



# हिन्दू विश्वकोष

बंगला विश्वकोषकी सम्पादक  
श्रीनगेंद्रनाथ वसु प्राच्यविद्यामहाशय,  
मिहान-वारिधि, शब्द-रत्नकर, तत्त्वचिन्तामणि, एम. ए., एम. ए., एम.  
तथा हिन्दूकी विद्वानों द्वारा सङ्गठित

—♦—  
द्वादश भाग

[ निद्रा—परमायुस् ]

## THE ENCYCLOPÆDIA INDICA

VOL. XII.

COMPILED WITH THE HELP OF HINDI EXPERTS

BY

NAGENDRANATH VASU, Prāchyavidyāmahārṇava,  
Siddhanta-vāridhi, Sabda-ratnākara, Tattva-chintāmani, M. R. A. S.

Compiler of the Bengali Encyclopædia; the late Editor of Bangla Sāhitya Parishad  
and Kāyastha Patrikā; author of Castes & Sects of Bengal, Mayura  
bhanja Archæological Survey Reports and Modern Buddhism;  
Hony. Archæological Secretary, Indian Research Society,  
Member of the Philological Committee, Asiatic  
Society of Bengal &c. &c. &c.

—♦—  
Printed by B. Basu, at the Visvakosha Press.

Published by

Nagendranath Vasu and Visvanath Vasu  
9, Visvakosha Lane, Baghbazar, Calcutta

1926.



हिन्दी

# विषयकोष

(द्वादश भाग)

निद्रा (सं० स्त्री०) निन्दते इति निदि कृतसार्था इति रक् नलोपच (निन्देर्नलोपच । उण २।१७) । स्वप्न, नीन्द । पर्याय—शयन, स्वाप, मंवेग, सुप्ति और स्वपन । कान्नाग्निरुद्रपत्नी सिद्धयोगिनो हैं, रातको ये योग द्वारा लोमोको आच्छन्न किये रहती हैं ।

“कालाग्निहरपत्नी च निद्रा सा सिद्धयोगिनी ।

सर्वलोकाः समाच्छन्ना यया योगेन रात्रिषु ॥” (तन्त्र) ।

नेयायिकीके मतमें इधमनाडोमें मनःमंयोग होनेसे निद्रा होती है । पातञ्जलदर्शनमें इसे मनकी एक वृत्ति वतलाया है ।

जिसमें सभी मनोवृत्तियां लीन हो जाती हैं उस अज्ञानका अवलम्बन कर जब मनोवृत्ति उदित रहती है, तब उसे निद्रा वा सुषुप्ति कहते हैं ।

वस्तुतः निद्रा भी एक प्रकारकी मनोवृत्ति है । प्रकाश-स्वभाव सत्त्वगुणके आच्छादक तमोगुणकी उद्रेक अवस्थाकी ही इस लोग निद्रा कहते हैं । तमः वा अज्ञान पदार्थ ही निद्रावृत्तिका आलम्बन है । जब तमोमय पर्याप्त अज्ञानमय निद्रावृत्तिका उदय होता है, तब मर्ष प्रकाशक सत्त्वगुण अभिभूत रहता है । सुतां उस समय किसी प्रकाशय वस्तुका प्रकाश नहीं रहता । यही कारण है, कि लोग कहते हैं—मैं निद्रित था, मुझे कुछ भी ज्ञान न था । यद्यार्थमें उस समय किसी विषयका ज्ञान नहीं रहता सो नहीं, उस समय अज्ञान विषयका ज्ञान अवश्य रहता है ।

उसी अज्ञानविषयक ज्ञानके रहनेके कारण निद्राभङ्गके बाद उस समयकी अज्ञानवृत्तिका स्मरण किया करते हैं । निद्राके समय अज्ञानमय वा तमोमय वृत्ति अनुभूत रहता है, इस कारण नींद टूटने पर उसका स्मरण होता है और उसे स्मरण द्वारा निद्राका वृत्तित्व जाना जाता है ।

मनकी पांच प्रकारकी वृत्तियां हैं, यथा—प्रमाण, विपर्यय, विकल्प, निद्रा और स्मृति । ये पांच प्रकार की वृत्तियां अभ्यास और वैराग्य द्वारा रोकनी जाती हैं । वेदान्तपण्डित निद्राको सुषुप्ति वतलाने हैं । सुषुप्ति देखो ।

मन जब रजः सत्त्व और तमोगुणमें अभिभूत होता है, तब निद्रा आती है । तमोगुणका कार्य अज्ञान है । इस निद्राकालमें अज्ञानात्मक ज्ञान होता है, पर्याप्त उस समय अज्ञानविषयक ज्ञान हो रहता है और कुछ भी नहीं ।

निद्राका विषय आनुर्वेदमें इस प्रकार लिखा है—मानवसमुहको स्वभावतः ही प्रतिदिन चार अभि-सायाएँ रहती हैं । आहारिच्छा, पानिच्छा, निद्रा और सुरतस्यृष्टा । जब निद्रा पट्टीचती है, तब उसका वेग रोकनेसे जूझा, मस्तक और चक्षुका गुरुत्व, शरीरमें वेदना और तन्द्रा होती है तथा खायी हुआ पदार्थ नहीं पचता ।

दिनकी निद्रा हितकर नहीं है, क्योंकि कफकी वृद्धि होती है । किन्तु शीतकालमें दिवा-निद्रा उत्तना दोषा-

यह नहीं है। श्रेष्ठाकालके निद्रा अन्य ऋतुधर्म दिवा-  
 निद्रा निविष्ट है। जिनका प्रतिदिन दिवा-निद्राका  
 अभ्यास है वे यदि उषणा परिष्ठाण करें, तो वायु, पित्त  
 और कफ वे त्रिदोष क्षुपित हो जाते हैं। जो सब मनुष्य  
 व्यायाम वा श्लो-मन-गन्धे दुर्बल पदवा पय पर्यटनने  
 लाज्य हो गये हैं तथा जो पत्तीमार, गुल, श्याम, विषामा,  
 रिष्ठा, वायुरोग, मटात्वय तथा पत्रोर्ण पादि रोगोंमें  
 ग्रस्त हो पयवा जो चोष देह, लोण कफ, गिन्द्र, हृद  
 और रातमें ज्ये हैं उनके लिए दिवा-निद्रा हितकर है  
 जिनको दिवा-निद्रा और राति जागरणका अभ्यास पशु  
 गया हो, उनके रात्रि-जागरण और दिवा-निद्रामें कोई  
 दोष नहीं होता।

भोजन वारनके बाद सोनेके लिए पयश जाना  
 चाहिये। हमने वायु और पित्त नष्ट होता है, कफकी  
 हृदि तथा शरीरकी पुष्टि होती है और मन प्रफुल्ल रहता  
 है। भोजन वारनके कमरे कम दो टण्ड बाद निद्रा-  
 को जाना चाहिये। जो श्वानिके माय हो सोनेको ज्ञाने  
 है उनके व्याख्यमें ज्ञानि पद-धती है।

यथासमय निद्रा लेनेमें धातुकी समता और पानस्य  
 विनष्ट होता है, शरीरकी पुष्टि होती है तथा वन, वर्ण,  
 उज्ज्वलता, उष्माए और जठराग्नि प्रदीप्त रहते हैं।  
 सोनेके समय पक्षा-भोवृष्टे पय शूर्णकी मधुके नाग  
 मिना कर लेहम करनेमें वायुकी प्रसरताका गुण बन्द  
 हो जाता है, सुतरा वायुके मद्धोषनके कारण निद्रा  
 पातो है।

जब मनुष्योंके मन, कर्मेन्द्रिय और बुद्धीन्द्रिय वित्राता-  
 भावका पयमन्यन करतो है और समो विषय-कर्मकी  
 निवृत्ति हो जाती है तभी मनुष्य निद्रामिभूत हो जाते  
 हैं। मूर्खता, भ्रम, तन्द्रा और निद्रा प्रत्येक एक दूसरे-  
 में विभिय है। पित्त और तमोगुणकी अधिकतामें भ्रम ;  
 वायु, कफ और तमोगुणकी अधिकतामें तन्द्रा तथा कफ  
 और तमोगुणकी अधिकतामें निद्रा होतो है। जिनमें  
 रन्ध्रिय विषयवहयकी शक्तिमें रहित हो जाय, और देह  
 को सुहता, क्षुधन, क्षान्ति-रोग और निद्रा-प्रवृत्तकी तरह  
 पशुभूत हैं, उषे तन्द्रा कहते हैं। निद्रा और तन्द्रामें

कलक यह है, कि निद्राके बाद प्राग्नेमें शक्ति पूर  
 जाती है और तन्द्रामिभूत व्यक्तिको जागरणवस्थामें  
 क्षान्ति दूर नहीं होती। ( भास्वप्रकाश )

सुयुतमें हमका विषय हम प्रकार निद्रा है,—  
 चेतनाका स्थान है। जब वह प्रथममें प्रावृत्त हो जा  
 है, तब प्राचीको निद्रा पातो है। निद्रा वै श्वयो-गति  
 यह सभी प्राचीको अभिभूत करती है। जब स-  
 यहा गिराए तम-प्रधान श्रेष्ठागे प्रावृत्त होती है,  
 तामसो नामक निद्रा पद-धती है। चतुष्के समय  
 निद्रा पाती है उने पयवधोधिनी निद्रा कहते हैं। त  
 गुणविशिष्ट व्यक्तियोंको दिन और रात दोनों समय  
 रजोगुणविशिष्टको पकारण और मत्त्वगुणविशि  
 व्यक्तियोंको चर्दे रात्रिमें निद्रा पातो है। श्रेष्ठाका  
 और वायुकी हृदि होनेमें पयवा मन वा शरीरके तापि  
 होनेसे निद्रा नहीं पाती। हृदय ही सब प्राणियों  
 चेतनाका स्थान है, यह पकते हो कदा प्रा चुका है  
 यह हृदय जब तमोगुणमें अभिभूत होता है, तब दे  
 निद्रा प्रयोग करती है। तमोगुण हो एकमात्र निद्रा  
 कारण है और-मत्त्वगुण बोधका हेतु पयवा स्वाभाव  
 ही इनका प्रभाग हेतु कह सकते हैं। जायतु पयस्य  
 जो सब शभाशय विषय अनुभूत होते हैं, निद्राके म  
 जोयाका रजोगुणविशिष्ट मन द्वारा उन मय विषयों  
 यष्टन करती है। इन्द्रियोंके विफल होनेमें तथा प  
 नताकी हृदि होनेमें जीवात्माके निद्रित नहीं होने पर  
 वसे निद्रित-भी कह सकते हैं।

वर्षासमय युरोपीय वैज्ञानिकोंका कहना है कि  
 प्राणिक विषय स्वाभाविक अवैतन पयस्याके लयव  
 हो कर वाद्यपानगत्यावस्थामें कानयापन करते हैं और  
 जिन पयस्याके बाद हो कार्यकारिणो गति प्रयन येन  
 पयस्यकी पयसा पानन्द और सामस्य के माय मनो रह  
 है उमो पयस्याका नाम निद्रा है। जिन प्रकार कि  
 यम्य वा कनके मगातार व्यपहार द्वारा लय प्राण  
 जामे पर उममें जब तक उम कल वा यम्यके उवादा  
 का मयोजन नहीं होता, तब तक वह उद्देय्य कर्म  
 पयुवयोगी रहता है; उोक उमो प्रकार हम्न पदादि  
 कार्य द्वारा उम सोनेके देहाध्यतरस्य भिय भिय यत्नो

चय होते रहने पर भी जब तक उसका कोई परिपोषण नहीं होता, तब तक वे सब यन्त्र भ्रकर्मण्य हो रहते हैं और उन यन्त्रोंमें चालित जीवदेह बहुत जल्द ही कार्यान्तम हो कर मृत नाम धारण करती है। इसी कारण सामञ्जस्यकी रक्षाके लिये कल्पामय परमेस्वरने निद्राकी सृष्टि की है। कारण जीवगणके जाग्रत अवस्थामें कर्म करनेसे उनके जिन सब यन्त्रों और वीर्योका फ्रास होता है, निद्रित होनेसे उन सब यन्त्रों और वीर्योके निष्कर्मावस्थामें रहनेके कारण उनका फ्रास वा चय होना बन्द हो जाता है। इसके अलावा निद्रामें पूर्वभूत आहार द्वारा विनष्ट वीर्योका अभाव पूर्ण हो जाता है। इसी कारण निद्राका विशेष आवश्यक है। पृथिवी जिस प्रकार रात्रि और दिवा इन दो अवस्थाओंके अधीन है और जिस प्रकार उन दो अवस्थाओंके आगमन का भी निर्दिष्ट समय अवधारित है उसी प्रकार जीवदेह निद्रित और जाग्रत अवस्थाके अधीन है और उन दो अवस्थाओंके आगमनका भी समय निर्दिष्ट है। निर्जन्मता और अन्धकारके लिये रात्रि ही मनुष्य और अन्य प्राणियोंके प्रथम निद्राका उपयुक्त समय है। किन्तु कई जगह इसका विपरीत देखा जाता है, जैसे-प्रजापति गण दिनके समय, इकमथ नामक कोट सन्ध्याके समय और मथकोट रात्रिमें कार्य करते हैं। पक्षियोंमें उलू और अन्योन्य दो एक पक्षियोंके सिवा सभी पक्षी दिनमें काम करते हैं और रातको सोते हैं। मसिजीवी वगैरे प्रभृति चिंस्त्रक जन्तु दिनमें सोते हैं और रातको आहार की तलाशमें विचरण करते हैं।

साधारणतः निद्राके दो कारण लिखे हैं, एक सुख और दूसरा उसका सहयोगी। सुख कारण यह है, जाग्रत अवस्थामें परिश्रम करके सभी इन्द्रियां क्षान्त हो जाती हैं, सर्वेन्द्रियका कर्त्ता मस्तिष्क ही जो विश्रामके सिवा और कोई कार्य नहीं करता है। निद्रा भिन्न मस्तिष्कका विश्राम अशभव है, इसीसे उक्त क्षान्ति द्वारा निद्राका प्राग्भोग्य होता है। किन्तु अनेक समय मानसिक और शारीरिक अत्यधिक परिश्रम निद्राका विघ्नजनक होता है। निद्राके प्राहायकारो कारणोंमें से जो मस्तिष्कको उत्थत नहीं करते घयवा जो मस्तिष्क-

बोधगम्य बातोंकी बार बार प्रावृत्ति करते, वे ही निद्राके पोषक हैं। जैसे, अन्धकार और निर्जन्मता साधारणतः निद्राकी सहायक है और जिनका किसी कल वा सदर रास्तेके पाख वर्त्ती कोलाहलपूर्ण स्थानोंमें रहनेका अभ्यास है वे उन निर्जन और निस्तब्ध स्थानोंमें कभी भी नहीं सो सकते। पूर्वोक्त दो अन्यान्य कारणसमूह मनको उसके कार्यक्षेत्रसे प्राकर्षण और उसकी इच्छा-शक्तिकी क्षमताको कम कर देते हैं, सुतरां निद्रादेवोका आगमन अनिवार्य हो जाता है। निद्रा आनेके कुछ पहलसे ही आनन्द्य भाव पट्टच जाता है और मनोयोगका अभाव देखनेमें आता है। इन्द्रियां वाह्य दृश्य-पदार्थोका अस्तित्व यद्वा नहीं कर सकते और उस समय निर्जन्मता तथा निस्तब्धता अत्यन्त प्रिय हो जाती है। निद्रा आनेके समय हम लोगोंको धारणाशक्ति कम हो जाती है, शरीरमें आलस आ जाता है, पाँखें बन्द हो जाती हैं, कान यद्यपि कुछ काल तक शब्दोका अस्तित्व समझ सकते हैं, पर उसका अर्थ बोध नहीं कर सकते और वह शब्द किसी दूर स्थानोंमें ही रहा है, ऐसा अनुभव करते हैं। उसी समय हम लोग घोर निद्रामें अभिभूत हो जाते हैं। निद्राको प्रथमावस्थामें इन्द्रिय और युक्ति-शक्ति सबसे पहले अचेतन हो जाती है। कल्पना और अन्यान्य छोटी छोटी शक्तियां बहुत देर तक अचेतन रहती हैं। निद्रावस्थाकी तीन भागोंमें विभक्त कर सकते हैं। निद्रा सबसे पहले अत्यन्त गाढ़, पीछे उससे कुछ चैतन्य मिश्रित और सबसे अन्तमें जाग्रत अवस्थाके आगमनको प्रतीचामें अचेतनभाव धारण करती है। साधारणतः निद्रा और चैतन्यके मध्यवर्ती एक समय देखा जाता है। उस समयमें निद्राका प्राग्भोग्य बहुत कम हो जाता है, इसीमें उस समय निद्रित व्यक्तिको सहजमें जगा सकते हैं। वयस, अभ्यास, प्रकृति और क्षान्तिके अनुसार मनुष्यकी निद्राका विशेष तारतम्य देखा जाता है। भ्रूण माष्टगर्भमें प्रायः चिर-निद्रामें अभिभूत रहता है। भूमिष्ठ होने पर यह पहले कुछ दिनों तक गाढ़ो निद्रामें होता है। विशेषतः पकालप्रसूत सन्तान केवल आनेका समय होइ कर चयमिष्ट सभी समय निद्रित रहती है। पीछे शरीरके

पूर्वसंदिग्ध नित्ये जब तक चंद्रकी चपेला पुटिका भाग पश्चिम प्रायः १५, मध्य तक पश्चिम निद्राका प्रयोजन पड़ता है। योगनाशक्यामं शरीरमें चय चौर दृष्टि दोनों ही प्रायः समान रहनेमें निद्राका भाग बहुत कम हो जाता है। लेकिन हृदयकालमें माधारणतः पौषण-गच्छिके अभावके कारण उमरके पूर्वके नित्ये पश्चिम निद्राको अदरत पड़ती है। नियायो निद्रा पुष्यमें बहुत कम है। नौरोग मनुष्याका चण्ड्ये पश्चिम समय तक नहीं सोना चाहिये।

वद्यार्थमें ऐसा देना जाता है कि स्थूलकाय मनुष्य सोपकायको चपेला चन्द्रकाल निद्राविय है। अथ्यामके अनुसार भी निद्राकी कमी घेगी टोपी जाती है। जनरल एनिशट २४ घण्टेके मध्य ४ घण्टेमें पश्चिम नहीं सोते थे। विद्यात प्राध्यात्मिक ग्राह्यवेत्ता डाक्टर रोड एक समयमें दो दिनका भोजन खा लेते चौर दो दिन तक सोते रहते थे। फिर अथ्यामके वयमें या का निद्रिष्ट समकर्म निद्रित चौर जागरित होनेको कथा समो घोकार करते हैं।

मिटर उरकमने एक कुतयो खोपड़े जाट कर मन्दिष्क द्वारा यह स्थिर किया है कि—(१) मन्दिष्कको उपरो गिरा स्फोट हो कर मन्दिष्क पर दबाव डालतो है इसीमें निद्रा आती है, यह भूल है। कारण निद्राके समयमें सब गिराएँ कुछ भी स्फोट नहीं होता। (२) निद्राके समय मन्दिष्क दूबरे समयको चपेला पश्चिम शस्त्रागम्यामें रहता है। मन्दिष्कको लपरो गिराचामि समय रहना परिमाण घटता है, भी नहीं, रहती गति भी मन्द हो जाती है। (३) निद्रावस्थामें मन्दिष्कमें रहती गति इस प्रकार मन्दिष्कचित होती है कि उममें मन्दिष्ककी भिन्नो पुटता साम करती है।

यहां पर अत्यधिक निद्रा या समकाल विपरीत भाव जिस अदम्यामें देगा जाता है उससे दो एक उदाहरण नहीं देनेमें तब समझमें नहीं या सकता। इसीमें यहाँ पर दो एक उदाहरण उद्धृत करते हैं। भिव जातीय पुस्तकके प्रथम द्वा. निद्रा नहीं एक समाव या साम तक किमो मन्दिष्कमें व्यापी रहते देना आती है। डाक्टर कापेण्डर-ने दो रोगियाका इसी प्रकार उल्लेख दिया है। फरामो

डाक्टर स्नाचेटने सम्प्रति इसी प्रकारके तीन रोगियाका उल्लेख कर उनमेंमें एकके विषयमें निया है कि यह रोगी सोते है। १८ वर्षकी अवस्थामें यह ४० दिन, २० वर्षकी अवस्थामें ५० दिन चौर २४ वर्षकी अवस्था लगभग एक वर्ष सोतो थी। इस समय उसके साममें आ एक दंत उपाड़ कर उमो हेट हो कर दूध वा मछली का गिरवा मुखमें टिगा जाता था चौर उमोमें उसकी जीवनरक्षा होती थी। यह उस समय गतिहीन चौर अमानावस्थामें रहतो थी। उसकी माटोकी गति बहुत मन्द थी, नियात-प्रत्यास दुर्बल था, मनमूवादि कुछ भी नहीं होता था चौर समूचा शरीर नावलमय चौर सुख रहता था। इस निद्राकी स्वाभाविक निद्रा नहीं कहते, यह निद्रा कष्टजनक है।

फिर कोई कोई मनुष्य सम्पूर्ण निद्राशून्यावस्थामें अथवा अल्प तन्द्रायस्थामें बहुत दिन तक रहते देगा गया है। सम्पूर्ण निद्राशून्यावस्था भावी पोड़ाप्रापक है। ऐना अवस्थामें दोषकालवशावी स्वर, मन्दिष्कका प्रदाव, मस्कोटस्वर इत्यादि पोड़ाएँ उत्पन्न होती हैं। दोषकाल चन्द्रावस्थामें रहनेमें सोच भीकमें मनाव चौर पचेतनावस्था भी पडुं व जाती है। यदि इस प्रकार जागरित रहनेका कोई विग्रेय कारण न रहे, तो रोगी ग्रीष हो उत्कट पीड़ाग्रस्त होता है। माधारणतः पद्या-घात, संन्यास वा उन्मादरोग उरके प्राक्रमण करता है।

स्वप्न-निद्रा इस प्रकार पीड़ाप्रापक नहीं है। माधारणतः जो मध मनुष्य कार्यमें लगे रहते हैं, जिनका मन्दिष्क बहुत चालित होता है अथवा जो चर्चकप्रता-भोग करते हैं वे ही उममें स्वप्न-निद्रासु सोते हैं। फिर जो बहुत दिनोंमें याग, धर्मरोग, मूत्ररोग, पेटकी पीड़ा चौर मूर्च्छा रोगमें प्राक्रान्त है, उनको भी निद्रा बहुत कम हो जाती है।

इस चन्द्रावस्थाको दूर करनेमें चन्द्राके कारणकी विज्ञाना जरमी होती है। यह रोगी जिस घरमें रहे, उस घरमें नित्य वायुके चामे जानेका रास्ता रखे। घर यदि पश्चिम गमं हो तो उसकी उत्पत्ताको कम कर दे। रोगी जिस गस्था पर भोवे, वह गमं न हो। उस रोगीको ये सब विज्ञापन चामे दे जो उसके मनको

संयन्ति आकृष्टे, चञ्चल और विरक्त करते हैं। इस समय सुलाव देना उचित है।

आयुर्वेदके मतसे शीतमस्रतुके सिवा अन्य सभी मस्रतुमें दिवा-निद्रा निषिद्ध है। किन्तु बालक, छद्, स्त्रीसंभर्गजनित कृग, चतचोण अथवा मयपापनसे उन्मत्त वाक्त्रिके लिये; सवारी वा पथगमनसे थान्त अथवा अन्य कर्म द्वारा थान्त वा अभुक्त वाक्त्रिके लिए अथवा जिघका भेद, घाम, कफ, रस और रक्त चीण हो गया हो उसके लिए अथवा अजीर्ण रोगीके लिये दिवा-निद्रा निषिद्ध नहीं है, लेकिन वे दो दण्डसे अधिक समय तक न सोवें। रातमें जितना समय तक जगे, दिनमें उसके आधे समय तक सो सकते हैं। दिवा-निद्रा देहके विकार स्वरूप अत्यन्त कट्य कर्म है। दिवाभागमें निद्रित वाक्त्रिकी कभी सुखवृद्धि नहीं होती तथा उसे सब दोषोंका प्रकोप झेलना पड़ता है।

दोषका प्रकोप होनेसे कास, श्वास, प्रतिश्याय, मस्रकका भार, अङ्गमर्द, अरुचि, ज्वर और अग्निमान्द्य आदि रोग उत्पन्न होते हैं, इसी कारण रात्रिजागरण और दिवा-निद्राका त्याग एकमात्र कर्त्तव्य है। रातमें परिमित रूपसे भी सकते हैं। परिमित निद्रासे देह निरोग और सबल बनो रहती है, नावणकी वृद्धि होती है, मन प्रफुल्ल रहता है तथा सो वर्ष परमायु होती है। निद्राको व्यर्थ कर लेनेसे दिनकी वा रातकी जगे वा सोये रहनेसे शरीरमें कोई हानि नहीं पड़ती।

निद्रानाश।—वायु, पित्त, मनस्ताप, क्षय वा अभिघातके कारणे निद्रा नाश होती है। इन सब दोषोंके विपरोत क्रिया करनेसे ही साम्य होता है। निद्रानाश होनेसे शरीरमें तैल लगावे। इस समय गात्रविलेपन और संवाहन हितकर है। शान्तिगडूल, गोधूम-पिटास, इक्षुरससंयुक्त मधुर और सिग्धद्रव्य भोजन, दुग्ध वा मांससयुक्त भोजन, रातमें द्राक्षा, शर्करा वा शुद्धद्रव्यका भोजन और कोमल तथा मनोहर शय्या और आसन पादिका व्रथचार करना कर्त्तव्य है। निद्राकी अधिकता होनेसे यमन, संशोधन, लङ्घन और रक्त-मोचण करे तथा मनकी भी चञ्चल करतें रहें, जिससे नींद न आवे। कफ वा भेदविशिष्ट अथवा विपाक्त

व्यक्तियोंके लिए रात्रि-जागरण और दृष्ट्या, शूल, छिक्का, यजीर्ण और अतीसाररोगमें दिवा-निद्रा हितकर है। इन्द्रियोंका विषय अर्थात् शब्दस्पर्शादिका ध्यान न होना, शरीरकी गुरुता, जृम्भण, क्लान्ति और निद्रामें कातरता ये सब तन्द्राके लक्षण हैं। तमोगुणके वातद्वेषाके साथ मिलनेसे तन्द्रा और श्लेषाके साथ मिलनेसे निद्रा होती है। (सुश्रुत शारीरस्थान ४ अ०)

जिस समय देहो आत्मा तमसे व्याप्त रहती है उस समय निद्रा पड़ती है। सत्त्वगुणके प्रावण्य होनेसे ज्ञान होता है, इस समय अन्तारात्मा विग्राम करती है, इसी कारण इसे निद्रा कहते हैं। अन्तारात्मा इस समय नासाई वा दोनों भ्रूके मध्यस्थलमें लीन रहती है। निद्रारहित व्यक्ति—

“कुतोनिद्रा दरिद्रस्य परमेश्वरस्य च।

परनारीप्रचक्षस्य पराद्व्यहरस्य च ॥”

सुखसुप्त—

“सुखे स्वपित्ययुग्मवान् व्याधिसुखं यो नरः।

सावकाशस्तु यो भुङ्क्ते यस्तु दारिर्न शक्तिः ॥”

( गण्ड-नीतिसार )

दरिद्र, पराधीन, परदाररत वा कभी सुखसे नो सकता है? जिन्हें किमो प्रकारका अटण नहीं है, जो व्याधिसुख हैं, स्त्रीसे विशेष संभर्ग नहीं करते और स्वच्छन्द भोजन करते हैं वे ही सुखसे सोते हैं।

धर्मशास्त्रके मतसे एक प्रहर रात्रिके बाद भोजनादि करके निद्राको जाय और चार दण्ड रात रहते निद्राका परित्याग करे। निर्जन पवित्र स्थानमें मनोहर शय्या पर सोनेसे नींद बहुत जल्द आती है। सोनेके पहले सिरा-इनेमें एक लोटा जल भरके निम्नलिखित वैदिक वा गारुड मन्त्रसे रखना महल्लप्रद है।

“शुचौ देशे विशिषे द्व गोमयेनोहितके।

प्रागुदकंलावने चैव सम्बिरोत्तु सदा मुपः ॥

मांरुधं पूर्णकुम्भं च शिरःस्थाने विषायेत् ॥

वैदिके गारुडैर्मन्त्रे रत्नौ कृत्वा स्वपेततः ॥”

( आदिहृतस्य )

अपने घरमें पूर्वकी ओर मस्रक करके सोना चाहिये। आयुष्कामी व्याजित दक्षिणकी ओर मस्रक रख



कर जो कहते हैं। प्रवामिष्यिको पविमन्त्री घोर मन्त्रक  
रथ कर मोना चाहिए। उत्तरकी घोर मन्त्रक रथ कर  
मोना पतिगय दूषनीय है। पूर्वकी घोर निराहना करके  
मोनेने धन-प्राप्ति, टक्षिपकी घोर चानुवृद्धि, पविमन्त्री घोर  
प्रवामिष्यिका घोर उत्तरकी घोर निराहना करके मोनेने  
मृत्यु होती है।

निद्रा ज्ञानके पक्षमें विष्णुको प्रवाम करना प्रथम  
कर्म है। इन सब स्थानोंमें कदापि मोना न चाहिये,  
शून्यालय, निर्जन घर, ज्ञानमान, एक हृद्य, चतुष्पय,  
महादेवशुद्ध, पदरीकी जमोनके ऊपर, धारय, मो, विप्र,  
देवता घोर शुरूके ऊपर। इनके पलावा भग्नगयन घोर  
पराधि हो कर प्रथया चार्द्रवासमें या नग्नायस्थानमें, खुले  
गिरमें, खुले मैदानमें तथा चैत्यहृद्यके तले मोना मना है।

( आदिहृतस्य )

निद्राकर ( सं० लि० ) निद्रायाः करः । निद्राकारक,  
सुलानिवाला ।

निद्राकरम् ( सं० स्त्री० ) सुनिपलक माक, एक प्रकारका  
साग ।

निद्राकर्यं ( सं० स्त्री० ) निद्रायाः आकर्यं । निद्राका  
आकर्यं, निद्रासुता ।

निद्राकारिन् ( सं० लि० ) निद्रा-ल-णिनि । निद्राकर,  
निद्राकारक, सुलानिवाला ।

निद्राकाल ( सं० पु० ) निद्रायाः कालः । निद्राका काल,  
मोनेका समय ।

निद्राकुल ( सं० लि० ) निद्रायाः आकुलः । निद्रासुर,  
निद्राबोधित ।

निद्राकण्ट ( सं० लि० ) निद्रया आकण्टः । आगतनिद्रा,  
जिसे मो'द या गर्द हो ।

निद्राकाका ( सं० लि० ) निद्रया आकाकाः । निद्राकुल,  
निद्रासुर ।

निद्रागत ( सं० लि० ) निद्रागतः । निद्रित, जो सो गया हो ।  
निद्रागार ( सं० पु० ) निद्राया आगारः । निद्राशुद्ध, मोने-  
का कमरा ।

निद्रागौरव ( सं० स्त्री० ) निद्रायादृष्य ।  
निद्रादत्त ( सं० लि० ) निद्रया दत्ताः । निद्राहृद्य, निद्रासुर ।  
निद्राजनक ( सं० लि० ) निद्राकर, सुलानिवाला ।

निद्राय ( सं० लि० ) निद्रा-त्, तस्य न, ततो षत्वम् । निद्रा-  
गत, जो सो गया हो । पर्याय—निद्रित, शयित ।

निद्रादरिद्र ( सं० पु० ) निद्राय, दरिद्रः प्रभावः । १ निद्रा-  
का प्रभाव, मो'दका नहीं होना । २ एक संस्कृत  
कवि ।

निद्रान्वित ( सं० लि० ) निद्रया अन्वितः । निद्रित, निद्रा-  
गत, सोया हुआ ।

निद्राभङ्ग ( सं० स्त्री० ) नी'द टूटना ।  
निद्राभाव ( सं० पु० ) निद्राया प्रभावः । १ निद्राका  
प्रभाव, मो'द नहीं पहुँचना । २ योगनिद्रा ।

निद्रायमान ( सं० लि० ) जो नी'दमें हो, सोता हुआ ।  
निद्रायोग ( सं० पु० ) निद्रा घोर गहरी विना ।

निद्रारि ( सं० पु० ) निद्रालक्षि, विराधता ।  
निद्रासु ( सं० लि० ) निद्रातोति निद्रा-पासुत् ( एट्टि  
एट्टि । पा ३।२।१५८ ) निद्रागीन, सोनेवाला । ( लो० )

निद्रा देयत्वे मास्त्वस्या इति निद्रा यादुलकात् पासु । २  
यासांङ्कु, वैगम, भंटा । ३ यनवर्षिका, वनतुलभी ।  
४ नसी नामक मन्थद्रव्य ।

निद्राप्रस्था ( सं० स्त्री० ) निद्राया प्रथस्या । निद्रित  
प्रथस्या ।

निद्रामिश्र ( सं० लि० ) अनिद्रा, जागरुक ।  
निद्राहृद्य ( सं० पु० ) निद्राया हृद्य-इव । पन्थकार ।

निद्रावेग ( सं० पु० ) निद्राका उपक्रम या इच्छा ।  
निद्रायाना ( सं० स्त्री० ) निद्राशुद्ध, मोनेका कमरा ।

निद्रागीन ( सं० लि० ) निद्रासु, सोनेवाला ।  
निद्रामंजन ( सं० स्त्री० ) निद्रा मंजलयतीति मंजन-  
दिच्-सुट् । १ रुईभा, कफ, फककी हृदिये निद्रा  
पाती है ।

निद्रित ( सं० लि० ) निद्रा-ञ्च मन्त्रातः, निद्रा तारकादि-  
त्यादित्त् । निद्रागत, सुम, सोया हुआ ।

निद्रोरियत ( सं० लि० ) निद्राये उरियत, जो सो कर  
रहा हो ।

निघट्टक ( हि० लि० वि० ) १ बिना किसी हृकापटके,  
श्रीक । २ बिना गङ्गोपदे, बिना द्विपकके, बिना आगा  
पौछा हिदे । ३ निःसह, शिष्टके, बिना क्रिमो भय दा  
विनाके ।

निधन ( स० पु० क्लो० ) नि-धा-क्यु । १ मरण । २ नाग ।  
३ लग्नस्थानसे आठवाँ स्थान । ज्योतिषके मतमें इस स्थानसे नदीवार, अत्यन्त वैषम्य, दुर्ग शस्त्र, आयु और सङ्घटका विचार किया जाता है । यदि लग्नके चौथे स्थान पर सूर्य हो और ग्रह पर शनिकी दृष्टि हो, तो जिन दिन निधनस्थान पर शुभ ग्रहोंकी दृष्टि होगी, उसी दिन मृत्यु अवश्य होगी ।

निधनस्थान पर सूर्यादि ग्रहोंके रहनेसे निम्नलिखित फल मिलते हैं—

यदि लग्नसे आठवाँ स्थान पर सूर्य हो और वह गृह सूर्यसे उच्च अथवा स्त्रीय गृह हो, तो वह रविग्रह सुख-दाता होता है, उक्त स्थान न हो कर यदि अन्य स्थान हो, तो प्राणनाशकी सम्भावना है । सूर्य अपनेसे उच्च अथवा अपने गृहमें रह कर जिसके लग्नसे अष्टम स्थानगत होंगे, उसकी सुखसे मृत्यु होगी । उक्त दो स्थान छोड़ कर अन्य स्थानमें रहनेसे कष्ट, यातना वा दुःखसे मृत्यु होती है । रविके अष्टम स्थानमें रहनेसे वञ्चाघात, सप अथवा च्वर इन तीनमेंसे किसी एक द्वारा स्थलभूमि पर मृत्यु होगी । लग्नसे आठवाँ स्थान पर चन्द्रके रहनेसे उसे कास, शोथ और च्वर होता है, देहका निम्नभाग क्षय हो जाता है तथा उसकी जलमें मृत्यु होती है । लग्नसे आठवाँ स्थान यदि पापग्रहसे देखा जाय और उस स्थान पर चन्द्र रहे, तो वह थोड़े ही दिनोंके मध्य यमराजका निहंमान बनता है । फिर वह अष्टम स्थान यदि चन्द्रका अपना अथवा शुक्रका या बुधका घर हो और वह चन्द्र यदि पूर्ण हो, तो काय और पित्ररोगकी उत्पत्ति होती है । लग्नसे आठवाँ स्थान पर मङ्गलके रहनेसे अन्न द्वारा, अग्नि अथवा राजविचारसे और अथकाग, कुष्ठ, व्रण, भर्ष वा ग्रहणी इनमेंसे किसी एक रोगसे आक्रान्त हो कर राह चलते मृत्यु होती है । बाद मरनेके उसे नरक होता है । यदि लग्नसे अष्टमस्थान पर मङ्गल रहे और वह मङ्गल दुर्बल अथवा स्त्रीय गोचराग्नियसे हो, तो वह मनुष्य अतन्त्र भयानक दुष्ट व्रण, अतिसार अथवा दन्ध हो कर किसी निन्दित स्थानोंमें मरता है । लग्नसे अष्टम राशिमें यदि बुध रहे और वह यदि शुभग्रहोंका चैत्र हो, तो अष्ट-तीर्थमें सुखसे उसकी मृत्यु होती है ।

लेकिन वह अष्टमस्थान यदि पापग्रहका चैत्र हो, तो मूल, पाद अथवा जङ्घा वा उदरके किसी प्रकारके रोगसे पीड़ित हो कर राजभवनमें उसकी मृत्यु होती है । शुभ-बुध यदि अष्टम स्थान पर हो, तो अष्ट तीर्थ स्थल पर मरण होता है और वह बुध यदि पापग्रहके माघ मिले हो तथा शत्रु गृहगत हो, तो मनुष्य वदनकम्पारोगसे मरता है । इहस्पति अपने घरमें किंवा शुभग्रहके घरमें रह कर यदि लग्नकी अष्टमराशिमें हो, तो होय रहते किसी पुण्यतीर्थमें उसका देहावसान होता है और यदि वह स्थान इहस्पतिका स्त्रीय गृह वा शुभग्रहका गृह न हो, तो भी मरते समय उसे होय रहता है । लग्नसे अष्टमस्थानमें शुक्रके रहनेसे मनुष्य उत्तमाचारी, राजसेवक, मांसमिय और सुवृद्धि होता है तथा उसके दोनों नेत्र स्थूल होते हैं । अन्तिम समय किसी सुतीर्थमें उसकी मृत्यु होती है । लग्नसे अष्टम स्थानमें शनिके रहनेसे मनुष्य शोकाभिभूत, वदन-कम्प वा शूलरोगाक्रान्त हो विदेशमें अथवा किसी नीच जाति द्वारा निधनकी प्राप्त होता है । शनिके अष्टम गृहमें रहनेसे मानव दुःखभीगी हो कर दिशान्तरवासी होता है । या तो चोरीमें नोच लोभके हाथ या नेत्ररोगसे उसकी मृत्यु होती है ।

राहुके अष्टम स्थानमें रहनेसे शत्रुके समक्षमें ही उसका मरण होता है तथा यह रोगी, पापकर्मनिरत, गम्भीरस्वभाव, चोर, क्षय, कापुरुष और धनवान् होता है । ( फलितज्योतिष )

४ ताराभेद, जन्मनक्षत्रसे सातवाँ, सीलहवा और तैरुसवां नक्षत्र । यह निधन तारा दूषणीय माना गया है । दोषशान्तिके लिये तिल और काष्ठन दान देना चाहिये ।

'प्रथरौ लवणं दद्यात् निधने तिष्ठकायम् ।'

( ज्योतिषतत्त्व )

५ विष्णु । ६ कुल, खानदान । ७ कुलका अधि-पति । ८ पांच अवयव वा सात अवयवयुक्त सामका अन्तिम अवयव । ( शि० ) निष्ठतं धनं यस्य । ८ धनहीन, निधन, दरिद्र ।

निधनकाम ( स० क्लो० ) भामभेद ।

निघनक्रिया ( मं० स्त्री० ) निघनस्य क्रियाः स्रतस्रि-  
का मन्त्रार, पन्थेष्टिपार्थ ।

निघनता ( मं० स्त्री० ) निघनस्य भावः, निघन-तल-  
टात् । दृष्टिता, संगामी ।

निघनवति ( मं० पु० ) प्रत्ययकर्ता, गिय ।

निघनवत् ( मं० त्रि० ) निघनं विद्यते यस्य निघन-  
मत्पु, मस्य वः । १ मरणयुक्त । ( स्त्री० ) २ निघना-  
वयययुक्त मामभेद ।

निघनो ( द्वि० वि० ) निर्घन, घनहीन, दृष्टि ।

निघमन ( मं० पु० ) निघमप्रथ, नोमका देह ।

निघा ( मं० स्त्री० ) निघोयते धार्यते कर्मनिनानया नि-  
धा-प । १ पाशममूढ । २ निघान । ३ धर्म ।

निघातस्य ( मं० वि० ) निघा-तस्य । व्यापनेय ।

निघान ( मं० स्त्री० ) निघोयतेऽत्र निघा चाधारे ष्युट् ।  
१ निधि । २ चाधार, चाचय । ३ सप्रस्थान, जहां गमो  
तद्यु भोग हो । ४ चक्रप्रसंग । ५ व्यापन ।

निघान—एक कवि । ये सभी पञ्चदश-सद्व्यसने  
नभापणित्त मे । कवितामञ्जरी विमोच पराकाष्ठा  
दिना कर दन्ते 'गान्धोव' नामक दिन्दो भाषा में  
पञ्च पञ्चमैत्यकव्यकी रचना की । ये १०५१ ई० में  
विद्यमान थे । कवि प्रेमसंगय चोर पण्डित गुणामजो  
मित्र दन्ते के सप्तमासिक थे ।

निधि—एक कवि । ये १६०० ई० में विद्यमान थे । यारा  
धर्मिक राजपण्डित ठाकुर प्रसाद विपाठोने पवने यनाये  
ए 'सुधार-अंध' धर्म में इनका उत्पन्न किया है ।

निधि ( मं० पु० ) निघोयतेऽस्मिन् निधा-क्ति । १ नजिका  
नामक द्रव्यविशेष । २ मनुष्य । ३ लोचकोपधि, लोचक  
नामकी दवा । ४ चाधार । यथा—गुणनिधि, जननिधि  
इत्यादि । ५ विष्णु ।

जय प्रत्ययकाम चाता है, सब सभी विष्णु में मोन हो  
जाते हैं । विष्णु, सभी के पादय मरुप है, इसी कारण  
निधिमरुप विष्णुका बोध होता है । ६ निरदनट्यामिड  
भुजाः लघुनिधेय, माहा दृषा नजनामः । मितास्यारामं  
निष्ठा है, कि दृषो में महा दृषः धन यदि राजाको मिले,  
तो लघुका चाधा काकाटिनी दे कर चाधा उसे से  
मिता चाहिये । विद्वान् ब्राह्मण यदि पारं, तो उसे सब

से सेना चाहिये । क्योंकि इस प्रकारके ब्राह्मण अत्यन्त  
प्रभु हैं । यदि राजा चोर विद्वान्को छोड़ कर पण्डित  
ब्राह्मण या क्षत्रिय पादि पाये, तो राजाको उन्हें कहां  
भाग दे कर श्रेय से लेना चाहिये । यदि कोई निधि  
पा कर राजाको संवाद न दे, तो राजाको उसे दण्ड  
देना चाहिये और सारा सज्जाना से लेना चाहिये ।

( मितास्यरा )

यदि कोई मनुष्य निधि पाये चोर बंध निधि त्याग  
उमोको है, ऐसा प्रमाण दिखाये, तो राजाको कहां भाग  
या मारक्या भाग से कर उसे श्रेय निधि छोटा देनी  
चाहिये । ७ कुबेर के दो प्रकारके रथ । पर्याय—  
श्रेयधि, वेधधि ।

“पयोऽग्निपयां मदायः मंभो मकरदरुको ।

सुप्रसङ्गदमीतारय वर्षोऽग्नि निधो नव ह”

( इगारकी )

यद्य, महायद्र, नह, मकर, कक्षय, सुकुन्द, नन्द,  
नील चोर वचं ये दो प्रकारकी निधियां हैं । मार्क-  
ण्डेयपुराणमें पाठ प्रकारकी निधियांका उल्लेख है ।

यथा—

“पद्मिनी नाम या निधा स्वमोस्तथाभिदेवता ।

तदापाराय निधय, ताम्पे विगारता म्यु ह”

( मार्कंडेयपुराण १८५० )

पद्मिनी नामकी विधाकी पधितायो देयो मरुतो  
हैं । ये सब निधियां उन्को चाग्रित हैं । यद्य, महा-  
यद्र, मकर, कक्षय, सुकुन्द, नन्द, नील चोर नह ये  
पाठ प्रकारकी निधियां हैं । जनी मरुतिका पाविभाय है  
इनका भी पाविभाय वही है चोर यहा, बहुत ज़रद  
मरु प्रकारकी निधियां काम होती हैं । देवताओंका  
प्रमथना तथा माधुओंकी सेवा, इन्को दो लघोभि यद्य  
निधि काम होती है ।

यद्यनिधि—यद्यो निधि प्रथम निधि चोर मरुतको  
पधित्त है । पुत्र चोर पोत्रादि क्रमसे इन निधिका  
भोग होता है । सुवच यदि इन निधिसे परिचित्त हो, तो  
नह दाविप्यमार, मन्त्राधार चोर परमभोगमार्गी होना  
है । यद्य निधि मरुतगुणों पधित्त है । इनके प्रमथने  
मनुष्य सुधर्म, श्रेय चोर ताम्पदि जिनको धारुप है

सर्वोका भोग करता और क्रय विक्रय करता है।  
 महापद्मनिधि—यह भी मत्स्यगुणको आधार है।  
 इसके अधिष्ठानसे सभी मनुष्य सत्त्वगुणप्रधान होते हैं  
 और सर्वदा पद्मरागादि रत्न, प्रवाल और मुक्तादिका भोग  
 तथा उर्ध्व सब रत्नोंका क्रय विक्रय करते हैं। पुत्र-  
 पीत्रादिक्रमसे इस निधिका भोग होता है।

मकरनिधि—यह तमःप्रधान है। जिसके पास यह  
 निधि है, वह व्यक्ति सर्वप्रधान होने पर भी, तमःप्रधान  
 होता है तथा वाण, खड्ग, भूमि, धनु और चर्म इनका  
 भोग करता है। राजाके साथ भी उसको मित्रता  
 होती है।

कच्छपनिधि—यह निधि भी तमःप्रधान है, इसी कारण  
 जिसके पास यह निधि रहती है, उसका स्वभाव भी तमः-  
 प्रधान होता है। वह मनुष्य पुण्यपरम्पराके अनु-  
 ष्ठानप्रसङ्गसे अनेक प्रकारके व्यापारमें प्रवृत्त रहता है।  
 किसी पर उसका विश्वास नहीं होता। जिस प्रकार  
 कच्छप अपना सारा अङ्ग संहरण करता है, उन्हीं  
 प्रकार वह भी आशुत्तचित्त हो कर लनताके चित्तको  
 संहरणपूर्वक आत्मभाव-रूपिण रहता है। वह मनुष्य  
 विनाशके भयसे कोई वस्तु-किसी चीज नहीं देता और  
 धाय भी उसका भोग नहीं करता। सब वस्तु जमीनमें  
 गाड़ रखता है।

सुकुन्दनिधि—यह निधि रजोगुणप्रधान है। इस  
 निधिकी दृष्टि होनेसे स्वभाव भी रजोमय होता है।  
 वह मनुष्य वीणा, वेणु, न्यदङ्ग आदिका सभोग करता  
 तथा गायत्र और नचंकीको चित्त देता है। बन्दी,  
 सुत, आगध और नास्तिहोकी रातदिन भोग्यवस्तु देता  
 और धाय भी उनके साथ भोग करता है। कुलटा तथा  
 उसी प्रकारके अन्यन्य व्यक्तियोंके प्रति उसकी आशुक्ति  
 होती है। यह निधि जिसकी भजना करती है, वह  
 एकका ही मङ्गी होता है।

मन्दनिधि—यह निधि रज और तमोगुणविशिष्ट  
 है। इसकी दृष्टि होनेसे मनुष्य धनवान् होता तथा वह  
 तरु तरुके धनरत्नादिका भोग और क्रय विक्रयादि  
 करता है। वह मनुष्य सज्जन, आगत, अभ्यागत सर्वोको  
 आशुय देता है। वह जरा-सा भी अपमान सह नहीं

सकता। कोई उसके पाससे विसुख मोट नहीं पाता;  
 और सर्वोको वह सुह मांगा दान देता है। उस व्यक्तिकी  
 पत्नी भी सौन्दर्यशालिनी होती है तथा उसके अनेक  
 सन्तान होती हैं। सात पीढ़ी तक इस निधिका भोग  
 होता है। इस निधिके अधिपति दोष-जोवन-लाभ  
 कर सुखसे समय व्यतीत करते हैं।

मोलनिधि—यह निधि सत्त्व और रजःप्रधान है।  
 जिसके प्रति इसकी दृष्टि पड़ती है, उसका स्वभाव भी  
 सत्त्व और रजःप्रधान होता है। वह मनुष्य तरु तरु-  
 के वस्त्र, कपास, धान्यादि, फल, पुष्प, सुता, विष्टम,  
 गड़ और शक्तिका भोग करता है। इन सब द्रव्योंमें  
 उसका जरा भी अनुपग उत्पन्न नहीं होता। उसका  
 अधिकांश समय तहाग, देवालय आदि सत्कर्मोंमें बीतता  
 है। यह निधि तीन पीढ़ी तक रहती है।

ग्रहनिधि—यह निधि रज और तमोमय है। जिस  
 के पास यह निधि है उसका स्वभाव भी रजः और तमो-  
 मय होता है। ग्रह निधि केवल एक पीढ़ी तक रहती  
 है। इस निधिका अधिपति दिव्यभोजन करता तथा  
 केवल अपनेकी ही अच्छे अच्छे भस्महारोंसे सजाना पसन्द  
 करता है। दूसरेकी बात तो दूर रहे, अपने स्तो और  
 बर्षोंकी भी कुछ नहीं देता है। स्वयं पद्मिनी देवो  
 इन मन्त्र निधियोंके ऊपर अपना आधिपत्य फौसाए हुए  
 है। (मार्कण्डेयपु० ६८ अ०)

पौरवशीय नृपविशेष। ये राजा दण्डगणिके पुत्र  
 थे। मत्स्यपुराणादिमें ये निरामित्र नामसे प्रसिद्ध हैं।  
 ८ महादेव, गिव, १० ऋषियोंका ऋणभूत पाठयुत  
 वेद। निधिगौर देखो। ११ नो की मर्यादा।

निधिगौर ( स० पु० ) निधिमृषोणामृणभूतपाठो वेदन्त  
 गोपयति, गुण-मणु। धनूचान, वह जो वेद-वेदाङ्गमें  
 पारंगत हो कर गुरुकुलमें आया हो।

निधिनाय ( स० पु० ) निधीना नायः। निधिगौरके  
 स्वामी, कुबेर। पर्याय—निधीग, निधीगवर, निधिपत्तु।  
 निधिनाय ( स० पु० ) एक संस्कृतज्ञ पण्डित। इन्होंने  
 न्यायसारसंग्रह नामक एक ग्रन्थ लिखा है।

निधिप ( स० पु० ) निधि-पा-क। धनेश्वर, कुबेर।  
 निधिपति ( स० पु० ) निधीना पति। कुबेर।

निधियाँ ( सं० पु० ) यथाधिपति ।  
 निधिगण ( सं० पु० ) यथेतर, कुवेर ।  
 निधिमत् ( सं० सि० ) धनसुक्त, निमके पाप धन हो ।  
 निधिराम कविवन्द्य—एक विख्यात कवि । ये विष्णु-  
 सुरके राजा गोपालसिंहके समान-पटित थे । इन्होंने  
 बह्मनाभावार्थमें विहित रामायण और महाभारत तथा  
 श्रीमहाभारतके आधार पर गोविन्दमठान, दाताकव्य  
 आदि कई एक छोटे बड़े ग्रन्थ लिखे हैं ।  
 निधिराम गुण—एक स्वभावज्ञान ब्रह्मानी कवि । इनका  
 प्रकृत नाम रामनिधि था । १६६३ गुरुके वैद्ययंत्रमें  
 ये लक्षण हुए थे । १८-इन्द्रिया-कर्मणोके अधीन ये काम  
 करते थे । २०-२६ गुरु अर्थात् १८-३६ ई०में ८४ वर्षकी  
 आयुमें इनका देहान्त हुआ ।  
 निधिराम मर्मा—एक व्यंग्यकार । इन्होंने 'पाषाणमाला'  
 नामक एक संस्करण प्रकाशनाया है ।  
 निधियाँ ( निधियाँ )—१ पद्मनगरके अन्तर्गत एक  
 महानगर । इनके उत्तरमें गोदायरी नदी निजामशासकी  
 सीमा निर्देश करती है, पूर्वमें मियगांव, दक्षिणमें नगर  
 और पश्चिममें राहड़ो है । क्षेत्रफल ४००१२८ एकड़ है ।  
 १६०० ई० में यहाँ लगे थे । १८१८ ई०में यह पंजाबमें  
 सामन्तियोंका हुआ ।  
 कहते हैं, कि प्राचीन हिन्दू राजाओंके समय निधि  
 नाम पदना समुद्रिणो था । यहाँ पत्तक सुमय  
 मनुष्य रहते थे । १४८० से १६३६ ई० तक यह नगर  
 निजामशाही राजाओंके राज्यभूत था । १६३६ ई०में  
 यह मुगलसम्राट् शाहजहाँके राज्य अग्रा । १८वीं  
 सताब्दीमें सिंधाओंके डोच माहुने योमुक्तमें यह स्थान  
 प्राप्त किया । १७४८ ई० तक यह नगर यहाँके  
 महाराष्ट्रोंके ही अधीन रहा । पश्चिमिमय हम नगरको  
 निधियाँ कहते हैं ।  
 १८-१-१८-३ ई०में हीन्दु इमी नगरके मध्य ही  
 यह पूरा जाने जाने से निधियाँ यहाँके लोग निधियाँ  
 पत्तक ही कहे थे । ई०के १८०६ ई० तक दुर्गक भीमराज  
 २६ दिनों अट्टमार महाराज रहे । उनकी मान दुर्गिच मो  
 पद मया, हम यह आर्यादि देग प्रमदय और पत्तकी  
 ही मया । अन्तमें १८१८ ई०में लख यह पंजाबके ही

मया; तस्मि यहाँ चारों ओर प्राणि विराजने लगे ।  
 किमो किमोका कहना है, कि १६३६ ई०में माविह  
 पत्तके 'निधियाँ'को दिल्लीके अधीन कर लिया, किन्तु  
 इस विषयमें कोई प्रमाण नहीं मिलता । यहाँ 'विद्यापीठ'  
 नियम प्रचलित था । कुन राजाको 'तंवा' या  
 'जमाम' और एक याममें जितने जमोग पड़ते थे,  
 उनके वेतकके 'रववा' कहते थे । ग्यारह यामोंमें  
 'मुक्यवन्दी' नियमानुसार मानगुजारी वसूल होती थी ।  
 निधियाँमें तरह तरहके कर वसूल किये जाते थे, जिनमें  
 लोभ बहुत तंग था गये थे ।  
 हम प्रदेशमें निधियाँ, मोगाई, गन्दा आदि बारह  
 गहर हैं । यहाँ तथा पादपावने गहरोंमें बहुतसे  
 तातो रहते हैं । प्रतिवर्ष यहाँमें श्रावणे सुने हुए कपड़े  
 की रफ्तानी होती है । धान्यकी लोभ एक प्रकारका  
 कर्मज तैयार करते हैं ।  
 पद्मनगरमें औरद्वादका रास्ता इमी गहर  
 ही कर गया है । इनके अन्तर्गत एक नगरा रास्ता  
 निधियाँके सिद्धाकेम होना हुआ पेशवाकी अन्त  
 गया है ।  
 २ एक महानगरका एक गहर । यह पथा० १८  
 ३४' ४०' और देगा० ०४' ५०' के मध्य पद्मनगरमें ३५  
 मील उत्तरपूर्वमें अवस्थित है । यह एक टाकथ्य विक्रिया  
 लय है । यह गहर १८०० ई०में बनाया गया है ।  
 निधियाँके पश्चिममायः पाषाणकी दूरी पर एक प्रस्ता-  
 पाषाण देवनेमें जाता है जिसका पेशवा मुठने कम नहीं  
 योगा । ऐसा अनुमान किया जाता है, कि यह मन्दिरका  
 भग्नांग है और ध्यानदेवता स्तम्भ कहलाता है । प्रवाद  
 है, कि ध्यानदेवने इमी स्तम्भ पर देव दे कर मगरीता-  
 की रचना की थी ( १२०१-१३०० ई०में ) । स्तम्भ  
 एक गहरके बीच महीमें गड़ो हुई है । महीके ऊपर  
 इमकी सम्राट् प्रायः ४२ फुट है । इमका विपला  
 भाग विपटा और ऊपर तथा मोक्षका भाग लोच है ।  
 ऊर्ध्व विपटा है, यहाँ एक गिवालिपिमें ही संस्कृत  
 २० और २० कृत लिखे हुए हैं । ०  
 १९८० ई०में महाराष्ट्रकवि ध्यानदेवने निधियाँमें

रह कर भगवद्गीताकी टीका लिखी थी। उसमें उन्होंने लिखा है, कि निवास महाराष्ट्रदेशके मध्य ५ कोस तक फैल कर गोदावरीके समीप चला गया है। उक्त ग्रन्थमें इस स्थानको महालय वा देवताका आवास मतलाया है।

निधिवास ( निवास )के विषयमें और भी कई एक दन्त-कहानियाँ प्रचलित हैं। \* उनमेंसे केवल एक दन्त-कहानी यहाँ देते हैं जिसका विषय स्कन्दपुराणके 'महालयमाहात्म्य'में लिखा है। यह 'माहात्म्य' वहकि अधिवासीके बड़े भादरकी वस्तु है।

महालयमाहात्म्यके मतसे पुराकालमें तारकासुर नामक एक दैत्य था। वह दैत्य ब्रह्माको स्वयसे सन्तुष्ट कर उसके वरके प्रभावसे स्वर्गको चला गया। देव दुर्लभ स्वर्गमें स्थान पा कर वह दैत्य अहङ्कारसे चूर चूर हो गया और देवताओंके प्रति अत्याचार करने लगा यहाँ तक कि उसने धीरे धीरे देवताओंको स्वर्गसे भगाना आरंभ कर दिया। असुरके उत्पातसे देवगण स्थिर न रह सके। वे अनन्योपाय हो कर ब्रह्माको शरणमें पहुँचे। ब्रह्माने उनकी रक्षाके लिये विष्णुका स्मरण किया। स्मरणके साथ ही विष्णु यहाँ पहुँच गये। बाद ब्रह्मासे सब बातें जान कर विष्णुने कहा कि, 'कात्तिकेय शूद्रके औरस और पार्वतीके गर्भसे उत्पन्न हो कर उस दैत्यका नाश करेगे।' फिर ब्रह्माने विष्णुसे पूछा कि, 'कात्तिकेय जन्मकाल तक देवगण कहाँ रहेंगे?' इस पर विष्णु बोले कि 'निवास' नामक एक देश है, वहीं देवताओंके रहनेका स्थान होगा। यहाँ वह दैत्य उनका कुछ भी अनिष्ट नहीं कर सकता। उन्होंने स्वयं निवासका जो वर्णन किया है, वह इस प्रकार है—'विन्ध्य-पर्वतके दक्षिण भागमें गोदावरी नदीके दाहिने किनारे पाँच कोस तक विस्तृत एक तीर्थस्थान है। वहाँ महालयमें वरानदी कलकल शब्द करती हुई बहती है। उस नदीको पूर्वदिशामें असाधारण वैष्णवी शक्तिका वास है।' अनन्तर देवगण उसी निर्धारित स्थान पर जा कर रहने लगे।

महालयमाहात्म्यमें निवासके 'महालय' और 'निधिवास' ये दो नाम रखे गए हैं और यहाँकी नदी प्रवरा, पापहरा और वरा नामसे वर्णित है। सत्कुमारने व्यासके

निकट उक्त नामोंको इस प्रकार व्याख्या की है। व्यासने प्रश्न किया, "महर्षि! इस पुण्य स्थानका नाम 'महालय' और 'निधिवास' क्यों पड़ा? 'प्रवरा' और 'पापहरा' शब्दका व्यवहार क्यों किया गया? एवं नदीका नाम 'वरा' होनेका क्या कारण? यह सब विषय सुनिश्चितता कर मेरे हृदयमें जो मन्दिर है, छापया उसे दूर कीजिए।"

इसके उत्तरमें सत्कुमारने कहा था, "यह स्थान महत् ( देवताओं )का आलय है, इस कारण इसका नाम 'महालय' पड़ा है। जब विशुके-प्रादेशासुरनार देवगण यहाँ रहनेको राजी हुए, तब वे अपनी अपनी सम्पत्ति ले कर-यहाँ आए थे। अनाधिपति कुँवर अपनी नवनिधि ले कर यहाँ रहने लगे और तभीसे वे इसी स्थान पर रहते हैं। "निधिवास" नाम पड़नेका यही कारण है। प्रवरा नदीने देवताओंसे प्रायःना की थी, कि जिससे मैं सुमिष्ट, विष्ट और सबोंको जीवन-रक्षिणी हो सकूँ, वह वर सुनिश्चित देनेकी छपा करे। देवताओंसे यह वर पा कर वह 'प्रवरा' ( अर्थात् सुमिष्ट जलपूर्णा नदी ) नामसे प्रसिद्ध हुई। 'पापहरा' पाप-धोतकारी नदीको और 'वरा' स्वास्थकरजनपूर्णा नदीको कहते हैं।"

महालयमाहात्म्यमें लिखा है, कि पूर्वोक्त वैष्णवी शक्ति निवासकी अधिष्ठात्री देवी है। आज भी ये निवास रक्षाकारिणी देवी कहलाती है। निवासमें वैष्णवी-शक्तिका एक मनोहर मन्दिर है। विष्णुने राहुका संहार करते समय जिस प्रकारको मूर्ति धारण की थी, वैष्णवी शक्तिकी मूर्ति भी ठीक उसी प्रकारकी है।

निधीखर ( सं० पु० ) निधीना ईखरः। कुँवरः। निधुवन ( सं० स्त्री० ) नितरां धुवनं हस्तपदादि कम्पनं यत्र। १ मीथुन। २ नाग, केलि। ३ कम्प। ४ हंसी-उड्डा।

निधुवन—श्रीहृन्दावन-धाममें स्निग्ध तीर्थविशेष। श्लोच्यं राधिका; हृन्दा प्रादि सखियोंके साथ यहाँ विहार करते थे। इनका प्रादि नाम हृन्दावण्य वा हृन्दाकुञ्ज है। अभवतः हृन्दावण्य नामसे हृन्दावन नामकी उत्पत्ति हुई है। इस उद्यानमें कृत्रिम सुन्ना और पत्तारागका पेड़ है।

प्रवाद है, कि श्रीराधिकाजै कल्पमे प्रज मविमुखाके प्रम-  
 हार मीने से, मय प्रभोने मावायोगने मणि पोर मुखा-  
 से मुषको छट्टि की थी। इसी पपरिमित पोर समुत्प-  
 निधिने कारण यह निपुवन नामसे मगहर है। श्रीकृष्ण-  
 ने मङ्गल वा कर पेटमें हाथ बाँडा था, पैसा प्रवाद है  
 पोर से श्रीराधिकाका न पुर से कर एक पैदा पर द्विप रद  
 है, इस कारण कुछ पैदोमें न पुराकृतिके फल देवे जाते  
 है। यह मन माराधकभाहने पाविष्कृत श्रीराधो बनके  
 प्रमाणत है।

निष्पत्ति ( मं० पु० ) छविपुत्रभेद, छविने एक पुत्रका  
 नाम।

निपेय ( मं० वि० ) निःधा-यत्। ख्याय, स्थापन करने  
 योग्य।

निधीसी—गुरुप्रदेगके पटा निसेके प्रमाणत एक घाम।  
 प्रजापितादके नयाबके राजन-रामधारी सुमानसिंहने  
 यहाँ एक दुर्ग बनवाया था जिसका पंचदश पात्र भो  
 मप्रार जाता है। यह स्थान नील पोर दरईके कारवार-  
 के निसे प्रसिद्ध है।

निष्याम ( मं० स्त्री० ) निःशो-उपुट। १ देगंन, देवना।  
 २ निदमंन।

निधुय ( मं० पु० ) गोत्र प्रवर्तक षटविभेट।

निधुवि ( मं० वि० ) निरारि भ्रुवति भ रचये कि। १  
 क्के व्योम्बिन, शिवरनामुक, निरमे बधनतान हो। (पु०)  
 २ एक काणव। कात्यायनके पात्रे दामुकमदिकारि मने  
 ये मगम मङ्गलके ११ छुटके शयि थे।

निध्यान ( मं० पु० ) धन मन्दे निःधन-धम। मङ्गलमात्र।  
 निमद् ( मं० वि० ) मट, मिच्छ, नय मन्, 'सनायंस-  
 मित छट्टः' इति मन्काट्टः, ततो शुम्। माग कानिमें  
 बसाक।

निन्द ( मं० पु० ) निःनद पन् ( नीतरवरदरकर) वा  
 ३३। (पु०) १ मन्द, पावात्र। २ रघुपुत्रमन्द, पारपाष्ट।

निन्दु ( मं० स्त्री० ) रघुपत्नी, मरा दूपा बट्टका।

निन्द ( मं० स्त्री० ) मरता, लोभाई, पात्रलो।

निन्दन ( मं० स्त्री० ) निःशो-उपुट। १ निपादन। २  
 पंचांगके नामके कुम्भके पदको शब्दो वा डिक्कनेवा  
 शब्द।

निनरा ( हि० पु० ) न्याग, पन्म, सुदा, दूर।

निनरं मन् ( मं० पु० ) देवयथा सबभई एक पुत्रका नाम।

निनद ( मं० पु० ) नि नद भावे-धनः। यदमन्दको  
 पचाररभेद।

निनाद ( मं० पु० ) निःनद पणे पत्र। मन्दमात्र,  
 पावात्र।

निनादि ( मं० वि० ) निनाद पन्म मन्नाता आरकादि-  
 त्वादितत्। मन्दि, धनित।

निनादिन् ( मं० वि० ) निनद-विनि। निनादकारी,  
 मन्द करनेवाला।

निनाम ( हि० वि० ) १ विन्दुन, एकदम, घोर। २ निनट,  
 सुरा।

निनार ( हि० वि० ) निना देवो।

निनारा ( हि० वि० ) १ मिथ, ग्यारा, जुदा, पलन। २  
 दूर, दटा दूपा।

निनारा ( हि० पु० ) जीम, मसुङ्गे तथा सुंठके भीतरके  
 पोर भागमें निरुक्तनेवासे महीन महीन मान दाने  
 निरमें कदावाष्ट पोर जोड़ा होती है।

निनारी ( हि० स्त्री० ) १ यह मसु जिमका नाम निना  
 पद्यम या सुरा समझा जाता हो। २ सुङ्गेक, भुगमी।

निनांक्य ( मं० पु० ) नोकेतोद्या भूतो निवगणोयः निःनद  
 कर्मणि ख्यात्। भूमि पर पगणोय मानिक।

निनिह ( मं० पु० ) निन्दितुमिच्छः, निन्दि-मन्-उ, वेदे  
 निवातनात् मायुः। निन्दा करानिमें रच्छक, लो निना-  
 यन करमा पाहता हो।

निनिभि ( Ninereh )—ऐतिहासिक जगत्में एक पायल  
 प्राचीन नगर। यह तारपीम मन्को पूर्व जिनादे पोर  
 यत्मान सुमन राजधानीके दुरदे जिनादे पारदित था।  
 १८वीं शताब्दीके पहले यहाँ पाषाणय राजापीकी राज-  
 धानी थी। उस समयके वादिकको स्थिति, मट्टादिका  
 कोन्द्वे पोर कादकार्य देवनेमे मान्यम पदका है कि  
 एक समय दक्ष मन्दिमाको नगर था। उस समय  
 इसकी मन्को पोर चोङ्केका विस्तार पाठ मीन था।  
 राजधानी दुर्गमें सुरचित थी पोर पदुमंशक बलिब,  
 प्यरमदको कामनाये देहा रचने थे। जब योनम् बन्-  
 रावनेके राजा श्रीकोयमे पाटिल हो कर यहाँ पावे से।

तब चन्द्र नगर प्रदक्षिण करनेमें तीन दिन लगे थे। इसके बाद दिवदोरस सिकुलस (Diodorus Siculus) जिस समय यहाँ आए, उस समय इसकी चतुःसोमा ४० मील थी और वीमान्तपदेश १०० कुट उच्च प्राचीरसे विर। था। उस विरहृत प्राचीरके बीच बीचमें कुल १५०० बुर्ज थे। प्राचीरके प्रत्येक विषयमें उनका यह भी कहना है, कि उसके ऊपर तीन गाड़ी एक साथ बसुवैधे पा जा सकते थीं। ६७० ई० सन्के पहले अश्विरीय-राज सादिनेपलुसके राजत्वकालमें प्रदक्षिण अनेक अनुशासन् लिपियाँ पाई जाती हैं। उन अनुशासनमें अधिकांश अभी यूरोपखण्डमें विद्यमान हैं।

६६६ ई० सन्के पहले बालिलन, इजिप्ट, सिडिया, धर्मपिया आदि स्थानोंके राजाओंने मिल कर इस नगर पर आक्रमण किया था। निनिमिराज प्रसुर-द्विकीने राजमासादमें भाग लगा कर सपरिवार जीवन विपन्न किया। इसी समयसे निनिमिके अधःपतनका अधःपात आरम्भ हुआ, यहाँके अधिवासी प्रसुर, निनी और उनकी सधर्मिणो समेत, निरीदचकी तथा उनको पत्नी जिशात्षणित, हस्तार, निर्गल, निनिप, वल, अण और द्विय नामक देयताओंकी पूजा करते थे। इनके पुस्तकागारमें कोषाकार अक्षरोंमें लिखित जली हुई भट्टोनी अनुशासनलिपि पाई गई है। उस समय इनका धर्म, विज्ञान, भाषा और लिखन-प्रणाली वादि-सोनियो-सी थी।

यह नगर इतना तहस नहस हो गया कि इसका विषय धँदनेसे ही आश्चर्य खाना पड़ता है। समय साहसने इस स्थानके परिदृश नन कालमें अनुमान किया था, कि यहाँ शायद १०००० मिलालिपियाँ होंगे। वस्तु-मान समयमें सत्तिका-स्तूप छोड़ कर और कुछ भी प्राचीन नगरका स्मृतिचिह्न रह न गया है।

निनीया (सं० स्त्री०) नेतुमिच्छा; नी-सन्-अप, टाप, एक स्थानसे दूसरे स्थानमें ले जानेकी इच्छा।

निनीयु (सं० स्त्री०) नेतुमिच्छुः, नी सन्-उ। नयनेच्छ, ले जानेका अभिसाधो।

निनीना (हिं० किं०) भुक्ताना, नवाना, नोषे करना।

निनीरा (हिं० पुं०) नाना वा नानीका घर। यह स्थान जहाँ नानानानीका यास हो।

निन्दक (सं० स्त्री०) निन्दति तच्छीलः; निदि कुसायां वुज (निदिहिष्ठेति। पा ३।२।१४६) निन्दाकारी, दूसरोंके दोष या बुराई कहनेवाला।

“न भाराः पर्वता भारा न भाराः सहस्रेभारः।

निन्दा हि महामारा भारा विरवासपातघः ॥”

(कर्मलोचन)

पृथ्वीके लिए पर्वत वा समसागर भार नहीं है, किन्तु विश्वासघातक वा निन्दक महाभार है। पृथ्वी इसका भार सहन नहीं कर सकती।

निन्दतल (सं० स्त्री०) निन्दं निन्दाइं तलं हस्ततलं यस्य। निन्दितहस्त।

निन्दन (सं० स्त्री०) निदि कुसायां भावे ल्य, ट, निन्दा, बुराईका वर्णन।

निन्दनीय (सं० स्त्री०) निदि-अनियर, १ निन्द्य, निन्दा करने योग्य, बुरा कहने काबिल। २ गर्ह्य, बुरा।

निन्दा (सं० स्त्री०) निन्दनमिति निदि-अ, (पुण्ये हलः। पा ३।१।१०३) १ अपवाद, दुष्कृति, वदनामो, कुख्यापि। पर्याय—निन्दन, अवर्ण, आक्षेप, निर्वाद, परोवाद, अपवाद, उपक्रोश, लुगुप्सा, कुत्सा, गर्हण, धिक्किया।

जहाँ गुरुका परोवाद अथवा निन्दा होती हो, उस जगह खड़ा नहीं रहना चाहिये, अगर खड़ा रहे भी तो दोनो कान मूढ़ ले। निन्दा और परोवादमें भेद यह है, कि जो दोष उसमें नहीं है, वो सब दोष उस पर लगा कर दूसरेके सामने कहनेकी निन्दा और जो दोष वास्तवमें है उसके कथनको परोवाद कहते हैं। कुछ कने अपनी व्याख्यामें शक है, कि विद्यमान दोषके अभिधानको परोवाद और अविद्यमान दोषके अभिधानको निन्दा कहते हैं।

द्वैता और द्विज आदिकी निन्दा महापापजनक है। इसका विषय ब्रह्मवैवर्तपुराणमें इस प्रकार लिखा है—

गिव और विष्णुके भक्त, ब्राह्मण, राजा, निज गुरु, पतिव्रता स्त्री, यति, भिक्षु, ब्रह्मचारी और देयता इनकी निन्दा नहीं करनी चाहिए; करनेसे जब तक चन्द्र सूर्य रहेगी, तब तक कालसूत्र नामक नरकको भोग होता है। वहाँ दिवारात्र श्रेष्ठा, मृत और पुरीव



पर मोता पड़ता है। जोड़ें मकोड़ें समझे चंग  
मन्त्रं सति ईं चोर इममे मह चदुत व्याकुल को कर  
भीकार करता है।

देवादिदेव मिथ, दुर्गा, मन्त्रो, मरगनी, मोता,  
गुणधो, गङ्गा, वेद, मधो वन, तपस्या, पुत्रामय, मय्य  
प्रठ पुठ इन मयको जो निम्ना करते हैं, वे विधाताको  
पामावुके चरैकान तव चरार्द्र गार्कमें पतित होत  
हैं चोर मयंमनुसमे भविन को कर चोर मय्य करते हैं।

जो दुर्घोरेमको चय्य देवतावेकें माय समान मानते  
हैं चोर राधा तथा तदुद्रजा गोविणों चोर मद्राद्रादीनी  
निम्ना करते हैं, वे चवठ न मरु तरकमें मटाके निवे  
माम करते हैं। इस नार्कमें रह कर लये' छोषा, गुज  
चोर पुण्य वासा पड़ता है।

परनिम्ना माय को दूयपीय है, इस कारण पर-  
निम्नाया माय काया मयंमोभायमे लक्षम है। केवल  
चरनी निम्ना कामेंम यम प्राप्त होता है।

(अप्रैरुर्न पुत्रा मीरुणयन ४०४१ वः)

कोमं उपपुराकमें निरा है, कि जो मंठ, देव चोर  
प्राप्तावनी निम्ना करते हैं उनका मुण देवनेमे वाप  
होता है। चरना मगंगा, वेदेनिम्ना चार दिवनिम्नाका  
यवगुणक वरिवाग करना चाहिये।

जहां पर सखनेको निम्ना होती हो, उस स्थान पर  
किसी हानकमें उतरना न चाहिये चोर यदि ठहर मो  
जाय तो पुत्र रहना को लियत है। माधुनिम्नाके मम-मु-  
नार भूम कर माय चयनग चाहिये।

निम्नाकर (मं० ति०) करोमीति ल-पव, निम्नाया  
करा। चययाटक, निम्ना करमियात्ता, दूमके दीप या  
गुाई करमियात्ता।

निम्नास्वित (मं० ति०) निम्नाया चस्वितः। निम्नादुक्त,  
निम्नित, नुरा।

निम्नावादात् (मं० पु०) निम्नादोर्वादात्। मोमा-  
ककोमे ममादुमार चयवादि मीट।

निम्नाहं (मं० ति०) निम्नमेग, निम्नाहे दीप्य।

निम्नास्ति (मं० ति०) निम्नाया स्तिः। व्याजस्ति,  
निम्नाहे चयनी स्तुति।

निम्न (मं० ति०) निम्ना-चय जासा, इति। निम्नादुक्त,

मिथे नोग नुरा कहते हैं। पर्याय—धिकूलन, चरनेन,  
निर्मिसित।

“अनु वररि मुद्राया प्रगतं नेव परति।

चरोति निश्चिं चतं मरवाप विमैति च ॥”

(देवीभाग ४:३४८.)

मास्त चोर नोकाचारमें जो विहित मनों है, उन्हें  
निम्नित करते हैं। चहितमोजन चोर प्राप्ताव कर्तक  
मुद्राका प्रतिपक्ष ये मय निम्नित मद्र्याया है।

निम्नित्य (मं० को०) निम्न-तय्य। निम्नोगी।

निम्निय (मं० ति०) निदि, कुत्राया यव। निम्नाकारक,  
दूममोर् दीप या नुराई कहनेवाला।

निम्नित् (मं० ति०) निम्न इति। निम्नाकारो।

निम्नु (मं० को०) निम्नातेऽप्रस्त्येवासो निदि कुत्राया  
चोवादिह व। न्यत्रयमा, तव चोरत निमके मस्ताम  
ही पर मर मर जानी हो।

निम्य (मं० ति०) निम्नयन्। १ निम्नोग्य, निम्ना  
करनेयोग्य। २ प्रवित, नुरा।

निम्यता (मं० को०) निम्यस्य भावः निम्य-तनः टय।  
निम्नोग्यता, दूययोग्यता।

निम्यानये (दि० वि०) १ नम्ये चोर मो, जो मंल्यामें  
एक कम मो हो। (पु०) २ नम्ये चोर मोको मंल्या, ८८।

निम (सं० पु० को०) निपतं विचल्येन नि वा चप्रवे क।  
१ कनय। (पु०) मोप प्रयोदगादित्यात् मापुः। २  
कदम्बलक।

निपयति (मं० को०) मोवः पक्षति। घोड़ीको दाहिनी  
चयन की तरफ हटियोगेमे दूमरो कट्टी।

निपट (दि० चय०) १ निपट, सामी, निरा। २ निताना,  
एकदम, विषदुम।

निपटता (दि० जि०) विरटना देखी।

निपट निपटननामो—उक्त कवि। रमका जय्य १५८१  
ई०में हुआ था। निपतिवके मतमें ये दूममोदावके  
जैसे निष्ठायात् धार्मिक है। ‘माता-मरयी’ चोर ‘निपटन’  
नामक दो चरनेके निवा हमके कनापि दूय चोर मो छोटे  
छोटे हिन्दोपय चय्य वाते जानें है।

निपटाना (दि० ति०) निराना देगी।

निपट रा (दि० पु०) निरारा देगी।

निपाटावा ( हि० पु० ) निघंटेवा देखो ।

निपटेरा ( हि० पु० ) निघंटेरा देखो ।

निपठ ( सं० पु० ) निपठनमिति नि-पठ-अप् ( नौ गरन-पठवना । पा ३।३।६४ ) पाठ, अध्ययन ।

निपठित ( सं० त्रि० ) नि-पठ-क्त । जो पढ़ा गया हो ।

निपठित्त्वं ( सं० त्रि० ) नि-पठितमनेन इष्टादित्वात् कर्त्तरि इनि । छतपाठ, जो पढ़ा गया हो ।

निपतन ( सं० क्ली० ) नि-पत-अद्युट् । निपात, अध-पतन, गिराव ।

निपतित ( सं० त्रि० ) नि-पत-क्त । पतित, गिरा हुआ ।

निपत्यरोहिणी ( सं० स्त्री० ) निपत्य रोहिणी रोहितवर्णा स्त्री मयूरवः । निपत्यरोहितवर्णा स्त्री ।

निपत्या ( सं० स्त्री० ) निपतत्यस्वामिति, नि-पत-अप, तप्तटाप । ( संभार्यां समञ्जनिपदनिघण्टे । पा ३।३।२८ )

१ युवभूमि । २ विच्छिन्नाभूमि, गोले चिकनी जमीन ऐसो भूमि जिस पर पैर किसले ।

निपरन ( सं० क्ली० ) निपिहं परणं प्रीतिः नि-पु-प्रीतो भावे व्युट् । प्रीत्यभाव, प्रीतिका अभाव ।

निपन्नाय ( सं० त्रि० ) निपतितं पन्नायं यस्य । निपतित पत्र ।

निपाक ( सं० पु० ) नियमेन पचनमिति नि-पच-अञ् । पाक ।

निपात ( सं० पु० ) नि-पत-भावे घञ् । १ पतन, पात, गिराव । २ श्रुत्य, ज्ञय, नाग । ३ अधःपतन । ४ विनाय । ५ शाब्दिकीं मतसे वह शब्द जिसके बननेके नियमका पता न चले अर्थात् जो व्याकरणमें दिए नियमोंके अनुसार न बना हो ।

निपातन ( सं० क्ली० ) निपात्यतेऽनेनेति नि-पत-णिच्, कार्ष्णि व्युट् । १ मारण, वध करनेका काम । २ गिरानेका काम । ३ अधोनयन । पर्याय—प्रवनाय, निपातन । ४ व्याकरणके लक्षण द्वारा अनुत्पन्नपदसाधन, व्याकरणके नियमके प्रतिकूल, व्याकरणका पदसिद्ध करनेके किये सूत्रोक्त जो सब नियम हैं, उनका अतिक्रम कर पदसाधन ।

जो सब पद व्याकरणके लक्षण द्वारा साधित नहीं होते वे सब पद निपातप्रयुक्त सिद्ध हुए हैं ।

निपातप्रयुक्त पदसिद्ध करनेमें किसी किसी वर्णका आगम और कहीं वर्णविकार अथवा वर्णनाश करना होता है ।

निपातना ( हि० क्लि० ) १ गिराना, नीचे गिराना । २ नष्ट करना, काट कर गिराना । ३ वध करना, मार गिराना, मारना ।

निपातनोय ( सं० त्रि० ) नि-पत-णिच् अनीयत् । निगतनं उपयुक्त, वध करने योग्य ।

निपातित ( सं० त्रि० ) नि-पत-णिच्-क्त । अधोनीत, जो नीचे फेंक दिया गया हो ।

निपातिन् ( सं० पु० ) निपातः अद्यास्ति इनि । १ महादेव । ये सभीका निपात अर्थात् नाग करते हैं, इस कारण इनका यह नाम पड़ा है । ( त्रि० ) २ गिरानेवाला, फेंकनेवाला, चला देनेवाला । ३ घातक, मारनेवाला ।

निपातो ( हि० वि० ) निपातिन् देखो ।

निपाद ( सं० पु० ) निष्कष्टो न्यग्भूतो पादोयत्र । निष्प्र-प्रदेश ।

निपान ( सं० क्ली० ) निप्रीयतेऽस्मिन्निति । निपा-आधारे ल्युट् । १ कुएँके पास दीवार घेर कर बनाया हुआ कुण्ड या खोदा हुआ गड्ढा । इसमें पशुपक्षी आदिके पौनिक लिए पानो इकट्ठा रहता है । २ गो-दोहन पात्र, दूध दुहनेका बरतन । ३ तालाब, गड्ढा, खुत्ता ।

“परकीय निगनेषु न स्नायाच्च कदाचन ।

निपानकर्तुः स्नात्वा च दुष्कृतांगेन विष्यते ॥”

( मनु ५।२०१ )

‘निपिवन्परिभ्रमतो वेति निपानं जलापयः’

( मेघातिथि )

यहाँपर निपान शब्दका अर्थ जलापय मात्र है । दूसरेके निपानमें कदापि स्नान नहीं करना चाहिये, करनेसे निपानकर्त्ताका चौदाई पाप निजमें चना जाता है । नि-पा भावे-क्त । ४ निःशेष पान ।

निपानो—बम्बई प्रदेशके बेलगाँव जिलेका एक नगर । यह अक्षां १६° २४' उ० और देशां ७४° २३' पू० बेलगाँव शहरसे ४० मील उत्तरमें अवस्थित है । जनसंख्या प्रायः ११६३२ है । यह शहर १८२८ ई०में अंगरेजोंने

जनन विद्य, जेसे १८५२ ई. में इतिहासग्रन्थ की मया है। यहाँका बाणिज्य व्यवसाय लोगों में चलता है। यहाँमें कुल ३ स्कूल हैं।

निरीदक (सं० वि०) निरीदकमोति निरीदक वाच । १ निरीदककारी, पोड़ा देनेवाला । २ निबोड़नेवाला । ३ धर्मवाला ।

निरीदक (सं० वि०) निरीदक भावे श्पट् । १ कट पट्टादि वा पोड़ित करनेका कार्य, तकसोक देना । २ पमेय निवृत्तता, वसना । ३ घिसना, घेर कर निकालना । ४ मलना, टपना ।

निरीदित (सं० वि०) निरता पोड़ित, निरीदक । १ निरीदित, जिसे पोड़ा पट्टादि गई हो । २ पात्राका । ३ टपाया हुआ । ४ घिसा हुआ, निरीदक हुआ ।

निरीत (सं० वि०) वा-कर्मणि ल, निःसिच्येण पीतं वा पात्रमद्वारमोति चार्गादित्वाच् । निःसिच्येण पीत, जो पानिरमें पोया गया हो ।

निरीति (सं० स्त्री०) निःसिच्येण पात्र ।

निरीतमान (सं० वि०) जो पोया जा रहा हो ।

निवृत्ता (सं० स्त्री०) चोपना, उधारना ।

निवृत्त (सं० वि०) वृत्त रागोक्तदि नि-वृत्त-क । १ कार्य-समाप्त, कार्य करनेमें पट्ट । पर्याय—प्रवीण, अभिप्रा, विघ्न, निवृत्त, निवृत्त, वैज्ञानिक, कर्मसुप्त, ज्ञानी, कुशल, संन्यासाशु, संतिमान्, कुशाचोद्योगिन, जटि, विदुर, कुप, रघु, मेदिनि, जगदी, सुधी, विद्यान्, कलकमां, विथ सप्त, विद्वान्, सुदुर, मोक्ष, मोक्षा, विगारद, सुमेधा, सुमति, तीक्ष्ण, प्रेक्षाशान्, विदुष, रिदन्, विद्यानिष्ठ, कुशली । (पु०) २ विद्वान्, वेद, एकोम ।

निवृत्तता (सं० स्त्री०) निवृत्तत्व भावः, नि-वृत्त-तन्-टात् । दयता, कुशलता, पट्टता, अभिप्राता, पार-टिनीता ।

निवृत्तिका (सं० स्त्री०) निवृत्तत्व भावः, नि-वृत्त-तन्-टात् । दयता, कुशलता, पट्टता, अभिप्राता, पार-टिनीता ।

निवृत्ती (सं० स्त्री०) निवृत्तत्व भावः, नि-वृत्त-तन्-टात् । दयता, कुशलता, पट्टता, अभिप्राता, पार-टिनीता ।

निवृत्त (सं० पु०) निवृत्तत्व भावः, नि-वृत्त-तन्-टात् । दयता, कुशलता, पट्टता, अभिप्राता, पार-टिनीता ।

निवृत्त (सं० पु०) निवृत्तत्व भावः, नि-वृत्त-तन्-टात् । दयता, कुशलता, पट्टता, अभिप्राता, पार-टिनीता ।

निवृत्ता (सं० स्त्री०) निवृत्तत्व भावः, नि-वृत्त-तन्-टात् । दयता, कुशलता, पट्टता, अभिप्राता, पार-टिनीता ।

निवृत्त (सं० पु०) निवृत्तत्व भावः, नि-वृत्त-तन्-टात् । दयता, कुशलता, पट्टता, अभिप्राता, पार-टिनीता ।

निवृत्त—१ यम्यके नाविक निवेका एक तालुका । यह पचास १८ ५१' में २०° १४' उ० और दैर्घ्य ७२° ४५' में ७४° २०' पूर्व में स्थित है । भूविस्तीर्ण ४१२ वर्ग मील और जनसंख्या प्रायः ८२०८१ है । इसके उत्तरीमें पन्डोर, पूर्वमें येवना पोर कोयना, दक्षिणमें नितार तथा पश्चिममें दिन्दोरो पोर नाविक-मण्डल है । यहाँको जमीन बिलकुल काली होती है । यहाँका जनवायु ग्वायकर है । किन्तु योवनाजमें पसल, व गरमो पड़ती है । गोदावरी तालुकके मया हो कर बह गई है ।

२ एक तालुकका एक गहर । यह नाविक नगरसे २० मील उत्तारपूर्वमें अवस्थित है ।

निवृत्तता (सं० स्त्री०) १ इस पारमें उत्त पार तक हेट करना, पार पार करना, शिथल । २ इस पारमें उत्त पार निकालना । ३ उद्वारित करना, खोलना, पट्ट करना, माक करना ।

निवृत्तत्व (सं० स्त्री०) हटि, टपना ।

निवृत्त (सं० स्त्री०) निवृत्तत्व भावः, नि-वृत्त-तन्-टात् । दयता, कुशलता, पट्टता, अभिप्राता, पार-टिनीता ।

निवृत्त (सं० पु०) निवृत्तत्व भावः, नि-वृत्त-तन्-टात् । दयता, कुशलता, पट्टता, अभिप्राता, पार-टिनीता ।

निवृत्त (सं० पु०) निवृत्तत्व भावः, नि-वृत्त-तन्-टात् । दयता, कुशलता, पट्टता, अभिप्राता, पार-टिनीता ।

निवृत्त (सं० पु०) निवृत्तत्व भावः, नि-वृत्त-तन्-टात् । दयता, कुशलता, पट्टता, अभिप्राता, पार-टिनीता ।

निवृत्त (सं० पु०) निवृत्तत्व भावः, नि-वृत्त-तन्-टात् । दयता, कुशलता, पट्टता, अभिप्राता, पार-टिनीता ।

होना । ४ निर्णीत होना, अनिश्चित दायमं रह न जाना ।  
 ५ चुकना, रह न जाना ।  
 निघंटाना ( हिं० क्लि० ) १ समाप्त करना, पूरा करना,  
 खतम करना । २ निर्णीत करना, भंगभट्ट न रखना,  
 तै करना । ३ भुगताना, चुकाना, चेबाक करना ।  
 निघटाव ( हिं० श्लो० ) १ निघटनेकी भाव या क्रिया,  
 निघटेरा । २ निर्णय, भंगभट्टेका फौसला ।  
 निघटेरा ( हिं० पु० ) १ निघटनेका भाव या क्रिया,  
 कुट्टो । २ समाप्ति । ३ निश्चय, भंगभट्टेका फौसला ।  
 निघड़ा ( हिं० पु० ) एक प्रकारका बड़ा घड़ा ।  
 निघड़ ( सं० त्रि० ) १ वड़, बंधा हुआ । २ निरुद्ध, रुका  
 हुआ । ३ प्रथित, गुंथा हुआ । ४ निवेशित, बँठाया  
 हुआ, जड़ा हुआ ।  
 निघड़ ( हिं० पु० ) वह गीत जिसे गाते समय चन्द्र,  
 तालमान, गमक, रस आदिके निघर्मोंका विशेष ध्यान  
 रखा जाय ।  
 निघन्ध ( सं० पु० ) निघन्धातीति निघन्ध-घञ् । १ भानाह-  
 रोग, पेगाव बन्द होनेकी बीमारी, करक । २ ग्रन्थकी  
 हृत्ति, पुस्तककी टीका । ३ निघन्धञ्च, नीमका पेड़ । ४  
 वन्धन । ५ संग्रहग्रन्थभेद, द्रव व्याख्या जिसमें अनेक  
 मतोंका संग्रह हो । ६ लिखित प्रबन्ध, लेख । ७ काल  
 विशेषसे देय रूपमें प्रतिश्रुत वस्तु, किसी तीर्थादिमें वा  
 पुण्यदिनमें 'तुम्हें यह वस्तु दे' ऐसा प्रतिश्रुत द्रव्य,  
 वह वस्तु जिसे किसीकी देनेका वादा कर दिया  
 गया हो । ( श्लो० ) निघर्ता वन्धः ताललयादि सञ्चित  
 वन्धनं यत्र । ८ गीत ।  
 निघन्धदान ( सं० श्लो० ) निघन्धस्य दानं । धनसमर्पण,  
 द्रव्यसमर्पण ।  
 निघन्धन ( सं० श्लो० ) निघन्धातेऽनेनादिभन् वा नि-घन्ध-  
 ल्युट् । १ हेतु, कारण । २ उपनाह, धीपा वा  
 सितारकी खूँटी, काम । ३ प्रान्थि, गाँठ । ४ वन्धन,  
 नियम, बाधस्था । ५ ग्रन्थ, पुस्तक । निघन्धातेऽनया  
 करणि ल्युट् । ६ निघन्धसाधन ।  
 निघन्धनक ( सं० त्रि० ) निघन्धनं तत्समीपदेशादिः  
 चतुरर्थ्यां क । निघन्धनसमीप देशादि ।  
 निघन्धना ( सं० श्लो० ) १ वन्धन । २ बँड़ी ।

निघन्धसंग्रह ( सं० पु० ) ग्रन्थसूची एक टीका ।  
 निघन्धिन् ( सं० त्रि० ) निघन्धकारी ।  
 निघन्ध ( सं० पु० ) निघन्धर्ता, ग्रन्थकर्ता, टीकाकार ।  
 निघन्धित ( सं० त्रि० ) निघन्धोऽप्युक्तः, तारकादि-  
 त्वादित्च । वड़, बंधा हुआ ।  
 निघर ( हिं० वि० ) निघट देखो ।  
 निघरना ( हिं० क्लि० ) १ बंधो फँसी, या लगी वस्तुका  
 भंगन होना, छूटना । २ सुत होना, उधार पाना । ३  
 उलभन दूर होना, सुलभना । ४ खतम होना, जाता  
 रहना, दूर होना । ५ चवकाश पाना, कुट्टो पाना, फुरसत  
 पाना । ६ समाप्त होना, भुगताना, सपरना । ७ निर्णय  
 होना, तै होना, फौसला होना । ८ एकमें मिलो लुनो  
 वस्तुओंका भंगन होना, हिलग होना, छूटना ।  
 निघर्ष्य ( सं० श्लो० ) निघर्षते इति नि-घर्ष-ल्युट् ।  
 मारण, नष्ट करनेकी क्रिया या भाव ।  
 निघर्ष ( हिं० पु० ) निघट देखो ।  
 निघर्षना ( हिं० क्लि० ) १ छुटकारा पाना, कुट्टो पाना,  
 निकलना, पार पाना । २ किसी स्थिति, सम्बन्ध आदिका  
 लगातार बना रहना, निर्वाह होना, बराबर चला चलना ।  
 ३ किसी बातके अनुसार निरन्तर व्यवहार होना, चरि-  
 ताय होना, पालन होना, पूरा होना । ४ बराबर होता  
 चलना, पूरा होना, सपरना ।  
 निवाज ( नवाज )—हारवशीय एक ब्राह्मण सन्तान । ये  
 एक सुप्रसिद्ध और कवि थे । १६५० ई०में इन्होंने जय-  
 ग्रहण किया था । ये पर्षाके हुन्देलाराज कन्नगालके  
 सभासद थे । आजमगढ़के कहनेसे इन्होंने शकुन्तला-  
 नाटकका हिन्दी भाषामें अनुवाद किया है । निवाज  
 नामक एक मुसलमान तांतो भी था । लोग कभो कभो  
 भ्रममें पड़ कर इन्हें ही निवाजतांतो समझते हैं । किमो  
 किसीका कहना है, कि पूर्वोक्त निवाज ही अन्तमें सुवर्न-  
 मान धर्मावलम्बी हुए थे । यैपोक्ष मुसलमान निवाजका  
 लक्ष हरदोई जिलेके बिलग्राममें १७४० ई०की हुआ था ।  
 निवाजर्द—बङ्गालके २४ परगनेके अन्तर्गत एक गण्ट  
 ग्राम । यह कलकत्तेसे १८ मील दूर दत्तपुत्र स्टेशन-  
 के निकट अवस्थित है ।  
 निबारी—घासामके अन्तर्गत गारोपहाड़ जिलेका एक

इन्द्रगत क्रिया, पोछे १८७२ ई० में छटिगराज्यभूक्त हो गया है। यहांका याचिज्य व्यवसाय जोरोंसे चमत्ता है। शहरमें कुल ३ स्कूल हैं।

निपीडक (सं० त्रि०) निपोड्यतीति नि-पोड् ग्लुञ् ।  
१ निपोडनकारी, पीड़ा देनेवाला । २ निचोड़नेवाला ।  
३ घेरनेवाला ।

निपोडन (सं० त्रि०) निपोड् भावे ल्यट् । १ कट पट्टु चाने या पोडित करनेका कार्य, तकलीफ देना ।  
२ पमेश निकालना, पसाना । ३ घेरना, घेर कर निकालना । ४ मत्तना, दत्तना ।

निपोडित (सं० त्रि०) नितरां पोडितः, नि-पोड्-त्त । १ निपोडित, जिसे पोड़ा पट्टु चार्डि गई हो । २ धाक्रान्त ।  
३ दयाया हुआ । ४ घेरा हुआ, निचोड़ा हुआ ।  
निपोत (सं० त्रि०) पा-कर्मणि क्त, नि-शेषेण पीतं वा पानमस्याप्तोति पशोदित्वाच् । नि-शेषमें पीत, जो पाशिरमें पीया गया हो ।

निपीति (सं० स्त्री०) नि-शेष पान ।  
निपीयमान (सं० त्रि०) जो पीया जा रहा हो ।  
निपुडना (हिं० क्ति०) खोलना, उघारना ।

निपुण (सं० त्रि०) पूण राशीकरणे नि-पुण-क । १ कार्य-क्षम, कार्य करनेमें पट । पर्याय—प्रबोध, चमिन्न, विद्वान्, निष्णात, विदित, वैज्ञानिक, क्षतसुख, क्षणो, कुशल, संन्यावान्, संतिमान्, कुशाघोधमति, क्षुष्टि, विदुर, युध, रच, नैटिठ, क्षतधो, सुधी, विद्वान्, क्षतकर्मा, विचक्षण, विदग्ध, चतुर, प्रोढ़, बोधा, विगारद, सुमेधा, सुमति, तीक्ष्ण, प्रेक्षावान्, विबुध, विद्वत्, विज्ञानिक, कुम्भी । (पु०) २ चक्रियक, बंध, हकीम ।

निपुणता (सं० स्त्री०) निपुणस्य भावः, नि-पुण तत्त्वात् । दक्षता, कुशलता, पटता, चमिन्नता, पारदर्शिता ।

निपुणिका (सं० स्त्री०) विक्रमोर्ध्वी नाटकोक्त एव परिचारिका ।

निपुती (हिं० वि०) निःसन्तान, निपुता ।

निपुर् (सं० पु०) निष्कटं पूर्यते पृ कर्मणि क्तिर ।  
निष्कट, सूक्ष्म शरीर । भक्षित पचवगनादि द्वारा बहुत सूक्ष्म रूपमें यह शरीर पूरा होता है, इस कारण इसका निपुर् नाम पड़ा है ।

निपुता (हिं० वि०) अपुन, जिसे पुत्र न हो ।

निफरना (हिं० क्ति०) १ सुभङ्ग या धंस कर दस पारसे उस पार होना, छिद कर पारपार होना । २ उषा-टित होना, खुलना, साक होना, प्रकट होना ।

निफला (सं० स्त्री०) निवृत्तं फलं यस्यः । ज्योति-भती लता ।

निफाक (सं० पु०) १ विरोध, द्रोह, खेर । २ मीद, फूट, विगाह, पमवन ।

निफाड़—१ बम्बईकी नासिक जिल्ला एक तालुका । यह पचास १८ ५५ से २० १४' ४०' और देगा ० ७३' ४५ से ०४' २०' पूर्वके मध्य अवस्थित है । भूपरिमाण ४१५ वर्ग मील और जनसंख्या प्रायः ८२०८१ है । इसके उत्तरमें चन्दोर, पूर्वमें येवला पोर कोपरगाँव, दक्षिणमें सिनार तथा पश्चिममें दिन्देरो और नासिक-मंडकूमा है । यहांकी जमीन बिलकुल कालो होती है । यहांका जलवायु स्वास्थ्यकर है । किन्तु घोषकालमें बसहय गरमी पड़ती है । गोदावरी तालुकके मध्य हो कर बह गई है ।

२ एक तालुकका एक शहर । यह नासिक नगरसे २० मील उत्तरपूर्वमें अवस्थित है ।

निफारना (हिं० क्ति०) १ इस पारमें उस पार तक छिद करना, पार पार करना, विधना । २ इस पारसे उस पार निकालना । ३ उद्घाटित करना, खोलना, स्पष्ट करना, साफ करना ।

निफालन (सं० स्त्री०) टाट, दर्शन ।

निफेन (सं० स्त्री०) निवृत्तः फेनो यस्मादिति । पक्षिफेन, फकीम ।

निफोट (हिं० वि०) स्पष्ट, साफ साफ ।

निष (सं० स्त्री०) लोहेकी चहरकी बनी हुई चाँद जो पहराकी कलमेंकी नोकका काम देती है । यह ऊपरसे खोधी जाती है ।

निषकीरी (हिं० स्त्री०) १ नोमका फल, निषोली, निषोरी । २ नोमका बीज ।

निषटना (हिं० क्ति०) १ निवृत्त होना, सुदो पाना, फुल-सत पाना, फारिग होना । २ समाप्त होना, पूरा होना, किए जानेकी बाधी न रहना । ३ मोचप्रादिमें निवृत्त

होना । ४ निर्णीत होना, अनिश्चित दयामें रह न जाना ।

५ चुकना, रह न जाना ।

निवटाना ( हिं० क्लि० ) १ समाप्त करना, पूरा करना, खतम करना । २ निर्णीत करना, भ्रंश न रखना, तै करना । ३ भुगताना, चुकाना, बंधाक करना ।

निवटाय ( हिं० स्त्री० ) १ निवटनेकी भाव या क्रिया, निवटारा । २ निर्याय, भ्रगड़ेका फौसला ।

निवटारा ( हिं० पु० ) १ निवटनेका भाव या क्रिया, हट्टो । २ समाप्ति । ३ निर्याय, भ्रगड़ेका फौसला ।

निवट्टा ( हिं० पु० ) एक प्रकारका बड़ा घड़ा ।

निवह ( सं० त्रि० ) १ वह, बंधा हुआ । २ निरुह, रुका हुआ । ३ अयित, गुवा हुआ । ४ निवेगित, बैठाय हुआ, लहा हुआ ।

निवह ( हिं० पु० ) वह गीत जिसे गाते समय अक्षर, तालमान, गमक, रस आदिके नियमोंका विशेष ध्यान रखा जाय ।

निवन्ध ( सं० पु० ) निवधारीति निवन्ध-घञ् । १ पानाह-रोग, पेगाह बन्द होनेकी बीमारी, करक । २ ग्रन्थकी वृत्ति, पुस्तककी टीका । ३ निवन्धवृत्त, नीमका पेड़ । ४ बन्धन । ५ संवहयन्मैद, यह व्याख्या जिसमें अनेक मतोंका संग्रह हो । ६ लिखित प्रबन्ध, लेख । ७ काल विशेषसे देय रूपमें प्रतियुक्त वस्तु, किसी तीर्थादिमें या पुण्यदिनमें 'तुम्हें' यह वस्तु दी' ऐसा प्रतिश्रुत द्रव्य, यह वस्तु जिसे किसीकी देनका वादा कर दिया गया हो । ( क्लि० ) निबारी बन्धः ताललयादि संहित बन्धनं यत्र । ८ गीत ।

निवन्धदान ( सं० क्लि० ) निवन्धस्य दानं । धनसमर्पण, द्रव्यसमर्पण ।

निवन्धन ( सं० क्लि० ) निवधारीतेनास्मिन् वा नि-वन्ध-ल्युट् । १ हेतु, कारण । २ उपनाह, वीणा वा सितारकी खूटी, काम । ३ ग्रन्थि, गाँठ । ४ बन्धन, नियम, बंधवस्था । ५ ग्रन्थ, पुस्तक । निवधारीतेनया कश्चि ल्युट् । ६ निवन्धसाधन ।

निवन्धनक ( सं० त्रि० ) निवन्धन् तत्समीपदेशादिः चतुरर्थी क । निवन्धनसमीप देशादि ।

निवन्धना ( सं० स्त्री० ) १ बन्धन । २ बड़ी ।

निवन्धनग्रह ( सं० पु० ) सृष्ट्युत्पत्ती एक टीका ।

निवन्धिन ( सं० त्रि० ) निवन्धकारी ।

निवन्ध ( सं० पु० ) निवन्धत्ता, ग्रन्थकर्ता, टीकाकार ।

निवन्धित ( सं० त्रि० ) निवन्धोऽस्य जातः, तारकादि-त्वादितच । वट्ट, बंधा हुआ ।

निबर ( हिं० वि० ) निर्वल देखो ।

निबरना ( हिं० क्लि० ) १ बंधो फँसी, या लगी वस्तुका अलग होना, छूटना । २ मुक्त होना, उद्धार पाना । ३ उलभन दूर होना, सुलभना । ४ खतम होना, जाता रहना, दूर होना । ५ अवकाश पाना, छुटी पाना, पुरसत पाना । ६ समाप्त होना, भुगताना, सपरना । ७ निर्याय होना, तै होना, फौसला होना । ८ एकमें मिलो जुनो वस्तुओंका अलग होना, श्लेष होना, छंटना ।

निवहण ( सं० क्लि० ) निर्वहति इति नि-वह-ल्युट् ।

मारण, नष्ट करनेकी क्रिया या भाव ।

निवह ( हिं० पु० ) निर्वह देखो ।

निवहना ( हिं० क्लि० ) १ छुटकारा पाना, छुटी पाना, निकलना, पार पाना । २ किसी स्थिति, सम्बन्ध आदिका लगातार बना रहना, निर्वोह होना, बराबर चला चलना । ३ किसी बातके अनुसार निरन्तर व्यवहार होना, चरिताय होना, पालन होना, पूरा होना । ४ बराबर होता चलना, पूरा होना, सपरना ।

निवाज ( नवाज )—हाश्वंशीय एक ब्राह्मण सन्तान । ये एक सुप्रसिद्ध शौर कवि थे । १६५० ई०में इन्होंने जय-ग्रहण किया था । ये पर्णके बुन्देलारराज छत्रपालके सभासद थे । आजमगढ़के कछनेसे इन्होंने शकुन्तला-नाटकका हिन्दी भाषामें अनुवाद किया है । निवाज नामक एक सुसलमान ताँतो भी था । लोग कभी कभी भ्रममें पड़ कर इन्हें ही निवाजताँतो समझते हैं । किसी किसीका कहना है, कि पूर्वाञ्चल निवाज ही चन्तमें सुपन-मान धर्मावलम्बी हुए थे । शं पोक्ष सुसलमान निवाजका जन्म हरदोई जिलेके बिलघाममें १७४७ ई०को हुआ था ।

निवाजई—बहालके २४ परगनेके चन्तगँत एक गण्ड-ग्राम । यह कलकत्तेसे १८ मील दूर दत्तपुर स्टेशनके निकट अवस्थित है ।

निबारी—भासामके चन्तगँत गारोपहाड़ जिलेका एक

पान। यह जिनारी मदीके किनारे घना हुआ है। यह स्थान यहाँके वापिज्यका अत्यन्त स्वल्प है। यहाँके जङ्गल-में गानक चनेक पेड़ देखनेमें आते हैं। जंगलमें काफ़ी आमदनी होती है जिनमें गवर्नमेंण्टका भी कर निर्दिष्ट है। १८८१ ई०के जन मासमें १० बर्गमील स्थान गवर्नमेंण्टको टिका या जो चमी 'जिनारी फारेस्ट रिजर्व' नामसे प्रसिद्ध है।

निवाह (हि० पु०) १ निवाहनीकी क्रिया या भाव, रहन, गुजारा। २ सुस्तिका उपाय, छुटकारका ढंग, बचावका रास्ता। ३ मगताह माधन, किसी बातके अनुसार निरन्तर व्यवहार, सम्बन्ध या परम्पराकी रखा। ४ चरितार्थ करनेका कार्य, पूरा करनेका काम।

निवाहक (हि० वि०) निवाह करनेवाला।

निवाहना (हि० क्रि०) १ निर्वाह करना, बराबर चलाए चलना, जारी रखना। २ निरन्तर माधन करना, बराबर करते जाना, मगराना। ३ चरितार्थ करना, पालन करना, पूरा करना।

निविड़ (हि० वि०) निविड़ देना।

निविड़ना (हि० क्रि०) १ उन्मुक्त करना, छुड़ाना। २ छोड़ना, हटाना, दूर करना, चलन करना। ३ परस्पर मिनी हुई वस्तुओंकी चलन चलन करना, बिनगाना, छोटना, चुनना। ४ उन्मुक्त दूर करना। ५ निर्णय करना, फैसला करना। ६ निवटाना, भुगताना।

निवेड़ा (हि० पु०) निवेरा देना।

निवेरा (हि० क्रि०) १ उन्मुक्त करना, बंधो, फंसी या मगो मगुकी चलन करना। २ उन्मुक्त दूर करना, चुन-भाना, फैसला या पदद्वन दूर करना। ३ निर्णय करना, फैसला करना, तै करना। ४ एकमें मिनी हुई वस्तुओंको चलन चलन करना, बिनगाना, छोटना, चुनना। ५ पूरा करना, निवटाना, मगराना, भुगताना। ६ त्यागना, हलना, छोड़ना। ७ दूर करना, हटाना, निटाना।

निवेरा (हि० पु०) १ सुक्ति, उद्धार, छुटकारा। २ समाप्ति, पूर्ति, भुगतान, निवटेरा। ३ मिनी चुनी वस्तुचिं चलन चलन होनेकी क्रिया या भाव, छोट, चुनाव। ४ उन्मुक्तकी क्रिया या भाव, उन्मुक्त या

फंसावका दूर होना। ५ निर्णय, फैसला, निवटेरा। निवेरी (हि० स्त्री०) नीमका फल, निवकीरी।

निवह—पश्चात्तके मध्य बंगालिर जिलेका एक पहाड़ी रास्ता। कुनावरके दक्षिण जो पर्वतश्रेणी है, उसीके ऊपर यह रास्ता व्यवस्थित है। यह पहा १० २२ ३० चौर ६८ १२ पू०के मध्य पड़ता है। इसके दोनों बगल ३५ फुट ऊँचाईके दो पर्वत छोड़े खुड़े हैं जो सदर-टरवाजेके जैसे दीख पड़ते हैं।

निभ (सं० वि०) नियत भाँतीति निभा क। १ मध्य, तुल्य, समान। (पु०) २ प्रकाश, प्रभा, चमकदमक। ३ व्याज।

निभना (हि० क्रि०) १ निकलना, पार पाना, बचना, छुटी पाना, छुटकारा पाना। २ निर्वाह होना, बराबर चला चलना, जारी रखना। ३ किसी स्थितिके अनुसार जीवन व्यतीत होना, गुजारा होना, रहायस होना। ४ किसी बातके अनुसार निरन्तर व्यवहार होना, पालन होना, पूरा होना। ५ बराबर होता चलना, पूरा होना, सपरना, भुगताना।

निभरभा (हि० वि०) जिनका विग्रह उठ गया हो, जिनकी याँप या भयाँदा न रह गई हो, जिनकी कलरं पुन गई हो, जिसका परदा टका न हो।

निभरोस (हि० वि०) निराश, हताश, जिसे भरोसा न हो।

निभागा (हि० वि०) चभागा, घटकसमूह।

निभाना (हि० क्रि०) १ निर्वाह करना, बराबर चलाए चलना, बराबर चोर जारी रखना। २ निरन्तर साधन करना, बराबर करते जाना, चलाना, भुगताना। ३ किसी बातके अनुसार निरन्तर व्यवहार करना, चरितार्थ करना, पूरा करना, पालन करना।

निभालन (सं० स्त्री०) निभल-विष्-भावे वगुट्। दर्शन।

निभाव (हि० पु०) निवाह देखो।

निभीम (सं० त्रि०) मयायक, उरायना।

निभृत (सं० त्रि०) निपल भृतः। चतीत, भृत, बीता हुआ।

निभृष्य (सं० पु०) निभृष्य नितरां भूत्वा मात्स्यादिकृषेया-वतोयं पाति पाकः। विष्णु, मगवान्।

निभृत (सं० त्रि०) निभृत्। १ धन, धरा हुआ, रखा

हुषा। २ निश्चल, अटन। ३ विनीत, नम्र। ४ एकाग्र, सूता। ५ गुण, छिपा हुआ। ६ निर्जन, सूता। ७ अस्तमयासक्त, अस्त होनेके निकट। ८ बन्द किया हुआ। ९ निश्चित, स्थिर, अनुसिद्ध, धीर, शान्त। १० पूर्ण, भरा हुआ।

निम (सं० पु०) शलाका, शूद्र।

निमकी (हिं० स्त्री०) १ नीबूका अचार। २ घोंमें तली हुई मोटेकी मोयनदार नमकीन टिकिया।

निमकौड़ी (सं० स्त्री०) निष्कौरी देखो।

निमखार प्रयोधशके अन्तर्गत सीतापुर जिलेका एक नगर। यह अक्षां० २०° २०' ५५" उ० और देशां० ८०° ३१' ४०" पू०के मध्य सीतापुर शहरसे २० कौस दूर गोमती नदीके बाएँ किनारे अवस्थित है। यह एक पवित्र तीर्थ है। यहाँ अनेक मन्दिर और पुष्करिण्यो हैं। प्रवाद है, कि जब रामचन्द्रजी रावणकी मार कर सीताकी साथ लिए प्रयोध्याको लौट रहे थे, तब ब्रह्महत्या पापसे मुक्त होनेके लिए उन्होंने इधो स्थान पर स्नान किया था।

निमखेरा—मध्यभारतमें भुपावरके ठाकुरसामन्तराज वा भोल एजिन्सोके अधीन एक छोटा राज्य। यह विश्व पर्वतके पास अवस्थित है। सर जन मैकमके वजाम बन्दीवस्तुके समयसे तिरला ग्रामके भुँइया वा प्रधान सरदार धाराराजकी धारिका ५००) रु० करस्वरूप दे कर वंशपरम्परासे इस राज्यका भोग कर रहे हैं। धारा और सुलतानपुरमें यदि कहीं चोरी हो वा डाका पडे, तो उनके दायो भुँइया ही हैं। भुँइया भोल जातीय दरियामिन्ड यज्ञके प्रसिद्ध सरदार थे। कुछ दिन हुए उनको मृत्यु ही गई।

निमगाव—भीमानदीके तीरवर्ती एक शूद्र जनपद। यह खेड़ाके ६ मोल दक्षिण-पूर्वमें अवस्थित है। इस धामके उत्तर एक छोटे पहाड़के ऊपर खण्डोवाका एक मन्दिर है। १८वीं शताब्दीके श्रेष्ठ भागमें गोविन्दराव गायकवाड़ने यह मन्दिर बनवाया था। चैत्रमासकी पूर्णिमाकी छत्त मन्दिरमें एक मेला लगता है जिसमें लगभग पाँच हजार मनुष्य समागम होते हैं। मन्दिरके खर्चके लिये बहुतसी निष्कर जमीन दी गई है।

निमज्ज (सं० त्रि०) नितरां समनः निमज्ज-क-ल। १ अन्नादिमें समन, डूबा हुआ। २- नम्यय।

निमच—खालियर राज्यके अन्तर्गत भण्डौर जिलेका एक शहर और छावनो। यह अक्षां० २४° २८' उ० और देशां० ७४° ५४' पू०के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या लगभग २१५८८ है, जिनमेंसे ६१८० मनुष्य शहरमें और १५३६८ छावनोमें रहते हैं। १८२० ई०के खालियरमें शंभूरेज और सिन्धियाके बीच एक सन्धि हुई। सन्धिकी शर्तके अनुसार दोलतराव सिन्धियाने सेनाधिका शब्दास्थान और कुछ जमीन प्रदान की। इनके बाद एक और सन्धि हुई जिसमें शंभूरेजोंको और भी कदं एक स्थान मिले। जब योबागण दूर देशोंमें लड़ने जायते, तब उनके परिवारादिके रहनेके लिये यहाँ एक छोटा दुर्ग बनाया गया था। वर्त्तमान समयमें इसमें अक्षयश्यादि रखे जाते हैं।

यह स्थान समुद्रतलसे १६१२ फुट ऊँचा है। जलवायु बहुत स्वास्थ्यकर है। किसी समय भी यहाँ न तो शोधित गरमो ही पड़ती और न ठंढ। यहाँ एक कारागार, डाकघर, स्कूल और चिकित्सालय है।

निमचा—प्रफगान और उच्चगिरिश्चवासी जातिके मूलदे उत्पन्न एक शूद्रजाति। ये लोग भारतवर्षीय कर्कसस पर्वतके दक्षिण टापुवें स्थान पर रहते हैं। इनको प्रचलित भाषाके साथ भारतवर्षीय भाषाकी विग्रह घनिष्ठता है। किन्तु आस्यका विषय है, कि लैटिन भाषाके साथ भी इनकी भाषा बहुत कुछ मिलती सुसती है।

निमकड़ा (हिं० पु०) ऐसा समय जिसमें कोई काम न हो, शककाश, पुरमत्, छुट्टी।

निमज्जक (सं० त्रि०) समुद्र आदि जलाशयोंमें डुबो लगानेवाला, गीते मार कर समुद्र आदिके नोचैकी चोर्जाको निकाल कर जीविका कमानेवाला।

निमज्ज्य (सं० पु०) निमज्ज प्रयुक्त। १ शयन, सोना। २ निमज्जन, स्नान। ३ निद्रा, नींद।

निमज्जन (सं० स्त्री०) निमज्जतेऽनेनेति, निमस ज-भावे व्युट-। शयनारुन, डूब कर किया जानेवाला स्नान। निमज्जित (सं० त्रि०) १ समन, डूबा हुआ। २ घात, मारा हुआ।

निमटना (हिं० त्रि०) निवटना देखो।



निमटाना ( हि० कि० ) निपटाना देखो ।

निमटाना—खेतमें कितनी फसल हुई है, उसे स्थिर करने-का एक प्रकारका नियम । काप्टेन रावर्टसन ० इसी उपायने शस्यका परिमाण स्थिर करते थे । किसी एक शस्यपूर्ण खेतसे तीन तरहके ऐसे पौधे लिए जाते थे जिनमें एकमें उत्तम दूसरे मध्यम और तीसरेमें सामान्य रकम लगी रहती थी । तीनों पौधोंके पनामको गिन कर उसका औसत निकाला जाता था । पीछे खेतके पौधे गिने जाते थे । पौधोंकी संख्या जितनी होती थी, उससे शस्यसंख्यामें गुणा करनेसे खेतके शस्यका परिमाण निकल जाता था । रावर्टसन साहबने कहा है कि उत्तर भारतवर्ष । खासतौर पर गुजरातमें यह प्रथा प्रचलित थी । गियाजीके पिता शाहजीके प्रधान कर्मचारी दादाजी कोण्डदेवने १६४३ ई०में पुनामें जय बन्दोबस्त किया, तब उन्होंने इसी नियमका प्रयोजन किया था ।

निमटारा ( हि० पु० ) निपटारा देखो ।

निमतौर—राजपूतानेमें निमत्त और भालरापाटन जिस राजवश पर अवस्थित है, उसी राजवश पर यह छोटा ग्राम भी मसा हुआ है । सम्भवतः निमतौर शब्द निमतला वा निमत्तर शब्दका अपभ्रंशमात्र है ।

इस ग्राममें ३ मन्दिर हैं जिनमेंसे एक बहुत प्राचीन कालका है और उसमें हयमूर्ति स्थापित है । दूसरे मन्दिरमें प्रकाण्ड शिवलिंग है और उसके चारों ओर मनुष्यके मुख खुदे रहनेके कारण शिवलिंगने चतुर्मुख धारण किया है । प्रवाद है, कि यह मन्दिर और हयमूर्ति मनुष्यके चतुर्मुख हो कर पहले नाग स्थानोंमें भ्रमण करते हुए अन्तमें गुजरातमें यहां पाए और तभीसे इसी स्थान पर रहने लगे हैं । हयको गति मन्दिर होनेके कारण मन्दिर कुण्ड पहले पड़वा था । यह प्रवाद सुन कर ऐसा अनुमान किया जाता है, कि सबसे पहले मन्दिर बनाया गया और पीछे हयमूर्ति स्थापित हुई । मन्दिर भी एक हजार वर्ष पहलेका बना होगा ऐसा प्रतीत होता है ।

निमट ( स० पु० ) मन्दिरमें और मन्दिरमें उच्चारण ।

• East-India Paper, p. 420.

निमटारी—पूना जिलेका एक छोटा ग्राम । यह सुनारसे ३ मील दक्षिणमें अवस्थित है । यहां १ एकडेवीकी एक वेदी है । चैत्रमासको पौष मासीकी वार्षिक मेला लगता है ।

निमन्त्रक ( स० पु० ) निमन्त्रण । निमन्त्रकारी, वह जो न्योता देता हो ।

निमन्त्रण ( स० क्री० ) निमन्त्रणे इति, निमन्त्र-ण्युट् । १ भाङ्गान, किसी कार्यके लिए नियत समय पर पानेके लिए ऐसा अनुरोध जिसका प्रकार पालन न करनेसे दोषका भागी होना पड़ता है । २ भोजन पादिके लिये नियत समय पर पानेका अनुरोध, खानेका अनुवाह, न्योता । आह्वादि कार्यके एक दिन पहले वेदज्ञ ब्राह्मणको आह्वान करनेके लिए पाना पड़ता है, इसीको निमन्त्रण कहते हैं । निमन्त्रण और पामन्त्रणमें यह भेद है, कि निमन्त्रणका पालन न करने पर दोष का भागी होना पड़ता है और पामन्त्रणका पालन न भी किया जाय, तो कोई दोष नहीं है ।

‘पाप यहां भोजन करे’ इस प्रकारके भाङ्गानका नाम निमन्त्रण और ‘पाप यहां शयन करे’ इसका नाम पामन्त्रण है । सोना या नहीं सोना अपनी इच्छाके ऊपर निर्भर है, लेकिन निमन्त्रित हो कर यदि निमन्त्रणका पालन न किया जाय, तो पापभागी होना पड़ता है ।

यदि ब्राह्मणको निमन्त्रण दे कर उनका यथाविधि पूजन न किया जाय, तो निमन्त्रणकारी नियक योगिनिमें जन्म लेता है । यदि भ्रमप्रमादवशतः निमन्त्रित ब्राह्मणकी पूजा न करे, तो सर्वे यरनपूर्वक प्रसन्न करके भोजनादि कराना चाहिये ।

‘आमन्त्रा ब्राह्मणं यस्तु यथान्वाये न पूजयेत् ।

अतिहृष्ट्यापु गोपात्रं तिष्ठेन्नोनिपु आयेते ॥’ (यम)

यमके मतानुसार ब्राह्मण यदि एक जगह निमन्त्रित हो कर दूसरी जगह खाने चले जाय, तो वे नरकका भोग कर चण्डालयोगिनिमें जन्म लेते हैं ।

‘आमन्त्रितस्तु यो विप्रः भोगानुपलभ्य गच्छति ।

नरकानां यत्र गत्या चांशुर्ह्यभिमनसते ॥’ (यम)

इस लोकमें ‘पामन्त्रित’ ऐसा पद मूल्य हुआ है,

इससे मालूम पड़ता है, कि धामन्त्रण और निमन्त्रणका कभी कभी एक ही अर्थ होता है। यदि ब्राह्मण एकसे निमन्त्रित ही कर दूसरेका पुनः निमन्त्रण ग्रहण करे अथवा एक जगह भोजन करके दूसरी जगह भोजन करे, तो उसके सब पुण्य नष्ट होते हैं।

“पूर्वे निमन्त्रितेऽग्नयेन कुर्यादग्न्यप्रतिमदम् ।

भुक्त्वाहारोऽप्यनाभुंके सुकृतं तस्य नश्यति ॥”

(देवल)

यदि निमन्त्रित ब्राह्मण विलम्बसे आवे, तो वे नरकगामी होते हैं।

“आमन्त्रितश्चरे नैव कुर्यादग्निः कदाचन ।

देवतानां पितृणां च दातृप्रदय चैव हि ।।

चिरकाली भवेद्द्रोही पच्यते नरकाग्निना ॥”

(शादित्यपु०)

निमन्त्रण ग्रहण कर ब्राह्मणको पयगमन, भारवहन, छिन्ना, कलह और मद्युन कार्य नहीं करना चाहिये। यदि करे, तो पापभागी होना पड़ता है।

ऋतुकालमें स्त्रीगमनकी भवश्यक-ऊर्ध्वता रहने पर भी यदि निमन्त्रण ग्रहण किया जा चुका हो, तो मद्युन नहीं कर सकते। विज्ञानिश्चरके मतानुसार निमन्त्रित होने पर भी ऋतुकालमें स्त्रीगमन विधेय है। पर हां, मद्युन-निषेध ऋतुविभिन्न कालकी जानना चाहिये।

निमन्त्रकी ये सब विधि और निषेध जो कहे गये, वे केवल आह विषयमें काम आते हैं। (निर्णयसिन्धु)

पूर्व समयमें आहकालीन ब्राह्मणको निमन्त्रण दे कर उनके सामने पितृगणका आहकार्य किया जाता था। लेकिन अभी ब्राह्मणके गुणहीन होनेसे कुप्रथम ब्राह्मणकी स्थापना करके आहविधिका अनुष्ठान होता है। रघुनन्दनने भी निमन्त्रणका विषय इस प्रकार लिखा है—

ब्राह्मणको निमन्त्रण करके आह करना चाहिये।

आह करूंगा, ऐसा स्थिर हो जाने पर एक दिन पहले

ब्राह्मणको प्रणाम करके निमन्त्रण देना चाहिये। जो

ब्राह्मण निमन्त्रण ग्रहण करके उसका पालन नहीं करते

वे पापभागी होते हैं; लेकिन धामन्त्रणका पालन नहीं

करनेमें पाप नहीं है। निमन्त्रण और धामन्त्रणमें केवल

इतना ही फर्क है।

पूर्व दिनमें यदि किसी विशेष कार्य वग ब्राह्मणको निमन्त्रण न दे सकें, तो उस दिन भी निमन्त्रण दे सकते हैं।

आपस्वस्वने निमन्त्रण शब्दका ऐसा अर्थ लगाया है—

आगामी दिन में आह करूंगा, इससे आप निमन्त्रणीय हैं,

इस प्रकारका प्रथम निवेदन और मैं आपको निमन्त्रण देता हूँ, यह द्वितीय निवेदन है। इस प्रकारके निवेदनको ही निमन्त्रण कहते हैं।

निमन्त्रणपत्र (सं० ह्यो) आह्वानपत्र, वह पत्र जिसके द्वारा किसी पुरुषसे भोजन उत्सव आदिमें सम्मिलित होनेके लिये अनुरोध किया गया हो।

निमन्त्रित (सं० त्रि०) निमन्त्र-ज्ञा। आहृत, जिसे न्योता दिया गया हो।

निमन्त्र्य (सं० त्रि०) प्रीथरहित, जिसे गुस्सा न हो।

निमय (सं० पु०) निमोयतेऽनेनिति नि-नि-भच्। (एरच.। पा ३।३।३६) विनिमय, बदला।

निमराणा—राजपूतानेके मध्य अलवार राज्यका एक शहर।

यह अक्षा० २८° ७६' २३" पू० अलवार

शहरसे ३३ मील उत्तर-पश्चिममें अवस्थित है। लोक-

संख्या लगभग २२३२ है। १४६० ई०में यह शहर

दूपाजसे बसाया गया है। १८०३ ई०में राजाने महा-

राष्ट्रको अपने यहां आश्रय दिया था, इस कारण लाड-

लेकने यह स्थान अलवारके अधीन कर लिया। पीछे

१८१५ ई०में बहुत अनुनय विनय करनेके बाद इसका

कुछ अंश राजाको लौटा दिया गया। १८६४ ई०में

निमराण अलवारकी जागीर कायम की गई और यह

भी स्थिर हुआ कि इसे वार्षिक ३००० रु० कररूप

देने हगिं। राज्यको भाय १८००० रु०की है। यहां

एक वनांधयूलर स्कूल और एक अस्पताल है।

निमरी (हि० स्तो०) मध्यभारतमें होनेवाली एक प्रकारकी

कपासे, बरही, बंगई।

निमरुद—एक प्रसिद्ध मृगयादंष्ट राजा। ईसाइयोंके धर्म-

ग्रन्थ (बाइबल)में लिखा है, कि ये व्याधिल, ररेक, भाकाट,

कालन और रेजिन दृशके अधिपति थे। नार्ज स्मिय कह

गए हैं, कि ये बाबिलन देशके एक शासनकर्ता थे।

इसके अधिकृत स्थानका नाम या इरेक जिसे पाजकन

घोयाका कहते हैं। पध्यापक मेमका कथना है, कि निमददका नाम घोर किमी ग्रयमें नहो मिनता है।

शोगदादमे प्रायः ८ मीनकी दूरी पर मिडोंका एक टोला है जिसे परशयामो तुन-प्रदेर-कौफ घोर तूकं शोग निमददतपमी कहते हैं। दोनो गण्डका पर्य निमददबांध है। जाव गदोने किनारे मुठानेके समीप एक प्राचीन नगर है, यद्यो निमदद नामसे प्रसिद्ध है।

निमाज ( ५० पु० ) सुमनमानोके मतानुसार इंमरको धाराधना जो दिन रातमें पांच बार की जाती है, इसनाम मतके अनुसार इंमरप्राथना ।

निमाजघंद ( फा० पु० ) कुशीका एक पेव। इसमें जोड़के दाहिनी घोर अंठ कर उसकी दाहिनी कलाइकी अपने दाहिने हाथसे खींचता है घोर पुनः अपनी बायां पेर उसको पीठकी घोरने ला कर उसकी दाहिनी भुजाकी इस प्रकार बांध लेता है, कि वध घूतड़के ठोक मध्यां पा जाती है। पीछे उसके दाहिने घंगूठेकी अपने दाहिने हाथसे खींचते हुए बाएँ हाथसे उसको लालिशा पकड़ कर उसे उलट कर घिन कर देता है। इस पेवके विषयमें दत्तकहामी है, कि इससे भाविष्कत्तां हमनामी ममविद्याके आचार्य चली साधव हैं। एक बार किसी जहलमें एक टैल्यसे उनका ममग्रुव हुआ। उसे नीचे तो वे लाए, पर चित्त करनेके लिए मगय न था। क्योंकि रुमाजका समय गुजर रहा था। इसलिए उन्होंने उस टैल्यको इस प्रकार बांध डाला कि उसे उसी स्थितिमें रहते हुए ममाज पढ़ सकें। जब ये खड़े होते, तब उसे भी घुहा होगा घोर जब बैठते या झुकते, तब उसे बैठना या झुकना पड़ता था। इसका निमाजघन्द नाम पढ़नेका यही कारण है।

निमाजो ( फा० वि० ) १ जो निममयुयक निमाज पढ़ता हो। २ धार्मिक, दीनदार।

निमाजु—वैष्णवोंका चतुर्थ अष्टदाय। निम्बाटिय इसके प्रथमक थे, इसी कारण घोर कोरे इसे निमशकं वा निमाजु कहते हैं। इस अष्टदायका सूमरा नाम है धनशक्ति मयदाय।

इसका विश्राम है, कि निम्बाटिय शूर्यके पगतार के घोर दाक्षिण्यकी दमन करनेके लिए प्रयुंते वा

भवतीग हुए थे। इन्दावनके समीप इनका वास था।

इसके साम्प्रदायिक निममादि किसे ग्रयमें लिखे नहीं हैं। इनका कहना है, कि मन्वाट, मोरङ्गजय यादगाहके शासनकालमें सुचनमानोने मयुरांमें इनके धर्म विषयक सभी ग्रन्थ जला डाले।

राधाकण्ठका युगनरूप इनके एकमात्र उपास्य है घोर योमहागवत इनका प्रधान गाम्प्रय्य है। ये लोग ललाट पर गोपीचन्दनकी दो खड्डो रेखा लगाते हैं घोर उनके बीचमें काना गोम तिनक चढित करते हैं। इसमें किसे एमे है जो गलेमें तुलसीकाष्ठकी माला भी पहनते हैं।

निम्बाटित्यके किशवभट घोर हरिदास नामक दो गिप्योंसे 'विरात' घोर 'गृहस्थ' इन दो सम्प्रदायोंकी उत्पत्ति हुई है। यमुनाके किनारे मयुराके समीप ध्रुवचंद्र नामका एक पहाड़ है। उसी पहाड़के ऊपर निम्बाटोंको गद्दी है। लोगोका विश्राम है, कि गृहस्थ-योगीभुक्त हरिदासके वंशधर छो उनके अधिकांश चले पा रहे हैं। किन्तु यहांके महत्त लोग अपनेको निम्बाटोंके वंगोहव मतलाते हैं। उनका मत है, कि ध्रुवचंद्रको गद्दी करीब १५०० वर्ष हुए प्रतिष्ठित हुई है। पश्चिम-प्रदेशके मयुराके सन्निकटपर्वी स्थानोंमें तथा गङ्गात-देशमें इस सम्प्रदायके अनेक लोग देखनेमें पाते हैं। प्रसिद्ध लयदेव गोखामो इसी सम्प्रदायके योष्य थे।

निमातधर ( म० वि० ) निमा-तधर। विनिसययोग्य, बदनेने लायक।

निमाट—मध्याभारतके मध्यावर्ती एक जिला। इसका प्रधान नगर बुरहानपुर है। निमार देखो।

निमान ( स० क्री० ) निमोयतेनेन निमा-लुट्। सुल्य, दाम, कीमत।

निमान ( हि० वि० ) १ गोधा, टपुवा, नीचेको घोर गया हुआ। २ नन्व, विनीत, शोधा मादा, भोलाभाला। ३ दन्तु।

निमायुज—एक वैष्णव गुह।

निमार—१ मध्यप्रदेशके नरबुदा विभागका एक जिला। यह पचा० २१' ५' से २२' २५' ठा घोर देगा० ०५' ५०' से ००' ११' पु०के मध्य पमदियत है। इसके

उत्तरमें इन्दौर और धारराज्य, पश्चिममें इन्दौर और खान्देश जिला, दक्षिणमें खान्देश, अमरावती और यकोना जिला तथा पूर्वमें छोसड़ावाद और वैतूल है।

इस जिलेका उत्तरस्थ स्थानममूह छोटी छोटी गिरिमालाश्रंघि शोभित रङ्गनेके कारण यहाँ समतल भूमिका बिलकुल अभाव है। इस कारण इस प्रान्तमें खेतीवारी कुछ भी नहीं होती। उत्तर-पूर्वांशमें बहुत दूर तक परती जमीन पड़ी हुई है। इसके सिवा इस अंशकी सभी जमीन साधारणतः अनुर्वर नहीं है।

जिलेके दक्षिणांशमें ताप्पो नदीकी तीरस्थ भूमि अपेक्षा-कृत उर्वरा है, पश्चिमांशकी जमीनमें भी अच्छी फसल लगती है। किन्तु नर्मदा नदीकी सर्वांतरस्थ भूमि सर्वापेक्षा उर्वर होने पर भी परती पड़ी हुई है, क्योंकि इस प्रान्तमें मनुष्योंका वास बहुत कम है। नर्मदा और ताप्पो नदीकी तीरस्थ भूमि १५ मील विस्तृत एक पहाड़ द्वारा विभक्त है। यह भतपुरा पहाड़ नामसे प्रसिद्ध है। इस पहाड़के गिखर पर अमतल भूमिसे ८५० फुट ऊपर अगोरगढ़ नामक दुर्ग और एक गिरि-पथ है। उत्तरभारतसे दक्षिणभारतमें पानिके लिये बहुत दिनोंसे यही रास्ता प्रयुक्त गिना जाता था। जिले-का अधिकांश स्थान पहाड़ और जङ्गलसे परिपूर्ण है। पयरियाकीयला यहाँ कहीं भी नहीं मिलता, लेकिन चांदगढ़ और पुनासाके निकटवर्ती जङ्गलमें लोहेकी खान देखनेमें आती है। निमार जिलेमें जितने जङ्गल हैं उनमेंसे पुनासा नामक जङ्गल गधमेंष्टके दखलमें है। सभी जङ्गलोंमें बहुमूल्य काष्ठ पाये जाते हैं। चांदगढ़ परगनेमें भी विस्तृत अरण्य है। ये सब अरण्य अशायदकी अवास भूमि है, किन्तु ये मनुष्य पर आक्रमण नहीं करते। व्याघ्रके सिवा यहाँ माल, चीता, जङ्गली सूअर आदि अनेक प्रकारके हिंस्र जन्तु तथा हिरण, खरगोश प्रभृति भाति भातिके निरीह जन्तु एवम् अन्यजुषकुट आदि नाना जातीय पक्षी देखनेमें आते हैं।

इतिहास -—हैहयराजगण पूर्वकालमें माहिषती (यत्तं मानं महेश्वर) में रह कर प्रान्त-निमारका शासन करते थे। पीछे ब्राह्मणोंने उन्हें राज्यच्यत किया। उन ब्राह्मणोंद्वारा नर्मदा नदीवेष्टिते माभ्याता नामक

स्थानमें शिवपूजा अवर्तित हुई। पीछे अगोरगढ़के चौहानराजपूत लोग हिन्दू देवदेवोंके उपासक हुए। पीछे प्रमार राजपूतोंने अगोरगढ़ पर अपना अधिकार जमाया। इस अंशके ताक नामके एक शासने ८वीं शताब्दीसे ली कर १२वीं शताब्दी तक अगोरगढ़का शासन किया। चांदकवि उन्हें हिन्दूधर बतला गये हैं। इस समय निमारमें जैनधर्म बढ़ा चढ़ा था। खण्डवा और मान्याताके निकटवर्ती स्थानोंमें अनेक मनोहर जैनधर्ममन्दिर आज भी विद्यमान हैं। १२८५ ई०में अनाउद्दीनने जब दक्षिणात्य पर आक्रमण किया था, उस समय चौहानवंशीय राजपूत अगोरगढ़के राजा थे। अनाउद्दीनने उन्हें परास्त कर एकके सिवा और सबको मार डाला। इस समय उत्तर निमार भील जातीय अलाराजाके शासनाधीन था। उनकी अशाली आजकल भी भोमगढ़, मान्याता और सिलानी नामक स्थानमें देखी जाती है। फेरिस्ता-का कहना है कि इस समय दक्षिण निमारमें अशा नामक गोपवंशीय एक राजा थे। उन्हेंने जो दुर्ग प्रस्तुत किया वह उनके नामानुसार अगोरगढ़ कह लाया। कहनेका तात्पर्य यह कि जिस समय मुसल-मानोंने इस राज्य पर आक्रमण किया उस समय यह राज्य जो चौहान और भीलराजाओंके शासनाधीन था इसमें जरा भी अन्देह नहीं।

प्रायः १२८० ई०में उत्तरनिमार मालवके स्वाधीन मुसलमानराज्यके अन्तर्गत हुआ और माण्डूमें राजधानी बसाई गई। १३०० ई०में मालकराज फरूखी-ने दिल्लीके सम्राटसे दक्षिण निमार प्राप्त किया। तदन-न्तर उनके पुत्र नसीर खाने अगोरगढ़ अधिकार करके सुहानपुर और अनावाद नगर बसाया। १३८८ ई०से १६०० ई० तक खान्देशके फरूखीवंशने क्रमशः ग्यारह पीढ़ी तक सुहानपुरमें राज्य किया। किन्तु गुजरात और मालववासियोंके आक्रमणसे सुहानपुर अनेक बार विध्वस्ताय हो गया। १६०० ई०में दिल्लीअर अकबरने अगोरगढ़ पर चढ़ाई करके फरूखीवंशके शिव राजा बहादुर खाने निमार और खान्देश जोत लिया। अक-बरने उत्तरनिमारकी बीजागढ़ और खण्डवा नामक दो

जिनको मैं विभाज करके उसे मालवसुत्राके अधीन किया। दक्षिण-निमार खान्देश गुरुवाके पन्नासुत्र हुआ। राजपुत्र दानिवान जय दक्षिणवाचके शासनकर्ता हुए, तब ये बुर्हानपुरमें रह कर राजकार्य की पर्यालोचना करते थे। पन्नामें १६०५ ई०में इसी स्थान पर उनको मृत्यु हुई।

पक्षर और उनकी वंशावलीकी कौमलवर्ष उचत-शासनप्रणालीके गुणसे निमार उचतिको चरम मोमा तक पहुँच गया था। इस समय समस्त भूमि सुनियमसे जोतो जाती थी। मानव और दक्षिणवाचके मध्यवर्ती स्थानोंमें व्यवसायिक व्यवस्था दृश्य से कर जाते पाते थे। १६३० ई०में मराठोंने पहले पहल जो खान्देश पर पालमण किया था उसमें बुर्हानपुर तक प्रायः सभी देश लूट गये थे। पीछे प्रति वर्ष फसलके समय मराठे यहाँ आ कर राजदमि स्थान स्थान पर लूटपाट मचाया करते थे और १६८४ ई०में उन्होंने बुर्हानपुर नगर भी लूटा। १६८० ई०में मराठोंने समस्त उत्तर निमारको लूटपाट द्वारा सञ्चलप्राय कर दिया। तब १७१६ ई०से मुगल लोग सर्व्व छोड़ और मरहेगुप्तो देनेकी बाध्य हुए। इसके ४ वर्ष बाद पालकजाइके दक्षिणवाचका शासनभार ग्रहण करने पर भी वे बहुत दिनों तक मराठोंकी चोच पादि देते आ रहे थे। किन्तु इस पर भी मराठानोंग सन्तुष्ट न हुए और गाना प्रकारके उपाय मचाने लगे। पन्नामें १७४० ई०को मन्धिके पनुसार वेगवाने उत्तरनिमार प्राप्त किया। पन्द्रह वर्ष पीछे पगोरगढ़ और बुर्हानपुर छोड़ कर समस्त दक्षिण निमार उनके हाथ लगा और १७१० ई०में उन्होंने बुर्हानपुर और पगोरगढ़को भी जीत लिया। १७०८ ई०में कानापुर और धिया परगना छोड़ कर पचगिट निमार जिना सिन्धिया महाराजके राज्यभूत हुआ और होनकरने भी पचगिट पालानिमार द्वारा ब्रह्मणके कले-सखी हदि थी। १८वीं शताब्दी तक यह राज्य इसी प्रकार शास्त्रि चपमोग करता आ रहा था। किन्तु इस समयसे ही कर १८२० ई०तक पालमण, लूटपाट पादिसे यह तबम महम हो गया। १८०३ ई०में पानासके मुहमें पंगरेज समसेगठने दक्षिण-निमार प्राप्त किया, किन्तु यह सिन्धियाराजकी दिवा

गया। पीछे १५ वर्ष तक होलकरके कर्मचारी, विपयारी और सिन्धियाके विपक्ष नाथ, गुमास्ता पादि द्वारा यह राज्य नियम पालास्त और उचितपक्ष होता गया। पन्नामें गेव वेगवा धात्रीरायने १८१८ ई०में सर जन मकोमके निकट पालमणवर्ष किया। इस समय नागपुरके पूर्वतन राजा पप्पासाहबके पगोरगढ़में पचगव लेनेसे पंगरेजोंने उस गढ़को अधिकारमें कर लिया। १८२४ ई०में सिन्धियाके साथ जो सन्धि हुई उसमें पचगिट समस्त निमार पंगरेज-शासनधीन हुआ। १८५४ होसद्वारा जिलेके कुछ परगने निमार जिलेमें मिला दिये गये और १८६० ई०में सिन्धियाने विनिसय द्वारा जैमावाड, माधुरोद परगना और बुर्हानपुरनगर पंगरेजोंने लाभ किया। पीछे हटिमराजने होलकर महाराजकी १८६५ ई०में कसावर, धरगव, बरवाँदे और मण्डलीनर प्रदान कर उनसे दक्षिणवाचके कतिपय परगने ग्रहण किये।

निमार जब पहले पहले पंगरेजोंके दखलमें आया, उस समय यह जिना प्रायः जनशून्य था। शास्त्रिणाव-का धनवान होनेसे ही पनेक क्षत्रिणी भी यहाँ पुनः लौट कर आने लगे। यहाँ तक कि कमाल (पीछे सर जैम) पाउडरके यज्ञसे यहाँके दुर्भिक्ष भीनोंने भी शास्ताभाव धारण किया।

पहले पहल यहाँकी पंगरेज-शासनप्रणाली सफलता लाभ कर न सकी। पीछे १८४५ ई०में करविभागके मध्यस्थमें लूनन बन्दीयस्त हो जानेसे निमार जिना पहनेकी तरह उचतपय पर जाने लगा। १८५० ई०में सिवाहीविद्रोहके उपस्थित होने पर भी यहाँके लोग प्रभुभक्ति दिखानेसे जरा भी विमुख न हुए थे। इस समय तानिशातोपी बहसंस्थक सेनाकी साथ से जिलेके मध्य हो कर गुजरे और पीपलोद, खाण्टवा तथा मुगलगावके पुनिसय (वा धागाको जना डाना। किन्तु इस जिलेका एक भी मनुष्य उनकी सेनामें न मिला था।

इस जिलेमें २ गहर और ८२२ ग्राम लगते हैं। जनसंख्या प्रायः ३२८१५ है। यहाँका उत्पन्न द्रव्य खार, गुजरी, तिन, चना और तेलहन पनाज है। यहाँ पकीम और रुईका विद्यमान व्यवसाय होता है। घट-

इण्डियन पेनिनसुला रेलवे जिलेके मध्य जो कर गई है, इस कारण यहां व्यापिकको विशेष सुविधा है। १८६४ ई०से निमाल शंकरजीके प्रधान एक स्वतन्त्र जिलेके रूपमें गणित होता आ रहा है। एक डिप्टी कमिश्नर, उनके सहकारी-कार्यालयों और तहसील-दारी द्वारा शासनकार्य सम्पन्न होता है।

निमालका जो शंकर जनरल है उन शंकरा जलवायु यत्नास्थल नहो है। किन्तु नर्मदा और तामीकी उपत्यका भूमिमें अग्रिम और मई मासमें अधिक गरमी पड़ती है। सन्नाहारी और ज्वर यहांका प्रधान रोग है। विद्यागिद्यामें यह जिला बड़ा बड़ा है। यहां छह स्कूल, ३ इङ्गलिश और ४ मनीकालर मिडिल स्कूल, ८५ प्राइमरी स्कूल तथा २ प्राइमरी बालिका स्कूल हैं। मिच्छाविभागमें वार्षिक ४२०००) १० खर्च होती है।

२ मध्यभारतके इन्दौरराज्यके उत्तरका एक जिला। यह अक्षां २१° २२' से २२° ३२' 'उ० और देशा ७४° २०' से ७६° १०' पू० नर्मदा नदीके उत्तरमें अवस्थित है। भूपरिमाण ३८७१ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः २५०११० है। इसमें खरगोल, महेखर और बड़वाड नामके तीन शहर और १०६५ ग्राम लगते हैं। जिलेकी आय ८ लाख रुपयेसे अधिककी है।

निमाल—पञ्जाबमें बसु जिलासंगत ग्यानधाली तहसील-का नगर। यह लखणपड़ाके पूर्वमें अवस्थित है।

निमि (सं० पु०) १ अविश्वशोद्धूत दसात्रेयके एक पुत्र-का नाम। २ कौरववंशीय भावितृपभेद, कौरव-वंशके भावि राजाका एक नाम। ३ हापरसुगीय भस्तराश्रुपभेद, हापर युगके एक राजा जो भस्तराश्रुमें उत्पन्न हुए थे। ४ मिथिलावंशस्थापयिता इक्ष्वाकु-वंशीय नृपभेद। इनका विवरण विष्णुपुराणादिमें इस प्रकार लिखा है,—

राजा इक्ष्वाकुके निमि नामक एक पुत्र था। इन्होंने मिथिलाका विदेहवंश चला। एक बार महाराज निमिने सङ्गस्यार्थिक यज्ञ करानेके लिए अग्निहोत्रकी बुलाया। अग्निहोत्रकी कथा, 'सुम्ने देवराज इन्द्र पक्षी-से ही यज्ञस्य-वार्थिकयज्ञमें धरण कर चुके हैं। अतः तब तकके लिए श्राप प्रतीक्षा करें। इन्द्रका यज्ञ

कराने में श्रापका यज्ञ कराजंगा।' अग्निहोत्रकी यह बात सुन कर निमि चुप हो रही। अग्निहोत्रकी भी समझ गए कि राजाने मेरी बात खोकार कर ली है; इसलिए इन्होंने इन्द्रका यज्ञ प्रारम्भ कर दिया।

अग्निहोत्रके चले जाने पर निमिने गौतमादि ऋषियों-को बुला कर यज्ञ प्रारम्भ किया। इन्द्रका यज्ञ हो जाने पर अग्निहोत्रकी देवताके बहुत तेजसे चले और यज्ञ स्थलमें पहुँच कर उन्होंने देखा कि निमि गौतमको बुला कर यज्ञ कर रहे हैं। इस पर उन्होंने निद्रामत राजा निमिको श्राप दिया, 'तू मेरी शपथ करके गौतम द्वारा यज्ञ करा रहा है, इस कारण तू दीन होगा और तुम्हारा यह शरीर न रहेगा।'

पक्षी राजाने अग्निहोत्रको श्राप दिया, 'शपथें विना जाने सुने व्यर्थमें श्राप दिया है। इस कारण श्रापका भी यह शरीर न रहेगा।' इतना कह कर राजाने शपथना शरीर छोड़ दिया। निमिके श्रापसे अग्निहोत्रके तेज मित्रावरुणके तेजमें प्रविष्ट हो गया। अनन्तर एक दिन उर्वशीको देख कर मित्रावरुणका बोधे नोचि गिर पड़ा। उसी बोधेसे अग्निहोत्रने दूरमा शरीर धारण किया।

निमि राजाको यह श्रुत देह अग्नि मगोहर तैल और गन्धद्रव्योंमें रखो गई थी, इस कारण जरा भी विकृत न हुई थी। यज्ञकी समाप्ति कर जब देवताओंने यज्ञभाग ग्रहण किया, उस समय ऋत्विक्ोंने यज्ञमानकी वर देनेके लिए देवताओंसे प्रार्थना की। अनन्तर देवताओंने जब वर ग्रहण करनेके लिए निमिसे कष्ट, तथै धोने, 'सुम्ने इतसे बड़ कर और कुछ भी दुःख नहीं है कि, शरीर और आत्माका परस्पर विधीय होतो है। इसी कारण मैं पुनः शरीर धारण करनेकी इच्छा नहीं रखता, केवल एक यही इच्छा है, कि मैं मयकी आँखों पर घाम कण।' देवताओंने उनकी प्रार्थना खोकार कर ली और उनको मनुष्योंकी आँखोंको पत्रक पर जगह दी। राजाके कोई पुत्र न रहनेके कारण भुनियोंकी डाह हुआ कि श्रापके कहीं पराजकता न फैल जाय, इस कारण वे उस श्रुतदेहकी धरणसे मयने लगे। कुछ देर बाद एक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम श्रुतदेहके उत्पन्न होनेके

कारण जनक रत्ना गया । मशनेमे ये सत्यय दृष्ट ये, हम निद इमका हूमा नाम मिधि भी था ।

( रिचुनु० ४ धंश ५ ष० )

मनुष्यद्विताकी टीकामें सुख कने निष्ठा है, कि निमित्त पवने पवित्रयके कारण विनष्ट दृष्ट ये । भागवत घो। मन्वपुराण आदिमें भी इमका विवरण निष्ठा है । रामायण सप्तारकाष्टके ५५ अध्यायमें निष्ठा है, कि निमित्त देवतायोके घरमे यागमूत हो कर प्रायिममूडके नेत्रो पर पवपतन करते हैं, इमोमे मानयके निमित्त दुष्ठा करता है । ५ निमित्त, चाँयोका मिचन ।

निमित्त ( ति० पु० ) निमित्त देवो ।

निमित्त ( म० ति० ) नि-मित्त । ममटीघंविस्तार परि भागयुक्त, निमकी लम्बाई घोर चोइइई समान हो ।

निमित्त ( म० स्त्री० ) नि-मित्त-क, संज्ञापूर्वकत्वात् नत्वम् । १ हेतु, कारण । २ चिह्न, लक्षण । ३ मनुष्य, मनुष्य । ४ दृश्य, फलकी घोर मत्त ।

निमित्तक ( म० स्त्री० ) निमित्त संज्ञायौ कन् । १ निमित्त कारण । २ बुद्धय । ३ निमित्त, कारण । ( ति० ) ४ निमित्त लक्षण, किमी हेतुमे होदेशान् ।

निमित्तकारण ( म० स्त्री० ) निमित्त कारणम् । कारणभेद, यद् निमकी सहायता वा करत्वमे कोई वस्तु घने । नैवाधिकोक्त मतेमे कारण तीम प्रकारका है-समसाधिकारण, समसाधिकारण घो। निमित्तकारण । यद्यो-प्रसक्ति प्रति कुलानदण, यत्क, मनिम घोर सुधादि निमित्तकारण है ।

निमित्तकाम ( म० पु० ) विमेष काम ।

निमित्तकृत ( म० पु० ) निमित्त स्वकृतेन शुभाशुभमङ्गल कर्मोक्ति क्र-क्रिय । कात्, कोवा । बोधिके मष्टमे शुभाशुभ जागा प्राणा है, इमोमे हमे निमित्तकृत कहते हैं ।

निमित्तकर्म ( म० ल्य० ) निमित्त-कर्म । कारण व्यतीत, कारण मिथ ।

निमित्तक ( म० स्त्री० ) निमित्त-क । कारणत्वं, प्रयोग-लक्षणात् ।

निमित्तधर्म ( म० पु० ) निमित्त, प्रायश्चित्त ।

निमित्तमात्र ( म० स्त्री० ) निमित्त मात्रक । हेतुमात्र, कारणमात्र ।

“ नदीं पूर्वं निदिता भातं शङ्काः

निमित्तमाधं भव मध्यकाचिन् । ” ( गोवा )

निमित्तवध ( म० पु० ) निमित्त रोधादिहेतुमा वधः । रोधादि निमित्त मधादिवध । वंधो पूर्वं पक्षस्थामें यदि माय मर जाय, तो वाधनेवाचिको प्रायश्चित्त करना होता है ।

“रोधने वनयने चापि योक्ते न मर्षी दमः ।

वस्थापमरर्षं चापि निमित्तो तत्र लिप्यते ॥”

( प्रायश्चित्तसूत्र ) प्रायश्चित्त देवो ।

निमित्तविट्ट ( सं० पु० ) निमित्त शुभाशुभमन्त्रणम् वेत्तीति विट्ट-क्रिय । देवज्ञ, मन्त्रक, ज्योतिषो ।

निमित्तान् ( सं० लि० ) निमित्तमस्त्यस्य इति । १ निमित्तयुक्त कार्य । २ वधकत्वं भीट । कर्त्ता, प्रयोजक, अनुमत्ता, अनुयायक घोर निमित्तो ये पांच प्रकारके वधकचाँ हैं । प्रायश्चित्त देवो ।

निमित्तार ( म० पु० ) एक राजपुत्र, एक राजकुमारका नाम ।

निमित्त ( म० लि० ) निमित्त द्वारा मिश्रित क्रिया दुष्ठा ।

निमित्त ( सं० पु० ) नि-मित्त घञर्थे क । १ चक्षुर्निर्गोलनमध्य व्यापार, पाँवका मिचन, पनकीका गिरना । २ तदुपलक्षित कानपीद, उतना कान जितना पनक गिरनेमें लगता है, पनक मारने भरका समय । ३ पर-मेश्वर । ४ सुशुभोक्त नेत्रयर्माश्रित रोगभीद, सुशुभके अनुसार एक रोग जो पनक पर होता है ।

निमित्त-क्षेत्र ( म० स्त्री० ) नैमियारण ।

निमित्त ( म० स्त्री० ) नि-मित्त-क । १ नेत्रस्थापानभीद, पाँवका मिचन । ( ति० ) २ निमीलित, मिथा दुष्ठा ।

निमीलन ( सं० स्त्री० ) निमीलननेति नि-मील कश्चे म्युट । १ मरण, मोत । २ निमित्त, पनक मारना । ३ पनक मारने भरका समय, पन, चण । ४ पयिकाम ।

निमीला ( म० स्त्री० ) नि-मील भावे द्विधा च । १ नेत्रमुद्रण, पाँवका मूदना । २ निद्रा, भीद ।

निमीलिका ( म० स्त्री० ) निमीलयतीति नि-मील निष्-पत्तुम्, टापि पत इत्व । १ वराज, हन । २ निमीलन, पाँवकी भरक ।

निमीलित ( म० लि० ) नि-मील-क । १ मुद्रित घंटे, टुका दुष्ठा । २ मृत, मरा दुष्ठा ।

निमीश्वर ( सं० पु० ) जिनेश्वरभेद ।

निमु पारक—अंगरेज गवर्नर अनजियर जब १६८० ई०में सूरतसे बम्बईनगरमें अंगरेजी अधिवासको उठा ले गये, उस समय उन्होंने यङ्कि वणिक, निमु पारकके साथ एक सन्धि की, "निमु-पारक और ब्राह्मणगण अपने घरमें इच्छानुसार धर्मकी उपासना कर सकते हैं, कोई उसमें छेड़ छाड़ नहीं कर सकता । अंगरेज, शीलन्दाज वा अन्य खृष्टधर्मावलम्बी अथवा कोई सुसलमान उनको चतुःमोमाने मध्य रह कर प्राणहत्या अथवा उनके ऊपर किसी प्रकारका पत्याचार नहीं कर सकता, करनेसे उसे गवमंश्टको ओरसे उचित दण्ड मिलेगा । ये अपने जातीय प्रथाके अनुसार शवदाह कर सकते हैं और विवाहके समय खूब धूमधामसे शारात भी ले जा सकते हैं । बलपूर्वक कोई ईमाई नहीं बनाया जायगा और न वे उनकी इच्छाके विरुद्ध किसी कार्यमें नियुक्त हो किये जायेंगे ।"

निमुहाँ ( हिं० वि० ) जिसे बोलनेको सुँह न हो, न बोलने-वाला, चुपका ।

निमृद्य ( सं० त्रि० ) नितरां शोधनीय, जो हमेशा शोधनेके योग्य हो ।

निमूल ( सं० त्रि० ) निवृत्त मूल यस्य । १ मूलरहित । नि-मूल-क । २ प्रकाशन ।

निमुलिया—चम्पारणके मध्यवर्ती ग्रामविशेष । यह अक्षा० २६° ४५' १०" सं० और देशा० ८५° ६' ५०"के मध्य अवस्थित है ।

निमेष ( सं० पु० ) निमीयते परिमीयते इति मा-माने नि-यत् यत्प्रत्यये ईत् । ( अचोयत् । पा ३।१।८७ ) ( ईलति । पा ६।४।६५ ) १ नैमेष, बलुर्भोजा, बदला । ( त्रि० ) २ परिवर्त्तनीय, बदलने योग्य ।

निमेष ( सं० पु० ) निमित्यते नि-मिष भावे घञ् । १ पञ्च-स्यन्दनकाल, पलक मारने भरका समय, उतना धक्का जितना पलकोंके उठ कर फिर गिरनेमें लगता है, पल । पर्याय—निमिष, दृष्टिनिमीलन ।

अग्निपुराणमें लिखा है, कि पलक भरके मारनेके समयको निमेष कहते हैं । दो निमेषको एक द्रुटि और दो द्रुटिका एक सव होता है । २ पलकका गिरना,

आँखका झपकना । ३ सुस्तोत रोगविशेष, आँखका एक रोग जिसमें आँखें फड़कती हैं । नेत्रोग देखो । ४ स्वनामख्यात यज्ञविशेष, एक यज्ञका नाम ।

निमेषक ( सं० पु० ) निमेष-कन् । १ चञ्चुकीपलक । २ खद्योत, लुगन् ।

निमेषकृत् ( सं० स्त्री० ) निमेषं करोतीति कृ-क्तिप-तुक् च निमेषे निमेषमात्रकाले कृत् स्फुरणकार्यं यस्याः । विद्युत्, विजली । निमेषकालके मध्य विद्युत्का स्फुरण होता है, इसीसे विद्युत्को निमेषकृत् कहते हैं ।

निमेषण ( सं० क्ली० ) निमिष-ञ्युट् । चञ्चुरूपमौल्य, निमेष-साधन गिराभेद ।

निमेषरुच ( सं० पु० ) निमेषेण निमेषकालं व्याप्य रोचते दौष्यते रुच-क्तिप । खद्योत, लुगन् ।

निमोची ( सं० स्त्री० ) राचतविशेष ।

निमोना ( हिं० पु० ) चने या मटरके पिसे हुए हरे दानोंके हलदी मसालेके साथ घोसे भून कर बनाया हुआ रसेदार व्यंजन ।

निमोनी ( हिं० स्त्री० ) बह दिन जब ईख पहले पहन काटी जाती ।

निम्न ( सं० त्रि० ) निम्नटा स्ना अभ्यासः शोक्तमत्र वा निम्नटं स्नातीति स्ना-क । १ नीच, नीचा । पर्याय—गभीर, गभीर, गभीरक । ( पु० ) २ अनमित्तपुत्र, पनमित्तके एक पुत्रका नाम । इनके दो पुत्र थे, सत्राजित् और प्रसेन ।

निम्नग ( सं० त्रि० ) निम्न-गम-ङ । पशोगामी, नीचे जानिवाला ।

निम्नगत ( सं० त्रि० ) निम्नं गतः । जी नीचेकी ओर गया हो ।

निम्नगा ( सं० स्त्री० ) निम्नं गच्छतीति निम्न-गम-ङ, स्त्रियां टाप् । नदी, दरया ।

निम्नदेश ( सं० पु० ) तत्तदेश, निम्नभाग, निचला हिस्सा ।

निम्ब ( सं० पु० ) निवि सेचने अच, अथयोरै क्वात् म् । स्वनामख्यात वृक्ष, नीम । संस्कृत पर्याय—अरिष्ट, सर्वतोभद्र, हिङ्गुनिर्घांस, मालक, पिबुमदं, पलकान्त, पूयारि, छदंन, अकंपाट, शूकमालक, कीटक, विषम्ब,



निम्ब, कैटर्ब, गेरब, बंदि, मम, पारिमद्रक, काठकन, कोरेट, नीता, सुमना, विमोक्षप, यवनेट, पोतमार, मोत, रातमद्रक, कोदट, तिखक, प्रियमान, पायंत।

भौमकी पत्तियां छेद दो बिल्लोको पतलो सीकींहे दोनें पोर लगतो है। इनके किनारे धारकी तरह होते है। छोटे छोटे खोलपुत्र गुच्छोंमें लगते है। कनियां मो पुष्पको तरह गुच्छोंमें लगती है पोर निधोलो कदनाता है। ये कनियां निरनोको तरह सख्योहरो होती है पोर पत्तने पर विष विषे गूदेवे भर जाती है। इस कभोमें पक्ष चल रहता है। बोझोमे तेन निरकता जो कछु पवनके कारण देवन भोयधरे या जलानिके कामका होता है। नोमकी तितारे या कछु पापन प्रसिद्ध है। नोमका प्रयेक पत्र कछु पा होता है। जो धिष्ट पुराने होते है उनमे कामो कामो एक प्रकारका पनस पानी निकलता है पोर मछीनीं बहा करता है। यह पानो भा कछु पा होता है पोर नोमका मद कहलाता है। इनकी नरको मलाई निर मजबूत होती है तथा हिडाङ्ग, माङ्गो, गाय पादि चमनेके काममें पानी है। पनो टहलियां टानूतके निघे बहुत तीव्रो जाती है।

राजनिघण्टुके मनेमे इनका गुण—गोत पोर तिखक, कक, मग, लमि, ममि, मोक पोर शान्तिहारो, 'दन्तदोष पोर हृदयविटाहनामक है।

भायप्रकाशके मनेमे—गोतन, मपु, घाडो, कटुपाक, पवित्रातकर, पक्ष्म, यम, टप्या, कास, ल्वर, चरुवि पोर लमिनामक विषा, कक, लदि, कुठ, ब्रजम पोर गेरनामक।

गोमकी पत्तियां निरको हिलकर, लमि, विषा, विप, पक्ष प्रसारको चदेवि पोर कुठनामक, वातन पोर चटुपाको होती है।

गोमजसका गुण—मनेमे तिख, पाचमें कटु, भेदन, विप मपु, उष्य पोर कुठ, गुडम, धर्म, लमि पोर महेनामक।

राजप्रमथके मनेमे निम्ब मोमका गुण—कुठप्र, तिख पोर लमिनामक।

राजनिघण्टुके मनेमे गोमपुत्र—मपुत्र, लमि,

कुठ, कक, खगदोष, संचकण्टु, नि पोर मोकहारो लयां पिपल।

रघुनन्दनके निघित्तमें लिखा है कि पत्तोंमें नोम नहीं पाना पाहिये, यामे तिर्यक्योनिमे जन्म होता है।

“नामोऽपि कडारेण निरं परिपरेणु यः।  
ययं न पथग विविगे वारय मपुरो भवेत् ॥”

( रामायण २, १५, १६ ) निघेन विररन मीम उधरमे देखो। निम्ब—मताराके पसगत एक समृद्धिमानो नगर। यह सताधमे ८ मोल उत्तरमें अवस्थित है। पहले यह नगर सताराको मृत रानीके योगपुत्र राजाराम भंजुनमेंके राय था। १७५१ ई०में इनके समोप तागाबाईके पक्षभुक्त टमाशी गायकवाड़ पोर पिंगवाका घतमान युध दृषा था। गुडमें दमाजोकी जोत हुई। प्रायः बोम हजार सेनापोंने ग्रामवा नामक पार्श्ववय पर लहे रोक। ये निम्ब तक पड़ेहे गये पोर यहीं पराजित हुए। यलमें लहे वाधा हो कर कितने ही पार्श्व युग ताराबाईको देमे पड़े।

निम्बक ( सं० पु० ) निम्ब एक स्थानि कनू। १ निम्ब, नोम। २ महानिम्ब।

निम्बपाम—वहलके पसगत एक प्राचीन पाम।

निम्बतरु ( सं० पु० ) १ मन्दागुल, सकेट पक्षवत। २ निम्बतरु, नोमका पेड़। ३ पारिमद्रक, करणदका पेड़। निग्देव—एक मंझनव पण्डित। ये मझोधर पोर नागनाथके पिता तथा कमलदेवके पुत्र थे। चन्द्रपुर पाममें इनका वासस्थान था।

निम्बपत्रकनू ( सं० लो० ) पक्षनिम्ब।

निम्बपत ( सं० लो० ) निम्बतरुचय पत। नोमका पत्ता।

निम्बप्रमय ( सं० पु० ) निम्बप्र, नोमका पत्ता।

निम्बरजम ( सं० पु० ) महानिम्ब।

निम्बगी—बोत्रपुर जिसेके दखी महरमे २० मोल उत्तरमें अवस्थित एक पाम। इस पामके उत्तर-पश्चिम भागमें जनागयथे किनारे चनुमागुला एक मन्दिर है। मन्दिरका दरवाजा दोहे उत्तरकी पोर है। इसका प्रायतन बड़ा है। भीतरमें भीतारामको मूर्ति पोर एक मित्र प्रतिष्ठित है। कहते है, कि १४८० ई०में धमाई नामक किमो मीनवाकरने उक्त मन्दिर बनवाया था।

मन्दिर-निर्माणके विषयमें किम्बदन्ती है, कि धनाईकी एक गाय वखा जननेके बादसे हो दुबली पतली होने लगी। बहुत तलाश करनेके बाद एक दिन इसने देखा कि एक साँपके बिलमें गायका दूध गिरता है। यह देख धनाईने दूसरे दिनसे उसे घरमें ही बंध रखा, बाहर न होने दिया। बाद रातको उसे खप हुआ कि 'उस सर्पके बिलके ऊपर एक मन्दिर बनाओ और नौ मास तक उसका हार बन्द रखो।' तदनुसार धनाईने उसी स्थान पर एक मन्दिर बनाया और नौ मास तक दरवाजा बन्द रखा। बाद नौ मासके दरवाजा खोलने पर उसने देखा कि एक लिङ्ग और सौतारामकी मूर्ति शर्दसमाप्त-वस्त्रांमें वर्तमान है।

निम्बवीज (सं० पु०) १ राजादनौहृष, क्षीरिणो, क्षिरनोका पेड़। २ नोमका बोया।

निम्बाक (सं० पु०) कोपफला, कागजी नीबू।

निम्बादित्य—वैष्णवसम्प्रदायके निमातृगाथाके प्रवर्तक। यह एक विख्यात पण्डित और साधु पुरुष थे। तथा हन्दावनके समोप ध्रुव पहाड़ पर रहते थे। वहीं पर इनके शिष्योंने इनके मरने पर गद्दी स्थापित की। वैष्णवोंका यह एक पवित्र तीर्थ-स्थान माना जाता है। इनके पिताका नाम जगन्नाथ था। बचपनमें जगन्नाथने इनका नाम भास्वराचार्य रखा था। बहुतसे लोग इनके सूर्यके चक्षुमें लवण बतलाते थे। इसका कारण यह था, कि ये लवणके बड़े भारी भक्त थे। इनका दूसरा नाम निमानन्द भी था। भक्तोंके मानकी रक्षा करनेके लिए नारायणने सूर्यरूपमें भाविभूत हो उनकी प्रार्थना पूरी की थी। इस विषयमें एक किंबदन्ती इस प्रकार है,—

किसी समय एक दण्डी (किसीके मतसे जैन-मन्यासी) इनके समीप पहुँचे। दोनोंने शास्त्रीय विचार होने लगे। सूर्यास्त हो रहा था, निम्बादित्यने आश्रमागत भतियकी शान्ति दूर करनेकी इच्छासे कुछ खाद्य सामग्री इकट्ठे की और उनसे ज्ञानेकी कक्षा। किन्तु सूर्यास्तके उपरान्त उनका भोजन करनेका नियम नहीं था। इस पर भास्वराचार्यने सूर्यकी गति रोक रखी और जब तक उनका भक्षण तथा भोजनकार्य

शेष न हो गया, तब तक सूर्यदेव उनको प्रार्थना और भक्तिमें मोत हो निकटस्थ एक निम्बवृक्ष पर छिपे रहे। सूर्यदेवने उनकी भाष्ठाका पानन किया था, इस कारण भास्वराचार्य तभीसे निम्बाक या निम्बादित्य नामसे प्रसिद्ध हुए।

सूर्यके बाद उनके प्रधान शिष्य श्रीनिवासाचार्य उनके उत्तराधिकारी हुए। इनके बनाए हुए जय-स्तवराज, शुक्लस्मरा, दगडो तो वा मिहान्तरद, मधु-सुखमदन, वेदान्तस्वबोध वेदान्तपारिजातसोम, वेदान्तमिहान्तपदीप, स्वधर्माध्वबोध, ऐतिह्यतत्त्वनिश्चल आदि कई एक ग्रन्थ मिलते हैं।

निम्बाक (सं० पु०) १ निम्बादित्य। २ निम्बादित्यका चलाया हुआ वैष्णव सम्प्रदाय।

निम्बाक शिष्य—शिटगोता और संन्यासपद्धति नामक ग्रन्थके रचयिता।

निम्बू (सं० स्त्री०) निधि मेवने ल वययोरैक्यात् मः। नीबू। संस्कृत पर्याय—निम्बूक, भन्तजम्बीर, दन्ताघातगोधन, भन्तसार, वड्डिवीर, दीप्त, वड्डि, दन्तगठ, जम्बीरज, यम्भ, रोचन, जम्बीर, शोधन, दीपक।

विशेष विवरण नीचे इन्द्रमें देखो।

निम्बूक (सं० पु०) भन्तजम्बीरवृक्ष, कागजी नीबू।

निम्बूकपानकम् (सं० स्त्री०) निम्बूरस, नीबूका शरबत।

निम्बूकपानक (सं० स्त्री०) पानोयधीद। एक भाग नीबूके रसमें छः भाग चीनीका जल डाल कर उसमें लवण और मिर्चका चूर्ण मिला देते हैं। इसीको निम्बूकपानक कहते हैं। यह बहुत सुगन्धित होता है।

भावप्रकाशके मतसे इसका गुण—प्लव्यन्, वातनाशक, घनिदीपक और रुच्य है तथा समस्त आहारमें पाचकका काम करता है।

निम्भ—धारवारसे ८ मील उत्तरमें अवस्थित एक ग्राम। इस ग्रामसे १३ मील दक्षिण-पश्चिममें श्रीदत्तात्रेयका देवताका बना हुआ एक मन्दिर है। महाइके महान्त जनार्दन भर्तृनि करीब १०० वर्ष हुए, मन्दिरका निर्माण किया है। इसकी लंबाई ६ फुटके कम नहीं होगी। मन्दिरके मध्य जमीनके नीचे एक कुतार है। वारह गोलाकार स्तम्भ और चार चतुष्कोणकृत स्तम्भ

के ऊपर हस्त टिकी हुई है। कुठारमें टटनासेय पीर दग घवतारकी शक्ति पङ्क्ति है। आद्यादि कर्मके लिए यह स्थान बहुत प्रसिद्ध है।

निघृत् ( मं० स्त्री० ) नि-घृत्, क्विप्, । नितरां गमन, प्रगातार चञ्चते रहना ।

निघृत्ति ( मं० स्त्री० ) निघृत्ति । चञ्चलगमन ।

निघ्रोष ( मं० पुं० ) नि-घुष्-घञ्, । चान्तमय, सूर्यका चञ्चल भोग ।

निघ्रोषनी ( मं० स्त्री० ) चदपकी नगरीका नाम जो मानसोच्चर वर्णतकें पवित्र है।

निघ्रोषा ( मं० स्त्री० ) एक पक्षराश नाम ।

निघ्रोषि ( मं० पुं० ) मातृत्वशैलीय भङ्गमानके एक पुत्रका नाम ।

निघ्न ( मं० लिं० ) नि-घ्न-त्, । १ संघ्न, छतणंघम, नियम दास स्थिर, संघा दृषा । २ घ्निर, उडराया दृषा, ठोक किया दृषा, मुकरँर । ३ नियोजित, स्थापित, प्रतिष्ठित, मुकरँर, तौनात । ४ घासल । ( पुं० ) ५ महादेव, गिब । ६ गन्धक ।

निघ्नमानस ( मं० लिं० ) निघ्नं मानसं येन । संघं-तन्द्रिय, जितमानस, जिसने इन्द्रियाकी वशसे कर लिया है।

निघ्नव्यवहारिककाल—ज्योतिःशास्त्रोक्त पुस्तकालनिर्गम, ज्योतिर्नमें पुषा, दास, मत्त, याद, यासा, यिवाइ इत्यादिकें लिए निघ्नत समय ।

काजमान जो प्रकारके माने गए हैं, सोर, मावन, चान्द्र, भास्व, पितर, दिव्य, प्राजापत्य ( मत्स्यार ), ब्राह्म ( क्षत्र ) सोर साङ्गत्तरा । इनमेंसे ऊपर निघो-याताके लिए तीन प्रकारके काजमान लिए जाते हैं— सोर, चान्द्र सोर मावन ( मं० क्कान्ति, उरतारावच, दक्षि-बायल भादि पुषाकाल सोर कालके अनुसार निघ्नत किए जाते हैं। त्रिदि, कारव, विवाह, सोर, मत्त, उषाम सोर याता इत्यादिमें चान्द्र काज लिया जाता है । १२म, मत्त ( चतुर्द ), चान्द्रायच भादि मावभिन्न, वृष दिनाधिपति, मानाधिपति, वर्षाधिपति सोर चरौकी मघान्तिका आदिका निघ्नत चावत्काल द्वारा होता है।

निघ्नन्ना ( मं० लिं० ) निघ्नन्, चान्ता येन । संघ्न-

न्द्रिय, चवने ऊपर प्रतिबन्ध रखनेवाला, चवने पात्रकी वशसे रगुनेवाला ।

नियतामि ( मं० स्त्री० ) नियता नियता चामिः । नाटकमें प्रारंभ कार्यको चवव्याभेद, नाटकमें चव्य उपायोंकी सोह एक हो उपायसे फल प्राप्तिका निघ्य ।

चपायाभावसे निर्धारित जो एकाल फलप्राप्ति है, उसीको नियतामि कहते हैं। उदाहरण—रात्राने कषा, देवीके चतुर्दशके मिवा सोर कोई उपाय नहीं देवता हैं। यहाँ पर कार्यसिद्धि सम्पूर्णरूपसे देवसिद्धिके ऊपर निर्भर है। देवके प्रसन्न होने पर निघ्य ही फलकी प्राप्ति होगी, इस प्रकारकी फलप्राप्तिको नियतामि कहते हैं।

नियताहार ( मं० लिं० ) नियत पादार येन । परिमिता-हारी, घोड़ा चानेवाला ।

नियति ( मं० स्त्री० ) नियत्यतेऽनया नियम-करणे लिन् । १ भाग्य, देव, चष्ट । २ नियम, चञ्चल । ३ स्थिरता, मुकरँरी, उडराय । ४ चवम्य होनेवालो बात, चञ्चो पुदें मात । ५ पूर्वज्ञत कर्मका परिणाम जिनका होना निघ्य होता है । ६ जङ्ग, प्रकृति । ७ चतुर्दशप्राप्तिसे देवव्योपितोकी चञ्चतमा स्त्री ।

नियती ( मं० स्त्री० ) निघ्यने कालो यया, नियम-क्षिप्, बाहुकलात्, डोय, दुर्गा, भगवतो ।

नियतेन्द्रिय ( मं० लिं० ) नियतानि इन्द्रियाणि येन । संघंतन्द्रिय, इन्द्रियदमनमोल, इन्द्रियकी वशसे रहने-वाला ।

नियतोप्य ( मं० स्त्री० ) नि-घ्न-तव्य । नियमनीय, दमन योग्य, शासन योग्य ।

नियन्ता ( लिं० पुं० ) निघ्यत देखो ।

नियन्सच ( मं० स्त्री० ) नि-घन्ति-स्युट् । प्रतिबन्ध दूरी करव, चक्षत म्यावनायं व्यापारभेद ।

निघ्नजित ( मं० लिं० ) नि-घ्नन्ति क्त । १ चबाध, चन्-मं० । २ छतनिघ्नम । ३ प्रतिबन्धादि द्वारा एकल म्यापित, नियमने संघा दृषा, कावदेहा चामंद ।

निघ्नत ( मं० लिं० ) निघ्नन्ति चान्तादोनिति नि-घ्न-त्यच् । १ नियमकारी, नियम चानेवाला, कावदा चानने-जाया । २ विभायक, कावका चाननेवाला । ( पुं० )

३ अन्ननियमकारी, घोड़ा केरनेवाला, सारथि । ४ विष्णु, भगवान् । ५ शिचक, नियम पर चलनेवाला शासक । नियम ( सं० पु० ) नियमनमिति नियम-अप । १ प्रतिष्ठा, अज्ञोकार । २ विधि या निश्चयके अनुकूल प्रतिबन्ध, परिमिति, रोक, पाबन्दो । जैनधर्ममें चोदह वसुधंके परिमाण वांधनेको नियम कहा है—जैसे द्रव्यनियम, विनयनियम, उपानहनियम, तास्त्रनियम, आहार-नियम, वस्त्रनियम, पुष्पनियम, वाहननियम, शय्यानियम, इत्यादि । ३ शासन, टबाव । ४ परम्परा, वन्धा कृपा क्रम, दस्तूर । ५ श्ववस्था, पहल, विधि, कायदा, कानून, जास्ता । ६ निश्चय । ७ ऐषो आतका निर्धारण जिनके होने पर दूसरो बातका होना निर्भर किया गया हो, शत । ८ योगाङ्गविशेष । पातञ्जल-दर्शनमें इसका विषय इस प्रकार लिखा है,—

यम, नियम, आसन और प्राणायाम आदि योगके आठ अङ्ग हैं । योगाभ्यास करनेमें दूसरे दूसरे यम-नियमादिका साधन करना होता है । पहले यम, पीछे नियम है अर्थात् यम नामक योगाङ्गके सिद्ध हो जाने पर नियमयोगाङ्गका अनुष्ठान किया जाता है । अहिंसा, सत्य, अक्षय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह इन पांच प्रकारके कार्योंका नाम यम है । यमयोगाङ्गका अनुष्ठान करके नियमयोगाङ्गका साधन करना पड़ता है । इनमें सत्त्वमें यमयोगाङ्गका विषय लिखा जाता है । पहले अहिंसा-अनुष्ठान है, केवल प्राणिवध नहीं करनेसे ही अहिंसा-अनुष्ठान सिद्ध होता है सो नहीं, किसे उपलक्षमें वा किसी समयमें प्राणियोंको कायिक, वाचिक वा मानसिक किसी प्रकारका कष्ट नहीं देनेसे ही अहिंसा-अनुष्ठान सिद्ध होता है । इस-अहिंसाअनुष्ठानकी पराकाष्ठा प्राप्त करनेसे चित्त निर्मल रहता है । अहिंसाअनुष्ठानके बाद सत्यानुष्ठान है । सत्यनिष्ठ होनेसे चित्त शीघ्र ही योगशक्ति लाभ करनेके योग्य हो जाता है । इसके बाद अचोय है । इसके साथ ब्रह्मचर्यका करना आवश्यक है । ब्रह्मचर्यका मूल पद चौयधारण है । शरीरमें शुकधातु यदि पुष्ट रहे, विह्वल, स्थूलित वा विचलित न हो, अचल, अटल वा स्थिरभावसे रहे, तो सभी बुद्धीन्द्रिय और मनकी

शक्ति बढ़ती है । चित्तको प्रकाशशक्तिको भी उद्वि होतो है । ब्रह्मचर्यके साथ अपरिग्रहवृत्तिको अवलम्बन करना होता है । लोभपूर्वक द्रव्यहरणका नाम परिग्रह है । केवल देहयात्रा निर्वाहके वा शरीररक्षाके उपयुक्त द्रव्यस्वीकारकी परिग्रह नहीं कहते । इस प्रकार अनुष्ठान करनेका नाम अपरिग्रह है । इस अपरिग्रहसे चित्तमें योगोपयुक्त वैराग्यका बीज उत्पन्न होता है । अहिंसादि पांच प्रकारके यमजाति देग और कानसे विशिष्ट नहो' होते ।

यमयोगाङ्गके दृढ़ हो जानेसे नियम नामक योगाङ्गका अनुष्ठान करना होता है ।

शौच, सन्तोष, तपस्य, स्वाध्याय और ईश्वर-प्रणिधान इन पांच प्रकारको अनुष्ठेय क्रियाओंका नाम नियम है । शौच दो प्रकारका होता है—बाह्य और आन्तरिक । जल, मिट्टी, गोबर आदिसे शरीरको साफ रखना बाह्यशौच है । कर्षणा, मैत्री, भक्ति आदि सात्त्विक वृत्तियोंको धारण करना आन्तरिक शौच है । इस प्रकार अनुष्ठान करनेसे शरीर और मन विशुद्ध हो जाता है तथा अमृत नामक चैताका वा पाशात्मिक तेजमें शुद्धता और सव्यता आ जाती है ।

सन्तोष, टम ; (विना परिश्रमके जो लाभ हो, उसीमें परिश्रम रहना चाहिए) कुछ दिन तक इस योगाङ्गका अनुष्ठान करनेसे सन्तोषचित्तमें दृढ़ हो जाता है । तपः, स्वाध्याय और ईश्वरप्रणिधान—अज्ञापूर्वक शास्त्रीक व्रत नियमादिके अनुष्ठान करनेका नाम तपसा है । प्रणव आदि ईश्वरवाचक शब्दके जप अर्थात् अथवा स्मरणपूर्वक उच्चारण और प्रध्यात्म शास्त्रके समाप्तुपस्थानमें रत रहनेका नाम स्वाध्याय है । भक्तिपूर्वक ईश्वरार्पितचित्त हो जो कार्य किया जाता है, उसे ईश्वर-प्रणिधान कहते हैं । इन तीन प्रकारको क्रियाओंका नाम क्रियायोग है । विना तपसाके योगसिद्ध होनेको सम्भावना नहीं । क्योंकि मनुष्यके चित्तमें अनादिकाशको विषयवासना और अविद्या बद्धमूल हो पड़े है । विना तपसाके उसका दूर होना सम्भव नहीं है । चित्तमें वासनानके रहनेमें योग ही नहीं सकता । इस वासनानाशके लिए तपसा अवश्य विधेय है । इन मध

विद्यायोगीनिं यदि मुनयुक्ता यमुत्तम पर महे, तो बहुत पक्का ; नहीं तो एक एक करके करना चाहिए । हम नियमयोगादिके पाठना होनेसे एक एक गति प्राप्त होती है ।

पहले पढ़ि-पाठिको प्रतिष्ठा हो जानेसे तैरव्याग पाठि गठिहा नाम होता है । मम देना ।

नियमका प्रथम यमुत्तम मान है । जो मोक्षको सिद्धि दाना परमें शरीरक प्रति गुच्छ प्राप्त उत्पन्न होता है और पासाङ्गकी इच्छा भी दूर हो जाती है । बाह्य मोक्षका अन्धम ज्ञान करने क्रमशः प्राप्तशरीरके प्रति एक प्रकारको घृणा पैदा होती है । उस समय जन्म-मृत्यु तक तो तत्त्व-मार्गमें और मनमूढादिमय चन्द्र-विकार शरीरके प्रति किमो प्रकारकी पाश्या वा पादर नहीं रहता और पाशरीरसंनर्गकी इच्छा भी दूर हो जाती । पाश्यात्तर मोक्षका पारम्भ करनेसे पहले मन्त्र-गुदि, गीदे एकाधता और पालन-मन्त्रमत्ता होती है । भावगुच्छिप्य पाश्यात्तर मोक्ष जब धरम सोमा तत्र पद-व जाता है, तब पत्ताःकरव ठेमा यमुनपूर्व सुखमय और पहागमय हो जाता है, कि उस समय छेदका कुल भी यमुभव नहीं रहता । हम पूर्व परिश्रमताका दूरा नाम मोक्षमत्ता है । मोक्षमत्के उदय होनेसे एकाधतागति प्रादुर्भूत होती है ; एकाधतागतिके उत्पन्न होनेसे इन्द्रियमय और इन्द्रियमय होनेसे हो विशा भागदुर्गम-मि समय होता है ।

मन्त्रोय होनेसे योगी एक प्रकारका यमुत्तम गुण प्राप्त करता है । यह सुखविषय निरपेक्ष है, सुखी यह सुख निरदिमय है ।

तपसा क्रमसे दृढ़ हो जाने पर तपोनिष्ठ होता है । महाभक्तिसे तदुत्तमविश हो कर हृत्पुत्रमगुनि माया-निरिक्त तपस्यामें रत रहनेसे शरीर वा मनके गतिविनि-कम्ब प्राप्तका पारम्भ मृत हो जाता है । सुखी उस समय तप-निष्ठयोगी शरीर या इन्द्रियको जिस और पाठों, उस और पुमा मकने है । उस समय ये अपने शरीरको इच्छामुक्त छोड़ा या वडा दना मकने है ।

पाश्यापका उत्पन्न होनेसे इष्टदेवता देवदेवमें पाने है । अन्तर्गत हो सर्वदा मन्त्रमय, इष्टमन्त्रमय,

देवता या मन्त्र-पाठ यद्यवा अन्य किमो प्रकार माया-मायाका पाठ करने करते जब वह परिवर्तन यवस्थामें था जाता है, तब उस पाश्यागति का जगदियरावय योगीके इष्टदेवता ऐश्वर्यमें पाने है ।

ईश्वर प्रविधान—ईश्वरमें विमलनिवेग सब दृष्ट हो जाता है, तब अन्य कोई माधन नहीं करनेसे भी उच्छ्र-तर ममाधि नाम होती है । ईश्वरविधाता योगी-की योगनाभते लिए अन्य किमो योगाङ्गका यवमन्त्र नहीं करना होता, एकमात्र भक्तिवचने हो ही ईश्वरमें समाहित हो जाते हैं । भक्त योग देवन भक्तिके द्वारा ही ईश्वरको उद्घोषित या प्रमथ करके उन्ने यमुत्तमके तेजसे प्राप्तकी गती दृष्ट और विप्रनमूहकी नाप कामे है तथा ओहे निवृत्तिव्यक्तमें समाहित और योगफल हो पाने है ।

याज्ञवल्क्य-स्मृतिमें चोदक नियम गिनाए है—स्नान, मोन, उपवास, यज्ञ, पीदवाक, इन्द्रियनिषेध, गुहमेना, मोष, अक्रोध, परमाद, तुष्टि, मन्त्रोय, उपव्यनिषेध पर्याप्त मन्त्रधर्म और इत्या ।

विष्णुपुराणमें नियम है, कि योगी यदि पाने मनकी तत्त्वज्ञानके उद्योगी बनना चाहें, तो पहले निष्काम-भावमें मन्त्रवर्ग, पढ़ि-ना, मन्त्र, अज्ञीय और उपरिपद इन पाँच वर्गोंका एवं व्याख्याय, मोन, मन्त्रोय, तपस्या और ईश्वरप्रविधान इन पाँच नियमोंका यमुत्तम करे ।

( विष्णुपुरा १ अंश ७ भा० )

तन्त्रसारके दश नियम यतनाया है यथा—तपस्या, मन्त्रोय, पाश्याना, दान, देयपुत्रा, विद्यालक्षणवत्, क्रो, मति, जप और होम ।

सैनसाधर्म मन्त्रव्यधर्मके यत्नामें १२ प्रकारके नियम कहे गए हैं—प्राधान्यातविरमय, स्वाहावाट-विरमय, चन्द्रदानविरमय, मेघुनविरमय, परिपह-विरमय, द्विप्रम, भोगीययोग नियम, धर्मावैदिकद्विव, सामयिकमिच्छान्त, देहामहागिक मिच्छान्त, पोषय और प्रतिनिवृत्तिमात । ८-विष्णु । १० महादेव, निव । ११ विधिभेद । १२ एक यत्नात्तर नियमों द्विभि ज्ञानका एक ही स्थान पर नियम कर दिया जाय यत्नात्तक हीना एक ही स्थान पर यतनाया जाय ।

नियमसूत्र (सं० त्रि०) नियमोंके अधोल, नियमोंसे बंधा हुआ।

नियमन (सं० स्त्री०) नियम भावे ल्युट्। १ नियम-शब्दाद्यः। २ नियमबद्ध करनेका कार्य, कायदा बांधना। ३ शानन। ४ निव्यवृत्त, नीसका पेड़। (त्रि०) नियम ल्युट्। ५ नियामक, नियम करनेवाला, नियम या कायदा बांधनेवाला।

नियमपत्र (सं० स्त्री०) नियमस्य पत्रं। प्रतिज्ञापत्र, सन्धिपत्र, शर्तनामा।

नियमपर (सं० त्रि०) नियमो परः। नियमानुवर्त्ति, नियमाधीन।

नियमबद्ध (सं० त्रि०) नियमोंके अनुकूल, नियमोंसे बंधा हुआ, कायदेका पाबंद।

नियमभङ्ग (सं० पु०) नियमस्य भङ्गः। प्रतिज्ञाभङ्ग, नियमका उल्लंघन करना।

नियमवत् (सं० त्रि०) नियमो विद्यतेऽस्य नियम-मत्पु, मस्य व। नियमयुक्त, नियमवशित।

नियमसेवा (सं० स्त्री०) नियमोऽन भगवतः सेवा। कात्तिक-मासमें नियमपूर्वक भगवदाराधना, नियमपूर्वक ईश्वरोपासना। हरिभक्तिविलासमें इसका विवरण इस प्रकार लिखा है,—

आश्विन मासकी शुक्ल-एकादशीसे नियमपूर्वक कात्तिक व्रत करना चाहिए। जो कात्तिकव्रतानुष्ठान नहीं करते वे जन्मजन्मोपाजित पुण्यके फलभोगी नहीं होते हैं।

नियमस्थिति (सं० स्त्री०) नियमोऽन स्थितिरत्र। तपस्या। नियमानन्द—निम्बाका दूसरा नाम। निम्बादित्य देखो।

किसी किसीका कहना है, कि इस नामके निर्वाक-ने वेदान्तसिद्धान्त नामक एक संस्कृत ग्रन्थ लिखा है।

नियमित (सं० त्रि०) नियम-णित्, ण। नियमबद्ध, नियमोंके मोतार लाया हुआ, कायदे कानूनके सुताविक।

नियमी (सं० पु०) नियमका पालन करनेवाला।

नियम्य (सं० त्रि०) नियम-यत्। १ प्रतिबद्ध होने योग्य, नियमित करने योग्य, नियमोंसे बांधने लायक। २ शासित होने योग्य, रोके या दबाए जाने योग्य।

निययिन् (सं० पु०) नी-भावे क्तिप्, निये नयनाय

इतः प्रभुः बाहुलकात् अणुक, मभाम। रय ऋट्ग सर्वाभि-मत प्राप्तिसाधन।

नियर (हिं० अथ०) समोप, पान, नजदोक।

नियार्ह (हिं० स्त्री०) सामोप्य, निकटता।

नियाराना (हिं० क्ति०) पान होना, निकट पहुँचना।

नियव (सं० पु०) नियु-मिथणे षेदे बाहुलकात् पप, मिथोभाष।

नियार्गवरेवार्ह—एक छोटा राज्य। इसका चैत्रफन ई. ५५० मीन है। बुन्देलखण्डके दक्षिणतक वंशधर लक्ष्मण-सिंहने छटिय गवर्मेण्टवे (१८०० ई०में) पांच ग्राम मनदमें पाए थे। १८०८ ई०में उनको मृत्यु होनेके बाद उनके पुत्र जगत्सिंह सिंहान पर बैठे। यहाँके राजाको पचास सेना रखनेका हक है। गवर्मेण्टको दग हज़ार रुपये करमें देने पड़ते हैं।

नियतन (सं० स्त्री०) नियत णित् ल्युट्। निगतन, नाग या ध्वंस करनेका कार्य।

नियान (सं० स्त्री०) नियमोऽन यानि गावो यत्र या आधारे ल्युट्। गोठस्थान, गोशाला।

नियाम (सं० पु०) नियम पक्षे घञ्। नियम।

नियामक (सं० त्रि०) नियम-णित्, ण्वुम्, १ नियम करनेवाला, नियम वा कायदा बांधनेवाला। २ व्यवस्था करनेवाला, विधान करनेवाला। ३ मारनेवाला। (पु०) ४ पोतवाह, मन्नाह, माफो।

नियामकगण (सं० पु०) रसायनमें पारेकी मारनेवाली षोषियोंका समूह। सर्पोंको, बककड़ी, सतावर, यंछाहुली, सरफोंका, गदहपूर्णा, मूलाकानी, मत्स्याचो, ब्रह्मदण्डो, शिवुडिनि, अनन्ता, काकजंघा, काकसाचो, पोतिक (पोरिका माग), विष्णुक्रान्ता, पोली कटसरैया, सहदेइया, महाबला, बला, नागबला, मूर्वी, चक्रवर्त्त, करंज, पांठा, नील, गोजिद्धा इत्यादि।

नियामत (सं० स्त्री०) १ पक्षस्य पदाय, दुर्लभ वस्तु। २ खादित भोजन, उत्तम भोजन, मजेदार खाना। ३ धन, ऐश्वर्य, माल।

नियामिका (हिं० वि०) नियम करनेवाली।

नियार (हिं० पु०) लोहरी वा सुनारोंको दूकानका कुड़ा कतवार।

नियोग ( हि० दि० ) १. पुनः, पुनः, पुनः । ( पु० )  
 २. पुनः ही वा जोहरिणीं गृहीता कृष्ण करण्ड ।  
 नियोगि ( हि० पु० ) १. अनुमत्त, सभाक पादमी ।  
 २. निम्नो दूरे वसुधीही पुनः पुनः करिनेवासा । ३.  
 गण जो पुनः ही वा जोहरिणीं ही राय, कृष्ण करण्ड  
 पादमिने मन्त्र निजामता हो ।  
 नियुक्त ( सं० वि० ) नियुक्त-क । १. पधित्त, पधित्त  
 जिया दूषा । २. नियोजित, मगाया दूषा । ३. वेरित,  
 लय रिया दूषा । ४. पधित्त, स्थिर डिशा दूषा,  
 लरगाया दूषा । ५. मगाया दूषा, लीला दूषा, तीगत,  
 मुकरं ।  
 नियुक्ति ( सं० ली० ) मुकरं ही, तीगाती ।  
 नियुक्ति ( सं० पु० ) नियुक्तमि वि. गु. वा युक्ता  
 यत् । ( निरि )  
 नियुक्त ( सं० ली० ) नियुक्तं वदुनं मगायतेऽनेनेनि, नि-  
 युक्त । १. लय, वद माय । २. दग लय, दग माय । नियुक्त  
 दग्गा मगायः दग लयमें ही पयकार दूषा करता है ।  
 नियुक्तोच ( सं० वि० ) नियुक्तः इदं नियुक्तुः ।  
 वायुदेवताके कर्मः पति ।  
 नियुक्त ( सं० पु० ) नियुक्तोऽगताः मगायते मनुष्य-मदय  
 यः । वायु, दूषा ।  
 नियुक्ता ( सं० ली० ) मगतमं गीय मगायते राजाको लीका  
 मगा ।  
 नियुक्त ( सं० ली० ) नियुक्तः । वायुदेव, वायुदेव,  
 वृत्ती ।  
 नियुक्त ( सं० वि० ) नियुक्त नियोजितो नियुक्तो वा वदो  
 यद । लामिने निवे नियोजित रय ।  
 नियुक्त ( सं० ली० ) नियुक्त-लय । नियुक्त,  
 नियोजित कर्म योग्य ।  
 नियुक्ता ( हि० पु० ) १. नियोजित करिनेवासा, मगायि-  
 वासा । २. नियोग करिनेवासा ।  
 नियुक्त ( सं० वि० ) नियुक्त-लय । नियुक्त देवो ।  
 नियुक्त ( सं० पु० ) नियुक्त-लय । १. वेरित, कायं  
 मगत करता । २. दयपयत्तादि लीयत द्वारा मगायत ।  
 ३. लय, वद माय । ४. पति । ५. वदुनं मगाय-  
 तेऽनेनेनि, नियुक्त, पुन पुनः मगायते करिने निवे  
 नि वलाक लीयते ही मगायते ही ।

नियोगविधि का विषय मनुष्ये रम प्रकार किया है ।  
 यदि पदने मगामिने ही समान लयप न हो, तो ली  
 पदने देव र पयवा पतिवे पोर किसी मगायते मगायत  
 लयप करा सकतो है । रात ही मीगायत मगायत  
 लामो वा गुद कण्डक नियुक्त व्यक्त विध । लीने देव  
 एव मगायत लयप कर सकता है । किसी किसी पाथाप-  
 का मत है, कि एक मगायत द्वारा नियुक्त ही नियोग-  
 लयप करिने मगायत ही मगायत, रम कारण लय ली  
 पोर नियोजित व्यक्त ही मगायत लय लयप कर सकतो  
 है । नियोजित लयप मा कनिष्ठ भ्राता यदि मगायत-  
 लामो न हो कर नियोगविधि का लयप करे, तो लने  
 मगायत करता होता है । ( मनु ८. ४० ) पर कनिमें  
 यद लीनि मगायत है ।  
 नियुक्तो ( सं० वि० ) नियुक्तोऽगताः मगायते नियुक्त-लय ।  
 १. नियोगविधि, जो नियोग किया गया हो, जो मगायत  
 वा मुकरं किया गया हो । पयं-लय मगायत, वायु,  
 मगायत । २. जो किसी लीने मगायत नियोग करे ।  
 नियुक्त ( सं० वि० ) नियुक्त मगायत । लामिने  
 नियुक्तो, काममें मगायत, मुकरं करिनेवासा ।  
 नियुक्त ( सं० ली० ) नियुक्त पयत । लय पय लामिने  
 किसी मनुष्यको नियुक्त का विषय लिया रहता है ।  
 नियुक्ति ( सं० पु० ) नियुक्तं इति विधा-जि. नियो-  
 गय विधिः । किसी कार्यमें नियुक्त करिनेको मगा ।  
 नियुक्त ( सं० पु० ) नियुक्त करिनेका लयप ।  
 नियुक्त ( सं० वि० ) नियुक्त मगायत, नियुक्त-लय । नियो-  
 गय, नियोग करिने योग्य ।  
 नियुक्त ( सं० पु० ) नियुक्तमि नि-युक्त-लय-लय ।  
 नियुक्तो, काममें मगायत, मुकरं करिनेवासा ।  
 नियुक्त ( सं० ली० ) नियुक्त-लय । १. नियोग ।  
 २. वेरित, किसी काममें मगायत, लीगत वा मुकरं  
 करता । ३. मगायत, लयप, लयप ।  
 नियुक्त ( सं० वि० ) नियुक्त दूषा, मगाया दूषा,  
 मुकरं, लीगत ।  
 नियुक्त ( सं० वि० ) नियुक्त मगायत, नियुक्त-मगायत  
 लय मगायत मगायत । १. नियुक्त, नियोग करिने  
 योग्य, ली नियुक्त करिने कायिण ही ।

नियोजन—(सं० पु०) नियुक्ते इति नियुञ्जन्च् ।  
१ कुकट, मुर्गा । २ राहुयुद्धकारी, मलयोद्या, कुशो  
लहनेवाला, पहलवान ।

नियोजन (सं० पु०) नियोजन देखो ।

नियोजन (सं० स्त्री०) सर्पपपष्ठाद्यमान, एक परिमाण  
जो सरसोंके छठे भागके बराबर होता है ।

निर (सं० अश्व०) नृ-क्षपण न दीर्घ । १ वियोग ।

२ प्रायय । ३ घाटेश । ४ अतिक्रमः । ५ भोग । ६  
निश्चित । निर एक उपसर्ग-भो है जो धात्वादिके  
पहले रह कर अर्थ प्रकाश करता है, यथाक्रम उसका  
उदाहरण लिखा जाता है । १ निःसङ्ग । २ निर्मिष ।  
३ निर्देश । ४ निष्क्रान्त । ५ निर्वेश । ६ निश्चित ।  
७ निषिध ।

निरेश (सं० पु०) निर्गतो अंशात् । १ सूर्यभुज्यमान  
राशिकी प्रथम राशिका तीसवां भाग, राशिके भोगकाल-  
का प्रथम घोर शेष दिन, संक्रान्ति । (त्रि०) निर्गतो  
भागो यस्य । २-भागरहित, जिसे उसका भाग न  
मिला हो ।

पतित, उसका पुत्र और क्लेश आदि निरेशक अर्थात्  
भागहीन हैं, इन्हें सम्पत्तिका भाग नहीं मिल सकता,  
केवल प्रतिपालनके लिए कुछ दे देना चाहिए । ३ विना  
अर्थात् ।

निरिक्षण (त्रि० वि०) १ खाली, खालिस, विना मेल-  
का । २ खच्छ, माफ ।

निरक्ष (सं०) निर्गतः अक्षस्तदुचित यस्य । अक्षोन्नति-  
गन्तदेश, निरक्षदेशः ग्रन्थोको उत्तरार्धे और दक्षिणार्धे  
दो भाग करनेमें जिस रेखा द्वारा भाग करते हैं उसे  
क्षिति और उसके ऊपरवाले देशोंको निरक्षदेश कहते  
हैं । निरक्षदेशमें रात और दिन बराबर होता है ।  
पूर्वमें भद्राश्वयुज्य और यमकोटि, दक्षिणमें भारतवर्ष  
और खंडा, पश्चिममें केतुमालवर्ष, रोमक, सातरकुह  
और सिद्धपुरी निरक्षदेश कहें गए हैं । सूर्य इन सब  
देशोंको विषुवरेखा हो कर जाता है, इसीसे दिन और  
रातका मान बराबर होता है ।

निरक्षर (सं० त्रि०) १ अक्षररम्य । २-जिसने एक  
अक्षर भो न पढ़ा हो, अनपढ़ा, मूर्ख । जैसे—निरक्षर  
महाशय—पंडित वंश हुआ मूर्ख ।

निरक्षर (सं० स्त्री०) नाडीमण्डल, निरक्षर, क्रान्ति-  
हत्त ।

निरक्षणा (त्रि० क्रि०) देखना, ताकना ।

निरगुनिया (त्रि० वि०) निःशुनी देखो ।

निरगुन (त्रि० वि०) जिसमें गुण न हो या जो गुणो न  
हो, अनाडी ।

निरग्नि (सं० पु०) निर्गतोऽग्निस्तत्प्राश्रयकार्यं यस्मात् ।  
श्रौत और स्मार्त्त अग्निसाध्यकर्मरहित ब्राह्मण, वह  
ब्राह्मण जो श्रौत और स्मार्त्त विधिके अनुसार अग्निकर्म  
न करता हो ।

निरग्नि ब्राह्मणको हमेशा एकोद्विष्ट आह-विधिकी  
अनुष्ठान करना चाहिए । सागिकब्राह्मण यदि अग्निका  
परिव्याग करे, तो उसे पुत्र-इत्यादि समान पाप लगता है ।  
मनुने अग्नि-परिव्यागको उपपातक बतलाया है ।

निरङ्ग (सं० त्रि०) निर्नाम्नि अङ्ग इव प्रतिबन्धको  
यस्य । १ प्रतिबन्धशून्य, जिसके लिये कोई अङ्ग या  
प्रतिबन्ध न हो । २ अनिवार्य, जो निवारण करनेयोग्य  
न हो । ४ खेच्छारी, विना डर दावका, वै-कहा ।

निरङ्ग (सं० त्रि०) निर्गत अङ्गं यस्य । १ अङ्गहीन,  
जिसे अङ्ग न हो । २ कैयल, खाली, जिसमें कुछ न हो,  
जैसे, यह दूध निरङ्ग पानो है । (क्लो०) ३ रूपक  
अक्षरकारका एक भेद । रूपक दो प्रकारका होता है,  
एक अक्षर, दूसरा तादृश्य । अक्षर रूपक भी फिर तीन  
भेद माने गये हैं, मम, अधिक और न्यून । इनमेंसे  
‘मम अक्षर रूपकके तीन भेद हैं, यथा—नङ्ग वा माव-  
यव, निरङ्ग वा निरवयव और परम्परीत । अक्षर उपमेयमें  
उपमानका इन प्रकार आरोप होता है कि उपमानके  
‘और सब अक्षर नहीं आते, वहाँ निरवयव या निरङ्गरूपक  
होता है—जैसे, ‘रेन नोद न चैन द्विप द्विनङ्ग’ घरमें  
कुछ और न भावे, सींचनको अब प्रेममत्ता यहउं द्विप  
काम प्रवेश लखावे’ । यहाँ प्रेममें श्रेयन मत्ताका आरोप  
है, उसके दूसरे दूसरे अक्षरों या सामर्थियोंका कथन नहीं  
है । निरङ्ग या निरवयव रूपक-भी दो प्रकारका माना  
गया है, पहला यह और दूसरा मानाकार । ऊपरमें  
जो उदाहरण लिखा गया है, वह यह निरवयवका है  
क्योंकि उसमें एक उपमेयमें एक ही उपमानका



(अंग्रेजी समाज) चांगीव दूषा है। सोपाहार निरमल  
 एते कर्मों के जिनमें एक एक उद्योगमें अनेकों उद्योग  
 समाजका आरोप हो। जैसे—'मिथर भेदेहकी वदेह  
 पायात यह, निह स्त्री समस्तको देह दुति बागी है।  
 सोपको निगम, कोटि कपट प्रधान जामें, मान न विद्याम  
 ह्यम प्रामकी दुहारी है। कई तोय हरि लाग्हाय विद्या  
 भार, जरह पगरको विचार अधिकांरी है। भागी  
 भयकारा यह पाउकी गिटारी सारो वही करि विचार  
 वरि भागी मुग प्यारो है।'

यहां एक स्त्री उद्योगमें भेदेहका संवर, अधिनपका  
 घर इत्यादि घटनेमें आरोप किये गये हैं।

निराङ्ग ( वि० वि० ) १ निरवर्ण, बेरंग, बदरंग। २ उदात्त,  
 वीर्य, शैरीरक।

निरङ्गल ( सं० वि० ) निर्गन्तगुणित्वात्; अथ, समा-  
 नात्वात्; अंगुणित्वे निर्गन्त, जिते उगन्ती न हो।

निरङ्गु ( वि० वि० ) निरिच्छ, शून्यो, जिते पुनस्त नित  
 गर्ह हो, जितमें दुर्गा पाई हो।

निरजस ( वि० वि० ) निरंज देवो।

निरजित ( सं० वि० ) निर्गतमजिजात्; अजितमे  
 निर्गत, जिते समुदा न हो।

निरजा ( वि० वि० ) संगतरागोंकी सहोम टीकी जितमें  
 संगमसंघ पर काम बनाया जाता है।

निरजाम ( वि० पु० ) १ निषोद्। २ निषय।

निरलोमी ( वि० वि० ) १ निषय करनेवाला। २  
 निषाद् निरामनेवाला।

निराव्या ( सं० वि० ) नर विप्र या निगम जो मापने की  
 विधिमें विद्यमान होता है।

निराङ्गन ( सं० वि० ) निर्गन्तं अङ्गनं तद्विषयमनं  
 अङ्गनं वा यन्मात्। १ अङ्गकारित, बिना अङ्गवत्ता  
 २ शून्यवित्त, बिना गुणवत्ता। ३ सोपायने निर्गन्त  
 ( १ ) उ घोर्णित्वेय। २ अरामात्। ३ अरदिह।

निराङ्गनदाम-विद्याके एक कवि। ये अङ्गदुरते निरामो  
 है। अङ्ग विद्याका नाम ब्रह्मण्यो पौर गृहका चीतार  
 है। अङ्गदुर १०२३ एतका अविनाशाल कदा जामा है।  
 अङ्गदुर एक दुष्प्राय वकी है जिनका नाम अविनाश  
 जाता है।

निराङ्गनवति - अंगरक्षक-साक्षात्कार-दहते रचयिता।  
 निरङ्गना ( सं० स्त्री० ) निर्गन्ति अङ्गनमित्वात् अङ्गो  
 यत टाप्। १ पूर्विमा। २ दुर्गाक पक्ष नाम।

निरङ्गनी - एक उद्योगक सम्प्रदाय। अर्थमें है, कि इस  
 सम्प्रदायके प्रयत्नके निदानद्वयामो है। अङ्गनि  
 निरङ्गन निराकार ईश्वरको उपासना करना है, इसमें  
 उद्योग सम्प्रदायको निरङ्गनीसम्प्रदाय कहने लगे; किन्तु  
 वास्तवमें निरङ्गनी माधु-रम-गन्धके अन्तर्भावसे साक्षात्  
 उपासना प्रवृत्त करते उदासीने पुरुषोंमें ही गए हैं। ये  
 कोरं न पहनते तथा तिनके घोर कष्टों धारण करते हैं।  
 मारवाङ्गमें इनके प्रयास घटते हैं। ये लोग साक्षात्, अस्मिन्  
 पादि उद्योगोंके मनुष्योंका प्रवृत्त करते हैं, इसीमें  
 रामानन्दों या माधारण्यधर्मनिष्ठ वैरागों इनके हाथका  
 भोजन नहीं करते।

इनके मन्दिरमें सोनारामकी मूर्ति, गानपामयिना,  
 गोमतीपक्ष पादि प्रतिष्ठित हैं।

निरक्त ( सं० वि० ) निरम-क्त। निरुक्त, किन्तु काममें  
 लगा हुआ, तत्पर, शीघ्र, अङ्गुल।

निरति ( सं० स्त्री० ) निरति रतिः, निरस-क्तिम्। १  
 अत्यन्त रति, अधिष्ठ मीति। २ अति शोभना भाव,  
 शोभ शोभना भाव।

निरतिमय ( सं० पु० ) निर्गन्तप्रतिमयो यन्मात् निरति  
 प्रतिमयो वा। अत्यन्तानिमय, अपिषट्टारा प्रतिमय  
 श्रव परमेश्वर।

परमेश्वरमें निरतिमय जान है, ये सर्वज्ञ हैं अर्थात्  
 उनकी सर्वज्ञताकी अनुमापक परिपूर्णज्ञानमति विष्णु-  
 मान है, अथ, धारामें वेमा नहीं है। उद्योग अङ्गद  
 नर दुर्गाको अङ्गना होता है, तब अनुमानको अङ्ग-  
 यता शोभी पङ्क्तो है। अथ अनुमान प्रयागो शोभी है  
 कि उद्योगे प्राप्त होता है कि शोभी आत्माशक्तिं अङ्ग न कुत्र  
 अङ्ग प्राप्त है, शोभी आत्मा अतः, अर्थात् पौर अङ्ग-  
 मान समाप्त नकती है। कोरं तो अङ्गद पौर कोरं उद्योगे  
 अधिष्ठ है। अतएव जिनमें पौर अधिष्ठ-पाका  
 नहीं है, जिनमें अङ्गको अरकाशा है, अथ परमेश्वरमें  
 अङ्गकी न निरतिमय है। अर्थात् पौर अङ्ग शोभी  
 नहीं है। ( १७००० )

निरन्तर (सं० त्रि०) निरन्तरीत्ययो यस्य । १ अन्तर्य-  
शून्य, जिसको छेद न हो । २ अंतर्याभाव, जिसका  
नाश न हो । ३ अपात्तिरहित, जिसे किसी बातका छेद  
न हो ।

निरदर (हि० वि०) निर्दय देखो ।

निरधातु (हि० वि०) वीर्यहीन, शक्तिहीन, अथवा ।

निरधारना (हि० क्लि०) १ नियम-करना, ठहराना, स्थिर  
करना । २ मनमें धारण करना, अभिभूतना ।

निरध्व (सं० त्रि०) निष्क्रान्तोऽध्वनः, प्रादिसमासे अच्  
समाधान्तः । अध्वसे निष्क्रान्त, जो अपनी रास्ता भूल  
गया हो ।

निरना (हि० वि०) निरग्ना देखो ।

निरनुक्रोश (सं० पु०) निर्दयता, निष्ठुरता, बेरहमी ।

निरनुक्रोशकारी (सं० त्रि०) जो निर्दयतासे काम करता  
हो, बेरहम ।

निरनुक्रोशता (सं० स्त्री०) निर्दयता, निष्ठुरता, बेरहमी

निरनुक्रोशयुक्त (सं० त्रि०) निर्दय, कठोर, बेरहम ।

निरनुग (सं० त्रि०) जिसे अनुगामी न हो, जो बिना  
नौकरका हो ।

निरनुनासिक (सं० त्रि०) निर्गतं अनुनासिकं अनु-  
नासिकत्वं यस्य । अनुनासिक मिय यणभेद, जिसका  
उच्चारण नाकके सम्बन्धसे न हो ।

निरनुशोभ्यानुयोग (सं० पु०) न्यायसूत्रोक्त नियमस्यान  
यहचार प्रकारका है—हस्त, आवि, आभास और अन  
धसरपहण ।

निरनुरोध (सं० त्रि०) प्रतीतिकर, निष्ठुर, कृतघ्न ।

निरन्तर (सं० त्रि०) निरन्तरि, अन्तर यस्मिन् यस्मादा  
१ निविद्ध, घना । २ सन्तत, अविच्छन्न, जिसमें या  
जिसके बीच अन्तर या फासला न हो, जो बराबर चल  
गया हो । सन्ततिदे दो-भेद हैं, दैशिकी और कालिकी

दमसे दैशिक विच्छेदशून्य है । ३ अनवकाश, जिसकी  
परम्परा खण्डित न हो, लगातार होनेवाला । ४ अपरि-

धान, सदा रहनेवाला, बराबर बना रहनेवाला । ५ घन,  
घना, गम्भीर । ६ अनवर्धमान, जो अवर्धमान न हो, जो

दृष्टिसे शोभित न हो । ७ धमेद, जिसमें भेद या अन्तर  
न हो, जो समान या एक ही हो । ८ तादर्थ्यरहित ।

९ बिना । १० प्रनाकोर्य । ११ अमध्य । १२ अनन्त-  
रात्मा ।

निरन्तर (हि० क्लि० वि०) सदा, हमेशा, बराबर ।

निरन्तराभ्यास (सं० पु०) निरन्तरः सततोऽभ्यासो यत्र  
कर्मधा० । १ स्वाध्याय । २ सतत आह्वति ।

निरन्तरान (सं० त्रि०) १ अन्तरालशून्य । २ निरन्तर  
अर्थ ।

निरन्तरालता (सं० स्त्री०) अविच्छिन्न मेल ।

निरन्त (हि० वि०) १ भारी अंधा । २ मृष्टा मूर्ख । ३  
ज्ञानशून्य ।

निरन्तस् (सं० त्रि०) निरन्न, बिना अन्नका ।

निरन्न (सं० त्रि०) १ अन्नहीन, बिना अन्नका । २ निराहार,  
जो अन्न न खाए हो ।

निरन्नता (सं० स्त्री०) उपवास ।

निरन्ना (हि० वि०) निराहार, जो अन्न न खाए हो ।

निरन्वय (सं० त्रि०) नास्ति अन्वयः सम्बन्धो यत्र । १  
सम्बन्धरहित । २ स्वामिसमञ्जसाख्य सम्बन्धशून्यस्तेय-  
भेद । ३ स्वामिसम्बन्धशून्य स्तेय । ४ निवेश ।

निरप (सं० त्रि०) जलहीन, बिना पानीका ।

निरपव्रत (सं० त्रि०) निर्गतो अपव्रता लज्जा यस्येति ।  
१ छुट । २ निर्लज्ज, बेहया ।

निरपराध (सं० पु०) १ निर्दोषिता, अकलङ्कता, शुद्धता,  
दोषविहीनता । (त्रि०) नास्ति अपराधो यस्य । २  
निर्दोष, अपराधरहित, बेकसूर ।

निरपराध (हि० क्लि० वि०) बिना अपराधके, बिना कोई  
कसूर किये ।

निरपवर्त्त (सं० त्रि०) १ जो नोटा न देता हो । २ जिसमें  
भाजकके द्वारा भाग लगे ।

निरपवाद (सं० त्रि०) १ अपवादशून्य, जिसकी कोई  
बुराई न की जाय । २ निर्दोष, बेकसूर । ३ जिसका  
कभी अन्वय न हो ।

निरपाय (सं० त्रि०) अपायशून्य, जिसका विनाश  
न हो ।

निरपेक्ष (सं० त्रि०) निर्गता अपेक्षा यस्य प्रादिवद्भु० ।  
१ अपेक्षाशून्य, जिसे किसी बातकी अपेक्षा या चाह न  
हो, बेपरवा । २ जो किसी पर अवलम्बित न हो, जो

विश्वो वा निरवैश न हो। ३ पाशाङ्गुय, जिसे विश्वो  
दूरीको पाशा न हो। ४ जिसे कुक्ष मगाय न हो  
पश्या। ( श्लो० ) १ पश्यादा। २ पश्यादेमना।

निरवैशा ( सं० श्लो० ) निरवैश-विश्वो टाट। १ पश्यादा,  
पश्या न होना। २ निरवैशा। ३ पश्याया या पाहका  
पश्याय। ४ पश्यामना न होना।

निरवैशम ( सं० श्लो० ) १ जिमको पश्या या पाह न  
हो गई हो। २ जिमके मध्य मगाय न रणा गया हो।  
निरवैशो ( सं० श्लो० ) १ पश्याया या पाह न रखनेवाला।  
२ पश्याय न रखनेवाला।

निरवैशो ( सं० श्लो० ) जिसे मंश या मज्जान न हो।  
निरवैशो ( सं० श्लो० ) निर्विषी दोशो।

निरभिभव ( सं० श्लो० ) १ अभिमवगुण्य, पयराजिय, जो  
श्रीमान न जा सके। २ जो अवमानित न हो।

निरभिमान ( सं० श्लो० ) नास्ति अभिमानं यस्य। १ अभि-  
मानगुण्य, पश्यादापरहित।

निरभिलाष ( सं० श्लो० ) अभिनापरहित, इच्छागुण्य।  
निरभोमान ( सं० श्लो० ) निरभिमान, पश्यादागुण्य,  
अभिमानापरहित।

निरभ्य ( सं० श्लो० ) १ अभ्य वा निपगुण्य, विना वादसहा।  
( पश्या० ) २ निपगुण्य वाहागमि।

निरभय ( सं० श्लो० ) निरभयं रमयं। १ निभय रति,  
पश्याय पश्यादा। निरभय-पाशारे ल्युट्, निभयं रमय-  
मन्दिन्। २ निभयतापर।

निरभयं ( सं० श्लो० ) १ पश्यागुण्य, धीर, जिममें धेय  
हो। २ निभयोल, जिममें भय न हो।

निरभयः ( सं० श्लो० ) १ शैलवाहादे पश्यादादे जिमेका एक तातुक।  
भूरविमाव इह पश्यागुण्य और जलमंश्या इह इह है।  
इधमें दशो नामका एक मय्य चार इह मंश्या कल्पे है  
जिममें १२ नामके हैं। यहाँको पाय एक न पश्या  
पश्याय हो है। यहाँ मय्यके इहारा पाशारे मंश्यादेना पश्या  
इहारा म है जिमें पाय पश्याय पैदा होना है। मोटा-  
पश्या मदी इमके दशियकी पश्याय है।

१ एक तातुकका मय्य। यह पश्या० १८ १ ३०  
पौर देगा० २० ३१ पूरके मध्य पश्याय है। मंश्या-  
मंश्या इह इह है। १०२१ ई०में यहाँके मय्यके निरभय

मयावतमय पर जो मूलीके मध्य शैलवाहादे मीम-  
कुण्डा हो जा रहे है, यहाँके कर हो। यहाँके रात्रा मारी-  
गय और वनकी मंगा सुवसितके भाग रहे। यहाँ पश्याय  
पाशिम, पश्याय, डाकघर पौर एक रहन है।

१ यहाँके मय्यके पाशा जिसेका पश्याय मंश्यामना  
एक मय्य। यह पश्या० १८ २३ ३० पौर देगा० २२  
४० पूरके मध्य पश्यायपरमे ३ मीम उषारमें पश्याय  
है। जलमंश्या २४१ है। यह एक पश्याय मय्य मय्या  
जाता है। यहाँ मय्यके ११ मंश्या मय्यके एक मारी  
मंश्या मय्या है जिममें बहुतेके दिन्नु, सुमममान, इमारे  
पौर पारयो मय्याय होत है। मंश्या पाठ दिन मय्य  
रहता है पौर तरह तरहको मोमोकी पश्याय-मय्यी  
होती है। यहाँ पाठ मय्यके पौर एक मय्या पौर भी  
देवतमें पाता है।

निरमनीर ( सं० श्लो० ) एक पश्याय या जड़ी जिममें  
पश्यायके विकार प्रभाव मू हो जाता है। यह लक्ष्मी  
पश्यायमें होती है। १८५८ ई०में यह मय्यके मय्यके  
मय्यायमें मंश्या मय्ये है।

निरमानी—मय्यके मय्यके मय्यके मय्यके पश्याय  
एक हीटा राष्य।

निरमित ( सं० श्लो० ) निरमितोऽस्मिन्निवस्य। १ मय्यके  
जिमका कोई मय्य न हो। (पु०) २ पौर पश्याय मय्यके  
पुसका नाम। ३ मय्यके मय्यके एक पुसका नाम। ४  
मय्यके मय्यके मय्यके मय्यके मय्यके एक पुसका  
नाम। ५ मय्यके मय्यके एक पुसका नाम। ६ एक मय्य  
को मय्यके पुस माने जाते हैं। (मय्यके पु०)

निरमोल ( सं० श्लो० ) १ पश्याय, जिमका मीम न हो।  
२ मय्यके मय्यके।

निरमर ( सं० श्लो० ) पश्याय, मय्यके मय्यके, विदयार।  
निरमरु ( सं० श्लो० ) १ जलमंश्या, विना पाशाका। २  
निरमर मय्यके। ३ जो मय्यके मय्यके मय्यके मय्यके  
रहे। ४ जिममें विना मय्यके रहना पश्याय।

निरमरु ( सं० श्लो० ) निरमित; पश्यायमंश्या यम निर-  
मरु पाशारे पश्याय। मय्यके, मय्यके।

निरमरु ( सं० श्लो० ) निरमरु मय्यके मय्यके ल्युट्, १ निरमित।  
मय्यके ल्युट्, २ निरमितोपाय। ३ पश्यायपरित मय्यके,

ज्योतिषमें गणनाकी एक रीति। सूर्य राशिचक्रमें इनेमा  
 भ्रमता रहता है। जितने समयमें वह एक चक्र पूरा  
 कर लेता है, उतने समयको एक वर्ष कहते हैं।  
 ज्योतिषको गणनाके लिये यह आवश्यक है, कि सूर्यके  
 भ्रमणका आरम्भ किसी स्थानसे माना जाय। सूर्यके पथ  
 में दो स्थान ऐसे पड़ते हैं जिन पर लम्बे आने पर रात  
 और दिन समान होते हैं। इन दो स्थानोंमेंसे किसी एक  
 स्थानसे भ्रमणका आरम्भ माना जा सकता है। लेकिन  
 विषुवरेखा (सूर्यके मार्ग) के जिस स्थान पर सूर्यके  
 आनेसे दिनमानको वृद्धि होने लगती है उसे वारान्तिक  
 विषुववेद कहते हैं। इस स्थानसे आरम्भ करके सूर्य-  
 मार्गको ३६० अंशोंमें विभक्त करते हैं। प्रथम ३०  
 अंशोंको मेष, द्वितीयको वृष इत्यादि मान कर राशि  
 विभाग द्वारा जो लग्नस्फुट और ग्रहस्फुट गणना करते  
 हैं, उसे 'सायन' गणना कहते हैं।  
 परन्तु गणनाका एक दूसरा तरीका भी है जो अधिक  
 प्रचलित है। ज्योतिषगणनाके आरम्भकालमें मेष-  
 राशिस्थित अश्विनीनक्षत्रके आरम्भमें दिन और रात्रि-  
 मान बराबर स्थिर हुआ था। लेकिन नक्षत्रगण खसकता  
 जाता है। इसलिए हर एक वर्ष अश्विनीनक्षत्र विषुव-  
 रेखासे जहाँ खसका रहेगा, वहींसे राशिचक्रका आरम्भ  
 और वर्षको प्रथम दिन मान कर जो लग्नस्फुट गणना  
 की जाती है उसे 'निरयण' कहते हैं। भारतवर्षमें अधि-  
 कांशमें पंचाङ्ग निरयण-गणनाके अनुसार बनाए जाते हैं।  
 ज्योतिषियोंमें 'सायन' और 'निरयण' ये दो पंच बहुत  
 दिनोंसे चलते आ रहे हैं। बहुतसे विद्वानोंके मतानुसार  
 सायन मत ही ठीक है।  
 निरगल (सं० त्रि०) निर्नास्ति अथलम्बित प्रतिबन्धकी  
 यंत्र। अंगल, प्रतिबन्धकशून्य, जिसे कोई वाधा न  
 हो।  
 निरघ (सं० त्रि०) निर्गतोऽथ यस्मात् । १ पर्य-  
 शून्य, जिसका पर्य न हो। २ व्यर्थ, निष्फल। ३  
 अभिव्यर्थशून्य।  
 निरयंक (सं० त्रि०) निर्गतोऽर्थो यस्य प्रादिव्युह या  
 केषु। १ निष्फल, विफलता। २ अर्थशून्य, धीमानी। ३  
 न्यायमें एक निपहलान। ४ निरयोजन, व्यर्थ, बिना

मतनयका। ५ काश्यदीपमेद, काश्यका एक दीप।  
 निरयंता (सं० स्त्री०) निरयंशु भावः निरयं तत्-  
 टापः। अर्थशून्यता।  
 निरवुद (सं० स्त्री०) १ नरकभेद, एक नरकका नाम।  
 निरव (सं० पुं०) निरव भावे अप्। नीरव, शब्दका  
 अभाव। निरव-अप्। २ निष्पन्न। ३ अपालन। ४  
 निर्गतारक्षक।  
 निरवकाश (सं० त्रि०) निर्गतोऽवकाशो यस्य। १ अव-  
 काशशून्य जिसमें अवकाश या सुजायशम हो। (पुं०)  
 २ अणुशब्द कालान्तरकर्त्तव्यताका कार्य।  
 निरवग्रह (सं० त्रि०) निर्गतोऽवग्रहः प्रतिबन्धो यस्मात्।  
 १ सतन्त्र, स्वच्छन्द, प्रतिबन्धरहित। २ जो दूसरेकी  
 इच्छा पर न हो। ३ बिना विघ्न या बाधाका।  
 निरवच्छिन्न (सं० त्रि०) १ अन्वच्छिन्न, जिमका सिल-  
 मिला न टूटे। २ विशुद्ध, निर्मल। ३ निरन्तर, लगा-  
 तार।  
 निरव्य (सं० त्रि०) निर्गतं अव्यं दीपः, अघानं  
 रागहोपादि वा यस्य। १ निर्दोष, अनिन्द्य, जिमे कोई  
 बुरा न करे। २ अघानशून्य, रागादिशून्य परमात्मा।  
 क्षियां टापः। ३ गायत्रीमेद।  
 निरव्ययुष्णवस्त्रम्—प्राचीन कनेरकी गिम्बानिपिके रच-  
 यिता। यह एक प्रधान मंत्री थे। युद्ध और मन्त्रिका  
 दारमदार इन्होंने ऊपर था।  
 निरवधि (सं० त्रि०) निर्नास्ति अवधियस्य। १ निरन्तर,  
 लगातार, बराबर। २ असीम, अपार, वैदद। ३ सर्वदा,  
 हमेशा।  
 निरवयव (सं० त्रि०) निर्गतोऽवयवो यस्य। १ अव-  
 यवशून्य, अङ्गोंसे रहित, निराकार, व्यायक मतसे पर-  
 भाण और आकाशादि। २ सर्वथा अवयवशून्य अणु।  
 निरवरोध (सं० त्रि०) निर्नास्ति अवरोधः यस्य। अव-  
 रोधरहित, प्रतिबन्धरहित।  
 निरवलम्ब (सं० त्रि०) निर्नास्ति अवलम्बो यस्य। १  
 अवलम्बनशून्य, आधाररहित, बिना सहारेका। २ निरा-  
 ध्य, जिसे कहीं ठिकाना न हो, जिसका कोई सहायक  
 न हो।  
 निरवलम्बन (सं० त्रि०) निर्नास्ति अवलम्बनं यस्य।  
 निराध्व, अमहाय।



निरा ( हि० वि० ) १ विग्रह, विना मेलका, खालिमा ।  
२ एकमात्र, केवल, जिसके साथ और कुछ न हो । ३  
निपट, निरान्त ।

निराई ( हि० स्त्री० ) १ निरानेका काम, फनलके पोथेके  
भासपास छगनेवाले छण आटिको दूर करनेका काम  
२ निरानेकी मजदूरी ।

निराक ( सं० पुं० ) निर-प्रक-प्रकगतो भावे घञ् । १  
पाक । २ खेद । ३ अथत् कर्मफल ।

निराकरण ( सं० स्त्री० ) निर-प्र-प्र-भावे ल्युट् । १ निवृत्ता  
रण, किसी बुराईको दूर करनेका काम । २ छणन युक्ति  
या दलीलको काटनेका काम । ३ प्रत्याख्यान, छांटना,  
अलग करना । ४ मोर्मासा, सिद्धान्त । ५ अवधारण,  
निर्णय । ६ हटाना, दूर करना । ७ मिटाना, रद्द करना ।

निराकरिणु ( सं० त्रि० ) निराकरोति तच्छोः निर-प्र-प्र-  
इणच् । निराकरणशील, जो निवारण या दूर कर सके ।

निराकरिणुता ( सं० स्त्री० ) निराकरिणु भावे-तल्-  
टाप् । निराकरणशीलका कार्य या भाव ।

निराकाह ( सं० त्रि० ) निर्नास्ति आकाहा यसा ।  
आकाहागम्य, जिसे आकाहा न हो ।

निराकाह्या ( सं० स्त्री० ) आकाहागम्यता, निरपृहता,  
भोभ या खालसा न होनेका भाव ।

निराकाहिन् ( सं० त्रि० ) निराकाह्य अस्त्यर्थे-इनि ।  
निराकाह्युक्त, निरपृह, जिसे कुछ इच्छा न हो ।

निराकार ( सं० पुं० ) निगत आकारो देहादि दृश्य-  
रूपं यस्मात् । १ परमेश्वर, ब्रह्म ।

“आकारं निराकारं सगुणं निर्गुणं प्रभु ।

सर्वोपारं सर्वं ह्यस्वैच्छाक्यं नमाम्यहम् ॥

वेदः स्वस्वो भगवान् निराकारो निराश्रयः ।

निर्मोक्षो निर्गुणः शशी स्वामारामपरात्परः ॥”

( ब्रह्मवैवर्तेषु० पणवर्षिष्ठ० ३ अ० )

परब्रह्म निराकार है, यस्तुतः उनका कोई आकार  
नहीं है । ब्रह्म विषयक किसी तथेको आलोचना  
करना विह्वलना मात्र है ।

यह विषय वेदान्तमें इस प्रकार लिखा है,—निराकार  
और साकारबोधक दो प्रकारकी श्रुतियां देखनेमें आती  
हैं । जब श्रुतिके ही दो भेद हैं, तब ब्रह्म निराकार है या  
साकार यह किस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है ? इस

प्रकारकी श्रुतियोंमें ब्रह्म रूपादिरहित निराकार है, यती  
स्थिर करना कर्त्तव्य है, उन्हें रूपादिमत् पर्यात् साकार  
स्थिर करना ठीक नहीं । क्योंकि ब्रह्मप्रतिपादक उन सब  
वाक्योंकी निराकार ब्रह्मने ही प्रतिपादित किया है । वे  
स्थूल, सूक्ष्म, जल्ल वा दीर्घ नहीं हैं ; वे अच्युत,  
अस्यं, अरूप और अशय हैं । वे आकाश, नाम और  
रूपके निर्वाहक हैं ; नाम और रूप जिनके अन्तर हैं ; वे  
ही ब्रह्म हैं । वे दिव्य, मूर्तिहीन, पुरुष पर्यात् पूर्ण  
हैं, सुतरां बाहर और भीतरमें विराजमान हैं । वे अपूर्व  
अनपर, अनन्तर और अबाध हैं । यही आत्मा ब्रह्म  
है और सबकी अतुल्यरूप है । इन सब वाक्योंमें  
निष्प्रपञ्च ब्रह्मात्मभावका बोध होता है और शब्दानुयायी  
निराकार ब्रह्मप्रधान है तथा साकार ब्रह्मबोधक वाक्य  
रायि उपासनाविधि प्रधान है, ऐसा अवधारित होता है ।  
फिर भी साकार और निराकार ये दो प्रकारकी ब्रह्म-  
बोधक श्रुतियां रहने पर भी निराकार श्रुतिमें निराकार  
ब्रह्मके अवधारण और साकारबोधक श्रुति अर्थके  
प्रत्युत्तरमें लिखा है, कि जिस प्रकार सूर्यमध्यम्योय वा  
चन्द्रसम्यम्योय आलोचके आकाशमें आच्छन्न रहने पर भी  
वह श्रेष्ठ और वक्रादिभाव प्राप्त अश्रुति आदि उपाधिके  
संसर्गसे श्रेष्ठ और वक्रादि भाव प्राप्तके जैसा होता है,  
उसी प्रकार ब्रह्म भी श्रुतियादि उपाधिभंगमें श्रेष्ठ-  
व्यादिके आकार प्राप्तके जैसे होते हैं । अतएव उपा-  
सनाके उद्देश्यसे श्रुतियादि उपाधि अवलम्बनपूर्वक  
ब्रह्मका जो आकार विमेष उपटिट्ट हुआ है, वह व्यर्थ  
या विरुद्ध नहीं है । वेदवाक्यका कुछ अर्थ सायक है  
और कुछ निरर्थक, सो नहीं । सभी वेदवाक्य प्रमाण-  
रूपसे गण्य हैं ।

उपाधिभंगसे परब्रह्मकी उभय विहता—साकार और निरा-  
कार दो प्रकारका रूप होना असम्भव है । श्रुतियादि  
उपाधिभंगसे ब्रह्म तदाकार प्राप्तकी तरह नहीं होते,  
यह विरुद्धवत् होने पर भी यथायथं विरुद्ध नहीं है ।  
क्योंकि जो उपाधिभंगका निमित्त है, वह वस्तुका धर्म  
नहीं है । वह अविव्याजित है, उपाधिमात्र ही अविव्याधे  
उपस्थापित है । समाधिकी भविद्याके रहनेसे ही लौकिक  
व्यवहार और शास्त्रीय व्यवहार अवतरित हुआ है ।

पुत्रिणी को निवा है, कि अथ निर्बिंशोप, दकाहार  
 कोर केमकमेवम है। तिम प्रकार लवप-  
 निष्पन्न, चकारण, मन्वुषं चोर वमपन है, उमी प्रकार  
 यह चाका वमनार, चकारा, पुषं चोर चैतन्यपन  
 चमोत्तु वमकेवमथ है। अथमिका तापयं यप, कि  
 वाभाके वमर वारर नहीं है, चैतन्य भिय चयप दप वा  
 वाकार नहीं है, चो जिवाहार, तिमवक्षिण है। चैतन्य  
 को वमका मारं वानिचदप है। तिम प्रकार लवप-  
 निष्पन्नं वारर चोर मीमरमें लवपरम रहता है। वूमरा  
 कोर वम नहीं रहता, उमी प्रकार चाका मी वारर चोर  
 मीमरमें चैतन्यदपको है, वममें चैतन्यके विवा चोर कोरि  
 दप नहीं है।

वमतामरमें निराहारवा तावावले मारदमे कका  
 ना, 'तुम मी मुनि दिव्यमयादिदुष चमोत्तु मूर्तिनिगत  
 देवम ही, मर माग है। यह मुनिमे ही यह दुई है।  
 वम प्रकार लव तक मी मादिदुषवारी म जोता, तम  
 मर तुम मुनि वरपाल नहीं मरुम।'

अथके दो रूप है, मूर्त्त चोर चमूर्त्त। चरमायं-  
 वममें मे चदप है। वासु चवाधिरे वमपार वमके  
 मूर्त्त चोर चमूर्त्त है। मूर्त्तका चयं मूर्त्तमम् चमोत्तु  
 लम् चोर चमूर्त्तका चयं वमप जोता है। वमी, लम  
 चोर मर मे तोमी अथके मूर्त्तदप है तथा वापु चोर  
 चमोत्तुदप चमूर्त्तदप। मूर्त्तदप मतां मरवमोम  
 है चोर चमूर्त्तदप चविमामी। (वेदवदर ३।२.पु०)  
 भिंभ विवाम अथके देको।

१ निराहारम। २ वाकाय। (ति०) ३ तिमका  
 कोरि वाकार म ही, विमके वाकारको भावता म ही।  
 निराहार (मं० ति०) निर्माणि वाकायं वम। चय  
 कादमम्, वृष।  
 निराकम् (मं० ति०) निरा वाकाय। १ चतारम  
 वाकम्, वृषम वरवादा वृष। २ चकाकम्, जो वृष  
 वा वापाहीक म ही। ३ चमूर्त्तम, जो वरवादा म ही।  
 निराकम (मं० ति०) निर, वा-क म। १ चतारम  
 वृषम, वृष को वृष, वृषाई वृष। २ निरव, वाकम को  
 वृष। ३ निराकम, वृष को वृष, निराई वृष। ४  
 निर, वाकम को वृष। ५ मीमरम, विवा  
 को वृष।

निराकमि (मं० को०) निर, वा-क म्। १ चतारम,  
 निराकम्, वरवादा। निर्मा वाकायैवमादिनि।  
 (ति०) २ वाकनिरवित, निराहार। ३ ववाकाय  
 वरिम, वेदव-ववितम। ४ चयमवावमके चमूर्त्तमने  
 वरिम। (पु०) ५ वीवितमपुपुम, वीवित मपुने पुपु-  
 का नाम।

निराकमि (मं० ति०) निराकममेन निराकम-वनि  
 (वपारि-वव। वा वृषवृष) निराकम्पकतां।

निराकम् (मं० ति०) निर्माणि वाकम्। वम। १  
 चरा कोरि वृषार वूमकेवामा म ही, अथ कोरि वरा  
 वा मवायता वरमेवामा म ही। २ चो वरा वा मवायता  
 म करे, चो वृषार म वूम। ३ तिमको वृषार म वूमो  
 मय, तिमको कोरि मवायता म वूम।

निराकिया (मं० को०) १ वरिन्तरव। २ वरवोकार।  
 ३ वरिन्तरव।

निरावान—मतारा जिनकी एक कविम मदी। मीम  
 मदी तथा मीमा मदी उपतावाका कुक, चंग मीममे-  
 के विचे निरावान काटो मदी है। निरकटपर्ती तिम  
 वर मदी चोर वामेमें तमकट वा वरुई वमे  
 दूर वरमेके विच मरुमिपदमे यह मकाय विवा है।  
 यह मरु कटवामेमें वममम वाड म्वाण वयये वचं दप  
 है। (वेद १००१ ई०) मकायटिमे वारव लव वृषांम मुमिं वा  
 वका वा, तम प्रथम प्रथम वाकमं वारिमेमें वा वर  
 मरु काटनेका उपाय मीवा। मीमा चोर मीमा मदी  
 के मय इत्यापु वरुमे जिमे वपुव ल्याम वूम: मया।  
 उमी म्वाण वर मरु काटता उपित है, वीमा वमेमें विर  
 विवा। (वेद १००१ ई०) मुमिं वनिमेदिम मीमेकी चमकट-  
 के मुक वमेके विचे कटिमे मरुवमे उममे म्वाण कट-  
 मता: मरु वर दिया। मीम मदीको वरुई वमन हो  
 वर निरावान मदी मदी है। वमकी मरुवाई १०५  
 मीम है। म्वाणमे वृषार, मीमकाको चोर इत्या-  
 दा। (वेद १००१ ई०) मय ममम १०००००००००००००००  
 मीम  
 वापा  
 वा

कई जगह पड़ाइके कारण निराखालको गति टेढ़ी हो गई है। कोड़ाके, मालिगांव और निमगांव बांदि खानोंके पड़ाइको काट कर सोधा रास्ता बना दिया गया है।

नराग (सं० त्रि०) रागशून्य, रागहीन।

नरागम (सं० त्रि०) भागमहीन।

नरागसं (सं० त्रि०) निर्नास्ति आगः यस्य। निष्पाप, पापशून्य।

नराग्रह (सं० त्रि०) भाग्रहहीन।

नराधार (सं० वि०) निर्नविद्यते आचारी यस्य। आधारशून्य, प्रमोचारे।

नराजी (हिं० स्त्री०) लुलाहोंके करघेकी वह लकड़ी जो हथी और तरौछीको मिलानेके लिये दोनोंके सिरों पर लगी रहती है।

नराजीव्य (सं० त्रि०) निर्नास्ति आजीव्य यस्य। जिसका जीविकोपाय कुछ भी न हो।

नराट (हिं० वि०) एकमात्र, विदेकुल, निपट, निरा।

नराटम्बर (सं० त्रि०) आटम्बरशून्य, आटम्बररहित।

नरातङ्ग (सं० त्रि०) निर्गता आतङ्गा यस्य, यस्माद्वा रं भयशून्य। २ रोगरहित, नौरोग।

नरातप (सं० त्रि०) निर्गत आतपो यस्मात्। १ आतपशून्य। स्त्रियां टाप। २ रात्रि, रात।

नरातपा (सं० स्त्री०) रात्रि, रात।

नरात्मक (सं० त्रि०) आत्माशून्य।

नरादर (सं० पुं०) आदरका अभाव, अपमान।

नरादान (सं० पुं०) १ आदान वा लेनेका अभाव २ एक बुढ़का नाम।

नरादिष्ट (सं० त्रि०) जो समाप्त कर दिया गया हो।

नरादिश (सं० पुं०) १ सम्पूर्ण शोध, भुगताना, षडा करने वा सुकानेका काम। (त्रि०) २ आदिशशून्य।

नराधान (सं० त्रि०) आधाररहित।

नराधार (सं० त्रि०) १ अंवलम्ब्य या आश्रयरहित, जिसे सहारा न हो या जो सहारे पर न हो। २ जो बिना अर्थ के आदिष्ट हो। ३ जो प्रमाणोंके बिना प्रष्ट न हो, बिना प्रमाणोंके।

नराधिका, जिसे या जिसमें जीविका बांदि का महारा हो।

निराधि (सं० त्रि०) निर्नास्ति आधिः रोगः यस्य। १ रोगशून्य, नौरोग। २ चिन्ताशून्य, मानसिक पीड़ा रहित।

निरानन्द (सं० त्रि०) १ आनन्दरहित, जिसे आनन्द न हो। २ शोकाकुल, शोकादिके कारण जिसका आनन्द नष्ट हो गया हो। (पुं०) ३ आनन्दका अभाव। ४ दुःख, चिन्ता।

निराना (हिं० स्त्री०) फसलके पौधोंके आसपास उगी हुई घासकी खोद कर दूर करना जिसमें पौधोंकी बाढ़ न रहे, नौदना, निकाना।

निरान्य (सं० त्रि०) निरङ्ग, अङ्गरहित।

निरापद (सं० स्त्री०) १ आपद या दुःखादि परिशुष्यता, जिसे कोई आपदा न हो, जिसे कोई आपत या डर न हो। २ जिससे किसी प्रकार विपत्तिको सम्भावना न हो, जिससे हानि वा अनर्थको आशा न हो। ३ जहां अनर्थ या विपत्तिको आशा न हो, जहां किसी बातका डर या खतरा न हो।

निरावाध (सं० पुं०) निर्गता अवाधा प्रतिबन्धो यस्मात्। १ पलाभापविषय। (त्रि०) २ आवाधाशून्य। ३ व्यथाशून्य। ४ प्रतिबन्धशून्य।

निरावाधकर (सं० त्रि०) जो अनिष्ट वा कष्टकर न हो।

निरामञ्जर (सं० पुं०) पलञ्जर।

निरामय (सं० त्रि०) निर्गत आमयो व्याधिर्गम्यात्। १ रोगशून्य, जिसे रोग न हो, नौरोग, भलाचक्रा, तन्दुस्त्र। पर्याय—वाचं, कल्प, नौरुज, पट, पलाघ, मधु, अगद, निरातङ्ग, अनातङ्ग। २ उपद्रवशून्य। ३ रोगनाशक। (पुं०) ४ वनहागल, जंगली बकरा। ५ शूकर, सूपर। ६ नृपभेद, एक राजाका नाम। ७ महादेव, शिव। (स्त्री०) ८ कुवस।

निरामदै (सं० पुं०) महाभारतीय नृपभेद, महाभारतमें एक राजाका नाम।

निरामासु (सं० पुं०) १ कपिल, कौशका पेड़। २ कत्बूल, निर्मली।

निरामिन् (सं० त्रि०) नितरां अभयशील।

निरामिष (सं० त्रि०) निर्गतमासिषामिनायो मांसाद्यासिषं वा यस्मात् प्रादिवद्दुः। १ सोमशून्य, जिसके रोग



श्रुतिमें भी लिखा है, कि ब्रह्म निर्विशेष, एकाकार और चैतन्यचैतन्य है। जिस प्रकार लवणपिण्ड धनन्तर, प्रवाहय, सम्यक् और रसघन है, उसी प्रकार यह आत्मा धनन्तर, प्रवाहय, पूर्ण और चैतन्यघन परमात्मचैतन्यचैतन्य है। कहनेका तात्पर्य यह, कि आत्माके अन्तर बाहर नहीं है, चैतन्यमिष पश्य रूप वा आकार नहीं है, वे निराकार, निरवच्छिन्न हैं। चैतन्य ही उनका मायकात्मिकरूप है। जिस प्रकार लवणपिण्डके बाहर और भीतरमें लवणरस रहता है, दूसरा कोई रस नहीं रहता, उसी प्रकार आत्मा भी बाहर और भीतरमें चैतन्यरूपी है, उसमें चैतन्यके सिवा और कोई रूप नहीं है।

स्मृतान्तरमें विश्वरूपधर नारायणने नारदसे कहा था, 'तुम जो मुझे दिव्यगन्धादिपुष्प पर्याप्त मूर्त्तिविगट देवते हो, वह माया है। यह मुझमें हो सृष्ट हुई है। हम प्रकार जब तक मैं मायिकरूपधारी न होता, तब तक तुम मुझे पहचान नहीं सकते।'

ब्रह्मके दो रूप हैं, मूर्त्त और अमूर्त्त। परमाय-कल्पमें वे पररूप हैं। परन्तु उपाधिके अनुसार उनके मूर्त्त और अमूर्त्त हैं। मूर्त्तका अर्थ मूर्त्तिमत् अर्थात् स्थूल और अमूर्त्तका अर्थ सूक्ष्म होता है। पृथ्वी, जल और तेज ये तीनों ब्रह्मके मूर्त्त रूप हैं तथा वायु और आकाशरूप अमूर्त्त रूप। मूर्त्तरूप अर्थात् सरण्योत्त है और अमूर्त्तरूप अविनाशो। (वेद१३८ ३१२७०) विशेष विवरण ब्रह्ममें देतो।

२ निर्गताज्ञान। ३ आकाश। (वि०) ४ जिसका कोई आकार न हो, जिसके आकारकी भावना न हो। निराकाश (सं० वि०) निर्नाम्नि आकाशं यस्य। अय-काम्यस्य, पूर्ण।

निराकुल (सं० वि०) नितरां पाकुलः। १ प्रताप्त पाकुल, बहुत घबराया हुआ। २ प्रयाकुल, जो सुख या डंवाडीन न हो। ३ अनुदिन, जो घबराया न हो।

निराकृत (सं० वि०) निर-पा-कृतः। १ प्रताप्यात् दूरीकृत, दूर की हुई, हटाई हुई। २ निरकृत, खंडन की हुई। ३ निवारित, रद की हुई, मिटाई हुई। ४ निर्नीत, स्थिर की हुई। ५ मोमाहित, विचारो हुई, मोची हुई।

निराकृति (सं० स्त्री०) निर-पा-कृ-क्तिन्। १ प्रतादिग, निराकरण, परिहार। निर्गता आकृतियै रमादिति। (वि०) २ आकृतिरहित, निराकार। ३ स्वाध्याय रहित, वेदपाठरहित। ४ पञ्चमहायज्ञके अनुष्ठानमें रहित। (पु०) ५ रोहितमनुष्य, रोहित मनुष्ये पुन-का नाम।

निराकृतित् (सं० वि०) निराकृतमनेन निराकृत-इति (इथादि१३३५ वा १२१४८) निराकरणकर्त्ता।

निराकृत्य (सं० वि०) निर्नाम्नि आकृत्य यस्य। १ जहां कोई प्रकार सुनिश्चयाना न हो, जहां कोई रसा या सहायता करनेवाला न हो। २ जो रसा या सहायता न करे, जो प्रकार न सुने। ३ जिसकी प्रकार न सुनी जाय, जिसको कोई सहायता न करे।

निराक्रिया (सं० स्त्री०) १ अविष्करण। २ अस्वीकार। ३ प्रतिबन्ध।

निराखाल—सतारा जिलेकी एक कृत्रिम नदी। नीरा नदी तथा भीमा नदीके उपताराका कुछ अंश भीचनेके लिये निराखाल काटो गई है। निकटवर्ती जिन सब नगरों और ग्रामोंमें जलकट या बर्हा देने दूर करनेके लिए गवर्नमेंण्टने यह मर्काय किया है। यह नहर कटवानेमें लगभग साठ लाख रुपये खर्च हुए थे। १८६८ ई०में अनापूर्तिके कारण जब पूनामें दुर्भिक्ष पड़ा था, तब प्रधान प्रधान राजकर्मचारियोंने आकर नहर काटनेका उपाय सोचा। भीमा और नीरा नदीके मध्य इन्दापुर इसके लिये उपयुक्त स्थान चुना गया। उसी स्थान पर नहर काटना उचित है, ऐसा सर्वोंने स्थिर किया। १८०६ ई०में दुर्भिक्षनिषेद्धित लोगोंको प्रकटके मुक्त करनेके लिये ब्रिटिश शाहवने उनमें खाल कटवाना शुरू कर दिया। नीरा नदीकी बाईं बगल ही कर निराखाल खनो गई है। इसकी लम्बाई १०३ मील है। इस खालने पुरन्दर, भीमठाड़ी और इन्दापुर महकूमके ८० ग्रामोंके मध्य लगभग २०००० एकड़ जमीनको उर्वरा बना दिया है। जून मासमें निकर माघा पक्षपर तक नीरा नदीका मध्य जल निराखाल ही कर बह नहीं सकता। दिगम्बरके शेष भाग तक भी नीरामें काफी जल रहता है।

कई जगह पहाड़के कारण निराखानको गति टेढ़ी हो गई है। कोडाले, मालिगांव और निमगांव आदि स्थानोंके पहाड़को काट कर सीधा रास्ता बना दिया गया है।

निराग ( स० त्रि० ) रोगशून्य, रागहीन।

निरागम ( स० त्रि० ) आगमहीन।

निरागस ( स० त्रि० ) निर्नास्ति आगः यस्य। निष्पाप, पापशून्य।

निराग्रह ( स० त्रि० ) आपग्रहहीन।

निराचार ( स० त्रि० ) निर्निश्चयते आचारी यस्य। आचारशून्य, अन्याचार।

निराजो ( चि० स्त्री० ) लज्जाहोके करकेकी वह नकदी जो हथ्ये और तरौंकीको मिलानेके लिये दोनोंके सिरे पर लगी रहती है।

निराजीव्य ( स० त्रि० ) निर्नास्ति आजीव्य यस्य। जिसका जीविकोपाय कुछ भी न हो।

निराट ( हि० वि० ) एकमात्र, विस्कुल, निपट, निरा।

निराडम्बर ( स० त्रि० ) आडम्बरशून्य, आडम्बररहित।

निरातह ( स० त्रि० ) निर्गता आतह्यो यस्य, यस्माद् १ भयशून्य। २ रोगरहित, नौरोग।

निरातप ( स० त्रि० ) निर्गत आतपो यस्मात्। १ आतपशून्य। स्त्रियां टाप्। २ रात्रि, रात।

निरातपा ( स० स्त्री० ) रात्रि, रात।

निरात्मक ( स० त्रि० ) आत्माशून्य।

निरादर ( स० पुं० ) आदरका अभाव, अपमान।

निरादान ( स० पुं० ) १ आदान वा लेनेका अभाव २ एक दुबका नाम।

निरादिष्ट ( स० त्रि० ) जो समाप्त कर दिया गया हो।

निरादेश ( स० पुं० ) १ सम्पूर्णशोध, भ्रगताना, फटा करने वा शुकानेका काम। ( त्रि० ) २ आदेशशून्य।

निराधान ( स० त्रि० ) आधाररहित।

निराधार ( स० त्रि० ) १ अमलस्य या आययरीहित, जिसे सहारा न हो या जो सहारे पर न हो। २ जो बिना अमलके आदिके हो। ३ जो प्रमाणोंके पुष्ट न हो, धेजड़ बुनियादका, जिसे या जिसमें जीविका आदिका सहारा न हो।

निराधि ( स० त्रि० ) निर्नास्ति आधिः रोगः यस्य। १ रोगशून्य, नौरोग। २ चिन्ताशून्य, मानसिक पीड़ा रहित।

निरानन्द ( स० त्रि० ) १ आनन्दरहित, जिसे आनन्द न हो। २ शोकाकुल, शोकादिके कारण जिसका आनन्द नष्ट हो गया हो। ( पुं० ) ३ आनन्दका अभाव। ४ दुःख, चिन्ता।

निराना ( हि० स्त्री० ) फसलके पौधोंके पासपास उगी हुई घासकी खोद कर दूर करना जिसमें पौधोंकी वाढ़ न रहे, नौदना, निकाना।

निराश्र ( स० त्रि० ) निरह, अश्ररहित।

निरापद् ( स० स्त्री० ) १ आपद् वा दुःखादि परिशून्यता, जिसे कोई आघात न हो, जिसे कोई आफत या डर न हो। २ जिसमें किसी प्रकार विपत्तिको सम्भावना न हो, जिसमें हानि वा अनर्थको आशङ्का न हो। ३ जहां अनर्थ वा विपत्तिको आशङ्का न हो, जहां किसी बातका डर या खतरा न हो।

निराबाध ( स० पुं० ) निर्गता अबाधा प्रतिबन्धो यस्यात्। १ पक्षाभामविशेष। ( त्रि० ) २ आबाधाशून्य। ३ अबाधशून्य। ४ प्रतिबन्धशून्य।

निराबाधकर ( स० त्रि० ) जो अनिष्ट वा कष्टकर न हो।

निरामञ्जर ( स० पुं० ) पञ्जवर।

निरामय ( स० त्रि० ) निर्गत आमयो अशुचिर्ण्णात्। १ रोगशून्य, जिसे रोग न हो, नौरोग, भलाचक्रा, तन्दुरुस्त। पर्याय—वास्त, कल्प, मोरुज, पट, छलाघ, लघु, अगद, निरातह, पनातह। २ उपद्रवशून्य। ३ रोगनाशक। ( पुं० ) ४ धनहागल, जंगली बकरा। ५ शूकर, सूपर। ६ नृपभेद, एक राजाका नाम। ७ महादेव, शिव। ( स्त्री० ) ८ कुमल।

निरामद ( स० पुं० ) महाभारतीय नृपभेद, महाभारतमें एक राजाका नाम।

निरामालु ( स० पुं० ) १ कपिल, केशका पेड़। २ कतुबेल, निर्मली।

निरामिन् ( स० त्रि० ) नितरां रमणशील।

निरामिप ( स० त्रि० ) निर्गतमामिपान्मिपयो मांसाद्यामिपं वा यस्मात् प्रादिवहृ०। १ सोमशून्य, जिसके रोग

न हो। २ मांसादि पाशिवगुण्य, मांसादि, जिममें मांस न मिला हो। ३ जो मांस न खाए। ( पु० ) ४ पाशिवगुण्य भवादि, बिना मांसका भोजन।

निरामिदाग्नि ( स० त्रि० ) १ निरामिपमोजी। २ जितेन्द्रिय।

निराय ( स० त्रि० ) आयरहित, करगुण्य।

निरायण—अयनरहित ( Destitute of precession ) । सोरमण्डलके ध्रुवकी किसी निर्दिष्ट स्थानसे गणना की जाती है। इस निर्दिष्ट स्थानका नाम है 'वासन्तिक विषुवपद'। वासन्तिक विषुवपदसे घूम कर पुनः उसी स्थान पर आनेमें सूर्यको ३६५ दिन १४ घड़ी ३१' ८०२ पल लगता है। इस समयको 'मायनवत्सर' (The tropical year) कहते हैं। किन्तु सूर्यसिद्धान्तके मतसे वर्षका परिमाण ३६५ दिन १५ घड़ी ३१' ५२२ पल है। श्रेयोक्त समयमें सूर्य वासन्तिक विषुवपदसे चल कर पुनः वीर यह स्थान पार कर ५८६८८१ सेकेण्डमें वृत्तखण्डका परिभ्रमण करता है। सुतर्का हिन्दूज्योतिषियोंके मतसे गतिके आरम्भका स्थान क्रमशः पूर्वकी ओर हट जाता है। इस प्रकार यह २२ डिग्रीसे भी अधिक हट जाता है। इन दोनोंके पार्थक्य ( difference ) को अयनांग (Degrees of precession) कहते हैं।

अभी सोरमण्डलके पदार्थोंका ध्रुवकी दो प्रकारसे गणना की जा सकती है; यथा—प्रथम विषुव ( Equinox ) में; द्वितीय हिन्दूज्योतिषियोंके मतसे। प्रथम प्रकारसे सोरमण्डलके पदार्थोंका ध्रुवकी अयनांगविगिट है, अतएव वही ध्रुवकी समुदाय 'सायन' कहलाता है। किन्तु द्वितीय प्रकारसे सभी ध्रुवकी अयनरहित है, सुतर्का ये 'निरायण' कहलाते हैं।

निरायत ( स० त्रि० ) १ विरह्यत। २ यद, अनायत।

निरायथ्यवत् ( स० पु० ) अलसव्यक्ति, वह जो अपने औषिकी निर्वाहके लिए कृद्ध भी घेटा नहीं करता।

निरायास ( स० त्रि० ) आराम या शैतारहित।

निरायुष ( स० त्रि० ) निरक्ष, अक्षहीन, बिना हृदय-यासका।

निरारम्भ ( स० त्रि० ) आरम्भ या कार्यगुण्य।

निरालम्ब ( स० पु० ) समुद्र-मध्यमें, एक प्रकारकी भूमिहीन स्थली।

निरालम्ब ( स० त्रि० ) निर्गतं पालम्बः अयलम्बनं यत्नं, मादिवहृ० । १ अयलम्बनगुण्य, बिना पालम्ब या सहारे-का, निराधार। २ निराश्रय, बिना ठिकानेका। ( पु० ) ३ यजुर्वेदीय उपनिषद्में द।

निरालम्बा ( स० स्त्री० ) गिनोम्भि पादम्बो यस्याः । आकाशमसि, कोटो जटामोमी।

निरालम्बन ( स० त्रि० ) निर्गतः पालम्बनः अयलम्बनं यद्य। निराश्रय, बिना ठिकानेका।

निरालम्बोपनिषद् ( स० स्त्री० ) यजुर्वेदीय उपनिषद्में द।

निरालस ( हि० वि० ) निरालस्य देवो।

निरालस्य ( स० त्रि० ) १ आलस्यरहित, जिममें आलस्य न हो, तत्पर, फुरतोला, बुद्धत। ( पु० ) २ आलस्यका अभाव।

निराला ( हि० पु० ) १ एकान्त स्थान, ऐसा स्थान जहाँ कोई मनुष्य या बस्ती न हो। ( वि० ) २ एकान्त, निर्जन। ३ विलक्षण, अद्भुत, मयसे भिन्न। ४ अनुपम, अपूर्व, अनोखा, बहुत बढ़िया।

निराली—एक प्रकारकी मित्र जाति। ये लोग अहमदनगर, पूना और शोलापुरमें अधिक संख्यामें पाए जाते हैं। इनका दूसरा नाम मोल-रंगकारी है। उक्त तीन स्थानके निरालियोंके आचार व्यवहार, रीतिनीति आदिमें आदृश्य तो है, लेकिन यहाँ पर प्रत्येक स्थानके निरालियोंके कार्यकलापका पृथक् रूपसे वर्णन किया गया है।

इसके पहले वे कहीं काम करते थे और कथ इस पञ्चनमें पाए, इनके विषयमें कुछ भी पता नहीं चलता। बहुतोंका विज्ञान है, कि ये लोग पहले महाराष्ट्रके 'कुणवो' समुदायभूक्त थे। पोछे नोन रंगका कार्य करनेके कारण ये जातिप्युत किये गये और निराली कहलाए। तभीसे इस जातिके लोग मित्र समझे जाते हैं। इन लोगोंमें पुत्र्य नामके पहले पादा अर्थात् पिता और स्त्री नामके पहले बाई या पाई ( अर्थात् माता ) शब्द रहता है। उन लोगोंके कुल देयताओंमें अहमदनगरके मोमारोके भैरव, निजामराज्यके तुलजापुरकी देवी, अहमदनगरकी कामादेवी और पूनाके पत्तगत जेजुरीके खडोबा प्रसिद्ध हैं। पुणवन्दनादि द्वारा ये

लोग उक्त कुलदेवताओंकी पूजा करते हैं। हिन्दूके जितने पर्व और उषसवादि हैं उनका ये लोग प्रतिपान्नन करते हैं।

ये लोग देखनेमें काले और बलवान् होते हैं। स्थानीय कुनवियोंकी तरह इनको गठन बहुत सुन्दर है। किन्तु हाथोंमें काले काले दाग रहनेके कारण ये लोग कुनवियोंमें छिपते नहीं, बहुत आसानीसे पहचाने जाते हैं। घर तथा बाहर सभी जगह ये लोग मराठी भाषा बोलते हैं।

निरालीपुरुषगण समूचा सिर सुँड़ा लेते हैं, केशत्र बोरमें थोड़ी गिखा रहने देते हैं। दाढ़ी और मूँछ भी ये लोग बढ़ाते हैं। इनका पहरावा धोतो, कोट और महाराष्ट्रमें प्रचलित पगड़े हैं। जूता और खड़ाजका भी व्यवहार होता है। स्त्रियाँ महाराष्ट्रीय रमणियोंसे योग्यक पहनती हैं। स्त्री पुरुष दोनों ही अलङ्कार पहनना पसन्द करते हैं और सब कोई पर्वके दिनमें अलङ्कार योग्यक परिच्छेदका व्यवहार करते हैं। ये लोग उच्च हिन्दूके जैसा प्रतिदिन स्नान करते और सन्ध्याङ्गन समाप्त करके भोजनादि करते हैं।

निराली लोग अतीव परिष्कारपरिच्छेद, अमयीत्र, शान्तिप्रिय, सच्चरित्र, मितव्ययी और दानशील होते हैं, नीलरंग करना ही इनका पसन्द व्यवसाय है। स्त्रियाँ रंगको चरने और कपड़ा रंगानेमें पुरुषकी सहायता करती हैं। बचपनमें ये लोग थोड़ा लिख पढ़ कर जातीय व्यवसायमें लग जाते हैं।

विवाह और आशुपल्लवमें भाखीय वस्तु निमन्वित होते हैं। स्थानीय पुरोहितगण विवाह और आशुकार्य कराते हैं। निराली लोग स्मार्त्त हैं। ये लोग आलन्दे, कामी, जैलुरी और तुलजापुर आदि तोर्योंमें जाते हैं। इनमें विधवाविवाह, बहुविवाह और वाश्वविवाह प्रचलित है। ज्योतिषियोंकी गणना शान्तिस्त्रैल्ययन और यादु आदिमें इनका पूरा विश्वास है। मराठी कुनवीकी आचारपरदात और इनकी पधतिमें कोई प्रभेद देखनेमें नहीं आता। पचायत द्वारा सामाजिक व्यवस्था भीमाहित होती है।

गोलापुरके निराली दो श्रेणियोंमें विभक्त हैं।

यथा—१म मूलनिराली, २यं काडू, पर्यात् गहर-निराली। इन श्रेणियोंके लोग एक साथ खाते पीते हैं, किन्तु प्रापसमें आदान प्रदान नहीं होता। इनके पादि पुरुषका नाम 'प्रकाश' है। प्रकाशकी माताका नाम कुकुत, और पिताका नाम घामोर था। ये लोग महा-राष्ट्रीय भाषा बोलते हैं।

सर्वदा प्रचलित नामोंके मध्य चित्रकर, कज, कालस्तर, कण्डारकर आदिका अधिका प्रचार है। क्रियाकर्मके उपलक्षमें ये लोग भात, रोटी और दालका भोज देते हैं ससे, किन्तु साधारणतः इनका प्रधान भोजन रोटी, दाल और तरकारी है। ये लोग मांस, मछली नहीं खाते और न शराब ही पीते हैं।

इनकी स्त्री और पुत्रकन्याएं इन्हे काम-काजमें सहायता पहुँचाती रहती हैं। इनके प्रधान आराध्य देवता अम्बाबाई, खाण्डोबा और बाजीबा हैं।

ये लोग शवदाह करते हैं और कभी कभी जमीनमें गड़ भी देते हैं। दस दिन तक भगौच मानते और तैरहवें दिनमें आहादि करते हैं।

पूना और गोलापुरमें अहमदनगरवासी निराली आ कर बस गए हैं। इनकी संख्या बहुत कम है। आचार व्यवहार दूसरे स्थानके निरालियोंके जैसा है। पर हाँ, कहीं कहीं प्रभेद भी देखनेमें आता है।

इनको आकाति नातिखून और खर्न है। ये लोग बहुत बलवान् होते और दाढ़ी मूँछ कुछ भी नहीं रखते, केशत्र मस्तकके ऊपर थोड़ी गिखा रहने देते हैं। मद, मांस, मद्य आदिके व्यवहारमें ये तनिक भी आपत्ति नहीं करते।

सन्तान भूमिष्ठ होनेके पाँचवें दिन ये लोग जातिके ऊपर पांच नीबू और पांच पनारकी कली रख कर दीप जलाते और पूजा करते हैं। दशवें दिनमें प्रकृतिके शुचि होनेके बाद ग्यारहवें दिनमें सन्तानका नामकरण होता है।

सुदंकी सफेद कपड़ेमें ढक कर लम पर पुष्पादि बिछा देते और स्नानन ले जाते हैं। जो स्त्री विवाहित होती, उसको स्नानदेहकी पहरो रत्नके कपड़ेमें ढक देते हैं। कोई स्नानदेहको दण्ड काने पोर कोई गड़ते हैं।

निर्मात्र ( म० वि० ) निर्गत पानोकी यस्मात् । १  
पानोकीगम्य, चन्धकार । २ पालोकरहित, जिसमें  
प्रकाश निकल गया हो ।

निराधर्ष ( म० वि० ) हृष्टिमें निवारित, हृष्टिमें रक्षणीय ।

निरायन्य ( म० वि० ) निराधार, बिना सहारेका ।

निराग ( म० वि० ) निर्गता प्रागा यस्य । प्रागारहित,  
जिसके प्रागा न हो, नाउष्योद ।

निरागक ( स० वि० ) निरागकारो, निराग करनेवाला ।

निरागङ्ग ( स० वि० ) निर्वाहित प्रागङ्गा यस्य । प्रागङ्गा-  
रहित, जिसमें किसी वातका सन्देह न हो ।

निरागता ( म० स्त्री० ) निरागस्य भावः, निराग-तन्व-  
टाव । निरागाका भाव या धर्म ।

निरागा ( स० स्त्री० ) प्रागाका प्रभाव, नाउष्योदो ।

निरागित्व ( म० स्त्री० ) निरागिनो भावः, निरागिन्त्व ।  
प्रागाराहित्य, निरागा का भाव ।

निरागिन् ( म० वि० ) हताग, नाउष्योद ।

निरागिन् ( म० वि० ) निर्गता प्रागौरागं मनं यस्य ।

१ प्रागौरागिन् । २ हृष्ट वेराग्यवगतः विगतलब्ध,  
लक्ष्यारहित ।

निरायम ( स० वि० ) निर्वाहित प्रायमो यस्य । प्रायम-  
रहित, प्रायमगून्, बिना प्रायय या सहारेका ।

निरायय ( स० वि० ) निर्गत प्रायय प्राधारी प्रथमम्बनं  
या यस्य । १ प्राययरहित, प्राधरहीन, बिना सहारेका ।

२ प्रथमप्राय, जिसे कहीं ठिकाना न हो । ३ निर्लिप्त,  
जिसे शरीर प्रादि पर मसता न हो ।

निराम ( म० पु० ) निर-प्रम भावे संज्ञ । १ प्रत्याख्यान,  
निष्कारण, दूर करना । २ छण्डन । ( वि० ) ३ निरामक ।

निरामन ( म० स्त्री० ) निर, प्रास उपवेशने स्मृट् । १  
निरामन, दूर करना । २ छण्डन । ( वि० ) ३ प्रासम-  
रहित ।

निरासाट ( म० वि० ) निर्वाहित प्राध्यादो यस्य ।  
प्राध्यादहीन ।

निरासाट्य ( म० वि० ) १ प्राध्यादरहित । २ संघो-  
गरहित ।

निरासात् ( म० वि० ) प्राध्यादरहित, प्राध्यादगम्य ।

निराहार ( म० वि० ) निर्गत प्राधारी यस्य । १ प्राध्या-  
रहित, जो बिना भोजनके हो । २ निवृत्त प्राधारी,  
जिसके अनुष्ठानमें भोजन न किया जाता हो । ( स्त्री० )  
३ प्राध्यारका प्रभाव ।

निरिङ्ग ( स० वि० ) निर्यत्न, प्रयत्न ।

निरिङ्गिणी ( म० स्त्री० ) नि-निर्मृतं जनं इति प्राज्ञो-  
तोति निर-इङ्-इनि । सतो डोप । तिरस्कारिनो, चिकं,  
भ्रुकमिलो, परदा । पर्याय—प्रयत्नहीनता, पटो, यत्न-  
निरा ।

निरिच्छ ( स० वि० ) निर्वादि इच्छा यस्य । इच्छागम्य,  
जिसे कोई इच्छा न हो ।

निरिन्द्रिय ( स० वि० ) निर्गतामिन्द्रियाणि यस्मात् ।  
१ इन्द्रियगम्य, जिसके कोई इन्द्रिय न हो ।

धनं धौ क्लीबपतितौ ज्ञान्यन्वयधितौ तथा ।

उभयतन्महाशय ये के विभिरिन्द्रियाः ४\*

( मनु० १२०१ )

क्लीब, पतित, ज्ञान्यान्व, ज्ञान्यधिर, उभयत, जड़, मूक  
घोर काना ये सब निरिन्द्रिय प्रयात् इन्द्रियरहित हैं ।  
निरिन्द्रियव्यक्ति पित्रधनके अधिकारी नहीं हैं । २ जिसके  
हाथ, पैर, पाँख, कान प्रादि न हों या कामके न हों ।

निरिन्धन ( स० वि० ) इन्धनगम्य ।

निरी ( वि० वि० ) निरा देखो ।

निरीचक ( म० वि० ) निर-ईच-ण्टुत् । १ दग्गक,  
देखनेवाला । २ देखरेख करनेवाला ।

निरीचण ( स० स्त्री० ) निर-ईच-ण्टुट् । १ दग्गन,  
देखना । २ देखरेख, निगरानी । ३ देखनेकी सुझा या

दग्ग, चितवन । ४ नेत्र, पाँख । निरीचते निर-ईच-  
ण्टु । ( वि० ) ५ दग्गक, देखनेवाला ।

निरीचमाण ( स० वि० ) निर-ईच-माणच् । जो देख  
रहा हो ।

निरीचा ( स० स्त्री० ) निर-ईच-प्रियां च । दग्गन,  
देखना ।

निरीचित ( स० स्त्री० ) निर-ईच-ञ् । १ पर्यकीकृत,  
देखा हुआ । २ देखा भांसा हुआ, जांच किया हुआ ।

निरीच्य ( म० वि० ) दग्गनयोग्य, देखने लायक ।

निरीच्यमाण ( स० वि० ) निर-ईच-माणच् । हयमोम,  
जिसको देखते हैं, जो देखा जाता हो ।

निरीति ( स० त्रि० ) निर्गता इतियंत् । इतिरहित, अतिरह्यदिगुण्य । अतिरहित, अनाहित, मूयिक, पतङ्ग, पक्षी और निरुक्तखित शत्रु राजा ये कः इतिरहित हैं ।

निरीय ( स० क्ली० ) निर्गता ईया यसमात् । १ हलका फाल । ( त्रि० ) निर्नास्ति ईय ईश्वरो यस्य । २ ईय-शून्य, जिसे ईय या स्वामो न हो, बिना मालिकका । ३ अनौश्वरवादी, नास्तिक, जिसकी समझमें ईश्वर न हो । निरीश्वर ( स० त्रि० ) निरव्यक्त ईश्वरो यत् । १ ईश्वर-रहितवाद, जिसे यादसे ईश्वरका अस्तित्व स्वीकार नहीं किया जाता । २ नास्तिक, अनौश्वरवादी ।

निरीश्वरवाद ( स० पु० ) निरीश्वरो वादः । निरीश्वर-विषयक वाद, यह सिद्धान्त कि कोई ईश्वर नहीं है । निरीश्वरवादिन् ( स० पु० ) निरीश्वरोवादीऽस्थाप्तीति इति । नास्तिकवादी, जो ईश्वरका अस्तित्व न माने । निरीष ( स० क्ली० ) निर्गता ईया यसमात् । निरीय, हलका फाल ।

निरीह ( स० त्रि० ) निर्गता ईहा यस्य । १ चेष्टाशून्य, जो किसी बातके लिये प्रयत्न न करे । २ जिसे किसी बातकी चाह न हो । ३ विरक्त, उदासीन, जो सब बातोंसे किनारे रहे । ४ तटस्थ, जो किसी वखेड़में न पड़े । ५ शान्तिप्रिय, जो सबके साथ भेदमें रहता हो । ( पु० ) ६ विष्णु ।

निरीहा ( स० क्ली० ) निरीह-टाप् । १ चेष्टाविरोधि-व्यापार, निषेध, चेष्टाका अभाव । २ विरक्त, चाहका न होना ।

निरुभार ( हि० पु० ) निरुभार देखो । निरुभारना ( हि० क्लि० ) निरुभारना देखो । निरुक्त ( स० क्ली० ) निर-वच-क्त, नि-निचयेन उक्तं । १ निर्वचन, कः वेदाङ्गोमिमे एक वेदका चौथा अंग ।

निरुक्त पांच प्रकारका है—वर्णोत्तम, वर्णविपर्यय, वर्णविकारनाय, धातु और उसका अर्थातिगययोग । वैदिक शब्दोंके निष्पत्त को जो व्याख्या यास्क मुनिने की है उसे निरुक्त कहते हैं । इसमें वैदिक शब्दोंके अर्थका निर्णय किया गया है । यह पञ्चाध्यायात्मक है, जिनके नाम ये हैं—अध्ययनविधि, छन्दः प्रविभाग, छन्दविनियोग, उपलक्षित कर्माङ्ग भूतकाण्ड और उपदर्शित

लक्षण । इन सब अङ्गोमि वेदका अर्थ जाना जाता है, इसीसे निरुक्त वेदका अङ्ग माना गया है । यह सभी अङ्गोंमें प्रधान है । क्योंकि इसमें अर्थ टिया गया है । अर्थ ही सर्वोपेक्षा प्रधान है । कारण अर्थका बोध नहीं होनेसे कोई फल नहीं होता, वैदिक शब्दका अर्थ जाननेके लिये निरुक्त ही प्रधान है । इसमें तात्पर्यके माथ अर्थीय सभी शब्दोंकी व्याख्या की गई है । अनिरुक्त अर्थानु निरुक्तसम्मत नहीं है, इस प्रकार मन्वार्थ व्याख्या करना उचित नहीं । निरुक्तसम्मत सभी मन्वार्थकी व्याख्या करनी होती है । इस प्रकार अर्थका परिज्ञान होनेके कारण यह प्रधान है । इसमें निम्नलिखित विषय प्रतिपादित हुए हैं—

नाम, आख्यात, उपमर्ग और निपातलक्षण, भाव विकारलक्षण, नाम और आख्यातज यथाक्रम उपपद्यत्त हो कर पक्ष और प्रतिपक्षके रूपमें उनका विचार कर अवधारण, पदविभागपरिज्ञान, प्रतिज्ञानबोधके अत्र-लक्षित प्रदर्शनके लिये आदि, मध्य और अन्त तथा अनेकदेशतन्निष्ठसदृष्टमन्त्रसे याज्ञिक परिज्ञान द्वारा देवतापरिज्ञानप्रतिज्ञा, अर्थज्ञप्रशंसा, अनर्थशावधारण, वेदवेदाङ्गव्युत्पन्न, समयोजन निष्पत्त समाग्रायविरचन, प्रकरणत्रयविभाग द्वारा नैषण्टु कप्रधान देवता-भिधान प्रविभागलक्षण, निर्वचन-लक्षण द्वारा शब्दशक्ति विषयोपदेश, अर्थप्राधान्यानुसारलोप, उपधा, विकार, वर्णलोप और वर्णविपर्यय, इन सब उपदेश द्वारा सामर्थ्यप्रदर्शनके निमित्त आदि, मध्य और अन्त लोप तथा उपधा, विकार, वर्णलोपविपर्यय, आद्यन्तवर्णव्यापत्ति और वर्णोपजनन उदाहरणविन्ता, अन्तःस्थ और अन्तधातुनिमित्त मन्त्रसायं और अक्षरसायं उभयप्रकृतिधातु निर्वचनोपदेश, भाषिकप्रवृत्तिसि नैगम शब्दार्थ प्रमिद्धि, देश व्याख्या द्वारा शब्दसपथयदेश, ग्रिथलक्षण, विभेय आध्या हारा लक्ष्यपर्यायभेद, संध्या, संधिध और उदाहरण द्वारा नाम, आख्यात उपमर्ग और निपातके विभागागुसार नैषण्टु प्रकरणका अनुक्रम, अनैकार्य शब्दके अनवगतमन्त्रकारका अनुक्रमण, परोक्षलक्षित आध्यात्मिक मन्त्रलक्षण, मुक्ति, आगोवादि, शपथ, अभिषेक, अभिषेक, परिवेदना, निन्दा और

प्रशंसादि द्वारा मन्त्राभिधानरूपदेव; निदान परिष्कार-  
 ध्यानावापनके निमित्त प्रनादिष्टदेवतोपपरीक्षणके लिये  
 पञ्चाक्षरीपद्यैका प्रकृतिसमूहत्व । इतरेतरजगत्तः स्थान  
 व्यभिचारे तौनस्त्री एकावस्था, महाभाग्यकृतके चर्मेक  
 नामधेय प्रतिवृत्तः । उत्पत्तिके सम्बन्धमें पृथक् अभि-  
 धानः देवताओंका साकारचिन्तन, भक्तिमाहर्चय, संस्तव  
 काम, पुस्तकार, हविर्भाक् और श्चन्द्रनभाक् संवह ;  
 पुत्रिणी, प्रत्नीच, व्युत्थान और देवताओंका अभि-  
 धेशभिधान तथा व्युत्पत्तिपाधान्यका व्युत्पुटाहरण; इन  
 सबका निर्वाचनविचार और उपपत्ति प्रवधारणानुसार  
 देवत्वप्रकाशनिर्णय ; विद्यापारम्पर्याद्योपदेव और  
 मन्त्रके प्रशंसादि द्वारा देवताभिधान निर्वाचनफल ।  
 निरुक्तशास्त्रमें यही सब विषय प्रतिपादित हुए हैं ।

चामरटोकाकार भरतने निरुक्त शब्दका अर्थ किया  
 है, निययदपसे उक्त = निरुक्त ।

हमशब्दके मतसे पदभङ्गनका नाम निरुक्त है ।  
 षट्शतकान्तिकांमिषा है, कि निरुक्त वेदव्याख्याका  
 प्रधानतम उपकरण है । यह वैदिक अभिधान विज्ञेय  
 है । शाकपूर्णि, चर्चामाभ और खोलाष्टिषो ये तीन  
 प्राचीन निरुक्तकार हैं । यास्क इन सबके बहुत पहले हुए  
 हैं । निरुक्तमें वेदमन्त्रकी यथारोति व्याख्या को गर्ह है ।  
 यास्कने उक्त शब्दमें नाम, संवा, चाव्याप्त, उपसर्ग  
 और निपातको सविज्ञेय पालोचना की है ।

किन्तुके मतसे निरुक्त १२ पञ्चाय है । प्रथममें  
 व्याकरण और शब्दशास्त्र पर सूत्र विचार हैं । इतने  
 प्राचीन कालमें शब्दशास्त्र पर ऐसा गूढ़ विचार और  
 ऋही नहीं देया जाता । शब्दशास्त्र पर दो मत प्रवर्तित  
 हैं, एकका पता हम लोगोंको यास्कके निरुक्तमें लगता  
 है । कुछ लोगोंका मत था कि सब शब्द धातुसमूहक हैं  
 और धातु क्रियापदमात्र हैं जिनमें प्रत्ययादि लगा कर  
 गिच भिन्न शब्द बनने हैं । यास्कने इन्ही मतका मण्डन  
 किया है । हम मनके विरोधियोंका कहना था, कि  
 कुछ शब्द धातुसमूह क्रियापदमें बनते हैं, पर सब नहीं ।  
 क्योंकि यदि 'पश'में पश्र भागा जाय, तो प्रत्येक बनने  
 या जाने बहनेवाला पश्र' पश्र कहनायगा । हमने  
 उत्तरमें यास्क सुनिने कहा है, कि जब एक क्रियामें

एक पदार्थका नाम पड़ जाता है, तब यही क्रिया  
 करनेवाले और पदार्थको यह नाम मने दिया जाता ।  
 दूसरे पक्षका एक और विरोध यह था, कि यदि नाम  
 इसी प्रकार दिए गए हैं, तो किसी पदार्थमें जितने गुण  
 हैं वतने ही उसके नाम भी होने चाहिए । हम पर  
 यास्क कहते हैं, कि एक पदार्थ किसी एक गुण या  
 धर्ममें एक नामकी धारण करता है । इसी प्रकार और  
 भी समझिए ।

दूसरे और तीसरे पञ्चायमें तोन निष्पत्तुओंके शब्दों-  
 के अर्थ प्रायः व्याख्या सहित हैं, जैसेके ऊठें पञ्चाय तक  
 चौथे निष्पत्तुकी व्याख्या हैं । सातवेंसे बारहवें तक  
 पाँचवें निष्पत्तुके वैदिक देवताओंकी व्याख्या है । (त्रि०)  
 २ निययदपसे कहा हुआ, शशाव्या क्रिया हुआ : १  
 नियुक्त, ठहराया हुआ ।

निरुक्तकार ( स० पु० ) निरुक्तः नामप्रत्यं करोतीति क्त-  
 पण्, १ यास्क । २ शाकपूर्णि । ३ खोलाष्टिषो । ४  
 निष्पत्तुके एक टोकाकार । मन्त्रिनाथने इनका नामोपज्ञेय  
 किया है ।

निरुक्तज्ञत् ( स० पु० ) निरुक्तं करोति क्त-क्रिय, तुक्, च ।  
 निरुक्तकार ।

निरुक्तज्ञ ( स० पु० ) निरुक्तः नियुक्तः अर्थात् प्रवृत्तुपाद-  
 ये शब्दः पश्यत्तमादृ जायते जन-उ । खोत्रज्ञ पुत्र ।

निरुक्तवत् ( स० पु० ) निरुक्तकार ।

निरुक्ति ( स० स्त्री० ) निरुक्त-क्रिय-क्रियन् । १ निर्वाचन, क्रिमी  
 पद या वाक्यको ऐसी व्याख्या जिसमें व्युत्पत्ति पादिका  
 पूरा कथन हो । २ एक काव्यावतार जिनमें किसी  
 शब्दका मनमाना अर्थ किया जाय, परन्तु यह अर्थ  
 मयुक्तिक हो । जैसे, रूप यदि गुण में भरो तजि को  
 प्रश्न वनिताम उच्च कुवजा यम भए, निर्गुण यहै  
 निदान । तात्पर्य यह कि गुणवती व्रज वनिताओंकी  
 छोड़ कर 'गुणरहित' कुवजाके यम होनेसे लय पत्र मध-  
 गुण 'निर्गुण' हो गए हैं ।

निरुक्तिमग्निव, ( स० स्त्री० ) धर्मप्रियाके लिये जो  
 ऐशान्तिको इच्छा होती है, उसीकी बोधके मतमें  
 निरुक्तिमग्निव कहते हैं ।

निरुक्तवाम ( स० त्रि० ) १ सहोष्, चंकरा, लहा बहुतसे

लोग न अट सके। २ जनाकीर्ण, जहाँ ठसाठस लोग भरे हों, जहाँ खड़े होने तककी जगह न हो। ३ आमन्दविहीन, सुबुध।  
निरुत्तर ( सं० त्रि० ) उत्तररहित, जिसका कुछ उत्तर न हो, साजवाब। २ जो उत्तर न दे सके, जो कायल हो जाय।

निरुत्पात ( सं० त्रि० ) उत्पातहीन, उपद्रवशून्य।  
निरुत्पन्न ( सं० त्रि० ) निर्नास्तित उत्पन्नो यस्य। उत्पन्नहीन, धूमधामरहित।

निरुत्साह ( सं० त्रि० ) उत्साहहीन, जिसे उत्साह न हो।  
निरुत्सुक ( सं० त्रि० ) नित्यसुप्तसुकः। १ अत्यन्त उस्तुक। २ शौरसुखहीन। ( पु० ) ३ रैवतक मनुके एक पुत्रका नाम।

निरुद्धक ( सं० त्रि० ) जलहीन, जलाभाव।  
निरुद्धकादि ( सं० पु० ) पाणिनिगणसूत्रीक शब्दगणभेद।  
यद्यः—निरुद्धक, निरुद्धपत्त, निर्मच्छिक, निर्मशक, निष्कालिक, निर्घृण, दुस्तारोप, निस्तरुप, निस्सारीक, निराजित उदजिन, उदाजिन।

निरुद्ध ( सं० त्रि० ) निरुद्ध-कर्मणि-क। १ संरुद्ध, रुका हुआ, बंधा हुआ। ( पु० ) २ योगमें पांच प्रकारकी मनोवृत्तियोंमेंसे एक, चित्तकी वह अवस्था जिसमें वह अपनी कारणीभूत प्रकृतिको प्राप्त ही कर नियेट हो जाता है। इसका विषय पातञ्जलदर्शनमें इस प्रकार लिखा है—मनोवृत्ति रुद्ध करनेका नाम योग है। मनकी वृत्तियाँ पांच प्रकारकी हैं—चित्त, मूढ़, विक्षिप्त, एकाग्र और निरुद्ध। यहाँ पर निरुद्ध वृत्ति हो वर्णनीय है, इस कारण सिद्ध भादिका विषय विशेषरूपसे नहीं लिखा गया। मनको अस्थिरता अर्थात् चञ्चलताका नाम विज्ञा-वस्था है। मन कभी स्थिर नहीं रहता, कभी उधर, कभी उधर हमेशा चलायमान रहता है। मन जब कसैक्याकसैक्यकी अथाग्र कर कामकीधादिके अशी-भूत हो जाता है, निन्द्रा तन्त्रादिके अशोच होता है तथा आलस्यादि विविध तमोमय अवस्थामें निमग्न रहता है, तब उसे मूढ़ावस्था कहते हैं।

विक्षिप्त अवस्थाके साथ पूर्वोक्त विज्ञावस्थाका बहुत थोड़ा प्रभेद है। वह प्रभेद है देवत चित्तके पूर्वोक्त

प्रकारके वाच्यके मध्य चणिकस्थिरता। मनका चञ्चल-स्वभाव होने पर भी बीच-बीचमें वह जो स्थिर हो जाता है, उसी चणिकस्थिरताका नाम विज्ञावस्था है। चित्त जब दुःखजनक विषयका परित्याग कर सुखजनक वस्तुमें स्थिर रहता है, विराभ्यन्त चञ्चलताका परित्याग कर चणकालके लिये निरवतुल्य होता है, तब उसकी यैसो अवस्था विज्ञावस्था कहलाती है।

एकाग्र और एकतान ये दो शब्द एक ही अर्थमें प्रयुक्त होते हैं। चित्त जब किसी एक वाद्य पर प्रथमा आभ्यन्तरीण वस्तुका अवलम्बन कर निर्वातस्थ नित्यल, निष्कम्प्य दीर्घशिखाको तरह स्थिर वा अकम्पित भावमें वर्तमान रहना है अथवा चित्तके रजस्तमो-वृत्तिका अभिभूत हो जानेसे केषलमात्र सात्त्विकवृत्ति उदित रहती है अर्थात् प्रकाशमय और सुखमय सात्त्विक वृत्ति मात्र प्रवाहित रहती, तब उदको ऐसी अवस्थाको एकाग्र अवस्था कहते हैं।

यह निरुद्ध अवस्थाका भी विषय जानना आवश्यक है। पूर्वोक्त एकाग्र अवस्थाकी अपेक्षा निरुद्धावस्थामें बहुत अन्तर है। एकाग्र अवस्थामें चित्तका कोई न कोई अवलम्बन अवश्य रहता है, किन्तु निरुद्धावस्थामें वह नहीं रहता। चित्त जब अपने कारणोभूत प्रकृति-को पा कर क्षतक्रतार्थको तरह नियेट रहता है, उस समय उसके दम्बसूत्रको तरह केवलमात्र संस्कारमाया-पक्ष हो कर रहने पर भी उसका किसी प्रकारका विषय परिष्कार नहीं रहता। इस प्रकार चित्तकी अवस्था होनेसे उसे निरुद्धावस्था कहते हैं।

इन पांच प्रकारकी चित्तवृत्तियोंमेंसे एकाग्र और निरुद्ध अवस्थामें योग हुआ करता है। चित्तकी निरुद्ध अवस्था ही योग शब्दका प्रकृत वा मुख्य अर्थ है।

निरुद्ध अवस्था अहर्जमें बोधगम्य नहीं हो सकती। चित्तको निरुद्ध करनेमें पहले चित्त, मूढ़ और विक्षिप्त अवस्थाको दूर करना होता है। उसके बाद एकाग्र और निरुद्ध अवस्था होती है।

चित्तकी निरुद्धावस्था होनेसे मनका मय होता है। मनका मय होनेसे आत्मा द्रष्टृस्वरूपमें अवस्थान करती है। ( पातञ्जल० समाधि० )



निद्ररुग्ण ( मं० पु० ) सुदुरोगविधिय, एक रोग जिममें मज्जहार बन्द मा हो जाता है। मज्जिग धारण करनिधे वायु प्रविरत हो कर गुह्यदेगमें पाथय लेतो है और मज्ज निवारनेके प्रथम स्त्रोतकी बन्द कर देतो है। एता करनिधे मज्ज बहुत घोड़ा घोड़ा और कटमे निकलता है। इमीको निद्ररुग्णव्याधि कहते हैं। यह व्याधि बहुत खटकर है। (प्रयुज) निद्ररुग्णमा देखो।

मज्जिगके धारण करनिधे कुपित चणानवायु मज्जयाही स्त्रोतकी मद्धवित कर उद्वहारीको सुक्ष्म कर देतो है, इमी कारण मज्ज बहुत कटमे निकलता है। इम रोगमें वातप्र मैल द्वारा परिषेक और निद्ररुग्णमा रोगके लैमा चिकित्सा करनी चाहिए। ( मायम० )

निद्ररुग्णमा ( मं० पु० ) मेट्टनात सुदुरोगविधिय, एक रोग जिममें मज्जहार बन्द मा हो जाता है और पैमाव बहुत रुक रुक कर और घोड़ा घोड़ा होता है।

भाष्यप्रकाशमें इमका विषय इम प्रकार लिखा है—  
 कुपित वायुमें मेट्टवर्णका चमरा भाग यदि बन्द हो जाय, तो हारया चम्पनाप्रयुक्त मूलस्त्रोत रुक जाता है, इमीसे धेटगा न हो कर पैमाव रुक रुक कर और घोड़ा घोड़ा होता है। इम प्रकारको वातजव्याधिको निद्ररुग्णमा कहते हैं। इम रोगमें कोहिके दो सुंजवाले मज्ज पथया काठके ननकी या जतुको घृतात्त करके निद्रमें प्रविष्ट करते हैं और पोहिके मूल तथा सुपरकी चर्मी और मज्जाद्वारा परिषेक करते हैं। वातभागके द्रवयुक्त चक्रमेभका प्रयोग करनिधे भी निद्ररुग्णमा रोग बन्द हो जाता है। इम रोगमें तीन तीन दिनके बाद उत्तरोत्तर मूल मज्जको भिन्नमार्गमें प्रविष्ट करना चाहिए। एता करनिधे एनका स्थान धीरे धीरे बड़ जायेगा और पैमाव भी निकलने लगेगा। इम रोगमें विषय बचका प्रयोग रितकर है।

उद्युतके मतमें—जब पुंविष्णुका चर्म वायुयुक्त हो जाता है, तब वह मज्जिगमें पाथय लेता है और मज्जिगमें हारया चम्पनाप्रयुक्त मूलस्त्रोतकी रुक देता है। इमसे मज्जिग ती विदोष मर्छी होता, केरिज पैमाव रुक रुक कर और घोड़ा घोड़ा होता है। इमीको निद्ररुग्णमा कहते हैं।

( प्रयुज विद्या रथान १३ न० )

निद्रयाम ( मं० वि० ) निर्मांति लयमः यस्य । लयमशून्य, निद्रयोग, जिमके पाम कोई लयम न हो।

निद्रयामता ( मं० स्त्री० ) निद्रयाम होनिशो क्रिया या भाव।

निद्रयामी ( मं० स्त्रि० ) जो कोई लयम न करता हो, बेकार, निकम्मा।

निद्रयोग ( मं० पु० ) निर्मांति लयमः यस्य । निद्रयाम, जिमके पास कोई लयम न हो, बेकार, निष्प्रभा।

निद्रयोगी ( मं० स्त्रि० ) जो कुछ लयम न करे, निकम्मा, बेकार।

निद्रिहिन ( मं० स्त्रि० ) निर्मांति लयमः यस्य । लयमरहित, निश्चिन्त।

निद्रिहिन ( मं० स्त्रि० ) निर्मांति लयमो यस्य । लयमशून्य, निश्चिन्त।

निद्रपक्षम ( मं० स्त्रि० ) निर्मांति लयमो यस्य । लयमशून्य।

निद्रपद्रव ( मं० स्त्रि० ) निर्मांति लयमोऽस्य । लयमरहित, जिममें कोई लयम न हो, जो लयात या लयपद्रव न करता हो।

निद्रपद्रवता ( मं० स्त्री० ) निद्रपद्रवस्य भावः निद्रपद्रवतन्-टापः । लयपद्रवशून्यता, निद्रपद्रव होनिशो क्रिया या भाव।

निद्रपद्रवी ( मं० स्त्रि० ) जो लयपद्रव न करे, शान्त।

निद्रपद्रुत ( मं० स्त्रि० ) लयपद्रवरहित।

निद्रपथि ( मं० स्त्रि० ) मठताविहीन, जिममें किसी प्रकारकी लयाधि न हो, जो लयपद्रव न करता हो।

निद्रपथि ( मं० स्त्रि० ) निर्मांति लयपथि यस्य । लयपथिशून्य, जिमकी कोई लयपथि न हो।

निद्रपथि ( मं० स्त्रि० ) लयपद्रवरहित, लयातरहित।

निद्रपथि ( मं० स्त्रि० ) निर्मांति लयमोः यस्य । लयमोगरहित, लयमोघहीन, जिमका कोई लयमो न हो।

निद्रपथि ( मं० स्त्रि० ) निर्मांति लयमो यस्य । लयमरहित, लयनारहित, जिमकी लयम न हो, बेजोड़। ( स्त्री० ) २ मायमी । ( पु० ) ३ राद्रुग्णव्याधि यमके एक राजाका नाम। राद्रुग्ण राजवंश देखो।

निरूपमा ( स० स्त्री० ) मायत्रोका एक नाम ।  
निरूपयोगी ( स० त्रि० ) जो उपभोगमें न आ सके, व्यर्थ,  
निरर्थक ।

निरूपरोध ( स० त्रि० ) निर्नास्ति उपरोधः यद्यः । उप-  
रोधरहित, अपक्षपाती ।

निरूपन ( स० त्रि० ) प्रस्तररहित, बिना पत्थरका ।

निरूपलेप ( स० त्रि० ) निर्नास्ति उपलेपः यत् । उपलेप-  
रहित, प्रलेपगम्य ।

निरूपसर्ग ( स० त्रि० ) उत्पातरहित, उपसर्गहोन ।

निरूपखल ( स० त्रि० ) १ पवित्र । २ स्वाभाविक,  
अक्षत्रिम ।

निरूपहत ( स० त्रि० ) १ अनाहत । २ शुभसुचक ।  
३ अघत ।

निरूपाख्य ( स० त्रि० ) निर्गता उपाख्या यस्मात् । १  
अमत्पदार्थ, जो बिलकुल मिथ्या हो और जिसके होनेको  
कोई सम्भावना नहीं । २ जिसकी व्याख्या न हो  
सके । ( पु० ) ६ ब्रह्म । ४ निःस्रूप ।

निरूपाधि ( स० त्रि० ) निर्नास्ति उपाधि यस्य । १ उपाधि-  
गम्य, आधाररहित । २ मायारहित । ( पु० ) ३ ब्रह्म ।  
उपाधि तिरोरहित होनेसे जो ब्रह्म ही जाता है । एक  
चैतन्य सभी जोवर्षि विराजमान है । वह अनादि अनन्त  
ब्रह्मचैतन्य उपाधिभेदसे अर्थात् आधारदेहादिके भेदसे  
विभिन्न भावको प्राप्त हुए हैं । यथायथं ये अभिन्न हैं,  
विभिन्न नहीं ।

उपाधिके अन्तर्हित होनेसे वे एक हैं, नहीं तो अनेक ।  
स्वर्ग, मर्त्य, पाताल ये तीनों लोक ब्रह्मचैतन्यसे आभा-  
सित हो कर, मायिकरूपमें देखे जाते हैं । क्योंकि  
एक, अर्थात्, महान् और व्यापित्वैतन्यमें स्थायित्व अज्ञानके  
प्रभावसे विश्वरूप इन्द्रजास प्रकाश पाता है । इसी  
कारण विश्व मिथ्या है, केवल प्रकाशक चैतन्य ही सत्य  
है । इतना ही नहीं, सत्य अचैतन्यमें जो, जो भावमान  
है, सभी असत्य हैं, वे सब चैतन्यायित अज्ञानके विलास  
मा विभ्रमके सिवा और कुछ नहीं हैं ।

शक्तिरूपी ब्रह्मायित अज्ञान ब्रह्ममें वा ब्रह्मको जगत्  
दिखाता है । इसलिए जगत् और ब्रह्म अभी निर्मित  
है । इसी कारण अभी मत्स्यक इन्द्र ही पञ्चरूपी हैं, १

पक्षि—है, २ भाति—प्रकाश पाता है, ३ मिथ—सुन्दर,  
उत्तम, बढ़िया है, ४ रूप—यह एक प्रकार है, ५ नाम—  
यह पशुक वस्तु है । इन पञ्चरूपीके प्रयोजन तीन रूप  
ब्रह्म हैं, अव्यय दो रूप जगत् अर्थात् अज्ञान विकार  
हैं । यह अज्ञान विकार वा जगत् परमार्थतः सत्य  
नहीं है । इसीसे जगत् मिथ्या माना जाता है ।

यह इन्द्रमान् जगत् तात्त्विक सत्तागम्य अर्थात् मिथ्या  
है । जिस प्रकार कोई ऐन्द्रजालिक माया द्वारा इन्द्रजाल-  
की सृष्टि करता है उसी प्रकार महामायाको ईश्वरने  
भी बिना व्यापारके खेच्छा द्वारा जगत् की सृष्टि की है ।  
उनकी वैधी इच्छाशक्ति ही माया कहलाती है । मत्स्य,  
रजः और तमोमयो मायाके एक होने पर भी गुणके प्रभेद  
से वे विभिन्न हैं । उसी प्रभेदसे जीवेश्वरविभाग प्रचलित  
है । मायामें उपहित ईश्वर और अविद्यामें उपहित  
जीव है । उल्लट मत्स्यमाधानमें माया और मत्स्यमत्स्य  
प्रावर्त्यमें अविद्या है । जीव केवल उपहित ही नहीं  
है, अविद्याके वर्गमें भी है । आकाश एक ही है,  
किन्तु घटरूप उपाधिसे घटाकाश और पटाकाश ऐसा  
प्रभेद हुआ करता है । उसी प्रकार एक अद्वितीय  
ब्रह्म होने पर भी मनुजादि उपाधिसे जीव और  
इस उपाधिके अणुगत होनेसे ही ब्रह्म कहलाता  
है । जब यह सम्पूर्णरूपमें उपाधिरहित होता है,  
तब ही उसे निरूपाधि कहते हैं । जब तक अज्ञान  
वा माया रह्यो, तब तक निरूपाधि होनेकी सम्भावना  
नहीं । ममस्त उपाधिके तिरोरहित होनेसे ही जीव ब्रह्म  
हीता है, इसीसे निरूपाधि शब्दका अर्थ ब्रह्म कहा गया  
है । उपाधिगम्य होनेमें अयण, मनन और निदिध्यासन  
करना होता है । जब तक उपाधि रहती है, तब तक  
ब्रह्ममें इन्द्रभ्रान्ति होती है । ज्योंही उपाधि चली जाती  
है त्योंही जीव ब्रह्मको साक्षात्कार करके ब्रह्म ही जाता  
है । ( वेदान्तदर्शन ) ब्रह्म देखो ।

निरूपाय ( स० त्रि० ) निर्न विद्यते उपायी यस्य । १  
उपायरहित, उपायहीन, जिसका कोई उपाय न हो ।  
२ जो कुछ उपाय न कर सके ।

निरूपेष्ट ( स० त्रि० ) १ उपेष्टारहित, जिसमें उपेष्टा न  
हो । २ सत्, चातुर्यगम्य ।

निरुप (मं० त्रि०) निर-उप-उ। यज्ञादिके भाग भागमें  
पृथक् करके दिया गया।

निरुपि (मं० स्त्री०) निर-उप-क्तिन्। यह जो यज्ञादि-  
के भाग भागमें पृथक् कर दिया जाता हो।

निरुपार (दि० पु०) १ मोचन, छुड़ानेका काम। २  
सुक्ति, वृत्तकारा, वधाव। ३ सुनभानेका काम, उभक्तन  
मिटानेका काम। ४ ते करनेका काम, निवटानेका  
काम। ५ निर्णय, फैसला।

निरुपारना (दि० क्ति०) १ सुक करना, छुड़ाना। २  
निर्णय करना, फैसला करना, ते करना, निवटाना।  
३ सुनभाना, उभक्तन मिटाना।

निरुपयो (मं० त्रि०) उच्योपगम्य, शून्यमस्तत्।

निरुपमन् (मं० त्रि०) उभारहित, शीतल।

निरुद्ध (मं० त्रि०) निर-रुह-क्त। १ उत्पत्त। २ प्रसिद्ध,  
विख्यात। ३ परिवर्द्धित, कुंपारा। (पु०) ४ शक्ति  
रूप लक्षण द्वारा चर्चबोधक शब्द। ५ परध्यागभेद,  
एक प्रकारका पशु-याग।

निरुद्धलक्षणा (मं० स्त्री०) निरुद्धा शक्तिरुत्था लक्षणा।  
लक्षणभेद, यह लक्षण जिनमें शब्दका शब्दोक्त चर्च-  
रुद्ध हो गया हो चर्चात् यह केवल प्रसंग वा प्रयोजनसंग ही  
न चर्च किया गया हो। जैसे, कर्म-कुशल। यहाँ कुशल  
शब्दका मुख्य चर्च है कुशल-छात्रोंमें प्रवेश, लेकिन  
यहाँ लक्षण द्वारा लक्षणाधारणतः टक्ष या प्रवेशके चर्च-  
में चर्च किया जाता है। लक्षण दोहो।

निरुद्धवृत्ति (मं० स्त्री०) वृत्तिभेद। कषाय वा चौर-  
में अपने जो वृत्तिका प्रयोग किया जाता है, उसे निरुद्ध  
वृत्ति कहते हैं।

निरुद्धवृत्तिके प्रयोगकी व्यवस्था सुयुक्तमें हम प्रकार  
निको है,—चतुष्टयान-प्रयोगके बाद वास्यापनहा प्रयोग  
करे। बन्धु चौर चोटका प्रयोग करके विद्या, मृत चौर  
वायुका धेग परिग्यामपूर्वक मन्त्राश्रयानमें पवित्र धरमें  
श्रीचोदिग वस्थी तरह रचे चौर विष्टोर्ष तथा उपाधान-  
रहित शब्दा परवाई करवटमें जो जाये। रोगी भुङ्गदके  
परिग्याके बाद दक्षिण शक्ति श्रीचोदिग चौर वासमति-  
की प्रसारित करे चौर प्रपुत्र मनमें निरुद्धवृत्तियमें रहे।  
देहे बाद परके उपर बांधे रच कर दाहिने हाथकी

हृदाश्रुति चौर तर्जनीमें बांधीकी मूँदें में चौर वाए  
हाथकी कनिष्ठा तथा पन-निकासे वृत्तिके मुखके पक्ष-  
भाग ही मद्धुचित कर मध्यमा, प्रदेगिनो चौर चन्द्र, छ  
भामक तीन उंगलियोंमें दूसरे चर्चमुखको टक कर वृत्ति-  
के मध्य चोपध भर दे। चोपध भरते समय वृत्ति जिसमें  
पश्चिम पायन वा मद्धुचित न हो जाय पचया उभमें वायु  
रहने न पावे हम पर विगेष ध्यान रहे। ऐसे वृत्तिमें जहां  
तक चोपध भरो जायगो उसके पन्ना भागको सुतेये बांध  
दे। पननार दाहिना हाथ उठा कर वृत्तिको पकड़े। बाद  
बाएँ हाथकी मध्यमाश्रुति तथा प्रदेगिनोमें बांध पकड़  
कर चन्द्र, छ द्वारा उसके छताक्ष मुखको टक दे चौर छताक्ष-  
मण्डारके मध्य ठुंग दे। रोड़की समरेषामें से कर मित-  
की कर्षिका तक सञ्चानित करके रोगीको स्थिर भावसे  
पकड़े रहे। बाएँ हाथमें वृत्ति पकड़ कर दाहिने हाथ-  
में प्रयोग करना पड़ता है। एक समय प्रयोग करनेका  
विधान है, जल्दी वा देरीमें काम नहीं लेना चाहिए।  
पननार वृत्तिको खोल कर एकसे से कर मोक्ष तक घोलने-  
में जितना समय लगता है, उतने ही समयकी चर्चवा  
कर रोगीको बैठने उठने करे। चोपधप्रत्यक्षी निष्क्रान्ति-  
के लिये रोगीको उल्लेख भावमें बैठायें। एक सुमूर्त्त-  
कालके मध्य निरुद्धवृत्त्य वाहर निकल पायेगा। हम  
नियममें दो तीन बार वृत्तिके प्रयोगमें जब मध्यक  
निरुद्धके लक्षण मान्म पड़ने लगे, तब फिर वृत्तिप्रयोग-  
को जदरत नहीं। निरुद्धका बढ़ना अच्छा नहीं, थोड़ा  
रहना ही अच्छा है। विगेषतः सुकुमार व्यक्तिके लिये  
सामान्य ही वृत्तिकर है।

वृत्तिप्रयोगमें जिसको मनवायु सामान्य वेगमें न  
निकले उसे दुर्निरुद्ध कहते हैं। इनसे मृत्तोग, चर्चवि  
चौर जड़तादीय उत्पत्त होता है। वृत्तिके प्रयोग  
करनेके साथ जिसका सुरीय विपत्त, कक चौर वायुक्रमसे  
निकल कर शरीर हलका मान्म पड़े, उसे सुनिरुद्ध  
कहते हैं। सुनिरुद्ध होने पर रोगीको छान चौर भोजन  
कराये। विष्ट, चर्चमा वा वायुप्रत्यरीममें चर्चक्रममें  
चौर, क्रम वा सांस्कान रम पीनेही दे। सां रच समी  
दीर्घमें दे सकते हैं। दीर्घान्तिके चतुमार तीन भाग,  
वा चर्चभाग वा चोर्षाई भाग हम भोजन कराये। बाद

दोषके अनुसार स्नेहवस्तिका प्रयोग करे। पास्यापन और स्नेहवस्तिका सम्यक् रूपसे प्रयोग करनेसे मनकी तुष्टि, देहकी स्वस्थता और व्याधिका निग्रह ये सब लक्षण उत्पन्न होते हैं। जिस दिन पास्यापनका प्रयोग किया जायगा, उस दिन वायुसे विशेष अग्नि उत्पन्न होगी। अतएव रोगीको उस दिन मांसरसके साथ भक्षभोजन करावे और अनुवासनका प्रयोग करे। योद्धे अग्नि की दौलति और वायुकी गति जान कर स्नेहवस्तिका प्रयोग करना हितकर है। मुहूर्त्त भरमें यदि निरुद्धद्रव्य बाहर न निकल आवे, तो चारमूल वा अमल-संयुक्त तीक्ष्णनिरुद्ध द्वारा शोधन करे। निरुद्धद्रव्यसे अधिक काल तक शरीरमें रहनेसे वायु विगड़ जाती है जिससे विष्टव्यगुण, अरति, उ्वर, आनाह यहाँ तक कि मृत्यु भी हो जाया करतो है। भोजन करनेके बाद पास्यापनका प्रयोग करना उचित नहीं है, करनेसे सभी दोष कुपित हो कर विषुचिका वा दारुण समन-रोग उत्पन्न हो जाते हैं। यही कारण है, कि अशुक्त अवस्थामें पास्यापनका प्रयोग बतलाया है।

दुग्ध, अम्लरस, मूत्र, स्नेह, क्षाय, रस, लवण, फल, मधु, शतमूली, सर्पप, वच, इलायची, त्रिकटु, राक्षा, सरल, देवदारु, हरिद्रा, यटिमधु, हिरण्य, कुष्ठ, शोषणी-वर्गस्थित द्रव्यसमूह—कुट, शर्करा, मोथा, खसकी जड़, चन्दन, कचूर, मंजीठ, मदनफल, चण्डा, त्रायमाण, रसाञ्जन, विषयफलका मार, अजवायन, प्रियङ्गु, कूटज-फल, कंकोल, चोरकंकोल, जीवक, जटपत्रक, मेद, महामेद, ऋद्धि, वृद्धि और मधुनिका इन सब वर्गोंमेंसे जो जो द्रव्य मिले उसे निरुद्धमें प्रयोग करे। अपनी अपनी अवस्थामें निरुद्धमें जितना कायका प्रयोग करे उतना पांचवां भाग छेह, पिचमें छठां भाग और कटमें आठवां भाग मिला कर प्रयोग करना होता है। सावि-पातिककक्षका अष्टम भाग छेह और उतना हो लवण देना उचित है।

मधु, गोमूत्र, फल, दुग्ध, अम्ल और मांसरस इनमेंसे जो आवश्यक समझे उसीका प्रयोग करे। कल्क, छेह और कषायका उल्लेख नहीं रहने पर भी युक्ति-क्रमसे कोई एक ले लिये। जो समय द्रव्य बतलाये गए हैं, उन्हें अच्छी तरह पोसना होता है।

निरुद्धा (सं० स्त्री०) निरुद्ध स्त्रियां टाप। १ लक्षण-विशेष। (द्वि०) २ अविवाहिता, कुंभारी।

निरुद्धि (सं० स्त्री०) निर-रुह-क्तिन्। १ प्रसिद्धि। २ निरुद्धलक्षण।

निरुप (सं० त्रि०) १ रूपहीन, निराकार। २ कुरूप, बदयकल। (पु०) ३ वायु। ४ देवता। ५ भाकाय। नीलन देखो।

निरुपक (सं० त्रि०) निरुपयति निरुपणं लुक्। निरुपणकर्त्ता, किसी विषयका निरुपण करनेवाला।

निरुपकता (सं० स्त्री०) निरुपकस्य भावः निरुपक-ल-स-टाप। स्वल्पसम्यग्भेद।

निरुपण (सं० स्त्री०) निरुप-णिच् ल्युट्। १ आलोच। २ विचार, किसी विषयका विवेचनापूर्वक निर्णय। ३ निर्दग्धन। (त्रि०) निरुपयतीति निरुप-णिच् ल्युट्। ४ निरुपक, निरुपण करनेवाला।

निरुपम (हिं० वि०) निरुपम देखो।

निरुपित (सं० त्रि०) निरुप-णिच् लुक्। १ कृतनिरुपण, निरुपण किया हुआ, जिसका निर्णय हो चुका हो। २ विचारित, जिसका विचार हो चुका हो। ३ दृष्ट, जो देखा जा चुका हो।

निरुपिति (सं० स्त्री०) १ निययल, स्थिरभावत्व। २ भावादिका व्याख्यान।

निरुप्य (सं० त्रि०) दृष्ट, स्थिरकृत, व्याख्यात।

निरुपन् (सं० त्रि०) उप्परहित, शीतल, ठण्डा।

निरुह (सं० पु०) निर-रुह करणे घञ्। अस्तिभेद, एक प्रकारकी विचकारी।

निरुहण (सं० स्त्री०) स्थिरत्व, निययका भाव।

निरुहवस्ति (सं० स्त्री०) निरुहवस्ति देखो।

निरुहति (सं० स्त्री०) निर्निगता ऋति घृणा अग्रमं वा यस्य। १ अलम्बी, दरिद्रता। २ दक्षिण-पश्चिमदिक्-पति, नैऋतकोणकी स्वामिनी। ३ निरुपद्रव। ४ अग्रमंकी पत्नी। ५ हिंसाके गर्भमें उत्पन्न अग्रमंकी कन्या। ६ अतमार्या। ७ मूलानघ्न। ८ विपत्ति। ९ मृत्यु। १० रुद्रवियोग, एक रुद्रका नाम।

निरुहं दर्शने निरुहतिता षष्ठी पापदेवता बतलाया है।

“दुतो निरुहंसा इदमानगाम।” (कण् १०।१६०।१)  
‘निरुहंसाः पापदेवतायाः दुतोऽनुवरः।’ (वायव)

पद्मपुराणमें एकका प्रयागगोन हम प्रकार लिखा है ।  
 पद्मपुराणमें पद्मने निरुक्ति और पीछे लक्ष्मीको स्थापित  
 हुई । उद्घाटनके माय निरुक्ति का विवाह हुआ ।

जय निरुक्ति उद्घाटनके माय गई, तब लक्ष्मी घर देकर  
 कर वह दुःखित हुई और उद्घाटनके बोनी, 'यह स्थान  
 भेरे रहने योग्य नहीं है । जहां सर्वदा वेदध्वनि होती हो  
 तथा जहां देवता और पतिविभूता आदि मन्त्रार्थ होते  
 हों, वहां मैं वास नहीं कर सकती । जहां सब प्रकारके  
 पशुकार्य होते हों, वही स्थान भेरे रहने लायक है ।'  
 इतना सुनते ही उद्घाटनक घरमें निकल गये । पीछे  
 निरुक्ति स्वामिबिरुद्धे व्याकुल हो कर रहने लगी । जब  
 लक्ष्मीको अपने घरमें दुःखका ज्ञान मालूम हुआ, तब  
 वे नारायणके माय वहां पहुँचीं । नारायणने निरुक्ति  
 को भ्रमभा कर कहा, 'पोषकका लक्ष भेरे पंथमें निकला  
 है, इसी लक्ष पर तुम वास करो । मन्त्रधारको लक्ष्मी  
 वहां आयेगी और उसी दिन तुम्हारे पूजा होगी ।

( वाष्पुतत्रय ४ १११ प० )

नयमभीपुरीके पश्चिम भागको दिक्कामिनोका नाम  
 निरुक्ति है । उनके अधिष्ठित लोकको निरुक्तिलोक  
 कहते हैं । वहाँ पुण्यगोन और अपुण्यगोन दो प्रकारके  
 लोग वास करते हैं ।

जिनके राक्षसयोनिमें जन्म ले कर भी परहिंंगा, पर-  
 हिव आदि कुकर्माँको विषयतु छोड़ दिया है वे ही  
 पुण्यगोचर हैं । जो मोक्ष योनिमें जन्म ले कर  
 याज्ञोक्त नियमोंका प्रतिपालन करते, हमों भी पशुपत्य-  
 भोजन नहीं करते और न परस्त्रीगमन, परद्रव्यस्पर्श  
 आदि पशुत्कर्म ही करते, जो सर्वदा पशु पक्षी  
 व संनि पशुना समय बिताने, द्विजसेवा, देवसेवा तीर्थ-  
 दर्शनदिमें सम रहते हैं, वे ही नरविधि भोगमत्स्य  
 होकर लक्ष पुरोगे वास करते हैं । उन्हे लक्ष होकर भी जो  
 पापकर्म नहीं करते और सुदिव्येन जागोके विधा  
 जिनकी पशु तीर्थमें गत्य होती है वे भी हम स्थानमें  
 वास करते हैं ।

दिक्कामिनिरुक्ति पूर्वकासी विष्णुस्वयंवर यज्ञमें  
 निरुक्ति मन्त्रीके प्रकारे रहती हैं । इनका  
 नाम विष्णु का लो मन्त्री है ।

मगरचंद्र विष्णुचक्र बहुत धनवान् और सचरित मनुष्य  
 थे । पदिकोंको विपद्को दूर करनेके निरुक्ति लक्ष्मी  
 कितने सिद्ध, पाप आदि मार कर पद्मको निरापद कर  
 दिया था । व्याधुत्ति उनको उपायिका होने पर भी  
 वे हमेशा निरुद्धाचारसे वाष्पुतत्रय रहते और कभी भी  
 विष्णु, सुम, यथायुक्त, लक्ष्मणमें निरत, गिर्य वा  
 गभंगुल जीव जन्तुको नहीं मारते थे । यह धर्मोक्ता  
 यमातुर पदिकको विद्यामस्थान, सुधातुरको पाछारदान  
 और दुर्गम मान्सापवर्गमें पदिकोंका अनुगमन कर लक्ष्मी  
 भयमदान देते थे ।

विष्णुलक्ष्मीने पाचारणमें वह मान्साभूमि नगरके  
 समान हो गई थी । कोई मनुष्य लरके मारे पदिकों-  
 का मार्ग नहीं रोक सकता था । किसी समय निकटस्थ  
 पामनिवासी विष्णुलक्ष्मी पाचारको जब पदिकोंके महा-  
 कोलाहलका मन्त्र सुनकर पड़ा, तब वे लक्ष्मी मूटनेके  
 निरुक्ति पानी मढ़े और वहाँ जा कर बैठकर पर उठ रहे ।  
 देवक्षमसे विष्णुलक्ष्मी उन दिन रातको गिकार घेननेके  
 लिए उसी जन्ममें गये थे और वहाँ मो रहे थे ।

इधर सुबह होनेके माय ही विष्णुलक्ष्मी पाचारमें अपने  
 माधियोंने विज्ञा कर कहा, 'पदिकोंको मारो, मारो,  
 गिराओ, मंगा करो, मृग पशुवाप छोड़ लो ।' ये पारे  
 पदिकगल बहुत लर गए और यिनोत स्वरसे बोले,  
 'भारें ! हम लोग तीर्थयात्री हैं, मत मारो, रक्षा करो ।  
 हमारे पास जो कुछ पशुवाप है, उन्हें हम लोग खुशोमे  
 दे देते हैं, ले लो । हम लोग पदिक और पशुवाप हैं,  
 किन्तु विद्यनापपरायण हैं । सुतरां वे ही हम लोगोके  
 रक्षाकर्ता हैं । किन्तु वे भी दूरमें हैं, वहाँ पभी हमारी  
 रक्षा करनेवाला कोई नश' है । हम लोग विष्णुलक्ष्मी  
 भोगे मर्षदा हम राक्ष हो कर जाते पाते थे, किन्तु  
 वे भी इस जन्ममें बहुत दूरमें रहते हैं । यह कोलाहल  
 सुन कर दूरमें 'मत लो, मत लो' ऐसा कहते हुए  
 पदिकरन्तु विष्णुलक्ष्मी पा पदिकों और लक्ष्मी लगे, 'भेरे  
 जोमें जो ऐसा कोल मारिका लाल है, जो भेरे मागुत्त  
 को मार कर लक्ष्मी मर्षदा दूर कर मके ।  
 लक्ष्मी सुन कर विष्णुलक्ष्मी पशुना पदिकों  
 विष्णुलक्ष्मी मार जाने लगी ।

विज्ञानं अनेसे धी, दस्यु टनके साथ लड़ते लड़ते किसी तरह यात्रियोंको अपने भाग्यमें वाम लाए। गौडि शत्रु, वेने उनका धनुर्बाण और कवच काट डाना। बाद अन्त्यादातसे विज्ञानका शरीर ह्विच भिन्न हो गया और वे इस लोकसे चला बसे। इसी विज्ञानने दूरमें जन्ममें नैश्वर्य नामसे जन्मग्रहण किया और वे दिक्पति हो कर नैश्वर्यकोणमें रहने लगे। (काशीखं०)

निरोध (सं० पु०) निरुद्ध-यक्। सामवेद।

निरोध (सं० पु०) १ चिरकालव्याप्य, चिरसम्यग्धीय। परिपूर्ण, पूरा।

निरोधव्य (सं० त्रि०) निरुद्ध-कर्मणि तस्य। १ धारणीय, रोकने योग्य। २ प्रतिरोधनीय।

निरोध (सं० पु०) निरुद्ध-घञ्। १ नाश। २ गति आदिका प्रतिरोध, रुकावट, बन्धन। ३ अवरोध, घेरा। निरुद्धाख्य चित्तावस्थामेद, योगमें चित्तकी गमस्त वृत्तियोंको रोकना। इनमें अभ्यास और वैराग्य की आवश्यकता होती है। चित्तवृत्तियोंके निरोधके उपरान्त मनुष्यको निर्बीजसमाधि प्राप्त होती है।

निरोधक (सं० त्रि०) निरुद्धि निरुद्ध-क्वुल। निरोधकारक, रोकनेवाला।

निरोधन (सं० क्तो०) निरुद्धे-ञ्युट। १ कारणारादिमें प्रवेश द्वारा गतिरोध, रोक, रुकावट। २ पारिका छटा संस्कार।

निरोधपरिणाम (सं० पु०) पातञ्जलोग्ग परिणामविशेष। इनका विषय पातञ्जल दर्शनमें इस प्रकार लिखा है— चित्तके चित्तादि राजसिक परिणामका नाम व्युत्थान और केवलमात्र विशुद्धमत्त्व परिणामका नाम निरोध है। चित्तकी सम्प्रदात अर्थस्या और परवैराग्यस्या भी यथाक्रमसे व्युत्थान और निरोध कलनाते है। जब व्युत्थानसे उत्पन्न संस्कारोंका घन्ना हो जाता है और निरोधके आरम्भ होनेकी होता है, तब चित्तका थोड़ा थोड़ा सम्बन्ध दोनों और रहता है, उन्नी अवस्थाकी निरोधपरिणाम कहते है।

योगी संयम द्वारा विविध ऐश्वर्य वा भौतिकक समताका आहरण कर सकते हैं मझे, किन्तु जिस प्रकारके विषयके लिये जिस प्रकारका संयम करना

होता है, वह समके पहले ही जानना आवश्यक है। कहां किस प्रकारका संयम करना चाहिए, किस संयम का क्या फल है, जब तक समका बोध नहीं होता, तब तक फलका प्राप्त होना असम्भव है। सुतरां संयम-मिच्छाके पानी संयमके स्थानका निर्णय कर लेना होता है तथा विविध चित्तपरिणाम अर्थात् चित्तके भिन्न भिन्न विकारभावोंको प्रत्यक्षवत् प्रतीतियोग्य कर लेना पड़ता है। चित्तशुद्धानके समय, एकाग्रताके समय और निरुद्धके समय चित्तको कौंसी अवस्था रहती है, उस पर नियुक्तके साथ निगाह रखनी होती है। निरोध-कालकी चित्तावस्थाका जानना जितना आवश्यक है, व्युत्थानकालकी चित्तावस्थाके चित्तपरिणामका अनुसन्धान करना उतना आवश्यक नहीं है। निरोधपरिणामका यथार्थ स्वरूप क्या है? अर्थात् निर्बीजसमाधिके समय चित्तकी कौंसी अवस्था रहती है, अभी उस पर विचार करना उचित है।

चाहे कौंसे संस्कार क्यों न हो, सभी चित्तके धर्म हैं और चित्त हो तत्तावतका धर्म अर्थात् आधार है। चित्त जब विविध विषयाकारमें परिणत होता है, तब उसमें उन्नी उन्नी परिणामका संस्कार अवहित रहता है। चित्त जब केवलमात्र संप्रज्ञातवृत्तिमें स्थित रहता है, एकाग्र वा एकतान होता है, उस समय भी उसमें उन्नीका संस्कार निहित रहता है। चित्त जब तक वृत्तियुक्त नहीं होता, तब तक उसमें संस्कार रहता है। एकाग्र-वृत्ति जब अविद्यान्तकालमें वा प्रवाहाकारमें उदित रहती है, तब तज्जमित संस्कार भी उसमें अवहित रहता है। क्योंकि संस्कार वा स्त्रोत विना निरोधपरिणामके तिरोहित वा अभिभूत नहीं होता। गौडि वैराग्याभ्यास द्वारा जब व्युत्थानसंस्कार अभिभूत, तिरोहित और निःशक्ति प्रथवा विहीन हो जाता है, तब वह निरोध-संस्कार प्रवृत्त वा पुट हो कर विद्यमान रहता है। चित्त इसी समय पूर्णगदित व्युत्थानसंस्कारसे अपछन हो कर केवल निरोधसंस्कार ले कर रहता है। चित्तके ऐसी अवस्थामें रहनेको योगी लोग निरोधपरिणाम कहते हैं।

यह निरोध अवस्था भी परिणामविशेष है। सुतरां

निरोधपरिवाम इम नामको भी सम्यक् ज्ञानमा  
 पादित । यत्न कथं गुणमय पर्याप्त प्रकृतियम्य है, तत्र  
 यत्र तत्र तत्र रद्वेग, तत्र तत्र तत्रमं यद्विश्राका परिवाम  
 होमा । यद्वीक प्रकृतिका यत्र स्वभाव है, कि यत्र यत्र  
 काल भी बिना परिवतत दृष्ट रद्व नही मकतो । सुतरा  
 जिमे निरोध कदा है, यद्यार्थमें यत्र हो एक प्रकारका  
 परिवाम है । कारण यत्न तम समय भी परिवतत होता  
 है या नहीं, यत्र तत्रमं यद्वेगका ही अनुद्वर है ।  
 तादृग यद्वपरिवामका दूधरा नाम स्थैर्य है । विरत  
 म्मिर दृषा है, पैमा कदनेधे किमो प्रकारका परिवाम  
 नहीं होता, ऐसा न समझ कर इस प्रकार समझना पादित  
 कि विषयामगता हसि नहीं होती, किन्तु यद्वेगका  
 अनुद्वरपरिवाम ही होता है । यत्र यत्र स्थिर दृषा कि  
 स्थैर्य यद्वेग निरुत्सुक यद्वेगका नाम ही निरोध-  
 परिवाम है । संस्कारके दृष्ट होनेसे ही तत्रमं प्रभावसे  
 निरोधपरिवामकी प्रमाणावाहिता या स्थैर्यप्रवाह  
 लय्यत होता है । ( पाश्चर्यमद )

निरोधिन ( सं० वि० ) प्रतिषेधक, रुकावट करनेवाला ।  
 निरोध्यागिनि ( सं० पु० ) याजितगानि, एक प्रकारका  
 धान ।

निर्ण ( का० पु० ) दर, भाव ।  
 निर्ण-दारोगा ( का० पु० ) सुमसमानोके राजत्वकाचका  
 दारोगा जिनका धाम बाजारको चीजोंके भाव या दर  
 पादिको निगरानी करना या ।

निर्ण-नामा ( का० पु० ) सुमसमानोके राजत्वकालको वह  
 युवो जिनमें बाजारको प्रत्येक वस्तुका भाव निर्ण  
 रहता या ।

निर्ण-बंदी ( का० स्त्री० ) किमो चीजका भाव या दर  
 नियम करनेकी क्रिया ।

निर्ण ( सं० पु० ) निरकार मन्त्राव्यवृत्ति, निर-गम-उ ।  
 ट्यम ।

निर्णत ( सं० वि० ) निर-गम-उ । यद्वि-वास,  
 निरुत्सुक दृषा, बाहर पाया दृषा ।

निर्ण-भ ( सं० वि० ) निर्णोद्धि गर्भः यम्य ।  
 जिनमें किमो प्रकारको ही ।

निर्ण-भता ( सं० स्त्री० ) निर्णोद्धि गर्भः यम्य ।  
 निर्णोद्धि गर्भः यम्य ।

निर्ण-भन ( सं० स्त्री० ) निर-गम-उ । निर्णोद्धि गर्भः यम्य ।  
 नियन्त्रण । २ मारण ।

निर्ण-भ्युत्पत्तो ( सं० स्त्री० ) निर्णोद्धि गर्भः यम्य ।  
 स्त्रीप । गान्धनित्तुष, मेमरका पेड़ ।

निर्ण-भ ( सं० पु० ) निर-गम-उ । निर्णोद्धि गर्भः यम्य ।  
 निराम ।

निर्ण-भन ( सं० स्त्री० ) निर-गम-उ । निर्णोद्धि गर्भः यम्य ।  
 दरवाजा । प्रतिदारी, दारपाल, चौकीदार ।

निर्ण-भता ( वि० स्त्री० ) निरुत्सुकता ।

निर्ण-भ ( सं० वि० ) निर्णोद्धि गर्भः यम्य । गर्भ-रहित,  
 यद्वद्वारण्य, जिमे किमो प्रकारका गर्भ या परिमाण  
 न हो ।

निर्ण-भाष ( सं० वि० ) गवाक्षरहित, जिनमें धरोवा न  
 हो ।

निर्ण-भ ( सं० पु० ) निर्णोद्धि गर्भः यम्य । १ सख, रज  
 चोर तमोगुणशीत, जिनमें सख, रज चोर तमोगुण न  
 हो, परमेसर । ( वि० ) २ विद्यादिगुण, सुख, जड़ ।  
 ३ गुणरहित, जिनमें क्या न हो, जैसे निर्णोद्धि धनु ।  
 ( सप्र-वेकी )

निर्ण-भता ( सं० स्त्री० ) निर्णोद्धि गर्भः यम्य, निर्णोद्धि-भाषि  
 तम, टाप । गुणहीनता, निर्णोद्धि होनेकी क्रिया या  
 भाव ।

निर्ण-भत्व ( सं० स्त्री० ) निर्णोद्धि भाषे-त्व । गुणहीनत्व,  
 मन्त्रत्व ।

निर्ण-भपापु—एक हिन्दो-कवि । इन्होंने भजनकीर्त्तन  
 नामक एक ग्रन्थ बनाया है ।

निर्ण-भामक ( सं० वि० ) निर्णोद्धि भामा यच्छ कन् ।  
 निर्णोद्धि रूप, मद्र ।

निर्णोद्धि ( वि० वि० ) निर्णोद्धि निर्णोद्धि होनेकी उपायना  
 करता ही ।

निर्णोद्धि ( वि० वि० ) निर्णोद्धि रहित, जिनमें कोई गुण  
 न हो, ।

( १ ) निर्णोद्धि मद्रवः उपायना ।  
 । मद्र-वेकी ।

गुणरत्न गुणरत्न  
 निर्णोद्धि ।

निर्गुणह—महिसुर राज्यके अन्तर्गत चित्तलदुर्ग जिल्लाका एक ग्राम। यह अक्षा० १३° ४०' उ० और देशा० ७१° ११' पू०, भोगदुर्ग शहरसे ७ मील पश्चिममें अवस्थित है। जनसंख्या प्रायः २५२ है। पूर्व समयमें यह गङ्गाराज्यके अन्तर्गत था और यहां जैनियोंकी राजधानी थी। लगभग दो सौ वर्ष हुए उत्तर भारतके नोनखोर नामक क्रिमो राजाने इसे बंवाया और इसका नाम नोनखतो पाटन रखा।

निर्गुण्डो ( स० स्त्री० ) निर्गतं गुण्डं वेष्टनं यस्याः ङीप् । एक प्रकारका छु। इसके प्रत्येक सींकेमें अरहरकी पत्तियोंके समान पांच पांच पत्तियां छोटी हैं जिनका ऊपरी भाग नीला और नीचेका भाग सफेद होता है। इसकी अनेक जातियां हैं। क्रिसोमें कालि अर किलीमें सफेद फूल लगते हैं। फूल धामके मोरके समान मंजरीके रूपमें लगते हैं और केसरिया रंगके होते हैं। यह स्मरणशक्तिवर्द्धक, गरम, रुखी, कसैली, चरपरी, हलकी, नेत्रिकी-लिये हितकारो तथा शूल, अजान, आमवात, रुमि, मदर, कोढ़, अरुचि, कफ और ज्वरकी दूर करती है। भोगपियोंमें इसकी जड़का व्यवहार होता है। हिन्दुओंमें इसे संभालू, महालू वा सिन्धुवार कहते हैं। इसके मंस्कृत पर्याय—मोलिका, नील-निर्गुण्डो, सिन्दुक, नीलसिन्दुक, पोतसडा, भूतकेशी, इन्द्राक्षी, कपिका, गोकानिका, शीतमोक्ष, नीलमञ्जरी, वनजा, मरुत्पत्नी और कर्त्तरीषडा हैं।

निर्गुण्डोकल्प ( स० पु० ) भैषज्यरत्नावलीके मतसे पिङ्गला योगिनीने इस औषधका प्रकाश किया। इसकी प्रसृत प्रणाली इस प्रकार है—निर्गुण्डोका मूल ८ पल और मधु १६ पल दोनोंको एक साथ मिला कर घीके बरतनमें रखते हैं। पीछे टकनेमें उसका सुंघ बन्द कर तथा अच्छी तरह सेप दे कर उसे धानके ढेरमें एक मास तक रख छोड़ते हैं। यह चूर्ण गोमूत्र और तन्नाटिके साथ कुछ दिन भवन करनेसे सब प्रकारके रोग दूर हो जाते हैं और पीछे बन, वीर्य तथा प्रायुकी वृद्धि होती है। एक मास तक भवनेसे शरीर कनकवर्णना होता, दृष्टि श्चन्द्रकी होती और सब रोग जाति रहते हैं। जो व्यक्ति एक वर्ष तक

इसका भवन करता है उसका शक्त यावज्जीवन एकमात्र बना रहना है और उसे चरवत्त शतश्लोममनकी इच्छा रहती है। गोमूत्रके साथ इसका भवन करनेमें आँखोंकी ज्योति बढती, कोढ़, गुल्म, शूल, झोडा, उदर पादि रोग दूर होते तथा शरीर पुष्ट बना रहता है।

निर्गुण्डोतैल—(स० पु०) वैद्यकीय औषधमें, वैद्यकमें एक विशेष प्रकारसे तैयार किया हुआ निर्गुण्डोका तैल जो सब प्रकारके फोड़े, फुंसियां, पपची तथा कण्ठमाला पादिकी अच्छा कारनिवाना माना जाता है।

निर्गुण्ड ( स० त्रि० ) निर्निश्चयेन शुद्धते संश्रिते आत्मा पत्रेति निर्गुण्ड अधिकारिणः । १ हलकोटर। (त्रि०) २ संहन। २ निताना गूढ, जो बहुत ही गूढ हो।

निर्गुण्ड ( स० त्रि० ) श्चद्रगुण्य, जिसके घर न हो।

निर्गौरव ( स० त्रि० ) १ गौरवहीन, पहल्लारशूर्य। २ सुशील, मन्त्र।

निर्ग्रन्थ ( म० पु० ) निर्गतो ग्रन्थेभ्यः । १ अपणक । २ दिग्भ्रर। प्राचीनकालमें दिग्भ्रर जैनी कपडा नहीं पहनते थे, इसीसे वे दिग्भ्रर वा निर्ग्रन्थ कहलाए। अभी इटिया-घाईन और दिग्प्रथाके अनुसार वे कपड़े पहनने लगे हैं। इन लोगोंका कहना है, कि मानव जब सम्पूर्ण निर्मम और स्पृहागुण्य होते हैं, तब ही वे सुल्लिखे योग्य हैं। अतएव प्रकृत संन्यासियोंको कपड़ा पहनना अनुचित है। जैन देखो। २ सुनिर्मद, एक सुगिका नाम। (त्रि०) ४ द्यूतकर, लुचा खेननेवाला, लुचारी। ५ निर्धन, गरीब। ६ मूर्ख, धनकूप। ७ निःसहाय, जिसे कोई सहायता देनेवाला न हो। ८ निर्घंढप्राप्त।

निर्ग्रन्थक ( स० पु० ) निर्ग्रन्थ एव स्वार्थं कन् । १ अपणक। (त्रि०) २ निर्फल, धकाम। ३ अपरिच्छद, नंगा, खुला हुआ। ४ अक्षररहित, जिसे कपड़ा न हो। निर्ग्रन्थक ( स० स्त्री० ) पथि कीटिष्ये निर्ग्रन्थि-व्युट् । मारण।

निर्ग्रन्थि ( स० त्रि० ) ग्रन्थिगुण, जिसमें गांठ वा निरन हो।

निर्ग्रन्थिक ( स० पु० ) निर्गतो ग्रन्थिर्हृदयग्रन्थिर्ग्रन्थः । १ अपणक। (त्रि०) २ निपुण, योगियार। ३ हीन; श्रियां टाप। ४ जैनसंन्यासिनी।



निर्माह ( मं० त्रि० ) निर्-गृह कर्म वि स्मृत । जो निषेधव्ययं यद्यत् करिनेमं समर्थ हो ।

निघंट ( मं० स्त्री० ) निर्गतो घटो यस्मात् । १ घटगूण्य देग । २ राजकरगूण्य षट्, यद्यत् घट या वाजार जहां किमी प्रशासका राजकर न लगता हो । ३ बहुजनशील षट्, यद्यत् घट या वाजार जहां बहुतसे लोग हैं । ४ घटाभाव ।

निघण्ट ( मं० पु० ) निर्-गण्ट-दोषो घनः । निघण्टन, गण्ट या घनसुषो, किङ्करिया ।

निघर्षण ( मं० स्त्री० ) संघर्ष, मर्षण ।

निघांत ( मं० पु० ) निर्-घन-घञ् । १ वायु शक्ति क परिभूत वायुवपतनज्जय गन्धविशेष, यह गन्ध जो हवाके बहुत तेज चलनेमें होता है ।

वायुमें वायु टकरा कर जद पाकागतनमें हृषिवो पर गिरतो है, तब यही निघांत कहलाता है । यह निघांतदीप्त दिग्स्थित विहंगीमें जय गन्धित होता है, तब यह वायकर माना जाता है । शूर्यादयके समथ निर्घांत होनेमें यह विचारक, धनी, घोडा, चक्रना, बलिक, चौर येजागणको तथा एक वहरके भीतर होनेमें शुद्र चौर घोरगणको निरुक्त करता है । मृजाप्रके समथ होनेमें राजीवनेमी व्यक्त चौर प्राश्रयगण कट पाते हैं । जनीव प्रचरमें निर्घांत होनेमें यह धैर्य चौर जलदातृगणको तथा चतुर्थ प्रचरमें होनेमें चोरिकी पीड़ित करता है । शूर्याममें होनेमें यह नीचीको चौर शक्ति समथ वाममें होनेमें गण्यकी, द्वितीय वाममें होनेमें विगाचगणको, तृतीय वाममें होनेमें हनी चौर चमगणकी तथा चतुर्थ वाममें होनेमें पदातिकगणको नष्ट करता है । त्रिम दिग्गमें निर्घांत वाता है, पश्चिमें बरी, दिग्ग नष्ट होती है । (हरशब्दिका ३८ मं०) त्रिम समथ निर्घांत होता हो, लय समथ किमी प्रकारका संमल ज्ञाव करना निदिह है । २ चक्राभेद, प्राचीन ज्ञानका एक प्रशासका यद्यत् । ३ बिज्जोकी बहुक ।

निर्घांत ( मं० स्त्री० ) निर्-घन-घञ् । निर्-घन-घञ् । सुप्रसन्न मनसि-पाय विघाति । सुप्रसन्नं चतुस्रं चक्राधिक्याको एक विघातक नाम ।

निर्घाण्ट ( मं० त्रि० ) निर्-घण्ट-घञ् । निर्घाण्ट, निर्घाण्ट-घञ् ।

निर्घोरिकी ( मं० स्त्री० ) नदी, निर्घोरिकी, मीता ।

निर्घेय ( मं० त्रि० ) निर्गता हृषा हृषा या यस्मात् । १ निर्घेय, हृषागूण्य, शरदम । २ हृषागूण्य, त्रिमे हृषा न हो, त्रिमे गन्धो चौर बुरी गद्युषीमें चित न भवे । ३ त्रिमे बुरे काममें हृषा या मज्जा न हो । ४ निर्घित्त, चयोष्य, निरुत्तमा ।

निर्घोष ( मं० पु० ) निर्-घुष-घञ् । १ गन्धमात्र, वावात्र । ( त्रि० ) निर्घोषि दीपो यत् । २ गन्धमूष, गन्ध-रहित ।

निर्घोषाचारविमुक्त ( मं० पु० ) ममाधिभेदका नाम ।

निर्घा ( षं० पु० ) चञ्चु नामक माग ।

निर्घाम ( मं० त्रि० ) निर्गतो जलो यस्मात् । जलमूष-स्यानादि, यह स्थान जहां कोई मनुष्य न हो, सुनमान ।

निर्घर ( सं० पु० ) जराया निरुक्ताः । १ दिग्गता ये जरा चर्घात् सुदापेमे मदा चषे हृष माने जति है, हमी निचे इनका निर्घर नाम पड़ा है । ( त्रि० ) २ जरा-रहित, त्रिमे कमी सुदावा न पाये, कमी सुदा न होने-याका । ( स्त्री० ) ३ सुधा, चरित । सुधा पोनेमें सुदापा जाता रहता है, हमीमें सुधाको निर्घर कहते हैं ।

निर्घरनयण ( सं० पु० ) निर्घरवियः मयण । देवमयण हृष ।

निर्घरा ( सं० स्त्री० ) निर्घर-टाप । १ शुद्ध, पी, गिनोव । २ मानपर्यी । ३ कश्चित् कर्मका तप दाहा निर्घर-या लय करना ।

निर्घराद्यु ( मं० पु० ) निर्गतो जरायुतः । १ जरावने निर्गत । २ जरावुहीन ।

निर्घरंज्य ( मं० त्रि० ) जर्गरीभूत, पुराता, टूटाकूरा, शकाम ।

निर्घरत ( मं० त्रि० ) निर्गतं कर्म यस्मात् । १ जलमूष्य (दिग्गदि), बिना जलका, जलके संसर्गमें रहित । २ त्रिममें जल पोनेका विधान न हो । ( पु० ) ३ यह स्थान जहा जल बिलकुल न हो ।

निर्घरतन ( मं० पु० ) यह मन का लयनाम त्रिमे प्रतो जय तत्र न पीव ।

निर्घरंजादृशी ( मं० स्त्री० ) निर्घरंजा पकाधुमी । त्रिज

शंका एकादशो तिथि, षष्ठ सुदी एकादशो तिथि । इस दिन लोग निर्जलव्रत रखते हैं । इस दिन ज्ञान, प्राचमन आदि किसी काममें जनसम्यं तक करना मना है । यदि कोई जलसम्यं करे, तो उसका व्रतभङ्ग होता है । इस एकादशोके उदयकालसे ले कर दूसरे दिनके उदयकाल तक जल वर्जन करना होता है । निर्जला एकादशो करनेसे हादयहादशोका फल होता है । दूसरे दिन सबरे अर्थात् हादशोमें स्नान करके ब्राह्मणोंको जल और सुवर्णदान कर भोजन करना चाहिये । जो इस प्रकार नियमपूर्वक एकादशोव्रत करते हैं, उन्हें 'यमभय नशी' रहता है, भक्तकालमें वे विष्णुभक्तको जाते और उनके पिढगण उदार पाते हैं । जो यह एकादशो नहीं करते, वे प्रायात्मा, दुराचार और नष्ट होते हैं ।

जो यह एकादशोव्रतविषय भक्तिपूर्वक सुनते या कोत्तन करते हैं, वे दोनों ही स्वर्गको जाते हैं ।

निर्जल व्रतविधि—इम व्रतमें पहले निम्नलिखित मन्त्रसे सङ्कल्प करके जनसङ्ग्रहण करे । मन्त्र—

“एकादशं निराहारो बर्जयिष्यामि वै जलम् ।

केशवप्रीणार्थाय शरयन्तदमनेन च ॥”

जल वर्जन करके एकादशोके दिन उपवास करे और रातको सुवर्णमय विष्णुमूर्त्तिकी स्थापना करके उन्हें दूध आदिके स्नान करावे । अनन्तर यथाशक्ति पूजा करके रातको जागरण करे । दूसरे दिन प्रातःस्नानादि करके यथाशक्ति जलकुम्भ ब्राह्मणको इस मन्त्रसे दान दे । मन्त्र—

“देवदेव ह्यीकेश सहायगैवतारक ।

जलकुम्भप्रदानेन वारयामि परमागतिम् ॥”

(हरिमन्त्रविलास १५ वि० )

इतना ही जाने पर छत्र और धक्षादिका दान करना कर्त्तव्य है ।

निर्जातमक (स० पु०) निर्जस्य, अत्यन्त जीर्ण, बहुत पुराना

निर्जित (स० त्रि०) निर्जित । १ पराजित, जीता हुंषा, जिसे जीत लिया हो । परीय—पराजित, पराभूत, विजित, जित । २ समीक्षित, जो धर्ममें कर लिया गया हो ।

निर्जति (स० स्त्री०) निर्जति क्लिप्त । जय वा यशो-भूतकरण ।

निर्जितन्द्रियग्राम (स० पु०) निन्दितानि इन्द्रियग्रामाणि येन । जितन्द्रिय, यति ।

निर्जिह्व (स० त्रि०) निर्गता मुखामिःखता जिह्वा यस्य । १ मुखसे बाहर करना । २ जिह्वागुप्त, जिसे जीभ न हो । निर्जीव (स० त्रि०) निर्गतः जीवःया जीवात्मा यस्य । १ जीवात्परहित प्राणहीन, मृतक, वैज्ञान । २ अग्रक या अस्वाहृहीन ।

निर्भर (स० पु०) निर्भरः-अप । १ पर्वतनिःसृत जलप्रवाह, मोता । जगत्प्राता जगदीश्वरने जीवोंको भलाईके लिये ऐसे अद्भुत अद्भुत कार्योंको सृष्टि को है, कि एक बार उन्हें देखनेसे ही भगवान्की अनन्त महिमाकी अनन्तमुखने गा कर भो परित्यजि नहीं होते । निर्भर उन्हीं आख्यं पंढारोंमिसे एक है । जहाँ एक भी जनाग्रय नहीं है, वहाँ भी हम अत्याचयं दृष्टानामागक निर्भरसे निर्मल जल प्रवल वेगसे निकल कर जीवके प्रति ईश्वरकी अनन्त दया प्रकाश करता है । पंढेजीमें निर्भरको Spring कहते हैं । निर्भरकी उत्पत्तिका कारण जाननेके पहले यह स्मरण रखना अत्यावश्यक है, कि तरलपदार्थ उच्चनीच असमान अक्षय्यामें स्थिर-भावमें नहीं रह सकता । यदि एक वक्क और सच्छिद्र दो खुले हुए सुँड़वाले नलके एक सुँड़में कुछ तरल पदार्थ डाल दिया जाय, तो जब तक दोनों नलमें उक्त तरल पदार्थ समान ऊँचाई पर न पा जाय, तब तक वह तरल पदार्थ स्थिर नहीं रह सकता । जब उक्त नलका तरल पदार्थ समान ऊँचाई पर पा जाता है, तब वह स्थिर रहता है । दूसरी बात यह है, कि जगदीश्वरने प्राणियोंके कल्याणके लिये हम इंसत्पृथ्वीकी सृष्टि की है, जिसकी प्रत्येक वस्तु आख्यं वा भिन्न प्रकृतिविगिट है । हम भोग मष्टीके ऊपर जो भ्रमण करते, सोने, तथा और अत्यान्व कार्य करते हैं, उन्हें यदि गौर कर देखे तो यह सृष्टि सूक्ष्म ही जायगा, कि यह मष्टी भी भिन्न भिन्न धर्म विगिट है । जो एक प्रकार अनात्मा सच्छिद्र है, उसके मध्य ही कर जन बहुत आभासीये पा जा सकता है और जो परे छिद्रविगिट है उसके मध्य जल

मन्त्रमें या सा नहीं कहता। हमें कारण यह कहना-  
में परिणत हो जाती है। ताम्रो तरहकी महीनी  
निर्मिष्ट कह भी दे, तो कोई वायुक्ति नहीं होगी।  
तबतः हमके मजबूत हो कर जन नहीं जा सकता, जैमे  
उपाय, खरी मही, कामो मही इत्यादि।

यदि यह विषय ध्यानमें या जाय, तो निर्भरका  
उत्पत्तिकारण महजमें मान्य ही आयागा। उद्विपात या  
गुणनत्र जनमसुख जब पर्यन्त निकल कर प्रयत्न वेगमें  
नाथे तो घोर जाता है, तब हममेंमें कुछ जन. प्रयोगे  
उत्तर भय कर समुद्र या जनामयमें गिरता घोर जदा  
उत्पादन करता है, कुछ जन वायुके द्वारा परिवर्त हो  
कर मीघ उत्पादन करता है घोर बहा गुना जन महीके  
भीषे का कर गुण जाता है। किन्तु परमात्मका जब  
धर्म नहीं है, तब यह शीघ्रत जनरागि कर्षा किम  
परशामें रहतो है। हमका तत्त्वानुमान करनेमे यह  
नाक गाक जामा जाता है, कि प्रयोगे जिन भिन्न भिन्न  
स्तरोंमें बसो है, उक्त जनरागि भी सर्वो स्तरोंको भेद कर  
एक ऐसे स्तरमें पहुँच जाती है जिनमें यह घोर भेद नहीं  
कर सकता। सुतारा उक्त जनरागि बहामें घोर भीषे नहीं  
जाती, यन्त्रि उगो दुर्मेव स्तर पर समा रहतो है। गेहे  
यह महिग जन जितना ही बढ़ता जाता है, उतना ही  
जमके रहनेके निये स्थानकी उद्वरण पड़तो है। विमि-  
यतः मायाकर्षण हमें हमेशा वेन्द्रकी घोर खीचण रहता  
है जिनमें उक्त जनरागि पूर्णतः दुर्मेव स्तरके ऊपर  
हानुकी घोर टोड़तो है। (भूमध्य जनस्त्रोतका  
प्रकाश कारण ही यही है।) हम प्रकारगतिकी परव्या-  
हः यदि हम जनस्त्रोतके सामने भी प्रिया ही दुर्मेव  
पदाय उपायित हो कर गतिभी रोक दे और भूयुक्तमे यदि  
जन पथिक परिणाममें उक्त स्त्रोतके पदुक्तन पहुँच जाय,  
तो यह प्रकारक जनरागि उपर उपर न बह कर प्रयोगे  
हेतु करत हुए ऊपर पहुँच जायगी, हमेशा साम निर्भर  
जा करता है। दुर्मेव स्तरके परव्याप्तके पदुक्तन उक्त  
निर्भरके वेगवा तापतव्य देया जाता है पर्याप्त उक्त दुर्मेव  
कर भूयुक्तमे जितना भीषे होगा, निर्भरका वेग भी  
उतना ही बमहाय होगी।

उक्त यदि उक्त स्थानमें ही उक्त भूयुक्तमें उक्त, कर

पूर्वज निर्भर उत्पादन करता है, उक्त निर्भरकी प्रम-  
रागि भूयुक्तमे प्रायः उतना ही। उक्त स्थान तक जा कर  
गिरतो है। गृहिके पनुमार उक्त जनको उतना ही  
उत्पा जामा उचित है, लेकिन मोघा होनेके कारण  
यह उतनी गूर नहीं जा सकता।

(ख) निर्भरका जन भग महीको भेद कर जाता  
है, तब हमका वेग कुछ मंद हो जाता है।

(ग) भूयुक्तको भेद कर पाकामगुनी होनेमें प्रायः  
उत्ते रोकतो है।

(घ) यह जन जब हिय भिन्न ही कर प्रयोगे पर  
गिरता है, तब पतिग जनमसुखके उत्पत्त परस्त्रोतकी  
तरह गिरते रहनेके कारण उक्त जनस्त्रोतकी गतिजा जन  
ही जाता है।

(च) उत्पत्त जनस्त्रोतमें जो भागुक्त पदाय गिजा  
रता है वह भी उक्त स्त्रोतके वेगमें ऊपरकी घोर धनु  
जाता है जिनमें हमका भार जनवेगके प्रतिफल कार्य  
करता है।

(छ) मायाकर्षण भी उक्त गामी पदायका वि-  
प्रतिकूल है।

यदि ये सब कारण न हों, तो पार्यत्व प्रदेगका  
निर्भर बहुत उक्त गामी होता। पल्लुद्वय दुर्मेव स्तर-  
प्रतिहत-निर्भर पथिक वेगवान् नहीं होता है।

ऊर्ध्व स्त्रोतमें जो जन निकलता है, यह उक्त  
निर्भर उत्पादक महीके मध्य प्रवाहित जनस्त्रोतके निगा  
घोर कुछ भी नहीं है। जिन स्तर ही कर उक्त भूयुक्तमे पर  
जनस्त्रोत महजमें या जा सके, यह स्तर जिन स्थानमें या  
जिन प्रदेगमें जितना मोघे रहेगा, उक्त स्थानका रूप भी  
उतना ही महदा होगा।

उक्त राजबर्ष या सुन्दर सुन्दर उक्तानोंमें जो यह  
कृतिग निर्भर या कुशारे देते जाते हैं, ये सामाजिक  
निर्भरके पनुकरवमें निर्मित हैं। पलेकामन्दिवायामी  
कायमें ही मन्त्रे १२० वर्ष पहले जो पनुयुक्त  
निर्भरका निर्माण किया, उक्तको निर्माणवालीको  
समाप्तीतना करनेमें कृतिग निर्भरके विषयमें कुछ काम  
उत्पत्त ही सकता है। उक्तका कृतिग निर्भर गाद-  
प्रकारपनुक्त-भूयुक्तमे निर्मित है। उक्तमे निगाह उक्तानमें  
उत्ते बनाया।

एक पीतलकी बड़ी डिग या रिक्वावर्के मध्य भागमें एक छेद है और वह नलके संयोगसे निम्नस्थित एक पात्रके ऊपरी भागमें दृढ़रूपसे लगा हुआ है। उस निम्नस्थ पात्रके तलदेगसे दोनी बगल हो कर दो नल उसके निम्नस्थित एक जलपात्रके साथ संलग्न हैं। सर्वापरि रिक्वावीमें दक्षिणमध्य नल और मध्यस्थित पात्रके साथ वामदिक्स्थ नल संयुक्त है और ठम मध्यस्थित पात्रके बीचमें एक छोटा वायुमसारक नल है। इस प्रकार दक्षिण औरके नल हो कर सर्वनिम्नस्थ पात्रमें जल प्रवेश करेगा और वहाँ वायुका दबाव पहुँचसे वह वामभागस्थ नल द्वारा मध्यस्थित पात्रमें प्रवेश करता और उसके मध्यस्थ जल पर दबाव डालता है। सुरतः उम पात्रकी ऊपरी रिक्वावीमें संलग्न नल द्वारा जल ऊपरकी ओर निर्भरके रूपमें गिरता है।

वायुका घर्षण आदि पूर्ववर्णित कारणसमुच्च यदि उस निर्भरके विरुद्ध कार्य न करता, तो यह जल उक्त दोनी पात्रके मध्यस्थित जलके व्यभ्रानानुसार ऊर्ध्वगामी होता। यथाशक्ति यह उससे कम दूर तक ऊपर उठता है। इसके बाद नाना स्थानोंमें नाना प्रकारके निर्भर तैयार हुए हैं। सविराम-निर्भरप्रवाह उसका प्रकारभेदमात्र है। फुहाए देखो।

भारतमें भी बहुत पहलसे कृत्रिम निर्भर प्रसृत होता था। कालिदासके ऋतुसंहारमें यह जलपन्न नामसे वर्णित है।

साधारणतः पार्वत्य प्रदेश ही स्वाभाविक निर्भरका स्थान है। कृत्रिम निर्भरका होना सभी जगह सम्भव है। अत्युत्कृष्ट राजप्रासाद वा सुन्दर सुन्दर हर्म्यके ऊपर नाना प्रकारकी खोदित मूर्तिके किसी न किसी स्थानसे उचित यह कृत्रिम निर्भर देखा जाता है।

पुराकालमें यौकदेशीय अनेक नगरोंमें इस प्रकारके कृत्रिम निर्भर देखे जाते थे। पोसेनसने लिखा है, कि करिन्थके अनेक स्थानोंमें इस प्रकारका निर्भर था और डायनरके निकटस्थ पैगासामें मूर्तिके पदतल ही कर इस प्रकारका जलस्रोत प्रवाहित होता था। यौसके और भी अनेक कृत्रिम फुहारों में और आज भी कहीं कहीं देखे जाते हैं। पम्पिनगरका राजपथ यहाँ तक कि

अनेक घर भी निर्भरमें सुगोमित थे। नैपवस नगरको चित्रगालिकामें बहुतसी 'ब्रोञ्ज' निर्मित प्रतिमूर्तियाँ विद्यमान हैं जिनसे कृत्रिम उपायसे निर्भरके आकारमें जलस्रोत प्रवाहित होता है। इटलीमें आजकल अनेक गोमायासो निर्भर प्रवाहित हैं जिनसे वहाँके अधिवासियोंकी विलासिताका परिचय मिलता है। ये सब निर्भर नाना वर्षादि चित्रित और प्रति विद्याल हैं तथा नाना प्रकारको मूर्तियोंसे निकलते हैं। चित्रकर, सुत्रधार और राजनिष्ठियोंने इन सब निर्भरोंकी बनानेमें कठिना, युक्ति और नैपुण्यका यथेष्ट परिचय दिया है। पारो शहर आदि स्थानोंमें भी बहुत पहलसे कृत्रिम निर्भर बनानेकी प्रथा प्रचलित थी।

लन्दन नगरमें जलका कोई अभाव नहीं होनेके कारण आज तक निर्भरका उतना आदर नहीं था। लेकिन दर्शन और विज्ञानकी उन्नति तथा सभ्यताके विस्तारके लिये अभी नाना स्थानोंमें निर्भरका प्रचार हो गया है।

वैद्यकके मतसे निर्भरका जल सधु, पथ्य, दोषन और कफनाशक माना गया है।

पर्वतके शानुदेशी जौ जल निकलता है उसे भी निर्भर कहते हैं। इसका जल सूचिकार, कफनाशक, दोषन, सधु, मधुर, कटुपाक और मोतन होता है। १ सुर्याश, सूर्यका घोड़ा। २ तुपानल। ३ इस्ती, चाथी।

निर्भरिथो (सं० स्त्री०) निर्भरप्रति डीय। १ नदो, दरया।

निर्भरिन् (सं० पुं०) निर्भरोऽस्यस्येति निर्भरं इति। गिरि, पहाड़।

निर्भरी (सं० स्त्री०) निर-भृ-पच्, गोरादित्वात् डीय। निर्भर, पर्वतसे निकला हुआ पानीका भरना, मोता, चरना।

निर्णय (सं० पुं०) निष्पन्नमिति निर-भी-पच्। १ अथधारण, भौचित्य और अनौचित्य आदिका विचार करके किसी विषयके दो पक्षोंमेंसे एक पक्षकी ठीक ठहराना, किसी विषयमें कोई सिद्धान्त स्थिर करना। इसका पर्याय निश्चय, निश्चयन और निश्चय है। २ विचार। पर्याय—तर्क, गुच्छा, चर्चा। ३ श्यायदर्शनोक्त सोलस्य पदार्थोंके अन्तर्गत पदार्थभेद।

मादो चोर प्रतिमादो इह दोषोका किमो विषयमि  
 तदि वाच्यसंग्रह उपस्थित हो। तो उभयमें व्यापवयोग  
 काला बाहिय परांग् गुण जो रहते हो तब इम कारवने  
 प्रकृत नहीं है। इम प्रकार व्यापवयोग करना होता है।  
 उम मादरके प्रति दोषोद्यायन चोर पीछे उम दोषोका  
 चकार करमेने जो एक वस्तुता व्यवहार होता है, उमका  
 नाम निर्वय है। इमो प्रकार निर्वय विषयकी जगह  
 ज्ञानभा बाहिय। एक विषय से का पाएके विषया  
 एव रहा है, उम विषय-विषयके एक वस्तुके वस्तुता-  
 का नाम निर्वय है। जो निर्वय होमा, उभयमें किमो  
 प्रकारका दोष न रहे, दोषदुष्ट होमेने उमे निर्वय नहीं  
 कह सकते। उ सीमांमकोर परिहरणका व्यववधिद,  
 मोनागामि किमो सिद्धान्तके पीछे परिचाम निकालना।

निर्वय, चविषय, पूर्वपण, उचारण, निर्वय चोर  
 निश्चाल से मर परिहरण है। तत्र होमुनेमें निर्वयका  
 व्यव इम प्रकार किया है—

निश्चाल द्वारा जो सिद्ध है परांग् जो विषय विषय  
 सिद्धान्तकाय द्वारा सिद्धान्तगत हुआ है मेमे वाच्यने  
 तात्पर्यव्यवहारका नाम निर्वय है। उ विरोधपरिहार,  
 चतुष्पाद व्यवहारके परामर्गत ग्रोप पाद, मादो चोर  
 प्रतिमादोकी चारोकी गुण कर उमके मन्व चयया परमाय  
 होमेके मन्वयमें कोरे विषय निर चरना, के मन्व,  
 निश्चाल। पावममें कोरे विषय उपस्थित होनेमे  
 राजाके पाव जालिय को जाती है। मादो, प्रतिमादो  
 चोर वाच्योकी मर चारो गुण कर राजप्रतिनिधि को  
 निर्वय कर देते हैं, उमोकी निर्वय कहते हैं।

व्यवहारमात्र चतुष्पाद है चोर निर्वयपाद उमका  
 मे पाद है। राजाके पाव इमका परिचयगत नामने, ये  
 हो इमको निर्वय कर दे, मर निर्वय है।

जब पावममें कोरे विषय उपस्थित हो, तब राजाको  
 बाहिय कि वस्तुकी मोमना कर दे। बाहियत प्रतिष्ठा  
 वा व्यव करके को कुछ कुछ चोर मादो-प्रतिमादो को  
 जो नहीं, राजा मन्वोभाति उमे कुम मे। पीछे निर्वय  
 होय निर्वय, उमे उमेमाकानुसार उच्य है। मोर-  
 विरोधदोष इमका विरोध विषय निर्वय है।

उमका, चतु, चरित, उच्य गुणका चोर चरितमन्व त  
 वरित द्वारा निर्वय कर उमका है।

विषयको जगह पादे माधोय विषय उपस्थित हो,  
 तो वहां युक्तिवा चयनव्यव करके निर्वय करना होता  
 है, कारण माधोयविषयमें व्याप हो चलना है।

"यमं पावविरोधे तु मुक्तिमुक्तो विधिः स्वयम् ।  
 इवमेव वाच्यवाचिणो न चेतोरो हि निर्णयः ॥  
 मुक्तिविधिकारे ही मन्वोभातिः परामर्शे ॥"  
 ( श्रीनिशोरचरुत मन्व )

निर्वयम ( सं० लो० ) निर-मो-भावे-च्युट् । निर्वय ।  
 निर्वयपाद ( सं० पु० ) निर्वयामको पादः भागविधोवा ।  
 चतुष्पाद व्यवहारके परामर्गत व्यवहारविषय ।  
 निर्वय-परमा ( सं० पु० ) एक परामर्हार । इममें उभय  
 चोर उभयानके गुणो चोर दोषोकी विवेचना की  
 जाती है ।

निर्णयः ( सं० पु० ) निर-नामः समम् । निर-  
 मन्व, चयत्वा मन्व ।

निर्णयन ( सं० लो० ) निर-मो-विष् च्युट् । निर्वयका  
 कारण । उ मजावाद्देय, निर्वय, वाच्योकी वाच्यका  
 बाहरो होता ।

निर्वय ( सं० वि० ) निर-विज-क । उ मोधिः । उ चय-  
 मत माय ।

निर्वय ( सं० पु० ) निर-निज-किय् । उ इय । ( वि० )  
 उ मोपक ।

निर्वय ( सं० वि० ) निर-निज क । निर्वय, जोता  
 हुआ, जिने जीत लिया हो ।

निर्वय ( सं० लो० ) निर-मो-क । उतनिर्वय, निर्वय  
 दिया हुआ, जिनका निर्वय हो चुका हो । परामर्श-  
 निर्वय, मन्व, चतु, विदक, प्रतीच्य, चोच्य ।

निर्वय ( सं० पु० ) निर-निज-चय । निर-मो-क,  
 चयत्वा इह ।

निर्वयक ( सं० पु० ) निर-निज-चय । उच्य, जोकी ।  
 निर्वयन ( सं० लो० ) निर-निज भावे च्युट् । उ उच्य ।  
 उ भावित । उ चयत्वा । उ भावत ।

निर्वय ( सं० वि० ) निर-मो-च्य । निर्वयका, विषय-  
 को निर्वय देनेवाला ।

निर्वय ( सं० वि० ) निर्वय चोय ।  
 निर्णय ( सं० पु० ) उपा-कारकचय, निर्णयन ।

निर्देशिन् (सं० त्रि०) १ नितरां दंशनकारो । २ दंशन-  
 होन ।  
 निर्देश (सं० त्रि०) १ जो अच्छी तरह दग्ध हो । १ जो  
 दग्ध नहीं हो ।  
 निर्देशिका (सं० स्त्री०) निर्देशिका, इलायची ।  
 निर्देश (सं० त्रि०) निर्देश-प्रयोदरादित्वात् साधुः । १  
 निर्देश, कठोर, बेरहम । २ परनिन्दाकारो, दूषरेके  
 दोष या बुराई कहनेवाला । ३ निर्भ्रयोजन, जिससे कुछ  
 पर्यं बिह न हो । ४ तीव्र, तेज । ५ सत्त, सतवाला  
 निर्देश (सं० त्रि०) १ निर्देश, कठिन । २ निर्देश,  
 कठोर, बेरहम । ३ निर्भ्रयोजन, बेकाम ।  
 निर्देश (सं० त्रि०) निर्भ्रयेषु दण्डो-यस्य प्रादिवहुः ।  
 १ सर्वप्रकार दण्डाहं, जिसे सब प्रकारके दण्ड दिये जा  
 सकें । २ दण्डहीन, जिसे दण्ड न दिए जाय । (पु०)  
 ३ शूद्र, जिसे सब प्रकारके दण्ड दिये जा सकते हैं ।  
 निर्देश (सं० त्रि०) दम्भहोन, जिसे दम्भ या अभिमान  
 न हो ।  
 निर्देश (सं० त्रि०) निर्माता दया यस्मात् । दयाशून्य,  
 निष्ठुर, बेरहम ।  
 निर्देशता (सं० स्त्री०) निष्ठुरता, बेरहमी ।  
 निर्देशत्व (सं० स्त्री०) निर्देश्य भावः निर्देश्य भावे त्व ।  
 निर्देशका भाव या क्रिया ।  
 निर्देश (सं० स्त्री०) निर्देश-पप । १ गुह्य, कन्दरा । २  
 निर्भर । ३ हलका निर्वास । (त्रि०) निर्गतो दरिद्र  
 यस्मात् । ४ सार । ५ कठिन । ६ अपवप ।  
 निर्देशन (सं० स्त्री०) १ दत्तनरहित । २ विदारण ।  
 निर्देश (सं० त्रि०) निर्गतानि दग्धानि यस्य । भ्रगोच  
 प्रतिश्रान्ता दग्धा, जिसका दग्ध दिन होत गया हो ।  
 निर्देशन (सं० त्रि०) निर्गतानि दग्धानि यस्य । दग्धन-  
 होन, बिना दांतका ।  
 निर्देश्य (सं० त्रि०) दस्यु होन, दस्युरहित ।  
 निर्देशन (सं० पु०) नितरां दहतीति निर्देश्युः ।  
 १ भस्मातक, भिलावेका पेड़ । २ भस्मातकका बीज ।  
 निर्मासि दहनो अग्निर्वत् । १ अग्निशून्य ।  
 निर्देशनो (सं० स्त्री०) निर्देशन-स्थिया डोप । भूयं-  
 सता, घूरनहार, सुरा, मरोकफली ।

निर्देश (सं० त्रि०) निर्देश-द्वयत् । १ दिदक । २ दाता ।  
 ३ शोधक ।  
 निर्देश (सं० त्रि०) अग्निदग्ध ।  
 निर्देश (सं० त्रि०) निर्देश-द्वयत् । १ वली । २  
 मांसल, मोटा ताजा ।  
 निर्देशिका (सं० स्त्री०) निर्देशिका, इलायची ।  
 निर्देश (सं० त्रि०) निर्देश-द्वयत् । १ निश्चित, जिसका  
 निश्चय कर दिया गया हो, ठहराया हुआ । २ आदिष्ट,  
 जिसको आज्ञा दी गई हो ।  
 निर्देश (सं० पु०) निर्देश-भावे-घञ् । १ आज्ञा,  
 हुकुम । २ कथन । ३ किसी पदार्थको बतलाना ।  
 ४ निश्चित करना या ठहराना । ५ उल्लेख, जिक्र । ६  
 वेपथु । ७ नाम, मंत्रा । ८ चेतन ।  
 निर्देश (सं० त्रि०) निर्देशतीति निर्देश-द्वयत् ।  
 निर्देशकता ।  
 निर्देश (सं० त्रि०) दोनता रहित ।  
 निर्देश (सं० त्रि०) निर्गतो दोषो यस्मात् । १ दोष-  
 रहित, जिसमें कोई दोष न हो, बेदूब, बे-दाग । २  
 जिसने कोई अपराध न किया हो, बेकसूर ।  
 निर्देशता (सं० स्त्री०) निर्देश होनेको क्रिया या भाव,  
 प्रकलङ्कता, शुद्धता, दोषविहीनता ।  
 निर्देश (सं० त्रि०) जिसने कोई अपराध न किया हो,  
 बेकसूर ।  
 निर्देश (सं० त्रि०) १ द्रव्यहीन । २ दरिद्र ।  
 निर्देश (सं० त्रि०) १ द्रोहरहित, मित्र । २ निर्दोष ।  
 निर्देश (सं० त्रि०) निर्गतो दग्धात् । १ जिसका कोई  
 विरोध करनेवाला न हो, जिसका कोई दन्ती न हो । २  
 जो राग, द्वेष, मान, अपमान आदि दन्तियों रहित या  
 परे हो । ३ अच्छन्द, बिना बाधाका ।  
 निर्देश (सं० त्रि०) निर्गतं वनं यस्य । १ धनशून्य,  
 दरिद्र, कंगाल । (पु०) २ जराइव ।  
 निर्देशनता (सं० स्त्री०) निर्देशन-तत्त्व-टाप । निर्देशन  
 होनेकी क्रिया या भाव, गरीबी, कंगाली ।  
 निर्देश (सं० त्रि०) निर्गतः धर्मात् । धर्मरहित, जो  
 धर्मसे रहित हो ।  
 निर्धार (सं० पु०) निर्देश-द्वयत्-भावे-घञ् । निर्धारण,  
 ठहराना या निश्चित करना ।

निर्धारण ( सं० क्रो० ) निर्-धा-विच्, भावे ल्युट् । १  
 आदि कर्मकार विधौ एक कारिणे-कार्यदिने युव या  
 कर्म पाठिरे विशामे दृढ हो समन करना । जैसे,  
 कामो मोय' बहुत दूर देनेवालो होतो है । यहाँ 'तो'  
 कारिणेमे अधिक दूर देनेवालो होनेके कारण कामो  
 मोय' बहुत, हो गई है । २ उपरामा या निश्चित करना ।  
 ३ निश्चय, निश्चय ।

निर्धारणा ( हिं० क्रि० ) निश्चित करना, निर्धारित करना,  
 उपरामा ।

निर्धारित ( सं० वि० ) निर्धारितः । १ निर्धारण विधय ।  
 २ निश्चित, उपरामा हुआ ।

निर्धारणंशद ( सं० वि० ) धारणंशद-गुण्य, धरणाद्वयुग  
 गुण्य सेना ग्यात ।

निर्धार्य ( सं० वि० ) निर्धार्यते स्थितो द्विपते वा निर्धि-  
 यते निर्-धा-स्त्यत् वा धारि-स्त्यत् । १ निर्धारण कर्म,  
 सामान्यमे प्रयत्नःकारण । २ निश्चय । ३ निभयकर्मकर्ता ।  
 ( क्रो० ) ४ परमत्त निर्धारण ।

निर्धुत ( सं० वि० ) निर्-धु-ञ्जः । १ कण्ठित, टूटा  
 हुआ । २ परित्याज, जिनका त्याग कर दिया हो । ३  
 निरागत, किंका हुआ, छोड़ा हुआ । ४ भस्मित, जिसको  
 निर्यात की गई हो । ५ धोया हुआ ।

निर्धुम ( सं० वि० ) धुमाहित, जहाँ या जिनमें धुमा  
 न हो ।

निर्धुनि ( सं० वि० ) निर्-धा-व-कर्मणि लृट् । प्रचालित,  
 ओया हुआ, माय किया हुआ ।

निर्धुनम ( सं० क्रो० ) निर्-धा-विच्, भावे ल्युट् ।  
 धुनु, मोक्ष कर्मोधारणार्थं व्यापारिणः ।

निर्धुमकार ( सं० वि० ) निर्धारित नगरकारो षाद्यः ।  
 नमस्कार वा प्रचालाहित ।

निर्धुव ( सं० वि० ) नराहित, अनुपपत्तय ।

निर्धुव ( सं० वि० ) नरापत्तय, विना मानिकता ।

निर्धुवित ( सं० वि० ) १ निर्धुवित्, जिसे छोड़ो न हो ।  
 निर्धुवन ( सं० क्रो० ) १ व्यापारिकारिणः, धुवरी  
 लवह नि आना । २ विपण्यय, निर्धुवन ।

निर्धुवित् ( सं० वि० ) निर्धुवन देना ।

निर्धुवित् ( सं० वि० ) धुवनय, विना लवह ।

निर्धुव ( सं० वि० ) १ धुवनय, जो धुवन न गिराये ।  
 २ निभयमे धुवन न गिरे । ( क्रि० वि० ) ३ विना  
 धुवन अपराध, एकटक ।

निर्धुव ( सं० वि० ) धुवनय, धुवनयत ।

निर्धुव ( सं० वि० ) निर्धुव' मोक्ष' प्रमात् । मोक्षार्थित,  
 धुवनयगुण्य, विना धरणा ।

निर्धुव ( हिं० वि० ) निरतन देले ।

निर्धुव ( सं० पु० ) निर्-धु-ञ्ज्य भावे धनु । १ धुवनियेध,  
 धुवनय । २ जित, दठ । ३ दृक्वावट, पदधन ।

निर्धुवनीय ( सं० क्रो० ) धुवनय, लवह, लवहा ।

निर्धुवित् ( सं० वि० ) धुवनय जदो कामका ।

निर्धुवित् ( सं० वि० ) धुवनयित, धुवनयित ।

निर्धुवित् ( सं० क्रो० ) निर्-धु-ञ्ज्य भावे ल्युट् । १ निर-  
 द्यय, मारण । ( वि० ) २ धुवनय, धुवनय ।

निर्धुवित् ( सं० वि० ) धुवनय, धुवनय ।

निर्धुवित् ( सं० क्रो० ) धुवनय ।

निर्धुवित् ( हिं० क्रि० ) १ धुवनय, धुवनय, धुवनय, धुवनय,  
 धुवनय । २ धुवनय धुवनय, धुवनय, धुवनय, धुवनय ।

निर्धुवित् ( सं० पु० ) निर्धुवन देना ।

निर्धुवित् ( सं० पु० ) निर्धुवन देना ।

निर्धुवित् ( सं० वि० ) निर्धुवित् याथा प्रमात् । १ धुवनय  
 धुवनय । २ धुवनय । ३ धुवनय । ४ धुवनय । ( पु० )  
 ५ धुवनय

निर्धुवित् ( सं० वि० ) धुवनय, धुवनय ।

निर्धुवित् ( सं० वि० ) निर्धुवित् धुवनय । धुवनय,  
 धुवनय धुवनय, धुवनय, धुवनय ।

निर्धुवित् ( सं० क्रि० ) निर्धुवित् धुवनय । धुवनय,  
 विना धुवनय ।

निर्धुवित् ( सं० वि० ) धुवनय, धुवनय ।

निर्धुवित् ( सं० वि० ) निर्धुवित् धुवनय । धुवनय,  
 धुवनय धुवनय, धुवनय, धुवनय ।

निर्धुवित् ( सं० वि० ) १ धुवनय । २ धुवनय, धुवनय  
 धुवनय धुवनय धुवनय धुवनय धुवनय ।

निर्धुवित् ( सं० वि० ) निर्धुवित् धुवनय । धुवनय,  
 धुवनय धुवनय, धुवनय, धुवनय ।

निर्धुवित् ( सं० वि० ) निर्धुवित् धुवनय । १ धुवनय,  
 धुवनय ।

जिसे कोई डर न हो, बेछोक। (पु०) २ रोच्यमनुके पुत्रमेद, पुराणानुसार रोच्यमनुके एक पुत्रका नाम।

३ थोड़ा पत्र, बढ़िया घोड़ा।

निर्भयता (हि० स्त्री०) १-निडरपन, निडर होनेका भाव। २-निडर होनेकी अवस्था।

निर्भयरागमदृ—त्रतोवधामधंयह धीर सव्यत्परोत्सव-कालनिर्णय नामक दो संस्कृत ग्रन्थोंके रचयिता।

निर्भयानन्द—हिन्दुके एक कवि। इनका कविताकाल स० १८१५ कहा जाता है। इन्होंने गिष्ठाविभागकी कुछ पुस्तकें बनाई हैं।

निर्भर (स० त्रि०) निःश्रेयस भरो भरणं यत्। १ बहुत, ज्यादा। २ युक्त, मिला हुआ। (पु०) ३ वेतनगुण मूल्य, वह सेवक जिसे वेतन न दिया जाता हो, बेगार।

निर्भर्त्सन (स० स्त्री०) नितरा भर्त्सनम् निर-भर्त्स-ण्यट्। १ निन्दा, बदनामी। २ अलक्षक, पलता।

३ भर्त्सन, तिरस्कार, डांट डपट। ४ अभिभव। ५ अनर्थक।

निर्भर्त्सना (स० स्त्री०) १ तिरस्कार, डांट डपट, बुरा भला कहना। २ निन्दा, बदनामी।

निर्भर्त्सित (स० त्रि०) निर-भर्त्स-क्त। कृतभर्त्स, जिसकी निन्दा की गई हो। पर्याय—निन्दित, धिक्कृत, अपध्वस्त।

निर्भाष्य (स० त्रि०) निर-निष्कटं भाष्यं यस्य। मन्द-भाष्य, मूढ़।

निर्भाष्य (स० त्रि०) अविभाष्य, जो भागयोग्य न हो।

निर्भिन्न (स० त्रि०) निर-भिद-क्त। १ विदलित, खुण्डित। २ अमिश्र, विच्छिन्न।

निर्भिन्नचिर्मिट (स० पु०) फुटिका।

निर्भीक (स० त्रि०) भयरहित, निःशय, बेडर, निडर

निर्भीकता (स० स्त्री०) निर्भीक होनेकी क्रिया या भाव।

निर्भूति (स० त्रि०) निर-भू-क्त। भयरहित, निडर

निर्भूज (स० त्रि०) जिसका एक धीर मोड़ा हुआ हो

निर्भूति (स० स्त्री०) तिरोधान, अन्तर्धान, गायन होना।

निर्भूति (स० त्रि०) निर्गता भूतियस्य। वेतनगुण्य कर्मकार, बेगार।

निर्भूद (स० पु०) १ विदारण, फाड़ना। २ विभाजन।

निर्भूदिन् (स० त्रि०) भेदकारो।

निर्भूद्य (स० त्रि०) विभेदयोग्य।

निर्भोग (स० त्रि०) भोग वा समो गारहित, सुखहीन।

निर्भ्रम (स० त्रि०) १ अपरिहत, जिसमें कोई मन्देह न हो। (क्ति० वि०) २ स्वच्छतासे, बेडर, बेखटके, बिना संकोचके।

निर्भ्रान्त (स० त्रि०) १ अमरहित, नियत, जिसमें कोई मन्देह न हो। २ जिसको कोई भ्रम न हो।

निर्भ्रिक (स० अशु०) मलिकायाः प्रमायः। १ मलिकाका प्रभाव। निर्गतो मलिका यस्मात्। २ मलिकागुण्य-देग। ३ तदुपलक्षित निजं नदेग, निभृतस्थान।

निर्भ्र्यन् (स० स्त्री०) १ नौराजन, धारती करना। २ सेवा।

निर्भ्रज् (स० त्रि०) निर-भ्रज-क्तिः, वेदे प्रयोदरा-दिस्वात् साधुः। गितात् शब्द।

निर्भ्रज् (स० स्त्री०) मज्जाहीन।

निर्भ्रजूक (स० त्रि०) भेकगुण्य, जहाँ बँग न हो।

निर्भ्रत्तर (स० त्रि०) मत्सररहित, अहङ्कारहीन।

निर्भ्रत्तर (स० त्रि०) सत्यहीन, जहाँ या जिसमें महत्तो न हो।

निर्भ्रथ (स० पु०) निर्भ्रथतेऽनेन निर-भ्रथ-करणे-र्युट्। अग्निमन्वन्दाश्च, पराधि, जिसे रगड़ कर यहाँह लिये भाग निकालते हैं।

निर्भ्रथन (स० स्त्री०) १ मन्थन, मथना। २ अग्नि-मन्थनदाश्च, पराधि।

निर्भ्रथा (स० स्त्री०) १ नलिका नामक गन्धद्रव्य। (त्रि०) २ जो मथने लायक न हो।

निर्भ्रद (स० त्रि०) निर्गतो मदी दानजलं प्रपोगर्वा वा यस्मात्। १ निरभिमान। २ हर्षगुण्य। ३ दानजनगुण्य।

निर्भ्रधा (स० स्त्री०) नजिका, गन्धद्रव्यविशेष।

निर्भ्रतक्त (स० त्रि०) अमनस्क।

निर्भ्रुज (स० त्रि०) निर-विद्यते मनुषो यत्। मनुष्य-रुध्य, निर्जन।





निर्मास्यक ( स० पु० ) कुंमारानुचरभेदं, कुंमारके एक अनुचरका नाम ।

निर्मा ( म० स्त्री० ) १ मूल्य, कीमत । २ परिमाण ।

निर्माण ( स० क्तो० ) निर्मायते निर-मा-ख्यट् । १

निर्मिति, बनानेका काम । २ घटादिकी रचना, बनावट । ३ निर्माणमाधन कार्यादि । ४ मानातोत ।

निर्माणविद्या ( स० स्त्री० ) इमारत, नहर, पुत्र इत्यादि बनानेकी विद्या, वास्तुविद्या, इंजीनियरी ।

निर्माता ( हि० पु० ) निर्माण करनेवाला, बनानेवाला ।

निर्मात्रिक ( स० त्रि० ) विना मात्राका, जिनमें मात्रा न हो ।

निर्मात्री—सिखु जातिके भन्तगंत । सम्प्रदायविशेष । ये लोग ईश्वराराधनामें अपना जीवन उत्सर्ग कर देते हैं और प्रायः लज्ज रहते हैं । सेरिका कहना है, कि निर्मात्री काशीधामके, यैष्णवीके सम्प्रदायमें दमात्र हैं ।

पवित्र रहना ही इनकी जीवनका मुख्य उद्देश्य है । ये लोग प्रतिदिन १०४ बार-घाघ घोंते हैं और दिन भरमें कई बार स्नान करते हैं । ये लोग संप्रसारका त्याग नहीं करते, किन्तु अपवित्र हो जानेको भायङ्गासे सन्तानोंकी स्पर्श नहीं करते हैं । बौद्धधर्मावलम्बियोंकी तरह ये लोग भी जीवहिंसा नहीं करते । सिद्ध देखो ।

निर्मास्य ( म० क्तो० ) निर-मस्यत् । देवोच्छिष्ट वस्तु, यह पदार्थ जो किसी देवता पर चढ़ चुका हो, देवता पर चढ़ चुकी हुई चीज । जो पुण्य, फल और मिष्टान्न आदि किसी देवता पर चढ़ाये जाते हैं ये विसर्जनसे पहले 'नैवेद्य' और विसर्जनके उपरान्त 'निर्मास्य' कहलाते हैं । देव-निर्मास्य मस्तक पर धारण और शरीरमें अनुलेपन करना तथा नैवेद्य भक्तोंकी दे कर आप खाना चाहिए ।

"निर्मास्यं शिरसा धार्य सर्वगं चाग्रेणम् ।  
नैवेद्यं चोपभुञ्जीत दत्त्वा तद्गणिकादिने ॥"

( तन्त्रसार )

पूजाके बाद ईशानकोषमें एक मण्डल बना कर उसमें निम्नलिखित मन्त्रसे निर्मास्य रख देना चाहिए ।

विष्णुका निर्मास्य होनिसे—'सो विश्वक्सेनाय नमः'  
शक्तिका होनिसे—'सो शिविकायै नमः'

गिवका होनिसे—'सो चण्डेश्वराय नमः' । सूर्यका होनिसे—'सो तज्यण्डाय नमः' । कालिकाका होनिसे—'सो चाण्डालिन्यै नमः'

यही मंत्र पढ़ कर निर्मास्य रखना होता है । कालिकापुराणमें लिखा है, कि निर्मास्यको जल या तरबूजमें फेंक देना चाहिए ।

तन्त्रसारके मतानुसार देवताके उद्देश्यसे जो मणिसुक्ता, सुवर्ण और ताम्र चढ़ाए जाते हैं, वे १२ वर्षके बाद, पट्टी और शांटी ६ मासके बाद, नैवेद्य चढ़ानेके साथ ही, मोदक और कुरार चढ़े यामके बाद, पक्षवत्त तीन मासके बाद, यक्षसुत एक दिनके बाद और अन्य तथा परमात्र शीतन होनेके बाद ही निर्मास्य हो जाता है ।

गिवको चढ़ा हुआ निर्मास्य खानेका निषेध है, खानेसे पापभागी होना पड़ता है ।

'अमात्रं शिवने वेद्यं पत्रं पुत्रं कलं अहम् ।  
शालग्रामशिलास्पर्शात् सर्वं भाति पवित्रताम् ॥'

( तिथिसार )

शिवने वेद्य तथा पत्र, पुत्र, फल और जस पहणोय नहीं है, किन्तु ये सब शालग्राम शिलास्पर्शसे पवित्र हो जाते हैं। अर्थात् ये सब यदि शालग्राम शिलामें स्पर्श कराये जाय, तो ग्रहणके योग्य हो सकते हैं । प्रातःकालमें प्रतिदिन निर्मास्य फेंक देना चाहिए । देवता यदि निर्मास्ययुक्त रहें, तो पुराकृत सभी पुण्य गट ही जाते हैं ।

'प्रातःकाले सदाः कुर्यात् निर्मास्योत्तरणं सुपः ।  
लुपितः पशवो बद्धः कश्यपा च अक्षयला ॥  
देवता ज निर्मास्यैवा इति पुण्यं पुराकृतम् ॥'

( अत्रिस्मृति )

प्रातःकालमें देवताका निर्मास्य फेंक देना चाहिए । यदि लुपित पशु बद्ध रहे, कन्या मरजहता हो और देवता निर्मास्ययुक्त हो, तो पुराकृत पुण्य गट होते हैं ।

प्रातःकाल उठ कर प्रतिदिन जो मनुष्य देवनिर्मास्य रिकार करता है, उसके दुःख, दरिद्रता और अकाम्यत्व नहीं होते ।

“६: अत्र, रच. व विनाय वि-  
 निर्माणादिभ्यः शिवादिभ्यः ।  
 न तस्य द्वात् न दरिद्वः च  
 माहात्म्यमुने च शीतपापमम् ॥”

( मन्तरवचः )

इति निर्माणादिभ्यः इत्यत्रा विपय इय प्रकाश  
 विगा ६,—

पदसोदयके मलय यदि निर्माणां दरिद्वार न विद्या  
 भाव, तो यह मलयमद, एक पक्षोके बाद मशागतन,  
 एक पक्षके बाद प्रति मलय शीर समके बाद मलयपार-  
 म्युय हो जाता है । एक पक्षोके बाद मुद्रयातक, मुद्रया-  
 के बाद मशागतन, फार पक्षोके बाद प्रतिगतक, तोम  
 मुद्रयाके बाद मशागतक शीर समके बाद मलयपथुय  
 वाग होला है । इस वापको निर्माणाके लिये प्रातपिशा  
 विषे है । यह मुद्रयाके बाद मलयपथ, मुद्रयाके  
 बाद मुद्रयापथार मय, तोम मुद्रयाके बाद मय पथार मय  
 शीर एक पक्षके बाद पुत्रपथन करना होला है । इसीमे  
 एक वापका नाम होला है । प्रथम शीत प्राप्ति पर को वाप  
 होला है मय प्रातपिशा करने पर भी दूर नहीं होला ।

निर्माणा ( सं० शी० ) निर्माणादिभ्यः शिवादिभ्यः शिवादिभ्यः  
 मय द्वात् । इटका, पमपरत ।

निर्मित ( सं० ति० ) निर्माणात् । क्त निर्माणा, रक्ति,  
 बनाया हुआ ।

निर्मिति ( सं० शी० ) निर्माणाभावेऽङ् । निर्माणा  
 लक्ष्य ।

निर्मूल ( सं० पु० ) निर्माणात् । १ मुद्रयापथुय  
 मय, मय मय निर्माणाके लिये के लिये कोही हो ।  
 ( ति० ) २ को मुद्रया हो गया हो, जो कूट गया हो ।  
 ३ निर्माणाके लिये निर्माणाके प्रकारका मयन न हो ।

निर्मूल ( सं० शी० ) निर्माणात् । १ मय, मय  
 मय, मय निर्माणाके लिये के लिये कोही हो ।  
 २ निर्माणाके लिये निर्माणाके प्रकारका मयन न हो ।

निर्मूल ( सं० शी० ) निर्माणात् । १ मय, मय  
 मय, मय निर्माणाके लिये के लिये कोही हो ।  
 २ निर्माणाके लिये निर्माणाके प्रकारका मयन न हो ।  
 ३ निर्माणाके लिये निर्माणाके प्रकारका मयन न हो ।

निर्मूल ( सं० ति० ) निर्माणात् । १ मय, मय  
 मय, मय निर्माणाके लिये के लिये कोही हो ।  
 २ निर्माणाके लिये निर्माणाके प्रकारका मयन न हो ।  
 ३ निर्माणाके लिये निर्माणाके प्रकारका मयन न हो ।

निर्मूलक ( सं० ति० ) निर्माणात् ।  
 निर्माणात् ( सं० शी० ) निर्माणात् । निर्माणात् ।

१ मय, मय, मय । २ निर्माणा करना या होना,  
 विनाय ।

निर्मेष ( सं० ति० ) निर्माणात्, विना बाटनका ।  
 निर्माणात् ( सं० ति० ) निर्माणात्, निर्माणात् ।

निर्मूलक ( सं० पु० ) निर्माणात् । निर्माणात् ।  
 इति निर्माणात् निर्माणात् । निर्माणात् ।

निर्मूल ( सं० ति० ) निर्माणात् । निर्माणात् ।  
 निर्माणात् ( सं० पु० ) निर्माणात् । निर्माणात् ।

१ निर्माणात्, निर्माणात् । २ निर्माणात्, निर्माणात् ।  
 निर्माणात्, निर्माणात् । ३ निर्माणात्, निर्माणात् ।

निर्मूल ( सं० ति० ) निर्माणात् । निर्माणात् ।  
 निर्माणात् ( सं० पु० ) निर्माणात् । निर्माणात् ।

१ निर्माणात्, निर्माणात् । २ निर्माणात्, निर्माणात् ।  
 निर्माणात्, निर्माणात् । ३ निर्माणात्, निर्माणात् ।

निर्मूल ( सं० ति० ) निर्माणात् । निर्माणात् ।  
 निर्माणात् ( सं० पु० ) निर्माणात् । निर्माणात् ।

१ निर्माणात्, निर्माणात् । २ निर्माणात्, निर्माणात् ।  
 निर्माणात्, निर्माणात् । ३ निर्माणात्, निर्माणात् ।

निर्मूल ( सं० ति० ) निर्माणात् । निर्माणात् ।  
 निर्माणात् ( सं० पु० ) निर्माणात् । निर्माणात् ।

१ निर्माणात्, निर्माणात् । २ निर्माणात्, निर्माणात् ।  
 निर्माणात्, निर्माणात् । ३ निर्माणात्, निर्माणात् ।

निर्मूल ( सं० ति० ) निर्माणात् । निर्माणात् ।  
 निर्माणात् ( सं० पु० ) निर्माणात् । निर्माणात् ।

१ निर्माणात्, निर्माणात् । २ निर्माणात्, निर्माणात् ।  
 निर्माणात्, निर्माणात् । ३ निर्माणात्, निर्माणात् ।

१ निर्माणात्, निर्माणात् । २ निर्माणात्, निर्माणात् ।  
 निर्माणात्, निर्माणात् । ३ निर्माणात्, निर्माणात् ।

निर्माहर्नी ( हि० वि० ) निर्देय, जिसके चित्तमें समता या दया न हो, कठोर हृदय ।

निर्माही ( हि० वि० ) जिसके हृदयमें मोह या समता न हो, निर्देय, कठोर हृदय ।

निम्नोत्तुका ( सं० स्त्री० ) निर्-न्ना-तुन्, संधायां कन्, प्रयोदरादित्वात् साधुः । न्नानिग्न्य भोपधिभेद ।

निम्नोक्ति ( सं० स्त्री० ) निम्नोक्ति देखो ।

निर्घ्न ( सं० त्रि० ) निर्घ्न विद्यते यत्नः यस्य । यत्न-ग्रन्थ, चालमी, जो अपने लिए कुछ भी उपाय न करे ।

निर्घ्नन्थ ( सं० स्त्री० ) निर्-यन्त्र-ल्युट् । १ निष्पीडन । ( त्रि० ) २ यन्त्रणग्रन्थ, साधारणहित । ३ निरगल । ४ उच्छ्वस ।

निर्याण ( सं० स्त्री० ) निर्याति मदीनेन निर्-या-करणे ल्युट् । १ गजावाहदेग, छायाकी आँखका बाहरी कोना भावे ल्युट् । २ मोचन, मोच, मुक्ति । ३ बाहर निकलना । ४ यात्रा, रवानगी, विशेषतः सेनाका युद्धक्षेत्रकी ओर प्रथवा पशुपौका चराईकी ओर प्रस्थान । ५ वह सड़ जो किसी नगरके बाहरकी ओर जाती हो । ६ अदृश्य होना, गायब होना । ७ शरीरसे पाष्काका निकलना । ८ पशुपौके पैरोंमें बांधनीकी रस्सी ।

निर्यात ( सं० त्रि० ) निर्-या-त् । निःसृत, निर्गत, निकला हुआ ।

निर्यातक ( सं० त्रि० ) निर्यातं निर्याणं वहिकरणं तत्करोति-णिव-ण्वुल् । निर्हारक, अनिष्ट करनेवाला ।

निर्यातन ( सं० स्त्री० ) निर्-यत्-णिव-ण्वुट् । १ वैर-शक्ति, शत्रुप्रतीकार, बदला चुकाना । २ प्रतीकार । ३ प्रतिदान । ४ न्याससमपण, मच्छित द्रव्यका लीटा देना । ५ मारण, मार डालना । ६ ऋणादिका शोधन, ऋण चुकाना ।

निर्याति ( सं० स्त्री० ) १ निर्गमन, प्रस्थान, रवानगी । २ सुसुप्त ।

निर्यात ( सं० त्रि० ) क्षेत्रकर्षक, कृषक, किसान । निर्दाह देखो ।

निर्याय ( सं० त्रि० ) निर्-याति कर्मणि यत् । १ शोधनीय, चुकाने योग्य । २ प्रतिदेय, देने योग्य ।

निर्याद ( सं० त्रि० ) यादवग्रन्थ स्थान, यादवरहित ।

निर्याम ( सं० पु० ) निर्-यम-घञ् । पातवाह, नाविक, मत्तवाह, माभो ।

निर्याम ( सं० पु०-स्य० ) निर्-यम-घञ् । १ कपाय । २ काय, काढ़ा ; ३ हत्ती या घोड़ोंमें आपसे भाव प्रथवा उनका तना आदि चोरनेसे निकलनेवाला रम । ४ गौद । ५ चरण, वहना या भरना । ६ वस्त्रज, हन । ७ लाक्षा ।

निर्यासिक ( सं० त्रि० ) निर्यामस्य अदूरदेयः ततो उच्च । निर्यासमल्लिखत देगादि ।

निर्यामी ( सं० पु० ) शाखोटकहृत् ।

निर्युक्ति ( सं० स्त्री० ) अयोग्य, युक्तिहीनता ।

निर्युक्तिक ( सं० त्रि० ) निर्युक्ता युक्ति यस्मात्, कप । युक्तिरहित, युक्तिहीन, विना युक्तिका ।

निर्युध ( सं० त्रि० ) युधभ्रष्ट, दलसे प्रथम् क्रिया हुआ ।

निर्युध ( सं० पु० ) नितरां युधः । निर्याम, गौद ।

निर्युध ( सं० पु० ) निर्-उह-क प्रयोदरादित्वात् साधुः । १ मत्तवारण । २ नागदन्त । ३ हस्तिदन्तके सदृग निर्मित हार-वेदिकाका काष्ठभेद, दीवारमें लगाई हुई वह लकड़ी आदि जिसके ऊपर कोई चीज रखी या बनाई जाय । ४ शंखर । ५ पायोड़, सिर पर पहनी जानेवाली कोई चीज । ६ हार, दरवाजा । ७ काय, काढ़ा ।

निर्योग ( सं० पु० ) फलहार, साज ।

निर्योग्य ( सं० त्रि० ) विषयविरत, वैषयिकचित्ता-विहीन ।

निर्येष ( सं० त्रि० ) निर्गतं लक्षणं यस्य । १ शुभ-लक्षणयुक्त, अच्छे लक्षणोंका । २ अप्रमिद, सुदृ ।

निर्येष्य ( सं० त्रि० ) लक्ष्यहीन, जो निगाह पर न पड़े ।

निर्येज ( सं० त्रि० ) निर्वाह्य सज्जा यमः । सज्जाहीन, धर्म, वैद्य ।

निर्येज्या ( हि० स्त्री० ) निर्येज्य होनेका भाव, धर्मों, वैद्यवाह ।

निर्येज्य ( सं० त्रि० ) १ जिसका कोई निश्चय निद्रा या विद्रव न हो । २ जिसका निद्रासाधन नहीं होता हो ।

निर्येज्य ( सं० त्रि० ) निर्-लिय-ल । १ सस्यग्रह,

को कोर्षे वरयन् न वरयन् को, विभोम । २ विरञ्जित्, राम  
होम च।दिभे मृत, को दिमा विपदमे वापक न को ।

निर्मुच्यन् ( सं० वधी० ) निर-मुच्य, भावे-उटुट् ।  
विमुचोश्चर्यादि, मृट्मात्र चरन्ते वाप ।

निर्मुच्यन् ( सं० वधी० ) निर-मुचिभावे ऋट् । अचर्यात्,  
ऋट्मा ।

निर्लेखन् ( सं० लो० ) निर-निष्-भावे ऋट् । १ क्रियो  
भोत पर मन्ते हृदन्ते च।दि मुरयना । २ मर मयु  
त्रिममे म्मे मुरयो जाट ।

निर्लेप ( सं० लि० ) निर्लेपा सेपो दन्तात् । १ नेत्राभ्य,  
विषया च।दिभे अलग चरन्तेवाप । २ पापदृष्ट । ३  
परिणामने कारण मन्तोटादि मृत् ।

निर्लेप ( सं० लि० ) क्रिये भोम न को, भावक न कारे-  
भावा ।

निर्लेपो ( दि० वि० ) निर्लेप रेण्ये ।

निर्लेपन् ( सं० लि० ) निर्गतं भोम यय । भोमरहित,  
द्विगमे रोच् न को ।

निर्लेप ( सं० लो० ) १ भोम नामक मन्त्रद्रव्य । २ व्याम-  
न्ध नामक मन्त्रद्रव्य ।

निर्वर्षणी ( सं० वधी० ) निर्वर्षी कोर्षे मन्तो भवनि,  
निर-भो-ऋट्, प्रबोधादित्यात् साधुः । १ कश्चुक,  
तामा, चोषक । २ गर्पत्रक, वैकुण्ठी ।

निर्वर्ष ( सं० लि० ) निर्वर्षे पागे मंग चकामेवामा  
कोर्षे न को, त्रिगमा मंग मट कोमया को ।

निर्वर्षणा ( सं० वधी० ) निर्वर्ष कोर्षेका भावे ।

निर्वर्षण्य ( सं० लि० ) निर-वृष लष । निर्वर्ष, प्रकाम न  
करने दोष ।

निर्वर्षण ( सं० लो० ) निर-वृष-भावे ऋट् । १  
निर्वृत्ति, विषो वट वा वाचको विमः प्याप्या त्रिममे  
व्युत्पत्ति च।दिवा दूरा कथन को । ( लि० ) २ अविष,  
माहृत्, ३ निर्लेपं चरन्ते यय । ४ मयमृत्, ५  
कोलाचनचरन । ६ मन्त्राभ्यामृत्, क्रिये कोर्षेने विदे  
कृत् भो न वृत् मया को ।

निर्वर्ष ( सं० लि० ) निर्लेपे मन्तु चरन्ते वाप ।  
मन्ते निर्वर्षण, मन्तेने निर्वर्ष दूषा वा मन्तेने  
वर्षा ।

निर्वर्षण ( सं० लो० ) निर-वृष-भावे ऋट् । १ दाम ।  
२ अचर्यात्का मन्त्रिभावा ।

निर्वर्षणी ( सं० वधी० ) निर्वर्षणी, च।दिभे के-मुणे ।  
निर्वर्ष ( सं० लि० ) निर्गतो वा यो यदवयवम् । १ निर्लेप,  
धर्म, विद्या । २ निर्लेप, निवृत्त । ३ मार, वरिम ।

निर्वर्षणता ( सं० लो० ) मन्त्रने च।दिभामे विमोचन ।

निर्वर्षण ( सं० लो० ) निर-वृष-भावे ऋट् । दण ।  
निर्वर्षिन् ( सं० लि० ) निर-वृत्-विष-कर्म-दि-क ।  
निष्पादित ।

निर्वर्ष ( सं० लि० ) निर-वृत्-विष-कर्म-दि-वृत् ।  
निष्पाव, व्याकान परिभाषित कर्मभेद ।

निर्वर्षण ( सं० लो० ) निर-वृष-भावे ऋट् । १  
मायाकृति, मगामि । २ निर्वाच, मुक्ता, निवाध ।

निर्वर्षित ( सं० लि० ) विमलता, अना करमेवाप ।

निर्वाष्ट ( सं० लि० ) मायाकोन, त्रिममे मुंकेमे वाप न  
निकमे, को गुय को ।

निर्वाष्य ( सं० लि० ) वाचकोन, को वीम न मकता को,  
मृगा ।

निर्वाष्य ( सं० वधी० ) १ मन्त्रिभावा, वाप । २ निर्गत ।  
निर्वाष्य ( सं० लि० ) निर्वर्षणोय ।

निर्वाष्य ( सं० लि० ) निर-वृष-ऋट्, क्रि । निर्गत,  
निष्का दूषा ।

निर्वाष्य ( सं० लो० ) निर-वा-ऋ । ( निर्वाष्टवापे । वा  
दः।१० ) चराने हनि लोः । १ मन्त्राचरन । २ विमाम ।

३ निर्वापि । ४ चामि । ५ चामि । ६ विपु । ७  
कृमिभेदमे चरनेपोय मन्त्रवृत्ति को मायकावृत्ति-  
मायिकवृत्ति मन्त्रमन्त्र । ८ वाचमृत् । ९ अनामक ।

१० कर्म । ११ निर्वापि । १२ निष्क । १३ मृत् ।  
१४ निर्वापि । १५ मुनि । दन्तेने चको चरने मन्  
मन्त्र विद्या मया को ।

चरानेकोने मुक्तिवाचक चार विनिग मन्त्रीका  
मन्त्रे वा—चरान् कोन, कोन, चराने, निर्वर्षण,  
मुनि, कोन्य को निर्वाप ।

अन्वित्पदे मन्त्राकार मन्त्राक मन्त्रे मन्त्र, चरान-  
वाम अमन नाम कोन है । चरान् ( मुनि ) कोन कोन-  
( चरान् दृष्ट ) वन कोने मन्त्रीका मन्त्र, विचार चर को

धीर व्यक्ति हैं वे श्रयोमार्ग का ही प्रबलमयन करते हैं। सांख्यदर्शनकार कपिलका कहना है, कि प्रकृति शीर प्ररूप इन दोनों तत्त्वोंके भेदज्ञान द्वारा दुःखव्यथाका ध्वंस शीर मोक्षलाभ होता है। शोतमने अपने न्यायदर्शनमें लिखा है, कि प्रमाण प्रमेयादि षोडश पदार्थोंके सम्यग्ज्ञान द्वारा दुःख, जन्म, प्रसृति, दोष शीर मित्याधानके उत्तरोत्तर अपाशसे अपवर्गलाभ होता है। द्रव्य गुण इत्यादि षट् पदार्थोंके सम्यग्ज्ञान द्वारा मिश्रयसाधिगम होता है। वैशेषिक दर्शनकार कणादका भी यही मत है। पातञ्जलदर्शनके मतसे—योग द्वारा जीवात्माके परमात्मानें लय होनेका नाम सुक्ति है। मौर्मासक सम्प्रदायोंमेंसे किसी किमीका कहना है, कि निखसुखसाधाल्कारका नाम सुक्ति है। वैदान्तिक लोग कहते हैं, कि पारमार्थिक ज्ञान द्वारा प्रविद्याका ध्वंस शीर कौवल्य लाभ होता है। फिर बौद्ध लोगोंका कहना है, कि प्रतीत्यसमुत्पन्न धर्म समूहकी सम्बुद्धि द्वारा प्रपञ्चका उपगम, राग, द्वेष शीर मोहका क्षय तथा निर्वाण लाभ होता है।

सुक्तिवादयन्त्रमें लिखा है, कि प्राचीन लोग सायुज्य, सालोक्य, सामीप्य, साटि शीर निर्वाण इन पांच प्रकारको सुक्तियोंको स्वीकार करते हैं। निम्नलिखित शोकमें श्रीहर्षने सायुज्य सुक्तिका विषय व्यक्त किया है।

“सायुज्यमृच्छति भवस्य भवाविषयाद  
स्तां पंस्तुरेयं नगरीं नगान्जगुत्रयाः।

मृताभिधानपट्टयतनीमवाप्य

भोभोद्धवे भवति भावनिवारित धातुः ॥”

(निषध ११/११०)

इस प्रकार सालोक्य, सामीप्य शीर साटि सुक्तिका विषय विभिन्न यन्त्रोंमें वर्णित है।

निर्वाणसुक्तिका विषय विष्णुपुराणमें इस प्रकार लिखा है—

एक दिन मायामोहावतार बुद्ध नामक यक्ष पहने, पालिमें सुरमा नामक भस्त्रांके निकट गए शीर मधुर स्वरसे कहने लगे—हे भस्त्ररक्षण! यदि निर्वाण, सुक्ति या स्वर्गको तुम लोग कामना करते हो, तो पशु-हिसां वादि कोई दुष्कर्म न करो, क्योंकि इसमें कोई फल नहीं निकलता है। इस संसारको विद्यागमय

समझो। पण्डितोंमें भी कहा है, कि यह जगत् पनाधार है, भवसङ्घटमें रवदा परिभ्रमण करता है शीर राग पादि दोषोंसे दूषित है।

निर्वाण शब्दका व्यवहार चाहै किसी समयमें कों न पारश्व हो यह शब्द सुक्ति प्रथम ही बौद्धदर्शनमें कई जगह व्यवहृत हुआ है शीर वस्तुतः निर्वाण बौद्धोंका सुक्तिव्यञ्जक पारिभाषिक शब्द है। सुक्ति कहनेसे बौद्ध लोग जो समझते हैं, यह निर्वाण शब्दमें ही प्रकटरूपमें जाना जा सकता है। जिस तरह इंधनके पभाभमें धमि निर्वाण हो जाते है उसी तरह काम, लोभ, मोह, संस्कार इत्यादिके सम्भूलनसे सत्ता या धर्मित्वका विलोप होता है। सत्ताका निरोध ही निर्वाण है। उदीच्य बौद्ध यन्त्रोंमें निर्वाण शब्दका लक्षण विगटरूपमें वर्णित है। नीचे कुछ यर्थोंका मत उद्धृत हुआ है—

१। पञ्चवोपने बुद्धचरितकाव्यमें लिखा है—

“बुद्धान्यना जयापयो यस्तुभयविभोहिताः।

निर्वाणे स्वान्नीवाहस्त पुन रंमनिरस्ते ॥”

( बुद्धचरित )

निर्वाण पुनर्जन्मका निवर्णन है। संस्कारसमूहका क्षय नहीं होनेसे जन्मान्तरका उच्छेद नहीं होता। सुतरां संस्कारसमूहके क्षयका नाम निर्वाण है।

२। भाय नागार्जुनने माध्यमिकसूत्रमें लिखा है—

“निर्वाणशाले बोच्छेदः प्रसंगाद्भवसत्ततेः ॥”

( माध्यमिकसूत्र )

भवसन्ततिके उच्छेदका नाम निर्वाण है। भव शब्दका साधारण अर्थ संसार है प्रशोक इसका प्रकृत अर्थ है कायिक, वाचिक शीर मानसिक कर्मजनित संस्कार। क्षय नाम जिस प्रकार अपने यत्नमें जान प्रसृत कर उसमें स्वयं प्रावृद्ध हो जाता है, हम लोग भी उसी प्रकार पूर्व संस्कारके यशसे अपने संसारकी सृष्टि कर उसमें नामा प्रकारके सम्यग्दर्शने प्रावृद्ध हो गए हैं। संस्कारके क्षय द्वारा संसारका उच्छेद साधन ही निर्वाण है।

३। रत्नसूत्रमें बुद्धोक्ति इस प्रकार है—

“पाण्डेयमोक्षधत्त परिनिर्वाण ॥” ( रत्नसूत्र )

राग, द्वेष शीर मोहके क्षयका नाम निर्वाण है। धमि



“अनन्तरस्य धर्मस्य श्रुतिः सा दैवना च सा ।

श्रुतेः धर्मं तत्रापि समारोपादनस्य ॥”

जो पदार्थ किसी अक्षर द्वारा प्रकाश नहीं किया जाता, उस दुर्ज्ञेय पदार्थ के सम्बन्धमें क्या विवरण दिया जा सकता है? अक्षर क, ख, ग इत्यादि अक्षर द्वारा प्रकाश नहीं किया जाता। इतना भी जो विवरण दिया गया वह भी धारमार्थिक पदार्थों में मिथ्या अक्षर-का आरोप करके।

यह शून्यता पदार्थ अत्यन्त दुर्बोध है। यह न तो भावपदार्थ है और न अभावपदार्थ। शून्यता नामक ऐसी कोई वस्तु हो नहीं जिसे हम लोग निर्वाणके समय प्राप्त कर सकते हैं। इस संसार वा अपनापनका ध्वंस वा अभाव भी शून्यता नहीं है। यदि शून्यता नामक कोई द्रव्य वा भाव पदार्थ रहता, तो अवश्य हो ध्वंसशील होता। सुतरां उस शून्यताके अविगममें निर्य निर्वाणका लाभ नहीं हो सकता था। संसार चंचल या अस्थिरके अभावको ही किस प्रकार शून्यता कह सकते? संसार और मैं दोनों ही मिथ्या पदार्थ हैं; क्योंकि इनका पारमार्थिक अस्तित्व कभी भी न था। अतः गिरिशून्य पदार्थकी गिरिपीढ़ाको तरह इनका अभाव किस प्रकार होगा? रत्नावलीपत्रमें लिखा है,—

“न चाभावोऽपि निर्वाणं कृत एवाहं भावना ।

मावाभावरामरामशो निर्वाणुष्यते ॥” ( रत्नावली )

निर्वाण (शून्यता) जब अभावपदार्थ नहीं है, तब इसे किस प्रकार भावपदार्थ कह सकते? भाव और अभावज्ञान-का अन्व ही निर्वाण नामसे प्रसिद्ध है। भाव और अभाव पदार्थ परस्पर सापेक्ष है, किन्तु जिस पदार्थके अविगममें निर्वाण लाभ होता है वह किसीका भी आरोप नहीं है। सुतरां निर्वाण वा शून्यता भावपदार्थ भी नहीं है और न अभावपदार्थ हो है। यह निर्वाण वा शून्यता अनिर्वचनीय पदार्थ है। जिन्होंने निर्वाण लाभ किया है वे भाव और अभावपदार्थके अस्तित्व तथा नास्तित्व-से पतित हो चुके हैं। उनकी अवस्थाका किसी प्रकार भी वर्णन नहीं किया जा सकता।

इसे शून्यता या निर्वाणके सम्बन्धमें नीचे कुछ मत्त उद्धृत किये गए हैं।

१। हिन्दू-नास्तिक माधवाचार्यने बौद्धदर्शन-के मतकी समालोचना करते हुए कहा है कि अस्ति, नास्ति, उभय और अनुभय ये चतुष्कोटि विनिर्मुक्त पदार्थ ही शून्यता है।

२। समाधिराजसूत्रमें लिखा है कि अस्ति और नास्ति दोनों ही मिथ्या है; श्रुति और अश्रुति वे भी कल्पित हैं। सुतरां पण्डित लोग उभय अस्तिका त्याग का मध्यमें भी नहीं रहते। वे निर्वाणलाभ कर अस्ति और नास्तिके अतीत तथा असाक्षीन हो जाते हैं।

३। नागार्जुनने कहा है, कि अल्प बुद्धिके लोग अस्तित्व और नास्तित्वका अनुभव करते हैं। किन्तु और मनुष्य अस्तित्व और नास्तित्वके उपगमरूप अर्थ-को उपलब्ध करते हैं। शून्यता पदार्थ “हे” ऐसा नहीं कह सकते और “नहीं है” ऐसा भी नहीं कह सकते।

४। रत्नावलीपत्रमें इस विषयमें इस प्रकार लिखा है,—जो “नहीं” अर्थात् संसार और मेरे ध्वंसरूप अभावपदार्थकी ही शून्यता मानते हैं वे दुर्गतिको प्राप्त होते हैं और जो नहीं मानते वे भाव और अभावके पतित शून्यताको लाभ कर सुगति और मुक्ति पाते हैं।

५। सलितविस्तारपत्रमें यों लिखा है,—एव संसारमें कोई पदार्थ “है” ऐसा नहीं कह सकते और “नहीं है” ऐसा भी नहीं कह सकते। जो कार्य-कारणकी परस्परसे अलग हैं वे अस्ति और नास्तिये पतित हो कर निर्वाण लाभ करते हैं।

६। रत्नाकरपत्रमें लिखा है,—यह विश्व महा-शून्य है। जिस प्रकार अक्षरोत्तमं शकुनका पट विद्यमान नहीं रह सकता, उसी प्रकार इस महाशून्यमें भी कोई पदार्थ विद्यमान नहीं है। पदार्थोंमेंसे किनोको भी अभाव वा अन्य निरपेक्ष सत्ता नहीं है, सुतरां वे किन प्रकार दूसरे पदार्थोंके अन्य वा जनक हो सकते?

७। रत्नत्रयपत्रमें लिखा है, कि पदार्थमसूत्रके भाट्टि और अन्तमें शून्यत्वभाव है। इनका कोई आधार वा स्थिति नहीं है। ये सब अक्षर और मायाभाव हैं। यह अश्रुत सभी आकाशके सहग निर्दोष हैं।

८। अन्वतम उदात्तमक्रमपत्रमें लिखा है,—जो पदार्थ अन्य पदार्थोंके सम्बन्धमें उपपन्न हुआ है,





है। यदि जरा, व्याधि वा मृत्यु नहीं रहती, तो भी रूपादि पञ्चस्तय धारण करनेमें जीवोंकी अत्यन्त दुःख भेदना पड़ता है। जरा, व्याधि और मृत्युके साथ चिरा-शुद्ध लौकिक दुःखको बात और क्या कही जाय।

इस दुःखसमुच्चयके चरमधर्मके लिये बुद्धदेवने प्रारम्भमें चतुरार्यसत्यका उपदेश दिया है।

“जित्वा हि आर्यशतानि। यथा दुःखं समुदयो, निरोधो, मार्गश्चेति।” (धर्मसंग्रह) :

दुःख, दुःखका उदय वा उत्पत्ति, दुःखका निरोध वा निवृत्ति और दुःखनिरोधका उपाय वा मार्ग ये चट मार्ग हैं।

जब समके सब रात दिन दुःखभोग करती हैं, तब दुःख पदार्थ क्या है, यह समझानेकी कोई जरूरत नहीं। दुःखकी उत्पत्ति और निरोधका क्रम, ललित विस्तर, माध्यमिकसुख इत्यादि समस्त ग्रन्थोंमें विवक्षितरूपसे वर्णित है। अथर्ववेदके बुद्धचरितसे दुःखकी उत्पत्ति और निवृत्तिका क्रम नीचे उद्धृत हुआ है,—

विविध प्रकारके दुःख और संसारविषयवस्तुकी लड़-भविद्या है। भविद्यासे कायिक, वाचिक और मान-सिक संस्कारोंकी उत्पत्ति होती है। संस्कारसे विज्ञान, विज्ञानसे नामरूप, नामरूपसे पड़ावतन, पड़ावतनसे स्वप्न, स्वप्नसे वेदना, वेदनासे लक्षणा, लक्षणसे उपादन, उपादनसे भव, भवसे जाति और जातिसे जरा, मरण तथा शोक उत्पन्न होता है। भविद्याके निरोध द्वारा क्रमशः इस संसृदायका निरोध होता है। भविद्यादि दादय पदार्थको प्रतीत्यसमुत्पाद कहते हैं।

उदीच्य बोधोने संसारका जो चित्र अङ्कित किया है उसकी प्रतिज्ञति एक चक्र है। इस चक्रके किन्तुमें कपोत-रूपी राग, सर्प-रूपी द्वेष और शूकररूपी मोह विद्यमान है। इस राग, द्वेष और मोह द्वारा जो संसारचक्र घूमता रहता है। संसारचक्रके नेमिदेयमें प्रतीत्यसमु-त्पादकी दादय मूर्तिर्या अङ्कित हैं। प्रथम धरमें एक चक्रकी लड़-भविद्यासे मानसे बँठी हुई है। दूसरे चक्रकी लड़-भविद्यासे मानसे बँठी हुई है। तीसरे चक्रकी लड़-भविद्यासे मानसे बँठी हुई है। चतुर्थे चक्रकी लड़-भविद्यासे मानसे बँठी हुई है।

पाँचवें धरमें एक चक्रको प्रतिज्ञति पद्धति है। छठे धरमें एक पुण्य और एक श्रेणी बँठी हुई है। सातवें धरमें एक तीर एक मनुष्यके चक्षुमें प्रथम कर रहा है। आठवें धरमें एक मनुष्य ग्रास पी रहा है। नवें धरमें एक वृद्धा उण्डा टुक कर खड़ी है। दशवें धरमें पालिशूनवह दम्पति है। ग्यारहवें धरमें एक स्त्री सन्तान प्रमथ कर रही है। बारहवें धरमें एक मनुष्य मुट्टीकी कंधे पर से कर प्रशगानकी और दोड़ रहा है। इस प्रतीत्यसमुत्पादचक्रके चारों धर नरक, तिर्यक, प्रेत, असुर, मनुष्य और देवलोककी प्रतिज्ञति है। इन सब लोकोंके मध्य मनुष्यलोक ही अष्ट है। क्योंकि बुद्धत्व या निर्वाण केवल मनुष्यलोकमें ही सम्भव है। अन्यत्र लोकोंमें सुख दुःखादिका भोगमात्र हुआ करता है। इस पदार्थकोके चारों तन्म सुखकी प्रतिमूर्ति है। उद्योने राग, द्वेष, मोह और भविद्यादिकी जोत सिद्धा है। उद्ये नरकादिमें पुनः जन्म नहीं लेना पड़ता। उद्येने भयचक्रको पार कर निर्वाणनाम किया है।

अब यह देखा गया, कि भविद्यादिकी निवृत्ति द्वारा दुःखको निवृत्ति और निर्वाणनाम हुआ करता है। यह कौनसा उपाय है जिसका अवलम्बन करनेसे भविद्यादि-का निरोधपादन किया जा सकता है ? बोधग्रन्थमें लिखा है, कि चार्य चटमार्गका अनुगमन ही वह उपाय है। सम्यग्-दृष्टि, सम्यक्-मन्त्रण, सम्यग्-वाक्य, सम्यक्-कर्मोत्त, सम्यग्-जीव, सम्यग्-व्यायाम, सम्यक्-स्मृति और सम्यक्-समाधि इन आठ प्रकारके चार्य-मार्गिक अनुधावन द्वारा भविद्यादि निरोधका सोपान प्राप्त होता है। भविद्याका चरमधर्मस कर सकनेमें ही बुद्धत्व या निर्वाणनाम होता है।

उपरोक्त विषयका संक्षिप्तभाव नीचे लिखा जाता है। पहले प्राणातिपात, पदसादान, काममिष्याचार, नृपावाद, पैशुन्य, पाकथ, मन्धिसप्रनाथ, भमिष्या, व्यापाद और मियाहटि इन दश प्रकारके चक्रुगन कर्म-पर्योका परिहार करना चाहिए।

महावसु ग्रन्थमें लिखा है, कि अठ दश प्रकारके धर चक्रुगन कर्मपर्योका त्याग करनेसे मोम (राग), मोह और द्वेषका नाश होता है। इनके नाश होनेसे चतु-विध धर्मपदका नाम होता है।



है। यदि जरा, व्याधि वा मृत्यु नहीं रहती, तो भी रूपादि पञ्चस्तम्भ धारण करनेमें जीवोंकी अत्यन्त दुःख भेजना पड़ता। जरा, व्याधि और मृत्युके साथ चिरानुबन्ध लोकोक्ति दुःखको बात और क्या कही जाय।

इस दुःखमनुष्यके चारमध्यमके लिये बुद्धदेवने प्रारम्भमें चतुरार्यसत्यका उपदेग दिया है।

“चत्वारि धर्मवृत्तानि। यथा। दुःखं, समुत्थो, निरोधो, मार्गश्चेति।” (धर्मवृत्त)

दुःख, दुःखका उदय वा उत्पत्ति, दुःखका निरोध वा निवृत्ति और दुःखनिरोधका उपाय वा धर्म ये चट मार्ग हैं।

जब सबके सब रात दिन दुःखभोग करते हैं, तब दुःख पदार्थ क्या है, यह समझानेकी कोई जरूरत नहीं। दुःखकी उत्पत्ति और निरोधका क्रम, ललित विप्लव, माध्यमिकसुख इत्यादि समस्त अर्थोंमें विगदरूपसे वर्णित है। अश्वघोषके बुद्धचरितमें दुःखकी उत्पत्ति और निवृत्तिका क्रम नीचे सहज रूपसे,—

विषय प्रकारके दुःख और संसारविषयको जड़ अविद्या है। अविद्यासे कायिक, वाचिक और मानसिक संस्कारोंकी उत्पत्ति होती है। संस्कारसे विज्ञान, विज्ञानसे नामरूप, नामरूपसे पड़ायतन, पड़ायतनसे स्वप्न, स्वप्नसे वेदना, वेदनासे दृष्ट्या, दृष्ट्यासे उपादान, उपादानसे भव, भवसे जाति और जातिसे जरा, मरण तथा शोक उत्पन्न होता है। अविद्याके निरोध द्वारा क्रमशः इन समुदायका निरोध होता है। अविद्यादि द्वादश पदार्थको प्रत्यक्षसमुत्पाद कहते हैं।

उदीच्य बोधोने संसारका जो चित्र चित्रित किया है उसकी प्रतिज्ञति एक चक्र है। इन चक्रके केन्द्रमें कपोत-रूपी राग, सर्प-रूपी द्वेष और शूकररूपी मोह विद्यमान है। इस राग, द्वेष और मोह द्वारा ही संसारचक्र घूमता रहता है। संसारचक्रके केन्द्रमें प्रतीत्यसमुत्पादकी द्वादश मूर्तियाँ चित्रित हैं। प्रथम धरमें एक अश्वोक्ती एक प्रदीपके सामने बैठी हुई है। दूसरे धरमें एक कुम्भकार मगतातर एक चक्रको घुमा रहा है। तीसरे धरमें एक बन्दर पखीर भाषमें सहज शूद रहा है। चौथे धरमें एक नाव पर एक पारोही बैठा हुआ

है। पांचवें धरमें एक गृहको प्रतिज्ञति चित्रित है। षष्ठे धरमें एक पुण्य पौर एक स्त्री बैठी हुई है। सातवें धरमें एक तीर एक मनुष्यके चक्षुमें प्रथय कर रहा है। आठवें धरमें एक मनुष्य गराव पी रहा है। नवें धरमें एक हठा उठठा टेक कर खड़ी है। दशवें धरमें पालिङ्गनवह दम्पति है। ग्यारहवें धरमें एक स्त्री मन्तान प्रमथ कर रही है। बारहवें धरमें एक मनुष्य मुर्देकी कंधे पर ले कर श्मशानकी ओर दौड़ रहा है। इस प्रतीत्य-समुत्पादचक्रके चारों ओर नरक, तिर्यक, प्रेत, असुर, मनुष्य और देवलोककी प्रतिज्ञति है। इन सब लोकोंके मध्य मनुष्यलोक ही अष्ट है। क्योंकि बुद्ध या निर्वाण केवल मनुष्यलोकमें ही सम्भव है। अन्यत्र लोकोंमें सुख दुःखादिका भोगमात्र हुआ करता है। इस पदलोकके चारों तरफ बुद्धोंकी प्रतिमूर्ति है। उन्होंने राग, द्वेष, मोह और अविद्याकी जड़ मिया है। उन्हें नरकादिमें पुनः जन्म नहीं लेना पड़ता। उन्होंने भवचक्रको पार कर निर्वाणनाम किया है।

अब यह देखा गया, कि अविद्याकी निवृत्ति द्वारा दुःखको निवृत्ति और निर्वाणनाम हुआ करता है। यह कौनसा उपाय है जिसका अत्यन्त करनेसे अविद्याका निरोधनाशन किया जा सकता है ? बोधयन्त्रमें लिखा है, कि धर्म चटमार्गका अनुगमन ही वह उपाय है। सम्यग्-दृष्टि, सम्यक्-संकल्प, सम्यग्-वाक्य, सम्यक्-कर्माल, सम्यगाजीव, सम्यग्-व्यायाम, सम्यक्-स्मृति और सम्यक्-समाधि इन आठ प्रकारके धर्म-मार्गके अनुधावन द्वारा अविद्यादि निरोधका मोषण प्राप्त होता है। अविद्याका चरमधर्मस कर सकनेमें ही बुद्ध या निर्वाणनाम होता है।

उपरोक्त विषयका संक्षिप्तभाव नीचे निम्न ज्ञाता है। पहले प्राणतिपात, भदत्तादान, काममिथ्याचार, मृदावाद, पशुम्य, पारुष्य, सन्निवृत्तता, अविद्या, व्यापाद और मिथ्यादृष्टि इन दश प्रकारके अज्ञान कर्म-पर्याका परिहार करना चाहिए।

महावसु पर्यमें निम्न है, कि जल दश प्रकारके और अनुगमन कर्मपर्याका त्याग करनेसे लोम ( राग ), मोह और द्वेषका नाश होता है। उनके नाश होनेसे चतुर्विध धर्मपदका नाम होता है।

उपरोक्त उदाहरण ही नहीं हुई है, ऐसा जानना चाहिए। हम पदार्थों के नाम व वाच्योपपत्ति जानते हैं। जिसे पदार्थ निर्दिष्ट करता नहीं है, उसे मूल्य कह सकते हैं और जिसमें मूल्यता उपलब्ध की है, वह हमें भी संसार में मूल्य नहीं रह सकता।

८। बुद्धिजन सब इस मूल्यताका विषय की वार्ता दिया है, वह इस प्रकार है—

'निर्वाण' एक प्रकार पदार्थ मूल्य द्वारा प्रकाशित होता है, किन्तु कोई भी निर्वाण नाम नहीं कर सकता। 'दन्तिरान' एक भी एक मूल्य है और इसे भी कोई नाम नहीं कर सकता। मूल्य पदार्थों को भी निर्वाण कहते हैं और प्रत्येक निर्वाण भी निर्वाण कह सकते हैं। निर्वाण ही पदार्थोंका जैसा ही मूल्य नहीं म कहें। हमें यह जोड़ना चाहिए दाइय मूल्य नहीं हो सकता। क्योंकि जोड़की प्रकृत मत्ता नहीं है।

धन: हममें निर्वाण 'जान' दिया, ऐसा जिस प्रकार कह सकते हैं। निर्वाण कोई भावपदार्थ नहीं है, धन: उनकी प्राप्ति भी सम्भव है। संसार और नै दोनों ही मित्या पदार्थ है और इन दोनोंही मित्या प्रतीति द्वारा उपलब्ध उपलभ रूप नहीं, लेकिन परमात्मता ही वा नहीं रहा। वहीं परामार्थिक पदार्थ निर्वाण है। यदि निर्वाणमभकी प्रणामी संसोधन ही जानी है—

यह संसार दुःखमय है। इतनाम करके जरा-भीअपविष्ट-पुत्रा-शोभनम्य दृष्टादि द्वारा जीव रात दिन सक्रम रहता है। साधुमें भी इस मत्ताकी विर-क्ति-प्रति नहीं होती, क्योंकि साधु में बट ही पुनर्जा-नाम होता है। अब तक हमें वा मूल्य ही उप नहीं हो जाता, तब तक सामान्यपदार्थ पदार्थमत्तामें होता रहता है। बुद्धि जन है—

"म इत्यपि न कर्तुं शक्यते" (गीता १८.१०)

जान ही मूल्य कहें व वाच्योपपत्ति उपलब्ध है।

इसकीटिकत्वमें भी हमें का उप नहीं होता। ज्ञान और ज्ञानके प्राप्त होनेमें ही जीवोंकी सम्पूर्ण मित्या है।

हमें उपलब्धता ही मूल्य, निर्वाण, ज्ञान, उपल,

मनुष्य और देव इन का भी ज्ञानें जगत् में हर का प्रकाश की गतिही जाता है। इन सब भी ज्ञानें जगत् में हर भी हमी पश्यत, हमी ज्ञेयत, हमी ज्ञातुत और हमी उपलब्धता ही ज्ञान होता है।

जिस प्रकार कुम्भकारका एक वस्तुनिर्दिष्ट मूल्य प्रभावने मत्तातर वृत्ता रहता है, जोव भी उसी प्रकार अपने अपने काममें अपने इस संसारवस्तुमें ज्ञातपर परि-भ्रमण करता है। जिस जिस प्रकार जिनो वांछनी मोर्तमें कुछ मोर्तकी जान कर मोर्तका मुँह मूल्य हर जेनेमें कोई मोर्ता ज्ञानमें, कोई मोर्ते और कोई मावों वृत्ता रहता है, एक भी उपमे निरुद्धने नहीं पाता, उसी प्रकार जोवमत्ता अपने काममें अपने इस संसारवस्तुमें मध्य कामों मूल्य, कामों निर्वाण, कामों मनुष्य यदि मोर्तमें जगत्प्रणय करते हैं, कोई भी उपमे वृत्ता नहीं पाता।

'एवं कल्पित्वा अक्षय्याः कश्चिद्वा न च पारतादति न शक्याः।' (कठिउपनिषत्)

संसारके सब पदार्थ पत्तित, चक्षान, पश्यत, पत्तामत्ता और कल्पित है।

संसाररूप महाविद्यालयकारणमें प्रसिद्ध पञ्चान-पटमतिमिराउत्पत्तयत्त प्रकाशवर्षि रचित मोर्तकी धर्मोत्तीक मदान और सर्वदुःखमें प्रमोषणके लिए मगवान् बुद्धने निर्वाण-मार्गका उपदेश दिया है। उन्होंने कहा है—

'विष्णु वीर्येण यत्त्वा समन्वृतेन  
 क्षायेरविष्णु विविष्यादि परारयेन।  
 विष्णु वीर्येण पुराणे न विविष्यतेन  
 विष्णु वीर्येण पुराणतः इतिः प्रवेणः ४  
 इति मय न मयेव नैव विविष्यते वृष्णु  
 मत्तानि न मादुर्गरे पंचरत्नयं वरायो।

जिसे ज्ञान ही मूल्य कहें व वाच्योपपत्ति उपलब्ध है।

है; यदि जरा, व्याधि वा मृत्यु नहीं रहती, तो भी रूपदि पञ्चस्कन्ध धारण करनेमें जीवोंकी अत्यन्त दुःख भिन्नता पड़ता है। जरा, व्याधि और मृत्युके साथ चिरा-  
मृत्युके लोकोके दुःखको बात और क्या कही जाय।

इस दुःखसमूहके चरमभ्रमके लिये बुद्धदेवने प्रारम्भ-  
में चतुरार्यसत्यका उपदेश दिया है।

"चत्वारि आर्यसत्यानि । यथा । दुःखं, समुदयो, जितोयो,  
मार्गद्वेषि ।" ( धर्मसंग्रह )

दुःख, दुःखका उदय वा उत्पत्ति, दुःखका निरोध  
वा निवृत्ति और दुःखनिरोधका उपाय वा मार्ग ये चत-  
सुमार्ग हैं।

जब समझे सब रात दिन दुःखभोग करते हैं, तब  
दुःख पदार्थ क्या है, यह समझानेकी कोई जरूरत नहीं।  
दुःखकी उत्पत्ति और निरोधका क्रम, ललित विष्णु,  
भाष्यमिकसुव इत्यादि समस्त ग्रन्थोंमें विवक्षित  
है। अथर्ववेदके बुद्धचरितसे दुःखकी उत्पत्ति और  
निवृत्तिका क्रम नीचे उद्धृत हुआ है,—

विविध प्रकारके दुःख और संसारविपदसुखकी जड़  
अविद्या है। अविद्यासे कायिक, वाचिक और मान-  
सिक संस्कारोंकी उत्पत्ति होती है। संस्कारसे विज्ञान,  
विज्ञानसे नामरूप, नामरूपसे पड़ायतन, पड़ायतनसे  
संयोग; संयोगसे वेदना, वेदनासे लक्षणा, लक्षणासे उपादान,  
उपादानसे भव, भवसे जाति और जातिसे जरा, मरण  
मया शोक उत्पन्न होता है। अविद्याके निरोध द्वारा  
क्रमशः इस संसृष्ट्युत्पत्ति का निरोध होता है। अविद्यादि  
हादय पदार्थकी प्रत्यक्षमृत्युवाद कहते हैं।

उदीच्य बोद्धोने संसारका जो चित्र चिह्नित किया है  
उसकी प्रतिज्ञति एक चक्र है। इस चक्रके केन्द्रमें कपोत-  
रूपी राग, सर्परूपी द्वेष और शूकररूपी मोह विद्यमान  
है। इस राग, द्वेष और मोह द्वारा जो संसारचक्र  
धूमता रहता है। संसारचक्रके केन्द्रमें प्रतीत्यसमु-  
त्पादकी हादय मूर्तियाँ चिह्नित हैं। प्रथम धर्ममें एक  
अश्वो ज्यो एक प्रदीपके सामने बैठी हुई है। दूसरे  
धर्ममें एक कुम्भकार लगातार एक चक्रको घुमा रहा है।  
तीसरे धर्ममें एक वस्त्र पहिरा आश्वसे चक्रके अक्षर रहा  
है। चौथे धर्ममें एक नाव पर एक पारोही बैठा हुआ

है। पाँचवें धर्ममें एक गृहको प्रतिज्ञति चिह्नित है।  
छठे धर्ममें एक पुरुष और एक स्त्री बैठी हुई है।  
सातवें धर्ममें एक तीर एक मनुष्यके चतुर्भुज प्रयोग कर  
रहा है। आठवें धर्ममें एक मनुष्य गणेश की रक्षा है।  
नवें धर्ममें एक हाहा उल्टा टोक कर खड़ी है। दशवें  
धर्ममें पालिशूनवह दम्पति है। ग्यारहवें धर्ममें एक स्त्री  
मन्तान प्रमथ कर रही है। बारहवें धर्ममें एक मनुष्य  
मूर्तकी कंधे पर से कर श्मशानकी ओर दौड़ रहा है।  
इस प्रतीत्य-समुत्पादचक्रके चारों ओर नरक, तिर्यक,  
प्रेत, असुर, मनुष्य और देवलोककी प्रतिज्ञति है। इन  
सब लोकोंके मध्य मनुष्यलोक ही अष्ट है। क्योंकि  
बुद्धत्व या निर्वाण केवल मनुष्यलोकमें ही सम्भव है।  
अन्यान्य लोकोंमें सुख दुःखादिका भोगमात्र हुआ करता  
है। इस पदार्थलोकके चारों तरफ बुद्धोंकी प्रतिमूर्ति  
है। उन्हींने राग, द्वेष, मोह और अविद्यादिको मोत  
लिया है। उन्हींने नरकादिमें पुनः जन्म नहीं लेना पड़ता।  
उन्हींने भवचक्रको धार कर निर्वाणलाभ किया है।

अब यह देखा गया, कि अविद्यादिकी निवृत्ति द्वारा  
दुःखको निवृत्ति और निर्वाणलाभ हुआ करता है। यह  
कोनसा उपाय है जिसका अवलम्बन करनेसे अविद्यादि-  
का निरोधनाशन किया जा सकता है? बौद्धधर्ममें  
लिखा है, कि मार्ग चतसुमार्गका अनुगमन ही यह  
उपाय है। सम्यग्-दृष्टि, सम्यक्-मनस्कत्व, सम्यग्-वाक्य,  
सम्यक्-कर्मन्त, सम्यग्-आजीव, सम्यग्-व्यायाम, सम्यक्-  
व्यसति और सम्यक्-समाधि इन आठ प्रकारके मार्ग-  
मार्गिक अनुधावन द्वारा अविद्यादि निरोधका उपान  
प्राप्त होता है। अविद्याका चरमभ्रम कर सकनेमें ही  
बुद्धत्व या निर्वाणलाभ होता है।

उपरोक्त विषयका संक्षिप्तभाव नीचे लिखा जाता  
है। पहले प्राप्तिपात, अदत्तादान, काममिप्याचार,  
मृदावाद, पशुम्य, पारुष्य, सम्भ्रमप्रमाय, अभिप्या,  
व्यापाद और मिप्यादृष्टि इन दस प्रकारके अकुशल कर्म-  
पर्योक्त परिहार करना चाहिए।

महावसु धर्ममें लिखा है, कि एक दस प्रकारके  
और अकुशल कर्मपर्योक्त त्याग करनेमें लोभ ( राग ),  
मोह और द्वेषका नाम होता है। इनके नाश होनेमें चतु-  
र्विध धर्मपदका लाभ होता है।

"कारि धर्मदत्ते । भक्तिः सर्वैकराः । दुःखाः सर्वैकराः । निरामयः सर्वैकराः । एतन् निर्वाणं वेत्ति ।" (पर्वहर्ष)

सभी पदार्थ अनित्य और दुःखदायक हैं । किसी भी समाज या व्यवस्थित-सत्ता नहीं है, शांति ही निर्वाण है । इस प्रकार अनुनिर्घ्न भावना ही धर्मके चार पद हैं ।

इस अनुनिर्घ्न धर्मपदका अनुमीनन करनेसे पार्याप्त-भावमें प्रथम लाभ होता है । सम्यक् दृष्टिसे कर सम्यक् समाधि पदका पाठ पार्याप्तार्थिके अनुसरण द्वारा पवित्रादि विगोपका हार प्राप्त होता है । तदनन्तर दान-वारिगत, मोक्षवारिगता, चान्तिवारिगता, बोधवारिगता, ध्यानवारिगता और प्रज्ञावारिगता ये छः प्रकारकी पारि-गता और प्रतीत्यसमुत्पादका सम्यग्ज्ञान लाभ होता है । दश प्रतीत्यसमुत्पादका ज्ञान उत्पन्न होनेसे पार्याप्त दुःखक उत्पत्ति और निरोधका क्रम समझ करनेसे पवित्रादि का विनय होना शक्य होता है । पवित्रादिके विनाश होनेसे बुद्धत्व का निर्वाणलाभ होता है । इस समय जन्म, जरा, व्याधि, मृत्यु और दुःख इत्यादिका चिर-सञ्चय ही जाता है । निर्वाण प्राप्तके बाद फिर भयघ्नमें मोटना नहीं पड़ता, उस समय उपनाशन और संसाररूप चरित् चिर-कालके लिए सुप्त जाती है ।

यद्यप्य यह ठहरेगा है, कि यदि संसार और भी दोषों को मिला है और मृत्युका ही रूप विग्रह प्रकृत समाप्त है, तो बिना प्रहार में, तुम, घट, पट इत्यादिका व्यवहार निषेध होता है । अथविषय, समस्तसुख, अस्मानुत्त इत्यादि द्वारा कोई कार्य सम्यक् नहीं की सकता, किन्तु "संसार" और "मैं" द्वारा ऐनिक कार्य ही रहें हैं, अनुमीन भी बराबर चल रहा है । इस प्रकार सारा यही है कि बोधने अस्वच्छ की उपनारणा की है आत्मानुत्त निश्चिन्तित सुखमें उस सत्त्वद्वयका उत्पन्न किया है,—

पदेवमे अनुचितसुखं पुनानी धर्मैरदना ।

मेरुपुत्रिणस्य कश्चिद्विषयस्य ।

(सांख्यिकव्युत्पत्ति)

बोधाधी धर्मद्वयका सांख्यिक (व्यवहार) और

पारमार्थिक इन दो प्रकारके सत्त्वोंका प्रायश मे वर प्रकृतित होती है । नागार्जुनने और भी कहा है,—

"स्वधारमनाश्रित परमार्थो देश्यते ।

परमार्थमनाश्रित निर्वाणं नाधिगच्छते ॥"

(सांख्यिकव्युत्पत्ति)

व्यवहारिक वश्यके प्रायश विना परमार्थमताका उपदेश नहीं दिया जा सकता और परमार्थमार्थकी उपलब्धिके विना निर्वाणलाभ नहीं होता ।

सत्त्वद्वयव्यवहारसुख, महाकृतारसुख, माध्यमिकसुख, इत्यादि प्रत्याभिचारिक और पारमार्थिक सम्बन्धोंके विग्रह व्याख्या दी गई है । यहाँ पर इतना कहना ही पर्याप्त होगा, कि सांख्यिक (व्यवहारिक) सत्य द्वारा विचार करनेसे संसार और भी ये दोनों मिया नहीं हैं । किन्तु पारमार्थिक सत्य द्वारा विचार करनेसे यह संसार घनाधार, कल्पित और मिया प्रतीत होगा । जब परमार्थ सत्यका सम्यग्ज्ञान हो जायगा, तब संसार और भी दोनों को मिया ही जायगी और तभी निर्वाणलाभ होगा ।

यह स्पष्ट देखा जाता है, कि निर्वाण कोई वस्तु नहीं है । संसार और भी ये ही दो मिया वस्तु हैं । मिया भावित ही ज्ञान पर भी प्रकृत जो या वही रहेंगा । वही प्रकृत व्यवस्था ही निर्वाण है । इस कारण निर्वाण और मृत्युता ये दोनों सम-रूप पदार्थ माने गये हैं । अन्तर्कोर्तिने कहा है,—

विश्वपदार्थका उत्पाद, स्थिति और विनाश है वही संस्कृत पदार्थ है निर्वाण वा मृत्युताका उत्पाद स्थिति वा चय नहीं है । इतना यह सम-रूप पदार्थ है । यहाँ तक निर्वाणलाभ, मृत्युताप्राप्ति इत्यादि व्यवस्थित निर्वाण और मृत्युताके नाम और प्राप्तिको कहा नहीं गये है, किन्तु यदि मय पूजा जाय, तो उसका नाम और प्राप्ति नहीं हो सकती । संसार और भी इन दोनों मिया पदार्थके मिया ही ज्ञान पर परमार्थतः जो पक्षसे चा, पीछे भी वही रहा । वही पारमार्थिक प्रकृत व्यवस्था निर्वाण है । उस प्रकृत व्यवस्थाका भवनात्तु बुधने प्रायः सम-रूपसुखमें निश्चिन्तित भावने वर्णन किया है—

भाव ही न सुखो न मत्ता न जीवो न पुत्रो न

पुद्गलौ विं तथा इमे सर्वधर्माः । असन्त इमे सब धर्माः ।  
 विटपिता इमे सर्वधर्माः । मायोपमा इमे सर्व-  
 धर्माः । स्वप्नोपमा इमे सर्वधर्माः । निर्मितोपमा इमे  
 सर्वधर्माः । उटकचन्द्रोपमा इमे सर्वधर्मा इति विम्वरः ।  
 ते इमां तथागतस्य धर्मदेगनां श्रुत्वा विगत्य रागान्  
 सब धर्मान् पश्यन्ति विगतमोहान् सर्वधर्मान् पश्यन्ति  
 पञ्चभाषान् पनावरणान् । ते आज्ञाशस्थितेन चेतसा  
 कालं क्लृप्सन्ति ते कालगताः समानाः निर्दुषधिगोपे  
 निर्वाणधातो परिनिर्वाणन्ति ।"

बुद्धने और भी कहा है,—

“शून्यभाषाविम्वरं पश्य पश्य शून्यं वहिर्गतम् ।

न विद्यते सोऽपि कश्चिद् यो मावयति शून्यताम् ।”

निर्वाणके विषयमें दाखिणास्य नोदपय्योहा मत  
 सदीच्यमतसे पृथक् नहीं है ।

विसुद्धिमग्न ग्रन्थमें लिखा है,—

“सोषानिकद्वमिति नेह पुणावहरता ।

निश्चाननिग्रहद्वेग निषेवितश्वन्ति ॥” ( विसुद्धिमग्न )

“यस्मिं क्षानत्र प्रज्जु छ सधे निश्चानवन्तिके ।”

( विसुद्धिमग्न )

निर्वाणमें निषिष्टहृदय व्यक्तिकी निरन्तर प्रमगानाङ्ग-  
 का सेवन करना उचित है । प्रमगान बहुगुणोंका  
 आधार है । इस प्रमगानके सेवन द्वारा साधक समझ  
 सकेगी, कि जीव और संसार मिथ्या है । जिन्होंने ध्यान  
 और प्रज्ञाका लाभ किया है, वे ही निर्वाणके पास पहुँच  
 चुके हैं । अद्विगत संसारके अनित्यत्वचिन्तन द्वारा  
 परमार्थ ज्ञानलाभ होता है और तदनन्तर संसार तथा  
 मैं ये दोनों मिथ्या साबित होते हैं । यहो निर्वाण है ।

धर्मपदग्रन्थमें लिखा है, क्षान्ति ही परम तप है,  
 तितिष्ठा ही परम निर्वाण है । क्षीमके समान धर्मि, हृदयके  
 समान पाप नहीं । स्वस्थके समान दुःख, मानसिक समान  
 सुख और सुघाके समान रोग नहीं है । संस्कारसमूह  
 ही परम दुःख है । इन सबका ज्ञान ही ज्ञानसे जीव  
 परमसुखके आधार स्वरूप निर्वाणको लाभ करता है । इन्द्र  
 द्वारा शारदकुसुमे जिस प्रकार छिन्न हो जाता है, उसी  
 प्रकार बुद्धसे आत्मामिमागकी छेदन करो । ऐसा करदेंगे  
 संगतप्रदर्शित निर्वाणरूप मान्तिमाग लाभ कर सकोगे ।

हैं भिक्षु ! इस दिक्कत नौ ठाको छिन्न डालो, हलकी ही  
 लयगो । राग, हृदय इत्यादिकी छिन्न डालनेसे पर्याप्त  
 इनका त्याग करनेसे निर्वाणनाम होगा ।

इन सब वाक्योंमें प्रतीत होता है, कि निर्वाणनाम  
 करना दाखिणातर मोहोंका भी चरम उद्देश्य है । इन  
 निर्वाण प्राणिके लिये उच्छान्ति में प्राणातिपातादि दग्धविध  
 भक्त्युत्तम कम पयके परिहार और चतुरार्यसत्यके अनु-  
 सरणका उपदेश दिया है ।

धर्मपदके मूलवर्गमें लिखा है—

जो मनुष्य प्राणातिपात, स्यायाद, अदत्तादान, पर  
 दारगमन, सुरावान इत्यादि कार्योंका अनुष्ठान करते हैं,  
 वे इन्हीं लोकमें आत्मोन्नतिका मूल विगट कर डालते हैं ।

धर्मपदके बुद्धवर्गमें लिखा है,—

दुःख, दुःखकी उत्पत्ति, दुःखका अर्थ और दुःख-  
 निरोधोपायक अष्टविध आर्यमार्ग, यह चतुरार्य मूल  
 ही अयस्कर और उत्तम शरण है । इन्हींकी शरणमें  
 सब प्रकारके दुःख जाते रहते हैं ।

परमत्यजोत्तिकाग्रन्थमें लिखा है,—“एत्य पन सोता-  
 पत्तिमग्नं भवेत्वा दिट्ठि-विचिक्खिच्छा पघामेन पघीणापाय-  
 गमनो सत्तखत्तुपरमो घोतापघो नाम होति । सल्लादा-  
 गामि मग्नं भावत्वा रागदोपमोहानं तनुकरत्ता सल्ला-  
 दागामि नाम होति । सक्किदिय इमं कोकं पनागत्त्वा  
 इत्य सत् परहत्तं भावेत्वा पनववेसक्कित्तेसपघामेन परहत्ता  
 नाम होति खीणासघो ।” ( परमत्यजोत्तिका )

चतुरार्यसत्यके अनुष्ठानमें व्यक्तित्व टट्टि विषय-चिन्तना  
 प्रहाय द्वारा स्त्रोत पापत्र, राग, हृदय और मोहके सब द्वारा  
 सल्लादागामी केवल एक बार संसारमें प्रत्यावर्त्तनपूर्वक  
 पनागामी और अन्तमें सर्वपलेशके प्रहाय द्वारा खीणासव  
 हो कर अहंत्पद लाभ करते हैं । जिन्होंने दग्धविध  
 भक्त्युत्तम कम पयका त्याग किया है तथा अष्टविध आर्य-  
 मार्गके अनुसरण द्वारा चतुरार्यसत्यकी अच्छी तरह पा  
 लिया है, वे ही जीवनकी पवित्रता द्वारा संसार-स्त्रोतकी  
 पार गये हैं और स्त्रोत-पापत्र नामसे प्रसिद्ध हैं । उन्हें  
 इस संसारमें भात बार लौटना पड़ेगा, किन्तु उनका  
 निर्वाण निश्चित है । नरकका द्वार उनके लिये बन्द  
 है । जिन्होंने राग, हृदय और मोहका त्याग कर दिया



१, ये महाभागो जहन्नाते ई। उरुं इम मंमारमं  
 येन एक वाग भागो पडता ई, पोडे निर्वाणनाम  
 होता ई। पन्नामिणोको इम मंमारमं एक वार भी  
 ओटता नहीं पडता। ये पन्नेकों यवो श्रदायाम  
 म्मन्नोकों दाम कर निर्वाणनाम करते ई।  
 वाक्कमं काय-सुद्ध पट्टवारमितामाम पडत्तण दे-  
 टवाम मात्तमे ही निर्वाण नाम करते ई।  
 पडत्तव ही परम पोर पुण्यवित्तताकी भवत्ता ई।  
 इम भवत्तामे धर्माधर्म, रागद्वेष इत्यादि निर्मुल ही  
 जाते ई। पडत्तकी पुनः इम मंमारमं जम्मपणन नहो  
 करना पडता। उनको देख मात्त पयगिट रहतो ई,  
 किन्तु उम देखने पावादि प्रवेग नहो कर सकते। उनका  
 पन्नात्वयोग पडने ही शुरू हो गया ई पोर जीवन  
 प्रदीप पडने ही बुझ चुका ई, उनकी सेवन देह रह गई  
 ई। कुछ समय बाद मृत्यु पडत्त कर उनको देखको  
 धर्म कर डालती ई। ये निर्वाण नाम कर पन्नात्व  
 पोर नामित्वने पत्तोत ही जाते ई। पडत्तव ( बुद्धत्व )  
 पोर निर्वाणमें पत्तार पड ई, कि पडत्तकी पयवी सत्ता  
 रहता ई, किन्तु निर्वाणनाम हो जाते पर सत्ताका भाग  
 ही जाता ई। निर्वाण पोर पडत्तव ( बुद्धत्व ) इनमें  
 किमी भवत्तामें भी राग, द्वेष पोर मोह नहीं रहता।  
 पडत्तव ( बुद्धत्व )की सोपाधिमेय निर्वाण पोर निर्वाण-  
 को पनुपधिमेय निर्वाण कह सकते ई।

रामचन्द्रने भारतेो महिमतक पन्थमें लिवा ई—  
 "इमे महाशिवरात्रे दशमहरणत् पडमारङ्गनाग  
 निष्ठावरात्रेव महाशिवरति जगति बोद्धात्मक निष्ठता  
 मूर्तिरसदृश मत्पामरचितमिहादुष्टपपापवना  
 पामीदीमन्त्र च दर विरघरमुते रवदमुतो मात्र पंडा इ  
 कोनास्करिवासीर उदरददुवात् प्रीति रागद्वेषोत्तर।  
 सोवस्ते विममुवा इत्यमगाउदरवद्वेकीमिगमिन् ।"  
 ( अतिपठक )

वःश्रव वीहरीके निर्वाणविवेक समाकोषव।  
 हिमो किमो पन्थमें लिवा ई,—निर्वाण "शांति  
 पोर सुखका वास्तव ई" पोर पन्थाय्य पन्थोमें श्रुतनाके  
 अर्थको निर्वाण प्रतमाता ई। इम प्रकाः परम्पर विरोधी  
 मत देख कर १८८८ ई०में पन्थायक मेरुमूरने इम

सब मनोके परपर मामन्त्रयके स्थापनको चेडा की।  
 उनका कहना ई, कि स्यादि पन्थोमें बुद्धको निज उक्ति  
 ई पोर उन मय पन्थोके मनमें पाकाके विरमागिमें  
 प्रवेगहा नाम निर्वाण ई। परयतो बोद्ध दार्मिकी-  
 ने कूटतर्कासंभवन करके पभिधर्मदि पन्थमें निर्वाण हा  
 को मत्तव बतलाया ई मटमुवार श्रुतार्क मत्तका नाम  
 निर्वाण ई।

१८७० ई०में पन्थायक साइन्समें निर्वाणविद-  
 यथा परपर विरोधीमतसमूहको एक वाक्यता प्रतिपक्ष  
 करते हुए कडा दे, कि पडत्तव ( बुद्धत्व ) पोर निर्वाण  
 ये दोनों ही मद्द बोद्धदार्मिकीने निर्वाण पर्थमें ज्ञ-  
 धार किये ई। पडत्तव पोर निर्वाण प्रायः एकाय वाचक  
 होने पर भी उनमें कुछ भेद ई। पडत्तव मानि पोर  
 सुखका निदान ई, किन्तु सत्ताका ध्वंस ही निर्वाण ई।  
 जहां पर बोद्धदार्मिकीने निर्वाणकी शांति हा निरुत्तम  
 बतलाया ई, वहां पर निर्वाण मद्दमे पडत्तव ( बुद्धत्व )  
 का मोघ होता ई।

१८७१ ई०में जेम्स-ही-पयविय सकोटयने निर्वाण-  
 विषयक गाना गवेषणापूर्ण प्रन्थमें पडत्तव पोर निर्वाण  
 का परस्पर भेद बतलाते हुए बोद्धपन्थके परस्पर विद्वह  
 वाक्यमसूहके मामन्त्रयकी रत्ता की ई। बोद्धपन्थोमें  
 उपधिमेय निर्वाण ( पडत्तव ) पोर पनुपधिमेय निर्वाण  
 दोनोंका भर्षन ई।

महामति पानुंकेने निर्वाण, परिनिर्वाण पोर महा-  
 परिनिर्वाण इन सब शब्दोंका भवमोहन कर उनके  
 पर्थोमें प्रीट मनवाया ई। किन्तु यथाथमें वे मनो  
 ममापक ई।

किमो किमो पापान्य पण्डितने निर्वाण पोर सुवा-  
 यतीको एक बतलाया ई। कि किमो किमोने कामो-  
 मत्तव देवभोज पोर निर्वाण दोनोंको एक ही पदाप  
 माना ई। मधुमः निर्वाणका प्रकृत पर्थ नहीं मान्म  
 कीने ही इम प्रकार पयविवात्ताकी कहना भी गई ई।  
 काशर रीत ईमिउसने महाशुवार विराकी पाप-  
 मृत्यु विर पयत्ता हो निर्वाण ई। पुण्यशांति, पुण्यशांति  
 पोर पुण्यविशुद्धि से मर पयत्ताके मत ई।  
 सुप्रसिद्ध काप्यर इनांगलरविने लिवा ई, कि

'निर्वाण सत्तासूकार और अहंत्वलाभ दोनों एक हो बात है। प्रसन्न सम्यग्दायके मतसे स्वर्ग और निर्वाण दो पथ बोधिसत्त्वोंके प्रबलस्वीय हैं। दुःखायके अनुष्ठान द्वारा सुखावलीमें पूर्ण सुखभोग किया जाता है और सम्यक् ज्ञानके अधिगममें संसारका उच्छेद और निर्वाण लाभ होता है। सत्ताका सम्यक् ध्वंस और संसारका सम्पूर्ण उच्छेद निर्वाणके विषयोभूत है।'

हेगरो अनवष्टरने लिखा है, कि निर्वाण शब्दका अर्थ सत्ताका ध्वंस है वा नहीं, इस विषयमें बौद्धोंमें मत भेद है। जो कुछ हो, भविष्यत् ध्वंग, दुःख और जन्मका सम्पूर्ण उच्छेद ही निर्वाण है। उनका कहना है, कि श्रमवासियोंके मतसे निर्वाण सुखका एक स्थान है जहां रहनेवाले कुछ भी नहीं है और जो अत्यन्त मनोरम तथा पवित्र है। बुद्धदेवने संसारके पादि और अन्तका निरूपण नहीं किया। बुद्धके मतानुसार परिदृश्यमान जड़जगत् दुःखमय है, सुतथा उसमें सम्पूर्ण विमुक्तिलाभ करना नितान्त प्रार्थनीय है। इस दुःखमय जगत्का उच्छेद ही निर्वाण है।

रभारिण्ड विज्जने चीन देशीय बौद्धमतकी समालोचना करते हुए लिखा है, कि नानालुंनकी प्रज्ञामूल शास्त्रोक्तके मतमें जो अपाय, चाणक्य और श्रावतिकत्वके प्रति है और जिमके उत्पाद तथा निरोध नहीं है, उसीकी निर्वाण कहते हैं। उनका निष्ठान्त यह है, कि जो दोनों कालमें प्रविकृत रहता है और जो देशविशेषसे परिच्छिन्न नहीं है, इस प्रकारकी प्रत्यक्षातिरिक्त प्रवस्था ही निर्वाण है। उनके मत अनुसार समय प्रत्येका सारममें यह कि उपाधिके प्रतिरिक्त प्रवस्था ही निर्वाण है।

रभारिण्ड प्रत्यन्तने तिब्बतोय बौद्धमतकी पालोचना करते हुए कहा है, कि दुःखका ध्वंस ही निर्वाण है। क्योंकि चतुसार्थसत्यका तत्त्वानुसन्धान करनेमें देखा जाता है कि सत्तामात्र ही दुःख है, अतएव निर्वाण शब्दका अर्थ सत्ताका ध्वंस है।

महाभक्ति बौद्धनमः, रिज डेभिड्स, मोनियर विलियम्स, डाकर पल्लेरम पाटि विद्वानोंने निर्वाणके विषयमें बहुत ध्यान की है।

तिब्बतोय भाषांमें निर्वाण शब्दका अर्थ दुःखका ध्वंस है।

चीनभाषांमें निर्वाणवाचक 'न्यु' शब्दका प्रयोग है इस न्युशब्दने सत्ताका ध्वंस और निर्वाण दोनोंका बोध होता है। कहनेका तात्पर्य यह है, कि पुनर्जन्म रहित न्यु ही निर्वाण है।

निर्वाणका प्राग्दर्शन

भारतवर्षमें दुर्लभ निर्वाणतत्त्वका आविष्कार का हुआ है, इसका निर्णय करना बहुत कठिन नहीं है भगवान् बुद्ध को इस तत्त्वके प्रथम प्रवर्तक हैं, इसमें सन्देह नहीं। संसार मिथ्या है, अहं मिथ्या है, इस मतका उन्वोने ही सबसे पहले जनतामें प्रचार किया और अपने जीवनमें उसका प्रदीप्त दृष्टान्त दिखला दिया थाई हजार वर्ष पहले बुद्धदेवने जोयत्तीना संवरण की अतएव निर्वाणतत्त्वका वयःक्रम क्रममें कम थाई हजार वर्ष है।

बौद्धोंका कहना है, कि मूल प्रज्ञाधारमिता महाकाव्यपंकी वर्णन है। महाकाव्य बुद्धके मिथ्य प्रज्ञाधारमिता अर्थमें निर्वाणतत्त्व और प्रविद्याकी सुन्दर तथा विशद व्याख्या लिखी है।

अष्टसाहस्रिका प्रज्ञाधारमिता द्वितीय बोधिमङ्गलमसमयमें रची गई। ई०सन्के ४०० वर्ष पहले द्वितीय बोधिसङ्गमकी प्रतिष्ठा हुई। इस अष्टसाहस्रिका प्रज्ञाधारमितामें निर्वाणतत्त्वका जो मा विशद विवरण लिखा है, उससे सहजमें अनुमान किया जाता है, कि उस समय निर्वाणमत जनसाधारणमें बहुत दूर तक विस्तृत था।

बुद्धचरितकाव्यके प्रणेता अश्वघोष ई०सन्को १२५ वर्ष गताब्दीके पहले विद्यमान थे। चीनपरिव्राजक युयन चुयङ्गने ४५३ ई०में भारतवर्षमें मोटते समय अश्वघोषकी प्राचीन कवि बतलाया है। कोई कोई अनुमान करते हैं, कि अश्वघोष कनिष्कके धर्मोपदेशी थे। उनका बुद्धचरितकाव्य पूर्वो गताब्दीके प्रारम्भमें चीनभाषांमें प्रकीर्ण वा पूर्वी गताब्दीमें तिब्बतोय भाषांमें अनुवादित हुआ। इस बुद्धचरितकाव्यमें निर्वाण और प्रविद्याके जो भी सुन्दर व्याख्या देखी जाती है उससे ज्ञान पड़ता है, कि अश्वघोषके समयमें भी निर्वाणतत्त्व लेकर विदेशी समालोचना चलती थी।

सुप्रसिद्ध कानितविद्वान् प्रयत्न ईसाजन्मके बहुत पहले का लिखा हुआ है। यह पहली गताब्दीकी चीन

है, वे महदागामी लक्ष्मी हैं। उन्हें हम संसारमें  
 संभव एक बार जाना पड़ता है, जोड़े निर्वाणनाम  
 होता है। पनागामियों को हम संसारमें एक बार भी  
 मोटना नहीं पड़ता। वे पहलेको तब सुझावात  
 ब्रह्मलोकमें काम कर निर्वाणनाम करने हैं।  
 माह्कर्मकाय-शुद्ध पट्पारमितामाम अर्हत्त्व  
 रथाना मालमें ही निर्वाण नाम करते हैं।  
 अर्हत्त्व ही अरम पौर पूर्णव्यवस्थाकी व्यवस्था  
 हम व्यवस्थामें धर्माधर्म, रागद्वेष हायादि निम्न  
 जाते हैं। अर्हत्त्वकी पुनः हम संसारमें जन्मग्रह  
 धरना पड़ता। उनको द्वेष मात्र व्यवस्थित  
 किन्तु हम द्वेषमें पापादि प्रयोग नहीं कर मज  
 पश्चित्तयोग पढ़ने ही शुद्ध ही गया है।  
 प्रदीप पढ़ने ही बुद्ध बुद्धा है, उनमें ही  
 है। कुछ समय बाद शत्रु पद्वेष कर  
 धर्म कर प्राप्तो है। वे निर्वाण म  
 पौर माह्मत्वमें पतितो ही जाते हैं।  
 पौर निर्वाणमें पकार यह है, कि पौर  
 रहतो है, किन्तु निर्वाणनाम हो जाते  
 हो जाता है। निर्वाण पौर अर्हत्त्व  
 क्रमो व्यवस्थामें भी राग, द्वेष पौर  
 अर्हत्त्व (बुद्धत्व) की योगधर्मिय  
 को अनुपधिगिय निर्वाण का मक

बहुत निर्वाण  
 को हम सब  
 चाँदिके  
 मन्त्र इत्यादि

१०० वर्ष के भीतर  
 ही वह पद्वेष निवे गये  
 ही भी भावामें अनु  
 में भी प्रचार हुआ।  
 भी भारतवर्षमें अर्ह-  
 त्वक ने कर निर्वाणपिण्डक  
 जब समय तिन्त्रतीय भावामें भी  
 हुए जिन्होंने निर्वाण मत तिन्त्र  
 गया।

श्री, प्रथो पौर प्रथो गताण्डोको  
 तमसाहन पंग बतलाया है।  
 के पद्वेषमें प्राप्त होता है, कि हम  
 भारतवर्षमें महोच्चित नाम को ही  
 समय भारत को ज्योतिःकथाने विद्वुटित को  
 विद्वोर्षे धीन पादि राह्योको धर्माधिक्ये  
 किया था। मशुतः श्री गताण्डोने ने कर  
 गताण्डो तक भारतवर्षमें निर्वाणधर्म को प्रसोम  
 हुए पौर हम दर्शानोचनाके प्रथम हीन,  
 पादि जनपदोंमें प्राणाधीनका संचार हुआ।  
 गताण्डोने का धर्म हुआ। मशु-  
 त्वधर्मके ही दोषहर योजान  
 हीय  
 हीय  
 हीय  
 हीय

रामचन्द्रने भारतो मज्जिमत्तक  
 "हृदय प्रकाशित" गार परमपरम  
 विद्यापरायण महाद्वन्द्वि प्रम  
 कहीनसद्व्युत्थाभारतनिमित्त  
 आनीदीवान् प्र हर विद्वन्मशु  
 होगारपात्रिमाहीन् सरररररर  
 दोषरदो विमन्मका इत्यवगार

बन्धन पतिहोती निर्वाण  
 किमो किमो पद्वेषे नि  
 पौर सुलका पाल्य है पौर  
 लक्ष्मी निर्वाण बतलाया है।  
 हम देव कर १८२८ ईस

महादेवजी-यहां रहते थे। एक दिन उनका हृष क्रिमी मालीके उद्यानमें चरनेकी गया। जब मालीको उस पर निगाह पड़ी, तब उसने उसे बहुत दूर तक खदेरा और थाए कंधे पर खुरपेने आघात किया। (उस चतका टाग बाज भी मन्दिरके अभ्यन्तरस्थ हृषके कंधे पर देखनेमें आता है।) वीछि महादेवजी उस हृषकी ले कर मिङ्गनापुरको चल दिये। किन्तु वह हृष फिर भी एक दिन उसी मालीके उद्यानमें गया। इस पर महादेवने ऐसा बन्दोबस्त कर दिया कि वे मिङ्गनापुरमें रहेंगे और उनका हृष निर्बङ्गनोमें। तोयवातो लोग हृषदर्शन करके शिष्यदर्शन करेंगे। जब यह देग सुसलमान राजाकोके हाथ आया था, तब उन्होंने एक दिन हृष-मूर्त्ति तहम नष्ट कर डालनेकी इच्छासे उसके सींगमें आघात किया। कहते हैं, कि आघात लगते ही सोगसे लहकी धारा बह निकली थी। इस पर वे लोग बहुत डर गये और तभीसे कोई भी उस हृषमूर्त्ति के प्रति भलाचार नहीं करता है।

निर्वाणपुराण (सं० श्लो०) मृत व्यक्तिके उद्देश्यसे वसिष्ठाने निर्वाणप्रकरण (सं० पु०) योगशास्त्र रामायणके चतुर्थ खण्डका नाम।

निर्वाणविद्या (सं० श्लो०) एक गन्धर्वीका नाम।  
निर्वाणभूषिष्ठ (सं० श्लो०) निर्वाणप्राय, निधाणीमुख।  
निर्वाणमण्डप (सं० पु०) काशीके सुक्ति-मण्डपाख्य तोय-मंदिर।

निर्वाणमस्तक (सं० पु०) निर्वाणं निष्ठित्तमस्तकमिष यत्। मोच।

निर्वाणवि (सं० श्लो०) निर्वाण विवरस्य। १ मोच-साधनास्तक, जो मोचसाधनमें तत्पर हो। (पु०) २ देव-भेद, एक देवताका नाम।

निर्वाणसुव (सं० श्लो०) १ एक बौद्धसुवका नाम। २ एक बौद्धका नाम।

निर्वाणिन् (सं० पु०) उत्सर्गिणोका, अर्हत्तमैद। जैन देखो।

निर्वाणी (सं० श्लो०) १ जैनोंके एक शासनदेवता। निर्गता वाणी यस्य, आहुस्तस्मात् न कप। २ वाश्य-रहित, गूंगा।

निर्वाण (सं० श्लो०) निर्वाणो वातो वायुर्वासात्। १ वायु-रहित, जहां हवा न हो, जहां हवाका भौंका न लग सके। २ जो चञ्चल न हो, स्थिर। (पु०) ३ यह स्थान जहां हवाका भौंका न लगता हो।

निर्वाण (सं० पु०) निर्वाणमिति, निर-वृद्ध-भावे घञ्। १ अणवाद, निन्दा, लोकापवाद। २ अणुवा, लापरवाही। निर्वाणितं वादः कथनं। ३ निश्चितवाद। वादस्य अभावः, अभावार्थेऽथयोःभावः। ४ वादका अभाव।

निर्वाणर (सं० श्लो०) वाणरहोण, जहां बन्दर न हो।

निर्वाण (सं० श्लो०) बहिर्यत, प्रेरित, भेजा हुआ।

निर्वाण (सं० पु०) निर्वाणमिति निर-वृद्ध-वज्। १ वह दान जो पितरोंके उद्देश्यसे किया जाय। २ दान। ३ भक्षण, खाना।

निर्वाण (सं० श्लो०) निर-वृद्ध-वज्-न्युट्। १ बध, मारना। २ दान। ३ रोपण, रोपना। ४ निर्वाणता-सम्पादन।

निर्वाणपिठ (सं० श्लो०) निर-वृद्ध-वज्-वृत्च्। निर्वाण-कारे, निवपक।

निर्वाणित (सं० श्लो०) निर-वृद्ध-वज्-क्त्वात्। १ निर्वाणप्राप्त, जो निर्वाण मिला हो। २ नाशित, जिमका नाश किया गया हो। ३ दत्त, जो दिया गया हो।

निर्वाण्य (सं० श्लो०) १ निर्वाणित, निर्वाणयोग्य। २ पानन्दित, प्रसन्न।

निर्वाण्य (सं० श्लो०) निश्चयेन विद्यते निर-वृद्ध-वज्-वृत्च्। निःगह-कर्मकर्त्ता, जो निःसहोचभावसे काम करता हो।

निर्वाण (सं० पु०) निर-वृद्ध-वज्-घञ्। १ निर्वाणन, देग-निकास। २ प्रसाध, विदेगयात्रा।

निर्वाणक (सं० पु०) निर-वृद्ध-वज्-क्त्वात्। निर्वाणन-कारो, निर्वाणन करनेवाला।

निर्वाणन (सं० श्लो०) निर-वृद्ध-वज्-न्युट्। १ बध, मार डालना। २ नाश, अणु या देग आदिसे दण्ड स्वरूप बाहर निकाल देना, देगनिकास। ३ निःसारण, निकासना। ४ विसर्जन।

निर्वाणनीय (सं० श्लो०) निर-वृद्ध-वज्-घञ्-नीयर्। निर्वाणन योग्य, देगनिकासना-योग्य।

निर्वाण्य (सं० श्लो०) निर-वृद्ध-वज्-क्त्वात् कर्मणि यत्। नगर-से बाहर करने योग्य।

भाषा में अनुवादित हुआ। इस ग्रन्थ में भी निर्वाणविषयक दुर्बोधितायनसूत्रका विस्तृत विवरण देखा जाता है। ईसा-शकके प्रायः दो सौ वर्ष पहले मुद्रित्यन्त नामक कुम्भने अपने माध्यमिहग्रन्थ में निर्वाणतत्त्व की सविशेष समझोचना की।

गाथाभाषा में लिखित चौर प्रायः दो हजार वर्ष पहले विरचित समाधिनामक नामक ग्रन्थ में भी निर्वाणको वर्णना है।

२री गताब्दी में धर्मपद चीन-भारत में प्रचुरादित हुआ। इस ग्रन्थ में भी निर्वाण मतका विवरण देने में आता है। महावनाशयुद्ध २री गताब्दीके प्रारम्भ में चीन भाषा में अनुवादित हुआ। इसमें भी निर्वाणविषयक अतिव्यक्त प्रवृत्तियों की सीमाया निर्या है।

२री गताब्दी (१४८-१००) में सत्याशतोय च चीन भाषा में अनुवादित हुआ। इस ग्रन्थ में निर्वाणतत्त्वका विवरण मिला है।

महापारमितासूत्रग्रन्थ ४०० ई. में कुमारजीवने चौर (४८ ई. में) युवराजसूत्रके चीनभाषा में अनुवादित हुआ। इस ग्रन्थ में भी निर्वाणविषयक दुर्दृष्ट प्रवृत्तियोंकी सीमाया निर्या है।

४वी गताब्दीके प्रारम्भ में यत्कृत दिशा चन्द्र कुमारजीवने चीनभाषा में अनुवादित हुआ। इस ग्रन्थ में भी निर्वाण-मतका विवरण है।

४ठी गताब्दीके प्रारम्भ (४२८ ई.) में बोधिवि नामक हिंदी लिखितमें प्रथमपुत्रे अपरिमितायुःसूत्र-नामका चीन भाषा में अनुवाद किया। इस ग्रन्थ में भी निर्वाणतत्त्वके अनेक विषय मिले हैं।

४ठी गताब्दी में प्रचुरा, दिग्गम पादि सुविख्यात लिखितोंमें इस निर्वाणतत्त्वको सुप्रसन्न समझोचना की। तदनुसार ३वीं, ४वीं, ५वीं चौर १०वीं गताब्दी में धर्मकीर्ति, माण्डिये, बन्धुकीर्ति पादि महाविद्यानि माध्यमिहाराज, बोधिवर्षावतार पादि ग्रन्थों में निर्वाण-तत्त्वका सम्यक विचार किया।

बुद्धपूर्वक चन्द्र गताब्दी में से कर बुद्धराजकी समय गताब्दी तक निर्वाणविषयक अनेक लिखित ग्रन्थों में मिले हुए। इसमें, विशेष, चलोय चौर प्रमुख बोधि-

मन्त्रमहात्मने धर्मस्य चन्द्र बशात् गये। प्रचुरा निर्वाण पादि अतिव्यक्त प्रवृत्तियोंकी वर्णनाके लिए जो इस ग्रन्थ बोधिवर्षाकी प्रतिष्ठा हुई। चण्डीक, कर्णिक पादिने रा-नत्वज्ञानमें जिनने तत्त्व हैं सर्वोकी सम्यक समझोचना होती थी।

२री गताब्दीमें ३री गताब्दी तक १०० वर्षके मोक्ष भारतवर्ष में निर्वाणविषयक धर्मस्य बौद्ध चन्द्र लिखित गए चौर सम समय हजारों संस्कृत ग्रन्थोंके चीन भाषा में अनुवादित होनेने निर्वाण-मतका चीनमें भी प्रचार हुआ। ३वीं, ४वीं चौर १०वीं गताब्दी में भी भारतवर्ष में बहुसंख्यक बौद्ध लिखितोंने जन्म ले कर निर्वाणविषयक अनेक ग्रन्थ लिखे। इस समय तिब्बतीय भाषा में भी जितने ग्रन्थ अनुवादित हुए जिनमें निर्वाण-मत तिब्बत भाषा में भी प्रचलित हो गया।

पुराविदोंने २री, ३री, ४वीं चौर ५वीं गताब्दीकी भारत इतिहासका समसाहसक पंग बननाया है। किन्तु बौद्ध-इतिहासके पक्षमें आता होता है, कि इस समय आनन्तवर्षा में भारतवर्ष में महाभक्ति नाम की थी चौर उसी समय भारत की प्रयोतिःकरणने विद्वुजित हो कर सुदूर विदेशों चीन पादि राज्योंकी धर्मात्मिकमें आनीकित किया था। प्रचुरा २री गताब्दीमें से कर १०वीं गताब्दी तक भारतवर्ष में निर्वाणधर्म की प्रचुरा वर्णनाके लिए चौर सम वर्णनाके अनेक चीन, तिब्बत पादि अनेक देशों में आनीकितका प्रचार हुआ। १०वीं गताब्दी में बौद्धविचारोंका धर्म हुआ। ब्रह्म-देवमें अद्यतनके रा-नत्वज्ञानने ही दोषद्वार योद्धा (पतीय) निर्वाणमतकी विचारके निवे सुवर्ष होय (ग्रहद्वेष) में गए थे। इस प्रकार निर्वाणने इस १०वीं गताब्दीके हीव भागमें भारतवर्ष में आनीकितका प्रचार नाम की। बुद्ध और बौद्धविचारोंके।

निर्वाणवि (निर्वाण) — पूजा तिब्बतमागत एक छोटा गाँव। यह १२५५ वर्ष १३ मील दक्षिणदिशि मोरा मठके हिस्से परलित है। यहाँ महादेवकी एक मन्दिर है। लोचंदायो कीव परने मन्दिर, मध्यम महादेव चौर उपमूर्ति के दर्शन करने हैं, योके गताब्दीके विज्ञान-पुर मठके दर्शनको जाने हैं। बचत है, कि पूर्णमतमें

सम्प्रज्ञातयोग सविकल्प, समाधि बादि नामोमे प्रकारा जाता है। इस समाधिके चार प्रकारके भेद कल्पित हुए हैं, सवितक, निर्वितक, सविचार और निर्विचार। स्वमके पालम्बनमें तन्मय होनेसे यह सवितक और निर्वितक तथा मूच्छके पालम्बनमें तन्मय होनेसे सविचार और निर्विचार कहलाता है। चित्त जब स्वममें तन्मय रहता है, तब यदि उसके माय विकल्पज्ञान रहे, तो उस तन्मयताको सवितक और यदि विकल्पका ज्ञान न रहे, तो उसे निर्वितक कहते हैं।

चित्त चाहे जिम किसी पदार्थमें अभिनिविष्ट हो, पहले नाम, पीछे सङ्केत-स्मृति और सबसे पीछे वस्तु स्वरूपमें पर्यवसित होता है। जैसे, घट शब्द कहनेसे पहले घ-प+उ-प इन चार वर्णोंका बोध होता है, पीछे कस्युश्रीवादिमहत्त्व और उसके माय उभक्त को सङ्केत है, उसका स्मरण होता है और सबसे पीछे घटाकारको चित्ररूपमें निष्पन्न होता है या नहीं? यदि होती है, तो यह ठोक जाना गया कि प्रत्येक तन्मयधाममें एक आनुपूर्विक ज्ञानव्यवस्था मन्वय है। फिर ऐसा भी होता है, कि घट देखनेके साथ अथवा घट शब्दके उल्लेखके समय कस्युश्रीवादिमहत्त्व और उसके माय घटशब्दका सङ्केतज्ञान तथा घ-प+उ-प इन चारों वर्णोंका ज्ञान अथवा घटाकार नामका ज्ञान अति शीघ्र उत्पन्न हो कर प्रथमोत्पन्न ज्ञान लुप्त हो जाता है। केवल घटाकार ज्ञान वा घटाकार मनोवृत्ति विद्यमान रहती है। अतएव जहाँ स्थूल पालम्बनका नामज्ञान और सङ्केतज्ञान रहता है वहाँ सवितक और जहाँ सङ्केतज्ञान वा नामज्ञान नहीं रहता, केवल पर्यकार ज्ञान रहता है वहाँ निर्वितक होता है। मान लो, विल यदि क्षणमें तन्मय हो और उसके साथ यदि नामज्ञान और सङ्केतज्ञान रहे, तो सवितक क्षणयोग और यदि नामज्ञान तथा सङ्केतज्ञान न रहे, केवल नम जनधरमूर्त्ति स्फुरित हो, तो उस अवस्थाको निर्वितक कहते हैं। सविचार और निर्विचार भी इसका नामान्तर है। इसका अवनमनोय विषय मूच्छ वस्तु है। मूच्छ वस्तुके मध्य पहले पक्षभूत, तद्वेषा मूच्छ तन्मात्र और इन्द्रिय है। इन्द्रियसे भी मध्य पक्षत्व है, पीछे महत्त्व और प्रकृति। यही योगकी

चरम सोमा है। परमात्मयोग इसमें भी मूच्छ चोर स्वतन्त्र है। जिन सब समाधियोंका विषय कहा गया वे सभीजन्मसाधिका हैं। मवीजन्मसाधिके मध्य सविनर्त-समाधि हो निकट और निर्विचार समाधि सबसे श्रेष्ठ है। इस निर्विचार योगका अच्छे तरह अभ्यास हो जानेसे ही चित्तका स्वच्छमिदमवाह दृढ़ हो जाता है। उस समय कोई दोष वा क्रिमो प्रकारका ज्ञेय अथवा कोई मानस्य हो नहीं रहता। नवंपकाशक चित्तमन्त्र विनाश निर्मल होता है और पाप्मा भी उस समय विज्ञान होता है। निर्विचारयोगके मन्त्रक पाठ्यत होने पर निर्मल प्रज्ञा उत्पन्न होती है। इस निर्विचारप्रज्ञाके साथ अना क्रिमो प्रज्ञाकी तुलना नहीं होती। इन्द्रियजनित प्रज्ञा वा अनुमानज्ञात अथवा गान्धर्वजनित प्रज्ञा कोई भी निर्विचारप्रज्ञाके समकक्ष नहीं है। क्योंकि उल्लिखित प्रज्ञाएँ वस्तुका एक-दृश या सामान्यकारमात्र ग्रहण करती हैं, विद्योप तरव ज्ञान नहीं सकती। किन्तु निर्विचार नामक योगज प्रज्ञा क्या सूक्ष्म क्या विप्रकृत क्या व्यवहित सभी प्रज्ञाग करती है। इसका कारण यह है कि बुद्धि पदार्थ महान्, सर्वव्यापक और सर्वप्रकाशक है। उसको सर्वज्ञगति रज और तमोगुणसे प्राहृत रहती है। इस मलस्वरूप रज और तमःके अवनोत होनेसे बुद्धिकी सर्वप्रकाशत्व-शक्ति पापमें पाप प्रादुर्भूत होती है। यही कारण है, कि निर्विचारप्रज्ञाके माय क्रिमो प्रज्ञाकी तुलना नहीं होती। (पातञ्जल-२०) विशेष विवरण समाधि शब्दमें देखो। निर्विचिकित्त ( सं० द्वि० ) निर्गता विचिकित्ता यस्य । निःस्पन्दे ह । निर्विचेष्ट ( सं० द्वि० ) अज्ञान, जड़, मूर्छ, ध्वस्त । निर्वितक ( सं० द्वि० ) निर्गता वितक यस्मात् । १ वितकशून्य । ( पु० ) २ पातञ्जलदंगनोक्त समाधि भेद । निर्विचार देखो । निर्वितकसमाधि ( सं० स्त्री० ) योगदर्शनके अनुसार एक प्रकारकी सवीज समाधि जो क्रिमो अथ न पालम्बनमें तन्मय होनेसे प्राप्त होती है और जिसमें तम पालम्बनके नाम और सङ्केत पादिका कोई ज्ञान नहीं रह जाता, केवल अपने पाकार पादिका ही ज्ञान होता है।

निर्वाह (मं० पु०) निर्-वह घञ् । १ कार्यसम्पादन ।  
 २ किसी काम या परम्परा का चला चलना, किसी वस्तु का  
 जारी रहना, निरवाह । ३ किसी बातके अनुसार कराने  
 या चरण, चालना । ४ समाधि, पूरा होना ।

निर्वाहक ( मं० ति० ) निर्-वह-कृष्ण्यु । निष्पादक,  
 किसी कामका निर्वाह करनेवाला ।

निर्वाहक ( मं० स्त्री० ) निर्-वह-वाच्ये लिट् भट्टः  
 निर्वाहक, माञ्जोरिमि प्रसन्न कथाकी समझि ।

निर्वाहक ( मं० पि० ) निर्वाह करवाये-इति । चरण-  
 गोल ।

निर्वाहित ( मं० प्रि० ) निर्-वह-लिट्-ञ । सम्पादित,  
 निष्पादित ।

निर्विकल्पक ( मं० ति० ) निर्गतो विकल्पो प्रायज्ञेय  
 आदि विभागो विमेषविशेषणनामस्यस्यो वा यस्मात्  
 ततो कल्पः । १ विभागोक्त प्रायज्ञेयत्वादि विभागसूत्र्य  
 समाधिभेद, वेदान्तके अनुसार वह चक्षुष्या जिनमें ज्ञाना  
 पोर प्रथममें भेद नहीं रह जाता, दोनों एक ही जाते हैं ।

२ व्यापके मतमें पञ्चैकिक पानोचनात्मक प्रागभेद,  
 व्यापके अनुसार वह पञ्चैकिक पानोचनात्मक प्राग भो  
 इन्द्रियवस्तु सामने बिभक्तुम शक्य होता है । बोह  
 भाष्योके अनुसार केवल ऐसा ही ज्ञान प्रमाण माना  
 जाता है ।

२ व्यापके मतमें पञ्चैकिक पानोचनात्मक प्रागभेद,  
 व्यापके अनुसार वह पञ्चैकिक पानोचनात्मक प्राग भो  
 इन्द्रियवस्तु सामने बिभक्तुम शक्य होता है । बोह  
 भाष्योके अनुसार केवल ऐसा ही ज्ञान प्रमाण माना  
 जाता है ।

निर्विकल्पक ( मं० पु० ) निर्विकल्पकः समाधिः ।  
 समाधिभेद, एक प्रकारकी समाधि जिसमें ज्ञेय, ज्ञान पोर  
 ज्ञाना यादिका कोई भेद नहीं रह जाता पोर ज्ञाना-  
 भाव मविदानम् ब्रह्मके प्रतिरिक्त पोर कुछ दिशाई  
 नहीं देता ।

विदानभाष्यमें इसका विषय यो लिखा है—समाधि  
 दो प्रकारकी है, अनिश्चय पोर निर्विकल्प । ज्ञाना, ज्ञान  
 पोर ज्ञेय इन दोनोंका प्राग रहने पर भी पश्चिमीय-  
 ब्रह्म वस्तुमें पदपञ्चाकारमें पाकारित विद्यतुलिके पद-  
 हानका कारण अनिश्चयसमाधि है । इस अनिश्चय  
 चक्षुष्यामें निरवकार सुखद वृत्तिमें वृत्ति का प्राग  
 रहनेभी भाँसना प्राग होता है, उसी प्रकार दोषहान  
 पदपञ्चमें भी पश्चिमीय प्राग होता है । तब ज्ञाना, ज्ञान पोर  
 ज्ञेय में भेद बिबक्तुम शक्य है समाधिमें ही, पश्चिमीय ब्रह्म

वस्तुमें एक ही कर रहे, पदपञ्चाकारमें पाकारित विद्य-  
 तुलिका पदपञ्चाकार ही, तब उसी चक्षुष्या हीमें निर्वि-  
 कल्पसमाधि होती है । इस समय ज्ञेय, ज्ञान पोर  
 ज्ञाना में सब एक ही जाते हैं, ज्ञानात्मक मविदानम्  
 ब्रह्मके विधा पोर कुछ भी नहीं रहता । निरवकार  
 प्रागमें स्वयच्छुद्धि निष्पादने ज्ञानाकारमें पाकारित स्वय-  
 चक्षुष्यात्मक चक्षुष्यात्मके समाधिमें केवल ज्ञानका प्राग होता है,  
 उसी प्रकार पश्चिमीय ब्रह्माकारमें पाकारित विद्यतुलिका  
 प्राग रहने पर भी पश्चिमीय ब्रह्मवस्तुमात्रका ही प्राग  
 होता है ।

इस समाधिकी तुलना योगकी सुषुप्ति चक्षुष्याके साथ  
 की जाती है । उस, नियम, ध्यान, प्राणायाम, प्रत्या-  
 हार, धारणा, ध्यान पोर सुविस्मयसमाधि में सब इसमें  
 प्रज्ञा है ।

निर्विकार ( मं० पु० ) प्रकृतेश्चैवा भावः विकारः निर्गतो  
 यस्मात् । १ विकाररहित, वह जिसमें किसी प्रकारका  
 विकार या परिवर्तन न हो, परामात्मा । ( ति० ) २

विकारसूत्र्य, जिसमें कोई विकार या परिवर्तन न हो ।

निर्विकारक ( मं० ति० ) निर्विकारः विद्यतेऽस्य, मनुष्यः,  
 मम्य च । अपरिवर्तनीय, जो परिवर्तनके योग्य न हो,  
 महा एक-मा रहनेवाला ।

निर्विकार ( मं० ति० ) पश्युः, विद्यारहित ।

निर्विघ्न ( मं० ति० ) १ निघ्नरहित, जिसमें कोई बिघ्न न  
 हो । ( ति० पि० ) २ निघ्न का समाप, बिना किसी  
 प्रकारके बिघ्न या बाधाके ।

निर्विचार ( मं० ति० ) निर्गतो विचारो यत् । १ विचार-  
 रहित । ( पु० ) २ पातञ्जलदर्शनशास्त्रे सुषुप्तिविकल्प  
 समापितान्तर समाधिभेदः ।

सहितके पोर निर्विकल्प समाधि द्वारा सुषुप्तिविकल्प  
 समापित पोर निर्विचार समाधिकी निर्विघ्न होता है ।

सविचार पोर निर्विचार समाधिकी विषय शक्य  
 पोर उनको सीमा प्रकृत है । इन्द्रियसमाप पोर यह  
 प्रकार इसकी शून्य प्रकृत है । ये सब समाधिस्थानके अनु-  
 सार प्रकृतियों का वह परिवर्तन ही जाते हैं ।

जिनमें बिना सब किसी पद पश्चिमीय वस्तुमें समाधि  
 ही जाता है, तब तबमें भाँसनायोग करके ही । तब

सम्प्रज्ञातयोग सविकल्प, समाधि आदि नामोंसे पुकारा जाता है। इस समाधिके चार प्रकारके भेद कल्पित हुए हैं, सवितर्क, निर्वितर्क, सविचार और निर्विचार। स्थानके आलम्बनमें तन्मय होनेसे यह सवितर्क और निर्वितर्क तथा मूर्च्छाके आलम्बनमें तन्मय होनेसे सविचार और निर्विचार कहलाता है। चित्त जब स्थानमें तन्मय रहता है, तब यदि उसके माय विकल्पज्ञान रहे, तो उस तन्मयताको सवितर्क और यदि विकल्पका ज्ञान न रहे, तो उसे निर्वितर्क कहते हैं।

चित्त चाहे जिम किसी पदार्थमें अभिविष्ट हो, पहले नाम, पीछे सङ्केत-स्मृति और सबसे पीछे वस्तुके स्वरूपमें पर्यवसित होता है। जैसे, घट शब्द कहनेमें पहले घ-प+ट-प्र इन चार वर्णोंका बोध होता है, पीछे कम्बु-प्रोधादिके जैसा वस्तुविशेषके माय उभक्त जो सङ्केत है, उसका धारण होता है और सबसे पीछे घटाकारकी चित्रवृत्ति निष्पन्न होती है वा नहीं? यदि होती है, तो यह ठोक जाना गया कि प्रत्येक तन्मयनाममें एक आनुपूर्विक ज्ञानव्यवस्था मंत्रय है। फिर ऐसा भी होता है, कि घट देवनेके साथ प्रथवा घट शब्दके उल्लेखके समय कम्बु-प्रोधादिमहसु और उसके माय घटशब्दका सङ्केतज्ञान तथा घ-प+ट-प्र इन चारों वर्णोंका ज्ञान प्रथवा घटाकार नामका ज्ञान प्रति शीघ्र उत्पन्न हो कर प्रथमोत्पन्न ज्ञान लुप्त हो जाता है। केवल घटाकार ज्ञान वा घटाकार मनोवृत्ति विद्यमान रहती है। अतएव जहाँ स्थूल आलम्बनका नामज्ञान और सङ्केतज्ञान रहता है वहाँ सवितर्क और जहाँ सङ्केतज्ञान वा नाम-ज्ञान नहीं रहता, केवल प्रथमकार ज्ञान रहता है वहाँ निर्वितर्क होता है। मान लो, चित्त यदि स्थूलमें तन्मय हो और उसके साथ यदि नामज्ञान और सङ्केतज्ञान रहे, तो सवितर्क संश्लेषयोग और यदि नामज्ञान तथा सङ्केतज्ञान न रहे, केवल मन जनधरमूर्ति स्वरूप हो, तो उस प्रथमकारको निर्वितर्क कहते हैं। सविचार और निर्विचार भी इसका नामान्तर है। इसका प्रथमस्वभाव विषय मूर्च्छा वस्तु है। मूर्च्छा वस्तुके मध्य पहली पद्यभूत, तदपेक्षा मूर्च्छा तत्प्राय और इन्द्रिय है। इन्द्रियसे भो स एष पदं तस्य है, पीछे महत्तत्त्व और प्रकृति। यही योगकी

परम सोमा है। परमात्मयोग इसमें भो मूर्च्छा और स्वतन्त्र है। जिन सब समाधियोंका विषय कहा गया वे सर्वोत्तमसाधि हैं। सर्वोत्तमसाधिके मध्य सविचार समाधि हो निष्कट और निर्विचार समाधि सबसे श्रेष्ठ है। इस निर्विचार योगका अच्छो तरह अभ्यास हो जानेसे ही चित्तका स्वच्छस्थितिप्राप्त हट्ट हो जाता है। उस समय कोई दोष वा किमो प्रकारका ज्ञेय प्रथवा कोई मानस्य हो नहीं रहता। नर्य प्रकाशक चित्तमत्त्व निरान्त निराल होता है और आत्मा भी उस समय विज्ञान होती है। निर्विचारयोगके मध्य श्रयत्त होने पर निराल प्रज्ञा उत्पन्न होती है। इस निर्विचारप्रज्ञाके साथ अन्य किमी प्रज्ञाकी तुलना नहीं होती। इन्द्रियजनित प्रज्ञा वा अनुमानजात प्रथवा आत्मज्ञानजनित प्रज्ञा कोई भी निर्विचारप्रज्ञाके सम-कक्ष नहीं है। क्योंकि उल्लिखित प्रज्ञाएँ वस्तुका एक-देग वा सामान्यकारमात्र दृश्य करती है, विवेक तत्त्व ज्ञान नहीं करती। किन्तु निर्विचार नामक योगजन प्रज्ञा क्या सूक्ष्म क्या विपद्गत क्या व्यवहित सभी प्रकारका करती है। इसका कारण यह है कि बुद्धि पदार्थ महान्, सर्वव्यापक और सर्वप्रकाशक है। उसको सर्वप्रकाशित रज और तमोगुणसे पाञ्चल रहती है। इस समस्वरूप रज और तमःके अपनोत होनेसे बुद्धिकी सर्वप्रकाशत्व-शक्ति पापमें आपा पादुभूत होती है। यही कारण है, कि निर्विचारप्रज्ञाके माय किसी प्रज्ञाकी तुलना नहीं होती। (पातञ्जल २६०) विशेष विषय समाधि शब्दमें देखो।

निर्विचिकित्त ( सं० लि० ) निगता विचिकित्ता यस्य । निःसन्देह ।

निर्विचेत ( सं० लि० ) चक्षान, जड, मूर्ख, बेवजूक ।

निर्वितर्क ( सं० लि० ) निगता वितर्कं यस्मात् । १ वितर्कशून्य । ( पु० ) २ पातञ्जलपदमोक्त समाधि भेद । निर्विचार देखो ।

निर्वितर्कसमाधि ( सं० स्त्री० ) योगदर्शनके अनुसार एक प्रकारकी सन्नैज समाधि जो किमो प्य न आनन्दमय तन्मय होनेसे प्राप्त होती है और जिसमें उस आनन्दमयके नाम और सङ्केत आदिका कोई ज्ञान नहीं रह जाता, केवल सम-प्रकार आदिका ही ज्ञान होता है ।



निर्विघ्न ( सं० ति० ) निर्विघ्नते विद्या गच्छ ।  
 विघ्नहीन, मुक्त, जो पढ़ा विद्या न हो ।  
 निर्विघ्न ( सं० ति० ) १. कार्य करनेमें अनिच्छुक्त । २  
 सामन्निहीन ।  
 निर्विघ्न ( सं० ति० ) निर्गतः विघ्न्यत् । १ विघ्न्यवर्तन  
 निःसृत, जो विघ्न्यवर्तने निरक्षी हो । निघ्नो टाव,  
 २ विघ्न्यवर्तने निरक्षी हुई एक मटोका नाम ।  
 निर्विघ्न ( सं० ति० ) अभिव, भेदरहित ।  
 निर्विघ्न ( सं० ति० ) विनाहीन, विमर्गशून्य ।  
 निर्विरोध ( सं० ति० ) विरोधहीन, अविवादी, निरोध,  
 गत्या ।  
 निर्विरोधिन् ( सं० ति० ) निर्विरोध अस्वयं रति ।  
 निर्वाह, शास, निर्विवादी ।  
 निर्विघ्न ( सं० ति० ) १ अद्वयम्, विना हेतुः । २  
 अविघ्न, शून्य ।  
 निर्विघ्न ( सं० ति० ) अमरगुण्य, निघने कोरि विघ्न  
 न हो, विना भगद्वेषा ।  
 निर्विघ्न ( सं० ति० ) जो जानना नहीं चाहता हो ।  
 निर्विघ्न ( सं० ति० ) विघ्नकारित, अविघ्नो, जो  
 किसी बातकी विघ्नचना न कर सकता हो ।  
 निर्विघ्न ( सं० ति० ) निर्विघ्नो होनेका भाव ।  
 निर्विघ्न ( सं० ति० ) गद्धाररित, निर्भय, निडर ।  
 निर्विघ्न ( सं० ति० ) गद्धारहीन, भयरहित ।  
 निर्विघ्न ( सं० ति० ) निर्विघ्नो निर्विघ्नो यस्य । १ मर-  
 द्देकदा विघ्नकारित परब्रह्म । ( ति० ) २ निर्विघ्नरित,  
 दुष्प्रसन्न ।  
 निर्विघ्न ( सं० ति० ) धर्मकीहीनता, अविघ्न ।  
 निर्विघ्न ( सं० ति० ) १ विघ्नपररहित, परब्रह्म ।  
 ( ति० ) २ विघ्नपररहित ।  
 निर्विघ्न ( सं० ति० ) निर्विघ्नो दुष्प्र ।  
 निर्विघ्न ( सं० ति० ) निर्गत विघ्न परमात्मा । १ विघ्नरित,  
 अद्वय विघ्न न हो । ( दु० ) २ अमरवर्त, धानी का अर्थ ।  
 निर्विघ्न ( सं० ति० ) सामन्निहीन ।  
 निर्विघ्न ( सं० ति० ) अविघ्न, जो अद्विधकारक  
 नहीं है ।  
 निर्विघ्न ( सं० ति० ) निर्विघ्नो, अविघ्न, अक्ष

प्रकारकी घाम । धर्मो-अविघ्न, निर्विघ्नो, अविघ्न,  
 विघ्नपर, विघ्नरितो, विघ्नभावा, अविघ्न, विघ्नरितो ।  
 गुण—हेतु, मोक्ष, अक्ष, यात धोर पररदोपनामक ।  
 निर्विघ्नो देखो ।  
 निर्विघ्नो ( सं० ति० ) अमरवर्तकी जातिहो एक नाम  
 जो अविघ्नोपर विमानय, कामोरे धोर अमरनिर्विघ्न  
 अविघ्नतामें होतो है । इनकी बहुत धनीमें समाप्त  
 होती है जिसका अक्षरकार मोक्ष-विघ्न, आदिमें विघ्नोके  
 अविघ्न गरोरहे धोर जो अक्षर प्रकारके विघ्नोका नाम  
 करनेके लिए होना है ।  
 टावर एक, हेमिन्टनका कहना है, कि सेवानमें जो  
 एकोनाइट मिटती है यह चार जातियोंमें विभक्त है,—  
 १ सिगिया विघ, २ विघ, ३ विघम धोर ४ निर्विघ्नो ।  
 ये कहते हैं, कि निर्विघ्नोमें विघ आतोय कोरि बहुत  
 नहीं है । यह निर्विघ्नो एको नाइटनिघ्नको अक्ष है ।  
 मिटर को अक्षुक्तका कहना है, कि यह निर्विघ्नो विघ-  
 नामक है धोर इनमें गरोरका विघ निरुक्त कर सिद्ध  
 मात्र होता है । टावर डायमक (Dr. Dymock)  
 के मतमें सिद्ध निरुक्तकाग एकोनाइटको निर्विघ्नो  
 नहीं कहते, बल्कि समेतता मानते हैं जो विघनामक  
 है । सिद्धोका निर्विघ्न गच्छ निर्विघ्नोमें भिन्न है ।  
 विघने, जितने विघ है मरका बोध होता है ।  
 इनमें साबित होता है, कि पुराकाशमें निर्विघ्नो  
 नामक कोरि निर्दिष्ट प्राप्त नहीं पा । पर ही, तब एको-  
 नाइट विघनामक है धोर लतापत्ता-जात बोधप्रसन्न  
 हुई है, तब नहीं बोध निर्विघ्नो कहनातो हो ।  
 सामान्यमें जो Costus root पाई गई हो, उसीको  
 बरके अविघ्नो निर्विघ्नो कहते हैं । विमानयके अवि-  
 घ्नपरमव यह प्रकारकी एकोनाइट प्राप्त है, जमीं कुछ  
 भी विघ नहीं है, अरु यह अविघ्न है । कोल्लुक्तका  
 कहना है, कि निर्विघ्नो धोर अक्षरकार में टोनी एक ही  
 है । अक्षरकार (Aimale) में अक्षर हेमिन्टनरहित  
 निर्दिष्ट गच्छ निर्दिष्टोमें अक्ष है । अक्षका कहना  
 है, कि Nihilis गच्छको अक्ष नाम Carenum Zed-  
 eris है, किन्तु अक्षरकार अक्ष विद्या विद्यु इमे Dis-  
 tinctio in drachmas अक्षरकार है । विमानयके निर्दिष्टो

किसी स्थानके लोग शीघ्र ही श्वेत रोगको निर्विष्टो कहते हैं। *Cynantus Lobatus* नामक नेपालीय प्रकृत निर्विष्टो रोगके मूलको तेलमें मिश्र कर उसे वातके उपर लगानेसे वातरोग शरीरमें हो जाता है। भोट-राज्यमें जो निर्विष्टो है उसके मूलका वे लोग दन्त-वेदनाके समय व्यवहार करते हैं। हिमालय पर्वतका *Delphinium denudatum* दक्षिणभागमें उत्पन्न होता है। गिरमालीसे कर कुमायून और कुल तक यह मूलको नामसे प्रसिद्ध है। कहीं कहीं इसको निर्विष्टो कहते हैं।

मीर मधुपर्द होसेने ५ प्रकारके जड़वारका उल्लेख किया है। इनमेंसे खटाई रोग सबसे उपकारी है। इनका खासत पहिले मोटा और पीछे तोता है। यह बाहरसे तो देखनेमें काला, पर भीतरसे धैर्य रंगका लगता है। तिब्बत, नेपाल और रङ्गपुरमें द्रितीय और तृतीय प्रकारका रोग पाया जाता है। चतुर्थ प्रकारका रोग कुछ काला होता है और खादमें बहुत तोता। कहते हैं, कि दक्षिण प्रदेशके पार्वत्यप्रदेशमें यह रोग बहुत उत्पन्न होता है। सुतरां यह *Delphinium* or *Aconitum* जातिका नहीं है। पञ्चम प्रकारके रोगका नाम *Antila* है जो स्पेन देशमें पैदा होता है। डाक्टर सुहीन सरीफका कहना है, कि दक्षिण भारतके बाजारमें तीन प्रकारका जड़वार विक्रय होता है जो विद्यालय पदार्थ विज्ञान है और एकीगण्ट जातिका है। इस प्रकार नाना स्थानोंमें नाना प्रकारकी निर्विष्टो देखनेमें आती है। निर्विष्ट (सं० त्रि०) निर-विश्र-क्त। १ कृतभोग, जो भोग कर चुका हो। २ प्राप्तके तन, जो अपनी तन-खाह पा चुका हो। ३ कृतविवाह, जो विवाह कर चुका हो। ४ कृतान्निहोत्र, जो अग्निहोत्र कर चुका हो। ५ भोग्य, जो भोग करने योग्य हो। ६ मुक्त, जो छोड़ दिया गया हो।

निर्विज्ञ (सं० पु०) निर्गतं वोजमस्य। १ वोजगम्य-जिसमें वीज न हो। २ कारगरहित, जो बिना कारणका हो। (पु०) ३ पातञ्जलीय समाधिभेद, पातञ्जल-के अनुसार एक समाधि।

सम्प्राप्त इति ज्ञं वन्द्यं ही जाती है, तब सर्व-

निरोध नामक समाधि होती है। तात्पर्य यह कि योगी लोग बहुत पढ़नेसे निरोध-ध्यान करके पार रहे थे। अभी उसी ध्यानके बलसे उनके चित्तका यह पत्र लम्बन भी निरुद्ध या विलीन हो गया। चित्त जिस वीज-का अवनमन कर वृत्तमान था, अभी वह भी नष्ट हो गया। इसी पत्रस्थाको निर्विज्ञसमाधि कहते हैं। यह निर्विज्ञसमाधि जब परिपक्व होगी, चित्त उसी समय अपने चित्तभूमि प्रकृतिका प्रायश्चित्त होगा। प्रकृति भी स्वतन्त्रा हो जायगी, सच्चिदानन्दमय परमात्मा भी प्रकृतिके अन्तर्गते मुक्त हो जायेंगे। इन पत्रस्थामें मनुष्य को सुख, दुःख पादिका कुछ भी अनुभव नहीं होता और उषवा-साध हो जाता है।

निर्विज्ञा (सं० स्त्री०) निर्विज्ञ-टाप। काकलीद्राक्षा, क्रियामिग नामका मिष।

निर्वीर (सं० त्रि०) निर्गतो वीरो यस्मात्। वीरगम्य, प्रभुताहोन।

निर्वीरा (सं० स्त्री०) निर्गतो वीरवत् पतिःपुत्रो वा यस्याः। पतिपुत्रविहीन, वह स्त्री जिसके पति और पुत्र न हो।

निर्वीर्य (सं० त्रि०) निर्गतो वीर्यो यस्याः। वीर्य-गम्य, जहाँ सत्ता न हो।

निर्वीर्य (सं० त्रि०) वीर्यहीन, बल या तीव्ररहित।

निर्वृष्ट (सं० त्रि०) वृष्टगम्य, बिना पैसका।

निर्वृत (सं० त्रि०) निर-वृ-क्त। सुख, प्रदम, सुग।

निर्वृति (सं० स्त्री०) निर-वृ-क्तिन्। १ सुस्थिति, प्रम-दता, आनन्द। २ मोक्ष। ३ मृत्यु। ४ शान्ति। (पु०) ५ विदम्बणीय वृष्णिके पुत्र।

निर्वृत्ता (सं० त्रि०) निर-वृ-क्त। निष्पन्न, जो पूरा हो गया हो।

निर्वृत्तगम्य (सं० पु०) दापरगमके यदुर्वशीय नृपभेद-निर्वृत्तात्मन् (सं० पु०) विष्णु।

निर्वृत्ति (सं० स्त्री०) निर-वृ-क्त भाव-क्तिन्। १ निष्पत्ति (वि०) निर्गता इतिर्जीविका यस्य। २ जीविकारहित, जीविकाहोन।

निर्वृत्त (सं० त्रि०) १ वर्षारहित, बिना वर्षाका। २ उपभरहित, बिना बैसका।

निर्देश ( सं० ति० ) निर्देशक ।  
 निर्देशक ( सं० ति० ) निर्देशक ।  
 निर्देश ( सं० पु० ) निर्देश भाग्य-पत्र । १ व्याप-  
 मानमा, चरमान । २ नागरमहा व्यापिभाव । ३  
 परम वेदाय । ४ वेद-पत्र । ५ विद, दुःख । ६ चतुर्मास ।  
 ( ति० ) निर्देशो वेदो यन्मात् । ७ वेदरहित ।  
 निर्देश्य ( सं० ति० ) निर्देश-मन्त्र मन्त्रः । वेद-  
 द्यो ।  
 निर्देश्य ( सं० पु० ) सुदुर्लभ कर्त्तव्येभ्यः धारणादेः,  
 सुदुर्लभ चतुर्मास व्याप हेतुना एत योज्या ।  
 निर्देश्य ( सं० ति० ) कल्पनहीन ।  
 निर्देश्य ( सं० पु० ) निर्देश्य, यत्र । १ भोग । २ वेदन,  
 तनवाह । ३ मूर्च्छा, मूर्च्छा । ४ विवाह, व्याह, गादी ।  
 निर्देश्योप ( सं० ति० ) भाग्य, लब्ध भोग कर्म योप्य,  
 यनि व्याह ।  
 निर्देश्य ( सं० पु० ) निर्देश्योप । १ गात्रोप,   
 सुदुर्लभ लज्जिता, लज्जिताया एव योज्या । २ रोगो ।  
 ( ति० ) निर्देश्यो वेदो यन्मात् । २ वेदरहित ।  
 निर्देश्य ( सं० ति० ) १ निर्देश्योप । २ परितोभिन ।  
 ३ सुप्रकार योप्य ।  
 निर्देश्यकाम ( सं० पु० ) निर्देश्योप कामः यद्य, सुतोभिन-  
 भोगः । विद्योपकाम, यत्र जो विद्या करणा भावना यो ।  
 निर्देश्य ( सं० ति० ) मनुभाष्यवर्तिन, मिय ।  
 निर्देश्य ( सं० पु० ) मनुभाष्यवर्तिन, मिय ।  
 निर्देश्य ( सं० ति० ) वचनकारा, विभाग करनिभाना ।  
 निर्देश्य ( सं० ति० ) यामहीन, मूर्च्छा ।  
 निर्देश्य ( सं० ति० ) व्यापकहीन ।  
 निर्देश्य ( सं० ति० ) व्यापकहीन ।  
 निर्देश्य ( सं० पु० ) निर्देश्य भाग्य-पत्र । १  
 द्विद, द्विद । २ निर्देश्य व्याप, निर्देश्योप । ( ति० )  
 ३ व्यापकहीन, निर्देश्योप ।  
 निर्देश्य ( सं० ति० ) निर्देश्य, वेदरहा ।  
 निर्देश्य ( सं० ति० ) व्यापकहीन ।  
 निर्देश्य ( सं० ति० ) व्यापकहीन, यत्र यामहीन ।  
 निर्देश्य ( सं० ति० ) व्यापकहीन, यत्र यामहीन ।

निर्देश्य ( सं० ति० ) १ व्यापक, व्यापकहीन । २ व्याप-  
 कीन ।  
 निर्देश्य ( सं० ति० ) व्यापकहीन, रोममुल, मोरोम,  
 यन्मा ।  
 निर्देश्य ( सं० ति० ) निर्देश्यो व्यापकहीन यन्मात् ।  
 व्यापकहीन, विना कामकाजका ।  
 निर्देश्य ( सं० ति० ) निर्देश्य व्यापकहीन । १ निर्देश्य । २  
 ममान । ३ सुमन्वत । ४ व्याप, चरनिवन्त ।  
 निर्देश्य ( सं० पु० ) निर्देश्य योपकहीनमात् ।  
 निर्देश्य, मागदलिका, दोषारो मगाई कुई यद्य लक्ष्मी  
 यादि निर्देश्य लक्ष्मी योप यन्मा योप योप योप ।  
 निर्देश्य ( ति० ) २ व्यापकहीन योप ।  
 निर्देश्य ( सं० ति० ) १ व्यापकहीन, निर्देश्य योपकहीन ।  
 २ व्यापक, निर्देश्य योप योप ।  
 निर्देश्य ( सं० ति० ) व्यापकहीन, यामानाग्युत् ।  
 निर्देश्य ( सं० ति० ) १ व्यापकहीन, व्यापकहीन । २  
 व्यापकहीन, याम योप योप ।  
 निर्देश्योप ( सं० पु० ) निर्देश्योप, योपकहीन ।  
 निर्देश्योप ( सं० ति० ) निर्देश्योप ।  
 निर्देश्य ( सं० पु० ) निर्देश्योप, निर्देश्योप ।  
 १ व्यापक, व्यापकहीन निर्देश्योप । २ व्यापक,  
 यामाना । ३ व्यापक, याम करणा ।  
 निर्देश्योप ( सं० ति० ) निर्देश्योप, याम करणा  
 योप, व्यापकहीन योप ।  
 निर्देश्योप ( सं० ति० ) व्यापकहीन योप, योपकहीन  
 योप ।  
 निर्देश्य ( सं० ति० ) १ व्यापकहीन, विना व्यापक । २  
 व्यापकहीन व्यापक । ३ व्यापकहीन ।  
 निर्देश्य ( सं० पु० ) निर्देश्य व्यापक । १ व्यापकहीन ।  
 निर्देश्य ( सं० पु० ) निर्देश्य व्यापक । १ व्यापकहीन ।  
 २ व्यापकहीन व्यापक हीन, व्यापकहीन । ३ व्यापकहीन  
 व्यापकहीन । ४ व्यापकहीन । ५ व्यापकहीन ।  
 निर्देश्य ( सं० ति० ) निर्देश्योप व्यापकहीन । १ व्यापक-  
 हीन । २ व्यापकहीन व्यापक हीन । ३ व्यापकहीन  
 व्यापकहीन ।

निहारिंष्ट ( स० स्त्री० ) निहारभवन, पाठाना ।

निहारिन् ( स० पु० ) निहारति दूरं गच्छति निर-ह-णिनि । १ दूरगामिगन्ध, वह गन्ध जो बहुत दूर तक फैले। ( त्रि० ) २ निहारणकर्ता, शयको जनानके लिये से जानिवाला ।

निहिम ( स० शब्द० ) हिमस्याभावः पशयोभावः । १ हिमाभाव । निर्गतं हिमं यस्मात् । ( त्रि० ) २ हिम-शून्य ।

निहंत ( स० त्रि० ) अपहृत, हटाया हुआ, निकास हुआ ।

निहंत्य ( सं० त्रि० ) भूलसे लाया हुआ ।

निहंति ( स० स्त्री० ) खपत्याच्युत, वह जो अपने स्थान-से हटाया गया हो ।

निहंतु ( स० त्रि० ) १ कारणहीन, जिधमें कोई हेतु वा कारण न हो ।

निहंति ( स० पु० ) नि-ह-न्ति-च्ञ् । शब्दभेद, पक्षी घादि-का शब्द ।

निहंतिन् ( स० पु० ) शब्दशुद्ध, ध्वनित ।

निहंस ( स० पु० ) निःशेषिणं हंसः । नितान्त हंस, चपप्राम ।

निर्हीक ( स० त्रि० ) निर्भीक, साहसो ।

निल ( स० पु० ) एक राजसका नाम जो मालो नामक राजसकी वसुदा नामकी स्त्रोमे उत्पन्न हुआ था और जो विभोपणजा मन्त्री था ।

निल—एक चन्द्ररज सेनाध्यक्ष । इत्यो मद्रयुद्धमें इन्होंने अच्छा नाम कमाया था । प्रियाहोयुद्धके समयमें भी इन्होंने अपने बल, बुद्धि और साहसका अच्छा परिचय दिया था । सिवाहीबुद्ध देखो ।

निलङ्ग—हेटरावाद राज्यके बोदर जिलेका एक तालुक । इसका भूपरिमाण ३१५ वर्गमोल और लोकसंख्या लगभग ४८००० है । इसमें ८८ ग्राम जाते हैं जिनमें २० जागोर हैं । यहाँका राजस्व डेढ़ लाखमें कुछ ऊपर है ।

निलम्—१ तिब्बतस्य एक ग्राम । यह चुङ्ग ( Chungsa ) जिलेकी जाङ्गवी शयवा निलम् ( Nilum ) नदीके किनारे अवस्थित है । २ उत्तर भारतको एक नदी । यह तिब्बत-

से निकल कर हिमालयको पार करतो हुई भागोरको पर्याप्त गङ्गा नदीके साथ मिल गई है । कलकत्तेमें जो नदी हुगली नामसे बहती है, कोई कोई इसे ही निलम् कहते हैं ।

निलम्बूर—मद्राज प्रदेशके मलबार जिलेका कूरनाट तालुकान्तर्गत एक गांव । यह प्रमत्त ११° १०' उ० ७१° ०६' १४' पू० के मध्य अवस्थित है । जनसंख्या २७०० है । यहाँ रबरके पेड़ तथा मङ्गलजो नामक एक प्रकारकी शहत लकड़ी पाई जाती है ।

निलय ( स० पु० ) निनीयते अस्मिन्निति नि-नी-यत् । १ गृह, घर, मकान । २ निःशेषरूपमे शय, पदार्थ, गायव । ३ शाययस्थान ।

निलयन ( स० स्त्री० ) निनीयते चत्त नि-नी चाधारे ल्युट् । १ नोड़, बैठने वा ठहरनेका स्थान । २ श्लेष, सम्बन्ध ।

निलबाल—बम्बई प्रदेशके अन्तर्गत त्राठियावाड़के गोहिल-वार विभागका एक छोटा राज्य । यहाँकी वार्षिक आय २४५,००० है जिसमेंसे इटिंग गवर्मेण्टको ५११,००० और जूनागढ़के नवाबको १५४,००० करमें देने होते हैं ।

निलाम ( हि० पु० ) नीलाम देखो ।

निलिम्प्य ( स० पु० ) निलिम्प्यतीति नि लिप ( नी लिम्पिर्वाच्यः । पा ३।१।१८ ) इत्यस्य वासिर्कोत्थय गः । दिव, दिवता ।

निलिम्प्य-निर्भरी ( स० स्त्री० ) निलिम्प्यानां देवानां निर्भरी नदी । गङ्गा ।

निलिम्पा ( स० स्त्री० ) नि-लिप्य-ग, सुचादित्वात् मुम्, स्त्रियां टाप् । १ स्तोत्रो, गाय । २ दीहनभाण्ड, दूध दूहनेका वस्तु ।

निलिम्पिका ( स० स्त्री० ) निलिम्पा एव स्वार्थे कन्, टाप् चत इत्वं । मौरभेयो, गाय ।

निमोन ( स० त्रि० ) नितरां मोनः नि-नी-न्त । निःशेष-रूपमे नीन, संलम्ब, चतान्त सम्बन्ध ।

निनीनक ( स० त्रि० ) निनीनस्य चतूरेणादि, रति श्रेण्यादित्वात् क । निनीन सगिनकटदेग प्रभृति ।

निपच ( स० पु० ) यथादिमें चत्तर्ग जीवको संज्ञामेद, वह जीव या पशु जो यज्ञ पादिमें चक्रनं किया जाय ।

निवचन ( स० स्त्री० ) निरन्तरं वचनं, प्रादितत् । निर-न्तर वचन, निरन्तर वाक्य ।

निबन्धा ( नि० खी० ) निबन्ध देवो ।  
 निबन्धा ( नि० खी० ) एक प्रकारको नाम ।  
 निबन्ध ( सं० खी० ) निबन्धे प्रति । १ स्थितप्रज्ञादि, जो  
 वदन् नीचेने हो । ( पु० ) २ निबन्धे, लगई ।  
 निबन्धा ( सं० खी० ) १ स्थितप्रज्ञा, वर जो नीचेको  
 घोर प्राणा हो । २ वरतनिबन्धाको घोर चक्रवर्त्त,  
 वराङ्क वरमे भीषे उल्लास ।  
 निबन्धुङ्क विरोधा—प्रविष्ट मन्दिर जो पुनः निवेके नाम  
 नामक विभागमे चरचित्त है । एक गोमार्दि बरमे  
 प्रतिष्ठाता है । १८१० ई०मे पुस्तकसंग्रह चरवाटाम  
 नामक गुप्तकारके क्रिमे भीमेने ३००० वः वर्षे वरके  
 हमका सोव मन्त्रा विद्या । मन्दिरमे जो देवमूर्ति  
 स्थापित है, वह निबन्धुङ्क नाममे धारि गई हो । एते  
 कारण वर विरोधा देव निबन्धुङ्क नाममे प्रविष्ट है ।  
 मन्दिर वदन् प्रसादा घोर मन्त्रारम है । हमके चारो  
 घोर एक वदन् भाग्य घोडा उद्यान है प्रा मनुष्योके  
 हानोपयोगी एक प्रकारक चरवणा भो विद्यमान है ।  
 मन्त्राभी घोर भिक्षुकोके वरनेके निवे पवित्र घोर  
 मन्दिरमे मन्त्र एक विद्या चारम है ।  
 निबन्धन ( सं० खी० ) निबन्धभावेऽनुवृत् । १ विवादि-  
 के वरमे दास । २ वर जो कुट वितरि धादिरे वरमे-  
 मे दास विद्या नाम ।  
 निबन्ध ( सं० खी० ) निबन्धभूतव्यर्त्तु वरतारि चर ।  
 १ निबन्धक, निबन्धन करदेवाणा ।  
 निबन्धा ( सं० खी० ) निबन्धा विद्यतेऽति निबन्ध चर ।  
 चरिवादिता, कुशा ।  
 निबन्ध ( सं० खी० ) प्रयाज्ञा, भीटा वृथा ।  
 निबन्धक ( सं० खी० ) प्रतिबन्धक, प्रयाज्ञात ।  
 निबन्धन ( सं० खी० ) निबन्धनभूतव्यर्त्तु । १  
 निबन्ध । २ ऐतरेय, प्राचीनकालमे भूमिको एक भाग  
 जो ३१० हात लम्बाई घोर ३१० हात चौडाईको होतो  
 हो । जो मनुष्य एक निबन्धन भूमि भिक्षुको दास करमे  
 है, के वरतनीकेमे प्रा का चरवन्नु लुटई है । २ भाग्य,  
 मुक्त्यर्थकचर । ४ वरके हाना वा भीटाणा ।  
 निबन्धनवदन्—एक वर वदन् । वदन् नाम मुहुरेव-  
 को वर वर चरवा नामके वरव दे वारि, वर कश्चि-

वदन् वोटमे ममय प्राती वर लघुमे वर वर वर  
 विद्याम विद्या या, वरमे वरान वर वर वदन् निर्मित है ।  
 गोमार्दिमानक गुप्तप्रवृत्त वर वदन् देव मर है ।  
 निबन्धा भोव ( सं० खी० ) निबन्धा-विद्य-चक्रवर्त्त । मन्त्र-  
 भीन, भीटने चोव्य, भीटे भी घोर वरने चोव्य ।  
 निबन्धनमान ( सं० खी० ) जो भीट वरवा हो ।  
 निबन्धनविद्य ( सं० खी० ) निबन्ध-विद्य-तथा । निबन्धन  
 चोव्य ।  
 निबन्धनित ( सं० खी० ) निबन्ध-विद्य-तथा । प्रयाज्ञा, जो  
 भीटाणा मया हो ।  
 निबन्धनित्य ( सं० खी० ) निबन्ध विद्य-तथा । वरको  
 भीटा नामा उचित हो ।  
 निबन्धनित्य ( सं० खी० ) जो वरमे भीट मया हो ।  
 निबन्धनित्य ( सं० खी० ) १ मन्त्राभावे प्रयाज्ञा, जो  
 मुहुरेमे भाग चारवा हो । २ निबन्धन । ३ जो वरके  
 घोर वर चारवा हो ।  
 निबन्धन ( सं० खी० ) १ प्रयाज्ञा । २ निबन्धन । ३  
 पुनर्मान ।  
 निबन्धन ( सं० खी० ) वरव, वर, वर ।  
 निबन्धन ( सं० खी० ) निबन्धनव्यर्त्तु, निबन्ध-वर्त्तित्य ।  
 वर, मन्त्रान ।  
 निबन्धन ( सं० खी० ) निबन्धनव्यर्त्तु, निबन्ध चारवा  
 चरव्य । १ वरव, वर । २ भीम, वर ।  
 निबन्धन ( सं० खी० ) मन्त्राभावे, निबन्ध चारवा वदन् ।  
 १ वर, वर, मन्त्रान । २ वर, वरव ।  
 निबन्धना ( नि० खी० ) निबन्धा चरवा, वरवा ।  
 निबन्धन ( सं० खी० ) निबन्ध-तथा । जो वरवाणा-  
 निबन्धव्यर्त्तु ।  
 निबन्ध ( सं० खी० ) निबन्धाभूतव्यर्त्तु । १  
 निबन्ध । २ ऐतरेय, प्राचीनकालमे भूमिको एक भाग  
 जो ३१० हात लम्बाई घोर ३१० हात चौडाईको होतो  
 हो । जो मनुष्य एक निबन्धन भूमि भिक्षुको दास करमे  
 है, के वरतनीकेमे प्रा का चरवन्नु लुटई है । २ भाग्य,  
 मुक्त्यर्थकचर । ४ वरके हाना वा भीटाणा ।  
 निबन्धनवदन्—एक वर वदन् । वदन् नाम मुहुरेव-  
 को वर वर चरवा नामके वरव दे वारि, वर कश्चि-

निवार ( हि० वि० ) १ नवीन, नया। २ विलक्षण, अनोखा।

निवाक ( सं० वि० ) नि-वच् वाहुलकात् घुञ् । निघ-चनगील ।

निवाज ( फ्रा० वि० ) छपा करनेवाला, अनुपम करने वाला।

निवाज—१ हिन्दीके एक कवि। ये बिलग्रामके निवासो और जातिके सुनाई थे। इनकी गृहकारसकी कविता अच्छी होती थी।

२ हिन्दीके एक कवि। ये जातिके ब्राह्मण और भक्तवेदनियासी थे। महाराज कृतमाल बुन्देला पद्म नरेशके दरबारमें ये रहते थे। राजमहालकी आश्रामे इन्होंने शकुन्तलानाटकका संस्कृतमें हिन्दीमें अनुवाद किया था।

३ एक हिन्दी-कवि। ये बुन्देलखण्डके ब्राह्मण थे और भगवन्तराय खोखो गजोपुरवालेके यहाँ रहते थे

निवाजिम ( फ्रा० स्त्री० ) १ छपा, मोहरवानो। २ दया

निवाड़ ( हि० स्त्री० ) निवार देखो।

निवाड़ा ( हि० पु० ) १ छोटी नाव। २ नावकी एक मोट्टा जिसमें उसे बीचमें से जा कर चकर देते हैं, नावर।

निवाड़ी ( हि० स्त्री० ) निवारी देखो।

निवात ( सं० स्त्री० ) नितरा वाति गच्छत्यत्र नि-वा परि-करणे-त् । १ भाष्य, निवास, घर। निवृत्तो वातो यस्मिन् । २ अवात, वातशून्य। ( पु० ) ३ गच्छामे-वा-जम्, कवच जो हथियारसे छिदान जा सके । ४ निवातक।

निवातकवच ( सं० पु० ) १ इत्यविशेष, एक असुर जो हिरण्यकशिपुका पीत और सफ़ादका पुत्र था। निवात गच्छामे-वा कवच' येषामिति । २ दानवविशेष।

महाभारतमें लिखा है, कि देवदेवो अमितवीर्यः प्रायः तीन करोड़ दानव थे जो निवातकवच कक्षान्ते थे। पुराण आदि ग्रन्थोंमें लिखा है, कि निवातकवचोंने अपने मातृवस्त्रमें देवदेव-पादि परमरक्षकों को बंधा परास्त किया था और देवगण भी इनसे डरा करते थे।

कठोर तपस्याके प्रभावसे उन्होंने ब्रह्माको समुद्र कर बर पाया था, कि वे निरापदसे समुद्रकुक्षिमें बास करनेगे और देवताओंसे कभी पराभूत न होंगे। उनकी पश्चिमत समुद्रकुक्षि और ब्रह्माको चित्रित विद्याल शोधयेणो पहले देवराज इन्द्रके शासनाधो न थी। पछि ब्रह्माके यामे शक्ति हो कर उन्होंने देवराजको पराजित किया और वहाँसे उन्हें निकाल भगाया।

वोरयच्छ ततोय पाण्डव धनञ्जय जव दुर्योधनः पडयन्वसे अपने चार भाइयोंके साथ जंगलमें बास करते थे, उस समय वे महादेवको प्रसन्न कर उनके वरपभावसे प्रसन्न सीखनेके लिये स्नान गये थे। वहाँ देवराज, चित्रधन और शत्यायु बहुसंख्यक प्रसाविट्ट देव, यज्ञ और गन्धर्वनि भर्तृन्को अश्वविद्या सिखाई। दिव्यास्त्रयोग, पुनः पुनः प्रयोग और उपसंहार, अस्त्रादि दम्भ व्यक्तिसा पुनः श्लोशन और परास्त्रमे अभिभूत निज अज्ञका उद्घोषन ये पांच प्रकारकी अस्त्र चानांशो विधि जब भर्तृन्को अच्छी तरह मालूम हो गई, तब इन्द्र पादि देवताओंने उन्हें सन्तोष चिह्नस्वरूप अपने प्रकाशके दिव्यास्त्र दिये। प्राते समय भर्तृन्ने जब शुद्धाक्षिणा देवोंको प्रकटा प्रकट की, तब इन्द्रने उन वर निवातकवचोंको मारनेका भार सौंप दिया।

तदनन्तर देवतुल्य वीर्यवान् गमरकुयन धनञ्जय दिव्य विमान पर चढ़ कर जहाँ निवातकवच रहते थे वहाँ पहुँच गए। दानवगण भर्तृन्की स्तर्ग, मर्त्य और पातालभेदो गन्धर्वनि सुन कर लोहसुहर, सुपन, पट्टि आदि नाना प्रकारके खड्ग और बहुसंख्यक अस्त्रास्त्रकी अपने अपने हाथमें लिये उन पर टूट पड़े। निवातकवच ऐसे मायावी थे, कि उनके मायायुद्धोंमें देवकी, समुद्रत मन्थमाचिकी भी रणमें पीठ दिखाना पड़ी थी। ओ झूठ हो, भर्तृन्ने बहुत आसानीसे उन दुर्बल दानवोंकी एक एक कर युद्धमें मार डाला और इस प्रकार देवताओंका मनोरथ सिद्ध किया।

( महाभारत वनपर्व १५८-१०३ प० )

भागवतमें लिखा है, कि रामायणमें निवातकवच रहते थे।

निवान ( हि० पु० ) १ जोचो जमोत जहाँ मोड़, मोड़



निविद् (सं० स्त्री०) निविद्-करणे क्तिप् । १ वाक्य ।  
२ वैश्वदेवके यज्ञविषयमें शंभनीय मन्त्रपदभेद । ३  
स्युक्त शब्दाय ।

निविद्धान (सं० स्त्री०) निविद् ग्युद्धो धोयनेऽस्मिन् धा-  
धाधारे ल्युट् । ऐकाहिक यज्ञादि, वध यज्ञ आदि जो  
एक ही दिनमें समाप्त हो जाय ।

निविद्धानोय (सं० त्रि०) निविद् सम्बन्धोय यैदिक मन्त्र-  
संयुक्त ।

निविरोध (सं० त्रि०) नि-नता नासिका यस्य, विरोधच्  
(नेत्रिङ्ग विरोधवौ । पा ३।२।३२) । नत-नासिकायुक्त,  
जिसकी नाक चिपटो या दबी हो । २ सान्द्र, घना ।  
(स्त्री०) ३ नत-नासिका, चिपटी नाक ।

निविद्वक्त (सं० त्रि०) निवारणेच्छुः, जो रोकना या  
हटाना चाहता हो ।

निविष्ट (सं० त्रि०) नि-विश-क्त । १ चित्ताभिविद्य-  
युक्त, जिसका चित्त एकाग्र हो । २ एकाग्र । ३ भाविष्ट,  
लपेटा हुआ । ४ प्रविष्ट, घुसा या घुसाया हुआ । ५  
भावह, बांधा हुआ । ६ स्थित, ठहरा हुआ ।

निविष्टि (सं० स्त्री०) नि-विश-क्तिच् । स्त्रीमंसर्ग,  
कामासक्त ।

निवीत (सं० स्त्री०) निवीतये स्मेति नि-व्ये वाच्छादने  
क्त, तस्ते सम्प्रसारणं । १ वाच्छादन वस्त्र, ओड़नेका  
कपड़ा, चादर । इसका पर्याय प्राप्त है । २ कण्ठ-  
सम्बन्धन यज्ञसूत्र, यज्ञका वह सूत्र जो गलेमें पहना  
जाता है । ३ निवृत्त ।

निवीतिन् (सं० त्रि०) निवीतमस्त्यस्य इति । निवीत  
युक्त, जिसने यज्ञसूत्र धारण किया हो । जिसके गलेमें  
यज्ञसूत्र मालाकी तरह झुलता रहता है, उसीको निवीती  
कहते हैं । जिसका धार्यं हाथ यज्ञसूत्रसे बाहर रहता  
और यज्ञसूत्र दाहिने कन्धे पर रहता है उसे प्राचीना-  
वीती और जिसका दाहिना हाथ यज्ञसूत्रसे बाहर रहता  
और यज्ञसूत्र बाएँ कन्धे पर रहता है उसे उपवीती  
कहते हैं ।

निवीय (सं० त्रि०) वीयंहीन, जिसमें वीय या पुरुषत्व  
न हो ।

निवृत् (सं० स्त्री०) काल्यायनोक्त ऋग्वेदभेद, एक प्रकार-

का वर्षा वृत्त जिसमें गायत्री आदि षाठ प्रकारके ऋग्मंत्र  
प्रतिपादमें एक एक अक्षर कम रहता है ।

निवृत्त (सं० त्रि०) निविद्यते वाच्छाद्यते स्मेति नि-वृ-क्त ।  
१ नियत, बाहरसे टका हुआ । परिवर्धित, घिरा  
हुआ ।

निवृत्त (सं० स्त्री०) नि-वृत्त भावे क्त । १ निवृत्ति, सुनि,  
छुटकारा । २ यत्नभेद, चित्त विषयमें उपरम । ३  
अभाव । ४ निवृत्तपूर्वक कर्म । (त्रि०) ५ छूटा  
हुआ । ६ विरक्त, जो भसग हो गया हो । ७ जो छुटो  
या गया हो, खासो ।

निवृत्तमंस (सं० स्त्री०) गुह्यरोगभेद ।

निवृत्तसन्तापन (सं० स्त्री०) निवृत्तं सन्तापनं यस्य ।  
सन्तापनिवृत्त ।

निवृत्तसन्तापनीय (सं० स्त्री०) निवृत्तं सन्तापनं यस्य  
तस्मै हितुं क्ष । रसायनभेद ।

“यथा निवृत्तेसन्तापा मोदन्ते रिषि देवताः ।

तथीवपीरिमा प्राप्यः मोदन्ते मुनि मानवाः ॥”

(गुह्यत वि० ३० अ०)

इसका विषय सुश्रुतमें इस प्रकार लिखा है—देव-  
गण जिन प्रकार सन्तापगुण हो कर स्वर्गमें विचरण  
करते हैं, मानवगण भी उसी प्रकार निवृत्तनिवृत्त भोग-  
के सेवन करनेसे देवगणकी तरह सन्तापगुण हो कर  
पृथ्वी पर विचरण कर सकते हैं । इसके सेवनसे मनुष्य-  
का शरीर युवाके समान और बल सिं हने समान हो  
जाता है ।

इस रसायनका सेवन ७ प्रकारके मनुष्योंके लिए  
कष्टसाध्य है, यथा—घनात्मवान् (अजितेन्द्रिय), अज्ञान,  
दरिद्र, प्रमादी, मोहासक्त, पापकारो और भीषत्रापमागो ।  
इस सब मनुष्योंकी अज्ञानता, अकारण, अस्थिरचित्तता,  
दरिद्रता, अनायत्तता, अधार्मिकता और भोग्यको  
अपानि इन सब कारणोंसे निवृत्तसन्तापनीय रसायनका  
सेवन दुर्घट होता है ।

इस रसायनमें अठारह भोग्यविधा हैं जो शरीरके समान  
भोग्ययुक्त मानी जाती हैं । इनके नाम ये हैं—अजगरी,  
श्वेतकपोतो, कृष्णकपोती, गीनची, वाराहो, कप्या, हत्या,  
पतिहत्या, करिण, अज्ञा, अज्ञाका, पादित्यपरिणो, अज्ञ-



एवमेव, आर्या, महायावती, मोक्षोमी पौर महादेव-  
 यन्त्रः । इत्येते चो मर चोचय पौराणां मूलविदित्तो  
 है, एतं एतन्मोक्षायार्थं तेषां कल्पमेवकामे होम  
 है । एतद्दत्तौतः का एव यमिन मूल मेवम विधिप है ।  
 पारश्वतोः चोचयिणीका चोः सुदुम परिमापमे एक  
 मयामि मेषम परतः आदिप । मोक्षयो, यत्नायो पौर  
 लक्ष्मणयोः इत्यो एतत् एतत् पर एव नृति परिमाव मे  
 कर दुःखे विप रहै, पीडे वम मूयको एतः पर एव को  
 भारमे हो विना आदिप । एतद्दत्ता का दुष्य एव मार मेष  
 पौर मद्राक्षययन्त्र महाया मेवकोप है । एव निपुण-  
 मन्नापयोग एमाग्रने मेवमने मनुष्याकी पापु वदुनी है  
 पौर पर दिव्य मयो भारप एव ममयसमि पयोपमद्वय  
 हो विपयन परमा है ।

विद्वानमृतारविप एतान द्वारा मर चोचय विर को  
 पाती है । निपय, करककुल्य पाभायूक, हो चद्रुम परि-  
 मिम मूलविदित्त, मर को तरह पाका पौर यत्नाभाः  
 परिदित्तयन्त्र, एते मय एको चोचयको एतद्दत्तौतः ।  
 विरम, म, मन्त्र, चद्वेवय, लक्ष्मण मन्त्रविदित्त,  
 हो परविदित्त होय पौर मोममने ममान होमेमे एने  
 मोमयो । चोःयुक्त, मरोग, मद्रु पौर इत्युसने ममान  
 मन्त्रिदिप होमेमे एने लक्ष्मणयोः हो कल्पमेव यदुनीपौर  
 चद्रुमभाय होमेमे एने भार्या पौर एव वन, यत्नाय  
 मेष्यायू, यत्नयम तथा चद्रुमभाय लक्ष्मणविदित्त चोचय-  
 को एतद्दत्तौतः परमे है । एव पर चोचयविमि तथा पौर  
 मद्रु निपाति होती है । मद्रुयै भीमको तरह मद्रुय  
 परिदिप, चद्रुमभाय को मरकवय चोचयविदित्त  
 चोचयको मर्याः दिव्य, इतिदिप, एतःमने ममान एव  
 पौर मद्रुय चोचयविदित्त तथा मर्याःमने चद्रुयै चोचय  
 यत्नमे ममान चद्रु, यतीट, यते मी मद्रु हो तरह  
 भीम चोचय, तथा यत्नयने एतद्दत्तौतः चोचय  
 मन्त्रय विदित्त कुलविदित्त, काकाएकोने कोमे मद्रु  
 कुलको परतः मद्रुये है । एव चोचयैरे मेवम उरदेमे  
 मन्नायूपा एव होमा है । मूलविदित्त, कोमल एव-  
 यन्त्र चोचयविदित्त पौर चद्रुयै मद्रुयै चोचययो होम  
 है एने चोचयैरे मेवम, चोचयको यत्नविदित्त एकोए  
 एव मद्रुयैरे मद्रुयैरे मेवम तथा मद्रुयै यत्नयने मी

पारां पौर ममान हो मेवम चोचयको मद्रुयैरे मेवम,  
 परतिदित्तमन्त्रय, चि-मद्रुयैरे मेवम वन, मोक्षोचय-  
 मद्रुयैरे एव यत्नयमविप एव योमेमे एने यत्नायो  
 पौर मर्यो मर मर्यायो, पर एनेमे चोचयैरे मरकवय  
 चोचय चोचय मद्रुयैरे मद्रुयैरे चोचयको महायावती  
 मद्रुये है । मोक्षोमी पौर यत्नयोमी चोचयि योमविदित्त  
 पौर चद्रुयैरे होती है । मूलभाय, चोचयैरे यत्नायो तरह  
 विद्वानमृतारविदित्त यत्नया मर्यायोभायमे मद्रुयैरे मद्रुय  
 परतः मर्याविदित्त पौर मर्याविदित्तुय चोचयको  
 मर्यायो मद्रुये है । यह चोचय मर्याये यत्नये यत्नय  
 योमी है ।

एव मर चोचयिणीको विद्वानमृतारविप मर्याये यत्न-  
 मन्त्रय कर उवाङ्मना होमा है । मन्त्रयो है —

“मर्यायाममृतारविप मर्यायो मर्यायो ।

यत्नाय मेवमयारी मद्रुयैरे मर्याये विदित्त यै है”

यत्नाय, यत्नय, एतद्दत्तौतः पौर यत्नयो पारिदो मे  
 मर चोचय मद्रुयैरे है । देवताविमि यत्नयविदित्त यत्नय-  
 मोममे यत्नया मोमयुक्त एव मर चोचयिणीमे पौर यत्न-  
 मे निदित्त योयो है ।

चोचयि-यत्नये एवम—देवकृत् नामक चद्रुयै पौर  
 विद्वानमृतारविप मर्याये यत्नये मद्रुयैरे मर्याये नामक चोचयि,  
 एव हो मद्रुयैरे मेवम मर्याये मर्याये चोचयि मर्याये मे पौर  
 मर्याये मर्याये मोमयो, काशीर मद्रुयैरे मद्रुयैरे मर्याये  
 नामक दिव्य-मर्यायेरे मर्याये, चद्रुयै, चद्रुयै, चोचयता,  
 मोक्षोमी, यत्नयोमी पौर महायावती नामको चोचयि  
 विद्वानो है । कोचयिणी मद्रुये मद्रुये चोचयिणी मर्याये पौर  
 तेषां यत्नय भूमि तरह मर्याये एवम है । एव मर्याये  
 चोचयैरे मर्याये मर्याये मर्याये मर्याये मर्याये है । मर्याये  
 पौर मर्याये मर्याये मर्याये मर्याये मर्याये चोचयिणी  
 योमी है । एव मर चोचयिणीका चोचयि मर्याये मे  
 मेवम विधिप है ।

विद्वानमृतारविप एतान द्वारा मर चोचय विर को  
 पाती है । निपय, करककुल्य पाभायूक, हो चद्रुम परि-  
 मिम मूलविदित्त, मर को तरह पाका पौर यत्नाभाः  
 परिदित्तयन्त्र, एते मय एको चोचयको एतद्दत्तौतः ।  
 विरम, म, मन्त्र, चद्वेवय, लक्ष्मण मन्त्रविदित्त,  
 हो परविदित्त होय पौर मोममने ममान होमेमे एने  
 मोमयो । चोःयुक्त, मरोग, मद्रु पौर इत्युसने ममान  
 मन्त्रिदिप होमेमे एने लक्ष्मणयोः हो कल्पमेव यदुनीपौर  
 चद्रुमभाय होमेमे एने भार्या पौर एव वन, यत्नाय  
 मेष्यायू, यत्नयम तथा चद्रुमभाय लक्ष्मणविदित्त चोचय-  
 को एतद्दत्तौतः परमे है । एव पर चोचयविमि तथा पौर  
 मद्रु निपाति होती है । मद्रुयै भीमको तरह मद्रुय  
 परिदिप, चद्रुमभाय को मरकवय चोचयविदित्त  
 चोचयको मर्याः दिव्य, इतिदिप, एतःमने ममान एव  
 पौर मद्रुय चोचयविदित्त तथा मर्याःमने चद्रुयै चोचय  
 यत्नमे ममान चद्रु, यतीट, यते मी मद्रु हो तरह  
 भीम चोचय, तथा यत्नयने एतद्दत्तौतः चोचय  
 मन्त्रय विदित्त कुलविदित्त, काकाएकोने कोमे मद्रु  
 कुलको परतः मद्रुये है । एव चोचयैरे मेवम उरदेमे  
 मन्नायूपा एव होमा है । मूलविदित्त, कोमल एव-  
 यन्त्र चोचयविदित्त पौर चद्रुयै मद्रुयै चोचययो होम  
 है एने चोचयैरे मेवम, चोचयको यत्नविदित्त एकोए  
 एव मद्रुयैरे मद्रुयैरे मेवम तथा मद्रुयै यत्नयने मी

सर्वे जगत् ईश्वरार्थं करतो है । (धृष्टुन् चिकि० ३० भ०)  
 निष्ठुत्तात्मन् ( स० त्रि० ) निष्ठुत्तः विपवेभ्यः उपरत-  
 भाक्ता चर्तःकरणं यस्य । १ विपयरागगून्व, जो  
 विपयवाग्नासे रहित हो ( पु० ) २ विष्णु ।  
 निष्ठुत्ति ( स० स्त्री० ) निष्ठुत्त-क्तिन् । १ निष्ठुत्ति, सुक्ति,  
 छुटकांग । पर्याय—उपरम, विरति, अपरति, उपरति,  
 पारति । २ श्यायमतसिद्ध यत्नभेद । ३ बोहोके  
 संतुर्नार सुक्ति. वा मोक्ष । ४ बोहोको निष्ठुत्ति और  
 ब्राह्मणोंका मोक्ष एक ही है । निष्ठुत्ति या निर्याण  
 शब्दका अर्थ पुनर्जन्मसे सुक्ति लाभ करना है । ५ महा-  
 देव, शिव । ६ तीर्थविशेष । यहाँ विजयनगरके प्रविद्ध  
 राजा नरसिंहदेवने बहुत दान पुण्य किए थे । ७ एक  
 कर्तव्यभेद । यह धरेन्द्रेते उत्तर और दक्षिणके पश्चिम  
 विरोट्टोरार्थके समोप-प्रस्थित है । यहाँ मवेगियोंके  
 चरनेके लिये बहुत लम्बा चौड़ा मैदान है । इसका  
 दूसरा नाम मरिय है, क्योंकि यहाँ महलियां बहुत पाई  
 जाती हैं । किन्तु इस स्थानके जिस अंशमें पहाड़ी और  
 जंगली लोगों रहते हैं, वही अंश साधारणतः लक्ष नामसे  
 प्रसिद्ध है । इसका प्रधान नगर अहमकुठ, काच्छप और  
 औरङ्ग वा विहारिका है । दूसरा नगर गुरा नदीके  
 किनारे बसा हुआ है और पहाड़ों एक समुल्लसमान शोसन-  
 कर्त्तिके देखलमें है । यहाँके अधिवासी खोजकति, अपरि-  
 च्छेद और सूखे हैं । यवनास्तित स्थानमें जाति-  
 विभागकी कोई सुव्यवस्था नहीं है ।  
 निष्ठुत्तात्मन् ( स० त्रि० ) निष्ठुत्तः भाक्ता स्वल्पं यस्य ।  
 निष्ठुत्त, अर्जन, मर्णादी ।  
 निष्ठुत्तक ( स० त्रि० ) निष्ठुत्तदतीति नि-विद-विच-ल्यु ।  
 निष्ठुत्तनकारी, निष्ठुत्तन करनिवाला, प्रायों ।  
 निष्ठुत्तन ( स० स्त्री० ) निष्ठुत्तते विद्याप्यतेऽनेनेति नि-  
 विद-ल्युट् । १ भावे दान, विनय, विनती, प्रायना ।  
 २ समर्पण ।  
 निष्ठुत्तनीय ( स० त्रि० ) नि-विद-विच-चनीयैर् । निष्ठु-  
 दगाह, निष्ठुत्तन करने योग्य ।  
 निष्ठुत्तयिषु ( स० पु० ) निष्ठुत्तयमिच्छुः, नि-विद-विच-  
 सन्, ततो च । निष्ठुत्तन करनेमें इच्छुक ।  
 निष्ठुत्तित ( स० त्रि० ) नि-विद-कर्मणि क्त । १ कृतनिष्ठु-

दम, निष्ठुत्तन किया हुआ । २ स्थापित, सुनाया हुआ,  
 कहा हुआ । ३ स्थापित, चढ़ाया हुआ, दिया हुआ ।  
 निष्ठुत्त दो ( स० त्रि० ) नि-विद-प्रस्तार्ये इति । निष्ठुत्तन-  
 कारी, प्रकाशक ।  
 निष्ठुत्त ( स० त्रि० ) नि-विद-ल्युट् । निष्ठुत्तनयोग्य,  
 स्थापनीय, जताने लायक ।  
 निष्ठुत्त ( स० पु० ) नि-विद-घञ् । १ विद्यास । २  
 गिरि, डेरा । ३ उदाह, विवाह । ४ प्रवेग । ५ गृह,  
 घर, मकान ।  
 निष्ठुत्तन ( स० स्त्री० ) निष्ठुत्तनार्थगति नि-विद-  
 अधिकरणे ल्युट् । १ गृह, घर, मकान । २ नगर ।  
 ३ प्रवेग । नि-विद-ल्युट्-भावे ल्युट् । ४ स्थापन ।  
 ५ स्थिति । ६ विन्यास । ( त्रि० ) ७ प्रवेगक ।  
 निष्ठुत्तवत् ( स० त्रि० ) निष्ठुत्तः विद्यते यस्य, मत्तु०,  
 मस्य व । विन्यासगुक्त ।  
 निष्ठुत्तन् ( स० त्रि० ) भाश्यप्राप्त, प्रविष्ट, प्रस्थित ।  
 निष्ठुत्तनीय ( स० त्रि० ) नि-विद-पनीयर् । प्रवेगाह,  
 प्रवेगयोग्य ।  
 निष्ठुत्तित ( स० त्रि० ) नि-विद-ल्युट्-क्त । १ स्थापित, २  
 विन्यास । ३ प्रवेगित ।  
 निष्ठुत्तय ( स० त्रि० ) नि-विद-ल्युट् । १ निष्ठुत्तनीय, प्रवेग-  
 योग्य । २ शोधनीय ।  
 निष्ठुत्त ( स० पु० ) १ आच्छादन, आवरणवत्, वह  
 कपड़ा जिसमें कोई चीज ढाकी जाय । २ सामभेद ।  
 निष्ठुत्तन ( स० स्त्री० ) वस्त्र द्वारा आच्छादन, कपड़ेसे  
 ढांकनेकी क्रिया ।  
 निष्ठुत्तय्य ( स० त्रि० ) नि-विद-ल्युट् । निष्ठुत्तनीय, ढांकने  
 योग्य ।  
 निष्ठुत्तय ( स० स्त्री० ) नि-विद-भावे ल्युट् । १ श्यामि ।  
 ( पु० ) २ व्यापक देवभेद । ३ आवर्त्त, पानीका भंवर  
 ४ नीहारजल, कुहासेका पानी । ५ जनस्तम्भ । ६ रुद्र ।  
 ( त्रि० ) ७ व्यापित, फैला हुआ ।  
 निष्ठुत्तान् ( स० पु० ) नितरां विध्यति इति अत्रन् नि-  
 व्यध-णिनि । १ रुद्रभेद, एक रुद्रका नाम । ( त्रि० ) २  
 नितान्त व्यापक ।  
 निष्ठुत्त ( स० स्त्री० ) अग्निनिष्ठुत्त, निरकार चेष्टा, सगो-  
 तार परिश्रम ।

निद्रा ( मं० खो० ) निद्रां गतिं तन्मूर्च्छां च व्यापारानि,  
मो० च, सुषोडशदिवसात् मन्त्रः । १ रात्रि, रात्रि । २ इतिहा,  
इतिहा ।

निद्रा ( वि० वि० ) १ विद्ये विद्यो वाच्यो मं० वा  
मय न को, निद्रा, निद्रा, विद्योः । ( पु० ) २ एक  
प्रकारका श्रुतिविद्ये ।

निद्राकुंवा-मगलदुर निद्राः एक परवना । निद्रा  
३३०००० एक द्वा मगलम १६११ मगमोम है । इन  
पाननेमि कुव १६२ जमेदिनाो जतने है । यह का पति-  
नाम ममोम प्रबंवा है, वनः मनि माक काको पनाम  
उपवता है ।

इम परवनेमि मज्य दुर्गमुखा रात्रयं वदुन ममिह है  
एम वंनरे पादिपुदय एक पमा रात्रदुन ये जिनका  
नाम वनमनिद्रा का । वने भाई मधुंन माय मे पविम  
निद्रांनरे दारातमरे पाकर घडा मम मय मे । परने  
ये दोन भाई दरमडा मंमंनरे मडा मोठरी करते है ।

एक दिन मयाका ममयवा, दोनो भाई रात्राहा  
देहापामि निपुत्र मे । कुह ममय वाद रात्रामे उके  
विद्याम जमेका पादिम दिवा । महांको व्यापार म पामि  
निद्राम मन्ने निवे 'चोय म' मन् ममद्वन चोता है ।  
विद्यु 'चोय' नामक पुत्र दिमामि एक जगार यो । मामुम  
पुत्रा है, वि वलं माक वगरवण्ड हा उप ममय 'चोय'  
मामे ममिह वा । दोनो मारयामि 'चोय म' मन् का  
दुपवा हा चयं मया निद्राः ये इनका प्रगत चयं जानने  
दुव मो रवे म ममम मरे । चयः चयामि कुव क्वमा-  
निद्रोको माय मे निद्रं 'चोय' चामको चामनेरे निवे  
कदम वडाव । मेवम 'चोय' मंन कर मे माता मरव  
मरे, चामुथा निद्रादुर परवना नकामि चने कमेने कर  
निद्रा । मय मया पर क्वायो चामममूमि मया कर मर  
दिनांरे वादोचमे मन् चामनेरे निवे दिनां मय । विद्यु  
महा मा कर मे मुकममामे ममंनरे ऐतिम द्वा । मरे  
ये मोड १६३ मे, मरे वनेरे उमुवनेमे मो मने मुकम-  
मामे चयं कदम जमेने पर वदुन मोपिन मे, चयं मारे  
चका । मधुदुमे १६४ मंन चयम मयाःचयमे मरका  
मिच्छेरे द्वावा वा । चका मरका वदुन चयं मय मय  
मय मय मयकम देवने निवे वदुन मरे मरे

दिवसं वयमित मोहाता कामनें वदुं च मया । मयाः  
घण्टे उवकी मनेरे लारा एक मन्दिरे वदुंवा मया  
महा एक मन्दिरे नाम करन । ३ इवने मरन चोपने  
निवे मं चोपा निद्रा ममोम दो मरे है । मधुने मंमका  
मुमममम है । ये लोग मोहातामि रहने है ।

निद्रा ( मं० पु० ) वनदेममुनमेद, मुरापाःमुपा मन्-  
देवने एक पुत्रका नाम ।

निद्राम ( मं० जो० ) निद्राम-विद्युत् । १ मंन  
देवना । २ उपव, मुनना ।

निद्रा ( मं० खो० ) इववदुनोमुन ।

निद्रा ( मं० खो० ) निद्रां गतिं तन्मूर्च्छां च व्यापारानि  
नि-यो-क-टात् । १ रात्रि, रात्रि । वदोव-रामो, रको  
जलको, मयाको, वकमेदिना, घोरा, मयाः, मयाः,  
दोया, मुदी, मोनो, मयाको, मायावा, मया, मयमेवे,  
मया, निद्र । २ वरोद्रा, वदोः । ३ पादविद्या । ४  
पविम त्योतिवमे मेव, वय, मियुम पादि कः रादिना ।  
निद्राकर ( मं० पु० ) निद्रां चोरोति निद्रा-क-ट ।  
१ मन्मया । २ कुट, मुगाः । ३ मूर, मूर । ४ मया  
देव । ५ एक मरवि का नाम ।

निद्राकरकामोनि ( मं० पु० ) निद्राकरव चदुंन  
जला मोनो यव । निव, मयादेव ।

निद्रालातिर ( वि० खो० ) वको, ममरे, दिममरे ।

निद्राम्या ( मं० खो० ) निद्राया पात्या पलाय । निद्राहा,  
इतिहा, इतिहा ।

निद्रापर ( मं० पु० ) निद्रायां रात्रो परतोनि निद्रा-पर-  
ट । १ रात्र । २ मया मय मरे । ३ विवक, मर । ४  
मं, मय । ५ चोर, चोर । ६ मू, मू । ७ चोरक मयक  
मयमय । ८ मया मय मय । ९ विदुः, विदो । १०  
मरुतिना पमा, मय । ११ मयादेव । १२ एक मंमन  
कवि । १३ मयाको मदेव ( मयो ) ( वि० ) इव विदुः  
मय, मो वानको वने, कुनरे, निद्रा पादि ।

निद्रापरानि ( मं० पु० ) निद्रापराम-मूनां मनि,  
१ मय । मममम, मिव, मयादेव । ३ मयव ।

निद्रापी ( मं० खो० ) निद्राया उव । १ कुनरा । २  
३ मया । ४ वेदिने मयक मयक विदुः । ५ पवि-  
मरिवा मयका ।

निशाचर्म (सं० पु०) निशायां चर्मव आवरणत्वात्।  
अन्धकारं, अंधरा।

निशाचारी (सं० पु०) १ गिवा। २ निशाचर।

निशाच्छद (सं० पु०) मुष्मभेद।

निशाजल (सं० स्त्री०) निशोद्भव जलं मध्यपदभौतिकं  
१ हिम, पाला। २ घोस।

निशाट (सं० पु०) निशायां रात्रौ घटतीति घट् घच्।  
१ पेषक, छल्लू। (त्रि०) २ निशाचर, रातको फिरने-  
वाला।

निशाटक (सं० पु०) निशायां घटति, निशावत् कृत्वात्  
घटतीति वा घट्-ञ्च्, लृ। १ गुग्गुलु, गूगल। (त्रि०) २  
रात्रिचर, रातको विचरण करनेवाला।

निशाटन (सं० पु०) निशायां घटतीति घट्-ञ्च्, । १  
पेषक, छल्लू। (त्रि०) २ निशाचर, जो रातको विचरण  
करे।

निशात (सं० त्रि०) शो निशानि नि-गो-त्त (शाब्दोत्प-  
त्तास्थाम् । पा ३।४।४१) इति सूत्रेण इत्याभावः  
शापित, तोख्योक्त, तेज किया हुआ।

निशातिक्रम (सं० पु०) निशाका अतिक्रमण, रात्रिका  
अवसान।

निशातैश्च—पायुर्वेदीक तैलविशेष, वैद्यकमें एक  
प्रकारका तैल। यह सेर भर कड़वे तैल, धतूरेके पत्तों के  
चार सेर रस, पाठ तोसे पीसो हुई चूस्टी और चार  
तोले गन्धकके मिलसे बनता है। यह तीन कानडे रोगोंके  
लिये विशेष उपयोगी है।

निशाख्य (सं० पु०) निशाया पर्ययः। निशावसान,  
प्रभात, सवेरा।

निशाद् (सं० पु०) निशायां अस्ति भक्षयतीति निशा-घट्-  
घच्। १ निशाद। (त्रि०) २ रात्रिभोजिमात्र, केवल  
रातको खानेवाला।

निशादमिन् (सं० पु०) निशायां पश्यतीति ङ-ञ्चिनि  
पेषक, छल्लू।

निशादि (सं० स्त्री०) निशाया आदिर्यत्र। सायं, संध्या।

निशाद्यतल—पायुर्वेदसंघत तैलौषधिविशेष। प्रसूत  
मंथली—तैल चार सेर। कस्क हरिद्रा, अजवनका दूध,  
सैन्धव, चित्तौमूल, गुग्गुलु, कुटकी, क्षाल, बुरघोरका

मूल सब मिला कर एक सेर, जल १६ सेर। इससे  
भगन्दरोग जाता रहता है।

निशाधीम (सं० पु०) निशाया; पधोगः। निशापति।

निशान (सं० स्त्री०) नि-गो भावे ष्युट्। तोख्यकरण,  
तेज करना।

निशान (फा० पु०) १ चिह्न, लक्षण। २ वह लक्षण या  
चिह्न जिससे किसी प्राचीन या पहनेकी घटना अथवा  
पदार्थका परिचय मिले। ३ किसी पदार्थका परिवर्ण  
करनेके लिये उसके स्थान पर बनाया हुआ कोई चिह्न।  
४ किसी पदार्थसे अद्विष्ट किया हुआ अथवा और किसी  
प्रकारका बना हुआ चिह्न। ५ शरीर अथवा और किसी  
पदार्थ पर बना हुआ स्वाभाविक या और किसी प्रकारका  
चिह्न। ६ वह चिह्न जो अपद मनुष्य अग्ने इत्यादि के  
बदलेमें किसी कागज आदि पर बनाता है। ७ धना,  
पताका, भंडा। ८ पता, ठिकाना। ९ वह चिह्न या मूर्ति  
जो किसी विशेष कार्य या पहचानके लिये नियत किया  
जाय। १० समुद्रमें या पहाड़ों आदि पर बना हुआ वह  
स्थान जहाँ लोगोंको मार्ग आदि दिखानेके लिये कोई  
प्रयोग किया जाता हो।

निशानकीना (हिं० पु०) उत्तर और पश्चिमका कोण।

निशानचो (फा० पु०) वह जो किसी राजा, सेना या  
दल आदिके पाने भंडा से कर चलता हो, निशान-  
बंदार।

निशानदेही (हिं० स्त्री०) निशानदेश देखो।

निशानदेही (फा० स्त्री०) पामामोको मध्यम आदिको  
तामोनेके लिए पहचानयानेको क्रिया, पामामोकापता  
अतलानेका काम।

निशानपटो (फा० स्त्री०) चेहरेको बनापट आदि अथवा  
असका यर्षन, डुलिया।

निशानबंदार (फा० पु०) वह जो किसी राजा, सेना या  
दल आदिके पाने पाने भंडा से कर चलता हो,  
निशानचो।

निशानवाला—सन्ततिह घोर मोहरमिहने यह मित्र  
भ्यापित किया। ये लोग प्राट जातिके ये घोर  
'दल' या दलबह अतलना सेनाकी पताका से जाते थे,  
इस कारण इनका नाम निशानवाला पड़ा। शतदुन्दीक



दिनभल रात्रियोंमें घोर जो काम रातके समय करना हो, वह रात्रिवन्त रात्रियोंमें करना चाहिए।  
 निशाभङ्गा (सं० स्त्री०) निशा हरिद्रा तद्वत्भङ्गो यस्याः। दुग्धपुच्छो नामक पौधा।  
 निशाभाग (सं० पु०) निशायाः भागः। रात्रि, रात।  
 निशामणि (सं० पु०) निशावामणिरिव। १ चन्द्रमा। २ कपूर, कपूर।  
 निशामन (सं० स्त्री०) निशमन्निष्पत्स्युट्। १ दर्शन, देखना। २ चालोचन, विचार। ३ श्रवण, सुनना।  
 निशामय (सं० पु०) शिव, महादेव।  
 निशामित्र—सुपन्नकारणके एक टीकाकार।  
 निशामुख (सं० स्त्री०) निशायाः मुखं इत्यत्। प्रदोषकाल, गोधूलोका समय।  
 निशामृषा (सं० स्त्री०) अश्वमृषा।  
 निशान्त्य (सं० पु०) निशाचरोन्त्यः पणः। शृगाल, शीदह।  
 निशाघिन् (सं० त्रि०) निद्रागत, सोया हुआ।  
 निशारण (सं० स्त्री०) निश्रु हिंसायां निष्पत्स्युट्। १ भारण, भारना। निशायाः रश्मिः। २ रात्रियुद्ध। ३ रादिशब्द।  
 निशारत्न (सं० स्त्री०) निशायाः निशायां वा रत्नमिव। १ चन्द्रमा। २ कपूर, कपूर।  
 निशादक (सं० पु०) १ ताननिशेष, सात प्रकारके रूपक तालींसिंसे एक प्रकारका ताल। दड़, प्रौढ़, सपर, विभव, चतुरक्रम, निशादक घोर प्रतिताल ये सात रूपक ताल हैं। इनमें दो मधु घोर दो शुद्ध मात्राएँ होती हैं। इनका व्यवहार प्रायः हास्यरसके गीतोंके साथ होता है। (त्रि०) २ नितान्त हिंसक, बहुत अधिक हिंसा करनेवाला।  
 निशादिकाल (सं० पु०) रात्रिका प्रथमाहं पर्यात् प्रथम दो याम।  
 निशावन (सं० पु०) निशावत् पन्थकारजनकं वनं यत्। शिशुपत्त, सनका पौधा।  
 निशावसान (सं० स्त्री०) निशायाः अवसानं। रात्रिका अवसान, रातका अन्तिम भाग, तड़का।  
 निशाविहार (सं० पु०) निशायां विहारो यस्य। रासस।

निशाद्वन्द (सं० स्त्री०) निशायाः द्वन्द्वं समूहं। रात्रिगण, रात्रिसमूह।  
 निशावेदिन् (सं० पु०) निशा निशापरिमाणं वेत्ति वेदयति वा विद या वेद-गिति। कुक्षुट, सुरग।  
 निशाप्ला (का० पु०) १ गेहूंकी भिगी कर उसका निकाला घोर जमाया हुआ मत या गूदा। २ मांझे, कपक।  
 निशासप्त (सं० पु०) निशायां सप्तति पुष्पविक्रमिण एतपच, वा निशायां हसो विक्रमो यस्य। दुमुट, कुमोदिनी।  
 निशाहासा (सं० स्त्री०) निशायां हासो यस्याः। श्रेफालिका, मिंदुवार, नियुंही।  
 निशाहा (सं० स्त्री०) निशाया पाहा पश्चिमानं यस्याः। १ हरिद्रा, हल्दी। २ मालवदेयमें प्रसिद्ध जतुका नामकी कता।  
 निशि (सं० स्त्री०) १ रात्रि, रजनौ, रात। २ हरिद्रा, हल्दी।  
 निशिकर (सं० पु०) चन्द्रमा, शशि।  
 निशिका (सं० स्त्री०) वत्तं नीद।  
 निशिघर (हिं० पु०) निशाघर देखो।  
 निशित (सं० त्रि०) निशो-त्त (शाशोरन्वतरस्याम्। वा ७।४।४१) १ शान्ति, सान पर चढ़ा हुआ, निर, चोखा। (स्त्री०) २ सोह, सोहा।  
 निशिता (सं० स्त्री०) निशो-त्त, टाप। निशोय, रात्रि, रात।  
 निशिति (सं० स्त्री०) निशो-त्त कर्म पि-त्तिन्, ततो हत्वम्। तनज्ञत, ससेजना, दिलासा।  
 निशिय (सं० पु०) दीया (रात्रि)-के एक पुत्रका नाम।  
 निशिदिन (हिं० क्रि० वि०) सब दा, रातदिन, मदा।  
 निशिन्या (हिं० पु०) निशायाप-द्वयो।  
 निशिन्याक (हिं० पु०) निशायाप देखो।  
 निशिमनि (हिं० पु०) निशायाप देखो।  
 निशिपाल (सं० पु०) १ चन्द्रमा। २ एक शब्द जिसके प्रत्येक चरणमें भगण भगण सगण नगण घोर शब्द होता है।  
 निशिपालक (सं० स्त्री०) १ शब्दोभेद, एक शब्दहारा नाम। निशिगल देखो। (पु०) २ निशिगलक प्रहरिभेद, वह शरपाल जो रातको पहरा देता है।



'हम लोग महिषासुरहत्या देवीका, अथवा प्राणनाथ करेने' उसी समय नर्मदा नदीसे चण्ड और मुण्ड निकल कर शुभ और निशुम्भके साथ मिल गये। सबोंने मिल कर सुग्रीव नामक एक दूतको विन्ययवत पर-देवीके निकट भेजा। देवीके पास पहुँच दूतने उनसे कहा, 'संसार भरमें शुभ और निशुम्भ सबसे बौर है और तुम भी त्रिलोकके मध्य सुन्दरी हो। इन दोनोंमेंसे तुम्हें जो पसन्द आवे उसीके गलेमें वरमाला डाल दो।' यह सुन कर देवीने कहा, 'तुम्हारा कहना अचरमः सत्य है, लेकिन मैंने एक भीषण प्रतिज्ञा की है, वह यह है कि, जो मुझे संध्यामें जीत सकेगा उसीकी मैं वरमाला पहनाऊँगी।' दूतने जा कर यह वृत्तान्त दानवराजसे कह सुनाया। इस पर दानवराजने देवीको एकदूत लानेके लिए धूम्रलोचनको भेजा। धूम्रलोचन कहीं ही दलबलके साथ देवीके पास पहुँचा, स्वैही देवीने एक डुङ्गा दी जिससे वह समीप भस्म हो गया। बाद दानव-श्रेष्ठ शुभ पति प्रचण्ड सेनाकी साथ दे-चण्ड मुण्डकी भेजा। ये लोग भी देवीके साथ युद्धमें जहाँके तहाँ टेर ही रहें।

चण्ड मुण्डके मारे जानेके बाद तीस कोटि अशोहिणी सेनाके साथ रत्नबीज भेजा गया। रत्नबीज देवीके साथ घमसान युद्ध करने लगा। रत्नबीजके शरीरसे जब एक बिन्दु रत्न जलोम पर गिरता था, तब उसीके सहज एक दूधरा रत्नबीज उसमें उत्पन्न हो जाता था। पर वे एक एक करके देवीके अमित तेजसे मरने लगे। अन्तमें रत्नबीज भी मारा गया। विशेष विवरण रणवीरमें देखें।

बाद निशुम्भ स्वयं युद्धक्षेत्रमें पधारे। उन्होंने देवीका प्रलोकसामाग्य रूपलावण्य देख कर कहा, 'कौशिकि! तुम्हारा देह बहुत कोमल है, पतः तुम मुझे अपना पति बरो।' इस पर देवीने गर्वित वाक्यमें उत्तर दिया, 'जब तक तुम मुझे युद्धमें पराजय नहीं करोगे, तब तक मैं तुम्हें अपना पति बना नहीं सकती।' फिर क्या था, दोनोंमें युद्ध होने लगा। क्रमशः देवीके हाथसे निशुम्भ भी मारा गया। पीछे शुभकी भी यही दया हुई। इस प्रकार दानवोंके निहत होने पर देवगण फूसि न समाए और सब कोड़े मिल कर उनका स्तुति करने लगे। इन्होंने

भी फिरसे स्तंग श्रेष्ठ प्राप्त किया। देवीकी हृषामे देवनायोका दुर्दिन जाता रहा; अतः देवीने भी शान्ताभाव धारण किया। (वामनपुरा २६-२७ अ०)

माकण्डियपुराणके मध्य देवीमाहात्म्य अध्याय चण्डोमें इस निशुम्भ दानवका विषय लिखा तो है, लेकिन इसकी उत्पत्तिका विषय कहीं भी देखनेमें नहीं आता। चण्डोमें इसका विषय जो लिखा है वह इस प्रकार है,—पुरा-कालमें निशुम्भ और शुभ नामक दो भाई पशुराजके पति पति थे। ये देवताओंके राज्य, यहाँ तक कि यज्ञका हविर्भाग भी, बलपूर्वक ग्रहण करने लगे। नितान्त विषोदित हो, देवताओंने देवी भगवतीकी शरण ली। इस समयसे देवी मगोहर रूप धारण कर रहने लगीं। एक दिन शुभ और निशुम्भके भृत्य चण्ड और मुण्डने ऐसा अलौकिक रूप देख कर शुभ और निशुम्भसे कहा, 'मघाराज! हमने हिमाचल पर एक कामिनोको देखा। उसका जैसा रूप था वैसा संसार भरमें किसीका भी नहीं है। पापके पास त्रिभुवनमें जितने अच्छी पत्थो बीजे हैं, सभी तो हैं, लेकिन वे भी कामिनो नहीं है। अतः निवेदन है कि पाप उसे पवनी हो बना ले।' यह सुन शुभ और निशुम्भने सुग्रीव दूतको देवीके पास भेजा। देवीने दानवराजको कथा सुन कर कहा,—

"यो मां जयति संग्रामे यो मे दर्पं व्यपेक्षति।  
यो मे प्रतिबले लोके य मे मर्ता भविरपतिः॥" (चण्डी)

जो मुझे संध्यामें जीत सकेगा और मेरा दर्प नाश करनेमें समर्थ होगा अथवा जो मेरे समान बल रखता होगा, वही मेरा मर्ता होगा, दूसरा नहीं। शुभ निशुम्भ देवताओंमें भी बननाही है। अतएव मुझे जय करना उनके जीने और पुरुषोंके लिए हाथका खेल है। यदि वे मुझसे विवाह करना चाहते हैं, तो मुझे लड़ाईमें जीत कर ग्रहण करें। सुग्रीवने यह वृत्तान्त जब देवराज शुभ-निशुम्भसे जा कर सुनाया, तब उन्होंने पहले धूम्रलोचनको, पीछे चण्डमुण्ड और रत्नबीजकी देवीके विरुद्ध भेजा। जब वे दलबलके साथ देवीके हाथमें मारे गये, तब निशुम्भ स्वयं वहाँ पहुँचे और सो गप तक देवीने सहने लड़े। अन्तमें वे भी युद्धमें निहत हुए। निशुम्भके मारे जाने पर शुभके भी पिर पर शोक नाचने लगा। यह



निशिपालिका ( म० स्त्री० ) निशिगत देखो ।  
 निगिपुण्या ( म० स्त्री० ) निगि पुजाति विक्रायते पुष्प  
 'पञ्च' तनी टाण् । शोफानिका, निगुंडी, सिंदुवार ।  
 निगिपुष्पिका ( म० स्त्री० ) निगिपुष्पा स्त्रायें वन् ।  
 शोफानिका, निगुंडी ।  
 निगिपुष्पी ( म० स्त्री० ) शोफानिका, सिंदुवार ।  
 निगियावर ( हिं० पु० ) नवटा, मटा, हमेगा, रातदिग ।  
 निगिचिन्—एक अथवात प्राधोन नगर । यह पारस्य, पौर  
 रोम इन दो साम्राज्योंके सीमान्त पर तथा ताइयोस पौर  
 युफ्रेटिस नदीके बीचमें अवस्थित है । पहले यह स्थान  
 दृढ़ पर्वत दुर्गद्वारा सुरक्षित था । रोम पौर परव-  
 यामिगेनि कहे वार इस पर्वत दुर्गकी जीतनेकी  
 चेष्टा की थी, किन्तु एक बार भी ये हतकाय न हुए ।  
 यह नगर पौर दुर्ग तीन पंक्तिमें ईंटोंको दोबारसे  
 घिरा था पौर प्रत्येक दो पंक्ति मध्यभागमें नहर काट  
 वार निकाली गई थी । पारस्यराज शाहपुर ३३८, ३४६  
 पौर ३५० ई०में क्रमशः ६०, ८० पौर १०० दिन तक  
 यहां घेरा डाले हुए थे, लेकिन प्रति वार उन्हें निराग  
 हो कर सोट जाना पड़ा था । अन्तमें ३६३ ई०को जोहि-  
 यमके कोमलने यह राज्य पारस्यराजके हाथ लगा था  
 इस दुर्गके चारों पौर पर्वत हैं जहां बड़े बड़े  
 गाने बिच्छू पौर विपैले हाव पाये जाते हैं । जब  
 लज्जित परब जातिने १७ हिजरोमें ८ गाव तक इस  
 नगरकी घेरे रखा था, उन समय बिच्छूके काटनेसे  
 कितनों परबसेना यमलोकाकी निधारी थीं । यह देव कर  
 परबसेनापति बहुत कुपित हुए पौर उन्होंने एक  
 हजार बड़े बड़े मछोके बरतनेमें निपाळ सरोख्य भर  
 कर रातकी उम्हें यन्त्रकी सहायतासे नगरमें फेंकवा  
 दिया । बरतनेमें फूट जानेसे बिच्छू बाहर निकले  
 पौर निद्रावस्थामें हो बहुतांकी कांटा जिससे वे सबके  
 सब पक्षकी प्राप्त हुए । जो कुछ खचरहे, ये सब  
 होने हो जताग हो गय पौर दुर्ग रक्षाकी लक्षमें जरा भी  
 प्रक्षि न रह गई । पीछे मुसलमानोंने दुर्गदारको तोड़  
 फोड़ कर भीतर प्रवेश किया पौर कितने पथियावियोंकी  
 मार कर दुर्ग दहन किया गा । कहते हैं, कि पारमा-  
 राजमें भीमैयानके राजत्वकालमें उक्त उपायसे नगरको  
 नोता था ।

वर्षमान समयमें नगरका यह प्राचीन मीद्व, नहीं  
 है, सामान्य ग्राममात्र देखा जाता है । इसके चारों पौर  
 को पंडहर पड़े है, ये प्राचीन कीर्तिका परिषय देते  
 हैं । यहां अफेद गुलाबके पच्छे पच्छे पीछे देवनेमें  
 पाते हैं, जिधरही मजर दोड़ारये, उधर फूल हो फूल  
 है । सरोख्य जानिका वाम भाग भी पूर्व पय है ।  
 निगीय ( स० पु० ) गितरा शेरसेवेति ति-ये-यञ्ज-  
 प्रत्ययेन निपातनात् माधुः ( निशीपयोरीप-वंगया । व-  
 २।८ ) १. पहराव, प्राची रात । २ राति, रात । ३  
 रातिका पुत्रभेद, भागवतके वनुसार रातिके एक कल्पित  
 पुत्रका नाम ।  
 निगीचिनी ( स० स्त्री० ) निगीयोऽस्यस्योः इति इति  
 डीप । राति, रात ।  
 निगीचिनीनाय ( स० पु० ) निगीचिन्याः, नायः । १  
 चन्द्रमा । २ अपूर ।  
 निगीथा ( स० स्त्री० ) राति, रात ।  
 निगुम्भ ( स० पु० ) नि-यन्-भ-हिं-नायां घञ् । १ यथ,  
 हत्या । २ हिंसन, मारना । ३ मर्दन । ४ पशुभेद ।  
 इनका विवरण यामनपुराणमें इस प्रकार निवा है—  
 कश्यपके दश नामक एक स्त्री थी । दशके गर्भमें तीन  
 पुत्र उत्पन्न हुए, शुभ, निगुम्भ पौर नमुचि । ये तीनों  
 इन्द्रसे भी अधिक बलशाली थे । नमुचि इन्द्रके हाथमें  
 मारे गए । पीछे शुभ पौर निगुम्भ घोरतर युद्धका पायो-  
 जन कर देवताओंके भाव सहनेकी तैयार हो गए । युध-  
 में देवताओंकी हार हुई पौर उन्होंने दानवीकी पध-  
 नता स्वीकार कर ली । शुभ पौर निगुम्भ जय स्वर्ग-  
 राष्यके अधिकारो हुए, तब देवगण एवो पर पा कर  
 रहने लगे । देवताओंके वाम जितने अष्ट रथादि थे  
 उन्हें दानवीने जहदें स्त्री ले लिया । शुभ पौर निगुम्भ-  
 ने एक दिन रथोत्तम नामक एक दानवको हार लघा  
 भट करत देव कर समसे कहा, 'तुम क्यों इस प्रकार दोन-  
 भावमें विचरण करते हो ?' रथोत्तमने जवाब दिया, 'मैं  
 महिषासुरका सचिव हूँ । विन्ध्यवर्ष पर काल्याणनी-  
 देवीने महिषासुरको मार डाला है । ऐसीके भयसे  
 वृष पौर मुण्ड नामक दो महावीर लक्षमें द्विप कर  
 रहते हैं । यह सुन कर शुभ पौर निगुम्भने प्रतिष्ठा की,

‘इमं लोकां महिषासुरहन्तो देवोका अथग्य प्राणनाथः  
 क्रूरं मे।’ उसी समय नर्मदा नदीसे चण्ड-घोर सुण्ड  
 निकल कर शुभ्र और निशुम्भके साथ मिल गये। सबोंने  
 मिल कर सुयोग नामक एक द्रुतकी विन्ययपूर्वत पर  
 देवीके निकट भेजा। देवीके पास पहुँच द्रुतने उनसे  
 कहा, ‘संसार भरमें शुभ्र और निशुम्भ सबसे घोर हैं और  
 तुम भी त्रिलोकके मध्य सुन्दरी हो। इन दोनोंमेंसे तुम्हें  
 जो पसन्द आवे उसीके गलेमें वरमाला डाल दो।’ यह  
 सुन कर देवीने कहा, ‘तुम्हारा कहना अच्युतः सत्य है,  
 लेकिन मैंने एक भीषण प्रतिज्ञा की है, यह यह है कि,  
 जो मुझे संघाममें जीत सकेगा उसीकी मैं वरमाला पह-  
 नाऊँगी।’ द्रुतने जा कर यह वृत्तान्त दानवराजसे कह  
 सुनाया। इस पर दानवराजने देवीको परकूड़ लानेके  
 लिए धूम्रलोचनकी भेजा। धूम्रलोचन व्योंही देव-  
 बलके साथ देवीके पास पहुँचा, व्योंही देवीने एक वृद्धा-  
 दी जिससे यह सबैश्वर भस्म हो गया। बाद दानव-  
 चण्ड शुभ्र भति प्रचण्ड सेनाको साथ दे चण्ड सुण्डकी  
 भेजा। ये लोग भी देवीके साथ युद्धमें जहाँके तहाँ टेर  
 हो रहें।

चण्ड सुण्डके मारे जानेके बाद तीसकोटि पक्षोद्दिष्टो  
 सेनाके साथ रत्नवीज भेजा गया। रत्नवीज देवीके  
 साथ घमसान युद्ध करने लगा। रत्नवीजके शरीरमें जब  
 एक शिन्दु रक्त जमोन पर गिरता था, तब उसीके सहज  
 एक दूधरा रत्नवीज उससे उत्पन्न हो जाता था। पर वे  
 एक एक करके देवीके पतित तेजसे मरने लगे। अन्तमें  
 रत्नवीज भी मारा गया। विशेष विवरण रत्नवीजमें देखो।  
 बाद निशुम्भ स्वयं युद्धक्षेत्रमें प्रधारे। उन्होंने देवीका  
 पक्षोद्दिष्टसाम्राज्य रूपसावण्य देख कर कहा, ‘कीर्तिकि।  
 तुम्हारे देह बहुत कोमल है, अतः तुम मुझे अपना पति  
 बरो।’ इस पर देवीने, गर्वित वाक्यमें उत्तर दिया, ‘जब  
 तक तुम मुझे युद्धमें पराजय नहीं करोगे, तब तक मैं  
 तुम्हें अपना पति बना नहीं सकती।’ फिर क्या था,  
 दोनोंमें युद्ध होने लगा। प्रथमः देवीके हाथसे निशुम्भ  
 भी मारा गया। पीछे शुभ्रभी भी वही दया हुई। इस  
 प्रकार दानवोंके निहत होने पर देवगण फूसी न समाए  
 और सब कोड़े मिल कर उनकां स्तुति करने लगे। इन्होंने

भी फिरसे स्वर्ग राज्य प्राप्त किया। देवीकी कृपासे  
 देवनाभोंका दुर्दिन जाता रहा; पृथ्वीने भी मानाभाव  
 धारण किया। (वामनपुराण २९-२० अ०)

माकण्डेयपुराणके मध्य देशोमाहात्म्य अध्याय चण्डोमें  
 इस निशुम्भ दानवका विषय लिखा तो है, लेकिन इसकी  
 उत्पत्तिका विषय कहीं भी देखनेमें नहीं पाता। चण्डोमें  
 इसका विषय जो लिखा है वह इस प्रकार है,—पुरा  
 कालमें निशुम्भ और शुभ्र नामक दो भाई असुरोंके पति  
 पति थे। ये देवताओंके राज्य, यहाँ तक कि यज्ञका  
 हविर्भाग भी, बलपूर्वक चण्ड करने लगे। नितान्त  
 निषेद्धित हो देवताओंमें देवी भगवतीको शरण ली।  
 इस समयसे देवी मनोहर रूप धारण कर रहने लगीं।  
 एक दिन शुभ्र और निशुम्भके शत्रु चण्ड घोर सुण्डने  
 ऐसा पक्षोद्दिष्ट रूप देख कर शुभ्र और निशुम्भसे कहा,  
 ‘महाराज! हमने हिमाचल पर एक कामिनोको देखा।  
 उसका जैसा रूप था वैसा संसार भरमें किसीका भा  
 नहीं है। पापके पास विभुवनमें जितनी अच्छी पच्छी  
 पोजें हैं, मभी तो हैं, लेकिन वे भी कामिनो नहीं है।  
 अतः निवेदन है कि पाप उसे अपना स्त्री बना ले।’  
 यह सुन शुभ्र और निशुम्भने सुयोग द्रुतकी देवीके पास  
 भेजा। देवीने दानवराजको कया सुन कर कहा,—

‘‘दे मां जयति संप्राप्ते को मे हर्षं व्यपीदति।  
 ये मे प्रतिबले लोके य मे मर्ता मविष्यति ॥’ (चण्डो)

जो मुझे संघाममें जीत सकेगा और मेरा दर्प नाश  
 करनेमें समर्थ होगा अथवा जो मेरे समान जल रसता  
 होगा, वही मेरा मर्ता होगा, दूसरा नहीं। शुभ्र निशुम्भ  
 देवताओंसे भी बनयायी है। अतएव मुझे जय करना  
 उनके जैसे औरपुत्रोंके लिए हाथका खेन है। यदि वे  
 मुझसे विवाह करना चाहते हैं, तो मुझे लड़ाईमें जीत  
 कर चण्ड करे। सुयोगने यह वृत्तान्त जब देवराज शुभ्र  
 निशुम्भसे जा कर सुनाया, तब उन्होंने पहले धूम्रलोचन-  
 को, पीछे चण्डसुण्ड घोर रत्नवीजकी देवीके विरुद्ध  
 भेजा। जब वे दलबलके साथ देवीके हाथसे मारे गये,  
 तब निशुम्भ स्वयं वहाँ पहुँचे और जो यय तब देवीने  
 लहते रहे। अन्तमें वे भी युद्धमें निहत हुए। निशुम्भके  
 मारे जाने पर शुभ्रके भी फिर पर काबू लानेमें लगा। यह

समी समय युद्धवेत्तमं पा सुहा द्रुपा भीरु देवोके  
 हायमे मारा गया। (मार्कण्डेयपु० चण्डो) यामनपुराण  
 में निष्ठा ई कि, रत्नगोत्र भीरु चण्डमुण्ड महिषासुरके  
 प्रमात्य थे, किन्तु चण्डोमें दमका कोरे उल्लेख देखनेमें  
 नहीं आता। शुभ देखो।

मार्कण्डेय पुराणान्तर्गत चण्डोमें एक दूमरे निष्क-  
 म्भासुरका उल्लेख है। शुभनिष्कम्भकी मृत्युके बाद देव-  
 तामेनि जब देवीको स्तुति की, तब देवीने उन्हें वर  
 दिया था, 'वैश्वानर मन्यन्तरेके पद्माहस्ये युगमें शुभ भीरु  
 निष्कम्भ नामक अयत्न बलवान् दो असुर जन्म ग्रहण  
 करेंगे। मैं नन्दगोपष्टकमें यमोदाके गर्भसे उत्पन्न हो  
 कर उनका नाश करूँगी।'

“ वैश्वानरेऽन्तरे प्राप्ते षष्टाधिं गतिमि युगे ।

सुम्भो निष्कम्भश्चैवायुःसुवृत्त्येवे महाहरो ॥

नन्दगोपष्टके जाता यतोदा गर्भं सम्भवा ।

ततश्चो नाशयिष्यामि निष्कम्भवनिहासिनो ॥”

( मार्कण्डेयपु० ८१।३६-३७ )

निष्कम्भ ( सं० स्त्री० ) निष्कम्भ किंसायां भावे क्युट् ।

वध, मार डालना ।

निष्कम्भदिगी ( सं० स्त्री० ) निष्कम्भं मर्दयति ऋद्-  
 ङिति, ततो ङोप । दुर्गा ।

निष्कम्भसुभमयनी ( सं० स्त्री० ) निष्कम्भं सुभस्य संभोति,  
 मन्थक्युट् न लोपः, ततो ङोप । दुर्गा ।

निष्कम्भन् ( सं० पुं० ) निष्कम्भो मोहनागोःस्यस्येति इति, वा  
 निष्कम्भ-णिनि । १ बुद्धविषय, एक बुद्धका नाम । पर्याय-  
 देवस्य, ईश्वर, चक्रमन्वर, देव, यज्ञकपाली, शशिगोचर,  
 यज्यश्रीक । ( ति० ) २ नागक, नाग करनेवाला ।

निष्कम्भ ( सं० स्त्री० ) गत, उपनीत, लाया हुआ ।

निष्कम्भ ( सं० वि० ) निष्कम्भ सत्यस्य हरति निष्कम्भ  
 बाहुल्यत्वात् भक्, षेदे सम्भारं ततो षोढोत्तरादिवात्

भाषुः । निष्कम्भ, मात्र लगाया हुआ ।

निष्कम्भ ( सं० पुं० ) निष्कम्भ ईश्वरः । चन्द्रमा ।

निष्कम्भ ( सं० पुं० ) निष्कम्भस्यैव तं ईयद्गमनं यसा ।  
 नष्ट, वसुधा ।

निष्कम्भ ( सं० पुं० ) निष्कम्भो अयमयत्न, प्रमात्,  
 लक्ष्मी ।

निष्कम्भ ( सं० स्त्री० ) अतः किञ्चित्, नहिद निष्कम्भ ।

निष्कम्भाय ( सं० पुं० ) वर जो रातमें विश्राम करता हो ।

निष्कम्भ ( सं० स्त्री० ) अयने कुलस्य निष्कम्भो दुर्ग ।

निष्कम्भ ( सं० स्त्री० ) चण्डो, चण्डा ।

निष्कम्भारिण्य ( सं० स्त्री० ) निष्कम्भः चत्वारिंशतः शतकम् ।

४ । चत्वारिंशत् संख्यासि निष्कम्भ, जिसमें चासीसब्धी  
 संख्या न हो ।

निष्कम्भ ( सं० स्त्री० ) १ चन्द्रमारुहित । २ जिसमें चमक  
 न हो ।

निष्कम्भभ्र ( सं० पुं० ) शोषभ्रं, एक प्रकारका  
 भ्रमक । यह दूध, खारपाठा, पादमौके मूत्र, मक्खीके  
 लेज पादि कई पदार्थोंमें मिला कर पीर सो पार उनका  
 पुट दे कर तै पार किया जाता है । कहते हैं, कि यह  
 पंद्ररागके समान हो जाता है । यह वीर्यवर्धक, रसायन  
 भीरु खरनागक माना जाता है ।

निष्कम्भ ( सं० स्त्री० ) निष्कम्भ प्रचित्तस्य मय, रस्यं सकादि-  
 त्वात् समासः । निष्कम्भ भीरु प्रचित्त यत्न ।

निष्कम्भ ( सं० पुं० ) निष्कम्भोऽनेनेति निर-वि-प-प-  
 ( प्रहृष्टनिविद्यमन । पा १।१।५८ ) । १ निःसंशयज्ञान,  
 ऐसी धारणा जिसमें कोई संदेह न हो । पर्याय-निर्णय,  
 निर्णयन, निष्कम्भ, संशयका अन्तर्ज्ञान । किमो यत्तुका  
 संशय होनेसे उसका एक पक्ष खिर करनेका नाम  
 निष्कम्भ है । २ निष्कास, धकीन । ३ निर्णय ।

४ बुद्धिकी असाधारण हृत्तिभेद । ५ दृढ़ सहाय, एक  
 विचार, पूरा इरादा । ६ अर्थात्कारभेद, एक अर्थोत्त-  
 हार जिसमें अर्थ विषयका निषेध हो कर प्रकृत वा  
 यथायं विषयका स्थापन होता है । उदाहरण—

“वदनमिदं न ह्योत्रं नमवे तेऽभीष्टे एते ।  
 १६ अथिबे सुप्रपरो मप्रुष न सुभा परिप्राप ॥”

( आशिष्य १० परि० )

यह वदन पद नहीं है, ये दो भोक्तोत्पन्न नहीं हैं—  
 चण्ड है । हे मधुकर ! हम कामिनीके समीप तुम हृदा  
 की परिभ्रमण करते हो । यहाँ पर पद भीरु भोक्तोत्पन्न  
 इन दो अर्थ विषयोंका निषेध करके प्रकृत विषयका  
 स्थापन हुआ । अतएव यहाँ निष्कम्भकार हुआ ।

निष्कम्भ ( सं० स्त्री० ) निष्कम्भो भाव वा आकृतिपुञ्ज ।

निधयात्मक ( स० त्रि० ) असदिग्ध, जो विनकुल निधिन हो, डोकडोक ।  
 निधयात्मकता ( स० स्त्री० ) निधयात्मक होनेका भाव, यथायथा, असदिग्धता ।  
 निधयिन् ( स० त्रि० ) स्थिरोक्त, स्थिर क्रिया हुआ, विवारा हुआ, डोक क्रिया हुआ ।  
 निधर ( स० पु० ) एकादय मन्वन्तरोय सप्तविंशभेद, एकादय मन्वन्तरके सप्तविंशभिसे एक ।  
 निधन ( म० त्रि० ) निर-चल-अच् । १ स्थिर, जो जरा भी न हिले लुसे । २ पचन, जो पचने स्थानसे न हटे । ३ असम्भावना, विपरीत भावनारहित ।  
 निधनता ( हि० स्त्री० ) स्थिरता, दृढ़ता, नियल होनेका भाव ।  
 निधलटासखामी—एक प्रसिद्ध दार्शनिक । इन्होंने प्रभाकर नामक पञ्चदशोक्तो एक टोका लिखी है ।  
 निधला ( स० स्त्री० ) निधल-टाप् । १ गालपर्णी । २ पृथिवी । ३ नदीविशेष, एक नदीका नाम ।  
 निधलाङ्ग ( स० पु० ) निधल-ङ् । यङ् यसर । १ यक, बगुला । २ पत्र त प्रभृति । ( त्रि० ) ३ मन्दरहित, जो हिलता डोलता न हो ।  
 निधायक ( स० त्रि० ) निधिनोतीति निर-चि-खुस् ।  
 निधयकक्षा, जो किसी बातका निधय या निर्यय करता हो ।  
 निधारक ( स० पु० ) निधरनोति निर-चर-खुस् । १ वायु, हवा । २ स्रच्छन्द । ३ पुरीपचय, प्रवाहिका नामका रोग को पतिसारका एक भेद है । यह वर्षाको प्रायः होता है और इसमें बहुत दस्त पाने हैं ।  
 निधित्त ( स० त्रि० ) निर-चि-कर्मणि-क्ते । १ जिसके सम्बन्धमें निधय हो चुका हो, तै किया हुआ । २ जिसमें कोई परिवर्तन या निर-बदल न हो सके । ( स्त्री० ) ३ नदीभेद, एक नदीका नाम ।  
 निधिति ( स० स्त्री० ) निर-नि-क्तिन् । अवधारण, निधय करना ।  
 निधित्त ( स० पु० ) समाधिभेद, योगमें एक प्रकारकी समाधि ।  
 निधित्त ( स० त्रि० ) निर्गता चिन्ता यस्मात् । चिन्ता-

रहित, जिसे कोई चिन्ता या चिन्तन न हो, बेचिन्त ।  
 निधिरा ( स० स्त्री० ) नदीभेद, एक नदीका नाम जिसका सङ्गोख महाभारतमें है ।  
 निधियमान ( स० त्रि० ) निर-चि-कर्मणि गानच् ।  
 निधय विपय ।  
 निधुङ्क् ( स० स्त्री० ) निःशेषेय बुद्धयम् । दन्तग्राह्य, मिथ्यो ।  
 निधेतन ( स० त्रि० ) निर्गता चेतना यस्मात् । १ चेतन-रहित, चैतन्यशून्य, बेहोश, बद्धवाम । २ जड़ ।  
 निधेतम् ( म० त्रि० ) निर्गतं चेतः यस्मात् । चेतन-रहित, बेसुच ।  
 निधेट ( स० त्रि० ) निर्गता चेटा यस्मात् । १ चेटा-रहित, चेटाहीन, बेहोश, अचेत । २ अचम, असहाय । ३ नियल, स्थित ।  
 निधेटा ( म० स्त्री० ) चेटाराहित्य, बेहोशी ।  
 निधेटाकरण ( म० स्त्री० ) निधेटा चेटाराहित्यं त्रियते ऽनेन क्त करणे स्युट् । १ कामवाचभेद, कामदेवके एक प्रकारके वापका नाम । २ मनःशिलाघटित भोगभेद, वैद्यकमें एक प्रकारकी भोग जो मंगलितसे बनाई जाती है ।  
 निधोर ( स० त्रि० ) दस्यु वा चोर-वर्षिभूत स्थान, जहाँ से चोर लकड़ोंका चडा उठा दिया गया हो ।  
 निधवन ( स० पु० ) १ वैश्वदेव मन्वन्तरके सप्तविंशभि-से एक ऋषिका नाम । २ महाभारतके अनुभार एक प्रकारकी पत्नि । ३ श्रुतिहोन ।  
 निध्वन्द ( स० त्रि० ) निर्गतं ध्वन्दो वेदो षष्प । वेदाध्ययनहोन, जिनमें वेद न पढ़ा हो ।  
 निध्वल ( स० त्रि० ) निध्वपट, ध्वरहित, सीधा ।  
 निध्वद् ( स० त्रि० ) निर्गतं ध्वन्दो यस्मात् । ध्वद्गन्त्य, जिसमें ध्वेद न हो ।  
 निध्वेद ( स० त्रि० ) पविमाष्य, गदितमें षड् रागि जिसका किसी गुणरुके द्वारा भाग न दिया जा सके ।  
 निध्र ( स० त्रि० ) निध्र समाधौ वाहुल्यकात् ङङ् । समाहित ।  
 निध्रय ( स० त्रि० ) दृढ़वक्त्र, गात्र पद्मभाया हुआ ।  
 निध्रम ( स० पु० ) सायादिमें सहिष्युता, किसी काममें न यकना भयवा न चबराता ।

निघण्टु ( सं० स्त्री० ) मोघान, मोढ़ी ।  
 निघादिन् ( सं० स्त्री० ) अघ्यन्तमशोन, जिमका भाग हो ।  
 निघोक ( सं० स्त्री० ) मोघान, मोढ़ी ।  
 निघोकिकाट्य ( सं० पु० ) एक प्रकारकी घाम जो रम-  
 होन पौर गरम होती तथा पशुपोंको कमजोर बना  
 देती है ।  
 निघोपो ( सं० स्त्री० ) १ मोघान, मोढ़ी, झींगा । २  
 मुक्ति । ३ सुशूररहस्य, खजूरका पेट ।  
 निघोयम ( हिं० पु० ) १ मोक्ष । = दुःपका अघ्यन्त अभाव ।  
 २ कल्याण ।  
 निघमस्य ( सं० स्त्री० ) निघामयुक्त । दीर्घ निघामका  
 परिव्याग करना, पाह भरना ।  
 निघाम ( सं० पु० ) निघम भावे घञ् । अदिमुंख ग्याम,  
 नाक या मुँहके बाहर निकलनेवाला ग्याम, प्राणवायुके  
 नाकके बाहर निकलनेका व्यापार । पर्याय—घाम,  
 एतन ।  
 निघामसंघिता ( सं० स्त्री० ) निघामाख्या महिला ।  
 गिमपचीत शास्त्रविशेष, गिमजीका बनाया हुआ एक  
 शास्त्रका नाम । शास्त्रकी अनुसंधाने अर्थानि यह संहिता  
 निघी है । इसमें पाशुपती दीक्षा पौर पाशुपत योग  
 वर्णित है ।  
 निघाल ( सं० स्त्री० ) निघ स, जिममें शक्ति न हो ।  
 निघाल ( सं० स्त्री० ) १ निघाय, निघर, वेत्तीक । २  
 अन्धकारहित, जिममें अंधा न हो ।  
 निघोम ( सं० स्त्री० ) वेसुरोचन, बदमिजाज, पुरे कृमाव-  
 वासा ।  
 निघोसता ( सं० स्त्री० ) दुष्ट स्वभाव, बदमिजाजी ।  
 निघोय ( सं० स्त्री० ) जिमका कुछ अत्रगिट न हो,  
 जिममेंके कुछ भी चाको न गया हो ।  
 निघकपुत्र ( सं० पु० ) राघव, निगाधर, अमुर ।  
 निघकर्म ( सं० पु० ) स्वमाधनको एक प्रयासो । इसमें  
 प्रयोक्तृ स्वरका शो दी बार अलापना पढ़ना दे । जैसे  
 का मा रे रे ग म म म व व ध ध नि नि सा का । वा मा  
 नि नि ध ध व व म म ग ग रे रे सा मा ।  
 निघक ( सं० पु० ) जगह, जिगा, भाव ।  
 निघक ( सं० पु० ) जगती अक्षरका भाग यत् । निघक

अधिकरके घञ् । १ तुनार, तूप, तरकम । २ अर्द्ध ।  
 ३ माधोन कालका एक भाग जो मुँहके फूँक कर  
 बगता जाता था ।  
 निघकधि ( सं० पु० ) नि-मन्त्र-घधिन् । १ पालिङ्गन ।  
 २ धनुष धारण करनेवाला । ३ रव । ४ स्तम्भ, कम्पा ।  
 ५ टण्य, घाम । ६ मारयि । ( हिं० ) ० पालिङ्गक, पानि-  
 ङ्गन करनेवाला ।  
 निघकधि ( सं० पु० ) निघकध्वजः धीयतेऽस्मिन् धा-  
 पाधारे कि । अत्रविधान, व्यान ।  
 निघकी ( सं० स्त्री० ) निघकीऽस्त्वय इति इति । १  
 धनुषधर, तोर बनानेवाला । २ अत्रधारी, अत्र धारण  
 करनेवाला । ३ निगायत सङ्गयुक्त । ४ तुंगोरयुक्त । ( पु० )  
 ५ तुंगोर, तरकम । ६ धृतपाटके एक पुत्रका नाम ।  
 निघक ( सं० स्त्री० ) निघोदतिस्मेति नि-सं-द-गच्छति ति ङ  
 निटाऽस्वयन् ( इत्थंवा निघातो न पूर्वैरप च दः । पा  
 २।१२ ) उपधविट, गनिच, खित, पयसम्बन्धारी ।  
 निघक ( सं० स्त्री० ) निघय संज्ञायां कन् । सुनिप-  
 यक्त माक, सुभनो नामका साग ।  
 निघक ( सं० स्त्री० ) नि-सद-कित् । निघदन, खिति ।  
 निघक ( सं० स्त्री० ) नि-सद वाहुलकात् ख् । निघय,  
 खित ।  
 निघद ( सं० स्त्री० ) निघोदत्यस्य नि-सद-पाधारे जिप ।  
 १ यज्ञशोभा । २ यदोदाकाविशेष । भावे जिप् । ३  
 उपसदन । नि-सद-कत् ( रि-जिप् । ४ उपवेष्टा ।  
 निघद ( सं० पु० ) निघोदति यद्-ज्ञादयः स्या यत्, नि-  
 भद-वाहुलकात् अघ् । १ निघादस्वर । २ अनामख्यात  
 दुपविशेष, एक राजाका नाम ।  
 निघदन ( सं० स्त्री० ) निघोदत्येति नि-सद-पाधारे  
 न्यृत् । १ अट्ट, घर । २ उपवेगन व्यान, वेत्तीकी  
 जगह । ( पु० ) निघोदति पायजमत्, न्यृत् । ३ निघाद ।  
 निघया ( सं० स्त्री० ) निघोदत्यावामिति नि-सद-क्य-  
 ( संज्ञायां गमन्विभृतेः । ग ३।१८८ ) १ अत्रविशेषवाला,  
 यह स्थान जहाँ कोई चीज विकती हो, घाट । २ दर,  
 घाट । ३ अत्र अट्ट, वा, बीठी, खाट ।  
 निघयाप्रशयत ( सं० पु० ) वीसे स्वानमें प्रसी वीसे पण  
 पाटकी सामग्री जो न रहीं वीसे यहि इटानिहका

उपसर्ग हो, तो भी अपने चित्तको सन्नायमान न करना।

( जैन )

निपट्टर ( स० पु० ) निपट्टति विपत्कामयन्ति जना  
अत्रेति नि-सट्-ध्वञ्च ( नी सट्ते: । उ० २।१२४ ) ततो  
"सदिरप्रतीः" इति पत्वम् । १ फट्म, कौचड्, चडला ।  
निपट्टां उपषेष्टृणां वरः । २ प्रधान उपषेष्टा ।

निपट्टरो ( स० स्त्री० ) निपट्टर पिप्त्वात् ङीप् । रात्रि,  
रात ।

निपध ( स० पु० ) १ पर्वतभेद, एक पर्वतका नाम ।  
नन्दाके उत्तर पूर्वसागर तक विस्तृत हिमगिरि है,  
हिमगिरिके उत्तर हिमकूट है । यह भी समुद्रतक फैला  
हुआ है । इसी हिमकूटके उत्तरमें निपध पर्वत अवस्थित  
है । भागवतमें इस पर्वतके विषयमें इस प्रकार लिखा  
है—इलाहृतवर्षके उत्तर उत्तरदिक् दिक् क्रमसे क्रमशः  
नीलगिरि, श्वेतगिरि और शृङ्गानृगिरि है । ये तीनों  
पर्वत यथाक्रमसे रम्यक वर्ष, हिरण्यवर्ष और कुरु-  
वर्ष की सीमाके रूपमें कल्पित हुए हैं और पूर्व की ओर  
विस्तृत हैं । इसी तरह इलाहृतवर्षके दक्षिणमें निपध,  
हिमकूट और हिमालय नामके तीन पर्वत हैं ।

( भागवत ५।१६ अ० )

२ सूर्यवंशीय रामाक्षर कुम्भके पौत्र । ३ महाराज  
जनमेजयके पुत्रका नाम । ४ देवभेद, एक प्राचीन देव-  
का नाम । क्षत्राण्डपुराणमें लिखा है, कि यह जनपद  
विन्ध्याचल पर अवस्थित था । किसी किसीके मतमें यह  
वर्त्तमान खमाज का एक भाग है और दमयन्ती-पति  
नल यहींके राजा थे । ५ निपधदेवके अधिपति । ६  
निपाटस्वर । ७ कुरुके एक सहोदरका नाम । ( सि०  
८ कथित ।

निपधवर्ग ( स० पु० ) निपधदेवगामी जातिविशेष  
निपाद देखो

निपधधिप ( स० पु० ) निपधदेवके राजा ।

निपधधिपति ( स० पु० ) निपधराज, राजा नल ।

निपधामास ( स० पु० ) भाषेय, पल्लवकारके पांच भेदोंमेंसे  
एक ।

निपधधितो ( स० स्त्री० ) विन्ध्यपर्वतजात नदीविशेष ।  
माकण्डेयपुराणके अनुसार एक नदीका नाम जो विन्ध्य-  
पर्वतसे निकलती है ।

निपधार्ग ( स० पु० स्त्री० ) कुरुके एक पुत्रका नाम ।

निपाद ( स० पु० ) निपद्यते घामयदमीमायां यदा निधी-  
टति पापमत्र, नि-सट्-क्रमणि अधिकरणे वा घञ् ।  
१ अनार्यजातिभेद । 'आर्यजातिके भारतवर्ष' चान्दिसे  
पहले यह जाति यहांके भिन्न भिन्न स्थानमें वास करती  
थी । इस जातिके लोग गिहार खेलेते, मद्रनियां मारते,  
छाका छालते और इसी तरहके पापकर्म: किया करते  
थे, इसीसे इनका नाम निपाद पड़ा है । २ वैश्वरीतो-  
द्भव जातिविशेष । इसका विषय अग्निपुराणमें इस  
प्रकार लिखा है,—जिस समय राजा वैश्वको जांच  
करो गये थी, उस समय उसमेंसे काले रंगका एक  
छोटा-सा भादमी निकला था । वही भादमी इस वर्ग  
का आदिपुरुष था । धीवर इन लोगोंकी पारिभाषिक  
उपाधि है । मनुके मतमें इस जातिकी छट्टि ब्राह्मण  
पिता और शूद्रा माताके पुत्र हैं ।

"ब्राह्मणद्वैतवक्ष्यमाणश्चैतानाम् आर्यते ।

निपादः शूद्रव्यायां वा: पारश्वोऽप्यते ॥"

( मनु १०।८ )

यह निपादजाति पारश्व नामसे प्रसिद्ध है । विषा-  
द्विता शूद्रकन्या और ब्राह्मणसे जो संतान उत्पन्न होती  
है, गहो निपाद कहलाती है । ब्राह्मण यदि शूद्रकन्यासे  
विवाह करे तो उससे उत्पन्न संतान निपाद कहला-  
यगी वा नहीं, इस सन्देहको दूर करनेके लिए कुल्लूक  
मन्ने ऐसा लिखा है,—

'जटायां शूद्रकन्यायां निपाद उच्यते ।'

( ब्रह्मसूत्र १।१८ )

याज्ञवल्करसंहिताके मतमें भी यह जाति ब्राह्मण  
पिता और शूद्रापी माताके गर्भसे उत्पन्न हुई है ।

'विश्वामूर्धाभिषिक्तो हि सप्रियानां विश्वः क्रियाम् ।

जन्मस्यः शूद्रां निषादोऽजातः पारश्वोऽपि वा ॥'

( याज्ञवल्कर १।१६३ )

मिताक्षरा आदिके मतमें ये लोग मद्रली मार कर  
अपनी लोबिका निर्वाह करते हैं, इसीसे इनका दूसरा  
नाम धीवर पड़ा है । ये लोग मद्र और पायी माने गये  
हैं । ३ स्याद्विनिष्का नाम । सि० धारमिनेने निपाद-  
को वर्त्तमान धरार वतनाया है, किन्तु यह ठीक पतेः ।

मर्त्ती होता। मम राजाके राज्यका नाम भी निषाद नहीं है, निषध है। मानूस पढ़ता है, कि महाभारतके उत्तरपद्यम निषादमें हिमालय और भाटनर जिनेका बोध होता है।

ब्रह्माण्डपुराणमें लिखा है, कि पूतनानिष्ठा गङ्गाको पूर्वोत्तिस्रोती घाग्ना छान्दिनो नदी निषाद देश होती हुई पूर्वोत्तानरमें गिरी है। गङ्गपुराणमें इस प्रकार लिखा है,—यह निषाद जाति "विश्वगोतनिष्ठासकः" है पर्याप्त ये लोग पहले दिव्यगिरिके निकटवर्त्ती स्थानोंमें वास करते थे और यही स्थान जहां तक सभाव है कि महाभारतके निषादभूमि नामके उक्त हुआ है। महाभारतके वनपर्वमें विनयसका जो उक्त है उससे दक्षिण पश्चिममें एक छोटा राष्ट्र है जो लुप्त सरस्वतीके किनारे बसा हुआ है। सम्भवतः किन्हीं निषादवंशोय राजानि यह राज्य बसाया होगा। रामायणके शूद्रवैशम्पतेमें इस निषाद-राज्यकी राजधानी थी। शूद्रवैशम्पते देवों। ४ कल्पभेदः। निषोदन्ति पट्टकादयः स्वरा यत्र निषाद-घनम्। ४ शूद्रोत्तके मात स्त्रीमेंसे पन्तिम और सबसे लंबा स्त्री। नारदके मतमें यह स्त्री हस्तिप्रदेके समान है। इसका उच्चारण-स्थान मनाट है, लेकिन व्याकरणके मतानुसार दन्त। इस स्त्रीका वर्ष यज्ञ है।

शूद्रोत्तद्वयं चेतुस्रार इम स्त्रीको उत्पत्ति पशु-वर्गमें हुई है। इसकी जाति वेग्न, वर्ष विहित, कम पुत्रहरदोषमें, शक्ति तुल्यक, देवता सूर्य और इन्द्र जगतों है। यह मन्व-वंश जातिका स्त्री है और कश्यप समके निवे विवेग उपयोगी है। इसकी कृत तान ५०४० है। इसका वार मनि और समय रात्रिके पन्तकी ८ दण्ड ३४ पन है। इसका स्वल्प गन्धशोक समान, वर्ष लक्ष्म-श्रेत और मान पुत्रहरदोष माना गया है। इसकी श्रुति छया और योगिनी है। मन्दरव्यानमें मूर्च्छेना कथा और मन्व-कालमें पच्युता है। नारदव्यानमें कोचना है। व्यासाजी और महावीर्ये दो रात्रिकियां निषादवर्त्तिता है। नारदपुराणके मतमें यह स्त्री निःसन्तान है।

निषादकथु ( मं० पु० ) देवभेद, एक देवका साधोम नाम।

निषादकथु ( मं० पु० ) निषादोःशस्त्र मत्पु, मर्यव न। १ निषादकथु। ( त्रि० ) २ निषादकथुगुह।

निषादित ( सं० स्त्री० ) नि-मद विष्-त्त। १ निषेदन, बैठनेकी क्रिया। ( चि० ) कर्मविज्ञ। २ उपवेशन, बैठना हुआ।

निषादिन् ( सं० पु० ) निषीदत्यवग्रमिति नि-मद चिदि। १ इन्द्रियक, शायोवान, महावत। ( त्रि० ) २ उपवेशन, बैठना हुआ।

निषिक्त ( सं० त्रि० ) नि-मिघ-त्त। १ नितात्तामिक्त। ( स्त्री० ) २ शकजात गर्भ, योर्वर्धे उत्पन्न गर्भ।

निषिक्तवा ( सं० त्रि० ) निषिक्तं वातोति षेदे निषातनः साधुः। १ गर्भरक्षा-कर्त्ता, गर्भको रक्षा करनेवाला। २ सोमदानकर्त्ता, सोमदान करनेवाला।

निषिद्ध ( सं० त्रि० ) निषिध्यते इमेति नि-मिध-त्त। १ निषेधविषय, जिसका निषेध किया गया हो, जिसके निषे मनाही हो, जो न करनेके योग्य हो।

पद्मपुराणके स्वर्गखण्डमें निषिद्धकर्मका विषय इस प्रकार लिखा है,—

ब्राह्मणोंके लिए व्याकरण, गतुनिषेध, लयि, गानिज्य, पद्यपालन, पर्वके निवे शूद्रुवा, कुटिलता, कुपोद और हयसोममन खादि कार्य निषिद्ध है। ये सब निषिद्ध कर्मान्वित ब्राह्मण वैदिक और तान्त्रिक कार्यके योग्य नहीं हैं। कर व्यतीत प्रतिपह, पृथ्वी पलायन, पाषकडे प्रति कातरता, प्रजाका पगमन, दान और धर्ममें विश्रुता, स्वराष्ट्रकी पनपेवा, ब्राह्मणका पनादर, भगवत्काम पमग्याम और इनके काम पर निगाह न रखना तथा शूकोंके प्रति परिहास खादि कार्य सतिपति लिए निषिद्ध है। धनलोभमें मिया मूलकदन, पशुपोंका पगमन, मन्वदसत्वमें यज्ञानुष्ठान नहीं करना, ये सब कार्य यज्ञोंके लिए तथा धनमय और दमविधनमें शूद्रोंके लिए निषिद्ध बतनाए गए हैं। ( मू० १०० १०० २० ४० )

गालवर्गमें जाना और उच्च बैठना तथा पापम और शत्रुसका काटना मना है। शार्ङ्गोंमें शिन सब पर्वकि जो कार्य नहीं बननाए गए हैं, वे सभी कार्य निषिद्ध हैं। निषिद्ध कर्मका अनुष्ठान करनेमें तिरयमासी होना पड़ता है। ३ निषादिन, कृषक, खराब, बहा।

निषिद्धशब्दोः ( स० स्त्री० ) 'आयुर्वेद'नमस्तपुषवजिह्व  
 धात्री । सन्तानादिके पालनके निषे निष्प्रनिखित श्रियो  
 को धात्री नहीं बनाना चाहिये । शोकाकुला, सुधिता  
 परिशाला, व्याधियुक्ता, बहुवयस्का अथवा अतिखुर्बा,  
 अत्यन्त स्थूलाङ्गी, अतिगण्य लघुाङ्गी, गर्भिणी, क्वर-  
 सेडिता और जिसके स्तन लम्बे तथा ऊँचे हों (ऊँचा  
 स्तन चूसनेसे बालक का घास बड़ा होता है और बड़ा  
 स्तनसे बालकका मुख नरक टक जाती जिससे उसको  
 मृत्यु हो जाती है ), भजोर्णभोजी, अपत्यसेवी, छुपित  
 कार्यमें आनक्ता, दुःखान्विता और अज्ञानचित्ता इन सब  
 दोषयुक्ता स्त्रीके स्तन पीनेसे बालक रोगग्रस्त होता है  
 निषिद्धि ( स० स्त्री० ) नि-सिध्-क्तिन् । निषेध, मनाही ।  
 निषूदन ( स० त्रि० ) मारनेवाला ।  
 निषेक ( स० पुं० ) निषिष्यति प्रविष्यति इति नि-सिध्-  
 घञ् । १ जलादिका नितान्त सेवन । २ गर्भोधान । ३  
 रेत, वीर्य । ४ चरण, चूना, टपकना ।  
 निषेकादिकृत् ( स० पुं० ) निषेकादि' गर्भोधानादिक'  
 करोतीति क्त-क्तिर् । गर्भोधानादिकृत्ता ।  
 निषेकथ्य ( स० त्रि० ) नि-सिध्-तथ्य । सेचनीय, सेचने  
 योग्य ।  
 निषेचन ( स० स्त्री० ) नि-सिध्-चिच्-त् । सेचन,  
 सौचनान्तर करना, भिगोना ।  
 निषेचिष्ट ( स० त्रि० ) नि-सिध्-त्थच् । सेचनकर्त्ता,  
 सौचनेवाला ।  
 निषेदिषत् ( स० त्रि० ) नि-सिध्-त्थच् । निषय, उपविष्ट,  
 उठा हुआ ।  
 निषेद्य ( स० त्रि० ) नि-सिध्-तथ्य । निषेधनीय,  
 निषेध करने योग्य मनाही लायक ।  
 निषेह ( स० त्रि० ) नि-सिध्-त्थच् । निषेधक, निषेध  
 करनेवाला ।  
 निषेद्ध ( स० त्रि० ) प्रतिषेधकगन्थ, जिसका दमन वा  
 रोकनेवाला कोई न हो ।  
 निषेध ( स० पुं० ) नि-सिध्-घञ् । १ प्रतिषेध, वजन,  
 मनाही । २-निष्ठसि, बाधा, रुकावट । ३ निषिद्धिपरीत  
 ४ निषत्तन, वारण । निषिद्यतेऽनेन करणे घञ् । ५  
 अनिष्टसाधनतादि बोधक वेदादि वाक्यभेद । प्रथमके निषे

सक वाक्याका नाम निषेध है । जिस शास्त्रविधि द्वारा  
 मनुष्य निषेधित होते हैं, उसको निषेध कहते हैं ।  
 निषेधक ( स० त्रि० ) नि-सिध्-तथ्य । निवारक, रोकने-  
 वाला ।  
 निषेधन ( स० स्त्री० ) नि-सिध्-त्थट् । निषेध, निवारण,  
 मना करना ।  
 निषेधत्र ( स० स्त्री० ) वारणविधि, वह पत्र जिसके  
 द्वारा किसी प्रकारका निषेध किया जाय ।  
 निषेधविधि ( स० पुं० ) निषेधे प्रभावे विधिः इटभाधन-  
 ताधीहृत् । अभावविषयमें इटभाधनताबोधक वाक्यभेद,  
 वह वात या पाप्मा जिसके द्वारा किसी बातका निषेध  
 किया जाय ।  
 निषेधित ( स० पुं० ) नि-सिध्-चिच्-त् । प्रतिषिद्ध, निवारित,  
 जिसके लिये निषेध किया गया हो, मना किया हुआ ।  
 निषेधिन् ( स० त्रि० ) नि-सिध्-चिन् । निषेधक,  
 निषेध करनेवाला ।  
 निषेधोक्ति ( स० स्त्री० ) निषेधवाक्य ।  
 निषेध ( स० त्रि० ) १ क्रियारत, अनुरक्त । २ अभ्यासगोल ।  
 ( स्त्री० ) ३ अयनोक्तन । ४ घाम । ५ पूजा । ६ अनुरण ।  
 निषेधक ( स० त्रि० ) १ अनुरक्त । २ पुनः पुनः एक स्थान  
 पर आगमन वा एक विषयमें अभिनिवेश ।  
 निषेधन ( स० स्त्री० ) नि-सिध्-भावो ल्युट् । १ सेवा ।  
 २ सेवन, व्यवहार ।  
 निषेधनीय ( स० त्रि० ) नि-सिध्-पनीयर् । सेवायोग्य ।  
 निषेधिष्ट ( स० त्रि० ) नि-सिध्-त्थच् । निषेधक, सेवा  
 करनेवाला ।  
 निषेधितथ्य ( स० स्त्री० ) नि-सिध्-तथ्य । सेवनीय, सेवा-  
 के योग्य ।  
 निषेधिन् ( स० त्रि० ) अयनोक्तन, अनुरण, सुपुत्रमीपी ।  
 निषेध ( स० त्रि० ) नि-सिध्-भावो ल्युट् । सेवनीय,  
 सेवाके योग्य ।  
 निष्क ( स० पुं० ) निषयेन कायति शोभते निष्-कृ-कृ-  
 या निष्क-अच् । १ अदिककामका एक प्रकारका मोक्ष  
 का सिद्धा या मोहर । भिष्क भिष्क सम्यग्नि-इतका भाव  
 भिष्क भिष्क या ।



नहीं होता। मन राजाके राज्यका नाम भी निषाद नहीं है, निषय है। मानूँ म पढ़ता है, कि महाभारतकी सप्तारण्यम निषादमें हिमाल पौर भाटनर जिनका बोध होता है।

ब्रह्माण्डपुराणमें निषा है। कि पूतवनिना गङ्गाको पूर्वामिसुखी भाषा छान्दिने नदी निषाद देग होती है पूर्व पूर्वसागरमें गिरी है। महद्गुराणमें इस प्रकार निषा है,—यह निषाद जाति "दिव्यमौक्तनिवासकः" है पर्याप्त ये लोग पहले दिव्यगिरिके निकटवर्ती स्थानमें वास करते थे पौर यही स्थान जहाँ तक सभाव है कि महाभारतकी निषादभूमि नामसे उक्त हुआ है। महाभारतके यमपर्वमें विनयनका जो उल्लेख है उसमें दक्षिण पश्चिममें एक छोटा राष्ट्र है जो सुम सरस्वतीके किनारे बना हुआ है। समभवतः किसी निषादवंशीय राजाने यह राज्य बसाया होगा। रामायणकी शृङ्खलपुरमें इस निषाद-राज्यकी राजधानी थी। शृङ्खलपुर देखो। ४ बन्धुमेद। निषोदन्ति महद्भाटयः स्वरा यय निषद-धम। ५ मन्त्रोक्तके मात स्वर्गमें पत्निम पौर मधमे लंषा कर। नारदके मतमें यह स्वर दक्षिणार्के समान है। इसका उच्चारण-स्थान सप्तार्क है, लेकिन व्याकरणके मतानुसार दन्त। इस स्वरका वर्ण यंश है।

मन्त्रोक्तद्वयके अनुसार इस स्वरकी उत्पत्ति पञ्च-वर्णमें हुई है। इसकी जाति यंश्र, वर्ण विभिन, लम्प पुञ्जरदोषमें, क्वचि लुम्बह, देवता सूर्य पौर दन्द जगतों है। यह मन्वर्ण जातिका कर है पौर कक्षय इसके निचे विधीय उपयोगी है। इसकी कूट तान ५०४० है। इसका धार शनि पौर समय रात्रिके पन्तकी ८ दण्ड ३४ दण्ड है। इसका स्वयं गणितजोके समान, वर्ण लक्ष्-व्येत पौर स्थान पुञ्जरदोष माना गया है। इसकी श्रुति तथा पौर शोभिगी है। मन्त्रलक्षणमें मन्वर्णका तथा पौर मन्वर्णलक्षणमें यह श्रुता है। तारस्थानमें भी दन्ता है। सामान्य पौर महावी ये दो रात्रिद्वय निषादवर्णिता है। नारदपुराणके मतमें यह स्वर निःसन्तान है।

निषादकर्म ( सं० पु० ) द्वैधमेद, एक द्वैधका माधोम नाम।

निषादकर्म ( सं० पु० ) निषादोऽपराध मनुष्य, मर्यव त। १ निषादस्वर। (वि०) २ निषादव्ययुक्त।

निषादित ( सं० क्री० ) नि-मद विच्-क्त। १ निषदन, घेठगेकी क्रिया। (वि०) कर्म निष्क। २ उपवेशिन, घेठा हुआ।

निषादिन् ( सं० पु० ) निषोदस्यधर्माति नि मट-विनि। १ इन्द्रियरु, चायोदान, महापत। (वि०) २ उपविष्ट, घेठा हुआ।

निषिक्त ( सं० त्रि० ) नि-विच्-क्त। १ नितात्तासिक्त। (क्री०) २ यत्कजात गर्भ, योयंके उत्पन्न गर्भ।

निषिक्तवा ( सं० त्रि० ) निषिक्तं वातोति वेदे निषातनाम् साधुः। १ गर्भरक्षा-कृत्ता, गर्भको रक्षा करनेवाला। २ सोमदानकर्त्ता, सोमदान करनेवाला।

निषिद्ध ( सं० त्रि० ) निषिद्धं एवेति नि-विच्-क्त। १ निषेधनियय, जिनका निषेध किया गया हो, निषेधके लिये मनाही हो, जो न करनेके योग्य हो।

पद्मपुराणके जगन्मन्त्रमें निषिद्धकर्मका निषय इस प्रकार लिखा है,—

माह्यवोके निष्पद्याकर्षण, शत्रुनिषहंश्च, लपि, माण्डिष्य, पशुपालन, पर्वके लिये मनुष्य, कुटिलता, कुपोद पौर लयभोगमन आदि कार्य निषिद्ध है। ये सब निषिद्ध कर्मांश्वित ब्राह्मण वैदिक पौरतास्त्रिक कार्यके योग्य नहीं हैं। कर व्यतीत प्रतिपद्य, पुत्रमें पलायन, वाचकके प्रति कातरता, प्रजाका पशुपालन, दान पौर धर्ममें विरहता, स्वराष्ट्रकी समवेसा, माह्यवका पनादर, धमावका पशुपालन पौर लनके काम पर निषाह न रलना तथा शृणोके प्रति परिहाम आदि कार्य पतिप्राके विष् निषिद्ध हैं। धननीभवे मिषा मूलकमन, पशुपोका पशुपालन, मन्वदमस्वमें दन्तानुमान नहीं करना, ये सब कार्य मन्त्रोके निष्प तथा धनमद्य पौर दमविषकर्म श्रुतीके निष्प निषिद्ध वतनाए गए हैं। (१५५३० ११००० २० ३०)

माह्यवर्णमें स्थाना पौर गर्भे द्विदना तथा पोषय पौर नटहचका खाटना मना है। माह्योमें जिन सब वर्धकि लो कार्य नहीं बननाए गए हैं, वे सभी कार्य निषिद्ध हैं। निषिद्ध कर्मका पशुपालन करनेमें निरवधानी होना पढ़ता है। २ निषारित, कुंठित, स्वराह, वहा।

निषिद्धशब्दोः (सं० स्त्री०) 'आयुर्वेदमन्त्रतुल्यवर्जित' धात्रो । सन्तानादिके पालनके निषे निष्कनिखिन श्रियो को धात्रो नहीं बनाना चाहिए । शोकाकुचा, क्षुधिता परिश्रान्ता, व्याधियुक्ता, बहुवयस्का अथवा अतिखुर्वा, अथवा लघुलाङ्गी, अतिगय लगाङ्गी, गर्भिणी, ज्वर-वेदिता और जिसके स्तन लम्बे तथा ऊँचे हों (ऊँचा स्तन चूसनेसे बालक का प्रास बड़ा होता है और बड़ा स्तनसे बालकका मुख नाक टक जानो जिससे उसको खूब ही जाती है), भोजार्थं भोजी, अपथ्यमेवी, घृणित कार्यमें आनता, दुःखान्विता और बहुलचित्ता इन मन्त्र दोषयुक्ता स्त्री है स्तन पीनेसे बालक रोगग्रस्त होता है निषिद्धि (सं० स्त्री०) नि-सिध्-त्तिन् । निषेध, मनाही । निषूदन (सं० त्रि०) मारनेवाला । निषेक (सं० पुं०) निषिच्यते प्रविष्यते इति नि-सिच-घञ् । १. जलादिका नितान्त सेवन । २. गर्भाधान । ३. श्रित, वीर्य । ४. क्षाण, चूना, टपकना । चादिहत् (सं० पुं०) निषेकादि गर्भाधानादिकं ति-ह-क्त्वा । गर्भाधानादि कर्त्ता । मं० त्रि०) नि-सिच-तस्य । सेचनीय, सेचने ली०) नि-सिच-णिच्-स्यट् । सेचन, ना, मिश्रीना । त्रि०) नि-सिच-लक्ष । सेचनकर्त्ता, निषेदिन नि-सिच-कृष् । निषण, उपविष्ट, डा हुआ । निषेदव्य (सं० त्रि०) नि-सिच-तस्य । निषेधनीय, निषेध करने योग्य मनाही लायक । निषेह (सं० त्रि०) नि-सिच-लक्ष । निषेधक, निषेध करनेवाला । निषेद्ध (सं० त्रि०) प्रतिबन्धकशून्य, जिसका दमन वा रोकनेवाला कोई न हो । निषेध (सं० पुं०) नि-सिच-घञ् । १. प्रतिषेध, वर्जन, मनाही । २. निषिद्धि, बाधा, रुकावट । ३. विधिविपरीत ४. निषेचन, धारण । निषिधयनेनेन करणे घञ् । ५. अनिष्टसाधनतादि वीचक वेदादि वाक्यभेद । पुरस्क निष

सक वाकाका नाम निषेध है । जिन शास्त्रनिधि द्वारा मनुष्य निषिद्ध होते हैं, उसीको निषेध कहते हैं । निषेधक (सं० त्रि०) नि-सिच-ञ्जुन् । निवारक, रोकने-वाला । निषेधन (सं० स्त्री०) नि-सिच-स्यट् । निषेध, निवारण, मना करना । निषेधत्र (सं० स्त्री०) वारणनिधि, वह पत्र जिसके द्वारा किसी प्रकारका निषेध किया जाय । निषेधविधि (सं० पुं०) निषेधे अभावे विधिः इटसाधन-ताधीर्हेतुः । अभावविषयमें इटसाधनताबोधक वाशब्दों, वह बात या प्राप्ता जिसके द्वारा किसी बातका निषेध किया जाय । निषेधित (सं० पुं०) नि-सिच-णिच्-त्वा । प्रतिषिद्ध, निवारित, जिसके निषेध निषेध किया गया हो, मना किया हुआ । निषेधिन् (सं० त्रि०) नि-सिच-णिच्-त्वा । निषेधक, निषेध करनेवाला । निषेधोक्ति (सं० स्त्री०) निषेधवाक्य । निषेध (सं० त्रि०) १. क्षिण्यत, अतुरत । २. अभ्यासगोन । (स्त्री०) ३. अवनोकन । ४. वाम । ५. पूजा । ६. अनुमरण । निषेधक (सं० त्रि०) १. अनुमत् । २. पुनः पुनः एक स्थान-पर आगमन वा एक विषयमें अतिनिषेध । निषेधन (सं० स्त्री०) नि-सिच-भावे स्यट् । १. सेवा । २. सेवन, व्यवहार । निषेधनीय (सं० त्रि०) नि-सिच-पनीयत् । सेवायोग्य । निषेधित (सं० त्रि०) नि-सिच-लक्ष । निषेधक, सेवा करनेयोग्य । निषेधितस्य (सं० स्त्री०) नि-सिच-तस्य । सेवनीय, सेवा के योग्य । निषेधिन् (सं० त्रि०) अवनोक्ति, अतुरत, सुखनीगी । निषेध (सं० त्रि०) नि-सिच-भावे स्यट् । सेवनीय, सेवाके योग्य । निष्क (सं० पुं०) निषेधेन कायति शोभते निष्क-क-वा निष्क-घञ् । १. वेदिककानकाक-प्रकारका मन्त्रिका मित्रा या मोहर । निष्क-मित्र मित्र था ।

नहीं होता। मूल शब्दों में  
 नहीं है, निम्नान्त  
 सप्तस्य (१५) निम्नान्त  
 होता है।

पूर्वाभि  
 पूर्वः  
 पूर्वः  
 पूर्वः  
 पूर्वः  
 पूर्वः  
 पूर्वः

- १ - एक वर्ष (११ मास)
- २ - सुवर्ष
- ३ - दीनार
- ४ - वन (४ या ५ सुवर्ष)
- ५ - चार मास
- ६ - १०० पयसा १५० सुवर्ष

२ सुवर्ष, मोला । ३ प्राचीन कालमें चांदीको एक प्रकारकी तोल जो चार सुवर्षके बराबर होती थी । ४ वैश्वकर्म चार मासकी तोल । ५ सुवर्षपात्र, मोनिका भरतल । ६ होराक, होरा । ७ कच्छभूया, मलेका गहन ।

निष्कण्ड (सं० पु०) १ सुवर्षानुसारविहित पत्र, मोनेके लोचरंभे मज्जा दूषण मया । २ वक्ष्यह्य निष्कण्डोव (सं० वि०) जिनके गर्भमें मोनि निष्कण्डक (सं० वि०) निर्गतः कल्प्य सर्गद्वय । ३ वाचाद्वय, जिनमें बाधा, चापल या अश्रुत पाटि न हो जिनमें कटा न हो । ४ मनुपरिगृह्य, निष्कण्ड (सं० पु०) निर्गतः कण्डः कल्प्यो कण्डः वक्ष्य नामधा पेट ।

निष्कण्ड (सं० वि०) कनिष्ठादि कनिष्ठादि निष्कण्ड गरी हो ।

निष्कण्ड (सं० वि०) जो कण्ड पाति योज निष्कण्ड (सं० वि०) नाम-रका हो ।

निष्कण्डता (सं० वि०) निष्कण्ड होनेका भाव । निष्कण्डता, मलता, कीटापण ।

निष्कण्टी (वि० वि०) निष्कण्ट देवो ।

निष्कण्ड्य (सं० वि०) निर्गतः कल्प्यो यस्य । कल्प्योप, जिनमें किसी प्रकारका कण्ड न हो ।

निष्कण्ठ (सं० पु०) गच्छका पुत्रभेद, गच्छकके एक पुत्रका नाम ।

निष्कण्ठु (सं० पु०) देवसेनाधिपभेद, पुरावापुमार देवतापौरके एक मेलापतिका नाम ।

निष्कर (सं० वि०) करगृह्य, यक्ष भूमि जिनका कर न देना पड़ता हो ।

निष्कण्डव (सं० वि०) निर्गति कहना यस्य । अह्वय हीन, जिनमें कहना या दण्ड न हो, निर्दय, शरहम ।

निष्कण्डव (सं० वि०) परिच्छेद, साक सुयरा ।

निष्कर्म (सं० वि०) निर्गति अर्भं यस्य । कार्यविरल, जो काममें लिप्त न हो ।

निष्कर्मल (सं० वि०) चकर्मल, प्रयोग्य, निकष्या ।

निष्कर्मन् (सं० वि०) १ जो कर्ममें लिप्त न हो, चकर्मो । २ पालको, निकम्मा ।

निष्कर्म (सं० पु०) निष्कर्म भावे घञ् । १ निष्कर्म, सुभासा । २ निष्कर्म, राजाका चपले नाम या कर दुःख देना । ३ निष्कर्म, निकालने ।

निष्कर्म (सं० वि०) १ निष्कर्म, नाम, २ निष्कर्म, वाहर

निष्कर्मि

निष्कर्मि

निष्कर्मि

नाम । इसमें ज्ञान करनेसे समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं । निष्कलत्व ( सं० श्लो० ) पवित्राभाय होनेकी प्रथमा, किसी पदार्थकी वह प्रथमा जिसमें उसके और अधिक विभाग न हो सके ।

निष्कला ( सं० श्लो० ) निर्गता कला यस्याः । रजो-हीना स्त्री, वृद्धा स्त्री, बुद्धिया ।

निष्कली ( सं० श्लो० ) निष्कल-होय । ऋतुहीना, पवित्र प्रथमावालो वह स्त्री जिसका मासिकधर्म बन्द हो गया हो ।

निष्कलमय ( सं० त्रि० ) पापरहित, कलहहीन, धैर्य ।

निष्कलाय ( सं० त्रि० ) निर्गतः कलायः चित्तमनभेदो यस्य । १ चित्तदोषगून्य, जिसके चित्तमें किसी प्रकारका दोष न हो, जिसका चित्त स्वच्छ और पवित्र हो । २ सुसुप्तः ( पु० ) १ जिनभेद, एक जिनका नाम ।

निष्कादि ( सं० पु० ) निष्क प्रभृति करके पाणिन्यक्त शब्द-गण । यथा—निष्क, पण, पाद, माघ, वाह, श्लेष, पटि । निष्काम ( सं० त्रि० ) निर्गतः कामी अभिलाषो यस्य । १ विषयभोगेच्छाशून्य, जिसमें किसी प्रकारकी कामना, प्रासक्ति या इच्छा न हो । २ कामनारहित, जो बिना किसी प्रकारकी कामना या इच्छाके क्रिया जाय । सांख्य और गौता आदिके मतसे ऐसा काम करनेसे चित्त शुद्ध होता और मुक्ति मिलती है ।

निष्कामकर्म ( सं० श्लो० ) कामनारहित कार्य । जो सब कार्य प्रासक्तिपरिगून्य हो कर क्रिया जाता है उसे निष्काम कहते हैं । गोतामें भगवान्ने भर्तृन्को इसी निष्कामकर्मका उपदेश दिया था । ज्ञानयोग और निष्कामकर्म योग इन दोनोंमेंसे कौन श्रेय है, भर्तृन्को जब यह मन्देह हुआ, तब उन्होंने भगवान्ने पूछा था, 'भगवन् । ब्रह्मयोग वा ज्ञानयोग एव' निष्कामकर्म इन दोनोंमें यदि ज्ञानयोग ही श्रेष्ठ हो, तो तुम्हें और निष्काम कर्म मार्गमें क्यों भेजते हैं ?' यह सुन कर भगवान्ने कहा था, 'भर्तृन् । मैंने तुम्हें कोई विमिश्रित वाक्य नहीं कहा । तुमने बुद्धिदोषसे ऐसा समझा है । मैंने, जो कल्याणकर है, यको तुम्हें उपदेश दिया है । पुनः ज्ञान दे कर जो कुछ मैं कहता हूँ, सुनो । जो कुछ भी तुम्हारे मोह है वह दूर हो जायगा । इस जगत्में जो

प्रकृत कल्याणकी अभिलाषा करते हैं उनके लिए मैंने पहले ही वेदके मध्य द्विविध निष्ठाका उपदेश दे दिया है । उन दो निष्ठाओंके नाम हैं ज्ञाननिष्ठा और निष्काम-कर्म निष्ठा । जो सांख्य पर्याय प्रासक्तिपरिगून्यमें विवेकज्ञान-सम्पन्न हैं और ब्रह्मचर्य पाश्र्विक वाद ही समस्त काम-नादिका परित्याग कर सकते हैं, जो वेदान्तविज्ञान द्वारा परमार्थतत्त्वका निश्चय करते हैं तथा जो परमहंस और परिब्राजक हैं उन्हींके लिए ज्ञाननिष्ठा है । ज्ञानयोगका अधिकारी न हो कर जो ज्ञानयोगका प्रायश लेते हैं उन्हींके किसी हालतमें श्रेय लाभ नहीं होता; बल्कि उन्हें नरक-गामी होना पड़ता है । जो कर्मके अधिकारी हैं, पूर्वाक्त मक्षणयुक्त नहीं हैं उन्हींके लिए कर्मयोग वतलाया गया है । कारण निष्कामभावसे कर्माभ्युत्थान किए बिना पुरुष कभी भी ज्ञाननिष्ठा नहीं पाते पर्यायतः समस्त कर्म विरहित हो कर केवल ब्रह्मरूपमें नहीं रह सकते । क्योंकि निष्कामभावसे कर्म करते करते ही क्रमशः बुद्धि विशुद्ध होती है—तत्त्वज्ञानपक्षके उपयुक्त हो जाती है, उसके बाद ही ज्ञाननिष्ठा हो सकती है । जो ब्रह्मचर्यके वाद ही बुद्धिविशुद्धि हो कर ज्ञाननिष्ठाके अधिकारी होते हैं उनको पूर्वजकार्जित कर्माभ्युत्थान द्वारा ही बुद्धि विशुद्ध होती है । सुतरां इस लक्षमें फिर कर्माभ्युत्थानकी प्रायशक्यता नहीं रहती । तत्त्व-ज्ञानका स्वरूप हुए बिना केवल कर्मपरिग्राहसे निष्काम नहीं होता; क्योंकि तत्त्वका ज्ञान नहीं होनेसे यदि समस्त क्रियाएँ परित्याग की जाय, तो वह केवल बाहरकी इन्द्रियदादि क्रियाके सम्बन्धमें ही सम्भव है । पत्नारकी क्रिया कुछ भी परित्यक्त नहीं होती । कारण जब तक प्राणाग्नेयसे समस्त कामनाओंकी निःशेषरूपसे परित्याग न कर लें, तब तक चण्डालके विषे भी कोई निष्क्रियभाषमें नहीं रह सकता । क्योंकि मृत्यु, राज और तमोगुण द्वारा परिचालित हो कर चाहे भोतर दा बाहर कोई न कोई काम करना ही होगा । निष्क्रियभाषमें रहना जब असम्भव हो जाता है, तब कार्यके कारण मत्वादि गुण रहनेसे काम भी निश्चय होगा । गुण जब वसपूर्वक काम करावेगा, तब निष्काम कर्माभ्युत्थान ही मद्कामनक है । शास्त्रमें भी लिखा है, कि जो इष्ट, पद

निष्कृत ( सं० पु० ) कृतात् गृह्यात् निष्कृताः वा निष्-  
कृत-क । १ गृह्यममीपय उपवन, घरके धामका बाग,  
प्रसाधान । २ चित्तविशेष, खेत । ३ कण्ट, क्रियाङ् ।  
४ पदवीय चक्रःपुर, लमानामहम । ५ पर्यंतविशेष,  
एक पर्यंतका नाम ।

निष्कृष्टि ( सं० स्त्री० ) निष्कृष्टो देहे ।

निष्कृष्टिका ( सं० स्त्री० ) सुमारानुषंगमाष्टमेट, कुमार-  
को अनुषंगी एक माष्टकाका नाम ।

निष्कृष्टो ( सं० स्त्री० ) निष्कृष्टि-हीय । पत्नी, दत्तायनी ।

निष्कृष्टम ( सं० लि० ) सुगृह्यगुण्य ।

निष्कृष्ट ( सं० पु० ) निम्-कृष्ट-प्रम् । १ टकीट्टय ।  
( लि० ) निर्गतः कृषो गम्भत् । २ कुम्भगुण्य ।

निष्कृष्ट ( सं० लि० ) निर्गतं कुम्भं पथयथानां मणुषी  
यस्मान् । १ पथयथमनुगुण्य । २ मणिक्रादि कुम्भ-  
रहित ।

निष्कृष्टोम ( सं० लि० ) कौन्मिगुण्य ।

निष्कृष्टित ( सं० लि० ) निम्-कृष्ट-र । १ निष्कृष्टित ।  
२ वाक्य । ३ नि.सारित । ४ निष्कृष्टीकृत । ५  
चलविधत् । ६ अणित्त । ( पु० ) ० मन्कृष्टमरीट ।

निष्कृष्ट ( सं० पु० ) निता सुधयते, कुष्ठ विष्णुपमे पच ।  
रुक्-कोटर, पिष्टका खोड्डरा ।

निष्कृत ( सं० लि० ) १ सुक, कृता कृया । २ निघिन,  
निघय किया हुआ । ३ मृत, मरा हुआ । ४ पयस-  
रित, हटाया हुआ ।

निष्कृति ( सं० स्त्री० ) निर-कृ-तिम् । १ निस्तार, सुट-  
प्राप्ता । २ निरुत्ति ; ३ पागदिने वहा । जो जलपुम्भ  
ब्राह्मणका पथ करता है, उसको निष्कृति नहीं है । ४  
पाठविधत् । ५ पम्भिविधेय, एक पम्भिका नाम ।

( भाट ३१२२८१४ )

निष्कृत ( सं० लि० ) नीटा, लैक भारदार ।

निष्कृत ( सं० लि० ) निर-कृ-प्र-क । १ सारीत । २  
निघिन ।

निष्कृत्य ( सं० पु० ) १ दृष्टिय कोमहासित संभ्रमासक  
रूपमिद । २ मका दा। पक्षयं पक्षरतदप पक्षमिद ।

निष्कृत्य ( सं० लि० ) निष्कृत्य धामः केवल्पम् । निघिन  
कोवल्-पक्षयं पच । १ निघिन केवल्प । २

पम्भानुषंगी, दूधरेकी मटट नहीं पक्षयानियाका । ३  
निरपिच । ४ निष्कृत्यकेवल् । ५ मोक्षकीन ।

निष्कृत्य ( सं० पु० ) निष्-कृत्य-प्रम् । निष्कृत्यप,  
पदिनिःसारण, बाहर निकालनेकी क्रिया ।

निष्कृत्य ( सं० स्त्री० ) निर-कृत्य-कृट् । पम्भर-  
ययथा गदिनिःसारण ।

निष्कृत्यक ( सं० लि० ) १ उष्णोपयोग्य, पताने  
प्रागक । २ उत्प्राटमगोन, पक्षाकुनेयोग्य । ३ पम्भर-  
ययमे विकृष्टय । ४ निःसारित, पम्भ किया हुआ ।

निष्कृत्यित्य ( सं० लि० ) निम्-कृत्य-तय । निष्कृत्य-  
योग्य ।

निष्कृत्य ( सं० लि० ) निर्गति कोरमः पच्य । कोर-  
गुण्य, बिना कोरवका ।

निष्कृत्याम् ( सं० लि० ) निर्गतः कौमास्याः नगर्षीः,  
तत्पुत्रपथमामे गोलवेन उदयः । कौमास्मिनगरीमे  
निर्गत, जो कौमास्मिनगरीमे बाहर चला गया हो ।

निष्कृत्य ( सं० पु० ) निर-कृत्य-प्रम् । १ गृह्यादिमे वदि-  
गंमन, घरमे बाहर निकलना । २ निष्कृत्यको रीति,  
दिशुदोमिं छोटे बघीका एक मंस्तार । ३ पतित होना ।  
४ मन्को हत्ता । ( लि० ) ५ बिना कृत्य या सितसिमे-  
का, पतारतोड ।

निष्कृत्य ( सं० स्त्री० ) निर-कृत्य-कृट् । १ गृह्यादिमे  
वदिगंमन, घरमे बाहर निकलना । २ टम प्रकारके  
मंस्तारोमिं एक मंस्तार । जय बापक चार मडोमिंका  
होना है, तब निष्कृत्य किया जाता है ।

मोमकने भी ऐसा ही कहा है ।

“अथ संघे प्रवृत्ते कृते निष्कृत्यं विनीः ।”

( मोक्ष )

किन्तु किमो किमो धर्ममाश्रमं यतोय मामने भो  
निष्कृत्यवका होना बननावा है । यथा—

“नो हृष्टये वरिष्ठेभ्ये प्रगधरे गोवरोवरे ।  
कृत्यापरापरानिरे मे निष्कृत्ये गोवरोवरे निष्कृत्यम् ॥”

( वाक्यमार्ग )

अथवे यतोय मामने बर्षिका जो निष्कृत्य होना है,  
यह सुखद माना गया है । निष्कृत्य कृत्यका धर्म  
है किमिं देना निष्कृत्य है,—

“अथ निष्क्रमणं नाम गृह्यत् प्रथम निर्गमः ।

अङ्गतायां कृतायां स्वादायुः श्रीनाथः शिशोः ॥”

( गृह्यसूक्ति )

बच्चोंका घरसे जो प्रथम निर्गमन या बाहर आना होता है, उसको नाम निष्क्रमण है। बच्चोंका यथोक्त विधानसे यदि यह निष्क्रमण कायं न किया जाय, तो उनकी प्रायु और मो नष्ट हो जाती है। यहां पर इस प्रकार अनिष्टफलस्य तिर द्वारा निषेधाविधि कही गई है अर्थात् यथोक्त विधानसे बच्चोंका निष्क्रमण अवश्य विधेय है। शास्त्रानुसार निष्क्रमणकार्य करनेसे सम्पत्तिवृद्धि और दीर्घायु प्राप्त होती है। यमसंहितामें लिखा है,—

“हृत्तथै मांसि कर्तव्यं शिशोः सूर्यस्य दशंभूम् ।

चतुर्थं मांसि कर्तव्यमग्नेश्चन्द्रस्यदशंभूम् ॥” (यम स )

बच्चोंका हृत्तीयमासमें सूर्यदृग् न और चतुर्थमासमें अग्नि तथा चन्द्रदृग् न कर्तव्य है। गोभिलसहस्रध्वर्ममें भी हृत्तीयमासमें निष्क्रमणका होना बतलाया है।

“अनेनाथहृत्तीयो ज्योत्स्नस्तदहृत्तीयायाम् ॥”

( गोभिल )

किसी किसी धर्मशास्त्रके मतसे हृत्तीय मासमें और किसीके मतसे चतुर्थमासमें निष्क्रमणका काल बतलाया है। इसमें परस्पर विरोध संवस्थित होता है। किन्तु ज्योतिषशास्त्रमें इसको व्यवस्था इस प्रकार लिखी है,—  
मासवैदियोंको हृत्तीय मासमें और यजुर्वेदियों तथा ऋग्वेदियोंके चतुर्थमासमें निष्क्रमण करना चाहिए।

‘ मासे हृत्तीय इति ऋग्यजुर्गानां गोभिलेन

अनन्तान्तरं हृत्तीयं ह्यसहृत्तीयायामिति” (ज्योतिस्तसह)

निष्क्रमणके विहित दिन,—रिक्ताभिस तिवि चर्थात् चतुर्थी, षट्मी और चतुर्दशी भिन्न तिवि, गति और मङ्गल भिन्नवार एवं चार्द्रा, चरैष्या, हस्तिका, भरणी, मघा, विशाखा, पूर्वफल्गुनी, पूर्वाषाढा, पूर्वभाद्रपद और शतभिषा भिन्न मघा, कन्या, तुला, कुम्भ और सिंहलग्नमें तीसरे या चौथे मासमें बच्चोंका जो निष्क्रमण होता है वह प्रशस्त है।

मासवैदियोंके लिये निष्क्रमणका विषय भवदेव भर्तृ इस प्रकार लिखा है,—शिशुको जनन-दिवसमें हृत्तीय ऋषभपक्षकी हृत्तियां तिविमें प्रातःकाल स्नान

करावे। पीछे दिवावसान होने पर, मायं मन्थ्या करनेके बाद ज्ञातशिशुका पिता चन्द्रमाकी घोर कृताञ्जलि हो खड़ा रहे। अनन्तर माता विशुद्ध वस्त्रसे कुमारको ढक कर दक्षिणको घोर अपने स्वामीके भामपात्रमें पश्चिमकी मुञ्च किए खड़ी रहे और शिशुका मस्तक उत्तरकी घोर करके पिता की ममर्षण कर दे। इतना ही जाने पर माता स्वामीके पीछे ही कर उत्तरकी घोर खड़ी जाय और चन्द्रमाको घोर मुँह किये खड़ी रहे। इस समय पिताको निम्नलिखित मन्त्रका जप करना चाहिए—

मन्त्र—“प्रजापति ऋषिरनुष्टुप्, हृदयन्द्रो देवता कुमारस्य चन्द्रदृग्ने विनियोगः। श्री यत्तं सुधीमे हृदयं हितमन्तः प्रजापती वेदाहं मन्वे तद्गणमाहं पौत्रमघं त्रिगाम् ।

प्रजापति ऋषिरनुष्टुप्, हृदयन्द्रो देवता कुमारस्य चन्द्रदृग्ने विनियोगः। श्री यत्तं पृथिव्या पनामृतं दिवि चन्द्रमसि त्रितं वेदगृन्त्याहं वेदनाममाहं पौत्रमघं ऋषम् ।

प्रजापति ऋषिरनुष्टुप्, हृदयन्द्रो देवता कुमारस्य चन्द्रदृग्ने विनियोगः। श्री इन्द्र मी शर्मं यच्छतं प्रजाये मे प्रजापती यथायं न प्रमीयति पुत्रो जमित्या चक्षि।” इन तीन मन्त्रोंका जप करके पिता पुत्रको चन्द्रदृग् न करावे, पीछे चन्द्रमाकी चर्च दे। चर्चमन्त्र—

“क्षीरोदायं रश्मूत् अत्रिनेव षड्गुह्र ।

गृह्यार्घं शशाङ्कं रोहिण्या उहितोवम् ॥”

सूर्यको चर्च देना हो, तो इस मन्त्रसे दे—

“एहि पृथ्वीशो तेजोरासे अगतवे ।

अनुष्टुप्य मां भक्तं गृह्यार्घं शिवाकर ॥”

बादमें पिता उसी प्रकार कुमारको उत्तर मुँह किए माताको गोदमें दे दे। पीछे यथाविधि ‘यामदेव्यं’ पादि द्वारा शान्ति कर्म करके गृहप्रवेश करे। अनन्तर पुर शुकपञ्चमकी हृत्तियां तिविमें घायं मन्थ्याके बाद पिता चन्द्राशिसुख ही कर जलाञ्जलि पश्य करे। बादमें इस मन्त्रसे जलाञ्जलिका त्याग कर दे,—

मन्त्र—“प्रजापति ऋषिरनुष्टुप्, हृदयन्द्रो देवता कुमारस्य चन्द्रदृग्ने विनियोगः। श्री यत्तं पृथिव्या हृदयं त्रितं वेदं विदांस्तु पञ्चमाहं पौत्र-

पामः हो निरुद्धरोरुप उमाधि है, यह पाको बनें समान-  
 गमन करतो है। ऐसा देण कर मुक्ति लयपात्रमने  
 तदुपहित पाया हो पाको हगतिको वरुणा को है।  
 मय प्रकृति तो पाया कही भो नहीं जातो। विष  
 प्रथा घटके एक त्यागने पुनरे त्यागने प्राप्ति है वाद तदु-  
 हित पायाका मया है ये। उमके विषय जाता है,  
 दुःख पायाको गतिको भो डोक उभी प्रकार आगवा  
 वादिए। पतएव पाया निरुद्ध है।  
 निरुद्धता ( म० पौ० ) निरुद्धव्य भावः तन्-टाप ।  
 निरुद्ध होमिका भाव या पयणा ।  
 निरुद्धवाक्य ( म० पौ० ) निरुद्ध पायाः यस्य, निरुद्ध-  
 वाक्य, तस्य भावः तन्-टाप । निरुद्ध प्रकृता,  
 निरुद्ध, पतवधानता ।  
 निरुद्धीति ( म० पौ० ) मुक्ति ।  
 निरुद्धी ( म० वि० ) निर्माणा क्रोधः यस्य । क्रोधहीन,  
 प्रिये गुणा न हो ।  
 निरुद्धो ( म० वि० ) । क्रोधहीन, मय प्रकारके कष्टोने  
 मुक्त । २ होयतानुसार दगो प्रकारके कमेगोने मुक्त ।  
 निरुद्धो ( म० वि० ) निर्माणा कमेगोनेदाः यस्य ।  
 कमेगोनेगुणय, मय भ मुक्त ।  
 ( म० पौ० ) ... यत । मांसादिका  
 मांसा पाणि पर्ववशा हो  
 म० तगो सेट

पामः हो निरुद्धरोरुप उमाधि है, यह पाको बनें समान-  
 गमन करतो है। ऐसा देण कर मुक्ति लयपात्रमने  
 तदुपहित पाया हो पाको हगतिको वरुणा को है।  
 मय प्रकृति तो पाया कही भो नहीं जातो। विष  
 प्रथा घटके एक त्यागने पुनरे त्यागने प्राप्ति है वाद तदु-  
 हित पायाका मया है ये। उमके विषय जाता है,  
 दुःख पायाको गतिको भो डोक उभी प्रकार आगवा  
 वादिए। पतएव पाया निरुद्ध है।  
 निरुद्धता ( म० पौ० ) निरुद्धव्य भावः तन्-टाप ।  
 निरुद्ध होमिका भाव या पयणा ।  
 निरुद्धवाक्य ( म० पौ० ) निरुद्ध पायाः यस्य, निरुद्ध-  
 वाक्य, तस्य भावः तन्-टाप । निरुद्ध प्रकृता,  
 निरुद्ध, पतवधानता ।  
 निरुद्धीति ( म० पौ० ) मुक्ति ।  
 निरुद्धी ( म० वि० ) निर्माणा क्रोधः यस्य । क्रोधहीन,  
 प्रिये गुणा न हो ।  
 निरुद्धो ( म० वि० ) । क्रोधहीन, मय प्रकारके कष्टोने  
 मुक्त । २ होयतानुसार दगो प्रकारके कमेगोने मुक्त ।  
 निरुद्धो ( म० वि० ) निर्माणा कमेगोनेदाः यस्य ।  
 कमेगोनेगुणय, मय भ मुक्त ।  
 ( म० पौ० ) ... यत । मांसादिका  
 मांसा पाणि पर्ववशा हो  
 म० तगो सेट

निष्ठुरी ( स० स्त्री० ) षडितिका एक नाम ।  
 निष्ठुर ( स० त्रि० ) निस्-तृ-क्तिष् धेदि बाहुलकात् उ.  
 ततो पत्व टुत्वच् । गत्रुर्षीका चभिभावक, गत्रु,  
 विजिता ।  
 निष्ठा ( स० पु० ) निर्गत्य स्थायते स्तो-क । निस्-  
 गतार्थे त्यप, वा, (अभ्यवशात् त्यप् । पा ४.२।१०४) इत्यस्य  
 'निगो गत' इति वार्त्तिकोक्ताया त्यप, ततो-विषमलोपः  
 पत्व टुत्वच् । १ चण्डालादि । २ स्नेच्छ जातिभेद,  
 स्नेच्छोको एक जातिका नाम जिसका सन्नेत्र वेदमें है ।  
 निष्ठ ( स० त्रि० ) नितरा तिष्ठतीति नि-स्था-क । १  
 स्थित, ठहरा हुआ । २ तत्पर, लगा हुआ । ३ जिसमें  
 किसीके प्रति यथा या भक्ति हो ।  
 निष्ठा ( स० स्त्री० ) नितरा तिष्ठतीति, नि-स्था-क, ततो  
 पत्व ङित्वा टाप्-च् । १ निष्पत्ति, इति, समाप्ति । २  
 भाग । ३ निष्ठावस्थाको अन्तिम स्थिति, छानकी वह  
 चरमावस्था जिसमें चाक्षा और मग्नकी एकता हो जाती  
 है । ४ निर्वहन, निर्वाह, गुजर । ५ धर्मादिमें यथा,  
 चित्तका जमना । धर्मादिविषयमें ऐकान्तिक चतुरागका  
 नाम निष्ठा है । यह निष्ठा दो प्रकारकी है—छाननिष्ठा  
 और कामनिष्ठा । विवेकियोंके लिये छाननिष्ठा और  
 कामयोगियोंके लिये कामनिष्ठा ही प्रयुक्त है । इस  
 धर्मनिष्ठा द्वारा जगत्में प्रतिष्ठा होती है, वैदिक व्यक्ति  
 बहुत प्राधान्यसे अपने धर्मको रक्षा करनेमें समर्थ  
 होते हैं । ६ धर्म, गुरु या बड़े पादिने प्रति यथा भक्ति,  
 पूज्यबुद्धि । ७ प्रवधारण, नियम । ८ व्याकरण-परिभाषित  
 क, शब्दनु प्रताय । ९ स्थिति, प्रवस्था, ठहराव । नितरा  
 तिष्ठन्ति भूतान्यत्र पाधारे बाहुलकात् ष । १० प्रत्यय-  
 खानमें सर्वभूतस्थितिके आधार विष्णु, जिसमें प्रत्ययके  
 समय समस्तभूतोंको स्थिति होगी । ११ चार्त्तिका ।  
 निष्ठागत ( स० त्रि० ) निष्ठा गतः, 'दितोयायितेतरादिना  
 दितोया तत्पुत्रवः । निष्ठागता ।  
 निष्ठान ( स० स्त्री० ) नि-स्था-करणे ल्युट् । व्यञ्जन,  
 चटनी चादि ।  
 निष्ठानक ( स० पु० ) १ नामभेद, एक नामका नाम ।  
 निष्ठान खार्थे कम् । निष्ठाक, व्यञ्जन, चटनी चादि ।  
 निष्ठाका ( स० त्रि० ) निष्ठा नामोऽन्ते-यस्य । नामान्ता

यस्य, जिसका नाम प्रथम हो, जो खनिगी न हो ।  
 निष्ठाव ( स० त्रि० ) निष्ठा युक्त ।  
 निष्ठावत् ( स० त्रि० ) निष्ठा विद्यतेऽस्य, निष्ठा मत्पु-  
 मथा य । निष्ठा युक्त, जिसमें निष्ठा या यथा हो ।  
 निष्ठावान् ( द्वि० वि० ) निष्ठावत् देखो ।  
 निष्ठित ( स० त्रि० ) नि-स्था-क । १ स्थित, दृढ़, ठहरा या  
 जमा हुआ । २ निष्ठा युक्त, जिसमें निष्ठा हो । ३  
 मय्यक-घाता ।  
 निष्ठोव ( स० पु० ) नि-ष्ठव भावे घञ्, बाहुलकात्  
 दीर्घः । छीवन, घूक ।  
 निष्ठोवन ( स० स्त्री० ) नि-ष्ठि-भावो ल्यट्, ष्टिबुद्धि-  
 ल्युटि दीर्घो वा इति दीर्घः वा ष्टोऽटारादित्वात् नाधुः ।  
 १ सुख द्वारा दोस्तीका समन, घूक । पर्याय-निष्ठेय,  
 निष्ठूति, निष्ठेवन, निष्ठेवा । २ यद्यकके चतुर्भार एक  
 प्रोषध । इस प्रोषधको कुक्को करने पड़ता है, इसीसे  
 इनका नाम निष्ठोवन पड़ा है । मैथिल, सोड, पीपर  
 और मिर्चका चूर्ण बना कर उसे चटरकके रसमें  
 मिलावे । बाद उसे भर सुंघे कर कुछ काष्ठ तक  
 रहने दे । ऐसा करनेसे हृदय, मग्या, पाख, मक्षक  
 और गलेमेंसे कफ प्रासानीसे निकलने लगता है और  
 गरीर कुछ हलका मानूस पड़ता है । इससे सेवन करने-  
 से पथभेद प्वर, सूच्छा, निद्रा, काम, गन्तरीग, सुप्त  
 और चक्षुका भार, जड़ता, अक्रोद आदि रोग जाते  
 रहते हैं । दोषके बलावसक्त विचार कर एक, दो, तीन  
 या चार बार तक भी निष्ठोवन व्यवहार्य है । यह  
 साध्यातिक रोगको प्रति अलक्ष्य प्रोषध है ।  
 ( मैथ्यरनाबड़ी उपराधिना )  
 निष्ठोविका ( स० स्त्री० ) निष्ठोवन ।  
 निष्ठोविन ( स० स्त्री० ) निष्ठोव करोति क्तो नि-ष्ठोव-  
 दिच्-भावे-क । निष्ठोवनकरण, घूक के कनेकी क्रिया ।  
 निष्ठुर ( स० स्त्री० ) नि-स्था-महारादयर्थे ति षट् । १  
 पशुन वाक्य । ( त्रि० ) २ कठिन, कड़ा, मघन ।  
 ३ कठोर, मूर, अरुहम ।  
 निष्ठुरता ( स० स्त्री० ) निष्ठुरस्य भावः निष्ठुर-तन्-  
 टाप् । १ निष्ठुरका कार्य, कठोरता, जड़ता, कर्त्तनी ।  
 २ निर्दयता, अरुता, अरुमी ।





विषयादि मन्त्रिरहित, जिसे कोई सम्पत्ति न हो। २ जो दान आदि न ले। ३ जिसके स्त्री न हो, रंछुषा। ४ भविष्यवित्त, कुँवारा।  
 निष्परिच्छद (सं० त्रि०) १ परिच्छदग्रह्य, बिना कपड़े-का। २ अनुषरग्रह्य, बिना जोकरका।  
 निष्परिदाह (मं० त्रि०) जो दाम्य न हो सके, जो सहेज-में न जले।  
 निष्परीक्ष (सं० त्रि०) जिसको परीक्षा न हो।  
 निष्परोक्षर (मं० त्रि०) जिसका परिहार न हो।  
 निष्परुच (सं० त्रि०) १ कोमल, जो सुननेमें कर्कश न हो। २ जो कर्कश या कठोर न हो।  
 निष्पवन (मं० स्त्री०) निम्-पू-भाये ब्युट, ततो पत्वं। धाम्यादिका निस्तुपकरण, धान आदिको भूसी निकालना, कूटना, छंटना।  
 निष्पाख्य (सं० त्रि०) पाण्ड्यग्रह्य।  
 निष्पाद् (सं० पु०) निर्गतो पादो यस्य, अन्त्यलोपः ततो विसर्गस्य यः। निर्गतपादक।  
 निष्पाद (सं० पु०) १ चनाजकी भूसी निकालनेका काम। २ बोझा नामकी तरकारी या फली। ३ मटर। ४ सेम।  
 निष्पादक (सं० त्रि०) निर-पद-णिव्-त्-ब्युट्। निष्पत्ति-कारक, निष्पत्ति करनेवाला।  
 निष्पादन (सं० स्त्री०) निर-पद-णिव्-त्-ब्युट्। निष्पत्ति-करण, निष्पत्ति करना।  
 निष्पादित (सं० त्रि०) निर-पद-णिव्-त्-त्। १ संपा-दित। २ उत्पादित। ३ चेटित।  
 निष्पादी (सं० स्त्री०) बोझा नामकी तरकारी या फली, लोबिया।  
 निष्पाद्य (सं० स्त्री०) निर-पद-णिव्-त्-त्। संपाद्य-निर्वाह करने योग्य।  
 निष्पान (सं० स्त्री०) निःशेषद्वारे पान, इस प्रकार पा-लेना कि कुछ भी बच न रहे।  
 निष्पाय (सं० पु०) निष्पृयते गुपाद्यपनयनेन शोष्यतेऽनेन निर-पू-करणे चत्। १ धाम्यादिका निस्तुपकरण, चनाजकी भूसी निकालनेका काम। पर्याय—पवन, पव, पूतीकरण। २ सर्पादिकी वायु, धूपकी हवा, जिसमें

धानकी भूसी आदि उड़ाई जाती है। १ राजमाय, लोबिया। ४ निर्विकल्प। ५ कठहर, भूसी, पैरा। ६ श्वेतगिम्बी, सफेद सेम। भावप्रकाशमें निष्पाय, राज-गिम्बी, वलक धोर श्वेतगिम्बिक एक पर्यायक शब्द बत-लाए गये हैं। गुण—मधुर, कषायरस, रुच, पचन, विपाक, गुण, सारक, स्नायु, पित्त रक्त, मूत्र, वायु धोर विट्टाचिवम्भजनक, छप्पचोप, विप, कफ, शोथ धोर शकनागक है। ७ द्विगुणा परिमाण।  
 निष्पायक (सं० पु०) निष्पाय एव स्याद्यं कन्। श्वेत-गिम्बी, सफेद सेम।  
 निष्पावी (सं० स्त्री०) निष्पाय-स्त्रियां स्त्रीप०। गिम्बी-विशेष, बोझा नामकी तरकारी या फली। यह दो प्रकार-की होती है, हरिदण की धोर श्वभयण की। हरिदण-के पर्याय—पामजा, फलियो, नखपूर्विका, मण्डपो फलिका, गिम्बी, गुच्छफला, विद्याचफलिका, निष्पायि धोर चिपटा। शब्दाके पर्याय—मङ्गुलिकला, मन्-निष्पायिका, हलनिष्पायिका, पाय्या, नख-गुच्छफला धोर चयना। गुण—कषाय, मधुर रस, कण्ठगुणिकर, मिथ, दीपन धोर रुचिप्रदाक।  
 निष्पट (सं० त्रि०) नि-पिय-त्। पूर्वाङ्गत, चर क्रिया हुआ।  
 निष्पीड (सं० त्रि०) निम्-पीड-त्-त्। निष्पीडन, निचोड़ना।  
 निष्पीडन (सं० स्त्री०) निर-पीड-त्-त्। निष्पीडन, निचोड़ना, गोरे कुपड़े की देवा कर समझने वाली निष्पा-सना।  
 निष्पीडित (सं० त्रि०) निम्-पीड-त्-त्। जो निचोड़ा गया हो।  
 निष्पुतिपत्रिक (सं० त्रि०) स्त्रीयै वा देवभोग्य चावन्-की सद्गन्धविशिट।  
 निष्पुत्र (सं० त्रि०) निर्नास्ति पुत्रः यस्य। अपुत्रक, जिसके पुत्र न हो।  
 निष्पुत्र्य (सं० त्रि०) पुराणग्रह्य, पुरातनरहित, नया।  
 निष्पुत्र्य (सं० त्रि०) पुराणग्रह्य, पुरातन, जहाँ धाम्यादी-न हो।  
 निष्पुलाक (सं० त्रि०) निर्गत-पुलाको यस्मात्। १

नियुक्ति ( सं० पु० ) भागद्वय, एक भागका नाम तिसवा  
पक्षेय महाभागात्मकं है ।

नियुक्त ( सं० लि० ) निःश्लेषः ततो जट् । ( चरुः )  
प्रकृतिः । च० शब्दात् । १ तिस, के का दृषा । २ त्रयोदश,  
अवका दृषा, मुं क्मे निष्ठाया दृषा ।

नियुक्ति ( सं० लो० ) निःश्लेषः क्तिन् । नियुक्ति, युक्त  
नियुक्तिः । सं० पु० ) निःश्लेषः-पञ्च । १ नियुक्ति, एक  
नियुक्ति ( सं० लो० ) निःश्लेषः-भावे क्तिन् । नियुक्ति-  
यत्त युक्त ।

नियु ( सं० लि० ) निःश्लेषः, 'नियुक्तिश्चातिः कोसमि'  
इति श्रुतेः च पञ्च, पञ्चे दृष्ये । कुगम, कोमियार ।

नियुक्त ( सं० लि० ) नियुक्तिश्चाति क्तिन् निःश्लेषः  
ततो पञ्च, पञ्चे दृष्ये ( त्रयोदशं क्तिन् ) शीलठे । या  
दाशब्दे । १ नियु, किमी नियुक्त पञ्चत्वा ज्ञाता । २  
नियुक्त, कुगम, यतुर । ३ पारगल, पूरा ज्ञानकार ४  
प्रधान, श्रेष्ठ, मुक्तिदा ।

नियुक्तः ( सं० लि० ) नितासां पञ्चम् । क्वचित्, पक्षाया  
दृष्यां, उदात्ता दृष्या ।

नियुक्त ( सं० लि० ) पञ्चपात्ररहित, जो किमीके पत्रमें  
न हो ।

नियुक्तता ( सं० लो० ) नियुक्त होनेका भाव, पञ्चपात्र  
न करनेका भाव ।

नियुक्त ( सं० लि० ) पञ्चदश, नियुक्त, पात्रे सुवरा ।

नियुक्त ( सं० लो० ) निःश्लेषः-पञ्च । नियुक्त, शारद  
शोभा ।

नियुक्तपञ्च ( सं० पु०-लो० ) शब्दादीनां पञ्चदशसंख्य  
दृष्टवित्ति, प्राचीन कालका एक प्रकारका दण्ड जिसे  
राजा लोग अपने पास रखते थे । यह दण्ड कांठ पनाकादे  
दृष्टके समान होता था, पक्षर शेषक रत्नाका शोभा  
या कि इधमें पनाका नहीं होती थी ।

नियुक्तियु ( सं० लि० ) नियुक्तपञ्चदशसंख्य दृष्टव्य,  
ततो पञ्च । नियुक्त पञ्चदश, नियुक्ति शोभा ।

नियुक्तियुता ( सं० लो० ) नियुक्ति शोभा, सुवरा-पञ्चा,  
ततो भावः पञ्च । यथोदा क्तिन्, यथ क्तिन् क्तिन् पञ्चो-  
पुत्र न हो, कुवामात्र ।

नियुक्ति ( सं० लो० ) नियुक्ति-पञ्च । १ क्वचित्,

पना । २ निदि, परिपाक । ३ नादको चरकाविशेष,  
इतयोगके अनुसार नादको चार प्रकारकी चरकाविशेष  
पनात्म चरका । चार चरकापञ्चोऽ नाम दे है, चारु,  
घट, परिचय घोर नियुक्ति । ४ चयघातप, नियुक्तः  
५ युक्तता, पदा । ६ लोमना । ७ नियुक्ति, निवाह । ८  
पनुपात (Ratio) ।

नियुक्त ( सं० लि० ) नियुक्ति पञ्च पात्रोंमें निरुक्त पञ्च  
गणुको दृष्य । १ जो गणुकार चरका पञ्च पात्रों में  
कर पुनरा पात्रों को कर नियुक्त जाय । २ नियुक्ति पत्रों  
न हो, विना पत्रोंका ।

नियुक्त ( सं० लि० ) नियुक्ति पञ्च पञ्च गणु कर । १  
पञ्चगण्य, नियुक्ति पत्रों न हो । ( पु० ) २ करोहव,  
करोहका पिह ।

नियुक्ति ( सं० लो० ) नियुक्त-पञ्च-टापि पञ्च दृष्टव्य ।  
करोहव, करोहका पिह ।

नियुक्तान्ति ( सं० लो० ) नियुक्त-पञ्च-भावे-क्तिन् ।  
चनियुक्त, चरका कट, भागे तज्जलोक ।

नियुक्त ( सं० लो० ) नियुक्त-पञ्च-क्तिन् । १ नियुक्ति, शारद  
निवात्मका ।

नियुक्त ( सं० लि० ) १ पादहीन, विना परिचय या परिचय ।  
( लो० ) नियुक्ति पञ्च पादो यद्वय, ततो पञ्चम् । २ पाद-  
हीन पाद, यथ मयागे नियुक्ति परिचय पादि न हो ।

नियुक्त ( सं० लो० ) नियुक्तिः पादोदर्या पादोदर्याशोभ,  
ततो युक्तपञ्चदशसंख्य शोभा, पञ्चावः नियुक्ति पा । ३  
पदहीना लो, विना परिचय शोभत ।

नियुक्त ( सं० लि० ) नियुक्तिः क्तिन् पञ्च । क्तिन्-  
रहित, नियुक्ति क्तिन् पञ्चका क्तिन् न हो ।

नियुक्त ( सं० लि० ) क्तिन्-पञ्च, क्तिन्-रहित ।  
नियुक्त ( सं० लि० ) नियुक्त-पञ्च । १ नियुक्ति-रहित,  
नियुक्ति नियुक्ति को पुत्रो हो । २ क्तिन्, जो पञ्च  
या पूरा हो चुका हो ।

नियुक्तता ( सं० लि० ) पादप हीन, शरकोर ।

नियुक्ति ( सं० लि० ) १ जो युक्तपञ्च नहीं हो । २ जो  
पञ्च नहीं है, विना क्तिन् में पादोका । ३ दण्डपञ्च-  
हीन ।

नियुक्ति ( सं० लि० ) नियुक्तिः परिचय, पञ्च । १

निष्कलि ( म० पु० ) चन्द्रोक्ति निष्कल करनिका चन्द्र ।  
 वाग्मोक्ति चतुमार जिम समय विश्वामित्र अपने साथ  
 रामचन्द्रको वनमें ले गए थे उस समय उन्होंने रामचन्द्र-  
 को घोर घोर चन्द्रोक्ति साथ यह चन्द्र भो दिया था ।  
 निष्कली ( म० स्त्री० ) १ निष्कलना, ठुहा फो । २ वस्था-  
 कर्त्रीटो, बाँझ ककड़ी ।  
 निष्कल ( स० द्वि० ) निर्गतं फेनं यम । फेनरहित,  
 जिसमें फेन न हो ।  
 निष्कल्प ( म० पु० ) निष्कल्प-भावे चक्र, वाङ्मलात्  
 यत्वं । १ क्षाप, जल पादिका गिरना । ( द्वि० ) निष्कल्प-  
 चक्र । २ निष्कल्पयुक्त ।  
 निष्कल्प ( स० द्वि० ) निःसिक्ल, ततो कट् पत्वम् ।  
 नितान्त प्रथित ।  
 निष्कल्पि ( स० द्वि० ) निर्गतः सन्धिः सन्धानं यम,  
 सुयामादित्वात् पत्वम् । सन्धिरहित ।  
 निष्कल्प ( स० चक्षु० ) निर्गता समा यस्य । तिष्ठद्दृग्ग्रन्थीनि  
 च सूत्रानुसारे प्रथयोभावाः, ततो पत्वम् । ध्वस्तरातीत ।  
 निष्कल्पान् ( स० द्वि० ) निर्गतं साम यस्य, सुयामादि-  
 त्वात् पत्वम् । सामग्य्य ।  
 निष्कल्प ( म० पु० ) निष्कल्प-भावे चक्र, ततो सुसा-  
 मादित्वात् पत्वम् । नितान्त बोध ।  
 निष्क ( स० चक्षु० ) निष्कल्प । उपसर्गभेद, एक उप-  
 सर्गका नाम । इस उपसर्गमे निष्कलिखित सर्वाका बोध  
 होता है । १ निष्क । २ निष्क । ३ साकल्प । ४ पतिलम ।  
 निष्क, घोर निष्क ये दोनों उपसर्ग एक ही अर्थमें व्यवहृत  
 होते हैं । निष्क देखो ।  
 निष्कल्प ( स० द्वि० ) संकल्पपरिहृत ।  
 निष्क ( स० द्वि० ) संघ्राहीन ।  
 निष्क ( हि० वि० ) चक्र, कमजोर, दुबला ।  
 निष्कतार ( हि० पु० ) निष्कतार देखो ।  
 निष्कत ( म० स्त्री० ) १ सम्बन्ध, लगाव, तात्पुरुक । २  
 विवाह सम्बन्धकी बात, मंगनी । ३ अपेक्षा, सुसना,  
 सुकावला ।  
 निष्कल ( स० पु० ) निष्कलं सम्पातः सञ्चारो यत् ।  
 निर्गोच, दोषहर रात ।  
 निष्कल ( म० द्वि० ) निष्कलि निष्कल्प । नितान्त गामुक्त,  
 खूब चलनेवाला ।

निर्माग ( म० पु० ) निःसृज्-घञ् । १ स्वभाव, प्रकृति ।  
 २ चरूप, प्राकृति । ३ सृष्टि । ४ दान ।  
 निर्माग ( म० द्वि० ) निर्मागाज्याते जन-ड । १ स्वभाव  
 जात, जो स्वभावमे उत्पन्न हो ।  
 निर्मागयुम् ( म० स्त्री० ) प्रायुर्विषयक गणनाभेद, एक  
 प्रकारको गणना जिसमे किसी वार्षिकी प्रायुका पता  
 लगाया जाता है । हस्तशास्त्रक पादि ज्योतिषशास्त्रोंमें  
 इसका विषय जो निम्ना है वह इस प्रकार है,—  
 सबसे पहले प्रायुको गणना नितान्त प्रायुगणक है ।  
 क्योंकि मनुष्यको परमायुके ऊपर ऐहिक घोर पारलौकिक  
 समो कार्य निर्भर है । यह प्रायुगणना चार प्रकारकी  
 है—चंगायुः, पिण्डायुः, निर्मागयुः घोर जीवायुः । इन-  
 मेंसे जिनका लग्न बनवाना है, उनके लिए चंगायुःकी,  
 सूर्यके बलवान् होनेमे पिण्डायुःकी, चन्द्रके बलवान्  
 होनेसे निर्मागयुःकी घोर जिनके लग्न, चन्द्र घोर रवि ये  
 तीनों बलहीन हैं उनके लिए जीवायुःकी गणना करना  
 होती है । प्रायुगणनामें सर्वाको उच्च घोर नोच राशि  
 तथा उच्चाय घोर नोचंगका जानना प्रायश्चक है ।  
 जिसके जन्मकालमें लग्न घोर चन्द्र दोनों ही बल-  
 वान् हों, उसके चंगायुः घोर निर्मागयुः दोनों प्रकारमे  
 गणना की जाती है ; गणना करके दोनों प्रायुके चन्द्रोंको  
 जोड़ दें । अब योगफलको दोषे भाग दे कर वो कुछ  
 उत्तर निकलेगा, वही उस मनुष्यको प्रायु है, ऐसा  
 जानना चाहिए ।  
 जिसके जन्मकालमें चन्द्र घोर सूर्य दोनों ही बल-  
 वान् हों, उसके लिए भी पिण्डायुः ही प्रयुक्त है ।  
 पिण्डायुः घोर निर्मागयुःकी गणना करके दोनों चन्द्रोंको  
 एक साथ जोड़ दें घोर योगफलका चन्द्रके वर्षों, मास  
 घोर दिन जितना होगा उसीको परमायुः जानना  
 चाहिए ।  
 निष्कलिखित प्रकारमे निर्मागयुःकी गणना करना  
 होती है । चन्द्रका प्रायुःपल यहल करके उसके ६०का  
 भाग दे घोर भागफलमें जितमो कला विद्यमानादि  
 पाँचों, उसने दिन घोर दण्डादिको चन्द्रदत्त निर्मागयुः  
 समझना चाहिये ।  
 बुधका प्रायुःपल यहल करके उसे ३६० गुना करे ।

पुनःकारितम्, त्रिमये मूर्त्ति स्थापि न ही । ( पु० ) २  
अनभेद, पानामो नमस्वि चोरे चतुवार इदमे चकृत्वा  
नामः ।

निष्पेय ( सं० पु० ) निष्-निष्-पय् । १ निष्कोकृत,  
निष्कोकृतम् । २ निष्पेयं, विपना, रणकृता । ३ शूयं, न,  
शूर शरणा । चभागायै चक्षुषोभावा । ४ पेश्यामानम् ।  
निष्पेय ( सं० स्त्री० ) निष्-पिप-प्य ट् । पयं, विपना,  
पामना ।

निष्पेय ( सं० स्त्री० ) दीपयहीन, त्रिमये पुहयस न ही ।  
निष्पेय ( सं० स्त्री० ) निर्गतः प्रहस्यो यत् । १ प्रकट  
अव्ययम् । ( पु० ) २ तथोदय मन्थकरोय ममविभेद,  
पुनःपानुवार निरहमे मन्थकृते ममविभेदमे एकदा  
भास ।

निष्पेय ( सं० स्त्री० ) निर्गतः प्रहारः याव । प्रका  
रकाम्, निर्विकरक, त्रिमये क्षाता धोर चोपमे भेद  
न ही ३५ क्षाता, दीर्घा एक ही क्षाते च ।

निष्पेय ( सं० स्त्री० ) निर्गतः प्रकाशः परमात् । प्रकाश-  
क्षाम, त्रिमये रोगमौ न ही ।

निष्पेय ( सं० स्त्री० ) प्रकाशम्, ओ एक व्यागमे मूमरे  
व्यान पर न जा मये, त्रिमये मति न ही ।

निष्पेय ( सं० स्त्री० ) प्रसावहीन, शृय, मोक्ष ।

निष्पेय ( सं० स्त्री० ) पतिक्रियारहित, पतीकारहीन,  
निगता पतीकार न जिया आय ।

निष्पेय ( सं० स्त्री० ) प्रतिपद्यहीन ।

निष्पेय ( सं० स्त्री० ) पतिक्रियारहित, त्रिमये कोई  
सोःकटोक न ही ।

निष्पेय ( सं० स्त्री० ) प्रतिपद्यरहित ।

निष्पेय ( सं० स्त्री० ) प्रतिपद्यम्, मनुषीन ।

निष्पेय ( सं० स्त्री० ) निर्वाह्य प्रतिभा यत् । १ यत्,  
नाममात्र, माहात्म्य । २ अङ्, मूषे । निर्गता प्रतिभा  
सोःकटोकम् । ३ सोःकटोक, त्रिमये यमं दण्ड न ही ।

निष्पेय ( सं० स्त्री० ) श्रेय, आनन्द, भाषा, निरहमे ।  
निष्पेय ( सं० स्त्री० ) उन्मत्तारहित, विपद्यम् ।

निष्पेय ( सं० स्त्री० ) अक्षयहीन, श्रेयसहीन ही ।  
निष्पेय ( सं० स्त्री० ) निर्गता प्रत्ययः भाषा यत् ।  
अव्ययम्, निर्विक्र त्रिमये कोई विक्र न ही ।

निष्पेय ( सं० स्त्री० ) पनामप्य, निष्पेय ।  
निष्पेय ( सं० स्त्री० ) प्रपद्यम्, मनुष्यम् ।

निष्पेय ( सं० पु० ) त्रिमये मन्थकृतम् ।

निष्पेय ( सं० स्त्री० ) निर्गता प्रभा यत् । प्रभायम्,  
त्रिमये त्रिमो प्रहारको प्रभा या चमक न ही । पर्याय-  
विगत चरीक ।

निष्पेय ( सं० स्त्री० ) प्रभापरहित, मास्यहीन ।

निष्पेय ( सं० स्त्री० ) प्रमाद्यम्, त्रिमये कोई  
चतुर् न ही ।

निष्पेय ( सं० स्त्री० ) ययहीन, ययापरहित ।

निष्पेय ( सं० स्त्री० ) निर्गतं प्रयोजनं परिमम् । १  
प्रयोजनरहित, त्रिमये कोई मतमय न ही । २ त्रिमये  
कृत् ययं विद्य न ही । ३ निर्ये म, ययं । जि० स्त्री०  
४ विना ययं या मतमयका । ५ ययं, ययम् ।

निष्पेय ( सं० स्त्री० ) निर्गता प्रयोजनं त्रिमये  
काये म्पुटः तन्निमित्तक याम, जो ययया यमी गुण  
मति परमे निष्काया गया ही ।

निष्पेय ( सं० स्त्री० ) निर्गता प्रयायो मनुष्याय-  
गनाका चम्पारहित या । ( निष्पेय-निष्पेय । ययारहित )  
इति-निष्पेयते । मनुष्यया, मया अयत् । पर्याय-  
चमामत, तन्मय, मयापर, पादत, ययत, मययत ।

निष्पेय ( सं० स्त्री० ) निर्गता प्रायाः प्राणायमकः प्रभा ।  
प्रामप्रयागादिभ्यः, सुपे, मरा वृषा ।

निष्पेय ( सं० स्त्री० ) निर्गता योनिभ्यः । योनि-  
भ्यः, त्रिमये योनि न ही ।

निष्पेय ( सं० स्त्री० ) निर्गतं ययं ययम् । १ ययम्,  
प्रियका कोई यय न ही । २ यय्योदरहित, त्रिमये  
यय्योय न ही । ( पु० ) ३ ययनका ययान, ययान ।

निष्पेय ( सं० स्त्री० ) निष्पेयं ययं ययः शय, १  
विमयपरयका यो, यय ही । ययका ययोपतं ययान यय  
ही गया ही, ययान ययं ययरही यो । पर्याय-  
निष्पेय, निष्पेय, निष्पेय, ययय, ययय, ययय-  
हीन, ययय, ययययय । २ ययका यययय  
क्षोदीया ययोपतं योना यय ही ययान हे, यय ययय  
कोर कोई ययान ययय लोके मीने । ययो कारण ययका  
निष्पेय नाम ययका हे ।

निष्कलि ( म० पु० ) चर्माके निष्कल करनेका अर्थ । वास्तविकीके अनुसार जिस समय विग्वामित्र अपने साथ रामचन्द्रको वनमें ले गए थे तब समय उन्होंने रामचन्द्रको धीरे धीरे अस्त्रीके साथ यह अर्थ भी दिया था ।

निष्कली ( म० स्त्री० ) १ निष्कला, महा स्त्री । २ वर्ष्या-ककोटी, वामक ककड़ी ।

निष्कन ( स० त्रि० ) निर्गतं फेनं यमः । फेनरहित, जिसमें फेन न हो ।

निष्कण्ड ( म० पु० ) निष्कण्डभावे घञ्, बाहुलकात् पत्वम् । १ चरण, जल पादिका गिरना । ( त्रि० ) निष्कण्ड-अच् । २ निष्कण्डयुक्त ।

निष्कृत ( म० त्रि० ) निःसिद्ध-क्त, ततो कट् पत्वम् । नितान्त घटित ।

निष्कृन्धि ( स० त्रि० ) निर्गतः सन्धिः सन्धानं यमः, सुपामादित्वात् पत्वम् । सन्धिरहित ।

निष्कर्म ( स० अर्थ० ) निर्गता समा यमः, तिष्ठदुपपत्तेर्नीति च सुखासुखारे प्रथयोभावः, ततो पत्वम् । अस्मरतीति ।

निष्कामन् ( स० त्रि० ) निर्गतं काम यमः, सुपामादित्वात् पत्वम् । कामशून्य ।

निष्कंध ( म० पु० ) निष्कंधभावे घञ्, ततो सुमा-मादित्वात् पत्वम् । नितान्त मेध ।

निष्क ( स० अर्थ० ) निष्कृत् । उपसर्गभेद, एक उपसर्गका नाम । इस उपसर्गसे निष्कृत्प्रकृत अर्थका बोध होता है । १ निष्कंध । २ निष्कंध । ३ शाकल्य । ४ पतिक्रम । निरु, धीरे निष्कंधे दोनों उपसर्ग एक ही अर्थमें व्यवहृत होते हैं । निरु देखो ।

निष्कल्प ( स० त्रि० ) संकल्परहित ।

निष्कंठ ( स० त्रि० ) संज्ञाहीन ।

निष्क ( हि० वि० ) अर्थक, कमजोर, दुर्बल ।

निष्कतार ( हि० पु० ) नितार देखो ।

निष्कवत ( अ० स्त्री० ) १ सम्बन्ध, लगाव, तास्तुक्त । २ विवाह सम्बन्धकी बात, मंगनी । ३ अपेक्षा, गुलना, सुकावला ।

निष्कवत ( स० पु० ) निष्कवतं सम्बन्धः सञ्चारी यमः । निर्गोच, दोषहर रात ।

निष्क ( म० त्रि० ) निष्कति निःस-अच् । नितान्त गामुक, सुख अस्मनेवाला ।

निष्कर्म ( म० पु० ) निःसर्ग-अच् । १ स्वभाव, प्रकृति । २ अर्थक, चाहति । ३ सृष्टि । ४ दान ।

निष्कर्मज ( म० त्रि० ) निष्कर्मजायते जन-उ । १ स्वभाव ज्ञात, जो स्वभावसे उत्पन्न हो ।

निष्कर्मयुक् ( म० स्त्री० ) आयुर्विषयक गणनाभेद, एक प्रकारको गणना जिससे किसी व्यक्तिकी आयुका पता लगाया जाता है । सुवृत्तान्तक पादि ज्ञातिःप्रत्येकं इसका विषय जो निष्कर्म है वह इस प्रकार है,—

सबसे पहले आयुको गणना नितान्त आयुग्रहण है । क्योंकि मनुष्यको परमायुके ऊपर ऐहिक धीरे पारलौकिक सभी कार्य निर्भर हैं । यह आयुगणना चार प्रकारकी है—पञ्चायुः, विण्डायुः, निष्कर्मयुः धीरे जीवायुः । इनमेंसे जिनका लग्न बनवाना है, उनके लिए पञ्चायुःकी, सूर्यके बनवाना होनेसे विण्डायुःको, चन्द्रके बनवाना होनेसे निष्कर्मयुःको धीरे जिनके लग्न, चन्द्र धीरे रवि ये दोनों बनवाने हैं उनके लिए जीवायुःको गणना करना होती है । आयुगणनामें प्रथमको उष धीरे मोक्ष रागि तथा उषा धीरे मोक्षरागा ज्ञानना प्रावश्यक है ।

जिसके जन्मकालमें लग्न धीरे चन्द्र दोनों ही बनवाना हो, उसकी पञ्चायुः धीरे निष्कर्मयुः दोनों प्रकारसे गणना की जाती है । गणना करके दोनों आयुके अर्थको जोड़ दे । अथ योगफलकी दोषे भाग दे कर जो कुछ उत्तर निकलेगा, वही उम्र मनुष्यकी आयु है; ऐसा जानना चाहिए ।

जिसके जन्मकालमें चन्द्र धीरे सूर्य दोनों ही बनवाना हो, उसके लिए भी विण्डायुः ही प्रयुक्त है । विण्डायुः धीरे निष्कर्मयुःकी गणना करके दोनों अर्थकी एक साथ जोड़ दे धीरे योगफलका अर्थक यम, माम धीरे दिन जितना होगा उसको परमायुः जानना चाहिए ।

निष्कलिखित प्रकारसे निष्कर्मयुःकी गणना करनी होती है । चन्द्रका आयुःपल पहल्य करके उसमें ३० का भाग दे धीरे भागफलमें जितनी कला बिकनादि पावेंगे, उतने दिन धीरे दण्डादिको चन्द्रदत्त नितर्गायुः समझना चाहिए ।

बुधका आयुःपल पहल्य करके उसे ३६ गुना करे ।

मुपनयन को होता है ३०वें भाग में कर निर्माता कला विद्या को, उत्तमा को दिन और दण्डादि मुपनयन निर्मातृ होता ।

रवि और बुधके वायुःपलका पदक ३०वें भाग में, भागजल विद्या को, उत्तमा को दिन और दण्डादि रवि और बुधका निर्मातृ होता ।

शुक्रके वायुःपलमें ३०वा भाग में कर भागजलमें जितनी कला विद्यादि पायेगी, उत्तमा को दिन और दण्डादि शुक्रके निर्मातृ है ।

गुरुके वायुःपलमें ३०वा भाग का मुपनयन ना हो, उसे ३०वें भाग में और भागजलमें जितनी कला विद्या को, उत्तमा दिन और दण्डादि गुरुके वायुःपलका निर्मातृ होता ।

शनिके वायुःपलकी पदक कर उसे दो अंगक रवि । पीछे एक पदको ३०वें भाग में कर भागजल को होगा उत्तममें जितनी पद पाठायें । एक जितनी कला विद्यादि कर रहेंगे, उत्तमा दिन और दण्डादि शनिका निर्मातृ होता ।

वायुःपलकी एक पदका गणना को जानो है—  
नक्षत्राणाम्नां एकत्रिंशत् शनिर्द्वे त्रिंशद्विंशतिं रहता एक पदम्बुधुको शनि चंग और ललाटिके पदमें एक पदको एक शनि और चंगके पदको पाठायें । एक पाठायन को होता है ३०वें गुण । मुपनयनको चंग द्वे माप तोड़ दे । पीछे एक योग ना चंगको ३०वें गुण करके ललाटके माप योग करके वा प्री पद कोना समो पदकका नाम एक पदका वायुःपल है ।

एदि नाम ३०वें मुद्रित योग कलाह का शनिके कलाह चंगी हल कला पाठ को एक कर हो, तो उसे हलीक कलाह का पीछे विद्येय कला होता है । वन-विद्याह को रहता, ललाटको एक पदका वायुःपल नामका पाठिके ।

एक पदकाये वायुःपलका निर्माता—नक्षत्राणाम्नां को एकत्रिंशत् शनिर्द्वे त्रिंशद्विंशतिं रहता, एक पद-बुधको शनि के पदकादिना पदक पर एक पदको एक शनि कला चंगका पद, एक ललाटका कलाह काये

के जो बनेगा, एक शनिके चंगको ३०वें गुण करे । मुपनयनको चंगकाहमें तोड़ दे । पीछे एक योग ना पदको ३०वें गुण करे और मुपनयनको कलाहके माप योग पर को योगजल होगा, ललाटका नाम एक पदका वायुःपल है । किन्तु एक मोक्षार्थक शनिका पद परिकल्पने भूल हो, तो उसे शनिके पदमें लः तोड़ दे और योगजलको पूर्ण प्रक्रियाके पदपाठ कला बनाये । जितनी कला होगी, वही एक पदका वायुःपल है । ललाटको भवना कलाको तो भिन्न है, पर एक पदका होता है ।

शुक्रके वायुःपलका नाम वा पथिमाहके रहने को, तो पूर्णांग प्रकाशके वायुःपल बना कर उत्तममें ललाटके निर्माता है । एक पदका तो कुछ बनेगा, वही एक एक पदका वायुःपल होता ।

शुक्र और शनि भिन्न पदोंके पदपाठ कोमिसे पूर्णांग वायुःपलमें एकका चंगींग निर्माता है । एक पदका तो बनेगा वही वायुःपल होता ।

पदपाठ नामके चंगमें एक कर यदि पदपाठ को जाय, तो पदकेको तरह चंगींग निर्माता बना पदका है । एक और शनिके माप शनिके नाम को पदपाठ को नामके वायुःपलमें कलाह ललाटका विद्येय करे । विद्येयजल को होगा, वही एक पदका वायुःपल है ।

एक पदका वायुःपलका शिर करके पूर्णांग प्रकाशके निर्मातृको गणना करने है ।

विद्याहः, निर्मातृः और ललाटः तीनों प्रकारकी गणनामें वही प्रकारके वायुःपल शिर कर ललाट याद गणना को जानो है ।

निर्मातृः गणनाके समय वायुःशनिकी गणनाकी प्रक्रिया करने को है । (एकपदका एक विद्येयकी) निर्मातृकी गणना एक विद्याह नामके है ।

- निमा ( ३० वं चंग ) ललाट, शनि ।
- निमाह ( ३० वं चंग ) निर्माह देतो ।
- निमाह ( ३० वं चंग ) निर्माह देतो ।
- निमाह ( ३० वं चंग ) ललाट, निर्माह ।
- निमाह ( ३० वं चंग ) ३ विद्याह देतो । ३ ललाट, ललाट ।
- निमाह ( ३० वं चंग ) निर्माह देतो ।

निसानो ( हि० स्त्री० ) निसानी देखो ।  
 निसापति ( हि० पु० ) निगापति देखो ।  
 निसार ( सं० पु० ) नि-सृ-घञ् । १ समुद्र । २ सहोरा  
 या सोनापाठा नामका वृक्ष ।  
 निसार ( सं० पु० ) १ निष्काशक, सदका, उतारा । २  
 सुगन्धीक शासनकालका एक सिक्का जो चौघाई रुपये या  
 चार पाने मुख्यका होता था ।  
 निसारक ( सं० पु० ) शालक रागका एक भेट ।  
 निसारना ( हि० स्त्री० ) बाहर करना, निकालना ।  
 निसारा ( सं० स्त्री० ) कदलीवृक्ष, केलीका पेड़ ।  
 निसावरा ( हि० पु० ) एक प्रकारका कवृत्तर ।  
 निसि ( हि० स्त्री० ) १ निगि देखो । २ एक वृक्षका  
 नाम । इसके मूलक चरणमें एक भगण और एक लघु  
 होता है ।  
 निसिकर ( हि० पु० ) निसिहर देखो ।  
 निसिदिन ( हि० स्त्री० वि० ) १ रातदिन, रात पहर ।  
 २ सर्वदा, सदा, हमेशा ।  
 निसिनिसि ( हि० स्त्री० ) चहरात्रि, निर्गोथ, पाघो रात ।  
 निसिन्धु ( सं० पु० ) वृक्षविशेष, निर्गुष्टी, सङ्घाम् ।  
 निसिशामर ( हि० स्त्री० वि० ) रातदिन, सर्वदा, सदा ।  
 निसोठी ( हि० वि० ) जिसमें कुछ तत्त्व न हो, निसार,  
 नीरव, घोषा ।  
 निसुभार ( सं० पु० ) निर्गुष्टीवृक्ष, सङ्घाम् का पेड़ ।  
 निसुन्धु ( सं० पु० ) पसुरभेद, प्रज्ञादके भाई छाटके  
 पुत्रका नाम ।  
 निष्ठुटक ( सं० स्त्री० ) निष्ठुटयति नि-सृदि-ष्णुन् । हिंसक,  
 हिंसा करनेवाला ।  
 निष्ठुटन ( सं० स्त्री० ) नि-सृट्-भावे ष्युट् । १ निहिं-  
 सन, हिंसा । २ बध । (वि०) ३ नि-सृट्-ल्युट् । ४ विना-  
 शक, मारनेवाला, नाश करनेवाला ।  
 निष्ठन ( हि० वि० ) निःपत देखो ।  
 निष्ठता ( सं० स्त्री० ) नितरां सता, नि-सृ-क्त स्त्रियार्थ  
 टाप । १ निष्ठता, निर्गोथ । २ स्थानाकवृक्ष, सोना-  
 पाठा ।  
 निष्ठतान्त्रक ( सं० पु० ) कोष्ठगतरोमभेद ।  
 निष्ठुट ( सं० स्त्री० ) नि-सृ-क्त । १ न्यस्त, परिंत क्रिया

दृष्या । २ प्रेरित, भेजा दृष्या । ३ दत्त, दिया दृष्या । ४  
 मध्यस्थ, जो बीचमें पड़ कर कोई बात करे । ५ छोड़ा  
 दृष्या, जो छोड़ दिया गया हो ।  
 निष्ठुटार्थ ( सं० पु० ) निष्ठुटः न्यस्तः पर्थः प्रयोजनं  
 यस्मिन्निति । दूतविशेष, एक प्रकारका दूत । दूत तोन  
 प्रकारका माना गया है—निष्ठुटार्थ, मिताथ और  
 सन्द गहारक । जो दोनों पक्षोंका अभिप्राय पच्छी तरह  
 समझ कर स्वयं ही सब प्रयोगोंका उत्तर दे देता है और  
 कार्य निष्ठ कर लेता है, उसे निष्ठुटार्थ कहते हैं ।  
 २ धनके अपचय और पाननादिमें नियुक्त पुरुषविशेष,  
 वह मनुष्य जो धनके पायव्यय और कृति तथा वाविश्य-  
 को देखरेखके लिए नियुक्त किया जाय । ३ पुरुष  
 विशेष, महोत्तम दामोदरमें लिखा है, कि जो मनुष्य धोर  
 और गूर हो, अपने मानिकका काम तत्परतामें करते रहें  
 और अपना धौरूप प्रकट करें, उसे निष्ठुटार्थ कहते हैं ।  
 निसैनो ( हि० स्त्री० ) सोपान, सोढ़ी, जीना ।  
 निसैनी ( हि० स्त्री० ) निसैनी देखो ।  
 निसोढ़ ( सं० स्त्री० ) नि-सृ-क्त, ततो भोव्, भोस्वात्वाच्  
 यः । नितान्तसद्य ।  
 निसोत ( हि० वि० ) जिसमें और किसी चीजका निःसृ-  
 ट् हो, शुद्ध, निरा ।  
 निसोत्तर ( हि० पु० ) निसोत देखो ।  
 निसोथ ( हि० स्त्री० ) सारे भारतवर्षके प्रदेशों और  
 पहाड़ों पर होनेवाली एक प्रकारकी मत्ता । इसके पत्ते  
 गोल और मुकीले होते हैं और इसमें गोल फल लगते  
 हैं । यह तीन प्रकारकी होती है—मफेद, काली और  
 लाल । मफेद निसोथमें मफेद रंगके, कालीमें काला  
 पन निये बँगनी रंगके और लालके फल कुछ लाल  
 रंगके होते हैं । मफेद निसोथके पत्ते और फल कुछ  
 लाल रंगके फल कुछ लाल रंगके होते हैं और अधिक  
 गुणकारी माने जाते हैं । बँगनी रंगके फलका  
 लुभाव सर्वेपच्छा समझते हैं । विशेष विवरण अत्र  
 शरमें देते ।  
 निसोकी ( हि० स्त्री० ) एक प्रकारका रोगका कीड़ा  
 जिसे निसारो भी कहते हैं ।  
 निष्ठुट—इसका साधने उसे 'इन्द्रक-वम' पाने समझाया





निसानो ( हि० स्त्री० ) निगानो देखो ।  
 निसापति ( हि० पुं० ) निगपति देखो ।  
 निसार ( सं० पुं० ) नि-र-घञ् । १ समुद्र । २ सहारा  
 या सोनापाठा नामका द्वीप ।  
 निसारं ( सं० पुं० ) १ निहावर, मदका, उतारा । २  
 सुगन्धीय भासनकासका एक सिका जो चौथाई रुपये या  
 चार आनि मूल्यका होता था ।  
 निसारक ( सं० पुं० ) गानक रागका एक भेद ।  
 निसारना ( हि० स्त्री० ) बाहर करना, निकालना ।  
 निसारा ( सं० स्त्री० ) कदलीद्वय, क्लेका पेड़ ।  
 निसावरा ( हि० पुं० ) एक प्रकारका कव्चर ।  
 निमि ( हि० स्त्री० ) १ निशि देखो । २ एक वृक्षका  
 नाम । इसके प्रत्येक चरणमें एक भगण और एक लघु  
 होता है ।  
 निमिकर ( हि० पुं० ) निशिहर देखो ।  
 निमिदिन ( हि० स्त्री० वि० ) १ रातदिन, पाठो पहर ।  
 २ सर्वदा, सदा, हमेशा ।  
 निमिनिमि ( हि० स्त्री० ) वर्षात्रि, निमोद्य, पाधो रात ।  
 निमिन्नु ( सं० पुं० ) वृक्षविशेष, नियुण्टी, सफ़ासू ।  
 निमिन्नु ( हि० स्त्री० वि० ) रातदिन, पत्रंत्त, मटी ।  
 मणि ।  
 निमिदिन ( सं० स्त्री० ) निमिदिनो विच-त्त । स्वविहीन,  
 जिसमें भूषी न हो ।  
 निमिपोवन ( सं० स्त्री० ) स्फटिक मणि ।  
 निमिषकण्टक ( सं० स्त्री० ) दण्य और कण्टकपरिणुष्य,  
 जिसमें घास और काँटा न हो ।  
 निमिज्ञ ( सं० स्त्री० ) निर्गतं तेजो यस्मादिति । तेजो  
 रहित, जिसमें तेज न हो ।  
 निमिज्ञ ( सं० स्त्री० ) ते सरहित, बिना तेलका, जिसमें  
 तेल न हो ।  
 निमिज्ञे ( सं० पुं० ) निष्-सुद-भावे घञ् । नितात्ता  
 ध्यान, बहुत कष्ट ।  
 निमिज्ञेन ( सं० स्त्री० ) निष्-सुद-भावे घञ् । नितात्ता  
 ध्यान, निहायत तकलीफ ।  
 निमिज्ञेय ( सं० स्त्री० ) तोयहीन, बिना जलका ।  
 निमिज्ञेय ( सं० स्त्री० ) भयहीन, त्रिसे डर न हो ।

दुषा । २ प्रेरित, भेजा दुषा । ३ दत्त, दिया दुषा । ४  
 मध्यस्थ, जो बीचमें पहुँच कर कोई बात करे । ५ कष्ट;  
 दुषा, जो छोड़ दिया गया हो ।  
 निष्टार्थ ( सं० पुं० ) निष्टः म्यदाः पर्यः प्रयोजनं  
 यस्मिन्निति । दूतविशेष, एक प्रकारका दूत । दूत तोन  
 प्रकारका माना गया है—निष्टार्थ, नितार्थ और  
 सन्देशहारक । जो दोनों पक्षोंका अभिप्राय अच्छी तरह  
 समझ कर स्वयं ही सब अश्लीला उच्चर दे देता है और  
 कार्य निह कर लेता है, उसे निष्टार्थ कहते हैं ।  
 २ धनके पथव्य और धाननादिमें नियुक्त पुरुषविशेष,  
 वह मनुष्य जो धनके पावव्य और ह्यपि तथा वाचिष्य-  
 को देखरेखके लिए नियुक्त किया जाय । ३ पुरुष  
 विशेष, मद्रोग दामोदरमें लिखा है, कि जो मनुष्य धोर  
 और गूर हो, अपने मानिकका काम तत्परतासे करते रहें  
 और अपना पौरुष प्रकट करें, उसे निष्टार्थ कहते हैं ।  
 निमैने ( हि० स्त्री० ) सोपान, सोढ़ा, षोना ।  
 निमैने ( हि० स्त्री० ) निमैनी देखो ।  
 निमोद्ध ( सं० स्त्री० ) नि-म-उ-त्, सतो भोत्, बोधात्वाच्  
 यः । नितात्तामद्य ।  
 निमोत्त ( हि० वि० ) जिसमें और किसी कोका निष्-  
 निभाव ( सं० पुं० ) यह शची सुची वस्तु जो बंध कर  
 रह गई हो ।  
 निमोद्ध ( सं० स्त्री० ) निर्गतः खेहः प्रेमतेजादिकं वा  
 पश्य । १ प्रेमशून्य, जिसमें प्रेम न हो । २ तैलशून्य,  
 जिसमें तेल न हो । ( पुं० ) ३ मन्त्रभेद, तन्त्रके अनुसार  
 एक प्रकारका मन्त्र । ४ धतमोद्ध, तीसोका पोधा ।  
 निमोद्धकला ( सं० स्त्री० ) निमोद्धः कर्म यस्याः ।  
 अतःकण्टकारी, सफ़ेद भटकटोया, कटोरी ।  
 निमोद्ध ( सं० स्त्री० ) निर्गतः शब्दो यस्य, बाहु० निमोद्ध-  
 कोयः । १ शब्दरहित, जिसमें कम्पन न हो । निमोद्ध-  
 घञ् । २ शब्द, कर्पण ।  
 निमोद्धतर ( सं० स्त्री० ) निमोद्ध-तर, यकाना शब्दर-  
 रहित ।  
 निमोद्धत्व ( सं० स्त्री० ) निमोद्ध-भाव ।  
 निमोद्धन् ( सं० स्त्री० ) निमोद्धः यस्मिन्निति इति ।  
 निमोद्धन् ।



धीर पुजारी द्वारा विग्रह-सेवा करते हैं। रातको ये लोग मठमें रहते हैं और दिनको व्यक्तिविषयसे अर्थ-संग्रह कर मठका खर्च निभाते हैं। ये लोग कभी भी तण्डुलान्नादि सामान्य भिक्षा ग्रहण नहीं करते। जन-समाजमें इनकी खब धाक जमी रहती है। जनता निहत्तोंके प्रति यथाविधि भक्ति और सम्मान दिखवाती है। निहत्तोंमें पण्यवकी जब मृत्यु होती है, तब उनके चेले अर्थात् अनुगत निहत्त गृह्य मठमें ही उनका शव-दाह करते हैं और एक दृष्टकमय वेदि निर्माण कर उसके ऊपर तुलसी वृक्ष रोपते और कई दिन तक उसमें जन-रहेते हैं।

निहत (सं० वि०) १ केका दुषा। २ नष्ट। ३ मारा हुआ, जो मार खाता गया हो।

निहतौर—युद्धप्रदेशके विजयनर जिलेकी धामपुर तहसीलका एक शहर। यह असा० २८° २०' उ० और देश० ७८° २४' पू०के मध्य, विजयनर शहरसे १६ मील पूर्वमें अवस्थित है। जनसंख्या लगभग ११७४० है। यहां बंदूक सुन्दर एक प्राचीन मस्जिद है। यहांकी चाय ३३०० रु०की है। यहां एक मिडिल स्कूल तथा बालक और बालिकाओंके लिए पाठशालाएं भी हैं।

निहत्या (हिं० वि०) १ जिसके हाथमें कोई हथियार न हो। २ जिसके हाथमें कुछ न हो, अर्थात् हाथ।

निहन (सं० पु०) नि-हन-सिध्। इननकारी, मारने-वाला।

निहनन (सं० स्त्री०) नि-हन-स्युट्। १ मारना, घबड़ाना।  
निपात देखो।

निहन्त (सं० वि०) नि-हन-स्युट्। १ इननकर्ता, मारने-वाला। (पु०) २ महादेव। ये प्रलय और इनन करते हैं, इसीसे इनका नाम निहन्ता पड़ा है।

निहन्तव्य (सं० वि०) नि-हन-तव्य। इननयोग्य, मारने-योग्य।

निहन्त (सं० वि०) निर्दत्ता देखो।

निहत्त (हिं० पु०) यह जमीन जो मटोके पीछे बूट जांते-में निकल पाई हो, मंगामरारा, कटार।

निहत्त (सं० पु०) १ यह मनुष्य जिसका यह निहत्त हो कि वस्तुओंका वास्तविक मान ज्ञान होना समर्थ है।

क्योंकि वस्तुओंकी सत्ता ही नहीं है। ऐसे लोग वस्तुओंको वास्तविक सत्ता और उन वस्तुओंके सत्तात्मक मानका नियम करते हैं। २ इस देशका एक दल। यह पहले एक सामाजिक दल था जो प्रचलित वैवाहिक प्रथा तथा रीति रवाज और पैसके माननका विरोधी था, लेकिन पीछे एक राजनैतिक दल हो गया और सामाजिक तथा राजनैतिक निरन्तर नियमोंका ध्वंसक और भांगक बन गया। ३ इस दलका कोई पादमी।

निहव (सं० पु०) नि-ह्व-पर, ततो मन्मथारणम्। (घः-सम्प्रसारणम्। पा ३।१।७२) पाह्वान।

निहार (हिं० स्त्री०) सोनारों और लोहारोंका एक जोहार। इस पर वे धातुको रण कर धोड़में कूटते या पीटते हैं। यह कोहका बना हुआ चौकोर होता है और नीचेकी सपेक्षा ऊपरकी ओर कुछ अधिक चौड़ा होता है। नीचेकी ओरसे निहारको एक काठके टुकड़ेमें जोड़ देते हैं जिससे यह कूटते या पीटते समय ऊपर उधर झिलती झिलती नहीं। यह छोटी बड़ी कई प्रकारों और प्रकारकी होती है।

निहाका (सं० स्त्री०) निघतं जहाति ध्रुवमिति नि-हा-त्यामि कम्। (गोशः। उप् १।४।४) १ गोविधा, गोध नामक जन्तु। २ घड़ियाल।

निहानी (हिं० स्त्री०) १ एक प्रकारकी बलानो जिसकी नोक परदे पम्पकार होती है और जिसमें बारीक बुनाईका काम होता है, कलम। २ एक नोकदार जोहार जिसमें ठपकेकी लकीरोंके बीचमें भंरा हुआ रंग सुरक्ष कर साफ किया जाता है।

निहायत (सं० वि०) अत्यन्त, बहुत, अधिक।

निहार (सं० पु०) निहारा जियतो पदार्था येन नि-ह-घञ्। १ नोहार, हिम, बरफें। २ घोस। ३ कुम्भटिका, कुहासा, पाला, कुहरा।

रातें अथवा दिनको हृद्ययमें और घाम पाटके ऊपरी भाग पर जो जलकवांसमुह जमा होते देना जाता है, उसीका नाम निहार है। इसकी उत्पत्तिके विषयमें एक मत नहीं है, भिन्न भिन्न निहारोंमें भिन्न भिन्न मत प्रकाशित किया है। चरित्रमें हिमी स्थान

दा विद्या है कि, 'दश मोहान एक प्रकारको छुटि  
 है। बापुने बाप को जन्मद बापद गिना रहता है वसने  
 किसे कबहू तदा जन्मनेके वध जन्मभूत हो कर छोटी  
 छोटी कृष्णमें छुटिको भाव नीचे गिना है।'  
 किसेका कहना है कि, "जोगलगाके ज्ञान मोहान  
 नहीं होता, नाशाने को जोगलगाको जन्मति होतो  
 है।' छोटी दशासविद्यादि कहने है, कि मोह मोहान-  
 जन्मलिका एक आदिब कारण होने पर भी, प्रतीतये  
 कृष्णता या हम व.वा.कारणमें निजलगा है, यह भी एक  
 विदित कारण है।' आधुनिक वैज्ञानिक एक समस्त  
 जगता दीवद म कहते हुए कहते हैं कि, 'दश विद्या-  
 सभासक समस्त मनुष्य को वसिष्ठवर्षे साधुविश्वारथ को  
 साधु-दशक कहते हैं।' हमनेमें गानकी साधुदशका  
 अधिका साधुविश्वारथका भाग अधिष्ठ है। कारण तेसके  
 आदिभूत मनुष्यके दिव्याभाषणमें मनी मनुष्य जन्मविश्व  
 मी साधु दशक कहते हैं। किन्तु साधुको प्रथम प्रकार  
 साधुदशक प्रथम प्रकारके कारण प्रथमतः को दिव्य  
 दशकके अधिका अधिष्ठ दिव्याभाषणमें साधुविश्वारथ  
 है। हमका जन्म पर कृपा कि धर्मो प्रथम दिव्याभाषणः  
 अधिका अधिष्ठ अधिष्ठ जोगलगा काह कहने हैं। पर-  
 दश मोहानको जन्मतिके विषयमें मनुष्यात्म जन्म पर है  
 कि, 'किसी दशक मनुष्याके कारण अधिष्ठ दिव्याभाषणमें  
 साधुविश्वारथको जन्मलगाको जन्म है, हम कारण  
 कहने किहकहनें साधुका साधुमंदिष्ट मनी साधु  
 जन्म हो जाता है को जन्मका जन्मभूत हो कर निज-  
 दशक कृष्णमें लगे जाय म ला है। कारण जन्म विद्वान्  
 को जन्म कहते हैं मनी को वसने दशकाव निश्चित  
 को जाने है को साधुदशकदि वसने को वसने को  
 कहते हैं। किन्तु साधु विद्वान् को जन्मलगा जाय कहते  
 है, जन्मके जन्म जन्म हो कर जन्मिष्ठ होने लगे  
 मनी साधुदशकदि वसने को जन्म को

विद्वान् जन्म एक जन्म  
 जाय जन्म होनेके को  
 है। अधिष्ठ जन्मका जा-  
 अधिष्ठ जन्म को कर जन्म  
 जन्ममें जन्मिष्ठ को जा-  
 जाकाधमें जन्म दि-  
 जन्मों रहते एक दिन  
 मनी जाया, या का-  
 जन्मके पुत्रीक जन्म को  
 है। दशका कारण  
 रहनेमें जन्मका निजमनु-  
 अधिष्ठ होना है। मनी  
 अधिष्ठका को जाया है  
 कहने पर मनी बापुके  
 जन्मके जन्म मनी को  
 मनी जन्मके दिव्याभाषणमें  
 जन्म को जन्म किसे  
 निजमनुष्य को जन्म म-  
 दिव्या जाया है। नि-  
 जन्मका मनी का-  
 निज मनी रहनेमें जन्म  
 साधुको मनी अधिष्ठ म-  
 जन्म को निजका अधिष्ठ  
 अधिष्ठ दिव्या है।  
 विद्वान् साधुको निजका  
 मनी जाया। जन्म  
 मनी जन्म निजका का-  
 होनेके को निज निज  
 को जन्म जन्म मनी को  
 मनी कोना। जन्म

रातकी वायुके तापका शून्यातिरिक्त अधिकतम तापकी अपेक्षा अधिक है। जिस दिन सबसे अधिकतम तापका मापा रहता है उसके पूर्व रात्रिको निहार यद्यत् परिमाणमें मन्त्रित देखा जाता है। कमन्त घोर शीत ऋतु को हमनोगोंके देगमें निहारपातका उपयुक्त समय है। इन समय रातको मोघादि रहनेसे निहार बहुत कम जमा होता है। किन्तु परवर्ती दिनमें उक्त निहार कुनामके रूपमें परिणत हो जाता है।

किर यदि आकाश निर्मल घोर वायु स्थिर रहें तो मध्यरात्रि को घोर सूर्योदयके पहले निहार अधिक मात्रामें मन्त्रित देखा जाता है।

जिन सब द्रव्योंके ऊपर निहारसञ्चार होता है, उनका तथा तन्त्रिकदृश्य स्थानोंका उष्णत्व नोहा-सञ्चार-सूचक ताप (Dewpoint) की कमी नहीं होनेसे उन सब द्रव्योंके ऊपर नोहार सञ्चार नहीं होता। एक ही समय वायुकी एक ही पवस्थामें भिन्न भिन्न वस्तुओं पर उष्ण-परिमाणमें नोहार मन्त्रित हुआ करता है। धातु द्रव्यके ऊपर अत्यन्त अल्पपरिमाणमें नोहार जमा होता है, किन्तु घास, कपड़े, लकड़, कागज, रूतू-तल घोर श्लास-के ऊपर निहार प्रचुर-परिमाणमें मन्त्रित होता है।

जितनी धातु है, उतनी बहुत कम तापविकीरण करती है, यद्यो कारण है कि घास, कपड़े इत्यादि तापविकीरण-शक्तिस्वरूप वस्तुओंके ऊपर अपेक्षात्न अधिक परिमाणमें नोहार-सञ्चार होता है। किर जो सब वस्तु आकाशके साथ सात्वात् सम्बन्धमें विद्यमान हैं, उनके ऊपर जैसा निहार जमा होता है, वैसा घोर किशो पदार्थके ऊपर जमा नहीं होता। समान तोलके दो गुच्छे पथमकी से कर उनके एक गुच्छेको किशो तस्तेके ऊपर घोर दूसरे गुच्छेको तल्लेके नीचे रखो तथा इसी पवस्थामें खुले स्थानमें रातकी लोड़ दो। सवेरा होने पर दोनों गुच्छेकी तोलमें फर्क पड़ जायगा। तल्लेके ऊपर जो पथम है, उसका आकाशके साथ लोड़-सम्बन्ध होनेके कारण उस पर नीचेकी अपेक्षा अधिक परिमाणमें निहार जमा गया है।

दिवाभागमें नोहार-सञ्चारके सम्बन्धमें मिटर रवेमर-का कहना है कि, 'पृथ्वीसे रात्रि पक्षवा दिवा समो समय

घोर आकाशकी समो पवस्थामें तापविकीरणशक्ति सम्यक् होती है। आधार्णतः सूर्य सब दृष्टिपरिच्छेदक-वृत्तके ऊपर पवस्थान करता है, तब पृथ्वीको तापविकी-रण घोर तापग्रहणशक्ति समान रहती है। जिन सब स्थानों पर सूर्यको किरण सम्प्रभावेमें नहीं गिगतीं, वे सब स्थान सूर्य घोर पन्थान्य पदार्थामें जो ताप ग्रहण करते, समय समग्र उभये अधिक तापविकीरण करते हैं; इसी कारण उन सब स्थानों पर सारा दिन निहार जमा होता रहता है। डाक्टर जेम्स-डि टूकाने निहा है, कि नेपालके पूर्व भागमें कहीं कहीं सुबहके १० घण्टेके पहले घोर तोसने पहरके ३ घण्टेके बाद सूर्यका मुख स्पष्ट देखा नहीं जाता। इन सब स्थानोंमें इनता पवि त ताप-विकीरण होता है कि वहां निहार जमेगा गिरने देखा जाता है।

निहारिका (Nebulae) (सं० स्त्री०) आकाशस्य एक प्रकारका चोषालोक-विशिष्ट पदार्थ, एक प्रकारका आकाशका पदार्थ जो देखनेमें धुंधले रंगके धब्बेकी तरह होता है। इसको निर्दिष्ट आकृति नहीं है। दूरबीनस्य यन्त्र द्वारा देखनेमें यह मेष (निहार)को आकृति मो मालूम पड़ती है, इसीसे इसका नाम निहारिका पड़ा है।

टेलीमीके सिफ्टाविन यन्त्रमें निहारिकाका जो विषय है उसे देखनेमें सामान्यदृष्टिमें प्रान हो जाता है। दूर-बीनसको सहायतासे देखा जाता है कि अत्यन्त छोटे छोटे पदार्थ लक्षसमूहको समष्टि को निहारिका है। १६१४ ई०में विममन सिरियसने एक निहारिकाका आविष्कार किया जो पूर्वाविश्राम निहारिकामन्त्रमें विनकुल प्रथक है।

१६१८ ई०में लीम ज्योनिर्वेत्ता मिनाट्जने ठोक समो प्रका। एक पदार्थका 'परियन' लक्षवपुच्छके मन्थ आविष्कार किया। हाइड्रोजन-भाइडने १६५५ ई०में इसका विषय प्रकाशित किया, किन्तु उससे पहले को इसका जो आविष्कार हो चुका था, उसे वे नहीं जानते थे, इस कारण ये पाश्चात्ये पधोर हो उठे। निहारिकाका निश्चयनी स्थान धार तमसाध्य है, इन कारण उनमें समझा कि आकाशके मध्य ही कर सर्वका

पर निष्ठा है कि, 'यह नोहार एक प्रकारको हटि है। वायुके समय जो जलोय वाष्प मिला रहता है उसमें किसी प्रकार उष्ण मगनेमें बह घनीभूत हो कर छोटी छोटी बुन्दोंमें हटिकी तरह नीचे गिरता है।' किसीका कहना है कि, "गोतसताके कारण नोहार नहीं होता, नोहारमें जो गोतसताकी उत्पत्ति होती है।' कोई पदार्थ विस्थाविद् कहते हैं, कि शैत्व नोहार-उत्पत्तिका एक भागिक कारण होने पर भी, जमीनसे हमेशा जो रम वाष्पकारणमें निकलता है, वह भी एक विशेष कारण है।" प्रायुनिक पक्कितमय इन ममस्त नतीका पोषण न करति हुए कहते हैं कि, 'यह विम-संसारस्य समुदय वस्तु ही प्रतिषधमें तापविकोरण घोर ताप-पहण करता है। इनमेंसे रातकी तापपहणको अपेक्षा तापविकोरणका भाग अधिक है। कारण तेजके प्रादिभूत म्युं देरसे दिवाभागमें समीः वस्तु बहूपरिमाणमें ताप पहण करती है। किन्तु रातकी उस प्रकार तापदायक द्रव्यके प्रभावके कारण द्रव्यमात्र ही तेज पहणकी अपेक्षा अधिक परिमाणमें तापविकोरण करता है। इसका फल यह हुआ कि समी द्रव्य दिवाभागको अपेक्षा रातकी अधिक गीतलता प्राप्त करते हैं। पत-एव नोहारको उत्पत्तिने विषयमें वर्तमान मत यह है कि, 'सभी द्रव्य मग्याके बाटसे अधिक परिमाणमें तापविकोरणपूर्वक गीतलताकी पाते हैं, इस कारण उन्हें निकटवर्ती स्थानोंका वायुसंघिष्ट जनेय वाष्प गीतल हो जाता है पोर क्रममः घनीभूत हो कर निक-टस्थ स्थानोंके ऊपर-ऊपर जाता है। कारण वायु जिनानां ही उष्ण होती है, उतने ही समके उपदान विघिष्ट हो जाते हैं पोर वाष्पधारणमति उतनी ही प्रबल हो उठती है। किन्तु वायु जिनको गीतलता लाभ करती है, उतने घन, उतने ही घन सञ्चिष्ट होने लगते है। सुतरां वाष्पधारणमति उतनी ही कम हो जाती है। एही कारण-है कि वायु खन उंठी हो जाती है, तब अधिक परिमाणमें अपने जलोय वाष्पकी उस अवस्थामें धारण नहीं-कर सकती पोर उक्त वाष्प घनीभूत हो कर अल्पविन्दु रूपमें लक्ष्मी पतियों, घास, तथा पोर मृत्से मृत्से द्रव्यांवा जम जाता है। ऊपरसे

गिरते समय उक्त जनकणामसूहका किसी शीतल द्रव्यके साथ स्पर्श होनेसे ही वह सममें सं-मन्न हो जाता है। उचित जनका नाम निहार है।' पूर्वोक्त जनविन्दु सञ्चित न हो कर जब अथवासाकन सुष्पतमं जनविन्दुके रूपमें प्रवर्तित हो जाता है, तब उसे कुहासा कहते हैं।

प्राकारमें जिस दिन घोर घनघटा वा प्रबल वात्सा नहीं रहती उस दिन उतना निहार जमा होते देखा नहीं जाता, सो क्यों? इसके कारणका प्रसुप्तमान कारनेसे पूर्वोक्त मत घोर भी परिस्पुष्ट वा दृढ़ हो सकता है। इसका कारण यह है कि उस दिन अधिक शीघ्र रहनेसे उसका तेजसमूह विकीर्ण हो कर भूषुष्ट पर पतित होता है। सुतरां भूषुष्टसे ताप विकीर्ण होनेका प्रतिबन्धक ही जाता है। इसी प्रकार प्रबल वेगसे वायु बहने पर गरम वायुके कारण तापविकोरणकार्य कुन्दर-रूपसे सम्पन्न नहीं होता। एही कारण है कि उस समय उतने परिमाणमें निहार देखा नहीं जाता। परि-ष्टल पोर किसी किसी दार्शनिकका कहना है कि घोर शीघ्रगुण घोर प्रबल वात्साहीन रातकी हो केवल निहार देखा जाता है। किन्तु डाक्टर वेचन इस बातको स्वोकार नहीं करने। प्रबल वात्सायुक्त रातकी शीघ्र नहीं रहनेसे शयना घोर मेघाच्छादिन रातकी वायुकी गति अधिक नहीं रहनेसे घास प्रभृति द्रव्यके ऊपर जो निहार सञ्चित होता है उसे उक्तोंमें अपनी शालोंसे देखा है। किन्तु घोर मेघ पोर प्रबल वायु-विघिष्ट रातकी निहारका जमा-होना कभी भी देखनेमें नहीं आता। उक्त डाक्टरके मतसे समय पोर स्थानके भेदसे उक्त निहारका शयु नाधिक देखा जाता है। हटि होनेके पीछे घटे निहारसञ्चार देखा जाता है किन्तु दीर्घकाल हटि नहीं होनेसे उस प्रकार निहारसञ्चार नहीं होता। कभी कभी दिनकी भी निहार देखा गया है। किसी किसी देशमें दक्षिण वा पश्चिम दिशामें जब वायु बहती है, तब निहार अधिक मात्रामें जमा होता है, किन्तु उत्तर वा पूर्व दिशासे बहनेसे उस प्रकार निहार नहीं देखा जाता। बसन्त पोर शरत्-कालमें शैवा निहारका निरना सम्भव है, वंश शेष-कालमें नहीं। कारण पूर्वोक्त दोनो समयमें दिन पोर

रातकी वायुके तापका स्थूलतिरिक्त शेषोक्त कालकी अपेक्षा अधिक है। जिस दिन सवेरे पत्यन्त कुहासा लाया रहता है उसके पूर्व रात्रिकी निहार यद्येष्ट परिमाणमें सञ्चित देखा जाता है। ह्रिमन्त और शीत ऋतु, ही-हमलोगीके दिगमें निहारपातका उपयुक्त समय है। इस समय रातकी भेघाटि रहनेसे निहार बहुत कम जमा होता है। किन्तु परवर्ती दिनमें उक्त निहार कुहासेके रूपमें परिणत हो जाता है।

किर यदि पाकाश निर्मल और वायु स्थिर रहे, तो मध्यरात्रिकी और पूर्वोदयके पहले निहार अधिक मात्रामें सञ्चित देखा जाता है।

जिन सब द्रव्योंके ऊपर निहारसञ्चार होता है, उनका तथा तत्रिकटस्थ स्थानोंका उष्णत्व नोहार-सञ्चार-सूचक ताप ( Dewpoint )की क्रमो नहीं होनेसे उन सब द्रव्योंके ऊपर नोहार सञ्चार नहीं होता। एक ही समय वायुकी एक ही पक्षस्थानमें भिन्न भिन्न वस्तुओं पर उद्यक् परिमाणमें नोहार सञ्चिन हुआ करता है। धातु द्रव्यके ऊपर पत्यन्त पल्पपरिमाणमें नोहार जमा होता है, किन्तु घास, कपड़े, खट्ट, कागज, शूल-तब और स्नास-के ऊपर निहार प्रचुर परिमाणमें सञ्चित होता है। जितनी धातु है, उतनी बहुत कम तापविकोरण करती है, यद्ये काण है कि घास, कपड़े इत्यादि तापविकोरण-शक्तिस्मय्य वस्तुओंके ऊपर अपेक्षातः अधिक परिमाणमें नोहार-सञ्चार होता है। किर जो सब वस्तु पाकाशके साथ साक्षात् सम्पर्धमें विद्यमान हैं, उनके ऊपर जोसा निहार जमा होता है, वेसा और किसी पदार्थके ऊपर जमा नहीं होता। समान तोलके दो गुच्छे धराशकी से ऊपर उसके एक गुच्छेकी किमी तखनेके ऊपर और दूसरे गुच्छेकी तखनेके नीचे रखी तथा इसी पक्षस्थानमें खुले स्थानमें रातकी छोड़ दो। सवेरा होने पर दोनों गुच्छेकी तोलमें फर्क पड़ जायगा। तखनेके ऊपर जो पदार्थ है, उसका पाकाशके साथ ठोका-सम्पर्ध होनेके कारण उस पर नीचेकी अपेक्षा अधिक परिमाणमें निहार जमा गया है।

दिवाभागमें नोहार-सञ्चारके सम्बन्धमें मिटर स्तंभ-का कहना है कि, 'सुबोपे रात्रि पड़वा दिवा समो समय

और पाकाशकी ममो-पवस्थाभोमें तापविकोरणक्रिया सम्भव होती है। प्राधारणतः सूर्य जब दृष्टिपरिच्छेदक-वृत्तके ऊपर पवस्थान करता है, तब पृथ्वीको तापविको-रण और तापवहणशक्ति समान रहती है। जिन सब स्थानों पर सूर्यकी किरण सम्बन्धमें नहीं गिरती, वे सब स्थान सूर्य और पन्थान्य पदार्थोंसे जो ताप ग्रहण करते, समय समय उनमें अधिक तापविकोरण करते हैं; इसी कारण उन सब स्थानों पर सारा दिन निहार जमा होता रहता है। डाक्टर जोषिक-डि हुकाने निहा है, कि नेपालके पूर्वी भागमें कहीं कहीं सुबहके १० मजेके पहले और सोमने पहरके ३ मजेके बाद सूर्यका सुख स्पष्ट देखा नहीं जाता। इन सब स्थानोंमें हमना पवित्र ताप-विकोरण होता है कि वहां निहार हमेशा गिरते देखा जाता है।

निहारिका (Nebulae) ( म० स्त्री० ) पाकाशस्य एक प्रकारका लोपात्तक-विशिष्ट पदार्थ, एक प्रकारका पाकाशका पदार्थ जो देखनेमें धुंधले रंगके धन्नेकी तरह होता है। इसकी निर्दिष्ट पालति नहीं है। दूरबीचण यन्त्र द्वारा देखनेमें यह मोघ ( निहार )की पालति मो मालूम पड़ती है, इसीसे इसका नाम निहारिका पड़ा है।

टलेमीके सिष्टाक्षियन यन्त्रमें निहारिकाका जो विषय है उसे देखनेमें सामान्यरूपमें ज्ञान हो जाता है। दूर-बीचणको सहायतामें देखा जाता है कि पत्यन्त छोटे छोटे पदार्थ मन्त्रमण्डको समष्टि हो निहारिका है। १६१४ ई०में सिमसन मिरियमने एक निहारिकाका आविष्कार किया जो पूर्वाविज्ञान निहारिकासम्बन्धमें विनकुण प्रथक है।

१६१८ ई०में खोम ज्योतिर्विद्या मिनटमने ठोका समो प्रकाश एक पदार्थका 'परियन' मन्त्रमण्डके मन्त्र आविष्कार किया। हाइजेगन् माइबर्ने १६५५ ई०में इसका विषय प्रकाशित किया, किन्तु उसके पहले जो इसका जो आविष्कार हो चुका था, उसे ही नहीं जानते थे, इस कारण ये पात्रादने पधोर ही ठठे। निहारिका निकटवर्ती स्थान द्वारा तमसाध्य है, इस कारण उन्हें निगमना कि पाकाशके मन्त्र को कर धरनीका



ज्योतिर्मय राज्य उनकी निगाह पर पड़ा है।

१८वीं शताब्दीके मध्यभागमें केवल मात्र २०११ निहारिका देखी गई थीं। १७५५ ई०में फरामो ज्योतिर्विद लुकासो (Lucasilli) ने इनके सिवा और भी ४२ निहारिकाओंका विवरण प्रकाशित किया। उन्होंने इस निहारिका ही तीन श्रेणियोंमें विभक्त किया।

१म श्रेणी—दूरबीक्षण द्वारा देखनेमें ये सब प्रकृत निहारिकाके रूपमें देखी जाती हैं, यद्यत् कोई निर्दिष्ट आकार देखनेमें नहीं पाता। २य श्रेणीकी नक्षत्रमें रख मकत है और ३य श्रेणी निहारिकापदार्थपरिचित नक्षत्र है। एक दूसरे फरामो पण्डितने १७३३ में अधिक निहारिकाओंका आदिष्कार किया।

इसने बाद हार्शलने निहारिकाका वर्तमान विवरण प्रकाशित किया। १७८६ ई०में उन्होंने रायल सोसाइटीमें हजार निहारिकाओंकी एक तालिका दी। १७८८ ई०में उन्होंने एक हजार और निहारिकाको तथा १८०२ ई०में पांच सौकी एक दूसरी तालिका प्रदान की। आखिरी बारमें उन्होंने नक्षत्रमण्डलके पदार्थोंका वारह भागोंमें श्रेणीबद्ध किया। गया,—

१। अनन्ययुक्त तारका (Insulated stars)।

२। युग्म-तारका (Binary stars) यद्यत् दो नक्षत्र एकत्र ही कर साधारण भारद्देन्द्रके चारों ओर घूमते हैं।

३। त्रय वा तमोधिक तारका (Triple or multiple)।

४। गुच्छवद् तारका वा क्षया-त्रय (Milky way)।

५। नक्षत्रपुच्छ।

६। मण्डल-गुच्छ (Clusters of stars)। इनमें और ४वीं श्रेणीमें विभेद यही है कि इसकी आकृति गोलाकार और केन्द्रको ओर क्रमशः घनीभूत होती है।

७। निहारिका।

८। नाक्षत्रिक निहारिका (Stellar Nebulae)। इनके सामनें ये सब पतौय दूरदर्शी मण्डल-श्रेणीके समान देखी जाती हैं।

९। श्वेत निहारिका (Milky Nebulosity)—इस श्रेणीमें तारामाना निहारिकाको सद्यः और यह निहारिका एकत्र देखी जाती है।

१०। निहारक-मण्डल (Nebulous stars) नैहारिक वायुमें परिचित।

११। ग्लोबमयभूत निहारिका (Planetary Nebulae), इस श्रेणीकी निहारिका पहचानकी तरह सम्पूर्ण गोलाकार, किन्तु छोय आकाश-विशेष होती है।

१२। केन्द्रविशिष्ट-निहारिका (Planetary nebulae with centres) शीघ्रतः दृश्य देखनेमें सद्यःमें घोष होता है कि निहारिका दिनों दिन उत्पन्न विरदुर्भे क्रमशः घनीभूत होती है।

१८११ ई०में उन्होंने रायल सोसाइटीमें निहारिकाकी तारकाकल्पितप्रामाणिके सम्बन्धमें एक प्रबन्ध लिख भेजा जिसका आरांश इस प्रकार है,—निहारिका आकाशमण्डलमें विच्छिन्न अवस्थामें रहती है। इनके छोटे छोटे पंश परस्पर आकर्षणवशात् एकत्र ही कर पदार्थमें परिणत होनेकी चेष्टा करते हैं और क्रमशः एकत्र ही कर कठिन पदार्थमें परिणत हो गये हैं।

१८३३ ई०में कोटे हार्शलने उत्तर-ख-मण्डलकी निहारिकाका अच्छी तरह पर्यवेक्षण कर उसका विवरण प्रकाशित किया। उस विवरणमें २१०६ निहारिकाओंकी कथा लिखी है, उनमेंसे ५००-का उन्होंने स्वयं आदिष्कार किया। इसी प्रकार और भी कितने साहस इस विषयमें पनेक विवरण प्रकाशित कर गये हैं।

काण्ट (Kant) और लाप्लास (Laplace) का मत है कि ध्रुवाण्डकी सभी पदार्थ किसी एक समय वायव्योय निहारिकावस्थामें थे। उस समय इनका ताप अत्यन्त अधिक था। पीछे क्रमगत ठण्डा होती होती है किसी निर्दिष्ट केन्द्रका स्थिर कर उसके चारों ओर घनीभूत होने लगे। पनन्तर उसकी गतिका पारम्भ हुआ। इस प्रकार हम सौरोंके श्वेतमण्डलकी सृष्टि हुई।

हम सौर केवल इसी विषयमार्तक चरित्तवसे पचगत हैं, इस प्रकार और भी अनेक दिग्ग हो सकते हैं, इसमें विदुग्माय भी शब्द न हो।

सम्प्रति ज्योतिर्विदोंका कथना है, कि जितने पदार्थ हैं, वे सभी पहले विच्छिन्नान्याममें पचग्य उत्पन्नपत्तर (Meteorites) रूपमें वर्तमान थे। उन समय उसका उत्पन्न उत्पन्न अधिक न था। परन्तु संश्रय और

शाक्यधर्म निहारिकार्यों की संशोधन-वृत्ति हुई। सद्यो-  
चन-वृत्ति होनेसे सत्ताप्रसारणका संघर्ष बहुत  
ज्यादा हुआ करता है, इस कारण निहारिकार्यों क्रमशः  
उत्तम होने लगे हैं। तापको द्वितीं दिन वृद्धि होनेसे वे  
उष्णरजतापा कर नक्षत्ररूपमें परिणत होते हैं। निहा-  
रिकांशि नक्षत्र होनेके बाद प्रकृतिके नियमानुसार ये ताप-  
विकीरण करती हैं और तापविकीर्ण होनेसे क्रमशः  
अपेक्षाकृत गीतल होने लगती हैं, किन्तु नक्षत्ररूपमें परि-  
णत होने पर भी, वहीकरणज्या उष्णता कियत्परिमाण-  
में बढ़ने लगता है। यह उष्णता जिस परिमाणमें बढ़ता है  
उससे अधिक विकीरण-जन्य उष्णता निकलता है। अतएव  
इसका फल यह होता है, कि य। नक्षत्र गीतल हो कर  
यह रूपमें परिणत हो जाता है। यहके साथ नक्षत्र-  
का जैसा सम्बन्ध है, नक्षत्रके साथ भी निहारिकार्योंका  
वैसा ही सम्बन्ध है अर्थात् नक्षत्र ठंडा हो कर यह ही  
जाता है।

निहारुषा (दि० पु०) नक्षत्रा देवी।

निहाल (फा० सि०) जो सब प्रकारसे संतुष्ट और प्रसन्न  
हो गया हो, पूर्ण काम।

निहाल—हिन्दूके एक कवि। ये सप्तमज जिनके निगोहा  
ग्रामके निवासो तथा जातिके ब्राह्मण थे। इनका जन्म  
सं० १२२०में हुआ था। इनका कविताकाल सं०  
१२५० तक जाता है।

निहाल—बरारके अन्तर्गत मेलघाटके प्रादिमवासी। इन  
लोगोंने अमताहोन हो कर बरारके कोर्कु पौता दासत्व  
स्वीकार किया। इनकी प्रादिम मातृभाषा लोप हो गई  
है। प्राधुनिक निहालजण कोर्कु भाषाका अनुकरण करते  
हैं। कोर्कु पौके साथ निहालोंकी सम्बन्धि है। किन्तु  
ये लोग कोर्कु पौकी मोच समझते हैं, उनके साथ ग्लान  
पाग नहीं करते, यहाँ तक कि उनके साथ बैठते तक  
भी नहीं। पूर्व समयमें ये लोग गांधीको बुलाया करते  
थे, अभी चित्तौ बारीमें संग गए हैं। ये लोग बड़े आत्मनी  
और निष्कर्मा होते हैं।

निहाल शा—अयोध्याके राघवसेमी विभागके अन्तर्गत  
सुजफर शा तालुकके १२ मील, उषार-पथिमसे निहाल-  
गढ़ नामक एक ग्राम है, जहाँ सद्योका दुर्ग आज भी

देखनेमें आता है। १०१५ ई०में निहाल शा नामक एक  
व्यक्ति उस दुर्गको बनवाया।

निहालगढ़—निहालशा देवी।

निहालगढ़ चकजदल—अयोध्याके सुलतानपुर जिलेका  
एक शहर। यह सुलतानपुरसे ३६ मील पश्चिम सप्तजन  
जानेके रास्ते पर अवस्थित है।

निहालशा (फा० पु०) छोटी तीमर या गद्दी जो प्रायः  
अधोके नीचे बिछाई जाती है।

निहालशोधन (फा० पु०) यह वेदा जिसकी अयान  
दो भागोंमें बंटी हो, बाधी दहिनी ओर बाधी बाईं  
ओर।

निहालसिंह—पञ्जाबकेगरी रणजित्मिंहके पीठ और  
महाराज खड्गमिंहके पुत्र। इनकी माताका  
नाम चदिकुमारो था। १२३४ ई०में ये अपने  
सेनापति भेनपुराकी ओर कोर्टकी साथ ले पैगावर  
प्रदेश जीतनेके लिए पयसर हुए। सभी मानके मर्द मास-  
में इन्होंने पैगावर नगर और दुर्गको अपने कब्जेमें कर  
लिया। पीछे देराहसमाप्त खाँके शासनकर्ता शाह  
नवाज खाँको पराजित और राज्यव्यत किया तथा सरफ-  
राज खाँसे तोस्तदुर्ग छोन लिया। १२६० ई०में इनके  
बिवाहके उपनयनमें महाराज रणजित्मिंहने देगी  
राजापौ और अंगरेजी सेनापति तथा बहुतसे लोगोंको  
निमन्त्रण किया था। १२६८ ई०में तौन माम राज्य  
करनेके बाद खड्गमिंह उन राज्यव्यत किये गए, तब  
पाप १२ वर्षकी अवस्थामें राजगद्दी पर बैठे।

माहविक्रता, विचलपता और दूरदर्शिताके बलसे  
निहालमिंहने पञ्जाबके निहासन पर सिक्का जमाया।  
अंगरेज-प्रातिके उपर इनको विरोध था न था। उनके  
साथ युद्ध करनेकी कामनामें कई बार इन्होंने सेना  
दकड़ी की थी, किन्तु अहमिहवाटके कारण एक बार भी  
इनका अभीष्ट फलभूत न हुआ। अन्तमें राजाके  
विषय युद्धयात्रा करके इन्होंने अन्तः पराजित किया और  
कमालगढ़ दुर्ग पर अधिकार जमाया। १२८० ई०में  
विनाके मरने पर जब ये उनकी दाहक्रिया करके मोट  
रहे थे, तब ठीक राजद्वार पर पहुँचनेके साथ इनके  
उपर गुब्बज गिर पड़ा और ये पत्थरकी प्राण हुए।

ब्राह्मण पण्डित, वाचा, फकीर आदि पर इनका यथैष्ट विग्रहण था। ब्राह्मणको छोड़ कर और किसीकी सत्ताइये चाहा नहीं करते थे।

निहालसिंह—पद्मनाभिया मिरनके सरदार फतेसिंहके च्येष्ठ पुत्र। १८२७ ई०में पिताकी मृत्युके बाद ये राज-सिंहासन पर बैठे। इस समय कुछ गंडे इनकी हत्या करनेके लिए राजप्रासादमें छिप रहे और-सुयोग वा कर गुप्तभाषमे इन पर टूट पड़े, किन्तु वे इनका एक बाल भी बाँका कर न सके। १८२८ ई०में जब नाड' पाकलैण्ड पञ्जाब हो कर काबुल जा रहे थे, तब इन्होंने आयादि द्वारा चंगरेजी सेनाको यथैष्ट सहायता की थी। काबुलपुहमें इन्होंने दो दस सेना भी भेजी थीं। १८४३ ई०में प्रथम सिन्ध-युद्धके समय इनके चरित्र पर चंगरेजी-को मन्द्-हो गया। क्योंकि इस समय इन्होंने रसद आदि दे कर सनकी सहायता न की। इस चपराधमें शतष्टके दक्षिणम्य वार्षिक ५६५०००) रु०को जो सम्पत्ति थी उसे पद्मरेज गवर्मेण्टने जौन लिया। २य सिन्धयुद्धमें इन्होंने तन मन धनमे पद्मरेजीको सहायता पदुवाई। इन प्रत्येककारमें इन्हें 'राजा'की उपाधि मिली थी। १८५२ ई०में ये धराधामकी छोड़ परलोककी मिधारे।

मरते समय ये अपना मारा राज्य बड़े लहके रण धीरसिंहको और विक्रमसिंह तथा सुचेतसिंह नामक शेष दो लहकेको एक एक लाख रुपयेकी आगीर दे गए।  
 निहाली ( फा० खो० ) १ तोगक, गद्दी । २ निहाई ।  
 निहाव ( हि० पु० ) मोड़का घन ।  
 निहमन ( मं० खो० ) नि-हिन्म भावे द्युट् । मारण, वध ।  
 निहित ( सं० खि० ) नि-धा-त, धा स्थाने हि । ( एपाठेहिः । पा ७।४।४२ ) १ आहित, बैठायी दुषा । २ स्थापित, रचा दुषा । ३ निधिम, कैका दुषा ।  
 निहोन ( मं० खि० ) नितरा भीमः । नीच, धामर ।  
 निहुकना ( 'हं० खि० ) झुकना ।  
 निहुकना ( हि० खि० ) निहुरना देवी ।  
 निहुकना ( हि० खि० ) मुकना, मरना ।  
 निहुराग ( हि० खि० ) छुहाना, मराना ।

निहोरना ( हि० खि० ) १ प्रार्थना करना, विनय करना । २ कृतज्ञ होना, एहसान लेना । ३ मनाना, मनोमो करना ।

निहोरा ( हि० पु० ) १ अनुग्रह, एहसान, उपकार । २ आर्यम, आधार, भरोसा, धामरा । ३ प्रार्थना, विनय । ( खि० वि० ) ४ निहोरेसे, कारणसे, प्रदोसत । ५ के किये, वास्ते ।

निहय ( सं० पु० ) निह्यते सचवास्वमनेनेति नि-ह्य पव, ( ङ्रो-२। पा १।१।६० ) । १ पपलाव, पलोकार करना । पर्याय-निह्यति, पवकृति, पवकृत् । २ निह्यति, मर्षना, तिरस्कार । ३ पवित्राम । ४ गुप्त, गोपक, छिपाव । ५ शक्ति, पवित्रता । ६ एक प्रकारका साम ।

निहान ( सं० खो० ) नि-ह्य-ह्युट् । निह्य ।

निह्यति ( सं० खो० ) नि-ह्य-ह्युट् । निह्य ।

निह्यत ( सं० खि० ) छिपाया दुषा ।

निह्यति ( सं० खो० ) गोपन, छिपाव, दुराव ।

निह्यत ( सं० पु० ) नि-ह्य-ह्युट् । गन्ध, ध्वनि ।

नी ( मं० खि० ) नयति नो-कन्तिरिक्तिर् । प्रायक ।

नीद ( हि० खो० ) १ निद्रा, स्वप्न, सोनेको पत्रणा ।

निद्रा देखो ।

नीक ( मं० पु० ) नीयते इति नी प्रायमे कन् ( अविपुषूः नीभ्यो दीर्घव । ङ १।४७ ) छापविशेष, एक पिठका नाम ।

नीक ( हि० पु० ) उत्तमता, अच्छापन, अच्छाई ।

नीकयिन् ( मं० खि० ) प्रमारणयुक्त ।

नीका ( हि० वि० ) उत्तम, अच्छा, बहिषा, मत्ता ।

नीकार ( मं० पु० ) नि-ह्य-ह्यि घञ् । बाहुलकात् दीर्घः । ( उरधर्गस्य षष्ठ्य मनुषेबहुलम् । पा ४।३।१२२ ) न्यञ्चार, मर्षना, तिरस्कार ।

नीकाग ( मं० खि० ) नितरा कायते इति नि-हाग-पच, तनो उपसर्गस्य दीर्घः । ( इषः षडे । पा ४।१।२१ ) १ तुल्य, समान । ( पु० ) २ निधय ।

नीकसक ( मं० पु० ) प्रवामेद ।

नीके ( हि० खि०-वि० ) पञ्चो तरद, मली मति ।

नीक्य ( मं० खो० ) नीक्यतेति नि-ह्य-ह्य कर्त्वि बहुट् । आदि परीसासाधन काष्ठमेद ।

नीमो ( सं० पु० ) हथगो ! निमो देखो ।  
 नीच ( सं० त्रि० ) निज्जटामो लक्ष्मीं गोमा विनोतीति  
 चिन्ड । १ ज्ञाति, गुण धोर कार्यादि द्वारा निज्जट, मुद्र,  
 तुच्छ, अधम, छेडा । संस्कृत पर्याय—विषय, पामर,  
 प्राज्ञत, पृथग, जन, निहीन, अपसद, जान्म, क्षुभक,  
 इतर, अपसद, क्षुभ, क्षुण्य, धेतक, खलक । नीचकी  
 संगति करना सर्वदा वर्जनीय है । २ अनुष्ठ, जो  
 ज्ञान न हो । पर्याय—वामन, न्यक्, खर्ब, जल । ३  
 निम्न, नीचे । ( पु० ) ४ चोरक नामक गन्धद्रव्य । ५  
 प्रहादिका स्थानभेद ।

जिस ग्रहको जो राशि उचस्थान होतो है, उस  
 ग्रहके उस उच स्थानसे गणनामें जो राशि सातवें स्थानमें  
 पड़ती है, वह स्थान उस ग्रहका नीच स्थान होगा ।  
 उदाहरणको जैसे गणना है, नीचांशको भी ठोक उसी  
 तरह है । यथा—रविका उचस्थान मेष है धोर मेषका  
 उचांश दश है । अतएव नीचांश भी दश होगा । नीचांश-  
 के मेष पंचको सुनीचांश कहते हैं । इस स्थानमें  
 जो ग्रहगण्य रहते हैं, वे नितात्त दुर्बल होते हैं । इसी  
 प्रकार अन्य राशिके नीचांश धोर सुनीचांशको गणना  
 करके ग्रहोंका बलावल देखना होता है ।

यह उच नीच जाननेके लिये नीचे एक तालिका  
 दी गई है ।

ग्रह का नाम	उच	नीच	उचांशका नाम	नीचांश-भोगका नाम
राशि	राशि	भोगकाल	काल	
रवि	मेष	तुला	१० दिन	१० दिन ।
शुक्र	वृष	सिंह	१३।३ पक्ष	१३।३ पक्ष ।
मङ्गल	मकर	कर्कट	४२ दिन	४२ पक्ष ।
बुध	कन्या	मीन	८ दिन	८ दिन ।
शुभ	कर्कट	मकर	२ मास	२ मास ।
रुद्र	मीन	वृष	२५दिन०।१२पक्ष	२५दिन०।१२पक्ष ।
गनि	तुला	मेष	२० मास	१२ मास ।
राहु	मिथुन	धनु	१२ मास	१२ मास ।
केतु	धनु	मिथुन	१२ मास	१२ मास ।

इसी प्रकार नीच राशि जाननी चाहिये । राशिके  
 नीचस्थित होनेसे मन्दकाल होता है । ( कलितज्योतिष )

६ बुध मनुष्य, नीच मनुष्य, चौका थादमी । ७

भ्रमणकालमें किसी ग्रहके भ्रमणवृत्तका वह स्थान जो  
 पृथीसे अधिक दूर हो । ८ टगाक देगले एक पत्र तका  
 नाम ।

नीचक ( सं० त्रि० ) नीच एव स्थाये कन् । वामन,  
 ५व, नाटा ।

नीचकःस्य ( सं० पु० ) नीचः कदम्बो यस्मात् । १  
 मण्डोर, सुष्ठो । २ महास्त्रायणिका ।

नीचकमाई ( हि० स्त्री० ) १ निम्न व्यवसाय, तुच्छ काम,  
 छोटा काम । २ वह धन जो बुरे कामोंसे उपार्जन  
 किय गया हो ।

नीचका ( सं० स्त्री० ) निज्जटामो गोमा चकति प्रतिहन्ति,  
 चक प्रतिघाते चष्-टात् । उजामा गो, चष्को गाय ।  
 नीचकी ( सं० पु० ) निज्जटामो गोमा चकति चक्ष प्रति-  
 घाते.भाङ्गकत् इति । १ उच्च, अँह । २ उपरो भाग ।  
 ३ जिधके पास चष्को गायें हैं ।

नीचकुलिग ( सं० स्त्री० ) वैकान्त रत्न ।

नीचकौच ( सं० चण्ड० ) नीचैस् इत्यव्ययस्य टः प्राग-  
 कच्, अव्यय पूर्वनाम्नामश्चकारुटः । पा ५।१।०१ । १  
 नीचैस्, सुद्र । २ चण्ड । ३ अधम । ४ नीच । ५ नन्व ।  
 ६ अधम । ७ खर्ब ।

नीचम ( सं० स्त्री० ) नीचं निम्नदेशं गच्छतीति गम-ठ ।  
 १ निम्नगामिजल, नीचेको धोर जानेवाला पानी । २  
 कलितज्योतिषके अनुसार वह पक्ष जो पक्षमें उच स्थान-  
 से सातवें पड़ा हो । ( वि० ) ३ निम्नगामी, नीचे जाने-  
 वाला । ४ पामर, चौका । छिदां टाप । ५ नीचवर्ष-  
 गामिनी स्त्री, नीचके साथ गमन करनेवाली स्त्री ।

नीचगा ( सं० स्त्री० ) नीचग-टात् । १ निम्नगा, मर्दी ।  
 २ नीचवर्षगामिनी स्त्री, नीचके साथ गमन करनेवाली  
 स्त्री ।

नीचगामी ( हि० वि० ) १ नीचे जानेवाला । २ चौका ।  
 ( पु० ) ३ जल, पानी ।

नीचट्टक ( सं० स्त्री० ) वह स्थान जो किसी ग्रहके उच  
 स्थान वा राशिके गमतीमें सातवां पड़ा ।

नीचता ( सं० स्त्री० ) नीचस्य भावः, नीच-तन् । १  
 नीचत्व, नीच होनेका भाव । २ अधमता, छोटाई,  
 खमीरापन ।

नीचत्व ( सं० पु० ) भाषता .

नीचभोज्य ( सं० पु० ) नीचे भोज्यः । १ पचाण्डू, प्याज ( वि० ) २ नीचभोज्यमास, पचाण्डू L

नीचधोनिन् ( सं० त्रि० ) नीचा धीनिरन्वस्यन्तोद्य दित्वात् ङिति । नीच-ज्ञानियुक्त ।

नीचमन्त्र ( सं० पु०-स्त्री० ) नीचमन्त्रकटः वयम् । यै क्रान्त मन्त्रि ।

नीचा ( हि० वि० ) १ जिनके तलसे उसके साम्यामका तल से चा हो, जो कुछ सतार या गहरार पर हो । २ जो ऊपरकी ओर दूर तक न गया हो । ३ जो उत्तम ओर मध्यम कीटिका न हो, छोटा या चौड़ा । ४ जो तोय न हो, मध्यम, धोसा । ५ जो ऊपरकी ओर पूरा उठा न हो, भ्रंश हुआ । ६ जो ऊपरसे समीपकी ओर दूर तक प्रयास हो, अधिक कष्टका हुआ ।

नीनात् ( सं० पद्य० ) निरुद्धासीं चिनोति वादुलकात् टाति । नीच, सुद्र ।

नीचामेद्र ( सं० त्रि० ) अधोमुखनिद्र ।

नीचायक ( सं० द्वि० ) नितरा निचयेन वा चिनोति नि-चि-वृत्त् । नितान्ता चायक, बहुत चाहनेवाला ।

नीचाययम् ( सं० द्वि० ) ग्यम, भाववात्र ।

नीचाग्रय ( सं० द्वि० ) नीच प्रागया यस्य । सुद्रचेता, सुच्छ विचारका, मोटा ।

नीचिको ( सं० स्त्री० ) नीचिको, चच्छो गाय ।

नीचीन ( सं० द्वि० ) ग्यगोय स्वायं च चयने न नीचात् नीचे पूर्वाची टयोः । श्यम, भूत, अधोमुख ।

नीचू ( हि० वि० ) जो टपकता ग-घो, जो न डुप ।

नीचे ( हि० क्रि०-वि० ) १ अधोभागमें, नीचेकी ओर, उदाहरण लपटा । २ अधोगतमें, मातहतमें । ३ श्यु म, घट कर, कम ।

नीचेगति ( सं० स्त्री० ) नीचेः गतिः । १ मन्दगमन । २ निम्नगति ।

नीचेम् ( सं० पद्य० ) नि-चि-क, नेटोयिमच । ( नी-टीपरव । ग. ५।१ ) १ नीच । २ नीच । ३ चय । ४ चयुग ।

नीचोद्यमाम—चन्द्रमा २० दिग् ३१ टण्ड ३१ एक वा इतीने नारी-ओर दूम पाता है ।

मध्य चन्द्रकेन्द्रा एक बार परिभ्रमण सम्पन्न

चंगरेली ज्योतिषमें इसे Anomalistic month कहते हैं । 'नीच' ( perigee ) शब्दका अर्थ है पृथिवी-ओर चन्द्रका गमनकालीन सर्वाधिक निकटवर्ती स्थान ओर 'उच्च' ( apogee ) शब्दका अर्थ पृथिवी-ओर चन्द्रका सर्वाधिक दूरवर्ती स्थान । परन्तु भीषोद्यमाममें पहले समयका मोघ होता है, जितनेमें चन्द्र 'नीच' ओर 'उच्च' में गमन कर पुनः उसी स्थान पर लौट-पाता है ।

शिविगद् देवो ।

नीचोःचञ्चल ( सं० स्त्री० ) उच्चभेद, यह उच्च जिनका केन्द्र किसी एक उच्चत्पत्तके मध्य भ्रमण करता है । ( Epicyclo )

नीचोपगत ( सं० त्रि० ) जो खगोलके निम्नभागमें पत-स्थित हो ।

नीच ( सं० द्वि० ) नीचि भवः ग्यनुच्, यस्, तनीचास्ती । पूर्वोत्तौ टोषः । निम्नभव, जो नीचे हो ।

नीज ( हि० पु० ) रसनी ।

नीजू ( हि० स्त्री० ) रसनी, पानी भरनेकी छोरी ।

नीठ ( हि० क्रि०-वि० ) नीटि देखी ।

नीठि ( हि० स्त्री० ) १ पश्चि, पश्चिच्छा । ( क्रि०-वि० ) २ ज्यों त्यों करके, सिमो न किसी प्रकार । ३ कठिनता-से, सुगन्धित्वे ।

नीठो ( हि० वि० ) पण्डित, पण्डित, न सुहानेवाला, न भानेवाला ।

नीट्ट ( सं० पु०-स्त्री० ) नितरा ईदृश्यते स्तुयते सुदृश्यत्वात् नि ईदृ-घञ् । १ पश्चिमानस्थान, पश्चिमें रहनेका घोंसला । इसका अर्थ कुमाय है ।

जिम जातिको चिड़िया जिम जिम चरतुमें गर्भापादन करती है तो ऊँचमी समय में अपने अपने घोंसले बगानेकी जिकमें रहती है । इस घोंसलेकी ये एकसर एककी लोधी छानियों पर हो घनाते है । अब गर्भियों चिड़ियाका द्विन्द्वसयकाल गमतीक या जाता है, तब नर ओर मादा दोनों इधर उधरमें खर, पत्ते, घास घून अपने-अपनेमें छटा छाने ओर किसी एकके एकतम स्थान पर घोंसला घनाते है । यह घोंसला इस प्रकार है कि समझे बाहरी माग पर छाय रहनेमें अंश मानम पड़ता है, लेकिन ऊँच

मोटा-पंडा पारती है वह स्थान घरके लंबा एवं बाहरकी सपेसा चिकना और फीमल होता है। चीन, कीबे आदिके घोंसले भी ठीक इसी तरह होते हैं। बहुत-सी ऐसी चिड़ियां हैं जो पुरानी दीवारकी दरारमें घोंसला बनाती हैं। कठोड़िया नामका पक्षी हचके कोटरमें घोंसला बनाना पसन्द करता है। गृह-पालित कुकुर, मत्तख, कड़तर आदि पक्षी अपने अपने निर्दिष्ट स्थानमें घर, घान और निज मत्तख योगसे नोड़ बनाते हैं। बया नामक पक्षीका घोंसला बड़ा ही भजूषा होता है। यह घोंसला बाहरसे देखनेमें सुखी तरहके लंबा लगता है। इसके भीतरका प्रवेशपथ और पादमस्थान बड़ी कारीगरीसे बना होता है। कहते हैं, कि बया पक्षी अपने घोंसलेमें जुगनू रख कर उसीसे दीएका कात लेते हैं। प्रति हेय प्राणी चमगादड़ पक्षियोंके कोमल परने अपना घोंसला ऐसे कोमलसे बनाता है कि उसे देख कर आश्चर्यित होना पड़ता है। यह अपना घोंसला भग्नगृहके बीसबरगमें सटा कर बनाता है। भोतरा भाग और सभी पक्षियोंके घोंसलोंमें मुलायम होता है। बादुर कहा घोंसला बनाता है, कीड़े नहीं जानता। यह चकमर भग्नगृहादि वा निर्जन गृहादिके बीसबरगमें प्रथवा किसी हचकी खालीमें दिनको बटका रहता है। काकासुषा आदि पार्श्वीय पक्षी पार्श्वकी दरारमें और हचके ऊपर घोंसले बनाते हैं। मयूरादि पक्षिगण पार्श्व पर प्रथवा जमीनमें गड़े बना कर रहते हैं। भट्टेलिया और सभके निकटवर्ती दीवारोंमें किण्विपारण होयपुच्छमें और कौर्विशोहोके उत्तर पश्चिममें एक जातिको चिड़िया रहती है जो घने जङ्गलमें मही वा बासके नीचे गड्ढा बना कर अपना पारती है। भारतीय शकुनि जातीय पक्षी आदि नोड़ देखनेमें कटव लगते हैं, लेकिन भीतरका भाग मुलायम रहता है। अपने देनेके समय वे पुरातन द्विज वंशका ना कर उसे और भी मुलायम बना लेते हैं। कभी चीयड़के बटले समुपके सिरके घान, परिव्यक्त पगमादि पथका छोटे छोटे शोषोको पक्षियों भी दिया करते हैं। इन नोड़का व्याप माध्याह्नतः २५ ३ फुट और सम्भारि ४५ १ इंच तक होती है। पक्षिकाने सड़पक्षी पनाड़-

के ऊपर और जो पालित हैं वे लघुमूल पर पण्ड-प्रमय-के समय हमादिके लंबा नोड़ बनाते हैं।

भारतसमुद्र सुमात्रा, योर्निया और चीनदेशके समुद्र-उपकुलमें एक प्रकारकी पखावीन (Swallow) चिड़िया रहती है। यह पक्षी गुहामें अपने मुखकी रानके ली नोड़ बनाती है वह चोम और यूरोप-वासीका बड़ा ही उपादेय प्राय है। यह सुखिन खन रान समुद्र-उपकुल-जात किमो पदार्थमें प्राय होती है। केम्कर माहव अनुमान करते हैं कि वह रास समुद्र कोट-की समष्टिकी बनी होती है। विज्ञानविद् पैंभर इसे एक प्रकारकी सऊनीके पण्डे वा समुद्रकुलवर्ती सुद्र-जातीय मछलीको मछायाताने गठित बतलाते हैं। उसकी पाकृति हंगडिभव-सी होती है। यह नोड़ प्रकृत पक्ष्या-में उक्त पखावीन चिड़ियाके मूल और परसे बाह्य रहता है। व्यवसायो लोग पक्ष्यागतवने नोड़ मंच कर उक्त मूल और पर धो लाते हैं, इस समय यह नोड़ ट्रेवने-में ठीक सफेद भींगुरके जैसा लगता है। यह ऐसा उपादेय होता है कि यूरोप और चीनवासी उमके गुण पर मोहित हो कर उससे गिरवा बनाते और बड़ी रुचिसे खाते हैं। यह भींगुरके जैसा पटाया विगिट नोड़ोंग ५ रुपये तकके हिमायसे बिकता है और केवल धना मुल्य उसे पुरोदते हैं।

चीनवासियोंका विश्वास है कि नोड़ पानिसे शरीर सबेदा युवाके जैसा बना रहता है। इस कारण वे प्रति वर्ष कई हजार मन ऐसा नोड़ संचय कर रचते हैं। यह नोड़ प्रकमर दो प्रकारका होता है, एक जेतशर्ण का नोड़ और दूसरा लयवर्षा। जेत-वर्षा विगिट नोड़ अधिक मोनमें बिकता है, मैकड़े पाछे केवल ४ सफेद नोड़ पाये जाते हैं। लयवर्षा का नोड़ यद्यपि रोज रात्रधानी बटमिया नगरमें बिकता है जहां उसे गुना कर समदा गिराव (पाटे) जैसा पटाया) तै गार करते हैं। किमी शिमोका कहना है, कि इस कामे नोड़की कुछ कान तक नाम जलसे बुझीये रखनेमें उसका रंग सफेदमें प्रकट पना है। पक्ष्यगड्डके मय यह नोड़ अधिक मन्वामें पाया जातः है।

१ बटने वा ठहरनेका स्थान। २ रक्षियोंका पक्षिहात

व्याम, रघुहे भीतर बह व्याम त्रिममें रयो बैठता है ।

“व व्याम नीट्टः परितुडकूरः पवात भूमौ इत्यवतिरम्बावत्”  
( रामायण ३।३।३८ )

४ रघाययवभेद, रघुहे एक बहका नाम ।

नीट्टक ( सं० पु०-स्त्री० ) नीट्टे कायति प्रकायते कौ० क ।  
श्वग, पत्नी, विद्विया ।

नीट्टज ( सं० पु० स्त्री० ) नीट्टे जायते जन ड । पत्नी,  
विद्विया ।

नीट्टमिन्द्र ( सं० पु० ) गकड़ ।

नीट्टि ( सं० पु० ) जितान्तं इत्यस्य, नि-इत्य स्वप्ने-इत्  
नप्य ड । निवाम, वासस्थान ।

नीट्टोद्भव ( सं० पु०-स्त्री० ) नीट्टे उत्भवति, उद् भू-पप-  
वा नीट्टे उत्भवो यस्य । श्वग, पत्नी ।

नीत ( सं० त्रि० ) नी-कर्मणि क्त । १ स्थापित । २ प्रापित ।  
३ गृहीत । ४ पतिवाहित । ( पु० ) ५ धान्य, घान ।

नीति ( सं० स्त्री० ) नीयते संस्रज्यन्ते उपायादय ऐदिका-  
मुक्तिकायां यास्यामनया, नी-चधिकरणे वा क्तिन् । १  
शुक्रादि-उक्त राजविद्या । भावे-क्तिन् । २ प्रापय । ३  
तदधिष्ठात्री देवीभेद । हरिश्चं २५६ २०में लिखा है -  
“सिध्दाय देव्यः प्रवराः क्रोः नीति” पुं लिखे व ।

प्रमा वृतिः समापूर्तिरिति विद्या दद्या मतिः ४”

४ धाम्निधियेव ।

नीतिशास्त्र हिताहित विवेचनाका शास्त्र है । इसका  
प्राधान्य करनसे पहले दुईका ज्ञान होता है । मानव  
जब दुर्नीतिवरायण होते हैं, तब जगत्में माना प्रकारकी  
विशुद्धताएँ उत्पन्न होती हैं । इसलिये सबसे पहले  
नीतिवरायण होना नितात्क प्रयोजन है । महाभारत-  
के शान्तिपर्वमें नीतिशास्त्रका विषय इस प्रकार लिखा  
है—युधिष्ठिरने जब भीष्मदेवसे नीतिशास्त्रका विषय  
पूछा, तब उसने कहा था कि तत्त्वगुणमें खटिसे कुछ  
दिन बाद सभी मनुष्य पापपुत्र पर-चमने लगे । यह देख  
कर देवताओंने ब्रह्माजीं शरव की । भगवान् कर्मस-  
योनिसे देवताओंकी सम्बोधन करने हुए कहा, ‘तुम  
लोग लगे मने मैं बहुत क्रोध हो इसका उपाय कर देता  
हूँ ।’ यह कह कर उन्होंने चरित्रात् कथ, चन्द्रावतुष  
नामशास्त्रों रचना की । तब दक्षदेवमें, चर्च,

काम और मोह यह चतुर्वर्गः सत्य, रज और क्रम तीन  
गुणः इति, चय और समानत्व नामक दण्डन त्रिवर्गः ।  
चिक्क, देय, काल, उपाय, कार्य और सहाय नामक  
नीतिज चतुर्वर्गः कर्मकाण्ड, ज्ञानकाण्ड, कृति, याज्ञि-  
क्यादि, जीविकाकाण्ड, दण्डनीति, पमान्य, रसाय-  
नियुक्त चर और गुणचरविषय, राजपुत्रका सतथ, चर-  
गणका विविधोपाय, घाम, दान, भेद, दण्ड, उपेक्षा, भेद-  
कारक मन्त्रदा और विभ्रम, मन्त्रसिद्धि और पत्तिदिका  
फल, भय, सत्कार, विसयइत्याद्यं पथम, मध्यम और  
उत्तम तीन प्रकारकी सन्धि, चतुर्विंशत्यात्मकाल, त्रिवर्ग-  
का विस्तार, धर्मयुक्त विजय और धार्मिक विजय,  
धर्मात्य, राष्ट्र, दुर्ग, वन और क्रोध इन पक्षवर्गके त्रिविध  
सतथ, प्रकाश और अमकाश सेनाका विषय, अटविध  
गुरु विषय प्रकाश, हस्ती, पशु, रथ, पदाति, भारवाही,  
चर, पीत और उपदेष्टा यह अटविध सेनाइ, बन्नादि  
और अन्नादिमें विषययोग, अभिचार, चरि, मित और उदा-  
सीनका विषय, पथगमनका पक्षनक्षत्रादिजनित समय  
गुण, भूमिगुण, पालाया, पाश्र्वाय, रथादि निर्माणका  
चतुसम्भान, मनुष्या, हस्ती, पशु और रथशलाका उपाय,  
विविधध्वज, विचित्र युद्धकौशल, भूमिकेतु यादि  
पदोंका उपाय, उत्कृष्ट निपात, सुमपनीकर्मने युद्ध,  
पलायन, अक्षयवत्का प्रापप्रदान, अक्षयज्ञान, सैन्-  
ध्यमनोचन, सैन्योका वर्गत्यादन, पौड़ा, पावद्-  
काल, पदातिज्ञान, वातपवनन, पताशादि प्रदयंनूषक  
शस्त्रके अन्तःकरणमें भयमन्त्राण्य, और, उपद्रवभाष,  
परस्पायायो, पत्तिदाता, विदमयोजक, प्रतिद्वयकारा प्रधान  
व्यक्तिका भेद, हृच्छेदन, मन्त्रादि प्रभावसे जाविषो-  
का बलज्ञान, सहा उपादन और चतुरक वृत्तिका  
प्राशङ्कन तथा विश्वासजनक द्वारा परराष्ट्रमें पौड़ाप्रदान,  
सहाहाराण्यका ज्ञान, इति और घमता, कार्यमानस्यं,  
कार्यका उपाय, राष्ट्रइति, शत्रु मध्यस्थित मित्रका भवेत्,  
यसवान्का पौड़क और विशागसाधन, शून्य व्यवहार,  
चलका उत्कृष्टन, व्यागाम, दान, द्रुपदमंथक, अमन-  
व्यक्तिका भरवोपय, भूतपशुव्यक्तिका वर्णवैलभ, यथा-  
कालमें पदप्रदान, अमनमें अनामसि, भूयतिष्ठा गुण,  
सिनापतिष्ठा गुण, त्रिवर्गका चारण और युद्धदोष, चतु

भूमिसन्धि, अनुगतोंके ध्वजहारदिके प्रति श्रद्धा, पनव-  
धाननापरिहार, पल्लवविषयका साध, सत्ववस्तुको वृद्धि,  
प्रवृद्ध धर्म, पर्य, काम और वरपन विनामके निधे दान,  
वृथया, पञ्चक्रीड़ा, सुरापान और स्त्रीवशयोग चार प्रकार-  
का कामज वाक्पाठ्य, उग्रता, दण्डपाठ्य, निग्रह,  
प्राक्सत्याग और धर्मदूषण यह छः प्रकारका क्रोधज,  
कुल दम प्रकारका वासन; विविधयन्त्र और यन्त्र कार्य,  
चित्तविलोप, चैत्यदिन, पवरोध, कृषि आदि कार्योंका  
अनुगमन, नाना प्रकारका उपकरण, युद्धयात्रा, युद्धो-  
पाय, पणव, पानव, शहू और भेरोद्वार उपाजन, सन्ध  
राग्यमें शक्तिस्थापन, साधुलोककी पूजा और विद्वानोंके  
साथ प्राप्तीयता, दान और होमका परिज्ञान, माद्वल्य-  
वस्तुका स्वयं, शरीरसंस्कार, आहार, आदिकता, एक  
पथका पनवस्यन कर अभ्युदयताम, सत्य मधुर वाक्य,  
सामाजिक सन्ध, शहूकार्य, चत्वारिदिव्यानका प्रत्यक्ष  
और परीक्ष-व्यवहार, अनुसन्धान, ब्राह्मणोंकी सद्गुण-  
नीयता, युक्तानुसार दण्डविधान, अनुशोचियोंके मध्य जाति  
और गुणगत पक्षपात, पौरजनका रक्षाविधान, दादग  
राजमण्डलविषयक चिन्ता, सत्कारका प्रसारका शारीरिक  
प्रतिकार, देग, जाति और कुलका धर्म, धर्मोदि मूल-  
कार्यको प्रणाली, साधुयोग, नोकानिमज्जनादि द्वारा  
नदीपथावरोध इन सब विषयोंका विस्तृत विवरण  
लिखा है ।

पद्मयोगि ब्रह्मणे इस नीतिशास्त्रको रचना कर इन्द्र  
आदि देवताओंके कृपा, 'मैने विषय संस्थापन और  
योगोंके उपकार-साधनके लिए वाक्यके सारस्वरूप इस  
नीतिशास्त्रका सञ्जावन किया है। इस नीतिशास्त्रके  
परिचयन करनेसे निग्रह और अनुपवह प्रदग्गलपूर्वक  
श्रीकारका करने तो बुद्धि उत्पन्न होगी। इस गाथा द्वारा  
जगत्के सभी मनुष्य दण्डप्रभावसे पुत्रप्राप्य फलनाभमें  
समयें होंगे, इसीसे इस नीतिकाम नाम दण्डनीति रखा  
जायगा।'

इस प्रकार अष्टाध्यायगुह्य नीतिशास्त्रके तैयार हो  
जाने पर पहले पहल महादेवने उसे पहल किया।  
प्रजाधर्मको बचावकी कमी देख कर उन्होंने इस नीति-  
शास्त्रको संचेपमें बनाया। यह शास्त्र दम हजार अध्यायों-

में विभक्त किया गया और य ग्रान्ताख्य नामसे प्रसिद्ध  
हुया। पीछे भगवान् इन्द्रने उस शास्त्रको पांच हजार  
अध्यायोंमें बना कर उसका नाम यादुदत्तक रखा। पनव  
वृद्धयतिने यादुदत्तक पन्त्यको मंथित कर तीन हजार  
अध्यायोंमें विभक्त किया जो पीछे बार्हस्पत्य नामसे  
सहस्र रूप हुआ। पन्तमें युक्ताचार्योंने इसीको सी कर हजार  
अध्यायोंका एक नीतिशास्त्र बनाया और उसका युक्त-  
नीति नाम रखा। यही शुकनीति अथवा मानवोंके पट्ट-  
योग्य है। इससे पट्टनेसे विनाहितका ज्ञान होता है।

(भारत शास्त्रार्थ ५८ अ०)

कालिकापुराणमें नीतिका विषय इस प्रकार लिखा है:  
राजा सगरने महामुनि षोडशकी न'तिमन्त्र्यमें सहस्र-  
सी वार्तें पृष्ठते हुए कहा, 'मुनिवर ! पाप्मा, पुत्र और  
भार्यके प्रति जिस नीतिका प्रयोग करना उचित है,  
उसे हमें पक्की तरह समझा कर कहें।' इस पर षोडशने  
उन्हे 'नीतिका इस प्रकार उपदेश दिया था,—

'पहले ज्ञानवृद्ध, तपोवृद्ध और योगवृद्ध, अग्निवर्जित,  
उदारचित्त, विप्रमण्डलको मेवा कर्त्तव्य है। उनमें  
प्रतिदिन श्रुतिस्मृतिविहित विधिव्यवस्था श्रवण करे।  
वे जो कुछ कहें, राजाको उचित है कि उसी समय उभे  
कर डालें। शरीर एक रथ है। पक्ष कर्मन्द्रिय उसका  
धुंधो है। पाप्मा उसकी पारोहो रथी है। ज्ञान  
घोड़े का लगाम है और मन उसका मारण है। सभी  
घोड़ोंको विनोत करना होता है और मारणिको रथीके व-  
नगामको हट्ट तथा शरीरमें स्वयं मग्नादान करना  
पवश विधेय है। रथो दुर्बिनीम अग्नि-पालित रथ पर  
चढ़ कर घोड़ोंके अज्ञानुसार जाते जाते विषयमें पट्ट-  
पता है। फिर रथीके पथाथ हो कर मारणिके दन्तानु-  
सार अग्निपालना करने पर रथो यदि धीर भी रहे, तो  
भी वह उसे रिपुके पथोत कर डालता है। पतः विषय  
भीग करते समय इन्द्रिय और मनको बगीभूत करे।  
ज्ञान जिसमें हट्ट रहे, सबसे पहले यही करना श्रेय  
है। ज्ञानरूप लगामके हट्ट होने पर और मारणिके  
द्वयवर्त्ती रहने पर, विनोत पात्र ठीक गच्छने लगेगा।  
इसमें सभीको चपनो चपनो इन्द्रिय और मनको बर्गमें  
कारके ज्ञानरूप पर रह कर पाप्माहितानुष्ठान विधेय है।



वैशाखकर्मने भोग कर महेते है, ऐजिन कुपयको चोर धाम न दे । जिमे देणना उचित है, लोको देखे, चोलापुत्रने माय कुल भोग न देवे । जी सुनने योग्य है, लमे हो सुने, पतिगिळ विषयकी चोर काग न दे । धोर राजा मारलकत्तके मिया चोर क्रिमी पर दटात् विद्याम न करे । राजा स्वैच्छाकर्मने विषयभोग कर सहेते है । ऐजिन लमके प्रति प्यासक न होवे । ऐसा करनेमे जो भे जिनेश्रय होते है । माझागुमोनन चोर हृदयेना ही रक्षियजयकी जेतु है । चण्डसेयो चोर माझा-भमिळ राजा यदुत ही जन्तु गयुके मग हो जाते है । प्रसन्नता प्रागनभ्य, ललाच, वाकपटुता, विवेचना, कुममता, महिष्णुता, प्रात, मंत्री, लतप्रता, गामन-दास्य, मत्त, गीध, शर्यस्थिरता, दूसरेका पमिदाय-ज्ञान, मघारिता, विपद्में धैर्य, क्रममहिष्णुता, गुरु, देव चोर दिजपूजा, चणुयाहीनता चोर चकोधता चादि गुण राजांम पवण्य रहने चाहिए । राजा कार्याकार्य-विभाग, धर्म, पर्व चोर कामके प्रति हमेगा म्लय रते । माम, दान, भेद चोर दण्ड इन चार उपाये हा ययाव्यानने प्रयोग करे । नामप्रयोगकी जगह भेद-प्रयोग मधाम, दानप्रयोगकी जगह दण्डप्रयोग वा दण्ड-प्रयोगकी जगह दानप्रयोग पधम चोर सामप्रयोगकी जगह दण्डप्रयोग पधममे भो पधम माना गया है । नाम चोर दान ये दोनी उपाय एक दूसरेके साहाय्य-दाते है । राजाको इन सब उपायेके प्रयोगकी जगह मोचिक मोजन्य प्रकारा करना चाहिए । राजाके निये काम, लीध, भोम, शर्प, पमिमान चोर मद इनका यातिम्लय श्रयुक्त निवार्य है । चोम चोर गर्न छोड़ कर काम पादिका ययाममय कुल कुल व्यवहार किया जा मचता है । राजापाका मेत्र हो सुर्मा लीत्र है । गर्न इनका रोग है, चतएन रोगयुक्त देहका तरह गर्न-निघिन तेजका परिम्याग करना चाहिए । नृगवामल, धुतलीहा, चलाता चोमभोग, चामदाय, चय-दूचन, वाकदाहया चोर दण्डदाहया इन ७ दोनोको राजा चल्ती तरह परिम्याग करे । पमिदण्ड, चोर, ललाचररो चोर चालतापिवाके लए राजा पर्वदा दण्डदाहया प्रयोग करे । विष्णु वाञ्छादाहयाका प्रयोग लके भूत कर

भी न करना चाहिए । काय ममभ कर लता चोर तेज-विताका पयमम्यन करना चपग कर्त्तव्य है । पमिमान, विपति, चात्रयपदण, देध, मन्थि चोर विपद्ये लः गुण राजांम हरयक मोजूद रहे । श्रयु, मित्र चोर लतामोन समीको विविध प्रमान टिकाये । जिगीया, धर्मकार्य, पटवर्ग चोर शरीरयातानिवांरमें भी लकाहो होग उचित है । लपि, दुर्ग, याविण्य, मेतुवम्यन, गजयात्रिमम्यन, लाननें पधिकार, करपण्य, एषं श्रुतिवेक्षण, चरग्यादि स्थानमें चरादि स्थानन यद्यो पटवर्ग है । इस पटवर्गसे चरनियोग करना चाहिए । इस पटवर्गमें नियुक्त याचियोंके कार्या-कार्यकी देखरेख कामके निये च चरोंको नियुक्त करे । राजाको चाहिए, कि वे मन्त्रोके माय प्रदोरकान-से मित्रलक्ष्यामने बैठ कर चरके मुखसे सब बाचां सुने । एकवेगधारी, ललाचवर्जित, सर्वज्ञ परिदिन, पति-दीर्घकृत, सुवर्णाय, मत्तन टिकापारी, योगमम्यन, नियुक्ति, धनप्रमत्तिविहीन, पुवदारवर्जित ये सब मनुष्य चर होने लायक नहीं है । बहूदेमत्तविवित्, बहुभावाभिष्ट, परामिदायवेत्ता, हृदमक्तिममय चोर निर्मय दार्त्तिको चर बनाना उचित है । चना,पुर्नमें हर्ष, धोर चोर विखतुण्यवालिष्टोको तथा विचक्षण सर्वधरोंको वा प्रजा रमणियोंको चर नियुक्त करे । राजा कभी भी एकाकी भोजन या मयन न करे । ये बहूविद्यानिगा-रद, धिमेत, मल्लुभोजन्य, धर्मवर्द्धुमन चोर मरमचित्त लालचोंको हो मल्लिपद पर नियुक्त करे । हितयोंको गर्वदा चपवतम्य रखे । स्त्री चरमम्य हो कर गदि कार्य करे, तो महत्तु पणितको लभावना है । राजा पुत्र चोर लोको चना,पुत्र वा यष्टि:मदेगमें स्थापीनभावमें जोरि कार्य करने गदे । राजा इन सब भोतिशंका चपमम्यन कर यदि राजमगमन करे, तो एक भी प्रजा भोतिवदिभूत कोरि लार्य नहीं कर मचती । राजाके दुर्भोतिपतायण संनिमे हो चारों चोर विभूदना लम जाता है चोर प्रजाकी लमके प्रति भलि यदा कुल भी मचो होगे । हमो, चारण भोतिमयुद्धमें उरुमे राजभोतिनी हो रात लकी गई । ( चरित-पु० पृष्ठ ७० )

मनुष्य विमेत है, या परिमेत, इनकां पय गेजक

राजा ही है। राजाको उचित है, कि वे सुनोतीका पालन करे। और ध्विनोतीको दण्डविधानादि हाग सुपय पर लावे। इसो कारण राजाको राजनीति-विगारट्ट होना उचित है।

पनिपुराणमें नीतिका विषय इस प्रकार लिखा है,—  
‘रामने लक्ष्मणको नीति विषयका ज्ञान उपदेश दिया था, वद इस प्रकार है,—

विनय ही नीतिका मूल है। शास्त्रानिश्चयके द्वारा विनयको उत्पत्ति होती है। इन्द्रियविजयको ही विनय कहते हैं। सभी मनुष्यको विनीत भावमें रहना चायग्रहक है। शास्त्रज्ञान, प्रज्ञा, धृति, दक्षता, प्रागल्भ्य, धार-विष्णुता, उल्लाह, वाक्यमयम, शौदाय, आपत्कालमें सहिष्णुता, प्रभाय, शुचिता, मेत, त्याग, सत्य, क्षतघ्नता, क्रुम, शील और दम ये सब गुण सम्पत्तिसे हेतु हैं।

इन्द्रियां मत्सहस्रीको तरह स्त्रमावतः उद्दाम हो कर हृदयको विद्रावित करती हैं और विषयरूप विज्ञान परस्वको घोर दोहते हैं। इस समय ज्ञानरूप पशुगुहारा उन्हे बग करना कर्त्तव्य है। जो मनुष्य ऐसा नहीं करते वे प्रवृत्त वृद्धिको मिराहनेमें राव कर मोत हैं। शत्रु, पणि, जल और इन्द्रिय इनमें से किसी पर विश्वास न रखना चाहिए। विमेषतः इन्द्रियकी शक्ति घोर वेग सबसे अधिक है। योगनिह परमविगण भी मझमा इन्द्रियवेगसे विचलित होते देखे गए हैं। धैर्य-रूप पालानमें ज्ञानरूप श्रद्धतसे जब तक नहीं बंधा जायगा, तब तक इन्द्रियरूप मत्सहस्रीको बयोकरण करना मिलकुल समान्य है। इन्द्रियवेगसे बुद्धि विचलित होती, मन घमने लगता, हृदय चञ्चल हो जाता, पाला चक्षमन्न हो जाती, चेतन्य विकृिन्न होता तथा ज्ञान विषय ही जाता है। पतएव जहाँ तक ही सके इन्द्रियहसतीको बग करना हरएकका कर्त्तव्य है। इन्द्रियरूप दुर्दान्त हसतीको धमोभुन करनेसे संसार परा तक कि क्षय ईप्सर भी बगीभूत घोर पराजित हो जाते हैं। ईप्सरको बगमें जामे निर्वारण परामपट्ट प्राप्त होता है, इसमें जरा भी मन्देह नहीं।

काम, क्रोध, मोम, हर्ष, मान और मट इनका नाम चरि पक्ष्मण है। इस पक्ष्मणका परिहार नहीं करनेमें

सुख किसी ज्ञानतमें मिल नहीं सकता। शास्त्रमें काम-को विषामिस्वरूप माना है, क्योंकि इसको ज्ञाना, विग घोर पविनेमे भी भयानक है। नितान्त प्रमात्तविष घोर कामाननमें पतित होनेमे एकात्वा पखिर होता है। संसारमें कामप्रभावसे मनुष्योंका जेसा पधःपतन होता है, वैसा घोर किसीसे नहीं होता। पतएव ज्ञानरूप सुगीतल जनने कामानलको सुभागा एकान्त कर्त्तव्य है।

जितने प्रकारके शत्रु बतसाए गए हैं उनमेंसे क्रोध सबसे प्रधान शत्रु है। इसी कारण क्रोधको महारिपु कहा है। शरीरमें क्रोधके रहनेसे पन्थ शत्रुका प्रयोजन नहीं पड़ता। क्रोध सारी एव्योको विषय कर डामता तथा बन्धुषोको भी विकृत करना है। क्रोध घोर विष-धर पजगर दोनों ही एक पदार्थ है। साप देखने पर मनुष्य जिस तरह डर जाते हैं, उसो तरह वे क्रोधो व्यक्तिये भी डरते घोर सहित होते हैं। क्रोधित व्यक्तिको हिताहितका ज्ञान नहीं रहता। बद्गममें मनुष्य क्रोधमें पा कर पालहत्या तक भी कर डामते हैं। क्रोध साधारण क्षतान्त-स्वरूप है। शत्रुसे धैर्यमें तमोगुणसे प्रभा संहार वा सृष्टिबिनाशके निव हो क्रोधका जय हुआ है। पतः क्रोधका त्याग करनेसे ही सुख मिलता है। जो क्रोधका त्याग नहीं करते, उन्हे हमेशा पशुष घोर पक्ष्मिभोग करना पड़ता है। क्रोधो मनुष्य किसी समय शान्तिनाभ नहीं कर सकता। शान्ति नहीं होनेमे जीवन हया घोर विडम्बनामात्र है। ज्ञान युक्त कर क्रोधको पाथय देना कमी उचित नहीं है। इसीसे हर-पक्षको क्रोधका परिखान करना चाहिए। विमेषतः जो राजपट्ट पर प्रतिष्ठित हैं, उन्हे क्रोधका परिहार करना परामधर्म है। क्रोधो नरपति नरपति नामके पयोग्य है।

मोमका पाजार प्रकार घोर श्रमावादि पतीव भीयण है। समस्त संसार मिन ज्ञाने पर भी लयको परिहसि नहीं होती, मोमसे बट्ट कर घोर दूमरा मधःपाप है ही नहीं। मोमसे बुद्धि विचलित घोर विषयविषा प्राट्ट भूत भीती है। विषयमोलुप शक्तिको हिसो कोकमें सुख नहीं। मोमो यशक्ति महा सुख बट्टको लोकमें रहता है। सुख उसे छोड़ कर बट्टन दूर बना जाता है। इस पक्ष्मण सीमीका सुख पाकागकुसुमवत् घोर म्प्रकल्पमा-

यत् एकदा पमोक्ष है । पतएव मन्त्रोक्तको मोमका त्याग करना विधेय है ।

मोक्षका नाम पुष्प विहार है । चन्दाय विहारके प्रतिहारकी सम्भावना है, किन्तु मोक्षविहारकी बोधय या तथा कुछ मो नहीं है । एकमात्र मद्गुरु और मरिचिआरमकी बोधय है । मोक्षमे पुष्पकी मृष्टि दूर है । पतएव मोक्षका दूर करना एकएकका धर्म है ।

पाशोचिकी, तयो, धार्मां चोर दण्डनीति इन विषयोंमें जो विविध चमिप्र चोर क्रियावात् है, उक्तो मर मनुष्योंके साथ राजा विनयावित्त हो कर यथायय राज-प्रायकी पर्यालोचना करे । पाशोचिकीमें पर्यविज्ञान, तयोमें धर्माधर्म, धार्मांमें पर्यान्वय चोर दण्डनीतिमें म्यायाम्याय प्रतिष्ठित है ।

चहिंगा, सृष्टतयाव्य, सरय, मोष, दया चोर समा इनका सर्वदा अनुष्ठान करना चाहिये । सतत प्रिय-याव्यकथन, दूरमेका दुःख दूर करनेमें तत्पर, दरिद्रोंका भरणबोधय, दुर्बल चोर शरणार्थीकी रक्षा ये धर्म कार्य मर्यादित उपकारो है ।

जो शरीर चाधिष्ठायिका मन्दिर है, जो पात्र वा कल पयम्न हो विनष्ट होजा, जो मांस, मूत्र चोर वृष्टिवादि पनाय वस्तुकी समष्टि है, उम शरीरकी रक्षाके लिए जिसो प्रकारकी दुर्गांतिका पक्षसम्पन्न करना सर्वतोभावे निविष्ट है ।

पत्रमें सुपत्रे लिए क्रिमोकी कट देना मङ्गल नहीं है । जिस प्रकार मनुष्य पूजनोय मञ्जनकी पञ्चानि प्रदान करते हैं, कल्याणकामनामे दुर्जनके निकट उसो प्रकार या सममे भी वद कर पञ्चो तरहमे पञ्चानिका विधान करे ।

क्या माधु, क्या पमाधु, क्या मत्तु, क्या मित्त पयवा दुर्जन या सुजन ममीकी बहिगा प्रियवाक्यमे सम्भाषण करे । मिष्टवाक्यको पपिता चोष्ठ मगोहरण चोर दूररा नहीं है । मत्त पयवाधो मीठो शार्तेमें उमो समय माक हो जामेकी सम्भावना है । यह मत्त जान कर मीठो शार्तेका प्रयोग सर्वदा करना उचित है । जो विषयार्थो है, वे जो देवता चोर जो कर्वादा है वे जो वस्तु है मत्त चोर चाधिष्ठातृपुष्पहरणमे सर्वदा

विधेय है । देवतावत् गुह्यवर्तीका चोर पामवत् सुहर्ष-का मादर सम्भाषण करना उचित है । प्रविवात द्वारा गुह्यको, सत्य ध्ययहार द्वारा माधुको, सुकृत धर्म द्वारा देवताचोको, प्रेम या दान द्वारा जो चोर भूचको तथा दाक्षिण्य द्वारा रत्नर मनुष्यको धर्मोभूत चोर चमिमुक्त करना चाहिये ।

परकार्यकी चमिन्दा, सधर्मका प्रतिगमन, दोनो पर दया सर्वदा मधुरवाक्यका प्रयोग, पञ्चमिन्न मित्रका प्राय दे कर उपकार, शृङ्गागत व्यक्तिको प्रायमदान, मज्जिके पशुधार दान, सहिष्णुता, पपनो सञ्चरिमें पशु-क्षेक, दूरमेको उच्यतिमें पमत्तर, त्रिषमे मनुष्यके हृदयमें चोट पट्टये, ऐसो बातका न कहना, त्रिषमे मनुष्यका किनी प्रकारका चमिष्ट शक्तिको सम्भावना हो, ऐसे कार्य-का न करना, जिसमे दहनीक निवृत्त हो, ऐसे कार्यमें प्रवृत्त न होना, जिसमे पपनो चोर दूरमेकी रवानि हो, ऐसे काय में प्राय न डालना, मोनप्रतपरिष्णुता, मनुष्य-के साथ बहर्षयोग, क्षमन पर समष्टि ये सब कार्य ध्ययहारनीति कष्टे मय हैं चोर यज्ञो मशान्ताधीन चरित है । ( अमिपु० १५०-१५८ म० )

चार्यजाति ही सामाजिक उच्यतिके साथ नीतिशास्त्र-का समादर है, इसका यथेष्ट प्रमाय मशामारतमे मिलना है । चमी जो मय नीतिशास्त्र प्रचलित हैं उनमेंमे उमनाप्रयोग उक्तनीति चोर कामन्दकमचोत कामन्द-योग नीतिशास्त्र प्रधान चोर माधीन हैं । दमर्षे पनाया चमेन्द्रविरचित नीतिकल्पतय वा नीतिज्ञता, मन्त्रोवति-रचित मोनिगर्मित शास्त्र, विद्यारत्ननीर्यजन नीति-तरङ्ग, नीतिदीविका, धैतानमहाकृत, नीतिमद्रोय, चादि-वेदकृत नीतिमञ्चरो, मन्थराशरचित नीतिमञ्चरो, नाम-रुष्टका नीतिमन्त्र, वरहविहृत नीतिरत्न, चक्रवर्त-कृत नीतिरत्नाकर, सोमदेवपुरहित नीतिवाक्यामृत, मशराज उक्तचित नीतिविलास, धर्ममङ्गलकृत नीति-विशेष, चक्रवर्तकृत नीतिशास्त्र, मधुपुन्दरविरचित नीति-शास्त्रचक्र, चाणक्यनीति, विवीरदेव, पञ्चतन्त्र चादि पञ्च देवमेंमे चाते हैं ।

निर्णय—विद्यालयपर्यन्तके मन्त्रिभूतक मद्गुरु मन्त्रिके विषय । यह पना० १०० ५६ १०

व० धीर देगा० ०८१ ५१ ५०" में अवस्थित है। कुमायूनसे तिब्बत तक जितने पथ हैं सभीसे यह उत्कृष्ट पथ है। इस पथके जो ज्ञानिने भारतवर्षके प्राय तिब्बत, चीनतातार और चीनदेशको वाणिज्यरक्षाको विधेय प्रविधा हो गई है।

कमान वैटनने, सबसे पहले धोत्रोनदीके किनारे इस बर्षको स्थिर किया। धीरे धीरे उनी नदीके तट छो कर यह पथ उत्तरकी ओर चला गया। इस पथ को क योङ्की दूर ओर उत्तरकी ओर चल कर वहाँका स्वाभाविक दृश्य ओर हवादि देखनेमें प्राते हैं। वे सब हल बहुत बड़े बड़े हैं पर उनका ऊपरो भाग बर्फसे ढका रहता है। बँटन साइबने पहलेजिस स्थान का वर्णन किया है यह हम लोगोंके हिन्दूग्रामस्थित विष्णुप्रयाग सिधा ओर कुछ भी प्रतीत नहीं होता। हिन्दूग्राममें जिस पथ महाप्रयागकी कथा लिखी है वह विष्णुप्रयाग सङ्घोर्षमें एक है। उसके निकट धोत्रो ओर चलकानन्दाकी मुक्तवैणी है। उक्त चलकानन्दा वदनायके विष्णुपादपद्मके निकट विष्णुगङ्गा नामसे प्रसिद्ध है। इस विष्णुप्रयाग-तीर्थका माहात्म्य स्कन्दपुराणके शिववद-खण्डमें वर्णित है।

इस पथ पर प्रायः १८४२ हाथ ऊपर एक बड़ा गाँव मिलता है। यहाँके अधिवासी इस घामकी नीति कहते हैं। घामके पूर्व-दक्षिणके पर्वतमें नीति नदी निकली है। इसको उपरका भूमि चारों ओरसे हवादि तथा तुपारमण्डित सन्तुष्टावस्थी पर्वतसे घिरी है। नगरके सम्मुखभागमें नदीके समीप समतल भूमिमें चोती-बारे होती है। यहाँके अधिवासो भोटोंमें देखनेमें लगते हैं। पर्वतवालो बड़े ही सरल और निर्विबादो होते हैं। कृषिकार्यका भार केवल खियोंके ऊपर ही पड़ता है। वर्ष भरमें चार मास में सप्तम पनाज उपजाते हैं। गौतकालमें जैसे ही पपना पावास छोड़ निम्नदेशमें भाग प्राते हैं, वैसे ही शोचके पारश्वमें पुनः पुनः पावासमें लोट प्राते और बर्फसे ढके हुए पर पादिको बाहर निकाल लेते हैं। स्थानीय भोटजातिके लोग समा-वता उप हीते और उनका पहनाया मोमग चर्मनेट हा रहता है। इन लोगोंका ऐसा स्वभाव है, कि वे किसी

दूरवर्ती वस्तुके साथ किसी प्रकारका सम्बन्ध नहीं रखते और न उन्हें पामोद-मनोदृष्टान्तमें धामस्वण हो करते हैं।

घामके उत्तर पावादी नहीं है। ऊपरका पर्वत केवल चूड़ाविशित है। दो शिखरके मध्य बड़े बड़े गड्ढे देखनेमें प्राते हैं। इस पथ को ज्ञान प्राणिको सुविधाके लिए स्थान स्थान पर दो चूड़ाके ऊपर काठका पुल बना हुआ है। इस प्रदेशमें बोझ पादि टोत्रके लिए केवल बकरे और भैंड़ोंसे काम लिया जाता है।

जूनमाघके पारश्वमें प्रातःकालको यहाँका सप्ताय ४० में ५० तक और दीपहरको ०० में ८० तक देवा जाता है। इस समय प्रति रातकी सामान्य हटि ओर बर्फ पड़ती है। यहाँतो खेती-बारीका यह प्रजन समय है।

दिनके तीन बजते न बजते ग्राम-मा टोप पड़ता है। इस समय पर्वतके ऊपर मेघराशि भा कर माना वर्षोंमें रजित होती और उच्च शृङ्गके ऊपर तुपार तथा निम्नतम प्रदेशमें जल बरसता है। यद्यपि मघाचर वर्षाघात वा विद्यत देखी नहीं जातो, तो भी यहाँ जलपचरादि-में भी बर्फोत्पन्न शिखर चतुर्षु पासोकामामसे विभूयित रहता है। ज नमाममें प्रातःकालसे बर्फ गमने लगती है और तीन बजेके बादसे भारी रात तुपार पड़ता है। शीतस्त्रुके प्राक्कालमें सपथ ताभूमि प्रायः बर्फने टको रहते है। शीतसे पारश्वमें यह बर्फ नद नदीमें गिर कर उसके कनेवरको बड़ा देती है।

इस नीति-घाटका सर्वाच्च स्थान समुद्रपृष्ठमें ११८४ फुट है। पर्वतमें प्रायः १००० हाथ ऊपरमें वायुकी मात्रा कम रहनेके कारण ग्रास पादि लेनेमें बहुत कष्ट मान्य पड़ता है। यहाँ तक कि निम्नतम एक ज्ञानिके कारण प्राय निकलने निश्चयने पर हो प्राते हैं। मैरिज नीतिपर्वतके वासियोंको इसका अभ्यास पड़ गया है, इस कारण उन्हें उतना कष्ट मान्य नहीं पड़ता। खत्रान रँटन साइबका कहना है, कि यह स्थान ठीक प्लाट-मैरिजके सदृश और इसका प्राकृतिक दृश्य महाप्रायके जो है। इस स्थानमें तिब्बतदेश बहुत कम नगर प्राता है।

पक्षरसे माघ मास तक यह स्थान निरवस्थित



वर्जितोज, दीम, वक्रि, दन्तगठ, जम्बीरज, पथ, रोचन, लखीर, शोधन और दीमक।

राजनिर्घण्टके मतमें फलका गुण—पक्करस, कटु, उष्ण, शुष्म, पाचकात्, काम, कफरोग, कण्ठरोग और विस्वहृदिनागक, अग्निवर्द्धक, प्रभुका हितकर और पकने पर पति हचिकर होता है।

भावप्रकाशके मतमें—यह अम्ल, वातघ्न, दीपन, पाचन, लघु, क्षमिसमूहनागक, तीक्ष्ण, उदरशमनागक, वात, कफ, पित्त और शूलरोगमें हितकर, कटनट, हचि और रोचनपर; सिद्धोप, पन्नि, चय, वातरोग और विपाचने उपकारक, मन्दाग्नि, वहगुद तथा विस्वचिका रोगमें प्रयोज्य है। पकने पर यह फल मिट्ट, स्वादु, गुरु, वातपित्तनागक, विपरीत और विप, कफ, उदरशम और रक्तहारक, शीघ्र, पचयि, खण्ड्या और हृदिघ्न, वक्ष्य तथा हृषण होता है।

२ आशानीबू। पर्याय—बोजपुर, फलपूरक, रुच, मज्जुस, पूरक, मातुलरुक, पूर, खकल, मातुलुड, सुगन्ध्याय गिरिजा, पूतिगुपिका, योजपूर्ण, पम्बुकेगर, कोलड, देवदूत, चरवस्त और मधुककटो।

भावप्रकाशके मतमें इसका गुण—स्वादु, उष्ण, अम्ल, दीपन, लघु, शुष्म, पाचान, वातघ्न, कण्ठ, जिह्वा, हृदरोग, ह्यास, काम, पचयि, म्रण और शोधनागक है।

इसकी क्षालका गुण—तिक्त, दुर्जर और कफवातनागक है। इसका गूदा स्वादु, शीतल, गुरु, मायु और पित्तनागक होता है।

३ पातोनीबू। संस्कृत पर्याय—क्षीयकला, निम्बपाक और निम्बा।

यैद्यकके मतमें गुण—शीतल, चर, वातघ्न, दीपन, पाचन, सुपमिय, क्षलका, रक्तशोधनोपह, तीज्जका, क्षमि, उदररोग, चड, मन्दाग्नि, वात, पित्त, कफ, शूल, विघ्न चिका और वहगुद इन सब रोगोंका नागक तथा विषमें हितकर और हचिकर।

संस्कृत ग्रन्थमें नीबू शब्दके नामा प्रकारके नाम और जातिभेद बतनाये गए हैं। यह बहुत दिन पहलेसे ही भारतवर्षमें उत्पन्न होता था रहा है और यद्यपि की मिनोप्टेनिया तथा सिद्धोपामे और अशाने नीबूक म्याने

ही इन्द्रसैण्ट पादि देशोंमें इसका प्रचार किया गया है। सिद्धोपामे पन्थ, स्थानोंमें फेनेने कारण यह Citrus Medica नामसे पुकारा जाता है। इस जातिका नीबू अशरजोमतमें तीन प्रकारका है, - निमन, मारम और माइडन। माइडनका बहिर्भाग वा हितका बहुत मोटा, कण्टहा और गन्दा; मारम देखनेमें कमनालोबू के समान और इसका ऊपरी भाग चिकना होता है। मध्यमत्तः पूर्वीय जातिका पादिमस्थान पूर्ववद्दका पार्श्वस्थ मटेम विद्येयनः मारो और सुमिशा पशुङ्ग नामा जाता है। किन्तु शीघ्रीक जातिके नीबू पूर्वोक्त स्थानमें बहुत उत्तर हिमालयमें ले कर पश्चात् तक फैले हुए हैं।

मिटनारम—जान पड़ना है कि यह चक्र दो आतोय नीबूके उत्पत्ति-स्थानमें बहुत दक्षिणमें है। निमन बहुत दिन पूर्व शोमदेशके निकटवर्ती स्थानमें पकने पकन उत्पन्न होते देखा गया है। आशानमें नीबूके पैङ्क-दृशना-यंतमें मिलते हैं। मारम मिट और पक्कर-भेदमें दो प्रकारका है।

चटपात, मोताकुण्ड, खमिया और मारो पशुङ्ग-पर नीबूके विना खेतोका शो-यन्मृत्तको तरह उत्पन्न होता है। इसकी-पत्तियां मोटे टुकड़ों और दीर्घां शीर्षों पर जुलोमी होती हैं तथा उनके ऊपरका रंग बहुत गहरा करा और नीचेका हलका होता है। पत्तियोंकी लम्बाई तोने संशुल्ममें अधिक नहीं होती। फले छोटे छोटे और भक्ति होते हैं जिनमें बहुतसे पराग-केसर रहते हैं। फल गोर्णवा मन्डोतेके तथा सुगन्धयुक्त होते हैं। आधा-रण नीबू स्वादमें खट्टे होते और खटाईके निवर्ही खाये जाते हैं। मोठे नीबू भी कई प्रकारके होते हैं, इनमेंसे जिनका क्षमकः जसम ही है और बहुत जल्दी उतर जाता है तथा जिनके रसकीगर्भा फलके अन्तर्ग को जाती है वे नारङ्गीके पक्षगत गिने जाते हैं। आशीरवन्तः नीबू शब्दमें खट्टे नीबूका ही बोध होता है। उलगाय भारतमें यह ही वार फैलता है—वरपातके पक्षमें और जाङ्के (पगहन-पुस में)। पश्चारेके निघ्न जाङ्के का नीबू ही पच्छा समझा जाता है क्योंकि वह बहुत दिनों तक रह सकता है। यह नीबूके मुख्य भेद ये हैं—श्रीमशो, जखीरी, बिजौरा और चकीतरा।

नीतिरसे टका रहता है। इस समय उक्त गिरिवर्य छोड़ कर पय त पर चढ़नेका और दूसरा स्वतन्त्र पथ नहीं है। कुमायून पथ तथाभी कहते हैं, कि कई वर्षों हुए पूर्व ही यवरापर गिरिवर्य दुर्गम ही हुए हैं। पक्षने जो स्थान तत्र उद्देशमें शोभित था अभी यह स्तूपकार स्तूपारसे पाच्छादित है।

भोटवागियो का विश्वास है, कि पर्वतगिरिवरसे यात्राके पथ प्राचीनसे प्रचुर निहाररागि गजलिन ही वार निरप्रदेशमें गिर भक्तनी है, इस प्रायश्चित्त से बन्दूक का यादावत्त्व का गण्ट नहीं करते।

१८२८ ई०में क्रमान् वेवने वागियके बहाने चोनसे माय सम्पन्थ म्यापन करके निर . नीतिके निरुद्धवर्ती चीनराज-प्रधिकृत द्विप्रनगरमें व्यवसाय करनेकी चेष्टा की थी लेकिन उनका मनोरथ सिद्ध नहीं हुआ।

नीतिघोष (स० पु०) नीतिरेव नीत्यात्मकी वा घोषो यम् । १ हृदयप्रतिका रथ । नीतिर्नयस्य घोषः ध्वनिः । २ नयध्वनि ।

नीतिज्ञ (स० वि०) नीति जनानि प्रा-क । नीतिवेदो, नीतिकुशल, नातिका ज्ञाननिवाला ।

नीतिप्रदोष (स० पु०) १ नीतिरूप प्रदीप । २ ज्ञानलोक । ३ योतानमहकृत एक नीतिग्रन्थ ।

नीतिमत् (स० वि०) प्रायश्चयेन नीतियिद्यतेऽप्य, मनुष्य । प्रगम्य नतिगुरु, सदाचारी ।

नीतिमान् (हि० वि०) नीतिपरायण, सदाचारी ।

नीतिग्रन्थ (स० स्त्री०) १ वह जिसमें नीतिकथाएँ सम्पूर्ण रूप निहित हैं । २ यरुचि-कृत यत्यविशेष, वा-रुचिका वनाश हुआ एक ग्रन्थ ।

नीतिशास्त्रात्मन (स० स्त्री०) १ मदिबे चनायुष्ये चौर ज्ञानगर्भं चरुतमय प्रमद । २ स्वनामस्वतय यम् ।

नीतिविद्या (स० स्त्री०) नीतिविषयक विद्या ।

नीतिशास्त्र (स० स्त्री०) नीतिशास्त्रः । नीतिशास्त्र शास्त्रभेद, वह शास्त्र जिसमें मनुष्यमानाजके हितके लिए देग, दान और पापानुसार पापार-व्यवहार तथा प्रवन्ध और शासनका निधान हो । योगनसघ्न, कामन्दक, पञ्चतन्त्र, नीतिमार, नीतिमात्रा, नीतिमयूष, हिमोपदेश और चाणक्यमार मंथन पादि ग्रन्थ नीतिशास्त्र नामसे प्रसिद्ध हैं । नीति देवो ।

नीतिसङ्गमन (स० स्त्री०) ज्ञानगर्भं चौर नीतिविषयक प्रमदमात्रा सविषिष्ट ग्रन्थ ।

नीतिमार (स० पु०) नीतिरेव सारो यस्य । इन्द्र प्रति हृदयप्रतिका नीतिशास्त्रभेद । चाणक्यने इमीसे मंथन करके चाणक्यगतक लिखा है ।

नीय (स० पु०) नयति प्रापयतीति नो-कथन (इतिवि-निरसिकाशिश्वः रूपन् । उण् २।२) १ नियन्ता । २ प्राप-यिता । नो-भावे कथन् । ३ नयन । ४ स्तोत्र । ५ प्रोक्षण हेतु, नयनहेतुभूत । (स्त्री०) ६ जल ।

नीध (स० स्त्री०) नितरां धियये इति मि-ध् मुलविभुजा टित्वात् कः । १ खलोक, ह्राजनकी शीलता । २ वन-जङ्गल । ३ नेमि, पहिपका चकर । ४ चन्द्र, चन्द्रमा । ५ रेवतीनक्षत्र ।

नीनाहं (स० पु०) नि-नह-भावे घञ्, बाहुलकात् दोषः । निवन्ध, बन्धन ।

नीप (स० पु०) नी-प (पाणोविषयः पः । उण् ३।२) बाहुलकात् गुणभावः । १ कदम्बवृक्ष । २ भूकदम्ब । ३ वन्धकवृक्ष, दुपहरिया । ४ नीनागोकवृक्ष, चगीक । ५ देशभेद, एक देशका नाम । ६ गिरिका पधोभाग, पहाड़का निचला हिस्सा । ७ पारराजके पुत्र । ८ नीप-कां घञ् ।

नीप (स० पु०) दो चीजों को बाँधने या गाँठ देनेके लिए रस्सीका फेरा या फँदा ।

नीपर (स० पु०) १ लं गरीमें बंधो हुई रस्मिशोभने एक । २ उक्त रस्मिके बन्धनको कसनेके लिये लगा हुआ डंढा ।

नीपराज (स० पु०) राजकदम्बवृक्ष ।

नीपातियि (स० पु०) कण्ठव शोडव एक कृपि । इक्षी-ने कृत्वये दृष्टे एम भण्डलके ३४ मुक्तकी रचना की ।

नीप्य (स० वि०) नीपे गिय धोमार्गे भवः, नीप-यत् । १ जो पहाड़के नीचे छतप हो । (पु०) २ कदम्ब, एक वृक्षका नाम ।

नीव (हि० पु०) १ मध्यम पाकारका एक पेड़ या झाड़ जिसका फल खाया जाता है और जो सुयोके गरम प्रदेशों में होता है, लखीर, कांगजी नीव । संस्कृत पर्याय-निम्ब क, पञ्चजम्बीर, दस्ताघातघोषु, पञ्चमार,

वज्रिभोज, दीप्त, वडि, टन्तयठ, जम्बीरज, पन्थ, रोचन, जम्बीर, गोधम और दीप्तक ।

राजनिर्घण्टके मतसे फलका गुण—पन्तरम, कटु, उष्ण, गुदम, पामवात, काश, कफरोग, जण्डरोग और विच्छर्दिनागक, अग्निवर्धक, ब्रह्मका हितकर और पक्वने पर प्रति रुचिकर होता है ।

भावप्रकाशके मतमें—यह पक्व, वातघ्न, दीपन, पाचन, लघु, क्षमिसमूहनागक, तीक्ष्ण, उदरयमनागक, वात, कफ, पित्त, और शूलरोगमें हितकर, कटनष्ट, रुचि और रोचनपर; विदीप, अग्नि, उष्ण, वातरोग और विपाचने उपकारक, मन्दाग्नि, बहगुद तथा विच्छिका-रोगमें प्रयोज्य है । पक्वने पर यह फल मिष्ट, स्वादु, गुद, वातपित्तनागक, विपयोग और विष, कफ, उदररोग और रक्तदाहक, शोष, पश्चि, दृष्या और हृदिघ्न, वल्य तथा हृहण होता है ।

रटाशानीयू। पर्याय—भोजपुर, फलपूरक, रुच, लङ्गम, पूरक, मातुलङ्गक, पूर, खकल, मातुलुङ्ग, सग-श्याय्य, गिरिजा, पूतिगुष्पिका, शोजपूर, पश्युकेमर, कोलङ्ग, देवदूत, परधम और मधुककटो ।

भावप्रकाशके मतमें इसका गुण—स्वादु, उष्ण, पक्व, दीपन, लघु, गुदम, पामान, वातरिघ्न, कण्ठ, जिह्वा, हृद्रोग, खास, काश, पश्चि, मूत्र और शोथनागक है ।

इसकी खानका गुण—तिक्त, दुर्जर और कफवात-नागक है । इसका गूदा श्लाघु, शीतल, गुद, वायु और पित्तनागक होता है ।

इ पातोनीयू । संस्कृत पर्याय—क्षीपफला, निम्बपाक और निम्बा ।

वैद्यकके मतसे गुण—शीतल, अम्ल, वातहर, दीपन, पाचन, सुगमिय, हनका, रक्तशोधोपह, तेजस्कर, क्षमि, उदररोग, यक्ष, मन्दाग्नि, वात, पित्त, कफ, शूल, विष-विका और बहगुद इन सब रोगोंका नागक तथा विषमें हितकर और रुचिकर ।

संस्कृत ग्रन्थमें नीचु शब्दके ताना प्रकारके नाम और जातिभेद बतलाये गए हैं । यह बहुत दिन पहलेसे ही भारतवर्षमें उत्पन्न होता था रहा है और यहांसे ही मेसोपटेमिया तथा सिदीयामें और पक्वमें शिपोक नामसे

ही इन्हें लैण्ड आदि देशोंमें इसका पचार किया गया है । सिदीयामें पक्व नामोंमें वैमनेके कारण यह Citrus Medica नामसे प्रचारा जाता है । इस जातिका नीचु पश्चिमजोमतमें तीन प्रकारका है—जिमन, माइम और माइडन । माइडन का बहिर्भाग या खिलना बहुत मोटा, बखड़ा और गन्दा; फारम देखनेमें कमजामाशुके जैसा और इसका ऊपरी भाग विकला होता है । मन्दाग्नि पूर्वोक्त जातिका प्रादिमम्यान पूर्व बहका पाश्चिम्य प्रदेश विशेषतः गारो और अग्निश पश्चिम प्रांता जाता है । किन्तु शिपोक जातिके नीचु पूर्वोक्त म्याममें बहुत उत्तर हिमालयमें से कर पश्चात् तक फेले हुए हैं ।

मिटलाइम—जान पड़ना है, कि यह सब दो जातीय नीचुके उत्पत्ति-स्थानमें बहुत दक्षिणमें है । निम्न बहुत दिन पूर्व जोनदेशके निकटवर्ती म्याममें प्रकृते पड़न उत्पन्न होते देवा गया है । पामाममें मोबू है पेश-द्वाना-यंतमें मिलते हैं । माइम मिष्ट और पक्वने-भेदके दो प्रकारका है ।

बहयाम, शोताकुण्ड, खनिया और गारो पश्चिम-पश्चिम बिना शिपोका जो वन्यवृक्षको तरह उत्पन्न होता है । इसकी पश्चिमां मोटे टनको और दीर्घां कोमें पर मुनीनी होती है तथा उनमें ऊपरीका रंग बहुत गहरा हरा और नीचेका हलका होता है । पश्चिमां की लम्बाई तोने बड़े-जमें अधिक नहीं होती । फूल छोटे छोटे और सफेद होते हैं जिनमें बहुतने पराग-कमर रहते हैं । फल गोले या लम्बीतरे तथा सुगन्धुल्ल होते हैं । पाषाण नीचु स्वादमें यह होते और चटाईके लिये ही खाये जाते हैं । मोठे मोबू भी कई प्रकारके होते हैं, उनमेंमें जिन्का खिलना नरम हो पा है और बहुत कठो उत्तर जाता है तथा जिन्के रसकोमको कठिने पक्वने ही प्रतीति है वे नारदीके पक्वनेत मिले जाते हैं । माषारस्यतः 'नीचु' शब्दमें कई नीचुका ही बोध होता है । तलांगव भारतमें यह दो बार फलता है—बरमातके पक्वमें और जाइ (पगहन पूम) में । पचारके लिये जाइका नीचु ही अच्छा समझा जाता है क्योंकि यह बहुत दिनों तक रह सकता है । यह नीचुके मुख्य भेद दो हैं—कोमनो, जम्बीरी, विजोरा और पकोतरा ।



नीचू में पैड़में कभी कभी गोद निकलता है। १८२५ ई. में मकलीपत्तनमें मन्नाज-महामेलिमें इसका गोद मीजा गया था। इसके फलमें उत्तम सुगन्धित तेल बनता है। हङ्गेरोमें जो जल प्रस्तुत होता है, वह इस तेलका एक प्रधान उपादान है। नीचूके छिलकेको टर्षा कर पोर थकथकतो महायंत्रामें भली भांति निचोड़ कर जो गन्धद्रव्य तैयार होता है, उसे मीझाट कहते हैं।

नीचूका छिलका उष्ण, शुष्क पौर बलकारक होता है। इसके बीचका साराग शोथगुणसम्पन्न पौर मोज, पक्षा तथा फूल उष्ण पौर शुष्ककारक एवं रस शैत्योत्पादक पौर महोचक होता है। किमो किमोका कहना है कि इस फलके सेवन करनेमें शरीरमें विपाक पश्या निकल जाता है। यदि किमोमें पड़ितकर विष खाया हो, तो उसको नीचू कुछ अधिक परिमाणमें खिलानेमें पाकस्थलीमें एक प्रकारकी उत्तजना होती है पौर विष निकलने पड़ता है। गर्भावस्थामें खानेमें यह गर्भस्थ शिशुके श्वास प्रणामका दोष नष्ट करता है। नीचू द्वारा प्रस्तुत जल भवसादक पौर छिलका पासाशय पीछामें उपकारी होता है। सोनोके साथ इसका गूदा मिला कर एक प्रकारका खाद्य तैयार किया जाता है, किन्तु यह कुछ तिक्तसादविगिट होता है।

इसे बङ्गालमें नेचू, बिजौरा, बिजपुरा पौर बड़ानेचू, हिन्दोमें बिजौरा, निम्बूफ, मधुकरटो चकोतरा पौर गुजरात में पञ्जाबमें बजौरा, मोम्बू; गुजरातमें बिजौरा, तुरख पौर घानहा बम्बईमें बीजपूर, महालुङ्गा, निचू, बिजोगी, महागडूमें महलुङ्गा, निम्बू; तानिलमें एनुमिच-बन्-पत्रहम्, या मासाम् पत्रहम्; तैलङ्गमें निम्बयन्टू, नार-दम्ब, माधिगन्-बन्टू, पुक दम्ब, बीजपुरम्। मलयमें गणपतिभारत; वामीमें तुरख पौर परबीमें उग्राज, उग्-रज या उतुरिओ कहते हैं।

हिमालयके बाहर गरम देशोंमें मधुवालमें कईघाम तक पौर मध्य भारतके नागा खानोमें कामकोनीचूका पैड़ देखा जाता है। मिडाके भेदके इसके पैड़ पौर फलमें भी विषयता पाई जाती है। फलका पाकार प्रधानतः गोला, छिलका उत्तलापम लिए बरा पौर पकने पर पोषा दिवाड़े पड़ता है। मानभूमिमें इसके पत्त-बमका मात्र करनेके काममें पाते हैं।

वैद्यलोग इस नीचूका इस्तेमाल किया करते हैं। उनके मतमें इसका बुर-वैत्तिक-वमननिवारक, शोथ-कर पौर पंचनेनिवारक है। इसका जल पच्यता सुपाय पौर लक्ष्यानिवारक तथा टटका रस मगकं दंशनमें विग्रेष उपकारी पौर जीर्णभायक होता है।

नीम ( हि० पु० ) १ पत्ता भाङ्गनेवाला एक पैड़ जिसकी उत्पत्ति हिदलाङ्गरसे होती है पौर जिसको पत्तियां बड़ दो बिलेकी पतली धीकीके दोनो पौर लगती हैं। ये पत्तियां चार पांच पङ्क्तोंमें लम्बो पौर चट्टल भर चौड़ी होती हैं। इनके किनारे पारीके तरह होते हैं। विशेष विवरण निम्न शब्दमें देखो। ( फा० वि० ) २ पदं, पाधा। नीमबर ( फा० पु० ) कुण्डोका एक पेव। यह पेव उम समय काम देता है जब जोड़ पीछी तरफमें कमर पकड़ कर बाएँ तरफ खड़ा होता है। इसमें पचना बायां घुटना जोड़की दाहिनी खाँवके मोचे से आती है, फिर बाएँ शायकी उसको टाँगोमें निकाल कर उसका बायां घुटना पकड़ते पौर दाहिने शायसे उसको मुठो पकड़ कर भीतरकी पौर खींचते हैं। ऐसा करनेमें यह वित गिर पड़ता है।

नीमगिर्दो ( फा० पु० ) बड़की एक यन्त्र जो खानो या पंचकगकी तरफका हो कर पदंयन्त्रकार होता है। यह खरादनेके समय सुराही पादिकी गर्दन खोजनेके काममें आता है।

नीमब ( हि० पु० ) बड़ाले, लकीयां, पञ्जाब पौर सिंधकी नदियोंमें मिलनेवाली एक प्रकारकी मछली। इसका मांस खानेमें अच्छा लगता है।

नीमषा ( फा० पु० ) खाँडा।

नीमज ( फा० वि० ) चंभरा।

नीमटर ( हि० वि० ) जिसे पूरो विद्या या ज्ञानकारी म-हो, अधकुरा।

नीमन ( हि० वि० ) १ चक्का, भंजा, मीरोग, चंगा। २ दुवला, जो विगड़ा हुआ न हो। ३ सुन्दर, पक्का, बढ़िया।

नीमर ( हि० वि० ) शक्तिहीन, बलहीन, दुबल।

नीमरजा ( फा० वि० ) १ बड़ो बूँट रजामन्दी। २ कुछ प्रसङ्ग।

नीमस्तीन ( हि० स्त्री० ) नीमस्तीन देखो ।  
 नीमा ( फा० पु० ) जामिके नीसे पहने जानेका एक पह-  
 रावा । यह जामिके आकारका होता है पर न तो  
 यह जामिके इतना नोचा होता है और न इसके बंद  
 बगलमें होते हैं । यह घुटनेके ऊपर तक नीचा होता है  
 और इसके बंद सामने हैं । इसकी आस्तीन पुरो नहीं  
 होती है । इसके दोनों बगल सुराहियां होती हैं ।  
 नीमावत ( हि० पु० ) वैष्णवोंका एक सम्प्रदाय ।  
 नीमास्तीन ( फा० स्त्री० ) एक प्रकारकी फतुई या कुशते  
 जिसको आस्तीन चाधी होती है ।  
 नीयत ( च० स्त्री० ) आन्तरिक लक्ष्य, सद्दृश्य, आग्रय,  
 सङ्कल्प, इच्छा, भाव ।  
 नीर ( सं० स्त्री० ) नयति प्रापयति स्थानात् स्थानान्तरमिति  
 मो-प्रापणे रक् ( स्फारितसं०ति । अ० २।१३ ) वा निर्गत  
 रो पत्नियैऽस्मात् । १ जल, पानी । २ रम, कोई द्रव्य  
 पदार्थ । ३ फफोले आदिके भीतरका चेष या रस । ४  
 सुगन्धवान्ता । ( पु० ) ५ राजपुत्रमेद ।  
 नीरल ( सं० त्रि० ) रत्नगुण्य, बंधुहीन ।  
 नीरह ( सं० त्रि० ) रत्नगुण्य, बिना रंगका ।  
 नीरज ( सं० स्त्री० ) नीरे जसे जायते जन-प । १ पद्म,  
 कमल । २ कुष्ठोषधि । ३ मुक्ता, मोती । ४ उद्गाद्य  
 जन्तु, लुट्टिलाव । ५ लमीरी, परमान । ६ ढवयिगेय  
 एक प्रकारकी घास । ७ जलजातमात्र, जलमें उत्पन्न-  
 मात्र । ( पु० ) ८ रजोगुणकार्यरागादिगुण्य महादेव ।  
 नीरजस ( सं० त्रि० ) निर्मोक्षि रजः धूलिः कुसुमपर-  
 गादिर्था । १ निर्धूलि, जहाँ धूल न हो । २ पराग-  
 गुण्य, बिना परागका । ३ रजोगुणकार्यरागादिगुण्य ।  
 ( स्त्री० ) ३ गतासंवा स्त्री, परजस्ता स्त्री, वह जो  
 जिसे रजोदग्धन न होता हो ।  
 नीरजस्त ( सं० त्रि० ) निर्मोक्षि रजः यस्य, ततो कप । १  
 रजोगुण्य । २ परागगुण्य । ३ रजोगुणकार्यरागादिगुण्य ।  
 नीरजात ( सं० त्रि० ) मोरान्नायते जन-प । १ जनजात  
 भाव, जो जन्मसे उत्पन्न होता है । ( स्त्री० ) २ पञ्चादि ।  
 इटिमे पञ्चादि उत्पन्न होते हैं, इन्हींसे नीरजात शब्दमें  
 पञ्चादिका बोध हुआ है । एकभावा पचसे हो प्रजाकी  
 उत्पत्ति और रक्षा होती है । ३ कमलादि ।

भीरत ( सं० त्रि० ) निर्गतं रतं रमषं यस्मात् । विरत,  
 रमषाभावयुक्त ।  
 नीरद ( सं० पु० ) नीरं जन्मं ददातीति दा-ञ्क । १ मेघ,  
 बादल । २ सुप्तक, मोघा । ( त्रि० ) ३ रदगुण्य, दन्त-  
 हीन, वेदांतका । ४ जस देनेवाला ।  
 नीरधर ( सं० पु० ) बादल, मेघ ।  
 नीरधि ( सं० पु० ) नीरानि धीयतेऽग्निम् नीर-धा कि  
 ( रूपैःपिचिह्नात्ते च । पा । ३।२।३ ) समुद्र ।  
 नीरनिधि ( सं० पु० ) नीरानि जलानि धीयन्तेऽग्ने ति  
 निर-धा-कि । समुद्र ।  
 नीरध्र ( सं० त्रि० ) निर्मोक्षि रग्धं हिरं यस्मिन् । १  
 हिररहित, जिनमें हिर न हो । २ धन, दीप्तत ।  
 नीरयति ( सं० पु० ) बह्णद्वेषता ।  
 नीरमिय ( सं० पु० ) नीरं मियं यस्य । १ जनकेतन,  
 अन्वेषेत् । ( त्रि० ) २ अन्तमियमात्र, जिसे पानी बहुत  
 प्यारा हो ।  
 नीरम ( हि० पु० ) यह बोध को अज्ञात पर केवल हमकी  
 स्थिति ठोक रखनेके लिये रहता है ।  
 नीरव ( सं० स्त्री० ) पद्म, कमल ।  
 नीरव ( सं० त्रि० ) रवगुण्य, मृत्तव्य ।  
 नीरव ( सं० पु० ) जलमधु-कृष्टव ।  
 नीरस ( सं० पु० ) नितरां रसो यत् । १ दाहिन, पमार ।  
 ( त्रि० ) निर्मोक्षि रसो यत् । २ रवगुण्य, जिनमें रस  
 या नीसापन न हो । ३ कृष्ण, सूना । ३ जिसमें कोरे  
 खाट या मजान न हो, फीका ।  
 नीरसन ( सं० त्रि० ) निर्मोक्षि रसना यत् । १ रसनाशून्य ।  
 २ बिना कर्णधनो या कमरवटका ।  
 नीरसा ( सं० स्त्री० ) निःशैविकाशय, एक क्षिप्रको  
 घास ।  
 नीराशु ( सं० पु० ) नीरस्य पाशुः । उद्ग, उदितार ।  
 पर्याय—जलनकुल, जलबिदाह, जलप्रव, उद्ग, अनाशु,  
 नीरज, मकुल ।  
 नीराजन ( सं० स्त्री० ) निर-राज-भावे ष्युट् । नीरा-  
 जना, दीवदान, पारतो ।  
 नीराजना ( सं० स्त्री० ) नितरां राजनं यत्, निर-र-ज-  
 विष्-युट्, नीराध्य गाम्बुदकस्य पञ्चमं सेनो यत् न ।

नीराजना वा । १ दीवादि द्वारा प्रतिमादि देवताका पारार्थिक, देवताको दोषक दिवानेकी विधि, भारतो । तिथितत्त्वमें रघुनन्दनने इस प्रकार लिखा है—

“व्यवहितप्रदीपाद्यं द्यूताख्यभाद्रिपत्रैः ।  
शोषधीभिरथ मेघवाभिः सर्वैर्बौद्धैर्वदिभिः ॥  
नभश्चां पर्यैकते तु यात्रावापे विद्येपतः ।  
यः कुर्यात् प्रदया चौर देव्या नीराजनं नरः ।  
रंशमेवादि भिनदी शंयगन्धर्व पुष्कलैः ॥

भारती दिवधान् चौर देव्या नीराजनं कृतम् ।  
तावत् कश्चिदहस्त्राणि दुर्गालोक महोद्यते ॥” (तिथितत्त्व)

पिष्ट प्रदीपादि, चूताग्रत्यादि पञ्चव, मेघ्या, शोषधि पादि एवं सर्वबोज यवादि द्वारा भक्तिपूर्वक नभमी तिथि, पर्यकाल पयवा यात्राकालमें देवीकी भारतो उतारनी चाहिए । इन समय शङ्ख, भेरी पादिका शब्द चौर जय-शब्दोच्चारण भी करना चाहिए । जो उक्त दिनोंमें देवीका नीराजन करता है, उसका कल्पमच्छ तक दुर्गालोकमें प्राप्त होता है । नीराजन पांच प्रकारसे किया जाता है—

“पंचनीराजनं कुर्यात् प्रथमं धीपताजना ।  
द्वितीयं शोदकः स्येन तृतीयं धीतवासना ॥  
चूनाः शर्यादिवशैश्च चतुर्थं परिकीर्तितम् ।  
पंचमं प्रणिवारिण छात्रिण यथाधिभिः ॥”

(कातोत्तरतन्त्र)

पहले दीपमाना द्वारा भारतो करनी चाहिए, पीछे उदकाल पर्याप्त पञ्चगुण जल, उसकी वाद धोतवत्, घताग्रत्यादि पञ्चव चौर प्रविपात द्वारा नीराजन करनेका विधान है । इसीको चणनीराजन कहते हैं । पारार्थिक प्रदीप द्वारा नीराजन करना होता है, इस प्रदीपमें ५ वा ७ वक्ती बनती है ।

“कुङ्कुमागुहकूर्त्तरुहणवादनविधिताः ।  
वर्तिनाः घत वा पंच शशा वग्दापनीवश्च ॥  
कुर्यात् कृतप्रदीपेन सर्वधंटादिवापयेः ।  
इतेः पंचप्रदीपेन ब्रह्मणी भक्तिप्रवराः ॥”

(पद्मोत्तरख० १०० अ)

कुङ्कुम, चतुर्द, कर्पूर, घंत चौर चन्दन द्वारा मात्र वा पञ्च वर्तिका निर्माप करनी चाहिए । पीछे ब्रह्म,

घण्टा पादि वाजा वंजाना चाहिए । विष्णुविग्रहमें पञ्च प्रदीप द्वारा भक्तिपरायण हो कर भारतो उतारनी चाहिए । हरिभक्तिविलासमें लिखा है, कि, पात्री करनेके पहले मूलमन्त्रमें तीन बार पुण्याग्रि देनी चाहिए चौर महावाया तथा जयमन्त्रपूर्वक शुभवातमें छत वा कर्पूर द्वारा नियम वा पनेक वर्तिका जन्मा कर नीराजन करना चाहिए ।

“उदय मूलमन्त्रेण इत्था पुण्याग्रिययम् ।  
महानीराजनं कुर्यात् महावापयपरवर्तिः ॥  
प्रमालयेत्तदर्थं च कर्पूरेण घृष्टेन वा ।  
शाश्वति० छमे पात्रे विपमानेकपरितेकम् ॥”

(हरि० रि०)

पहले विष्णु के चतुष्पादतन चौर चाभिदेगमें दो बार पीछे सुवमण्डलमें एक बार चौर चतुष्पादमें ७ बार भारतो उतारनी चाहिये ।

पनेक वर्तियां बाल कर भारतो करनेमें कल्पकोटि तक विष्णु लोकमें प्राप्त होता है ।

“बहु वर्तिं उमायुक्तं उच्यते, देवावोपरि ।  
कुर्यादाश्रिति० यत्तु क्त्वाकोटि, वधेत्सिरी ॥”

(सहस्रनाम)

पूजादि मन्त्रहीन या क्रियाहीन क्रोममें यदि पीछे नीराजन किया जाय, तो पूजा सम्पूर्ण समझो जाती है पर्याप्त पूजादिमें जो सब समाप्त है, वह नीराजनमें पूरा हो जाता है ।

“मन्त्रहीनं क्रियाहीनं यत् कृतं पूजनं इति ।  
इयं सम्पूर्णतायेति इत्ये नीराजने निवे ॥” (सहस्रनाम)

देवताका नीराजन करनेमें समोपाय विनष्ट होती है । जो देवदेव विष्णुका नीराजन पचलोकन करती है, ये सत्रजन्म साक्षात् हो कर चतुर्लमें परमपद प्राप्त करती है ।

“नीराजनस्य वा पर्यन्तं देवदेवस्य शक्तिः ।  
छलजगति निरः ह्यारुन्ते च परमं परम् ॥”

(हरि० रि०)

देवताको भारतो होने के समय सेनी चाहिए, भारतो करकेकालमात्रमें भो-पनीपदुष्पलिया है । जो पित्त करने है उमके कोटिकुल उदारा पाते हैं चौर चतुर्लोकमें विष्णुका परमपद प्राप्त होता है ।

'सूर्य-प्राशस्त्रिक' पर्यन्त कालमात्रं प्रवृत्तम् ।  
 कुटकीदि' उपरुक्ष्य वाति विष्णोः परं पदम् ॥''

(विष्णुपर्वो०)

२. शान्तिमठ, राजाको नीराजन शान्तिकार्य सम्पन्न करके युद्धमें जाना चाहिये ।

इसका विषय हस्तमंजिरामें इस प्रकार लिखा है—  
 मगधान् विष्णुके जागरित होने पर सुरङ्ग, मातङ्ग और मनुष्यों का नीराजन करना चाहिये । कार्तिक शुक्लपक्षको पूर्णिमा, द्वादशी और चतुर्थीमें पंचम प्राश्रितमासमें नीराजन नामक शान्ति करनी चाहिये । नगरके उत्तर-पूर्वदिक्स्थ प्रगल्भ भूमि पर बारह हाथ लम्बा और दस हाथ चौड़ा एक तीर्थ बनवावे । उसमें सर्ज, उदुम्बरशाखा और फकुमस तथा कुम्भबहुल एक शान्तिकेतन निर्माण करे । उसके द्वार पर वंशनिर्मित मण्डप, ध्वज और चक्रनिर्माण विधेय है । शान्तिरुद्र और शिवान्यकी पुष्टिके लिए घोड़ोंके गर्भमें प्रतिमरणमन्त्र द्वारा भस्मातक, शान्तिधान्य, कुट और सिद्धार्थ बांध दे एवं रवि, बरुण, विष्णुदेव, प्रजापति, इन्द्र और विष्णु सम्बन्धीय मन्त्रसे शान्तिरुद्रमें ७ दिन तक प्रसन्नोक्त शान्ति करे । वे घोड़े पुष्टाहमें यदि शङ्क, सूर्यध्वनि और गीतध्वनि द्वारा विमुक्तभव और पूजित हों, तो पर्य-वाक्य वा अन्य प्रकारसे ताड़नीय नहीं होते । चतुस्रदिनमें कुम्भ और चौर द्वारा पाठित पाथमाम्बिकी तीर्थके दक्षिण मुखसे उत्तर मुख ओंके ऊपर रहते । चन्दन, कुठ, ममद्गा ( मंजीठ ), हरिताम, मन्नागिजा, गियद्र, वच, दन्ती, पद्मस, पद्मन, हरिद्रा, सुवर्ण, चर्मिमन्त्र, कटभरा, वायमाणा, महदेवो, श्वेतवर्ण, पूर्णकीर्ण, नाग-कुसुम, स्वगुप्त, शतावरी, शीमराजो और पुष्प इन सब द्रव्योंमें कनक पूर्ण करके प्रचुर मधुपायम यावक प्रभृति नाना प्रकारके भक्ष्योंके साथ यज्ञिका उपहार दे । खदिर, पलाश, उदुम्बर, काश्मरी वा पत्रवत्य द्वारा यज्ञोप-काष्ठ बनावे । यज्ञार्थप्रायियोंके लिए स्वर्ण वा रोष्य द्वारा सुक् निर्माण करना कर्तव्य है । राजा पूर्णकी और सुवर्ण करके पत्रवत्य और देवप्रायिक साथ पञ्जिके समीप बैठे । पीछे अक्षययुक्त पत्र और यष्ट हस्तीको हनन तथा दोषित करा कर पचन, श्वेतवज,

गन्धद्रव्य, मान्य और धूप द्वारा अभ्यर्चित करे और वाक्य द्वारा मान्यना तथा वाद्ययन्त्र शङ्क, पुष्टाद गन्ध करके हुए उन्हें पाथमतीर्थके समीप भावे ।

इस प्रकारमें साथे हुए पत्र यदि दक्षिणपक्षरक्षकी समुत्प्रेषण करके बैठ जाय, तो वह राजा बहुत लस्ट शयुक्तो विनाग करेगी, ऐसा जानना चाहिये ; किन्तु ये पत्र यदि डर जाय, तो राजाका पशुम होता है ।

पुराहितके यथाविधि अभिमन्त्रण करके प्राय प्रदान करनेमें पत्र यदि उसे पाषाण वा पाहार करे, तो राजाको जय होती है । किन्तु इसका विपरीत होनेमें फल भी विपरीत होता है । उदुम्बरकी शाखाको कलसके जलमें डूबी कर पुरोहित नृप और नागसमन्वितनेना तथा पत्र-गणकी शान्तिपौष्टिक मन्त्र द्वारा स्वर्ग करे । पीछे राहुहृदिके त्रिये प्राभिवारिक मन्त्रमें भुयोभूयः शान्ति कर पुरोहित नृपस्य शत्रु प्रतिद्वनिर्निर्माण पूर्वक मूल द्वारा उसका वसा-स्थल छेद डाले और अभिमन्त्रण करके पत्रको लगाम पहनावे । बादमें राजा इस प्रकार नीराजित हो कर उत्तर-पूर्वकी ओर गमन करे । उस समय चारों ओर नाना प्रकारकी माद्वनिक ध्वनि होने चाहिये । इस प्रकार शान्ति स्थापन करके राजा यदि युद्धयात्रा करे, तो वे नियय ही भारो-ष्ट्योको जय कर सकते हैं ।

( हस्तमंजिरा ४४ अ० )

कालिकापुराणमें नीराजनशान्तिकी विधि इस प्रकार लिखी है,—

नीराजन शान्ति द्वारा पत्र, गज पादिकी हवि होती है । प्राश्रित मासकी खानियुक्ता शुक्ला तृतीयाकी निज-पुरके ईशानकीपर्वमें उत्तम स्थानका संस्कार करना चाहिये । पीछे पाठके दिनमें नीराजन करना विधेय है ।

राजा महावसिष्ठ और मनोहर एक पत्रको ७ दिन तक गन्धपुष्प और मष्टादि द्वारा पाराधना करे । तृतीयादिमें पूजा कर के उत्तम पत्रको यत्र स्थानमें भाड़ा करावे ; पत्रके चेटायुसार शुभाशुभ जाना जाता है,— पत्र उस स्थान पर उपस्थित हो कर यदि भाग जाय, तो राजाका जय ; पशु त्याग करे, तो राजपुत्रकी मृत्यु ; राह चलने प्रतिद्वनाशरक्ष करे, तो राजमहिषीकी मृत्यु ; सुव्र, नाक, चट्ट पादिके जिम और शङ्का हो कर मष्ट

करे, उस पौरके शत्रु, पाँका सय पोर यदि वह दधि पादके पयभागको राजाके सामने उठाये खड़ा रहे, तो राजा उस विपक्षियोंको पराजय करेगे, ऐसा जानना चाहिये ।

दगमी तिथिको प्रातःकालमें नीराशन करे । दैव-यगतः यदि छल तिथिमें कर न सके, तो दगमीके बाद द्वादसी तिथिमें नीराजना-गान्ति कर सकते हैं । इसमें भी यदि बिष्ट पदु'च जाय, तो निजपुरके ईमानहोषमें दोहगदभ्त-परिमित स्यानके मध्य दगदभ्त-परिमित विपुल तोरण निर्माण करे । ३२ हाथ लम्बा पोर १६ हाथ चौड़ा यक्षमण्डल बनानेका विधान है । थोड़ेके उत्तरभागमें पल्लु नाम वेदो निर्माण करे । इस स्थान पर पुरोहितगण भाग संस्थापन करके पूजन पोर शान, सद्गुण्यर पयवा पशु नहचकी गोप्याकी मध्यममुहाहित चक्र तथा ध्वज दारा विभूयित करें ।

पुष्टि, गान्ति पोर मिहार्थघोटकके गन्देशमें गान्ति-कुष्ठ पोर भस्मातक बांध दे । राजा वैष्णवमण्डलका निर्माण कर दिक्पान पादिको पूजा करे । पुरोहितगण एक मत्तष्ट तक छत तिल पोर पुपकी एकत्र कर सूर्य, बरुण, ब्रह्मा, इन्द्र पोर विष्णुके लक्ष्मणमें होम करे । धर्मार्थकामादि चतुर्धर्मको गिहिके लिये प्रत्येक देवके लक्ष्मणमें सड़ख शार पयवा १०८ बार होम विधीय है । तदनन्तर सृण्णय ८ घंटोंमें नाना प्रकारके पत्रन दे कर उन्हें स्थापन करना होता है । पुरोहित इन सब चक्षों-में मन्त्रिष्ठा, हरितास, चन्द्रम, कृष्ण, मिथुन, मनागिन्ता, पञ्चन, हरिद्रा, श्वेतदण्डी पादि तथा भस्मातक, सह-देवी, शतावरी, वष, मागकेयर, सोमलता, सुगुमिका, तुलु, करवीर, तुलसीदल पादि द्रव्योंके ज्ञान दे । इस प्रकारकाठे ० दिन तक पूजा पोर होम करना होता है । जब तक इस नीराजना-गान्तिका श्रिय न हो जाय, तब तक राजाको रात भर घरमें रहना उचित है । गान्तिके समय लक्ष्मणपूरुमिमें रहनेका जह्वात नहीं पोर इसमें समय तक किशो प्रचारका यागारोह विधीय है । मात दिन तक देवताओंको नाना प्रकारके नयेच चक्षुमें होत है ।

मातर्वे दिनमें खड्ग चर्म प्रभृतिमें विभूयित हो कर तोरण-प्राप्तमें सूर्यपुत्र ईमन्ताका सूर्यपुत्राविधानमें पूजन करे । इस समय राजाको होमकुण्डके उत्तरभागमें श्यामचर्म पर बैठ कर पयत्रको देखते रहना चाहिये । पुरोहित इन समय मन्त्र जप पयविष्ट उपस्थापित करे । यदि पयत्र उस पयत्रको वा ले पयवा सूँघ कर झोड़ दे, तो जानना चाहिये कि कार्यकी जान होगी । पौष्टि पुरो-हित सद्गुण्यर, पाम्ब पयवा वज्रुतकी मायाकी घटजनमें दुषो कर गान्तिमन्त्रमें सेचन करे । इस प्रकार गान्ति कार्यके श्रिय हो जाने पर राजा उस घोड़े पर सवार हो उत्तर पूर्वकी पोर सब प्रकारको जाति पोर चतुरङ्गजनके साथ प्रस्थान करे । अत्रिह, पुरोहित पोर पाचार्य-गण सावधान हो कर शमाश्रम देखनेके लिये घोड़ेके पौष्टि पाँष्टि चले ।

इस प्रकार एक कोम तक जानेके बाद राजा पुत्र-दार हो कर नगरमें प्रवेश करे । अनन्तर पाचार्य प्रभृति-के पयोपयुक्त दक्षिणा दे कर विदा करे । इस व्यतोष-में यदि राजाके जातागोच ना श्यामगोच रहे, तो भी यह नीराजना उत्सव रुक नहीं सकता ।

( काष्ठिकायु० पृ २०० )

नीराञ्जन ( सं० पु० ) १ दोषदान, चारती, देवगाकी दीपक दिग्गान्ती विधि । २ इयिपारोंकी समकाने या साक करनेका काम । ३ एक त्योहार जिनमें राजा भोग इयिपारोंकी सजाई कराते थे । यह कार (कातिक)-में होता था जब यात्राको गैदारी होता था ।

नीरन्दु ( सं० पु० ) नि-रन्द, कम्पने-भाये-रिपु, नीरा-निर्ता कम्पने इन्द्रिया सुभगेन शोभते ततो इदि-उच्य । पयगाकोटहच, मिहोरका पिटु ।

नीदच ( सं० ति० ) निवितं रोषते दच-तिर, रभीधि पूर्वाको दीपः । निताम्न दोसिधीय, जिधमें बहुत समक क्षमक हो ।

नीदञ्ज ( सं० पु० स्त्री० ) निर-दञ्ज, भावे जिह, रभीधि पूर्वाको दीपः १ रोगामाष । पर्याय—स्नाप्य, वासं, भनामय, पारोग्य । ( ति० ) निर्माणि रञ्ज, रोगो यन्म । २ पट, वासाह, होमियर । पर्याय—नवाच, वासं, कल्प ।



सुध, बंगाल, मराठत, इन्डोनेस, मणि, सुयोम चादि २१ प्रांतिका पत्तिका। २० लण्डनगुणक, मोलीकट मरेया। २१ लण्डनगुणक। (वि०) २१ नीलवर्णसुग, नीलरंगका, गहने चासामो रंगका।

नील (म० फी०) हलविगेष, एक पोषा जिनसे नील रंग निकाला जाता है। इसका चंगरेली, फारसी और जर्मन नाम इण्डिगो (Indigo) तथा लैटिन नाम इण्डिगोफेरा (Indigo ferra) है। नीलके पोषेकी ३००० लघुभाग जातिमें होती है, पर जिनसे यह रंग निकाला जाता है वे पोषे भारतपर्यंत हैं और ४० तरफ के होते हैं।

जिन नीलके रंग निकाला जाता है उसका वैज्ञानिक नाम Indigofera tinctoria है। इसे संस्कृतमें नीलका, भोटमें वगना, तुर्कीमें फोसना, सिन्धुपदेशमें श्रिन या नीर, बम्बई-पञ्चममें मोला, महाराष्ट्रमें नीलि, गुजरातमें गलि या नोल, तामिलमें नीलम्, तेलगुमें नीलमन्दू, कर्णाटमें नीली, ब्रह्ममें मीनाई, मसघमें नीलम्, पारसमें नीलाज और पारसमें नील कहते हैं।

नीलके चादि इतिहासके विषयमें कुछ भी जाना नहीं जाता। प्राचीन छद्मविद्याविशारदोंका कहना है, कि भारतवर्ष, चलोका और परबेटानमें यह जंगल-सम्पत्ति उपजता था। किन्तु जिन नीलके रंग निकाला जाता है, ( पर्याप्त Indigofera tinctoria ) यह पक्षमें पञ्चन किम देशमें उपजाया गया, उसका कोई निर्दिष्ट प्रमाण नहीं मिलता। कोई कोई कहते हैं, कि सबसे पहले नील गुजरातमें उपजाया जाता था, दूसरी जगह नहीं। डि जाटोनीने लिखा है, कि संस्कृत कविोंने अथ 'नीलि' शब्दका व्यवहार किया है, तब निश्चय है, कि यह भारतवर्षका ही पोषा है। नीलरंग पृथ्वीके पत्तिका स्थानोंमें प्रचलित था। नीलपत्र ( Indigofera tinctoria )के सिया पत्तिका हल्लोमें भी नीलरंग प्रस्तुत होता था। पतपत्र भिन्न भिन्न देशोंमें भिन्न भिन्न प्रकारके पोषोंमें नील रंग निकाला जाता था।

नील शब्दका पर्याप्त लण्डन है और कोई कोई काने पक्षमें भी व्यवहार करते हैं। इसी पर्याप्त संस्कृत कवि-रूप नीलमन्दिता, नीलरंगी, नीलनी चादि पत्तिका शब्दोंका व्यवहार कर गए हैं।

१५वीं शताब्दीमें यह यहाँमें नील पुरोपके देशमें जामि लगा, तबसे यहाँके निवासियोंका ध्यान नीलकी ओर गया। सबसे पहले जामि पत्रवानोंने नीलका काम शुरू किया और कुछ दिनों तक वे नीलको रंगारंगे लिए यूरोप भरमें निपुण समझे जाते थे। नीलके कारण जब यहाँके वस्तुओंके वाणिज्यकी घटा पड़ने लगी, तब फ्रांस, जर्मनी चादि कानून द्वारा वे नीलको प्राप्तकी वन्द कानूनको विषय हुए।

१६०८ ई०में हेनरी हेनरी (Henry IV)ने डिओरा विटथा दिया कि 'जो कोई नील रंगका व्यवहार करेगा, उसे प्राणदण्ड मिलेगा।' जर्मनीमें भी नीलका व्यवहार बन्द कर देनेके लिये गठन कानून पास हुआ था। इस प्रकार यूरोपमें अब जगह बायडको खेती (Wool plantation)की पधनति होती देख मोसकी वन्द कर देनेकी बहुत कुछ चेष्टा की गई थी, किन्तु कुछ भी फल न निकला। छोटे ही दिनोंके पन्दर भारतके नीलरंगने यहाँके विरमचलित शक्त का स्थान दलन कर लिया।

रानी एलिजाबेथके समयमें १५८१ ई०को नील और बायडने प्रस्तुत रंगका समभावमें व्यवहार करनेकी पधनति दी गई। पगतकी कुछ काना करके लिये नीलका ही व्यवहार होने लगा। कुछ दिनों तक पर्याप्त मत् १६६० तक ब्रह्मदेशमें भी नील नीलकी विप कहते रहे जिनसे इसका पक्ष जाना बंद रहा। पीछे २५ सालके समयमें ब्रह्मदेशमें नीलका रंग बगाने-वाले सुकोशमी नीलकर गुलाब गए जिनोंमें नीलका काम मिलाया। इट-इण्डिया-कम्पनीमें अब नीलके कामको ओर ध्यान दिया, तब यह धूरत और बम्बईमें काकी नील शक्ति लगी।

हिन्दी हिन्दीका कहना है, कि बन्दरनगरमें फरासी-नियोंको एक कोठी थी। इसी कोठीमें नीलकी खेतीका सुत्रभूदय हुआ था, किन्तु इसमें सती सपति नहीं हुई। पीछे जब इट-इण्डिया-कम्पनीमें देना कि नीलके लिये लाभ और जिन उपनिवेशोंकी का बाट नीलका पढ़ा है, तब यह ब्रह्मदेशमें नीलके पत्तिका लिये यथेष्ट शक्ति प्रदान करने लगी।

इस समय धर्मरिक्ताने यूरोपीय अधिकारिणों वृद्धान-  
के मानास्थानों में आ कर कोठियाँ खोलीं । धीरे धीरे  
भारतवर्ष में ऐसा उलट्टट नील उत्पन्न होने लगा कि वह  
फ्रांस और स्पेनको मात कर गया और बहुत चम्के में  
गिना जाने लगा । १७८५ ई० में सबसे पहले यमोर में  
नीलकी खेती शुरू हुई ।

१८२० ई० में भी गुजरात में नील प्रस्तुत होता था ।  
मगर धीरे धीरे निकट नीलखेतीमें व्यवहृत पुरातन  
पाठादि आज भी देखने में आते हैं ।

प्रथमतः इट-इण्डिया-कम्पनीको छपकोकी दादनी दे  
कर नीलकी खेती करने में सहाय देने लगे । पीछे  
जब उन्होंने देखा कि इसमें बिलक्षण लाभ है तब  
( १८०२ ई० में ) पेशवाको रूपया देना बन्द कर दिया ।  
१८०८ ई० में कम्पनीने नऊद रूपयेसे नील खरीदनेके  
निये एक कोठी खोली । यद्यार्थ में देखा गया कि यूरोप-  
वासीयोंके सहायमें ही पहले पहल इस देशमें नीलकी  
विस्तृत खेतीका प्रारम्भ हुआ है । १८वें शताब्दीके प्रारम्भ-  
में पाद मेर नील २५)से ले कर ५) रु० में विक्रता था ।

१८१० ई० में नीलकी खेतीके लिए जमींदार और  
अधिकारियोंके साथ छपकोका सम्बन्ध समझलजलक और  
विशेष कष्टदायक हो पड़ा । धनेक स्थानों में जमींदार  
सोग साहबोंको पक्षनिकी शक्त पर जमीन बन्दोबस्त  
देने लगे । वे फिर उस जमीनको रैयतके साथ  
बन्दोबस्त करने लगे । किन्तु प्रत्येक रैयतको ही अपनी  
जमीनमें नील उपजाना पड़ना था । कधी तो स्थानीय  
जमींदार प्रजा द्वारा नीलकी खेती करा लेते थे । नाई-  
मकेने इस विषयमें एक प्रबन्ध लिखा जिसमें उन्होंने  
कहा, है कि नीलकी खेतीके लिए प्रजाके प्रति घट्ट  
धत्याचार होता था । प्रजाको एक तरह जमींदारके  
कीतदास कहनेमें भी कोई शक्य कि नहीं । उनका यह  
प्रबन्ध उस समयकी गौहनीय व्यवस्था में विशेष कल-  
दायक हुआ था ।

इस और ध्यान देना पायशुल्क समझ कर १८६०  
ई०की ८वीं धाराके अनुसार कुछ कर्मचारी नियुक्त  
किये गए । वे सोग मन्दासत्यका अनुसन्धान कर गव-  
र्नेमण्टको सूबर देने लगे । उक्त धारिके अनुसार ठेकेदार

ठेकेके अनुसार काय्य करनेकी बाध्य हुए, किन्तु जहाँ  
हल बन और बीगलमें काम लिया जाता था, वहाँ इस  
ठेकेके नियमावुमार कीर्दी भी काय्य करनेकी बाध्य नहीं  
था । १८६८ ई० में धाराके अनुसार यह कानून  
तोड़ दिया गया । १९०५-०७ ई० में बिहारमें भी इस  
प्रकारका पन्थाय व्यवहार प्रारम्भ हुआ था, किन्तु  
दुर्भाग्यके समयमें नीलकर माहमोंने प्रजामण्डलके प्रति  
विशेष दया दर्शायी; चतः गवर्नेमण्टने इस विषयमें  
सन्तोष न लिया । केवल इतना ध्यान पवशु रखना  
जाता था कि नियमके विरुद्ध कोई काम करने न पाये ।  
वक्त मान समयमें इस सम्बन्धमें जो गानन प्रचलित  
है, उसका मर्म यह कि जो कोई इसका ठेका लेगा  
वह नियमके अनुसार करनेको बाध्य होगा । नहीं तो  
धारिकके अनुसार उसे क्षतिपूर्णा देना पड़ेगा । यम-  
पूरक कोई किसीमें नीलकी खेती करा नहीं सकता ।

धीरे धीरे नील-व्यवसायियोंकी समिति बँठी  
है । उस समितिमें धनेक नियम बनाए जाते हैं । उसी  
नियमके अनुसार ये कार्य करते तथा मान कोठीके  
काय्य सम्पन्न करते हैं । गवर्नेमण्टने जो नील परगं कर  
छठा दिया है, उसमें दिनों दिन इस व्यवसायकी उपति  
होती देखी जाती है ।

१८७५ ई० ५ पल्लु सरके पहले नीलके विदेश भ्रान्त-  
में मन पीछे १) रु० कर देना पड़ता था । किन्तु उस  
समयमें नील प्रस्तुत करनेमें मन पीछे ३) रु० और नील-  
की पक्षियों पर एक टन ( २० मन् ८ मेर )-के ऊपर  
होने पर भी तीन रुपये लगने लगे । धीरे धीरे ८ मर  
कर छठा दिए गए हैं ।

वृद्धानमें नीलकी खेती धीरे धीरे समरिदा और  
वेटरण्टीम् आदि स्थानों में फैल गई । जट मन्दासके  
पधियासियोंका ध्यान उस और गया, तब वे भी बहुत  
उद्यमपूर्वक इसको खेती करने लगे । तिरहुतमें भा इसकी  
खेती होती है ।

नीलसे होती—भिष भिष स्थानों में नीलकी खेती  
भिष भिष कस्तुषोंमें और भिष भिष रीतिमें होती है ।  
मि० हवनू एम रोडमें यमने नीलकी खेतीकी व्यवसाय  
और सन्ततिविषयक पुस्तकमें लिखा है, कि सन्त-विषार



वादि लय स्थानों में नीचको खिनीमें बहुत परिश्रम लगता है। यहाँ शब्दका लोग जमीनकी पक्षमें पच्छी तरह घुटानेमें कोइते हैं, पीछे सममें नीचका चीज भी कर पाट खाननेके बाद चीजी देते हैं। चीको देते पर भी यदि टेना रफ़ जाता है, ता उसे छायने कोइते थयया थानह-थानिका मिथ कर सुदामे पीटतो-हैं।

नित्य बहानमें जमीन प्रायः मनुद्रेमें बहुत कम जर्धी है। इ : कारण जबकि समय तब हटि घोर बहूमें हूय जाती है। शरत्कालमें प्रायः पर जन सुचने लगता है। इमी समय इन देगमें नीचका बीया बोया जाता है। थतपक्ष यहाँ उत्तर-विहार वादि स्थानों के जेमा विमिय परिश्रम भरता नहीं पड़ता। किन्तु जहाँको जमीन थयिजाऊन जं चां है, यहाँ खेत जोत कर थंया बोया जाता है मशो, किंठिन उत्तर-विहारके जेमा खुदानमें कोइ कर वा टेने फाड़ कर नहीं। यहाँ विमिय कर का निःसहोनेमें ही वाज-थपन होता है।

उत्तर-विहारमें थयं भरमें दो बार बीया बोया जाता है। एक भाद्रमासमें हटिके समय जिसे चायादोमोल कहते हैं। चायादोमोलका भरोमा बहुत कम रहता है। कारण काफो तीरमें थुय घोर पानी नहीं मिलता जि-मे थंया बरबाद हो जाता है। दूसरो बार इनके पुसंगका कोइ निःदंड समय नहीं है थयं भरमें प्रायः ज्मा समय बोया जा सकता है। यहाँ कहीं तो फलन लग हो मशामे तक खेतमें रहता है घोर कहीं पठारक मशोमें तक। जहाँ थोथि बहुत दिना तक खेतमें रहते है ता उनमें रई बार काट कर पत्तियां वादि भी जाना है। पर थय कमथका बहुत दिना तक खेतमें रहनेका चाय उठतो जाता है। उत्तर-विहारमें मोल कागुन-पेतके मशामें बोया जाता है। शरमोमें तो फलनकी बाढ़ रकी रहता है पर पानी बहुत ही शोरके साथ टहलियां पानी मिलनता घोर बढ़ती है। पनः चायादुमें पचना कम हो जाता है घोर उत्तरिणः वादि कारणसे मेल हो जाती तथा खेतमें सूटियां रफ़ जाने है। फलन वाटमें भाद्र तिर दिन जोत पठसा जाता है निममें पकालका पन जल्दी तरह मोचक है घोर पाटिका तिर बहु कर पानी कम हो जाती है। दूसरो बटाई तिर

कारमें होती है। कहीं कहीं सिमा भी देखा जाता है कि जब चैत-त्रेमासमें कुछ भी पानी नहीं पड़ता, तब लयकणय थंमके डंडमें एक तरफ़ जनपूय बाइटी घोर दूसरो तरफ़ कोइ भारो चीज सटका कर कंधे पर चढ़ा लिते घोर खेतमें जाते है। जिन खेतमें पानी देनेको प्रायशकता देतेन, उन खेतको पानीमें भीष देते हैं। कहीं कहीं थमहूके येसीमें पानी भर कर पैनको गंड पर लाद देते घोर खेत में जा कर हटिका प्रभाव पुग करते हैं। जो थमो शब्दथ है, वे कहीं कुपां थोट परको काम चला लेते हैं। कारण चैतमासमें यदि हंड विनकुल न हो, तो जमीन फट जानेको सम्भावना रहता है। सिमा छानेमें जोज गट हो जाने है घोर किमो तरफ़ यदि थोथे पुग भी थंय, तो पीछे वे तिर-शन ही जाते हैं। जब तक हटि नहीं होतो तब तक वे इमी प्रकार खेतको सींचने रहते हैं।

नित्यबहानमें मोल मय जगह कातिः समासमें दुना भातः है मशो, पर रफ़को कटार मिथ मिथ समयमें होता है। एक प्रकारका सिमा मोल है, जो चायादु, याथय घोर ज्मा कमा भाद्र मासमें भी काटा जाता है। यह शरतीय मोल पाठ नाम तक प्रमोसमें रहता है। बटाईके समय पहले नित्यस्थानका मोल काटा जाता है। कारण यादुका डर बना रहता है। काटनेके बाद थोथीको चंठियामें सांभते घोर बेलको गाड़ी पर लाद कर बीजेमें पड़वा देते हैं।

बहान छोड़ कर भारतयपके थय्यास्थ स्थानोंमें भी थयिउ परिमाणमें मोल लयष होना है। पुस मय स्थानोंमें जिन प्रचानाथे जोमका खेती होती है, वह उपरि-उक्त प्रचानाथे विमोय विमिय नहीं है। पर स्थानविशेषमें विमिय समयमें जोजयगल घोर कटार होती है। सुनपुर लयकणय थंमके समय भांभते प्राय प्राय थयं पनाथ भी उपजाते है। नित्यबहानमें कातिःमासमें मोलके प्राय शरमो कोइ जाता है। बयईपदेसमें मोलके प्राय रई, कंगोदागा, पादिको खेती करते हैं।

प्रत्येक थोथिन धारिभर मोलका बीया लगता है। किंठिन पाठको विपटथे जाना जाता है, कि बहानमें प्रति थोथे प्रायः १५ इ०का मोल लगता है। मोलका

धर्य प्रतिद्वन्दी पाट है। पहले जिन सब जमोनमें नील होता था उसके अधिकारी स्थानमें चमी पाट होने लगा है। विदेगकी रफ्तानो वसुधामें ये ही दो सर्वप्रधान हैं। नीलको खेतीमें सुविधा यह है, कि रुपये पैगगी मिलते हैं।

चासाम पौर ब्रह्मदेगमें भी नील उपजता है। पहले ब्रह्मदेगमें कोठीकी निकटस्थ जमोनके उत्तोर्यागमें प्रजा याध्य हो कर नील उपजानी थी। केवल ब्रह्मालमें नहीं, बल्कि तमाम भारतवर्षमें नीलकी खेतीमें प्रजाकी चधीम कष्ट भुगतना पड़ता था। लेकिन अब वं मा नहीं है, नील उपजाना या नहीं उपजाना प्रजाकी दृष्टि पर है।

मन्द्राजके मध्य नैलूर पौर कड़ापा जिना नीलका प्रधान स्थान है। इस पत्तनमें कुछ विभिन्न उपायमें नील उपजाया जाता है। यहाँ इसकी दो प्रकारकी खेती होती है, प्रथम 'प्रोमिन्टुम' पौर द्वितीय वर्षातः। पहली प्रणालीमें जमोनमें थोड़ा पानी पड़ते ही खेत कोतने काबिल हो जाता है और तब सार दे कर चैत बँसावमें बीया बोते हैं। इस प्रणालीमें वृष्टिके जलके ऊपर पूरा भरोसा करना पड़ता है। द्वितीय वर्षातः पाट्र प्रणालीमें वृष्टिके जलकी अपेक्षा नहीं करनी होती। पोवर चयवा पौर जलायकके निकट बीया बोया जाता है। उस जमोनमें ताजाब चादिसे जल सोचनेको जरूरत नहीं पड़ती। इस प्रणालीमें जमोन भी काम जाती जाती है। लेकिन मार हर हानतमें दिया जाता है। कहीं कहीं खेतसे उर्वरा बनानेके लिये भँड़े तीन चार दिन तक खेतमें छोड़ दिये जाते हैं। इनके मल-मूत्रादिसे जमोनको उर्वरताशक्ति बढ़ती है। ३४ दिन बाद ही बीज पंक्जुरना शुरू कर देता है। यदि कुछ बिसम्ब हो जाय, तो एक बार जल सोचनेसे निघय ही पंक्जुर निकल पायेगा। टहलियाँ निकल जानेसे बाद प्रायः पात दिन तक जल देना पड़ता है। नील मासके बाद इसकी पहली कटाई पौर फिर तीन मासके बाद दूसरी कटाई होती है।

नीलसे बीज उगानेके दो उपाय हैं। कटाईके बाद दितमें जहाँ नहीं जो दो चार पोषे रह जाते हैं, उसकी

कुछ काल रचा करे। पीछे फल लगने पर उसे म'यद करके दूसरे वर्षके लिये रख छोड़े। ये बीज सर्वात्तम होते हैं पौर बोए जानेके तीन चार दिन बाद ही सबके सब उग पाते हैं, एक भी नष्ट नहीं होता। पूर्व समयमें ब्रह्माल पादि देगमें इस प्रालिपे उक्त बीज भिजे जाते थे। ब्रह्मालके कोटचांदपुरमें एक प्रकारका बीज उत्पन्न होता है जिसे 'देगी' कहते हैं। उच्च स्थानमें जहाँ प्रायः चार खेत जोत कर नील बोया जाता है, वहाँ इस देगी बीजकी जरूरत पड़ती है। किन्तु देगी बीजमें जो पोषे उत्पन्न होते हैं, उनकी कटाई देगीमें होती है। यगौर, पूर्णियाँमें देगी बीजमें जो पोषे, जगते वं भी विनम्यमें परिपक्व होते हैं। किन्तु पटने पौर कानपुरमें बीजमें उत्पन्न पोषे कुछ पड़ने ही कष्ट जाते हैं। मन्द्राजी बीजमें तो पौर भी ग्रीष्म नील उत्पन्न होता है। किन्तु यह उतना सुविधानजनक नहीं है। उसका कारण यह है, कि नदीका जल अब तक परिष्कार नहीं हो जाता तब तक कोठीका काम शुरू नहीं होता है। किन्तु जिन समय मन्द्राजी बीजका नील होता है उस समय नदी धालुकामय रहती है। नीलबीजके मृत्पटो कुछ स्थिरता नहीं है। प्रति मनका टाम ४५में ले कर ४०० चानीस रुपये तक है। गया पौर उसके निकट-वर्ती स्थानोंमें प्रति बीचे ६० सेर बीया बोया जाता है। जो सब नीलके पोषे सजेज नहीं होते, उन्हें बीये-के लिये रख छोड़ने हैं। इस प्रकारके पोषेमें एकड़ पीछे प्रायः ६ मन बीज उत्पन्न होता है।

यद्यपि नीलकी खेती बहुत बृहत्तममें पौर कम परि-यममें होती है, तो भी इसमें कभी कभी यदृष्ट विप्र पड़ जाता है—(१) वर्षाव लघुं ह मासमें पनाउष्टि होने पर उनके समय पत्तियाँ झुलम जाती हैं। (२) कब भी पोषे परिष्क हो जाते, तब उनमें एक दृष्ट सभ्या मजदब'का कीड़ा लगता है जो पोषेका यदृष्ट मु-मान करता है। इस कीड़ेके उत्पन्न होनेसे ही समझ लेना चाहिए कि नील काटनेका उपयुक्त समय था गया। किन्तु २४ दिन यदि काटनेमें विनम्य हो जाय, तो कीड़े पत्तियोंकी विनकुल काट गिराते हैं। (३) १५५ २ दृष्ट सभ्या एक प्रकारका कीड़ा मानके पोषेमें देवा गया

३। हमो कसो वसो मोहन या कासी है, कि येनका येन कल कोटोमि हलकोम हो प्राप्ता है। ( ४ ) हटि थोर गिनाहटिमे तथा कटाईके बाद पोषोके जनमे भिगा जानेमे पत्तिवा बरबाद हो जाती है जिसमे सुन्दर रंग नहो भगना। ( ५ ) पतिहटि, पनाहटि दोनो हो रमके पतिकर है। ( ६ ) पोषके मनेत्र रहने पर भी यदि ये बहुत दिना तक येनमे छोड़ दिये जाय, तो हटि पादिमे नष्ट हो जानेकी विषय सम्भावना रहती है।

युक्तदिगमें तथा पयोध्याके गहलो नामक स्थानमें एक प्रकाशका जोड़ा उत्पन्न होता है जो नोनके पोषोका परम शय है। कसो कसो इतने जोरमे क्या बकता है, कि पोषोके विमकुल डंठल टूट पाते है, एक भी पत्ता रहने नहो पाता। फलतः हममे रंग निकाला नहो जा सकता। मन्द्रागमें पञ्चान, गोङ्गोपुङ्गु थोर अग्वाणी-पुङ्गु इत्यादि कोङ्गोमि पोषोको विनिय पति होती है। बुद्धिगानू नामक जाट रमे ८ इंच तकके पद्मुरकी नष्ट कर डालता है। इस पयव्यामें यदि ये सब जोट देखि जाय, तो समझना चाहिए कि इस मान मोन इतना हो तक गीय है। मिरेन माडव (E. J. Sewell) ने निष्ठा है, कि पद्मुर निकल जानेके दो महीनेके पन्डर बुद्धि" थो पागुरमण्डल-पुडिगुगु नामक दो प्रकारका उत्पात होता है। ८५वेमें पत्तियां विमकुल मजिद हो जाती है थो दूधरेमें कानो हो कर प्रमीन पर गिर पड़तो है। मि० कक माडव (C. Kough)ने एक थो मत्तन रोगका उल्लेख किया है। इसमें पत्तियां पर बकता मा टाग पड़ जाता है थोर छोड़े थो दिनाके मध्य पोथे मर जाते है।

मार घडालमें कितनी जमीनेमे कितना मोन उत्पन्न होता था, उसका निरूपण करनेके लिये सबसे पहले डाक्टर एच मोहन ( Dr. H. Mohan ) ने चेता को। इसीमे कर्मचारियोंके विवरणमे सर्वेचना मना था, कि १८००-०८ ई०में प्रायः सात लाख एकड़ जमीनेमें मोन उत्पन्न होता था। फिर १८०८-१२ ई०को उत्पन्न होना जाता है। कि प्रायः तीस लाख एकड़ जमीनेमें मोनहो रोग होना थो। उस वर्षके उपय लाखकी परिभाषा-मंस्थानके माध मुमना करनेमे देया जाता है।

कि १८००-०८ ई०को विहारमें १८१०-१२ एवम् प्रमीनमें मोन उत्पन्नता था थोर प्रत्येक एकड़में २० पोण्ड मोन होता था। फिर निम्न यज्ञानको १४०१४० एकड़ जमीनेमें मोनहो रोगो होतो थी थोर एकड़ पोथे १२ पोण्ड मोन उत्पन्न होता था। १८०४-०५ ई०में विहार थोर निम्न यज्ञानमें किम विभागेमें मोन उत्पन्नता था थो ठोक ठोक मानूम नहो। किन्तु उतमान कल्पनाके विवरणमे जाना जाता है कि उपरि-उक्त कुछ वर्षोंमें क्रमशः १८२२-२५ पोण्ड पर्याय एकड़ पोथे १ पोण्ड मोन उत्पा था। मेकिग डा० मे रनेमे प्रमीनका कैसा परिमाण दिया है, उसमे पथिक परिमित स्थानमें मोनहो रोगो होनी थो। मत्त १८०८ ई०के विवरण पत्रमें मानूम रोगा है, कि भारत भरमें कुल थोदक माध एकड़ जमीनेमें मोनहो रोगो हुई थो थोर १५६४०१२८ पोण्ड मोन विदेगमें मिला जाता था। इस विभागेमे प्रति एकड़ १२१ पोण्ड मोनहो रोगा माहित होता है। किन्तु भारतवर्षके व्यवहारमें लिये २० लाख पोण्ड मोन जरूरत मोनूद रहता था। इसमे यह ज्ञान होता है, कि यद्धेगोंमें एकड़ पोथे १२ पोण्ड थोर विहारमें २० पोण्ड मोन उत्पन्न होता था।

मोतये रंग निकालनेका उपाय।  
मोनका रंग कोटोमि घुगुन होता है। इस कोठीकी जोग कलमान ( Concern ) कहते है। प्रत्येक कोटोमि दस रण्डके पातादि थोर दूधरे दूधरे पायण्ड-कोय दूधदिद तथा कुनो, मन्डू थोर कर्मचारी रहते है। इन सब काम धारियोंके ऊपर एक पञ्चन रहता है। कार्यधारियोंके मुटल, बहुर्यां थोर मन्-कार्यकुगम होना चाययक्त है। विनियमः परिवहार जनका मन्पद रहना पञ्चनका पञ्चन कार्य है। कारन बिना परिवहार कम थोर मोनकोषोके कोठीकी काम चल हो नहो सकता। मोनके रंग दो प्रकारमे निकाला जाता है। एक थो थोर दूधरे रंगो पोथे।

१। इरे पीनेके रंग निकालना।  
मोन घुगुन करनेमें परिवहार जनका मन्पद रहना विनिय चाययक्त है। यही ज्ञान है कि मदी वा घुगुन जनपूर्व लभायके मन्पद थोकी बनारि जाती है।

साधारणतः जलोत्सोदन यन्त्र द्वारा ( pump ) सर्वोच्च पात्रमें भी जल भर कर रख दिया जाता है। टंग हजारा घनफुट जल जिममें समा करने में चहबच्चका रचना निम्नान्त आवश्यक है।

उक्त चहबच्चके चत्तावा छोटे छोटे घोर भी घने चहबच्च रचते हैं। पंगरेजीमें इन चहबच्चोंका भाटम (Vats) कहते हैं। इन सब चहबच्चोंको परस्पर मध्य रखनेके लिए नलकी प्रवृत्त होती है। ये सब भाट पुनः दो यंत्रियोंमें विभक्त हैं, टोपिंभाट (Steeling Vat) और वोटिंभाट (Weating Vat)। बड़े घोर छोटे चहबच्चोंका आकार कीटोंके समान नहीं होता। नोलकी घासटनीके पनुसार विभिन्न कोठोंमें विभिन्न आकारके चहबच्च बने होते हैं। जिन सब कोठियोंमें १२ टोपिंभाट रचते हैं, उनका परिमाण साधारणतः २४ × १८ × ५ फुट होना चाहिए। ये सब चहबच्चों ईंट घोर कीमेण्ट-के बने होते हैं तथा यंत्रियोंमें सजे रहते हैं। इनके सामने महीके नीचे घोर भी कितने प्रयुक्त घोर चहबच्चगमीर चहबच्च रचते जिन्हें वीटिंभाट कहते हैं। टोपिंभाटके नीचे एक छिद्र रहता है। बाहरमें उसमें काठको ठेवो सगे रहती है। उस छिद्रमें नल लगा कर टोपिंभाटमें वीटिंभाटमें जोड़ दिया जाता है। पीछे उस ठेवो की खोल देनेसे टोपिंभाटमें जो कुछ प्रलुन रम रहैगा, यह वीटिंभाटमें चला जायगा। इसी प्रकार वीटिंभाटके ऊपर नीचे भी कितने छिद्र होते जो नलके साथ संलग्न रहते हैं।

टोपिंभाट (घर्वात् भिगोनेका पात्र) किम लिये व्यवहृत होता है, चम्पान्य पात्रोंका विवरण देनेके पहले हमोका संक्षिप्त विवरण देना आवश्यक है। छटे छुप छरे पोषे कोठोंमें कितने मौजूद रहते हैं उन्हें हमी चहबच्चोंमें दशा कर रख दोड़ते हैं चार ऊपरमें पानो भर देने हैं। बारह मोदह घंटे पानीमें पड़े रहनेमें उसका रम पानोमें छतर पाता है घोर पानीवा रंग धानी हो जाता है। पीछे टोपिंभाटकी ठेवी खोल देनेसे यह पानी दूसरी जगहमें घर्वात् वीटिंभाटमें जाता है। इस समय उस तरल पदार्थका रूप देखा कर मज्जमें कह सकते हैं, कि रंग कौसा होगा। यदि यह रस सलत्त भिप

कुछ धीना मानूम पड़े, तो जानना चाहिए कि नोल बहुत संकट होगा। यदि यह मदीरा (Madira) के रंगमा मानूम पड़े, तो सुन्दर रंग; कुछ विद्रव घोर सब जघर्ष मिश्रित तथा चहबच्चानमिश्रित गाटा नीलमा मानूम पड़े, तो मध्यम रंग घोर यदि मनीन मानवण दील पड़े, तो रंग खराब हो गया है, ऐसा जानना चाहिए। वीटिंभाटमें पानिके साथ ही छेद्र दो घंटे तक यह लकड़ीमें डिलाया घोर मया जाता है। मथनेका यह काम कहीं हाथने घोर कहीं मशीनके चक्रमें भी होता है। दो टाइं घंटे तक मये जानिके बाद वर रम पाने गाटा सब जघर्ष, पीछे वैगनिगा घोर पत्रमें पीछे घोर नीलवर्ण-वा देखनेमें लगता है। इस पानोड़न पात्रमें दो क्षिणार्थ निष्पन्न होती है, इसी तरल पदार्थके ऊपर वायुश्रित चम्पजन क्रिया घोर रंग प्रसूनकारी कथाममुहका एकत्र हो कर एक छहटाकार धारण। रासायनिक पण्डितोंका मत है, कि पानोड़ित होनेके पहले जलवत् पदार्थ ठोक नीला (Blue) नहीं रहता वरं उसे मकैद नील या छाइट इण्डियो कहते हैं।

पत्रजन वायुके साथ मिन कर यह नील रंगमें परिणत हो जाता है। पानोड़नक्रिया द्वारा पत्रजन वायुके साथ मिन जाता है, इस कारण चम्पान्य तपायमें पत्रजनके साथ मिश्रित कर नहीं मयनेमें भी काम चल सकता है, मकैद नील पानोमें मल जाता है। लेकिन जब यह पत्रजन वायुके साथ मिन कर (शु) रंगनिगिट नील हो जाता है, तब पानीमें नहीं मयता। मयनेके बाद पानी घिरानेके लिये छोड़ दिया जाता है जिनमें कुछ देरमें साम नीचे बैठ जाता घोर तल ऊपरका पानो नल द्वारा दूसरे चहबच्चोंमें बहा दिया जाता है। यह पानी कभी कभी जमीनमें सारका काम करता है। इन पानीके निष्कन जाने पर यह जमा हुआ नील चान्टीमें भर कर हननीके ऊपर रख दिया जाता है, ऐसा करनेमें उसमें जितना कूड़ा बरकट तथा पतियां रहता, सभी निकल जाते हैं।

पीछे एक नल की वर उमें एक पात्रमें माते है। तब पात्रका नाम है पल्पभाट (Pulp Vat)। उसकी चकृति १४ × १० × ४ फुटकी होती है। उसीके ऊपर वायव्य

रकता है। यह एक जन्मे हुए मील की पुनः माक धामी में  
 गिरा कर उखावते हैं। उबल जाने पर यह बॉमकी  
 फिटिंग में मारें तान कर धोखाए हुए मोटे ऊपर की  
 चट्टी को पर टाल दिया 'जाम' है। आदमी खनैरहा काम  
 करती है। धामी तो नियर कर बर जाता है चोर माक  
 मीन धीरे-धीरे रूपमें मरना रहता है, यह मोना मोन छोटे  
 छोटे छिद्रों में कुछ एक मसू, कम, जिनमें मोना ऊपर  
 पड़ा रहता है, रण कर मूव टाया जाता है जिनमें  
 उपकी मात पाठ पंगुल मोटी तह जम कर जो मारी  
 है। हमके कतरे खाट कर धीरे धीरे गुप्तनेह मिय रण  
 दिए जाते हैं। मूतने पर इन कतरो पर एक पट्टी-मो  
 जम आते है जिन माक कर देने है। ये जो कतरे मील  
 है नाममें बिकने है। इन कतरोके ऊपर कोठोका माता  
 दिया जाता है।

जब कतरे हमी तरह मूव जाते हैं, तब उन्हें एक  
 कोठोमें मजा कर रण देते हैं। इन घरका नाम पॉटि-  
 दम है। यहाँ कतरे या मोनोके ऊपर रंगरी घमांक  
 करके उखल करते हैं। इन घरमें मोनोकी एक दूधरेह  
 ऊपर हम प्रकार मजा कर रणते कि यह दोवार-ना  
 दीग पड़ता है। बाद हमे कम्बल वा भूमिमें टक रणते  
 हैं। घरके दरवाजोके मूव मागधामीमें घंटे रणना  
 पड़ता है। कारण अधिक वायुके सममें मोनो नट हो  
 जानेकी वित्तिय मन्धावना रहती है। प्रायः २५ दिन तक  
 हम प्रकार रणमें मोनको मोधी घमांक हो जाती है  
 पीछे धीरे धीरे मोड़ा मोड़ा करके हमे मोनते है, एक-  
 धारामो मोनमें मोनोके फट जानेको मन्धावना रहती  
 है। पछा कतरेमें मोनकी उखलना पड़ती है।

मोमके कतरेको पच्छी तरह मूतनेमें तोम माग  
 मरते हैं। बाद हमे एक बकामें रण देते हैं। प्रायः  
 एक दिनको प्रमूत मोनोमें यह एकमा भर जाता है।

२। मूव पीछे के विवरण।

हम प्रयोगमें जो मात तैयार होता है, यह उत्तम।  
 पच्छा नहीं होता। तब हममें सुविधा एक घरे है कि  
 कारके बाद जब कच्छा है, तब हममें रंग निहाल  
 मरते है। 'मिच' मोनको केओ मरी है, मूतरेको बेंडो  
 विहाए पर जे कर रंग प्रमूत करते है, ये जो पाटा रण

व्यायका पचलमन करते है। हम प्रयोगमें तबो यह  
 मोक पाट प्रयोगमें केरि विमिय दूधका नहीं है।  
 कट रहता ही है, कि प्रथम पचलमन मोनके पोथीका  
 न मुवा कर मरुनेके लिए रण देते है। पर हममें पोथी  
 को मुवा मते है जिनमें पच्छी भद्र कर गिर पड़ती  
 है। ये मुवी पच्छिया एक सामने बाद मधुचरुमें  
 मोनकर निर घुमावकी ही हो जाती है। पीछे  
 टोपिभाटमें मुवी पच्छिया डाल कर ऊपरसे मुवा  
 चल दे देते हैं। हम प्रयोगमें जमागत विहाति मोर  
 मयते है। बहुत देर तक हमनेके बाद पच्छिया मोने  
 थैठ जाती है। पीछे जल मधुचरुका जो कर पीटि-  
 भाटमें जाता है चोर पूर्य नियममें मोन-रंग प्रमूत किया  
 जाता है।

डाक्टर शर्ट ( Dr. Shortt )-ने रंग निहालनेका  
 हममें भी एक मजबूत उपाय बतलाया है। हम प्रयोगमें  
 येतमें माया हुआ ताजा मोन एकधारकी मादलरमें  
 डाल दिया जा सकता है। पीछे जलमें मिह करके रंग  
 चल जाता है। हम प्रकार मिह करते कतरे हममें कुत  
 रंग वाहर निहाल पाता है। मिह करकेके समय काठके  
 एक घन्टमें पच्छियां जलमें मुवी रणना चाहिये। बीच  
 बीचमें हम पर विमिय ध्यान रहे कि धामी 'हक' उखलना  
 मुद करता है। कारण लघ समय पांच कम कर देनी  
 पड़ेगी। जब हमका मर्ष कुछ साम हो जाय, तब  
 जानना चाहिये कि उखलना मीव हो गया। पीछे हममें  
 काठको पीटिभाटमें डाल कर मयना होता है। हममें  
 सुविधा यही है, कि पीछे जो मयपके पन्धर काप-  
 मयव हो जाता है। पीटिभाटमें हमको पत्त बायकर  
 ( Puff Blower )में ले जाना पड़ता है। यमत्तर पुन  
 प्रयोगमें कि पन्धरार मभी काप कोत है।

मयपति मि. रिघार्ट 'पलकाट'में रंग बजानेका  
 एक नई तरकीब निहाली है। हममें मरुज, मोन चोर  
 मोनकर मोन प्रमूत होता है। मोन पोथीकी ताजी  
 पच्छियांको टोपिभाटमें डाल कर ऊपरसे किसे मसुवा  
 टायाके देते है। पीछे जल पछुनेमें हममें रण निहाल  
 कर जलमें मोना मना देता है। यदि पीन-रिघार्टा प्रमूत  
 करना ही, तो पोथीके पन्दी तरह मरुनेके पहले यह

प्रक्रिया को जानो है और यदि ब्लू-इण्डिगो बनाना है, तो पत्तियों जिनको हो सकेगा, रंग उताना ही अच्छा होगा। बाकी सभी प्रक्रियाएँ पहले ही हैं।

नील प्रसृत करनेमें बहुत खर्च पड़ता है। मेरिक साइबकी रिपोर्ट पढ़नेमें मालूम होता है, कि कोठोके मन पीछे वर्षात् ०२ बोण्ड १० ई बोममें २० द० खर्च होते हैं। यदि नीलका पोषा अच्छा हो और नोसकी दर मध्यम हो, तो मन पीछे ५० से लेकर ०५, १० लाभ होते हैं।

ब्लू-नोस तापके संयोगमें वायुमें मन जाता है। यदि हममें अधिक उष्णता दिया जाय, तो यह उष्णता और धूममय गिवाविगिट हो कर जनने लगता है।

• डिपीमें १०० डिग्री सेण्टिग्रेड तक शुष्क क्लोरिय इसके ऊपर कोई क्रिया नहीं करता। लेकिन यदि यह नील जनने कुछ गोला बना दिया जाय, तो उसमें हमके भीतर क्लोरिय देनेमें पहले यह सल्फ थर्षका ही जाता है, पीछे हरिद्रावर्णका। वर्तमान रासायनिक पण्डितोंने विज्ञानशास्त्रमें नील (Indigo blue)का साहचरितिक विद्युत  $C_8 H_5 NO$  or  $C_{16} H_{10} N_2 O_2$  रखा है। जल, सुरासर, इथर (Ether), स्यूड अरक (Dilute acid), चार (Alkali) इत्यादि द्रव्यों में यह द्रव नहीं होता। गन्धक द्रावक (Sulphuric acid)के साथ द्रव हो कर एक्स्ट्राक्ट चाय इण्डिगो (Extract of Indigo) प्रसृत होता है।

नील द्वारा रंगम, पगम, सुभो कपड़े आदि रंगाए जाते हैं। कपड़े रंगानेके पहले ब्लू-इण्डिगो पर्याप्त नोसगोठोको पन्थाम्य द्रव्योंके साथ मिला कर एक खर्च-बर्षमें धोवते हैं। विभिन्न प्रणालीके विभिन्न द्रव्य मिलाये किया जाता है। किसी प्रणालीमें सूना चार फेरस सल्फेट (Ferrous sulphate  $Fe SO_4$ ) मिलाये किया जाता है। किसी प्रणालीमें कार्बोनेट-चाय पट्टाम (Carbonate of Potash), ब्रान्स (Brans) किं किसी उपायमें चय और कार्बोनेट-चाय मोडा (Carbonet of Soda) इत्यादि व्यवहृत होता है। भारत-वासो साधारणतः निम्नलिखित उपायमें रंग प्रसृत करते हैं। एक बोण्ड नोसका खर्च, तीन बोण्ड चूना और

चार बोण्ड चाय निट चाय-मोडा इन सबको जनमें घोल कर उसके साथ ४ बोम चीनी मिलाते हैं। यदि ०५८ घण्टेके मध्य पचनक्रिया चारभन हो, तो फिर कुछ चीनी और चूना मिलाया पड़ता है। ठण्डे दिनमें पचनका उष्णता देनेमें यह नोन बहुत जगद कार्यायोगी ही जाता है। उचित कर्ष एक प्रणाली ही है चार रंग बनानेको और भी पनेक प्रणालियाँ हैं। इन सब प्रणालीके ब्लू-इण्डिगोसे शुभ इण्डिगो विभिन्न हो जाता है। (इसका रासायनिक विद्युत  $C_{16} NO$  or  $C_{16} H_{10} N_2 O_2$  है।) इस मफेद इण्डिगोमें पन्थजन कर्षक हाइड्रोजन वायुके वरिष्ठाग कोनेमें पुनः ब्लू-इण्डिगो प्रसृत होता है। उस ब्लू-इण्डिगोमें वरिष्ठाग नीलवर्णमें रंगाया जाता है।

पहले जिन कपड़ोको रंगाया होगा, उसे पूर्वात्त प्रणालीके अनुसार प्रसृत रंगके गमनेमें डाल दे। यदि बार बार इसे रङ्गमें डुबोते रहें, किन्तु यह कार्य विवेक साधनाके बिना किया जाता है। क्योंकि सम्पूर्ण रूपमें धात्रु कोनेके पहले यदि यह तरलपदार्थमें बाहर उठाया जाय, तो वायुस्थित चमत्जनके साथ मिलाये हो कर विभिन्न स्थानमें विभिन्न रंग हो जायगा। परन्तु पन्थादि-के सङ्गी तरह मिला हो जाने पर पर्याप्त इसके वर्षागमें मफेद नोसका प्रयोग हो जाने पर उसे निवोदु मने और सुवनेके लिये पन्थत फौला देते हैं। इस समय वायुला चमत्जन (Oxygen) उसमें हाइड्रोजन (Hydrogen) प्रथम करके जन प्रसृत करेगा। यह जन वायु-रूप धारण करके छट्ट जायगा। परन्तु मफेद नोसमें हाइड्रोजनके बाहर ही जाने पर यह ब्लू-नील ही कर वरतण्डके मध्यन्तर प्रयोग करेगा जिनमें कपड़ेका रंग भी चुन जायगा। यदि एक बारमें चागानुवापी रंग न पकड़े, तो फिर उसे डुबो दें। पगमी कपड़े रंगाने में पहले इन्हीं गरम जनमें मिला कर लेते हैं। पीछे पन्थ उर्य जनमें मिलाये कर रंगके वरतनमें डाल देते हैं। रंगानेके पहले गमनेमें रंगके ऊपरका जेल किंक देना पड़ता है। रंगके बनानेमें दोहरे परकमिलाये जनमें (Acidulated water) उसे धो लेना पड़ता है। यदि अधिक पक्का रंग बनानेकी जरूरत हो, तो रंगे फिर

फिट्रवी चयना बाइक्रोमेट चयन पट्टाम (Bichromate of Potash) तथा टार्टरिक एसिड (Tartaric acid) में जलके साथ मिश्र करणा पड़ता है।

इसके पहले कहा जा चुका है, कि नील लोपिके चलाया जायत पादि चम्पान्य तुल्यो में भी इसी प्रकार रंग प्रद्युत होता था। पहले कोलतार (Coal tar) में नील रंग प्रद्युत होता था। मर्यादके नीलमोल (Serium Indigo), इन्डिगो चौर राजपुमानिके यमनीय, परपुरिया, (Fephrasia Purpuria) चौर हिमालयको पहाड़ी कानिया यमपेरी वा तुल्यो (Marsdenia tinctoria) में रंग प्रद्युत करतो थीं। एन्डोयमें (M. Parviflora) चौर चायदेसीय निपाठनिपाठ (Isatis Indigotica) नामक तुल्यो में नील प्रद्युत किया जाता है। इन्डिगो चलाया Gynmema Tingens एवं केशाई (Acacia Bugta) इत्यादि तुल्यो पक्षियों के बड़िया मोलना रंग निकाला जाता था।

भासतपर्वके यमनके चायमें चायके पहले करके कदलीमें कमकटा कुछ चंग जमोदार हो दिया जाता था। मर्याद, चक्रवर्मादमें हो रंग प्रयाको ठठा कर निवसित करा रन्दीयत कर दिया। चक्रवर्माके मर्यादके बाद तथा चंगरेवा पधिकारके पहले कल कर यद्युत करति समय प्रभाके प्रति यद्येष्ट चत्याचार किया जाता चौर कर मममाना मद्युत किया जाता था किमने पना मंग तंग भा रद्वे ही। अब चंगरेवाका पूरा पधिकार भारतवर्ष पर हो गया, तब लक्ष्मि देगा कि हम प्रकारको चर-पड़नका मर्यादा संस्कार होना चावश्यक है चौर जिनमें एक ही चारमें मानिकके निकट चयना पदुं च जाय, एम विषयमें मर्याद रचना चर्चा है। हम चाय पर चर्चाके प्रभाके विषयमें बहुतसे नियम बनाए।

वि० एच० डेवने ब्रह्मको नीलको चेतो तथा वेगोपेन्दीयमर्यादके मर्यादमें लिखा है, कि हम देगम मान-का रोगको मर्यादपुन मोल प्रकारका चंग मर्यादा - जिवाट, कान्याचौर चौर चुमरी। जिवाटमें नीलकर मर्याद चलाया जायतमें नील प्रद्युतति है। चायामोकर निवसित जमान प्रभाके दलकमें रहती थी, प्रभा लयों इन्डिगो नामक तुल्यो चर जमोदारके चर्चा रंग प्रद्युतनी ली।

जिम्बु जमोदार चोपे प्रति निवट करके कुछ भी इन्डि-का टाका नहीं कर सकते हैं। तुल्योमें प्रभा चरनी इन्डिगो चनुमार मोल प्रद्युतनी थी। इस मर्यादके चनु-मार प्रभा जमोदारके किसी चालकमें चाय लयी।

मनुमंजितमें लिखा है, कि मर्यादको मानको चेतो कदापि नहीं चरनी चादिप।

मोमके चोपेके एक प्रकारका तिल निवसित है जो निवसित: चोपेके चारमें जाता है।

मोमका रंग मृगी चौर इनायविक रोगमें प्रद्युत होता है। यम्याकाओमें तथा कन्यामाममें भी रंगका प्रद्युत देया जाता है। रामायनिक प्रक्रियाका नाम मोम-का पदुत अदरत पड़तो है।

चनेक प्रमिद सुशोभय हाटर मोमके चनेक गुण वतला गया है जिसमें कुछ मोमके दिव्य ज्ञान है।

दीर्घमालकायो मर्यादकरोगमें देगाय विद्विगाक मोमप्रकारका मर्यादकरति है। प्रभाके बन्द हो जाने पर मोमको पक्षियोंको पुनटिल देगमें प्रभाय उतर जाता है। यह चरित्र द्रव्यजात निवसितकर, चोलीका चने-मामक, उद्याचाल तथा प्रभाका मर्यादकरा है। पदुथो-के रोगमें मोमका रंग बहुत कायदा मर्याद माना गया है। विषको दूर करकेके विषे कहीं कहीं मोमको मर्यादका प्रयोग भी दिया जाता है। मोमो और मोमिका देवो।

२ प्राप्रकल हम कोमिके देगमें एक तथा पिकु चाया है जिसे मर्यादपर्वमें मोमप्रद्युततनाया है। हम मोम-प्रद्युत हमकिये कहा है कि हमको पक्षियों विमद्युत मोमो चोती है। हम पिकुका पादि चयनितम्याग चर्चा निवा-देग है हमका नाम है मर्यादप्रद्युत (Eucalyptus)। तुल्योमेंके मर्याद विवद्युत जिम चंगके चलायत है, यह भी लयी चंगके चलायत माना गया है। उद्विगादर-में हम चंगको मर्यादामो (Myrica can) कहते हैं। हम मोमप्रद्युतके मर्याद १०० भेद है। यह चंग चर्चा चोती है। यही तब कि चर्चा चर्चा १०० चयन तब चर्चा देगा मर्याद है। हमने बहुत चर्चा चर्चा जयते चर्चा है। चर्चाके एक प्रकारका मर्याद निवसित है जो मर्यादके चनेक जामोंमें चलाया है। हमका चर्चाके एक प्रकारका तिल चलाया है। यह तिल चर्चाके विषे मर्याद-मर्याद है।

इसके पत्र धोरः पुत्र देवनेमें यह ही सुन्दर लगती है। बहान देयमें इसकी वाट बहत जल्द होती है। मोलह पत्रमें यह १० हाथ धोर पचासवर्षमें १३० हाथ बढ़ जाता है। इस समय इसके तनेका घेरा ४० हाथ तक होता है। इस वृक्षमें जो तरबुती आदि बनाये जाते हैं, वे बहुत टिकाऊ होते धोर पत्थाप्य काठको तरह इसमें घुल नहीं लगती इसको लकड़ोको जलानेमें यथेष्ट पटाश (Potash) या चार पाया जाता है। जहां पर मनेरिया ज्वरका प्रादुर्भाव है, वहां इस वृक्षको लगानेमें सुमत है, कि दूषित वायु मंशोधित होती है। इसलिय किमो किमो नी इसका नाम रखा है "स्वरनायक वृक्ष" इसमें मनेरिया नाग कानिका जो युव है, उस विषयमें सचमुच डाक्टर वेष्टलाने पनेक प्रमाण सं'पह कर यह स्मिर क्रिया है, इसको पणियोंको चुपानेमें जो नील निकलता है उसको गन्ध कपूर-घो होती है। यह परक वा टि'धर वृक्षमें भी व्यवहृत हुआ करता है। पञ्जोणे, पञ्जाग्य धोर पन्धके पुरातन रोग, सर्दी, छमि घात आदि नाना रोगों-में इसका व्यवहार होता है। इसकी वायुनिवारण-गति भी विलक्षण है।

इतनी धोर पन्धिरिया आदि देयोंमें मनेरिया ज्वरका विलक्षण प्रादुर्भाव है। वहां जलमें ही पनेक मोलवृक्ष लगाए गए हैं धोर यह देखा गया है, कि इसमें पन्ध भी पच्छे निकलते हैं। जहां धारही माम मनुष्य क्रमव्यवस्थेमें बोहित रहता था, जहां जोड़ा यज्ञत् वृद्ध कर पेट चूटका पाजार धारण करता था, जहां मिश्रणोंको प्रायस्ता दुःसाध्य हो गई थी, वहां प्राज इस मोलवृक्षके युग्मे सुखकाय, सवध धोर पुष्टका जन्म होता है।

नील—धूर्य'स'श्रीय राजा धोरचीलके गुरु। जब धोरचील दानिपालके अधीनर हो कर राज्यधामन करते थे, उस समय नीलने लहो' पेटयावध ब्राह्मणको भूमिदान करने कहा था। लहो'ने उपदेश दिया था, 'यदि तुम अपने पूर्व-पुष्टयोके इच्छाको जानेंकी पागा रघुते हो, तो मरे उपदेशानुसार कार्य करो।' गुरुके कहनेमें राजाने 'परकेशरीवतु'दे' मङ्गलम्' नामक धाम ब्राह्मण-के दान दिया था।

नील—नामोंके एक राजाका नाम। इन्होंने भोजपुराणकी रचना की। जब बौद्ध भोगोंने माजपुराणको उन्नतदि बन्द कर दिए, तब पाकागधे शिवावर्ष्य होने लगा। पन्धमें इन्होंने पन्धदेव नामक किमो ब्राह्मणमें यथ कराया जिनमें शिवावर्ष्य बन्द ही गया।

नील—प्रसिद्धाकी एक बड़ी नदीका नाम। प'गरेजीमें इसे नादन (Nile) कहते हैं। इजिप्ट भरमें यह मध्ने बड़ी नदी है। यह बहर-उन्न-पगविषाद पर्यात् गुग्ग नदी धोर बहर-उन्न-पगवराक पर्यात् नीलनदीमें मिलन कर भूमध्यसागरमें गिरती है। १८४१ ई०में पन्धटः भ्राताधो'ने पविनीनिशके टलिय पचा० ०' ४८ उ० धोर देगा० १४' ३८' पू०में इसका उत्पत्तिस्थान पत्ता-लाया था। किन्तु उनके परवर्ती भ्रमणकारियोंका कहना है, कि लहो'ने नील नदीको उपनदी उमाका नील नाम रखा था। उनके मतानुसार इसका उत्पत्तिस्थान धोर मो टलियमें है। नील नदी, गायेत्रा इष्टमें जन्म ले कर न्य रिया, इनफे, सेण्टी, डमार, बाकी, इबाना, महम आदि देयोंको उर्वरा बनाती है। पाशोयान नामक स्थानमें यह इजिप्टमें गिरती है।

इस स्थानमें क्रमान्वय उत्तारकी धोर पत्था० २४'ने ले कर पत्था० १०' १२' उ० तक प्रवाहित हो कर यह ही गावावीमें विमल कुई है। एक शाब्दिके ऊपर रोमिता मगर बना हुआ है। दूसरी गावा पलेकपन्धिया मगर होना कुई पयिमकी धोर धनी गई है। प्रत्येक शाब्दाहे पृथक् पृथक् मात सुवर्तित हैं। इस नदीमें लः ललप्रधान है जिनमेंसे इजिप्ट धोर म्पु बियाके मीमाका प्रदेशमें पत्था-स्थित प्रपात सबसे प्रधान है। इसका वत्त'मान नाम ए-विरको है। पुरातकमें यह किनो (Philoe) नाममें प्रसिद्ध था।

धोपकाधामने नील नदीका जल बहुत ल'वा चट्ट पाता है। लुनादि धामके पारधमें सबसे पहले कायरो नगरमें ललपृष्टि देकी जाती है। वहां ११३८ ई०के निकट इसकी जलपट्टि नापनेके लिये एक स्तम्भ गड़ा हुआ है जिसे मीनामीटर कहते हैं। वरने ११३८ दिन तक बहुत धीरे धीरे जल चट्टता है, वरने इसकी जल-पट्टि ल'व कष्ट होती है, जल लहो' पट्टता। इसके कुछ दिन



बाद ही वह बहुत बड़ जालो ही घोर २० पञ्चा ३०  
 मिताक्षरके मन्व जन्तुवि जाममोमा तक पहुँच कर  
 दख जालो है। वीङ्गे जोरें घोर घटने मगमो है। हम  
 प्रकाश जन्तुविका काय वह है, कि घोषमस्तुमें बहुत  
 यहाँ हीना है घोर यहाँका जल नील मदी ही कर समुद्र  
 में गिरता है। नील मदीको जिन माग्नादे ऊपर रोमिटा-  
 नगर बना हुआ है, उसका विस्तार ६५० फुट घोर जिन  
 पर क्रिमिपटा नगर है उसका विस्तार १०० फुटमें पश्चिम  
 नहीं है। नील मदी घोर काययोगामके बांधके मन्व एक  
 मन्वय स्नाथ मग्ना हुआ है। यहाँकाममें जल अतना  
 ऊपर उठता है, हमको जहाँसे भी ठोक उसको छो कर  
 दी जाती है। हम स्नाथको पदमके पथथा हुमारो  
 कहते हैं। अतमाभाय हमने नीलका जल माया नरने  
 है। अब जल तोर सेममें ज्वाहमें प्रवेग करता है, तब  
 वह स्नाथ खोलके बह जाता है। प्रवाद है, कि दक्षिणके  
 ओग प्राचीनकाममें खोलका वेग रोकनेके लिए प्रतिवर्ष  
 कुमारोका बलिदान देते थे।

नीलक ( म० लो० ) नीलनेक कायें कदा । १ कायसवय ।  
 २ यहाँ खोद, बीदरी मोदा । ३ पञ्चमत्त, विद्यामाल ।  
 ४ मटर । ५ भद्रातक, भिन्नावा । ६ कृष्णमारथ्य । ७  
 मन्मथुदा । ८ नीलम यथैक कायति-क-ज । ( पु० )  
 ८ भयम, भीरा । ९ नीलमयितमें पम्पक राधिका एक  
 मीद ।

नीलकण ( म० पु० ) १ नीलमका एक टुकड़ा । २  
 लोहा पर मोटे हुए मोटेका हिन्दु ।  
 नीलकणा ( म० लो० ) लणुमोरा, काणार्जोरा ।  
 नीलकण्ड ( म० पु० ) पातक पत्ती ।  
 नीलकण्ड ( म० पु० ) नील नीलकणः कर्त्तुं यत्न । १  
 गिय । नीलकण्ड नाम पदुमिका कारक—

पदुमोपनिषद् बाद भी देवतापानि समुद्र मयता  
 हीना नहीं, बल्कि वे घोर प्रजापुत्रके मयने लगे। हम  
 भाग्य मन्वय पत्तिका तरह जन्तुविकाको घाटन करता  
 हुआ काण्डकट विद जन्वय हुआ। तबको मन्मथुदा  
 की तिमोक्षित ओग यथैक ही पड़े । तब प्रजापति  
 पदुमोपनि मन्मथुदा मन्मथुदा मन्मथुदा तब काण्डकट  
 (मन्मथुदा) पदुमि कर्त्तुं यत्न कर (७८) जिनमें मन्मथुदा

बहुत बड़ काला बड़ पयो। एते मन्मथुदे दिवकी नील-  
 कण्ड नामके प्रतिवर्ष ( मन्मथुदा १०० म० )

हमका विषय पुत्रात्मने हम प्रकाश किया है,—पुत्रा-  
 काममें देव घोर देवताके जोन समुद्र मन्मथुदा  
 या। हम समुद्रमें देवमय समताकोन घोर मन्मथुदा  
 कर निताका खोबरत हो गये थे। यहाँ तक कि हमका  
 यगंराण्य भी मन्मथुदाके हाथ आने आने पर हो गया  
 था। तब मन्मथुदाका लयाग मोचनेके लिये एतेहीमें  
 मन्मथुदाके लयाग भाग पर एक विराट् मग्ना की। तब  
 मग्नामें समुद्र मन्मथुदे देवता(घो)में कलौ विष्णु, के माव  
 परामर्ग करनेको कहा। मन्मथुदे पदुमोपनि मन्मथुदा  
 यथाकुल हो कर विष्णुको मावमें पहुँचे। विष्णुने  
 देवता(घो)में एतेही यथा(घो)के प्रतिष्ठा की घोर समने  
 पदुमि देवताके साध मन्मथुदाका यहके समुद्र मयने-  
 देा कहा। मन्मथुदाके समता मन्मथुदाके घोर मन्मथुदा  
 यापुत्रि मन्मथुदाके यथाव मये। विष्णुने यह भी कहा  
 या, "समुद्रमयन दास मी पदुमि लयाग होना तब  
 मन्मथुदा के पदुमि तुम मोग पदुमि मन्मथुदा । तब  
 तब देवतामय समुद्र मयनेमें मन्मथुदा नहीं देंगे, तब तक  
 मदा नहीं जा सकेगा। क्योंकि वे मोग तुम मन्मथुदा  
 हम घोर परामर्गमें कलौ बड़े हुए है।"

देवताका बन्द विष्णुके पदुमोपनि मन्मथुदाके  
 लिय देवताका मन्मथुदे पाव मय। मन्मथुदे लयाग मन्मथुदा  
 मन्मथुदे किया, मन्मथुदाके भी मन्मथुदाके लयाग  
 याहा। तब मन्मथुदे पदुमि मन्मथुदा देना खोकार किया,  
 तब देवताके मन्मथुदाके माव मन्मथुदाके दुग्-समुद्र  
 मयनेका तोरार हो गये।

विष्णुके पदुमोपनि मन्मथुदाके दुग् समुद्रके ऊपर घोष-  
 मन्मथुदाके माव पादि मन्मथुदाके कर मन्मथुदाके घोर  
 यापुत्रिको मन्मथुदाके दासो पदुमि समुद्र मयनया मन्मथुदा  
 कर दिया। किन्तु मन्मथुदाके समुद्रके ऊपर मन्मथुदा-  
 पदुमि बहता मोमहो जा, मन्मथुदाके लोहाके घोर मन्मथुदा  
 काला या जिनमें समुद्र मयनेमें कलौ पदुमि मन्मथुदाके लोहा

७ मन्मथुदाके बड़े देवताके भी मन्मथुदाके माव मन्मथुदा  
 मन्मथुदाके मन्मथुदाके है।

घी। यह देख कर विष्णु ने उसी समय कूर्म रूप धारण कर मन्दरपर्वतके प्रथमी पीठ पर ले लिया। योद्धे देव और दैत्यगण धामन्दपर्वक समुद्र मंथने लगे।

समुद्र मंथने मंथते वन घोषधर्को मत्ता घोमि, जी मघनेके पहले समुद्रके ऊपर फीको गई घो, एक प्रकारका विष० उत्पन्न हुआ जी समुद्रके ऊपर रहने लगा। उसको भयानक गन्ध और तेजो कितने देव और दैत्य स्युको गोद पर सो रहे। यह व्यावार देख कर स्युके भयने लगे, मर्त्य और पातानवासी सबके सच सम पतित-पावन स्युस्त्रय महादेवकी शरणमें पहुँचे। शरणागतपानक आशुतोष प्राचिन्यांके लोभ दूर करनेके लिए उस भयानक विषको पी गए। जो पनादि और पनन्त हैं, अजर और अमर हैं, अजय और अजीय हैं, सामान्य विषमें उनका कोई पनित होनेको सभावना न थी। पर वे सर्वोपधिनित्या भी उस भयानक विषका बोध-धारण करनेमें विलक्षण समर्थ न हुए। उस भयानक-विषके परिपक्व नहीं होनेसे वे चल्ता पन्तर्दाह अनुभव करने लगे। पन्तमें अर्धगामी हो कर उस विषने उनका गला नोसर्गमें परिणत कर दिया। इसी कारण महा-देव नीलकण्ठ नामसे प्रसिद्ध हुए। २ मयूर, मोर। ३ पीतवार, पियासास। ४ दात्यह। ५ घामघटक, गौरा-पत्नी। ६के नरके कण्ठपर काशा दाग होता है, इसीसे इसे नीलकण्ठ कहते हैं। ६ पलिविषय, एक विहिया जो विष्णुके लगभग लंबे होती है। इसका कण्ठ और उभे नीले होते हैं। शेष शरीरका रंग कृष्ण लताई लिए बादामी होता है। चौच कृष्ण मोटी होती है। यह कोड़े मकोड़े खा कर जाता है, इसीसे वर्षा और शरत्कृतमें चहता हुआ पक्षित दिखाने पड़ता है। विजयादशमीके दिन इसका दर्शन बहुत शुभ माना जाता है। जब इसका दर्शन हो, तब भीसे लिखे मन्थने पथाम करना चाहिए। मन्थ—

“नीलपीठ शुभपीठ सर्वकामजनकम् ।  
शुभिशामवलीर्लोहि ऋषीरु भोरुते ह”

“सं भोगयुक्ता सुविपुत्रकण्ठशररथामेति चित्तोद्गमेन ।  
सं दसते प्राप्ति निर्गतायां ह” मत्तायर्धमयो नमस्ते ,”  
( शिवियर )

यदि अज, गो, गज, बाजि वा महोरग इनमेंसे किसी एकको पीठ पर नीलकण्ठका दर्शन करे, तो राज्यनाम और कुलग होता है। भद्रम, चर्य, कंग, लख, रोम, और तुष पर खड़ा हो कर देखनेसे दुःख प्राप्त होता है। यदि अशम अश्रन (नीलकण्ठ)का दर्शन हो, तो देवता और ब्राह्मणका पूजन तथा दान करे और योद्धे सर्वोपधि जनमें स्थान करे।

श्रीनरकतुमें यह समस्त भारतवर्ष, सिंहनदीय, दक्षिण चीन और उत्तर अफिरामें देखा जाता है। योष्मका मादुर्भाव होनेसे यह हिमालयके उत्तर शीत-प्रधान देशमें भाग जाता है। (स्रो०) ० मूलक, मूलो . ( सि० ) ८ नीलघोषायुक्त, जिसका कण्ठ नीला हो। नीलकण्ठ—नीपालके पन्तर्गत एक तोयस्थान। काट-मण्डसे यहाँ जानेमें लगभग ८ दिन लगते हैं। यह पथा २८° २२' ४०" और देगा ० ८१° ४' ५०"के मध्य पवस्थित है। परिव्राजकगण लुनाई मासमें ले कर पगस्तमान तक इतने दिनाके मघा यहाँ आया करते हैं, दूसरे समय तुयार और हटिके अवधमें यहाँका पाना जाना बंद हो जाता है। यहाँ ८ प्रसवण हैं जिनमेंमें एक उत्प है। सुयंकुण्ड यहमें एक शीतकी दूरी पर है। इसके पान ही एक पहाड़ है जहाँसे कोगिबी नदीकी एक गावा निकली है। स्कन्दपुराणके हिमवत्पृष्ठमें नीलकण्ठ-माहात्म्य वर्णित है।

नीलकण्ठ—१ एक पण्डित। इन्होंने महाबोरपरितका एक टीका और भूमिका लिखी है। इनके पिताका नाम भद्रयोगान और पुत्रका नाम भयभूति था। २ प्रगोष-ग्रतकके रक्षयिता। ३ पाश्र्वावनशोमसुत्रके एक टिप्पणीकारक। ४ कण्ठमण्डपविधानके रक्षयिता। ५ कण्ठपूजाप्रयोगके रक्षयिता। ६ कोकिलादेवोमाहात्म्या-मं पदके प्रवेना। ७ एक प्रसिद्ध नैयायिक। इन्होंने गदाधारोको टीका रची है। कहते हैं, कि पवनचर्षो क्रोड़ इन्हींका बनाया हुआ है। ८ हिमशोषरित नामक संस्कृत चरितके प्रवेना। ९ दावभागह टीकाकार।

१- नागपुत्रयोभाके रचयिता । १। मङ्गलिनिकार-  
 कारिकासप्तमकाण्डे । २। यामाके पञ्चमिह रचयिता ।  
 ३। विराटयोत्पात्तं गेहं पतितः । ४। वेरास्यमनक-  
 नामक एक सुदृग्दर्शन कवये रचयिता । ५। मद्र-  
 गण्डारयोभाके रचयिता । ६। एक प्रसिद्ध वेदाङ्कण ।  
 ७। योनि कन्दर्पोभा नामक एक व्याकरणकी रचना की ।  
 ८। यादवविभक्तं शोकाकार । ९। एक प्रसिद्ध वीरा-  
 निक । १०। योनि वीरवीरानिबन्धमममममम नामक एक  
 सुन्दर पुत्रावली रचना की । ११। बराहू, गामाणकार ।  
 १२। एक विख्यात ग्यानिर्दिष्ट । इनके विताका नाम  
 चरना चोर वितामरका नाम विस्तार वि था । ये चनेक  
 यत्न विभक्त ५५ विभक्तं ये सब प्रधान ५५—ग्रह-  
 प्रथमप्रकरणटीका, गोचरमकरणटीका, ग्रहकोशक, ग्रह-  
 भाष्य, त्रैलोक्यगुणटीका, सुयोगिनी, ज्योतिषकोमुदी,  
 टोडरान, ताजिक, त्रिगिज्यमाभा, देवप्रव्रज, मन्त्र-  
 गोमुदी, मन्त्राल, मकरन्द, सुदर्शनवितामरिका तथा  
 अन्य, सर्वप्रथम, विद्यावमकरणटीका, मन्त्रात्म, नासो-  
 कोशक । २३। रामभाषि पुत्र । योनि कारिकात्मिक  
 विगा है । २४। सुश्रीयोतर्क रचयिता । इनके विताका  
 नाम मद्रभर था । २५। महाभारत चौर देवी भागवतके  
 एक विनयान टीकाकार । दालिचार्यके इनका जग-  
 यान था । इनके विताका नाम इन्द्रनाथ द्वैजक,  
 माताका मन्त्री चौर सुद्धा नाम काशीनाथ तथा  
 गोधर था । ये श्रीमहाभारतव्यमुक्त है । रत्नश्रीके जगद्वरुण  
 दे देवी भागवतकी टीका विनयने मन्त्रा दूय है ।  
 नीलकण्ठक ( सं० पु० ) पट्टकवली, चारक ।  
 नीलकण्ठकविताकी—एक विख्यात हिन्दी कवि । १०वीं  
 शताब्दीके कामपुरा विरसेमें इनका जन्म हुआ था । कहते  
 हैं, कि इनके पिता पतिव्रत एक मन्दिरेमें की देवी-  
 मूर्त्तिके दाम्ने चौर पूजन किया करते थे । पूजने  
 महाशय की कर देवैने एक दिन उन्हें दाम्ने देव चौर  
 मन्दिरेके चार मन्दिरेके देवनाथ की चनेके पुत्रकर्म  
 चक्रवर्तक जन्मका जन्म हुआ । यद्यप्यप्य चनेके चार  
 पुत्र हुए किन्तु के नाम ही विष्णुात्मि, भूषण, मन्तराम  
 चौर महाशय का शोचक था । शेषके चनेके एक  
 इलाकाके चाने की देवै कवि हुए हैं ।

नीलकण्ठकविता—एक विख्यात कविता । ये कव-  
 यामा चन्द्रकौटिलके मन्दीर, चन्द्रकौटिलके देव चौर  
 नामक कौटिलके पुत्र थे । योनि चन्द्रकौटिल-  
 नामक शब्दविशयवत्, विनयव्यवत्, विनयोभाभा यत्न  
 चार कलापयविके चादि यत्न विरति है ।  
 नीलकण्ठक—१ एक विख्यात मन्त्र । योनि चन्द्र-  
 मन्त्र नामक विचरको रचना की । यह मन्त्र महाशयके  
 चारके ममभा जाता है । २ एक मन्त्र कविता ।  
 योनि शक्तिमन्त्र नामक यत्न विरति है । योभाके  
 रत्नका जग यान था । ३। १०२ ई०में ये चन्द्रको मन्त्र  
 हुए । ४ एक प्रसिद्ध नैययिक । इनके विताका नाम  
 रामभर था । ये कौटिल्यनोमके चौर पादिकावम-  
 में इनका जन्म हुआ था । ये मन्त्रके चन्द्र कौटिल्यनाम  
 बना गये है ।  
 नीलकण्ठकविता—१ योभाके नामक यत्नके रचना । २  
 एक प्रसिद्ध हिन्दी कवि । इनका जन्म १५०० ई०में  
 दोपारके चक्रको जिलाकर्तन शोभापुर चाममें हुआ  
 था । ये मन्त्रमायाके भी चन्द्र कवि है ।  
 नीलकण्ठकविता—योनिचन्द्रकौटिल्यो नामक यत्नविचर-  
 कार ।  
 नीलकण्ठक ( सं० पु० ) इन्दुमार-मन्त्रको चौरयथेद,  
 एक शोभय प्रियके यमिका विधि राम मन्त्र है—यथा  
 गन्ध, मोहा, विम, मोहा, पञ्चकाल, दारकोमो, देवक,  
 यादविके, विरागुल, इलायवी, नातके, मोर, दीपक,  
 मिय, हृद्, चारना, बहेहा चौर तावा तथा माग मे कर  
 दुर्गमे पुजने सुभे विनये चौर शब्द चनेके चारको मोमी  
 बनावे । इनके चैवम करनेके काव, मन्त्र, प्रतीक, विचर-  
 चर, रिता, चरको, मोष, पाण्डु, सुजलक, सुद्धम  
 चौर नातराके चादि मूत्र की जने है । यह चौरके चक्रा-  
 ये चादिजग दूरे है । इनके विता महाशयकण्ठक  
 नामक एक सुधरी चौरय भी है ।  
 महाशयकण्ठककी प्रस्तुत यथाभी—विश्विजने  
 मन्त्रिण मोदा है मोभा, मन्त्र है मोभा, मन्त्रिण १५  
 मोभा, यत्न २५ मोभा इन सबके एक भाव विगा कर  
 हुआ। चन्द्रकौटिल, चन्द्रक, चन्द्र, सुन्दरी, मन्-  
 मन्त्र, सुद्ध, नातकाना, नातकाना, इन्द्रक चौर

चीता-इनकी भावना-देवे। पीछे उसमें विकला, विकट, मोया, चीता, इत्यादयो, लक्ष्य, जातिकल प्रयोग का अर्थ ८ तोना मिला कर २ रत्नों परिमाणको गोली बनावे। इनके सेवन करनेसे यातरोग, ४० प्रकारके पित्तरोग और अन्य सभी रोग प्रशमित हो जाते हैं। इनमें यथेष्ट पाहार-समता, कन्दर्प महगन्ध, मेधावी, बलवान्, प्राज्ञ, भोमके समान विक्रम धोर भेदावान होता है। इनके सेवन करनेसे बन्धा भारीके भी मत्तान होते हैं। जबसे दस प्रोषधका सेवन किया जाय, तबसे २१ दिन तक मद्युक्तमें निमिद है।

नीलकण्ठलिङ्गायत्—एक श्रेणिका तन्ति। शीजापुर जिलेके अनेक नगरों धोर यामांसे इनका वास है। ये लोग दो भागमें विभक्त हैं, बिलिजादर धोर पड़सन गिजादर। इन दो सम्प्रदायोंमें पापसमें खानपान धोर विवाह-गादो नहीं चलती। शिष्यक सम्प्रदायको प्रथम सम्प्रदाय पतित समझता है। सुतरां उनके साथ ये खाते पीते तक भी नहीं। लिङ्गायतोंको ३३ उपाधियां हैं। एक उपाधिवान् श्री पुरुषके मध्य विवाह नहीं होता। घरमें बैठ कर घरछा चलते चलाते ये लोग निवीर्य धोर पाण्डु वर्ण हो गये हैं। इनका कद म उतना ऊँचा है धोर न गाटा। इनकी शक्ति बहुत नीचेमें धोर नाक चिपटी तथा लम्बो होती है। शिष्यां घरके बाहर जाती धोर सभी काम काज करते हैं। ये पुरुष भी अपेक्षा बलवान् दोख पड़ते हैं। अत्याय्य दिगोय लिङ्गायतोंका नाईं ये लोग भी पापसमें परिवृद्ध कणाड़ी भावा धीनते हैं। ये लोग मांस मद्यको तो नहीं खाते किन्तु सहसुन व्याज खाते हैं।

पुरुष प्रतिदिन धोर शिष्यां भोजधार धोर उद्वप्रति-धारकी छान करती है। ये लोग तमाङ्क पोने धोर सुरतो खानिके विवाह दूरके किसी मादक द्रव्यका व्यवहार नहीं करते।

ये लोग दाढ़ी नहीं रखते धोर समूचा गिर मुंडा सेते हैं। तथा महागर्द-सा पहनावा पहनते हैं।

निर्गमत् उदरमें शिष्य विहास देखो।

नीलकण्ठमिका ( सं० स्त्री० ) मयूरमिका।

नीलकण्ठमिधापाय—प्राज्ञान्-मोसामाभाष्यके रचयिता।

नीलकण्ठाप ( सं० स्त्री० ) नीलकण्ठः महादेवस्तत्प्रियः पत्नी जयमाना यवः १ रद्राद्यः। नीलकण्ठः वृद्धनक्षत्र्य पत्नियैव घृष्टिषो यण्यः यमाने यच् यमानानाः। ( वि० ) २ वृद्धनक्षत्र्य पत्नियुक्त, शिष्यके वृद्धन वा नीलकण्ठ-गो पात्रिं हो।

नीलकण्ठ ( सं० पु० ) नीलः कण्ठः मूलं यण्यः सक्षिप-कण्ठमेदः।

नीलकण्ठिण्य ( सं० पु० ) १ महाभाजयत, सुन्दर याम। २ नीलवर्णका कण्ठिण्य।

नीलकमल ( सं० स्त्री० ) नीलं कमलं पद्मम्। नीलपद्म। पर्याय—उत्पन्न, नीलपद्मक, नीलपद्म, भीमाल। गुण—भीमल, स्वादु, सुगन्धि, पित्तनाशक, हृदिकर, श्रेष्ठ रसायन, दिग्दाटयंकर धोर केमहितकारक।

नीलकर ( सं० पु० ) वह जो नील प्रदुन करता हो। नील करके अत्याचारके विषयमें दो वृक्ष बाते पढ़ने ही नील गद्यमें कहा जा चुकी है। नील देखो। यहाँ हम विषयका कुछ विस्तारित विवरण देना आवश्यक है। धीरे धीरे नीलकरको मर्यादा बढ़ने लगे। नीलकर माहवने नील उद्वानिके लिए कुछ जमीन पामामोंके हाथ मगा हो धोर कुछ खय करने लगे जो जमीन से खुदसे उपजाते थे उसमें वहाने बहुतसे भूख नियुक्त लिये। जो जमीन रखतके अधीन थे, उसमें वे छपकका पैगगी रूपसे देते धोर उनमें एक पद्मोकार-पत्र हम प्रहार लिखा लेते थे, "इतनी जमीनमें नील छपव कर दूंगा, इमलिए इतने रूपसे पैगगा लेता हूँ। यदि दुरभिमन्त्रि-पूर्वक अत्याचार करे, तो पाप का जो मुक्तमान होगा, उसे मैंने उससाधि कारिण्य पूरा करनेमें बाध्य है।" एक वर्षमें से हर दस वर्ष तक हम पद्मोकार-पत्रनका नियम था। छपकको प्रति घोष ही रूपसे दादनीमें दिवे जाते थे। छपकको जो जमीन उर्वरा यो तथा अच्छी तरह जाती जाती यो उसो जमीनमें काठोके नीलर नील उपजानेके लिए बिना दे देते थे।

जितनी दानो पामामोंके पद्मोकारमें शिष्यो जमीन यो, नीलकरगण उसे दिनहुन मुक्त लहो देते थे। जो कुछ देते थे, उसका भी दस पाँच कोठोके नीलर बहुत कर जाते थे। कसर पामामोंके समुदाय ही नीलकर



घनी आ रही थी। पदान्तर्गम नाश्रिय नहीं होनेसे ही पत्याचार, चामसौमा तक नहीं पहुँचता था, यह बात ठीक नहीं है। पत्यक्त कष्टमे प्रयाहित हो कर ही दरिद्र रूपक विचारपतिके आश्रय देनेको बाधा होते थे।

१८२८ ई०में जब प्रजापति पहली पहलू पाविदनपत्र पेश किया, तब लार्ड वेण्ट्रिक बंहादुरने इसकी यथा-र्थताका निरूपण करनेके लिये सबकी सुनवाई। पीछे पार्लम वाम होनेके बाद उन्होंने वर्त्तमान पावेदनकी आवश्यकताका विचार कर उत्तर दिया था कि, नीलका मूल्य कम हो जानेसे यगोरके मजदूरोंको बड़ा हो कष्ट हुआ है। नील बनानेमें बहुत रुपये खर्च होते हैं। सुतरां हम लोग पहलीकी तरह सब उन (प्रजा)का उपकार नहीं कर सकते तथा इसके पहले उन्होंने जो रुपये कर्ज लिए हैं उन्हें वसूल करनेसे लिये दावा किया जाता है। दादने वसूल करनेके लिये हीन प्रजाके प्रति जो पत्याचार किए गए थे, वह वर्षनातीत है तथा कितने लोगोंके जो गृहादि भस्मीभूत हुए थे, उसको क्षमर नहीं।

दादनपत्रकी नीलकरकी चर्चाभूत रहनेके लिये पनेक प्रकारके पार्लम विधिवह होने लगे। किन्तु दादन-पत्रणकारियोंके कष्टनिवारणके लिये प्रायः कोई विधि विधिवह न हुई। गवर्मेण्टने नियेध कर दिया था, कि हटेनवागी इस देशमें भूमिपति नहीं कर सकते, तो भी ये लपकोंको वगमें खानेके लिये जमींदारोंने पनेक पाम देगीय भूखोंके नाम पर रजारा लेते थे। देगीय जमींदार जब उनकी कामना पूरा न करते थे, तब घोर विवाद उपस्थित हो जाता था। जो दुर्बल जमींदार थे, उन्हें तो वे पयसस कर दानते थे। समय समय पर माहवके कर्मचारिण्य यथायोग्य राज-दण्ड भी पाते थे, तो भी तत्कालीन दण्डविधि पार्लम-के समुदाय पंगरेओके जिम्मा भदान्तके विचाराधीन नहीं रहनेके कारण उन्हें कोई शारीरिक दण्ड नहीं मिलता था। इस कारण वे अपने पमोष्टकी सिद्धि लिये जमींदार तथा प्रजाको व्यतिव्यक्त करनेसे बाज नहीं आते थे। इस प्रकार कितने लपकोंमें तो निषाहित हो कर अपने सामान्य हानि दिने घोर जो कुछ सब

रहि, वे लकठे पटागत हो कर रहने लगे। १८५० ई०में निषाहीविशोदकके समय जब बहुतसे नीलकोंको गवर्मेण्टको घोरने मद्दायक मजिस्ट्रेटकी समता मिली, तब लपकोंका खेग घोर भी बढ़ गया।

दुर्भाग्य लपकोंके लोमनिवारणके लिये देगम्य एक महदय मिगनरियेष्ट घेडा कराने लगे, किन्तु कुछ भो उनका दुःखमोचन न हुआ। नीलकर माहुर तथा पट्टरेज राजपुरुष ये दोनों एक आतिथे थे, एक धर्मके घेतथा पापममें बाह्य-व्यवहार पादाम-प्रदान चलता था, इस कारण पट्टरेज राजपुरुष उन्हें इस काममें मदद पहुँचाते रहते थे। यह सब देख सुन कर इन प्रदेशकी जनताको अच्छो तरह मानस हो गया, कि नील-ध्वषणमें गव-र्मेण्टका विशेष स्वार्थ है। पतः यह निश्चय है कि प्रजा पर दुःखका पहाड़ ही बर्तों न टट पड़े, तो भी गवर्मेण्ट प्रतिजुलके विषय पनुसूल नहीं हो सकती। कालक्रमसे पनेक मनुष्य सुगिचित हुए घोर जिलेके नामा विधानोंमें इस देशके सुविद्य डिप्टी-कमण्डर घोर पुनिसके काय में मिलित तथा धर्मभूक दादोगा निपुण होने लगे। ये लोग गवर्मेण्टका पमिषाय प्रजाकी समझाने लगे जिससे उनके हृदयसे पमूलक संस्कार धोरे धोरे दूर होने लगे। इस समय धामत जिलेके तदानीकान मजिस्ट्रेट पानरेत पास्को इयुम माहव थे। वहाँ जब लपकों घोर नाल-करांमें विवाद पड़ा हुआ, तब उक्त मजिस्ट्रेटने एक पर-वाना निकाला जिसमें लिखा था कि, 'जमीनमें फयस होता प्रजाकी रक्षा पर निर्भर है। इसमें यदि कोई विपद आकेगा, तो यह राजदण्डसे दण्डित होगा।' पहले लपकोंके चित्त-वेधमें पागाका जो पट्टुर लगा था, वह इस परवानेके द्वारा बढ़ गया। १८५८ ई०में भारतके लपकोंकी एक सभा हुई जिसमें यह स्थिर हुआ कि नीलको खेती विमजुल ठडा रो आय। फलतः बहुत सजद ही नीलकर घोर प्रजामें पुनः विवाद उपस्थित हुआ। इस समय उदापेता कदमहृदय ले० वि० पाष्ट माहव बदानके मॅप्टेमेण्ट गवर्मेण्ट थे। उन्होंने नालकरका कष्ट निवारण, नीलकार्यको प्रचलित प्रबालोका तथागु-मभान तथा इस लपकोंकी किमी निद्वेगपानीका निर्हा-रण करनेके लिये १८६० ई०की ११वां विधि प्रजापित



नीलगाया या नीलकण्ठके माहात्म्यका वर्णन है। नीलगङ्गा (स० स्त्री०) नदीभेद, एक नदीका नाम। नीलगङ्गन—पूर्विया जिनके पत्नार्गत धर्मपुर धोर द्वेषने परगनेके मन्त्रास्य एक स्थान। यहाँ नीलकी एक कोठी है।

२ यगोरके पत्नार्गत एक स्थान जो चाँचडासे एक क्रोम दूर भैरवमदीके किनारे समस्थित है। नीलगण्ड (स० पु०) नोली गण्डः। नीलवर्ण गण्ड। नीलगर्भ (स० त्रि०) नीला गर्भ यस्मिन् नीलगण्ड, जिनका विचला भाग नीला हो।

नीलगाय (हि० स्त्री०) मृगजातीय जन्तुविशेष, नीलापन लिए भूरे रंगका एक बड़ा हिरन जो गायके बराबर होता है। इस मृगोके हिन्दूमात्रमें ह्योत्सर्ग-यज्ञमें नीलहृय नामक किसी जन्तुका उत्सर्ग होता था और उसके फल शास्त्रोंमें धनलाए गए हैं। नीलहृय कछनेसे सामान्यतः नीलरंगके साँड़का ही बोध होता है। किन्तु उक्त गुणयुक्त साँड़ एकमेव देवनेमें नहीं पाते, इस कारण प्राचिनिक स्मृतिकारण्य नीलहृय शब्दसे किसी प्रकृत जन्तुका नाम स्वीकार नहीं करते। शक्तिस्त्वमें लिखा है,—

“छोड़ितो मनु वर्णेन मुषे पुच्छे च पाश्र्वः।

इवेत्सुरविषाणामर्षं च नीलहृय उच्यते ॥”

रक्षवर्ण शरीर, सुख और पुच्छ पाण्डुर, सुर धोर मृदु श्रेतवर्ण ऐसे लक्षणक्रान्त जीवका नाम नीलहृय है। उक्त लक्षणके नीलहृयका कोन पद्म नीला होता है, इसका अनुमान नहीं किया जाता। नीलगाय नामक प्रसिद्ध मृगयोषीमुख स्त्री चतुष्टय जन्तु है यह देखनेमें लोहिताम नीलवर्ण-सा होता है और कुछ भय हृय क्षान्तिसे मिलता लुनता है। पत्नी यही नीलगाय पूर्व-तन प्रत्यक्षार वर्णित नीलहृय है, इसमें सन्देह नहीं।

नीलगाय कछनेसे साधारणतः स्त्रीसिद्धमें मृगयोका बोध होता है। यज्ञादिमें छासर्गके लिये हृयका प्रयो-जन होता है, गायका नहीं। इस कारण शास्त्रकारोंमें नीलगायका उत्सर्ग न कर नीलहृयका ही उत्सर्ग दिया है।

यह जन्तु देवनेमें हृय-सा धोर मृग क्षान्तिका होता

है, किन्तु हृयकारसे पाशारादिमें बहुत कर्क पड़ता है। पुरुष जातीय नीलगायकी लम्बाई १५ से ३ फुट धोर ऊँचाई ४५ फुट होती है, सोकिन स्त्रीजाति अपेक्षाकृत कुछ कम। दोनोंका वर्ष श्रेत पत्नरके जैसा, पर नीलरंगके रीएका घपभाग कुछ ताम्रवर्ण युक्त होता है। मृग धोर मद्दाक मृगके जैसा लेकिन बहुत कुछ घोड़ेके सुखसे भी मिलता लुनता है। इसके काम गायके-से धोर दोनों कींग टेढ़े धोर ३ बुहनके पगभग मन्त्रे धीने हैं। नींगकी जड़में घनुष्ठीवधिगिट एक काले बालों का दाग है। इनके दोनों काम काले, मन्त्रा टेढ़ा धोर धागीको धोर झुका हृया तथा हृद होता है। छोटे छोटे कोली बालोंका ऊँसर (पायल) भी होता है। गने ३ नोच बड़े बालोंका एक झोटा गुच्छा सा होता है। देवनेमें यह जन्तु गाय धोर हिरन दोनोंमें मिलता जान पड़ता है। स्तन्यकी अपेक्षा पृष्टदेग कुछ ऊँचा, पत्नी ज्ञाग गर्दभपृष्टके जैसा धोर पुच्छ भो वैसा ही होता है। पृष्टका ऊपरी भाग कुछ काले बालोंमें टन्ना रहता है। धोरके बाल काले धोर धने होते हैं। उदर धोर पृष्टदेग प्रायः सफेद होता है।

यह जन्तु जङ्गलोंमें दल बांध कर चलता है। कामा साम, पाठ या क्रोम एक साथ मिल कर इधर उधर भ्रमण करते हैं। भारतवर्षके मध्यप्रदेशमें सहिसुर तज, पञ्जा। राज्य धोर रामगढ़से से कर हिमानयवर्षतथेणोमी पादभूमि तकके सभी स्थानोंमें इन प्रकारके जन्तु देवने-में पाते हैं। ये घने जङ्गलमें रह नहीं सकते, छोटे छोटे शुष्मविगिट पचवा जनश्रीम मेटालमें विश्रण करते हैं। ये पच्यन्त मत्तक, द्रुतगामी धोर वलित होने हैं। इनकी चाल इतनी तेज होती है, कि द्रुतगामी घोड़े पर सवार हा बहुत देर तक इनका पीछा करने पर भी मजबूतमें ये पकड़े नहीं जा सकते। नीलगाय दामो का मकती है, किन्तु कभी कभी वह पानकडी ही मृगिने पाहमण करती है। पाहमणके पहले यह मामनेके दाना मृत्तोंकी जमीनमें टिक कर एक टकमें देखती धोर जेदे सामनेके जन्तु पर मूख जोरमें भावती है।

यह गाय छोटे छोटे पेड़की पत्तियाँ, घाम धोर ज्वलि-या कर पचना पेट भरती है। यह लंटेनी तरह चाली



की। प्रथमोक्त विषयनिष्पादनकी लिये जितने मजदूर ट्रेड  
ये सब मिल कर यत्न करने लगे और श्रेयोक्त दोनों कार्य-  
के सम्पादनार्थ पांच कमिश्नर (३ नियुक्त हुए। कमिश्नरोंने  
नीलकार्य-प्रणालीमें जितने दोष थे सब लिख कर गव-  
मेंटरके पास भेज दिया। इस पर नीलकर साहब, जिन्हें  
अब पूर्व सी चमता न रहई, प्रजाके विरुद्ध तरह तरहके  
सुकदमे दायर करने लगे। इन सब सुकदमोंमें यद्यपि  
अनेक कृपकोंका सर्वनाश हो गया, तो भी उनको प्रतिष्ठा  
भटल हो रही। अब कोई भी नीलकी खिती करनेकी  
धमतर न हुआ। 'बोर्ड' ही दिनोंमें नीलकरका  
गौभाग्यस्यै भस्त हो गया। उनको जितनी कोठियां  
और भूमिगतियां थी, सब बेच डाली गईं। अब जो इने-  
गिनी नील कर साहब रह गये हैं; उन्हें पूर्वसा प्रभाव  
नहीं है।

नीलकण्ठी (मं० स्त्री०) खनामख्यात लताविशेष,  
कालदाना।

नीलकाण्ठीक (सं० पुं०) महाराजचूत फल, सुन्दर आम।  
नीलकाचीड़व (सं० स्त्री०) काचलवण।

नीलकान्त—खनामख्यात पवित्रविशेष, एक पहाड़ी  
सिद्धिया जो हिमालयके पहाड़में होती है। मसुरीमें  
इसे नीलकान्त और नीलातलमें दिग्दर्शन कहते हैं।  
इसका माथा, कण्ठके नीचेका भाग और छाती काली  
होती है। सिर पर कुछ सफेदी भी और पूँछ नीली  
होती है। कण्ठमें भी कुछ नीलेपनको भ्रूणक रहतो  
है। सोच और दोनों पैर लाल होते हैं। इसकी  
लम्बाई २८ इंच, पूँछकी १८ इंच और डैनेको ८ इंच  
होती है।

हिमालय पर्वतकी गतह-उपत्यकासे लो कर नेपाल  
तक, आसामके नुगापहाड़, श्याम, ब्रह्मदेश, आराकान  
भामी और तैनासिरिम तथा पूर्व बङ्गके पाषाण प्रदेशोंमें  
इस जातिके अनेक पची देखे जाते हैं।

ये प्रायः तीनसे छः तक एक साथ घूमते हैं। माचंसे  
ले कर जुलाई महीनेके अन्दर मादा छुछ पर एक साथ  
तीनसे पाँच अण्डे वारते हैं।

• W. S. Setonkar, President, R. Temple, W. F.  
Ferguson, Rev. J. Sale, Baboo Chandra Nath Cha-  
tteejee.

कोई कोई इमी पचीको नीलकण्ठ कहते हैं,  
लेकिन नीलकण्ठ और नीलकान्त दोनों स्वतन्त्र पची हैं।  
२ विष्णु। ३ मणिमेंट, नीलम।

नीलकान्तशाह—मध्यभारतके नागपुर विभागस्थ चांदपुर  
जिलेके गोंड राजाओंके ग्रेप राजा। ये अत्यन्त निहुर  
और विश्रामघातक थे। इधोसे समो प्रजा इन्हें बुरी  
निगाहमें देखती थी। १७५६ ई०में रघुजो भोन्सलाने  
जप चांदा पर आक्रमण किया, तब किसने भी नील-  
कान्तको तरफसे अस्त्रधारण न किया। सुतरां बिना  
रक्षयातके ही इज्जो इस जिलेके अधोखर हो गए। योद्धे  
उन्होंने नीलकान्तशाहको कैद कर समस्त स्थान अपने  
अधिकारमें कर लिए।

नीलकाण्ठीक (सं० स्त्री०) १ नीलशरीरविशिष्ट, जिसका  
शरीर नीला हो। (पुं०) २ बोद्धदेवताभेद।

नीलकुन्तला (सं० स्त्री०) नीला नीलवर्णा; कुन्तला यस्या।  
। पार्वतीकी एक सखिका नाम।

नीलकण्ठीक (सं० पुं०) नीलकिण्टो, नीली कटसरैया।  
नीलकुसुमा (सं० स्त्री०) नीलवर्णा किण्टो, नीली कट-  
सरैया।

नीलकेशी (सं० स्त्री०) नीलकाण्ठीक, मोनका धोधा।  
नीलकान्ता (सं० स्त्री०) नीलिन नीलवर्णन कान्ता।  
विष्णुकान्ता, कृष्ण अपराजिता।

नीलक्रीड (सं० पुं०) नीलः क्रीडः। नीलवक्र, काला  
बगला, वह बगला जिसका पर कुछ कालापन लिए होता  
है। पर्याय—नीलाङ्ग, दोष योष, अतिजागर।

नीलखात—नेपालके मध्यावर्त्ती एक ज़ुद। इसका दूरपरा  
नाम भोसाई कुण्ड भो है। कहते हैं, कि देवगण जब  
अमृतकी आशासे समुद्र मथने लगे, तब पहले पहल  
विषकी उत्पत्ति हुई। उस विषको शिवजो पी गये और  
घोड़ी देर बाद ही वे यन्त्रणासे अचेत हो रहे। योद्धे  
दुर्गाके मन्त्रबलसे वे होशमें तो पा गए, पर यन्त्रणा पूर्व-  
की बनी रही। अनन्तर ज्वालाके निवारणके लिए निभृत  
तुषाराच्छादित स्थानमें उन्हें निशुनवे आघात किया  
जिससे तीन स्रोत उसी समय निकल पाए। इन तीनों  
स्रोतोंके मिलनेसे एक ज़ुद बन गया। इसी ज़ुदका  
नाम नीलखात है। स्कन्दपुराणके शिवमत्स्यखण्डमें इस

नीलगायास वा नीलकण्ठके भाषात्म्यका यथार्थन है। नीलगङ्गा ( सं० स्त्री० ) नदीभेद, एक नदीका नाम। नीलगङ्गन—पूर्विया जिनके चक्रागत धर्मपुर पौर हवेली परगनेके मध्याक्ष एक स्थान। यहाँ नीलकी एक कोठी है।

२ यगोरके चक्रागत एक स्थान जो बाँचड़ामि एक छोटी घूर भै खनदीके किनारे अवस्थित है।

नीलगणेश ( सं० पु० ) नीला गणेशः। नीलवर्ण गणेश। नीलगर्भ ( सं० त्रि० ) नीलाः गर्भं यस्य। नीलमध्या, जिसका विचना भाग नीला हो।

नीलगाय ( हि० स्त्री० ) ऋज्जातीय जन्तुविशेष, नीला-पन लिए भूरे रंगका एक बड़ा हिरन जो गायके बराबर होता है। इस स्त्रीके हिन्दूगान्धर्वे ह्योस्वर्ग-यज्ञमें नीलहृष नामक किसी जन्तुका चरित्र होता था और उसके फल गान्धर्वे बतनाए गए हैं। नीलहृष कहनेसे सामान्यतः नीलरंगके सड़का ही बोध होता है। किन्तु उक्त गुणयुक्त सड़ा चक्रमर देखनेमें नहीं पाते, इस कारण प्राधुनिक व्यतिकारण्य नीलहृष शब्दके किसी प्रकृत जन्तुका नाम स्वीकार नहीं करते। अति-तत्त्वमें लिखा है,—

"लोहितो यस्तु वर्णं मुखे पुच्छे च पाशरः।

श्वेतसुरविशाम्नां च नीलहृष वच्यते ॥"

रक्तवर्ण शरीर, सुख और पुच्छ पाण्डर, सुर और श्वेत श्वेतवर्ण ऐसे लक्षणाक्रान्त जीवका नाम नीलहृष है। उक्त लक्षणके नीलहृषका कौन पशु नीला होता है, इसका अनुमान नहीं किया जाता। नीलगाय नामक प्रसिद्ध ऋग्यजुर्वेदसुक्त जो चतुःपद जन्तु है यह देखनेमें लोहितताम नीलवर्णसा होता है और कुछ प्रसंग ह्य लक्षितमें मिलता लुजता है। परन्तु यहाँ नीलगाय पूर्व तन पश्यकार वर्णित नीलहृष है, इसमें संदेह नहीं।

नीलगाय कहनेसे साधारणतः स्त्रीलिङ्गमें ऋग्यजुर्वेदका बोध होता है। यथादिमें उत्सर्गके लिये ह्यका प्रयोग होता है, गायका नहीं। इस कारण शास्त्रकारोंमें नीलगायका उल्लेख न कर नीलहृषका ही उल्लेख किया है।

यह जन्तु देखनेमें ह्यसा और ह्य जातिका होता

है, किन्तु ह्यकारके पांशुंरादिमें बहुत फल पड़ता है। पुरुष जातीय नीलगायकी लम्बाई १५ से ७ फुट और ऊँचाई ८५ फुट होती है, लेकिन स्त्रीजाति अपेक्षाकृत कुछ कम। दोनोंका श्वर घंटे पश्यके जेव, पर नीलरंगके रोएँका अद्यभाग कुछ ताम्बरवर्ण युक्त होता है। सुख पौर मत्तक रंगके जैसा लेकिन बहुत कुछ घोड़ेके मुखमें भी मिलता लुजता है। इसके कान गायके-से और दोनों कीं गेटे पौर ७ बुद्धनके लगभग सम्ये होते हैं। मींगकी जड़में चतुष्कोणविगिट एक काने धानी का दाग है। इसके दोनों कान काने, गन्ना टेढ़ा पौर पानीकी ओर झुका हुआ तथा हड़ होता है। छोटे छोटे काने वालोंका ऊँसर (पायल) भी होता है। गन्ना नोचें बड़े बालोंका एक छोटा गुच्छा सा होता है। देखनेमें यह जन्तु गाय पौर हिरन दोनोंमें मिलता जान पड़ता है। क्लृप्तकी अपेक्षा पृष्ठदेग कुछ ऊँचा, पया ह्याग गर्दभपृष्ठके जैसा पौर पुच्छ भी वैसा ही होता है। पृष्ठका ऊपरी भाग कुछ काले बालोंमें टका रहता है। पौरके बाह्य काले पौर घने होते हैं। पृष्ठ पौर अक्षदेग प्रायः सफेद होता है।

यह जन्तु जङ्गलोंमें दान खाँध कर प्रसूता है। कभी कभी साम, पाउ वा बीम एक साथ मिल कर इधर उधर भ्रमण करते हैं। भारतवर्षके मध्यप्रदेशमें महिपुर तक, पश्चात् राज्य पौर रामगढ़में ने कर हिमानयप्रतयेनीकी पाटभूमि तकके सभी स्थानोंमें इस प्रकारके जन्तु देखनेमें पाते हैं। ये जने जङ्गलमें रह नहीं सकते, छोटे छोटे गुह्यविगिट पयसा अनशुन मोठानमें विषाण करने हैं। ये पश्यल मतक, दुर्गामी पौर बलिष्ठ होते हैं। इनकी चाल इतनी तीव्र होती है, कि दुर्गामी घोड़े पर सवार हो बहुत दूर तक इनका पीछा करने पर भी सक्षममें ये पकड़े नहीं जा सकते। नीलगाय जानी जा सकती है, किन्तु कभी कभी यह पालककी ही कीर्तने पाक्षमय करनी है। पालकवचके पक्षमें यह मामनेके दोनों मुठनोंकी अमीनमें टेक कर एक टकमें देखती पौर पीडे मामनेके जन्तु पर खूब खोरमें भरपटी है।

यह गाय छोटे छोटे घेड़की पत्नियाँ, घान पौर जलति प्या कर पयता घट मरती है। यह ऊँटकी तरह पानी

पैर मोड़ कर विश्राम करती है। गायकी तरह पाखंडकी शोर मार रख कर विश्राम नहीं करती। गिकारी चमड़े आदिके लिए इसका गिकार भी करते हैं। इसका चमड़ा बहुत मजबूत शोर पनला होता है। गलिके चमड़ेकी टालें बनती हैं। पालित भवस्थानमें यह माघारण गो-जातिकी तरह गर्भवती होती शोर एक ही समयमें दो शायक जनती है।

ऐतरेयब्राह्मणमें लिखा है, कि ऊपानि जब अपने पिता प्रजापतिके भयसे रक्षवर्ष रोहित ऋगीका रूप धारण किया, तब प्रजापतिने भवानक ऋष्यरूपमें उसका पोछा किया था। देवगण जब इस अत्याचारको रोक न सके, तब अपने अपने विराट्-गुणकी समष्टिमें उन्होंने रुद्रमूर्ति की सृष्टि की। रुद्रदेवने ऋष्यरूपी प्रजापतिको वाणमें भेद कर डाला। ऋष्यर्षि काल (ऋगशिरा पुरुष) रूपमें आकाशमें प्राश्य लिया।

यह ऋष्य किम जातिका ऋग था, उसका प्रभो निर्णय करना बहुत कठिन है। पूर्वकालोन ऋगविशेषका नाम वर्त्तमान समस्त ऋगजातिके पर्यायरूपमें गृहीत हुआ है। ऐतरेयब्राह्मणभाष्यमें सावणचार्यने ऋष्य शब्दसे ऋगविशेषका नाम बतलाया है। तैत्तिरीय ब्राह्मणमें 'गोऋग' शब्दसे गो शोर ऋगके सङ्घ भवानक व्यंशविशेषका अर्थ लगाया है। उक्त दो ऋग ही नीलगाय प्रतीत होते हैं। ऐतरेयब्राह्मणमें प्रजापतिके प्राश्ययोग्य ऋगरूपकी ही प्रति बलिष्ठ, उग्र स्वभावयुक्त तथा द्रुतगामी नीलगाय बतलाया है। शब्दकल्पद्रुममें भी ऋष्यको नीलाङ्गक कह कर उल्लेख किया है।

भाष्यप्रकाशमें लिखा है—

।'शब्धो नीलाङ्गश्चापि गवयो रोहि इत्यपि ।

गवयो मधुगेवत्यः स्तिगोष्णः कृपितः ॥”

इससे यह भी जाना जाता है, कि ऋष्यका दूसरा नाम नीलाङ्ग भी था। अतः यह साक साक प्रमाणित होता है कि ऋष्य जातिका हरिण नीलगायके निवा शोर दूसरा कृक भी नहीं है। इस नीलऋष्य-जातिका हरिण बहुत प्राचोनकालमें हम लोगोंके देशमें प्रचलित था, इसमें तनिक भी संन्देह नहीं। वैदिकक अनुसार नीलगायका मांस मधुर, रस श्लकारक, कण्ठशोध, क्षिप्त तथा कफ शोर पित्तवर्धक होता है।

नीलगाय—जातिविशेष। नीलरंग बनाना ही इनका प्रथम व्यवसाय है। बोजापुर जिलेके नाना स्थानोंमें इस जातिके लोग रहते हैं। इन्दि शोर बोजापुरमें इनका प्रधान अड्डा है। माघारणतः शहर शोर उन्नत ग्रामोंमें ही ये लोग देखनेमें आते हैं। किन्तु कृष्णनदीके दक्षिणस्थ जिन जिन स्थानोंमें कपड़े बुननेकी प्रथा अधिक प्रचलित है, उन्हीं सब स्थानोंमें ये लोग विशेषतः रहते हैं। इनका कुलगत कोई नाम नहीं है। स्थानके सामानुसार ये लोग अथवा नाम रख लेते हैं। इनमें कोई सम्प्रदाय वा विभाग नहीं है, किन्तु शाखाएँ अनेक हैं जिनमेंसे विठ्ठल शोर कदरनबह प्रधान है। नीलगायगण देखनेमें सुन्दर, मंभोले कदके, बलिष्ठ शोर बुद्धिमान होते हैं। स्त्रियाँ पुरुषोंको अपेक्षा पतलो शोर सुयो होती हैं। इनको साटभाया कथाडो है। साधारणतः इस जातिके लोग नितभोजी, लेकिन रम्यकार्यमें नितास्त प्रपट्, होते हैं। इनमेंसे कितने ऐसे हैं जा लिङ्गायतोंकी तरह मच्छो मांस नहीं खाते शोर न शराब ही पीते हैं। किन्तु लिङ्गायतोंके साथ इनके चरित्र शोर पोशाकके विषयमें कोई विशेष प्रभेद देखनेमें नहीं आता। ये लोग छती कपड़ोंको शाले रंगमें रंगाते शोर बहुत कम खेती-बागो करते हैं। नोल, चूना, किलिके पिट्टको राख शोर तरबट्टका बीज इन सबको मिला कर उक्त काला रंग बनाया जाता है। विदेशीय द्रव्योंकी आमदनी ही जामेसे इनके व्यवसायमें बहुत धका पड़वा है। नीलागारोंमेंसे अधिकशय ऋष्यजातमें फसे हैं। विवाह शोर इसी प्रकारको विशेष घटनामें ये लोग प्रकसर कर्ज ले कर ही काम चलाते हैं। यह लिङ्गायतमें ये नोच ममके जाते हैं। किन्तु उनके साथ धर्मज्ञानमें एक पंक्तिमें बैठ कर स्वामि-पोषेमें कोई निपेय नहीं है। ये लोग लिङ्गायतको एक शाखामें है शोर जङ्गमका विशेष आडर करते हैं। जङ्गम इनके गुरु होते शोर वे ही सब काम काज करते हैं। कोलापुरके भन्नागत सिदगेरि नामक स्थानमें जङ्गमका वास है। इनको समाजनेति शोर धर्मनैति लिङ्गायतमें कुछ प्रक है। ये लोग अपने लङ्गकोको पड़ाते लिखाते नहीं हैं तथा जातीय व्यवसाय छोड़ कर शोर कोई व्यवसाय नहीं करते।

कुल मिला कर इनकी वर्त्तमान अवस्था योचनीय है। नीलगिरि—मद्राजप्रदेशके पन्तर्गत एक गिरियोधो पौर जिला। यह पचा० ११' १२" से ११' ४०" तक पौर देशा० ०५' १४" से ००' पू०के मध्य अवस्थित है। यह जिला पहले बहुत छोटा था। १८०२ ई०में दक्षिण-पूर्व मैनाद-का अक्टरलोनो विभाग इन जिलेमें मिलाया गया। पोछे १८५७ ई०में मन्थारके पन्तर्गत नैनाद तालुकका नम्बलकोड़, चेरामकोड़ पौर मगमादका कोरें कोरें अंग इस जिलेके पन्तर्भूक्त हो जानेसे इन जिलेका पावतन पहले से बहुत बढ़ गया है। जिलेका विस्तार उत्तर-दक्षिणमें ३५ मील पौर पूर्व-पश्चिममें ४८ मील है। क्षेत्रफल ८५८ वर्ग मील है। इस जिलेके उत्तर महिसुरराज्य, पूर्व पौर दक्षिण-पूर्वमें कोयम्बतोर जिला, दक्षिणमें मन्थार पौर कोयम्बतोरका कुछ अंग तथा पश्चिममें मन्थार है। राजकीय प्रधान प्रधान वार्षिक उत्तकामण्डमें रहते हैं।

नीलगिरि (पहाड़) पूर्व समयमें कोयम्बतोर पौर मन्थारके पन्तर्गत था। पोछे १८६८ ई०में नीलगिरि प्रदेश भी कर एयक् जिला स्थापित हुआ। एक कमिश्नरकी नियुक्ति हुई। ये ही खजाना वसूल करते पौर दोरा तथा दीवानो विचारका काम भी चलाते थे।

कमिश्नर १८८२ ई०में कसकर, जिला-मजिस्ट्रेट पौर प्रतिरिक्त दोरेके अजके पद पर नियुक्त हुए हैं। उनके सहकारी कमिश्नर प्रधान सहकारी कलक्टर पौर मजिस्ट्रेटका काम करते हैं। इनके पलाया एक सव-अज पौर धनागारके डिपटीकलक्टर नियुक्त हुए हैं। उत्तकामण्डमें एक डिपटी तहसीलदार हैं। वर्त्तमान समयमें उत्तकामण्डमें समस्त विचार-विभाग स्थापित हुए हैं।

शोषकालको इस उत्तकामण्डमें मद्राजप्रदेशकी राजधानी छठ कर घातो है। नीलगिरि जिलेमें पाँच उपविभाग हैं, चेरनाद, तोड़ानाद, मेकनाद, कुन्दननाद पौर दक्षिण-पूर्व मैनाद। नीलगिरि प्रदेशको प्रादिम पनस्था दुर्घ्न है। केवल इतना ही पता लगता है, कि हैदरपली १०० वर्ष पहले तोड़ानाद, मेकनाद पौर चेरनाद नामक स्थानमें तीन गामनकतां थे। मन्दाई-कोटा, इलिकलदुर्ग पौर कोटागिरिमें उत्तका सदर

दुर्ग था। सुतां यह गिरि पहले कोट्टुदेग पचात् पूर्व चेरदेशके पन्तर्गत था पौर तदनन्तर १०वीं शताब्दीमें महिसुरके पन्तर्गत हुआ है, ऐसा अनुमान नितान्त पयोक्तिक नहीं है। फिर भी अनुमान किया जाता है कि हैदरपली पूर्वाहल दो दुर्ग अधिहार करके अधिवाशियों ने घेघट कर वसूल करवें थे। टोपुसुत्तानने भी कोटा-गिरि दुर्ग पर अधिहार जमाया था। १८२१ ई०में मि० सुनिषमने इस स्थान पर प्रथम पञ्चरत्नी कोठी खोली।

१८०१ ई०के पहले नीलगिरि जिला जव जिलेके पन्तर्भूक्त नया, तब इसका पावतन बहुत कम था। इसके चारों पौर दो गिरियोधोने मध्यवर्ती अधिष्ठाकां चिरे हुए जिलेको मोमावह रखा था। इस अधिष्ठाका प्रदेशमें छोटी छोटी गिरिमाना मोलवर्ण दखने मिलते हैं। लगह जगह छोटे छोटे निर्भर कल कल शब्द करते हुए बह रहे हैं। कहीं छोटे छोटे पिट्ट समान लंघाईमें एक सौधमें गड़के हो कर पयिथोके मनकी पाकट कर रहे हैं। यह गिरि साधारणतः ६००० फुट ऊँचा है। नैनाद पौर महिसुरके मध्यवर्ती मान-भूमिमें मोयरनदी गिरली है। यहाँमें पश्चिमघाटके दक्षिण-पश्चिम कोणमें कुण्डपहाड़ है जिसको एक गाय्वा दक्षिणको पौर बहुत दूर तक खीं गई है।

प्रधान गिरिशृङ्ग—दोदायिता ४००० फुट ऊँचा, कुटियाकोड़ ८५०२ फुट, वैरवेत्ता ८४८८ फुट, मफूत्ति ८३०२ फुट, दावरमोनवेत्ता ८३८० फुट, कुण्ड ८३५१ फुट, कुण्डमोग ८२१६ फुट, उत्तकामण्ड ७३६१ फुट, ताम्रवेत्ता ७२८२ फुट, वीकयेत्ता ७२६० फुट, उक्वेत्ता ६८११ फुट, कोड़नाद ६८१५ फुट, देववेत्ता ६५०१ फुट, कोटागिरि ६५०१ फुट, कुण्डयेत्ता ६५४५ फुट, टिम-वडी ६३१५ फुट, कुन्नूर ५८८२ फुट पौर रत्नखामीशृङ्ग ५८१० फुट ऊँचा है। इन जिलेमें ६ गिरिपय वा घाट हैं। यथा—कुन्नूर, सेगूर, गुडामूर, तिसगाडा, कोटा-गिरि पौर सुन्दपहा।

यहाँको निष्कलिविष नदियां प्रथम हैं। मोयरनदी नीलगिरिमें लपट हो कर भयानो नदीमें गिरती है। यहकर नदी मोयरकी एक शाखा है। इसका दूगगा नाम बेघपुर है। उत्तकामण्डल्य ऋद समुद्रसंस्थमें ०१९० फुट

ज'चेमें अवस्थित है और प्रायः २ मील विस्तृत है। पहाड़के निम्नभागमें टालवेँ स्थानके ऊपर घनेक वृक्ष लगे हुए हैं। इन सब वृक्षोंमें कायोपयोगी सुन्दर तगुता तैयार होता है। पूर्व समयमें पहाड़ पर बाघ, भालू, पहाड़ी बकरे इत्यादि जङ्गली जानवर अधिक संख्यामें पाये जाते थे। आजकल गिकारियों के उत्पातसे उनको संख्या बहुत कम हो गई है।

नीलगिरि जिलेमें दो शहर और ४८ ग्राम लगते हैं। जनसंख्या लाखमें ऊपर है। हिन्दू, मुसलमान, ईसाई और पारसी लोग हो इस जिलेमें अधिक पाए जाते हैं। हिन्दूओं में ब्राह्मण, चविय, शैठो, वेलासर (भूमिकर्षक), इदयैर (भोगमन्त्रक), कम्पानर (सूतधर), कणकण (लेखक वा कायस्थ), कौकलर (तन्तुवाय), वन्नियम (छापक) कुम्भवन (कुम्भकार) और मतानी (मिथ-जाति) प्रधान है। ईसाइयोंमें अङ्गरेज, यूरोपखण्ड वा अमेरिकादेशीय प्रजा, मिथ अङ्गरेज और इस देशके ईसाइयोंकी संख्या ही अधिक है। असभ्य पर्वतवासियोंकी संख्या भी कम नहीं है।

अङ्गरेज, कणाडो और तामिल यहांकी प्रधान भाषा है।

जिलेके आदिम अधिवासिण ५ त्रिपिथीमें विभक्त है,—बड़ग, इरुलर, कुरुम्ब, कोटा और तोड़ा। ये समस्त असभ्य जातियां बहुत बलिष्ठ होती हैं। इनमेंसे तोड़ा लोग सबसे अधिक साहसी होते हैं। ये लोग लम्बे, सुडोल और गिकार तथा युद्धप्रिय हैं। इनका अङ्गसौष्ठव और बलवीर्य देखनेसे मालूम पड़ता है कि ये लोग भौह्वंशमें उत्पन्न नहीं हुए हैं। फिर सुबह्मिनासिका, दीव कपाल, गोलमुख और लण्णवर्ण को दाढ़ो और भ्रू देखनेसे ये लोग यहूदोजातिकेसे मालूम पड़ते हैं। तोड़ाओंका आकार-प्रकार जिस तरह जनसाधारणसे अनेक विभिन्न है, पोशाक परिच्छेद भी उसी तरह प्रयुक्त है। इन लोगोंका आचार-व्यवहार बहुत निकट है। पपरिच्छेदावस्थानें रहना ही इनका स्वभाव है। इन लोगोंमें सभी भाई मिल कर एक स्त्रीका पाणिग्रहण करते हैं। गोचारण और गोपक्षा कार्य ही इन लोगोंका एकमात्र व्यवसाय है।

कणाडो और तामिलमिश्रित एक प्रकारकी भाषा इस जातिमें प्रचलित है। ये लोग उदर और गिकार-देवताकी उपासना करते हैं। इनका विश्वास है, कि मृत्युके बाद आत्मा पुण्यस्थानमें वा दूसरे स्थानमें जाती है।

तोड़ाओंके रहनेके लिये पांच घर होते हैं, तीनमें आप रहते हैं, एकमें गो और शेष एकमें उबका बरुडा। जहां तक मालूम होता है, कि बरुगेरा लोग विनय-नगर-राज्यके ध्वंसेके बाद २०० वर्ष पहले दुर्भिक्ष-प्रदीप्त हो कर इस स्थानमें आ कर रहने लगे हैं। देवोद्य जातियोंमें इनको ही संख्या अधिक है और धन, मोन्दर्य तथा सम्यतामें भी ये लोग बड़े बड़े हैं। पुरुष लोग समतलवासियोंको तरह पोशाक पहनते हैं। इससे पनावा एक कीमती चादरसे शरीर और कंधेको ढँके रहते हैं। इनकी स्त्रियां अलङ्कारकी बहुत पमन्द करती हैं। ये विशेष कर चाँदी, पोतल वा लोहेका बाजू, बाला, कनेठी और मद्यनी पहनती हैं। इनका प्रधान देवता रङ्गलामा है।

कोटागण मध्यम आकारके, सुगठित और सुथो होते हैं। इनका कपाल छोटा, मत्स्य ज'चा, कान चौड़े और बाल लम्बे लम्बे होते हैं। स्त्रियां पुरुषके समान सुन्दर या सुगठित नहीं होतीं। बहुतेके कपाल ज'चे और नाक चिपटो होती है। कोटाजाति कृषिकर्मानुरत और भारवहनकार्यमें विशेष दक्ष होती है। ये लोग साधारणतः तोड़ा और बड़गियोंके सभी काम काज करते हैं। कितने काल्पनिक-देवताओंको पूजा ही इनमें प्रचलित है। इनका भाषा प्राचीन कणाडो है। ये लोग ७ ग्रामोंमें वास करते हैं जिनमेंसे ६ पर्वतके अधिवासका-प्रदेशमें और अवाशित गूडालूरमें है। इनके वासगृह अत्यन्त पपरिष्कृत और निम्न होते हैं।

असभ्यजातियोंमें कुम्भखलोग ही अत्यन्त निकट होते हैं। इनका शरीर रोगीके ज'सा पतला, पेट बहुत ज'धा, मुख बड़ा, दांत लम्बा और थोठ मरोटा होता है। स्त्रियोंकी पाकृतिमें कोई विशेष अन्तर देखनेमें नहीं आता, केवल उनको नाक अपेक्षाकृत कीटी और चेहरा सुष्म होता है। वे प्रायः एक कपड़ेसे शरीरको ढँके रहती

हैं। श्री घोर पुरुष टीनों को पूर्वाभिवृत्ति पोषण घोर लोहके साभूषण पहनते हैं।

साधारणतः पर्वतको उत्पत्त्या घोर वनजङ्गलमें इनका वासस्थान है। अविशुद्ध ताम्रिन भाषा इन लोगोमें प्रचलित है। अरु जाति साधारणतः क्षत्रियार्थ नहीं करती। धर्मविश्राम इनमें कुछ भी नहीं है। येना कष्ट सकते हैं। पर ये प्रकृतिक कुछ दृश्य वस्तुषोकी ठपासना करते हैं। कुक्ष्यियोंमें जो पर्वतगामी हैं, वे बहुगियोंका पीरोहित्य करते हैं। अन्त्याय जाति कुक्ष्यीये प्रत्यक्षा भव करती हैं घोर कुक्ष्य लोग भी तोड़ाघोंके भयसे हमेशा व्यतिथ्यम्तर रहते हैं।

इहमजाति नीलगिरि (पहाड़)के नीचे टालू प्रदेशमें घोर पहाड़के तलदेगमें शून्य स्थान तकके जङ्गलोंमें वास करते हैं। यथार्थमें ये लोग पर्वतके अधिवासी नहीं हैं।

इम जातिके लोग देखनेमें न तो सुन्दर होते घोर न कुक्ष्य ही होते हैं। दूसरा दूसरा जातियामें ये लोग मलवान् अरु होते हैं। इनकी स्त्रियां प्रत्यक्षा अनिष्ट पौर कालो होती हैं। इम जातिके पुरुष घरमें लंगोटी पौर साहरमें देगोय लार्गिके जेमा कपड़ा पहनते हैं। इनको स्त्रियां कमरमें एक कपड़ेको टाँहरा कर पहनती हैं। घोर श्रेय यज्ञोंको अनाष्ठन रखते हैं। ये अष्टद्वारद्विध होती तथा लोहे घोर पानलके बानू, बाला, कनेठियां पाटि पहनना बहुत पसन्द करते हैं। इहमल लोग मय प्रकारशामान खाते घोर पाछेटमें बड़े मिहदृष्ट होते हैं। इनकी भाषा तामिल, क्पाहो घोर मलयभाषाके नियममें उत्पन्न है। इन समस्त पर्वत जातियोंमें इहम घोर कुक्ष्य लोह कर श्रेय जातियोंकी अथवा उत्तमी योषनीय नहीं है। बहुगजातिकी दिनों दिन अथति होती जा रही है।

नीलगिरि(पहाड़) पर जो, गेहूँ, माना प्रकारके उरद, गोल चामू, व्याज, लहसुन, सरसों घोर रेंडो, उत्पन्न होती है। वर्ष भरके मोहर यहाँ तीन बार गोल चामू उपजाया जाता है। इनके अलावा यहाँ माना प्रकारकी विद्यायतो साक्षरता भी उत्पन्न होती है।

कहना, चाय घोर दिनकोना भी इहम जिलेमें कम

गहों उपजता। पूर्व समयमें बैलाट घोर बीडग पट्टेगमें कष्टना उत्पन्न होता था, लोटे नीलगिरि (पहाड़) पर उपजने लगा है। यहाँ तीन प्रकारकी चायभी पैदा होती है। नीलगिरि (पहाड़)के पश्चिम वदन जंघे पर चाय उत्पन्न होती है। यहाँको चायको अथवा टेल कर यह स्वरूप जाना जाता है कि चायके दोषे गौतमपान देगोंमें हो अच्छे लगते हैं।

इम जिलेके समस्त स्थान घाज तक भी कृषियोग्य नहीं हुए हैं। जिम नियममें अधिकांश जमीन यहाँ कर्षित होती है, उसका कुछ विवरण देना यहाँ आवश्यक है। कहते हैं, कि तोड़ाजाति पहनेम ही सर्वापेसा अलगाना घोर माहमो होता चना पर रखा है घोर पर्वतकी सभी उत्पत्त्याकापामें पवनो उपजाधिकारें उत्पाद-स्वरूप गोधन घोर मरिवादि जीव जन्तुषोकी अथावा करती थी। इन मय अधिष्ठत प्रदेशोंमें दूसरा गेहूँ भी गोधन वा क्षत्रियार्थ नहीं कर सकता था, किन्तु अरु माना स्थानोंमें माना देगके पसभ्य घोर सुमभ्य मनुष्य उन मय पार्थक्य प्रदेशोंमें पा कर बस गए, तब उनके श्रौव-नोवायके निये तोड़ाघोंके अधिष्ठत स्थानोंको जीतने कीहुनेकी आवश्यकता जान पड़ी। सुता प्रभुत्वगामी तोड़ा लोग भी सुयोग समझ कर उनमें ऊर अथन करने लगे। पागस्तुकगय भी बिना किमा टिड्डाटुके का देनेकी वाद्य हुए। यहाँ तक कि चन्द्ररजोंको भी कुछ दिन तक बंध कर देना पड़ा था। पाव; इना तरहमें कुछ समय होत गए।

तदनन्तर जब यह चन्द्ररजोंके हाथ लगा, तब पार्थक्य प्रदेशोंके सभी ग्रामोंको अजाके मध्य रियता; जमान बन्दोबस्त करनेका नियम जारी हुआ। मजा जब कर देनेमें असमर्थता प्रकट करता थी, तब भारतीय राजासिके पादैन-पट्टमार लणको जमान अथन कर को जाता था।

तोड़ाजाति पहनेम जिम विद्याय भूभागमें गाधरप पादि कार्य करती थी, तबके निये हिमाका भा अथाना नहीं देना पड़ता था। इम पर्वतदेशके पश्चिम पार उत्तराञ्चलमें ये सर्वदा गोमहिवादि अथावा अर्थमें थे, सुता उनके बिहामुदमें उन मय स्थानोंका अथवायु

चुराव डी जाया करता था। इस कारण गवर्मेण्टने वर्ष भरमें कुछ मास तकके लिये गो आदिका चराना बन्द कर दिया है। ये सब जमीन गवर्मेण्टकी परती जमीनमें समझी जाती है। पर प्रत्येक तोड़ाके घरके पासको पचाम एकड़ जमीन और आसपासके जङ्गल उनके अधिकारमें रह गए हैं। उक्त जमीनके लिये एकड़ पोछि दो खाना कर गवर्मेण्टकी देना पड़ता है। इस प्रकार प्रायः सात हजार एकड़ जमीन तोड़ाघोंमें अधीन है। किन्तु कार्यतः वे इस पाबन्द्य प्रदेशके पतित जमीनमें जो गोमहिषादि चराया करते हैं। जमीन जमा जब्त कर लेनेके नियम भी यहाँ प्रचलित है। जमीनका मुख्य गुणानुसार दृश्यक है। उक्तकामण्डमें जमान प्रभो अधिक मोनमें विक्रतो है।

नीलगिरि जिल्लेमें कभी भी दुर्भिक्षकी बातें सुनी नहीं जातीं। पर हाँ, समस्त भागमें फसलका दाम बढ़ जानेके कारण पर्वतवासियोंको वह दुर्भिक्षसा हाँ जान पड़ता है। १८७७ ई०में यहाँके गरीब अंगरेजों और नीलगिरिके अधिवासियोंको अन्नके लिये अत्यन्त कष्ट सहने पड़े थे।

नीलगिरि जिला पर्वतसङ्घल होने पर भा यहाँ गमनागमनयोग अनेक पथ हैं, ऐसा कह सकते हैं। यहाँको प्रधान सड़क कुनूरघाट और उतकामण्ड है। उतकामण्डसे एक पथ कर्कणहलामें, दूसरा गुडालूरमें और तीसरा अथलहोमें चला गया है। प्रथम पथ जो कर महिसुरकी जाते हैं। काटागिरिघाट पथ भी वाण्डियक लिये विशेष उपयोग है। इसके सिवा जाने जानेके भार भी कितने गिरिपथ हैं किन्तु इन सब राहों का कर बंलगाहो नहीं जा सकता।

इन सब स्थानोंमें एक भी बढ़िया पदार्थ तैयार नहीं होता, पर तोड़ा लोग एक प्रकारका मोटा कपड़ा प्रचलित करते हैं। यहबि चाय, कहवा और सिनकोना अत्यन्त भेजा जाता है।

उतकामण्डमें प्रति मङ्गलवारकी एक बड़ो हाट लगती है, यही हाट सबसे बड़ो है। तोड़ाघोंमें 'कट्टू' नामका उरख प्रचलित है। प्रति यण्ड श्रावण तिथिमें यह उत्सव मनाया जाता है। इस उपजवर्ष महिषादि-

बध और नृत्यगीतादि होते हैं। बड़ों और कोटाघों भी इसी प्रकारका वार्षिक उत्सव है।

नीलगिरि जिल्लेके उतकामण्डलक्ष्य पुस्तकालय घोलाभण्डलक्ष्य लारिन्स-भायमके विषय पर कुछ कह देना उचित है। १८५८ ई०में अष्टतोस हजार रुपये खर्च करके एक हर्म्य बनाया गया जिन्में उक्त-पुस्तकालय स्थापित हुआ। इसमें प्रायः १२००० पुस्तक हैं। इनके वार्षिक प्राय ७४०० रु०की है। यीपोक लारिन्सविषयमें अंगरेजो सेनाघोंको मन्तान पालित और शिक्षित होती हैं। इसको वार्षिक प्राय लाख रुपयेकी है। इस जिल्लेसे एक अंगरेजो समाचारपत्र निकलता है।

नीलगिरि (पहाड़) पर अनेक पुरातन कीर्त्ति स्तम्भ वस्तु व्यक्तिके स्मृतिस्मरकका भग्नावशेष देखनेमें पाता है वे साधारणतः पर्वतशृङ्ग पर ही स्थापित हैं। इन सब स्तम्भोंमेंसे कितने टट फूट गए हैं। उनके मध्य अनेक अक्ष और नाना प्रकारके पात्रादि पाए गए हैं। तोड़ा-नाद और परङ्गनाद नामक स्थानके स्तम्भमें घड़्याचौन और उल्लेख ब्रोज्जनिर्मित तरह तरहके पात्रादि और अक्षमख देखे जाते हैं। इन सब स्तम्भोंको आकृति बहुत अजुबा है। किस व्यक्ति वा अभ्युदयके समय किस व्यक्तिसे वे सब स्तम्भ बनाए गए थे, इसका पता लगाना कठिन है। कोटागिरिके मिन्नामगमें जो सब कीर्त्ति स्तम्भ हैं उनमेंसे कितनामें महीके पुतले हैं जिनके ऊपर तातारदंडीय पगडो दिखाई पड़ती है। डाक्टर काल्डवेल (Dr. Caldwell)का कहना है कि यत्तमान अधिवासियोंमेंसे कोई भी इन सब अधःसायशेषका अपने पूर्वपुरुषमें निर्मित होना स्वीकार नहीं करता। परतः इससे अनुमान किया जाता है कि वे सब कीर्त्ति स्तम्भ और तक्षालोन अधिवासियों यत्तमान नीलगिरिवासियोंसे बहुत पहलके हैं। कितने स्तम्भ हस्तक्षोका आकृति-विगिट हैं। इनमेंसे एकको तोड़ कर देखा गया था कि उसके मध्य अनेक हथ उत्पन्न हुए हैं। उन सब हथोंकी देखनेसे मालूम होता है कि वे सब कीर्त्ति-स्तम्भ भन्ततः ८०० वर्ष पहलके बने हुए थे।

यत्तमान समयमें जो सब स्तम्भ परीक्षाके लिये तोड़े गये हैं उनमेंसे कितनामें दोस्तके पात्र, चन्दे, श्रत्यात्र

गाना प्रकारकी गृह सामग्री घोर तीरकी मूठ पादि पदार्थ पाए गए हैं। इसमें बहुतोंका अनुमान है, कि वे मद्य प्रकटयके पश्चिमायी (Soythic) घोर तीहाषोंके पूर्वपुरुष थे। किन्तु इन मद्य कीर्तिस्तम्भकी तोड़ने तथा उनके मध्यस्थ द्रव्यादिकी उठा ले जानेमें भी तोड़ा लोग जरा, भी आपाधि नहीं करते। इधरेसे बहुतोंका कहना है, कि उक्त पूर्वतन पश्चिमामी तोड़ाषोंके पादि-पुरुष नहीं थे। यद्यपि सोडा लोग इन मद्य स्थानोंमें स्त्रजातिके 'समाधिकार्य' करते हैं, तो भी वे प्रागुरु लोगोंकी चपना पादिपुरुष नहीं मानते। डाक्टर शोर्ट (Dr. Shortt) इस प्रकार लिख गए हैं, "यहाँके पश्चिमामियोंका कहना है, कि पाण्डुराजाषोंके मद्यचर्चोंमें वे मद्य कीर्तिस्तम्भ बनाए ढोंगे, क्योंकि एक समय पाण्डुराजगण यहाँ राज्य करते थे।" बहुतोंमें कितनोंका ऐसा ही विश्वास है, किन्तु वे कहते हैं, कि वे पाण्डुराजघोषगण कुदम्ब नामसे प्रसिद्ध थे। पायाल्य पण्डितों घोर पुरातत्त्वविदोंने भी यीवोक्त मतका समर्थन किया है। प्रमाद है, कि कुदम्ब लोग एक समय मद्य पश्चिमान्धमें जँमे हुए थे। पीछे विदेशीय राजाषोंके शासनमें द्विच भिन्न हो कर चनोंने गिरि, जहल पादि दुर्गम प्रदेशोंमें पायप पहर किया।

मन्द्राज प्रदेशमें तथा भारतवर्षके नाना स्थानोंमें ऐसे कीर्तिस्तम्भ या स्मृतिस्तम्भ हैं जिनमें प्रोचित स्मृतदेवकी उल्लेखों पादि देखी गई है।

नीलगिरि (पहाड़) पर एक बहुत प्राचीन वेदाजानिका वास था। ये ही विद्वत्स्य वेदाजातिके पादिपुरुष माने जाते हैं।

यहाँका जङ्गल चार भागोंमें विभक्त किया जा सकता है। (१) नीलगिरिके पूर्व घोर दक्षिण टालू प्रदेश, (२) उत्तरस्य टालू प्रदेश घोर मोयाको उपत्यका, (३) दक्षिणपूर्व घेनाद घोर (४) सोल उपजम्बेकी उपत्यका।

प्रसोक्त प्रदेशमें तरु तरुके सुन्दर पेड़ पाये जाते हैं। जिनोय विभाग चन्दनवृक्षमें भरा हुआ है। उत्तरीय विभागमें चनेक वाराचन्दनके वृक्ष हैं। चतुर्थ विभागमें बड़े बड़े मेपुत्रके पेड़, मोयम, पिशासल वारिके

पेड़ तथा हाल घोर उद्रेद देवदारु उपत्यक ढोंगे हैं। उत्तकामण्ड, कुन्नूर घोर येल्लेश्वर पादि स्थानोंमें सभी पट्टेजिया देवोय नीनवृक्ष घोर पन्थाम्य चनेक मूलन वृक्ष रोपे जाते हैं। ये मद्य नीनपीषे इतनी जल्दोसे बहुत है कि १० वर्षके बाद ही वे कार्यायोगी हो जाते हैं। नीक देखें।

नीनतिरिप्रेद्य प्रायः दो हजार फुट ऊँचे पर पवणित है। पूर्व घोर पश्चिमदिग्ध्य मसुद्रमूलसे दूर रहने, यथावस्य दो मोनसून (monsoon) वायुके बहने तथा वासमें इस प्रकारके मध्य कोर्द वृक्ष पहाड़ों नहीं रहनेमें यहाँका जनवायु नातिमोशोष्य घोर स्थान्य-वर्द्धक है। यहाँ मयकादि, कौटपतङ्ग या चर्तिकर जीव जन्तु कुछ भी नहीं होते। स्थानीय उष्णपका पोषण ५८° फारेनहीट है। पश्चिम-महें मासमें भी जमनी गरमी नहीं पड़ती, केवल दक्षिण-पश्चिम मानसून वायुके बहनेसे प्रोषमज्ञान जाना जाता है।

वायुके उद्विपात ४९ इंच है। यहाँ वर्षा घोर वात-रोग चककर हुआ करता है। जिनवाज यहाँका जन्म वायु बहुत पच्छा ढोंनेके कारण यह स्थान दक्षिणवर्षके स्वास्थ्य-निवासरूपमें निर्वाचित हुआ है।

डाक्टर लैरडनका कहना है, कि इन पहाड़ पर प्रायः ११८ जातिके पक्षियोंका वास है।

गिह्यामस्यवर्षमें इस जिलेका नम्बर मन्द्राज जिलोंमें दूसरा पाया है। यहाँ भिन्न भिन्न जातियोंके जिये भिन्न भिन्न वृत्तन हैं। कुलके सिवा यहाँ कोनी चपत्तास घोर तीस कारागार हैं।

नीनगिरि—उड़ीहाके चलागत एक देवोच राज्य। यह मन्दा० २१° १०' से २१° २०' से ०० घोर देगा० ८६° २२' से ८६° २०' पू०के मध्य पवणित है। इसके उत्तर घोर पश्चिममें मयूरभञ्ज राज्य, दक्षिण घोर पूर्वमें जामेना जिला है। इस राज्यका एकलतीर्थीय पार्वत्य भूमि, एकदलीयाम जहलपरिपूर्व घोर पश्चिमदिग्ध्य उद्विष्यके चपतुङ्ग है। यहाँ एक प्रकारका कोमनीकाना पत्थर पाया जाता है जिनसे बटोरा, रिखास पादि बरतन प्रयुक्त होते हैं। हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, गैरान घोर भूमिज जातिके लोग यहाँ पश्चिद पाए जाते हैं। जनवस्था



सत्तर हजारके लगभग है। राज्यको बाँपिक भाग १३०००, २० है जिसमेंसे ३८०० २० गवर्मेण्टको करमें देने पड़ते हैं। राज्य भरमें १ मिडिल स्कूल, ८ पपर प्राइमरी स्कूल और ७३ लोवर प्राइमरी स्कूल हैं। इसके पश्चात् एक विकित्सालय भी है। राजाकी सैन्य-संख्या २८ है। इसमें कुल ४६६ ग्राम-संगति है। प्रवाद है, कि छोटानागपुर राजाके किसी चाणोयनि लड़ोसाके राजा प्रतापसूद्रदेवकी कन्यासे विवाह कर इस राज्यको बसाया। चत्रियराज कृष्णचन्द्रीसुरदराज हरि-चन्दन इस वंशके चौबीसवें राजा माने जाते हैं।

नीलगिरिकविका ( स० स्त्री० ) गिरिकवि कामेद, नील पुष्प, नील अपराजिता।

नीलगिरिजा ( स० स्त्री० ) १ विष्णुकान्ता, अपराजिता।  
२ भास्कीता, छपरमाली बेल।

नीलगुण्ड—१ एक सुद्र ग्राम। यह धारवार जिनके गहगमे १२ मील दक्षिण-पश्चिममें अवस्थित है। यहां उत्तम मर्मर-प्रस्तरनिर्मित एक नारायण-मन्दिर और सामनेमें एक महापवित्रस्थान है। मन्दिरकी छत १२ खम्भोंके ऊपर स्थापित है। इसकी दीवारमें पुराणोक्त अनेक मुस्ति या चित्रित हैं। ग्रामके उत्तरी फाटकके पूर्व १०४४ ई०की लक्ष्मी एक शिलालिपि है।

२ जातिभेद। ये लोग हिमालयके पन्तगत गढ़वाल और कुमायुन नामक स्थानमें वास करते हैं। इनका भाषार-व्यवहार ह्यणदेशवासियों-सा है।

नीलश्रीव ( स० पुं० ) नीला नीलवर्ण शीवा यस्य। १ महादेव, शिव। ( त्रि० ) २ नीलवर्ण शीवायुक्त, जिसका गला नीला हो।

नीलह ( स० पुं० ) निरुद्धति गच्छतीति नि-लगि-गतौ कु-निपातनात् पूर्व टोषः। ( खण्ड कुशुनि० पृ० लिपु। ३०, १३० ) १ कामिभेद, एक प्रकारका कीड़ा। २ शृगाल, मोटह। ३ भ्रमर, भवरा। ४ प्रसून, फूल।

नीलचक्र ( स० पुं० ) १ जगदायजीके मन्दिरके गिणुर पर माना जानेवाला चक्र। २ तीस चक्रों का एक दण्ड-हस्त। यह शमीकपुष्पमञ्जरीका एक भेद है। इसमें गुरु लघु १५ बार क्रमसे पाते हैं।

नीलचर्मन् ( स० स्त्री० ) नील चर्म फलत्वग् यस्य। १

वर्षक, फालसा। २ लक्ष्णाजिन। ( त्रि० ) ३ नीलचर्म विष्टि, जिसका चमड़ा या किल्ला नीला हो।

नीलच्छद ( स० पुं० ) १ गरुड़का नामान्तर, गरुड़का एक नाम। २ खजूरुच्छ, खजूर। ( त्रि० ) ३ नीलपत्र-विष्टि, नीले पत्र या भावरणका।

नीलच्छवि ( स० पुं० ) कुक्षु भवषी, धनसुर्गा।

नीलज ( स० स्त्री० ) नीलाज्जायते जन-ड। १ वत्त नील, बीटरी लोहा। नोलात् नीलपर्वतात् जायते इति जन-ड स्त्रियां टाप्। २ नीलपर्वतोत्पन्न नदीभेद, वितस्ता नदी। ( त्रि० ) ३ नीलजात।

नीलजा ( स० स्त्री० ) नीलनदीसे उत्पन्न वितस्ता ( सिन्धु ) नदी।

नीलक्षिण्टी ( स० स्त्री० ) नीला नीलवर्णा क्षिण्टी। नील-वर्ण क्षिण्टीपुष्पवृक्ष, नीलो कटमुरैया। पर्याय—नील-कुरण्ट, नीलकुसुमा, वाला, वांषा, दासा, कण्टात्तगला। गुण—कटु, तिक्त, दन्तामय, शूल, वात, कफ, कासघोर लघ्वेदोपनाशक है।

नीलतन्त्र ( स० स्त्री० ) चीनाधारदिप्रकाशक तन्त्रभेद।

नीलतरा—श्रीह कथापोक अनुसार गान्धारदेशकी एक नदी जो उर्व्वेदारस्थले हो कर बहती थी। इस स्थान पर जा कर बुद्धदेवने उर्व्वेदकाश्यप, गयाकाश्यप और नदीकाश्यप नामक तीन भाइयोंका अभिमान दूर किया था। उक्त तीनों भाई अपनेको पहलू कहा करते थे और लोगोंकी उग कर अपनी मतलब निकालते थे। बुद्ध भाईके पांच गौ, सधामके तीन सौ और कुटेके डो सो गिये थे। बुद्धदेव उक्त तीनों भाइयोंकी अपने मतमें साम्यके लिये बर्षा गए और रातभर बुद्ध भाईकी अग्नि-शाला वा मन्दिरमें रहनेके लिये उनसे याचना मांगी। उर्व्वेदने उत्तर दिया, कि स्थान देनेमें तो आपत्ति नहीं, लेकिन लक्ष्य ये रहना चाहते हैं वहाँ एक प्रकारका विप-धर सपने रहता है। बुद्धदेवने इसकी परवाह न की और सोचे मन्दिरमें प्रवेश किया। पीछे माना लयायसे उक्त सपना पराभूत और बन्दी कर अपने भाइयोंका अभि-मान दूर किया। बाद में बहुत लज्जित हो कर बुद्ध-देवका पादर करने लगे।

नीलतट ( स० पुं० ) नीलतटः। नारिकेल, नारियल।

नीलता (सं० स्त्री०) नीलस्य भावः नील-तल-टाप । १

नीलत्व, नीलापन । २ कानापन ।

नीलतान (सं० पु०) नीलतानः । दिन्यासत्रय, स्वाम-  
तमान ।

नीलदूर्वा (सं० स्त्री०) नीला दूर्वा । हरिदण्डं दूर्वा इती  
दूर्व । पर्याय—गोतकुम्बो, हरिता, शाश्वी, ग्रासा, गोता,  
शतपर्षिका, अमृता, पूता, शतप्रत्वि, चङ्गुवसिका,  
गिवा, गिर्वेष्टा, मङ्गना, जया, सुभवा, भूतहन्त्री, शत-  
मूला, महोपधो, विजया, गौरो, ग्रान्ता, वसनी ।

गुण—हिम, तिक्त, मधुर, कषाय, लघु, रक्तपित्त  
पित्तघ्न, कफ, वमन घोर च्चरनाग्नक ।

भायप्रकाशके मतानुसार इक्षुका पर्याय—दहा, धनता,  
भागवी, शतपर्षिका, शम्प, सहस्रवीथी घोर शतप्रक्षी ।  
गुण—हिम, तिक्त, मधुर, तुवर, कफ, पित्त, अम्ल, धोषर्ष,  
दृष्या घोर दाहनाग्नक ।

नीलद्रुम (सं० पु०) नीलवर्णं चमनद्रुम ।

नीलध्वज (सं० पु०) नीलः नीलवर्णः ध्वज इव । १ तमान-  
स्रय । २ मृषमैत्र, एक राजाका नाम । ये माहिष्मती-  
नगरोके अधिपति ये । इतका विषय जैमिनिभारतमें  
इस प्रकार लिखा है,—

राजा नीलध्वज माहिष्मतीनगरोके यथोत्तर ये ।  
इतको स्त्रीका नाम ज्वाला घोर पुत्रका प्रवीर था ।  
इतके स्वाहा नामक एक कन्या भी थी । जब यह कन्या  
विवाहयोग्य हुई, तब राजाने कन्यासे पूछा, 'हमारे  
पटमण्डपमें हजारों राजा अवस्थान करते हैं । इनमेंसे  
जिस किसीको चाहे, अपना पति बना लो ।' ज्वालाने  
लज्जामें मुख मोचे किये उत्तर दिया, 'मनुष्य कोभके  
यथीभूत घोर मोहमें पाच्छेष्ट है । परतः मैं मनुष्यको  
अपना पति बनाना नहीं चाहती । परतएव पाप देव-  
लोकमें जा कर भरे लिये एक सपुत्र्य करकी तलाश  
कीजए ।' यह सुन कर नीलध्वजने कहा, 'तुम देवराज  
इन्द्रकी अपना पति बरो । सुना है, कि वे मातृपौका परि-  
पश्य करना चाहते हैं ।' इस पर ज्वाला बोली, 'परतः ।  
देवराज इन्द्रने देवतापोंका सर्वत्र चरण किया है,  
तपस्वियोंके विद्वय वे आत्माधार किया करते हैं, पर-  
विभूति पर अचते हैं तथा लक्ष्मीं गोतमकी भायोंका

सतीत्य नष्ट किया है । ऐसे सर्व कुकर्म करनेमें जितने  
किये हैं, मानुस नहीं । इसीमें मैं लक्ष्मीं भर नहीं सकता ।  
पत्निदेव यमो वसुपौका पवित्र करते हैं, परतः मैं  
लक्ष्मीं अपना पति बनाना चाहती हूँ ।' कन्याके  
इच्छानुसार नीलध्वजने पत्निदेवके स्त्री माघ सपका  
विवाह कर दिया । पत्निदेव विवाह करके माहिष्मती-  
नगरीमें रहने लगे । जब यमो कीर्त घब्रु, इस नगर पर  
चढ़ाई करता था, तब पत्निदेव नीलध्वजकी सुदृष्टमें  
महायता पदुंघाते थे । इसमें किसीकी रनके विद्वान-  
त्ररण करनेको हिम्मत नहीं होती थी । जब पशुन  
पत्रमेधका घोड़ा से कर दिव्यशयको निकले, तब यह  
घोड़ा पहने इसी माहिष्मतीनगरीमें प्रविष्ट हुआ ।  
राजाके पुत्र प्रवीर अपने मत्पापोंके माघ मतामण्डपमें  
खेन रहे थे । इसी समय यह घोड़ा उनके सामने पदुंघ  
गया । प्रवीरने मदनसुन्दरो सम सुन्दर पत्रके मन्त्रक पर  
जयपत्र देव सवे पकड़नेकी कहा ।

यज्ञोय घोड़ा पकड़ा गया । प्रवीर समे ले कर अपने  
पुरकी चल दिये । वहाँ घोर सब तो सम अपुषं घोड़ेकी  
देखनेमें लग गये, किन्तु प्रवीर समेय सुदृको प्रतीचा  
करने लगे । घोड़े पशुन घोर सुदृकेतुके माघ घोरतर  
संयाम हुआ । प्रवीर बिपसोंके शरनाममें एकबारगी  
पदुंघ्य हो गये । इस पर पावकपतिम नीलध्वज तोम  
पत्नीहिनी मेलाकी माघ से वहाँ पदुंघ गए घोर प्रवीर-  
की मुक्त किया । इस समय लक्ष्मीं पत्निका पाहान  
किया । पत्निदेवके सुदृष्टमें पदुंघनेके माघ हो पशुन-  
की मेला दृश्य होने लगी । तब पशुनमें नारायण-पत्न-  
का हमस्य किया । इस नारायण-पत्नका देव कर  
पत्निमें गान्तिमूर्ति चरण की घोर राजा नीलध्वजको  
समझा कर कहा, 'पाप घोड़ेकी छोटा दे । क्या  
भगवान् विष्णु लिनके महापदक हैं, उनके माघ लड़ कर  
सुदमें जयलाभ करे, ऐसा कोन व्यक्त है ? राजाने इसे  
युक्तिपुक्त समझा घोर घोड़ेको छोटा देना चाह । जब  
रामोकी लक्ष्मीं चरण लगी, तब वे कोपाश्रित हो बोलीं,  
'महाराज ! भावने राजकोपमें विष्णुन चर्च है, उद्यमाहिनी  
मेला घोर पुत्र दोषादिने रहने चात्रिधर्म पर कात नार  
क्या इस प्रकार घोड़ा छोटा रहे है ?' राजा माहिष्मीकी

वात चुन कर पुनः युद्धके लिये 'पद्मसर' हुए। इस वार भी दोनों में समतान युद्ध चला। नीलध्वजका महा-वल्लिष्ठ युद्ध घोर आतङ्गण मारि गये, रथ टूट फूट, गया घोर सारथिका पतन हुआ, स्वयं नीलध्वज भी मूर्च्छित हो कर रथके ऊपर गिर पड़े। सारथि राजाको युद्धक्षेत्रसे उठा ले गये। पीछे जब वे होयमें आए, तब रानी पर बहुत विगड़े घोर माना उपहारोंके साथ अर्जुनको बोझा छोटा दिया तथा आप अखरज्जोमें निरुक्त हुए। इसर राजमहिषो ज्वाला उसी समय अपने भाई उद्यूकके पास गईं और अपनी दुरवस्थाका सब विषय सुनाया। पीछे रानीने अर्जुनके लक्षके लिये उनसे खूब अमुरोह किया, पर वे राजी न हुए। कोई उपाय न देख ज्वाला वरने निकल कर गङ्गाके किनारे चली गईं घोर लड़ा चित्रा कर बोली, 'पाण्डवोंने अन्यायरूपसे भोगदेवका वध कर डाला है।' यह सुन कर गङ्गादेवीने क्रुध हो कर पश्चिमाय दिया कि आजसे छः मासके भीतर अर्जुनका गिर भूयतिस जोगा। ज्वालाको जब मान्म सुभा कि भय उसका मनोरथ पूरा हो जायेगा, तब अर्जुनमें क्रुद कर उसने शरीर त्याग किया घोर भयानक वाणरूपमें आविर्भूत हो कर धनञ्जयके सञ्चारकी कामनासे वभ्रुवाहनके तरकशमें प्रवेश किया। (कैमिनियार १५ अ०) ४ कामरूपके एक राजा। कामरूप देखो।

नीलनाग—काश्मीर राज्यका एक ऋद। एक ऋदसे एक जलश्रोत निकल कर परामूलाके समीप सिन्धुदेगख्य द्वारा चतो नदीके साथ मिल गया है। यह बघा० १२°४८' २०' घोर देगा० ७४° ४०' पू०के मघा, चीनगरसे २१ मील दक्षिण पश्चिममें अवस्थित है। यह ऋद हिन्दुषोका एक पवित्र तीर्थ गिना जाता है।

नीलनियुष्टी (सं० स्त्री०) नीलानियुष्टी। नीलवर्ण सिन्धुवारहण, नीला सम्राट्।

नीलनिर्यामक (सं० पु०) नीलवर्णो निर्यासो यस्य, कप०। १ नीलसन्तुष्टय, पियासासका पेड़। २ कण्यवर्णनिर्यास, काला-गोट।

नीलनीरज (सं० स्त्री०) नील नीरजं पद्मम्। नीलपद्म, नीलकमल।

नीलपद्म (सं० स्त्री०) नीलं पद्ममिव । १ अम्भकारि । २ कण्यवर्णम, काला कीचड़।

नीलपटल (सं० स्त्री०) अश्वोको चाळोका वध समहा जिससे पक्षि टकी रहती है।

नीलपद—एक कवि।

नीलपत्र (सं० स्त्री०) नीलं पत्रं पर्णं पुष्पफलं यस्य।

१ नीलवर्णं उत्पल, नीलकमल। २ गुण्डल्य, गोनरा

घास जिसकी जड़ कषेय है। ३ अश्वनाकहल। ४

नीलामनहण, पियासासका पेड़। ५ टाडिम, प्रसार।

नीलं पत्रं कामधे०। ६ नीलवर्णं पत्र, नीला पत्ता।

(त्रि०) ७ नीलवर्णं पत्रंयुक्त, जिसके पत्ते नीले हों।

नीलपत्रिका (सं० स्त्री०) १ नीलपत्रो, नील। २ कण्य-तालमूली।

नीलपत्री (सं० स्त्री०) १ नीलहृत्, नीलका पोधा। २ अल नीलीसुप, जङ्गली नील।

नीलपत्र (सं० स्त्री०) नीलं पद्मम्। नीलतर्णं पद्म, नील कमल।

नीलपर्ण (सं० पु०) १ हंसविशेष। (स्त्री०) २ हृन्दारक-हृत्, हृन्दारका पेड़।

नीलपर्णी (सं० स्त्री०) विदारोहल।

नीलपत्नी—मन्द्राज प्रदेशके अन्तर्गत गोदावरी जिसका एक शहर। यह शहर अन्त० १६° ४४' २०' घोर देगा० ८२° १२' पू०के मध्य अवस्थित है। यहां अन्तरेजोकी एक वाणिज्यकौमी है।

नीलपिङ्गल (सं० त्रि०) नीलश्च तत् पिङ्गलश्चेति, वर्णो-वर्णैर्न इति सूत्रेण कामधारयः। नील अथवा पिङ्गल-वर्णयुक्त।

नीलपिङ्गला (सं० स्त्री०) नीला च पिङ्गला चेति। नील अथवा पिङ्गलवर्णयुक्त गोजातिभेद, नीलो घोर भूरापन लिये काल गाय।

नीलपिच्छ (सं० पु०) नीलं पिच्छं यस्य। अनेपत्नी, बाजपत्नी।

नीलपिट (सं० पु०) वीहोका राजकीय अट्टयासन घोर इतिवृत्तचपद्म।

नीलपिष्टोद्गी (सं० स्त्री०) नीलानीहण, लज्जुङ्गुङ्ग नामका पेड़।

नीलपुनर्नवा ( स० स्त्री० ) नीला पुनर्नवा । छत्रवर्ष  
पुनर्नवा शाक । पशोय—नील, श्यामा, छत्राव्या, नील-  
वर्षाभि । गुण—तिक्त, कटु, उष्ण, रसायन, द्रव्रो,ग,

पाण्डू, शत्रयथु, म्हास, वात घोर कफनाशक ।

नीलपुर ( स० पु० ) काश्मीरका एक पुर ।

नीलपुराण ( स० स्त्री० ) पुराणमेंद, एक पुराणका नाम ।

नीलपुष्प ( स० पु० ) नील पुष्प यस्य । १ नीलभद्रराज,  
नोकी भंगरैया । २ नीलान्नान, काना कांराठा । ३  
ग्रन्थिवर्ष, गडिवन । ४ नीलकुसुम, नीला फूल ।

नीलपुष्पा ( स० स्त्री० ) नील पुष्प यस्याः । विष्णुकाता,  
पवराजिता ।

नीलपुष्पिका ( स० स्त्री० ) नील पुष्प यस्याः । कप  
कापि-पत इत् । १ पतसी, चलसी । २ नीलोत्प,  
नीलका पोधा । ३ नील-पवराजिता ।

नीलपुष्पी ( स० स्त्री० ) नील पुष्प यस्याः, डोप । १

नीलवृष्टा, कासा बीना, नोली कोयन । २ पतसी,  
चलसी ।

नीलवृष्ट ( स० पु० ) नील वृष्ट धूम्रपिण यस्य । १  
चम्लि, पाग । २ मस्यविशेष, एक किसको महली ।

नीलवृष्टा ( स० स्त्री० ) नीलोत्प, नीलका पोधा ।

नीलवीर ( स० पु० ) इक्षुभेद, एक प्रकारकी ईख ।

नीलफला ( स० स्त्री० ) नील फल यस्याः । १ जम्बूतृण,  
जासुनका पेट । २ बैंगन, भटा । ३ चार्त्ताकुत्त ।

नीलकुसारी—१ यद्वापनेके रङ्गपुर जिलान्तर्गत एक मह-  
फूला । इसका घेतकम ३३८ वर्गमोल है । इसमें कुल  
३८२ घाम लगते हैं । यहाँ हिन्दू, मुसलमान, ईसाई,  
जैन, बौद्ध, ब्राह्म, मन्थाल घोर चम्याश्रय चनेक जातियों-  
का वास है ।

२ उक्त महफूलका एक घाम । महफूलको पटा-  
सत यहाँ ही लगती है ।

नीलधरो ( हि० स्त्री० ) लक्ष्मी नीलकी बही ।

नीलविरहे ( हि० स्त्री० ) सनायका पोधा, सना ।

नीलम ( स० पु० ) नील इव भाति भा-श्च । १ चन्द्र,  
चन्द्रमा । २ मेष, बादेस । ३ मणिक, मन्त्री । (त्रि०)  
१ नीलवर्षा पाभाविमिट, जिनमें नीली रीमनी हो ।

नीलमण्ड ( स० स्त्री० ) नीलमण्डल, विद्यासाल ।

नीलभू ( स० स्त्री० ) नीलात् भूदप्यसि यंष्य । नील-  
पर्वतोत्पन्न नदीभेद, नीलवर्षातमे उत्पन्न एक नदीका  
नाम ।

नीलभद्रराज ( स० पु० ) नीली भद्रराजः । नीलवर्ष  
भद्रराज, नीला भंगरैया । पशोय— महाभद्र, महाशोम,  
सुनीलक, नीलपुष्प, श्यामल । गुण—तिक्त, उष्ण, चतुष्प,  
देगाश्चरः ; कफ, घाम, गोक घोर विषनाशक ।

नीलम (का० पु०) नीलमपि, नीले रंगका रस, इन्द्रनील ।  
पं गरे नील इमे Sapphire कहते हैं ।

निहमदीयके मध्यगत राशयगद्वाके मन्विलित पद्माकर  
प्रदेशमें इन्द्रनील मिलता है । प्राचीन कालमें पारस्य  
घोर परबदेशमें यह रस मिलता था । अब भारतमें नीलम-  
की प्दानें नहीं रह गई हैं । काश्मीरकी प्दानें भी अब  
खाली हो चली हैं । बरामें मानिकके माघ नीलम भी  
निकलता है । निहमदीय घोर श्याममें भी बहुत पच्छा  
नीलम पाता है । उत्तर-पमेरिका, दक्षिण-पमेरिका,  
पट्टेनिया पादि स्थानोंमें भी नीलम पाया गया है, ऐसा  
सुननेमें जाता है ।

नीलम याम्बवमें एक प्रकारका कुर'ड है जिनका  
नम्बर कड़ाईमें हीरेके दूबरा है । जो बहुत पोधा जाता  
है उसका मोल भी हीरेमें कम नहीं होता । नीलम  
अपराइड पाय एलुमिना ( Oxide of alumina )  
घोर अकाराइड पाय कोबाल्ट ( Oxide of cobalt )  
इसी दो पदार्थोंमें प्रचुन होता है । यद्यप्यमें यदि देवा  
जाय, तो अक्सीजन-वायु ( Oxygen ) घोर एलुमिनियम  
कोबाल्ट ( Aluminium Cobalt ) नामक अत्यन्त  
मामास्य द्रव्य हो इसमें दिवनेमें जाता है । तब रसादि-  
का मूष्य अधिक होनेका कारण यहो है । कोई विज्ञान-  
विदु पण्डित क्विमि उपायमें होरकादि प्रचुन नहीं कर  
सकते । किन्तु विज्ञानको दिनादिन जोड़ी अथति देवो  
जातो है घोर अक्वियन विषय ले कर जैसा यहाँ चल  
रही है उसमें बोध होता है, कि घोड़े ही दिनादि मन्थ  
यह पभाय पूरा हो जायगा ।

समया नीलमके रंग एकमें नहीं होते । इसमें कुछ  
नीलवर्षके जैसा, कुछ नीलवर्षमन्के जैसा, कुछ सुम-जित  
तन्धाराके जैसा, कुछ अमरके रंगके जैसा, कुछ शि-  
व

नीलकण्ठके जैसा, कुछ मयूरमुच्छेकें तारके जैसा और कुछ क्षण अपराजिता पुष्पके जैसा होता है। मसूद्रकी निर्मल जलरागिष्णु नीलरङ्गके बुदबुद और कीकिल कण्ठके जैसा नीला नीलम ही एकसर देखनेमें आता है। यह वर्षभेदसे चार भगोंमें विभक्त है, यथा—खेतका आभायुक्त नील, रक्तका आभायुक्त नील, पीतका आभायुक्त नील और क्षणका आभायुक्त नील। इन चार अंगियोंके इन्द्रनील यथाक्रमसे ब्राह्मण, चतुर्विध, वैश्व और शूद्र नामसे प्रसिद्ध हैं।

पद्मराग जिस तरह उत्तम, मध्यम और अधमके भेदसे तीन प्रकारका है, इन्द्रनीलके भी उसी तरह तीन भेद हैं, यथा, साधारण इन्द्रनील, महानील और इन्द्रनील। महानीलके सम्बन्धमें लिखा है, कि यदि वह मौसुने दूधमें डाल दिया जाय, तो सारा दूध नीला दिखाई पड़ेगा। अधम अथवा इन्द्रनील वह है, जिसमेंसे इन्द्रधनुषको-सो आभा निकले। पर ऐसा नीलम जल्दी मिलता नही। नीलममें पांच वर्तन देखी जाती हैं—गुरुत्व, स्निग्धत्व, वर्षाव्यत्व, पार्श्ववर्तित्व और रक्षकत्व। जिस इन्द्रनीलका, पार्श्ववर्तित्व गुरुत्व बहुत अधिक हो अर्थात् जो देखनेमें छोटा पर तीक्ष्ण भारी हो, उसे गुरु कहते हैं। जिसमें स्निग्धत्व होता है, उसमेंसे चिकनाई छूटता है। जिसमें वर्षाव्यत्व होता है उसे प्रातःकाल सूर्यके सामने करनेमें उसमें नीली गिरावणो फूटती दिखाई पड़ती है। पार्श्ववर्तित्व गुण कम नीलममें माना जाता है जिसमें कहीं कहीं पर मोना, चांदो, स्फटिक आदि दिखाई पड़े। जिसे जलपात्र आदिमें रखनेसे सारा पात्र नीला दिखाई पड़ने लगे उसे रंजक समझना चाहिए। गुरु इन्द्रनील वंशुद्धिकर, स्निग्ध इन्द्रनील धनवृद्धिकर, वर्षाव्य इन्द्रनील धनधान्यादि-वृद्धिकरक, पार्श्ववर्ती इन्द्रनील ययस्कर और रंजक इन्द्रनील सध्मो, यग और वंशवर्तक माना गया है। अश्वक, ब्रास, चित्रक, मृदुगर्भ, चंद्रमर्ग और रोच्य ये छः प्रकारके दोष इन्द्रनीलमें पाये जाते हैं। जिस इन्द्रनीलके जपरीभागमें पशु-सो क्लृप्ता दीख पड़े, उसे पशुक कहते हैं। इस प्रकारके इन्द्रनीलसे प्रायु और सम्यक् विनष्ट होती है। जो इन्द्रनील विविध विच्छेद द्वारा भग्न मालम पड़े, वही लासनील

है। इस नीलमके धारण करनेमें दृष्टोभय उत्पन्न होता है। जिसमें भिन्न भिन्न रंग दोष पड़ते हैं, उसे विचक कहते हैं, चित्रकके दोषसे कुल नष्ट होता है। जिसके मध्यभागमें भट्टी लगी रहती है, वह मृदुगर्भ कहलाता है। मृदुगर्भके दोषसे गावकण्डू, पादि नाना प्रकारके त्वग्रोग उत्पन्न होते हैं। जिसके भीतरमें पथ्याका खुण्ड दिखाई दे उसका नाम है चंद्रमर्ग। चंद्रमर्ग दोष-विनाशका कारण है। जो शर्करायुक्त है, उसे रोच्य कहते हैं। रोच्य शोषाद्युक्त इन्द्रनीलधारो व्यक्तिको यमराजका द्वार देखना पड़ता है। दोषहीन होने पर भी जो गुणयुक्त है, ऐसी इन्द्रनीलमणि जिसके पास है उसको प्रायु और यमको वृद्धि होती है। जो मनुष्य विशुद्ध इन्द्रनील धारण करता है, नारायण उसके प्रति प्रमत्त होते हैं और उससे प्रायु, कुल, यश, बुद्धि, लक्ष्मी और समृद्धि ही उन्नति होती है। गुणसम्पन्न और दोषयुक्त पद्मराग धारण करनेमें जैसा शुभाशुभ होता है, इन्द्रनील धारणमें भी ठीक वैसा ही फल लिखा है।

जिस इन्द्रनीलमें कुछ लोहित-सो आभा दोष पड़े उसे टिट्ठिम कहते हैं। टिट्ठिमजातीय मणि धारण करनेके साथ ही गर्भ-यो-स्त्री सुखसे सन्तान प्रसव करती है।

( ५६५० )

पद्मरागके जैसा नीलम तीन अवस्थामें पाया जाता है। यथा—( १ ) शुभ स्वच्छ चूनेके पथ्या ( White Crystalline lime-stone )के मध्य निहित अवस्थामें देखा जाता है। ( २ ) पहाड़के निकटवर्ती भट्टीके मध्य गिरियल अवस्थामें पाया जाता है और ( ३ ) रत्नप्रसविक कहके मध्य कभी कभी देखा जाता है। माधारणता द्वितीय अवस्थाका नीलम ही यथेष्ट पाया जाता है।

फलद्वारके लिये इन्द्रनीलका इतना आदर है। नीलम इतना कठिन पदार्थ है, कि इस पर लक्ष्मी आदि कार्य बहुत सुगम किन्तसे किया जाता है। इस प्रकार अवसिधा रहने भी इन्द्रनीलमें खोदित मूर्ति देखी गई है। यीसके जुपिटर ( Jupiter )की उज्ज्वल सुखाकृति इस इन्द्रनील पर खोदित है, ऐसा सुना जाता है। मार्लबोरो ( Marlborough ) संस्थानमें जो सब प्राचीन द्रव्य संग्रह किये गए हैं उनमेंसे मेह साका

मस्तक (Medusa's head) नीलम पर प्रस्तुत देखा गया है। इसके पलाया घोर भो कितनी प्राचीन प्रति-मूर्तियाँ इस पत्थर पर निर्मित हैं।

पहले ही कहा जा चुका है, कि इन्द्रनीलम नामा प्रकारकी व्याधि घोर अमङ्गलका नाम होता है। यह केवल भारतवासियोंका ही विषय है, मो नहीं, यूरोपके अनेक महात्मा लोग भी इसका पक्ष समर्थन कर गए हैं। एपिफेनिस् (Epiphanes) -भा कहना है कि मोसिस (Moses)के निकट जो दृग्ग्य वर्षातके लघु चदित हुआ था घोर ईश्वरने सबसे पहले उनसे पास श्री नियमावली भोजी थी यह नीलममें ही निची थी। पुण्याका जेरोम (St. Jerome)ने कहा है कि इन्द्र नील धारण करनेसे राजाका प्रियवात्र होता है, मन्त्र, धर्म-में या जाते हैं घोर अन्धमसे छुटकारा मिलता है। धर्ममें धारण करनेसे बलवीर्य को वृद्धि घोर अमङ्गल निवारित होता है। यदि कोई लम्पट मनुष्य इसे धारण करे, तो इसका भोज्यजन्म जाता रहता है। चन्द्रनिमें पहननेसे कामसुखि नष्ट होता है, यही कारण है कि धर्म-याज्ञक मण्डल इसे चन्द्रनिमें पहनते हैं। कष्टमें धारण करनेसे श्वर दूर हो जाता है, जवातरमें धारण करनेसे यह रक्त-सायकी वन्द कर देता है। इन्द्रनीलकी चूर्ण कर गोले-तैयार करके पाँच पर रगनेसे बालुकाकण, कीट खादि कुछ भी चक्षुमें पड़े न प्रवेग कर जाय, उसी समय यह बाहर निकल पाता है। इसके मिया पाँचका पोना पचवा समस्तोपजन्तित चक्षुसदाह दवादि पोरोम्य हो जाता है। दूधके साथ ईसका चूर्ण मेषग करनेसे श्वर, मूर्च्छा, विषप्रयोग खादि प्रशमित होते हैं। विष नायकगति इसमें इतनी अधिक है कि जिन ग्लान वा मोमीमें कोई विषधर प्रायो रहे उसमें यदि इसे लान दे, तो वह उसी समय मर जाता है।

पद्यरागके जैसा इन्द्रनीलके पाकारके अनुसार इसका मील अधिक नहीं होता। होरेको तरह ज्योतिः-परिच्छेदताके अनुसार मूल्याका तापस्य दूपा करता है। यहियामे बढ़िया नीलम यदि एक कौरेटके कम तोन-में हो (कौरेट-मायः ४ रत्नी), तो यह ४० से १२०) ५० तकमें बिक्राना है घोर एक कौरेट होनेसे १२०)से

२५०) ५० तकमें। किमी किमी इन्द्रनीलमे लक्ष्मी की तरह ज्योति मिलती है। इस प्रकारका नीलम इन्द्रदुषोका एक पवित्र पदार्थ है। इसका मूल्य २००० से १०००) ५० तक है। प्रकृत यह इन्द्रनील रात दिन मय समय मोलवर्णकी रोगनी देता है। कभी कभी ऐसा भी देखा गया है, कि दिनमें दो चन्द्र नीलम एक ही रोगनी देते हैं, पर रात होते ही उनसे भिन्न भिन्न तरहको रोगनी निकलती है। कभी कभी इन्द्रनीलमें अनेक दोष भी देखे जाते हैं। इसमें मस, टाग तथा इसी तरहके कितने दोष रहते हैं। इसके पलाया इसमें तमाम एक-सा रंग नहीं रहता।

सफेद नील होरेमे मिलता सुनता है। यह तक कि यदि यह अच्छी तरह काटा जाय घोर बिना पालिका रहे, तो हीरेमें घोर इसमें कुछ भी फर्क देखनेमें नहीं पाता। दो चन्द्र काँच से कर उनके मध्य ऐसे सुकीर्णमसे रंग स्थापित किया जाता है, कि वे तमाम रंग हुएसे मान्म पहने पाते हैं। अमगिय लोग चक्षु-र इनकी नीलम समझ लेते हैं घोर अनेक समय ठगे भी जाते हैं।

चन्द्ररत्न राजदूतने पावानगरमें ८५१ कौरेटनीलका एक खण्ड उज्जैनवर्षविगित इन्द्रनील देखा था। पारिस (Paris) नगरकी खनिज-वित्तयाविहा (Musée-minéralogie) में १३२,१८ कौरेट नील-का एक नीलम है जिसका नाम 'एटल लुन मेमर' है। यह नाम पहनेका कारण लीग बतपाते हैं कि चन्द्र-के काठको लमली बचनेवाले टिमी दरिद्रने इसे प्राया था। एतनेमें यहनेके जयमें उनट फिर होता हुआ यह फरामो देगीव हिमो यन्त्रके यहाँ १८८०० प्रौद्योगिकी देखा गया। पीछे राजकीयमें बहुतसे सुन्दर सुन्दर नीलम हैं। इस्टेनके चीनयाण्टस नामक स्थानमें चन्द्ररत्न सुहृद इन्द्रनील है। इसकी किमी काउण्ट-पयो (Counter)के पास श्री चन्द्रल परिरवार घोर मनोहर दिव्याकति इन्द्रनील था अमे दिविसनदके महाभिनेमें देप कर लीग खचित हो गए थे। लन्दन महाभिनेमें एच० टि० होप (H. T. Hope) नाइरके मध्यकोत कुछ नीलम दिव्याये गए थे घोर वहाँ ८०

नीलकण्ठके जैसा, कुछ मयूरपुच्छके तारके जैसा और कुछ क्षण्य अपराजिता पुष्पके जैसा होता है। समुद्रकी निर्मल जनरागिरूप नोतरङ्गके बुदबुद और कीकिल कण्ठके जैसा नीला नीलम ही भक्षर देखनेमें पाता है। यह वषण् भेदसे चार भागोंमें विभक्त है, यथा—श्वेतका श्वाभायुक्त नील, रक्तका श्वाभायुक्त नील, पीतका श्वाभायुक्त नील और क्षण्यवा श्वाभायुक्त नील; इन चार अणियोंके इन्द्रनील यथाक्रमसे ब्राह्मण, चतुर्य, वैश्य और शूद्र नामसे प्रसिद्ध हैं।

पद्मराग जिस तरह उत्तम, मध्यम और अधमके भेदसे तीन प्रकारका है, इन्द्रनीलके भी उसी तरह तीन भेद हैं, यथा, माधुर्य इन्द्रनील, महानील और इन्द्रनील। महानीलके मधुमधुमें लिखा है, कि यदि वह सीसुने दूधमें डाल दिया जाय, तो माग दूध नीला दिखाई पड़ेगा। मधुमें अथ इन्द्रनील वह है जिसमेंसे इन्द्रधनुषको-सो श्वाभा निकले। पर ऐसा नीलम जलही मिलता नही। नीलममें पांच वर्त देही जाते हैं—गुणत्व, स्निग्धत्व, वर्षाण्यत्व, पार्श्ववर्तित्व और रञ्जकत्व। जिम इन्द्रनीलका पार्श्ववर्तित्व बहुत अधिक हो अर्थात् जो देखनेमें छोटा पर तीलमें भारी हो, उसे गुण कहते हैं। जिसमें स्निग्धत्व होता है, उसमेंसे चिकनाई छूटता है। जिसमें वर्षाण्यत्व होता है उसे प्रातःकाल सूर्यके सामने करनेसे उसमें नीलो सिखा-गे फूटतो दिखाई पड़ती है। पार्श्ववर्तित्व गुण उस नीलममें माना जाता है जिसमें कहीं कहीं पर मोना, चांदी, स्फटिक आदि दिखाई पड़े। जिसे जनपात्र आदिमें रखनेसे सारा पात्र नीला दिखाई पड़ने लगे उसे रंजक समझना चाहिए। गुण इन्द्रनील वंशवर्द्धकर, स्निग्ध इन्द्रनील घनवर्द्धकर, वर्षाण्य इन्द्रनील घनधान्यादि-वर्द्धिकारक, पार्श्ववर्ती इन्द्रनील यशस्कर और रञ्जक इन्द्रनील लक्ष्मी, यग और वंशवर्द्धक माना गया है। चम्बरक, त्रास, चित्रक, सृद्गर्भ, चम्बरगर्भ और रौल्य ये छः प्रकारके दोष इन्द्रनीलमें पाये जाते हैं। जिस इन्द्रनीलके ऊपरीभागमें चम्बरसो छाया दीख पड़े, उसे चम्बरक कहते हैं। इस प्रकारके इन्द्रनीलसे पायु और संपत्ति विनष्ट होती है। जो इन्द्रनील विशेष चित्र द्वारा भग्न भालम पड़े, वही त्रासनेल

है। इस नीलमके धारण करनेमें दृष्टोभय उत्पन्न होती है। जिसमें भिन्न भिन्न रंग दोख पड़ते हैं उसे चित्रक कहते हैं, चित्रकके दोषसे कुल नष्ट होता है। जिसमें मध्यभागमें मही लगे रहती है, वह सृद्गर्भ कहलाता है। सृद्गर्भके दोषमें गावकेण्डू आदि नाना प्रकारके त्वग्रोग उत्पन्न होते हैं। जिसके भीतरमें पत्युषा खण्ड दिखाई दे उसका नाम है चम्बरगर्भ। चम्बरगर्भ दोष-विनाशका कारण है। जो शर्करायुक्त है उसे रौल्य कहते हैं। रौल्य शीपाश्रित इन्द्रनीलधारी व्यक्तिको यम-राजका हार देलना पड़ता है। दोषहीन होने पर भी जो गुणयुक्त है, ऐसी इन्द्रनीलमणि जिसके पान से उसको पायु और यमको हर्षि होतो है। जो मनुष्य विशुद्ध इन्द्रनील धारण करता है, नारायण उसके प्रति प्रसन्न होते हैं और उससे पायु, कुल, यग, बुद्धि, लक्ष्मी और सन्धि ही उपति होती है। गुणसम्पन्न और दोष-युक्त पद्मराग धारण करनेमें जैसा श्वाभाम होता है, इन्द्रनील धारणमें भी ठीक वैसा ही फल लिखा है।

जिम इन्द्रनीलमें कुछ खोदित-सो श्वाभा दोख पड़े उसे टिटिम कहते हैं। टिटिमजातीय मणि धारण करनेके साथ ही गर्भियों-ही सुखसे सन्तान प्रसव करती है।

( १६७५० )

पद्मरागके जैसा नीलम तीन अवस्थामें पाया जाता है। यथा— ( १ ) शुभ स्वच्छ चूनेके पत्थर ( White Crystalline lime-stone )के मध्य निहित चम्बरगर्भमें देखा जाता है। ( २ ) पहाड़के निकटवर्ती महीके मध्य गिथिल चम्बरगर्भमें पाया जाता है और ( ३ ) रत्नप्रवृत्ति कंकड़के मध्य कमी कमी देखा जाता है। माधुर्यवत् हितीय चम्बरगर्भका नीलम ही यथेष्ट पाया जाता है।

फलद्वारके लिये इन्द्रनीलका इतना आदर है। नीलम इतना कठिन पदार्थ है, कि इस पर नङ्गागी आदि कार्य बहुत मुश्किलसे किया जाता है। इस प्रकार चम्बरगर्भ रहते भी इन्द्रनीलमें खोदित मूर्ति देवी गई है। यीसके ज्युपिटर ( Jupiter )की उच्चतम सुखाकृति इस इन्द्रनील पर खोदित है; ऐसा सुना जाता है। मार्लबोरो ( Marlborough ) संस्थानमें जो सब प्राचीन द्रव्य संग्रह किये गए हैं उनमेंसे मेडु साको

मंदाक (Medusa's head) नामन पर प्रस्तुत देखा गया है। इसके पलावा पीर भी कितने प्राचीन प्रति-  
मूर्तियाँ इस पत्थर पर निर्मित हैं।

पहले ही कहा जा चुका है, कि इन्द्रनीलमे नामा प्रकारकी व्याधि पीर पमङ्गलका नाम होता है। यह केवल भारतवासियोंका ही विश्वास है, भी नहीं, यूरोपके पनेक महात्मा लोग भी इसका पच समयन कर गए हैं। एपिफेनिस् (Epiphanes) का कहना है कि मोसिस (Moses) के निकट जो हज़ार वर्ष तक ऊपर उदित हुआ था पीर ईश्वरने सबसे पहले समूचे पाम भी नियमावली भेजी थी यह नीलमने ही निखी थी। पुण्यात्मा जीरोम (St. Jerome) ने कहा है कि इन्द्र नील धारण करनेसे राजाका प्रियपात्र होता है, शत्रु वश-  
में या जाती है पीर समयसे लुटकारा मिलता है। वचने धारण करनेसे धनवीर्य को हृदि पीर पमङ्गल निवारित होता है। यदि कोई सम्पत्त मनुष्य इसे धारण करे, तो इसका धोख्यन्य जाता रहता है। पञ्च निमें पहननेसे कामसुखि नष्ट होतो है, यही कारण है कि धर्म-याजक गए इसे पञ्च निमें पहनते हैं। कष्टमें धारण करनेसे श्वर दूर हो जाता है, कपातमें धारण करनेसे यह रक्त-  
स्त्रावको बन्द कर देता है। इन्द्रनीलको चूर्ण कर गोने-  
लेपार करके घाव पर रखनेसे बालुकाकण, कीट पादि कुछ भी शत्रुमें क्यों न प्रवेश कर जाय, समो समय यह शहर निकल जाता है। इसके सिवा पवित्रता पाणा पर्ववा यमनारोगजनित शत्रुमदाह इत्यादि पीरोग्य हो जाता है। दुर्घके साथ इसका चूर्ण सेवन करनेसे श्वर, मूर्च्छा, विषययोग पादि प्रयमिते होते हैं। निप मागकगण्डि इसमें इतनी अधिक है कि जिस स्वाम वा योगीमें कोई विषय प्राणो रहे सममें यदि इसे खान दे, तो वह समो समय मर जाता है।

पदारागके त्रैषा इन्द्रनीलके पाकारके पनुधार इसका मोल अधिक नहीं होता। डोरको तरह ख्योति-  
परिच्छयताके पनुधार मूल्यका तापतम्य हुआ करता है। यद्विषाये यद्विषा मोसम, यदि एक कौरटमें कम तोन-  
में ही (कौरट-प्रायः ४ रत्नी), तो यह ४० से १२०) ६० तकमें बिशाला है पीर एक कौरट बीनेमे. (२०)से

२५०) ६० तकमें। किमो किमो इन्द्रनीलमे मघतकी तरह ख्योति निकलती है। इस प्रकारका नीलम हिन्दुओंका एक पवित्र पदार्थ है। इसका मूल्य २०००) मे (१०००) ६० तक है। प्रकृत यह इन्द्रनील रात दिन मय समय मोलवणकी रोगनो होता है। कभी कभी ऐसा भी देखा गया है, कि दिनमें दो गुण्ड नीलम एक मो रोगनी देते हैं, पर रात होते ही उनमे भिन्न भिन्न तरहको रोगनी निकलती है। कभी कभी इन्द्रनीलमें पनेक दोष भी देखे जाते हैं। इसमें मीस, टाग तथा इमो तरहके कितने दोष रहते हैं। इसके पलावा इसमें तमाम एक-  
सा रंग नहीं रहता।

सकंद नील ईराने मिलता जुगला है। यहां तक कि यदि यह पक्षी तरह काटा जाय पीर बिना गालिग का रहे, तो हीरेमें पीर इसमें कुछ भी फर्क देखनेमें नहीं जाता। दो गुण्ड काच न कर उनके मध्य ऐमे सुकीगनसे रंग स्थापित किया जाता है, कि वे तमाम रंगो हुएसे मानूस पहने लगते हैं। पनभिन्न लोग पक्ष-  
सर इनको नीलम ममक लेते हैं पीर पनेक समय ठगी भी जाती है।

पञ्चरेज राजदूतने पावानगरमें ८५१ कौरटनीलका एक गुण्ड उख्यलवणविशिष्ट इन्द्रनील देखा था। पारिस (Paris) नगरकी खनिज-वित्यायिका (Musée-minéralogique) में १३२१६ कौरट तोन-  
का एक नीलम है जिसका नाम 'उडेन रयुन मेनर' है। यह नाम पहनेका कारण मोग चलता है कि यह देम-  
कि काठको कमली से चनेवासे किमी दरिद्रने इसे पाया था। पनमे यद्वतंति शायमें समट केर होता हुआ यह फरामो देमोय किमी पण्डक की यहाँ ! ८८००० फ्रेडमें सेना गया। दोपके राजकीयमें यद्वतने सुन्दर सुन्दर नीलम है। इंडोनेके दोमवालयटम नामक स्थानमें पञ्चुलुट सुदह्य इन्द्रनील है। इसकी किमो काठगट-  
पयो (Countess) के पाम जो पञ्चल पणिकार पीर मनोहर दिवालयि इन्द्रनील था समे पेरिसनगरके महाभनेसे देण कर मोग खरित हो गय मे। इन्द्रन महाभनेसे पच० टि० होय (H. T. मण्ड०) बाहकके सट्टहोत कुछ नीलम दिवसाये मए से पीर कर्षा र. नि.



होय (A. J. Hope) साहसने अपना खरज्योतिषक नीलम (Sapphire Maveilleux) सर्वके सामने दिखाया था जिससे दिनकी नोना और रातकी बैंगनी रंगकी रोशनी निकलती थी। इङ्गलैण्डके महाराज ४थे जार्जने राजमुकुट धारण करनेके लिए एक गढ़ा नीलम खरीदा था। मिजापुरके मरुन्तरे पास किसी समय अत्यन्त लज्जत एक खण्ड इन्द्रमोल था।

नीलमकुण्ड (सं० पु०) नीलवनमुद्र, नकुल। नीलमसिका (सं० स्त्री०) नीला नीलवर्णा ससिका, नीली मक्खी।

नीलमञ्जरी (सं० स्त्री०) नीलनिगुण्डी। नीलमणि (सं० पु०) नील; नीलवर्णा मणि। स्वनाम-ख्यात मणिविशेष, नीलम। नीलम देवी। नीलमण्डल (सं० स्त्री०) पदप, फालसा। नीलमलिका (सं० स्त्री०) १ विद्व, बेल। २ कपिल्य, कौष।

नीलमाधव (सं० पु०) नीली नीलवर्णा माधव; १ विष्णु, जगन्नाथ।

नीलमाप (सं० पु०) नील; माप। राजमाप, काला उग्र।

नीलमौलिक (सं० पु०) नीलवर्णनिमीलनमयभवेति नील-मौल-ठन्। खद्योल, जुगन्।

नीलमृत्तिका (सं० स्त्री०) नीला नीलवर्णा मृत्तिका। १ पुष्पकामीन, हीराकवीस। २ कन्यावर्ण मृत्तिका, काली मट्टी। (त्रि०) नीला मृत्तिका यत्। ३ जहाँ काली मट्टी हो।

नीलमूत्र (सं० पु०) मूत्ररोगविशेष। पित्तमे नीलमूत्रे उत्पन्न होता है। इसमें मालसारादि वा य-का प्रयोग करना चाहिए। इस रोगसे बाहर निकलता है, इसीसे नील

नामपट्टिका (सं० स्त्री०) कन्यावर्ण इत्युभेद, एक प्रकार की काली देवी।

नीलरत्न (सं० स्त्री०) इन्द्रनील-मणि।

नीलराजि (सं० पु०) नीलाना राजि; समस्तति, अन्य कारराशि।

नीलरूपोपनिषद् (सं० स्त्री०) उपनिषद्देव।

नीलरूपक (सं० पु०) १ इक्षुद्रुक्ष, पाकरका पेड़।

नीललोचन (सं० त्रि०) नील-लोचन-युव। नीलवर्ण-नेत्रगुल, नीली पालुवाला। जो मनुष्य शाक भुगा है, उसकी आँखें नीली होती हैं।

"शाकहारी च पुंसो जायते नीललोचनः" (शाततम)

नीललोह (सं० स्त्री०) नील-नीलवर्ण-लोहम्। १ वर्तलोह, बीदरी लोहा। २ लखलोह, काला लोहा।

नीललोहित (सं० पु०) नीलवासो नीहितवेति (यर्णं यर्णेन य २।१।६८) इति सूत्रेण कर्मधारयः। १ शिव, महादेव। धैर्यमासर्षे नीललोहित शिवके उद्देशसे व्रत करना होता है। इस व्रतमें त्रिषष्ट्या स्नान कर रातकी शिव-प्याशी और जितेन्द्रिय हो कर नाना प्रकारके उपहार को

उत्सवके साथ शिवकी पूजा करते हैं, पीछे संक्रान्तिका उपवास और होम करके व्रत समाप्त करते हैं। भगवान् शिवके प्रसन्न होनेसे कुछ भी फलभ्य नहीं है। महादेव-का कण्ठ नीला और मस्तक नीलवर्ण है, इसीसे शिवका नाम नीललोहित पड़ा है। (त्रि०) २ नीला-वन लिये साक, बैंगनी।

नीललोहिता (सं० स्त्री०) १ भूमिजम्, एक प्रकारका कोटा जामुन। २ शिवयावती।

नीललोह (सं० स्त्री०) वर्तलोह, बीदरीलोहा।

नीलवटी (सं० स्त्री०) केशरपत्रम्।

सं० त्रि०) मौक्त-निषयो विद्यतेऽस्य, महत्प-१ निवासयुक्त। २ नीलवर्णयुक्त।

सं० स्त्री०) १ रसाञ्जन, नीलमूलक। २ पदप-

नीलमैत्रिम् (सं० मित्र-चिन्ति। नी नीलमोर (सं० पु पर पाया जाता है।

नीला नीलवर्णा वर्षाभूः। १ वर्षाभिक, काला बैंग। लवणा वल्ली। बन्दर।

नीलवस्त्रन ( सं० त्रि० ) नील्या रत्नं वस्त्रं, नीलं यस्मिन् यस्या । १ नीलवस्त्रशुक्र, नीला या काला कपड़ा पहनने-वाला । ( पु० ) २ शनिपद । शनिका परिधि यस्त्र मोला । ३, इमीवे नीलवस्त्रन गच्छे शनिका बोध होता है । ३ नीलवस्त्रं वस्त्रं, नीला कपड़ा । ४ वस्त्रराम ।

नीलवस्त्र ( सं० पु० ) नीलं वस्त्रं यस्या । १ यस्त्रराम । २ नीलवस्त्रं यस्या, नीला कपड़ा । साक्षात्वादि तीनों वर्णोंकी नीलवस्त्र नहीं पहनना चाहिये, पहननेमें प्रायश्चित्त करना पड़ता है । नीलवस्त्र पहन कर यदि ध्यान, दान, तपस्या, होम, स्वाध्याय और विद्वत्तर्पण आदि पुण्यकार्यं किये जाय, तो वे निष्फल होते हैं ।

“स्नानं दानं तपो होमः दरापणायः निवृत्तवर्गम् ।

तुषा तरप महाशो नीलीवस्त्रस्य पाणोत् ॥”

( श्राव्यविवेक )

नीलवानर—एक प्रकारका बन्दर ( Inuus silenus ) । यह बन्दरका राजा Lion monkey भी कहलाता है । इस जातिके बन्दर काने होते हैं और समस्त रीचीमें टंका रहता है । इसकी सम्बन्धे प्रायः २ फुट और सेजकी सम्बन्धे १० इंच होती है । यह यानरजाति त्रिभिन्न श्रेणियोंमें मन्विविभक्त है । कोई तो इसे Papio, कोई Cynocephalus और कोई Macacus जातिके समझते हैं । किन्तु मेमन और घे माहब इसे स्वतन्त्र श्रेणीका बतना गए हैं । ये बहुत कुछ समुमान्से मिलने लगते हैं । कुछ काल पहने यूरोपवांसिगण इसके भारतके दक्षिणार्ग और सिंहलरासी समझने थे । बकनने इनका जो Wand-roo नाम रखा है वह इस सिंहल द्वीपीय समुमान्के जैसा है । किन्तु टेम्प्लेटन और सेयाड माहबने कहा है, कि सिंहलद्वीपमें ये कभी भी पाये नहीं जाते । भारतवर्षके पश्चिमघाट पर्वतमें, पश्चिमदेगल्य जंगलके मथा इनका वास है । कीचीन और तिवाङ्गु हमें भी ये पशुके संख्यामें मिलते हैं । पश्चिम निबिङ्ग और पश्चिम अरबमें ये रहना समझ करते हैं । ये प्रायः दल बंध कर बाहर निकलते हैं । एक एक दलमें १२ वा २० पशुका समूह भी पशुके बन्दर देखे जाते हैं । ये बड़े समूहों और लालुक होते हैं, किन्तु ये कोची और सिंहल जो पशुके दलें हैं ।

नीलवीर्य सं० पु० ) मोनं वीर्यं यस्या । नीलाभनहस्य, पियामान ।

नीलवृक्षा ( सं० स्त्री० ) नीलवर्षं वृक्षमिदं, नीलावीना नामका पेड़ ।

नीलवृष ( सं० पु० ) नीलो वृषः । वृषधर्मिदं, एक किष्कि-का दरवृक्ष । पर्याय—नील, वातारि, मोकनागम, गर-नामा, नखवृष, नखानु, नरत्रिय । गुण—ऊट, कषाय, उष्ण, स्रग्धु, वातानय और गानामपशुनाश ।

नीलवृक्षा ( सं० स्त्री० ) नीलवर्षं वृक्षं यस्या । १ गुन, रुई । २ तुणकाठ, तरकग बनानेकी लकड़ी ।

नीलवृक्षाक ( सं० स्त्री० ) नीलवृक्षा-कष । गुन, रुई ।

नीलवृष ( सं० पु० ) वृषविभेद, विभेद प्रकारका मोट्ट या बछरा ।

श्राद्धमें नीलवृष एक पारिभाषिक शब्द है । जिन वृषका रंग सान, पूर, चुर और मिर शंखवर्ण हो, उमें नीलवृष कहते हैं । ऐसे वृषके उष्णका बड़ा फल है । इसमें गया श्राद्धादिके समान फल प्राप्त होता है ।

“श्राद्धेयं बह्वः पुत्रा मधे कोट्टी मयां मजेर ।

पजेरु अरुनेपेन नीलं वा वृषगुण्यजेर ॥” ( देवीपुराण )

चनेक पुत्रोंमें यदि एक भी पुत्र गया जाट, पशुवा परमधेय कर वा नीलवृषका उष्ण करे, तो उसकी विशुद्ध उद्धार पाते हैं । नीलगाय द्वैतः ।

नीलवृषा ( सं० स्त्री० ) नीलं नीलवर्षं पुष्करनादिषुं गर्पति मयूते इति वृष-क, ततटाव । वासाको, वैगम ।

नीलवस्त्र ( सं० स्त्री० ) वस्त्रविभेद । मन्वपुराणमें इस प्रकार विषय इस प्रकार लिखा है—

श्री ईश, मोनोत्पन्न और शर्करापातमंगुल कर वृषभके माघ दान करते हैं, उदके पश्चिम वैष्णव-उद प्राद होता है । इसीका नाम नीलवस्त्र है । इस व्रतावर्षके समय रातकी पाना होता है ।

नीलविष्णु ( सं० त्रि० ) नीलः विष्णो उच्यते । १ नील-वर्षं विष्णुशुक्र । ( पु० ) २ वृषभेद ।

नीलविष्णु ( सं० पु० ) नीलः विष्णुः । मोमापुत्रादयः, महाजनका पेड़ ।

नीलविष्णिका ( सं० स्त्री० ) विष्णुभेद ।

नीलवृष ( सं० पु० ) महाशिव वृषिके जातिभेद ।

विषय इस प्रकार लिखा है—दोष जब चतुर्थ पटलमें  
 आश्रय लेता है, तब तिमिररोग उत्पन्न होता है। जिम  
 तिमिररोगमें कमी कमी एकवारगो कुण्ड न टिगाई पड़े  
 उसे लिङ्गनाग कहते हैं और जिममें पात्रागमें चन्द्र सूर्य,  
 मन्त्र, विजली आदिकी-सो घमक दिखाई पड़े उसे  
 नीलका कहते हैं। जब यह रोग वायुमें उत्पन्न होता है,  
 तब सभी पदार्थ भ्रष्टवर्ण और सफल दिखाई देते हैं।  
 पित्त कर्तृक उत्पन्न होनेसे आदित्य, खयोम, इन्द्रधनु,  
 तद्दिव्य और मयूरमुच्छकी तरह विचित्र वष भ्रष्टवा नील  
 क्षणवण देखनेमें पाता है अथवा सफेद वादलको तरह  
 भ्रष्ट लक्षण और मेवगूय समयमें संप्राच्छदकी तरह  
 भ्रष्टवा सभी पदार्थ जनप्रभावित-से मालूम पड़ते हैं।  
 रक्त कर्तृक इस रोगके उत्पन्न होनेसे सभी द्रव्य रक्तवर्ण  
 और मन्त्रकारमय नजर आते हैं।

यदि यह रोग कफमें उत्पन्न हो, तो सभी वस्तु श्वेत-  
 वर्ण और स्थि देखनेमें आती है। यदि यह सन्धिवा-  
 तज हो, तो जिधर ही नजर दोड़ाई जाय उधर ही सभी  
 पदार्थ हरित, श्याम, कृष्ण, धूस आदि विचित्रवर्ण-  
 विविध और विण्जुतकी तरह दोख पड़ते हैं। ४ सुद्रो-  
 ग-भेद। क्रोध और परिश्रम द्वारा वायु कुपित हो कर तथा  
 पित्तके साथ मिल कर मुखदेगमें आश्रय लेती है, इससे  
 मुखमें छोटी छोटी फोड़े निकल आते हैं जिन्हें 'सुखश्रद्ध'  
 कहते हैं। इस लक्षणका चिह्न जब शरीर वा मुखमें  
 उत्पन्न होता है, तब उसे नीलिका कहते हैं।

इसकी चिकित्सा—शिराविध, प्रलेप और अभ्यङ्ग  
 द्वारा मुखश्रद्ध, नीलिका, न्यच्छ और तिलकानककी  
 चिकित्सा करनी होती है। बटवृषकी कमी और  
 मधुरकी एक साथ पोस कर चक्षुषा-प्रलेप देनेसे यह  
 रोग दूर हो जाता है। मधुके साथ मञ्जिष्ठा घीम कर  
 उमका अथवा शगकके रक्त वा वा वक्षुषवर्षके दिनरेको  
 क्षामनूतमें घीम कर लेप देनेसे मुखश्रद्ध और नीलिका  
 नष्ट होती है। प्रकृवनके मूष और हृदीकी घीम कर  
 जमश्रा प्रलेप देनेसे भी बहूत्र टिनीसो नीलिका जाता  
 रहती है। इधरे साथ घीमे हृष मसूरमें घी मिना कर  
 मुखमें प्रलेप देनेसे मालिकरोग प्रगमित होता है और  
 मुखको क्षान्ति उच्छन्न होती है। बटवृषका दूरा पत्ता,

मालतो, रक्तचन्दन, कुट और लोध इन सब द्रव्योंकी  
 पोस कर प्रलेप देनेसे नीलिका जाती रहती है। इस  
 रोगमें कुड्म, मादि, तेल की सर्वांगलट है। कुड्म, मादि-  
 तेलकी प्रस्तुत प्रणाली—तिलतेन ८ घेर, कवकायै कुट, म,  
 मन्त्रचन्दन, लोध, पक्षु, रक्तचन्दन, खसकी जड़,  
 मञ्जिष्ठा, यटिमधु, तेजवत्, पक्षकाष्ठ, पक्षमूल, कुट,  
 गीरोचना, हरिद्रा, लाला, टारुहरिद्रा, गेरुमही, जग  
 कैयर, पलाशफूल, बटाङ्गूर, मानती, सोम, पर्यप, सुर-  
 भिवच प्रत्येक द्रव्य पाच कटाक, जन ३२ घेर।

इस तेलकी घोमो भांचने गाक कर प्रयोग करनेमें  
 व्यङ्ग, नीलिका, तिलकालक, मापक, न्यच्छ आदि रोग  
 प्रगमित हो कर चन्द्रमण्डलकी तरह मुखक्षान्ति उच्छन्न  
 होती है। (भावप्रकाश) ५ जलका च्चर।

नीलिकाकाच, (सं० पु०) नेत्ररोगविशेष। नीलिका दोष।  
 नीलिनू (सं० त्रि०) नीलः प्रगमस्तथाऽऽव्यस्य इति इन्।  
 प्रगमत् नीलवर्णं युक्त।

नीलिनो (सं० स्त्री०) नीलिनू डोप। १ नीलोष्ठः  
 नीलका पोधा। २ नीलपुष्पावृष, नीला बीजा। ३ श्याम-  
 त्रिपुटा। ४ अजमीठकी पत्नी। ५ सिंहपिप्ली।

नीलिनीफल (सं० स्त्री०) नीलीबीज, नीलका बीजा।  
 नीलिमा (हिं० स्त्री०) १ नीलापन। २ श्यामता, रवाबी।  
 नीली (सं० स्त्री०) नीली त्रिप्यायले मऽव्यस्यत्वाः, नील-  
 पचू, ततो गीरादित्वात् डोप। १ वृषभेद, नीलका पोधा।  
 पर्याय—काला, श्लोत्किका, पामीषा, मधुपर्णिका,  
 रञ्जनी, शोकली, तुष्या, तूषी, दोला, नीलिनी, तूनी,  
 चोषी, मिला, नीलपयो, राप्ता, मोषीका, नीलपुष्पी, कानो  
 श्यामा, गोधनो, शोकना, पाम्या, भद्रा, भारवाही, मोषा,  
 क्षाया, व्यञ्जनकेयो, मझाफना, सतिता, क्लोतनी, वेगो,  
 चोरटिका, गन्धपुष्पा श्यामलिका, रञ्जपयो, मञ्जवला,  
 स्थिररङ्गा, रञ्जपुष्पा, मूलि, मूलिका, श्लोत्किका।

इसका गुण—ठण्ड, तिक्त, उष्ण, वंशश्मिकर, काम,  
 कृक, वायु और विपरीर, व्याधि, सुप्त, जन्तु और द्रव्य-  
 नाशक।

भावप्रकाशकेमतमें यह रेषक, तिक्त, केरहितकर  
 और भ्रमनाशक है।

उष्णका गुण—ठण्ड, श्लेष्मा, वातरक्त और कृकवायु-

नीलगण्ड । नील शब्दने विरक्त विभाग देको । २ नीलशा-  
रोग । ३ नीलाश्रनिका, नीला सुरमा । ४ कालाश्रनि,  
कालो कणाम । ५ श्लोकनिका, धनका पेड़ । ६ हृददारक ।  
नीलो ( हि० वि० ) कानि रंगही, नीलके रंगको, कालो,  
धाममानी ।

नीलोघोड़ी ( हि० स्त्री० ) १ शाने चयवा महरंगनी  
घोड़ी । २ आमिके माय निनी दुई कागजको घोड़ी ।  
इने पछन लेनेने जान पड़ता है, कि चादमो घोडे पर  
सवार है । हकामो इने पछन कर गाडी मियाके गोल  
गाने हुए भोज मांगने निरुत्तते है ।

नीलोचकरी ( हि० स्त्री० ) एक प्रकारका पोधा ।  
नीलोचाय ( हि० स्त्री० ) यज्ञकुग या चमिया घास ।  
नीलोकल ( सं० स्त्री० ) श्लोकन ।

नीलोराग ( सं० पु० ) १ प्रेमभेद । २ स्थिर प्रेमपुरुष ।  
इसका पर्याय स्थिरभेद है । ३ नायक-नायिकाका  
पूवसांगविशेष । जिस रागमें मनोगत प्रेम चयगत नहीं  
होता और अतिमात्र शोभित है, उस रोग ही नीलोराग  
कहने है । राममोताका राग नीलोराग है ।

नीलोराग ( सं० पु० ) चक्षुरोगभेद, पाषिका एक रोग ।  
नीलीहा देखो ।

नीलू ( हि० स्त्री० ) एक प्रकारकी घास, पसवान ।  
नीलगर—मन्नाज प्रदेशके टलिन कपाड़ा जिनके चक्र-  
गत खानगोड़ तातुकका एक गहर । यह चतः १२  
१६० पोर देगा ०५ ८००के मध्य अवस्थित है ।

यहां साधारणतः हिन्दू, मुसलमान और ईसाईका नाम  
है । यह गहर पहले मलबारके चिरकसबगंके अधीन  
था । १०८८ ई०में इट-इण्डिया कम्पनीने इस पर अपना  
टपल जमाया और राजाकी पैगमन मुकर कर दो ।  
पान तक भी राजाके वंशधरोको पैगमन मिलतो है ।

नीलोत्पल ( सं० स्त्री० ) नील नीलवर्ण उत्पल । नील-  
वृक्ष (A blue lotus, Nymphaea caerulea), नील-  
कमल । पर्याय—उत्पलक, कुचलय, इन्दीवार, कन्दोटा,  
सोमशिक, सुमन्य, कुहनामन्य, चमिनीत्पल, कन्दोट,  
इन्दिरामर, इन्दीवार, नीलपत । गुण—घृणादु, नील,  
धूमि, शोण्यकारी, पाकमें अतिशय और रक्तविना-  
शक । इतरक देखो ।

नीलोत्पलमय ( सं० वि० ) नीलोत्पल-मयट् । नीलवृ-  
क्षमाच्छन्न, नीलवृक्षक, जिनमें नीलकमल ही ।  
नीलोत्पलनायट्टन ( सं० स्त्री० ) नीलोत्पलनाच नाम वृक्ष ।  
चक्रवाणि दक्षक हृत्तोपधेद ।

नीलोत्पलो ( सं० पु० ) नीलोत्पल घाटलेन तहवा वा  
पचयव्यति इति । १ शिवगमिद, शिवके एक षंग । २  
बोरमहात्मा संजुयोका एक नाम ।

नीलोद ( सं० पु० ) नीलजलविशिष्ट भागर वा नदी, यह  
समुद्र या दरया जिनका पानो मोला है ।

नीलोकर ( का० पु० ) १ नील कमल । २ कुमुद, कुई ।  
ककोमो मुसखीमें कुमुद या कुईका जो व्यवहार होता है ।  
नीर ( हि० स्त्री० ) १ घर बनानेमें गहरा नानोके रूपमें  
पुदा कुपा गहा जिसके भीतरने दोवारकी जोड़ाई पारथ  
होतो है, दोवार उठानेके लिए गहरा किया हुआ स्थान ।  
२ दोवारके लिए गहरे किये हुए स्थानमें ईंट, पत्थर,  
मिटो पादिकी जोड़ाई या जमावट जिसके ऊपर दोवार  
उठाने हैं, दोवारकी लड़ या पाधार । ३ स्थिति, पाधार,  
जड़, मूल ।

नीर ( हि० स्त्री० ) नीर देखो ।

नीयर ( सं० पु० ) नवत्याकामं यत् कुत्रचित् दिव्यता-  
निष्पादनायेति नी-स्वरच् प्रत्ययेन निगतमात् गुप्ताभावेन  
साधुः ( अत्रात्वेरेति । इण् १११ ) १ भित्तिपरिमात्रक । २  
वायुच्छिद । ३ वास्तव्य, रहनेको जगह । ४ पहा, कीचड़ ।  
५ जल, पानी ।

नीवाक ( सं० पु० ) निरकरं निरतं वा उच्यते इति नि-  
वच्-घञ्, कुत्वं उच्यते दोषत्वं च १ मृत्याधिभ-  
हेतु धाम्यादिमें श्लोकसमूहका आदर्शातिशय । २ तुला-  
धारवा ध्वज, दुःखानि, मर्षांशो । पर्याय—प्रयाग, दुष्वा-  
च्य, दुर्लभत्व । ३ पचननिष्ठति ।

नीमानस ( हि० पु० ) मसानाम, धर्म, बरबादी ।  
( वि० ) २ नष्ट, चोपट, बरबाद ।

नीवार ( सं० पु० ) नि-उ-घञ्, उपसर्गव्य दीर्घत्वं ।  
शुद्धाग्निभेद, पनही वा तिबीके चामल । पर्याय—उप-  
धान्य, नमनीति, पाव्यधाय, मूनिधाय, तबोडर, परल-  
गति । गुण—मधुर, तिग्म, पवित्र, पक्व, सधु ।

नीवारक ( सं० पु० ) गीवार एव स्वार्थे कन् । नीवार,  
खण्डान्धमेद, तिष्ठो ।

नीवारतुण्डिका ( सं० स्त्री० ) नीवार ।

नोवि ( सं० स्त्री० ) निव्ययति निवीयते वा नि-ञ्ये-इञ्  
यनोपः पूर्वस्य दीर्घः ( नोव्यो दतोः पूर्वस्य च दीर्घः । उग  
४।१५ ) १ ण्य, वाजो । २ षणिकृत्वा मूर्धन, पुंजी ।

३ राजपुत्रादिका बन्धक । ४ स्त्रीकटीव्रह्मबन्ध, मृतकी  
छोरो जिसमें स्त्रियां धोतोकी गांठ बांधतो हैं, फुफुंढो,  
मारा । ५ वधमात्र, माही, धोतो । ६ कमरमें लपेटेी  
हुई धोतोकी बड़ गांठ जिसे स्त्रियां घेटके नोचे मृतकी

छोरीमें वा रीं हो बांधतो है । ७ लड़कियोंमें पड़ी हुई बड़  
छोरो जिसमें लड़गा कमरमें बांधा जाता है, इजारबन्द  
नीवीभार्य ( सं० द्वि० ) मूल भादिसे बचानेका बन्ध-  
पाच्छादक ।

नीहत् ( सं० पु० ) नियतं वचंते वसत्यत्र जनममुपः  
इति नो-ह पश्चिकरणे क्तिप् । ततो पूर्वपदस्य दोषः  
( महवृत्तिपिठपिठस्त्रिद्वितिलेवु कर्णो । पा ६।३।११६ )  
जनपद, देश ।

नीम ( सं० स्त्री० ) नितरां त्रिवर्ते लम्बाङ्गुलकात् क पूर्व-  
दाघस्य । १ छदिगान्तभाग, क्यरका सिरा यां किनारा ।  
पर्याय—बन्धोका, पटनग्रान्त । २ नीम, पद्मिका घेरा ।  
३ चन्द्र, चांद । ४ रवतोत्रचक्र । ५ वन ।

नीमार ( सं० पु० ) निःशेषिव नितरां वा शीघ्रंने हिम-  
यात्वाद्योनिन पञ्चादत्र वा नृ-ञञ्, उपसर्गस्य दीर्घत्व ।  
१ हिम धोर वायुनिवारकं चावरणवत्, मरही रक्षा  
भादिसे बचावके लिये परदा, कनात । २ ममहरी ।

नीपह ( सं० द्वि० ) पतिक्रम, जय ।  
नीस ( द्वि० पु० ) सफेद धनुरा ।  
नीमानो ( द्वि० स्त्री० ) तैदिव मायाधोका एक छन्द ।  
१ वसमें १३वीं जो । १०वीं मात्रा पर विराम होता है ।  
यह छपनामके नामसे अधिक प्रसिद्ध है ।

नीसू ( द्वि० पु० ) जमीनमें गड़ा हुआ काठका कुंटा जिस  
पर रख कर चारा या गन्ना काटते हैं ।  
नीहार ( सं० पु० ) निःश्रयते इति नि-ञ-घञ्, उपसर्गस्य  
घञोति दीर्घत्व । १ तुवार, हिम, पाना । पर्याय-  
बन्ध्याय, तुवार, तुहिन, हिम, मासेय, महिका, चउप्रल,

निगात्रल, निहार, मिहिषा । यह कल्प धोर वायुवर्धक  
माना गया है । २ कुम्भटिका, कुहरा । निहार देलो ।

नीहार—१ हिमालयके पाददेशमें अवस्थित एक प्राचीन  
जनपद । यह पौराणिक उज्ज्वलान जनपदके दक्षिण पदिम-  
में तथा वर्त्तमान, काबुल धोर सरखस् गद्दीके महामख्यन  
पर जनाजावाटके समोप अवस्थित था । यह नगर माल्य  
धोर यामनपुराणमें निगहर वा निराहार नामसे तथा  
पार्यायवर्त्तमानचित्रमें निगहर नामसे उल्लिखित हुआ है ।

पध्यापक खामेनके मतानुसार इस स्थानका नाम नगरहार  
है । २ गोमतीतीरवर्ती एक ग्राम ।

नीहारस्कोट ( सं० पु० ) हृद्दाकार नोहारविण्ड, बर्फका  
बड़ा बड़ा टुकड़ा ।

नीहारिका ( सं० स्त्री० ) पाकागमें भूषका कुहरको तरह  
फैला हुआ शीतप्रकाशपुञ्ज जो पंघेरी रातमें सफेद  
धन्वेकी तरह कहीं कहीं दिखाई पड़ता है ।

नीहारिका देयो ।  
नु ( सं० अव्य० ) नीति मुदति वा । नु, नद वा सितद्रुधा-  
दित्वात् डु । १ वितक । २ अपमान । ३ विकल्प । ४  
चतुनय । ५ चतोत । ६ मय । ७ हेतु । ८ अप-  
देश । ९ भादिग । १० चतुताप । ११ संशय । १२  
सध्याम । १३ मध्योघन । १४ अपमान ।

नु ( सं० पु० ) चतुस्वार ।  
नुकता ( सं० पु० ) १ विन्दु, बिन्दु । २ लगतो हुई वक्रि,  
फवती, कुटकता । ३ दोष, ऐव । ४ घोड़के मत्से पर  
बांधनेका एक परदा । यह भारतके रूपका होता है  
धोर इसलिये बांधा जाता है जिसमें बाजमें मन्त्रियां न  
सगीं ।

नुकताचोम ( फा० वि० ) द्विद्वान्वेषी, दोष टूटनेवाला  
या निकालनेवाला ।  
नुकताचोने ( फा० स्त्री० ) द्विद्वान्वेष्य, दोष निकालने-  
का काम ।

नुकती ( फा० स्त्री० ) एक प्रकारकी मिठाई; बिलनकी  
छोटो मशोन बुदिघा ।  
नुकरा ( सं० पु० ) १ चांदी । २ चौड़ीका सफेद रंग ।  
( वि० ) ३ सफेद रंगका ।

नुकरी ( द्वि० स्त्री० ) जलागर्षिके पास रहनेवाली एक

विद्विषा । प्रभुके पौर अफिद पौर घाँव काभी होती है ।  
 मुकसान ( प० पु० ) १ कास, कमी, घटो । २ घति,  
 हानि, घाटा । ३ पत्रगण, दीव, विकार, विवाह, खराबो ।  
 मुकाई ( हि० खी० ) खुशबोने निरानिका काम ।  
 मुकीमा ( हि० वि० ) १ नोकदार, जिनमें नोक निकली  
 हो । २ सुन्दर टपका, नोक भौंकका, वाँका तिरछा ।  
 मुकीसी ( हि० वि० ) सुधीया देखो ।  
 मुकड़ ( हि० पु० ) १ नोक, पतला सिरा । २ पत्ता, सिर,  
 खोर । ३ निकला हुआ कोना ।  
 मुका ( हि० पु० ) १ नोक । २ मीठोके खिसमें एक लकड़ो ।  
 मुकम ( प० पु० ) १ दीव, देव, खराबी, बुराई । २ घुटि,  
 कमर ।  
 मुपना ( हि० लि० ) भाग का वित भेटना ।  
 मुपार ( हि० खी० ) लडकी मार जो कलन्दर मानुके  
 सुँह पर मारते हैं ।  
 मुगदी ( हि० खी० ) मुकली देखो ।  
 मुगिन—दिल्लीके निकटवर्ती एक नगर । यह गाहरम-  
 पुर जिनमें पड़ता है पौर पचा० २८ २०' ७० तथा  
 देगा० ७८ २५' पूरके मध्य अवस्थित है । यहाँ पनेक  
 प्राचीन कालियाँ देवनेमें पाती हैं जिनमेंसे धान् खीका  
 दुर्ग प्रसिद्ध है ।  
 मुहंकी—पामामके पनागत एक जिला । यहाँके राजा  
 तोयमिहमे १८२५ ई०में अपना राज्य मन्दिपके पनु-  
 मार चंघेजीको सुपुटे किया । मन्धिकी मर्त यह हो  
 कि पन्थनी राजाको विदेशीय शत्रुके पाकमणने बचा-  
 धियो । राजा देगके बादमेंके पनुमार मजाका पाथन  
 करेगे । यदि कोई पन्थि कम्पनीके पधिकृत स्थानेमें  
 पन्थाय कार्य करके राजाके राज्यमें पाथय ले, तो  
 राजा उसे कम्पनीके हाथ लगा दे ।  
 मुपना ( हि० लि० ) १ पंग या पंगमे मनी घुरे किमी  
 पमुका भटकके सिंघ कर पलम होना, सिंघ कर उत्त-  
 रना, उठना । २ बुरोया जामा, मायून पादिमे  
 हिलना ।  
 मुपवाना ( हि० लि० ) नोचनेमें किमी दूरमेको प्रपल  
 करना, नोचनेका काम करना, नोचने देना ।  
 मुकट ( हि० पु० ) मंगोलमें २५ मीमाचोमिमे एक ।

मुजित्-उदोसा—रोहिलखण्डके एक गामनकता । १८वीं  
 गताब्दीमें इन्हीं दिल्लीका गामनभार पारब किया पौर  
 गारपालमके बड़े लडके मुबराज नियानगरतरे प्रति-  
 निधि हो कर राजकाय चलाया । पामोपतको लडाई-  
 के बाद १७८ ई०में पोगवा माधोरावने बहमं प्यक मेला  
 मंघड कर भारतवर्ष जीतनेके लिए लडे भेजा । विम-  
 जी लख, माधोजी विन्धिया पौर तुकाजी होमकरने  
 सैन्यदलका नेतृत्व पारब किया । जब लडेमें राजपूत  
 राजाघोषो जीत लिया, तब मुजित्-उदोसा बहल डर  
 गये पौर उनमे मेला करना चाहा । लेकिन पामोपतको  
 लडाईमें इन्हीं मराठोके विरुद्ध विपुल संध्याम किया  
 था, इस कारण माधोजी विन्धियाने प्रतिनिधिमणने  
 दण्ड हो कर इनका सन्धि प्रस्ताव मंजूर न किया ।  
 विमजी लडेमें मन्थिका समाचार पोगवाको निप भेजा ।  
 पोगवाने दूध दिया कि यदि मुजित्-उदोसाके साथ मन्थि  
 करना किशोका नो लडो भरता है, तो उनका प्रस्तावित  
 विषय विचारपूर्वक सुननेमें क्या पावनि है ? तदनन्तर  
 मराठाओंके लोगन-क्रममे यह ज्ञान चंघेजीके हाथमे  
 ले लिया गया किन्तु उनको यह पाया फलपती न हुई ।  
 योड़े ही दिनेके मध्य १७० ई०में मुजित्-उदोसा  
 देहान्त हो गया ।  
 मुजिक खाँ (नाजिक खाँ)—१७०३ ई०में महराष्ट्रीका  
 प्रभाव पारब होने पर मुजिक खाँने दिल्लीमन्थटको  
 मभामे विरुधे स्थान पाया ।  
 नवाबने यकीर मुजिक खाँको मन्थुट करनेके पामिपाय-  
 से कम्बोद-मभामे लडे अपना प्रतिनिधि बनाया । मुजिक  
 खाँने कितनो ही लडाईयोंमें विजय पाई थी । रोहिल-  
 खण्डपामिघोंके पाय जो लडाई लडो थी उनमें इन्हीं  
 चंघेरेज पौर सुजा-उदोसाका साथ दिया था पौर पंटे  
 लडोका पामिमाल चूर किया । पागवा भरने इनका  
 प्रभाव कम गया । जब ये दूर देगेमि नामा काठेमि लगे  
 थे, तब यहाँ उनके पाकीय जनेमिसे कितने इनके मन्थ,  
 हो गए । ये पबहुन चंघेरेज खाँकी वादमारको मभामे  
 अपना प्रतिनिधि छोड़ गए थे । लडेके हाथमे मुजिक  
 खाँने राजकाय पौर साधारण कार्यका भार पारब  
 किया था । इस जूतन दीवानको मुकड-उदोसाको

हो गई थी। उन्होंने सम्राट् के यहां मुजिफ खांको गिरा-  
यात कर अपनी प्रधानता जमानमें खूब कोशिश की। मुजि-  
फ ने विरुद्ध जो मंत्र पढ़यस्य चक्र रहि थे, उन्हें धँस नहीं  
जानते थे, सो नहीं। उस समय ये भारो कामोंमें उनमें  
रूप थे, इस कारण उन्होंने हम और कुछ भो ध्यान न दिया।  
अपने सुगन्धित पदातिक सेन्थके गुणमें ही ये विराट्-  
कार्यमें कृतकार्य हुए थे। जिस समय दिल्लीके सम्राट्  
अंगरेजोंके आग्रहमें थे, उस समय उनके कप्तक उक्त  
पदातिक सेन्थका उक्तूटांग सुगन्धित हुआ था। मुजिफ  
खांके पधीन हो दल सेना गो जिनमेंसे एक दल जर्मन-  
बानो समूहके और दूसरा दल फ्रांसो सेन्थके  
पधीन था।

मुजिफ खांने निर्विघ्नतामें अपनी पसाधारण क्षमता-  
को फौनाया। वे लुल्फिकर खांको उपाधि ग्रहण कर  
अमीर-उन-उमराव हुए थे। अनन्तर ग्यायपरायणता  
और हड़ताके माथ ये सम्राट् और साम्राज्य दोनोंका  
शासन करने लगे।

मुजिव-उद्योग (नाजिव-उद्योग)—रोहिलखण्डके एक  
ख्यातनामा सुदृढ औरपुष्ट और जमींदार। १७५० ई०-  
में अहमदशाहने इन्हे सेनापतिके पद पर प्रतिष्ठित किया,  
किन्तु बादशाहके अनुपस्थितिकालमें बजोरमें नाजिव  
उद्योगके स्थान पर अपने पादमीको नियुक्त किया। दिल्ली  
के राजपुत्र अलीअहमद खानके बजोरके स्वभावको मद्दत  
न कर सके और नाजिवको शरणमें पड़के। बादशाहने  
पुनर्बारे नाजिव उद्योगको सेनापति बनाया। इस समय  
यह पान्तमगोरके बजोर शाह्य उद्योगने अपनी क्षमताको  
हृदयपूर्वक निवे महााराष्ट्रमें महायता मांगी। यह  
शुभर अथ शुकनाय राव (राधव)को लगी, तब उन्होंने  
मानसमें दिव्योपाया करके नगरमें घेरा डाला। नाजिव-  
उद्योग किमो तरह भाग गये। राधवने हिन्दुस्थानका  
व्याग कर मध्यममुहकी दो टलोंमें विभक्त कर दिया।  
एक दल लाहौर चला गया और दूसरा दिल्लीमें हो रहा।  
जिदोग दलका नियत्य दलको सिन्धियाके हाथमें था। उन्होंने  
साह्य उद्योगके पात्रानुसार नाजिव उद्योग और रोहिल-  
खण्ड-बामिदोंके विरुद्ध पक्ष धारण किया। अन्तमें नाजिव  
उद्योगने मोहिन्दपुत्रकी सेनाको तहस तहस कर गड़ा-

के दूसरे पार मार मगाया। हमो बीचमें अहमदशाहने  
१७५८ ई०में पन्नाथ जीननेके लिए पाए और नाजिवके  
माथ मिल गए। दोनोंने मिल कर दलको सिन्धियाको  
पक्षी तरह परास्त किया। अहमदशाहके मारने पर  
उनके पुत्र अलीअहमद गारपालमकी उपाधि धारण कर  
सिंहासन पर अधिकार जमाया। इस समय रोहिला-  
गय बहुत क्षमतावानो हो उठे थे और दिल्लीमें वा कर  
रहने लगे थे। मरदार नाजिवउद्योगने अपने स्वामी-  
नता फौना दी और रोहिलखण्डमें राज्य करने लगे।  
१७७० ई०के अन्तमें इनका देहान्त हुआ।

मुजिव खां (नाजिव खां) रोहिलखण्डके एक शासनकर्ता।  
१७७२ ई०में महाराष्ट्रने रोहिलखण्ड पर आक्रमण कर  
इनके प्रभु धन-रत्न हरिया लिए थे।

मुजीवावाइ—सुरादावाद जिन्केका एक भाग।

मजीवावाद देखो।

मुजुफगढ़ (नाजफगढ़)—कानपुर जिलेके पश्चात्त इलाहा-  
बादके मध्यवर्ती एक नगर। यह कानपुर शहरमें १० कोस  
दक्षिण-पूर्व गङ्गाके किनारे अवस्थित है। वर्त्तमानसमय-  
में यह एक प्रसिद्ध वाणिज्य स्थानमें गिना जाता है। इसके  
पास ही एक मोलकीडो है जिनमें यह और भी प्रसिद्ध  
हो गया है।

मुद्रका—उत्तर-अमेरिकाके पश्चिम अटलन्टिकमें जामि-  
विशेष। रक्षितवर्तके गीनप्रधान स्थानमें से कर समुद्र-  
तट तक इनका वास है। अङ्गरेजोंने इनका 'मुद्रका-  
कलमयोय' नाम रखा है। किन्तु यह नाम उनका देगोय  
नहीं है। दन्तदेवों के कई नामोंमें पुकारे जाते हैं, यथा  
सेनुक, क्लोटमप, वाकग, मुन्टलोमो वा क्लामथ।

ये देवमेंमें अङ्गरेजोंमें मोरे होते हैं। किन्तु देग  
व्यवहारके अनुसार ये अपने सर्वोङ्गमें नामा प्रकारका  
महो लेपे रहते हैं। इनके मन्त्रकता धाकार पपराप  
मनुष्योंके जमा होता है लेकिन कुछ विषया होता है।  
इस कारण इनका मन्त्रक किम जातिके जमा है, इसका  
निष्पन्न करना कठिन हो जाता है। जब लड़का जमा  
लेता है तब उसके मन्त्रक दोनो बगल काठको पट्टी  
जोड़ने बांध देते हैं, कुछ काल बाद हा उनका मन्त्रक  
मदाके लिए विषया हो जाता है। पाषण्ड्या विषय यह

है, कि ऐसी विज्ञतायस्त्वाने उनके मदिप्रकृ या बुद्धिप्रतिष्ठी कोई ज्ञान नहीं होता। ये लोग कर्मठ और पसभ्यता-मुयायो सुचतुर होते हैं। किन्तु इनके गीतन स्थानमें रहने पर भी ये उपयोगी यन्त्रादि बुनना नहीं जानते। यही कारण है, कि ये हमेशा रोएदार भासका चमड़ा पहने रहते हैं। ये लोग सुकोमल और तत्परताके साथ अपने वामोपयोगी गृहादि और प्रयोगानुसार नौकादि बनाते हैं।

इनका पाहार-व्यवहार पन्थाम्य मनुष्यजातिसे पृथक् है। सामन मछली को इनकी प्रधान उपजोबिका है। गीतकालमें भोजनके लिए ये पहले-से ही मछलीको संघट्ट कर खाता रहते हैं। जब रङ्गे काफ़ी मछली मिल जाती है, तब ये फूले नहीं समाते और बड़े सेन-से दिन काटते हैं। उस समय कोई कोई दम्पति वन-में जा कर पनाहार ऐन्द्रजानिक मन्त्रसाधन करते हैं। इस प्रकारके तपःकारियोंकी 'तामिय' कहते हैं। इन लोगोंका विश्वास है, कि दम्पति तपस्याके समय 'गोत्रोक्त' नामक एक देवताके माय कथोपकथन करते हैं और उन्हींकी कृपासे मात्रा प्रकारके पनोक्ति कार्य कर सकते हैं।

प्रवाद है, कि मुटका लोग नरमांस खाते हैं, किन्तु यह कहां तक सत्य है, कह नहीं सकते। 'तामिय' तपस्विण्य किसी किसी दिन कृप्यलोमविगिट चर्मसे गरीर ढक कर और मूत्रक पर बल्कलनिर्मित सामनवर्णके मुकुट पहन कर वनमें बाहर निकलते और घाममें प्रवेग करते हैं। उन्हें देखनेके साथ ही पाशासक्त इवनिता सबके मुख भाग जाते हैं, डेहल ओ घाबसो है, ये ही उनके सामने पाते हैं। इस समय ये उन्हें पकड़ कर उनके हाथसे ही तीन घाम मांस काट लेते हैं। मांस काटनेके समय धोर हो कर स्तम्भ रहना ही प्रयोगयोग है। जो ऐसा नहीं करते उनको प्रमाजमें निन्दा होती है। तामिय भी यदि पनाघाम तथा गोप्रगामे मांस काट न सकें, तो उनको भी निन्दा दी जाती है। उच्चिखित प्रकारसे जितना मांस खाया जाता है, उन्हीसे पनुमान कर सकते हैं, कि ये लोग कहां तक सामांसी हैं। इसके पन्थावा ये पन्थ नरमांस भोजन नहीं करते।

इनकी भाषाका अनुमीनन करनेमें ये पत्रनक जातिही भाषा समझे जाते हैं। दोरी जातिहीका भाषा-के पनेक शब्दोंके ग्रैय भागमें 'तन' वा 'तनी' शब्द मगा रहता है और दोरी हो एक हो पर्यमें व्युद्घन होते हैं। उदाहरणरूप दो एक शब्द और उनके पर्य गाये दिए जाते हैं यथा—'वायःकुरकित्तून'—'वायिन्दन' ; 'तोमकदिन्निन्नून'—'तुम्बन' ; 'हितूनन्जितन'—'मुम्बन' ; 'पागकीयातन'—'युवती, रमयो इत्यादि।

इनके घर काठके बने होते हैं जो बहुत पररिप्लन और मछलीकी गन्धसे परिपूर्य रहते हैं। घरमें काठकी पनेक पुतनियां रहती हैं। कभी कभी मदर्नी पकड़नेके जितने जोशार हैं तथा किस प्रकारसे मछनियां पकड़ी जाती हैं, उन्हें भी दोवारमें प्रदित कर देने हैं। इनका पाशासम्भान जैसा पररिष्कार रहता, परिषेय यन्त्रादि जो वंसा ही रहता है।

एतौ कपड्डेका ये लोग जरा भी व्यवहार नहीं करते और न इसे बुनना ही जानते हैं। मांसके चमड़ेके पन्थावा 'दाहन' उपसो दावरो वनो दुर्ग एक प्रकारकी घटाई पहनते हैं। कभी कभी घटाईके मोरे जार रोएमें टक कर उसे ही गरीरके लपरा रख लेते हैं।

इनका प्रधान खाद्य मछली है। इनका घर हमेशा मछलीमें भरा रहता है। मछलीकी गन्ध इनको तीव्र होती है कि मुटकाके सिवा पन्थ मनुष्य परमें प्रवेग नहीं कर सकते। ये लोग मछलीका तप भी पीते हैं और उनके पन्थसे एक प्रकारकी गोटी बनाते हैं।

ये लोग बड़े पसभ्य होते हैं, इस कारण इनको मुटिका उनको सुनील्य नहीं होती। गिकार जेवनने तथा मछली पकड़नेके विषय में दूसरा कोई राग नहीं लातन। पाहार-व्यवहारमें ये लोग रक्षय' मार्किसजातिही पन्था सब प्रकारसे निष्ठ हैं।

मुन (सं० वि०) मु सुनो न् । मुन, प्रयमित, जिनको मुति वा प्रमांसा की गई हो।

मुनरिया—मानवके पन्थगत एक दुर्ग गहर। यह पन्था २४° ०' उ० और ८५° २३' पू०के मन्थ पर-किन है।

मुनि (सं० की०) बु-भावे-जिन् । १ मुनि, यन्था । २ पूषा ।



मुम्बई ( मं० वि० ) मुम्बई पाकिस्ती मन्त्रालयः (मुम्बईदेहि ।  
 या २२।५(१) १ चित्त, चलाया हुआ । २ प्रेरित, मीत्रा  
 हुआ । ३ सुदृग्मत्तवृत्त । ४ मनुष्यवृत्त ।

मुम्बई ( मं० पु० ) १ मुम्बई, बयौ । २ मन्त्रिण, चीनाद ।

मुम्बईराय ( मं० वि० ) १ जिनकी उत्पत्ति अर्थिचारमे  
 हो, वर्णमंकर, दीगता । २ कमीना, बदमाश ।

मुम्बईराय—वालेगुरका एक परगना । क्षेत्रफल १०६६  
 वर्गमील है । इसमें कुल २० जमींदारों लगती हैं और  
 राजस्व ११०२०) रु०का है ।

मुम्बईरा ( हि० वि० ) स्वादेमें लम्कःका खारा, नमकीन ।

मुम्बईरा ( हि० वि० ) मुम्बईरा देखो ।

मुम्बईरा ( हि० वि० ) मुम्बईरा, चेत काटना ।

मुम्बईरा ( हि० वि० ) छोटी जातिकी मूत । यह शिमा-  
 नय पर काश्मीरमें ले कर मिन्निक तत्र तथा धरमा और  
 टिबेट-भागमें वहाई पर होता है ।

मुम्बईरा ( हि० पु० ) १ मोनी मही खादिसे नमक निकालने-  
 याका, नमक बनानेका रोजगार करनेवाला । २ मोनिया,  
 मोनिया । मोनिया देखो ।

मुम्बईराय—मुम्बईराय जिलेका एक नगर । यहले यह  
 नगर बहुत विस्तृत था । अभी इसके चारों ओर भूम-  
 माओर रह गए हैं । यह पचा० २१° २५' उ० और देगा०  
 ७४° १५' पू०के मध्य अवस्थित है । इसके पासकी जमीन  
 बहुत उतरी है, किन्तु जन्माभावसे उपयुक्त मर्यादा नहीं  
 होती । नगरमें एक पायकी दूरी पर दादगुरकी कब्र  
 है । कब्रके लपर एक मन्दिर बना हुआ है । इसके चलावा  
 ओर भी कितने मन्दिर देखनेमें पाते हैं ।

मुम्बईराय ( दूसरा नाम गाजीपुर )—बालाघाट जिलेके  
 पश्चिममें एक बहुजनकीबं गहर । इसके चारों  
 ओर महीकी दावार है और बीचमें एक दुर्ग है । यह  
 पचा० १५° २३' उ० और देगा० ८८° ३७' पू०के मध्य  
 अवस्थित है ।

मुम्बईराय ( मं० वि० ) मुम्बईराय मन्त्रालय प्रवर्द्धक च मः । १  
 मुम्बई, चित्त, चलाया हुआ । २ प्रेरित, मीत्रा हुआ । ३

मुम्बईराय—सादरके उत्तरार्धमें अवस्थित एक जिला । यह  
 शिमासयके उत्तर पश्चिम, सायुक्तरीके किनारे पचा०  
 १५° से १६° उ० और देगा० ७०° से ७८° पू०के मध्य

अवस्थित है । तिलक भरमें यह स्थान बहुत लंबा और  
 सुन्दर है ।

मुम्बईरायकोट—मनवार प्रदेशका एक छोटा गहर । यह  
 पचा० ११° ३२' उ० और देगा० ७१° ३५' पू०के मध्य  
 कोलिकदुमें ५२ मील पू०-उत्तरमें अवस्थित है ।

मुम्बईराय ( फा० स्त्री० ) १ प्रश्न, दिवावा, दिवावा ।  
 २ तड़क भड़क, ठाठवाट, मज्जधज । ३ भाषा प्रसारकी  
 वस्तुओंका कुतूहल और परिचयके लिए एक स्थान पर  
 दिवावा खाना । ४ वह मिला जममें अनेक स्थानोंमें  
 इकट्ठी की हुई चराम और चूना वस्तुएं दिखाई  
 जाती हैं ।

मुम्बईरायगाह ( फा० स्त्री० ) यह स्थान जहाँ अनेक प्रकार-  
 की उत्तम और बहुत वस्तुएं मँपद करके दिखाई  
 जायें ।

मुम्बईराय ( फा० वि० ) १ दिवाऊ, टिपोवा, जो देखनेमें  
 मधकीना और सुन्दर हो, पर टिकाऊ या कामजा न  
 हो । २ जिसमें ऊपरी तड़क भड़क हो, भीतर कुछ मार  
 न हो ।

मुम्बईराय ( मुम्बई )—धेनुधियायके अन्तर्गत पश्चिम  
 की एक श्रेणीके मनुष्य । ये लोग मुम्बईराय धर्मावलम्बी  
 हैं । करारकी मुम्बईराय जिले राजपत्रोंके गर्भमें उत्पन्न  
 हुए हैं, ऐसा प्रयाद है । वर्तमान समयमें ये लोग २२  
 गावाधीन विभक्त हैं ।

मुम्बईरायपुर—त्रिपुराराज्यका एक परगना । इसका क्षेत्र-  
 फल ७३२ वर्गमील है । इस परगनेमें कुल चार जमीं-  
 दारी लगती हैं ।

मुम्बईराय—जैलिया पहाड़के मध्यवर्ती एक नगर । इस  
 स्थानके पश्चिमकी ओरके पश्चिम वर्तमान है । मँपटनेपट  
 इसका साक्ष्यका कथना है कि इस स्थानके साथ उत्तरे  
 धर्मका सम्बन्ध है ।

मुम्बईराय ( नवकराय )—पतावाजिनावाही एक मक-  
 सेनी कायस्थ । अपने जीवनके माहात्म्यमें ये पचीप्याके  
 नवाम मुम्बईराय-मुम्बईराय यहाँ सेवकके कार्यमें निगुप्त  
 हुए ।

मुम्बईरायके मरने पर उत्तरे भागिनेय मन्त्रालय  
 पचीप्याके नवाम-मन्त्रालय पर अवस्थित हुए । उत्तरे

नयनरायको राजाको उपाधि दे कर सभ्याध्यक्ष पोर अपने महकागिद्वयमें नियुक्त किया । इस समय मफ-  
दरको ईई मयं टिकोमें रह कर विद्रोहियोंको दमन  
करना पड़ा या पोर नयनराय स्वयं मुद्राङ्कनाके साथ  
पयोधामदेगके मासनकार्य चला रह्ये । जब बादशाह  
महम्मदशाह अपनी महम्मदशाहके विरुद्ध युद्धयात्रा कर  
गभनल जिसेके बह्मगदुर्गको ज्ञात न मके, तब नयान-  
यजोरके पादेगसे महाराज नवन गभनलको गए पोर एक  
ही दिनमें दुर्ग-प्राचोरको तहस-महस कर गवुको हस्त-  
गत कर लिया । इस पर मफदरने प्रमत्त हो कर इनकी  
सही तारीफ को पोर बहुमूल्य पदार्थ पुरस्कारमें दिये ।  
१७६० ई०में जब शीहस्त-पकमान विद्रोही हो उठे,  
तब महाराज नवन उन्हें दमन करनेके लिये अपसर  
दिए । इस युद्धमें ये पकम्पद गाँ बह्मगके साथ बहुत  
काल तक घसीम माहसके साथ लड़ते हुए मारे गए ।  
पोहे इनके लड़के सुसालसिंह राजा हुए ।

मुबल (नवलसिंह)-भारतपुरके जाटवंशोंय राजा सूर्यमलके  
द्वितीय पुत्र, २५ पत्नीके प्रथम गर्भजात । सूर्यकी प्रथमा  
पत्नीके द्वितीय पुत्र रतनसिंहकी मृत्युके बाद उनके पांच  
वर्षके पुत्र खैरोसिंह मन्थिमभासे राजपद पर प्रतिष्ठित  
हुए । अपने भतीजेका राजकार्य चलायके लिये नवल-  
सिंह नियुक्त हुए । करीब एक मासके बाद खैरोसिंहकी  
मृत्यु हो गई । जब मुबलसिंह सिंहासन पर बैठे पोर  
स्वाधोनभावसे राज्यशासन करने लगे ।

राज्यवहनेकी पोर इनका विगेष ध्यान था । ११८६  
हिजरीमें इन्होंने बागु जाटके पुत्र पञ्जीतसिंहसे कामल-  
गढ़ दुर्ग ज्ञात लिया । इस समय पञ्जीतको महायताके  
लिये टिकोमें राजसेना पारि । किन्तु राम्ने ही नवनने  
उन्हें मार भगाया । इस युद्धमें इन्हें दिल्लीके पधिकार-  
भूक्त निकेन्द्रा पोर चन्दास्य त्याग हाय लगे । पोहे  
सम्राट् बाह चालमने मेस्त्राध्यक्ष लजक चोको उनके  
विरुद्ध भेजा । इदल पोर चर्नातके मित्र टोमनि लड़ाई  
दिहो । पहले नवनने जो सब स्थान अपने पधिकारमें  
कर लिये थे उनमेंसे लजक को फरोडाबाद पोर चहबगा-  
बाद ज्ञात कर पोहे दोग दुर्ग ज्ञातनेके लिये अपसर  
हुए । इसी दुर्गमें नवलसिंह रहते थे । लजक को इस

दुर्गको दो बय तक घेरे रह्ये । इस समयके सभा  
नवनको मृत्यु हुई ।

मुविगन्न—पागराके चत्तगंत एक नगर । यह फदंगा-  
नादसे १८ मोल दक्षिण-पश्चिममें पचा० २०' १४" उ०  
पोर देगा० ०८' १५" पू०के मध्य पयस्थित है ।

मुसवा (घ० पु०) १ निवा दुधा कागज । २ कागजका  
यह पिट जिम पर हटोम या बंध रोमीके लिये बोध-  
सेवनसिंधि पाटि लिखते हैं, दवाका पुरजा ।

मुमरत खाँ तुगनक ( नमरत )—फिरोज तुगनकके पोर ।  
११८१ ई०में दिल्लीके जमींदारगण दो दशोंमें विभक्त  
हुए । इनमेंसे एक दशने बादशाह महम्मदशाह पोर दूसरे-  
ने नमरतका पक्ष धयनधन किया । इस प्रकार यह-  
विवाद लड़ा दुधा पोर तोम त्रय तक विषम हुआकान्त्र  
चन्ता रहा । ११८६ ई०में नमरत एकबाल गाँके  
हायकी कठपुलना बन गए । किन्तु चन्तामें एकबादने  
नमरत चोको दनवलके साथ नगरसे बाहर निकाल  
दिया था ।

मुनुर—दिल्लीके पधोन एक छोटा नगर । यह पचा० २८'  
५६" उ० पोर देगा ००' १०" पू० महाराजपुर नगरसे १४  
मोल दक्षिण-पश्चिममें पयस्थित है ।

मुभविङ्ग (मुजिबोङ्ग)—सम्राज प्रदेशके छप्पा निमान-  
गंत एक जमींदारी । यह प्राचीन भ्यान जिसे वर्षीय  
जमींदारके कहे था । इसका क्षेत्रफल ६८४ वर्गमील  
है । यह जमींदारी ६ भागोंमें विभक्त है, यथा—१ बेल्-  
प्रगड़ा, २ ख्येगुड, ३ मिर्जापुर, ४ खलियेरापुर, ५ तपो-  
मील पोर ६ मदुरा । वार्षिक पाय ६ (१००००)  
हकी है ।

२ उक्त जमींदारीका सदर पोर प्रधान नगर । यह  
पचा० १६' ४०" २१" उ० पोर देगा० ८०' ५६" २०"  
पू०के मध्य पयस्थित है । क्षेत्रबाड़ासे यह २६ मोल उत्तर-  
पूर्व एक जंघी भूमि पर बना हुआ है ।

यहाँ एक प्राचीन महाका दुर्ग है जो चमी जमींदारी-  
के पालामन्दानमें परिवर्तन हो गया है । यहाँका बहूटे-  
पर न्यासीका मन्दिर करीब चार मी बर्षका पुराना  
है । उक्त समयका बना हुआ एक बहूत सुदृग्मालधनी-  
मन्दिर भी है जिसका बाहर बहुत कम लोग करते हैं ।

गत गताब्दीमें गङ्ग के हाथमें यह नगर बसाया गया है ।  
यद्यपि १५ मील दक्षिण-पूर्व में स्थित है वाम तट को  
बान्सा गया है, वही इस नगरका प्रवेशद्वार है । यहाँ  
नारियल और आमके फलें बहुत द्रव्य हैं ।

मू. जलपला—छत्ता जिसेके पश्चिममें एक पाम । यह बिन्-  
कोण्डमें ८ मील दक्षिणमें अवस्थित है । यहाँके पश्चि-  
माकदेशमन्दिर और मण्डपके सामने स्थाभगावमें गिजा-  
लिपि उत्कीर्ण है । पाममें १ मील उत्तरमें एक प्राचीन  
दुर्गका भग्नावशेष देखनेमें आता है ।

मू. जिकन—दक्षिण-भारतकी एक नदी । यह कूर्ग राज्यमें  
पश्चिमघाट पर्वतकी मेरुकारा श्रृंखलाके निकटवर्ती  
सम्प्राप्ती उपत्यकामें निकलती है और पश्चिमामिस्र  
हीनो हुई मद्राजके दक्षिण कणाड़ा जिलेकी पार कर  
कारमगोडके निकट घसवनी नामके पारश्वीपसागरमें  
गिरती है ।

मू. त (मं० वि०) नू-स्थाने कर्मणि क्त । सुत, प्रमंशित ।  
गत (हि० वि०) १ नूतन, नया । २ शरीर, शरीर ।  
मू. तन (मं० वि०) नवण्व तनप् नवस्य नूरादेश्य ।  
(नवस्य नूरादेश्यभवनप्लावक प्रत्यया वक्ष्यते । वाति०  
५।४।५) इत्यस्य यात्किं कौश्या तनप् । १ पुरातन,  
नया, नवीन । पर्याय-प्रयय, पमिनन, नव्य, नव, नवीन,  
नूय, सद्यस्क, पञ्जीर्ण, अभ्यय, प्रतिनव । २ बिलस्य,  
पयुर्ण, शरीर ।

गतनगुड़ (मं० पु०) पमिनन गुड़, नयागुड़ ।  
नूतनपाप—भारतमहासागरके बोर्नियो द्वीपके उत्तर-  
पूर्वमें अवस्थित एक द्वीपपुच्छ । इसके उत्तर और दक्षिण  
में दो भागके दो छोटे छोटे द्वीप हैं । उत्तरार्ध द्वीप-  
पुच्छ पचा० ४° ४५' उ० और देशा० १००° ८' पू०में पड़ता  
है । उत्तरमें दिसम्बर मास तक बहुतसे जहाज इसी  
द्वीपके दक्षिणय हो कर निरापदमें बोम्बेन्द्रको जाते  
आते हैं । दक्षिणार्ध द्वीपपुच्छ पचा० १ उ० और देशा०  
१०८° पू०के मध्य बोर्नियोद्वीपके उत्तरपश्चिममें अव-  
स्थित है । मध्याह्न ब्रह्मपुत्रोप ३४ मील लम्बा और १३  
मील चौड़ा है । इसकी चौड़ाई मध्य जगह एकमी है ।  
यहाँके वहाँके पार पमण्य छोटी छोटी दीपायनी देखनेमें  
आती हैं । ये सब हाथ पर्वतमण्डल हैं । कोई कोई पहाड़

तो इतना ऊँचा है, कि समुद्रागार ४५ मील दूरमें  
देख पड़ता है । यहाँ मलयजानिया वाम है ।

नूतनता (हि० स्त्री०) नवीनता, नयापन, नूतनता  
भाव ।

नूतनत्व (मं० पु०) नयापन, नवीनता ।

नूतनपको—मद्राज प्रदेशके कर्णूल जिलेका एक पाम ।  
यह नन्दीकोटकुरुके १२ मील दक्षिण-पश्चिममें अवस्थित  
है । यहाँ शास्त्रनेयका एक मन्दिर है जिसमें एक  
पण्डित गिरालिपि खोदी हुई है ।

नूत (मं० त्रि०) नव एव नवस्य जप् नूरादेश्य ।  
नूतन, नया ।

नूट (मं० पु०) नूदति रोगावापिनिति लुट-क प्रथो-  
दरादित्वात् ङोष् । पत्रग्याकार ब्रह्मादहस्य, मङ्गल ।  
ब्रह्मराव देको ।

नूत—उड़ीसाके पश्चिम पुरो जिलेकी एक प्रधान नदी ।  
यह जिलेके मध्यभागमें निकल कर पचा० १८° ५१' ३०"  
उ० और देशा० ८५° ३०' पू० दयानदीमें जा कर मिल  
गई है । इस नदीमें कभी कभी बाढ़-पा आया करती है  
जिसमें तीरस्थ गस्यादि लट हो जाते हैं । इसकी तीर-  
भूमि म्हाभयतः ऊँची है और जनस्रोतकी रोकनेके लिए  
कहीं कहीं बांध भी देखे गए हैं ।

नूत (हि० पु०) १ प्राप्त । २ दक्षिण-भारत तथा आसाम  
बर्मा आदि देशोंमें मिलनेवाली आसामकी जातिकी एक  
प्रजाति । इसमें एक प्रकारका लाल रंग निकलता है ।  
इसका व्यवहार भारतवर्षमें कम लेकिन जावा आदि  
द्वीपोंमें बहुत होता है ।

नूतम् (मं० बन्ध०) नू जनयतीति क्त पश्चिमि पम् ।  
१ तर्क, लहापोह । २ पर्यन्तय । ३ अवधारण । ४  
स्मरण । ५ माक्यपूरण । ६ उत्प्रेक्षा ।

नूता—१ बालेश्वर जिलेके पारुरा परगनेका एक प्रकाश  
बांध । यह पचा० २° ५०' २१' १२" उ० और देशा०  
८५° ५२' ३६" ५३" पू० तक विस्तृत है । समुद्रका जल  
जिसमें सामने प्रवेश न कर सके, इसलिये यह बांध दिया  
गया है । जिसमें कभी कभी यह बांध पनिकटा कारण  
हो जाता है । १८५० ई०में गमाईनदीका जल बांध  
रखनेके कारण बाँहर निकलने लगी पाया जा जिसमें

विशेष पण्डितको सम्भावना हो गई थी। किन्तु ईश्वरको अनुकम्पामें यह बाध जल्दके विगमें टूट गया था। २ दिनात्रपुरकी एक नदी।

नूनी—सुग्रीदावादमें ७४ सोन उत्तर-पश्चिमके कोनमें पनस्थित एक सुदृढ नगर। यह बसा २८° ५६' उ० ७०' देशा० ८७° ८' पू०के मध्य पवस्थित है।

न.पुर ( ८० पु० ली० ) नू-जिय. मुनि पुरति पुर पण-गमने-क । १ स्वनामस्थित पादभूषण, पेरमें पहननेवा क्षिप्रिका एक गहना, पेंत्रनो, पु'चद । २ नगणके पत्रले भेदका नाम । ३ इत्याकृतशोध एक राणा ।

न.पुरवत् (सं० लि०) नू.पुर: विद्यार्थि, मत्पू मख व । नू.पुरवृत्त, जिनमें नू.पुरपहना की।

नूर (५० पु०) र ज्योति, प्रकाश, पाभा । २ शो, क्षान्ति, गोभा । ३ ईश्वरका एक नाम । ४ सत्रीनमें बारह मुहामर्मेमें एक ।

नूरखीशाह—मुसलमानोंने सुकी-सम्प्रदायके एक मुक और भीरु मसुम खलीशाहके पुत्र और शिष्य। इनके पिता दाक्षिणात्यवासी और छेपद पत्नी राजा नामक किसी मुसलमानमें दीक्षित हुए। पारश्वराज खरोम खाने राजत्वकालमें ये पितापुत्र भारतवर्षको छोड़ कर निराजनगरको चले गए और वहाँ रहने पवने पच-कर्मित भये सतका प्रचार किया। थोड़े ही दिनोंके मध्य मा० तीस हजार अनुयायनके गिया हो गए। नूर-पत्नीने पहले इत्याहन नगरमें धर्मोपदेशको वषट्कता दी। उनको पचव्या कम होने पर भी दया और बुद्धिमें बंधी-को मात करती थी। मुसलमान धैरिवाचिकगण मुककण्ठसे इनका मुवाजुबादे कर गए हैं। दिनों दिन इनको गियास'रखा बढ़ती देख इत्याहमके धर्म'यात्रकगण जल उठे। पीछे उन्होंने संकल्प करके सुकी-साम्प्रदायिक मतमें विश्व निम्दा करतें हुए राजा पत्नीमर्दान खाने पवित्र और मत्त इस्लामधर्मको ज्हापनाके लिए पारिदेन किया और कहा कि सत्य धर्मके ऊपर भोगीका जो विश्वास है उसे वे भोग हटा रहे हैं। यह सुन कर राजा बहुत विगड़े और सत्यधर्मके ऊपर विशेष धारणा दिलवाने हुए यह कहा, कि इस प्रकार सत्यधर्मका निन्दावाद धर्मविरोध और राजनीतिविरोध है। पता

उसी समय उन्होंने दूक दिया कि इन विरुद्धाचारियोंके नाक कान काट कर देगेंगे निकाल दो। फिर क्या था, मूख' मैनिकोंने बाधा पाते ही, जो सामने मिले उनही नाक, कान पोर दाढ़ी काट हासे। इस समय मुसलमानधर्म'अपत्तमें पनेक निरोध इस्लाम धर्म' मैविद्योको यह निषेध भोग करना पड़ा था। ये नामा स्थानोंमें पर्यटन कर मुसलमाननगरको भोट पाए। प्रवाद है, कि विय था कर ये मरे थे। इस समय इनके माय: साठ हजार गिय हो गए थे।

नूरखीनूकरारी—एक कवि। ८०४ हिजरीमें गिलन प्रदेश जब पारश्वराज तहमास्पके अधिकारमें थावा, तब इनके पिता मोसामा पचदुर-रजाक निरुत्तरभावसे मारे गए थे। ये पहने गिलनके शासनकर्ता पदग्रहण खाँके पधीन काम करते थे। विनाकी मृत्यु पोर पदग्रहणको राज्यच्युति देख कर ये कीवानजिनको भाग गए। पीछे वर्षा ८२३ हिजरीमें ये अपने भाई पनुमकतु पोर इमान को साथ ले भारतवर्षको भाग पाए। मन्घाट, पचदुर गाहनमें पहले रहने सेनाध्यक्षके पद पर नियुक्त किया, किन्तु ये पचधारापथे विमकुल पराछु'ए थे। एक समय जब ये विना इतिपारके अपने दलके बीच था खड़े हुए, तब माघियोंने इनको खूब हँसी उड़ाई। इस पर उन्होंने जवाब दिया कि दलके ज'सा विद्याभूरागोको सुख-विद्या पच्छो नहीं समता। रहने पोर भी कहा था, कि जब तैमूर देग जीतनेको कपसर हुए, तब उन्होंने ज'ट गवादिको दलके बीचमें पोर जियोंको दलके पीछे रना था। जब कोई दलमें विद्वान् व्यक्ति हान पृष्टने, तब ये कहा करतें थे, कि फारोंमें भा पीछे विद्वान् पोर पच्छितोके रहनेका स्थान है, कारण विद्याभूरागो व्यक्ति कभी भी साहसी नहीं हो सकते।

इन्हें पण्डित्यवहारसे पण्डित ही कर मन्घाट, पच-वाने रहने बडासमें भंज दिया। वर्षा ८८८ हिजरी-में मुरपजर खाँके शासनाधीन बङ्गालमें जो राष्ट्रविद्वान् हुए, उनमेंमें नूरखीनूको मृत्यु हुई।

नूरखीनू सराय—पञ्जाबके बड़ो-दोवांश विभागमें पच-गैन एक नगर। यह इरारनो नदी' काए' किनारे २० सोन दाखल-पुर्व' पोर साहोर नगरके ३३ माल पुर्व-

टगिपमें पक्षा ११' ३०' उ- तथा देगा ०५' ५२' पू० के मध्य अवस्थित है।

नूरउलीन् महम्मद-एक सुमनमान चन्पहार। इन्होंने 'कामो-वन-हिकायत' नामक एक ऐतिहासिक चन्प लिखा जिसे १२३० ई०में दिल्लीग्वर अलतममके मियाअब निजाम-मन-मुल्क महम्मदके नाम पर उल्लग किया था। नूरउलीन्महम्मद मिर्जा-धनाउलीन् महम्मदके पुत्र और खाजा दुबैनके पोत्र। सम्राट् बाबरकी कन्या सुलफुख बेगमसे इनका विवाह हुआ था। इन्होंने कन्या सतिमा सुलताना अकबरके कहनेसे १५५८ ई०में खानखाना बेराम खांकी ब्याहो गई थी।

नूरउलीन्मफे दूनी-एक सुमनमान इबि। डिस्टके खोरासन प्रदेशके अन्तर्गत आमनगरमें इनका जन्म हुआ था। मगहद गहरमें इन्होंने पढ़ना लिखना समझ किया। बाबरशाहसे परिचित होनेके पक्षसे इमायूँके साथ इनका सवा-भाव था; सम्राट् हुमायूँ इन्हें खूब प्यार करते थे, सभी समय अपने साथ रखते थे। इनके पाचरणमें मस्तुट ही कर सम्राटने सफेदून परगना इन्हें जागीरमें दिया। तभीसे ये सफेदूनी कहलाने लगे। सम्राट् अकबरकी तरफसे इन्हें समाना परगनेकी फौजदारो और 'नवाब-तरखान'की उपाधि मिली थी। समानाके फौजदारके पद पर रह कर इन्होंने गोरमहम्मद दीवानकी धनुरी नामक खानमें परास्त किया। ८०३ हिजरीमें इनका शरीरावसान हुआ था।

१५६८ ई० वा ८०० हिजरीमें ये यमुना नदीमें कर्नाम तत्र एक नहर काट ले गए। यह नहर मैलू-लहर नामसे प्रसिद्ध है। इनो साल सम्राट् अकबर शाहके पुत्र लहाङ्गीरका जन्म हुआ था। पादरके माघ इन्होंने सम्राट् पुत्रका 'सेरपावा' नाम रखा। सुलतान सलीमके मायके लिये उल्ल नहरका नाम मैलू पड़ा। विद्या-रुपांके लिए कीर् कीर् इन्हें मुजानूरउलीन् कहा करते थे। काव्य-जगत्में इन्होंने विंगेय ग्याति नाम की थी। सामयिक कविषीने इन्हें "नुरी"की पटथो दी थी। इनकी सगाई हुई "दीवान" और "सोत-साना" नामक दो पुस्तक मिली है।

नूरउलीन् मीर-एक ऐतिहासिक। इन्होंने पारख भाषामें

"तारीख-कामोर" नामक कामोरपठेयका एक इतिहास लिखा है। इस चन्पका जेव खण्ड १६८ मजिह और मज्जद अजीमने समझ हुआ था।

नूरउलीन्-बेगम-मिर्जा इब्राहिम दुबैनकी कन्या और सुलफुख बेगमकी गर्भजाता तथा सुलफकर दुबैन मिर्जाकी बहन। युवराज मनोमके माघ इनका विवाह हुआ था। यहो मनोम भविष्यमें भारतके इतिहासमें लहान्गीर नामसे प्रसिद्ध हुए। १०२३ हिजरीमें ये बर्तमान थे।

नूरउल्लक-१ एक चन्पकार, दिक्वोवासी पकदुल इकबिल सेपुहोन्के पुत्र। इन्होंने पिताके लिये हुए इतिहासका पूर्ण संस्कार कर "सुबदन्-उत्त-वारिख" नामसे उसको प्रकाश किया। पूर्व पन्थमें जो सब भूल और कूट चोखे ययाव्यान पर सखियेगित कर इन्होंने उज्वल भाषामें पुस्तक लिखी और छोडुवारी तथा इलामचमके विषयमें एक "भारा" लिखा। सम्राट् फासमगोरके राजवकालमें १६६२ ई०की इनकी मृत्यु हुई।

अम-सम्राकी, अम-देलावी और अम-नुजारा ये सब इनके सयोदा-सूचक नाम हैं। इनके इतिहासमें बङ्गाल, दालिवात्त, दिल्ली, युजरात, मालव, जोनपुर, सिन्धु, कामोर पादि देशोंके राजावीका संघिम विवरण है।

२ एक निधारणति। ये १०८६ ई०में विद्यमान थे और बरेलीमें काजोका काम करते तथा पारख भाषामें कविता लिखनेमें विंगेय पारदर्मी थे। पारख भाषामें इन्होंने तीन सारखे भी अधिक त्थोकीकी रचना की। इनकी कवितामें शोकके रंग पर लिखित कुरान-टोका, परबो और पारमोभाषामें लिखित कामोटाउपह कुल मसनवी और तोस दीवान मिलते हैं। कविताग्रन्थके काव्य इन्हें "सुनाइम"की उपाधि मिली थी।

नूर-उल्ला-सुन्दरी-सम्राट् अकबरशाहकी राजसभाके एक समराव। इनका अमल नाम "नूर-उल्ला-बिन-बीक-अन-दुबैन-अन-सुन्दरी" था। इन्होंने "मजलिब-उद-मीमिनोन्" नामक एक चन्पकी रचना की। इस विस्तृत शीवगीमें 'मिया' मन्धटायके विगित समरावोंका इतिवृत्त लिखा है। इतिहासके मन्थनमें यह एक समुल्य चन्प है। इस चन्पके इस मजलिब का भागमें

केवल प्रवादगत लीवनी घोर व्यवहारकीर्षिका इतिष्ठत निष्ठा है। इसके पन्नाया प्रयेक चिदिष्ठक वा चकोम-  
के जीवनपरितके गेव भागमें उगके क्षत मन्थादिके नाम भी वर्णित हैं। गिया मन्थदायके मत पर इनकी विमिय अथा थी। इस कारण जहानूनीरके राजत्वकालमें १११-  
ई०की इन्ने यघैठ कट भुगतने पड़े थे।

मूर-प-किरात—भारतवर्षके पयिम भोमालोयर्षी काबुल-  
नदीकी शाखा। मूर घोर किरात नामक दो शाखाएं विभिन्न स्थान होती हुई एक साथ मिल कर काबुल-  
नदीमें गिरी हैं।

मूरकीष्ठी—टासिषाल्यके बीजापुर राज्यके पन्नागत एक नगर। यह बीजापुर राजधानीने ३० मील दक्षिण-पयिममें अवस्थित है। साल पत्यरके पहाड़के ऊपर यह नगर बना हुआ है। यहके मकान भी साल पत्यरके ही बने हुए हैं। इसके दक्षिण-पयिममें पवेलाकृत उच्च पहाड़के ऊपर एक सुदृढ़ घोर दुर्ग 'य दुर्ग' रचित है। इसका गिर्य-  
कार्य घोर गठनाटि सतना सुन्दर नहीं है।

मूरगढ़—मुगलराजधानी दिल्लीके निकटवर्ती एक नगर। यह पभी सभीमगढ़ नामके मगड़र है।

मूरगुम—टासिषाल्यके बीजापुर प्रदेशके पन्नागत एक छोटा जिला। यह घाटप्रभा घोर मानप्रभा नामक दो नदीके मध्यमस्थान पर बना हुआ है। इस जिलेमें घटामो घोर रामदुर्ग नामक दो नगर लगते हैं।

मूरघाट—बम्बई प्रदेशके पूना जिलामन्नागत एक नगर। पेशवा नारायणरावको मृत्यु होने पर उनके पुत्र मधुराव-  
ने १७०४ ई०में विजयपद ग्रहण किया, इनके सिंहासन पर बैठनेमें रघुनाथरावने ईर्ष्यावित हो सुलतने पन्द्रह प्रो-  
के महाघटा मंगी। पहरैभी सेना पूनानगरसे मूरघाटमें जो बीम खोनका दूरी पर था, पड़ चुके। इधर महा-  
राष्ट्रगण भी पूनामें सक्त नगरकी घोर पचसर हुए। दोनों पक्षमें घमघाम कुछ चल। युद्धमें किमी भी पचको लोत न हुई। किन्तु रातकी पहरैभी सेनाध्यक्षने पेशवा से मिल कर किया घोर रघुनाथकी उनके हाथ सुपुद कर दिया।

मूरजहानू (मूरमहल, मिहृदक्षिमा)—भारतवर्षके सुदण-  
वन्था जहानूनीरकी विद्यमाना महिषी। ११११ ई०में

इनके साथ मन्थाट, जहानूनीरका विवाह हुआ था। तभीमें से कर ११ वर्ष तक मूरजहानूकी लीवनी ही जहानूनीरके राज्यका इतिहास है। मूरजहानू मरिषी हो कर पन्थाल प्रभावमन्थक हो गई थी। बिना इन-  
को मनाह लिए मन्थाट, कीरे काम नहीं करती थे। इस समय इनके इतिने ही पायोय-धरजन राज्यके प्रधान प्रधान पद पर अवस्थित हुए थे।

मूरजहानूके इतिहासका पता मगा अर जो कुछ मालूम हुआ है उसमें इनके पितामह तकका कुछ कुछ विवरण जाना जाता है; उसमें यहसेका कुछ भी नहीं। मूरजहानूके पितामहका नाम था ख्वाजा महम्मद शरीक। पारस्यनगरके तेंहरानू नगरमें उनका वास था। पारस्य के पन्नागत जोरासान प्रदेशमें जब महम्मद-खान-महक-  
सहो-सगलु-साकलु 'बिगनाके बिनो' थे, उस समय वशाशा महम्मद शरीक उनके मन्थी थे, (१) घोर सभो ममथ से उनकी प्रतिष्ठा जम गई—वे एक प्रतिष्ठावच कवि भी थे। "द्विजरी" (२) यह सपनाम धारण कर से कविता लिखते थे। पूर्वोक्त सगलु-साकलुके पुत्रने जब तातारसुजातानपद प्राप्त किया, तब ख्वाजाम-महद शरीक को यज्ञीरके पद पर नियुक्त हुए। सक्त सुलतानकी मृत्युके बाद उनके पुत्रकोयाजक खांके समयमें भी ख्वाजा महम्मद शरीक को यज्ञीरके पद पर वर्णमान थे (३)। पीछे कोयाजक खां जब मर गए,, तब पारस्यराज शाह तमास्पने ख्वाजा महम्मद शरीकको बुला कर यात्रद नामक राज्यका यज्ञीरोपद प्रदान किया (४)।

हिमी जिले पतिष्ठासिद्धका मत है, कि ये पारस्यराज शाह तमास्पने को यज्ञीरोपद पर नियुक्त हुए थे। मुगलमन्थाट, हुमायूँ शाह जब मिरगाहने भगाए गए थे, तब ये पारस्यराज शाह तमास्पने यहाँ पतिष्ठा हुए थे। उस समय शाह तमास्पने जिन सब घमोरी घोर खमचारिदीकी उनकी सेवा सुधुवामें

(1) Ikbal nama : Jahangiri : Elliot Vol. p. 450.)  
(2) Ain-i-Akbari (Blochmann, p. 222.)  
(3) Ain-i-Akbari (Blochmann, p. 206.) इन्हें  
घोर पारस्यराजशाहने यज्ञीरोपद प्राप्त करने का भी है।  
(4) Ikbal-nama-i Jahangiri (Blochmann, p. 400.)



लिया। हजकी वलिमीं पर सुना कर, हज की वलिमीं टह कर गयासबेगने भारतकी भविष्यत् साम्राज्यकी मसभूनीके किनारे वनवासमें राह पर छोड़ दिया और आप छोड़े पर सवार हो यहाँवे चल दिए। उस समय उनके सिर्फ दो घोड़े बच गए थे। मद्योजात मस्लानकी इस प्रकार छोड़ कर गयास-वलिता परिवरन धारामें मयूसीशन कानो दुई खामीकी पनुवलि मो दुई। आप कीमया रास्ता ते करने मो न पाया था, कि शीश और मोहसे गयासवलिता पशान हो छोड़ेको पीठ परसे नीचे गिर पड़ी। गयासने देखा—जिससे पाषकी रसाके बिये मद्योजात गिय तकको मो छोड़ पाये हैं, अभी गिय-विच्छेदमे उभीकी जान जानि पर है। बाद पकीको होयमें ला कर पुनः छोड़े पर बिठा दिया और पात्र उस कन्याकी जाने चले गये। गियके पास पहुँच कर गयासने देखा, कि एक विवरण मय गियके ऊपर पका बाड़े हुए है। यह देख कर ही गयासके होम रुक गए और कुछ देर बाद मयसे खोला करने लगे। खोकार सुन कर मय बहुत सुर्तीसे भाग चला। गयासने उस कन्याको गोदमें से लिया और जहाँ तक ही सका बहुत तेजीसे परिवारवर्गके निकट पहुँच कर सारा विवरण सब सुनाया। बाद सब किवीने भगवान्को धन्यवाद देते हुए पुनः यात्रा पारम्भ कर दी।

इसी समय पीछेसे भारतगामी एक दल बचिष्, था पहुँचा। उस दलके अध्यक्ष थे मलिक मसउद। वे भी शोके माय पार रहे थे। गयासबेग मूष मागिनेके बिये मलिक मसउदके पास पहुँचे। मलिकने गयास-परिवारका पाचार-व्यवहार और पाकृति मज्जित देख कर उनका परिचय पूका। गयासबेगने भी उनकी मज्जदपतासे सुभ की कर पायोवापल सब बातें सब सुनाईं। मलिक मसउद मज्जता कन्याके पनुवलीय रूपलायक पर मोहित हो उभे अपनी शोको दिखलाया। मसउदपकीने भी सब रूप देख कर और मामीके मुखसे सारा विवरण सुन कर वास्तव्युगक मय उस कन्याके बालन-पाठनका भार पक्ष किया और कन्याको धामीरुपमें कन्याकी माताकी ही निरुक्त किया। गयासकी यह समावलीय

चात्रय या कर जनजाते पमिभूत हो गई। (१)  
 यह मलिक मसउद और गयासबेग दोनोंने निग कर यात्रा की। दोनोंने गाड़ी मीति हो गई। क्या-प्रमदमें गयासबेगको मालूम हो गया कि मसउदकी भारतके मुगलमन्दाट पकबरके यहाँ पहुँच बनती बनती है। गयास इस भविष्यत् सुविधाको पागामे मलिक मसउदके निकट विमेष विनीत, छतप और चात्रय हो कर रहने लगे। १५८६ ई०में (२) मसउद गयासबेगको माय से परिवार समेत भारतकी चात्रयत राजधानी लाहौर पहुँचे। बादगाथ पकबर उस समय लाहौरमें ही थे (३)। धीनकालमें वे यहाँ रहने लगे।

एक दिन गयासको माय से मलिक मसउद मन्दाटके दरबारमें उपस्थित हुए। दरबारमें गयासको एक और पभावनीय मन्त्र्य मिला। जाफरबेग नामक वह नामक एक एक पदके राजकर्मचारिके माय इन्हा परिचय हुआ। परिचयसे मालूम हुआ कि वे दोनों एक ही बंसके हैं। इस ज्ञातिके सहायतासे मित्रा गयासउदोन, मज्जद कन्याट-दरबारमें पच्छी तरह परिचित हो गए।

कन्याटने उनका विवरण जान कर अपने यहाँ चात्रय दिया और कुछ दिन बाद उनके व्यवहारसे प्रसन्न हो कर मीन सेनाका मनमवदार बनाया। अपने भाग्यके जोरसे गयासबेग तेहरानी भारतवर्षमें या कर पक्ष प्रकार मनमवदार हुए। उस समय पकबर बादगाथके राजत्वका ४०वाँ वर्ष चल रहा था।

गयासबेग इस प्रकार मन्दाट पकबरगाहमें मनसबदारके पद पर अधिष्ठित हो जमगः मन्दाटके मीनिभाजन हो गए। बाद दोनोंने गाड़ी मीति मो हो गई। क्याप्रमदमें पकबरको मालूम हुआ कि मन्दाट, हुमायूँ गाथ कुछ मीरगाहसे वितर्कित हो कर वारन्ददेश भाग गए थे, तब गयासबेगके पिता राजा मज्जद मरीकने उनकी पच्छी बहावता की थी। यह जान कर पकबर-

(१) *Alto-Akbari* (Blochman p. 809) विश्वकोश ४म भाग-१५० पृष्ठ देखो।  
 (२) विश्वकोश ४म भाग १५० पृष्ठ देखो।  
 'The East's Mughal History', Vol. VI, p. 207. Dow's *Blochman* III, p. 27





निगा। प्रकृतिवर्तियों पर मुना कर, प्रकृतिवर्तियोंसे टक कर गयासवेगने भारतकी भविष्यत् साम्राज्यकी मध्यभूमिसे किशोर वनवास्तुमें राह पा छोड़ दिया और भाव छोड़ कर मवार हो बहबि चस दिए। उस समय उनसे विरक्त दो छोड़े बच गए थे। मध्योक्त मलानकी इस प्रकार छोड़ कर गयास-वसिता परिवल धारामें पशुसोचन करने हुई स्वामीकी पशुवर्तियों हुई। पाथ कोमका रास्ता ले करने भी न पाया था, कि गोक और मोहमे गयासवसिता पत्रान हो छोड़के घोट परसे नीचे गिर पड़ी। गयासने देखा—जिसके प्राथको रचाके बिसे मध्योक्त गिर तसको भी छोड़ पाये हैं, सभी गिर-विच्छेदने उठीकी जान जाने पर है। बाद पत्नीकी बीमारी का कर पुनः छोड़े पर बिठा दिया और पाथ उस कल्या-की जाने चले गये। गिरके पास पहुँच कर गयासने देखा, कि एक दिवपर सव गिरके जपर पत्नी काड़े हुए है। यह देख कर ही गयासके होम चढ़ गए और कुछ देर बाद भयमे जोत्कार करने लगे। जोत्कार सुन कर सव बहुत हुरतीमें भाग चला। गयासने उस कल्या की मोटमें से निगा और जहाँ तक हो सका बहुत मीठीसे परिवारसवके निकट पहुँच कर मारा दिवसक कह सुनाया। बाद सब किशोने भगवान्की धर्मबाह दित हुए पुनः वाला पारभ कर दी।

इसो समय पीछेसे भारतगामो एक इस बचिक्, पा पहुँचा। उस दसके पथच ही मज्जिक मसउदु। ये भी छोके साथ चरिरे थे। गयासवेग दूध मतिनेके निये मज्जिक मसउदुके पास पहुँचे। मज्जिकने गयास-परिवार-का पाचार-व्यवहार और पाकृति मज्जित देख कर उसका परिचय पूछा। गयासवेगने भी उसकी मज्जयतासे सुन हो कर पाचोवाल तब बातें कह सुनाई। मज्जिक मसउदु जयजाता कल्याके पशुननेय रूपमायक पर मोहित हो सने अपनी छोकी दिखनाया। मसउदुपत्नीने भी यह रूप देख कर और वामीके सुकसे मारा दिवसक सुन कर पानदुपुसक सपने सग कर्माके कामन-पाननका भार चरच दिया और कल्याकी पामोकरवमें कल्याकी नाताकी भी निरुक्त किया। गयासवकी यह पमावनीय

पाथय पा कर जनसमासे पमिमून हो गई। (१)

एक मज्जिक मसउदु चोर गयासवेग दोनने गिन कर पाता की। दोननें माड़ी मीति हो गई। कया-प्रमज्जमें गयासवेगकी मामूम हो गया कि मसउदुकी भारतके सुगमसग्याट, पकवरके यहाँ पशु वसनेो बनगो है। गयास इस मविष्यत् सुविधाको पागामे मज्जिक मसउदुके निकट विगिय विनोत, छतप और बाध्य हो कर रहने लगे। १५८ ई०में (२) मसउदु गयासवेगकी माय के परिवार समेत भारतकी पश्वतम राजधानी आहोर पहुँचे। बादगाह पकवर उस समय साहोरमें ही थे (३)। योषकासमें ये वहीं रहते थे।

एक दिन गयासकी माय से मज्जिक मसउदु मग्याटके दरबारमें उपस्थित हुए। दरबारमें गयासकी एक चोर-पभावनेय वःश्वय मिना। आकरवेग पामक वी नामक एक मज्ज पदकी राजकर्मचारिके माय रनका परिचय पूछा। परिचयमें मामूम हुआ कि ये दोनो एक ही वंशके हैं। इस ज्ञातिके सहायतासे मिर्जा गयासउदुन, मज्जदुद मग्याट-दरबारमें पच्छी तरह परिचित हो गए।

मग्याटने उनका विवरण जान कर अपने यहाँ पाथय दिया और कुछ दिन बाद उनके व्यवहारसे प्रमथ हो कर तीन घो सेनाहा मज्जदुददर बनावा। अपने भाग्यके जोरने गयासवेग नेहानी भारतवर्षमें पा कर एक प्रकार मज्जदुददर हुए। ४४ समय पकवर बाद-गाहके राजत्वका ४०वाँ वर्ष चल रहा था।

गयासवेग इस प्रकार मग्याट, पकवरगाहसे मज्जदुददरके घट पर पधित हो कसगः मग्याटके मीति-भाजन हो गए। बाद दोनोमें माड़ी मीति भी हो गई। कयाप्रमज्जसे पकवरको मामूम हुआ कि मग्याट, हुआपुं गाह कदु मिरगाहसे दितदित हो कर पारसदेग भाग गए थे, तब गयासवेगके पिता यशका मज्जदुद मरीकने उसकी पच्छी सहायता की थी। यह जान कर पकवर-

(१) Al-J-Akbari ( Blochmans p. 802 ) विरहोच-सम माय १५० एव देली।

(२) विरहोच-सम माय १५० एव देली।

(३) Bloch's Mohammedan Histories, Vol VI. p. 297. Dow's Histories III. p. 23

शासकों इत्ये कृतप्रतापे परिपूर्ण हो गया। इस कृतप्रतापके प्रत्युपकारस्वरूप मन्नाटने तीन सोः सेनाके मनसबदार गयासके पहले काबुलकी दीवानीके पद पर, पीछे एकहजारो मनसबदारके पद पर और तब युगतात दीवानो (सांसारिक व्यापारके अध्यक्ष)के पद पर नियुक्त किया। क्रमशः गयासकी पत्नीके साथ प्रसवदरदी मजिथी सुलीमकी माता मरियम खमानीकी अत्यन्त घनिष्ठता और मित्रता हो गई। वे प्रायः कन्याकी लोकर बादशाह बेगमके यन्तःपुरमें जाया करती थीं। जिस अपूर्व सौन्दर्यललाभभूता कन्याने कन्दहारके मरप्रान्तमें जन्म लिया था, वह कन्या आज बड़ी हुई और उषका नाम रखा गया मिहेरबिसा अर्थात् रिमपोकुलदिनमण्डि।

गयासके ग घोर घोर अपने उन्नति करने लगी। अपने परिवारके लिए भी उन्होंने अच्छी व्यवस्था कर दी। जिस कन्याके जन्म होनेके बादसे उसकी दुर्दशाका क्रमशः पवसान हो गया, गयासने सबसे पहली उसी कन्याको तालीम करनेके लिए जहाँ तक हो सका सुव्यवस्था कर दी। उसकी परिचर्याके लिए दिनारानी नामक एक धात्री नियुक्त हुई। (१)

मिहेरबिसाने नृत्य, गीत, वाद्य, चित्रविद्या तथा काव्यमें घोर घोर अच्छी व्युत्पत्ति नाम कर ली। थोड़े ही दिनोंमें वे कविता और गानरचनामें पारदर्शनी हो गई। उसका सुयोग चारों ओर फैल गया। सुलीमकी माता उन्हें बहुत चाहती थी, मिहेरबिसा कभी कभी उसकी खुश करनेके लिए नाचती, गीतो तथा कविताकी रचना कर उन्हें सुनाती थीं। (२)

\* विशुकीय बंहातगीर कन्द देखो—२४ मंग १५७ पृ०।

Ain-i-Akbari (Blochmann, p. 509)

(१) Dow's Hindoestan III. p. 24.

(२) Ain-i-Akbari, Blochmann, p. 510.

Waki-at-i-Jahangiri (Elliot's History of India vol. VI. p. 384)

(३) विशुकीय २४ मंग १५७ पृ०। Ain-i-Akbari (Blochmann, p. 524.)

एक दिन गयासके गने अपने यहां राज्यके मन्त्रालयोंकी निमन्त्रण किया। शाहजादा सुलीम भी निमन्त्रित हुए। सलीमका असल नाम था महमूद नूर-उद्दीन। २७ हिजरी (१५६८ ई०)की १८वीं रविउल-अव्वलकी फतेपुर शहरमें शिशुसलीम चित्तीके घरमें जन्म होनेके कारण वे सलीम नामसे प्रसिद्ध हुए। इस समय उनकी चढ़ती लषानी थी। भगवान् सिंघकी कन्या जोधवादे और बीकानेरके राजा राजसिंघकी कन्याके साथ उनका विवाह हो चुका था। जो कुछ हो, निमन्त्रणमें सलीम गयासके घर पहुंचे। एकदूसरे सामने हो जाने पर जितने अत्याग्न पाए हुए थे, सब चले गए, केवल सलीम रह गए। गयासने उनके लिये शराब मंगवाई। उस समय ऐसा निश्चय था, कि राजा या राजपुत्रीकी अर्भ्यना करनेमें निमन्त्रणकर्त्ताके परिवारकी रमणियोंकी उनके सामने घाना पड़ता था। गयासबेगम भी वैसा ही किया। मिहेरबिसा और अर्धान्य रमणियोंने धा कर शाहजादाकी सर्वहना की। मिहेरबिसाने शराबका बीतल युवराजके हाथमें दिया। सलीम कन्दर्पलाञ्छन थे, इधर मिहेरबिसा भी रतिविनिन्दिता थीं। ऐसे शुभ अवसरमें एकका मन दूसरेके प्रति आकृष्ट हो गया। पीछे मिहेरबिसा कोकिलकण्ठमें वीणाविनिन्दितस्वरमें देववालाका हावभाव टिप्पा कर गाने लगीं। उस मधुर तानसे शाहजादाको हृदयतन्वी वीज ठठो। मिहेरबिसा भी उस समय युवती थीं, विद्यावसध और सहवासके शुरुवे लोकपरिव भी कुछ कुछ समझती थीं। सुलीमका भाव देख कर वे समझ गईं, कि युवराज उनके गान पर मोहित हो गए हैं। अब उन्होंने नाचना शारम्भ कर दिया। इस समय सलीमकी ऐसा मालूम होने लगा मानो उनके हाथ पैरके संचालनसे रूपकषा विकीर्ण हो रही हैं। सलीमका दिमाग चकराने लगा। अपनी मर्णादाकी मूर्खता हुए वे टक लगा कर मिहेरबिसाके प्रत्येक अङ्गप्रत्यङ्गकी गठन और शोभाकी देखने लगी। इस समय हठात् वायुके संचालनसे मिहेरबिसाका घूँघट अलग हो गया। नृत्यका ताल भङ्ग न हो जाय, इस भयसे वे उसे संभालन सकीं। लज्जा और मौतिविजड़ित सहीचपूक कुप

राजके मुखको घोर लज भरके लिये ताके कर-मिहृद-  
 विमानमें पचना गिर नाचे कर लिया। उस दृग्दर्शने,  
 उस कटाक्षमें मनोमके हृदयमें पनुनागको ध्वाना धधक  
 सठो। घुंघट-पत्रग हो जानेका चक्राना कर मिहृद-  
 विमाने गाना बंद कर दिया। मनोम-भो, पचने घरकी  
 पथे गए। वृत्तके बाट जधं तक-ये बर्षा बैठे रचे, तब  
 तक उनके मुखमें एक भी वात न निकली। (१)

तदनन्तर दोनोई मनमें एक दूरसे प्रति पनुराग  
 मड़ने लगा। मनीम मिहृदविभाकी पानेके लिए नितास्त  
 लक्ष्मक घोर यज-परायण हुए। यह बात धीरे धीरे  
 पितामाताके कानमें पड़े। बादमाह पंचवरेने पुत्रके इन  
 परिभाषको जरा भो पसन्द न किया। क्योंकि उस  
 समय एमा नियम था, कि जब किसी राजकम-चारीकी  
 पचनो कन्याका विवाह करना होता था, तब उसे राजा-  
 की पनुमति लेनी पड़नी थी। गयानवेगने भी इत्या-  
 क्षुनु नामक तुल्यक ज्ञानीय पनोकुलीवैग नामक एक  
 सुदृग् सुप्रतिष्ठितके माय जो दो को येनाके मनमप्रदार  
 थे, विवाहमन्व्य व्यिर करके मन्माटकी पनुमति ले  
 ली थी। जिसे एक बार जगदादान देनेकी पनुमति दी  
 जा चुकी है, उसे सब पुत्रके पनुरोधमें पसन्दा करना  
 बादमाहने पच्छा नहीं ममभा, बल्कि जिन्में प्रस्तावित  
 पात्रके माय पानीक गोप्र विवाह हो जाय उनके लिए  
 दीयान गयानवेगने पनुरोध किया। उन्होंने समझा था,  
 कि पुत्रके माय ब्याही जाने पर मनोम मिहृदविभाकी  
 पागा पचमर ही छोड़ देगे, किन्तु वे पा न हुआ।  
 विवाहकी पक्षी बातचीत ही जामे पर भी मनोमने एक  
 दिन पिताके सामने पचना मन्वाय प्रकट किया। यह  
 सुनते ही बादमाह पागबधूना हो गए घोर मनोमकी  
 तिरस्कार करते हुए सामनेमें निखनवा दिया। इस  
 प्रकार तिरस्कार हो कर मन्मार्थ मनोमके घिरे पर  
 जर्दी का गई। उसी दिनमें उन्होंने मन्माटकेपथे मिहृद-  
 विभाके पानेको चेष्टा छोड़ दी (२)।

पनो-कुलीवैग इत्याजपुके प्रकृत तपस्वदेगोय होने  
 पर भी इसी पक्षे पचन पारस्यराजका मन्व्यत सीकार  
 करना पड़ा था। ये मफानोवंगोय २५ इस्मारनके  
 'मफर्री' (भोजन-परिचारक) थे। इस्मारर्री ययु  
 होने पर, पनोकुलीवैग कन्वहाममें भारतवर्षकी पने  
 पाए। मूलतानमें इनके साथ प्रयाग-सेनापति मित्रा  
 पयदररकेम पानपानाका परिचय हो गया। उन्होंने  
 एके-सेना-दलमें-एहण-कर लिया। पानपामा उस  
 समय ठटा मौतनेकी जा रहे थे। पनोकुली भी उनके  
 साथ ही लिये। तुद्धमें पनोकुलीने पचना विधिय नेपुत्र  
 दिया कर सुन्यति साम-को। पानपामा ८८८ दिवसो  
 (पंचवरेके राजतेके ३४६ वर्ष)-में मियुकी मौत कर  
 जय दरवार मोटे/तब उन्होंने पनो-कुलीवैग इत्याजपु-  
 का राजके माथे परिचय करा दिया। मन्माटने पान-  
 पामाके सुहृदके युद्धमें जधं इस मनीम युवाकी कार्य-  
 क्षता सुनी, तब उन्होंने एके दो को सेनाके मनमप्रदारके  
 पद पर नियुक्त किया। पक्षे पनोकुलीने कुमार मनोमके  
 माथे रोपायतापके विरुद्ध युद्धमें मीने गए, इस समय भी  
 उन्होंने पचनो बहादुरी दिग्वा कर पच्छा नाम कमा  
 लिया था (१)। पचवर बादमाहने इस कार्यमें प्रीत हो  
 कर एके 'मि-पफमान'की स्थापि दी (२)।

इसो समय मनोम घोर मिहृदविभाके माय पचोम  
 घटना चल रही थी। यह देख कर पचवरने दोभाग  
 गयानवेगको इसो मन्मयकके माय कन्याका विवाह  
 करनेकी कष्टा था। बादमाहके पनुरोधमें एकेके माय  
 मिहृदविभा ब्याही गई (३)। ११८८ ई.के कुछ पक्षमें यह

(1) Ain-i-Akbari (Blchmann, p. 524).  
 (2) Ikbal-nama-i-Jahangiri (Elliot Vol. VI, p. 407)  
 हिन्दु एवभाभामाथिं दृष्टि बग्दे (Ellis Vol. VI, p. 404)  
 मिया है कि 'ने' सेकान'की स्थापि इत्याजपुके ही की है।  
 (3) Ain-i-Akbari (Blchmann, p. 524)

(1) Dow's Hindoostan III, p. 24-25. विरुद्धोपके  
 कदाही-रक्ष्ये मिया है, कि मनोमने पुत्रकी पनुमतिपरा-  
 क्ता मिहृदविभाके एके दिन इत्याजपुका था। 'म' भाव।  
 (2) Dow's Hindoostan Vol. III, p. 25.

आइने-अकबरीमें लिखा है, कि बहादुरीने पचाइ हो  
 कर एके मन्मयकके पद पर नियुक्त किया था, हिन्दु 'दुग्ध  
 पानापी' नामक बहादुरीके इतिवृत्त और बर्तानमें  
 रचया होके बरके मी है। आइने-अकबरीके मन्मय-क-  
 पानके इत्याजपु-कन्वहाममें लिखा है, कि यह

घटना घटी। बादशाह युवको दुर्दमनयि चाकांकाकी वात जानते थे, तिस पर मो बे निराय कर दिए गये। भागे चल कर इसका कुक्षित परिणाम क्या होगा, कौन कह सकता ? अतएव सावधान होनेके लिए पत्नी-कुली-धेगकी यर्बमानकी जागोर और 'वहाकी' कुतुबदारीका पद दे कर सम्राटने उन्हें पत्नीके साथ बग़ास भेज दिया। इस प्रकार पायाका घन बहुत दूर हट जाने पर तथा सम्राटके मयसे दृष्टा रहते हुए भी पत्नीम मानो मेहेरबिसाको भूल गये।

बग़ासमें पानिके पहलें ही पत्नीकुलीने 'शेर-भफगान' की उपाधि पाई थी। कहते हैं, कि इन्होंने निहत्थे एक साधकी मारा था, इसीसे उक्त उपाधि मिली थी (१)। सलीमके साम्राज्य लाभके पहलीका मेहेरबिसाके विषयमें और कोई विशेष विवरण मालूम नहीं।

१०१४ हिजरी (१६०५ ई०)में कुमार सलीम जहान-गोर (पृथ्वीजयी) को उपाधि धारण कर राज्यसिंहासन पर बैठे। राज्य पानिके साथ ही अन्यान्य सख्तियोंके मध्य निजसुक्त पाया मेहेरबिसा पानिके लिये वे नाना प्रकारके आयोजन करने लगे।

जहानगोरने मेहेरबिसाके पिता गयासबेगकी पांचहजारी मनसबदारके पद पर नियुक्त किया। इस समय वे केवल हजारीमनसबदार और बादशाहके सांसारिक पण्यक थे। इसी समय दीवान खज़ीर खाँकी मृत्यु हुई। उस पद पर जहानगोरने गयासबेगकी ही दीवान बना कर "इसमद-उद्दौला" (राज्यका प्रमुख घन)की उपाधि दी और उसके साथ साथ नगरा, निग्रान आदि सम्मान-चिह्न व्यवहार करनेका आदेश

जहानगोरने कुतुबदरीनुको बग़ालका सुवेदार बना कर भेजा, तब शेर-भफगान-बर्दानके कुतुबदारके पद पर अतिष्ठित थे। दूसरी उनका यह पद अकबरसे ही दिया गया था, ऐसा प्रतीत होता है। Ain-i-Akbari (Blochmann, p. 496.)

(१) आश्विन इमददारीके १२४ पूजने लिखा है, कि राजपूतानेके युद्धमें गोरबे विष्ठा कर उन्हेने जहानगोरसे यह उपाधि पाई थी। लेकिन बाब बादशाहका कहना है, कि जहानगोरके राज्यादरोह करनेके बाद यह उपाधि मिली थी। (Dow's Hindostan, Vol. III, p. 45.)

दिया। पोहे उन्हेने मेहेर-उबिसाके द्वितीय भ्राता मिर्जा अबुल इबेगकी पांचहजारी मनसबदारके पद पर नियुक्त किया। जहानगोरके राजत्वके दूसरे वर्ष (१०१५ हिजरी) में मेहेरबिसाके ज्येष्ठ भ्राता मसूद शरीफ काराबख्त कुमार खुशरूकी राज्य देने तथा जहानगोरकी मार डालनेका प्रयत्न करने लगे। यह बात खिरी रह न सकी—सब किसकी मालूम हो गई। फलतः मसूद शरीफ पकड़ा गया और मार डाला गया।

इसी साल जहानगोरने अपने धात्रीपुत्र कुतुब-उद्दीन खानिचिस्तीकी बग़ालका सुवेदार बना कर भेजा। इस व्यक्तिका प्रकृत नाम शैख खुबु था। इसको माता फतेपुर-निवासी शैख सुलोमकी कन्या थी और इनका पिता भी बदायुनके श्रेष्ठ श्रेष्ठ था। जब कुमार सलीम पिछ्छोही हो कर इलाहाबादमें थे, उस समय उन्हेने ही इसे कुतुब-उद्दीनको उपाधि दे कर बिहारका सुवेदार बना कर भेजा था। जो कुछ हो, अभी यह जो बग़ालका सुवेदार बनाया गया, उसका एक विशेष उद्देश्य था। कुतुब-उद्दीन शेर-भफगानकी दिल्लीके दरवारमें भेज देनेके लिये कहा गया था। शेर-भफगान सुवेदारके अधीन कर्मचारी हो कर और सम्राटका आदेश पा कर भी जानिकी राजी न हुआ। शेर-भफगान ये सब बातें पहलसे ही ताइय गये थे। बादमें कुतुब-उद्दीन अपने भागिनीय गयासकी शेर-भफगानके पास यह कह कर भेज दिया, कि वह शेर-भफगानकी समझा सुझा कर कह दे कि दिल्ली जानिसे उनका कोई अनिष्ट नहीं होगा। पोहे कुतुब-उद्दीन शेर-भफगानसे स्वयं मिलनेके लिये गये। इन समय शेर-भफगान सुवेदारका स्वागत करनेके लिए जब पानी बड़े, तब कुतुब-उद्दीनने अच्छा मौका देख अपने अनुचरोंको चाबुकका इमारा किया और उन्हेने उठी समय शेर-भफगानकी चारों घोरसे घेर लिया। शेर-भफगान भी उसी समय बहुत जूझनेमें स्थानमें तलवार निकाल कर कुतुबकी घोर दोड़-घोर समूची तलवार उनके पैरमें घुसेड़ दो। कुतुब-उद्दीन बहुत स्वस्व चौड़े तथा मजबूत जवान थे, दोनों हाथोंसे अपने विह-उदरको दाव कर उन्हेने अपने अनुचरोंसे शेर-भफगानका सिर काट लेनेको कहा। अच्छा खा नामक

प्रेमः कश्मीरी सेनापति गिर चफगान पर टूट पड़े। दोनोंमें कुछ काम तक युद्ध होता रहा। अन्तिम तमवार-में उनका गिर दो फाँस हो गया, किन्तु उनके इत्ता भी जीवित रह न सके। गिर चफगानने अपने जानिके पहले पश्मा खाँको भी यमपुर भेज दिया। कुतुब-उद्दीन उस विद्वदरसे चागपुठ पर बैठे हुए थे। पश्मा खाँको मरा देख उन्होंने अपनी सेनामें गिर चफगानका गिर धड़में पल्लव कर लायनेको कहा। चतुम माइभी गिर चफगान कुछ काम तक इन समय मड़ते रहे चौर चहुँतीको इतागत कर पीछे चाप भी युद्धमें नैत रहे। गिर-चफगान जब युद्धमें ला रहे थे, तब उनको मारने उनके गिर पर एक पगडो घाँघ कर बागीचाँट दिया था, 'शेता। युद्धमें जाओ, लेकिन देखना जिनमें तुम्हारी माताके पशु विगलित होनेके पहले तुम्हारे शत्रुको माताको पशुधारा प्रवाहित होवे।' इतना कह कर मारने गिर चफगानके उन्हें विदा किया। गिर चफगानका माय-बागीचाँट सफल हुआ था। उन्होंने मरनेके पहले कुतुब-उद्दीनको गिर-खानावागिट चौर पश्मा खाँको यमपुर भेज दिया था। कुतुब-उद्दीनने गिर चफगानकी मृत्यु सुन अपने भाँजीको यमपुर मारने चौर गिर चफगानके परिवारको यन्त्रो कर उनको सम्पत्ति चोगोध करनेका हुकूम दिया। इतना कह कर वे सदेगको फोटे चौर राफोमें ही उनको भी मृत्यु हो गई। जमपुर गिरचरीमें उनको अंतदेह गाड़ो गई। इन्होंने ही १०११ हिजरीमें सदाउनको सुमा मस्जिद बनवाई थी। (१)

कोई कोई कहते हैं, कि गिर चफगान रथस्थलमें मरने मारे गए। वे पाहत हो कर ब्यूँच भेंड करके हुए अपने या फोटे चौर मंगी तमवारको हाथमें लिये गयमगुठके द्वार पर लड़े हो गए। उनका लड़ेस था कि उनको शत्रु-हाथमें जानेके पहले ही अपने अपने हाथमें मार कर पीछे सुकलितमें चाप मो मरे'गे, किन्तु ऐसा नहीं हुआ। उनको मास तक समय नहीं मिली हुई थी। वह जमाईके इस भावमें पानेका लड़ेस समझ गई चौर कम्पाकी मृत्युमें उधानेके लिये दरवाजी पर लड़ोकी रकी चौर बीओ, भेड़ें-नखिलाने भी फाँसखी रकने लिये

कूपमें जूद कर बाचलाग किया है, तुम चले जाओ चौर अपने चापको विक्रमा करो।' यह सुन कर गिर चफगान मानो निदराने हो गए चौर अपने समय उनके हृदयका पाथेग घटने लगा। वह एक मीढ़के निजलनमें वे अमोन पर मूर्च्छित हो गिर पड़े चौर अपने समय पदलको प्राप्त हुए। यमपुरमें बहारा मरना मामक कविने पणित-पाथमके निकट उनको समाधि हुई (१)।

किसी इतिहासमें लिखा है, कि जहानगोर राजगद्दी पर बैठनेके साथ ही मेहेर-उधिया-लामके प्रधान प्रति-पक्षक गिर चफगानको उठानेके लिये केवल कुतुब-उद्दीनको भेज कर खुप चाप बैठे रहे, मो नहीं, उन्होंने गिर चफगानको राजधानीमें निमन्त्रण किया। गिर-चफगान जब दरबारमें पहुँचे, तब मन्त्रालयने उनका ब्यूँच पल्लव किया। मरत मायाके गिरने सोचा कि जब मन्त्रालयके हृदयमें किसी प्रकारकी दुष्टता नहीं है। चमत्कार एक

(१) Khafi-Khan ( J. P. 267. )—Sidi Akbar Blochmann, p. 628. )

एववातनागमें लिखा है, कि गिर चफगान उठानेमें भा कर विरोधी हो गए थे। कुतुब-उद्दीन जब उठानेके साथ-कर्ता हो कर गए, तब वे जहानगोरके आशुवार छेद-भक्त-गानको समन करनेकी बोधितमें लग गए। गिरीठे खाना होने समय कुतुब-उद्दीनको कहा गया था—छेद भक्तगान मरि इनकी बरवता खोदार कर से, तो उसे ज़ापीरमें रहने देना, शययद रिस्की मीव देना। यदि रिस्की जानेमें वह मरवैक रिताव करे, तो उसे उचित बन्ध देना। गिर-भक्तगानने जब कुतुब-उद्दीनका दृष्य न माना, तब कुतुबने वह खूब जहानगोरको भिन्न भेरी। इस पर जहानगोरने गिर-भक्तगानको बहुत बन्द समन करने-का आदेश दे दिया। (Elliot, Vol. VI. p. 402.) किन्तु साईन-द-अहमदीमें इसका कोई उल्लेख नहीं है। जहानगोरके इतिहासमें भी इसका कुछ जिक्र नहीं है। मायब होना है, कि गिर भक्तगानके इस विरोधकारके प्रति कभीकहा बरवहार की शययबहुत हुआ था। उनको समन करनेके लिये एववातनागके मन्त्रकार सुगवर खाने देना लिखा होता। भवता उस समय इन मन्त्रालय विज्ञापयना लिये हुआ थाकी थी, किन्तु गिरभक्तगान मचुव विरोधी हुए थे। वा नहीं, वह विरोधी प्रकमान देहिलीवने नहीं किया है।

(1) Sidi Akbari (Blochmann, p. 607.)  
Vol. XII. 50

दिन दोनों मिल कर गिकार खेलनेके लिये खिसा जङ्गलमें गए। गिकारियोंको चास पानके ग्रामवासियोंसे खबर लगी कि अमुक जङ्गलमें एक बड़ा भारी बाघ है जो उनके मवेशीको हमेशा मारा करता है। जहानगीर दल-मलके साथ वहाँ पहुँच गए। बाघ चारों ओरसे घेर कर बीचमें लाया गया। सम्झाटने, हँसोके बहानेमें चंपने चंपुचरोंको कहा, 'हमारे इतने महावीर अमुचरोंमेंसे जो भक्तला व्याघ्र पर आक्रमण कर सके, वह बागी बड़े।' यह सुन कर सबके सब एक दूसरेका मुँह देख निश्चिंत हो रहे। बहुतोंने शेरभक्षणानकी ओर भी डट्टि डाली थी। शेरभक्षणान उस डट्टिपातका मर्म समझ न सके। भ्रममें तीन भमितसाहसी उमराव हाथमें तलवार लिए तैयार हो गए। इन्हे देख कर शेरभक्षणानके अभिमान पर धक्का पहुँचा। एक तीव्र व्याघ्रशिकारोंमें पहलीमें ही प्रविष्ट थे, दूसरे उनके रहते तीन प्रतिद्वन्द्वी खड़े हो गए। यह देख कर वे क्षणकाल भी ठहर न सके और बोले, 'एक जंगली पशुका गिकार करनेमें अस्वशक्त लेनेका मैं कोई प्रयोजन नहीं समझता। जंगदीश्वरने पशुकी जिस तरह दंष्ट्रानखांमुध दिये हैं मनुष्यको भी उसी तरह हस्तपदादि दिये हैं।' इस पर अमीरोंने कहा, 'बाघकी अपेक्षा मनुष्य कमजोर है। सुतरां बिना अस्त्रकी सहायता लिए उसे जय करना असंभव है।' इस पर शेरभक्षणान बोले, 'बाघ लोगोंको जो भ्रम है, उसे मैं अभी सुरन्त दिखलाए देता हूँ।' इतना कह कर वे अशुचर्मका श्याम करतले हुए खाली हाथसे बाघ पर टूट पड़े। जहानगीरका हृदय नाचने लगा, किन्तु दिशावटो तीर पर उन्होंने शेरभक्षणानको इस दुःसाहसिक कार्यमें जानेसे निषेध किया पर शेरभक्षणानने एक भी न सुनी और वे भगवान्का नाम स्मरण करते हुए बाघको घेर चल पड़े। जितने मनुष्य वहाँ उपस्थित थे, वे उनके साहस पर प्रशंसा करके मां धुँखता पर गिन्दा करेगे, उसे घोर शिकंसे कुंठ भी ध्यान न दिया। बाघके साथ शेरभक्षणानका युद्ध हुआ। बहुत आनन्दमें रहने बाद सर्वशरीर क्षतविक्षत हो कर शेरभक्षणान भगवान्की कृपासे युद्धमें विजयी हुए। सन्ने बाघसे बाघ मारा गया।

चारों ओर जयध्वनि होने लगी। सम्झाट भोतरसे तीव्र हो व्यथित हुए, पर बाघसे उनको प्रशंसा करतले हुए उन्हें यथेष्ट पुरस्कार दिया। पीछे चासशरीरसे शेर पानकी पर बैठे राजदरवारसे अपने द्वारे पर जा रहे थे, उस समय सम्झाटने उन्हें राहमें मार डालनेके उद्देश्यसे महावतकी गलीमें एक मतवाला हाथी रखनेका गुप्त आदेश दिया। शेरभक्षणान राहमें मत्त हाथी देख कर गरा भी न डरे और शिविका ले जानेकी कहा। हाथी सूँड़में पाग निये रास्ते पर खड़ा हो गया। महा लोच शय्य उपस्थित देख पानकीकी फेंक करे जिधर-तिधर भाग गये। शेरभक्षणानकी इस समय भारी विपद्की आशङ्का हुई और सर्वाङ्गमें बेदना रहते भी वे पानकीमेंसे बाहर निकल पड़े। बाद अपने निज सङ्गी छोटी तलवार द्वारा हाथीको सूँड़में उन्होंने भीमशक्तसे ऐसा आघात किया कि उसी समय सूँड़ दो खंड हो कर जमीन पर गिर पड़ी। हाथी चिंघाड़ मारता हुआ भाग चला और कुंठ दूर जा कर मर गया।

यह देखनेकी सम्झाटकी बड़ी उल्लेखता थी। वी प्रासादके एक भरोखेसे शेरभक्षणानका यह ध्वंस व्यापार देख रहे थे। वैसे ही हालतमें भी जब उन्होंने देखा कि शेरभक्षणानने ऐसे विशाल मत्त हाथीको मार गिराया, तब वे बहुत ललित हो काठकी मुस्ति की जहाँके जहाँ खड़े रह गए। दूसरे शेरभक्षणान इस कामसे और भी उत्सुक हो कर अशुचिर्ध्विचक्षे समझाटकी यह सम्वाद कहने चले गए। सम्झाटने सुखसे अजस्र प्रशंसा करके उन्हें विदा किया। शेरभक्षणान पीछे वर्तमानकी लौट आए। छः मास तक घोर कोई उत्पात न हुआ। पीछे कुतुबशहीन, सुवेदार ही कर बहालमें आए। चाहे सम्झाटके गुप्त आदेशसे ही, चाहे श्राव सम्झाटका प्रियकार्य साधन करके भी भी प्रियपात्र होनेके लिये ही उन्होंने शेरभक्षणानकी हत्याके लिये हुंठकेतोंकी नियुक्त किया। शेरभक्षणानकी जब यह गुप्त रहस्य मालूम हो गया, तब वे हमेशा दरवाजा बन्द किए रहने लगे। एक दिन रातकी चारपासकी असावधानीने दरवाजा बन्द नहीं किया गया, हुंठकेतोंकी गट्ट-प्रवेशमें अच्छा मौका हाथ लगा। शयनगृहमें वे

प्रवेश करके निद्रिनासव्यामिं गेर चक्रगानकी भारदेके निचे लयन हुए। उलके मधमिमे एक युद्धा बोला, "निद्रिनासकी मध करनेके निचे ४० पाषात करनेहा या प्रयोजन। मातुवोचन व्यवहार करो, एकमे ही काम चल लायगा।" इस कथोपकथनमे गेर चक्रगान जाग उठे पौर वातकी बातमे स्मृतिमेमे पयमी तनवार निवान कर बोले, "ओ बोर-ऐ, यह युद्ध कर ले" इतना कह कर वे वरके कीर्तिमें पहुंचे ही गए पौर उर्कैनीके प्राक्रमणका प्रतिरोध करने लगे। १८१२ उर्कैनी तो पाहत हो कर चम्पत ही गए शेष-समी जगह टेर रहे। जिम हृदकी वातसे उनको मीद टूटी थी, यह भागा नहीं, बल्कि समी जगह चुपचाप खड़ा रहा। गेर चक्रगानने उसे पुरस्कार दे कर कहा, "जायो, यह सम्वाद चारों ओर फैला दो। इस समय वे सुधिदारके राजधानी-महलमें वे पौर इस घटनाके बाद ही वर्धमानकी चले आए। पोले कुतुब-उद्दीन मधो मध्य कर्मचारियोंकी कार्यालयकी टैवरैव करनेके बहाने वर्धमान पहुँचे। गेर चक्रगानने उनका स्वागत किया। पोले कुतुब-उद्दीनका उद्देश्य समझ कर गेरने उन पर प्राक्रमण कर लहे" यमपुर भेज दिया। पोले कुतुबके पञ्चशक्ति उन पर हमला किया। उः गौनी पौर धर्मस्य मोरका जन्म यह कर भी वे छोड़े वरमें उतरे पौर मकैनी पौर सुँह किए चहुँ ही गए। मकैके उद्देशमे एक सुहो धूल पंवेने गिर पर लाल कर धार्मिकके मरचकी तरह भोगव्या पर गी रहे (१)।

गेर चक्रगानकी शायद बाद में ऐ-उद्विमा पर कहा पहा धैराया गया पौर यह दिल्लीकी भेज दी गई। मरा पदुष कर लहे" भी कुतुब-उद्दीनके मारे जानिके बमियोग पर, बन्दिनोभावमे रहनेका दुष्ट हुआ। चक्र-वर्ककी मददो हकिया बेगमकी संरक्षरियीमे वे नियुक्त हुँ (२)। इसी किमोका कहना है, कि में ऐ-

उद्विमानि जहान् गोरदी गम धारिणी मन्थिन-उत्तमोके यदा पापय निया (१)।

जिम में ऐ-उद्विमाने एक दिन अपने कटासमे कुमार मनोमका मोहित कर दिया था, फिर तो पानी चक्र कर भारतको पधीररी बनाई गई थीं वह में ऐ-उद्विमा प्राज प्रामादमें बुरी निगाहमे देखी आ रही है, यह देख कर उह गहरी चोट पारि। जहानोने उनके प्रति ऐसा क्रूर व्यवहार क्यों किया, उसका स्पष्ट इति-हास नहीं मिलता। मुसलमान इतिहासिकोका कहना है, कि प्रियदात कुतुब-उद्दीनकी शत्रु पर वे परधम शोकार्ण हुए थे।

गेर-चक्रगानके शोच पौर में ऐ-उद्विमाके गर्भमे एक कन्या उत्पन्न हुई थी जिमका पाटका नाम था नाहनी बेगम, जिन्स यथार्थमें माताके नाम पर उसका भी नाम में ऐ-उद्विमा रखा गया था। माताके माघ यानिका भी दिल्लीपारि थी।

गेर-चक्रगानकी शत्रुता सम्वाद जब दिल्लीमें पहुँचा तब जहान् गोर फूले न मयाए पौर बोले, 'वह काला-सुख नाशधम करकेमें पिरकाम तक पहुँगा।'

में ऐ-उद्विमा सुलतागाहकिया बेगमके मरणमे रहने लगीं। बेगममाहजाने समको परिणवाके निचे एक क्रीतदामी भी नियुक्त कर दी। प्रामादमें पानिके बाद सम्वाद, जहान् गोरने में ऐ-उद्विमाकी कोरि शोच पापर न भी। जिमके निचे उर्कैनी दाभीवन यय, कोगम पौर धूल व्वाशे को, प्राज प्राग् वरितीने चीने पर भी उनको पौर वे नजर तक भी नहीं उठाते। इस व्यवहार पर में ऐ-उद्विमाको तो पापय होमा ही चाहिये, पन्थान्य लोग भी विस्मय ही पड़े। सम्वादमें ऐसा क्यों किया, मान्य नहीं। मुसलमान इतिहासिकोंने भी इसका कोरि उल्लेख नहीं किया है। किमो किमोका कहना है, कि प्रियदात कुतुब-उद्दीनकी शत्रु पर गभीर शोकार्ण ही उर्कैने ऐसा किया था। जहान् गोर क्षमिचित विवरणमें किमो कारणका उल्लेख न कर बेगम इतना निज गए है कि, "वहमे वधम भी

(1) D. W. Hindustan, vol III, p. 26-32.  
 (2) Ain-i-Akbari (Blöchmann, p. 209 and Waki-  
 21-Jahangiri ZMik, vol. vi, p. 293.)

(1) Iktal-us-salaf-Jahangiri (E. H. S. p. 404)



उसे प्राण नहीं करता था ! सुतरां इसका कारण चिर-भ्रष्टात रह गया। पीछे इससे भी बड़कर मेहेर-उगिनसाकी भयघना की गई थी। उन्हें प्रतिदिन खाने-के लिये केवल ४५ पानि मिलने लगे थे।

मेहेर-उगिनसा स्वामिगोक तथा बादशाहके भयघना जनित कष्टमें दिनों दिन ऋण होने लगीं। अन्तमें टांडस बांध कर जिससे सम्राट् की नयन-पथवर्तिनी हो सकूँ, उसकी चेष्टा करने लगीं। सुलताना हकिया बेगम-साहबा उनके व्यवहारमें बहुत प्रसन्न हुईं। मेहेर-उगिनसाका अलोकसामान्यरूप देख कर वे भी सुभ्र हो गई थीं। ऐसी भुवनमोहिनो सुन्दरी ऐसी बुरी भयस्थामें रहेगी, यह उन्हें जरा भी पसन्द न आया। स्वतःप्रवृत्त हो कर उन्होंने सम्राट् में अनुरोध किया। बादशाहने विमाताकी अनुरोध पर भी कर्णपात न किया।

अब मेहेर-उगिनसा निराशासे दुःखित न हो ऐसा उपाय सोचने लगीं जिससे बादशाहका मन इस ओर पलट आवे। वे दैनिक व्ययके लिये जो कुछ पाती थीं, उससे अपना तथा अपने परिवारिकाका खर्च चलावा बहुत कठिन था। इसी सूत्र पर उन्होंने सूई-धोर गिल्स कर्ममें विशेष मन दिया। आप वे सब कार्य अच्छी तरह जानती भी थीं, अब ओर भी तन-मन दे कर पसाधारण सुद्धिके प्रभावसे अच्छे अच्छे फूल, पाड़ और नक़्शे निकालने, जवाहरमें बड़िया नक़्शागी उत्तारने और पुराने गहनोंमें कुछ परिवर्तन कर उन्हें और भी सुदृग्ग करने लगीं। ये सब कार्य वे खुद अपने हाथसे करती और अपनी परिवारिकाको सिखा कर उससे भी कराती थीं। धीरे धीरे द्रव्यादिके प्रसृत हो जाने पर वे परिवारिका द्वारा उन्हें बेगम-महलके नामा स्थानोंमें बेचनेके लिये भेज देती थीं। बेगम-साहबा और कन्याएं बहुत पायस तथा आदरसे उन गयी नयी विलासकी सामग्रियोंको खरीदती थीं। इस प्रकार छोड़ ही दिनोंमें मेहेर-उगिनसाकी प्रग सा बेगम-महलमें फैल गई। अब तक विन्तासनी उनके प्रसृत दो चार द्रव्योंको अपने घरमें रख न लेती थीं, तब तक वे अपने कमरेको सुसज्जित नहीं समझती थीं। सुतरां

रही सुवसे मेहेर-उगिनसाको बहुत पाय होनै लगी। बाद वे सुन्दर सुन्दर द्रव्यादि प्रसृत कर दिवनोंके समस्त भनोर उमरावोंके भन्ता-पुरमें भेजने लगीं। उन स्थानोंमें भी इनका नाम फैल गया। धीरे धीरे दिवनोंसे ले कर प्रागा तक उनके द्रव्यादिको, रपतनी होने लगी। इस प्रकार वे बहुत धनवती हो गईं। उपयुक्त पर्य पा कर मेहेर-उगिनसाने अपनी परिवारिकाओंको ऐसे सब कौमल तथा कामदार कपड़े दिये कि वे ही बादशाहजादी-सी मान्य-पहने लगीं। पीछे अपने घरकी भी उन्होंने भलीभांति सजा दिया। लेकिन आप अपने व्यवहारमें सफेद मान्यवी कपड़े के सिवा और कुछ भी काममें न लाती थीं। इस प्रकार चार वर्ष बीत गए। सम्राट् के निजप्रन्तःपुरके प्रत्येक घरसे, दरबारके प्रत्येक भनीर-उमरावके सुवसे, यहां तक कि दिवना और आगरेके सभी सम्मान्य व्यक्तियोंसे मेहेर-उगिनसाको गिल्स-प्रग सा इतनी दूर तक फैली कि सम्राट् जहांगीरकी भी इसकी खबर लग गई। फिर क्या था, जो जहांगीर एक दिन मेहेर-उगिनसाका गान सुन कर स्तब्धसे हो गए थे, आज वे उनकी गिल्स-प्रग सा सुन कर तथा उनके गिल्सकार्यको अपने पाँवोंसे देख कर उद्योत हो उठे। यहां तक, कि उन्होंने स्वयं किसी दिन मेहेर-उगिनसाके कारखाने जाने और उनके गिल्सकार्यको देखनेका सङ्कल्प कर लिया। लेकिन यह विषय उन्होंने कितोसे भी न कहा (१)।

१०२० हिजरी ( जहांगीरके राजत्वके छठे वर्ष ) के प्रथम दिनमें ( २ ) सम्राट्, उठाव मेहेर-उगिनसाके कक्षमें उपस्थित हुए। कक्षगोभा ओर गृहसज्जादिका समन्वित देख कर बादशाह सचमुच विस्मित हो पड़े। उस समय मेहेर-उगिनसा खाट पर किहनीके बज्र सेटो हुई अपनी परिवारिकाओंके गिल्सकार्यकी निगरानी कर रही थीं। वे आप तो सफेद मसजिनका सामान्य कपड़ा पहने हुए थीं, किन्तु बहुमूल्य गोभामय परिच्छद-परिधारिणी बहुत-से परिधारिकाएं घरकी गोभा बढ़ती हुई मण्डलाकारमें बैठ कर काम कर रही थीं।

( १ ) Dow's Hindustan, vol. III, p. 84.

( २ ) Iktal-nama-i-Jahngiri (Ellis, vol. vi. 494)

मिर्ज़ा-उमिना बादशाहकी देख विस्मयचकितनयनसे समझीच विहावन परचे छठी और कुर्सी दे कर उनका स्वागत किया। इस समय बादशाह सामान्य सुध्रवस्त-मण्डित मिर्ज़ा उमिनाको अनुलनीय मोभा और माधुरी देख कर बवाक् हो रहे। यह प्रत्यक्षकी सरल गठन, परिमित आकार और सारे शरीरका सवस्त्र देख उन्हें मानूम पड़ा मानो ऐन्दर्व्य ही मूर्त्तिमान हो कर उनके सामने खड़ा है। सम्वाद कुछ काल तक टक लगाए बवाक् हो उस रूपरागिकी देखते रहे। पीछे खाट पर बैठ कर लकींने पूछा, 'मिर्ज़ा-उमिना ! ऐसी विभिन्नता क्यों ? तुम्हारे परिचारिकाओंके परिच्छदसे इतनी प्रयत्नता क्यों ?' मिर्ज़ा-उमिनाने उत्तर दिया "जहाननाह ! टासख करनेके लिये जिन्कीने जन्म लिया है, प्रभुके इच्छानुसार ही उन्हें अपनी सजावट करनी होती है। मुझमें लड़ा तक गति है, वहाँ तक मैं इन्हें सुखी बनानेकी चेष्टा करती हूँ। मैं आपकी बांदी हूँ, आपके अधिप्रायानुसार मैंने अपना परिच्छद मनोनीत कर लिया है।" मिर्ज़ा उमिनाके ऐसे विनीत पधच कुछ श्रेयस्वस्तक उत्तरसे जहानगोर नितान्त प्रसन्न हुए। उसी समय उनका पूर्वानुसार पूर्ववत् प्रवचनवेगमें उद्गीत हुआ। मीठो मीठो बातोंसे मिर्ज़ा-उमिनाकी आखासन से धे चले आए। दूसरे दिन उन्होंने मिर्ज़ा-उमिनाके माथ अपना विवाह तथा उसका आयोजन करनेका प्रकाश्र आदेश दे दिया (१)।

जहानगोरने लिखिलिखित विवरणमें मिर्ज़ा-उमिनाके साथ द्वितीय बार प्रथम दर्जनका कोर्दे विधेय कारण नहीं दिया है, केवल इतना ही लिखा है, "पल्लने मैंने काजीकी बुला मंगाया और उससे विवाह कर लिया। विवाहके समय मैंने उसे 'दिनमोहर' ( विवाहकालीन धरकटक कन्याको पशुय देय यौतुक )-रूप ५ मेस्करन परिमित, ८० लाख अमरकी ( ० करोड़ २० लाख रु० ) और एक लड़ी सुक्काकी कंठी ( इसमें ४० सुक्का थीं, प्रत्येकका मूल्य ४० हजार रुपये, कुतरा १६

लाख रुपये ) प्रदानकी थी (१)।" १०२० हिजरीके प्रथम मासकी ३री वा ४थी तारीखकी सम्वाद, जहानगोरके साथ मीर-फकगानकी विधवा पत्नी मिर्ज़ा-उमिना वेगमका दूसरा विवाह हुआ था। मिर्ज़ा-उमिनाकी धरर उस समय ३४ वर्षकी और जहानगोरकी प्रायः ४२ वर्षकी थी (२)।

विवाहके बाद जहानगोरने नवपत्नी मिर्ज़ा-उमिनाका नाम बदल कर "नूरमहल" अर्थात् 'पनापुरानीक' और पीछे उसे भी बदल कर अपने नामानुसार "नूरजहान्" नाम रखा।

नूरजहाने विवाहके बाद साम्राज्यकी पद प्राप्त किया, साथ साथ अपने रूप और चमत्काम्य बुद्धिके प्रभावसे जहानगोरके ऊपर भी अपनी चमत्ता और प्रभुत्व फैलाया। जहानगोर उनके हाथके खिनेने हो गए। वे नूरकी बुद्धिके प्रभाव पर सुग्ध हो कर कड़ा करने से, "नूरजहान्से विवाह होनेके पहले मैंने विवाहका यथार्थ चर्च नहीं समझा था। उनके हाथमें राज्यका और राजकीयके कुल मणिमणिप्यादिका भार दे कर मैं निश्चित हो गया हूँ। मुझे यही एक सेर शराब और आध सेर मांसके सिवा कुछ भी प्रयोजन नहीं है (१)।" नूरजहान्के विवाहके बाद उनके पिता गयास-बेग प्रधान मन्त्रीके पद पर नियुक्त हुए और ६ हजारो मनसबदार तथा ३ हजार अग्राणीके अधिनायक बने। जहानगोरके राजत्वंके दशमें वर्ष (१०२५ हिजरी)में गयासबेगने और भी सम्मानपद प्राप्त किया। उन्हें दर-सारके बीचमें ही खोय सम्मानसूचक डब्बा बजानिका हुकुम मिला। ऐसा सम्मान और किमोके भाग्यमें नहीं बढ़ा था। इसके पांच वर्ष बाद नूरजहान्की माताका देहान्त हुआ। १०३० हिजरीमें गयासने उस मरुमह-चारिकी सुख-दुःखकी मङ्गिनी प्रियतमा पत्नीकी रगो दिया। इस समय गयासकी जामाताके माथ काशीर

( १ ) Tuzuk-i-Jahangiri ( Autobiographical memoirs of Jahangir by Major, D. Price p. 27 )

( २ ) औरमानसे एककी गनना ही गई ( Ain-i-Akbari p. 506 note )

जाना पड़ा। राहमें भग्नहृदय गयास पीड़ित हो पड़े। इस समय सम्राट और नूरजहान् ये दोनों कागरादुगे देखने गये थे। गयासकी प्रतिम अपनस्थानमें उन्हें यह संवाद मिला और और नव दोनों उन्हें देखनेकी चत्त दिये। इस समय गयासकी सुसुप्त अवस्था थी, किसकोकी वे पहचान नहीं सकती थी। नूरजहान्ने अश्रुपूर्ण नयनसे पिताकी शय्याके पाम खड़ी हो कर सम्राटकी दिशाति हुए पूका, "वेफोन हैं, पहचान सकते हैं?" गयास एक कवि थे, उस समय भी उनकी कविताशक्ति नष्ट नहीं हुई थी। उन्हेंनि कवि अनवारीकी एक कविताकी आश्रित करके कन्याके प्रथमा उत्तर दिया जिसका भावार्थ था— "यदि अन्तान् भी यहाँ आ कर खड़ा हो जाय, तो वह भी ललाटकी विशालता देख कर सम्राटकी उपस्थिति समझ सकेगा।" जहाँगीर श्वशुरका तकिया पकड़ कर दी घण्टे तक वहाँ खड़े थे। कुछ समयके बाद ही गयासकी मृत्यु हो गई। पत्नीकी मृत्युके ३ मास २० दिन बाद १०३१ हिजरीमें उनको मृत्यु हुई थी। आगरेके निकट उनकी कब्र बनाई गई। इनका समाधिमन्दिर देखनेमें सुन्दर और उल्लेखयोग्य है। गयासकी मृत्यु पर जहानगीर भी शोकातुर हुए थे।

जहानगीर स्वयं कह गए हैं, कि जहानगीर विपद्दय-युक्त वन्धुको अपेक्षा एकमात्र उनका साथ प्रतीव प्रीतिकर है। गयासके एक भी शत्रु न था, सभी उन्हें चाहते थे। उनमें अगार दीप भी था तो सिर्फ यह कि वे रिश्वत लेते थे (१)।

नूरजहान्ने दिनों दिन सम्राटके ऊपर अपना इतना प्रभुत्व जमाया, कि तातार पारस्यसे प्रतिदिन उनके जितने आश्रय दिसोमें आने लगे, वे सभी अच्छे अच्छे पोहरे पर नियुक्त होते गये। इनके पिता और भाईने तो अकबरके समयसे ही प्रतिपत्ति लाभ की थी। अब दहन के भारताधिपति होने पर उन्हेंनि और भी अपनी पदो-

क्ति कर लो। यहाँ तक कि इस समय राजकोका नामक एक व्यक्ति राजान्तापुरके परिचारिका-नियोगके पध्वत्त थे। नूरजहान्की धार्मिक दिनारातीने नूरजहान्की कृपासे इस व्यक्तिके ऊपर भी कर्तृत्वनाम कर "सदरो-भनास"की पदवी प्राप्त की थी। बिना उसकी सलाह जितने राजकोका, किसको नियुक्त नहीं कर सकते और न किसीकी वेतन जो दे सकते थे। इस समयने धर्मीय-रूपमें अपनी सभी भूमि मोहराहित करके दान कर ली थी। सम्राट उसमें जरा भी कड़कड़ा नहीं करते थे (२)।

नूरजहान्के बड़े भाईका विवरण पहले ही कहा जा चुका है। द्वितीय भ्राता मिर्जा अयुक्त हुसैन आसफ खाँकी उपाधि लाभ कर पंचसजारी मनसबदार हुए थे। तृतीय भ्राता इबाहिम खाँ फतेहगढ़की उपाधि लाभ कर १६१८में १६२३ ई० तक बहालके सुवेदार हुए थे। उनके कनिष्ठभगिनीपति हाकिम-बेग दरबारमें एक अच्छे उमराव थे।

नूरजहान्के पुत्र खामोके औरसवे लाड़ली बेगम नामक जो कन्या उत्पन्न हुई थी, उसके साथ १०३१ हिजरीमें जहानगीरने अपने पञ्चमपुत्र गहरदारका विवाह कर दिया।

नूरजहान्ने धीरे धीरे राज्यके सभी काम अपने हाथमें ले लिए। यहाँ तक कि उपाधिवितरणके व्यापारमें भी उनकी सम्मतिकी आवश्यकता होती थी। शासन, युद्ध, सन्धि, राजकोष आदि सभी विषयोंमें उनकी आशा ली जाती थी। केवल अपने नाम पर "खुतबा-पाठ"के सिवा और सभी विषयोंमें उन्हेंनि सम्राटका अधिकार निजसर्व कर लिया था। राज्यके सभी काराज पत्तोंमें तथा दलील-दस्तावेज आदिमें सम्राटके नामके बाद ही उनका भी नाम लिखा रहता था। स्त्रियोंकी जो सब जमीन दान की जाती थी, उस दान-पत्रमें केवल नूरजहान्का मोहर अधिकृत रहता था। राज्यकी सुदामें भी उनका नाम और इस प्रकारकी

(१) Aiu-i-Akbari (Blochmann, p. 409-10) and Autobiographical memoirs of Jahangir, p. 25. Wakiat-i-Jahangiri (Elliot, Vol. VI, p. 382)में लिखा है, कि इनकी मृत्यु १०३० हिजरी, १० भादवको हुई।

(२) Wakiat-i-Jahangiri (Elliot, Vol. VI, p. 398 and Aiu-i-Akbari (Blochmann, p. 570.)

कविता सुदृष्ट होती थी,—“सम्नादके आदेगसे स्वर्ण-सुद्राके बंध पर रानी नूरजहानका नाम अद्वित रहनेसे स्वर्ण की ज्योति से गुणी बढ़ गई है।” नूरजहानने इतनी क्षमता पाई थी वही, लेकिन कभी उनका अप-व्यवहार न किया। उन्हें जे जो पिटल-वस्तु वा प्राचीय स्वर्णनोंकी प्रधान कर्म पर नियुक्त किया था, उसके लिये कि भी ऐतिहासिकने उनके प्रति दोषारोपण नहीं किया। उसका कारण यह था, कि उन्हें जे सब कर्मचारियोंकी ग्रामने वशीभूत कर रखा था। वे लोग भी कभी राज्य-का मनिट करना नहीं चाहते थे। उनका सब किमीके साथ सदृश्यवहार था। वे शिष्टपालन और दुष्टदमन करते थे, परतः कोई उनसे डाह नहीं रखते थे। ये सब मनुष्य अपने अपने कर्त्तव्यपालनमें निपुण थे, इस कारण कोई उन्हें रानीका प्राणिय समझ कर विद्वेषट्टिसे नहीं देखते थे। उनको पदोन्नति प्राणियताके कारण नहीं होतो थी, बल्कि कृतकारिताके कारण। यही कारण है कि ऐतिहासिकगण नूरजहानमें कोई दोष बतला न सके और वे भी अनुगतपालनके दोषसे मुक्त हो गईं।

नूरजहान पराम दयावतो थीं। जब कभी उन्हें अपनाया बालिकाओंकी खबर लग जाती, तब ये उनके प्रतिपालनको व्यवस्था और विवाहादि करा दिया करते थीं। इस प्रकार उनकी छपासे पांच सौसे अधिक बालिकाओंका उद्धार हुआ था।

इस प्रकार क्षमता प्राप्त कर उसके सदृश्यवहारके साथ साथ नूरजहान जहान गीरकी मद्यपानामति घटानेकी कोशिस करने लगीं। १०२१ हिजरीके शरत्कालमें जहान गीरकी श्वासरोधकी बीमारी हुई। उस समय वे काश्मीरमें थे और बंधन छोड़ा सा दूध पीया करते थे। बहुत-सी चिकित्सा की गई, पर फल कुछ भी अच्छा न निकला। मद्यपानसे वे कुछ भारीप्यता अनुभव कर सकते थे, इस कारण अन्तमें उसीकी मात्रा बढ़ा दी गई। वे टिनकी भी श्रावण होने लगीं। नूरजहानने इसका कुफल देख कर बहुत चालाकीसे इसकी मात्रा घटा दो और सेवा करके स्वासीकी भारीप्य बना-दिया। इसी समयसे जहानगीरके मद्यपानका परिमाण कुछ कम हो गया (१)।

नूरजहान केवल बुद्धिमती रमणी थीं तो नहीं, वे वीर्यशालिनी भी थीं। इनके प्रथम स्वामी शेर-अफगानने व्याघ्रको मार कर जो साहज दिखनाया था, वे भी वसा ही साहज रखती थीं। १०२८ हिजरीमें मयुराके निकट बाघने बड़ा उपद्रव मचाया। जहान गीरकी जब इसकी खबर लगी, तब उन्होंने हस्तिदल भेज कर बाघकी चारों ओरसे घेर लेनेका हुकुम दिया। ग्रामको नूरजहान भी अनुचरोंके साथ पहुँचीं। जहान गीरके नहीं जानैका कारण यह था कि उन्हें प्रतिष्ठा थी थी कि वे किसी प्राणिको बंध नहीं करेंगी, इस कारण उन्होंने नूरजहानको जाने तथा गोली चलायेंका आदेश दे दिया। बाघकी गन्धसे हाथी स्थिर रह न सका। अतः हाँटेके भीतरसे निगाना ठोक करना बहुत कठिन-सा हो गया। उस समय केवल मिर्जा रस्तम नामक एक पयार्यस्य शिकारी उपस्थित था। उसने तीन बार निगाना किया, लेकिन एक बार भी सफल न हुआ। अन्तमें नूरजहानने उस अस्थिर हाथीको पीठ परसे अपने-गिहाने बल एक ऐसी गोली चलाई कि बाघ चित हो रहा (२)।

दरबारमें किसी कविने इस घटनाका उपनस्य करके कवितामें कहा था, “यद्यपि नूरजहान स्त्री थीं, तो भी वे शेर-अफगानकी पत्नी ही तो थीं।” “जानि-शेर-अफगान” अर्थात् शेर-अफगानकी पत्नी वा शत्रुनाशिनै रमणी यह विवरण जहान गीर सत्य शिष्य गए थे।

शहरारके नूरजहानके जमाई होने पर तथा नूरजहानका प्रभाव देख कर जहान गीरके अन्याय पुनरागण डर गए। सम्नादके पूर्वमेंसे युवराज खुर्रम (पछि शाहजहान) बुद्धिमान, वीर, कर्मकुशल तथा पितामह अकबरके प्रियपात्र थे। अंगरेजके पूर्व-दक्षिण रामगिरके

(1) Wakisb-i Jahangiri (Elliot Vol. VI. p. 267)

भाईन-इ-अकबर (५३५ पृ०)में बार बाघकी कथा लिखी है जिनमेंसे दो बाघको एक एक गोलीसे और तीसरी दो दो गोलीसे नूरजहानने मारा था। शिकारमें उन्हें जवादा प्रेम था, इस कारण इन्हें इन्हें समादसे बाधा दे ही लेती थीं।

मिकट रानी नूरजहाँ की प्रति विस्मृत जागीर थी। १०२१ हिजरी के शेष में जहानगोर के राजत्व के मुत्तरह में वर्ष के पारभ में यह सम्वाद पड़ चुका कि युवराज खुर्रम ने नूरजहाँ और राजकुमार शहरयार को जागीर का अधिकार अधिकार कर लिया है। उस समय शहरयार के कर्मचारी टोलपुर के फौजदार असरफ उल मुल्क के साथ लड़ रहे थे, जिसमें दोनों पक्षों को बहुत-सी सेनाएं हताहत हो चुकी थीं। यह खबर जब जहानगोर की लगी, तब उन्होंने शाहजहाँ के अधीनस्थ सैन्य दल दिल्ही भेजे तथा उन्हें अपने जागीर में सन्तुष्ट रह कर काल्पवपथ में विचलित नहीं होने के लिए एक अनुशासन पत्र उनके पास भेजा। शाहजहाँ ने पिता की आज्ञा का पालन किया। प्रधान सेनापति मिर्जा अजदुल-रहोम खानखानाने शाहजहाँ का साथ दिया। अन्त में २५ हजार अश्वारोही ले कर आसफ खाँ (नूरजहाँ का द्वितीय भ्राता) ने बिलुचपुर के निकट विद्रोहियों के ऊपर आंशिक जयलक्ष्मी किया। पीछे १०३२ हिजरी में तुतामद-उद्दौला अफगाँव में मरहूम खाँ कुमार परकीज के अधीन रह कर ४० हजार अश्वारोहियों को साथ ले विद्रोह दमन में अग्रसर हुए। अजमेर के समीप मरहूम खाँ विद्रोहियों के प्रभाव को बहुत कुछ खर्च कर डाला। पीछे खानखानाने जब शाहजहाँ का साथ छोड़ दिया, तब वे उड़ीसा भाग गए। इस घटना में नूरजहाँ शाहजहाँ के ऊपर बहुत विगड़ी और भविष्य में अपने जमाई शहरयार को ही दिल्ही के सिंहासन पर बिठाने का उन्हें न सफल कर लिया, किन्तु शाहजहाँ का अनिष्ट करने को उनकी जरा भी इच्छा न थी। कारण मरहूम खाँ जब उनके विरुद्ध रण की ओर अग्रसर हुए, तब नूरजहाँ ने ही एक गुप्त पत्र लिख कर उन्हें गुजरात की राह में भाग जाने की सलाह दी थी (१)।

जहानगोर के राजत्व के चौबीसवें वर्ष में १०३५ हिजरी की मरहूम खाँ बहाल के सुवेदार हुए। सुवेदार हो कर उन्होंने बहाल से हाथी (जो प्रति वर्ष पकड़ कर भेजा जाता था) भेजना बन्द कर दिया। अश्वारोही

दोस्तगायर नामक एक कर्मचारी द्वारा हाथी भेजने तथा मरहूम खाँ को दरबार में उपस्थित होने के लिए मन्दाटनी कहला भेजा। मरहूम खाँ हाथी तो भेज दिया लेकिन आप न गये। इस समय उन्हें खबर लगी कि मन्दाटनी की सलाह लिये बिना उन्होंने जो अपनी कर्ता का विवाह किया है, इस कारण मन्दाटनी उनके जमाई को पकड़ लाने का हुकूम फिदाई खाँ को दे दिया है। इस समय मन्दाटनी दलबल के साथ कानुल की ओर जा रहे थे। बेहात (वितस्ता) नदी के किनारे उनकी छावनी डाली गई थी। नवाब आसफ खाँ अपनी सारी सेना को ले कर नदी पार हो चुके थे। मरहूम खाँ निज मान, सम्भ्रम और ओशन समुह को विपद् में समझ कर २०० राजपूत सेना साथ ले मन्दाटनी छावनी में प्रवेश किया। एकत्रालनामाने प्रत्यक्ष सुतामद खाँ इस समय मन्दाटनी वकरी, और और तुजक के पद पर अधिष्ठित थे, इस कारण वे हमेशा उनके साथ साथ रहना करते थे। मरहूम खाँ दलबल के साथ छावनी को घेर लिया। सेनाने दरवाजे परटे को चोर फाड़ डाला। द्वाररक्षक ने भीतर जा कर मन्दाटनी को यह खबर दी। मन्दाटनी तुरत हो बाहर निकल आए और पालकी पर चढ़ कर जहाँ मरहूम खाँ थे, वहाँ पहुँचे। मरहूम खाँ ने उनसे कहा, 'नवाब आसफ खाँ की हिंसा और ताच्छिल्य का सफन नहीं करते हुए मैंने जहाँनाह को शरण ली। मैं यदि प्राणदण्ड के उपयोगो हूँ, तो हुकूम दोजिए, आपके सामने ही दण्ड-भोग करूँ।' इसके बाद योहागण पालकी को चारों ओर से घेरे हुए खड़े हो गए। राग के मारे मन्दाटनी दो बार तलवार को खोंचना चाहा, पर दोनों बार मसूर-दकशीने उनका हाथ पकड़ लिया और धैर्य रखने तथा ईश्वर पर निर्भर करने का अनुरोध किया। पीछे मरहूम खाँ ने मन्दाटनी अपने घोड़े पर सवार होने को कहा। लेकिन मन्दाटनी ने ऐसा नहीं किया यरन् उन्होंने अपना घोड़ा और पोशाक लाने का हुकूम दिया। घोड़े के पछले ही वे तुरत सवार हो गए। योही दूर जा कर मरहूम खाँ हाथी पर चढ़ा लिया और दोनों दगल में पहरा बैठाया गया। पीछे गिकार का दफाना

करके महब्वत सम्राट् को अपने घर ले गए और अपने पुत्रीको सम्राट् के रचोस्वरूप नियुक्त किया।

महब्वत जो सम्राट् की बन्दी करके ले गए, यह रहस्य किधीको मालूम होने न पाया। यहाँ तक कि रामो नूरजहान् को भी इसको खबर न मगी। महब्वतने जब सम्राट् को कैद किया, उस समय उनके मनमें बुद्धिमती नूरजहान् की कथा जरा भी याद न थी। इस प्रकार कई दिन बीत जाने पर जब उन्हें नूरजहान् का खबर मगा, तब उन्होंने सम्राट् को पुनः राजप्रासादमें भेज देनेको कल्पना की। किन्तु जब इधर नूरजहान् को मन्दीह हुआ, तब वे अपने भारीके साथ सुलाकात करनेकी गईं। यह सन्वाद पा कर महब्वत अपनी भूल समझ गये और सुविधा रहते भी नूरजहान् को बन्दी कर न सके यह सोच कर वे अपने भोठ चवाने लगे। पत्तमें कुमार शहरयारकी सम्राट् के साथ बन्दी रखनेके उद्देश्य से वे सम्राट् को शहरयारके घर ले गए।

इधर नूरजहान् आशुशिविरमें पहुँचे और अपरिणामदर्शिताने लिये उनको खूब निन्दा की। नवाब शासक खाँ भी बहुत खिन्न हुए। उस समय सर्वाने सलाह करके यह स्थिर किया कि दूसरे दिन महब्वत पर भाकमण और सम्राट् को उधार करना ही कर्तव्य है। यह खबर धीरे धीरे सम्राट् के कानमें पहुँची। उन्होंने इस ब्यर्थ आयोजनको रोक देनेके लिये सुकारिष खाँके हाथ संवाद भेजा और नदी पार हो कर युद्ध करनेका निषेध किया। दूत यह खबर पहुँचानेके लिये राजाकी भ्रंशुठी ले कर चला गया था, किन्तु भासक खाँने महब्वतका कृतकोगल समझ कर उस परामर्शकी घोर कर्षपात न किया।

महब्वतकी भी इसकी खबर मग गई। नदीके ऊपर जो पुल था उसे उन्होंने जला दिया। किदाई खाँ सम्राट् का बन्दित सुननेके साथ ही कई एक साथी वीरोंके साथ ही तैर कर नदी पार होने लगे। उनमेंसे कुछ नदीके वेग और जलकी गीतसतासे मर गए, केवल छः योद्धा कुशलसे पार हो सके थे। इन छः मेंसे भी फिर चार शत्रुके हाथसे मारे गए। किदाई अपनी निरुद्विगता समझ पुनः तैर कर नदीके पार चले आए। पत्तमें

पामफ खाँ नूरजहान् को साथ ले सस म्य हायो- और चौड़े द्वारा नदी पार कर गए। नूरजहान् ने दूत भेज कर सर्वाकी सहायित किया और कहा, 'अभी इतनातः करनेसे सब व्यर्थ हो जायगे। शत्रु लक्ष्यपनाइको ले कर भाग जायंगे। इसमें उनके प्राण जानिकी प्रायश्चा भी है।'

नदी पार होनेके समय मात घाट से राजपूतसेनाने युद्धस्तीकोले कर जलके बीचमें ही उन पर भाकमण किया। नूरजहान् के हाथोकी छुँड़ पर विपलियोंने तलवार द्वारा बहुत जोरसे प्रहार किया। जब हाथी लौटा, तब वे तोरवरसाने लगे। कुमार शहरयारकी कन्याकी धात्रीके पहलमें एक तीर चुभ गया (१)। नूरजहान् ने उस तीरको खींच कर बाहर फेंक दिया। धात्रीका सन्तुचा शरीर लहलहे रंग गया। हाथी रानाको अपने पीठ पर लिए राजप्रासादको घोर चल दिया। पार होते समय भासक खाँ चौड़े परसे पानोमें गिर पड़े और रिकाव पकड़ कर कुछ दूर तक बटक रहे। घोड़ा उनके बोझने पानोमें डूब मरा। इसी समय एक कश्मीरी नाविककी नजर भासक पर पड़ी और उसने उनको जान बचा ली। पीछे भासक खाँ इस प्रकार अपने उद्देश्य और परामर्शको विफल होते देख खजामे मर गये। किदाई खाँ कतिपय पशुचरों और सम्राट्-श्रुत्योंको ले कर नदी पार हुए और शत्रुओं पर टूट पड़े तथा उनका ब्युद्ध भंग करते हुए दसबलके साथ कुमार शहरयारके प्रासादमें जहाँ सम्राट् बन्दी थे पहुँचे। प्रासादके मन्दिर विपलियोंके जो बहुसंख्यक भयवारीही घोर पदाति बैठे हुए थे, उन्होंने किदाईकी पुरोमें प्रवेश करनेसे रोका। इस पर किदाई खाँ फाटक परसे तोरकी सर्पा करने लगे। जिस घरमें सम्राट् बंदी

(१) बाट चाहके इतिहासेमें लिखा है, कि नूरजहान् की कन्या शहरयारकी पानी ही बाहर हुई थी और वही ठीक नी प्रतीत होता है। क्योंकि ऐसे समयमें वही बालिहाको ले कर नूरजहान् की धात्रीके साथ हाथी पर उबार थी- यह अनुमानसे बाहर है। उनकी इच्छासे हाथ रदना कोई भी बात नहीं थी।  
(Dew's Hindostan Vol. III, p. 91.)

ये, उस घरमें भी दो एक तोर जा गिरा। सुबहिस खी नागक एक ब्यक्ति सम्राट् के जीवनको भयहा देख निज शरीर द्वारा सम्राट् को भाङ्ग दिए खड़ा रहा।

शत्रुओं के तोरने फिदाई खी के कितने यतुचों को यमपुर भेज दिया; वे स्वयं भी आहत हुए और उनका घोड़ा चृतप्राय हो गया। जोतको आग न देख फिदाई खी लोट जानिको बाध्य हुए और नदी पार कर रोहतस दुर्गमें जा ठहरे। आसफ खी भी खलित और परास्त हो अपनी जागीरके अन्तर्गत अटकदुर्गमें भाग गए। महब्वतने जयो हो कर आसफ खीको पतङ्गनेके लिये अपने लङ्क के विश्वीज और एक राजपूत सेनापति-को विपुल सेना साथ दे भेज दिया। आसफ खीके सेना-बल कुछ भी न था। अतः वे सहजमें पराजित और पुत्र समेत पकड़े गए। महब्वतके पास पहुँच कर वहाँ न उनका पक्ष ग्रहण करनिका प्रयत्न था। अटकदुर्ग महब्वतके अधीन रहा। सम्राट् कुछ दिन जलामावादीमें रह कर काबुलकी चल दिए। महब्वत भी उनके साथ थे, उनका बन्धित्व उस समय भी दूर नहीं हुआ था (१)।

आसफ खीके सपुत्र बन्दे शीने पर नूरजहाँन साहोर-से भागी जा रही थी। किन्तु सम्राट् ने उन्हें एक पत्र लिख कर सूचित किया कि महब्वतने उन्हें घरमान-पूर्वक रखा है और महब्वतके साथ जितना गोलमाल था, सब मर मिट गया है। स्वामी कुशलपूर्वक हैं, यह ज्ञान कर नूरजहाँनको चैन पड़ा। महब्वतने भी सम्राट् के पत्राभ्यायो सब विवाद मिट जानिकी कथा लिखी और अन्तमें नूरजहाँनको सम्राट् के साथ काबुल वा जहाँ वे चाहे वहाँ जानिमें बाधा नहीं देगे, ऐसी खबर दी। अब नूरजहाँनने स्वामीके पास जानिमें जरा भी विलम्ब न किया। साहोर छोड़ कर वे उसी समय जहाँ

(१) एकबारमासमें नूरजहाँन कर कहीं और निज तरह सम्राट् से मिली उरका कोई वरुख नहीं है। पर काबुलप्रमणके समय वे सम्राट् के साथ थी, ऐसा शिक्का है। अतः काबुल प्रवेगके पहले ही वे बलानाकदबी शायनीमें मिली थीं ऐसा अनुमान किया जा सकता है।

सम्राट्, ये वहाँ पहुँच गईं। महब्वतने सेना भेज कर उनकी सहायसम्भसे अभयार्थना की।

महब्वतने इस प्रकार नूरजहाँनको हस्तगत कर उनकी कार्यक्षमताको और दृष्टि रखी और वे शीघ्र हो समझ गए कि नूरजहाँन अपने जामाताकी राजगद्दी पर विठानिकी कोशिशमें हैं। महब्वतने उनकी खबर सम्राट् को दो और कहा "मोका मिलने पर रामो आप-के प्राण तक भी ले सकते हैं। अतएव इस समय नूर-जहाँनको मार डालना ही उचित है।" इस पर सम्राट् ने उसी समय नूरजहाँनके वाधादेय पर हस्ता-क्षर करके भेज दिया। महब्वतने यथासमय वह वादेश-पत्र नूरजहाँनको दिखाया। नूरजहाँनने कहा, "सम्राट् अभी बन्दे हैं। उन्हें साधोना कर्ता। मैं एक बार उनसे मुलाकात करना चाहती हूँ।" उनको प्राधान्य स्वीकार की गई। नूरजहाँन, पर नजर पड़ते ही सम्राट् फूट फूट कर रोने लगे। जिस हाथसे सम्राट् ने वधादेय लिखा था, उसे अश्रुजलसे सिक्त किया। सम्राट् ने व्याकुल हो कर महब्वतसे कहा, 'महब्वत! क्या तुम केवल इसे एक स्त्रीको छोड़ नहीं सकते।' यह कातररक्ति सुन कर महब्वत भी सुगुँहो गए और सुँहसे एक बोली भी न निकालते हुए रक्षिण्यको जाने कह दिया। नूरजहाँन मुक्त हो गईं। इधर महब्वतके इस आचरणसे उनके साथी लोग सुख और विरक्त हो गये तथा बोले, 'इस दया पर, इस भूल पर एक दिन तुम्हें ठोकर खाने पड़ेगी। वाचित्र जब कभी मोका पायगो तभी उसकी हड्डी चबा डालिगो। भागे चल कर दुधा भी बेना ही। नूरजहाँनके हृदयमें यह अप-मान प्रस्तराहित रखाकी तरह बैठ गया था। (१)

यादशाह और बेगम काबुलमें हः मास तक ठहरी थीं। इस समय वे बीच-बीचमें शाह शम्शादलसे मुला-कातकी जाया करते थीं। महब्वतकी शायनी वादगाही शायनीसे कुछ दूरमें थी और वे कभी कभी वादगाहकी देखने आया करते थीं।

नूरजहाँनका हृदय पूर्व-परमानसे दिनों दिन धक्क

रहा था। जिस प्रकार महब्वतका बदला चुकाऊ। रात दिन वे हथौकी फिक्रमें थे।

इस समय गूरजहान, हमीदा खानेकी साथ रहा करती थीं और उदारके लिये नाना परामर्श देती थीं। किन्तु सम्राट्, एक भी परामर्श न सुनते थे। उस समय वे महब्वतके साथ मिल कर विश्वास दिवानेको चेष्टा कर रहे थे। महब्वत भी सम्राट्के व्यवहारसे दिनों दिन उध-विषयमें निरुद्ध हो रहे थे। सम्राट्को भी यह अच्छी तरह मालूम हो गया था। वे उस विश्वासकी एक चारकी छूरीभूत करनेके लिए नूरजहानके सभी परामर्शोंको निष्कपट पूर्वक महब्वतसे कहने लगे। यहां तक कि नूरजहानने महब्वतके प्राणनाशकी जो सलाह दी थी तथा उनको भ्रातृपुत्र वधू (शाईस्ता खांकी पत्नी और शाह नवाजकी कन्या)ने भयभर पा कर उन्हें गोलीसे मार गिरानेकी जो विचार किया था उसे भी सम्राट्ने महब्वतको कह दिया।

महब्वत पिछरावह-विहङ्गनौके उद्यारायें ये सभ हथा-चेष्टाकी कथा सुन कर छुपाकी हथौसे हंमते थे। नूरजहानको इसकी भी खबर नग गई और अन्तमें वे इसे बरदाश्त कर न चकें। ये महब्वतकी छुपेसे अलग करनेकी कोशिश करने लगे। उन्होंने इस बार सम्राट्की भी इसको सूचना न दी। महब्वत जिन राह हो कर वादगाही गिविरमें पा रहे थे, एक दिन उस राह पर उन्होंने कुछ काबुली बन्दूकधारियोंको गुप्त स्थानमें रखा। महब्वत छोड़े पर चढ़ ल्यों हो गली हो कर कुछ दूर भागे बढ़े, ल्यों ही दोनों बगलकी भटालिकाओं परसे उन पर गोली बरसने लगी। शोभाग्यवश महब्वतके शरीरमें एक भी गोली न लगी। वे धातुवेगसे गली हो कर बन्दूकधारियोंको विमर्दि करतें हुए सामान्य पाहत पा कर अपने गिविरमें पहुँचे। काबुलियोंने सम्राट्की पाँच हो सेनाको मार लाया। पोलि नूरजहाननेमाने इस विषयसे बिलकुल अनभिद्य हो, सम्राट्से इन घटनाका कारण पूछा। सम्राट्, संक्षुभ इसका कुछ भी हाल नहीं जानते थे, सुतर्षा वेषा ही उत्तर दिया। बाद महब्वतने काबुलियोंसे इस प्रदेशको छेद लिया। काबुली मयभीत हो गए। नगरके प्रधान प्रधान मनुष्य

महब्वतके पास बहुत विनीतभाषमें उपस्थित हुए। सम्राट्ने भी उन लोगोंको धीरेसे महब्वतमें चमा मीगी। इस घटनाके कुछ नेतागण जब पकड़वा दिये गए, तब महब्वतने भी सम्राट्के चित्तमें घेरा उठा दिया। उन सब नेताओंको सामान्य दण्ड दे कर मुक्ति मिली। इसके बाद ही महब्वतने काबुलमें क्षान्सी उठा लेनेका हकूम दिया और वे सबके सब साहोरकी ओर चम दिए (१)।

नूरजहानने जब देखा कि सम्राट्, उनकी बात पर कान नहीं देते, तब वे बहुत उद्विग्न हो गईं और क्या करना चाहिये उसकी तरकीब दूढ़ने लगीं। खानेकी परसे उनका विश्वास हट गया और छिपते उद्यार पानेके लिये वे पड़यन्त्र रचने तथा सम्राट्की भी प्रबोध देनेके लिये उनकी साथ मिया परामर्श करने लगीं। सच पूछिये तो नूरजहान, इस समय जी जानसे छुटकारा पानेकी कोशिशमें थीं। वेतन दे कर वे अनुचरकी संख्या धीरे धीरे बढ़ाने लगीं। क्रमशः उनके कोषाध्यक्ष होगियार खां दी हजारा मनुष्योंकी संघ हर साहोरकी ओर पधर हुए। उस समय नूरजहानि भी राजभयपरिचयसे कितने हो लोगोंको संघ कर रखा था। होगियारने रोहतसमें कुछ दूरमें रह कर नूरजहानको सम्वाद भेजा। नूरजहानि खानेकी निजसैन्यपरिदर्यानेके लिये भाष्यपूर्वक अनुरोध किया। सम्राट्ने इसे स्वीकार कर लिया। उन्होंने निज परिचारक बलन्द खां द्वारा महब्वतको कहला भेजा कि उस दिन दैनिक कूचकथायद बन्द रखो जाय कारण भ्रमट्, वेगमसे चम्बरोहका परिदर्या न करेंगे। पहले महब्वत तो राजो न हुए पर पोलि राजा-चललहसनने तके द्वारा उन्हें राजो कराया। राजप्रासादसे ले कर नदीके किनारे तक दोनों बगल रानोके चम्बरोहो एक ग्रीधमें खड़े किये गए। उद्यार नदीके दूसरे किनारे होगियार खांको सैन्यदल रोहतस दुर्ग तक फँसा हुआ था। वादगाह और वेगम छोड़े पर सवार हुईं। उनके कुछ

(१) Ikbal-nama-i Jahangiri Elliot, Vol. VI, p. 420-431)



दूर जानें पर मैं न्याय घोर घोर सम्राट के पीछे पीछे  
 आने लगे। अन्त में बहुत तैयारी से सबके सब बादा-  
 शाह घोर विगमके साथ नदी पार कर रोहतस दुर्ग में  
 पहुँचे। इस प्रकार रानी नूरजहाँके बुद्धिबलसे सम्राट  
 ने चिरमन्दिबलसे उधार पाया। अब खामोशो उधार  
 कर वे अपने भाई घोर भोजीके उधारकी चेष्टा करने  
 लगीं। उन्होंने महबूबत खाँको एक आदेशपत्र खामोश  
 लिखवा कर भेजवा दिया। उस पत्रमें महबूबत खाँको  
 उद्देश्यमें शाहजहाँके विरुद्ध युद्धयात्रा करने, भासफ खाँ  
 और उनके पुत्र बाबू तालीब (पीछे शाहजहाँ) को  
 दरबारमें भेज देने, शाहजहाँ दानियालके दोनों पुत्रोंको  
 और सुबखसि खाँके पुत्र खलसरो खाँको भेज देनेका  
 आदेश था। पत्रमें यह भी लिखा था, कि उनके आदेश-  
 का पालन करनेसे उनके विरुद्ध सेना भेजी जायगी।  
 महबूबतने देखा, कि इस समय बिना किछे छिड़छाड़के  
 सबकी भेज देना हो अच्छा है, नहीं तो प्राप्त मेरे ही फिर  
 पहुँचो। यह सोच कर उन्होंने सब किसीकी भेज दिया  
 सिवा भासफखाँके, जिसका कारण लिख भेजा कि वे उद्देश्य  
 प्रदेग जा रहे हैं, इस समय वे भासफ खाँको छोड़ नहीं  
 सकते। क्योंकि नूरजहाँ विगमसे वे पदपदमें प्रतिशोध-  
 को प्रायश्चित्त कर रहे हैं। उद्देश्य घोर जाननेसे सम्भव है  
 कि स्वाधीनता-प्राप्त भासफ खाँ उनके विरुद्ध अस्त्रधारण  
 करें। अतएव लाहौर पार होनेसे बाद वे छोड़ दिये  
 जायेंगे। नूरजहाँ यह सम्वाद पा कर प्रायश्चित्त हो  
 उठे। उन्होंने पुनः महबूबतको लिख भेजा कि वे  
 कोरन भासफको छोड़ दें अन्यथा उनके पक्षमें अच्छा  
 नहीं होगा। इस पर महबूबतने बिना किसी नाँवके  
 भासफको भेज दिया, लेकिन उनके पुत्रको कुछ समय  
 तक रोके रखा।

हाथ साहबके इतिहासमें सम्राटके उधारका वर्णन  
 घोर प्रकारसे लिखा है। महबूबतकी राज्य धामकी जरा  
 भी इच्छा न थी। पर घोर सर्वादोंमें किसी प्रकारकी  
 हानि न पहुँचेगी इस प्रकार सम्राटसे प्रतिज्ञा करा कर  
 उन्होंने उन परसे कठोरता घटा दी; पहलुषीकी महबूबत  
 को कम कर दिया तथा जो सब राजकीय धर्मता अपने  
 हाथमें ले ली थी उसे भी सम्राटको प्रत्यर्पण किया। इस

सदृश्यकार पर भी नूरजहाँ सुप चाप बैठो न रहीं, परन्तु  
 धमता पानेसे उन्हें सब घोर भी सुयोग मिल गया।  
 उन्होंने यह कहला भेजा कि, "जो भयानक दुर्दास्त धमता  
 गाँधी घोर कुटिल मनुष्य सम्राटको कैद कर सकता  
 है, उसे यदि बिना दण्ड दिए ही छोड़ दें, सबका  
 मोखिक धानुगल्यमें बगीभूत हो कर उसका बाहर करे।  
 तो फिर प्रजा क्या सम्राटको प्रकृत सम्राट, मानेगी?"  
 यह कह कर वे गमने जनताके सामने उसे माण्डण्ड  
 देनेके लिये सम्राटमें अशुरोध किया। लेकिन सम्राटने  
 वे साँ नहीं किया, परन्तु इस विषयमें कोई बात उठानेसे  
 मना किया। स्वामीसे इस प्रकार विकसमतोरय हो  
 नूरजहाँने एक खोजाको सम्राट-विधिरमें प्रवेश करती  
 वा उससे बाहर निकलते समय महबूबत पर गोली  
 चतानिका डुफुम दिया। जहाँगीरको खोजी इस आदेश-  
 को खबर लगे, ल्यों ही उन्होंने महबूबतको सावधान  
 होनेके लिये कहला भेजा। महबूबत सावधान हो गए  
 लेकिन मारे जानेका डर हरबल बना हुआ था। अन्त-  
 में सम्राटकी बात पर विश्वास करते हुए, वे सुरा कर  
 उद्देश्यको चल दिये।

जब नूरजहाँकी मालम हुआ कि महबूबत जान  
 ले कर कहीं भाग गया, तब उन्हें खोजने घोर पकड़  
 लानेके लिये उन्होंने चारों तरफके शासनकर्त्ताओंके पास  
 फरमान भेज दिये। डिठोरा भी पिटवा दिया गया कि  
 महबूबत खाँ भागी हो गया है, जो उसको पकड़ लावेगा  
 उसे उद्येष्ट पारितोषिक मिलेगा।

भासफ खाने अपने बहनके ऐसे कठोर आदेशको  
 अच्छा न समझा। वे महबूबतकी गुणवकी जानते थे  
 घोर स्वयं भी उनके सहायकारके बगीभूत थे।

महबूबत नूरजहाँनके आदेशसे ताड़ित कुत्तकी  
 तरह नाना स्थानोंमें सुरा कर घूमने लगे। अन्तमें एक  
 दिन छत्रेश्वरमें असम साहस पर निर्भर करते हुए  
 छोड़े पर नवारं हुए घोर उठने दो सो कीधका राफ़ता  
 ते कर कर्णाल नामक स्थानमें भासफ खाँके विधिरमें  
 पहुँचे। रातके ८ बजे जब वे द्वार पर जा खड़े हुए,  
 तब एक खोजने उसे पहचान भासफकी धर दी।  
 भासफने महबूबतके मस्तिन बंध घोर दुद या देख कर

उनका आतिथ्य किया और दोनों रीने लगे। वह तब  
वातघोत होनेके बाद महबूतने कहा, "समाट् की  
छेपताने ही उनका सर्वनाश किया। नूरजहान जैसे  
पल्लवत है और सबके लिये जब मेरो ऐसी दुर्दशा हो  
गई है, तब एक दूसरेकी समाट् बधाऊंगा, ऐसी मैंने  
प्रतिज्ञा कर ली है। कुमार परवीज धार्मिक बन्धु होने  
पर भी दुर्बलमना और निर्बोध है। किन्तु शाहजहाँ  
सर्वशक्तिमान् प्रयुक्त है। उसे मैंने युद्धमें परास्त किया है।  
अन्यथा यदि आप हमारी सहायता करें, तो हम आप-  
के जामाताकी राज्य दे सकते हैं।" आसफ-अपार्थित  
बन्धु या कर विस्मित और प्रीत हुए तथा सैन्य और  
भय दे कर सहायता प्रदान करनेकी तैयार हो गए।  
बाद महबूत वहाँमें चल दिये।

तदनन्तर दरिद्रके गोलयोगका सम्वाद पड़्यो।  
समाट् ने महबूतके लैने सेनापतिका अभाव उल्लेख  
करते हुए आशय किया। इसी मौकेमें आसफ लैने  
महबूतकी मार्जनाका आदेश बाहर निकाल लिया।  
महबूतने फिरसे पूर्व सम्मान और पदादि पाए तथा वे  
मैन्सदरके अधिनायक हो कर शाहजहाँके विश्व भेजे  
गए। (१)

सुसम्मान ऐतिहासिकोंने लिखा है,—इसी बीच  
समाट् दलबलके साथ लाहौर पहुँचे। आसफ लैनेके  
वहाँ पहुँचने पर वे पञ्जाबके सुवेदार और प्रधान मन्त्री-  
के पद पर नियुक्त किए गए तथा उन्हें समस्त राजनैतिक  
और राजस्वज्ञान मन्त्रासमाके सभापतिरूपमें काग  
करनेका आदेश भी दिया गया। इस समय महबूत  
यहूदमें २२ लाख सुद्रा साथ लिए आते थे। विहारके  
निकट शाहाबाद पहुँचने पर जब समाट् की इसकी  
खबर लगी, तब उन्होंने सेना भेज कर उसे हथि लिया।

इसके बाद शाहजहानने उठ प्रदेश होते हुए पारस्य  
जाने तथा वहाँके पधीमर शाह अन्वससे सहायता  
मांगनेका विचार किया। उठप्रदेश पहुँचने पर कुमार  
शहरवारके काम धारी सरीफ-उल-सुबकने दुर्गमें गोना  
के कर उनके कितने अनुचरोंको मार डाला। इस

समय ३८ वर्षको अवस्थामें कुमार परवीजकी मृत्यु  
हुई। पतः शाहजहाँ उठकी छोड़ कर नामिक भाग गए।  
महबूत लौ शाहाबादमें २२ लाख रुपयेसे वसित हो कर  
सब आशाओंका परिधायण करते हुए राजपूतानेमें राणा-  
के राज्यके मध्य प्रायः व्यपदेशमें दिष्ट रहे। पीछे जब  
उन्होंने सुना कि शाहजहाँ आसिधमें हैं, तब उनके पास  
एक दूत भेजा। इस समय शाहजहाँको महबूतके जैसे  
एक आदमीकी लठरत थी, इसलिए उन्होंने महबूतको  
अपने पास बुला भेजा। इस समय भी महबूतके साथ  
२००० सखारोही थे। सुनिर नामक स्थान पर दोनोंमें  
मुलाकात हुई।

१०३० हिजरीमें समाट् लहाँगीर रोग-ग्रस्त हुए।  
दोनों दिन उनका भोजन कम होता गया। केवलमात्र  
एक पात्र द्राक्षा-रसके साथ और कुछ मीखानेका उपाय  
न रहा। अन्तमें चिकित्सा होने लगी। पर कोई फल  
देखान न गया। काश्मीरसे वे पालकी पर चढ़ा कर  
लाहौर भेज दिए गए। इस समय कुमार शहरवार  
एक प्रकारकी सपद शपोहासे अत्यन्त दुर्दशा ग्रस्त हुए।  
उनके मुखमण्डलके अग्रशु, शुक, भ्रूपक्ष, मन्दाकके दाह  
और गात्रगेम भङ्ग हुए। वे नितास्त मलिन हो पित्तके  
निकटसे लाहौर भाग आए। समाट्, मो पूर्वतसे उत्तर  
रहे थे। राहमें वेरमकल (अन्नकाल), नामक स्थान पर  
पहुँच कर परिधिकारमिय समाट् की मिकार सेवने-  
की इच्छा हुई। कुछ धामवासो समाट् के पादयमें  
एक हरिणकी जङ्गलमें भगा लाए। समाट् ने कष्टमें  
बन्दूक उठा कर गोली चलाई। हरिण गोली खा कर  
बहुत तेजसे भागा और हरिणके पास जा पड़ा हुआ।  
बाद उसी जगह उसकी जान निकल गई। कुछ लोग  
जो इसके पीछे पीछे दौड़े थे एवं तबे गिर कर पशुत्वकी  
प्राप्त हुए। यह देख कर दुर्बलमस्तिष्क समाट् का  
मन और-विकृत हो गया। उन्हें उस समय-सेना-मालूम  
पहुँने लगा कि वे यमदूतको देख रहे हैं। बाद में इस  
स्थानसे दो दण्डका रास्ता ले कर राजौर पहुँचे। इस  
समय उन्हें बेषल शराकी लप्पा थी। लेकिन वे उसे  
पूट न सके। दूसरे दिन सबेर (२१वीं सफर १०३०

(1) Dow's Hindostan Vol. III, p. 9.

हजरोको) सम्राट् नूरजहाँ नरहामीर परलोकको सिंघार गए (१)।

बाद चाफ खाने इरादत खानखानी आजमेके साथ परामर्श किया और तदनुसार नृत सुवराज खुशक की मुख दौरा बकशको बन्दित्वसे उधार कर उसोको राजकी भाशा दी। दौरा बकशने उन लोमीसे इस विषयमें प्रतिज्ञा कर ली। अन्तमें चाफ खाने उम्हें घोड़े पर चढ़ा उम्हेंके मस्तक पर राजद्वार पहना दिया और सबके सब घणसर हुए। नूरजहाँने इस समय भार्इसे भेंट करनेके लिये अनेक बार उम्हें अशुरोध किया; किन्तु चाफ खाने कोई बहाना लगा कर मुलाकात न की। दौरा बकशको आखासन दिये जाने पर भी चाफखाने अपनी प्रतिज्ञा पर कायम न रहे। उम्होंने वाराणसी नामक एक अत्यन्त द्रुतगामी दूतको भेज कर शाहजहाँ और महबूबतको इसकी खबर दी, पत्र लिखनेका उम्हें प्रवकाश न था। अभिज्ञानस्वरूप उम्होंने अपनी अगुली दूतके हाथ लगा दी। ऐसा करनेका कुछ कारण था (२)। इनकी कन्या सुमताज-महलके साथ १०१८ हजरीमें कुमार शाहजहाँका विवाह हुआ था। सुतरां जामाताके लिये निहासनको निरापद रखनेके उद्देश्यसे दूरसे दूरसे प्रतिबन्धियोंकी बाधा देनेके लिये ही उम्होंने दौरा बकशको निहासनकी भाशा दी थी।

दूसरे दिन भीमवरसे बड़े धूमधामसे सम्राटकी मृतदेह लाहौर लाई गई और नूरजहाँकी अधानमें गाड़ी गई। यहाँ पर अत्यन्त पसीरगण चाफ खानेकी अभिसन्धि समझ कर उम्हेंके मतानुसार चलने लगे। दौरा बकश सम्राट् कह कर विधोषित किये गए और भीमवरमें उस दिन उनके नाम पर सुतथा पड़ा गया। नूरजहाँ भार्इके इस कार्य पर बहुत असन्तुष्ट हुई। वे नृत सम्राटके इच्छानुसार काम करने लगे और उसी स्थान पर पसीर समराथोंके

मध्य स्वरूपमें लोक संघ करानेके लिये चेष्टा की। चाफ खाने इनकी चेष्टाको विफल करनेके लिये उम्हें अपने शिविरमें बन्दिनीके स्वरूप रख दिया

उधर शहरदार पिताका शत्रु-सम्वाद पाते ही लाहौरके राजकीय पर अधिकार कर बैठे और सभी सैन्य संघट्ट करने लगे। उनको पत्नी मरजहानके कन्या भेड़ बसिसाने स्वामीनी उत्सजित कर उम्हें सम्राट् कह कर तमाम घोषणा कर दी। सैन्य भी सेनापतियोंको अपने दलमें लानेमें शहरदारके एक सहायके मदुर १० लाख रुपये खर्च हुए थे। शाहजादा दामियालके भतीजे मिर्जा बाहमिन्दरने इस समय भाग का लाहौरमें अपने भतीजे शहरदारका प्राथम्य पदच किया। शहरदारने चाचाको सेनापति बनाया। वे सैन्यदल ले कर नदी पार हुए और यहाँ किनारेकी चारों ओरसे सुरक्षित कर रहने लगे। हाथी पर चढ़े हुए चाफ खाने और दौरा बकशने देखा कि नदीके किनारे तीन कोस तक विषम सैन्य एक कतारमें खड़े हैं। चाफकी सैन्यसंख्या बहुत कम थी। अतः वे पहले तो डर गए, पर पीछे जब उम्होंने युद्ध करनेका पक्का विचार कर लिया, तब शहरदारकी अभिसन्धि सेना गोलघातसे भीत हो कर अश्रुचालनके पहले ही तितर-बितर हो गई। दूरमें शहरदार पर्वतशिखर पर होन सहस्र भस्मारीही ले कर खड़े थे। जब उम्हें मानस पड़ा कि उनकी सेना जान ले कर भग गई, तब वे पर्वत परसे उतर कर किलेमें प्राथम्य किया। दूसरे दिन चाफ खाने सुनिश्चित राजमस्तक सैन्य और वीरोंकी सहायतासे पुनः दुर्गको अपने अधिकारमें कर लिया।

उस समय शहरदार अन्तःपुरमें किये हुए थे। फिरोज खाने उम्हें चाफके पास पकड़ लाए। दोगबकशके पादियेमें उनको दोनों अर्धे उपाट लो गई। शाहजादा दामियालके दूसरे दो मुख भी मन्दी हुए (१)।

उधर वाराणसी काश्मीरके पहाड़से २० दिनमें मोसकूड़ा पहुँचा और १०१७ हजरी १८ रविषल

(१) Ikbāl-nāma-Jahāngiri (Elliot, Vol. VI, p. 481-85)

(२) Dow's Hindustan, Vol. III, p. 118 and Ikbāl-nāma-i-Jahāngiri (Elliot, Vol. VI, p. 486)

(१) Dow's Hindustan Vol. III, p. 114 and Elliot Vol. VI, p. 437.

नूरजहानकी छुनिर नामक छानमें महबबत खांके घर उपस्थित थी उसने चासफखाना प्रेरित सम्बाद कह सुनाया शाहजहानकी भी इसकी खबर लगी। पीछे उन्होंने २३ तारीखकी गुजरातकी राह छो कर यात्रा कर दी। महमदाबाद पहुँच कर शाहजहानने अपने खबरकी एक पत्र लिखा जिसमें कुमार खगड़के पुत्र दोरा बकश, कुमार शहरवार और शाहजादा दानियालके पुत्रोंकी मार डालनेका परामर्श था। तदनन्तर १०१० हिजरोकी शेर जमादियल भबलको साहोरमें सर्वसम्पत्तिक्रमसे शाहजहाँ सम्राट बनाये गए। २६ तारीखकी दोरा बकश, उनके भाई गरशाख, शहरवार और दानियालके दोनों पुत्र मार डाले गए। चासफखाने इस विषयमें कोई खोज खबर न ली। दूसरे दिन वे सबके सब भागराकी चला दिये और २६वीं तारीखकी शाहजहाँ दलबलके साथ भागरा पहुँच कर सर्ववादी सम्बादके जैसा बहोत हुए।

शहरवारकी मृत्यु होने पर नूरजहानकी सभी भागा, सभी चेष्टा धूलमें मिल गई। उन्होंने राजनीतिक थापारसे एकवारगे हाथ पलग कर लिया। शाहजहानने उन्हें वारिक दो लाख रुपयेकी इत्ति निकांरत कर दो। बाद वे जब तक जीती रहीं, तब तक उन्होंने सफ्ट वस्त्र पहन कर विधवाचारसे जीवन व्यतीत किया। इस समय वे पढ़ने तथा पारसीमें कविता बनानेमें रत रहती थीं। 'सुकफि' उपनामसे वे खरचित कवितामें भविता देती थीं। 'आमोद लक्ष्म'में इस समय इनकी जरा भी शरिताया न थी।

नूरजहान पसामान्या रमणो थीं। राजनीतिको उन्होंने नखदुर्गणमें रखवा लिया था। जो होकर वे जेम तरह भारतसाम्राज्यका शासन कर गईं, एक-दूसरेके जैसे राजनीतिक शादयाहके पुत्र हो कर जहाँगीर की उस तरह राज्यशासन कर न सके थे। नूरजहानकी बुद्धिमत्ता रमणी यदि जहाँगीरको न मिलती, तो सम्भव था कि वे या तो विदेशमें सिंहासनच्युत होती, अथवा जिन्दगी भर महबबत खांके विरवन्दिलमें रह कर प्रायः पति। बुद्धि, साहस, कौशल, धूर्तता, दया, खेड, समता और कर्तव्यनिष्ठता आदि गुण नूरजहानमें भरपूर थे।

पर हाँ, महबबतके साथ उनका व्यवहार विषय निन्दनीय था। स्थायित्व हो कर उन्होंने जो पक्षतयता दिखलाने हुए दुष्ट कौशलका प्रबलम्बन किया था, उन्हीं सब भूलोंसे उनका इतना शीघ्र पतन हुआ।

साहोरमें ०२ वर्षकी उमरमें १०५५ हिजरी, २८वीं शीयासकी भारतेश्वरी नूरजहाँका शरीरावसान हुआ। श्यामीकी कन्नके बगल ही निजनिर्मित कन्नमें उनकी देह समाहित हुई।

नूरजहाँ जो सब पतुलनीय-प्रायिक-भोन्द्यशालिनी थीं, वे ही हो-भोन्द्यप्रिया और विलासिनी भी थीं। शेरअफगानकी मृत्युके बाद जब वे जहाँगीरकी वन्दितो थीं; तब उन्होंने नये नये भादयके गहने बना कर श्यामीवस्त्रमें नकाशी करके निज शिल्पकुशलता और भोन्द्यज्ञानकी परिचय दिया था। पीछे चाप महिषी हो विलासिताकी चूड़ाना वस्तु प्रस्तुत कर भुवनपर चिर प्रसिद्धि लाभ कर गईं। "शतर-इ-जहाँगीरी" नामक सर्वोत्कृष्ट गुलाबजल, पिथाजके लिये सुष्म चिकणं "दुदामी" नामक वस्त्र (तौलमें दो दाम मात्र), भोदनेके लिये 'पाँच तोखिया' (तौलमें ५ तोला मात्र), 'बादला' नामक बूटेदार या गुलदार सुष्म श्यामीवस्त्र और जरी इन्हींके मसिष्कको उजावित वस्तु हैं। 'कराब-इ-चन्दनी' नामक चन्दनवर्णकी कार्पेट उनके समस्त शिल्पोकी परिचायके विषय और परम शोभाविशिष्ट हैं। (१)

द्वितीयवार विधवा हो कर नूरजहाँ ईश्वराराधना और पतिकी चिन्तामें इतनी डुबी हुई थी कि उन्होंने चिरप्रिय राजनीतिका भी परित्याग कर दिया था।

नूरजा—सिन्धुप्रदेसका एक बहंतू ग्राम। यह पचा० २६' १४' ७०" तथा देशा० ६०' ५२' ५०"के मध्य उपस्थित है। यह सेवानसे १० मील उत्तर और सिन्धुनदीसे ६ मील पश्चिम पड़ता है। इस ग्रामके चारों ओरकी जलोन्म समतल है और प्रति वर्ष पंकेके पड़नेसे यह उर्वरा हो जाती है। यहां बहुतेरी महरें हैं। इस कारण फसलादि अच्छी लगती है।

(1) Ain-i Akbari (Blochmann, p. 510)

नूरपुर-१ ब्रह्मपदेशके पन्तभुक्त त्रिपुरा जिलेके पधीन एक सुदूर नगर। यह पन्ना २३ ४५' ०" और देगा ८१ ५' ५०" के मध्य टाका शहरसे ५५ मील उत्तर-पूर्व में अवस्थित है।

२ खुलना जिलेके पधीन एक गण्डग्राम। यहाँ राजा बसन्तारायके वंशधरगण वास करते हैं।

३ युक्तपदेशके छोटे साटके शासनाधीन एक नगर। यह पन्ना २८ ४१' ०" और देगा ७० ५८' ५०" के मध्य मुजफ्फरनगरसे हरिद्वार जानेके रास्ते पर बना हुआ है। यहाँसे मुजफ्फरनगर २२ मील उत्तर-पूर्व पड़ता है।

नूरपुर-१ पन्ना प्रदेशके कांगड़ा जिलेके पन्तर्गत एक तहसील। यह पन्ना १२ १८' ०" और देगा ७५ ५५' ५०" के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ३२५ वर्ग मील और लोकसंख्या चार हजारसे ज्यादा है। यहाँ एक प्रायश्चित्तनका लकड़ोंका मन्दिर है। यहाँ चावल, गेहूँ, मकई, जौ, चना, ईख, रुई और अन्यथाय भाक सबी उत्पन्न होती हैं। यहाँके तहसीलदार ही दीवानो और राजस्व विभागीय विचारकाय तथा शासनकृतिके कार्य करते हैं। यहाँ तीन यानि हैं।

२ उक्त तहसीलका एक शहर। यह पन्ना १२ १८' १०" ०" और देगा ७५ ५५ १०" पू०, समुद्रस्तरसे दो हजार फुटकी ऊँचाई पर तथा धर्मशाला नामक स्वास्थ्य-निवासमें ३० मील दक्षिण पकी स्त्रीतस्वतीकी एक गाँवा पर अवस्थित है। पहले यह नगरो एक सुदूर देगीय सुदूर राज्यको राजधानी थी। राजा बसुनि समतल क्षेत्रसे दूध नगरको उठा कर पहाड़के लंगर बसाया और चारों ओर दुर्गसे सुरक्षित कर दिया। बहुत दिनों तक यह नगर वाणिज्यहस्तिके कारण जिलेका प्रधान सदर था। किन्तु वर्तमान समयमें व्यवसायका क्रास हो जानेसे नगरकी पूर्व ओ जाती रही और पन्नामावसे जनसंख्या भी दिनों दिन घटती जा रही है। प्रान्त-प्रुसिया युद्धके बाद ही यहाँके वाणिज्यकी सबनति हुई। यहाँ गाल और पगामी कपड़े तो निर्यात होते हैं पर के-कामोरे या पन्तनगरके कपड़ोंसे बहुत मिलत हैं।

यहाँके अधिवासो विधेय कर राजपूत, कश्मीरी और क्षत्रिय है। ये क्षत्रियगण सुसलमान राजाओंके उपोद्धित हो कर साहोरे या कर दती. स्थान पर बस गए। १७८३ और १८३० ई०में जब काश्मीरमें घोर दुर्भिक्ष पड़ा था, तब कश्मीरियोंसे बहुतोने अदेग छोड़ दिया और रबी स्थानमें भा कर रहने लगे। भाते समय वे प्रमोना बच्चादि बुननेके उपयुक्त यन्त्रादि भी अपने साथ लाए थे। इस समयसे यह स्थान गाल व्यवसायके लिए विधेय मगहर हो गया है।

फिलहाल यहाँके काश्मीरिगण गालव्यवसायके मदने रियमके कीड़ेकी खेतो करते और उसीसे रेशमादि तैयार कर बेचते हैं। यहाँ एक बड़ा बाजार, अदालत, पोषाखास्य, विद्यालय और दो सराय हैं। निकटवर्ती स्थानोंसे नाना प्रकारके द्रव्यादिकी आमदनी होती है।

हरायती और विवासा-नदियोंके बीच १३ मील तक विस्तृत एक भूभाग है जो नूरपुर जिला नामसे प्रसिद्ध है। इसके उत्तरमें चन्द्रभागा नदी, पूर्वमें चम्पारान्य, पश्चिममें पञ्जाबराजके पधीनस्थ कई एक हिन्दूराज्य और विवासानदी तथा दक्षिणमें हरिपुर है। इस जिलेके प्रगतस्व-विषयमें जो कुछ पता लगा है, वह नीचे दिया जाता है। प्रसिद्ध ग्रन्थकार भवुलकजलने इस स्थानकी दमझी बतलाया है। यहाँके अधिवासी इसे 'दहमेरी' कहा करते हैं। तारीख-इ-फलिफामक ग्रन्थमें इसका दमाल नाम रखा गया है। उक्त पुस्तकमें लिखा है, कि यह स्थान हिन्दुस्थानके प्रान्तभागमें एक पर्वतके ऊपर बसा हुआ है।

इस दहमेरी जिलेको राजधानी पठानकोटमें है। यह पठान-कोट नगर हरायती और विवासा नदोके मध्य स्थलमें अवस्थित है। यहाँके मिहटख पर्वतो पर काहङ्गा और चम्पानगर तथा समतल क्षेत्र पर साहोर और जलन्धरनगर बसे रहनेके कारण एक समय यह नगर वाणिज्यका एक उल्लट स्थान गिना जाता था। इस स्थानके प्राचीन हिन्दूराजगण पठान जातीय राजपूत-शाखासे उत्पन्न हुए हैं और पठानिया या पठान कहलाते हैं। ये लोग सुसलमान या पफगान जातिको पठान शाखासे बिलकुल विभिन्न हैं। यह पठानिया या पठान

शब्दों से खलत 'प्रतिष्ठान' नामक जनपदका प्रथम प्रसंग मन्तव्य जाता है। जो सक्तता है, कि गोदावरी तीरवर्ती स्थिति पठान वा प्रतिष्ठान जनपदके किसी राजाने इस बसाया हो।

इनाहम गजनवो नामक किसी सुसलमानने इस पठियान वा पठियानकोटके दुर्गको बहुत दिग्ग तक वेरे रहनेके बाद जीता था। धीरे धीरे इसका पूर्वतन हिन्दू नाम लीय होता गया और वर्त्तमान सुसलमान अधिकांशमें पठानकोट कहलाने लगा है।

यहांके पुरातन दुर्गका जो ध्वंसावशेष देखा जाता है, उसने चारों ओर का सोवर्ग फुट तक एक महीका स्तूप है जिसकी ऊंचाई करीब एक सौ फुटकी होगी। यहां जो सब ईंटें मिलती हैं वे बहुत बड़ी-बड़ी हैं जिन्हें देखनेसे ही पता लगता है कि ये प्राचीन हिन्दुओंसे बनाई गई हैं। यहां श्रीकराज जीलस (King Zoilus), गण्डकपतिवर्मि गोकुण्डरस (Gondophares), कलिष्क और वृषिककी पनेक मुद्राएँ मिलती हैं और भी भाष्यका विषय यह है कि पठानकोटमें हिन्दुराजाओंके समयकी भी ताम्रमुद्राएँ पाई गई हैं। इस मुद्राके ऊपर पानी पत्थरमें श्रीदुम्बर नाम खोदा हुआ है। ये सब मुद्राएँ प्रायः दो हजार वर्षकी पुरानी होगी। इस प्रकारकी मुद्रा दूसरी जगह देखी नहीं जाती, केवल इसी स्थानमें पाई गई हैं। इस कारण डॉ० कनिंघम इस जिलेको प्राचीन श्रीदुम्बर देय बतला गए हैं।

पाणिनिने छटुम्बरहल (Ficus glomerata) समन्वित देगकी श्रीदुम्बर बतलाया है। वर्त्तमान भूरपुर जिलेमें भी इस जातिके पनेक पड़े देखे जाते हैं। इसके पलावा पनेकानेक देगीय प्रान्तोंमें यह श्रीदुम्बर देय पलावके उत्तर-पूर्वमें प्रचलित माना है। यराहमिहिरने छटुम्बरवासीके साथ कण्ठिलवासियोंका सम्बन्ध निर्णय किया है। माकण्डेयपुराणमें भी यह मत समर्थित हुआ है। विष्णुपुराणमें भी विगतवासी पोग कुलिन्द-जातिके साथ इनका सम्बन्ध वर्णित है। इसके निवा प्राचीन "दहमेरी वा दहमवरी" गण्ड श्रीदुम्बरका प्रथम है, इसमें सन्देह नहीं। प्राचीन श्रीदुम्बर जनपद

और तत्प्रायः वर्त्ती स्थानसमूह जो एक समय दहमेरी नामसे जनसाधारणमें प्रसिद्ध था, पठानराजाओंके समयमें पठानकोट कहलाने लगा। पीछे जब यह सुसलमानके हाथमें आया, तब पठानकोट और जहांगीरके राजत्वकालमें नूरजहानके नाम पर नूरपुर नामसे प्रसिद्ध हुआ। यहां जितनी ताम्रमुद्राएँ पाई गई हैं, वे सभी चौकीन हैं। इसके एक छठ पर एक मन्दिर और दूसरे छठ पर हाथी और हथकण्ठित है। मन्दिरके पार्श्वभागमें शैवोंका स्तूपिक और धर्मचक्र तथा तलदेगमें एक सर्पमूर्ति खोदित है। दूसरे छठ पर जो हथकण्ठ चारों ओरसे घिरा है और उस पर श्रीदुम्बर नाम खोदा हुआ है। इन सब प्रमाणोंके बलसे डॉ० कनिंघम प्रादि प्रकृतत्वविदोंने इसी स्थानको श्रीदुम्बर राज्य स्थिर किया है।

भारतवर्षमें सुसलमान-प्राक्रमणके पहले यही नाम जनसाधारणमें चलता था। परवर्ती कालमें प्रायः रिहान नामक किसी व्यक्तिने लखनूरकी राजधानीको दमाल (अन्यान्य सुसलमान प्रान्तोंमें इसी स्थानका नाम देहमारो है।) बतलाया है। मालूम होता है, इसी समय ब्रेगर्त्स वा काहङ्गावासीने इस स्थानको अपने अधिकांशकृत किया था। इस समयके बादसे ले कर सम्राट् फरिश्तके शासनकाल तक इसका कोई उल्लेख देखनेमें नहीं आता। पर हां, यह स्थान किसी एक सुदृढ़ हिन्दु सरदारके अधीन था, इसमें जरा भी सन्देह नहीं। फरिश्तके राज्यारोहणके पहले ८६५ हिजरीमें जब पठान-राज भकतमल निकन्दर-घुरके सहयोगी हो कर मानकोट नामक स्थानमें सुंगलधन्विषय खड़े हो गये थे, तब बैराम खाने उन्हे कैद कर लिया और वही सुरी तरहसे मार डाला।

नूरपुर राज्यका प्रकृत इतिहास सुसलमान और सिखयुद्धके समयसे नहीं मिलता है। किन्तु १८४६ ई०में बैरपुरके कोतवाल शिखमण्डद भमीरने यहांके देवोयाह नामक ८५ वर्षके एक हथकण्ठ राजवंशका जो

• Hall's Edition Vishnupurana, Vol. II, p. 180.  
 Elliott's Mohammedan Historians, Vol. I, p. 62.

इतिहास संबंध किया है तथा सुमनमान ऐतिहासिकोंने नूपुरके इतिहासके विषयमें जो कुछ लिखा है, वह एक दूसरेके बिलकुल मिल जाता है।

यहांके राजगण विप्लोनी, मन्दी और सुखित पादि देवोंके राजाओंकी तरह अपनेकी पाण्डु वंशोद्भव वत-मानी हैं। इनकी जातीय भाषायां पाण्डोर है। देवोग्राहका कहना है, कि ये लोग अर्जुन वंशोद्भव तोमरजातिके राजपूत हैं। उनके मतानुसार,—जयपाल और भूपाल नामके दो भाई थे जिनमेंसे जयपाल देहमेरीमें और भूपाल पैठान नामक जगत्पदमें राज्य करते थे। जयपालके बादमें जो उन्होंने थोड़े राजाओंके नाम दिए हैं, उनके राजत्वकालका निर्धारित समय मालूम नहीं होनेके कारण एकवर बादशाहके राजत्वके पूर्व समयके केवल चौबीस राजाओंके नाम गोचे दिए जाते हैं। यथा—

१ जयपाल, २ गोत्रपाल, ३ सुखीनपाल, ४ जायत्पाल, ५ रामपाल, ६ गोपालपाल, ७ अर्जुनपाल, ८ वर्षपाल, ९ यतनपाल, १० विद्रय वा विद्रुशपाल, ११ लोखानपाल (इन्होंने तिहारण राजाजन्यासे विवाह किया), १२ राना किरातपाल, १३ कक्षपाल, १४ जहसुपाल, १५ कलसपाल (इन्होंने जम्बूराजकन्याका पाणिग्रहण किया), १६ मागपाल, १७ प्रभोपाल, १८ बिलो और १९ भक्तपाल। शेष राजा १५२५ ई०में राजगद्दी पर बैठे और १५५८ ई०में मानकाठके युद्धमें बंराम खांचे मारे गए। पीछे २०वें विहारोत्तम राजा हुए। १५८० ई०में इनकी मृत्यु हुई।

२१वें राजा वसुदेव—इन्होंने १५८० ई०में राज्यारोहण किया। सम्राट् एकधरके राजत्वके ४२वें वर्षमें ये एक बार बिद्रोही हुए थे। फल यह हुआ कि सम्राट् ने उनकी राजाकी उपाधि छीन ली और वे उन्हें मान तथा पठानप्रदेशके जमींदारके रूपमें गिनने लगे। पांच वर्षके बाद फिर भी वे बिद्रोही हो उठे। इस बार सम्राट् ने पठानराज्य उनके हाथसे छीन लिया। १६१३ ई०में उनकी मृत्युके बाद उनके लड़के राज्याधिकारी हुए।

२२वें राजा सूर्यमल्ल थे। जब ये गद्दी पर बैठे, तब लहंगीरके विद्वह षडयन्त्र रचने लगे। इन पर सम्राट् ने

१०२१ हिजरीमें उन्हें दमन करनेके लिये रात्रा विक्रम-जित्तुकी भेजा। सूर्यमल्ल डर गए और उन्होंने पहले वसु-राज-निर्मित नूपुर दुर्गमें, पीछे चम्पारणके यहां पायस लिया। विक्रमजित्तुने उन्हें पराजित कर मो, हारा, पहारो, ठड, पकोत, छर और लमालोके दुर्ग दखल कर लिए। बाद बहुसंख्यक हाथी, घोड़े और धन-व्यादि लूट कर दिसो भेज दिये \*। १६१८ ई०में सूर्यमल्लके राज्यभ्रुत होने पर उनके भाई जगत्सिंह (२३वें) राजा हुए।

सम्राट् जहांगीर जगत्सिंहको बहुत चाहते थे। पतः प्रसन्न हो कर सम्राट् ने उन्हें ३०० सेनाधिकी अध्यक्षता पद और राजाकी उपाधि दी।

१०४० हिजरीमें वे शाहजहानके विद्वह हो गए। पीछे उनकी अधोमता स्वीकार करने पर हीना हुआ अधिकार लौटा दिया गया। १०४२ हिजरीमें वा १६४२ ई०में वे दाराशिकोहकी कान्दहार ले गये और वहीं उनकी मृत्यु हुई। पीछे उनके लड़के राजा रूपने १५ सेनाओंका अध्यक्षपद और राजाकी उपाधि पाई। तारागढ़के युद्धमें इनकी हार हुई और किला हाथसे जाता रहा। १०७० हिजरीमें उनके मरने पर उनके लड़के राजा मान्धाताने राज्यभार ग्रहण किया। यह एक अच्छे कवि थे। उनके लिखित काव्यमें महामान्य सोमस साहबने जो वंशपरिचय और प्रश्रुत कहानी संबंध की हैं, उसका अधिकार मि० एल्कमैन साहबके अनुवादित पादशा-नामाकी वर्णित कहानीसे बहुत कुछ मिलता है। इस ग्रन्थमें राजा जगत्सिंहकी गुण-

\* क. एल्कमैन कावरा नामक ग्रन्थमें लिखा है कि मुद्र-जनके बाद इस समीरणका नाम नूराट्टीन जहांगीरके नाम पर 'नूपुर' पड़ा था। (Elliot Vol. VI, p. 522.)

† स्थानीय प्रवाद है तथा माधवाधारित ग्रन्थमें लिखा भी है कि राजा जगत्सिंह सुबहमान सेनाको पराजित करनेमें सफल हुए थे। बादशाह-नामाने लिखा है कि जगत्सिंहने पराजित हो कर मो, नूपुर आदि दुर्ग उनके हाथ जगा दिये और अन्तमें तारागढ़ मुद्रने आत्मघातपूर्ण किया।

गरिमा ही अधिक गार्दे गई है। पीछे २६वें राजा दयोधात. २७वें छव्तीसिंह, २८वें कर्तिसिंह और २९वें राजा वीरसिंह ( १८०५ ई० ) हुए।

मुगल साम्राज्यकी प्रवृत्तिसि ले कर सिधजातिके पशुदय तक पञ्जाबके ऐसे छोटे छोटे राज्योंनि शान्ताभाव धारण किया था। १७०३ ई०में मि० फरीस्ता जब नूरनगर देखनेके लिये आये थे, उस समय इस राज्यका शान्ताभाव देख कर वे लिख गए हैं, कि निकटवर्ती स्थानोंसे यहांकी शासनविधि बहुत अच्छी है और सिध लोगोका अधिक उपद्रव नहीं है। १८१५ ई०में महाराज रणजितसिंहने वीरसिंहको कैद कर उनका राज्य अपने कब्जेमें कर लिया। वीरसिंहने किसी तरह भाग कर आकाखा की। १८२६ ई०में वे पुनः कैद कर लिए गए और मासिक ५००) रु० भत्ता उन्हें मिलने लगा। १८४६ ई०में उनकी मृत्युके बाद यमीवन्तसिंह उनके पद पर अभिषिक्त हुए।

राजा वसुदेवने समतलक्षेत्रका पठानकोट नगर एकबार बादशाहके हाथ लगा दिया। सम्भवतः इसी समय उन्होंने पर्वत पर इस नूतन नगरकी बसा कर जहांगीर बादशाहकी खुश करनेके लिए नूरजहानुकी नाम पर इस शहरका नाम रखा था।

३ शयोधा प्रदेशके अन्तर्गत एक नगर। यह हखनज शहरसे ३४ मील और कानपुरसे ७६ मील उत्तर-पूर्वमें अक्षा० २७° १८' उ० तथा देशा० ८२° १३' पू०के मध्य अवस्थित है।

४ पञ्जाबके सिन्धुनागर दोषाब विभागका एक नगर। यह बितस्ता नदीके दक्षिण छूनासे २२ मील उत्तर-पश्चिम ( अक्षा० ३२° ४' उ० और देशा० ७२° ३८' पू० )में अवस्थित है।

५ उक्त प्रदेशके दमन विभागका एक नगर। यह मुल्तानसे ८० मील दक्षिण-पश्चिम अक्षा० २८° ८' उ०

तथा देशा० ७०° ३६' पू०के मध्य अवस्थित है।

६ बड्वालके टाका जिलेके अन्तर्गत जलालपुरका एक नगर। यह टाका शहरसे २२ मील दक्षिण-पश्चिममें अवस्थित है और बड्वालके छोटे लाटके शासनाधीन है।

७ संयुक्त प्रदेशके छोटे लाटके शासनाधीन विजानौर जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २८° ८' उ० तथा देशा० ७८° २८' पू०में पड़ता है।

नूरबाफ ( फा० पु० ) लुलाहा, तांती।

नूरम—प्रकवरशाहको वैमात्रेय भाई। सम्राटके राजत्वके ३१वें वर्षमें इन्होंने हीरापर्वत पर चकगान जातिके साथ युद्ध किया था। पीछे जब मानसिंह उड़ीसा जोतनेके लिए बड्वाल पाए, उस समय ये एक हजार सेनाके नायक हो कर उनका सामना करने गये थे।

नूरमस्जिद—पायरा नगरका एक उद्यान। इसे सम्राट जहांगीरने लगाया था। यत्मान समयमें लोग इसे 'देहराबाग' कहते हैं। उद्यानके मध्य एक बड़ा झूप है जिसे देखनेसे दोघीसा भ्रम होता है।

नूरमहम्मद—सिन्धुप्रदेशके एक शासनकर्त्ता। १७१८ ई०में इनके पिता यारमहम्मद कन्नहोराके मरने पर उनके राज्य पर अभिषिक्त हुए। इधर नूरमहम्मदने दाखदपुरोंसे नहर उपविभाग छोन लिया, साथ साथ मेहन और तदधीन राज्य भी अपने अधिकारमें कर लिये। १७३६ ई०में इन्होंने मकर दुर्गको जोता। बाद मुल्तानसे उदत्तक इनका अधिकार फैल गया। १७३८ ई०में जब नादिरशाह भारतवर्ष पर चढ़ाई करने आये, तब दिल्लीपरसे उधर और गिकारपुर जीत कर इन्होंने नूरमहम्मदको सिन्धु और पञ्जाबका शासनभार सौंप दिया और भाव स्वदेशको लौट गये। इसी बीच नूरमहम्मदने उनके सुबेदार सादिकरानीको तीन लाख रुपये दे कर उनसे उध प्रदेश खरीद लिया। इस पर नादिरशाह बहुत विगड़े और उन्हें दमन करनेके लिए सिन्धु और पञ्जाबकी ओर प्रयत्न हुए। उनका पागमन सुन कर, नूरमहम्मद अमरकोटकी भाग गये। अन्तमें इन्होंने गिकारपुर और गिबप्रदेश नादिरको दे कर अपना पिण्ड बूझाया। नादिरने इन्हें मोहकूची खाकी पदवी दी और इन

१. Proceedings Asiatic Society of Bengal, 1872, p. 156 and Journal of the Asiatic Society of Bengal 1875, p. 201.  
 २. Cunningham's Ancient Geography of India.



मान्यपुरस्कार-स्वरूप 'इन्दे' धार्मिक २० लाख रुपये कर देने पड़ते थे। १७४८ ई०में पहलमदाह दुशानीने मिन्युपदेशकी जीत कर इन्दे ग्राह नवाज खांको सपाधि दी। १७५४ ई०में नूरमहमदने जब कर देनेसे इनकार किया, तब अफगन उनसे लड़नेके लिए अफसर हुए। दुशानीका आगमन सुन कर नूरमहमद जगलमिरकी भाग गये और वहाँ उनका शरीरवासन हुआ।

नूरमहल—पञ्जाबके जलन्धर जिलेकी फिलौर, तहसीलका एक शहर। यह पन्ना ३१ ६' ७" और-देगा ७५' १६" पू०, जलन्धर शहरसे १६ मील दक्षिण, सुनतानपुरसे २५ मील दक्षिण-पूर्व और फिलौरसे १६ मील पश्चिममें अवस्थित है। जनसंख्या पाठ हजारसे ज्यादा है। यह नगर बहुत प्राचीनकालका है। इसके विषयमें पनेक प्रमाण भी मिलते हैं। यहांकी मठो खोदने पर ११' X ११' X २ ३" मापको लो ईंटे निकलते हैं, उनके ऊपर हाथका चिह्न है और हाथके तब पर एक केन्द्रमें तीन अक्षरलिपि अंकित हैं। ये सब ईंटे पूर्वतन हिन्दू राजाओंके समयकी मानी जाते हैं।

इसके अलावा यहां जो सिक्के पाए गये हैं वे भी बहुत पुराने हैं। इनमेंसे छेनीको कटी हुई (Punch-marked) रोज्यसुद्रा, अथवा राजुवनकी तामसुद्रा और दिल्लीशर महीवालकी सुद्रा तथा विभिन्न समयके सुसलमान राजाओंकी सुद्रा भी पाई गई हैं। ये सब सुद्राएं नूरमहलके प्राचीनत्वका परिचय देती हैं।

सम्नाट, जहांगीरने इस नगरका जोर्ण संस्कार कराके बिज प्रियतमा पत्नी नूरुलखाने नूरमहल नाम पर इस नगरको फिरसे बसाया। उस समय जहांगीरकी आश्रामे यहां एक बड़ी सराय बनाई गई जो देखने लायक है। इस सरायकी सौग बादाशाही सराय कहते हैं। इसमें एक कोषविगिट चूड़ा और कुल ५२१ वर्ग फुट परिमाणफल है। इसका पश्चिमो प्रवेशद्वार बाल पत्थरीका बना हुआ है। वे सब पत्थर फतेपुर सिकरीमें संग्रहित गये हैं। सरायकी दीवारमें अहा तहा देव, देव, परी, हाथी, गैंडे, कंठ, घोड़े, बानर, मयूर, पत्थरीची घोड़ाओं और तोरन्दाजीकी मूर्तियों खोदी हुई हैं।

किन्तु यहांका गिरफ्तारों उतना सुन्दर नहीं है।

प्रवेशपथके ऊपर एक खण्ड गिराफतकर्म की क्राय खोदो हुई है उसमें जाना जाता है कि यह खान फिलौर जिलेके अन्तर्गत है। किन्तु कोई कोई यह लिपि को 'कोटकपुर' वा 'कोटकहली' ऐसा पढ़ते हैं। पूर्व द्वार दिल्लीकी और ही और पश्चिमद्वारके लंबा साध पत्थरीका बना है। इसके ऊपर भी पारस भाषामें एक गिराफतलिपि खोदी हुई थी, किन्तु पूर्वद्वारकी गठनादि बिलकुल भूमिसत्तु हो गई है। इसके पश्चिम वा साहोरमुखी द्वारके ऊपर गिराफतक सत्कीर्ण है जिससे प्रात होता है, कि साम्राज्यो नूरजहानके आदेशसे फिलौर जिलेमें यह 'नूरसराय' १०२८ हिजरीमें स्थापित हुई, किन्तु इसका निर्माणकाय १०२० हिजरीमें समाप्त हुआ था।

सम्नाट, जहांगीरके राजत्वकालमें जलन्धर-सुवाके नाजिम अकरिया खाने इस सरायका निर्माण किया, किन्तु इसके पश्चिम वा पूर्व द्वारकी गिराफतलिपिसे साक्ष्य होता है कि बेगम नूरजहानकी आश्रामे यह 'नूरसराय' बनाई गई है। अकरिया खांकी कथा नितान्त अमूलक नहीं है, कारण वहके सत्कीर्ण फलकसे जाना जाता है, कि ये इसके निर्माणविषयमें विमोच सद्योगी थे।

यहां एक सुसलमान फकीरकी कब्र है जहां प्रति वर्ष मेला लगता है। मिलेमें दूर दूरके सुसलमान एकत्रित होते हैं। शहरमें १८६० ई०की इग्लिसचर्चि स्थापित हुई है। यहां एक वनविद्युत्तर मिडिल स्कूल है जो बोर्डके खर्चसे चलता है। इसके अलावा शोधशास्य, हाकवर और पुलिस-स्टेशन भी है।

नूरमा—पाषाणकी गीराजातिहा देवतामेद।

नूरुलखान—एक कवि। इनका जन्म संवत् १७०० (११२० हिजरी) में हुआ था। आपने तीस-बर्षकी अवस्थामें दोहा बोपाइयामें ज्ञापवीकृत प्रभावतोके उंग पर इन्द्रावती नामक एक अच्छा प्रेमप्रत्य बनाया है। आपने 'बावैला पादि' फारसी शब्द, 'विश्रिष्ट, खान्ता, इन्द्राक, शम्भेरम-पादि संस्कृत शब्द भी आपने भाषा में रखे हैं। आपने गंवारी बबधी भाषामें कविता को है, परन्तु फिर भी उसको बड़ा मनमोहिनो है। इनकी रचनासे विदित होता है, कि ये काव्याङ्ग भी जानते थे। एकांधं खान पर इन्होंने कूट भी कहे हैं। इनका मन-

नलपारीवाला वर्षान बड़ा ही विग्रह है। इन्होंने सामाजिक वर्षान जायमोको भांति खूब विस्तारसे किए हैं तथा भावा, भाव और वर्षान-शास्त्रमें धपनी कविता जायसोमें मिला दी है। इन्होंने प्रीतिका भी अच्छा चित्र दिखाया है।

रमाहवली—एक सुसज्जमान धार्मिक फकीर। पञ्चाव-के फिरोजपुर नगरमें ये रहते थे। मरने पर इनकी कस फिरोजपुरमें हो बनाई गई थी। प्रति हहसतिवारको सुसज्जमान लोग उस कब्रके पास जा कर नमाज पढ़ते हैं। पासपासके हिन्दू भी कब्रके दर्शन करने भाते हैं। सुहर म उक्तयक कुछ दिन बाद ही यहाँ एक बड़ा मेला लगता है। लगभग सौ वर्ष हुए जब सर हेनरो सार्वस्य इस स्थानकी देखने आए थे उस समय इस छोटी कब्रके निकट घनेक लोगीका समागम देख कर वे बहुत प्राय-वर्णित हुए थे। घतः उन्हे ने भग्नावशिष्ट कब्रकी मरणांत करनेका हुकुम दिया और भागत लोगीके रहने-के लिये जो वहाँ टूटा फूटा मकान था उसे तोड़वा डाला। फिरोजपुरमें प्रवाद है कि पहले कप्तान सार्वस्य-ने सब कुछ भूमिसायु करना चाहा था। लेकिन रात-को सपनेमें उन्हें मालूम पड़ा कि कोई रक्षीसे उन्हें मजबूतीसे बांध रखा है और कहता है कि, 'यदि तुम मेरा ध्वंस करोगे तो तुम्हारे जान नही बचेगी।' दूसरे दिन सबेरे सार्वस्य साहबने कोतवालको बुलवा कर कब्रका संस्कार कराया और पाख़ वृत्ति शहादिको तोड़ डालनेका आदेश दिया।

रा (हि० सु०) यह कुरगो जो प्रायसमें मिल कर लही जाय अर्थात् जिसमें जोड़ एक दूसरेके विरोधो न हो। रात—इलाहाबादके मध्यवर्ती एक शहर और गिरि-सहट। यह अक्षा० २४° २४' ०" और देशा० ७८° ३४' ०" के मध्य तियारीसे १० मील दक्षिण-पश्चिममें अव-स्थित है।

रावाद—मध्यभारतके ग्वाजियर राज्यके अन्तर्गत एक नगर। यह अक्षा० २६° २४' ४५" ०" और देशा० ७८° ३१' १०" ०" के मध्य गङ्गानदीके दाहिने किनारे पर अक्षा ३५ है। पागुरा राजधानीसे यह नगर ६० मील दक्षिण और ग्वाजियरसे ११ मील उत्तर-पश्चिममें पड़ता।

१। सुसज्जमानो, शासनकालमें यह नगर पागुराके अन्तर्गत था।

सुगन्तराज्यको अवनतिके साथ साथ इस नगरको पूर्व-स्मृति भी धीरे धीरे गायब हो गई। यहाँ जितने मकान हैं वे सभी पत्थरसे बने हुए हैं। १०७१ हिजरोमें यहाँ एक मसजिद बनाई गई और दूसरे वर्ष, मोता-मिद खांसे एक बड़ी सरायका भी निर्माण किया गया। इन दोनोंके ऊपर दी गिराफलक खोदित हैं। सरायका अभी भग्नावशेष मात्र देखा जाता है।

यहाँ गङ्गानदीके ऊपर सात मुख्यका एक पुल बना है। इसके पास ही औरङ्गजेब क़ान् १६६६ ई०में बना हुआ एक सुहृद प्रमोद-उद्यान है। इस सुसज्जमानके मध्य दिक्कीखर अहमदशाह और इनके परवर्ती सम्राट् २य आलमगोरके वज़ीर गाओउद्दीन खांकी पत्नी गुणा-बेगमके स्मरणार्थ १७०५ ई०का एक स्तम्भ है। यह स्तम्भ आज भी उर्ध्वका ल्यो है। इस कामिनीने धपनो प्रखर मानसिक वृत्तिके बलसे नानाशास्त्रोंमें ध्युपत्ति लाभ की थी। उनके श्वाश्वको भाया अत्यन्त सरम और प्राञ्जल है। उन्हे ने हिन्दी भाषामें जो गीत बनाया है वह बहुत प्रशंसनीय है और आज भी आदरपूर्वक गाया जाता है। उक्त स्मृतिस्तम्भमें पारस्य भाषामें उल्लेख जो सब बातें लिखी हैं, वे केवल उनके वियोग-शान्त वर्ष नामूलक हैं।

नरि—मूलतानप्रदेशके सिन्धु-विभागमें फुलाली नदीके किनारे अवस्थित एक गण्ड घास। यह हैदराबाद नगरसे १५ मील दक्षिणमें अवस्थित है।

नुरी (हि० खी०) एक विद्विद्या।

नूरुल-बंशा—कूर्म राजाके अन्तर्गत एक प्रस्यु अर्थात् गिम्बर। यह सिन्धुपुरघाट जैनके राजा पर मरकारासे १२ मील दूरमें अवस्थित है। इस गिम्बर पर खड़ा हो कर देखनेसे कूर्म राजाका दर्शनसमूह बहुत सुन्दर दीखता है।

नूर—पञ्जाब प्रदेशके सुरगाँव जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० २७° ३१' और देशा० ७८° ३०' तथा देशा० ७६° ५१' और देशा० १८° पू० के मध्य अवस्थित है। उपरिमाण ४०१ वर्ग मील और जनसंख्या करीब ६५ लाख की है। इसके पश्चिममें अम्बार राजा पड़ता है। तहसीलमें कुल

२५० घाम लगते हैं। राजल दो लाख रुपये के अधिक है। १८०८ ई० में यह स्थान ब्रिटिश साम्राज्यभूक्त हुआ।

यहां धामरा, पवार, जो, चना, गेहूँ, खई, कल-मूलादि और अंतरापर शर्करा की खेती होती है। यहां कि तहसीलदार ही शासनकार्य करते हैं। यहां एक दीवानो और एक कोजदारी अदालत तथा तीन घाने हैं।

२ छत्त तहसीलका संदर और म्युनिस्लिटीके अधि-कृत नगर। यह अक्षां २८° ३०' ०" तथा देशां ७०° २' १५" पूर्व मध्य गुरास नगरसे २६ मील दक्षिण बलवार जानिके रास्ते पर अवस्थित है। यहांके निकटवर्ती स्थानोंमें तथा लक्ष्ययुक्त पुत्ररिणोसे नमक प्रसृत हो कर नानास्थानोंमें बाणिज्यके लिये भेजा जाता था। किन्तु अभी सम्बररुद्रसे लक्ष्य प्रसृत होनेके कारण यहांके व्यवसायका क्षाम हो गया है। शहरमें विद्यालय और औद्योगिक भो है।

३ मयूरा जिसके नरभोज परगनेके अन्तर्गत एक नगर। यह यमुनानदीके बाएँ किनारेसे ४ मील दूर अक्षां २०° ५१' ४०" और देशां ७०° ४२' ५०" के मध्य-अवस्थित है।

नूह ( अ० पु० ) ग्रामी या इब्रानी ( यहूदी, ईसाई, मुसलमान ) मतों के अनुसार एक वैश्वरका नाम जिनके समयमें बर्षा भारी तुफान आया था। इस तुफानमें सारे सृष्टि जनमन हो गई थी, केवल नूहका परिवार और कुछ पशु एक किशोरी पर बैठ कर बचे थे।

नूह-होतियानो—निम्न प्रदेशके अन्तर्गत एक पाम। यह उत्तरेभागसे तीन मील उत्तर-पश्चिम तथा मतिपारोसे पायः ११ मील उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है। यहांकी वीर-नूह-होतियानोकी दरगाह १०८२ ईजरीकी बनी है।

नू ( अ० पु० ) गी-भयन् डिब, १. मनुष्य। २. पुत्रव। ३. मयू। ( लि० ) ४. नीता।

नूकपाज ( अ० जी० ) नूकपाज इतत्। नरकपाज, मनुष्यकी खोपड़ी।

नूकुसुर ( अ० पु० ) १. कुत्तेका अर्थात् मनुष्यका शरीर। २. कुत्तेके जो सा व्यवहारविहित मनुष्य।

नूकेगरो ( अ० पु० ) केगरो प्राण्ये वासयन् इति इति, ना वासी केगरो चेति। १. नरसिंहायतार, तृप्तिरुत्पत्ति विष्णु। २. मनुष्योंमें नूके समान पराक्रमी पुत्रव, अथ पुत्रव।

नूग ( अ० पु० ) १. एक राजा जिनकी कथा महाभारतमें इस प्रकार है,—

द्वारकानगरमें यदुवाल्किने किसी रूपमें एक बड़े गिरगिटकी देखा और उसे बाहर निकालनेकी श्रम कोयिग को, किन्तु क्षतकाय न हुए। बाद में अत्र सर्व भगवान् श्रीकृष्णके पास गये और सारा वृत्तान्त कह सुनाया। कृष्ण कृष्णके पास आए और उन्होंने गिरगिटकी बाहर निकाल कर उसका पूर्वजीवनवृत्तान्त पूछा। इस पर गिरगिटने कहा, 'भगवन्। मैं पूर्व जन्ममें नूग नामक राजा था। मैंने हजारों यज्ञ और नाना प्रकारके सन्कार्य किए हैं। भगवान्ने उसकी पुण्यकथा सुन कर कहा, 'जब भाव ऐसे दानों और धर्मोंका है, तब ऐसी दुर्गाति होनेका क्या कारण है?' इस पर लक्ष्मण-रूपी महाराज नूगने जवाब दिया, "प्रभो! कीर्तनविहीनी ब्राह्मण किसी कारणवश जब परदेग गया था, तब यहां उसकी गाय मीरी गावोंके कुण्डमें आ मिली। मैंने एक बार एक ब्राह्मणको सहस्र गोदानमें दो जिनमें यह ब्राह्मणवाली गाय भी थी। जब यह ब्राह्मण पर-दियसे लौट और गायकी घरमें न देखा, तब वो उसकी खोजमें शहर उधर निकले। जिस ब्राह्मणको मैंने गोदान किया था उन्होंने घरके पास यह गाय घर रची थी। वह ब्राह्मणने अपनी गायकी पहचाना और उनसे मांगा। इस पर उन्होंने कहा, 'राजा नूगने मुझे यह वेददान किया है।' बाद दोनों भगवत्त हुए मेरे निकट आए और सारा वृत्तान्त कह सुनाया। जिस ब्राह्मणकी मैंने माएं दान-में दी थीं, उन्हें बहुत समझा कर कहा, कि इस गायके बदनमें मैं पापको एक हजार गाये और देता हूँ, आप उनकी गाय दे दें। लेकिन उनमें एक भी न मानी और कहा कि ये सब गाये सुलभ हैं, आपएव हरे मैं लौटा नहीं सकता। इतना कह कर ब्राह्मण चले दिये। बाद मैंने निरुपाय हो प्रयासगत ब्राह्मणसे कहा, 'भगवन्! मैं उस गायके बदन पापको एक लाख गाएं देता हूँ,'

बाप छपापूर्वक उन्हें ले ले।' इस पर वे बोले, 'मैं अपना भरण-पोषण भलोमति खर्च कर लेता हूँ, तब फिर राजाओंका दान क्यों नूँ।' इतना कह कर वे विपक्ष चित्तसे अपने घरकी लज दिए। अनन्तर योड़े ही दिनोंके मध्य मेरा शरीरावसान हुआ। जब मैं यम-लोक पहुँचा, तब धर्मराज यमने मेरे पुण्यकर्म की विविध प्रशंसा करते हुए सुभवे कथा, 'बापका पुण्यफल बहुत है, पर ब्राह्मणकी गाय हरण करनेका पाप भी आपकी लगा है। चाहे आपका फल पहले भोगिये, चाहे पुण्यका।' इस पर मैंने पापका ही फल पहले भोगना चाहा। अतः सहस्र वर्षके लिए गिरगिट हो कर मैं इस कुएँमें रहने लगा। यमने कथा था, 'सहस्रवर्ष हीत जानिके बाद भगवान् वासुदेव आपका उद्धार करेंगे और तब आप इस मनातन लोकमें पावेंगे।' अभी आपने छपा करके मेरा उद्धार किया।' बाद राजा नृग लख्यके पादेयके दिश्यामान पर चढ़ कर सुरधामकी चले गये।

महाराज नृगके स्वर्गारोहण करने पर भगवान् वासुदेवने लोगकी मलाईके लिए कथा था, कि नृगने ब्राह्मणका गो-धन चुराया था जिससे उन्हें ऐसी दुर्दशा भुगतनी पड़ी थी। अतएव ब्राह्मणहरण करना कदापि उचित नहीं है। फिर भी देखना चाहिए कि साधुसमागमसे महाराज नृगने नरकसे उद्धार पाया था। अतएव साधुम संग भी कभी निष्फल होनेकी नहीं। दान करनेमें जितना फल लिखता है, अपहरणमें उतना ही पापम भी होता है। (भारत अनुशासनपर्य ७० अ०)

२ मोघवतके वीर । ३ मोघेय वंशका पादि पुरुष जो नृगाके गर्भसे उत्पन्न उद्योतरका पुत्र था। ४ मनुके एक पुत्रका नाम। ५ सुमतिका पिता।

रूंगधूम ( सं० पु० ) तीर्थभेद, एक तीर्थ का नाम।  
 नृगा ( सं० स्त्री० ) उद्योतरकी पत्नी और नृगराजकी माता।

नृग ( सं० स्त्री० ) नरघातक ।  
 नृवचस ( सं० पु० ) नृन् चष्टे भक्त्यत्वेन पश्यतीति नृ-च-व-सन्, वा अस्ति ( अथर्ववेदके गिण । अणु ४।२३२ )  
 १ राघव । २ देव । ३ मनुव्यदशक ।

नृवचस ( सं० पु० ) नृणां प्रजातां चक्षुरिव । सुनोय राज-पुत्र ।

नृचन्द्र ( सं० पु० ) रत्नगारराजका एक पुत्र ।  
 नृजघ ( सं० स्त्री० ) नृ-अस्ति, पद-क, ततो जघादेयः ।  
 नरमक्षक, मनुष्यकी खानेवाला ।

नृजस ( सं० स्त्री० ) नृ-जस-इ-तत् । १ मनुष्यनेत्रजन, पाँध । २ मानवमूत्र, मनुष्यका मूत्र ।  
 नृजाति ( सं० स्त्री० ) नरजाति, मनुष्यजाति ।  
 नृजित् ( सं० स्त्री० ) १ नायकके पिता । २ एकाहभेद ।  
 नृति ( सं० स्त्री० ) नृत नर्त्तने इन् संच, कित् (रंगुपाय किं । अणु ४।११८) नर्त्तन, नाच ।

नृत् ( सं० पु० ) नृत्यतीति नृत याहुलकात् कुः । १ नर्त्तक, नाचनेवाला । २ भूमि, जमीन ।

नृत् ( सं० स्त्री० ) नृत्त-कु । १ नर्त्तक । २ नृत्तवृत्तिवृत्त-कित् । ३ नरहंसक ।

नृत्त ( सं० स्त्री० ) नृत्त-भाव-क । नृत्य, नाच ।

नृत्य ( सं० स्त्री० ) नृत्य-शब्द । नात्तमानरसाध्य सविलास शब्दविशेष, सुहृतीके लाल और गतिके अनुसार हाथ पाँव हिलाने, उठकने-बूदने-पादिका ध्यावार, नाच । पर्याय—ताण्डव, नटन, नाट्य, साँस, नर्त्तन, नृत्त, नाट, लाम, सायक, नृत्ति ।

नृत्य मानवीका स्वभावनिष्ठ है। क्या प्राचीनकाल क्या प्राधुनिक काल सभी समुभ्य समयमें नृत्य प्रचलित था और है। पुराकालमें जिस प्रकार नृत्य होता था, उस-प्रकार आज काल नहीं होता, रूपांतरित भावमें हुआ करना है। गिवनी सर्वदा नृत्य किया करते हैं, स्वर्गमें अथरायें मनोहर नृत्य करके देवताओंकी खुश किया करती हैं।

महर्षि भरत नाट्यशास्त्रके प्रणेता थे। ये सुदृसे स्वर्गमें अथरायोंकी नृत्य सिखाते थे। प्राया सभी पुराणोंमें लिखा है कि देवमन्दिरका प्रदक्षिण कर नृत्य करनेसे महापुण्य प्राप्त होता है। चैतन्यदेवने अपने गिष्णोंकी नामोच्चारणपूर्वक नृत्य करनेका उपदेश दिया था।

अति पुराकालमें धीक लोग उखबोपलक्षमें नृत्य और गान करते हुए देवमन्दिरकी प्रदक्षिणा करते थे। यह दिशोंमें भी नृत्य बहुत पहलेसे प्रचलित है। दरबारलोक सोहितसगर पर कर आनन्दपूर्वक नृत्य किया था। धीकलोगोंका नृत्य अतिमह प्रयाके चक्रभूत है। इनके

भयानक रसका नृत्य देख कर बहुतोंके मनमें मयका सदा रहता था।

चीक-गिल्ब विद्याविहारद भास्करोंकी प्रस्तावोदित प्रतिभूति पर नृत्यकी नानाप्रकारकी भङ्गी प्रदर्शित हुई है। होमर, पारिस्तस, पिण्डार आदिने अपने अपने यत्नमें नृत्यका विशेष उल्लेख किया है। पारिस्तसने नृत्यकी विविध प्रणालीका उद्घाटन कर उसे 'पोइटीक' शब्दके मध्य समवेगित किया है।

खाट्टे नामक युद्धके समय नृत्य करनेके लिये अत्र उनकी उमर पाँच वर्षकी होती थी, तभीसे नृत्य सीखते थे। उनके युद्धके इस नृत्यका नाम 'पारिस्तिक' नृत्य था।

सम्प्रान्त रोमकगण धर्मकार्य भिन्न धर्म लोगोके लिये नृत्य नहीं करते थे। हम लोगोके निमित्त नृत्य वहाँके व्ययमायिषोमे सम्पादित होता था। मिस्रदेशीय मत्तकियोका नाम 'पानमी' है। ये चञ्की चञ्की कविता गान करते हुए नाचते हैं। यह नृत्य हम लोगोके नृत्यसे बहुत कुछ भिन्नता लक्षता है।

यूरोपियोके मध्य सम्प्रान्त बगैसे ले कर साधारण मनुष्य तक सभी नृत्य किया करते हैं। कोई स्त्री वा पुरुष जो नाच नहीं सकते वे अकर्मण्य और असमर्थ समझे जाते हैं। यह Ball नामक नाच कई प्रकारका है, यथा—ओस्का, कौवाडि न, कनडी डान्स इत्यादि। इसके सिवा समिनय कार्यमें भी अनेक प्रकारके नृत्य हैं।

हम लोगोके देशमें उन्नतगाम्भानुसार जो नृत्य हैं सभी उन्हीं पर विचार करना चाहिये।

इतिहास, पुराण, स्मृति आदि सबमें नृत्यका उल्लेख मिलता है। जो मत्तक वा मत्तको नृत्य करेगी उनका सुन्दर रूप रचना आभयज्ञ है, यद्यपि मत्तकीका नृत्य निम्नोच्य समझा जाता है।

“वस्तेनाकम रूपेण विदिर्नोम्यस्य स्वतः।

धार्मिण्यभूय” श्रुतमप्यदिहृन्मना ॥”

(मार्कण्डेयपुराण)

अनेक नृत्य मनुष्यपदवाच्य नहीं हैं। सुन्दररूपविगट मनुष्य ही मनुष्य कहलाता है। देवदेवीकी पूजामें नृत्य प्रदर्शन भी यही प्रकारके मनुष्य प्रीत होते हैं।

जो देवोद्दिष्टमे नृत्य करते हैं वे सभारमागामे सुखितामं कर स्वर्गलोह गमनं करते हैं।

“यो नृत्यति प्रहृष्टतमा माधेरं सुपुमन्वितः।

य निरदति पापानि अमन्तर एतैरपि ॥”

(द्वारकाभारतम्)

जो मनुष्यचित्तसे परयत्न भक्तियुक्त हो नृत्य करते हैं वे शतजन्मान्तरके पापने सुखि लाभ करते हैं। इति भक्तियुक्ताने भो लिखा है—

“नृत्यतां धीपतेरपे तालिकावादनैर्बन्धुम्।

उदीयते शरीरस्याः धर्मे पातकपक्षिणः ॥”

जो विष्णुके श्रागे तालिकावादन द्वारा पर्याप्ततामी दे दे कर नाच करते हैं, उनके शरीरस्वित सभी पाप दूर हो जाते हैं। प्रायः सभी धर्मशास्त्रोंमें देवीके समीप जो नृत्य किया जाता है उसको प्रशंसा मिली है।

शामायण और भागवतके दृगमस्तम्भमें नृत्यका विशेष विवरण मिलता है। महाभारतके विराटपर्वमें लिखा है कि अर्जुन उत्तम मत्तक के शौर उन्नीमे मे (हृदयलाक्ष्यमें) विराटके पनात्पुरमें शिवोको नाच गाने सिखानेके लिये नियुक्त हुए थे।

धर्मसंघितामें लिखा है कि नृत्य जिनकी अपजीविका है, वे निरुद्ध समझे जाते हैं, यथा—रजक, धर्मकार, मट प्रभृति अति निरुद्ध जाति है। देवात् यदि इनका अथ मद्यप किया जाय, तो प्रायचित्त करना होता है। मनु मनुति सभी धर्मशास्त्रोंमें मट-जाति और नृत्यका उल्लेख है। अनयय इन देशमें नृत्य-पथां पत्यन्त पुरातन है, हममें जरा भी संन्देह नहीं।

मुकुटा लक्षणम्।

“हेतुहत्या प्रतीतोऽयं ताममानरसाधनः।

समिन्नापोऽत्रविधिषो नृदमिगुचपते पुनः ॥”

(उन्नीपदागोहर)

जिस देशकी लोको हृदि है, मनुसुसार तान, मान और रसायित विद्यासमुक्त अत्रविषयका नाम नृत्य है। नृत्य दो प्रकारका है, ताण्डव और साम्ब। मनुष्यको ताण्डव और स्त्रोत्तुलको साम्ब कहते हैं। ताण्डव नामक हृदिने ताण्डव नृत्यको विधि रचो थी। यह विषय भरतमत्तिकने भरतकोपकी टीकामें

विस्तृतरूपसे लिखा है। ताण्डवं-घोर-नाट्य-भो-दो-दो-प्रकारके होते हैं,—पेन्निवि-घोर-चक्ररूपक। अभिनयशून्य-भङ्गाविशेषको-पेन्निवि-घोर-गिरमं छिद्र, भेद तथा पनेक-प्रकारके भावोंके अभिनय ही उसे बहुरूपक कहते हैं।

नाट्यतृत्य भी दो प्रकारका होता है—हुरित-घोर-यौवत। पनेक प्रकारके भाव दिखाने हुए नायक-नायिका-एक दूसरेका सुन्दन, घालिङ्गन आदि करते हुए जो नृत्य-करती है, वह हुरित कण्ठनाता है। जो नाच-नाचने-वाली अडेनी भाव ही नाचे वह यौवत है।

गानसे वाद्य-घोर-वाद्यसे लयकी उत्पत्ति है। पोल्ले-लय-घोर-तालके समासह-हो-कर-नृत्य-करना-होता-है। जितने प्रकारके विग्रह-विग्रह-नृत्य-हैं, उनमेंसे समस्त-के-द्वि-अर्थात्-द्वि-प्रकारके-भङ्गाविशेषको-ही-नृत्य-वा-नर्तन-कहते-हैं। नर्तन-निर्णयमें-लिखा-है—

“अंगविशेष-पर्व-शिर्य-अनघितातुदे-जनम् ।

नटेन-दर्शित-यत्र-नर्तनं-कथ्यते-तदा ॥” (नर्त-निर्णय)

नट-नाना-प्रकारके-भङ्गाविशेषके-साथ-लोगों-का-जो-विस्तार-सुन्दन-करता-है, उसीको-नर्तन-वा-नृत्य-कहते-हैं। यह-नर्तन-लोग-प्रकारका-है—नाट्य, नृत्य-घोर-नृत्य।

इसमेंसे-नाट्यमाटकादि-अर्थात्-दृश्यकाव्य-घोर-तदु-गत-कथा, देय, हसि, भाव-घोर-रपादि-चार-प्रकारके-अभिनय-द्वारा-प्रदर्शित-होनेसे-उसे-नाट्य-घोर-कोई-आख्यायिका-जो-पुस्तकमें-अनुगत, वा-नेपथ्य-विधानके-अधीन-नहीं-है, अथवा-रसभावादि-अभिनय-द्वारा-विभू-यित-घोर-तत्तद-रसभावादि-अभिनय-द्वारा-प्रदर्शित-होतो-है, उसे-नृत्य-कहते-हैं। यह-सर्वाङ्ग-सुन्दर-होने-पर-सभी-मनुष्यों-का-मनो-हारो-होता-है। अभिनय-वर्जित, अमर्तुकारजनक-भङ्गाविशेष-विशेष-का-नाम-नृत्य-है।

“हस्तपादाभिरितो-पेशनभारंगोभिनिम् ।

लक्षरभामिनयमानन्दर-दृष्टं-अनघिभम् ॥”

(नर्त-निर्णय)  
यह-नृत्य-तीन-प्रकारका-माना-गया-है—विषम, विकट-घोर-लक्ष। शब्दमण्डपके-मध्य-घोर-रङ्ग-में-परि-भ्रमण-हन्वादि-प्रकारका-ताम-विषम-नृत्य-है। यह-नृत्य-मन्द्राजो-बाजोकर-लोग-करते-हैं। शैल्यजनक

विगभूपादि-व्यापारका-नाम-विकट-नृत्य-घोर-अन्य-उप-करण-अवलम्बनपूर्वक-उत्प्रेरणादि-गति-विशेषका-नाम-लक्ष-नृत्य-है। यह-नृत्य-रस-धारियों-में-व्यवहृत-होता-है।

नर्तन-का-वा-नर्तन-की-को-रङ्गभूमिमें-प्रवेग-तर-पुण्य-आदि-उत्कृष्ट-वस्तु-छिड़क-देने-चाहिये-घोर-तब-पहले-अनुरूप-तामसे-जो-मूल-नृत्य-पारम्भ-करना-चाहिये। विषम-घोर-अोहन-विशेष-नृत्य-का-नाम-जो-मूल-नृत्य-है।

रङ्गप्रवेशके-बाद-जो-नृत्य-क्रिया-जाता-है-यह-दो-प्रकारका-है—अन्य-घोर-अन्य-नृत्य। अन्य-नृत्यमें-गति, नियम-घोर-चारो-प्रभृति-विविध-क्रियाओं-का-नियम-रहता-है। अन्य-नृत्यमें-वह-नहीं-रहता।

नृत्य-के-मध्य-अनेक-व्यापार-घोर-ज्ञातव्य-विषय-हैं। मस्तक, चक्षु, श्रु, मुख, हाथ, हस्तक, चालक, तलहट, हस्तप्रचार, करकर्म, चैत्र, कटि, पङ्क्ति, स्थानक, चारी, धारण, रीचक-प्रभृति-शारीरिक-अनेक-प्रकारके-व्यापार-हैं। नृत्यशाला, नर्तक-संघ, रीखालस्य, नृत्याङ्ग-घोर-सके-सोडव, इत्यादि-अनेक-प्रकारके-ज्ञातव्य-भो-हैं। पण्डित-विद्वान्-ये-सब-विषय-नर्त-निर्णयके-चतुर्थ-प्रकरणमें-विस्तार-रूपसे-लिखे-हैं।

नृत्य-घोर-अभिनयमें-मस्तक, हटि-घोर-श्रु-चाल-नादिके-अनेक-प्रकारके-भेद-हैं-जिनमेंसे-मस्तकके-सम्बन्धमें-१८-प्रकारके-भेद-वतसाये-गये-हैं। दोप-रहित-रसभावादि-अन्य-अनेक-अवलोकनका-नाम-हटि-है। यह-हटि-तीन-प्रकारकी-है—रसहटि, स्थायिहटि-घोर-महारिहटि। इन-तीनोंके-पलाया, व्यभिचारिहटि-भो-एक-है। नर्तक-वा-नर्त-क्रियेके-लिये-यह-हटि-विज्ञान-की-सा-अति-है, वं-सा-कठिन-घोर-दूसरा-कुछ-भो-नहीं-है। अङ्गार, योर, कर्ण-आदि-समा-रसभाव-इसो-हटि-द्वारा-मूर्ति-मान-करने-होते-हैं। इनमेंसे-रसहटि-८, स्थायि-भावप्रकायक-हटि-८-घोर-व्यभिचारिहटि-२०, कुल-३६-प्रकारकी-हटि-है। इनके-सिवा-ताराकर्म-अर्थात्-अभि-विकारभाधक-व्यापार-भो-है-१-अ-विचार-३-प्रकारका-है—सहजा, अरिहता, कुञ्चिता-रिचिता, पतिता-अनुरा-घोर-श्रु-कुटो। अन्तर्भावित-रसभाव-जिनमें-सुगम-प्रकाय-हो, ऐसे-सुखार्थको-सुखराग-कहते-हैं। यह-सुखराग

मयानक रसका नृत्य देख कर बहुतेके मनमें मयका मधार होता था ।

वीक-गिन्स विद्याविमार्ग भास्को की मदारखोदित प्रतिमूर्ति पर नृत्यकी नानाप्रकारकी भङ्गी प्रदर्शित हुई है । होमर, पारिदात्म, पिल्लार पादिने अपने अपने यत्नमें नृत्यका विषय उल्लेख किया है । पारिदात्मने नृत्यकी विविध प्रणालीका उद्घाटन कर उसे 'पोइटीका' ग्रन्थके मध्य समवेगित किया है ।

स्वार्टनगण युद्धके समय नृत्य करनेके लिये जय छगकी उमर पाँच वर्षकी होती थी, तभीसे नृत्य सीखते थे । उनके युद्धके इस नृत्यका नाम 'पाइरिक' नृत्य था ।

सभ्रान्त रोमरुपण धर्मकाय 'मिच' इस लोगोके लिये नृत्य नहीं करते थे । हम लोगोके निमित्त नृत्य यहाँके व्ययसायिषोसे सम्पादित होता था । मिस्त्रदेवीय मत्स्यकियोका नाम 'पञ्चमी' है । ये पञ्चमी पञ्चमी कविता गान करते हुए नाचते हैं । यह नृत्य हम लोगोके नृत्यसे बहुत कुछ भिन्नता युक्तता है ।

यूरोपियोके मध्य सभ्रान्त वर्गसे ले कर साधारण मनुष्य तक सभी नृत्य किया करते हैं । कोई कौन वा पुरुष जो नाच नहीं सकते वे पञ्चमैल्य पौर पञ्चम्य समझि जाते हैं । यह Ball नामक नाच कई प्रकारका है, यथा—पोल्का, कोवाडिन, कनड्रो डान्ग इत्यादि । इसके सिवा समिनय कार्यमें भी अनेक प्रकारके नृत्य हैं ।

हम लोगोके देशमें सङ्गीतशास्त्रानुसार जो सब नृत्य हैं सभी सङ्गीत पर विचार करमा चाहिये ।

इतिहास, पुराण, स्मृति आदि सबमें नृत्यका उल्लेख भिन्नता है । जो मत्स्य का नर्तकी नृत्य करेगी उसका सुन्दर रूप रङ्गमा पायल्लक है, चण्डा मत्स्यकीका नृत्य निन्दनीय समझा जाता है ।

"वृत्तेनात्ममैवेन विदिर्नाम्यये स्वयः ।

पारिषिष्टमृत्युं वृत्तमप्यदिहन्वना ॥"

(मार्कण्डेयपुराण)

चण्डेय नृत्य मृत्युपदवाच नहीं है । सुन्दररूपविगिट मृत्यु ही मृत्यु कहजाता है । देवदेवीकी पूजामें मृत्यु प्रदर्शनमें अनेक प्रकारके मनुष्य प्राप्त होते हैं ।

जो देवीदेवसे नृत्य करते हैं वे सभारदागर्भ मुक्तिप्राप्त कर स्वर्ग लोक गमन करते हैं ।

"यो नृत्यति प्रहृष्टात्मा भाषेत्सुखमकिन्तुः ।

स निश्चिन्ति पापानि जग्मन्तोर शतैरपि ॥"

(द्वारवाभाशास्त्र)

जो प्रपुञ्जचित्तने परयन्ता भक्तियुक्त हो नृत्य करते हैं वे शतकल्पान्तरके पापने मुक्ति प्राप्त करते हैं । इति-भक्तिविलासने भी लिखा है—

"श्रुतता धीपतेरपे तात्तिकायादनेह कम् ।

वहीपयते शरीरस्याः यथै पातकपशियाः ॥"

जो विष्णुके पागे तात्तिकायादन द्वारा पर्यत्ताकी छिटे कर नाच करते हैं, उनके शरीररहित मनो पाप दूर होजाते हैं । प्रायः सभी धर्मशास्त्रोंमें देवीके समीप जो नृत्य किया जाता है उसको प्रयसा लिखो है ।

शामायण पौर भागवतके दशमस्कन्धमें नृत्यका विषय विवरण मिलता है । महाभारतके विराटपर्वमें लिखा है कि पशु न उचसम नर्तक थे पौर समीपे ये (हृष्टसंसारुपे) विराटके पत्नःपुरमें स्त्रियोंको नाच गान सिखानेके लिये नियुक्त हुए थे ।

धर्मशास्त्रोंमें लिखा है कि नृत्य जिनको उपकीर्तिका है, वे निरुद्ध समझि जाते हैं, यथा—रजक, पञ्चकार, गट प्रभृति इति निरुद्ध जाति है । देवालयदि इनका पञ्च भक्षण किया जाय, तो प्रायचित्त करमा होता है । मनु प्रभृति सभी धर्मशास्त्रोंमें नृत्यजाति पौर नृत्यका उल्लेख है । अतएव इस देशमें नृत्यचर्चा पत्नका पुरातन है, इसमें जरा भी सन्देह नहीं ।

मूलका सत्य ।

"देवदेव्या प्रतीतोऽय तात्तमानरुपाभयः ।

सविकारोऽङ्गविषयो नृत्यमिदुपपत्ते सुचेः ॥"

(सङ्गीतशास्त्र)

जिस देशकी जो कौ हृष्टि है, तदनुसार तान, मान पौर रसाक्षित विलासमुक्त पञ्चविधैयका नाम नृत्य है । नृत्य दो प्रकारका है, ताण्ड्य पौर साम्य । पुञ्जक को ताण्ड्य पौर स्त्रीनृत्यको साह्य कहते हैं ।

ताण्ड्य नामक नृत्तने ताण्ड्य नृत्यको विधि रचो थी । यह विषय मरतमसिक्कने चमरकीयको टीकामें

विस्तृतरूपसे लिखा है। ताण्डवं और सास्यभो दो दो प्रकारके होते हैं,—पेलवि और बहुरूपक। अभिनयग्रन्थ अङ्गविशेषकी पेलवि और निममें छेद, भेद तथा अनेक प्रकारके भावोंके अभिनय ही उसे बहुरूपक कहते हैं।

सास्यद्वय भी दो प्रकारका होता है—कुरित और योषत। अनेक प्रकारके भाव दिखाने हुए नायक-नायिका एक दूसरेका सुम्बन, आलिङ्गन आदि करते हुए जो नृत्य करती है, वह कुरित कहलाता है। जो नाच नाचनेवाली अनेकी अप ही नाचे वह योषत है।

गानसे वाद्य और वाद्यसे लयकी उत्पत्ति है। पोछे लय और तालके समायव हो कर नृत्य करना होता है।

जितने प्रकारके विशेष विशेष नृत्य हैं, उनमेंसे समस्त कोई अथवा चित्तारूपक अङ्गविशेषको ही नृत्य वा नर्तन कहते हैं। नर्तननिर्णयमें लिखा है—

“अंगविशेषे पवे विशेषे अनचितायुरंजनम्।

नटेन दर्शितं यत्र नर्तनं कथ्यते तदा ॥” (नर्तननिर्णय)

नट नाना-प्रकारके अङ्गविशेषके साथ लोगोंका जो चिन्तासुरंजन करता है, उसीको नर्तन वा नृत्य कहते हैं। यह नर्तन तीन प्रकारका है—नाच्य, नृत्य और नृत्त।

इनमेंसे नाच्यमाटकादि अर्थात् हास्यकाच्य और तद्गत कथा, देय, वृत्ति, भाव और रसादि चार प्रकारके अभिनय द्वारा प्रदर्शित होनेसे असे माटय और कीड़े आख्यायिका जो पुद्गलकर्म, अनुगत, वा नेपथ्य विधानके अधीन नहीं है, प्रयत्न, रसभावादि अभिनय द्वारा विभूयित और तत्तद्-रसभावादि अभिनय द्वारा प्रदर्शित होती है, उसे नृत्य कहते हैं। यह सर्वाङ्गसुन्दर होने पर सभी मनुष्योंका मनोहारो होता है। अभिनय-वर्जित, अमत्कारजनक अङ्गविशेष विशेषण नाम नृत्त है।

“हस्तपदादिर्विस्तरेणैव नराङ्गसंगीभोगम्।

हस्तपदाभिनयमात्रद्वरं नृत्तं अनाप्यम् ॥”

(नर्तनविशेष)

यह नृत्त तीन प्रकारका माना गया है—विषम, विकट और लघु। अक्षरमण्डलके मध्य और रक्ष्यमें परिभ्रमण इत्यादि प्रकारका नाम विषम नृत्त है। यह नृत्त मन्द्राजो वाजोकर लोग करते हैं। वैकल्पजनक

विश्रभूपादि व्यापारका नाम विकट-नृत्त और अल्प-करण प्रवलम्बनपूर्वक उरझतादि गति विशेषका नाम लघु नृत्त है। यह नृत्त रसकारियोंमें व्यवहृत होता है।

नर्तक वा नर्तकीको रङ्गभूमिमें प्रवेश कर सुभ्य आदि उल्कृष्ट वस्तु किङ्कट देणो चाहिये और तब पहली अनुरूप-ताससे कोमल नृत्य, पारम्भ, करना चाहिये। विषम और शोभनविहीन—नृत्यका नाम कोमल नृत्त है।

रङ्गप्रवेशके बाद जो नृत्य किया जाता है वह दो प्रकारका है—अन्ध और अन्ध नृत्त। अन्ध नृत्तमें गति, नियम और चारो प्रभृति विविध क्रियाओंका नियम रहता है। अन्ध नृत्तमें वह नहीं रहता।

नृत्यके मध्य अनेक व्यापार और ज्ञातव्य विषय हैं। मस्तक, चक्षु, भ्रू, मुख, हाड, हस्तक, चालक, तलहत्त, द्रुमप्रचार, करकर्म, चैव, कटि, पट्टि, स्थानक, चारी, फारण, रीचक प्रभृति शारीरिक अनेक प्रकारके व्यापार हैं। नृत्यशाला, नर्तकसङ्घ, रेखालसङ्घ, नृत्याङ्ग और सङ्घके-सौष्ठव इत्यादि अनेक प्रकारके ज्ञातव्य भी हैं। पण्डित विद्वान्ने ये सब विषय नर्तननिर्णयके चतुर्थ प्रकरणमें विस्ताररूपसे लिखे हैं।

नृत्य और अभिनयमें मस्तक, हटि और भ्रू-चाल आदिक अनेक प्रकारके भेद हैं जिनमेंसे मस्तकके सम्बन्धमें १८ प्रकारके भेद बतलाये गये हैं। दोष-रहित, रसभावादिअङ्गक प्रवलोकनका नाम हटि है। यह हटि तीन प्रकारकी है—रसहटि, स्थायिहटि और सञ्चारिहटि। इन तीनोंके अलावा अविचारिहटि भी एक है। नर्तक वा नर्तकियोंके लिये यह हटिविज्ञान असा कठिन है, वे सा कठिन और दूसरा कुछ भी नहीं है। अङ्गार, धोर, करण्य आदि सभी रसभाव इनो हटि द्वारा मूर्त्तिमान् करने होते हैं। इनमेंसे रसहटि ८, स्थायि-भावप्रकायक हटि ८ और अविचारिहटि २०, कुल ३६ प्रकारकी हटि हैं। इनके सिवा ताराकर्म अर्थात् सन्धि-त्रिकारमाधक व्यापार भी है। भ्रू-विकार ७ प्रकारका है—सहजा, उत्थिता, कुपिता, रचिता, पतिता, चतुरा और भ्रू-कुटो। अन्तर्स्थित रसभाव जिनमें सुषमं प्रकाय हो, ऐसे सुषयर्षको सुवराग कहते हैं। यह सुवराग



४ प्रकारका है। वाद् (चंद्रोत्पत्त्यकालमें किम प्रकार  
 हस्तमण्डलमन करमा होता है, यद्) १८ प्रकारका है—  
 यथा ऊर्ध्व, अधोमुख, तिर्यक्, पयोविह, प्रमारित,  
 पदिग्न्य, मण्डप, गति, अस्तिह, घटित, पायेटित,  
 घटातुग, पविह, कुचित, मरुत, मन्ध, आन्दोक्षित और  
 उल्लारित। नृत्यकालमें चतुर्गामनक अथवा चतु  
 चर्यप्रकाशक जो हस्तार्द्रुलिका विन्याम वा विधेय-  
 विधेय क्रिया जाता है, उसे हस्तक कहते हैं। यह  
 हस्तक तीन प्रकारका है—मंयुत, चमंयुत और नृता-  
 हस्त। फिर संयुतहस्तके १८, चमंयुत और नृताहस्तके  
 ३२ भेद वतनाये गये हैं। पताक, चंमपच, गोमुख,  
 चतुर, निकुचक, सर्पगिरा, पडाभ्य, चर्दचन्द्रक, चतु-  
 मुख इत्यादि नृताके ही भेद कहे गये हैं।

चालक—चंगो वा चतुर्प्रकारके लययन्त्रका चतु-  
 गत कर हस्त विरेचनाका नाम चालक है। नृतामें हम  
 चालक-विषयके चनेक विवरण लिखे गये हैं। इसके  
 प्रतिरिक्त कारकर्म है, यथा—उत्कर्षण, विकर्षण,  
 चाकर्षण, परिघट्ट, निघट्ट, बाह्यान, रोधनसंघेय,  
 विघ्नेपरचण, मोक्षण, विधेय, धूमन, विसर्जन, तर्जन,  
 द्वेदन, भेदन, स्तोदन, मोदन, ताडन ये सब हस्तकर्मके  
 नामने प्रसिद्ध हैं। नृताकार्यमें हम सब हस्तकर्मका  
 विधेयपदपसे ज्ञान रहना आवश्यक है।

हस्तधेय—पार्श्वेदय, मन्मुख, पयात्, ऊर्ध्व, अधः,  
 मन्दाक, ललाट, कर्ण, स्कन्ध, नाभि, कटि, शीर्ष, ऊर्ध-  
 द्य ये शिरह हस्तधेय चर्चात् हस्तविन्यासके प्रधान स्थान  
 हैं। नृत्यकालमें इन सब स्थानोंमें हस्तविन्यास करना  
 होता है।

कटि—निर्दोष नृतायोर्ध्व ऊर्ध्व कटि ३ प्रकारकी है,  
 यथा—ऊर्ध्वा, समान्द्रिवा, मित्रता, रेचिता, कम्पिता  
 और उदाहिता। नृतामें इनका साधन और लक्षण  
 विधेयपदपसे जानना आवश्यक है।

चरण—नृताके लययुक्त चरणके साधन और लक्षण  
 शिरह प्रकारके हैं, यथा—सम, पक्षित, कुक्षित, ध्रुवप,  
 मन्मधर, उद्घटित, घटित, उत्कृष्टक, सतिन, मर्दित,  
 पार्ष्णिग, घस्यत और पार्श्वग। नृतामें इनका भी विधेय  
 लक्षण जानना आवश्यक है।

रयानक—पानुरहितजनक चरणमें चतुर्भविरेयविधेयका  
 नाम रयानक है। यह रयानक चतुर्भय प्रकारका है,  
 जिनमेंसे नृतामें २७ प्रकारके लक्षण प्रयोजनीय हैं। इन-  
 के नाम ये हैं—समपाद, पार्ष्णि विह, अस्तिह, संघत,  
 उत्कट, चर्दचन्द्र, मान, मन्दावर्त्त, मण्डन, चतुरस्र,  
 वैशाख, पावडित्यक, पृथोत्थान, तथोत्थान, चारकाक,  
 एकपादिक, मन्दा, वैश्वान, शैव, पालीक, लक्ष्मसुचि,  
 प्रतालीक, समसुचि, विषमसुचि, कुर्माणन, नागबन्ध,  
 गारुड और हयभासन।

चारो—इसका साधारण लक्षण यह है कि जिनमें  
 पाद, जहा, यद्य और कटि ये सब रयान पायस क्रिये  
 जाय। पायस ही ज्ञान पर तद्वद्वारा विरचन करनेका  
 नाम भी चारो है। सञ्चरपविधेयमें समने किसी चंगका  
 नाम चारोकरण और किसी चंगका नाम व्यायाम है।  
 इस व्यायामके परस्पर घटित चंगविधेयका नाम खण्ड  
 और लयहस्तमूहका नाम मण्डन है।

“चातीभिः प्रयुतं शुलं चातीभिरेटव” तथा।  
 चातीभिः शस्त्रमोक्ष चार्यो युद्धेयुकीर्तिगः।”  
 (नर्तकनिर्णय)

चारो प्रथमतः दो प्रकारकी है—भीमी और पाका-  
 गिका। भूमि पर सञ्चरण विधेयका नाम भीमी और  
 शून्यमें गतिविधेयका नाम पाकागिकाचारो है। इन  
 दोनों प्रकारकी चारोका प्रायः ८२ प्रकारका है। इनके  
 नाम ये हैं—समपादा, स्थितावर्त्त, मकटाद्यो, विन्धवा,  
 चञ्चलिका, चागति, एनका, श्रीद्विता, समभयिता,  
 मतन्दो, उत्कृष्टिन्दिता, उड्डिता, स्यन्दिता, बन्धा, क्षिप्ता,  
 उन्मुखी, रयचक्रा, परोहता, नृपुरादिका, तिर्यङ्-  
 मुखा, मराना, करिहस्ता, कुसीरीका, विद्विष्टा, कातरा,  
 पार्ष्णि रेचिता, ऊर्ध्वाहृता, ऊर्ध्वेची, तथोद्गृहता, हरि-  
 यत्रातिका, चर्दमण्डलिका, तिर्यक्कुक्षिता पादि भीमी  
 चारोके चतुर्भुक्त हैं। पतिक्ताता, चयक्ताता, च्यगृता  
 प्रभृति ३१ प्रकारकी पाकागचारो है।

करण—नृताकालमें हाथ हाथ लुढ़ कर, पद पद  
 लुढ़ कर वा हाथ और लुढ़ कर जो नृता क्रिया जाता  
 है सम ३३ नाम करण है। यह करण नामा प्रकारका है  
 जिनमेंसे १३ प्रकारके करण नृत्योपयोगी है। इन शोकर्त-  
 के नाम ये हैं—जीन, समनक, विह, त्रुवावतरह, वैशाख,

श्चित्त, पक्षाब्जित, पुष्पपुट, पाश्व, जाशु, ऊर्ध्वजाशु, दण्डपत्र, तलविलासित, विद्यद्वारास्त, चन्द्रावत्क, स्तम्भित, सजाटतिलक, नामनेता घोर वृषिक । नृतरमें इतके लक्षणदि जानना परमावश्यक है ।

उपरमें जिन मय पदार्थोंका उल्लेख किया गया, उनके संयोग घोर वियोगवयतः अनेक प्रकारके नृतर हो सकती है घोर होते भी हैं । नृतर कुछ भी नहीं है, कथित नियमोंको धारत कर ताललयसंयोगसे ही वह नृतर कहलाता है । यदि नृतर करना ही, तो पूर्वोक्त सभी नियमोंका भलीभांति जानना आवश्यक है । प्रथमतः नृतर दो प्रकारका है, बन्ध और अनिवन्ध । गतरादि नियमोंके अन्वेषण लो नृतर है, उसका नाम बन्धनृतर और अनिवन्ध नृतर है । इस बन्ध और अनिवन्ध नृतरके अधिकारके नाम दिये जाते हैं । यथा—कर्मकवर्चनिका-नृतर, मकरवर्चनिका और मायूरिनृतर, भानवी-नृतर, मनीनृतर मृगोनृतर, हंभीनृतर, कुक्कुटो नृतर, रञ्जनीनृतर, मज्जगामिनो नृतर, नेरिनृतर, करणनेरिनृतर, मित्त नृतर, चित्रनृतर, नेत्र, अष्टोक्त, कुवाह, चक्रबन्ध, नागबन्ध, छतलतिका, झालुक, मुने, रूपक, उपरूप, रविचक्र, पर्यन्ध इत्यादि ।

नेरिनृतर—चतुरस्रमें स्थित करके रासनामक तालसे घोर विस्तम्भित सयके प्रथमतः ही कर नेरिनृतर धारण करना चाहिये । पीछे रथ, चक्र, पाट और यथायोग्य गतिका प्रवृत्तम्बन करना चाहिये । चारों दिशामें पताकहस्त ही कर तलसंसार करना चाहिये । वाम घोर दक्षिण भागमें नेरि वा विष्टदि गतिका होना आवश्यक है ।

चक्रबन्ध—यह नृतर किमो द्रुततासे धारण करे, पीछे सहीर्य घोर अनेक प्रकारकी गति द्वारा सुन्दर रूपमें प्रवृत्त कुवाह नामक गीतजातिका गीत घोर उस जातिके तालकी योजना करे । वाद इन्द्र, वाह, वामपद भादि हः अङ्ग परिमित ताल द्वारा मिला कर ल-अक्त ताल यदि समान मात्रामें लिया जाय घोर द्रुत एवं लघु द-हय यदि सममें रहे, तो पूर्य पूर्व मात्राका परिमाण कर क्रमशः अग्रिमादि आशयमें नृतर करना चाहिये । नृतराविद्याविशारदोंने इसकी चक्रबन्ध बांदा है । (नरकनिर्णय)

इन सब नृतरोंका विषय पति संक्षिप्तभावमें कहा गया । आजकाल इनमेंसे अधिकारिग नृतर प्रचलित देखनेमें नहीं पति । अभी सचराचर लो नृतर प्रचलित हैं, ये सब प्रायः प्राधुनिक हैं । इनमेंसे खेमटा, बाईनाथ भादि प्रसिद्ध हैं । नरतकनिर्णयके सिवा नृतर-प्रयोग, नृतर-विलास, नृतरसर्वस्व, नृतरग्राह्य घोर अग्रीकमन्त्र-विरचित नृतराध्याय नामक कई एक ग्रन्थोंमें नृतरके प्रकर-पादि विग्रेपरूपसे वर्णित हैं । मन्त्रिनाथने किराताम्बुनीय नाटककी टोकामें नृतराविलास और नृतरसर्वस्वका उल्लेख किया है ।

नृतर्यंकाकी ( सं० स्त्री० ) गतिरूपमेद ।  
नृतर्यप्रिय ( सं० त्रि० ) नृतर्यं प्रियं यस्य । १ नरत्तनप्रिय, जिमे नाथ प्रिय ही । ( पु० ) २ ताण्डवप्रिय महादेव । ३ क्वाति प्रियका एक प्रसुचर ।

नृतर्यगाला ( सं० स्त्री० ) नृतर्यस्य गाना । भाव्यगृह, नाचघर ।

नृतर्यस्थान ( सं० स्त्री० ) नृतरस्य स्थानम् । नृतर्यका स्थान, नाचनेकी जगह ।

नृतर्यस्वर ( सं० पु० ) महाभैरवमेद ।

नृदुर्ग ( सं० पु० ) सेनाका चारों घोरका घेरा ।

नृदेव ( सं० पु० ) नृपु नरैषु मध्ये देवः, ना देव इय इयुपमितसमाभो वा । १ राजा । २ ब्राह्मण ।

नृधर्मन ( सं० पु० ) नृनरस्य इव धर्मो यस्य, इति अतिच ( परादिति केवलात् । १ ३४। २४ ) १ कुधर । ( त्रि० ) २ नरधर्मयुक्त ।

नृपूत ( सं० त्रि० ) मनुष्य कर्त्तक शोधित, पादमोक्षे शोधा कुषा ।

नृनमन ( सं० स्त्री० ) नृभिर्नम्यते, नम कर्मणि म्पुट्-पूषपदादिति षत्व प्राप्त सति शुभ्रादित्वात् न षत्वम् । मनुष्यानमनीय दियादि ।

नृप ( सं० पु० ) नृत् नरान्, पाति रक्षति इति नृ-पा-क । १ नरपति, राजा ।

जिनका अधिकार शोदक योजन तक विस्तृत हो, उन्हें नृप कहते हैं । इससे अतगुण अधिक होनेसे राजा वा मण्डलेश्वर और इसमें भी दग गुण अधिक होनेसे राजेश्वर कहते हैं । नृपप्रयसा इस प्रकार है—

‘सुवस्वपुत्रः पुत्रो निर्धनस्य वनः दूतः ।  
 अमासुवेनमी राजा अनासत्सव विता दूतः ॥  
 अनासत्सव पुत्रो नाथः प्राम्नुः पाषिं वः पतिः ।  
 शवत्सव पुत्रो श्वतः दूत एव दुर्गा वला ॥  
 सर्वदेवभयो राजा अस्मात्सवमये दूतः ॥’

( काठिकाण्ड ५० सर् )

राजा अनुपमका पुत्र, निर्धनका धन, मादहोनको माता पिडहोनका पिता, अनासका नाथ, जिसके भर्त्सना नहीं है, अनासका पति, अभृत्यका भृत्य, एकमात्र राजा ही सबके सखा है, राजा सर्वदेवस्वरूप है। मृगको दुष्टाका दमन और मिष्टीका पालन करना चाहिए। अगत्तमें पराजकता फेन खाने पर चारों ओर हाहाकार मच जाता है, मनुष्य ठरमे विद्वान को खाने हैं। इसी कारण भगवान् ने चराचर जगत्की रक्षाके लिए राजापीठी सृष्टि की है। इन्द्र, वायु, यम, सूर्य, चानि, वरुण, चन्द्र और कुबेर इन षटदिकपालीके संग्रामे राजा अक्षयवृत्त करते हैं। इसी कारण राजाको सर्वदेवमय कहा है।

मनुमहितामें नृपोत्पत्तिका विषय इस प्रकार लिखा है—

‘राजा षटदिकपालीके संग्रामे जगत्प्रलय करते हैं। इस कारण ये षटदिकपाली होते हैं। मरुपति प्रभा-  
 में चानि, वायु, सूर्य, चन्द्र, यम, कुबेर, वरुण और मरुदेवके समान हैं। मृग देवता ही ही कर मनुष्यके रूपमें अभिव्यक्त करते हैं, इनलिए उन्हें मरुदेव कहते हैं। राजा प्रयोगयोग कायंकलाप, स्वकीयगति और देवकालकी सम्यक् पर्याप्तोपना करके धर्मानुरोधमे सब प्रकारके रूप धारण किया करते हैं। जिनके प्रमथ रक्षनेसे मङ्गली शोभात्र होती है, जिनके पराक्रमप्रभावसे विश्वय नाम होता है और जिनके क्रोध करनेसे चतुर्दुषा करती है, वे सर्वसंजीवय हैं। जिसको राजाके प्रति क्रोध वा श्रेय करना कर्त्तव्य नहीं है। राजा मिष्टीके प्रतिपालन और दुष्टीके दमनके लिए जो धर्मनियम अक्षयवृत्त करते हैं, उन नियमोंका खमो अक्षयवृत्त नहीं करना चाहिए। विधाताके राजाके सफलके लिए सर्व-  
 प्राणियोंके रक्षाकर्त्ता, धर्मरक्षक और पापान्न भक्षणकी-

मय दण्डकी सृष्टि की। राजा स्वयं उन दण्डका परि-  
 चालन करते हैं। इस दण्डके मयने चराचर अगत्-  
 चपला चपला अगत् भोग क्रिया करता है, कोई भी स्वयम-  
 में विषयित नहीं हो सकता। एकमात्र दण्ड ही चारों  
 वर्गके धर्मका प्रतिमुखरूप है। दण्ड ही सारा प्रजाका  
 गणन और रक्षणविषय करता है। सर्वोके निर्दिष्ट होने  
 पर एकमात्र दण्ड ही उन्हें समरित करता है। राजा-  
 को उचित है, कि वे जनसमूहों पर धर्मानुसारके  
 दण्डको परिचालना करें।

राजापीठे कर्त्तव्यकर्म—मरुपतिकी चर्चिष, कि वे  
 शास्त्रानुसार दुष्टोंको दण्डविधान, विदेयीय मनुष्योंको  
 तोष्य दण्डसे दमन और अक्षयभावसे धार्मिक स्वयम-  
 के प्रति सरल व्यवहार करे और कम अपराधमें ब्राह्मणों-  
 को सजा न दे।

जो राजा सदाचार और सुवर्णपूर्वक शास्त्रानुसार  
 राज्यशासन करते हैं, यहां तक कि यदि उन्हें उच्छ-  
 हृत्ति द्वारा जीविका-निर्वाह करना पड़े तथा उन्हें धन-  
 सम्पति बहुत थोड़ी हो, तो भी जो प्रजाकी रक्षा करने-  
 में सुबं नहीं सोचते, उनकी योग्यता संसार भरमें फेन  
 जाती है। जिन राजापीठा पाचार व्यवहार इसके विरु-  
 कुल विपरीत है, उनके परमल धनमानों होने पर भी  
 इस लोके उनको निन्दा और परलोके नरक होता  
 है। राजा प्रतिदिन मङ्गरे गय्याका त्याग कर घेद्वय और  
 नोतिगात्रजुगल ब्राह्मणोंको सेवा करे और वे जो कुछ  
 कर्त्तव्यका प्रतिपालन भी करे। राजाकी विनयी होना  
 सर्वतोभावेसे उचित है। राजा कामज दम और क्रोध  
 पाठ इन षटदिकपालीके परमनोंमें कदापि प्राप्त न  
 हों। वे स्वयंकीके साथ परामर्श करके, परमोंका  
 विचार करे। ( मनु ७ अ० ) विदेय विवरण राश्ट्र  
 मरुमें देखो। २ मृगमक। ३ राजादमवृत्त, विरमोका  
 पृष्ठ। ४ मरु-पादुका।

नृपकन्द ( मं० पुं० ) नृपविषयः कन्दः, कन्दामो नृपः  
 यं हो वा। राजवलाण्ड, खान प्लाज।  
 नृपदण्ड ( पं० ली० ) नृपाणां दण्डम्। राजमन्दिर,  
 राजाका मकान। राजापीठा के पाचार होना चाहिए,  
 उनका विषय इदम्प्रदितता ( ३३ अध्याय ) में और

श्रीमन्मनोतिपग्निष्ट ( १ अध्याय )में विशेषरूपसे लिखा है।

नृपञ्जय ( सं० पु० ) चम्पान् नृपान् जयति जि-ञ्जय् ।  
घौरव नृपमेद ।

नृपतह ( सं० पु० ) १ पारम्बधुष, चमलनाम । २ राजा-  
दनीहृष, खिरनोका पेड़ ।

नृपता ( हि० स्त्री० ) राजापन, राजाका गुण या भाव ।  
नृपति ( सं० पु० ) पानि पा-डति, नृपां पतिः इतत् ।  
१ राजा । २ कुर्वर ।

नृपतिव्रजम ( सं० पु० ) १ वटिकांमह चक्रदत्तोक्त शोध-  
विशेष । रसेन्द्रसारसंघर्षमें इसकी प्रस्तुत-प्रणाली इन  
प्रकार लिखी है—जायफल, सवङ्ग, मोथा, इलायचो,  
सोहागा, हींग, जीरा, तेजपत्र, सींठ, सैन्धवलवण,  
सोह, पन्ध, पारा, गन्धक और ताम्र प्रत्येक ८ तोला,  
मिर्च १६ तोला इन सबको बकरीके दूधमें पीन  
कर गोली बनाते हैं । श्रीमन् गहननाथने बड़े खोजसे  
इसका आविष्कार किया है । इसके सेवन करनेसे मीर्च  
जीवनलाभ और रोगो रोगसे मुक्त होता है । यक्षी  
अधिकारकी यह एक उत्तम शोध है । ( रसेन्द्रसारसंघर्ष,  
प्रदशीवि० ) इसके सिवा इस अधिकारमें बृहन्नृपति-  
व्रजम और दो प्रकारका 'महाराज नृपतिव्रजमरस'  
नामक शोधियोंकी प्रस्तुतप्रणाली लिखी है ।

बृहन्नृपतिव्रजमकी प्रस्तुत प्रणाली—पारा, गन्धक,  
सोह, पन्ध, सींठक, चिता, निषोद्य, सोहागा, जायफल,  
हींग, दारुचीनो, इलायचो, सवङ्ग, तेजपत्र, जीरा, सींठ,  
सैन्धवलवण और मिर्च प्रत्येक एक तोला ले कर उसे  
दो पाने भर सूर्य, अदरकके रस और चाँसलेके रसमें  
भावना दे कर दो माग भर की गोली बनावें । प्रातः-  
काल छठ कर इमे खानेसे जो सब पदार्थ भोजन किये  
जाय वे भलीभांति पाक लेते हैं । इस शोधके सेवन  
करनेसे चर्मरोग, पञ्जीष, चर्म, यक्षी चामाजीष,  
उदरी पादि रोग प्रशमित होते हैं । ( रसेन्द्रसारसंघर्ष, प्रदशी-  
वि० ) । नृपतिव्रजम शोध भेषज्य रत्नावलीमें श्री-  
नृपतिव्रजम नामसे प्रसिद्ध है । बृहत् नृपतिव्रजमका  
नाम बृहत् नृपव्रजम है । ( भैषज्यरत्नावली ) ( त्रि० ) २  
राजापता श्रिय । ( स्त्री० ) श्रियां टाप् । ३ राजपत्नी,  
राजमहिषी ।

नृपतोन्द्रवर्मा—श्याधपुरके एक राजा । इसके परवर्ती  
राजा जयवर्माने महेंद्र पर्वत पर जा कर राज्यस्थापन  
किया ।

नृपतुङ्ग—१ दासिणातारके राष्ट्रकूट वंशिय एक राजा ।  
ये श्य गोविन्दराजके पुत्र थे । मद्राज प्रदेशके पार्कट  
जिल्लेसे जो ताम्रगासन प्राप्त हुआ है उसमें इनका वंश  
परिचय है । इस ताम्रगासन द्वारा इन्होंने मद्राजकी  
'प्रतिमादेशी खुर्चंदो मङ्गल' नामक ग्राम दान किया ।  
इन्होंने भातुमालोकी कन्या प्रियवी-भाषिक्यासे विवाह  
किया था और धालुस्य, चम्पुशब्द पादि जातियों  
को लौत कर पीछे मान्खेटनगरका पुनर्निर्माण किया ।  
यही नगर उनके वंशधरोंकी राजधानीरूपमें गिना जाता  
था । यह प्राचीन नगर वर्तमान निजामराज्यके पन्ना  
सुंठ मानखेरा वा मानखेड़ है ।

इन्होंने बहुत दिन तक राज्य किया था । ७०३  
शकमें छत्तीष इनके राज्यकालका एक और ताम्रगासन  
पाया गया है । पिलट साहबने इस पत्नीचयप और  
पतिग्रयधवल इनके दो नाम बतलाये हैं ।

२ उक्त वंशके एक दूसरा राजा । ८५१-८५२ शकमें  
चन्द्रवहणके उपलक्षमें छत्तीष धारवाड़ जिल्लेके बह्मा-  
पुर तालुकमें इनको एक गिलासिधि है । उस लिपिसे  
जाना जाता है, कि ७४५-८५७ शकके मध्य इन्होंने २५  
भोमराजके साथ युद्ध किया । राष्ट्रकूटवंशवंध देखो ।  
नृपती ( सं० स्त्री० ) नृपां पतिः, पालयित्री, नान्तादेयः  
नान्तत्वात् श्रियां डोप् । मनुष्योंकी पालयित्री स्त्री,  
वह औरत जो मर्दानेका पालन करती है ।

नृपत्व ( सं० स्त्री० ) नृपस्य भावः, नृपत्व । राजत्व, राजा  
का काम ।

नृपद्रुम ( सं० पु० ) नृपप्रियो द्रुमः । १ पारम्बध, चमल-  
तास । २ राजादनीहृष, खिरनोका पेड़ ।

नृपद्रीडी ( हि० पुं० ) परदाराम ।

नृपप्रिय ( सं० पुं० ) नृपाणां प्रियः । १ वैद्यवंश, एक  
प्रकारका वसि । २ राजपलाङ्गु, लाल प्याज । ३ शम  
शरद्व, परकण्टा । ४ शालिधान्य, अङ्गुलधान । ५  
पान्धुष, चामका पेड़ । ६ राजशूकपत्नी, राजसुधा,  
पराकी या पार्वती तीता । ( त्रि० ) ७ राजवन्दनभ,  
राजाका प्रिय ।

नृपप्रियकृत्वा (मं० स्त्री०) नृपप्रियं कर्म यस्याः ।  
वासीकी, वैभन ।

नृपप्रिया (मं० स्त्री०) नृपप्रियं क्रियां टाप् । १. वैतकी  
२. राजपुत्रुंरो, विपुत्रुंर ।

नृपप्रवर (मं० पुं०) वृटराणां नृपः । राजदत्तादित्वात्  
पुत्रनिशानः । राजप्रवरवृष ।

नृपमन्दिर (मं० स्त्री०) नृपाणां मन्दिरम् । राजमृह,  
मामाद ।

नृपमाह्वयक (मं० स्त्री०) नृपस्य माह्वयस्य यस्मात्,  
कप् । पाठुनवृष, तस्यटका विड ।

नृपमान (मं० स्त्री०) नृपस्य तद्गोत्रस्य मानमायेटकं  
वाच्यं । एक प्रकारका राजा जो राजापोक भोजनके  
समय बजाया जाता था ।

नृपमाय (मं० पुं०) राजमाय ।

नृपहृद्—दक्षिणार्थे पूर्ण चालुख्यं शीघ्र एक राजा ।  
दमके पिता त्रिपुरके कलकुरि-रं शीघ्र ये शौर दमको  
माता ईश्वरसंगमपुत्रा यो । बाह्यसंग देवो ।

नृपनक्षत्रम् (मं० स्त्री०) नृपाणां नक्षत्रम् । राजविज्र,  
हृत्पामराटि ।

नृपनिवृद्धर (मं० पुं०) धरतीति छ-पच. नृपनिवृद्धस्य  
धरः । नृपयोगधारी ।

नृपयज्ञम् (मं० स्त्री०) १. चक्रपवि-दालोक पत्तं हृत् शौर  
तौमविशेष । मैघपरलोचनोमे दसकी प्रसुत प्रथानो  
२म प्रकार लिको ई-निनतेन वा गच्छेत् ३० मिर,  
दुग्ध ७२ मिर, भांभायं जावक, चटपक, मेट, द्राघा,  
मानपपी, कण्टकारी, हृदना, यटिमधु, विडुङ्ग, मन्त्रिहा,  
पीनो, राक्षना, भीमोपम, मोरु, पुण्डरीककाष्ठ, पुन-  
नैवा, सैन्धव, पीपर मन्त्रेक २ तोला । तमके लिए  
मन्त्रेक द्रव्य २३ तोला करके देना होता है । नृपयज्ञमं हृत्  
वा तं मन्त्रो यथाविधानं प्रसुत कर भेदन करके तिमिर,  
रातायना, निवृत्ताय, सुखनाया, दोगेन्यं पादि नामा  
प्रकारके रोग प्रसमित होते हैं ।

(मैघरायना० मैत्ररीगपि०)

२ राजामृतम् । ति०) १. राजप्रियमगत ।

नृपयज्ञमा (मं० स्त्री०) १. वैतकी । २. महाराजपुत्रवृष ।

नृपयज्ञ (मं० पुं०) रायहृत्, भीमायुक्ता पेट ।

नृपय (मं० पुं०) ना वपुःशिव, वा ना वामो वपुःशिव ।  
१. नृपय । २. नृपय ।

नृपयाह्वय (मं० पुं०) नृपः शाह्वय इव 'वपुःशिव' वाप्रा-  
दिभिः योहाय' इति सूत्रेण कर्मधारयः । राजमाह्वय,  
राजयेठ ।

नृपयासन (मं० स्त्री०) नृपस्य यासनं । तत् । राज-  
यासन, राजाका यासन ।

राजाको प्रजा, दाम, भूता, भायां, पुत्र, विषय चादि-  
के प्रति किम प्रकार यासन करना चाहिये, उसका  
विषय योगनम नीतिपरिग्रहके ११ वें चख्यायमें विस्तर-  
रूपमें लिखा है । राजयासन देखो ।

नृपयसम् (मं० स्त्री०) नृपाणां यसा ततः तस्युदयसमये  
क्षोयत्वम् । (यसा राजामृतयुग्धरार । पा २।३।२१) ।  
राजापोको यसा ।

राजाको चाहिए कि ये सुगम मनोरम तिहोठ,  
पद्म कोष्ठ वा सप्तकोष्ठ विन्दिह राजसभा प्रसुत करे ।  
इम राजसभामांके निर्माणका विधिसे विवरण योगनम  
नीतिपरिग्रहके १ चख्यायमें लिा है । राजसभा देखो ।

नृपयुता (मं० स्त्री०) नृपस्य युता । १. राजकथा,  
राजकुमारो । २. कटुन्दरो, कटुन्दर ।

नृपयंग (मं० पुं०) नृपयंग द्वयोः भागः । १. राजाको  
देव यहांरूप भाग । राजाको वज्रका कटा भाग करमें  
देना होता है इसको नृपयंग कहते हैं । २. राजपुत्र,  
राजाका सहाका, राजकुमार ।

नृपयज्ञट (मं० पुं०) नृपस्य पाह्वयः । क्षोड्वाके निमित्त  
राजकृत्तक च हृत् राजा, चतुरङ्ग पादि येननेक निप  
पाह्वय राजा ।

नृपयज्ञम् (मं० स्त्री०) नृपस्य यज्ञम् । तत् । राज-  
यासादका प्राह्वय या पायम ।

नृपय (मं० स्त्री०) नृपयं वामं ततो पत्यं । १. जन्-  
नेताका पालयोग्य । (पुं०) २. देवतापका पालयाधन ।

नृपयट (मं० पुं०) नृपां पाता रथकः । मनुष्यीकं मर्दा  
रथक, मनुष्यीको पाचनेनामा ।

नृपयज्ञ (मं० पुं०) नृपस्य पायमत्रा । १. राजपुत्र, राज-  
कुमार । २. पायनाकहृत् । ३. महाराजपुत्रवृष ।

नृपयज्ञा (मं० स्त्री०) नृपायमं टाप् । १. राजकथा,  
राजकुमारो । २. कटुन्दरो, कटुना पीया ।

टुपाधर ( स० पु० ) टुपामात्रकक्षय्यः अध्याः । राजसूय-  
यज्ञ । प्रत्येक राजाको यज्ञ यज्ञ भवय्य करना चाहिए ।  
टुपानुचर ( स० पु० ) राजभृत्य, राजाका नोकर ।  
टुपात्र ( स० स्त्री० ) नृप प्रिय धर्म । १ राजात्र नामक  
धान्यपेट, राजभोग धान । नृपस्य धर्म । २ राजाका  
धर्म ।  
टुपान्वल ( स० स्त्री० ) राजपरिवर्त्तन ।  
टुपाभोर ( स० स्त्री० ) अभोरयति सूचयति भोजनकाल-  
मिति, अभि-इर-क, अभोर, नृपस्य अभोर भोजनकाल-  
सूचकषाद्यविशेषः । एक प्रकारका वाजा जो राजाको  
भोजनके समय बजाया जाता था ।  
टुपामय ( स० पु० ) आमयानां रोगानां नृप, राजदन्ता-  
दित्वात्पूर्वनिपातः । १ राजयस्मा, घयरोग । यह रोग  
सभो रोगीका राजा है, इसोमे इसको नृपामय कहते  
हैं । नृपस्य आमयो व्याधिः इ-तत् । २ नृपकी पीड़ा,  
राजरीग ।  
नृपाय्य ( स० त्रि० ) नृमिनेद्विभेदे वैः पाय्यं । देवताओं-  
के पानयोग्य सोम ।  
नृपाहम् ( स० स्त्री० ) गालिधान्य, एक किसमका धान ।  
नृपाल ( स० पु० ) नृन् पालयति पालि-घण् । नृपति,  
राजा ।  
नृपानय ( स० पु० ) राजप्रासाद, राजाका घर ।  
नृपावत् ( स० स्त्री० ) नृप इव भावच्छन्ते इति भा-हृत-  
घच् । राजावत् बह्व, मणिविशेष ।  
नृपासन ( स० स्त्री० ) नृपस्य आसनम् । राजासन, तख्त ।  
पर्याय—भद्रासन, सिंहासन ।  
नृपासद ( स० स्त्री० ) नृपस्य आसद इ-तत् । राजस्थान,  
राजप्रतिष्ठा ।  
टुपाह्वय ( स० पु० ) टुपं चाह्वयते गर्भं नेति, चान्द्र-घच् ।  
१ राजपसाण्ड, साल प्याज । २ राजा कहलानेधाना,  
राजनामधारी ।  
नृपीठ ( स० स्त्री० ) सटक, लस ।  
नृपीति ( स० स्त्री० ) पा-रक्षणे भावे क्तिन्, भात ईत्वं वेति,  
नृपां पीतिः इ-तत् । १ मनुष्यरक्षण । ( त्रि० ) कक्षति  
क्लिच् । २ मनुष्य-रक्षक ।  
नृपेयस् ( स० त्रि० ) नरक्षय ।

नृपेट ( स० पु० ) १ राजपसाण्ड, साल प्याज । २  
राजवदरहस्य, बैरका पेट । ३ नोलहस्य, नोलका पोधा ।  
टुपोचित ( स० पु० ) नृपेपु उचितः । १ राजमाय, कासा  
बहुत छरद । २ लोभिया । ( त्रि० ) १ राजयोग्य ।  
टुवाहु ( स० पु० ) नृपां वाहुः । १ कर्मनेता ऋत्विगीको  
वाहु । २ नरवाहुमात्र ।  
टुमर्क ( स० पु० ) नृपां भर्ता । मनुष्योंका रक्षक ।  
टुभोज ( स० त्रि० ) प्राकाय जात, जो प्राकागमें उत्पन्न हो ।  
टुमण ( स० पु० ) नृपु यजमानेषु मनो यस्य, ततो णत्व ।  
१ रक्षितव्य यजमानके प्रति अनुग्रहबुद्धियुक्त, इन्द्रादि  
देव । ३ धन, सम्पत्ति ।  
टुमण ( स० स्त्री० ) ब्रह्महीपकी एक मंडानदी ।  
टुमणि ( स० पु० ) विद्याभेद, एक भूत जो बर्षोंको  
लग कर तंग किया करता है ।  
टुमत् ( स० ) मनुष्यविशिष्ट, लक्षं पादमी हो ।  
नृमर ( स० त्रि० ) मनुष्यका हन्ता, राक्षस ।  
नृमांस ( स० स्त्री० ) नृपां मांस । नरमांस, पादमीका  
मांस ।  
नृमादन ( स० त्रि० ) नृपां मादनं । ऋत्विक्, और यज-  
मानका हवीत्पादक सोम ।  
नृमिथुन ( स० स्त्री० ) नृपां मिथुनम् । स्त्रीपुरुषका  
जोड़ा ।  
नृमिध ( स० पु० ) ना मिथ्यतेऽत्र मिध-भाधारे घञ् ।  
१ पुरुषमेधयज्ञ, नरमेधयज्ञ । यजुर्वेदके ३०वें अध्यायमें  
इस यज्ञका विशेष विवरण लिखा है । २ ऋषिभेद, एक  
ऋषिका नाम ।  
नृमूय ( स० स्त्री० ) नृमिन्नायतेऽभ्यस्यते च्वां घञ्, श्च  
ततो णत्व ( ह्रस्वोददेशमहात्, पा ८।३।२६ ) धन, सम्पत्ति ।  
टुयज्ञ ( स० पु० ) तुर्गं रायां यज्ञः । पञ्च यज्ञांमिसे एक  
जिसका करना ऋहस्यके लिए कर्त्तव्य है, भतिय-पूजा,  
अभ्यागतका सत्कार । जो भतियसेवा करते हैं उनके  
पञ्चसनाजन्म पातक मट हो जाते हैं ।  
नृयुग्म ( स० स्त्री० ) नृयुग्मम् । नृमिथुन, स्त्रीपुरुषका  
मिथुन ।  
नृलोक ( स० पु० ) ना एष लोकः । नरलोक, मनुष्य-  
लोक ।

नृशत् ( सं० लि० ) ना परिचारकादिरत्यस्य मनुष्य वेदे मरययः । परिचारक नरशुक्त ।

नृशत्प्रति ( सं० लि० ) पथ्यादि सहाययुक्त कर्मिणा ।

नृशराह ( सं० पु० ) न शसि वराहयेति वराहकृपष्टक भगवदवतारः । वराहकृपधारी भगवान् ।

यद्यी नृशराहकृपो भगवान्, वसिष्ठे हारी कृप ये ।

“शौचं कर्मधारय द्वारैश्च व दुरात्मनः ।

मरिचधामि न शरदेशे नम शत्रु वराहिवः ॥”

( पद्मपु० चरित्र० २० अ० )

मं शीकर पर्याप्त वराहकृपे धारण कर दस दुरात्मा वसिष्ठा हारी शीलंगा, दसमें मन्देह नहीं । नृशराहदेवकी मुर्ति दस प्रकार है—पाकार वराहके जंभा, चक्रप्रत्यङ्ग मनुष्यके जंभा, हायमें गङ्गा, चक्र, गदा और पद्म; दाहिनी ओर शार्ङ्ग और गङ्गा, लक्ष्मी या पद्म, वामकूर्परमें श्री और शरद्वयुगलमें पृथिवी तथा चमत्त है । ऐसी मुर्तिका घरमें स्थापना करनेसे राज्यलाभ और चमत्त चमत्तलाभ लाभ होता है । ( भगिनपु० ३० अ० )

नृशराहच ( सं० लि० ) नैशबोद्धा, नायकवाहक ।

नृशराहन ( सं० पु० ) ना वाहनं यरथ । नरवाहन कुशरे । यं दिक्ष प्रयोगमें चत्त दो कर नृशराहच होगा ।

नृशराहृ ( सं० लि० ) नरवाहक, इन्द्र और उनके सारथि पादिका वाहक ।

नृशेष्टन ( सं० लि० ) ना शेष्टनं दस्य । १ मनुष्यवेष्टित, पादमीने घिरा हुआ । ( पु० ) २ महादेव, शिव ।

नृशंस ( सं० लि० ) नृशु, नरान्, यंसति विनस्तोति नृशंसु-पत्न्यु ( कर्मण्ये । पा ३।२।१ ) १ कूर, निर्दय । २ परद्रोही, पनितकारी, अपकारी । निन्दिता स्त्रीसे विवाह करनेमें नृशंस पुत उत्पन्न होता है ।

चार इतर विवाह पर्याप्त गाम्भवं, पसुर, रासस ओर पेशाव विवाह करनेमें नृशंस, सिन्धुवादी, धर्म ओर वेदविहयो पुत्र उत्पन्न होता है । जो नृशंस है, उनका चक्र तक भी धामा नहीं चाहिये ।

वाचस्पत्यमें लिखा है, कि नृशंस राजा, रजक, लसत्र, अधश्रीवी, शैलपाव पर्याप्त वृक्षको मूल दूर करने वाला ओर वृक्षाश्रीवी इनका चक्र धामा निषेध है ।

नृशंभता ( सं० स्त्री० ) नृशंसदस्य भावः, भावतक, तन-शाय । निर्दयता, कूरता ।

नृशंसवत् ( सं० लि० ) नृशंसः त्वत्पदार्थे, मनु२ मरययः यः । पापकर्मा, अपकार करनेवाला ।

नृशुद्ध ( सं० स्त्री० ) नृशुद्धां नृशुद्धम् । पनीक पटागं, मनुष्यकी शीर्षके समान चमत्तोनो बात या वस्तु ।

नृशोभा—दाहिनाताके शोभापुर प्रदेशके पत्ताशुक्त शोभापुर सामन्ताराजके पद्योम एक पाम । यह लक्ष्मा ओर पद्मगङ्गा नदीके मङ्गलमन्थन पर चमत्तित है । यही लक्ष्मणनदीके किनारे शोभानराजिविराजित घाटके लार नरसिंहदेवका मन्दिर है । मन्भवतः शोभी नृसिंहदेवके मन्दिरसे दस स्थानका नामकरण हुआ होगा । यही श्राद्धय भी रहते हैं । पूर्वोक्त घाटके दूधरे किनारे कन्दर नगर है । यहाँका घाट जो सा सुन्दर है, वीसा ही तीर-शर्ती स्थानसमूहका इला भो मगोम है ।

नृशुद्ध ( सं० पु० ) नरि पुरुषे पत्ताशुमितया सोदति नृशुद्धिपु, वेदे पत्वम् । १ परमात्मा । २ कपलकृपिके विष्ट-कृपिभेद । ३ मनुष्यस्वायो ।

शुद्धन ( सं० स्त्री० ) नरः नितारः कृत्वित्वा तेषां मरुतं, वेदे पत्वम् । यज्ञगृह, यज्ञशाला ।

शुद्धन ( सं० लि० ) मनुष्यार्थे रहनेवाला ।

शुषा ( सं० लि० ) शुषदाता, मृदुका देनेवाला ।

शुषात् ( सं० लि० ) प्राचक्ष्यसे मनुष्यको सेवा करनेवाला ।

शुषाता ( सं० स्त्री० ) मनुष्योंके नभक्षा ।

शुषाह ( सं० लि० ) मनुष्योंको पराष्ट करनेवाला ।

शुषाष्ट ( सं० लि० ) मनुष्योंका अभिभाषुक, दुष्कीकी जोतनेवाला ।

शुषत् ( सं० लि० ) शु-प्ररेषे कर्मणि क्त, श्रुमिः श्रुतः ३-तत् । श्लोष्टगण्य कर्त्तव्यकर्मिणः ।

शुषार ( सं० पु० ) १ निवादनक । २ महाद्रावक ।

शुषिह ( सं० पु० ) ना शामी शिंहयेति कर्मधारयः । १ भगवदवतारभेद, नरसिंहकृप्यो शिष्यु, नृसिंहवतार, दस चतुर्दशमेंसे चौथा चतुर्दश ।

“शिंहारु इत्या वदनं मुक्तिः परा काठं च इदकनेत्रम् ।  
अर्द्धं वपुर्न मनुष्यव इत्या मनी धर्मा देवपतेः पुराणा ३”  
( भगिन० )

भगवान् मुरारि याथा शरीर शिंहके जंभा ओर पाया मनुष्यके श्रेणा दस पञ्चार नरसिंहमूर्त्त धारण कर देत्यर्जुनके नामने मभामें पड़्ये है ।

परिनिपराणके मतसे—नृमिंहमूर्ति स्थापन करनीका ऐसा विधान है । उनका शरीर व्यादित, वाम ऊरु पर लतशानव, गलेमें माना, हाथमें चक्र और गटा है, ऐसी प्रवक्षामें वे देव्यपतिका यज्ञ फाड़ रहे हैं । (अभिपु० ३० अ०) नृसिंह तथा महाविष्णुका मन्त्र और पूजादिका विषय तन्त्रसारमें विशेषरूपसे लिखा है । नृमिंहमन्त्र इस प्रकार है, यथा—

‘उमं वीरं वदेत् पूर्वं महाविष्णुवन्दनम् ।  
उच्यते पद्मामाष्य सर्वतो मुखमीत्येत् ॥  
वृत्तिहं मीषणं मद्रं मृगयुग्मुं वदेत्ततः ।  
नमाम्यहमित्ति श्रोको मन्त्रराजः सुदंभुमः ॥’ (तन्त्रधार)  
यह नृसिंहमन्त्र मायापुटित और सर्वकामद है ।  
‘उमं वीरं महाविष्णुं उच्यते सर्वतोमुखं ।  
वृत्तिहं मीषणं मद्रं मृगयुग्मुं नमाम्यहम् ॥’

इसी मन्त्रसे नृमिंहदेवकी पूजा करनी चाहिये । इस मन्त्रके भादि और अन्तमें ‘ह्रीं’ यह मन्त्र योग करके जपादि करनेसे साधकका कल्याण होता है । इस मन्त्रका पूजा-प्रयोग इस प्रकार है—सामान्य पूजापद्धतिके अनुसार प्रातःकाल्यादि करके विष्णुपूजापद्धतिक्रमसे पीठस्थापना सम्स्त कर्म कर चुकनेके बाद श्रेष्ठान्यास, करन्यास, अङ्गन्यास और मन्त्रन्यास करे । पीछे वृत्तिहदेवका ध्यान करनीका विधान है ।

ध्यान—‘माणिक्यादिसमग्रं निरुद्धा संप्रस्तारोपणं  
जातुन्यस्तहराम्भुनं त्रिनयनं रत्नोद्भवभूषणम् ।  
बाहुभ्यां वृत्तशंखचक्रनिशं दं द्रौपदकोटप्रवृत्त  
श्वाला जिह्वुद्वारकेसरचवं वन्दे वृत्तिहं विभूम् ॥’  
‘वृत्तिहदेवकी देहकान्ति माणिक्यादिकी तरह चञ्चल है, शरीरकी प्रभासे शालसगण सर्वदा लरा करते हैं, दोनों हाथ जातुके ऊपर रखे हुए हैं, इनके तीन नेत्र हैं और समूचा शरीर रत्नभूषणसे भूषित है । हाथोंमें शङ्ख और चक्र है, बाधा शरीर मनुष्यके जैसा और बाधा वृत्तिहके जैसा है । विकट वदनसे अग्निशिखाकी भाँटें जिह्वा बाहर निकली हुई है ।’ इस प्रकार ध्यान करके मानसोपचारसे पूजा करे और शङ्खस्वामयुक्त विष्णुपूजा पद्धतिक्रमसे पीठपूजा और पुनर्वार ध्यान चामोदनादि द्वारा पूजा करके पावरणकी पूजा करनी

होती है इस मन्त्रका पुरायण ३२ लाख जप है । यथा-विधि पुरायण करके छतनं युक्त पायस द्वारा ३२ हजार होम करना होता है ।

नृमिंहदेवका मन्त्रान्तर—  
‘पाशः शक्तिरहरिरेङ्गो वर्म फट् मगुः ।  
पक्षधरो नरहरोः कथितः सर्वदाः ॥’

पां ह्रीं चोौं ह्रूं तथा फट् ये ह्रः पक्षर नृमिंहदेवके मन्त्र हैं, यह मन्त्र सर्वकामप्रद है । यथाविधान इस मन्त्रसे नृमिंहदेवकी पूजा करनी होती है । इस मन्त्रका पुरायण भी ३२ लाख बार जप है । जप करनेके बाद छत द्वारा ह्रः हजार होम करनीका विधान है ।

नृमिंहदेवका एकाक्षर मन्त्र—  
‘अक्षरो वक्षिमाह्वो मनुभिन्दुसमन्वितः ।  
एषाक्षरो मगुः श्रेष्ठः सर्वकामफलप्रदः ॥’

चो यही नृमिंहदेवका एकाक्षर मन्त्र है । यह मन्त्र सर्वकामफलप्रद माना गया है । इस मन्त्रका पुरायण ८ लाख जप है और जपका दर्शांश होम ।

नृमिंहदेवका षष्ठाक्षर मन्त्र—  
‘जयद्रयः धनुश्चार्थं धीशुं वृत्तिह इवपि ।  
अष्टाक्षरो मगुः श्रेष्ठो मन्त्रो कामदो मणिः ॥’

‘जय जय ओ नृसिंह’ यही षष्ठाक्षर मन्त्र है जो साधकोंके लिये कल्याणकर माना गया है । इस मन्त्रका पुरायण भी ८ लाख जप है और जपका दर्शांश होम होता है ।

वृत्तिहदेवके षडक्षर मन्त्रका ध्यान—  
‘कोवादालोत्तमिहं विभूतनिजमुलं सोमधूर्वाग्निनेत्रं  
पादादानिर्णर्णप्रममुपरिमितं भिन्नदैत्येन्द्रधामम् ।

शङ्खं चक्रं वषाशां कुशकुटिलगदादाह्वान्द्वन्द्वदन्तं  
भीमं तीक्ष्णोर्ध्वदंष्ट्रं मणिप्रविविधा वक्षसीके वृत्तिहम् ॥’  
इस प्रकार ध्यान करके पूजा करते हैं ।

वृत्तिहदेवके यन्त्रविषयमें तन्त्रसारमें इस प्रकार लिखा है । वृत्तिह यन्त्र—

‘वीजं वाप्यधमन्वितं प्रविष्टिलिख्येऽप्यत्रो ध्यो  
मन्त्राणां शुद्धितो निमज्जति चिच्छेत् लिप्या बहिर्वेद्येत् ।  
बाह्ये कोणगदीजहद्वन्द्वगुणोद्हरये मातृजं  
यत्रं धृद्विषयहामयतिप्रभवं घनं भीरवम् ॥’



मध्य मन्त्रमें जोत्र चोर माजनामादि लिख कर पट्टकमें यह लिखे—

“उद्यं नीर महाविष्णुं महात्मं सर्वतो मुखं ।

मूर्तिं हं मीनमं मरं मृगपुच्छं मन्मथं च ॥”

इस मन्त्रके चार चार मन्त्रमें विष्णुम चोर उषके चारों चोर माट्टकावर्ष चर्पाण पकारादि वर्ष दारा परिहृत करना होता है। उभके वरिष्ठभागमें दो भूपुर लिख कर उभके मन्त्रके कोनेमें लौ यह मन्त्र लिखना पड़ता है। इस मन्त्रका यथाविधि पूजन कर शरीर पर धारण करनेमें चंद्र विष चङ्-दोष, व्याधिरोग, मनुष्यं चोर मन्मोनाम होता है। भूजपसंक्रियित मन्त्र १२ वर्ष तक धारण किया जा सकता है। (उत्तरवार) लुट्टिह शकशागिखा विषय महादिह मन्त्रमें देखी।

२ योद्धा रतिवन्धनागत नयम मन्त्र । ३ नर गेठ, त्र्येसुषय । ४ पनामपवात नृपविशेष ।

मूर्ति—पञ्चाषके भनागत काट्टडा जिनमें विष्णु-चव-तार नरमिं च वा नारमिं चदेवका पूजन प्रथमित्तु है। यहाँके प्रायः दो खतोयोग मनुष्य इस पूजाकी विशेष श्रद्धामात्मक करते हैं। प्रियोका विम्लास है, कि यही नरमिं चदेव चके मन्त्रागादि देते चोर विपट्टकानमें उद्धार करते हैं।

इस पूजामें से लोग एक नारियलकी से कर यामो पर रखते चोर पट्टे परिष्कार जसमें उभे धोते है। पीछे उभमें चन्दन घिस कर लेप देते है तथा उभं चन्दनमें उभके ऊपर तिलक काट्टते है। चादमें उभ पर चरमा पावक छोड़ते चोर माजादिमें विभूषित कर उभके चारों पूज जलाते है। पूजाके बाद वे मिटाखादि भोग लगाते है चोर उभ प्रसादकी धरमें तथा उड़ोमोके बामवर्षाके कोष बाँट देते है। साधारणतः प्रति रविवार चववा नामके प्रथम रविवारकी यह पूजा होती है।

यहाँके लोग नरमिं चदेवके साधारणतः उभे चोर उभकी भक्ति किया करते है। सभी चपनो चपनो बौध पर कवच पहनते है जिसके ऊपर मूर्तिं चमूर्तिं खोदित रहती है। इसके सिवा बहुतसे मनुष्य ऐंने भी है जो कवच न पहन कर चपने परमें नारियल रखते चोर प्रति दिन चपनोकी पूजा करते है। माता वा नाम जब यह

पूजा करती है, तब कत्या वा पुत्रवपुर्वी जनका माय देना पड़ता है। अब कोई बन्धुभासरो पुत्रके विषे किमी घोसीने मायना करती है, तब यह योगी उभे नरमिं च-पूजा करनेकी सलाह देते है। प्रसाद है, जि इव प्रकार पूजा करनेमें नरमिं चदेव रातको उभे स्त्रय देते है। जब किमोको उजर लगता है, तब नरमिं चका चैना खा कर उभका रोग भाड़ देता है।

मूर्तिं च—भारतवर्षके मध्यपट्टेके पन्नागत निबनो जिनका एक मन्दिरालि पर्वत। यह वेत्तगवा मन्दीकी उषत्यकाभूमिमें एक गो फुट ऊँचा है। पहाड़के ऊँचे गिडर पर नरमिं चदेवका मन्दिर चोर मध्यभागमें विष्णुकी मूर्तिं चमूर्तिं प्रतिष्ठित है। पर्यंतके निम्न-भागमें इमी नामका एक घाम भी है।

मूर्तिं च—एक राजा। ये कुमारिकाभक्त चम्पकसुनिने कुलमें उषस राजा मागमग्ननके पुत्र थे।

मूर्तिं च—चर्नक मंगलत चन्त्यकारोंके नाम। जो जो चन्त्र जनके रचित है, उन उन चन्त्रोंके नाम चोर चन्त्यकारोंका यथामन्त्रव परिषय नीचे लिखा है।

१ चापपुष्पसोमटोका, पात्रार्थमिप्रयोग, चयनपरति, प्रयोग-पारिजात, विधानमाणा चोर मन्कार पादि चन्त्रोंके प्रथिता।

२ कालचक्र, जातकमानिधि, लौमिनिधुमटोका निवन्ध-गिरोमदि-सल निषंयाच, केगयाकको जातक-पहतिशी प्रोद्धमनोरमा नामक टोका, यन्त्राजोदाहरण, दिशाप्रदीपिका पादि चन्त्रोंके रचयिता।

३ मणि-गद्य नामक एक मन्त्रकृत चन्त्रके रचयिता।

४ दत्तकपुत्रविधानके रचयिता। इनकी उपाधि भट्टकी थी।

५ मसोदयटोकाके प्रथिता।

६ चन्त्रकोसुदी नामक चन्त्रकर्ता।

७ चोरनारमिं चावलोकनके प्रथिता।

८ उत्तरमाकरटोकाके रचयिता।

९ गिवमःकदिलाम नामक चन्त्रके प्रथिता।

१० उद्धारज्ञापकमात्रके प्रथिता। ये चपनेकी चारोत-यं-टोडव चतमाते थे।

११ कुमलके पुत्र। मन्त्राचारके पन्नागत धामुनके की गदमासे च मन्त्रटोकाके रचयिते।

१२ एक ज्योतिर्विद् । ये दियाकरके पोव, जप्य-  
द्वैषके पुत्र, गणेश द्वैषके भ्रातृपुत्र और कमलाकर-  
के पिता थे । इन्होंने तिथिविन्तामणितोका, सिद्धान्त-  
शिरोमणिवासनाधारित क और सूर्य सिद्धान्त-वासनाभाष्य  
रचे हैं ।

१३ जालकमन्त्रीके प्रणेता । ये नागनाथके पुत्र  
और सोदृगल्य गोत्रके थे ।

१४ नारायण भट्टके पुत्र, नृसिंहके पोव और  
गोपीनाथके भाई । होयगाल राज्यके पन्तर्गत वर-  
याहू ग्राममें इनका जन्म हुआ था । इन्होंने प्रयोगाल  
नामक एक संस्कृत ग्रन्थकी रचना की ।

१५ एक ज्योतिर्विद् । ये रामद्वैषके पुत्र और  
केशवके पोत्र थे । इन्होंने गणेश द्वैषके ज्योतिःशास्त्र  
पढ़ा था । इनके बनाये हुए ग्रन्थकोसुत्री, ग्रहदीपिका  
और विह्लाजटीका नामक ग्रन्थ मिलते हैं ।

१६ एक विख्यात पण्डित । इनके बनाए हुए  
कालनिर्णयदीपिकाविवरण और तिथिनिर्णय संप्रद  
टोका नामक दो ज्योतिषग्रन्थ हैं । ये भृगवनाम कौमुदी-  
के प्रणेता लक्ष्मणधाराचार्यके पितामह और विह्लाचार्यके  
पिता थे । इनके पिताका नाम रामचन्द्राचार्य था ।  
इन्होंने गोपालपण्डितमें विद्याविद्या पाई थी ।

१७ शङ्करमन्मदायिभक्तियुक्त पद्यम गुरु । इनको उपाधि  
तोर्थ थी ।

तृसिंह प्रगदी—मन्दाज प्रदेशके दक्षिण कण्ठाड़ा जिला-  
न्तर्गत उप्पिसड़ी तालुकका एक प्रधान नगर । यह  
पचा० १३ २ ७ और दिगा० ७५ ५२ पू०के मध्य  
पवस्थित है । १७८४ ई०में टीपूसुलतान जब मङ्गलूरसे  
दूरी स्थान हो कर जा रहे थे, तब उन्होंने इस स्थानको  
शत्रुके भ्रामकणमें सुरक्षित तथा पर्वतोपरि दुरारोह  
स्थानमें अवस्थित देख यहाँका प्राचीन नाम बदल कर  
समासावाह नामका एक नगर बसाया । इस नगरके  
पश्चिम पाल्पुच पर्वतशिखर पर एक दुर्ग बना कर उन्होंने  
इस नगरको रक्षा की थी । १७८८ ई०में पंगरेजो सेना-  
के साय टीपूसुलतानके सेनासे कः समाह तक युद्ध चलता  
रहा । पन्तर्में टीपूके सेनाध्यक्षने जब पाल्पुचल्य कर  
आसी, तब पंगरेज-सहकारी कुर्गके राजाने जमाना

आदनगरको तहस नहस कर डाला । इसके पाग्लवर्ती  
धार्मिक भाज भी बहुत खूब मुसलमानोंका वास है ।

तृसिंहभाष्य—१ एक पण्डित । ये कुमिकवर्गके थे ।  
कोई कोई इन्होंने रामानुजके पिता जतनाते हैं ।

२ पनङ्गसर्वज्ञभाष्यके प्रणेता लक्ष्मो तृसिंहके पिता ।  
३ एक दार्शनिक । इन्होंने शङ्कराचार्यजन ऐतरेयोप-  
निषद्भाष्यकी टीका, नारायणीपनिषद्सार और शङ्करा-  
चार्य-विरचित श्वेताम्बरीपनिषद्भाष्यकी टीका प्रण-  
यन की ।

४ गीयानन्तकृत पदार्थचन्द्रिका नामक ग्रन्थके  
टीकाकार ।

५ पनन्तभट्टको भारतवर्षम् टीकाके रचयिता ।  
६ मन्त्रचिन्तामणिके प्रणेता ।

७ ज्योतिःशास्त्रविगारद एक पण्डित । ये भरद्वाज-  
गोत्रके वाधूलवर्गोय वरदाचार्यके पुत्र थे । इन्होंने काल-  
प्रशागिका नामक एक मखिम ज्योतिषग्रन्थ लिखा है ।

८ चम्पू भारतको सरस्वती नामक टीकाके रचयिता ।  
तृसिंहकवच (सं० झी०) तृसिंहके कवचम् । मन्दासारी  
नृसिंहदेवका कवचभेद, विपनिवारक मन्त्रभेद । इस  
कवचकी भोजपत्र पर लिख कर यथाविधि हृद्यमें  
धारण करनेसे सब प्रकारकी विपद् जाती रहती है ।

तन्त्रसारमें लिखा है—  
“नारद उवाच ।

इन्द्रादिदेवसुन्देश तातेऽवर जगत्पते ।  
महाविष्णोर्दृष्टिं हृत् कवचं ब्रूहि मे प्रभो ॥  
यस्य प्रवठनाद्धिद्वार शैलोक्य विजयोभवत् ॥  
मद्योववाच ।

शृणु नारद वदयामि पुत्रश्रेष्ठ तपोवन ।  
कवचं नारदिस्य श्रीलोक्यविजयामिषम् ॥  
यस्य प्रवठनाद् वागीशै लोक्यविजयी भवेत् ।  
सहाहं जगती वरद पठनाद् धारणादुपदाः ॥ इत्यदि ।

एक टिन नारदने जब ब्रह्मासे महाविष्णु नृसिंह-  
देवके कवचके विषयमें पूछा, तब उन्होंने कहा था,  
‘हे नारद ! तुम त्रैलोक्यविजय नामक नृसिंहकवच  
ग्रन्थको जिस कवचके पढ़नेसे वाग्मिव्य ज्ञान और  
त्रैलोक्य-विजयी होता है । मैंने इस कवचकी धारण

कश्चिद्व्यग्रहो नाम ज्योतिः । इमोऽसौ वायु पौर धारण कर सन्त्योदेवो विजयमन्त्रा पानन करती है । सन्त्योदेव इमोऽसौ प्रभावमे जगत्प्राप्त करती है पौर देवतापति इमोऽसौ त्रिगोप्राप्त नाम दिया है । यह कवच ब्रह्ममन्त्रमय है, इममे भूतादि निवारित होते हैं । मुनि दुर्वासा इमो कवचके प्रभावमे त्रिलोकविजयी हुए हैं । इम ज्योतिःस्य विजयमन्त्रं नरवि—राजापति, सन्त्यो—गायत्री, विष्णु—मूर्ति देवता है ।

इम कवचको यथाविधि भोजन पर निम्न अर्च-पात्रमें रख कर यदि कोई कष्ट वा दुःखमें धारण करे, तो यह मनुष्य स्वयं वृत्तिरत्नको ही जाता है । विरोगीको यह कवच पाम वादुमें पौर पुद्गलो की दक्षिण वादुमें वहनना चाहिए । धाकवन्त्या, गृहपत्या, प्रभत्या पौर लटपुत्याकी यदि इम कवचको धारण करे, तो वे बहु-पुत्रवती होती हैं । इम कवचके प्रभावमे सब प्रकारको विपत्तियाँ जाती रहती हैं पौर माघकृष्ण शीतल सुख होता है । जिम घरमें वा जिम पाममें यह कवच रहता है, भूतप्रेतगण सम देवकी हीदु कर बहुत दूर चले जाते हैं । ब्रह्मचरिणामे यह कवच निवा है । तन्वमारमें भी इम कवचका प्रभाव विषय देवनेमें पाता है ।

(हस्तधार)

मूर्तिरत्न-२ मध्यमदेवके चत्वारिंशत् होलकरराजके पथीमल्ल भूपाल एनेकोका एक छोटा राज्य पौर परगना । यह पचा० २३ ई०में २३ ई० तथा देगा० ०६ २० से ०० ११ पू०के मध्य प्रचलित है । भूरिमाथ ०३४ वर्गमील है । इमके उत्तरमें इन्दौर, विन्धोपुर पौर राजगढ़ टेटा पूर्वमें मधुपदमढ़ पौर भूपाल पश्चिममें देवास पौर स्यानिवर तथा दक्षिणमें भूपाल पौर स्यानि-यर है ।

राजगढ़के रावतवंशोय मानसराजके मन्त्री पात्रवर्धनके पुत्र परदाराम १६६ ई०में विजयद पर नियुक्त हुए । पीछे १६८१ ई०में इन्हीं रावतोंमे यह मूर्तिरत्न राज्य हस्तपूर्वक पदक, कर लिया पौर १६९९ इस प्रतिष्ठित राज्यके अधीन रह गए । १८१० ई०में मन्त्री राजकी मन्त्रीकी पथीमल्ल हकीका की पौर वे होलकरके साथ मन्त्रि करमें बाध हुए । उमो मन्त्रिके पुनः राज्यकी

पात्रनेमे होलकर राजा की मूर्तिरत्न ८८०००, ६० देने पड़े ।

विजयारो दक्षिणमें यह परगना प्रचलित होने पर इम म्पाके पञ्चव दौबान सुभगमिंह बाकी चत्वारिंशे टायी हुए । उक्त मन्त्रविमोपके निचे उमोनेतम उमके पुत्रकुमार चोर्धनने यहाँके स्येदार मन्त्राधिपति बहादुर म्पोजनमन्त्री मिन्धियाको एक पत्र लिवा । यह पत्र जब होलकरके दरबारमें पहुँचा, तब राजा मन्त्रार राव होलकरने मूर्तिरत्नके पश्चिमी सुभगमिंहको १२१८ इस्वीमें अपना बन्धुकरके परगना भोज दिया जिममें हा यर्को सभीमन्त्री सुदा पर तीन लाख पचीस हजार रुपये देनेकी बात लिखी थी ।

१८२४ ई०में चोर्धनने हटिय सेना पर धावा बोल दिया पौर पाप ही युद्धमें मारे गये । पीछे १८०२ ई०में चत्वारिंशत् मूर्तिरत्नके मिन्धाम पर पश्चिम हुए । इन्के हटिय मन्त्रिको पौरमे राजाको उगाधि पौर १५ मन्त्री तोपे मिर्जा । १८०३ ई०में चत्वारिंशे मन्त्रे पर होलकरने उमके उत्तराधिकारी प्रतापमिंहने मन्त्रराजा तलम किया । सिद्धि हटिय सरकारने इम दावाको स्वीकार न किया । १८०० ई०में प्रतापकी मृत्युके बाद उमके पया महतापमिंह मिन्धाम पर बैठे । महतापकी निःसन्तानावस्थामें मृत्यु हुई । पीछे हटिय सरकारने माठयेर ठाकुरके संभर चत्वारिंशत्की १८८६ ई०में मूर्तिरत्नके मिन्धाम पर पश्चि-वित्त किया । ये ही वर्तमान राजा हैं । इनका पूरा नाम यह है—एच, एच राजा मर चत्वारिंशत् मन्त्र बहादुर, ई० सी० पार० ई० । इन्के प्याके मन्त्री तोपे मिन्त्री हैं ।

राज्यको जनसंख्या साठसे ऊपर है । सैकड़ों पीछे ८० इन्की संख्या है, जिनमें पन्ध्याय जातियाँ । राजकी चाय पीप लाख रुपयेकी है । राजाके पास ४० पन्नीकी, पदातिक पौर २३ गोदमन्त्र सेना है । २ उक्त राज्यका एक मन्त्र । यह पचा० २३ ई० पौर पचा० ०० ई० पू०, मिन्धोरेके ४४ मीलकी दूरी पर प्रचलित है । जनसंख्या लगभग ८००० है । मूर्तिरत्नके मन्त्र मन्त्रार वादुमने इस मन्त्रको रचाया । यहाँ

स्कूल, अस्पताल, कारागार तथा डाकघर और टेलिग्राफ आफिस है।

३ मध्यप्रदेशके दमोड़ जिलेका एक प्राचीन नगर। यह पश्चात् २३°५८' उ० और देश० ७८° २६' पू० दमोड़ नगरसे १२ मील उत्तर-पश्चिम तथा हृदयपरगनेसे १५ मील दक्षिण-पश्चिममें अवस्थित है। पहले यह नगर इलाहाबाद महकमेके अधीन था। मुसलमानों परतलमें यहां एक दुर्ग और मस्जिद बनाई गई। मुसलमान लोग इस स्थानको नगरतगढ़ कहा करते थे, परन्तु महाराष्ट्र-पञ्चदशमें उल्ला नामके वदते नरसिंहगढ़ नाम रखा गया। यहां महाराष्ट्रोंका धनाया हुआ एक दुर्ग है। १८५० ई०के गदरमें अंगरेजों सेनानि दुर्गका बहुत कुछ अंग तहस तहस कर डाला था।

हृत्सिंहचक्रवर्ती—देवीमाहाशक्त्यष्टौकाके रचयिता।

नृत्सिंहचतुर्दशी ( न० स्त्री० ) हृत्सिंहप्रिया हृत्सिंहव्रती-पलविता वा चतुर्दशी। वैशाखमासकी शुक्लचतुर्दशी। इस तिथिमें हृत्सिंहदेवके उद्देशसे व्रतानुष्ठान किया जाता है।

“वैशाखस्य चतुर्दश्यां शुक्लान्यां श्रीनृत्सिंह्याः।

आवस्तदस्यां तस्मिन्नेव क्वींते सव्रतम् ॥”

(नारसिंह)

वैशाखमासकी शुक्लचतुर्दशी तिथिमें हृत्सिंहदेवके पवतीर्ण हुए थे, पतपय इस दिन उनके उद्देशसे पूजा, व्रत और संकीर्ण करना चाहिए। यह व्रत प्रत्येक व्यक्ति का अवश्यकर्त्तव्य है।

व्रतविधि—“वर्षे वर्षे तु कर्त्तव्यं मनः-सन्तुष्टिकारणम्।

महाशुभमिदं भ्रष्टं मानवैर्भवतीहतिः ॥

विधि—विशुद्ध मरिचं यद्दुःखयेत् सप्त पत्रमाकं।

एवं श्रावणं प्रवृत्तंभे मद्दिने व्रतपुत्रमम् ॥

अथवा नरकं याति पावकप्रतिवाहरी ॥”

(सुहृद् नासिंहपुराण)

प्रति वर्षे भगवान् नृत्सिंहदेवको सन्तुष्टिके लिये यह पतिगुणधर श्रेष्ठ व्रत सर्वोका अनुष्ठेय है। इस व्रतका अनुष्ठान करनेसे भवभय जाता रहता है। जो इस दिन व्रतानुष्ठान नहीं करते, वे पापभागी होते हैं। पतः-महिनमें वर्षान् नृत्सिंह-चतुर्दशीमें यह उत्तम व्रत अवश्य

कर्त्तव्य है। इगका पत्न्याचरण करनेमें जब तक सूर्य और चन्द्रमा रहेंगे, तब तक नरकमें वास होगा।

इस नृत्सिंहव्रतका करना सर्वोका अधिकार है, इसमें ब्राह्मण्यदि यण विभाग नहीं है। विशेषतः महत्तगणको एकाय हो कर इस व्रतका अनुष्ठान करना चाहिए।

ब्रह्मादेके भगवान् नृत्सिंहदेवके इस व्रतका साहाय्य पूरनेपर उन्होंने कहा था,—पुराकालमें अवस्तोपुरमें यशु-देव नामक एक ब्राह्मण थे। वे अत्यन्त वेदपात्रण और नाना प्रकारके सद्गुणसम्पन्न थे। उनको पत्नीका नाम था सुशीला। सुशीला सचमुच सुशीला थी। उनके गर्भमें पाँच पुत्र उत्पन्न हुए जिनमेंसे छोटिका नाम दुर्विनीत था। वह बहुत विलासो था और हमेशा विलासिनाके घरमें रहा करता था। यहां तक कि उसने वेष्ठाभक्त हो उसके साथ सुरापान तक भी आरम्भ कर दिया। एक दिन वेष्ठाके साथ इसका विवाद हुआ। नृत्सिंहचतुर्दशीका दिन था। विवाद करके छह दिन दोनों उप-वासी रहे, उपवास और रात्रिजागरण तो विवादसत्रमें हुआ, लेकिन साथ साथ इस महाव्रतका अनुष्ठान भी किया गया।

इस व्रतके प्रभावसे छम वेष्ठा और वसुदेवनन्दनमें तुम्हारे समान भक्ति हो पाई। वह वेष्ठा इस त्रिकोणमें सुखचारिणी हो कर पतलमें स्वर्गकी भयगा हुई और नाना प्रकारके सुख भोग करने लगी। ब्राह्मण-कुमारके भी स्वर्गगति हुई। इस व्रतका साहाय्य अधिक क्या कहा जाय, ब्रह्मनि सृष्टि करनेके लिये स्वर्ग इस व्रतका अनुष्ठान किया था। इसी व्रतके प्रभावसे वे सृष्टि करनेमें समर्थ हुए हैं। देवगण इसी व्रतके प्रभावसे देवता हो कर स्वर्गमें सुखसे पवस्थान और समस्त विद्विन्नाम करते हैं। जो मनुष्य यह व्रतानुष्ठान करते, कल्पकोटि-गत वर्षमें भी उनको पुनरावृत्ति नहीं होती। इस व्रतके प्रभावसे अपुत्र पुत्रलाभ करता है, दरिद्र लक्ष्मी पाता है और राज्यकामी राज्य प्राप्त करता है। हमारे भक्त गण यह व्रत करके जो कुछ प्रायना करते, वही पाते हैं। जो मनुष्य यह व्रतमाहात्म्यं भक्तिपूर्वक अथ करते हैं उनके ब्रह्महत्या-जनित पाप दूर हो जाते हैं और उनके सभी पापिनापाए पूर्ण होते हैं।

(सुहृद् नासिंहपुराण)



प्रायः जाता रक्षा, उस समय अनेक ब्राह्मण इहीं नर-  
सिंहरायकी शरणमें पहुँचे। नरसिंह रायको सभामें  
अनेक देगियख्यात पण्डित थे। रूपनारायण नामक  
दिव्यशयो पण्डित इन्हींके समान्य रहे।

रूपनारायण देखो।

ब्राह्मणोंको प्रायर्नामै राजा उन सब पण्डितोंको  
साथ ले नरोत्तमके माथ ग्रास्ताय कराने गए। अन्तमें  
ग्रास्तायमें परास्त हो कर इन्होंने दलबलके साथ ठाकुर  
संहायकता गिष्यत्व ग्रहण किया। इसी समयसे राजा  
कहर भक्त हो गए और पदको रचना भी करने लगे।

नृसिंहदेवव्रत—एक प्रसिद्ध व्यातिर्निर्दि। इन्होंने सूर्य-  
सिद्धान्तके भाष्य और त्रिषिविन्तामण्डिकाका रचना  
की है। गोलधाम नगरमें भरद्वाजगोदमें इनका जन्म  
हुया था। इनका वंशपरिचय इस प्रकार मिनता है—  
राजपूजित दिवाकर देवव्रतके ५ पुत्र थे जिनमेंसे कण्व-  
देवव्रत बड़े थे। कण्वदेवव्रतने वोजसूत्रात्मक ग्रन्थ लिखा।  
उन्होंने पुत्र नृसिंहदेवव्रत हैं।

नृसिंहनक्षत्र—मन्द्राज प्रदेशके तिववेलेली जिलान्तर्गत  
एक ग्राम। यह भष्ठा ८८ ४२ ३० और देशा ७७ ४२  
५० तिववेलेली नगरसे ३ मोल पथिममें अवस्थित है।

नृसिंहपद्यानन—एक ग्रन्थकार। इन्होंने न्यायसिद्धान्त-  
मञ्जरी नामक न्यायग्रन्थको एक टीकाका सङ्कलन  
किया।

नृसिंहपद्यानन भष्ठाचार्य—एक नैयायिक। इन्होंने वेद-  
लक्षण नामक तत्त्वचिन्तामण्डिपोधितिकी एक टीका  
लिखी है।

नृसिंहपुराण (सं० श्लो०) भारतमें दुराण देखो।

नृसिंहपुर—नरसिंहपुर देखो।

नृसिंहपुरीपरिभाषा—एक ग्रन्थकार। इन्होंने श्वकोप  
नामक एक ग्रन्थ लिखा है।

नृसिंहभट्ट—इस नामके कई एक संस्कृत ग्रन्थकारोंके  
नाम मिलते हैं—

१ दमरूपके एक टीकाकार।

२ विष्णुधर्मसौमसाके रचयिता।

३ विष्णुपुराणके एक टीकाकार।

४ एक ह्मात्त पण्डित। इनकी उपाधि सौमसाक

थी। "स्मृतिनिबन्ध" नामक ग्रन्थ इन्होंने रचना  
हुया है।

५ हरिहरानुसरण्यात्मा नाटकके प्रथिता।

६ संस्काररत्नायकीके प्रथिता, सिद्धभट्टके पुत्र।

नृसिंहभारतो—एक ईश्वरतत्त्वज्ञ पण्डित। ये देवो-  
महिम्नस्तोत्र पादि कई ग्रन्थ रचना गए हैं।

नृसिंहभूपति—एक चोलराज। ये पूर्वचालुक्यवंशोद्य  
चोलराज विश्वेश्वर भूपके दोस और उषेन्द्रके पुत्र थे।

चाण्डनराज्यका देखो।

नृसिंहमुनि—१ एक वेदान्तिक। इन्होंने वेदान्तसूत्र-  
कोपकी रचना की। २ राममन्त्रार्थ ग्रन्थ-प्रथिता।

नृसिंहयज्वन्—महिषसुरधातो एक पण्डित। इन्होंने  
प्रयोगरत्न पार श्रौतकारिका नामक दो ग्रन्थोंकी  
रचना की।

नृसिंहयतीन्द्र—एक ख्यातनामा पण्डित। ये वेदान्त-  
परिभाषाकार धर्मराज अक्षरान्द्रके गुरु थे।

नृसिंहराय—विजयनगरके नरसिंह राजा। ये यौर नर-  
सिंह वा नृसिंहन्द्रके पिता थे। इन्होंने तिप्पाजीदेवी  
और नागलामे विवाह किया था। विजयनगर देखो।

नृसिंहवन (सं० पु०) कूर्मविभागमें धार्यत पथिम-उत्तर-  
दिक्-स्थित एक देश।

नृसिंहवर्म—पक्षव वंशोद्य एक राजा। इन्होंने प्रायः  
५२० ई०में काञ्चीपुरस्थ कैलासनाथ या रामसिंहेश्वर  
दिव्यमन्दिरका निर्माण किया।

नृसिंहवक्रभिमित्रठाकुर—कालीचरण मित्र नवायके टोथान  
थे। उनकी सन्तान होती थी, पर मर मर जाती थी।  
एक दिन एक सन्तानकी श्राधु होने पर उनकी स्त्री नदी  
किनारे बैठ कर रो रही थी। इसी समय ठाकुरमन्त्र  
(ज्ञानदान)के साथ उनको भेंट हुई। ज्ञानदाव देखो।  
उन्होंने मित्रपत्नीकी दुःखवार्ता सुन कर दयादर्पचित्तसे  
उन्हे पाश्चात्तन दिया और कहा, "इस वार को तुम्हारे  
पुत्र होगा, वह बचिगा और प्रभुका भक्त होगा।" यह  
सुन कर मित्र ठाकुराचो विनोतभायसे बोली, 'यदि  
पापके बचन मल्य निकले, तो मैं उस पुत्रकी ठाकुरके  
चापमें पर्यण कर दूंगी।'

यही गेय पुत्र नृसिंह वक्रभट्ट है। जब नृसिंहदेवी उमर



नेपाल ( हि० पु० ) नेपाल देखी ।  
 नेपली ( सं० स्त्री० ) इठयोगभेद । रुद्रधामलमें इसका  
 विषय इस प्रकार लिखा है—  
 धीतोयोगके शेष हो जानेके बाद यह नेपली-योग  
 किया जाता है । इसमें पहले मूंग भनाजको सिद्ध कर  
 खाते हैं, पोछे भपना सदर चालन करते हैं । इठयोग-  
 में इसका विषय विस्तररूपसे लिखा है ।  
 नेपलीधोषी—उड़ीसा विभागके अन्तर्गत ऋटक जिलेका  
 एक परगना । भूमिपरिमाण ३८४ वर्ग मील है । यहाँ  
 बोंधरु पौर नयापाड़ा नामक दो विभिन्न ग्राम हैं ।  
 नेक ( फा० वि० ) १ उत्तम, अच्छा, भला । २ गिट,  
 सज्जन । ( क्रि० वि० ) ३ घोड़ा, जरा, तनिक ।  
 नेकचलन ( हि० वि० ) अच्छे चालचलनका, सदाचारी ।  
 नेकचलनी ( हि० स्त्री० ) सदाचार, भलमनसाहत ।  
 नेकनाम ( फा० वि० ) जिनका अच्छा नाम हो, जो  
 अच्छा प्रसिद्ध हो, यशस्वी ।  
 नेकनामी ( फा० स्त्री० ) सुख्याति, कीर्ति, नामवरी ।  
 नेकनीयत ( फा० वि० ) १ शुभसहस्यवाला, जिसका प्राग्रय  
 या सहस्य अच्छा हो । २ उदारप्राग्रय, उत्तम विचारका,  
 भलाईका, विचार रखनेवाला ।  
 नेकनीयती ( फा० स्त्री० ) १ नेकनीयत होनेका भाव,  
 अच्छा संकल्प, भला विचार । २ ईमानदारी ।  
 नेकवखत ( फा० वि० ) १ भाग्यवान्, खुशकिस्मत । २  
 अच्छे स्वभावका, सुमील ।  
 नेकमद—बङ्गालके दिनाजपुर जिलेके अन्तर्गत भवानन्द-  
 पुर ( भवानीपुर ) ग्रामके अवस्थित एक स्थान । यह  
 पचा० २५° ५८' उ० और देशा० ८८° १८' ३०" पु०  
 कुलिक नदीमें १ मील पश्चिममें अवस्थित है । यहाँ पर  
 नेकमदन नामक किसी सुसनमान फकीरकी कब्र र ने-  
 के कारण यह स्थान सुसलमान समाजमें बहुत पवित्र  
 माना जाता है । उधे फकीरके नामानुसार इस स्थान-  
 का नामकरण हुआ है । उधेके उद्देशमें यहाँ प्रतिवर्ष  
 मेला लगता है जिसमें लाख टिड्ड लाख पादमी जुटते हैं ।  
 जिस तरह सोनपुरके हरिहरचित्रके मेलमें जायी, छोड़े  
 पौर गार्थीकी हाठ लगती है, यहाँ भी उसी प्रकार  
 मधेयी पादि बिकनेकी पाते हैं ।

नेकाविहार—हिन्दुकुग पर्वतके अन्तर्गत एक दुर्गारोह  
 गिरिसिद्ध । यह स्थान प्रायः सभी समय तुपारने टका  
 रहता है । सभ्याकालमें से कर दूधरे दिनके दो पहर  
 तक तुपाररागि प्रवलस्रोतमें टालवा पथ हो कर निम्न  
 प्रदेशमें गिरती है ।

नेकरी ( हि० स्त्री० ) समुद्रकी लहरका यमैदा जिससे  
 जहाज किसी धोरको बड़ता है, हाँक ।

नेको ( फा० स्त्री० ) १ उत्तम ध्यवहार, भलाई । २  
 सज्जनता, भलमनसाहत । ३ उपहार, हित ।

नेकोविधर—सुषतान—सम्नाट, भोरङ्गजिवकं पोत्र भोर मङ्क-  
 म्पद अक्षरके पुत्र ।

नेग ( हि० पु० ) १ विवाह पादि शुभ अवसरों पर भव्य-  
 न्धियों, पायित्तों तथा कार्य वा क्रयमें योग देनेवाले  
 पौर लोगोंको कुछ दिए जानेका नियम, देने पानेका हक  
 या दस्तूर । २ वह वस्तु या धन जो विवाह पादि शुभ  
 अवसरों पर सम्बन्धियों, नोकरों चाकरों तथा नारि-वारी  
 पादि काम करनेवालोंको उनकी प्रसन्नताके लिये निय-  
 मानुसार दिया जाता है, बंधा हुआ प्रस्कार, इनाम,  
 वक्ष्यगिग ।

नेगघार ( हि० पु० ) नेगयोग देखो ।

नेगजोग ( हि० पु० ) १ विवाह पादि महल अवसरों पर  
 सम्बन्धियों तथा काम करनेवालोंको उनकी प्रसन्नताके  
 लिये कुछ दिए जानेका दस्तूर, देने पानेकी रीति,  
 इनाम बाँटनेकी रस्म । २ वह धन जो महल अवसरों-  
 पर सम्बन्धियों पौर नोकरों चाकरों पादिको बाँटा जाता  
 है, इनाम ।

नेगो ( हि० पु० ) नेगपानेवाला, नेग-पानेका हकदार ।

नेगोजोगी ( हि० पु० ) नेग पानेवाले, विवाह पादि  
 महल अवसरों पर इनाम पानेके अधिकारी ।

नेपरिया ( हि० पु० ) प्रकृतिके पतिरिक्त ईश्वर पादिको  
 न माननेवाला, नास्तिक ।

नेजक ( सं० पु० ) निज शूद्रों खुल्ल । निर्पेजक, घोषो ।

नेजन ( सं० स्त्री० ) निजमेंसे निज अघारे, खुल्ल । १  
 निजकाल्य, घोषोका पर । २ शौचन ।

नेजा ( फा० पु० ) १ भाला, बरछा । २ निगान, हाँग

नेजावरदार ( फा० पु० ) भासा या राजाघोषा निगान  
 चलायेवाला ।





मङ्गिनी है। विषकाटी-उत्सवके कुछ पहले काठमण्ड-  
गहरमें इनके मण्डानके लिये निवानयामो प्रति वर्ष मन्त्रो-  
त्सव करते हैं। इस महोत्सवमें स्वयं नेपालराज और  
उनके अधीनस्थ सरदार तथा बौद्ध और हिन्दू-मतावलम्बी  
सभी योगदान देते हैं। यह उत्सव नेतादेवीकी यात्रा  
नामसे प्रसिद्ध है।

नेति (सं० पु०) १ इष्टयोगभेद। २ एक मंखलत वाक्य  
(न इति) जिसका अर्थ है "इति नहीं" अर्थात् "मन्त्र  
नहीं है" ब्रह्म या उत्सवके सम्बन्धमें यह वाक्य उपनिषदों  
में पनम्नाता सूचित करनेके लिये आया है।

नेती (हिं० स्त्री०) वह रस्मी जो मथानामें लपेटे जाती  
है और जिसे खींचनेसे मथानो फिरती है और दूध या  
दही मथा जाता है।

नेतीधोती (हिं० स्त्री०) इष्टयोगकी एक क्रिया जिसमें  
'कपड़ेकी धज्जो पीटमें डाल कर पोंते' भाव करते हैं।  
पौति देखो।

नेतीयोग (सं० पु०) इष्टयोगभेद। इस योगका विषय  
रुद्रायामलके उत्तरखण्डमें इस प्रकार लिखा है—

नेतियोगका अवलम्बन करनेसे मन्त्रकर्में जितना  
कफ है वह दूर हो जाता है। इस योगमें पहले एक  
पतली सूतीकी नाकमें डाल कर सुल हो कर निकालते  
हैं। इस प्रकार अभ्यास करते करते कुछ मोटे सूतमें  
काम लेने लगते हैं। इस नेतियोगसे नासारुग्ध साफ  
होता है।

नेत्र (सं० पु०) नयतीति नो-उत्त्व। १ प्रभु। २ निरुद्धक।  
३ नायक। ४ प्रयत्नक। ५ प्रापक। ६ निम्बवृक्ष, नीम-  
का पेड़। ७ विष्णु।

नेत्रत्व (सं० स्त्री०) नेत्रुर्भावः नेत्रत्वम्। नायकता, अध-  
यता।

नेत्रमत् (सं० त्रि०) नेत्रदुक्त, नायकरूपमें नियुक्त।  
नेत्रोक्तल-दाक्षिणात्यके धेन्सरो तिलान्तगत पदोन्नो  
तालुकका एक ग्राम। यहां वर्षभरके ऊपर पाञ्चनेयका  
एक मन्दिर है। उक्त मन्दिरके पीठस्थानके निकट एक  
पत्थरके ऊपर सैलुनी भायामें उत्कीर्ण एक गिलानिधि  
है। इस धाम और गन्धर्वन धामकी सीमाके मध्यभागमें  
एक दूधरा गिलानक देखनेमें आता है।

नेत्र (सं० स्त्री०) नीयते नयति वामनेति नो-कारणे इत्  
(राम्नी उपेति। पा ३।२।१८२) १ चक्षु, भयन, शीघ्र। २  
मन्त्रनदाम, मथानीकी रस्मी। ३ यक्षभेद, एक प्रकारका  
वृक्ष। ४ वृक्षमूल, पिड़की जड़। ५ रथ। ६ जटा। ७  
नाड़ी। ८ प्रापिता। ९ शक्तिगलाका, वस्त्रोकी सलाई,  
कटीड़ा। १० दोका मंख्याधुचक गन्ध। ११ चक्षुके गोलक-  
स्थित यक्षभेदयाक तैजस इन्द्रियभेद। (पु०) १२ देहय  
राजाने एक पुत्रका नाम।

नेत्रकभीनिका (सं० स्त्री०) नेत्रयोः चक्षुषोः कनोनिका।  
चक्षुका तारा।

नेत्रकोष (सं० पु०) नेत्रयोः कोषः। नेत्रपटल, पाखरे  
पटें।

नेत्रच्छद (सं० पु०) नेत्रे छाद्यतेऽनेनेति छद-विच्, क,  
ततो छदधः। नेत्रपिधायक चर्मपुट, पाखरे पटें।

नेत्रज (सं० पु०) नेत्रात् जायते जन-ङ। नेत्रजात  
पाष्।

नेत्रजन (सं० स्त्री०) नेत्रयोजलम्। पशु, शीघ्र।  
नेत्रता (सं० स्त्री०) नेत्रस्य भावः नेत्र-तल्-टाप। नेत्र-  
का भाव और धर्म।

नेत्रपर्यन्त (सं० पु०) नेत्रयोः पर्यन्तः पन्तः कोणः सीमा।  
१ पचाङ्ग, पाखका कोना।

नेत्रपाक (सं० पु०) नेत्ररोगभेद, पाखका एक रोग।  
कण्डू, उपदेह, अयुजात, पत्ते हू-मरकं जैसा पाकार,  
दाह, संहर्ष, ताम्रवर्ष, तोद, गोरव, गोफ, सुइसुइः  
अण्य, शोतल और विच्छिन्न पास्त्रायमरुधा पादि मन्त्र  
रहनेसे सगोक नेत्रपाक और शोफ नहीं रहनेसे अगोक  
नेत्रपाक लगना चाहिए।

नेत्रविण्ड (सं० पु०) नेत्रं विण्ड इव यन्म। १ विहाल,  
विही। स्त्रियां जातित्वात् ङोप, (स्त्री०) २ नेत्रगोलक,  
पाखका टेला।

नेत्रपुष्करा (सं० स्त्री०) नेत्रयोः पुष्करं जलं यस्याः  
यत्केयनादियर्थः। रुद्रजटा नामकी जला।

नेत्रप्रवन्ध (सं० पु०) नेत्रे प्रवन्धतेऽनेन प्र-वन्ध-करणे  
व्युत्। नेत्रपुट, पाखका पटें।

नेत्रप्रसादनकर्मन् (सं० षो०) चक्षुःप्रसादनकार्य-  
विशेष, यह काम जिसके करनेमें चक्षुः प्रमथ ही और

दृष्टिप्रदो मधुमन्ना मित्रे, चोमे, कपल इत्यादि ।  
नेत्रदन्त ( मं० पु० ) नेत्रदीर्घत्वः इत्यम् । मधु-दन्तयो  
पाशरपन्ना मधुमन्नादिभिः, पाप मित्रोमोका जिनः ।

नेत्रभासा ( ति० पु० ) गुणमधुभासा, कपलोद, धानक ।

नेत्रभान ( मं० पु० ) मन्त्रोत या मन्त्रमि वर भाय त्रिममे  
नेत्रम पापान्त्रो चेटागे गुण दुःख चादिना योष करवा  
तासा ई चोरे कोरि चरु मर्षी हिनवा शोभना, यह भाय  
बहुन कठिन मगन्ना प्राताः ई ।

नेत्रमण्डल ( मं० पु० ) शोषका पीमा ।

नेत्रमण ( मं० पु० ) नेत्रदीर्घत्वम् । मधुहा मन्त्र पाप  
का कोषक, गिप ।

नेत्रमार्ग ( मं० पु० ) नेत्रमालकी मन्त्रिच्छ तत्र मया  
दुपा गुण । जमने यन्त्राः सन्त्रमे दृष्टिमान होता ई ।

नेत्रमोक्षा ( मं० पु० ) नेत्रयोः मोक्षा मुद्रणं यन्त्रः,  
धप टादिनाम् लस्य म । यपतिना मन्त्रा । इनने मेत्रममे  
चति मन्त्र रचना ई ।

नेत्रगुण ( मं० पु० ) नेत्रं तत्रवारं मुण्णाति मुण-क्रिय ।  
दृष्टिका इवपातक, दृष्टिपचारनामक ।

नेत्रयोनि ( मं० पु० ) नेत्राणि योनिमिमांतामि यन्त्र,  
नेत्राणि मोनय इव यन्त्र इति वा । १ इन्द्र । मोतमके  
मावमे इनने मरोरमि मखन योनि-यन्त्र चो मये मी श्री  
पादे नेत्रके पाकारमे चो मये, इमी कारव इन्द्रहा नाम  
नेत्रयोनि यद्वा । नेत्रं यतिशोषनं योनिहृत्पति-कारणं  
यन्त्रः २ भद्रमाः । मी यतिशो पापमे मन्त्रय इव  
ई, इव कारव इके भी नेत्रयोनि यन्त्रमे ई ।

नेत्रशूल ( मं० पु० ) नेत्रे रज्ज्वे चमिन रज्जु करदि  
चतुर । कपल, काजल । कानिकापुमायने विद्या ई, कि  
चपलने मन्त्र मोरार, भायन्त्र, गुण, मयूर, योकर चौर  
दर्विका मे चो का मकारके मन्त्रि ई । इन्ममे मोरार  
हृत्पट्ट, य-मुन, यन्त्र, मयूर चौर योकर इव, नेत्रमाल  
नेत्रम-इके दिना मर यन्त्रा मेलनमायमे मिय कर  
रम विद्याय मी चौर मने दिवदेमोको मन्त्रि । मन्त्रादि-  
यन्त्रमे मन्त्र चौर मन्त्रादि मन्त्र कर यन्त्रको मन्त्रोमे मी  
काजल मोरार होता ई चोरे दर्विका मन्त्रे ई । यन्त्र  
-विद्यो मन्त्राया मन्त्रम मन्त्रि मी दर्विको दर्विका  
मन्त्र मे मन्त्रे ई । विद्ययाये मन्त्र विद्या दूपा मन्त्र

दुर्वोको मर्षी मन्त्राया चादिप । ( कानिकापु० मन्त्र मन्त्र )  
नेत्रदन्त ( मं० पु० ) मन्त्र-दन्त, नेत्रयोः दन्त । मन्त्र-  
दीक्षा, नेत्ररोग ।

नेत्ररोग ( मं० पु० ) नेत्रयोः रोगः । मधुमन्ना, शोषका  
दन्त । इयका विषय मधुमन्ने इव प्रकार विद्या ई,—

यन्त्रे मन्त्राद्यन्त्रे उदरदेनेके परिमाणमे मी चतुर, कि  
नेत्रमन्त्रको मन्त्राई ई । इयका मन्त्र परिमाण  
टाई चतुर मई । इयका पाकार मोनमके मन्त्र  
मुत्रता चौर यन्त्र मन्त्रादे मूरेके मुत्रमे मन्त्रय दूपा  
ई । नेत्रमन्त्रना मन्त्र विद्ये, मन्त्र विद्ये, मन्त्र-  
भाग वायुमे, मन्त्रभाग मन्त्रमे चौर यन्त्रमार्ग पाकारमे  
मन्त्रय दूपा ई । नेत्रका यन्त्रोपाय मन्त्रमन्त्रय ई चौर  
दृष्टिमान मन्त्रमन्त्रका मन्त्रमार्ग ई । मोरारि नेत्रके  
मन्त्रय म्, मन्त्रि २ चौर यन्त्र २ ई । मोरारि मन्त्रमे मन्त्र  
ये ई,—यन्त्रमन्त्रय, मन्त्रमन्त्रय, मन्त्रमन्त्रय, मन्त्र-  
मन्त्रय चौर दृष्टिमन्त्रय । ये मन्त्र यन्त्रमन्त्रमे मन्त्र दूपाके  
मन्त्रय म् । मन्त्रि यः मन्त्राको ई, यन्त्रा—यन्त्र चौर  
मन्त्रमन्त्रय, मन्त्रि, मन्त्रं चौर यन्त्रमन्त्रय मन्त्रि,  
यन्त्र चौर मन्त्रमन्त्रय मन्त्रि, मन्त्रमन्त्रय चौर  
दृष्टिमन्त्रयको मन्त्रय मन्त्रि मन्त्रा मन्त्रोमिका चौर  
यन्त्रमन्त्रय मन्त्रि । यन्त्रा यन्त्र मन्त्रमन्त्राद्यन्त्र, दूपा  
मोनायित, मोरारा मन्त्रायित, चोवा चलि चायित चौर  
मन्त्रयो दृष्टिमन्त्रायित ई । यन्त्रमन्त्र विद्यामन्त्रयो  
दोयमन्त्रय चौर नेत्रमन्त्रमे मन्त्रय रोग मन्त्रे ई । चारि-  
मन्त्रा, मन्त्रय, यन्त्रयन्त्र, मुद्रयन्त्र, टाक, मन्त्र मन्त्रि  
यन्त्रय मोरारि यन्त्रा मन्त्रयको मन्त्रयो म् मन्त्रयको मन्त्रय  
यन्त्रो पापमे मोरारा मन्त्रय मन्त्रा ई, यन्त्रा मोरारि मोरारि  
दिना इनने मन्त्रययन्त्र वा मन्त्रययन्त्रमे मन्त्रायिका  
यन्त्रायित मोरारि नेत्र मोरारि मन्त्रय ई, यन्त्रा मन्त्राया  
चादिप । यन्त्रो मन्त्राया मोरारि मन्त्रय मन्त्राया  
विषये ई ।

नेत्ररोगका निदान- मन्त्रायितयन्त्र, मन्त्रयन्त्र, मन्त्रयन्त्र,  
मन्त्रयन्त्रय मन्त्रायित यन्त्रमे मोरारा चौर मन्त्रमे मन्त्राया,  
मन्त्रायित, मोरार, मोरार, मोरार, मोरार, यन्त्रायित, यन्त्र-  
मन्त्रय, टाक, मन्त्रयो, यन्त्र, मुद्रयन्त्र चौर मन्त्रय मन्त्रय,  
मन्त्रय यन्त्रा यन्त्र, यन्त्रो वा मन्त्रययन्त्र, मन्त्रययन्त्र वा

अभियोग, वाय्वर्षेगधारण या सुष्मपदार्थ निरोधण इन सब कारणोंसे दोष कुपित हो कर नेत्ररोग होता है। ये नेत्ररोग ०६ प्रकारके हैं जिनमें वायुजन्य दग्ध, कफजन्य तैरह, रक्तजन्य शोषह, सन्निपातज पचीस और वाद्य-रोग दो प्रकारके हैं। इनमेंसे हताधिमन्य, निमेष दृष्टिगत, गभीरिका और वातहतवर्कन् ये सब वायुजन्य चक्षुरोगके मध्य प्रधान हैं। वायुज काचरोग याप्य तथा अन्व्यतीवात, शुष्काक्षिपाक, अधिमन्य, अधिमान्द और मादत ये सब रोग साध्य हैं। पित्तज रोगोंमेंसे ज्वरजाल्य, जलस्त्राय, परस्त्रायो और मौलीरोग प्रसिद्धा है। काचरोग, अधिमान्द, अधिमन्य, अस्त्रायु पित्तदृष्टि, शक्तिका, पित्तविदग्धदृष्टि, पोथकी और लगण ये सब याप्य हैं। कफजात नेत्ररोगके मध्य स्त्रावरोग प्रसाध और काचरोग याप्य हैं। अधिमन्य, अधिमन्य, वस्त्रास-प्रथित, शोषविदग्धदृष्टि, पोथकी, लगण, कर्मिप्रथि, क्लिष-वर्क और श्लेष्मापनाहं श्लेष्मजरोगमेंसे ये सब रोग साध्य हैं। रक्तजात नेत्ररोगमें रक्तस्त्राव, प्रजका, शोषितामं, भयलक्षित और शुकुरोग प्रसाध है। रक्तज काचरोग याप्य तथा मध्य, अधिमान्द, क्लिषवर्क, हर्षोत्पात्, सिराज, पञ्जम, सिराजाल, पर्वणा, भ्रमण, शुक. शोषि-तामं और भक्तुंन ये सब साध है। पुण्यस्त्राव, नाकु-लान्ध, अक्षिपाक और भनजो ये सब रोग सर्वदोषज हैं; भतएव ये सब प्रसाध है। सन्निपातज काचरोग और पञ्चकोपरीय याप्य है। वर्कलक्षन्य, पिङ्गका, प्रस्त्रा-र्यमं, मांसामं, स्त्रायमं, लक्ष्मिनी, पूयासस, चर्षुद-श्याववर्क, चर्षुवर्क, शुक्रागं, शक्रावर्क, सशोक और पयोिक ये दो प्रकारके पाकुरोग, वक्षलवर्क, अक्षिषवर्क, कुभीका और विपथकं ये सब रोग साध्य हैं। सनिमित्त और सनिमित्त ये दो प्रकारके वाद्यरोग हैं।

नेत्ररोग ०६ प्रकारके हैं। इनमेंसे ८ सन्धिगत, २१ वर्कगत, ११ शुकुरागस्थित, ४ ज्वरभागास्थित, १० चर्कगत, १२ दृष्टिगत और २ वाद्यरोग हैं।

नेत्रके सन्धिगतरोग ८ प्रकारके हैं—पूयासस, उप-नाह, पूयास्त्राव, श्लेष्मास्त्राव, रक्तस्त्राव, पित्तास्त्राव, चर्षुवर्क, प्रसजो और कर्मिप्रथि। नेत्रके सन्धिस्थानमें जब पक्षुगो क हो जाता और इनसे प्रतितम्बविधित पुं

निकलता है, तब उसे पूयासस रोग कहते हैं। सुन्दतमें उदरतन्त्रके पहले प्रधायमें जो प्रधाय तब नेत्ररोगका विरह्यत विवरण लिखा है।

प्रत्येक विभिन्न रोगका विषय तत्तद् ग्रन्थमें देखो।

भावप्रकाशके नेत्ररोगाधिकारमें द्रवका विषय इस प्रकार लिखा है,—पपनो अपनो हृद्वाहुलिये दो पञ्जुस नेत्रमण्डलका परिमाण है। पञ्च, वक्ष, श्रोत, लण्य और दृष्टि ये सब इसके पञ्जु हैं तथा दृष्टमें ७८ प्रकारके रोग होते हैं; (चरकके मतानुसार १४ प्रकारके हैं।) दृष्टिमें १२, लण्यगत ४, शुकुरगत ११, वर्कगत २१, पञ्जा-गत २, सन्धिगत ८ और समस्त नेत्रव्यापक १७ प्रकारके रोग हैं।

नेत्ररोगका निदान।—घातपादि द्वारा उत्पन्न स्थितिके स्नान करनेसे जयमतेजका अभिमक, दूरस्थ वस्तुदग्धेन, निद्राविपर्यय अर्थात् दिवानिद्रा और रात्रिजागरण, अन्ध्यादि द्वारा उत्पन्न, नेत्रमें धूलि या धूममये, वमन-वेगधारण, अर्यगतवमन, शुक. आरनाल, जल, कुलपो और उरदके अतिरिक्त श्वेदन, मज्जामुत्रका वेगधारण, अतिमय क्रन्दन, शोकाजन्य सन्ताप, मस्तक पर प्रधात, द्रुतगामी शान पर आरोहण, कर्तुविपर्यय, दंष्ट्रिक चर्षु-प्रयुक्त अधिमाय, अतिरिक्तश्रीप्रसङ्ग, अन्व्यवेगधारण और अतिसुष्म वस्तुदग्धेन इन सब कारणोंसे अनादि दोष कुपित हो कर नेत्ररोग उत्पन्न करने हैं। पूर्वोक्त कारणसे प्रकुपित शोष गिरासमुह द्वारा जर्क देयका प्रायय कर नेत्रपीडादायक होते हैं।

नेत्रदृष्टिका सञ्चय—दृष्टि कण्ठमण्डलके मध्यस्थित मसुरादान अर्थात् प्राथि मसुरके परिमाणको लुगनू नामक कीड़े को जो सो या अन्निकण्ठाकी तरह घातमान, सञ्चिद्र और वाद्यपटलसे अग्रहृत है। यह शीतप्राय अर्थात् शीत क्रियासे प्रगान्त, पञ्चभूतात्मक और चिरस्थायी तेजोमय है। पटल-विवरण—वाद्यपटल रमरत्नाग्रिम, दूषणा मांठा-ग्रित, तोररा-मिदसंश्रित और घोया पटल कासकाश्चि-संस्थित है। पटलसमुहकी स्थिरता नेत्रमण्डलके पार्श्वे पञ्चका एक पञ्च है। पहले पटलमें दोष होनेसे रोगी कभी अस्सट और कभी स्पष्टदृष्टि देखता है। दूसरेमें दोष सञ्चित होने पर स्पष्टदृष्टि दिखाई नहीं पड़ता और कभी अचिका, मयक, शीम, जातक, मण्डल,



सुदुसुहः उष्यं, शीतल तथा पिच्छिल आस्त्राव, संरम्भं पौर पक जाना ये एवं सगोफ नेत्रपाकके लक्षण है। पगोफ नेत्रपाकमें शोफके सिवा भोर दूधरे सब लक्षण देखे जाते हैं। भांगकी आभ्यन्तरिक गिरामे वायुस्थित हो कर दृष्टिको प्रतिबिम्बपूर्वक हताधिमग्य नामक असह्य रोग उत्पन्न होता है। कुपित वायुके दोनों पक्ष भोर भ्रूमं आश्रय कर संचारण करनेसे कभी तो भ्रूमं भोर कभी पक्षमें वेदना होती है, इसीको वातपर्याय कहते हैं। नेत्रवर्णके कठिन तथा रुध्र होनेसे प्रयवा दृष्टिके शीघ्र होनेसे भोर नेत्रको जमीलन करनेमें अत्यन्त कष्ट मालूम होनेसे शुष्काल्पिकाकरीग समझा जाता है। पक्ष वा विदाही द्रव्यके खानेसे पांखोंके सूजन भोर नीहापन लिये लाल हो जानेको जो अस्त्राध्युपित दृष्टि कहते हैं। वेदना ही वा न ही, लेकिन समुचो पांखोंके लाल होनेसे ही गिरोत्पातरोग कहा जाता है। इस प्रकार कुछ दिन रहनेसे पांखोंमें ताम्रवर्णके जैसे धूसू निकलते रहते हैं भोर रोगो देख नहीं सकता। (अशुत उत्तरतम ६ अ०) अगम्य विषय तथा विकिरण उत्पन्न गन्धमें देखो।

नेत्ररोगहन् ( स० पु० ) नेत्ररोगं हन्ति हन-क्विप् । ह्यि-कासीत्थप् ।

नेत्ररोम ( स० स्त्री० ) नेत्रयोः रोम । नेत्रपक्ष, पांखकी विरनी, धरोनी ।

नेत्रपक्ष ( स० स्त्री० ) नेत्रयोर्ष्वभिष्व पाच्छादक । नेत्रच्छद, पांखके पर्दे ।

नेत्रवस्त्रि ( स० स्त्री० ) एक प्रकारकी छोटी पिचकारी ।

नेत्रवारि ( स० स्त्री० ) नेत्रयोगारि । अशुजल, धाम् ।

नेत्रविप् ( स० स्त्री० ) नेत्रयोर्विद् । नेत्रमल, पांखका कीचड़ ।

नेत्रविप ( स० पु० ) नेत्रे विपं यप्य । दिव्यसर्गभेद, एक प्रकारका दिव्यसर्ग जिसकी प्राप्तिमें विप होता है ।

नेत्रसन्धि ( स० स्त्री० ) पांखका कोना ।

नेत्रस्तम्भ ( स० पु० ) नेत्रयोः स्तम्भः इ-तत् । चक्षुर्हयका जमीलनादि व्यापारराहित्य, पांखकी पलकीका स्थिर हो जाना संघर्षात् ठठगा भोर गिरना अन्ध हो जाना ।

नेत्रस्त्राव ( स० पु० ) पांखोंमें पानी बहना ।

नेत्रास्त्रान ( स० स्त्री० ) नेत्रयोः अस्त्रान् । कज्जल, काजल, सुरमा ।

नेत्रामन्द—जययात्रा नामक एक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता । नेत्रान्त ( स० पु० ) नेत्रयोः पन्तः । अपाङ्गदेश, पांखके कोने भोर कानके बीचका स्थान, कनपट्टी ।

नेत्राभिष्यन्द ( स० पु० ) नेत्रयोः अभिष्यन्दः इ-तत् । नेत्ररोगभेद, पांखका एक रोग जो छूतसे फैलता है, पांख भानेका रोग ।

सुशुतमें लिखा है, कि प्रसङ्ग, गात्रसंस्कार, निःश्याम, एक माद्य भोजन, एक शय्या पर शयन, एकत्र उपवेशन, एक वस्त्रपरिधान भोर मास्यप्रभृति सेवन करनेसे कुष्ठ, श्वर, शीघ्र, नेत्राभिष्यन्द भोर भोपमर्गिक रोग एक व्यक्तिसे दूसरे व्यक्तिको हो जाता है, ये सब संज्ञामकरोग हैं ।

सर्वनेत्रगत अभिष्यन्दरोग चार प्रकारका है— वातज, पित्तज, कफज भोर रक्तज । इस रोगमें पांखोंके लाल हो जाते हैं भोर अन्तमें बहुत पोड़ा होता है । वातज-अभिष्यन्दरोगमें सुन्दर शुभमेकी-सो पोड़ा होती है भोर ऐसा जान पड़ता है कि पांखोंमें फिटकरी पड़ो हो । इसमें ठण्डा पानी बहता है, सिर दुखता है भोर शरीरके रंगते खड़े हो जाते हैं ।

वैक्तिक-अभिष्यन्दमें पांखोंमें जलन होती है भोर बहुत पानी बहता है । ठण्डी चीजे रखनेसे चाराम मालूम होता है ।

श्लेष्मिक-अभिष्यन्दमें पांखोंमें भारी जलन पड़तो है मूलन अधिक होती है भोर बार बार गाढ़ा पानी बहता है । इसमें गरम चीजोंसे चाराम मालूम होता है ।

रक्तज-अभिष्यन्दमें पांखोंमें बहुत लाल रहतो है भोर सब लक्षण पित्तज अभिष्यन्दकेसे होते हैं । अभिष्यन्द रोगकी चिकित्सा नहीं होनेसे अधिमग्यरोग होनेका डर रहता है । ( भावप्रकाश ४४४ भाग )

निकिरण—वायुजन्म अभिष्यन्द वा अधिमग्य होनेसे पुरातन दृष्ट, दारु अशुध करे, जोड़े यथाविधि अन्धना प्रयोग भोर गिरोविषयपूर्वक रक्तमोक्षणका विधान है । इसमें तर्पण, पुटपाक, धूम, पापरोतन, गप्य, खेदपरिषेधन, गिरोविरचन, जलधर वा जलोप देगधर यातत्र पण्डुं मांस प्रयया अस्त्राज्जका परिषेधन कार्याय है । दृष्ट, चर्वा, भेद भोर मज्जा अत्रको एक माद्य गरम करके प्रयोग करनेसे यह रोग जाता रहता है । सुशुतमें उपा-



सुदुस्तु हः संष्य, शीतल तथा विच्छिन्न आस्त्राय, संरभ भोर एक जाना ये सब सगोफ नेत्रपाकके लक्षण है। सगोफ नेत्रपाकमें शोफके सिवा भोर दूनरे सब लक्षण देखे जाते हैं। पांखकी आभ्यन्तरिक गिरामे वायुस्थित हो कर दृष्टिको प्रतिबिम्बपूर्वक हताभिमर्श नामक असाध्य रोग उत्पन्न होता है। कुपित वायुके दोनों पक्षभोर भ्रूम में आश्रय कर संचारण करनेसे कभी तो भ्रूम भोर कभी पक्षमें घेदना होती है, इसीको वातपर्याय कहते हैं। नेत्रधर्मके कठिन तथा रुच होनेसे प्रयवा दृष्टिके क्षीण होनेसे भोर नेत्रको उन्मीलन करनेमें अत्यन्त कष्ट मालूम होनेसे शुष्काल्पिकाश्रोग समझा जाता है। पक्ष या घिदाहो द्रव्यके खानेसे पांखके सूत्रने भोर नोत्पापन मिये लाल हो जानेको हो अस्त्राध्युपित दृष्टि कहते हैं। वेदमा हो वा न हो, लेकिन समुधो पांखके लाल होनेसे ही शिरोत्पातरोग कहा जाता है। इस प्रकार कुष्ठ दिन रहनेसे पांखोसे ताम्रधर्मके जैसे धासू निकलते रहते हैं भोर रोगो देख नहीं सकता। (अष्टल उत्तरतम ६ अ०) अगम्य विवरण तथा चिकित्सा तत्सद्गम्यमें देखो।

नेत्ररोगहन् ( स० पु० ) नेत्ररोगं हन्ति हन-क्विप् । दृष्टि-कानौष्ठम् ।

नेत्ररोम ( स० स्त्री० ) नेत्रयोः रोम । नेत्रपक्ष, पांखकी विरनी, धरोनी ।

नेत्रयक्ष ( स० स्त्री० ) नेत्रयोर्वंशमिव प्राच्छादक । नेत्र-च्छद, पांखके पर्दे ।

नेत्रयस्त्रि ( स० स्त्री० ) एक प्रकारकी छोटी विषकारो ।

नेत्रवादि ( स० स्त्री० ) नेत्रयोगादि । अशुजल, धासू ।

नेत्रविष ( स० स्त्री० ) नेत्रयोर्विद । नेत्रमल, पांखका फीसह ।

नेत्रविष ( स० पु० ) नेत्रे विषं यप्य । दिव्यमर्गभेद, एक प्रकारका दिव्यमर्ग जिसकी पांखोंमें विष होता है ।

नेत्रसन्धि ( स० स्त्री० ) पांखका जोना ।

नेत्रस्तम्भ ( स० पु० ) नेत्रयोः स्तम्भः इ-तत् । चक्षुहयका उन्मीलनादि व्यापारराहित्य, पांखको पलकीका स्थिर हो जाना अर्थात् छटना भोर गिरना अर्थ हो जाना ।

नेत्रस्त्राय ( स० पु० ) पांखोंमें पानी बहना ।

नेत्राश्रम ( स० स्त्री० ) नेत्रयोः अश्रमं । कच्छल, काजल, सुरमा ।

नेत्रानन्द—जययात्रा गामक एक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता ।

नेत्रान्त ( म० पु० ) नेत्रयोः पन्तः । अघातदेग, पांखके कोने भोर कानके बीचका स्थान, कमपटो ।

नेत्राभियन्द् ( म० पु० ) नेत्रयोः अभियन्द्ः इ-तत् । नेत्ररोगभेद, पांखका एक रोग जो छूतसे फैलता है, पांख भानेका रोग ।

सुश्रुतमें लिखा है, कि प्रसङ्ग, गात्रसंस्पर्श, निःश्वाम, एक साथ भोजन, एक शय्या पर शयन, एकत्र उपवेशन, एक अक्षपरिधान भोर मास्यप्रभृति सिपन करनेसे कुष्ठ, अक्षर, शोथ, नेत्राभियन्द् भोर शोषमर्गिक रोग एक व्यक्तिसे दूसरे व्यक्तिको हो जाता है, ये सब संक्रामकरोग हैं।

सर्वनेत्रगत अभियान्द्रोग चार प्रकारका है— वातज, पित्तज, कफज भोर रक्तज । इन रोगमें पांखों लाल लाल हो जाती हैं भोर अन्तमें बहुत पीड़ा होती है। वातज-अभियान्द्रोगमें सुई चुभनेकी-सा पीड़ा होती है भोर ऐसा जान पड़ता है कि पांखोंमें फिटकिरी पड़ो हो। इसमें ठण्डा पानी बहता है, सिर दुगुता है भोर शरीरके रंगते खड़े हो जाते हैं।

पित्तज-अभियान्द्रमें पांखोंमें जलन होती है भोर बहुत पानी बहता है। ठण्डो घीजे रखनेसे पाराम मालूम होता है।

कफज-अभियान्द्रमें पांखों भारी जान पड़ती है मूलज अधिक होती है भोर बार बार गाढ़ा पानी बहता है। इसमें गरम-घीजोंसे पाराम मालूम होता है।

रक्तज-अभियान्द्रमें पांखों बहुत लाल रहते हैं भोर मूत्र लक्षण पित्तज अभियान्द्रकेसे होते हैं। अभियान्द्र रोगकी चिकित्सा नहीं होनेसे अधिमर्शरोग होनेका डर रहता है। ( भावप्रकाश ४४ भाग )

चिकित्सा—वायुजस्य अभियान्द्र वा अधिमर्श होनेसे पुरातन एत द्वारा क्षिप्र करे, जोड़े यथाविधि स्नेहका प्रयोग भोर शिरोविषमपूर्वक रक्तमोक्षणका विधान है। इसमें तर्पण, पुटपाक, धूम, पाद्योत्पन्न, मद्य, स्नेहपरिपेक्षा, शिरोविरचन, जलधर वा जलोप देयधर यातन पत्रकें मांस प्रयवा अस्त्राध्यका परिपेक्षा कर्तव्य है। एत, अर्घ्यो, भेद भोर मल्ला सबको एक साथ गरम करके प्रयोग करनेसे यह रोग जाता रहता है। सुश्रुतमें उत्तर-





पैता सन् १८४६ ई०के पहले किसानों नहीं था। उसी सालके ब्रह्म वर मासमें फ़ारासीनी ज्योतिर्विदु लेमिरियर (M. Lorrerier)ने इस ग्रहका पता लगाया। अब तक जितने ग्रहोंका पता लगा है उनमें यह सबसे अधिक दूरी पर है। इसका व्यास ३०००० मील है। सूर्यमें इसकी दूरी २०००००००० मीलके लगभग है, इसीसे इसकी सूर्यके चारों ओर घूमनेमें १६४ वर्ष लगते हैं अर्थात् नेपालका एक वर्ष हमारे १६४ वर्षोंका होता है। जिस प्रकार पृथ्वीका उपग्रह चन्द्रमा है, उसी प्रकार नेपालका भी एक उपग्रह है। खगोल वेदों।

नैपथ्य (सं० स्त्री०) नी-निच्, गुणः, नैः नेता तस्य पथम् । १ विय । २ भूपथ । ३ वेगस्थान, नृत्य, अभिनय, नाटक आदिमें परदेके भोतरका वह स्थान जिसमें नट नटी नाना प्रकारके वेग सजते हैं।

नक्षत्रनिर्णयमें नैपथ्य विधानका विषय इस प्रकार लिखा है। अभिनयमें नैपथ्यविधि विविध प्रयोजनीय है। नैपथ्यविधि चार प्रकारकी है—पुस्त, फलहार, संजोव और अङ्गरचना। फिर पुस्त-नैपथ्य ३ प्रकारका है, सन्धिमा, भाजिमा और चेष्टिमा। वक्ष वा चर्मादि हारा जो दृश्य बनाया जाता है, उसका नाम सन्धिमा है। वक्ष इत्यदि यन्त्रघटित हो, तो उसे भाजिमा और यदि इत्य चेतमान हो, तो उसे चेष्टिमा कहते हैं। माल्य, फलहार और वक्ष्यादि द्वारा यथायोग्य तत्सद्वृत्तोंभाके लिये जो दृश्य बनाया जाता है, उसका नाम फलहारनैपथ्य है। नैपथ्यके जो प्रविषयवेग होता है उसे संजोव कहते हैं।

माल्य और फलहारदि तथा खेन, पौन, नील और कोष्ठितादि वक्ष्यादारा यथायोग्य स्थानमें यथावय भावने जो विन्यास किया जाता है, उसे अङ्गरचना कहते हैं।

( नर्तकतिः )

नेपाल—भारतवर्षके उत्तरमें अवस्थित एक स्वाधीन राज्य। इस राज्यके उत्तरमें तिब्बत-राज्य, पूर्वमें बंग-रैजी-खरक सिक्किमराज्य, दक्षिणमें बंगरैजाधिकृत हिन्दु-स्थान और पश्चिममें अङ्गरैजाधिकृत कुमायुन और रोहिता-खण्डप्रदेश हैं। १८१५ ई०के पहले कुमायुन और और उसके पश्चिम-मत्त नदीके तीर तक इन राज्यकी

सीमा विस्तृत थी। १८१६ ई०के सन्धिपूर्वके ये सब स्थान बंगरैजोंके अधिकारमें आ गये हैं। पश्चिममें: कानो वा सरयू नदी, दक्षिणमें पयोध्याके मध्य डुण्डवा पर्वत, चम्पारणके मध्य सोमेश्वर पर्वतकी उच्चभूमि तथा पूर्वमें मेघोन्दी और गङ्गा पर्वत ही नेपाल और अङ्गरैजी-राज्यके मध्य सीमा-रेखास्वरूप निर्दिष्ट हैं।

शक्तिसङ्ग्रहमतन्त्रमें नेपालकी सीमा इस प्रकार लिखी है—

“जदेश्वर समारम्भ योगेशान” महेश्वरी ।

नेगलदेशी देवेशि सापदानं मुक्तिदिः ॥”

जेश्वरसे ले कर योगेश्वर तक नेपाल देय माना गया है। यह स्थान माधकीका सिद्धिपद है।

नेगलनामधी उपपत्ति ।

हिमालय पर्वतस्य तटदेशके जिस पार्श्वतोय पार्श्वमें गोर्खाजातिका वास है, उसे तिब्बतोय और हिमालयके उपरिस्थ अहिन्दू पार्श्वराज्यातिका भाषामें ‘पाल’ देय कहते हैं। वर्त्तमान नेपालराज्यके पूर्वांश और सिक्किम प्रदेशकी वहाँकी आदिम पक्ष्य सेववाजाति ‘नि’ कहती थी। सेववा, निवार और अपरापर कई एक परस्पर संलग्न जातियोंकी चैन-भारतोय भाषामें ‘ने’ शब्दका अर्थ ‘पर्वत गुहा है जहाँ गृहादिके लैसा पाथय ले कर मनुष्य रह सकते हैं।’ तिब्बत और ब्रह्ममें तथा लामाओंको भाषामें ‘नि’ शब्दका अर्थ है ‘पवित्र गुहा वा देवताके लक्ष्णसे रचित पवित्र स्थान वा पोठ।’ इससे महजमें अनुमान किया जा सकता है कि गोर्खाजातियोंके वासभूमि हिमालयतटस्थ पासदेशमें जहाँ कापाका सूर्वा और ख्यम्भुनाय प्रभृति ‘नि’ अर्थात् पवित्र तीर्थ स्थान है, उसी समष्टिकी नेपाल ( अर्थात् पालराज्यात्मगत पवित्र तीर्थ वा वासभूमि ) कहते थे। फिर किमो किमोका कहना है, कि इस पाल देशके जिन भागमें निवारजातिका वास था, वह पहले ‘नि’ कहलाता था।

✽ तिब्बतोय भाषामें ‘पाठ’ शब्दका अर्थ है पथ। हिमालयके इस लक्ष्णमें पथमाते अनेक पथ पाये जाते हैं, इस कारण वे लोग इस स्थानको पाठदेश कहते थे।

† An account of this Staps See Proc. of the Bengal Asiatic Society 1892.



मन्दिर नवकोट शहरमें पढ़ता है। किन्तु प्रतिवर्ष तुपारके गल जाने पर जब मनुष्य यहाँ घाने लगते हैं, तब दोनों नदीके सङ्गम-स्थल पर लम्बे लम्बे तपते और खुं-पुल्लत पर्वतराशि द्वारा एक मन्दिर बना कर उभी-में देवोकी पूजा की जाती है। कहते हैं, कि देवोकी प्रतिमा पहले इसी स्थान पर थी पोछे स्रग्नादेयसे नव-कोटमें स्थानान्तरित हुई। टाढ़ी वा त्रिगुलगङ्गाका स्वभावतः वेग इतना तेज है और वर्षाके समय उसका लज इतना बड़ जाता है, कि दोनों किनारे टूट फूट जाते हैं। इसी कारण देवीने स्रग्नादेयसे अपना प्रतिमा स्थानान्तरित करा ली। गण्डक भववा-हिका जिन चौबोस सुद्र खण्डोंमें विभक्त है वा पहले जिस चौबीसोराजका सन्नेख किया गया है वह घर्षरा-भववाहिकाके पत्तगंत याईसी राज्याधिपति सुमसा-राजके प्रधान था। उन राज्योंके नाम ये हैं,—टानाहुं, गुलकोट, मालोभूम, गतहुं, गडहुं, पोखरा, भङ्कोट, रंदिं, घेरिं, घोवार, बालवा, धेतुल, पात्या, गुलमी, पचिम नवकोट, खवि वा खवि, इया, धरकोट, सुपि-कोट, घिदि, सलियाना, विघा, पैसान, लहहन, दं, कलि, लमसुङ्ग और प्रथम। ये सब सभी गोर्खाराज्य-के पत्तानि विष्ट हुए हैं। गोर्खाोंने समस्त गण्डक-भववाहिकाे मालोभूम, खवि, पत्या और गोर्खा इन चार भागोंमें विभक्त कर लिया है। मालिभूम प्रदेश ठीक घबकगिरिके नोचे भरिगर नदी तक विस्तृत है। इसकी राजधानी बिन्-महर नारायणी नदीके किनारे बसा हुआ है। खविप्रदेश मालिभूमके दक्षिणपूर्वमें पड़ता है। पत्याप्रदेशका विस्तार ज्यादा नहीं होने पर भी वह सबसे प्रयोजनोप विभाग है। यह बङ्गरेजी राज्य गोरख-पुरजिल्लेके सोमात्ममें अवस्थित है। इसके उत्तरमें नारायणीनदी बहती है और निम्नभागमें गोरखपुरसे ठीक उत्तर "धेतुलवास" नामक तराई प्रदेश है। यह तराई भयोध्याके पत्तगंत तुलसोपुरसे ले कर गण्डक नदीके पचिम पासी शहर तक विस्तृत है। शासकत्वमें पर्वतका निम्नप्रदेश और दक्षिणार्ध परिध्या है। पचिम नवकोट विभाग गण्डक नदीके पचिममें अवस्थित है। यह पत्या प्रदेशका ही एक भंग है। वर्त्तमान गोर्खाोंने

पूर्वप्रथम राजपूतगण १२वीं शताब्दीमें जब सुसल-मानसे विताहित हुए, तब वे इसी प्रदेशमें आ कर रहने लगे थे। पोछे वे लोग श्वेतगण्डकोके किनारे लमसुं प्रदेशमें जा बसे। पत्यानगर ही प्रधान शहर है, उसके बाद धेतुल और गुलमी शहर है। पत्यानगरसे २० कोस पूर्व तानसेन शहर अवस्थित है जहां पत्या-प्रदेशकी सेना रहती है। यहां एक दरवार, बाजार और टकशाल है। इस टकशालमें तबिका घिका टाला जाता है। पत्या प्रदेशमें गुरांजातिके लोग सुतो कपड़े बुनते तथा तरह तरहका व्यवसाय करते हैं।

गोर्खाराज्य गण्डक-भववाहिकाके पूर्वोत्तर भंगमें त्रिगुलगङ्गा और मरस्यागढ़ी दोनों नदियोंके बीच अव-स्थित है। राजधानी गोर्खानगर जमुमानवनजङ्ग पर्वत-के ऊपर घरमढ़ी नदीके किनारे नवाहुंघा है और काठ मण्डुनगरसे १२ कोस दूर पड़ता है। गोर्खाप्रदेशके पचिम-दक्षिणार्धमें पोखरा उपत्यका है। इस उपत्यकाका प्रधान शहर पोखरा श्वेतगण्डकीनदीके किनारे अवस्थित है। यह शहर बहुत बड़ा है, लोकसंख्या भी कम नहीं है। इस स्थानके ताम्बद्रथका व्यवसाय प्रसिद्ध है। यहां प्रति वर्ष एक मेला लगता है जिसमें समस्त पोखरा उपत्यकाके उत्पादित मय्य तथा ताम्ब द्रव्यादि बिकने जाते हैं। नेपाल उपत्यकासे पोखरा उपत्यका बहुत बड़ी है। यहां बहुतसे ऋद हैं। सर्वापिचा हहन् ऋद इतना बड़ा है कि उसका प्रदक्षिण करनेमें दो दिन लगते हैं। इन सब ऋदोंसे पश्चिमाय दक्षुत गहरी हैं। इनके किनारेसे जलस्रुत माय १५+२०० फुट निम्न है। सुतरां क्षिप्रकार्यमें इन सब ऋदोंसे कोई उपकार नहीं होता। पत्या और धेतुल प्रदेशके मध्य गण्डकनदीके पचिमी किनारे गोडतासोमढ़ी नामक उपत्यका और गण्डकके पूर्व धितवन वा धेतनमढ़ी नामक उपत्यका तथा इस-के उत्तर मकवन वा माङ्गनमढ़ी नामक उपत्यका विशेष प्रसिद्ध है। धितवन उपत्यकामें रामी नदी बहती है। यह भीमफिड़ी नामक स्थानसे कुछ पूर्व शिगपाचि पर्वत-से निकल कर भीमगर पर्वतके उत्तर गण्डकनदीमें मिलती है। इस नदीके ऊपरमें ही डिटवारा शहर बसा हुआ है। धितवन उपत्यकामें बड़े बड़े सवाके ननकी



कोशीके पचीन दो टन सेना एवं दा रहती हैं। प्रकृत तराई चार जिल्लों विभक्त है, १ बटा और पारभा, २ रोचत, ३ शलय-समागे और ४ मोहतारी। गण्डकके मोहस्य, प्रथम जिल्लेके मध्य हो कर ही काठमण्डूका रास्ता गया है। विशोलियाके निकटवर्ती पारभा नामक स्थानमें १८१५ ई०को कप्तान सिलवी परास्त हुए थे और उनको दो वमान शत्रुओं ने हार खगो रीं। रोचत जिला पारभाको भीमासे ले कर बाघमती तक विस्तृत है। यामिनीनदीके किनारे रोचत जिल्लेको सीमा पर बाघमतीसे ७॥ कोस पश्चिम सिमरोननगरका ध्वंसावशेष नजर आता है। यह ध्वस्त स्थान बहुविस्तृत और गभीर बनाच्छादित है। ऐतिहासिक चंद्रशेखरका परिष्कार होना उचित है। इस ध्वंसावशेष स्थानमें प्राचीन मिथिला राज्यकी राजधानी थी। उस समय मिथिला राज्य पूर्व-पश्चिममें गण्डक और उत्तर-दक्षिणमें नेपालकी पर्वतमालासे गङ्गातोर तक विस्तृत था। १०८० ई०में मिथिलाराज नान्यपदेवसे सिमरोननगर घमाया गया। ११२२ ई०में दिकोके सम्राट् गयासुद्दौन तुगनने नान्यपदेश्य हरिसिंहदेवको परास्त कर सिमरोननगर ध्वंस कर डाला। हरिसिंहदेव नेपालको भाग गये और नेपाल जय करके वहीके राजा बन बैठे। बाघमतीके किनारे बहारवार घाम बहुत स्थाव्यपद और शुक-स्थान है। १८२४ ई०के प्रथम नेपालयुद्धमें मेजर ब्राडवने सबसे पहले इसी स्थान पर आक्रमण किया और इसे जीत लिया।

शलयसमागे जिला बाघमतीसे कमजानदे तक विस्तृत है। इस जिल्लेके सीमान्तमें प्राचीन नगर जनकपुरका भग्नावशेष है। मोहतारी जिला कामलासे कोशी तक फैला हुआ है। कोशीके दक्षिण किनारे सीमान्तके निकट भागुरवा नामक स्थानमें सेनाबाघ है। कोशीके पूर्वसे सीधीनदी तक तरौयर नामक मोरङ्ग समतल देग है। इस देगको भूमि कर्दमय है। मलेरियाका यहाँ विशेष प्रकोप रहता है। तराईके मध्य जितने देग हैं, उनमेंसे यह देग सर्वापेक्षा पलाय्यकर है। नदियोंका जन भी बहुत दूषित है, यहाँ तक कि पनेक नदियोंका जल विपात है। मोरङ्ग छोड़ कर तराईकी अन्यत्र भूमि फर्यात खरा है। यहाँ तरङ्ग तरङ्गका शब्द, ईश,

पकोम और तमाकु भी काफी उपजता है। कोशीके पश्चिमांगके जङ्गलमें हाथीकी संख्या दिनां दिन कम होती आ रही है। मोरङ्गमें पानी बहुत हाथी मिलते हैं, लेकिन पहाड़के लोवां नहीं।

नेपाल-उपत्यका।  
 योसाईं स्थान पर्यंतके अर्धतंत धैर्यपर्वतके ठोक दक्षिण सहगण्डकी और सन्नर्वागिकोसे मध्य जो उच्च उपत्यका प्रदेश वर्तमान है, उसीका नाम नेपाल उपत्यका है। यह उपत्यका त्रिकोणरूप है। इसकी सम्झाई पूर्व-पश्चिममें १० कोस और चौड़ाई उत्तर-दक्षिणमें ७॥ कोस है। इस उपत्यकाके पश्चिम-त्रिशुलगङ्गानदी और पूर्वमें मिलाची वा इन्द्राणीनदी है। उपत्यकाके चारों ओर पर्वतवैष्टित है जिनमेंसे उत्तरमें धैर्य पर्वतमालाके शिवपुरी, काकपो, पूर्वमें महादेव-पोखरशिखर, देव चौका, पश्चिममें नागार्जुनपर्वत और दक्षिणमें श्रेयपातो-पर्वतमालाके चम्पूगिरि, चम्पादेवो और फुलचोका पादि पर्वतशिखर ठोक पर्वतखण्डपर्वत अवस्थित है। नेपाल उपत्यका को समुद्रस्तरसे ४५०० फुट लंबो है। नेपाल उपत्यकाके चारों ओर छोटी छोटी पर्वतराक्षेनेके कारण उनमें भी चारों ओर छोटी छोटी उपत्यका है। इन सब उपत्यका उपत्यकाओंके मध्य दक्षिण-पश्चिममें चित्तलङ्ग उपत्यका, पश्चिममें धुला और कालपूरउपत्यका, उत्तरमें नवकोट उपत्यका और पूर्वमें बनेपा उपत्यका उल्लेखयोग्य है।

नेपालकी गिरिमाता।  
 नेपालउपत्यकाके चतुष्पार्श्ववर्ती पर्वतमाला विनियम प्रसिद्ध है। इन सब पर्वतशिखरोंके परस्पर संयुक्त रहनेके कारण गिरियय और नदी धारा छोड़ कर पन्य दियासे इस उपत्यकामें प्रवेश नहीं कर सकती। उत्तरतय शिवपुरी पर्वत षाठ हजार फुट लंबा है। इसका शिखरदेग शाल और सिन्दूरसोमि समाच्छेद्य तथा चम्पास्य पर्वतको अपेक्षा एतद्ग है। पश्चिमतय काकपो पर्वतके साथ शिवपुरी पर्वतका योग है। दोनोंके मध्य हो कर 'सन्नला' नामक गिरि पय गया है। काकपो पर्वतको ऊँचाई ७ हजार फुट है।



कक्षाके अधीन दो टन सेना एवं दो रहती हैं। प्रकृत-  
 -तराई चार जिलोंमें विभक्त है, १ बटा और पारसा, २  
 रोचत, ३ मलय-समाधि और ४ मोहतारी। गण्डकके  
 श्रीहृदय प्रथम जिलेके मध्य हो कर श्री काठमण्डूका  
 रास्ता गया है। विगोत्रियाके निकटवर्ती पारसा नामक  
 स्थानमें १८५६ ई०को कप्तान सिन्धी परास्त हुए थे और  
 उनको दो व मान शत्रुओंके हाथ लगे थीं। रोचत जिला  
 पारसाको सीमासे ले कर बाघमती तक विस्तृत है।  
 यामिनीनदीके किनारे रोचत जिलेकी सीमा पर बाघ-  
 मतीसे ७० कोस पश्चिम सिमरोननगरका ध्वंसावशेष  
 नजर आता है। यह ध्वस्त स्थान बहुविस्तृत और गभीर  
 वनाच्छादित है। ऐतिहासिक दृष्टिसे इसका परिष्कार  
 होना उचित है। इस ध्वंसावशेष स्थानमें प्राचीन  
 मिथिला राज्यकी राजधानी थी। उस समय मिथिला  
 राज्य पूर्व-पश्चिममें गण्डक और उत्तर-दक्षिणमें नेपालकी  
 पर्वतमालासे गङ्गातीर तक विस्तृत था। १०८० ई०में  
 मिथिलाराज नान्यपदेवसे सिमरोननगर बसाया गया।  
 १३२२ ई०में दिल्लीके सम्राट् गयामुद्दौन तुगत्रकने नान्यप  
 देवसे हरिसिंहदेवको परास्त कर सिमरोननगर ध्वंस  
 कर डाला। हरिसिंहदेव नेपालको भाग गये और नेपाल  
 जय करके यहींके राजा बन बैठे। बाघमतीके किनारे  
 बहारवार याम बहुत स्वास्थ्यप्रद और शुक-स्थान है।  
 १८१४ ई०के प्रथम नेपालयुद्धमें मेजर ब्राडसन सबसे पहले  
 इसी स्थान पर आक्रमण किया और इसे जीत लिया।

मलयसमाधि जिला बाघमतीसे कमलानदी तक  
 विस्तृत है। इस जिलेके सीमान्तमें प्राचीन नगर जनक-  
 पुरका भग्नावशेष है। मोहतारी जिला कमलासे कोयो  
 तक फैला हुआ है। कोयोके दक्षिण किनारे सीमान्त-  
 के निकट भागुरवा नामक स्थानमें सेनावास है। कोयो-  
 के पूर्वसे सीधीनदी तक तरौवर नामक मोरङ्ग समतल  
 देश है। इस देशको भूमि कर्दमय है। मत्तैरियाका  
 यहाँ विशेष प्रकोप रहता है। तराईके मध्य जितने देश  
 हैं, उनमेंसे यह देश सर्वोत्तम पलायक्यकर है। नदियों-  
 का जल भी बहुत दूषित है, यहाँ तक कि अनेक नदियों-  
 का जल विषाल है। मोरङ्ग छोड़ कर तराईकी अन्यत्र  
 भूमि पर्यन्त उर्वरा है। यहाँ तराई तराईका मस्य, ईरु,

पकोम और तमाकू भी काफी उपजता है। कोयोके  
 पश्चिमार्धके जङ्गलमें हाथीकी संख्या दिनों दिन कम  
 होती आ रही है। मोरङ्गमें पशु बहुत हाथी मिलते हैं,  
 लेकिन पक्षिके जैसा नहीं।

नेपाल-उपत्यका।  
 गोसायँथान पर्यंतके पर्यन्त ध्वंसावशेषके लोक  
 दक्षिण मलयगण्डकी और सप्तकोशिकीसे मध्य जो उच्च उप-  
 त्यका प्रदेश वर्तमान है, अभीका नाम नेपाल उपत्यका  
 है। यह उपत्यका त्रिकोणरूप है। इसकी उत्तरार्ध पूर्व-  
 पश्चिममें १० कोस और चौड़ाई उत्तर-दक्षिणमें ७० कोस  
 है। इस उपत्यकाके पश्चिम त्रिशुलगङ्गानदी और पूर्वमें  
 मिलाची या इन्द्रापोनदी है। उपत्यकाके चारों ओर  
 पर्यन्त विस्तृत है जिनमेंसे उत्तरमें ध्वंसावशेष पर्यन्तमालाके  
 शिवपुरी, काकण्डो, पूर्वमें महादिव-पोखरशिवपुर, देव  
 चौका, पश्चिममें भागलुंगपर्यन्त और दक्षिणमें शिवपुरी-  
 पर्यन्तमालाके चन्द्रगिरि, चम्पादेवों और कुलचौका आदि  
 पर्यन्तशिवर ठीक पर्यन्तस्वरूपमें अवस्थित है। नेपाल-  
 उपत्यका जो समुद्रपृष्ठसे ४५०० फुट ऊँचा है। नेपाल-  
 उपत्यकाके चारों ओर छोटे छोटे पर्वतराईके कारण  
 उनमें भी चारों ओर नौटो छोटी उपत्यका है। इन  
 सब उपत्यका उपत्यकाओंके मध्य दक्षिण-पश्चिममें शिव-  
 लङ्ग उपत्यका, पश्चिममें धुला और कालपूरुपत्यका, उत्तर-  
 में नवकोट उपत्यका और पूर्वमें बनेपा उपत्यका उल्लेख-  
 योग्य है।

नेपालकी गिरिमाता।  
 नेपालउपत्यकाके उत्तरार्धवर्ती पर्वतमाला विशेष  
 प्रसिद्ध है। इन सब पर्वतशिखरोंके परस्पर संयुक्त रहने-  
 के कारण गिरिपथ और नदी धारा छोड़ कर पथ दिशा-  
 से इस उपत्यकामें प्रवेश नहीं कर सकते।  
 उत्तरतः शिवपुरी पर्वत श्रेणी उत्तर फुट ऊँचा है।  
 इसका शिखरदेश माल और सिन्धूरहोनेसे सम्राज्य तथा  
 पश्चिम पर्वतको अपेक्षा हल्का है।  
 पश्चिमतः काकण्डो पर्वतके साथ शिवपुरी पर्यन्तका  
 योग है। दोनोंके मध्य हो कर 'मन्ना' नामक गिरि-  
 पथ गया है। काकण्डो पर्वतको ऊँचाई ७ हजार  
 फुट है।





क्षेत्रिके अधीन दो टन सेना एवं दार रहती हैं। प्रकृत-  
 तराई चार-जिल्लोंमें विभक्त है, १ बटा और पारना, २  
 रोचत, ३ गन्ध-सप्तमी और ४ मोहतारी। गण्डकी  
 कोटस्थ प्रथम जिल्लेके मध्य हो कर ही काठमाण्डूका  
 रास्ता गया है। विभोसिवाके निकटवर्ती पारना नामक  
 स्थानमें १८५५ ई.को किमान सिलखी परास्त हुए घे और  
 उनको दो वमान गतु भी है हाथ लगी थीं। रोचत जिला  
 पारसाको सीमासे ले कर बाघमती तक विस्तृत है।  
 यामिनीनदीके किनारे रोचत जिल्लेको सीमा पर बाघ-  
 मतीसे ७० कोस पश्चिम सिमरोननगरका ध्वंसावशेष  
 नजर आता है। यह ध्वंस स्थान बहुविस्तृत और गभीर  
 वनाच्छादित है। ऐतिहासिक सर्वेगण्डे इसका परिष्कार  
 होना उचित है। इन ध्वंसावशेष स्थानमें प्राचीन  
 मिथिला राज्यकी राजधानी थी। उस समय मिथिला  
 राज्य पूर्व-पश्चिममें गण्डक और उत्तर-दक्षिणमें नेपालको  
 पर्वतमालासे गङ्गातोर तक विस्तृत था। १०८० ई.में  
 मिथिलाराज नान्यपदेवसे सिमरोननगर बसाया गया।  
 १३२२ ई.में दिल्लीके सम्राट गयासुद्दौल तुगजकीने नान्यप  
 देवको हरिसिंहदेवको परास्त कर सिमरोननगर ध्वंस  
 कर डाला। हरिसिंहदेव नेपालको भाग गये और नेपाल  
 लय करके वहीके राजा बन बैठे। बाघमतीके किनारे  
 बहारवार घाम बहुत खाल्पवमद और शुष्कस्थान है।  
 १८१४ ई.के प्रथम नेपालयुद्धमें मेजर ब्राडसनसे सबसे पहले  
 इसी स्थान पर आक्रमण किया और इसे जीत लिया।

गन्धसप्तमी जिला बाघमतीसे कमलानदी तक  
 विस्तृत है। इस जिल्लेके सीमान्तमें प्राचीन नगर जनक-  
 पुरका भग्नावशेष है। मोहतारी जिला कमलासे कोघो  
 तक फैला हुआ है। कोघोके दक्षिण किनारे सीमान्तर-  
 के निकट भागुरवा नामक स्थानमें सेनावास है। कोघो-  
 के पूर्वसे मीचीनदी तक तरौवर नामक मोरङ्ग समतल  
 देग है। इस देगको भूमि कर्दममय है। मलेरियाका  
 यहाँ विषम प्रकोप रहता है। तराईके मध्य जितने देग  
 हैं, उनमेंसे यह देग सर्वोपेक्षा पलायन्यकर है। नदियों-  
 का जल भी बहुत दूषित है, यहाँ तक कि पत्तन नदियों-  
 का जल विषाल है। मोरङ्ग छोड़ कर तराईको पत्तन-  
 भूमि पायलत सर्वरा है। यहाँ तराई तराईका मध्य, ईर,

पकोम और तमाकू भी काफी उपजता है। कोघोके  
 पश्चिमार्धके जङ्गलमें हाथीकी संख्या दिनों दिन कम  
 होती जा रही है। मोरङ्गमें अभी बहुत हाथी मिलते हैं,  
 लेकिन पहलेके जैसा नहीं।

नेपाल-उत्तरपक्षा।  
 गोसाइँस्थान पर्वतके अन्तर्गत धैयदुर्गपर्वतके लोक  
 दक्षिण सप्तगण्डकी और सप्तकोशिकीके मध्य जो उच्च उप-  
 त्यका प्रदेश वर्तमान है, उनीका नाम नेपाल उपत्यका  
 है। यह उपत्यका विषोषाङ्ग है। इसकी सम्पूर्ण पूर्व-  
 पश्चिममें १० कोस और चौड़ाई उत्तर-दक्षिणमें ७० कोस  
 है। इस उपत्यकाके पश्चिम तिशुलगङ्गानदी और पूर्वमें  
 मिलाथी या इन्द्रापोनदी है। उपत्यकाके चारों ओर  
 पर्वतवर्धित है जिनमेंसे उत्तरमें धैयदुर्ग पर्वतमालाके  
 शिवपुरो, काकब, पूर्वमें महादेव-पोखरशिखर, देव  
 चौका, पश्चिममें नागार्जुनपर्वत और दक्षिणमें शिवपानी-  
 पर्वतमालासे चन्द्रगिरि, चम्पादेशी और कुलचोका पादि  
 पर्वतशिखर ठीक पर्यंतस्वरूपमें व्यवस्थित है। नेपाल-  
 उपत्यका जो समुद्रस्तरसे ४५०० फुट लंबी है। नेपाल-  
 उपत्यकाके चारों ओर छोटी छोटी पर्वतराईके कारण  
 इनके भी चारों ओर छोटी छोटी उपत्यका हैं। इन  
 सब उपत्यकाके उपत्यकाओंके मध्य दक्षिण-पश्चिममें चित्त-  
 लङ्ग उपत्यका, पश्चिममें भूना और कालपुत्रउपत्यका, उत्तर-  
 में नन्दीकोट उपत्यका और पूर्वमें बनेपा उपत्यका उल्लेख-  
 योग्य है।

नेपालकी गिरिमाता।

नेपालउपत्यकाके बहुप्यायवर्षीय पर्वतमाला विनिय  
 प्रसिद्ध है। इन सब पर्वतशिखरोंके परस्पर संयुक्त रहने-  
 के कारण गिरिपथ और नदी घाटा छोड़ कर अन्य दिमा-  
 ने इस उपत्यकामें प्रवेश नहीं कर सकते।

उत्तरस्थ शिवपुरो पर्वत षाठ हजार फुट लंबा है।  
 इसका शिखरदेग घाम और सिन्दूररूपमें अमाच्छन्न तथा  
 चम्पान्य पर्वतको अपेक्षा हृत्स है।

पश्चिमस्थ काकबो पर्वतके साथ शिवपुरी पर्वतका  
 योग है। दोनोंके मध्य हो कर 'सप्तता' नामक गिरि  
 पथ गया है। काकबि पर्वतको अर्चाई ७ हजार  
 फुट है।

भयंका बड़ी बड़ी घाटीका जङ्गल ही अधिक है । इन सब जङ्गलोंमें गेडा अधिक संख्यामें पाए जाते हैं । पश्चिम घोर मध्य उपत्यकाके समस्त प्रधान शहरोंके मध्य ही कर एक बड़ी मड़क बनी गई है । यह सड़क काठ-मण्डूने नवकोट, गोर्खा, टानाहुँ (उत्तरमें एक शाखा द्वारा लम्बु), पोखरा, शतदु, तानसेन, पंथा दक्षिणमें एक शाखा द्वारा बैतुल), गुविम, पेताना घोर साक्षि-याना होती हुई दोती (दोपैत) तक चली गई है । योतिसे जगरकोट घोर लुमला तक एक शाखा है ।

१ पूर्व उपत्यका वा कोशी-भववाहिका प्रदेश—यह भववाहिका साधारणतः 'सप्तकोशिकी' नामसे मगङ्गर है । मिलसी वा इन्द्राणी, भुटियाकोशी, तांवा (ताम्ब) कोशी, निरु, दुधकोशी, परुण घोर तामोर वा ताम्बर नामक मात्र उपनदियोंके योगसे कोशी वा कौशिकी नदी उत्पन्न हुई है । ये साती नदियां तुधारक्षेत्रसे निकल कर प्रायः समान्तर भावमें बहती हुई वर्षेदा वा बहुद्वार नामक स्थानमें मिल गई हैं । पीछे कोशी वा कौशिकी नाम धारण कर पञ्चरेजी राज्य पूर्णिया जिलेमें जा कर राज-महल पर्यंतके निकट गङ्गामें मिली है । मिलसी वा इन्द्राणी नदी भुटियाकोशीके साथ मिलती है । ताम्बा-कीशी, सिपु घोर दुधकोशी ये तीनों नदियां सङ्गीची (स्वर्णकोशी)में गिरती हैं । अनन्तर ये दो युक्त नदियां तथा परुणा घोर ताम्बर बहुद्वारघाटमें जा कर मिल गई हैं । परुणानदी द्वारा कोशी-भववा-हिका प्रदेश दो भागोंमें विभक्त हुआ है । परुणके दाहिने किनारे दुधकोशी तक जो भूखण्ड विस्तृत है, उसे किरातदेश घोर बाएँ किनारेके भूखण्डको लिम्बु-याना कहते हैं । यह प्रदेश पुनः छोटी छोटी धावन चुर्धमें विभक्त है । प्रत्येक चुर्धमें चार पांच ग्राम लगते हैं । लिम्बुयाना पहले सिक्किम राज्यके अन्तर्भूत था । पीछे राजा पृथ्वीनारायणसे मदाके लिये नेपाल राज्यमें मित्रा दिया गया । इस प्रदेशकी बीजापुरमढ़ी उपत्यकामें धोला-पुर शहर एक प्रसिद्ध स्थान है ।

कोशी-भववाहिकाके दक्षिण जो तराई है, उसीको प्रधानतः नेपाल तराई कहते हैं । यह तराई दो भागोंमें विभक्त है, अङ्गल तराई घोर प्रकृत तराई ।

नेपालकी तराई ।

नेपालतराई पश्चिममें घोरका नदीसे ले कर पूर्वमें भीमो-नदी तक विस्तृत है । इसका विस्तार ११० कोस के लगभग है । इसके उत्तरमें चेरियाघाटी पर्वत-माला घोर दक्षिणमें पञ्चरेजी राज्य पूर्णिया, तिर-हुत, चम्पारण-पादि जिलोंके सीमानामें समथरायको सीमानिष्ठपक स्तम्भावली है । जहाँ कोशी नदी नेपाल तराई होती हुई पंगरेजी राज्यमें प्रवेश करती है, वहाँ नेपाल तराईका विस्तार केवल ६ कोस मात्र है घोर पश्चिम १० कोससे कम नहीं होगा । यह द्वा कोस विस्तृत जमोन लम्बा-लम्बी दो भागोंमें विभक्त है । उत्तरांगमें चर्पातु चेरियाघाटी पर्वतमालाके दक्षिण गण्डक-तीरसे कोशी तीर तकके स्थानको भवर वा गालवन कहते हैं । विमोल्या नामक स्थानके पश्चिमसे गालवन-का विस्तार क्रमशः थोड़ा होता गया है । इस वनमें जो कोशीका वास है, वंश प्रायः नहींके समान है, केवल नदीके किनारे जहाँ प्रावादी हुई है, वहाँ कहीं कहीं पर एक दो ग्राम देखनेमें पाते हैं । गालवनमें शाल, शीशम, देवदार पादि बड़े बड़े वृक्ष हैं । चेरियाघाटी पर्वत-मालाके ऊपर ये सब वृक्ष खूब बड़े बड़े होते हैं । गण्डक घोर मोचीनदीके मध्य बाधमती वा विष्णु मती, कमला, कोशी छोड़ कर अन्य सभी नदियां तराईके मध्य शोषकालमें पंढल पार करती हैं । बहुत-सी नदियां ऐसी हैं जो शीष्मकालमें बहुत घोष हो कर भूगर्भमें लुप्त हो जाती हैं । किन्तु वन पार कर वे पुनः बहती देख पड़ती हैं । वर्षाके समय इन सब नदियोंका प्रवाह सर्वत्र एक-सा है ।

नेपाल-तराईके दक्षिणार्धमें चर्पातु गालवनके दक्षिण प्रकृत तराई-भूमि अवस्थित है । घोरकासे कमला नदी तक इन तराईयोंका विस्तार अधिक है घोर कमला से कोशी तक कम होता गया है । कोशीसे पूर्व भीमो-पर्यन्त तराईप्रदेशको मोरङ्गदेश कहते हैं । इसका विस्तार २॥ कोससे अधिक कहीं भी नहीं है । ये सब तराईप्रदेश नेपाल-राजामें प्राणित नहीं होते । यद्यपि गालवनका पञ्चाध्व नामक स्थानमें रहते हैं । अन्त-रङ्ग-विमोल्यासे कुछ पूर्वमें पड़ता है । यहाँके शहर-

क्षतीके पधोन दो टन सेना संयदा रहती है। प्रकृत तराई चार जिल्लों विभक्त है, १ बटा पौर पारना, २ रोचत, ३ शलय-समागि पौर ४ मोहतारी। गण्डकके कोठस्थ प्रथम जिल्लेके मध्य हो कर ही काठमाण्डूला रास्ता गया है। विगोमियाके निकटवर्ती पारना नामक स्थानमें १८५३ ई०को कप्तान सिलवी परास्त हुए ये पौर उनको दो कमान शत्रुओंके हाथ लगे थीं। रोचत जिन्ना पारनाको मोमामे ले कर वाचमती तक विस्तृत है। यामिनौनदोके किनारे रोचत जिल्लेकी सोमा पर बाघमतीसे ७५ कोस पश्चिम सिमरोननगरका ध्वंसावशेष नजर आता है। यह ध्वस्त स्थान बहुविस्तृत पौर गभीर बनाच्छादित है। ऐतिहासिक सङ्ग्रहसे इसका परिष्कार होना उचित है। इस ध्वंसावशेष स्थानमें प्राचोन मिथिला राज्यकी राजधानी थी। उस समय मिथिला राज्य पूर्व-पश्चिममें गण्डक पौर उत्तर-दक्षिणमें नेपालको पर्वतमालासे गङ्गातोर तक विस्तृत था। १०८० ई०में मिथिलाराज नान्यपदेवसे सिमरोननगर बसाया गया। १३२२ ई०में दिल्लीके सम्राट गयासुद्दौन तुग़लकने नान्यपदयोग्य हरिसिंहदेवको परास्त कर सिमरोननगर ध्वंस कर डाला। हरिसिंहदेव नेपालकी भाग गये पौर नेपाल जय करके वहीके राजा बन बैठे। वाचमतीके किनारे बजारवार ग्राम बहुत ख्यातप्रसिद्ध पौर शुक-स्थान है। १८१४ ई०के प्रथम नेपालसङ्ग्रहमें मेजर ब्राडवने सबसे पहिले इसी स्थान पर आक्रमण किया पौर इसे जीत लिया।

शलयसमारि जिला वाचमतीसे कमलानदो तक विस्तृत है। इस जिल्लेके मोमान्तेमें प्राचोन नगर जनकपुरका मन्मावशेष है। मोहतारी जिला कमलासे कोयो तक फैला हुआ है। कोयोके दक्षिण किनारे सोमान्तरके निकट भानुरवा नामक स्थानमें सेनावास है। कोयोके पूर्वसे भीचौनदो तक तरौवर नामक मोरङ्ग समतल देग है। इस देगको भूमि कर्दममय है। मलेरियाका यहाँ विषय प्रकोप रहता है। तराईके मध्य जितने देग हैं, उनमेंसे यह देग सर्वविधा फसलसम्पन्न है। नदियोंका जनमो बहुत द्रुपित है, यहाँ तक कि पनेक नदियोंका जन विपात है। मोरङ्ग छोड़ कर तराईको अन्यत्र भूमि अत्यन्त उर्वरा है। यहाँ तराई तराईका मस, ईस,

पकोम पौर तमाकुर्गो काफी उपजता है। कोयोके पश्चिमांगके जङ्गलमें हाथीकी मर्यादित दिन कम होती आ रही है। मोरङ्गमें अभी बहुत हाथी मिलते हैं, लेकिन पहलेके जैसा नहीं।

नेपाल-उपरका।  
 सोसाईयान पर्वतके अतर्गत धैयङ्गपर्वतके दक्षिण सन्नगण्डकी पौर सन्नकोगिकोके मध्य जो उच्च उपत्यका प्रदेश वर्त्तमान है, उन्नीका नाम नेपाल उपत्यका है। यह उपत्यका त्रिकोणाकार है। इसकी सम्पूर्ण पूर्व-पश्चिममें १० कोस पौर छोड्हाई उत्तर-दक्षिणमें ७० कोस है। इस उपत्यकाके पश्चिम विशुनगङ्गानदो पौर पूर्वमें मिलाची वा इन्द्राचौनदो है। उपत्यकाके चारों पौर पर्वतवर्षित है जिनमेंसे उत्तम धैयङ्ग पर्वतमालाके शिवपुरो, काकब, पूर्वमें महादेव-पोखरगिखर, द्वैय चौका, पश्चिममें नागार्जुनपर्वत पौर दक्षिणमें गेवपानी-पर्वतमालाके चन्द्रगिरि, चम्पादेवो पौर पुनचोका पादि पर्वतशिखर ठीक पर्वतशरूपमें अवस्थित है। नेपाल-उपत्यका जो समुद्रपृष्ठसे ४५०० फुट ऊँचा है। नेपाल-उपत्यकाके चारों पौर छोटे छोटे पर्वत रहनेके कारण उनके भी चारों पौर छोटी छोटी उपत्यका हैं। इन सब उपत्यका उपत्यकाओंके मध्य दक्षिण-पश्चिममें विस्तृत उपत्यका, पश्चिममें धूना पौर कालपूउपत्यका, उत्तरमें नवकोट उपत्यका पौर पूर्वमें वनेपा उपत्यका उल्लेखयोग्य है।

नेपालकी गिरिमाता।  
 नेपालउपत्यकाके बहुध्यायवर्ती पर्वतमाला विविध प्रसिद्ध है। इन सब पर्वतशिखरोंके परस्पर संयुक्त रहनेके कारण गिरिपथ पौर नदो धारा छोड़ कर अन्य दिशासे इस उपत्यकामें प्रवेश नहीं कर सकते। उत्तरतः शिवपुरो पर्वत पाठ हजार फुट ऊँचा है। इसका शिखरदेग मात्र पौर सिन्दूरघाटसे बनाच्छेद तथा पश्चान्त पर्वतको अपेक्षा स्थूल है। पश्चिमतः काकबो पर्वतके साथ शिवपुरो पर्वतका योग है। दोनोंके मध्य हो कर 'मन्ना' नामक गिरिपथ गया है। काकबि पर्वतको ऊँचाई ७ हजार फुट है।

पूर्वाक्षरस्थ मण्डिचूड़ पर्वतके साथ भी मिवपुरो गिखरका योग है। लेकिन गिरिपथ एक भो नहीं गया है। मण्डिचूड़की चूड़ा भो ७ हजार फुट ऊँचा है।

उपत्यकाके ठीक पूर्वमें महादेवपोखरा गिखर वर्तमान है। यह भो प्रायः ७ हजार फुट ऊँचा है। इसके साथ पूर्वोत्तरकोणस्थ मण्डिचूड़ पर्वतका योग है। दोनों गिखरके मध्य भस्पोच पर्वतमाला विस्तृत है।

दक्षिण-पूर्वमें फुलचोया या फुलचोक पर्वत जङ्गल मय और बहुत दूर तक विस्तृत है। इसकी ऊँचाई ८ हजार फुटके लगभग है। महादेवपोखरा-गिखरको और इससे रानोचोया नामक एक गिखर निकला है। इन दो पर्वतोंके मध्य हो कर बनेया उपत्यकामें जानिका गिरिपथ वर्तमान है। पश्चिम दिगामें इस पर्वतसे महाभारतगिखर नामक एक पर्वत निकल कर बाघमतो नदीके किनारे तक विस्तृत है। फुलचोया पर्वतके पत्युछ गिखर पर सुन्दर सिन्दूरबनके मध्य देवीभैरवी और महाकालका मन्दिर है। इन दो मन्दिरोंके समीप बौद्ध मञ्जुश्रीका मन्दिर भी है। इस पर्वत परसे नेपाल उपत्यकाका समतल क्षेत्र और हिमालयका तुलाराहत गिखर बहुत मनोरम दीख पड़ता है।

उपत्यकाके ठीक दक्षिणमें पूर्वोक्त महाभारतगिखर विस्तृत है। इसीके पश्चिम सीमा हो कर बाघमतो नदी नेपाल उपत्यकासे बाहर बहने लगी है। धनुर्दिकस्थ पर्वतश्रेणीके मध्य इन नदी खातकी छोड़ कर और कहीं भी भयच्छेद नहीं है।

दक्षिण पश्चिममें चन्द्रगिरि पर्वत ६ हजार ६ सौ फुट ऊँचा है। इसके पूर्वागकी हाथोबन कहते हैं। इन स्थानमें बाघमतो प्रवाहित है। चन्द्रगिरिके दक्षिण-पूर्वस्थ गिखरका नाम चम्पादेवी है।

उपत्यकाके ठीक पश्चिम महाभारत पर्वतके पूर्वमें इन्द्रद्वान गिखर अवस्थित है। यह ठीक पर्वतगिखर नहीं है। इसकी छठदेग कुक लुकाकार और नेपाल उपत्यकामें १०००१२०० फुट ऊँचा है। यद्यपि यह इसके पश्चिमस्थ देवचोया या देवचोक पर्वतका पार्श्व है। इन्द्रद्वान गिबिहवनसे घिरा है। इसके दक्षिण भागमें उच्च स्थान पर एक कम महादेवका ऋद्ध है जिसके

किनारे दो मन्दिर प्रतिष्ठित हैं। यहाँ हाथोकी पांसे पर इन्द्र और इन्द्रापोकी प्रतिमा स्थापित है। इन्द्रद्वान पर्वतके ऊपर बेशपुर और बन्जर नामक दो शहर बसे हुए हैं। यह देवचोया-पर्वत नागार्जुन महाभारत और फुलचोया पर्वतके साथ संयुक्त है।

पश्चिमोत्तरमें नागार्जुन पर्वत ७ हजार फुट ऊँचा है। इसके ऊपर बहुत उत्तम काष्ठोत्पादक गभीर बन है। पूर्वकी ओर इस पर्वतसे स्वयम्भुनाथ और बालाजी नामक दो गिखर निकले हैं। इन दो गिखरोंके उपत्यकाके पत्तर्दिकमें विस्तृत होनेसे उपत्यकाकी डिम्बाकृति सोमारिखा विस्तृत हो गई है। नागार्जुन पर्वत दक्षिणमें देवचोया पर्वतके साथ और उत्तरमें काकति पर्वतके एक भस्पोच गिखरके साथ संयुक्त है।

ये सब पर्वत नेपाल उपत्यकाके ठीक सोमाना पर अवस्थित हैं। एतद्भिन्न उत्तर-पूर्वकीषमें भीरबन्दी और कुमार पर्वत नामक दो गिखर अवस्थित हैं। भीरबन्दी पर्वत नेपाल उपत्यकाके निकटवर्ती सब पर्वतोंसे उच्च है। इसके सर्वोच्च गिखरकी कोनिया पर्वत कहते हैं। यह उपत्यकाभूमिमें भो ४ हजार फुट ऊँचा है। इसके साथ पूर्वकी ओर काकति पर्वतका योग है। इन दोनोंके बीच जो गिरिपथ गया है, वह ६ हजार फुट ऊँचेमें अवस्थित है। इन दो पर्वतोंके उत्तरत गवकोट उपत्यका और पश्चिममें कान्त्यू नदीकी उपत्यका है।

कुमार, भीरबन्दी, काकति, मिवपुरो, मण्डिचूड़ और महादेव पोखरा ये छः पर्वत विगुलगङ्गासे इन्द्रापोके तोर तक विस्तृत हैं और जिवजिबिया पर्वतमालाके साथ समाप्तर भागमें अवस्थित हैं। चन्द्रगिरि, फुलचोया, मण्डिचूड़ा, मिवपुरो, नागार्जुन पादिका उत्तरागमने जङ्गलोंसे ढाँच्छादित हैं और यहाँ चीता, भानू और जङ्गली सुपर पाए जाते हैं।

नेपाल उपत्यकाकी पूर्वावस्था।

हिन्दुवीके मतसे यह उपत्यका बहुत पहले एक डिम्बाकृति अति हल्के और गभीर ऋद्धके रूपमें थी। एक समो पर्वत इनो ऋद्धके किनारेमें उठे थे।

योहोका कहना है, कि मञ्जुश्री बोधिसत्त्वने ही इस हल्के ऋद्धके उत्तरी किनारेपर कारके इसे सुन्दर बाग

योग्य स्वरूप अर्थात्कार्मिं परिष्कृत किया है । उद्दिनि  
 चपनी तलवारके कोटवार नामक एक पर्वत गिबुरको  
 काट कर उसी पथ हो कर जल बहा दिया था । फुल-  
 चौया धोर चण्पादेवी पर्वतके मध्य जिन गहरे हो कर  
 वाघमती नदी प्रवाहित है, कहते हैं, कि वह गह्रा  
 मञ्जुश्रीने इस प्रकार बनाया था । मञ्जुश्रीभा उपा-  
 ख्यान यदि छोड़ दें, तो भी यह खान एक समय  
 जलमय था धोर प्राकृतिक परिवर्तनसे बहुत समयके  
 बाद उपर्युक्तार्मिं परिष्कृत हो गया है, यह विश्वास किया  
 जा सकता है ।

उपर्युक्तकी नवी ।

वाघमती—यह गिबपुरो पर्वतके ऊपर उत्तरीकी  
 धोर वाघदार नामक स्थानमें एक निर्भरसे उत्पन्न हो  
 कर गिबपुरी धोर मण्डिचुङ्के मध्य होती हुई गिबपुरी  
 पर्वतके ऊपर गोकर्ण नामक तीर्थस्थानके निकट स्थान-  
 मती वा गिबानदीके साथ मिल गई है । इस स्थानमें  
 यह नदी दक्षिणाभिमुखमें प्राचीन बौद्धचैत्य के  
 समीप पहुँच गई है । पीछे गजेश्वरी खादके मध्य होती  
 हुई पशुपतिनाथ चैत्यके प्रायः तीन धोर घेठन करके  
 दक्षिण-पश्चिमकी धोर राजधानी काठमाण्डूके निकट पाई  
 है । काठमाण्डू इसके दाहिने किनारे धोर पाटननगर  
 वाएँ किनारे बसा हुआ है । पीछे यह दक्षिणकी धोर  
 एक खाद होती हुई चन्द्र नामक प्राचीन नगरके निकट  
 हो कर चन्द्रगिरिपर्वत-मूलमें फैल गई है धोर वहां-  
 से चण्पादेवी धोर महाभारतगिबुरके मध्य फिरफिर  
 पर्वतके निम्नवय खाद हो कर नेपाल उपत्यकाकी छोड़तो  
 हुई चली गई है । यहांके बोईका कहना है, कि  
 गोकर्णके निकटवय खाद, गजेश्वरीखाद, चन्द्रके नि-  
 टवय खाद धोर फिरफिर पर्वतके निकटवय खाद  
 मञ्जुश्री वीधिसरकी तलवारके भाषातसे उत्पन्न हुआ  
 है । गिबमार्गो नैवार धोर पन्थाम्य हिन्दू उगको  
 उत्पत्तिकी विष्णुके प्रति शारीप करते हैं । विष्णुमती  
 धीथिकोला वा रुद्रमती, मनोहरा धोर हनुमानमती ये  
 चार वाघमतीकी प्रधान उपनदियाँ हैं । विष्णुमतीका  
 दूसरा नाम कृष्णवती है । यह गिबपुरी पर्वतके दक्षिण  
 बड़े मोनकण्ड ऋतमें निकल कर विष्णुनाथ नामक पाम-

को निकट पर्वतकी छोड़ कर उपत्यकामें प्रवेश करती  
 है । यहांमें यह दक्षिणकी धोर नागार्जुन पर्वतके  
 चार्गे धोर घूम कर बालाजी धोर स्वयम्भुनाथ नामक  
 तीर्थस्थानके बाईं धोर होती हुई काठमाण्डूनगरके  
 पश्चिमार्गमें पहुँच गई है धोर पीछे नगरमें कुछ निम्न  
 दक्षिण दिशामें वाघमतीके साथ मिलती है । इन  
 दो नदियोंके संगम स्थान पर बहुतसे मन्दिर हैं धोर  
 एक बड़ा घाट भी है । यहां शवदाह करना नाग पुण्य-  
 प्रद समझते हैं, इन कारण दूर दूर स्थानोंमें आ कर लोग  
 यहां शवदाह करते हैं । वाघमती धोर विष्णुमतीकी  
 उत्पत्तिके विषयमें एक उपाख्यान है । बौद्धोंका  
 कहना है, कि जब ऋजुच्छन्द नामक चतुर्थ मानव  
 बुद्ध तीर्थदार्गनके उद्देश्यसे नेपालके गिबपुरोपर्वत  
 पर आये, उस समय उनको कुछ चतुचरोने उस स्थान-  
 को गोभा देख कर बौद्धधर्म ग्रहण करना चाहा धोर  
 वहां चिरकाल तक रहनेको इच्छा प्रकट की । उनके  
 अभिप्रेतके लिये ऋजुच्छन्दकी कक्षा भी जल न मिला ।  
 तब देवगणिकी प्रार्थना करके उन्होंने एक पर्वतगात्र-  
 में अपना हृद्वाङ्मूठ प्रयोग कर दिया । उस हृद्वा  
 कर देववत्समें एक निर्भरणी निकली । उसी निर्भर-  
 की धारा यारिमती वा वाघमती नाममें प्रसिद्ध है । तद-  
 न्तर उसी जलसे अभिप्रेत हुआ । नव बौद्धोंके सुण्डन-  
 के बाद स्तूपोजन कीमरागि प्रस्तूरीभूत हो गई । यही  
 वर्तमान बौद्धतीर्थ देवचैत्य कहलाता है । उन सब  
 केगीका कुछ भंग वायुसे लड़ कर जहां चला गया, वहां  
 भी फिर इसी तरहकी जलधारा वर्धित हुई । यही  
 धारा कृष्णवती वा विष्णुमती नदी कहलाती है । फिर  
 सुवर्णमती धोर यदरी नामक विष्णुमतीको दो उपनदियाँ  
 हैं । धीथिकोला वा रुद्रमती गिबपुरो पर्वतसे निकल  
 कर काठमाण्डूसे छोड़ कोष पूर्व वाघमतीमें मिल गई  
 है । इसने किनारे हरिगांध धोर देवपाटन प्रसिद्ध  
 है । मनोहरा वा मनोमती मण्डिचुङ्क पर्वतसे निकल  
 कर पाटन नगरके सामने वाघमतीनदीमें गिरी है ।

हनुमानमती महादेवोपला पर्वतके एक ऊँचे  
 उत्पन्न हो कर भाटगावनगरके दक्षिण धोती हुई कंधा-  
 वती नदीके साथ मिल गई है ।

हृषि ।

नेपालकी खेतोयारी धोर छद्मिजादिको उत्पत्ति तथा हृषि यहाँके जलवायु धोर इमन्तादि पङ्कतनुके लपर निर्भर करतो है । इस राज्यके सभी स्थानोंके सम-तल नहीं होने तथा जगह जगह उपत्यकादिके ऊँची धोर मोधी रछनेसे यहाँकी प्रकृतिका विनक्षण विषयय देखा जाता है । हिमालयके क्रमनिम्न प्रदेशोंमें तथा नेपालकी पार्वतीय उपत्यकादिमें समिटफल धोर पाहा-रोपयोगी शाक सब्जो प्रचुर परिमाणमें उपजती है । जल-वायुके गुणानुसार पर्वतीयके किसी किसी स्थानमें बड़ा बड़ा धान धोर बेंतका पेड़ देवनेमें पाता है । किन्तु अन्यत्र्य पर्वतोंमें केवल सुन्दरीवृक्ष धोर देवदारुके पेड़की ही मंख्या अधिक है । इसके अलावा कहीं कहीं पाखुरोट, महगुल, गोरोकल (Rashbory) आदि समिट-फलोंके दरपत भी नजर आते हैं । छोटे छोटे पहाड़ोंकी उपत्यका भूमिमें जहाँ घोषकी प्रखरता अधिक है वहाँ एक अनानाम धोर ईंध तथा दूसरे दूसरे स्थानोंमें जौ, गेहूँ, कंगनी आदिको विस्तृत खेती होती है । यहाँ शीतकालमें कमलानीवू उत्पन्न होता है । पर्वतादि उच्च भूमि पर वर्षाकालमें खूब हृषि होती है जिससे फलादि नष्ट हो जाया करतें हैं ।

वर्षाकालमें पंक पड़ जानेसे धोषमन्त्रतुमें धाम लुहरी तथा अन्यत्र्य फसल अच्छी लगती है । यहाँ बहुतन्नी जमीन ऐसी है जिनमें ऋतुभेदसे वर्ष भरमें तीन बार फसल लगती है । शीतकालमें भिन्न जमीनमें गेहूँ, जौ, सरसो आदि फसल लगती है, बसन्तके प्रारम्भमें उष जमीनमें पुनः मूली, लहसुन, चालू आदि तथा वर्षाकालमें धान, मकई आदि उपजते हैं । टाणुवां पर्वत जहाँ काट कर समतल बना दिया गया है, वहाँ मटर, सरस, घना, गेहूँ धोर जौ आदि भी नजर आते हैं । यहाँ सरसो, मञ्जिठा, ईंध धोर इलायची प्रचुर उत्पन्न होती है । जहाँ इलायचीका पेड़ लगता है, वहाँ अधिक जलका रहना आवश्यक है, नहीं तो फसल उत्तम नहीं होती ।

चावल ही नेपालकानिर्वाहका साध है । इस कारण राज्यके सभी स्थानोंमें एक एक तरहके धानकी खेती

होती है । एतद्विषय नेपासमें धार भी माना प्रकारके धानकी खेती होती है जिसे नेपासी 'घिया' कहते हैं । इन सब धानोंको परिपक्व होनेमें धोष वा वर्षाकी जल्द-रत नहीं पड़ती । पत्र तक लपर खेत जीतनेके लिये इन वा अन्य धोजारकी आवश्यकता नहीं होती । ये लोग कायिक परिश्रमसे हस्त धारा ही जमीनको शस्यवपनोप-योगी बना लेते हैं । जमीनको चर्चरता बढ़ानेके लिये उसमें गोबर, एक प्रकारकी कालो मर्ती तथा घरके कूड़ा-करकट आदि हाल देते हैं । नेपालके तराई नामक स्थानमें चावल, पफोम, सफेद सरसो, तोषी, तमाजू आदि उप-जते हैं । इस प्रदेशके चारों धोर खास धोर पर्वतनिःसृत छोटी छोटी स्रोतखिनो बहती है जिससे यहाँ कभी जलाभाव नहीं होता ।

इस तराई प्रदेशके वनविभागमें शाल, श्वेतमाल, पिशासल, खेबर, शोथम, लण्यकाठ, बट धोर माञ्ज नामक एक प्रकारका पेड़, हई, डूमर धोर गोंद उत्पन्न कारी वृक्ष पाए जाते हैं ।

पर्वतके उपरिस्थ वनमें सुन्दरी, तिसपत्र, मन्दार, पहाड़ी कटहल, कण्ठरु, तालाउपल, मण्डल, श्रृङ्गाट, पखराट, चम्पक, शिरीष, देवदारु धोर भ्जाज आदि वृक्ष ही प्रधान हैं । इसके अलावा खायोपयोगी मधा तथा सुगन्धविगिष्ट पुष्पवृक्ष भी देखनेमें आते हैं ।

जमीनसे लयककी सहायतासे माना जातोय मध्य धोर छद्मिजादि उत्पन्न होने पर भी यहाँकी मट्टां माना प्रकारके कन्द, धोषधलता आदि पाई जाती हैं । यहाँके निष्कासायुक्त धोर सुगन्धविगिष्ट वृक्षादिके निर्वाससे माना प्रकारका रंग निष्कासा जाता है । 'लीया' नामक एक प्रकारकी सतासे घरस उत्पन्न होता है । इसका सेवन करनेसे नया होता है । इस लीयोके देवमें इसे नेपासीघरस कहते हैं । मधारी लोग वल लीयाके पोषकी नीरस पत्तियोंको कूट कर उससे सूत सरावा एक प्रकारका पदार्थ निष्कालते हैं जिससे एक तरहका सूती कपड़ा तैयार होता है ।

मूल्य ।

नेपालकी पार्वतीय पर्वतसे जौ सब मूल्यवान् पदार्थ धोर धातु पाई गई है, उनसे अच्छी तरह चतुमान

क्रिया जाता है, कि नेपालके किसी किसी प्रांतमें सुप्र-  
खान विद्यमान है। जमीनके कुछ नीचेमें ताम्र, लोह  
पादकी खान देखी गई हैं। ताम्र उकट होने पर भो  
यहाँका लोह अग्न्याग्नि स्थानोंमें निकट होता है। यहाँ  
गन्धक प्रचुर परिमाणमें मिलती है और नाना स्थानों  
में भोजी जाती है।

नेपालमें जो सब विभिन्न प्रकारके मिश्रित और  
अपविश्रुत श्वनिज पदार्थ पाए जाते हैं, उनको  
विशेष आलोचना करनेसे जाना जाता है, कि उन सब  
मिश्रित पदार्थोंमें अनेक मूल्यवान् पदार्थ हैं। इससे  
पतावा यहाँ नाना जातीय प्रसार देखनेमें आते हैं जिनमें-  
से मारब्ल, छोट, चूनापत्थर और लाल तथा पीतवर्णके  
पत्थर ही उल्लेखयोग्य हैं।

गोर्खामदेयके निकट एक प्रकारका सख्ख कस्तन  
(Crystal) पत्थर पाया जाता है। अच्छी तरह काटने-  
से यह हीरेके जैसे चकमक करता है। यहाँका महो  
इतनी उरकट है, कि कुछ कालके बाद यह घिमेंपटकी  
तरह टूट ही जाती है।

#### वाणिज्य ।

नेपालराज्यके वाणिज्यके विषयमें कुछ कथनेके  
पहले यह देखना होगा, कि किन किन राज्यके साथ  
नेपालवासियोंके व्यवसायके सम्बन्धमें विशेष संबंध है।  
हिमालयपर्वतके पारपाश्चिमत तिब्बतदेश और दक्षि-  
णपूर्व हिमालयके भारतसाम्राज्य, इन दोनोंके साथ  
उनकी विशेष घनिष्ठता देखी जाती है। तिब्बतदेश जाने-  
में बहुतसे निरिपय है सदा, लेकिन वे हमेशा तुपारके  
उके रहते हैं। केवल काठमाण्डूनगरके उत्तर-पूर्व ही  
कर जो रास्ता कोशी नदीको उपनदीके किनारे  
सोमान्तवर्ती मोझु वा कुटो नामक चट्टा तक चला  
गया है, यह प्रायः १४०० फुट ऊँचेमें है और दूसरा  
रास्ता जो ८०० फुट ऊँचा है वह गण्डकनदीके पूर्वोप  
सुपी स्रोतको प्रतिवाहन कर सोमान्तमें किराण  
पामर ही कर ताकम् पामरके सचिकट सान्पूतदोके किनारे  
तक चला गया है। इन्हीं दो पथ ही कर नेवारी लोग  
साधारणतः तिब्बतराज्यमें जाते आते हैं। पण्डित्य ले  
कर जानेमें कोई विशेष संधारो नहीं मिलती। एकमात्र

पार्श्वतीय बकरे और भेड़ोंको पीठ पर मान लाद कर  
उक्त राहमें जाते हैं। चाड़े वा बेलकी गाड़ी ले कर  
ऐसे दुर्गम पथमें जाना मुशकिल है। तिब्बतमें पद्मोना  
गान और एक प्रकारका पद्म-निर्मित मोटा कपड़ा,  
लवण, सोहागा, मृगनाभि, चामर, हरिताल, पारा,  
स्वर्णरेणु, सुरमा, मंजोठ, चरस, नाना प्रकारकी शोष-  
धियाँ और शक्करलादि नेपाल तथा पाम पामके पद्म-  
रजाधिकृत राज्योंमें लाये जाते हैं। फिर यहाँमें ताँबे,  
पीतल, लोहे, काँसे, विलायती कपड़े, लोहेके द्रव्यादि,  
भारतोत्पन्न सूती कपड़े, सुगन्धित मण्डले, तमाकू,  
सुपारी, पान, नाना धातु और मूयवान पत्थरोंकी  
तिब्बतमें रफ्तानी होती है।

नेपाली भारतके साथ जो व्यवसाय-वाणिज्य करते  
हैं, वह प्रायः नेपालसीमान्तमें ३०० मीलके प्रस्ताभुक्त  
समो हट वाजारोंमें ही। उनके बाहर नहीं। नेपालमें  
भारतके नाना स्थानोंमें सब पण्डित्योंकी रफ्तानी होती  
है, उनके ऊपर नेपालराज्यमें कर लगा दिया है। इसी  
प्रकार भारतमें जो पदार्थ नेपाल लाये जाते हैं, उन पर  
भो निर्दिष्ट कर है। इस तरहका संबंधित कर राज-  
कीयका होता है। राजाके आदेशमें देववासिर्षकी गोकी  
मना और विलासिताके लिए जो द्रव्य नेपालमें लाए जाते  
हैं, उन पर अधिक शुल्क निर्धारित है। किन्तु स्वदेशीय-  
के आवश्यककारुधमें जो सब वस्तुएँ धामदानी होती हैं  
उन पर राजा बहुत कम शुल्क लगाते हैं। वे सब शुल्क  
यसूल करनेके लिए प्रत्येक घाटमें और भिन्न देगमें से  
जानिमें प्रत्येक पथ पर एक एक कोतघर स्थापित है।  
कभी कभी इस कोतघरका कार्य चलानेके लिए वह ठेके-  
दार वा महाजनकी नौनाममें दिया जाता है। तमाकू,  
इलायची, लवण, पैसा, इन्दिद्रत और चकोरकाठ  
शाम नेपाल-गवर्नेण्टका होता है। इस व्यवसायको  
चलानेके लिए राजपरिवारभुक्त पथवा राजसुवामाम  
कोई व्यक्ति नियुक्त किये जाते हैं। एतद्विषय समो द्रव्य  
दूसरे दूसरे लोगोंके अधिकारमें है। किन्तु शुल्क देनेकी  
समो बाध्य है। यह शुल्क द्रव्यके गुणवत्ता वा संख्यानुसार  
दिया जाता है।

काठमाण्डूमें जिस राह हो कर नेपालशात द्रव्यसमूह



भारतवर्षमें लाया जाता है, वह राह मिगौलीसे राजधानी काठमाण्डू की ओर पहले नेपाल-सोमान्तमें राकशूल ग्रामकी ओर कर सम्वाधासा, हतोग, भोमफेङ्को ओर यानकीट नगर होते हुए राजधानीकी चली गई है। पहले इस राह ही कर चम्पारण जिलेके मध्य पटना नगरमें पाते थे, किन्तु यत्नमाग समयमें मिगौली तक रेलपथ ही जानिसे वाणिज्यकी विशेष सुविधा हो गई है। इन सब सुविधाओंके रहते भी यहाँके दुर्गमपथ ही कर द्रव्यादि से जानिमें बड़ी कठिनाइयाँ उठानो पड़ती हैं। कहीं बँस, कहीं छोड़े ओर कहीं कुसीको सहायतासे मान पहुँचाया जाता है। मिगौलीसे काठमाण्डू तक जो रास्ता गया है, वह प्रायः ८२ मील लम्बा है। स्थानीय नदी या स्तोतादि ही कर ईश्वर शाल ओर अन्यन्य चकोरकाष्ठ बसा कर ले जाते हैं।

चावल तथा दूसरा दूसरा अनाज, तैलकारबीज, छन, टहू, गो-मेयादि, गिकारोके लिए गिकर पत्तो, मैना, शाल पादिका चकोर, अफोम, मृगनाभि, दिरायता, मोहागा, मस्त्रिष्ठा, नारविमका तैल, खैर, पाट, चम, छागका सोम, सोंठ, इलायची, मिर्च, हज्दो ओर चामरके लिये चामरी गौकी दुम पादि नागा द्रवा भारतवर्षके प्रधान प्रधान नगरोंमें पामदना होता है। ओर यहाँमें रुई, रुईके सुते, सुतो कपड़े, पगमो कपड़े, शाल, फलानिल, रंगम, किंछाप वा बूटेदार चिकने कपड़े, कारकर्मयुक्त भास्तर वा जरोके पाड़े, चीनो, मिर्चे पादि मसाले, नील, तमाकू, सुपारो, बिन्दूर, तैल, लाव, लवण, यारोके चावल, महिय, छागम, भेड़े, ताम्र, पोतलके फलदार, भासा, चारसी, गिकारके लिये बन्दूक ओर बाहुद तथा दार्जिलिङ्ग ओर कुमायुममें 'चाय' पादि द्रव्योंकी नेपालमें रफ्तानो होता है। जिस तरह चम्पारण ही कर पटनानगर जानिका रास्ता है, वही तरह दरभङ्गा जिलेके मिर्जापुरनगरमें तथा पुर्बिया जिलेके मीरगञ्ज नगरमें नेपालसे द्रव्यादि ले कर जानिके लिये भी दो रास्ते गये हैं।

वाणिज्यार्थे वरान इत्यम् ।

नेपालकी सभी जातियोंमें नेवारगण बड़े परिच्यो होते। वे-पुरुष दोनों ही कठिनसे कठिन परिश्रम कर सकते हैं। नेवारोंकी

पुत्रवर्धन सुनी कपड़े बुननेमें विशेष पट्टे हैं। ये माधारणतः अपने पहननेके लायक एक प्रकारके मोटे कपड़े तैयार करते हैं ओर अन्यन्य देवोंमें रक्तमोके लिये एक दूसरा बसा बुनते हैं। गरीब लोगोंके लिए पगमका कम्बल प्रसृत होता है जिसे भूटियागण बुनते हैं। नेपाल राजगण ओर अन्यन्य सम्मान वाणिज्य जो सब पोयाक ओर परिच्छेद पहनते हैं, वे यूरोप पादि नाना स्थानोंमें यहाँ लाये जाते हैं। स्वदेशजात मोटे कपड़ेके ऊपर उनकी विशेष स्फुष्टा देखो नहीं जाती।

नेवारो पुत्रवर्धन लोहे, ताँबे, पीतल ओर काँसे नाना प्रकारके तेजघाटि निर्माण करते हैं। पाटन ओर भाटगाँवनगरमें इन सब धातुओंका विशदत कारबार है। यहाँ बहुत अच्छे अच्छे घंटे तैयार होते हैं। ये लोग जेजू पेड़को छानसे मोटा कागज बनाते हैं। पहले क्लिककी किनो बरतनमें रख गरम जलमें सिद्ध करते हैं। सिद्ध हो जानि पर उसे एक खतलमें झूटते हैं। बाद उसे जलमें धोस कर छाननेसे छान लेते हैं। ऐसा करनेसे जो पदार्थ कपड़े पर जम जाता है उसे एक चोरस काठके छपर सूखने देते हैं। अच्छो तरह सूख जाने पर उसे चिकने काठकी सहायतासे घिस कर चिकना बनाते हैं। कालीनटोके तीरबर्धो भूटिया लोग इन प्रकारका कागज तैयार करते हैं। काठमाण्डूमें तीन सेर कागज सत्तरसे थानेमें विक्रता है। कोई भी बांधनेके लिए यह कागज बड़े कामका ओर बहुत चीमड़ होता है।

नेपाली चावल ओर अन्यन्य गल्पमें सुराका सार, गेहूँ, महुएके फूल ओर चावलसे मद्य तैयार कर बाजारमें बेवते हैं। ये लोग इस मद्यको 'रुकसी' कहते हैं। यह सुमिष्ट होता है ओर अन्यन्य मद्यकी तरह इसमें तोनमाटकता गति नहीं रहती।

प्रचलित मुद्रा ।

नेपालमें क्लिष्टतास जो मुद्रा प्रचलित है तथा ममय समयपर जो स्वर्ण, रोप्य ओर ताम्रमुद्रा प्रचलित थी एवं 'पद्मरेजाविद्वत भारतवर्षमें' उक्त सब मुद्राओंका क्या मोल है, उसकी एक तालिका नीचे दी जाती है।

पूर्व प्रचलित मुद्रा	उपका दाम
पगरेजो	२० रु०
पाटले	८० पा०
सूका	४५ ८ पाई
सूकी	२०४ पाई
पागा	५८ पाई
दाम	१२ पाई

रौप्यमुद्रा

रूपो	४० ४ पाई
मोहर	१५ ८ पाई
सूका	४ ४ पाई
सूकी	५ ८ पाई
पागा	११०
दाम	१५

ताम्रमुद्रा

पैसा	१२ पाई
दाम	११ पाय पाई

धर्मो निपासनं जो मुद्रा प्रचलित है उसका नाम मोहर है। यह मोहर हम लोगों के देगके कपाने भाठ पाईके बराबर होता है। किन्तु इस प्रकारकी मुद्राका अब प्रचार नहीं है, केवल मात्र गणनाके लिये आवश्यक है। किलहाल निपासनं जो मुद्रा प्रचलित है, वह इस प्रकार है—

४ दाम	=	१ पैसा
४ पैसा	=	१ पागा
११ पागा	=	१ मोहररीदपी

इसके पन्नावा यहाँ और भी तीन प्रकारकी ताम्रमुद्रा प्रचलित देखी जाती है। पगरेजाधिकृत बराबरम चम्पारण तकके स्थानोंमें जो चौका ताम्रमुद्रा देखी जाती है वह भुटिया वा गोरखपुरी पैसा नामसे परिचित है। इस प्रकारके ७५ पैसे हम लोगोंके देगके एक रुपयेके बराबर माने गये हैं। किन्तु निपासी उस पैसेके इतने बराबर है, कि हमें तबके ८ पैसेकी खगह है लोग पगरेजो ८ पैसेके कम नहीं मते। ये सब पैसे निपाचरणके पन्ना सिक्केके बराबर तानेकेन नामकी टक्याकने बनाए जाते हैं।

इस राज्यके पूर्व और उत्तरपूर्व में एक प्रकारका काला सिक्का प्रचलित है जो 'लोहिया-पैसा' कहलाता है। इस सिक्केमें लोहा मिला रहता है, इस कारण इसका दाम भी कम है। इस प्रकारके १०० पैसे हम लोगोंके देगके एक रुपयेके बराबर ही सकते हैं। लोहिया पैसा बगानेकी पूर्व दिक्कत पूर्वतयोंमें पनेक टक्याक है जिनमेंसे सिक्का-मेकहा-पामकी टक्याका ही उल्लेखयोग्य है। आज भी चम्पारण और पूर्णियाँ जो कर के सब मुद्राएं 'उत्तरविहारमें' पाती हैं।

१८१५ ई०में काठमण्डू उपत्यकामें जो नया पतला ताम्रिका सिक्का प्रचलित हुआ है, उसका आकार गोला है वह कसको सहायतासे बनाया जाता है और उसके ऊपर राजाका नाम भी पढ़ित है। इस नएन मुद्राका प्रचार हो लानेमें राजधानी भरने लोहिया-मुद्राका प्रचार बिलकुल उठ गया है। इस मुद्राकी टासनेके लिये काठमण्डू नगरमें खतम्ल टक्याका है।

पूर्व समयमें 'निपाचरणमें' जो रौप्यमुद्रा प्रचलित थी, वह वर्तमानकालकी मुद्रासे कहीं बड़ी थी। इस राज्यके दक्षिणवर्ष सभी स्थानोंमें निपासी मोहरके बदले पगरेजो रुपयेका प्रचार ही गया है। वहाँ पगरेज प्रचलित मोटका भी पाए जाते हैं। काठमण्डू शहरमें इस मोटका विशेष आदर है, कारण रुपयेके नैऋत्यमें मोट रहनेसे उससे कहीं पीछे कुछ लाभ मिलता है।

किलहाल निपासनं जो रौप्यमुद्रा प्रचलित है, उससे एक छठ पर राजा सुरेन्द्रविक्रमसहादेव और त्रिभुल तथा दूरमें छठ पर गोरखनाथ और बोधमें श्रीमबानी तथा विषय पढ़ित है। बेखल छाहबने सिखा है, कि निपासनं ग्राम ७वीं शताब्दीको मुद्रासे स्थानीय प्राचीन इतिहासतत्त्वके पनेक विषय जान जाते हैं। किन्तु ११वीं शताब्दीके परवर्तिकाकालकी मुद्रासे ही इतिहासिक समय तथा राजाओंके नामका निर्यय करनेमें विषय सुविधा हुई है।

\* Zeitschrift der deutschen morgenländischen Gesellschaft 1892, p. 631.

† Brandell's Catalogue of British Manuscripts, Cambridge, Jan. XI.

गौड और रजन ।

रज समय स्वर्ण, रोप्य, चण्ड्याय धातु, शुक्ल और अनीय पदार्थका वजन तथा उसका परिमाण निर्धारण करनेके लिये जो सब बटखुरे वा माप प्रचलित है, वह क्रमशः नीचे दिया जाता है ।

स्वर्ण रोप्य

१० रत्ती वा लाल = १ मागा | ८ रत्ती वा लाल = १ मागा

१० मागा = १ तोला | १२ मागा = १ तोला

लातू और विषटकारि धातुकी माप ।

४॥ तोला = १ कुण्डवा  
४ कुण्डवा = १ टुकणी वा षोड  
४ टुकणी = १ मेर

१ मेर = १ धारणी, एक धारणीका वजन = चङ्कुरेजी पवर्तौपाईज ५ षोण्ड ।

शुद्ध द्रव्यादिकी माप तरल पदार्थादिहा परिमाण

२ मन = १ कुडुवा | ४ दोया = १ चौपाई ।  
४ कुडुवा = १ पायी | २ चौपा = १ भाघटुकणी ।  
२० पायो = १ मुही | २ भाघटुकणी = १ टुकणी  
१ पायी = चङ्कुरेजी एभर्त्तौ- | ४ टुकणी = १ कुडुवा = १ मेर  
पाईज ८ षोण्ड | ४ कुडुवा = १ पायी

समयनिरूपण ।

वर्त्तमानकालमें केवल धनी लोग ही सूर्योपगम गंगोत्रे हुए घटिकायन्त्रकी सहायतासे समयादिका निरूपण करते हैं, पर चीर लोग पूर्वकालसे भारत-वासीका यन्त्रकार्य कर समयका जो निरूपण करते पाए हैं, वह इस प्रकार है,—

- १० विपल = १ पल
- १० पल = १ घड़ी = २४ मिनट ।
- १० घड़ो = १ दिन वा २४ घण्टा

प्रभातकालमें जब हाथके रोएँ चपटा बट्टादिकी सतह ऊपरकी कोठरी मांक सांक गिनी जाती है, ठीक उसी समयमें इन लोगोका दिन शुरू होता है ।

प्राथम्य ममथमें नेपाली एक तांबेकी छडीकी सेंदो- में छेद करके उसे किसी एक पातस्थित जलके ऊपर बहा

देते थे । छडीका छेद इस प्रकार बना रहता था, कि तमदेगस्य जल धीरे धीरे छडीमें प्रवेश करता और छडीकी पातस्थ जलके मध्य छडीमें एक घड़ो समय लगता था । इस प्रकार प्रत्येक वार पूरण और निरूपण से कर एक एक घड़ो समय निरूपित होता था । हम लोगोंने देगमें पूजादिके समय कबिके बने हुए जिस गोलोकार घटिका व्यवहार होता है, ठीक उसी तरहके घटोमें ये लोग घड़ोके निरूपण को जानिके बाद एक दो धरके घोट देते थे ताकि जनसाधारणको समयका ज्ञान हो जाय । आज कल हम लोगोके देगमें भी धनी लोगोके यद्यपि उसी तरहके घटिका व्यवहार होती देखा जाता है । नेपालियोंमें दिन रात चार भागोंमें विभक्त है । पहला प्रभातसे पूर्वाह्नकाल तक, दूसरा पूर्वाह्नसे सन्याकाप तक, तीसरा सन्यासे दोपहर रात तक और चौथा दोपहर रातसे फिर दूसरे दिन प्रभातकाल तक । किन्तु हम लोगोके देगमें दिवारात्र दो ही भागोंमें विभक्त है,— यद्यपि दोपहर रातसे दोपहर दिन चर्थात् १२ बजे तक और १२ बजे फिर रातके १२ बजे तक ।

जाति-तन्त्र

पर्वत-श्रेणी द्वारा यह देग बहुधा विच्छिन्न होने पर भी रांश्वमें चनेक सपत्यकापोको छटि हुई है । इन सब सपत्यकाभूमि पर नाम प्रकारकी पार्वतीय जातियोंका वास देखा जाता है । ये लोग यहाँके प्रादिम अधिवासो माने जाते हैं । कामीनदीके पूर्व स्थित सपत्यकापो पर जिन प्रधान प्रधान जातियोंका वास है, उनोके नाम उल्लेखयोग्य हैं । (१) मगरजाति— भरोे चीर मत्स्येन्द्रो वा मत्स्यायो दोर्भा नदियोंके मधावर्त्तौ पर्वत-मय प्रदेशमें इनका वास है । ये लोग बड़े शाहसो हैं और सैनिकवृत्ति द्वारा ओयिकानिर्वाह करते हैं । २ गुरङ्गजाति— शङ्ख मगरजातिको वासभूमिसे हिमालयके तुयारागत स्थान पर्वत पर्वतपुण्ड पर इनका वास है । (३) नेवार जाति— काठमाण्डू सपत्यकाके 'ने' नामक प्रदेशके प्रादिम अधिवासी । नेपालके कवि प्रादि सभी काव्य रचनेसे सम्बन्ध होने हैं सच्ची, मैकिंग ये ही लोग धनधान भी हैं । इस सपत्यकाभूमिके पूर्व दिक्कण पार्वत भूमिमें (४) निम्ब, वा याक-पुम्बा और (५)

किराती या खोम्बो जातिको वाम है। (६) सेपचा-  
जाति—ये लोग विक्रम और दार्जिलिङ्ग विभागके  
पश्चिमपार्श्वमें तथा नेपालके पूर्व भोमान्दमें वाम करते  
हैं। (७) भूटिया-जाति—निम्बु, किरातो और सेपचा-  
जातिकी वासभूमिके उत्तरस्थ पर्वतकी उपतःकादिमें  
तथा तिब्बतसीमान्त तकके स्थानोंमें इस जातिका वास  
है। भूटियाओंके 'लो' नामक स्थानवासी लोकप्रायः और  
तत्पार्श्ववर्ती जाति दुःखा कहुनाती है। हिमान्तके  
दूसरे पार तिब्बतके निकटवर्ती देशोंमें भूटिया जातिके  
वासभूमिमें रंबो, सिथेना या काठभूटिया, पलुमेन,  
थासेन, सर्प आदि पार्श्वतीय जातियोंका वाम है। एत-  
द्दिस निम्नतर उपतःकादिमें तथा नेपालकी तराई प्रदेश-  
में (८) कुम्भार, (९) देनवार और (१०) हायु-  
वोटिया, दूरे वा दहरो, वासु, बोक्सा, चेपा, कुसुन्दा,  
थाइ आदि जातियोंका वाम है। एतद्दक्षिण (११)  
गुनवार और (१२) मूर्मि या तमर नामक और भी दो  
विभिन्न जातियां हैं।

कालो वा सारदानदीके पश्चिम कुमायुन प्रदेशमें  
१२वीं शताब्दीकी राजपूतानेसे गोर्खाजाति यहाँ वा कर  
वास करती है। इन लोगोंने जो ब्राह्मण हैं उनको  
उपाधि पाँडे और उपाध्याय तथा क्षत्रियोंकी उपाधि खुम  
और थपा है। सभी नेपालकी समस्त जातियोंके ऊपर  
इन्हींका प्राधिपत्य है। गोर्खा देवी।

शार नेपालकी जनसंख्या पंङ्गरीजराजके अनुमानसे  
प्रायः सातसे अधिक नहीं होगी। किन्तु नेपाली-  
राजदरवारकी तालिकासे ज्ञान जाता है कि यहाँकी  
जनसंख्या वास्तवसे अप्यन्त साध्य तक है। नेपालमें  
किसो समय मरदुमशमारी नहीं होनेसे प्रकृत जन-  
संख्याका निरूपण करना बहुत कठिन है।

पूर्वार्द्ध आदिमजातिके रहने भी यहाँ बोधनाथ और  
स्वयम्भुनाथके मन्दिरके निकट भूटान और तिब्बतवासी  
जातियोंका वास है। काठमाण्डू उपतःकादिमें कश्मीरी और  
इराकी मुसलमान वणिक्, मन्दायाका वाम हैं। इन  
लोगोंने बहुत पहलसे ही यहाँ उपनिवेश स्थापन कर  
रखा है।

नेपालमें सर्वप्रथम देवदेवियोंके मन्दिर रहनेके कारण

ब्राह्मण और पुरोहितकी संख्या भी बढ़ गई है। हमने  
पन्नाथा प्रतीक स्तूपके एक स्वतन्त्र पुरोहित रहता  
है। ये सब पुरोहित धर्मयाजक और गुरु अपने अपने  
ग्रिथ वा यज्ञमानमें प्रदत्त दक्षिणा, क्रियात्मक द्रव्यादि  
और ब्रह्मोत्तर जमीनसे ही अपनी जीविका निर्वाह करते  
हैं। इन लोगोंमें जो राजगुरु हैं, वे ही सबसे अधिक  
माननीय हैं। राज्यभरमें वे एक चमत्तापन यज्ञि माने  
जाते हैं, उनका वाक्य प्रामाण्य करनेको किमीमें समया  
नहीं है। नेपालराज प्रदत्त जमीनके उपपत्तिसिद्धि  
निवा वे लोग देगवासियोंके मध्य प्रातिगत किमी दोष-  
की मोमांसा करके भी प्रचुर धन उपाजन करते हैं।  
नेपालसोमण ब्राह्मणकी विशेष भक्ति करते हैं। किमी  
प्रकारकी वीक्षा या वृथात् विपद्के उपस्थित होने पर  
ब्राह्मण-भोजनका नियम भी प्रचलित है।

मानवान् ब्राह्मणके नियम यहाँ देवियोंका भी वाम  
है। यद्यपि कोई कोई पुरोहितार्थ करते हैं, तो भी  
देव्यज्ञति ही उनका जातीय व्यवसाय है। भविष्यत्  
वातके ऊपर नेपालियोंको विशेष आस्था है। यहाँ तक  
कि एक विन्दु भोजनसेवनसे सुदृढता आदि दुर्लभ कार्य  
पर्यन्त सब तक देव्यज्ञ सम्भालका नियम नहीं कर  
देते, तब तक वे किसी काममें हाथ नहीं डालते।

वैद्यजाति—प्रायुर्वेद शास्त्रको पालोचना करना  
ही इनका व्यवसाय है। नेपालो चाहे जित्त व्यवसाय  
की न हो, प्रतीक परिवारमें एक एक वैद्य निगुण  
रहता ही है। यहाँ जनसाधारणके उपचारार्थ कोई  
भोज्यशास्त्र नहीं है।

जो सेषक वा हिंसक-कितानका काम करते हैं वे  
नेवारजातिगत होने पर भी यहाँ मानकालमें स्वतन्त्र  
व्यवसायक रूप हैं।

यहाँ व्यवहार-जीविका विषय पादर नहीं है। पशु-  
को तरह सब पराजकता देख नहीं पड़ती। सर जङ्ग-  
बहादुरके सुशासनसे नेपालियोंकी वर्तमान समयमें  
कुकार्य करनेका मांस नहीं होता। यहाँके जो प्रधान  
विचारपति हैं उनका मानिक चेतन दो ही रूपमें परि-  
नत है। इस कारण विचारकको स्वयं समर्थनके निवे  
प्रतिवादिगण विचलन दे कर अपना काम निरान  
सते हैं।

वदत पक्षमे ब्रह्मलदेवके साव नेपालका मन्त्र वा त्रिमका प्रकृत इतिहास यथास्थानमें दिवा गया है। समो समयमें नेपालमें ब्रह्मलदेवका व्यवसाय पारश्व दृषा था। वे सब पूर्वतन ब्रह्मलो घेरे घेरे नेपाली पाचार-व्यवहारका अनुकरण कर तथा वहांके प्रचलित चिन्ह, बोध और पर्याप्तवासियोंकी पादि धर्मप्रथाके अनुगर्भी हो कर नेपालराज्यवासियोंमें परिचित हो गए हैं। वे लोग धर्मप्रचारके उद्देश्यसे वा-अर्थ्य क्रिमी कारण दग स्वदेशमें विताड़ित हो कर अथवा यागिण्यादि कार्यवापदेगमें इस पारश्व-प्रदेशमसूहमें पा उपस्थित हुए, हममें कोरे-सन्देह नहीं।

पूर्वोक्तित जातियोंके चतिरिक्त, नेपालमें जगह जगह और भी कितनी जातियोंका वास देखा जाता है। काउ-भूटिया जातिके वासस्थानमें निकटवर्ती पर्यंतमात्रा पर यकमिया और पक्षीया नामक दो जातियां रहती हैं। उनमें एक दूसरेके साथ संलामाव है। नेपालमें जगह जगह पक्षि या-पक्षि, वायु वा कायु, खग वा खगिया कोलि, डोम, राभी, हरी, गह्वाली, कुनेत, दोगड़ा, कक, बम्ब, गकर, दहु और दूधर तथा दक्षिण भागमें नेपालके तराई-प्रदेशके समीप तथा मध्यभागमें कोच, मोदो, घिमान, कीचक, पन्न, कुच, दहि वा दरि बोधवा और पचलिया-जातिका वास है। इस पचलिया जातिके मध्य और भी कितने जाक हैं, यथा—गरी दोलखमो, बतर या बीर, कुदो, हाजन्न, धनुक, मरहा, पमान, वैमान, यामि प्रभृति।

जिन सब प्रधान प्रधान जातियोंका विषय परने लिखा गया है। उनमेंसे जातिगत व्यवसायमें जिन जिन सम्प्रदायमें विगिट पाया जास की है तथा जिन सम्प्रदाय में पविधाममें जिन जाकको सम्पत्ति हुई है, उनको एक तालिका नीचे दी जाती है।

जुगार, साकि (चम कार, बमार), कामी (बमार, बडूई) मोनार (बन्धकार), गहन (बायकर और गापन), भाजर (गायक, इन लोगोंकी शिष्य वेशा-हति करती हैं), दमर (दरवाजे), पागरी (वननकार), सुगहन और किरि (कुम्हार), पी (डोम, ये लोग जमादका काम करते हैं), कुपु (चमकार), माय

(कसार), चमाचन (चांगर जो मैना कैकना है), डोह वा युगो (बायकर सम्प्रदाय), को (बमार, बडूई), हुसो (घातुपोषणकारी), पच (खगति), बालि (कचक), मो (नापित), कुमा (कुम्हार), संजत (धोमो) तडि (दोरी पादिका बभानियात्रा), गया (मालो), सावो (जोक लगा कर लेह निजामने-बासा), क्षिपि (दंगरेज), विकमो, दकमो (शुद्धादि-निर्माता, राजमिष्को), लोडोन्नरमि (पत्थरकावा)।

परिष्कट और लखार।

नेपालियोंमें गोर्खा जातिने ही वेदभूषा और पारिपाठ्यमें अत्यान्व जातियोंसे अंशता लाभ की है। पौष्मकासमें यहाँके लोग सफेद या नीलवर्णका-सूनी कपड़ा बना कर पहनामा, कुर्ची वा-बुटने, तक, लम्बा चपकनकी तरह अंगरखा पहनते हैं। शीतकालमें वे लोग पूर्वीरूपके परिच्छेदादि धारण करते हैं संधी, धिन्तु उसमें रुई भरकर। जो धनो हैं, उनके निचे लकल व्यवस्था है। वे कुर्चीके भीतर वस्त्रके रोपे डाल कर सने पहनते हैं। मत्तकशोभाके लिये ये लोग गिरफ्तारका व्यवहार करते जो जरी पादिसे लड़े रहते हैं।

नेवारोंको साधारणतः कमर तक कपड़ा पहनते हैं और शीत तथा पौष्मके अन्वधिस्त्रमें मोटे सूते वा पयमोने कपड़ेका व्यवहार करते हैं। इन लोगोंमें जो व्यवसाय द्वारा धनमांको जो गए हैं तथा जो पचसर कार्यालयमें तिलतदेग जावा करते हैं, वे चूरीदार हजार, चपकनकी तरह लम्बा कुरता और मत्तक पर पयमनिर्मित-टोपी-पहनते हैं। हरनिदि नामक ब्यानमें जो सब नेवारो रहते हैं वे जियोंके सघरेकी तरह पाँवकी-पंकी तक लम्बे कुरतका व्यवहार करते हैं। इनके मध्ये पर सज्जद वा कावे कपड़ेको टोपी रहती है।

नेपालमें और कितनी सब जातियां हैं, उनका पक्ष-नामा पूर्वोक्त प्रकारका होता है। पर अज्ञानविशेषके कुछ समेट भी देखा जाता है। जियोंके मध्य वेदभूषामें विशेष वैषम्य नहीं देखा जाता। समो जातिको जियां एक चपक कपड़ा लें कर सने मासनेके भागमें चूरेकी तरह की पो बटने पहनता है। इनको परिधान-

प्रयां बहुत पपुव है। समुदायगतमें जो कपड़े का कुश्चिंत पटिममूह विलम्बित रहता है, वह प्रायः दोनों पैरों की ठकता हुआ मटोको छूता है। किन्तु पयादागका कपड़ा उतना लटका हुआ नहीं रहता। राजपरिवारभूता रमणियां तथा देवीय धनी व्यक्तिकी श्लोकग्यायं घंघरे की तरह कोंची करके पहननेके लिये त्रिभु कपड़ेका व्यवहार करती हैं, उसकी लम्बाई ६० से ८० गज होती है। यह कपड़ा मसलिनकी तरह वारीक होता है। धनीकी स्त्री इस प्रकारका लम्बा कपड़ा पहन कर धनी धूमनेके लिये बाहर नहीं निकलती। धनी या उस कुलीनवा स्त्रियां अपने बंगको मर्यादा और सम्भ्रमकी रक्षाके लिये इस प्रकार अमानाम्य वेगभूपाचे भूषित हो कर जनसमाजमें भादरण्यो होती हैं।

सभी स्त्रियां प्रायः चूड़ी टार हत्या लगा हुआ पैजामा और साड़ी पहनती हैं। भारतके समतलक्षेत्र-वासियोंके जैसे वे कभी समूचे शरीरमें कभी कमर तक ही कपड़ेका व्यवहार करती हैं। इनके छिर पर किमो प्रकारका विभेय-परिच्छेद नहीं रहता। नेवाररमणियां अपने बालोंका मिरके मध्यभागमें जूड़ा बांधती हैं, किन्तु ग्याय, स्त्रियां सापकी तरह अपने पीठ पर लटकाये रहती हैं और उस प्राक्त भागको रेशम या सूतेसे बांध कर बालकी शोभाकी बढ़ाती हैं।

नेपाली स्त्रियां पलहारकी बहुत पमन्द करती हैं। ये यथागति अपने अपने पञ्चको शोभा बढ़ानेके लिये नाना प्रकारके पाभरण पहनती हैं। धनीकी श्लोकग्याय जिम तरह मणिमुक्ताप्रवालादि जड़ित तथा अन्य शौर रोष्यका पसहार पहनतीं, उसी तरह पहाड़ी स्त्रियां भी अपनी अपनी सामयिके अनुसार पहनती हैं। धनी व्यक्ति निज परिवारकी अंगशोभाकी दृष्टिके लिये मस्तक पर खणं या पीतलका बना हुआ फूल, गलेमें सोने वा प्रवालकी माला, हाथमें चहुँकि और घासा, कानमें कणंफूल, नाकमें मयनी तथा इसी तरहके मूल्यवान् आभूषणोंको काममें खाते हैं। पमभर भूटिया मोग भी स्वजातीय कामिनीकुलके लिये सुलेमानी, पत्यर, प्रवाल, चौर दर्याम्य कोमती, पत्यरीको माला, चाँदीकी माधुनी वा मट्टी, पादि नाना प्रकारके पसहार बनवाते हैं।

शोभाव ही सुगन्धिन पुष्पकी विभेय पनुरागो होती है। वे गिरशोभाकी दृष्टिके लिये हमेशा गिर पर फूल गंधि रहती हैं। त्योहार पादि उत्सवमें वे अपने बालोंको फूलने अच्छी तरह सजाए रहती हैं। स्वाभाविक सदा-चारी होने पर भी उनकी पुष्पसृष्टय बहुत पधिक होती है। इसीसे जब कभी उन्हें फूल मिल जाता, तब उसे सूँघनेके लिये वे हाथमें ले लेतीं पद्यवां प्रकृति-मतीकी मर्यादाको रक्षाके लिये उसे गिर पर गांध लेतीं और इस तरह अपने ही चरितार्थं समझती हैं।

राजपुरुषोंको परिच्छेदप्रथा स्ततन्व है। ये मस्तक पर जरी और मणिमुक्ताखचित ताज, पहलमें रेशमका कपड़ा पद्यवा चूड़ोदार हत्या लगा हुआ पद्यकनके लैसा लम्बा-कुरता, पैजामा और पैरमें जरीका जूता पहनते हैं। सभी राजपुरुषोंके हाथमें चकनेके समय रमाल और तलवार रहती है। राजा जङ्गबहादुर अपने मस्तक पर जो मुकुट पहनते थे, उसका मूल्य एक लाख पचास हजार रुपये था। महंशजत भद्र मन्ताम नव ममय गिर पर टोपी, शरीरमें घुटने तक लम्बा कुरता, कमरघंट, पैजामा और जूता लगाए रहती हैं। वैज्ञिक विभागके पध्यक्षण्य साधारणतः वेगभूपाय, अंगरेजी मैना-नायकोंका अनुकरण करते हैं।

घाय, और पानीय।

नेपालराज्यमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र पादि जातियोंका विभाग होने पर भी खाद्यप्लादक विषयमें कोई अयकृता देखी नहीं जाती। यहाँ जो ब्राह्मण कह-घाते हैं, उनका साधारण-व्यवहार और खाद्य-प्रवालो सभी भारतवर्षके समतलक्षेत्रवाशो ब्राह्मणोंके जैसे हैं। किन्तु पद्यकर्म व्यक्ति पत्यस्त मांसमिय होती है। गोर्वा-जातियां माधारणतः उत्तरखण्ड पावंतीय प्रदेश और तराई भूमिसे लाए हुए भेड़ें पादिका मांस खाती हैं। ये मोग पद्यस्त मिहारमिय होती हैं। धनवान् सभी व्यक्ति गिकार विषयमें अंधही तरह अभिन्न हैं। ये प्रायः सभी समय गिकार येननेकी बाहर निकलते हैं और इच्छा-नु-रूप हरिण, जंगली सूकर, मोवास्त तथा गोर्वांगु, कुसाक-देवी, कुरेल, बुदनचोल पादि पद्यंज्ञात पक्षियोंका गिकार कर उनका मांस खाते हैं।

ये लोग पशुमर सुपरके बचेकी पोसते हैं और इंग्लैण्डकी प्रयाके अनुसार उन्हें बिना कर बढ़ा करते हैं। बचपनमें पालित गृहर-गायक प्रतिपालकने घसी-भूत हो जाते हैं। यहां तक देखा गया है, कि वे कभी कभी कुत्तेको तरह अपने मानिकका पदानुसरण कर बाहर निकलते हैं। निवारण मद्य, भैंड़े, कागल, दंस आदि पक्षियोंका मांस खाना बहुत पसन्द करते हैं। यहांकी मगर और शरङ्ग जाति अपनेकी हिन्दू घत-नाती है। किन्तु उनके कायकसपादिके ऊपर लक्ष्य रखने से ये नोचयेषो मे प्रतीत होते हैं। मगरजाति गृहर-का मांस खाती है, मद्यिका नहीं। इसके विपरीत शरङ्गलोग मद्यिके मांसको बहुत पसन्द करते हैं, किन्तु म.घरके मांस छूने तक भी नहीं। किन्तु, किरातो और निपचा आदि बौद्ध धर्मावलम्बियोंको खाद्यप्रचाली निवार जातिको मारें है।

पक्ष्यापक व्यक्ति-माधारण मांसादि भोजन और नाना प्रकारके विनाश द्रव्य उपभोग करनेमें तो समर्थ हैं, पर पक्ष्यापक दरिद्र और निम्नश्रेणीके व्यक्तिके भाग्यमें मांसादिका भोग हमेशा बढा नहीं रहता। मांस-प्रिय होने पर भी ये लोग पर्याभाबवगतः सब समय प्यायके सिवा मांसका बन्दोबस्त नहीं कर सकते। इसी कारण माग मन्त्री द्वारा ये लोग उदर-पूरण करनेमें बाध्य होते हैं। ये लोग पशुमर चावल, साक मन्त्री लहसुन, पात्र और मूली आदिकी तरकारो बना कर खाते हैं। मूली पचानेके लिये ये एक प्रकारकी चटनो बनाते हैं जिसको पधादिके माद्य खाते हैं। इस चटनोकी ये 'सिनको' कहते हैं। यह पत्यन्त दुर्गन्धयुक्त और नितास्त छुपित होती है।

निवारणप और चन्दाय निम्नजातिके लोग मदि-रासक्त होते हैं। ये पचनी पचनी पान-विगमाको परो-ह्य करनेके लिये भावस पचया गोधूमसे एक प्रकारका मिश्रण मद्य तैयार करते हैं जिसे रुकधी कहते हैं। यहाँके उच्चश्रेणीके मनुष्य गराव नहीं पीते। कारण जो ममाजके नेता हैं और जातीयतामें सबसे अछे हैं, वे ग्रावकी नमसुखके ममान समझते हैं। इस प्रकारके मन्धात्म कुसमील भद्र स्थिति यदि मद्यपान 'बर से', तो

ये जातिमें श्युत किये जाते हैं। पाच्यैका विषय यह है कि स्वदेशमें उत्पन्न मद्यको बचेका चभी निवासमें विना-यतो ब्रैडो और ग्रैमविन मद्यकी प्रबुध पामदनी देखो जाती है।

निवारजाति चामोद-प्रमोदके लिये जो मद्य पान करते हैं, उसे बह चपने घरमें हो सकता है। हमने लिये राजाको कोई कर देना नहीं पड़ता। किन्तु यदि कोई इस रुकसी मद्यको बाजारमें बेचे, तो राजकर्मचारी उससे कर वसूल करते हैं। निवारणप सब समय मद्य पान करते हैं, किन्तु वे कभी भी नगरें बेहोग नहीं देखे जाते। केवल नेता आदि पर्यायलक्षमें भयवा चन्दादि-के एक स्थानसे दूसरे स्थानमें रोपनेके समय वे इदमें प्यादा गराव पीते हैं। पार्वतीय कौल जातिमें जिस तरह 'हाडिया' प्रचलित है उसो तरह इन लोगोंमें रुकसी मद्य।

उत्तम, मध्यम और निम्न श्रेणीके सभी मनुष्य चाय पीते हैं। निम्नश्रेणीमें जो गितास्त गरीब हैं, जिन्हें चाय खरीदनेको वित्तकुल शक्ति नहीं है, केवल ऐसे ही मनुष्य चाय पीनेसे बंघित रहने हैं। यह चाय तिन्त्र-से छाई जाती है। ये लोग चायकी दो प्रकारके बनाते हैं,—(१) ममासादिके साथ एकल सिद्ध करके जो चाय बनाई जाती है उसका छ्वाद मद, चीनी, मैदूके रस और जायफल मिश्रित द्रव्य खरोखा संगता है। (२) दूध और चीने संयोगसे जो चाय बनाई जाती है, उसका छ्वाद बहुत कुछ पंगरैसी चाकलेट (Chocolate) से मिलता जुलता है। इसके पश्चात्ता निपाकी चाय-पिटक-की खाना बहुत पसन्द करते हैं। इसको प्रस्तुत बचानी इस प्रकार है:—ताजी चायकी पक्षियोंके माद्य चर्बी, चावलका पानी पचया पारगुक्त पदार्थ मिला कर उसे कुछ कालके लिये धूपमें झोड़ देते हैं। पोलै किन वा जाने पर उसे चोकीर वा मन्धे बरतनमें भर कर चर्बि पर चढ़ाते हैं। यह दूध आदिके माद्य भी प्यादा जाता है। चीन भाषामें इसका नाम गुड-काफ है। चंदेओ प्रचालीसे प्रस्तुत की हुई चाय विमोप पादरक्षीय नहीं होती। केवल उच्चश्रेणीके निवासो जो पशुमर बनकरते पाया करते हैं, वे ही इसके पचगताते हैं।

विवाह-प्रथा

ग्रीकोन नेपालियोंमें बहुत विवाह प्रचलित है । विवाह उन लोगोंके लिये एक प्रकारका बट्टपोस्ट है । जो अपेक्षाकृत धनवान हैं, वे एक से अधिक स्त्री रखनेमें बाज नहीं आते । बहु-पत्नीपरिहृत रहना नेपालियोंके सम्मानका चिह्न है । इस कारण ५०।६० दारपरिग्रह करने पर भी किसी किसी धनी व्यक्तिको आगा लक्ष नहीं होती । बहु-विवाहका स्रोत नेपालमें जैसा प्रचल है, वैसा ही विधवाविवाह एकवारगो नियोज्य है । पहले यहाँ हजारों विधवाएँ सती होती थीं । स्वामीको मृत्यु पर स्त्रीके इस पक्षी खाद्यतरागने नेपालियोंके कठोर-हृदयमें भयानक धर्म-ध्वोति; टाल ही दो थी । ये सब स्त्रियाँ भी धर्म-जगतमें 'सती' नाम कय कर तथा भारतके वक्ष पर धर्म-स्नाथ स्थापन कर सारे जगतमें अपने इस चिरस्मरणीय कोर्तिको घोषणा करके सधोंकी पूज्य हुई हैं, इसमें विन्दुमात्र भी संशय नहीं ।

पूर्वतन राजपुरुषोंको नियमावलीके यथेच्छाचारिता-दीपमें धूमिल रहनेके कारण तथा राजाके राज्यशासनमें शिथिल प्रयत्न होनेके कारण राज्यमें विषम विशुद्धता उपस्थित होती है । राजपुरुषोंके आत्मविच्छेदके राष्ट्र-विभव होता है । इसी समय जङ्गलहादुरने राजाको सिंहासनच्युत करके स्वयं राज्यभार ग्रहण किया था । नेपालका राज्यभार अपने हाथमें ले कर भी जब राणा जङ्गलहादुरने देखा कि, अब भी वे शत्रुपक्षीको कुहट्टिमें निष्कृति लाभ न कर सके, तब उन्हेंने नेपालकी सम्भ्रान्त संशोय होनेकी कन्यापोका पाणिग्रहण कर बहुतांकी चरितार्थ किया । इस विवाहका मुख्य उद्देश्य यह था, कि शत्रुदल अब किसी क्षान्तसे उनके विरुद्धाचरण न करेंगे । इसी उद्देश्यको साधनेके लिये ये उस समय देशके गणसाम्य और समतापन सभी घरोंमें अपने पुत्र, कन्या और भ्राताओंका विवाह दे कर सम्बन्धसूत्रने धारण हुए । इस प्रकार अपनेको विपक्ष दलसे निरापद समझ कर वे १८५१ ई०में हस्तैण्ड गये और वहाँ एक वर्ष ठहर कर दूसरे वर्षको ८वीं फरवरीको स्वदेश छोटे । स्वदेशमें आ कर ही, उन्होंने 'पं'पे'जो-पुन'करके सामरिक सुश्रद्धा और कोजदारो चार्डन-पादिमें ही कर

करके देशमें सुव्यवस्था स्थापन की । इस समय उन्होंने सतीदाहको रोधनेके लिये कई एक नियम बनाए । सतीदाहके सम्बन्धमें उनकी संशोधित नियमावली इस प्रकार थी—(१) पुत्रवती स्त्रियाँ इच्छा रहते भी सती नहीं हो सकतीं । (२) सती सुनामाकाहिणी कोई रमणी यदि स्वल्पत विताको देख कर डर जाय और साक्षात् गमनरूप भ्रमिर्न जौवन-विमर्जन करनेमें कातरता प्रकट करे, तो कभी भी वह रमणी भ्रमि-प्रवेग नहीं कर सकती । पहले यह नियम था, कि जो स्त्री मृतपतिके साथ जानिको इच्छा प्रकट करती और यदि वह प्रग्यानघाट जा कर प्रग्यानका वीभक्त-दृश्य देख सती होना नहीं भी चाहती थी, तो भी उसे मृत्युधान्य वनपूर्वक चितामें बैठा देते थे । यदि वह भाग जाने की कोशिश करती, तो ऊँठके प्रहारसे उसकी श्रोण्डी चूर कर देते थे जिससे वह उसी समय पक्ष्यकी प्राण होतो थे । जङ्गलहादुरको कृपासे पशुघाया भ्रियोंने ऐसे मृत्युस चत्वाचारके हाथमें रखा पाई है । ब्राह्मणों और पुरोहितोंने यद्यपि इस नवानुमोदित मतको 'पशुघात' और भ्रयोक्तिक तथा धर्मका वाधाजनक' बतलाया था, तो भी उनके समामतकी उपेक्षा करके मित्रमत स्थापन-के लिये ये दृढ़महत्त्व हुए थे ।

गोर्खाजातिको दाम्पत्य-प्रणयमें एक बार पवित्राग हो जाने पशुघात पक्षीके चरित्रमें सन्देह होने पर ये स्त्रियोंको खूब यत्नता देते हैं । यदि कोई स्त्री भ्रमवग विषयगामिनी हो जाय, तो पहले उसे घरमें सुनियम-पूर्वक रख कर उसके चरित्र-संशोधनको चेटा करते हैं पशुघात उससे पूर्व आचरित, प्राप कर्मके प्रायचित्त-स्वरूप उत्तम-मध्यम यथाघात द्वारा उसे पुनः सुपथ पर लानेकी कोशिश की जाती है । इतना करने पर भी जब देखते हैं कि कोई फल न निकला, तब वे उसे याव-जौवन केदमें रख छोड़ते हैं । जो मनुष्य उपपत्ति हो कर दूसरोंकी पत्नी पर आसक्त होता है और उसे स्वधर्ममें भ्रष्ट करनेकी चेटा करता है तथा यह यात यदि उस स्त्रीके स्वामीको मान्य हो जाय, तो निषय ही उसकी पत्नीका धर्म-रक्षा उपपत्ति है । ऐसा व्यक्ति जब कभी मजूर पाता है, तभी उसे यथाघात द्वारा जमीन पर



सुना देते हैं। पर अन्वयः अतएव कि हम प्रकार चर्च-प्रत्यय किंनमात्र जातीयताको उपनति होती है और समीप इत्यने अट्टेगकी स्तनितया पाक-घाघाको सम्भावना है, तब उक्तो ने हम नृगंम व्यापार-को रोकनेके लिये एक कानून निकाला। उस कानून-के अनुसार यदि कोई मनुष्य चर्च-प्रत्यय उपपत्ती-प्रभमें पामात्र ही जाता, तो उसे राजदरबारमें उचित दण्ड मिलता था। दोषी व्यक्तिको कैदमें रख कर उसका विचार किया जाता था। विचारमें यदि वह दोषी ठहराया जाता, तो राजाके प्राधानुसार उस रमणोका नामो घा कर सबके सामने अपनी स्त्रीके सतीत्वापहारी उपपत्तिको दोष्य कर डालता था। किन्तु उसकी मृत्युको ठीक पहले प्रापरचारके लिये उसे एक मात्र प्रदृष्ट-परीक्षा करनेको दो जतों थी। इस परीक्षा-में दोषी व्यक्ति अपने जीवन-संहरणमें कुछ दूरमें चढ़ा रहना और उसे भागनेको कड़ा जाता था। यदि वह दोषी व्यक्ति किसी उपायमें अपने जीवनरक्षा कर सकता, तो वह पुनर्निमित्तमात्र करता था। उसका विचार किर नहीं होता। इसके अन्वय उस उपपत्तिको प्रा-रक्षाके भी। मो दो उपाय थे। किन्तु नेपाली हम उपायों की पलाःकरणमें ही समझते थे। नेपालीके मतमें हम प्रकार पूजित प्रथाको अनुसरण करनेमें जातिव्याग करनेको अपने प्राणत्याग करना अच्छा है। फिर यदि वह स्त्री कह देती कि वह वास्तवमें प्रथम उपपत्ति नहीं है और न वह मरने पहले उसे कुपय पर ले ही गया है, तो राजा उस स्त्रीको बात पर विश्वास करके विचारार्थ लाए हुए उपपत्तिको छोड़ देते थे। हम प्रकार पर्य स्त्रीके साथ शुभ भावसे प्रणय करनेमें कितने ही सभास्तथेनीय युवकगण कराल कान्ठके मानमें पतित हुए हैं।

व्यभिचार और जातिभेदोपके लिये पूर्व समयमें नियमके अनुसार नेपालियोंको मुहतर मजा दो जाती थी। वे भी कार्यमें ऐसा दाहक दण्ड और दाम्बिक व्यापार समाप्तः ही निद्रोहका उत्पन्नक था।

सर्वमानकात्ममें अन्त दिवसोंमें बहुत ही फेर हो गया है जिसका उक्तो पर उक्तो करना लियेयोजन है। नेवार,

लिम्बू, शिरातो और भूटियाजातिके लोग बौद्ध होने पर भी हममें दिग्दूषमें का मनुष्य प्रमात्र देखा जाता है। इस कारण हममें विभिन्न व्यक्तियोंको उत्पत्ति हो गई है। हमने परस्परका पादार-व्यवहार प्रायः एक-सा है।

यहाँकी नेवार चादि जातियोंको अपनेसा गोर्खाकी विवाह-प्रथममें कुछ विधियता देखी जाती है। भारत-वासो हिन्दुओंके जैसा हम लोगमें भी स्त्री-विधेयका नियम नहीं है। स्त्रीत्याग और उस स्त्रीका पयस्वर-प्रथय से दोनों कार्य-यथार्थमें जातीय गौरवमें जानि पहुँचाने माने हैं। नेवारलोग अपनी अपनी कथ्याका सचपनमें हो एक ब्रह्मके साथ विवाह कर देते हैं। वे ही वह कथ्या जब बड़े और अतृप्ततो होती है, तब उससे लिये एक उपयुक्त सरटूङ्ग लाना पड़ता है। यदि उन मध-दम्पतीके मनमें प्रणयमहार न हुआ और सबदा कलह होता रहा, तो वह कथ्या अपने स्वामीके सिरेके तलियेके मोचे एक सुपारी रख कर पोहर वा पण्यत्र चली जाती है। ऐसा करनेमें हो वह स्वामी समझ जाता है, कि उसको अवविवाहिता पत्नी उसे छोड़ कर कहीं चली गई है। संप्रति यह स्वामीत्यागपथा विधि-यत्र हो गई है। पहले मधुप्रभं कोर्दे था। स्वामीको छोड़ कर पर्य स्थानमें नहीं जा सकती।

हममें विधवा विवाह प्रचलित है। प्रायः हममें हिन्दी-को विधवा होना ही नहीं पड़ता। हमका विश्वास है, कि रतिसे पत्यार प्रथय करनेमें पर भी धान्यबालमें धेनुके साथ सनका जो विवाह हुआ था उससे लिये मांगका सिन्दूर कभी भुल नहीं सकता।

हमको स्त्रियाँ जब व्यवभिचार-दोषसे दुष्ट हो जाती हैं, तब उन्हें पति सामान्य मजा मिलतो है। किन्तु जिस उपपत्तिके सहवासमें संसका धातिप्रय-धर्म नष्ट हो गया है वह उपपत्ति यदि पत्नीपरिवार स्वामीके पूर्व-विवाहका कुल धर्म न दे और उसको स्त्रीका शिवा कष्ट उठाए भोग दान्यन करनेको चेष्टा करे, तो उसे ब्यागारको दया पानी पड़ती है।

ये भोग अन्वयदेहका दाह करने हैं और विधवाकी दण्डा होने पर वह सती हो सकती है। किन्तु हममें विधवाविवाह प्रचलित रहनेके कारण और दूसरे धर्म

यहण करना नहीं पड़ता। इनमें कभी कभी दो एक सतीदाह भी होते देखा गया है।

शासन-प्रणाली।

प्राचोन कालमें यदि कोई भारो दोष कारना था, तो उसका कोई अज्ञ कटाया दिया जाता अथवा देहका कोई कोई खान चौर दिया जाता था अथवा वेतकी सजा दी जाती थी जिससे उसके कभी कभी प्राण भी निकल जाते थे। सर जङ्गलवाटुर अब इंग्लैण्डमें लीटे, तब उन्होंने कितने टुंगस आदिन उठा दिए और राज्य शासन सम्बन्धमें निम्नलिखित कुछ नूतन आदिन प्रचार किये। जो व्यक्ति राजद्रोही होमा वा राजकीय कार्य सम्पन्नमें विघ्नप्रदायकता करेगा उसे यायज्जीवन-कारावास अथवा गिरच्छेदकी दण्डशा मिलेगी। गवर्मेंट सम्बन्धीय जो व्यक्ति रिगवत लेगा अथवा राजकीय तहबोलको नष्ट करेगा अथवा बिना किसीके जाने राजकीयसे रुपये ले कर दूसरेके यहां छुद्र पर लगावेगा उसे छुर्माणा देना पड़ेगा और साथ साथ उसकी नौकरो भी छुट जायगी।

इस राज्यमें जो गो किंवा नरहत्या करता है, उसे समय उसके गिरच्छेदकी आशा होती है। यदि कोई गोक गासचर्मको अन्नादि दाना अतविचरत करे अथवा पहले बिना सोचे विचारे क्रोधके बर्षीभूत हो कर उसको हत्या कर जाले, तो उसे यायज्जीवन का दोष रहना पड़ता है। राजनियम-सज्जहकारो याज्ञिको उसके दोषके अनुसार छुर्माणा देना होता अथवा कारावासभुगतना पड़ता है।

यदि कोई नीच श्रेणीका मनुष्य अपनेको अथवा मोक्ष वतसाथे और इस कारण किनो सम्भालानुसंगोस याज्ञिको अपना स्वर्ग क्रिया अथ और लस खिलानेके लिये अनुरोध करे तथा उसे स्वजातिभूत करनेकी कोशिस करे, तो उसे छुर्माणा देना पड़ता, कौदकी सजा भोगनी पड़ती और उसकी सारी सम्पत्ति लभ कर ली जाती है। अथो कभी कौतदासके रूपमें वह दूसरे हाथ बेच भी दिया जाता है। किन्तु वह अतिभ्रष्ट भद्र मनुष्य अथवासादि और प्रायविषा करके तथा युद्ध और पुरोहितको निर्दिष्ट पर्वदण्ड दे कर स्वजातिमें फिरसे मिल जाता है।

ब्राह्मणों और रमणियोंके गिरच्छेदका तिधान नहीं है। भारोसे भारी अपराध करने पर स्त्रियोंको कठिन परिश्रमके माथ चिरनिर्वासन होता है। ब्राह्मणोंके लिये भी वही एक नियम है। पर विशेषता यह है, कि ब्राह्मण-गण कारागारमें जा कर जातीय गौरव-नायक माथ माथ ही ज्ञातिभूत होते हैं।

सेनाविभाग।

राज्य-रक्षा और राज्यशासन सम्बन्धमें निधानराजकी बहुत रूपये खर्च करनेमें पड़ते हैं। जिन सुनियमसे सेनाओंको युद्धविद्या सिखाई जाती है, कमान और बन्दूकादि तैयार करनेमें भी वैसे ही अधिक परिश्रम और रूपये खर्च करने पड़ते हैं। यहां राजवैतनभोगी प्रायः सोलह हजार सेनाएं हैं। एक सेनादल २६ विभिन्न रेजिमेंटमें विभक्त है। इनके पनावा निपालराजके नियमानुसार कुछ मनुष्य सैनिक विभागमें निर्धारित समय तक युद्धविद्या सीख कर घरमें भी बैठ सकते हैं। समय पड़ने पर वे सैन्यदलभुक्त हो कर सहाईमें जाते हैं। राज्यमें ऐसे नियमका प्रचार रहनेके कारण निपालराजको अश्वयंघर करनेमें कोई कठिनाई उठानो नहीं पड़ती। इच्छा होने पर ही वे एक दिनमें ७० हजार विचरत सेनाएं संघट कर सकते हैं।

अद्वैती प्रणालीके अनुसार यहांकी सेना विभक्त है। किन्तु सभी विषयमें अद्वैती नियम है, जो नहीं। अश्व-का विभाग और दलस्य नायक और अधिनायकादि पद सभी अद्वैतीके अनुसार होने पर भी उनकी अद्वैतीकी तरह क्रमिक पदोन्नति नहीं है। राजपुत्र या राजकुटुम्ब-गण प्रति वर्ष कुछ पद पाते हैं, किन्तु जो सयोद्ध-विषयक कर्मचारी हैं, वे प्रायः सामरिक विभागका निम्नपद भोग करते देखे जाते हैं, इनको सहाईमें उन्नति नहीं होती।

सेनादलका दैनिक परिच्छेद, नौकराहका मूनी अद्वैती और गैजामा है। सामरिक योद्धाओंकी मास रंग-का अंगरखा, खाला हजार, बगलमें खाल छोरी, पैरमें खूता और मिर पर टोपी तथा स्वदनकी विप्रयुक्त एक चांदीकी तल्वती रहती है। कमानवाही सेनादलकी योगाह नौकी होती है। अन्नादि परिधानसहा खान

नहीं रहनेके कारण नेपालराज्यकी प्रजापतिही नेपालकी सन्त्या प्रदुत योही है। यहां शकद, गोरी घोर गोरी पादि तै वार करनेका कारणना है।

प्रागभो मैत्र्य-विचारके लिये जूझलवायव होती है। पावर्तीय प्रदेशमें ये लोग युद्धमें विलक्षण पट, होते हैं। पद्मेरजोके माथ इनका जो दो वार युद्ध हुआ था उनमें हमोंने जूझ लीं (ता दिखनाई थी। इनकी कमान, इन्द्रक घोरा श्यामय यथादि उतने सुविधाजनक नहीं है। किमहाल नेपालराज्यके पास ४ पहाड़ी कमान (Mountain-battery) घोर ४५ हजार सेना है। अब मरदार वाघरजने नेपालीसेनाका चालक ही कार पद्मेरज-नेनाच्यकी पवने व्यवहारमें परिष्कृत किया था, तब पद्मेरजराजने धन्युत्यके निदर्शन-स्वरूप उक्त चार यत्न नेपालराजकी उपहारमें दिये थे। राजाके पन्थागारमें पवने कमान रहने पर भो प्रतिदिन यथा कमान घोर पन्थादि तै वार होते हैं।

दाघ प्रथा।

नेपालमें प्रागभो दामदाघोको विक्रयप्रथा प्रचलित है। सामान्य पथछापथ व्यक्ति भो पवने पवने गृह कार्य की सुविधाके लिये क्रीतदाम खरोदा करते हैं। किन्तु यह दाम-प्रथा मरिक्काके पूर्व प्रचलित दाघप्रथा-साधमें भिन्न है। यहाँके दामगाय केवल घरके काम काज करते हैं घोर एक तरफमें स्थापित भाषणमें रह सकते हैं किन्तु मरिक्काके विक्रीत दामगाय पवने प्रभुमें समय समय पर निमेषदधमें निगृह्यते होते हैं। नेपालके जो दामदाघो हैं, ये बहुत कुछ भारतयामोके घरमें रहित दामदाघो-में होते हैं।

नेपालकी वर्तमान दामसन्त्या प्रायः ३२ हजार है पवन्त्याममन वा प्राति-प्राधममें पादि निकट पावोमें भिन्न होनेमें पववा ज्ञातिगत कीर्त दोय करनेमें यह स्त्री वा पुत्रव राजाके पादिमें परिवार समेत क्रीतदामदधमें देवा जाता है। इस प्रकार नेपालकी दामसन्त्या दिने दिन बढ़ती जा रही है।

क्रीतदाघो हमें या गृहकार्यमें व्यस्त रहती है। हमके पन्थावा पवने लक्ष्मी काटना, बकरे, घोड़े पादिके लिये प्राग काटना पादि कितने प्रबोधित कार्य भी करने

पहुने हैं। कोई कोई धनी इन सब दानियोंकी पवने घरमें बाहर निकलने नहीं देते। किन्तु ये पद्मेरज पधि-काय समय से स्त्रियों विचरण करती हैं। इन सब रम-दियोंका परिच उतना पवित्र नहीं होता। ये प्रायः गृहस्थित किसी न किसी व्यक्तिके साथ पवध-प्रवर्धमें पानत रहती हैं। यदि पुरीदनेवासे गृहस्थानोके मह-वाग्ने उध दाम-रमणोके गर्भमें प्रत्यानादि उत्पन्न हो, तो वह स्त्री पवने स्वाधोमता पुनः जमा मकती है। उध समय यह कभी भी उस घरका परिवाराग करना नहीं चाहती। यहां क्रीतदाघोका मूल्य (१०)में २०० घोर दामका मूल्य (१०)से (१०) २० है।

देवदेवीकी पूजा और उत्सवादि।

देवदिजमें विधेय भक्तिप्रयुक्त नेपालमें पवने देव-देवियोंके मन्दिर प्रतिष्ठित हैं। यहां २०२३ उने पणोप्य तीर्थक्षेत्र वा देवालय हैं घोर उन सब देवमन्दिरोंमें पर्वोपलक्षमें उत्सव हुआ करता है। प्रायः वर्षके प्रत्येक दिन एक दो वा ततोधिक पर्वोत्सव पार्थ है। कवने-का ताव्यर्थ यह है, कि वर्षभरमें छः मास पूजा घोर उत्सवादिमें व्यतीत होते हैं। इस देगमें पानिमें जो गान्धम पद्मेगा कि यहां पार्थय घोर उत्सवका मय नहीं है। प्रायः मा विषय यह कि यहाँके लोग इन सब उत्सवोंमें मदा लिप्त रहते हुए भी किम प्रकार पवने जीविका निर्वाह करते हैं। प्रत्येक निर्दिष्ट पर्वदिन घोर तत्रस्थ उत्सवादि समग्रमें प्रचलित प्रवाद है। विद्यारके भयमें उत्सका विवरण नहीं दिया गया। यहां जो सबसे प्रधान प्रधान पीठ वा देवालय हैं उने पर्वदिन घोर उत्सवादिकी उत्पत्तिकी कथा बहुत मंचेपमें दी जाती है।

१। मन्थेन्द्रनाथपर्व-नेपालके पधिपाठदेवता मन्थेन्द्रनाथके विषयमें प्रचलित प्रवादपादि यथास्वाममें वर्णित हैं। पाटनके चमगात भोगमती घाममें यह मन्दिर घोर किष्ण स्थापित है। वर्षके प्रथम दिन (विशाख-की १मी तारीख)को प्रथम उत्सव पारम्भ होता है। इस दिन विषहत्यानेके बाद राजाकी तलवारकी मूर्तिके पाटदेगमें १४ कर उसकी पूजा करने हैं। पूजाके बाद एक सुमन्त्रिन रथ पर मन्थेन्द्रनाथकी मूर्तिकी विडा कर पाटन से जाते घोर यहाँ प्रायः एक मास तक रह

कोर पुनः पुण्यदिनं चौर शुभलग्ने' योगमतीं याममे' लाति है। इस दिन विषयकी कम्बलमे टक लेते चौर स्थान स्थान पर यह बावरायवस्त खोल कर जनताको मूर्त्ति का दर्शन कराते है। इसमे लोगोको यह जताया जाता है, कि देवता गरोध नहीं होने पर भी एक गुदहो (कम्बल)के सिवा चौर कुछ भी ले नहीं लाते। वे सर्वोको यह बतलाते है, कि अपनी अपनी व्यवस्था पर सन्तुष्ट रहना ही अच्छा है। इसका नाम गुदहो-भाङ्गा-उत्सव है। पाटनमे श्रोतये समय राहमे' जहाँ जहाँ मेवको'के आहारके लिये विग्रह रखा जाता है, वहाँके पधिवानिगण खाद्य द्रव्यादिका ढेर लगाते है। नेवारो'में भी नेपालके पधिवता आर्यावलोकितेश्वर-मत्स्येन्द्रनाथ-देवके दो पत्रा'दिन निश्चित है। विभिन्न विवरण पाटन और मत्स्येन्द्रनाथ शब्दमें देखो।

२। नेतादेवीकी यात्रा या देवीयात्रा।  
नेतादेवी देखो।

३। पशुपतिनाथयात्रा। पशुपतिनाथ देखो।

४। वस्योगिनो-यात्रा—यह बोहो'का उत्सव है। बोहोके पलाया हिन्दू लोग भी अभी उनकी उपासना करते है। यह नामक पर्यंत पर इस देवीका मन्दिर है। ३ वीं शाखो इस उत्सवका उत्सवात होता है। इस समय लोग एक रा'टके ऊपर वस्योगिनो-मूर्त्तिको रख कर कंधे पर चढ़ा गहू'गहरका प्रदक्षिण करते है। उन मन्दिरके सामने ही खज्रयोगिनोका मन्दिर है। देवोमूर्त्तिके मामने पञ्च हमेशा प्रवृत्तित रहतो है चौर वहाँ एक मनुष्यका मस्तकाकृति भी रखी हुई है।

५। सिधियात्रा—काठमण्डू चौर स्वयम्भूनाथके मध्यवर्तीविष्णुमनोमदीके किनारे २१ ज्येष्ठको यह उत्सव होता है। भोजनके बाद तोष'सेवमे' उपस्थित ध्यातगण दो दलो'में' निभल हो जाते चौर दोनो' दन एक दूसरे पर टैला कि'कना गुरु कर देते है। पूर्व' समयमें यह प्रथा थी कि श्री कोर्दि ई'टी'के पाषाणसे मूर्त्तिकृत हो रहता था उसे विपन्न दलके लोग निकट-वर्ती कटो'मरी मन्दिरमें ले जा कर धनि देते थे। अभी राजाके पादिगमे' उनकी'का ई'टी'का कि'कना य'द हो गया है।

६। गोधिया मङ्गल वा घण्टाकण्य—घण्टाकण्य नामक रासमकी स्वदेवसे निकाल भगाना ही इस उत्सवका उद्देश्य है। नेवार वालक उस समय मधोकासमे चरकी एक प्रतिमूर्त्ति बना कर रामो रामो घूमते चौर प्रत्येक मनुष्यमे भीख मांगते है। १४ ध्रावणको उत्सवके बाद बानकगण उत्सव मूर्त्ति जला कर पामोद-प्रमोद करते है।

७ बाङ्गा-यात्रा—बौद्धमार्गी नेवार जातिके पुरोहित ८ यावण चौर १३ भाद्र ये दो दिन प्रत्येक गृहस्थके यहाँ यापिक स्वल्प चावल चौर गस्यादि मांगते लाते है। इस भिषावृत्तिका पर्य' यह है कि प्राचीनकालमें बाङ्गाओ'के पूर्व'पुरुष बौद्ध-पुरोहितगण भिक्षु थे। उन महात्माओ'के व'शधर उनके पशुष्टये मत्स्या'या पापान करनेके लिये वर्ष भरमें केवल दो बार भिषावृत्तिका व्यवधान करते है। इस भिषान्त्य द्वारमे ये एक वर्ष तक गुशारा करते है।

उत्सव दिनेमें नेवारो'गण अपने अपने घर चौर टुकाम-को फूल आदिमे सजाते चौर उन घरकी रमणियां एक एक टोकरा चावल तथा चौर दूसरे दूसरे मत्स्यको ले कर टुकाम वा घरसे बाहर जा बैठती है। बाङ्गागण जब बा'रदेग हो कर गुजरते है, तब सभी उन्हें' काफी पनाज दे कर उनकी विदा करते है। धनवान् नेवारो' उत्सव निर्दिष्ट दिनोंके सिवा यदि दूसरे दिन गुप्तभायमे पर्याप्त पकसा ही बाङ्गाओ'की इस प्रकार भिषा दे कर विदा करनेकी इच्छा प्रगट करे, तो बिना प्रभूत पर्य'शय किये उनकी यह मनस्त्राममा पूर्ण नहीं हो सकती। इस उत्सवमें जो बाङ्गा सबसे पहले चौकट पर पहुँच जाता है, उसे कुछ अधिक दान मिलता है। यदि गृहस्थ इस उत्सवके उपसन्धमें राजाको निमन्त्रण करे, तो राजाके सम्मानार्थ' उसे एक रौप्यमि'हापन, ३२ चौर रत्न-तेजसादि दे कर पाल्ममार्यादो' रचा करनी पड़तो है।

८। राखी-पूर्णिमा—यावणमासकी पूर्णिमाके दिन बौद्ध चौर हिन्दू दोनों सम्प्रदाय इस उत्सवमें योगदान करते है, किन्तु दोनों दलके पाव'णादि धर्मग्रन्थ है। बौद्धगण इस दिन पवित्र नदीमें स्नान करके देवदर्शनके लिए मन्दिर जाते है। इधर ब्राह्मण पुरोहितगण अपने विष्णु वा यजमानके हाथमें सुरक्षित सता जिये राखी

करते हैं, रक्षित हैं और अपने लिए अपने कुछ दत्तिका  
यज्ञ करते हैं। बहुतसे हिन्दू पुत्र कामानेके उद्देश्यसे  
गोपारंदा नामक वर्षके तटवर्ती नीमकटुवृक्ष वा  
गोपारंदाकृष्ण नामक स्थानमें स्नान करनेको जाते हैं।

८। जागवन्धनी—प्रति वर्ष 'त्रायसमासकी पद्मो-  
त्रियिकी भाग और गङ्गके उपनद्यमें घंटा उत्सव होता  
है। चाङ्गुनारायणके मन्दिरमें जो गङ्गदुर्गति प्रतिष्ठित  
है, त्रिवाणिकीका विग्रहास है, कि उस दिन उस मूर्तिके  
गरोरमें दूरके शक्ति काण्य पसोना था जाता है। पुरो-  
हितगण एक तोलियासे उस पमीनेको पीछे डालते हैं।  
इस प्रकार सर्वोका विग्रहास है, कि उस तोलियाका एक  
घुमा भी सर्वविषका विषय उपकारी है।

१०। जग्माटमी—ज्योत्स्नके जग्मोपलक्षमें यह  
उत्सव होता है।

११। गोष्ठ वा गाभीयाता—ईश्वरमात्र नेवार भातिके  
मध्य यह उत्सव प्रचलित है। किमी गृहस्थ परिवारके  
किमी व्यक्तिके मरने पर उस घरके सब कोई मिल कर  
१ भादोंको गाभीरुप धारण करते और राजप्रासादके चारों  
पौर समस्य पौर श्रुय करते हुए घूमते हैं।

१२। वाघयाता—गाभीयाताके बाद जो १ भादोंको  
नेवारगण वाघकी सजा कर नृत्यगोत करते हैं। यह  
गाभीयाताके चतुर्थमास है।

१३। इन्द्रयाता—२६ भादोंको काठमण्डू नगरमें  
यह उत्सव होता है और ८ दिन तक रहता है। प्रथम  
दिन राजप्रासादके सामने एक उष्य काठकी ध्वजा गाड़ी  
जाती है और शत्रुहा नरकमण्डप मुखम, पहन  
कर प्रासादके चारों पौर घूम घूम कर नृत्यगोतादि  
करते हैं। उत्तीय दिन राजा कुछ बासिकाचीकी कुवा  
कर कुमारोपना करते हैं। चौथे उष्य गाड़ो वा सदा  
का नगरमें घूमते हैं। जब ये सब कुमारियां नगरका  
परिक्लम कर राजप्रासादमें पुनः पहुँचती हैं, तब  
एक गङ्गेके जल पर राजा ईश्वर बैठते पदया राज-  
नेवहारकी सात कर लगे लहर रहते हैं। इन समय  
राजपदशाभुके समयादिगण नदीका पधारके उदडीकन  
पौर नगरका हाविष्य करते हैं। सभी दिन पनमण्डू  
होती होती हैं। गोपारंदाकृष्णोपनद्यके इन्धनेके दि-

में टनपण्डे माय काठमण्डू नगरमें प्रवेश किया था।  
जब राजाके बैठनेके लिये गद्दी बाहर निरामी गई,  
तब गोपारंदाकृष्ण उभ गद्दी पर बैठे। नेवार लोग पहले सब  
उक्तमें मग्न और लगेमें चूर थे, इस कारण ये विप्ल-  
के प्रति पक्षधारण कर न सके। नेवारराज नगरमें भाग  
गाए, प्रयोनारायणने निर्वादादमे नेवारराज्यको टपक  
कर लिया। इस वर्षके दिन यदि भूकम्प हो, तो बिदेस  
पनिटयातकी सुभाषना रहती है, ऐसा नेवारों-  
का विश्वास है। यही कारण है कि नेवारगण भूमि-  
कम्पके बादमें चाठ दिन तक पुनः इस उत्सवको  
मानते हैं।

१४। दमहरा या दुर्गासत्र—महामासके बादके  
विजया दशमी तक दस दिन यह उत्सव होता है। भास-  
वर्षमें दमहरा उत्सवके उपलक्षमें जो सब कामादि विहित  
हैं, यहाँ भी ठीक वही सब हैं। उत्सवका अन्तिम  
दस दिन है। इन दस दिनोंमें चनेह भेजे और बकौ-  
की बलि दी जाती है, किन्तु पञ्चान तथा विशारके नैवा  
महीकी दुर्गा-प्रतिमा नहीं बनाई जाती। प्रथम दिन  
पर्याप्त घट-स्थापनके समय ब्राह्मण लोग पूजाके निदि  
निर्धारित स्थान पर यथादि पद गम्य होते और पवित्र  
नदीके जलसे स्नान करते हैं। दसमें दिन में गिजादि  
की विषयमें जो के पट्टर चीन देते पौर राधोको तरह  
इसमें भी दक्षिण पाते हैं।

१५। दोवाषो—धनाविहाती लक्ष्मीदेवीकी पूजा-  
के उपलक्षमें काशीको पनारव्याकी यह वर्षोत्सव  
मानाया जाता है। इन दिन नगरकाभी सारी राते जुपा  
खेनते हैं। राजनिघममें जुपा खेनना निषिद्ध होने  
पर भी इस उत्सवमें तीन रात और तीन दिन तक कोई  
रोक टोक नहीं है। जुपाकी स्नान शीघ्र चादिका दान  
रहते हैं। सुनते हैं, कि कभी कभी वे पद्मनी स्त्रीको  
भी दक्षिण पर रण कर खेनते हैं। एक समय किमी  
मनुष्यने पद्मना बाद काट कर दक्षिण पर रखा था। जब  
श्रीत लभकी दूरी, तब लक्ष्मी प्रतिपक्षने कहा, कि लक्ष्मी  
राजके वदने पाय देना हीना पक्षपातीना हुआ जो  
कुछ द्रव्य लभके पास है, वही लोहना पहेला। ऐसा  
मनुष्य मरनेमें बहुत कम है।

१६। किचा-पूजा—केवल नैवार प्रातःमें यह उत्सव होता है। १६ कातिककी नैवारगण सिर्फ कुत्तकी पूजा करते हैं। इस दिन नेपालके प्रायः सभी कुत्तोंके गलेमें पुष्पमाला गोमित देखी जाती है। मधिय, काक और भैक पादि जीवपूजाके लिये भी इसी प्रकारका दिन निर्धारित है।

१७। भाई-पूजा वा भ्रातृ-दिनोपा—कात्तिककी शुक्लादितीयाकी रमणियां अपने अपने भाईके घर आती हैं और भाईके पाँव धो कर उनके कपालमें तिलक लगाती और गलेमें मालादि पहना कर मिष्टानादि भोजन कराती हैं। भाई भी सखीय देनेके लिये बहनको कपड़ा भलहारादि देते हैं।

१८। बाला-चतुर्दशी वा शक्तू—१४ पंगहनकी यह उत्सव होता है। इस दिन देवयामिगण पशुपति नाथ मन्दिरके अपर पार्श्ववर्ती नृगस्थनी नामके यन्त्रमें जा कर बन्दरोंके भोजनके लिये खावल, कौसा और मिष्टानादि जमोन पर छिड़क देते हैं।

१९। कात्तिक की-पूर्णिमा—इस पर्वोत्सवमें एक मान पहले बहुसमीक्षियां पशुपतिनाथ मन्दिरमें जाती हैं और एक मान तक उपवास करती हैं। ये सब स्त्रियां कथन विग्रहके स्नानधीत जलके सिया और कुंड भी नहीं खाती। मासके शेष दिन संयात् कात्तिकी पूर्णिमाकी उपवासके पक्षमें वे उत्सवादि करते हैं। इस दिन पशुपतिनाथका मन्दिर रोगनीमे भक्ता भक्त करता है और सोरी रात नाच गान होता रहता है। दूसरे दिन जिस पर्व तट पर दिनमन्दिर अवस्थित है, उस कौसा-पर्वतके ऊपर शमणियां ब्राह्मण भोजन कराती और अपने कुटुम्बादिमें धन्यवाद ले कर घरवापिस आती हैं।

२०। शेष-शेष वा चतुर्थी—माघमासमें गणेशके मोन्धके लिये यह उत्सव होता है। सात दिन उपवास करके रातकी भोजनादि करते हैं।

२१। बंशमीक्षव वा शीपक्षमी—यह उत्सव हम लोगोंने देगके जमा होता है।

२२। होकी वा दोन-खीना—फागुण मासके शेष दिनमें यह उत्सव होता है। इस दिन शक-गमादके

सामने एक 'घोर' वा फाण्डकी टंक कर समीं निगानादि गोमित करते हैं और रातकी सवे जना देते हैं। नेपालियोंमें प्रवाद है, कि इस प्रकार वे गत वर्षकी जलाकर नूतनवर्षके भागमनकी प्रतीक्षा करते हैं।

२३। माघी-पूर्णिमा—माघमासमें नैवारयुक्कगण प्रतिदिन पूतसजिनां घाघमतीके जलमें स्नान करते हैं। जिनका कुछ मानसिक रहता है, मासके शेष दिनमें उनमेंसे कोई तो हाथ पर, कोई पीठ पर, कोई लक्ष पर, कोई पद पर अग्नि जला कर सुसज्जिन डोली पर चढ़ते और अपने अपने स्नानघाटमें देवद्वारमेंको जाते हैं। दूसरे दूसरे स्नानघाटों भी अपने अपने शायमें एक एक छिद्रयुक्त जलपूर्ण कलसी ले कर उनके पीछे पीछे चलते हैं। उस कलसीके छिद्रसे बुंद बुंदमें पानी गिरता है जिसे लोक पवित्र समझ कर गिर पर ले लेते हैं। इस दिन अपनेक मनुष्य अग्नि जलाते हुए रात्र पर चलते हैं। इस कारण नैवारगण रात्रमें चगमा लगाए रहते हैं। यह वाद्य उत्सव सत्रतीभावमें हाथोहोकर है।

२४। घोड़ा-यात्रा—एक पञ्चमेना। १५ शैतकी राजाके पादशय्ये राजभक्त शारिगण अपने अपने घोड़े ले कर कृष कथायदके मैदानमें पहुँचते हैं। यहाँ सर जङ्गबहादुरकी प्रतिमूर्त्तिके निकट राजा और दूसरे दूसरे कर्षतन कर्मचारी उपस्थित होते हैं। सभी अपने अपने घोड़े पर सवार हो सुदुदोड़ करते हैं। जिन स्तम्भके ऊपर जङ्गबहादुरकी मूर्त्ति स्थापित है, उन्हीं स्तम्भ-निर्माणके यादिक उत्सवमें एक बड़ा मेला लगता है। गर्वमें गढ़-संक्रान्त काम शारिगण कृष कथायदके लिये निर्दिष्ट मैदानमें आ कर तम्बू लगाते हैं। यहाँ दोवासीके जमा इस दिन भी रातकी समयत पामोट घोर सुषा खेला जाता है। शेष दिनमें प्रतिमूर्त्तिके चारों घोर पामोट माकामे सुसज्जिन करके उत्सवमञ्च करते हैं।

२५। पिशाच-चतुर्दशी—यह वर्षे गरी-बाहला देवीका पर्वदिन है। चैत्र कृष्णपादाशुमें नाना स्थानोंपर इस देवमन्दिरमें भोग वा कर रहते होते हैं। इस दिन देवीके सामने बरबनि होती है। छयोदशोके दिन कुमार घोर कुमारियाँकी भोजन कराया जाता है और पिशाच-

पशुदंशका प्रतिकार चारम्भ होता है। उस दिन रात भर दीप जलना रहता है और चमिरघा की जाती है दूसरे दिन मधे चम्पेश्वरी देवीको एक रथ पर चढ़ा कर नगरको परिक्रमा करते, वीक्षे मन्दिरके निकटस्थ महा-देवमूर्तिके पात्रमें रथ देते हैं। देवीका रथयात्रापथ बहुत धूमधामसे मनाया जाता है।

२६। पञ्चलिङ्ग-भैरवयात्रा—पाणिनकी शृङ्ग पद्मो-की यह उत्सव चारम्भ होता है। प्रवाद है, कि इस दिन महाभैरव या कर खड्गिनी वा कामादिनी देवीके साथ उक्त स्थान पर कर्मोपदेश करते हैं।

२७। शैल्या-यात्रा—कान्तिपुर-प्रायणके बहुत पक्षे-में देवमाहात्म्यका श्लोक लिखे इस उत्सवकी सृष्टि हुई है।

२८। उज्यायात्रा—देवकीर्ति-सोवपाय महीश्वर। कान्तिपुरकायणके पक्षमें यह प्राचीन उत्सव नैपालमें प्रचलित है।

२९। सावित्र्या-यात्रा—शाक्यमुनि जब बोधिसत्वकी लोचने ध्याननिम्नन है, उस समय इन्द्र उनका ध्यान तोड़नेके लिए चाप, छेकिन उनके यन्त्रे पराभूत हो बाधित पड़े गए। वीक्षे ब्रह्मादि देवगण शाक्यपुत्रको पाणीबाँद देने आए। इसी उद्देश्यमें इस उत्सवकी सृष्टि हुई है।

३०। भैरवो-यात्रा और विषकाटी उत्सव—भात-गाय नगरके पवित्राता भैरवदेवके उद्देश्यमें नैवार-जातिका उत्सव। यह उत्सव दो तीन त्रेमासकी मनाया जाता है। इसके पाम की शक्तिव्यवधिमें भैरवोमूर्ति नैतादेवीका मन्दिर है। इस दिन भैरवमन्दिरके नामसे एक लकीरकाट रथ कर उसकी पूजा करते हैं। इसीका नाम निद्रयात्रा वा विषकाटी है।

३१। चमिताभ-मुद्दका उत्सव—शयधु मायके मन्दिरमें नामाचकारके पवित्र उत्सवरूप और साजमज्जादि तथा चमिताभ बुद्धके गिर परका मुकुट का कर काठमण्डपमें यह उत्सव होता है। पूजादिमें बाद बड़ा नामक बौद्ध ब्राह्मणकी धार्यादि मण्डप और नामाचकारके द्रव्यादि दान करते हैं। मठमन्त्रा देवीविष्ट मन्त्रैस्तादिकी रात्रों पर विष्टुष्ट देते हैं। इस समय चागत बौद्ध-नैथार्थीदण्ड बुद्धका पवित्र प्रपाद पानेकी परामर्श मान्य है करते

हैं। वीक्षे बौद्धा-भोजन होता है। इसके बाद ही पूरे कोटि मिनजर बाहर निकलते हैं।

३२। रथयात्रा—यह इन्द्रयात्रामें उत्सव है। १८३०-१८५० ई०के मध्य राजा जयप्रकाशमन्त्रके शासनकालमें इस उत्सवकी सृष्टि हुई। एक समय मात यन्त्री एक बौद्धा-वाचिधानि मलाप करते हुए कहा कि यह कुमारी देवी वा शक्तिकी प्रशंसाभूत है। लेकिन राजाने उसे पाण्डुको समझ कर नगरमें बाहर निकाल दिया और उसकी प्रतीक जमा सब जम कर ली। उसी रातको रामो यापुरोगसे वीक्षित हुई। उसने उत्सव मलापसे मान्य हुआ कि उस पर देवीका क्रोध है। यह देख कर राजा क्षुब्ध हो रहे। उसने सबके सामने उस बौद्धावाचिधा-की ईर्ष्याय प्रशोद्धय यतलाया और उसी समयसे प्र-की पूजादि करके देवीका प्रोध शांत किया। ऐसे राजाने उस कथाको सृष्टेयमें ला कर बहुत-से जागो-रीं। प्रतिपथ उस कथाको रथ पर चढ़ा कर नगरके चारों ओर घुमाते थे। इसीसे रथयात्रा उत्सवकी सृष्टि हुई है। जिस तरह उड़ीसामें जगन्नाथ, बलराम और उनके वीचमें सुभद्रा देवी पवस्थित हैं, उसी तरह यहां भी देवीको मूर्तिके रथपायमें पवके लिये दो बौद्धा नामक नियुक्त रहते हैं। वे भैरव वा महादेवके पुत्र गणेश और कुमारके रूपमें गिने जाते हैं। यह कुमारी पट-मात्रका वा कालीदेवीकी तरह पूजित होती है।

३३। स्वयम्भूसेना वा स्वयम्भूपतिर्चन—स्वयम्भू देवके जन्मदिन-उपलक्षमें पाणिनी पूर्विमाकी यह उत्सव होता है। वर्षाके प्रारम्भमें श्रेष्ठमासकी स्वयम्भू मायकी पूजा पाटिनी ब्रह्मसे उक्त देते हैं। इस दिन मन्दिरावरक मण्डका जन्मोत्सव किया जाता है। बौद्धधर्मोपनिषदिमें लिखे यह महापुष्पाका दिन है। इस दिन नैपालकी सभी उपत्यकाओंमें पुष्पकी पूजा होती है।

३४। छोटी मन्त्रेन्द्रमाद-यात्रा—काठमण्डप नगरका एक धार्मिक महोत्सव। पाठनमें जिस तरह पद्माचिका उत्सव होता है, वहां भी उसी तरह समता-मन्त्रे उद्देश्ये एक उत्सव होता है। किन्तु समता-भद्रका नाम-माहात्म्य जलपाचार्यमें विद्यमान था न रहनेके कारण यह धार्मिकोत्सव नैपालके पवित्राता मन्त्रेन्द्र-मन्त्रे

नामानुसार कोटी कोटी मरत्येन्द्रनाथयात्रा नामसे प्रसिद्ध है। चैत्रमासको शुक्लपटमी तिथिको यह प्रवृत्तय होता है और चार दिन तक रहता है। किन्तु दैवदुर्विपाकसे यदि रथचक्र टूट जाय चघवा रथयात्रामें कोई विघ्न पड़ूँ च जाय, तो अतिपूरण-स्वरूप एक दिन और भी उत्सव होता है। प्रथम दिन रानी-पोखरामे पासनतान तक, दूसरे दिन पासनतालमे दरवार तक तथा तीसरे दिन दरवारमे साघनताल तक जाते हैं और चौथे दिन साघनतालमे पुनः रानीपोखराको लौटते हैं।

३५। रामनवमी-उत्सव—श्रीरामचन्द्रके जन्मोत्सवमें गोर्खाशासिका चतुष्टित उत्सव। चैत्रमासकी शुक्ल-पटमी तिथिको सूर्यदेव उत्तरायणमें पटापण करते हैं, गोर्खा लोग इस शुभ दिनमें अपने अपने द्रव्यमध्यमें पूजा और देवताओंको मनोमत द्रव्यादि उत्सर्ग करते हैं। दूसरे दिन नवमी तिथि पड़ती है। इस पुण्यतिथिमें हिन्दूधर्मका उत्सव देख कर बौद्ध नेवारगण अटमोमे ले कर एकादशी तक समन्तभद्रका उत्सव दिन स्थिर करते हैं।

३६। नागपंचपूजा और उत्सव—शिवपुरी पर्वतके सातुदेगमें बड़ा-नोलकण्ठ नामक ग्राममें तथा नागालुंन-पर्वतके निम्नस्थ बालाजी ग्राममें विष्णुपूजा महा धूमधामसे होती है। पहले सिर्फ बड़ा-नोलकण्ठमें यह उत्सव होता था। यहां एक क्षुद्र पुष्करिणिके मध्यभागमें अनन्तश्रया-शायी नारायणकी सुलभत्त मूर्त्ति विद्यमान है। इस विष्णु मूर्त्तिके हाथमें शङ्ख, चक्र, गदा और शालग्राम है। गोर्खाईयान पर्वतके नोलकण्ठ इदतीरधर्मो महा-देवको सुलभत्त मूर्त्ति देख कर नेपालबासी इस नारा-यणमूर्त्तिको भी महादेवको मूर्त्ति मानते हैं।

बड़ा-नोलकण्ठतीर्थमें नेपालराज और राजपरिवारभक्त किसी वास्तिका जाना निविद्ध है। किन्तु दूसरे दूसरे सभी बौद्ध और हिन्दूगण इस तीर्थमें जा सकते हैं। प्रायः दो सो वर्ष हुए कि नेवारोंने इसके चतुर्करपमें बालाजीमें बालानोलकण्ठ नामक नूतन नारायणकी मूर्त्ति स्थापन की है। हिन्दूगण यहां केवलमात्र नारा-यणमूर्त्तिकी पूजा करते हैं और मानसिक द्रव्यांदि उप-हार देते हैं। किन्तु बौद्धगण पूजाके बाद नागालुंन पर्वतस्थित बौद्धदेवके दर्शनकी जाते हैं।

३७। उपरीक्त यात्रावातोत्त मठयात्रा यात्रा, ( ३८ ) श्रद्धालुके यात्रा, ( ३९ ) लोकेश्वरयात्रा, ( ४० ) स्वर्ग-लोकेश्वरयात्रा आदि अन्य यात्राएं हैं।

स्कन्दपुराणके हिमवत्खण्डमें और स्वयम्भूपुराणमें उक्त यात्राओंमेंसे किसे किसेका विषय वर्णित है।

नेवारजातिके उत्सवमें पार्वणकार्य चाहे हो चाहे न हो लेकिन नृचमोत्त, मांसभोजन और मद्यपान अवश्य होता है।

फाल्गुनमासकी शिवचतुर्दशी तिथिको नेपानोगण शिव-पूजा और राभिजागरणादि करते हैं। प्रायिक मनुष्य पशु-पतिनाथके मंदिरमें जाता और हाथमतीमें छान करता है। प्रविद्ध रवानारि।

नेपाल उपत्यकामें सचसुच क्षेत्र चार नगर हैं। विभिन्न राजाके समयमें इन्हीं चार नगरोंमें राजधानी थी। वर्त्तमान राजधानी काठमाण्डू और प्राचीन राज-धानी कोर्त्तिपुर, पाटन और भातगाँव यही चार नगर विष्णुमतीनदीके किनारे बसे हुए हैं। इनके पन्नावा और लो सब प्रसिद्ध स्थान हैं, उनमेंसे अधिकतर तीर्थ-स्थान वा मन्दिरादिके लिए विख्यात है, किन्तु वे सब ग्राम मात्र हैं। नेपाल उपत्यकामें इस प्रकारके जितने ग्राम हैं उनमेंसे बड़ा नोलकण्ठ ग्राम, बालाजी वा छोटा नोलकण्ठ ग्राम, स्वयम्भूनाथ ग्राम ( ये सब विष्णुमती नदीके सुहाने पर अवस्थित है ), धरिग्राम, हय ( रुद्रमतीके किनारे ), धरिगाय ग्राम और बोध-नाथ ग्राम ( रुद्रमती और बाघमतीनदीके मध्यवर्त्ति सचभूमि पर अवस्थित ), गोकर्णग्राम, देवपाटन ग्राम, चन्द्रगहर, फिरकिङ्गगहर, गद्दुगहर, बाङ्गनारायण ग्राम, तिम्ब्रिगहर ( मनोहरानदीके निकटवर्त्ति ), गोदा-यरी ग्राम ( गदोरी, कुनघोवा-पर्वतमूल पर अवस्थित ), धानकोट गहर ( चन्द्रगिरि पर्वतमूल पर अवस्थित ) आदि ग्राम उल्लेखयोग्य हैं।

काठमाण्डू, कोर्त्तिपुर, पाटन और भातगाँव ये चार नगर नेवार राजाओंके समयमें प्राचीर द्वारा चारों ओरसे घिरे थे और ज्ञाने चानेके लिए प्राचीरके ज्ञाने स्थानोंमें तीर्थय मने हुए थे। गोर्खाओंके समयमें ये सब प्राचीर दिनों दिन तहस नहस होमे जा रहे हैं। अधिकतर तीर्थ



चतुर्दशीका व्रतकल्प चारम्भ होता है। उस दिन रात भर दोप क्षमता रहता है और पवित्ररक्षा की जाती है दूसरे दिन सबेरे वर्षाखरी देवीकी एक रथ पर चढ़ा कर नगरकी परिक्रमा करते, पीछे मन्दिरके निकटस्थ महा-देवमुक्तिके शायंभे रथ देते हैं। देवीका रथयात्रापर्व बहुत धूमधामसे मनाया जाता है।

२६। पञ्चलिङ्ग-भैरवयात्रा—प्राग्निनकी शक्त पञ्चमो-को यह उत्सव चारम्भ होता है। प्रवाद है, कि इस दिन महाभैरव का कर खिन्नीया या काश्यायिनी देवीके साथ छल्ल स्थान पर केलीविहार करते हैं।

२७। हील्ला-यात्रा—कान्तिपुर-स्थापनके बहुत पहले-से देवमाहात्म्यप्रकाशके लिये इस उत्सवकी सृष्टि हुई है।

२८। कथ्यायात्रा—देवकीर्ति-चोषणार्थ महोत्सव। कान्तिपुरस्थापनके पहलेसे यह प्राचीन उत्सव नेपालमें प्रचलित है।

२९। साखिया-यात्रा—शाक्यसुनि जब बोधिल्लके मोचे ध्याननिम्न थे, उस समय इन्द्र उनका ध्यान तोड़नेके लिए भाए, लेकिन उनके बलसे पराभूत हो वापिस चले गए। पीछे ब्रह्मादि देवगण शाक्यबुद्धकी भागीर्षाद देने भाए। इसी उद्देश्यसे इस उत्सवकी सृष्टि हुई है।

३०। भैरवो-यात्रा और विपकाटी उत्सव—भात-गाँव नगरके पश्चिमाभा भैरवदेवके उद्देश्यसे नैवार-जातिका उत्सव। यह उत्सव दो तीन वर्षे शाक्यकी मनाया जाता है। इसके पास ही शक्तिस्वरूपिणी भैरवीमुक्ति नेतादेवीका मन्दिर है। इस दिन भैरवमन्दिरके सामने एक चकोरकाष्ठ रख कर उसकी पूजा करते हैं। इसका नाम लिङ्गयात्रा या विपकाटी है।

३१। अमिताभ-बुद्धका उत्सव—स्वयम्भूनाथके मन्दिरसे गामाप्रकारके पवित्र उपकरण और साजसज्जादि तथा अमिताभ बुद्धके शिर परका सुकुट सा कर काठमण्डूमें यह उत्सव होता है। पूजादिके बाद बाढ़ा नामक बौद्ध ब्राह्मणोंकी धान्यादि शय्य और नानाप्रकारके द्रव्यादि दान करते हैं। तदनन्तर देवीच्छिद्र नैवेद्यदादिको राक्षी पर डिहक देते हैं। इस समय प्रागत योद्ध-नेवारीगण बुद्धका पवित्र प्रसाद पानेकी प्राप्तिमें गोलमाल करते

हैं। पीछे बाढ़ा-भोजन होता है। इसके बाद ही वर्ष कोई मिलकर बाहर निकलते हैं।

३२। रथयात्रा—यह इन्द्रयात्रासे स्वतन्त्र है। १०४०-१०५० ई०के मध्य राजा जयप्रकाशमल्लके शाश्वतकालमें इस उत्सवकी सृष्टि हुई। एक समय मात वर्षाकी एक बाढ़ा-वालिकाने प्रलाप करते हुए कहा कि तब कुमारी देवी वा शक्तिकी प्रशंसभूत है। लेकिन राजाने उसे पावण्टी समझ कर नगरसे बाहर निकाल दिया और उसकी जमीन जमा सब जप्त कर ली। उसी रातको रातो वायुरोगसे पीड़ित हुई। उनके उत्सव प्रलापसे मात्तूम हुआ कि उन पर देवीका क्रोध है। यह देख कर राजा स्तम्भित हो रहे। उन्होंने सबके सामने उस बाढ़ावालिका-की ईश्वरीय प्रशंसा वतनाया और उसी समयसे उसकी पूजादि करके देवीका क्रोध शान्त किया। पीछे राजाने उस कन्याको स्वदेगमें ला कर बहुत-सी जागोर दीं। प्रतिवर्ष उस कन्याको रथ पर चढ़ा कर नगरके चारों ओर घुमाते थे। इसीसे रथयात्रा उत्सवकी सृष्टि हुई है। जिस तरह उड़ीसामें जगन्नाथ, बलराम और उनके बीचमें सुभद्रा देवी पवस्थित हैं, उसी तरह यहां भी देवीकी मुक्तिके रक्षणवैद्यके लिये दो बाढ़ा बालक नियुक्त रहते हैं। वे भैरव वा महादेवके पुत्र गणेश और कुमारके रूपमें गिने जाते हैं। यह कुमारी घट-भादक वा कासोदेवीकी तरह पूजित होती है।

३३। स्वयम्भूमेला वा स्वयम्भूत्पत्तिकदिन—स्वयम्भूदेवके जन्मदिन-उपलक्षमें प्राग्निनी पूर्णिमाकी यह उत्सव होता है। वर्षाके प्रारम्भमें ज्येष्ठमासकी स्वयम्भूनाथकी चूड़ा भादिकी वस्त्रसे ढक देते हैं। इस दिन मन्दिरावरक वस्त्रका उन्मोचन किया जाता है। बौद्धधर्मावलम्बियोंके लिये यह महापुण्यका दिन है। इस दिन नेपालको सभी उपत्यकाओंमें बुद्धकी पूजा होती है।

३४। छोटी मांस्वन्द्यायात्रा—काठमण्डू नगरका एक वार्षिक महोत्सव। पाटनमें जिस तरह पद्मपाविका उत्सव होता है, यहां भी उसी तरह समन्त-भद्रके उद्देश्यसे एक उत्सव होता है। किन्तु समन्त-भद्रका नाम-माहात्म्य जनसाधारणमें विगोप व्याप्त न रहनेके कारण यह पार्वीत्सव नेपालके पश्चिमाभा मत्स्येन्द्र-नाथके

मामासुसार छोटी छोटी सरहयेन्द्रनाथयात्रा नामसे प्रसिद्ध है। चैत्रमासको शुक्लपक्षमें तिथिको यह पर्वोत्सव होता है और चार दिन तक रहता है। किन्तु दैवदुर्घिपाकमें यदि रथचक्र टूट जाय पथवा रथयात्रामें कोई विघ्न पड़व जाय, तो अतिपूजा-स्वरूप एक दिन और भी उत्सव होता है। प्रथम दिन रानो-वोखरासे घासनताल तक, दूसरे दिन घासनतालसे टरवार तक तथा तीसरे दिन टरवारसे साघनताल तक जाते हैं और चौथे दिन साघनतालसे पुनः रानोवोखराको लौटते हैं।

३५। रामनवमी-उत्सव—श्रीरामचन्द्रके जन्मोत्सवमें गोर्खाशांतिका अनुष्ठित उत्सव। चैत्रमासकी शुक्ल-पक्षमें तिथिको सुप्रदेव उत्तरायणमें पढायण करतें हैं, गोर्खा लोग इस शुभ दिनमें अपने अपने दलमध्यमें पूजा और देवतापोकौ मनोमत द्रव्यादि उत्सर्ग करतें हैं। दूसरे दिन नवमी तिथि पड़ती है। इस पुण्यतिथिमें हिन्दुओंका उत्सव देख कर मोह निवारण्य पटनोमें ले कर एकादशी तक समस्तभद्रका उत्सव दिन स्थिर करतें हैं।

३६। नारायणपूजा और उत्सव—शिवपुरो पर्वतके सानुदेशमें बड़ा-नोलकण्ठ नामक ग्राममें तथा नागार्जुन-पर्वतके निम्नस्थ बालाजी ग्राममें विष्णुपूजा महा धूमधामसे होती है। पहासे सिर्फ बड़ा-नोलकण्ठमें यह उत्सव होता था। यहां एक सुदृ पुष्करिणिको मध्यभागमें धनन्तगव्या-शायी नारायणकी सुवहत् मूर्त्ति विद्यमान है। इस विष्णुमूर्त्तिके हाथमें शङ्ख, चक्र, गदा और शानघाम है। मोसाईयान पर्वतके नोलकण्ठ इदने रवर्षी महा-देवकी सुवहत् मूर्त्ति देख कर नेपालवासी इस नारायणमूर्त्तिको भी महादेवकी मूर्त्ति मानते हैं।

बड़ा-नोलकण्ठतीर्थमें नेपालराज और राजपरिवारमुख किसी वास्तिका जाना निषिद्ध है। किन्तु दूसरे दूसरे सभी बौद्ध और हिन्दूगण इस तीर्थमें जा सकतें हैं। प्रायः ही बौध्वे हुए कि नेवारोंने उसके अनुकरणमें बालाजीमें बालानोलकण्ठ नामक मूलतः नारायणकी मूर्त्ति स्थापन की है। हिन्दूगण यहां केवलमात्र नारायणमूर्त्तिकी पूजा करतें हैं और मानसिक द्रव्यादि उपहार देते हैं। किन्तु बौद्धगण पूजाके बाद नागार्जुन पर्वतस्थित बोधिवृक्षके दर्शनको जाते हैं।

३७। उपरोक्त यात्रावातोत मठयात यात्रा, ( ३८ ) सुशुभरी यात्रा, ( ३९ ) लोकेन्द्रयात्रा, ( ४० ) स्वयं-लोकेश्वरयात्रा पाटि भने ह यात्राएँ हैं।

स्कन्दपुराणके हिमवत्पर्वमें और स्वयम्भूपाणमें उक्त यात्राओंमेंसे किसे किमीका विषय वर्णित है।

नेवारजातिके उत्सवमें पार्षणकार्य चाहे हो चाहे न हो लेकिन नृयोग, मांसभोजन और मद्यपान प्रथम्य होता है।

फाल्गुनमासकी शिवचतुर्दशी तिथिको नेपालीगण शिव-पूजा और रामिजागरणादि करतें हैं। प्रायः मनुष्य परंपतिनाथके मंदिरमें जाता और शायमतोमें स्नान करता है।

प्रसिद्ध स्थानारि।

नेपाल उपत्यकामें सचमुच केवल चार नगर हैं। विभिन्न राजाके समयमें इन्हीं चार नगरोंमें राजधानी थी। वर्त्तमान राजधानी काठमाण्डू और प्राचीन राजधानी कोर्त्तिपुर, पाटन और भातगाँव यही चार नगर विष्णुमतीनदीके किनारे बसे हुए हैं। इनके पनाया और जो सब प्रसिद्ध स्थान हैं, उनमेंसे अधिकांश तीर्थ-स्थान वा मन्दिरादिके लिए विख्यात है, किन्तु वे सब ग्राम मात्र हैं। नेपाल उपत्यकामें इस प्रकारके जितने ग्राम हैं उनमेंसे बड़ा नोलकण्ठ ग्राम, बालाजी वा छोटा नोलकण्ठ ग्राम, स्वयम्भूनाथ ग्राम ( ये सब विष्णुमती नदीके मुहाने पर अवस्थित है ), हरिग्राम, हय ( रुद्रमतोके किनारे ), हरिग्राम ग्राम और बोधनाथ ग्राम ( रुद्रमतो और भावमतोमठोके मध्यवर्त्ति उचभूमि पर अवस्थित ), गोकर्णग्राम, देवपाटन ग्राम, चन्द्रगहर, फिरकिङ्गहर, गद्गुगहर, चाङ्गनाथग्राम, तिम्बिगहर ( मनोहरानदीके निकटवर्त्ति ), गोदावरी ग्राम ( गदोरी, पुनचोया-पर्वतमून पर अवस्थित ), घानकोट गहर ( चन्द्रगिरि पर्वतमून पर अवस्थित ) आदि ग्राम उल्लेखयोग्य हैं।

काठमाण्डू, कोर्त्तिपुर, पाटन और भातगाँव ये चार नगर नेवार राजापोकै समयमें प्राचीर द्वारा चारों ओरसे घिरे थे और ज्ञाने पानेके लिए प्राचीरके नामा स्थानोंमें तोरण नने हुए थे। गोर्खापोकै समयमें ये सब प्राचीर दिनों दिन तहस नहस होने जा रहे हैं। अधिकांश तीर्थ

ध्वंसावशेषमें परिषत हो गए हैं। किन्तु नगरसीमा उस प्राचीन प्राचीर तक आज भी निर्दिष्ट है। उस समयके नियमांशुसार नीच जातीय हिन्दू (नेहतर, कपाई, लज्जाद घादि) किसी नगरसीमाके अन्तर्भागमें वास नहीं कर सकते। मुसलमानोंके प्रति यह नियम नहीं है। यद्यपि मुसलमान नगरमें ही वास करते हैं। प्रति नगरके प्रत्येक फाटकमें सन्तान एक एक टोला या पत्नी है। इन सब पत्नियोंकी म्यूनिसिपलिट्री स्वतन्त्र है। म्यूनिसिपलिट्रीके हाथमें पत्नीके संस्कार और रखाका भार है। इन चार नगरोंके प्रत्येक नगरमें एक राजप्रासाद या दरवार है जो नगरके प्रायः मध्यस्थानमें अवस्थित है। प्रत्येक प्रासादके सामने एक लम्बा चौड़ा मैदान है। उसी मैदान की धर राजप्रासाद पाना पड़ता है। मैदानके चारों ओर मन्दिर प्रतिष्ठित हैं। नगरके अन्त्य भी इस प्रकारका खुला मैदान देखनेमें आता है। काठमण्डू नगरमें ऐसे मैदानकी संख्या १२ है। विचारालय और साधारण कर्मस्थानादि इसी प्रकारके मैदानके किनारे अवस्थित है। काठमण्डू पाटन और भातगाँवके प्रधान प्रधान मन्दिर दरवारके पास ही बने हुए हैं। यहाँ तक कि उनमेंसे जितने दरवारकी सीमाके मध्य उपस्थित हैं। उनके निकटवर्ती कोई कोई मन्दिर आज भी भग्नावशेषोंमें यत्मान है। दरवारोंके पीछे राक्षोद्यान, हृद्यमाल और घुड़माल है।

काठमण्डू नगर प्रायताकार है। बोर्डाका कहना है, कि यह नगर मण्डूओ द्वारा उनकी तलवारके धाकारमें बनाया गया है। लेकिन हिन्दू लोग, भवानीके खन्नाकारमें यह नगर बनाया गया है, ऐसा कहते हैं। जिन किसीका पत्र हो, उसका मुष्टिभाग दक्षिणकी ओर बाधमनो और विष्णु मूर्तिके सङ्ग हृद्य पर तथा उत्तरकी ओर तिब्बत घाममें अथवा कविपत हुआ है।

काठमण्डू उत्तर दक्षिणमें पाथ कोस और चौड़ाईमें कहीं उससे अधिक है। इसका प्राचीन नाम है मण्डू पाटन। दरवारके मण्डूवस्त्र और काठमण्डू भवनकी नैवारलीग सब दिग्गेष काठमण्डू (काठमण्डू) कहते आये हैं; जहाँ तक मन्थ है, कि उसीमें नगरका नाम भी 'काठमण्डू' पड़ा है। १५८६ ई०में राजा

लक्ष्मीन्द्रसिंहमकने यह काठमण्डू बनवाया था। यह कोई देवमन्दिर नहीं है। देगवासी और पागलुस मन्थानियोंके रहनेके लिये ही यह बनाया गया है। आज भी उसमें वही कार्य होता है। लेकिन कुछ दिन हुए कि उसमें एक शिवमूर्ति भी प्रतिष्ठित हुई है। काठमण्डूके प्राचीन १२ फाटकोंमें कितने आज भी मन्थवस्थानमें पड़े हैं किन्तु उन १२ फाटकोंके संश्लिष्ट १२ टोला या घाम अथ भी पूर्ववत् दोष पड़ते हैं। इन घामोंमें पामनटोला, दन्धक, दरवारचक्र, काठमण्डू टोला, टोवा टोवा और लचन टोला उल्लेखयोग्य है।

दरवारचक्रमें दरवार या प्रासाद अवस्थित है। प्रासादके उत्तर तल्लिचु मन्दिर, दक्षिण बसन्तपुर नामक मन्थगण्डक और मूतन-दरवार (अभ्यर्था-गण्डक), पूर्व राक्षोद्यान और हाथी-घोड़े रहनेके घर तथा पश्चिममें सिंह-द्वार है। प्रासादमें उन सायके निवारोंके बने हुए प्राचीन गठनके गृहवादि आज भी विद्यमान हैं।

काठमण्डू नगरमें हिन्दूके जितने मन्दिर हैं उनमेंसे तल्लिचु मन्दिर छोड़ कर और कोई मन्दिर उतना गोभायुक्त या उल्लेखयोग्य नहीं है। बौद्धमन्दिर नगरके नामास्थानोंमें है जिनमेंसे 'काठगम्भू' और 'बौद्धमण्डू' नामक दो मन्दिर उल्लेखयोग्य हैं।

काठमण्डू नगरमें ६०से ८० हजार लोग रहते हैं जिनमेंसे निवारोंकी संख्या ही अधिक है। नगरके बाहर पूर्वकी ओर ठण्डोखेल नामक मैदानमें सेनापोकी कूच कवायद होती है। इसके मध्यकालमें प्रमत्तवेदिकाके ऊपर सर जङ्गवहादुरकी गिण्टो को हुई एक प्रतिमूर्ति है। १८५६ ई०में बहुत धूमधामसे जङ्गवहादुरने स्वयं इस मूर्तिकी प्रनिष्ठा की थी। बाह्यद्वारामें जगन्नाथका मन्दिर है जिसे १८५२ ई०में जङ्गवहादुरने प्रतिष्ठित किया। ठण्डोखेल मैदानके एक भूगर्भमें बहुत पुराना एक छोटा मन्दिर है जहाँ नेपालके सभी मन्दिरोंकी प्रवेष्टा अधिक जाती एकत्रित होती है। इस मन्दिरमें महाकाल नामक शिवकी जो मूर्ति है, वोड लोग उसीकी पद्मपाणि बोधिसत्त्व बतलाते हैं। महाकालके कथान पर एक और भी छोटी मूर्ति खोदित है। हिन्दू लोग उस मूर्तिकी कथा कहते हैं, माकूम नहीं (शायद

चन्द्रमुक्ति कहते हैं)। किन्तु बौद्धलोग उस मूर्ति को पद्मपाणि के सलाटने उत्पन्न समितामकी मूर्ति मानते हैं। जो कुछ हो, इस मन्दिरमें दधी लिये एक हो प्रतिमा-को विभिन्न धर्म का विभिन्न देवता जान कर हिन्दू धोर बौद्ध दोनों सम्प्रदायको मनुष्य उसकी पूजा करते हैं।

नगरके उत्तर-पश्चिम कोणके रानीपोखरा नामक जिन सरोवरका उल्लेख किया गया है, उसके मध्यस्थमें देवो-का मन्दिर है। इसमें जानिके लिये पश्चिम किनारेमें पुल लगा हुआ है। पहले इस ऋद्धकी गोमा भयपूर्व थी, किन्तु जबसे जङ्गलछाटने इसे चारों ओरने दीवारसे घेर दिया है, तबसे इसको गोमा नष्ट हो गई है।

रानीपोखरा सरोवरके पूर्वोत्तरकोणमें नारायणका एक छोटा मन्दिर है जिनके चार तरफ देवढावके सुन्दर बन लगे हुए हैं, यह स्थान देखने लायक है। इसके समीप ही एक निर्भर है। इस स्थानका नाम नारायणहिटी है। इस मन्दिरके सामने प्राथुनिक चूना पत्थरका काम किया हुआ फतेजङ्ग घोतरा नामक एक पहालिका है जहाँ पूर्व समयमें फतेजङ्ग वास करते थे। रानीपोखराके दक्षिण एक प्रस्तरमय ढायीके ऊपर राजा प्रतापमङ्ग धोर उसको महिषीकी प्रस्तरमयी मूर्ति है। वही महिषी इन सरोवरकी खुदया गई है।

काठमण्डू शहरके पश्चिम स्वयम्भूनाथ पहाड़के दक्षिण षडभूमि पर स्वाम्यावा धोर कवायदका मंदिर है। यहाँ गोलम्दाज सेनाकी कवायद होती है। शहरके दक्षिण बाघमती धोर विष्णुमतीके सहमखल पर बाघमतीके दाहिने किनारे सेनापति श्योम बहादुरसे निर्मित २३ की गज चौड़ा पत्थरका एक बड़ा घाट है। यह घाट काठमण्डू, कान्तिपुर, जिनदेशी बादि नामोंमें भी पुकारा जाता है। कहते हैं, कि राजा गुणकामदेवने १८२४ काल्क (०२२ ई०) में यह नगर बसाया।

रानीपोखरासे धोर भी दक्षिण ठण्डीखेल वा तुङ्गी-खेल नामक कवायद करनेका मंदिर है। इसके पश्चिम धरारा नामक एक प्रस्तरस्तम्भ है जिसे भीमसेन ठाय नामक किसी सेनापतिने बनाया है। इसके ऊँचाई २४० फुट है। इसमें मोड़ी धोर भरोखे लगे हुए हैं १८५६ ई०के बजापातसे इसका बहुत कुछ भंग टूट

फूट गया था, फिरसे इसका संस्कार हुआ है। यहाँ भीमसेन निर्मित दधी प्रकारका एक धोर भी स्थापना था जो १८३३ ई०के भूमिकम्पमें तहस नहस हो गया है। वर्तमान स्थापकी गठन धोर साहकार्य पत्यत उत्कृष्ट धोर शोभासम्पन्न है। काठमण्डूसे पाचकोम उत्तर पंग-रेजी रैमिडेण्टका भावासभवन धोर उद्यान है।

काठमण्डूमें जिन सेतु द्वारा बाघमती पार कर पाटन जाना होता है, उस सेतुके उत्तर एक प्रस्तरमय उक्त कल्पके घट पर प्रस्तरस्तम्भ है। स्थापके ऊपर एक प्रस्तरमय सिंहामूर्ति विद्यमान है। यह बहुताकार स्थाप भी सेनापति भीमसेन ठायसे बनाया गया है। सेतु भी उन्हींको कीर्ति है।

पाटन—यह नेपालमें सबसे बड़ा नगर है। इसका दूसरा नाम है कान्तिपत्तन। यह काठमण्डूसे दक्षिण-पूर्व तीन पावकी दूरी पर बाघमतीके दाहिने किनारे अवस्थित है। गोर्खा-विजयके पहले नेपाल की तीन राष्ट्योंमें विभक्त था, उस समय इसी नगरमें नेवारराजको राजधानी थी। पाटन देखो।

कीर्तिपुर—चन्द्रगिरि पर्वतके उपरिस्थित गिरिपथके नीचे जो यह ग्राम धोर नगर है उसमेंसे धानकीट शहर बहुत कुछ प्रसिद्ध है। इसीके पूर्व पर्वतके ऊपर बहुतसे धाम हैं। उन धामोंमें कीर्तिपुर ही प्रधान है। यहाँ पहले एक क्षाधीन राजाकी राजधानी थी। पत्तनमें यह पाटनराजके हाथ लगा। कीर्तिपुर निकटवर्ती मम-तल भूभागसे २-४ सौ फुट ऊँचे पर तथा पाटन धोर काठमण्डू नगरसे छेड़ कोषकी दूरी पर अवस्थित है। यह नगर प्राचीनकालमें बहुविस्तृत नहीं था। जिम्बु यहाँका दुर्भेद्य दुर्ग बहुत समझर था। १०६५-में १०६० ई० तक तीन वर्ष घेरा डाले रहनेके बाद गोर्खाराज पृथ्वीनारायणने हल करके यह नगर जीता धोर विष्णु-घातकृताने नगरमें प्रवेश कर भावामल्लदेवसिता मर्वाकी माक काट डालीं। सेवल वे ही बच गए थे, जो बांसुरी बजाना जानते थे। कादारगाहिनियों नामक एक पाहरी इन समय कीर्तिपुरमें थी। वे अपने निवान-हतिहासमें इस विषयमें पनेक निहुर घटनाओंका उल्लेख कर गए हैं। कर्णाल काठपेटिक भी इन

घटनाई १० वर्ष बाद जब कौत्तिपुर गए थे, तब उन्होंने भी यहाँ कितने नकटे मनुष्योंको देखा था। कौत्तिपुरकी जोबसंख्या चार हजारके लगभग है। छपौनारायणके पादेमये कौत्तिपुरका नाम बदल कर 'नामदाटापुर' रख गया। तभीसे यह नगर प्रमगध्वंस होता जा रहा है, मन्दिर और भद्रालिकापीके संस्कार करनेकी कोई चेष्टा नहीं की जाती। प्राचीन तोरण और प्राचीर आज भी ध्वंसप्राय प्रयस्थाने पड़ा है। यहाँ केवल नेवारीका वास है। जलवायु बहुत छाह्यकर है। परंतुसुलभ मलमण्डरीमी यहाँ एक भी देखनेमें नहीं आता। यहाँके दरवार और निकटवर्ती मन्दिरादि शहरके पश्चिम छोटे पहाड़के ऊपर अवस्थित है। अभी इसका जो ध्वंसप्रयत्न वत्तमान है, उससे प्रकृत आकारका निरूपण नहीं किया जा सकता। पातमर्ण प्रस्तर (पभी इस तरहका पत्थर नेपालमें प्रसृत नहीं होता) निर्मित दो मन्दिर आज भी वत्तमान हैं। इनकी छत गिर पड़ी है, दोवार पर जलल हो गया है, किन्तु कितने हाथी, सिंह आदिकी प्रस्तर मूर्त्ति आज भी रचित प्रयस्थाने वत्तमान है। मन्दिर १५५५ ई०में बनाया गया था और उसमें हरगोरीकी मूर्त्ति प्रतिष्ठित थी।

यहाँके सभी मन्दिर ध्वंसप्राय हैं, केवल जिनका ध्वंस मोर्खा राजाकोषसे दिया जाता है, वे ही आज तक पूर्णवत् प्रयस्थाने विद्यमान हैं। भैरवका मन्दिर ही प्रधान है। यहाँ उससे दिग्बहुतसे याताएकत्रित होते हैं। मन्दिरमें कोई ममूयाकृति या लिङ्गरूपो देवप्रतिमा नहीं है। उनके बदलेमें एक प्रस्तरमय ताना रंगीमें रञ्चित ध्याप्रमूर्त्ति है। यहाँ मूर्त्ति देवमूर्त्तिरूपमें पूजित होते हैं। इस मन्दिरके पास ही और भी दो तीन मन्दिरोंका ध्वंसप्रयत्न देखनेमें आता है।

कौत्तिपुरके उत्तर पश्चिमके ऊपर गवेमका एक मन्दिर है। इस मन्दिरका तोरण बहुत सुन्दर और चरकट प्रोदित आहकाय शोभित है। इन सब छोदिने गिर्वाँके पश्चिमीय पौराणिक चित्र है। १६१५ ई०में जेपोलातोय मौरिस्थानेवारीने इस मन्दिरकी प्रतिष्ठा की। तोरणको केपाहोके मध्यस्थलमें गवेम, वाम भागमें मयरा

रोहिणी कुमारी, कुमारीके वामभागमें महिपारोहिणी वाराही, और वाराहीके वामभागमें गिबारोहिणी चासुण्डा है तथा गवेमके दक्षिण गदहुरोहिणी वण्णवी, वण्णवीके दक्षिण ऐरायतरोहिणी इन्द्रापी और इन्द्रापीके दक्षिणमें सिंहायहिनी महानक्षी है। गवेमके ऊपर मध्यस्थलमें भैरव और सिंघवी तथा वामभागमें हंसारोहिणी महाप्राणी और दक्षिणमें हयारोहिणी रुद्रापीकी मूर्त्ति खोदित है। इन सब देवमूर्त्तियोंकी घटमाळका कष्ट है। दोनों द्वारके लोनेमें मध्यविन्दुगुळ पटकोयो यन्त्र है और दोनों गगल पंचगुळ सिंहमूर्त्तिके नीचे कलस और शीवस्त खोदित है।

कौत्तिपुरके दक्षिणपूर्वमें "विज्ञानदेव" नामक एक बौद्धमन्दिर है। यह मन्दिर छोटा होने पर भी इसमें बौद्ध देवदेवियों, बौद्ध शास्त्रोक्त घटनापी और बौद्ध विज्ञानादिके जो सब विचित्र चित्र स्पष्टरूपसे खोदित हैं, उन सबसे लिये इस मन्दिरका विशेष आदर होता है। कौत्तिपुरके पूर्व काठमण्डसे एक कोम दक्षिण चौमहाल नामक ग्राम और उससे भी डेढ़ कोस पूर्व में भातगांव पड़ता है।

भातगांव—यह महादेव-गोबरागिखरमें डेढ़ कोम और काठमण्डसे दक्षिणपूर्व ४ कोम दूर हनुमान्मतीके बाएँ किनारे अवस्थित है। इस नगरके पूर्व और दक्षिणमें हनुमान्मती नदी और उत्तर तथा पश्चिममें काँसावती नदी प्रवाहित है। इस नगरका आकार ग्रहना है। भातगांव देखो। भातगांव और काठमण्डके मध्य नदीबुर्दे और घेमी नामके ग्राम बना हुआ है। घेमी ग्राममें बहुत सुन्दर मूल्यय पात्रादि प्रसृत होते हैं।

फिरकिङ्ग—यह छोटा नगर धावमती नदीके दक्षिण बसा हुआ है।

चाँपागाँव—पाटनमें जो रास्ता दक्षिणकी ओर गया है उसीके ऊपर यह छोटा नगर अवस्थित है। इस नगरके समीप एक पवित्र कुण्डके मध्य एक बहुत प्राचीन मन्दिर है।

हरिसिंह—पाटनसे दक्षिणपूर्वकी ओर जो रास्ता चला गया है उसीके ऊपर यह गण्डवाम अवस्थित है।

गोदावरी वा गदीरी—फुलचोया पर्वतके पादमूलमें तथा पाटनसे दक्षिणपूर्वकी ओर जो रास्ता गया है वहीके ऊपर यह नगर अवस्थित है। यह नगर नेपाल भरमें बहुत पवित्र स्थान माना जाता है। हर बारइस वर्षमें यहाँ एक निर्भरके समीप एक मासश्रापी मेला लगता है। स्थानीय लोगोंने प्रयाद है, कि दाक्षिणात्यकी गोदावरी नदीके साथ इस नदीका संयोग है और तदनुसार इस स्थानका नाम भी पड़ा है। इसके समीप बहुतसे छोटे छोटे मन्दिर और पुष्करिणी हैं। गोदावरीमें इलायचीका खेत बहुतविस्तृत है। यहाँकी इलायची पन्ध्र भेजी जाती है और ऊपरके इससे काफी लाभ उठता है। यहाँ पर्वतके शिखर पर गुलाब, लूही, जाती पादि जंगली फूल बहुत लगते हैं, ऐसा नेपाल भरमें और कहीं भी देखनेमें नहीं आता। प्रचुर परिमाणमें फूला उपजनेके कारण जो इस पर्वतका नाम फुलीया वा 'फुल-चोया' पड़ा है। पर्वतके ऊपर एक छोटा पवित्र मन्दिर है जहाँ से कहीं यात्रो जमा होती हैं। मन्दिरके निकट दो स्तम्भोंमेंसे एकके ऊपर तलियोंके कितने भावो और दूसरे पर एक त्रिशूल गड़ा हुआ है।

पशुपतिनाथ—काठमाण्डूमें पूर्वकी ओर एक रास्ता निकल कर नवसागर, नन्दीगाँव, हरिगाँव, चवाहिल और देवपाटन ग्रामके मध्य होता हुआ पशुपतिनाथ तक चला गया है। यह तीर्थस्थान काठमाण्डूमें डेढ़ कोस पूर्व-उत्तर कीर्णमें अवस्थित है। पशुपतिनाथ देखो।

चाङ्गु नारायण—पशुपतिनाथसे दो कोसकी दूरी पर यह शहर अवस्थित है। इसके निकट मनोहरीनदी प्रवाहित है। चाङ्गु नारायण चार घामोंकी समष्टि है। प्रत्येक घाममें चारि नामक चार नारायणके मन्दिर हैं। उन्हीं सब देवताओंके नाम पर उन घामका नाम पड़ा है। चारिनारायणमूर्तिके दर्शन करनेके लिये दूर दूरसे देवो लोग यहाँ आते हैं। चारिनारायणके नाम ये हैं,—चाङ्गु नारायण, विष्णु नारायण, शिखरनारायण और पद्मचाङ्गु नारायण। इन चार घामोंकी सोमा प्रायः २२ कोस है।

गद्दु—चाङ्गु नारायणसे पूर्व-उत्तर कीर्णमें एक कोसकी दूरी पर यह नगर अवस्थित है। इसको भी तीर्थ-स्थानमें गिनती होती है। यहाँ भी से कहीं यात्रो जमा

गम होते हैं। यहाँका सिद्धिविनायक नामक गणेशका मन्दिर बहुत मगहर है। निगस प्रदेशमें विनायक नामक चार गणेशकी मूर्ति प्रसिद्ध है। इन चारोंमेंसे गद्दु-नगरमें सिद्धिविनायक, भातगाँवमें सूर्यविनायक, काठमाण्डूमें चाण्डविनायक और चम्बलनगरमें सिद्धिविनायक मन्दिर अवस्थित है।

गोकर्ण—यह पशुपतिनाथसे एक कोस पूर्व-उत्तर कीर्णमें घाघमनोके किनारे अवस्थित है। यह नेपाल-तीर्थके मध्य विशेष प्रसिद्ध है। इससे समीप सर जहा-बहादुरके यज्ञमें मृत्युके लिए एक यज्ञ लगा हुआ है।

बोधनाथ—पशुपतिनाथ और काठमाण्डूके मध्य पशुपतिनाथसे प्रायः पाध कोस उत्तर बोधनाथ ( बुद्धनाथ ) नामक ग्राम अवस्थित है। एक बृहत् बौद्धमन्दिरके चारों ओर चक्राकारमें यह ग्राम बसा हुआ है। मन्दिरकी बेटो गोलाकार ईंटोंमें बनी हुई है। उसी बेटोके ऊपर पूर्णगर्भ गण्डुशक्ति मन्दिर है जिसकी चूड़ा पोतलकी बनी हुई है। बेटोमें कुलद्वीके मध्य बोधिमतलकी प्रतिमा है। ये सब कुलद्वी १५ दश ऊँची और ६ दश चौड़ी हैं। मन्दिरका व्यास १०० गजसे कम नहीं होगा। यह मन्दिर भूटिया और तिब्बतीय बौद्धोंका विशेष आदरका स्थान है। शांतकालमें सत्त बौद्धगण इन मन्दिरको देखने आते हैं।

नोलकण्ठ—शिवपुरी पर्वतके पादमूलमें नोलकण्ठ-द्वर्कके किनारे नोलकियत् या नोलकण्ठ नामक ग्राम वसने मान है। यहके नोलकण्ठ देवताका विद्याप इनके पहले शिवपुरी पर्वतके वर्षगायत्रमें उल्लिखित हुआ है।

बान्नाप्रो—काठमाण्डूमें विष्णुमती पार हो कर एक निकुञ्जमास्तमें नागालु म पर्वतके नीचे यह ग्राम बसा हुआ है। इस पर्वतका बहुत कुछ भ्रमं सर जहाबहादुर द्वारा प्राचीरमें धारा हुआ है और समर्थ मध्य सुरक्षित मृत्युम है। इस पर्वतके नीचे कितने निर्भर बहते हैं और निर्भरके नीचे एक बृहदाकार गायत्र मृदादेवकी मूर्ति है। इस घाममें नेपालाधिपतिको उद्यानवाटिका विद्यमान है।

पद्मभूताथ—काठमाण्डूसे पश्चिम तीन पावकी दूरी पर पद्मभूताथ ग्राम अवस्थित है। इस घाममें

पर्वतके गिखर पर बौद्ध देवता स्वयम्भूनायका मन्दिर  
 है। मन्दिरमें जानेके लिए चार सौ सीढ़ियां लगी हुई  
 हैं। मन्दिर २५० फुटको ऊंचाई पर अवस्थित है।

सीढ़ीके नीचे गायसिंहकी एक प्रकाण्ड मूर्ति विष्-  
 मान है और ऊपरमें ३ फुट ऊंचो बौद्धके ऊपर इन्द्रके  
 वक्की मूर्ति है। स्वयम्भूनायक देखो।



स्वयम्भूनायका मन्दिर।

भोगमती—कोत्तिपुरसे ठाई कोस दक्षिण बाघमती  
 के पूर्वी किनारे यह पाम अवस्थित है। यथे ऊपर इस  
 पाममें स्वयम्भूनायकी प्रतिमा छः मास तक रहती है।  
 प्रवाद है, कि भरेन्द्रदेव और पाषाण जय णटनसे पवित्र  
 वारिपूष कलस ले कर कपोतपर्वतपर घूम रहे थे,  
 तब इन्हीं एक दिन इषी ग्राममें बाम किया था।

नवकोट—यह नवकोट उपत्यकाका प्रधान नगर है।  
 काठमाण्डूसे पूर्व ८१ कोसकी दूरी पर अवस्थित घैवह  
 वा जिभजिबिया पर्वतके दक्षिण-पश्चिमको और जो गिखर

है, उसीके ऊपर यह नगर बसा हुआ है। इस नगरके  
 पूर्व पाध कोसकी दूरी पर तिगुलगाहा और पूर्व तथा  
 दक्षिण पाध कोसकी दूरी पर ताङ्गी वा श्रुयमती नदी  
 प्रवाहित है। इस नगरमें दो दरबार या प्रासाद हैं।  
 नेपालका विख्यात भैरवीदेवीका मन्दिर इसी नगरमें  
 अवस्थित है। चन्द्रेजी और नेपालियोंके साथ जो  
 पत्थिम सहारै हुई उस समय तब इस नगरमें नेगना-  
 धियतिका योगमाबाम था। १८२१ ई०में नेपालाधिपतिने  
 यकीका याममान छोड़ कर काठमाण्डूमें ही विरवास

करनेकी वायव्या की है और तमोसे यहांके भागटादि भग्नेमुख हुआ है। सूर्यमती नदीकी ओर घने शानका वन है। चैत्रमासमें नया कोट सपत्नका ओर तराई-प्रदेशमें मत्तोरिया च्चरका प्रादुर्भाव अधिक देखनेमें पाता है।

देवौघाट—नयाकोट नगरसे तीस पायकी दूरी पर देवौघाट नामक स्थान है। यहां त्रिशूलगङ्गा और सूर्यमती नदी प्रायसमें मिली है। इस सङ्गम स्थान पर भैरवीदेवीका मन्दिर वर्तमान है। ये शास्त्रमासमें मन्त्रियोंके प्रकीर्णके समय इस देवमन्दिरमें पनेक यात्रो एकत्रित होते हैं। मन्दिरमें कोई प्रतिमा नहीं रहती, इस समय नयाकोटको भैरवीदेवी यहां स्थाई जाती है।

भाशुर्वा—यह तराई-प्रदेशमें बसा हुआ है। इस नगरसे नेपाल जानेमें कोयोनदी पार होना पड़ता है। इस स्थानके निकट जो खप्पाच्छादित सुन्दर प्रगल्भ मैदान है वह सै न्यावासके लिए उपयुक्त है।

रङ्गेशो—मोर्ङ्ग तराईके मध्य यह स्थान खाण्य-निवासके रूपमें गिना जाता है। मोर्ङ्गके अग्य समो स्थान अस्वास्थ्यकर होने पर भी रङ्गेशोका जनबाध बहुत उत्तम है। यहांका पानी भी सुखाहु है।

तराई-प्रदेशमें हनुमानगञ्ज, जलेश्वर, बुढहुवां पादि शहर लगते हैं।

नेपाल सपत्नकासे पश्चिम कुमायुन जानेमें निम्न-लिखित प्रसिद्ध स्थान राषमें पड़ते हैं—

यानकोट नेपाल-सपत्नकाका सीमास्थावर्षी है। यह एक छोटा सुन्दर शहर है।

महेगलीघर—यह काठमण्डू से दस कोस पश्चिममें पड़ता है। इस घामके नीचे त्रिशूलगङ्गा और महेग खोलानदीका सङ्गम है।

भद्रकोटघाट—यह काठमण्डू से दोन कोस पश्चिममें है। यहां सेनापति भीमसेननिर्मित कितने जो पत्थरके मन्दिर हैं।

गोर्षांगनगर—हरमङ्गलनदीके पूर्व का दक्षिण किनारे काठमण्डू से २६ कोसकी दूरी पर यह नगर अवस्थित है। यह हनुमानवनप्रद पर्यतके उत्तम प्रतिष्ठित है और वर्तमान राजवंशकी प्राचीन राजधानी है।

दानाहुङ्ग—यह काठमण्डू से १४ कोस दूर है और इसी नामके छोटे राज्यकी राजधानी है। इसका दरवार भग्नप्राय है।

पोखरा—यह सेतुगञ्ज नदीके किनारे बसा हुआ है और एक छोटे स्वाधीन राज्यकी राजधानी है। नगर बहुत बड़ा और बहुजनकीर्ण है। यहां सब प्रकारका पनाज उपजता है। यह ग्राम ताम्बुनिर्मित द्रव्यादिके वायव्याके लिए विख्यात है। यहां एक वार्षिक मेला लगता है।

गनहुं—पोखराकी तरह यह भी एक सुदृग्ग्राधीन राज्यकी राजधानी है। यहां एक दरवार है।

तानसेन—पोखराको तरह यह एक सामन्त राज्यकी राजधानी है। पश्चात्प्रदेशका मेनावास इसी नगरमें है। एक हजार सेना और एक काजी यहां रहते हैं तथा एक नूतन दरवार और हाट भी है। गुल्गण्डके प्रसृत सूती कपड़ेका वायव्याय यहां खूब होना है। यहांकी टकशालमें ताम्बुसुन्ना टानो जाती है। काठमण्डू से ६१ कोस पश्चिममें यह नगर अवस्थित है।

पल्पांनगर—यह काठमण्डू से ६३ कोस दूर है। यहां एक दरवार और भैरवनाथका मन्दिर है।

पेण्डागा—यह काठमण्डू से ८६ कोस पश्चिममें है। यहां बाहुट और बन्दूकका कारखाना है। निकटवर्षी सुविधिया-भनजङ्ग घामसे यहां मोरकी घामदमी होती है।

सलियागा—पोखरा राज्यकी तरह ग्राधीन राज्यकी राजधानी। यह काठमण्डू से एक सौ दस कोस पश्चिम इरबलखोला नदीके ऊपर अवस्थित है। यहां दरवार और मन्दिरादि हैं।

जलुरकोट—एक प्राचीन राजधानी। यह भीङ्गी-गङ्गानदीके किनारे अवस्थित है। यहांका दरवार और देवी-मन्दिर भग्नप्राय है।

तरिया—धैवद्व पर्यत और जिबनिधिया पर्यतको एक गाम्बके ऊपर यह घाम बसा हुआ है। यहां भूटिया जातिका वाम है। इनके नगरीय एक स्वाभाविक सङ्गु गुहायु स्थान है। लहा २६ को मनुष्य रह सजते हैं। मोर्ङ्ग घाम पर्यतके तीर्थवासी यहां आ कर वायव्य



लेते हैं। निवारणय इमे भीमल पाजू शौरपाव तीयस्योग  
 "भीमलगुफा" कहते हैं। प्रवाद है, कि भीमल नामक  
 एक निवार-काजोने तिब्बन जीतनेके लिये एक दल सेना  
 भेजी। जब सेना वहां पहुंची, तब तिब्बतके नामा ऊपर  
 से बड़े बड़े पत्थर उतार कर फेंकने लगे। किन्तु भीमल  
 अपने हाथोंसे उग गुहाको छतको तरफ बड़े बड़े पत्थरों-  
 को रोकते गए और किसीका कुछ भी भण्डित न हुआ।  
 तभीसे इसका नाम 'भीमलगुफा' पड़ा है।

दुमचा—यह भीमलगुफासे कुछ कोन दूरमें अवस्थित  
 है। यहाँ प्रध्तरनिर्मित एक बुधमन्दिर है। इस धामके  
 निकट चन्दनवाड़ी पर्वतके ऊपर लोहो-विनायकका  
 मन्दिर है। लोहो-विनायकके मन्दिरमें एक मूर्तिछात्र  
 प्रध्तरखण्ड गणेशकी प्रतिमाके रूपमें पूजित होता है।  
 मन्दिरकी परिक्रमा करनेमें यात्रियोंको डंडे खादि रख  
 देने पड़ते हैं, नहीं तो उनपर विनायकका क्रोध  
 पड़ता है।

इतिहास और पुरातत्त्व।

नेपालका विज्ञानयोग्य प्राचीनतम इतिहास प्रायः  
 नहीं मिलता। पौराणिक ग्रन्थ-समूहसे अथर्ववेदके  
 परिशिष्टमें, स्कन्दपुराणके नागरखण्डमें ( १०२।१६ )  
 और महाभारतखण्डमें ( १६।८ ), रघुखण्डमें, देवो-  
 पुराणमें, गरुडपुराणमें ( ८०।२ ), अरिष्टनेमि-पुराणा-  
 मत्गत लौहहरियं गमें ( ११।८२ ), ब्रह्मवीरसम्बन्धमें,  
 वाराहोत्तथमें, वाराहमिहिरकी ब्रह्मसंहितामें और हेम-  
 चन्द्रकी स्थविरावली चरितमें नेपालका सामान्य उल्लेख  
 मात्र पाया जाता है। बौद्धतन्त्र और बौद्धस्वयम्भूपुराण-  
 में तथा स्कन्दपुराणके हिमयत्खण्डमें नेपालका थोड़ा  
 बहुत वर्णन देखनेमें आता है। किन्तु इन सब ग्रन्थोंमें  
 केवल पञ्चोक्तिक उपाख्यानवत्तों मिलते हैं। इनको  
 ऐतिहासिक वातका पता लगाना मुश्किल है।

सुना है, कि नेपालके नामा स्थानोंमें समृद्धिशाली  
 पुरातन बंशके लोगोंने विभिन्न समयको राजवंशावली  
 संभ्रवीत है। सुप्रसिद्ध मल्लतत्त्वविद् भगवानुत्तल चन्द्रको  
 जब नेपालमें उधरे हुए थे, तब उन्हें इस प्रकारक  
 वंशावलीकी खबर लगी थी। किन्तु दुःभागका विषय है,  
 कि वे भी उक्त संप्रदायके न सके थे। पात्रकक रचित

पार्वतीय-वंशावली नामक ग्रन्थमें एक प्रकारके राज-  
 राजाश्रीका सविन्न विवरण लिखा है। किसी किसी  
 यूरोपीय ऐतिहासिकने इस प्रकारकी वंशावलीके आधार-  
 पर नेपालका इतिहास लिखा है।

बौद्धपाव तीय वंशावलीके मतमें—नेपुनि वर्षके  
 मध्यमें पहले गोपालवंशने नेपालके पन्नागत मातातीर्थ-  
 में राजत्व लाभ किया। इस गोपालवंशने ५२१ वर्ष तक  
 नेपालमें राज्य किया था। इसके १५३६ वर्ष पीछे त्रिने-  
 दासि नामक किरातवंशीय एक शक्ति राज्य करते  
 थे। कुसुपाण्डव-युद्धके समय शिविदासिने पाण्डवका  
 पक्ष अवलम्बन किया था और कुसुपाण्डवके समरप्राप्त्यमें  
 ही उनकी जीवनीना श्रेय हुई थी। यह विवरण प्रकृत  
 ऐतिहासिक है या नहीं, इसमें बहुत संदेह है। पर  
 इतना तो भव्य है, कि जब किसी सम्य पायं सन्तानने  
 नेपाल जा कर अपना अधिपत्य नहीं फेलाया था, तब  
 नेपालमें गोमिप-प्रतिपालक और-स्यगयोगिन गोपाल और  
 किरातोंकी ही प्रधानता थी।

सम्प्रति नेपालकी तराईमें जो अंगोकांतिपि पाधिपत  
 हुई है उससे ज्ञात होता है कि नेपालके दक्षिणाञ्चलमें  
 एक समय शाक्यराजगण राज्य करते थे और वहाँ प्राना-  
 वतार याक्ववुह पाधिभूत हुए। वायु और महाख-  
 पुराणमें शाक्यवंशीय कई एक राजाश्रीके नाम पाये  
 जाते हैं जिससे अनुमान किया जाता है, कि बुधदेवके  
 बाद भी शाक्यवंशीय ५।० पाण्डियोंने इस पञ्चसत्तमें राज्य  
 किया था। पीछे सखाट, पथीकका पाधिपत्य हुआ।

इसके बाद ही नेपालमें पराक्रान्त लिच्छवि राजाश्री-  
 का अभ्युदय हुआ था। यद्यपि पार्वतीय वंशावलीमें  
 'लिच्छवि' नामका उल्लेख नहीं है, तो भी  
 इस लोगोंने यावत्तनामा तत्त्वतत्त्वविद् भगवानुत्तल  
 चन्द्रजोके यद्यमें इस प्रथित राजवंशका विमलस्य परिचय  
 पाया है। नेपालका पुरातत्त्व संयह करनेके लिये नेपाल-  
 में जा कर लोगोंने हो मध्यमें पहले २९ पुरातन-मिस्ता-  
 तिपियोंका उत्पार किया। उनकी संभ्रवीत मिस्ता-  
 तिपियोंमेंसे ११ लिपिके ऊपर निर्भर करके बाण्डर  
 म्नीट और डाक्टर शौरभनेने लिच्छवि राजाश्रीका  
 धाराविद् इतिहास लिपिमेंही भेटा की। विष्णु

दुःखका विषय है कि वधैत मानसमाला उनके अधोन रहते हुए भी वे प्रकृति निश्चिन्त्यापनमे' उत्तमे उपयोगी न हुए। उन्हींने किस प्रकार निष्कृति राजाओंके राज्यकालका गिण्य किया है, पहले यही लिखते हैं।

पण्डित भगवान्मालने जिज संशुद्धीत १५ गिना-  
निविधोंमें नेवाल राजाओंका जैसा धारावाहिक नाम और कालनिर्णय किया है, वही नीचे उद्धृत किया जाता है,—

१। जयदेव १म—प्रायः १ खू टाण्डमे' । ( १५ वीं लिपि ) ।

२। २से लेकर १२ पर्यात् ११ राजाओंके नाम गिना-  
लिपिमें नहीं लिखे गए हैं । ( १५वीं लिपि । )

३। सुपदेव—प्रायः २६० ई०में । ( १सी और १५ वीं लिपि । )

४। गहरदेव—प्रायः २८५ ई०में ।

५। धर्मदेव—( राज्यवतीके साथ विवाह हुआ ) प्रायः ३०५ ई०में ।

६। मानदेव, संवत् ३८६-४१२ वा ३२८-३५६ ई०में ।

७। महीदेव—प्रायः ३६० ई०में ।

८। वसन्तदेव वा' वसन्तसेन—संवत् ४३५ या ३८८ ई०में ।

९। उपदेव—प्रायः ४०० ई०में । २०से २० जन  
८ राजाओंके नाम १५वीं गिनालिपिमें नहीं दिए गये हैं ।

२०। शिवदेव १म, प्रायः ६१० ई०में ।

महासामन्त चंशुधर्मा ( पीछे महाराज ) ६५-४५  
श्रीहर्ष संवत् या ६४०-२मे ६५१-२ ई०में ।

२८। १५वीं गिनालिपिमें कोई उल्लेख नहीं है ।

३०—मु. वदेव - श्रीहर्ष' संवत् ४८ वा ६५४ ५५  
ई०में ( ८वीं लिपि । ) जिण्यगुप्त श्रीहर्ष' संवत् ४६ वा ६५४-५५  
ई०में ।

३१। १५ वीं लिपिमें नाम नहीं दिया गया ।

३२। जिण्यगुप्त और सभ्रवतः विण्यगुप्त । ( ८वीं लिपि । )

३३। मण्डूदेव—प्रायः ६८० ई०में ।

३४। शिवदेव २य, ( प्रादित्यसेनकी दोहिनो और

श्रीहर्ष संवत् ११८-१४५ वा ७२५ ६-७५१-२ ई०में ।

३५। जयदेव २य, परचक्रकाम ( गोरोडकनिद्रा  
कीगनाधिप भगतसंभव'श्रीय हर्षदेवकी कन्या राज्यवती  
से विवाह हुआ ) श्रीहर्ष' संवत् १५५ वा ७५८-६-ई०में ।

उक्त विवरणके प्रकाशित होनेके बाद शिष्टान साहबमें  
नेपालमें ३१६ संवत्में ज्ञापक शिवदेवकी एक गिनालिपि  
प्रकाश की । उसमें भी चंशुधर्माका नाम रहनेके कारण  
प्रयत्नस्वयित्त पत्तोटा साहबने उस पद्यकी गुप्तसंवत् ज्ञापक  
पर्यात् ६२५-६ ई०को लिपि बतलाया है । इसी लिपि-  
को सहायतासे उन्होंने पूर्वांश भगवान्माल और डाक्टर  
बुद्धरसाहबका मत परिवर्तन कर दिया है ।

डाक्टर पत्तोटा साहबका मत ।

डाक्टर पत्तोटा साहबके मतसे शिवदेवके समयमें  
उल्लोण' ११६ पद्य विज्ञान लिपि ही सर्वप्रयोग है ।  
उसीके आधार पर उन्होंने श्री कान्ताशुक्रमिक्त संशिम काज  
विवरण प्रकाशित किया है ( १ ), वही यहाँ पर सघेपमें  
लिखा जाता है ।

१। ( मानसहमे ) भदारक महाराज निष्कृतिकुल-  
केतु शिवदेव ( १ म ) थे । इन्होंने महासामन्त चंशुधर्माने  
उपदेव या चतुर्गोषमे ३१६ ( गुप्त ) संवत्में पर्यात् ६३५  
ई०में एक ताम्रगणसन प्रदान किया । इस शानसके मूलक  
स्वामिभोग वर्मन् थे । ( २ )

२। ( कैलासकूटमवनमे ) महासामन्त चंशुधर्माने  
३४मे ४५ हर्षसंवत् पर्यात् ६४०मे ६४८-५० ई० तक  
राज्य किया ।

३। चंशुधर्माके बाद श्री कान्ताशुक्रभगवने श्रीजिण्य-  
गुप्तकी लिपिमें ४८ संवत् पर्यात् ६४३ ई० और मान-  
सहृदिपि ४८ यदेवका नाम है ।

४। उपदेवके प्रवेश, गहरदेवके पौत्र और धर्म  
देवके पुत्र मानदेव ६८५ गुप्तसंवत् पर्यात् ७०५ ई०में  
राज्य करते थे ।

( १ ) Dr. Fleet's Corpus Inscriptionum Indicarum,  
Vol. III, pp. 177 ff.

( २ ) डाक्टर पत्तोटा एवं मोहनराजे महासामन्त चंशुधर्माके  
भगिनीवति मानते हैं । p. 177n.

- ५। परम महारक महाराजाधिपान श्रीगिषदेव (२य) ११८ हर्षसम्बत् पर्वात् ०२५ ई०में राज्य करते थे।
- ६। वोष्ठी ४१३ गुप्तसम्बत्में पर्वात् ०१२-२३ ई०में मानदेव नामक एक राजाका नाम मिलता है।
- ७। फिर २य गिषदेवकी एक दूसरी लिपिसे जाना जाता है, कि ये १४३ हर्षसम्बत् पर्वात् ०४८ ई०में राज्य करते थे।
- ८। मानगृहस्य महाराज श्रीवसन्तमेन ४३५ गुप्त सम्बत् पर्वात् ०५४ ई०में विद्यमान थे।

८। जयदेव ( २य )—विहद परचक्रकाम—११३ हर्षसम्बत् वा ०५८ ई०में। इनकी लिपिमें पूर्वतन लिच्छवि राजाओंकी वंशावली वर्णित है।

१०। राजपुत्र विक्रममेन ५३५ गुप्तसम्बत् पर्वात् ०५५ ई०में विद्यमान थे। डाक्टर पत्तोटीने सगोष्ठा राजाओंकी पर्यालोचना करके स्थिर किया है, कि नेवामके दो स्वामिने दो राजवंश राज्य करते थे जिनमेंसे एक वंश नेवामके प्राचीन लिच्छवि वंश था और दूसरा महासामन्त पंशुवर्मासे पारम्भ हुआ था। सर्वेति दो विभिन्न राजवंशकी तालिका इस प्रकार लिखी है—

मानगृहके लिच्छवि वा हर्षवंश।	कैलास घाट भयनका ठाकुरीवंश।
<p>१ जयदेव १म—प्रायः ३३० ई५५ ईस्वी।</p> <p>२ }                      ३ }                      ४ }                      ५ }                      ६ }                      ७ }                      ८ }                      ९ }                      १० }                      ११ }                      १२ }</p> <p>मिलानलिपिमें इन प्रायः कई एक मनुष्योंके नाम नहीं मिलते।</p>	<p>पंशुवर्मा महासामन्तके बाद महाराज ६५५-६५० ई०।                      जिप्युगुम—६५० ई०।</p> <p>उदयदेव लगभग १०१-१०० ई०।                      नरेन्द्रदेव ( उदयके पुत्र ) लगभग १००-१०२४ ई०।                      गिषदेव २य ( नरेन्द्रके पुत्र ) १०५-१०४ ई०।                      जयदेव २य ( गिषदेवके पुत्र ) १०५-१०८ ई०।</p>
<p>महाराज गिषदेव १म ६३५ ई०।</p> <p>महाराज भुवदेव ६५३ ई०।</p>	<p>१३ उषदेव—प्रायः ६३०-६५५ ई०।</p> <p>१४ गङ्गादेव (उषदेवके पुत्र) लगभग ६५५-६८० ई०।</p> <p>१५ धर्मदेव (गङ्गादेवके पुत्र) ६८०-१०४ ई०।</p> <p>१६ मानदेव (धर्मदेवके पुत्र) १०५-११२ ई०।</p> <p>१७ महीदेव (मानदेवके पुत्र) ११३-१०५ ई०।</p> <p>१८ वसन्तदेव (महीदेवके पुत्र)</p>

पेछि प्रजतस्त्रविट्ट डाक्टर होरनलीने सत्त तालिका  
सदय की है। (१)।

ऊपरमें दोनोका मित्र मत बहुत किया गया जिनमें-  
से गोपेक्ष मतकी समी परधय करते हैं। किन्तु जहाँ त न  
इसकी खोज की गई उससे मालूम होता है, कि यह  
मत समीचीन नहीं है। पूर्वोक्त गिनालिपियोंके  
पक्षर विन्यास, पूर्वापर घटनावली पोर सामयिक उत्पत्तान  
से जाना जाता है, कि डाक्टर पवोट पोर डाक्टर होर  
नली बहुत पनुसन्धान द्वारा जिस सिद्धान्त पर पहुँचे हैं,  
उसका सम्पूर्ण परिवर्तन आवश्यक हुआ है।

पण्डित भगवान्नाथ पोर डाक्टर बुङ्गरने जो मत  
प्रकाश किया था, उसका कोई कोई अंग भ्रान्ति-विज-  
द्वित होने पर भी यह बहुत कुछ प्रकृत इतिहासके  
निकटवर्ती है, यह सम्यक्, आलोचना द्वारा प्रतिपक्ष  
हुया है।

उक्त शिलालिपि-समूहको अग्रालोचना।

१म पर्याप्त मानदेवकी लिपि १२५ (पनिर्दिष्ट)  
सम्बन्धमें उल्लेख हुई। पण्डित भगवान्नाथ पोर डाक्टर  
बुङ्गरने उसकी पक्षरावलीको गुमाचार बतलाया है। किन्तु  
डाक्टर फ्लोड्ट माहबके मतसे यह दोषी गताब्दीका पक्षर  
है। हम लोगोंने स्थानमें इसकी पक्षरावली १वीं  
गताब्दीकी-से प्रतीत होती है। कारण दोषी गताब्दीमें  
उल्लेख जो मय लिपियाँ उत्तरभारतमें आविष्कृत हुई  
हैं, उनमें मायाकी पुष्टिका पारम्भ देखा जाता है।

इसके पलावा उस समयके व्यञ्जनयुक्त स्वरान्तिको पर्याप्त  
र, णि, , पो, , पादि स्वर-चिह्नको बहुत कुछ पूर्णता  
देखी जाती है। किन्तु मानदेवकी लिपि मायाकीन  
है पोर इसके स्वर-चिह्न सतने पुष्ट नहीं हैं। इसका  
पक्षरविन्यास युगधम्नाट्ट, सतुदगुडको इलाहाबाद-लिपि-  
के अनुकूल है। इसमें व्यञ्जनयुक्त स्वरवर्षका जो क म्  
है, यह २य से ४य गताब्दीकी लिपिमात्रमें ही पाया  
जाता है। इसमें कई जगह प्रयुक्त क, ज, त, द, ध, प  
इत्यादि पक्षरोंका कान्द २यसे ४य गताब्दीके मध्य  
उल्लेख गिनालिपिमें देखा जाता है। केवल इसका न,

म, ग, य ये सब पक्षर हम लोगोंने पूर्वतन लिपियोंमें  
नहीं मिलते, वलिक ४य गताब्दीकी उल्लेख  
लिपियोंमें मिलते हैं। इसके सिवा प, पा, द, ह, ह  
खरोंका जो सा रूप है, वह केवल २य-से ४य गताब्दीकी  
खोदित लिपिमें अनेक पनुसन्धान करने पर भी निकाम  
नहीं सकते।

द्विती गताब्दीमें उल्लेख मधुमामको गयास्य लिपिक  
पोर ० वीं गताब्दीमें उल्लेख सीनपातसे प्राप्त धम्नाट्ट  
हृयवर्द्धनकी लिपिकी आलोचना करनेसे सचअमें जाना  
जा सकता है कि उक्त मानदेवकी लिपि गोपेक्ष समयकी  
-लिपिसे कितनी प्राचीन है। सुमरी मानदेवकी शिना-  
लिपिका पक्षरविन्यास देख कर उसे ७ वीं या ८ वीं  
गताब्दीकी लिपि कहापि नहीं मान सकते, वरं उसे  
४यो वा ५वीं गताब्दीकी लिपि मान सकते हैं। हम  
हिमाचलमें मानदेवकी लिपिमें जो पद-निर्देश है, उसे  
यदि शक्याद्वारापक पक्ष माने, तो कोई पञ्चुक्ति नहीं  
होगी। पण्डित भगवान्नाथने उसे विक्रमसम्बन्धका  
पक्ष बतलाया है। किन्तु उत्तर भारतमें ५वीं गताब्दी-  
के पूर्ववर्ती किसी लिपिमें विक्रमसम्बन्ध कापक पक्ष  
प्राज तक अदृश्यसे पाया नहीं गया है। वरं १ जी,  
२ रो, ३ री पोर ४ यो गताब्दीमें उल्लेख उत्तरभारतीय  
बहुसंख्यक लिपियोंमें केवल 'म'वत् नामसे शकसम्बन्ध-  
का ही प्रमाण पाया जाता है। इसीसे हम लोगोंने उसे  
शकसम्बन्ध पिसा स्वीकार किया।

३य पर्याप्त यक्षतदेवकी लिपिकी डाक्टर पवोटने  
दोषी गताब्दीकी लिपि माना है। किन्तु किन किन  
कारणोंसे हम लोगोंने मानदेवकी लिपिका प्राचीनत्व  
स्थापनकी चेता की है, उन्हीं सब कारणोंसे हम लोग  
वर्तमान गिनालिपिकी भी ५वीं पोर छठी गताब्दीका  
पक्षर पर्याप्त ४३३ शकसम्बन्धका लिपि पक्षर कर  
सकते हैं।

४य पर्याप्त १३३ सम्बन्ध-पद्धित लिपि डाक्टर फ्लोड्ट  
माहबके मतसे ८ वीं गताब्दीकी लिपि है। किन्तु इस  
लिपिके पक्षरोंका जो कान्द है यह ४योसे ५वीं गताब्दीके

(1) - Journal of the Asiatic Society of Bengal  
for 1889, Pt. 1. Synchronistic Table.

• Flora's Corpus Inscriptionum Indicarum, Vol,  
III, plates XLI XXXII, B.

मध्य क्लोपं निविषीं दिखनेम पाता' है (१)। इसके किमी एक पूर्ण शब्दका हान्द ८ वों वां ८ वों गताब्दीकी निविषीं नहीं मिलता (२)।

प्रथमतः शिवदेव घोर पंचशुभार्थके समयकी लिपि देखनेसे यह ३ वीं गताब्दीकी लिपि प्रतीत होती है। किन्तु जब हम लोग जापानके होरि-उलु-मठके तासुपत्रके पन्नाकी प्रतिलिपि देखते हैं, तब शिवदेवकी लिपि ३ वीं गताब्दीकी है, ऐसा खोकार करनेमें महा शब्द उपासित होता है। होरो-उलुमठमें शितने अन्य ६ वें भारतके लेखकसे उत्तरभारतमें घूट कर लिखे गए घोरः ५२० ई०के कुछ पहले बोधाचार्य बोधिधर्म फलक चीनदेशमें जाय गए। फिर ये सब अन्य चीन देशमें ६०८ ई०में जापान भेज दिए गए (१)। उन पन्नोंकी प्रतिलिपिको प्रसिद्ध पद्यायक मोक्षानुसरने प्रकाश किया है घोर उसे देख कर प्रश्नतरवित् डाक्टर बुद्धरने ऐसा खिर किया है, कि उक्त अन्य ६ वीं गताब्दीके प्रथम भागमें लिखे गए है (२)। उक्त पन्नोंकी लिपिमें तथा शिवदेव घोर पंचशुभार्थके समयकी लिपिमें बहुत कुछ सहगता देखो जाते हैं। दोनों लिपियोंका पक्षरविन्यास एक-सा होने पर भी शिवदेवकी मिनालिपिमें उक्तका प्राचीन रूप रखा गया है। डाक्टर बुद्धर साहबने बहुत खोजके बाद खिर किया है, कि मिन. लिपिमें हम लोग जो पक्षरविन्यास देखते हैं, राजकीय दलीलपत्रमें व्यवहृत होनेके बहुत पहले यह विद्वत्-समाजको लिपि माना गया था।

लिखने पढ़नेमें पहले जो व्यवहृत होता था, घोर घोर यही राजकीय लिपिमें व्यवहृत होने लगा, किन्तु

(१) Dr. Buhler's Gundris, ( Indischen Palaeographie ) 1 V Tafel.

(२) यह लिपि इससे है—The inscription of Gopala ( Cunningham's Arch. Surv. Reports Vol. I. ) of Dharmapala ( Cunningham's Malabarji ) and of Devapala ( Ind. Ant. XVII, p. 610. )

(३) Professor Max Muller's Letter, in the Transactions of the 6th International Congress of Orientalists held at Leiden, pp. 124-125.

(४) Anecdota Oxoniensia, Vol. I. 3. 1. 111 p. 68

पत्र यह उठता है, कि यदि विद्वत्समाजमें पुस्तक-रचनाके समय किसी विशेष पक्षरका व्यवहार होता है, तो क्या यह हम समयको राजकीय दलीलदिने प्रयुक्त नहीं होगा ? प्राचीन मिनालिपिकी पालीपत्रा करनेमें देखा जाता है, कि राजकीय शासनादि शास-सभाके प्रधान प्रधान पण्डितोंसे लिखे जाते थे। यही तब कि शास्त्रशासनका कोई कोई शोक राजा सत्य रूप कर अपने कबिलकी शक्तिसे परिभय देते थे। इन दिशासे राजसभ्य सामयिक पुस्तकदिने उल्लेख पक्षरोंके हान्दका व्यवहार कर पूर्वतन पक्षरोंका हान्द पक्षर करते थे। पक्षरों तक सभाव है, समझमें नहीं जाता। इसी कारण मालूम होता है, कि गुणरथनि राष्ट्रभूताराज दह प्रगाशा रागशा हस्ताक्षर देना कर डाक्टर बुद्धरने लिखा है, 'पक्षिक सभ्य है, कि ६ वीं गताब्दीके प्रथम भागमें भी उत्तरभारतके पहाड़ोंमें दो प्रकारके हस्ताक्षर प्रचलित थे (१)।'

पहले ही लिखा जा चुका है, कि डाक्टर सुभोटेके मतानुसार शिवदेवकी लिपि मानदेवलिपिके बहुत पहलेकी है। किन्तु खोदित लिपिके धारावाहिक जालानुसारो पक्षरपक्षकी पालीपत्रा करनेमें मानल होता है। मानो मानदेवकी खोदित लिपि बहुत प्राचीन कालकी है। इन दिशासे कौन पाछा किया जा सकता है ? यदि हम लोग उपरोक्त प्रकृतखविद्-गिर्दमित ३ वीं गताब्दीमें मघोत् ६२५-६५० ई०में राजा शिवदेव-घोर मन्नासामता पंच-शुभार्थका प्रकृत समय खोकार करें, तो सामयिक इतिहासके साथ विरोध उपस्थित होगा। हम दिशासे-यदि डाक्टर बुद्धरके मतानुसार एक ही समयमें दो प्रकारकी लिपिका हान्द प्रचलित था, ऐसा खोकार कर शिवदेव भी उनके मन्नासामताकी पंचवीं गताब्दीके मनुष्य माने, तो कोई गड़बड़ नहीं रहती।

उक्त लिच्छविराजके समयकी दो खोदित-लिपिके प्रतिस्वरूप देखने साहबने प्रकाश किया है, कि एक ही समयकी दोनों लिपि होने पर भी परस्पर वर्णविन्यासमें कुछ फरक देखा जाता है। पहलेसे पर विज्ञा-हान्द

(१) Dr. Buhler's Remarks on the Hoaral palm leaf MSS ( Ance. Oxon. Vol. I. p. 111, p. 65. )

‘i’ ‘i’ देखनेमें ही मान्य पड़ता है कि यह दूसरीकी  
 प्रथमा प्राथमिक चर्यात् इति. गताष्टोके वादका है।  
 किन्तु द्वितीय लिपिका पण्डित ‘i’ तथा ‘i’ देखनेमें इसकी  
 प्राचीनताके विषयमें उतना मन्द्बुद्ध नहीं रहता। पण्डित  
 भगवान् नालकी प्रकाशित श्रुती गितालिपि उक्त शिवदेव  
 प्रदत्त होने पर भी उभयका ‘वा’ कार देखनेमें यह  
 वैप्लव्य प्रकाशित लिपिका समकालीन प्रतीत नहीं  
 होता। इस प्रकार पण्डित भगवान् नालकी ओरी लिपि-  
 का आकार ‘i’ तथा वैप्लव्यसाहच्यकी श्रुती लिपिका आकार  
 ‘i’ इन दोनोंकी मिला कर देखनेमें मान्य होगा कि  
 श्रुतीका ‘i’ करे गताष्टो वादका है। पण्डित भगवान्  
 नालकी श्रुती लिपिके आकारने उनको ओरी लिपिमें  
 बहुत कुछ परिपुष्टि की है, ऐसा जान पड़ता है। यही  
 कारण है, कि पण्डितवरने ओरी लिपिकी श्रुती लिपिमें  
 बहुतपरवर्षों कुछ कर लगेछ किया है। किन्तु वैप्लव्य  
 साहच्यकी प्रकाशित श्रुती चौर री गितालिपि तथा  
 पण्डित भगवान् नालकी श्रुती, इति, ओरी चौर चर्या  
 लिपिके आकारकी आलोचना करनेमें ऐसा मान्य  
 पड़ेगा कि चर्या लिपि सबसे प्राचीन है। चर्या लिपिकी  
 श्रुती पण्डिका “वास्तुन” शब्दका ‘वा’ चौर श्रुती लिपिके  
 द्वितीयश्रुती ११वीं पण्डिका “वा” इन दोनोंमें कोई प्रमेद  
 नहीं देख पड़ता।

पारावाहिक इतिहास

पण्डित भगवान् नालके मन्द्बुद्धित निच्छाविराज जय-  
 देव-परचक्रकामके गितापटमें जो बंशावली है, यह इस  
 प्रकार है—

निच्छावि (शुयं वंशिय)

सुपुष्य (सुपुष्युरवा याम)

(वीके यथाक्रमसे २३ स्थिति)

जयदेव (१म, निवाम्नाधिप)

(११ मनुष्य इसी वंशके राजा)

सुपुष्य

शुयं वंशिय

भमदेव

मानदेव (२८३-४१२ मक)

महीदेव

वसन्तदेव (४३५ मक)

उदयदेव (१)

नरेन्द्रदेव

गिर्यदेव २ (१४३-१४८ पनिर्दिष्ट मंथर)

जयदेव-परचक्रकाम (१५८ पनिर्दिष्ट मंथर)

निवाम्नाधिप निच्छावि राजाशोकके समयकी जितनी  
 गितालिपियां पाणिपुत्रत हुई हैं उनमेंसे उपरोक्त १५वीं  
 लिपिपत्रित-वंशावली प्रकृत धारावाहिक है। उक्त  
 वंशावलीके आधार पर ही, हम निवाम्नाका प्राचीन चौर  
 प्रामाण्य मंथिम इतिहास लिखते हैं।

निवाम्नाकी प्राचीन-वंशावली पवित्राष्ट चर्या लि-  
 पिकके विषयपूर्ण होने पर हमके बीच बीचमें प्रकृत  
 इतिहासिक कथा देखनेमें पाती है जिसे पण्डित भग-  
 वान् प्रभृति प्रकृतचर्यादेने एक वाक्यमें स्तोकार किया  
 है। इस वंशावलीमें एक जगह लिखा है,—

“शुयं वंशिय राजा विष्वदेवगमाने ठाकुरीयंशिय  
 पंशुवर्माको अपने सङ्की ब्याह दी। इनके समयमें  
 विक्रमादित्य-नेपाल, पाप धी चौर वहाँ अपना चन्द प्र-  
 जित किया था।”

“पंशुवर्मा भी राजा हुए थे। उन्होंने मध्यतपु  
 (कोलासकूट) नामक स्थानमें अपने राजधानी बसाई।  
 उनके समयमें विभुवर्माने मगधभरतपुत्र एक जयपदानी  
 प्रद्युत करके उमके समय एक लक्षोष् गितापट (२)  
 स्थापन किया (१)।”

(१) पण्डित भगवान् नालने जिस पाठकी उद्धार पर  
 प्रकाशित किया है, उसके अनुसार उदयदेवके बाद ११ राजा  
 हुए, पीछे नरेन्द्रदेव नेगलमि गहने पर बैठे। उक्त उदयदेवके  
 बाद तीन राजा हुए, यह गितालिपिमें ज्ञापित है। बादमें उठी  
 वंशके नरेन्द्रदेव राजकी शासन पर अधिपत हुए।

(२) पण्डित भगवान् नाल प्रकाशित चर्या लिपि।  
 (३) Wright's History of Nepal, and Ind. Ant.  
 1884, p. 418.

पण्डित भगवान् लाल पोर डाक्टर मुकुरने कहा है, 'पंचवर्षाके ममयमें विक्रमादित्यका निवास पागमन विजयपुर भ्रममय है। मानस होता है, श्रीहर्षदेवके विजय-उपलक्षमें उनका पण्ड नेपालमें प्रचलित हुआ, यह उस चौथे स्तम्भको विहसतपद वंशावलीमें भूलसे दिख-साया गया है (१)।'

इसका प्रयुवर्षा ही कर डाक्टर पकोटने भी पंच-वर्षाके ममयमें उत्कीर्ण लिपियोंके पढ़ाईको श्रीहर्ष संवत्-प्रायक लोकार किया है।

पत्र पत्र यह उठता है, कि मन्नाद हर्षदेव तथा मधु-सूच निवास गये थे पोर वहां जा कर क्या अपने पण्डका प्रचार किया था? हम विषयमें कोई ऐतिहासिक प्रमाण नहीं है। वाच्यभङ्गे हर्ष चरितमें, चीनपरिभाषक युएन-चुवङ्गके भ्रमपत्रसालमें, म-तोयन्-सिन्ने विवरणमें पोर राजा हर्षवर्द्धनको निज खोदित लिपिमें हर्ष द्वारा नेपालविजय पोर हर्ष संवत् प्रचारको कोई बात लिखी नहीं है। हर्षदेवने नेपाल जय किया था, उसका आज तक कोई प्रमाण नहीं मिलता। इस विषयमें हर्षदेव कर्णक नेपालविजय पोर हर्ष संवत्के प्रचारकी कथा-को प्रासादिक तौर पर पश्य नहीं कर सकते।

पश्य नहीं करनेका कारण भी है। यदि हम लोग पंचवर्षाको खोदित लिपिके पढ़ाईको श्रीहर्ष संवत्-प्रायक माने, तो भी सामयिक विवरणसे साध विरोध उपलब्ध होता है। पंचवर्षाके ममयमें जो '३८', '३०', '४४' या '४५', पढ़के चिह्न हैं उन्हें श्रीहर्ष संवत् पढ़ माननेसे ४५में ४३ ई.सम्ब होता है। किन्तु चीन-परिभाषक युएनचुवङ्गने ६९० ई.की ५वीं फरवरीकी नेपालकी यात्रा की दो (२)। उन्होंने नेपाल देख कर लिखा है, "पंचवर्षा नामक यहां एक राजा थे। मैं स्वयं विद्वान् थे पोर विद्वान्का पाठ भी करते थे। मैं स्वयं शब्दविद्याके विषयमें सुप्रज्ञ रह गये हैं। निवासमें उनकी कोर्षा बहुत दूर तक फैली हुई थी। (३)।"

चीनपरिभाषकका एक विवरण पढ़ कर हमारी पण्डितानि खिर किया है कि, 'चीनपरिभाषकने निवासके कदम तक भी नहीं बढ़ाया। मैं केवल हजिरी राव-धानो तक पहुँचे थे पोर वहाँके लोगोंसे जहाँ तक सम्भव है, कि पूछपाछ कर कुछ लिखा होगा। यद्यपि-में उस समय भी पंचवर्षाकी सृष्ट नहीं हुई थी।'

एक समासोचना ठीक प्रतीत नहीं होती। जिस व्यक्तिको सुखाति निवास भ्रममें कैसी हुई थी, उनका सृष्ट-संवाद जाननेमें भूल हो गई थी, यह कहाँ तक सम्भव है। चीनपरिभाषकने पंचवर्षाके रचित पत्र-का भी परिचय दिया है। इस विषयमें उनका विवरण प्रामाण्य नहीं मान सकते। चीनपरिभाषकने पढ़ते ही पंचवर्षाको मूल्य हुई थी, इसमें जरा भी संशय नहीं। सुतरां पंचवर्षाको खोदित लिपिके पढ़ाईको श्रीहर्ष संवत्-का पढ़ नहीं मान सकते, बल्कि उसे गुप्तसंवत्का पढ़ मान सकते हैं। गुप्तसंवत् माननेका कारण भी है।

गुप्त राजाओंके माय लिच्छवि राजाओंका बनिष्ठ संबन्ध था, इसमें तनिक भी संशय नहीं। डाक्टर फ्लोटने पसहोच-पूर्वक लिखा है, 'गुप्तसम्बत यद्यपि-में लिच्छविसम्बत है। लिच्छवि-राजवंशमें यदि गुप्त राजाओंने सम्बत पश्य किया है, इसमें किसी बातकी प्राप्ति उठ नहीं सकती।.....में समझता हूँ, कि लिच्छवियोंमें साधारणतन्त्रके विरुद्ध पोर राजतन्त्रके पारम्भे प्रयत्न हम जयदेवके राज्याभिसे ही उक्त सम्बत पारम्भ हुआ है (१)।'

(1) 'And no objection could be taken by the Early Gupta Kings to the adoption of the era of a royal house, in their connection with which they took special pride, I think, therefore, that in all probability the so called Gupta era is Licchavi era, dating either from a time when the republican or tribal constitution of the Licchavis was abolished in favour of a monarchy, or from the commencement of the reign of Jayadava I. as the founder of a royal house in a branch of the tribe that had settled in Nepal' ( Fleet's, Corpus Inscriptionum Indicarum Vol. III. Intro. p. 130.)

(1) Indian Antiquary, 1851, p. 424.  
 (2) Cunningham's Ancient Geography of India.  
 (3) Bret's Records of Western World, Vol. II, p. 81.

गुमराजके लिच्छवीके साथ सम्बन्धसूत्रमें भागद होने पोर हम कारण अपनेको गोश्वान्वित समझनेमें, उन्हेंनी जो लिच्छवी-वंश ग्रहण किया था, अनुमानके सिवा इस विषयमें और कोई प्रमाण नहीं है। यर लिच्छवी राजाओंने गुमसम्बन्धका व्यवहार किया था, यही अधिक सम्भवपर प्रतीत होता है।

पार्श्वतोय वंशवासीमें पंशुवर्मा कुक पहले विक्रमादित्यके भागमन्तका प्रसङ्ग है, यह नितास्त भ्रममय मालूम नहीं पड़ता।

भारतवर्षमें विक्रमादित्य नामके कितनेही राजाओंने राज्य किया था। उनमेंसे जो नेपाल गये, वे गुमसंघत-प्रवर्तक प्रथम गुमसम्बन्ध, थे। उनका नाम था चन्द्र-गुमविक्रमादिच। उसका लिच्छवीराज-दुहिता कुमारदेवीके साथ विवाह हुआ था। इस सम्बन्धसूत्रमें गुमसम्बन्ध, अपनेको विशेष सम्मानित समझने लगे थे। इसीसे अनुमान किया जाता है, कि उनकी मुद्रा पर 'लिच्छवय' यह गौरवस्पर्शी शब्द खोदा गया है। उक्त लिच्छवीराज-दुहिता कुमारदेवीके गर्भसे ही गुमसम्बन्ध समुद्रगुम उत्पन्न हुए थे।

इन गुमसम्बन्धने अपने बाहुबलसे नेपालादिके सभी क्षीमात् राजाओंको बर्गमें कर लिया था, यह उनकी इत्साहासादमें उत्कीर्ण खोदितलिपिमें साफ साफ लिखा हुआ है। किन्तु नेपालके लिच्छवी राजाओंने गुमराजाओंको कुछ पराजय किया था, इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता। इस विषयसे समुद्रगुमके पिता पोर लिच्छवीराजजातात्, चन्द्रगुमविक्रमादित्यने नेपालमें गुमसम्बन्ध प्रवर्तित हुआ था, इसीका स्पष्ट धाभास पार्श्वतोय वंशवासीमें पाया जाता है।

वंशवासीमें लिखा है, 'पंशुवर्माके उत्तर विगदेव जब नेपालके राजा थे, उसी समय विक्रमादित्य नेपाल गये थे पोर अपना वंश बनाया था।' अगर यह ठीक मान लिया जाय, तो फिर कोई ऐतिहासिक मौलमान नहीं रहता—

"चन्द्रगुम विक्रमादित्यके उत्तर ह्यदेव जब नेपालके राजा थे, उसी समय चन्द्रगुम विक्रमादित्यने नेपाल आ कर कुमारदेवीका पवित्रग्रहण किया पोर वहाँ अपना वंश बनाया।"

प्रथम गुमसम्बन्ध, चन्द्रगुम विक्रमादित्यने ११८-२० में १४०-४८ ई० तक राज्य किया। इसके बोध वे किमी समय नेशन गये थे।

मानदेवकी गिस्लानिधिमें मालूम होता है, कि लिच्छवीराज १८१ शक ( ४४४ ई० ) में राज्य करते थे। ह्यदेव उनके प्रतितामह थे। तीन पीढ़ी तक एक गताद्धी मान सिनेसे जिस समय गुमसम्बन्ध, नेपाल पाये, उसी समयमें हम लोग ह्यदेवकी लिच्छवीराज-वंशिसन पर पधित्त देखते हैं। हमसे यह बोध होता है, कि पार्श्वतोय वंशवासीके रक्षयिताने 'ह्यदेव' की जगह 'विगदेव' यह ग्रामादिक पाठ ग्रहण किया होगा।

ह्यदेवके बाद १५ गुमसम्बन्धने पर्यात् ११४-४५ ई० में महासामन्त पंशुवर्माका अभ्युदय हुआ। पण्डित भगवान्माल पादि उपरोक्त पण्डितोंने लिखा है, 'पहले पहल वे राज्योपाधि ग्रहण करनेमें टासमटोल करते थे। पीछे ४८वें चहमे वे 'महाराजधिराजकी' उपाधिमें भूषित हुए।' किन्तु हम लोगोंका विश्वास है, कि वे अपनी इच्छासे कभी राज्योपाधि ग्रहण करनेमें संघर न हुए। शीव, वीर्य, पराक्रम पोर विद्युद्भिने प्रपाता लाभ करने पर भी उन्होंने कभी सम्मानित लिच्छवी-राजाओंकी पगहेला करके 'राज्यापाधि' ग्रहण नहीं की। उनकी निज खोदित गिस्लानिधिमें 'राज्योपाधि, मह' है। वे महासामन्तकी उपाधिमें ही मरुट थे। हम विगदेवकी गिस्लानिधिमें जाना जाता है कि लिच्छवी राज महासामन्त पंशुवर्माके पराक्रमसे अपने राज-सत्त्वको रक्षा करनेमें समर्थ हुए थे। सम्भवतः जिस समय वे अपना पासाद छोड़ कर दूर देशमें युद्ध करने को लिये गये थे, उसी समय उक्त ४८वें चहमें किन्तु-गुमकी लिपि खोदी गई होगी।

पूर्वतन पोर पशुनांतन भारतीय सामन्तोंकी अपने अपने अधिकारके समय 'राजा' 'महाराज' इत्यादि समुच्च उपाधिमें भूषित दिखते हैं। महासामन्त पंशुवर्मा भी उसी तरह अपने अधिकारके समय किन्तुगुम पादि पधोमख व्यहियेसे जो 'राजाधिराज' वास्वासे परिहित हुए होंगे, यह सम्भव नहीं है पोर कहीं शानो-पाधि देख वे लिच्छवी राजाओंकी पशुनातासे मुक्त हो



कर एक ज्ञायीन राजाके मध्य गिने मचे धी, यह डोक प्रतीत नहीं होता। पात्र भी जिस तरह नेपालराजके पयोग राजा-उपाधिकारी बहुसामन्त हैं, लिच्छवी राजाओं के समयमें भी उही तरह धी। लेकिन चंद्रवर्माने सर्व प्रधान सामन्तपद पर अधिकृत हो कर लिच्छवी राजाओंके राज्योचित महासम्मान प्राप्त किया था, यह सम्भव नहीं है।

जनके धर्म्युदयके समय ध्रुवदेव लिच्छवीराजधानी मानगृहमें प्रतिष्ठित धी चौर गुप्तसम््राट् समुद्रगुप्तने समस्त भारतवर्षमें अपना प्राधिपत्य फैला लिया था। जिस तरह मालवराज महासेनगुप्तकी महान महासेनगुप्तके साथ स्थायीमहादोष पाटियवर्द्धनका विवाह हुआ (१) उही तरह मालूम होता है कि समुद्रगुप्तके पुत्र २य चन्द्रगुप्त विक्रमादित्यके साथ ध्रुवसेनको वचन ध्रुवदेवोका परिषय कार्य सुसम्भव हुआ होगा (२)।

ध्रुवदेव ४६ (गुप्त) सम्वत् चर्मात् ३६०८ ई०में राजसिंहासन पर बैठे धी। किन्तु उन्होंने कब तक राज्य किया, डोक डोक मालूम नहीं। उनके समयमें उत्कीर्ण जिष्णुगुप्तकी गिमातिवि देख कर कोई कोई अनुमान करते हैं, कि उक्त सम्वत्के पहले ही महासामन्त चंद्रवर्माको मृत्यु हुई धी। लेकिन यदि सच प्रकृत, तो उस समय भी उनको मृत्यु नहीं हुई धी। ३१६ (गक) सम्वत् चर्मात् ३८४ ई०में वे विद्यमान धी, यह वैदल नाहयको गच्छामित लिच्छवीराज गिर्यदेवकी गिमातिविसे जाना जाता है।

महासामन्त चंद्रवर्मा प्रवर्द्धे चौर गिर्यदेव दोनोंके राजत्वकालमें ही विद्यमान धी। उनके यज्ञसे नेपाल उत्कृष्टकी चरम सीमा तक पहुँच गया था। इस समय नेपालमें लिच्छवीराजगण बौध चौर ब्राह्मणधर्मावलम्बी भ्रमोंकी समान दृष्टिमें देखते धी। चंद्रवर्माके समयमें उत्कीर्ण निविसे मालूम होता है, कि एक चौर के जिस तरह हिन्दूधर्मके प्रति गति दिखसाने धी, दूसरी चौर

उसी तरह बौद्धोंका पादर भी करते धी। नेपालमें बहुत दिन तक शुद्धमन्त प्रचलित था, ऐसा बोध नहीं होता। क्योंकि गिर्यदेवके समयमें पुनः पुनःप्रचलित (गक) सम्वत्का पचार देखा जाता है।

ध्रुवदेव चौर गिर्यदेवके बाद कान्तापुरसार हम कोत मानदेवका नाम पाते हैं। इनके साथ ध्रुवदेव चौर गिर्यदेवका क्या सम्बन्ध था, मालूम नहीं। पर धी, इतना तो स्पष्ट है, कि वे सबके मध्य लिच्छवीवंशके धी। मालूम होता है, कि गिर्यदेवके बाद धर्मदेव चौर धर्मदेवके बाद उनके पुत्र मानदेव राजा हुए।

मानदेवने ३८३मे ४२३ गक (४४४मे ४८४ ई०) तक शासितपूर्वक राजा किया। ये बड़े माट-भक्त चौर महावीर माने जाते धी। उनके समयमें महासामन्त चंद्रवर्माचंगीय ठाकुरी राजाओंने सम्भवतः लिच्छवीराजकी अधीनता पत्नीकार कर स्वाधीनता पानेकी चेष्टा की धी। मानदेवके गिमावर्द्धमें लिखा है, "उन्कोने पूर्वकी चौर याता की। चर्मा पूर्वदे गायित सामन्तोंको यमीभूत कर राजा (मानदेव) निर्भिक सिंहाकी तरह पालिसी चौर चयनर हुए। उधर किमो एक नगरमें पहुँच कर उन्कोने सामन्तका कुष्यरचार देख गित्त भायमें कहा था, 'यदि यह मेरे पादेमासुवर्त्तिन होगा, तो मेरे विक्रमभावमें गिर्य हो पराजित होगा।' इस सामन्तका नाम क्या था, मालूम नहीं। लेकिन लडाँ तक सम्भव है, कि ये महासामन्त चंद्रवर्माचंगीय कोई चंगी।"

मानदेवके राजत्वकालमें जयचर्मो नामके एक यज्ञिने चर्माग पणपतिगायके मन्दिरमें जयचरम नामकी एक मूर्तिकी प्रतिष्ठा की; लेकिन यह लिङ्ग गट हो गया है। अभी उस स्थान पर मानदेवके पिता महरदेवका प्रतिष्ठित १४ हाय लंबा एक तिगुल विद्यमान है।

मानदेवके बाद उनके पुत्र मंडोदेव गिर्यदेव पर बैठे। उनके समयका कोई विवरण जाना नहीं जाता। गेहूँ यज्ञदेव गिर्यराजके अधिकारी हुए। ४३३ (गक) सम्वत् चर्मात् ५१६ ई०में लकीचर्मा इनके समयकी खोदित सिपि पाई गई है। ३य जयदेवकी गिमातिविमें लिखा है, कि ये बड़े धी मुरवीर धी। विजित सामन्तगण उनको बन्दना किया करते धी।

(१) Epigraphica India, Vol. 1 p. 687D.  
 (२) २५ पत्रपुस्तकमन्तरिकने ४०० ४१३ ई० तक ८४४ विषय। मध्यम होता है, राजवर्माचर्माके बहुत पहले उनके साथ ध्रुवदेवोका विवाह हुआ था।

वसन्तदेवके समयमें हो सम्भवतः पार्थिवलोकितेश्वरका प्रभाव नेपालमें बढ़ा चढ़ा था। पार्थवीय वंशवासीमें लिखा है,— '३६२३ कल्पितायुकी पञ्चलोकितेश्वर नेपालमें उदित हुए।'

पहले ही कहा जा चुका है, कि पण्डित भगवान्मान पादि प्रवक्तृविदोने स्वीकार किया है, कि पार्थवीय वंशवासीमें पनेक पनैतिहासिक विवरण रहने पर भी इनमें ऐतिहासिक कथाका भी समाव नहीं है। ऊपर में पञ्चलोकितेश्वरके विषयमें जो कुछ उद्धृत किया गया है, उसके मूलमें सत्य किया रह सकता है।

३६२३ कल्पयुत् पर्यात् ५२२ ई०में मालूम होता है, कि वसन्तदेवने समस्त सामन्तीको सम्पूर्ण रूपसे यथीभूत कर नेपालमें पञ्चलोकितेश्वरकी पूजाका प्रचार किया। उसी समयसे ले कर आज तक पञ्चलोकितेश्वर या मत्स्येन्द्रनाथको नेपालके अधिष्ठात्यदेवता मान कर उनको पूजा करते आ रहे हैं।

वसन्तदेवके पश्चात्तन २य जयदेव पौर २य जयदेवको गिर्णानिधिमें संवत् पद्म है। मालूम होता है, कि वक्ष्य्य उक्त पञ्चलोकितेश्वरके सायंजनिक पूजाप्रकार तथा राजा वसन्तसेन कर्त्तृक सायंभोगिक राजा कह कर परिचित होनेके समयसे गिना जाता होगा।

वसन्तदेवके बाद उनके लड़के उदयदेव राजा हुए डाक्टर एनीटके मतसे उदयदेव लिच्छवीवंशीय नहीं थे, वे ठाकुरीवंशीय पर्यात् पञ्चवर्मावंशीय थे। २य जयदेवको गिर्णानिधिमें उदयदेवके पहले जिन छत्र राजाओंको वंशवासी दी हुई है, वे लिच्छवीवंशीय होने पर भी (उक्त पुराविदुर्के मतसे) उदयदेवसे ही ठाकुरीवंशको वर्णनाका पारम्भ है। किन्तु मूल गिर्णानिधि पत्रमेंसे उदयदेव लिच्छवीवंशीय पौर वसन्तदेवके पुत्र माने जाते हैं। उदयदेवके बाद ठोक कौन इन्द्रि राजसिंहासन पर बैठे, वह गिर्णानिधिमें कुछ पक्ष है। किन्तु उससे बाद ही नरेन्द्रदेवका विवरण साक साक लिखा है।

इस नरेन्द्रदेवके पराक्रमकी शक्ति २य जयदेवकी गिर्णानिधिमें विस्तारसे वर्णित है। पश्चात्तन: इनके पञ्चकामसे व्यापकभाषिपति हर्षवर्द्धन नेपालकोत नहीं मसे

थि। इनके राजवंशकालमें चोनपरिप्राजक युष्मत्पुष्पने कुछ समयके लिए नेपालमें पदावर्ण किया था। वे इस प्रकार लिख गये हैं—

"मैं कितने पर्वतोंको लघते हुए तथा कितनी ही उपर्यकार्ण होते हुए नेपालदेशमें पाया। यह देव सुपारमय पर्वत मानासे वेदित है। पर्वत पौर उपर्यका एक दूसरेसे संयुक्त है।" इस प्रकार देवकी प्राकृतिक पौर लोकसाधारणकी पक्ष्याके वर्षनके बाद उद्धर्म लिखा है, "यहां विष्णुसो पौर पवित्रगो (पर्यात् बोह पौर हिन्दू) दोनों सम्प्रदाय एक साथ बाम करते हैं। यहां सहायाम पौर देवमन्दिरकी संख्या पनेक है। महायान पौर शैवयान सतावनसो प्रायः २००० यवर्षोंका वाम है। राजा पवित्र पौर लिच्छवीवंशीय है। वे पवित्र, निर्मलचरित्र; पौर उन्नतप्रकृतिके हैं। बोधधर्ममें उगका प्रगाढ़ विष्णुस है।" इत्यादि।

चोनपरिप्राजकने जिन लिच्छवीराजका उल्लेख किया है, वे ही सम्भवतः नरेन्द्रदेव हैं। नरेन्द्रदेवके विषयमें पनेक किम्बदन्तियां आज भी नेपाली बौद्धसमाजमें प्रचलित हैं। २य जयदेवकी गिर्णानिधिमें जाना जाता है, कि नरेन्द्रदेवके पहलेसे ही लिच्छवीराजगण बोधयासनके पक्षपाती हुए थे।

नरेन्द्रदेवके बाद उनके पुत्र २य जयदेव निर्णामन पर बैठे। मगधराज पादित्यसेनकी दौहित्री पौर मोषरीराज भोगवर्माकी कन्या यक्षदेवोके साथ इनका विवाह हुआ था। इनके समयमें जो गिर्णानिधि उल्लेख हुई है, उसमें १४३, १४५ पौर १४८ (चन्द्रिण्ट) संवत् चर्हित है। इससे अनुमान किया जाता है कि इन्होंने ६५५ ई०के मध्य किमी समय राज्य किया था। पीछे इनके पुत्र २य जयदेव लिच्छवीराजनिर्णामन पर चर्चिण्ट हुए। इनका दूसरा नाम परचक्रकाम था। इनके समयकी १५८ संवत् चर्चित गिर्णानिधिमें जाना जाता है, कि इन्होंने गोह, उत्र, कलिङ्ग पौर फोगसाधिप हर्षदेवकी कन्या राजसरीके साथ विवाह किया। इसी हर्षदेवकी हम कोर्णाने इससे पहले हर्षवर्द्धन सम्भवा था। किन्तु पभी मालूम होता है, कि ये कर्णोराज हर्षवर्द्धन नहीं हैं। जिन वंशमें कामरुपाधिपति कुमार भास्करवर्माने जन्मप्राप्त

क्रिया वा, २५ जयदेवके मरार हय देव सो सभो वंशमे  
 छपय हूए छै । सामान्य पद्यनमे पाविष्कृत ताम्रगासन-  
 मसूह पढ़नेमे जाना जाना छै, कि ये कुमार भास्करवर्माके  
 पुत्र पयवा घोत जोगि । तैजपुरके ताम्रगासनमे ये 'हरिव'  
 नाममे प्रसिद्ध हूए छै ।

पार्वतीय वंशावलीमे गहरदेवके ४ पोढ़ीके बाद  
 'गुणकाम' नामक एक राजाका नाम मिलना छै । यंश  
 मथीके मतमे ७२१ ई०मे उक्तमे काठमाण्डू को बनाया ।  
 पारधककाम पौर गुणकाम यदि एक व्यक्तिको उपाधि छी,  
 तो २५ जयदेवको ७२१ ई० तक नेपालके राजसिंहा-  
 सन पर पवित्रित देखते छै ।

२५ जयदेवके बाद प्रायः टाई सो वर्षका इतिहास  
 मशुक्क पन्थकाराच्छुव छै । इस समयमे नेपाल इतिहास-  
 के विभाषवोग्य विवरवादि पात्र तक संशुद्धीत नहीं  
 हूए । नेपालाधिप राघवदेवमे ८०८ ई०को २०वीं पद्यन-  
 करको एक नया पद्य चलाया जो नेपाली सम्भूत कदाता  
 छै । तदनन्तर पाषोत पन्थीमे बहुत पद्यनम्यान करने  
 पर पन्थापक वण्डलसाहबमे शो तालिका प्रस्तुत की छै,  
 वच नीचे दो जाती छै—

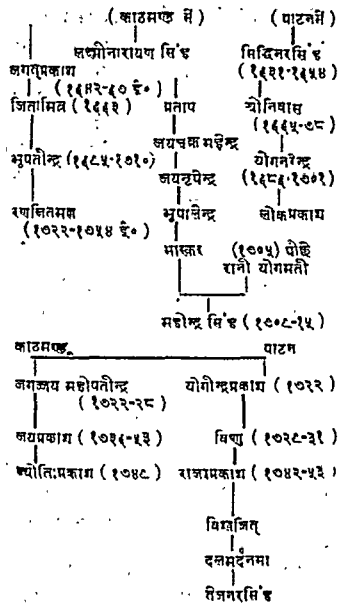
राजाके नाम	शासनकाल	राजधानी
निर्मयसद्व	१००८ ई०	
भोजसद्व	१०११ ई०	
प्रथमीकाम	१०१५-१०१८ ई०	
जयदेव		काठमाण्डू
उदय		काठमाण्डू
भास्कर		पाटन
वसुदेव		
पद्यनकामदेव	१०११ ई०	
नागालुनदेव		
गहरदेव	१००१-१००२ ई०	
नाथदेव	१०८१ ई०	
रामचन्द्रदेव	१०८१ ई०	
सदागिरदेव		
हरदेव		
मानदेव	११२८ ई०	
नरदेव	११३३	

पानन्द	१११५-१११६ ई०	
सद्वदेव		
मिय वा पद्यत		
पद्मिदेव		
रघुगूर	१२२२ ई०	
सोमदेव	}	
राजकाम		
धन्यमल		
पद्मयमल	१२२४ ई०	
जयदेव	१२५० ई०	भातगाव
पाननामल क	१२८५-१३०२ ई०	काठमाण्डू
जयानुममल	१३१४-१३८४ ई०	
जयस्वितिमल	१३८५-१३८२ ई०	
रज्जुपातिमल	१४८२ ई०	
जयधर्ममल	१४०१ ई०	
जयवशीतिमल	१४११ ई०	काठमाण्डू
शचमल	१४२८-१४५० ई०	

यसमलके बाद नेपालराज्य सनके सङ्कोके बीच  
 दो पंशोमे विभात हो गया । एकको राजधानी भात-  
 गावमे पौर दूनरेको काठमाण्डूमे छी । राजवंशावली,  
 सनके समयको मुद्रा तथा गिलासिपिबे ओ वर्ष सामान्य  
 हूया छै वच नीचे देते छै—

यसमल ( प्रायः १४५० ई०मे )		
भातगाव		काठमाण्डू
राय वा राम		रज
सुवर्ण ( सुवन )		धमर
प्राय		पुर्व
तिम		मसूह
तैलीय ( १५०२ ई० )		मथीय
जयज्योतिः ( १५२८-१५२१ )		मदागिष ( १५०१ ई० )
		गिर्वाभिक ( १५०० )
११२८		

७ इके पार १० वर्ष तकका पद्य वरी संख्या ।



प्रांत्तमन्त्रपद सुसलमान मोग इस देयमें था कर विगोप-  
 कपसे पार्थर्यित और सम्मानित हुए तथा रहनेके लिये  
 एक सुरक्षित स्थान अधिकार कर बैठे। सुसलमानोने  
 बन्धुत्वसूत्रसे भारतवर्षमें पठार्पण किया मही, किन्तु  
 पहलीसे ही उनको चान्ति भारतपर गहो हुई थी। पता  
 धीरे धीरे उन्होने बन्धुत्वके धद्वेसे भारतसाम्राज्य पर  
 अपना अधिकार जमा लिया। नेपालके भाग्यक्षेत्रमें भी  
 एक दिन ऐसी ही अवस्था हुई थी।

११२२ ई०में पयोध्याके सूर्यवंशीय राजा हरिसिंह-  
 देव पर जब सुसलमानोने प्रांत्तमन्त्र किया, तब उन्होने  
 पयोध्यासे मिलिलाकी राजधानी सिमरोगगढ़में दलबल-  
 के साथ भाग कर पाल्पाका की। ४४४ नेपालीमन्त्र-  
 में (१३२४ ई०में) से पुनः दिवलीयार गुणमकाशने  
 पाल्पामें हुए। इस धार सिमरोगमें उन्होने शत्रुओंके  
 साथ तुमुल-संप्रदाय किया, पौछे पराजित हो कर नेपाल-  
 में जा पश्रय लिया। इस समय नेपालमें धर्मवंशीय  
 राजगण राज्य करते थे। जब राजा हरिसिंहदेव यथां  
 पहुँचे, तब उन्होने यहाँके राजाओंके पूर्व प्रभावका  
 ज्ञान देखे स्वयं नेपाल राज्यकी कारायत्त कर लिया।  
 प्रवाद है, कि राजा हरिसिंहदेवके राज्यमें यवगका  
 उत्पात देखे देवी तुलजाभवानीने राजाको इस सुसल-  
 मानसंघट राज्यका परित्याग कर नेपालमें सत्तम प्रदे-  
 में लाने और वहाँ राज्यस्थापन करनेका आदेश दिया  
 था। राजा देवीके आदेशानुसार जब इस प्रदेशमें पाए,  
 तब भातगाँवके ठाकुरीराजाओंने तथा वहाँके पधिया-  
 सियोने अपनी देवीका प्रत्यादेश पुन कर लर्फीके साथ  
 नेपाल-दरवारका कुल कार्यभार पवर्ण किया।

नेपालमें राज्यभार सभ्य करनेके साथ ही उन्होने  
 वहाँ तुलजादेवीके स्मरणार्थ एक मन्दिर बनवाया।  
 उस मन्दिरका नाम मूक-धौक है। भोटियागण उनकी  
 पधितित तुलजादेवीका साहाय्य पुन कर देवमूर्ति को  
 पुरा स्थानेके लिये भातगाँवको धीर चल दिया। जप में  
 मोग, प्रपुस जदोके किनारे पहुँचे, तब उन्होने देखा कि  
 प्रबन्धित-कृत्यागण भातगाँव नगरको चारों धोरसे दहन  
 कर रहा है। देवीकी चतुःत समता देव भोटिया मोग  
 सबके सब हर गए और विहित हो प्रापिस बैठे पाए।

इसको बाद ही नेपालमें गोर्खाधिपत्य विस्तृत हुआ।  
 उपरोक्त राजाओंके विषयमें जो संक्षिप्त इतिहास  
 पाया गया, उसे संक्षेपमें लिखते हैं—

११ वीं शताब्दीमें जब सुसलमानोने भारतवर्ष पर  
 प्रांत्तमन्त्र किया, उसके पहलीसे ही भारतका पधिमोत्तर  
 प्रदेशमभूज छोटे छोटे खण्डराज्योंमें विभक्त था। उन  
 सर्व राजाओंके एक दूसरेके प्रति आक्रोश और ईर्ष्या-  
 वगता युद्धविषयमें सित रहनेके कारण दिनों दिन उनकी  
 सेना धीरे धीरे कमि होने लगी जिससे वे दुर्बल होने  
 लगे। ऐसे समयमें उन्होने गृहयुद्धके ज्वलने रक्षा पागे  
 तथा स्वदेशमें अपनी मान मर्यादा और समताको  
 पधुण रक्षनेके लिये महिर्देवसद शत्रुओंको प्रांत्त-  
 मन्त्र किया। इसका फल यह हुआ कि भारतवासीके

१६३० ई.में दिवलीके बादमाह महमूद तुगलकने चीनमास्थाप्य आंगरेके द्विधे पयने भागिनेय मेनापति युगाद-भाविहको टय स्याप चखारोही मेनाके माय भाग देगमें भिज दिया। इनकी मेना इमी नेपालराज्य-के मध्य हो कर गई हो। इस समय मेनाके पन्था-चारमें नेगाम प्रायः तहम महम हो गया था। मुसल-मागी मेनाने बहुत सुदकिसमे पर्वतादिको पार कर नेगाममीमासमें चीनमन्थका सामना किया। यहां दोनोमें घनघोर युद्ध हुआ। एक तो ग्रीनका समय, दूसरे यह स्थान इनके द्विधे पन्थास्यकर था, इन पारण मुसलमानो मेना दिगो दिन गष्ट होने लगे। यद्यो युधो मेना रणक्षेत्रमें पीठ टिगा कर दिवलीकी पौर भाग लगी।

राजा हरिमिहदेवने प्रायः २० वर्ष तक राज्य किया था। पीछे इनके लड़के मतिमिहदेवने १५ वर्ष पौर मतिमिहके लड़के मतिमिहदेवने २२ वर्ष तक राज्य किया था। इनके माय चोनमस्याटकी व्रतता हो, इन कारण वनेप (वणिकपुर) घामके पूर्व वर्षी पनाम-थोक घाममें इन्होंने राजधानी बसाई। वहाँमें से चोन-राजमभानि तरह तरहके भिंटे भिज करत से पौर चोन चस्याटने भी इनके बटसेमें चन्ने ५३५ चोनान्दका निवित एक चनुमोदनयत पौर भीलमुहर भिज दी। मतिमिहके पुत्र ग्याममिहदेवके एक भी पुत्र न था। इस कारण से १५ वर्ष राज्य कर चुकने बाद चयनो एक माय कन्या पौर सामानाको राज्यभण्ट देनेकी बाध्य हुए। राजा नाथपदेवने अन्न नेपाच पर पाकमय किया, तब नेपालके मन्थक शीय राजाने तिरहुत भाग कर चयनो जाम बसाई। अन्न मन्थराज्यमें ग्याममिहदेवने चयनो कन्याका विवाह किया। इस वधमे नेपालमें मन्थराज्यमें गको पुत्र प्रतिष्ठा हुई। १२८ नेपालमहत्-में चयनो मधालक भूमिकल्प हुआ जिसमें मन्थराज्य तथा दूसरे दूसरे किनने मन्दिहादि तहम महम हो गए।

हरिमिहदेव-वंशका राजत्व मिय होने पर मन्थराज्य मन्थरामने चयनो वध नेपालराज्यमें चयनो कीटी जमाई। १३ वर्ष राज्य करनेके बाद प्रथमद्वारको-की विधारे। पीछे इनके लड़के भागमन्न राजागो पर

बैठे। इन्होंने सिके १५ वर्ष राज्य किया। बादमें इनके लड़के लयजगत्तमने १२ वर्ष तक राज्य कर चुकनेके बाद चयनो लड़के मन्थरामने १५ वर्ष राज्य कर चुकनेके बाद चयनो लड़के लयजगत्तमने १५ वर्ष राज्य किया। पीछे इनके लड़के चगीकमन्न राज-मिहानन वा पवि-मित हुए। इन्होंने भी विष्णु मती, बागमती पौर हड-मती तीनों नदियोंके मध्यवर्ती स्थानमें धोतकाली पौर रत्नकालीकी स्थापना करने उद्योगकी प्रवृत्तमूमि काशीभासके जैमा पादग बना दिया पौर चयनो नाम रखा उत्तरकाशी वा काशीपुर। चयनो मुजाममने राजा चगीकमन्नने ठाकुरी राजाघोको पराम्त कर वनको राज-धानी पाटन नगर पर अधिकार कर लिया।

तदनन्तर इनके पुत्र जयसिधितिमन्न राजा हुए। इन्होंने पूर्वतन राजगणकृत शासन विधिवा विधीय संशोधन पौर कुछ भवे नियमोत्सा प्रचार किया। इन्होंने शासन-कालमें जातिमयादा संस्थापित हुई। सम्राजमभन तथा धर्म संक्रान्त कुछ मयोन प्रयाका प्रचार कर के जून-माधारवकी अथा पौर भक्तिने पाठ हुए थे। पायसीय वे दूसरी पौर वामवर्तीके किनारे इन्होंने रामचन्द्र, इनके लड़के मय पौर कुगती मूर्तिको स्थापना तथा गोरधनायदेव मूर्तिको पुनः प्रतिष्ठा की। अजिन-पाटनका लक्ष्मेश्वर मन्दिर तथा चन्थाभा बहुमन्थक देवमन्दिर इन्होंने प्रतिष्ठित हैं। ४३ वर्ष राज्य करने बाद इनके लड़के राजा लयजगत्तम राजमिहानन पर छोड़ित हुए। इन्होंने चयनो महाराज्य प्रभितित धर्ममत्त वदव कर भारतके टाचिवापने महाप्राज्ञकी बुलावा पौर पद्यतिमापदेवकी पुजाका भार उर्हो पर बोवा। चयनो समयमें भारतमानी हिन्दूधर्मोचको शास्त्रोनि नेपालमें प्रकृत हिन्दूमतानुसार देवपूजाविधि-का प्रचार किया। इनके राज्यकालमें धर्मशास्त्र मोन-भाष-कोके प्रारम्भ मन्दिर बनाया गया। अन्न मन्दिरमें चयनराज्य की विमल, चयनवि सोधिपत्त पौर चयनराज्य की विमल तथा नागा देवदेविदेकी मूर्ति प्रतिष्ठित हैं। १३३ मुजाममन्थमें इन्होंने एक दुर्गनिर्माण किया पौर चयनो देवमानके लिये कुछ विधेय नियम

खलाए। भातगांधके तथपावटोसं ग्राममें रहनेने दातात्रेयका एक मन्दिर बनवा दिया। राजा गुणकाम देव-प्रतिष्ठित लोकेश्वर देवमूर्ति ठाकुरी राजाघोषके समयमें यमला नामक स्थानके भग्नमन्दिर स्तूपको मध्य पाई गई थी। उन्होंने उक्त देवमूर्ति का संस्कार करा कर काठमण्डलमें पुनः उसको प्रतिष्ठा की। वरुण मूर्ति यमो यमलेश्वर नामसे प्रसिद्ध है। ये पाटन और काठमण्डलके राजाघोषके मन्दिर स्थानमें समर्थ हुए थे।

राजा यक्षमल्लके तीन पुत्र और एक कन्या थी। मरनेके पहले उन्होंने अपने बड़े लड़केको भातगांध, रायमल्ल दूसरे रणमल्लकी बनेवा और तीसरे लड़के रत्नमल्लको काठमण्डल तथा कन्याको पाटनका सामन्तारण्य दे दिया था। किन्तु धीरे धीरे पापघमें विवाद ही जामिंसे वे कमजोर हो गये। राजा यक्षमल्लके इस प्रकार अपना राज्य विभाग कर देने पर भी प्रकृत यशधरके प्रभावसे प्रचया किमो प्रभावनेय कारणसे बनेवा और पाटनराज्य भातगांध और काठमण्डल राजवशके हाथ चला पाया। इसी कारण नेपालके इतिहासमें गोर्खा-प्राक्रमणके पहले उक्त दो राज्योंका थोड़ा बहुत इतिवृत्त मिश्रता है। ५८२ नेपालो-सम्बन्धमें यक्षमल्लकी मृत्यु होने पर नेपालराज्य इस प्रकार विभक्त हो गया। उनके बड़े लड़के रायमल्लने भातगांधका-विश्वमिंहासन पाया। इस समय भातगांधका राज्य पूर्व सूचकीगो तक विस्तृत था। रायमल्लके बाद उनके लड़के प्राणमल्ल, प्राणमल्लके बाद उनके लड़के विश्वमल्ल भातगांधके राजा हुए। विश्वमल्लने अपने मठ और देवमन्दिर बनवाये। विश्वमल्लके पुत्र खैलोक्यमल्लके राजत्वके बाद उनके लड़के जगज्जोतिमल्लने शासनभार ग्रहण किया। उन्होंने ही भातगांधमें प्रादिभैरवकी रथयात्राका उत्सव प्रवर्तन किया। इनकी मृत्युके बाद उनके लड़के मरेन्द्रमल्ल राजा हुए। इनके बाद उनके पुत्र जगत्प्रकाशमल्लने राजपद वा कर १०५५ नेपालसंवत्में अपने कौत्सिं स्तम्भ स्थापन किये। तथपावटोसं ग्राममें प्रादिभैरव भारी और प्रादिभैरव भारी नामक दो व्यक्तिने भीमसेनके उद्देश्यसे एक मन्दिरकी प्रतिष्ठा की। १०८२ नेपालसंवत्में उन्होंने विमलादेवि-मण्डल और १०८० ने०म०में गढ़ध्वज नामक एक स्तम्भ निर्मांष किया।

इनके लड़के राजा जितामित्रने (१०२ ने०म०) एक धर्मशाला, नारायणमन्दिर और (१०३ ने०म०) टटाखे येयका मन्दिर बनवाया। इनके पुत्र राजा भूपतोन्द्रमल्लके राजत्वकालमें नेपालमें एक सुदृढ़ दरवार और नाना देवदेवियोंके मन्दिरकी प्रतिष्ठा की गई। उन्होंने 'प्रय' तथा 'प्रयने पुत्र रणजितकी सहायतासे १३६ ने०म०को भैरवदेवके मन्दिरमें स्वर्णकी छत बनवा दी। पिताके मरने पर रणजितमल्ल शासनभार ग्रहण कर नेपालमें अपने अष्टम कौत्सिं छोड़ गए हैं। १३६६के राजत्वकालमें भातगांध, ललितपाटन और कान्तिपुरके राजाघोषके बीच परस्पर विरोध झड़ गया। गुर्खादेगाधिपति राजा नरभूवाखने तत्कालीन राजाघोषकी इस प्रकार कमजोर देखे उन पर आक्रमण कर दिया। जब वे विगुलगङ्गानदी पार कर नेपाल पहुँचे, तब नवकोटके वैशराजने उनके विरुद्ध पक्षधारण किया। इन युद्धमें गुर्खाराज पराजित हो कर स्वदेशको लौट गये।

गुर्खापति नरभूवाखके पुत्र राजा मृदोनारायण रणजितके राजत्वके समय नेपाल देवनेकी पाए। रणजितने उनका पाचार-श्रवणकर द्वेष अपने पुत्र वीरवृत्तिमल्लके माथ उनकी मित्रता करा दो; किन्तु युवराजकी पक्षाल मृत्यु होने पर भातगांधके 'प्रय' वंशीय राजाघोषका पक्षित्त लोप हो गया।

राजा यक्षमल्लने द्वितीय पुत्र रणमल्लको पवित्रपुर तथा और सात घामोंका शासनभार प्रयोज किया था। उनका आधिपत्य पूर्वमें दुधकीगो, पश्चिममें मझा नामक स्थान, उत्तरमें मझाधल और दक्षिणमें मेदिनामल नामक सम्यभूमि तक फैला हुआ था। पवित्रपुर किमो व्यक्तिने (१३२२ ने०म०) यक्षपतिनाथकी एक मूर्खवान् कषय और एकमुखी वृक्षात्त उपहार देते समय राजाकी एक दुगाना गेटमें दिया था। वरुण दुगाना प्राय भी कान्तिपुर-राजघानोंमें रखा हुआ है।

राजा यक्षमल्लके तृतीय पुत्र राजा खैल वा राजमल्लने पिताके विभागानुसार काठमण्डलका राज्यभार ग्रहण किया। इस राज्यके पूर्व सीमामें वाघमती, पश्चिममें तिगुलगङ्गा, उत्तरमें गोर्खादेवान और दक्षिणमें पाटन-विभागकी उत्तरीय सीमा है। राजा खमल्लने जिताउ

माते समय उनले सुप्रसादेवीका बौद्धमन्त्र ब्रह्म किया था। प्रसाद है, कि इस मन्त्रब्रह्मने देवी उन पर हमीया प्रपञ्च रहती थी। इसको भविष्यत् उच्यते देख इनके बड़े भन्दे जन्मने मने। यन्त्रमें इस मन्त्रोच्चारणसे दोर्मनिं मारो विरोध मरुदा हो गया।

राजा रजमन्त्रने एक दिन क्षत्रने देवा कि मोक्षतारा-देवी उन्हे कष्ट रहती है, 'यदि तुम कान्तिपुर जा सको, तो यात्रोगण तुन्हे चषमय ही राजा बनाके।' तदनुसार राजा बहुत तट्टने विद्यावनमे छठ देवीको प्रणाम कर ठाकुरी राजापीके प्रधान खात्रीके समीप पङ्क्ति। कार्जने उन्हे राजा बनानेकी प्रतिज्ञा को। पयनी प्रतिज्ञा पूर्ती करनेके सिधे कार्जने एक दिन बाराह ठाकुरीराजापीकी पयने यहा गिमन्त्रव शिष्या और व्यञ्जनाटिके साथ विष मिला कर उन बाराहीको यमपुर भेज दिया। कान्तिपुरके सिंहासन पर बैठनेके साथ ही रजमन्त्रको खात्रीके चरित पर विनीय मन्त्रे हो गया और पाण्डोरको उमे मरवा ही डाया। क्षत्रट्ट वाक्य मिया होने पर भी उन्कोने मारयोके साथ विवाद कर जो कान्तिपुर दखनमें कर लिया था, इनमें मन्त्रे क नहीं।

इरी नेत्र'में इन्कोने लवकोटके ठाकुरीराजापो-की पराजित कर उनका राज्य चपना लिया था। इस व्यासके उन्कोने नामा प्रकारके फूल और फल ले कर पदपतिसायक) पूजा की थी। यद्ये कारण है, कि पात्र भी लडकि लोग लवकोटके इत्यादि ला कर उक्त देवमूर्ति-की पूजा करत है।

इनके राजत्वकालमें कुपु नामक भूटिया जातिने विद्रोहो हो कर राजा पर विनीय चण्पाचार चारण्य कर दिया। राजा जब उन्हे दमन कर न सके, तब देवधर्मा चामवामो चार तिरहुनिया झाडव पत्ताके बेकराजापी-के चण्पोलव्य सेना ले कर रजमन्त्रको सहायतामें उद्घुं ब रण। कुङ्कयानाजोर नामक ग्राममें भूटिश क्लेश परा जिन हुए। राजाने झाडव'की कई एक नाम कर बहुत धनपत्र दान दिये। इन्कीं मानसहासमें भोटिया विद्रोह-के बाद देवकीं यमन (मुदलमान) जातिका क्षान चारण्य हुआ।

इन्कोने इरी नेत्र'में रजमन्त्र, सुप्रसाद कीका एक

मन्दिर बनवा कर उनमें देवमूर्ति'की स्थापना की। बाद इन्कोने कान्तिपुर और ललितपाटनके चण्पिचारिणी-की यममें ला कर मीयामङ्गि पर्यन्तकी चित्तमिष्ट कन-स्यकाकी तबिकीं खानसे लाया निकाम कर सुविधा (१) के बदलीमें ताबिके पैनेका प्रचार किया।

रजमन्त्रकी मृत्युके बाद उनके लडके चमरमन्त्र कर मन्त्रुके सिंहासन पर चण्पिद्वर हुए। इनके शासनकाल-में चण्पिजपुरके कुमारोने चमरमन्त्रारायणकी मूर्ति'की ले कर पदपतिके मन्दिरमें स्थापन करना चाहा। किन्तु राजाका पादेग नहीं मिनने पर उन्कोने उनो गत भरमें बाह्यता देवके मन्दिरकी चण्पतमें एक दूगरा मन्दिर बनवा लिया और इसीमें नारायणकी मूर्ति' प्रतिष्ठा को। भुवनेगरके उद्यानक मणि पाचार्यके चण्प-चरोने ८ कुमार और कुमारियोके उद्येगमे एक यात्रा-उत्सव किया। प्रति चण्प ८ पापाट्टकी यह उत्सव होता है। प्रवाद है, कि १०० न.म.० निम दिन मणिपाचार्य 'ज्वननकीवयो'के चण्पेचपने' बाहर निकले से, उन्को दिन यह उत्सव मनाया जाता है। उनके चण्पयोने उनके पत्न्यांन होनेका समाचार सुन कर जब चण्पेचि-ट-क्रियाकी तैयारियां कीं, तब ये देववाटनमे भोट कर उनका चमिप्राय समभक्त चण्पेचने चण्पिमें जल मरी।

राजा चमरमन्त्रने मदनके पुत्र चमपराजको सुत्रा-द्वयका चण्पेचमार दे कर 'इतिनायक'के पद पर चण्पिपिष्ठ किया। इन्कोने चण्पने चण्पे'के चण्पेक मन्दिरादि बनवाये थे।

इस राजाने खोडनाकी महालक्ष्मीदेवी, हमकीर-देवी, मानमईदेवी, पयसो-भीरव और सुविहालीकी दुर्गादेवी, कमडेवरी, चटोरी और चण्पिचिहकी पूजा-में शुक-उत्सवका प्रचलन किया। पूर्व समयमें कमडेवरी-देवीको पूजामें मरचि हो जाती थी, इस कारण चण्पे उक्त देवीकी पूजा और उत्सव मन्त्रे हो गया है।

कान्तिपुर, चण्पेच, चिको, चण्पिचि, सुभु, चण्पेच-चि, उरिचि, मन्त्रेचण्डर या चण्पेचि, खोडना, चण्पे

(१) इतिहास वा चण्पेच उन्के देवमूर्ति'का। इहवा चण्पेच' मीन २ पैके चण्पे को मन्त्रे है।

कोत्तिपुर, धानकोट, वनखु, शतहल, हलवाक, फुटुम, धर्मस्थानो, टोखा, चप्लोगाँव, लेसेग्राम, चुकग्राम, गोकर्ण, देवपाटन, नन्दोग्राम, अमग्राल, मालीग्राम वा मागल भादि विविट जनपद उनके अधिकांशमें थे। काठ-मण्डू से पशुपति ग्राम जानिके रास्ते पर नन्दोग्राम अवस्थित है। अमग्राल और मालीग्राम एक समय विमान-नगर नामसे प्रसिद्ध था। यहाँ प्राचीन कोत्तिके अनेक ध्वंसावशेष देखनेमें पाते हैं।

नेपालीगणनाके अनुसार ४० वर्ष राज्य करनेके बाद चमरमल्लका देहान्त हुआ। पीछे उनके लड़के चर्प-मल्ल राजा बने। इन्होंने भातगाँवके राजासे राजा शहुर-देवस्थापित चक्रुनारायण और शहपुर ग्राम जोत लिए। पीछे शहपुर जा कर वल्लयोगिनोदेवोकी उपासनाके लिये वहाँ छः वर्ष ठहर कर अन्तमें कान्तिपुर-कोटे और यहीं उनकी मृत्यु हुई। अनन्तर उनके लड़के नरेन्द्रमदन और पीछे नरेन्द्रमल्लके लड़के महीन्द्रमदन राजा हुए। इन्होंने दरवारके सामने महीन्द्रेश्वरी और पशुपतिनायका मन्दिर बनवाया। भारतको राजधानी दिल्ली जा कर इन्होंने सम्राटकी गाना जातीय हंस और गिकारी पत्नी उपहारमें दिए। सम्राटसे सुद्रादण-का भादे श्रमगने पर सम्राटने सुग्रीसे इन्हें रीप्यमुद्रा प्रचलनकी अनुमति दी थी।

स्वराज्य छोड़ कर राजा महीन्द्रमल्ल अपने नाम पर 'शहुर' नामको रीप्यमुद्रा टनवाने लगे। यही मुद्रा नेपालकी प्रथम रीप्यमुद्रा थी। इसके पहले और कभी भी नेपालमें रीप्यमुद्राका प्रचार था वा नहीं, यह नहीं सकते। इस समयके पहलेकी नेपालमें जो मन्त्र सुद्राएँ पाई जाती हैं, उनके ऊपर छप, सिँह, हस्ती आदि जन्तुओंकी प्रतिरूपित चिह्न हैं।

महीन्द्रमल्लके ही पहले कान्तिपुर नगर बहुजन-कीर्ण हुआ था। १६८८ ई.स.में माघमासमें इन्होंने उन्नत नगरमें तुलजाभयानीकी प्रतिष्ठाके लिये एक मन्दिर बनवाया। इनके शासककालमें १६८६ ई.स.में विष्णु-सिँहके पुत्र पुनन्द-राजवंशीने सल्लितपाटन दरवारके सामने नारायणके लिये एक मन्दिरकी स्थापना की। राजा महीन्द्रमल्लको दो पुत्र थे। बड़ेका नाम था

मदागवमल्ल और छोटेका गिबसिँहमल्ल। इनकी माता ठाकुरी-वंशमन्त्रता थीं।

पिताको मरने पर बड़े लड़के सदागिव राज्याधि-कारो हुए किन्तु वे थे लम्पट और खेदहासारी राजा। किसी मने वा यात्राके उपलक्षमें जब किसी सुन्दरी स्त्री पर उनकी नजर पड़ जाती थी, तब वे उसकी पावटू ले लेते थे। इस प्रकार इन्होंने कितनीही कुल-मनमानाओंके कुलमें कान्तिमा लगा दी थी, उसकी दयत्ता नहीं। विलासिताके अग्रगण्य हो कर वे धीरे धीरे राजकीय खासो करने लगे। प्रजा भी उनका ऐसा व्यवहार देख दिनों दिन यदाहीन होने लगी। एक दिन जब इन्होंने देखा, कि राजा मनोहराकी और लार है, तब वे छप्पे सुद्राएँ भादि ले कर उन पर टूट पड़े। राजाने डर कर भातगाँवमें जा कर आश्रय लिया, किन्तु भक्तपुराधिपतिने उनका अग्र्य अस्त्र विषय सुन कर उन्हें कैद कर लिया। राजा सदागिव कुछ दिनों बाद किसी तरह जान ले कर अग्र्य भाग पाये। इन्होंने समयमें प्रकृत सूर्यवंशका आधिपत्य नेपालसे अन्तर्हित हो गया।

प्रजाने सदागिवको राजपुत्र धरके उनके पैसाव भाई गिबसिँहमल्लको राजमहिंशमन पर बिठाया। राजा गिबसिँह बड़े आगे थे। इन्होंने महाराष्ट्र देशमें ब्राह्मण बुना कर उन्हें गुरुपद पर अभिषिक्त किया। इनके राजत्वकालमें सूर्यवंश नामक कान्तिपुरवासी कोई ताम्बिक तिम्बतको राजधानी आमानगर गये। गिब-सिँहके दो पुत्र थे, लज्जोमरविंशमल्ल और हरिहरविंश-मल्ल। छोटे हरिहर कुछ छप मल्लिके थे। विनाके कीर्ति-जो से सल्लितपाटनका शासन करनेके लिये अग्र्यमर हुए। इनकी माता महाराणीने कान्तिपुर और बङ्ग-नोमरुपके मध्य एक उद्यान बनवाया जो रागीवन नामसे प्रसिद्ध है। वर्षमान पहरेजो-रेसिंहेण्डके समोप ही उन्नत उद्यानके ध्वंसावशेष उन्नत पाँचीरादि देखनेमें पाते हैं। कुछ समय पहले यही अन्न उद्यान जङ्गलवादार-के गिकारके लिये हरिष्यशयक पालनके स्थानरूपमें परि-गणित था।

एक समय हरिहरविंशने जब देखा कि उनके पिता



विचारके लिये बाहर गये हुए थे, तब उन्होंने हिमो विवाहके कारण चउमे भाई मन्मोहनसिंहको दरबारमें बाहर निकाल दिया था। ०१४ ने०म०में राजा मिह० सि०के स्वयम्भूनाथके मन्दिरका पुनः संस्कार करा दिया। कुछ समय बाद राजा बीर रामी गङ्गादेबोके मामे पर ल्येड पुत्र मन्मोहनसिंह कान्तिपुरके राजा हुए। इनके किमी पश्चीय भीममन्त्रने स्वयं भोटदेगमें जा कर कान्तिपुर और भोट इन दोनों स्थानोंकी वाक्पितृव्यमते एक कर दिया। इस प्रकार स्वयन्माय व्यापारमें भोटमें स्वयं पौर शैव्य नेगल मया गया था। काजी भीममन्त्रके यवने भोटराजके माय राजा मन्मोहनसिंहकी रस गरा पर एक मन्त्रि हुई कि स्वयन्माय-वपनचर्मं यटि किमी मनुष्यका निम्नको राजधानी नामानगरमें औपन गट हो जाय, तो उनको स्वावर चम्पावर मन्त्रिसे नेपाल-गयमें गटको देनी पड़ेगी। इनकी सहायतामें मोमान्-वर्षी कुटी नामक प्रदेश नेपालके पधीन किया गया।

निम्न-राजधानी नामानगरमें भोट कर भीममन्त्रने राजाको उन्नत करनेमें विवेक सहायता की थी। यथाथ-में ये राजा मन्मोहनको नेपालके एकच्छत्र राजा बनाने-में विवेक प्रयत्न थे। किमी मनुष्यने एक दिन राजाके कहा, "भीममन्त्र स्वयं राजा सेनेके लिये ये सब चेटायें कर रहे हैं। पापको राजाच्युत करणा ही उनका मुख्य उद्देश्य है।" यह सुन कर राजाने भीममन्त्रका गिरछेद कारनेकी चाचा दे दी। भीममन्त्रने अपनी जीवहामि धर्म-गिना विषयका एक ताम्र पात्ररप बनवा दिया था। लक्ष-द्वानि है, कि दक्षिण-भारतवासी निवाणन्द्यामो नामक एक ब्रह्मचारी इस समय नेपालमें आए हुए थे। वे ब्रह्म-पानी से मही, हिन्दु किमी मूर्त्तिको प्रथम नहीं करते थे। एक कदा सुन कर राजा पाण्डकुला की मय पौर ब्रह्मचारिको विषयवि प्रथम करनेका हुकुम दिया। निवाणन्द्यामोने जो' हो विषयके मामने अपनी गिर सुबादा, लीं ही चम्पेउरी, धर्मगिना, धामदेव पदि मूर्त्तिका टूट चूट गईं। भीममन्त्रको बला पर लक्षकी फीने राजाको माय दिया था जिससे कुछ दिन बाद राजाका मन्त्रिक विह्वल हो गया। तब से राजकार्य चलातेके चउमय, हुए, तब उनके लड़के मन्मोहन ७१८

ने०म०में नेपालको गरी पर बैठे। ०१७ ई०पू०बा०ई० १६ वर्षे कारागारके बाद राजा मन्मोहनसिंहको म'बु हुई।

उन्होंने इन्द्रपुर नगर पौर प्रगजाय देवालयको स्थापना की। ०७४ ने०म०को माघ-छला पक्षमेंकी उद्देनि कान्तिप्रदेशो-प्रायकी रचना कर उसे पत्नरके लय सुदवा दिया पौर प्रहा' लहा' देशमर्में भो निवहा दिया। यह देवस्त्रीय १५ विभिन्न भाषाओंको बर्ण-मानामें रचा गया था। ये विद्वान् पौर पनेक शास्त्री-के पठित थे तथा १५१६ विभिन्न भाषा जानते थे।

इनके राजत्वकालमें ग्यामागो-लामा नामक खीरे भोट-वासी नेवाल पाए पौर ०६० ने०म०में उद्देने स्वयम्भूनाथका गर्भकाष्ठ उदघना दिया तथा देव-भूतिं यो गिरयो करवा दीं। उक्त मन्दिरके दक्षिणक गुम्बजमें राजा मन्मोहनसिंहका नाम प्रहित है। ०७० ने०म०में राजा मन्मोहनने स्वयम्भूनाथका माकुम्भ वर्षेन करते हुए एक पौर कविताकी रचना की तथा उसे प्रसार पर गोटवा कर देवमन्दिरमें रचना दिया। उन्होंने अपनी प्रचलित मुद्रामें 'कयोः' की उपाधि संयोजित कर अपनेको विवेक गौरवाचित मन्मन्' वा।

उद्देने पहले दो तिरहुत-राजकुमारोंका वाक्पितृव्य किया। योके योगनन्मबाबसुनम चउमनामे उद्देने दक्षिण-जालमाको पठित्य करके लिये नेगामी प्रवान्-मार प्रायः तीन हजार रत्नविषी की खोडे रूपमें बरच किया था। इस पदमनासमाके यममें था कर उद्देने एक समय एक कानिहाकी मार उल्ला था। ब्रह्म-पानीमें भयभीत हो कर उद्देने तथा परिवारस्य सब किमीने प्राणोचनेके लिये तुलादान उन्नत किया।

इनके राजत्वकालमें महाराष्ट्रमें लक्ष्मणस्य पौर तिरहुतमें मरसिंहकाकर नामक ही ब्राह्मण नेवाल पौर पौर राजामें परिचित हो कर 'गुह-उन्नाविसे सुविनं हुए। राजा मन्मोहनके पौर पुत्र थे, वाक्पितृमन्त्र, श्रीमन्मन्त्र, महीपन्त्र ( महीपन्त्र ) मन्त्र पौर पञ्चवर्षीमन्त्र ।

• D. Wright's History of Nepal बंगल पुस्तकालय  
जल शिव विरिही एक उद्देनी है ।

पिताके जोते-जी उन धारो'ने एक एक वर्ष पिताके इच्छा-  
नुसार राज्यभोग किया। छतीस पुत्र महोपतीन्द्रके  
शासनकालमें पिताने पुत्रकी सहायतासे ७८८ ने०सं०को  
पक्षीभ्यबुद्धमन्दिरके सामने धर्मघातमण्डलमें एक इन्द्र-  
की वखासति स्थापित की। 'चतुर्थ' पुत्र चक्रवर्तीन्द्रने  
एक वर्ष राज्य कर लीधलोला मन्थरष की। ७८८ ने०-  
सं०में चक्रवर्तीन्द्रने जो मुद्रा बनाई, उसके एक पृष्ठ  
पर बाणास्र पाग, अद्भुत, कमल और चामर अङ्कित देखा  
जाता है।

पुत्रकी मृत्यु पर राजमाता जब व्याकुल हुई, तब  
राजाने उनका गोक दूर करनेके लिये एक सुष्ठवत् पुष्करिणी  
घोर मन्दिरकी प्रतिष्ठा की। यह पुष्करिणी रानी-  
दीपायी नामसे मगहर है। ८०८ ने०सं०की राजाकी  
मृत्यु हुई। पीछे उनके लड़के महीन्द्रमल भूपालेन्द्र  
नाम धारण कर राजसिंहासन पर बैठे। ८२४ ने०सं०  
की भूपालेन्द्र भी पञ्चत्वकी प्राप्त हुए। बादमें उनके  
लड़के श्रीभास्करमल चौदह वर्षकी अवस्थामें राजपदकी  
प्राप्त हुए। इनके राजत्वकालके घाठवें वर्षमें दगहरा-  
का उत्सव ले कर पाटन घोर भातगावसामियोंके बीच  
विवाद उपस्थित हुआ। १६थी साल नेपालमें महाभागे-  
का प्रकोप हुआ जिससे उनकी पत्नी मृत्यु हुई।  
उनकी मृत्युके साथ माघ कालिपुरका सूर्यवशीय राज-  
वशका भी चिराग सुन गया। राजाकी मदिथी तथा  
दूसरी दूसरी स्त्रियां सतीदाह होनेके पहले अपने विशेष  
प्राकीय जगज्जयमलकी राजा बना गई थीं।

राजा भगजयके पांच पुत्र थे। राजेन्द्रप्रकाश घोर  
जयप्रकाशने उनके राज्यप्राप्तिके पहले जन्मग्रहण किया  
था। राज्यप्रकाश, नरेन्द्रप्रकाश घोर चन्द्रप्रकाश पीछे  
उत्पन्न हुए थे। राजाकी जीवितावस्थामें ज्येष्ठ राजेन्द्र  
घोर कनिष्ठ चन्द्रप्रकाश स्वर्गधामकी सिधारे। दोनों  
पुत्रके वियोगसे जब राजा बहुत व्याकुल हुए, तब  
उनके पक्षीमन्त्र मन्मिपादियोंने पा कर उन्हें सात्वला  
नी घोर राजकुमार राज्यप्रकाशके राजपद-प्राप्तिके लिये  
उन्में विशेष अनुरोध किया।

इस समय जब राजाकी मारुस हुआ कि गुर्पानी-  
राल धूमनीनाशयपने नवकोट तक राज्य फैला लिया है

घोर उनको देखोत्तर सम्पत्ति मनुके हाथ लग गई है,  
तब वे बहुत दुःखी हुए। ८५२ ने०सं०में उनके स्वर्ग-  
रोहण करने पर उनके लड़के जयप्रकाशमल काठ-  
मण्डूके सिंहासन पर अधिष्ठत हुए। कुमार राज्य-  
प्रकाशको जब सिंहासन प्राप्त न हुआ, तब वे निराग  
हो पाटनको चले गए घोर राजा विष्णुमलके यहाँ रहने  
लगे। राजा विष्णुमलको एक भी पुत्र न रहनेके कारण  
उन्होंने राज्यप्रकाशकी ही अपना उत्तराधिकारी बनाना  
चाहा।

राजकर्मचारी ठारिगणने उनके कनिष्ठ भ्राता नरेन्द्र-  
प्रकाशको देवपाटन, गद्दु, वाङ्ग, गोकुण घोर नन्दी-  
याम नामक पांच प्रामांिका पाधिपत्य प्रदान किया।  
ठारियोंके कार्यसे विरक्त हो कर उन्होंने उन्हें कैद कर  
लिया घोर भाईसे उक्त पञ्च प्रामका अधिकार छीन  
लिया। पतः नरेन्द्रप्रकाशकी विहराजधानी काठमाण्डू  
छोड़ कर भातगाव जा कर रहना पड़ा था। इसके  
कुछ दिन बाद नरेन्द्रप्रकाशकी मृत्यु हुई।

जो कुछ हो, उक्त ठारिकर्मचारियोंने समय पा कर  
कैदसे छुटकारा पाया घोर रानी दयावतीका पक्ष पत्र-  
सम्पन्न कर उनके पठारह मासके लड़के ज्योतिप्रकाशकी  
सम्बन्धे नामने राजा कह कर घोषणा कर दी। राजा  
जयप्रकाश दरबार छोड़ कर कनिष्ठपाटन भाग  
गये। किन्तु वर्षके प्रधानोंने उन्हें पायय न दिया।  
इस कारण वे रानी दयावतीका पायय ग्रहण करनेके  
लिये गोदावरीकी पने गए। यहाँवे भी निष्कासे जानि  
पर उन्होंने गोकर्णेश्वरमें घोर पीछे गुप्तेश्वरीके मन्दिरमें  
पायय लिया। यहाँ एक भक्तने उन्हें देवीका खट्ट  
दे कर मृत्युपत्रके विरुद्ध युद्ध करनेको मत्ताह दी। उनके  
विरुद्ध जो सैन्यदल कानिपुरमें पा रहा था, वे सबके  
मथ उनके हाथसे मारे गए। पीछे राजाने कानिपुर  
भोट कर दरबारमें प्रवेग किया घोर मिथ ज्योतिप्रकाश-  
की दो पण्ड करके उनकी माता रानी दयावतीको  
सखीपुर-चकमें कैद कर रखा।

इस प्रकार जयप्रकाशने अपने मनुष्योंकी दमन कर  
नवभोट पर आक्रमण कर दिया। गोर्पाराज धूमनीना-  
यच परास्त हो कर छदेय भोटे। इसके बाद

बाट एवोभारावधने पुनः लक्ष्मीपुर पर समस्त भोग दिया  
 घोर रर तिरदुतवासी म् एवोभो का हलोशर छोनिया ।  
 पुन प्राद्वीमे निगम-राजके वाप का कर एवमा  
 दुपडा रोठा । रमी समयमे राजाके पयपनका  
 यजमान हुवा । अर एवोभो न सुमा कि कायोसम ठावा  
 नामक एक लाल एवोभारावधको लक्ष्मीपुर का अधिकार  
 देनेके निवे मवावता कर रहे है, तब एवोभो समझा कर  
 मवावता करमेमे मना दिया । कायोसमने पवनेको  
 बिलकुल निर्दोष बनलावा, निज घर मो जय ये वाबदिन-  
 के गोरोघट पर मर्या कर रहे थे, तब राजमेरित गुम-  
 परोने पा कर एवोभो मार डाला ।

गुप्तमर्गको एवामे जयमहामने पुनः राज्यमार  
 पदक किया घोर लतघनाके निवे मन्दिरके सामने घाट  
 घोर पदके चारो घोर गृहदि बनया दिये तथा एक  
 देवोकी पुजाके निवे पदत-भो जमीन दान दी । ये दो  
 एक देवोपुजाके लक्ष्मी पदमन्वक भोगको विनाम-  
 को मवा बना गए है । पदवतिनाय-मन्दिरके समीप  
 एवोभो एक घेठोके ऊपर अस्तिहानिर्मित कोटिमिष-  
 निहूनाको पदति जारो की थी जो घमो कोटि-वार्यम  
 पुजाके नाममे मसिद्ध है ।

इस समय एवोभारावधने पदत-भो मेगा से कर  
 कोसिपुर पर पाक्रमण कर दिया । दोनो दमने घम-  
 गाम पुत्र बना । बुद्धने निवाकराजके मरदार मलिपत्रम-  
 के एवोभल वारह हजार मेगा दिनट हुई थो । दोनो  
 दमने विगेष जति होने पर भी राजा जयमहाम एवो-  
 भारावधने राज्यमे बाहर निकाल देनेमे मसम हुए थे ।  
 हिन्दु शरिणव भोगासधर्मो तिरदुतवासी प्राद्वीके  
 ऊपर ईश्वरपना ही कर पुनः एवोभारावधके समीप  
 मव घोर एवोभो निगमके हितमे यम मदान किए ।

इस समय भासनायके राजा रणजितमक थे । न  
 भी मुघोनिर्गोको वाजिन करमेकी वज्याये नामनिवा-  
 हियोको दिला देने लगे । ८८० मेमके वायाक  
 नाममे यहा एक घाटके मय २२ था म् निहक्य हुवा  
 था । इसके धात नाम काट ८८० मे ८८२के एवो-  
 भारावधने पुनः काजिपुर पर बाधा मारा । उम दिन  
 एवोभारावध एक म् था । मेगाभो घेठ घोर मरवायो

एक मव ममे म् पूर पूर थे । एवमा दो एक एक  
 पुत्र करनेके घाट ही ये एक गए । राजा लम मर  
 मन्दिरमे देवोकी उवावतामे मर्य थे । एवोभारावध-  
 को पदका मोठा दाद मवा । एवोभो पदके काजिपुर  
 पर घोर पीके मलिपुर पर घमो गोटी मर्य ली ।

राजा जयमहामने वाटन शोन कर । एवोभो एकमय  
 कयाको वरहा मारमभार पयक किया । क्रममे पद  
 अनन्त काळमयू राजाके समयमे था मवा । राजा  
 मियमिहके छोटे मरुके राजा हरिहरसिंहमर एक  
 मदेयका मानन करने पाये । हरिहरसिंहकी मरुके  
 वाद एकके मरुके निहिनसिंह राजा हुए । ये मरु  
 नामवान् थे, उनको कोसि पाग भो मेगाके मर  
 मवक विद्यमान है । ७४०ने मममरुको एवोभो मरने  
 गुप्त विमगाव घाज्यायमी मनामे तुलनादेवोको पुनः  
 पतिष्ठा की । ७१० नेगाममरुके काजिपुरमव पुनः  
 म् पुनचवको वायुमान योगमे एवोभो कोव्याविवक  
 कर राधाकयाका मन्दिर बनवाया ।

ये बुद्धमर्गोत्पद्यके ऊपर विगेष गृह मरने थे ।  
 राजाने मय घट रोविहारको मोड़ना कर लमका पुन-  
 निर्माप किया । इसके अलावा पन्थाय मरीं मरने  
 एवोभयतमक, भाजितम, मयुमक विष्णु-पथ,  
 वेवावक, चोकामोदर मक, हज, विरज्यक, एतो-  
 धरायूक, पक, मज, दवा, मयु, मवादा, जोगावा  
 घोर पुमवादा नामक कई एक विहार बनाए गए थे ।  
 एवोभो जयोविहार 'मियाविक' है एवोभो एव एवोभो  
 निव है, जो मियावपन मानना चाहते थे वे एवोभो-  
 पद मरी करने । मर निवापघमदावियोके घोर भी  
 वाव विहार है ।

पदमे कहा जा चुका है, कि राजा मयोभारसिंहने  
 वायोव काओ भीममरुकी मवायामे निगममे निमप-  
 कावियोके मय वाविकके निव को मर्यका मवा  
 हुवा था, मयो मरने पर काजिपुरका बाबिक मरुदाव  
 भी भीटजातिके भाव वाविका मरुदाव करने मवा ।

७६८ नेगाममरुको एवोभो मरुमारुके निहट-  
 मरने निहक्य मवा घोर दुहरियोके समीप एक भूमे  
 मरुपका निवाव किया । इस मन्दिरके ऊपरी भाग पर

काठके ऊपर ललत्रादिकी प्रसिद्धि थीर खर्गिय देव-  
तापीकी मूर्ति खोदित है। उक्त वर्षकी वीषमामकी  
मकरसंक्रान्तिके उक्तवर्षमें उन्हीने घण्टानुर्वावामो जानकी-  
नाथ चक्रवर्ती नामक एक ब्राह्मणको पठारह महत्-  
पुराण दान किये। ७७२ नेपालसम्बत्में वे तोयेघाटा-  
को निकले। ७७४ नेपालसम्बत्में भयानक तूफान उठा  
जिससे नेपालके धर्मके मन्दिर थीर गृहदि तहस नहस  
हो गये। उन्हीने अपना सारा जोषन सत्कर्ममें द्रिष्टाया।  
७७७ ने०स०में उन्हीने राजासनका परिवाराण कर संन्यास-  
धर्म ग्रहण किया। प्रयाद है, कि नेपालमें ऐसे सदुप-  
मन्त्र राजा थीर कोई न हुए थे। उनका नाम सेनेसे  
सर्वपाप भय होता है।

उनकी मृत्युके बाद श्रीनिवासमन्त्र १२ ज्यैष्ठ सुदि  
(७७७ नेपालसम्बत्)की मृत्युकेन्द्रनाथके उत्सव दिन  
नेपालके सिंहासन पर अभिषिक्त हुए। ७७८ नेपालसम्बत्-  
में, उन्हीने भातगाँव थीर ललितपुर राजाके साथ मेल कर  
कान्तिपुर राजाके विरुद्ध लड़ाई ठान दी। इस समय  
श्रीनिवास थीर प्रतापमन्त्रके वीष कान्तिकापुराण तथा  
हरिवंश गूँडू कर मित्रता स्थापित हुई एवं भातगाँव,  
ललितपुर थीर कान्तिपुर जाने धर्मके लिये जो एक  
रास्ता गया है वह इस युद्धमें शून्य रणभूमिकी प्रायश्चित्तमें  
राजो हुए।

७८० नेपालसम्बत्में भातगाँवके राजा जगत्प्रकाश-  
मन्त्रने चाण्डिके निकटवर्ती सेनानिवासमें प्राण त्याग कर  
८ मनुष्यकी हत्या कर डाली थीर २१की कैद कर अपने  
साथ ले गए। इस पर राजा श्रीनिवासने प्रतापमन्त्रके  
साथ मेल कर पहले बन्धेधाम थीर धम्मराय सेनानिवास-  
की जीत लिया, पीछे वे चौरपुरी जीतनेके लिये प्रयत्न  
हुए। चौरपुरी जब इनके हाथमें आ गया, तब भातगाँवके  
राजाने हाथी घोड़े पादि दे कर इनसे मेल कर लिया।  
७८२ ने०स०में ये शोधगाँव जा कर रहने लगे। यहाँ  
७ दिन रहनेके बाद उन्हीने नकदियगाँवकी जीत तथा  
लूटा। पीछे धेमी जीत कर ये अपनी अपनी राज-  
धानीकी ओट।

राजा श्रीनिवासने ७८३-८८ नेपालसम्बत्के मध्य  
धर्मके मन्दिर बनवाये तथा बहुतेका संस्कार कराया।

८०१ नेपालसम्बत्में उन्हीने भोजनेके लक्ष्यमें एक  
हस्त मन्दिरका निर्माण किया। उनके बाद उनके लड़के  
योगनरेन्द्रमह सिंहासन पर बैठे। उन्हीने मयिमण्डप  
नामक एक बड़ा घर बनवाया। इनके धानकपुत्रके  
लोकान्तर होने पर उन्हीने राजेश्वरने उदामीन भी  
मंगारधर्मका त्याग कर दिया। इस समय जनताके  
प्रायश्चित्त कान्तिपुरके राजा महीपतीन्द्र वा महीन्द्रसिंह-  
मन्त्र पाटनके राजा हुए। इनकी मृत्यु होने पर जययोग-  
प्रकाशने राज्यभार ग्रहण किया। जययोगप्रकाशने  
पञ्चम मृत्यु हुई। पीछे योगनरेन्द्रको एकमात्र कन्या  
रुद्रमतीके पुत्र विष्णुमन्त्र ८४३ ने०स०में राजा बनाए  
गए। उनके राज्यकालमें महादुर्भिक्ष थीर पत्तानुदि  
उपस्थित हुई। उन्हीने धर्मके पुनरारंभ थीर भाग-  
साधन करके बृहत् देवताका शान्तिविधान किया। कोई  
सन्तान न रहनेके कारण उन्हीने राजप्रशासनकी  
गोद लिया। राजाप्रकाश शान्तिप्रतिष्ठ मनुष्य थे। इसी  
कारण प्रधान कर्मचारियोंने पट्टयन्त्र करके उन्हीने  
प्राचीने धम्मा बना दिया। इस पर उनके भर्तृ जय-  
प्रकाशने क्रुद्ध हो कर उक्त प्रधान थीर कान्तिपुरीको बँटने  
ठान दिया। राजा राजप्रकाश चतु-उत्पाटनकी दान-  
यन्त्रवाकी सङ्घ न उके थीर पहासमें हो करान कालके  
मासमें पतित हुए।

इस समय पाटनके टानादेवशाहजातीय धर्म-  
प्रधानोंने भातगाँवके राजा रणजितकी बुला कर पाटनका  
शासनभार धर्यण किया। किन्तु ये राज्यशासन पल्लव  
तरङ्ग चला न सके, इस कारण एक वर्षके बाद ही राज्य  
शून्य किये गए। इनके बाद उन्हीने पुनः कान्तिपुरके  
राजा जयप्रकाशकी आ कर पाटनके सिंहासन पर  
बिठाया। किन्तु प्रायश्चित्तका विषय या कि एक वर्षके  
बाद ही जयप्रकाशकी भी सिंहासनशून्य करके विष्णु-  
मन्त्रके दोहिवकी राज्यभार धर्यण किया। उनका नाम  
या राजविश्वजित्। चार वर्ष राज्य करनेके बाद प्रधानोंने  
पट्टयन्त्र करके विश्वजित्की मरवा हाभा, तटनसार ये  
नवकोट गए थीर राजा धर्मोत्तरायचकी मनाह में कर  
उनके हीटे भाई दलमन्त्रनया नामक एक स्थलको पाटन-  
के सिंहासन पर अभिषिक्त किया। दलमन्त्रन प्रधानोंकी

विना मनाह निघ ही राजकार्य चहायें व्हाती। एक समय  
 दुस्री मारायचचे विटोकी होतें पर चर्चेंनि मी बहू भाईं  
 माघ मुघ विद्या या। कसमा। एतरे व्यापारचने विना ही  
 या चार मयें राज्य चहायें वाट ही प्रघामेनि एतरे  
 निजाल भगावा घोः विजयित्ते वं होइव मीजमरविं  
 मरुकी विंघामन पर चमिजिज विद्या।

मिजमरविं चने वेषन तीन ही मयें राज्य किया  
 ना कि पुर्वी मारायच निजाल वहुंचे। एतके पाटन पर  
 व्याक्रमण करेने पर मिजमरविं च भाजतीवर्नि भाग मय।  
 पुर्वी मारायचने जव टिका जि, प्रघाम ही एकमात्र व्हाती  
 चर्चा हे, तव एतों नि दन विद्यामघालकी को पकडा घोः  
 मार झाला।

पुर्वी मारायचने मयमामने जव माहू कादव घोः  
 मीरे वहुणकरे वचकन पर पदरेव कर वृटिमयेमकी  
 निमो कलायें मारतने चर्चा मी राज्यकी मीव हाजनेकी  
 कोविजये वे, मीक वकी वलय म्हाकरे उत्तर विनालय-  
 च पादमुचने मीनेकराव्य कोरे कोरे कामलाकोरे चलोम  
 को कायेंने वरचवने विरोच चव व्हा वा। पुर्वी विजयि  
 म मरुने, कादवचू घोः पाटनके विच वरिजवने मारा  
 जाता हे, कि जव मीजमरविं च कादवने वि काकन मर  
 घोः चपुवक राजा मरुचवाम कादवचू हे वि काकन  
 पर चमिजिज वे, तव भाजनेके चमिजिज राजा चपुवक  
 मरुन विही कादवने चपुवकी जव हीने कादवकी वने  
 व्हाती ही कादवने कादव वन मर कादवने चमिजे विच  
 चकनर वृष्टे। राजा चपुवक कोदवने विरोच कादवने  
 पुत्रकारा एतने विच तव चपुवकी कादवचू, कादव  
 ने भाजनेके वनेच राजा चपुवकी कादवचू मर पु-  
 वचू, कोदवने पुर्वी मारायचकी वहुण चपुवने पुत्रकार।  
 एतने कादवने कादव विच कादवने वे मरी कादवचू वि  
 एव चपुवने विरोच मी कादवने चमिजिजने कादवचू को  
 पादवने मी। राजा चपुवक कादवचू मर कादवने कादव  
 ही मर चपुवचू वृष्टे चपुवने पुत्रकार पुत्र मीजमरवकी  
 व हा जव मरी। विच मीजमने कादव पुर्व पुत्रकार  
 पादवचू करेने मी कादवचू वृष्टे हे मीव कादव  
 की मरवने वृष्टे मरुने मर मरी हे, चपुवकी कादव-  
 विद्या कादव मी चपुवने वृष्टे मरी वृष्टे मी। कादव

भाई चपुवने मकी चपुवने पाटनहा मयममरवने वहाल लेहे  
 प्रवचना काके एतरे राज्यने मीजमरवने मारा, तर ही  
 एतके वृष्टयने विमियवचूके व्यापन वा। एतः वृष्टे  
 रचमरुके व्याक्रमणकी चपुवना म की। विचवचू रचवचू  
 घोः ही वृष्टेके मयम मरुच मय, कि एतने माराचवकी  
 मयु चर्चेंके मयु माराचनेने वताव हे। एतं पर मारा  
 रचमिजने चपुवने की माराचर मरुच चमिज मरुने माराच  
 पाद विद्या घोः वरचवने मयममने वृष्टवचू ही चर्चेंनि  
 मयु घोः मयु मीमाकी मार भगामेका चपुवचू मर विद्या।  
 विजु कावता एतने कीरे चपुवचू पन म निजाल।

राजा पुर्वी मारायचने पुर्वी माराचकी को वचव देव  
 एतके विरह मुघ न किया। ये चपुवने वनकी वृष्टि कायें-  
 के विघ पायें तीव मरदावने को कादवने वरुचने मरी-  
 को वेटा काने मरी। चपुवने मी भाजनेके पुर्व मरी  
 भुजवेन घोः कोकोटमविरोचें साय पायः मः मार मुघ  
 काके एतरे चपुवने मरी मय। गोळी कोकोटने पन मर  
 मारा कर चपुवने मीमाचव्या वदुने मरी। एव मरुने  
 मरुचमिज माराच मरुच मी मयमुचने मुचवनेके  
 माच [३ दिन तक चपुवचू मर विद्या। एव मुचने चपुवने  
 ती मुचवें कोम मार कर माग मय, जिमु चपुवकी वृष्टने  
 मरुचमिज माराचने मूनिमायी घोःने पर कोकोटमच  
 रचवचूका चमिजान कर गो हो माराच की मरी। पुर्वी  
 विच वृष्टे मर पुर्वी मारायच रचमिज देवनेके विर  
 काव, तव मरुचमिज वकी मरुचमिज मरुचदेव देव कर  
 चपुवने वीचवकी मरुच मरुच को घोः एतके वरिचारा-  
 वनेकी वृष्ट विच राजमाराचने मय पर पादवचू  
 कोकन मरुचवा। कादवने चपुवनेके मरी म मय  
 कादवने मरी, कादव, कादव, कादव, कादव वरुच  
 कादव मर चपुवने वृष्टे चमिजान मरुचदेव मरुचको कोर मय।  
 कोदवने वृष्टे कादवचू मरुच मरी कादव वृष्टे  
 कादव वृष्टे कादव मरुच पुर्वी मारायचने वृष्टे मी मरुच  
 वृष्टे चपुव मर कादवचू विच मरी। कोदवने कादव  
 कादव मरी कादव मर कोकोटम मरुचमरुच वृष्टे मरी  
 कादव मरी वृष्टे वृष्टे कादव मरुच मरुचमिज मरुचमिज  
 मरुचमिज मरुचमिज मरुचमिज मरुचमिज मरुचमिज मरुचमिज

कोत्तिपुरमें यह पाण्डविक संयाचार दिखा कर  
 पूजोभारायण पाटन जीतनेकी पमिलायाने पधरर हुए ।  
 पाटनराज तेजनरसिंहके पामसमर्पण करनेके पहले  
 पूजोभारायणने सुना कि कप्तान कीनलकके पधीन पद्म-  
 रेकीसेना निवान तराईके दक्षिण प्रान्तमें पहुँच गई है ।  
 तब से उठी समय धूमरी राह हो कर चले गए और  
 पाटनराज तेजनरसिंह प्रायः एक वर्ष तक नियन्त्र  
 रहे ।

कोत्तिपुरकी यह पत्याचार कप्तानी निवारराजने  
 पद्मरेकी सुनाई । १०६० ई०के प्रारम्भमें कीनलक  
 माहय निवान पर्वतके सातुदेगमें जा धरके । उस समय  
 बर्षाका समय था, पद्मरेकी सैन्य जलवायुनिवन्धन और  
 खाद्यद्रव्यके अभावमें पीड़ित हो बहुत कष्ट भोगने  
 लगे । पता से हविदुगके सामनेसे लोठ जानेकी बाध्य  
 हुए । कीनलकके सभैय लोठने पर भी प्रायः एक वर्ष  
 तक गुर्खा लोग निवानमें प्रवेश कर न सके । पुनः १०६८  
 ई०में इन्द्रयात्रा-उत्सवके समय पूजोभारायणने काठ-  
 मण्डु पर धावा होल दिया । काठमण्डु राजा और राजा  
 तेजनरसिंहने कई बार अपने रोक, सेकिन कोई फल  
 न हुआ । अन्तमें जब उन्होंने देखा कि निवानके सभ्य-  
 म्यक्ति और उनके पाम्कीयगणने पूजोभारायणका पल  
 पयनस्वन किया है, तब से और कुछ कर न सके और  
 भातगावमें जा कर पान्य लिया ।

राजा रणजित्ने एकमात्र पुत्र बीर-नरसिंहकी  
 वसित करनेके लिए उनके पथ्य छोड़गई जात 'सात-  
 बहालिया' ( सातपुत्र )-गणने पड़यत्न रचा और गुर्खा-  
 पतिको क्षेत्रमात्र रायेग्रर नामसे पापसमें सम्पत्ति  
 और सिंहासन बाँट देनेका बन्दोबस्त किया । पीछे  
 उन्होंने अपना यह उद्देश्य और प्रस्ताव राजा पूजो-  
 भारायणकी प्रात किया । तदनुसार गुर्खापति प्रस-  
 चित्तसे भातगावस्था भविष्यत् राजत्व प्राप्त करनेकी  
 पालाङ्गाने पधरर हुए ।

गुर्खाराजने उन लोगोंके पूर्वोक्त परामर्शानुसार  
 भातगाव पर पामसमर्पण कर दिया । भातबहालियागणने  
 कुछ पण्यो तक क्षेत्र दिवानके लिए पालो बन्दूकमें  
 हुय किया और साथ ही साथ अपनेने पुरा कर अपनी

गोली और बाण्डक गन्ध पोंके पास भेज दिया तथा वे  
 पपने सुरक्षित दुर्ग-द्वार गन्ध पोंको छोड़ कर पाप पपान्तर  
 हो गए । गुर्खापाने जगदमें प्रवेश कर अपने पपने पधिका-  
 में कर लिया । दरबारके सामने एक बार भीषण युद्ध  
 हुआ जिसमें राजा जयप्रकाशके पैरमें गन्ध पोट लगे  
 और वे पवमक हो समीम पर गिर पड़े । १०६८ ई०के  
 प्रारम्भमें ही यह युद्ध दिखा था । इसी युद्धने निवानके  
 पूर्वतन राजव्यका पयःपतन हुआ और गुर्खाराज्य में  
 निवासके सिंहासन पर भविष्यत, राजरूपमें प्रतिष्ठित  
 हुए ।

राजा पूजोभारायणने रणजयी हो कर दरबारमें  
 प्रवेश किया । उस समय बर्षा राजा जयप्रकाश, रणजित्  
 और तेजनरसिंह सभी बैठे हुए थे । दोनोंमें बातचीत  
 होते होते पापसमें प्रीति हो गई । पूजोभारायणने रण-  
 जित्मकको पपने भातगाव राईयमें पूर्ववत, राजा कोनि-  
 के लिए विनये पनुनय विनय किया । किन्तु रणजितने  
 इसमें पपनी पमिच्छा प्रकट करने हुए कहा, "पाम्कीय  
 पंजनको विद्यासघातकतामें मैं विनये पनुन दे, सुमरां  
 रायभार पड़ण नहीं करूँगा; वरं इस हृदावप्यमें सिरो  
 रच्छा है कि कामों जा कर विद्येग्ररकी सेनामें जियन  
 प्यतीत करूँ ।" ऐसा पमिप्राय प्रकट करने पर गुर्खा-  
 पतिने उनके लिए वैसा ही सुबन्दीबस्त कर दिया ।  
 जाने समय पन्दुगिरिके जयर सुर्वां हो कर उन्होंने मात-  
 बहालियोंकी गउता और पुत्र बीर नरसिंहकी हत्या-  
 कप्तानी पूजोभारायणको सुनाई । राजा पूजोभाराय-  
 णने विद्यासघातक-राजद्वैष्टी मातबहालियोंकी मपरि-  
 वार हुआया और राजपद पानेके लिये अपनेने पित्तसे  
 गन्धुताचरण किया है, इस पपराधमें उनके माक कान  
 कटवा दिए, तथा उनके स्याधर और पाम्सावरसम्पत्ति  
 हस्तगत कर ली ।

रणप्रकाशने प्रायंता को, "गोलोके पाघातने मैं  
 सुमुर्तु हो गया हूँ । पतपव तुम लोग मुझे पपपति-  
 नायके पाय पाटने से पनो । बर्षा मिरा मरीरावनाम  
 होने पर पान्ने टिखिया करना ।

कजितपुरराज तेजनरसिंहने प्रव देखा कि उनके  
 पाम्कीय रणजित्ने ही यह अभावनीय विपद् नेपासके



कौत्तिपुरमें यह पागविक अत्याचार दिखा कर पृथ्वीनारायण पाटन जीतनेकी अभिलाषामें प्रयत्न हुए। पाटनराज तेजनरसिंहके आत्मसमर्पण करनेके पहले पृथ्वीनारायणने सुना कि कप्तान कीनलकके अधीन अन्न-रेखीसेना नेपाल तराईके दक्षिण प्रान्तमें पहुँच गई है। तब वे उसी समय दूसरी राह हो कर चले गए और पाटनराज तेजनरसिंह प्रायः एक वर्ष तक निश्चिन्त रहे।

कौत्तिपुरकी यह अत्याचार कहानी नेवारराजने अन्नरेखीको सुनाई। १७६७ ई०के प्रारम्भमें कीनलक साहब नेपाल पर्वतके सातुदेगमें जा धमके। उस समय वर्षाका समय था, अन्नरेखी सैन्य जलवायुनिबन्धन और खाद्यद्रव्यके अभावसे पीड़ित हो बहुत कष्ट भोगने लगे। अतः वे हरिदुर्गके सामनेसे लौट जानेकी वाध्य हुए। कीनलकके सचेत्य लौटने पर भी प्रायः एक वर्ष तक गुर्खा लोग नेपालमें प्रवेश कर न सके। पुनः १७६८ ई०में इन्द्रयात्रा-उत्सवके समय पृथ्वीनारायणने काठमाण्डू पर धावा मील दिया। काठमाण्डूराज और राजा तेजनरसिंहने कई बार उन्हें रोका, लेकिन कोई फल न हुआ। अन्तमें जड़ उन्हींने देखा कि नेपालके सभ्यान्त-व्यक्ति और उनके आत्मीयगणने पृथ्वीनारायणका पक्ष पक्षबन्धन किया है, तब वे और क्रुद्ध कर न सके और भातगावमें जा कर आश्रय लिया।

राजा रणजित्के एकमात्र पुत्र वीर-नरसिंहको वधित करनेके लिए उनके अर्थ छोोगर्भजात 'सात-बहानिया' (रुभपुत्र)-गणने प्रवृत्त रवा और गुर्खा-पतिकी केषलमात्र राज्येश्वर नामसे आपसमें सम्पत्ति और सिंहासन बाँट देनेका बन्दोबस्त किया। पीछे उन्होंने अपना यह उद्देश्य और प्रस्ताव राजा पृथ्वी-नारायणको ज्ञात किया। तदनुसार गुर्खापति प्रसन्नचित्तसे भातगावका भविष्यत् राजत्व आस- करनेकी आकांक्षामें प्रयत्न हुए।

गुर्खाराजने उन लोगोंके पूर्वोक्त परामर्शानुसार भातगाव पर आक्रमण कर दिया। सातबहानियागणने कुछ घण्टों तक केवल दिखानेके लिए खाली बन्दूकसे युद्ध किया और साथ ही साथ उन्होंने सुरा कर अपनी

गोली और बन्दूकको शत्रु पक्षके पास भेज दिया तथा वे अपने सुरक्षित दुर्ग-द्वार गद्दु पक्षकी छोड़ कर भाग पयात्पद हो गए। गुर्खापतिनगरमें प्रवेश कर उसे अपने अधिकारमें कर लिया। दरबारके सामने एक बार भीषण युद्ध हुआ जिसमें राजा जयप्रकाशके पैरमें गलत चोट लगी और वे भवसक्त हो जमीन पर गिर पड़े। १७६८ ई०के प्रारम्भमें ही यह युद्ध खिहा था। इसी युद्धसे नेपालके पूर्वतन राजवंशका अधःपतन हुआ और गुर्खाराजवंश नेपालके सिंहासन पर भविष्यत् राजत्त्वमें प्रतिष्ठित हुए।

राजा पृथ्वीनारायणने रणजयी हो कर दरबारमें प्रवेश किया। उस समय वहाँ राजा जयप्रकाश, रणजित् और तेजनरसिंह सभी बैठे हुए थे। दोनोंमें बातचीत होती होती आपसमें प्रीति हो गई। पृथ्वीनारायणने रणजित्तमलको अपने भातगाव राज्यमें पूर्ववत् राजा होनेके लिए विशेष अनुमय विनय किया। किन्तु रणजितने इसमें अपनी पक्षिच्छा प्रकट करते हुए कहा, "आत्मीय स्वजनको विश्वासघातकतामें मैं विशेष गुण्य है, सुतरां राज्यभार ग्रहण नहीं करूँगा; वरं इस ह्दावस्थामें मेरी इच्छा है कि काशी जा कर विश्वेश्वरकी सेवामें जीवन व्यतीत करूँ।" ऐसा अभिप्राय प्रकट करने पर गुर्खा-पतिने उनके लिए वंसा ही सुबन्दीबस्त कर दिया। जाते समय चन्द्रगिरिके ऊपर खड़ा हो कर उन्होंने सात-बहानियोंकी मउता और पुत्र वीर नरसिंहकी हत्या-कहानी पृथ्वीनारायणको सुनाई। राजा पृथ्वीनारायणने विश्वासघातक-राजद्वीही सातबहानियोंकी सपरि-यार मुलाया और राजपद पानेके लिये उन्हेंने पितासे शत्रुताचरण किया है, इस अपराधमें उनके नाक कान कटवा दिए, तथा उनके स्थावर और अस्थावरसम्पत्ति हस्तगत कर ली।

राज्यप्रकाशने प्रायः ना की, "गोसोकै आघातसे मैं सुसुपु हो गया हूँ। अतएव तुम लोग मुझे पशुपति-नायके प्रायः घाटमें ले चलो। वहाँ मेरा शरीरावसान होने पर अल्पे टिक्रिया करना।"

कलितपुरराज तेजनरसिंहने जब देखा कि उनके आत्मीय रणजित्से ही यह अभावनीय विपद् नेपालके



बिना सलाह लिए ही राजकाय चलायती लगी। एक समय पृथ्वीनारायणके विद्रोही होने पर उन्होंने भी बड़े भारीके साथ युद्ध किया था। क्रमशः उनके पाचरणसे विरक्त हो कर चार वर्ष राज्य करनेके बाद ही प्रधानोंने उन्हें निकाल भगाया और विश्वजित्की वंशोद्भव तेजहरसिंह-महलकी सिंहासन पर प्रतिष्ठित किया।

तेजहरसिंहने केवल तीन ही वर्ष राज्य किया था कि पृथ्वीनारायण नेपाळ पहुँचे। उनके पाठन पर आक्रमण करने पर तेजहरसिंह भातगाँवमें भाग गए। पृथ्वीनारायणने जब देखा कि, प्रधान ही एकमात्र हर्षाकर्ता हैं, तब उन्होंने इन विश्वासघातकी को पकड़ा और मार डाला।

एक ही शताब्दीके मध्यभागमें जब साहू झाडव धीरे धीरे बंगालके वज्रस्थल पर पददीप कर इतिहासके नयी निमीकतासे भारतमें अहरेजी राज्यको नीव डालनेकी कोशिशमें थे, ठीक उसी समय बंगालके उत्तर हिमालयके पादमूलमें नेपोलराज्य छोटे छोटे सामन्तकीके अधीन हो जानेसे परस्परमें विरोध चल रहा था। पूर्वोक्तित भातगाँव, काठमाण्डू और पाटनके शेष इतिहाससे जाना जाता है, कि जब तेजहरसिंह पाटनके सिंहासन पर और अमुत्रक राजा जयप्रकाश काठमाण्डूके सिंहासन पर प्रथिरुद्ध थे, तब भातगाँवके प्रधिपति राजा रणजित-मदन किसी सामान्य कारणसे एक दोनो राजाओंके प्रति-द्वन्द्वी हो दसबलके साथ उन पर आक्रमण करनेके लिए चयनर हुए। राजा रणजित, लखेदयैरै(रयो)के हाथसे घुटकारा पानेके लिए तथा अपनेकी काठमाण्डू, पाटन और भातगाँवके एकद्वार राजा बनानेकी कामना कर दूर-गदू गोर्खापति पृथ्वीनारायणको बहुत पादरसे बुलाया। अपने मदगंधसे उत्तेजित रणजितने नहीं समझा कि इस गृहयैरिताके वंशुल्लेख भविष्यत्में क्या विषम परिणाम होगा। राजा पृथ्वीनारायण इस घामन्तकथसे मन ही मन आनन्दित हुए-उनके हृदयमें पुनः नेपाल-जयकी आशा लग उठी। जिस नेपालमें उनके पूर्वपुरुषगण आक्रमण करते भी-व्ययमनोरथ हुए थे और स्वयं भी लडाये युद्धमें प्राणसे कर भागे थे, उनको राज्य-विषया प्राप्त भी उनके हृदयसे दूर नहीं हुई थी। उनके

भाई दलमदंनको पहले पाटनका शासनभार प्रदान कीये प्रवचना करके उन्हें राज्यसे वञ्चितकरण्यापार, तब भी उनके हृदयमें विशेषरूपके लापत, था। पता-रहोति रणमत्तके प्राह्वानकी उपेक्षा न की। विशेषण रणजित योद्धे ही दिनेकी मध्य समझ गए, कि उनके महाव्यथारो बन्धु उन्हेंके शत्रुतासाधनमें उतारू हैं। इस पर राजा रणजितने अपनेकी कमजोर समझ सन्धि करनेका प्रस्ताव पास किया और परस्परमें सन्धिवलसे दृढ़बद्ध हो उन्होंने शत्रु और गदू सेनाकी मार भगनेका सङ्कल्प कर लिया। किन्तु कार्यतः इससे कोई अच्छा फल न निकला।

राजा पृथ्वीनारायणने पूर्वोक्त राजाओंको एकत्र देव उनके विरुद्ध युद्ध न किया। वे अपने बलको उद्वि करनेके लिए पावर्तीय सरदारोंकी छलबलसे खदलमें लानेको चेष्टा करने लगे। पहले वे भातगाँवके पूर्ववर्ती भूलखेल और चौकोटवासियोंके साथ प्रायः छः बार युद्ध करके उन्हें अपने चर्ममें लाए। पोछे चौकोटमें एक गढ़ बना कर अपनी सेनासंख्या बढ़ाने लगे। इन समर्थ महेन्द्रसिंहाराय नामक किसी राजपुरुषने गुर्खाओंके साथ १५ दिन तक अनवरत युद्ध किया। उस युद्धमें पहले तो गुर्खा लोग क्षार कर भाग गए, किन्तु परवर्ती युद्धमें महेन्द्रसिंहारायके भूमिगायी होने पर चौकोटिशगण रणक्षेत्रका परित्याग कर नौ दो ग्यारह हो गये। दूसरे दिन सबैरे जब पृथ्वीनारायण रणभूमि देखनेके लिए आए, तब महेन्द्रसिंहकी वरदा-विह रतदेह देख कर उनके वीरत्वकी भूरि प्रशंसा की और उनके परिवार-वर्गको कुछ दिन राजमासादमें रख कर आदरपूर्वक भोजन कराया। अन्तमें भरणशोषणके लिये वे उन्हें पनाशतो, वनीपा, नाला, खदमू, सहा प्रादि पाँच ग्राम दान कर अपने पूर्व प्रथिकृत नवकोट राज्यकी लौट गए।

कोत्तिपुरका प्रथमयुद्ध १०६५ ई०में समाप्त हुआ। इसके कुछ समय बाद राजा पृथ्वीनारायणने पुनः दो बार इस नगर पर आक्रमण किया था। तृतीय बारके आक्रमण और जयके बाद जो भीषण पत्ताघार हुआ था, वह फादर गैदी द्वारा प्रकाशित नेपाल-मिसनकी तालिका पढ़नेमें विशेषरूपसे जाना जा सकता है।

कीर्तिपुरमें यह पागविक अत्याचार दिखा कर पृथ्वीनारायण वाटन जीतनेकी भूमिलायामें प्रथमरूप हुए। वाटनराज तेजनरसिंहके आश्रममें प्रवेश करनेके पहले पृथ्वीनारायणने सुना कि कप्तान कीनलकके अधीन अह्मरेलीसेना नेपाल तराईके दक्षिण प्रान्तमें पहुँच गई है। तब वे उसी समय दूसरी राह हो कर चले गए और वाटनराज तेजनरसिंह प्रायः एक वर्ष तक नियन्त्रित रहे।

कीर्तिपुरकी यह अत्याचार कहानी निवारराजने अह्मरेलीको सुनाई। १७६७ ई०के प्रारम्भमें कीनलक शाहव नेपाल पर्वतके सानुदेगमें जा धमके। उस समय वर्षाका समय था, अह्मरेली सैन्य ललवायुनिवन्धन और खाद्यद्रव्यके अभावसे पीड़ित हो बहुत कष्ट भोगने लगे। अतः वे हरिद्वगके सामनेसे लौट जानेकी वाध्य हुए। कीनलकके सैन्य लोटने पर भी प्रायः एक वर्ष तक गुर्खा लोग नेपालमें प्रवेश कर न सके। पुनः १७६८ ई०में इन्द्रयाता-उत्सवके समय पृथ्वीनारायणने काठमाण्डू पर धावा मोल दिया। काठमाण्डू राज और राजा तेजनरसिंहने कई बार उन्हें रोका, लेकिन कोई फल न हुआ। अन्तमें जब उन्होंने देखा कि नेपालके सम्भ्रान्त्यक्ति और उनके आश्रयगणने पृथ्वीनारायणका पक्ष प्रवृत्त करने किया है, तब वे और कुछ कर न सके और भातगावमें जा कर आश्रय लिया।

राजा रणजित्के एकमात्र पुत्र वीर-नरसिंहको वधित करनेके लिए उनके अग्र्य ज्योतिर्भोजित 'सायवहालिया' (रुसपुत्र) गणने प्रद्वयन्त्र रचा और गुर्खापतिके केवलमात्र राज्येश्वर नामसे आपसमें सम्पत्ति और सिंहासन वांट देनेका वन्देवस्तु किया। पीछे उन्होंने अपना यह वृहत्त और प्रस्ताव राजा पृथ्वीनारायणको ज्ञात किया। तदनुसार गुर्खापति प्रसन्नचित्तसे भातगावका भविष्यत् राजत्व प्राप्त करनेकी आकांक्षाने प्रथमरूप हुए।

गुर्खाराजने उन लोगोंके पूर्वोक्त परामर्शानुसार भातगाव पर आक्रमण कर दिया। सातवहालियागणने कुछ घण्टों तक सेवल दिखानेके लिए खाली घन्टूकसे युद्ध किया और साय ही साय उन्होंने शुरु कर अपनी

गोली और शरदूककी शत्रु पक्षके पास भेज दिया तथा वे अपने सुरक्षित दुर्ग-द्वार शत्रु पक्षको छोड़ कर भाग पयान्पद हो गए। गुर्खापतिने नगरमें प्रवेश कर उसे अपने अधिकारमें कर लिया। दरबारके सामने एक बार भीषण युद्ध हुआ जिसमें राजा जयप्रकाशके पैरमें शरत चोट लगी और वे भवभक्त हो जमीन पर गिर पड़े। १७६८ ई०के प्रारम्भमें ही यह युद्ध खिटा था। इसी युद्धमें नेपालके पूर्वतन राजवंशका अन्तःपतन हुआ और गुर्खाराजवंश नेपालके सिंहासन पर भविष्यत् राजरूपमें प्रतिष्ठित हुए।

राजा पृथ्वीनारायणने रणज्यो ही कर दरबारमें प्रवेश किया। उस समय वहाँ राजा जयप्रकाश, रणजित् और तेजनरसिंह संभो बैठे हुए थे। दोनोंमें बातचीत होती होती आपसमें प्रीति हो गई। पृथ्वीनारायणने रणजित्मल्लको अपने भातगाव राज्यमें-पूर्वपक्ष- राजा होनेके लिए विशेष प्रसन्नय विनय किया। किन्तु रणजितने इसमें अपनी अनिच्छा प्रकट करते हुए कहा, "आश्रय स्वजनको विश्वासघातकतामें मैं विशेष दुःख हूँ, सुतरां राज्यभार ग्रहण नहीं करूँगा; वरं इस वृद्धावस्थामें मेरी इच्छा है कि काशी जा कर विश्वेश्वरकी सेवामें जोयन व्यतीत करूँ।" ऐसा अभिप्राय प्रकट करने पर गुर्खापतिने उनके लिए वंसा ही सुवन्दोवस्तु कर दिया। जाते समय चन्द्रगिरिके ऊपर खड़ा हो कर उन्होंने मात-वहलियोंकी शठता और पुत्र वीर नरसिंहकी हत्याकहानी पृथ्वीनारायणको सुनाई। राजा पृथ्वीनारायणने विश्वासघातक-राजद्वेषी मातवहलियोंको सपरिवार मुलाया और राजपद पानेके लिये उन्हेंने पितासे शत्रुताचरण किया है, इस अपराधमें उनके नाक कान कटवा दिए, तथा उनकी स्थावर और अस्थावरसम्पत्ति हस्तगत कर ली।

राज्यप्रकाशने प्रायः ना की, 'गोलीके आघातसे मैं सुसुप्त हो गया हूँ। अतएव तुम लोग मुझे पशुपतिनाथके आश्रयघाटमें ले चलो। वहाँ मेरा शरीरवसान होने पर अन्त्येष्टिक्रिया करना।

कलितपुरराज तेजनरसिंहने जब देखा कि उनके आश्रय रणजित्ने ही यह अभावनीय विपद् नेपालके

घट्टमें पहुँचे हैं, तब वे किसका दोष देंगे। यह सोच कर उनके मनमें दारुण घोर घृणा और आत्मत्याग उत्पन्न हो गया। किंकरत्तिय बिभूट्ट को उन्होंने मोतावसम्बन्धन किया और एक चित्तसे ईश्वराराधना करने लगे। ओं न इमी ममय पृथ्वीनारायण उनका अभिप्राय जानने के लिए प्रयत्न हुए। लेकिन जब उन्होंने देखा कि तेजस्वरत्तियने उन्हें एक घात मरो न करी, तब वे बहुत विगड़े और लक्ष्मीपुरमें उन्हें कैद कर रखा। यहाँ पर नेत्रके मन्त्रबोधिय शिव राजा तेजस्वरत्तिय बहादुरने पयगिट जीवन व्यतीत किया था।

नेत्र-विहासन पर अधिष्ठित हो राजा पृथ्वीनारायणने किरात और लिम्बुजातिको वासभूमि अपने अधिकारमें कर ली। क्रमशः एक एक करके नेपालको वर्तमान सीमाके अन्तर्गत प्रायः सभी प्रदेश उनके हाथ लग गए थे। उत्तरमें किराँत और कुटी, पूर्वमें विजयपुर और सिक्किम सीमान्तवर्ती मोचीनदी, दक्षिणमें मकवानपुर (माखनपुर) और तन्यौरी (तराई) तथा पश्चिममें सप्तगण्डकी, इस सीमाके मध्यस्थित विन्दीय भूभाग राजा पृथ्वीनारायणके शासनाधीन हुआ। भातनाथसे कान्तापुरमें आ कर उन्होंने वसन्तपुर नामक एक हस्तक्षम गान्ना बनवाई। इन्होंने ही सबसे पहली निरूपित 'पुनवर्' जातिको राजाके समीप लानेको प्रयत्नमिति दी थी। प्रायः ७ वर्ष राजत्वके बाद गण्डकीतीरस्थ माहनतीर्थमें ८८५ नेपालमन्वतकी उनका शरीरावसान हुआ।

जब प्रथम कीर्तिपुरके युद्धमें राजा पृथ्वीनारायण राजा जयप्रकाशमहलसे पराजित हो एक बोली पर चढ़े गये जा रहे थे उस समय एक विप्राहीने उनके प्राण लेनेके लिये गोही लज्ज उठाया, रवी ही उधके एक दूधरे धामीने उधका हाथ पकड़ कर कहा, 'ये राजा हैं, भयः हमें नहीं मारनेका अधिकार नहीं।' पीछे एक दुभाल और एक कषाईने उन्हें बन्धे पर लटका कर राव भरमे नबकोट पहुँचा दिया। राजाने दुभालकी कार्यन्तरेरठाके प्रथम ही 'शाबाय पुत्र' ऐसा कहा था। इसी दिनसे दुभालकी जाति 'पुत्रवर' कहलाने लगी। ये लोग राजाके संगीति भी स्वयं कर सकते हैं।

पृथ्वीनारायणके दो पुत्र थे। बड़े सिंहासनाधीन पिताके मरने पर सिंहासन पर बैठे और छोटे सा बहादुर बेतियाराज्यमें निर्वासित हुए। पाचायिके कुबलमें पढ़ कर ८८८ नेपालाब्दमें उन्होंने नखर मानवदेहका त्याग किया। उनकी मृत्युके पश्चात् उनके पुत्र रणबहादुरने राजासन ग्रहण किया। पाचायिके चरित्र पर उन्हें सन्देह हुआ, इस कारण उन्हें मरवा डाला। पीछे अन्य किसी कारणसे विरक्त हो उन्होंने मन्त्रि-नायक वंशराज पाँडेका गिरफ्तार कर लिया था। इस समय इनके चाचा सा बहादुर नेपालमें आ कर रणबहादुरके प्रतिनिधि हुए। किन्तु राजमाता राजेन्द्रसम्पत्की वार्त्त उनका विवाह होनेके कारण वे पुनः राज्यसे निरुत्थित दिए गए। जब राजमाता अपने हाथमें शासनभार ले कर राजकार्य चलाय लगीं। राजमाता अत्यन्त बुद्धिमति और कार्यक्षमा थीं। उन्होंने यत्न और उद्योगसे पुष्पके पश्चिमस्थ पत्था और कश्चिके मध्यवर्ती समुदय भूभाग नेपाल राज्यान्तर्गत हुआ था। उनकी मृत्युके बाद सा बहादुर नेपाल लौट कर पुनः राज्यको परिचालना करने लगे। उनके उत्साहसे चौबीसी और वारसी सामन्त-राज्य, लमजुङ्ग और टनही तथा पश्चिममें गढ़ानदीतट-वर्ती स्यान्, थोनागर और कश्चि तकके भूभाग तथा पूर्वमें किराँतराज्य और शुभेश्वर तकके स्यान्ने नेगण सोमाके कलेधरकी हडि की थी।

१०८१ ई०में गुर्खालोगोंने नेपाल, तिब्बत और बंग-रेजाधिकृत भारतवर्षमें वाणिज्य सम्बन्धकारके लिये सन्धिका प्रस्ताव किया। इस समय चीनराजके साथ गुर्खापतिकार, चीनराजगुरुके अधिकृत दिग्गारवा नामक स्यान्का आक्रमण से कर घोर युद्ध हुआ। चीनमेंकी शुभयाम और काजी धुरिनने पचीन चीन-सैन्यने पा कर खतियार, रसोआ और गोमाई धान पर्वतके निम्न-देशमें दौरासी नामक स्यान् पर नेपालियोंको पकड़ी तरफ पराजित किया। नेपालीगण पराजित हो कर पर्वले धुनेचू और पीछे खनोरा भाग गए। इस युद्धमें मन्त्रि-नायक दामोदर पाँडे ने खुद वीरता दिखलाई थी।

१७८२ ई०में चीन-सैन्यसे इस प्रकार पराजित हो कर नेपालियोंने सितम्बरमासमें साङ्गकान् वाक्चिसे

सहायता मांगी। काम बालिसेने पहले तो चीनके विरुद्ध बख्त धारण करनेसे बखीकार किया, पर पीछे बहुत कष्टापोषके बाद १७२३ ई०के मार्च मासमें मेजर कार्क पैटिककी काठमण्डू भेज दिया। किन्तु चंगरेजीकी सहायता पहुँचनेके पहले ही नेपालराज चीन-सम्राटसे सन्धि कर चुके थे।

१७२५ ई०में रणवहादुर जब बीस वर्षके हुए, तब उन्हेंने पित्रराज्य प्राप्त किया। इस समय किसी कारण-वश पाचाके साथ उनका विवाद खड़ा हुआ जिसका फल यह हुआ कि सा महादुरकी यावज्जीवन कैदमें रखा गया।

रणवहादुरने १८०० ई० तक बहुत प्रत्याचार और कठोरताके साथ राज्यशासन किया। इनके व्यवहार पर सबके सब बागी हो गए और उन्हेंने मन्त्रिगणके दामोदरपांडेकी सहायतासे उन्हें राज्यच्युत कर वाराणसीधाममें भेज दिया। उनकी प्रथमा पत्नी शुक्ली राजकन्याके कोई सन्तान न रहनेके कारण राजारणवहादुरने एक विधवा मिस्त्र-रमलीका पालिश्रयण किया। इसके गर्भसे गीर्वाणयोध विक्रम सा नामक एक पुत्रने जन्म लिया। राजपूत-राजकी भ्रातृपत्नी कन्या प्रहण करना प्रवृत्त है; यह देख कर सब किसीने उन्हें राज्यसे निकाल भगाथा।

१८०१ ई०में नेपाल और चंगरेजीके साथ एक सन्धि हुई। उस सन्धि-शर्तके अनुसार नेपालके राज-कार्यके प्रति दृष्टि रखनेके लिये कप्तान डबल्यू डि नक्स नामक एक चंगरेजी रेसिडेण्ट को कर नेपालमें रहने लगे। पहले तो नेपालियोंने इस चंगरेज राजपुरुषकी नगरमें प्रवेश करने न दिया था, पर १८०२ ई०के प्रमिल माससे वे नेपालराजधानीमें रहने लगे थे। वहाँ एक गप रह कर वे १८०३ ई०में खट्टेकी लौट गए। १८०४ ई०में खाड वंशजोंने नेपालके साथ पहलेकी जितनी सन्धि थी, तोड़ दी और १८१० ई०के मई मासमें एक नई सन्धिकी प्रस्ताव पेश किया।

राजा रणवहादुर चार वर्ष तक संघ्यासी वंशमें काशीधाममें रह कर पुनः नेपाल लौटे। वहाँ पहुँचते ही उन्हेंने शत्रु वर्ग और दामोदर-मन्त्रीकी यमपुर भेज दिया तथा राजा भरने नूतन फार्देनका प्रचार कर पाव

कागराकी घोर अग्रसर हुए। युद्धमें उन्हेंने कागराधि-पति चंसारवादीको परास्त कर उनका राजा नेपालके सोमान्तर्गत कर लिया।

राजा रणवहादुरकी मृत्युके बाद उनके पुत्र गीर्वाण-योध विक्रम सा राजगद्दी पर बैठे। उन्हेंने राजारणा-के लिये भीमसेन ठापाको अपना प्रधानमन्त्री बनाया। १८०८ ई०में यहाँ भयानक भूमिकम्प हुआ जिससे बनेक मनुष्योंकी जान गई और हजारों मन्दिर धरवाह हुए।

इनके पिता रणवहादुरने ऐसेसे पहले नेपालमें खण्ड सुद्राका प्रचार किया था। उन्हेंने भी पित्रगौरव प्रजनके लिये टाक (डबल पैसा) नामक तांबिका सिक्का अपने नाम पर चलाया और धम्मवहिन खेल नामक स्थानमें गोलो और बाफुद का कारखाना खोला। १८१० ई०में चंगरेजराजके सन्धिप्रस्ताव करने पर भी नेपालके साथ चंगरेज बणिकोंके वाणिज्यव्यवसायमें दिनादिग भ्रमनति देखे गईं। १७८७ ई०से १८१४ ई० तक नेपालियोंने चंगरेजी सोमान्तमें पा कर खूब उपद्रव मचाया, फलतः उसी सालके नवम्बर मासमें चंगरेजीने नेपालके विरुद्ध युधघोषणा कर दी। इस युद्धमें जनरल मारलो और सउ विम्वरूपसे भाहत हुए और जनरल जिलिषी मारे गए। किन्तु जनरल फाक्टरलोनो हटिय-गौरवकी रक्षा करनेने समर्थ हुए थे। चंगरेजीने जब मकचनपुर नगर और दुर्ग पर अधिकार किया, तब मुखारामने १८१६ ई०में सन्धिघरसे चंगरेजीके नवाभिजत देग छोड़ दिए और इसके कुछ दिन बाद चंगरेजीने नेपालराजकी इसके बदलेमें तराईप्रदेस अर्पण किया।

१८१६ ई०की सन्धिगतकी कायम रखनेके लिये मि० गार्डिनर नामक कोई चंगरेज रेसिडेण्टके रूपमें निर्वाचित हो काठमण्डू पधारे। इस समय राजा नावासिग थे, अतः सरदार भीमसेन ठापाके हाथमें ही शासनका कुल भार था। चंगरेजी सुधविग्रहके बाद ही नेपालमें भयानक वसन्त देखा गया। इस महामारे-के भयसे नेपालवासी बहुत डर गए। दिनके समय प्रकाश राजपय हो कर नरमांस मुखमें लिए गृध्रिनी और कुत्ते इधर उधर घूमने फिरने लगे। नेपालका यह भीमवस्तु देख कर सबके सब भङ्कित हो पड़े।

राजा दरवारसे बाहर नहीं निकलते थे। शीतला देवी-  
की कृपामें उनका सारा शरीर गोठीसे ढाँका जाता था  
और पन्तमें हमीसे उनकी श्रृंगु भी छुई।

इनकी श्रृंगुके बाद उनके तीन वर्षकी लड़की राजेन्द्र  
विक्रमसा बहादुर समग्र जङ्ग नेपालके सिंहासन पर  
पधित हुए। रण बहादुरकी विधवा पत्नी ललित-  
त्रिपुरा-सुन्दरादेवी राजकर्त्री और सरदार भीमसेन ठापा  
उनके पादशानुसार बालकराजका राज्यशासन करने  
लगे। १८१० ई०में डो० बालिचु चन्द्रिका विषय जानने-  
के लिये नेपाल आए। १८२६ ई०में राजाके एक पुत्र  
उत्पन्न हुआ।

भीमसेनके इस प्रकार एकाधिपत्यसे सब कोई विरिमत  
और स्तम्भित हो गए। पशुपतिनाथके मन्दिरमें उन्हें  
की सोने और चाँदीका किबाड़ दान किया तथा उनकी  
कृत धारा और धर्मशाला आदि देख कर धीरे धीरे राजा  
के मनमें घिकार उपस्थित हुआ। १८३१ ई०में उन्हें  
रानीके बहनेसे उन्हें कौद करनेकी छुटाया हुआ।

१८३४ ई०के भीषण सूफानसे नेपालके बाहुदखानिमें  
भाग लग गई जिससे रिसिडेन्सी टूट फूट गई और बहुत  
से लोग मरे।

१८३५ ई०में राजाने सेनापति मन्वरसिंहको कल  
कत्ते भेज दिया।

१८३८ ई०में रणजङ्गपण्डि जब महारानीसे नेपालके  
सेनापतिपद पर नियुक्त हुए, तब भीमसेन और मन्वर  
हताय हो पड़े। इस समय किसी तरह मन्वर पञ्जाव-  
के गरी रणजित्सिंहके निकट किसी विधि पर परामर्शके  
लिये भेज दिए गए। कई वर्ष तक चेष्टा करके पन्तमें  
१८३९ ई०की रात्रि भीमसेनको कौद कर लिया। कारा-  
गारमें ही भीमसेनने आत्महत्या करके अपने हृदयका  
भार साधव किया था। नेपालके जिस वीरभेता सैनिक-  
ने प्रायः २५ वर्ष तक राज्य किया था, आज उसके  
मरने पर उसकी लाश अत्यन्त लज्जाम्बावसे काठमाण्डू-  
की रास्ते हो कर विष्णुमतोक किनारे लार्दे गई थी।

भीमसेनकी श्रृंगुके बाद १८४३ ई० तक नेपालको  
शासन-विभागमें विगय गङ्गुहट्टी होती रही और इसी  
सूत्रमें अंग्रेजोंके साथ युद्धकी घटना हुई। महामति

हजसन साहजकी श्रृंगुसासे शिवपदा समा आगहाए  
निर्वाचित हो गईं। उसी वर्ष बड़ी रानीने रणजङ्गपण्डि-  
का पल ले कर उन्हेंको राज्यका प्रधान मन्त्री बनाया।  
उधर छोटी रानीने भीमसेनके भावीय मन्वर-  
सिंहके पञ्चावसे लौटने पर उन्हेंकी मन्त्रिपद पर बरण  
किया। राजपुरुष और सैन्यदलने भी मन्वरका पल  
पवसम्बन्ध किया जिससे उन्हेंने निज विक्रमशाही गीत  
ही सम पांडेय यको उल्लासित कर दिया।

इस समय नेपालके एकमात्र गौरवस्थल, महत्त्व, वृद्धि  
और वीर्यशाली जङ्गबहादुर सामान्य सैनिकरूपमें  
अपनी भविष्यत् उत्तिका आभास दे रहे थे। ये बाल-  
नरसिंह नामक नेपाली काजीके पुत्र और राजमन्त्री  
मन्वरके निकट भावीय थे। मन्वर इस बालककी  
भावी क्षमताके विषय पर विचार कर बहुत डर गए थे  
अंग्रेज रिसिडेण्ट हेनरी लारिन्स इस बालकको बुद्धिमत्ता-  
की विशेष प्रशंसा करते थे।

जङ्गबहादुरने मासादस्य प्रधान राजमन्त्रियोंके साथ  
पहुँचकर करके १८४५ ई०के मई मासमें मन्वरको मार  
वाला और पाप-राज्यके एकमात्र इकाकर्ता हुए।  
किन्तु गगनसिंह प्रधान मन्त्रीके पद पर नियुक्त रहे।  
१८४६ ई०में जब सर हेनरी लारिन्सने नेपालका परिषदाय  
किया, तब मि० कलमिन नेपालके रिसिडेण्ट हो कर आए।

मन्वरकी श्रृंगुके बाद राजा और रानी दोनों  
जङ्गबहादुरके हाथमें कठपुतलीभे रहने लगे। इस समय  
राजमन्त्री गगनसिंह और फ्रंजिज, प्रभृति राजकीय दल-  
के साथ रानी और जङ्गबहादुरका मत-अपस्य उपस्थित  
हुवा। इस विवादवत्से १८४६ ई०की १४वीं और  
१५वीं सितम्बरको नेपाल-राजधानीमें भोषण ज्वाल-  
काण्ड किवा गया। राजा गहरी रातमें भाग कर कल-  
मिन सहायकी शरणमें पहुँचे। उधर नेपालके अधि-  
कांग सम्प्रान्त व्यक्ति जङ्गबहादुर और उनके सैन्यदलसे  
यमपुर भेज दिये गए। राजाने रिसिडेन्सीसे फौट कर  
देखा कि फौटमासादके चारों ओर नालिमें रक्त स्त्रोत बह  
रहा है।

जङ्गबहादुर आर्यदलसे पुष्ट हो कर नेपालके मर्भ  
एक विधेय समतापन्न व्यक्ति समझे जाने लगे। जिन सब

पूर्वतन सरदारोंने उनके विरुद्ध गिर लडाया था, वं सभके सब जङ्गलवाहादुरकी तलवारके आघातसे यमपुर सिधारे । राजा भी अपनेकी चारों ओरसे विपदसे बिरा देख वाराणसीकी भग गए । जिस रानीने अपने पुत्रकी सिंहासन-प्राप्तिके लिये जङ्गलवाहादुरकी सहायता की थी, वे भी प्रवक्षित हो कर कामोधाम भेजी गईं । १८४० ई०में राजाने नेपालराज्यलाभकी भागसे दो बार नेपाल पर आक्रमण किया, किन्तु वे फलतकाय हुए और फलमें तराई-युद्धमें कीट कर लिये गए । इस प्रकार राजाके राजपूत होने पर उनके वंशधरके हाथ सिंहासन अर्पित हुआ ।

राजा राजेन्द्र-विक्रमके नेपालसे बाहर जाने तथा उनका मस्तिष्क खराब हो जानेसे जनताके आग्रह और सहायभूतिसे राजपूतकुलतिलक महाराज सुरेन्द्र-विक्रम-ग्राह समसेरलङ्गनेपालके सिंहासन पर बैठे । राजा सुरेन्द्र-विक्रमकी मृत्युके बाद उनके लड़के तै लोखवीर विक्रम ग्राह बहादुर समसेरलङ्गनेपालके राजा हुए । १८४० ई०की ११वीं दिसम्बरकी रातने जन्मग्रहण किया था ।

राजा वीरविक्रमने जङ्गलवाहादुरकी कन्यासे विवाह किया । उन्हें ही गर्भ और राजाके पौरससे १८७५ ई० की २१वीं अगस्तकी जङ्गलवाहादुरके दीक्षित नेपालसिंहासनके भावी उत्तराधिकारीका जन्म हुआ ।

नेपालका अधुनातन इतिहास और राज्यकी एकेश्वर समता मन्त्रियोंके हाथ न्यस्त रहनेके कारण नेपालका इतिहास उन्हें मन्त्रियोंकी कार्यकारिताके ऊपर-बिस्त-कुल निर्भर है । एकमात्र प्रधान मन्त्री ही नेपालके संसिकर्ता और विधाता हैं, राजा इनके हाथके खिलौने हैं । राज्यके किसी विषय वा कार्यमें उन्हें इस्तेमाल करने वा कीट अधिकार नहीं है । राजा जङ्गलवाहादुरके समयसे ही मन्त्रिकुलकी देव मर्यादा और समताकी उक्ति हुई है तथा उन्हें ही समयसे नेपालका इतिहास उनको बंश-पाषाणके मध्य गिना जाता है । नेपालके पूर्व-राजवंशशासिका इतिहास ग्रहण करके सभी जङ्गलवाहादुर और तैलुस-त्रिभुव-घटनाबन्धीका उल्लेख कर-नेपालका इतिहास ग्रहण किया जाता है ।

१८४८ ई०में दिल्लीपसिंहकी माता चन्द्रकुमारीने

लाहौरका परित्याग कर नेपालमें अपना आश्रय ग्रहण किया । जङ्गलवाहादुरने राज्यके गमस्त सम्भालने घरोमें निज सुकन्याका विवाह कर, विलायत जा कर, स्वदेशमें लौट आते न आइएनका प्रवर्तन कर, सामरिक विभागका संस्कार तथा गन्तुके हाथसे अपनी रक्षा कर बलवीर्य और उन्नतशुद्धिका यथैष्ट परिचय प्रदान किया है ।

१८५२ ई०में जङ्गलवाहादुरने अपने भाईकी पत्नी और भूतवल प्रदेशका शासनकर्ता बनाया । १८५५ ई०में आगिनूट्ट, १८६१ में वैज्ञानिक तत्त्वके अन्वेषणके लिये नेपाल जाने की जब जङ्गलवाहादुरसे अनुमति मांगी, तब उन्होंने विशेष सरनताके साथ उनकी प्राथना भस्वीकार की ।

पूर्वसन्धिके शर्तानुसार नेपालराज प्रति पांच वर्षमें नजराना और उपदोकन स्वरूप अर्घ्य द्रव्यादिके साथ एक दूत चीनमन्त्रालयके पास भेजा करते थे । उस दूत को द्रव्यादि ले कर तिब्बत हो कर जाना पड़ता था । एक समय तिब्बतवासियोंने उस राजदूतकी भयमानना की । इस पर १८५४ ई०में नेपालराज उनके ऐसे भयद व्य-हार पर क्रुध हो उन्हें दण्ड देनेके लिये अग्रसर हुए । इस युद्धसमयमें विशेषदृष्टिसे सज्जित होने पर भी पाव-तौरपथ हो कर जानिमें नेपालसेनाको विशेष कष्ट उठाया पड़ा था । इसी समय नेपालीके मध्य चमरी गो-मांस खानेकी प्रथा पारम्भ हुई । समतल भूमि पर तिब्ब-तोय और भोटिया लोगके परास्त होने पर भी, नेपाली गण उन्हें चुन्ना, किराड और कुट्टी गिरिपथसे भगान सके । १८५५ ई०के नवम्बर मासमें भोटियाने कुट्टी, किराड और चुन्ना देखल किया । पीछे काठमाण्डूसे जब नेपाली सेना आई, तब उन्होंने एक एक करके सब देग छोड़ दिए । किन्तु उनके हृदयमें विद्रोहकृषी भागका धक्कना बन्द न हुआ । इस पर जङ्गलवाहादुरने नूतन सामरिक-कर ले कर काठमांडू सेना इकट्ठी की । १८५६ ई०के मार्च मासमें तिब्बतके साथ जो सन्धि हुई, उससे नेपालियोंने भी तिब्बतके अधिकृत प्रदेश छोड़ दिए और तिब्बतराज वाषिक १०००० रु० देने और लासा राज-धानीमें एक गुर्खा कर्मचारी रखनेकी राजी हुए । १८५६ ई० अगस्त मासमें जङ्गलवाहादुरने नेपालके

राजा दरबारसे बाहर नहीं निकलते थे। शीतला देवी-  
की छपासे उनका मारा शरीर गोठीसे घाच्छादित था  
और भन्तमें इसीसे उनकी मृत्यु भी हुई।

इसकी मृत्युके बाद उनके तीन वर्षके सड़के राजेन्द्र  
विक्रमसा बहादुर समीर जङ्ग नेपालके सिंहासन पर  
पधित्त हुए। रण बहादुरकी विधवा पत्नी ललित-  
त्रिपुरा-सुन्दरादेवी राजकर्त्री और सरदार भीमसेन ठापा  
उनके चाहे शासुसार बालकराजका राज्यशासन करने  
लगे। १८१० ई०में डो० याज्ञिक चन्द्रिका विषय ज्ञानने-  
के लिये नेपाल आए। १८२८ ई०में राजाके एक पुत्र  
उत्पन्न हुआ।

भीमसेनके इस प्रकार एकाधिपत्यसे सब कोई विरिमत  
और स्तम्भित हो गई। पशुपतिनाथके मन्दिरमें उन्होंने  
जो सोने और चांदीका कियाड़ दान किया तथा उनकी  
छत धारा और धर्मशाला आदि देख कर धीरे धीरे राजा  
के मनमें धिक्कार उपस्थित हुआ। १८३२ ई०में उन्होंने  
रानीके कहनेसे उन्हें कैद करनेकी उताहूँ हुए।

१८३४ ई०के भीषण तूफानसे नेपालके बाढ़दखानेमें  
भाग नग गई जिससे रिसिडेण्टी टूट फूट गई और बहुत  
से लोग मरे।

१८३५ ई०में राजाने सेनापति मन्वरसिंहकी कल  
कत्त भीज दिया।

१८३८ ई०में रणजङ्गपडि जब महरानीसे नेपालके  
सेनापतिपद पर नियुक्त हुए, तब भीमसेन और मन्वर  
हताग हो पड़े। इस समय किसी तरह मन्वर पञ्चाव-  
केगरी रणजङ्गसिंहके निकट किसी विधेय परामर्शके  
लिये भीज दिए गए। कई वर्ष तक सँटा करके भन्तमें  
१८३८ ई०की राशने भीमसेनकी कैद कर लिया। कारा-  
गारमें ही भीमसेनने धामहत्या करके अपने हृदयका  
भार साधव किया था। नेपालके जिस वीरभेता से निक-  
ने प्रायः २५ वर्ष तक राज्य किया था, आज उसके  
मरने पर उसकी साथ पत्न्यन्त जघन्यभावसे काठमाण्डू-  
की रास्ती हो कर विष्णुमतोक किनारे सार्दे गई थी।  
भीमसेनकी मृत्युके बाद १८३९ ई० तक नेपालके  
शासन-विभागमें विधेय गडबडही होती रही और इसी  
सूचने धर्मजोके साथ युष्की खपना हुई। महाभक्ति

हजसन साहबकी सुट्टबलासे विपदकी समा चायहाए  
निर्वाचित हो गईं। उसी वर्ष बड़ी राशने रणजङ्गपडि-  
का पल से कर उर्होकी राज्यका प्रधान मन्त्री बनाया।  
उधर छोटी रानीने भीमसेनके भावीय मन्त्र-  
सिंहके पञ्चावसे लौटने पर उर्होकी मन्त्रिपद पर बरप  
किया। राजपुत्रय और संन्यदलने भी मन्त्रका पक्ष  
पवसम्बन्ध किया जिससे उर्होने निज बिक्रम द्वारा गीत्र  
ही उम पांडेव यको उत्साहित कर दिया।

इस समय नेपालके एकमात्र गौरवशाल, पट्ट तवक,  
बुद्धि और वीर्यशाली जङ्गबहादुर सामान्य से निकल्पमें  
पानी भविष्यत् उचतिका पाभास दे रहे थे। वे बाल-  
नरसिंह नामक नेपाली काञ्चीके पुत्र और राजमन्त्री  
मन्वरके निकट पाळीय थे। मन्वर इस बालककी  
भाषी समताके विषय पर विचार कर बहुत उर गए थे  
अंग्रेज रिसिडेण्ट हेनरी लारिन्स इस बालकको बुद्धिमत्ता-  
को विधेय प्रगसा करते थे।

जङ्गबहादुरने शासदल्य प्रधान राजमहिपियोंके साथ  
पहलम्बर करके १८४५ ई०के मई मासमें मन्वरकी मार  
हाला और आप राज्यके एकमात्र उर्होकर्ता हुए।  
किन्तु गगनसिंह प्रधान मन्त्रीके पद पर नियुक्त रहे।  
१८४६ ई०में जब सर हेनरी लारिन्सने नेपालका परिव्याग  
किया, तब मि० कलभिन नेपालके रिसिडेण्ट हो कर आए।

मन्वरकी मृत्युके बाद राजा और रानी दोनों  
जङ्गबहादुरके हाथमें कठपुतलीभे रहने लगे। इस समय  
राजमन्त्री गगनसिंह और फज्ज, प्रभृति राजकीय दन-  
के साथ रानी और जङ्गबहादुरका मतवैषम्य उपस्थित  
हुया। इस विवादसूत्रसे १८४६ ई०की १४वीं और  
१५वीं सितम्बरको नेपाल-राजधानीमें भीषण हत्या-  
काण्ड किया गया। राजा गडहरी रातमें भाग कर कल-  
भिन साहबकी शरणमें पहुँचे। इधर नेपालके अधि-  
कांग सभामन्त्र व्यक्ति जङ्गबहादुर और उनके सन्त्यदलने  
यमपुर भेज दिये गए। राजाने रिसिडेण्टीसे लौट कर  
देखा कि कोटभावादके चारों ओर नालेमें रक्त स्रोत बह  
रहा है।

जङ्गबहादुर आर्यदलसे सुट्ट हो कर नेपालके मन्त्र  
एक विधेय समतापक्ष व्यक्त समने जाने लगे। जिन वध

केवल अपने दाहिने हाथको पहारछेपे बाहर निकाल लेते हैं। दाहिने हाथ के साथ माथे पराधार्मिक भी चनाहत हो जाता है। ये सब योगाकर्तव्य वा पञ्चतन्त्रकी होती हैं। बहुतसे वीतवर्णको पोशाक भी पहनते हैं वस्त्राचार्य और मित्रकोकी पोशाकमें कोई प्रभेद नहीं है, केवल गिरीभूषा विभिन है। वस्त्राचार्यके मस्तक पर ताञ्त्रवर्णका कारुकार्यविशिष्ट सुकुट, कटिवन्धमें शास्त्रीय ग्रन्थ, हाथमें वस्त्रदण्ड और घण्टा, गलेमें १०८ दानोंको विचित्रवर्णकी स्फटिकमाला वा दूसरी तरहकी माला रहती है। मालाको एक छोरमें छोटा घण्टा और दूसरी छोरमें छोटा वस्त्र लटकता रहता है। मित्रकोकी मस्तक पर रङ्गवस्त्रका चन्वीय रहता है जिसे 'उद्दान'टोपी कहते हैं। इन टोपीके ऊपर एक पीतलका बुताम वा वस्त्र रहता है और सामनेमें एक चैत्यकी भाङ्गति रहती है। सामान्य सामान्य उत्सवोंमें तथा बाँड़ायात्रामें वस्त्राचार्य लोग भी उक्त प्रकारकी उद्दान टोपी पहनते हैं। मित्रकोके गलेमें सामान्य माला, दाहिने हाथमें 'मिचलिका' नामक दण्ड और बाएँ हाथमें 'पिण्डपात्र' नामक पीतलकी घाली रहती है। इसीमें लोग भिक्षादान करते हैं।

बाँडालोग जहाँ लगातार वास करते आए हैं वही विहार वा मठ कहलाता है। ये मठ विहार वा मठादि प्रधान प्रधान बौद्ध मन्दिरोंके निकट अवस्थित हैं। प्रति प्राचीनकालमें ये सब बग जो विहार वा मठमें बाम करते आ रहे हैं, उनमें एक ऐसी घनिष्ठता ही गई है कि उसके भद्रसार एक एक विहार वा मठवासियोंको एक एक सुद्रम्यदाय कहते हैं। इस प्रकार एक सम्प्रदायके मध्य कितने आचार व्यवहार और रीतिनीति बहमून हो गई है। उससे कौन किस विहार वा किस मठके व्यक्ति हैं यह सहजमें मालूम हो जाता है। बाँडालोग शास्त्रभावके, परियमी और उदाचारी होते हैं। किन्तु इनमें सभी बौद्ध धर्मके सन्वासी संघवा शैलीका आचार-व्यवहार प्रवृत्त भावमें प्रचलित नहीं है। तीर्थधर्ममें कहीं पर भी मठस्थानोंमाहार वा मादक व्यवहारका नियम नहीं है तथा मध्याह्नके पहली ही दैनिक आहार करनेका विधान है। किन्तु बाँडा

लोग उष समयके बौद्ध सन्वासीके स्थान पर अभिविक्त हो कर इन सब सामान्य नियमोंका भी प्रतिपालन नहीं करते। सुविधा या लीन पर ही ये लोग छाग और मध्व-मांस खाते हैं, अपने हाथसे छागोंकी काटते हैं, गराव खूब पीते हैं तथा दिनमें जब इच्छा होती, तभी दो चार बार खा लेते हैं। मद्यपायो ज्ञान पर भी ये लोग मतबली-ये नहीं खतते। अन्यान्य बौद्धगण बाँडालोगोंकी ठोक बाँडालोगोंकी तरह मानते हैं। बाँडालोगोंको दान देना हिन्दूके लिये जैसा पुण्यजनक है, बाँडालोगोंको भी दान देना नैपाली लोग वैसे ही समझते हैं। बाँडा भो धर्म-हृदय यात्रिसे इस प्रकारका दान लेनेमें इन्हेमा तैयार रहते हैं।

उदासगण वाणिज्यव्यवसायी हिन्दूके वैश्ववर्णके जैसे होते हैं। इन लोगोंमें सात श्रेणियाँ हैं। प्रथम श्रेणीका नाम उदास है। तिब्बत और चीनके माथ जितने व्यवसाय चलते हैं, सभी इसी उदासश्रेणीके हाथ हैं। इन सात श्रेणियोंका एक एक व्यवगत व्यवसाय है। लेकिन ये लोग बाँडालोगोंकी तरह व्यवसाय करनेमें उतने बाध्य नहीं हैं। ये लोग सभी महाजनो करते हैं, इसके अलावा मिथधातुके द्रव्यादि और खाद-मित्थित द्रव्यादि प्रस्तुत, प्रसारकी प्रदानिकादि और भास्कर कार्य, देवतामूर्तिनिर्माण, नित्यव्यवहार्य तैजसादि निर्माण, छोटा छोटा घर और इष्टकादि निर्माण आदि कार्य भी करते हैं। उदास लोग कहर बौद्ध हैं। प्रकाश रूपसे ये लोग हिन्दू देवदेवताको पूजा नहीं करते और न बाँडालोग द्वारा अपना पीरोहित्य हो कराते हैं। ये लोग धर्मकर्ममें यथाचार्यका उपदेय ग्रहण करते हैं। उदास लोग कभी बाँडा श्रेणीमें प्रवेश नहीं कर सकते, पर बाँडा इनके हाथ आहारव्यवहार करके इनके दलमें मिला सकते हैं। ये अपनी सात श्रेणियोंमें एक साथ आहार व्यवहार करते हैं, पर ज्ञापुत्रोंके साथ खान पान नहीं करते। किसी समय ये लोग बहुत धनी हो गए थे, व्यवसायकी हीनतासे इनकी अवस्था आज कल उतनी अच्छी नहीं है। सभी बाँडा लोग ही वाणिज्य व्यवसायमें बढ़े चढ़े हैं।

अन्यान्य सभी बौद्ध जापूत्रियोंमें गिने जाते हैं। इनको



रोतिनीति तथा आचार व्यवहार और भी विरुद्ध है। योनाचारकी भाव इन्होंने हिन्दूके आचार पवित्रस्थ-रूपमें मिला लिया है। हिन्दूके मन्दिरादिमें जा कर लक्ष्मणके समय ये लोग पूजा करते हैं। विशाह और अन्धवैदिक्रिया हिन्दूको तरह को जाती है। इनके सामाजिक कार्यके समय बन्धाचारके साथ साथ एक साम्राज्य पुरोहित रहते हैं। इनमें पाठ श्रेणियां हैं। सभी श्रेणियोंका संगत व्यवसाय है जिनमेंसे छः श्रेणियोंका कृषिसंक्रान्त कर्म, एकका जमीनका परिमाणदि और ग्राम एक श्रेणियोंका कर्म कुम्भकारवृत्ति है। कृषिजीवी छः श्रेणियोंका नाम ही जापू है। इनका स्थान उदान-के बाद ही आया है। तीस प्रकारके जापुओंमें उल्ल प्रकृत जापूगण सामाजिक विधानमें अन्यान्य श्रेणियोंकी अपेक्षा भयानाई हैं। प्रकृत जापू अपनी छः श्रेणियोंके प्रतिरिक्त दूसरी श्रेणियोंके साथ खान-पान तथा आदान-प्रदान नहीं करते। अन्यान्य २४ श्रेणियोंमें पट्टु पा, वस्त्ररञ्जनकारो, षडई, माली, टीकादार, अस्त्रचिकित्सक, नापित, निम्नश्रेणियोंका छीम, दुमाध, खासा, काठुरिया, हारपान आदि प्रधान हैं। इनमेंसे एक श्रेणियोंका नाम है 'सर्भि'—जिसका जातीय व्यवसाय तेल प्रस्तुत करना है। नेवारियोंमें अभी इन्हीं सर्भिके लोग धनी हैं। अभी इन्होंने उदासोंकी तरह महाजमी और वाणिज्य व्यवसायका पारम्भ कर दिया है। श्रेणियोंका विभिन्न बौद्धोंके हाथका हिन्दू लोग पानी नहीं पीते। लेकिन सर्भि आदि कई एक श्रेणियोंके लोग अभी नेपाल-राजसरकारके अनुपहसे जलाचरणीय हो गए हैं।

प्राज काल बौद्धोंमें ये सब जातिभेद क्रमशः दृश्यमान होत जा रहे हैं। इसके भिन्न दूसरा व्यवसाय पवलम्बन करनेसे बौद्धोंकी जातिशुद्धि होती है, ये सब व्यवसायी पाठ श्रेणियोंके लोग पतित कहलाते हैं। इनका दृष्ट कीर्ति दूरव क्या जोह क्या हिन्दू कीर्ति भी पहचान नहीं करे। इस पाठ श्रेणियोंके मध्य आपसमें व्यवहार नहीं चलता। इस देशके वर्णसाम्राज्योंकी तरह नीचश्रेणियोंके वर्ण गौडा लोग उल्ल नीच श्रेणियोंकी गणकता करते हैं। नेपाली बौद्धोंके मध्य ब्राह्मणोंकी प्रतिनिधि धर्म-व्यवसाय संशयदिशी और 'गति'के विधानानुसार

सामाजिक विषयकी सीमांमा होती है। किन्तु कोई विचारातीन विषय होनेसे वह गुर्खाओंके तादृशप्रधान ग्राजकराजगुरुके सामने पेश किया जाता है। इस विषयमें कोई शोध विचारक नहीं होते। राजगुरुके विचारालयता नाम धर्माधिकरण है और वे स्वयं धर्माधिकारी हैं। ये हिन्दूशास्त्रानुसार जातिगत विवादका विचार करते हैं। विचारमें धर्मदण्ड, कारादण्ड, प्राणदण्ड, कैसा ही पशो न हो, अपराधी शोध होने पर भी उसे हिन्दूशास्त्रानुसार दण्ड भुगतना पड़ता है। राजगुरु इस विषयमें बोधगायको और जरा भी ध्यान नहीं देते।

नेपाली बौद्धगण तिब्बतीय साम्राज्योंका प्रधानत्व अस्वीकार नहीं करते। ये लोग साम्राज्यकी श्रेष्ठ धर्मका प्रधान स्थान मानते हैं। किन्तु धर्मसम्बन्धमें दोनों देशोंमें कोई सम्बन्ध वर्तमान नहीं है। तिब्बतों लोग नेपाली बौद्धोंकी हिन्दूकी अपेक्षा कुछ अच्छा समझते हैं। वे लोग स्वयंभूनाथ, बोधनाथ और केशवचैत्यके दर्शन करने आते हैं, किन्तु नेपाली बौद्धधर्मकी कोई खबर नहीं लेते और न उनके उत्सावादिमें साथ ही देते हैं।

गणिके नियमानुसार प्रत्येक श्रेणियोंके प्रत्येक परिवारके कर्त्तव्यको एक बार करके सामाजिक व्यक्तियोंकी भोज देना पड़ता है। इस प्रकार एक एक भोजमें हजारों रुपये खर्च होते हैं। गरीबके लिये यह भोज बड़ा ही कठिन हो जाता है। जो इस भोजकी गठी दे सकता, वह जातिमें हीन समझा जाता है। वह हीनता जातिशुद्धिके समान है। फिर एक नियम ऐसा है जिसके अनुसार किसी परिवारमें किसीके मरने पर उस जातिके प्रत्येक परिवारमेंसे एक एक अनुपथको उस मृतके सत्कारमें योग देना पड़ता है। केशव इतना ही नहीं, उन्हें दादगाह पगोवान्तके दिन भी उपस्थित होना पड़ता है। नेपाली बौद्धोंकी मृतदेहका दाह होता है। प्रत्येक श्रेणियोंका दाहस्थान स्वतन्त्र है। पर है सभीका नदी किनारे ही। गणिके नियमका उल्लंघन करनेसे अपराधी स्वजातीय प्रधानोंके विचारमें धर्मदण्ड पाता है। भारी अपराध करने पर जातिशुद्धि भी होती है। जातिशुद्धि व्यक्तिकी मृतदेह राह पर डोढ़ दो जाती है।

नेपाली बौद्धका उपास्य विषय ।

नेपाली बौद्धगण आदि-चैतन्यको, आदिबुद्ध नामसे और आदिकारणरूपिणीको आदि-प्रज्ञा नामसे परिचित कर सर्वत्र देवदेवीके रूपमें उनकी उपासना करते हैं । आदिबुद्ध स्वयम्भू, ज्ञानमय उनके कर्त्ता नहीं हैं, वे हो सबीके कर्त्ता हैं । आदिकारणरूपिणी आदि-प्रज्ञा आदिबुद्धकी ही आश्रयस्वरूप हैं । इनके मतसे आदिबुद्ध या आदिप्रज्ञाकी कोई मूर्ति कल्पित नहीं हो सकती । किसी मन्दिरमें वा कारुण्यके मध्य इनकी कोई मूर्ति देखी नहीं जाती । नेपालका प्रधान बौद्ध-मन्दिर आदिबुद्धके नामसे उल्लेखित है । लोगोंका विश्वास है कि उन सब मन्दिरोंमें आदिबुद्धका आविर्भाव है ।

नेपालमें ज्योतिःकी ही आदि बुद्धका स्वरूप मान कर उनको प्रणामादि करते हैं । सभी ज्योतिः इस प्रकार पूजी नहीं जाती । सूर्य रश्मिसे निर्गत ज्योति ही आदि बुद्धज्योतिःरूपमें पूजित होती है । वे सूर्यलोकको भी सबीकी ज्योति मानते हैं ।

बौद्ध लोग त्रिमूर्ति वा त्रिरत्नकी पूजा करते हैं । बुद्ध, धर्म और सद्द यही त्रिमूर्ति त्रिरत्न नामसे प्रसिद्ध है । सामान्यतः बुद्ध और सद्द पुरुषरूपमें और धर्म स्त्रीरूपमें कल्पित और चित्रित होते हैं । स्त्रीमूर्ति धर्म ही प्रज्ञादेवी, धर्मदेवी और उपास्यदेवी नामसे मशहूर है । नेपालमें त्रिरत्नसेवाका विशेष आधिक्य देखा जाता है । प्रायः सभी मन्दिरोंमें त्रिरत्न वा त्रिमूर्ति खोदित है, मनुष्य इसको पूजा करते हैं । बहानेके लोगोंके मन्दिर दरवाजेके ऊपर चौखट पर वा प्राचीरमें, शयनगृहकी दीवारमें, बुद्ध वा बोधिसत्वके मन्दिरमें यह त्रिमूर्ति देखनेमें आती है । इस त्रिमूर्तिकी छोटी और बड़ी गाना प्रकारकी प्रतिमा होती है । त्रिमूर्ति-की तीनों मूर्तियां प्रायः एक दूसरेसे सटी रहती हैं । कहीं मध्यस्थलमें बुद्ध, कहीं धर्ममूर्ति खोदित है । वे त्रिमूर्तियां प्रफुल्लित पद्मके ऊपर बैठे हुई हैं । मध्य स्थलकी मूर्ति ही साधारणतः बड़ी होती है । बुद्धमूर्ति प्रोढ़ पुरुष, धर्ममूर्ति युवती रमणी और सद्द किगोर-वयस्क पुरुषरूपमें कल्पित होते हैं । त्रिरत्नमें मधोभ्य

अथवा शम्भुसिंह बुद्धकी शक्ति ही मानी जाती है । धर्मकी मूर्तिके चार भुजाएँ होतीं जिनमेंसे दो ऊपरकी और दो नीचेकी और रहती हैं । ऊपरके दो हाथोंमें पद्म और अथमाता तथा नीचेके हाथोंमें पुस्तक रहती है । ऊपरके एक हाथका प्रहृष्ट दूसरे हाथकी तर्जनीसे लुटी रहती है । कहीं तो बोधिसत्वकी मूर्ति हो सद्दमूर्तिके रूपमें मानी जाती है । कोई कोई सद्दमूर्ति चतुर्भुज और कोई मूर्ति द्विभुज भी देखी जाती है । इनके दो हाथ पुटान्कलिवद् होती, एक हाथमें मणिगर्भपद्म वा पुस्तक और दूसरे हाथमें मणिनिर्मित जयमाला रहती है ।

प्रथमतः आदिबुद्ध और आदिप्रज्ञाकी उपासना, पीछे त्रिरत्नपूजा, तब ध्यान और मानवभेदसे द्विविधयेषीके बुद्ध तथा उनकी शक्ति एवं बोधिसत्वकी उपासना प्रचलित है ।

ध्यानबुद्धकी संख्या पांच ( किसीके मतसे दो ) और मानव बुद्धकी संख्या छान ( किसीके मतसे नौ ) है । ध्यानबुद्धकी शक्तियां उनकी पत्नी और बोधिसत्वगण उनके पुत्र माने जाते हैं । ध्यानबुद्धकी संज्ञा वे हैं— शक्ति, बोधिसत्व, गुण, भूत, इन्द्रिय, आयतन, वाहन, वर्ण, चूड़ा और सुद्राक्षतन्त्र ।

मानवबुद्धकी तारागण पत्नी हैं सद्ये, लेकिन बोधिसत्व पुत्र हैं, शिष्य नहीं । ये सभी वीत वा स्वर्णवर्णके हैं, भूमिस्पर्श सुद्राविगिह है, सिंहवाहन है । जो पांच ध्यानबुद्ध मानते हैं, वे तन्त्रके मतसे दक्षिणचारी और जो छः ध्यानबुद्ध मानते हैं, वे वामाचारी कहाने हैं ।

७म मानवबुद्ध शम्भुसिंहको शरणपूजा भी नेपालमें प्रचलित है । इसमें पद्मलक्ष्मिचक्र है, यथा श्रीवर्ष वा कौस्तुभ चक्र, पद्म, ध्वज, कलस, चामर, छत्र, मत्स्य-युगल और शङ्ख ।

मञ्जुश्री बोधिसत्व नेपालियोंके मध्य विशेष उपास्य हैं । ये मञ्जुश्री, मञ्जुवीप और मञ्जुनाथसे प्रसिद्ध हैं । नेपालमें प्रायः सभी जगह इनका मन्दिर है । स्वयम्भूनाथके निकटस्थ मन्दिर ही प्रधान है । ये नेपालियोंके मतसे विज्जनायक तथा रक्षाकर्त्ता माने जाते

है। जितने नेपाली गिम्बजीविग मरलतो धोर विष्णु-कर्मा को तरह इनकी पूजा करते है। इनकी दिभुज धोर चतुर्भुज प्रतिमा देखी जाती है। दिभुज प्रतिमा-को एक हाथमें खड्ग धोर एक हाथमें पुष्पांक है। चतुर्भुज प्रतिमाके पन्च दो हाथोंमें तोर धोर धनुस् है। इनके मन्दिरके सामने मण्डल नामक एक खण्ड पत्थर रहता है जिम पर मञ्जु-ओ चरण-चिह्न लकोण देखा जाता है। मञ्जु-ओ चरणके गुल्फ देगमें चक्षुचिह्न है। बम्पादेवी पर्वत पर इनकी एक पत्नी वरदा ( लक्ष्मी ) धोर फुलधोया पर्वत पर भोवदा ( सरस्वती ) नामक दूसरी पत्नीका मन्दिर है।

नेपाली धोहोंमें हिन्दूका शंवाचार धोर तन्वाचारके मिश्रित हो जानेसे बने धर्मका गेदेवदाता धोर तान्त्रिक उपास्य योनिनिद्रादिकी उपासना करते है। नेपालमें स्वयम्भुनाथ ही पादिबुद्धरूपमें धोर शुद्धेश्वरी पादिप्रसा-रूपमें पूजित होती है। ध्यानोबुद्धोंमें शमिताम, तत्प्राणि धोर पुत्र एवं मानवबुद्धोंमें शाक्यमिह एवं बोधिसत्व मञ्जु-ओ सबकी अपेक्षा प्रधान उपास्य है। इसके पनावा बुद्धचरण, मञ्जु-ओ चरण, विकीर्णभृति विग्रह भावमें पूजित होते है।

नेपाली बौद्ध धातुमण्डल नामके एक धोर प्रकारके चिह्नकी पूजा करते है। धातुमण्डल दो प्रकारका है, यक्ष धातुमण्डल धोर धर्म धातुमण्डल। यक्ष धातुमण्डल बेरोचबुद्धके माथ धोर धर्म धातुमण्डल मञ्जु-ओ बोधि-सत्त्वके माथ मंघित है। बड़े बड़े बौद्धमन्दिरोंके निकट इन सब धातुमण्डलोंकी प्रतिष्ठा है। ये सब गोलाकार वा षटकोणी २२ दस सोटे पत्थरखण्ड पर बने होते है। उनमें पद्मचिह्न खोदित रहते है। प्रतिमा बैधानके लिये वा चरणचिह्न खुदवानेके लिये इस प्रकारके मण्डलकी आवश्यकता होती है। जैसे बुद्ध वा बोधिसत्त्वोंके पवित्र स्थानादिमें या उनके शवशेयके ऊपर चैत्य बना होता है, वैसे ही देवताके पवित्र स्थानादिके ऊपर बड़े बड़े धातुमण्डल प्रतिष्ठित होते देखे जाते है। बड़ा बड़ा धातुमण्डल मन्थ वा वेदिके ऊपर स्थापित होता है। इन सब मण्डलोंमें बौद्ध देवदेवियोंको मूर्ति धोर चिह्नादि च्छित होते है। धर्म धातुमण्डलमें २२२

प्रकारके चिह्नोंमें कम नहीं रहते। समस्तरी क्रम-सङ्घट्टके मध्य पृथक, पृथक, मास पर मंघोक्त बुद्ध-लानुसार एक एक प्रकारका चिह्न खोदित रहता है। वज्रधातुमण्डलमें ५०१० प्रकारके चिह्नोंसे षड्विध चिह्न नहीं रहते। इन दोनों प्रकारके मण्डलोंके चिह्नादिकी यथंला एक-नो नहीं होती।

इसके अलावा हिन्दूके दिक्पालोंकी तरह धोहोंके भी उपास्य चार देवराज है। ये सब भी दिक्पाल है। खड्गपानि खड्गराज पश्चिमाधिपति, चैत्यधारी चैत्यराज दक्षिणाधिपति, धीशाणणि धोरराज पूर्वाधिपति धोर ध्वजधारी ध्वजराज उत्तराधिपति माने जाते है।

गिषमार्गी हिन्दुधोंके निम्नलिखित देवता क्वा हिन्दू यवा धोह दोनो सम्प्रदायके उपास्य है,—

भैरव धोर महाकाल, भैरवी वा काली, गणेश, इन्द्र धोर गरुड। भैरवका मुख मत्स्येन्द्रनाथके रथके मम्बुल भागमें संलग्न रहता है। बौद्ध लोग इस मुल्लकी यवापि रथका पलदार विग्रह मानते है, तो भी परयन्त पवित्र समर्थ करके उसे एपिताद्, विहारके मध्य रहते है। भैरवका दैत्यवगारोही विग्रह धनेक बौद्ध मन्दिरोंके भी सामनेके मन्दिरके रक्षाकर्ता वा द्वारपालरूपमें देखे जाते है। महाकाल गणाधिपति गणेशके गणभुक्त होने पर भी इनकी प्रतिमा बौद्धमन्दिरके अभयवाथमें देखी जाती है। मञ्जु-ओमन्दिरके चरणमण्डलके एक पार्श्वमें गणेश धोर एक पार्श्वमें त्रिशूलधारी महाकालकी मूर्ति है। महाकाल प्रतिमा ही धनेक स्थानोंमें वज्रपाष चोधिपत्त्वके विग्रहरूपमें पूजित होती है।

मिह्रिदाता गणेशकी बौद्ध लोग बुद्धिदाता मानते धोर यदाभक्तके साथ उनको पूजा करते है। पद्मपतिर्षी-के दण्डदेव मन्दिरके निकट शयोक्कक्या चारुमतीका प्रतिष्ठित एक बहुत प्राचीन गणेश-मन्दिर है। 'बाह-वोधि' विहारके बांटापुरोहितगण ही इस गणेशकी पूजा करते है।

काली वा भैरवी मूर्ति किधी बौद्धमन्दिर वा उसके निकट देखनेमें नहीं पाती। पर हाँ, उनके को कतक मन्दिर है, बौद्ध लोग वहाँ जा कर पूजा करते है। धनेक कालीमन्दिरमें बांटा पूजकका काम करते है।

इन्द्रकी अपेक्षा इन्द्रवज्रकी बौद्ध लोग पवित्र और उपास्य देवता मानते हैं। बौद्धशास्त्रमें लिखा है, कि बुद्ध देवने एक समय इन्द्रकी परास्त कर उनका वज्र जयचक्रस्वरूप छोन लिया था। वज्र मुटानियोंको मध्य 'दोर्जे' शब्दमें प्रसिद्ध है।

स्वयम्भूतायकी मन्दिरकी सामने धर्म धातुमण्डलके ऊपर ५ फुट लम्बा एक वज्र प्रतिष्ठित है। पसोभ्य-बुद्धका चिह्न वज्र है। एक वज्रके मध्यभावमें घोर दूधरेके नियंकाभावमें स्थापित होनेमें यह विश्ववज्र कहलाता है। यह विश्ववज्र अमोघसिद्ध बुद्धका चिह्न है। हिन्दू लोग लिङ्ग और योनिकी जिस तरह देवदेवीको प्रतिनिधि रूपमें पूजा करते हैं, उसी तरह नेपालमें वज्र और घण्टा बुद्ध तथा प्रज्ञादेवीके प्रतिनिधिरूपमें पूजित होता है। हिन्दूघण्टेकी मुष्टिभाग पर जिस तरह गरुड़, धनन्त, पद्म आदि मूर्तियाँ होती हैं, बौद्धघण्टेकी मुष्टिभाग पर भी उसी तरह प्रज्ञा वा धर्मका सुख अर्द्धित दिखा जाता है।

हारिती (श्रीतला) और गरुड़की मूर्ति प्रायः सभी बौद्धमन्दिरोंमें देखी जाती है। बौद्ध गरुड़की मूर्तिके गलेमें सर्पमाथा, छाद्यमें सर्पवलय और चक्षुमें मृत सर्प तथा दोनो पदके नीचे पर्वतारो सर्पाकार नागकन्याकी मूर्ति है। अमोघसिद्ध बुद्धका वाहन भी गरुड़ है। प्रायः सभी बौद्धमन्दिरोंमें घोर वैष्णव देवदेवीके मन्दिरमें गरुड़मूर्ति देखनेमें आती है। गरुड़का स्वतन्त्र मन्दिर नहीं है। लिङ्ग और योनिपूजा भी बौद्धोंमें प्रचलित है। वे लोग लिङ्गको आदिबुद्ध वा स्वयम्भूपन्नका पुष्पभाग और योनिकी स्वयम्भूपन्नका मूलस्थ आदि निर्भर वा गुह्येश्वरोका स्थान मानते हैं। बौद्धोंमें अधिकांश इनके उपासक नहीं हैं। हिन्दू शिवलिङ्गके गात्रमें बौद्धलोग बौद्ध देवदेवीकी मूर्ति अन्वेषण कर उनकी पूजा करते हैं। लिङ्गमस्तकको भी उन्होंने चैत्यके आकारमें बदन दिया है। इस प्रकार खोदित लिङ्गकी विधेय छच्छट्टिसे परीक्षा किये बिना सङ्गर्जमें उसे हिन्दू शिवलिङ्ग नहीं कह सकते। हिन्दूतान्त्रिकोंके उपास्य त्रिकोण बिहको बौद्धलोग कभी तिरस्कृत चिह्न, कभी गुह्येश्वरी आदि देवियोंके चिह्न मानते हैं। हिन्दू-तान्त्रिकके अङ्गमें

यन्त्रधारणको तरह बौद्ध लोग भी यह त्रिकोण यन्त्रधारण करते हैं।

बौद्धलोग जिस तरह हिन्दूदेवदेवियोंकी उपासना करते हैं, उसी तरह हिन्दू लोग भी अनेक बौद्धदेवदेवियोंको हिन्दूदेवदेवीकी प्रतिमा समझ कर उनकी पूजा करते हैं। ये लोग गुह्येश्वरीकी भगवतीका स्वरूप मानते हैं। मञ्जुश्रीकी हिन्दू लोग स्त्रीदेवता सरस्वतीरूपमें पूजा करते हैं। उनकी दो पत्नी भी लक्ष्मी सरस्वतीके रूपमें हिन्दूके निकट मान्य हैं। वंशीबुद्ध प्रतिमाभुद्ध और विष्णुके प्रथमारूपमें गण्य होते हैं।

एतद्भिन्न स्वयम्भूनाथ पर्वत परके शीतलादेवीके मन्दिरमें हिन्दूकी तरह बौद्ध लोग भी उन्हें हिन्दूदेवी समझ कर ही पूजा करते हैं।

नेपाली शिवमार्गी हिन्दूमेंसे कितने ही तान्त्रिक शैव हैं। शाक्तको संन्या बड़त छोड़े है। हिन्दूओंको उपास्य देवदेवीका विशरण इसके पहले ही पूजा और उक्तवादि-के मध्य लिखा गया है। नेवार देखो।

नेपालक ( सं० ह्री० ) नेपाल स्वार्थ कन् । १ नेपाल । २ तान्त्रधातु, ताँवा ।

नेपालकम्बल ( सं० पु० ) कुपास्य चित्तकम्बल ।

नेपालजा ( सं० स्त्री० ) मनःशिला, मैनसिल ।

नेपालनिम्ब ( सं० पु० ) नेपालोद्भवो निम्बः । नेपाल-देशोद्भव निम्ब, नेपालकी नोम, एक प्रकारका चिरयता । पर्याय—नेपालं, छपनिम्ब, च्वरान्तक, नाडोतिल, निद्रारि सन्निपातरिपु । गुण—श्रोतल, उष्ण, लघु, तिक्त, योगावाहि, प्रत्यक्ष कफ, पित्त, पक्ष, शोफ, छण घोर च्वरनाशक ।

नेपालमूलक ( सं० स्त्री० ) इक्षिकन्द सह्य मूलभेद, इक्षिकन्दके समान एक कन्द ।

नेपालिका ( सं० स्त्री० ) १ मनःशिला, मैनसिल । २ शीमलता ।

नेपाली ( हि० वि० ) १ नेपालका, नेपालमें रहने या होनेवाला । २ नेपाल सम्बन्धी । ( पु० ) १ नेपालका रहनेवाला पादमी । ( स्त्री० ) ४ मनःशिला, मैनसिल । ५ नेवारीका पोधा ।

नेपियर ( सर चार्ल्स जेम्स )—एक अङ्गरेज सेनाध्यक्ष । इनका जन्म १७२२ ई०में हुआ था । ये एडमिरल नेपि-

घर (Admiral Napier) के प्रतिभ्राता थे। १८६८ ई० में चाइरिस-विद्रोह के समय वारह वर्ष की अवस्था में वे २२ नं० रेजिमेंट के पताकावाहक (Ensign officer) के पद पर नियुक्त हुए और १८६६ ई० में सर जॉन मूर को सहायता के लिए ५० नं० पदातिक सैन्य में अध्यक्ष हो कर रयेन गए। इसी समय कश्मीर की लड़ाई में इनके पंजर की हड्डी टूट गई और वे बन्दो हुए। बाद इंग्लैण्ड लौट कर एक वर्ष तक वे बेकाम बैठे रहे। इसी समय इन्होंने सामरिक विभागीय नियमावली, उपनिवेश और पायरोलैण्ड की अवस्था के विषय पर एक पुस्तक लिखी। बाद १८७८ ई० में वे सखेर-मेनादल में मिल गए और स्पेन के विरुद्ध पुनः युद्धवाता कर दी। किन्तु इस वार इन्हें गहरी चोट लगी। इसके बाद १८९३ ई० में वे उत्तर-अमेरिका के सामरिक कार्यों में चले गए और १८८१ ई० में भारत को सर्वप्रधान मेनाध्यक्ष (Commander-in-chief) हो कर आए। लार्ड एनेन-यरा जय मन्वर्ग-जनरल हो कर भारतवर्ष आए थे, तब इन्होंने उन्हें अफगान युद्ध के लिए सलाह दी थी। अफगानिस्तान में अहरेजों की दुरवस्था देख कर सिन्धु प्रदेश के अमीरगण उनको अधीनता से छुटकारा पाने के लिए तत्पर हुए। इसी समय यहांके रिमिडेण्ट मेजर घाटरम (सर-जैम्स) अमीरों के बौद्धत्व से डर गए और राज-प्रतिनिधि एनेनयरा को इसकी शर दी। इन्होंने उक्त प्रदेश को सामरिक और राजनैतिक कार्यावली को देखरेख के लिए नेपियर को आदेश दिया। नेपियरने सिन्धु प्रदेश जा कर पहले की लिखी हुई गत्त में कुछ छेद किए कर यहांके अमीरों को अपने वश में कर लिया।

१८८१ ई० की ८ वीं जनवरी को नेपियरने महर्देश्य इमामगढ़ पर आक्रमण किया। अमीरगण पहले से ही उनकी शठकारिता की बात जानते थे। पतः से युद्ध की कोई घोषणा पाने से पहले ही इमामगढ़ पार हो कर हैदराबाद की ओर चले गए, नेपियरने भी दुर्ग को आत और उसे ध्वंस कर अमीरों का पीछा किया। इधर हैदराबाद सरकार के अमीरगण एक ही कर घाटरम के साथ

अधिका प्रस्ताव कर ही रहे थे, कि इन्होंने नेपियर के हैदराबाद की ओर पाने को खबर सुनी। इस समय अरको मारे बिना भागे पीछे सोचे इन्होंने सन्धिपत्र पर अपने अपने हस्ताक्षर कर दिए। अमीरों ने तो हस्ताक्षर उभो समय बना दिए पर उनके अधीनस्थ को बेलूच सरदार थे, इन्होंने अहरेजों को वश्या स्वीकार नहीं की। १८८१ ई० की १५ वीं फरवरी को इन्होंने दल बांध कर रिमिडेण्ट पर आक्रमण कर दिया। मेजर घाटरम हैदराबाद के वासभवन का परित्याग कर भाग गये।

सर चार्ल्स नेपियर यह खबर पाने ही चांगवत्सा हो गते। इन्होंने १० वीं फरवरी को बेलूचों पर आक्रमण किया। मियानी के निकट दोनो दल में घमसान युद्ध हुआ, लेकिन बेलूच दल पराजित हो कर रणस्थान से नौ दो ग्यारह हो गए। नेपियरने हैदराबाद पर अधिकार जमाया और अमीरों के अल्लखारिफ अपने देखभल कर लिए।

पुनः उभो साल की २२ वीं मार्च को बेलूच-दल अमीर गीर महर्षादके अधीन हैदराबाद के निकट वर्षी दुर्ग नामक स्थान पर अहरेजों के विरुद्ध भा उठे, किन्तु इस युद्ध में भी इन्होंने हार हुई। युद्ध में नेपियरने बड़े बौरता दिखाई थी। यद्यपि ये सिन्धु प्रदेश के अधीन कई एक बेलूच सरदारों को अपने वश में लाने में सफल हुए थे, तो भी बल्ल गण्डय, मरी, गुगटो पादि उत्तर-पश्चिम सीमांतवासी कुछ बेलूच जातियों ने इनकी अधीनता स्वीकार नहीं की। वे उस समय के पारस्य और सिन्धु अमीरों के प्रभाव की अपेक्षा कर उन लोगों के राज्य में लूट पाट मशाय करते थे। फिर क्या था, नेपियर जब बुधपाय बँडनेवाले थे। इन्होंने १८८५ ई० की १३ वीं जनवरी को उनका सामना किया। विद्रोही दल के नेता सरदार बीजा भी युद्ध में पराजित हो कर बन्दो हुए। अन्त में यहांके विद्रोह ने शान्तभाव धारण किया। बाद १८८७ ई० में नेपियर इंग्लैण्ड गए और पुनः १८८८ ई० में सिन्धु युद्ध के समय भारतवर्ष आए थे। इस युद्ध में भी इन्होंने अमम साहस के साथ अपने बुद्धि और रणचतुर्य का परिचय दिया था। गोविन्दगढ़ के ६० नं० द्वितीय पदातिक दल के १८८८ ई० में विद्रोह होने पर, नेपियरने उन्हें दमन किया तथा

सर्वोको बरखास्त करे' उनको जगह पर .. गोर्खाको रखा। यहाँ पर नेपियर अपने जीवनमें उदारताका लक्षण दिखा गए हैं। उन्होंने राजद्रोहियोंको प्राणदण्ड न दे कर सर्वोको दयाका पात्र समझ छोड़ दिया। उनका यह विश्वास था, कि अहंरैज-राजके भविचारमे ही प्रजावर्गके मध्य राजभक्तिका उच्छेद देखा जाता है।

इस निर्भीक सेनापतिने जीवनके अन्तिम समय तक भारतवर्षके विषयमें कालयापन कर पोर्टस्माथके निकटवर्ती फ्रांज़ेण्ड नगरमें १८३५ ई०को मानव-सीला संवरण की। इनको इन्तलिपि अत्यन्त ही सुन्दर होती थी। इनकी भाषा और शब्दविन्यास देख कर अचमत्कृत-हीना पड़ता था। ये बड़े ही धीरवृत्तिके मनुष्य थे और मर्यादावादीकी और इनको तनिक भी आसक्ति न थी।

नेपोलियनबोनापार्ट—जगद्विख्यात वीर। १७६८ ई०की १५वीं अगस्तको नेपोलियनने कर्मकांडोपके प्रधान स्थान एंजिसिओ नामक नगरमें जन्म ग्रहण किया। नेपोलियनके जन्म लेनेके दो वर्ष पहले ही फ्रांसीसियोंने एंजिसिओ पर अधिकार जमा लिया था। सुतरां नेपोलियन फ्रांसीसीको प्रजा हो कर उत्पन्न हुए थे। आपके पिता चार्ल्स बोनापार्ट व्यवहारजीवी थे, किन्तु फ्रांसीसियोंने जब कर्मका पर चढ़ाई कर दी, तब उन्होने बकालती छोड़ कर सैनिकवृत्तिका अवलम्बन किया था और यास्कल पेयलोडे साथ मिल कर देगके लिये यथासाध्य युद्ध करनेमें एक भी क्षण रुक न रह्यो। जब नेपोलियन माइगर्भमें थे उस समय उनके मातापिता एक स्थानसे दूसरे स्थानमें भाग कर स्वाधो-नतारवाकी विग्रह घेरा कर रहे थे। अन्तमें कोई उपाय न देख उन्हें फ्रांसीसीकी भवोनता बाध्य हो कर स्वीकार करनी पड़ी। आपके पिता सम्भ्रान्त वंशोद्भव थे। आपकी माता लिटिसिया रेणोवल्दिनी जैसी सुन्दरी थीं, वे ही सदृशप्रमालिनी भी थीं। वंशमर्यादामें उनमेंसे कोई भी हीन न थे।

आप अपने पिताके हितोय पुत्र थे। आपके चार भाई और तीन बहन थीं। किन्तु बचपनसे ही आप बड़े भाईके ऊपर अपना प्रभुत्व जमाने लगे थे।

यैश्वकामने पिताकी गोद पर बैठ कर नेपोलियन कर्मिकावाशियोंके बोरखको कहानो सुना करते थे। फ्रांसोसियोंके साथ युद्धमें पेयलोने जेना प्रविचलित साहस, अदम्य उल्हास और अद्भुत वीरत्व दिखलाया था, उसे सुन कर बालक मोहित होते थे। पितामाताएक एक स्थानसे दूसरे स्थानमें भागने और उनको कष्टसहिष्णुताका परिचय सुन कर वे समझते थे, कि उन समय यदि वे विद्यमान रहते, तो कभी सम्भव नहीं था कि फ्रांसोसी कर्मिकाको जीत सकते।

बचपनमें ही नेपोलियनको गिट्टिविद्योगुदुःखका अनुभव करना पड़ा था। पछे आपकी माता आपका तथा अन्यथा सन्तानोंका यत्पूर्वक स्वास्थ्यपान और शिक्षाप्रदान करने लगे। बचपनमें आप बड़े मटखट और पश्मिानी थे। माताके सिवा कोई भी आपको शासन नहीं कर सकते थे। वे भी वचपयोगको अपेक्षा मोठी मोठी बातोंसे नेपोलियनको सुषय पर लानेकी चेष्टा करती थी। यहाँ समझ वार लिटिसिया पुत्रका यथैत आदर नहीं करती थी। पीछे नेपोलियनने भी स्वीकार किया था कि उनकी माताने उनकी चरित्रगठनको सुधारा था। आपको मातृभक्ति प्रति प्रबल थी।

फ्रांसोसियोंने कर्मिका जीत कर यह नियम बनाया था, कि सम्भ्रान्त वंशोद्भव कुक्षालकीको यहाँसे प्राप्त से जा कर उन्हें सामरिक विद्याको शिक्षा दी जायगी। कर्मिकाके शासनकर्त्ता काउण्ट मारकोफका बोनापार्ट-परिवारके साथ अच्छा सहाय था। इनमें दूसरे दूसरे बालकोंके साथ नेपोलियनको भी उन्होंने प्राप्त भिजना चाहा। इस समय आपकी उमर केवल छह वर्ष की थी। जिस समय आप माताके निकट विदाई लेने गए, उस समय आप फूट फूट कर रोने लगे और बहुत व्याकुल हो उठे। प्राप्तमें पहुँच कर जेन नामक स्थानके सामरिक विद्यालयमें आप भर्त्ती किये गये। उस विद्यालयमें प्राप्तके अश्ववंशोद्भव भूएथामे और धनियोंके लड़के पढ़ते थे। वे सोम विदेशी शासककी पोयाक खादि देख कर उनकी हँसी उड़ाने लगे। बचपनसे ही नेपोलियन निर्रनप्रिय और चिन्ताशील थे। अभी विद्यालयमें आ कर दक्षिणसे पाठाम्यास करने लगे। धनी

सड़कों का साथ करना प्रायः करा भी पन्द्रह नहों करने के और न उनको तरफ हटा ममय नट करना हो चाहते थे। विनामिता के चाप कहर दुश्मन थे। यही कारण था कि विनामित्रिय धनो मन्तानोंको चाप नोच निगाहसे देखते थे। एकाग्रचित्तसे पाठान्यास करके चाप सर्वदा परोषा-मैं सर्वोत्थान पाते थे। परीक्षाका साफल्य देख कर धनो-मन्तान चापकी खूब खातिर दारने लगी और जहरत पड़ने पर चापकी अपना दक्षपति भी बनानो थो। नेपो-लियन उन्हें साथ करके यफ का किना बनाने और यफ को गोलागोली करके दुर्गरका और प्राक्रमण-गिवा करते थे। विद्यान, इतिहास और पद्यशास्त्र चापके प्रिय-पाठ्य थे। दर्शन, न्याय चाटि तर्क प्रधान शास्त्र पर इनकी उत्तनी रुचि न थी। चरितपाठ और होमरके काव्यमें इनका प्रगाढ़ प्रनुराग था। जर्मन भाषा सीखने में इन्हें पानन्द नहों मिलता था। चापकी हृदयलिपि पच्छी नहों होती थी। १७७८ ई० तक ग्रीनके विद्यालयमें पढ़ कर चापने हुत्ति साम की। पीछे चाप पारोके राजकीय विद्यालयमें भेजे गए। वहाँ केवल एक वर्ष तक ग्रैप परोषामें प्रशिक्षण के साथ उत्तीर्ण हुए। घाट प्राय एक दस गोलान्दाज सेनाके लेफ्टनेण्ट बनाने गए। सोलह वर्षके सड़केके लिये यह कम गौरवकी बात नहों है।

नेपोलियन कुछ दिन तक सेनादलमें काम करके एक ममय हुदे ले कर कर्मिका गए। माता और भ्राता-भतिमियोंके साथ मिन कर चापको पानन्दका पारावार न रहा। एक समय इन्होंने पिटम्बका घियलोक के साथ सुलजात की। घियनीने नेपोलियनकी तीक्ष्णबुद्धि और अविश्रान्तता परिचय पा कर चापहपूर्वक उन्हें चापने मतमें लानेकी कोशिश की। किन्तु नेपोलियन यथापि घियलोककी भक्ति और सम्मानकी दृष्टिसे देखते थे, तो भी उनको मय बातोंमें इन्होंने साथ न दिया। कुछ पुरो हो जाने पर नेपोलियन पुनः सेनादलमें चान मिले। इस सेनादलकी लड़ लड़ा पर रहनेका हुक्म मिलता था, तब इन्हें भी यही जाना पड़ता था। वे पनाना नैतिकवर्गधारियोंकी तरफ हटा पामोर्टमें समय नहों दिताते थे। जहाँ लड़ने जाते, वहाँ वहाँ के कति-

यामियोंके मिल कर उनको रीतिनीति और पवस्थाका विषय जाननेकी चेष्टा करते थे।

१७८८ ई०में फरामोदेशमें राष्ट्रविप्लव उपस्थित हुआ। फ्रांसकी प्रजा प्रचलित शासननीतिके विद्वद पच्छो तरफ उट गई। इस समय घोषो वंशपर फ्रांसमें राज्य करतें थे। राजा १६वें सुदके शान्तासमावसे और प्रजाहितो थे। पन्द्रह वर्षके व्यादा में राजविंशासन पर बैठ चुके थे। उनको चेष्टा और सहायतासे अमेरिकाका युवाशय पंतरीजी पधोनताका त्याग कर स्वाधीन हो गया था। उनसे पूर्व वर्षों राजाओंके पनेक व्ययसाध्य युद्धकार्यमें लगी रहनेके कारण राजकीय छात्री होता पा रहा था।

१६वें सुदके राजत्वकालमें मन्त्रियोंके चट्ट-परिचय करने पर भी राजकीय पूरा न हो सका। पन्तमें सभा कर जनसाधारणके कर्त्तव्यनिर्णयकी व्यवस्था हुई। प्रजाने प्रचलित शासननीतिका परिवर्तन करगा चाहा। उन्होंने देखा कि फरामो यमनीवियोंके पमा-नुतिक परिचय करने पर भी उनका पेट नहों भरता—पधिकांग कर-भारसे पीड़ित है। फरामो जर्मोदरभो वृष्ट सुगे तरङ्गे प्रजाके साथ पैगं चार रहे हैं। यह सब देख कर सचानुभूतिका सूत्र दिनों दिन क्षिय होने लगा। ऐसो ज्ञानतमें प्रजाकी विद्वे-रूपी पन्तमें धनो और भूस्वामियोंके भस्मीभूत होनेकी सम्भावना थी। उन्होंने राजाको ग्रहण लो। राजाने उन्हें समयान करनेमें पवनी पचमयता प्रकट की। राजा यदि प्रजाके मतानुसार चलते, तो सम्भव था कि कोई उपद्रव नहों उठता। राजसमतकी कुछ साधयता पवश्य होती। जतीय सभामें सर्वप्रधान राजनैतिक मन्त्रा मिरावों यदि जोचित रहते, तो निश्चय था कि राज-समता पिलुग न होती। उनको मृत्यु होनेसे ही राजपच-मितास्य दुर्वन हो गया। राजाको पवशिलास-दमितार्क शिपमें राजा, रामो दीनो हो पयमोमित, निरुद्धीत और बन्दी हुए। फ्रांसका राजनैतिक प्राकाग मीवाच्छक हो गया। यूरोपके पनान्य राजाओंने प्रजायुक्तिके विकास पर प्रमाद समझा। अश्लीयराज सुदके घाले थे। उन्होंने पुसोय और साडिनीयाके राजाओंको अपने मतमें ला कर फ्रांसके विद्वद-सुदवोपवा कर दी। फरामोकी

लोग भी लड़ाईको तैयारियां करने लगे । राष्ट्रीय और  
 प्रुभीय सेना पराजित हो कर नौ दो ग्यारह हो गई ।  
 फ्रांसिसियोंको जब मालूम हुआ कि उनके राजा भग  
 कर देशके गवर्नरोंके माध्यम से देनको जा रहे हैं, तब  
 उन्हेंने राजा रामी दोनोंको देशके गवर्नर समझ कर उन्हें  
 फाँसी दे दी । तदनन्तर फ्रान्समें साधारणतन्त्र स्थापित  
 हुआ । इधर यूरोपीय राजगण युग युद्धका आयोजन  
 करने लगे । चारों ओरसे फ्रान्स आक्रान्त हुआ । देश  
 भरमें भराजकता फैल गई । जनता राजनीतिक धमता  
 की सामसे उत्कृष्टप्राय हो गई और छोटे छोटे दलोंमें  
 विभक्त हो कर आपसमें विरुद्धाचरण करने लगे ।  
 कितने स्वदेशीय मित्र स्वाधीनचैता, व्यक्त जसादके हाथसे  
 यमपुर भेजे जाने लगे । रक्तकी धारा बह निकली ।  
 फ्रान्सके अन्तर्विद्रोहका सुयोग पा कर कर्मिका  
 वानियोने स्वदेशकी स्वाधीन वनानिमें कमर कसी ।  
 पियलो फिरसे उनके अधिनायक हुए । नेपोलियन इस  
 समय जातीय सैन्यके अधिनायकरूपमें कर्मिकामें थे । पियली  
 ने उन्हें अपने पक्षमें ला कर अङ्गरेजोंके हाथ कर्मिकाको  
 समर्पण करना चाहा । किन्तु नेपोलियन इन पर राजी  
 न हुए । फ्रान्सके साथ कर्मिकाका अधिकतर व्यवहारगत  
 सम्बन्ध देख कर उन्हेंने पियलीके मतका खण्डन किया ।  
 इसीसे पियलो उनके जानोदुश्मन हो गये । पियलीकी  
 उच्छेजनासे कर्मिकाके लोगोंने नेपोलियनका घर जला  
 डाला । नाना विपदोंको झिलते हुए वे माता और भ्राता-  
 भगिनोके साथ फ्रान्समें भग आए और मासैयल नगरमें  
 रहने लगे । तभीसे परिवार-प्रतिपालनका कुल भार उन्हेंके  
 ऊपर रहा । यहाँ नौकरीकी तलाश करने पर उन्हें  
 गोलन्दाज सैन्यके कप्तानका पद प्राप्त हुआ । कुछ समय  
 बाद पाप टुलामें घेरा डालनेके लिए भेजे गये । टुलो  
 फ्रान्सका ससुद्रोपकूलवर्ती एक नगर है । वहाँके राज-  
 पक्षीय अधिवासियोंने नगरको अङ्गरेजोंके हाथ सुपुद  
 कर दिया था । साधारणतन्त्र के पक्षसे अनेक चेष्टा करने  
 पर भी यह स्थान हाथ न लगा । पीछे नेपोलियनने गोल-  
 न्दाजसे नरके अधिनायक रूपमें आ कर निज बुद्धकी गल  
 द्वारा नगरको जीत लिया और अङ्गरेजोंको वहाँसे भागना  
 पड़ा । इसी स्थान पर अङ्गरेजोंके साथ नेपोलियनको

पहली मुठभेड़ हुई थी । इस काममें नेपोलियनकी पदोन्नति  
 हुई और वे राष्ट्रीयसैन्यके विरुद्ध आपसप पक्षके तलदेशमें  
 भेजे गये । वहाँ भी उनके परामर्शानुसार कार्य करके  
 फ्रांसी सेनाने विजय पाई । इस समय फ्रान्स गवर्नर एट-  
 को नेपोलियन पर कुछ सन्देह हुआ और वे पदच्युत  
 किए गए । दो सप्ताह बाद नेपोलियन मुक्त तो हुए, पर  
 फिरसे नौकरी न मिली । इस कारण वे राजधानीको  
 चल दिए । वहाँ अर्थकी वभावसे उन्हें विशेष कष्ट  
 उठाने पड़े । यहाँ तक कि आत्महत्या द्वारा इन्होंने  
 प्राणत्यागका भी सङ्कल्प कर लिया था । किन्तु उनके  
 मित्र-डिमाशियमी अर्थ सहायतासे उसकी जान खतरेसे  
 बच गई । किसी समय इन्होंने तुरष्क जा कर सुलतान  
 के अधीन कार्य करनेकी इच्छा प्रकट की थी । जो कुछ  
 भी, जीत ही इनके कष्टका अवसान हुआ ।  
 फ्रांसीसियोंको जातीय समिति १७८५ ई० तक  
 शासनकाय चला कर जनताकी विरागभाजन हुई ।  
 पारोन्गरके जनसाधारण उनके विरुद्ध पक्षधारण करने-  
 में उद्यत हुए । इस विपदके समय सत्त समितिने  
 नेपोलियनकी राजधानीस्थित सेनाप्रीका मङ्गकारी सेनापति  
 बनाया । नाममात्रके सङ्गकारी होने पर भी इसका कुल  
 दारमदार नेपोलियनके हाथ था । वे छः हजार सेना ले  
 कर विद्रोहदमनमें समर्थ हुए थे । क्षतघ्नताके चिह्नस्वरूप  
 जातीय समितिने आपकी सेनापतिका पद प्रदान किया ।  
 इस समय जातीयसमितिने पांच व्यक्तियोंके हाथ  
 शासनसत्ता, दोनै हाथ व्यवस्थापनयन और कार्य परि-  
 दर्शनका भार दिया । पांचो शासनकर्त्ता डिरैक्टर नामसे  
 प्रसिद्ध हुए । इनमेंसे वरस नामक डिरैक्टर नेपोलियनके  
 वन्धु और प्रथमपक्षके थे । उन्हेंके यत्नसे नेपोलियन इटली-  
 की फ्रांसी सेनाके प्रधान सेनापति बन कर वहाँ  
 गए । इसी समय आपका प्रथम विवाहकार्य सम्पन्न  
 हुआ । जोसेफाइन नामक एक सम्मान्त विधवा महिला  
 का पाणिग्रहण कर आपने अपनेको क्षतार्थ समझा ।  
 उक्त रमणी सर्वांशमें नेपोलियनकी उपयुक्त थी । जैसी  
 सुन्दरी थी वैसीही सर्वगुणशालिनी और विनीतस्वभावा  
 होनेके कारण उन्हेंने नेपोलियनका मन हर लिया था ।  
 जोसेफाइनके प्रति आपका आन्तरिक अनुराग हो गया



या। जोसेफारम भी वीरघरकी प्राप्ति बड़ कर चाहतो थी। उनके एक पुत्र पोर एक कन्या को जन्हे नियो-  
नियन पयनी मन्तानकी तरह मानते थे। ऐसी स्त्रीके  
माथ नियोनियन अपना अधिक दिन बिता न सके। ग्रीस  
की लड़के पयनी नोकरी पर जाना पड़ा।

इस समय इटलीसीमा पर ६५ हजार फ्रांसीसी  
सैन्य दुरायत्यामें प्राप्त थे। शत्रुसे बार बार पराजित  
हो कर वे बिलकुल भगोसाह हो चके थे। उनके परि-  
शेष सख्त हिन्दु और पदतन पादुकाविहिन हो गए थे।  
कुछ मास तक वे तन मही मिलनेके कारण खानेकी भी  
मिथिय तन्मोफ थी। नियोनियनने वहां पहुँचते ही  
उन्हें सन्तान्धित क्रिया पोर इटलीमें ले जा कर उनके  
कुल पभाय दूर किये जायंगे, ऐसी आशा दी। अल्प-  
जयरात सेनापतिने सन्तान्धयक्यने उत्तेजित ही फ्रांसो-  
सेना पाल्यम पर्वत पार कर गश्यपूर्ण इटलीदिगमें  
पहुँचो पोर बहमस्यक शत्रुसैन्यको क्रमागत कई  
एक युद्धोंमें परास्त किया। सार्डीनियाराज नियोनि-  
यनके साथ गन्धि करनेको बाध्य हुए। इसके बाद  
पद्मोय सेना आक्रान्त पोर परास्त हुई। किन्तु हारने पर  
भी उन्होंने हार स्वीकार न की। युद्धविगारद सेना-  
पतियोंके पधीन पद्मोय-सन्नाट बनवत सैन्यदल  
सेनाने लगे। नियोनियनने भी क्रमशः उन्हें लोडो,  
पार्कोला, रिमोको पोर काटिलियन पादि स्थानों पर  
परास्त क्रिया पोर विनष्ट कर डाला। सारा सन्नाटि-  
प्रदेग फ्रांसोमियोंके अधिकारमें आया पोर वहाँ साधारण-  
तन्त्र प्रतिष्ठित किया गया। पद्मोय सन्नाटके उरम-  
सेर, पालमिन्नी, प्रभरो पादि समरकुशल सेनापतियोंके  
बार बार परास्त होने पर भी वे सन्धिसंवापनमें पयसर न  
हुए। नियोनियनने इटलीमें पयनी सेनाला पभाय दूर  
कर फ्रांसमें प्रचुर पर्व, सुखवान् चित्त पादि भेजे थे।  
पयनी सन्नाट स्थानोंकी फ्रांसोसेनाकी महायताके लिये  
भी कुछ रक्षक भेजे गई। इसके पनत्तर नियोनियन  
पद्मोय पर पढ़ाई कानेका पायोजन करमें लगे। पद्मोय-  
सेनापति राजपुत्र जावन लड़के रोक न सके। नियोनि-  
नने कुछ दूर पागे बढ़ने पर पद्मोय सन्नाटने उनसे  
पक्ष्य करला बादा। कम्पोकर्मिं भी नामक स्थान पर

सन्धि हुई। फ्रांसोमियोंकी उत्तर इटलीका भाग बाँट  
लगा।

युद्धमें विजय पा कर नियोनियन राजधानीको छोटे।  
देयके लोकोने महसू कएते उनको प्रशंसा को। समस्त  
यूरोपकी निगाह नियोनियनकी पोर घाकट हुई। पयो  
सब कोई नियोनियनकी देखनेके लिये तथा उनके परि-  
विषत होनेके लिये उत्सुक हुए। इस समय नियोनियनको  
इङ्ग्लैण्ड पर चढ़ाई करनेका आदेश मिला। किन्तु  
इङ्ग्लैण्ड पर आक्रमण करना फ्रांसोमियोंकी  
पान्तारिक इच्छा न थी। पतः नियोनियन मिस्र पर  
चढ़ाई करनके लिये भिजे गये। १७९८ ई. की १८वीं  
मईकी टुंभीके पन्दसे ४० हजार सेनाको साथ ले  
नेपोनियनने मिस्रको पोर यात्रा कर दो। जितने  
विद्वान्, पुरातत्त्वज्ञ पोर वैज्ञानिक व्यक्ति भी उनके साथ  
हो लिये। राहमें माल्टा जोत बार नियोनियन मिस्रके  
उपशूलमें पहुँचे।

पयंजोंके लगे जहाज उनके पनुसन्धानमें रक्ष  
रक्षा घुम रहे थे। उन्होंने फ्रांसोमोंगे जहाजोंको राह  
में पा कर उन पर आक्रमण किया पोर जितनेको नष्ट  
भष्ट कर डाला। इसी बीच नियोनियन मिस्रकी ज़ीतने-  
के लिये दसवन्तके साथ पयसर हुए। उप समय मिस्र  
नाममास तुषकके सुत्तानके पधीन रहने पर भी  
मास्त्रूक लोग वहाँ राज्य कर रहे थे। नियोनियनने  
कई एक युद्धोंमें उन्हें परास्त क्रिया पोर मिस्रकी अधिकार  
शुध कर लिया। भारतयप पर आक्रमण करना  
नियोनियनकी एकांत इच्छा थी। वयोसे टोपु सुत्तानके  
साथ उन्हेंने दूत भेज कर सन्धि कर ली। यदि एक बार  
वे भारतयप पर पा सकते, तो पयंजोंके लिये विपन्न  
कर डालते, इतमें सन्धे नई। मिस्र पोर महाप्रांति  
माथ मित्रता कर वे नूनन पाम्प्राप्यस्यपनमें हतकाय  
हो सकते थे, किन्तु स्थल पय धी कर तुषककी पोर पय-  
पर होते समय एकर नामक स्थानको वे जीत न सके।  
पयंजोंकी महायतासे तुर्की सेनाने नियोनियनकी पमि-  
काया धुलमें मिला दी। वे हताग ही मिस्रकी छोटे  
पाप। रक्षर पयंजोंकी महायतासे प्रकाण्ड एज दल तुर्की-  
सेनाने मिस्र पर आक्रमण कर दिया। किन्तु नियोनियनने

पैराक्रमसे वे सबके सब मारे गए। इस समय उन्हें खबर मिली, कि फ्रान्स चारों ओरसे आक्रान्त हुआ है। अट्रॉय-सम्राट् ने मन्थि तोड़ कर इटली पर आक्रमण कर हमें जीते लिया है। अन्तान्य राजाओंने सुयोग पा कर फ्रान्सके विरुद्ध सेना भेजी है। फ्रांसोसो कई एक युद्धोंमें परास्त हो चुके हैं। फिर क्या था! वीर नेपोलियनमें शोधकी धमनियाँ दौड़ गईं। वे क्षणकाल भी स्थिर रह न सके। मिस्त्रासनकी मुख्यवस्था कर और साहसी सेनापति क्लेवरकी सेनापति बना नेपोलियन कुछ मनुचरों और सेनायिकों साथ एक छुद्र पोत पर आरोहण हुए और अफ्रिकाके कूल होते हुए आगे बढ़े। १७९८ ई०की २२वीं अगस्तको उन्होंने स्वदेशकी यात्रा को और ४१ दिन समुद्रपथमें रह कर वे फ्रान्सके उपकूलमें पहुँचे। राहमें अफ्रिकी जङ्गी जहाजने उनके छुद्र पोतका पोछा किया था। लेकिन ईस्त्रकी रूपसे नेपोलियन कुशलपूर्वक खराब्यमें पहुँच गए।

इस समय फ्रासी लोग डिरेक्टर-उपाधिधारी शासनकर्त्ताओं पर बहुत विगड़े थे। स्वार्थोलुप डिरेक्टर देशकी भलाईकी ओर जरा भी ध्यान नहीं देते थे। अतः शासनप्रणालीमें हरे फेर करनेकी आवश्यकता हुई थी। देशके सभी मनुष्य नेपोलियनके आगमन पर विशेष उत्साहित हुए। सब कोई उनकी सम्बर्धना करने लगे, किन्तु कोई कोई डिरेक्टर उनके प्रतिकूल भावधारणमें प्रवृत्त हुए। वे जो सबोंके प्रिय हो गये हैं, यह कुछ स्वाध-पर डिरेक्टरोंको अच्छा न लगा। यहाँ तक कि वे उन्हें अक्रान्तकारी समझ कर पकड़ने और बन्दे करनेकी भी तैयार हो गए। इसका फल यह हुआ कि नेपोलियन डिरेक्टरोंको संमतताका लोप कर प्राप ही सर्वसर्वा हो गए। बिना किसी खूनखामबोके उन्हेंने सारे क्षमता अपने हाथमें कर ली थी। प्राप प्रधान कान्सन (Consul) बने और अन्य दो व्यक्ति उनके सहायक हुए। नूतन शासनप्रणाली बढती गई। सब किसीने नेपोलियनको कार्यप्रणालीको सराहा।

फ्रान्सके सर्वमयकर्त्ता हो नेपोलियनने प्रथमतः यूरोपीय राजाओंके साथ सन्धिस्थापनकी चेष्टा की। अट्रॉय-सम्राट्ने भी इङ्ग्लैण्डाधिपतिको नेपोलियनके साथ

सन्धि करनेके लिए एक पत्र लिखा। लेकिन उन्हेंने अनिच्छा प्रकट की। मन्थिको प्राया न देख नेपोलियन युद्धको तैयारी करने लगे। किन्तु उस समय फ्रान्सकी आर्थिकवस्था इतनी ग्रीबनीय थी, कि वे बहुत शष्टसे चालीस हजार सेना जुटा सके थे। इधर अट्रॉय सेनाने इटलीकी जीत कर फ्रांसो सेनापति सेनाको जिनोया नगरमें प्रचरुद्ध कर रखा था। नेपोलियनकी सेना महादुरारोच आल्प्स पर्वतके उस शिखरको पार कर अट्रॉय सेनाके पचाहागमें पहुँची। उन्हेंने शत्रुके आगमनको आगहान की थी, इसीसे वे महसा उनकी गति रोक न सके। अन्तमें मरेङ्गो नामक स्थान पर दोनों सेनामें मुठभेड़ हुई। अट्रॉय सेनापति मेलसनके साथ हजार सेना ले फ्रांसोसियों पर आक्रमण कर उन्हें छिन्न भिन्न कर डाला। इस समय फ्रासी सेनाकी संख्या कुल आठ हजार थी। नेपोलियन यद्यपि स्वयं युद्धक्षेत्रमें उपस्थित थे, तो भी वे मेलसनकी गति रोक न सके। दोनों पक्षमें घममान कुछ चलने लगा। फ्रांसोसेनाने युद्धमें पीठ दिखलाई। मेलसनने अपनेकी युद्धमें जयो समझ यूरोपीय राजाओंको पत्र लिखा कि नेपोलियनकी युद्धमें परास्त कर दिया। किन्तु कुछ देर बाद ही फ्रान्सवे एक दल सेना पहुँची। इस बार मेलसन पराजित हुए और ममस्त इटली शत्रुके हाथ पर्यण कर प्राप जान ले कर स्वदेशको भागे। नेपोलियन भी लड़ाई जीत कर राजधानीको लौटे। अट्रॉय सम्राट् पराजित होने पर भी सहमा सन्धि करनेको तैयार न हुए। केवल कुछ काल तक युद्ध बन्द रहा। बाद फिरने दोनोंको बन्-परीचा हुई। इस बार अट्रॉय सम्राट्ने पराजित हो मन्थिके लिए प्रायश्चा को और कुछ प्रदेश फ्रांसोसियोंको देनेका वचन दिया।

अट्रॉय नगरमें रहने जब देखा कि उनके मित्रराज अट्रॉय-सम्राट् फ्रांसोसियोंके सन्धिसुत्रमें आशङ्क हो गए हैं, तब उन्हेंने भी स्वदेशके उदारनैतिकोंको सलाह ले कर नेपोलियनके साथ सन्धि करनेकी इच्छा प्रकट की। अट्रॉय-नूतन माड कान्वालिसकी चेष्टासे सन्धि स्थापित हुई। यही एमिन्सको सन्धि कहनातो है। १८०२ ई०की २०वीं मार्चको यह सन्धिपत्र स्थापित

दुप्रा था। इस मन्त्रि दारा चन्द्रेजांने सिं'हल छोड़ कर युद्धस्य समी प्यान कसामां पोर् पोपन्दाजो'को दे दिए थे। इसके बाद यूरोपीय पन्थास्य राजापो'के साथ मन्त्रि प्सावित हुई। इतने दिनों तक यूरोपमें जो महासमर भी प्राग धधक रही थी, यह नेपोलियनकी चेष्टामें सुत गई। फामोसियोने ज्ञतघनाके सिहवरूप उद्ये' यायज्जो-यम कायमन बना कर सत्ताधिकारी निर्देश करनेकी समता प्रदान की।

इस समय फ्रांसके भूतपूर्व राजवंशोय राजपुत्र लुईने फ्रांसके सिं'हासनको फिरसे पानेकी प्रागामि नेपोलियनको पत्र लिखा था। जब ये स्रराज्यमें पुना प्रतिष्ठित हुए, तब उन्हेने नेपोलियनको पुरस्कारस्वरूप मर्यादा पट देनेकी इच्छा की थी, लेकिन कई एक कारणोंसे ये पचना अमिनाय पूरा कर न सके। इन्हे'ने लुईकी जो राजसिं'हासन पर प्रतिष्ठित किया, इस पर फ्रांसके भोग मन ही मन बहुत विगडे' पोर् नेपोलियनको हथवा करनेका पक्षग्रह करने लगी। एक बार ये शुभभावसे नेपोलियनको अग्रदानकी राहमें बाहुरसे सहा देने गए थे, लेकिन क्षणकार्य' न हुए। नेपोलियनने दया दिखना कर देशमें ताहित जिन सब फरासीसियोंको स्वदेश छोड़ने का अधिकार दिया था, आज ये ही भोग पचसर पा कर उनके प्राणनाशको चेष्टा करने लगे।

एतिसही मन्त्रिके बाद चंगरेज भोग वाणिज्य-विस्तार करनेका रास्ता ठ' करने लगी। लेकिन नेपोलियनने फ्रांसमें व्यापार करनेको उद्ये' अनुमति न दी, क्योंकि ऐसा करनेमें फरानोसियोंके गिण्वाणित्यमें घटा सग मरता था। इस पर चन्द्रेज बहुत अपमनुष्ट हुए पोर् उन्हे'ने भूतपूर्वमामरजां साकेटा मामक सुद्ध होय से ज्वर मन्त्रि तोड़ दी। पुन'एत मन्त्रि दारा चंगरेजांने मास्टा छोड़ देना चाहा था। लेकिन जितना ही दिन गत होने लगता, उतनी ही लह होय छोड़नेकी उद्ये' मगता होने लगती। नेपोलियन मन्त्रि-गत'से पनुसार काम करनेके लिये चंगरेजो दूतको धनकार्य' लगी। पन्तमें १८०३ ई०के मई मासमें चंगरेजांके साथ नेपोलियनका विवाद किङ्ग गटा। एतिसको मन्त्रिके'नेषन एक वर्षे कोसट दिन-के बाद ही दोनों पक्ष युद्धको तैयारी करने लगे। युद्ध-

चोदथा करनेके पहले चंगरेजो जंगोजहाजन पराकोडे' कितने ही वाणिज्यपोतोंको रोच रखा। नेपोलियनने भी इसका बदला लेनेके लिये फ्रांस पोर् तटविक्रम देकोसे जो सब चंगरेज भोज्ट' पे उद्ये' फाँद कर लिया। भाः इन्हे'ने ग्ठे'परके पेटकरास्य ऐनीमरकी फरासियोंमें जोत लिया। किन्तु जिससे यह सहा समरानक होत ही सुत जाय इससे लिये नेपोलियन खुब' कोमिग करने लगे। चंगरेज भोग लक्षयुद्धमें प्रवल है, उनही वर्ष-सहायतासे यूरोपीय समी राजा फ्रांसके शत्रु ही-सजते हैं यह नेपोलियन पच्छी तरह जानते थे। चंगरेज-जातिको विरोध विपक्ष करनेको निन्दे उनको उच्छट इच्छा हो गई। उन्हे'ने इहलै'ए. पर-चढ़ाई' करनेका सल्लस्य कर लिया। किन्तु फरानो स्थलयुद्धमें प्रवल होने पर भी जनयुद्धमें चंगरेजो'के समान न थे। इस कारण वे जंगे' जहाज बनानेका उद्योग करने लगे। फ्रांसके समी लीगो'ने इस कार्यमें प्रमाधारण उसाह दिखनाया। बहुतसे लीगो'ने स्वःप्रयत्न ही कर तन मन धनसे सहा-यता दी। फ्रांसके समुद्रोपकूलमें छोटे बड़े समी तरह-के जंगे' जहाज बनते लगे। सुसोयमि खादि खानोंमें बहुत'त्यक सेना एकत्रिन हुई। यह भारी सुबसजा देख कर चंगरेज भोग डर गए। इस समय विजियम विट'इहलै'एके प्रधान मन्त्री थे। वे बुद्धिकोयमने नेपोलियनको पराजित करनेको चेष्टा करने लगे। उन-के राजनीति-भोगमने रुमिया, पट्रिया पोर् नेपसम खादि प्यानो'के राजगव फ्रांस पर पाकसंघ' करनेकी सहमत हुए। विट साहबने उद्ये' युद्धके समी वर्षे देने-के पचन दिये। इंग्लैण्डकी पर्य'सहायतासे पट्रीय पोर् रुसमन्वाट' सैन्य सं'पद करने लगी। यह लक्ष्य नेपोलियनको लग गई, किन्तु वे पच्छी तरह जानते थे कि इहलै'ए पर चढ़ाई' कर देनेमें ही ये सब भारी उपद्रव दूर हो जायेंगे। इस कारण वे उसीकी कोमिग करके लगे। इधर नेपोलियनकी गुप्तमाधने मंत्रने'के लिये योर्षाणपोप भोग मोका डूढ़ रही थी। दो एक जेना-पतितने भी इस चक्रात्ममें गाव दिया। एक राजपुत्र फ्रांसके मोसलाभागमें रह कर फ्रांस पर पाकसंघ' करने-के पचसरको जोतनें थे। किन्तु दै'यक्रममें पराजो

पुलिसकी इसकी खबर भट मिल गई। उनके यत्नसे पढ़ेयन्त्रकारो पकड़े गए। सब किसीने अपना अपराध स्वीकार किया और यह भी कहा कि उन्हें भ्रूरेजो की ओरसे श्रयं सहायता मिलो है। धृत्यक्तियोंमेंसे किसी किछीने सजाके मारे घामहत्या कर डाली और कुछ जमादके हाथसे यमपुर मिधारे। सीमान्तवासो राजपुत्र भी पकड़े गए। सामरिकविचारालयमें उनका विचार हुआ और प्राणदण्डकी प्राप्ति मिली। नेपोलियनकी यदि समय पर यह सन्वादि मिसलता, तो मन्थ था, कि वे उन्हें प्राणदण्डकी प्राप्तिसे मुक्त कर देते, लेकिन ऐसा नहीं हुआ। इसके वास्ते कोई कोई नेपोलियनको दोषी बनाते हैं। जो कुछ है, फरामी लोग अच्छी तरह समझ सकते थे, कि नेपोलियनका जीवन कैसा सुखवान है और गुप्तघातकके हाथसे उनके प्राण खो जानिको कैसी सम्भावना है। इस कारण गोपनी होनेने नेपोलियनको प्राप्तके सन्वाटपद पर अभिविक्त किया। १८०४ ई०के नवम्बर मासमें उनकी अभिविक्तिया सम्पन्न हुई थीं। रोमसे पोपने सा कर खय उन्हें सन्वाटके पद पर अभिविक्त किया था। पहले कंभो भी किमी राजाके अभिविक्त कालमें पोप नहीं आए थे। सन्वाटपद पर बैठ कर नेपोलियनने इङ्ग्लैण्डमें पुनः सन्धि करनेकी चेष्टा की। उन्हें यह अच्छी तरह मालूम था, कि समरानलके एक धार प्रचलित होनेसे वह सहजमें बुझनेकी नहीं। इस कारण सन्धिके लिये प्रार्थना करते हुए उन्होंने इङ्ग्लैण्डश्वरकी एक पत्र लिखा, लेकिन भ्रूरेज गवर्नरने सन्धि करनेमें अनिच्छा प्रकट की। फिर क्या था। नेपोलियन कब हटनेवाले थे, तुरंत ही युद्धकी तैयारी करने लगे। उन्होंने पहिलेसे ही समुद्रके किनारे एक साख माठ हजार सेना और बहुतस्यक युधोपकरण संग्रह कर रखे थे। सैन्य पार करनेकी कितनी नावे भी सज्जित हुई थीं। लेकिन बिना एक बिल्क जंगीजहाजके उन्होंने यात्रा करना प्रच्छा न समझा। उनके नौसेनापति एक बड़ा जंगीजहाज ले कर अमेरिका गए हुए थे। वहाँ भ्रूरेजो रणपोतने भी उसका पोछा किया था। वे लौट कर अपनेके उपजूलमें उपस्थित हुए और उन्होंने एक बड़ा भ्रूरेजो जहाज

की परास्त किया। किन्तु कितने रणपोतके सामान्यरूपसे क्षतिग्रस्त हो जानेके कारण, वे बुलियोनमें पहुँच न सके। नेपोलियन अधीरभावसे नौसेनापतिके आगमनको प्रतीक्षा कर रहे थे। सेनापतिके समय पर नहीं पहुँचनेके कारण वे बहुत असन्तुष्ट हुए। इसी सेनापतिके दोपसे फलमें फरामी-रणपोत विध्वस्त हुआ था। नेपोलियनने इङ्ग्लैण्ड-प्राक्रमणका जो महत्त्व किया था उसे त्याग कर अट्रियाकी ओर यात्रा कर दो। उनके नौसेनापति यदि समय पर पहुँच जाते, तो इङ्ग्लैण्डके घट्टमें क्या होता, कह नहीं सकते। भाग्यवशसे इङ्ग्लैण्डमें रक्षा पाई। अथर अट्रियोसेनाने फ्रान्सके मित्रराज्य पर आक्रमण कर उलम नामक स्थानकी जीत लिया। इससेना उनका साथ देनेके लिये बहुत तेजसे आगे बढ़ी। विपद्का शुरुत्व समझ नेपोलियनने सैन्य समुद्रोपजूलकी छोड़ दिया और बहुत तेजीसे आगे बढ़ कर उलमकी भस्मा हजार अट्रियोसेनाकी चारों ओरसे घेर लिया। शत्रुसैन्य पराजित और बन्दी हुई। पीछे नेपोलियनने अट्रियाको राजधानी भियेनाको और कदम बढ़ाया। भियेना भी बातकी बातमें अधिगत हुआ। उस समय इससेना पहुँच गई थी। अट्रिज न मक स्थानमें दोनोंको मुठभेड़ हुई। मन्थते अट्रियो और इससेन्य पराजित तथा विनष्ट हुईं। अट्रियोसन्वाटने कोई दूसरा रास्ता न देख सन्धिके प्रार्थना को और खय जा कर नेपोलियनसे मिले। इस समय नेपोलियन इस सन्वाटको दलबलके साथ कैद कर सकते थे, लेकिन ऐसा न कर उन्होंने उदारता दिखलाई और उनके साथ सन्धि कर ली। तदनन्तर वे स्वदेश लौटे। प्राप्त पर जो वे सब विपद् भ्रा पड़ी थीं वे केवल इङ्ग्लैण्डश्वरके प्रधान मन्त्रीके बुद्धि कौशलसे ही। यूरोपीय समो राजगण फ्रान्सके विरुद्ध डट गये थे। अभी उन सबोंको पराजय हुई और मन्थोंने सजा तथा चिन्ताके मारे प्राण त्याग किया। पिछकी मृत्युके बाद चार्ल्स फाक्स आदि उदारनेतिकीने मन्त्रीका पद पाया नेपोलियनके साथ सन्धि करनेको उनकी एकमात्र इच्छा थी, लेकिन थोड़े ही दिनोंके अन्दर उनकी मृत्यु ही गई जिससे सन्धि न हो सकी।

राजधानी लौट कर नेपोलियन देशहितकर कार्यमें

मगद, माना ज्ञाना में प्रकृत, पुन घोर नहर तैयार कराने लगे। पारीगहरके निम्नभागमें जो मद्यपयःपानियों उमका गंहरार किया गया। उस समय फरामी भारतीय धीनीका व्यवहार करने से, किन्तु 'पंघे वों' के साथ युद्ध उपस्थित हो जानेसे पर्याप्त चोगैका मित्रता बन्द हो गया। इस पर नेपोलियनने विट.मूलसे चोनी तैयार करनेका उपाय पाविश्रुत किया। तभीमें फ्रांस पादि देशोंमें विटचोनी प्रचलित है। इस प्रकार चारों घोर देशहितकर कार्य करके नेपोलियन सभीके धन-घाटके पात हुए। इसको पहिले ही उन्हें 'कीडनेपो-लियन' नामक व्यक्तिसुपुत्रकको विधियुक्त कर उमका प्रचार किया था। फ्रांसमें रोमनके धार्मिक धर्म विप्रयुक्त समय चलाहित हो गया था। नेपोलियनने पुनः उमकी स्थापना की। ये वंशमर्षाका भादर न कर गुलाबु-सार सबीको राजकार्यमें नियुक्त करने घोर गुणी तथा विद्वान् लोगोंका मग्यान भी करते थे। विद्वत्समाजके उत्पत्तिमाधनमें वर्ण करनेसे ये जरा भी टिचकते न थे। फ्रांसमें विद्यालयकी स्थापना कर तथा मानिका-विद्यालयमें उल्लाङ्ग कर पाप वहां नशयुगका पावि-भाव कर गए हैं। उनको धारणा से, कि माता पच्छो होनेसे मृतान भी पच्छो होती है। इन कारण मानिका जिनसे पापमयक गृह-धर्म घोर मन्तानपानमादि भलो-भाति भीषण, इससे लिए ये विशेष ययवान् थे। पपने शिष्यकके उपस्थित होने पर ये उन्हें 'पागातीत मेंट' दे कर बिटा क्षति से। पपने दुःखसका समय इच्छोने जिन मद्यपयःपानियोंसे मद्यपयता पाई हो उन्हें 'पय मद्य-पयता' देनेमें विशेष साक्षात्तिन होने से।

इसी समय नेपोलियनने चर्चिया घोर उपरिष्कणके परिपत्तिवोंकी राजाको उपाधि प्रदान की। यह उपाधि पात्र मो से भोग कर रहे हैं। पोहे निम्नराज-की निर्वासनपुन करके उम पद पर इच्छोमें पपने बड़े भारि जोनेपकी प्रतिहित किया। उल्ल राजाको इच्छोने तीन बार चमरा भरके राज्य छोड़ दिया था, किन्तु चोयो बार पत्ररेमोंको उत्तभगामे भेदकराज-ने फ्रांसके विद्वत् गुणधोपया कर दो थी घोर जब नैपा-लियन चट्टियामें बुद्ध करने गए थे, तब उच्छोने इच्छोके

करामियों पर धाया बोन दिया था। 'पतः उच्छे' काय पर रखनेसे फ्रांसके पपने पतिट होगा, यह देख नेपोलियनने उन्हें पदच्युत कर दिया। नेपस्थ-वासियोंने 'पानम्यके साथ जोषिककी पम्पयता' को थी।

१८०६ ई०के मद्यभागमें प्रूसियाके साथ नेपोलियन-का युद्ध उपरिष्कण हो उठा। पहली बारके पट्टीय-युद्धके समयमें प्रूसिया इमका साथ देता था, किन्तु पटर्निजमें नेपोलियनने उन्हें परास्त किया, तब कि-युद्धमें पपसर होनेका उन्हें साहस न हुआ। पय इम-का उल्लाङ्ग घोर शेष-साहाय्य पानेकी पागामे प्रूस बुद्ध-निये प्रयुत हुआ। प्रूसियाधिपति फ्रेडरिक विश्वियन-गान्तस्यभाषके घोर विश्व राजा थे। गान्तिके पयगतो होने पर भी पमो उनका मत स्थिर रह न मठा। उनको स्त्री घोर राजपरिवारस्य सभी भूखामो तथा सेनापतियोंके साथ एकमत हो कर उच्छोने युद्ध करना ही स्थिर कर लिया। नेपोलियन पट्टिया जाते समय प्रूसियाभि-कृत किसी स्थान हो कर जानेमें बाध्य हुए थे। इस कारण मोठे मोठे घातोंसे प्रूसियाधिपतिको इच्छोने प्युग करनेकी चेष्टा भी की थी। उन्हें 'पपने पपने' रखना नेपोलियनकी एकान्त इच्छा थी। यही कारण था कि नेपोलियनने इच्छोके गट्टररका पैल्लरराज्य इच्छो-पर जोत कर उन्हें दे दिया था। पमो प्रूसवासियोंने नेपोलियनसे शान्ति घोर इच्छोकी छोड़ देने कहा। किन्तु नेपोलियन राजे न हुए। फिर क्या था, दोनोंमें युद्ध छिड़ गया। १८०६ ई०के सितम्बरमासमें फरा-सियोंने प्रूसियामें प्रवेश किया। दो एक छोटी छोटी लड़ाईके बाद जेना नामक स्थानमें पुनः दोनोंमें लुभई हो गई। कई पट्टीयों तक भीषण युद्ध होता रहा। पोहे प्रूसवासियों पराजित हो कर भाग लसे। उसी दिन प्रूसके राजाने ६६ हजार सेनाके साथ नेपोलियनके एक सेनापतिके चौरहताद नामक स्थानमें पात्रमय किया। किन्तु सेनापतिने शिक २६ हजार सेनामें उन्हें परास्त किया था। पोहे उसमद्य प्रूससेना भूच्छके भूच्छमें पात्र-मपय करने लगे। फरामियोंने उनको राजधानी बर्लिन पर अधिकार जमा लिया। प्रूस-राज भग कर

रूसकी शरणागति में पहुँचे। नेपोलियनने शत्रु राज्य जीत कर भी शान्तिस्थापनकी कोशिश की थी। प्रसुराजकी उनकी राज्यका अधिकार तोटा कर सन्धि करना चाहा, किन्तु रूससम्राट् की सलाहमें वे सन्धि करानेकी राजी न हुए। इस वरं नेपोलियन बहुत थगड़े और युद्धके सिवाय और कोई दूसरा उपाय न देख रूसकी ओर पय-सर हुए। रूसियोंके साथ पहले कई एक छोटी छोटी लड़ाईयाँ हुईं। पीछे क्रिउनेख नामक स्थानमें जब रूससेना परास्त और विध्वस्त हुई, तब रूससम्राट् ने कोई उपाय न देख सन्धिके लिये प्रार्थना की। नेपोलियनके साथ टिलसिट नामक स्थानमें उनकी भेंट हुई। नेपोलियनने उनकी शर्तोंखातिर की और इस प्रकार दोनों वस्तुत्वसे भावद हुए। नेपोलियन दूसरे दूसरे राजाओंकी प्रतिज्ञाभङ्ग करते देख उनके प्रति असन्तुष्ट हुए थे और रूससम्राट् की अपने पक्षमें लानेकी कोशिश करने लगे। नेपोलियनके व्यवहार और कार्यसे सुख ही रूससम्राट् अलेकसन्दरने प्रतिज्ञा की कि वे उनके विरवन्तु होंगे।

पूर्व समयमें पीछेख नामक एक स्वतन्त्र राज्य था, किन्तु रूसियों, फ्रिचियों और प्रूसियोंतीनों राज्यने उसे बाँट कर अपने अपने दखलमें कर लिया था। पश्चिम प्रूसियाके अंशमें जो चार भाग पड़े थे उन्हें नेपोलियन फिरसे स्वाधीन कर देनेमें इच्छुक हुए। साक्षनके अधिपतिकी राजोपाधि दे कर उनकी देखरेखमें यह छोटा प्रदेश रख छोड़ा। प्रूसियासे एक दूसरा भाग ले कर इन्होंने वीष्टफेलिया नामक एक राज्य संगठन किया और अपने छोटे भाई जिरोमकी वहाँका राजा बनाया। इसके कुछ दिन पहले पापके एष और भाई हालैण्डके सिंहासन पर अभिषिक्त हुए थे।

जब रूसके साथ युद्ध चल रहा था, उस समय फ्रेंचियसम्राट् द्विप कर फिरने लड़ाईकी तैयारी कर रहे थे, किन्तु रूसके पराजित होनेमें, उन्होंने लड़ाईका कुन उद्योग छोड़ दिया। अंग्रेज लोग सधं किसीकी युद्धमें उक्ताइ देते थे, अर्थ साहाय्य करते थे और युद्धमें सामान भी भेजते थे। किन्तु युरोपीय शक्तिके पराजित होनेमें उनकी समीप्रायाओं पर पानी फिर गया। वे फरारों-

देशमें जलपथ हो कर किसीकी वाग्निज करने नहीं जाने देंगे, ऐसा अभिप्राय जव उन्होंने प्रकट किया, तब नेपोलियनने भी अपने कर्मचारियोंकी हुकुम दिया कि निजराज्य तथा मित्रराज्यमें जहाँ अंग्रेजोंके वाग्निज द्रव्य मिले उसे उधत कर लो। शान्तिके सागरसे भूनाथसागरके जूने तक अङ्गरेजोंका पण्ड्रय लाना मन्द हो गया। रूससम्राट् और नेपोलियन दोनोंने आपनमें ऐसी प्रतिज्ञा की कि दोनों एक दूसरेके शत्रुकी निज शत्रु-मा मानेंगे।

इस समय युरोपके मध्य सुदूर पोचुंगलनके सिवा अङ्गरेजोंका और कोई मित्र न रहा। सभी नेपोलियनके वशीभूत हुए। विशेषतः रूससम्राट् के वस्तुत्वलाभमें नेपोलियन सभी पक्षोंकी वलवान् समझने लगे। रूससम्राट् अलेकसन्दरने अङ्गरेजोंकी सन्धि करनेके लिए अनुरोध किया। किन्तु अङ्गरेज लोग इस पर राजे न हुए और साथ साथ उन्होंने गर्वित भावसे उत्तर दिया। अतः वे भी अङ्गरेजोंके विरुद्ध लड़ाई करनेको प्रवृत्त हो गए। तदनन्तर पोचुंगलराजकी स्वपक्षमें लानेके लिए नेपोलियन कोशिश करने लगे। किन्तु नेपोलियन यदि शान्तिभावविशिष्ट प्रूसियापतिकी अधिकार राज्य छोड़ देते, तो सम्भव था कि वे उनकी कृतज्ञता और चिरवस्तुत्व लाभमें समर्थ होते। अथवा जब प्रूसियाकी राजीने नेपोलियनके निकट आ कर केवल मागडिबर्ग दुर्गके लिए उनसे प्रार्थना की थी, उस समय यदि वे उनकी प्रार्थना पूरी करते, तो प्रूसपति उनके चिरवन्तु हो जाते, इसमें शरा भी सन्देह न था। किन्तु राजीकी युद्धका कारण सम्भ कर नेपोलियनने उदारता नहीं दिखलाई। प्रूसियापतिके मन ही मन नेपोलियनके प्रति विरक्त होनेका यही कारण था। इधर पोचुंगलराजने नेपोलियनके कथनानुसार जब अङ्गरेजोंका पक्ष छोड़ा, तब उन्होंने उनके राज्य पर आक्रमण कर उसे जीत लिया। १८०७ ई०के शेषमें यह घटना हुई थी।

इस समय स्पेनदेशीय राजपरिवारके मध्य शत्रु-विवादका स्वपात हुआ। राजा चार्ल्स राजकार्यकी ओर ध्यान नहीं देते थे। राजीके प्रियपात्रही राजकार्य चलाते थे। प्रधान मन्त्री अपने इच्छानुसार चल नहीं

सकते थे। परन्तु शीघ्र ही विद्रोहना उपस्थित हुई। राज-  
 पुत्र फ्रांसिनेस पिताको दसवृत्तक राज्यव्युत्तर करनेका  
 सदस्य कर माताको निन्दा करने लगे और रामोके विध-  
 वायको भी स्थापित करनेसे राज नहीं चाए। राज-  
 कुमारने दसवृत्तक राजा चार्ल्सको राजनिर्वाहमान होकर  
 देनेके विषये राज्य विचार और प्रजाको पिताके विरुद्ध  
 उत्तेजित करने लगे। मैडिन विना नेपोलियनको  
 मग्यनिके राजनिर्वाहमान पर अधिकार करनेका उद्देश्य  
 साहस न दृष्टा। परन्तु उनको मलाइनेनेके लिए राज-  
 पुत्र प्राण्य गए। इधर राजा चार्ल्स भी यह मन्दाट  
 वा कर सपरिवार नेपोलियनके समीप पहुँचे। राज-  
 पुत्रने माताको पासवपनकी सय गिरावत की, तब  
 रामोने भी सचके मामने राजपुत्रकी सारज बतलाया।  
 राजनि पुत्रको राजद्रोही मनना कर विचारके लिए  
 प्रायणा की। नेपोलियन बड़ी भारी ममन्यामें पहुँ गए,  
 इस समय क्या करना चाहिए कुछ भी विचार न सके।  
 पीछे राजा चार्ल्सने सुगोके साथ अपना राज्य नेपो-  
 लियनको समर्पण किया। राजकुमार अपना स्वयं सहासा  
 छोड़ न सके, मैडिन जाय उरुहे। राजद्रोही यतना कर  
 विचार होनेकी बात छिड़ी, तब वे बहुत डर गए और  
 गिराग हो कर रुदेय लोटें। इस प्रकार विना परिश्रम-  
 को ही स्पेनराज्य नेपोलियनके हाथ मया। पीछे उरुहेने  
 अपने बड़े भाई जोसेफको नेवलससे ला कर स्पेनका  
 राजा बनाया। यदि स्वयं न ले कर नेपोलियन स्पेनदेग-  
 के राजनिर्वाहमान पर कनिष्ठ राजकुमारको विमाने, तो  
 उनको स्वायपरता प्रकट होनी। इस समय स्पेनवासो  
 नितान्त ही नाबख्खामें थे। वे यूरोपव्य परवाग्य आतिथी  
 की संप्रदा गिना और मन्थामें बहुत पीछे पड़े हुए  
 थे। स्पेनको उद्धत करनेको नेपोलियनको एकमत रचता  
 ही। स्पेनके उद्योगो मनुष्य नेपोलियनके कार्यके  
 अच्छी तरह मनुष्ट हुए, किन्तु भूवासो-पोर पाटरो  
 लोग अथ हीवकीको उत्तेजित करने लगे और भीष ही  
 विद्रोहवादि धपक धठे। पत्रेज मयमेंपठने विद्रो-  
 हियोंका पथ लिया और उनको सहायताके लिए सेना  
 भेजे। एक एक करामी सेनाओ स्पेनवासियोंने पाम्प  
 किया। पीछे स्वयं नेपोलियन स्पेन आए और कई युद्धके

बाद शान्तिस्थापनमें समर्थ हुए। पत्रेज सेनापति को नके  
 भी दो ग्याए ही गए। पत्रेज सेना प्रह अहास पर बहुत  
 कर कुछ पाने बड़ी, तब से निरूपधान करामीकी गोदीके  
 वाचातने धे मथके सब मकी पर डेर हो रहे। कमा-  
 हियोंने मग्यनिके साथ अपने कथमें दिया।  
 नेपोलियनके स्वयंमें जानेका सुयोग देण पहिय-  
 मन्दाट फिरसे सहाईकी तैयारी करने लगे। पत्रेजो-  
 ने भी उरुहे मशायता देनेके सचन दिये। इसियाके  
 साथ नेपोलियनका लय युद्ध चल रहा था, तब पहिय-  
 वामो भी द्विप कर युद्धमन्दा कर रहे थे। पीछे जब  
 उरुहेने नेपोलियनको विजयो देखा, तब कुछ समय तन  
 वे शान्त रहे। अभी नेपोलियन दसवृत्तके मध्य स्वयंमें  
 रहते हैं और उरुहे श्रोतनेमें विमत हैं, यह कीष  
 कर पहिय-मन्दाटने पाम्पधारण किया और वे  
 हतराज्यके पुनरुद्धारमें लग गए। यह मन्दाट वा कर  
 नेपोलियन बहुत विमित हुए। उनको सेनाकोके मिष  
 मिष स्वामोंमें रहनेके कारण वे युद्धका कोई चाहीन  
 कर न सके, परन्तु इन समय इकीने शान्तिवा बनाने की  
 उचित मनम्ता। इसमन्दाटको मध्यय बना कर इरुहेने  
 विवादि मिटाना चाहा, परन्तु पहियमन्दाटने मया अपना  
 सुयोग ममन्ता था, इस कारण मन्थिपस्थावकी पोर अथ  
 भी कर्षणान न कर प्राप्तके मितराज्य पर पाम्पमथ कर  
 दिया। युद्धको चतुस्यभावो देण नेपोलियन विना निरुप  
 किये ही प्राप्तकी चल दिये और वहां पहुँच कर वे स्व  
 संध करने लगे। किन्तु उनके पेटाके बाद वे ४ लाख  
 पहियमनाकी गतिका रो हनेके लिये २ लाख सेना परम  
 कर सके थे। उरुहे सेनाको साथ ही उरुहेने पहिय-  
 को राजधानी मियेना पर सहाई कर लने श्रोत  
 लिया। परन्तु भीयेवायके युद्धमें पहियमना अच्छी तरह  
 पराजित हुई। नेपोलियनने पहियमनास्वाज्यकी चलन  
 चलन कर देना चाहा, मैडिन म मान्मको इन उरुहे  
 की पूरा न किया। इस धार पहिय मन्दाटने प्रतीक्षा  
 कर ली कि वे फिर कयो नेपोलियनके विरुद्ध शान न  
 उठेंगे। इसो मान सहाईकीने शैलजियत पर मन्थिप  
 किया, मैडिन पराजित हो कर स्पेनको लोट गए।  
 इन युद्धके बाद नेपोलियनने देखा कि यूरोपके राज-

शेष उम्हें शान्तिमुख भोग करने नहीं देते हैं। युद्धके पारम्भसे ले कर अन्त तक हजारों को बरबादो हुई तथा शोषितपात भो हुआ। देशहितकर कार्यमें ध्यान देनेका पवसर उम्हें नहीं मिला। फ्रांसोनोबसके फैलाने तथा गिष्प-वाणिज्यके उन्नति-कार्यमें भो, वें कुछ कर न सके। यह सब सोच कर सिसो यूरोपीय राजवंशके

साथ लड़ कर मर मिटना उम्हो'ने स्थिर कर लिया। इनकी सौ जोसेफाइन प्रिये गुणगालिनो थीं और नेपोलियनके पौरमसे उम्हें कोई सन्तान न थी। अतः नेपोलियनने क्रिसो राजवंशिय कन्यासे विवाह करना चाहा। लेकिन एक सौके रहते दूसरी स्त्रीसे विवाह करना इन स्त्रीगो-में नियोज था। इस कारण जोसेफाइनको छोड़ देनेकी



नेपोलियन बोनापार्ट ।

भावश्यकता हुई। नेपोलियन जो इतना कर रहे थे, वह अपने स्वार्थके लिये नहीं, बल्कि फ्रांसकी उन्नतिके लिये। फ्रांस-हितके लिये उम्होंने अपनेको उन्नयन कर दिया था। स्त्रीत्यागकी बात उनके सामने कुछ भो नहीं थी। इधर देके लिये स्वार्थ त्याग जैसा प्रगसनीय है, संघर्ष राज-नीतिके लिये स्त्री-त्याग बँसा भी दृष्यीय हीने पर भी

थाप फिरसे विवाह करनेकी वाञ्छ हुई। फ्रांसो सिनेट-सभाने उनके इस कार्यका अनुमोदन किया। जोसेफाइनने भी अपनी उदारता दिखला कर इसमें सम्मति दी। पोपे पट्रिय-सम्राट् कुमारे मेरी लुइसके साथ नेपोलियनने १८१० ई०के मई मासमें विवाह किया। १८११ ई०के मार्चमासमें उम्हें एक पुत्र उत्पन्न हुआ।



इस समय नेपोलियन तथा क्रांतिकारियोंके सामन्तका पालापर न रहा, चार्स और गार्सि विराजने लगे।

इस समय नेपोलियनने सुना कि रुम-मन्नाट् उनके मित्र नो कर मो चिट्टा, प्रूनिया घोर स्वीडनके साथ दूतने लड़े। अलिख्यवशस्त्रमें तथा प्रस्ताव कर रहे हैं। अपने राज्य को कर चंघेजोंका वाचिष्यद्रय ज्ञाने म देते, दोनो प्रतिष्ठा करने पर भी ये चंघेजोंकी अपने राज्य को कर वाचिष्यद्रय यूरोप ज्ञाने देते हैं। रुम-मन्नाट्, मित्रता छोड़ कर प्रतिज्ञानताएष कर रहे हैं तथा अपने वंशप्रथम वदना सेनेहा मोका छूट रहे हैं। गान्तिरसाके प्रयासो हो कर नेपोलियनने रुम-मन्नाट्को अपने वचनमें लाने की विनिय चेटा की। लेकिन कोई फल न निकला। रुममन्नाट्ने तुर्कजके पद-गंत कर एक प्रदेशों पर अधिकार जमाना चाहा और नेपोलियन अभी भी पोनेण्टराण्पके पुनःसंस्थापनमें योग्य न करेगी, ऐसा उन्होंने प्रस्ताव किया। किन्तु यह प्रस्ताव नेपोलियनने अच्छा न लगा। पतः दोनों-में फिर युद्ध छिड़ गया।

१८१२ ई.को १३वें जूनको तीन लाख फ्रांसो पठाते। माठ हजार फ्रांसोही घोर वारह को कमान से कर नेपोलियन रुम सोमान्त पर जा धमके। पंजीय घोर प्रभुय सेना भी उनकी मशयताके लिये पायी बड़ी। नेपोलियनमें फिर एक बार अभि करनेको चेटा की घोर रुम-मन्नाट्में मित्रता चाहा, किन्तु वे छतकाय न हुए। इस समय नेपोलियन यदि पोनेण्टराण्पका पुनःसंस्था-पन कर गता रन जामे, तो बहुत कुछ अच्छा होता; एक पापनी जातिको प्राधोन करना होता, रुम-मन्नाट्की यूरोपोप शक्तिपुञ्जमें पसंग रचना होता और रुमयुद्धमें पसन्न गोपितगत करना न पड़ता। लेकिन ऐसा नहीं हुआ, विधाताकी गतिको कोई रोक नहीं मलता। आखिरको फ्रांसो सेनाने रुममें प्रवेश किया। रुमयुद्ध पट पटमें पराजित होने लगे। बरीडिया कामज फ्रांसो की भीषण युद्ध हुआ उनमें रुमवासो पान-जिन की कर भाग चले। नेपोलियनने रुमियाके प्रधान दरार परसे ले लिया। फ्रांसो के प्रांथमें वायः हजार मील दूर का गये थे। नेपोलियनने माघ रखा था कि

ये मस्कोनगरमें शीतकाल बिता कर हमारे यहाँ रुमको राजधानी सेण्ट-विटमें वर्ग पर आक्रमण करेगी। लेकिन रुमवासियोंने मस्कोनगरमें पाम लगा कर उनकी पाषाकी निमूल कर दिया। मस्को नगरमें भ्रमोभूत हो जानेसे शत्रुमित्र सभी विषय हो गए। मस्को-निवासी रुमियोंकी दुरवस्थाका शेष हो गया। नेपोलि-यन यथासाध्य उनकी मदायता करने लगे। वे रुमियों-की वर्धरता घोर निद्रुरतामें किंकर्षण्यविगुह हो गए। पतः इस समय उन्होंने मस्को नगरका पश्चिम कर वापिस जाना ही अच्छा समझा।

१८वीं पश्चुरकी फ्रांसियोंने मस्कोनगर छोड़ दिया। इधर दादण गीतका भी समय पड़ने गया, तुपारपात होने लगा। कुहासे से चारों दिगाएँ धाँसा-दित हो गईं। दिनकी भी राह दोष न पड़ने लगी। भोजनके सम्भावसे छोड़ घोर सेनाके प्राय निरुपन लगे। ये सब दुर्घटनाएँ देख कर नेपोलियन बहुत भार-दुष्ट घोर स्वयं पैदल चल कर उनके साथ रुमानुक्ति दिखाने लगे। इस तरह १० दिनका राहता ते कर नेपोलियन मकुगल पोनेण्ट पड़ने। उनकी सेनापंथिसे बहुतोंको मृत्यु हुई और बहुत छोटी बच गई।

नेपोलियनकी दुरवस्थाका मन्नाद वा कर को मर उनके मित्र से भी गये, हो गए। सबसे पहले प्रूनिवाधि-पतिने पक्ष धरण किया। नेपोलियनके मरुध पट्टी-मन्नाट्, भीतर जो भीतर युद्धका प्रायोग्य करने लगे। नेपोलियनके जो सब सेनापति उनकी लगने छोड़नेसे राजा हो गए थे, उनमें भी नेपोलियन तथा निर-अम भूमिके विरुद्ध पक्षधारण किया। पंथेज गवर्मेंट-ने मनोंको पयंसाहाय्य करनेका यत्न दिया। स्पेन-देशमें भी दूने लम्बाहके साथ युद्धारम्भ हुआ। स्पेनमें पंथेजसेनापति एक पाप-नेपोलियन फ्रांसोविशालि-नेनिगामे पराजित हो कर निरबन्ध देशमें भाग गए थे। इस समय उन्हें भी फिरसे लम्बाहके साथ अपसर हो स्पेनमें प्रवेश किया। नेपोलियन घोर फ्रांसो इधमें पराभो न करे घोर सफाईको तैयारी करने लगे। किन्तु इस धार से निरजित बहदुरीं नानाई बहदुरीं बन्ध-वपक-रईयितित सेनाकी साथ ले बड़े। यद्यपि

'सौम्य' 'समरमै' बहूत कर्षी। पीर, भी सिलए। ये, तो मो  
 रव्होंने लटजेन पीर वटजेन नामक स्थानमें बहस'ख्यक  
 शत्रु सेनाको बातकी बातमें परास्त कर डाला। नेपोलि-  
 यनने छे सडेनकी कम्पेमें कर लिया। साकननीके राजा-  
 ने नेपोलियनका पक्ष नहीं छोड़ा था, इसीसे शत्रु भीने  
 उनके राज्य पर आक्रमण किया। प्रभो नेपोलियनने  
 'इन्हें' अपने राज्यमें गुप्त प्रतिष्ठित किया। इसके बाद  
 कुछ दिन तक लड़ाई बन्द रखनेके लिये रुस-सम्राटने  
 प्रस्ताव किया। सन्धिस्थापनकी भांश पर नेपोलियन-  
 ने उसे स्वीकार कर लिया। पट्टोयसम्राटके मध्यस्थमें  
 सन्धिकी बातचीत होने लगी, किन्तु सन्धि करनेकी  
 राजाशोकी इच्छा न थी। वे पच्छी तरह प्रस्तुत नहीं  
 थे, इस कारण उन्होंने कुछ काल तक युद्ध बन्द रखा था।  
 जब वे पच्छी तरह प्रस्तुत हो गए, तब पट्टोयसम्राट  
 अपने सम्बन्धको पीर कुछ भी ख्याल न करते हुए तीन  
 साख सेनाके साथ युद्ध करनेके लिए तैयार हो गए।  
 इसके बाद वे सबके सब प्रयुक्तिगत ठावा कर बैठे;  
 क्योंकि ऐसा करनेसे नेपोलियन स्वीकार नहीं करेंगे।  
 जो कुछ ही, इस समय नेपोलियन यदि सन्धिसूत्रकी  
 स्वीकार करते, तो चारों पीर शान्ति विराजती। कितना  
 ही अपमानकार पीर सजाजनक क्यों न होता  
 नेपोलियनकी यह सन्धि स्वीकार करना कर्त्तव्य था।  
 पट्टोयसम्राटने जब देखा कि नेपोलियन इसमें राजी  
 नहीं हैं, तब उन्होंने भी शत्रुके दलमें योग दिया।  
 शत्रु भीने चारों पीरसे नेपोलियनको घेर लिया। छे सडेन-  
 के युद्धमें नेपोलियनने रुस, प्रूस पीर पट्टोयसेनाके जपर  
 जय प्राप्त की। प्रनेकी शत्रु सेना मारो गई। किन्तु  
 युद्धके बाद नेपोलियनके सहसा पीड़ित हो जानेसे युद्ध-  
 जयका सम्बन्ध फल में लाभ कर न सके। 'नहीं' तो  
 युद्धके बाद ही शत्रुगण सन्धि करनेकी वाप्य होते।  
 लेकिन ईश्वर इस समय उनके प्रशुद्धन थे।  
 तदनन्तर यूरोपीय राजगण चारों पीरसे नेपोलियन  
 पर आक्रमण करने लगे। खल्लयुद्धमें लड़ा नेपोलियन  
 स्वयं उपस्थित नहीं रहते थे, उन सब युद्धमें वे जयो होने  
 लगे। अन्तमें लिपज़िक नगरमें दोनों पक्षकी सेनासे  
 मुनाकात हो गई। मिश्रित राजाशोके पक्षमें प्रायः ४

लाख सेना थी पीरसे नेपोलियनके पक्षमें केवल डेढ़ लाख।  
 दो टिम तक घनघोर युद्ध होता रहा। तीस हजार मरतम-  
 सेना युद्धके समय नेपोलियनका पक्ष छोड़ कर शत्रु दलमें  
 मिल गई। इससे नेपोलियन जरा भी न डरे, लेकिन इस  
 समय इन्हें मालूम पड़ा कि युद्धकी मामथो कुल गीय हो  
 गई, उतनो भी गेली या वास्तु नहो' है जिमसे दूसरे  
 दिन युद्ध किया जाय। अतः इस समय नेपोलियनकी  
 लड़ाईमें पीठ दिखानी पड़ी। इसके पक्षमें इन्होंने बर्लिन  
 जोत कर वहाँ सैन्यसंस्थापन करनेकी मोचा था, किन्तु  
 सेनापतिको इच्छा नहो' होनेसे ये वैसा कर न सके।  
 प्रभो इन्हें हट कर फ्रान्सघोमामें पाना पड़ा। चारों  
 पीरसे फ्रान्स आक्रान्त हुआ। पट्टपालको तरह शत्रु-  
 सेना फ्रान्समें प्रवेश करने लगी। इस समय नेपोलियन-  
 ने स्पेनके राजकुमार फर्देनैंडको विद्वाराज्य छोड़  
 दिया। किन्तु इस पर भी युद्ध शान्त न हुआ। स्पेनोय  
 पीर पट्टरेजो सेनाने दक्षिणको पीरमें फ्रान्स पर आक्र-  
 मण किया। पूर्व दिशासे पट्टोयसेना दलके दलमें प्रथ-  
 सर हुई। उत्तरसे रुस, प्रूस पीर स्वीडेनकी सेनाने  
 फ्रान्सको घेर लिया। नेपोलियन अपना वीरल पीर  
 समरकीयल दिखनाते हुए तीन मास तक शत्रुशोको  
 रोके रहे। किन्तु एक शत्रु दलके विनष्ट होनेसे नया दल  
 आ कर उसकी पुष्टि करने लगा। किन्तु नेपोलियन  
 नया दल म'पक्ष करनेमें विनकुल प्रमथ' थे। ऐसी  
 हालतमें मो नेपोलियनने मुठो भर सेनासे बहस'ख्यक  
 शत्रु सेनाको परास्त किया। किन्तु इस पर भी इन्हें  
 कोई प्रच्छा फल हाथ न लगा। 'साखो' शत्रु सेनाकी  
 वे अपनी हजार सेनासे कथ तक रोके रख सकेगे। जब  
 ये इधर एक पीर संभालने पर थे, तब उधर शत्रु सेना  
 दूसरी पीर चढ़ाई कर देती थी। तीन मास प्रथिशान्त  
 युद्धके बाद शत्रु सेनाने राजधानी पारी नगर पर प्रधि-  
 कार जमा लिया। इसके विरुद्ध सेनापति पीर कर्म  
 चारिगण लिपके शत्रुशोका साथ देते थे। लेकिन सेना  
 पीर जनता नेपोलियनके लिए जान देनेकी प्रस्तुत थी।  
 यूरोपीय राजाशोने बोर्बो'योयो'की फ्रांसके राज-  
 सिंहासन पर प्रतिष्ठित किया। नेपोलियन यदि चाहते तो  
 कुछ दिन पीर युद्ध चला सकते थे। लेकिन प्रन्थि'द्वो'ह

घोर उपाय कोलितवात बीना लन्देनि पक्का न ममम्हा।  
 यतः मूलभूनागरका एतत्ता नामक सुदृष्टीयका प्राधियन्त्र  
 घोर काश्र्मने कृच्छ्र हति वा ३२ वें पत्रयाकी पत्र दिए।  
 सै कह्यो प्रभुमन्त्र रचीमेना भी लनरे साथ जानि लगी।  
 इनके श्रीपुत्र लम समय घट्टाय सम्राटके यहाँ थे, इन  
 कारण एतके साथ जा न सके।

एतवा दोप पद्वं कर नेपोलियनने वहाँके अधि-  
 यानियोंको उचल करनेमें मन दिया। पत्र घाट प्रस्तुत  
 होने लगा। नेपोलियन लिफ्कर्मा को कर बैठना पसन्द  
 नहीं करते थे बल्कि उन्हें यह कष्टकर मालूम पड़ता  
 था। यहाँ इन्होंने यद्यमाध्य प्रजाहितकर कार्य चारु  
 कर दिया। इस समय कितने विदेशी मनुष्य एतने  
 मिशन पाया करते थे। पाप भी एतके साथ सामाजिक  
 व्यवहार करते घोर पनोमेय युद्धविययन कथा कह  
 कर उन्हें अपने पक्षमें लानेकी कोशिश करते थे।  
 नेपोलियनका अपने क समय घट्टरेओ दूतोंके साथ हात-  
 पात करनेमें योतता था। जब ये काश्र्मने राज्य करते  
 थे एत समय घूमने फिरनेका इच्छे व्यवसाय नहीं  
 मिन्ता था। यहाँ पा कर ये खुब घूमने लगे। शरीर भी  
 पक्षमें कृच्छ्र अधिक बन ठन गया।

इस क्रान्तिमें १८मं सुई राजा हुए, चारों घोर  
 पसतोयका शोच चट्टुरित होने लगा। नेपोलियन प्रजा-  
 पक्षके सम्राट् थे, बंगमर्दादाको पपेसा गुणका अधिक  
 पादर करते थे। किन्तु सुई पुरानो रीतिके पनुसार  
 बंगमर्दादाके पक्षपाती हुए। क्रान्तके इतने पड़े विद्रवमें  
 भी उन्हें ज्ञान न हुआ। यतः ये बहुत जल्द प्रजाके  
 पक्षिय बन गए। मद्रु द्वारा सिंहासन पर बिठाये जानि-  
 के कारण वे जलताके पक्षियमात्रम भी हुए। यमी  
 सब कोई नेपोलियनके पुनरागमनको 'आमना करनी  
 लगी। इन समय चड्डियाको राजपातो मियेना मगरमें  
 यूरोपीय राजाओंका बैठक होती थी। ये वहाँ बैठ  
 कर राजनीतिवटित समी विषयों पर विचार करते थे।  
 एतमें नेपोलियनको आनाकारित कर किमी सामा-  
 न्यका दोषमें बन्द रहना मुक्तिमंगल ममम्हा। यह  
 बावए ला कर नेपोलियन बहुत कर गए। विविधता  
 कीपुनकी एतके साथ मिशने न देना घट्टाय सम्राट्ने

मानो टारुप निहुरताका परिचय दिया था। आश्र्मने  
 नेपोलियनको जो हति मिन्ती तो यह भी बन्द का  
 दी गई। पर नेपोलियन फिर रह न सके। पराधियों-  
 का मनोभाव ममम्हा कर लहोने प्रागम्को यात्रा कर  
 दी घोर १८१५ ई०को १मी मार्चको वे प्रागम्के सं-  
 जूनमें पहुँचे। एतरे साथ कुछ शरीररथे सेना भी थी।  
 किन्तु यो ही भागे चडुते गये, त्यों हो सेनाकी संख्या  
 भी बढ़ने लगी। राजा सुईने नेपोलियनकी गति रोहनेके  
 लिये जो सेना भेजी थी वह मो एतकी सेनामें मिल गई।  
 २०वीं मार्चकी नेपोलियन राजधानीमें जा पधे। यमं-  
 साधारणने वही घूमधामने इनका स्वागत किया। सुई  
 जान से कर भागे। नेपोलियनको पकी चारवा दो कि  
 यूरोपीय राजगव एतके साथ सन्धि न करेने, तो भी  
 पुनः एक बार इन्होंने सन्धिकी चेष्टा की। किन्तु इनके  
 दृष्ट किसे राज्यमें प्रवेश कर न सके। एत सब राजाओं-  
 ने नेपोलियनका पागमनमन्हाद चुन कर पुनः युद्ध  
 करनेका विचार किया। इस साथ सेनाका क्रान्त पर  
 प्राक्रमण करनेका हुक्म मिला। पंगरेज-सेनापति चंङ्क  
 पाव सेमिड्रटन एतके प्रधान सेनापति नियुक्त हुए। एत  
 नेपोलियन मो सुईका पावीजन करने लगे। एतकी  
 चेष्टासे एक साठ तीस हजार सेना युद्धके लिये तैयार  
 हुई। नेपोलियनने समझा था कि मूस घोर चड्डरेको  
 सेनाको एक साथ मिन्नेका व्यवहार न दे' घोर तत्र  
 प्राक्रमण कर उन्हें परास्त करे'। लेकिन अदेगहोरे  
 द्वारा मद्रु योको नेपोलियनके समी स'वाद मीक्षम ही  
 जाती थे। यहाँ तक कि युद्धारम्भके कुछ पक्षसे ही सेना-  
 पति मद्रु एतमें मिल गए घोर एतोंने नेपोलियनकी  
 गुन मन्हावा प्रकाय कर दी। एतना होने पर भी नेपो-  
 लियनने १७वीं जूनकी मूससेना पर प्राक्रमण कर उन्हें  
 परास्त कर दिया। वे जबके पंगरेजोंके साथ मिल न  
 सके, एतके लिये एतोंने तीस हजार सेना एतके साथ  
 भेजी घोर सत्तर हजार सेनाके साथ चड्डरेकी सेनाका  
 सामना किया। १७वीं जूनको दोनो सेनाने लुडमेंड  
 को गई, की दिन एत दिन समय अधिक नहीं रहनेके  
 कारण युद्धारम्भ न हुआ। रातको मूलपचार हुई हुई।  
 यही हति नेपोलियनका काम थी। इस रातको सन्धि

दृष्टि न होती, तो यूरोपका मानचित्र भिन्नका धारण करता। नेपोलियन समस्त शत्रुसैन्यको परास्त कर जय लाभ करते और फिरसे फ्रांसमें अपना मोटो जमानेमें कृतकार्य ही सकत थे। लेकिन हीनहार हुए बिना नहीं दलनी। यही दृष्टि नेपोलियनके सर्वनाशका कारण हुई। महीके मीली, ही जानेसे सवेरे लड़ाई नहीं छिड़ी, पर्यंत तोपखोकी उपयुक्त स्थान पर रखनेकी प्रवृत्ति दीख पड़ी। दिनके बारह बजे युद्ध शुरू हुआ। फरान्सीसी यदि सवेरे युद्ध शुरू कर देते, तो दो बजेके पहले ही वध शेष हो जाता। लेकिन ऐसा हुआ नहीं। फरान्सीसी ने प्रतिमानमें घा कर 'पेंजे' पर दोनो ओरसे आक्रमण कर उन्हें पीछे हटा दिया। अङ्ग्रेजी सेनाके मध्य भागमें पदातिसेना अठारह चतुर्कोण आकारमें अवस्थित थी। अंग्रेजी सेनापतिकी चालीस हजार सेनाके सिवा और सब जिधर जिधर भग गई थी। फरान्सीसी अङ्ग्रेजी सेनामें अभी इस चतुर्कोण पर ध्यान बोल दिया। उनकी सख्या बारह हजार होने पर भी अमानुषिक बोरत्व दिखा कर उन्होंने अंग्रेजी १६ तोपों पर अधिकार जमाया और अठारह चतुर्कोण पर आक्रमण कर उन्हें क्षुब्ध कर डाला। इस समय सात बज चुके थे। अंग्रेजीसेनापति रातदिन केवल प्रूससेनाके पागमनकी प्रतीक्षा करते थे। इसी समय फरान्सीसी सैन्य दृष्टिसे भागसे साठ हजार प्रूससेना आ धमकी। इस समय उनके अनुसरणकारी फरान्सी सेनापति यदि पदचलाते, तो भी नेपोलियनकी हो जेत होती। किन्तु वे भागे नहीं। बुद्धिमान फरान्सी सेना विपदका युद्ध समझ कर धीरे धीरे दो ग्यारह होने लगे, केवल बारह और सेना नेपोलियनके साथ रह गई। उन्होंने प्रयासाध्य पेंजेको प्रति रोकनेकी चेष्टा की। नेपोलियनने मद्दय कर लिया था कि वे शेष पर्यन्त इसी सैन्य दलके साथ रह कर मृत्युका आलिङ्गन करेंगे, किन्तु ऐसा नहीं हुआ। जोड़के लगाम पकड़ कर सेनापतिने उन्हें छोटा लिया। उनके गरीरसिगम्य मृत्युका निश्चय करके समरानन्दमें कूद पड़े और एक एक कर सुरक्षामकी सिधारे।

नेपोलियन फ्रांस छोड़े। इस समय भी अरसी हजार

सेना युद्धके लिये तैयार थी। किन्तु फ्रांसकी जातीय-समितिके नेपोलियनको गिहासनका त्याग कर देनेके लिये अनुरोध किया। साधारणतन्त्रके पक्षपातियोंने नेपोलियनके सङ्के की राजा बनाना चाहा। उनके पद-त्याग फ्रांससे फ्रांस रखा पायेगा यह सुन कर नेपोलियनने जरा भी विन्मग्न न किया और राजविद्ध त्याग कर अन्त्य चले जानेका सङ्कल्प कर लिया। किन्तु कार्यन्तः शत्रु द्वारा राजा चुड़े पुनः प्रतिष्ठित हुए।

अमेरिकाके युद्धराज्यमें जा कर भाग्य सेना नेपोलियनको एकान्त इच्छा थी। लेकिन शत्रुओंकी आशोंके सामने अमेरिका जाना सज्ज नहीं है यह देख कर कुछ नेपोलियनपतियोंने उन्हें युद्धभावमें ले जाना चाहा, पर नेपोलियन इस पर राजी न हुए। अन्तमें जब अङ्ग्रेजीने सुना कि, 'इङ्गलैण्डमें वे पदीचित प्रतिधिसत्कार लाभ कर सकत है,' तब वे पेंजे जहाज पर चढ़ कर इङ्गलैण्ड को चल दिये। किन्तु इस समय उदारनेतिक राजपुत्र्य लोग ही इङ्गलैण्डके सर्वोत्तम थे। उन्होंने सुखान वा धर्मकी ओर ध्यान न देते हुए नेपोलियनको सेण्टेहेलेना द्वीप ले जा कर उन पर पहरा बिठा दिया। वहाँ कुछ अनुदारमति राजपुत्रयोका व्यवहार नेपोलियनके प्रति प्रति निन्दनीय था। क्रोध, चोभ, अभिमान आदिसे नेपोलियन दिनो दिन कमजोर होने लगे। एक हीपका जनवायु भी प्रत्यायकर था। इसीसे वे शोष ही वीहित हुए और १८२१ ई०के मई मासमें काल कालके गालमें पतित हुए। पेंजे-गवर्णमें नेपोलियनके प्रति जोषितकालमें जैसा कठोर व्यवहार किया था, मृत्यु होने पर भी उसी तरह उनको मृतदेहकी फ्रांसमें नहीं भेज कर हृदयहीनताका परिचय दिया था। किन्तु दयामयी महारानी विक्टोरियाके सिंहासनारूढ़ होने पर फ्रांसियोंने नेपोलियनकी मृतदेहके लिये प्रार्थना की। विक्टोरियाने उसी समय उनकी प्रार्थना पूरी कर दी। नेपोलियनकी मृतदेह बड़ी धूमधामसे पारी महरमें लाई गई थी।

नेपोलियनके जीने सर्वजनविषय सम्पादन आज तक पायात्यदेशमें लभ लिया है ऐसा सुननेमें नहीं आता। उनका स्वभाव निर्मल और चरित्र विद्युत् था। वे देखनेमें

जोने घुमी पुरव सि, जनका जनमाव भो गेसा हो मज्जु ट  
 या। उनको सेना देयता संतोषा उनको मज्जि तरती यो।  
 ये सर्वसाधारणको यहाके पात छि। फामो भोग पात्र  
 भो उनका नाम मज्जिबुद्ध भिने छै। उनके नाम पर  
 आज भो समी उपासने उपजुक्त होति छै। नेगेनियनके  
 विरगठु पंचेज भोग भो पात्र उनको भूयसो प्रयांसा  
 करनिने कार्यएव नर्ही दिव्यनाम। इधर कसो समरमें  
 उर्हीनि बुद्धिय नै नंभो शरद्विंवा दिव्य नाई यो, बडे  
 होनि पर चट्टगास्थने सेना ही नाम भो कमा निघा या।  
 समय समय पर उनको श्यागोलताका भी विमोय परि-  
 चय पाया गया छै। जिन सब व्यक्तियोंके साथ बाल्यकाल-  
 में तथा घेनिककृतिके प्रथमव्यनकालमें उनका प्रात्तरिक  
 पालाप हुआ था, मन्त्राट-पद प्राप्तके साथ ही उर्ध्वनि  
 उन सबको यथोपयुक्त कर्मपद पयवां पेतनस्वरूप कुछ  
 पर्यंका बन्दोबस्त कर उर्ध्व मन्तुट किया या। विद्या  
 लयमें पढ़ने समय त्रिकनि नेगेनियनको कप्तानिपि सिध-  
 नाई यो, पर्यांमाव जताने पर ये उन बाल्यगुरुको समो  
 प्रकार पुरस्कार दे कर उनके उर्ध्वगत हुए छि। पूर्वोक्त  
 बर्षका शिक्षा समाते समय त्रिघो महपाठोके साथ  
 इनको पनवन हो गई यो इस पर बर्षके टुकड़े-  
 ने उर्ध्वनि समे सेना चींघ कर मास कि उनके मस्तकमें  
 मोहबह निकला था। नेगेनियनको उच्चतिके समय लव  
 उम बालकने उनके पास जा कर पूर्वोक्त बातकी याद  
 दिसाई, तब नेगेनियनने उमे पयथाग निघा चोर ययो-  
 वित सहायता दे कर दयाको पराकांक्षा दिव्यनाई यो।  
 जिन छिमासिमें पयमे एक दिन नेगेनियन परिवार-  
 का गुनारा चलता था, तोर नेर्धनियन लव छात्रमेंके  
 सर्वथादिगमगत राजा हुए, तब उर्ध्वनि उनका स्तव  
 पतिगोष कर चपडेकी कताय समभा था।  
 नेका (का० पु०) पायजानि सङ्गीत धरमें इशारवट  
 या माहा विरोधका स्थान।  
 नेव (हिं० पु) महापत्र, मंसो, दीवान।  
 नेवू (हिं० पु०) मोडू देणे।  
 नेम (सं० पु०) नपभोति भो मन् ( कर्त्तिसुवर्द्धि ।  
 इन् १।११८) १ काष्ठ, समय। २ चमधि। ३ खण्ड,  
 टुकड़ा। ४ साकार, दीवार। ५ क्षेत्र, हल। ६ चर्द,

पाथा। ७ गत, गहा। ८ मायादि। ९ चक्षु, चौर।  
 १० मायंकाम, याम। ११ मुक्त, जहा। १२ चक्षु,  
 चनात्र।  
 नेम ( हिं० पु० ) १ नियम, कायदा, बंधन। २ बंधो  
 दुई बात, एवो बात जो टनतो न हो। ३ रीति, दरगुह।  
 नेमधिन् ( मं० त्रि० ) नेमं धितः, नेम-धा-न्, ततो धातो  
 हि। पदेनागधारी इन्ट।  
 नेमधिति ( मं० स्त्री० ) नेम-धा-तिन्, धातो हि। १ चक-  
 र्धन। नेमं घोयतेऽय ध-तिन्। २ संघाम, सुव।  
 नेमनिप ( सं० त्रि० ) नमस्कार पूर्वक गमनकारी, जो  
 प्रणाम करके पयनी राह लेता हो।  
 नेमनायनिह एक चयकार। निरभाव देको।  
 नेमादिच—दमयन्ती कथा या अनवन्तू नामक पत्रके  
 मधेता। ये त्रिविक्रमभट्टके पिता चौर श्रीधर पञ्चनके  
 पुत्र छे। इनका मोक्ष शास्त्रिण्य था।  
 नेमानुर—मानवभट्टके चत्वारंगत हिन्द्याई मुरे किनारे  
 नर्मटा तट पर स्थित एक नगर। यह चला० २३० २०  
 ७० चौर देगा० ७७ पु०के मध्य अवस्थित है। यह नगर  
 होमनररात्रके पथोन है।  
 नेमि ( सं० स्त्री० ) मयति सज्जनिति मो-मि। (निर्घोमि।  
 उग ४।१३) १ चक्रपरिधि, परिपक्का चैरा बां चर्रे।  
 पर्याय—मधि चौर नेमो। कुपोपरिस्थित पहावालभाग,  
 कुर्णके लया चारों चौर रंधा हुआ लंधा स्थान या चर-  
 तरा। २ प्राताभाग, किनारेका हिस्सा। ४ भूमिस्थित  
 कुण्ड, कुर्णके समवट। ५ कुण्ड भोमीपमें रज्जुधारावाह  
 विदाह यन्त्र, कुर्णके किनारे मट्टकीका बह डीबा जिन  
 पर रणो रचने चौर जिनमें प्रायः चिरनो... नगी रचनी  
 है। इनका पर्याय त्रिधा है। ६ कुण्डके निचट समान  
 स्थल, कुर्णके समोपकी समतल जगह। (पु०) ७ निर्दिष्ट  
 तोयं चर। ८ दोस्त्वियेय, एक चरुका नाम। १० बडू।  
 नेमिपाम—चन्द्रद्वेयके चत्वारंगत एक नाम।  
 नेमिचक्र ( सं० पु० ) परीक्षितके लङ्के एक राजा श्री  
 चर्मीमहत्त्वके पुत्र छे। इर्ध्वनि कौशाब्धीने कपनी शक  
 धानो बघाई यो। ( नावरन० ८।२३१८ )  
 नेमिचन्द्र—एक विख्यात तालिक। ये चौरकासीके  
 दिव्य चौर सादरद्वेयनिर्धुक्तः। चातुर्यके दिव्य

शास्त्रिकचन्द्रने १२७४ संवत्को स्वरचित ग्रन्थमें इनका उल्लेख किया है।

नेमिचन्द्र सिद्धान्तदेव—एक विख्यात पण्डित और माधवचन्द्र के विद्यार्थी गुरु। इन्होंने की सनाहसे छह माधवचन्द्र के विद्यार्थी भावार्थों लिखित तिलोपसार वा तिलोकसार ग्रन्थकी टीका संस्कृत भाषामें लिखी।

नेमिचन्द्रसुरि—उत्तराख्यनवति नामक जैनसूत्रके टीकाकार। टीकाके अन्तमें ग्रन्थकारने आत्मपरिचय दिया है। इन्होंने भाष्यानामणिकीय और वीररचित टीका नामक और भी दो ग्रन्थ रचे हैं। इनका आदिनाम देवेन्द्रगणियां। पीछे इन्होंने संज्ञान्तिक गिरोमणिकी उपाधि ग्रहण की। ये ब्रह्मदृगच्छ शाखासम्भूत थे।

नेमितोर्थ—एक पवित्र तोर्थस्थान। चैतन्यदेव संन्यासधर्मके प्रचारके लिए जब नाना स्थानोंमें भ्रमण कर रहे थे, तब उन्होंने इसी नेमितोर्थमें स्नान और इसके घाट पर विष्णुंम किया था।

नेमिन् (सं० पु०) नेम ऊर्ध्वमस्थास्तीति नेम-इमि। तिमिश्रच्छ, निवास, तिनसुना।

नेमिनाथ—एक जैन तोर्थद्वार। इनका दूसरा नाम था नेमि वा परिटनेमि। ये राजा समुद्रविजयके औरस पौराणिकी शिवादेविके गर्भसे ८ मास ८ दिन गर्भवासके बाद हरिवंशकुलमें यावण्यो शुक्रापचमो कन्याराशि चित्रानक्षत्रकी हीरोपुर नगरमें प्रवर्तनीय हुए। इनका उल्लेख विष्णु श्रद्ध, गरीरमान १० धनु, वर्ष ख्याम और प्रायुःकाल हजार वर्षका था। राजकुमार पसाधारण समताशानी थे। वसुदेवके पुत्र श्रीकृष्ण भापके आराध्यकर्मकीय थे। हिन्दूधर्मशास्त्रमें गोवर्द्धनधारी श्रीकृष्णकी अनेक अनौकिक समताका उल्लेख है। जनश्रुति है, कि नारायणचयतार द्वारकापाति कृष्णके सिवा और कोई भी उनकी पाञ्चजन्य शङ्ख बजा नहीं सकता थे। एक दिन ऐसा हुआ कि नेमिनाथने श्रीकृष्णके रचित शङ्खको-से कर लूष औरसे बजाया। श्रीकृष्ण दूरसे शङ्खमाद सुन कर बहुत तेजीसे उस स्थान पर पहुँच गए और यहाँ प्राकर उन्होंने देखा कि उनके भाई ही ऐसी उद्विग्न ध्वनिके एकतम कारण हैं। श्रीकृष्ण ऐसी पवित्रीय समता देख कर उनकी प्रतिद्विष्टतामें संयमर हुए। भाईके असोममल और वीर्य का आस करनेके लिए चतुरपुद्गामणिके उनके पास एक घो

गोपियां भिजो थीं। गोपकुललक्षणाएँ उनके पास पहुँच कर उन्हें माना प्रकारसे विद्रूप करने लगीं और उनमेंसे किसीके साथ विवाह करनेकी कथा। लेकिन नेमिनाथने अत्यन्त विरक्तभावसे उसे अस्वीकार किया। पीछे विशेष रूपसे सम्बन्धित और तिरस्कृत होने पर वे विवाह करनेकी राजी हो गए। शीघ्रणका उद्देश्य था कि नेमिनाथका वीर्य चय होनेसे ही उनके वनचय ही सम्भावना है, इस लिये वे इसीया उसीकी चेष्टामें लगे रहे। अन्तमें उन्होंने गिर्नारके राजा उग्रसेनकी कन्या राज्यमतीके साथ विवाह करना चाहा। निर्दारित दिनमें नेमिनाथने जनागढ़की ओर यात्रा की। नगरमें पहुँचते ही उन्होंने देखा कि नगरवासी सबके साथ विवाहोत्सवमें मग्न हैं। विवाह-यज्ञमें आहुति देनेके लिए अग्न्येव्य ढाग लाये गए हैं, उन ढागोंको वृत्ति दे कर निमन्त्रित व्यक्तियोंका भोज होगा। इस घण्टीके दिन अग्न्येव्य जीवइत्या और उनकी पोखार सुन कर इनका हृदय कल्पामें भर पाया। मानवजीवनका मुख अति तुच्छ है, ऐसा उन्हें मालूम पड़ा; वे जीवोंकी दुर्गतिकी कथा स्मरण कर बड़े ही कातर हुए। अतः उनकी प्राणरक्षाके लिये संसारग्रन्थका त्याग कर गिर्नारपर्वत पर जा पहुँचे। यावण्यमासकी शुक्रापचमोकी विसस हृदयके तसे उन्होंने एक ज्वार साधुओंके साथ दोचा ग्रहण की। पीछे ५४ दिन कष्टग्रहण रह कर ५५वें दिनमें पाश्चिमी अमावस्याकी शत्रुक्षय नगरमें उन्हें आनन्दाम हुआ। इसके बाद सान सो वर्ष आनन्दाममें विचरण कर पायादकी शुक्रापचमो तिथिको इन्होंने शत्रुक्षय नगरमें पद्मसमसे बैठ मोक्षसाम किया। उज्जयन्त पर्वतके ई जिस स्थान पर उनकी मुक्ति हुई थी, वह स्थान जैन-

\* जूनागढ़के दुर्गके निकटवर्ती मूर्परिवीकुलो नामक स्थानके पार्वतेश्वरमें इस राजवादाका स्मारक आज भी देखनेमें आता है। Ind. Ant., Vol. II, p. 189.

† संस्कृत उग्रवस्त और प्राकृत उग्रवस्त गिर्नारका नामांतरमान है और वर्तमान काठियावाड़ जिलेके जूनागढ़के निकट अवस्थित है। कोई कोई इस स्थानको अतः बतलाते हैं। उग्रवस्त देखो।

मासका को पवित्र तीर्थ माना जाता है। यहाँ जलसे पदचिह्नके ऊपर एक छत्र निर्मित है जो मिमिनाय-रुमि कहलाता है। इसके दक्षिण-पश्चिममें जो गुफा है, वह शम्भुमतीका वास्तव्य मानी जाती है \*।

दाक्षिणात्यधामो नेमियोके कनारपुराचमं निवा है कि त्रिवेन्द्राधिपति पर्याप्त सिद्धमते अधिपति श्रीकृष्ण-नेमिोदर मिमिनायका गिरास्य प्रदण किया था है।

रंगमण्डपविभिरवित त्रिवेन्द्रियथाकापुराचपरित म मह पत्येने मिमिनायका पाशुपतिक इतिहास विव्यक्तकृपमे निवा है।

नेमिप्रथ ( सं० पु० ) श्वेतपदिरउच, मकेद पौरका पहा।

नेमिनाह—रसतरङ्गियोटोकादि पविता।

नेमिमम—दिगम्बर श्री त्रियोके साष्टुरसम्यदायके पलाभुंरु पालितगविके गिरप श्री माधवमेमके गुह। इतोने कमलाकर नामक एक स्थलिको स्वधर्ममें दीक्षित किया था।

नेमो ( सं० श्री० ) नेमि बाह्यकायु डीयू। त्रिगणहृष, त्रिभुना।

नेमो ( कि० वि० ) १ गिरमहा पानम करनेवाला। २ धर्म से इष्टिसे पूजा, धान, व्रत, लक्ष्मण—यादि त्रियम-पुत्रक करनेवाला।

नेय ( सं० त्रि० ) १ माने घोष्य। २ चतिशालन।

नेयतपुराच मन्त्रोत्तरदेगके त्रिनाहुरा राज्यके परमार्ग पर लक्ष्मण। इसका भूपतिगान २१ वर्गमोम है। इसमें मूल मिला कर १५ धाम मयमें है।

नेयगम ( सं० पु० ) राजपुरमिद।

नेयावता ( सं० श्री० ) काण्डोपमिद।

नेर—१ चम्पूरभूमिके न्यायेन विनाशमर्ग एक नगर। यह चला० २१० १६०० और देगा० ८६० ३६० पूरके मध्य, धेरुतिधमके १८ मील दक्षिण पौराणिकदोके दाहिने किनारे अवस्थित है। इसके एक नगर विमिय मन्दिनामो था।

\* इम कन्द-वस्तुसार—१। १। १। १। विवेक विवरण पिन १४:५५ रेको।

बातों पौर कज इकनेने बारह देना प्रतीत होता है। एक समय यहाँ पहले कुमनमतीका नाम था। कभी पूर्वकीर्णका दिनों दिन क्राम होने देना जाता है।

२ नगरके परमार्गो जिमेके परमार्ग मीमो तापुका एक नगर। यह चला० २१० १६०० और देगा० ८६० ३६० पूरके मध्य अवस्थित है। जनमंख्या यह नगरके कर्षीव है। इसके निकटस्थ पर्वत पर शिवमं-दिशोका मन्दिर है। एक समय यह बहुत बड़ा बड़ा नगर था।

नेरनामा—वराहपदेयके परमार्ग एक त्रिना। एनेपामे से का वादानदी तक समयका पार्वतीय भूभाग इस त्रिमेके परमार्ग है। इसका प्राचीन नाम नारायणाचव है। नानाका नगर ही कुमनमान राजाधीके समयमें इसका नगर गिना जाता था। १५८२ ई०में पशुपतकर्मने मिला है, 'इम पर्वतगिरास्य नगरमें एक लक्ष्मण दुर्ग' पौर अनेक प्रामादतुण्य गृहादि है।' यह नगर पूर्वाधीके किनारे अवस्थित है। यमो इसकी पूर्व मन्दिनापट ही गई है, जनमंख्या दिनों दिन घट रही है।

नेर-त्रिनाय—वराह राज्यके परमार्ग कमरावती त्रिमेका एक नगर।

नेरतनी ( कि० श्री० ) नीले रंगकी एक पहाड़ी मीक जो मोटामे मरुगाय तक पाई जाती है। इसके ऊपर कल्पवृक्ष पादि धर्मों हैं।

नेरामो—नर्मर प्रदेशके शिवगाव त्रिनामार्ग एक नगर। यह नर्मर पौर इहो नामक पालके मध्य अवस्थित है। यहाँ एक दुर्ग है। मिटोनीराव त्रिवेन्द्र ( पचासाहके १००८ ई०में एक दुर्ग पर आक्रमण किया था।

नेरि (नारि)—मध्यप्रदेशके चांदा त्रिसेकी बरीरा तरुनीके परमार्ग एक नगर। यह चला० २१० १६०० और देगा० ८६० ३६० पूरके मध्य विमूने ३ मील दक्षिण पूर्वमें अवस्थित है। वर्तमान नगरके पार्श्वमें ही पुरातन नेरिनामका पचासवीं पेटिनेमें पाना है। पुरातन नगर श्रीरीग ही मया है। यहाँ धान तथा तरफ तरफके पलाक पदार्थों के नाम हैं। इसके पलाका पचमि त्रि पौर दीनलके इहोप दूर दूर देरीमि मिने जाति है।

] W. J. Mack. Col. Vol. 1, p. 146 and 147. A-1. 11, p. 172.

पुरातन नगरांशमें दो भग्नदुर्ग देखनेमें पाते हैं। इसके पलायां यहाँ एक प्रत्यन्त प्राचीन मन्दिर भी है।  
नेरिञ्जनेपद—कोयम्बतूर जिलेका एक नगर। यह श्रीरङ्ग-पत्तनसे ८८ मील दक्षिण-पूर्व कावेरीनदीके पश्चिमी किनारे अवस्थित है। यहाँके निकटवर्ती पहाड़ पर अनेक भालू पाये जाते हैं।

नेरुर—१. बम्बई प्रदेशके सावन्तवाड़ी जिलेका एक नगर। यह बलावल्ली और महम्बपुर ग्रामके मध्य बसा हुआ है तथा सुन्दरवाड़ी नगरसे १५ मील उत्तरमें है। १२२ शकमें चालुक्यवंशीय राजा विजयादित्यने देवस्थाम्बी नामक एक व्यक्तिको यह नगर दान किया था। यहाँसे अनेक गिलानियाँ पाई गई हैं।

२ मन्दाज प्रदेशके कोयम्बतूर जिलान्तर्गत कन्नूर तालुकका एक नगर। यह अक्षां ११° ०' १५" उ० और देशां १८° ११' ४०" पू०के मध्य कन्नूरसे ५१ मील उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है। यहाँ शिव और विष्णुके दो प्राचीन मन्दिर हैं।

नेरे ( हि० क्रि०वि० ) निकट, पास, समीप।

नेरगल—बम्बई प्रदेशके धारवार जिलान्तर्गत एक नगर। यह कूदलसे दो मील दक्षिण पश्चिम और इङ्गलसे १४ मील उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है। यहाँका सर्वेश्वर-मन्दिर बहुत पुराना है। इसको छत २४ सुन्दर स्तम्भोंके ऊपर रहित है। सर्वेश्वरके मन्दिरमें ८८८ शकमें लक्षोणं एक गिलाफनक है। इसके पलायां निकटवर्ती पुष्करिणी तट पर तथा बमप्या मन्दिरमें और भी बहुतसे गिलाखेव देखनेमें पाते हैं।

नेरो—हजारीबाग जिलेके भाण्डेश्वर पर्वतके निकट और शकोनदोकी अवसाहिकके पश्चिम १७३० फुट ऊँचा एक पर्वत है।

नेर्ता—बम्बई प्रदेशके सतारा जिलान्तर्गत बलवा उप-विभागका एक नगर। यह अक्षां १७° ५' उ० और देशां ७४° १६' पू०, सतारासे ४४ मील दक्षिण-पूर्वमें अवस्थित है। जनसंख्या ७५२४ है।

नेलकोट—मन्दाज प्रदेशके भन्तापुर जिलान्तर्गत एक ग्राम। यह पैरकोण्डामे २५ मील उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है। इन ग्रामके पास एक प्राचीन दुर्ग है जो पल्लवारोंके समयका बना हुआ प्रतीत होता है।

नेलसो—मन्दाजके कोयम्बतूर जिलान्तर्गत धारापुर तालुकका एक ग्राम। यह धारापुर नगरसे १३ मील उत्तर-पश्चिममें अवस्थित है। यहाँके शिव और विष्णु-मन्दिरमें बहुतसे गिलाफलक लक्षोणं हैं।

नेलवेली—मन्दाजप्रदेशके भन्तापुर तालुकके वा तिरुनेलवेली जिलेका प्राचीन नाम, तिप्रवल्ली देश।

नेलमङ्गल—महेश्वर राज्यके भन्तापुर तालुकका एक नगर। यह अक्षां १६° ६' १०" उ० तथा देशां ७७° २६' पू०के मध्य अवस्थित है। यह नगर नैलमङ्गल तालुकका सदर है।

नेलमूर—१ मन्दाज प्रदेशके कोयम्बतूर जिलेके भन्तापुर तालुकका एक नगर। यह अक्षां १०° ४६' १५" और देशां ७७° ३०' २०" पू०के मध्य अवस्थित है। २ उक्त प्रदेशके मलवार जिलान्तर्गत एगट तालुकका एक गण्ड ग्राम। यह अक्षां ११° १०' उ० और देशां ७६° १५' ४५" पू०के मध्य अवस्थित है। कोई कोई इस स्थानको नैलमूर कहते हैं।

नेलसन होरेशिय—इङ्गलैण्डके एक प्रसिद्ध भौतिकशास्त्रज्ञ। १८वीं शताब्दीके प्रथम दशके द्वारा इङ्गलैण्डके नौवल-का गोरव विशेष वर्धित हुआ था। जब ये गिन्नायस्था-में थे, तब समर्थ एक बार भारतवर्ष भी पधारें थे। भारतके उपकूलमें होरे इनको गिन्ना पूरी हुई। लोग इन्हें 'ऐडमिरल नैलसन' कहा करते थे।

इङ्गलैण्डके भन्तापुर नरफोकसायरके वाणेशम-टोपमें १७५८ ई०को नैलसनका जन्म हुआ था। इनके पिताका नाम था रिममि नैलसन। ये अपने पिताके धरो लड़के थे। नाथं वैशम नगरमें रहनेमें पढ़ना जिलना सोचा। लेकिन जब इनकी उमर केवल १२ वर्षकी थी, तभी इनके मामा कप्तान साकलिनने इन्हें नौ-सेनाविभागमें गिन्नायि रूपमें नियुक्त किया। कप्तान साकलिन 'रिजोनेबल' नामक जहाजके कप्तान थे। कुछ दिन बाद वे भाँजिको जहाज पर गिन्ना देने लगे। एक समय उन जहाजको चेट-रज्जोण दीपपुच्छकी ओर से जानेका हुकूम हुआ। नैलसन भी मामाके साथ जहाज पर गए। जब वे मोटे, तब नायिकविद्यामें रहनेने



विदित पट्टना नाम को। इस समय राजकीय काम नहीं करेते, ऐसा दाहने महत्तर कर लिया। किन्तु कुछ दिन-के बाद ही इनके मामा जब 'टापट्ट' नामक जहाजके पहास नियुक्त हुए, तब जिन दफ्तेर उनके पास जाना पड़ा। १९०३ ई०में कामडोर दिव्य पोर जमान नाट बोझी जब जल-व्यवस्था समुद्र को कर पयके पाकि-घारमें बाहर निकले, तब कुछ जेलमन भी नाट बोझी जहाज पर भर्ती हो कर उनके साथ पाय गये। इन समय पयने कोयन, माहम पादिने दाहने पच्छा नाम कामा लिया।

पौखे १९०३ ई०के पञ्चम मासमें दफ्तेर 'सि-डव' नामक जहाज पर भेरी मिली। वे पयनी देनन्दिन जियने मिल गये कि, "कमान कामरके २० कामान-युक्त जहाजके पहास मज्जुस पर चढ़ कर चारों ओर दृष्टि रखनेके तिये में ही पयने पहास निवृत्त हुआ। कुछ दिन बाद मुझे 'कोयाटर-डिंक'में काम करना पड़ा। इस जहाज पर रहने समय मेरे पूर्व भारतीय हीपुच्छमें पोर पहासने कमीराके मध्य जितने स्थान हैं प्रायः सभी देखे हैं।" जो मोहन महाराष्ट्र-पुत्रके समय भारत-की पोर पाया था, ऐडमिनलर पर एडवर्ड प्रुज उसके पहास थे। 'सि-डव' जहाज कमान कामरके पधीन ही दसमें था। पहासम पासनाके भ्रमचक्षुतात्मके भी ज्ञाना जाता है कि १९०६ ई०की १० वीं फरवरीको 'सि-डव' जहाज कामर-पयनमें नहर जाने हुए था। जेलमनकी देनन्दिन जियने उनके भारतदमन-की परिचिताहा-विषय या उनके देखे हुए जगहादिका कोई विवरण मिलिये नहीं है। जेलमनने १९०० ई०में स्वदेव या कर के फुटेने-पुत्री परीक्षा दी। परीक्षा-में उत्तीर्ण होनेके पायही वे नाटमुटवट, किरीटके दिनेय पयक पर पर नियुक्त हुए। पेरिया मुयमें यह जियने कहा गया था। जेलमनने कहा भी नाम कामा लिया था। १९०६ ई०में दफ्तेरमें 'पौट-कमान'के पट्ट पर नियुक्त हो कर 'निधिमनके' जहाजको पहासना नाम को। यह जहाज वे कर के पेट-एन्फोर हीपुच्छमें गये पोर 'मिन्डि-हीपयनाके' तोर-कमीर कीट' कामानुपयनी बोमनेके दिने विदेव पहासना हुए। इन पट्ट के बाद वे रोज विपिन हुए। पारीप्यना नाम कामे-

के कुछ दिन बाद ही 'पेरियमाने' जहाजके पहास हुए। पौखे दफ्तेर 'कोटियम जहाजको' पहासना मिली। इस समय पयक-पाव-कारिना (ये ही 'पुनट' विपिनम नामके दफ्तेरके भूता हुए) पयना नामक जहाजके कमान थे। यह जहाज जेलमनके पधीन था। इरी समय जेलमनका विवाह हुआ। पहले इरीमें जियने हीपके विचारवति मि० विजियम 'एडवर्ड'की कमाने, पौखे उनी हीपके हा० मेमबिटकी विषया पहासे विचार किया। दूसरी पहासे गमने जेलमनके कोर कमान पहासना हुई।

इसके बाद प्रायके साथ जब चौर कुछ बस रहा था उस समय 'पाममिमन' जहाजके पहास हो कर 'मै-यन टू-की-गदर'के मामने उपस्थित हुए। पेरिया पनरोध के बाद वे दक्षिण चानभीको गये। महाके जो-पुत्रमें इनकी दोनो पायिनट हो गईं। इस समय इनके सुहकोमन पोर ता-प्यवृद्धिको कथा चारों ओर फैल रही। १९०५ ई०में 'एडमिनलर' जहाजके पधीन जेलमनने फरामी जहाजदमने साथ कच्चे सादमसे मुह किया था। १९०६ ई०में मिलमा जहाज पर 'कमीडोर' नियुक्त हो कर इरीमें फरानियोंने 'सावेविन' नामक जहाजकी रीत रखा। किन्तु जब इरीमें देना कि उनको मरने के मोद जहाज पद्वेच गया है, तब वे उनके कोट' में ही प्यार हो गये। इसके बाद ही इरीमें 'मैल-मिननेष्ट' बन्दरकी पारे कर किउके फरामी जहाजका पीडा किया। पौखे दफ्तेरमें प्यारिटीपोना जियिटादा, कामनिकीय भी (मानकीयिक वा पाममन कर लके) जगत लिया। इस कार्यके पुरस्कारस्वरूप जेलमनकी ६० मी० मी० की उगाधि मिली। पौखे ये बेहिन पनरोधकारो जहाजदमने के पधिनायक हो कर भिने गये। बेहिनपनको इरीमें ही गोबोने उडा देना पाया था। मैकिन इरीमें जलमन प्रारण हुई। तदनन्तर देनियवेदे कुयमें गोबोने पहासने जेलमनकी दाहिनी मुजा नट हो गई। इन कुयमें पयनेको भी जगत नहीं हुई। पायान या कर के स्वदेवको भीट गये पोर दफ्तेर 'पावि' पयक पहास कीलका इति विषये मती। पयनाम कामेरे पारेदेन पयने विषया है, विवेदिया कोर कामको पधारीमें इरीमें करेह वही

यिता को: और उन्हें सब मिला कर १२० वार युद्ध करने पड़े थे। पीछे बहुत दिन तक नेलसन किसी कार्य में नियुक्त नहीं हुए।

तदनन्तर जब यह खबर पहुँची कि नेपोलियन बोनापार्ट ने टूली का परित्याग किया है; तब नेलसन पल्ल भाव से कटमिनसेण्टकी सहायसे नेपोलियनका प्रमुखरण करनेके लिये भिजे गये। नेलसन जल्दी जहाज ले कर इटलीका उपतूष्ण घूम कर उनको खोजने, अलेक्सन्द्रियाकी घोर प्रघसर हुए। लेकिन वहाँ उन्हें न देख कर वे हताग हो पड़े। पीछे नेलसनने मिससौकी यात्रा की। सिवलीमें विशेष संवाद पा कर १०८८ ई०में नेलसेने पुनः अलेक्सन्द्रिया होते हुए चातुकीके उपसागरके मुहाने पर उपस्थित हुए। यहाँ उन्होंने फरान्सियोंको प्रथम अयोधके कुछ प्रिगेटोंको लखर डाले हुए देखा। ऐडमिरल नेलसनने यह देखनेके साथ ही उसी समय लड़ाई शुरू कर देनेका हुकुम दिया। निकटवर्ती एक दोपके उपर नेपोलियनके जल्दी जहाजोंकी रक्षाके लिये कमानअयोध सज्जित थी। युद्ध छिड़ गया; नेलसनके कुछ जहाज शत्रुके जहाज-दलमें प्रविष्ट हुए। फरानसी नौबल इस प्रकार दोनी घोरसे प्रताप्त हो कर तंग तंग पा गया। शत्रुको प्रायः डार हो गई थी, इसी समय नेलसनके 'एलवेरिएण्ट' नामक जहाजमें भाग लग गई। उस प्रागने इतना भयङ्कर रूप धारण किया कि अनेक चेष्टा करने पर भी वह न बुझी। दूसरे दिन सबरे देखा गया कि शत्रुपक्षके दो जहाज अक्षत अवस्थामें उपसागरसे बाहर हो कर सागरके गर्भमें जा चुके हैं, अन्य सभी जहाज प्रकम्पित हो गये हैं। इस युद्धका सम्वाद घोर जयको खबर इन्होंने पहुँची। नेलसन सम्मानसूचक 'बेरन भावदि नाइल'की उपाधिसे भूषित किये गये और वे तभीसे लाडकी अयोधमें गिने जाके लगे। उनकी ध्यानभी बढ़ा कर इज्जत कर दी गई। विदेशमें भी उन्हें सम्मान लाभ हुआ था। नेपलसराजने उन्हें अपने राज्यके मध्य भूप्रम्यत्ति दे कर 'ब्लू क्रास' अयोधकी उपाधिसे भूषित किया। इसके बाद 'लाड' नेलसन सिवली गये। इस समय नेपलसमें बिद्रोह उपस्थित हुआ था। राजा प्रायः राज्यव्युत्तः हो

गये थे। नेलसनको ज्यों ही इसकी खबर पहुँची, खीं ही वहाँ जा कर इन्होंने बिद्रोह दमन किया और राजाकी पुनः गद्दी पर बिठाया। देग लौट कर 'लाड' नेलसन बड़े समारोहसे अभ्यर्षित हुए। इस समय यूरोपके उत्तरांगके पन्थाय राजाघोने मिल कर इन्हें एक तरहस नहम कर डालनेका प्रयत्न रचा। अंगरेज-गवर्नमेंण्ट यह सम्वाद पा कर डर गई और इस चेष्टाको व्यर्थ करनेके लिये एक बेड़ा जल्दीजहाज तैयार किया तथा सर हाइड पार्करको प्रधान अध्यक्ष और 'लाड' नेलसनको द्वितीयपद पर नियुक्त कर जहाजके साथ भेज दिया।

वह बेड़ा जब काटिगट उपसागरमें पहुँचा, तब दिनेमारोंने प्रणाली ही कर, अंगरेजपरतरोको जानेसे रोका। २२ फरिलक तीसरे पहरमें लड़ाई छिड़ गई। दिनेमारोंके १० जहाज भस्मीभूत और निमज्जत वा अधिजत हुए। डेन्मार्कके राजाने कोई उपाय न देख नेलसेनके साथ सन्धि कर ली। 'पीछे लाड' नेलसनने स्वीडनके राजाको वाध्य करके उनसे वासटिकसागरमें अंगरेज वाणिज्यका प्रादेग ले लिया; इस कामके बाद नेलसन देग लौटे। इस वार इन्हें 'भाइ-कावण्ड'का पद प्राप्त हुआ।

१८०१ ई०में नेपोलियन युवलनिके निकट इङ्गलैण्डको जोतने की कामनासे विपुल पायोजन कर रहे थे। नेलसन इस पायोजनको ध्वंस करनेके लिये प्रघसर हुए। इस वार विशेष चेष्टा करने पर भी 'लाड' नेलसन शत्रुका कुछ प्रनिष्ट कर न सके और लाचार ही देगको लौटे। किन्तु दो एक वर्षके बाद ही पुनः युद्ध छिड़ गया। १८०५ ई०के मार्चमासमें "मिक्सी" जहाजके अध्यक्ष बन कर ये भूतधारासागरमें प्रघसर होने लगे। इस वार भी वे साक्ष्य चेष्टा करने पर शत्रुके बेड़ेको रोक न सके। वे बड़ी चतुराईसे टूलीको छोड़ कर कैडिजमें उपस्थित हुए। 'लाड' नेलसनने प्रपिवाकत अध्यक्षक नौबल ले कर फरान्सियोंका पौढा किया। पीछे फरान्सियों और स्पेनियोंने मिल कर १८०५ ई०के प्रलूभरमोसमें ट्रीफुलगर प्रस्तरोपके सामने नेलसन पर चढ़ाई कर दी। २१वीं प्रलूभरको दोनी पक्षमें

कड़ाई विद्द गई। मेसमनने "इन्फेल्ड" का पत्रिक  
 कादि देसराके निवे एगग एगग कत'व्य एगग  
 कोगा" इय मास'नित्त हरतु एगगको कडा दिया।  
 एगगे मिक्को प्रकाशके माय कापीन प्रतिदरदो 'म्यान्-  
 रिथोमा निनिशाट' प्रकाशकी मुठमेड हो गई। विपक्ष-  
 की पीरने नेसमनके कडाव पर मिमाउटिके समाम  
 'पत्रर गोमीकी घोडाइ होने लगे। ये गारो' पोर  
 घूम घूम कर पकायना कर रहे थे। एमी समय एक  
 गोमी इजके बंधे पर गिरो पोर इम पायातमे तीन  
 पण्टे के मया माड' नेसमनको प्रावशानु निरुण गई।  
 त्रिम समय नेसमनका जीवन नष्ट हुआ, एम समय  
 विपक्षकी पराजय भी एक प्रकारसे निश्चित हो चुकी थी।  
 नेसमनको मृत्युके बाद ईटमिरल कमि'उडने पधासता  
 पदक कर चुकोयमे प्रयनाम किया।

नेसमनकी मृत्यु पर गारो इन्फेल्डमें गमोर गीह का  
 गया। किन्तु वे इन्फेल्डके निवे जो कुछ कर गये, समके  
 प्रतिदानरुद्धर माड' होरेगिय नेसमनके भाई ईभरेण्ट  
 विनियम नेसमन को पार्नेको पटमी दे कर माड'को  
 प्र'वीमें समको गिनती हो गई पोर' लम्बे' यार्किङ्क  
 इभार ईगमन मिलने लगे। नेसमनके दो बहन थीं;  
 लुई' भी काकी ईगमन निहारिन हुई।

१८०६ ई०के जनवरी मासमें माड' नेसमनकी मृत-  
 देह विपटपण का टैडि'लमें समाहित हुई।

**मैत्रिहास—**मन्दास प्रदेशके दक्षिण कनाडा त्रिनेके  
 चलनंत मन्डूर तालुकका एक ग्राम। यह मन्डूर  
 नगरसे २० मील उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है।

**मैत्रिहास—**दक्षिण कनाडाका मन्डूर तालुकके चलनंत  
 एक ग्राम। यह मन्डूर नगरसे २२ मील उत्तरमें पड़ता  
 है। वहाँके एक मापीन मन्दि'में जन-को मायासे किया  
 हुआ एक दिनाचलक है।

**मैत्रिहास—**मन्दास प्रदेशके उत्तर पार्क'ट त्रिनाचलंत  
 एनमन तालुकका एक ग्राम। यह एक तालुक  
 के नगरसे दक्षिण कीक दक्षिणदिगमें अवस्थित है।  
 ग्रामके उत्तर देसरोका पर्वतके निधार पर एक  
 मन्दि'निर है त्रिनेके नगर एम दिनाचलिक लम्बे'च  
 है। इन्के उत्तर नेसमनका-ने देसमेंसे नगरे' है। उत्तर-

गत माटमर रहने पर भी उन्ने एवट लैक्यू नहीं कर  
 सकते।

**मैत्रियवृत्ति—**मन्दास प्रदेशके कोचीन राज्यके चलनंत  
 एक गिरिये'यो। यह पोन्नपाट नगरसे १० मील दक्षिण-  
 में अवस्थित है। समुद्रतलसे यह पर्वतकी १००० फीट  
 ऊँची १००० फुट लंबा है। १५००से ४००० फुट लंबी  
 भूमि पर शाक, पन्धन पादि पन्धक प्रकारके गोमती पेश  
 लगने हैं पोर कहीं कहीं इलायची, कदरक, त्रिपं  
 पादिकी चितो भी होने देखी जाती है। १८६० ई०में  
 यहाँ कड़वेको चितो होने लगी है। इसकी चितो दिना  
 दिग उत्पत्ति पर है।

पर्वतके उत्तरमें वेदार नामक एक पत्थर काठका  
 ग्राम है। इसका पाषाण-युद्धक बहुत कुछ बचता  
 जिनको कुडम्ब जातिसे मिलता जुलता है। वे कोर  
 फल-मूल पोर त्रुसी पाषाण का कर कामा मुठारा  
 करते हैं। इसके पलाया ये लोग मूमे पादि कपड़े कपड़े  
 जानवोंका मांस भी पाने हैं। जंगी समय ये एक  
 लज्ज काम नहीं पाने। इसका जातिगत कोई खास  
 व्यवसाय नहीं है।

**नेरू—**वि'इलहीयगत हकविशेष। यह पिट्ट'घाउ पर्व-  
 के बाद फलता जुलता है। इसके फूलोंके नामसे मधु  
 पाया जाता है। इस कारण वि'इलहाकी इस हककी  
 मधुका पिट्ट' कहते हैं।

**नेरू—**मन्दास प्रदेशसे लज्ज पर्वकोलाधिकृत एक त्रिवा।  
 यह पचा० ११' २८" से १५' १" ए० तथा देसा० ७२६' से  
 ८०' १५" पू०के मज्ज अवस्थित है।

त्रिनेके नगर नेरू नगरके मानाहुवार इय त्रिनेका  
 नाम पड़ा है। म्यानीय भाषामें इस नगरका नाम नेरू  
 वा नैरू कह है। 'उद' इन्मेंसे ग्राम पोर नैरू इन्मेंसे  
 पामनकी हकका पोष होता है। कहते हैं, कि नेरू  
 नगर तालुकापेश पति मापीन इन्काकाएकी इवारीमें  
 बना हुआ है। यह कामकी नम मायद वि'को मापीन  
 पामयमें एक दण्डकमसे चलाने'नीं ता।

यह त्रिना माताजीकी इमारतके परिमीभिन होने  
 पर भी पहाका इनामानिक कोन्' नगना कर्मकर नहीं  
 है। लक्ष्मणकी चण्डालके कारण नगना इनामानिक

दृष्टादिमें कोई विशेष परिवर्तन न देख पड़नेके कारण विदेगिरीके लिये-यह स्थान उत्तमा रोचक नहीं है। पंचिममें बेलो गोण्डाकी गिरिचोटी स्थावर-जङ्गमात्मक सुदीर्घ-अवयव धारण कर विभोपिकामयी जीवजन्तुओंके साथ दण्डायमान है। पूर्वमें बहोपसागरकी लवणपात्र जलस्राविके बांधातसे तीरवर्ती प्रक्षारभूमि चूर्ण हो कर बालुकामय हो रही है। समुद्र तीर प्रतिष्ठम कर जमीन जल ही होती गई है। अधिकांश स्थान पर्वतमय और वनराशिये परिपूर्ण है।

पश्चिम दिशाकी समस्त भूमि पर्वतमय और पशुवर्ण है। इस पर्वतके सर्वोच्च शिखरका नाम पेचमा कोण्डा है जो समतल क्षेत्रसे १००० फुट ऊंचा है। इस शिखरमें सलमन दूसरे शिखरका नाम उदयगिरिदुर्ग है। इसकी ऊंचाई १०७८ फुट है। जिलेके सभी स्थानोंसे इस शिखरको ऊंचो चोटो देखनेमें पातो है।

इस जिलेके मध्य एक आश्चर्य स्थान है जिसे जनसाधारण अक्षर देखने जाया करते हैं। उस स्थानका नाम है श्रीहरिकोटहोप। उस होपके एक और प्रतल-स्वर्ण लवण-समुद्र और दूसरी ओर सीधे कलेवर पालिकट रुद्र है। दोनों जनरायिके बीचमें बालुकाभूमि बांधपमें दण्डायमान है जो अभी होप कहलातो है। यह अच्युत कहना होगा कि वह जगदोश्वरके गौरव और स्वभावकी सुन्दरताकी वृद्धा रही है।

यहां पेशर ( पिनाकिनो ), सुवर्ण सुखी और गुगुसा कष्ठा नामके तीन नदियां प्रधान हैं जो पूर्व घाट पर्वतकी अधिव्यका भूमिसे निकली हैं। इन तीनोंके सिवा पर्वत गांठसे ओर ओर असंख्य छोटे छोटे जलस्रोत निकल कर भिन्न भिन्न ओर बह गये हैं। इतनी नदियां रहते भी यहांको सर्वरता वा वाणिज्यकी कोई विशेष उन्नति देखी नहीं जातो। एकमात्र पेशर नदी ही बाढ़के समय जलपूर्ण होती है।

जङ्गलमें इन दिनों वन्य वा हिंस्रजन्तु नहीं पाये जाते। बाघकी संख्या बहुत कम है, जो कुछ है भी वे कड़पा जिलेसे यहां पाये हैं। पीता बाघ, भालू, याभर हरिण, बाइसन जातीय मृदिय और वन्य वराह अधिक संख्यामें पाये जाते हैं। प्रचिजातिमें कस्तूरस, अंगकी कपोत और तीतर प्रधान हैं।

माना जातीय प्रक्षार रहते भी यहां मछीके पक्षर एक प्रकारका लोहमिश्रित कट्टम पाया जाता है। यह मछो ग्टाहट तथा पय बनानेके काममें पातो है। १८०१ ई०में यहां तधिको खान पायो गई है। जमीनके नीचे चूर्ण लोह भी पाया गया है। उस चूर्ण लोहको यहांके लोग गन्ना कर रूपान्तरित करते हैं और जबरत पड़ने पर यन्त्रादि भी निर्माण कर लेते हैं। कहीं कहीं मछोमें थोड़ा सोरा भी पाया जाता है।

यहांके जनवायुका भाष सब ऋतुमें एक सा है, कभी भी तापकी घटती वा बढ़ती नहीं होती। जनवायु स्वभावतः रुद्ध होने पर भी, स्वास्थ्यप्रद है। शीतकालमें पश्चिममें जो उष्ण वायु चलती है वह बड़ी ही कष्टकर होती है। उत्तर-पूर्व और दक्षिण-पश्चिम मीनसुन वायुके बहने पर भी वर्ष भरमें दो समय प्रचुर वर्षा होती है। उत्तर-पूर्व मीनसुनवायुसे जिलेके उत्तरमें और दक्षिण-पश्चिम वायुसे जिलेके दक्षिणमें अधिक वर्षा होती है।

जलवायुके प्रकोपसे साधारणतः यहां कई एक विविध रोगोंकी उत्पत्ति हुआ करती है। सविरामन्वर, वात, कुष्ठ, गोद, वमि, अजोष, शामाय, विषविका और वसन्त प्रादि रोगोंका प्रभाव ही अधिक है। समय समय पर ऐजा और ज्वेग भी हुआ करता है।

यहां जो विस्तीर्ण वन देखा जाता है और जो एक समय सुविस्तृत दण्डकारण्यका अंश समझा जाता था, वह वन्य भूभाग अभी बेलीकोण्डाकी पूर्व स्थित टालू प्रदेश तथा रायपुर, पालकूड, उदयगिरि और कविगिरि तालुकके अन्तर्भूत है। रत्नचन्दन, अज्जना, पियासान प्रादि मूल्यवान् वृक्षोंका जङ्गल खाम गवमेंष्टके अधीन है। पालिकट रुद्रके अन्तर्गर्भी श्रीहरिकोटहोपके बालुकामय स्थानमें जो वनविभाग है, उसमें भी तरह तरहके पेड़ पाये जाते हैं।

इस जिलेमें १० शहर और १०५८ ग्राम लगते हैं। जनसंख्या साढ़े दस लाखके लगभग है। सबकुछ पीछे ८० हिन्दूकी संख्या है। यन्त्रोपजाति ही यहांको प्रादिम अधिवासी गिने जाती है। सभी जगह इनका वास है। श्रीहरिकोटहोपमें जो अक्षयसंज्ञक यन्त्रो



इन्होंने १२७६ ई० में राज्य-लाभ किया। मामलुक-बहीत-वर्षीय सुलतानके माथ एक समय चंनकी सन्धि हुई थी। मन्भवतः उसी सन्धिसूत्रसे चनकी मुद्रा दक्षिणमें और वहांसे वाणिज्यप्रदेशसे भारतवर्ष लाई गई होगी। त्रिवाङ्कुराज और रिमडेण्ट जनरल कान्तिन साहबके पास बहुत-सी प्राचीन रोमक मुद्रा हैं। फिर कितनी मुद्रा पर भी सेण्टोनिथन, थ्यूडोसियस और यूजोसियाके नाम भी खोदित हैं। इन सब मुद्राओंका धारा-वाहिकतत्त्व संघट्ट करनेसे और सुमन्नमानीका इति-हान पढ़नेसे अच्छी तरह जाना जाता है, कि कई शताब्दी तक नेज़ूर और समुद्र करमण्डल उपकूल प्रसिद्ध वाणिज्य स्थान समझा जाता था।<sup>१</sup> तान्त्रिया-तुल-घमसर नामक इतिहासमें लिखा है कि कुरमने से कर नेज़ूर तक प्रायः तीन मी फरलङ्ग विस्डन समुद्रका उपकूल मायावर कहलाता था। यहाँके राजाओंको उपाधि देवर थी। चीन और मद्राचीनवासिगण अपने जङ्ग नामक जहाज पर तद्देशजात सुष्म कारुकायं निशिष्ट दुर्लभ वस्तु लाद कर इस प्रदेशमें बेचनेके लिए लाया करते थे। सिन्ध और तत्प्रायः बर्ची-जनपदवासी सुमन्नमान भी इस देशमें वाणिज्यके लिए जहाज पर आया करते थे। इराकसे खोरामन तकके स्थान समूहमें और रोम तथा यूरोपके स्थान स्थानमें जो सब प्राचीन और सुन्दर शक्यथा देखनेमें आते हैं उनमेंसे अधिकतम एक समय इसी भारत-उपकूलसे लाया गया था। पारस्य-उपनागरके हीपशासियोंका अर्थ और मणिसुक्तादि एक समय इसी प्रदेशसे आहत हुई थीं, इसमें सन्देह नहीं। जिस समय सुन्दर पाख्य इस प्रदेशके राजा थे, उस समय कायेस-हीपके वाणिज्य और मानिक-सल इस्नाम जमाल उद्योन् सन्दे वाणिज्यके लिए करस्वरूप प्रतिवर्ष १४०० अन्न देनेको राजी हुए थे। फिर वह भी जाना जाता है, कि दूरवर्ची चीन और अन्यथा देशोंसे जो सब सुन्दर और सुष्म द्रव्य यहां लाये जाते थे उनमेंसे पहले राजा करस्वरूप कुछ ले लिया करते थे। इसके पन्नावा नेवु-जाहनेजर और मिशोरके समयमें बाबिलन और इजिप्ट देशीय

वाणिज्य वाणिज्यके लिए भारतवर्ष आते थे, यह उस समयका इतिहास पढ़नेसे जाना जाता है।

नेवुजाहनेजर देखो।

वर्त्तमान समयमें दक्षिण-भारतका वह वाणिज्य-गौरव नहीं है। प्रायः १४वीं शताब्दी तक इस प्रकारका व्यवसायस्रोत चलता रहा था। पोछे धीरे-धीरे इसका विनशुल झग हो गया है। उस प्राचीन व्यवसायके माथ माथ नेज़ूरके नौसवर्ष 'सलेमपुरी' नामक यष्टाने भी विशेष ख्याति प्राप्त की थी। पूर्व समयमें उस यष्टको वेस्ट-इण्डो-इण्डोपवासी नियोजातिके लोग बड़े आपदके साथ पहनते थे। इस कारण उस यष्टका कभी भी बनादन नहीं हुआ। अभी नेज़ूरसे कपाम-यष्टकी विदेशमें रफ्ताने नहीं होती। नेज़ूर नगरके निकटवर्ती कोडुर ग्राममें एक प्रकारका सुष्म यष्ट तथा फमालका उपयोगी यष्ट भी तैयार होता है। ऊँची तमि, पोतल और कविके भी अच्छे अच्छे बरतन तैयार होते हैं।

रत्नपथ होनेके पहलीसे ही वाणिज्य घनतिका सुत्र-पात देखा जाता है। कड़ापा और कर्णूलके लोग हर्दके बन्दरेमें नेज़ूरसे सवण ले जाते थे। पाज कल समुद्रके किनारे केवलमात्र शस्यादिकी रफताने होती है। यहां हर्द, चावल, नील, तमाकू, सरद घोर अन्यथा शस्यकी खेती होती है। उपकूलस्थित कोटवाटम तथा इटमुकूला नामक दोनों बन्दरोंसे पाज भी, उन सब देशजात द्रव्योंकी रफताने और विभिन्न देशोंसे वाणिज्यार्थ उत्पन्न नाना प्रकारकी द्रव्योंकी आमदना होती है।

कभी कभी जल और हृष्टिके अभावसे, वेनर नदीकी बाढ़से तथा समुद्रकूलस्थ तूफानसे यहांकी शस्यकी विशेष क्षति हुआ करती है। १८०४, १८०६, १८२०, १८२८, १८३२, १८३६, १८५२, १८५७, १८७४, १८७६ और १८८२ ई०में यहां तूफान और बाढ़से घोर दुर्भिक्ष पड़ा था। १८०६-७८ ई०में जो दुर्भिक्ष पड़ा था उसमें फसल बिलकुल नहीं हुई थी। इस समय प्रायः ६००० गोमेष और अश्वस्य मनुष्य अन्धकारके अभावसे कालकान्तके गालमें पतित हुए थे।

यहांके हिन्दू कहर सनातनधर्मावलम्बी होने पर भी

• In Han Antiquary, Vol. VI. p. 215-18.

† Indian Antiquary, Vol. II p. 241-420.



घोर शङ्करेज लोग घपना घपना घाघिपत्य फौलानिमें विगेष यत्नवान् थे । १७५१ ई०में नाजिबउलानि अपने भाई नवाब महमूद भलीसे प्रदत्त नेव्लूरप्रदेगका शासनभार प्राप्त किया। इसी साल महमूद कांमाल नामक किसी सुमलमाननि नेव्लूर नगरमें प्रवेश कर नाजिब उल्लाको निकाल भगाया। जब यह तिरुपतिका मन्दिर ध्वंस करनेकी प्रागे बढ़ा, तब मन्दिरका रक्षाभार भङ्गरेजोके हाथ समर्पित हुआ। दोनों दक्षमें घनघोर युद्ध चला। पहले शङ्करेजोकी हार हुई, पर पीछे उन्होंने कामाल पर आक्रमण कर उन्हें कैद कर लिया।

नाजिबउलानि खराबमें प्रतिष्ठित हो कर कुछ दिन पीछे (१७५७ ई०में) अपनी खाधोनता चच्छेद करनेके लिये भाईके विरुद्ध भस्त्रघारण किया। नवाब महमूद भलीनि अपने शङ्करेज बन्धुका आग्रह ग्रहण किया। नाजिबउलानि भी घपना पक्ष दृढ़ रखनेके लिये फरासियोंकी सहायता ली। युद्धमें शङ्करेजोकी हार हुई। कर्णल फार्डेल्ल चतिके उत्तरदायो हो कर मन्द्राज लोटे। १७५८ ई०में नाजिबने बलासत जङ्ग घोर महाराष्ट्रोको अंग्रेजोके विरुद्ध उभाड़ा। १७५८ ई०में जब फरासी सेनापति खाली सेना ले कर मन्द्राजसे अघट्टत हुआ, तब उन्होंने अंग्रेजोनि सन्धि कर ली। पीछे ये अंग्रेजोनि उक्त प्रदेशके शासनकर्ताके पद पर नियुक्त हो कर अंग्रेजोकी वार्षिक तीस हजार 'पगोडा' देनेकी राजी हुए। १७६० ई०में टीपू सुलतानके साथ जब अंग्रेजोका युद्ध छिड़ा, तब अंग्रेजोनि अपने हाथमें कर्णाटप्रदेगका राजस्व बसूल करनेका भार ले लिया। १७६२ ई०में टीपूके साथ सन्धि होने पर उसका शासनभार पुनः नवाबके हाथ दे दिया गया। पीछे १८०१ ई०में अंग्रेजोनि सदाके लिये इस प्रदेशका शासनभार अपने हाथ ले लिया। जिस भरमें १ कालेज, १८ मेडिकल, ८८ प्राइमरी और ७ ट्रेनिंग स्कूल हैं। शिक्षाविभागमें प्रतिवर्ष १७७००० रु० खर्च होते हैं। स्कूलके अलावा यहां १० अस्पताल और १७ चिकित्सालय हैं।

२ उक्त जिलेका एक उपविभाग। यह नेव्लूर घोर कावली तालुक ले कर संगठित हुआ है।  
३ नेव्लूर उपविभागका एक तालुक। यह अक्षा-

१४° २१' से १४° ४६' उ० घोर देगा ७८° ४३' से ८०° ११' पू० के मध्य अवस्थित है। इसके पूर्वमें बंगालकी खाड़ी पड़ती है। भूपरिमाण ६३८ वर्ग मील घोर जनसंख्या लगभग २२,६२,८२३ है। इसमें नेव्लूर घोर बङ्गूर नामके दो शहर और ४८ ग्राम लगते हैं। पेन्नर नामकी नदी तालुकको दो भागोंमें विभक्त करती है। यहां धानकी फसल अच्छी लगती है।

४ उक्त जिलेका एक प्रधान शहर। यह अक्षा १४° २७' उ० तथा देगा ७८° ५८' पू०, पेन्नर नदीके दाहिने किनारे अवस्थित है। जनसंख्या तीस हजारसे ऊपर है। इस नगरका प्राचीन नाम सिंघपुर था। यहांका मूलस्थानेश्वरका मन्दिर मुकन्ति नामक किसी राजासे बनाया गया है। तेलगुदेगमें ये 'मुकन्ति महा-राज' नामसे प्रसिद्ध है। यहां सुमलमानोके समयका एक किला है।

वादेमें यह शहर 'दुर्गांमिहा' नामसे प्रसिद्ध हुआ। आज भी नेव्लूरका उपकण्ट इसी नामसे पुकारा जाता है। इस नगरकी गठन घोर चाबडवा उत्तमो खराब नहीं है। यूरोपियोके आवासभवनके दूरसे पार्कमें नरसिंहकोण्डा पर्वतके ऊपर बहुतसे मन्दिर विद्यमान हैं। यहां १२वीं शताब्दीमें 'ठिकुआ सोमयजुलू' नामक एक कविने संयु भाषामें संस्कृत महाभारतका अनुवाद किया। इन्हींके समयकी मुक्ता नामक एक स्त्री कविने भी रामायणका अनुवाद कर विद्याचर्चाके गौरवकी रक्षा की थी। राजकवि अलसानी पेञ्जाना राजा अय्यदेवकी सभामें वचनमान थे। १८५६ ई०में यहां म्युनिसिपलिटी स्थापित हुई है। शहरकी आय प्रायः ४४००० रु० है। यहां यूनारटेड प्रो. चर्च मिगन हार्ड स्कूल घोर वेड्टगिरि राजाका हार्ड स्कूल है। इसके सिवा घोर भी कितने स्कूल हैं।

नेवगी ( हि० पु० ) नेगी।  
नेवधार ( हि० स्त्री० ) निवार देको।  
नेवज ( हि० पु० ) देवताको पवित्र करनेको बसु, यानि पोनेको चीज जो देवताको चढ़ाई जाय, भोग।  
नेवजा ( फ्रा० पु० ) चिह्नगोला।  
नेवजी ( फ्रा० स्त्री० ) एक प्रकारका नाज।



मैत्रिणी—पत्नीका प्रतिपत्नीका नाम । एक भद्र ।  
 यह भीरुम कहते हो मोक्ष दक्षिणपूर्व पक्षी-दोके  
 विशाली पक्षीका है । एक समय दक्षिण महाविपारी  
 प्रायः राम दिव्याको वाहर निकले पौर इस अज्ञानी  
 सामानिक घृष्टात्मा देव का मांरिन हो गये । वेदे  
 लवेनि पशुम वडवा कर मैत्रिणी महर बघाया । महार-  
 ये एक बघानमे पाहोम शशापेका दुमं दार । वलागाम  
 पविवाका देव अज्ञान बघानको लयका धगबर्भन  
 बनवाने है । दीविन मंशोय शशापेनि पहा बहम दिन  
 एक शाल्य विद्या सा । समयी मन्त्रीति मन्त्रमुदमे  
 मैत्रादि मरिन मन्त्रक पौर महोर-पुत्रोमे भारत  
 वरं पर पशुके कर शशाको शाल्यने तिकाय मगावा  
 पौर लयं शापलाय पक्ष विद्या । बहुरोमी सुमम-  
 मानेमे मन्त्रपर यात्र भी इस महासमे काम करते है ।  
 महुरको दिनी दिन लयति होती जा रहो है ।  
 मैत्रवता (विं० वि०) निमन्त्रित करना, मैत्रता गेहना ।  
 मैत्रवदतो (विं० पु०) गौरवरो केकी ।  
 मैत्रता (विं० पु०) श्रेया केतो ।  
 मैत्रमः—ब्रह्मके प्रद्वेतेके प्रवृत्तिरि जिनान्वित एक भद्र ।  
 यह पक्षी-१३३३३० पौर देमा० ०३३३३ पु० शीर्ष-  
 तीक्ष्णशापको मोपति १८ तीक्ष्णकण्ठविपरीते पक्षिगत  
 है । पक्षमे एक सता शशापुके पक्षीक था । वहाँ एक  
 दुःखी अज्ञानीमे देवनेमे पाना है । मि० इसम पति  
 पुत्रा बदेनि एक बघानको टमयो-कदिन 'मिद्र' वा शिमो-  
 कदिन 'मिद्रम' बनताया है । यथो इस वदानके  
 का-पक्षकी मोड'क जाती रहो, किनी दिन यमका  
 काम होता जा रहा है । [१२१-१८६० में पंदिना शिमा-  
 ने इस बन्दर पर काकमय पिटा पौर मोनेके पायानके  
 दुःखका लहम लहम कर मशापुकी कायके कोन विद्या ।  
 मैत्रावः—दुःखीदेवेके प्रजापुत्र विद्यामन्त्र एक त्रि-  
 पदा । यह पक्षी-१३३३३० पौर देमा० ०३३३३ पु०  
 पक्षीक काय बनलिन है । इसका दूसरा नाम महाविपद्र  
 है । यहके पौर-मशो विशयो है । यह महार पर कर  
 मशाको पौर कामके कण्ठमे कबला मित्रवता दक्षिण-  
 पक्षमे बदेम शिमत है । यहाँ कदुम'पक्ष सुदिनाका  
 य न है । ये पक्ष महोके पक्षी पौर मंदिनी देव पर

पक्षम, शिक्का पति, पक्षय, पक्षय, वर, मोडुकी बनी कपु  
 तथा कण्ठमे एक काट कर पापिपत्रके सिधे पक्षी काके  
 है पौर पक्षमे मरव, मरव'पुत्र, मोडामा पौर ए-  
 मादि के जाने है । यह पक्षम कमुद्रवमे १३३३३ पु०  
 पक्षीक है ।  
 मैत्र (विं० पु०) । पौरका मरता, मुरा । (विं०) ।  
 योकेके पौरका पर पाव भी दूरके पौरको मोडा पर  
 मरवमे हो जाना है । शं योकेके पौरके पौरको मरव ।  
 मैत्रा (विं० पु०) मान जवङ्की भारीको कोलो ।  
 मैत्रव (विं० पु०) मैत्र होयो ।  
 मैत्रवाम—एक द्विभो-कवि । इसकी कविता करव को  
 मपुत्र होती थो । इसका कविता-काल देवके मन्त्र  
 कथा जाता है ।  
 मैत्रवा (विं० पु०) थार प्रैरीके अमीन पर भैके-  
 वाला याव मना काय प्रमा पौर ४-२ सुमम पौरा  
 मलापारो पिङ्गल जन्म । यह देवमेमे गिनकीके पाका-  
 का पर लममे यथा पौर भूरे रंगका होता है । गिरे  
 विरल मङ्गल पक्षी होयो ।  
 मैत्रवो—शत्रुपुताकेके पनामे पनमोरका एक भद्र ।  
 यह मपुत्र शापानीमे १० मोक्ष दक्षिणपूर्व पक्ष-  
 २३३३३ उभार पौर देमा० ०३३३३ पु० के मज प-  
 लिन है । मो यप'पहमे एक मगा मज्ज'मशापो प-  
 पौर इसका पापमन भी विपद्रम था । पमोरे काके कर  
 इस महारकी लूटा था, लम समय यथके पविवाके दुर्क  
 प्रमद भाग मप । वेदे १२८८६० में एक मशो मन्त्र  
 लदाविन दुर्क, लव कोलोको मन्त्रा पौर मशो मरुके मेरी ।  
 इसके पयाकामेमे वरम मन्त्रमे दृष्ट्यामाम एक पक्षी पौर  
 पाममेमे मपुत्र मज विपद्रम पान'म'मि है । पक्ष'की  
 महर महामङ्ग मन्त्रक दुमं है । लम दुमंको यथाके  
 सिधे १२ मोलापार मोने' ममे कपु है । ललाके काक'क  
 म मशुकायव ममीम मर एममी पौर ऐ'मके देव  
 मम' ममे है । इसके पमाका यहाँ लयक भद्र कपान,  
 देवम'मर, म'मिम यमरका पौर मनीटाके मन्त्रि'लप  
 रविन है ।  
 मैत्रा (विं० पु०) । शीलि, मपुत्र, पक्षम । ३३ कोर्षी-  
 कथावम ( वि०) ३ मने, ममान ।

नैवाज ( हि० वि० ) निवाज देखो ।

नैवाज—१ हिन्दीके एक कवि । इनका जन्म-संवत् १८०४में हुआ था । ये जातिके जुलाहे तथा विनयाम-वासी थे । इनकी कविता-रचना अच्छी होती थी ।

२ एक हिन्दी-कवि । ये जातिके ब्राह्मण और बुन्देलखण्डके रहनेवाले थे । इन्होंने १८०० संवत्में 'सखरा-वती' नामक एक पुस्तक बनाई है । ये असीधरके राजा भगवन्त राय खीचीके यहाँ रहते थे ।

नैवाजना ( हि० लि० ) निवाजना देखो ।

नैवाड़ा ( हि० पु० ) निवाड़ा देखो ।

नैवार—नेपाल-राज्यवासी प्रादिम जातिविशेष । जो स्थान अभी नेपालप्राय कहेलाता है और जिस उपत्यकाभूमि पर वर्तमान काठमाण्डू नगर बना हुआ है वही स्थान इस जातिका प्रादि वासस्थान है ।

नेपाल शब्दमें लिखा है, कि इस स्थानमें लोमवहुन हागजातिका वास रहनेके कारण तिब्बतवासी हिमालयकी इस तटभूमिको 'पालदेश' कहते थे ( तिब्बतोय भाषामें पाल शब्दका अर्थ पयम है ) । यह उपत्यका बहुत पहलसे ही 'ने' नामसे प्रसिद्ध थी । एही 'ने' नामके स्थानके अधिवासी होनेके कारण वे लोग नैवार । वा नैवारी कहलाने लगे । प्रादिम नैवार जाति बहुत पहले असभ्य रहने पर भी अन्तमें बौद्धधर्मको उन्नतिके साथ साथ अपनेको भी उन्नतिके सोपान पर चढ़ानेकी चेष्टा की थी । ये ही लोग नेपालमें प्रचलित बौद्धधर्मके स्थापनकर्ता हैं । अभी नेपालराज्यमें जो सब प्राचीन बौद्ध और हिन्दूजाति देखी जाती हैं, वह इन्हींके उद्यम और यत्नसे बनाई गई थीं । पालराज्यके 'ने' नामक स्थानवासी पूर्वतन नैवारियोंके गौरव और सम्मान रचाय अन्तकी वासभूमिके नाम पर इस राज्यका नाम 'नेपाल' हुआ था ।

इनकी प्राकृति गोर्खा लोगोंकी अपेक्षा लम्बा है और सुखाकृति देखनेसे वे मन्त्रीलोकके जैसे सांख्य पड़ते हैं । भारतके साथ तिब्बतका गैकव्य रहनेके कारण 'दोनी' जातिमें संस्क्रव हो गया है । बौद्धधर्मके प्राबल्यसे जब बौद्धमत तिब्बतमें प्रचारित हुआ और नैवारी लोगोंने भी जब बौद्धमत ग्रहण किया, उही समयसे 'दोनी'

जातिमें प्रादान-प्रदान होता चारहाँ है, ऐसा अनुमान किया जाता है । कारण नैवारजातिको धर्म प्रथा, भाषा, यथोपिज्ञान और उनकी वाद्यगठन प्रणालीके ऊपर लक्ष्य करनेसे यह स्पष्ट बोध होता है कि तिब्बतोय संस्क्रव भिन्न नैवारजातिके मध्य इस प्रकार प्रकारान्तर कभी भी होनेको संभावना न रहती । इनके वर्तमान धर्मके कुछ क्रियाकलाप ही इसकी एकमात्र निदर्शन हैं ।

वहुतोंका अनुमान है कि पूर्व समयमें नेपाल उपत्यका तथा इस देशसे ली कर तुषाराहत हिमालय पर्वत पर्यन्त विस्तृत स्थानमें जो सब जाति वाप करती थीं वे चीन और तिब्बन जातिके नियन्त्रणसे उत्पन्न हुई थीं । जिस समय बौद्ध गुरु मञ्जुश्रीने महाचीनसे नेपाल प्रा कर बौद्धधर्मका प्रचार किया था, उही समय भारतवासीके साथ तिब्बतोय पथवा महाचीन-वासीके संस्क्रवसे यह नैवार जाति गठन हुई होगी । फिर नैवार जातिके तिब्बतोय पूर्वपुरुगण हिन्दुस्थानवासीको पार्वतीय जातिके साथ विशाहादि करके उनके पूर्वदोषालम्ब बौद्धमतके पथवासीमेंसे नवविवाहित हिन्दुओंको धर्म प्रथाके कुछ प्रकरण सन्निविष्ट कर लिए हैं । इस कारण नैवासमें प्रचलित बौद्धधर्मके साथ हिन्दुत्वका सम्मिलन हो जानेसे उन लोगोंका बौद्धधर्ममग्न बहुत कुछ विरह भावापन हो गया है । इन लोगोंमें हिन्दु-शास्त्रोक्त नियमादिका विशेष आदर देखा जाता है ।

जिसी किमोका कहना है कि समय समय पर भारतवर्षके समस्तन क्षेत्रसे असंख्य परिव्राजक, तीर्थयात्री तथा प्रवासी हिन्दुगण नेपालको इस पवित्र उपत्यकाभूमिमें प्रा कर रहते थे । ये ही नवागत हिन्दुगण या इन लोगोंके वंशधर कालक्रमसे यहाँके प्रादिमवासो पथवा शोपनिवेशिक तिब्बन जातिके साथ विवाहादि सम्बन्धमें प्राबद्ध हुए हैं । इसी तरह सम्भव है कि भारतवासीके साथ तिब्बतके सम्मिश्रणसे इस नैवार जातिकी उत्पत्ति हुई होगी । भारतसे लाहित हो कर पथवा स्वदेशसे जो धर्म प्रचारके उद्देश्यसे यहाँ प्राये, उनमेंसे अधिकतर बौद्धमतवादी और जो तीर्थदार्शनिक उपलक्षमें पथवा हिमालयप्रदेश-परिदग्गनको कामनासे

पदां पारि, पत्रदेवे वदन् वृक्ष विन्दुषे । इमं विन्दु-  
 पत्रविन्दो के मातृ विन्दोमे सो मेवम वा जह । सोऽस्य  
 पश्य विद्या पौर कोरे स्वर्गम के तदा पाप्मा स्वाम्य  
 कश्च विन्दुपत्रके समुदाय विद्या-कलापद्या विवाह  
 करणे भवे । मेवमपरायोः सोऽना मनाइकस्मिपदि इव  
 व्यापको कटिप वना विद्या पौर वराके पादिम समि  
 सामिपको कस्यापे विवाह क गृही को गये । इव  
 पद्याः मापेन पत्रमेव अधिपानिपाने मरुप विन्दु पौर  
 कोऽस्य पकस्मि को जनेमे वे सोऽना कः पहाके पयान  
 मम समाने जामे भवे ।

अत्रि मापेन कामे इव पादिम कामिने मरुप  
 कामिपम विन्दी प्रकाका पापके देवा लको जामा वा ।  
 मे सोम विव पद्याः मारने प्रालेदिममे पवनेके जउर  
 वास कर उमपूरे व्यामार्गिक कोऽस्य पौर सोऽपि जेने से,  
 पनी प्रका इव मरुपवपुट व्यापने वास करणे भी मे  
 सोम व्यामपमः से मरुप पौर निरोह को गये । कोऽपम  
 पदम करनेके बाद इम कोऽपि मरुप मदासोम वा  
 मरुपयो पौर गृही इम सो पौ विन्दोको कटि पुर । सो  
 सोम कोऽप-परायो से वे कटि ककसाभे से । पौर पौर  
 पौर कोऽपयो पौर विभिप माकामि विमम को गरी ।  
 इम वा पौ विन्दोके मरुप भी पुनः एक सोम देपे जने  
 से । को पौको विम परिमाकमे सोमव्याम करणे से,  
 वम पौकोके मरुप मरुपपारपमे सोम प्रकाः अहता  
 काम करणे पौर ममाभमे माप्याक्य जेने से । पौर  
 मरुपमप जामा प्रकाः विवपकापौ पौर व्यापपामे  
 मरुपे रहने से ।

सिम मरुप पयामिपेने विन्दुपम की रणा-की से  
 मरुपे मरुपमप पयका पयामप निवारोमेन भी क्राक-  
 मापमपमे विन्दुपमके मरुपमो को गये । पकमेवे को  
 कामास्य मरुपमपि मरुपे कालम कोमे मी, काममपमे  
 मरुप मरुपम को विन्दुपमके परिपम को मने । इव मरुप  
 विन्दुपममपिपेनेने मरुप मरुपमपमे पुनः मरुप पदि-  
 कदिपेनेने कालमेको विन्दुपमके कोऽस्य विद्या । इव  
 मरुप इव मरुप मेदाकमपके मरुपम-पमके मरुप  
 पुर । इवके मरुप विन्दुपमपेनेने क्राकम, कालम, मेवम  
 को मरुप के मरुप मरुपम विमम मरुपम पुनः विन्दुपमे

मरुप मरुप मरुपमे मरुप मरुपम मरुप मरुपम  
 विन्दी मरुपम विमममे पापक मरुप पुनः ।

पौर कोरे विवादिपामे दो विभिप मरुपमपके मरुपम  
 पुर । सिम मरुप विवादिपामे कोऽस्य पदम विद्या, मेवम-  
 मरुपे पौर को विन्दुपमके मरुप पाप्मापान पुनः से  
 मिमोपमका करणेके बादम विममामे ककामे ।

इम दो पौ विन्दोके मरुप पुनः मरुपे मरुप मरुप-  
 विममपम मरुपे पुनः । मरुप मेवम कामिने मरुप मरुप-  
 पक मरुप विन्दुपमपमको को मरुपमिप मरुपे को  
 वा विममामापम से ।

विममामे विवादिपके मरुप मरुपमके कोरे मरुपमप-  
 मरुपे कोरमपु वा मरुपे से सोम विभिप मरुपमप-  
 से । मरुपमपे कोमे मरुपम वा मरुप (से पादि मरुप-  
 मरुपमपे से, मरुपमप के मरुप मरुप) सोऽपकेने  
 मेमिपका काम कर रहे से ) पौर मरुप (से सोम मरुप-  
 मरुपको मरुपमे से ) मरुप मेवमपे सोमे कोवि, व्यापम,  
 मरुप पौर मरुपम पावार मरुपम मरुपमप मरुपमप  
 से । मरुपमे मरुप मरुपमप पौर मेवमप मरुपम दो मरुप  
 मरुपमे मरुप से । मे सोम मरुपमपे मरुपम-मरुपम मरुप  
 से । मरुप मरुपमे मरुप, मरुपमप पौर मरुपमप मरुप  
 सोम मरुप से । मे सोम मरुपे मरुपमप मरुप मरुपमप  
 मरुपमप मरुप से । मरुप मरुपमे मरुपमे मरुपे विन्दु  
 से, कोरे भी मरुपको मरुप मरुपे मरुपम मरुप मरुप  
 मरुप मरुपम मरुपमे मरुपम से । मे सोम मरुपमपे  
 विवाह मरुपे मरुपे मरुप मरुपे मरुपे मरुपे मरुपे  
 मरुप मरुपम से मरुपे से ।

पुनः मरुपमे वा कोऽपमपमको मेवामे मेवम मरुप-  
 मरुपे मरुपमप से -

मरुप-—मरुप मरुपम वा मरुप, मरुप मरुपम मरुपम  
 मरुप से ।

मरुप-—मरुप मरुप मरुप मरुप मरुप मरुप मरुप  
 मरुपमे मरुपमप से, मरुपमे मरुपमे मरुप मरुप मरुपम से ।

मरुप-—मरुपमे मरुपे कोऽप, मे सोम विन्दु पौर कोऽप  
 कोमे मरुपमे मरुपे से । मरुपमपि मरुपमपे को मरुपम  
 मरुपमे मे सोम विममपिपामे मरुपमपम मरुप मरुपम  
 मरुपमे से ।

प्रथमोक्त बाँदा श्रेणीके नेवारोंमें पुनः ८ स्वतन्त्र थाक  
 हैं। यहाँ—१ गुमाजु, २ बड़हाजु, ३ बिखु, ४ भिछु, ५  
 निर्भार, ६ निर्भार-भाङ्गि, ७ टहामि, ८ गन्धसाङ्गि, और  
 ९ चिववा भाङ्गि। ये लोग पौरोहित्यके ले  
 कर सोने चाँदीके प्रसङ्गार, भोजनपात्रादि और बन्दू-  
 कादि बनाए, यहाँ तक कि स्वधर पादिके  
 निष्कट कर्म भी करते हैं। द्वितीय उदासश्रेणी—मभी  
 महाजन वा व्यवसायीका काम करते हैं। एक बाँदा-  
 नेवार इच्छा करने पर उदास हो सकता है; किन्तु  
 बाँदाको अपेक्षा निष्कट उदास कभी भी बाँदा-श्रेणी-  
 भुक्त नहीं हो सकता। फिर उदास-नेवारको इच्छा  
 करने पर वे जाफु नेवारके दलभुक्त हो सकते हैं। किन्तु  
 जाफुके विशेष चेष्टा करने पर भी वे तत्पक्षीभुक्त  
 नहीं हो सकते। जाफु नेवारगण खेती धारो करके  
 अपना गुजारा करते हैं। नेवार जातिके मध्य ये लोग  
 रूपवश्रेणीभुक्त हैं। इनकी एक शाखा सर्मि है। ये  
 लोग बड़े धनी होते हैं। एतद्विषय उदास श्रेणीके मध्य  
 कमार, लोहार-कर्मि ( जो पत्थर काट कर घर बनाते  
 हैं ), मिक्कर्मि, ताम्बू, चबर, मद्दिकर्मि प्रभृति छः  
 शाक हैं; तृतीय श्रेणी मियित सम्प्रदायके मध्य मज्ज,  
 दङ्ग, हुम्दार, करभुजा, जाफु वा किससिनो, बोनी, चित्र  
 कर, दातो, छिपा-कोया वा निकर्मि, नी ( नापित ),  
 सर्मि, पुल्पुल, कोशा, कोनार, गङ्गयो ( मानो ), काट-  
 ठार, टही, बलईजो, युङ्गवार, बल्ला, लमु, दंघो, पिचि,  
 गोषोवा, गन्दगाषोवा, बल्लामो, गोको, नञ्जो, नाई वा  
 कमाई, जोषी, धुन्त, पोषी, कुषू, पुरिया, चमुकलक,  
 म'धार पादि १८ विभिन्न शाक पाये जाते हैं।

नेवाल देखो।

यह नेवार जाति को एक समय नेपालकी सर्वमय-  
 कर्ता थी; वह नेपालके इतिहासमें विशेषरूपसे वर्णित  
 है। नेवारराज धर्मदत्त देवपाटनमें टानदेवका मन्दिर  
 निर्माण कर उसमें पादि तुर्बमत्ति की प्रतिष्ठा कर गये हैं  
 और पशुपतिनाथका मन्दिर भी इन्हींके द्वारा स्थापित हुआ  
 है। १६६१ ई.में देवपाटन दरवारके खर्चसे उक्त मन्दिर-  
 का संस्कार हुआ था। गुर्खा-शासनके समय मन्दिर-  
 का नाशकालसे तोड़ छोड़ डाला गया था और नेवार

राजने उसीको खर्च कर बुद्धका खर्च चलाया था \*।

नेवारियोंमें भैक और सर्पपूजा विशेष प्रचलित है।  
 भैकपूजाके विषयमें भिन्न-भिन्न लोगोका भिन्न-भिन्न  
 मत है। कोई कहते हैं, कि जिस प्रकार सभी पादिम  
 प्रसभ्य जातियोंके मध्य किमी किमी विशिष्ट जन्तुकी  
 पूजा प्रचलित है, नेवारियोंमें भैकपूजा भी उसी प्रकार है।  
 फिर किसो किषी का कहना है, कि नेवारो लोग भागपूजा-  
 के उपर विशेष प्रास्थान् हैं, इस कारण सर्पके एकमात्र  
 पाइर इस भैक जातिका समादर किया करते हैं।  
 किन्तु नेवार लोग कहते हैं, कि इस भैकके प्राधान्यसे ही  
 मर्त्यभूमि पर वृष्टि होती है और वृष्टि होनेसे देश धरा  
 भरा हो जाता है। भैक ही देशको उन्नतिका एकमात्र  
 कारण है, यह जान कर वे लोग भैककी पूजा किया  
 करते हैं। लापान हीपमें भी बड़े धूमधामसे भैककी  
 पूजा होती है।

नेवारो लोग कार्तिक मासकी कृष्ण सप्तम्यकी यह  
 पूजा करते हैं। इस दिन वे नाना प्रकारके द्रव्य ले कर  
 किसी पुष्करिणीमें जाते और वहाँ उन सब द्रव्योंको रख  
 कर छतके संयोगसे अग्नि जलाते और मन्त्र पढ़ते हैं।  
 मन्त्रका मर्म इस प्रकार है, "हे परमेश्वर भूमिनाथ!  
 हम लोगोको प्रार्थनाके अनुसार यह उपहार ग्रहण  
 कीजिए और समय समय पर जल दे कर हम लोगोके  
 शस्यकी रक्षा कीजिए।"

जब मच्छुओ महाचीनसे इस नेपालराज्यमें पधारें थे, उस  
 समय काठमाण्डूका उपत्यकादेश जलपूर्ण था। मच्छुओ-  
 ने अपनी पत्नीक एक चमता दिखलानेके लिये पर्वत-  
 को काट कर वह संचित जल बाहर बहा दिया जलमें  
 जो सब सर्प और पश्यान्व जलजन्तु हैं वे धीरे धीरे  
 जलस्रोतसे बाहर निकल पड़े। जब नागराज कर्काटक  
 द्वारसुख पर आ खड़े हुए, तब मच्छुओने उन्में भीतरमें  
 रहनेका पशुरीष किया और उनके रहनेके लिये टण्डा  
 नामक एक विस्ष्टत ऋद्ध वा पुष्करिणी निर्दिष्ट कर दी।  
 नागराज कर्कोटकका महादाम्य-प्रकाशके लिये नेपालमें  
 सर्पपूजा प्रचलित हुई।



चल दिये। यहाँ उनकी कब्रके ऊपर लिखा है कि ७०२ हिजरीमें उनकी मृत्यु हुई। सभी अधिवासी उन्हें यति वा ब्रह्मचारी मानते हैं।

हिमो किचोका कहना है, कि यह बाङ्गड़-मज नगर उक्त सुनसमान सन्यासोमें बसाया गया था, किन्तु जनसाधारणोंमें ऐसा प्रवाद है, कि यहाँ बाङ्गड़ नामका एक धोवो रहता था। उन्हींके नामानुसार इस नगरका नाम बाङ्गड़-मज पड़ा। सुनसमान सन्यासीको कब्रके सामने उनकी भी कब्र खोदी गई थी। जो कुछ हो, यह गल्प मूल्य नहीं होने पर भी उस समय पर्याप्त तिरहवीं शताब्दीमें जब यह फकीर नेवाल नगरमें भाये हुए थे, तब वे नगरकी सुन्दरता देख कर विमोहित हो गए; इनमें जरा भी रुन्देह नहीं। यथाथमें जिस समय यूपन-सुपङ्ग इस स्थानको देख गए थे, उस समय उनके परवर्ती छः शताब्दियोंमें भी उन सब प्राचीन कौत्तिके कुछ अंश बच रहे थे, यह सङ्गति ही अनुमान किया जा सकता है।

बाङ्गड़के समाधिमन्दिरमें जो प्रस्तरलिपि है उससे जाना जाता है कि वह मन्दिर ७०२ हिजरीमें फिरोजशाह तुगलकके राजत्वकालमें निर्माण किया गया था। सुनसमान समाधिमन्दिरको ईंटें १५×१२ इंच हैं और उन पर उनकी चार श्रद्धालियोंके चित्र देखे जाते हैं। इसके बरामदे और सम्युखभागमें प्राचीन हिन्दू राजाओंके समयका स्तम्भ विद्यमान है। जिस ऊँचे टोलेके ऊपर यह मन्दिर स्थापित है, वह किसी प्राचीन हिन्दू-कौत्तिके भग्नावशेषके अवशेष देखनेमें लगता है। नेवालमें प्राचीन ध्वंसावशेषके मध्य क्षेत्र ऊँचे ऊँचे टोले, दीवार, टेढ़ी ईंटें, पत्थरकी भग्न प्रतिमूर्ति, जकी हुई मिट्टीका कारुकार्य और पुस्तकिकादि तथा भिन्न भिन्न समयकी मुद्रा और माला पाई जाती है।

यहाँ जितने टोले हैं उनमेंसे देवराडि नामका टीला सबसे बड़ा है। इस स्थानको खोदते समय दो बड़े प्राचौर देखे गए जिनकी प्रत्येक ईंट १५×८ इंच लम्बी थी। शीतलादि टोलेमें एक चतुर्भुज विष्णुमूर्ति और कई एक बुद्धदेवके मुख पाये गए हैं। यामने साङ्ग-नीन हज़ार फुट पश्चिमोत्तर दिगामें 'दाभोवेरो' नामका

एक दूसरा बड़ा ऊँचा टीला है। यहाँ ब्राह्मणोंके प्राचीन एक मन्दिर और कुछ प्रतिमूर्तियाँ हैं। नेवाल यामके उत्तरागममें महादेव और कुनवाडो नामक दो स्थान हैं। यहाँके मन्दिर ब्राह्मणधर्मके परिचायक हैं। इनके पूर्व और उत्तरपूर्व दिगामें पवनाईनालाके और भी कुछ स्तूप तथा इटकानि देखे जाते हैं।

यूपनसुपङ्गने नवदेव नगरके विषयमें यों लिख है,—इस नगरके उत्तरपश्चिम तथा गङ्गाके पूर्वी किनारे एक देवालय था जिसका मण्डप और गिखर बहुत ऊँचा और कारुकार्य भी मनोरम था। नगरमें एक भीलपूर्व तोन बौद्ध महाराम थे। उन महारामको पार कर दो सौ पाद जानेके बाद भगोकरनिर्मित १०० फुट ऊँचा एक स्तूप देखा जाता है। यहाँ बुद्धदेवने सात दिन तक धर्ममतको गिखा दो थी। इसी स्तूप पर उनकी शरीर गाढ़ा गया था। इसके पास ही शिपोल चार बुद्धके बैठनेके आसन और उनके भ्रमणस्थान हैं। उपर्युक्त तोन महारामसे भाध मोल उत्तर गङ्गाके किनारे भगोकरनिर्मित दो सौ फुट ऊँचा एक और स्तूप है। यहाँ बुद्धदेवने ५०० राक्षसोंको अपने मतमें प्रवर्तित किया था। इनके समूह चार बुद्धासन हैं। कुछ दूरमें बुद्ध देवका केग और नखपोठ नामक एक दूसरा स्तूप देखनेमें आता है।

वक्त मान नेवालग्राम और बाङ्गड़मजमें जो सब ध्वंसावशेष हैं उनके साथ यूपनसुपङ्ग-वर्षित बौद्ध और हिन्दू कौत्तियोंको तुलना करनेसे दोनोंमें बहुत सादृश्य देखा जाता है। इसके सिवा जिस स्तूप पर बाङ्गड़ राजकी क्षम है, प्रत्नसखविद् उसीको बुद्धदेवका केग और नखपोठ मतलाते हैं। पसोसाडो-कीरोगो (Osina-de-Korose) साङ्गने अपने तिब्बतीय योद्धा-ग्रन्थकी समालोचनाके समय एक ग्रन्थमें एक गल्पका उल्लेख किया है जो इस प्रकार है,—सम्यक नामक एक शाक्य कपिलवस्तुमें भगवते ज्ञान पर वे बुद्धने नव और देश अपने साथ ले भाये थे और बाङ्गड़ नामक स्थानमें रहने लगे थे। बाङ्गड़के राजा हो कर उन्होंने नव और देशको महीके पन्दर गाड़ दिया और उसके ऊपर एक चैत्यका निर्माण किया। वह कौत्तिके स्तम्भ उन्हींके



बल दिये। यहाँ उनकी कब्रके ऊपर लिखा है कि ७०२  
हिजरीमें उनको खलु हुई। सभी अधियासो उन्हे यति  
वा ब्रह्मचारी मानते हैं।

किसी किशोका कहना है, कि यह बाङ्गड़-मज नगर  
उक्त सुमनमान संन्यासोसे बसाया गया था, किन्तु जन-  
साधारणोंमें ऐसा प्रवाद है, कि यहाँ बाङ्गड़ नामका एक  
धोचो रहता था। उन्हीके नामानुसार इस नगरका नाम  
बाङ्गड़-मज पड़ा। सुमनमान संन्यासीको कब्रके सामने  
उसकी भी कब्र खोदी गई थी। जो कुछ हो, यह गल्प  
सत्य नहीं होने पर भी उस समय पर्याप्त तिरछीं शताब्दी-  
में जब यह फकीर नेवाल नगरमें भागे हुए थे, तब  
वे नगरकी सुन्दरता देख कर विमोहित हो गए; इसमें  
जरा भी सन्देह नहीं। यथायथं जिस समय यूपन-  
सुपङ्ग इस स्थानको देख गए थे, उस समय उनके पर-  
वर्ती छः शताब्दियोंमें भी उन सब प्राचीन कौत्तिके कुछ  
अंश बच रहे थे, यह महज्जमें ही अनुमान किया जा  
सकता है।

बाङ्गड़के समाधिमन्दिरमें जो प्रस्तरलिपि है उससे  
जाना जाता है कि यह मन्दिर ७८२ हिजरीमें फिरोज-  
शाह तुगलकके राजत्वकालमें निर्माण किया गया था।  
सुमनमान समाधिमन्दिरको ईंटे १५×१२ इंच हैं  
और उन पर उनकी चार शङ्खलियोंके चित्र देखे जाते  
हैं। इसके बरामदे और सम्युधभागमें प्राचीन हिन्दू-  
राजाओंके समयका स्तंभ विद्यमान है। जिस ऊँचे  
टीलेके ऊपर यह मन्दिर स्थापित है, वह किसी प्राचीन  
हिन्दू-कौत्तिके भग्नावशेषके जेपा देखनेमें लगता है।  
नेवालमें प्राचीन ध्वंसावशेषके सध केषल ऊँचे ऊँचे  
टोले, दीवार, टेढ़ी ईंटे, पत्थरकी भग्न प्रतिमुक्ति,  
जली हुई मिट्टीका कारकाय और पुत्तलिकादि तथा  
भिन्न भिन्न समयकी मुद्रा और माला पाई जाते हैं।

यहाँ जितने टोले हैं उनमेंसे देवराडि नामका टीला  
सबसे बड़ा है। इस स्थानको खोदते समय दो बड़े  
प्राचोर देखे गए थे जिनकी प्रत्येक ईंटे १५×८ इंच  
लम्बी थी। शीतलादि टीलेमें एक चतुर्भुज विष्णु मूर्ति  
और कई एक बुद्धदेवके मुल पाये गए हैं। यामने सादे-  
मोन हजारा फुट पश्चिमोत्तर दिगामें 'दानोघरो' नामका

एक दूसरा बड़ा ऊँचा टीला है। यहाँ ब्राह्मणोंके प्राचीन  
एक मन्दिर और कुछ प्रति मूर्तियाँ हैं। नेवाल यामके  
उत्तरागममें महादेव और फुलवाड़ी नामक दो स्थान हैं।  
यहाँके मन्दिर ब्राह्मणधर्मके परिचायक हैं। इनके  
पूर्व और उत्तरपूर्व दिगामें पथनाई नालाके और भी  
कुछ स्तूप तथा इटकादि देखे जाते हैं।

यूपनसुपङ्गने नवदेव नगरके विषयमें यों लिख  
है,—इस नगरके उत्तरपश्चिम तथा गङ्गाके पूर्वी किनारे  
एक देवालय था जिसका मण्डप और शिखर बहुत  
ऊँचा और कारुकायं भी मनोरम था। नगरसे एक  
मील पूर्व तीन बौद्ध मठाराम थे। उन मठारामको पार  
कर दो सौ पाद जानिके बाद अगोकरनिर्मित १०० फुट  
ऊँचा एक स्तूप देखा जाता है। यहाँ बुद्धदेवने सात दिन  
तक धर्ममतको गिचा दो थी। इसी स्तूप पर उनका  
शरीर गाड़ा गया था। इसके पास ही शिपोल चार बुद्धके  
बैठनेके आसन और उनके भक्षणस्थान हैं। उपर्युक्त तीन  
मठारामसे आध मील उत्तर गङ्गाके किनारे अगोक-  
निर्मित दो सौ फुट ऊँचा एक और स्तूप है। यहाँ  
बुद्धदेवने ५०० राक्षसोंको अपने मतमें प्रवर्तित किया  
था। इनके समीप चार बुद्धासन हैं। कुछ दूरमें बुद्ध  
देवका कैग और नखपोठ नामक एक दूसरा स्तूप देवने-  
में प्राता है।

वक्त मान नेवालग्राम और बाङ्गड़मजमें जो सब  
ध्वंसावशेष हैं उनके माय यूपनसुपङ्ग-नर्णित बौद्ध  
और हिन्दू कौत्तियोंको तुलना करनेसे दोनमें  
बहुत सादृश्य देखा जाता है। इसके सिवा जिस स्तूप  
पर बाङ्गड़ राजकनी कब्र है, प्रव्रतस्त्वविद् उसीको बुद्ध-  
देवका कैग और नखपोठ व्रतलाते हैं। कसोमाडो-फोरोनो  
(Cosma-de-Koroso) साहबने अपने तिब्बतीय योद्ध-  
ग्रन्थको समालोचनाके समय एक ग्रन्थे एक गल्पका  
उल्लेख किया है जो इस प्रकार है,—सम्पक नामक  
एक शाक्य कपिलवस्तुमें भगाये जाने पर वे बुद्धके नख  
और कैग अपने माथ ले भाये थे और बागुड नामक  
स्थानमें रहने लगे थे। बागुडके राजा हो कर उन्हीं नख  
और कैगकी महीके पन्दर गाड़ दिया और उनके ऊपर  
एक चैत्यका निर्माण किया। वह कौत्तिके स्तंभ उन्हींके



प्रायःप्रायःकाले नगरदेवकी यद् पूजा चौर उक्त  
 होता है। जहाँ चौर वा पंग जनपदों पर यह भाव मिल  
 गई है, वहीं स्थान पूजा के लिये उक्त समझा जाता  
 है। इस पूजा में एक सुरोहित प्रायःप्रक है। इस दिन  
 यह सुरोहित प्रायःप्रक समान करके चावल, सिद्धू,  
 समान भागमें मिश्रित सुग्घ चौर जन, फूल, सुग, मखन,  
 ज्ञायकन, ममाका, चन्दन चौर धुना पादि उपकरण एक  
 पात्रमें रख लीटोत शनि चौर पूजा समान करके घर  
 छोटे हैं। अथवा चौर ने शक सभ्यते देखो।

नेवारी ( हिं० खो० ) छुड़ी या चनेकोही ज्ञानिका एक  
 पोषा। इनमें छोटे छोटे सफेद फूल लगते हैं। पत्तियाँ  
 इसकी कुंठ या खुड़ीको-भो होती हैं। यह पोषा बर्षा-  
 ऋतुमें अधिक फूलता है। फूलोंमें बड़ी पच्छी भोनी  
 मकड़ होती है। इसे बनमलिका भी कहते हैं।

नेवाल—पयोया प्रदेशके बाङ्ग-मज नगरसे २-मीन  
 उत्तर कण्ठापो नदीके समीप पचलाई नामके जंगल  
 स्थित एक प्राचीन वाम। यहाँ चनेक मूर्ति का चौर  
 इकादिके स्तूप देखनेमें पारते हैं। यही भन्वावर्ष  
 इसके प्राचीनत्व का परिचायक है। यह काम्यकुकराज-  
 धानीमें प्रायः १८ मीन दक्षिणपूर्व गङ्गा नदी के किनारे  
 पर्वतस्थ है।

चौर शक्तिराजक फाहियान चौर युएनलु इका जनप-  
 दक्षाना पड़नेमें जाना जाता है कि ये काम्यकुकरने बाहर  
 निहल कर गङ्गा नदी पार हुए। पोछे उक्त महानगरीमें  
 प्रायः ३००० या १००० लोग ही रहते थे। कर से  
 दक्षिण दिशा में नवदेवकुल (No-pa-li-po-Kiulo) नामक  
 एक मूर्तिस्थानी नगर पड़ै है। युएनलुइने इस नगर-  
 के नामके सम्बन्धमें लिखा है, कि बुद्धदेव यहाँ पंग मी  
 राजकी ही धर्म का उपदेश दिया। उन चरुगेने बुद्ध-  
 देवसे धर्म का उपदेश पा कर दण्डवत्ति होइ दो चौर  
 गया अन्न प्राप्त किया। इस स्थानमें नूतन देवजातिकी  
 उत्पत्ति हुई, इस कारण वामका नाम 'नवदेव-कुल'  
 रखा गया।

डा० कनिं हम नेवाल वामकी प्राचीन कीर्ति देव  
 कर विस्मृत हो पड़े चौर चनेने अनुमानमें समस्त  
 भू-भाष्येयकी प्राचीन नवदेव-कुल नगरीका निर्देश  
 बतलाया। चनेने यह भी कहा है, कि युएनलुइने  
 नगरके परिदृश्यके समय तिन सब शब्दादिका उल्लेख  
 किया है, उनको अच्छी तरह पालोचना करनेमें साक्ष्य  
 पड़ता है कि वर्तमान नेवाल चौर बाङ्ग-मज नगरमें  
 जो सब भग्न शब्दादि चौर स्तूपपादिका अभावमें है,  
 वही उस प्राचीन कीर्ति का स्फुटान्तरमात्र है। बाङ्ग-  
 मज नगरसे नेवाल दो मील दूर होने पर भी बाङ्ग-  
 मजके प्रायःभागमें स्थित जो टीला देखा जाता है, वह  
 स्थानसे नेवाल वामकी दूरी एक मीलसे भी कम होगी।  
 युएनलुइने नवदेवकुल नगरका चिरा प्रायः तीन मील  
 लिखा है। यदि ऐसा हो, तो अनुमानके यह अर्थ  
 सकते हैं, कि वर्तमान नेवालवाम चौर बाङ्ग-मजके  
 पंगमें प्राचीन भग््न शब्दादि हैं। उनका बहुत कुछ  
 पंग से कर उस समय दण्डनतापूर्वक मूर्तिस्थानी  
 नवदेवकुल नगरी गठित हुई होगी।

यहाँके अभावमें एक विषयमें अधिवाचियोंके सुचने  
 ऐसा सुना जाता है, कि एक समय यह नगर बहुत  
 मूर्तिस्थानी चौर इमारतोंमें परिपूर्ण था। मुसलमानों-  
 के प्रथम आक्रमणके समय यहाँ नर नामक एक हिंदू  
 राजा वास करते थे। इस समय सैयद अलाउद्दीन बिन  
 चातुन नामक कौर फकीर इन स्थान पर रहनेकी  
 इच्छामें काम्यकुकरने रवाना हुए। राजाने अपने राज्यमें  
 पयल हा मान होना पसन्द न किया चौर उस फकीरकी  
 दूरसे देग चने जानेका हुकूम दिया। फकीरने उसकी  
 बातको अवज्ञा कर दी। इस पर राजाने अपना बहुत  
 मीन कर उके बाङ्ग-मजने निवारण भागाया। जति  
 संघ फकीरने श्राव दिया, 'तेरा राज्य मोत्र हो  
 भूमिमात्र होगा।' राज भी इस आनेके अभावमें  
 पंगकी वहाँके लोग उन्हे खैरा (उलट पलट) नगर कहते  
 हैं। उनका विश्वास है कि उस फकीरके श्रावने यहाँ  
 जितने मकान थे वही उलट गये चौर उक्त भन्वावर्ष-  
 का पत्तो केवल एक टीला रह गया है। फकीरकी नेवाल-  
 में स्थान न मिलने पर ये बाङ्ग-मज नामक स्थानकी

• Inst. Fa. Lib., Chip., XVIII. p. 71.  
 † Journ. of the Soc. Ta ang, Vol. II, p. 265.

क्रिया तथा शरदके अन्यान्य स्थानों पर भी देखल  
जमाया ।

५०२ ई०सन्के पहली भाप पपनी सेमाके अधि-  
नायक हो कर इजिप्ट राज्यमें गए और वहाँके अधिपति  
होफोकी पराजित कर राज्यमें लूटमार मचाने लगे ।  
वेहि पहमेय नामक एक सेनापतिको उस प्रदेशका  
शामनकर्त्ता बना कर प्राप बाबिलन लौटे । इस समय  
बाबिलन राज्य उसतिकी चरम सीमा तक पहुँच  
गया था ।

महाराजशाही सम्राट्, नेबूकाडनेजरके राजत्व-  
कालमें ही बाण्ड्यकी उत्पत्तिकी पराकाष्ठा भूलकने लगे  
थे, उनके शासनकालमें इजिप्ट और बाबिलनवासी  
भारतवर्षमें बाण्ड्यके लिये प्राया करते थे । उनके  
प्रतिद्वेषे इजिप्टराज २५ निकोने बाण्ड्यविस्तारके  
लिए नौलनदोके साथ होहितसागरके संयोगार्थ एक  
नहर काटनेका इरादा किया ।

नेबूकाडनेजरने बहुतसे मन्दिर बनवाये थे । बेबि-  
लनका प्रसिद्ध 'सिंगल' मन्दिर और तेमिन-समिश्त्-  
मिति नामक स्तूप, यक्षो टिस नदीके किनारे अवस्थित  
तीर्थ स्थान और धर्म मन्दिर-समूह तथा बेबिलन नगरके  
चतुर्दिक्क्ष विख्यात और प्रशस्त प्राचीरका उन्नीने  
पुनर्निर्माण कराया । बेबिलन महानगरीमें जो 'घाकाश-  
उद्यान' ( Hanging Garden of Babylon ) सभ्य-  
जगत्के मध्य प्राच्यकौत्ति' समझा जाता है और जो  
निर्माताके पत्नीके कार्य तथा अधीन बुद्धिका परि-  
चायक है, सम्राट् नेबूकाडनेजर परामित धर्म श्रय  
करके जंगलमें उस पर्व्व कौत्तिकी प्रतिष्ठा कर गए हैं ।

दानियेल-लिखित घटनावली पढ़नेसे जाना जाता  
है कि नेबूकाडनेजर उदावस्थामें उरमाद रोमपदत हुए ।  
ई०सन् ५६२ वर्षके पहले उनकी मृत्यु होने पर उनके  
पुत्र बमिस मरुदकने राज्यभार ग्रहण किया । दानियेल  
और एज्कायेल पुस्तकमें उनके नामकी विभिन्न परि-  
भाषा देखी जाती है । विपुलन गिलालियिमें उनके तीन  
नाम देखे जाते हैं, नवोखोद्रेसर, मखुद्रुधर और नव-  
खुद्रुधर । सुसलमान ऐतिहासिकोंने इन्हे 'बसत् बल-  
नसर' नामसे उल्लेख किया है ।

नेट ( स० त्रि० ) न इटम्, नजर्यून शब्देन सह सुए-  
सुपेति समासः । १ अनिट । २ लक्षाधननिमित्त, जो शास्त्र-  
में निषिद्ध बतलाया गया है, उसका पनुष्ठान करनेसे  
अनित होता है, इसीसे उसे नेट कहते हैं ।

नेटा ( हि० पु० ) नेष्टु, देखो ।

नेष्टु ( स० पु० ) निश-नुत्तु । लोड्ड, टेला ।

नेष्टु ( न० पु० ) नयति शुभमिति नो-ष्टन् प्रत्ययेन साधुः  
( नष्ट्नेष्टु, ष्टोति । उण्, २।६६ ) १ ऋत्विक् । २ ल्वट्-  
देव, ल्वटा देवता ।

नेस ( फा० पु० ) जङ्गलो जानवरोंके लम्बे मुकीले दाँत  
जिनसे वे काटते हैं ।

नेसकुन ( हि० पु० ) बन्दरोंका जोड़ा खाना ।

नेसर्गो—बम्बई प्रदेशके बेलगाँव जिलान्तर्गत प्रापगाँव  
तालुकका एक नगर । यह प्रापगाँव मुद्रसे ३३ कोस  
उत्तर बेलगाँवसे कुलादगी जामिके रास्ते पर अवस्थित  
है । प्रति सोमवारको यहाँ ह्वाट लगती है । बम्बययन  
और बलहार निर्माण यहाँके अधिवासियोंका प्रधान  
व्यवसाय है । यहाँका वासवका मन्दिर बहुत प्राचीन है ।  
इसके अर्ध-वासविका कारुकार्य बड़ा ही सुन्दर है ।  
मन्दिरके सामने वासवेश्वर शिवकी उद्दृश्यसे प्रति धर्म  
एक उत्सव होता है । रत्नशाय राजा धर्म कात्त वीर्य-  
के राजत्वकालमें ११४१ शकमें उत्सोर्ण एक गिला-  
लिपि मन्दिरमें सलन है । उक्त शिलाफलकसे  
जाना जाता है, कि नेसर्गो प्रादि छः ग्रामोंके शामन-  
कर्त्ता बाचेयनायकने तीन मन्दिर बनवाये और राजा  
कात्त वीर्यके प्रादेशानुसार उक्त मन्दिरादिके व्ययके  
लिए कुछ भूमि दान की गई । यहाँके धर्मभग्न जैन-  
मन्दिरमें जो जिनमुक्ति प्रतिष्ठित है उसके नीचे ११वीं  
वा १२वीं शताब्दीके प्रचलित प्रश्नोंमें खोदित एक और  
शिलालिपि है । १८०० ई०में दुर्गियावाचका पोष्ठा  
करनेमें नेसर्गोके 'दिगाई' सरदार दनधनके साथ चंपेज-  
सेनापति बेलेश्वरीके साथ मिल गए थे ।

नेष्ट ( फा० वि० ) जो न हो ।

नेष्टा ( फा० स्त्री० ) १ अनस्तित्व, न होना । २ प्राप्त्य ।  
३ नाय, बर्वादी ।

नेह ( हिं० पु० ) १ खेद, वेम, पीति । २ वि० भा.  
ने० या सी ।

नेहद्वारा—एक पवित्रिभोज्य मिलापति । निजामशाही  
शासनमें जय चांदबीबीने बालकराज बहादुर खांको पवि-  
त्रिभोज्य दूजे घो, उस समय ( १६८४ ई०में ) नेहद्वारा  
मिलापतिके वर निवृत्त थे । राजा इम्रादिम खांको  
मृत्युके बाद प्रधान मन्त्रीने मियाँ मञ्जू पदमद नामक  
एक दूतके बालकको राजा बनानेका विचार किया ।  
मिलापति इत्यानाम पतिने पदमदके राजवर्गोपत्य पर  
मन्देश करके हुए एक घोर बालकको राजा बना कर  
घ पला कर दो । नेहद्वारांने प्रथम सुरक्षित निजाम  
राज्यके हृदय मगधपत्तको भो जिनकी उम्र ७० वर्ष-  
की थी, मिंहासनके प्राचीनपति उपस्थित किया । इधर  
सुभगताना चांदबीबीने इम्रादिमके पुत्र बहादुरकी यद्यार्थ  
उपराधिकारी समझ रखा था । इस प्रकार एक मिंहा-  
सन पर तीन बालक राजपदके प्रतिद्वंद्वी हुए । पकबरके  
पुत्र मोरदने मियाँ मञ्जूका साथ दिया । सुगलपुत्रने  
इत्यानाम खां पराजित हुए । नेहद्वारां सुगलनेमानी  
भेद परते हुए पदमदनगर मठमें पहुँचे घोर चांद सुन-  
सागाके साथ मिल गए । मिंहासन प्राचीं गाहपत्ती युद्ध  
में अपने पत्न्युधरके साथ मारे गए । इसके बाद नेहद्वारां  
मन्दिपद पर पवित्रिभोज्य हुए । इस समय चांदबीबीके  
साथ सम्प्राप्त पकबरका युद्ध लड़ा । पकबरके पक्षीन  
७५ सुगल लोग पचमर हुए, तब नेहद्वारांने पदमे लो उन्हे  
रोषनेही चूष कोमिग को, सिंकिन पोले उन्हे जूनोर  
नामक स्थानमें भाग जाना पड़ा ।

बहादुर निजामशाह के लो ।

नेहाल—प्राचीन्य वादिम जातिविशेष । वरारके पन्त-  
गत बारा गदीके खिन्नेर मिलाघाट नामका लो वर्तत है  
उन्हे जङ्गलमें रहना साम है । ये लोग कल मूल रखा  
कर पचना मुकारा करते हैं । जातिमें ये गाढ़में निकट  
समझि जाते हैं । कहीं कहीं इस जातिके लोगोंने मोह-  
त्रे उन्हा दामत्य लोकार कर लिया है । कान्देशमें ये  
लोग लोग जातिके साथ एक श्रेयोपति पावत्य है ।

ने ( हिं० स्त्री ) १ लो । ( पा० स्त्री० ) २ बांसकी  
गली । ३ दुकके लो गिलासी । ४ बांसुरी ।

नेक ( मं० स्त्री० ) निःपक्ष भाव, पक्ष । ( वि० कृ० )  
नेक ( मं० स्त्री० ) न पक्षः नक्षत्रं गण्डेन महसुदेन  
समाप्तः । १ पक्षेक, वदुत । ( पु० ) २ विष्णु ।

नेकवर ( सं० स्त्री० ) नेकः संघोभूय परातीति पर-  
संघोभूयवरो, जो पक्षे न लक्ष्मते ही, लुंठनें पक्षे  
ही, लैमे सुपर, मित्थिया, हिरन पाटि ।

नेकज ( मं० पु० ) नेकभा जायते जन-  
त्वात् धा लोपः । धर्मरसाके विषे पक्षेक वार लायमान,  
परमेश्वर ।

नेकटिक ( मं० स्त्री० ) निकटे यमति निकट-  
वधि । वा शाशाब्दे । निकटवर्ती, निकटव्य, समीपवा ।  
नेकव्य ( मं० स्त्री० ) निकटव्य भावा, निकटपत्र,  
निकटव्य, निकट धीतिका भाव ।

नेकनी ( मं० स्त्री० ) नेकं तापते ताप-  
डीय । १ गोठो । तत्र भय पन्थादित्वात् पक्ष । ( स्त्री० )  
२ नैयत-गोठीभव ।

नेकदग ( मं० पु० ) विद्यमानिके एक पुत्रका नाम ।  
( भारत ११२५३३ मं० )

नेकधा ( मं० पक्ष्य० ) नेक प्रकारे धाव् । पक्षेक प्रकार,  
करे तरह ।

नेकपठ ( मं० पु० ) राजपुत्रभेद ।  
नेकभेद ( मं० स्त्री० ) नेकी भेदोपत्य । उन्हावध,  
पक्षेक प्रकारका ।

नेकमाय ( मं० स्त्री० ) नेका माया त्यस्य । १ पक्षेक  
क्षपट, बहुमकार मायायुक्त । ( पु० ) २ परमेश्वर ।  
नेकदप ( मं० स्त्री० ) नेकं रूपं त्यस्य । १ जानकर ।  
( पु० ) २ परमेश्वर ।

नेकपथ ( मं० स्त्री० ) बहुवर्षगमन्यित ।  
नेकगम् ( मं० स्त्री० ) बहुवार, पक्षेकवार ।  
नेकगणमय ( मं० स्त्री० ) नानाविध पक्षयुक्त ।  
नेकपथ ( मं० पु० ) नेकानि पत्तारि शृङ्गाणि दर्शय ।  
परमेश्वर । "नेकपथो गङ्गापथः" ( विष्णुप० ) भगवान्  
विष्णुहे तीन घेर घोर चार लोग सानि गये हैं ।

नेकपेप ( मं० पु० ) निकटमाया पचयं टक्क । निःकथा  
अत्र, राक्षस ।

नैकमानु ( स० पु० ) नैके सामनवो यस्य, पर्वतभेद, एक पहाड़का नाम ।

नैकमानुचर ( स० पु० ) नैकमानो चरतीति चर-ट । ग्रिय, महादेव ।

नैकाकनु ( स० पु० ) नैक आत्मा स्वरूपं यस्य । पर ब्रह्म, परमेश्वर ।

नैकुम्भ ( स० स्त्री० ) जैपालवोज, जमानगोटका बोया । नैकतिक ( स० त्रि० ) निजत्या परापकारेण जीवति

निजत्या निद्ररतया चरति वा निजति ठक् । १ दूमरेकी हानि करके निष्ठुर जाविका करनेवाला । २ ऋट भाषी ।

नैकेनहुत्ता—महिसुरके अन्तर्गत एक सुन्दर नगर । यह चित्तमदुर्गमें २१ मील उत्तर-पश्चिममें अवस्थित है ।

नैखान्य ( स० त्रि० ) निखनभयोव्य, खोदने या गाड़ने लायक ।

नैगम ( स० स्त्री० ) निगम एव ध्वार्यं षण् । १ ब्रह्म-प्रतिपादक उपनिषद्बुद वेदभाग । २ नय, नीति । निगमे भव षण् । ३ वर्षिक जन । ४ नगर । ५

निघण्टु-ग्रन्थाम्भेद । ६ ऋति । ७ पथ । ८ नायक । ९ नगरवासी मनुष्य । ( त्रि० ) १० निगमसम्बन्धी ।

११ जिसमें ब्रह्म आदिका प्रतिपादन हो । १२ निगम-शास्त्रवेत्ता ।

नैगम—पठारी जातिके एक राजा । सोधल्यऋषिकुलमें राजा जाह्नलिकके वंशमें इनका जन्म हुआ था । एक घोरा इनके कुल देवता थे ।

नैगम—देवार्थज्ञ । गुप्तशिलालिपिमें लिखा है, कि विष्णुवर्धन राजाके समयमें पट्टिदत्त नामक किसी राज-कर्मचारीसे निगमविद्याका विशेष भादर हुआ । इसीसे उक्त शिलालिपिमें पट्टिदत्तको नैगमका भादि पुरव दत्तनाया है ।

नैगमनय ( स० पु० ) यह नय या तर्क जो द्रव्य और पर्याय दोनोंको सामान्यविशेषयुक्त मानता हो और कहता हो कि सामान्यके बिना विशेष और विशेषके बिना सामान्य नहीं रह सकता ।

नैगमिक ( स० त्रि० ) निगमे भयः, तस्य व्याख्यातो वा ऋगग्रन्थादित्या ठक् । १ निगमभव, जो निगमसे

उत्पन्न हो । ( स्त्री० ) २ तदव्याख्यान प्रत्य । ३ उसका अध्याय ।

नैगमिय ( स० पु० ) १ कुमारानुचरभेद, कात्तिकेयके एक अनुचरका नाम । २ सुश्रुतीक बालग्रह भेद ।

नैगमिय ( स० पु० ) सुश्रुतीक बालग्रहभेद । सुश्रुतमें ८ बालग्रहभेदका उल्लेख है जिनमेंसे नैगमिय नवम ग्रह है । इसके द्वारा पोलित होनेसे बच्चोंके सुहृदये फेन गिरता है, वे रोते हैं, वीचने रहते हैं, उन्हें स्वर होता है तथा उनको दृष्टि ऊपरको टंगो रहती है और देखसे चरबोकौ-सो गंध आती है ।

इसकी चिकित्सा—विषय, अग्निमन्त्र, नाटाकरञ्ज इन सबका क्षाय और सुपा, काजी, धान्यान्त परिपेचन, प्रियदू, सरलकाष्ठ, अमन्तमूल, कुटबट, गोमूत्र, दधि-मसु और अम्लताण्डो इनके योगसे तेल पाक करके अथवा करना होता है । दग्मूलका क्षाय, दुग्ध और मधुसूय तथा खजूरकी ताड़ो इन सबके योगसे पाक करके छतपान, हरीतकी, जटिका और वचका अङ्गमें धारण, श्वेतसर्पप, अष्य, डिङ्गु, कुष्ट, भलातक और अज-मोदा इनका धूप प्रदीप्य है । रातको सबके सो जाने पर बन्दर, चहू चिड़िया और गिद्धको विष्टाके बने हुए धूप, तिल, तण्डुल तथा विविध प्रकारके भक्षद्रव्योंसे इस ग्रहका पीहके नीचे पूजन करना चाहिए । बट हृदके नीचे इसका पूजन करना प्रयत्न है । इस ग्रहका छान-मन्त्र इस प्रकार है—

“अमानववलाभिभ्रुः कामरूपी महापणः ।

बालं पालयिता देवी नैगमेयोऽभिरुद्धु ।”

( द्रव्यत उत्तरतन्त्र ७५ अ० ) नवग्रह देखो ।

नैगमोपावृद्धत ( स० पु० ) नागोदर, सोनावद ।

नैगीय ( स० पु० ) सामवेदकी एक शाखा ।

नैघण्टु ( स० स्त्री० ) निघण्टुः पर्वोद-ग्रन्थमधिकृत्य प्रहसं ठक् । भाव्यरुचित प्रथमाध्यायत्रयात्मक निघण्टुः ग्रन्थका प्रथम काण्ड ।

नैचा ( फा० पु० ) दुक्केकी दोहरी नकी जिसमें एकके सिरे पर चिलम रखी जाती है और दूसरेका और मुँहमें रख कर धुर्वा खीचते हैं ।

नैचावद ( फा० पु० ) नैचा बनानेवाला ।

नेत्राक्षदी ( छा० श्लो० ) नेत्राक्षदीनां काम ।  
 नेत्राक्षदी ( मं० श्लो० ) शूद्र-मन्त्रश्री धन ।  
 नेत्रिक ( मं० श्लो० ) मोघा भवतोति ठक् । गो गिरी-  
 भाग, गाय खादि चोपावीका भाषा ।  
 नेत्रिकी ( मं० श्लो० ) मोघं चरतोति ठक्, वा निचिः  
 मोघं चरतोति ठक्, ततः चार्यं कन्, प्रथमं निचिक-  
 मन्वाः ततो ष्योः खादिभ्य इत्यच्, ततो ङीप् । उत्तम-  
 गामी, चक्षुः गाय ।  
 नेत्रिक्य ( मं० श्लो० ) निचिः भवः, नादित्वात् ख्य ।  
 निचिः देशभव ।  
 नेत्रो ( ङि० श्लो० ) पुर मोट्ट वा चरणा स्त्रोचते समय  
 योनेने चमनेने निचि चोने दृष्टि टाम्, राह, रवट, वेडी ।  
 नेत्रुल ( मं० श्लो० ) निचुलवेदे' चप, फलम्य पृथक्  
 प्रयोगे चानो न-मुप् । १ निचुलमन्त्रश्री विज्ञानफलादि,  
 निचुलका फल या वीज । ( श्लो० ) २ निचुलमन्त्रश्री ।  
 नेत्र ( मं० श्लो० ) निजस्वेदमिति निज-चप, निज-  
 मन्त्रश्री, पचना ।  
 नेत्री ( ङि० श्लो० ) दुग्दी नामकी चाम या चक्षुः, दुग्धिषा  
 चाम ।  
 नेत्रशय ( मं० पु० ) सरस्वती नदीतीरवर्ती स्थानभेद ।  
 नेत्रिक ( मं० श्लो० ) मोतिमन्त्रश्रीय, मोतिपुष्प ।  
 नेत्रुण्ड ( मं० पु० ) निचुण्ड-चपत्वार्यं दन् । निचुण्डका  
 पुत्र ।  
 नेत्रोग ( मं० पु० ) हननकारोका चपत्, मारनेवासेकी  
 चक्राति ।  
 नेत्र ( मं० श्लो० ) निचिं दोषते निच्युट्टादिखादप, १  
 निच्युट्टोद्यमान, निच्युट्टादिनामिवासा । २ निच्युट्टा ।  
 ( श्लो० ) निच्युट्टा विहितः चप, वा चार्यं चप, ३ निच्यु-  
 विहित कर्म । ४ निच्युट्टकर्म, रोज रोजका काम ।  
 नेत्रय ( मं० श्लो० ) नेत्र-चार्यं कन् । नेत्र, रोजका ।  
 नेत्रयश्रिक ( मं० श्लो० ) नेत्र-श्रिकं चार्यं चपत् ठक् ।  
 निच्युट्टादी, श्री यश्रिकं निच्युट्टा चार्यं चपत् ।  
 नेत्रिक ( मं० श्लो० ) निच्युट्टा विहितः ठक् । निच्युट्टादिना,  
 को प्रतिदिन विद्या जाता है ।  
 "दाया ईव महाशयः निचिः श्रुतिर्धर्मः च ।" ( मनु )  
 श्रुत्या चोर पक्ष महाशयः दक्ष नेत्रिक कर्म है ।

रमने शर्ही करनेसे पापका भागी होना चकता है ।  
 निच्युट्टा श्लो० ।  
 नेत्राय ( मं० श्लो० ) निदाघम्य इदं येदे श्यिकोऽप, ।  
 निदाघमन्त्रश्री, घोषका ।  
 नेत्रायिक ( मं० श्लो० ) निदाघम्य मरुत्वावित्तिन 'कानार'  
 ठक् इति ठक्, निदाघ मरुत्वावित्ति, घोषका ।  
 नेत्रायोय ( मं० श्लो० ) निदाघमन्त्रश्री ।  
 नेत्रान ( मं० पु० ) उत्पत्ति, कारण ।  
 नेत्रानिक ( मं० श्लो० ) निदानं रोगकारणं वेत्ति, तद्यदि-  
 पादकं चम्यमर्धते वा ठक्, १ रोगनिदानमिन्द्र,  
 रोगोका निदान करनेवाला । २ तद्यदिपादक चमने  
 चप्येता ।  
 नेत्रैगिक ( मं० श्लो० ) निदेशं करोति ठक्, विहर,  
 दास ।  
 नेद्र ( मं० श्लो० ) निद्रा-चप, निद्रामय, निद्रामन्त्रश्रीय ।  
 नेधन ( मं० श्लो० ) निधननेच चार्यं चप, १ निधन,  
 मरुत् । २ क्षमने पाठया स्थान ।  
 नेधान ( मं० श्लो० ) निधानेन निष्ठत्, मन्त्रादित्वात्  
 चप, निधानमाध्य ।  
 नेधामी ( मं० श्लो० ) वाच प्रकारको सोमाचामिने चप,  
 यह सोमा जिमका चिच्छ गदा दृष्या कोयला या रूप हो ।  
 नेधेय ( मं० पु० ) निधिमन्त्रश्रीय ।  
 नेधुच ( मं० पु० ) निधुचगोत्रमन्त्र श्रुतिभेद ।  
 नेधुचि ( मं० पु० ) यश्रुचं द्वाप्यावक काम्य श्रुतिभेद ।  
 नेनपुल ( ङि० पु० ) एक प्रकारका चिकना मन्त्रो  
 कवदा ।  
 नेत्राचार्य—चधिकरुचित्तामवि, चाचार्य प्रपत्ति,  
 पाचार्य प्रार्थना, पाचार्य मन्त्र, तत्त्वत्रयपुस्तक, तत्त्व  
 मुक्ताकलापकण्ठी, रश्मिचयपुस्तक चौर मारतयपुस्तक  
 खादि यन्त्रादि प्रपिता ।  
 नेत्राक्षोविन—मन्त्रात्रक चमर्गत्त मन्त्रा जिमका एक  
 स्थान । यह कामनादि ८ कोम उत्तरयदिमने चमर्गत्त  
 है । यहाँ एक बहुत प्राचीन प्रसिद्ध मन्त्रमन्त्रि है जिमका  
 आदकार्य देवने योग्य है । यहाँ मन्त्रादि खादि यन्त्रादि  
 मन्त्रा मन्त्रा है जिमने चनेक यामो एकत्रित होते हैं ।  
 नेत्राक्ष—मारतयचर्क मुक्तादिमर्क चमर्गत्त मुक्तादि

जिलेमें अवस्थित एक पार्षत्य नगर। यह भस्मा० २८' ५१" से २८' ३०" और देगा० ७८' ४३" से ८०' ५' पूर्वके मध्य अवस्थित है। नगरके नोचे एक बड़ा और सुन्दर शोभासय झर है। यह एक स्वास्थ्यनिवास और यूरोपियनोंका शोभावास है। युक्तप्रदेशके छोटे साठ शीतकालमें इस नगरमें या कर रहते हैं। यहाँका चारों ओरका पार्षत्य प्राकृतिक दृश्य बहुत मनोहर है। समुद्र-तलसे यह नगर ६४०८ फुट ऊँचे पर बसा हुआ है। शोषकालमें यहाँकी जनसंख्या प्रायः ग्यारह हजार हो जाती है। १८८० ई०की १८वीं सितम्बरकी यहाँ एक भारी तूफान आया था जिससे पर्वतशृङ्गाका एकभाग धंस गया था और १५० मनुष्योंको जान गई थी। म्युनि-सिपलिट्रीने २ लाख रुपये खर्च करके नगरके संस्कार और रक्षाकी व्यवस्था कर दी है। सिपाहो-विद्रोहके बाद यहाँ पोद्धित सेनानिवास स्थापित हुआ है। १५० घंटेके शोभासय यहाँ चिकित्साके लिये रह सकती है। जिस झरके किनारे शहर अवस्थित है उसकी लम्बाई आध कोस और चौड़ाई ४ सो गज है। झरकी दोनों वगल गेरुदण्ड और लुङ्गियाकण्ठ नामक दो पर्वतशिखर हैं। झरमें मछलियाँ अधिक संख्यामें देखी जाती हैं। जिस उपर्युक्त पर नैनीताल बसा हुआ है, वह एक कीस लक्ष्मी और आध कोस चौड़ी है। झरका नाम मयनताल है। शायद मयनतालसे ही नयनोतान या नैनीतान ऐसा नाम पड़ा है।

नैनु ( द्वि० पु० ) १ एक प्रकारका सूती कपड़ा। इसमें धाँवको-सो गोल, समरी हुई बूटियाँ बनी होती हैं। २ मखनः।

नैव ( स० त्रि० )। नैपस्य विकारः नैप-रजतादित्वात् भञ्ज्। नैपविकारः।

नैपातिक ( स० त्रि० ) निपातनके हेतु प्रयोगयुक्तः।

नैपातिय ( स० क्लौ० ) सामभेदः।

नैपाय ( स० क्लौ० ) निपातस्य भावः, ब्राह्मणादित्वात् ष्यञ्। निपातका भावः।

नैपाल ( स० पु० ) नैपाले नैपालाख्यदेशे भवः, भण्। १ नैपालभूमेः २ इच्छाभिमिदः, एक प्रकारको ईच्छा। ३

भूमिस्वयिभोग ( द्वि० ) ४ नैपालसम्बन्धी। ५ नैपाल-देगका, नैपालमें होनेवाला।

नैपालिक ( स० क्लौ० ) नैगन्ने भवः इति ठक्। ताम्ब. तांवा। ताम्ब देखो।

नैपाली ( स० क्लौ० ) नैपाल-डीय्। १ नवमल्लिका, निवाली। २ मनःशिला, मैनसिल। ३ नासो, नीनका पौधा। ४ गफानिका, एक प्रकारकी निगुं गठी।

नैपाली ( द्वि० वि० ) १ नैपाल देगका। २ नैपालमें रहने या होनेवाला। ( पु० ) ३ नैपालका रहनेवाला चादमी।

नैपालीय ( स० त्रि० ) नैपालदेशभव, नैपाल देशमें होने-वाला।

नैपुण ( स० क्लौ० ) निपुणस्य भावः, कर्म वा भण्। नैपुण्य, निपुणता।

नैपुण्य ( म० क्लौ० ) निपुणस्य भावः कर्म वा, यञ्. ( गुणवचन ब्रह्मणादिभ्यः कर्मणि च। पा ५।१।२४ ) निपु-ण्यता, चतुराई, होशियारी।

नैवहक ( म० त्रि० ) निवहस्य भट्टदेगादि वराहादि-त्वात् फक्। निवहसमीप देगादि।

नैभृत ( स० क्लौ० ) निभृतस्य भावः ब्राह्मणादित्वात् ष्यञ्। निभृतत्व, भवाद्यव्यय।

नैमन्नक ( म० त्रि० ) निमन्न वराहादित्वात् फक्. ( पा ४।२।४० ) निमन्नका भट्ट देगादि।

नैमन्त्रक ( स० क्लौ० ) निमन्त्रित व्यक्तियोंकी बिलाना पिलाना, भोज।

नैमय ( स० पु० ) वणिक, व्यवसायी, रोजगारी।

नैमित्त ( स० त्रि० ) निमित्ते भवः, निमित्तस्य शकुन-शास्त्रस्य व्याख्यानी प्रथो वा ऋग्यनादित्वात् षण्. ( पा ४।३।७३ ) १ निमित्तवध। २ शकुनरूप निमित्त-सूचक ग्रन्थव्याख्यान।

नैमित्तिक ( स० त्रि० ) निमित्त' चेत्, तत्प्रतिपादक-ग्रन्थमधीते वा सकृदादित्वात् ठक्. १ निमित्ताभिन्न। २ निमित्तरूप शकुनशास्त्रके पद्येताः ३ जो किसी निमित्तमें किया जाय, जो निमित्त उपस्थित होने पर या कसो विशेष प्रयोजनकी-निमित्तके लिये हो। जैसे, नैमि-

नैमित्तिक, प्रमाणिक निमित्त पुत्रे टिप्पणका अनुष्ठान, यद्यपि निवे महात्मानः।

नित्य, नैमित्तिक चौर काव्य से जोन मीट है। ध्यान, यद्यपि चौर संज्ञानि पाठि नैमित्तिक व्यवस्थित होने पर जो ध्यान विद्या जाता है, उसे नैमित्तिक ध्यान कहते हैं। समासनि नैमित्तिकका मन्त्र इम प्रकार बत-साया है—

नैमित्तिका नियम होने पर अधिकांगीकी कर्त्त-व्यता, अधिकांगी अधीन मान्यते प्रमका अधिकार है, गवाम्भूत अधिकांगीके कार्यको नैमित्तिक कहते हैं।

गृहपुराणमें लिखा है, कि पात्रगानिके निचे पक्तिमें की ओ टान किया जाता है उसे नैमित्तिक टान कहते हैं। ४ नैमित्तिकाधोन, नैमित्तिके निचे।

नैमित्तिक-लय (मं० ५०) नैमित्तिका प्राज्ञयो दिवाव-मातनैमित्तियमायु गो लयः। प्रलयविशेष। गृह-पुराणमें लिखा है, कि इम प्रलयमें जो वर्ष तक चना-रुटि होती है। वारही वर्ष उदित हो कर तीनों लोकों-का शोधन करते हैं। फिर बड़े भीषण भीषण गो वर्ष तक लगातार बरस कर सृष्टि का शय करते हैं।

नैमित्त (मं० ५०) नैमित्तिकेय सायं चण। नैमित्तिका-रत्न। एतौ पर नैमित्तिकेय अंतोय माता जाता है। नैमित्त (मं० ५०) नैमित्तिकेय सपत्यं इत्। नैमित्तिका चपत्य।

नैमित्त (मं० ५०) १ परस्परद्वय तोयं भेट, नैमित्तिक-पारस्य। २ यम जाके दक्षिण तट पर बसनेवाली एक प्राति जिनका लोच महाभारत चौर पुराणमें है।

नैमित्तिकार (मं० ५०) नैमित्तिकारमायेन निहतं पातुरं बलं यत्, ततन्मात् नैमित्तिकं परस्यं। परस्य-विशेष, नैमित्तिकेय, एक प्राथोन वन जो वास हन हिन्दुओंका एक तीर्थ स्थान माना जाता है चौर भीमवार कहलाता है। यह स्थान बसवर्षे मातापुर तिममें है।

गौरमुक्त मुनिमें यहाँ नैमित्तिकारके मन्त्र अनुष्ठाने पर चौर चक्रके बलकी भावसोभूत का दिया था, इसीसे इम स्थानका नाम नैमित्तिकार पड़ा है। देवीमहात्म्यमें इसका विवरण इस प्रकार लिखा है,—शक्तियोग कह कलिकात्मके भयसे बहुत घबराए, तब उन्होंने पित्तमाह

मन्त्रकी श्राव की। मन्त्राने उन्हें एक मनोमत्त चक्र में कर कहा था, 'तुम लोग इस चक्रके पीछे पीछे चलो, कहीं इसकी नैमित्तिक (पिता, चक्र) विमोच' की श्राव उसे पत्न्या पवित्र स्थान प्राप्त होगा। यहाँ रहनेमें तुम्हें कलिका कोई भय नहीं रहेगा। जब तक मन्त्रानुष्ठान उचित न हो, तब तक नैमित्तिक ही कर तुम लोग वहाँ वास करना।' शक्तियोग मन्त्राने पाठित था कर मन्त्राने देम देवनेको इच्छासे उस चक्रके अनुष्ठानमें हुए। तबो चक्र मारी प्रयोगका परिष्कार कर इम लोकोके ममत्वमें ही विमोचनैमित्तिक हो पड़ा। तभीमें यह स्थान नैमित्तिकेय नैमित्तिकार नामसे प्रविष्ट हुआ है। यह स्थान बहुत पवित्र है। कलिका यहाँ प्रवेशाधिकार नहीं है। (देवीमाहात्म्य १२:२५:३२) कूर्मपुराणके ४०में चण्डीयमें नैमित्तिकारका जो सत्यविवरण है यह इस प्रकार लिखा है—

"ततो मुनेन तत्परं ते सत्त्वं धर्मवृत्तम् ।  
तस्यैव प्रथमः शिवः दत्त नैमित्तिकीर्तनम् ॥  
नैमित्तिकं सत्त्वं सत्त्वं नामा पुत्रं शिवेन प्रथितम् ॥"  
(कूर्मपुराण ४० मं०)

विष्णुपुराणमें लिखा है, कि इम क्षेत्रकी गोमतो नदीमें स्नान करनेसे मक्ष पापों का शय होता है। कहते हैं, कि गौतमुनिने इस स्थान पर शक्तिविद्येकी एकत्र करके महाभारतकी कथा कही थी।

पाईल-च-पञ्चवरी नामक सुप्रसन्न इतिहास पत्रमें लिखा जाता है, कि पूर्व समयमें यहाँ एक दुर्ग था। इसके निचा हिन्दुओंके चनेक देवमन्दिर चौर एक उग्ररूप पुष्करिणी वास भी देखनेमें आती है। यह पुष्करिणी पञ्चवीर्ष नामसे प्रविष्ट है। प्रवाद है, कि टानकीके माय युद्धकालमें विष्णुका सुदर्शनचक्र यहाँ था गिरा था। पुष्करिणीकी पालकी घटकीपी चौर एकका स्थान प हायना है। इसके मध्यभागमें एक ललछोत निर्भरके पाकारमें निबन्ध कर दक्षिणामिषुल होमा हुए मन्त्रमुनिने करार कहा गया है। इस स्थानका नाम गोदा-वरी-नामा है। गोदावरीके पारों चौर बहुतसे मन्दिर चौर चर्मनामा निर्मित हैं। इन पवित्र पञ्चवीर्षके दक्षिण-पश्चिम पश्चिममें एक एक दुर्ग स्थापित है। दुर्गकी

पश्चिमांशस्य उच्च चूडा शङ्ख-वृज-नामधे प्रसिद्ध है। दुर्ग-  
 में बहुतवे स्थान ऐसे हैं जिन्हें गोर कर देखनेसे मानुष  
 होता है, कि इसका-हार सोर शङ्खवृज-ये दोनों स्थान  
 बहुत प्राचीन हैं और हिन्दू राजादि-ममयके बने हुए हैं।  
 उक्त दो स्थानकी गठनादि और स्मृतिकादि देखनेसे  
 उनके प्राचीनत्वका सन्देह नहीं होता। स्थानीय  
 प्रवाद है, कि यहाँ ओ प्राचीन दुर्ग था, यह पाण्डव  
 राजाओं के समयमें बनाया गया था। पीछे उसी ध्वंसाव-  
 शेषके ऊपर दिगोखर असासहोन खिलजीके यज्ञोर ढाडा-  
 जल ( एक स्रधर्मत्यागी हिन्दू-मन्तान ) ने -१३०५ ई० में  
 एक दुर्ग का पुननिर्माण किया।  
 गोमतोके दूधरे किनारे श्रीरामर, श्रीरामोद और  
 शैलनगर नामके एक अत्यन्त विस्तृत गठवृष्टित स्थान  
 दृष्टिगोचर होता है। यहकि श्रीगो का कल्याण है, कि  
 यही स्थान वंशराजाका प्रासाद माना-जाता है।  
 नैमिषि ( स० पु० ) निमिषति - निमिषक, निमिषस्य-  
 -स्यापत्य-इत्, । नैमिषारण्यशोव।  
 नैमिषीय ( स० पु० ) निमिषस्य इदं, इत् । निमिष-  
 -सम्बन्धी।  
 नैमिषेय ( स० त्रि० ) निमिषे भव, निमिषस्ये इत् प्रादुलकात्  
 उक्त् । १ निमिषारण्यस्य, नैमिषारण्यमें रहनेवाला।  
 २ नैमिषसम्बन्धी।  
 नैमिष्य ( स० पु० ) निमिषसम्बन्धीय।  
 नैमिष्य ( स० पु० ) नि + मि-प्रणियदाने अचो यत् इति यत्,  
 ततः स्याथे प्रज्ञाथथ, परिचरत्, विनिमय, वसुषो का  
 मदला।  
 नैमिष्य ( स० त्रि० ) निमिषसम्बन्धीय।  
 नैमिषोष ( स० स्त्री० ) न्यमिषोषस्य विकारः, ततः प्रजादि-  
 -भ्योऽण् । ( पा ४।३।१६४ ) तस्य विधानसामर्थ्यात् फले न  
 सुक्त्, ततो ऋषिरे जागमथ ( न्यमिषोषस्य च नैमिषस्यं । पा  
 ३।३।१५ ) १ न्यमिषोषफल, वरगदका फल।  
 नैमिष्य ( स० स्त्री० ) न्यमिषोषिकारो इति षञ् । ( प्राणि-  
 -रत्नविशेषोऽत्र । पा ४।३।१५४ ) न्यमुन्मुगजात वृक्ष-  
 -समादि, बारहसिंहेका समझ।  
 नैमिष्य ( स० स्त्री० ) नियतस्य इदं नियत-षञ् । निय-  
 -तस्य, निबन्धनोनेका भाव।

नैमिषिक ( स० त्रि० ) नियमादागतः उक्त् । नि-  
 विधिमान कर्म, ऋतुमती स्त्रीके साथ गमनादि।  
 नैमिष्य ( स० त्रि० ) न्यायस्य व्याख्यातो षञ् । ऋग-  
 दित्वात् षञ् । ( पा ४।३।३२ ) न्यायव्याख्यान षञ्  
 नैमिष्यिक ( स० पु० ) न्याय गीतमादिप्रयोगेत्  
 शास्त्रविशेष अधीते वेत्ति वा न्याय-उक्त् । ( ऋग-  
 चतुष्टय उक्त् । पा ४।३।३५ ) १ न्यायवेत्ता, न्यायशास्त्र-  
 जाननेवाला। २ न्यायाधीता। पर्याय-श्लाघ-  
 सामादिक, भाईत।  
 नैमिषिक ( स० त्रि० ) न्यायविदुः।  
 नैरश्मना ( स० स्त्री० ) मदीमेदु। गया जिलेकी फ-  
 नदी पहले इसी नामसे पुकारी जाती थी। भाज-  
 इसको पश्चिमामिमुखिनी शाखा मौलाञ्जन या लो-  
 जन नामसे उक्त जिलेकी मोहानीनदीमें मिल गई है।  
 नैरश्म्यं ( स० स्त्री० ) निरश्मरस्य भावः निरश्मर-थ-  
 निरश्मरत्व, निरश्मरका भाव, पविच्छेद।  
 नैरपेक्ष ( स० स्त्री० ) निरपेक्षस्य भावः श्वञ् । अपे-  
 क्ष्यत्व।  
 नैरपिक ( स० त्रि० ) निरपेक्षस्य भावः कर्म वा, नि-  
 श्वञ् । निरपेक्षता।  
 नैराश्य ( स० स्त्री० ) निरात्मनोभावः, श्वञ् । नि-  
 -रामता।  
 नैराश्य ( स० स्त्री० ) निरागस्य निष्कामस्य भावः श्व-  
 -भागागुत्वात्।  
 "भाषा हि परमं दुःखं नैराश्यं परमं सुखम् ।  
 यथा संशयं कान्ताणां सुखं सुधाव पिङ्गता" ( संक्षेप-भा-  
 -षागा )  
 भागा ही दुःखकी कारण है, नैराश्यं परमं सु-  
 खं जिस प्रकार पिङ्गला कान्तकी भागाका परित्याग कर-  
 -सोती है। भागाका त्याग नहीं करनेसे सुख मि-  
 -दुर्लभ है। अतः जो सुखका प्रमिताप रखते हों,  
 भागाका परित्याग करना सर्वतोभावेसे उचित है।  
 नैराश्य ( स० पु० ) शरत्यागमन्त्रविशेष, याथ स्त्री-  
 एक मन्त्र।



सिद्धकर्म, पुण्यकारिणि निमित्त पुनः तिष्ठत्यस्य अनुकूल, यद्वदन्ति शिरो मन्त्राद्याम् ।

नित्य, नैमित्तिक चोर खाद्य ये शोच गीत ई । खान, पक्ष्य चोर संज्ञानि पाटि निमित्त जगद्विस्त होने पर तो खान विद्या जाता है, उसे नैमित्तिक खान कहते हैं । इत्यादि नैमित्तिकका अर्थ हम प्रकार यत्-सादा है—

निमित्तका निपय होने पर-पक्षिभारोही कर्त्त-व्यता, पक्षिभारि अर्थात् मायासे प्रमत्ता अधिहार है, यथाभूत पक्षिभारिण खाद्यको नैमित्तिक कहते हैं ।

महदपुराणमें लिखा है, कि पापमानिने निवे पण्डितो को को दाम किया जाता है उसे नैमित्तिक दाम कहते हैं । इ निमित्ताद्योक्त, निमित्तके निवे ।

नैमित्तिक-रूप ( म० पु० ) नैमित्तिका प्राणायो दिवाय-माननिमित्तप्राणायो लयः । प्रणयविमेष । महद-पुराणमें लिखा है, कि हम प्रणयमें मो ययं तक यथा-वृष्टि सोती है । बांधों सुप्रं उदित हो कर तोतीं लोकी-का शोषण करते हैं । फिर वही शोषण भेष मो ययं तक समाप्त कर कर घटिका लय करते हैं ।

नैमित्त ( म० लो० ) निमित्तमिथ खाद्यं यत् । निमित्ता-रत्न । इतो पर नैमित्तयेन योऽतीयं माता जाता है । नैमित्त ( म० पु० ) निमित्तयय यत्नं इत् । निमित्तका यत्न ।

नैमित्त ( म० लो० ) १ परस्परदय शोचंभेद, नैमित्ति-पाठय । २ यम, जाके दक्षिण तट पर बसनेवाली एक खाति प्रमत्ता जन्मे वा महाभारत चोर पुराणमें है ।

नैमित्तारत्न ( म० लो० ) निमित्तारत्नमातेव निहतं पाहुरं यत् यत्, ततस्तत् नैमित्तं परस्परं । परस्पर-विमेष, नैमित्तयेन, एक प्राणोत्पन्न वन को पाह प्रय विन्दुर्दीवा एक शोचंभेदमाता जाता है चोर शोचंभेद-कहलाता है । यह स्थान पक्षधरं शोचानुर निमित्तं है ।

शोचंभेद मुनिने यही निमित्तकारके अर्थ पुराणमें लू चोर उलके बलके अर्थोभूत का दिया था, इन्हीं हम स्थानका नाम नैमित्तारत्न पड़ा है । नैमित्तारत्नमें हमका विमेष हम प्रकार लिखा है,—अत्रिचोद लव कर्त्तव्यके अर्थमें बहुत-परवार, लव योऽंते निमित्तार

महाको दाय को । इत्यादि ययं एक मनोभव एक है कर कहा था, 'तुम शोच दम यजने छोड़े छोड़ि चलो, यही हमको नैमित्त ( चोरा, चोर ) विमेष' ही प्राय उसे पक्ष्यस्य उदित स्थान समझना । यही रहनेमें तुम्हें क्लिष्टा कोइ भय नहीं रहना । लव तक मन्त्रयुग उच-मित्तम हो, लव तक निमित्त ही कर तुम शोच यही नाम करना । 'अपिण्य महाभा पाटिण पा कर मनना देय देवनेको रहनेमें उच यजने अनुमाती हुए । यही यक्त काही दृष्टोक्षा परिभयः कर हम शोचोहि समझने ही विमेष नैमित्त ही पड़ा । तमीमें यह स्थान नैमित्तयेन या नैमित्तारत्न नाममें प्रविष्ट हुआ है । यह स्थान बहुत पवित्र है । क्लिष्टा यही प्रवेगाधिकार नहीं है । (देवीभागवत १३.२५३२) कूर्मपुराणके अर्थमें यथापमं नैमित्तारत्नका जो उत्पत्ति-धिकार है मह हम प्रकार लिखा है—

“ततो मुनेन तत्पर्वके से मन्त्र समुत्पन्नम् ।  
तस्यै प्रकृतः स्थितं यत् नैमित्तारत्नम् ।  
नैमित्तं तत् स्मृतं नरना पुत्रं यद्वै प्रिन्मम्”  
(हर्मपुराण ५० म०)

विष्णुपुराणमें लिखा है, कि हम चोरको शोचंभेद शोचंभेद खान करनेमें मन्त्र पावों का यत् होता है । कहते हैं, कि शोचंभेदमें हम स्थान पर शोचंभेदो यत्न करके महाभारतको कहा कथो सी ।

पाहुरं-र-पक्षधरी नामक सुप्रमत्ता इतिहास पदमें ही जाना जाता है, कि पूर्व समयमें यही एक दुर्ग था । इनके भिवा हिन्दुर्दीके चनेक देवमन्दिर चोर एक उद्यत् पुष्करिणी पात्र भी देवनेमें जाती है । यह पुष्करिणी पक्षधरी नाममें प्रविष्ट है । प्रवाद है, कि दामर्षिके मात मुहूर्त्तमें विष्णुका उदयंनवलक धरती या गिरा था । पुष्करिणीको पाहुरिण घट, शोचो चोर समझा योऽत ए चायना है । इनके अर्थमागने एक जलशोच निभंरके पाहुरिण निभंरक दक्षिणामिषुण हीना हुआ अयमुमिर्के ऊपर बह गया है । हम स्थानका नाम शोच-धरी-नामा है । योचंभेद कांशे चोर बहुतसे मन्दिर पाहुर धर्ममाता निर्मित हैं । हम पवित्र पक्षधरीके दक्षिण-पश्चिम पश्चमूर्तिर ऊपर उक्त दुर्ग स्थानि है । दुर्गका

पश्चिमांशस्य उच्च चूडा शाह-वुज्ज नामधेय प्रसिद्ध है। दुर्ग-  
में बहुमते स्थान एते हैं जिन्हें गोर कर देखनेसे मालूम  
होता है, कि इसका द्वार और शाहवुज्ज से दोनों स्थान  
नदत प्राचीन हैं और हिन्दू राजाके समयके बने हुए हैं।  
सक दो स्थानकी गठनादि और - स्वधिकादि देखनेसे  
उनके प्राचीनत्वका सन्देह नहीं होता। स्थानोय  
प्रवाद है, कि यहाँ जो प्राचीन दुर्ग था, वह पाण्डव  
राजाकोके समयमें बनाया गया था। पीछे उसी ध्वंसाव-  
शेषके ऊपर दिल्लीखर भूलासहोदर खिलजीके जजोर हाहा-  
अल (एक स्वधर्मत्यागी हिन्दू-मन्तान)ने-११०५ ई०में  
उस दुर्गका पुनर्निर्माण किया।

गोमतोके दूबरे किनारे थोराभर, थोराडोड थोर  
बेननगर नामक एक प्रत्यन्त विस्तृत गडबेटित स्थान  
दृष्टिगोचर होता है। वहाँके लोगोंका कहना है, कि  
यही स्थान यथाराजाका प्रासाद माना जाता है।

नैमिषि (सं० पु०) निमिषति - निमिष्यक, निमिषस्य-  
स्यावत्यं दृञ् । नैमिषारण्यभाषो ।

नैमिषीय (सं० पु०) निमिषस्य इदं, ष् । निमिष-  
सम्बन्धी ।

नैमिषीय (सं० त्रि०) निमिषे भव, निमिषस्ये इं वा दृलकात्  
ठक् । १ निमिषारण्यस्य, नैमिषारण्यमें रहनेवाला ।

२ नैमिषसम्बन्धी ।

नैमिष्य (सं० पु०) निमिषसम्बन्धीय ।

नैमिषीय (सं० पु०) नि + मि-प्रणिदाने अघो यत्, इति-यत्,  
ततः स्त्रायोः प्रसादात् । परिवर्त्त, विनिमय, वस्तुषोका  
वदला ।

नैमिष (सं० त्रि०) निमिषसम्बन्धीय ।

नैयमोष (सं० स्त्री०) न्यमोषस्य विकारः, ततः प्रसादि-  
भ्योऽण् । (वा ४।३।१६४) तस्य विधानसामर्थात् फले न  
सुखं, ततो अष्टद्विरे काममयः (न्यमोषस्य-प-केवदस्यं । पा  
३।१।५) १ न्यमोषफल, बरगदका फल ।

नैयम्य (सं० स्त्री०) न्यमोषिकारः इति अञ् । (प्राणि-  
-रत्नविश्लेषः । वा ४।१।५५) न्यम्युज्जगत वञ्च-  
यमादि, बारहविंशिका चमड़ा ।

नैयम्य (सं० स्त्री०) नियतस्य इदं, नियत-अञ् । निध-  
तस्य, निधमं होनेका भाव ।

नैयमिक (सं० त्रि०) नियमादागतः ठक् । नि-  
विधिमात्र कर्म, कृत्यमती स्त्रीके भाय गम्नादि ।

नैयाय (सं० त्रि०) न्यायस्य व्याख्यागो प्रत्यः अण्  
दित्वात् षण् । (वा ४।३।०३) न्यायव्याख्यान य-  
नैयायिक (सं० पु०) न्याय गीतमादिमपीत ।

शास्त्रविशेष पधीत वेत्ति वा न्याय-ठक् । (कृत्य-  
षु श्राव् ठक् । पा ४।२।५०) १ न्यायवेत्ता, न्यायमा-  
जाननेवाला । २ न्यायाध्यता । पर्याय-लाप-  
साम्बादिक, पाछित ।

नैयायिक (सं० त्रि०) न्यायविद् ।

नैरञ्जना (सं० स्त्री०) नदीमेद । गया जिलेकी प-  
नदी पहले इसी नामसे पुकारी जाती थी । पा-

इसको पश्चिमाभिमुखिनी शाखा नीलाञ्जन वा ले-  
अन नामसे उक्त जिलेकी मोहानौनदीमें मिल गई ।

नैरन्तर्य (सं० स्त्री०) निरन्तरस्य भावः निरन्तर-य-  
निरन्तरत्व, निरन्तरका भाव, अविच्छेद ।

नैरपेक्ष (सं० स्त्री०) निरपेक्षस्य भावः अञ् । अ-  
शून्यत्व ।

नैरथिक (सं० त्रि०) निरथे वसति ठक् । नरक-य-

नैरर्थ्य (सं० स्त्री०) निरर्थस्य भावः कर्म वा, मि-  
थञ् । निरर्थकता ।

नैरात्म्य (सं० स्त्री०) निरात्मनोभावः, अञ् । नि-  
रामता ।

नैराग्य (सं० स्त्री०) निरागस्य निष्कामस्य भावः अ-  
प्राप्ताशून्यत्व ।

“भाषा हि परमं दुःखं नैराग्यं परमं सुखम् ।  
यथा संतप्य कामतां सुखं सुखेण विंगता ॥”  
(पांथ-भा)

प्रागा ही दुःखको कारण है, नैराग्य परम सु-  
जिस प्रकार पिपला कान्तको प्रागाका परित्याग कर-  
सोता है । प्रागाका त्याग नहीं करनेसे सुख मि-  
दुर्लभ है । अतः जो सुखका प्रभिलाष रखते हैं,  
प्रागाका परित्याग करना सर्वतोभावसे उचित है ।

नैरास्य (सं० पु०) शरत्यागमन्त्रविशेष, वाण खी-  
एक मन्त्र ।

नेह ( सं० लि० ) निहकल द्वाव्यने द्वाव्य तत्र मयो  
दा द्यः । ( अथकनः १५५ । वा ३।३।७१ ) १ निहक-  
मावयो । ( स्त्री० ) २ निहकमावयो द्यः । ३ निहक-  
का ज्ञानमे वा द्यव्यय करमेवासा ।

नेहक ( सं० लि० ) निहकं निहं चमं घेति, तदुच्यते  
चधेने वा उहटाटियात् ठक् । ( वा ४।३।१० ) १  
निहं दमादिच २ निहकप्रचमं चधेता ।

नेहक ( सं० पु० ) निहकः प्रयोक्तमव्य ठक् । अथु-  
नान्त वल्लिदित, एक प्रधारकी विधकारो ।

निहकप्रति देतो

नेहंत ( सं० पु० ) निहंतैरव्यं, द्यः । १ वाचम ।  
२ दधिम-दधिय चोचका वामो । अथोतिवसे मतसे हम  
दिगाका वामो राहु है । ३ मूला नचत । ( लि० ) ४  
निहंतैरव्यो ।

नेहंतो ( सं० स्त्री० ) निहंतैरिव द्यः, ततो ङीप् ।  
दधियप्रविमके मधको दिगा, नेहंतं ङीच ।

नेहंतो ( सं० लि० ) निहंतो द्यव्यं ठक् । निहंतै-  
का मंशत ।

नेहंतो ( सं० लि० ) निहंतैति द्वैवाा यव्यः पापे वाहुल-  
कात् घृत् । निहंतैतिदेवताज घृत् पादि ।

नेहंत्य ( सं० स्त्री० ) निहंत्य भावा, द्यः । निहं-  
मता, मयहोमता ।

नेहंत्य ( सं० स्त्री० ) निहंत्य भावाः कर्म या निहंत्य-  
वामः । १ निहंत्य, अष्टी निकतका न होना । निहं-  
त्य वाक होमिसे मद्यवाम होता है । जब तक गुणका  
कोरे भी कार्य होता है, तब तक संकार और दुःख प्रवर्त-  
मानो है । नेहंत्य होमिसे जो कभी समय वमो दुःख  
जाते रहते हैं । २ कलकौमल पादिवा प्रभाव । ३  
मात्र, रज, तम इन तीनों गुणोंका न होना ।

नेहंत्य ( सं० स्त्री० ) निहंत्य भावाः, द्यः । निहं-  
यता, घृवाका न होना ।

नेहंत्य ( सं० स्त्री० ) १ दुर्वादि प्रवर्धे प्रथम द्य दिन  
चमिवाचनः । २ किमी विदुमनक द्यमकोदक्य समय  
जो पतिप्रमद प्रपाता ।

नेहंत्य ( सं० लि० ) अथोम, मावहत ।

नेहंत्य ( सं० लि० ) अथोम, मावहत । ( अथ ३।३।११ )

नेहंत्य ( सं० स्त्री० ) निहंत्य भावा, द्यः । ( अथो-  
मता, द्यव्यतः । २ निहंत्य-वे शाय ।

नेहंत्य ( सं० स्त्री० ) निहंत्य भावा, द्यः । १ निहं-  
मता, द्यव्यतः । २ निहंत्य-वे शाय ।

मल दो प्रकारका है, बाह्य और आन्तरिक । विषय-  
के प्रति आमन्त्रिकी मातम-मल कहते हैं । हम मात-  
मलके प्रति जो विराग है, उमीका नाम नेहंत्य है ।  
विषयके प्रति विराग होमिसे विषय द्य घर्वात् निहंम  
होता है । बाह्य निहंमताको नेहंत्य नहीं कह सकते ।  
क्योंकि बाह्य नेहंत्य पाचिक है । आन्तरिक निहंम  
होमिसे प्रकृत निहंमता आम होती है । विषयके विषयमे  
पामक रहनेसे, यह कभी भी निहंम नहीं हो सकता ।  
जब विषय घेराव्य होता है, तब विषय चापमे पाव  
निहंम हो जाता है ।

नेहंत्य ( सं० लि० ) अथोम, अथोमि च ।

नेहंत्य ( सं० लि० ) निहंत्य भावा, द्यः । निहं-  
मता ।

नेहंत्य ( सं० स्त्री० ) निहंत्य भावा, द्यः । निहं-  
मता ।

नेहंत्य ( सं० लि० ) निहंत्य भावा, द्यः । निहं-  
मता ।

नेहंत्य ( सं० लि० ) निहंत्य भावा, द्यः । निहं-  
मता ।

( अथ ३।३।१२ )

नेहंत्य ( सं० पु० ) नेहंत्य द्यव्यं, नेहंत्य वि-  
द्यात् किम्, ( वा ३।३।१५ ) । नेहंत्य भावा, द्यः ।

नेहंत्य ( सं० स्त्री० ) नेहंत्य भावा, द्यः । निहं-  
मता ।

नेहंत्य ( सं० पु० ) निहंत्य अथोम, द्यः । ( वा  
३।३।१६ ) निहंत्य अथोम, द्यः ।

नेहंत्य ( सं० लि० ) निहंत्य भावा, द्यः । निहं-  
मता ।

नेहंत्य ( सं० लि० ) निहंत्य भावा, द्यः । निहं-  
मता । ( वा ३।३।१७ ) निहंत्य भावा, द्यः ।

नेहंत्य ( सं० लि० ) निहंत्य भावा, द्यः । निहं-  
मता ।

न वासी (सं० त्रि०) निवाससाधु, गुडादिस्थात् उज्ज-  
(पा ४।१।२३) १ निवास साधु । २ तत्र पर रहने-  
वाला देवता ।

नैविद्या (सं० स्त्री०) निविद्धस्य भावः, प्यञ् । १  
घनत्व । २ निविद्धता । ३ अविच्छेदरूपमे संयोग,  
यशोपुष्काररूप गुणभेद ।

नैविद (सं० त्रि०) निविद् सम्बन्धोय ।  
नैवेद्य (सं० स्त्री०) निवेदं निवेदनमहंतीति निवेद-  
प्यञ् । देवताको निवेदनोय द्रव्य, वह भोजनकी  
सामग्री जो देवताको चढ़ाई जाय, देवबलि, भोग ।

"निवेदनीयं द्रव्यन्तु नैवेद्यमिति कथ्यते ।" (स्मृति )  
देवोद्देशे नैवेदनीय वस्तुमात्र ही नैवेद्यपदवाच्य  
है । नैवेद्यगृह्यकी नामनिर्दिष्टके विषयमें भीर भी  
लिखा है—

"अनुविभं कुलेणानि द्रव्यन्तु पञ्चवाणितम् ।  
निवेदनात् भवेत् सुसिन्वेद्यं तदुदाहृतम् ॥"  
(कुलागवहस्य १० उ०)

है कुलेणानि । पहरसान्वित चतुर्विध द्रव्य-निवेदनमे  
मं रो टलि होती है, इसीसे रसका नाम नैवेद्य पड़ा है ।

नैवेद्यके द्रव्य—  
"ससितेन शुशुभेन पायसेन ससपिंया ।  
सितोदनं सकदलि-दभ्यादरं च निवेदयेत् ॥"  
(प्रपञ्चसार)

ससित (शकरा सहित), ससृत विग्रह पायस,  
सितोदन (सोतास) कदली और दधि आदिके साथ  
देवदेवियोंका निवेदन करना चाहिये ।

नैवेद्य पञ्चविध—  
"निवेदनीयं यद्वर्ष्यं प्रशस्तं प्रयतं तथा ।  
वह्निसार्धं पञ्चविधं नैवेद्यमिति कथ्यते ।  
मक्षं भोज्यञ्च केदारञ्च वैयं नोभ्यञ्च पञ्चमम् ।  
सर्वत्र चैतन्नैवेद्यमाराध्यास्यै निवेदयेत् ॥" (तन्त्रसार)

प्रयत्न भक्षणीय जो सब वस्तु देवताको चढ़ाई जाती  
है, ससका नाम नैवेद्य है । यह नैवेद्य पांच प्रकारका  
है—मक्ष, भोज्य, केदार, वैय और नोभ्य । यथाविधान  
देवपूजन करके नैवेद्य चढ़ाना चाहिये ।

नैवेद्यदान-समय—

"अर्वाकं विधत्त नारदस्य नैवेद्यं सर्वमुच्यते ।  
विद्यन्ति ते जगन्नाथे निर्मात्यं भवति क्षणात् ॥  
पञ्चरात्रविदो मुहुरा नैवेद्यं मुञ्चते सुखम् ॥" (गणेशपुराण)  
विधत्त नके पहले भस्मद्रव्यको नैवेद्य और वि-  
र्ग न हो जाने पर उसे निर्मात्य कहते हैं ।

नैवेद्यस्थापनका क्रम—  
"नैवेद्यां दक्षिणे भग्ने पुरितो वा न पृथतः ।  
पञ्चवक्ष देवता ग्रामे आमाप्तश्चैव दक्षिणे ॥" (पुराण)  
"दक्षिणन्तु परित्यज्य ग्रामे चैव निघापयेत् ।  
अभोज्यं तद्वेदनं पानीयञ्च सुरोपमम् ॥"  
(तन्त्रसार)

नैवेद्य देवताके दक्षिण भागमें रखना चाहिये, प  
या पीछे नहीं । इसमें विशेषता यह है, कि पत्र नैवे  
देवताके बाएँ और कक्षा दक्षिण भागमें रखना चाहिये  
अभोज्य वह अभोज्य और पानीय सुरा सह्य सम  
जाता है ।

नैवेद्यदान-फल—  
"नैवेद्येन भवेत् स्वर्गो नैवेद्येनामृतं भवेत् ।  
धर्मयकाममोक्षाद्य नैवेद्येण प्रतिष्ठिता ॥  
सर्वयशफलं निरयं नैवेद्यं सर्वदुष्टिदम् ।  
आनन्दं मानन्दं पुण्यं सर्वभोगमयं तदा ॥"  
(कालिकापुराण १६९ अ०)

नैवेद्यदानसे स्वर्ग और मोक्ष लाभ होता है । ध  
पर्य, काम और मोक्ष नैवेद्यमें प्रतिष्ठित है । नैवे  
दानसे सब यशका फल, ज्ञान, मान और पुण्य  
होता है ।

नैवेद्य उत्सर्ग करनेके समय मुद्रा दिखानी चाहिये  
"नैवेद्यमुद्रामङ्गलं उच्यते कनिष्ठान्या । प्रदर्शयेत् ।  
कनिष्ठानामिकाङ्गुष्ठौ तु प्राणस्य कीर्तिताः ॥  
तत्र नीमपत्रमाङ्गुष्ठौ रथानस्य तु मुद्रिका ।  
अनामानस्यमोक्षोद्देशानस्य तु सा स्मृता ॥  
तत्र न्यनामानभ्यामिः चाङ्गुष्ठाभिवन्दयिषिंका ।  
सर्वाभिः सा समानस्य प्राणान्दमेण कोजिता ॥" (या-  
पञ्च और कनिष्ठ पञ्च इन्के सहयोगसे नैवे  
मुद्रा दिखानी चाहिये । इसमें विशेषता यह है,  
प्राण, अपान, उदान, स्थान और समान इन पांच वायु



दूर हो जाती हैं। ब्रह्मर्षि वसुंधरापुत्रके श्लोकानुसंगमखण्डके २७वें अध्यायमें इसका विस्तृत विवरण लिखा है। गिरिधर चरणका नैवेद्य खाना मना है।

“अप्राहृतं शिवनैवेद्यं पत्रं पुथं कलं जलम्।

शाकप्रामगिलासपत्नी सर्वं याति पवित्रताम् ॥

(भाद्रिहृततत्व)

फलपुष्पादि चौर शिवनिवेदित नैवेद्य भयाघ्रा है अर्थात् भक्षण करना निषिद्ध है। इसमें विशेषता यह है, कि यदि यह नैवेद्य शालिग्राममें गिलासूट हो, तो वंश पवित्र होता है। शालिग्राम-खुट शिव-नैवेद्य खानेमें कोई दोष नहीं। इसका तात्पर्य यह कि शाकप्रामगिलामें शिव-पूजा करनेसे वंश-नैवेद्य खाया जा सकता है।

शिवके लहृश्यसे चढ़ाया हुआ वस्त्र चौर नैवेद्य फिरसे ग्रहण नहीं करना चाहिये, ग्रहण करनेसे नैवेद्य चढ़ानेका कुछ भी फल नहीं मिलता। फिर दूसरे शास्त्रमें शिवने नैवेद्यका ग्रहण भयाघ्रा नहीं बतलाया है—

“वस्त्रा नैवेद्यवस्त्रादि नादधीत कथंचन ॥

ताफव्याः शिवमुद्दिश्य उदादाने न तत् फलम् ॥”

(एकादशीपत्रव)

शिवनिर्माल्य धारण करनेसे रोग, चरणोदक पीनेसे शोक चौर नैवेद्य खानेसे अग्नि पाप नाश होती है।

शिवने नैवेद्य भक्षण जो निषिद्ध बतलाया है उसका पौराणिक उपाख्यान इस प्रकार है—

“रोगं हन्ति निर्मल्यं शोभन्तु चरणोदकम्।

अशेषं पातकं हन्ति शम्भो नैवेद्यमक्षणम् ॥”

(श्रीकानन्दतर)

एक समय सनत्कुमार विष्णुसे भोजन करने लिये ब्रह्मण्ड गये। इस समय भगवान् विष्णु भोजन कर रहे थे। भक्तवत्सल विष्णुने सनत्कुमारको देख कर स्वभुजा-वशिष्ट कुछ प्रसाद दिया। सनत्कुमारने उस प्रसादमेंसे कुछ तो चाप खा लिया चौर-कुछ पालीयवेगकी देनेके लिये घर से चाये। सिद्धान्तमें पदुंच कर चढ़ीने भयने गुरु महादेवकी कुछ प्रसाद दिया। महादेवने उस प्रसादको पा कर उसी समय खा लिया चौर-नृत्य करनी मती। इसी बीच पापती वहा पदुंची चौर भयने पुत्रसे सब व्रतान्त सन कर शिवको परबहुत विगड़ी। यहा

तक कि पार्वतीने शाप दे दिया, ‘भापने जो विष्णुका मुँहे दिये बिना खा लिया, इस कारण जगत्में जो मनुष्य भापका नैवेद्य खायगा, वह दूसरे जन्ममें कुक्षुरयोनिमें जन्म लेगा।’

“अद्यप्रभृति ये लोका नैवेद्यं भुञ्जते तव।

ते अश्वकैः घामेयो मविश्वशयेव भारते ॥”

(श्रीकृष्णजन्म)

इस प्रकार शाप दे कर पार्वती जो विष्णुका प्राण नहीं ले सकी, इस कारण से जारबजार रोजे लगी।

इसका दूसरा कारण लिङ्गाद्यं नतन्वके ११।४ प में भी विस्तृत रूपसे लिखा है—

“दुर्लभं तव निर्मल्यं ब्रह्मादीनां कृपानिधे।

तत् कथं पत्मेयानः निर्गदिवं तव दूषितम् ॥”

(लिङ्गाचर्चन)

कालिकापुराणमें नैवेद्यका विषय इस प्रकार लिखा है—

प्रसन्न चौर पवित्र निवेदनीय वस्तुका नाम नैवेद्य है। यह नैवेद्य भक्त (भात) प्रभृति मीठसे प्रसादित होता है। इन पांच प्रकारके नैवेद्योंमेंसे देवीका नैवेद्य सबसे प्रिय है, चर्चोका विषय यहाँ लिखा जाता है। पांचों प्रकारका नैवेद्य देवीका प्रिय है। नागर, कद्राचा, कसुका, करक, यदर, कील, कुषाण्ड, ककुल, मधुक, रसास, पाम्नातक, केसर, पापिण्डखलुर, कदण, श्लोक, उह, भोदुम्बर, पुमांधव, ककठीफल (ककड़ी), जाम्बव, बोडजम्बल, हरीतकी, पामलक, इ प्रकारका नारदेवक, मधु, शीत, पटोल, चौरिहृत्तज, पटल, घाहृत, चर्मिज, रुदनीफल, तिन्दूक, कुसुम, पीत, वेणु, कण्डय, गमांषक आदि तथा माना प्रकारके फल द्वारा देवीका नैवेद्य प्रस्तुत करना चाहिये। अतः, शिव, शैलक प्रभृति फल भिन्न-सभी फल दे प्रिय हैं। मातुलुङ्ग, नटक, करमद चौर रसास सब कामाद्या देवीको चढ़ाने चाहिये। अडाटक, कमातुक, भृषाल, श्रृङ्गवेर, काश्चन, खूनलकन्द, कुसुमादि फल, परमाव, पिटक, यावक, हयग, मोपथक, चिहड़ा चौर सडू इन सब द्रव्योंके नैवेद्यसे

ममक हीमो है। नी, मरिच, पत्रा, पात्रिक दोर मरु  
 रम कर दणुनीका कृष, मरु प्रकाशका मधु, मर्कवा, मरु  
 प्रकाशका पत्र, पान चौर। मांन ये मरु देवीके मेमेचम  
 ममका मांन मरे है। पानिष्ठा, परमात्म, मर्कवासिगिन  
 रधि चौर सुत ये मरु मधु महादेवीकी पत्रांय कामिने  
 परमिषदप्रका पत्र मिष्ठा है। मर्कवा मधुनिगिन  
 मुर, मरुत्र, कशक, कपक, मुर, मरु, तिम चौर यष  
 पादि मरु प्रकाशका मरु देवीकी चक्राता पात्रिप। केमा  
 र्की मरुप्रम म्की म चो, उषका विग-क-कादि मंका।  
 काहे तर मेमेचमि है मरुने है। मंकाय मरुका  
 तिम मकार मंकार करना होता है, उषी मकार मंकार  
 कर मं मेमेच चक्राता पात्रिपे। ओ सुतिमभमंमुर  
 चो, टण्ड तथा भीममके पयोप्य चो, उषे मेमेचमि मर्की  
 देना पात्रिपे। सुम्य चक्रुंवासिम तावुम देवीकी  
 चक्रातमि निचोप प्रत्य है। ओ मरु मुर चोर उषी पानि-  
 टाकमि हेदिन हीमि है उषका मांन, मरुत्र, पामिगिप  
 चो। कांन मांन तथा मरु मरुन कर देवीकी मेमेचमि  
 ट मरुने है। चक्रुं, विष्णुचक्रुं तथा मरु मरुचक्रुं  
 देवीकी चक्रातमि रात्रमपयका कामिका पत्र मिलता है  
 तथा हताराय (विष्णु)के मेमेचमि पतुन मोमाय  
 कांन होता है। मांनिलका तल चक्रातमि पानिहोम-  
 यका पत्र चोर कांन, लक्ष्मी, चांती तथा श्रीरम  
 चक्रातमि भी पानिहोम पत्र कांन होता है, पीहे उषे  
 मेमेचकीका मांन होतो है। दाया, मर्कवा चो। मरु-  
 प्रका, इष्टमुर, मरुनीम, मांनिलका पत्र, मर्कवा चो।  
 रधिपुल मय मधु, मीनार चोर करदकी रधिमे पाव कृ  
 कर देवीकी चक्रातमि मरुचक्रुं चोर कपचक्रुं होता है,  
 पीहे मरुने पर मरु मील मिलता है। मिकं, विष्णुके,  
 कोय, मीरक चोर मरुम चक्रुं ममीमति मंकात कर  
 देवीकी चक्राता पात्रिपे। रात्रमाय, मरु, पान्ड,  
 पानिष्ठा, पानिष्ठा, कलाय, मरुनीम, मरुत्र, मरुत्र  
 मरुकी, चक्रुं, विष्णुकेका, सुप्रदिगुम पत्र चोर सुम-  
 वंका पादि मरु देवीकी चक्रा मरुने है। मरु चोर  
 काकविषद, तथा सुप्रमायमंनिय मेमेच देवमाकी  
 चक्राता निच है। चंरी का मीमेच पात्रमे देवमाकी  
 मेमेच चक्राता पात्रिपे। (विष्णु- ०० मं।)

पत्रा पत्रा कर देवमाकी मेमेच चक्रातकी  
 निष्ठा है।  
 "सुरे देवे च वैदेते प्रवदे इवमे तथा।  
 चक्रातारं चक्रुं तथा मीरामेदेः च।  
 ( विष्णु- ०० )  
 मेमेच ( मं० वि० ) निचोप निचुंका मरुकादिष्ठाप,।  
 ( मं० वि० ) निचोमनिचुंका, निचोमनिचुंका।  
 मेमेचिक ( मं० वि० ) निचोमाय मांकाय विमं,  
 निचोम-क,। १ निचोमचोय काका। २ निचोमाय  
 होदमाय प्रत्य, निचोमके निचो दिने कामिका प्रम।  
 मेमेच ( मं० वि० ) निचोमाय इदम् निष्ठा-पत्र,। ( मरुदेव म  
 मरुकी, २ ) १ निचोमायमयो। २ निचोमाय।  
 मेमेचिक ( मं० वि० ) निचोमाय मरु, निचोम-पत्र, ( विष्णुके  
 पात्रा-पत्र,। मं० वि० ) १ निचोमाय। २ निचोमायपत्र।  
 मेमेचिक ( मं० वि० ) निचोमका भाव, पत्र,। निचोम।  
 मेमेच, मं० वि० ) निचोममाय विमम,। नि-  
 चोममायम।  
 मेमेचोपमिक ( मं० वि० ) निचोमके पयोप्यमय क,।  
 निचोममायम। निचोमके मं० की प्रमक विमं की  
 कर निचोममिक देमा पत्र चोमा।  
 मरुचक्रुं ( मं० वि० ) १ निचोमम, निचोमका। २ मरु-  
 चक्रुं मरुचक्रुं, मेमेचका।  
 मेमेच ( मं० पु० ) निचोमाय राया, निचोम-क,। १  
 मरुकाता। २ निचोमदेमायिपति। ३ मरुचक्रुं। ४  
 विष्णुकेकाय निचोमदेमायो, मेमेच मरुमचक्रुं  
 चक्रुं मरु, पत्र,। १ मरुचक्रुंविष्णु महाकायमेरु,  
 मीरमरुचक्रुं पत्र मंकाय काय निचोम राया मरुकी  
 काका मरुं है। मरु काय २२ मरुनि मरुचक्रुं  
 होता है।  
 "मरुदे देवे कामे मरु मरुका कर मरुका।" ( मरुके  
 इवमे मरुके मरुके मेमेच काकाय मरुमे मांन  
 चो। मरुचक्रुं मरु मरुकी है। इवमे निचो चो। मी  
 मरुके है वि-  
 "मरुका मरुकाय मरुके मरुके।"  
 मेमेच मरुके मरुके मरुके मरुके मरुके। ( मरुके  
 मरुके मरुके मरुके मरुके मरुके मरुके मरुके मरुके

नैपथका पदसंज्ञित्य प्रयोगो य इ तथा भाषमें ये तोनीं गुण पाए जाते हैं। यथायमें नैपथ-काव्यका पदसंज्ञित्य अनुपम है। वंशुतामिन्न मात्र ही इसकी यथायंताका अनुभव कर सकते हैं। नैपथके सम्बन्धमें एक किंवदन्ति प्रचलित है—श्रीहर्षदेवने नैपथकाव्यकी रचना कर सके अपने प्राचीय एक भालहारिककी देखने दिया सन्नेनि विशेषरूपसे पर्यालोचना करके कहा, 'मिने जो एक भालहारिक्य लिखा है उसके दोष-परिच्छेदके लिये मुझे कई ग्रन्थ देखने पड़े हैं। कुछ दिन पहले यदि तुम्हारी यह पुस्तक मिल जाती, तो एक ही वर्षके मेरे दोष-परिच्छेदके सभी उदाहरण संघट्ट हो जाते।' संस्कृत महाकाव्यमें यह एक प्रधान काव्य है, इसमें सन्देह नहीं। (त्रि०) ६ निपथदेशसम्बन्धो, निपथ देवका। नैपथीय (सं० त्रि०) नैपथस्य इदम् 'हवाच्छ' इति च्छ नससम्बन्धो। १२००

नैपथ्य (सं० पु०) निपथस्य लक्षणया तन्मृपस्थापत्यम् नादित्वात् ष्य। राजा नक्षका पुत्र या वंशज। नैपाद (सं० पु०) निपादस्य अपत्यं विदादित्वाद्ज्। निपादका वंशज। नैपादके (सं० त्रि०) निपादेन कृतम्, कुसादादित्वात् संप्रायं वुञ्। (पा ४।३।१८) निपादकृत पदार्थभेद। नैपादिक (सं० पु० स्त्री०) निपादस्य अपत्यं इति चकळ् निपादका वंशज। नैपादि (सं० पु०) निपादस्य अपत्यं इति भाषे इञ्। निपादका वंशज। नैपिध (सं० पु०) निपथः मलो वाचकतयाऽस्त्वस्य, षण्, एषोदरादित्वात् साधुः। तथामक नक्षरूप दक्षिणान्ति। नैष्कर्म्यं (सं० स्त्री०) निष्कर्मणो भावाः ष्यञ्। विधिपूर्वकं सर्वकर्मत्याग। चामत्तिपरिमूय्य ही कर विधिपूर्वकं कर्म करते करते कर्मत्याग किया जा सकता है। नैष्कर्मतिक (सं० त्रि०) निष्कर्मतमस्यस्य उञ्। (पा ५।२।११६) निष्कर्मतमानुयुक्त। नैष्कसहस्रिक (सं० त्रि०) निष्कसहस्रमस्यस्य उञ्। निष्कसहस्र परिमाणयुक्त। नैष्किक (सं० पु०) निष्के हेजि श्रीगारे नदागारे नियुक्तः

उक्तः। १। कीर्वाच्यत्, टकगालका अपसर। २ निष्कधिकार। (त्रि०) ३ निष्ककोत, निष्क द्वारा मोल लिया हुआ। ४ निष्कसम्बन्धी। नैष्किसून्य (सं० स्त्री०) निष्किसून-यञ्, निष्किसूनल, दरिद्रता। नैष्कतिक (सं० त्रि०) परहसि-हेदनमें तत्पर, दूरेकी धानि करके अपना प्रयोग न निकालने वाला। नैष्कमण (सं० वली०) निष्कमणे गिगोष्टं हाट्वाहर्गमन-काने दीयते तत्र कार्यं वा श्युटादित्वात् षञ्, (पा ५।१।६०) १ निष्कामणकालमें दीयमान वसु, वह वसु जो निष्कामण संस्कारके समय दान की जाती है। नैष्ठिक (सं० त्रि०) निष्ठा विद्यतेऽस्यंति निष्ठा-उठ्। १ निष्ठावान्, निष्ठायुक्त। २ मरणकालमें कर्त्तव्य। (पु०) ३ ब्रह्मचारिभेद, वह ब्रह्मचारी जो उपनयनकालमें सि कर मरणकाल तक ब्रह्मचर्य-पूर्वक शुद्धे भाव्यममें ही रहे। याज्ञवल्क्यमें लिखा है, कि नैष्ठिक ब्रह्मचारिगण याज्ञवल्कीवन आचार्यके समीप, आचार्यके प्रभावमें आचार्य-पुत्रके समीप, उसके भी प्रभावमें उनको पत्नीके समीप और यदि पत्नी भो न रहे, तो पतिश्रोत्रोय अग्निंके समीप वास करे। जित्नेन्द्रिय नैष्ठिक-ब्रह्मचारी यदि विधिपूर्वक इसका अवलम्बन करे, तो अन्तमें उसे सुख-लाभ होता है। इस संभारमें फिर सके जठरयन्त्रपाका भोग करना नहीं होता। याज्ञवल्क्य ब्रह्मचर्यं चव-सम्भनका नाम ही नैष्ठिक-ब्रह्मचर्यं है। नैष्ठुर्यं (सं० वली०) निष्ठुरस्य इदं, निष्ठुर-भाज्। निष्ठुरका, निठुराई, कुरता। नैष्ठ (सं० त्रि०) निष्ठायुक्त, धननियमादि आचरण-श्रीन्। नैष्पिण्ड (सं० स्त्री०) निष्पिण्डस्य भाषे षत्वम्। शगामाव। नैष्पिणिकत्व (सं० वली०) पिपणकारीका कार्य, पीसने-वालेका काम। नैष्पिणिक (सं० त्रि०) निष्पिणकारो, पीसनेवाला। नैष्पुह्य (सं० वली०) निष्पुहय-ष्यञ्। (पा ४।३।४१) निष्पुह्यका भावः।





चष्ट्याम पर आक्रमण किया जिससे यहांके सुसलमानोंकी संख्या और भी बढ़ गई। इसके अलावा चरवदेशीय धर्मिण्य सिन्धु और मन्धार उपकूल होते हुए वाणिज्यार्थ यहां आये थे। धीरे धीरे यहांके सुसलमान सम्प्रदायकी दिनों दिन उन्नति होने लगी।

१५५६ ई०में सोजर-ओडरिक नामक एक भिनिस-निवासी इस स्थानकी देख कर लिख गये हैं,—'यहांके अधिवाधिगण मूर नामक दस्युके समान हैं। लकड़ी यहां बहुत सस्ती मिलती और नमकका बहुत बड़ा कारबार है। प्रति वर्ष लाखों मन नमक यहांसे दूसरे स्थानमें भेजा जाता है।'

सोलहवीं शताब्दीके अन्तमें कुछ पोर्तुगीज इस देशमें आए और आराकानराजके अधीन रहने लगे। १६०० ई०में किसी कारण आराकानराजने उन्हें मार भगाया। बहुतोंकी जानें गईं और जो कुछ बच रहे वे गन्तानदोके मुहानेमें दक्षुवृत्ति करने लगे। इनके अत्याचारमें अतीवृत्त हो कर इवाहिम खाने ४० जन्मो जहाज और ६०० सेना ले कर गाहावाजपुर द्वीपमें इन पर चढ़ाई कर दी, किन्तु इस सहाईमें वे पराजित हुए। पोर्तुगीजोंने इनके अहाजादि अपने अधिकारमें कर लिए। इससे इन लोगोंने असाहित हो कर १६०८ ई०में सन्दीप पर आक्रमण कर सुसलमानोंसे दुर्गकी अशंकोध किया। गिरित और कौमली पोर्तुगीजोंके साथ युद्धमें सुसलमानोंकी हार हुई और सन्दीप इनके अधिकारमें आ गया।

फरान्सी-पर्याटक बर्नियरकी लिखित वर्षानासे ज्ञात जाता है, कि जब पोर्तुगीज सुगल द्वाहा पराजित हुए, तब आराकानराजने उन लोगोंके साथ साथ अत्याच्य चर्चे जोको भी भाग्य दिया और इन लोगोंकी सहायतासे सष्टम वन्दरकी सुगल-आक्रमणसे बचाया। मग और पोर्तुगीज मिलित दक्षुवृत्तद्वयके लुप्टन और अत्याचारसे सुगल-सम्भ्राट और राजीव तंग तंग आ गये और अन्तमें शासनकर्त्ता शाहस्ता खोंकी उन्हें दमन करनेके लिए भेजा। शाहस्ता खाने उन लोगोंको डरा धमका कर बगोभुल किया और कहा कि यदि वे लोग अत्याचार करतना छोड़ दें, तो बोग्गजीव उन लोगोंको रहनेकी जगह जमोने दे सकते हैं। इस प्रकार शाहस्ता खाने

उन लोगोंकी गान्त कर १६६५ ई०में संयुक्त पक्षगानके अधीन ५०० सेना नगरकी रक्षाके लिए रख छोटा था।

१०५६ ई०में दृष्ट इण्डिया-कम्पनीने कपड़ेका व्यवसाय करनेके लिए यहां एक फीठो बसवाई। इसके अलावा चारपाता, काशोबन्दा, कदवा और लम्बोपुर ग्राममें उसी समय अनेक कोठो निर्माण की गईं जिनके अलावा गेय आज भी नजर आते हैं। यहांके सुसलमानगण कुलानमतासुकारी हैं। ये लोग नमाज पढ़ते और अनेक हिन्दूपूजामें योगदान देते हैं तथा अत्याच्य सुसलमान वीरकी विग्रह भक्ति नहीं करते। हिन्दुओंके मध्य ब्राह्मणगण गंय और निम्नश्रेणोंके हिन्दूगण बख्श हैं। यहां मोतसादेवो और नागपूजा ही प्रसिद्ध मानो जाते हैं।

यहांके क्या हिन्दू क्या सुसलमान दोनों जातिके मध्य युद्धका १५५६ ई० वर्ष और कन्याका १० वर्ष होनेसे विवाह होता है। यहांके सुसलमानकी विवाह-प्रथामें हिन्दूमें बहुत कुछ फर्क पड़ता है। विवाहके दिन वर पालीय सज्जन और ग्रामस्थ निमन्त्रित करवातेके साथ कन्याके घर जाता है। अत्याच्यके निर्दिष्ट स्थान पर बैठनेके बाद एक पादमी बकील और दो पादमी साक्षि-रूपमें नियुक्त होते हैं। बाद वर दसो बकीलके द्वारा बहुतमे द्रव्य कन्याको उपहारस्वरूप देता है। कन्या इन सब द्रव्योंको ले कर विवाहको सम्पत्ति प्रकट करती है। अन्तर बकील वरके निकट आ कर कुलवाते कह सुनाते और उक्त साक्षिद्वय उनका समर्थन करते हैं। सामन्तिक व्यक्तियोंके भीजन कर चुकने पर विवाह होता है। इसके बाद वर कन्याकी भवना घर ले जाता है।

इस शिलेके नाना जातीय मनुष्य धानको खेती करते हैं। चैत्र वैशाखमें जो भाउष धान बोया जाता है, वह आवष, भाद्रमें और जो ज्यैष्ठ, पाषाणमें बोया जाता है, वह कार्तिक, पशुपक्षमें कटता है। यहां सरस, सरसी, नारियन, सुपारी, हददो, ईख, पाट और धानकी बहुत खेती होती है। ये सब उत्पन्न द्रव्य यहांमें टाका पट, धाम पादि जिलोंमें भेजे जाते और इन सब स्थानोंमें



राजाओं को उपाधि सि एम है। चांबल, कंगन, तजपान, रबर, लाख और मोम इस राज्यमें बघैठ पाया जाता है। राज्यमें चूने और कीपत्तेको खान भी पाई गई है। सोलहवें इस राज्यमें भानेका एक राज्ता है।

नौगसोकी—वसिष्ठा पर्वतके पत्तेशुक्त एक छोटा राज्य। यहां धान, चावल, मकई आदिको खेती होती है। यहांके लोग चटारैका व्यवसाय अधिक करते हैं।

नौगसुद्ध-शामासके खसिया पर्वतका एक सामन्त राज्य। जनसंख्या दो हजारके लगभग और राजस्व ८८०) रु० का है। यहांकी प्रधान उपज धान, धानू और मधु है। राज्यमें लोहा भी पाया जाता है, लेकिन यह काममें लाया नहीं जाता।

नौच (हि० स्त्री०) १ नौचनेकी क्रिया या भाव। २ छीनने या लेनेकी क्रिया, कई घोरसे कई आदमियोंका भूपाटेके साथ छीनना या लेना। ३ चारों घोरकी मांग, बहुतेसे लोगोंका तकाजा।

नौचखोटी (हि० स्त्री०) भूपाटेके साथ लेना या छीनना, जबरदस्ती खींच खींच करके लेना, छीना भूपाटी।

नौचना (हि० स्त्री०) १ किसो जमी या मगो छुई वस्तुकी भूपाटेसे खींच कर फलन करना, चलाहना। २ शरीर पर इस प्रकार हाथ या पंजा लगाना कि नाखून घँस जाय, खरोचना। ३ नख आदिसे विदोष करना, किसी वस्तुमें दाँत, मधु या पंजा घँसा कर उसका कुछ भाग खींच लेना। ४ ऐसा तकाजा करना कि नाकमें दम हो जाय, बार बार तंग करके मांगना। ५ दुखी घोर औरान करके लेना, पोछे पड़ कर किमोको इच्छासे विरह छससे लेना, बार बार तंग करके लेना।

नौचानाथो (हि० स्त्री०) नौचखोटी देखो।

नौघ (हि० पु०) १ नौचनेवाला। २ तंग करके लेनेवाला। ३ छीना भूपाटी करके लेनेवाला। ४ तकाजोंके मारे नाकों दम करनेवाला।

नौजनी—युक्तपदेशके शहरामपुर जिलाभागत एक ग्राम। यह चक्षा २८° ५३' २८" उ० और देशां० ७७° ४२' ५२" पू०के मध्य, पाण्डुर नगरसे १ मील दक्षिण घोर बड़पु। ग्रामसे १ मील दक्षिणपश्चिममें पतपित्त है।

नोट (सं० पु०) भट-धच, प्रयोदरादित्वात् साधुं नट।

नोट (सं० पु०) १ ध्यान-रहनेके लिये लिख लेनेका काम, टांकने या लिखनेका काम। २ चाशय या धर्म प्रकट करनेवाला लेख, टिप्पणी। ३ लिखा हुआ परचा, पत्र, विज्ञो। ४ यूरोप, अमेरिका और अंगरेजाधिकृत भारत-यपमें प्रचलित कागज (Parchment) की सुद्राविशेष, सरकारकी ओरसे जारी किया हुआ वह कागज जिस पर कुछ रूपोंको संख्या रहती है और यह लिखा रहता कि सरकारसे उतना रूपया मिल जायगा, सरकारो हुंड़ो। भारतधर्ममें नोट दो प्रकारका होता है, एक करेसो, दूसरा प्रामिसरो। करेसो नोट बराबर निकाले स्थान पर चलता है और उसका रूपया जब चाहे, तब मिल सकता है। प्रामिसरो नोट पर केवल छद्म मिलना रहता है। सरकार मांगने पर उसका रूपया देनेके लिये बाध्य नहीं है। प्रामिसरो नोटकी दर घटती बढ़ती है।

नोटवेपर (सं० पु०) पत्र लिखनेका कागज।

नोटवुक (सं० स्त्री०) वह कापी या बही जिस पर कोई बात याददास्तके लिये लिखी जाय।

नोटिस (सं० स्त्री०) १ विज्ञप्ति, सूचना। २ विज्ञापन, इतिहास। प्रस शब्दकी कुछ लोग पुंलिंग भी वोलते है।

नौष (सं० स्त्री०) लवण, नमक।

नौषम्बवाड़ी—वर्तमान महिपुर जिनैका उत्तरांग जो अभी विल्लुर्ग कहलाता है, प्राचीनकालमें नौषम्ब-प्रनाधिकृत देश वा नौषम्बवाड़ी नामसे प्रसिद्ध था।

नौषम्बघोर—चालुक्यवंशोय एक राजा। चालुक्य देखो।

नौदन (सं० स्त्री०) नुद भावे स्त्रुट, १ जखण्डन। गिच, भावे स्त्रुट, २ प्रेरण, चलाने या हांकनेका काम। ३ प्रतोद, चैलौकी हांकनेकी छड़ी या कोड़ा, पैना, भीगी।

नौध (सं० त्रि०) पपसारण्योय्य।

नौधम् (सं० पु०) शु धमि-धुट, च। ष्टपिभेद।

नौधसिंह—पञ्चासकेशरो महाराज रथजित् सिंहके पूर्व पुरुष। इनके पिता बुद्धसिंह अपने पिताके आदिमानुसार मानकका धर्मधर्म पढ़ कर विष्णुसम्प्रदायभुक्त हो गए थे। बुद्धसिंह पञ्चासके नाना स्थानोंमें जो सब प्रथम नुट लाते थे उन्हें सुधिरचक नामक ग्राममें, जहाँ चलका घर था, रख देते थे। सुधिरचक नामक स्थानमें घर रहने

नाम द्रवीकी इन जिनमें चामदमी भी होती है। १८३६ ई०में यहाँ एक भयानक बाढ़ आई थी जिनमें बहुत मनुष्यों के प्राय नाम हुए थे।

२ उक्त जिनका एक उपविभाग। यह पचा० २२' १०" से २३' १०" तक चौ० देगा० ८' ४" से ८' ३३" तक मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण १३०१ वर्गमील और जनसंख्या ८२२८१ है। इसमें सुधाराम नामका एक शहर और १८५४ ग्राम समेत है।

३ उक्त जिनका एक प्रधान नगर। सुधाराम देखो।

नीरनी ( हि० स्त्री० ) नीर देवी।

नीर ( हि० स्त्री० ) दूध दुहते समय मायके पोर बांधने-टारफी, बंधी।

नीर ( फा० स्त्री० ) १ सुष्म पदभाग, शङ्कु के पाकारको वस्तु का मञ्जीर या पतला छोर। २ कीप प्रतियोगी दो रेश्माओंका मध्यस्थान या बिन्दु, निकला हुआ कोना। ३ किसी वस्तुके निकले हुए भागका पगला गिरा, किमो धारकी बड़ा हुआ पतला-पदभाग।

नीरनीर ( हि० स्त्री० ) १ अनाव सिंगार, ठाटघाट, मजाघट। २ पातङ्ग, दर्प, तेज। ३ शुभनेवासी घात, व्यंग्य, ताजा, पावाजा। ४ डेहड़ा, परस्परकी घोट।

नीरदार ( फा० स्त्री० ) १ जिनमें नीर हो। २ शुभनेवाला, पैना। ३ विजयमें शुभनेवाला, दिनमें चमक करनेवाला। ४ गानदार, तड़क-भड़कका, ठसठसा।

नीरना ( हि० स्त्री० ) मसबना।

नीरपत्तक ( हि० स्त्री० ) चीतु नाम पादिकी गड़म, चेहरकी बनाघट।

नीरपाप ( हि० पु० ) जूतीकी काट काट, सुन्दरता पोर मनबूती।

नीरनीकी ( हि० स्त्री० ) १ परस्परव्यंग्य पादि द्वारा धाकमप, डेहड़ा, ताजा, पावाजा। २ विवादा, भगतडा।

नीरनीना ( हि० स्त्री० ) सुधीया देखो।

नीरना ( हि० स्त्री० ) पदभुग, विविक्त, धनुठा, धनुर्व।

नीरना या नवपाप -गुणपदेशके वस्तुकाई जिनमें अवस्थित चंगरेजाविहित एक पाप। यह मर्दानमें ११ खीम पूर्व पोर धोहिन्द नगरमें ८ खीस उत्तरमें अव-

स्थित है। इसने पाप की शमीघाट नामक पर्वत है।

धाममें तथा पर्वत पर धनेक प्राणन ध्वंवांशिय देखनेमें पाते हैं। पानोय प्रयात है, कि देवकी वापनकर्ता कोई शानो इस पर्वतके उच गिरा पर बैठ कर चारों पोर देखा पातो थीं। जब उड़तो दूर भूत नजर पातो थी, तब ये समझ नेतो थीं कि देवाकारास्य बन्दि, भारत-वर्ष या रहते हैं। इस समय ये लगे लूटनेके क्रिये अपनी मेतःकी गेज देतो थीं। इसी शमीके नाम पर पर्वत पोर तिहटल्य धामका शमीघाट नाम पड़ा है। धाम भी शमीघाटके गिरादेग पर शमीका प्रसाराम नजर पाता है। विशेष विवरण शमीघाट शरमें देवे।

नीरुजम-धामामदेगके सुमिया पर्वतस्थित पौरिम राज्यके पत्तगंत एक धाम। इसके पाप हो मोहिनी नाम है। यह लोहा पत्तनके तापने गला कर मसतक-सेत पर रखा जाता है पोर पीके बहुत उजळ लोहा भी जाता है। इससे स्थानोय अधिवासी पपगा अपनी व्य-हारोपयोगी पत्थादि बनाते हैं।

नीरु-धनाय-धामामके सुमिया पहाड़के पत्तगंत एक छोटा राज्य। यहाँके राजाओंको उपाधि मि-यम है। १८२३ ई०में पश्चिमा राज्यके मध्य मधमें पड़ले इसी स्थानके राजाके साथ चंगरेजोंकी मिश्रता हुई थी। फल-स्वरूप मि-यम राजाने अपनी राज्य की कर लगे धामाम सामिका एक रास्ता बनानेका चादेश दिया। किन्तु १८२८ ई०में चंगरेजोंके साथ इनका समझौता हो गया। सुमिया लोगोंने शानो ही कर इन नगरके दो चंगरेज-कर्मचारी पोर मिजाहियोंको सार डाला। मित्रोहियाका दमन क्रिये लागि के बाद चंगरेजोंने इन नगरमें पालिटि-कन एजेंटका सटर स्थान बनाना चाहा। यहकि पश्चि-माकी एववहारोपयोगी सुनो कपड़े बुनने पोर मोहिके-चत्रिधार भी बनाते हैं।

नीरुजाममें-धामामदेगके सुमिया पर्वतके पत्तगंत एक छोटा सामना राज्य। इसे कोई कोई पार-नीरुजाम-में भी कहते हैं। यहाँके राजा या धामनकर्ताओंको उपाधि महार है।

नीरु-हीम-सुमिया पर्वतके पत्तगंत एक सामना राज्य। यहाँको जनसंख्या द्वा हजारके करीब है। यहाँके

राजोंको वपाधि सि एम है। चोवन, कंगन, तेजपात, रबर, लाख और मोम इस राज्यमें यथेष्ट पाया जाता है। राज्यमें घूनी और जोयलेकी खान भी पाई गई है। सोलहसे दस राज्यमें धानका एक रास्ता है।

**नोहसोकी**—वमिया पर्वतके पत्तभुक्त एक छोटा राज्य। यहां धान, चावल, मकई आदि को खेती होती है। यहांके लोग चटाईका व्यवसाय अधिक करते हैं।

**नोहसङ्ग**—पाषाणके खसिया पर्वतका एक सामन्त राज्य। जनसंख्या दो हजारके लगभग और राजस्व ८८०००० रुका है। यहांकी प्रधान उपज धान, पानू और मधु है। राज्यमें लोहा भी पाया जाता है, लेकिन बड़ काममें लाया नहीं जाता।

**नोच** (हि० खी०) र नोचनेकी क्रिया या भाव। र खोनेने या लेनेकी क्रिया, कई घोरसे कई पांडमियोंका भ्रष्टाण्टेके साथ खोना या लेना। र चारों घोरकी मांग, बहुतसे लोगोंका तकाजा।

**नोचखमोट** (हि० खी०) भ्रष्टाण्टेके माथ लेना या खोना, लहरदप्ती खींच खींच करके लेना, छीना भपटी।

**नोचना** (हि० क्रि०) र किसी जमी या लगी हुई वस्तुको भ्रष्टाण्टेसे खींच कर फलंग करना, उखाड़ना। र शरीर पर इस प्रकार हाथ या पंजा लगाना कि नाखून घँस जाय, खुरीचना। र नव आदिसे विदोष करना, किसी वस्तुमें दान, गड़ या पंजा घँसा कर उसका कुछ पंश खींच लेना। र ऐसा तकाजा करना कि नाकमें टम हो जाय, धार धार तंग करके मांगना। र पुटुपुटी और हेरान करके लेना, पीछे पड़ कर किसीको इच्छासे विरह उससे लेना, धार धार तंग करके लेना।

**नोचानाचो** (हि० खी०) नोचखमोट देखो।

**नोच** (हि० पु०) र नोचनेवाला। र तंग करके लेनेवाला। र खोना भपटी करके लेनेवाला। र तकाजोंके मारे नाकी दम करनेवाला।

**नोजली**—युक्तपदेशके महारानपुर जिलान्तर्गत एक ग्राम। यह चला २८ ५३ २८०० और देगा ०७ ४२ ५२ मूके माथ, पाण्डुर नगरसे र मोन दक्षिण घोर बड़पुआ माथसे र मोन दक्षिणपश्चिममें अवस्थित है।

**नोट** (सं० पु०) गटपच, पपीदरादिलाव् साथ। गट।

**नोट** (सं० पु०) र ध्यान रहनेके लिये लिख लेनेका काम, टांकने या लिखनेका काम। र भाग्य या धर्म प्रकट करनेवाला लेख, टिप्पणी। र लिखा हुआ परचा, पत्र, विद्वो। र यूरोप, अमेरिका और अंगरेजसिद्धत भारतमें प्रचलित कागज (Parchment) की मुद्राविशेष, सरकारकी घोरसे जारी किया हुआ वह कागज जिम पर कुछ रूपयोंको चंख्या रहती है और यह लिखा रहता कि सरकारसे उतना रुपया मिल जायगा, सरकारी हुंडो। भारतवर्षमें नोट दो प्रकारका होता है, एक करेसो, दूसरा प्रामिसरो। करेसो नोट बराबर भिकसि स्थान पर चलता है और उसका रुपया जब चाहे, तब मिल सकता है। प्रामिसरो नोट पर केवल सुद मिलता रहता है। सरकार मांगने पर उसका रुपया देनेके लिये बाध्य नहीं है। प्रामिसरो नोटकी दर घटने बढ़ती है।

**नोटपेपर** (सं० पु०) पत्र लिखनेका कागज।

**नोटबुक** (सं० खी०) वह कापी या वही जिस पर कोई बात याददास्तके लिये लिखी जाय।

**नोटिस** (सं० खी०) र विज्ञप्ति, सूचना। र विज्ञापन, इतिहास। इस शब्दकी कुछ लोग पुंलिङ्ग भी बोलते हैं।

**नोप** (सं० खी०) लक्ष्य, नमक।

**नोपम्बवाड़ी**—वर्तमान महिसुर जिलेका उत्तरांग जो अभी चित्तमटुंग कहलाता है, प्राचीनकालमें नोपम्ब-प्रजासिद्धत देय वा नोपम्बवाड़ो नामसे प्रसिद्ध था।

**नोपम्बघोर**—चालुक्यवंशीय एक राजा। चालुक्य देखी।

**नोदन** (सं० खी०) सुद भावे लुट। र खण्डन। गिच् भावे लुट। र प्रेरण, चलाणे या हांकनेका काम। र प्रतीद, बेलीकी हांकनेकी लड़ी या कोड़ा, पैना, चोगी।

**नोप** (सं० खी०) नोपम्बवाड़ी देखो।

**नोपसिंह**—पञ्जाबके शरो महाराज रणजित् सिंहके पूर्व पुत्रव। इनके पिता बुद्धसिंह अपने पिताके पादेगादुसार मानकका धर्मपाथ पढ़ कर पिछमस्यदायभुक्त हो गये थे। बुद्धसिंह पञ्जाबके माना स्थानमें जो मव दूथ म्द लाते थे उन्हें सुखेरचक नामक ग्राममें, जहाँ उनका घर था, रख देते थे। सुखेरचक नामक स्थानमें घर रहने

**नोप** (सं० खी०) नोपम्बवाड़ी देखो।

**नोप** (सं० खी०) नोपम्बवाड़ी देखो।

**नोप** (सं० खी०) नोपम्बवाड़ी देखो।

**नोप** (सं० खी०) नोपम्बवाड़ी देखो।

**नोप** (सं० खी०) नोपम्बवाड़ी देखो।

**नोप** (सं० खी०) नोपम्बवाड़ी देखो।

**नोप** (सं० खी०) नोपम्बवाड़ी देखो।

नागा दूबोंकी इस जिलेमें 'चामदनी' भी होती है।  
१८७६ ई०में यहाँ एक भयानक बाढ़ आई थी जिससे बहुत मनुष्योंके प्राण नाश हुए थे।

२ उक्त जिलेका एक उपविभाग। यह पचा० २२' १०' से २३' १०' तक और देगा० ८०' ४०' से ८१' ३३' ५०' की मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण १३०१ वर्गमील और जनसंख्या ८२२८१ है। इसमें सुधाराम नामका एक नगर और १८५५ ग्राम संगति हैं।

३ उक्त जिलेका एक प्रधान नगर। सुधाराम देखो।

नौदनी ( हि० स्त्री० ) नौई देखो।

नौई ( हि० स्त्री० ) दूध दुहते समय गायके पौर बांधने-का रस्सी, बंधो।

नौक ( फा० स्त्री० ) १ सूक्ष्म अयंभाग, शूद्रके चाकारको वस्तु-का महीन वा पतला छोर। २ कोण बनानेवालो दो रेखाओंका मङ्गमस्थान या बिन्दु-निकला हुआ कोना। ३ किसी वस्तुके निकले हुए भागका पतला सिरा, किसी औरको बड़ा हुआ पतला-अपभाग।

नौगभोके ( हि० स्त्री० ) १ अनाव सिंगार, ठाटवाट, सजावट। २ प्रातः, दर्प, तेज। ३ सुभनेवाली बात, व्यंग्य, ताना, भावाजा। ४ छिछकाड़, परस्परकी चोट। नौकदार ( फा० वि० ) १ जिसमें नौक हो। २ सुभनेवाला, पेना। ३ विसर्ग सुभनेवाला, दिशमें असर करनेवाला। ४ शानदार, तड़क-भड़कका, ठसकका।

नौकना ( हि० स्त्री० ) ललचना।

नौकपलक ( हि० स्त्री० ) चौख नाम पादिकी गढ़न, चेहरकी बनावट।

नौकपान ( हि० पु० ) जूतीकी फाट छाँट, सुन्दरता और सजधूती।

नौकभोके ( हि० स्त्री० ) १ परस्पर व्यंग्य यादि शारा पाक्रमण, छिछकाड़, ताना, भावाजा। २ विवाद, भगड़ा।

नौकीला ( हि० वि० ) उकीला देखो।

नौखा ( हि० वि० ) अद्भुत, विचित्र, अनूठा, अपूर्व। नौघाम वा नवघाम -युक्तप्रदेशके युद्धफार्जे जिलेमें अवस्थित चंगरेजाधित्त एक ग्राम। यह मईनसे ११ कोस पूर्व और शीहन्द नगरसे ८ कोस उत्तरमें अव-

स्थित है। इससे पास ही राकीघाट नामक पर्वत है।

ग्राममें तथा पर्वत पर अनेक प्राचीन धर्मस्थान देखनेमें आते हैं। स्थानीय प्रवाद है, कि देवको शासनकर्ता कोई रानी इस पर्वतके उच्च गिखर पर बैठ कर चारों ओर देखा करती थीं। जब अड़ुतो हुई धून नजर आती थी, तब वे समझ लेती थीं कि देवान्तरस्थ बणिक्, भारत-वर्ष गा रहे हैं। इस समय वे उहाँ नूटनेके लिये अपना सेनाको गीज देती थीं। इसी रानीके नाम पर पर्वत और निकटस्थ ग्रामका रानीघाट नाम पड़ा है। आज भी रानीघाटके गिखरदेग पर रानीका प्रस्तरामन नजर आता है। विशेष विवरण रानीघाट शब्दमें देखो।

नौझक्रम—घासामप्रदेशके खसिया पर्वतस्थित खैरिम राज्यके अन्तर्गत एक ग्राम। इसके पास ही लोहकी खान है। यह लोहा अग्निके तापमें गला कर समतल-रूप पर रखा जाता है और पीछे बहुत उन्नत लोहा ही जाता है। इससे स्थानीय अधिवासी अपना अपना व्यवहारोपयोगी अस्त्रादि बनाते हैं।

नौझ-शत्राव—घासामके खसिया पहाड़के अन्तर्गत एक छोटा राज्य। यहाँके राजाओंको उपाधि सि-एम है। १८२३ ई०में खसिया राज्यके मध्य सवने पड़से इसी स्थानके राजाके साथ अंगरेजोंको मित्रता हुई थी। फल-स्वरूप सि-एम राजाने अपने राज्य हो कर उहाँ घासाम जानिका एक राज्ता बनानेका आदेश दिया। किन्तु १८२८ ई०में अंगरेजोंके साथ इनका मतभेद हो गया। खसिया सीमोंने धागो हो कर इस नगरके दो अंगरेज-कर्मचारी और सिपाहियोंको मार डाला। विद्रोहियोंका दमन किये जानेके बाद अंगरेजोंने इस नगरमें पार्लि-कम एजेंटका सदर स्थान बनाया था। यहाँके अधि-वासी व्यवहारोपयोगी सूती कपड़े बुनते और कोहके श्रियार भी बनाते हैं।

नौझतरमेन—घासामप्रदेशके खसिया पर्वतके अन्तर्गत एक छोटा सामन्त राज्य। इसी कोई कोई दार-नौझतर-मेन भी कहते हैं। यहाँके राजा वा सामन्तकर्ताकी उपाधि महार है।

नौझ-टोरन—खसिया पर्वतके अन्तर्गत एक सामन्त राज्य। यहाँको जनसंख्या दस हजारके करीब है। यहाँके

योगी-विद्वर लोनी मद्यो पर बैठ कर तपस्या कर रहे थे और लक्ष्मी भवस्थाने उनका तपोभ्रष्ट हुआ था। पीछे योगीश्यासने उनका अधिहार न रहा। रामचन्द्रने उन्हें शाप दे कर सोरा प्रस्तुत करनेका आदेश दिया। विन्दु और वेनदारकी उत्पत्तिके विषयमें ऐसा ही प्रवाद है। किमीका मत है, कि विन्दु जातिके आदि पुरुषसे नोनिया और वेनदारकी उत्पत्ति हुई है।

विहारमें नोनिया जातिके सात सम्प्रदाय हैं, यथा—  
 १. पवधिया वा पयोध्यावासी, भोजपुरिया, खुशुलत, मधैया  
 २. घोड़, पवाइया और सेमारवार। इन सम्प्रदायोंमें एक दूसरेसे विवाह शादो नहीं होती। पर हा, तीन वा पांच-पौढ़ो तक कोइ कर अन्य हिन्दू जातिके जैसा विवाह कर लेते हैं। बहुत नजदोकी सम्बन्धमें विवाह नहीं करते। ये लोग कसो उमरमें हो लड़कोको ब्याहते हैं। किन्तु प्रयाभावगतः कोई कोई अधिक उमरमें भी विवाह करते हैं। इन लोगोंमें बहु विवाह प्रचलित है, लेकिन दोसे अधिक स्त्रो प्राये बहुत घोड़े देखे जाते हैं। वंशरक्षके लिये यदि कोई दो चार स्त्री भी कर ले, तो समाजमें उसकी निन्दा नहीं होती। विधवा विवाह भी इन लोगोंमें चलता है। विधवा विधेयतः पपने देवरके साथ विवाह करना ही अच्छा समझती है।

पत्नीके पसतो होने पर अथवा पतिपत्नीमें मत नहीं रहने पर पश्चात्तसे पत्नीपरिहारकी अनुमति दी जाती है। इस प्रकार एक स्वामी कोइ देने पर नोनिया स्त्रियां अन्य स्वामो ग्रहण कर सकती हैं। किन्तु एक धार यदि अन्य जातिका सहवास करे, तो वह समाजमें भलन कर दी जाती है और फिर वह समाजमें विवाह नहीं कर सकती।

तिरहुतिया ब्राह्मण इनके पुरोहित होते हैं। इन लोगोंकी विवाहप्रथा अन्याय्य जातिकी प्रथामे कुछ भन्तर पड़ती है। वरका मुख्य कुलरोतिके अनुसार क्षेपण एक जोड़े कपड़ा और एकसे पांच रुपये तक है। इस मुख्यका नाम तिनक है। विवाहके पंचमे ही इष्ट मुख्यका निर्णय करना होता है। विवाह हो जाने पर कन्या वारातके साथ और जातिके जैसा ससुराल नहीं जाती। जब तक हिरागमन नहीं होता, तब तक वह पीहरमें ही रहती है।

पवधिया नोनियामें 'बास्माई माड़ा' नामक एक आश्रय-पड़ति प्रचलित है। इस पड़तिके अनुसार वर-कन्याकी विवाहके समय दूसरे स्थानमें रहना पड़ता है।

विहारमें प्रचलित हिन्दूधर्म ही नोनियाका धर्म है। इनमें शाक्तको संस्था हो अधिक है, वैष्णव बहुत थोड़े हैं। भगवती इनको प्रधान आराध्यदेवी हैं। ये लोग बन्दो, गोरैया और शोतलाकी पूजा-मङ्गलधार, दुधवार और शनिवारकी क्रिया करते हैं। स्त्रियां और छोटे छोटे लड़के किमी देवदेवीकी पूजा नहीं करती। लक्ष्मी कभी स्त्रियां शोतलापूजामें पुरुषता माय देती हैं। सन्ध्यामी फकीर लोग हो इस जातिके शुद्ध होते हैं। ये लोग श्मशानके सन्नाते हैं, गाइते नहीं। जिसकी मृत्यु पांच वर्षके अन्दर होती है, केवल लक्ष्मीकी श्मशान गाड़ी जाती है।

लोनी मद्यो सोरा और लक्ष्य प्रस्तुत करना ही इनका पेटक व्यवसाय है। वर्षमान समयमें इनमेंसे कुछ पयनिर्माण, पुष्करिणीखनन, पद्यालिकानिर्माण, घर-काजन-आदि मजदूरका काम करते हैं।

पटना, सुहर और मुजफ्फरपुरके नोनिया कुर्मो, कोररो आदि जातिके समकक्ष हैं और ब्राह्मण इनके हाथका जल पीते हैं। किन्तु भागलपुर, पूर्णिया, चम्पारण, ग्राहावाद और गयाके नोनियाका जनकोई हिन्दू नहीं पीता। वहाँ ये लोग जातिके समान माने जाते हैं। इस जातिके प्रायः सभी लोग चूड़े और सपरका मांस खाते तथा शराब पीते हैं।

नोनी ( हि०—लो० ) १ नोनी मद्यो । २ नोनिया, पम-लोनीका पोधा । ( वि० ) ३ रूपवती, सुन्दर । ४ अच्छी, बढ़िया ।

नोनेकवि—एक हिन्दी-गायक-कवि जिन्होंने मुन्देरखण्डके अन्तर्गत बादा-नगरमें १८७४ ई०की इनका जन्म हुआ। इनके पिताका नाम था—हरिदास ।

नोनेरा—युक्तप्रदेशके भागल विभागकी सैनपुरी तहसीलके अन्तर्गत एक गण्डयाम। यह जिलेके सदरसे ८ मील उत्तर-पश्चिम ४० फुट लंबी भूमिके ऊपर अवस्थित है। इस उच्च क्षुपके पूर्व-दिशामें अवस्थित एक प्राचीन मन्दिरकी ईंटोंसे उत्तरांगमें एक दुर्ग बनाया गया था।



कारण उनेके दलभूत सिखगण 'सुखि-चक्र-मिगल' नामसे प्रसिद्ध हुए। 'बुद्धसिंहके दो पुत्र थे, नोधसिंह और चान्दसिंह। नोधसिंह पिताके मिश्रणमें ही रहें और कनिष्ठ चान्दसिंहमें 'सिन्धियन-वासा' नामक याककी उत्पत्ति हुई।

उम समय 'धरसो' वा दक्षगुण्यवमाय जातीयताका गौरवसुचक समझा जाता था। इसीसे नोधसिंहने अन्य कोई ह्दित प्रबलव्यन करनेके पड़ने सम्मानसुचक दक्षु-नेता होनेका प्रका विचार कर लिया। क्योंकि वे जानते थे, कि इस व्यवसायमें प्रचुर धन हाथ लगेगा। भविष्यत्-उन्नति ही प्रायसे इन्होंने रावलपिण्डोकी सीमासे ले कर शनदूके तोरवर्ती मभी स्थानोंकी सृष्टि कर प्रभूत धन प्राप्त किया। इस समय क्या सिख, क्या जाट, क्या सीमांतवर्ती धरदारगण, सभीसे इनकी अवस्था उन्नत हो गई थी। विगित धनशाली होकर ये अपने देश भरमें विगेष गण्यमान हो उठे थे। १७३० ई०में इन्होंने मांजि-धियर मन्दि-जाटवंशोय गुलाबसिंहकी कन्याका पाणि-ग्रहण किया। इसके बाद नोधसिंह फौजपुरिया मिगलके सरदार नवाब कपूरसिंहसे था मिले। इसी समय प्रथमदगाह 'पवटनीने भारतवर्ष पर शासन किया। गाना स्थानमें प्रचुर धनरत्न ले कर नोधसिंह सुखिचक्रमें आकर रहने लगे और जनताधारणमें उन्हें सुखिचक्रके सरदार वा सामन्तराज मान कर घोषणा कर दी। १७४० ई०में इनके साथ अफगानोंका एक सामान्य युद्ध हुआ। युद्धमें एक गोला इनके गिर पर आ गिरा। इस प्राधानमें इनकी सख्यु-तो न हुई, पर धर्म-तज ये चकमण्ड्य हो रहे। १७५२ ई०में आप चरत्सिंह, दलसिंह, चेतसिंह और मन्हीसिंह नामक चार पुत्र छोड़ सुरधामकी सिधार गए।

नीधा (सं० अर्थ०) नर-धा-धृ०। नरधा, नो प्रकार। नीनगढ़—जयनगरसे ३ कोम दक्षिणपूर्व किञ्चन नदीके किनारे अवस्थित एक ग्राम। कोई-कोई इसे सोनगढ़ भी कहते हैं। यहाँ एक भग्नमूर्ति पाई गई है जिसमें ई०सन्के पहले ११० गताब्दी और बादकी १२वीं गताब्दीके मध्यवर्ती समयके अन्तमें खोदित एक मिलासिखि है। मूर्तिको भास्करकाय, मो-मटरामें प्राप्त उल्ल

मयकी खोदिन प्रतिमूर्तिके अनुसृत्य है। चोनपीर-वाजक युएनबुवङ्ग लि-इग-नि-तो नामक स्थानमें भ्रमण कर लिख गए हैं, कि यहाँ एक बौद्ध मठाराम और स्तूप है। यत्मान नीनगढ़में भी इसी प्रकार दो चिह्नके ध्वंसावशेष देखनेमें आते हैं। यहाँके स्तूपकी लम्बाई और चौड़ाई तथो उसके प्राचीनत्वकी प्राचीनता करनेसे मालूम होता है, कि यही सोनगढ़ चोन-परि-वाजक-वर्णित लि-इग-नि-तो नगर है।

नीनवा (हि० पु०) १ नमकीन पचारा। २ नमकमें छाओ हुई आमकी फाकीकी छटाई। ३ वह जमीन जहाँ सोनी बहुत हो।

नीनको (हि० स्त्री०) सोनी मही।

नीनहरा (हि० पु०) पैसा। यह गन्धर्वकी धोनी है।

नीना (हि० पु०) १ नमकका अंग जो पुगानी दोषों तथा सोड़की जमीनमें लगा मिलता है। २ सोनी मही। ३ शरीफा, सोताफल, पात। ४ एक कौड़ा जो नाव या जहाजके पेटमें लगे कर उसे कमजोर कर देता है। चर्दकोड़ा। (वि०) १ नमक मिला, पचारा। २ लावण्यमय, सलोना। ३ सुन्दर, अच्छा, बढ़िया।

नीनार—प्रासादप्रदेशमें प्रवाहित दो नदी,—१ सो भूटान पर्यन्तसे निकल कर दरङ्ग जिलेके पश्चिम कीतो हुई ब्रह्मपुत्र नदीमें गिरती है और २ शी मिकोर पर्वतसे निकल कर हरियामुख ग्राममें ब्रह्मपुत्रकी कनक-शाखामें जा गिरी है।

नीनाखान—२४ दरगनेके अन्तर्गत विद्याधरो नदीको एक शाखा।

नीनाचमारो—एक प्रसिद्ध जाटुगर्भो। इसको दोहाई अब तक भी मंत्रोंमें दो आते हैं। लोगोंका कहना है, कि यह कामरूप देवकी रहनेवाली थी।

नीनिया (हि० पु०) सोनी महीसे नमक निकालनेवाली एक शीघ्र जाति। गया, शाहाबाद, चम्पारण, सारण्य प्रादि जिलोंमें इस जातिके लोग अधिक संख्यामें पाए जाते हैं। सोरा प्रस्तुत करणा ही इनका प्रधान व्यवसाय है। इस जातिकी उत्पत्ति किस प्रकार हुई, मालूम नहीं। लेकिन दलकहाती है, कि मिदुरभक्त नामक किसी योगीने पयधियाका जन्म हुआ। उल्ल

नगर। १८८८ ई०में यहां बजुरेजी सेना था वसो थी।  
 २ बम्बई प्रदेशके खान्देश जिलान्तर्गत एक ग्राम।  
 इस ग्रामके चारों ओर पार्वतीय श्रमोंमें भोल जातिका  
 वास ही अधिक है।  
 नोयारबन्द—भासाम प्रदेशके कछाड़ जिलेका एक नगर।  
 यह शिवचरमे १८ सोल दक्षिणमें अवस्थित है। लुसाई  
 और कुको-प्राकृतमपमे देगकी रचाके लिये यहां छुट्टिया  
 सरकारने सेना रखी है। इसके पास चायकी खेती बहुत  
 होती है।  
 नोयिल—मन्द्राज प्रदेशके कोयम्बतूर जिलेकी एक नदी।  
 यह वेनिगिरिवे निकल कर कावेरीनदीमें गिरती है।  
 नौर—घानामके दक्षिण ओर भावालयके उत्तर तथा  
 किन्दुयम ओर ऐरावती दोनों नदियोंके मध्यमें अवस्थित  
 एक जनपद। १६८५ ई०में यह स्थान ब्रह्मके राजाके अधीन  
 था। यहांके सामन्तराज भासाम राजवंशीय हैं।  
 नारोज-इजलानी (वा नौराज-इजलानी) मुसलमान  
 धर्मशास्त्रका एक प्रसिद्ध दिन। सुलतान मालिक-शाहके  
 पादेमके ज्योतिषियों ओर बहूशास्त्रविदोंमें वर्ष, ऋतु,  
 मास और कालनिर्णयके लिये किरम गणना पारम्भ कर  
 दी। उक्त गणनासे यह स्थिर हुआ, कि द्वादश राशि में  
 प्रथम मेघराशि ही पहले ब्रह्मकालकी विषुवक्रान्तिका  
 प्रतिफल कर भयन वृत्तमें गमन करती है। इस कारण  
 उक्त दिनसे मुसलमानोंके मास और वर्षकी गणना चली  
 आ रही है।  
 नोवगा (हि० लि०) दुहने समय रस्सेसे गायका पैर  
 बांधना।  
 नोविमेटला—मन्द्राजके घनतापुर तालुकके पश्चिम एक  
 ग्राम। यह मुट्टीमें ३५ मील दक्षिण-पश्चिममें अवस्थित  
 है। यहांके पाञ्चनेयके मन्दिरमें १५५८ सम्बत्तमें लक्ष्मी  
 एक शिलालिपि देखनेमें आती है।  
 नोविलियथ राधट्टि—एक पोर्तुगो कर्मिगनरो। १५०६  
 ई०में ये पहले पहल मद्रुरा नगरमें आये। इस समय  
 तिरुमल नायक यहां राज्य करते थे। यहांके हिन्दू  
 अधिवासीगण यूरोपीय याजकप्रधान नोविलीको तत्त्वबोध  
 नगर नामसे पुकारते हैं। १६६० ई०को मन्द्राजके निरुद्ध  
 ब्रह्मोंधाममें इनका देहान्त हुआ। (अध्याय देखो)।

नोत्रा—उत्तर-भारतके काश्मीर राज्यके लदाख विभागके  
 पन्तगत एक उपविभाग। यह काराकोरम गिरिखोमे  
 ग्यारह हजार फुट ऊंचे पर अवस्थित है और चारों  
 ओरमें श्यायोक्क वा नोत्रानदीसे घिरा है। देशकिस प्रकारका  
 प्रधान नगर है।  
 नोहर (हि० वि०) १. पलभ्य, दुर्लभ, जरदो न मिलने:  
 वाला। २. पढुत, पनोछा।  
 नोहला—चालुष्यवंशीय राजा भवनिवर्माको कन्या।  
 इनका सुभतुङ्ग राजपुत्र केवलूरवर्षके साथ विवाह हुआ  
 था। इनके प्रतिष्ठित मन्दिर और शिवलिंग नोहलेश्वर  
 नामसे प्रसिद्ध हैं।  
 नो (सं स्त्री०) गुणवर्तनेयति नुद-प्ररणे-हो (शब्द-  
 दिग्गं डोः। अण्, २।६४) १ नोका, नाक। २ यन्त्रवालीय  
 नोभेद, प्राचोनेकालको एक नाव जो यन्त्रके सहारे  
 चलाई जाती थी। महाभारतमें इस प्रकारकी नावका  
 उल्लेख देखनेमें आता है।  
 इस यन्त्रवालीय नोका यन्त्रसे पाज कसके जहाज-  
 का ही बोध होता है। वर्तमान समयमें जहाजके जो  
 सब लक्षण देखे जाते हैं, वे पूर्वोक्त यन्त्रवालीय नोका-  
 के साथ मिलने लुप्त हैं। पता: इस वाजनीय नोकाकी  
 यदि जहाज योपीमें गिनती की जाय, तो कोई दोष  
 नहीं होता। नोका देखो।  
 नो (हि० वि०) जो गिनतीमें पाठ-ओर एक हो, एक  
 कम दश।  
 नोकरा (हि० पु०) एक प्रकारका लुभा जो तीन पाठमें  
 तीन तीन कौड़िया ले कर खेनते हैं।  
 नोकर (फा० पु०) १. शूद्र, चाकर, टहलुवा, खिदमत-  
 गार। २. कोई काम करनेके लिये वेतन आदि पर नियुक्त  
 किया हुआ मनुष्य, वैतनिक कर्मचारी।  
 नोकरानी (फा० स्त्री०) दासो, घरका काम धंधा करने-  
 वाली स्त्री।  
 नोकरो (फा० स्त्री०) १. नोकरका काम, सेवा टहन, खिद-  
 मत। २. कोई काम जिसके लिये तनखाफ मिलतो हो।  
 नोकरोपेगा (फा० पु०) वह जिसका जीवननिर्वाह  
 नोकरोंमें होता हो, वह जिसका काम नोकरों करना हो।  
 नोकरुंधार (सं० पु०) नाव: कर्ण: धारयति, धारि-पण,  
 नाविक, मजदूर।

नीपस्थान (सं० त्रि०) न-ठपतिठतिःस्थान-स्थल । दूरस्थ, दूरका ।

नोमुदी—भारतवर्ष की सोमान्तवर्षी बेलुच जातिकी एक भाषा । सेवानसे ले कर खूटी तक इन लोगों का वास है ।

नोया (नोया)—पश्चिम एशिया के प्राचीनतम ईसाइयों के एक पेटिपार्क वा महापुरुष । सत्रं शक्तिमान् जगदीश्वरने जय देखा, कि धरावासो मानवों की पधार्मिकता और पत्याचारसे धरित्रों भारपदा हो गई है, तब उन्होंने भूभारकी घटानेका महत्त्व किया । तदनुसार उन्होंने धार्मिक प्रवर नोयाकी प्राचीन स्वजनो के साथ एक जहाज बना कर उस पर रहनेका पादेय दिया । यह जहाज 'नोयासूपाक' वा नोयाका जहाज नामसे प्रसिद्ध हुआ । नोया सपरिवार जहाज पर चढ़ कर निरापदसे रहे । श्वर जगत्पतिके महाप्रलयसे पृथिवी जलमग्न हो गई ; ममो जीव जन्तु इस लोकोकी छोड़ कर परलोकमें जा बसे । मात मास तक जलस्रोतमें बहता हुआ नोयाका जहाज आराराट गिरिच्छ्र पर जा लगा । यहाँ जब इन्हें रहनेका आश्रय मिल गया, तब जगदीश्वरकी स्तुति करनेके लिए इन्होंने एक बलि चढ़ाई । जगदीश्वर भी उनकी स्तुतिके लिये प्रतियुत हुए ।

इस स्थान पर उतर कर नोयाने पञ्चूरकी स्त्रीकी को एक दिन पञ्चूरकी रस पी कर ये मत्सावस्थामें अपने पुत्र छामकी बगलमें जा सो रहे । छामने पिताका दीर्घवय न समझ कर श्याम और जाफर नामक अपने दो भाइयोंको सुलाया और पिताकी सादकताजनित पञ्च गिथिलता और निद्रितावस्थाकी दिशा कर ये पाशुपूर्विक सभी विषय जान गए । पन्द्रह दिन तक पिताकी इसी अवस्थामें देख वे बड़े मज्जित हुए और उन्हें सर्वोपः एक बख्खसे ठक कर रख दिया । निद्रामग्न होने पर नोया अपने पुत्रोंके इस आचरणको समझ गये और श्याम पर अपसुप्त हो कर शय्य दिया, तुम्हारे भविष्यत् चरति कहापि नहीं होगी । पृथ्वीके जलमग्नित होनेके ३५ वर्ष बाद धार्मिक नोया स्वर्गधामको सिधार गए । इनका पूर्ण जीवनकाल ८५ वर्ष था ।

सुसप्तमान इतिहामने भी नोयाका उल्लेख है ; यास्ता

निया-वंगीय श्वम राजा विश्वर-पास्व दुपङ्कने पुत्रं जन्मेदकी सिंहासनच्युत करके राजा बन बैठे । कुकामीदिमें सने रहनेके कारण जगदीश्वरने उनके पूर्वजत पापका क्षुण्डन करनेके लिये नोयाको उसके पास भेजा । नोयाके नावों उपदेय देने पर भी राजाकी शान न हुआ । इस पर परम पिता परमेश्वरने धराभारहरणके लिये महाप्रलय उपस्थित किया । ऐसा करनेसे पृथ्वी पर जितने पापों से सर्वोंको मृत्यु हो गई । नोयाको मृत्युके प्रायः एक हजार वर्ष बाद श्यामके पुत्र लुपाक राजा हुए ।

केवाक श्यामके टछिय जेवलय १ कोस दूर श्वार समतल क्षेत्रके ऊपर बालवे कवासिगण नोयाकी कन्न बतलाते हैं । यह कन्न १० फुट लम्बे, २ फुट चौड़ी और २ फुट उंची मानी जाती है । कन्नके ऊपर ६० फुट ऊंची एक शक्ति बनी हुई है । यहाँसे २ कोसकी दूरी पर चारमिनका भग्नमन्दिर है । चंगरेजी वाइरुके नोया, शिन्वाइरुके गिथफम या एकेबियन नोया तथा पन्थान्य भागमें इनकी घटनावली विभिन्न नामोंसे वर्णित है । मनु देखो ।

नोयाकोट (नवकोट)—नेपाल राज्यके चन्गत्त हिमालय तटस्थित एक नगर । यह त्रियुगलहानदीके पूर्वी किनारे अवस्थित है । धैवङ्ग पर्वतके निकटवर्ती गिरिपथ हो कर तिब्बती पथवा चोनवासिगण सहजमें नवकोट राज्यमें प्रवेश कर सकते हैं । १०२२ ई०में चीनसेनाने इसी नगर को कर नेपाल पर आक्रमण किया था । यहाँके महामाया वा भवानीके मन्दिरके ऊपरी भाग पर चीनसेनान्ये लब्ध कितने द्रव्य युद्धजयके गौरवचिह्न स्वरूप संलग्न हैं । नेगत देखो ।

नोयामि—भारतवर्षके उत्तर काश्मीर राज्यके चन्गत्त एक गिरिपथ । इसके एक ओर उच्च हिमालय-गिखर और पूर्वकी ओर काश्मीरकी उपत्यकाभूमि है । इसका सर्वोच्च स्थान समुद्रपृष्ठसे षारह हजार फुट है ।

नोयापुर (नवपुर)—१ गुजरात प्रदेशके चन्गत्त एक

\* तापिच-इसुहृती नामक सुसप्तमानो इतिहासमें नोयाकी वंशावली इस प्रकार छिपी है । नोया, उनके पुत्र काया, कायाके पुत्र तारा, ताराके पुत्र श्वरवन्द्य श्वर, श्वरके पुत्र श्वाराक वा विश्वर-श्वर । Tabakat-i-Nasiri, Vol. I, p. 303a.

नगर। १८१८ ई० में यहां बम्बईकी सेना आ बसो थी।

२ बम्बई प्रदेशके खान्देश जिलान्तर्गत एक ग्राम। इस ग्रामके चारों ओर पार्वतीय श्रमिणि भील जातिका वास ही अधिक है।

नोयारवंद—पासाम प्रदेशके कछाह जिलेका एक नगर। यह गिलचरमे १८ मील दक्षिणमें अवस्थित है। सुसाई चौर फूकी-प्राक्रमणमे देगकी रक्षाके लिये यहां ब्रिटिश सरकारने सेना रखी है। इसके पास चायकी खेती बहुत होती है।

नोयिल—मन्द्राज प्रदेशके कोयम्बतूर जिलेकी एक नदी। यह वेनिनगिरिसे निकल कर कावेरीनदीमें गिरती है। नौर—पामामके दक्षिण चौर पाषाणनगरके उत्तर तथा किन्दुएम चौर ऐरावती दोनों नदियोंके मध्यमें अवस्थित एक जनपद। १६८५ ई० में यह स्थान ब्रह्मके राजाके अधीन था। यहांके मामन्तराज पासाम राजवंशीय है।

नारोज-जलाशो (वा नौराज-जलाशो) मुसलमान धर्मशास्त्रका एक प्रसिद्ध दिन। सुलतान मालिक-शाहके प्रादेशसे ज्योतिर्विदों चौर बह्मशास्त्रविदोंने वर्ष, ऋतु, मास चौर कालनिर्णयके लिये फिरसे गणना आरम्भ कर दी। उक्त गणनासे यह स्थिर हुआ, कि द्वादश राशिकी प्रथम मेघराशि ही पहले बसन्तकालकी विपुलप्रामाणिका पतिक्रम कर भयन वृत्तमें गमन करती है। इस कारण उक्त दिनसे मुसलमानोंके मास चौर वर्षकी गणना अभी चाल रही है।

नोवना (हि० लि०) दुहने समय रखीसे गायका पैर बांधना। नोविमेडला—मन्द्राजके बननपुर तालुकके अन्तर्गत एक ग्राम। यह गुटीमे ३५ मील दक्षिण-पश्चिममें अवस्थित है। यहांके शास्त्रज्ञके मन्दिरमें १५५८ संवत्तमें उत्कीर्ण एक मिलानिधि देखनेमें पातो है।

नोबिलियस राषट्ट-हि—एक पोस्तु नौजमिगनरो। १५०६ ई० में ये पहले पहल मदुरा नगरमें आये। इस समय हिंदुसभ नायक यहां राज्य करते थे। यहांके हिन्दू अधिवाधिगण ब्रह्मीय याज्ञिकप्रधान नोबिलोको तत्त्वबोधनागर नामसे पुकारते हैं। १६६० ई०को मन्द्राजके निजट्ट मन्त्रीशामने इनका देहात्त हुआ। कथ्यन् देखो।

नोवा—उत्तरभारतके काश्मीर राज्यके लदाख विभागके अन्तर्गत एक उपविभाग। यह काराकोरम गिरिचोमि ग्यारह हजार फुट ऊँचे पर अवस्थित है और चारों ओरसे श्यायोक्त वा नोत्रानदीसे घिरा है। देगकित्तूरका प्रधान नगर है।

नोहर (हि० वि०) १ पलभ्य, दुर्लभ, जवदे न मिलने वाला। २ पहलूत, पनीखा।

नोहला—चातुष्यवंशीय राजा अश्वनिवर्माको कन्या। इनका सुधतुङ्ग राजगुरु केयूरवर्षके साथ विवाह हुआ था। इनके प्रतिष्ठित मन्दिर चौर सिधसिङ्ग नोहसिंघर नामसे प्रसिद्ध है।

नो (सं० स्त्री०) नुद्यतेनेति नुद्-प्रेरणे-डो (ग्लादु-दि-यां डोः। उण्, २।६४) १ नोका, नाव। २ यन्त्रवालीय नोभेद, प्राचोनकालको एक नाव जो यन्त्रके सहारे वे चलाई जाती थी। महाभारतमें इस प्रकारकी नावका उल्लेख देखनेमें पाता है।

इस यन्त्रवालीय नोका शब्दसे प्राज कलके जहाजका ही बोध होता है। अस्तमान समयमें जहाजके जो सब लक्षण देखे जाते हैं, वे पूर्वाक्त यन्त्रवालीय नोकाके साथ मिलते जुलते हैं। अतः इस चालनीय नोकाकी यदि जहाज अर्थोमें गिनतो की जाय, तो कोई टोप नहीं होगा। नोका देखो।

नो (हि० वि०) जो गिनतीमें पाठ चौर एक हो, एक श्रम दग।

नोकड़ा (हि० पु०) एक प्रकारका लुभा जो तीन पादकी तीन तीन कौड़ियां से कर खेलते हैं।

नोकर (फा० पु०) १ शूद्र, चाकर, टहलुवा, खिदमतगार। २ कोई काम करनेके लिये वेतन यादि पर नियुक्त किया हुआ मनुष्य, वैतनिक कर्मचारी।

नोकरानी (फा० स्त्री०) दासि, घरका काम धंधा करनेवाली स्त्री।

नोकरो (फा० स्त्री०) १ नोकरका काम, सेवा टहल, खिदमत। २ कोई काम जिसके लिए तनखाप मिलतो हो।

नोकरोवेग (फा० पु०) लक्ष्मिका शोचननिर्वाह नोकरोमे होता हो, यद्द्विजमका काम नोकरो करना हो।

नोकर्यधार (सं० पु०) नावः कर्णः धारयति, धारि-घण्। नायिक, मन्त्राह।

नौकर्णा (सं० स्त्री०) नौरित कर्वा यस्याः, डीय. ।  
कुमारानुषेर माष्टभेद, कात्ति कियको यनुचरो एक  
माष्टका ।

नौकर्मा (सं० स्त्री०) नावि कर्मा, चालनादिश्यावारः ।  
नोकावाहनादि कार्य, नाव चलानिका काम ।

नोका (सं० स्त्री०) नोरिव स्त्रायै कन् स्त्रियां टाय ।  
तरणि, नाव, जहाज । पथीय—शारिरथ, नौ, तरिका,  
तरणि, तारि, तारी, तरण्डो, तरण्ड, पादाभिन्दो, तत्वप्रथा,  
घोड़, बाधू, वाजंट, बहिन, पोत, बहन । यान दो  
प्रकारका होता है जलयात्रा और स्थलयात्रा । नोका  
निय्यद यान है ।

नोका प्रभृति जलयात्राको निय्यदयान और भग्नादि-  
यानको स्थलयात्रा कहते हैं । जलमें नोका ही एकमात्र  
यान है यथात् जलपथ ही कर जानेके नोका ही उसका  
एकमात्र उपाय है । इस कारण शुभ दिन देख कर नोका  
प्रसृत और नोकाशोधन करना चाहिये ।

नोका बनानेमें पहले काष्ठनिर्णय करना होता  
है । काष्ठजाति चार प्रकारकी है—ब्राह्मण, क्षत्रिय,  
वैश्य और शूद्र ।

इन चार प्रकारके काष्ठोंमें जो लघु, कोमल और  
सुघट होता है, वह ब्राह्मण जातिका काष्ठ, जो हृदाङ्ग,  
लघु और सुघट है, वह क्षत्रियकाष्ठ; जो कोमल और  
शुभ होता है, वह वैश्य जातिका काष्ठ और जो हृदाङ्ग  
तथा शुभ होता है, वह शूद्र जातिका काष्ठ कहलाता  
है । प्रथमतः काष्ठकी इन चार जातिवर्तिमें जिस काष्ठ  
द्वारा नोका बनाई जायगी, वह काष्ठ किस जातिका है,  
पहले उसको स्थिर करना होता है । ये सब लक्षण  
ठोक करके द्विजजाति काष्ठ नोकाके लिये, संपन्न करना  
चाहिए । भोजके सठमें क्षत्रिय जातिका काष्ठ ही नोका-  
के लिये प्रसन्न है । फिर दूसरे दूसरे पक्षितोंका कहना  
है, कि कपू और सुहृद काष्ठके बी शाय बनाई जाते हैं,  
वही सर्वसे बढ़िया है ।

जो नोका दो विभिन्न जातिके काष्ठोंसे बनाई जाती  
है, वह शुभफलद नहीं होती ।

नोका प्रथमतः दो प्रकारकी होती है, सुदुर्नोका  
और मध्यामा नोका । जो नोका जितनी सखी होती

उसका चौपाई भाग यदि उसका चौड़ाई पार उतनी  
ही चौड़ाई हो, तो उसे सुदुर्नोका और जिसका परि-  
ष्ठाए लग्नाईसे बाधा तथा जिसको चौड़ाई तिहाई भागके  
समान हो, उसे मध्यामा नोका कहते हैं ।

यह सामान्य नोका दश प्रकारकी है । यथा—सुदुर्,  
मध्यामा, मोमा, चपला, पटला, चमया, दोर्घा, पवपुटा,  
गर्मरा और मन्तरा । इन दश प्रकारको नोकाओंमें भीमा,  
चमया और गर्मरा नोका शुभजन्मक नहीं है ।

दोर्घनोकाका लक्षण—जो नोका दो राजहस्त दोर्घ  
उसका पाठशं भाग परिष्ठाए तथा दशर्षा भाग  
उबत हो, वही नोकाको दोर्घा कहते हैं । दोर्घा नोका  
मो पुनः दश प्रकारकी है—दोर्घिका, तरणि, सोला,  
गंवरा, गामिनी, तरि, लहला, श्राविनी, धरणी और  
वेगिनी । इन दश प्रकारको नोकाओंमें सोला, गामिनी  
और श्राविनी नोका दुःखप्रदा माने गई है ।

नौकामें नाना प्रकारकी धातु द्वारा चित्रकार्य करना  
होता है । यथाक्रमसे कर्मक, रजत और ताम्र द्वारा  
प्रद्यादिकी प्राकृति चित्रित करे; पोछि वित्त; रत्न, पोत  
और मोल प्रादि वर्षासे उसे सुगोमित बनाए रखे ।  
क्षित्री, मद्यि, नाग, हिरद, श्याव, पक्षी और भेक  
इन्हे मुख नोकाके मुखको और बने रहें । जनमें नोका  
भिन्न पन्थ जो कोई यान है उसे जघन्ययान कहते हैं ।

जलपथ-गमनमें श्लोषोयान, घटानोका, फलयान,  
चर्मयान, हृद्ययान और जन्तुयान ये सब यान निन्दित  
माने गए हैं ।

उत्तम दिन चर और मकरादि लग्न तथा विहित  
नक्षत्र देख कर नोका बनवाना चाहिये ।

(युक्तिस्तोत्र)

नोकाकष्ट (सं० स्त्री०) चतुरङ्गकोट्टाभेद ।  
नोकादण्ड (सं० पुं०) नोकायां परिचालनार्थं यो  
दण्डः । शिपयो, नावका हांकू, बन्नी ।

नौकाम—नौकाय शोभं युक्तं सेतु, नावका बना हुआ पुल ।  
नौगोष (नययाम)—प्राथमिके चीज कमिश्नरके अधोन  
एक जिन्ना । यह पचा २५ ४५ में २५ ४० से ८० तथा  
दिगा ८२ से ८५ ४५ पूरके मध्ये प्रचलित है । इसके  
उत्तरमें ब्रह्मपुत्रनदी, पूर्वमें गिबसागद, दक्षिणमें

सुसिया और जैलिया। पत्र त तथा पश्चिममें कलङ्ग नदी और कामरूप जिला है। इसका प्रधान सहर नौगांव नगर है।

इस जिलेके चारों ओर जिस तरह कामरूप, मिर्ज़ौर, खुसिया और जैलिया पर्वतमाला सुभोमित है, उसी तरह पर्वतगात्रवाहिनी बहुतही नदियोंसे यह उपविभाग विच्छिन्न हुआ है। इनमेंसे धानेश्वरी, कसगाणी, दिखरु, देवपानी, ब्रह्मपुत्र और कलङ्ग नदियां ही प्रधान हैं। दिखु, ननाई, कापिली, यमुना, बड़पानी, दिमास और किलङ्ग भादि छोटी छोटी शाखानदियां ब्रह्मपुत्र और कलङ्गकी वृद्धि करती हैं।

कामाख्या-पर्वतकी कामाख्यादेवीका मन्दिर उल्लेख योग्य है। शायद यह मन्दिर कूचविहार-राजवंश के किसी राजासे बनाया गया होगा। प्रवाद है, कि यह स्थान पहले एक बौद्धतीर्थरूपमें गिना जाता था। मोह-मतावलम्बी राजा नरनारायणने १५६५ ई०में इस मन्दिरका पुनर्निर्माण किया। कामाख्या और कामरूप देखो।

पार्वतीय प्रसभ्य जातियोंमें मीकिर, गारो, कुकी और नागा ही प्रधान हैं। ये लोग बहुत कुछ छोटानाग-पुरके भोरावन, कोच और सन्थालोंसे मिलते जुलते हैं। यहां कोच जातिकी संख्या ही अधिक है, ये लोग प्रस्थान्य जातियोंसे थोड़ा माने जाते हैं।

२ सहा जिलेका एक प्रधान नगर। यह कलङ्ग नदीके पूर्वी किनारे अवस्थित है।

इ मध्यभारतके सुन्दरलखण्ड राज्यके अन्तर्गत एक नगर और सेनानिवास। इसके एक ओर अंगरेजाधिकृत हमीरपुर जिला और दूसरी ओर हतपुरका सामन्तशास्य है। यहां साइं सेयोके हमरपायं सुन्दरलखण्डके सामन्त राजने 'राजकुमारकावेज' नामक एक विद्यालयकी स्थापना की।

नौमही (हि० स्त्री०) हाथमें पहननेका एक गहना जिसमें नौ कंगूरेदार दाने पाठमें गुंथे रहते हैं।

नौघर (सं० द्वि०) नावा चरति चरट। नौकाचरण्यौस, जो नाव पर चढ़ कर विचरण करते हैं।

नौचो (फा० स्त्री०) वैश्याको पासो हुई लड़की जिसे वह अपना व्यवसाय सिखातो हो।

नौकावर (हि० स्त्री०) निवारर देवा।

नौज (हि० अर्थ०) १ ईश्वर न करे, ऐसा न हो। २ न हो, न सही।

नौजवान (फा० वि०) नवयुवक, उठनो जवानो।

नौजवानो (फा० स्त्री०) उठनो युवावस्था।

नौशा (फा० पु०) १ बादाम। २ चिखोजा।

नौजो (फा० स्त्री०) लोचो।

नौजोविक (सं० द्वि०) नावा जीविका यक्ष्य। नौचाल-नादि जीविकायुक्त, जो नाव चला कर अपना गुजारा करता हो।

नौता (सं० पु०) ग्यौता देखो।

नौतार्थ (सं० द्वि०) नावा नौकया तार्थं तरणोयं। नौकागम्य देयादि।

नौतेरही (हि० स्त्री०) १ ककरई ईंट, छोटी ईंट। २ एक प्रकारका लुपा जो पाँचोंसे खेला जाता है।

नौतोड़ (हि० वि०) १ नया तोड़ा हुआ, जो पहले पहल जाता गया हो। (स्त्री०) २ वह जमान जो पहली बार लाती गई हो।

नौदण्ड (सं० पु०) १ नौकादिके मध्यस्थित काष्ठदण्ड। २ डांड।

नौदसो (हि० स्त्री०) एक रीति जिसके अनुसार किसान अपने जमींदारसे रुपया उधार लेते हैं और सालभरमें ८) रु०के १०) देते हैं।

नौध (हि० पु०) नया घोषा, अंशुषा।

नौघा (हि० पु०) १ नौसको वह फसल जो वर्षारम्भ-हीमें बोई गई हो। २ नए फलदार पौधोंका बगीचा, नया लगा हुआ बगीचा।

नौनगा (हि० पु०) बाहु पर पहननेका एक गहना जिसमें नौ नग जड़े होते हैं। इसमें नौ दाने होते हैं और प्रत्येक दानेमें भिन्न भिन्न रंगके नग जड़े जाते हैं। इसे नौरत्न भी कहते हैं।

नौना (हि० पु०) १ नवगा, लुजगा। २ लुज कर देना होना।

नौनिधिराम—एक प्रत्यकार। इन्होंने महहपुराणमार-सं पह ओर टोकाकी रचना की। ये हरिनाारायणके पुत्र और राजा शार्ङ्गके पुराणपाठक पण्डित सुखशास्त्रीके पौत्र थे।

नीमार (हि० फ़ो०) वह स्थान जहाँ नीमिया लीम लीनी महीने नमक बनाते हैं।

नीमचू (हि० वि०) जिसे सुद्ध वा हीन दग्गवे चष्ठी दग्गमिं पाए घोड़े हो दिन हुए ची।

नीवत (फा० फ़ो०) १ घारो, पारी। २ गति, दग्ग, द्वागत। ३ यंभव, उत्सव या मंगलमूषक वशां लो पहर पहर भर देवमन्दिरों, राजप्रासादों या बड़े आद-मियोंके द्वार पर बजता है। नीवतमें प्रायः गहनाईं पौर नगाड़े बजाते हैं। ४ स्थितिमें कोई परिवर्तन करनेवालो वार्ताका घटना, उपस्थित दग्ग, संयोग।

नीवतखामा (फ़ा० पु०) फाटकके ऊपर बना हुआ वह स्थान जहाँ बैठ कर नीवन बजाई जाती है, नकारखाना।

नीवती (फा० पु०) १ नीवत बजानेवाला, नकारवा। २ फाटक पर पहरा देनेवाला, पहरदार। ३ बिना सदारका मजा हुआ घोड़ा, कीतल घोड़ा। ४ बड़ा खेमा या तम्बू।

नीवतीदार (फा० पु०) १ द्वारपाल, दरवान। २ खेमे पर पहरा देनेवाला, सतरो।

नीवरार (फा० पु०) वह भूमि जो किसी नदीके दृष्ट जानेसे निकल जाती है।

नीमासा (हि० पु०) १ गर्भका नवां महीना। २ वह रीति रस्म जो गर्भके नौ महीने हो जानेपर की जाती है और जिसमें पंजीरी मिठाई खादि बांटी जाती है।

नीमो (हि० फ़ो०) पत्थको। गर्वीं तिय।

नीयाम (सं० बलो०) नौकादि पर चढ़ कर देगान्तरकी यात्रा।

नीयायिनु (सं० वि०) नावा याति या-यिनी। नौका द्वारा नदी खादिके पारगामी। नीयायियोंको तरपण्य देना होता है। इसतरपण्यका विषय मनुमें इस प्रकार लिखा है। मठो मार्ग हो कर जानेंमें नदीकी प्रवृत्तता या स्थिरता तथा भीष्म वर्षादिकालकी विवेचना करके तरमूख स्थिर करना होता है। मसुद्रके विषयमें यह नियम लागू नहीं है। गर्मिंवी ली, परिप्रांभं, मिद्ध, मानप्रयं, ब्रह्मशरीरी पौर ब्राह्मण इन मंत्रवे उत्तराईं नहीं लीगे खादि। दोनों गाँवों नाँव पर पार करनेमें एक पल महगुन, एक मनुष्य जितना नौकटी संकंतां है

उतनेमें बर्हणं, पगु पौर लोको पार करनेमें कतुघोम पण तथा भारगुण्य मनुष्यको पार करनेमें एक पणका पाठवां भाग महसून लगता है। शेष धारों पणवा पौर कहीं नाविकके दोपमें यदि मुषाफिरकी कोई वस्तु नष्ट हो जाय, तो उसका दायो नाविक होगा। नाविकके दोपसे यदि लगकी चीज चोरी हो जाय, तो नाविकको ही उस चीजका दाम लगा कर देना होगा। किन्तु देवसंयोगसे नष्ट हो जाने पर वह उसका दायो नहीं है।

(मठ ८ ग०)

नीरग (हि० पु०) एक प्रकारकी चिड़िया।

नीरतन (हि० पु०) १ नशरग देगो। २ नीरगमा नामका गहना। (स्त्री०) ३ एक प्रकारकी चटनी जिममें ये लो चीजें पड़ती हैं—खटाई, गुड़, मिर्च, शोतलचीनी, केसर, हलायची, जावित्री, सौंफ पौर जीरा।

नीरवे—यूरोप महादेगका एक देग। नारवे पौर इसके पूर्ववर्ती स्वीडेन ये दोनों देग मिल कर स्केन्दिनेवीय उपदीप कहलाते हैं। नारवे भवा० ५८° में ०१° ०' पौर देगां० ५° से २८° पू०के मध्य अवस्थित है। इसके उत्तरमें उत्तरमहासागर, पूर्वमें स्वीडेन, दक्षिणमें काटो-गांट उपसागर पौर पश्चिममें जर्मन तथा उत्तरसागर है। इसकी समुद्री उत्तर-दक्षिणमें ग्यारह हजार मील है, किन्तु चौड़ाई सर्व जगह समान नहीं है। भूपरिमाण १२५००० वर्गमील है।

इस विस्तीर्ण देगका अधिकांश वर्षातमय है। एक गिरिमाथा उत्तरसे दक्षिण तक फैली हुई है। उत्तर भागको ब्युलिन पौर दक्षिण-भागको कीयलिन कहते हैं। ब्युलिन पर्वत ओषोका मयवे ऊँचा श्रम समीतलमा कहलाता है जिसकी ऊँचाई ४८०५ फुट है। इसमें धनेक श्रृंखलें हैं, सबसे ऊँचे श्रृंखको ऊँचाई १२० फुट है। ब्युलिन-पहाड़ वर्षसे टका हुआ है। इससे बहुत-सी बर्फकी नदियां निकली हैं। यहाँको नदियोंके ऊँची भूमिसे निकलने पौर इनकी समुद्री दक्षिण ग होनेके कारण ये सब नीयायिण्यकी वनुपयोगी हैं। स्वीडेन नदी ही सबसे बड़ी है। यह दृक्कित पहाड़से निकल कर स्थागरक उपसागरमें गिरती है। नारवेका पश्चिम उपतल प्रति दृष्ट पौर भान है। इसके

दक्षिणस्थ प्रदेशोंमें बड़े बड़े ऊद नजर आते हैं। स्वीडन-की सीमाके निकट फामण्ड ऊद समुद्रपृष्ठसे २२० फुट ऊंचा है।

यहांको भाववृत्ता स्थान भेदसे भिन्न भिन्न प्रकारकी है। समुद्र और उपनागरीय स्रोतके प्रभावसे उत्तरार्धमें उतनी ठंड नहीं पड़ती है। यहाँ वर्ष भरमें प्रायः आठ महीना समय खराब रहता है। गर्त और शीतकालमें हवा बहुत जोर-शोरसे बहती है और कुहासा भी देखा जाता है। बाद पूर्वकी हवा बहने पर वह जाता रहता है। १५ मईसे २८ जुलाई और १८ नवम्बरसे २५ जनवरी तक यहाँ रात बड़ी होती है। इन कई एक महीनोंमें उत्तरकी ओर एक प्रकारका उज्वल आलोक (Aurora Borealis=सोमगिरि) दिखाई पड़ता है। मरुस्थ-जीवों वही रीशमीकी सहायतासे रातमें दिनकी तरह सहजमें ही मछली खादि पकड़ सकते हैं। पशुमोष-कृमिमें क्या जाड़ा, क्या गर्मी सब समय समान हवा चलती है, पानी बरसता है और विजली कड़कती है तथा कभी कभी भूकम्प भी ही जाया करता है।

यहाँ-बड़े बड़े जङ्गल देखनेमें आते हैं। इन सब जङ्गलोंमें उत्पन्न फल और काष्ठ ही यहाँकी प्रधान सम्पत्ति है। मटर खादि कई तरहकी फसल भी लगती है। देगके लोग कृषिकार्य यद्यत् परिश्रमसे करते हैं सही, लेकिन उत्पन्न द्रव्यसे यहाँका अभाव पूरा नहीं होता।

यहाँके पहाड़ों पर आकारिक द्रव्य बहुतायतसे मिलते हैं। नरस्ता फोयलेन पहाड़ पर लोहा, कंसवर्ग और भायल स्वर्ग पर रूप, होवरफेल्ड पर ताँबा और दक्षिणस्थ प्रदेशोंमें सोसा, जस्ता, सावर्नल खादि पाये जाते हैं। स्हागरक उपसागरके उपकूलवर्ती प्रदेशोंमें समुद्रके जलसे लवण प्रसृत किया जाता है।

यहाँके आधेसे अधिक लोग मरुस्थ, काष्ठ तथा धातुका व्यवसाय करते और पशुपिष्ट लोग कृषिशोधि हैं। वेग-वती-नदीके किनारे लकड़ों काटनेकी बड़ी बड़ी कलें हैं। यहाँ लोहे, ताँबे काष्ठ और चाकड़के भी बहुतायतसे कारखाने देखनेमें आते हैं। समुद्रतीरस्थ चनेक जगहोंमें लकड़ा भी सौर किया जाता है।

पन्थाव्य देगोंके साथ नारवेका विस्तृत वाणिज्य प्रचलित है। परस्पोत्सव ड्रड्य, मरुस्थ तथा खनिज पदार्थ इङ्गलैण्ड, स्वीन, मूमध्यसागर और बाटिकसागर भेजा जाता है। लोहा विदेश नहीं भेजा जाता, देगके व्यवहारमें ही खपत होता है। यहाँके लोग नाविक-कार्यमें बड़े ही निपुण हैं।

इन देगमें विद्याभिक्षाको विधेय उच्यति है। सुबोंको ही लिखना पढ़ना सांख्यना पढ़ता है। पाम ग्राममें विद्यालय है, प्रत्येक नगरमें उच्चशैलीके विद्यालय तथा १० बड़े बड़े नगरोंमें मत्सरह विज्ञविद्यालय भी हैं।

नारवेके पश्चिमासिगण श्युटन जातिके हैं। अत्यन्त प्राचीन कालमें ये लोग समुद्रमें दक्षुवृत्ति कर दिन बिताते थे। ये सब जलदस्य, उत्तर समुद्रके उपकूलवर्ती देगोंमें जा कर प्रनिकाण्ड, नरहत्या तथा लुण्ठन किया करते थे। उस समय यहाँ बहुतायत छोटे छोटे राजा थे जो हमेशा भायसमें लक्ष्मण-भगद्वते रहते थे। प्राचीन नारवेवासियों ने प्रादसलैण्डका पता लगाया और वहाँ उपनिवेश स्थापित किया। ८७५ ई०में हेरलड डरफाया नामक एक राजा समस्त छोटे राज्योंको मिला कर एकाधिपति हुए थे। इसके कुछ दिन बाद ही नारवे और डेनमार्कके लोगोंने मिल कर डेनमार्क के राजा कैन्गूटके साथ इङ्गलैण्ड पर चढ़ाई की थी। बाद बीच-में ही दोनों जाति प्रलग प्रलग हो गईं। १०८० ई०में राष्ट्री मारगारेटके समयमें फिर एक दोनो जाति एक साथ मिल कर १२१४ ई० तक उसी पवस्थानमें रहीं। १२१४ ई०में स्वीडन डेनमार्कसे नारवेमें मिलाया गया और तभीसे नारवे और स्वीडन एक राष्ट्रभूत हुआ है। प्रजाओंके प्रतिनिधि ले कर नारवेकी व्यवस्थापक सभा संकलित हुई है। प्रजा सभावाचरुपसे प्रतिनिधि नियोग नहीं करतीं। वे निर्वाचक चुनती हैं और निर्वाचकोंमेंसे प्रतिनिधि निर्वाचित होती हैं। नगरमें ५० नगरवासियोंमेंसे एक निर्वाचक चुननेका अधिकार है और छोटे छोटे गाँवोंमेंसे सौकड़े पोलै एक। इन प्रतिनिधियोंको संख्या ७५ और १०० के बीच होना चाहिए। नारवेकी व्यङ्गस्याक सभाका नाम है 'थिंग'। राजा का प्रतिनिधि एक सभाका कार्य एक करते हैं। इस



ममा द्वारा पार्लमेंट घटस बदल करना, नया कर लगाना और तोड़ना, राजपुत्रोंको सँझा गया वीतन ठीक करना और पन्थान्य पनेक कार्य निर्वाहित होते हैं। एके दो विभाग हैं, अर्थात् और पीओडवर्ग। पहले विभागका काम पार्लेन-कानून बनाना है और दूसरेका देगने कागजातीको ले कर पहलेमें पेश करना। प्रत्येक तीन वर्षकी एक फरवरीकी एर्थमें अधिवेशन होता है। कुन गामन-भार राजाके ऊपर रहता है। नारवेके गवर्नर, एक मन्त्री और सदस्यगण ले कर यहाँको मन्त्रिसभा संगठित है। राजा जब नारवेसे कहीं दूसरी जगह पने जाते हैं, तब मन्त्री और दो सदस्य उनके साथ रहते और बाकी गवर्नर तथा अपरापर सदस्यगण मिल कर राज्यको देखभाल करते हैं। नारवेके मनुष्य गवर्नर नहीं हो सकते। वे मन्त्रिसभाके पन्थान्य उभ्य हो सकते हैं। युद्ध-घोषणा करने पर राजा और पीओडवर्ग दोनों देगके सदस्योंको बुला कर उनके अभिमतानुसार कार्य करते हैं। यहाँका राजस्व लगभग दो करोड़ पछो लाख रुपयेका है।

नारवे और स्वीडेन एक ही राजाके शासनाधीन है। यहाँ ४५ जहाँ जहाज और ११८ तोपें हैं। सैन्य-संख्या १८००० है। तैरिस वर्षसे ज्यादा उम्रवाला मनुष्य ही से निकर कार्यमें नियुक्त किया जा सकता है और तैरिस वर्षसे अधिक समय तक उन्नत कार्यमें कोई नहीं रह सकता।

नौरस (हि० वि०) एक प्रकार का नया पदार्थ ताजा हो, नया पका हुआ, ताजा। २ नवयुवक।

नीलव (हि० पु०) नीलको फसलको पहली कटाई। भीक देना।

नीरोन (फ्रा० पु०) एक पारसियोंमें नव वर्षका पहला दिन। इस दिन बहुत धूमध्वज उल्लास मनाया जाता था। २ त्योहारका दिन। ३ पुगोका दिन, कोई एक दिन।

नील (हि० वि०) १ नरक देवी। २ अज्ञान पर माल कानूनका भाड़ा।

नीलम्बा (हि० वि०) नीलवा देवी।

नीलम्बा (वि० वि०) नीलम्बा, जिसको कोमत नीलम्बा भी कहते हैं, जहाँके और बहुसंख्य।

नीलखी (हि० स्त्री०) जलानेको वह मकड़ी जिसमें ताने टपाने जाते हैं और जिसमें रेश रेश बजनी पत्थर बंधे रहते हैं।

नीला (हि० पु०) वेपना देना।

नीलामी (हि० वि०) मर्म, कोमल, सुनायन।

नीवत खाँ नवाब—सम्राट, पकघरके एक सेनापति। उन्होंने शाहजहाँके पन्तःपुरके निकट ८०३ हिजरीमें एक मसजिद बनवाई जिसे लोग 'नीलोखरी' कहते हैं। अभी वह टूटी फूटी अवस्थामें पड़ी है।

नीवतपुर—युक्त प्रदेशके वाराणसी जिलात्संगत एक ग्राम। यह पन्था २५ १४ १८ ०० तथा देगा ८३ २० ४० ०० पूरके मध्य अवस्थित है। यहाँ बलबन्त सिंहके तख्तेश्वर विग्रहामें सिंहप्रतिष्ठित एक मन्दिर और सराय है। कर्मशासनदी पार करनेके लिए यहाँ एक प्रस्तरनिर्मित सुन्दर सेतु है।

नीलमन्मतीय—हिमालयपर्वतस्य तीर्थ विग्रह। महाप्रलयके बाद मनुने यहाँ प्रायश्चित्त किया था। मनु देखी।

नीलमन्मतीयमें लिखा है—महर्षि करवप जब तीर्थयात्राके निकसे, तब उनके पुत्र नीलने कनखलमें पाकर उनसे निवेदन किया कि मन्मद देवके पुत्र जलोद्भवके उपद्रवसे घरा समझित हो गई है। तदनन्तर करवपने ब्रह्मा और शिवके निकट जा कर उन्हें सब वृत्तान्त कह सुनाया। सुनिको प्रायश्चित्त तुष्ट हो कर ब्रह्माने देवताओंको दलबलके साथ नीलमन्मतीयमें भेज दिया। कंसनागके उत्तर हिमालय पर्वतके प्रायश्चित्त पर यह तीर्थ स्थापित है। यहाँ पड़ुष कर ब्रह्माने उत्तर, विष्णुने दक्षिण और शिवने दोनोंके बीचमें खड़े हो कर जलोद्भव देवको क्रुद्धके भीतरसे बाहर निकलने कहा। लेकिन दुरन्त दृष्टुने उनके बात पनसुनी कर दी। इस पर विष्णुके परामर्शानुसार शिवने अपने तिशूल द्वारा पर्वतको छिद डाला। ऐसा करनेसे जब जन्म निकलने लगा, तब विष्णुने प्रायश्चित्त धारण कर जलमें प्रथम किया और यहाँ जलोद्भवके साथ युद्ध करके उसे मार डाला। कोई कोई पारारत पर्वतको जहाँ नोयाका जहाज पा भगा था, नीलमन्मतीय मानते हैं। नीला देवी।

नीवाह (सं० त्रि०) नाव वाहयति वाहि-भण्ये । नौका-  
यावक, जिससे नाव चलाई जाती है, उद्दि ।

नीविद्या—जहाजादि परिचालन विद्या । नाविक वेंकी ।

नीव्यसनं (सं० स्त्री०) नावि व्यसनं । नौका पर विपद् ।

नीयहर—१ उत्तरपश्चिम-सोमान्त प्रदेशके विगावर जिलेकी एक तहसील । यह पश्चात् ३१° ४०' से ३४° ८' ए० और  
दिशा० ७१° ४०' से ७२° १५' पू०के अवस्थित है । भूपरि-  
माण ७०३ वर्ग मील और लोकसंख्या लाखमें ऊपर है ।

२ उक्त तहसीलका प्रधान नगर और छावनी । यह  
पश्चात् ३४° ए० और दिशा० ७२° पू०, विगावरसे २७  
मील पूर्वमें अवस्थित है । जनसंख्या दस हजारके  
करीब है । छावनी काबुल नदीकी बालुकामय जमीन पर  
अवस्थित है । काबुल नदी पार करनेके लिये १८०३  
ई०की १वीं दिशवरमें एक पुल और लोहेकी सड़क  
बनाई गई है । शहरमें एक सरकारी अस्पताल और एक  
वर्गाकूलर स्तल है ।

३ पञ्जाबके बहावलपुर राज्यके अन्तर्गत खानपुर  
निजामतकी एक तहसील । यह पश्चात् २७° ५६' से २८°  
५४' ए० और दिशा० ७०° ०' से ७०° ३६' पू०के मध्य अव-  
स्थित है । भूपरिमाण १६८० वर्ग मील और जनसंख्या  
करीब ८००३५ है । इसमें इसी नामका एक शहर और  
७१ ग्राम लगते हैं । राजस्व दो लाख रुपयेका है ।

४ उक्त तहसीलका एक शहर । यह पश्चात् २८° २५'  
ए० और दिशा० ७०° १८' पू० बहावलपुर शहरसे १०८  
मील दक्षिण-पश्चिममें अवस्थित है । जनसंख्या प्रायः  
४४०५ है । यहां चावलकी एक कल और चिकित्सा-  
लय है ।

५ बम्बईके सिन्धुप्रदेशके अन्तर्गत हैदराबाद जिलेका  
एक उपविभाग । इसके उत्तर और पश्चिममें सिन्धुनदी  
पूर्वमें खैरपुरराज्य, धर और पाकर जिला तथा दक्षिण-  
में जाला उपविभाग है । भूपरिमाण २८२८ वर्ग मील है ।

यहां जैतीवारीकी उत्पत्तिके लिए १८८८ नहर काटी  
गई है जिनमेंसे 'नसरत नामक नहर नर्महम्माद कल-  
होरिके राजत्वकालमें काटी गई थी । १७८६ ई०में शाह-  
पुर-युद्धके बाद सिन्धुप्रदेश तानपुर सरदारिके मध्य विभाग  
हो गया । इस युद्धमें मीर फतेहली और रक्षम खान

जब पवतुन नविकलहोरा पराप्त हुए, तब कन्दि-  
घर तथा नोगहर तालपुरके शासनकर्ता मीर सोझाव  
खानके हाथ लगा । इस विवादसूत्रमें जो युद्ध छिड़ा  
उसमें फलीमुरादकी जीत हुई और १८४३ ई०में उन्हें  
रायको उपाधि मिली । १८५२ ई०तक उपविभाग मुसल-  
मानोंके अधिकारमें रहा । पीछे उनके अमदवावहारसे  
क्रुद्ध हो कर ब्रिटिशसरकारने इसका शासनभार अपने  
हाथमें ले लिया ।

६ उक्त उपविभागका एक प्रधान नगर । यह मीरो  
नगरसे १५ मील उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है । तालपुरके  
मीर राजाओंके समयमें यहां गोलमूजा सेना रहती थी ।  
यह नगर २०० वर्ष हुए धमाया गया है ।

७ गिकोहाबाद तहसीलके अन्तर्गत एक ग्राम । यह  
मैनपुरी नगरसे १४ मील दक्षिणपूर्वमें अवस्थित है ।  
सन्नाटशाहजहाँके राजत्वकालमें हाजो अथू से यद  
नामक किसी मुसलमानसे इस ग्रामका पत्तन हुआ ।  
यहां उनके तथा उनके पालोय पाटिलका-डाका समाधि-  
मन्दिर है । इसके अलावा यहां अनेक कूप, समाधि-  
मन्दिर और गृहादिके भग्नावशेष देखनेमें आते हैं ।

नौरवा पत्तो—सिन्धुप्रदेशके गिकारपुर और चकर उप-  
विभागके अन्तर्गत एक तालुक । यह पश्चात् २७° ४२' से  
२८° ए० और दिशा० ६८° १५' से ६८° पू०के मध्य अव-  
स्थित है । भूपरिमाण ४०८ वर्ग मील और जनसंख्या  
प्रायः ७१३६ है । इसमें एक शहर और ८० ग्राम लगते  
हैं । यहाँकी जमीन बहुत उपजाऊ है । धान, ज्वार,  
गेहूँ और चना यहाँकी प्रधान उपज है ।

नोगा (फा० पु०) दूध, धर ।

नोगी (फा० स्त्री०) नववधू, दुग्धिन ।

नौरवा—पारस्यराज कुवादके पुत्र । ये सांधुताके विजय  
पक्षपाती थे । इनसे पश्चिममें यूरोप और पूर्वमें भार-  
तादि मानासाम्राज्योंमें ये 'सन्' नामसे प्रसिद्ध थे । मुसल-  
मान लोग इन्हें 'पादिल' और योक्वामी खसद (Chos-  
roes) कहा करते थे । ५३१ ई०में पिताकी मृत्युके  
बाद ये राजगद्दी पर बैठे । इस समय इन्होंने रोमन  
लोगोंको युद्धमें कई बार परास्त किया, मुसलमान  
लोकोंने तो सोचा है कि इन्होंने रोमके बादशाहकी

केद किया था। रोमके सम्राट् उस समय अटिनियन थे। नौसेरवाची अष्टिद्योक्त पर विजय, शासदेय तथा भूमिभूसागरके पनेक स्थानों पर अधिकार तथा सार-हरिया युद्धादन प्रदेशों पर आक्रमण रोमके इतिहासमें मोःप्रसिद्ध है। रोमके बादशाह अटिनियन पारस्य साम्राज्यके पधोन हो कर प्रतिवर्ष तीस हजार पगर्कियां कर दिया करते थे। ८० वर्षको सहायस्थानि नौसेरवाचि रोम राज्यके विरुद्ध चढ़ाई की थी और दारा तथा गाम पादि देशोंको अधिकृत किया था। ४८ वर्ष राज्य करके परम प्रतापी और न्यायी बादशाह परसोक सिधारे।

फारसीकृतार्थमें 'नौसेरवाचि' न्यायकी बहुतनी कथाएँ हैं। ध्यान रखना चाहिए कि इसी बादशाहके समयमें मुसलमानोंके पैगम्बर मुहम्मद साहबका जन्म हुआ जिनके मतमें प्रभावसे पापी चलकर पारसकी प्राचीन पाप्य सभ्यताका शोष हुआ। सर जान मानक्रमके पारस्य भ्रमणवृत्तान्त तथा अन्यन्य पारस्य ग्रन्थोंमें पूर्वकी और भारत और सिन्धु प्रदेशमें तथा उत्तरकी और फरगना राश्ट्रमें नौसेरवाचि पागमन और आक्रमणकी कथा मिली है। सर डेवरो पटिखरसाहबने लिखा है कि बलमोरानपुत्र गृहने नौसेरवाची कन्याका पाषण्डण किया था।

नौसेरवाची—मनुचिस्थानवासी जातिविशेष।  
 मोदेचन (मं० स्त्री०) भावः—सेसनम्, सुपानादित्वात् यत्वम्। मोकासेचनम्।

मोसत (हिं० स्त्री०) शूद्रा, सोलहो सिंगार।  
 मोसरा (हिं० पुं०) मो सड़ोकी माता, मोसरा चार वा गजरा।

मोसादर (हिं० पुं०) एक तीर्थ भासदर चार वा अनक मोदीवायव्य द्योकि योग्ये जनता है। यह चार वायव्यदक्षिणें वायुमें अक्षमातामें मिला रहता है और जम्बुद्वीपके शरीरके सहने गलनेमें एकवित्त होता है। सींग, खुर, हड्डी, मान पादिका भबसेमें चर्क, खींचकर चक प्रायः निकाला जाता है। मोसेके कारखानोंमें पट्टरके औद्योगिकी भबके पर चढ़ानेसे मो एक प्रकारका पानो-पापदायक होता है पाज कल बहुतभा मोसादर उठाने निकाला जाता है। पर समयमें मोसरेके पत्रादीषि

मो चार निहासते थे। उन सब पत्रादीषि भाँके पाये कुछ जम्बुद्वीपके बंग मो मिलकर जनते थे। मोसादर पीपथ तथा कलाकीगलके वायव्यार्थमें जाता है।

ये शकमें मोसादर दो प्रकारका माना गया है, एका क्विक मोर ररा चक्रविम। जो मोर चारोंभि बनाया जाता है उसे क्विक मोर जो जम्बुद्वीपके मूलपुरीय पादि के चारोंभि निकाला जाता है उसे चक्रविम मोसादर कहते हैं। चायुर्वेदके मतानुसार मोसादर शोथनायक, मोसल तथा यकृत, प्रोक्ता, खर, चर्मुद, सिधदं, खाँसो इत्यादिमें उपकारो है।

नौसारि—यहोदाराज्यके पत्तगत एक नगर।  
 नवसारि हेतो।

नोसिख (हिं० वि०) नौसिखिया देखो।

नोसिखिया (हिं० वि०) जो दक्ष या कुग्रह न हुआ हो, जो मोस करे पकाल हुआ हो, जिधने नया मोखा हो।  
 मोहूँ (हिं० पुं०) मदीकी नई हाड़ी, कोरी हड्डिया।  
 मोहूँहा (हिं० पुं०) पिठपच, कणायत। इसमें मदीके पुराने भरतन केक दिए जाते हैं और नए रखे जाते हैं।

मोहजारी—चक्रालके २४ परगनेके पत्तगत एक ग्राम।  
 म्यका (सं० स्त्री०) निःपक्का, बाहुं जःशोयः। विहाका कीड़ा।

म्यकाहका (सं० स्त्री०) गक, क्रियतेसो प्रयोदरादित्वात् क शोपे साधु। म्यकान्कोट, विहाका कीड़ा।

म्यकार (सं० पुं०) गक, क्रियते इति क्वचप्रः। गकः करण, मोचकरण। पर्याय—पवना, परोहार, परिहार, पराभव, अपमान, परिभव, तिरस्किधा, तिरस्किर, पवहेना, हेना, पवहेसन, हेसन, चनादर, परिभव, सूचय, मुचय, रीठा, परिभूति, निजति, पधुचय, पधुचय, मोकांग, पवहेत, चनासन, घेय, निकार, धिन्नार।

म्यकाहका (सं० स्त्री०) पतङ्गविशेष, मसका कीड़ा।  
 म्यक (सं० स्त्री०) निःपक्वः, ततः कुत्वम्। गितास पञ्चमयुकोक्त।

म्यक (सं० वि०) तत, नौसेरवा हुआ।

म्यकाहो (सं० स्त्री०) मोसेकी मोर रवी हुई रंगनी।

म्यस (सं० पुं० स्त्री०) नियते जिनने वा पत्रिषो यक्ष समामे यत्। १. मडिप, मोस। २. आमदम्य, परदास।

३ कास्थ्य । ( क्लो० ) ४ महिषहंष । ( त्रि० ) ५ निहृष्ट ।

न्यग्रजाति ( सं० क्लो० ) नीध जाति ।

न्यग्रभाव ( सं० पु० ) नीधो भावः । नीचत्व, नीध हीने का भाव ।

न्यग्रभावन ( सं० क्लो० ) नीधत्वप्रापण, हृषाके साथ याव-हार करना ।

न्यग्रभावयिष्ट ( सं० त्रि० ) नन्दकारी, नवानि या भुक्तानि-वाजा ।

न्यग्रोध ( सं० पु० ) न्यक्-रुणहि इति रुध-प्रच् । १ वटहृत्, वरगद । २ शमोहृत् । ३ वामपरिमाण; सतनी लम्बाई जितनी दोनों हाथोंके फैलानिसे हीतो है, पुरसा । ४ विण्णु । ५ मोहनोपधि । ६ उपसेन राजाके एक पुत्रका नाम । ७ महादेव । ८ बाहु । ९ वाराणसीके अन्तर्गत एक ग्राम । १० सुषिकपर्षी, सूसाकानी ।

न्यग्रोधक ( सं० त्रि० ) न्यग्रोध, लस्यादूरदेगादि, च्छया-दित्वात् ठक् । ( पा ४।२।८० ) न्यग्रोधके दूरदेगादिः । न्यग्रोधपरिमण्डल ( सं० पु० ) न्यग्रोध; ग्रामः परिमण्डल परिणाहो यस्य । ग्रामपरिमित-सच्छायपरिणाह पुरुष, वह मनुष्य जिसकी लम्बाई चौड़ाई एक ग्राम या पुरसा हो । ऐसे पुरुष वेतामें राज्य करते थे ।

न्यग्रोधपरिमण्डला ( सं० स्त्री० ) न्यक्-रुणहि इति न्यग्रोधं पधः प्रसृतं परितो मण्डलं नितम्बमण्डलरूपं यस्याः । स्त्रियैका एक भेद, वह स्त्री जिसके स्नान कठोर, नितम्ब-विशाल और कटि-चोण हो ।

न्यग्रोधपुटपाक ( सं० पु० ) घट कस्तादि पुटपाकभेद । पुटपाक दोष ।

न्यग्रोधमूल ( सं० क्लो० ) वटहृत्को जड़ ।

न्यग्रोधा ( सं० स्त्री० ) न्यक्-रुणहि रुध-प्रच्-टाप् ।

न्यग्रोधी । पर्याय-दन्तो, लघुभ्रमरपर्षी, निकुम्भ, मुकुलक, द्रवन्ती, चित्रा और मूषिकाङ्गया ।

न्यग्रोधादिगण ( सं० पु० ) सन्तुलील द्रव्य संघटनीयगण-विशेष, यैद्यकमें हस्तोंका एक गण या वर्ग जिसके अन्तर्गत ये सब माने जाते हैं- वरगद, पीपल, गून्धर, पाकर, महषा, चतुर्ग, काम, कुसुम, धामड़ा, जामुन, चिरोजी, माखरीबिबी, कदम, बर, तेंदू, सतई, सजपत्ता, लोध,

सावर, मिनावा, पनाय, तुन, घुंघची या मुनेतो ।

(सन्तुत घृत्स्थानः ३८ अ० )

न्यग्रोधादिघृत ( सं० क्लो० ) घृतोपधमेऽ । भैषज्यरत्ना-यन्त्रोमें इसकी प्रसृत प्रणालीः इस प्रकार लिखी है— घृत ४ सेर; स्थायके सिधे घट, पीपल, गुलबः पद्म, कुट, पाकर, जामुन, चिरोजी, चमनतास, वेंत, सुपारी, कदम, रत्नोद्गा और शाल प्रत्येकको ढास २ पल, जल ६४ घेर, शीप ४ घेर आवेलेका रस ४ सेर । कल्कार्य यष्टिमधु, कुसुम, पिण्डखजूर, टाहहृदो; जीवन्तोफल, गाम्भारीफल, कंकोल, चौरकंकोल, रक्तचन्दन, श्वेत-चन्दन, रसाञ्जन, अन्तमूल प्रत्येक ६ मोला, सबको मिला कर यथाविधि पाक करते हैं । इससे सेवन करनेसे नाना प्रकारके प्रदर, योनिशूल; कुक्षिशूल; वक्षिशूल, गात्रदाह और योनिदाह आदि रोग जाते रहते हैं ।

( भैषज्यरत्ना० धीरोगाधिहारः )

न्यग्रोधादिचूर्ण ( सं० क्लो० ) भावप्रकाशोक्त चूर्णोपधि-भेद । प्रसृत-प्रणाली—वट, यज्ञदुग्ध, पीपल, चमन-तास, पीतमाल, जामुन, चिरोजी, चतुर्ग, धवहृत्, यष्टि-मधु, लोध, वरुण, मंदार, मेपयङ्गी, दन्तो, चीता, चट-डुल, डहरकरंज, विफला, इन्द्रिय और मिनावा प्रत्येक-का बराबर बराबर भाग लेकर चूर्ण भगते हैं । पीछे उस चूर्णको मधुके साथ खा कर विफलाका पानी पीनेसे सुवाद-विषय होता है । इतना ही नहीं, बीस प्रकारके प्रमेह और मूत्रकच्छु भी जाते रहते हैं ।

न्यग्रोराम—कपिलवस्तु-नगरस्थ वीरोंका एक प्रधान । स्वयं बुद्धदेव इस स्थानमें रहते थे ।

न्यग्रोधिक ( सं० त्रि० ) जडां बहुतये घटहृत्को ही ।

न्यग्रोधिका ( सं० स्त्री० ) शालुकर्षी लता, सूसाकानी सता ।

न्यग्रोधो ( सं० स्त्री० ) १ मूषिकपर्षी, सूसाकानी । २ हृत्तदन्ती ।

न्यङ् ( सं० पु० ) यानादिका; अंशभेद, रचना एक अंग ।

न्यङ् ( सं० पु० ) निगरां चक्षति गच्छतीति अच्, गतो ष ( भाष्यः १।१।८० ) न्यङ्गरीवाच्य । पा ३।१.५३, इति क्तवम् । १ न्यग्रभेद, एक प्रकारका शिरण, चारद-सिंगा । भावप्रकाशके मतमें इसका मांसः स्वादु, कषु,

वन्धारक शीर विदोयनागह होता है । २ सुनिभेद,  
एक अयिका नाम । ३ सविभेद, एक प्रकारकी मणि ।  
( त्रि० ) १ नितान्त गमनगोन, बहुत दोड़नेवाला ।  
न्यङ्गुह ( म० पु० ) न्यङ्गुरिय मूहः । १ श्लोनाक-  
हृद्य, सोनापाठा । २ पारववृहद्य, पमनताम ।  
न्यङ्गुगिरि ( म० स्त्री० ) कजुभङ्ग ।  
न्यङ्गुमारिषी ( म० स्त्री० ) वृहती इन्दोभेद, एक वैदिक  
इन्द्र जिमके पक्षमे शोर दूमेरे चरणमें १२, १२ पक्षर शीर  
शीमेरे तथा चौथे चरणमें ८, ८ पक्षर होते हैं ।  
न्यङ्गादि ( सं० पु० ) कुलनिमित्त शब्दगणभेद । यथा—  
न्यङ्ग, मद्गु, श्मगु, दूरीपाक, फसपाक, चषिपाक, दूरीपाका,  
फलेपाका, दूरीपाका, फलेपाका, तन्ना वक्त, व्यतिपङ्ग,  
पनुपङ्ग, पयमगं, सपमगं, म्यपाक, मांमपाक, मुमपाक,  
कपीतपाक, सस्यपाक ।  
न्यङ्ग ( सं० पु० ) नि पनुज-पञ्च । नितरां पञ्चन, नितान्त  
पञ्चन ।  
न्यच्छ ( सं० पत्नी० ) नितरामच्छम् । सुदुरोगविशेष ।  
जिम रोगमें शरीर श्माम या श्मनवर्ण हो, शरीरमें  
जहां तर्हा थोड़ा बहुत दर्द होता हो पथया वेदना-  
विहोन मणुनाकति विद्यत हो गया हो, उसे न्यच्छरोग  
कहते हैं । गिरावेध, प्रसेव शीर पथ्यद्वारा न्यच्छरोगको  
पिकित्ता करनी चाछिय । शीरिच्छके कक्ककी दूधसे  
पोष कर उसका प्रसेव देनेसे पथया सिद्धिवत, हदारक  
शीर गिद्यकाशकी चूच कर उससे उदरान करनेसे न्यच्छ  
शीर मुषयशरोग नष्ट होता है । ( भावप्रकाश ४५०  
शुररोगा० ) ( त्रि० ) २ पथ्यना निमंन, बहुत साक ।  
न्यञ् ( सं० त्रि० ) निश्चतया पक्षति पनुच-विच् । १  
निश्च । २ मोक्ष । ३ काश्म्य ।  
न्यञ्चन ( सं० स्त्री० ) नितरामञ्चने गमन । नितरां गमन,  
तेजोषे चमना ।  
न्यञ्चित ( सं० त्रि० ) नि-पञ्चे विच्, ङ । पथाचिन्न, मोचे  
किंका या डाता दुषा ।  
न्यञ्चनिका ( सं० स्त्री० ) निश्चकता पञ्चति । निश्चमागमें  
न्यञ्च इक्षुपट, मोचे शी शीरकी हुई पंजसी या इक्षी ।  
न्यञ्च ( सं० पु० ) नितरां चमन । चरमभाग, शेषभाग ।  
न्यञ्च ( सं० पु० ) नि-पञ्चे ( पञ्च, ङ ) वा १३१५६ )  
पञ्च, ङ, ङा ।

न्ययन ( सं० स्त्री० ) ङट ।  
न्ययं ( सं० त्रि० ) नि-पञ्चे । दूरीभूत ।  
न्ययं ( सं० पु० ) नि-पञ्चे गतो यत् । १ निलटगति । २  
ध्वंस, नाश । ( त्रि० ) निलटो पर्यायप्य । ३ निल-  
टाघं ।  
न्ययुं ( सं० स्त्री० ) १ दगयुषित पनुं द संख्या, दग  
परव ।  
न्ययुंदि ( सं० पु० ) निलटः पनुंदिदेवी देवात्तरं यज्मात् ।  
रुद्रभेद, एक रुद्रका नाम ।  
न्यय्या ( सं० त्रि० ) नि-पञ्च-कर्मणि-ङ । १ यिम, किंका  
दुषा, डाता दुषा । २ त्यर, कीडा दुषा । ३ निहित,  
रखा दुषा, धरा दुषा । ४ स्यापित, बैठया या जमाया  
दुषा । ५ विद्यत, चुन कर सजाया दुषा ।  
न्यय्यादण्ड ( सं० त्रि० ) जिमने डंडेकी मुठाय या  
नयाया हो ।  
न्यय्यादेह ( सं० स्त्री० ) १ स्यापित देह । २ म्म देह ।  
न्यय्याग्य ( सं० पु० ) न्यय्यां शान्तिं येन । १ पितृशोक ।  
( त्रि० ) २ त्यहग्य, जिमने हविषया रख दिये हो ।  
न्यय्यिका ( सं० स्त्री० ) दोर्भाग्य लक्षण ।  
न्यय्य ( सं० त्रि० ) नि-पञ्च सेवे कर्मणि वाङ्मनात् पापं  
यत् । १ स्यापनीय, रखने योग्य । २ त्यहवा, कीङ्गे  
योग्य ।  
न्यङ् ( सं० पु० ) पभायस्याका मायं कान् ।  
न्याय ( सं० स्त्री० ) नितरामन्यते इति नि-पञ्च ङट् ।  
श्ट तण्डुल, भूना दुषा चावल । दसका पर्याय श्टाक  
शीर कुहव है ।  
न्याह्व ( सं० पत्नी० ) न्यह्वोरिदं श्मद्य-पञ्च । रद्दु-  
चर्म, धारहनिचेका चमड़ा ।  
न्याद ( सं० पु० ) न्यदगमिति नि-पञ्च-भञ्जि-प ( भोज  
व । वा १३१६० ) पाहार, भोजन ।  
न्याय ( सं० पु० ) नियमन ईयते इति नि-पञ्च ङट् ।  
( परिच्योनेविषयुनाभ्येयोः । वा १३१६० ) १ उचित  
वात, नियमसे पनुकृत वात, हृद्य वात, रसाक ।  
पर्याय—पथेया, कल्प, देगदय, समञ्चय । २ निश्चु । ३  
माधु । ४ भोजि । ५ जयोगद । ६ भोज । ७ कुञ्जि । ८

प्रतिज्ञा, हेतु, उदाहरण, उपनयन और निगमनात्मक पक्ष प्रवचन वाक्य । यह पक्ष प्रवचन वाक्य ही न्याय है । प्रवचन शब्दकी पक्ष कश्चि है, ये सब प्रवचन न्यायके पक्ष हैं । अतएव यह पक्ष प्रवचनयुक्त वाक्य ही न्याय पदवाच्य है । न्याय कश्चिने न्यायशास्त्रका बोध होता है । न्याय शब्दगर्भाने है । इनके प्रवचनके गौतम श्रुति मिथिलाके निवासो माने जाते हैं ।

गौतमश्रुति:—गौतमजन शूद्राकारमें पथित पदार्थ समूह पर छोड़ा विचार करना यहां पाषण्ड है । गौतम दर्शनके प्रतिपाद्य विषय हैं । प्रथम अध्यायके प्रथमाङ्कमें प्रमाणादि षोडश पदार्थाका बहुश आत्मतत्त्व-साक्षात्कार और मोक्षरूप प्रयोजन प्रतिपादन, पीछे तत्त्वज्ञानाधोम सुशिक्षा उत्पत्तिक्रम एवं प्रमाण पदार्थाका प्रवचन, अनुमान, उपमान, शब्द ये चार लक्षण, पीछे दृष्टार्थ और अदृष्टार्थके भेदसे शब्दविभाग और प्रमेय लक्षण तथा प्रमेयविभागपूर्वके आत्मा शरीरनिर्द-पण इन्द्रिय, भूत और पर्यविभाग, बुद्धिलक्षण, मना-निर्दपण, प्रवृत्तिलक्षण और तद्विभाग, दोष, प्रेत्यभाव, फल, दुःख, अपवर्ग और संशयलक्षण, संशयका कारण-निर्देश, प्रयोजन और सिद्धान्तलक्षण, सिद्धान्त विभाग एवं सर्वतन्त्रसिद्धान्त, प्रतिप्रत्यसिद्धान्त, चधिकरण-सिद्धान्त, अर्थपगमसिद्धान्त लक्षण, न्यायावयव विभाग, प्रतिज्ञाहेतु, व्यतिरेकीहेतु, उदाहरण, व्यतिरेक्य उदाहरण, उपनयन और निगमनलक्षण, तर्क और निर्णयनिर्दपण ; द्वितीयाङ्कमें—वाद, जल्प, वितण्डालक्षण और हेत्वा-भाष्यविभाग, सश्रुतिवार, विरुद्ध, प्रकरणसम, साध्यसम और प्रतीतकालरूप, व्यभिचारो विरुद्ध, सप्रतिपक्षित, पक्षिह और बाधित यह पक्षविध दृष्टहेतुका लक्षण है, इनमें वाद क्लान्तलक्षण और क्लेशविभाग; वाक्कल, सामान्य-रूप और उपचाररूप इन विविध क्लान्तका लक्षण और तत्सम्बन्धी पूर्वपक्ष तथा समाधान, अनन्तर जाति और निषेधस्थानका लक्षण वर्णित है । द्वितीय अध्यायके प्रथम पाङ्किकमें संशयसम्बन्धी पूर्वपक्ष और सिद्धान्त एवं प्रमाणचतुष्टयसम्बन्धी पूर्वपक्ष और तत्समाधान, प्रत्यक्ष-लक्षणमें भावेप और समाधान, मनासिद्धिविषयमें युक्ति और प्रत्यक्षसिद्धान्तमूल, इन्द्रियसिद्धिर्षयमें प्रत्यक्षाहेतुत्व

शब्दों, प्रत्यक्षमें अनुमितत्वशब्दा और तत्समाधान प्रव-चनो-खण्डन और तत्समाधान, अनुमानपूर्वपक्ष और तत्समाधान, उपमानपूर्वपक्ष और तत्समाधान उप-मानका अनुमानार्थभावत्वखण्डन एवं शब्दप्रामाण्य-सम्बन्धमें पूर्वपक्ष और वेदप्रामाण्यक्षेप, तत्समाधान, वेदवाक्यविभाग, विशिलक्षण, अर्थवादविभाग और अनुवादलक्षण, वेदप्रामाण्यमें युक्ति, प्रमाण चतुष्टय-सम्बन्धमें भावेप, तत्समाधान, शब्दका अनित्यत्वमायन, शब्दविकार-निराकरण, केवलप्रवृत्ति, केवलजाति और केवल जातिमें शक्तिका निराकरण और जात्याकृतविशिष्ट व्यक्तिये पदका शक्ति-प्रतिपादन, व्यक्ति, जाति और जातिका लक्षण ; तृतीय अध्यायमें आत्मादि द्वादशविध प्रमेयकी परीक्षा, इन्द्रियचैतन्यवाद, शरीरालम्बद प्रभृति दूषण, चक्षुका अस्तेत्यनिराकरण, मनका आत्मत्वशब्दा-निराकरण और आत्माका नित्यत्वप्रतिपादन, शरीरका एक भौतिकत्वकथन और पार्थिवत्वमें युक्ति, इन्द्रियका भौतिकत्व और मानात्व परीक्षा, रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, शब्द, इस पञ्चविध पदार्थके सम्बन्धमें परीक्षा, ज्ञानरूपका अयोग्यत्वप्रतिपादन, वादनिरास, बुद्धिका आत्मगुणत्व-प्रतिपादन, बुद्धि जो शरीरगुण नहीं है, इनका विभेद रूपसे प्रतिपादन, मनको परीक्षा और शरीरका पुत्रपा-दृष्ट निष्पाद्यत्व प्रतिपादन ; चतुर्थ अध्यायमें प्रवृत्ति और दोषपरीक्षा एवं जन्मान्तर सम्बन्धमें सिद्धान्त, सप्रति-प्रकार प्रदर्शन, दुःख और अपवर्गकी परीक्षा, तत्त्वज्ञान-को उत्पत्ति, प्रवचनो और निरवयवप्रकरण, पञ्चमा-ध्यायमें जातिविभाग, साधर्म्यसम, वैधर्म्य सम-प्रभृति पनेकविध जाति विभेदका प्रतिपादन, अनन्तर निषेध-स्थान विभाग, प्रतिज्ञाहानि, प्रतिज्ञान्तर प्रभृति वार्हेस प्रकारके निषेधस्थानका लक्षण, पीछे हेत्वाभाषणका सर्वप्र-कार यह न्यायप्रत्य समाप्त हुआ है ।

संक्षिप्तभावमें न्यायदर्शनके सभी पदार्थाको जानो-चना की जाती है, विचार प्रभृतिका विषय नान्यायव्यक्त पर चाकोचना की जायगी ।

सर्वाथ गौतमने पक्षसे सोलह पदार्थाका निर्दपण किया है । यथा—प्रमाण, प्रमेय, संशय, प्रयोजन, दृष्टान्त, सिद्धान्त, प्रवचन, तर्क, निर्णय, वाद, जल्प, वितण्डा,



निये-प्रकारमाय' यद्य विरोधण दिया गया है। प्रप-  
 दय नटीकाकृत वाचस्पति मित्र प्रभृति मीठ नैयायिकों  
 तथा विश्वनाथप्रभृति मन्वा-नैयायिकोंका कहना है  
 कि 'इन्द्रियसन्निकर्षजन्यप्रवृत्तिचारी' यथायथा। ज्ञान-  
 मात्र ही प्रत्यक्षका मध्यस्थ है। अथवापदेय्य और वाचसाय  
 इन दो प्रत्यक्षकारिभाग, अथवापदेय्यः शब्दको अर्थ,  
 निर्विकल्पक प्रत्यक्ष, अथवाचसायः शब्दका अर्थ और  
 सविकल्पक प्रत्यक्ष है। प्रपदय्य एव ही प्रत्यक्ष प्रप-  
 दय को ज्ञान विरोधण और निरोधणके सम्बन्धको विषय  
 करता है, वह सविकल्पक है, यथा नोम घट इत्यादि।  
 इस ज्ञानने जोनिरूपालक विरोधण और घटरूप विरोधण-  
 के सम्बन्धको विषय किया है। अथवाचसायः सविकल्पक  
 ज्ञानको विग्रिष्टबुद्धि कहते हैं। अज्ञो ज्ञानसम्बन्धको-  
 विषय नहीं करता, वह निर्विकल्पक है। घट-  
 रूपादिनिर्माय चक्षुके तन्निर्गम्य होने पर पहले प्रथम  
 प्रथम रूपमें घट और घटत्वादिका जो ज्ञान होता है  
 उसमें प्रथम ज्ञान निर्विकल्पक और उत्तर ज्ञान सवि-  
 कल्पक है। इस निर्विकल्पक ज्ञानका साकार शब्द  
 द्वारा दिखलाया नहीं जाता। इस कारण इसे अथवापदेय्य  
 कहते हैं। घट, घटत्व इत्यादिरूप निर्विकल्पक ज्ञान-  
 का साकार दिखलाया गया, वह और कर देखनेसे  
 बुद्धिमान्प्रगति मात्र जो ममत्तमत्तमे क्रियह निर्वि-  
 कल्पक ज्ञानका प्रकृत साकार नहीं है। प्रपदय्य कि  
 तादृगाकारक ज्ञान, और घटागके घटत्वादिका प्रत्यक्ष  
 ज्ञान द्वारा करता है, इस कारण तादृगाकारक ज्ञानको  
 सविकल्पक कहते हैं। निर्विकल्पक ज्ञानका प्रत्यक्ष  
 नहीं होता। अथवा प्रपदय्य है। प्रपदय्य अथवाचसाय  
 द्वारा असा, असात् निर्विकल्पक ज्ञानका अनुमिर्गम्य  
 ज्ञान द्वारा करता है। प्रपदय्य अथवाचसाय द्वारा

साधारण नियम यह है, प्रपदय्य कि विग्रिष्टबुद्धिके प्रति-  
 विरोधण ज्ञानकारण है। क्योंकि यह घटत्व प्रकृत्यादि-  
 रूप विरोधणका ज्ञान नहीं होनेसे घटत्वप्रकृत्यादि विग्रिष्ट  
 घटका ज्ञान नहीं होता। प्रपदय्य अथवाचसाय घटभाविग्रिष्ट  
 घटज्ञानसे पहले विरोधणका घटभाव प्रकृत्यादि का ज्ञान  
 अथवा साकार ज्ञान होगा। प्रपदय्य घटत्व सविकल्पक  
 पहले घटत्वका अनुमित्यादिरूप का ही सविकल्पक ज्ञान

नहीं रहने पर भी घटमें चक्षुसि योगोदिवसतः घटभावे-  
 विग्रिष्ट घटज्ञान द्वारा करता है। अतः प्रपदय्य घटत्व के  
 तादृगविग्रिष्टबुद्धिके पहले घटभावका निर्विकल्पिक ज्ञान  
 स्वीकार करना होगा। इस निर्विकल्पिक ज्ञानके प्रति  
 प्रपदय्य कारण अथवाचसाय ही निरोधण इन्द्रियायै सन्निकर्ष  
 मात्र ही कारण स्वीकार किया गया है और इन्द्रियायै  
 सन्निकर्ष रूप कारण है ऐसा ज्ञान करे घटभावेके निर्वि-  
 कल्पक ज्ञानके साथ घटका भी निर्विकल्पिक ज्ञान  
 स्वीकार किया गया है। प्रपदय्य अथवाचसाय द्वारा

यहां सोचनेकी बात यह है कि, लक्ष्मणसे सवि-  
 कल्पक ज्ञानके प्रति निर्विकल्पिक ज्ञान कारण होने पर  
 प्रपदय्य निर्विकल्पिक ज्ञानके प्रति इन्द्रियसन्निकर्ष मात्र  
 कारण होने पर सर्वत्वादिका और सविकल्पक निर्वि-  
 कल्पक ज्ञानमें भी लक्ष्मणसे कार्य कारणभाव स्वीकार  
 करना होगा। प्रपदय्य अथवाचसाय ही प्रकृत्यादि कि  
 रज्जुमें चक्षुससन्निकर्ष होनेसे रज्जु रज्जुत्वका निर्वि-  
 कल्पक ज्ञान जो करे रज्जुमें रज्जुत्वसन्निकर्ष सविकल्पक  
 ज्ञान ही हमेशा ही संकती है। प्रपदय्य रज्जुमें सर्वत्वंभ्रम  
 कटावि नहीं हो संकती। क्योंकि रज्जु रज्जुत्वमें चक्षु-  
 सन्निकर्ष है, इस कारण रज्जुत्व विग्रिष्टबुद्धिके कारण  
 रज्जुत्वरूप विरोधण ज्ञान अथवाचसाय ही और सर्वत्वमें चक्षु-  
 सन्निकर्ष नहीं है, इस कारण यह सर्व इत्याकारे सर्वत्व-  
 विग्रिष्ट बुद्धिके कारण सर्व रूप विरोधण ज्ञान नहीं  
 है। प्रपदय्य निरोधण प्रपदय्य ही संकती ही करे दूरत्व दोष-  
 निर्विरोधण सर्वत्वका रज्जुमें भ्रम होता है। ऐसा कहने-  
 से भी वेगिहोती है कि सर्वत्वभ्रम अनुमित्यादि न  
 या प्रत्यक्षात्क है जिनमें व्यंगिप्रमाण और प्रतिदेय्यनाय  
 जय स्मरण-महत्त-माहयज्ञज्ञानादि नहीं है। इस कारण  
 वह सर्वत्वभ्रम अनुमित्यात्क नहीं हो सकता। और  
 सर्वत्वमें सन्निकर्षका नहीं रज्जुना प्रकृत्यादि सर्वत्व भी  
 प्रत्यक्ष नहीं हो संकती। प्रपदय्य अथवाचसाय द्वारा  
 रज्जुमें रज्जुत्व प्रत्यक्ष नहीं होगा जो नहीं है। इसका  
 उत्तर हम प्रकार है - प्रपदय्य दो प्रकारका है, भौतिक  
 प्रपदय्य और सन्निकर्ष प्रपदय्य। इनमें सन्निकर्ष प्रपदय्य  
 में इन्द्रियसन्निकर्ष कारण नहीं है। प्रपदय्य अथवाचसाय  
 चाहिये कि रज्जुमें जो सर्वत्वभ्रम हुआ करता है, वह



लौकिक प्रत्याय नहीं है। अलौकिक प्रत्याय सर्वस्व-  
भ्रममें सर्व इन्द्रियमग्निकर्म नहीं रहने पर भी ज्ञान  
की गहता है।

दूतत्व शेष-निवृत्त्य रज्जु और रज्जुत्वमें सर्वस्व-  
मग्निकर्म नहीं हो सकता, इस कारण रज्जुमें रज्जुत्व-  
का प्रत्याय नहीं होता। यहाँ एक और पायदा हो  
सकती है कि इन्द्रियमग्निकर्म यदि लौकिक प्रत्यायमें  
आव्यक्त हो, तो रज्जुमें इन्द्रियमग्निकर्म के बिना रज्जुत्व-  
में सर्वस्वभ्रम नहीं होता। इसका उत्तर यह है कि  
ज्ञानका विषय दो प्रकारका है, विद्येया और विद्येयक।  
इसमें इत्याहारक रज्जुमें सर्वस्वभ्रममें रज्जु विद्येया  
के और सर्वस्व विद्येयक। इसमें रज्जु ज्ञान प्रत्याय लौकिक  
ज्ञान और सर्वस्व प्रत्याय अलौकिक ज्ञानका प्रत्याय  
लौकिक है, इस कारण रज्जु ज्ञानार्थमें चक्षुःमग्निकर्म  
पायदाक है, अतः रज्जुमें चक्षुःमग्निकर्म नहीं रहने  
पर भी रज्जुमें साहच सर्वस्व प्रत्याय नहीं होगा।

यह प्रत्याय ज्ञान छः प्रकारका है, प्रायज, रासन,  
स्पर्श, स्वाध, श्रावण और मानस। प्राय, रसना, चक्षु-  
ः, श्रवण, श्रोत्र और मन इन छः इन्द्रियों द्वारा यथाक्रम  
अभिहित छः प्रकारका प्रत्याय उत्पन्न होता है। मधु-  
रति इस और तद्गत मधुस्वादोति जातिका रासन, नील  
पानीदिदप यह स्वविशिष्ट द्रव्य, शोभत्वपीतल प्रकृति  
जाति तथा लस स्वविशिष्ट द्रव्यकी कृशा और योग्य-  
हति समवायादिका चक्षुः, उद्भूत शीत स्वविशिष्ट रस  
और ताह्य स्वविशिष्ट द्रव्यादिका स्वाध, शब्द और  
तद्गत सर्वस्व, ध्वनिवादि जातिका श्रावण और सुष-  
ुःवादि पाकप्रति गुणकी धामाका सुषुत्वादि जातिका  
मानसप्रत्याय होता है।

चक्षुःमान—साध्यपदार्थ देख कर साधक पदार्थका  
को ज्ञान होता है, उसे चक्षुःमिति कहते हैं। जिस पदार्थ के  
रसने जिस पदार्थका प्रायज नहीं रहता उसे चक्षुः  
साध्य और जिस पदार्थके नहीं रहनेसे को पदार्थ नहीं  
रहता उसे चक्षुः साधक कहते हैं। जैसे—इसमें भी  
बिना यहिसे धूम नहीं होता, इस कारण यहि धूमने  
साध्य है। यही कारण है कि पदार्थादि पर धूम देख  
कर अनुभव यहिसे चक्षुःमान किता करते हैं। यह चक्षु-

मान तीन प्रकारका है, पूर्ववत्, शेषवत् और सामान्यतो-  
हट।

पद्यको ले कर को ज्ञान होता है यह चक्षुःमान है।  
भावाकारने इसकी व्याख्या इस प्रकार की है—जिह्वा  
निष्क्रान्त प्रत्याय ज्ञानसे उत्पन्न ज्ञानकी चक्षुःमान कहते  
हैं। जैसे, हमने बराबर देखा है कि जहाँ धूँवाँ  
रहता है वहाँ धाग रहती है। इसीको शेषविक व्याप्ति-  
ज्ञान कहते हैं जो चक्षुःमानको पदमी सोझी है। हमने  
कहाँ धूँवाँ देखा को धागका जिह्वा या चिह्न है और  
हमारे मनमें यह ध्यान हुआ कि "जिस धूँवके साथ  
गदा हमने धाग देखी है वह वहाँ है।" इसीको पदा-  
मान ज्ञान या व्याप्तिविशिष्ट पद्यमानता कहते हैं। इससे  
बनकर हमें यह ज्ञान या चक्षुःमान हुआ कि 'यहाँ  
धाग है।'

जिस पदार्थकी चक्षुःमिति होगी उसे जिह्वा और जिस  
पदार्थ द्वारा चक्षुःमिति को ज्ञायगी उसे जिह्वा कहते हैं।  
जैसे, पर्वत पर लक्ष्मीकी चक्षुःमितिमें यहि जिह्वा, धूम  
जिह्वा और पर्वत पद्य है। पायसी गैराविकीने जिह्वाकी  
हेतुमाधनादि नामने और जिह्वाकी पायादि नामने  
उत्पन्न किया है। मोक्ष साक्षात्प्राप्तिने जिह्वाविशिष्ट  
पद्यकी साध्य प्रत्याय है। पद्य शब्दका साधारणतः  
अर्थ है—जिस पदार्थमें चक्षुःमिति की ज्ञायगी। किन्तु  
मोक्ष या साक्षात्प्राप्तिने पद्य शब्दका ऐसा अर्थ तो नहीं  
भी नहीं लगाया है, वरन् उद्योक्त्यादि लगाया है।

पूर्ववत्, शेषवत् और सामान्यतोहट इस त्रिविध  
चक्षुःमानके बाधक पूर्ववदादि शब्दका भिन्न भिन्न कोती-  
ने भिन्न भिन्न अर्थ लगाया है। किन्तु साक्षात्प्राप्तिने जैसा  
अर्थ लगाया है वही यहाँ पर दिया जाता है।

पूर्ववत् चक्षुःमान कारण देख कर पदार्थके चक्षु-  
मानको पूर्ववत् चक्षुःकारणनिष्क्रान्त कहते हैं। जैसे—  
शेषको लक्ष्मी देख कर लक्ष्मीका चक्षुःमान; चक्षुःमान शेष  
हुआ है, यहाँ पर शेषवत् कारण देख कर बहुत जल्द  
मति होगी, इसी लक्ष्मीके चक्षुःमानको पूर्ववत्  
चक्षुःमान कहते हैं।

शेषवत् चक्षुःमान—जहाँ देख कर कारणके चक्षुःमान-  
की शेषवत् चक्षुःकारणनिष्क्रान्त चक्षुःमान कहते हैं।

जैसे—नदीको पथ्यन्त वृद्धि देख कर वृष्टिका अनुमान ।

सामान्यतोष्ट अनुमान—कारण और कार्यभिन  
केवल वशाथ जो वस्तु है उसे देख कर जो अनुमिति  
होती है, उसे सामान्यतोष्ट अनुमान करते हैं ; जैसे—  
गगनमण्डलमें सम्पूर्ण शयधर देख शून्यपक्षके अनुमान-  
को हेतु करके गुणका अनुमान और पृथिवीय जाति ही  
हेतु करके द्रव्यत्व जातिका अनुमान । वास्त्यायनने सामान्यतोष्ट अनुमानका कोई लक्षण नहीं बतलाया। लेकिन उदाहरण इस प्रकार दिया है—सूर्यका गमनानुमान यह सामान्यतोष्ट अनुमान है । उद्योतकर और विश्वनाथ प्रभृतिने कार्यकारण भिन्न लिङ्गक अनुमानको सामान्यतोष्ट अनुमान कहा है । यमो यह देखना चाहिये कि सूर्यका गमनानुमान यहां पर लक्षणके अनुसार उदाहरण हो सकता है वा नहीं ? इसमें पड़ने देखना होगा कि उस गमनानुमानमें लिङ्ग क्या क्या है ? यदि संयोग ही लिङ्ग ही, तो वह संयोग गतिके कार्यके ही सा श्रेयवत् अनुमानके पद्यगंत हो जाता है, सुतरां कार्यकारणभिन लिङ्गक नहीं हो सकता । देगान्तराग्नि और देशास्तर संयोगमें भिन नहीं है, यतएव देगान्तराग्निज्ञानको विषयत्वटिका हेतु करना होगा । यहां पर देगान्तराग्निके गतिकार्य होने पर भी देगान्तराग्निज्ञान विषयत्व गतिकार्य नहीं है, इसमें तादृश लिङ्गक अनुमान श्रेयवत् अनुमानके पद्यगंत नहीं हो सकता । सुतरां सूर्यका गमनानुमान सामान्यतोष्ट अनुमानका उदाहरण ही सकता है, ऐसा बहुतेरे कहा करते हैं ।

वास्त्यायनका द्वितीय कल्प—जिन अनुमानका लिङ्ग-  
लिङ्गो सम्बन्ध पक्षने देखा गया है उसे पूर्व वत् कहते हैं ;  
जैसे—पूरुलिङ्गक वरिष्ठ-अनुमान प्रमथ्यमान ( जिसके प्रसक्ति है ) इतर धर्मके निराकृत होने पर चरवगिट धर्मानुमान श्रेयवत् है । यथा शब्दमें गुणत्वानुमान और वत् • पदार्थ होनेके कारण उसमें द्रव्यत्व, गुणत्व और कामत्वस्वरूप धर्मत्वकी प्रगति है । यमो शब्द एक द्रव्य समवेत होनेके कारण द्रव्य नहीं है, शब्द सजा-

तीय जनक होनेके कारण काम नहीं है । सुतरां द्रव्यत्व कामत्वके निराकृत होने पर शब्दमें चरवगिट गुणत्वका अनुमान होता है । लिङ्ग प्रकृत लिङ्गोका सम्बन्ध पथ्यत्व ही कर किसी धर्म द्वारा लिङ्गोकी ममानता ( एक रूपता ) निवन्धन चरवगिट लिङ्गोका अनुमान सामान्यतोष्ट है । यथा, इच्छादि द्वारा प्राणाका अनुमान । प्रयोग यथा—  
इच्छादि गुण गुणपदार्थ द्रव्यवृत्ति, यतएव इच्छादि और द्रव्यवृत्ति । यमो यह देखना चाहिये कि इच्छादिका आधार भास्वरूप द्रव्य है और इच्छादिका सम्बन्ध भी प्रतय नहीं है । इच्छादिमें गुणत्ववत् धर्म द्वारा द्रव्यवृत्ति प्रय गुणके माथ ममानतानिवन्धन इच्छादिके द्रव्यवृत्तिवत् सिद्धि द्वारा सामान्यतः द्रव्यत्वस्वरूपमें प्राणाको ही सिद्धि हुई है ।

उद्ययनाचार्य, गङ्गेश, विश्वनाथ प्रभृतिने पूर्व उदादि-  
शब्दमें यथाक्रम केवलान्वया केवलव्यतिरेका और चरवग-  
व्यतिरेकी ये तीन प्रकारके अनुमान बतलाये हैं । उनके उस केवलान्वयो प्रभृतिमें लक्ष्य और लक्षणेने मतमिदसे नानाव्य धारण किया है ।

उद्ययनके मतमें—केवलमात्र चरवग-सहधार ज्ञान  
द्वारा जहां पर हेतुभाव्यको व्याप्तिका निर्णय होता है,  
वहांका हेतु केवलान्वयो ; केवलव्यतिरेक-सहधार द्वारा  
जहां हेतु भाव्यको व्याप्तिका निर्णय होता है, वहां हेतु  
केवलव्यतिरेकी और जहां उभय सहधार द्वारा व्याप्ति-  
का निर्णय होता है, वही हेतु चरवगव्यतिरेकी है ।

गङ्गेशके मतमें—जहां केवल चरवग व्याप्ति ज्ञान द्वारा  
अनुमिति होती है, वहां जो चरवगव्याप्तिज्ञान है, वही  
केवलान्वयो है । केवलव्यतिरेक व्याप्तिज्ञान द्वारा अनु-  
मिति होनेसे वह व्याप्तिज्ञान केवलव्यतिरेकी, उभयविध  
व्याप्ति द्वारा व्याप्तिज्ञान चरवगव्यतिरेकी है ।

उद्योतकर प्रभृतिने यह पूर्व उदादि भिन केवलान्वयो, केवलव्यतिरेकी और चरवगव्यतिरेकी अनुमान स्वीकार किया है । विन्दारके मतमें तथा यह नथय-  
है समवाय सम्बन्ध । उच समन्वयेने अवयवने अवयवी, इवमे  
गुण और कर्म, इव, गुण और कर्मने उगान्य वा जाति एव  
परमात्मे विशेष रहता है । अवयवि इव एव इवमे नहीं  
रहता ; इवदिमे रहता है, अन्य इव समवेत नहीं होता ।

\* शयधरके मतसे द्रव्य, गुण और कर्म वत् है ।

† शब्द बाह्यस्वरूप एवमात्र इवमे समवेत है । शब्दका मने

श्यामकार विषय शीतले कारण तम पर विमोय प्राचीनमा  
नहीं को कहें।

पशुपत शीतले के भेदमें गीतमके मममें भी  
पशुमान शी, विमोय के उभे गीतमोके हेतु प्रकृति मलय  
दिग्, कार ममी, इत्येवम्, का; मकते है।

हयमान—किमो किमो मन्दि किमो किमो, पशुमि  
महिर्दिच्छे दको, उपमिति कहते हैं। यथा; शिम मनुष्यने  
पशु मवयजन्तु मनें शिवा, किन्तु श्वा है कि शीमहय  
मवय होता है, पशुमि शिम मनुष्यो, पाकति प्रमि-  
कन्तु गीको पाकतिमो शीतो है, मवय मन्दिमें पशुको  
बोध होता है। तब मनुष्य उस समय पशु इतना को  
ज्ञानता है, कि शीको मवय शीमहय कोमो, मवय  
मन्दिमें शीको बोध होता है। मवय मन्दिमें मवयजन्तु  
मममहा श्वाहा है, शी मक शीके शानता है। किन्तु जब  
जब मनुष्य पशुने पशुमि मवय जन्तु शिवता है, तब  
कम मवयपी पाकति गीको प्राकतिमें ममान देख कर  
तथा पूर्व पशुमोमहय, मवय शीता है। इस प्रावयका  
इमारण कर यह विचार करता है कि, यदि शीमहय  
जन्तुमें मवय मन्दिका बोध ही, तो जब मक जन्तु-गीमहय  
होता है, तब यही जन्तु मवयपदना प्रशोमा- इममें  
मन्दि के नहीं। इस प्रकार मवयमन्दिके महिपदिच्छेदको  
उपमिति कहते हैं।

गीतममन्दिमें ममजा सुषय तम प्रकार है—ममिह-  
माधम, दामा, माधनिषुषा, काम उपमिति है। तब  
कहते, उपमान है। श्यामपदमें पशुको श्यामपद, खरा  
है, कि, यतिहेमनाशयप्रयोष्य स्मृति द्वारा प्रमिय मनुके  
साहयप्रान्ते मन्तिययमुविमयक म'स'मान' बोध-  
का नाम उपमिति है।

एक मनुष्य, पशु, मनुके मम'हयमशी प्रतिहेम  
वाक्य कहते हैं। शीके शीमा मवय, यही मवयका  
प्रतिहेम भाव है।

मन्दिममिति या मन्दिममव—मन्दि, दारा को बोध  
होता है, ममें मन्दिमव कहते हैं। शीमें, मन्दि, मव;  
हेतु काउय सुन कर शीको उपदिष्ट पशुका मन्दि बोध  
होता है। गीतममन्दिमें इतना मवय तब प्रकार है—  
पाकतिमवका नाम, मन्दि है। ईहम, मन्दि-इम बोध मन्दि-

मन्दिमव है। यह मन्दिमव तब प्रकारका है, इत्याय'क  
पौर पदनाय'क।

मन्दिमव है। यह मन्दिमव तब प्रकारका है, इत्याय'क  
पौर पदनाय'क।

शिम मन्दिका पशु मलयविह है मनें इत्याय'क पौर  
जिमका पशु पदनाय'क है। उभे पदनाय'क कहते हैं।  
इमका उदाहरण तम प्रकार है—तम, गोरमुप' शी,  
मैरा, शिताय, पशुमनु मन्दि है। इत्यादि शिवाय'क काउय  
पौर 'याय' करमेंमें मम' की, पाकति शीतो है, 'विशु' शी  
पूजा करमेंमें विशुको मोति होती है। इत्यादि, विधिमाय  
है। गीतमने पेशा ममान' हेतु, प्रमिय मदाय'का  
निर्देश किया है।

ममिहयदाय—पाकति, मगीर, इन्द्रिय, पशु, बुद्धि, मम,  
मन्दि, शी, शिमाय, कन्तु, दामा पौर पशुमव' हेतुमें  
वारत प्रकारका है। मनुष्यप्राकतिमें शिप' पशु, पाकति  
पदाय' यथाय' प्राणशोय' शीते' कारण मम' है। ममान'  
दारा ही यह मम'य मदाय', शिवा ज्ञाना होता है। इमो-  
म, पशुमें ममान'का विषय शिवा ज्ञाना है।

पशुमन्दिमें यथाय' ज्ञान विषयपद प्रमिय मवयका  
निमित्त पदाय' ही मन्दि को मकता है। यथा' कारण  
है, कि जन्तुका मम'न' म' यथाय'कनि निमित्त पदाय'को ही  
मम'य मकता है। इस वारत प्रकार मम'य'के यथा-  
विध मन्दि मम'मो निमित्त ज्ञान है।

पाकति—इच्छा, हेतु, मवय, सुख, शान' ये मम'  
पाकति (शोभाका) के निमित्त यथाय' पशुमाय'क सुख है।  
श्रीके कीर्ति मन्दिमवका पशु मलय' पेशा भी कहते  
हैं—विमोय' मन्दि है यथाय'क है, जो शीतमम'य' है, य'  
पाकतिमम'य' है। पाकति मम' इन्द्रिय' पौर मम'-  
रादिको पधिताता है। पाकति मनें इममें किमो  
इन्द्रिय द्वारा कीर्ति काय' मन्दि मनें शी' मकता है।

जिन प्रकार मम'म' द्वारा 'माय'क' मम'मान'  
करता होता है, उमो प्रकार' मन्दिमव'के शीतेदि  
दिग् कर पाकति मी पशुमिति को मकती है। 'कीर्ति'  
यदि यह मन्दि मम'रादिके मनें, तो मन्तुप्राकति' मनें  
श्री मी शीतम'को उपमिति होती, इममें मन्दि मी मन्दि'  
मनें पौर मम' मम' मनें शी' ज्ञाना है, मनें पाकति'  
विशु' ही ज्ञाना है, तब पाकति मी मनें पौर इन्द्रियमें  
मिथ है, यह मन्दिमवमें ज्ञाना जाता है। यह पाकति मी  
पका'को है—शोभाका पौर पाकति।

मनुष्यत्वकीटा-पतत्र संभ्रंति जीवात्मायदवर्षयि है, पिर-  
 भासाप्रसूतिपरिभरर है । कुसुमाञ्जलि की प्रदीपना की  
 प्रगर्भं प्रोभासाकोविपयं धरु विचारि रिक्या 'सिधार्गो'  
 शरीर-जीवोष्टो, इन्द्रिय-धोर सुख-दुःखके भीतिका  
 भावतत है। उभे शरीरके कहते हैं ।  
 इन्द्रिय-भौतिक इन्द्रियोंव प्रतासकी है प्रमाण,  
 रचना, स्वतन्त्रत्व, मोक्ष शीय । भूत भी पंच प्रकाशका  
 है-निमित्त, जल, अन्न, महत् और धर्म ।  
 इन्द्रिय-भौतिक इन्द्रियोंव प्रतासकी है प्रमाण,  
 रचना, स्वतन्त्रत्व, मोक्ष शीय । भूत भी पंच प्रकाशका  
 है-निमित्त, जल, अन्न, महत् और धर्म ।  
 इन्द्रिय-भौतिक इन्द्रियोंव प्रतासकी है प्रमाण,  
 रचना, स्वतन्त्रत्व, मोक्ष शीय । भूत भी पंच प्रकाशका  
 है-निमित्त, जल, अन्न, महत् और धर्म ।

नहीं है, एक रूपमा भी कारण है, जिसके रहनेमें जान  
 होता है औरानही रहनेमें जान नहीं होता । यह कारण  
 औरा कुका भी नहीं है, भासयोग है । किन्तु यह  
 प्रत्यक्ष नहीं है । इन कारणोंमें जानने केका है कि एक  
 समय जानइयका नहीं होना । भनका प्रमाणका है ।  
 प्रकृति (यत्र) तीन प्रकारकी है, मनःपायित-दया  
 श्रीःपृथुवादि । वाश्यायित मधुःश्रीःपृथुवादि तथा  
 ग्रीरायित परोपकार-श्रीःपृथुवादि । फिर इन सब यद्यो-  
 की भी दो-मैद, वनलाये, गये हैं, पायःश्रीःपृथुवादि ।  
 दोय-जो मनुष्यकी प्रकृति करावे वनादोयपदवाच्य  
 है । यह दोय जोन प्रकारका है-राग-द्वेष और-मोह ।  
 राग-द्वेष और-मोहके-वर्गमें-पा-करामनुष्य कार्यमें-गहस  
 होते हैं-पत्ययाजनीं होते हैं-राग-द्वेष और-मोह-इन  
 तीनोंमें-मोह-प्रधिक-निन्दनीय है । यद्योकि-मोह-गहीं  
 रहनेमें राग और-द्वेष नहीं होते ।  
 राग-क्रोध-मद-रुद्धा-द्वेष-लोभ-माया और  
 दशादिके-मैद-राग-दवाय-नाना प्रकारका है । वस्तु  
 विषयके-प्रभिनवाय-को-काम-पौर-पाना-प्रयोजन-गहीं-रहने  
 पर भी दूसरेके-प्रभिमत्-विषयको-निवारण-कृष्णकी-मत्तर  
 कहते हैं । प्रगुणकी-निवारण-कृष्ण-भी-मत्तर-कहनातो  
 है । जिसमें-किसी-विषयकी-चानि-न-हो-ऐसी-विषय-  
 मामिकी-दृष्टाकी-दृष्टा, सन्धित-वस्तुका-क्षय-न-हो-ऐसी  
 दृष्टाकी-दृष्टा-वित्त-वैय-म-कर-धन-रक्षण-कृष्णकी  
 कार्य-जिसमें-पा-को-म-ऐसी-विषय-दामोच्छाकी  
 लोभ, परवचने-कृष्णकी-माया-पो-द्वेष-पू-का-पने  
 धर्म-कृष्णदिकी-प्रकाशित-शर-स्वकीय-उच्छ्र-व्यवसा-  
 पनीच्छाकी-दृष्ट-कहते हैं ।  
 क्रोध-द्वेष-प्रमथा-धर्म-श्री-प्रभिमामादिके-मैद-  
 में-द्वेष-भी-नाना-प्रकारका-है-निवारण-कृष्णकी-मत्तर-  
 द्वेषकी-क्रोध-माशरण-धनादिमें-निजाम-गोही-एक-धर्मो-  
 द्वेष-मत्तर-धर्मोका-श्री-प्रभिमामादिके-मैद-  
 द्वेषमें-गुण-परो-विद्व-करनेका-नाम-पृथु-है ।  
 पायि-विनायकत्व-द्वेषकी-दुःख-दुःख-पकारोकि  
 प्रभिमत्-प्रकार-म-व्यक्तिके-द्वेषकी-धर्म-वीर-ज-द्वेष  
 पकारोका-पकार-न-कर-मन्ने-पर-हया-धर्मो-  
 माननाकी-प्रभिमाम-कहते-है ।

रिपयैव, संशय, लज्जा, मान, पनाट, भय चौर  
 लोकादिषु सिद्धे लोके लोकात् प्रकृत्या है। अथवायं  
 निचयको विचयैव, लो लो गुण द्वायार्थं चरता नरीं है  
 ये मय गुण पात्रिः पात्रेय चर अपनेरो अष्टुट समाप्तने-  
 को मान, परिपरमिताको पनाट, अतिअनन्य दिने  
 गवापारं सपयित कोने पर लयनीकारं अपनेको  
 चममयं समाप्तनेको मय चौर इत्यनुपे विवोग होने पर  
 पुनर्वाचनकी चममिको सभायताको मोक कहते है।

प्रेलभाव - पुनर्भ्रम, बारम्बार सत्यतिको चर्चात एक  
 बार सत्य चौर एक बार असत्यतय तथा क्रिमे सत्य  
 चौर असत्यतयतय चार्थतिको प्रेलाभाव कहते है।  
 पात्याको निरपय सिद्धि दाहा पुनर्भ्रम निच होना है।

फल - दोष-महजन प्रवृत्ति-जनित लो सुख या दुःख-  
 का भोग है, यह फल है। फलके प्रति दोषमहजन प्रवृत्ति  
 ही कारण है।

दुःख - लो मनुष्यका दृश्य वा प्रतिबुद्धवेदनीय है  
 लमे दुःख कहते है। यह दुःख मुख्य चौर मोक्षके सिद्ध-  
 मे ही प्रकाशका है। लो दुःखान्तरको चवेला न कर  
 प्रतिबुद्धवेदनीय है लमे मुख्य चौर लो दुःखान्तरको  
 चवेला कर प्रतिबुद्धवेदनीय है लमे लोच दुःख कहते  
 है। गीतमने कहा है कि जगदके माय हमेंमा दुःख  
 चनुमद रहता है, हमीमे प्रकाश होना दुःख है।

चपनम - दुःखकी चम्यता निवृत्ति ही चपनम है।  
 चयता मद्धा चय है निचके बाद चौर दुःख नहीं  
 होना। मोक्षके मन्त्रार्थमें चनेके मतपेट है। पात्याचमने  
 कहा है, कि दुःख मद्धा चय है दुःखद्वय जगदका -  
 चयता मद्धा तात्पर्य है अतीत जगदका त्याग चौर  
 भविष्यमें जगद चय नहीं करना। गहर निच प्रवृत्ति का  
 कहना है कि दुःखका अनुप्राद हो दुःखनिवृत्त है।  
 विरताय प्रवृत्ति कहते है कि दुःखविमोक्ष मद्धा  
 चय है दुःखनाम चौर जगदनिवृत्त। यह चयचर्चा-  
 जन नहीं हो सकता, हम कारण मुक्तिके अन्तःपरीक्षकत्व  
 की वृत्तार्थ लमे पहल दुःखनिवृत्तिको मुक्ति कहते  
 है चौर जगद दुःख मद्धा भी चयतयुःसुवार्थके कोना  
 नहीं है। लो कुट हो, लोमनेके चमिचयके माय  
 चरण विचयमें किमीका भी विरोध नहीं है। किन्तु

सुखमिचयानमें चय नहीं देखनेके लोमका चमय रहता  
 है, हम कारण चपनम लो मकता है। लोमनेके लमे  
 सुखमें चमय मद्धा अनुप्रादवर है, मायवर नहीं है।  
 वरीक चयःदुर्गम लोमनामने प्रति कारण नहीं लो  
 मद्धा, किन्तु चय नहीं रहनेके लोय मद्धा नहीं  
 होना, चय अनुप्रादके प्रति प्रवोक्त लो मकता है।  
 चमी देखना चयिचये कि सुखमिचयान लोय अनुप्राद-  
 को दृष्टान्त दिया गया है। हम कारण मुक्तिवोक्त  
 दोषद्वय लोमनाम चौर लोमनुप्राद ही चयच चरता  
 होना तथा दोषःमद्धा दुःखनामका कारण नहीं होने।  
 दोषका अनुप्राद प्रवोच्य चौर दुःखकी अनुप्रादद्वय मुक्ति  
 गीतमने चमिचय है, यह ममता ज्ञाना है। यही  
 दाटम प्रकार प्रमेय है।

प्रमाय चौर प्रमेयका विषय कहा गया, चमी संशय-  
 का विषय कहा जाता है।

संशय - साधारण धर्मज्ञान, प्रमाधारण धर्मज्ञान  
 चौर निप्रतिपत्ति चयचयार्थ ज्ञान तथा सत्यमिचको चय-  
 मद्धा लो संशयके प्रति कारण है। चयवृत्तिको चय-  
 मद्धाको लो कीर्ति कीर्ति अत्यन्त कारण चयनाम है। किन्तु  
 यह चयमद्धाचयदि किमीका लो सत्यमिच नहीं है।

टीनिके समान या एक धर्मको साधारण धर्म कहते  
 है, लोमे म्यान् चौर पुण्यका अर्थत्व समान है, सुभरी  
 यह साधारण धर्म है। लो चय समानज्ञानोय, चय।  
 चयमानज्ञानोय किमीका भा धर्म नहीं है, चय।  
 धर्म चयसाधारण धर्म कहलाता है। अमलेन्द्रियवाक्-  
 मता मद्धा चयसाधारण धर्म है, मद्धके सनातोय  
 चयगुण या मद्धके चयज्ञानोय द्रव्यधर्ममें कहें लो  
 चयवेन्द्रियवाक् मता नहीं है। यह चयसाधारण  
 धर्म ज्ञानाधीन मद्धमें गुणचार्थ - संशय चय चरता  
 है। चयवेन्द्रियद नाचद्वयका विप्रतिपत्तिवाच्य कहते  
 है। किमिच कहा पात्या है। किमिच कहा पात्या  
 नहीं है, हम प्रकाश 'वाच्य है या नहीं' यह विद-  
 हार्थ ज्ञानहेतु हम प्रकार संशय चय चरता है।  
 चयवृत्तिको चयचयमद्धा मद्धको चयवेन्द्रियवाक् लो  
 रहता वा चयमान संशय, सभावार्थमें जगदज्ञान मद्ध  
 होना है। किन्तु चय प्रवोच्य लोय चयच मद्धज्ञानका

भ्रम होनेसे, वोही जिसे समय निकट जाते हैं, उस समय जलाभाव ज्ञान हो कर जलज्ञान का मियाल बीच होता है। संयुक्तस्थि शब्द का अर्थ है ज्ञान वा विपरीत ज्ञानकी स्थिरता का नहीं रहना वा अभाष्य-संशय। यथा—सून विरोधमें पहिले जलका ज्ञान नहीं हुआ, परं जलका अभाव ही शेष हुआ। किन्तु वोही जब जल देखी गया, तब जलाभावज्ञानमें मियाल बीच हुआ, इस कारण अनात्र जलाभावज्ञानमें अभाष्य संशय ही करे जल है वा नहीं; इस प्रकार संशय हुआ करता है। अर्थसंज्ञा शब्द का दूसरा अर्थ भी हो सकता है। विज्ञानार्थ प्रभृतिने अभाष्य संशयका ऐसा अर्थ किया है।

प्रयोजन—जो वस्तु इच्छावशतः मनुष्यमें प्रवृत्त होती है उसका नाम प्रयोजन है। जैसे सुख, दुःखनिवृत्ति प्रभृति। सुखादिके इच्छावश ही मनुष्य प्रवृत्त होते हैं। गौतमने प्रयोजन का कोड़े विभाग नहीं किया। गदाधरने सुक्तिवादमें गौण और मुख्यके भेदसे दो प्रकार का प्रयोजन माना है।

अभिलषणीय विषयके सम्पादकके जैसा जो विषय अभिलषणीय होता है उसे गौण और तदतिरिक्त केवल अभिलषणीय विषयको मुख्य प्रयोजन कहते हैं। जो जीवका स्वभावतः इष्ट है, वही मुख्य प्रयोजन है, यथा—सुख और सुखभोग तथा दुःखनिवृत्ति। किन्तु जो स्वभावतः इष्ट नहीं है, सुखादिका जनक ही कर इष्ट होता है, वही गौण प्रयोजन है, यथा—भोजनादि। स्वभावतः भोजनादिकी इच्छा नहीं होती। भोजन सुखजनक वा सुधादिजनित दुःखनिवृत्तिजनक होनेके कारण भोजनको इच्छा हुआ करते हैं।

दृष्टान्त—प्रकृत विषयको दृष्टीकरणार्थ जिसे प्रतिष्ठ स्थलका उपन्यास किया जाता है, उसे स्थलको दृष्टान्त कहते हैं, अर्थात् लोकक तथा शास्त्रय दोनो जिस विषयका स्वीकार करते हैं, उही का नाम दृष्टान्त है। यथा—इस संशय पर अग्नि है क्योंकि धूप धूम देखा जाता है, जहाँ जहाँ धूम रहता है वहाँ अग्नि रहती है। जैसे, रत्नरंगाना, यहाँ पर रत्नरंगाना यही दृष्टान्त पद वाच्य है।

सिद्धान्त—अनिश्चिन विषयका शास्त्रानुसार निर्णय करनेको सिद्धान्त कहते हैं। यथा,—सुक्ति किस प्रकार होती है? इस तरह जिज्ञासा करने पर "तत्त्वज्ञान होनेसे सुक्ति होती है" ऐसा निश्चित हुआ। यह सिद्धान्त चार प्रकारका है—सर्वतन्त्र, प्रतितन्त्र, अधिकरण और अभ्युपगम। जो विषय सभी शास्त्रोंमें खोजत हुआ है इस प्रकार विषय स्वीकारका नाम सर्वतन्त्रसिद्धान्त है। जैसे, परधनापहरण, परस्त्रीसंभोग आदि दोष सर्वतोभावमें अकर्मत्व है, फिर दोनके प्रति दया प्रभृति सत्कर्म सभी शास्त्रोंके अभिमत हैं, इनको सर्वतन्त्रसिद्धान्त कहते हैं। जो विषय शास्त्रान्तरअभिमत नहीं है, ऐसे विषयके स्वीकारको प्रतितन्त्रसिद्धान्त कहते हैं, अर्थात् जो एक शास्त्रसिद्ध है किन्तु अन्य शास्त्रविरुद्ध, वही प्रतितन्त्रसिद्धान्त है। यथा, इन्द्रियका भौतिकत्व सांख्यशास्त्र विरुद्ध है, लेकिन न्यायशास्त्र संगत है; अतएव यह प्रतितन्त्रसिद्धान्त हुआ।

एक पदार्थके सिद्ध होने पर उसके आनुपष्टिक जिस पदार्थकी सिद्ध होगी वह अधिकरणसिद्धान्त है। यथा, इन्द्रियकी नानाल सिद्धि द्वारा इन्द्रियमें भिन्न आत्मरूप एकत्रताकी सिद्धि हुई है, यही अधिकरणसिद्धान्त है। जो विषय साक्षात्सुखमें नहीं कहा गया अथवा उसका धर्मकथन द्वारा प्रकारान्तमें स्वीकार किया गया है, उसे अभ्युपगमसिद्धान्त कहते हैं। यथा, गौतमने मनको साक्षात् इन्द्रिय नहीं वर्तताया है, अर्थात् मनको सुख साक्षात्कारादि करण स्वीकार कर प्रकारान्तरमें इन्द्रिय कहा है।

अवयव—विचाराङ्ग वाच्यविशेष ही अवयव कहते हैं। अवयवके पांच भेद हैं,—प्रतिष्ठा, हेतु, उदाहरण, उपपत्ति और निगमन। इस पञ्चावयवी न्याय कहते हैं।

प्रतिष्ठा—जिस विषयका व्यवस्थापन करना होगी, उसे उपन्यासकी प्रतिष्ठा कहते हैं। यथा—पर्वत पर वृद्धिके साधनार्थ पर्वतों वस्त्रमान् अर्थात् पर्वत पर अग्नि है इत्यादि वाक्य।

हेतु—जिस हेतु पर्वत पर वृद्धि है, इस जिज्ञासाके निगमांश तदनुमापक हेतुका औपन्यास है, उसे

हेतु कहते हैं; पर्याप्त मात्रा में माधुम कहनेके विवे  
 प्रसूत्र निद्रावाकाश नाम हेतु है। अंगे—उस जगह  
 'धूम्रात्' पर्याप्त धूमहेतु हम या शकः उपनाम है।  
 यह हेतु दो प्रकारका है—पशुयो चौर व्यतिरेकी।  
 पशुत पर धूम रहनेसे बहिरां रहतो है। हम  
 चाण्डालके निपाचार्य जिनजिन स्थान पर धूम रहता  
 है वही वही स्थान पर बहिरां रहतो है। यथा—  
 रथमगाना इत्यादि बाका प्रयोगनको व्यतिरेकी उदा-  
 हार्य कहते हैं।

१। प्रतिष्ठा। पशुत पर बहिरां है वा पशुत  
 बहिरां है।

२। हेतु। धूम होनेके कारण।

३। उदाहरण। जहाँ जहाँ धूम है, वहाँ वहाँ  
 बहिरां है। अंगे वाक्यानादि।

यह उदाहरण बाका द्वारा बहिरांनिमित्त पशुतदप  
 साध्यके साथ वाक्यानादिद्वय दृष्टान्ताका धूमवत्वादि-  
 कथं माधुम्यं वा एक कथमाय होनेसे यहाँ पर पशुयो-  
 हेतु हुआ है।

व्यतिरेकी हेतु—जिसे पूर्वार्थ मन्त्रानिराकरपाप  
 जहाँ बहिरां रहतो, वहाँ धूम भी नहीं रहता।  
 यथा—पुष्करिणी इत्यादि वाक्यप्रयोगकी व्यतिरेक  
 उदाहरण कहते हैं। पर्याप्त जो माधुम्याकारके पशुतगत  
 उदाहरण बाका द्वारा साध्य है चौर दृष्टान्तका बोधार्थ  
 वा बहिरांरूपना बोध होता है, उस नारायणार्गत हेतु-  
 माधुम्यकी व्यतिरेकी हेतु कहते हैं।

१। प्रतिष्ठा। पशुत पर बहिरां है।

२। हेतु। धूम होनेके कारण।

३। उदाहरण। जहाँ धूम नहीं है, वहाँ बहिरां  
 नहीं है। यथा—उद, अन्तमप समुद्रि।

यह उदाहरण बाका द्वारा पशुतदप साथ (बहिरां  
 पशुत समुद्रि निद्रावयम) का कहनेके बोध होता है,  
 अतएव वहाँ पर व्यतिरेकी हेतु हुआ है।

जिन दृष्टान्तका पशुतदपमाधुम्यं निवृत्त्यन उपलव  
 व्यतिरेककला में माहोत्त कहते हैं। हम पर तथा कोम  
 कहते हैं कि माहोत्तके उपलव्य उदाहरण बाका द्वारा  
 हेतु चौर साध्य (निद्रा) का पशुतदपवाक्य का अर्थ

वाक्य बोध होती है, वही नारायणगत हेतुवाक्य  
 पशुयो हेतु है। (दो वस्तुओंके एकसाथ रहनेकी पशुत-  
 सहधार, पशुतदपके एकसाथमानकी व्यतिरेक सहधार  
 चौर उभरके हम सहधारदपके निगमना पर्याप्तिकारी  
 होनेसे उभे कथमा पशुत चौर व्यतिरेकवाक्य कहते हैं।)

पूर्वार्थ जिनजिन स्थान पर धूम है वहाँ वहाँ बहिरां है,  
 हम उदाहरण बाक्ये धूमद्वय हेतु चौर बहिरांरूप वाक्य-  
 के पशुतदपवाक्य वा धूममें बहिरांकी पशुतदपवाक्य  
 बोध हुआ, यथा तत्रत्य हेतुवाक्य पशुयोहेतु हुआ।  
 जिन बाका द्वारा हेतुमाध्यके व्यतिरेकसहधार का  
 व्यतिरेक वाक्यिका बोध होता है, वह नारायणार्गत  
 हेतुवाक्य व्यतिरेकी हेतु है।

उपलव—उपलव्य हेतुबोधक वाक्यका नाम उपलव्य  
 है। व्यतिरेकी उपलव्यकी जगह भी हेतुके पशुतदपका  
 पशुतदप होनेसे प्रकारान्तरमें हेतुका बोध होता है। यह  
 उपलव्य भी दो प्रकारका है, पशुयो चौर व्यतिरेकी।  
 पशुयो यथा—

जहाँ जहाँ बहिरां है, वहाँ धूम है। अंगे—वाक्य-  
 मान्य। व्यतिरेकी यथा—जहाँ बहिरां नहीं है, वहाँ  
 धूम नहीं है। अंगे कदादि।

निगमन—हेतु कथन द्वारा प्रतिष्ठावाक्यके पुनः कथनकी  
 निगमन कहते हैं, पर्याप्त यथायथं प्रकृतमाध्यके उप-  
 लव्यकार साधकता नाम निगमन है। अंगे 'तदमात्त बहिरां-  
 मात्' पर्याप्त उप हेतु पशुत पर बहिरां है, इत्यादि साध्य।

निगमन—उपलव्य धूम है हमोसे पशुत पहिनाम् है।  
 अनेक लक्षणव्यापिक उपलव्य चौर निगमन वाक्यार्थ-  
 बोधमें भी वाक्यिकालका कोकार करते हैं चौर पशुत  
 पके मन्त्रमें बहिरांरूपवाक्य इत्यादि 'पशु' लक्षण है।  
 ये सब विषय चौर भी गुणान्तरित्यनपशुत लक्षणवाक्यमें  
 पशुतचित्त हुआ है।

यहाँ पर वस्तुओंकी पशुतदपकी पशुतकी है कि अन्त-  
 दार्शनिकत्व (बौद्धिकत्व) उदाहरण, उपलव्य चौर  
 निगमन से तोन प्रकाशके उपलव्य कोकार करते हैं चौर  
 है ही तोन उपलव्य उभरके मन्त्रमें व्याप्य है। ये तोनमहा  
 मन्त्र उदाहरण चौर चौर नहीं करते। तोनमन्त्र उदाहरण  
 की कोकार दिया है, हम मन्त्रमें विष्णुमन्त्रकार

प्रभृतिनि ऐसी युक्ति दो है। पहली देखना होगा कि न्यायका प्रयोग क्यों होता है? इस विषयमें सभी स्वीकार करेंगे कि किसी विषयमें मन्देह उपस्थित होने पर उसे दूर करनेके लिए तत्त्वप्रमाणोंन न्यायका प्रयोग हुआ करता है। अतएव यह देखना उचित है कि किस प्रकार अज्ञेय न्यायका प्रयोग होता है। यथा—पर्वत पर पत्तिका संशय होने पर वहाँ पत्तिका है या नहीं? ऐसा प्रश्न होता है।

इसके उत्तरमें यदि कहा जाय कि जहाँ धूम है वहाँ बर्फ है, तो प्रश्नकारीका इस वाक्य द्वारा संशय दूर नहीं होता, इस कारण अज्ञेयतामि तदोपकरण चर्चा-प्रमाणमत्त ही जाता है। अतएव इस प्रश्नके उत्तरमें पहली तुम्हें कहना होगा कि पर्वत पर बर्फ है। वीछि बर्फ है, इसका प्रमाण क्या? इसके उत्तरमें यह कहना पड़ेगा कि धूम होनेके कारण। वीछि धूम होनेके कारण बर्फ रहनेको, उसीका क्या प्रमाण है? तब कहना होगा कि जहाँ धूम है वहाँ बर्फ है। धूम रहनेसे बर्फ पचस्य रहतो है। यथा—पाकगान्ना। अतएव प्रश्नाधीन प्रतिष्ठादिक्रमसे ही वाक्य प्रयुक्त हुआ करता है, इस कारण नैय्यायिकोंने प्रतिष्ठादि पञ्च भवयवको ही न्याय माना है।

वाक्याशयन-भावसे मान्य होता है कि कोई कोई दम प्रकारका पचयव स्वीकार करते हैं। पूर्वोक्त प्रतिष्ठादि पांच प्रकार और जिज्ञासा, संशय, शक्यतामि, प्रयोजन तथा संशयव्युदास (संशय-निवृत्ति) यह दम प्रकार न्यायावयव है। गौतमने प्रतिष्ठादि पञ्चवाक्यको ही निर्णेतव्य पचके निर्णय विषयमें समर्थ वतला कर एक पञ्चवाक्यको ही न्यायावयव स्वीकार किया है। जिज्ञासा प्रभृति परम्पराक्रमसे निर्णेतव्य पचके निर्णय विषयमें उपयोगी होने पर भी स्वतः तादृश पच-निर्णयमें समर्थ नहीं होते। इस कारण जिज्ञासादि पचको न्यायावयव नहीं माना है।

कोई कोई उदाहरण और उपम्य इन्हीं दोको न्यायावयव मानते हैं, क्योंकि यही दो साधसिद्धिके उपयोगी हैं। त्वादिपचधर्मतादि निर्णय द्वारा निर्णेतव्य पचका निर्णय करता है। त्वादि रूप न्यायाव-

यवके म'ख्याविषयमें और भी चनेक मन हैं। गौतमने न्यायका पञ्चावयव स्वीकार किया है, इस कारण पञ्चावयवका विषय हो लिया गया, अस्यान्य मतका विषय प्राचीनचित नहीं हुआ।

तर्क—सापत्ति विषयको तर्क कहते हैं। यथा—पर्वत पर यदि बर्फ नहीं रहती, तो वहाँभिधुर्पा नहीं निकलता, क्योंकि धूम बहिय्याप्य है। गौतमने तर्कका कोई विभाग नहीं किया, किन्तु अस्यान्य नैयायिकोंने इसे ५ उपधियोंमें विभक्त किया है; आत्मावयव, अस्यान्यावयव, चक्रक, चनयस्या और प्रमाणसाधनार्थ-प्रसङ्ग।

निर्णय—असन्दिग्ध ज्ञान हो निर्णय है, अर्थात् निवेचना करके पच और प्रतिपच द्वारा जो पचार्थधारण होता है, उसे निर्णय कहते हैं।

वाद—परस्पर जिगीषु न हो कर केवल प्रकृत विषयके तत्त्व निर्णयार्थ वादो और प्रतिवादीके विचारको वाद कहते हैं, अर्थात् प्रमाण और तर्क द्वारा स्वयं साधन और परपक्षद्वयपूर्वक सिद्धान्त पविरोधो पञ्चावयवयुक्त वादो और प्रतिवादीको उक्ति तथा प्रयुक्ति कथनको वाद कहते हैं। यहाँ पागदा हो सकती है कि वादी और प्रतिवादी दोनोंका वाक्य किस प्रकार प्रमाणतर्कादिविगट हो सकता है? इसका उत्तर यही है कि लक्षणस्य प्रमाणादि गट्टका पच जो है, वही समझना होगा। यदि मनुष्य भ्रमवश प्रमाणाभाम, तर्काभास, सिद्धान्त और न्यायाभासका प्रयोग करे, तो विचारकी वादत्वहानि होती है।

वादविचारमें सभीको अधिकार नहीं है। जो प्रकृत विषयके तत्त्वनिर्णयच्छे, यथार्थवादी, वचकतादिदोप-शून्य, यथाकात्मने प्रकृतोपयोगी कथनमें समर्थ हैं, जो सिद्धान्तविषयका पंचपक्ष नशो करते तथा युक्तिविह-विषय स्वीकार करते हैं, वे ही यथार्थमें वादविचारके अधिकारी हैं।

किन्तु विजिगीषावशतः मनुष्य यदि प्रमाणादि कह कर प्रमाणाभावादिका प्रयोग करे, तो वह वाद नहीं होगा। तत्त्वनिर्णयके लिये वादप्रतिवाद ही वाद पञ्चपक्षका लक्ष्य है और निष्पत्त दृढ़ करनेके लिये है।





प्रभृतिने ऐसी युक्ति दो है। पहले देवना होगा कि न्यायका प्रयोग क्यों होता है? इस विषयमें समी खोकार करने कि किसी विषयमें मन्देह उपस्थित होने पर उसे दूर करने के लिए तत्त्वप्रामाण्य न्यायका प्रयोग हुआ करता है; अतएव यह देखना उचित है कि किस प्रकार अज्ञे न्यायका प्रयोग होता है। यथा—पर्वत पर अग्निका संग्रह होने पर वहाँ अग्नि है वा नहीं? ऐसा प्रश्न होता है।

इसके उत्तरमें यदि कहा जाय कि जहाँ धूम है वहाँ अग्नि है, तो प्रश्नकारीका इस वाक्य द्वारा संग्रह दूर नहीं होता, इस कारण अज्ञिज्ञासित दोषरूप अज्ञानतापन्न ही जाता है। अतएव इस प्रश्नके उत्तरमें पहले एम्हें कहना होगा कि पर्वत पर अग्नि है, वीछि अग्नि है, इसका प्रमाण क्या? इसके उत्तरमें यह कहना पड़ेगा कि धूम होनेके कारण। वीछि धूम होनेके कारण अग्नि रहेगी, उषीका क्या प्रमाण है? तब कहना होगा कि जहाँ धूम है वहाँ अग्नि है। धूम रहनेसे अग्नि अवश्य रहती है। यथा—पाकशाला। अतएव प्रामाण्य प्रतिष्ठादिप्रमाणसे ही वाक्य प्रयुक्त हुआ करता है, इस कारण नैयायिकोंने प्रतिष्ठादि पञ्च भवष्यको ही न्याय माना है।

वाक्यायन-भावसे मान्य होता है कि कोई कोई दृग् प्रकारका अवयव खोकार करते हैं। पूर्वात्त प्रतिष्ठादि पांच प्रकार और जिज्ञासा, संग्रह, शक्यमाप्ति, प्रयोजन तथा संग्रहयुक्तास (संग्रह-निवृत्ति) यह दृग् प्रकार न्यायावयव है। गौतमने प्रतिष्ठादि पञ्चवाक्यको ही निर्णेतव्य अर्थके निर्णय विषयमें समर्थ बतला कर सत्त पञ्चवाक्यको ही न्यायावयव खोकार किया है। जिज्ञासा प्रभृति परम्पराक्रमसे निर्णेतव्य अर्थके निर्णय विषयमें उपयोगी होने पर भी सत्तः तादृग् अर्थ-निर्णयमें समर्थ नहीं होती, इस कारण जिज्ञासादि पञ्चको न्यायावयव नहीं माना है।

कोई कोई उदाहरण और उपनय इन्हें टीका न्यायावयव मानते हैं, क्योंकि यही दो साध्यसिद्धिके उपयोगी हैं; व्यादिपञ्चमं तादि निर्णय द्वारा निर्णेतव्य अर्थका निर्णय करता है। इत्यादि रूप न्यायाव-

यवके मन्व्याविषयमें और भी अनेक मत हैं। गौतमने न्यायका पञ्चावयव खोकार किया है, इस कारण पञ्चावयवका विषय हो लिखा गया, अथवा न्याय मतका विषय आलोचित नहीं हुआ।

तर्क—पावत्ति विषयको तर्क कहते हैं। यथा—पर्वत पर यदि अग्नि नहीं रहती, तो अग्निसे धूम नहीं निकलता, क्योंकि धूम अग्निव्याप्य है। गौतमने तर्कका कोई विभाग नहीं किया, किन्तु अथवा न्याय न्यायि होने इन्हीं अर्थोंमें विभक्त किया है; आत्माश्रय, अथवा न्यायश्रय, चक्रक, अनवस्था और प्रमाणवाधिनाय-प्रसङ्ग।

निर्णय—असन्दिग्ध ज्ञान हो निर्णय है, अर्थात् विवेचना करके पक्ष और प्रतिपक्ष द्वारा जो अर्थसंधारण होता है, उसे निर्णय कहते हैं।

वाद—परस्पर जिगीषु न हो कर केवल प्रकृत विषयके तत्त्व निर्णयार्थवादे और प्रतिवादीके विचारको वाद कहते हैं, अर्थात् प्रमाण और तर्क द्वारा स्वपक्ष साधन और परपक्षदूषणपूर्वक सिद्धान्त अवरोधो पञ्चावयवयुक्त वादो और प्रतिवादीको उक्ति तथा प्रत्युक्ति कथनको वाद कहते हैं। यहाँ भागद्वारा ही मकतो है कि वादी और प्रतिवादी दोनोंका वाक्य किस प्रकार प्रमाणतर्कादिविमोच हो सकता है? इसका उत्तर यही है कि सत्तपञ्च प्रमाणदि शब्दका अर्थ जो है, वही समझना होगा। यदि मनुष्य अत्रमवग प्रमाणाभास, तर्कभास, सिद्धान्त और न्यायाभावका प्रयोग करे, तो विचारकी वादत्वज्ञानि होती है।

वादविचारमें समीको अधिकार नहीं है। जो प्रकृत विषयके तत्त्वनिर्णयके, यथाव्यवादी, वक्तृतादिदोष-शून्य, यथाकाममें प्रकृतोपयोग कथनमें समर्थ है, जो सिद्धान्तविषयका पक्षपात नहीं करते तथा युक्तिविश्व-विषय खोकार करते हैं, वे ही यथाव्यवादी वादविचारके अधिकारी हैं।

किन्तु विजगीवावगतः मनुष्य यदि प्रमाणादि कथ कर प्रमाणभावादिका प्रयोग करे, तो वह वाद नहीं होगा। तत्त्वनिर्णयके निम्ने वादप्रतिवाद ही वाद सत्तपञ्चका अर्थ है और निष्पक्ष दृढ़ अर्थके निम्ने ही



भासादिका उद्घावन नहीं होगा, उस समय वहिर्दिन्द्रय-  
पाङ्गय एवं स्वर्गशून्यत्वद्वय हेतु द्वारा परस्पर विरुद्धार्थ  
साधनमें समानबलयुक्त होनेसे अतप्रतिपक्ष होगा। किन्तु  
पनान्तरपक्षमें तर्कदि द्वारा बलका प्राधिकार वा हेत्वा-  
भासादि द्वारा शून्यता होनेसे अतप्रतिपक्ष नहीं होगा।  
परस्पर विरुद्धार्थ साधनके निमित्त प्रयुक्त हेतुद्वयकी  
प्रदुष्टता नहीं हो सकती, इस कारण अतप्रतिपक्षको  
जगद उत्तर नाममें जिस पक्षमें जैसा है वामान उद्घावित  
होगा, वह प्रचोय हेतु वैसा हो हेत्वाभास द्वारा दूष्ट  
होगा। यदि वादो प्रतिवादी प्रथमा मध्यस्थ किन्ती पक्षमें  
हेत्वभास उद्घावन न करे, तो उस समय हेतुका दुष्टत्व  
व्यवहार नहीं होगा।

— भिन्न—साधनकी तरह हेतु यदि पक्षमें अविद्य  
वा अनिश्चित हो, तो उसे भिन्न कहते हैं। यथा—श्या  
द्रव्य, गति होनेके कारण, यहाँ पर छाया पक्ष है और  
द्रव्यभावसाधन गति हेतु है। यथात् यहाँ पर गतिको  
हेतु करके छायाका द्रव्यत्व निश्चय किया गया है। किन्तु  
नैवाधिकके मतसे छायामें द्रव्यभाव (द्रव्यत्व) जैसा  
अविद्य है, वैसा ही गतिमत्व भी अविद्य वा अनिश्चित  
है, अतः इस प्रकार हेतुका नाम भिन्न वा साध-  
न है।

कालातीत वा वाधित पक्षमें साधनपक्षाका काल अतीत  
होनेसे पक्षमें साधनसाधनके लिये हेतुको कालातीत  
कहते हैं। जिसका एक दिग् निजकालके अतीत होने पर  
अभिहित होता है, उसो हेतुका नाम कालातीत है।

लक्ष—वस्तु जिस अर्थ तात्पर्यसे जिस शब्द का प्रयोग  
करता है उस शब्दका वैसा अर्थ ग्रहण न कर तद्विप-  
रोध अर्थको कल्पना करने हुए मित्या दोषारोप करने-  
को लक्ष कहते हैं। वादिवाक्यको अर्थान्तरकल्पना अर्थात्  
यत्नाके अभिप्रायसे अन्वय वा तात्पर्यकी कल्पना कर  
वादिवाक्यके पत्याख्यानको लक्ष कहते हैं। यथा—मैं  
हरिका पसाद खाता हूँ। यहाँ पर हरि शब्दका विणु-  
रूप तात्पर्य न ग्रहण कर वानररूप अर्थको कल्पना करने  
सम्बन्धी विरुद्ध करना, लक्ष है। यह लक्ष तीन  
प्रकारका है, वाक्यलक्ष, सामान्य लक्ष, उपचार लक्ष।

अनेकार्थ शब्द प्रयोग करनेसे वादोके अभि-

प्रेतार्थ भिन्न अर्थको कल्पना करके वादिवाक्य  
पत्याख्यानको याच्छत कहते हैं। यथा—'समागत  
वाक्चित्त नवकम्बलधारो', यह वादिवाक्य सुन कर प्रति-  
वादी कहता है, इसके एक कम्बल है, जो कम्बल कहाँ  
है? यज्ञे प्रतिवादीका वाक्य वाक्यलक्ष है। नवकम्बल  
शब्दमें नूतन कम्बल और एक कम्बल ये दो अर्थ हो सकते  
हैं, किन्तु वादोने नवशब्दका 'नूतन' ऐसा अर्थ लगाया  
है, पर प्रतिवादीने उस अर्थका परित्याग कर एक कम्बल  
ऐसा अर्थ किया है। यहाँ पर प्रतिवादीने जो वादीके  
वाक्यका दूसरा अर्थ लगाया वही वाक्यलक्ष है।

अन्वयपर सामान्यतः अर्थभिप्रायमें अभिहित वादि-  
वाक्यके अर्थअर्थ अर्थको कल्पना करके सामान्यार्थका  
कदाचित् पक्षिक्त न नियन्त्रण वादिवाक्यपत्याख्यानको  
सामान्य लक्ष कहते हैं। यथा—वादोने कहा 'ब्राह्मण  
विद्वान् होते हैं।' इस पर प्रतिवादी बोला, ब्राह्मण यदि  
विद्वान् हों, तो ब्राह्मण गिरी भो ब्राह्मण होनेके कारण  
विद्वान् हो सकते हैं, किन्तु वैसा नहीं होता, सुतरां  
तुम्हारी बात मिथ्या है।

अथो देवना चाहिये कि वादीका अभिप्राय क्या  
था, उसका अभिप्राय था कि सामान्यतः ब्राह्मणमें विद्या  
रुभावपर है। प्रतिवादीका कहना है, ब्राह्मण होनेसे  
ही विद्वान् होगा, वादिवाक्यमें ऐसे अर्थअर्थ-अर्थको  
कल्पना कर विद्वान् भिन्न भी ब्राह्मण होते हैं, अतएव  
ब्राह्मणस्वरूप सामान्यार्थमें विद्याका पक्षिक्त करता है,  
इस कारण ब्राह्मण ही विद्वान् होना रुभाव है, अतएव  
इस वाक्यमें प्रतिवादीने मित्या स्वारोप किया है, सुतरां  
प्रतिवादीका लक्ष वाक्य यहाँ पर सामान्य लक्ष दृष्टा।

शब्दके वाक्य और साक्षरक अर्थमें अर्थ दो प्रकार-  
का है। इनमेंसे एकतार्थभिप्रायसे वादीके शब्दप्रयोग  
करने पर अर्थार्थको कल्पना कर वादिवाक्यके पत्या-  
ख्यानको उपचार लक्ष कहते हैं। जैसे—वादोने कहा,  
'मैंने मित्य गङ्गामें बाग बनाया है,' इस पर प्रतिवादी  
बोला, तुम्हारा मित्य गङ्गाके किनारे रहता है, इस  
कारण तुम्हारे बात मिथ्या है। अथ यहाँ गङ्गाके दो  
अर्थ होते हैं, प्रथम वाक्यका अर्थ गङ्गाजल और द्वितीय-  
वा गङ्गातीर। वादोने कल्पनाभिप्रायसे वाक्यका प्रयोग



विषयका अज्ञानमूलक ही वादी निवृत्त होना करता है, इस कारण तादृशविप्रतिपत्ति (विपरीत ज्ञान) अप्रतिपत्ति अज्ञान द्वारा ममो नियमस्थानको अनुसृत जानना होगा। यही कारण है, कि गौतमने विप्रतिपत्ति और अप्रतिपत्तिको नियमस्थान बतलाया है। यह नियमस्थान २२ पदों का है। यथा प्रतिज्ञादानि, प्रतिज्ञाविरोध, प्रतिज्ञासंन्यास, छेत्त्वन्तर, अर्थान्तर, निरर्थक, भविष्यात्तायक, अपार्थक्य अप्राप्तकाल, न्यून, अधिक, पुनरुक्त, अननुभाषण, अज्ञान, अप्रतिभा, विक्षेप, मतानुज्ञा, पर्यनुयोज्योपेक्षण, निरनुयोग, अप्रतिज्ञान्त और श्रुत्याभास। सामान्य प्रकारसे बोध करनेके लिये दो एक विषय दिये जाते हैं।

प्रतिज्ञादानि—छट्टान्तके प्रति छट्टान्तधम स्वीकारको प्रतिज्ञादानि कहते हैं। यथा—घटवत् इन्द्रियग्राह्य होनेके कारण शब्द अनिता है। इस स्थापना पर प्रतिवादीने कहा, कि निरा द्रव्यत्वादि इन्द्रियग्राह्य होनेके कारण इन्द्रियग्राह्य अनित्य साधक नहीं हो सकता। इस प्रकार दोपारोप काने पर वादीने कहा, तब तो द्रव्यत्वादि जातिवत् घट भी गिता होगा।

प्रतिज्ञान्तर—प्रतिज्ञातार्थ विषयका प्रतिषेध कानेसे अन्वयधर्म द्वारा प्रतिज्ञातार्थके कथनको प्रतिज्ञान्तर कहते हैं। यथा—इन्द्रियग्राह्य होनेसे घटवत् शब्द अनिता है। इन स्थापना पर इन्द्रियग्राह्य द्रव्यत्वादि गिता होनेसे इन्द्रिय ग्राह्य ही अनित्यत्वसाधक नहीं हो सकता, प्रतिवादीने इस प्रकार दोपारोप किया। इस पर वादीने कहा, द्रव्यत्वादि बहुनिष्ठ है। किन्तु घट और शब्द बहुनिष्ठ नहीं है। अतएव भातिके साथ एकरूप नहीं होनेसे घटवत् शब्द अनिता होगा, इत्यादि।

प्रतिज्ञाविरोध—प्रतिज्ञा और हेतुके विरोधको प्रतिज्ञा विरोध कहते हैं। यथा—घटादिद्रव्य रूपादिगुणव्यतिरेकमें घटादिको उपलब्ध नहीं होती। रूपादिगुणव्यतिरेकमें घटादिको अनुपलब्धि होती है। घटादिनिष्ठ रूपादिगुण भिन्नताका अनुभाषण न हो कर प्रतिषेधक होता है। इस कारण प्रतिज्ञा और हेतु परस्पर वरुद्ध है।

सौलभ्य पदार्थके लक्षण लिखे गये। इन सब पदार्थके लक्षण होनेसे भाष्यस्थान उत्पन्न

होता है। भाष्या जो गरीरादिमें प्रयगभूत है वह अष्टरूपमें प्रतीयमान होता है। सुतरां गरीरादिमें भाष्यस्वरूपमिथ्याज्ञान फिर उत्पन्न नहीं होता। इस प्रकार राग और द्वेषका कारणस्वरूप उस मिथ्याज्ञानके निवृत्त होने पर राग और द्वेषकी उत्पत्ति नहीं होती। यदि राग और द्वेष हो निवृत्त हुआ, तो उनका कार्यस्वरूप कर्म और अधर्मात्मक प्रवृत्तिको पुनर्यापत्ति उत्पत्तिको सम्भावना क्या? फिर जब धर्म और अधर्म हो जन्म मरणके मूलोद्भूत हुआ है, तब धर्माधर्मके निवृत्त होने पर जन्मादि निवृत्त होगा इसमें और पाथर्य ही क्या? सुख और दुःखके प्रायतन स्वरूप गरीरादिके प्रभावमें तरवहानीके मरनेके बाद फिर सुख या दुःख कुछ भी उत्पन्न नहीं होता। सुख और दुःख एतद् ही समर्थमें निवृत्त हो जाता है, सभी दुःखनिवृत्तिको सुक्ति कहते हैं।

प्रमाण और प्रमेयका विषय लिखा जाता है। प्रमाण द्वारा प्रमेयपदार्थ निरूपित होगा।

गौतमने सौलभ्य पदार्थके विषयकी वर्णना कर परोक्षाका विषय कहा है। संक्षेपमें इसके विषयमें दो चार बातें कह देना प्राथम्यक है। न्यायदर्शनमें अनेक पदार्थको परोक्षाका विषय लिखा गया है। किन्तु विषयको स्वीकार करनेमें जो सुक्तिका उपन्यास किया जाता है, उसे उसको परोक्षा कहते हैं। जिस अर्थ विषयका संदेह होता है उसके लक्षणवर्णनके लिये परोक्षा हुआ करती है। असन्दिग्ध विषयकी परोक्षा नहीं होती। प्रमाणादिके किसी किनो स्थानमें जो संशय है वह पति संक्षेपमें लिखा जायगा।

चार्शकने एक प्रत्यक्षको दो प्रमाण माना है, अनुमानादि सभी जगह सत्य नहीं होता, इस कारण उसे प्रमाण नहीं माना है। यथा भेद्योत्पत्तिदर्शनमें वृष्टि साधक अनुमान प्रमाण नहीं हो सकता, सुतरां अनुमान भी प्रमाण नहीं है। क्योंकि अनुमान विषयमें कभी सत्य कभी मिथ्या और कभी परस्पर विभिन्नमान होनेसे अनुमानादिमें प्रामाण्यसंशय हुआ करता है। इसमें न्यायदर्शनका अविश्रय यह है, कि प्रमाण ही अनुमान है। सामान्य भेद्योत्पत्ति देख कर वृष्टिसाधक अनुमान



गवय नामधारिव्य नही होगा। सट्टय्य शब्द द्वारा विनक्षण म-इच्छ हो वक्राका प्रतिप्रति जानना होगा। विशेषतः उपमान द्वारा पहले प्रज्ञात गवय पदवाच्य ही स्वरूप संज्ञा संभोजा बोध होता है।

वक्रि और धूमादिको तरह घटादि पद और पदाय-का कोई खाभाविक सम्बन्ध नहीं है, परतएव शब्द अनुमान प्रमाणके अन्तर्गत नहीं हो सकता। नयान्यायमें ही ये सब विषय विशेषरूपसे आलोचित और अन्यान्य नानामत खण्डित हुए हैं।

कोई कोई कहते हैं कि प्रत्यक्ष प्रमाण और अनुमानके अन्तर्गत स्वतन्त्र प्रमाण नहीं है, यह वादिमत खण्डित हुआ है।

कोई कोई तो अर्थापत्ति, सम्भव, अभाय और ऐतिह्य यह ४ प्रकारका प्रतिरिक्त प्रमाण स्वीकार करते हैं; किन्तु गीतमने इन सबका खण्डन कर अर्थापत्ति, अभाय और सम्भवको अनुमान प्रमाणके अन्तर्गत और ऐतिह्यको शब्दप्रमाणके मध्य निषिद्ध किया है।

प्रमेयपीठा—कोई कोई कहते हैं, कि चक्षुरादि इन्द्रिय ही समस्त विषयको प्रत्यक्ष करती है, अतएव चक्षुरादि इन्द्रिय ही आत्मा वा जानी है। फिर किमो-का कहना है, कि यह शरीर प्रत्यक्ष कर्ता है, कोई कोई मनुकी ही कर्ता अंतर्ज्ञाते हैं।

इस पर नैयायिकोंका सिद्धान्त इस प्रकार है—चक्षुरादि इन्द्रियको आत्मा नहीं कह सकते, क्योंकि चक्षुरादि एक एक इन्द्रिय द्वारा सभी विषयोंका प्रत्यक्ष नहीं होता, एक एक इन्द्रिय द्वारा एक एक विषयका प्रत्यक्ष हुआ करता है। अब तुम्हें यह कहना होगा कि चक्षुरादि इन्द्रिय भिन्न हीनेसे रूपरसादि का प्रत्यक्षकर्ता भी भिन्न भिन्न हैं, किन्तु हमने गुलाबका रूप और स्पर्श दोनोंको ही प्रत्यक्ष किया है और हमने पहले देखा था कि इन सबका स्पर्श क्रिया है, इत्यादि साधु लौकिक प्रति द्वारा रूप और स्पर्शका एक ही प्रत्यक्ष हुआ करता है।

तिन्निहो (दमसी) देखने या इसका विषय गोवने-से ज्ञानमें अन्तर्भव या जाता है, यह लौकिक है। सभी देवता चाहिये, कि यदि इन्द्रिय आत्मा होगा, तो

तिन्निहो-द्रष्टाके चक्षुका रमानुभाव नही था। इस कारण रसकी स्मृति नही हो सकती और चक्षुका धर्म तिन्निहो-दर्शन जिज्ञासा रहोषक नहीं हो सकता, इस कारण स्मरण नहीं हो सकता।

अचेतन दधि और गोमय-मंयोगसे हृदिक उत्पन्न हुआ करता है और खेदादिज्ञात मविकादि प्रहारी-यत मनुष्यादिगो देख कर डरके मारे भाग जाती है। अब देखना चाहिये कि उस हृदिकके उत्पादान गोमयादि अचेतन है और संस्कारशून्य होनेके कारण उत्पादान-कारणसे संस्कारका संक्रमण सम्भव है। सुतरां मय-हेतु स्मरण नहीं हो सकता। नैयायिकोंका मत है कि पूर्वजन्मके संस्कार द्वारा आत्माका इहजन्ममें स्मरण हो सकता है।

मनको भी आत्मा नहीं कह सकते, कारण मन सुखदुःखादि ज्ञानमें करण है, कारण कर्त्तव्य भिन्न होता है, इस कारण मन कर्त्ता नहीं हो सकता। चक्षुरादि ज्ञान करणसापेक्ष होने पर भी सुख दुःखादिज्ञान करण-सापेक्ष नहीं है, ऐसा नहीं कह सकते, क्योंकि सामान्यतः ज्ञानमात्र ही कारणसापेक्ष है। यह देखा जाता है; इस कारण सुख दुःखादिका ज्ञान भी जो कारण-सापेक्ष है यह हम लोग अनुमान कर सकते हैं और ज्ञानइयका अयोग्यता कारणार्थ मनको प्रति सुखमूक्त द्रव्य स्वीकार करना होगा। सुतरां प्रतिवृत्त मन आत्मा नहीं हो सकता। आत्मा नितर है वा अनित्य, इस विषय पर कुछ विचार करना आवश्यक है।

साधारणतः मनुष्योंके प्रवृत्तिके प्रति राग (इष्ट-साधनता ज्ञान) कारण है, राग नहीं रहने पर सब किछो विषयम प्रवृत्त नहीं होता। ज्ञानमात्र बालकके स्तनपानमें और गर्भमें अचेतन-स्वतः वावर-गिच्छके ग्राह्य-व्यवहारेमें प्रवृत्ति प्रती होती है? इस पर नास्तिकोंका कहना है कि जिस प्रकार स्वभावतः ही बिना कारणके पद्मादिका विकास और सद्योच हुआ करता है, उसी प्रकार स्वभावतः ही उक्त प्रवृत्तिका उदय होता है। इसके उत्तरमें नैयायिक कहते हैं, कि कार्यमात्र ही कारणसापेक्ष है, इसीसे पद्मादिशा विकास और सद्योच स्वभावतः बिना कारणके नहीं होता, परतएव पद्म





(अप्रबोध) हुआ था, अभी चैतन्य हुआ है; केषन यही बोध होता है। चैतन्य का कोई भी विषय नहीं है। अतएव सविषयक और निर्विषयक चैतन्य एक नहीं हो सकता, ज्ञान ही मूल शक्ति चैतन्य है, यह आत्मा का धर्म है, ज्ञानादि बुद्धिका धर्म है, ज्ञान बुद्धिका धर्म होने पर भी बुद्धिमें अतिरिक्त नहीं है। क्योंकि बुद्धि स्वतंत्रकर्म ज्ञानकी कदापि उपलब्धि नहीं होती। शिष्यप्रदेशमें गमन कर बुद्धि ही घटपटा देका आकार धारण कर ज्ञान नामसे पुकारा जाती है। जिसे पहले ज्ञाननेको इच्छा की थी, उसे अभी ज्ञानता हूँ इत्यादि प्रत्यभिज्ञान और स्मरण आदि द्वारा बुद्धिका नितराय विह्वल हुआ है एवं चैतन्य प्रमाणात्मिक और विभु है, आत्मानमें घटादि शिष्य प्रतिनिवृत्त नहीं हो सकता, इस कारण घटादि ज्ञान भी आत्माका नहीं हो सकता। इस पर नैयायिकों का प्रथमतः है कि प्रत्यभिज्ञान बुद्धि किया करती है वा आत्मा, यह सन्देह है। अतएव प्रत्यभिज्ञान द्वारा बुद्धिका नितराय सिद्ध नहीं हो सकता। ज्ञानाश्रयकी नितरता हम खोर्गोकी अनुभवेत नहीं है। चैतन्य और ज्ञान यह विभिन्न नहीं है। हमारे चैतन्य नहीं था, अभी चैतन्य हुआ है; इतरादि सार्वभौमिक व्यवहार द्वारा चैतन्यका विषय स्वीकार करना होगा। यदि कहा जाय, 'हम विषयमें मेरे चैतन्य न था, इसका पर्यं यह है कि हम विषयमें मेरा ध्यान नहीं था, पर सुष्यके भी मनःसंयोग होता है, इस कारण उस समय चैतन्य नहीं रहता। पुनर्वा मनके स्वाभाविक अवस्थामें पानिने ही ज्ञान हो सकता है। इस कारण मन स्वाभाविक अवस्थाको प्राप्त हुआ है, इसी तात्पर्यमें अभी समके चैतन्य हुआ है, इतरादि व्यवहार होता है। चैतन्यज्ञानमें अतिरिक्त होने पर भी मनःसंयोग अतिरिक्त नहीं है। ज्ञानाश्रयमें मनःसंयोग है अतः चैतन्य भी ज्ञान है। यह एक पदार्थका धर्म नहीं है, ऐसा नहीं कह सकते। बुद्धि विषयके ज्ञानमात्र है, लेकिन उपलब्धि नहीं करतो। कारण उपलब्धि ज्ञानमें विभिन्न नहीं है। अतएव यह भी प्रकृत है। बुद्धिमें ज्ञान स्वीकार करनेमें उपलब्धि भी स्वीकार करने पड़ेगी।

चैतन्य, प्रमाणात्मिक और विभु आत्मानमें स्वीकार नहीं करने पर भी बुद्धि धर्मने ज्ञानादिवा प्रतिविम्ब स्वीकार किया है, अतएव यह आत्माकी प्रतिविम्ब नहीं 'हर सकत', ऐसा भी तुम नहीं कह सकते। यदि कहो, कि बुद्धि और ज्ञानादि विभिन्न नहीं है, तो हम पर भी विचार कर देखनेमें मानस पड़ेगा कि घटपटादि निखिन विषय ज्ञानका भी रहना आवश्यक है। किन्तु निखिन विषयज्ञान कदापि नहीं होता और निखिन ज्ञान ही मत्ता प्रभुभूत नहीं होता पर्यं एक ज्ञाननाममें अखिन ज्ञानाश्रय बुद्धिका नाम स्वीकार करने पर सभी ज्ञानका नाम हो सकता है। एक ज्ञान नष्ट हुआ, एक ज्ञान रहा, ऐसा नहीं कहा जाता। घटज्ञान और पटज्ञान एक बुद्धिमें अन्वित होने पर घटज्ञान और पटज्ञान एक हो सकता है, लेकिन नैयायिकोंके मतमें ज्ञानादि गुण और आत्मद्रव्य परस्पर विभिन्न है तथा घटज्ञान और पटादिज्ञान परस्पर विभिन्न है, सुतरां पूर्वोक्त आपत्ति नहीं हो सकती।

मन सभी इन्द्रियोंके साथ एक कालमें संयुक्त नहीं हो सकता, क्रमशः विभिन्न इन्द्रियके साथ विभिन्नकालमें संयुक्त हुआ करता है और निखिन विषयके साथ एक कालमें इन्द्रियका अग्निर्कर्म नहीं होनेमें एक कालमें निखिन ज्ञान नहीं होता। इस बुद्धि विषयमें और भी अनेक प्रकारको विचार-प्रणाली प्रदर्शित हुई है।

विषयबुद्धि चरममें देखो।

एकमात्र त्वक् हो इन्द्रिय है ऐसा कहनेमें भी चक्षु द्वारा रूप प्रत्यक्ष कालमें स्पर्श प्रत्यक्ष हो सकता है, क्योंकि चक्षुःस्थित त्वक् द्वारा स्पर्श प्रत्यक्ष होनेके कारण चक्षुःस्थ त्वक्को स्पर्श प्रत्यक्षका कारण कहना पड़ेगा। सुतरां चक्षुके साथ चक्षुका सन्निकर्ष होने पर रूपवत् स्पर्श प्रत्यक्ष भी हो सकता है।

एकमात्र स्वर्गिन्द्रियमें मनःसंयोग होनेमें सभी इन्द्रियोंके साथ मनका संयोग स्वीकार करना होगा। सुतरां उस मतमें एक कालमें सभी इन्द्रियों द्वारा प्रत्यक्ष हो सकता है। किन्तु नैयायिकोंके मतमें इन्द्रियके विभिन्न होनेके कारण प्रति चक्षु मन्त्रके साथ एक कालमें सभी इन्द्रियोंका संयोग नहीं हो सकता, मनःसंयोगके



यथार्थं ज्ञान ही प्रमा है, उस का पात्रय ही प्रमा का तद-  
योग्यत्वच्छेद यथार्थ किसे समग्र प्रमा को 'अपत्ताका  
नहीं रहना ही प्रामाण्य है, ऐसा गौतमप्रका अभिप्रेत है।  
नहीं तो "मन्त्रायुर्वेदशामाख्यपद तर्प्राणाय" अ.१८-  
प्राणायाम इम मूत्रके सामप्रामाख्यपद की सङ्गति नहीं  
होती, प्राण-पर्याय वाक्याय गौचर यथार्थ ज्ञानवत्,  
पुरुषरूप वेदवश्ट ईश्वरमें प्रामाण्य नहीं रहता, क्योंकि  
अन्वप्रमा नहीं होनेसे प्रमासाधनत्वका प्रमाकरत्व भी  
ईश्वरमें असम्भव है। जिम प्रामाण्यको हेतु करके समस्त  
वेदका प्रामाण्य संस्थापित होगा, ऐसा प्रामाण्य गौतमा-  
भिप्रेत होने पर भी 'प्रलक्षणुवाचनवराः प्रनागानि' यहाँ  
पर प्रमाण शब्द यथार्थानुभवसाधनतात्पर्यमें उक्त हुआ  
है ऐसा कहना हीगा, नहीं तो चतुर्विध प्रमाण सङ्गत  
नहीं होता। तत्त्वचिन्तामणिकार गङ्गोपाध्यायके मत-  
से सभी पदार्थत्वके प्रमाणाधीन सिद्धि होती है, अत-  
एव प्रमाणत्वकी विवेचना सर्वथा कर्त्तव्य है। यह  
कोष कर उन्होंने प्रत्यादि भेदसे चार खण्ड न्यायनस्व  
चिन्तामणिकी रचना की है—'प्रमाणाधीना सर्वेषां अव-  
स्थितयः प्रमाणतत्त्वमय विचिन्त्ये' ऐसी प्रतिष्ठा करनेका  
अभिप्राय यह है कि यह प्रमाणत्व सिद्धपण करता है  
इस प्रकार प्रतिष्ठा करनेसे ही मनुष्य ज्ञान सकेगी। इस  
शास्त्रके अथवा वा अध्ययन करनेसे सभी विषयोंकी प्रमि-  
यता होगी। गौतमने प्रमेयसंशय चादि जो कुछ निर्देश  
क्रिया है वह तत्त्व और प्रमाणके विस्तारप्रसङ्ग ही  
विशेषित है। वस्तुतः उनमें उन्होंने प्रमाधितर प्रथम  
प्रमाणके सम्बन्धमें यह शब्दा उल्यापन की है, "प्रमाणा  
धीना तत्त्व" प्रतिपादयत् वाच्य परम्परा निःश्रेयसेन  
सम्बन्धते।" यथार्थ इस शास्त्रसे ही प्रमाणादिका तत्त्व  
साधन उत्पन्न होता है वह परम्परा नियेयसाधन होनेके  
कारण इस शास्त्रके साथ युक्तिका परम्परा प्रयुज्यप्रयोजक-  
भाव सम्बन्ध है। अतएव जो प्रमा नहीं जानता, उसके  
प्रमाणज्ञान नहीं हो सकता। फिर विभिन्न ज्ञान विवे-  
कज्ञानसाधित होनेसे जिस प्रमातत्त्वज्ञानका पदने होता  
था अथवा है उन प्रमातत्त्व का ज्ञान स्वतः अथवा परना  
नहीं हो सकता। यथार्थ प्रमाकरके मतसे ज्ञान प्रामाण्यके  
स्वतः ही पद होता है यथार्थ उक्त मोमोर्वक कहते हैं।

कि ज्ञानका प्रमात्व (प्रामाण्य) उही ज्ञानका विषय  
है। कारण ज्ञानमात्र स्वप्रकाशमूलक है। अतएव  
मीमांसकके मतसे 'सिद्धिर्वाचयेय प्रथ' ज्ञानमात्रस्य  
विषयः।" प्रमा और प्रमाज्ञानका पात्रय तथा विषय  
ये समो उत्पन्न ज्ञानके विषय हैं, यह विरस्तन उक्ति  
है। भेद का कहना है कि ज्ञान मात्र ही प्रतीन्द्रिय कह  
कर ज्ञानोत्पत्तिके परत्त्वमें ही घटज्ञान हुआ है, यह  
अनुभवसिद्ध ज्ञानतासिद्धक अनुमानका विषय ज्ञानका  
प्रामाण्य होता है। सुरारि मित्र कहते हैं, कि ज्ञानो-  
त्पत्तिके पक्षे, 'मिं यथार्थरूपमें घट जानता है' इस प्रकार  
जो ज्ञानका मानस अनुभव वा अनुबुद्धिसाध है उसीका  
विषय ज्ञानोका प्रमात्व है। उन्होंने इन सब नैयायिकों-  
का मत प्रत्यक्ष न्ययन्यायमें उल्यापन करके अनुभवायमे  
दोषोत्पन्न ज्ञानमें प्रामाण्यमंशानुपपत्ति चादि दोषोंका  
उल्लेख करते हुए खण्डन किया है। अनुमान यदि  
प्रमात्व निर्णायक हो, तो अनुमानगत प्रामाण्यके अनु-  
मापक अनुमानान्तर तथा तद्गत प्रामाण्यके अनुमापक  
भायका अनुमान ऐसाहेतुक अनवस्थादोष लगता है।  
नव्य नैयायिकोंने इन सब दोषोंका उल्यापन कर सिद्धान्त  
क्रिया है,—सब प्रकारके व्याप्तिज्ञानमें ही प्रामाण्य संदेह  
हीगा और उस प्रामाण्यनिर्णयके निचे अनुमानकी  
पपेक्षा उसमें प्रमाण नहीं होगी, मूलतः अभ्यासोत्पन्न  
व्याप्तिज्ञानरूप अनुमानमें प्रामाण्यका मानस अनुभवरूप  
निर्णय सम्भव है, अतएव अनवस्था दोष नहीं है। उन्होंने  
नाना प्रकारके माध्यमिक प्रभृतिमें उल्यापित दोषके निरास-  
पूर्वक प्रामाण्यवादमें प्रामाण्यनिर्णयका उपनंदा  
क्रिया है, समने प्राचीन न्यायमें चिन्तामणि पत्र भी  
स्वतन्त्र ही जाता है, इस कारण चिन्तामणि पत्रकी  
नया-न्यायमें गिनती हुई है।

इन सब सिद्धान्तों का समर्थन करनेमें सूत्रातिवृत्त  
विचारनिश्चयन रघुनाथगिरिमण्डित दीधिति, मधुरा-  
नाथ तर्कवागौयजन रहस्य, जगदीशजन दीधिति प्रका  
यिका और गदाधर भट्टाचार्यजन दीधिति का ये सब  
ग्रन्थ इतने दुर्लभ और विद्वान ही गये हैं कि उन्हें  
हिन्दोभाषामें मन्व्यहूरने ममभूतिकी चेष्टा करना  
असंभव है। इसीमे वह विषय छोड़ दिया गया।



एकके धारणसे दूसरेका धारण उस प्रकार नहीं होता, तद्वय एकदेशी परमाणुपुञ्जके धारणसे अपर परमाणु-पुञ्जका धारण असम्भव होनेके कारण एकदेश धारण और भाकर्षणसे हृद्यके धारण और भाकर्षणको अनुप-पत्ति होती है। फिर घटादि परमाणुसे स्वतन्त्र नहीं होने पर उनकी द्वारा दृश्यादिका ज्ञानयन भी असम्भव है। अतएव एकदेशमें चक्षुःसन्निकर्ष होनेसे भी समस्त हृद्यमें चक्षुःसन्निकर्ष हुआ है, ऐसा कहा जाता है और उस सन्निकर्षबलसे समुदित हृद्यकी उपपत्ति भी युक्त-युक्त है।

अभी प्रत्यक्षमें, चक्षुरादिका इन्द्रियके सन्निकर्ष-अपत्ति सम्बन्धमें यह भागड़ा हो सकती है, कदा इन्द्रिय यथास्थानमें रह कर विषयके साथ संलग्न होती है। अथवा विषयमें नहीं रह कर प्रत्यक्ष उत्पन्न करता है। चक्षु-अपत्ति स्थानमें रहती हुए अपने रश्मि फैला कर विषयके साथ युक्त होता है, यह उत्तर सङ्गत नहीं होता। कारण सूर्यकिरणकी तरह प्रत्यक्ष नहीं होनेके कारण चक्षुकी किरण है, ऐसा नहीं कहा जाता। इसमें "अग्निश्चर-नयनविषयदर्शनम्।" इस सूत्र द्वारा इस प्रकार सिद्धान्त होता है कि रातकी मार्जार, शार्ङ्गल आदिके चक्षुमें रश्मि देखे जाती है, अतः मनुष्य-चक्षुमें भी रश्मि है, यह हटानावस्यसे सिद्ध होता है। पर हाँ, चक्षु-रश्मिके अणुत्वतत्त्ववान् होनेसे ही उसको उपपत्ति नहीं होती, चक्षुमात्र ही रश्मिविशिष्ट है। क्योंकि तेजःपदार्थ जिस प्रकार रात्रिश्चर मार्जारका चक्षु है, उसी प्रकार प्रयोग द्वारा मनुष्य-चक्षुमें भी रश्मि का अनुमान न्याय-सिद्ध है। फिर चक्षुके तेजःपदार्थ नहीं होने पर वह रूपादि विषयका प्रकाशक नहीं हो सकता, जैसे पार्यव घटादि एवं रूप रस गन्ध स्पर्श इन सब गुणोंमें चक्षु-केवल रूप प्रकाशक है। अतएव चक्षु तेजःपदार्थ है। चक्षु यदि पार्यव होता तो वह गन्धका भी प्राहक होता। चक्षुकी रश्मि रहने पर भी विषयमें युक्त नहीं होनेसे वह विषयप्रकाशक है। कारण काँच और अभ्र तथा स्फटिक प्रभृति सूक्ष्म पदार्थोंके अन्तर्गत विषयको भी उपपत्ति होती है। "अग्रादपरणं वाचप्रवट-रुडिहान्तरितोपलभ्ये" इस सूत्र द्वारा उक्त भागड़ा करके

फिर "न कुल्यान्तरितानुपलभ्येर प्रतिषेधः" इस सूत्र द्वारा उसोका निराकरण किया है। यदि चक्षु इन्द्रिय पचविलक्ष्ण पदार्थको प्राप्य करानेमें समर्थ होती, तो वह भित्तिके द्वारा परतारित पदार्थका भी ज्ञान उत्पन्न कर सकती थी। जब पाचीरादि प्रतिषेधकवशसे चक्षु-किरण जिस वस्तु पर नहीं पड़ सकती, उस वस्तुको हम लोग कभी भी उपलब्ध नहीं कर सकते। अतएव इन्द्रियके मध्य अर्थका सन्निकर्ष रहने पर भी प्रतीक्ष उत्पन्न होता है, यह सिद्धान्तसङ्गत है। पर हाँ, जो काँच, अभ्र आदिके व्यभिधानमें रह कर भी अर्थःचाक्षुप-प्रतीक्ष-विषय होता है, उसमें वल्लभा यह है "अप्रति-पतात् सन्निकर्षोऽपत्तिः। आदिल्लभ्येः स्फटिकान्तरितोपि दक्ष्ये अविषयात्"। काँच आदि सूक्ष्मपदार्थकी नयनरश्मि भी-प्रतिरोधक नहीं होती। अतएव काच आदि द्वारा व्यवहित वस्तु पर भी चक्षुरिन्द्रिय पतित हो सकती है। जिस प्रकार आदिराशमि स्फटिक वा काच-विशेषमें अन्तःप्रविष्ट हो कर तदाहत्त दाह्य वस्तुमें कौन-हीतो है, उसी प्रकार तेजःपदार्थ चक्षुको रश्मिः काच-अभ्र प्रभृतिको भेद कर व्यवहित पदार्थमें संयुक्त पयी न होगी। ऐसा नहीं कह सकते कि आदिराशमि और स्फटिकान्तरित दाह्य पदार्थमें प्रवेश नहीं करता, यदि ऐसा हो, तो तदन्तरित वस्तु युक्त दाह्य पदार्थको अज्ञानता और दाह उत्पन्न नहीं हो सकता है। जिस प्रकार कुम्भस्थ जलमें तेजःपदार्थ यज्ञि और सूर्य प्रविष्ट हो कर उत्पानादि सम्पादन करता है, उसी प्रकार चक्षु-अपत्ति रश्मि द्वारा दृश्य वस्तुमें प्रविष्ट हो कर उसका प्रत्यक्ष ज्ञान उत्पानन करता है, इस प्रणालीमें चक्षुरादि इन्द्रिय जो माप्यकारो है, इसमें अन्वेष नहीं। जो कहते हैं, कि विषयका प्रतिविम्ब अक्षु पर पड़नेसे ही अक्षु विषयप्रकाशक हो जाता है, इसे भी युक्तिमङ्गल नहीं मान सकते। पद्योक्ति काँच, अभ्र आदि द्वारा व्यवहित वा आहत जो पार्यव पदार्थ है उनका प्रतिविम्ब चक्षु पर पड़ नहीं सकता, कारण तेजोति-रिक्ति पदार्थका कावाभ्रभेद कर चक्षु पर आ प्रतिविम्बत होनेको उसमें शक्ति नहीं है। काचाभ्र ही उसमें प्रतिविम्बक है। अर्थ आदिसे-सुम्भका



प्रतिबन्धकताके अनतिरिक्त वृत्तित्वरूप चयच्छेदकता विगिष्ट होता है, तद्द्वय विगिष्ट ही दोष है. जलमें वज्रिमाधा करनेमें धूनादि हेतुमें वज्रिगुण्य जन ही दोष होता है। क्योंकि वज्रिगुण्य जनविषयक निश्चयत्व प्रकृतानुमिति की जो प्रतिबन्धकता है, उसमें प्रतिरिक्त स्थानमें प्रावृत्ति हुई है। किन्तु पर्वत वहिके माध्यता-स्थानमें प्रकृतानुमिति प्रतिबन्धकतागुण्य की वह न्य-भाववान् है, इस प्रकार पक्षानवगाही वह न्यभावमात्र प्रकारके निश्चय है, उसमें वहिभावविषयक निश्चयत्व होनेके कारण वैसे पदमें वज्रिभाव नहीं लिया गया। क्योंकि भ्रमका विषय जो वह न्यभाव है, तद्विगिष्ट पर्वत नहीं होनेमें वह नहीं लिया जा सकता। पर्वत वज्रिमान् है, इस अनुमितिके शुद्ध संरन्धभाववान् यह निश्चय भी प्रतिबन्धक नहीं होता। दोषितिकारके लक्षणके ऊपर भी दोष लगता है, कारण, बाधकालमें इच्छामयुज्य जो चाहाये वा परामाण्य है उसमें ज्ञाना-स्कन्दिने वज्रिगुण्य जलविषयक निष्पन्न अनुमितिका प्रति-बन्धकतागुण्य होनेमें वज्रिगुण्य जनविषयक निश्चयत्व उक्त प्रतिबन्धकतागुण्य वृत्ति हुआ। सुतरां वज्रिगुण्य जलरूप-बंधमें दोषलक्षणके भी तत्संख्येय हेतुमें दोषवत्त्वरूप दुष्टत्व लक्षणका अस्वाभिप्रेय होता है। इसी कारण जगदीश, गदाधर प्रभृतिका कथना है कि अनोहाय परामाण्य ज्ञानानास्कन्दिने निश्चय वृत्तित्वविगिष्ट यद्व-विगिष्ट विषयित्वका व्यापक होता है, प्रकृतानुमिति प्रतिबन्धकता तद्वृत्त विगिष्ट ही दोष है। तद्वत्त्व ही दुष्टत्व है। जगदीश और गदाधरने इस लक्षणके ऊपर भ्रमरूप दोष दिखलाते हुए निश्चयप्रवेशपूर्वक अनुमान और अभूत-पूर्व विचारचातुर्य दिखलाया है, साध्यसाधनपदके अतिरिधी अथवा प्रकृतमाध्यामिपदके विधिप्रधान-का जो विषय है वही अविचार है। यह अविचार साधारण, असाधारण और अनुपमं हारोके भेदमें तीन प्रकारका है। साधारण्य-देशयित्त हेतुको साधारण कहते हैं। यथा—शब्द नित्य है, क्योंकि वह स्मरं गुण्य है, यहाँ पर नित्यताएव साधारण्य की स्पन्द है, उसमें निष्पन्नहैतु होनेके कारण नित्यतागुण्य वृत्ति निष्कर्म-ल-में ही साधारण हुई। असाधारण्यमें वृत्तित्तहेतु असा-

धरण शब्द द्रव्यत्ववान् है, क्योंकि वह अथवेन्द्रिययाद्य है। यहाँ पर द्रव्यत्वसाधके अतिरिक्तमें अथवेन्द्रिय-याद्यत्व नहीं होनेके कारण असाधारण हुआ, ऐसा जानना होगा। असाधारण्यमें सर्वत्र वाच्यत्वादि-पक्षतावच्छेदकादि अनुपमं हागी है। पक्षवृत्ति साधारण्य-कोभूताभाषके प्रतिशोभी हेतु विरुद्ध है। यथा—गोत्व साधक मध्यत्वादि हेतु है, पक्षमें पक्षतावच्छेदका-भावादि भाव्यसिद्धि है, हेतुगुण्य पक्ष ही स्वरूपसिद्धि है, यथा—इदमें वज्रिमाधाक धूनादि। वार्धविशेषणत्व-रूप वाच्यत्वनिधि होता है। इस कारण नीलधूम हेतु करने पर भी इष्टहेतु होता है। विरोधियामग-कालोनेहेतु सप्रतिपक्षित है, यथा—गरोर अचेतन है, क्योंकि यह भौतिक है, जो जो भौतिक है, वे सभी चैतन्यविहीन होते हैं, जैसे घट शरीर चादि। जेया-धिकेके इस वाक्यके समानकालमें यदि चार्वाक कहें, शरीर ही चैतन्यविगिष्ट है, क्योंकि वह सचेत है, जो जो सचेत है, वे सभी सचेतन हैं, जो सचेतन नहीं है, वह सचेत भी नहीं है। इस प्रकार चैतन्यका व्यामि-विगिष्ट चेष्टावान् शरीर और अचेतनत्वस्थानिविगिष्ट, भौतिकत्ववान् शरीर इस प्रकार अचेतनत्व और अचेत-नत्व इस विरोधिपक्षार्थद्वयकी व्यामिविगिष्ट चेष्टा और भौतिकत्व हेतुके एक कालमें एक पक्षमें परामर्शकाममें सप्रतिपक्ष दोषयुक्त हेतुद्वय किषो भी पक्षके साधनोपपदायके अनुमापक नहीं होता। तत्र यदि, "शरीरं शरीरं च मनसोव्यवस्थितं सदानां विभुमात्मनं मत्वा घोरो न शोचति" इत्यादि श्रुतिका उल्लेख करें, तो शरीर चैतन्यथाद सुबल होता है। उस समय समानबलता नहीं होनेके कारण हेतु सप्रतिपक्षित नहीं होता। शरीर चैतन्यथाद नहीं है, इसके प्रतिपादक वेदप्रमाणवत्त्व चैतन्यकी व्यामि-विगिष्ट चेष्टाके शरीररूपपक्षमें निष्पन्नकविरोधि-परामर्शके परामाण्य ज्ञान ही कर चैतन्यभावका अनु-मान ही मत् होता है। साधारण्य पक्ष ही वाध है, यथा—इद वज्रिविगिष्ट धूमहेतुके, यहाँ पर वज्रिगुण्य इद वाधदोष हुआ। परकीय हेतुमें हेतुभावनका उदा-हन जेका असाधारण्यमान स्वयंमें उपयोगी है, वै भा





ऐसा कहने पर भी प्रतियोगिताका अवच्छेदको भूतधर्मावच्छिन्नत्व नश्य होनेके कारण वहिहा होना नहीं मान सकते । अतएव तादृगसाध्य समानाधिकरणरूप व्याग्निलक्षणका उक्त लक्ष्यत्वमें नहीं होना अस्यादिपद्य होता है । इसीसे दीक्षितकार उच्यते विरोमणि कहते हैं, 'प्रतियोग्यममानाधिकरणतद्रूपविगिष्टममानाधिकरणान्यस्याभावप्रतियोगितामवच्छेदको यो धर्मस्तदमावच्छिन्नत्वेन येन केनापि समं समानाधिकरणं तद्रूपविगिष्टस्य तदमावच्छिन्नथावच्छिन्नविगिता व्याग्नः ।' श्लोच प्रतियोगिताके अधिहरणमें अहन्त हो कर जो हेतुतावच्छेदकविगिष्टके अधिहरणमें वस्तमान होता है, जो जो प्रभाव तत्तदोय प्रतियोगिताका अवच्छेदक नहीं होता, जो अधतावच्छेदक धर्म तद्विगिष्ट जिस विशेष साध्यात्मिके साथ जिस हेतुको जो ऐहाधिहरणस्थिति है, वही उस हेतुतावच्छेदकविगिष्टहेतु है, यही साध्यातावच्छेदक धर्मविगिष्ट निरूपित व्याग्नः है । पर्वतोय वह व्यादिव्यक्तित तत्तद्व्यक्तित्व धूमस्वरूप हेतुतावच्छेदक विगिष्टका अधिहरण पर्वतलक्ष्यभावीय प्रतियोगिताके घटत्वादिही तरत अवच्छेदक होने पर भी तद्वत्त्व वहित्वरूप साध्यावच्छेदकविगिष्ट वहिका जो सामानाधिकरण्य है, वही वहित्वावच्छिन्नकी व्याग्नः हुआ । अर्थात् तादृग व्याग्नितान ही यश्च्युतमिति का जनक है । इस लक्षणके प्रतियोग्यसमानाधिकरण पदमानारूप अर्थ प्राग्ज्ञापूषक नानाविध दीर्घका उल्लेख काके विरोमणिने जो स्वतन्त्र अर्थ किया है, उसमें भी इसी लक्षण स्वतन्त्ररूप हुए हैं । 'यादृगप्रतियोगितावच्छेदकावच्छिन्नाधिकरणत्वं हेतुमतः तादृगप्रतियोगितामवच्छेदकसाध्यावच्छेदकविगिष्टसामानाधिकरण्यं व्याग्नः ।' जिस प्रकार प्रतियोगितावच्छेदकविगिष्टके अधिहरणहेतुका अधिहरण होता है, उसी प्रकार प्रतियोगिताके अवच्छेदक धर्म भिन्न साध्यातावच्छेदकविगिष्टके अधिहरणमें हेतुका वस्तमानत्व ही व्याग्नः है । इस लक्षणमें पुनः कालोच्चकालिक मध्यममें घटसाध्य महाकालान्वादिहेतुमें अस्यानि होती है, क्वचित् मध्याध्यातक कालिकमध्यममें मायो वसुधाका अधिहरण काल होता है । एतां जो प्रभाव मान कर लक्षण निधा जाय ।

उप प्रभावके प्रतियोगितावच्छेदक विगिष्टका अनधिकरणकालरूप हेत्वधिहरण नहीं होता, इस कारण कि जो भी प्रभावकी प्रतियोगिताको तादृग प्रतियोगिता नहीं मान सकते । सुतरां उक्त लक्षण वहाँ नहीं जाते । इसके बाद प्रतियोग्यममानाधिकरणरूपदत्तके मानरूप पारिभाषिक अर्थको कल्पना करनेने उसमें भी कानका अगटाधारवसतमें दोय होता है । अतएव अन्तमें कहने ऐसा लक्षण किया है, 'निवृत्तप्रतियोग्यअधिकरणहेतुमिच्छाभावप्रतियोगितासामान्ये यत्तुसम्बन्धावच्छिन्नत्वयद्दमावच्छिन्नत्वोभयाभावज्ञेन सम्बन्धेन तदमावच्छिन्नस्य व्यपकत्वबोधः ।' इन सब लक्षणोंके प्रत्येकपदकी व्याग्नित्त्वात् स्वतन्त्र स्वतन्त्र नानाकार लक्षणोंका पारिस्वार कर अगदीय और गदाधरजन टीका भवत्या विवृत न हुई है । जिस जिस प्रभावकी श्लोच प्रतियोगिताके अवच्छेदक सम्बन्धमें स्वोय प्रतियोगिताका अवच्छेदक धर्मविगिष्टका अधिहरण भिन्न होता है, जो हेत्वधिहरण है उस प्रभावोय प्रतियोगितामें जो सम्बन्धावच्छेदक है, साध्यातावच्छेदक जो धर्मावच्छेदक है, इन दोनोंका प्रभाव रहता है, यह हेतुका व्यापक होता है । उस सम्बन्धमें उस धर्मविगिष्ट एवं तादृग व्यापकीभुग साध्याके अधिहरणमें हेतुकी पत्ता ही व्याग्नः हुई । स्वोय प्रतियोगी घटादिका अधिहरण धूमारिष्ट हेतुके अधिहरणमें वस्तमान जो जो घटादिका प्रभाव है, उस प्रतियोगितासामान्यमें ही संयोगसम्बन्धावच्छिन्नत्व और वहिभावच्छिन्नत्व इन दोनोंका प्रभाव देया जाता है । सुतरां संयोगसम्बन्धमें वहित्वविगिष्ट धूमका व्यापक हुआ । उसके अधिहरणमें वह धूम है, पुनः धूम ही वहिका व्याप्य हुआ । मिहान्तलक्षणका प्रतियोगितामवच्छेदक इसका घटक जो अवच्छेदकता है, वह किम प्रकार है, स्वरूपसम्बन्धरूप है-या प्रतियोगिताका अनतिरिक्तत्वस्यद्वय है ? इस प्रकार प्राग्ज्ञापूषक अवच्छेदकत्वनिर्वाचन कारके अवच्छेदकत्वनिर्वाचन नाममें दीक्षितकारने एक और पद्यको रचना भी है । ये सब सम्बन्ध यत्र लक्षण ज. मनेके निम्ने मध्यमार्थमें श्रुत्यादित प्रभाव पार प्रतियोगिताका सम्बन्ध तथा प्रतियोगिता पर अवच्छेदकताया का सम्बन्ध है, जो किमका अवच्छे-



ऐसा कहने पर भी प्रतियोगिताका प्रवच्छेदकोभूतधर्माव-  
च्छिन्न साध्य होनेके कारण वहिका होना नहीं मान  
सकते। अतएव तादृगसाध्य समानाधिकरणरूप व्याप्ति-  
लक्षणका उक्त लक्ष्यस्थानमें नहीं होना प्रत्यागिदोष होता  
है। इससे दोषितिकार रघुनाथ गिरोमणि कहते हैं,  
"प्रतियोग्यसमानाधिकरणपदव्यतिरेकसमानाधिकरण-  
पदसाधारणप्रतियोगिताप्रवच्छेदकी यो धर्मस्वभाव-  
च्छिन्न येन केनापि समं समानाधिकरणं तद्व्यतिरेक-  
व्यतिरेकसमानाधिकरणव्यतिरेकव्याप्तिः।" श्लोय प्रति-  
योगिताके अधिहरणमें पदोक्त हो कर जो हेतुतावच्छे-  
दकव्यतिरेकके अधिहरणमें यत्तमान होता है, जो जो  
प्रभाव तत्तदोय प्रतियोगिताका प्रवच्छेदक नहीं होता,  
जो स धर्मावच्छेदक धर्म तद्व्यतिरेक जिन द्विसो साधा-  
र्यके साथ जिस हेतुको जो ऐकाधिकरणव्यतिरेक है,  
वहो उस हेतुतावच्छेदकव्यतिरेकहेतुक है, वही साधा-  
तावच्छेदक धर्मव्यतिरेक निरूपित व्याप्ति है। परंतोय  
वह व्याप्त्यतिरिक्त तत्तद व्यतिरेक भूमत्वका हेतुताव-  
च्छेदक व्यतिरेकका अधिहरण परंतुलक्ष्यभावीय प्रति-  
योगिताके घटत्वादिको तरत प्रवच्छेदक होने पर भी  
तद्विषय वहित्वका साधारणवच्छेदकव्यतिरेक वहिका  
जो सामानाधिकरण्य है, वही वहित्वव्यतिरेक ही व्याप्ति  
रूपा। अर्थात् तादृग व्याप्तिज्ञान ही यह न्यतुमितिका  
जनक है। इस लक्षणके प्रतियोग्यसमानाधिकरण पदका  
नागरूप अर्थ आगच्छापूर्वक नानाविध दोषोंका अल्लेख  
काके गिरोमणिने की स्वतन्त्र अर्थ किया है, उनमें भी  
इसो लक्षण स्वतन्त्ररूप हुए हैं। "यादृगप्रतियोगिता-  
वच्छेदकामच्छिन्नाधिकरणत्वं हेतुमतः तादृग प्रति-  
योगिताप्रवच्छेदकसाधारणवच्छेदकव्यतिरेकसमानाधि-  
करण्यं व्याप्तिः।" जिन प्रकार प्रतियोगिताप्रवच्छेदक-  
व्यतिरेकके अधिहरणहेतुका अधिहरण हीना है, उसी  
प्रकार प्रतियोगिताके प्रवच्छेदक धर्मभिव साधारणवच्छे-  
दकव्यतिरेकके अधिहरणमें हेतुका यत्तमानत्व ही अर्थान्  
है। इस लक्षणमें पुनः कालांतरकालिक सम्बन्धमें घटसाध्य  
सहाकार्यवादहेतुमें अर्थान्ति होतो है, कोर्त म. धा ना-  
घटके कालिकसम्बन्धमें मभो वस्तुपेशा अधिहरण काल  
होता है। अर्थात् जो प्रभाव मान का लक्षण निरा ज्ञाय।

अप प्रभावके प्रतियोगिताप्रवच्छेदक व्यतिरेकता अनि-  
करण कालरूप हेतु अधिहरण नहीं होता, इस कारण किशो  
भी प्रभावकी प्रतियोगिताको तादृग प्रतियोगिता नहीं  
मान सकते। अतएव उक्त लक्षण वही नहीं ज्ञाने। इससे  
बाद प्रतियोग्यसमानाधिकरणपदके ज्ञानरूप पारिभाषिक  
अर्थको कल्पना करनेसे उसमें जो कानका अगताधारण  
सतमें दोय होता है। अतएव अन्तमें कहोंने ऐसा लक्षण  
किया है, "निरुक्तप्रतियोग्यअधिहरणहेतुमच्छिन्नाभावप्रति-  
योगितासामान्यं यत्सम्बन्धव्यतिरेकत्वमावच्छिन्न-  
त्वोभयामाद्यत्तु न सम्बन्धेन तद्व्यतिरेकत्वस्य व्यपकत्व-  
बोधः।" इन सब लक्षणोंके प्रत्येकपदकी व्याप्ति ही  
स्वतन्त्र स्वतन्त्र नानाकार लक्षणोंका पाविचार कर अग-  
दीग पोर गदाधारण टीका फलान्त विद्वान् हुई है।  
जिन जिन प्रभावकी श्लोय प्रतियोगिताके प्रवच्छेदक  
सम्बन्धमें स्वीय प्रतियोगिताका प्रवच्छेदक धर्मव्यतिरेक-  
का अधिहरण भिन्न होता है, जो हेतुव्यतिरेक है उस  
प्रभावोय प्रतियोगितामें जो सम्बन्धव्यच्छेदकत्व है, साधा-  
तावच्छेदक जो धर्मावच्छेदकत्व है, इन दोनोंका  
प्रभाव रहता है, यह हेतुका व्यापक होता है। सम  
सम्बन्धमें सम धर्मव्यतिरेक अर्थ तादृग व्यापकीभूत साधारण  
अधिहरणमें हेतुकी भत्ता ही व्याप्ति हुई। अर्थात् प्रति-  
योगी घटादिका अधिहरण भूमादिका हेतुके अधिहरण-  
में यत्तमान जो जो घटादिका प्रभाव है, उस प्रति-  
योगितासामान्यमें ही संयोगसम्बन्धव्यच्छिन्नत्व पोर वहि-  
मावच्छिन्नत्व इन दोनोंका प्रभाव देखा जाता है। अतएव  
संयोगसम्बन्धमें वहित्वव्यतिरेक भूमका व्यापक रूपा।  
उसके अधिहरणमें वह भूम है, अतः भूम ही वहिका  
व्याप्य रूपा। निदानानलक्षणका प्रतियोगिताप्रवच्छेदक  
इसका घटक जो प्रवच्छेदकता है, यह किम प्रकार है,  
स्वरूपसम्बन्धरूप है-या प्रतियोगिताका अनतिरिक्तव्यति-  
रेकत्व है ? इस प्रकार आगच्छापूर्वक प्रवच्छेदकत्व  
निर्वाचन करके प्रवच्छेदकत्वनिर्वाह नाममें दोषित-  
कारने एक पोर अर्थान्तरचना ही है। ये सब अर्थान्त्र  
लक्षण ज. ननेके निये नद्व्याप्तमें अतुत्यादित प्रभाव  
पार प्रतियोगिताका सम्बन्ध तथा प्रतियोगिता के  
प्रवच्छेदकताया वया सम्बन्ध है, जो न द्विसक। प्रवच्छे-

ही शीघ्र हेतुमें ध्यामिउत्पत्तता दिव्यनिर्मे भो प्रकृतो-  
योगी है, इस कारण ध्यामि दिव्य पदार्थों का स्वस्व है,  
यह आत्मता आवश्यक है ।

ध्यामिवाद --पति प्राबोधनकानमें निद्रानिद्रिका  
निद्रानमव्यभ्रतदा हो ध्यामिहा उत्पन्नया, पनन्तर  
यसो पव्यभिरित्त,मन्वन्त घोर पतिनामावमव्यभ्रने  
केवाएक होनाया । पीछे निद्रदुष्टय गहरेने प्राचीन  
दरम्याप्रपत्तित पव्यभिरित्तत गह्रका ही जो पांच  
प्रक.रहे पर्यंका उत्पन्नका होय दिव्यकामे हुए निरा-  
कार्य किगा है उसमें काव्याभाववत्तुसित्तल इस लक्षणमें  
साध्यगुण्यद्वेगमें हेतुता नहीं रहना हो ध्यामि है ।  
यथा—युतायंमं पमभव होता है, यती'कि' साध्यघट  
उभयथा पमाय घोर साध्य प्रतियोगिक होनेसे साध्यता-  
माय है, उभयतामाय मय प्रगह है, सुतरां तदपिहरणमें  
प्रसिद्धा ही भूममें है । इस पव्यामि पयथा पमभव होय-  
में तथा 'धूमवान् बहः' इत्यादि स्वकमें पतिव्यामि होय  
होता है इस कारण पनन्तर, साध्यतामाव्यामाय घोर  
तादृशप्रसिद्धतामाव्यामाय पादि लक्षणों का निवेग  
रिया गया है । यत्किंचित् साध्य रहने पर भी काव्य-  
सामान्यथा पभाव नहीं रहता, सुतरां पयंत पर मट  
य'प्र नहीं है, ऐसे प्रतीति होने पर भी य'प्र नहीं है  
ऐसा नहीं कह सकते । साध्यतामाव्यामाय निवेग पर-  
से लक्षणथा पयं पय होता है कि पशुमिनिको विपे-  
यतादप साधयगामें पयच्छेदकमिच सी घर्त है तविट  
पयच्छेदकताका पदिदपक घोर साधयतावच्छेदकनिष्ठ  
पयच्छेदकताका निदपक जो प्रतियोगिता है, उभयता  
निद्रवृत्त जो पमाय है, तदपिहरण-निदपित्त प्रसिद्धतामाय-  
ध्यामि, यह घट होना' नहीं है, यह प्रतीतिमिच पभाव  
साधयतावच्छेदकके पतिरिक्त उभयत्वयमं'निष्ठ-पयच्छेद-  
कताका निदपक होनेसे तादृशसःम्यामाय नहीं है  
यथा साधयतामाव्यामावधिहरणधूमप्राधिकरण नहीं  
होता, सुतरां पमायि होय नहीं लगता है । साधय-  
तावाधिकरणयत् साधयतामाव्यामाय निवेग नहीं करने  
पर भी तादृश प्रसिद्ध लक्षण उभयतामावादि सादान  
करके ध्यामिहारण-व्यवसायमें पतिव्यामि होने है ।  
'धूमवान् बहः' इत्यादि पव्यभ्रतयमें धूमवय साधय-

मावाधिकरण जननःनिदपित्तुसित्ततामाय यह हेतुमें  
रहता है इस कारण तथा धूमवयसाधयतावाधिकरण-  
निदपित्तुसित्तल प्रसिद्ध पतदुभयतामाय बहिहेतुमें रहनेसे  
लक्षणमें पयय होता है, सुतरां पतिव्यामि है, "पनपय  
साधयतामावधि । रननिदपित्तुसित्तल' मायि" इत्याकार  
प्रतीतिमिच तादृशप्रसिद्धता माव्यामाय निवेगपूर्वक  
पतिव्यामि कारण दरती होती है । प्रसिद्धतामाव्यामाय  
निवेगकी प्रयाकी पति दुष्टय घोर विद्यूत होनेसे कारण  
पती नहीं निवो गई । इस प्रतीतिमें पय प्रक लक्षण  
निवेगद्वयमें निवेग प्रवेग कर पति दुष्टय घोर तातादृ-  
की लक्षणता करनेमें ध्यामिप्रसक भी विद्यूत हुआ है ।  
यही पांच लक्षण साधयता पभाव पयथा साधयतामिष्ट-  
का सामान्यमें दृष्टित होनेसे केवलसाध्यविद्यममें (जिमका  
पभाव पयमिह, है ऐसे साधय न हेतुमें) पयव्यामि होयमें  
परिहृत हुआ है । पीछे वि'व-ध्यामिोक्त लक्षणद्वय एवं  
सुन्दरीयाध्याय-मन्मिच साधिकरणपदयमें पभावपठित  
पनेक प्रकारें लक्षणोंको कल्पना पर निराश घोर धूम-  
पयोक्त बहुविधलक्षण परिहारपूर्वक मिद्वान्तलक्षण किया  
है, "प्रतियोग्यमनाधिकरणयत्सामानाधिकरण्याव्यक्ता-  
भावपतियोगितावच्छेदकावच्छिद्यं यय भवति तय समं  
तय्य सामानाधिकरण्यं वारानि;" यद्योत्तु त्रिस हेतुके  
पययमें वत्तं नाम पमावीय प्रतियोगिताके निवेगहो-  
भूतधर्मविगिष्टमें मिच जो साधय है उसके पधिहरणमें  
उम है, जो मत्ता ही ध्यामि है । जैसे पयंत महिमान्  
है, यती'कि' यहाँ धूम है । इस प्रकार धूमहेतुक बहि  
साधयत्वकमें हेतुता पधिहरण जो पयंत पनन्तर,  
गोठ घोर महानम उममें वत्तं नाम जो पययतामाय है,  
तदीय प्रतियोगितावच्छेदक जो घाएव गोय प्रभृति है,  
तदपिच्छेव जो घट घोर गो-प्रभृति है, तद्विच महिदप  
साधयके माय धूमवय हेतुमें जो एकाधिकरणपभाव है,  
नही बहिही ध्यामि है, इस लक्षणमें उक्त लक्षण पर ही  
पव्यामिहोय होता है हेतुके पधिहरणय पयंत पर महा-  
लभोय बहिहा. महानममें पयंतीय, यहिका, चत्वरमें  
तीनादिनिवच्छिका, गोठमें पयतादिनिवच्छिका जो  
पभाव पयं नाम है, लक्षणतामाय प्रतियोगिताका पय-  
च्छेदकोभूत लक्षणद्वयमाय विगिष्ट समो बहि-कोती है,

ऐसा कहने पर भी प्रतियोगिताका प्रवृत्तको भूतधर्माव-  
 स्थित नान्य होनेके कारण वहिना होना नहीं मान  
 सकते। अतएव तादृगसाध्य समानाधिकरणरूप व्याप्ति-  
 लक्षणका उक्त लक्षणत्वमें नहीं होना प्रत्याभिदोष होता  
 है। इसीसे दोषितकार रघुनाथ विरोमणि कहते हैं,  
 'प्रतियोग्यमानाधिकरणपदव्यभिचयमानाधिकरणा-  
 यत्प्रभावाप्रतियोगितामवच्छेदको यो धर्मस्तदभावा-  
 च्छिन्नत्वेन वेन वेनापि समं समानाधिकरण्यं तद्व्यभिचि-  
 टस्य तदभावाच्छिन्नप्रावृत्तिरपि ता व्याप्तिः।' ख्योय प्रति-  
 योगिताके अधिहरणमें अहित हो कर जो हेतुतावच्छे-  
 दकव्यभिचिष्टके अधिहरणमें वत्त मान होता है, जो जो  
 प्रभाव तत्तदोय प्रतियोगिताका प्रवृत्तदक नहीं होता,  
 जो सधारातावच्छेदक धर्म तद्विभित्त जिस किसी साधा-  
 र्य्यके साथ जिस हेतुको जो एकाधिकरण्यश्रिति है,  
 वही उस हेतुतावच्छेदकव्यभिचिष्टहेतुक है, वही साधा-  
 र्यतावच्छेदक धर्मव्यभिचिष्ट निरूपित व्याप्ति है। पर्वतोय  
 यह व्याप्यलक्षण तत्तद व्यक्तित्व धूमलक्ष्य हेतुताव-  
 च्छेदक व्यभिचिष्टका अधिहरण पर्वतवृत्तभावीय प्रति-  
 योगिताके घटत्वादि ही तरह प्रवृत्तदक होने पर भी  
 तद्विन्न वद्विलक्ष्य साधार्यतावच्छेदकव्यभिचिष्ट वहिना  
 जो सामानाधिकरण्य है, वही वद्विलक्षणवच्छिन्न ही व्याप्ति  
 हुआ। अर्थात् तादृग व्याप्तिज्ञान ही यह न्यनुमितिका  
 जनक है। इस लक्षणके प्रतियोग्यसमानाधिकरण पदका  
 नानारूप अर्थ आग्नायुषक नानाविध दोषोंका उल्लेख  
 काके विरोधविने की स्वतन्त्र अर्थ किया है, उसमें भी  
 इसी लक्षण स्वतन्त्ररूप हुए हैं। 'यादृगप्रतियोगिता-  
 वच्छेदकावच्छिन्नप्रावृत्तत्वं हेतुमतः तादृगप्रति-  
 योगितामवच्छेदकसाधार्यतावच्छेदकव्यभिचिष्टसमानाधि-  
 करण्यं व्याप्तिः।' जिस प्रकार प्रतियोगितावच्छेदक-  
 व्यभिचिष्टके अधिहरणहेतुका अधिहरण होता है, उसी  
 प्रकार प्रतियोगिताके प्रवृत्तदक धर्ममिद साधार्यतावच्छे-  
 दकव्यभिचिष्टके अधिहरणमें हेतुका वत्त मानत्व ही अर्थ  
 है। इस लक्षणमें पुनः खालद्वैकालिक मध्यममें घटसाध्य  
 महाकालव्यापिहेतुमें प्रत्याभिदोष होता है, क्योंकि सधारा-  
 यतक कालिकमध्यममें मतो अनुपूर्वा अधिहरण काल  
 होता है। अर्थात् जो प्रभाव माग का लक्षण निरा ज्ञायता

अप्रभावाके प्रतियोगितावच्छेदक व्यभिचिष्टका अनि-  
 करण कालरूप उद्वेधकरण नहीं होता, इस कारण किने  
 भी प्रभावकी प्रतियोगिताको तादृग प्रतियोगिता नहीं  
 मान सकते। अतएव उक्त लक्षण नहीं जाते। इसमें  
 बाद प्रतियोग्यमानाधिकरणपदके नानारूप पारिभाषिक  
 अर्थको कल्पना करनेने उसमें भी कानका अगदाधारत्व  
 मतमें दोष होता है। अतएव अन्तमें उन्हेने ऐसा लक्षण  
 किया है, 'निरुक्तप्रतियोग्यअधिहरणहेतुमविद्याभावाप्रति-  
 योगितासामान्यं यत्प्रवृत्तव्याच्छिन्नत्वयदभावाच्छिन्न-  
 त्वोभयाभावत्वेन मध्यमत्वेन तदभावाच्छिन्नस्य व्यापकत्व-  
 बोधः।' इन सब लक्षणोंके प्रत्येकपदकी व्याख्या और  
 स्वतन्त्र स्वतन्त्र नानारूप लक्षणोंका पाविष्टार कर अग-  
 दीग और गदाधारजन टीका अत्यन्त विस्तृत हुई है।  
 जिस जिस प्रभावकी ख्योय प्रतियोगिताके प्रवृत्तदक  
 मध्यममें ख्योय प्रतियोगिताका प्रवृत्तदक धर्मव्यभिचिष्ट-  
 का अधिहरण भिन्न होता है, जो हेतुव्यभिचरण है उस  
 प्रभावोय प्रतियोगितामें जो मध्यमव्यच्छेदयत्व है, साधा-  
 र्यतावच्छेदक जो धर्मावच्छेदयत्व है, इन दोनोंका  
 प्रभाव रघुता है, यह हेतुका व्यापक होता है। उस  
 मध्यममें उस धर्मव्यभिचिष्ट एवं तादृग व्यापकीभूत साधार्य  
 अधिहरणमें हेतुकी प्रता ही अर्थानि हुई। ख्योय प्रति-  
 योगी घटादिका अधिहरण धूमलक्ष्य हेतुके अधिहरण-  
 में वत्त मान जो जो घटादिका प्रभाव है, उस प्रति-  
 योगितासामान्यमें ही संयोगमध्यमव्यच्छिन्नत्व और वद्वि-  
 भाववच्छिन्नत्व इन दोनोंका प्रभाव देखा जाता है। अतएव  
 मयोगमध्यममें वद्विलक्षणधूमका व्यापक हुआ।  
 अतके अधिहरणमें वद्विधूम है, अतः धूम ही साहका  
 व्याप्य हुआ। मिशान्तालक्षणका प्रतियोगितामवच्छेदक  
 इसका घटक जो प्रवृत्तदकता है, यह किस प्रकार है,  
 अरूपसम्बन्धरूप है-वा प्रतियोगिताका अनतिरिक्तवृत्ति-  
 स्वरूप है। इस प्रकार आग्नायुषके प्रवृत्तदकत्व  
 निर्वोचन काके प्रवृत्तदकत्वनिश्चि नाममें दोषित-  
 कानि एक और अर्थको रचना भी है। ये सब अर्थन्य अर्थ  
 लक्षण अन्तमें निर्ये मध्यमव्यममें अनुस्थापित प्रभाव  
 पार प्रतियोगिताका अर्थम तया प्रतियोगिता और  
 प्रवृत्तदकतावा क्या मध्यम है, कीन किमका प्रवृत्त-

द्वय ही वा है, पचच्छेदक मल्लका इवा चर्मा है, पचच्छे-  
दकता हिनते प्रसारको है, निरूपितत्व चो निरूपकत्व,  
पचिहरणत्व, पचिगतत्व, विरूपकत्व, विरूपितत्व, प्रसारता,  
प्रकारिता चादि विषय विमेषद्वयमे जातता चारणक है  
चोह किमी पटायां को ले कर माहाद्वय लक्षण चोह लपका  
दोषानुगतान्तर अरने अरने व्याप्तिवाट भी इतना विच्छेद  
को मया है हि उाडे पचान करनेमें तोन चार चर्मा  
कर्तमें ।

'पञ्चाभास म प्रतिशोभो', जिनका अभाव है, यही  
पटायां चभासका प्रतिशोभो होता है, यौक्ति प्रतिशोभ  
चर्मां पचिजनमव्यय उपमे है, प्रतिशोभीका  
अभाषाण धर्मद्वय जो प्रतिशोभिता है समका इतान्तर-  
मत्तक विमेषक ही पचच्छेदक है । यह पचच्छेदक  
दो प्रकारका है,— ३ 'योगादिमें मन्वन्व्य पचच्छेदक चोह  
प्रतिशोभ्यं गमें प्रकाशोभूत धर्म पचच्छेदक, प्रतिशोभिता-  
को निरूपित पचच्छेदकता, पचच्छेदकताको निरूपक  
प्रतिशोभिता चोह प्रतिशोभिताका निरूपक ( निर्वाचक )  
चभास चादि विषय जो जातमें है, ये ही लक्षणविषयलक्षण  
क्षणमेके पचिकारी है ।

चार्थाकका कहना, 'सर्वमिदं यशस्विनियये मति  
क्यात् "तदेव तु न भवति उपायमाहातम्" चर्मां पच्य-  
चातिनिक चनुमितिद्वयमव्यय मया तयो निद चोतो है,  
लक्ष यशस्विनियय ही मके, यही यशस्विनियय तुम्हारे  
उपायका अभावहेतु अमध्य है । इन कारण यशस्विता  
निश्चय करके भी मेष निकले यशस्विनिययका उपाय  
निर्दिष्ट किया है । अनेक लक्षण पर उपायि चार चार महत्वा  
दमीं यशस्विनियय कह जो, तो भी यशस्विचार प्रान्तका  
अमहत्त्व महत्त्वचक्षण ही यशस्विनिर्णयका कारण है  
उत्तम महत्त्व ही । अन्वया प्रतिशोभी भीजनार्थ  
प्रवृत्त नहीं होता चोह जो भीजनार्थोभन मविषयत्तु किं  
कारण है उत्तम अन्वयार्थके विमेष विच्छेदक इतना  
प्रकाशक नहीं होता । इतमपचक्षणम चर्मा कह कर जह  
कही भी प्रवृत्त देगा नहीं जाता, तब पच्य ही कहना  
हीना कि भीजनार्थक प्रवृत्त भीजनमें प्रवृत्त इतना-  
अमत्त कि निर्णय का इह इतमपचक्षणम चर्मा का  
अमत्तमत्त नहीं ही कहना । अविच्छेदक चर्मा सुनि-

मत्तमत्तके अर्थमें कीट भी उपदेम वा इत्युति नहीं  
है । केवल मात्र भीजन ही प्रतिशोभन है, इन प्रकार  
भीजनमे प्रतिशोभनार्थ प्रान्तमाह व्याप्तिनिर्णयद्वयमत्त,  
मतिपट्टोभनमें प्रतिशोभकताका अनुमातापर निरूप  
द्वय प्रकता है । सुचर्मा भीजनप्रतिक्रिया अभाषक भी चोता  
है, इन प्रकार प्रतिशोभनप्रकारके नहीं रहनेके किमी  
भी भीजनमें ही प्रतिशोभनताका प्रान्तद्वय प्रतिशोभनताके  
महत्त्वार्थमें भीजनार्थों अन्वयप्रकताका अमति-  
चाति मन्वन्व्यद्वय पूर्णाति व्याप्तिनिर्णय चर्मा ही  
लोकाव है । इन प्रकार विचारपूर्णाति निश्चय  
करनेमें व्याप्तिप्रकोषय नामक व्याप्तिप्रार्थके अन्वयमत्त  
अन्वयप्रार्थकोत्त द्वय है । अर्द्ध जगद व्याप्ति-  
चार मत्तमेके निरालोचनार्थ तर्क भी विमेष उपशोभी  
होता है । महर्षि गौतमने कहा है, "अविज्ञाततय उं  
कारणोपगततः तत्प्रमाणाय" लक्षणात् ।" इतना  
ताम्ये यह हि व्याप्य का आरोप प्रवृत्त होता है, जो  
व्यापकता आरोप है वही तर्क है चर्मां जिन पटायां के  
विना नहीं रह सकता अमका आरोप या चार्थाि चर्मा  
ही अम पटायांका आरोप होता है, यही तर्क पटायां  
है । अम तर्क पटायांका प्रयोजन अविज्ञाततयपटायां-  
का तत्प्रमाण है । यह तर्क लक्षणापके अनुसार, पंच  
प्रकारका माना गया है— ५ अन्वयप्रार्थ, अन्वयप्रार्थ,  
अन्वय, अन्वयप्रार्थ, तदन्वयप्रार्थमत्त । तर्कका  
विमेष प्रतिपादन करनेमें तर्क नामक एक अन्वय प्रार्था  
गया है । व्यापकपटायांका अभावप्रकारणियय जहाँ  
रहता है, वही अन्वय प्रार्थाके आरोपार्थोभन अभावप्रकार  
प्रार्थापार्थोभनद्वय तर्क द्वय प्रकता है । प्रवृत्त यदि  
वर्द्धिप्रवृत्त ही, तो यह निर्णय चोता । इन प्रकार महत्त्व-  
माहात्म्यक व्याप्यके आरोपार्थोभन अन्वयप्रार्थ, अन्वयप्रार्थ-  
का आरोप ही तर्क द्वय । अन्वयप्रार्थमें प्रार्थापार्थो-  
भन अन्वयप्रार्थोभन अन्वयप्रार्थोभन अन्वयप्रार्थोभन  
व्याप्य महत्त्वप्रार्थोभन अन्वयप्रार्थोभन अन्वयप्रार्थोभन  
निर्णय होता है चोह प्रवृत्त यदि महत्त्वप्रार्थोभन ही, तो  
यह वर्द्धिप्रवृत्त नहीं होता, इन प्रकार तर्क अम तर्क  
प्रकारके निर्णय चर्मा मत्तमत्तमाहात्म्यक अन्वयप्रार्थोभन  
द्वय प्रकता है । अन्वयप्रार्थोभनमें व्याप्तिनिर्णय

उपाय, तर्कनिर्वाचन योद्धे उपाधि चौर सामान्यलक्षण ।  
 चतुर्धर पक्षानिर्वाचन चर्यात् निर्णयित पदार्थकी अनु-  
 मिति नहीं होनेसे अनुमितिके प्रति साध्यसन्देह चौर  
 इच्छाद्वयप्राचीन मतसिद्ध पक्षताका कारणत्वनिर्वाह-  
 पूर्वक अनुमितिसाध्य साध्यनिर्णयके प्रभावकी कारण  
 बलप्रमाण है । इसके उपर जगदीश्वरी गाढाधरी पादि  
 विद्वत्त टीका रची गई हैं । गङ्गेगनि परामर्शके कार-  
 णार्थ निवृत्त, योद्धे ग्यायावयव, तदनन्तर हेल्लामाम  
 निरूपण, अन्तमें ईश्वरानुमानका अर्थ नकर अनुमानखण्ड  
 ग्रहण किया है ।

श्रेय शब्दव्युत्पत्ति - शब्दका प्रामाण्य—अनुमान जिस  
 प्रकार प्रत्यक्षाद्यतिनिष्ठस्वतन्त्र प्रमाण है, शब्द भी उसी  
 प्रकार प्रत्यक्षानुमानोपमानमें स्वरूप प्रमाण है । महर्षि  
 गौतमकृत 'शान्तिपदोऽयं शब्दः' इस सूत्र द्वारा शब्दप्रामाण्य-  
 का लक्षण प्रतिपादित हुआ है । 'याम चर्यात् वाक्यार्थ'  
 गोचर यथायं ज्ञानवान् पुरुष है, तदुच्चारित शो वाक्य  
 है वही प्रमाण है । न्यूनव्यायके सममें प्रामाण्य, प्रामाण्य,  
 तात्पर्य और योग्यतावद्वाक्य ही प्रमाण है । क्योंकि  
 वक्ताके वाक्यार्थविषयक ज्ञान रहने पर भी तदुच्चारित  
 शोमादिमें पार अनिष्ट व्यक्तिके प्रमाणक शब्दबोध  
 उत्पन्न होता है । लौकिकवाक्यमें भी अनेक समय  
 अस्मत्क शब्दबोध हुआ करता है, इस कारण सभी  
 लौकिक वाक्यकी प्रामाण्य नहीं है । ज्ञान, प्रमाद, प्रता-  
 र्थच्छा, करपापाटय यह दोषतुष्टयरहित प्राम पुरुषो-  
 चारित ममो वाक्य प्रमाण है । तादृश प्रामोचरित ही  
 वेदका प्रामाण्य है । "मन्त्रपुत्रेदमाश्रयन्तु तत्  
 प्रामाण्यं प्रामपामाण्यत्" इस न्यायसूत्र द्वारा शब्द-  
 प्रामाण्य परोक्षप्रदर्शनमें उक्त तात्पर्यमूलक की  
 वेदप्रामाण्य सिद्धांत हुआ है और प्रामाण्य, प्रामाण्य,  
 तात्पर्य और योग्यताविशिष्ट वाक्य जो स्वतन्त्र प्रमाण है  
 उसके सम्बन्धमें पूर्वपक्ष और सिद्धांत करनेमें शब्दा-  
 प्रामाण्य नामक चिन्तामनिके अन्वय त एक विद्वत्त पक्ष  
 ही जाता है । प्रामाण्य, प्रामाण्य, तात्पर्य और योग्यता  
 इनकी पारविषयी पर पार पक्ष रचे गये हैं, तदनन्तर  
 शब्दाभिन्नतावाद और वीद्धे प्रवाहके पक्षच्छेदद्वय निवृत्त  
 अन्वयमें अस्मत्क शब्दवाद नामक और भी एक पक्षकी

रचना की गई है । वाक्यव्यवहारे वाद लो एक विशिष्ट-  
 ज्ञान उत्पन्न होता है वही शब्दबोध है । यह शब्दबोध  
 पदज्ञान ही कारण है, क्योंकि पदज्ञान पदार्थकी स्मृति  
 उत्पन्न कर उक्त विशिष्टबोधका अनुमान होता है । अनेक  
 समय पदज्ञान व्यापक प्रत्यक्षान्तर होने पर भी पद-  
 के अस्मत्प्रधान लक्षि देख कर मीनि शोशदिका शब्द-  
 बोध हुआ करता है, इस कारण पदका प्रामाण्य ही  
 उसका कारण है । पुस्तक देखनेमें हम शोशिके जो  
 ज्ञान उत्पन्न होता है, यह चिह्नविशेषद्वय प्रकाशदि  
 पक्षमें ज्ञानग्रहण पदस्मृति होता है, इसी कारण हमसे  
 पुस्तक प्रतिपाद्य विषयका अनुभव होता है । उदा.  
 प्रमाण—कोई भी मनुष्य यदि कहे कि तुम्हारे पुत्र उत्पन्न  
 हुआ है अथवा पुत्रका देहांत हुआ है तब हृदय और  
 विषाद दोनों ही होते हैं, अतएव यह कहना होगा कि  
 शब्दमें यदि केवल पदार्थावस्थिति वा पुत्रजन्य और मरण  
 एवं संशयका मरण मात्र ही हो तो हृदय और विषाद  
 किसी प्रकारमें ही सम्भव नहीं । क्योंकि कोई भी मनुष्य  
 लक्ष अथवा मरण शब्दमात्रमें हृदयविषादोपपन्न नहीं  
 होता । केवल हमारे पुत्र उत्पन्न हुआ है इत्यादि  
 विशिष्टबुद्धि होनेमें ही हृदयविषाद उत्पन्न होता है । इसकी  
 विशिष्टबुद्धि स्मृति नहीं कह सकते, क्योंकि पहले ऐसा  
 अनुभव नहीं होता । ऐसे प्रत्यक्ष भी नहीं कह सकते,  
 क्योंकि तादृश विशिष्टार्थमें इन्द्रियप्रसन्नता नहीं है ।  
 फिर यह अनुमान भी नहीं है, कारण व्याप्तिज्ञान वा  
 व्याप्तिज्ञान उपस्थापक कोई भी नहीं है । इसे उपमान  
 भी नहीं मान सकते, कारण अस्मत्क शब्द पदार्थका  
 शक्तिवाक्य कोई भी सादृश्यज्ञान नहीं है । अतएव  
 शब्दबोध स्वतन्त्र प्रमाण और तत्कारण शब्दप्रामाण्यवि-  
 द्वाय ।

उत्कर्मता, प्रामाण्य लक्षि इत्यादि निराकाहा वाक्य  
 पदादि प्रथमे लक्षितप्रमाण उपस्थापक होने पर भी उ-  
 कर्मताक प्रामाण्य लक्ष्य इत्यादि विशिष्ट बुद्धि उत्पन्न  
 नहीं होती, इस कारण उदपरोक्षत्वविशिष्ट शो "अम्"  
 पद तथा "अम्" पदोत्पत्तिविशिष्ट शब्दपद ही पद,  
 शोपदोत्पत्तिविशिष्ट "हि" पदत्वद्वय "उत्कर्मता"  
 इत्यादि स्वभाव प्रामाण्य ज्ञानकी कारणता उक्त पक्ष-





पदके वृत्तिरन्ध्रं चर्चके सायं कथ्यते—पञ्चादिका बोधजनक होनेसे योगरूढ़ है। पाचकादि गन्ध केवल स्वच्छकपदके योगार्थं मात्रका अनुभव होनेसे योगित है। ये सब विषय नामरूपमें विगोप्रकृतमें प्रतिपादित हुए हैं। प्रकृति, प्रत्यय और निवातादिके लक्षण भी यथाक्रम वर्णित हुए हैं। तदन्तर योगिक नामके पन्तर्गत समासका लक्षण और विभाग प्रतिपादन करके समास नामके स्वतन्त्र प्रकरण हुआ है। बाद पटकारक और उपाकारकका व्युत्पादनपूर्वक कारक नाम सुदीर्घ प्रकरण रचा गया है। इस कारकप्रकरणमें प्रत्याकी विभक्ति, धात्वर्थ, तद्धित और कृत इन चार प्रकारमें विभक्त विभक्ति पादिका सामान्य लक्षण और विशेष लक्षण वर्णित है। विभक्ति दो प्रकारकी है, सुप, और तिङ्। इनमेंसे सुप, कारकायं और इतरायं है, धात्वर्थमें जो विभक्तयर्थ प्रकार कह कर अनुभवका विषय होता है, वही कारकायं और तादृग सुवर्थ ही कारक है। तदितर सुवर्थ ही उपकारक है। गदापर भद्राचार्यने प्रथमादि व्युत्पत्तिवाद नामके विस्तृत ग्रन्थकी रचना कर उसमें प्रथमादिका अर्थ, उसका पन्त्य और उसके सम्बन्धमें पानुपन्निक विचारपूर्वक खमत्तम स्थापन किया है। द्वितीयादिश्रुत्युत्पत्तिवादमें अमदान्वयके कारणादि निर्देश और लक्षणमें विचार किया है तथा द्वितीयादिश्रुत्युत्पत्तिवादमें ही द्वितीयादिके अर्थ और धात्वर्थके साथ कौशा सम्बन्ध है, इत्यादि विषय लिखे हैं।

बौद्ध-न्यायः।

प्रसिद्ध बौद्ध-नैयायिक धर्मकीर्ति रचित न्याय-निर्मुषग्रन्थमें बौद्ध न्यायके विषयमें जो कुछ लिखा है उसका संक्षिप्त विवरण मोक्षे दिया जाता है। इस ग्रन्थके प्रथम परिच्छेदमें प्रथम-ज्ञानका विषय और द्वितीय एवं तृतीय परिच्छेदमें स्वार्थ तथा परार्थानुमानका विषय प्रतिपादित हुआ है। सम्यग्ज्ञान होनेसे समास पुरुषार्थ सिद्ध होते हैं, पुरुषार्थ सिद्धिके विषयमें सम्यग्ज्ञान ही एकमात्र कारण है। सम्यग्ज्ञान ही ज्ञानमें निर्वाण प्राप्त होता है। हिन्दून्मतमें भी सिद्धा है 'ज्ञानाश्रुतिः' अर्थात् ज्ञानलाभ होनेसे मुक्ति होती है। बौद्धिके मतानुसार सम्यग्ज्ञान होनेसे सभी पुरुषार्थ

सिद्ध होते हैं। पतएव जिनसे सम्यग्ज्ञान प्राप्त हो उसके लिये यत्न करना इत्येतन्ना कर्तव्यम् है।

इसोसे पहले सम्यग्ज्ञानका विषय निश्चा जाता है— 'वैश्वानरकं ज्ञानं चै' उषीका नाम सम्यग्ज्ञान है, जिसमें किसी प्रकार विमन्यद ( विपरीत ज्ञान ) और विरोध प्रकृति न हो, वही सम्यग्ज्ञानपदवाच्य है। प्रमाण द्वारा ही वस्तुका स्वच्छबोध हुआ करता है, प्रत्यय सम्यग्ज्ञान प्राप्त करनेमें प्रमाणकी विशेष आवश्यकता है। अर्थवर्णन ही प्रमाणका फल है। प्रमाण द्वारा ही अर्थकी अर्थवर्णन होती है, उसमें और किसी प्रकार का संशय नहीं रहता, उसी समय पुरुषार्थ प्राप्त होता है। पतएव जो सब विषय अधिगत नहीं है, प्रमाण द्वारा उषीको अर्थवर्णन हुआ करता है। सम्यग् पहले पहल जिस ज्ञान द्वारा अर्थ मान्य करते हैं उसी ज्ञानके अनुसार प्रवर्तित हो कर अर्थलाभ किया करते हैं। ये सब अर्थ दृष्टरूपमें अर्थागत होते हैं, यह प्रत्ययका विषयीभूत है और जो निद्रा (हेतु) दग्गंहेतु निवृत्तवर्णनमें अर्थवर्णन होता है यह अनुमानका विषय है। यह प्रत्यय और अनुमान निखिन अर्थसमूहका प्रदर्शक है, इसीसे ये दो प्रमाण हैं। यही सम्यग्-विज्ञान है, इसके अतिरिक्त सम्यग्-विज्ञान और कुल भी नहीं है। पानिके निमित्त शक्य जो अर्थ है, उसका नाम प्राप्त है और प्राप्त प्रमाणपदवाच्य है। इन दो अर्थोंके अतिरिक्त जो ज्ञान है उससे प्रदर्शित जो अर्थ है, यह अर्थका विषयमा हुआ करता है। जैसे मरीचिकामें जल, पहने ही कहा गया है कि जो पानिके लिए शक्य है वह प्राप्त है और यही प्राप्त प्रमाण है। किन्तु मरीचिकामें जल नहीं मिलता, यहाँ पर असहा प्रकल्प नहीं है, अन्तर प्रमाण भी नहीं होगा। मरीचिकामें जलकी भावना असत्ता है इसीसे उसमें जल प्राप्त असम्भव है। जहाँ जहाँ वस्तुका प्रापक नहीं होगा यहाँ प्रमाण भी नहीं होगा; मन्दिस्वप्नमें जगत्तम भाव और अभाग्युक्त कोई पदार्थ दिखनेमें नहीं आता और यह वस्तुका प्रापक नहीं है, अन्तर्गत संशय भी असम्भव प्रमाण नहीं होगा। सम्यग्ज्ञान होनेसे तत्त्वार्थ पुरुषार्थ सिद्ध नहीं होगी। पुरुषार्थ सिद्धिके प्रति सम्यग्-



(सन्तित्व) है वह द्वितीय है । तृतीय चमपचमे चमत्ता है । चमपच मन्त्रमिष चयात् विपद्य है, उसमें जो चमत्ता (चमस्तित्व) है, वह तृतीय है । इसी त्रिविध सिद्धिमें परार्थानुमान होता है ।

वस्तु धारणके प्रति दो हेतु हैं, एक प्रतिषेध हेतु और दूसरा समर्थक हेतु । अर्थात् किसी एक वस्तुका साधन करनेमें उसमें प्रतिषेधकहेतु और समर्थक हेतु देना होता है । यह प्रतिषेधकहेतु ग्यारह प्रकारका है । यथा—स्वभावानुपलब्धि, कार्यानुपलब्धि, व्यापकानुपलब्धि, स्वभावविरुद्धोपलब्धि, विरुद्धशामोपलब्धि, विरुद्ध-कार्योपलब्धि, कार्यविरुद्धोपलब्धि, व्यापकविरुद्धोपलब्धि, कारणानुपलब्धि, कारणविरुद्धोपलब्धि और कारणविरुद्ध-कार्योपलब्धि ।

स्वभावानुपलब्धि—स्वभावविक चनुपलब्धि है । यथा—“नात्र धूम उपलब्धिलक्षणप्राप्तम्यानुपलब्धेः ।” यहाँ पर धूम नहीं है, क्योंकि यहाँ उपलब्धि लक्षण प्राप्तिके अर्थात् जिनमें धूमका बोध हो सके ऐसे किसी विषयमें उपलब्धि-का बोध नहीं है । इस कारण यह स्थिर हुआ कि ‘नात्र धूमः’ अर्थात् धूम नहीं है ; यदि धूम रहता, तो धूमोपलब्धि का बोध हो सकता था । यह धूमज्ञानका प्रतिषेधक होनेके कारण प्रतिषेधक हेतु हुआ है ।

कार्यानुपलब्धि—कार्यको चनुपलब्धि यथा—“नेह प्रतिषेद्धमामर्थ्यानि धूमकारणानि नन्ति धूमाभावात् ।” पहले कदा जा चुका है कि धूम नहीं है, इस धूमके अभाववशतः अप्रतिबन्धवामर्थ्य जो धूम कारण है, वह भी नहीं है । जब धूम नहीं है, तब धूमकारण भी नहीं है, इसीमें कार्यको चनुपलब्धि हुई ।

व्यापकानुपलब्धि—व्यापक वस्तुको चनुपलब्धि, यथा—“नात्र गिंशया ह्यभावात् ।” यहाँ पर गिंशया ह्य नही है, क्योंकि ह्यका अभाव है । गिंशया एक प्रकारका ह्य है, यदि वहाँ कोई ह्य न रहे तो गिंशया ह्यरूप व्यापकका अभावहेतु गिंशया व्याप्य-को चनुपलब्धि हुई ।

स्वभावविरुद्धोपलब्धि—स्वभाववशतः जो विरुद्ध है, उसको चनुपलब्धि, यथा—“नात्र शोतस्पर्शान्तरं रिति ।” यहाँ पर चन्निमें शोतस्पर्श नहीं है । चन्निमें शोत-

स्पर्श स्वभावविरुद्ध है, परतएव स्वभावविरुद्ध वस्तुको उपलब्धि होती है । जहाँ चन्नि रहता है, वहाँ उष्णस्पर्श रहेगा । चन्निमें शोतस्पर्श वा जलने उष्ण-स्पर्श नहीं हो सकता, परतएव यहाँ पर स्वभावविरुद्धोपलब्धि है ।

विरुद्धकार्योपलब्धि—विरुद्धकार्यको उपलब्धि, यथा—“नात्र शोतस्पर्शान् धूमादिति ।” यहाँ पर शोतस्पर्श नहीं है, क्योंकि धूम है । धूम रहनेमें उष्णस्पर्श रहेगा हो, यहाँ विरुद्ध कार्यको उपलब्धि होती है । विरुद्ध-व्याप्योपलब्धि—विरुद्ध जो व्यापि है उसको उपलब्धि ।

कार्यविरुद्धोपलब्धि—कार्यविरुद्ध जो वस्तु है उसको उपलब्धि । इत्यादि लक्षण दुर्बन्धि होनेके कारण छोड़ दिये गये ।

स्वार्थानुमानके बाद परार्थानुमान लिखा जाता है । परार्थानुमान शब्दस्वरूप है । इसमें दूसरेको सम-भानेके लिये अनुमानसूचक शब्दोच्चारण करना होता है । जैसे—तुम नियय जानोगे, कि जब धूम दिखाई देता है, तब पथस्थ ही यहाँ बड़ि है इत्यादि । ‘परस्मै षट् परार्थ’; परार्थ’ अनुमान’ परार्थानुमान” दूसरेके निमित्त जो अनुमान है, उसे परार्थानुमान कहते हैं । कारणमें कार्योपचार अर्थात् कारण देखनेमें जो कार्य का अनुमान होता है, वही परार्थानुमान है । गौतमके मतमें लिङ्गज्ञानपूर्वक जिज्ञासा जो अनुमान है वह प्रायः एक ही प्रकार है । यह परार्थानुमान दो प्रकारका है, साधर्म्यवत् और वैधर्म्यवत् । यथार्थमें इसके अर्थमें कोई भेद नहीं है । प्रयोगकी जगह भिन्न होनेके कारण प्रयोगानुसार ही इसके दो भेद हुए हैं । इस परार्थानुमानमें व्याप्ति, पन्थव, व्यतिरेक पादिका विषय चालोचित हुआ है । इसी परार्थानुमान द्वारा भगवान् ऋषभदेव और वर्धमान प्रभृति योग्य द्वारादिक्षा जैनमत और गौतम तथा कपिल पादिका मत चिह्नित हुआ है । धर्मकीर्त्तिमें पहले जैन और हिन्दू प्रभृति दाग-निकांका मत पचकन कर सम्यग्ज्ञानका विषय स्थिर किया है । इस सम्यग्ज्ञानके प्राप्त होनेमें सभी पुद्गलार्थ भिन्न होते हैं, फिर कोई प्रयोग न नहीं रहता । इसका विशेष विवरण न्यायविन्दु और उनको टोकामें विस्तृत-रूपमें लिखा है ।

सोहीके आदमासके नाम से नीहा भी स्वयंका  
तर्कमात्र है। उद्योगि श्यापारके मध्य पश्चिमादि  
तर्कमासको पालोचना की है। श्याप देखो।

भारतीय समाजशास्त्रका परिचित इतिहास।

विद्य प्रचार हम भारतवर्षमें श्यापदार्शनिकी उत्पत्ति  
दूरि यो, हमका प्रथम सावधान्य करत सज्जन नहीं  
है। वर्षमान सादास्य पश्चिमीका विद्यमान है कि जोह  
प्रभृति विद्वदनात्मकविद्योका मत सज्जन कर्मके सिधे  
द्विष्टुकोमें तर्कके पक्षक नियम प्रचार किये। द्विष्टु  
कोर सोहीके पक्षर संचयके परिणाममें सृष्टपूर्व पद्यम-  
गनाम्नेमें आदमासको उत्पत्ति दूरि।

किर किमी भारतीय पश्चिमतका मत है—"वेदिक  
शास्त्रसमूहके समन्वयसाधन-निमित्त शैमिनिने जो मय  
तर्क कोर उभके नियम विधिबद्ध किये थे, यही पक्षके  
श्याप नाममें प्रसिद्ध था। श्यापदार्शन्य-धर्मसूत्रके द्वितीय  
पध्याठमें श्री श्याप शब्दका उल्लेख है, यह शैमिनिका  
पुत्र-मोमीमासिर्दृष्टक है कोर उभ पध्याठमें श्री श्याप-  
विष्णुशब्द है उसका अर्थ मोमीमास है। साधवाचार्य-  
में पूर्व मोमीमासा जो मार संचय किया था उसका  
नाम है आदमासाविस्तार। साधवर्षतिमिद्यने श्री श्याप-  
पदिखा नामक एक कोर मोमीमासा सम्यकी रचना की।  
इस प्रकार धार्मिक संचयन सम्यकी पालोचना कर्ममें  
जाना जाता है कि पक्षके श्याप शब्द मोमीमासा अर्थमें  
ही व्यवहृत होता था। वेदिका अर्थ विद्वद कर्मके  
उद्योगि जो तर्क तर्क या श्याप व्यवहृत होते हैं, वे मय  
श्याप सुग्रहसामाथमें संव्यहृत हो कर शिव साक्षको  
उत्पत्ति दूरि यही पश्चोचिकी-विद्या नामके प्रसिद्ध था।  
पध्याठमें सज्जनि शैमिनिका उद्घाटित तर्क समूह की  
पश्चोचिकी विद्याका बीज है, यही तर्क समूह श्याप  
कहा जाता था। शब्दका निवासिध, शोभायाका सज्जन,  
सृष्टि इत्यादि तत्त्वसमूहका पश्चोचिकी विद्यामें पला-  
निविष्ट करके शैमिनिने श्री दार्शनिक मत प्रचार किया,  
यह साक्षरममें श्याप-साक्ष नाममें प्रचलित हुआ।

सादास्य कोर एक भारतीय विद्वानोंने श्यापदार्शनिक  
की उत्पत्तिके विषयमें जो सावधान्य कोर सृष्टि उद्घाट  
की है, हम सोहीके पुत्र विचारके लक्षणा पदिबद्ध

समोचोत के वा शेष नहीं होता। बुद्धदेवके समूहद्व-  
के बाद द्विष्टु कोर सोहीके संचयमें श्याप या तर्क-  
विद्याको उत्पत्ति दूरि पद्यका मोमीमासा तर्क समूह की  
पुत्र-श्यापमें पश्चोचिकी नाममें प्रचलित था कोर सोही  
शैमिनिका श्यापसूत्र प्रचारित होने पर पश्चोचिकी शब्द  
ही श्यापसाक्षदार्शनिक नाममें प्रचलित हुआ है, उभ सृष्टि का  
समर्थन नहीं किया जाता। शोभाया देखो। श्यापसाक्ष  
का शेष उत्पत्तिदूरि ही पक्षका है। ठीके मतमें श्याप-  
दार्शनिकमत प्रचलित होता था रखा है। शैमिनिने  
उसका कोर कोर मत संचयित कोर परिचालित कर  
के अपने सूत्रके मध्या पश्चिमत लिखा है।

वेदान्तिक संचयना श्रमना है कि उत्पत्तिदूरि या  
वेदान्तमें सृष्टि, सदाचार्य कोर नियमन में शोभाया प्रचल  
कोरत हुए हैं। पक्षके देखा जाता है कि श्यापदार्शनिक  
शैमिनिने सृष्टि द्वारा प्रतिष्ठा कोर उत्पत्ति इन दोनोंकी  
पश्चिमत मान कर पश्चात्तय कोरत किया है। कोर  
कोर शैमिनिने सृष्टि द्वारा संचयन साक्षदार्शनिक भाष्य-  
में, "श्यापदार्शनिक ने श्यापिका श्यापे सज्जन" इत्यादि  
उक्ति देव कर कहते हैं कि शैमिनिने श्यापसूत्र पश्चि  
कोरके पक्षमें भी शैमिनिने श्यापिक प्रचलित किया था। श्याप-  
यत्नके पक्षमें कोर कोर शैमिनिने श्यापिक श्यापे सज्जन कोरत  
करते हैं, श्यापदार्शनिक उसका भ्रम मत सज्जन किया  
है। किन्तु शैमिनिने पक्षमें शिवा पुत्रके श्यापे सज्जन  
कोरत कि पक्षके श्याप प्रचार नहीं किया।

सभी द्विष्टुसाक्षके मतमें—शैमिनिने श्यापसूत्रके  
प्रचलन में। शैमिनिने श्यापसूत्रके श्यापे सज्जन या  
तर्कमासको पद्यके वेदिका श्यापे सज्जनका है।

"प्रतिशब्दद्वारे श्यापकोर यही शैमिनिने श्यापे सज्जन  
द्वारे" ( श्यापे सज्जन )

श्यापसाक्षके मतमें—श्यापसाक्ष श्यापे सज्जन  
पश्चिमत है। श्यापे सज्जनद्वारा श्यापे सज्जन कि—"श्याप-  
सज्जन" नामक शब्दके श्यापके श्यापे सज्जन  
शैमिनिने श्यापसाक्षके श्यापसाक्ष श्यापे सज्जन  
श्यापे सज्जन कोर श्यापे सज्जन श्यापे सज्जन है।

श्यापे सज्जन श्यापे सज्जन श्यापे सज्जन श्यापे सज्जन  
श्यापे सज्जन श्यापे सज्जन श्यापे सज्जन श्यापे सज्जन

नाम माधवाचार्य के सर्व दर्श मसं ग्रहमें पाया है किन्तु भक्षपाद नाम नितान्त आधुनिक नहीं है, यह ब्रह्माण्ड-पुराणकी उल्लिखित द्वारा प्रमाणित होता है ।

पाश्चात्य पण्डितोंने लिखा है कि पूर्वो गताष्टीमें ब्रह्माण्डपुराण और महाभारत यवदोषमें लाया गया था । सुतरां पूर्वो गताष्टीके बहुत पहिलेमें 'भक्षपाद' नाम प्रचलित था, इसमें सन्देह नहीं । बोद्धोंके लद्दावतार सुत्रमें भक्षपाद-दर्शनका उल्लेख है । उद्योतकराचार्यने न्यायवार्तिकमें और पीछे वाचस्पतिमिश्रने वार्तिक-तात्पर्यटीकामें न्यायशास्त्र प्रवर्तक भक्षपादको प्रथम कर अपने अपने ग्रन्थका आरम्भ किया है । उद्योतकर और वाचस्पति दोनों ही माधवाचार्यके बहुपूर्ववर्ती थे, इसमें सन्देह नहीं ।

भक्षपाद नाम क्यों पड़ा, इस सम्बन्धमें आधुनिक नैयायिक समाजमें जो भाष्यायिका प्रचलित है वह इस प्रकार है ज्ञानदेवायन वेदव्यासने गौतमप्रणीत न्याय-सूत्रकी निन्दा की थी । इस कारण गौतमने प्रतिज्ञा कर ली कि वे फिर कभी नहीं वेदव्यासके मुखदर्शन करेंगे । इस पर वेदव्यासने उनको यथेष्ट मान्यता की । किन्तु गौतमने जो प्रतिज्ञा की है, वह कदापि टपनेकी नहीं । पीछे गौतमने पादमें पंचि प्रकाशित करके उभे द्वारा व्यासका मुखावलोकन किया । गौतमका भक्षपाद नाम पड़नेका यही कारण है ।

वह भाष्यायिका किसी पुराणादिमें लिखी नहीं है । ब्रह्माण्डपुराणमें जाना जाता है कि भक्षपाद और कृष्णपादके पीछे ज्ञानदेवायन व्यास प्राविर्भूत हुए थे । फिर महाभारतके पाद पत्रमें ( २१२७५ ) और शांति पत्रमें ( १८०४०-४८ ) पान्चोपनिषद् और तर्कविद्याका यथेष्ट निन्दावाद है ।

"आन्वोपिषी तर्कविद्यामनुष्यो निरधि काम् ।

हेतुवादान् प्रवदिता बला संघत्य हेतुमत् ।

आक्रोश प्राविक्त्वा च तद्व्यासपुत्रे च शिवात् ।"

यहां तक कि पान्चोपनिषद् और तर्कविद्यान्यायिकीके शृंगारयोगिनी प्रौढिकी कथा भी वेदव्यास और वाचस्पतिकी निन्दनेके लिये नहीं छोड़ी । साक्ष्य होता है, इत्यादि

निन्दावाद देख कर ही भक्षपादको भाष्यायिका कहियत हुई होगी ।

पान्चोपनिषद्के सम्बन्धमें मधुसूदन सरस्वतीने प्रख्यान-मिद नामक ग्रन्थमें लिखा है—

"न्याय आन्वोपिषी पञ्चाध्यायो गौतमेन प्रणीता ।"

ज्ञानदेवायनके समयमें जो नैयायिकगण विद्यमान थे, महाभारतमें ही उसका यथेष्ट परिचय पाया जाता है ।

महाभारतके सुविख्यात टीकाकार नौलकण्ठ उपरोक्त महाभारतवर्णित पान्चोपनिषद् और तर्कविद्या शब्दको ऐसी व्याख्या की है—

"इच्छा प्रत्यक्षं तामनुप्रवृत्ता ईसा पन्वोत्ता धूमादि-दर्शनं न वह न्यायानुमानं तत्प्रधानामान्चोपनिषद् तर्क-विद्या कथमन्वाच-चरणादिप्रणीतं शास्त्रं ।"

देवत्वामो, विमलशेष पादि महाभारतके प्राचीन-तम टीकाकारोंने भी नौलकण्ठ सरोषी व्याख्या की है ।

मनुसंहिताके सिधातिवि-भाष्यमें भी 'पान्चोपनिषद्विषयि तर्कविद्याय शास्त्रादिका' ऐसा लिखा है । किसी भी प्राचीन संस्कृत ग्रन्थमें पान्चोपनिषद् शब्दका पद्य 'पूर्वमीमांसावर्णित युक्ति' है ऐसा कहेंगे भी नहीं मिला । सुतरां पान्चोपनिषद् विद्या मीमांसाशास्त्रसम्भूत है ऐसा नहीं मान सकते । मीमांसामूलक होने पर वेदव्यास कभी भी पान्चोपनिषद् विद्याका निन्दावाद नहीं करते थे । वेदव्यासने पान्चोपनिषद् वा नैयायिकोंकी क्यों निन्दा की है ?

पादिपत्रमें २१२७५ श्लोकमें— "नैयायिकानां मुखयोग बहूपस्थाकजेन च । इत्यादि श्लोकमें विमलशेषने दुष्ट-टाय प्रकाशिकी नामक भारतटीकामें लिखा है, "नैयायिकानां मुखेन युक्तिरैव सनीयधी न तु नृतिरिति मन्व-मानिनं धर्मात् नैयायिक लोगोंने नृतिके प्रमाणकी अपेक्षा युक्तिकी ही प्रधान माना है । किन्तु मीमांसकगण उसका ससटा मानते हैं । नृतिकी अपेक्षा युक्तिका प्राधान्य श्लोकार करनेमें ही नैयायिकगण वेदव्यासके निकट निन्दित हुए हैं ।

मीमांसकगण वेदकी परोक्षरूप और नैयायिकगण परोक्षरूप मानते हैं, यह भी निन्दाका अत्यन्त कारण हो सकता है ।

मनुष्यविराजते भाष्येने शिष्यानिमित्तं श्री शिष्या के—  
 "ननु प्रजाया दत्ता शोचि क प्रमादप्रदपित दत्ता मया  
 ये मोदिकभोकादिका कृत्वा १— कविपकदादिकाया  
 मविरमनामि दत्ताभादिपु हि मया प्रमाणं तथा वाच  
 पाटमयम् । दत्ताभासुमन्तोदमा इत्याः प्रमाणाणि श्री शि  
 पिहा एति" ( १३१+६ ) यदा शिष्यानिमित्तं श्री श्याय  
 मोदिकभोकोकादिका, कविप पादि शिष्यविराजते-  
 श माय एक शोदीभूक शिष्या के ।

प्रजाभासुमन्तो क र श्याययत्ने प्रयोधाकाल्ये  
 श्री "शे वापिच" मन्त्रेण उक्तेषु ये । इमो अनुमान  
 किया जाता है कि श्यायप्रवचनार्थे पहले श्री श्याय-  
 भाष्यका प्रचार हुआ था । एतद्विषय वाचिनिमित्त एक-  
 पादिप्रमाणे 'श्याय' और मन्त्र मयमूलक धारा १० श्रुतमें  
 शे वापिच मन्त्रप्रोक्ता किया है । 'सुश्रुतमें तर्कप्रवचनका  
 नाम और शकमंशिकामें सुश्रु, उपनय, प्रवचन, अनुमान  
 इत्यादि सूक्ष्म वाचिभावित मन्त्र दत्ता श्यायभाष्यका  
 प्रमत्त सुचित हुआ है ।

प्रवरव्याप्तिने श्रीमान्भाष्यमें उपरवर्ति भाष्यके जो  
 वचन लक्ष्मण से है, तन्मो स्पष्ट ज्ञान ज्ञाता है कि  
 उपरवर्ति श्रोतमने श्यायप्रमि उपरही तरह ज्ञानकार से  
 और मन्त्रों श्रोतमथा मन्त्र उर्ध्व प्रवचन विद्या है ।  
 श्रीताया श्रोतने उपरवर्तिप्रवचन, शिष्यविश्वामित्रापुरुष-  
 चरित, कविमन्त्रक प्रवचन पादि मन्त्र प्रवृत्तिने ज्ञान  
 होता है कि उपरवर्ति प्रवचन मन्त्र प्रवचनमें वाचिषो  
 इत्याद्योर्ध्व उपरि विद्यमान है ।

प्रवचिक प्रमि प्रमाण प्रेमनेये यह सूक्ष्मप्रमि ज्ञान  
 ज्ञानमता है कि श्यायप्रवचने वाचिभाव कर्त्त से प्रमि  
 प्रमि श्रोतमता श्यायभाष्य प्रवचन हुआ था, इममें  
 प्रमि प्रमि ।

प्रजाभासुमन्तो क प्रजाभासुमन्तो क प्रजाभासुमन्तो क  
 किया है कि प्रमि दत्ताभासुमन्तो क प्रमि प्रमि प्रमि  
 है । किमो शिष्याय एक मा मन्त्र है कि श्यायप्रममने  
 दत्तनीश शिष्य है । किन्तु शिष्य शिष्य दत्तनीशमनुष्य-  
 श्री दत्तनीशमनुष्य प्रमि कोन प्रमि और कोन कोन दत्तन  
 हुआ है इववा शिष्य प्रवचन प्रमि प्रमि प्रमि है । शिष्य  
 एक श्री दत्तनीशो एक श्री श्याय शिष्य शिष्य दत्तनीश

दत्तनीशे ज्ञानी है । श्री श्ये—श्रोतमयुक्तका १३२ ( १० श्रुत  
 और मन्त्रप्रवचन १३१+१० श्रुत, शिष्य प्रवचनप्रवचन  
 १३१+१० श्रुत और श्रोतमयुक्तका १३१+१० श्रुत शिष्याने  
 शिष्य दत्तनीश श्रोत पर भी एक श्री श्याय प्रेमनेये ज्ञानी  
 है । श्ये श्याय पर श्रोत शिष्यका प्रमि प्रमि है, यह शिष्य  
 करना प्रमि प्रमि है । इस प्रकार शिष्य दत्तनीशे एक श्री  
 कथा पा कर दत्तनीश मन्त्र अनुमान कर्त्त है कि  
 श्रोतम, कथाद वा श्यायप्रवचने प्रममने वा प्रमने प्रमि  
 श्री श्यायप्रममें ये मन्त्र श्रुतियां वा दत्ताभासुमन्त्रिण ये ।  
 यथायंमें ये मन्त्र श्रुतियां वा शिष्याका श्यायनिमित्त वा  
 प्रमि प्रममने यथायमय दत्तन श्री प्रमने है, इमनिमि प्रमि  
 प्रममप्रवचन श्री कर श्री प्रमम कर, श्री शिष्य प्रममने, श्री  
 प्रमि है । शिष्य मन्त्रे दत्तनीशका एक शिष्यप्रवचन वा वाचि-  
 भाष्यप्रवचन के श्री एक दत्तनीशे शिष्या प्रमने दत्तनीशे प्रमि  
 है और शिष्यप्रवचनप्रममने श्री शिष्य प्रमम दत्तनीशका  
 शिष्य शिष्य नाम प्रमि है ।

शिष्य दत्तनीशका श्री शिष्यप्रवचन है, प्रममका प्रमम दत्ति  
 प्रमम श्रीश्रीको शिष्य दत्तनीशे शिष्ये श्री श्य प्रमम कर्त्तना  
 प्रमि प्रमि कि शिष्य दत्तनीशे प्रमने दत्तनीशका शिष्य प्रमम  
 प्रमम शिष्या है, यह दत्तनीश प्रमममका मने शिष्यप्रवचन हुआ  
 है । श्यायप्रममें 'ननु प्रवचनार्थे वाचिषो श्री श्ये शिष्या-  
 दिवम्' ( १३२ ) इत्यादि श्रुतमें स्पष्ट श्रोतमिक मन्त्र-  
 प्रवचन, "दत्ताभासुमन्तो मन्त्रात्, सुश्रुमन्त्रिण" ( १३० )  
 और "श्रीश्यायप्रवचनम्" ( १३६ ) इत्यादि श्रुतमें  
 श्रोतमयुक्तका प्रवचन और "श्यायप्रवचनम्" ( १३० )  
 इत्यादि श्रुतमें प्रमाणमयुक्तका मन्त्र प्रवचन हुआ है ।

श्री शिष्याने श्रीमान्भाष्यमें "श्यायप्रवचनम्" मन्त्रप्रव-  
 चन प्रममप्रवचन श मनुष्यदत्तनीश शिष्यप्रवचने प्रममप्रव-  
 चनप्रवचन श्यायप्रवचनमने प्रममम्" ( १३१ )

"कथादिपि कौशिकः प्रजायते न" ( १३१ )  
 इत्यादि श्रुतमें श्यायप्रवचनका मन्त्र प्रवचन हुआ है और  
 श्री शिष्याने श्याय प्रवचन प्रमम है ।

शिष्य शिष्याप्रममें "श्यायप्रवचनम्" श्री शिष्या-  
 ( १३१ )

"श्यायप्रवचनम् शिष्याप्रवचनम्" ( १३१ )  
 शिष्य "श्यायप्रवचनम् श्यायप्रवचनम्" ( १३१ )

इसके अनाथों (१३११) और (१३१२) सूत्रों में जैमिनि का मत एवं "तर्कप्रतिष्ठानात्" (२११११) इत्यादि सूत्रों में न्यायशास्त्र का मत खण्डित हुआ है।

उपर्युक्त प्रमाणानुसार देखा जाता है कि सांख्य-सूत्र, जैमिनिसूत्र और वेदान्तसूत्रों पर दर्शन का मत-खण्डन और दर्शनकारों के नाम हैं तथा पातञ्जलसूत्र में भी परमाणुप्रसङ्ग रहनेसे कोई कोई उन्हें वैशेषिक के परवर्ती मानते हैं। किन्तु वैशेषिक और न्यायसूत्रों में हम लोग किसी दूसरे दर्शनकारों के नाम वा मतों को नहीं पाते। इस दृष्टांतसे वैशेषिकसूत्र को ही प्रचलित-परंपरा पर दर्शनसूत्रसे प्राचीन मान सकते हैं। महाभारत-पार्व्याय तर्कालंकार महाशयने जो मत प्रकाशित किया है उसको हम युक्तिपूर्वक समझते हैं।

न्यायसूत्रके (१११५) भाष्यमें यादस्यायनने जो मत प्रकाशित किया है उससे मालूम होता है कि उनके पहलेसे ही सूत्रका प्रकृत पाठ और प्रकृत अर्थ से कर कुछ गड़बड़ी हुई थी। फिर एक जगह वात्स्यायनने कहा है कि गौतमने जिमका विस्तारके भयसे छोड़ छोड़ दिया, वह वैशेषिक दर्शनमें ग्रहण करना होगा। इससे ज्ञाना जाता है कि वैशेषिक और न्याय ये दो ही कर एक दर्शन गिना जाता था और नैयायिक लोग उसी धर्त गौतमसूत्रमें नहीं रहनेके कारण वैशेषिककी सहायतासे सब विषयोंकी मोमांसा करते थे। यद्यार्थमें न्याय और कणादसूत्रको पालोचना करनेसे वे दोनों एक माताके गर्भजात, एक माय यदितं और एकत्र प्रतिष्ठित हुए थे-पिसा जाना जाता है। दोनोंमें वैशेषिक बड़ा और चपटा छोटा समझा जाता है। वैशेषिककी बहुत-सी धर्त न्यायसूत्रमें और न्यायसूत्रकी बहुत-सी धर्त वैशेषिकसूत्रमें लिखी हैं। कणादसूत्रमें द्रव्य, गुण, कर्म, सामाना, विभेय और समवाय ये छः पदार्थ तथा गौतमसूत्रमें प्रमाण, प्रमेय, संशय, प्रयोजन, दृष्टान्त, सिद्धांत, चक्षय, तर्क, निर्णय, वाद, जल्प, वितण्डा, हित्वाभास, ह्य, आति और निग्रहप्रदान ये सोलह पदार्थ धर्तित हुए हैं।

यद्यत्र उठता है कि गौतम और कणाद दोनों ही एक विभेयसूत्रमें तर्कशास्त्रकी पालोचना की है,

तब एकका नाम न्याय और दूसरेका वैशेषिक होनेका कारण क्या ?

तर्कशास्त्रकी पालोचना करने पर भी कणादने सुप्रमाणादयमें और सुशुद्धत भावमें इस शास्त्रको पालोचना नहीं की। वे "विभेय" नाममें एक विभेय पदार्थको लोकार करते हैं, इस कारण उनके दर्शनका वैशेषिक नाम पड़ा। वैशेषिक देखो। गौतमसूत्रमें दूसरे मभी दर्शनको अपेक्षा सुशुद्धतभावमें न्यायकी विस्तृत पालोचना है, इस कारण उसका न्यायदर्शन नाम पड़ा है। इस सम्बन्धमें रघुनाथने लौकिक न्यायसंग्रहमें लिखा है—

"अनाचारस्थेन व्यपदेगा भवन्ति इति श्यायः। यथा गौतमोक्तशास्त्रे प्रमाणानि पौष्ट्यपदार्थप्रतिपादनेऽपि तदेकदेगन्यायपदार्थस्य अस्याशास्त्रापेक्षया प्राधान्येन प्रतिपादनात् न्यायशास्त्रमिति तस्य मंत्रा।"

न्यायसूत्रके भाष्यकार यादस्यायनने लिखा है—  
"प्रदीपः सर्वविद्यानामुपायः सर्वकर्मणाम्।  
आधयः सर्वधर्माणां विरोधे प्रधीर्तिता।" (१११११)  
तर्कविद्या मभी विद्याओंका प्रदीपस्वरूप है, सभी कर्मोंका उपाय और निखिल धर्मका आश्रय है।

मानव मिथ्याज्ञानवशसे ही माना कर्मानुष्ठान करके जन्मलाम और बहुत दुःखभोग करते हैं। सुतरां मिथ्याज्ञान रहनेसे मानवका दुःखोच्छेद नहीं हो सकता। दुःखोच्छेद करनेमें पहले मिथ्याज्ञानका उच्छेद आवश्यक है। सर्वत्र तत्त्वज्ञान ही मिथ्याज्ञानका निवर्त्तक है। चाक्षतत्त्वज्ञान होनेसे ही मिथ्याज्ञान जाना जाता है। उस समय मिथ्याज्ञानजय दुःख पावसे चाप तिरोहित हो जाता है। चाक्षतत्त्वज्ञान ही मुक्ति का परम उपाय है। इस चाक्षतत्त्वके अर्थमें सम्प्रदायके भेदसे माना प्रकारके मतभेद देखनेमें धर्त है। इस कारण हममें लोगोंकी माना प्रकारका सन्देह हुआ करता है। उससे चाक्षतत्त्वका निर्णयज्ञान होना दुःकर है। अतएव सन्देह दूर करके निर्णय करनेमें विचार आवश्यक है। मुमुक्षु किस प्रकार उसका विचार करे, अर्थात् गौतमने न्यायसूत्रमें यह विचारपथाकी निरूपण की है और विचार करनेमें उसका प्रयोजनीय





६। ७८ ई०में कनिष्कका अभियेक हुआ। इस हिमावसे छठी शताब्दीके द्वितीयाईमें सम्राट् और वसुवन्धुका समय मान सकते हैं। दिङ्नाग कानिदासके प्रति-द्वन्द्वी और सम्राट्के मिथ्ये। सम्राट् और वसुवन्धु विक्रमादित्याके समसामयिक माने जाते हैं। सुतरां विक्रमादित्य, कानिदास और दिङ्नाग ये तीनों छठी शताब्दीके मनुष्य होते हैं।

मोक्षमूलरके उक्त मतको समीचे अधिकांग लेखक ग्रहण करते हैं। किन्तु उक्त मत समीचेम-सा प्रतीत नहीं होता। यूपनसुवह्मका भ्रमणहत्तान्त और उनके जोषनी पदनेसे ऐसा ज्ञान नहीं पड़ता कि उनके गुरु गीलभद्र सम्राट्के बोधिसत्त्वके मिथ्ये थे। चीनपरिव्राजक यूपनसुवह्मने सम्राट्के बोधिसत्त्व, उनके भाई वसुवन्धु और गीलभद्रका यथेष्ट परिचय दिया है। किन्तु कहीं भी उन्होंने गीलभद्रको सम्राट्का मिथ्ये नहीं बतनाया है। गीलभद्र यदि सम्राट्के मिथ्ये होते, तो चीनपरिव्राजक कभी भी उनके जन्मकिये विना न रहते, बल्कि उनके उल्लेख करनेमें गुरुका भीरव समझते। सम्राट्के बोधिसत्त्व चीनपरिव्राजकके भै कहीं वर्ष पहले विद्यमान थे। सम्राट्के भाई और मिथ्ये वसुवन्धुके परिचयके स्थान पर चीनपरिव्राजकने लिखा है, "बुद्धनिर्वाणके बाद हजार वर्षके मध्य वसुवन्धु और उनके मिथ्ये मनोज्ञत पाविर्भूत हुए थे।" चीनशास्त्रावत् स्यामुएन विल साहबने उक्त विवरणको टीकामें लिखा है, 'उस समय च.नबोधगण ५५० ई०-सन्के पहले बुद्धके निर्वाणकालको कल्पना करते थे।' इस हिंसावसे वसुवन्धु और उनके भाई सम्राट् दूमरी शताब्दीके मनुष्य होते हैं।

चीन-बोध ग्रन्थसे जाना जाता है कि वसुवन्धु और दिङ्नागाचार्य दोनों ही सम्राट्के मिथ्ये थे, इस तरह दिङ्नागाचार्यको भी दूसरी या तीसरी शताब्दीके मनुष्य मान सकते हैं।

चीनपरिव्राजक यूपनसुवह्मने लिखा है कि वसुवन्धु यावक्षीराज विक्रमादित्यकी मर्मांसे उपस्थित हुए थे। चीनपरिव्राजक फाहियान पूर्व शताब्दीमें यावक्षीका सम्पूर्ण भ्रमणवर्षोंके लेख गये थे। इस हिंसावसे प्रथी शताब्दीके पहले वसुवन्धु जो यावक्षीवर्मानसे उपस्थित

हुए थे, इसमें सन्देह नहीं। वसुवन्धुविरचित शत-शास्त्र और बोधिविज्ञानोपादानशास्त्र कुमारजीवसे ५०४ ई०को चीनभाषामें अनुवादित हुए। एतद्विषय उनके दूसरे दूसरे ग्रन्थोंसे शताब्दीको चीनभाषामें अनुवादित हुए थे। फिर कोई कोई चीनपरिव्राजक इतिहासका विवरण उद्धृत करके कहते हैं कि बोध नैयायिक धर्म-कीर्ति इतिहासके समसामयिक थे। इतिहासने ६८५ ई०में अपना ग्रन्थ समाप्त किया। अतएव उनसे कुछ पहले धर्म-गोति ने ख्याति नाम को थी। इतिहासकी कथा एक कालमें ही शिखाग्रवर्षों नहीं है। इसमें तत्कालीन समस्त इतिहासविद्वह्मोंको अनेक बातें हैं जो किशो मत्तसे प्राचीन माना नहीं जा सकती। चीन और भोटके समीचे बोधग्रन्थोंमें धर्म-कीर्ति सम्राट्के मिथ्ये बतलाये गये हैं। सम्राट् वसुवन्धुके व्येष्ट सद्योदर और गुरु थे, यह चीनपरिव्राजक यूपनसुवह्मके भ्रमणहत्तान्तमें लिखा है।

चीन बोधसमाजमें बोधिसत्त्वोंकी जो धार्माधिकतालिका प्रचलित है उससे इस प्रकार जाना जाता है— वसुवन्धु २१वें, उनके मिथ्ये मनोज्ञत २२वें और बोधिसत्त्व धर्म २३वें बोधिसत्त्व हुए थे। उक्त बोधिसत्त्वने ५२० ई०को चीनदेशमें पदार्पण किया। इस तरह उनके बहुमतवर्ष पहले वसुवन्धुका पाविर्भाव स्वीकार करना पड़ता है। मोक्षमूलरने खय लिखा है, कि प्रसिद्ध नैयायिक धर्म-कीर्ति वसुवन्धुके मिथ्ये थे। अतः प्रथी शताब्दीके बहुत पहले धर्म-कीर्तिको चीन साबित होता है। पापु-निश भोटदेशीय ताराणाय और रत्नधर्मराजका उपास्थान धर्म-तिहासिक थीं समीचेचीन होनेके कारण उसका परिव्याग करना उचित है। बोधशास्त्रकी शोचोचना करनेसे यह स्पष्ट जाना जाता है कि ३री या ३री शताब्दीके मध्य सम्राट्, वसुवन्धु, दिङ्नाग और धर्म-कीर्तिने बोधसमाजका अस्तित्व किया था।

दिङ्नागादिके बहुत पहले पापु-शास्त्रोंमें पावि-भूत हुए थे। भोटदेशीय बोधग्रन्थके मतसे बुद्धनिर्वाणके ५०० वर्षों के बाद राजा कनिष्क और न शास्त्रिका अभ्यु-दय हुआ था। भोटदेशीय बोधग्रन्थके मतानुसार ६०० वर्षों के बाद पहले बुद्धदेवता निर्वाण हुआ। अतः



“अग्निशुभ्रययस्य प्रमाचन्द्र” कवि” इत्ये ।

कृत्वा चन्द्रोदय” येन सङ्घदाश्रयादित” जगत् ॥

चन्द्रोदयस्तस्य सः केन न गतयेत् ।

शुद्धाङ्गनाम्नापि सत्वां शेषतः गतम् ॥

महाकलं कभीवालनामकशरिणां गुणाः ।

विदुषां हृदयारुहा हागुणस्तैरिति निर्मला ॥”

उपर्युक्त इन्डोकेमें जिनसेनने जिस प्रकार प्रमाचन्द्रकी प्रगप्सा की है, वह सन्नेषयोग्य है । प्रमाचन्द्र यदि उनके समसामयिक होते, तो जिनसेन अवश्य ही उसका जिक्र करते । इस तरह हम लोग प्रमाचन्द्रकी जिनसेनके पूर्ववर्ती भर्षात् ७वीं शताब्दीके मनुष्य मान सकते हैं । माणिकरान्दी उनके पूर्ववर्ती थे, क्योंकि प्रमाचन्द्र अपने प्रथम माणिकरान्दीको यद्येष्ट प्रगप्सा कर गये हैं । दिगम्बरीके सरस्वतोगच्छकी पहायलोके मन्से माणिकरान्दी ५८५ विक्रम-सम्भूतमें भर्षात् ५२८ ई० में पहचर हुए थे । पहचर होनेके पहले भर्षात् ५२० शताब्दीके प्रथमभागमें माणिकरान्दीने ‘परोक्षासुख’ की रचना की । पहले ही कहा जा चुका है कि माणिकरान्दीने विद्यानन्द पातङ्गरीका नाम और उनके भाद्रमीमांसाको सञ्ज्ञत की है । इस प्रकार विद्यानन्द माणिकरान्दीके पूर्ववर्ती और ५वीं शताब्दीके किसी समयके मनुष्य होते हैं ।

प्रमाचन्द्र और जैनशोकयागितिकार विद्यानन्द दोनों ही कुमारिलभट्टके मत का पालन किया है । उनके प्रथम दिङ्नाग, उद्योतकर, धर्मकोर्ति, भरतुहरि, गवरसामो, प्रमाकर और कुमारिलके नाम साफ साफ उल्लेख हुए हैं । इसके पन्नाया विद्यानन्दने ‘ब्रह्मादेव-वाट’ नामक गङ्गावायं प्रवर्तित शब्दतत्वादाका पालन किया है ।

अधिक दिनकी बात नहीं है, कि अध्यापक पितृसंन साहबने गुजरातके पाटनगढ़के ‘कौशाचार्य’ मन्त्रवादि-विरचित न्यायविन्दुटिप्पण नामक एक जैनन्याय-ग्रन्थ संग्रह किया है । धर्मतराचार्यने धर्मकोर्तिरचित न्याय-विन्दुकी जो टीका लिखी है, उस टीकाका मत पालन करनेके लिये ही मन्त्रवादीने ‘न्यायविन्दु-टिप्पण’ प्रकाशित किया । पितृसंन साहबने जैनशास्त्रके दिग्दर्शक

है, कि मन्त्रवादी ८८४ वीरगताब्द भर्षात् ३५८ ई० में विद्यमान थे ।

अभी हम लोग जैनयाज्ञानुसार देखते हैं कि मन्त्रवादीके पहले धर्मोत्तर, धर्मोत्तरके पहले धर्मकोर्ति, उनके पहले उद्योतकराचार्य और उद्योतकरके पहले दिङ्नागाचार्य होते हैं । पहले किसी ग्रन्थका प्रचार, पीछे स्थानिविस्तार, बादमें उसका यादप्रतिवाद हो कर टीका टिप्पणका प्रकाश बहुत छोड़े समयमें नहीं हो सकता । जिन समयकी बात कह रहे हैं, उस समय मुद्रायन्त्र नहीं था अथवा प्राप्त करनेके जैसा मुद्रक-प्रचारकी सुविधा भी न थी । इस हिसाबसे एक पुस्तकके तैयार हो जाने पर सब जगह उसका प्रचार होने और भिन्न सम्प्रदायसे उसको टीका टिप्पण करनेमें कमसे कम ३-४० वर्ष समते थे । अतः मन्त्रवादीके सो वर्ष पहले हम लोग दिङ्नागका होना शोकार कर सकते हैं । इसके पहले चोनदेगोय प्राचोन बौद्धग्रन्थानुसार मालूम हुआ है कि दिङ्नागाचार्यके गुह चन्द्र और वसुवन्धु २री या ३री शताब्दीके किसी समय विद्यमान थे । अभी जैनग्रन्थ बौद्धमतका ही समर्थन करता है ।

पहले कहा जा चुका है, कि विद्यानन्द पातङ्गरीने ५वीं शताब्दीमें एकलङ्क और समन्तभद्रके नाम तथा पञ्चका उल्लेख किया है । एकलङ्कने ही पट्टगती नामक समन्तभद्रकी भाद्रमीमांसाकी टीका लिखी है । सुतरां समन्तभद्र ४वीं शताब्दीके बहुत पहले आविर्भूत हुए थे, इसमें मन्दे नही । श्वेताम्बर जैनियोंके लङ्केश्वर-तरगच्छकी पहायलोके अनुसार वनवासयोगच्छप्रथमके समन्तभद्रमूरि ५८५ वीरगताब्दके कुछ पहले भर्षात् ५८ ई०के पहले पहायलित हुए । जैनियोंके मतसे उनके पहले ही उन्होंने भाद्रमीमांसाकी रचना की । इस समन्तभद्रकी भाद्रमीमांसामें विभिन्न शार्वाणिक मतपण्डनेमेंसे न्यायभाष्यकार शाक्यायन मुनिका मत उल्लेखन भी देखा जाता है । सुतरां शाक्यायन ३री शताब्दीके बहुत पहले आविर्भूत हुए थे ।

प्रसिद्ध जैनशास्त्र-विद्वान्ने शाक्यायनके और कितने नाम प्रकाशित किये हैं—



न्यायिकां विमोच्य भ्रष्टरं करणे लगे । इस समय जो सब बौद्धधर्म प्रचारित हुए थे, उनमें श्यायवेगोपिकका पूर्ण प्रभाव लक्षित हुआ । कर्मफलसे लक्ष्यग्रहण और नाना प्रकारका योनिभ्रमण, जन्मदुःखभोग, कर्मावधारण, स्वर्ग या नरकमें जा कर पुरस्कार वा दण्डप्राप्ति, जन्म-पक्षयनिवृत्ति अर्थात् मुक्ति ही दुःखसे परित्राणका उपाय है, आनन्द ही नीचे मुक्ति प्राप्त होती है और मुक्ति ही परम सुखपाय है इत्यादि न्यायवेगोपिकका मत बौद्ध-शास्त्रमें देखा जाता है । अधिक सम्भव है कि श्यायवेगो-पिक शास्त्र ही बौद्धोंने उक्त मत पक्षय किये होंगे । इसीसे मान्य होता है कि परवर्तीकालमें नैयायिक और वेगोपिकगण अन्तर्गत हिन्दूदार्शनिक और धर्म-शास्त्रविदुके निकट नितान्त हीय समझे गये थे । यहाँ तक कि मेधातिथि मनुभाष्यमें नैयायिक और वेगो-पिकोंको वेदविद्वहवादी लोकायत, बौद्ध, जैन आदिके साथ गिननेमें बाज नहीं आये । ई-सन्के पहले १५ शताब्दीसे संघर्षयुगका सूत्रपात हुआ । इस समय प्रसिद्ध बौद्धाचार्य नागार्जुनने 'न्यायद्वारतारकशास्त्र' प्रकाशित किया । इसमें कुछ समय बाद स्यादाद-वित् प्रसिद्ध दिग्गम्यशाचार्य रामानुजभद्रने पात्रमौ-मांसामं न्यायशास्त्रका खण्डन किया । पीछे जैनतक-शास्त्रविदु अक्षयभद्रने 'न्यायविनियय' वा 'प्रमाणविनि-यय' ग्रन्थ प्रकाशित कर जैनियोंके मध्य एक अभिनव श्याययुगका प्रवर्तन किया । अक्षयभद्रके बाद बौद्ध-समाजमें नागार्जुनरचित न्यायद्वारतारकशास्त्रको धर्म-पालकत व्याख्या वसुवन्धु सम्पादित अक्षयभद्रका न्याया-नुसारमूत्र और दिङ्नागाचार्यका 'प्रमाणसमुच्चय' प्रकाशित हो कर बौद्धोंमें न्यायप्रधान्य स्थापित हुआ । इन सब न्यायपन्थोंमें वेदविद्वहमत विमोचकपक्ष प्रका-शित हुआ था । उक्त पन्थोंमें दिङ्नागाचार्यका 'प्रमाण-समुच्चय' ग्रन्थ ही प्रधान न्यायपन्थके जैसा बौद्धसमाजमें गृहीत हुआ था । उन्होंने न्यायके १६ पदार्थोंमें केवल 'प्रमाण' स्वीकार कर अपने ग्रन्थमें प्रमाणके विषयमें ही विस्तृत धारणा की है ।

इस समय दिङ्नागाचार्यके विषय दंगनसे हिन्दू-न्यायकी रक्षा करनेके लिए उद्योतकराचार्य ने 'न्याय-

वार्तिकका प्रचार किया । न्यायवार्तिकके आघातको लक्षाक्षीन बौद्धसमाजने पसन्द नमन्ता था । मोक्ष ही पसन्दके अनात्म मिथ्या धर्मकोर्तिने प्रमाणसमुच्चयके ऊपर प्रमाणवार्तिक लिख कर उद्योतकराचार्यके मत-का खण्डन किया । धर्मकीर्ति 'न्यायविन्दु' नामक भी एक स्वतन्त्र न्यायग्रन्थ लिख गए हैं, विनीतदेवने मन्थसे पहले उनको टीका लिखी । प्रमाणवार्तिकका खण्डन करनेके लिए इस समय कोई हिन्दू नैयायिक वर्तमान न थे । ४थी शताब्दीमें सुविख्यात मौमांसक प्रभाकर और कुमारिलभद्रने प्रादुर्भूत हो कर दिङ्नाग, धर्मकीर्ति, मन्थभद्र आदि बौद्ध और जैनाचार्योंके मतका खण्डन किया है । मौमांसाचार्यके मतका खण्डन करनेके लिये कुछ समय बाद ही बौद्धनैया-यिक धर्मोत्तराचार्य तर्कमंथामने प्रवृत्त हुए । उनको न्यायविद्वदुटीकामें मौमांसकका मत पण्डित हुआ है । उस समय हिन्दू और बौद्धके बीच मानो शास्त्रमंथाम-चक्र रहा था । जैनियोंके माय भी बौद्धोंका उसी प्रकार तर्कयुक्त हुआ था । जैनोको प्रवन्धविस्तारमणि-में लिखा है—

"एक समय गिलादिलको समामं श्रोताम्बर जैन और बौद्धोंके बीच औरतर्कसंघाम उपस्थित हुआ । दोनों सम्प्रदायमें आपसमें ऐसे प्रतिष्ठा की थी, 'जिस पक्षके लोग विचारमें परास्त होंगे उन्हें देग छोड़ कर वनवासो होना पड़ेगा ।' विचारमें बौद्ध लोगोकी ही जीत हुई । श्रोताम्बर जैनों लोग वनवासो हुए । शत्रुपक्षको पवित्र आदिनाय मूर्ति सुखरूपमें गण्य हुई । गिलादिलका भागनेव मज्ज उस समय बहुत बन्धे थे, इस कारण बौद्धोंने उसे वन भेजना नहीं चाहा । क्रमशः वह मज्ज सब बन्धे हुए, तब श्रज्जातिका पतिष्ठास्थापन और बौद्धदर्पे ध्वंस करनेके लिये टिकाराव शास्त्राध्ययन करने लगे । पन्तमें देवी मरुत्ततोकी ह्मपावे उन्हें नय-चक्र लाभ हुआ । इस नयचक्रके प्रभावसे मज्जने बौद्धों-की मन्थरूपसे परास्त किया । उनके पाण्डित्यप्रभावसे श्रोताम्बर धर्मकी गुत्तो पुनः बोलने लगी । वे बाटो बटाधि लाभ कर इस समयसे आचार्य मज्जश्री नामसे प्रसिद्ध हुए ।

“वास्तव्यायनो मन्त्रनागः ऋषिद्विगुणवचनः ।  
इमिलः पक्षिहरशमी विष्णुगुणोद्भूतः स च सः ॥”

( क्षमिपानचि० )

हेमचन्द्रकी उक्ति द्वारा वास्तव्यायनको हम लोग मन्व्यग्रके उच्छेदकारो वाचक मान सकते हैं, किन्तु मायात्व और द्वेषीय संस्कृतानुरागो पुराविद्वेष हेमचन्द्रके उक्त वचन पर विज्ञास नहीं करते। क्योंकि वे लोग वास्तव्यायनका प्रथो गताश्रयीमें होना स्वीकार करते हैं। उनको युक्ति पहने ही खिण्टत हुई है। अब यह देवता चाहिये कि हेमचन्द्रकी उक्ति प्रामाण्य है वा नहीं।

इस गताश्रयीमें सुबन्धुने ‘मन्त्रनाग-विरचित-काम-शास्त्र’-का उल्लेख किया है। फिर सुप्रसिद्ध गङ्गासायण, उदयनाचार्य और वाचस्पतिमिश्र पत्तिनस्यामोक्रामास है और वास्तव्यायनका न्यायभाषा उद्धृत कर गये हैं। महेश्वरने विष्णुप्रकाश पश्मिघानमे लिखा है—

“मन्त्रनागोऽभ्रमातङ्गे वास्तव्यायनमुतावपि ।” इत्यादि उदाहरण द्वारा वास्तव्यायनका दूसरा नाम जो मन्त्रनाग और पत्तिनस्यामो था, वह प्रमाणित होता है। अब प्रश्न उठता है कि कामसूत्रके रचयिता वास्तव्यायन और न्यायभाषाकार वास्तव्यायन दोनों एक व्यक्ति थे या नहीं? न्यायभाषा और कामसूत्रका भाष्य पक्षों तरह पढ़नेसे यदि दोनोंकी एक ही मनुष्यकी रचना मान लें तो अयुक्ति नहीं होगी।

पक्षो वास्तव्यायनके भिन्न भिन्न नाम, पाठलिखित नगर-से कामसूत्रमें प्रह, चाणक्यकी तर्कविद्याविशारद कात्या और बौद्ध तथा जैनपञ्चानुसार ई० सन्के बहुत पहने वास्तव्यायन और चाणक्यके चाविर्भाव इत्यादिकी पर्यालोचना करनेसे मान्य होता है कि वास्तव्यायन और चाणक्य दोनों एक ही व्यक्ति थे।

वेदविद्वत्सूत्रके भाष्यकार प्रयत्नपाठने कई जगह बौद्धमतका निराकरण किया है। किन्तु वास्तव्यायनके कथों भी बौद्ध-मतका जिक्र नहीं किया। यदि उनके समयमें बुद्धमतका विरोध प्रचार होना, तो पक्षोपर ब्रह्मचर्याभाष्यकारोंके जमाये भी बौद्धमतका उल्लेखन बिधे बिना न रहने। इससे ज्ञात होता है कि वास्तव्या-

यनके समयमें बौद्धमतका विरोध करने प्रचार नहीं था। इस विधानसे भी वास्तव्यायनको पति प्राचीनज्ञानके मनुष्य मान सकते हैं।

विभिन्न समयके नैयायिकग्रन्थोंका पाठ कर पक्षो हम लोग न्यायदर्शनको कई एक स्तरोंमें विभक्त कर सकते।

१म सूत्रयुग। २य भाष्ययुग। ३य संघर्षयुग। ४य समयन या व्याख्यायुग। ५म नय न्यायका चाविर्भाव।

१म युगमें अर्थात् सूत्रयुगमें गौतमका मूलग्रन्थ प्रकाशित हुआ। पहले उनके मतानुवर्तियों केवल शिष्यामण्डाय भी सूत्रालोचना करते थे। उस समय केवल उनके शिष्योंमें शिष्यापरम्पराशुभार सूत्र पक्षीत या पानोक्षित होता था। उस समय सूत्रमूल नैयायिकोंके कण्ठस्थ था, लिपिवद्ध नहीं होता था। पीछे कई गताश्रयी वीत ज्ञान पर शिष्यापरम्पराके मध्य प्रकृत पाठ और व्याख्या ले कर बड़े गङ्गवही उठे। उसी समय श्यायमूल लिपिवद्ध करनेका प्रयोगन हुआ था। पार्श्वनाथ, महावीर पादि धर्मवीरोंके मतानुसारो नैयायिकग्रन्थ श्यायमूलका अर्थ ले कर अपना अपना स्वाधीन मत, यहां तक कि वेदविद्वद्ध मत प्रकाशित करने लगे। इससे ब्राह्मण्य-धर्मावलम्बी नैयायिकोंके क्रोध पर आघात पड़ता। उसी समय श्यायमूलकी व्याख्या काके जनसाधारणको प्रकृत सूत्रका अर्थ समझानेका प्रयोजन पड़ा। इस समय भाष्ययुगका परिवर्तन हुआ। वास्तव्यायनने इस युगमें सूर्यस्वरूप प्रादुर्भूत धर्म पर अपना पक्षोपारण युक्ति और विद्याप्रभावसे भाषा प्रमाणित किया। उनके सुविचारपूर्ण प्रमाणशास्त्रकी पानोचना करनेसे विश्वमत होना पड़ता है, उनकी सुविचारप्रणालीकी पर्यालोचना करनेसे अपने हम लोग भारतके परिष्कृत कह सकते हैं। ई० सन्के पूर्वोक्ते २री गताश्रयीके पहले तक भाष्ययुग था अर्थात् इस समय हिन्दून्यायिकग्रन्थ स्वाधीनभावसे व्याख्याकारोंकी पालोचना करते थे।

सम्प्रदाय, पक्षोके प्राधान्यनामसे साय साय बौद्धमत भी विशेष प्रवृत्त हो उठा। हिन्दूदार्शनिकग्रन्थ सुप्रभाष्य होने लगे। इसी समयसे बौद्धग्रन्थ वैशेषिक और

न्यायिका विषय आधार करने लगे। इस समय जो सब बौद्धग्रन्थ प्रचारित हुए थे, उनमें श्यायवैशेषिकका पूर्ण प्रभाव लक्षित हुआ। कर्मफलसे लक्ष्यग्रहण और नाना प्रकारका योनिभ्रमण, जन्मदुःखभोग, कर्मानुसार क्षम या नरकमें जा कर पुरस्कार वा दण्डप्राप्ति, जन्म-ग्रहणनिवृत्ति प्रयोग मुक्ति ही दुःखसे परित्राणका उपाय है, आनन्द ही नीचे मुक्ति प्राप्त होती है और मुक्ति ही परम सुखपाय है इत्यादि न्यायवैशेषिकका मत बौद्ध-शास्त्रमें देखा जाता है। अधिक सम्भव है कि श्यायवैशेषिक शास्त्रसे ही बौद्धोंने उक्त मत ग्रहण किया होगा। इसीसे मान्य म होता है कि परवर्तीकास्त्रमें नैयायिक और वैशेषिकग्रन्थ अपरापर हिन्दूदार्शनिक और धर्म-शास्त्रविदूके निश्चय नितान्त हीय समझे गये थे। यहां तक कि मेधातिथि मनुभाष्यमें नैयायिक और वैशेषिकोंको वेदविग्रहवादी लोकायत, बौद्ध, जैन आदिके साथ गिननेमें आज नहीं आये। ई-सन्के पहले १५ म शताब्दीसे संघर्षयुगका मूलपात हुआ। इस समय प्रसिद्ध बौद्धाचार्य नागार्जुनने 'न्यायद्वारतारकशास्त्र' प्रकाशित किया। इससे कुछ समय बाद स्यादाद-वित् प्रसिद्ध दिगम्बराचार्य सामन्तभद्रने आममौ-मांसामें न्यायशास्त्रका खण्डन किया। पीछे जैनतक-शास्त्रविदु चक्रवर्तुने 'श्यायविनिचय' वा 'प्रमाणविनि-चय' ग्रन्थ प्रकाशित कर जैनियोंके मध्य एक अभिनव श्याययुगका प्रवर्तन किया। चक्रवर्तुके बाद बौद्ध-समाजमें नागार्जुनरचित न्यायद्वारतारकशास्त्रको धर्म-पालकत व्याख्या बसुवर्गु सम्पादित उद्भवद्रका नाराय-नुसारसूत्र और दिङ्नागाचार्यका 'प्रमाणसमुच्चय' प्रकाशित हो कर बौद्धोंमें न्यायप्रधानता स्थापित हुआ। इन सब न्यायग्रन्थोंमें वेदविग्रहमत विग्रहरूपसे प्रका-शित हुआ था। उक्त ग्रन्थोंमें दिङ्नागाचार्यका 'प्रमाण-समुच्चय' ग्रन्थ ही प्रधान न्यायग्रन्थके जैसा बौद्धसमाजमें गृहीत हुआ था। उन्होंने न्यायके १६ पदार्थोंमें केवल 'प्रमाण' लोकार कर अपने ग्रन्थमें प्रमाणके विषयमें ही विस्तृत आलोचना की है।

इस समय दिङ्नागाचार्यके विषय दंशनेसे हिन्दू-न्यायकी रक्षा करनेके लिए उद्योतकराचार्य ने 'न्याय-

वार्तिकका प्रचार किया। न्यायवार्तिकके आघातको तत्कालीन बौद्धसमाजने बसुवर्ग समझा था। श्रोत्र हो पसुवर्गके चनातम गिरा धर्मकीर्तिने प्रमाणसमुच्चयके ऊपर प्रमाणवार्तिक लिख कर उद्योतकराचार्यके मत-का खण्डन किया। धर्मकीर्ति 'न्यायविन्दु' नामक भी एक स्वतन्त्र न्यायग्रन्थ लिख गए हैं, विनीतदेवने मयसे पहले उसकी टीका लिखी। प्रमाणवार्तिकका खण्डन करनेके लिए उस समय कोई हिन्दू नैयायिक वर्तमान न थे। ४थी शताब्दीमें सुविख्यात मौर्मांसक प्रभाकर और कुमारिसमहने प्रादुर्भूत हो कर दिङ्नाग, धर्मकीर्ति, समन्तभद्र आदि बौद्ध और जैनाचार्योंके मतका खण्डन किया है। मौर्मांसवार्तिककारका मत खण्डन करनेके लिये कुछ समय बाद ही बौद्धोंया-यिक धर्मोत्तराचार्य तर्कमंथामने प्रवृत्त हुए। उनको न्यायविन्दुटीकामें मौर्मांसकका मत खण्डित हुआ है। उस समय हिन्दू और बौद्धके बीच मानो शास्त्रप्रथम चल रहा था। जैनियोंके माय भी बौद्धोंका उसी प्रकार तर्कयुद्ध हुआ था। जैनोको प्रव्यवित्तामपि-नें लिखा है—

"एक समय गिनादित्यको समामें श्रोतास्वर जैन और बौद्धोंके बीच घोरतर तर्कसंग्राम उपस्थित हुआ। दोनों सम्प्रदायने आपसमें ऐसे प्रतिज्ञा की थी, 'जिस पक्षके लोग विचारमें परास्त होंगे उन्हें देग लोड़ कर वनवासो होना पड़ेगा।' विचारमें बौद्ध लोगोंकी ही जीत हुई। श्रोतास्वर जैनी लोग वनवासो हुए। शत्रुपक्षको पवित्र आदिनाथ मूर्ति बुद्धरूपमें गण्य हुई। गिनादित्यका भागनेव मज्ज उस समय बहुत बड़े थे, इस कारण बौद्धोंने उसे वन में जना नहीं चाहा। क्रमशः यह मज्ज जब बड़े हुए, तब स्वजातिका प्रतिष्ठास्थापन और बौद्धदर्प चूर्ण करनेके लिये टिबाराव शास्त्राध्ययन करने लगे। पन्तमें देवी मरुत्ततोकी लपामे उन्हें नय-चक्र प्राप्त हुआ। इस नयचक्रके प्रभावसे मज्जने बौद्धोंकी सम्पूर्ण रूपसे परास्त किया। उनके प्राणित्यप्रभावसे श्रोतास्वर धर्मकीर्ति पुनः जौलने लगे। ये घाटी खगधि नाम कर इस समयमें आचार्य मज्जवादी नाममें शिष्य हुए।



१२८ ई०के निरुद्धवर्ती किसी समयमें मङ्गवादीने 'न्यायविन्दुत्थित' प्रकाशित कर धर्मशराधार्य का मत खण्डन किया। इसके कुछ समय पीछे श्री गताश्रो- में दिग्गमराधार्य विद्यानन्दपातकेगौरीने समस्तभद्रका स्वादात्मत स्वादेन और कुमारिलका मत खण्डन करने के लिये लोमरोक्तधार्यकका प्रचार किया। उन्होंने 'प्रमाणपरोषा' नामक न्याय-धर्ममें दिङ्नागका मत विरोधरूपमें खण्डन किया है। उनका यह न्यायग्रन्थ दिग्गम समाजमें विरोध पाहत होता है।

विद्यानन्दके समयमें भारतकाग्रामें हम लोगोंने गङ्गाधार्य रूप से दानिके धर्म का विकास देखा। इनकी प्रभासे बौद्ध, जैन और दूसरे दूसरे दार्शनिक लक्षण होन- प्रम हो गये। यद्यत्की गौरवप्रभा समस्त भारतमें प्रकाशित हुई। गङ्गाप्रतार महात्मा गङ्गाधार्यने उपरोक्त उपवर्ष प्रभृति दार्शनिकोंके नाम वा मत उद्धृत तथा समाधारण उपनिषदोय ज्ञानमूलने सभी दर्शनोका मत खण्डन किया। पहले ही कहा जा चुका है कि उनके अभ्युदयकालमें बौद्ध, जैन और मोमां- मक मत ही भारतवर्षमें प्रवल था। इस समयके नैया- यिक और वैशेषिकगण बौद्ध तथा जैन मताग्रमें मानो मिल गये थे परन्तु इस समय बौद्धों और जैनोके मधय कितने ही नैयायिक और वैशेषिक दर्शनवित्तु पाविभूत हुए थे। मान्य प्रवृत्ता है, कि इसी कारण गङ्गाधार्य- ने बौद्धों और जैनोके मांय नैयायिकों तथा वैशेषिकोंकी छलाहटिमें देखा है। न्याय और वैशेषिकमें अति निरुद्ध सम्बन्ध है। न्यायदर्शनमें प्रकृत पमिप्रता नाम करनेमें वैशेषिकदर्शन भी पड़ना होता था, यह न्याद- भाष्यकार बरिष्यायनकी उक्तिमें ही जाना जाता है। गङ्गाधार्यने वैशेषिकको पर्यैनामिक वा पर्यैबोध बतलाया है। सम्भवतः गङ्गाधार्यके शारीरकमायादि- प्रचार होनेसे नैयायिक और वैशेषिकगण विच्छिन्न हो गये थे। मान्य प्रवृत्ता है कि गङ्गाधार्यका तोम प्रतिपाद देव करे हिन्दू नैयायिकगण वैशेषिककी पच- केला करते गये। वैशेषिकके विच्छिन्न होने पर न्यायदर्शनकी भी पचनप्रतिपाद प्रवृत्त हुई। दिग्गम- पक्षर मारिकजन्मोंने १२५ सावत् पर्याय १२० ई०के

कुछ पहले प्रमाण-परोषाके स्वाध्यायका परोषामूल नामक एक विरह्य न्यायधर्मको रचना की। इस धर्ममें समस्तभद्र, पकनदू और विद्यानन्दका मत मानो- वित हुआ है। उनके बाद प्रसिद्ध जैन कवि और नैयायिक प्रमाणन्दका पञ्चदश दूषा। उन्होंने प्रमेय- क्षमसमाप्त १७ नामक परोषामुलको एक टीका लिखी है। इस धर्ममें जैन न्यायमतकी समानोचना और उपवर्ष, दिङ्नाग, तथोपकर, धर्मशौचि, भक्तुहरि, गवरषामी, प्रभाकर और कुमारिल पादिका मत जगह जगह पर खण्डित है। एतद्विषय उनके धर्ममें प्रकाशित वाद भी निराकृत हुआ है।

वाटमें ७वीं और ८वीं गताश्रोके बीच किमो स्यातनामा हिन्दूनैयायिक वा हिन्दून्यायधर्मका 'सन्धान नहीं' मिलता। '७वीं' गताश्रोमें वाषभने ईश्वरकारिभिः इत्यादिरूपमें हिन्दू नैयायिकोंका उल्लेख किया है। भवभूतिके मालतोमाधर्ममें भी जाना जाता है कि ८वीं गताश्रोमें न्यायशास्त्रकी विशेष चर्चा थी। इस समय सिद्ध्यात बौद्धाधार्य कमलमोक्षने पाविभूत हो कर जैन और हिन्दूमतखण्डन करनेके लिये 'तर्कसंघ' नामक बौद्धमतपुष्प एक न्यायग्रन्थ प्रकाशित किया। तर्कसंघके पहले ही कमलमोक्षने लिखा है—

“इमं तत्कलकसंघं गङ्गाधार्यविषयमाधर्मम्।

- गुणद्वयविद्याभ्यासप्रवृत्तिसाधनानि ॥
- एतन्मार्गोपिनाहारसाम्प्रदायमनीचाम् ॥
- एतन्नखण्डं तुल्यवर्गाद्विद्विपनिश्चितम् ॥
- अनीचकारि नाशिन विभीक्ष्ण पतन्यदम् ॥
- अपेक्षितमनःकर्म प्रतिविम्बादिधर्मिणम् ॥
- अपेक्षितवचनोद्-निर्मुक्तमगतं परैः ॥
- एतन्नखण्डं तुल्यवर्गाद्विद्विपनिश्चितम् ॥
- अन्याकार्यापेक्षेयवर्गाभूमनहारदः ॥
- यः प्रतीयत समुत्साहं जगद वरदा वरः ॥
- नं सर्वैः प्रवृत्तानि किमपि तर्कसंघदः ॥”

कमलमोक्षने अपने तर्कसंघमें ईश्वरकारित्तराव, कविनन्दिय राजवाट, योगिनियदरुणित आत्मनद और मन्नाईतनाद पादिका खण्डन कर सतःप्रामाण्य- वाद संस्थापन किया है।

‘द्वी’ शताब्दीमें शिवादिस्वयंवायाचार्योंने प्रगल्भ-  
पाद रचित वैशेषिक सूत्रभाष्यके ऊपर श्वीमन्वतो नामक  
वृत्ति और सप्रदायीकी रचना कर प्राचीन मत संस्था-  
पित किया। इसी समयमें समर्थन वा ध्यास्यायुगका स्व-  
पात हुआ। कथादने पहले पट्टपदार्थ स्वीकार किया  
और प्रत्यक्षादने विषय भाष्य द्वारा उसे समझाया।  
अभी शिवाचार्योंने द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विषय  
और समवाय इन छः पदार्थोंके प्रस्ताव ‘प्रभाव’ नामक  
एक और प्रतिरिक्त पदार्थ स्वीकार किया। हिन्दू नैया-  
यिकोंने ईश्वरकारणवाद पश्चात् जगत्सृष्टा ईश्वरका  
निरूपण किया था। वास्तव्यायनभाष्य, उद्योतकराचार्यके  
वार्त्तिक पादि प्राचीन न्याय ग्रन्थोंने समझा यद्येष्ट  
प्रमाण मिलता है। बोध नैयायिकोंने ईश्वरकारणवाद-  
का खण्डन कर ईश्वरको सहा देनेको चेष्टा की। इधर  
औरनें भी ब्राह्मभोमांसा, प्रमाणमीमांसा, प्रमाणपरीक्षा,  
प्रमाणसमुच्चय, प्रमेयप्रमातृष्ट, प्रमेयकमलमातृष्ट,  
न्यायावतार, धर्मसंप्रहण, तत्त्वार्थसूत्र, नन्दीमिश्रान्त,  
शार्दूलोनिघिगन्धर्वस्मिन्नाभाष्य, शास्त्रसमुच्चय पादि  
ग्रन्थोंने जगत्सृष्टा ईश्वरवादका खण्डन किया। शिवा-  
दिस्य न्यायाचार्यके अपने ग्रन्थमें ईश्वरवाद प्रचार करने-  
की चेष्टा करने पर भी उनका उद्देश्य सिद्ध न हुआ।  
उनके बाद ही वैनाचार्य समयदेवचरिने ‘वादमहाणव’  
नामक न्यायग्रन्थ लिख कर अैनमतका संस्थापन किया।  
यौद्धे भहारक देवसेनने ८८० सव्यवर्षमें ‘नयचक्र’ नामक  
एक न्यायग्रन्थकी रचना कर तर्कशास्त्रको बालोचमा  
की। इससे बाद पट्टद्वयनतीकार्त्तु दुप्रसिद्ध वाचस्पति-  
मित्रका ग्रन्थद्वय हुआ। उनका प्रकृत पाविर्भाव काण-  
से कर मतगत था। किन्तु उनके ‘न्यायसूचीनियन्त्र’के  
प्रकाशित हो जानेमें उनके पाविर्भावकानके विषय-  
में कीर्ति नीलमात्र नहीं रहता। उक्त न्यायसूचीनियन्त्र-  
के ग्रन्थ भागमें लिखा है कि उन्होंने यह ग्रन्थ ८८८ शकमें  
समाप्त किया।

“न्यायसूचीनियन्त्रोऽद्यावत्परि उपिनां सुदे।  
श्रीवाचस्पतिमित्रेण त्वत्पुत्रेण ( ८९८ ) बरबरे ॥”  
उनको न्यायवार्त्तिकतात्पर्यटीकाके प्रारम्भमें  
लिखा है—

“इत्यभि किमपि पुत्र्ये बुत्तराङ्गनिवन्धनं कमगनाम् ।  
उद्योतकरगवीनामतिजरातीनां समुदरणात् ॥”  
यद्यार्थमें उन्होंने उद्योतकरका ईश्वरकारणवादकी  
संस्थापना करनेके लिये जो न्यायवार्त्तिकतात्पर्यटीका  
प्रकाशित की। इस ग्रन्थमें ईश्वरमाहात्म्य विगोपकपने  
कीर्त्तित है। उनके कुछ समय बाद प्रसिद्ध नैयायिक  
उदयनाचार्य पाविर्भूत हुए। उदयनाचार्यरचित  
सप्तधावनिके शेषमें ग्रन्थरचनाका काल मिया है—

“तर्काश्वरकप्रतिषेधश्रीतेषु शकान्ततः ।

वर्षेद्वयनयके सुशोभां सप्तशतश्रीम् ॥”

उक्त श्लोकसे मालूम होता है कि वाचस्पतिमित्रके  
८ वर्ष पछे पश्चात् ८०६ शकमें उदयनाचार्यने ग्रन्थको  
रचना की थी। वाचस्पतिमित्र विभिन्न मतावलम्बिषीका  
मत निरास कर ईश्वरवाद और पात्रवादके प्रचारमें  
विगोपकपने यत्नवान् नहीं हुए, इस कारण उदयनाचार्यने  
‘न्यायवार्त्तिकतात्पर्यपरिग्रहि’, कुसुमाञ्जलि, बोधसिंहार,  
पात्रतत्त्वविवेक, शिवायवली पादि ग्रन्थ लिख कर  
समस्त बौद्धादिविभिन्न मतोंका विगोपकपने खण्डन  
किया। उनके पाविर्भावसे हिन्दू समाजमें पुनः प्रसिद्ध  
न्याययुगका पाविर्भाव हुआ, ऐसा कहनेमें भी कोई  
पण्युक्ति नहीं। उन्होंने ही पुनः हिन्दुओंके मध्य न्याय-  
माधान्य स्थापन किया और वे ही प्रसाधारण पाण्डित्य  
तथा तर्कशक्तिके प्रभावसे बोद्धाका मूलच्छेद करनेमें  
समर्थ हुए। इसी उदयनाचार्यके समय दक्षिणराष्ट्रमें  
इबड़के अन्तर्गत भूरसुट ग्राममें श्रीधराचार्यने पाण्डु-  
दास राजाके पात्रममें प्रथमपादभाष्यके वृत्तिप्रकृत्य  
न्यायकन्दलीकी रचना की। न्यायकन्दलीके शेषमें लिखा  
है, ‘श्रीधरकटगोचरनवयतयकान्दे न्यायकन्दलो रचिता’  
पश्चात् ८१३ शकाब्दमें न्यायकन्दलो रची गई।

इस न्यायकन्दलीसे जाना जाता है कि ८०० वर्ष पछे  
भी इस देशमें न्याय और वैशेषिक शास्त्रकी विगोपकपने  
प्राचीनता होती थी। इससे बाद मा-सर्वज्ञने न्यायधार-  
भूयन् नामक एक टीका मकदपापूर्ण न्यायग्रन्थकी रचना  
की। यौद्धे १२वीं शताब्दीके प्रारम्भमें धानन्द नामक  
जिसो कश्मीर नैयायिकका नाम मिलता है। किन्तु  
दुःखका विषय है कि उनके बनाये हुए किसी ग्रन्थका

चतुस्रम्यान नहीं पाते। इस समय नरचन्द्रचूरि नामक विन्नी कोशाचार्यने नारायणकन्दो-टिप्पणकी रचना कर किरने जे समयत स्वायम्भवी देखा की। उनका चतुस्ररथ कर विहसिन नामक एक दूसरे जेने प्रायः १२४२ भङ्गत्में 'प्रमापप्रकाश' नामक एक जैन-न्यायपर्ययका प्रचार किया। इस समय विजयवंसगवि नामक एक और जैन-गणितने भा-सर्व-प्ररचित न्यायमारकी टोका निघ कर ईश्वरकारणवादको उड़ा देनेको चेष्टा की। १२५२ ई०में मारङ्गके पुत्र राघवभरने न्यायमारविचार नामक नारायणरकी एक दूसरी टोका कर हिन्दू-नै-या-यिकमत म-न्यायन किया। बादमें रामदेवमियके पुत्र सरदारजने नारायणोपिका, ताकिंकराचा पादि कई एक न्यायपर्ययीकी रचना की। इनमें माघवाचार्यने सर्व-दुर्गम-प्रहर्षने ताकिंकराको बचन उद्धृत किये हैं। वेहि जयन्तामहने १२८६ ई०के लगभग न्यायकसिका और नायमस्यो नामक दो नारायण्य लिखे। १२२६ गक पर्यात् १३०४ ई०में विद्याताने नारायणं जिनमम-चूरि पद्धतमें नो नामक एक टार्गनिक ग्रन्थकी रचना कर ईश्वरकरणवाद खण्डन करनेमें यशवान् हुए। तदनन्तर तिलकचूरि और वेहि जिनममके उपदेशानुसार उनके दो शिष्य, इन तीनोंने तीन नारायणकन्दोपनिषदा प्रचयन की। शेषोल दोके नाम थे रत्नगोचरचूरि और राजगोचरचूरि। राजगोचरचूरिने नारायणकन्दोवपि-शा-मे लिखा है, कि 'पश्चे प्रमत्तवादनं वैशेषिकसूत्रका भाषा प्रकाशित किया। वेहि श्योम शिवाचार्यने श्योम-मती नामक समकी प्रति, समके बाद श्रीधराचार्यने नारायणकन्दो नामक सन्दर्भ, वेहि हदयवाचार्यने किरपा-नसी और चन्मि श्रीवालाचार्यने श्रीवालीकी रचना की। शेषोल चार चर्य लक्ष्मणपारथके सहस्रवीथ नहीं होनेके कारणमें यह नारायणकन्दोवपिषदा लिख रहा है।' उनके पद्यमें नारायणं गेदिकको प्रनेक शक्तिं रङ्गने पर भी उर्ध्वनि प्रकृत्यभाषमे पूर्वतन जैन-नै-या-यिकोंके मतका समर्थन किया है। वे प्रकाशद्वयके यदादि ईश्यावादका निराकरण नहीं करते थे, तो भी उनका चर्य पढ़नेमें मान्यम होना है कि ये एक कहर मारारवर्दी थे। सुप्रसिद्ध उदयनाचार्यके समयमें ही

भारतवासो बोद्ध नैयायिकोंका सम्बन्ध प्रचयतन हुआ था। राजगोचरके बादमें ही जैनदार्शनिकोंका भी प्रच-यनिका मूलपात हुआ है। राजगोचरके कुछ पक्षमें ईश्वरमियकी तर्कभाषा रची गई। उर्ध्वके बाद मध्य-नारायणका प्राविर्भान हुआ। १४वें शताब्दीके प्रारम्भमें सुप्रसिद्ध गङ्गोपाध्याय प्रादुर्भूत हुए। उर्ध्वनि प्रमाधारण तर्कशुद्धिके प्रभावमें 'तत्त्वचिन्तामणि' प्रकाशित कर नैयायिकोंके मध्य युगात्तर उपदिष्ट किया। प्राचीन नैयायिकानि केवल निश्चिके उद्देश्यके ही धारणा दिखार है। उदयनके समयमें जटिस तर्क समुद्धकी प्राप्तिपना तो होती थी, पर उनका मूल्य अट नहीं हुआ। वे मूल पदार्थतत्त्वकी प्राप्तिपना-में व्यापृत थे, उद्या वाङ्मयमें प्रवृत्त नहीं हुए। इस समय गङ्गोने प्रत्यक्ष, चतुस्रम्यान, उपमान और मन्द इस चार खण्डात्मक तत्त्वचिन्तामणि नामक एक विस्तृत प्रमापप्रयका प्रचार किया। पूर्वतन नैयायिकोंके १५ पदार्थ स्तोकार करने पर भी उर्ध्वनि केवल 'प्रमाण' स्वीकार किया। मोतम और वाङ्मयावादि प्रवर्तित न्यायदर्शनमें प्राप्ततत्त्व, देहतत्त्व, सुक्षितत्त्व, ईश्वरतत्त्व पादि दर्शनप्रतिपाद्य विषय बलि त हुए हैं। नव्यवादा-के प्राविर्भावमें न्यायशास्त्रका दार्शनिकतत्त्व लोप होने पर था गया। नव्यनैयायिकोंका प्रधान उद्देश्य था पचवर्ग। किन्तु प्राचीननि जिन पर्ययका अचसम्भन किया है, नव्य लोग संसा नहीं करते। नव्यनारायणमें उर्ध्व कहीं मूलपदार्थतत्त्वकी प्रति वर्चिन प्राप्तिपना रहने पर भी वह उभेपुण्य नहीं है। गङ्गेशकी चिन्तामणिमें ईश्वरानुमान अपूर्ववाद इत्यादि स्थान मित्र अध्यात्म-तरकी प्राप्तिपना निताना पक्ष है। यहाँ तक कि गङ्गेशने शेष बोधमें मोतमका भी मत खण्डन किया है। उनके पद्यमें केवल तर्कका वाङ्मय देखा जाता है। इस तर्कके मुकाममें पहुँकर नव्यनैयायिक लोग प्राचीन नारायणालयें दूर हट गये हैं। नव्यनैयायिकोंने केवल वाक्का से कर विचार, कर्तव्यसमूह और विमोक्षक पदका खण्डन, विमोक्षवात्तारप्रवेगमें उल्ला समर्थन इत्यादि वाङ्मयको घटा विस्तार की है। उर्ध्वनि नैयायिकोंके वराकाशा विद्या कर किञ्च तर्कनामका

ही भाष्य लिया है । प्रत्यक्ष, उपमान, अनुमान और शब्द इन चार प्रमाणरूपभित्तिके ऊपर नव्यन्यायशास्त्र गठित हुआ है । यज्ञेश्वर ने नव्यन्यायके प्रवक्त क थे, पर संस्थापक नहीं । तत्परवर्तीकालमें उनके पुत्र बह्म-मान, बह्ममानके बाद पक्षधरमित्र, बह्मिदत्त, वासुदेव सार्वभौम, रघुनाथशिरोमणि, जयराम तर्कालङ्कार, मथुरा नाथ तर्कशास्त्रज्ञ, गदाधर भट्टाचार्य, दिनकरमित्र आदि ख्यातनामा नैयायिकगण असाधारणविचार और युक्तिके प्रभावसे नव्यन्यायका मत संस्थापन कर गए हैं ।

मिथिलामें नव्यन्यायकी जन्मभूमि होने पर भी, उसे नव्यन्यायका लीलाक्षेत्र नहीं मान सकते । सरस्वतीका लीलानिकेतन नवहोपधाम ही प्रकृत नव्यन्यायकी रङ्गभूमि है । वासुदेव सार्वभौम और रघुनाथशिरोमणि देखो ।

प्रवाद है, कि बङ्गदेशमें पहले न्यायशास्त्रकी विशेष चर्चा न थी । बङ्गवासी मिथिलामें न्यायशास्त्र पढ़ने लाया करते थे । यहां पाठ साङ्ग होने पर शुरूके निकट पढ़ी हुई पुस्तक के क कर घर आना पड़ता था । ग्रन्थके प्रभावसे बङ्गदेशमें न्यायशास्त्रकी अध्यापना नहीं होती थी । प्रन्तमें सुप्रसिद्ध वासुदेव सार्वभौम समस्त न्यायशास्त्र और कुसुमाञ्जलिके पद्यांग कण्ठस्थ कर बङ्गदेश पाये और वे ही सबसे पहले नवहोपमें न्यायका विद्यालय खोल कर न्यायशास्त्रकी अध्यापना करने लगे । उनके प्रधान शिष्य रघुनाथशिरोमणिने मिथिलाके सुप्रसिद्ध नैयायिक पक्षधरमित्रकी तर्कशास्त्रमें परालिप्त कर नवहोपमें न्यायशास्त्र स्थापन किया । उनकी चिन्तामणि-दीक्षित नामक तत्त्वचिन्तामणिकी टीकामें उनकी प्रतिभा और असाधारण तर्कशक्ति परिरूपित हुई है । पद्ये त-प्रकाश नामक वैष्णवग्रन्थमें लिखा है कि महाप्रभु चैतन्यदेवने भी एक तर्कशास्त्रकी टीका लिखी है । किन्तु कोई प्रसिद्ध नैयायिक उनकी टीका देख अपने मानकी लाघवता समझ दुःख प्रकाश करेगे, यह जान कर गौराङ्गदेवने गङ्गाजलमें चंपनौ टीका के क दी ।

सप्तमूख श्येनचन्द्रदेवके अष्टादशकालमें नवहोपमें जो न्यायशास्त्राचार्य स्थापित हुआ, आज भी नवहोपका यह न्यायश्रीव समस्त सम्प्रदायमें विद्योपित होता है । आज भी मिथिला, काशी, काशी, तैलङ्ग आदि दूर

दूर देशोंमें शिक्षार्थीगण न्यायशास्त्र पढ़नेके लिए नवहोप जाया करते हैं ।

नवयनैयायिकोंने जिन्होंने नाना ग्रन्थ लिख कर ख्याति लाभ की है; प्रकारादिकक्रममें उनके तथा ग्रन्थके नाम जोड़े दिए गए हैं । इन नव्यन्याय युगमें विद्वानांथ, शङ्करमित्र आदिने गौतममुनिवृत्ति और भाष्योप न्यायका सर्वविश्व विवरण प्रकाशित किया है । उनके कितने ग्रन्थ नव्यन्यायके अन्तर्गत नहीं होने पर भी इसी युगमें लिखे रहनेके कारण उनके नाम भी इस तालिकाके मध्य दिष्टे गये हैं ।

ग्रन्थकार । न्यायग्रन्थके नाम ।

अनिहोत्रे भट्ट-तत्त्वचिन्तामणि-पानोक्तकी टीका ।

अनन्तभट्ट—पदमञ्जरी ।

अनन्ताचार्य—गतकीटोखण्डन और 'संक्षेपसंक्षेपरूप' ।

अनन्तदेव—वाक्यभेदयाद ।

अनन्तनाथपण्डित—कारिकावली नामक भाषापरिच्छेदकी टीका, तर्कसंग्रहटीका ।

अनन्तदेव भट्टाचार्य—विवेकतारकस्थ ।

अनन्त—षाढार्यटीका ।

अनापति उपनिषद् ( रत्नरतिके पुत्र )—पदार्थीय दिव्यचतुः ।

काशीसर—पद्यमञ्जरी ।

कण्ठकर्कालङ्कार—महाहित्यविधार ।

कण्ठदत्त—भनोरमा नामक न्यायसिद्धान्तसुक्तावली-टीका ।

कण्ठन्यायशास्त्रज्ञ भट्टाचार्य ( गोविन्द न्यायशास्त्रकारके पुत्र )—न्यायसिद्धान्तमञ्जरीकी भाष्यटीका नामक टीका ।

कण्ठभट्ट पांडे ( काशीवासी कण्ठभट्ट )—१. काशिका नामक गदाधरीवृत्ति, २ मञ्जुपात्रा जगदीशशेखरी, ३ सिद्धान्तसंक्षेप नामक जगदीशगी टीका, ४ वाक्य-चन्द्रिका, ५ कण्ठभट्टीय न्याय, ६ सिद्धान्तमञ्जरी । इसके सिवा और भी कितने छोटे छोटे खण्ड लिखे हैं ; यथा—पद्यपरचतुष्टयटीका, पद्यमितीश्रयटीका, पद्यमिती-सङ्घटितवृत्ति, अथर्ववेदकल्पनिर्दिष्टरूपटीका, अथर्व-पर्ययटीका, अथर्वयतिपंथो, अथर्ववेद-पर्यय-

तर्कभाषाटीका, तर्कसंपदटीका, मुक्तावली, चौर-  
गौरीभाषीय नामक महाभाष्यमहाविचार ।

गौरीभाष्य—तर्कप्रथम ।

चक्रधर—न्यायमधुरिपत्र्यम् ।

चतुर्भुजपण्डित—तत्त्वचिन्तामणिदोषितिविस्तार ।

चन्द्रनारायण चाचार्य—कुसुमाञ्जलिटीका, गाढाधो-

यासुगम, गढाधरके चतुर्मानसपत्रकी टीका, गौतमसूत्र-

हार्ता, जागदीशिकीटीका, जागदीशचतुर्दशमसची-

पत्रिका, तत्त्वचिन्तामणिविदित्पनी, तर्कसंपदटीका,

न्यायकीकृत ।

चव्यमह—तर्कपरिभाषा ।

चित्रभूष (विष्णुदेवारायके पुत्र, १४वीं शताब्दी)—

तर्कभाषाप्रकाशिका, निवृत्तिविवरण, चित्रभूषीय ।

जगदाश्रम—न्यायमीमांसा ।

जागदीश तर्कासद्वार महाचार्य (भवानन्दके गियर

१४८ ई०के पक्षके)—तत्त्वचिन्तामणिदोषितिविस्तारिका,

तर्कदोषिकाव्याख्या, तर्कसूत्र, तर्कानुसारटीका, न्याय-

सौसाधनोपक्रमगदीधितितोका, इन्द्रगतिप्रकाशिका । इनके

पत्राणि ह्य चौर भी कृतने स्वमे मिलते हैं, यथा—

चतुर्भुजतिरक्ष्य, चव्यके दक्षमिदति, चव्यवचन-  
रक्ष्य, चाण्डालवाट, चान्तिविचार, उदाहरणसङ्ग-

रीधितोका, जयनवल्लभदीधितितोका, उपाधिच-  
रक्ष्य, उपाधिवादटीका, केषवधरतिरक्ष्य, केषव-

न्याय दन्तदीधितितोका, देवनाथवियरक्ष्य, चतुर्दश-

कसची, तर्कसंपदरक्ष्य, उत्तरीयचक्रवर्तिनसचदोषिति-

टीका, उत्तरीयमहाप्रकाशदीधितितोका, द्वितीयचक्रवर्ति-

नसचदीधितितोका, द्वितीयचक्रवर्तिनदीधितितोका, पञ्चा-

दित्पनी, पञ्चापूर्वपक्षधदीधितितोका, पञ्चमसची,

परामर्शपूर्वपक्षटीका, परामर्शरक्ष्य, परामर्शहेतुता-

विचार, पुञ्जसचपटीका पूर्वपक्षरक्ष्य, प्रतिज्ञासचव-

दीधितितोका, प्रथमचक्रवर्तिनसचपटीका, प्रथमचक्रवर्ति-

नटीका, सामान्यवाद, साधनरक्ष्य, भास्वरक्ष्यसामान्य,

भुयोदहन, निवृत्तपक्षरक्ष्य, विरोधनिवृत्ति, विरोध-

नसचपटीका, विरोधव्याप्तिरक्ष्य, विवदताव्याप्तिवादयः,

साधनरक्ष्यसंख्येयभाष्यटीका, व्याप्तिरक्ष्यरक्ष्य,

व्याप्तिरक्ष्यटीका, व्याप्तिवाद, व्याप्तिरक्ष्यरक्ष्य,

व्याप्तिरक्ष्यटीका, व्याप्तिवाद, व्याप्तिरक्ष्यरक्ष्य,

सङ्ख्येयनितिविचार, व्याप्तिरक्ष्यपक्षरक्ष्यसंज्ञातिरक्ष्य-  
पक्षधदीटीका, सप्तविंशतिनिवृत्तासचपटीका, सप्तविंशत-

पक्षरक्ष्य, सप्तविंशतसामान्यनिवृत्ति, सप्तविंशत-

निवृत्तासचपटीका, सामान्यनिवृत्तिरक्ष्य, सामान्य-

निवृत्तिटीका, सामान्यनक्ष्यटीका, सामान्यनक्ष्य चौर-

सामान्यभास्वरक्ष्य, सिद्ध्याप्रतिष्ठा, सिद्ध्याप्रतिष्ठा-

रक्ष्य, सिद्ध्याप्रतिष्ठापटीका, ईलाभास इत्यादि ।

जगदाश्रमके पञ्चानन—जगदाश्रीय न्याय ।

जगदाश्रमके पण्डित—न्यायवाटविवेक ।

जयदेव (पञ्चधामिय)—तत्त्वचिन्तामणि-  
पाषोके, (चिन्तामणिप्रकाश, मञ्जारीक वा पाषोके नामके भी

प्रतिष्ठा हैं), दक्ष्यदर्शी, न्यायपदार्थसाक्षात्, न्यायमीमा-

न्तरीविवेक ।

जयदेव (शुनिरक्षके पुत्र)—न्यायमञ्जरीसार ।

जयनारायणके पण्डित—तर्कमञ्जरी ।

जयनारायणके पण्डित महाचार्य (राममङ्गके मिष्य)—

तत्त्वचिन्तामणिदोषितिविस्तारिका, न्यायकुसुमाञ्जलिटीका

न्यायनिवृत्तासामान्यः पदार्थनिवृत्तासामान्यः इनके पत्राणि

चौर भी कृतने स्वमे मिलते हैं ।

जयनिरक्षके—न्यायसामान्यदीधितिका ।

ज्ञानसोनाय—न्यायनिवृत्तासामान्यरी ।

तात्त्विकतावचन—महद्वेदोपिका ।

तिमिर—चक्रवर्तिन्यायविचार, सामान्यनिवृत्तिकी ।

विनीचनदेव न्यायवचनान-न्यायकुसुमाञ्जलिप्रकाशिका ।

विनीचनचार्य—न्यायमङ्गल ।

त्रायकमह—त्रायकमहोदय ।

दिनकर—दिनकरो वा न्यायनिवृत्तासामान्यमीमांसा,

भवानन्दटीका ।

दुर्गादास सन्तिय—न्यायदीधितिका ।

दुर्गादासचार्य—गाढाधरीकीटीका ।

देवदाम—न्यायसंक्षेपरक्ष्य ।

देवनाथ—तत्त्वचिन्तामणि-  
पाषोकेपण्डित ।

धर्मदासमह—जगदरथ नामक न्यायनिवृत्तासामान्य-  
टीका ।

धर्मदासके पण्डित (विरोधीनारायणके पुत्र)—तत्त्व-

चिन्तामणिप्रकाशदीधितिका, तर्कसूत्रमणि (तत्त्वचिन्ता-

मणिसारकी टीका), न्यायसिद्धांतमण्डिका, धर्मराज-  
दोषितोय ।  
- नरसिंहशास्त्री—प्रकाशिका, न्यायसिद्धांतमुक्ता-  
वलीकी प्रभा नामक टीका ।  
- नानेगमह—पदार्थद्वैतिका ।  
- नारायण भावभीम—प्रतियोगिज्ञानकारणवाद, प्राति-  
पदिकसंज्ञावाद ।  
- नारायणतीर्थ—न्यायकुसुमाञ्जलिकारिकाव्याख्या ।  
- निधिराम—न्यायभारतसंग्रहटीका ।  
- नीलकण्ठमह—तर्कसंग्रहद्वैतिकाप्रकाश ।  
- नीलकण्ठशास्त्री—गादाधरीटीका, जागदीश्वरीटीका,  
तत्त्वचिन्तामणिदोषितटीका ।  
- नृसिंहपञ्चानन (गोविन्दपुत्र)—न्यायसिद्धांतमञ्जरी  
टीका ।  
- पद्मभिरामशास्त्री—तर्कसंग्रहनिरुक्ति, न्यायसङ्ग्रह, पा,  
प्रकाशिका, प्रभा ।  
- प्रगल्भचार्य (हंसरा नाम शम्भुकर, नरपतिके पुत्र)—  
तत्त्वचिन्तामणिटीका और श्रीदर्पण नामक सुखनखण्ड-  
खाद्यटीका ।  
- बलभद्रचूरि—प्रमाणमञ्जरीटीका ।  
- बलभद्रमह ( विशुदासके पुत्र )—तर्कभाषाप्रका-  
शिका, शक्तिवादटीका ।  
- बालकृष्ण—न्यायबोधनी नामक तर्कभाषाटीका ।  
- बालकृष्ण—न्यायसिद्धांतमुक्तावलीप्रकाश ।  
- भगीरथमेघ (शम्भुचन्द्रके पुत्र और जयदेवके वीर)—  
दृष्ट्यप्रकाशिका, न्यायकुसुमाञ्जलिप्रकाशिका ।  
- भवनाथ—सुखनखण्डखाद्यटीका ।  
- भवानन्दसिद्धान्ताध्यायी ( विद्यानिधामके पिता )—  
तत्त्वचिन्तामणिव्याख्या, भवानन्दी वा गूढार्थप्रकाशिका  
नामक तत्त्वचिन्तामणिदोषितिकी टीका, गूढार्थसार-  
मञ्जरी ।  
- भवाश्रीशङ्कर—संप्रकाशताविचार ।  
- भारकरमह—तर्कपरिभाषादर्पण ( तर्कभाषाकी  
टीका )  
- सचिन्द्रमिश्र—कारकसुखनखण्ड, न्यायसंग्रह ।  
- सच्चिदानन्द—तर्कशास्त्र—सच्चिदानन्दी वा सच्चिदानन्दी

तत्त्वचिन्तामणिटीका, तत्त्वचिन्तामणिदोषितिकी, तत्त्व-  
चिन्तामणि-पानोकटीका, मिदान्तरहस्य । इसके सिवा  
घोर भी कितने खरर ई जो २००० से कम नहीं हंगे ।  
मधुसूदन—तर्कसूत्रमाध्यटीका, तत्त्वचिन्तामणि-  
पानोककण्ठकीटार ।  
- महादेवमह—मुक्तावलीकरण ।  
- महादेवभट्टदिनकर (दिनकर नामसे प्रसिद्ध)—इन्होंने  
पिताके सहयोगसे दिनकरी पादिकी रचना की ।  
- महादेवपुष्पसुभकर ( सुकुन्दके पुत्र )—न्याय-  
कौशुभ, भवानौपकाय ( भवानन्दीकी टीका ), मितभा-  
षिणी नामक न्यायसंग्रह ।  
- महेशचन्द्र—तत्त्वचिन्तामणि-पानोकदर्पण ।  
- महेश्वर—तत्त्वचिन्तामणिटीका, तत्त्वचिन्तामणि-  
दोषितिकी ।  
- माधवमिश्र—अनुमानानोकद्वैतिका ।  
- माधवदेव—तर्कभाषासारमञ्जरी । न्यायसार, प्रमा-  
णादिप्रकाशिका ।  
- माधवपदाभिराम—तर्कसंग्रहभाष्यार्थनिरुक्ति ।  
- मुकुन्दमह गाङ्गुल ( पनन्तमहके प्रभ )—इहेश्वरवाद,  
तर्कसंग्रहचन्द्रिका नामक तर्कसंग्रहकी टीका, तर्क-  
संग्रहतरङ्गिणी ।  
- मुकुन्ददास—न्यायसंग्रहसिद्धि ।  
- सुरारिभट्ट—तर्कभाषाटीका ।  
- मोहनपण्डित—तर्ककौमुदीटीका ।  
- यज्ञपति उपाध्याय—तत्त्वचिन्तामणिप्रभा नामक तत्त्व-  
चिन्तामणिकी टीका ।  
- यज्ञमूर्ति कामीनाथ—तत्त्वचिन्तामणिटीका ।  
- यतिवर्ष—तत्त्वचिन्तामणिदोषितिव्याख्या ।  
- यतीपण्डित—न्यायसङ्ग्रह ।  
- यज्ञमह—न्यायपारिजात ।  
- यादवपण्डित वा यादवध्यास ( नृसिंहके पुत्र )—  
अनुमानमञ्जरीसार, न्यायसिद्धांतमञ्जरीसार ।  
- रघुदेव न्यायानन्दार महाचार्य—रघुदेवो वा गूढार्थ-  
द्वैतिका नामक तत्त्वचिन्तामणिकी व्याख्या ।  
- रघुनाथपण्डित—न्यायसंग्रह नामक गदाधरके पद-  
वादीकी टीका ।

रघुनाथशिरोमणि ( बासुदेव नाथ भीमके मित्र )—  
 काकतखण्डविषकटीका, खण्डनपण्ड्यायटीका, तत्र  
 विनामविदोषित, न. य. कुसुमाञ्जलिटीका । इषके विवा  
 दीर भी विलने सधरे मिलने है, यथा—सहै तेसर-  
 वाद, सपुत्र वादरहस्य, सवयव, चाकाहावाद, धारुवात-  
 वाद, वैषम्यनिरीको, सुपनिद्वयसधर्मितावच्छेदक-  
 प्रत्यागति, नम्र वाद, निवोद्वान्यवायं निद्वय, निरोच-  
 नसच, पक्षता, प्रामाण्यवाद, योग्यतारहस्य, मास्यवाद,  
 व्यातिवाद, मृद्वमादायं, सामानानिहति, सामाना-  
 लक्षण इत्यादि ।

रघुगति—तत्रचिन्तामणि-पाक्षीक पौर शशाङ्कोक-  
 रहस्य ।

रघुनाथमह—दिनकारीटीका ।

रङ्गाचार्य—छत्तरपत्र, गोवर्द्धनपत्र ।

रत्ननाथ—भार्यवोधिनी नामक तर्कसंग्रहकी  
 टीका ।

रथेश—मत्तवसंपद ।

रमानाथ - जागदीशोदित्यनी ।

राघवपद्मानमहाचार्य—काकतखण्डविष ।

रामाचार्य—तर्कतरङ्गिणी ।

रामकृष्ण—तत्त्वचिन्तामणिविदोषितटीका, भाष्य-  
 टपंच ।

रामकृष्ण ( धर्मशास्त्राध्वरी )—वचिदत्तके तत्त्व-  
 चिन्तामणिसंज्ञाकी टीका ।

रामकृष्ण चाचार्य—भाष्यनिहायन ।

रामकृष्णमहाचार्य चक्रवर्ती ( रघुनाथशिरोमणि-  
 के पुत्र )—भाष्यटीका, भाष्यसौख्यवर्तीप्रकाश ।

रामचन्द्रभाष्यवागीश—अधिवादविचार, पामलि-  
 रहस्य, नम्रताविचार, विधिवादविचार, विरोधविचार,  
 मृद्वनित्यविचार ।

रामचन्द्रमह—मीलकृष्णरचित तर्कसंग्रहटीका-  
 प्रकाशकी टीका, भाष्यनिहायनमुद्रासोपकाय टीका ।

रामचन्द्रमहाचार्य नाथ भीम—प्रमासतख, भीम-  
 वाद, विधिवाद ।

रामभाष्य—तर्कसंग्रहद्विपत्र, भाष्यनिहायनमुद्रा-  
 शकीद्विपत्र ।

रामनारायण—धनुमिनिर्दिष्टपद ।

रामभद्र नाथ भीम ( भावनायके पुत्र )—कुसुमाञ्जलि-  
 कारिकाव्याख्या, श्यावरहस्य नामक भाष्यसूत्र टीका,  
 नामात्ववादतत्र, समासवादतत्त्ववादार्थखण्डनद्विपत्र ।

रामभद्रनिर्भावागोश—मृद्वनित्यमिच्छाविचारवो-  
 धिनी, तर्कतरङ्गिणी ।

रामभद्रमह—तर्कतरङ्गिणी, तर्कसंग्रहटीका-  
 व्याख्या, प्रभा, स्युत्पत्तिवादटीका, दिनकरकी मद्रत-  
 वादटीका ।

रामनिद्र ( इक्ष्वाकूदके पुत्र )—भाष्यसंपद नामक  
 तर्कभाषाकी टीका ।

रामानन्द—भार्यायुतव्याख्या ।

रामानुजाचार्य—मविचार नामक तत्त्वचिन्तामणि-  
 मविचारकी समानोचना ।

राधनरसिंह परिश्रुत—तर्कसंग्रहटीकाप्रकाश,  
 प्रभा नामक भाष्यसिद्धांतमुद्रासोपटीका ।

रघिदत्त ( द्विपदसके पुत्र पौर जयदेवके मित्र )—  
 कुसुमाञ्जलिप्रकाशमकरन्द, तत्त्वचिन्तामणिसंज्ञा, तर्क-  
 वाद, तर्ककार, पदार्थखण्डनव्याख्यामकरन्द ।

रुद्रनाथवाचस्पति ( विद्यानिवासके पुत्र )—भवा-  
 न्मदीकारकाचार्य, निषेधकी टीका, तत्त्वचिन्तामणि-  
 दोषित, कुसुमाञ्जलिकारिकाव्याख्या, भाष्यनिहायन-  
 मुद्रासोपटीका, वादपरिच्छेद, विधिकपनिद्वय, मृद्व-  
 परिच्छेद ।

रिजतसिंहट—खेचुभूक्त तर्कभाषाटीकाकी टिप्पणी ।  
 सधोदाश—धनुमानसचच ।

संग्रहमिथ ( जगन्नाथके भातृपुत्र )—आश्वोषिकी  
 या श्यावतत्त्वपरीक्षा नामक भाष्यसूत्रकी हति, योग-  
 कृष्टिविचार, निधिवाद ।

समट्ट—भवानन्दप्रकाश ।

सईमान लघुभाष्य ( मङ्गल लघुभाषाके पुत्र )—  
 खण्डनपण्ड्याप्रकाश, तत्त्वचिन्तामणिसंज्ञा, भाष्य-  
 कुसुमाञ्जलिप्रकाश, भाष्यसूत्रका भाष्यनिहायनकाश,  
 भाष्यपरिमिटप्रकाश, पदोदत्तरहस्य ।

साधुप्रति—सईमानसिंह, भाष्यनिहायनकी, भाष्य-  
 रटीका ।

- धामध्वज—नारायणकुसुमाञ्जलितोका ।
- वासुदेव सार्धं भौम—तत्त्वचिन्तामणिव्याघरा, समाम-  
वादा, सार्धं भौमनिरुक्ति ।
- विजयीन्द्रयतीन्द्र—धामोद नामक नारायणस्तकी  
टीका ।
- विनायकभट्ट—नारायणकुसुदी नामक नारायणस्तकी  
टीका ।
- विश्वेश्वरीप्रसाद—तरङ्गिणी नामक तर्कसंग्रह-  
टीका, नारायणविद्यान्तमुक्तायलीटीका ।
- विश्विभट्ट—तर्क परिभाषाटीका ।
- विश्वनाथ—तत्त्वचिन्तामणियुद्धखण्डटीका, तर्क-  
तरङ्गिणी, तर्कसंग्रहटीका ।
- विश्वनाथभट्ट—गणेशकृत तत्त्वप्रबोधिनोकौ नाराय-  
णविलास नामक टीका ।
- विश्वनाथ—नारायणपञ्चानन ( विद्यानिवासके पुत्र )—  
भाषापरिच्छेद वा कारिकावली, मुक्तायली नामक उपकी  
टीका, नारायणतत्त्वबोधिनो, नारायणसूत्रवृत्ति, पदार्थतत्त्वा-  
वलोक, सुबयं तत्त्वावलोक ।
- विश्वनाथायम—तर्कदोषिका ।
- विश्वेश्वर—तर्ककुतूहल, नारायणप्रकरण ।
- विश्वेश्वरनाथ—तर्कचन्द्रिका ।
- वीरराघवाचार्य—पद्मभवपत्र ।
- वीरेश्वर—जागदीगीटीका ।
- विदुटाचार्य—तत्त्वचिन्तामणिदीपितिकोष्ठ, तत्त्वाय-  
दीपिका नामक तर्कसंग्रहटिप्पणी ।
- विदुटराम—नारायणकुसुदी ।
- वशीदत्तवागीशभट्ट—तर्कसमयखण्डन ।
- वेदान्ताचार्य ( ब्रह्मभट्टविहके पुत्रः )—प्रनुमानका  
द्वयकू प्रामाण्यखण्डन ।
- वेदानाथ—तर्करहस्य, नारायणकुसुमाञ्जलिकारिका-  
व्याख्या ।
- वेदानाथ गार्गिस—तर्कचन्द्रिका नामक तर्क-  
संग्रहकी टीका ।
- वेदानाथदीपित—हृदिदशरचित तत्त्वचिन्तामणि-  
प्रकाशकी टीका ।
- वज्रराज गोखामो—नारायणार ।

- गङ्गभट्ट—सामान्यनिरुक्तिकोष्ठ ।
  - गङ्गमित्र—गादाधरोटीका, जागदीगीटीका ।
  - गणधर षाचार्य—गणधरोय वा न्यायसिद्धान्तदीप,  
न्यायनय, नारायणोत्सावकरण, नारायणप्रकरण, गण-  
धरमान्ता ।
  - गणेश्वरभट्ट—नारायणमुक्तायली, सच्चिदायलीविहङ्गि,  
पदार्थचन्द्रिका ।
  - गणेशकण्ठ—तत्त्वचिन्तामणितोका ।
  - गणेशयोगी—नारायणप्रकाशटीका ।
  - गणेशरामवाचस्पति—नयमुक्तिवाटटिप्पणी ।
  - गणेशान्त—नारायणविहङ्गदीपप्रभा, पदार्थचन्द्रिका ।
  - गणेशकण्ठदीपित—तर्कप्रकाश नामक नारायणविद्यान्त-  
मञ्जरोटीका ।
  - गणेशवाचस्पति—पद्मभवक्रीडा, नारायणविद्यान्ततत्त्वा-  
स्त ।
  - गणेशवासभट्ट ( काशीवासो )—सुरतकल्पतरु नामक  
तर्कदोषिकाटीका ।
  - सच्चिदानन्द शस्त्री—नारायणकुसुम ।
  - हनुमदाचार्य ( व्याभाषणके पुत्र )—चिन्तामणि-  
वाचस्पतिदोषिका, तर्कदोषिकाटीका ।
  - हरनारायण—गादाधरोटीका, जागदीगीटीका ।
  - हरि—प्रमाणप्रसोद ।
  - हरिकण्ठ—उपसर्गवाद ।
  - हरिदास नारायण वाचस्पति तर्कालङ्कार—तत्त्वचिन्ता-  
मणि-प्रनुमानखण्डटीका, तत्त्वचिन्तामणि-पालीकटीका,  
नारायणकुसुमाञ्जलिकारिकाव्याख्या ।
  - हरिराम—तर्कालङ्कार ( गदाधरके गुरु )—तत्त्व-  
चिन्तामणितोका ।
  - हरिहर—तर्किकरपासंग्रहटीका ।
- बैरोथिक एण्ड देसो ।
- पाश्चात्य-न्यायदर्शन ( Logic. )
- संस्कृत नारायण शब्द यूरोपीय साजिकके प्रति-  
गम्भीरदृष्टि व्यञ्जित दृष्टांकरता है । किन्तु  
यद्यपि देवनेने भारतोय नारायणदर्शन और  
यूरोपीय साजिकमें सामान्य माहत्त्व भविष्य होता है ।  
भारतीय नारायणदर्शनमें ऐसे चनेक विषय लिखे हैं जो



कभी भी यूरोपीय दार्शनिक मतमें न्यायशास्त्रके चर-  
भूत नहीं हो सकते। मुस्लिमोंका भोवत निरूपण ही  
भारतीय प्रथम न्यायदर्शनका प्रधान प्रायोग्य विषय है,  
किन्तु यूरोपीय दार्शनिकोंके मतमें यह Philosophy  
proper or metaphysics चर्चात् साधारणतः दर्शन-  
शास्त्र कहनेमें ही समझा जाता है, उसीका प्रतिपाद्य  
विषय है। हम लोगोंके देशमें न्यायदर्शन जिस प्रकार  
सकृद्दर्शनके साथ दर्शनविषय है, यूरोपीय न्यायदर्शन  
या सांज्ञिक उस प्रकार दर्शनशास्त्रके चतुर्थांश नहीं है।  
यूरोपीय न्यायदर्शन विज्ञानकी एक शाखा (Science)  
विशेष है और वास्तव्य न्यायकी विज्ञानके चरभूतका नाम  
कर ही उसीके चतुर्थांश सांज्ञिककी संज्ञा (Definition)  
लिखी गई है।

किन्तु हिन्दी दार्शनिकोंके न्यायकी चिन्ताका न्यायशास्त्र-  
शास्त्रविषय बतलाया है ( Science of the laws  
of thought as thought )। किन्तु किसीका कहना  
है कि सांज्ञिक या न्याय युक्तिप्रयोजकशास्त्र (Science  
as well as the art of reasoning ) है, जिन चतुर्थांशके  
मतमें सांज्ञिक कहनेमें साधारणतः प्रमायका  
निरोधक समझा जाता है ( Science of proof or  
evidence )

सुतरां भारतीय न्यायदर्शनका जो चतुर्थांश प्रमायके  
चतुर्थांश है उसीके जिसकी चर्चामें प्रमायकी नियमा-  
यमी व्यव प्रयोगवाची बर्णित है, जो भारतीय न्याय-  
शास्त्रका मुख्य विषय है, वही यूरोपीय न्यायदर्शन या  
सांज्ञिकका प्रायोग्य विषय है।

प्रमायके अन्तर्गत् सभी विषयोंका सत्यासत्य निर्धार  
करता है। सत्यविषय ही सब सब प्रकारकी चिन्ता-  
यमी या कार्यप्रवाचीका मुख्य उद्देश्य है—सब परसे  
प्रमायका वाच्यत्व, अवाच्यत्वका निरोधक कहना प्राय-  
गम्य है। सुतरां सांज्ञिकमें प्रमायका प्रमाय किसे कहते  
हैं, प्रमायका उद्देश्य क्या है, निर्णय प्रमायका अर्थ क्या  
है, अस्वाम्य ( Fallacy ) संशोधनका उपाय क्या  
है, अवाच्य निरोधक करनेमें कौनसे प्रयासोंमें चिन्ताका  
उपाय करना आवश्यक है, ये सब विषय उद्घाटन-  
अर्थमें सांज्ञिकके मुख्य विषय हैं।

यौक्तिक-परिचित परिहण ही—वास्तव्य न्यायके उद्देश-  
कर्मों हैं। परिहणके बहुत परसेमें न्याय या चतुर्थांश  
प्रचलन करने पर भी परिहणमें ही परसे परसे न्यायकी  
एक-मात्रादर्शनमें प्रवर्तित किया। परिहणके परसे  
न्यायको नियमायमी दर्शनशास्त्रमें प्रयुक्त होता है।  
न्यायशास्त्र नामसे हीरे एक-मात्र नहीं था।

दार्शनिक अन्वेषण परसे परसे न्यायप्रचलित निय-  
मायमीका बहुत कुछ कर गए हैं। अन्वेषणके अन्त-  
र्गत् नये प्रामाण्य विषय भी न्यायशास्त्रमें प्रवर्तित  
हुए हैं। तर्कशास्त्रका संज्ञापरिहण ( Definition of  
notion ) अन्वेषणमें प्रवर्तित हुआ है। अवा-  
सिद्धात्ता ( Synthetic reasoning or induction )का  
अन्वेषणमें प्रचार किया है। अन्वेषणके परसे ही दार्-  
शनिक अन्वेषण अन्वेषणका उद्देश्यपर्यन्त कर गये हैं। दार्-  
शनिक चिन्ताकी शास्त्रदर्शनमें निरूपण, करनेमें चिन्ता-  
की परचिन्ताका क्रम ( Method ) की प्रायगम्यता है और  
चिन्ताका क्रम भी न्यायशास्त्र प्रमायके अन्तर्गत् निर्धार  
करता है। सुतरां दर्शनशास्त्र सब अवाच्य चिन्ता-  
माय न ही कर शास्त्रविषय ही जाता है, तब साथ साथ  
न्यायशास्त्र प्रमायप्रवाचीका भी ( Logical method )  
उत्पत्ति साधित हुआ करता है। अन्वेषणके, अन्वेषण  
बाद दर्शनशास्त्रके चतुर्थांशके साथ साथ, तर्कशास्त्रकी  
उत्पत्ति हुई थी। यही तर्कशास्त्र कहनेमें ही समझा  
जाता है, उस समय सांज्ञिक कहनेमें ही भी वही समझा  
जाता था। उस समय सांज्ञिकका सुतरां नाम था  
Dialectic या तर्कशास्त्र। अन्वेषणके दर्शनमें भी वही  
प्रकार Dialecticका प्राथम्य दिखनेमें आता है।  
Dialectic—यौक्तिक चतुर्थांश निर्णय, न्यायदर्शनके  
कर्म है। Dialectic—इस प्रमायमें प्रयोगवाचीके  
विषय और भी दर्शनके अन्वेषण साधारण विषय चर्चित  
है। बहुत-समों Metaphysics कहनेमें ही समझा  
जाता है, उस समय Dialectic कहनेमें भी वही  
समझा जाता था।

अन्वेषणके परसे ही अन्वेषण—समवायिक दार्शन-  
विषयोंके साथ चतुर्थांश-विषय ( Antithesis )में  
चर्चितका चर्चित अन्वेषण—विषयोंके चर्चित

विनियमका दार्शनिकमत वस्तुमान Nominalism वा नामवाद है। आन्टिपथिनिसके मतानुसार वस्तुमात्र संभाव्यक है, और सभी संज्ञा वस्तुकी सत्ता है तथा युक्ति (reason) संज्ञाकी परिवर्तनः (Transposition of names)के सिद्धा और कुछ भी नहीं है। सुतरां आन्टिपथिनिसके मतसे लाजिक बहूशास्त्रका समस्थानीय है। पीछे स्टोइक-दर्शनमें (Stoic philosophy) तर्कका भी कुछ आधिपत्य देखनेमें आता है। सत्यान्वेषणका न्यायानुगत पन्थानिरूपण ही स्टोइक-दार्शनिकोंके मतानुसार तर्कशास्त्रका प्रतिपाद्य विषय है और सत्यका नियामक है, (Ascertainment of the criterion of truth) यह पन्था उनके मतानुसार वास्तवविषयके ऊपर निर्भर नहीं करता है, यह सांख्यिक वा आन्तर धर्म विग्रेय (Subjective or a priori है)। स्टोइक-दर्शनमें तर्कशास्त्रकी उद्यति यही पर्यवसित होती है।

एपिक्यूरियन (Epicurean) दार्शनिकोंके मतानुसार तर्कशास्त्र सत्यान्वेषणके उपायस्वरूप जड़विज्ञानके सहायकशास्त्रविशेषरूपमें परिगणित होता है। उपरि-उक्त दार्शनिक मतोंके यथोचितभागमें लाजिकका उक्त ख रहने पर भी यद्यपि, तर्कशास्त्रको थोड़ी ही उद्यति हुई थी। आरिस्टलके पहले तर्क 'लाजिक' छद्मक-शास्त्रके बीसा परिगणित नहीं हुआ। दार्शनिक आरिस्टलने ही तत्पूर्व यत्नी Dialectic को परिवर्द्धित कर उसे लाजिक या न्यायशास्त्ररूपमें प्रवर्द्धित किया।

आरगेनन (Organon) नामक ग्रन्थमें आरिस्टलने अपने न्याय वा लाजिकको व्यवहारणा की। इस ग्रन्थमें केवल तर्कके अन्तर्निहित विषय ही पालोचित नहीं हुए, दार्शनिकशास्त्रके अन्त्याय जटिलतत्त्वका भी निर्माणाकी भी व्यवहारणा की गई है। आरगेननमें Metaphysics और न्यायशास्त्रका जटिल संमिश्रण देखनेमें आता है। सुतरां आरगेननके वस्तुमान तर्कशास्त्रका मूल ध्य हीने पर भी यह अविमिश्र-तर्कशास्त्र नहीं है।

आरगेनन नामक ग्रन्थमें आरिस्टलने त्रयमतः संज्ञा वा नामप्रकरणके सम्बन्धमें (Determination of the categories) पालोचना की है। दृष्टियुक्त वस्तुमात्र

ही संभाव्यक है; यद्यपि मात्रका ही एक एक धर्म वा गुण ले कर एक एक संज्ञाका आरोप किया गया है। जो सब गुण किसी न किसी पदार्थमात्रके ही साधारण धर्म हैं, आरिस्टलने उन साधारण धर्म-गुणोंको ले कर एक एक यथोचितभाग किया है।

आरिस्टलके दृष्टियोंका यथोचितभाग साधारणतः दस बतलाये गये हैं। यथा—द्रव्यत्व (Substance); मित्य वा परिमाण (Quantity), धर्म वा गुण (Quality), सम्बन्ध (Relation), देग (Space), काल (Time), अवस्थान (Position), अधिकारित्व वा अधिकार (Possession), द्रव्यत्व और गुणके अन्त्याय सम्बन्धकी अधिकारित्व कहते हैं), कार्यकारकगुण (Action), जिस-द्रव्यके ऊपर अन्य कोई गुण वा पदार्थको कार्यकारो समता रहती है, वह गुण (Passion)। आरिस्टलके आरगेननके प्रथम प्रबन्धमें इस प्रकार पदार्थोंका यथोचितभाग निर्णीत हुआ है।

आरगेननके द्वितीय प्रबन्धमें भाव और भावाके सम्बन्धके विषयमें सविस्तार पालोचना है। भावा किस परिमाणके भावप्रकाशमें समर्थ है, भावमात्र ही भावा द्वारा प्रकाशित किया जा सकता है वा नहीं, भाव और भावामें विरोध किस प्रकार सम्भव है; सम्पूर्ण भाव किस प्रकार भावामें प्रकाशित होता है, (Logical propositions) ये सब विषय पुद्गलपुद्गलरूपमें मोर्मावित हुए हैं।

आरगेननका तृतीय प्रबन्ध, जितने भागोंमें विभक्त हुआ है, उतने भागोंका विशेषणवाद (Analytic Books) कहते हैं। चिन्ताप्रणालीका क्रम किस प्रकार है, जिस विषयके सिद्धात्ममें उपनीत होनेमें किस प्रकार युक्ति-प्रयोग करना होता है, यही इस अंगका प्रतिपाद्य विषय है। साधारणतः युक्ति (Reasoning) ले कर पुद्गलका यह अंग लिखा गया है।

पानाटिकके प्रथम भागमें निगमनमूलक-युक्ति (Syllogism or Deductive reasoning) का विषय विवृत हुआ है। निगमनमूलक-युक्ति (Syllogistic reasoning) भित्त किस प्रकार है, निगमनमूलक युक्ति की त्रयीगणनाकी के मो है, इत्यादि इस भागके पालोच्य विषय हैं।

एक एपानिस्टिक एवम्वा रितीय भाग कई एक भागोंमें विभक्त है जिसमें प्रथम दो भागोंमें एपानिस्टिक प्रमाणोंके सम्बन्धमें ( Apologetic arguments ) कुछ लिखा है । पश्चात् पाठ भागोंमें प्रवृत्तिबुद्धि वा वादमन्वयमें प्रयोगोचित हुआ है । पश्चात् एक प्रबन्धमें ( Essay on the Sophistical Elements ) भ्रमात्मक बुद्धि वा देवताभाव ( Fallacies )-की चर्चाबना है ।

पार्सोनसके उपरि-रक्त यथासंख्य सारीधारमे यह मन्वयमें जाना जा सकता है कि पारिष्टलके समयमें तर्क-शास्त्रको व्यवस्था कौनो भी चीज नहीं माना समयमें उसको कौनो उचित दूर है । सामान्य परिमितप्रमाण के दोषमें ही प्राप्त होता है कि पारिष्टलके समय में उद्घातित तर्कशास्त्र ( Formal or Deductive Logic )-में बहुत कम उचित ही है । 'कारमन साजिक' की पारिष्टल जिस प्रकारमें रण गये थे, सामान्य परिवर्तन छोड़ देनेमें यह सब भी प्रायः उन्ही व्यवस्थामें है । निगमनमूलक-न्याय ( Deductive Logic ) की प्रयोग-प्रधानी पारिष्टलके निर्दिष्ट समय ही प्राप्त तक नहीं पा रही है । पारिष्टलका 'डिडकटिम साजिक' वर्तमान कालमें दार्शनिक काण्ट ( Kant ) और इतिमन्वय-प्रवर्तित कारमन साजिकमें परिवर्तन हुआ है । पारिष्टलके न्याय वा साजिकको दार्शनिकनिमित्त पारिष्टलवाद ( Realism )के अन्तर्गतस्थित है । पारिष्टलके जन्मका पारिष्टल सौकार नहीं किया । उनमें समय वास्तवगत चीज पक्षार्थगत्का विषय ही मन्वयका ध्येय है । पक्षार्थगतमें विरोधव्ययनः ( Contradiction ) की अनुभव किया नहीं जाता, वास्तवगतमें भी उनका पारिष्टल व्यवस्था है । उनमें दोषोंका अभाव ही ( Absence of Contradiction ) कायदे कायदे की मूलका धरता है । पारिष्टलके मतके साथ यहनेमें विज्ञानकी गति ( Inner consistency )का बोध नहीं होता । वास्तवगतके साथ अन्वयका बोध होता है ( Correspondence with external reality )। उनमें पारिष्टलका 'डिडकटिम साजिक' वर्तमान 'कारमन-साजिक' नहीं है ।

सामान्य दार्शनिक मतका प्रचार हुआ । निवृत्तादीनिर्दिष्टे मतानुसार ज्ञानसाधनका व्यवहार करनेमें अन्वय प्रवृत्त तत्त्वका उद्घाटन किया नहीं जाता, पाकाकी पक्ष-अर्थोंमें ही प्रवृत्तमानका मन्वय है ( Inner mystical subjective exultation ), पाकाकी ही ही उन्वयित व्यवस्थाकी निवृत्तादीनिक दार्शनिक चानन्दमय दशा ( Ecstasy or rapture ) कह गये हैं । निवृत्तादीनिक पण्डितों द्वारा भी साजिककी कोई उचित माधिम नहीं हुई । वे लोग भी दार्शनिकप्रवृत्त पारिष्टलका मत अनुसरण कर गये । निवृत्तादीनिक पण्डित प्रोटिनस ( Plotinus ) पारिष्टल-सूत्र पारिष्टलको उद्घाटनिका ( Introduction ) लिख गये हैं । तत्कालानुसार पण्डितोंमें भी पारिष्टलके दार्शनिक पक्षोंको टीका रची है ।

इही मतानुसार प्राक्कालमें पृथग्भावमन्वयों महा-जन लोग भी ( Church fathers ) पारिष्टलके न्याय-मतका ही अनुसरण कर गये हैं । इही समयमें पश्च-देगीय पण्डितों और यहूदीजातिकों विद्वान्मन्वयोंमें भी पारिष्टलका दर्शन विमोचकमें प्राप्त हुआ । पारिष्टलके मतके अनुवर्ती पश्च-देगीय पण्डितोंके मध्य आभिनेक ( Avicenna ) और आभिरोम ( Avirocs ) इन दो पण्डितोंका नाम मन्वयिक विख्यात है ।

यूरोपमें मध्ययुग ( Middle Ages )में ही दार्शनिक मतमन्वयका आधिमान हुआ, उन्हीं वापारततः स्कालास्टिक विज्ञानकी ( Scholastic philosophy ) कहते हैं । स्कालास्टिक-दर्शन एक जन्म दार्शनिक मत नहीं है । मध्ययुगमें पृथग्भावका प्रभाव अतिवृत्त था और पारिष्टलका प्रभाव भी उन समय मन्वय-वैदयमें तिरोहित नहीं हुआ था । स्कालास्टिकदर्शन इन दोनोंके संघर्षमें व्यवस्था हुआ था । स्कालास्टिक दर्शनका विमोचक मन्वय यह है कि उसका अधिकांश भाग ही ज्ञान और भावके सम्बन्धमें स्थित हुआ है ( Reconciliation of Intellect and Faith ) । पृथग्भावके साथ दार्शनिक मतका सामन्वय प्रतिपादन ही स्कालास्टिकदर्शनका लक्ष्यमन्वय-विषय था । पारिष्टलके दर्शनका यह समय अतिवृत्त प्राप्तमन्वय हुआ । यहने बहुतसे पण्डितोंमें पारिष्टलको टीका मन्वय की है । एक महात्मा-के साजिकको एक

इही मतानुसार निवृत्तादीनिक ( Neo-Platonism )

समय विगोच्य वर्णन हुई थी। अविनाइस डे पत्रके (Abelard 1049-1142 A. D.) चारिटरलके लाजिककी सामान्य चर्चा ही विद्वग्मण्डलोमें प्रचारित हुआ था। चारिटरलको पदार्थविभाग-प्रणाली (The Categories) और 'डि इण्टाप्रिटेसिन'में लाजिकके इन दो चर्चोंका सामान्य प्रचार हुआ था। अन्यान्य चर्चोंका सामान्य विवरण बिथियस (Boethius) और 'अगुस्टिन (Augustine) के ग्रन्थसे प्राप्त होना है। १२वीं शताब्दीके अन्धकारमें लाजिकके अन्यान्य चर्चोंका प्रचार हुआ। इसके पनपार १५वीं शताब्दी तक चारिटरलके लाजिकके मूलग्रन्थकी भारीतनसे अधिक धानीपना हुई थी। इस समय चारिटरलका मित्रजिस्टोके वा 'न्योस्यम' य-यात्मिकायुक्ति (Syllogistic reasoning) कुछ उन्नत दृष्टान्त थी। चारिटरलकी संशोधनमूलक युक्तियोंमें (Syllogistic doctrine) सोराइटिस (Sorites) नामक तर्कविशेषका उल्लेख और विवरण है। अंध-युगमें ग्लोकोनियस (Goclonius) नामक पण्डितने भिन्न प्रकारके सोराइटिस (Sorites) वा युक्तिविशेष का उल्लेख किया है। इसके सिवा लाजिकका क्रम वा प्रणाली एक प्रकार रचने पर भी अंधयुगमें चारिटरलके लाजिकको दार्शनिक भित्तिका स्थापना हुआ था।

चरिटरलका न्यायमत सत्यवाद (Realism) के ऊपर प्रतिष्ठित है। चरिटरल याज्ञजगत्के अस्तित्व कीकार करते हैं और मनके वाद्यजगत्के व्यापारकी धारणा करनेको गति है, वह भी स्वीकार करते हैं। सुनरा जो मानसराज्यमें चमत्कृत समझा जाता है, जगत्में भी उसका अस्तित्व नहीं है (Contradiction of things constitutes contradiction of thought) क्योंकि मानसराज्यके व्यापार वाद्यजगत्के अस्तित्व हुए हैं। चरिटरलके मतानुसार सत्यका लक्षण (Criterion of truth) हेतु मानसिक सन्नति असन्नति (Subjective consistency or inconsistency) नहीं है, यद्युक्त धारण वस्तुका अस्तित्व वा अस्तित्वापेक्ष है (Objective consistency—external reality)। चरिटरलका यह सत्यवाद (Realism) अंधयुगमें स्तनाटिड अस्तित्वके समय नामवाद (Nominalism)के

पक्ष समित हुआ। नामवाद कहनेमें साधारणतः समझा जाता है कि नाम ही सत्यज्ञापक है। नामव्यतीत सत्य किसी वस्तुको सत्ता निर्दिष्ट नहीं करता। नाममें ही वस्तु तो सत्ता पर्यवसित होने से। किसी वस्तुका नाम ही निर्दिष्ट करनेसे इन्द्रियगम्य वस्तुभूति (Sense-perception) का उद्घोषण किया जाता है। इसके सिवा इन्द्रियके परीक्षा और किमो पदार्थमें अस्तित्व निर्दिष्ट किया नहीं जाता। जैसे वृक्ष कण्ठनेसे किमो न किमो एक निर्दिष्ट वृक्षकी प्रतिज्ञति मनमें उदित हुआ करती है—यही प्रतिज्ञति जैसे गान, तान, वस्तुल इत्यादि किसी न किमो एक वृक्षको ही होगी। वृक्ष कहनेमें ऐसा कुछ भी समझा नहीं जाता जो गान भी नहीं है, तान भी नहीं है, वस्तुल भी नहीं है अर्थात् निर्दिष्ट किमो इन्द्रियगोचर वृक्षकी प्रतिज्ञति नहीं है। 'मनुष्य' यह शब्द मनमें रखनेसे साधारणतः मनमें किम प्रतिज्ञतिका उदय होता है। मनुष्य नामको कोई निर्दिष्ट प्रतिज्ञति नहीं है। मनुष्य कहनेमें ही साधारणतः राम, श्याम या यदु अर्थात् किमो न किमो निर्दिष्ट मनुष्य ही प्रतिज्ञति मानसपटमें उदित होती है। यह प्रतिज्ञति एक निर्दिष्ट रकमकी है, यह या तो दीर्घ है, या क्षण है या मध्यमाकारकी है। वर्ष गोग, काना पदवा सविला हो सकता है। साधारणतः राम, श्याम या यदु कहनेसे जैसे किमो एक निर्दिष्ट साधारणविशिष्ट प्रतिज्ञतिका मनमें उदय होता है, वैसे ही मनुष्य इस शब्दके अनुस्यू ऐसी कोई प्रतिज्ञति नहीं जो मनुष्यमात्रकी ही प्रतिज्ञति कह कर गिने जा सके। परंपरा पदार्थके सम्बन्धमें भी उन्ही प्रकार है। नाम केवल इन्द्रियगोचर प्रतिज्ञतियों मनमें उदित कर देता है। नामके साथ इन्द्रियगत मानसिक प्रतिज्ञतिका अभ्यासगत (Through experience) एक ऐसा सम्बन्ध है कि नाम उच्चारित होने पर तत्संज्ञित पदार्थका मनमें स्थान धा जाता है (Association of ideas)। इसी दार्शनिकमतको नामवाद (Nominalism) कहते हैं। मध्ययुगमें इन नामवाद (Nominalism) और अस्तित्ववाद (Realism)के सम्बन्धमें विगोच्य धानीपना धनी थी। वस्तुमान कालमें भी यह प्रतिज्ञति निकटी

मतीं है। इसपरचही समर्थनहारी युक्ति का दर्शन म  
 हुई है। इसने लुट्टेमीय पम्पिरियल दार्शनिक मत-  
 समर्थक ( Empirical School ) दाम, जनट्टा पाट-  
 मिन मन्तिनासवादकी घोषाके पीर लुट्टेमीय  
 ट्रेन्डेम्बर्ग ( Trendelenburg ) ममानुभवों वलित-  
 मय मीनेक मतके समर्थक है। मध्ययुगके प्थनाटिक  
 समय ( Scholastic Period ) का पधिकांश ये दो मत-  
 भेदमें कर कथित हुआ है। सामवादके पम्पिरिक  
 प्रभावमें आश्रित विद्याप्रवायेका नियामक न हो कर  
 पारिवितण्डामात्रमें परिवत हुआ था। आश्रितका  
 पधकागत पंथ हो ( Formal or Linguistic  
 aspect ) प्रथम ही उठा था। प्थनाटिक या मध्यमयुग-  
 के दार्शनिक मतोंका पम्पिरिक व्याख्यारिषी है।  
 इसके पधःपतनका मूल है। बारमोश पम्पिरिक प्रला-  
 देय ( Revelation )के मायःमुक्तिका सामन्तरय विधाभ  
 करता एक प्रकार पमाध्यायन हो उठा। पधिकांश  
 प्थितोमें ही ममभः दार्िक इस प्रकार सामन्तरयविधाभ  
 एक तरह पधःपतन है पीर इस प्रकार पम्पयो तथा  
 पमार भित्तिके धरःप्रतिष्ठित दार्शनिकमत भी पम्पयो  
 पीर पारहोत है।

तद्विषयके पीर प्थनाटिकदार्शनिकताका तथा आश्रितकी  
 पधां भी प्थनाटिकमतके पधःपतनका पम्पयन काय  
 है। पधमें ही कथा आ पृका है कि मकपुगमें दार्-  
 निक पधां एक प्रकारसे माद या तर्कविषयाकी उपप-  
 कादप हुई थी। उठो पीर प्थनाटिक आश्रित दार्-  
 निक मत मिय मिय भाषांमें पामिकरुपसे पनुवाटित  
 हो कर विद्वत्समयमें मविंन पीर मियत होना था।  
 मुद्रायम्बके लहामके माय उठो पीर प्थनाटिकी पुनक  
 पीर भाषांमें मुद्रित हो कर पधो जाने लगीं।

धर्मसंस्कार ( The Reformation ) पीर प्रोटे-  
 स्टेन्ट ( Protestants ) मतके, पम्पुदरकी भी पम्प-  
 नितिका पम्पकारण कह सकते हैं। पामक-मन्पदाय  
 ( Church )के धर्मका उदय होनेके माय माद प्थनाटिक  
 विद्याका प्रचार हुमें लगा। सुतरां मुक्ति पीर विद्या-  
 के मायःपम्पविषयाकी विद्या पामकःके पधःपतनःमिलके  
 लपर निरंतर कर आश्रितःपम्पिकरुपमें ही मप-  
 काय हुई। पामनिक विद्याकी मन्ति भी इस पम्पकी

विद्याका पध है पीर यह भी प्थनाटिकमतके पधः-  
 पतनका मूला कारण है।

प्थनाटिकमतके विद्वत् भी पम्पुदर पमा या,  
 लुट्टे लुट्टेमीय माउ वैडन ( Lord Bacon ) लुट्टे  
 पम्पयन मायक थे। वैडनकी पधां मातःकालके 'इन्फ-  
 शिय' मानिकके प्थनाटिकी है। पधमें लोमम् पाम-  
 मिन या मन्पयन नामक पधमें ( Novum Organum )  
 पधमि पधमें मन्पका प्रचार किया है। वैडन पामिन्प-  
 लत म्यापमन्की म्याम्बेपका पधिवेक नहीं मानते।  
 वैडनके ममानुभव पामिन्प-पधिकांश मुक्ति या वि-  
 गिन्प ( Syllogism ) स्याम्बेपक ( Scientific invest-  
 igation ) के पनुकूल नहीं है, यह वैडन माद या  
 तर्कके पनुकूल ( Suitable for disputation ) है।  
 मध्ययुगके पामिन्पके तर्कमालका जेमा पारःहोता  
 था, वैडनके लेन लसे प्रकार इसे पामिन्पके पधोमा-  
 के पधुमें देवा है। वैडनके म्यापमन्में निगमन पंथ  
 म्यापके पधोमाक लधिवेक ही म्याि ( Inductive )  
 मागमें पधिकतर माधातर लाभ किया है। म्यापमाल  
 या आश्रितका इस प्रकार पामुन परिवतन दार्शनिक  
 भित्तिके ( Underlying philosophical basis )के  
 परिवर्तनके माय मंथटित हुआ है। वैडनके पधमें  
 दार्शनिकपक पम्पनःमन्पकी ही दार्शनिकी भित्तिके  
 लोमाभूमि मान गये है। वैडनः मधवमें पामनिक  
 विद्याकी लम्पतिके माय माय लममापःपकी इटि  
 नदिकःमन्पकी पीर पामक हुई थी। सुतरां पधिमःमन्-  
 की दार्शनिकी भित्तिके ही कर लहुका था। पधिमःमन्-  
 की पम्पनःमन्पके नियामकके जेमा लोःकल हुआ था  
 ( Experience became the criterion of truth )।  
 वैडनके लपःपधःपतन मिय आश्रितका सामान्य ही  
 लधनिकरुप किया है। निगमनमूलक म्यापमालमें  
 जेमा लुनकका लुनके ही पीर लुनःमन्प-निरामका प्र-  
 रण मन्पित हुआ है, वैडन के मा ही लोमो प्रवायो-  
 का पधःपतन काधमि म्याि ( Induction ) मय मन्प-  
 के लपके मुक्तिमाय कर मके, लम लामकीका निरःम का  
 गये है। वैडो लुनः म्यािन्प ( Conviction of In-  
 duction ) कह सकते हैं। लुनके निमा वैडन का  
 तर्कमालकी पीर लोःकल लधनिक मन्पि नहीं हुई।

वर्कन नवप्रणालीकां पत्र्य निर्देश कर गये हैं और उसका अनुसरण करके तत्परवर्ती जनट्रुयाटमिक एवं वेन प्रभृति पण्डितोंने वस्तुमान व्यासिमनुक तक ग्राह्य ( Inductive Logic ) का प्रथयन किया है और निगमनके चंगकी भी ( Deductive Logic ) व्याप्तिकी भित्तिके लपर प्रतिष्ठिन किया है ।

इहानीं पण्डके सिधा यूरोपके पन्थान्य देवीमें भी प्राचीन ग्रीकदगम और मध्ययुगके स्तनाटिक दगमके विरुद्ध पान्दोलन चला था । प्राग्मेदगीय दार्शनिक डेकार्ट ( Descartes ) प्राचीन दगम मतीके प्रति वीतश्रद्ध हो कर निदार्शनिकमतका प्रचार किया । तद्वरिचत डिक्कोम-डि-न-मियड ( Discourse-de-la-Methode ) वा चिन्ताप्रणाली नामक पुस्तकमें ये चपमे दार्शनिक मतीको निविद्य कर गये हैं । डेकार्ट पन्थान्य मतीका भ्राग्नि-विजृम्भित धिर कर स्वयं सःयाजुक्तमानके प्रयासोनिष्यंमें प्रहंस हुए । पधिमवादिता स्वा मय है । यह प्रथ पहली पहल हो सके मनमें उदित हुआ । बहु चिन्ताके बाद ये दस सिद्धान्तमें उपनीत हुए कि स्नाजुभव ही ( Cogito, ergo sum ) ध्रुय भव्य है, मैं ही मोचता हूँ, पतप्य मैं हूँ, दस ज्ञानमें संशय करनेका उपाय नहीं । कारण संशय करना भी यह अनुभवसापेक्ष है । हमो स्नाजुभवकी सहायतासे पन्थान्य विपर्योका सत्यामत्य निर्णय करना होता है । हमके पनभर पन्थान्य विपर्यमें सत्यासत्यका किस प्रकार निर्धारण करना होगा, डेकार्टने उस विपर्यमें संशय ( Methods ) पत्रमें जो पत्र निर्देश किया है, वह संक्षेपतः यह है—प्रात्मगत अनुभव और स्वतः सिद्धज्ञान ही सत्यका द्योतक है ( Subjective clearness and distinctness ) । जब कोई विपर्य स्पष्ट और निःसंशय रूप ( Subjective Certainty or intuition ) में रहता है, तब वह काष्णिक विपर्य है जो डेकार्टके मतसे सत्यं पर्यात् बाह्यज्ञानमें समका पक्षित्व है ।

उपरि-उक्त विवरणमें मामूम होगा कि डेकार्टके दार्शनिकमतमें उनके साजिकके लपर किस परिमाणमें प्रभाव विस्तार किया था । स्पष्टज्ञान ( Distinctness and clearness ) को सर्वत्र द्योतक मान कर उन्होंने

प्रमादकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें कहा है कि पस्पष्टज्ञान ही ( Indistinctness of thought ) प्रमादका कारण है । दूसरी जगह साजिकके सम्बन्धमें उन्होंने कहा है— "यदुसंशयक नियमोंकी प्रस्तापना न कर निश्चलित चार नियमके पवसम्भन करनेसे ही साजिकका उद्देश्य साधित होगा । ये चार नियम ये हैं—१म, जब तक स्पष्टतः प्रतीयमान न हो, तब तक किसी विपर्यको शर्य मत मानो । शर्य माननेके समय इस बात पर शर्य रखना होगा कि किसी संदेहका विपर्य सिद्धान्तसे पर्यतिष्ठित न रहे । दूसरा, किसी दुर्बुद्ध विपर्यके सिद्धान्तमें उपनीत होने समय उस विपर्यको भिन्न भिन्न रूपमें विभाग करना होगा और प्रत्येक विभागकी विशेष रूपसे परीक्षा करनी होगी । ऐसा करनेसे मोमोस्य विपर्यका सिद्धान्त सुगम हो जायगा । तीसरा, किसी विपर्यके सिद्धान्तमें उपनीत होने समय चिन्ताप्रणालीका इस प्रकार प्रयोग करना चाहिए, कि जो स्वतःसिद्ध और प्रत्यक्ष है उसीसे प्रारम्भ कर और धीरे धीरे दुर्बुद्ध विपर्यमें प्रवेशसाम करना होगा । चौथा—पन्तमें मोमोस्य विपर्यका पान्दोलन और समालोचना करके यह देख लेना आवश्यक है कि कोई प्रयोजनोय विपर्य कोड़ तो नहीं दिया गया है । डेकार्टके मतानुसार उपरिउक्त चार नियमोंके प्रति लक्ष्य रखनेसे ही साजिकका उद्देश्य सिद्ध होगा । डेकार्ट-प्रवर्तित कार्टेशियन स्कूलसे सा-साजिक ( La Logique ) नामक पत्र्य प्रकाशित हुआ । डेकार्टके परवर्ती मस्त्रान्थ पादि दार्शनिकगण डेकार्टके न्याय-मतको पोषकता कर गए हैं ।

रिपनोबा । डेकार्टके परवर्ती दार्शनिकोंमें रिपनोजाका ( Spinoza ) नाम विशेष उल्लेख योग्य है । रिपनोजाका दार्शनिक मत बहुत कुछ इस देशके पद्वैतवादसे मिलता जुलता है । प्रत्यक्षभावमें साजिकका कोई स्वतःविधान या प्रवर्तित प्रयास परियक्षा न होने करनेसे भी रिपनोजाके दार्शनिक मतमें उस समयके प्रचलित साजिकके लपर जो प्रभूत परिमाण में प्रभावविस्तार किया, इसमें स्पष्ट है नहीं । यूरोपीय साजिक प्रमापका नियामक्याप्रविधेय है और शर्य ही मामास्य-विषय है । तद्वरि नय नया है, इस विपर्यमें



निद्रावशमें सुप्तचेतन्य (Sleeping monad) यतसाया है। कितने घनेचेतन है, जैसे घटादि; कितने सचेतन हैं जैसे पशुपक्ष्यादि और कितने सम्पूर्णचेतन है, जैसे आत्मा (Soul) प्रकृति। इन सब मनाडके समावेगमें ही जगत्को उत्पत्ति हुई है। एक एक मनाड एक दर्पणको तरह है समस्त समस्त जगत् प्रतिबिम्बित हुआ है और यह विश्वासायस्या जिम प्रकार सम्पूर्ण है, वह मनाड भी उसी प्रकार उत्पन्न है। पहले जो निर्दिष्ट नियमवशसे मनाडका ऐसा अन्यान्ययोग साधित हुआ है, उसे निवनिज पूर्वप्रतिष्ठित सामन्वस्य (Pre-established Harmony) कहते हैं।

पूर्वोक्त संक्षिप्त विवरणमें ही निवनिजके दार्शनिक मतका किञ्चित् सामास्य दिया गया है। निवनिजने डेकार्टे की तरह कई एक सूत्रोंका प्रयोग कर साजिकको प्रावश्यकता प्रतीकार नहीं की। निवनिजके मतमें परस्पत और पविश्यज्ञानमें ही भ्रमको उत्पत्ति हुई है और यह पविश्यज्ञान जब तक पियहज्ञानमें परिणत नहीं होगा तब तक भ्रमका निराकरण नहीं होगा। न्यायानुगत सभी पद्यों (Logical rules) का अनुसरण नहीं करनेसे भ्रमनिवारण असम्भव है। अतः जब तक भ्रमप्रसाद यत्तमान रहगा, तब तक साजिककी प्रावश्यकता स्वीकार करनेकी ही पड़ेगी। निवनिजने प्रमाणके सम्बन्धमें दो नियमोंकी प्रावश्यकता स्वीकार की है। उन दो नियमोंमें एकका नाम है अन्यान्यविरोध (The Principle of contradiction) और दूसरेका पर्याप्तयुक्ति (The Principle of sufficient reason)। इनके प्रत्यायी भी जिसमें साजिकमें सम्भाव्ययुक्ति (Doctrine of probability) नामक एक और प्रयोग योजित हो इसके लिये निवनिजका विमोघ परिमिर्त, था। ये सब उपर्युक्त प्रयोगका स्वयंसात्कार न सके थे।

निवनिजके बाद तत्प्रभावधर्ती दार्शनिक क्रिश्चियन चरक (Christian Wolf) ने प्रायान्य तर्कशास्त्रको वगैरे पर्याप्तोपना की। उन्होंने किञ्चनकिया रासायनिक (Philosophia Rationalis) नामक साजिकके सम्बन्धमें चर्चक गवेषना की है। चरक चण्डाश्रमके प्रत्यायी अथलम्बन कर भारतवाहिकपरमं साजिकके

बानोप्य विषय क्रिश्चियन कर गए हैं। चरकके मतमें साजिकके तत्त्वदर्शन (Ontology) और मनशास्त्र (Psychology) इन दो शास्त्रोंके ऊपर प्रतिष्ठित होने पर भी, यह उनका पहली प्राबोध्य है। कारण, यद्यपि साजिकके खीलत विषय (Data-Specially the axioms) उक्त दोनों शास्त्रोंके ऊपर निर्भर हैं, तो भी उक्त दोनों शास्त्र साजिकको प्रभावोका अथलम्बन करके ही प्रावश्यकपरिणत हुए हैं। चरकने अनुमानप्रणय (Theoretical) और सिद्धान्तप्रणय (Practical) इन दो प्रयोगोंमें साजिकको विभक्त किया है। इनमेंसे प्रमाणप्रकरण (Notion) प्रसादयका अन्यान्यसम्बन्ध निराकरण प्रक्रमण (Judgment) और अनुमान (Inference) प्रयोगोंके पर्यन्त है तथा प्रयोग प्रयोगोंमें पुस्तकप्रणयन, तर्कविषयप्रणयको इत्यादि विषयोंमें साजिककी प्रावश्यकता प्राबोचित हुई है। चरकने कार्टेसियन दृष्टिको साथ निवनिजके मतका समन्वयसाधन किया है। निवनिजके मतमें अन्यान्यका परिरोध ही सत्यको सूचना करता है (Absence of contradiction is the criterion of truth)। चरक कार्टेसियनोके मतानुवर्ती हो कर कहते हैं, कि केवल विरोधभाव, होनेसे ही सत्यको प्रतिष्ठा नहीं होती। सत्यका मानतत्त्वयत्तका सम्भाव्य होगा प्रावश्यक है (The criterion of conceivability)।

निवनिजके सद्योगो दार्शनिकोंमेंसे क्रिश्चियन टमैसियस (Christian Thomesius) का नाम प्रमुखयोग्य है। टमैसियसने परिष्टन और कार्टेसियन इन दोनोंका मध्यस्थी मत अथलम्बन किया है। निवनिजके समकालपर्यन्त दार्शनिक लामबर्ट (Lambert) ने पारयोग्य या नूतन तन्त्र (Newes Organon) नामक एक पुस्तकको रचना की है।

इसके बाद ही दार्शनिकप्रवर इमानुयेल काण्ट (Emanuel Kant) का प्राविर्भाव हुआ। काण्टको यदि यत्तमान दार्शनिक जगत्का सूत्र कहें, तो कोई प्रायुक्ति नहीं। काण्टके समय दार्शनिक जगत्में एक युगान्तर उपस्थित हुआ। जर्मन देशमें कार्टेसियन दर्शन क्रमशः प्रत्याकारित हो कर दिवनिजप्रवर्तित



मनोविज्ञानमें परिचित हुआ था। यहूदीयोंमें साह-  
स्यवर्तिन रैम्पिरिकल एगन (Empirical philosophy)  
दादा निरुक्त हुआ प्रयत्नित चर्चेयवादी (Scepticism)  
परिचित हुआ था। काण्टके समयमें इस दोनोँ दार्शनिका  
विशेष प्रभुत परिमाणमें दृष्टोक्तन को उठा था। काण्टके  
समय कथा है, यहूदीयें चर्चेयवादीमें को उठने दार्श-  
निक मतका परिचरतन किया है ( It was Humm's  
scepticism that rescued me from any dogmatic  
shambler )। काण्टके चार्चनियम दार्शनिका रनेटदि-  
चौरका ( Innate theory of ideas ) सत्य दृष्टने  
समर्थन नहीं किया। उन्हींमें सथायवका चयनरतन  
किया है। काण्टके चर्चेयें इस मतको रनेटदिचोरी  
( Innate theory ) न कह कर 'रनेट'के बर्तमें 'चात्रिय-  
वादी' सत्यका व्यवहार किया है। दोनोँ दृष्टके सारथ्यमें  
व्यवहारगत क्या चार्चन है? काण्टके दार्शनिक  
मतका उदाहरणकोमें विवरण नीचे दिया जाता है।

काण्ट साहायगतका परिचित चर्चेकार नहीं  
करते। पर ही, साधारणतः साहायगत,के सारथ्यमें 'इस  
कोनोँकी कोनोँ प्रारणा है, काण्टके मतमें साहायगत  
के वा नहीं है। साहायगत, कहनेमें जिन सब सामाजिक  
बस्तुको प्रतिरुति इस कोनोँके मानसचय पर वरित कोती  
है, काण्ट कहते हैं, कि साहायगत, उँक उम प्रकार  
नहीं है। उर्चय पर वरित जावकी तरह साहायगत  
मानसवर्तिकरुतिके चतुष्टय नहीं है। साधारणतः  
साहायगत, कहनेमें इस कोन को समझते है, यह इस  
कोनोँका मनःसमूह है। साहायगतका परिचर है,  
यसमें निवा साहायगतका चर्चेय जाननेकी इस कोनोँमें  
चामता नहीं है। काण्टके मतमें क्युमीकीक कथ कोचकी  
अलग ( Persons )के कोर को कर जाता है; तब यह  
जिन तरह मोच, टैत, कोचिकादि मानसिक विच  
वर्तित विमान कोना है। साहायगत, भी उन्हीं तरह जब  
इस कोनोँके मनःसमूह वरित करता है, तब मानसिक  
चर्चेयुवादीके सारथ्य प्रकथा कर वरिते है और इस  
विचारकलापके मानसवर्तिकरुतिको ही इस कोन सारथ्य  
रतन साहायगत, कहते हैं। कर्चनियमके उँका को  
न दृष्टने जिन प्रकार सत्य बस्तुके कोनोँके

नहीं जान सकते, तबो प्रकार इस कोनोँके मानसिक-  
धर्मसमये वरत साहायगत, उँका है, तब इस कोन  
नहीं जान सकते है। साहायगत, यह वरत सत्य  
विशेष इस कोन नहीं जानने, काण्टके चर्चेयवर्तना  
( Thing-in-itself ) कथा है। चर्चेय दृष्ट यह उर  
सकता है कि यदि साहायगत, चर्चेयको चर्चेय चर्चेय  
को दृष्ट, तो दैय ( Nipoc ) चोर जान ( Time )का  
कोन सत्य है? काण्ट कहते हैं, कि दैय चोर जानका  
साहायचित्त नहीं है, यह मतका धर्म का सुचरिचय  
है। यदि कोरे सत्य कोन चोर कोचित काचरिचिच  
चर्चेयका व्यवहार करे, तो उन्हींको चर्चेयमें जिन प्रकार  
चर्चेय वरत चर्चेय को रंगोँमें रंगोँ दृष्ट दोच चर्चेय है,  
उन्को प्रकार साहायगत, भी इस कोनोँके मानसिक-  
कलापमें सचेयताय करने समय दैय चोर जान ये दो  
मानसिक धर्माकारको दैय चोरकाचमें संचित है,  
ऐसा मानस चर्चेय है। दैय चोर कोन वरत दो मानस-  
धर्मिका दार्शनिक काण्टके "चतुष्टिका साकार"  
मान रथा है। इनके निवा चोर को जिनके जान साह-  
यगतमें चर्चेयत रूप है। जैधे, वचन ( Unity ), बहुत्व  
( Plurality ), समवाय ( Totality ), चार्चेकारण-  
सायन्य ( Causality ) इत्यादि। काण्टका कथा है  
कि ये सब जान साहायगतमें चर्चेयत नहीं है, ये सब मान-  
सिकधर्मविधेय हैं। काण्ट इन सबको कोचका पाका  
विमान ( Categories of the understanding )  
कता गये हैं।

साहायगत,के वरत सत्यचय समर्थमें काण्टके जिन  
प्रकार चर्चेयवादीका चयनरतन किया है, ईयर चोर  
चर्चेयके सारथ्यमें भी वरथा मत चर्चेय प्रकार है। ये  
दो सत्य मानस्य नहीं हैं, उन्में है साह गाक विरुद्ध  
कर गये हैं। पर ही, ईयर चोर चर्चेयके परिचरको  
काण्ट चर्चेयकार नहीं करते। उन्हींमें सत्यचय ( Con-  
ditions of Practical Reason ) नामक चर्चेयें इस दोनोँ-  
का परिचित कोचकार चोर सत्य करनेकी चर्चेय को  
है। विच प्रकार उँक विचारमें के चर्चेयत रूप है,  
सत्यमान सत्यचयके उँक चर्चेयत नहीं है। उँका चर्चेय  
चर्चेयके सारथ्यमें के उँक चर्चेयत नहीं है।

पहले ही कहा जा चुका है कि काण्टने बोधगति को बोधगति का आकार ( Forms of the understanding ) और बोधगति का विषय ( Matter of the understanding ) इन दो भागों में विभक्त किया है । ये कहते हैं कि साजिक बोधगति का आकार वा प्रक्रिया ( Forms of thought ) से कर संघट रहेगा, बोधगति का विषय ( Matter of thought ) साजिक का प्रतिपाद्य विषय नहीं है । काण्टके आकार ( Form ) और विषय ( Matter ) इस दार्शनिक त्रैलोक्यविभाग से ही फारमल साजिक ( Formal Logic ) की सृष्टि हुई है । काण्ट ही फारमल साजिक का सूत्रपात कर गये हैं । यत्तमानकाल में हैमिल्टन और मानसेल ( Hamilton and Mansel ) से वही परिवर्तित हो कर यत्तमान फारमल साजिक में परिणत हुआ है ।

जर्मन देश में जाकोबि ( Jacobi ), कियेसवुटर ( Kieswutter ), हवयर ( Hoffbauer ), क्रुग ( Krug ) आदि दार्शनिकगण काण्टके मतका अनुसरण कर गये हैं ।

काण्टके समकालीन तदीय प्रतिपक्षमातृत्वकी दार्शनिकीमें फिकटे ( Fichte ) दार्शनिकगणमें सुविख्यात हैं । हम यहां पर उनके दार्शनिक मतका उल्लेख नहीं करेंगे । इतना कहना ही पड़ेगा कि फिकटे समस्त जगत और जागतिक ध्यादारकी आत्माका विकास ( Manifestation of the Ego ) बतला गये हैं । फिकटेके मतमें ज्ञानका आकार और विषय ( Form and matter of thought ) यह काण्टनिर्दिष्ट त्रैलोक्यविभाग सहित नहीं है । यतः उनके मतसे फारमलसाजिक नामका एक पृथक् साजिक नहीं हो सकता ।

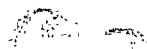
तत्परवर्ती सुप्रसिद्ध दार्शनिक शेल्लिंग ( Schelling ) ने फिकटेका मतानुसरण किया है । उनके मतका विशेषरूपसे उल्लेख करनेमें उनके दर्शनका उल्लेख करना होता है । किन्तु यह यत्तमान प्रबन्धके उपयोगी नहीं है । शेल्लिंगके मतसे सभी एकमात्र निर्गुण ( Absolute ) है विद्यते है । गुण निर्गुणसे निकला है, किन्तु निर्गुण गुणसे नहीं निकला

है, यह स्वयं निर्गुण ही कर भी गुणका आधार है । यह निर्गुण ( Absolute ) शेल्लिंगके मतसे ज्ञानमध्य ( known dy intellectual intuition ) है ।

शेल्लिंगके प्रवर्तित निर्गुण ( Absolute ) का स्वरूप को सा है, इस विषयको मोमना करना यत्तमान समयमें बड़ा ही दुष्ट है । क्योंकि उनका मत इतने बार प्रवर्तित हुआ है, कि उनके प्रकृत मतका निर्धारण करना प्रायः असाध्यसाधन हो गया है । लेकिन यत्तमान दार्शनिकगण पहले उन्होंने मतकी युक्तियुक्त और मारवान् मानते हैं ।

जब सभी वस्तु निर्गुणको विवक्षित हैं, तब विषय ( Matter ) और आकार ( Form ) इस प्रकार पार्यन्त नहीं रह सकता । आकृति और तद्विहित पदार्थ अन्योन्यमध्यविशिष्ट हैं ; एकके अभावमें अन्यका अस्तित्व असंभव है ; पदार्थके रहनेसे ही आकृति रहेगी और आकृतिके रहनेसे ही पदार्थका अस्तित्व असाध्यभावी है । इस प्रकार अन्योन्यमध्यविशिष्ट दोनों वस्तुओंका परस्पर स्वातन्त्र्य संघटन करना असंभव है । सुतरां शेल्लिंगके मतानुसार केवल फारमल साजिक ( Formal Logic ) नामका कोई पृथक् ज्ञान नहीं रह सकता । साजिकके यथायथ ज्ञान सहायक ज्ञान होनेमें आकारगत वा फारमल ( Formal ) और विषयगत वा मटीरियल ( Material ) दोनोंका ही होना आवश्यक है ।

फिकटे और शेल्लिंगके मतका अनुसरण कर सुप्रसिद्ध दार्शनिक हेगल ( Hegel ) ने भी कहा है, कि काण्टप्रवर्तित ज्ञानका आकार और ज्ञानका विषय ( The form and content of thought ) इस प्रकार एक त्रैलोक्यविभाग नहीं हो सकता । हेगलका कहना है कि आकार और विषय ( Form and Content ), भाव और वस्तु ( Thought and Being ) दोनोंका एक ही साजिककी मूलभूति है । हेगल अपने दार्शनिक मतको 'साजिक' नामसे परिचित कर गये हैं । हेगलके दार्शनिक मतकी साधारणतः दार्शनिक वा मेटाफिजिकल साजिक ( Metaphysical Logic ) कहते हैं । Metaphysical Logic कहनेसे साधारण साजिककी तरह तर्क वा युक्तिका नियामकमात्रविधेय समझा



सर्वों काग। ईदमका दुर्गत कोर कार्त्तिक से दोनो एक को दुर्गत है। ईदमका चतुष्का है कि यह विद्यापरा-  
 पर कोर मनुष्यवृत्त समस्त आकार को समस्त विद्याप-  
 काग काये एक स्वभावे दूको स्वभावेमें काग काग  
 है। पर विद्यापराको परापरदिक् है, दुर्गत कीरे  
 यान्त्रिक दुर्गत है। किम प्रयागेही यन्त्रार एक आग-  
 तिक् समविद्याग साधिन होग है, एक प्रयागेही दुर्गि-  
 मयक् प्रयागे वा 'दुर्गसिद्धिद्वय मेवक्' (Dislocation  
 method) काये है। केवल मानसिक अणुमें एक  
 कार्त्तिकक प्रयागेका प्रयाग निदह लही है, केवल  
 यन्त्रसंयन्त्रा विद्याग को एक प्रयागेही यन्त्रार साधिन  
 लही होग, अणुसंयन्त्रा विद्याग को एकमे निदह लही  
 साधिन है। निदह लहीग; एक दो विरोधो दोनो  
 मनुष्य का भागीके समस्तमें प्रयोग मनु वा भागका  
 विद्याग है। एकमे एकका नाम पूर्वद्वय वा सिधिस  
 ( Thesis ) कोर एकमे विरोधिभाव वा मनुष्य का नाम  
 उपपन्न वा आन्विषिस ( Antithesis ) है तदा एक  
 प्रयागविरोधो मनु वा दोनो भागीके मीदोमे मिलिन  
 लहीग मनुष्य का नाम समस्त वा सिधिसिस ( Syn-  
 thesis ) है। मनुष्यो प्रवेक प्रयागान् मनु लही निदहमे  
 यन्त्र है। अन्विष ( Being ) कोर समस्तार ( Not-  
 Being ) एक दो विरोधोभागेके सिधिससमे विद्यागही  
 लयति दुर् है। आन्विष लही आकार को यन्त्र विद्याग-  
 भाग है। ( A process of becoming )। किम यन्त्र-  
 सिधिससमस्तिके प्रयागे ( Intelligence Reason )  
 पर भागवि सिधिस कोमे है, यन्त्रै एक समोचयमे  
 सिधिससिद्धि विद्याग है, लही मन्त्र ईदमके मनुमे  
 यन्त्रोको ( Intelligence ) है। एक यन्त्रसिद्धिस सिद्धि  
 प्रयागे लहन्का सिद्धिसिस मनुष्यसिद्धिमे मनुष्यसिद्धि  
 सिद्धि यन्त्रे सिद्धिसमे यन्त्रार भागे वाद प्रयागिन दुर् है।  
 किम यन्त्रा मनुष्य मनुष्य सिद्धिस मनुष्य ( Signifi-  
 cation ) है एक मनुष्यमे यन्त्रका विद्याग दुर् है,  
 सिद्धिस यन्त्रे दुर्गमे एक मनुष्यमे सिद्धिससमे सिद्धिस  
 कर लही है। सिद्धिस को सिद्धिस मनुष्यमे सिद्धिस  
 सिद्धिस काग है।

प्रयागका दुर्गसिद्धिस मनुष्य कागपर कोर भागीके

सिद्धिस को मनुष्य है। मनुष्योमे मनुष्य कोर यन्त्रै मनुष्य  
 सिधिस सिधिस सिधिस सिधिस भागका सिद्धिस दुर्ग  
 है, यन्त्रो भागीयता है ( The development of  
 those pure universalizations or thoughts  
 determinations which underlie and form  
 the foundation of all natural and spiri-  
 tual life, the logical evolution of  
 the absolute ) एक यन्त्रो सिद्धिस 'आन्विष वा'  
 भागका मनुष्योमे एक मनुष्य है। सिद्धिस यन्त्रोमे सिद्धिस  
 मनुष्यो विद्यापराकोका मनुष्यो है। एक यन्त्रो  
 सिद्धिसमे प्रकृतिसार ( the philosophy of nature )  
 नाममे मनुष्य सिद्धिस है। सिद्धिस यन्त्रोमे यन्त्रारमनुष्य  
 सिधिस प्रकार विद्याग नाम करके मनुष्य, मनुष्यसिद्धिस, सिद्धिस  
 भागि सिद्धिस सिद्धिस दुर्ग है, मनुष्य सिद्धिस है। एक  
 यन्त्रका यन्त्रारमनुष्य ( The philosophy of the spirit )  
 नाम रणो मनुष्य है। यन्त्रो पर एक यन्त्रा लही  
 है कि सिद्धिसको एक मनुष्यसिद्धिसको एक सिद्धिस  
 वा मनुष्यसिद्धिस है; मनुष्यसिद्धिस विद्याग को मनुष्यसिद्धिस  
 है। किम एकमे ( Part I ) मनुष्यसिद्धिस कोर  
 यन्त्रा मनुष्य ( Nature and spirit ) एक दो सिद्धिसोमे  
 सिद्धिस को कर मनुष्यसिद्धिस को मनुष्यसिद्धिस ( The ab-  
 sulte idea ) मे सिद्धिस होग है, मनुष्य मनुष्यके  
 सिद्धिसमे एक सिद्धिस यन्त्रोमे सिद्धिस को है। भाग कोर  
 मनुष्यका सिद्धिस को ( The unity of thought and  
 being ) एक सिद्धिससिद्धिस ( Absolute being ) का  
 यन्त्र है। एक यन्त्रोमे एक यन्त्रोके मनुष्यसिद्धिस,  
 यन्त्रासिद्धिस यन्त्रासिद्धिस वा यन्त्रो भागको यन्त्रो मनुष्यसिद्धिस  
 यन्त्रासिद्धिस नाम सिद्धिस मनुष्यो है।

के मनुष्ये मनुष्यके यन्त्रासिद्धिस यन्त्रोमे मनुष्य  
 सिद्धिस मनुष्यसिद्धिसको मनुष्य मनुष्यके एक मनुष्यका  
 यन्त्रो सिधिस यन्त्रोका यन्त्रोमे आन्विष मनुष्य रणो है,  
 लही यन्त्रोका यन्त्रो सिद्धिस मनुष्यो मनुष्यो को यन्त्रो का  
 मनुष्य है कि सिद्धिसके मनुष्ये सिद्धिसके यन्त्रो सिद्धिस  
 यन्त्रोमे ( The development of those pure universalizations or  
 thoughts determinations which underlie and form  
 the foundation of all natural and spiri-  
 tual life, the logical evolution of  
 the absolute ) वा सिद्धिस मनुष्य कोर  
 मनुष्यके सिद्धिसके एक यन्त्रोमे सिद्धिस मनुष्य सिद्धिस है।

किन्तु पारिष्टल प्रकृति दार्ग निकोने जिस प्रकार पदार्थ विभागको (Categories) संघेपने लिया है और किस प्रकार पदार्थ विभागका विकास हुआ है उसे नहीं दिखनाया है; हेगलने ऐसी प्रयाका पचलनन नहीं किया है। जिस प्रकार डार्लेकटिक प्रयाक्रमने (Dialectical method) भाव वा पदार्थने क्रमविकागतताम किया है, हेगलने उसका गृहायय विवरण किया है।

हेगलने अपने त्नाजिकको साधारणतः तीन भागोंमें विभक्त किया है। प्रथमांशका नाम है स्रष्टितत्व (The Doctrine of Being)। Being और Nothing इन दो विरोधात्मक भावोंके संयोगने Becoming वा विकासकी उत्पत्ति होती है। दोहे लकीने पचस्था (State, thereeness), स्वार्थ (Individuality), गुण (Quality), सख्या (Quantity) और परिमाण (Measure) आदि भावोंको उत्पत्तिके सम्बन्धमें विस्तृत पालोचना की है।

द्वितीयशका नाम है सत्त्ववाद (The Doctrine of Essence)। सभी पदार्थोंको सत्ता क्या (Essence) है; किस प्रकार Essence का विकासताम होता है। (Essence and its manifestation), सत्ता (Essence) और विकास (appearance) में क्या सम्बन्ध है; इनके मियां समत्व (Identity), बहुत्व (Diversity), विरोधत्व (Contrariety), असंगति (Contradiction) आदि तथा स्रष्टितत्व (Actuality) आदि भावोंका विकास वर्णन है।

तृतीयशका नाम भाववाद (The Doctrine of notion) है। इन शंशमें प्रथमतः भाव वा Notionका स्वरूप क्या है, इसीका उल्लेख है। दोहे हेगलने Notion को तीन भागोंमें विभक्त किया है। (१) मानसिक धारणा वा भाव (Subjective notion), (२) बाह्य-भाव चर्चात, यह मानसिकभाव जिस प्रकार बाह्यजनगतमें प्रतिफलित हुआ है (Objective notion) और (३) आरडिया (Idea), आरडिया उपरि-उक्त दोनों भावों चर्चात Subjective और Objective भावोंका समन्वय (Synthesis) है।

बाह्यमें हेगलने (Subjective notion)के चर्चात

भावोंको निविष्ट किया है। हेगलका कहना है कि Subjective notionके क्रमविकागतमें साधारणत्व वा सार्वभौमत्व (Universality), विशेषत्व वा विशेषभाव (Particularity) और एकत्व (Singularity) इन भावोंकी उत्पत्ति हुई है (They are the moments of the subjective notion)। दोहे वाक्य (Judgment) और युक्ति (Syllogism)का स्वरूप भी है, उस विषयमें पालोचना की है। एकत्वमें सार्वभौमत्व किस प्रकार चर्चातित है, इस तत्त्वका निर्णय ही (Judgment)का स्वरूप है (The Judgment enunciates the identity of the singular with the universal the self-diremption of notion)। किस प्रकार सार्वभौम भाव (Universal notion) विशेष भावकी सहायतामें (Through the particular) एकत्वमूलक भावके साथ (Singular notion) समन्वित होता है, इन सबका प्रदर्शन ही (Syllogism)का उद्देश्य है। एक, बहु और विशेष भावोंका समन्वय-साधन (Commidiation of universal and singular through particular), युक्तिप्रणालीका मूल है।

तदनन्तर Objective notionके सम्बन्धमें पालोचना की गई है। Objective notion कहनेमें कोई मानसिक भाव समझा नहीं जाता है। Objective notion कहनेमें बाह्यवस्तुका बोध होता है। केवल बाह्यवस्तु कहनेमें Objective notion का बोध नहीं होता। सम्पूर्ण और भावघातक चर्चात बाह्यवस्तुका जो दृष्टनेमें मनमें एक सम्पूर्ण भावकी उदय होता है, उसीको हेगलने Objective notion कहा है। (Objective notion is not a outward being as such, but an outward being complete within itself and intelligently conditioned)

वस्तुगत भावकी उत्पत्तिका क्रम (Development of the objective notion) निम्नलिखितरूपमें निविष्ट किया गया है। हेगलने मनमें बाह्यगति या मेकेनिज्म (Mechanism) इस क्रमोच्चतिशा प्रथम स्तर है। दो स्वयंनिविष्ट वस्तु जब किसी तीसरी वस्तु या शक्ति द्वारा एकत्र होती है और फलित एक मूलन वस्तु



जगत और अज्ञानत्व वे दोनों स्वतन्त्र पदार्थ नहीं हैं, एक दूसरेका प्रतिरूप है। 'अज्ञानत्व' ज्ञानके लिये विकस्यमाने माय माय ही जगत्के अन्तर्निहित ज्ञानस्वरूप अज्ञानत्व ही की ओर वापस आनेमें परिचित हुआ है (Consciousness has returned to itself), यहि जगत् और अज्ञानत्वका विरोध आज तक भी दूर नहीं हुआ है, ज्ञानको आधार बाधा या मेरे निकट यहि जगत् अपने भी बाहरकी वस्तु है। बाधा यहि जगत्में अपना विकास देखतो है। Absolute Idea वा अज्ञानत्वका विकास होनेसे ही इस विरोधका निरास होता है, उस समय ज्ञान और अज्ञान, भाव और वस्तु, अज्ञानत्व और यहि जगत्का सम्बन्ध नहीं रहता है (The opposite between the subject and the object, Knowing and Being, Thought and Being will cease)। यह निरखनदान जगत्के मतमें प्रागतिक सभी कार्य-कलापोंमें नियन्त्रित करके अपनी ओर खींच लेता है। संचितः उपरि-उक्त विवरण ही जगत्के सांज्ञिक वा अज्ञानके दर्शनका मूलतत्त्व है। जगत्के बहुविधता दर्शनका अन्वय्य अर्थ छोड़ कर उनके 'सांज्ञिक' साम-वेद्य अंगकी आलोचना की गई है। जगत्का दर्शन एक तो दुर्बोध है, दूसरे दृष्टोभायमें उसका विवरण और भी जटिल हो गया है। ऐसी अवस्थामें इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि अन्वय्य दर्शनिक लोग सांज्ञिक कहनेसे जो समझते हैं, जगत्का सांज्ञिक उस अर्थको वस्तु नहीं है। उनका सांज्ञिक जागतिक विषयकी परिचयस्वासे जटिल है। जगत् क्रमोपपत्तिवादी (Evolutionist) हैं। उनके मतानुसार यहि जगत् और अज्ञानत्व दोनों ही जगत्में इस सांज्ञिकका विकास साधित होता है। (Gradual development of the categories both in the subject and the object—mind and matter)।

परिचयमें ही कर जगत् तदा सांज्ञिककी उत्पत्ति, परिचयमें ही परिचयमें सम्बन्धमें धारणादि प्रतिष्ठित दिया गया। विभिन्न दर्शनिक विचारोंके अन्तर्निहित ही कर सांज्ञिकने कौन कौन भिन्नभावधारण किया है, उसका परिचय देना ही उपरि-उक्त विवरणका अर्थ है।

ही और अज्ञानत्व समयमें ही सांज्ञिककी कौनकी परि-ष्ठित साधित हुई है, उपर्युक्त विवरणमें ही यह अज्ञानत्व आया है।

इसके अन्तर्गत विचार का अर्थ है, कि दर्शनिकप्रकार के अन्तर्गत सांज्ञिक-प्रवृत्ति अन्वय्यपरिचय का अर्थ है। तत्परिचय Novum Organum वा नव-अन्वय नामक अन्वयमें अज्ञानत्व समयमें व्याप्तिमूलक तर्क (Inductive Logic) का सूचना कर दी है। वेदिक दर्शनिक ज्ञान दर्शन-मिथ (John Stuart Mill) ने सबसे पहले व्याप्ति-मूलक सांज्ञिककी पूर्णविवय प्रस्ताव रखा। मिथ और वेकनके दोनों अन्वय अज्ञानत्व समयमें 'इन्डक्टिव सांज्ञिक' के सम्बन्धमें प्रासादिक अन्वय है। दर्शनिक प्रवृत्ति (Kant) जिसे फारमल सांज्ञिक (Formal Logic) ही सूचना कर गये है, अज्ञानत्व समयमें यह ही इन्डक्टिव और उनके मिथ मान्य (Sir William Hamilton and Mansel) कर्तव्य सामान्य परि-चयमें ही छोड़ कर एक प्रारम्भिक अन्वयमें ही रचित हुआ है।

साधारणतः व्याप्तिमूलक सांज्ञिककी मेटेरियल सांज्ञिक (Material Logic) और फारमल सांज्ञिककी 'निगमनमूलक' सांज्ञिक कहते हैं। किन्तु यद्यपि वेदिकने वेसा अर्थोविभाग अज्ञानत्वमें ही कर दिया है। कारण Deduction वा निगमन युक्ति (reasoning) का एक प्रकार भेद मात्र है। Material सांज्ञिकमें ही Deductive reasoning वा निगमन-मूलक युक्तिप्रयोगका प्रयोग किया गया है। मेटेरियल और फारमल दोनों ही सांज्ञिकमें इन्डक्टिव और इन्डक्टिव दोनों प्रकारकी युक्तिप्रयोगका प्रयोग है। अर्थ है इतना ही है कि एकमें व्याप्ति और दूसरेमें निगमन-युक्ति प्रयोगकी प्रवृत्ति ही रहती है। सांज्ञिककी अन्वयप्रवृत्ति भी अज्ञानत्व समयमें ही उपरि-उक्त अर्थोंमें ही रहती है। मिथका कहना है कि युक्ति मात्र ही प्रवृत्तिः व्याप्तिमूलक है। निगमनयुक्ति प्रवृत्ति ही तत्परिचयमें ही अज्ञानत्वके अन्तर्निहित है। निगमनयुक्तिप्रवृत्तिके अन्वयमें ही इन्डक्टिव (Syllogism) का अन्तर्निहित अर्थ (Major Premiss)



इसी कारण प्रायःक नाजिकके प्रथमांगमें ही भावापरि-  
च्छेद सन्नियत हुआ है। इसमें भावाकी मिसमिषरूपमें  
विश्लेषण करके (Analysing) भावा और भावके  
पञ्चोन्म सन्बन्धके विषयमें चालोचना की गई है।  
प्रत्येक मानसिक भाव भावाकी महायतासे प्रकाशित  
होता है। जितने वाक्यविषयाम करनेमें एक सम्पूर्ण  
समीभाव सूचित होता है, उत समीभावप्रापक वाक्य-  
ममष्टिको (Acomplete sentence) नाजिकमें एक एक  
प्रतिष्ठा कही गई है। प्रतिष्ठाका विशेषण करनेमें देखा  
जाता है कि शब्दसमष्टि हो कर एक एक प्रतिष्ठा ग्रथित  
हुई है। इसीमें नाजिकके प्रथमाध्यायमें नाम-प्रकरण  
वा शब्दशक्तिके सन्बन्धमें चालोचना है।

नामप्रकरण—नामका प्रकृत स्वरूप कैसा है, इस  
विषयमें मिस मिस ग्रंथोके दाग निका मंत मिस  
मिष है।

नामवादी (Nominalist) मिसके मतमें नाम तत्-  
संघट पदार्थका साहचरि चिह्नमात्र (Symbol) है।  
अभ्यासक्रममें (Through association) किसी एक  
नाम वा शब्दका स्मरण होनेसे ही तत्संघट पदार्थ  
मनमें उदित होता है।

हे मिलटन प्रकृति पण्डितमग मिस मतावमस्वी है  
इसके अन्वयित मतकी भाववाद वा कल्पेपुष्पात्मिजम  
(Conceptualism) कहते हैं। हे मिलटनका कहना  
है कि जिन तरह व्यक्तिगत प्रतिकृति किसी व्यक्तिवाचक  
शब्दके साथ संघट है, समी प्रकार जातिवाचक शब्दके  
साथ जातिगत भाव (Concept) संघट है। एक  
वातमें भाववादी सामान्य भाव (General idea or  
concept) का अस्तित्व स्वीकार करते हैं, नामवाद  
केवा नहीं करते।

अपरि एक मतदय हीड कर भी एक और ग्रंथोका  
मत है जिसे सत्वाद (Realism) कहते हैं, परिच्छेप  
और मध्यम (Scholastic period) के अनेक पण्डित  
इसो मतके अन्वयिसे हैं। इनका कहना है कि द्रव्य-  
मनुष्यका मिस मिस गुण हीड कर जातिव नामक एक  
स्वतन्त्र गुणका अस्तित्व है। जैसे,—अग्नि मिस मिस  
गुण रह सकता है। किन्तु तदतीत इसमें अन्वय क

कर एक माधारण गुण है, इस गुणके मही रहनेमें यह  
अतपदवाच्य नहीं होता। सत्वादी पण्डितमग Essence  
कह कर गुणका स्वतन्त्र अस्तित्व (Reality) स्वीकार  
करते हैं। जैसे—मनुष्यत्व, गोत्व, हत्त्व इत्यादि। इसी  
में इन्हें Realist कहा गया है। मिसके मतानुसार  
गुणममष्टि हीड कर Essence नामक कोई एक स्वतन्त्र  
गुण नहीं है।

पेडि नामकी ग्रंथो विभागप्रधानो निर्दिष्ट हुई  
है। यह नाम एकत्ववाचक, बहुत्ववाचक और समष्टि-  
वाचक (Collective names) के भेदमें तीन ग्रंथो-  
में विभक्त हुआ है।

ग्रंथोभेदके द्वितीय प्रकरणमें व्यक्तिवाचक (Con-  
crete) और जातिवाचक (Abstract) भेदमें नाम  
दो प्रकारका है।

द्वितीय प्रकरणमें नाम सन्ववाचक (Connotative)  
और असन्ववाचक अर्थात् गुणवाचक नहीं (Non Con-  
notative) इत्यादि भेदमें दो ग्रंथोमें विभक्त है।  
जिस नाम द्वारा केवल एक नाम वा गुणका प्रकाश हो,  
उसे Non-connotative वा असन्ववाचक नाम कहते  
हैं। राम कहनेसे राम-नामसेव्य व्यक्तिका ही बोध होता  
है, और किसीका भी नहीं। शुकत्व कहनेसे केवल एक  
गुणविशेषका ही बोध हुआ, इसके मिस अन्य किसी  
तत्त्वका सन्धान नहीं पाया गया, ऐसे नामको अन्व-  
वाचक वा Non connotative और जिससे गुण तथा  
द्रव्य दोनोंको ही प्रतीति होती है, उसे Connotative  
वा सन्ववाचक नाम कहते हैं।

चतुर्थ प्रकरणमें (Fourth principal division)  
Positive वा भावप्रापक और Negative वा अभाव-  
प्रापक भेदमें नाम दो प्रकारका है, जैसे मनुष्य,  
अमनुष्य, अणु, अणु इत्यादि।

अन्वय प्रकरणमें सन्बन्धमापक (Relative) और  
सम्बन्ध-निरपेक्ष (Absolute or non-relative) इन दो  
प्रकारका विवरण है। जो दोनो नाम परस्पर अन्वय-  
प्रापक हैं, उन्हें सन्बन्धमापक नाम कहते हैं, जैसे पिता  
कहनेमें जो पुत्रको और राजा कहनेमें प्रजापती उच्यता  
करता है, इत्यादि।





संज्ञा है, उन श्रेणीगत प्रत्येक वस्तुके सम्बन्धमें वह श्रेणीचक्र को वास्तव है, यही संसुदयका मूल है ।

दार्शनिक मूल उपरि उक्त मतको समीचीन नहीं मानते । उनका मत है कि कर्तृपद ( Subject ) और विधेयपद ( Predicate ) किसी एक विषय सम्बन्धकी सूचना करता है और अन्योन्य सम्बन्धने कर भी प्रतिष्ठाकी शक्ति है । वे सम्बन्ध मूलके मतमें सामान्यतः तीन हैं—पौर्वापर्य ( Sequence ), सामानाधिकरण्य वा समावस्थान ( Co-existence ), अस्तित्वमात्र ( Simple existence ), कार्यकारण ( Causation ) और सादृश्य ( Resemblance ) ।

प्रतिष्ठाकी साधारणतः दो भागोंमें विभक्त कर सकते हैं—वाचकप्रतिष्ठा ( Verbal proposition ) और वास्तव प्रतिष्ठा ( Real proposition ) जिस प्रतिष्ठाका विधेयपद ( Predicate ) कर्तृपदका अर्थ वा अर्थानुसार प्रकाश करता है अर्थात् कर्तृपद जो अर्थ प्रकाश करता है तदतिरिक्त अर्थ प्रकाश नहीं करता, ऐसी प्रतिष्ठाको वाचक वा Verbal प्रतिष्ठा कहते हैं । मनुष्य बुद्धिवाली जीव है, यहाँ पर 'बुद्धिवाली जीव' यह विधेयपद मनुष्य अर्थमें जो समाप्ता जाता है, तदपेक्षा किसी अतिरिक्त अर्थका प्रकाश नहीं करता । अतएव यहाँ पर उपरि उक्त प्रतिष्ठावाचक प्रतिष्ठा है । जिस प्रतिष्ठामें विधेयपद कर्तृपदके अतिरिक्त अर्थ प्रकाश करता है, वेही प्रतिष्ठाको वास्तवप्रतिष्ठा ( Real proposition ) कहते हैं । जैसे 'सूर्यपद जगत्का केन्द्रस्थ है' यहाँ पर 'सूर्य' इस कर्तृपदके अर्थको प्रतीति होनेमें यह जगत्का केन्द्रस्थ इस विधेयपदका अर्थ तदनुगतिविष्ट है, ऐसा समाप्ता नहीं लाता, विधेयपद संपूर्ण नूतन तथ्यप्रकाश करता है । इसीसे यह प्रतिष्ठाको वास्तव प्रतिष्ठा कहते हैं । वाचक प्रतिष्ठाका नामान्तर अर्थव्योक्त प्रतिष्ठा ( Explicative ) और वास्तव प्रतिष्ठा ( Real proposition ) का नामान्तर अर्थव्योक्त प्रतिष्ठा ( Ampliative proposition ) है । प्रतिष्ठाका अर्थविचार करनेमें विधेयपदका विशेषण वाचक है और विधेयपदके माय कर्तृपदका अर्थविचार करनेमें ही प्रतिष्ठाका अर्थ निर्धारित हुआ ।

व्याख्यान । Definition—सभी वस्तुओंकी संज्ञाप्रदानको जिस नियममें गाहित हुई है, किम प्रकार संज्ञानिर्देशप्रदानको निर्दिष्ट है, किम प्रकार वस्तुकी संज्ञा निर्देश ( Define ) की जाती है या नहीं को जाती है इत्यादि विषय हम प्रकरणमें आलोचित हुए हैं । यहाँ पर यह कथ देना आवश्यक है कि संज्ञा और अर्थको डेफिनेशन ( Definition ) सम्बन्धरूपसे समायोजक नहीं है, अधिकतर उपयुक्त नामके अभावमें संज्ञाशब्द ही प्रतिगण्य स्वरूप व्यवहृत हुआ । संज्ञाप्रकरणके सम्बन्धमें मूल मूल तर्कशास्त्रों का भिन्न भिन्न मत है ।

दार्शनिक परिष्ठाके मतानुसार किसी पदार्थका संज्ञा निर्देश करनेमें वह पदार्थ जिस जाति ( Genus ) के अन्तर्गत है, उस जातिका और तदपेक्षा जो सब अतिरिक्त गुण उस पदार्थमें विद्यमान हैं, उनका उल्लेख करनेमें ही पदार्थका संज्ञानिर्देश किया गया ( Definition per genus at differentia ) । परिष्ठा एवं तदनुगति अर्थव्युत्पत्ते अर्थव्योक्त दार्शनिक सत्यादि ( Realist ) थे, उपरि उक्त संज्ञाप्रकरण उनके दार्शनिक मत सन्धत है ।

मूल प्रकृति नामवादी ( Nominalist ) दार्शनिकगण उक्त मतको समीचीन नहीं मानते । मूलका कहना है कि प्रमाण पण्डितोंके मतमें पराजाति ( Summum genus ) अज्ञित नहीं की जाती । उनके मतमें हम लोकोक्त सरल मनोभाव ( Elementary feeling ) व्यतीत और सभी पदार्थ संज्ञा द्वारा निर्देश किये जा सकते हैं । समस्त संज्ञा मूलके मतमें नामका केवल अर्थ प्रकाश करती है ( Enumerates the connotation of the term to be defined ) ; एक नामका स्वरूप होनेसे ही तद्विहित जिन सब गुणोंमें वह नामधेय पदार्थ अन्तर्गत होता है, वे गुण स्वरूप या जाते हैं और उन गुणोंके निर्देश करनेके लिये ही मूलमें 'संज्ञा' विशेष पाठ्या प्रदान की है । मूलका कहना है कि जो वस्तु कोई सूचना नहीं करती, ऐसी वस्तु संज्ञा द्वारा निर्देश नहीं की जा सकती । राम कहनेमें किसी अर्थको प्रतीति नहीं होती; राम शब्द एक वस्तु निर्देशता

नामका अर्थोविभाग संज्ञेयमें कहा गया। अभी नामका पर्यं विचार संज्ञेयमें कहा जाता है।

दार्शनिकप्रकार परिचलने द्रव्य, गुण, परिणाम इत्यादि दश पदार्थ विभाग करके निर्देश किया है। नाम इन दश अर्थोविभवे किमी न किमीके पन्नागत होगा। मिथने पूर्वोक्त दश प्रकारका अर्थोविभाग करके पर्यं निर्धारणकी प्रयोगिकता दिखानाते हुए स्वोयमत स्थापन किया है। मानसिक चिन्ताप्रणालीका विश्लेषण कर मिथने निम्नलिखित अर्थोविभाग निर्देश किया है।

( १ ) मानसिक भाव पर्याय वाङ्मयवस्तुओंके मनके ऊपर स्थिया (Feelings or states of consciousness)

( २ ) मन वा धाम्ना—(The mind which experiences those feelings.)

( ३ ) समस्त वाङ्मयवस्तु (The Bodies or external objects) पर्याय जो सब वस्तु हम लोगोंके मानसिक भावोंकी जनयिता।

( ४ ) पूर्वोपर्यं ज्ञान ( Succession ) समानाधिकरण ज्ञान (Co-existence) सादृश्य और चमादृश्य ज्ञान (Likeness and unlikeness)

जागतिक समस्तपदार्थ इन चार अर्थोविभवे किमी न किमीके पन्नागत होने हों।

साहित्यकी प्रतिज्ञा (Logical propositions)—पहले कहा जा चुका है कि एक सम्पूर्णमानसिक भाव जापक समष्टिकी प्रतिज्ञा (Proposition) कहते हैं। कर्ता, विधेयपद और योजक पदभेदसे प्रत्येक प्रतिज्ञाके तीन पद हैं। जिससे सम्बन्धमें कुछ उक्त वा विहित ब्रूया करता है उस व्यक्ति या वस्तुको कर्तृपद (Subject), जो उक्त वा विहित हो उसे विधेयपद (Predicate) और जिस पदकी सहायतासे वस्तुपद पर्यं विधेय पदके मध्य सम्बन्ध स्थापित हो, उसको योजकपद (Copula) कहते हैं। जैसे भावजापक (Affirmity) और चमावजापक (Negative), सरल (Simple) योजक (Complex), सावर्भौमिक (Universal), विशेष (Particular), अनिर्दिष्ट (Indefinite) और व्यक्तिकीपक (Singular) इन कई अर्थोविभविभाग हुआ है। बादमें प्रतिज्ञाके पर्यं विचारके सम्बन्धमें

(Import of propositions) प्राचीनता सन्निविष्ट हुई है। सभी प्रतिज्ञाओंके पर्यं सम्बन्धमें नामान्त देवे जाते हैं। किमी किमी मतमें प्रतिज्ञा केवल दो मानसिक भाव या प्रतिकृतिके मध्य सम्बन्धकी सूचना करती है (Expression of a relation between two ideas)। फिर दूसरेका मत है कि दो नामके पर्यंका सम्बन्ध स्थापन ही प्रतिज्ञाका मूल है (Expression of a relation between the meanings of two names)। दार्शनिक हब्स (Hobbes) का कहना है कि कर्तृपद (Subject) और विधेयपद (Predicate) जो एक ही बातके दो भिन्न भिन्न नाम हैं एक प्रदर्शन करना ही प्रत्येक प्रतिज्ञाका उद्देश्य है। जैसे सभी मनुष्य प्राणिविशेष हैं; यहाँ पर प्रत्येक मनुष्यकी जो प्राणी कहा गया है। मनुष्य और प्राणी ये दो शब्द एक ही वस्तुके नामान्तरमात्र हैं। इसका मत एकदम दर्शियों और पन्नागत्यमें भ्रान्तियुक्तभिन्न है, इसीसे मिन प्रभृति परापर नामवादियोंका मत इससे खतन्न है। इन विषयमें मतभेद देखा जाता है। इन अर्थोविभवे दार्शनिकोंका कहना है कि कोई वस्तु किमी एक निर्दिष्ट अर्थोविभवे पन्नागत है वा नहीं (In referring something to or excluding something from, a class) इसका निर्देश करना ही प्रतिज्ञावा उद्देश्य है। जैसे, राम मरचमोण है, ऐसा कहनेसे समझा जाता है कि मरचमोण पदार्थ वा जीव नामकी जो अर्थो है, राम उसी अर्थोगत व्यक्तिविशेष है। इसी धामिपामी जन्तु नहीं है, यह कहनेसे समझा जाता है, कि समस्त धामिपामी जन्तु से कर जो अर्थो गठित हुई है, इसी उस अर्थोके पन्नागति नहीं (excluded) है, यह पन्ना अर्थोका है। इस प्रकार साहित्यकी समस्त प्रतिज्ञा एक अर्थो दूसरी अर्थोकी पन्नागतिविष्ट है, यही सूचना करती है, जाति (Genus) अर्थो (Species) इन दोनोंका पावक (Differentium) प्रभृति, सहायक स्वरूपक पन्नागति प्रयत्नित अर्थो विभागमें प्रतिज्ञाके पर्यं निर्देशका मुख्यता हुआ है। पारिचलन प्रयत्नित मूल (Dictum de omni et nullo) पर्याय एक अर्थोके सम्बन्धमें जो विहित, जो

संज्ञका है, उन जिनोगत प्रत्येक वस्तुके सम्बन्धमें वच प्रयोग ही गद्यता है, यही समुदायका मूल है ।

दार्शनिक मूल उपरि उक्त मतको समीचीन नहीं मानते । उक्त मत है कि कर्तृपद ( Subject ) और विधेयपद ( Predicato ) किसी एक विषय सम्बन्धकी सूचना करता है और अन्योप्य सम्बन्ध से कर ही प्रतिष्ठाकी दृष्टि है । वे सम्बन्ध निम्नके मतमें सामान्यतः पाँच हैं—पूर्वोपर्य ( Sequence ), सामानाधिकरण्य वा समावस्थान ( Co-existence ), पक्षित्वमात्र ( Simple existence ), कार्यकारण ( Causatin ) और सादृश्य ( Resemblance ) ।

प्रतिष्ठाकी साधारणतः दो भागोंमें विभक्त कर सकते हैं—वाचकप्रतिष्ठा ( Verbal proposition ) और वास्तव प्रतिष्ठा ( Real propootion ) जिन प्रतिष्ठाका विधेयपद ( Predicato ) कर्तृपदका अर्थ वा अर्थानुमात्र प्रकाश करता है अर्थात् कर्तृपद जो अर्थ प्रकाश करता है तदतिरिक्त अर्थ प्रकाश नहीं करता, ऐसी प्रतिष्ठाकी वाचक वा Verbal प्रतिष्ठा कहते हैं । मनुष्य बुद्धिवादी जीव है, यहाँ पर 'बुद्धिवादी जीव' यह विधेयपद मनुष्य अर्थमें जो समझा जाता है, तदपेक्षा किसी अतिरिक्त अर्थका प्रकाश नहीं करता । अतः यहाँ पर उपरि उक्त प्रतिष्ठावाचक प्रतिष्ठा है । जिस प्रतिष्ठाके विधेयपद कर्तृपदके अतिरिक्त अर्थ प्रकाश करता है, वेही प्रतिष्ठाकी वास्तवप्रतिष्ठा ( Real proposition ) कहते हैं । जैसे 'मूर्धन्य जगत्का केन्द्रबिन्दु है' यहाँ पर 'सूर्य' इस कर्तृपदके अर्थको प्रतीति होनेसे जगत्का केन्द्रबिन्दु इस विधेयपदका अर्थ तदन्तर्निविष्ट है, ऐसा समझा नहीं जाता, विधेयपद सम्पूर्ण नूतन अर्थ-प्रकाश करता है । इसीसे इस प्रतिष्ठाकी वास्तव प्रतिष्ठा कहते हैं । वाचक प्रतिष्ठाका नामान्तर अर्थदीप्तक प्रतिष्ठा ( Explicative ) और वास्तव प्रतिष्ठा ( Real proposition ) का नामान्तर अर्थदीप्तक प्रतिष्ठा ( Am-plicative proposition है ) । प्रतिष्ठाका अर्थविचार करनेमें विधेयपदकी विश्लेषण आवश्यक है और विधेयपदके अर्थ कर्तृपदका सम्बन्ध अिरीकृत होनेसे ही प्रतिष्ठाका अर्थ निर्धारित हुआ ।

संज्ञाकरण । Definition—अमे वस्तुपक्षी संज्ञाप्रदातो किम निरुपमे लाधित दुई है, किम प्रकार संज्ञानिर्देशप्रदातो निर्दाय है, किम प्रकार वस्तुकी संज्ञा निर्देश ( Define ) की जाती है वा नहीं की जाती है इत्यादि विषय हम प्रकारमें पाशोचित हुए हैं । यहाँ पर यह कथ देना आवश्यक है कि संज्ञा और अर्थको डेफिनिशन ( Definition ) सम्बन्धरूपमें समायोजक नहीं है, अधिकतर उपयुक्त नामके प्रभावमें संज्ञाशब्द ही प्रतिगम्य स्वरूप व्यवहृत हुआ । संज्ञाप्रकरणके सम्बन्धमें मिय मिय तर्कशास्त्री का मूल मूल मत है ।

दार्शनिक परिचलके महाद्वार किसी पदार्थका संज्ञानिर्देश करनेमें वह पदार्थ जिस जाति ( Genus ) के अन्तर्गत है, उन जातिका और तदपेक्षा जो सब अतिरिक्त गुण है उस पदार्थमें विद्यमान है, उनका उल्लेख करनेसे ही पदार्थका संज्ञानिर्देश किया गया ( Definition per genus at differentine ) । परिचल एवं तदनुभवकी मध्ययुगके पश्चिमीय दार्शनिक मत्यादि ( Realist ) थे । उपरि उक्त संज्ञाप्रकरण उनके दार्शनिक मत सभ्यत है ।

मूल प्रवृत्ति नामवादी ( Nominalist ) दार्शनिकतय उक्त मतको समीचीन नहीं मानते । मिसका कहना है कि प्राचीन पण्डितोंके मतमें पराजाति ( Summam genus ) अज्ञात नहीं की जाती । उनके मतमें हम लोगोंके सरल मनोभाव ( Elementary feeling ) स्वतन्त्र और सभी पदार्थ संज्ञा द्वारा निर्देश किये जा सकते हैं । समस्त संज्ञा मूलके मतमें नामका अर्थ अर्थ-प्रकाश करती है ( Enumerates the connotation of the term to be defined ) ; एक नामका स्वरूप होनेसे ही तद्विहित जिन सब गुणोंसे वह नाम-धेय पदार्थ सूचित होता है, वे गुण स्वरूप या जाति हैं और उन गुणोंके निर्देश करनेके लिये ही मिसने 'संज्ञा' एको पाठ्या प्रदान की है । मिसका कहना है कि जो वस्तु कोई सूचना नहीं करती, ऐसी वस्तु संज्ञा द्वारा निर्देश नहीं की जा सकता । राम कहनेमें 'इसी अर्थ' का प्रतीति नहीं होती, राम शब्द एक वस्तु निर्देशता

चित्रमात्र ही घोर वच चित्र केवलः वस्तुनिर्देशको मर्या-  
यता करता है। अतः राम शब्द मंत्रा द्वारा निर्देश्य  
नहीं है।

यदि कोई नाम वा शब्द तस्मिन्निश्चित समस्त पर्यायोंका  
प्रकाश न कर पर्यायमात्र प्रकाशित करे, तो वहाँका  
उक्त नाम वा शब्दको मंत्राको अपरमूर्ण मंत्रा कहते हैं  
( Imperfect definition ) । इसके विवा किनो वस्तु-  
के समवायी गुणोंका उल्लेख न कर अपसमवायी गुण  
( Accident ) द्वारा उक्त वस्तुका निर्देश करनेसे, उक्त  
वस्तुको मंत्रा अपरमूर्ण बुद्धे, इस प्रकार अपरमूर्ण-  
मंत्रा मंत्रापदवाच्य न ही कर; वर्णनायपदवाच्य  
( Description ) हुआ है।

संज्ञकके उद्देश्यानुसार उपरि उक्त वर्णना भी  
( Description ) कभी कभी मंत्रापदवाच्य हुआ करता  
है। विज्ञानशास्त्रमें अधिकांश मंत्रा इसी विधायक  
रही गई हैं। लेखकने जिस गुण वा धर्मके कथन करके  
उक्त वस्तुको मंत्रा अपविभाग निर्देश किया है, वह  
गुण वस्तुका समधिक विनिष्ट गुण नहीं भी हो सकता  
है, किन्तु लेखकके उद्देश्यानुसार गुणकी विशेष मर्या-  
कता है। इस प्रकार उक्त निर्देश्य प्रयासिकी वर्णना  
( Description ) न बाध कर वैज्ञानिक मंत्रा ( Scien-  
tific definition ) कहते हैं। प्राचीनरसविद् कुम्भिर  
( Cuvier )ने मनुष्यको "दिहस्तविनिष्ट वस्तुप्रायास" लोच  
संज्ञित किया है। उक्त मंत्राको वर्णमान प्रयोजनी-  
यता रहने पर भी मंत्रापदवाच्य नहीं हो सकता। किन्तु  
कुम्भिरका उद्देश्य अन्य प्रकारका है। उक्तने जिस  
प्रयासिकी ( Principle )के अनुसार प्राणियोंका अपवि-  
विभाग निर्देश किया है, उसीके अनुसार उपरि उक्त  
मंत्राको साध्यकता है। समस्त वैज्ञानिक मंत्रा इसी  
प्रकार प्रयासिकीका अवलम्बन कर पधित है।

नामप्रकरणसे ले कर मंत्रापदकरण तक भाषा घोर  
भाषका है। सम्बन्धनिष्कारण चिन्ताप्रयासिकीका साध्य-  
माधन काममें भाषामें जिस प्रकार संस्कारको साध्य-  
कता, नामप्रकरण, मंत्रानिर्देशप्रदानके, भाषाके पर्य-  
निर्देशका सामान्यविधान इत्यादि प्रयासिकीके अन्त-  
र्या को गई है। उपरि उक्त विषय, तर्कशास्त्रके भिन्नि-

स्वरूप है। इसके अन्तर्गत तर्कशास्त्रके मूल उद्देश्यमात्र  
"प्रमाण" नामक पदको अवतारणा ही गई है।

अनुमान ( Reasoning ) ।—यहने कहा जा चुका  
है कि श्यायशास्त्रके प्रमाण-वस्तुत्वके अन्तर्गत अनुमान  
एक प्रमाणविषय है। यूरोपीय पश्चिमतत्त्व मध्य तर्कको  
पर्याय मध्य, उपरि उक्त घोर शब्दको प्रमाणका स्वरूप  
नहीं मानते।

जिस प्रयासिकीका अवलम्बन कर किछो ज्ञातपूर्व  
विषयके ज्ञानसे किनो पञ्चात वा पददृष्टपूर्व विषयके  
सिद्धांत पर पहुँचता है। ऐसी युक्तिप्रयासिकीको अनु-  
मान ( Reasoning or Inference in general )  
कहते हैं। कोई विषय सिद्ध या प्रमाणित हुआ, यह  
वाक्य कहनेमें साधारणतः हम लोग क्या समझते हैं ?  
साधारणतः इस पदमें यह बोध होता है कि प्रामाण्य  
विषयका सत्याभाव जिस विषयके लक्षण निर्धार करता  
है, वह विषय हम लोगोंको प्राप्त या घोर उस ज्ञात  
विषयमें पञ्चातविषय निरूपित हुआ है।

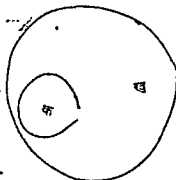
अनुमान नामा अपविभागे विभक्त है। प्रथमतः निग-  
मनयुक्ति ; ( Deductive Reasoning ) घोर श्यासि-  
मूलकयुक्ति ( Inductive reasoning ) उपरि उक्त अपवि-  
विभाग छोड़ कर एक घोर प्रकारके अनुमानका उल्लेख  
है। किन्तु यथावत् इस अपविभागा अनुमान यथावत् अनु-  
मान ( Inference ) नहीं है, केवल शब्दविपर्ययवस्तु  
( Transposition of terms ) यथावत् अनुमान केसा  
बोध होता है। ऐसे अनुमानका ज्ञान है साक्षात् अनुमान  
या इतिहेतुवत् इत्यन्तरण ) ( Immediate Inference )  
जैसे, सभी मनुष्य मरणात्काल है, इस वाक्यके बदलेमें  
यदि कोई मनुष्य अमर नहीं है, इस पदका व्यवहार  
किया जाय, तो किनो ज्ञान सिद्धांत पर नहीं पहुँचते,  
केवल एक ही बातकी वाचकतासे पुनरावृत्ति की  
गई है।

यूरोपीय दार्शनिकोंने तर्कशास्त्रको प्रतिष्ठापिकी  
साधारणतः चार भागोंमें विभक्त किया है घोर यथाक्रम  
उक्तको A, E, I, O नाम रखा है। इनमें A साध-  
भौतिक मरणात्कालक है; यथा—सभी मनुष्य मरणा-  
त्काल है, यथा वर मान : न पद सभी मनुष्योंके सम्बन्ध-

में विहित हुआ है। E प्रतिज्ञा सार्वभौमिक सम-  
मतिप्रापक है, अर्थात् किमो जगत् विधेयपदके साथ  
कठपंथकी एकतावस्थिति नहीं है, यही ज्ञापन करना  
E प्रतिज्ञाका उद्देश्य है। जैसे, नीरे भी वस्तु सम्पूर्ण  
नहीं है, यहाँ पर सम्पूर्णपद प्रत्येक वस्तुके सम्बन्धमें  
ही प्रत्याहार किया गया है। सांगिक सम्मतिप्रापक  
और, सांगिक सममतिप्रापकको यथाक्रम I और O  
कहते हैं; जैसे, कितने जीव सम्पूर्ण हैं ( I ), कितने  
जीव सम्पूर्ण नहीं हैं ( O )।

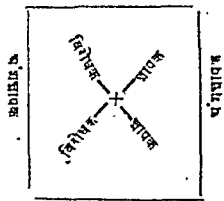
चित्र द्वारा साक्षात् अनुमान ( Immediate In-  
ference )का स्वरूप सहजमें ही प्रदर्शित हो सकता  
है। जैसे, सभी 'क' ही 'ख' हैं; अतः कितने ख क  
है, और कितने क क नहीं हैं, ये दोनों ही अनुमान  
सिद्ध हो सकते हैं। निम्नलिखित वृत्त द्वारा प्रत्येक पद-  
की व्याप्ति ( Extension ) दिखानाई गई है। क और ख  
नामधारी जितना वस्तु हैं

ये यथाक्रम क और ख  
वृत्त द्वारा सूचित हुई  
हैं। सचिहितचित्रके देखा  
जायगा कि क नामधारी  
जितनी वस्तु हैं वे क  
नामधारी वस्तुओंके पमा-  
गत हैं। अतः क पाल्याधारी ऐसी कोई वस्तु नहीं  
है जो ख न हो। किन्तु ख वृत्तका जो पंग क वृत्तका  
एक स्थानोप है, उस पंगका ख ही क है; अतः  
कितने ख क हैं। और ख वृत्तका जो पंग क वृत्तके  
बहिर्भूत है, उस पंगका ख क नहीं है, अतः दोनों  
अनुमान सिद्ध हुए।



कठपंथ और विधेयपदका जिस प्रकार म्यान विप-  
र्यय द्वारा अनुमान माधित होता है, यह साधारणतः  
तीन प्रकारका है—( १ ) सामान्य और विरोध-विप-  
र्यय ( Simple conversion and conversion per  
accidents ), ( २ ) विपरोतायम्यान ( Tran-sposition )  
और ( ३ ) विपरीतमाधन ( Obversion )। इन सब  
अनुमानोंका अधिकारक उच्च विस्तार से जानने भव्य  
नहीं किया गया। निम्न लिखित चित्रके प्रतिज्ञाओंका  
परस्पर सम्बन्ध निरूपित हुआ।

A वैपरोत्यप्रापक E



I सांगिक वैपरोत्यप्रापक O

चित्र द्वारा प्रमाण किया जा सकता है कि दोनों  
ही वैपरोत्यप्रापक प्रतिज्ञाके मध्य दोनों ही मिथ्या  
हो सकते हैं। किन्तु दोनों ही सत्य नहीं हो सकते।  
सांगिक वैपरोत्यप्रापक दोनों प्रतिज्ञाके मध्य दोनों ही  
सत्य हो सकते हैं, किन्तु दोनों मिथ्या नहीं हो सकते।  
दोनों परस्पर विरोधप्रापक दो प्रतिज्ञाके मध्य सत्य  
पथवा दोनों मिथ्या नहीं हो सकते। एकके मिथ्या  
होनेसे दूसरा अवश्य सत्य होगा। पंगप्रापक दोनों  
प्रतिज्ञाके मध्य सार्वभौमिक प्रतिज्ञा ( Universal  
proposition ) विशेष प्रतिज्ञा ( Particular propo-  
sition )का साथ प्रतिपादन करता है। किन्तु विशेष  
प्रतिज्ञाका सत्य प्रतिपन्न होनेसे सार्वभौमिक प्रतिज्ञाका  
सत्य प्रतिपन्न नहीं होता। विशेष प्रतिज्ञाके मिथ्या प्रति-  
पन्न होने पर सार्वभौमिक प्रतिज्ञा भी मिथ्या प्रतिपन्न  
होती है, किन्तु सार्वभौमिक प्रतिज्ञाके मिथ्या प्रतिपन्न  
होने पर विशेष प्रतिज्ञा मिथ्या प्रतिपन्न नहीं होती।

उपरि उक्त साक्षात् अनुमान ( Immediate In-  
fer-ence )के निम्ना अनुमान प्रधानतः दो श्रेणियोंमें विभक्त  
हैं,—निगमनमूलक अनुमान ( Deduc-tive Rea-  
soning ) और व्याप्तिमूलक अनुमान ( Inductive Rea-  
soning )।

रिश्तविमयुक्ति। रिश्तकृतिम वा निगमन-प्रमाणोंमें  
युक्तिका प्रथम श्रेण्य ( First premises or datum )  
सार्वभौमिक प्रापन ( Universality ) कहते हैं, उस  
सार्वभौमिकपदक प्रतिज्ञाको विशेषक कठपंथयुक्तिप्रमाण  
प्रकार काम करता है। उदाहरणमें प्रायः अधिकांश

मगद यहो प्रमाणी चरनरिक्त दृष्टि है। जोने व्याप्ति-  
 गान्धर्मे कितनी ही मंत्रा स्वतःसिद्ध विषय है और प्रतीकृत  
 विषयमें प्रथम मीमांसनस्वरूप मान कर विद्योत्पन्न प्रती-  
 कृतमें अन्यत्र तत्त्व प्रमापित हुए हैं। जागतं य जं मय  
 कार्यकलाप मात्वात्कार द्वारा मीमांसित होनेको नहीं  
 है, यहाँ पर निगमन (Deduction) युक्तिका प्रायः  
 यत्र करमा हो होगा। व्योतिव्याप्तके मनेर विषय  
 हमी प्रकार उदाहरण चयनस्वरूपमें निर्णित हुए हैं। तत्र  
 भीर यह जगत्के सभी तत्त्व हम नोगीके इन्द्रियात्त  
 नहीं हैं, किन्तु यह जगत्के अनेक तत्त्व व्योतिविद्  
 द्वारा निर्णित हुए हैं। इस प्रकार किसी तत्त्वकी सूचना  
 देनेमें सन तत्त्व प्रमाप्योक्त होनेको उच्यते ही कुछ  
 नहीं है, केवल चरवाचर ज्ञान और मीमांसित प्रमाणों  
 माय उक्त तत्त्वकी सद्गति (Consistency) है वा  
 नहीं तथा चरवाचर व्यापकतर तत्त्व (Higher prin-  
 ciples)के उक्त तत्त्वमें वदुचता है (Deduce) वा  
 नहीं, इसीका निराकरण है। निगमनयुक्ति (Deduc-  
 tive Reasoning)के जो कई प्रकारके भेद हैं, उनमें  
 प्रथोत्तम मंत्र्यात्मिक युक्ति (Syllogism or Ratio-  
 cination) विशेष उल्लेख योग्य है। जोके उक्त प्रकारकी  
 युक्तिका स्पष्ट मर्म दिया गया है।

प्रथोत्तम मंत्र्यात्मिक युक्ति (Syllogism) और  
 उक्तप्रव चतुर्मात्रमें प्रतिष्ठादय वा दो स्वीकृत विषयके  
 मन्थोमने उलोय विषयके सिद्धान्त पर उच्यते ही  
 पदता है। प्रथमोक्त प्रतिष्ठादय वा स्वीकृत विषय  
 दोहोको प्रेमिस (Premises) कहते हैं। इनमेंसे जिन  
 प्रतिष्ठा वा वाक्यमें प्रधानपद (Major term) वा  
 तिम (हम लोगोंके न्यायमाप्यानुसार) हेतुपद रहता है  
 हम प्रतिष्ठाकी प्रधान वाच्य वा निररमेमिस (Major  
 premises) और तिम प्रतिष्ठामें चरधानपद (Minor  
 term) वा हम लोगोंके न्यायमाप्यमें माध्यपदका  
 समेष है उन प्रतिष्ठाकी चरधान वाच्य (Minor pre-  
 mises) कहते हैं। तिम पदके मध्योमने (Mediation)  
 हेतु और माध्यके माध्य माध्य चरधान ही कर सिद्धान्त  
 पर वदुच जाता है, हम पदको मध्यपद वा सिद्धान्त  
 (Middle term) कहते हैं। प्रतिष्ठादय (Premises)

की सहायतासे तिम सिद्धान्त पर उच्यते ही जाता है  
 उके सिद्धान्त प्राप्य वा निगमन (Conclusion) कहते  
 हैं। निगमनप्रमा उदाहरण नीचे दिया जाता है।

- ( १ ) प्रत्येक मनुष्य ही मरणयोग्य है।
- ( २ ) राम मनुष्योपाधिभिदिष्ट है।
- ( ३ ) अतएव राम मरणयोग्य है।

उपरि उक्त उदाहरणमें तम प्रथमोक्त प्रतिष्ठा प्रधान वाच्य  
 (Major premises) वा न्यायमाप्योक्त प्रतिष्ठा है,  
 द्वितीय प्रतिष्ठा "राम मनुष्योपाधिभिदिष्ट" चरधान  
 वाच्य (Minor premises) वा न्यायमाप्योक्त उदाहरण  
 है और तिसी प्रतिष्ठा "राम मरणयोग्य" सिद्धान्त वाच्य  
 (Conclusion) वा न्यायमाप्योक्त निगमन है। मरण-  
 योग्य, राम और मनुष्य ये तीन पद (Term) यथा-  
 क्रममें प्रधानपद (Major term) चरधानपद  
 (Minor term) और मध्यपद (Middle term) चरधान  
 न्यायमाप्योक्त हेतु, माध्य और सिद्धान्तवाच्य है।

मध्यपद वा सिद्धान्त (Middle term)के चर  
 म्यानभेदके चतुर्मात्रके चार चरचयनगत भेद हुए हैं  
 जिनका यूरोपीय न्यायशास्त्रविदोंने सामान्यतः "चर-  
 यक्त" (Figure) नाम रखा है। जिनके प्रथम चर-  
 यक्त (First figure) चतुर्मात्र ही माध्यिक प्रचरित  
 है, दूसरोंकी प्रथमायवर्धनं परिणत किया जा  
 सकता है।

प्रथम चरयक्त चतुर्मात्रमें (First figure)  
 मध्यपद प्रधान वाच्यका कर्तृपदस्वरूप और चरधान  
 वाच्यका विधिय पदस्वरूप विज्ञान दूया करता है।  
 यथा—

ममा क ही न है	कीर्त भी न है	कीर्त भी न है
ममी म ही न है	नहीं है।	नहीं है।
अतएव ममी	ममी म न है	कितनी म न है।
म न है	अतएव कीर्त भी	अतएव कितनी
	म न नहीं है	म न नहीं है।

द्वितीय चरयक्त (Second figure) मध्य वा  
 सिद्धान्त प्रधान (प्रतिष्ठा) और चरधान (उदाहरण)  
 चरधान विधिय पदस्वरूप चरधान दूया करता है।  
 यथा—

कोई भी क ख नहीं है  
सभी ग क है  
∴ कोई भी ग ख नहीं है

विषयामात्र कोई भी मनुष्य  
मुजो नहीं है, धार्मिक-  
मात्र जो सुजो है  
∴ धार्मिक मनुष्य विषय-  
मात्र नहीं है ।

तृतीय चरित्र ( Third figure ) में मध्यम  
प्रधान और उपप्रधान दोनों प्रतिज्ञाका ही कर्तव्यव्यवहार  
व्यवहृत दुषा करता है ।

सभी क ख है  
सभी ग ग है  
अतएव कितने ही ग क है

मनुमनविका मात्र ही बुद्धि-  
शाली है ।

मनुमनविका मात्र ही पत्र-  
विशेष है ।

अतएव कितने ही पत्र-  
शाली होते हैं ।

यहां पर देखा जाता है, कि प्रधान और उपप्रधान  
दोनों वाक्यों के व्यापकत्वसूचक वा भावभौतिक ( Uni-  
versal ) प्रतिज्ञा होने पर भी सिद्धान्तवाच्य भाव-  
भौमत्वज्ञापक नहीं है, विशेषत्वज्ञापक ( Particular )  
है, व्यापकत्वज्ञापक के रूप में सिद्धान्त निर्देश करता है ।

प्रथम प्रतिज्ञा में मधुमनविका मात्र ही बुद्धिशाली है, यहां  
पर कर्तव्यव्यवहार विशेषत्वज्ञापक स्वरूपविषय करके हम  
सोच नहीं कह सकते कि बुद्धिशाली जीवमात्र ही मधु-  
मनविका है । कारण मधुमनविका नहीं है, ऐसे कितने  
बुद्धिशाली जीव हैं । द्वितीय प्रतिज्ञा में भी 'पत्रमात्र' ही  
मनुमनविकाका विशेष है, ऐसा निर्देश करना भी उचित  
नहीं है । इस प्रकार सिद्धान्तवाच्यता या भौमत्व  
( Universality ) निर्देश करनेसे सिद्धान्त प्रति-  
ज्ञासिद्धोपद्रुत हो जाता है ।

चतुर्थ चरित्र ( Fourth figure ) विदित चतु-  
मानमें मध्यमको चरित्राति ठोक प्रथमापव्यवस्थित  
चतुमानमें विपरीत है । यहां पर मध्यम प्रधान प्रतिज्ञा-  
के विशेषव्यवहार और उपप्रधान प्रतिज्ञाके कर्तव्यव्यवहार  
व्यवहृत दुषा करता है । यथा—

सभी प क है ।  
सभी ग ग है ।  
∴ कितने ही ग क है ।

सभी मनुष्य बुद्धिशाली हैं  
सभी बुद्धिशाली जीव ही मनुष्य-  
विशेष हैं ।

∴ कितने ही मनुष्य ही बुद्धिशाली जीव  
मनुष्य नामधारी हैं ।

उपरि उक्त चार प्रकारके चतुमानमें ही देखा जायगा  
कि दो प्रधान और उपप्रधान वाक्यद्वयके मध्य एक प्रतिज्ञा-  
का प्रत्ययः व्यापक ( Universal ) प्रतिज्ञा होने आवश्यक है । दो विशेषत्वज्ञापकमें किसी सिद्धान्त पर पड़ना  
नहीं सकती । कारण प्रतिज्ञाद्वयके मध्य एकही भी  
व्यापक नहीं रहनेसे चतुमान असम्भव है । एकत्व या  
विशेषत्वविशेष प्रतिज्ञाद्वयके कोई चतुमान ही मजबूत  
है वा नहीं इन विषयमें मतभेद है । मिल्के मतमें हम  
प्रकारका चतुमान नाथा है, बैन ( Alexander Bain )  
और अन्य अन्य न्यायशास्त्रविदोंके मतमें इस प्रकारका  
चतुमान समाधर है ( Bain's Logic, i, 159.)

दो निषेधज्ञापक ( Negative ) प्रतिज्ञाद्वयमें भी  
किसी प्रकारका सिद्धान्त नहीं हो सकता । कारण, इस  
प्रकार व्यापकत्ववाच्य भाव नहीं रह सकता, सुतरां  
चतुमान असम्भव है ।

तद्विषय मध्यम ( Middle term ) दो प्रतिज्ञाका  
( Premises ) प्रत्ययः एकमें भी एक बार समप्रभावसे  
ज्यात होता ( Distributed ) आवश्यक है । मध्यम-  
को मजबूततामें ही चतुमान साधित होता है, इसीसे  
मध्यम-दो समप्रधानिका रहना आवश्यक है ।

हेतु, माधर और निम्न ( Major, Minor and Mi-  
dle terms ) के मध्यमें पदका तोमने चरित्रिक और  
चरित्र्य देना आवश्यक है ।

इन सब नियमोंका दृष्टान्तिगत होनेसे जो चतुमान  
मज द्रोपाच्यित होता है, वह हेतुवाच्य ( Fallacies )  
प्रकारमें निजा गया है ।

उपरि उक्त नियमोंका प्रायव्य करके प्रत्येक चरित्र-  
के ( Figure ) प्रत्ययगत जिन सब बुद्धियोंकी सहायि  
साधित हुई है, उन्हें विदित चतुमान ( Valid moods )  
कहते हैं । तदनुसार कितनी बुद्धियोंका बारंबार सिद्ध-  
विद्य ( Barbara, Celarent ) नामकरण हुआ है ।  
( J. V. S. Logic on Syllogism )

हमिल्टन ( Sir William Hamilton ) विशेषत्व-  
वाच्यत्व ( Quantification of the predicates )  
नामक मतको प्रवृत्तारण कर कहते हैं कि हमके द्वारा  
सिद्धांतमके चरित्रवाच्य नियमोंको प्रायव्यकता निराकरण  
होनी ।



सामान्य प्रतिज्ञा के निरूपण और प्रतिपादन करनेके उपायको मिलने 'इण्डक्शन' वा व्याप्ति कहा है। जितनी विशेष घटना देव्य कर पड़े यदि उन्नी प्रकारको एक घटना संघटित हो, तो हम लोग कहते हैं कि यहाँ भी वन देखा हो होगा। पर्याप्त रूपसे विषय तथा परम्युमुपमें पतित होना हमें यदि कोई पशुमिचारी रूपसे लक्ष्य करे चर्चातु यदि देखे कि राम, हरि, यदु, गोपाल तथा पौर (दूमरी)ने विषय खा लिया है और वे मृत्युमुपमें पतित हुए हैं, तो किसी दूसरेने वहाँ विषय खाया है-वेना ज्ञान मउने पर यह महत्त्वमें कह सकेगा कि यह व्यक्ति भी मृत्युमुपमें पतित होगा। इस प्रकार विशेष घटनासे साधारण ज्ञानमें उपस्थित होनेका नाम इण्डक्शन वा व्याप्ति ( Induction ) है। विषय खानेमें राम, यदु और हरि मर गए हैं, पतएव गोपाल भी मरेगा तथा जो कोई विषय खाया वह भी मरेगा, इत्यादि घटना के संख्यानुसारके ऊपर अनुमानके लिए निर्भर करना प्रकृत व्याप्तिमुक्त अनुमानका स्वरूप नहीं है। केवल घटनासंख्या देव्य कर अनुमान करनेको ब्रूकन ( Bacon ) संख्यामुक्त व्याप्ति वा इण्डक्शन ( Induction per enumerationem simplicem ) कहते हैं। इस प्रकार अनुमान पदार्थ इण्डक्शन वा व्याप्तिपदवाच्य नहीं है। प्रत्येक वस्तुके पर्यवेक्षणके बाद यदि कहा जाय कि वस्तुमात्र ही सुषुके पालोकेने पालोकिन होगा है, तो इस प्रकार सिद्धांत 'इण्डक्शन' द्वारा निरोक्त हुआ है, ऐसा दिखानेमें भी पदार्थमें कोई अनुमान-ज्ञिया वाधित नहीं होता। कारण, प्रत्येक अनुमान ज्ञान विषयमें अज्ञान विषयमें ले जाता है ( A process from the known to the unknown )। यत्तमान-म्यनमें "वस्तुमात्र ही सुषुके पालोकेने पालोकिन होता है" यह सिद्धांत एक पशुमिच मिहान्त नहीं है या पशुमिच वस्तुके सम्बन्धमें भी पालोकेन नहीं किया गया है, मभी यहाँका पर्यवेक्षण करके एक सिद्धांत पर पदुंन गया है, पतएव वस्तु सिद्धांतपदार्थके अनुमान नहीं है। ( Not an inference properly so called )।

प्रकृत व्याप्तिका स्वरूप ऐसा है, मिल तत्पक्षीन जालिक पक्षमें हमको अविद्वत पालोकेना कर गए हैं।

यहाँ पर उनका मत संक्षेपमें लिखा जाता है। मिश्रका कहना है कि स्वाभाविक नियमका पशुमिचारी ( Uniformity of nature ) ध्यानिही निशि है। प्राकृतिक कार्यावली एक ही प्रक्रियाके अनुसार साधित होती है। नियमका पशुमिचारी स्वयं यह है कि जयतुमें जो घटना ही सुको है वा हो रही है, ठीक उस प्रकार घटना परंपराका समवाय है। यह घटना ही ही पौर जितनी बार यह घटनासमवाय संघटित होगा उतनी बार घटनाका संघटन भी पशुमिचारी है। मनुष्य मरणागोन है, हम सिद्धांत पर हम लोग क्यों विस्तार करते। योड़ा गौर कर देखनेमें ही व्याप्ति का वाच्य स्थिराकृत होगा। प्राप्त तक जितने मनुष्योंने हम लोगोंके सो दो मो वयं पढ़ने जन्मपक्ष किया है, मभी मर चुके हैं। यत्तमान समयमें जिनोंने जन्म लिया है उनमेंसे भी जितने मरे हैं। कोई देव्य वयों न ही, दो मो वयंके व्यक्ति जीवित नहीं रह सकते। प्राप्त तक किसी का भी पमर हो कर रहना नहीं देखा गया है। इन सब विषयोंमें स्थिर किया जाता है कि मरण मानवजोयनका पशुमिचारी धर्म-विशेष है और उसका संघटन जीवनमें पशुमिचारी है। सुतरां जो सब मनुष्य यत्तमान समयमें जीवित हैं और जो भविष्यमें जन्मपक्ष करेंगे, सभी मरेगे; इस प्रकारका सिद्धांत पशुमिचारी नहीं है। यहाँ पर प्राप्त तक जितने मनुष्योंने जन्मपक्ष किया है सभी मर चुके हैं, पतएव सभी मरेगे, ऐसा सिद्धांत नहीं किया जाता। कारण, पुराकालमें जिनोंने जन्म लिया है वे ही मरे हैं ऐसा कह कर जो यत्तमान हैं तथा जन्म लेने से भी मरेगे, इस प्रकारका सिद्धांत पशुमिचारी है। क्योंकि जिनोंने पहले जन्मपक्ष किया है, वे मरे हैं, पतएव जो भविष्यमें जन्मपक्ष करेंगे, वे भी मरेगे ऐसा कोई नियम नहीं है। भविष्यकालमें मानव पमर हो सकते हैं, क्योंकि भविष्यात् जब दृष्टिके परदार-में है, तब उस समयकी बात किम प्रकार कही जा सकती है किन्तु अनुमानका पदार्थ तथा यदो है। प्राप्त तक मानवजोयनका मरण करने देखा गया है कि मृत्यु उनका पशुमिचारी धर्म है। प्रकृतिका कार्य पशु-

भिद्यारी है, जब तक वस्तुमान घटनाममत्राय रहेंगा, तब तक क्रियाफल बन्द नहीं होगा। सुतरां जिस घटनाममत्रायमें मृत्यु मंघटित होती है, वह जब तक रहेंगा, तब तक मृत्यु होती ही रहेंगी। कल सूर्य उदय होने के पश्चात् विद्यमान करते ? वदुकालमें सूर्य उदय होने का रहे है, इस लिये कल भो उदय होगी, इस प्रकार विद्यमान करते है। क्योंकि जिस घटनापरम्परा संयोगमें सूर्योदय संघटित होता है, वह घटना परम्परा आज भो विद्यमान है, इसी कारण सूर्योदय होगा।

चपरोक्त प्रस्तावमें देखा जायगा कि स्वामि अनुमानको प्रयोजनीय पद्धत नहीं है। प्रतांत वा वस्तुमान ममयमें होता है, प्रतएव भविष्यत्कालमें होगा, शुद्ध कालके ऊपर निर्भर करके इस प्रकार जिस मिद्वान्त पर पड़ते है, वह मिद्वान्त निर्दाय नहीं है। इन प्रकारका अनुमान व्याप्तिरूप निर्देग नहीं करता।

पहले कक्षा जा चुका है, कि स्वाभाविक नियमका पश्यभिचारित्व (Uniformity of Nature) व्याप्तिरूप गुणिको भित्त है। सुतरां स्वाभाविक नियमको व्यति-क्रमहीनता कैसे है तथा स्वाभाविक नियमवकी (Laws of Nature) किसे कहते है, ये सब विषय मालूम होने पर उक्त अनुमानकी स्वरूपो लब्धि होगी।

स्वभावके पश्यभिचारित्व मन्वन्धमें धारणा है कि स्वभावके जो एक बार हो चुका है, वही पर्यायक्रममें होता है। किन्तु स्वभाव यथार्थमें कुलान्तलक्षके मद्ग वैचित्राहोन यस्तु नहीं है। एक वर्ष परवर्षों वर्षों के ठीक अनुसूच नहीं है। इस मयमें जिस जिन दिन कोई घटना घटती है, दूसरे वर्ष समो दिन उस प्रकारकी घटना घटेगी, ऐसा कोई स्वभाव निर्दिष्ट नियम नहीं है। पर हा, स्वाभाविक कितनी घटना विक्रान्त नियम विरुद्ध भो नहीं है। रात्रि, दिन, चरतु और संवत्सर पर्यायक्रममें वा चोर जा रहा है। यथार्थमें देखनेमें मालूम पड़ेगा कि वैचित्राहो माय नियमका संमिथन ही प्रकृतिका स्वरूप है। प्रकृतिमें हम वैचित्राहो मत्र अनुमानके उपदान स्वरूप व्यतिक्रम-

द्विय (Uniformity) का निर्वाचन करना होगा। प्राकृतिक नियमावलीका स्वरूप कैसा है, यह दो एक मदीय अनुमान द्वारा स्पष्टीकृत हो जाएगा। पश्याधिक पद्वैगतादी पहले पक्रिकावाभो समझते थे कि मनुष्यमात्र ही कृत्यवर्णके होते है, पश्यों कि उन्में कृत्यवर्ण द्यनीत पन्थ किमी वर्णके मनुष्योंको सम मय तक नहीं देखा था। उनमें निकट इस प्रकार अभिप्रेताका पश्यभिचारित्व रहने पर भो मिद्वान्तको निर्दाय नहीं कह सकते। कारण, मनुष्यमात्र ही कृत्यवर्णके नहीं होते, ये बहुतोंके नजर पारते है। पतः ज्ञानना होगा कि मिद्वान्त यथाऽय्य प्रतिपन्न नों क्रिया गया। कुछ दिन पहले यूरोपियनोंको धारणा थो कि उन्मात्र ही मत्रे है, पश्यवर्णविगिट हंन कभो मनेके नयनगोचर नहीं हुए थे। मिद्वान्त उनको अभिप्रेता द्वारा समर्थित होने पर भो परवर्षों घटना द्वारा प्रशोत् पश्यान्व वर्णविगिट हंसने पन्थित्व द्वारा प्रमापित होता है कि मिद्वान्त निर्दाय नहीं है। किन्तु यदि कक्षा जाय, तब एक जातिका मनुष्य ऐसा है जिसका मन्थक स्वरूपदेगके नोचे पश्यमित है, तो यह बात पश्यभ चोर पश्यिमास्थ-भो प्रतीत होती है। इस प्रकारका पश्यि-मत्रान्तितात्त युक्तिहोन गभी है। कारण, मन्थरमें वैचित्राहो रतना अधिक है कि उन्में अनुमानका विगिव ध्यावात नहीं पड़ता। कृत्यवर्णकी जगह मत्रेवर्षका होना उतना विस्मयकर नहीं है। किन्तु मन्थकका स्वरूपके नोचे होना विरुद्ध पश्यभ है। पश्यों कि, वर्णवैचित्राहोके पश्येता पताहम प्राकृतिकतम वैचित्राहो विरम है चोर मत्रोरविद्या (Physiology)को नियमावली भो उक्त मिद्वान्तका समर्थन नहीं करती। इस प्रकार देखा जाता है कि किमी जगह एक विषयमें ही हम मीग निर्दाय अनुमानमें पड़च सकते है चोर दूसरी जगह वदु अभिप्रेतामापेक्ष होने पर भी अनुमान यथाऽय्य पश्य नहीं क्रिया जा सकता। उक्त अनुमानका प्रकृत स्वरूप ज्ञान मनेमें विषयकी मीमांसा पर पड़च सकते है।

स्वभावका पश्यभिचारित्व (Uniformity) कहने-के पश्यिक्रमराद्विय नामक कोई धाराएव नियम मन्थ

नदी' ज्ञाना । स्वभाविके नियम नियम प्रमाण जो विभिन्न नियमनयने माधिय होते हैं, तन्ही नियम-मनसि स्वभाव-यो सरनिष्कमसाधिय है ( The uniformity in operation is not properly uniformity but uniformities. Vide Mill's Logic, p. 206 ) । इस प्रकार नियमों-में ( Uniformities ) जो नियम पन्थ नियमों-के प्रमाण-तन्ही' हिचे ज्ञातिये नियम पन्थना साधारण हैं चोर निज नियमों-के स्वीकार करनीये प्रत्या-नियम प्रतिपत्तिये जा सक्ये, त्वेने नियमों-को प्रकृतिक नियमत्वको ( Laws of Nature ) कहते हैं - ( Mill's Logic ) । ज्यातिविद् केप्लर ( Kepler ) ने ग्रहों-का गतिशा पर्यवेक्षण करत समय तोन नियमों-का प्रस्तावना की है, उन तीनों नियमों ( Kepler's Laws ) को उच्चतम मूल ( Ultimate ) नियममें गिनतो कहनीये वे प्राकृतिक मूल नियम ( Laws of Nature ) समझे जाते हैं । इनके प्रमाणर बहुते खोजके बाद यह स्थिर हुआ कि ते तीनों नियम प्राकृतिक भादि नियम नहीं हैं, गतिके नियम ( Laws of Motion ) के प्रमाण-त नियमत्वगत हैं ।

प्राकृतिक नियमावना साधारणता: दो भागोंमें विभक्त है, कार्य-कारण सम्बन्ध ( The Law of causation ) चोर समानत्वान सम्बन्ध ( The Law of Consistency ) । मिलने तदोद दण्डकटिभ सांज्ञिकके प्रित्तभागको कार्य-कारणमूलक नियम ( the Laws of Causation ) के लिये सविशेष किया है । प्रसिद्धतायो दो टाग-निष्कर्ष ( Empirical or Experimental School ) कार्य-कारण ज्ञानको साधारण: दोर्भावय' मतवाद ( Succession Theory ) कहते हैं:; चर्चयवादी द्युम ( David Hume ) ये यह मत प्रवर्तित हुआ है । द्युमका कथना है; कि हम कौतुंहा कार्य-कारणज्ञान दोर्भाव-पद ज्ञानके विधा चोर दुर्लभ ही नहीं है । पूर्व-वर्ती घटना ( Antecedent, event or cause ) केवल पारवर्ती घटना ( Consequent or effect ) को घुपना करती है वना । विधा-कारण इस प्रकार क्रियाका उत्पन्न करना है, सवे भागोंको प्रस्तावना हीमें नहीं-है । इन सब पूर्व-वर्ती घटना-पारिभाषिक हीन प्रकृत कारण ( Real cause )

है, इन विषय में मिलने कहा है कि पारवर्तितारी पन्थ-माधिय ( Not conditioned by others ) पूर्व-वर्ती घटना ही कारण पदवाच्य है ( Cause may be defined to be the antecedent, or the concurrence of antecedents, on which the effect is invariably and unconditionally consequent ) । पूर्व-वर्ती पन्ही घटना-पारिभाषिक हीन ही घटना-कारण हीनो, ही नहीं, दो तीन घटनाके सहयोगमें क्रिय: सम्भव होते-पर नवों-को मन्सिकी ( Collective ) कारण समझना होगा, किन्ही ही पन्थ करनीये काम नहीं करेगा । वन्दू-कके शब्दका कारण वन्दू-क निश्चित याकूद है, प्रसिद्ध-मंयोग, वन्दू-क चोर इन सबका मंयोगकर्ता प्राम कोटि एक नहीं है, किन्तु इन सबका एकत्र मंयोग है । इस प्रकार कार्य-कारण सम्बन्धका जगत् प्रकृत ध्यात्मिक-पद-पदुमान-क्रिया माधिय प्रोती है । एक कार्य-कारण सम्बन्धका निष्पत्त कर सकनीये वहां पर अनुमान निर्दिष्ट होगा, कारण कार्य-कारण-सम्बन्ध प्रवर्तितारी है ।

किन्ही घटनाका कारण निर्देश-करनेमें किस प्रकार पूर्व-वर्ती प्रमात्तर घटना-पारिभाषिक हीन प्रकृत कारण निर्देश-क्रिया जा सकता है, इन विषयमें चार नियम दिये गये हैं जिन्के ध्यात्मि चूत्र ( Canons of Inductive or four Experimental methods ) कहते हैं । विद्वान-ही ज्ञानके मयवे इन सबका विवरण न देकर केवल प्रमु-मान प्रयोगका यत्किचित् प्रामाण्य टिया जाता है । इनके बाद तर्क-शास्त्रमें दुनरे कोन कोन विषय सविशेष हैं-छट्टे' चर्चय मात किया जायगा ।

ध्यात्मिके चूत्र चार हैं—(१) सामान्यसम्बन्ध-निर्देश-प्रणाली ( Method of agreement ), (२) पारवर्त-सम्बन्ध-निर्देश-प्रणाली ( Method of difference ), (३) कार्य-साधने साधन सम्बन्ध-निर्देश-प्रणाली ( Method of concomitant variation ) चोर ( ४ ) पारवर्त-विषय-ही सम्बन्ध-निर्देश-प्रणाली ( Method of Residues ) । Mill's Logic देखो ।

तर्क-ध्यात्मिके सविशेष पन्थ-विषयोंमें पन्थ-पद-म-निर्देश-प्रणाली ( The theory of Hypothesis ), सम्भाव्य-गुणि ( Calculation of chance ), बाह्य

ज्ञान ( Analogy ) किस प्रकार समानता सहायता करता है उस विषयका, कार्यकारण ज्ञानका प्रमाण— ( Of the Evidence of the Law of Universal causation ) समावस्थानमूलक नियमावली धोर इन सब नियमोंका कार्यकारणज्ञानके ऊपर अनिभरत्व ( Of Uniformities of Co-existence not dependent on causation ) तथा प्रकृतिको पदान्तर नियमावली चादिज्ञा उल्लेख है । जेड़े व्याप्तिमूलक समान किम् किस विषयके ऊपर निर्भर करता है उनका भी उल्लेख है । घटनावलीका यथायथ दर्शन धोर वर्णन ( Observation and Description ), दार्शनिक भाषा की आवश्यकता धोर उसके प्रति क्या क्या प्रयोजन है ( Requisites of a Philosophical Language ), श्रेणीविभाग तो प्रावश्यकता धोर तत्त्व-प्रणाली ( Classification as subsidiary to Induction ) चादिका उल्लेख है ।

बाद हेलाभास ( Fallacies ) बालोचित हुआ है । हेलाभासका स्वरूप कोसा है, कितने प्रकारका हेलाभास है । ( Classification of fallacies ); सामान्यज्ञान-मूलक हेलाभास ( Fallacies of simple inspection ); परिभ्रतामूलक हेलाभास ( Fallacies of Observation ) सामान्यतोहट हेलाभास ( Fallacies of generalisation ) निगमनमूलक हेलाभास ( Fallacies of Ratiocination ) धोर परस्पट ज्ञानमूलक हेलाभास ( Fallacies of Confusion ) इत्यादि विषयोंका उल्लेख है ।

इसके पान्तर न्यायानुमत नियमावलीका प्रयोग दिख-जाया गया है । मनस्तरव नतिज्ञान ( Moral Science ) समाज-विज्ञान ( Social Science ) चादि विभिन्न शास्त्रोंकी बालोचना किस प्रकार न्यायानुमत पद्धतिका अनुसरण करती है उसकी बालोचना इसके मध्य नमि-विष्ट है । इसी कारण उक्त दार्शनिकोंने चार पंथों का पद्धतियोंका उल्लेख किया है—मत्त्वभिज्ञामूलक पन्था ( Chemical or experimental method ), गणित-विज्ञानमूलक पन्था ( Geometrical or Abstract method ) विषयमूलक निगमनप्रणाली ( Concrete Deductive method or physical method ),

विपरीत निगमनप्रणाली ( Inverse deductive method ) इत्यादि ।

० युक्तिमूलक दृष्टान्त विधेय । जिन सब दृष्टान्तों-में माना प्रकारकी युक्ति प्रदर्शित हुई है उन्हें न्याय कहते हैं । यह न्याय कई प्रकारका है । इसे लौकिक न्याय कहते हैं । इस लौकिक न्यायमें कितनेही नाम, लक्षण धोर प्रमाण निम्ने ज्ञात हैं ।

१ पञ्जालयाणीयन्यायः ।

पञ्जा काम धोर कृपाय पञ्चविधेय, तत्सु दय न्याय । पञ्जागमन बालोम दृष्टान्त कृपायके पतनमें यह न्याय कृपा करना है यथात् कृपाय ठठा कृपा या, इसी शेष एक काम या रहा या । देवकाममें यह कृपाय कामके मर्म पर गिर पड़ा जिनमें काम कट गया । देवकाममें काम पर कृपाय गिरा, इस कारण इसे पञ्जालयाणीय न्याय कहते हैं । जहाँ पर देवकाममें कोई विपत्ति उप-स्थित हो कर प्रतिष्ठाकी सूचना करती है, यहाँ पर इस न्यायका दृष्टान्त हो सकता है ।

२ । पञ्जातपुत्रनामोलीति नन्यायः ।

पञ्जातपुत्र, त्रिषके पुत्र नहीं हुआ है, उससे पुत्र नामकरण, तत्सु दय न्याय । जिसके पुत्र उत्पन्न नहीं हुआ है, उससे पुत्रका नामकरण नहीं हो सकता । पतएय पञ्जातपुत्र नामकरण मानो कुश्कितनी सामाजस्थित है । उसी प्रकार जहाँ मनुष्य पायाके समीभूत हो माना प्रकारकी कल्पना करते हैं, वहाँ इस न्यायका दृष्टान्त हो सकता है । ताएय यह कि भाविकार्यके निर्देशकी जगह ही इस न्यायका उदाहरण दिया जा सकता है ।

३ । 'बधिकन्तु प्रविष्ट' न च तद्वानि' इति न्यायः ।

जहाँ पर बधिक प्रविष्ट होनेके समकी दानि न हो, वहाँ पर यह न्याय कृपा करता है । जैसे लौकिक

० नो पारचर्य तर्कशास्त्रका निम्न मर्म जानना करते हैं, वे निम्ननितित मर्म देते—Grate's Aristotle, Hamil-ton's Logic, Moore's Logic, Bos's Logic, Venn's Empirical Logic, Venn's Logic of chance, Bostruquet's Logic, Bradley's Logic, Fowler's Logic, Jevon's & Whately's Logic &c.



अथ कर्तृक गृहीत गोलाङ्गुल, तद्विषयक श्वाय ।  
 एक पधा पधने कुट्टन्वकं यथां शा रक्षा या । यधता-  
 यगतः यध एक घोर जङ्गलमे जा क्क दोनमावसे बेट  
 गया किमो दुटमतिने व भो अवस्थामे देव कर उधे पूडा  
 'भाई ! तुम कर्हा जायोगी ?' इसवर अन्धने यधने मनको  
 मध वात क्कह दो । यध दुट योना, ' अथ तुम्हें चिन्ता  
 करनेको कोई जङ्गल नहीं, मैं एक गाय ला देता हूँ  
 उमोको पूँछ पकड़ लेना, यध तुम्हें यधर तक पधुं चा  
 देगो ।' अन्धने दुटमतिने उपदेगानुभार गायको पूँछ  
 पकड़ो घोर यध गाय ऊर्ध्वश्याममे भागने लगा । इससे  
 अधने अमोठ देग पधुं चनेको यात तो दूर रहें, यधरनु उधे  
 बड़ो विपत्ति उठानो पड़ो । इस न्य गका तात्पर्य यध  
 है, कि सूर्यका उपदेग कटापि यध्ण न करना चाँहिये,  
 यध्ण करनेमे लक्ष अन्धके लैमा विपत्ति भेननो पड़गा ।  
 यध अन्ध ! गोलाङ्गुल पकड़ कर बड़ो मुशिकलमे पड़ गया  
 या, इस कारण इसका गोलाङ्गुलश्याय नाम पड़ा है ।

८ । अन्धचटकन्यायः ।

अन्धकटक गृहीत चटक, तत्पुत्र्य न्याय । एक समय  
 एक चटक ( गोरया पत्नी ) देवात् किमो अन्धेन हाय  
 पर गिरा । अन्धने उधे पकड़ लिया । इस पर अन्धने  
 एक चटक पकड़ा है, इस प्रकार प्रवाद हो गया । यदि  
 जडात् किमो अमोठ यधुका नाम होता है, तो यथा पर  
 इस न्यायका उदाहरण हो सकता है । 'अजाङ्गवापीय'  
 श्याय घोर इस श्यायमे प्रभेद यध अ कि लर्हा पः जडात्  
 पनिट होगा, यथा पर 'अजाङ्गवापीय' न्याय घोर जथां  
 अमोठ नाम होगा यथा अन्धचटक न्याय होगा ।

९ । अन्धपरम्परान्यायः ।

अन्धपरम्परा—अन्धममूहतत्पुत्र्य न्याय । एक अन्ध-  
 ने दूसरे अन्धका उपदेग दिया । अन्धने फिर तोभरे अन्ध-  
 को भी इसा प्रकार उपदेग दिया या । अन्धपरम्परामे  
 प्रदाय उपदेग जस प्रकार पमा उपदेग नहीं माना जाता  
 उसा प्रकार अधका उपदेगममूह भी प्रमापित नही  
 माना जा सकता है ।

अधविषय—अधोपध अन्धने यदि पध अन्ध गहूँ  
 में गिर जाय, तो सभी एक एक कर गहूँमें गिर जायेंगे,  
 कोई भी धामे पाँकेका विचार नहीं करेगा ।

११ । अन्धयोवायन्तमस्य विनिपातः पदे पदे इति  
 न्यायः ।

अन्धमन्म अन्धको पद पदमें विपत्ति उठानो पड़तो  
 है । एक अन्ध यदि दूसरे अन्धका 'अयन्तमस्य हो तो  
 प्रतिपदमें विपत्तिका सम्भावना रहतो है । जथां पर  
 दानोंको हा विपत्ति उठानो पड़े, यथां पर यध न्याय  
 हुआ करना है ।

१२ । अन्धपद्मन्यायः ।

अन्ध घोा पद्म तत्पुत्र्य न्याय । एक अन्ध घोर एत  
 लंगड़ा पाटनो या । इन दोनोंमें पकना कोई भी  
 कार्य नहीं कर सकता, लेकिन यदि दोनों मिल कर  
 कार्य करें, तो सभी काम सम्पन्न हो सकते हैं । लंगड़ा  
 यदि अन्धके कन्धे पर चढ़ जाय, तो दोनोंक संयोगमे  
 भारोमे भारो काम नाबिन हो सकता है । मात्प्यदमं न-  
 में इस न्यायका उदाहरण इस प्रकार लिखा है—

प्रकृति घोर पुरुषके संयोगमे सृष्टि हुआ करतो है  
 प्रकृतिका अन्धेला कोई कार्य करनेको शक्ति नहीं है,  
 यध पुरुषके संयोगमे सृष्टि किया करतो है । पुरुष जब  
 प्रकृतिमे अलग हो जाता है, तब फिर सृष्टि नहीं हाया ।  
 इसका पार भी एक उपायान उद्यमकार है । एक मनी-  
 पुरुषके क्षेत्रज्ञ नामक एक पद्म दाम पार प्रकृति नामक  
 एक अन्धदाया था । महापुरुषने एक दिन पद्म दामसे कहा,  
 'मैंने अन्धने संसारका भार तुम्हें दिया ।' दूसरे दिन  
 अन्धदायाको भी अन्धने इसा प्रकार चाखा दो । पाँके  
 अन्धभ्रूय प्रभुका इस प्रकार पादेग पा कर, 'मैं लंगड़ा  
 हूँ, जिस प्रकार संसारका कार्य बना सकता' इस  
 तरह चिन्ता करने लगा । अन्धदायो भी इसा प्रकार  
 चिन्ता कर रहे था । इसी समय काकताजोय श्यायमें  
 दोनोंका मिलन हो जानेने तथा एक दूसरेके विषयमे  
 अवगत हो कर दानोंने एक तरकीब निकाली । पद्म-  
 दाम अन्धदायाके कन्धे पर चढ़ गया घोर इस प्रकार  
 परस्परका अभावतामे दानों—प्रभुके पात्राशुभार मनी-  
 पुरुषके संसारके सभी काम करने लगे ।

१३ । उपवादन्यायः ।

उपवाद तत्पुत्र्य न्याय । जिस प्रकार रज्जुविषयमें  
 सर्पका अयात् रज्जुमें अयाका अन्ध होनेवे पाँके अन्ध

भोग होने पर भोगी जानना उच्छेद ही किन्तु रज्जु मात्र रहती है, उसी प्रकार वस्तुविवर्तन चपस्तुका चर्चात् सिद्धिदानम् ब्रह्म वस्तुमें चक्राणादि अङ्गप्रपञ्च जो भ्रम है उसका नाम होनेमें पदाद् ब्रह्मभावको चर्चयन्ति होती है, इसीको चर्चवाद म्याय कहते हैं। "चर्चवादी नाम रज्जुविवर्तन्य सर्वेष्व रज्जुमात्रत्ववत्, वस्तुविवर्तन्य चपस्तुनः चक्राणादिः प्रपञ्चव्य वस्तुमात्रत्वम्।" (वेदान्तधारा)

वेदान्तशास्त्रमें इस भ्यायका उद्बन्ध मन्वच निर्दिष्ट हुआ है इस भ्यायका तात्पर्य है कि चर्चिकरूपमें भ्रम सिद्धयमें प्रतीयमान वस्तुके यथा—स्वाप्नमें भ्रान्तिरूपमें प्रतीयमान पुरुषके व्याख्यादि पतिरिक्त द्वारा को चर्चाव निषेध है, उसे चर्चवाद कहते हैं। रश्मि घोर भी कुछ चक्रा चक्रा कहते हैं। एक प्रकारकी वस्तुके चर्च प्रकार को होनेमें चर्चविवर्तन है। दुग्ध दधि होता है, यह दुग्धका विकार जानना होता, रज्जु सर्पाकारमें प्रयोग होती है, यह विषय है। जगत् ब्रह्मका विकार नहीं है। यह दग्ध जगत् ब्रह्मजालमरणा है। तात्पर्य मन्वायुच्य चर्चात् मिया है। ब्रह्ममें जगत्पदमें चर्चाव निषेध का चर्चवाद है। यद्यार्थमें जगत्फल नहीं है, ब्रह्म का एक मात्र मन्व है। ब्रह्ममें प्रतीत भी यह जगत् है उसका चर्चाव निषेध चर्चात् भाव है। यह लील प्रसारमें दूर होता है। यथा—योग, यौक्तिक चौर प्रत्यय। निति निति 'नामादि सिद्धय' यह नहीं है, यह नहीं है, तदतिरिक्त चौर कुछ भी नहीं है चर्चादि वृत्तिमें क्या गया है इसे श्रोतव्य कहते हैं। कलकालि चर्चावमें जिन प्रकार चर्चकीर्ति चर्चावका घोष होता है, उसी प्रकार भिन्निक कारण ब्रह्मातिचरकमें सिद्धि प्रपञ्चका चर्चाव हुआ जाता है, यह यौक्तिक है चौर रज्जुमें सर्पका भ्रम होनेमें यह रज्जु नहीं सर्प है, इस प्रकार चर्चके द्वारा जिन तरह भ्रमच तिरोहित होनेमें रज्जु का नाम जाना रहता है, उसी प्रकार चर्चकादि चर्चावजिन में केवलचर्चके इस प्रकार घोष होनेमें ब्रह्मत्वमें ब्रह्मातिचय होता है, इसकी चर्चावचर्च कहते हैं।

१४। चर्चावनिषेधः।  
चर्चावनिषेधः—चर्चाव निषेधः। जिनका ही

दिन टनता जाता है, उसको ही चर्चा कहते जानते हैं। इसी प्रकार चापुषीका व्याख्या जिनका ही घोष होता है, उसको ही चर्चाको चर्च कहते हैं।

१५। चर्चावनिषेधः।  
भूतनमें चर्चि इटापि जाने पर भी जिन प्रकार कुछ काल तक भूतनमें चर्चिका चर्चाव रह जाता है, उसी प्रकार धनो धनमें विपुल होने पर कुछ काल तक उसको धनोपमा रहती है।

१६। चर्चावनिषेधः।  
रश्मि चर्चावनिषेधः।

सर्पको भी चर्चि चर्चाव निषेधः।  
सर्पको भी चर्चि चर्चाव निषेधः।

१७। चर्चावनिषेधः।  
चर्चावनिषेधः।

१८। चर्चावनिषेधः।  
चर्चावनिषेधः।

(वर्णनार्थी)

चर्चावनिषेधः।  
चर्चावनिषेधः।

१९। चर्चावनिषेधः।  
चर्चावनिषेधः।

वेष्टामें पड़ जानेसे प्रति घाटमें अपने गायको बंधने में लाया करते थे। गाइकके गायको उमर पूछने पर यह ब्राह्मण कथा करते थे कि यह गाय बहुत दिनकी है। दूसरी गाय समझ कर गाइक लौट जाते थे। ब्राह्मण प्रति घाटमें गाय ले जाते थे, किन्तु खरोददार उनको बात सुन कर चले जाते थे। इस प्रकार गाय किसीके हाथ न बिकी। एक दिन किसी ब्राह्मणने गोखानोमें पा कर कहा, 'महागय ! चाप प्रति घाटमें गाय ले जाते हैं और फिर ले जाते हैं, बंधते नहीं, इसका क्या कारण ?' ब्राह्मणने जवाब दिया, 'मनुष्यको अधिक उमर होने पर लोग उसको प्राचीन समझ करके और अधिक दे कर खरीद कर लेते हैं, यही मोच कर मैं गोको उमर अधिक दिनकी बताता हूँ, इस पर कोई गाइक नहीं खरोदता, लौट जाता है। यही कारण है कि मैं प्रति घाटमें गो ले कर घर वापिस आता हूँ।' ब्राह्मणने उमर का मनोभाव समझ कर कहा, 'आप फिर कभी नहीं' इस गायको उमर अधिक दिनकी बतावेगे, बल्कि कहेंगे कि यह हालको विपारी गाय है, अधिक दूध देती है, ऐसा कहनेसे ही लोग इस पर बहुत ही जायगी और खरीद लेंगे।'

ब्राह्मण अपने मन ही मन सोचने लगे, 'मैंने पहले इसे ब्रह्मा बतलाया है, अब किस प्रकार तर्को कहूँ।' 'धनमें उन्हीं स्थिर किया कि यह गाय पालांगनमें आका हड पुरुष है, अरतो है, शरीरमें तर्को हो सकती है। अतएव इसे बंधे अरतो बतला सकता हूँ। इस प्रकार ब्राह्मणके तर्कविचार स्थिर कर चुकने पर किसी गाइकने पा कर गो का हान पूछा। इस बार ब्राह्मणने कहा, 'मैंने यह गाय बंधे अरतो और बंधे तर्को है।' ब्राह्मणको विषयानभिन्न समझ कर गाइकने गाय खरोद ली। अर्थात् वारो और प्रतिवादिनीका मत कुछ ग्रहण किया जाता है और कुछ नहीं ग्रहण किया जाता है यहाँ पर इस न्यायका उदाहरण होगा।

४०। चर्चं त्यजति पण्डितो न्यायः ।

पण्डितव्यक्ति चर्चा परित्याग करते हैं, तत्सु न्यायः ।  
वेदिकमें चर्चोके भागको अथावका ही और वहाँ पर

यदि चर्चक परित्याग करनेसे विपक्षमें उदार हो जाय, तो पण्डितगण्य बना हो करते हैं, सबको रखनेका कोशिस नहीं करते।

"वर्षनासे अमृतमने अर्द्ध इष्यति विहितः ।" ( पाण्ड्य )

२१। अगोक्षवनिक्कान्यायः ।

अगोक्षवनिक्का, अगोक्षयनगमन, तत्सु न्यायः । अगोक्षयनमें जानने जिम प्रकार यथाभिनयित छाया और मोरम पा कर अन्य जानकी इच्छा नहीं होती, उसी प्रकार यद्यत् प्राम होने पर अन्यस्वन्में फिर जानिका अभिलाष नहीं होता, ऐसी जगहमें यह न्याय दूपा करता है।

२२। अग्गलोष्टन्यायः ।

अग्ग-प्रसार, लोष्ट-टिना, तत्सु न्यायः । रुईकी पपेचा टिना कठिन है और टिनेको पपेचा पपर और भी कठिन है। जहाँ पर जिमको पपेचा जिमका बंध्य रहैगा, वहाँ पर यह न्याय होगा। अग्ग और लोष्ट, अग्गमें लोष्टकी विषयता हो इस न्यायका उद्देश्य है। जहाँ पर जिमको पपेचा जो नष्ट है, उमका विषय बर्णित होगा, वहाँ पर 'पापापिठक न्याय' होता है। पापापिठके इष्टक नष्ट है, अतएव जहाँ पर जो नष्ट नष्ट है उमका विषय बर्णित न हो कर पापापिठक न्याय होगा।

२३। असाधारणो न व्यग्रदेगो भनन्तोति न्यायः ।

असाधारण्य द्वारा व्यग्रदेग होता है, तत्सु न्यायः । यथा—गौतम-प्रोक्त न्यायदर्शनमें प्रजावादि कोषह पदार्थ निर्णयित हुए हैं। यद्यपि इन दर्शनके कोषह पदार्थका निरूपण ही प्रतिपद्य विषय है, तो भी इसमें प्रमाण विषयरूपमें दिव्यताया गया है, इस कारण कोषह पदार्थके अथ अन्य किमोका भी नाम न हो कर न्याय-दर्शन यही नाम दूपा है, अन्य मभो पदार्थ असाधारण्य रूपमें कथित हुए हैं। इस प्रकार जहाँ पर प्राधान्यरूपमें निर्देश होगा, वहाँ पर यह न्याय होगा है।

२४। असाधारण्यवचनं वन्याय नरनवत् ।

जो मुक्तिः असाधारण्य च ननु वयोनी है, उम जो विका करनेमें अतर्क समान होना पड़ता है। आका



भारत मनुष्य को तब भी दृष्टिहीनो विलामे पाउट हो मुक्त न भी मई है ।

२५। अन्तर्दोषन्यायः ।

अन्तर्दोष—ननु न्यायः । त्रिम प्रकार अन्त-  
र्दोष दोष दोहो समग्रमें जो मुक्त जाता है, उसी प्रकार  
जहां दोष पविष्ट होनेको सम्भावना है, वहां पर यह  
न्याय दूषा करता है ।

२६। अहिङ्गुणन्यायः ।

अहिङ्गुणन - सर्व वस्तु तत्तुल्य न्यायः । सर्वोको  
कुण्डलाकृति देखत त्रिम प्रकार व्याभाविक है, उसी  
प्रकार जहां पर किमो व्याभावनिश्चयिकता कथन ही  
वहां पर यह न्याय होता है ।

२७। अहिङ्गुणन्यायः ।

अहि चोर मनुष्य, तत्तुल्यन्यायः । भय चोर निवृत्त  
त्रिम प्रकार व्याभाविक मनु है, उसी प्रकार जहां पर  
व्याभाविक विवादाका विषय बड़ा जाता है, वहां पर  
यह न्याय होता है । यथा—काकोरुक ।

२८। अहिनिवर्त्यगीवत् ।

सर्व निर्माकको तरह अन्तर्दोष नहीं करता चाहिये ।  
सर्वत्र निर्माक ( केंबुल ) दोड़ देने पर भी यह समान-  
प्रमुख न्यायको दोड़ नहीं मकता । किमो अहिनिवृत्तिक  
( संदेशिया ) में हम केंबुनका अनुभाव करते उसे  
पकड़ा था । तापय यह कि किमी वस्तु पर अन्त-  
ममता नहीं र वनो अहिने चोर बहूतामो मनुका प्रकृत-  
को हीय जान कर दोड़ देना चाहिये ।

२९। आकाशपरिच्छेदक न्यायः ।

आकाश त्रिम प्रकार अपरिच्छेदक है, उसी प्रकार  
जहां पर अपरिच्छेदक मनुका मर्म होता है, वहां पर  
यह न्याय दूषा करता है ।

३०। आदावतो वा इति न्यायः ।

यह न्याय पहले मनुका पद ही है, जहां पर हम  
प्रकारके कार्यको पहले या पीछे करनेके कार्यको सिद्धि  
होता है, वहां पर यह न्याय दूषा करता है ।

३१। आभासकथनः ।

लौकिक न्याय तत्तुल्य न्यायः । लौकिक न्याय  
को व्याभाविक करते हैं, यथा—इस प्रकारके अनुक म

हृत् पर भूत रहता है, विया लोचनपदक है । इस  
प्रकार लक्षणवाटमुक्त विषय का पर बड़ा जाता है,  
वहां पर यह न्याय होता है ।

३२। आम्बरवद्वयः ।

आम्बरव, तत्तुल्य न्यायः । किमो आम्बरमें बहूतमें हृत्  
है त्रिममें आम्बरहृत्की संज्ञा ही पविष्ट है । आम्बर-  
में हृत्में हृत्में हृत् में हैं, पर आम्बरहृत्की संज्ञा  
पविष्ट रहनेमें वनका नाम आम्बरम पड़ा है । इस  
प्रकार प्रभावद्वयमें वा विषय पविष्ट होना, इस न्यायके  
अनुसार उसीका निर्देश होगा ।

३३। आयुर्गुणमिति न्यायः ।

हृत् ही एक मात्र पायु है अर्थात् जो जानने  
पायुका हृत् ही होता है । इस प्रकार जहां मनुक्त हो,  
उसमें विषयके कहे जानने यह न्याय दूषा करता है ।

३४। इयुकारणव्येकविकल्प्य समाधिधानिः ।

यथाय एक मकनीम इयुकारणों तरह समाधिष्णुत  
होना नहीं पड़ता । इयुकार त्रिम प्रकार एकात्ममण-  
में समाधिवर्ती राजाकी भी देख म नई है, उसी प्रकार  
समाधिष्णुत वस्तु भी एकात्मताकात्ममें लागू नहीं देख  
सकती है ।

३५। उपाटितदन्तनागन्यायः ।

उपाटित दन्तनाग अर्थात् सर्व, तत्तुल्य न्यायः ।  
त्रिम प्रकार नोउके दान ताड़ देनेके सममें चोर कीरे  
समता नहीं रहता, किंतु मर्म मर्म मर्म रहता है, उसी  
प्रकार त्रिममें कीरे समता नहीं है अथवा मर्म म  
है । इसमें मर्म पर यह न्याय दूषा करता है । प्रवाद  
भी है कि दान उपाटिता दूषा मांग । मीम यह भी बड़ा  
काम है तादारे विपरीत तोड़ दिष्ट मने, अर्थात् तुममें  
चोर कीरे समता म रहा, हीन लो मई ।

३६। उदकनिमज्जनायाः ।

अन्तर्दोष, तत्तुल्य न्यायः । उदकनिमज्जन यह  
प्रकारका विषय है । जानने पाउ किया है मा नहीं,  
इसमें सम्यक्ता चोर अन्तर्दोष जाननेके विषयको अन्तर्दो  
द्वारा जाता है चोर उमें क्या जाना है कि तुम अन्तर्दो  
दन्त रहता है वहां में चोर पाउता है, अब तक यह तोर  
कोट म पावे तब तक तुम उपाटिता जानने रहता । मीर

मानिके पड़ने यदि तुम्हारा कोई अज्ञ दोष पड़े, तो तुम दोषी और यद्ये न दोष पड़े तो निरदोषी समझे जाओगे। जहाँ पर मन्थानमय विषय कथित होगा, वहाँ पर यह न्याय होता है।

३०। उपपन्नं उपपन्नं धर्मो विकरोति हि धर्मिण-  
मिति न्यायः।

उपगत और औपगत धर्म धर्मिको विकृत करना है, तत्सु न्यायः। अर्थात् जहाँ पर धर्मिके पूर्व धर्मका उपगत होनेसे अग्य धर्मकी उत्पत्ति होती है, वहाँ पर यह न्याय हुआ करता है।

३८। उपशामाहर् भोच्छमिति न्यायः।

उपवासने भिक्षा श्रेष्ठ है, भिक्षावृत्ति क्षोगजनक है, सही, पर उपवासमें जो क्षोग होता है उसमें भिक्षाका क्षोग कम है। इस प्रकार जहाँ पर अधिक क्षोगकर विषय अथ कोशकर विषय उपदिष्ट होगा, वहाँ पर यह न्याय होता है।

३९। उभयतः पायरञ्ज न्यायः।

दोनों ओर ही बन्धन रखू है, जिस ओर जायगी उसी ओर बंध जायगी। इस प्रकार जहाँ पर ममी पक्ष दुष्ट हो, वहाँ यह न्याय होगा।

४०। उपरहटिन्यायः।

मन्भूमिमें दृष्टि होनेसे जिस प्रकार कोई फल नहीं होता, उसी प्रकार जिस कार्यमें कोई फल नहीं वहाँ यह न्याय हुआ करता है।

४१। उदृक्कण्टकभक्षणन्यायः।

छोट जिस प्रकार काटा खाता है, खाते समय तो बड़े काटा बहुत दुःख देता है, पर जब पेटके अन्दर चला जाता, तर्वाकिसिन् माय सुख होता है, उसी प्रकार जहाँ बहुत कष्ट उठा कर छोटा सुख प्राप्त हो, वहाँ पर यह न्याय होता है। मानव पक्षित्कर सुखके लिये बहुत कष्ट उठाते हैं।

४२। श्लुमार्गेण मिथ्यतोऽर्थस्य वक्षेण भागना-  
योग इति न्यायः।

जब मरल पथमें कार्य सिद्ध हो जाय, तो एकपथमें जानेकी क्या जरूरत है, एकमधुन्यायके साथ इस न्यायका सादृश्य है।

४३। एकदेशमिहितमनन्ययद्वयति इति न्यायः।  
एक देशका विरक्त अनन्ययत् रूपा करता है, तत्सु न्यायः। ऐमें स्थान पर यह न्याय हुआ करता है।

४४। एकं मन्थिततोऽपरं पच्यते इति न्यायः।

एक ओर मन्थान करने जाय ओर दूसरी ओर भट्ट हो, तत्सु न्यायः। जिस प्रकार कामिने भयन वरतमकी एक ओर जुड़ाते समय दूसरी ओर आगकी गरमीमें भयन ही जाता है, उसी प्रकार एक उपकार करनेमें माय माय एक उपकार भी करना पड़ता है; ऐमें ही स्थान पर यह न्याय हुआ करता है। उदयनाचार्यने कुसुमान्त्रनि ओर मोक्षधिकारमें इस न्यायका उदाहरण दिया है।

४५। एकदाक्यतापदानां मन्भूयै कार्य प्रतिपाद-  
कत्वमिति न्यायः।

एक वाक्यतापत्र वाक्य मिल कर जिस प्रकार एक अर्थका प्रतिपादक होता है, उसी प्रकार जहाँ पर मिल कर कोई काम किया जाता है वहाँ पर यह न्याय होगा।

४६। एक मन्थिज्ञानमपरमन्थिस्मारक मिति  
न्यायः।

जिस प्रकार हाथीका दर्शन होनेसे अपर मन्थयो माहुतका स्मरण होता है, उसी प्रकार जहाँ पर एक मन्थयोका ज्ञान होनेसे अपर मन्थयोका ज्ञान होता है, वहाँ पर यह न्याय हुआ करता है।

४७। एकाकिनो प्रतिज्ञा ति प्रतिज्ञातं न माधये-  
दिति न्यायः।

बैथल प्रतिज्ञा प्रतिज्ञात वस्तुका माधन नहीं कर सकती। प्रतिज्ञादिपक्षक अर्थात् प्रतिज्ञा, ऐत, उदाहरण, निगमन ओर उपमय यही पाँच कार्य माधन करते हैं। प्रतिज्ञामात्रमें अर्थमिद्धि अन्वय है, इस कारण इत्यादिकी अर्थमिद्धिमें मिये पात्रमयक है, ऐसा जहाँ होता है, वहाँ यह न्याय हुआ करता है।

४८। एकात्मिदि परिहरतो द्वितीया पापयते इति  
न्यायः।

एक विपद्में सहार लाभ करनेसे दूसरी विपद् का पड़ने कातो है। जहाँ पर एक दुःखमें उदार मिल जाय पर दूसरा दुःख उपस्थित हो जावे, वहाँ पर यह न्याय होता है।

“इहान् इत्येवमत्र वाच्यं तत्रैवैतन्मिदं समुचितं मे ।”  
इति उदाहरणम् ।

४८। योग्यिकाकारात्मोपदेशः ।

योग्यिकार्याकारात्मोपदेशः, तन्मन्त्रः ॥१२॥ अने एक  
पाकारा उपवाचिभेदमे चनेक है. यथा—उदाहरण,  
उदाहरण इत्यादि । किन्तु इन सब उपवाचिके निरीक्षण  
को करने पर हम एक आशय सब जानता है । हम  
प्रकार जहाँ पर एक वस्तु आधारभेदमे चनेक होती है,  
वहाँ पर एक श्याव होता है ।

“अत्रैवैतन्मिदं समुचितं मे वाच्यम् ।”

इति श्रीश्री महाशयि शब्दार्थ शिरोमणिः ॥ ( नृपति )

एक ही योग्य सब शीर्षमे निराश्रयण है । यही  
एक चरित्र योग्य प्रकाश है । यह चरित्र प्रकाशमे  
उपवाचि भेदमे चर्चात् आधार देनादि भेदमे विभिन्न ही  
कर चनेक दूया करते हैं । अतः एक चरित्र है,  
विभिन्न नहीं । उपवाचिके चरित्रित होनेमे ही ये एक  
है चनेक नहीं ।

५०। अष्टवक्रोक्तश्यावः ।

अष्टवक्रित सुवर्ण भूयण, तन्मन्त्र श्याव । सुवर्ण-  
कार लो मयिं है, पर भ्रमभग जार लो गया है हम  
श्यावमे चर्चा चोर समझी तलाग करने है । हम प्रकार  
जहाँ वस्तु है, चरित्र भ्रमभगतः गत ही गई है, यह  
समाप्त कर दुःखानुभव होता है, दोहे भ्रम मान्म ही  
जानि पर गुण होता है, वहाँ पर यह श्याव दूया करता  
है । हमका उदाहरण देनाहमें हम प्रकार लिखा है—  
अष्टवक्र प्रकाश शीय लो अष्टवक्रभगतः श्याव सुव  
दुःख गुण जान कर अष्टवक्रभगतः दुःख भोग करता है,  
दोहे श्याव तत्रमसि मन्त्रि वाच्यत आश्रयमाश्रयकार  
होता है, तत्र भ्रमभगतः लो दुःख वा, यह निरीक्षित  
ही जाता है ।

५१। अष्टवक्रोक्त श्यावः ।

लोकाकार अष्टवक्र शिवा प्रकार चरित्र समजा  
चरित्रमें एक शरीर दुःखरम होता है, जहाँ प्रकार  
जहाँ पर भ्रमभगत चनेक एककारण काय प्रकृति होती  
है, वहाँ पर यह श्याव दूया करता है । अष्टवक्रोक्त  
इसी दूया दूख ही समझ निकलने है ।

५२। अष्टवक्रोक्तश्यावः ।

अष्टवक्रोक्त शिवा शरीर चरित्र पर भी वस्तु है शिवा भ्रमभ  
कर चने चरित्र, तन्मन्त्र श्याव । जहाँ पर वस्तु नहीं  
है चरित्र चरित्र वस्तुकी प्रकाशमें ज्ञान ठान दिवा जाता  
है, वहाँ पर यह श्याव होता है ।

५३। अष्टवक्रभगतश्यावः ।

अष्टवक्र भगत श्याव चरित्रमे ही अष्टवक्रभगत शीय होता  
है । कर यह श्याव निरपेक्षण है, किन्तु अष्टवक्रभ  
यह श्याव चरित्रमे चरित्रभक्त अष्टवक्र समझा जायगा,  
तन्मन्त्र श्याव । हम प्रकार जहाँ पर चरित्र श्याव, वहाँ  
पर यह श्याव होता है ।

५४। अष्टवक्रोक्तश्यावः ।

अष्टवक्रभगतश्यावमे तानवगत तन्मन्त्र श्याव । एत  
तानवगतके अर्थमें किन्तो काकके चरित्र समझ यदि ताह  
निर जाय, तो भोग चरित्रमे चरित्रमे किन्तो ही ताह  
गिराया है । किन्तु उपवाचिके यह नहीं है, ताहका  
चरित्रसमझ होनेमे ही यह गिरा है । दोहे एक चरित्र  
सुवर्णमे चरित्र ही तानवगतके दोहे चरित्र कर कुक्ष शीय  
रहा, दो. इमी शीयमें अर्थमें एक गान गिरा चोर चरित्र  
चरित्रमे चरित्र भूयको निरुत्तर करना चाहा । हम चरित्र  
पर चरित्रभक्त जेव चरित्रमे एक काक भेठा था, यह  
काक लो समझ चरित्र गया, चाहे एक तान लोके गिरा ।  
इसमे चरित्रका चरित्रमे चरित्र दूया । चरित्रके काक चोर  
तानका व्यापार देव कर समझ, कि काकके चरित्रमे ही  
तान गिरा है, किन्तु उपवाचिके काक चरित्र किन्तो चरित्र-  
भगत चरित्र है चोर चरित्रभक्त उपवाचिके होनेमे ताह  
गिरा है । तानचरित्रमे चरित्र अष्टवक्रभगत चरित्र जहाँ चरित्र  
पर भी चरित्रभगतः चरित्र समझा गया । इमीको काक-  
तानोपदेश्य चरित्र है ।

जहाँ पर हम प्रकारके चरित्र होता है, वहाँ पर  
यह श्याव दूया करता है । चरित्रित भावमें चरित्र वा  
चरित्र होनेमे ही यह श्याव होता है ।

“अष्टवक्र भगत श्यावः ।”

“अष्टवक्र चरित्रभगत श्यावः ।”

( अष्टवक्र )

५५। अष्टवक्रोक्तश्यावः ।

कारकसे अधिकी रक्षा करो, इस प्रकार एक घादमो की उपदेश दिया गया, 'कारिभ्यो दधि दत्त्वा' इससे यह समझा गया कि कारकसे अधिकी रक्षा करो, केवल यही नहीं, जो कोई जन्म दधि मत करे, उसको निवारण करना होगा। काक पट लक्षणवत् है, जहाँ पर ऐसा होगा, वहाँ पर यह न्याय हुआ करता है।

५६। काकदन्तगवययानायः ।

काकके दन्त हैं या नहीं और वे सब दन्त शुद्ध हैं वा हृष्य यह शब्दोंपण जो मा निष्कल है वैसा ही जहाँ जिनका शब्दोपण निष्कल होता है, वहाँ यह न्याय हुआ करता है।

५७। काकमांसं शुनच्छिद्यं स्वल्पं तदपि दुर्लभमिति न्यायः ।

एकता को एका मांस, दूसरे कुत्तेका शूठा, स्वल्प और प्रति दुर्लभ, तत्त्वान्नाय। जहाँ पर प्रति निरुद्ध और प्रति सुच्छ यशु भी दुर्लभ होती है, वहाँ यह न्याय होता है।

५८। काकादिगोलकन्यायः ।

काकका एक यशु जिन प्रकार प्रयोगानुसार उभय-लक्षणीकर्म संचार होता है, उसी प्रकार जहाँ एक पदार्थको उभयस्वस्वमे सम्बन्धितवत्ता होती है, वहाँ यह न्याय हुआ करता है।

५९। कारणगुणवत्कर्मन्यायः ।

कारणगुण कार्यमें संक्रमित होता है, तत्त्व न्याय। 'कारणगुणाः कार्येणुत्पन्नमन्ते' कारणता गुण सजातीय कार्य प्रवर्तक होता है, यथा—तन्तुका रूपादि सजातीय पटमें हुआ करता है, इसी जगह यह न्याय होता है।

६०। कारयितुः शब्दत्वन्यायः ।

जो कार्य करता है, वे ही कर्ता है, तत्त्व न्याय। कार्य स्वयं नहीं करने पर भी दूसरे द्वारा करनेसे इस न्यायके अनुसार समझा करके लक्षण मिले जाता है, जैसे युद्ध तो राजाकी संस्थादि करती है, पर हाथ जोड़ राजाको होती है। भाव्यके रत्नमें पुष्प क ई कय नहीं करता, बुद्ध भी करता है, संवाच पुष्पका शब्द स्वपदेश हुआ करता है।

६१। कार्येण कारणमन्ययव्यायः ।

जहाँ पर कार्य द्वारा कारणका ज्ञान होता है, वहाँ पर यह न्याय हुआ करता है। जैसे—धूम द्वारा बह्निता ज्ञान, वृक्ष हाथ बीजका ज्ञान इत्यादि।

६२। कृमकायावसम्बन्धन्यायः ।

सम्बन्धने वनभिन्न शक्ति यदि मनुमें पड़ कर कृम वा कागका घबलवम करे, तो यह जिन प्रकार उमके अन्त निष्कल जाता है, उसी प्रकार प्रबलयुक्तिके निरास्त होने पर दुर्बलशक्तिका घबलवम करनेसे यह निष्कल होता है। ऐसे स्थान पर यह न्याय होता है।

६३। कूपतानकन्यायः ।

जो मनुष्य कूप खनन करता है उसके शरीरमें कर्मम लग जाता है, वही जब कूपमें जल निकलता है, तब उस जनमें वह कर्म दूर हो जाता है। इसी प्रकार धियज्ञावच्छिन्न ईश्वरभेद बुद्धि। अर्थात् भगवान् शम्भुधरो ई, क्षणवर्ण हैं इस तरह हम लोगोंको क' दिव्युद्धि है जो यह भेद बुद्धिजनित जो दीप है, वह भगवान्को उपासना करते करते ही चन्दैतवोप हो जाते हैं, तब तत्त्वय दीप भी निरास्त होता है। ऐसी जगह पर यह न्याय हुआ करता है।

६४। कूपमण्डकन्यायः ।

समुद्रस्थित मण्डकने एक दिन किसी कूपमण्डकके विचरने प्रवेग किया। कूपमण्डकने उसे देख कर पूछा, 'तुम कहाँसे पा रहे हो?' 'मैं समुद्रमें पा रहा हूँ' समुद्रमण्डकने जवाब दिया। इस पर कूपमण्डकने पुनः उसमें पूछा, 'समुद्र कौसा होता है?' जवाबमें समुद्रमण्डकने कहा, 'वह्ना' जवाब होता है। कूपमण्डकने फिरसे कहा, 'इस कूपके जैसा?' समुद्रमण्डकने उत्तर दिया 'समुद्रमें बड़ा और कुछ भी नहीं' होता, समुद्र मभी नदियोंका प्रति है।' यह सुन कर कूपमण्डक बोला, 'तुम मिथ्या कह रहे हो, कूपमें बड़ा कोई भी नहीं है।' यह सुन समुद्रमण्डक मन हो मन उसको 'इसमें सच्चाई मग। कूपमण्डक समुद्रको न जान कर और समझी प्रतिमाने घबलन न हो कर जिन प्रकार उपलभयोग हुआ था, उसी प्रकार वा दूसरेके निर्जानताको न जान कर उसके ऊपर दीयारीय



७४। गड्डनिकाप्रवाहः ।

भेड़के कुण्डमें यदि एक नदीमें गिर जाय, तो सभी एक एक कर नदीमें गिर जायेंगे। इस प्रकार दलके मध्य एक जो फूट करता है, येय सभी पश्चात्तु भाषा लोके विना उसे कर जानते हैं। इसीकी धोल-चालमें भेड़ियाधमान भो कहते हैं। ऐसे स्थान पर यह श्याय हुआ करता है।

७५। गतासुगतिक्रमः ।

कुछ ब्राह्मण तर्पणके पर्वको किनारे रख गङ्गामें डूबको लगाने गए। स्नान कर चुकने पर जब उन्होंने तर्पणके लिए पर्वे अपने अपने जगहमें लिये तब मानस पड़ा कि पर्वी एक दूसरेसे बदला गया है। इस प्रकारकी घटना एक दिन नहीं, कई दिन हो गईं। एक दिन किसी हृद ब्राह्मणने अपनी पदचानके लिए पर्वे पर एक ईंट रख दो घोर भाव स्नान करने चले गये। उस ब्राह्मणको देखादेखी सब कोई अपने अपने पर्वेके ऊपर ईंट रख स्नान करने चले गये। इस पर हठने चनका उपहास करके कहा कि सभी मनुष्य गतासुगतिक प्रथात् देखा देवी काम करते हैं, यस्तुतः यथायोग्य कोई भी विवेचना नहीं करते। यदि बुद्धिसे काम लेंते, तो सब कोई इस प्रकार एक-सा विज्ञ न देते। इसी प्रकार प्रायः सभी मनुष्य गड्डनिकाप्रवाह ( भेड़ियाधमान ) पथया पम्परम्परा श्यायने मंसारान्धकृपमें पतित होते हैं। ऐसे ही स्थान पर यह श्याय हुआ करता है।

७६। गृहजिज्ञासाः ।

वालकको निम्बदान करानेमें जिस प्रकार उसकी जिज्ञा पर मुड़ घिस कर मोम खिलाया जाता है, इस स्थान पर निम्ब भोजन कराना ही प्रयोजन है। मुड़लेप प्रलोभनमात्र है। एक वालक कहवो देवा प्राग कर उसे नहीं खाता था। पाछिरकी उसे कहा गया कि यह देवा खावो, तुम्हें मिठाई दूंगा। इस प्रलोभनमें पड़ कर कहकेने उस कहवो देवाको खा लिया जिससे उसका रोग जाता रहा। इस प्रकार कर्ममूढ़ पति दुःखर होने पर भी शास्त्रमें निर्दिष्ट हुआ है कि प्रमुक्त मत करनेमें पक्षय स्वर्ग होगा। इ-स्वर्ग-प्राप्त्यासे प्रतापति पति दुःखर होने पर भी उन्हें कर जानते हैं। वे ही पथात्तु कर्मसे प्रलोभन करके मोषके लिये कमा

कर्मका विधान किया है। ऐसे ही स्थान पर यह न्याय होता है। मनमानतत्त्वमें इस न्यायका विषय निष्ठा है।

७७। गोबोधदं न्यायः ।

बनोबदं पर्वमें हयभक्षा बोध होता है। पयच नो ग्द्वपूर्वत्त वनोबदं इस शब्दके प्रयोगसे घोर भी गोघ हयभक्षा बोध होता है। जहां एक शब्द प्रयोगसे पर्वका बोध होने पर भी घोर भी गोघ पर्वबोध हो, ऐसे शब्द प्रयोगमें यह श्याय हुआ करता है।

७८। घटकुटीप्रभातः ।

घटकुटीरु समीप प्रभात तच्छुष्य न्याय। पार होनेके लिए पैसा देनेके डरसे घोरवणिक विषय ही कर भागे जा रहे थे, जब वे घटकुटीके समीप पाये तब संधेरा हो गया। इन घोरवणिकोंको विषय ही कर जाना भी पड़ा घोर पार होनेका पैसा भी देना पड़ा। ऐसे स्थान पर यह न्याय होता है।

७९। पुण्यवराः ।

वंशसुण्डमें सुन लग कर वंशके कुछ पंग कट जानेसे उसमें पचरने विज्ञ निकल गये हैं, पर्यात्तु बांध इस तरह काटा गया है कि वह ठोक पचरके लेना ही गया है। सुन बांधको पचरके जैसा काटना नहीं, देवात्तु वैसा होता है। इस प्रकार जहां पन्थायमें प्रष्टत कार्य देवात्तु पन्थायका निष्पादन करे, वहां यह न्याय होता है।

८०। चतुर्वेदविद्वयः ।

किसी एक दाताने प्रचार किया कि चतुर्वेद ब्राह्मणोंको मैं यथेष्ट सुयथे सुदा दान करूंगा। यह शब्दाद वा कर कोई मूढ़ दाताके पास जा कर बोला, 'मैं चतुर्वेद मय्यक् रूपमें जानता हूँ, मुझे दान दीजिए।' इस मूढ़की धन तो मिला नहीं साथ साथ उसकी हंसी भी बढ़ाई गई। इसी प्रकार जो पवित्रा-गन्दरूप प्रत्यगभिस ब्रह्मणं यस्तुतः पयगत न ही कर 'मि ब्रह्म धानता हूँ' ऐसा कहता है, उसकी पीन सुन भवती घोर साथ साथ यह घटकास योग्य भी हो जाता है। जहां पर ऐसी घटना हो, वहां पर इस न्यायका प्रयोग होता है।

८१। पम्पपटवाहः ।



कार्यमें प्रवृत्त होनेसे यह न्याय होता है।

१२५। प्रासादवाग्निनाशः।

एक व्यक्ति प्रासादमें रहता है, लेकिन उसे कार्या-  
शुरोधमें कभी कभी नीचे आना पड़ता है और दूसरी  
जगह भी जाना पड़ता है। ऐसा होने पर भी उसे जिस  
प्रकार प्रासादवागो कहते हैं, उसी प्रकार वर्षाभीय  
विषयके प्राधान्यानुसार ही उसका नाम होगा।

१२६। फलवत्प्रकारनाशः।

पथिक फलयुक्त शस्त्रवृत्तके नीचे छायाके लिये थोड़ा  
दुष्य है और वह फल जिस प्रकार बिना मंगी उसके पाने  
आयसे आय गिरता, उसी प्रकारको घटना जहाँ होगी,  
वहाँ यह न्याय होता है।

१२७। बहुवृत्तकालप्रशयः।

जिस प्रकार बहुवृत्त मिथ्यासे धाकृत एक नृगका  
एकत्र स्थिति नहीं होती, उसी प्रकार जहाँ बहुवृत्तका  
परस्पर विवाद होता है वहाँ पर एक विषयकी स्थिरता  
नहीं रहती। जहाँ पर ऐसी घटना होगी, वहाँ यह  
न्याय होता है।

१२८। बहुभिर्गो विरोधो रामादिभिः कुमारो-  
ग्रहणम्।

बहुत मनुष्योंका साथ नहीं करना चाहिये, करनेसे  
रामादि द्वारा कुमारोग्रहको तरह कलह होता है।  
धान कूटने समय किमो कुमारोके शायनेका ग्रहाभरण  
यज्ञ होता है। देखने पर कुट्टम् बैठे हुए थे, कुमारोको  
बहुी लज्जा हुई, सो अपने सब धाम्यक उतार दिये,  
केवल एक रहने दिया। एकडे रहनेसे चावाज नहीं  
होती थी। तात्पर्य यह कि सुसुप्त स्थितिको परेक्षा  
रहना चाहिये, बहुवृत्तके साथ नहीं। चावृत्तिस्या  
सहोदय और प्राणनामका प्रतिव्ययक है।

१२९। बहुमाश्रयगुणसन्निवि सरादानं चटपद-  
नम्।

नामा शस्त्र और नामा उपासनादिके रहने पर भी  
अमरके लेशा मारपाही होता चाहिये। अमर जिस  
प्रकार पुष्पका परिश्रयण कर मनुष्यमात्र पक्ष्य करता है  
उसी प्रकार सुसुप्त स्थितिको शालीक विद्या मात्र पक्ष्य  
करनी चाहिये, उपविद्या नहीं।

१३०। बहुवृत्त चतुष्पादो न्याय्य इति न्यायः।

बहुत मनुष्योंका चतुष्पद न्याय्य है, तत्तुल्य न्याय।  
सामान्य वस्तु होने पर भी उसके सेनसे कठिनसे कठिन  
काम साधित होते हैं। जैसे, छत्र यद्यपि सुदृढ वस्तु है, तो  
भी उसके नीचेमें गन्त जायो जाये जानी है। इस प्रकार  
अनेक प्रकार वस्तु वा मिलन भी कार्यसाधक होता है।

"बहुनामप्यवशात्तौ मेहन" कार्यसाधकम्।

तुल्यैः श्रम्याद्यते रज्जुप्रथा मागोऽपि बभूवते ॥"

१३१। विरलस्य हेयक्षानमुपादेयोपादानं च सं-  
चौरणम्।

विरल मनुष्यको संसको तस्य हेय चंगका परि-  
श्रयण कर उपादेय चंग पक्ष्य करना चाहिये। दुष्-  
मिश्रित जन संसको देनेसे संस केवल वृक्ष ही होता है,  
जन छोड़ देता है। तात्पर्य यह कि पत्तारने मारपक्ष्य  
विषय है।

१३२। विनवर्त्ति गोधानाशः।

गोधा (गोध) गर्त्तके मध्य रहनेसे उसका जिस प्रकार  
विभाग गधों हो सकता, उसी प्रकार पद्मातपर-  
सिद्धान्तकी बिनाजाने उनमें दीय लगानेसे यह न्याय  
होता है।

१३३। ब्राह्मणधामनाशः।

एक धाममें पत्तक जातिके लोग रहते हैं, किन्तु  
उनमेंसे ब्राह्मणकी संख्या अधिक रहनेसे लोग उसे जिस  
प्रकार ब्राह्मणधाम कहते हैं, उसी प्रकार पाषाणाकी  
विषया होनेसे ही इस न्यायका प्रयोग किया जाता है।

१३४। ब्राह्मणधमपत्तनाशः।

अमपका पथ बोधवति है। ब्राह्मणके निजधर्मका  
परित्याग कर बोधधर्म पक्ष्य करने पर भी उसे जिस  
प्रकार ब्राह्मणधम कहते हैं, उसी प्रकार जहाँ मृत-  
पुत्र गति द्वारा निर्देग हो वहाँ यह न्याय होता है।

१३५। मिश्रगदप्रसारनाशः।

कोई एक मिश्रक यष्टे भोजनादि पानिको पाया-  
से किसी धनाके घर गया। एक समय यमो पमोट नाम  
करना पक्ष्य है। अतः पहले वादप्रसारण, पीछे  
परिचय और इससे यमो पमिनाय पूरे इति। पैसा कीच  
यह पक्ष्ये योको भिदा और बहुत कीच विचारके बाद





उपक्रम और उपसंहारमें पर्वत को वाञ्छार्थ रूप, ऐसा ही स्थान पर यह नया होता है ।

१४० । योजनप्राप्त्यायं कार्येभ्यो मन्त्रवन्धनश्रायः ।  
 योजनप्राप्त्यायं कार्येभ्यो मन्त्रवन्धन (मन्त्र को बन्धन) का विषय, उसका मन्त्रवन्धन, पद्यवा मन्त्र योद्धृपुस्तके (जो मन्त्रवन्धन) तत्तुल्य श्रायः । यदि पक्ष जनागम्य हो, तो मन्त्रवन्धन करके जनागम्य बनायास पार हो सकता है । लेकिन नदी यदि योजनप्राप्त्या हो, तो मन्त्रवन्धन करके पार होना सम्भव है, इस प्रकार जहाँ होगा, वहाँ यह नया होता है ।

१४१ । रत्नपटन्यायः ।  
 जहाँ पर निराकाङ्क्ष वाक्यमें पाकाङ्क्ष उत्थापित करके एक वाक्यमें किया जाय, वहाँ पर यह नया होता है । यथा—पटोऽस्ति, यह पट है, इस वाक्यमें किमी प्रहारकी पाकाङ्क्षा नहीं है । इस निराकाङ्क्ष वाक्यमें पाकाङ्क्षा उत्थापित करके पद्यार्थ वैसा पट, ऐसी पाकाङ्क्षा निकाल कर उसमें एक वाक्यता को गई पद्यार्थ रत्न पट । जहाँ ऐसी कथा जायगा, वहाँ यह नया होता है ।

१४२ । रज्जुसर्पश्रायः ।  
 रज्जुमें सर्पभ्रम, तत्तुल्य श्रायः ।  
 यत्र विभक्तिर्भाति कथितं 'रज्जुसर्पवत्' (अष्टाशकठं) पट्टुटालोकमें रज्जु देखनेमें मनुष्यको संपेक्षा भ्रम होता है, किन्तु जब पट्टुटालोकमें यह अच्छी तरह देखा जाय, तब फिर सर्पभ्रम नहीं रहता । इस प्रकार हम लोगोके विज्ञानके पट्टुटालोकमें ब्रह्ममें जगत्भ्रम होता है । जब अथवा, मनुष्य और निदिध्यासन द्वारा ज्ञान-कोट बना जायगा, ज्ञानालोक उद्घातित होगा, तब फिर ब्रह्ममें जगत्भ्रम नहीं रहेगा । वेदान्तदर्शनमें यह न्याय प्रदर्शित हुआ है । भ्रान्ति हो जगह इस न्याय-का प्रयोग होता है ।

१४३ । राजपुरव्याधन्यायः ।  
 किमी समय तक और एक राजपुरवकी प्रथा में गये पीर-एक व्याधके दाह किए जाना । व्याधमरणमें जाने लेने आनेमें 'मै व्याधपुत्र जू' ऐसी राजपुरवकी धारणा हो गई । पीर मरणके किमी पालीयने जब राजपुरवके

उसका जगत्प्रधाना कह सुनाया, तब राजपुरवकी व्याध-भ्रान्ति दूर हुई और स्वप्नका बोध हुआ । इस प्रकार ब्रह्म भ्रान्ति हो कर वाक्यमें पपनोदन होता है, यहाँ पर यह श्राय होता है । वेदान्तदर्शनमें यह न्याय प्रदर्शित हुआ है । हम लोगोकी ब्रह्ममें दृग् भ्रान्ति होती है, किन्तु तत्त्वमस्यादिके वाक्यमें उसका पपनोदन हो कर 'पदं ब्रह्म' यही ज्ञान अविचलित है । यही स्थान हम न्यायका विषय है । सांख्यदर्शनके चतुर्थ अध्यायमें 'राजपुरवत् तत्त्वोपदेगात्' इस सूत्रमें यह प्रथाका देखनेमें आता है ।

१४४ । राजपुरवधे श्रमश्रायः ।  
 राजा जब किमी नगरमें जाते हैं, तब उनके देखनेके लिये लोगोको भीड़ लग जाती है, ऐसी जगत्प्रधान विचल-मत्ता उपस्थित हो सकती है । किन्तु ये सब मनुष्य रजियोके पीठनभयमें व्योमोद्वेगभावमें पचलित रहते हैं । इस प्रकार जहाँ सुशुद्धभावमें कार्यनिर्वाह होता है, वहाँ हम नयाका प्रयोग किया जाता है ।

१४५ । लक्षणप्रमाणाभ्यां द्वि वस्तुमिद्विरिति श्रायः ।  
 लक्षण और प्रमाणा द्वारा वस्तु मिय होता है, इस प्रकार जहाँ लक्षण और प्रमाणाके वस्तुको विधि हुआ करतो है, वहाँ यह नया होता है ।

१४६ । मृतातन्तुश्रायः ।  
 मृता कीटयिमिय, उसने तन्तुनिर्गम तत्त्व श्राय । मृता (मकड़ा) जिस प्रकार स्वयं पपनी दिहने मृत निर्माय करतो है और निज देखनेको संहार करतो है, उसी प्रकार ब्रह्म हम जगत्की सृष्टि करतो है और संहारके समय ब्रह्ममें हो यह जगत् सोन हो जाता है । ये स्थान पर यह नया होता है ।

१४७ । सोद्वृत्तश्रायः ।  
 जिस प्रकार लघुवृत्त द्वारा सोद्वृत्त पूर्ण होता है, उसी प्रकार उपमर्त्य और उपमर्त्य होमेंवे वहाँ यह नया होता है ।

१४८ । सोद्वृत्तश्रायः ।  
 सोद्वृत्त और लघुवृत्त दोनों को मिथल है, किन्तु लघुवृत्त लोच अविधिमार्गमें हो उसे पाकद्वय करता है, इष्ट प्रकार लघुवृत्त निदिध्यास होने पर भी प्रत्यक्षिकामने

शरीरपत्रांक होता है। नास्त्वदमंजनें यत् प्रथम प्र-  
सिंजत कृपा है।

१३१। मन्मथोत्थापः।

नीलो पद्मोत्तं वर कोर यपुपत्तं परस्पर पानागमे  
एक मग हो कर तिम प्रकाश करणामदय कार्य मन्मथ  
विद्या जाता है, उसी प्रकार जहाँ एकमय हो कर कोर  
एक कार्यमत्तन विद्या जाता है, वहाँ यह माप होता  
है। नीलो मर कोर यपु पदमे पानागमे एकमय हो  
कर करणाम संता है, इसीमे एक मापयका माप वर-  
नीलो माप पडा है।

१३२। वरदाताय कर्मभारवमिति म्नायः।

विद्या करणा जदरों है यमय विपकम्यामे विवाह  
करनेके माय हो मकतो है, यमः विपकम्याके विद्या  
महो करणा हो गये है। जहाँ यमीट यस्तु नाम  
करनेमें यमिटाकारकी कथायना हो, यहाँ यमीट  
यस्तुका नाम महो करणा ही पण्डा है। ऐसे स्थान  
पर हो यह माप होता है।

१३३। यमिपुमन्मायः।

पुमदय कार्य देवमेके तिम प्रकाश कारणदय कार्य-  
का यनुमान होता है, यमी प्रकाश कार्यदमंजनें कारण  
के यनुमान-स्थान हो यह माप होता है।

१३४। विन्मयत्ताटम्यायः।

कल्याट यदात् विमके गिाके काम भङ्ग मये को।  
यल्याट मनुष्य पुत्रमे पलाका त्रिज हो कर हागाके निदे  
एक विन्मयदके लीके देता कृपा का। इसी मगद एक  
बेज लमके विर पर निरा तिममे लकहा विर पूर पूर हो  
पडा। इस प्रकार जहाँ यमीट यमिको यामाने जा कर  
यमिटा नाम होता है, जहाँ इस मापयका यमीट होता है।

१३५। विदेयं विदेयं तस्मादि य विदेयवमिति  
म्यायः।

विदेयमें विदेय, जहाँ भी विदेय मनुष्य म्याय।  
उपे, भुक्त भटवम् कोर मकरम्, यहाँ पर भुक्तमें यट  
विदेयव है यो यह विदेयव भुक्तमंजनें वदत कृपा है,  
एक प्रकार विदेयव एक योनिमें यदा पानामाक होता,  
जहाँ यह माप होता है।

१३६। विपयत्ताटम्यायः।

यामेमे यार विद्या है मा लको, यह कामनेके निदे  
विद्यामयदर दिव्य करणा होता है। विद्यामयक  
यामेमे विप-विनानेके यदि लममे यथावेके यम ल  
विद्या हो, तो यमे यमिटा महो होता योर यदि यमिटा  
हो यद, तो यमे यामे यमामना जाविये। एक यका  
जहाँ यमामिमयका योत यो। यमामिमयका यम  
हो, यहाँ यह माप होता है।

१३७। विपयत्ताटम्यायः।

यमय यकाको याम तो दूर रहें, यदि विपयत्ता भी  
यमिंजत कृपा माय, तो यमे भी यटाता यमित महो है।  
यमी प्रकाश तिम यमिंजत यस्तुका यम यम यमीं  
यामा जाविये, ऐसे ही स्थान पर यह माप होता है।  
'विपयत्तायि देवदां एव' ऐश्वर्यकाम्यम्। (इका २४०)

१३८। शोभितरुम्यायः।

मदीको तरु तिम प्रकाश यकाके वाट दृग्गी यामन  
होती है, यमी प्रकाश जहाँ यम्याजाममे यामांयता  
हो, यहाँ यह माप होता है।

'शोभितरुम्याये मनुषित्तु शोभितम्।' (यामरि०)  
मैदायिनीके मतमे ककारादिमय शोभितरु म्याय  
के यनुसार यामन होते है।

१३९। शोभाटुम्यायः।

यौत्रमे यट्टर यमया यट्टरमे योत, यिना योत्रके  
यट्टरमेयत महो होमी योर यट्टरके महो योत्र पर  
यौत्र भी महो होता, यमर यट्टरके यति योत्र काय  
है वा योत्रके यति यट्टर कायण है, इसका कुछ विर  
महो विद्या जाता तदा योभाटुम्यायका यमदि है यह  
योकार करता होगा। इस प्रकार जहाँ होगा, यहाँ  
पर यह माप होता है। यंदायामंजनें योरोरक  
भार्यमें यह माप यमयंजत कृपा है।

१४०। यमयत्ताटम्यायः।

कीरे एक यामेमे एक योत्र पर यटा का। भीरे  
हो यामेमे यट्टर है। यममे यमिं एक यामा योर  
युक्तीने योरे योर माया विमानकी कथा। यमका  
यदा कृपा यामेमे यमके यमयंजत विद्यायामेमे  
युट भी यम लकहा। यहाँ एक योत्रके यामेमे यट्टर  
यमके यमयंजत कृपा विद्या विद्या यममे यमी यमके

दिलेने लगीं। इस प्रकार जहाँ सभी वस्तुओं का वि-  
रोधाचरण हो, वहाँ पर यह न्याय होता है।

१६६। सुहकुमारीवाक्यनायायः।

एक दिन सुन्दरने एक सुह कुमारीसे वर मांगने को  
कहा। इस वर उसने प्रायःनाको घो, 'मिरे प्रियमे पनेक  
पुत्र हो', बहुत चीर हो, छत हो तथा मैं काचनपात्रमें  
भोजन करूँ; यही वर सुभी टोत्रिये।' यह स्त्री कुमारी  
घी, विधाह नहो' हुआ था, विधाहदि नहो' होनेसे पुत्र  
घोर धनादि नहो' हो सकता। किन्तु उस कुमारोने  
एक ही वरसे पति, पुत्र, गो, धान्य घोर हिरण्य प्राप्त  
किया। इस प्रकार उपासना द्वारा एक मोक्षसाधन  
तत्त्वज्ञान प्राप्त करनेमें तदन्तर्भूतचित्तगमादि संश्लेषित  
होते हैं, सभी प्रकार जहाँ एक वाक्य द्वारा नामा पद्य'  
का प्रतिपादन हो, वहाँ यह न्याय होता है। महा-  
भाष्यमें यह न्याय प्रदर्शित हुआ है।

१६७। सृष्टिमिष्टवतो मूलमपि विमष्टमिति न्यायः।

किसी एक वृषिकने मूलधन सदानेके लिये व्यवसाय  
पारम्भ किया था। उसने कितने नोकरोंने पनगाना  
व्यवहार करके उसका मूलधन तक भी नष्ट कर दिया।  
इस प्रकार जहाँ होता है, वहाँ इस न्यायका प्रयोग  
किया जाता है।

१६८। प्रतनियमसत्त्वनादानर्थश्च' लोकरवतः।

ज्ञानसाधक प्रतादिका परित्याग करनेसे लोकरहतात्म-  
में ज्ञानरूप प्रयोजन नष्ट हो जाता है। तात्पर्य यह कि  
हवा वनप्रस्थ करनेसे वायुशुद्धा उपाय होगी और  
हवा परित्यागसे भी, धनर्थ होता है।

१६९। गच्छवितानायायः।

गच्छवितानायाय जिस प्रकार समय विवेकका घोर  
उपद्रव द्वारा समयका ज्ञान होता है, सभी प्रकार जहाँ  
भिन्न भिन्न पद्य' जाना जाता है, वहाँ यह न्याय  
होता है।

१७०। शतपदमिदन्यायः।

शे पर्वोको एक घुई द्वारा विद्य करनेमें एक ही  
धार में भिद गये, ऐसा ज्ञान पड़ता है, किन्तु जो नहीं,  
प्रत्येक पद्य भिन्न भिन्न समयमें भिदा गया है, पर काल-  
को स्मृत्यागतता; उसका चतुर्मान नहीं होता। इस

प्रकार जहाँ बहुतमे कार्य एक दूसरेके वाद होने पर भी  
एक समयमें हुए हैं ऐसा ज्ञान पड़ता है, वहाँ यह न्याय  
होता है। मांस्वदग' नमें यह न्याय दर्शित हुआ है।

१७१। गानिमम्पत्तो कोद्रागनन्यायः।

गानि उत्तम धान्यविशेष है घोर कोद्रय पद्यम,  
उत्तम धानके रहते पद्यम धानका पाना, तत्पद्य न्याय  
जहाँ उत्तम वस्तुके रहते पद्यम वस्तुका घेवन किया  
जाय, वहाँ यह न्याय होता है।

१७२। गिरोवेदनेन नामिका श्रम' इति न्यायः।

मन्तक बेटन करके नामिकाश्रम', तत्पुन्य न्याय।  
जहाँ पन्नावाससाध्य कार्यमें बहुत परिश्रम लगता हो,  
वहाँ यह न्याय होता है।

१७३। श्यामरत्नन्यायः।

जिस प्रकार छटादिका श्यामगुण नाम हो कर राह-  
गुण होता है, सभी प्रकार जहाँ पूर्वगुणका नाम हो  
शे कर पर गुणका समावेश हो, वहाँ यह न्याय  
होता है।

१७४। श्यामरत्नकन्यायः।

किसी खादमीने एक कुत्ता पाना था घोर वह उसे  
श्यामक ( साना ) नामसे पुकारा करता था, जिस दिन  
उसे पपनी श्लोकी विधानिका मन होता था, उस दिन वह  
उस कुत्तेको तरह तरहकी गानो देता था। स्त्री उस  
कुत्तेको पपना भाई समझ कर बहुत गुस्सा जाती थी।  
श्यामकके प्रति गानो देना यक्षाका अभिप्राय नहो' था,  
वहाँ उसको श्लोके प्रोथका कारण नहो' रहने पर भी  
नामका ऐक्य सुन कर वह प्रोथान्विता होती थी। इस  
प्रकार जहाँ ज्ञाना, वहाँ यह न्याय होता है।

१७५। यः कार्य' मय प्रवर्तितेति न्यायः।

जो कार्य कल करना होगा उसे धात्र, जो पात्र  
करना होगा उसे सभी कर सासना चाहिए। इस प्रकार  
जहाँ पर कर्तव्य कार्य पहले किया जाय वहाँ यह  
न्याय होता है।

'यः बार्देव्य वत्तम' पुरांशो चारारिष्टम्।

मदि प्रतीक्षते यःपुः हनन्त न वा हन्त न'

१७६। श्लेषवत् सुपद्रुःपो न्यायवियोगाभ्याम्।

श्लेषव्याय घोर वियोग इन दोनों द्वारा श्लेष वयो-

बाह्यवर्णक होता है। अल्पवर्णक से यह भाग प्रक-  
रित हुआ है।

१११। आभासोभासः।

लोको वर्णान्तर कोर वस्तुसकं परस्पर आभासमे  
एक भाग को कर जिस प्रकार आभासकक जाय कल्पव  
जिवा जाता है, उसी प्रकार जहाँ एक भाग को कर लोके  
एक भाग आभास जिवा जाता है, वहाँ यह भाग होता  
है। लोको कर कोर वस्तु एवमे आभासमे एक भाग को  
कर आभास होता है, वहीमे हम भासकका नाम वर-  
लोकमे भागव पड़ा है।

११०। आभासकक अभासककमिति भागः।

विवाह करवा प्रदोरे व पदव विवकक्यामे विवाह  
करनेमे भाग को मकतो है, यथा विवकक्यामे विवाह  
महो करवा हो योय है। जहाँ प्रमोह वस्तु नाम  
करनेमे अनिष्ट, अरको कथावला हो, वहाँ प्रमोह  
वस्तुका नाम लको करवा हो पड़ा है। ऐसे स्थान  
पर हो यह भाग होता है।

११८। अग्निपुनःकाण्डः।

पुनःकाण्ड कायं द्वैतमे अत्रम प्रकार आरककक कायं-  
का अनुमान होता है, लमी प्रकार कायंकाण्डमे कायव  
के अनुमान-कक को यह भाग होता है।

११८। विवकक्याकक्याः।

कल्पक वर्णान् तिमके सिद्ध काय अक गये हो।  
कल्पक अनुज पुनमे कल्पक सिद्ध हो कर कायके सिद्ध  
एक विवकक्याके लोके देहा हुआ था। वही समव एक  
के ल समके विर पर विरा। तिमके अनुका विर पूर पूर को  
महा। इक प्रकार जहाँ प्रमोह कायको आभास का कर  
अनिष्ट भाग होता है, वहाँ एक भागका प्रमोह होता है।

११०। विविक्त विविक्तं तत्तानि च विविक्तमिति  
भागः।

विविक्तमे विविक्त, कथमे भी विविक्त तत्तानु भाग।  
केमे, अनुज परवन् को। अनुज, वहाँ पर अनुजमे प्रक  
विविक्त है कोर यह विविक्त अनुजकोमे प्रक हुआ है,  
यह प्रक विविक्त एक लोके वहाँ आभासकका  
महा एक भाग होता है।

१११। विवकक्याकक्याः।

यामे भाग जिवा है वा लको, पर आभासमे लोके  
विवकककक विवा करवा होता है। विवकक्याके  
यामेको विव विवकक्याके यदि लमे कयाके लोके  
जिवा हो, तो लमे अनिष्ट लको कोका कोर यदि अनिष्ट  
को काय, तो लमे यामे आभासका आभास। हम प्रक  
महा अभासकककका भाग को। विवकक्याककका महा  
को, महा पर भाग होता है।

११२। विवकक्याकक्याः।

यथा एवको भाग लो पूर अरु, यदि विवकक्य भी  
अरुत जिवा जाय, तो लमे भी कायका अनिष्ट लको है।  
लमी प्रकार तिम अरुत अनुजका कायं नाम लको  
काया आभासमे, ऐसे हो भाग पर यह भाग होता है।  
'विवकक्याके लोके देहा' इवमे अभासककक्या' (इतर लको)

११३। लोकाकककक्याः।

लकोको लक तिम प्रकार एकके भाग लमे कायक  
कोते है, लमी प्रकार जहाँ आभासककक्यामे कायकियात  
को, वहाँ यह भाग होता है।

'लोकाकककक्याके अनुजकिया लोकाका' (आभासके)  
लोकाकककक्याके लमे अभासककक्याके लोकाकककक्या  
के अनुजका कायक कोते है।

११४। लोकाकककक्याः।

लोकेमे अनुज कायका अनुजके लोके, जिवा लोकेमे  
अनुजकिया लको कोते कोर अनुजके लको लोके पर  
लोके भी लको होता, एकरा अनुजके लोके लोके काय  
है वा लोकेमे लोके अनुज कायक है, इवका अनुज किर  
लको जिवा जाता तथा लोकाकककक्याके कायक है पर  
अभासकककका होता। हम प्रकार जहाँ लोके, महा  
पर यह भाग होता है। अभासकककक्याके लोकेके  
आभासके यह भाग प्रकमित हुआ है।

११५। अनुजकककक्याः।

लोके एक कायको एक लोके पर अनुज का। लोके  
को कायको लोके है। एकरा लोके एक कायको  
लुकेमे लोके कोर भाग विवकक्याके महा। अनुज  
पड़ा हुआ अनुजके लोके परवा विवकक्याके लोके  
लुके भी काय लोके। एकरा एक लोके कायको लोके  
अनुज का अनुजका एक जिवा जिवा लोके कायक

द्विजने लगीं। इस प्रकार जहाँ सभी वस्तुओं का पवि-  
रोधाचरण हो, वहाँ पर यह नयाय होता है।

१११। उद्वक्तुमारोवाचननायः।

एक दिन इन्द्रने एक उद्वक्तुमारोने घर मांगने को  
कहा। इस पर उसने प्रायनाको यो, 'मेरे ज़िममे पनेक  
पुत्र हो, बहुत चीर हो, छत हो तथा मैं काश्चनपावसें  
भोजन करूँ, यही घर मुझे दीजिये।' यह श्री कुमारी  
घी, विवाह नहो' हुआ था, विवाहादि नहो' होनेसे पुत्र  
घोर घनादि नहो' हो सकता। किन्तु उस कुमारीने  
एक ही वरसे पति, पुत्र, गो, धान्य घोर हिरण्य प्राप्त  
किया। इस प्रकार उपासना द्वारा एक मीसमाधन  
तत्त्वज्ञान प्राप्त करनेसे तदन्तर्भूतचित्तगमादि संश्लेषित  
होते हैं, उसी प्रकार जहाँ एक वाक्य द्वारा ज्ञाना पर्य  
का प्रतिपादन हो, वहाँ यह नयाय होता है। महा-  
भावमें यह नयाय प्रदर्शित हुआ है।

११०। उद्विजिमिष्टवतो मूलमपि विनष्टमिति नयायः।

किसी एक षण्पिकने मूलधन बहानिके लिये व्यवसाय  
प्राप्त किया था। उससे कितने नौकरोंने पनगाना  
व्यवहार करके उसका मूलधन तक भी नष्ट कर दिया।  
इस प्रकार लक्षों होता है, वहाँ इस नयायका प्रयोग  
किया जाता है।

११८। अतनियमनकुनादानयंश्वं लोकवत्।

ज्ञानमाधक प्रतादिका परिश्याग करनेसे लोकदृष्टान्त-  
में ज्ञानरूप प्रयोजन नष्ट हो जाता है। तात्पर्य यह कि  
हवा प्रतपश्य करनेसे पायण्डना हावय होती है घोर  
हवा परिश्यागसे भी पनय होता है।

११८। गृहधैसानयायः।

गृहधन द्वारा जिन प्रकार समय विशेषता घोर  
घण्टा द्वारा समयका ज्ञान होता है, उसी प्रकार जहाँ  
भिन्न भिन्न पर्य ज्ञाना जाता है, वहाँ यह नयाय  
होता है।

१०९। प्रतपयमेदननायः।

भी पर्वतों को एक सुरे द्वारा विद्ध करनेसे एक ही  
धार से भिन्न गये, ऐसा ज्ञान पड़ता है, किन्तु भी नहीं,  
प्रत्येक पत्र भिन्न भिन्न समयमें भिन्ना गया है, पर कान-  
को सुझातावयतः चक्षुषा पदुमान नहो' होता। इस

प्रकार जहाँ बहुतने कार्य एक दूसरेके घाट होने पर भी  
एक मनयमें दृष्ट है ऐसा ज्ञान पड़ता है, वहाँ यह नयाय  
होता है। सांख्यदर्शनमें यह नयाय दर्शित हुआ है।

१०१। शानिमम्यतो कीद्रशगननायः।

शान्ति उत्तम धान्यविशेष है घोर कीद्रव पधम,  
उत्तम धानके रहते पधम धानका खाना, तत्सुद्व नयाय  
जहाँ उत्तम वस्तुके रहते पधम वस्तुका सेवन किया  
जाय, वहाँ यह नयाय होता है।

१०२। गिरोषेटनेन नासिका श्याम इति नयायः।

मनुष्य के घाटन करके नासिका श्याम, तत्सुद्व नयाय।  
जहाँ पश्यायसमाय्य कार्यमें बहुत परिश्रम लगता हो,  
वहाँ यह नयाय होता है।

१०३। श्यामरत्ननायः।

जिस प्रकार घटादिका श्यामगुण नाग हो कर रत्न-  
गुण होता है, उसी प्रकार जहाँ पूर्वगुणका नाग हो  
हो कर पगर गुणका समावेश हो, वहाँ यह नयाय  
होता है।

१०४। श्यानगुनकनयायः।

किसी पादमोने एक कुत्ता पाना या घोर यह उसे  
श्यानक (साना) नामसे पुकारा करता था, जिस दिन  
उसे पपनी स्त्रीको विद्वानेका मन होता था, उस दिन वह  
उस कुत्तेको तरह तरहकी गानो देता था। स्त्री उस  
कुत्तेकी पपना भारी ममत्त कर बहुत गुस्सा आती थी।  
श्यानकके प्रति गानो देना वल्लाका पभिराय नहो' था,  
वहाँ उसको स्त्रीके प्रीतिका कारण नहो' रहने पर भी  
नामका ऐक्य सुन कर वह प्रीतिधन्यता जलती थी। इस  
प्रकार जहाँ हांग, वहाँ यह नयाय होता है।

१०५। श्रः श्यमयं श्रुवैतिति नयायः।

जो कार्य कस करमा होगा उसे पात्र, जो पात्र  
करना होगा उसे पभी कर जानना चाहिए। इस प्रकार  
जहाँ पर कसव्य कार्य पहले किया जाय वहाँ यह  
नयाय होता है।

'श्रः श्यमयं श्रुवैतिति नयायः।

नदि शरीरके श्रुवैतिति नयायः।

१०६। श्रमवत् सुखदुःखो त्यागविद्योमाश्रयः।

श्रीव त्याग घोर विद्योम हल दोनो द्वारा श्रम पक्षी-

कार्यप्रवर्तक होता है। सांख्यदर्शनमें यह श्याय प्रदर्शित हुआ है।

१५१। वरगोष्ठौश्यायः।

गोठो पर्याप्त वर और यथुपचर्च परस्पर आलापसे एक मत हो कर जिम प्रकार वरलाभरूप कार्य सम्पन्न किया जाता है, उसी प्रकार जहाँ एकमेव हो कर कोई एक कार्यसाधन किया जाता है, वहाँ यह श्याय होता है। गोठो वर और यथु पंचके आलापसे एकमेव हो कर वरलाभ होता है, इसीसे हम श्यायका नाम वरगोठो श्याय पड़ा है।

१५०। वरघाताय कन्यावरणमिति श्यायः।

विवाह करणा लक्ष्मी है अथच विपकन्यासे विवाह करनेमें श्यु हो सकते है, अतः विपकन्यासे विवाह नहीं करना ही श्ये है। जहाँ प्रभोष्ट यस्तु लाभ करनेमें पनिष्टान्तरकी क्षमायना हो, वहाँ प्रभोष्ट यस्तुका लाभ नहीं करना ही श्यु है। ऐसे स्थान पर ही यह श्याय होता है।

१५८। वद्विधुमश्यायः।

धूमरूप कार्य देखनेसे प्रजस प्रकार कारणरूप कार्यका अनुमान होता है, उसी प्रकार कार्यदर्शनमें कारणके अनुमान-स्थान ही यह श्याय होता है।

१५८। विश्वखुल्लाटश्यायः।

खुल्लाट अर्थात् जिसके सिरके बाल झड़ गये हो। खुल्लाट मनुष्य धूपमें अत्यन्त क्रिय हो कर छायाके लिये एक विश्वघृष्टके नीचे देठा हुआ था। इसी समय एक बाल उसके सिर पर गिरा जिससे उसका सिर चूर चूर हो गया। इस प्रकार जहाँ प्रभोष्ट प्राप्तिको आशासे ला कर पनिष्ट लाभ होता है, वहाँ इस श्यायका प्रयोग होता है।

१६०। विधेयते विधेयत् तत्रापि च विशेषणमिति श्यायः।

विधेयते विधेयत्, उसमें भी विधेयत् तत्त्व श्याय। जैसे, भूतल घटवत् और जलवत्, वहाँ पर भूतलमें घट विधेयत् है और यह विधेयत् भूतलमें प्रदत्त हुआ है, इस प्रकार विधेयत् हम गौतमि जहाँ माघमान होगा, वहाँ यह श्याय होता है।

१६१। विपमत्तपश्यायः।

पापीने पाप किया है वा नहीं, यह जाननेके लिये विपमत्तपश्याय दिव्य करना होता है। नियमपूर्वक पापीको विप खिलानेसे यदि उसने यथायमं पाप न किया हो, तो उसे पनिष्ट नहीं होगा और यदि पनिष्ट हो जाय, तो उसे पापे समझना चाहिये। इस प्रकार जहाँ सत्याभिसन्धका मोक्ष और मिथ्याभिसन्धका बन्ध हो, वहाँ यह श्याय होता है।

१६२। विपहृत्तश्यायः।

अन्य हृत्तकी बात तो दूर रहे, यदि विपहृत्त भी यहित किया जाय, तो उसे भी काटना उचित नहीं है। उसी प्रकार निज प्रजित यस्तुका श्ये नाम नहीं करना चाहिये, ऐसे ही स्थान पर यह श्याय होता है। "विपहृष्टोऽपि संबन्धं स्वयं प्रेक्ष्यमसाम्प्रतम्।" (इन्द्रा २००)

१६३। वीचितरङ्गश्यायः।

नदीकी तरह जिस प्रकार एकके घाट दूसरी घाट तक होता है, उसी प्रकार जहाँ परम्पराक्रमसे कार्यरथात्त हो, वहाँ यह श्याय होता है।

'वीचितरङ्गश्यायेन तदुत्पत्तिस्तु धीर्तिता।' (भाष्यपरि०)

नैयायिकोंके मतसे ककारादिबर्ण वीचितरङ्ग श्यायके अनुसार उत्पन्न होते हैं।

१६४। वीजाङ्कुरश्यायः।

बीजसे अङ्कुर अथवा अङ्कुरसे बीज, बिना बीजके अङ्कुरोत्पत्ति नहीं होती और अङ्कुरके नहीं होने पर बीज भी नहीं होता, अतएव अङ्कुरके प्रति बीज कारण है वा बीजके प्रति अङ्कुर कारण है, इसका कुछ स्थिर नहीं किया जाता तथा बीजाङ्कुरप्रवाह अनादि है यह स्वेकार करना होगा। इस प्रकार जहाँ होगा, वहाँ पर यह श्याय होता है। वेदान्तदर्शनके शारोकर भाष्यमें यह श्याय प्रदर्शित हुआ है।

१६५। हृत्तप्रकम्पनश्यायः।

कोई एक पादमें एक पैर पर चढ़ा था। नीचे दो पादमें खड़े थे। एकने उसे एक शाखा और दूसरेने कोई और शाखा हिलानेकी कहा। हृत्त पर चढ़ा हुआ पादमें उसके परस्पर विश्वबादोवाक्यके कुछ भी कर न सका। इधर एक तीसरे पादमें जड़ पकड़ कर समूचा हृत्त हिलाने दिया जिससे सभी शाखाएँ

द्विजने, लगीं। इस प्रकार जहाँ समी वस्तुओं का अवि-  
रोधाचरण ही, वहाँ पर यह नशाय होता है।

१६६। उहकुमारीयाकनशायाः।

एक दिन रम्भने एक उह कुमारीने वर मांगने को  
कहा। इस वर उसने प्राथनाकी थी, 'मिरे जिनसे धनेक  
पुत्र हो, बहुत कीर हो, धृत हो तथा मैं काश्चनपात्रमें  
भोजन करूँ, यही वर सुभके तीजये।' यह स्त्री कुमारी  
थी, विधाह नहो' हुआ था, विवाहादि नहो' होनेसे पुत्र  
बौर धनादि नहो' ही मकता। किन्तु उस कुमारीने  
एक ही वरसे पति, पुत्र, गी, धान्य बौर हिरण्य प्राप्त  
किया। इस प्रकार उपामना द्वारा एक मोक्षमाधन  
तत्त्वज्ञान प्राप्त करनेसे तदन्तर्भुक्तधित्तगमादि संश्लेषित  
होते हैं, उसी प्रकार जहाँ एक वाक्य द्वारा भाषा अर्थ  
का प्रतिपादन हो, वहाँ यह नशाय होता है। महा-  
भाष्यमें यह नशाय प्रदर्शित हुआ है।

१६७। इन्द्रिमिष्टवतो मुद्रमपि विनष्टमिति नशायः।

किन्ती एक धणिकने मूलधन बढ़ानेके लिये ध्यवसाय  
पारम्भ किया था। उसके कितने नौकरोंने अपना  
व्यवहार करके उसका मूलधन तक भी नष्ट कर दिया।  
इस प्रकार जहाँ होता है, वहाँ इस नशायका प्रयोग  
किया जाता है।

१६८। प्रतानियमसङ्गनादानर्थक्यं लोकावतः।

ज्ञानमाधक व्रतादिका परिश्याग करनेसे लोकदृष्टान्त-  
में ज्ञानरूप प्रयोजन नष्ट हो जाता है। तात्पर्य यह कि  
हृषा व्रतपरिष्य करनेसे पापपञ्जा लापक होगी। बौर  
हृषा परिश्यागसे भी धनर्य होता है।

१६९। मह्यैतानशायः।

महाव्रत द्वारा जिन प्रकार समय विनियोजन बौर  
घण्टा द्वारा समयका ज्ञान होता है, उसी प्रकार जहाँ  
मिथ मिथ अर्थ जाना जाता है, वहाँ यह नशाय  
होता है।

१७०। शतपत्रमिदनशायः।

सौ पत्रोंको एक घड़े द्वारा विद्य करनेसे एक ही  
शार से भिद गते, ऐसा ज्ञान पड़ता है, किन्तु सौ नहो,  
प्रत्येक पत्र मिथ मिथ समयमें भिदा गया है, पर काल-  
की सूक्ष्माधमता; उसका अनुमान नहो' होता। इस

प्रकार जहाँ बहुतसे कार्य एक घूमेके घाट होने पर भी  
एक मनसमें हुए हैं ऐसा ज्ञान पड़ता है, वहाँ यह नशाय  
होता है। सांख्यदर्शनमें यह नशाय दर्शित हुआ है।

१७१। शानिमन्वसो कोद्ररागनशायः।

शानि उत्तम धान्यविशेष है बौर कीद्वय पधम,  
उत्तम धानके रहते पधम धानका पाना, तथा न्य नशाय  
जहाँ उत्तम वस्तुके रहते पधम वस्तुका सेवन किया  
जाय, वहाँ यह नशाय होता है।

१७२। शिरोवेष्टनेन शानिका श्याग इति नशायः।

मनुष्य के टेल करके शानिकाश्याग, तत्सुख्य नशाय।  
जहाँ पन्नायामसाध्य कार्यमें बहुत परिश्रम लगता हो,  
वहाँ यह नशाय होता है।

१७३। श्यामरक्तशायः।

जिन प्रकार घटादिका श्यामगुण नाम हो कर रक्त-  
गुण होता है, उसी प्रकार जहाँ पूर्वगुणका नाम हो  
हो कर परर गुणका समावेश हो, वहाँ यह नशाय  
होता है।

१७४। श्यामगुणकनशायः।

किन्ती पादमोने एक कुत्ता पाना था बौर यह उसे  
श्याल ( शाना ) नामसे पुकारा करता था, जिन दिन  
उसे पपनी स्त्रीको विद्यानिका मन होता था, उस दिन वह  
उस कुत्तेको तरह तरहकी गानो देता था। स्त्री उस  
कुत्तेको अपना भारी समझ कर बहुत गुस्सा जाती थी।  
श्याल तके प्रति गानो देना श्यालका परिश्याग नहो' था,  
यहाँ उसको स्त्रीके प्रीयका कारण नहो' रहने पर भी  
नामका ऐश्व सुन कर वह प्रीयान्विता होती थी। इस  
प्रकार जहाँ होगा, वहाँ यह नशाय होता है।

१७५। श्याजार्थमय प्रवर्ततेति नशायः।

जो कार्य कन करना होगा उसे प्राप्त, जो प्राप्त  
करना होगा उसे अभी कर लासना चाहिए। इस प्रकार  
जहाँ पर कर्तव्य कार्य पहले किया जाय वहाँ यह  
श्याय होता है।

'शरः शर्वेण्य वर्मण्यं दूरंश्चे पाशाङ्गिरम्।

नदि वनीद्वर्षे वृष्टः इतद्वरा न वा कुन्द न'

१७६। श्येनवत् सुखदुःखो श्यागवियोगश्यागः।

श्वेनश्याय बौर वियोग इन दोनों द्वारा श्येन पशु-



की ताड़ सुखी और दुःखी होता है। किसी पादमोनि एक श्येनमासक पाया था। कुछ दिन बाद उसने सोचा कि इसे हवा कट फेंकी दूँ, छोड़ देना ही अच्छा है। इस निचे पिछरनेसे निकाल लने उड़ा दिया। श्येन वन्यनमुक्त ही कर सुखी हुआ और पादकके विच्छेदसे दुःखी भी हुआ। तात्पर्य यह कि संसारमें निरवच्छिन्न सुख नहीं है।

१७७। मन्दश्रवणतितनायः।

मन्दश्र (महामो) जिम प्रकार मध्यस्थित पदार्थ ग्रहण कर सकता है। उसी प्रकार पूर्वोत्तर पदार्थके मध्यस्थित पदार्थके ग्रहणको जगह यह नशाय होता है।

१७८। सन्निहितादपि व्यवहितं साकाङ्क्षं यत्नोय इति नशायः।

सन्निहितसे व्यवहित पद यदि साकाङ्क्षात्तु ही, तो यह बनवान् होता है तत्तु नशाय। शब्दबोधकी योग्यताके कारण साकाङ्क्षपदको पर्याप्त स्वार्थान्वयबोधकी प्रयोजकता है इस नियमसे उसके पाषाणिक्रमका पनाटर करके अन्वययोग्य पदार्थवाचक शब्दका व्यवहितत्व रहने पर भी मूर्ख अन्वय होता है, वहाँ इस नशायका प्रयोग किया जाता है।

१७९। सन्निहिते बुद्धिरन्तरङ्गमिति न्यायः।

सन्निहित और विप्रकृत इन दोनोंमें यदि दोनोंके अन्वयकी सम्भावना ही, तो सन्निहितमें पामलित वगता अन्वय होता है, विप्रकृतका अन्वय नहीं होता। ऐसे स्थान पर यह नशाय होता है।

१८०। समुद्रउत्थिन्यायः।

समुद्रमें वहाँ होनेमें जिम प्रकार उसका कीरे उपकार नहीं होता, उसी प्रकार जहाँ निष्कल कार्य होता है, वहाँ इस नशायका प्रयोग करते हैं।

१८१। समूहानामननशायः।

जहाँ उपस्थित पदार्थोंके मध्य विविध और विविध भाव द्वारा अन्वयकी सम्भावना ही, वहाँ उपस्थित पदार्थके समूहका अवनश्यन करके अन्वयका बोध होगा, जैसे घट, पट इत्यादिकी जगह घट और पट दोनों ही निरीयापद हैं। इस विविधपदका अवनश्यन करके अन्वयका बोध होगा। ऐसे स्थान पर यह नशाय होता है।

१८२। सम्भवत्येकवाक्यत्वे वाक्यभेदो न सिद्ध इति नशायः।

एक वाक्यकी सम्भावना होनेसे वाक्यभेद पमित्यपयोग्य नहीं है, जहाँ पर ऐसा होगा, वहाँ यह नशाय होता है।

१८३। सर्वं विविधेषु सावधारणमिति नशायः।

विविधेषु मात्र हो सावधारण है, जैसे—'श्वेत गह्व' यहाँ पर गह्व श्वेतवर्ण' हो है, इस प्रकार जहाँ सावधारण वाक्यबोध होगा, वहाँ यह नशाय होता है।

१८४। सर्वापेक्षानशायः।

बहुतमें समुपयोगी निमित्तत्व दिया गया, उसमेंसे अभी केवल एक पाया है, उसे जिस प्रकार भोजन नहीं दिया जाता है, सबको अपेक्षा करनेसे पड़ती है, उसी प्रकार जहाँ ऐसे घटना होंगे, वहाँ यह नशाय होता है।

१८५। सन्निवेशो हि विधिनिषेधो विमोषणमुपसंक्रामतः मति विमोषे वाधे इति नशायः।

विमोषणपदके वाधित होने पर विमोषणके साथ वसामान विधि और निषेध विमोषणमें उपसंक्रान्त होती है, तत्तु नशाय। जैसे—'घटाकाशमामय मानाकाश' घटाकाश लाओ, परनाकाश लानेको जरूरत नहीं। यहाँ पर विमोषणपद आकाशे वाधयत्तु लानयन और निषेध यह विधि है और निषेध होनेसे घटादिक्षेत्रमें विमोषण उपसंक्रान्त हुआ पर्याप्त घट लाओ, यहाँ बोध हुआ। इस प्रकार जहाँ होता है वहाँ इस नशायका प्रयोग करते हैं।

१८६। साक्षात् प्रकृतो विकारलय इति न्यायः।

साक्षात् प्रकृतिमें विकारका लय होता है, तत्तु नशाय। जिस प्रकार घटादिका साक्षात् प्रकृति कपानादिमें लय होता है, परमाणुमें नहीं होता, उसी प्रकार जहाँ पर विकारका लीय प्रकृतिमें लय होगा, वहाँ यह नशाय होता है।

१८७। सावकाशनिरवकाशयोर्मध्ये निरवकाशो यत्नोयान् इति नशायः।

सावकाश और निरवकाशविधितो जगत् निरवकाश विधि ही बनवान् है, तत्तु नशाय। निम्नसे अनेक विषय पर्याप्त रहने है, यह सावकाश विधि और निरवकाश

यत्न एक विषय है, वही निरवकाश विधि है। यदि कहीं पर ये दो विधियाँ समान रहें, तो वहाँ निरवकाश-विधिकी ही प्रधानता होगी। जहाँ इस प्रकार निरवकाश विधिकी प्रधानता होती है, वहाँ पर यह न्याय होता है।

१८८। सिंहावलोकनन्यायः।

सिंह जिस प्रकार एक झुंझका बंध करके पानी बढ़ते बढ़ते पीछे की ओर देखता है, उसी प्रकार जहाँ पानी पीछे पीछे दोनोंका प्रत्यय हो, वहाँ यह न्याय होता है।

१८९। सूचीकटाह न्यायः।

पत्थायामसाध्य सूची निर्माणके बाद कटाह निर्माण। एक दिन किसी पादमीने एक कर्मकारके जहाँ जा कर उसे एक कटाह बनाने कहा। इसी बीच एक दूसरा पादमी भी वहाँ पहुँच गया, उसने सूचीके लिये प्रार्थना की। कर्मकारने पहले सूची बना कर पीछे कटाह बना डाला। इस प्रकार जहाँ स्रष्टायाम साध्य निष्ठा कर बहु पायासमाधा कार्य किया जाता है, वहाँ यह न्याय होता है।

१९०। सुन्दोपसुन्दन्यायः।

सुन्द और उपसुन्द नामक प्रथम पराक्रान्त दो चतुर थे। ये दोनों भाई परस्पर विवाद करके नष्ट हुए। इस प्रकार जहाँ परस्पर विवाद होता है, वहाँ इस न्यायका प्रयोग करते हैं।

१९१। सूत्रगाटिका न्यायः।

सूत्र द्वारा गाटिका होना है। सूत्र गाटिका उपादान होनेसे सूत्रकी गाटो इस भाविसंज्ञा द्वारा निर्देश होती है। इस प्रकार जहाँ उपादानका भाविसंज्ञा रूपमें निर्देश होता है, वहाँ यह न्याय होता है।

१९२। सोपानारोहणन्यायः।

प्रासादके ऊपर जाने को इच्छा होने पर जिस प्रकार सोपान पर चढ़ कर जाना पड़ता है पर्याप्त एक एक सोपान पार कर क्रमशः प्रासादके ऊपर चढ़ते हैं, उसी प्रकार जहाँ जाननेमें पहले एक एक सोपान पार करनेसे ज्ञानकी प्राप्ति सम्भव है। पर्याप्त धीरे धीरे वैशेष्य आदि उत्पन्न होता है और समझे गये जो माघ पक्षान भी दूरकी

जाता है। क्रमशः सम्पूर्ण पक्षान तिरोहित होनेसे ज्ञानमात्कार होता है। ऐसे ही न्याय पर यह न्याय होता है।

१९३। मोपानावरोहणन्यायः।

जिस प्रकार मोपान पर चढ़ा और उतरा जाता है, उसी प्रकार जहाँ होगा वहाँ यह न्याय होता है।

१९४। स्थविरलगुहणन्यायः।

उद्वहस्तपतित लगुह जिम तरह लक्ष्यस्थान पर पतित नहीं होता, उधो तरह लक्ष्यस्थान पर पतित नहीं होनेसे यह न्याय होता है।

१९५। स्थानातिवृत्तनन्यायः।

स्थाना गृहस्तम्भभेद समकाल निवृत्तन। स्तम्भ प्रोत्थित करनेमें समकी दृढ़ताके लिए पुनः पुनः कर द्वारा उत्थान और चालन कर जिस प्रकार निवृत्तन किया जाता है, उसी प्रकार जहाँ प्रथम पक्ष समर्थितराशिकी दृढ़ताके लिए उदाहरण और युक्ति पादि द्वारा पुनः पुनः समर्थन किया जाय, वहाँ यह न्याय होता है।

१९६। स्थानादभ्यतो न्यायः।

विवाहके बाद घर और घट्टकी पदस्थती दिखाने की होती है। यह पदस्थती बहुत दूरमें प्रवक्षित है, इसीसे पत्न्यात्न सूक्ष्म है। पति दूरत्वके कारण इसे जगत् देख नहीं सकता। किन्तु पत्नी जि निर्देश पूर्वक अनुपपन्न पहले समर्थिकी, पीछे उत्तरे समोपवर्ती पदस्थतिकी यतनाते हैं और समवे क्रमशः पदस्थतीका ज्ञान भी होता है, इस प्रकार जहाँ पतिमूर्च्छ और दुर्विज्ञेय वस्तु ज्ञाननेके लिये धीरे धीरे उत्तका मोक्ष होता है, वहाँ यह न्याय होता है।

१९७। स्वामिश्रयणन्यायः।

सभी श्रयण प्रभुके अधिप्राधान्यकार्य मत्प्राप्तन करके प्रसादनाभवे अपने ही आभवात्न समझते हैं। इस प्रकार जहाँ परस्पर उत्तकार्य और उत्तकारक भावका मोक्ष होता है, वहाँ इस न्यायका प्रयोग किया जाता है।

कितने ही लौकिक न्यायके लक्षण लिखे गये। इसके मिया योग भी उक्तमें लौकिक न्याय है। विस्तार की जानेके भयसे उनका विवरण नहीं किया गया। केवल पारादि क्रमसे तादृशिका ही जाती है।

१ अन्यायव्यवहार, २ अशक्तं बलवन्तोऽपि गौर-  
 जानपदा इति न्याय, ३ अद्वयदहनन्याय, ४ अगधीति  
 मद्रामाग्ये इति न्याय, ५ अनन्तरस्य विधिर्वा भवति  
 प्रतिषेधो वा इति न्याय, ६ अन्ते वा मतिः सा गतिरिति  
 न्याय, ७ अन्ते रण्ण्यविवाहस्य द्वादशैव कृतो न स इति  
 न्याय, ८ अश्वदमनन्याय, ९ अन्यायुक्तन्याय, १० अंग-  
 भक्षणन्याय, ११ अभाष्यनामन्याय, १२ अद्वैतगण-  
 न्याय, १३ अथ श्लाघितानपेक्षितयोरिति न्याय, १४  
 अयत्तरोर्गभन्याय, १५ अथश्वत्वन्याय, १६ अहितिपुत्र-  
 न्याय, १७ अहितुक, कौचत्तं न्याय, १८ अवाङ्मत्त-  
 न्याय, १९ इक्षुरधन्याय, २० इक्षुविकारन्याय, २१  
 इच्छेत्प्रमाणयोः सममित्यद्वारे इयमाशयस्यैव प्राधान्य-  
 मिति न्याय, २२ इयुवेगद्ययन्याय, २३ उपजन्मिष्य-  
 माननिमित्तोऽप्यपवादे जातनिमित्तमपि सख्यं वधत  
 इति न्याय, २४ उपजोष्योपजोवकन्याय, २५ उट्टनगुड-  
 न्याय, २६ एकत्र निर्णयः शास्त्रार्थः अथश्लाघि तथा  
 इति न्याय, २७ एकद्वयन्याय, २८ करिष्वहितन्याय,  
 २९ कांश्रभोजनन्याय, ३० कामनागोचरत्वेन शब्दबोध  
 एव शब्दसाधनताऽन्वय इति न्याय, ३१ कालनामो कार्यं  
 नामन्याय, ३२ किमज्ञानस्य दुष्करमिति न्याय, ३३  
 कोटभङ्गन्याय, ३४ कुक्कुटध्वनिन्याय, ३५ कुम्भीघान-  
 न्याय, ३६ कूपन्याय, ३७ कृताकृतपद्मयोः विधिः स  
 नित्य इति न्याय, ३८ कोपपञ्चन्याय, ३९ कोण्डिनन्याय  
 ४० कोकोयराधिपन्याय, ४१ खनमेखोन्याय, ४२ प्याटक-  
 घातकन्याय, ४३ गजघटान्याय, ४४ गण्यवतिन्याय, ४५  
 गर्भभारामगण्यनामन्याय, ४६ गलेपादुकन्याय, ४७ गुणोप-  
 संहारन्याय, ४८ गोघोरं श्वदकोर्द्धमिति न्याय,  
 ४९ गोमण्यपायसन्याय, ५० गोमद्विधादिन्याय, ५१  
 घटप्रदोषन्याय, ५२ चक्रभ्रमणन्याय, ५३ चर्मतसो  
 मिश्रयोः कस्योपि न्याय, ५४ चित्ताश्रयन्याय, ५५ चित्र-  
 पटन्याय, ५६ चित्राङ्गनामन्याय, ५७ चित्तानन्याय,  
 ५८ जन्मदल न्याय, ५९ जामात्रयं किमप्रवृत्तयोरिति  
 प्लुपकारणत्वमिति न्याय, ६० ज्ञानधर्मिस्त्वशास्त्रकारे  
 तु विपर्यय इति न्याय, ६१ ज्ञानादिनिष्कर्षं बहुतुल्यो-  
 ऽप्यज्ञो न्याय इति न्याय, ६२ ज्योतिन्याय, ६३ तत्साहच-  
 यगम्य इति न्याय, ६४ तदभिसम्बन्धमिति न्याय, ६५

तदागमोऽपि दृश्यते इति न्याय, ६६ तमःप्रकाशन्याय,  
 ६७ तरतमभावापचमिति न्याय, ६८ तामसं परियत्रैवे-  
 दिति न्याय, ६९ तानस्यन्याय, ७० तियं गधिकरण-  
 न्याय, ७१ तुभोसमनन्याय, ७२ त्वञ्जिदेकं कुमस्यायौ  
 इति न्याय, ७३ त्याग्या दुष्प्रतिभो इति न्याय, ७४ दम्भा-  
 रसन्याय, ७५ दम्भेभ्यनवङ्कन्याय, ७६ दम्भेभ्य-  
 मारणन्याय, ७७ दम्भिव्यभि प्रयसो त्वर इति न्याय,  
 ७८ दम्भप्रोक्षान्याय, ७९ दानश्यातकन्याय, ८० दाह-  
 कदाह न्याय, ८१ दुर्बलैरपि बाध्यते पुत्र्यैः पार्थि-  
 वाश्रितैरिति न्याय, ८२ देवताधिकरण न्याय, ८३ देव-  
 दत्तहस्तकन्याय, ८४ देहो दोषन्याय, ८५ देहाधी-  
 सुत्वन्याय, ८६ धर्मकल्पनान्याय, ८७ धर्मकल्पना  
 न्याय, ८८ धान्यपलनन्याय, ८९ नहि प्रथमिज्ञामात्रेण  
 पथं सिद्धिरिति न्याय, ९० नहि भिक्षुको भिक्षुकमिति  
 न्याय, ९१ नहि विवाहानन्तरं वरपरोक्षा क्रियते इति  
 न्याय, ९२ नहि शब्दमगाद्येनाथेति इति न्याय, ९३  
 नहि सुतोऽप्यभिधारा स्वयमेव ह्येति साहित-  
 ध्यापारा भवतीति न्याय, ९४ नामोद्धृति न्याय,  
 ९५ नाम्नातिशयोक्ता विमिष्टबुद्धिः विभेद्यं संज्ञामतीति  
 न्याय, ९६ नोरघोरन्याय, ९७ नोनेन्दोवरन्याय, ९८  
 नोनाविकन्याय, ९९ पटन्याय, १०० पटमप्यविका-  
 भावात्प्रकारात् न विगियत इति न्याय, १०१ परिष-  
 न्याय, १०२ पत्रं ताधित्यज्ञानन्याय, १०३ पत्रं तोपच्यंका-  
 न्याय, १०४ पिण्डं हित्वा करं जेहीति न्याय, १०५  
 पुरस्तादपवादा अनन्तरान् विधेयान् यद्येति नैतरानिति  
 न्याय, १०६ पुटकगुणन्याय, १०७ पूर्वसंपवादा निवि-  
 गको पयादुत्सर्ग इति न्याय, १०८ पूर्वान्तरं परस्मैपद-  
 न्याय, १०९ प्रकृत्यापवादादिविषयं पयादुत्सर्गोऽस्मिन्-  
 विगते इति न्याय, ११० प्रकाशयन्याय, १११ प्रकृति-  
 प्रययार्थयोः प्रययार्थस्य प्राधान्यमिति न्याय, ११२  
 प्रधानमज्ञनिवर्हणं न्याय, ११३ प्रमायव्यवहटादि  
 ज्ञानानि सुरह न्यपेति न्याय, ११४ प्रमद्वपठिनन्याय,  
 ११५ बहुविधप्रदप्रदोषन्याय, ११६ बहुराजकपुरन्याय,  
 ११७ ब्राह्मणव्यतिन्याय, ११८ भक्तिः विषयमेव न शास्त्री  
 व्याधिरिति न्याय, ११९ भामतीन्याय, १२० भावप्रधान-  
 माध्यातमिति न्याय, १२१ न्यादिन्याय, १२२ भूमि-

पलिनाय, १२३ भूशेयोपन्याय, १२४ भैरवनाय, १२५  
 म्भरनाय, १२६ मलिकान्नाय, १२७ मण्डकप्लुति  
 नाय, १२८ मय्यकण्ठकनाय, १२९ मय्यपाननाय,  
 १३० मङ्घो पमवोन्मुञ्चोतिनाय, १३१ माक्यनाय,  
 १३२ मूकभयेन क्रथात्वागनाय, १३३ मुञ्चोपेयननाय,  
 १३४ मृगानिकृताभ्रनाय, १३५ मृगभयेन गय्यानाय-  
 येण इति श्याय, १३६ मृगवागुगनाय, १३७ मृतमारण-  
 नाय, १३८ यः कारयति स करोष्ये इति नाय, १३९  
 यः कुर्वते स भुङ्क्ते इति नायः, १४० यत्पायः श्रूयते  
 वाहकं तथाप्यवगम्यते इति नाय, १४१ यदर्थं प्रवृत्तिः  
 तदर्थः प्रतिषेधः इति नाय, १४२ यद्विवाहोत्तमान-  
 मिति नाय, १४३ यथाज्ञानं भ्रमस्यास्य भ्रान्तः सत्यक-  
 च मेद स इति नाय, १४४ यावच्छिद्रास्त्रावच्छिद्रोऽप्यथा  
 इति नाय, १४५ येन चाप्राप्तो न यो विधिरारभ्यते स तस्य  
 वाधको भवति इति नाय, १४६ यद्यद्भवान्नाय, १४७  
 यस्मिन्नादिनाय, १४८ राजसं नाममन्वेति नाय, १४९  
 राममंठितनाय, १५० रुद्रिर्गोमपवहरतीति नाय, १५१  
 श्वागम्यनाय, १५२ रोगिनाय, १५३ नाङ्गसञ्जीवन-  
 मिति नाय, १५४ ओद्वाग्निनाय, १५५ वकत्रभ्रमनाय,  
 १५६ विधिविधौ मत् विमेषवाधे विमेषणं स्वमंका-  
 मित इति नाय, १५७ विधे यं हि श्रूयते वद्वितिनय य,  
 १५८ विपरोक्षं बलाभ्रमिति नाय, १५९ विवाहप्रवृत्ता-  
 ग्यनाय, १६० विविष्टतर्क इति नाय, १६१ विविष्टप्य  
 वै शिष्टमिति नाय, १६२ द्विद्विगीमनाय, १६३ वेगो-  
 षासु तदाह इति नाय, १६४ वृषकारकनाय, १६५  
 व्याप्तिबोधनाय, १६६ वयस्यनाय गन्तव्यमिति  
 नाय, १६७ सोद्विबोजनाय, १६८ शक्तिः सङ्कारिणीति-  
 नाय, १६९ शोधोत्संभनाय, १७० शालावन्दनाय,  
 १७१ शान्दोद्वाकादा शब्दो न पूर्योयेतिनाय, १७२  
 शंभुनाय, १७३ श्रुतप्रतीचामननाय, १७४ शक्ति-  
 घटाश्व नाय, १७५ शक्तिबोधे न जानातीति नाय, १७६  
 सर्वशान्दप्रययमेकं कर्म इति नाय, १७७ शास्त्रानुपहन-  
 मितिनाय, १७८ शास्त्रमतीनाय, १७९ शाब्दजनी न  
 सुष्यायस्ववनाय, १८० शिष्टमनाय, १८१ शून्यजि-  
 मितिनाय, १८२ शुभमिभुक्तनाय, १८३ शून्यजि-  
 मनाय, १८४ श्यानीपुत्राकनाय, १८५ श्यावरकण्ठमिष-

नाय, १८६ म्दिकमोदिवनाय, १८७ शक्रकुच-  
 नाय, १८८ स्वपक्षानिकर्तृत्वात् शुकुभाहारतां गत  
 इति नाय, १८९ स्वप्रव्याप्तनाय, १९० स्वगिणमि-  
 पुम्बन्तमिति नाय, १९१ इन्तामनकनाय ।  
 श्री रामदयानुगिण्य श्रुतान्यविरचित लौकिकनाय  
 संघर्षे उक्त नायममूहका विवरण निपा ३ ।  
 न्यायकत्तो ( मं० पु० ) नाय करिनेवाणा, दो पक्षो  
 विवादका निर्णय कतनेवाणा, इमाक करनेवाणा ।  
 न्यायलौकिक ( मं० पु० ) एक शीयाधाय ।  
 न्यायनः ( मं० पत्र० ) न्याय-मनिम । १ न्यायानुमार,  
 धर्म धोर नोतिरे चनुमार, इमानमे । २ ठोक ठोक ।  
 न्यायता ( मं० श्लो० ) नाय भावे तन्, टाप । न्यायका  
 भाव, उपयुक्तता ।  
 न्यायदेव—भरतमणीत मन्त्रोत्पत्त्यकार यन्त्रे टीका-  
 कार ।  
 न्यायदेश ( मं० श्लो० ) १ विचारानय, घटागत । २  
 विचारमस्यन्धोय कम ।  
 न्यायपथ ( मं० पु० ) नायोपेतः पन्थाः, समाने पथ् सम-  
 षानाः । १ मोमांशाभावा । २ पाचरपका नायमन्यत-  
 मार्ग, उचित रोति ।  
 न्यायपरता ( मं० श्लो० ) नायपरप्य भावः, तन्, टाप ।  
 १ नायवान् कार्य, इमाकका काम । २ नायमीनगा,  
 नायो चीनिका भाव ।  
 न्यायवत् ( मं० श्लो० ) नायः विद्यतेऽस्य सतुप, मत्तं  
 व । नाययुक्त, नाय पर चनेवाणा ।  
 न्यायवर्त्ता ( मं० श्लो० ) नाय-सत-निनि । नाय पर  
 चनेवाणा ।  
 न्यायवागीश ( मं० पु० ) काव्यचन्द्रका नामक एक च-  
 द्दार चन्द्रे वपेता, दिवानिधिके पुत्र ।  
 न्यायवान् ( श्लो० पु० ) विवेको, नायो ।  
 न्यायविहित ( मं० श्लो० ) नायेन विहितः । न्यायानुमार  
 हन, जो नाययुक्त किया जाय ।  
 न्यायवृत्त ( मं० श्लो० ) न्यायवपितं हनम् । १ न्याय-  
 विहितपाचार । ( श्लो० ) २ शास्त्रविहितपाचार ।  
 न्यायविहय ( मं० श्लो० ) प्रत्यक्ष प्रमाणे विरोधी ।  
 न्यायमाप्ती ( मं० पु० ) महाराष्ट्रदेशे धर्मप्रमाणा  
 उपाधि ।

श्यापयमा (सं० स्त्री०) वह ममा जहा विवादीका निर्णय हो, कचहरी, भदासत ।

श्यापयमारिषी (सं० स्त्री०) श्यापं मरति स्-गिति । युक्ति-पुयके कर्मानुमारिषी ।

श्यापयोग (सं० पुं०) १ उपाधिविशेष, व्यवहार या विवादका निर्णय करनेवाला अधिकारी, मुकदमेका फैसला करनेवाला अधिकारी, जज ।

श्यापानय (सं० पुं०) वह स्थान जहाँ न्याय चर्चात व्यवहार या विवादका निर्णय हो, वह जगह जहाँ मुकदमेका फैसला हो, भदान्त, कचहरी ।

श्यायो (सं० द्वि०) नरायोऽस्त्वस्य इति । श्याय पर चरनेवाला, भोतिसम्बन्ध आचरण करनेवाला, उचित पक्षप्रवृत्त करनेवाला ।

श्याय्य (सं० द्वि०) नराय्यादिनपेतं नराय यत् (धर्मपर्याय-न्यायानपेते । पा ३।४।१२) नरायसुक्त, नरायमङ्गल । पर्याय-सुक्त, शोषार्थिक, लम्ब, भङ्गमान, चमिनीत, क्रमोचित ।

श्याय (हिं० वि०) १ जो पास न हो, दूर । २ जो मिला या लगा न हो, पसंग, लुदा । ३ विलक्षण, निराला, पनोहा । ४ पतर, भिन्न, घोर हो ।

श्यायि (हिं० पुं०) सुनारोकि नियारकी घो कर सोमा चोदी एकत्र करनेवाला ।

श्यायि (हिं० द्वि०-वि०) १ पास नहीं, दूर । २ प्रपक्, पसंग ।

श्याय (हिं० पुं०) १ नियम-भौति, आचरणप्रवृत्ति । २ दो पक्षोंके बीच निर्णय, विवाद वा झगड़ेका निराकरण, व्यवहार या मुकदमेका फैसला । ३ उचित पक्ष, कर्तव्यका डोक निर्धारण, वालिभ बात । ४ उचित प्रवृत्तिकी बुद्धि, संसक ।

श्याय (सं० पुं०) श्यायने इति नि-पत्य-प्रत्यय । १ उप-निवि, निभोको वस्तु जो दूरके यहाँ इस विज्ञानपर श्को हो कि बह लम्बी रखा करिगा पीर मांगनेपर शोटा देगा, धरोहर, वासी । निशेदेको । २ विनाश, ह्वापन, रचना । ३ पक्क । ४ त्याग । ५ प्राग्नि-काश्यायानिधुतर्थापयान्-प्रत्ययिणोऽप । ६ सं-नास । ७ हिमी रोग या वायुकी गन्तिरे लिये भोगी या

वाधायन्त मनुष्यके एक एक पक्ष पर हाथ नें जा कर मन्त्र पढ़नेका विधान । ८ पुत्राकी तान्त्रिक पद्धतिके अनुसार देवताके भिन्न भिन्न चर्गाका ध्यान करते हुए मन्त्र पढ़ कर उन पर विशेष वर्षाका श्यापन । पूजा करनेमें न्यास करना होता है । तन्त्र घोर पुराणमें इसका विधान लिखा है ।

शातःकाल, पूजाके समय वा होमकर्म इन सब समर्थीमें न्यास करना होता है । न्यास पूजाका पक्ष है । तन्त्रमें अनेक प्रकारके न्यासका विवरण देखनेमें आता है जिनमेंसे तन्त्रपारोक्ष कई प्रकारके न्यासका विषय नोचे दिया जाता है । सभी पूजामें शातकालन्यास करना होता है ।

"अथ मातृदा मन्त्रस्य ब्रह्मविर्गायत्रीऽहम्दी मातृदा परस्वती देवता ह्यो बोशनि स्वराः शक्तयो मातृदायावे शिनि-योगः । धिरति शो ब्रह्मणे ऋषये ममः, मुष्टे शो माश्री-रज्जुदष्टे ममः, हृदि शो मातृकासरस्वत्यै देवतायै ममः, गुहा शो बंधनभेभ्यो बीजेभ्यो नमः, पादयोः स्वरेभ्यः शक्तिभ्यो नमः ।"

"मातृकां श्युं देवेति न्यषेत् पापनिहृत्तनी ।  
ऋषिर्निहास्य मन्त्रस्य गायत्री षण्ड उच्यते ॥  
देवता मातृकादेवी शोक् भवनसंभारम् ।  
शक्तयस्तु स्वता देभिः पठन्माधमाचरेत् ॥"

शातकालन्यासके पापका नाश होता है । इस न्यासके फल मद्या, छन्द गायत्री, देवता मातृकासरस्वतोदेवी, यौज व्यवहन घोर शक्ति लाभमूह है ।

पक्ष घोर करन्यास-चं कं तं मं चं हं पां चहुं-ठाम्या नमः, इं चं हं अं भं चं हं इं मन्त्रभोग्यां लाहा, हं टं टं हं टं चं लं मन्त्राम्यां वयट्, एं तं थं दं थं मं ऐं चनामिकाभ्यां हूं, शीं पं कं थं भं मं शीं कनि-ठाभ्यो शोपट्, चं थं रं सं थं शं पं थं हं लं चं पः कर-तलपुत्राभ्यो पसंथाय फट् । इसी प्रकार हृदयमें सो जानना चाहिए । यथा-चं कं तं मं चं हं पां हृदयाय नमः इत्यादि । पूर्वद्वय वर्षे यथाक्रमसे गिरने लाहा, दिवायै वयट्, कवचाय हूं, निद्रायाय शोपट्, करतल-पुत्राभ्यां पसंथाय फट्, रग मन्त्रोंकी पूर्व पूर्व प्राग्नि-क पदुमार वर्षे श्यापन करना होता है । यही

दो ग्याम पद्म घोर करग्यास है । प्रानाण वस्तुमें इन पद्म घोर करग्यासका विधान इस प्रकार लिखा है—  
'अं मां मये वरगर्हणं हं हं मये वरगर्हणम् ।

उं ऊं मये उरगर्हणं एं ऐं मरुते उरगर्हणम् ॥' इत्यादि ।

पद्मनाम घोर करन्यास ही मातृकान्यासका पहला न्यास है । यह पापनाशक माना गया है । इसमें ६ मन्त्रोंसे ६ चण्डोंमें न्यास करना होता है, इनमेंसे ५ने पहला कहते हैं । ६ मन्त्र ये हैं—नमः, स्वाहा, वषट्, हूं, ओषट्, घोर फट् तथा पद्माङ्गलि, करतलपट्ट, हृदयादि पद्मपद्म घोर करतलपट्ट ये छः पद्म हैं । इन्हीं ६ चण्डोंमें छह ६ मन्त्रोंमें न्यास किया जाता है । इसीसे इस न्यासको पद्म, कर वा पद्म कहते हैं ।

मातृकाका षष्ठादिन्यास, पूर्वोक्त प्रकारमें करन्यास घोर पद्मनाम करके चन्तमातृकान्यास किया जाता है । इस चन्तमातृकान्यासका विषय पद्मस्त्यसंहितामें इस प्रकार लिखा है—

देहके मध्य पाधारति भ्रू मध्य तक ६ पद्म हैं । उन्हीं मध्य पद्ममें यह चन्तमातृकान्यास करते हैं । कण्ठस्थलमें जो दोहम दलपद्म हैं, उनके दोहम पद्मोंमें चकारादि दोहम धरतीको घुस्यारयुक्त करके—पं नमः, धं नमः इत्यादि रूपमें, न्यास करना होता है । यथा—हृदयस्थित दादगदगपद्ममें ककारादि दादगवर्ण, पर्यात् कने ठ पर्यन्त वर्ण, गभिमूलस्थित दम दल पद्ममें छकारादि टगवर्ण, डमे क पर्यन्त, लिङ्ग मूलस्थित पहलुटन पद्ममें चकारादि पहलुवर्ण, वने झ पर्यन्त, मूलाधारस्थित चतुर्दल पद्ममें चकारादि चार वर्ण, वने न पर्यन्त एव भ्रूमध्यस्थित हृदय पद्ममें ह, च इन दो वर्णोंका न्यास करना होता है । न्यासमें प्रत्येक वर्णको घुस्यारयुक्त करके पर्यात् 'कं नमः, चं नमः' इत्यादि प्रकारसे न्यास किया जाता है । इस प्रकार मन्त्र ही मन्त्र चत्वारिंश न्यास करके साक्षात्न्यास करते हैं । विष्णुविषयमें पाधारति मस्तिष्क तक पट्टपद्ममें गिन्ध्रनिमित्त क्रमसे वर्णन्यास विधेय है । मूलधारस्थित सुवर्णम चतुर्दल पद्ममें न, म, य, न ये चार वर्ण, लिङ्गमूलस्थित विद्युत्नाम पहलुटन स्वाधिधानपद्ममें वने ल पर्यन्त, गभिमूलस्थित जोलमे वरुभ दददल, मविभूर

पद्ममें ह-ने क पर्यन्त वर्ण, प्रथमपट्टम हृदयस्थित दादगदग बनाहृत पद्ममें कने ठ पर्यन्त, वण्डस्थित धूमवर्ण दोहम दल विद्युत्नाम पद्ममें चकारादि दोहम-स्वर घोर भ्रूमध्यस्थित चन्द्रवर्ण हृदय पद्ममें ह च ये दो वर्णविन्यास विधेय हैं । त्रिमवर्ण मर्षवर्ण विष्णुपित्त समाहित चिन्तमें इस प्रकार ध्यान करनेको जो पात्सर मातृकान्यास कहते हैं ।

इस न्यासमें प्रथमतः मातृका देवीका ध्यान करना होता है ।

साक्षात्मातृका ध्यान—

'पद्मवाचस्त्रिभिर्विभक्तपुत्रदोषघ्नमप्यवशः पत्नी मास्वग्रीहितिवदचदगदमावापीनद्रुहलनीम् ।  
प्रथमसपुत्रं प्रथाद्गुहलमे विधातुं इत्यादि ।  
विधानां विपदनां तिनपनां इत्यादेवताम परे ॥'

मातृकादेवीका शरीर चकारादि पद्माक्षरवर्णमय, ललाट पर चञ्चल अन्द्र निद्रह, दोनी मूल बहुत स्थूल-धार्गी शायोमें मुद्रा, जपमाला, सुधापूषं कलम घोर विषय हैं । यह मातृकादेवी विपदप्रमा घोर विनयना है ।

इस प्रकार मातृका देवीका ध्यान करने पुनः ग्यास करना होता है । न्यासविषयमें पद्मनि-नियम इस प्रकार है—ललाटदेगमें पनामिका घोर मध्यमाङ्गलि द्वारा नाश विधेय है । इसी प्रकार सुवर्ण तर्जनी, मध्यमा घोर पनामिका, दोनी नेत्रमें हवा घोर पनामिका, दोनी कानमें पद्म, छ, दोनी नाकमें कनिष्ठा घोर पद्म, छ, दोनी गण्डमें तर्जनी, मध्यमा घोर पनामिका, दोनी चोष्ठमें मधामा, दोनी दन्तपंक्तिमें पनामिका, मस्तिष्क पर मध्यमा, सुवर्ण पनामिका घोर मध्यमा, हस्त, पाद, पात्र घोर छट्ट वा कनिष्ठा, पनामिका घोर मध्यमा, गभि-देगमें कनिष्ठा, पनामिका, मध्यमा घोर पद्म, छ, हृदयमें मवाङ्गलि, वचःस्थल, दोनी ककुत्स्थल, हृदयमें हस्त, हृदयमें पाद घोर मुख तक सभी स्थानोंमें हस्ततल द्वारा न्यास करना होता है । इनका नाम है मातृकामुद्रा । इस मुद्रासे जाने बिना न्यास करनेमें निष्फल होता है ।

मातृकान्यासका ध्यान—ललाट, मुख, चतु, कर्ण, नासिका, गण्ड, चोष्ठ, दन्त, मस्तिष्क, सुव, हृदयपादमथि, हस्तगदाप, पात्र, हय, पृष्ठ, नाभि, उदर, हृदय, कर्ण-

द्वय, कङ्कट, छटाटि सुते, इन सब स्थानों में न्याय करना होता है। न्यायके सभी स्थानों पर प्रणवादि नमोऽना का प्रयोग करनेका विधान है।

यथा—वीं चं नतो ननाटे, वं घं नतो सुखटते, दं ईं प्रसुधो; वं कं कणयो, व्टं व्टं ननो; लं लं गण्टयो; वं चोत्रे, ऐं चधो, घं चयोदतो, चो लावटते, चं भ्रमरभं, पः सुखे । कं टववाटु मूने, खं सुवे, गं मणिबन्धे, घं पङ्कनिमुने, डं पङ्कन्यपे चोर चं कं कं भं कं वामवाटुमूनस्यथ्येयु, इत्यादि । इन प्रकार पञ्चाशदर्थका विन्यास कर न्याय किया जाता है।

“लोभापत्रो नमोऽनो वं चरिदुर्विन्दुःकितः ।

धवावटु वं भिषाधः कमाटुको मनीषिभिः ॥”

मं हारमाटुकान्याम ।—इन न्यायमें मं हारमाटुका टैवोका ध्यान करना होता है।

जान—“ख ५५३” हरिणपोनमृदं गटं व

रियाः कुरैरितं दधती त्रिनेत्रां ।

अदंष्टुवैरिमहगामरिन्दरामं

यदंशरीं प्रभमत धनमारनसाम् ॥”

जो चपने धारी हाथमें पलमाला, करिणशायक, मृदङ्गटु चौर विद्या धारण को दूई हैं चौर को जिन-यनो है, अर्धचन्द्र जिनके मोनिदेश पर विराजमान है तथा जो चाविन्दुवाचिनो हैं, उन्हीं चर्षे श्वरी स्तनभार-विनता टैवोको प्रणाम करता हैं। इस प्रकार मं हार माटु भाका ध्यान करके ‘छटाटि सुते चं नमः छटाटि चटरे चं नमः’ इत्यादि रूपमें न्याय करती है। यह माटुहाथें चार प्रकारका है—कंयन, विन्दुयुक्त, विभर्ग-युक्त चौर विन्दु तथा विभर्ग समथयुक्त । इन द्वैवल माटुकोन्यायमें विद्या, विन्दु चौर विभर्ग समथयुक्त न्याय में भक्ति, विभर्गयुक्त न्यायमें पुत्र चौर विन्दुयुक्त न्यायमें विद्या नाम होता है।

“चतुर्षो मातृका शोका ईशवा विन्दुसंपुता ।

उरिगर्वा वीमवा च रक्षयेत्यु कल्पते न

रियाःको केवला च गोमवा मोक्षदायिनी ।

पुत्रदा चरिद्वर्गा च हरिदुर्गिणदायिनी ॥”

इदंश्वर तन्तमें लिखा है, कि वाक्, सिद्धि कामना-में मातृकी ( वं ), श्रीहृदिकी कामनामें योवोज

( श्री ), पय सिद्धिकी कामनामें नमः चौर मोक्षयोज-करणमें कामवोज ( कौ ) चादिमें योग करके न्याय करे । यह ( पः ) चादिमें योग करके न्याय करनेसे सभी मन्त्र प्रमत्त होती हैं । नवरत्नेश्वरयन्त्रमें श्रोत्रिधाके दिव्य-में लिखा है, कि चादिमें वायवोज ( वि ) चौर चतुर्में नमः योग करके पर्यात् ‘ वं चं नमः ’ वं चो नमः’ इत्यादि पञ्चाशदर्थ द्वारा न्याय कानेसे पश्चिमादि पटसिद्धि नाम होती है । यामलमें लिखा है, कि भूतपुत्रि चौर माटुका न्याय किये बिना जो पूजा की जाती है, यह निष्फल होती है । चतुर्थ सभी देवपूजामें माटुकान्याय अवश्य विधेय है । गीतसोयनस्त्रमें मानान्य न्यासका पद्म, निगमय इन प्रकार लिखा है—मन जो मन पुष्प द्वारा पथवा चनामिका चौर पद्मूह द्वारा न्याय धारे, इनका विपरोत करनेसे निष्फल होता है । साधारण न्यायमें यह नियम है, श्यामादि विद्याविषयमें माटुहाथवाममें चौर कुंज धियेय है।

वाटन्या—“घं चाधरगक्ये भमः” इस प्रकार

प्रकृति, कूर्म, धनस्त, पृथ्वी, सोरमसुद्ध, श्वेतपीर, मणिरण्डप, कल्पलक्ष, मणिवेदिना चौर रत्नमं भामन ये सब स्थान करने प्रीत हैं यह श्याम चूटयमें करना होता है। वीह दक्षिणकक्षमें धर्म, वामकक्षमें ज्ञान, वाम कक्षमें वैराग्य, दक्षिण कक्षमें ऐश्वर्य, सुषुप्तं चधर्म, दक्षिणवाममें चक्षुः, नाभिमें चयैराग्य चौर वाम-पार्श्वमें पनोश्वये इन सबका न्याय किया जाता है। सभी जगत् प्रणवादि नमोऽनाका प्रयोग होगा।

“अगोहपुगवर्गविद्वान् प्रादक्षिण्येन साधकः ।

धर्मं शानं च वैराग्यैश्वर्यं कृपणः सुधीः ।

सुखवासं नमिषाथं श्वघर्षादीन् प्रकृतायेत् ॥”

दिरमें छटयमें न्याय करना होगा, घं चमत्ताय नमः, इन प्रकार पट, चं टाटगकलायक सुयमण्डप, चं योहृग कलायक मीमसण्डप, मं दम कलायक वशि-मण्डप, मं सख, वं रजम, तं तगम्, घं चामन, चं चकाराकम्, चं वरनाकम्, कौं ज्ञानाकम्, चन्तमें नमः शब्दका योग करके न्याय करना होगा है। नारदा-लिपिकमें इन न्यायका विषय इस प्रकार लिखा है—

प्राचादिनाम—

“मन्देश्वरमुखात्पुत्राया यः साधातया मनु ।  
 संघातयति दृष्टायां च तस्य ऋषिरिति ॥  
 प्रह्वान्मरुतके चान्द्रेण्यवस्तु परिधीयति ॥  
 सर्वेषां परमत्त्वानां साद्वान्पदवद उच्यते ॥”

जिनोंने पहले महादेवके मुखमें मन्त्र व्यवहृत करके तपस्या द्वारा मन्त्र सिद्ध किया है, वे उन्हीं मन्त्रके ऋषि होते हैं । ऋषि ही मन्त्रके पादि गुण हैं, इस कारण उनका मन्त्रकर्म नशाम करना चाहिए । सब प्रकारके मन्त्रतत्त्वकी जो प्राच्छादन शिष्ट रहते हैं, उनका नाम ऋत्वे है । मन्त्रो ऋत्वे पक्षर चोर पदघटित हैं, पक्षः ऋत्वेका मुखमें नशाम करनेका विधान है । सब प्रकारके जन्तुओंकी जो सब कार्योंमें प्रेरण करते हैं, वे देवता हैं । पक्षः ह्यव्ययमें पक्षका नशाम किया जाता है । ऋषि चोर ऋत्वेको बिना जाने नशाम करनेसे कुछ भो फल प्राप नहीं होता । तन्वात्तरमें लिखा है, कि मन्त्रक पक्ष ऋषि मुखमें उच्यते, हृदयमें द्रव्या, गुच्छादिगर्भमें बीज, वाग्द्वयमें गणित, चोर, मन्त्राङ्गमें लोक नशाम करे । वेदिके मन्त्रोक्त-नाम करना होता है । चानाण्यवमन्त्रमें लिखा है कि जो मनुष्य पागमोक्त विधानसे प्रतिदिन न्याय करते हैं उनका मन्त्र सिद्ध होता है चोर घन्त- ये देवमोक्तकी प्राप्ति है । जो न्याय करके मन्त्रका जप करते हैं, उनके सब भिन्न प्राप्ति रहते हैं । पञ्चानता प्रयुक्त जो न्यासादि क्रिये विना पन्त्र जपने हैं उनके सभी काम निष्फल होते हैं ।

पद्मन्यायका पद्मनि-विषय—तोम, दो, पक्ष, दग, तीन चोर दो पद्मनि द्वारा हृदयादि पद्मङ्गमें न्याम करे । राघवभङ्गन नामकग्रन्थके बचनमें लिखा है कि मन्त्रमा, पक्षामिका चोर तर्जनी पद्मनि द्वारा हृदयमें, मन्त्रमा चोर तर्जनी पद्मनि द्वारा मन्त्रकर्म, पद्मद्वयद्वारा मित्रा-न्यायमें, मन्त्राङ्गनि द्वारा कवचमें, तर्जनी, मन्त्रमा चोर पक्षामिका द्वारा नेत्रमें तथा तर्जनी चोर मन्त्रमा द्वारा करतल पर न्याम करना होता है । निम देवताका न्याम करना होता है, उस देवताके यदि दो नेत्र हैं, तो तर्जनी चोर मन्त्रमा द्वारा नेत्रमें न्याम करनेका विधान है । हृदयाद्यन्तम, मित्रो देवताका, मित्राये बधुत्, इत्यादि पूर्वोक्तसमक्ष हृदयादि पद्मङ्गमें न्याम करे । जहाँ पर

पद्मङ्ग न्याम कहा गया है, वहाँ पर नेत्रकी जोड़ कर दूसरे पद्मङ्गमें न्याम करे । विष्णुके विषयमें पद्मद्वयने मरुतहस्त गाला द्वारा हृदय चोर मन्त्रकर्म न्याम करे तथा पद्मद्वय मध्यगत मुष्टि द्वारा मित्रा, उभय हस्तकी मन्त्राङ्गनि द्वारा कवच, तर्जनी चोर मन्त्रमा दाया नेत्रमें न्याम करके पद्मद्वय चोर तर्जनी चोर करतल पर ध्वनि करनी चाहिये । जहाँ पर पद्ममन्त्र निर्दिष्ट नहीं दृष्या है, वहाँ पर देवता नामके पादि पक्ष द्वारा पद्म-न्यास करना होता है । इनके विषयमें ब्रह्मशासनमें लिखा है, कि सभी देवताओंके नामके पादि पक्षर द्वारा पद्म-न्याम किया जा सकता है ।

इन प्रकार न्यासादि करके देवताका मुद्राग्रहण, पञ्चन चौर पूजातादि करनेका विधान है ।

( तन्त्रसार सामान्य पृष्ठ ४० )

यह जो मातृका प्रकृति न्यामिका विषय लिखा गया वह सभी पूजामें किया जाता है, यह पणमें ही लिखा जा चुका है । मातृका न्याम चोर भूतहृत्ति नहीं करनेसे पूजादि निष्फल होती है ।

“मन्त्राङ्गः मन्त्राङ्ग” वो मूत्राङ्ग प्रत्येकमनुम् ।  
 सर्वविधीः स वाप्यः रथात् दयाद्यैः सिद्धेषां च”  
 ( तन्त्रसार )

यह न्यास मित्र मित्र देवताके विषयमें मित्र मित्र प्रकारका है । विद्वानके मयमें कुल विवरण नहीं लिखा गया, केवल जोड़के न ममाव दिव गये हैं,—

विष्णुविषयमें न्याम—वैशककोत्थोदि, मूर्ति पञ्चर, तत्त्व, भूमिपञ्चर, दगाश, पद्माङ्ग । मित्रविषयमें यो-कछादि, ईशानादि पञ्चमुक्ति, मन्त्र, मूर्ति, गोलक, सुमगादि चोर भूयण ; चयनूर्त्ताविषयमें पद्मन्यास ; यो-निद्याविषयमें यतिन्यादि, नवयान्यायक, वीर, तत्त्व, पद्मदगो, योङ्गो, मन्त्रार, स्थिति, सटि, नाट, वोद्गा, गदिग, पक्ष, मन्त्र, योगिनी, राशि, विष्णु, योङ्गनिद्या, कामरति, सटिस्थिति, प्रकटयोगिनी, चावुध, तारा-विषयमें न्याम, हृत्, पक्ष, लोकपाल है ( तन्त्रसार ) इन सब न्यामोंको प्रयासो तन्त्रारमें विद्वत्त हृदयमें लिखी है । मन्त्राङ्ग मन्त्राङ्ग विद्वत्त उन्हीं हृदयमें देयो ।

न्यामसूत्र ( मं० पु० ) यह सूत्र विद्वय कोटि राज नमामः किंवा प्राय ।



न्यासिह ( मं० त्रि० ) न्यासिन चरति पय्यादित्वात् ठन् ( वा ४।४।१० ) न्यासकारी, धरोश्च रत्ननेवाना, जो किमोको धातो रचि । चिद्यो विस्त्वात् डोप ।

न्यासिन् ( मं० त्रि० ) नि-पस-पिति । १ रथागो । २ मंन्यामी ।

न्युह ( मं० पु० ) नि-उह-उञ्, ह्योदरादित्वात् साधुः । अणमिड । गीतिने उडास चनुडासकृप मोनह चोकार ह् जिमनेमे तोन पुन चौर तेह चर्योकार है । २ मस्यह् । ३ मनोत्र ।

न्युज ( मं० स्त्री० ) न्युञ्जति यधोसुधो भवति नि उञ्ज चच् । १ कर्मभद्रफल, कर्मरख । २ आद्यादि पाठ-मिड । ३ दर्भमय सुकू । ४ कुश । ५ च्चुक, एक दन्तपाय । ६ अथवा, कष्ट । ७ गोगो, घोसारी । ( त्रि० ) न्युञ्जति यध सुधो भवतोति । ८ इज, कुनदा । ९ यधोसुध चोधा । १० रोगभुज, रोगमे जिमको कम्मर टेढो को गद को ।

न्युजलत्र ( मं० पु० ) न्युजः लत्रः । कुज लत्र, टेढो तन्ववार । इमका पर्याय कटीतन है ।

न्युग्राह—न्युह पदमे चारा विभ गान्तर्गत वटा तहमोल-का एक ग्रम । यह तहसोलेके टमने ४ मोल उत्तर पूर्वमें पवस्थित है । यहाँ एक सुन्दर मन्दिर है ।

न्युगोमो - प्रगाप्तमणम गरम्य पूर्व दोपपुञ्जके पन्तर्गत एक द्वप । इसका दूरमा नाम तानापपुया है । यहाँका योगिनटनेनि गिरिश्र १३०० फुट लंबा है । इसका उत्तर-पश्चिम उदोप भाग योगिनटानो चौर दक्षिण-पूर्व भाग हटिय गममें गट्टे पधिकामें है । यहाँ प्रसिद्ध पपुया-जाति रहती है । यह पल्लिकाको निपो चौर सिपोरोशानिमे बहुत कुछ मिलती जुलती है । इनके प; प्र-उ-चौर मद्राजादि देवनेमे ये पल्लिमेमोय काया-भुज-मे मान्य पवर्त है । यहाँकी फल, मदीके तोर-वामिगय गहरे पीले, न्युव मन्ने चोडे चौर मलिह तथा दुन लपटोपके पधिसामी चरापन निप कुन वोलि चोति है । च-प-र-जातियो पपुयासमय-ग्रमस्य त है ।

इह पदमाग-के निउचरनी पामशामिगय बुहदिद्या इ निदुप, यममोल, मारिचविद्यापारदर्मी, मिरीके पच्छे पच्छे चरनन चौर खिलीने पादि बनानेमे पट्ट है ।

मोगसवि बन्दरवान, कोई-तापु चौर जीयोशानि यहाँको पादिम पधिसामी है ।

न्युगोमोके दक्षिण पूर्व प्रायः तीन मो मोनने मज्ज पचोम विभिन्न मायाए देवनेमे धातो है । इमने सङ्गमे जाना जा सकता है, कि यहाँ बहुत मो पमम्-जातियोका वाम है । यहाँ तक कि कोई कोई जाति हया जो मनुष्यों दो मागो चौर बनने माने जानी है । इसो कारण यहाँमे यजि हगय पनायान पयमो जिन्दगो खो बैठते है । यहाँपचो, मऊको चौर फनादि पधिक परिमाणमें मिलते है उनमेंसे ईख, कुनदा, गरबुन, पाम, खोरा सुपावि, स-यु चौर मारियन प्रथम है ।

न्यु-वायनें प, न्यु निम दहज न्यु दालिडोनिगा, मानिकोता चौर ताना पादि इन दोपुञ्जके पन्तर्गत है ।

न्युगोमो प-प-र-आहित एक उपनिवेश, दक्षिण गोलाकेके प्रगाप्तमणमागमें एक दोपपुञ्ज । इममें बड़े बड़े दीप चौर इमने दक्षिणमें एक छोटा दीप है । यहाँके रहनेवाने इन दो बड़े दीपोमेंके उत्तरम्य दोपको एकिलोमसक चौर दक्षिणको टेलन-पोनाम्न कहते है जो कुकके सुगन्ध द्वारा एक दूरमेंसे प्रयक् किये जाते है । किन्तु उपनिवेश-न्यापनेकारी उत्तमोय दोपको न्युचमटर, दक्षिणोय बड़े दोपको न्युमनटा चौर छोटेको न्युलिगटर कहते है ।

यह दोपपुञ्ज पचा १४ २५ मे ४० १० दक्षिण चौर देशा १६६ २६ मे १० २६ पूर्वमें पवस्थित है । जनसंख्या ८५००० चौर भू-उरिमांय १०४४० वर्गमोल है । यहाँको पानहवा इहकोपको पावतवाने बहुत कुछ चंगोंमें मिलती जुलती है । नाहमें न्युव रंज पड़ती है चौर इमके मिवां पन्त्यान्य पदुपोमें भी जाहां मालूम होता है । यहाँ प्रायः सब समय दुषा करतो है । किन्तु गीत चौर मयमल पदुमें कुछ पधिक होती है ।

जिस समय यूरोपोयगव इन देशमें पाये है, उस समय यहके पधिसामी तारी ( Caladium esculentum ) चौर कुमैरा नामक मोठे पान् ( Kumera or Sweet potato convolvulus potato ) को मिली करती है । पचीमें मदिदा ( Areca Sapida ) ही सर्वांकट है । यहाँके पधिसामी न्यान नहाने भरे हुए है जिसमें

माना प्रचारक बड़े बड़े प्रसन्न देखनेमें पाते हैं। यहांकी प्रधान उपज त्वार गेहूं, चावल, मलमम चादि है, किन्तु चावल की खेती अधिकतर दोनो से थोर यह दूसरे देशोंमें भेजा जाता है। पहले पहल यहांके प्रायः पशुओंमें केवल कुत्त को देखे जाते थे, लेकिन वर्तमान समयमें यूरोपवासीगण गाय, घोड़े, गेहूँ, गूकर प्रभृति पशुपालित पशु भाये हैं।

खनिज द्रव्य यहां उतने अधिक नहीं मिलते। १८५२ ई.को करमण्डलमें सोनेको खानका पता लगाया। तब, जोड़े थोर कानेको खानों को कहीं कहीं देखनेमें पाते हैं।

मलय भाषा ( Malay language ) थोर यहांके अधिवासियोंको भाषा एक चादि भाषामें ही उत्पन्न हुई है, किन्तु इन लोगोंको भाषा दूसरी दूसरी भाषाओंमें मिली हुई है। जब कमान कुकनी पहले पाल ( यू.कोने ) का आविष्कार किया था उस समय यहांके लोग यहाँके उत्पादित मसालोंमें जोषण-निर्वाह करते थोर पहाड़के ऊपर छोटे छोटे घर बना कर रहते थे।

यहांके अधिवासी यूरोपके उपनिवेशस्थानकारों थोर स्थानीय चादिम निवासी हैं। स्थानीय अधिवासी इन लोगोंको भिरो कहते हैं जो दोषकाय, बलित थोर सुन्दर गठनविशिष्ट होते हैं। शासन विभागकी यहां एक कमेटो कायम है। उसमें एक गवर्नर रहते हैं जिसको देशमें तनख्वाह मिलने है। देशकी देखभाल व्यवस्थापिका समा द्वारा होती है जिसमें पैतानिस सेन्सर थोर प्रसो प्रतिनिधि रहते हैं। संस्वर पंचके प्रांतमें वर्षमें थोर प्रतिनिधि प्रत्येक तोमरे वर्षमें बदले जाते हैं। इसको देख देख गवर्नरके ही अधीन रहते हैं। यहां स्थुलिसिपलेटोको भी व्यवस्था है। शिक्षाविभागका भी सुप्रबन्ध है। यहां पब्लिक प्राइमरी मिडिल थोर हाई स्कूल हैं तथा चार प्रिंसिपल स्कूलोंमें कालेज भी हैं जहाँ लड़के सब प्रकारकी शिक्षा पाते हैं।

किन्तु विद्योका कहना है, कि सोचबहो मनोप्रेमों स्थानवासियोंमें यू.कोने का पता लगाया। किन्तु इस विषयका कोई समीपजनक प्रमाण नहीं मिलता। सोमनाथ नामिक अधिल भासमानने १५५२ ई.में यहां

पा कर पहले पहल यू.कोने का नाम जननाधारपमें फैलाया।

न्यूटन भास्वक -- एक विख्यात दार्शनिक थोर ज्योतिःशास्त्रज्ञ पण्डित। इन्होंने न्यूटन विज्ञान प्रयोगोंके कोनटरबर्ग मित्रोंके पत्राभूक्त समय नामक एक छोटेसे गांवेने १६४२ ई.को २५वें दिसम्बरको न्यूटन का जन्म हुआ था। इनके मातापिता दोनों ही प्राचीन सम्भ्राणतवंशमें उत्पन्न हुए थे। ये न्यूटनवंश पहले विज्ञान प्रयोगोंके इतरि जगत्में नाम करते थे। बाद समयमें ही तात्पर्यकारी पा कर वे लोग यहाँ पा कर रहने लगे। इनके पिताने रटने गुरुवासी जगत् पञ्जाबकी काश्मिके साथ विवाह किया था। न्यूटन जिन समय माताके गर्भमें थे, उसी समय इनके पिता ही मृत्यु हो गये थे। इस प्रकार ग्रीकनागरमें जन्म हो उनकी माताने पचमसमें ही पुत्र प्रसव किया। ये पचम मातापिताको एक ही मलान थे। न्यूटनको परिवारके भरण-पोषणोपयोगी पाय नररनेके कारण उनकी विधवा माता नार्थगेथमके धर्मोपज्ञक (Rector) के साथ पुनः विवाह करनेकी राय हुई। इस समय तीन वर्षके बालक न्यूटनने मातामहीके तत्वावधानमें रह कर विद्या-विद्या प्रारम्भ की। बारह वर्षको उम्रमें वे पन्थामके व्याकरण-विद्यालयमें भर्ती-होने पर भी विद्याभ्यासको कोई विरोध उत्पन्न दिवानेमें समर्थ न हुए। इस समय उन्होंने यन्त्र-विद्या (Mechanic) पढ़नेको इच्छा प्रकट की थोर यद्यपि क्रौमिके साथ वायुभोग-यन्त्र (Windmill), जलघड़ी (Water clock) तथा सूर्ययन्त्र (Sun dial) बनाये। इन सब विषयोंमें विशेष पारदर्शिता दिखाने पर भी विद्याचर्चामें वे दूसरे दूसरे लड़कोंकी अपेक्षा हीन थे। जोषनी-लेखक हुटारने लिखा है कि इनके उपरिष्ठ एवं बालकने एक दिन उनकी अपेक्षा कर इनके घटमें एक आत मारी। इस पर इनके पिता प्रतिष्ठा को कि, "जब तक उसकी विद्याका अधिमान प्रकट कर दूंगा, तब तक किसीमें बातचीत न करूंगा।" उसको इस पारम्परिक दृष्टाने विद्वान्-जगत्का सर्वोच्च पामन दिनाया था। १६५१ ई.में इनके हिनोय पिता रिमरेण्ड वारनावाच गिम्बकी मृत्यु हो पर इनके माताके साथ

पुनः उनयर्थे मोट चाना पडा । हम ममय पाप मानाके पाट्टेमे विधा-गिधा धा परिचाग कर सिधोकरा तथा लयानादिने उल्हवनाघनमें यद्यत्तु दृष्ये पोर इन सब कार्याके लिनित्तु कर सोने पर मो पाप उल्हो कानेकी माध दृष्ये । जब इटवारमें ग्युटन पाठियोंके पाठ पन्नामके मध्य द्रव्योको विकस्य करानेके निवे ज्ञाते थे, तब वे किमी स्थान पर कनकारस्थाना देखे उडर जाते तथा समके चक्रादिको गति विगोप रूपमे देखते थे । नगरमें प्रयोग कर वे अपने मित्र एक पोत्रध-विकेताके घर पर जा उनके पुस्तकालयको पुस्तके पढ़ते थे । हम तरह पुराने पाठ्याठने थे ऐसा पानन्द-पुस्तक करते थे कि उनके मथो अब तक द्रव्यादि विकस्य कर उल्हो मथी पुकारते, तब तब वे पाठने उठते नहीं थे । उनको विद्याभ्यासमें एकात्म पनुरक्ति देख कर उनके मामा 'शिरैण्ड डवलिज सम हाफ'ने उल्हो फिर विद्यालयमें वीजनका विचार किया । १० वर्षको अवस्थामें ये केमिस्टके प्रसागत विनिनि कानेके पाठ्याभ्यासके निवे मीक दिवे गये ।

यहां उन्होंने १६६० ई०में प्रथम प्रयोगिका (Matriculation) परीक्षा पास की । १६६१ ई०में पापने पद्येन-निक 'सब-सोजर' (Sub-sizar) को विद्यालयमें विद्या-गिधा देनेको अनुमति पाई तथा १६६४ ई०में पाप गिनित योकोभुक दृष्ये पोर १६६५ ई०में पापको 'यो-ए-ए'की उपाधि मिली ।

उन कई वर्षोंमें इनको कोई विगोप उपति नहीं देखो गई । जब इनको अवस्था २४ वर्षकी हुई तब उन्होंने प्रान्तीय पराहाठा दिवापर अोजगवितके प्रकाशित टिाट उपाया (Binominal theorem) विज्ञान गवितके परमासुकी मति अनुधावनके हेतु नियमाव लो (Principles of Fluxion) लेयर को पोर गतिके नियम (Law of force) व्यापकालमें पद्यपद्ये वहां तक कि पट्टेकी भी गुणगिनित्तु पाकपद्ये है यह उनके पद्यःकरवमें मद्यमां जाग पडा । उन्होंने कई एक पर्यामिं लज विधय प्रतिपादन करनेमें यद्ये किया था पोर कतिपय पदरकी दृष्टिनेको पोर पाकट्टे देखे ममान था कि लिन मकर मलय पद्यपद्ये पद्यःकर वक्येपद्यो

ई, उनो प्रकार दृष्टिने मो 'पाकट्टेगतिके पद्यःकर है । १६६४-६५ ई०में ग्युटन विनिनि कानेका 'पारि-म-मदप्य ( Law-fellowship ) कानेके निव 'गार्ड्ट-सम-डेन' माइडके प्रतिदृष्टो दृष्ये गे, किन्तु दोनोके मध्यके ज्ञानवान् सोने पर मो उनके पद्यःकर 'डा० प्यारो' मि० उमडेनको पुरातन तथा लयोसड विद्येवनाके मदप्य रूपमें लाये । १६६० ई०में वे लुनिगरमेंदप्ये पोर 'पम-ए-ओ'की उपाधि पां कर दूमरे वर्षमें निनिगर मदप्य निवृत्त दृष्ये । १६६८ ई०में उन्होंने लुहांको (Lucasian) के पद्यःपाठ की प्यारो माइडका पद्ये पद्यःकर किया ।

गणितशास्त्रमें प्रयोग कर उन्होंने पहले 'देशार्थ' (Descartes) निनिनि संवामिति पद्यःपद्येका पोर उक्त पद्यःपाठके प्रशस्ति संवामितिके माय वीप्रदेवित-की म'गोचरता का पद्यःपद्ये किया । इसके बाद उन्होंने 'वानिव'रवित Arithmetica Infinitorum नामक गणितपद्ये पद्या । इनके भी पद्येमे उल्हो विगोप लभ दृष्ये था । यह पर्यामो बना करते समय उनके उद्येपद्येमें थे दिवदृष्टि-पाप गवितके मद्यमांके उपाय उद्घावन करनेके सूचने दृष्ये ।

ग्युटनने परमासुको प्रपद्येनगोलगति गद्यःपद्येका पद्यःपद्ये उपाय १६६५ ई०में कद्यःपद्ये किया पोर उक्त प्रतिपाट-नाय' दूसरे वर्ष "Analysis per Equationes Numerorum Terminorum Infinitas" नामका एक छोटा निव्ये भी लिखा । हममें किमी तरहको भूलने की मकतो है, हम मयके कारण उन्होंने पहली उक्त लिपि किमीकी भी म दिवार पोर पद्यःपद्ये पद्ये पद्ये दिव-वस्यु डा० प्यारो माइडको दिया । प्यारो माइडने इनकी अनुमति ले कर उक्त पद्यःनिवित पद्यःपद्ये मि० कलिनकी दिवाया । उन्होंने इधे पद्यःपद्ये पुस्तकमें निव्ये निव्ये पोर १०१२ ई०में इनका प्रथम सुद्रादृष्ये दृष्ये ।

१६६५-६६ ई०में जब इन्होंने लुहां में महाभारो लीने की, तब पाप केमिस्ट छोड़ कर ललयःपद्ये पा लये थे । यहाँ पा कर पापने पहले मद्ये मद्यःपद्येकी 'बोमानिक-गति पोर दृष्टिनेको उगलिये मद्यःपद्येका सू-दृष्टि (Centre of Earth)को पोर बोमानिक पद्यःपद्ये की दिव्या पद्यःपद्ये को पा पोर मद्ये भी अनुमत्ये किया था

कि यही गति क्रमानुसारं वर्धित हो कर चन्द्र धोर उन्-  
के परिधिपरिभ्रम तारापथको चाकर्षण करती है । इन  
समस्त तारागणके परिवर्तिष्ठ चन्द्रने भी परस्परकी वृत्त-  
स्थित केन्द्रापसारिको पालट गति ( Centrifugal-  
force )-से पृथिवीकी दूरीके समुदाय इन चीणगणिकी  
पथनी धोर चाकर्षण कर देनी गतिकी घोषने स्थिर  
कर रहा है । इन हेतु यह स्पष्ट समुभूत होता है, कि  
ये समस्त यह धोर तारागण पथनी पथनी गतिके प्रभाव-  
ने ( पृथिवीके ) कक्षावृत्त रहते पर भ्रमण कर तिर  
भावसे ठहरे हुए हैं । चन्द्र जिन प्रकार पथनी  
कक्षा ( Orbit ) पर घूर्णमान उल्लासपरिकी ( Con-  
trifugal ) गतिके पथनी ही वृत्त-पथ पर स्थिर हैं, उन्ही  
प्रकार धोरतारागणके केन्द्र ( Centre ) पर्यन्त घूर्णक चारों  
धोर चक्रप्रवृत्ति पर्यगणका पथने पथने वृत्त-पथ पर  
चपनी पथनी गतिके प्रभावसे समान न्यूटनके न्याय  
विज्ञानीय मन्तिवर्तने ऐसी धारण उत्पन्न हुई थी । इनके  
पहले मैसाजिक बुल्लो ( Bouillaud )ने सूर्यके पासत  
इन चाकर्षणगणिका प्रतिपादन किया था ; किन्तु ये  
इसकी सरल भावनें समझनेमें समर्थ न हुए थे । महा-  
मति न्यूटनने स्वयं कहा था कि परगण पथनी पथनी  
गतिके प्रभावसे कल्पित न हो स्थिर भावसे ठहरे हुए  
हैं । उन्होंने देखा था कि केवल-प्रतिपादित परगणके  
सम्यक्त्वकी दूरता ( Mean distance ) धोर भागण-  
काल ( Periodic time ) दोनों ही समभावमें वर्त्तमान  
हैं धोर यह परस्परका स्वाभाविक-चाकर्षण पालट  
वस्तुकी दूरीका समुदायी है, उन्ही दूरीके व्यस्तवर्गफल  
( Inverse square )से इन गतिकी कमी वा धेगी  
देवी जाती है । बुल्लो महर्षके इन मतके प्रकाश करने  
पर न्यूटनने समझा पथ समर्थन करते हुए कहा, कि  
यह गति सभी पदार्थोंमें स्वभाविक भावमें वर्त्तमान है ।  
न्यूटनने यह भी कहा, कि किमी वस्तुकी पालटि-गति  
किन्तु ही प्रबल हवीं न ही जिनके पथनी उल्लास-  
पसारिकी गतिकी सम्यक्त्वमें स्थिर रहा है, उन्ही गति-  
की प्रबलता निर्दिष्ट समवर्तके मध्य किन्तु भुजवृत्तकी  
पर्यन्तस्था ( Versed sine of the arc )का समानुपात  
हीमें सबजमें समुदाय दिया जा सकता है । पतः

मय यदि पथ ही, तो वृत्तांगके वर्गफलकी निर्दिष्ट  
प्रबलें सम्यक्त्व ( Mean distance )की दूरतासे भाग  
देनेसे पथवा रेखादिगट गतिवर्गके वर्गफलकी उन्ही  
दूरतासे भाग करनेसे उक्त गतिकी समुदाय स्थिर किया  
जाता है ।

इन प्रकार परगणकी सूर्यको धोर पात्राटि स्थिर कर,  
ये पृथिवीके माथ उल्लासका चाकर्षण निराकरण करनेमें  
समर्थ हुए थे । १६६६ ई०में महामारीके प्रकोपके  
इन्द्रदेवने पथने जाने पर ये फिर कैम्ब्रिजनगर पाये ।  
यहां था कर ये ट्वाचिसने इन सब विषयोंके तथ्यकी  
सोच करने लगे । इन प्रकार उनको मानविक कल्पना  
१६ वष तक इनमें पत्तानिष्ठ रहने । बाद १६८२ ई०-  
में उन्होंने राशन सोमायटोके पथिये शनमें उपस्थित हो  
विक्रम महर्ष-पगुहित याम्योत्तररेखांग ( Arc of a  
meridian )का परिमाण जान कर पृथिवीके व्यासार्ध-  
का परिमाण ठीक किया था । इन समय इनका पूर्व-  
सहित चाकर्षण-गति-प्रकरण जिनकी कल्पना इनके  
हृदयमें बहुत दिनोंसे पा रही थी, कायः परिष्कृतित  
होने लगा । इनसे ये इतने उत्सुकित धोर व्यायवीय  
दुर्बलतामें ऐसे पथन हुए कि उक्त गणना समाधान  
कर ये उठ न सके थे इनके दूसरे वर्ष उन्होंने केन्द्रा-  
भिमुखिकी ( Centripetal ) गतिकी सहायतासे पदाटं  
सम्यक्त्वकी गति निराकरण कर एक प्रबन्ध लिखा । १६८६  
ई०में यह प्रबन्ध डा० भिन्नेप्ट द्वारा रायन सोमायटोमें  
दिया गया धोर पनेक वादानुवादके बाद विरोधित हो  
१६८० ई०में वह इनके बनाए हुए "प्रिन्सिपिया" नामक  
पथनें पहले पहल प्रकाशित हुआ । इनके बाद उन्होंने  
धोरतारागणके प्राथिक परस्परमासुके परस्परके प्रति पालटि  
धोर किस विधिमें वस्तुके चाकर्षणसे वे सब उद्यम  
मंजून भावसे स्थित हैं, ये सब विषय निर्देश किये ।  
यही माशाकर्षण गति है जिसकी बहुत दिन पहले  
हमारे देशके पण्डितगण स्थिर कर गये हैं ।

सप्तमः अध्यायः ३

परगणकी परिचालना देपनेके विषये न्यूटनने १६०१ ।  
ई०में पथनें इत्यथे एक दूरवीक्ष्ययन्त्र बनाया । यह  
यन्त्र पाथ भी रावक-सोमायटोमें वर्त्तमान है । १६०९

ईंमि ये नरु मभरि नंदरु निरुचित रुप चीर १५८८ ईंमि गिलातिसागरं प्रतिनिधि हो पानिं वामं एरु मरु-ममका पानन परुग नि ग। इमरं कुड टिन वाट ये धारिं क ६०० पोण्ड वोलन पर टकगानके प्रधानः व्यस-ले पट पर नियुक्त रुप। १६८८ ईंमि ये पेरिस (Paris) नगरको 'रायन एंडेडो-पाक, मायेरुस' मभारं कारिन-पमोमियेट चीर १००१ ईंमि रायन-मोमायटोके वंमि-दिण्ट भी कर गन्तु, पर्यंत नरु पट पर समानके मय परिधित रहे। १७०५ ईंमि इन्वेण्टरी मरारानो एनी (Queen Anne) नि इन्वेन्सिओ को उपाधि हो। १७२२ ईंमि इन्वेनि म्य चीर यातरोमि भाकाला हो कर इन्वेन्सिओमभारं १७२७ ईंको ८२ वर्षको उमरं मानयलोना मरुपर की। इन्वेनि कुल मारु पुस्तकोको रचना को जिनमेंमि प्रिन्सिपिओ, अपर्टिक्म, एनालिसिस पर इकोपेवमिस न्यूमरो टरनिनोरम इन्क्विरीटम, एमथेट पाकः पनकशन, एनालिसिस, वाइ इन्क्विट मोरोज चीर वाइमरुके संस्कारक-ये मय परु प्रधान है। इन्वेनि ओ मय कोटो कोटो प्रवन्मा-यको-रायन-मोमायटोमें-परुण की थी, ये मय उरु मोमायटोको कार्य-विवरणो (Transactions) कि उममे १११ भागमें मयिविष्ट है।

न्यून (मं० वि०) न्यूमयति नि-ऊन परिप्राये पर, १ मंडा, नीच, सुदः २ ऊन, कम, छोडा।

न्यूमतरां (मं० वि०) प्रयनित परिमापका क्रास, चलते रुप यनममे कम।

न्यूमता (मं० स्त्री०) न्यूमय भावः तन, टाप, १ सुदता, शीतता। २ परुपता, कमो।

न्यूमवदावदाय (मं० पुं०) न्यूमवदायतः ऊनवदायदा-युनी भाषी परत। ऊनवदायदायः वाक्य।

न्यूमवाट्ट (मं० स्त्री०) १ बीगाड, को परु किमीका बीन हो। २ परु, न्यूमवाट्ट।

न्यूमैरिप्राय (मं० वि०) बी एक न एक इन्दिपचा रीग हो।

न्यूमवदरुकेरु-पेटेटेनके परिजन एक होय। पर घटकापटक मरुमागमरं पना० ४६ ४०-मि-५१ १० १० चीर दिमा० ५२ २१-मि-१८ ११-पदिममें मयव्यिन

है। १००० ईंके परसे-नारथे, देगवामिओने इम देगका मयम पाविष्कार किया। वाट-१५८० ईंमे जामकोबट (John Cabot) नि इसका फिर एसा मनाया। इस स्थानमें उरुनिवेश स्थापनके निप सर जार्ज कनभट (Sir George Calvert) करे नार पेटा कर पलनकार्य रुप। परतमे १६२१ ईंमे इम दोयके दक्षिण पूर्वागमें एक उपनिवेश स्थापित रुप। धीरे धीरे दूसरे दूसरे उपनिवेश भी-स्थापित रुप है।

इम दोयका उत्तरकन ६००० वर्गमील है। यहाके अधियामिओनेमि अधिकांग मरुपनोको है चीर बहुत थोड़े मनुपय उिओयामे करत है। समो मूठधर्माव-मयो है—कुड प्रोटेटेण्ट (Protestant) चीर कुड रोमन कैथनिक (Roman Catholic) है। पट लाण्टिकके मय परुदियत चीर अधिकांग मय तफ वर्कमे ठके रहमेके कारण यहाको पोपमनुप परुपता मनी-रम होती है। इमे समय टिन चीर रात पलनत सुव-ऊनक है। मप्रति यहाके देगवामिओने क्रियकार्दके नियेव ध्यान दिया है। मीश, उरद, को, पान, पादि यहा प्रचुर परिमाणमें होती है। इवानोय मयमें एरु नाना देओने नाना प्रकारके मयोके योजाकी धाम-टना करतो है। किन्तु मरुको परुकृता हो दो-यामिओने प्रधान उपनोविका है। तेल चीर परुमके लिए मरु (Seal) चीर तेल प्रचुर दरमेके लिए कुड (Cod) मरुको भी परुकी जाती है। बहुत एरुक ओग इम व्यवसाय द्वारा आरनयात्रा निर्वाह करत है। यहाके प्रचुर नामन (Salmon) मरुको परुमेरिका पादि स्थानोंमें मीओ जाती है।

यहाको राजधानी सेंटजान्स- (St. Johns) है जो द-पके दक्षिण-पूर्वागमें पना० ४० ११-४० चीर देमा० ५२ ४३-५०के मय परुम्यित है। यहा वाली चीर मे सको कमे है चीर एक माविष्कार (Custom-house) भी मनाया गटा है।

उरु दोयको दक्षिण पूर्वाकी तीरभूमि बहुत बड़ी है। किमे मनुककी वेनी विरुटन तीरभूमि दुपमेमें मनी-पानी। उरु विमान तीरभूमि (Great Bank) ६० मील चौड़ी है।



द्योम ही कर खे भावे विम्व युद्धजहाज भिजा । श्रीविन-  
के राजाने उन्हें दिय रहनेको सन्ताह दो, किन्तु म्येभा  
थेमे यामुह्य नहीं थे । लीं ही विपचके जराभ मामने  
द्योमे म्गी, लीं ही ल्कोने एक एक कर उनके ली  
जहाजो पर इस प्रकार पाकमय किया कि ये बचाय-  
का कोई उपाय न देय सन्धिसुचक पताका सठानेकी

बाध्य हुए। खेभाने उनके साथ देना सटार धरदार  
किया था, कि सामाी-राजने उन्हें कानिस्ट द्दिखनेका  
निमन्त्रण किया, किन्तु यामुह्य ही शानिके धारा  
सन्धोने निमन्त्रण स्वीकार न किया और अपने  
जहाज पर मान समयाध-साट कर स्वदेशकी धम  
दिये ।

**प**

प—पकार, पञ्चमवर्गका प्रथम वर्ण, व्यञ्जनवर्णका  
दशमवर्ग पक्षर । इसका उच्चारण श्रोत्रमे होता है,  
इसलिये गिद्यमे इसे श्रोत्रवर्ण कहा गया है । इसके  
उच्चारणमे दोनीं श्रोत्र मिलते हैं, इसलिये यह स्पर्श-  
वर्ण है । इसके उच्चारणमे गिद्यके पञ्चमार विचार,  
ग्राम, घोष और अल्पमात्र नामक मयल सगते हैं । प के  
पेदि रहनेमे विमर्गके स्थानमे उदात्तामीय वर्ण होता  
है । सर्वाभिधानतन्त्रमे इसके वाचक मन्त्र ये हैं,—  
सुरविद्यता, तोष्टा, स्तोहित, पक्षम, रमा, युद्धकक्षां,  
निधि, मेघ, काशरात्रि, सुधारिष्ठा, तपम पासन, -पाता,  
द्वेयदेय, निरञ्जन, सावित्री, पातिनी, पान, चोरसन्ध,  
धनुर्धर, दक्षपार्श्व, मेनाजो, मरोचि, पयम, गनि,  
छट्टीय, लविनी, हुता, चम्परेणा, मुन्ना, दितोष्ठा  
इन्द्राक्षी, कोलाक्षी, मम और पाकक ।

इसका उच्चारणप्रकार—  
"पञ्चरेकरशाश्व मूर्ध्मे दसतस्तथा ।  
सुनसंगतगानोद्वाग्नुद्वरवानर्कभान ॥" (प्रकल्पशा)  
इसका ध्यान—  
"विचित्रवर्णो देवी द्विभुजा बहुजेष्टगाम् ।  
रथवन्द-लितार्द्धी पदमासाभिभूतिताम् ॥  
मणिललादिभेयु-रामभित्तिपशाम् ।  
धनुर्धर्मपदां, निलो निपातमन्दमयी पराम् ॥  
एवं पशुषा पशुस्यु तन्मन्त्रं दसया करीत् ॥"  
साष्टकांगणामे इम वर्णका दक्षिण पात्रमे ख्याम  
किया जाता है । काव्यादिमे इसवर्णका प्रथम प्रयोग  
करनेमे सुव क्रोम है ।

इस वर्णका व्यञ्ज्य—  
यह 'प' पक्षर पक्ष्य और अक्षरवर्ण-वट है । इसको  
प्रमा मारुकाभीम जम्मा-मो है । यह वर्ण पञ्चदशमव  
और परमकुच्छभो, पञ्चमाक्षमय, सर्वेदात्रिभ्रिभमन्विन,  
द्विभुषावित्त, पाकादितावसंभुत एवं महामोहवट  
है । (वर्णपेङ्गला ४)  
इस वर्णमे मन्त्र, शब्दा और भावधनी अत्रलान  
करती है ।

'सुतमन्त्रावर्णमेतद्गुणः' परमो' ( इत्यादि ० टीका )  
प ( न० पु० ) पातप्रति वेगिग सुतादीम पन-कर्षो रि उ ।  
१ पयम, इया । पतति उच्चात् उ । २ पर्व, पय, पला ।  
पौपमे रति पा-उ । ३ पान । ४ पातम । ५ पला ।  
६ पाता, तद जो पासन करता रो । पाति रसति पा-  
क, रपी मन्त्रप्रतिमे पाता यह वर्ण दुपा । यह किमी  
मन्त्रे वाट प्रमुह दुपा करता है । यथा—मोय, नृग  
इत्यादि ।  
"राजगण्डकीन्दिर रमापदी वृ-रतमाह ।"  
( मू ३१११ )

सुगंधीध ध्याकरणमें यह चतुश्चक्रमें लिखा गया गया है। पमुचादि। सुचादियोंका मन्त्र है पं।

“नः स्वादिः पो मुचादिर्मःसमादिर्मिर्चायुग्मैः।”

(हविस्त्वहम)

पंख (हिं० पु०) पख, पर, हैना, वह चवयव जिनमें चिड़िया, फतिले खादि स्वामिं छड़ते हैं।

पंखड़ी (हिं० स्त्री०) पखड़ी देखो।

पंखा (हिं० पु०) वह पटाई जिसे ज्जिना कर हवाका भोका किमी धोर से जाने हैं, विजना, घेना। यह भिच भिच यस्तुषीका तथा भिच भिच धाकार धोर प्वालतिका बनाया जाता है। इससे हिमानीमें वायु चल कर शरीरमें लगती है। छोटी बड़े जितने प्रकारके पटाईमें वायुमें गति उत्पन्न की जाती है, इसके लिये घेचल 'पंखा' शब्दमें काम चल सकता है। पंखके धाकारका होनेके कारण चयवा पहलें पंखमें घमाये स्नानके कारण इसका नाम पंखा पड़ा है।

पंखाकुली (हिं० पु०) यह कुली जो पंखा धींचनेके लिये नियत दिया गया हो।

पंखाज (हिं० पु०) पखाउज देखो।

पंखामोम (हिं० पु०) पंखके लपरका मिष्ठाफ।

पंखी (हिं० पु०) १ पखी, चिड़िया। २ पखड़ी। १ वह पतली पतली चक्रको पत्तियां जो साखूके सिरे धर होती हैं। ४ मूलतो यह वस्तु जो कयूतरके पंखमें बंधी होती है धोर जिसे दरकीके छोटोंमें चूँटका देते हैं। २ पंखी, पतिंगा। ६ एक प्रकारका जिनो कपड़ा जो भिड़के बालमें पहनाईमें बुना जाता है। (स्त्री०) ५ छोटा पंखा।

पंखड़ा (हिं० पु०) मनुष्यके शरीरमें कंधेके पासका वह भाग जहां हाथ लुड़ा रहता है, कंधे धोर बाँहका जोड़, पयोरा।

पंखुरा (हिं० पु०) पंखड़ा देखो।

पंखेड़ (हिं० पु०) पंखेड़ देखो।

पंग (हिं० वि०) १ पङ्, लंगड़ा। २ स्तम्भ, विकाम। (पु०) ३ सामासको धोर गिनपट वस्त्र खादिमें होनेका एक पङ्। इसकी लकड़ी बहुत मजबूत होती

है धोर सक्नोंमें लगती है। इसका लोचना भी बहुत चच्छा होता है। लकड़ीमें एक प्रकारका रंग भी प्रसृत करते हैं। ४ एक प्रकारका नमक जो नियरपुनमें पाता है।

पंगत (हिं० स्त्री०) १ पंक्ति, पंती। २ भोजनके समय भोजन करनेवालीकी पंक्ति। ३ सभा, समाज। ४ सुनाइके करघेका एक चीजारा जो दो परकडोंमें बनाया जाता है। इस चीजाराको वे कंधेको तरफ स्थान स्थान पर गाड़ देते हैं। इनके लपरी छेटी पर तानिके किनारेके चुन इसलिये फंसा टिपे जाते हैं जिनमें ताना फौला रहें। ५ भोज।

पंगला (हिं० वि०) पङ्, लंगड़ा।

पंगा (हिं० वि०) १ पङ्, लंगड़ा। २ स्तम्भ, विकाम।

पंगाघत (हिं० पु०) पंगघताना, गीठघारे।

पंगाम (हिं० पु०) एक प्रकारको मछली।

पंगो (हिं० स्त्री०) एक प्रकारका कीड़ा जो धानके खेतमें लगता है।

पंगो (हिं० स्त्री०) मटो जिसे मटो चपने जिगारि वरमान घेत जाने पर लागती है।

पंच (हिं० पु०) १ पाँच को संख्या वा पङ्। २ पाँच या अधिक मनुष्योंका समुदाय, समाज, सर्वसंधाय, जनता, लोक। ३ पाँच वा अधिक मनुष्योंका समाज जो किमी भगड़े या माममेंको निश्चयमें लिये एकत्र हो, न्याय करनेवाली सभा। ४ दनाम। ५ वह जो फोजदारीके दोरेके मुकदामेमें होरा जजकी पटापतके मुकदामेमें जजकी सहायताके लिये नियत हो।

पंचकुर (हिं० स्त्री०) एक प्रकारको बटाई जिसेमें खेतको उपजके पाँच भागमेंमें एक भाग जमींदारको दिया जाता है।

पंचकीम (हिं० पु०) पाँच कीमकी लम्बाई धोर चौड़ाईके बीचमें घनी चूरे कागको पवित्र भूमि, बागी।

पंचकीमी (हिं० स्त्री०) काशीकी परिकमा।

पंचतीनिया (हिं० पु०) एक प्रकारका भोगा मखीन बपड़ा।

पंचमाघ (हिं० पु०) चटरोनाय द्वारकानाथ, जगदाय, रंगनाथ धोर श्रीनाथ।



पंचनामा ( पा० पु० ) एक काव्य नाम एक पंच श्लोक-  
 नि रूपमा लिख्य या पंचनामा लिखा श्री ।  
 पंचनामा ( हि० पु० ) पंचोक्तो नामका घोषा, पंचपत्रको ।  
 पंचदीपिका ( हि० पु० ) मुद्रणमार्गिक पंचोक्तो पौराणिकी वृत्ता  
 चरमनामा ।  
 पंचमार्गो ( हि० स्त्री० ) श्लोकः ।  
 पंचमेल ( हि० वि० ) १ जिनमें पांच प्रकारकी चीजें  
 मिली हैं । २ साधारण । ३ जिनमें सब प्रकारकी  
 चीजें मिली हों, मिना झूठा टैर ।  
 पंचरंगा ( हि० वि० ) १ पांच रंगका । २ तरण तरङ्ग  
 रंगीका रंग विरंगका ।  
 पंचमहा ( हि० वि० ) पांच महोका ।  
 पंचशो ( हि० स्त्री० ) मन्त्रेण पञ्चमन्त्रकी पांच श्लोकी  
 माना ।  
 पंचशरो ( हि० स्त्री० ) पंचशरी देवी ।  
 पंचशशांगी ( का० पु० ) १ पांच शशांगी नामका पवि-  
 रति । २ एक पदयो को मुगलशासनायमें बड़े बड़े  
 लोगोंको मिलती थी ।  
 पंचशर्ष ( हि० वि० ) १ मन्त्र पौर पांच, पांच कम मी ।  
 ( पु० ) २ मन्त्रेण पांच पवित्रको मन्थया या चद्रु जो  
 हम प्रकार लिखा जाता है—८१ ।  
 पंचाक्षर ( हि० पु० ) अक्षरपात्र देखो ।  
 पंचायत ( हि० स्त्री० ) १ जिनमें विवाह, भगद्वे या पौर  
 किमी मामलें पर विचार करनेके लिये पधिकारियों वा  
 जुद्धे एव लोगोंका समाज । २ एक म.प. बहूतसे लोगोंकी  
 एकवर्द्ध । ३ बहूतसे लोगोंका एकत्र हो कर जिनो  
 मामलें या भगद्वे पर विचार, पंचोका माह-विवाह ।  
 पंचायती ( हि० वि० ) १ पंचायतका स्थान; दुपा, पद्मा-  
 यतका । २ पंचायत मन्त्रकी । ३ चद्रुतमें लोगोंका  
 मिला जुला, मारिका, जो कई लोगोंका हो । ४ सब-  
 साधारणका, सब पक्षीका ।  
 पंचानिम ( हि० वि० ) पंचानिम देवो ।  
 पंचो ( हि० पु० ) मुझो टण्डके जिनमें टण्डमें मुझो-  
 की मार कर दूरे निकले वा एक टण्ड । २ जिन मुझोकी  
 मर्दें सामने रहनाम कर टण्डमें पाठमें मारि है ।  
 पंचोक्तो ( हि० स्त्री० ) १ पंचम भाग, मन्त्रपदेम, बडाई

पौर शशांगी जिनमेंशाना एक घोषा । २ पंच पक्षी पौर  
 टण्डमें एक प्रकारका मुगलियन निम निहनता है । ३  
 मन्त्रका व्यवहार युरोपके देवोंमें बहुत होता है । ४  
 जिनो पालके भोटोंमें की जाती है । ५ पंच दी ही पुरके  
 फामने पर लगाए जाते हैं । ६ पंचो पंच बार मलाटे  
 जाते हैं उनमें दो बार ल.प. मन्त्रों पर जसुन काटो  
 जाती है । जब दूसरी कम्पन कर जाती है, तब पंचो  
 घोट कर फेंक दिये जाते हैं । ७ टण्डमें मूष जाने पर  
 सबे इहें बड़े मूर्ति बचने पौर विकीके लिये भिन्न देते  
 हैं । टण्डमें भवके दारों में निकाला जाता है । ८  
 मर मन्त्रकी लक्ष्य [२में १५ मर तक में निकलता  
 है । युरोपमें हम मन्त्रका व्यवहार मुगल्य इराकको भाति  
 होता है । हमें पंचपा. पौर पंचपत्रको भी कहते हैं ।  
 ( पु० ) २ मन्त्र पचासि जो पंचपरमेश्वरोंमें पनी मानो  
 हो । प्राचीन कालमें किमी मन्त्र या धाममें व्यवसा  
 रगने पर वोट मोटे भगद्वेको निश्टागिके लिये पांच  
 प्रतिष्ठित कुलके लोग जुन लिये जाते थे जो पंचक  
 माने थे ।  
 पंडा ( हि० पु० ) १ पानीको तरहका एक संग्राम जो  
 प्राणियोंके शरीरमें या पेट में पानीके पंगुमें घोट करने  
 पर या योंको निकलता है । २ हाने, फकीने, चोचक  
 चाटके मोत भरा दुपा वा ।  
 पंडाना ( हि० पु० ) १ फकीने । २ फकीनेका पानी ।  
 पंडा ( हि० पु० ) बडा, निद्रिया ।  
 पंडकी ( हि० स्त्री० ) पौरके एक देविना नाम ।  
 पंडना ( हि० स्त्री० ) धातुके रत्नमें टिके चाटि द्वारा  
 जोड़ मगना, अलना, भाल लगना ।  
 पंडरना ( हि० स्त्री० ) पन्ना देखो ।  
 पंडरी ( हि० स्त्री० ) पट्टी, टि. ठी ।  
 पंडरनामि ( का० पु० ) ए. २ प. ५ को मुगलशासनशासकी  
 के समयमें मरदाहो । ३ मन्त्रियोंको मिलती थी ।  
 पंचे भोग वा मो पांच प्रकार मिला रख सकने ही पंचपा  
 पांच प्रकार मन्त्रके मायक बनये जाती है ।  
 पंचा ( पा० पु० ) १ पांचका मन्त्र, मोको । २ पांच वा  
 पंचो पांचो संगलियोंका मन्त्र साधारणतः इदंमो-  
 के मन्त्र हापको पौर मन्त्रके पंचके मानके मन्त्र

पैरकी पाँचों छंगनियों। ३ पंजा मझानिकी कसरत या बनपरोला। ४ लुपका दीय जिमे नकी भो कहते हैं। ५ तागका वड़ पसा जिममें पाँव चिह्न या बूटियाँ हो। ६ पुट्टे के ऊपरका मांस। ७ छंगनियों के मझित छेदीनोका संपुट, संपुन। ८ जूतेका चगला भाग जिममें छंगलियाँ रहती हैं। ९ पंजीके चाकारका बना हुआ पोत खुजनामिका एक पोसा। १० बैल या गैसकी पमलीकी सीढ़ी हड्डी जिममें भंगो सेना उठाते हैं। ११ मनुष्यके पंजीके चाकारका कटा हुआ टोन या घोर किमो धागुकी चदरकी टुकड़ा जिमे लंबे चाँव चाटिमें बांध कर झण्डे या निशानकी तरह ताजियेके साथ लो कर चलते हैं।

पंजातोड़ बँडक (हिं० फ़ो०) कुशोका एक पंचे। इसमें मनामोका हाथ मिलाते हुए जोड़के पंजीकी तिरछा होते हैं, फिर चपनी कुहनी चक्के पेटके नीचे रख पकड़े हुए हाथकी चपनी गढ़न या कंधे परमे लो जा कर चगलमें दबते हैं घोर झटके साथ खोल कर जोड़की स्थित गिराते हैं।

पंजाव (फा० पु०) पञ्जाब देखो।  
पंजावन (हिं० पु०) पंजाबीके कारीकी बोली। जय पामिमें कंधो भूमि मिलती है, तब यह बोली काममें लाते हैं।

पंजाबी (फा० वि०) १ पञ्जाब मन्थनी, पञ्जाबका। (पु०)  
२ पंजाबका रहनेवाला, पञ्जाबनिवासी।

पंजारा (हिं० पु०) १ जो कर्तोंसुन कातता हो। २ कई धुननेवाला, धुनिया।

पंजोरो (हिं० स्त्री०) १ एक प्रकारकी मिट्टी। यह घाटेके बूँदकी घोंमें भून कर उसमें धनिया, मोठ, जोरा आदि मिला कर बनाई जाती है। इसका व्यवहार विनीतः नैवेद्यमें होता है। जगाटमीके उत्सव तथा मन्थारायणकी कथामें पंजोरीका प्रयोग ईंटता है। यह प्रमत्ता स्त्रीके लिये भी बनती है घोर पठामिमें भी मीठो जाती है। २ मनावार, मैसुर तथा उच्चरं सरकारमें मिलनेवाला एक पौधा। यह पौधके काममें पाता है तथा इसमें सफेद जड़, सेंटककारक घोर कफनाशक गुण माला गया है। लुकाव या सर्दोंमें इसको पत्तियों घोर

हठपोंका काटा दिया जाता है। मंझनमें इसे इम्दुपरी घोर चजराट करते हैं।

पंजारा (हिं० पु०) बरतन भालनिका काम करनेवाला, बरतनमें टाँके घाटि दे कर जोड़ मगानेवाला।

पंथन (हिं० वि०) १ पान्थुयणका, पोना। (पु०)  
२ गरीर, पिंड।

पंडव, पंडवा (हिं० पु०) १००६ देवो।

पंडवा (हिं० पु०) भैमका घधा।

पंदा (हिं० पु०) १ किमो तोय या मण्डिरका पुजारी, घाटिया, पुजारी। २ रोटी घननेवाला ब्राह्मण, रमो-दया। (स्त्री०) ३ विवेकामिका बुद्धि, विवेक, ध्यान, बुद्धि। ४ मारुप्रधान।

पंडित (हिं० पु०) पण्डित देखो।

पंडितारि (हिं० स्त्री०) विद्वत्ता, पाण्डित्य।

पंडिताऊ (हिं० वि०) पंडितोंके टंगका।

पंडितानी (हिं० स्त्री०) १ पण्डितकी स्त्री। २ ब्राह्मणी।

पंडुक (हिं० पु०) कपो। या चबूतरकी जामिका एक पत्ती। यह मनाई लिये भूरे रंगका होता है। यह प्रायः जङ्गल, झण्डियों घोर सजासु स्थानोंमें होता है। मक्की बीनी कड़वी होती है घोर समके गवमें कण्ठोभा होता है जो नाचिकी घोर अधिक स्पष्ट टिपार देता है, पर ऊपर माफ नहीं मानूस होता। यह घोर लोटेके भेदमें यह पत्ती दो प्रकारका है। बड़ेका रंग भूरा घोर खुलना तथा लोटेका रंग भटमैसा लिये ईंट-मा लाल होता है। चबूतरकी तरह पंडुक जगदी पायगु नहीं होता। पंडुक घोर कफिद कष्टरके औषुमें कुमरो पैदा होती है।

पंडोड़ (हिं० पु०) नावदान, वामाना, वामाना।

पंथ (हिं० पु०) १ मार्ग, रास्ता। २ पाचारपदति, व्यवहारका क्रम, चाल, रीति, व्यवस्था। ३ धर्ममार्ग, सम्प्रदाय, मत। ४ यद इसका भोजन जो रोगीकी लहान या उपवासके पीछे गरीर कुछ मज्ज सीम पर दिया जाता है।

पंथी (हिं० पु०) पथिन देखो।

पंथ (फा० स्त्री०) मिषा, उपदेश, मोष।

पंचमास ( जा० पु० ) वर्ष का अन्त विषय पर पंच कोर्त।  
 में पञ्चमा शिबंग वा पंचमा शिवा हो।  
 पंचमास ( हि० पु० ) पंचोवा मासका पञ्च, पंचमासो।  
 पंचमसिया ( हि० पु० ) सुभ्रमासोके पंचो पौराणिकी पूजा  
 करनेवाला।  
 पंचमसिगी ( हि० स्त्री० ) द्रौपदी।  
 पंचमस ( हि० वि० ) १ जिसमें पांच प्रकारकी चीजें  
 मिली हैं। २ माधारण। ३ जिसमें मय प्रकारकी  
 चीजें मिली हों, मिश्र कृता टैर।  
 पंचरंगा ( हि० वि० ) १ पांच रंगका। २ तरफ तरफके  
 रंगोंका रंग विरंगका।  
 पंचमहा ( हि० वि० ) पांच महादेवा।  
 पंचमही ( हि० स्त्री० ) गन्धेरे पदमनेकी पांच महोंकी  
 माना।  
 पंचमरी ( हि० स्त्री० ) पंचमरी देखो।  
 पंचरसाग ( जा० पु० ) १ पांच रसाकी मिलाका पधि-  
 पति। २ एक पदयो जो सुपनमान्त्राणमें बड़े बड़े  
 कोनोंको मिलतो ही।  
 पंचसमे ( हि० वि० ) १ मय पौर पांच, पांच कम भी।  
 ( पु० ) २ नरमें पांच पधिकको मथवा या पदु तो  
 हम प्रकार लिखा जाता है—८५।  
 पंचापर ( हि० पु० ) पंचापरण देखो।  
 पंचायत ( हि० स्त्री० ) १ हिमी विधाट, भगदू या पौर  
 किमी मासमें पर विचार करनेके लिये पधिकारियों। दा  
 मुनि दृष्ट कोनोंका समाज। २ एक मय पदुमें कोनोंकी  
 एकन दे। ३ बपुमें कोनोंका एकन की कर किमो  
 ४ मने या भगदू पर विचार, पंचोंका माट-विधाट।  
 पंचायती ( हि० वि० ) १ पंचायतका विधा; दुपा; पचा-  
 यतकी। २ पंचायत मयभी। ३ बपुमें कोनोंका  
 मिक; सुधा, कामेश, तो कर्त कोनोंका ही। ४ मय-  
 काकरपका, मय पंचोंका।  
 पंचायती ( हि० वि० ) पंचायती देखो।  
 पंचो ( हि० पु० ) मुकी दण्डके पंचके दण्डके मुकी-  
 की दण्डके मुकी दण्डके पंचके दण्डके मुकी-  
 की दण्डके मुकी दण्डके पंचके दण्डके मुकी-  
 की दण्डके मुकी दण्डके पंचके दण्डके मुकी-

पौर पंचासमें मियनेवाला एक योग। हमने पंचों पौर  
 दण्डमें एक प्रकारका सुगमिज निय निहलता है। एक  
 मयका मयदार युरोके मुकीमें बपुत होता है। हमने  
 कोतो पानके भोटीमें की जाती है। पधि दो दो पुत्रके  
 कामने पर मयाए जाने है। जो पधि एक बार मयाटे  
 जाने है उनमें दो बार मय; मयीने पर मयम काटी  
 जाती है। अब दूसरी कयम कट जाती है, अब पधि  
 शीट कर किंक दिये जाते है। अठम सूध जाने दा  
 मये बड़े बड़े गहूमि बाधते पौर विकीके लिये मय मने  
 है। अठकोमे मयके पौरां मय निशाना जाता है। १  
 पौर मयकीमे करीब १२मे १३ मय तक मय निहलता  
 है। युरोमें हम मयका मयकार सुगम्य दृश्यकी भांति  
 होता है। हमने पंचपा। पौर पंचमही भी करमें है।  
 ( पु० ) २ यह पचाधि जो पंचमय्याम मयी जाती  
 हो। प्राचीन कालमें किमी मय वा पामने पचखा  
 रखने पाप शीट शीट भगदूकी दिवटादिने लिये पांच  
 प्रतिष्ठित कयके मोग मुन लिये जाने थे जो पच क  
 जाते थे।  
 पंदा ( हि० पु० ) १ पानीकी तरहका एक खाद्य जो  
 मालियोंके शरीरमें या पंके पोषांके पंचोमें शीट करने  
 पर या यो हो निकलता है। २ दामे, कजोके, मयके  
 पारिके भातर मय दूधा पा है।  
 पंचाला ( हि० पु० ) १ कजोका। २ कजोके को पानी।  
 पंका ( हि० पु० ) बघी, विविधा।  
 पंचलो ( हि० स्त्री० ) चोमयके एक दायका नाम।  
 पंचला ( हि० स्त्री० ) मयके मयमें टोके पारि द्वारा  
 जोदु मयाना, मयका, मयका मयका।  
 पंचरता ( हि० स्त्री० ) मयका देवी।  
 पंचरी ( हि० स्त्री० ) पचरी, टिाठी।  
 पंचरसाग ( जा० पु० ) १ पंच पांच जो सुभ्रमास राजाधि-  
 के मयमें मरदासो पौर पुराणियोंकी मिलतो ही।  
 पंचे मोग वा तो पांच मयका मयका मय मयके ही पचपा  
 पांच मयका मयके माटके मयके मयके ही।  
 पंचा ( जा० पु० ) १ पांचका मयके, माटो। २ दण्ड वा  
 पंचके पंचोंके पंचके मयका मयका मयका मयका  
 मयके पंचके पंचके पंचके मयके मयके मयके मयके

पैरकी पाँचों उंगलियाँ। ३ पंजा लड़ानेकी कसरत या बलपरीक्षा। ४ लुपका दौव जिसे नक्की भी कहते हैं। ५ नागका वह पत्ता जिसमें पाँच चिह्न या बूटियाँ हों। ६ पुष्टीके लपकरका मांस। ७ उंगलियोंके सहित हथेलीका संपुट, चंगुन। ८ जूतिका घगला भाग जिसमें उंगलियाँ रहती हैं। ९ पंजिके आकारका बना हुआ पीठ खुजलानेका एक योजन। १० बेल या मँसकी पंमलीकी सौड़ी हड्डो जिसे भंगो मेला उठते हैं। ११ मनुष्यके पंजिके आकारका कटा हुआ टोन या थोर किमो धातुकी चहरकी टुकड़ा जिसे लंबे बाँप आदिमें बांध कर भाँड़े या निगानकी तरह ताजियेके माथ लगे कर चलते हैं।

पंजातोड़ बैठक (हिं० स्त्री०) कुशुकीका एक पेच। इसमें सनासोका हाथ मिलाते हुए जोड़की पंजिकी तिरछा होते हैं, फिर अपनी कुशुकीके उरके पेटके नीचे रह पड़ते हुए हाथकी अपनी गर्दन या कंधे परसे लगे जा कर घगलमें टखते हैं और भटकेके साथ खोच कर जोड़की चित गिराते हैं।

पंजाव (फा० पु०) पञ्जाब देखो।  
पंजाबल (हिं० पु०) पान गोके कारोकी बोली। जब प्रायमें ऊँची भूमि मिलती है, तब यह बोली काममें लाते हैं।

पंजाबी (फा० वि०) १ पञ्जाब मन्वस्यो, पञ्जाबका। (पु०)  
२ पंजाबका रहनेवाला, पञ्जाबनिवासी।

पंजारा (हिं० पु०) १ जो कहीं सेन कातता हो। २ कहीं धुननेवाला, धुनिया।

पंजोरी (हिं० स्त्री०) १ एक प्रकारकी मिटरई। यह आटेके चूषकी घोंसे भून कर उसमें घनिया, मोँठ, जोरा आदि मिला कर बनाई जाती है। इसका व्यवहार विशेषतः नैवेद्यमें होता है। जम्माटमीके लसव तथा सत्यनारायणकी कथामें पंजोरीका प्रभाट चँटता है। यह प्रसूता स्त्रीके लिये भी बनती है और पठाविमें भी भोजो जाती है। २ मलावार, मैसूर तथा उत्तरे मरकारमें सिन्धुनेवाला एक वीधा। यह औषधके काममें आता है तथा इसमें ससो जक, खेदकारक और कफनाशक गुण माना गया है। लुकाम या सदेमि इसको पत्तियों और

उठलोंका काटा दिया जाता है। मरुक्रममें इसे इन्दुपर्णी और भजपाद कहते हैं।

पंजरा (हिं० पु०) बरतन भातनेका काम करनेवाला, बरतनमें टाँके आदि दे कर जोड़ लगानेवाला।

पंडल (हिं० वि०) १ पाण्डुवर्णका, पोना। (पु०)  
२ शरीर, पिंड।

पंडव, पंडवा (हिं० पु०) पाण्डव देखो।

पंडवा (हिं० पु०) भैरवका वच्चा।

पंडा (हिं० पु०) १ ज़िमी तोर्ष वा मन्दिरका पुजारी, चाटिया, पुजारी। २ गोटो बनानेवाला ब्राह्मण, रमोदया। (स्त्री०) ३ विवेकालिका बुद्धि, विवेक, ज्ञान, बुद्धि। ४ शास्त्रज्ञान।

पंडित (हिं० पु०) पण्डित देखो।

पंडितारई (हिं० स्त्री०) विद्वत्ता, पाण्डित्य।

पंडिताज (हिं० वि०) पंडितोंके टंगका।

पंडितानी (हिं० स्त्री०) १ पण्डितकी स्त्री। २ ब्राह्मणी।

पंडुक (हिं० पु०) कपोन या कबूतरकी जातिका एक पक्षी। यह लनाई लिये भूरे रंगका होता है। यह प्रायः जङ्गल, भाडिगों और उजाड़ स्थानोंमें होता है। नरकी बोली कड़ी होती है और उमके गनेमें कण्ठना होता है जो नोचेकी ओर अधिक स्पष्ट दिखाई देता है, पर ऊपर माफ नहीं मानूस होता। बड़े और छोटेके भेदमें यह पक्षी दो प्रकारका है। बड़ेका रंग भूरा और खुलना तथा छोटेका रंग भटमैला लिये ईंटमा लाल होता है। कबूतरकी तरह पंडुक जड़ो पानतू नहीं होता। पंडुक और सफेद कबूतरकी जोड़से कुमरो पैदा होती है।

पंडोड़ (हिं० पु०) नावदान, पानाला, पनाला।

पंथ (हिं० पु०) १ मार्ग, रास्ता। २ आचारव्यवहार, व्यवहारका क्रम, चाल, रीति, व्यवस्था। ३ धर्ममार्ग, सम्प्रदाय, मत। पंथ देखो। ४ वह जलका भोजन जो लोगोंकी सङ्घन या उपवासके पीके शरीर कुछ स्वस्थ होने पर दिया जाता है।

पंथो (हिं० पु०) पथिन देखो।

पंद (फा० स्त्री०) पिशा, उपदेग, पीष।



समस्त पौर स्त्रियों के पक्ष तथा पक्षपात्रमें जो पक्ष चक्षु रहता है, यह निष्पन्न है। सुदुम्बर, कटुम्ब, गिरीय, वष, दद्रुनाथ, शाकमलि और शालकी लकड़ीसे पाक किया हुआ घस खाना नहीं चाहिए। पचीरा स्त्रीका अन्न तथा जिनके सन्तान न हुई हो, ऐसी स्त्रीका पक्षान्न भी दूषणीय है, उनको घरमें भी भोजन करना मना है। अल्पयथात्रमें घस पाक करनेमें मास, पक्ष वा ८ दिनमें उसे परिव्याग करना चाहिए। पाकके समय पाकपात्रका तीन भाग जलसे भर दे। मोदक, कन्दुपक्ष, गन्धाय्य और घृतमयुत अन्न पुनः पुनः खानेमें कोई दोष नहीं।

“मोदकं कन्दुपक्षं च गन्धाय्यं घृतमयुतम् ।

पुनः पुन भोजने च पुनान्नं न दुष्यति ॥”

( मत्स्यसू० २२ पटल )

पक्ष ( सं० त्रि० ) पक्ष-पक्ष, तस्य च । १ परिणत, पक्षा । २ निहासान्न । ३ सुहृद्, परिपुष्ट । ४ परिणतवृद्धि । ५ त्रिगा-शोभुख, प्रत्यासन्नयिगाम्य ।

पक्षकृत् ( सं० पु० ) पक्षं करोति वेदान्चित्तःशालं परिणम-यति-निष्पिष्टत्वगादिभिरात क्ष-क्षिप्-ततस्तुक् । निस्वचक्ष, शोभ-ः पीड । इसको पक्षियोंकी पौम कर फोड़े आदिमें लगानेमें वे पक्ष जाते हैं ( त्रि० ) पक्षं करोति पक्ष्यत्पादिकं । २ पाककर्त्ता, पक्षानिवाता । पक्षक्रेय ( सं० त्रि० ) शुककेययुक्त, जिसके बाल पक्ष गए हो । ( ५० ) शुककेय, सफेद बाल ।

पक्षगात्र ( सं० त्रि० ) क्षतगात्र, जिसका प्रत्येक अङ्ग एकौटकसमन्वित हो ।

पक्षता ( सं० स्त्री० ) पक्षस्य भावा, तन्-टाप । पक्ष-वस्था, पक्ष-निषेधा भाव, पक्षापन ।

पक्षार्स ( सं० स्त्री० ) पक्ष-आस । १ पार्का-स्य मांस, मिह किया हुआ मांस । इसका गुण—क्षितकर, बल और धैर्यवर्धक है । २ अहहृदर, बड़ा बिर ।

पक्षमान ( सं० त्रि० ) पक्ष्यमान, पक्षाया हुआ, मिह किया हुआ ।

पक्षारव ( सं० पु० ) पक्षस्य गुहाटेः रसः । मय, मदिरा पक्षवारि ( सं० स्त्री० ) पक्षस्य अन्नादेर्वारि, यथा पक्षं वारि शिवसन्निभं । १ काश्चिक, काँजी । २ पक्षजन, पचाला हुआ पानो ।

पक्षग ( सं० पु० ) पुक्षंग्य ह्योदरादित्वात् साधुः । अन्त्य-जातिभेद, एक अन्त्यज नोच जाति । पय य—पुक्षंग्य, पुक्षग और पक्षण ।

पक्षगस्योपमोवति ( सं० पु० ) पक्षगस्यस्य उपमा यत्र, तादृशी सन्नतिर्धस्य । राजकदम्ब ।

पक्षातोमार ( सं० पु० ) सुश्रुतोक्तं ग्रामातोसारं भिन्न पक्ष-प्रकार अतोसाररोग, एक प्रकारका अतीसार, ग्रामा-तोसारका ललाटा । ग्रामातोसारमें मलके साथ पाँव गिरतो है, पक्षातीसारमें नहीं । अतिवार देखो ।

पक्षाच ( सं० स्त्री० ) पक्षमच । क्षतपाक तण्डुलादि, पक्षा हुआ अन्न । २ घो, पानो आदिके साथ आग पर पका कर बनाई हुई खानेकी चीज ।

“ग्रामं ग्रहरथ पवत्रामं पवत्रमुत्पद्यमुच्यते ॥”

( तिथितत्त्व )

शूद्र अन्नादि पाक करके देवपूजा और ब्राह्मणादि-को सेवा नहीं करा सकता, केवल ब्राह्मणादि तीनों वर्ष देवताको पक्षान्न चढ़ा सकते हैं ।

“त्रिषु वर्णेषु कर्त्तव्यं पाकभोजनमेव च ।

शुश्रूषामपि पशानां शूद्राणां च वरानने ॥

एतच्चत्वार्यण्यपाककरणं कर्त्तव्यतरपदं” ( तिथितत्त्व )

रघुमन्दनने दुर्गीश्वरमें जो मा लिखा है, उसमें बोध होता है कि शूद्र भी ब्राह्मण द्वारा पाक करा कर उसे नैवेद्यमें दे सकता है । जिस प्रकार शूद्ररुद्धमें ह्योत्सर्ग-को जगह चरुपाक करके उस चरु द्वारा होमादि कार्य सम्पन्न होता है, उसी प्रकार ब्राह्मण द्वारा पक्षान्न भी देवोद्देशमें निवेदन किया जा सकता है ।

“ग्रामं सुहृदस्य पत्रवामं पत्रमुच्छिद्य मुच्यते ।

इति स्वयं पाकविषयं” ( तिथितत्त्व )

इस अर्थमें पशुमार शूद्र भी ब्राह्मण द्वारा अन्न पाक करके नैवेद्य दे सकता है । किन्तु ऐसा व्यवहार देखने-में नहीं पाता । ब्राह्मण शूद्ररुद्धमें शूद्रकदक कन्दुपक्ष, पायस, दधिघृत, भोजन कर सकते हैं और शूद्र भी इसे देवोद्देशमें चढ़ा सकता है ।

“कन्दुपक्षानि तैत्तेन पायसं दधिघण्टवः ।

द्विजैरेतानि भोज्यानि ॥ इत्येदकृतान्यपि ॥”

( तिथितत्त्व )



हाथी । २० विहग, पक्षी, चिड़िया । २१ वनय, हायमें  
पहननेका कड़ा ।

पक्षक ( मं० पु० ) पक्ष द्वय प्रतिरुक्तिः ( द्वे प्रतिरुक्ते । फ  
३३।६६ ) इति कन् । १ पक्षहार । २ पाखंडार । ३ पार्श्व  
मात्र । ४ सहाय ।

पक्षगम् ( मं० त्रि० ) १ जो पंखको सहायतासे चलता  
हो । ( पु० ) २ पक्षी, चिड़िया । ३ पर्वत ।

पक्षगुम ( मं० पु० ) पक्षविशेष, एक चिड़ियाका नाम ।  
पक्षपक्ष्य ( मं० क्लो० ) पक्षस्य पक्षगम् । साहाय्यकरण,  
किमोको सहायता लेना ।

पक्षयाह ( सं० त्रि० ) पक्षपक्ष्यकारो, पक्ष देनेवाला ।  
पक्षयाहिनू ( मं० त्रि० ) पक्ष-यह-णिनि । पक्षयहण-  
कारी ।

पक्षपात ( मं० पु० ) पक्षस्य देशस्य घातः विनागनं  
यस्मात्तु यत्र वा । स्वनामस्थानत वातनोगविशेष पक्ष-  
घातरोम । पञ्जागत देखो ।

पक्षपू ( मं० त्रि० ) पक्षं हन्ति पून-क । पक्षनागक ।  
पक्षम ( मं० त्रि० ) पक्षगम देखो ।

पक्षचर ( सं० पु० ) पक्षे शुकपक्षे चरतीति चर-ट । १  
चन्द्रमा । २ पृथक्-चारिगज ।

पक्षच्छिद्रे ( सं० त्रि० ) पक्षं क्तिन्ति पक्षच्छिद्रे-क्लिप् ।  
इन्द्र ।

पक्षज ( सं० पु० ) पक्षे शुकपक्षे जायते जन-ड । १ चन्द्रमा ।  
( त्रि० ) २ पक्षजातमात्र ।

पक्षजसन् ( सं० पु० ) पक्षे शुकपक्षे जन्म उत्पत्तियस्य ।  
१ चन्द्रमा । ( त्रि० ) २ पक्षजातमात्र ।

पक्षता ( सं० स्त्री० ) पक्षस्य भावः, तत् ततो टाप । न्या-  
योक्त अनुमानेच्छाभाव समानाधिकरणे साध्यवत्ता निय-  
याभाव, अनुमित्ताविरहविशिष्टविद्यभाव । यद्यो पक्षता  
अनुमितिको कारण है ।

पक्षति ( सं० स्त्री० ) पक्षस्य मूलं ( पक्षात्तिः । पा ५।२।२५ )  
इति पक्षति । १ प्रतिपदतिथिः । २ पक्षमूल, डैनेको  
जड़ ।

पक्षत्व ( सं० क्लो० ) पक्ष भावे त्व । पक्षधर्मता, पक्षता ।  
पक्षहार ( सं० क्लो० ) पक्षे पार्श्व स्थित हारम् । पार्श्व-  
हार, खिड़कीका दरवाजा ।

पक्षधर ( मं० पु० ) धरतीति धर, धृ-धच् । पक्षस्य धरः ।  
१ चन्द्रमा । २ महादेव, शिव । ३ पक्षी, चिड़िया ।  
( त्रि० ) ४ पक्षधारणकर्त्ता, तरफदार ।

पक्षधर—तत्त्वचिन्तामणिशास्त्रीके प्रणीता जयदेवका नाम-  
मेट । ज०देव देखो ।

पक्षधामिय—१ प्रसिद्ध नैयायिक, बटेश्वर मद्रामहो-  
पाध्यायके पुत्र । इन्द्राने तत्त्वदिष्य नामक एक न्याय  
ग्रन्थको रचना की है । अपनो प्रतिभाके बलसे इन्द्राने  
मद्रामहोपाध्यायकी रपाधि पाई थी ।

पक्षनाहो ( मं० स्त्री० ) डैनेका पालक या पर ।

पक्षपात ( मं० पु० ) पक्षे अन्याय्यसाहाय्यं पातः अभिनि-  
वेश । १ अन्याय्यसाहाय्यकरण, अन्यायपक्षालम्बन, बिना  
उचित अनुचितके विचारके किमोके अनुकूल प्रवृत्ति या  
स्थिति, तरफदारो । २ गणताकरण । पक्षाणां गहर्ता  
पातः पतनं यत्र । ३ प्रतिपत्तिका उच्चर, पक्षियोंके उच्चर  
होनेसे उनके पर झड़ने लगते हैं ।

पक्षपातकारिन् ( मं० त्रि० ) पक्षपात-ह-णिनि । अन्याय  
रूपसे पक्षसमर्थनकारी ।

पक्षपातित्ता ( मं० स्त्री० ) पक्षपातितः सहाय्यकारिणः  
भावः, पक्षपातिन्-तन्-टाप् । सङ्गता, मदद ।

पक्षपातिन् ( सं० त्रि० ) पक्षपातः विद्युग्दस्य इति । अन्याय-  
पक्षमें समर्थनकारी, बिना उचित अनुचितके विचारके  
किमोके अनुकूल प्रवृत्त होनेवाला, तरफदार ।

पक्षपाती ( त्रि० वि० ) पक्षपातिन् देखो ।

पक्षपाल ( सं० पु० ) पक्षस्य गृहस्य पालिरिव । पार्श्व-  
हार, खिड़कीका दरवाजा ।

पक्षपुट ( सं० पु० ) पक्षियोंका डैना ।  
पक्षपापण ( मं० त्रि० ) पक्षपापणकारो, पक्षसमर्थक,  
तरफदार ।

पक्षप्रद्योत ( सं० क्लो० ) नृत्यकालमें घृष्टका भवस्थापन-  
मेट ।

पक्षभाग ( सं० पु० ) पक्षस्य पार्श्वस्य पक्ष एव वा-भागः ।  
हस्तिपार्श्वभाग, हाथीका कोख ।

पक्षमाजरी ( सं० पु० ) पक्षविहान ।

पक्षमूल ( सं० क्लो० ) पक्षस्य मूलम् । १ पक्षति, डैना,  
पर । २ प्रतिपदा तिथि ।





फलोका बोज, भनीम, प'डोकी जड़, राधना, गतमू लो  
घोर मन्थव घब मिला कर एक सेर; कल्साय' उरद १६  
सेर, जन १ मन २४ सेर, शोष १६ सेर, पडुम १६ सेर,  
जल १ मन २४ सेर, शोष १६ सेर । यथानियम इस  
तेलकी पा कर व्यवहार करनेसे पक्षाघात चंगा हो  
जाता है । (भावप्र० २ भाव)

सुश्रुतमें इसका लक्षण इस प्रकार लिखा है—भग-  
वान् स्वयम्भू हो वायु नामसे अभिहित हैं । यह वायु  
जब कुपित होती है, तब नाना प्रकारके राग उत्पन्न होते  
हैं । वायु अत्यन्त कुपित हो जब पथी, कर्ध्व' शी' तिर्यग्-  
गामिनो धमनाके मध्य प्रवेश करतो है, तब वह एक  
घोरके अङ्गके सन्निवन्धनको विद्विष्ट कर डालती है ।  
इससे शरीरका एक पक्ष नाश हो जाता है, इसीसे इस-  
को पक्षाघात कहते हैं । वायु कष्ट क पाहुत हो कर  
शरीरका समस्त वा पक्ष अङ्ग अक्रमण घोर निस्पन्न हो  
जाने पर रोगी उसी समय पृथो पर गिर पड़ता है, वा  
प्राणत्याग करता है । पक्षाघात कबल वायुजन्य होने पर  
वह पक्षाघात ही जाता है । उम वायुके साथ यदि पित्त  
वा श्लेष्मा मिला हो, तो वह सङ्गमें पारोप्य हो जाता  
है । अथजन्य पक्षाघातको पक्षाघात समझना चाहिये ।

( सुश्रुत निदानस्थान १ श० )

यह पक्षाघातरोग वातश्याधिका एक भेद है । वायु  
कुपित हो कर जो सब रोग उत्पन्न करतो है, उसीको  
वातश्याधि कहते हैं । पक्षाघातरोगमें रोगीका शरीर  
स्थान नहीं होने पर तथा शरीरमें वेदना रहने पर रोगी  
यदि प्रकृतिलेख घोर उपकरणविद्विष्ट हो, तो उसको  
चिकित्सा विधेय है । प्रथमतः स्नेहस्त्रोद द्वारा अल्पवमन  
करा कर रोगीको संशोधन करा लेना चाहिए । पीछे  
अनुवासन घोर आस्थापनाका प्रयोग करना चाहिए । पक्ष-  
में आक्षेपक रोगके विधानानुसार घि' का विधेय है ।  
कुछ दिन तक यदि विगैररूपसे चिकित्सा कर ई जाय,  
तो रोग अवश्य पारोप्य हो सकता है । ( सुश्रुत )

एलोपैथीके मन्थे पक्षाघात वा पार्श्विक अवगता  
पार्श्व विभिन्न कारणोंसे उत्पन्न होती है—(१) पक्षमें लो-  
राई, दोनों कीर्ण और कागिह'रज्जुके ऊर्ध्व'शमें रक्त-  
स्राव, (२) डिफथिरिया वा त्वगाच्छादनरोगका परि-

णाम (३) शिशुकालकी भावो'ङ्कक अवगता, (४) क्षिप्ता-  
वस्था, (५) अथयुक्त अवगताकी शिवावस्था । क्षिप्ता-  
वस्थादि विभिन्न सार्वाङ्गिक अवगताका विषय पाथग्ग-  
कतानुसार यथास्थानमें लिखा जायगा ।

शरीरका पक्षी'श अनुलम्बभावमें अवग होने पर उसे  
पक्षाङ्गान्धि (Hemiplegia) कहते हैं । पङ्करेकी भावा-  
में इसका पर्याय है (Paralytic Stroke) । पृष्ठ'शोय  
मज्जाके उपर'स्थ जो वृहत् प्र'श (Medulla oblon-  
gata) कोटोमें न्यस्त है, उसके मध्यस्थ शुभ्रद्रायु  
तिर्यक् भावमें गमन करतो है । उसके ऊर्ध्व'शमें यदि  
कोई वैधानिक पोड़ा रहे, तो विपरोत पार्श्वमें अव-  
गता देख पड़तो है । लेकिन यदि निम्न'शमें कोई परि-  
वर्तन हो, तो जो पार्श्व पीड़ित है, उसी पार्श्वमें अव-  
गता होतो है । फिर यह भी देखा जाता है कि Cor-  
pus Striatum अथवा पार्श्वन्तरिककोष (Internal  
Capsule)-के ऊपर रक्तस्राव वा अन्य कोई परिवर्तन  
देख पड़े, तो तबल अवगता एवं टर्ग'नक्षिप्रा मस्य-  
न्धोय मस्तिष्कके पार्श्व'स्थ दोनों कीर्णों, Optic thala-  
mus)-के ऊपरका गोलाकार आच्छादक भाग पक्षाघात  
हो जात है और तब स्वर्ग'शक्तिको ह'नता होतो है ।  
मस्तिष्क घोर मज्जाका वैधानिक पोड़ा'निवन्धन इसी  
रोगकी उत्पत्ति है । किन्तु अन्यान्य व्याधिमें मस्तिष्क  
क्रियाका भावान्तर होने पर भी यह रोग हो सकता है ।  
यथा—मृगो, कोरिया, डिट्रिया आदि । उपर'शरोग  
भी इसी पीड़ा का एक भारो कारण है ।

लक्षण.—मस्तिष्कके मध्य शुभ्र प्र'शको कोमलता  
अथवा सामान्य परिमाणमें संयत रक्त (clot) टि'चाई  
पड़नेसे पोड़ा पारम्भ होनेमें भी रोगीको ज्ञान रहता है ।  
किन्तु अधिक रक्तस्राव होनेसे रोगी ज्ञानशून्य हो ज'ता  
है । रोगके आक्रमणप्रणालीके तारतम्यानुसार रोगीके  
शरीरमें जो सब विगैय विगैय लक्षण देखि जाते हैं, पक्षमें  
उसीकी पालोचना को गई । सन्नानमें पक्षाङ्गान्धि (He-  
miplegia with consciousness) होनेसे रोगी हाथ  
वा पैरके किसी प्र'शमें सामान्य अवगता अनुभव करता  
है जो क्रमशः वर्धित हो कर अङ्गके एक पार्श्व'स्थ वृहत्  
और पक्षी'श अवग कर डालतो है । ज्ञानशून्य अवस्थामें



यदि यह मान्म जो जाय कि इस प्रकार का पक्षाघात रोगग्रस्त रोगीके पक्षी उपदंशरोग तथा था, तो पीटाभी पीडाहडका व्यवहार करना चाहिए। मज्जाकी पोष्टकी कारण यदि अर्थात् चिप जो तो टि' आगंट और बेल-डोना विशेष उपचार है। मस्तिष्कमें र अधिक्त्वे जेनेसे टिन्निवा फलदायक नहीं है। शुभमयायु चादि रोगघटित पीडामें यथेष्ट औषधका प्रयोग करे।

अन्यान्य रोगके साथ मिलनेमें पक्षाघात रोगका विभिन्न नाम हो जाता है। मानसिक प्रकृतिके परिवर्तनमें जो अवयवता का लक्षण उपस्थित होता है, उसे चिन्नावस्थाकी अवयवता (General paralysis of the insane) कहते हैं। ममम वायुमूलमें अथवा उसको दृढगाथा (Portio Dura) में कोई परिवर्तन होनेसे सुलकी भांमपेयियां अवयव हो जाती हैं। इस रोगको Bell's palsy or Facial paralysis कहते हैं। एतद्भिन्न Paralysis agitans, P. diphtheric, P. Duchene's, P. Glosso labio laryngeal, P. infantile, P. landry's और Scrivener's Paralysis आदि पक्षाघात रोगोंमें भी औषधादि प्रायः एक ही हैं। परन्तु रोगविशेषका लक्षण परस्पर अलग है।

धर्मशास्त्रमें लिखा है कि यह पक्षाघात रोग महापातकके कारण हुआ करता है। पूर्वजन्ममें जो सब पाप किये जाते हैं, मनुष्य उन पापोंका भाग कर पुनः जब जन्म लेता है, तब महापातकके चिह्नस्वरूप ये सब व्याधियां हुआ करती हैं। इस प्रकार महापातकज विद्विंसात जन्म तक रहता है। पक्षाघात और कुटादिरोग महापातकज हैं।

जिसके पक्षाघात चादि महापातकज रोग होती हैं, उसे प्रायश्चित्त करना होता है। महापातकरोगी यदि प्रायश्चित्त न करे, तो उसे किसी धर्मकर्ममें भाग्यकार नहीं रहता और बिना प्रायश्चित्त किये यदि इस रोगसे उसका मृत्यु हो जाय, तो प्रायश्चित्त किए बिना उसका टहन, बरन वा अंगोचादि कुछ भी नहीं होगा। इस पाप का प्रायश्चित्त करके उसके दाहादि कार्य करने होंगे।

महापातकमें प्रायश्चित्त पराकत्रत है। यदि यह न करे मर्क, तो पक्षघेनु दानरूप प्रायश्चित्त विधेय है। इस

पक्षघेनुका मूल्य १५ रु० है। इस पक्षाघातरोगका प्रायश्चित्त करते समय प्रायश्चित्तकी श्रवणा लेनी होती है। व्यवस्थापत्रमें इस प्रकार निरुद्ध रचना चाहिये।

'पक्षाघातरोगघृष्टचित्तपक्षधाय पराकत्रतायकौ ब्राह्मणेन क्षयिगादिना वा यत्किमिहृष्टमप्यपदसहायीगीदानकरं प्रायश्चित्तं कार्यमिति त्रिदुवचनम्।'

प्रायश्चित्तके अग्रगण्य विवरणके लिये प्रायश्चित्त देखो।

पक्षादि (सं० पु०) पक्ष आदियं स्थ। पाणिनि उक्त शब्दगणमें द। यथा—पक्ष, त्वं च तुप, कुण्ड, अण्ड, कम्बलिका, वलिक, चित्त, अस्ति, पथिन्, पन्था, कुम्भ, सौरक, मरक, सकल, सरस, समल, अतिश्वन्, रोमन्, लोमन्, हस्तिन्, मकर, लोमक, शीर्षं विनात पांक, डिंभक, अष्टुश, सुवर्णक, हंभक, कुक्ष, विल, विल यमल, हस्त, कला, मकणक इन पक्षादियोंके उत्तर फलप्रत्यय होता है। (पाणिनी)

पक्षाधाय—न्यायशास्त्रके अन्तर्गत विषादमत्त अध्याय। पक्षान्त (सं० पु०) पक्षस्थ अन्तो यत्र काले। १ अभावस्था, पूर्णमा। पर्याय—पक्षदयो, अर्कं दृष्टं अक्षेयपथं, पक्षावसर। पक्षान्तरमें यात्रा नहीं करनी चाहिये, करनेसे निष्फल होता है।

'पक्षान्ते निष्कला यात्रा भावन्ते मरर्गं धुवन् ॥ (उभोतिस्तव्य)

२ पक्षका अवसान। पक्षान्तर (सं० स्त्री०) अन्यत्पक्षं पक्षान्तरं। १ अवरपक्ष, दूषणी तरफ। २ मतान्तर।

पक्षाभास (सं० पु०) १ हिल्वाभास, सिद्धान्ताभास। २ मिथ्या अनुयोग।

पक्षालिका (सं० स्त्री०) कुमारानुचर मातृभेद, कुमारकी अनुचरी मातृका।

पक्षालु (सं० पु०) पक्षी विद्यते यस्य, पक्ष पक्ष्येण आलुच, पक्षी, चिह्निया।

पक्षावसर (सं० पु०) पक्षस्थ अवसरोऽवसरणं यत्र। पूर्णमा, अभावस्था।

पक्षाहार (सं० त्रि०) जो एक पक्षी शंघा एक बार भोजन करते हैं।

पक्षिणी (सं० त्रि०) १ पक्षवाली। (स्त्री०) २ चिह्निया,



पर्वत पर उतरते और मन्दिर जा कर विषहभृत्ति को अभिवादनपूर्वक पछेते पान भोजन करने जाते हैं। भोजन कर चुकने पर परितुष्ट हो वे स्वस्थानको लौट जाते हैं। पीछे यह पण्डा उपस्थित व्यक्तियोंके मध्य पक्षिभुक्त प्रसाद वितरण करते हैं। यह सत्य घटना बहूतोंने अपने आँखोंसे देखी है। इसी कारण इस पर्वतका तिरुक्कड़ कुण्डम् नाम पड़ा है। प्रवाद है कि उक्त दोनों पक्षी पहले ऋषि थे, पीछे किमो पापके कारण वे इस अवस्थाको प्राप्त हुए हैं।

श्रद्धतीर्थमें प्रतिदिन सुबह और शामको स्नान कर पर्वत पर भ्रमण, देवभृत्ति दर्शन और सतत उनका ध्यान तथा शल्य चिकित्सा करनेसे थोड़े ही समयके मध्य कुष्ठ, पक्षाघात, उन्माद और अन्यान्य नाना रोग उपगम होते देखे जाते हैं। बहुतेरे मनुष्य रोगमुक्त होनेको आशामें यहाँ आया करते हैं। अन्यान्य तीर्थके सम्बन्धमें भी अनेक तरहको किंवदन्तियाँ प्रचलित हैं। ये सब भौतिक घटना सुन कर सद्रूपके श्रीलन्काजगण कोट्टल निवारणेच्छसि १६६३ ई०की यहाँ भाँये और पर्वत पर स्नानात्त पण्डित कर गये हैं।

पश्चिन् ( म० पु० स्त्री० ) पक्षी विद्यते यस्य पक्ष-इनि । विहङ्गम, चिह्निया । पक्षी देखो ।

पश्चिपति ( स० पु० ) पश्चिणां पतिः इ-तत् । १ पचिराज । २-सम्प्राप्ति ।

पश्चिपात ( स० पु० ) पतङ्गप्लवर ।

पश्चिपानीयशालिका ( स० स्त्री० ) पश्चिणां पानीयस्य पानार्थं जनस्य शालिका । पक्षीका जलपानस्थान, यह जगह जहाँ चिह्निया आ कर पानी पीते हैं ।

पश्चिपुङ्ख ( स० पु० ) पक्षियेष्ठ जटायु ।

पश्चिपवर ( स० पु० ) पश्चियेष्ठ, गरुड ।

पश्चिपगता ( स० स्त्री० ) पश्चिन् और मृगत्व ।

पश्चिराज ( स० पु० ) पश्चिणां राजा, उच्चसमासान्तः । गरुड, पक्षोन्म ।

पश्चिल ( स० पु० ) पश्चिलस्वामी, वास्त्यायन । इन्हीने गौतमचरित्रका भाष्य प्रणयन किया ।

पश्चिलजगामि ( स० पु० ) स्वनामस्थान्त गामिधान्-विदेश, पक्षिराज धान ।

पश्चिगाला ( म० स्त्री० ) पश्चिणां गालां गृहम् । गौड़, घासला । इसका पर्याय कुसायिका है ।

पश्चिमिह ( म० पु० ) पक्षी सिहं इव, अथवा पश्चिपु सिहः श्रेष्ठः । पचिराज, गरुड ।

पश्चिस्वामिन् ( स० पु० ) पश्चिणां स्वामी । गरुड ।

पक्षी ( म० पु० स्त्री० ) पक्षी विद्यते यस्य पक्ष-इनि । विहङ्गम, चिह्निया । पर्याय—स्रग, विहङ्ग, विहंग, विहङ्गम, विहायम्, शकुन्ति, शकुनि, शकुन्त, शकुन, द्विज, पत-त्रिन्, पत्रिन्, पतग, पतत्, पवत्रथ, चण्डज, नगोकम, वाजिन्, विकिर, मि, विम्किर, पमत्रि, नौडोइव, गरुत्त, पिच्छन्, नभमङ्गम, नाडोचरण, कण्डारिन्, पतङ्ग, अगो-पन्, चक्ष भृत्, कुरण्ड, सरण्ड, विपतिपु, पतयाइ और द्यंग ।

पश्चियोंको उत्पत्तिका विषय भग्निपुराणमें इस प्रकार लिखा है—

“अहमेव भार्या श्येनी वीर्यवती महाबली ।

सम्प्रतिद्य जटायुश्च प्रसूतो मक्षिपवतसौ ॥” (भग्निपु०)

चरणकी भार्या श्येनी थी, इसी श्येनीने पहले पहल जटायु और सम्प्राप्ति नामक दो पक्षी प्रसव किये । उन्हीं दोसे पक्षी जातिको उत्पत्ति है । दूसरी जगह लिखा है—स्यलचर, जलचर और मांसायी पक्षी क्रोध-वशासे उत्पन्न हुए हैं । मत्स्यपुराण और विष्णुपुराणमें लिखा है—शुक्रो, श्येनो, भासो, गृध्रो, सुग्रीवो और शुचये हः तान्त्रिको कन्या यौ । इनमेंमें शुक्रोके गर्भसे शुक्रपक्षो और उलूकगण, श्येनोके गर्भमें श्येनगण, भासोके गर्भसे भास-और कुररपक्षिगण, गृध्रोके गर्भसे गृध्र, कपोत और पादावत जातीय पक्षो, सुग्रीवीके गर्भसे ह्यग, मेघ, गर्दभ और उद्ग तथा शुचिके गर्भसे हंस, सारस, कारण्ड और यानरगण उत्पन्न हुए हैं ।

भावप्रकाशके मतसे जो सब पक्षी कुलचर हैं, वे उरुष्ट और लघु तथा अनुपदेगज पक्षी बलकारक, सिन्ध और गुरु होते हैं । पक्षीके घण्टोंमें किञ्चित् सिन्ध, पुष्टिकारक, मधुररम, वायुनामक, गुरु और शल्यन्त शक्यवर्क गुण माना गया है । (भावप्रकाश)

पक्षी घण्टज जीव हैं । जैसे हम लींगके दो हाथ होते हैं, वैसे ही उनके दो पैर हैं, उन्हींसे वे शन्य-



कुछ जातिगत पाथर्य वतलाया है। उन्हीं नामान्जातोय पक्षियोंके मध्य अल्पधियांर पाथर्यकी विवेचना कर रहे हैं। इनके जातियोंमें विभाग किया है। पक्षिजातिके शरीरतत्त्वको आलोचना करनेमें विज्ञानविद् पक्षिजगण मन्तव्य, पदतल, पुच्छ और वृक्षास्थि आदिका पाथर्य समावेश और विभिन्नता दिखा कर जिस सिद्धान्त पर पहुँचे हैं उसका विवरण सहजबोध नहीं है। शरीर-तत्त्वत्र व्यक्तियण यदि इस विषयमें आलोचना करें, तो वे बहुत कुछ समझ सकेंगे। आधारतः जो सब विषय करनेमें सहजमें बोध हो सकता है, उसीका यहाँ पर उल्लेख किया गया।

प्रथमतः पक्षिजातिका कोई विभाग निर्देश करनेमें उसका वाद्यद्वय पुञ्जानुपुञ्जरूपमें लक्ष्य करना उचित है। जैसे कुछ पक्षियोंका पूरक शरीरको अपेक्षा बड़ो और कुछको छोटी है। कितनेके करभ अचल-सन्धि और कितनेके सक्ष-सन्धि हैं। किसीकी भी वृक्षास्थि सरल और लम्बी नहीं है। इस प्रकार छोटे छोटे तथ्योंके अनुवर्ती हो कर शकुनावर्तोंमें निर्देश किया है कि जिन सब पक्षियोंके इनकी मौलिक-प्रगण्डास्थि पदाङ्गलिके मध्य मध्य परियकी अपेक्षा छोटी है तथा हृद्वाङ्गलि कुछ बड़ो है, वे हो बैटिटी ग्रैपी (Group) भुक्त और एप्टेरिगिड (Apterygidae) शाखाके अन्तर्गत है। जिनकी हृद्वाङ्गलि बड़ी नहीं है वे डिनोर्निथिडी (Dinornithidae) और कसुयारियाइड Casuaridae) शाखाके मध्य सचियेट हुए हैं। जिनकी प्रगण्डास्थि बड़ो और अङ्गुलिके दो नखास्थिसमन्वित है तथा जिनको वृक्षास्थि त्रिकास्थि (एण्डरुण्डकी निम्न मान्दस्थि पक्षि)में आ कर मिल गई है और उदराधःप्रदेश परिलक्ष्य है, उस शाखाका नाम रिडी (Rheidae) है अमेरिका देशोय उरुपक्षी (Ostrich) इसी शाकके अन्तर्गत है। जिन सब पक्षियोंको वृक्षास्थि सरल और उदराधःप्रदेश तलपेटकी उपस्थास्थि की सन्धिमें संलग्न है इसी शाखामें (Struthionidae) आक्रिका और अन्धान्य स्थानवासी उरुपक्षी गिने जा सकते हैं। उसी प्रकार जिन सब पक्षियोंकी नासाफल-कास्थि पदाङ्गलमें प्रयत्न हो तथा तालुसम्पर्कीय पच-

वत् पक्षिके मध्यभागमें और गलेका तनदेह-कोलाकार पक्षि-व्यिष्ट हो, तो उस श्रेणीके पक्षियोंको कैरिनेटी (Carinatae) कहते हैं।

फिर जिन सब पक्षियोंको नासाफलकास्थि पदाङ्गल में पतली और गलेकी तनदेहस्थ कोलाकार स्थि तालु और मस्तकाभ्यन्तरस्थ पचवत् पक्षिके नाथ पयित है तथा जिनके तालु-सम्पर्कीय हनुद्वय सरल और नामा-फलकास्थि सूचाय है, वे सब पक्षी Carinatae श्रेणीके अन्तर्गत होने पर भी, उनके मध्य विभिन्न शाखा और विभिन्न नाम देखे जाते हैं। उदाहरणस्वरूप उनमेंसे एकका विषय नीचे लिखा जाता है। जैसे झोमार पक्षी (Plover) इस श्रेणीके देखमें इसे तोता कहते हैं। विज्ञानविदों ने इसे Carinatae श्रेणी-भुक्त करके भी इनके मध्य कार्सोरिना (Cursorina) और काराड्रिना (Charadrinoe or Charadriomor- phoe) नामक दो अलग शाखा निर्देश की है और देख तथा स्थानके भेदसे इस जातिके पक्षियोंमें पाकृति-गत वैलक्षण्य देख कर उन्हीं एक एकका विभिन्न नाम रखा है। तोतर पक्षीको प्रथमोक्तिवत या रामें Indian courier, Double bounded, Large Swallow and Small Swallow एवं निम्नोक्त शाखामें Grey, Golden, Large sand, Small sand, Kentish ring, Indian ringed और Lesser ringed आदि जातियां वा संचायें देखी जाती हैं। एतद्भिन्न चीन, यक, कुङ्कुट, पारावत, डंस आदि पक्षी जातिके मध्य अमंख्य जातिगत विभाग और नामस्वातन्त्र्य ललित होता है। एतेत और बाक प्रवृत्ति मध्य देखो।

इसके बाद उन्हीं करोटी और तयधरस्थ पक्षि तथा मस्तिष्कादिकी उत्पत्ति और वृद्धिके सम्बन्धमें इसी गभोर आलोचना की है उसका उल्लेख करना निश्चयेजन है। किस प्रकार जटायुकें मध्य संचित शक्त अण्डोंमें परिणत होता है, वह किस प्रकार बढ़ कर परिपुष्ट होता है और प्रसवागतमें उससे बड़े फोड़नेके बाद क्या क्या अवस्थान्तर होता है, संचेपतः उसीका हाल यहाँ दिया जाता है।

सभी जातिके पक्षी एक समयमें पण्डे नहीं देते।



मागं प्राकारमें इधर उधर उड़ सकते हैं। इनके मुखाधरमें लो कर धोड़ाभाग तक कठिन चमिके सह्य चक्षु युक्त है। चक्षुंके ऊपरी भागमें दो छोटे छोटे नामाच्छिद्र हैं। उठरके पक्षीदेशमें केवल दो पैर हैं, चन्दीमें वे हृद्यादिकी शाखा, सृष्टिका, पर्वत और गडादिकी छतके ऊपर खड़े ही कर जिधर तिधर इच्छानुसार गमनागमन कर सकते हैं। दोनों पैरके मध्यास्थानमें गांठ रहती है। प्रत्येक पैरमें चारसे पांच अङ्गुल और उनके पथभागमें टेढ़े किन्तु तेज नाखून होते हैं। ये दोनों पैर समय समय पर हाथके भी काम करते हैं। विशेषतः बाज, गिऊरे (Hawks) आदि पक्षियोंके लिए ये विशेष उपयोग हैं। दोनों पैरके पयाङ्गागमें मलत्याग वा जलनिन्द्य-विचर और उसके भी पयाङ्गागमें पुच्छ रहता है। पूंछ और डेनेमें साधारणतः बड़े बड़े पर जन्मते हैं तथा समूचा शरीर पगम सरोखे कोमल छोटे छोटे परोंसे ढका रहता है। इनके ऊपरके पर इतने चिकने होते हैं कि उन पर जरा भी पानी नहो' उधरता। यही कारण है कि वनके मध्या धुने मैदानमें जब ठुटि होती है तब इनका शरीर मींग कर भारो नहो' होता। अतः इस समय यदि कोई उन्हें पकड़ने जाय, तो वे सहजमें उड़ सकते हैं।

पक्षीमात्र ही खेचर है, क्योंकि ऐसा एक भी पक्षी नहीं जो कुछ भा उड़ना नहो' जानता हो, लेकिन जो कम उड़ सकते (अर्थात् जो हमेशा जमीन पर चला करते हैं) और जो अत्याध पक्षीकी अपेक्षा भारहीन हैं, वे ही स्थलचर कहलाते हैं—जैसे सारसके मूट्य पक्षी, उड़पक्षी, कुक्कुट प्रभृति। एतद्दिन स्थलचर होने पर भी जो सब पक्षी स्वतः ही जलमें विचरण करना पसन्द करते, और जलमें साधारणतः खाद्य-शु संपन्न किया करते हैं, वे जलचर पदवाच्य हैं। जैसे, बक, पण्डूक आदि।

प्राणितत्त्वज्ञाने जलचर पक्षियोंके मध्य कुछ सामान्य लक्षण निर्देश करते हुए इनका जातिका निर्णय किया है। उन सब लक्षणोंमें बहुत साभ्यन्तरस्य एक प्रकारका उच्चत्वक ही प्रधान है जिसकी सहायतासे वे आसानीसे पानीमें तैर सकते हैं। इसीसे इनका एक

पौर नाम रखा गया है, जालाट। यह जान। सुक-त्वक। उनके पदके पुरीभागस्य तीन तं गलियोंमें पर-म्यर संलग्न है। इनके दोनों पैर देखके पयाङ्गागमें स्थापित हैं। जातिभेदमें इन पयाङ्गानका तारतम्य देखा जाता है। पैङ्गु इन नामक पक्षीके पद परकसर पुच्छमूलमें संलग्न रहते हैं। इस कारण जब वे जमीन पर बैठते हैं, तब खड़े जैसे मानस पड़ते हैं। इन श्रेणियोंमें शम शोतप्रधान देगज पैङ्गु इन और २५ निमल-कादि, २५ गगन-भेङ्गादि, ४४ वान-कौटादि, ५ गण्ड-चिह्लादि और ६४ उंसादि हैं।

शकुनशास्त्रविदोंने पक्षवर्गको इस प्रकार पाठ गणोंमें विभक्त किया है—

१म शाखाचारी (Peyseres) अर्थात् जो नष्ट दा उच्चको शाखा पर विचरण करते हैं, यथा—घटरु, फाक, गोलकाण्ड, टुमटुनी, श्यामा आदि।

२य काण्डचारी (Scansores) अर्थात् जो उच्च-काण्ड पर विचरण करते हैं,—जैसे, दावीघाट (कठ-फोड़), टोकान, काकातूपा, नूरो टीया आदि।

३य घृतचारी (Carsores) अर्थात् जो घृणी पर बहुत फुत्तोंसे पैर रख कर चलते हैं, जैसे—ग्राहमरग, कगोचारी, लट्टुघोषी आदि।

४थं जलचारी (Grallatores) अर्थात् जो जलमें विचरण करते हैं,—जैसे, बक, भारम, पण्डूक आदि।

५म तरपदी (Natatores) अर्थात् जो पद द्वारा तैरते हैं,—जैसे, हंस, पैङ्गु इन।

६ठ चर्मकपदी (Rasores) अर्थात् जो पक्षी मख द्वारा भूमि विदारण करते हैं—जैसे, कुक्कुट, मयूर, मोनाक, तोतर आदि।

७म आनीतक (Columbae) अर्थात् वारायत और उसीके समान पक्षी, जैसे पायरा, घुघू इत्यादि।

८म बाखेटक (Raptors) अर्थात् जो सब पक्षी बाखेट वा गिरा करके भयवा मान-भक्षण द्वारा जीविका निर्वाह करते हैं,—जैसे, पेंचक, बाज, गिऊरे, चोस, गोघ, इडगिला, गकुनि इत्यादि।

प्राणितत्त्वज्ञाने पक्षजातिका साभ्यन्तरिक गठन और अन्तरिक संबंधोंको पार्थिवता कर- इनके मध्य

कुछ जातिगत पक्षी का बतनाया है। उन्होंने नानाजातीय पक्षियों के मध्य अल्पविस्तर पाखण्डकी विवेचना कर के अनेक जातियों में विभाग किया है। पक्षिजातिके शरीरतत्त्वकी आलोचना करनेमें विज्ञानविद् पण्डितगण मस्तिष्क, पदतल, पुच्छ और तुकास्थि आदिका परस्पर समावेश और विभिन्नता दिखा कर, जिस सिद्धान्त पर पहुँचे हैं उसका विवरण सहजबोधय नहीं है। शरीर-तत्त्वज्ञ व्यक्तिगण यदि इस विषयमें आलोचना करें, तो वे बहुत कुछ समझ सकेंगे। माधारणतः जो सब विषय करनेमें सहजमें बोध हो सकता है, उसका यहाँ पर उल्लेख किया गया।

प्रथमतः पक्षिजातिका कोई विभाग निर्देश करनेमें उसका वास्तव्य्य पुद्गातुपुद्गरूपमें लक्ष्य करना उचित है। जैसे कुछ पक्षियोंको पूँछ शरीरको अपेक्षा बड़ी और कुछको छोटी है। कितनेके ऊपर अचन-सन्धि और कितनेके सचल-सन्धि हैं। किसोकी भा तुकास्थि सरल और लम्बी नहीं है। इस प्रकार छोटे छोटे तथ्योंके अनुवर्ती हो कर शकुनावर्तने निर्देश किया है कि जिन सब पक्षियोंके डेनेकी मौलिक-प्रगण्डास्थि पदाङ्ग निके लक्ष मध्य परियकी अपेक्षा छोटी है तथा पदाङ्गलि कुछ बड़ी है, वे ही बैटिटी योषी (Group) भुक्त और एप्टिरोगिडि (Apterygidae) शाखाके अन्तर्गत है। जिनकी पदाङ्गलि बँधी नहीं है वे डिनरनिथिडो (Dinornithidae) और कसुयारियाइडि Casuarinidae) शाखाके मध्य सचिवेष्ट रूप हैं। जिनकी प्रगण्डास्थि बड़ी और अङ्गलिके दो नखास्थिसमन्वित हैं तथा जिनको वक्ष्यास्थि त्रिकोणिक (षष्ठपङ्ककी निम्न प्रान्तस्थ अस्थि) में आ कर मिल गई है और उदराधःप्रदेश परिलक्ष्य है, उस शाखाका नाम रिडो (Rheidae) है अमेरिका देशीय उट्टपक्षी (Ostrich) इसी धाकके अन्तर्गत है। जिन सब पक्षियोंकी वक्ष्यास्थि सरल और उदराधःप्रदेश तल्पेटकी उपस्थास्थिकी सन्धिमें संलग्न है इन्हीं शाखामें (Struthionidae) आफ्रिका और अन्यान्य स्थानवासी उट्टपक्षी गिने जा सकते हैं। उसी प्रकार जिन सब पक्षियोंको नासाकल-कास्थि पञ्चाङ्गामें प्रगुप्त हो तथा, तालुसम्पर्कीय पक्ष-

वत् अस्थिके मध्यभागमें बोग गनेका तनदेग कोनाकार अस्थिविष्ट हो, तो उसमें गोल पक्षियोंको कैरिनेटो (Carnivatae) कहते हैं।

फिर जिन सब पक्षियोंको नामाकलकास्थि पञ्चाङ्गामें पतली बोग गनेकी तनदेगस्थ कोनाकार अस्थि तालु और मध्यकास्थिपर पक्षवत् अस्थिके साथ अस्थि है तथा जिनके तालु-सम्बन्धीय उदुदय सरल और नामाकलकास्थि सूचाय है, वे सब पक्षी Carinatae योषीके अन्तर्गत होने पर भी, उनके मध्य विभिन्न शाखा और विभिन्न नाम देखे जाते हैं। उदाहरणस्वरूप उनमेंसे एकका विषय नीचे लिखा जाता है। जैसे झोभार पक्षी (Plover) हम लोगोंके देशमें इसे तोता कहते हैं। विज्ञानविदोंने इसे Carinatae योषी-भुक्त करके भी इनके मध्य कार्सोरिना (Cursorina) और काराड्रिना (Charadriinae or Charadriomorphae) नामक दो स्वतन्त्र शाखा निर्देश की हैं और देश तथा स्थानके भेदसे इस जातिके पक्षियोंमें पालतिगत वैलक्षण्य देख कर उन्हीं में एक एकका विभिन्न नाम रखा है। तोतर पक्षीको प्रथमोजि वत या रामें Indian courier, Double bounded, Large Swallow and Small Swallow एष' निम्नोक्त शब्दोंमें Grey, Golden, Largesand, Small sand, Kentish ring, Indian ringed और Lesser ringed आदि जातियाँ या सङ्घाये देखी जाती हैं। एतद्दिल चील, बक, कुकूट, पारावत, उँस आदि पक्षी जातिके मध्य अन्त्य जातिगत विभाग और नामस्वतन्त्र लक्षित होता है। कपोत और बाक प्रथम शब्द देखो।

इसके बाद उन्हीं करीबो और तन्मध्यस्थ अस्थि तथा मस्तिष्कादिको उत्पत्ति और वृद्धिके सम्बन्धमें लैसो गमोर आलोचना की है उसका उल्लेख करना निष्प्रयोजन है। किस प्रकार जटाशुकें मध्य सञ्चित शक्त अण्डोंमें परिणत होता है, वह किस प्रकार बढ़ कर परिपुष्ट होता है और प्रसवार्तमें उसमें बड़े फोड़नेके बाद क्या क्या अवस्थान्तर होता है, सञ्चैपता उसको हाल यहाँ दिया जाता है।

सभी जातिके पक्षी एक समयमें अण्डे नहीं देते।

शत्रु और कानभटमें ये चो'मने बनाते और मरतान उत्पादन करते हैं। चक्रमर देना जाता है कि काक, चीन, शान्तिव प्रभृति विभिन्न चो'गोंके पक्षिगण विभिन्न समयमें चण्डे उठते हैं। उन चण्डोंको बाहरी प्राकृतिमें इनकी जातिगण प्रयत्ना जानी जाती है। माधारणतः चण्डोंकी एक और कोणाकार और दूसरी और गोलाकार होती है। कोणाकार चण्ड ही पहले प्रभव पथ हो कर बाहर निकलता है और साथ साथ मोटे गोल चण्डोंके लिये पथ परिष्कार कर देता है। इसी प्रकार नमो पक्षी चण्डे प्रभव करते हैं, सो मकी, कहीं कहीं इसका बेलघण्टा देखा जाता है। एतद्भिन्न विभिन्न जातीय पक्षीकी चण्डावरक कठिन त्वक्के ऊपर विभिन्न प्रकारका रंग देखा जाता है। विज्ञानविशेषीका कहना है कि जरायुसे प्रभवकारमें शनिके समय वह चण्डोंके एक प्रकारके रंगोन पदार्थमें लिप्त हो बाहर निकलता है। माटमें देखा जाता है कि चण्डोंके ऊपर भिन्न भिन्न रंगोंके भिन्न भिन्न दाग पड़े हैं। ये सब दाग उन पर समान भावसे नहीं पड़ते। पितामाताके दुःख होने पर चण्डोंको छहत् प्राकृतिक कारण गर्भद्वारमें अटक जानेसे तथा भोत प्रयत्ना अत्यन्त उत्तेजित होनेसे भी डिम्बके ऊपर रंगको चटपटा बयल जितनी अधिक होगी, उनके ऊपरका रंगीन दाग भी उतना ही उज्ज्वलतर होता है। जो मादा दो वा दोसे अधिक चण्डे देती हैं उनके प्रथम चण्डों पर रंगी अधिकता और परवर्ती चण्डों पर रंगको चटपटा लक्षित होती है। इन सब चण्डोंमें यदि कुछ अन्तर पड़ जाय, तो भी वे एक जातिके समझे जाते हैं। चड़ाई नामक एक प्रकारको चिड़िया (Passer montanus) के जो पूरे ६ चण्डे एक साथ देते हैं, ये सब चण्डे भिन्न भिन्न तरहके होते हैं। पश्चिम चण्डा बिलकुल सफेद होता है। इस और बुरुट मादा प्रयः १५ चण्डे देती है। इनके प्रथम प्रसृत चण्डेकी अपेक्षा शेष चण्डे अपेक्षाकृत छोटे देखे जाते हैं।

इसके बाद उन्हीं डिम्बके आधारक कठिन त्वक्की सहायता सहाय्य खादि देख कर इनका जातिगत पाठ्य का निर्देश किया है। इनका कहना है, कि उत्तर

पक्षिकाके लघुपक्षीका डिम्ब हृदि-दन्तके सह्य मध्य और उपमागा पक्षीके निकटदर्शी ग्यागतात वृद्ध-पक्षीका डिम्ब पुरपुरा और वमस्तकी तरह ब्रह्मचिह्न-युक्त होता है। ये दो माहस्यगत विभिन्नता रहने पर भी उनकी जातिगत कोई प्रयोजना देखी नहीं जाती। इसी कारण उन्हीं इस पक्षी (Ratitae)की ये योभुक्त करके विभिन्न शाखाओंमें विभक्त किया है। चण्डोंकी प्राकृति-की भिन्न भिन्न तरहसे प्राक्चयना करके भी उन्हीं इनकी प्रयोजना स्वीकार को है। पेषक (Strigidae) जातीय पक्षीका डिम्ब प्रायः गोल होता है। जिन सब पक्षियोंका डिम्ब ग्युलाकार गोल न ही कर कुछ लम्बा हो गया है, उनमेंसे कुछ Limicolae और कुछ Alci-dae शाखाभुक्त है। फिर वनकुङ्कट (Pterocleidae) जातीय पक्षियोंका चण्डा नलकी तरह बहुत कुछ गोल होता है। इसके सिवा शुकुनविदोंने डिम्बका प्राकृति-गत वैषम्य दिखा कर इनका विभिन्न जातिव निरूपण किया है। डाँडकाक (Corvus Corax) और गिल्लेमट (The guill-mot) एक प्राकृतिक होने पर भी दोनों पक्षियोंके डिम्बमें बहुत अन्तर देखनेमें आता है। डिम्बकी प्राकृतिमें ये १० इस प्रकार प्रभेद है। कादा-खोंचा (Snipe or Scolopax gallinago) और क्लक-बर्ड (Black Bird or Turdus merula) पक्षीके डिम्बमें भी इसी प्रकार असादृश्य देखा जाता है। कादा-खोंचा और Partridge (Perdix cinerea) पक्षीका डिम्ब समानाकृतिका होने पर भी इनमें विशेषता यह है कि कादाखोंचा केवल चार चण्डे प्रभव करती है, किन्तु पैटिज चिड़िया माधारणतः १२से कम प्रभव नहीं करती।

चण्डाप्रभव होनेके साथ ही ये गरमी देना प्रारम्भ करते हैं। जो बारह चण्डे पारतो वे भी प्रथमसे ही गरमी देती हैं। कोई कोई शाखाचारी (Passeres) जातीय चिड़िया डिम्ब फोड़नेके लिए १०।११ तक उबे सेवती है, अन्योन्य जातिवोंके मध्य कोई १३; कोई २१ और कोई २८ दिन तक गरमी पड़वानेके लिए चण्डोंको उन्हीं छिपाये रहती है। फिर जलचर और गिकारी पक्षियोंका डिम्ब फूटनेमें एक माससे अधिक समय लगता है। इसका

डिम्ब फूटनेमें प्रायः छः सप्ताह समय लगता है। डिम्बमें गरमो पहुँचा कर बच्चा निकालना केवल मादा पक्षीका काम है। एक जातिकी ऐसा भी पक्षी है जिसमें एकमात्र पुरुषके ऊपर यह भार सौंपा जाता है। उद्ग पक्षीगण वालुमय स्थान वा मडीकी खोद कर उसीमें डिम्ब पारते हैं और पीछे उन अण्डोंकी मट्टीसे ढक देते हैं। मिर्फ अण्डा पारना ही मादाका काम है, उनकी देखरेख नर करता है। दिनके समय वे मिट्टीके ढके हुए अण्डे सूर्यके उष्णामसे उष्ण होते हैं। शामकी मादा सा कर अण्डेकी सेवती है। कुछ पक्षी ऐसे हैं जो स्वयं अण्डे सेभना नहीं जानते। हम लोगोंके देगकी कीयल और अमेरिका महादीपकी वावबर्ड (Cowbird) दोनों ही दूसरेके जीमखीमें अण्डे देते हैं।

डिम्ब सेवनेके चार दिन बाद ही अर्थात् चौथे दिनके श्रेष्ठ भाग और पाँचवें दिनके आरम्भसे डिम्बके बीच का कुसुम और स्नायु रूपान्तरित होने लगता है, अण्डस्थ श्रावककी करोटीको गठन। सूत्रपात इसी समय होता है। पहले यह तरल पदार्थमें गाढ़ा हो कर उपास्थियमें परिणत होता है, पीछे धीरे धीरे वह करोटी मजबूत और झुरझुरी डिन्दुयुक्त मानसू पड़ती है। यह करोटी भो कुछ दिन बाद काँचवत् स्वच्छ अस्थिमें रूपान्तरित होती है। इस प्रकार क्रमशः श्राव्यकतनुसार गरमो दिनेके बाद डिम्बके भीतरमें पक्षीका गठन-प्रणाली किस प्रकार निरपादित होती है वह सङ्गमें हा समझा जा सकता है। डिम्बसे श्रावकके निकलने पर और उसकी गन्धक नालके गिर जाने पर पक्षि फूटती देख पड़ती है। किन्तु इस समय भी गरमो पानिके लिए उस श्रावक को पिता वा माताके डेनेक नोचे रहना पड़ता है। क्रमशः दो चार दिन बाद उनके शरीरमें सूक्ष्म सूक्ष्म लोम निकलने देखे जाते हैं।

सभी जीवकी शरीरके भीतर माना अण्डेकी अस्थि है—अर्थात् मस्तिष्कावरक करोटी और उसकी उपास्थि, हृत्पिण्डावरक पञ्जरास्थि, वक्ष और उदरावरक लम्बमान वृक्षास्थि प्रभृति। अण्डे फोड़ कर जब श्रावक बाहर निकलता है, तब इस अस्थिमज्जके उपरिभाग पर त्वक्की तरह सामान्य अंग लड़ा हुआ देख पड़ता है।

पिता माताके यत्नमें पालित हो कर तथा उपयुक्त चारा खा कर वह श्रावक धीरे धीरे फूट होने लगता है। क्रमशः माँमें पौ वृद्धि हो कर कठोर त्विके माथ साथ उन माँमें पौके सूक्ष्म प्लवसमूह तंत्रोवर्द्धक पदार्थका कुछ अंश डेने और पुच्छर टोर्वाकार परमें तथा कुछ अंश छुट, वक्ष और उदरस्थ छोटे छोटे परमें परिणत होता है।

पक्षियोंकी पारिष्क कशिकेकास्थिः परिचालनके कारण छटअंशके गले और पुच्छ भागमें माँमें पौकी अधिकता देखी जाती है।

उनकी वृक्षास्थि (Sternum) बहुत दूर तक फैली रहनेके कारण उदरदेशमें साधारणतः पेशीको स्वल्पता देखी जाती है। केवल कुछ माँमें पौके सूक्ष्म सुत्रपञ्चर में पेशी आच्छादक भिन्नाने सुखमें आ कर पुनः पुनः श्रोत्रिक अत्रवहारकी आवाण किया है। इन सबकी क्रमिक परिपुष्टि ही पक्षिगतिके आकाशमार्गमें विचरणका प्रधान कारण है। जिस प्रकार पक्षिगण अपने डेनेकी उच्च और निम्न कर के वायु मार्गमें गमन करते हैं, उसका पहला कारण यह है कि वायु गुणत्वको अपेक्षा पक्षीका गुरुत्व बहुत कम है और दूसरा उनको वक्षस्थ स्थित पेशीके काक-चक्षुवत् स्कास्थि (Scapulo-coraoid)के मध्य हो कर श्रावसमें ग्रथित रहनेके कारण वह प्रणयनास्थिमें मिल गई है। इसी पेशीके रहनेसे पक्षी कठिनकी तरह अपने डेने आनाभीसे उठता और फैलाता है। इनके निम्नपद और उँगलियाँ शरीरको अपेक्षा पतली होती हैं और ऊपरी भाग शरीरानुयायी मोटा होता है। यही कारण है कि पक्षिगण प्रवलीलाक्रममें त्वक्की शाखा पर पैर रख कर पौ सकते हैं।

करोटीके गर्तके मध्य ही मस्तिष्कका अवस्थान है। इसमें मस्तिष्क अन्त्या गिराएँ मस्तिष्कके दोनों पार्श्ववर्ती (अर्थात् कर्णके मस्तिष्कटस) गर्तके मध्य निहित रहती है। ये गिराएँ मस्तिष्कके भिन्नाययमें जाते समय दोनों गर्तके व्यवच्छेदक अस्थि-प्राचोरमें अनुप्रस्थ भावसे छिद्र करके उनमें मध्य हो कर गमन करता है। जितनी गिराएँ इसी प्रकार परिपुष्ट हो कर दी स्वतन्त्र चक्षुगोलकमें परिवर्तित होती है। इनके साथ मूल

सन्धिस्थिका मध्य रङ्ग पर भी दोनों चक्षुःगोनक विभिन्न रङ्गि पावरकके मध्य स्थितिस्थ है। इसके सिवा सन्धिस्थिके मध्यके गोष्ठि एक घोर भी घावदार है। इन जीवके मध्य घुठ वंशावलीको प्राग्दश रङ्गको मध्यमली प्रवेश करके हृदिको प्राग्गि हुई है। इसका मध्यभाग ज्ञानवत् सन्धिस्थिकावरक भिन्नी घोर पन्थाका छोटी छोटी गिराघोमि शाच्छादित है। यही गिराघे परस्परको सहायतामे इन्द्रियप्रदान उत्पन्न करता है।

पक्षिजातिके चक्षुकी गठनप्रणाली गोषिका, क्रम, कुम्भोर आदि सरोखवजातिके साथ बहुत कुछ मिलती सुनती है। इनका पक्षिजन्म कन्दार-रङ्ग द्वारा पूर्ण-मात्रामें चक्षुःस्यन्दनकारी सुक्ष्मसुख समूहमें निवृत्त है। यही कारण है कि ये चक्षुःपक्षको सहजमें ठठाते घोर चन्द कर सकते हैं। इसका चक्षुःगोनक चार मस्तकपेशो घोर दो ध्रुवभावापन्न सांसरोशाशो सहायतामे इच्छा-सुधार विभिन्न घोर परिचालित होता है। चक्षुःगोनक-योजकत्वक (Conjunctive के अन्वयवहित यहि-टिंगमें अधस्थित कठिन घनत्वक (Sclerotic के सामने चक्षुःरोयकी तरह गोनाकार सुक्ष्म शांशके शृङ्ग अधि-आ पात (plate) है। चक्षुःस्यन्दनके वास्तवमें तारका-सफुल्ल सुक्ष्म सुक्ष्म मांसपेशो द्वारा भावसमें समान्तर-भायम मयोजित होता है। पक्षिजातिके चक्षुके समूह-भागया चन्त्वक Sclerotic उपस्थितविगिट (Cartilaginous) है। पक्षिजातिको ही अथवेन्द्रिय वत्समान रहने पर भी उनमेंसे सभी सुन नहीं सकते कुछ जाति के पक्षो ऐसे हैं जो दूसरेका खर घोर भाषा अच्छो तरह सुन सकते घोर उमे याद रखते हैं। किन्तु कुछ पक्षो ऐसे हैं जो कुछ भी नहीं सुनते। उनके अथवविषयस्य अर्थपटल गेग कोटे छोटे परंति पाहत है, कि उनके मध्य दो कर कोड़े शब्द महजमें प्रवेश नहीं कर सकते। क्रम, कुम्भोर आदि सरोखवजातिके साथ पक्षिजातिको अथवेन्द्रियका कोई पाथ क्व देखा नहो जाता।

घीयव घोर गर्भ घन्द देखो।

पक्षोकी जिह्वाके साथ सरोखवजातिको विशेष समानता है। कुछ पक्षियोंकी जिह्वा तोराकार सुक्ष्म घोर सूक्ष्म कण्टकयुक्त है घोर कुछ पक्षो ऐसे हैं जिनके

कुम्भोरकी तरह जिह्वा नहीं होती। Totipalmatoe घोर Balaeniceps जातीय पक्षोकी जिह्वा छोटी घोर मोल होती है। Rapaces जातीय पक्षोकी जिह्वा मोठी घोर किनारेमें छटो होती है Picidae पक्षोकी जिह्वा-मूलास्थि विस्तृत करनेके कारण उनको जिह्वा भा घड़े घोर चोड़ो होती है तथा प्रकृत जिह्वापभाग तोरके फल-के जेसा घोर कण्टकमय होता है।

किसी किसी पक्षोके पन्थको उपरिस्थ पन्थान्तो प्रसारणमोल है। छोटे घोर बड़ेके भेदमे पन्थ दो प्रकारका है। सभी पक्षियोंमें हृदय पन्थ परिष्कृत-नासामें मिला हुआ है। यह स्थान पन्थावरक भिन्नी द्वारा परिष्कृत है। अधिकांश पक्षियोंके पाशाग्यके अधोभागान्तके निकटस्थ पन्थ वा पन्थ हाग घोर हृदयार एक दूसरेके सम्मुखवर्ती है। Alectoromorphus घोर Actomorphae या शर्चामें हृदय घोर गिरका (Hawk) आदि पक्षियोंके गलेको नाली बड़ी हो कर कण्ठनालीस्य पक्षियोंके खाद्याधारमें परिणत हुआ है, किन्तु पाराश-तादिके गलेको नालीमें दो छेद होते हैं। जो सब पक्षो केवलमात्र मटर गेहूँ आदि खा कर जीवनधारण करते हैं उनके वाकाग्यको भिन्नीया-विशेष परिपुष्ट होता है घोर साथ साथ उनको श्लैषिका भिन्नीका त्वक बढ कर मोटा घोर कठिन तथा खाद्य परिवारके उपयोग हो जाता है। कोई-कोई पक्षोको भी पक्षा सकता है, वे से पक्षियोंका पाकाग्य प्रसारचुणकारी पदायामें गठित है। पक्षोके जेसा पक्षिजातिके भी हादगाहूनात्मके सन्धिस्थानके छिद्रमुखमें क्रोम है। पक्षियोंको पक्षि-पूतनालीका पयाहू प्रदेग सन्धिस्थित कोपयुक्त है।

इन सब गिराघोकी सहायतामे खाद्यसमूह कण्ठ-नाली हो कर पाकाग्यमें लाया जाता है घोर वहां परि-पाक हो कर भिन्न भिन्न गिरा घोर धमनोके योगसे यह रन पचले रत्तागयमें घोर पोष्टि हृदयस्थमें प्रेरित हुआ करता है। पक्षिजाति का कुण्डल घोर घोर सन्धिस्थि कोषिका नाली हो रत्तागयका सूक्ष्मय है, जिन दो कोषोंके कुचनमे हृदकीपने रत्त पन्थास्य धमनियोंमें विचित्र होता है, वे जीव परस्पर भिन्न घोर मध्यमें वतने परतके समान पक्षिपात द्वारा विभक्त है। पक्षियोंका

हृदयैनीकीय भिक्षोपलवत् होने पर भी वह हृदयै नीर उसके चतुर्दिक्षय वायुकोपके वृद्धिंशका प्राच्छादक है।

पादाकारकी परिपुष्टिसे जिम प्रकार शरीरमें रक्षादिका मञ्जालन होता है, उसी प्रकार उक्त शिरा मन्वन्धीय कार्यप्रणालीमें उनके स्वासप्रश्वास और नाना प्रकारके स्वरका उत्पान देखा जाता है। कितने पक्षी ऐसे हैं जो केवल एक श्वर धोती हैं। जैसे—काक, पेचक, सारंग आदि। फिर कितने ऐसे भी हैं जो गीतकी तरह लययुक्त सुमिष्ट स्वर उत्पन्न करते हैं। इस पक्षियोंके मध्य हम लोगोंके देशके पयोषा, कीयल, मैना, श्यामा, मणिषा और इङ्गलैण्डका Nightingale तथा दक्षिण अमेरिकाके घण्टापक्षी (Bell-bird) आदि देखे जाते हैं। कुछ पक्षी गीत गा सकते हैं और कुछ नहीं, इसका कारण जाननेके लिये प्राणितत्त्वविदोंने जो गभीर आलोचना की है, उसका बहुत कुछ अंश उल्लेखयोग्य है। उनका कहना है कि जिन मनुष्योंको मन्हायतामें वायु फुलफुलके मध्यसे ध्वनित हो कर सुमिष्ट और सुनिर्मलध्वर उल्लिख्य होता है उसकी प्रणाली इस प्रकार है—पक्षीको छाक वा तक्षत ध्वनि कण्ठनलीमें नहीं निकलता, वरं कण्ठनलीकी निम्नस्थ श्वासनली, श्वासनली और वायुनलीके संयोगस्थान तथा केवलमात्र वायुनलीसे ध्वनि पुष्ट हो कर कण्ठनलीसे प्रकाश पाती है। Ratitae और Cathartidae (अमेरिका देशीय गृध्र) श्रेणीके केवलमात्र कण्ठनलीनलस्थ श्वास और वायुनलीसे शब्द निकलता है। हम लोगोंके देशके गायक पक्षिविशेषको प्राभ्यन्तरिक गठनप्रणाली भी उसी तरह है। काक प्रभृति पक्षियोंकी स्वरव्यञ्जिके मध्य प्रणालीगत होने पर भी वे गान नहीं कर सकते। कण्ठनलीके प्राभ्यन्तरिक छिद्रमुखमें एक सुगठित कोप है। उक्त कोपके टंका छिद्रमुखमें संलग्न है। इसके ठीक पात्रं देशमें वायुनलियां विभिन्न और फैल कर टंकाकी मध्यरेखामें अवस्थित हैं। वहां पर आवरककी एक वायुनली दूसरोंके भीतर हो कर चली गई है। इस आवरकका अग्रभाग सरल और अग्रमणिवन्ध-भिक्षो-विशिष्ट है, किन्तु इसका अग्रभाग क्रमशः उपास्थिके

आकारमें परिणत हो कर टंकाके साथ मिल गया है। इसके दूसरी ओर वायुनलीभुजके प्राभ्यन्तरिक छिद्र वन्ध्याकारमें परिणत हो कर वायुनली शान्वाके वरिहरांशमें परस्पर म्यर्ग करते हैं। इसके प्राभ्यन्तरमें स्थित स्थायक व्यूहनत्तु सञ्चित हो कर शैथिल्य भिक्षो उत्पन्न करते हैं। शैथिल्यभिक्षो और मणिष्यभिक्षोके व्यवधानमें जो गहर गठित होता है उसके मध्य हो कर फुलफुलकी वायुवृद्धिगमनक्रान्तमें उसके स्थितस्थायक पात्रं देशमें स्पन्दित और अनुकरण (Vibrating) करते हैं। इसी प्रकार कण्ठनलीके मध्य हो कर सुमिष्ट गीतस्वर निकलता है। स्थितस्थायक पात्रं देशके वितान और वायुपसारिणी श्वासनलीमध्यकी वृद्धिके अनुसार स्वरका तारतम्य धुषा करता है। उक्त शब्दोत्पादक दोना गद्गलमें मानपेयोंके सहोचरितु शब्दका तारतम्य होनेके कारण वह पेयो वाद्य और अन्तरक भेदमें दो प्रकारकी है। Alektoromorphae, Chenomorphae और Dysporomorphae आदि पक्षिजातियोंके प्राभ्यन्तर पेयो नहीं है। Coracomorphae शान्वाभुक्त पक्षीके प्रां जोड़ा प्रान्तरिक गर्भयुक्त पेयो है। वह पेयो श्वासनली और टंकाके निकटसे ले कर वायुनलीमध्य तक विस्तृत है। तोतापक्षीके तीन जोड़ा प्रान्तरिक पेयो है, किन्तु उनके व्यवधान-पावरक (Septum) नहीं है।

पक्षियोंको मूलप्रत्ययमें विभिन्नाकार बहुतेसे उपखण्ड है। मुखकोपके सर्वांग स्थित उभय पात्रं वर्त्ती गोलाकार सूक्ष्म दोनों भागों (Lobes)में इनका अण्डकोप स्थापित है। गीतकी प्रवन्तामें वह अण्डकोपभाग सङ्कुचित होता है और शैथिल्यकी अधिकतामें अर्थात् वैशाख ज्येष्ठमासमें उसको वृद्धि देखी जाती है। यही कारण है कि वे शैथिल्यकालमें अधिक सन्तान उत्पन्न करते हैं।

पक्षियोंके जिम उपायमें पर निकलते हैं, जातिभेदमें उनके मध्य भी स्वातन्त्र्य देखा जाता है। मस्तक, गला, देहपटि (अर्ध और उदरभाग), पुच्छ और पदपद आदि विभिन्न स्थानोंके पक्ष परस्पर अतन्त्र हैं। एकजातिके गलेके पर इनमें क्रमशः नीते हैं कि दूसरे किसी

पक्षीमें वैसे पर नहीं निकलते । इस कारण बहका गना विगेष पाटकी वसु घोर मूल्यावान् है । मयुरकी पुच्छ घोर कण्ठके पर सुन्दर तथा नानावर्णमें रंगे होते तथा डैनेके पर भी वंम जातिके डैनेके परकी तरह कलमके लिए विगेष पाटन हैं । काकातुषा जातीय पक्षीकी घुड़ामें घोर पारायनादिके पेरोंमें पर होते हैं । पक्षिजातिमात्रमें ही परकी विभिन्नता देखी जाती है । परकी उत्पत्ति घोर वृद्धि शरीरकी पुष्टिसे माधित होती है । प्रत्येक परकी जड़में गोशुद्धके गूदिको तरह रज-मिश्रित मांसका पन्तिल देखा जाता है ।

पक्षिगावकके गात्रमें परकी जो पर निकलते हैं वे कुछ दिन बाद झड़ जाते हैं और फिर नये पर निकल पाते हैं । पक्षिमात्र ही वर्ष भरमें एक बार अपने पुरा-तन घोर वृष्टि आदिसे नष्ट परका त्याग करते हैं और नववस्त्रपरिधानवत् उनके घुड़ामें नये पर निकल पाते हैं । माधारणतः जिस ऋतुमें जो पक्षी मन्तान उत्पादन करती है ठोक समके पशुवक्षित बाद ही उस पक्षीका पक्षत्याग हुआ करता है । इसके पलावा घोर भी दो एक ममयमें किसी किसी पक्षीको पुच्छका परित्याग करते देखा जाता है । पक्षिगण पुरातन परोंको त्याग कर नये परोंकी वयो धारण करते हैं तथा चतुष्पदियोंको स्त्रोम-वा त्याग घोर सर्प जातिको केशुभीका त्याग वयो होता है इसको घुड़ों तरह पालोचना न कर मक्षिपमें किञ्चन बदना हो कहते हैं कि उनके डैनेके परके ऊपर उनके पाकागमगममें गमनागमम घोर जीविकाजन होता है, इसी कारण उन्हें गूतन पक्षीका पाशयकता होती है । इस प्रकार उनके डैनेके नष्ट पर यदि परिवर्धित नहीं होते, तो वे चढ़ नहीं सकते, यद्यत् तक कि वे झड़वत् चर्ममूल्य ही कर विश्वजन्तुमें प्याये जाते, पयवा विगट ही लाते ।

सभी पक्षी एकवारमें पर नहीं छोड़ते । पर छोड़ने-का समय पक्षीमें ही वे डैनेके दोनो डैनेके एक एक परकी छोड़ते हैं । क्रमशः उन दोनोका जगह अब नूतन पर निकल पाते हैं तब पुनः वे दूसरे परकी इसी प्रकार छोड़ते हैं । ऐसा करनेसे उन्हें उड़नेमें किसी प्रकार की तकलीफ नहीं होती । अधिकतर पक्षीके पक्षि-

गावकगण प्रायः वर्ष भरमें प्रथम बार पर नहीं छोड़ते; किन्तु Gallinae नामक पक्षीके पक्षिगावकगण बहुत बचपनमें ही उड़ते हैं, इस कारण वे पूर्णवयस्य पक्षीके पहली ही एक बार पर छोड़नेमें बाध्य होते हैं । वंम पक्षी (Anatidae)के मध्य पूर्वोक्त प्रयागा विगेष वंम-चल्य है । ये एक ही ममयमें डैनेके पर छोड़ते हैं और प्रायः एक ऋतुकालमें उन्हें उड़नेकी क्षमता नहीं रहती । Anatinae घोर Fuligininae नामक वंमपक्षीके नामके पर जब झड़ जाते हैं, तब वे योभ्रष्ट देखनेमें लगते हैं । नूतन परके निकलने पर वे फिरसे पाकागममें चढ़ सकते हैं, किन्तु इनके मध्य Micropterus cinereus चाकके वंमगण जब इस प्रकार पर छोड़ते हैं, तब वे पाकाग-ममें चढ़ नहीं सकते । टर्मिगन नामक (Ptarmigan = Lagopus mutus) एक प्रकारका पक्षी है जो मत्तानो-त्पादक ऋतु (Breeding Season)के बाद यद्यपि नर मादा दोनो ही पक्ष त्याग करके नूतन पर धारण करते हैं, तो भी शीतमें पक्षी रक्षाके लिये शीतकालमें नूतन पर धारण करते हैं और शीतकालके वीत जाने पर फिर से तृतीय बार शीतवस्त्रका त्याग करके वसन्तऋतुमें विशिष्टवर्णयुक्त पक्षावरणमें पक्षीको टंक लेते हैं । यह परिवर्तन केवलमात्र उनके देखमन्त्र्यमें ही हुआ करता है । पुच्छ वा डैनेके पर वे त्याग नहीं करते । एक पक्षी वा जातिगत किसी किसी विभिन्न चाकके पक्षीको वर्ष भरमें दो बार पर छोड़ते देखा जाता है । जिस पक्षीमें Garden Warbler (Sylvia hortensia) वर्ष भरमें दो बार पक्ष त्याग करता है, उसे पक्षीमें Black-cap (S. atricapilla) नामक पक्षिगण वर्षके पन्डर केवल एक बार पर छोड़ा करते हैं । Emberizidae पक्षीके पक्षी भी इसी नियम का प्रतिपालन करते हैं और Motacillidae जातिके मध्य भरतपक्षी (Alaudidae) वर्ष भरमें एक बार घोर पापिट नामक पक्षी (Papits = Anthinae) वर्ष भरमें दो बार पर परिवर्तन करते हैं, किन्तु कोई भी डैने वा पुच्छके पर नहीं छोड़ते । गान्वाचारी पक्षियोंकी भी कभी कभी पक्षका त्याग करने देखा जाता है । वे ममयानुसार कभी पुच्छ, कभी गात्रके इसी प्रकार सभी स्थानों पर बदला करते हैं ।

पक्षिजातिके प्राचीन इतिहासको आलोचना करने से देखा जाता है कि एक समय इस भूगर्भमें नाना जातिके पक्षियोंका वास था। कालप्रभावसे उनके भ्रान्त-मते कुछ जातियां कहीं विलीन हो गईं हैं, उसका निरूपण करना बड़ा ही कठिन है। भारतमहासागरस्थ मरिसस (Mauritius) द्वीपमें एक समय डोडो (Dodo) नामक एक जातिके पक्षीका वास था। विगत शताब्दीमें कोई-कोई शकुनशास्त्रविद् इस पक्षीको अपने पांखोंसे देव कर उसको प्रतिक्रतिको बतला गये हैं। किन्तु वर्त्तमान शताब्दीमें इस पक्षीको सजीवताका चिह्नमात्र भी नहीं है। सृष्टिकानिहित प्रस्तरभूत पक्षियोंसे जो केवल उनके पूर्व अस्तित्वकी आलोचना की जा सकती है। इसी प्रकार कई शताब्दी पहले जो सब पक्षिकुल कुटिलकालके कवचमें पड़ कर पृथ्वीके मध्य प्रोथित हुए हैं और अभी जिनको प्रस्तरभूत पक्षिकोड़ कर एक भी सजीव पक्षी मिलनेकी सम्भावना नहीं है, वे पक्षिगण जिस श्रेणीके हो सकते हैं, शकुनशास्त्रविदोंने भूगर्भमें उत्खनित प्राचीन पक्षी जातियोंकी प्रस्तरभूत पक्षियोंके अन्तर्गत आलोचना किया है। न्यू इंग्लैण्डकी कनेकटिकट उपत्यकामें जिन सब पक्षियोंकी अस्थि पाई गई है, उनकी विशेष आलोचना करके प्राणिविदोंने उन्हें Amblyonyx, Argozoum, Brontozoum, Gallator, Ornithopus, Platypterna, Tridentipes आदि श्रेणियोंमें विभक्त किया है। कोई-कोई इनकी कुछ पक्षियोंकी सरोष्ठपजातिकी पक्षि समझते हैं। Brontozoum श्रेणीके पक्षीकी आकृति बहुत बड़ी है। इनके पदचिह्न १६ इंच हैं और एक एक पादचिह्नका व्यवधान ८ फुट है। बर्मेशियाके जिस पक्षीमें पक्षीको कुछ प्रस्तरभूत पक्षि और पक्ष संलग्न थे, उनके पुच्छकी काशिर-परिधर्म सरोष्ठपक्षी तरह तीस गठि थीं और एक एक गांठसे दो दो करके पर निश्चल हुए हैं। इस जातिके पक्षीको उन्होंने Archaeopteryx श्रेणीके अधीन रखा है। हथसिन युग (Eocene period) में हम लोग कितने पक्षियोंके हस्तान्तरे अवगत हैं। उस समयके एक हृदयकाय पक्षी (Gastornis parisiensis) की अस्थि पाई गई

है। उस पक्षीकी आकृति उड़ पक्षीकी तरह बड़ी है। इसके बाद ग्रथ (Vulture) की तरह एक प्रकारके पक्षीका प्रकाश था। वह पक्षी एमिन नामक पक्षीको अपनेका छोटा था, किन्तु दोनों ही Lithornis श्रेणी-भुक्त थे।

यामसेउटन नामक स्थानमें जहां पूर्वार्ध पक्षिजाति-श्री अस्थि थी, वहां एक और Dasornis जातीय उड़ पक्षीको करोटो पाई गई है। इस पक्षीके (Odontopteryx toliapicus) दन्तमूलमें दन्त है। इतसिन युगमें और भी प्रमथ्य पक्षियोंकी प्रोथितास्थि पाई गई है। किन्तु उनके मध्य अधिकांश पक्षीजाति वर्त्तमानकालमें देखी जाते हैं, केवल Agnopterus श्रेणीको संख्या लोप हो गई है। इस समयमें प्रोथित अमेरिकाके वीमिंग (Wyoming) शहरमें जिन सब पक्षियोंकी प्रस्तरभूत अस्थि पाई जाती है, उनमेंसे एक सरीसृपको अस्थिका वजन प्रायः चालोस इंचाएरी है। तर्षियारि सृष्टिकानिहित (Tertiary deposits) हिमालय पर्वतके निम्नस्तरमें उड़ पक्षी Struthio और Phaeton श्रेणीके हृदयाकार पक्षीकी अस्थि पाई गई है। उत्तर अमेरिकाके तर्षियारि युगके निम्नतरमें Uintornis श्रेणीके एक प्रकारके पक्षीको अस्थि पाई गई है, यह जाति भी अब विनकुल लोप हो गई। यहां माउसिन युगको जो सब अस्थि पाई जाती है, उन सब जातियोंके पक्षी अमेरिकामें आज भी मिलते हैं। इसके परवर्त्ती त्रिजसिन युग में नाना जातीय पक्षियोंकी सृष्टिकामोथित अस्थि पाई जाती है।

एकद्विज फरासोद्विगके गुहाभयन्तरमें नाना जातीय पक्षियोंका कङ्काल पाया गया है। यहां एक प्रकारके हृदयाकार वक्षजाति (Grus primigenia) की अस्थि और शुभ्र पक्ष (Snowy Owl Nyctea scandiaca) और Willow grouse (Lagopus albus) पक्षीका निदर्शन है। माल्टाद्वीपका हृदयाकार हंस (Cygnaeus falconeri) और दक्षिण अमेरिकाके सण्ड प्रदेगके Orux और Rhea नामक पक्षी उल्लेखयोग्य हैं, ग्रेजोल्स दोनों पक्षिजाति लुप्त हो गईं हैं। Rhea नामक पक्षी उड़ पक्षीकी तरह दौड़ सकता था।



हिनमाकके एक स्थानसे (Caperally-Tetrao urogallus और Great Auk or Gargowl-Alca-impennis) दो पक्षिजातिकी पर्यप्रस्तोभूत पक्षि पाई गई है। यही उस जातिके पक्षी इस देशमें नहीं मिलते। इन्होंने एक पक्षिगत नारफोक प्रदेशमें पौर इनाइदोपमें कई एक (Pelecanus) अणोके पक्षियोंकी पक्षि पाई जानी है। उनकी प्राकृति यत्मान P. onocrotalus-को प्रवेष्टा बड़ी है। मडागास्कर होपके दक्षिणार्धमें कितनी Struthio अणियोंकी पक्षिजातिकी पक्षि पाई गई है उनमेंसे हिन्नोर माइव (M. Is. Geoffroy St. Hilaire)ने १८५१ ई०में Aepyornis maximus अणोके एक पक्षीका भांडा पौर गृहमें भेज दिया था। न्यूजीलैण्डहोपमें भी नाना जातीय हृष्टदाकार पक्षीको पक्षि पाई जाती है। इस होपमें मेशरी उपनिवेश स्थापित होनेके पहले उस देशके पक्षियोंने पक्षिक पक्षियोंको मार कर खा डाला है। यहाँको Harpagornis अणोभूत शिकारी पक्षी इतने बड़े होते हैं, कि वे Dinornis अणोके पक्षीको पकड़ सकते हैं। पहले पाण्डुलिया होपमें ये पक्षी अधिक संख्यामें पाये जाते थे, किन्तु यही उनकी संख्या घिलकुन गायब हो गई है। प्रसिद्ध एसन पक्षिगण भी इसी अणोके मानी जाते हैं। ये उड़पक्षीकी तरह नहीं उड़ सकते, किन्तु दोड़नेमें बड़े तेज हैं।

पहले ही कहा जा चुका है कि कुछ जातिके पक्षीगत दो गतादीके मध्य आसके पक्षिक स्त्रोतमें लुप्त हो गये हैं। मरोसस होपमें भी दोदो (Dildus inpetus) पक्षीकी कथाका उल्लेख किया है, यह १८५१ ई०में 'बाले' काम्प्ले नामक लड़ाके मास्त्रिम वैज्ञानिक हैरो इस जातिके जीवित पक्षीको देख कर लिख गये हैं। उनके विपित कागजादि आज भी इन्डोनेशिया लाइपमें रहते हैं। इस होपके दक्षिणार्ध बोर्था राबनिपन, मेसकारिन, मास पाई होपमें ऐसे पक्षिक पक्षियोंकी निदमनाईय पाई गई हैं जिनका वंश इस संसारमें बिलकुल लुप्त हो गया है। उक्त होपके पूर्व पौर पक्षिकव्यव रङ्गिनी नामक होपमें एक पौर प्रकार (Pezophaps solitarius)को पक्षिजातिका

वास था। ये दादोने सम्पूर्ण भिन्न थे। १८८१-८२ ई०में एक निर्यामित चित्रजिनट इस पक्षीको प्रतिप्रतिकी प्रति कर गये हैं। पोछे १८८८ ई०में Edward Newton नामक किसी यूरोपवासीने इसकी पक्षि पा कर उसकी पुर्वास्तित्वका खोजा किया है। यही इस पक्षिजातिका चिह्नमात्र भी नहीं है। इसमें पक्षीवा मारिससहोपमें एक पौर प्रकारका तोता पक्षी (Lophopsittacus mauritianus) था। उसकाट १८०१ ई०में जब मारिससहोप भ्रमण करते करते पहुँचे, तब उन्होंने इस जातिके पक्षीकी जीवित देखा था। मारिसस पौर ममकारागनिन पाई होपमें पौर भी कितने तोते, चहूँ पाई नाना जातीय पक्षियोंकी पक्षिका निदमना पाया गया है। प्राणितत्त्वविदोंने उनकी स्वतन्त्र प्राण्य प्रदान की है। यहाँ Aphanapteryx जातीय एक प्रकारका पक्षी था जिसकी चोंच बहुत लम्बी थी। राबनिपन पौर रङ्गिनीहोपमें एक समय नाना जातीय पक्षियोंका वास था। धीरे धीरे वे सब पक्षी लुप्तप्राय होते जा रहे हैं। प्रायः ४० वर्ष पहले Starling (Fregilupus varius) नामक पक्षी जीवित था। एतद्विषय एक प्रकारका छोटा पक्षिक (Athena murivora), बड़ा तोता (Necropsittacus rodericanus) इस प्रकारका घूँघूँ और एक जातिका बक (Ardea megacephala) Miserythrus liguati नामक नाना जातीय पक्षीकी एक समय उक्त होपमें जीवित थे वरुण इस लोग भ्रमणकारियोंकी तात्कामे जानते हैं। फ्रांसोपक्षिक गेथडेलोप पौर माटिनिक होपमें एक विभिन्न अणियोंके पक्षी (Psittaci) ५०१६० वर्ष पहले जीवित थे, किन्तु उनमेंसे आज एक भी देखनेमें नहीं आता। लाब्रेडर देशय हृष्टदाकार हंस (Somateria labradora) प्रायः सत्तर वर्ष पहले योन्सवटलुमें सेण्टकारिक पौर लाब्रेडरके मेदागमें विपणन करते थे। जब उक्त अधिक पक्षीकी थी, तब ये इस स्थानको छोड़ कर ममा-स्तोविया, न्यूजाप्लिक पाई दक्षिणदिक्क संय-प्रधान देशमें भाग जाते थे। यगामादि मांसभुक् चतु-प्यंद प्राणीमें ये पक्षी पंडोकी रक्षा करनेके लिए पक्षी-मय छोटे छोटे होपमें चण्डादि प्रवेश करते थे। विश्व

जन्तुमें पक्षीको वचाये रखने पर भी वे मनुष्यके छात्रोंमें पक्षीको वचा नहीं सकते हैं । शौतुकप्रिय मानवीनि गिकार करनेकी शक्तिप्राप्तमें इस उभयव्यक्तिको उच्छेद कर डाला, किन्तु किमीने इस चीर ध्यान न दिया कि ऐसा करनेसे यह उभयजाति मदायें लिए इस मध्यभूमिकी कौटुक करनेकी जायगी । १८५८ ई०में कर्नल वेडरवारनू हालिफाकस मन्दरमें इस पक्षीको देख कर उल्लेख कर गए हैं । फिलिपपोपके एक जातीय तोता पक्षी (Nestor productus) विगत कई वर्षोंमें मध्य क्षेत्र ही गये हैं । इस प्रकार जिनमें पक्षी ऐसे हैं जिनको संख्या एक देशमें ही रहने पर भी दूसरे किमी न किमी देशमें उभयजातिको संख्या प्राप्त भी लक्षित होती है । जैसे पक्षी (Capercally) नामक पक्षी आयरलैण्ड और स्कॉटलैण्डमें देखा जाता था, किन्तु अभी आयरलैण्डमें इस जातिके एक भी पक्षी नहीं मिलता ।

किन्तु प्रकार इन सब पक्षी जातियोंका ध्वंस हुआ, उसके प्रकृत कारणका पता लगाना कठिन है । लेकिन अनुमान किया जाता है कि इन सब क्षेत्रोंमें श्वान्य स्थानोंसे जब मनुष्य वास करने आये, तब उनके वासोपयोगी स्थान वनानिके लिए घास घासके भाङ्ग-जङ्गल जला दिए गए । ऐसा करनेमें कितने पक्षी जल मरे और जो कुछ बच रहे वे सुमध्य यूरोपवासियोंके गिकार वन गये ।

एतद्भिन्न नाना देशीय पौराणिक ग्रन्थोंमें बहुतसे पक्षियोंका उल्लेख है जिनके स्मृतिचिह्नके निवा और कोई निदर्शन नहीं मिलता है । हिन्दुओंके पुराणमें गण्डपक्षी, रामायणकी जटायु, जेन्दोका इरीय, पारस्य वासियोंका रुक और शाहसुर्ग, अरबवासियोंका अड्डा तुर्कीमानोंका काकिस, इजिप्त और शोर्कीका फिनिस, एशियासियोंका यरूशमिल और जापानवासियोंके किरनी नामक पक्षि प्राचीन पक्षियोंका उल्लेख देखा जाता है ।

पृथ्वीके प्रायः सभी स्थानोंमें पक्षिजातिका वास है, किन्तु देश और जलवायुके पार्यव्याप्तुसार पक्षिजातियोंमें कितनी विभिन्नता देखी जाती है । यही कारण है कि यकूनशास्त्रविदोंने सारी पृथ्वीको छः भागों (Re-

gion) में विभक्त किया है और एक एक भागके मध्य भी भिन्न भिन्न विभाग (Subregion) कर पक्षिजातिका यथा विभाग निर्धारित किया है । एक एक Region और सोमा उन्हीं पक्षाय और द्वाविमान्तर द्वारा निर्दिष्ट किया है, -

१। अष्ट्रेलियन (अष्ट्रेलिया अर्थात् भारतमहासागरके सभी द्वीप इस यथा (Group)में निवद्ध हैं।) इसके मध्य चार उपविभाग (Subregion) हैं:—(क) (Papuan Subregion) अर्थात् पूर्वा द्वीपसमूहके अन्तर्गत मलक्का, सिलबिस आदि द्वीपजात पक्षी। (ख) Australian subregion अर्थात् अष्ट्रेलिया द्वीपसमूहके अन्तर्गत तासमानिया (Tasmania or Van Diemen's Land) आदि स्थानजात पक्षी। इस द्वीपके अन्तर्गत सभी पक्षियोंको अर्थात् कृष्णवर्ण हंस (Black Swan) विशेष उल्लेखयोग्य है। (ग) Polynesian subregion अर्थात् पालिनेशिय द्वीपसमूहके अन्तर्गत विभिन्न द्वीपजात पक्षी। (घ) New Zealand Subregion अर्थात् न्यूजीलैण्ड द्वीप और तत्पार्श्ववर्ती लार्ड होई, नारफोको, कार्माडोक, च्याम, आकलैण्ड आदि द्वीपजात पक्षी।

२। न्यूट्रिक्वाल—अर्थात् समस्त दक्षिण अमेरिका हरन अन्तर्गते ले कर पनामायोजक तक तथा उत्तर अमेरिकाके २२ उत्तर अक्षांश और फर्नलेण्ड तथा वेष्ट इण्डीज द्वीप समूह। इसके मध्य फिर दो उपविभाग (Sub-region) है, -

३। नोवार्टिक—अर्थात् अटलन्टिक महासागरके उत्तर अक्षांशके निकटवर्ती स्थानसमूह। कालिफोर्निया, कनेडा, अल्बर्टा आदि स्थान इन्हींके अन्तर्गत है।

४। पैलियोार्टिक (Palearctic)—अर्थात् अफ्रीकाके उत्तरार्ध, समग्र यूरोप, आइसलैण्ड, स्पिट्सबर्ग, भूमध्यसागरस्थदी, एशियामहाद्वार, पेरसियन, पारस्य, अफगानिस्तान और हिमालय पर्वतके उत्तरस्थित समुदाय एशियाखण्ड। स्थानभेदसे इसके मो कई एक विभाग किए गये हैं—(क) European, (ख) Mediterranean, (ग) Mongolian, (घ) Siberian समूह।

५। इन्डियविद्युत्—पर्यात् वर्षारी राज्य छोड़ कर ममस्त पक्षि है, रेपभाई होय मडगारकर, निविनिम, मकोडा, परब पादि स्थान । इसके मध्य—(क) Libyan, (ख) Guinean, (ग) Caffrarian, (घ) Mosambican, (ङ) Madagascarian.

इण्डियन—पर्यात् भारतवर्ष और तन्विकटवर्षी सिङ्गल, सुमात्रा, मलका, फर्मासा, हेनाम, कोचीन, चीन, ब्राह्म, ग्राम पादि देगजात । फिर इसके मध्य भो कितने स्वतन्त्र वाक वा Sub-region हैं:—(क) Himalo-chinese, (ख) Indian पर्यात् भारतवर्ष के पन्तर्गत राज-पूताना, मानव, छोटानागपुर, सिङ्गल पादि स्थान । (ग) Malayan पर्यात् किनियाधन होयपुत्र, मलय उप-दोप, बोर्नियो, सुमात्रा, जावा, वायो पादि दोप ।

प्राणितत्त्वविदोंने जो छः श्रेणोविभाग किये हैं, उनको पालोचना करनेमें देखा जाता है, कि उन छहोंके एक एक भाग (Region)-में कितने पक्षियोंको श्रेणो वा याक है, ये प्रायः एक दूसरेके समान हैं और उन सब पक्षियोंकी श्रेणो वा याकमें इतनी विभिन्नता है कि उसको विस्मृत पालोचना करना मिलकुल असम्भव है । पहले जो लिखा जा चुका है कि चील (Kites) जातिका पक्षो स्थानभेदमें विभिन्न प्रकारका है । उन नाना-स्थानजात एक जातिके पक्षियोंका, पाकारगत बंल-सख्य देन कर उन्हें विभिन्न वाकके पन्तर्गत करके विभिन्न विभिन्न श्रेणोमें अभिहित किया गया है,— जिस प्रकार Casuarinus श्रेणो वा जातिगत पक्षिगण विभिन्न स्थानवासो हैं और उन उन स्थानके जलवायु-सेवी हो कर विभिन्न पाकार धारण करते हैं, उसी प्रकार उनके नाममें भी वृथकता देखो जातो है—

पक्षिजाति	स्थान
C. galentus ...	Ceram
C. Papuanus ...	Northern New guinea
C. Westermanni ...	Jobie Island
C. Uniappendiculatus ...	New guinea
C. Picticollis ...	Sonth New guinea
C. beccarii ...	Wokun, Ara Island
C. Bicarunculatus ...	Aru Island

C. australis ...	North Australia
C. Bennetti ...	New Britain

इस प्रकार देखा जाता है कि प्रत्येक पक्षिजातिका एक पृथक् पृथक् नाम है । विस्तार हो जानिके भयसे उन सबका समोचन नहीं किया गया । ऋतु-परिवर्तन के साथ ही साथ पक्षियोंका वास-परिवर्तन हुआ करता है । कुछ जातिके पक्षो ऐसे हैं जो एक ऋतुको पसन्द करते हैं और जब एक देगमें उन ऋतुका परिवर्तन हो कर एक दूसरी ऋतुका प्रागमन होता है, तब वे उस स्थानको छोड़ कर अपने पन्तर्गत ऋतु-युक्त स्थानमें फिर चले जाते हैं । कोकिल पादि पक्षिगण यन्तर्गतिय हैं । जब इस देगमें घसन्तका प्रागमन होता है, तब कोकिल जातिका भी पन्तर्गत होता है । फिर जब घसन्तकाल चला जाता है और शीतऋतु पातो है, तब उक्त पक्षियोंका वास भी बदल जाता है पर्यात् कोकिल पक्षो इस देगको छोड़ कर यन्तर्गत स्थानको चले जाते हैं । इसी प्रकार चील जातिमें एक बंलसख्य देखा जाता है । शीत-शीतोष्ण ऋतुमें इस जातिके पक्षो हम लोगिके देगमें चले जाते हैं, किन्तु वर्षाके पारम्भ होते ही इनको मर्यादा धीरे धीरे कम होने लगती है । इसका कारण यह है कि शीतजातिके पक्षो वर्षाकासके पक्षगतो नहीं हैं । हम लोगिके देगमें प्रयाद है कि शायकका चूल्हा हमेशा जलता रहता है, पक्षि वर्षाकालमें वह प्रायः बुझ जातो है, इसी प्रायदासे विद्युत् भगवान् चीलीकी चपती रसा करनेका प्रादेग देते हैं, यही कारण है कि चील पक्षो वर्षाके पारम्भ होते ही उसो देगमें चले जाते हैं । उत्तरी अमेरिकाके शोर (Shore) नामक पक्षो कभी कभी इन्तर्गत और मोरबेके पक्षि कुलमें पाते देखे जाते हैं । पत्तना शीतप्राधान देगमें (High Northern latitudes) इनको मादा यन्तर्गतोपादन करती है । उत्तर-देगमें उनके चले जानैका यही कारण है । इस समय उत्तर पटलाण्टिक महासागरमें हवा जोरोंसे बहती है । उन पक्षियों वायुमें कितने पक्षो अपने अभीष्ट पक्षमें जाते नहीं पाते और वायुके भीरोंसे वे जिब्रर तिधर जा लगते हैं । एतद्दिग्गं कुछ श्रेणोके पक्षो ऐसे हैं जो

केवल श्रोतकारों ने दिखाई देते हैं। आज गिकर आदि पक्षियों की इसी श्रेणीके अन्तर्गत ले सकते हैं। शरत्-कालमें श्यामल वस्यवेत्रसमूह शोभित होने लगता है, तब माना जातिके पक्षी या कर धान्यादि शस्य खाते हैं। इनमेंसे बलुई नामक एक प्रकारका छोटा पक्षी है जो केवल धानकी नष्ट करनेके लिए खाता है। इस समयके सिखा वे किसी और समयमें दिखाई नहीं पड़ते। इङ्ग्लैण्ड-देगमें भी इसी प्रकार Swallow, Nightingale, Cuckow, Corncrake, Song-thrush, Red breast आदि पक्षी भी ऋतुकी विभिन्नताके अनुसार स्थान परिवर्तन करते हैं। कोई कोई अनुमान करते हैं, कि केवल ऋतुके प्राख्यानुसार ही वे स्थानपरिवर्तन करते हैं, 'सो नहीं,' सम्भवतः उम समय उन सब स्थानोंमें खाद्यके उपयोगी खाद्यादि नहीं मिलनेके कारण वे स्थानपरिवर्तन करनेको बाध्य होते हैं।

ग्युगिनो, अरुदोप, मिसन, मानवतो आदि ह.पपुच्छमें एक जातिके पक्षीका धास है जिनके शरीरके पर इतने सुन्दर और चञ्चल होते तथा इस प्रकार मजि रहते हैं कि उन्हें देखनेमें हो यत्र अवश्य खोकार करना होगा कि वे सभी पक्षियोंके राजा हैं। गजुनगाम्नादिनां इन पक्षीको शाखाचारी ( Passeres ) श्रेणीभुक्त किया है। इस पक्षीको अरुदोपवानी 'बुरङ्गमति', अरुदोपवासो 'मानुषदेवता' और मलयवार्धा 'बुरङ्गदेवता' कहते हैं। आलोन्दाज वणिकगण जब पहली पहल इस द्वीपमें आये, तो उन्हेंने पक्षीके आकृतिगत सौन्दर्यसे आकृष्ट हो कर इसका Birds of Paradise अर्थात् देवपक्षी वा नन्दनपक्षी नाम रखा। द्वीपवासियोंका विश्वास है, कि इस जातिके पक्षिगण स्वर्गधाममें मर्त्य पुरुषों भाते हैं और कुछ काल, यहाँ ठहर कर जब हृदं हो जाते, तब मृत्युका आगमन जान कर वे पुनः स्वर्गको चले जाते हैं। किन्तु मनुष्य-जगतमें रह कर उनका शरीर भारा-क्रान्त हो जाता है। इस कारण वे ऊपर उठ कर जमीन पर गिर पड़ते और विनष्ट हो जाते हैं। इन पक्षियोंकी परस्पर विभिन्नतासे तथा डेने और पुच्छ आदिके परोंको सुन्दरतासे इनके मध्य विभिन्न श्रेणियों की सृष्टि हुई है। पहली श्रेणीका विश्वास था, कि

द्वीपवासो जो मय नृत पक्षी यूरोपीय वणिकोंके हाथ बेचते थे वे अपने इच्छानुसार उनके पैर काट डालते थे। इन पक्षियोंमें जो पक्षीके जंभे वर्ण पिगिट और बड़े ( Paradisea apoda ) होते, जो कुछ छोटे ( Paradisea minor ) होते वे तथा राजनन्दनपक्षी ( Cicinnurus regius ) और लानवर्णके नन्दनपक्षी ( P. rubra ) Paradiseidae familyके अन्तर्गत हैं एवं जिन सब पक्षियोंको चीन अपेक्षाकृत लम्बी जरद-वर्णकी ( Seleucidia alba ) होती, वे Epimachid- dal family-के अन्तर्गत माने गए हैं। इनमेंसे किननोंके पुच्छके पर रस्सीके समान ( Semioptera wallacei ) होते हैं।

वायिकगण समुद्रपथ ही कर चलते समय मङ्गाभाग वज्रमें भी अनेक पक्षियोंके दर्शन करते हैं, किन्तु वे किस देशके रहनेवाले हैं, इसका आज तक भी निर्णय नहीं हुआ। उन पक्षियोंमें तिमिपक्षी ( Prion Desolatus ), नटनपक्षी ( OEstreinta-Lessonii ) और Black-night Hawk प्रभृति पक्षी ही उल्लेखयोग्य हैं।

प्रापितत्वविदोंने विश्वीय गवेषणाके साथ पक्षियोंकी इनको गठनके पार्थक्यानुसार प्रायः ३३० प्रधान जातियों वा श्रेणियोंमें विभक्त किया है।

पक्षोन्म ( स० पु० ) पक्षिपु इन्द्रः यं ठः । १ पक्षियेत्त, गरुड । २ जटापु ।

पक्षोश्वर ( स० पु० ) पक्षिर्णा ईश्वरः । गरुड ।

पक्षेष्टि ( स० वि० ) १ पाक्षिक, एक पक्षमें होनेवाला । ( पु० ) २ पाक्षिक भाग, यह यज्ञ जो प्रति पक्ष किया जाय ।

पक्षु ( स० वि० ) पक्ष-स्तु ( ग्लान्धाश्वात्पक्षपक्षपरिस्त्रुः स्तुः । उग्रशेष ) पानकर्त्ता, पोनेवाला ।

पक्ष ( हि० पु० ) पक्षिको विरनो, वरानी ।

पक्षकोप ( स० पु० ) सुश्रुतेषु नेत्ररोगभेद, आँखकी विरनो या पलकोंका एक रोग ।

पक्षघात ( स० पु० ) पक्षगत नेत्ररोगभेद । पक्षवध-रोग ।

पक्षन् ( स० क्तो० ) पक्षान्ते परिश्रुतान् आतपतापादि-कमनेन पक्षकरणे मनिन् । १ बलिनोम, नेत्राच्छादकलोम, आँखकी विरनी, वरानी । २ पक्षादिका केशर । ३ घृता-

दिका बह्य भाग । ४ चगाटिका पच, गहत् ।  
 पन्मपकोप ( मं० त्रि० ) पन्मकोपरोगभेद ।  
 पन्मल ( मं० त्रि० ) पन्मन् निधादित्वात् मत्वर्थे इत्तच् ।  
 पन्मयुक्त ।  
 पन्माच ( मं० त्रि० ) पन्मकोप-रोगभेद ।  
 पन्मार्ग ( मं० स्त्री० ) नेत्रपक्षाग्रं रोग ।  
 पन्मोत्सङ्ग ( सं० पु० ) पन्मगोचरोग ।  
 पन्मर ( मं० त्रि० ) पच दिगादित्वात् यत् ( वा ४।३।५४ )  
 पक्षोप, पचायनम्बी ।  
 परांड ( हिं० पु० ) पातंड देखो ।  
 पखंडो ( हिं० वि० ) गखंडो देखो ।  
 पख ( हिं० स्त्री० ) १ ऊपरसे घ्ययं बड़ाई हुई बात,  
 तुरा । २ ऊपरसे बड़ाई हुई गर्त, बाधकनियम, पड़ंगा ।  
 ३ भगड़ा, बखेड़ा, भंभट । ४ घूटि, दोप, तुकम ।  
 पखडो ( हिं० स्त्री० ) फूलोंका रंगोन पटल जो खिन्ने-  
 के पक्षसे पावरणके रूपमें गर्भ या वरागकेघरको घाँरी  
 घोरसे बन्द किये रहता है घोर खिन्न पर फेला रहता  
 है, पुष्पटल ।  
 पखनारो ( हिं० स्त्री० ) चिह्निका पंगुको छठो । इसे  
 जुनाड़े टरकीके छिदमें तिनी रोकनेके लिए लगाते हैं ।  
 पखवान ( हिं० पु० ) एक प्रकारका चाभुपण जिसे पैर-  
 में पहनते हैं । इसे कौरे कौरे पाँवपोश भी कहते हैं ।  
 पखराना ( हिं० लि० ) पखारनेका काम करना, धुन-  
 याना ।  
 पखरो ( हिं० स्त्री० ) पंखरी और पाखर देखो ।  
 पखरेत ( हिं० पु० ) वह छोड़ा, घैल या हाथी जिस पर  
 लोहेको पाखर पड़ो हो ।  
 पखरोटा ( हिं० पु० ) वह पानका बीड़ा जो सोने या  
 चाँदीके बर्कसे लपेटा हुआ हो ।  
 पखवाड़ा ( हिं० पु० ) पखरा देखो ।  
 पखवारा ( हिं० पु० ) १ मञ्जीमेके १५-१५ दिनके दो  
 विभागोंमेंसे कौरे एक । २ पन्द्रह दिनका समय ।  
 पखावज ( हिं० पु० ) पखारज देखो ।  
 पखाटा ( हिं० पु० ) धनुषका कोना ।  
 पखाना ( हिं० पु० ) कटा, कड़ावत, कहनून, मसम ।  
 पखारना ( हिं० लि० ) धानीमें सैल पादि माफ करना,  
 धोकर साफ करना, धोना ।

पखान—ऐटरावादके मित्रामराज्यके पखान एक बड़ा  
 शूद्र या जनाशय । भुवदिमाप १२ वर्ग मील है । इसके  
 चारों घोरका घेरा करीब २५ कोम होगा । इसकेतीन  
 घोर छोटे छोटे पहाड़ हैं घोर एक घोर करीब १ मील  
 लम्बा एक बाँध है । जनजी गहराई प्रायः ४० फुट है ।  
 इस छदमें बहुतसे मत्स्यादि जीव घोर जंगली हाथो  
 देखे जाते हैं ।  
 पखान ( हिं० स्त्री० ) १ पानो भरनेकी बँसके चमड़ेकी  
 बनी हुई बड़ी मगक । २ धौकनी ।  
 पखानपेटिया ( हिं० पु० ) १ वह जिसका पेट पखानको  
 तरह बड़ा हो, बड़े पेटवाना । २ वह खादनी औ बहुत  
 खाता हो, पेट ।  
 पखानी -सुखलमान प्रांतिका एक सम्प्रदाय । पखान  
 या मगकमें पानो भर कर टोना ही इनको प्रधान उपजो-  
 विका है । ये लोग पड़ने हिन्दू थे, वल्लि महिसुरके राजा  
 ऐटरपनोसे ( १०११-१२ ई०के मध्य ) सुखलमानो-  
 धर्ममें दोषित हुए । ये लोग स्व-सम्प्रदायके मध्य दक्षिण  
 हिन्दुस्तानो भाषामें घोर पखान्य मनुष्योंके साथ सराठो  
 घोर कनाहो भाषामें बातचीत करते हैं । पुत्र्य दंडकाय  
 घोर सुखल होते तथा स्त्रियाँ अपेक्षाकृत पतलो, कानो  
 घोर पुत्र्यके बराबर लम्बी होती हैं । बाल सुढ़वाने भी  
 दाढ़ी रखनेकी प्रथा इन लोगोंमें प्रचलित है । इच्छानु-  
 सार कौरे-कौरे दाहो भी ०टाते हैं । स्त्री-पुत्र्य दोनों ही  
 स्वभावतः परिष्कार घोर परिच्छुल्ल होती हैं । पूनाके  
 पखानो कुछ उपरिष्कार रखते हैं । ये लोग पखान या  
 मगकका जल ईसाई, सुखलमान, पारसी तथा निम्न-  
 श्रेणीके हिन्दुओंके यहाँ भेष कर अपने पचना गुजारा  
 करते हैं । इस प्रकार ये मञ्जीमें १५से २० ६० तक  
 उपाजन कर लेते हैं । घारघारके पखानो पायलत पाना-  
 मल होते, किन्तु साधारणतः खसुर ही ताहो पोना हो  
 पसन्द करते हैं । सामाजिक भगड़ा निवटानेके लिए  
 इनमें एक 'पेटक' या घोधरो कहलाता है ।  
 ये लोग खानिको श्रेणीके सुनो सम्प्रदायमुख हैं,  
 किन्तु कौरे भी कथमा नशो पड़ता घोर न मसबिद भी  
 जाता है । पर नो सुखलमानको तरह ये लोग भी स्व-  
 सेद कराने हैं । कथन स्वप्रातिके मध्य हो विषाद-गारो

चलती हैं। सुषलमान होने पर भी वे लोग हिन्दू के त्योहारों में उत्सव आदि करते हैं और इसे वे अपना कर्त्तव्य कार्य समझते हैं। आग्निनमंत्रोंकी दृग्दृष्टा उत्सवों में वे हिन्दू का साथ देते हैं। धारवाँड़, सतारा, पूना, शोलापुर बीजापुर आदि दक्षिणात्यके प्रधान प्रधान नगरोंमें इनका नाम है। इनका दूसरा नाम भिष्टो भी है।

पखावज (हिं० प्लो०) मृदङ्गसे छोटा एक प्रकारका वाजा।

पखावजो (हिं० पु०) यह जो पखावज बजाता हो।

पखियां (हिं० पु०) भंगड़ांजू, मखिया मचानेवाला।

पखुडो (हिं० प्लो०) पखड़ी देखो।

पखुवां (हिं० पु०) भुजमूलका पार्श्व, बाँटिका यह भाग जो किनारे वा बगलमें पड़ता है।

पखेद (हिं० पु०) पखो, चिड़िया।

पखेव (हिं० पु०) गाय वा भैंसका वह खाना जो घस्रा जनने पर छः दिन तक उसे दिया जाता है। इसमें सोठ, गुड़, इनदी, मँगरेला और लडका पाटा होता है।

पखोषा (हिं० पु०) पंख, पर।

पखौटा (हिं० पु०) १ डेना, पर। २ मछलीका पर।

पखोड़ा (हिं० पु०) पंखोरा देखो।

पखोण्डा (सं० पु०) पल्लपोड वृक्ष, एक पेड़का नाम।

पखोरा (हिं० पु०) स्तम्भ और भुजदण्डकी मन्थि, कंधे परको ढब्डी।

पग (हिं० पु०) १ पैर, पाव। २ गमन करनेमें एक स्थानसे दूसरे स्थान पर पैर रखने को क्रियाको समाप्ति, डग, फाल। ३ जिस स्थानसे पैर उठता जाय और जिस स्थान पर रखा जाय, दोनोंके बीचको दूरी, डग, फाल।

पगडंडो (हिं० प्लो०) जल या मोदानमें वह पतला रास्ता जो लोगोंके चलते चलते बन गया हो।

पगड़ी (हिं० प्लो०) लणीय, पाग, चोरा, साफा।

पगतरो (हिं० प्लो०) जूता।

पगदाकी (हिं० प्लो०) १ जूता। २ खड़ाऊँ।

पगमा (हिं० प्लो०) १ रस्सेके साथ परिपक्व होकर मिलाया, शरबत या शोरेमें इस प्रकार पकना कि शरबत या शीरा चारों ओर लिपट ओर छुन जाय। २ पत्थर, बहुरत्न

जोना, किसीके प्रेममें लुप्तता, मग्न होना। ३ रस आदिके साथ शीतप्रोत होना, मग्नता।

पगनियां (हिं० प्लो०) जूती।

पगयान (हिं० पु०) एक आभूषण जो परमें पहना जाता है। इसे कोई कोई पलानो या गोडसंकर भी कहते हैं।

पगरना (हिं० पु०) सोने चाँदीके नक्शाओंका एक औजार। यह औजार नक्शाशी करते समय गूदा बनानेके काममें आता है।

पगरो (हिं० प्लो०) पगड़ी देखो।

पगना (हिं० पु०) पागल देखो।

पगड़ा (हिं० पु०) पशु बांधनेको रस्से, निर्राव, पषा।

पगा (हिं० पु०) दुपट्टा, पटका।

पगान १ लक्ष ब्रह्मदेशके मेमनसिंह जिलेका एक उपविभाग। इसमें पगान, सेल और खोकपदौड़ नामके तीन गहर लगते हैं।

२ उत्तम उपविभागका एक सदर। यह पश्चा० २०° ५३' से २१° २०' उ० और देशा० ८४° ४८' से ८५° १६' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ५२२ वर्ग मील और जनसंख्या करीब साठ हजार है।

३ ब्रह्मदेशके पश्चिममें एक प्राचीन नगर। यह पश्चा० २१° १०' उ० और देशा० ८४° ५३' पू० इरान बतौ नदीके बाएँ किनारे अवस्थित है। जनसंख्या छः हजारसे ऊपर है। वर्त्तमान राजधानीके दक्षिणपूर्वमें प्रायः ३ कोस तक प्राचीन पगानका ध्वंसावशेष पड़ा है। इसके ठीक पश्चात्प्रागमें शायीवेण्डिन नामक गिरिमाता रहनेके कारण नदी किनारेसे एकका दृश्य देखनेमें बहुत मनोरम लगता था। केवल मन्दिरादिके लोभे शिखर छोड़ कर कोई भी नजरको रोकता नहीं था। कथेन द्वित सावबने विशेष पर्यालोचना करके देखा है कि इस पश्यपरिसर सुदूर नगरमें एक समय हजार मन्दिर शोभा पाते थे। सभा मन्दिर हिन्दू और बौद्धधर्मके परिचायक रहे। अनौरथ सीमन नामक किसी बौद्धने जब यहाँ बौद्धमत फैलाया, तब उन्होंने मत्स्यसारा बौद्धनिघांतुनके मन्दिरादिके पशुकर्णमें गड़ा बहुतेके मन्दिर बनवाये। ५औं शताब्दीके शेष भागमें यह नगर राज

धानीके रूपमें गिना जाने लगा। यहाँकी गिनतानिधि देखनेमें मानूम पहला है कि ८५०-८५८ में कर १२३० यत्नाब्दी तक यह नगर विविध दसत दगावे था। इसा-यना नदीके किनारे ब्रह्मकी पुरातन राजधानीके उत्तर प्राचीन पगाल नगर अवस्थित है। १२८५ ई. में हुसैन खाने राजत्वशामने सुगलमेताने था कर इस नगरकी लहस नहम कर डाला।

पगाना (हिं० पु०) १ पाननेका काम करना। २ चतुरक करना, मन्त्र करना।

पगार—मध्यप्रदेशके होन्हाधाट जिलान्तर्गत एक छोटा राज्य। यह म्हादेवपर्वतके ऊपर बसा हुआ है। पर्वत पर जो मन्दिर है उसीके पंढरिमें एक यहाँके सरदार है।

पार (हिं० पु०) १ पैरोंमें कूचनी हुई मटो। कौचक या गारा। २ वह पानी या नदी जिसे पैदल चल कर पार कर सकें, पायाव। ३ ऐसी वस्तु जिसे पैरोंमें कूचल सकें। ४ वेतल, तुलसी।

पगह (फा० स्त्री०) यात्रा चारण करनेका समय, भीर, साहस।

पगुरना (हिं० क्रि०) १ पगुर करना, जुगानी करना। २ हजम कर जाना, डकार जाना, नि जाना।

पगा (हिं० पु०) पीतल या लोहा गनानेकी घण्टा, पागा।

पगो—पुत्रभागवामी भोजनानिधी एक गाथा। दे भोग पद-विच्छेदा अनुमरण करके चौर चौर खनीकी बहुत दूरमें भी एकदू संकता है।

पगा (हिं० पु०) वह रक्षा जो गणों के लोके पादि-कोपायोके लक्षेके बाधा जाता है। दीरकी बाधनेकी मोटो रक्षी।

पगाम (हिं० पु०) एक प्रकारका बहुत कड़ा मोर। पंचयना (हिं० क्रि०) निचयना देना।

पघेया (हिं० पु०) गणों के पादिमें घूम घूम कर मास के चनेवासा व्यापार।

पह (सं० पु० बन्धो) १ चने व्यापार के लिये या चनेल पंच-पञ्च, कुत्तक। २ कर्दम कौचक, कोन। ३ पानके माथ मिना हुआ पीतले योग्य पदार्थ, सेव। ४ पंच, १।

पहकर्वट (सं० पु०) पहलु कर्वट, मनोहर। जन्मदुष्ट पद, पागोके माथ मिना हुआ पीतले योग्य पदार्थ। पहकीर (सं० पु०) पहमियः कीरः पचिविघोषः। कौच-टिक पत्ती, टिटिकरी नामकी विट्पिया।

पहमीक (सं० पु०) पहल पहन या लोड़ति पह कीक-पच। १ गूकर, सुपर। (त्रि०) २ कर्दमपेसक, कौचकमें रेशनेवाला।

पह कीकनक (सं० पु०) पहकीक स्याधं कर्। गूकर, सुपर।

पहगक (सं० पु०) पहल स्थितो गकः। मन्त्रविघोष, एक प्रकारकी छोटी मकली।

पहगति (सं० स्त्री०) पहल गतिपेसः। पहगक मन्त्र, एक प्रकारकी छोटी मकली।

पहपाव (सं० पु०) पहल स्थितो पावः। जलप्रभुभेद, मगर।

पहज (सं० बन्धो) पहल पहला जायने पह-जन् कर्त्त-टि। १ पद्य, कमल। (त्रि०) २ कौचकमें छपव होने-वाला।

पहजकन (सं० स्त्री०) पहल जन्म यन्त्र। पद्य, कमल। पहजकन (सं० पु०) पहल जन्म उत्पत्तिस्थानं यन्त्र।

१ ब्रह्मा, पद्मयोनि। पहजराम (सं० पु०) पद्मरामपि।

पहजवाटिका (सं० स्त्री०) तरु पचरोका एक सन्-वृत्त। इसके प्रत्येक चरणमें एक भगवत्, एक सगवत्, दो जगवत् चौर चरुमें एक सप्त होता है। इसका दूसरा नाम एकावली चौर कञ्जावली भी है।

पहजात (सं० पु०) १ भृशराजसुप। २ पद्य, कमल। पहजावली (सं० स्त्री०) १ हन्धोभेद। २ पद्मसमूह।

पहजासम (सं० पु०) ब्रह्मा। पहजित् (सं० पु०) गकके एक सुतका नाम।

पहजिनी (सं० स्त्री०) पहजागि सन्तारामा इति रनि (पुत्रवादिमो रेते। पा ५। २। १५५) १ पद्माकर, कमलाकर। २ कमलिनो, कमलहृत्। ३ पद्मसमूह, कमलका टेर।

पहप (सं० पु०) मांसादिनिमित्तके पापाचारदमके कचः कसही यन्त्र स, पयोदरादिरामु माधुः। पकव, शयराशय, चाखारका घर।

पङ्कदिवसं शरीर ( सं० पु० ) १ दानवभेद, एक दानवका नाम । २ कर्दमाक्ष देह, कीचड़से भरा हुआ शरीर ।  
पङ्कदिग्धाङ्ग ( सं० पु० ) कुमारानुचरभेद, कार्तिकेयके एक अनुचरका नाम ।

पङ्कधूम ( सं० पु० ) नरकभेद; जैनियोंके एक नरकका नाम ।

पङ्कपर्वटी ( सं० स्त्री० ) सौराष्ट्रस्थितिका, गोपीचन्दन ।

पङ्कप्रभा ( सं० स्त्री० ) पङ्कस्य प्रभा प्रकारो यस्य । कर्दमयुक्त नरकविशेष, कीचड़में भरी हुए एक नरकका नाम ।

पङ्कमण्डूक ( सं० पु० ) पङ्के मण्डूक इव । १ शम्बूक, घोंघा । २ जलपङ्क्ति, छोटी मीप, सुतही ।

पङ्कबद्ध ( सं० स्त्री० ) पङ्के रोहतीति पङ्क-बद्ध-क्तिप् । पङ्क, कमल ।

पङ्कना—देवायलोनर्णित मक्षभूमस्य एक नदी । बह विष्णुपुरसे दो कोस उत्तरमें प्रवाहित है ।

पङ्कान् ( सं० त्रि० ) पङ्कः विद्यतेऽस्य, पङ्क-मत्तुप, अस्य वा । कर्दमयुक्त, कीचड़से भरा ।

पङ्कवारि ( सं० स्त्री० ) कार्ष्णिक, काँजो ।

पङ्कवास ( सं० पु० ) पङ्के वासो यस्य । १ ककूट, लेकड़ा । २ मत्स्यादि, मछली खादि ।

पङ्कशक्ति ( सं० स्त्री० ) पङ्के स्थिता या शक्तिः । १ जल-शक्तिभेद, तालमें होनेवाली मीप, सुतही । २ शम्बूक, घोंघा ।

पङ्कशूरण ( सं० पु० ) पङ्के शूरण इव । शम्बूक, घोंघा । २ पद्मकन्द ।

पङ्कहार ( सं० पु० ) पङ्कसृच्छति पङ्कं प्राप्य भङ्गते इति यावत् पङ्क-भ्रष्ट इवमन्ते षण् । १ जलज हलविशेष, एक बड़े जो गड़होंके कीचड़में होता है । इस पोथीमें स्त्री और सुषप दो अलग आसियां होती हैं । २ सँघाल, सवार । ३ सेतु, पुल । ४ सोपान, सीढ़ी । ५ बाँध । ६ जल-कुञ्जर, सिंघाड़ा ।

पङ्किल ( सं० त्रि० ) पङ्कोऽस्त्वस्मिन् पङ्क-इसच् ( होमादि-पामादिपिच्छादिभ्यः षनेऽबः । पा ५।२।१०० ) सकर्दम, जिसमें कीचड़ हो, कीचड़वाला । पर्याय—घनजवाच, पङ्कयुक्त, कर्दमाश्रित ।

पङ्कज ( सं० स्त्री० ) पङ्के जायते इति जन-उ ( सप्तम्यां षनेर्ह । पा ३।२।८० ) इति सप्तम्यां षण् । पद्म, कमल ।

पङ्करोह ( सं० स्त्री० ) पङ्के रोहतीति पङ्क-रोह क ततो सप्तम्यां षण् । १ पद्म, कमल । ( पु० ) २ मागसपत्नी । पङ्केशय ( सं० त्रि० ) पङ्के श्येति शो-षच्, ततः सप्तम्यां षण् । १ पङ्कशायो, पङ्कमें रहनेवाला । स्त्री० ) २ शनैका, जीक ।

पङ्कश्रि ( सं० स्त्री० ) पङ्कते व्यञ्जोक्तिर्यते श्रेणोविशेषेणिति यावत् पञ्चि—श्रिक्तिरुचि-श्रिन्, इदित्वाच्सू वा पङ्कश्रिति विश्वायति पञ्च विस्तारि क्तिच् । १ मन्त्रातीय मंस्थान-विशेष, श्रेणो, पाँती, कसाग, नाशन । २ माग-वीथी, शालि, भावलि, श्रेणी, वीथि, पालो, पावनी पाँता, श्रेणि, शरणि, सन्तति, विश्वोलो, पालि, पाला, वीथिका २ पञ्चाक्षरपादक हन्दीविशेष, एक वर्षोत्तत जिनके प्रत्येक अक्षरमें पाँच पाँच अक्षर अर्थात् एक अगण और अन्तमें दो गुण होते हैं । भागवतमें लिखा है—

“अजनावाः पङ्कितवृत्तानां इहती प्राणनोऽनवर ।”  
( ३।१।४६ )

मन्त्राधि पङ्क्ति और प्राणसे बहती सप्तम्य इह है । १ द्वागक्षरपादकहन्दीविशेष, एक वर्षोत्तत जिनके प्रत्येक अक्षरमें पाँच पाँच अक्षर होते हैं । ४ द्वागमस्थ, दमका अदद । ५ पृथ्वी । ६ गौरव । ७ भोजनमें एक साथ बँट कर खानियालीको श्रेणो । हिन्दू याधारके प्रनुमार पतित आदिके साथ एक पङ्क्तिमें बँट कर भोजन करने का निषेध है ।

“न संवरेष्वेव पतितेन चापह्लासैर्न पुत्रकरी; ।  
न मूर्ध्निर्नावलितैश्च नान्मूर्ध्निर्नाया वषाशिमिः ॥  
एकपशुग्रन्थे पङ्क्तिर्मापङ्कयकामनिधनम् ।  
यात्रनाभ्यापने योनिस्त्वेषिह सद् भोवन्मू ह  
सद्वाप्यामश्नु दशमः सद्वाजानमेव च ।  
एवादाध पङ्कितिया दोषाः शङ्कर्यनगिताः ॥”

( श्लो० १५ अ० )

पतित, पञ्चाल, नीच और मुर्ख आदिके साथ साथ, एक आमन पर बैठना, एक साथ श्राना, घनका घजन, अश्यापन प्रभृति दूषणीय है । यह दोष स्वरक प्रकारका



६ । एक पंक्तिमें बैठ कर यदि एक दूसरेको स्पर्श कर चयन करम और चयनयनधान रहे, तो पंक्ति-सादृश्य होय नहीं लगता ।

'एक संक्षुभ्रिहा ये न हृत्पुत्रि परदारम् ।  
मरुता नमसोऽस्ति न मेदां गच्छो मवेत् ॥  
मरुता नमसोऽस्ति न मेदां गच्छो मवेत् ॥

८ सेनामें दण्ड दण्ड घोडाघोडो योयो । ९ कुलोप-  
प्राप्तिको योयो ।

पञ्चिकरुद्रक ( मं० पु० ) पञ्चिको एकपञ्चिको कपटक-  
रुद्रक । पञ्चिकरुद्रक ।

पञ्चिकता ( मं० स्त्री० ) योयो, पातो ।

पञ्चिकरुद्रक ( मं० स्त्री० ) पञ्चिक-रुद्रक पञ्चिकरुद्रक चिप ।  
योयोवद ।

पञ्चिकीय ( मं० पु० ) पञ्चिकः दशमंशिकाश्रीता यस्य ।  
रायण ।

पञ्चिकधर ( मं० पु० ) पञ्चिकः योयोवदः सन् चतुर्थाति-  
पंक्ति-धर । कुररपत्तो ।

पञ्चिकरुद्रक ( मं० स्त्री० ) किसी कल्पद्रु, टोप पाटिके धारण-  
जातिनी योयोमे धारण किया हुआ, धारणरुद्रके निजाना-  
हुया ।

पञ्चिकरुद्रक ( मं० पु० ) पंक्ति एकपंक्ति भीमने दृश्यति-  
दृष्टि-पण्य । पञ्चिकरुद्रक ।

पञ्चिकरुद्रक ( मं० पु० ) आदकाने भीमनार्थमुपदिष्टानो-  
वतस्तानामो ब्राह्मणानां पंक्ति योयो दृश्यति या, पंक्ति-  
रुद्रक कर्त्तारि-रुद्रक । चवाङ्कुर्ये, आदकानेनानां-  
ब्राह्मण, एवा ब्राह्मण जिनके माथ पंक्तिमें बैठ कर भीमन-  
नहीं कर सकते । उपपुराणके रुद्रसंस्कृत १५ अध्याय-  
में लिखा है—किसक, भृङ्गक, यज्ञारोगी, पशुपालक,  
निराक्रान्ति, काममेध, वादेविक, गायक, सयं विजयी,  
पगारदाही, गरद, कुण्डगो, मोमविक्रयो, मामुद्रिक,  
राजदूत, तैमिक, ऋष्यारक, विनाके माथ विवाहकारो,  
चमिगन, स्तंभ, मिमोपकोही, मित्रहोषी, धारदारिक,  
परिवृत्ति, दुषमा, मुहताप्य, कुमालय, देगनक, मद्यो-  
पकोही, मद्यट, मद्यकगामो और मिमके घां उपवति-  
जाता जाता हो, ये सब ब्राह्मण चवाङ्कुर्ये है ।

जिम भाद्रमें मुहताप्य और दुषमा भीमकता है,

सम आदमें विदग्ध भोजन नहीं करते और वह प्राण-  
निष्कल होता है । जो ब्राह्मण मुद्राको उपदेग देते हैं,  
एवं भी आदमें विनाना नहीं पाविते ।

(पञ्चु० १२५०० १५ अ०)

मनुमंहितामें पञ्चिकरुद्रक विषय इस प्रकार-  
लिखा :—

होयता, नास्तिकता, ब्राह्मणरोका चमचयन, चम-  
रोग, द्यूतक्रीडा, मद्युयाग, निकिसा, प्रतिमापरिचर्या,  
देवता ब्राह्मणका कार्य, मोमविक्रय, चाक्रिय, याम या  
राजाका सरकारो कार्य, कृतित, मन्त्रोप, शाश्वतन,  
गुरुके प्रतिशुभाचार, श्रोत शौर समाप्त, एमिगरीयाग  
एवं कुशीट, यज्ञारोग, दान, गो प्रसूति पशुपालन, पञ्च-  
महायज्ञ नहीं करना, ब्रह्महत्या, परिवृत्ति, माधुविक्रय  
निये छान्द्र धनाटिका उपभोग, नर्तन या गायगादिभक्ति,  
स्त्रोमस्यक द्वारा ब्रह्मचर्यहानि, चमचर्या-विधाक, शूद्रा-  
विवाह और जिनको जाया हा उपवति है, जिनके लेका  
बेट पढ़ाना, शूद्रनी पढ़ाना, निष्ठुरवधय, जारहोदय,  
पिता माता और मुहजानका भक्षण परिचय, पतिनके  
माथ चयननादि और कल्याणनादि द्वारा मद्यन,  
प्राणनामके निये विष प्रदान, मोमविक्रय, मद्युद्रयाया,  
स्तुतिवादादि द्वारा जीविका, जिनके निये तिनादि योज-  
पेयन, तुलामान या सेव्यादिविषय, द्यूतक्रीडा नहीं  
जानने पर भी, पर्व टै कर दूसरे द्वारा क्रीडा, मद्यपान,  
पापगेम, उपवेग, दण्ड पादिका रमयिकय, धनुक और  
मरुनिमोन, एवेताभिमोका विवाह हुए विना कनिहा-  
भिमोका प विषय, मित्रहोष, चमचमार, मद्यनाना,  
श्रोतकुष्ठ, चक्राद और चन्धरोग, यदनिष्ठा, हस्तो, गो,  
पञ्च और उद्रका दहन या घातन, नक्षत्रादिको मद्यन,  
सेतुगिटादि द्वारा प्रवचनान श्रोतका चमचोप, मामुविया,  
शौरवकाय, जिनभोगी हो कर हजारापन, क्रीडा दिग्गमि-  
के निये कुङ्कुर पालन, अन्वेषणके माधुविक्रयादि द्वारा  
जीविकानिर्वाह, कल्याणमदन, दिसा, शूद्रमिया, नाना  
जातीय मोह-यात्रकता, चवाङ्कुर्यता, चमचकारमें  
निन्दकाक, स्वयं हवि द्वारा जीविकानिर्वाह, दयाप  
दारा रजसुदेह, मामुविको दिव्य, परपूर्वी चमच-  
एक बार विवाह हो मुद्रा है यथा ब्राह्मण विरहे पादि-

प्रशङ्गा, धनग्रहण करके शववहन और ब्राह्मणनिन्दित-  
चार, जिन ब्राह्मणों के उपरोक्त कोई दोष है, वे पंक्ति-  
प्रवेशके श्योष्य हैं, अर्थात् ये एक पंक्तिमें बैठ कर  
भोजन नहीं कर सकते। अतएव इन प्रकारके ब्राह्मण  
घण्टाज्ञेय या पंक्तिदूषक कहलाते हैं। आदिमें इन सब  
गोष्ठियोंको भोजन करानेमें बह आह्वानिष्फल होता  
है। (मनु ३ अ०)

पंक्तिदूषकका विषय हेमाद्रि आह्वानमें विशेष  
रूपमें लिखा है।

पंक्तिपावन ( सं० पु० ) पङ्क्ति आजीवनके भोजन-  
योपविष्टानां वेदविद्याविशारदानां ब्राह्मणानां श्रेणो  
पुनरति पश्यति वा पङ्क्ति पाविष्युः । १ श्रेणोपवित्र-  
कर्ता, बह ब्राह्मण जिनको यज्ञादिमें तुलाना, भोजन  
कराना और दान देना श्रेष्ठ माना गया है।

पद्मपुराणमें लिखा है—

“इमे हि मनुजप्रेष्ठ । विज्ञेयाः पंक्तिपावनाः ।

विधारेदमरनाता ब्राह्मणाः सर्व एव हि ॥

सदाचारपराश्रय विज्ञेयाः पंक्तिपावनाः ।

मातापित्रोर्गैश्च श्रेयसो दक्षपृथक् ॥

ऋतुकालाभिगमो च धर्मपरनीयुः सदा ।

वेदविद्याभनसनातो विप्रः पंक्ति पुनरयुत ॥”

(पद्मपुराण स्वर्गख० ३५ अ०) एषादि

वेदविद् ब्राह्मण, जो सदाचारपरायण है, जो पिता  
और माताके श्रेयोभूत है, अत्रिथ और जो ऋतुकालमें  
धर्मपत्नीमें उपगत रहते है, स्वधर्मपरायण, वेदादि-  
पारग और स्यातक ये सब ब्राह्मण पंक्तिको पवित्र करते  
हैं। सत्यवादी, धर्मशील, स्वर्गनिरत, तीर्थजायी,  
पत्नीधो, अचपल, चान्द, दान्त, जितेन्द्रिय, भूतोके  
दित्तकारक, ऐसी ब्राह्मणोंको दान देनेसे प्रचय फल  
प्राप्त होता है और ये ही पंक्तिपावन कहलाते हैं। जिन  
के किसी प्रकारका दोषाघात नहीं है, अर्थात् पहले  
पंक्तिदूषककी जगह जिन सब दोषोंका उल्लेख किया  
गया है, वे ही दोषरहित ब्राह्मण पंक्तिपावन हैं। २  
पश्चान्निष्ठस्थ, बह ब्राह्मण जो पश्चान्निष्ठ ही।  
पङ्क्तिवद्ध ( सं० त्रि० ) श्रेणोपवित्र, पंक्तिमें लगा हुआ,  
कारणमें बंधा हुआ।

पङ्क्तिरथ ( सं० पु० ) पङ्क्तिपु द्यसु दिक्षु गतो रथो  
यस्य । राजा दगरथ ।

“अशोभनायां महाराजः पुरा पंक्तिरथो बली ।

तस्यायनो रामचन्द्रः सर्वेश्वरैर्योगिभिः ॥”

(पद्मपुराण पानासखण्ड०) (शु० ८।७४)

पङ्क्तिराधर ( सं० त्रि० ) ब्राह्मणोक्त इविष्युक्त्यादि  
द्वारा मसृह यज्ञ ।

पङ्क्तिवाह्य ( सं० त्रि० ) जातिशून्य, पंगतिमें निकलना  
हुआ।

पङ्क्तिश्रेण ( सं० पु० ) पंक्तिभूतानि वीजानि यस्य । १  
वधूरशुभ, बबूल । २ आरम्भयज्ञ, उरमा । ३ कर्मिका-  
यज्ञ, कर्मिकार ।

पङ्खी—चट्टणाम पावत्वमदेशवासी जातिविशेष । गङ्गानदी-  
के पूर्वी किनारे बोझोङ्ग-प्रदेशकी कर्णफुल्लो नदीके किनारे  
तीन ग्रामोंमें ये अधिक संख्यामें पाये जाते हैं। यहाँके  
वनयोगी जातिके लोग भी अपनेकी इसी वंशके बतलाते  
हैं। इनका कहना है, कि दोनों ही जाति एक पिताको  
दो सन्तानमें उत्पन्न हुई हैं—एक पुत्रका वंश पङ्खी और  
दूसरेका वंश वनयोगी कहलाता है। इन दो जातियोंको  
भाषा, आचारव्यवहार और रीतिनीति प्रायः एक-मो है।  
ये लोग अपनेकी ब्रह्मके शानवशोद्भव बतलाते हैं। दोनों  
जातियोंमें फर्क इतना ही है कि वनयोगी लोग मस्तक-  
के अग्रभागमें झुंडा धाँवते हैं और पङ्खी लोग मस्तकके  
पचाहागमें ।

जगत्की उत्पत्तिके विषयमें इन लोगोंके मध्य एक  
आयय ग्रहण प्रचलित है। इनके पूर्वपुरुषोंके वंशमें  
रत्नोन्दोकवा नामक एक राजा हुए। वे विशेष चमता-  
वान् थे। उनका विवाह किसी एक देवकन्यामें हुआ  
था। एक समय इन पर्वत प्रदेशमें प्राग लगी। देव-  
कन्याकी सलाहमें पर्वतवासिगण मनुद्वारास्य समतल  
क्षेत्रमें स्तर पाये और तमोमें वे निम्नप्रदेशमें रहने लगे  
हैं। इनका कहना है, कि पहले सभी जीवजन्तु वात  
चोत कर सकते थे। एक दिन सबने मिल कर देव-  
कन्याके मांस खानेकी मांगा, इस पर देवबालाने भग-  
वान्को बह कर जीवोंको वाक्पंक्ति हरण कर ली।  
तमोमें शेष पुनः हत्याजनित कष्ट बोल कर। प्रकाश कर

नहीं मकते। पचने पोर जीवि' यही दो इनके कुन-  
देवता है।

पहले इन लोगो'में नरइत्या प्रचलित थी। पधो  
पं'गोरज गमन'गट'उठोर शाननमे वड बोभस व्यापार  
प'द कर दिया गया है। इनमें कोरे पर्व' नहीं होता,  
लेवन धानकी कटनीके समय ये लोग विविध पामोट  
प्रमोट करते हैं। वनयोगी लोग शवदेहको गाड़ देते  
हैं, जनाते नहीं।

पद्मपाल ( टिड्डी )—पद्मपाल ज्ञातिविशेष, टिड्डी। प्राचि-  
तत्वविदोंने इन्हे (Orthoptera) पर्याय प्रकृत छेनेके  
वपरिभागस्य कठिन पाच्छादनयुक्त घोर लम्फनशील  
(Saltatoria) वननाया है। उन्हे'ने Gryllidae  
घोर Locustidae नामक दो ज्ञाति गमन'पाका सिटिंग  
पर पुगः इनके सध पनेक अणियोंका विभाग किया  
है। इनके पयाद्यागके घेर साधारणतः शरीरकी अपेक्षा  
बड़े होते हैं। इन्हीं घेरोंके ऊपर शरीरका कुन भार  
दे'कर ये उड़ते फूटते हैं। किन्तु सामनेके घेर अपेक्षा-  
कृत छोटे होते हैं। सप्ताकके सामने सुनकी तरह बड़त  
बारीक कड़े बाल रहते हैं उन्हींमे इनका श्वस'प्राप्त  
होता है। अस्यान्य पतनी'को तरह इनकी देखवटि भी  
तोत भागो'में विभक्त है, यथा—मस्तक, पृथ घोर उदर।  
गुरुकायि भी तोत अणियों'में पावत है। इनके छेने  
पेटमे भी अधिक जोड़े होते हैं घोर उनके जठर'में जो  
कठिन टट्टिया (Elytra) होते हैं, उन्हींके परस्पर  
ग'घर्षणमे पुद्मपालित एक प्रकारका धरुणुट गण्ट करतो  
है। यह गण्ट पोठ पर जो अणि है उन्हीमे उत्पन्न  
होता है। नरके पाक्षारमे साटाके पाक्षार'में, बहुत एक  
पड़ा।



पद्मपाल।

विशेष दिशिमें इन पद्मपाल आतिका विभिन्न नाम  
देखा जाता है। विचारमें टिड्डी, धा पद्मपाल, उद्गामा'में

भिष्टिडी, परभमें जरद घोर जरद-उन-बडग, पाइभे  
कसिटी, प्रायमें Sautorelle, जर्म'में Heuschrecke,  
घोसमें Ophreomachez, बिहुमें चारगोल, चारवे, इटलीमें  
Locusta, पद्म'रीमें locust, पोल्'गीजमें Logosta,  
स्पेनमें Lango-la, वारभमें माइग मन्व, मन्व-र-  
इनाल, मन्व-इ-इराम, मन्व-र-दरियाई पाटि पनेक  
नाम पाए जाते हैं।

व्याज, वर्ष घोर पाकृतिके तारतम्यानुसार इनमें भी  
अ'चोविभाग हुए हैं।

( १ ) इन्हे उद्देगका सवृज रंगका पद्मपाल (Ac-  
rida viridi-sima) प्रायः दो इच्छ मन्वा होता है।

( २ ) पद्मपाल अ'थेके मध्य Gryllus migra to-  
rius साधारणतः बड़े होते हैं। ये पनेक समय एक  
एक जिना नष्ट कर डालते हैं।

( ३ ) उद्गोभाको भिष्टको प्रायः १ इच्छ मन्वी  
होती है।

( ४ ) Phymates punctata देखनेमें बड़े हो  
सुन्दर होते हैं। इनके पेटका तलभाग लाल घोर वल-  
भाग जरद तथा झोझू रंगका होता है। इन आतिका  
छोटे छोटे कोट भी लकके विविध आनिकारक हैं।

( ५ ) अक्रिका घोर अणियाके टलिका'में Acry-  
dium (Oedipoda) migratorium देखनेमें एक  
रंगके, छेनेका कठिन पावक पच्छ, पांश घोर सफेद  
तथा घेर लालपन लिए पोले रंगके होते हैं। ये शून्-  
साग'में प्रायः १८ मील उड़ सकते हैं।

( ६ ) गिनार' प्रदेगका Gryllus gregarius।

( ७ ) A. peregrinum नाम घोर पोले रंगके होते  
घोर शानोमण्ड तथा भारतके अस्यान्य व्यालो'में कमी  
कमो देख जाते हैं।

( ८ ) Acrydium limole वागटाटके वाजार'में  
आतिका लिए वि'कते हैं।

( ९ ) Oedipoda migratoria प्राय'को राजधानी  
घेरसमे नि कर वारसकी राजधानी इत्याहन तक घोर  
मध्य अक्रिका'मे नि कर तातर तकके सभी व्यालो'में  
पा कर कभी कभी पसमकी बड़ी आन गढ़'वाते हैं।  
उद्देगिया हाव'में जो मध पद्मपाल देखे जाते हैं, ये

Tetragonia जातिके हैं। ये केवल छत्रके ऊपर घूमते और पत्रादि खाते हैं। जातिभेदसे कोई सख, कोई नारंगी रंगका और कोई काला होता है। इनके जाल-वत् सूक्ष्म त्वक्-विशिष्ट पर सुन्दर इन्द्रधनुषके रंगोंमें रंगी होते हैं।

पद्मपालका उपद्रव चिरप्रसिद्ध है। जिस समय इनका टल नान बादलको घटाके समान समझ कर चलता है उस समय आकाशमें अश्वकार-भा हो जाता है और मार्गके पेड़, पौधे तथा खेतोंमें पत्तियां नहीं रह पातीं। जिन जिन प्रदेशोंसे हो कर ये चलते हैं, उनको फसलको नष्ट करते जाते हैं। शास्त्रमें दुर्भिक्ष और मारो-भय जैसे दो वस्तु निराकरण अत्यय है, वे भा हो पद्मपाल-पतन भी दुर्लक्षण और दैवघटित उपद्रवसमूहका निदर्शन है। दुर्भिक्षके साथ इनका समागम भी दुष्प्रा करता है। इतिहासमें इनके भूरि भूरि प्रमाण लिखे हैं। संस्कृत भाषामें इस जातिका पद्म 'शलभ' नामसे प्रसिद्ध है। अतिवृष्टि, अनावृष्टि, भूमिबन्ध, जनस्रावण जिस प्रकार दुर्भिक्षादि प्रलक्षणका पूर्वलक्षण है, पद्मपालका आगमन भी उसी प्रकार जानना चाहिये। पद्मपाल और मृषिका आदिका उपद्रव राज्यके धर्मज्ञको सूचना करता है। हिन्दूशास्त्रमें लिखा है—

"अतिवृष्टिरानुष्टिः शलभा मृषिकाः खगाः।

प्रशासनाय राजानः वधेतातयः ह्युताः ॥"

( कामन्दक १३:६३-६४ )

महाभारतमें लिखा है, कि शलभ दन्तके खरधारसे जिस प्रकार पेड़ों वा पौधोंको काट डालते हैं, शलुंमके सुतीक्ष्ण वाणसे भी शत्रुओंको वधो हो दया हुई थी।

( विराटपर्व ४६:४ )

प्राचान समयमें भी शलभोंका उपद्रव सर्वजन विदित था, इसमें सन्देह नहीं। रामायणमें भी वाणके साथ शलभकी तुलना की गई है। इसके अलावा वायुश्लमें भी ईसाजन्मके बहुत पहले पद्मपालके भोयण उपद्रवकी कथा लिखी है। १८०६ ई०में अमेरिकाके हामो राज्यमें पद्मपालका उपद्रव दूर करनेके अभिप्रायसे प्रजाकी ईश्वरकी स्तवस्तुति करनेकी आशा हुई थी। पद्मपालकी अक्षय्य दुर्भिक्षार्थ है। जिस स्थान हो

कर पद्मपाल चढ़ते हैं, वहां काला मुंहुवाला कोड़ा देखा जाता है। दिनके समय ये सब कीड़े बहुत कीटे देख पड़ते हैं। रातको वे धानके पौधों पर चढ़ जाते और सिरको जमीनमें काट गिराते हैं। इसी प्रकारके कुछ कीड़ोंको पकड़ कर देखा गया है कि ८१० दिनके बाद ही उनका आकार बड़ा हो जाता और तब ठोक बड़े फाँटोंसे देखनेमें लगते हैं। मादा खुले मैदानमें गड्डे बना कर षंडे देती हैं। जिम खेतको हलसे मट्टी अलग कर दो गई है, उसी नरम स्थानमें वे प्रायः षंडे देना पसन्द करती हैं। प्रत्येक गड्डेमें प्रायः ५०-६० षंडे रहते हैं। टांगनिक अरिष्टलज्जा कचना है, कि वे शोनकानमें (पर्याप्त अग्रभूतसे अन्नभरणमासमें) षंडेको जमीनके अन्दर रखती हैं। वसन्तकालमें उन षंडोंके फूट जाने पर शावककोड़े बाहर निकल आते हैं। प्रसवके बाद मादाके सदरसे रालको तरह एक प्रकारकी श्लेष्मा निकलती है। उसीमें वे षंडोंको बचाये रखते हैं। षंडेके फूटने पर कोड़े जमीनके बाहर निकलते हैं। पीछे उन्हें पूर्णाङ्ग होनेमें प्रायः छेड़ दो मास लगते हैं। जिम खेतमें गेहूँकी खेती होती है उस खेतमें पद्मपालके षंडोंसे अधिक कोड़े निकलते हैं, किन्तु मरसोंके खेतमें २।५से अधिक कोड़े कभी भी निकलते नहीं देखे जाते। ये सभी प्रकारकी फसल, कच्ची और सूखी पत्तियां, पेड़की सुखी छाल और लकड़ो, कागज, रुई, पशुमोने वस्त्र, यहाँ तक कि मीड़ोंकी पीठ पर बैठ कर उसके शरीर परकी पशम भी खा डालते हैं। तमाकू, कच्चा फल, मृतपत्ती, धातुर आदि इनके विशेष उपोद्रेय हैं। साँप, बिल्ली, बेंग, सूअर तथा नाना जातिके पत्तों इनके विषम शत्रु हैं। षंडे वा कोड़े पानेसे ही वे उसी समय निगल जाते हैं। इनके षंडोंको यदि नष्ट करना चाहें, तो आसानीसे कर सकते हैं। इससे मट्टीको उलटा देनेसे अथवा जमीन पर मिट्टीका तेल छिड़क देनेसे प्रायः सभी षंडे नष्ट हो जाते हैं। पद्मपालके आक्रमणसे खेतकी रक्षा करनेके और भी कितने उपाय हैं जिनका उल्लेख करना निष्प्रयोजन है।

अति प्राचीनकालसे ही यहटा आदि पाषाण्य जातियोंके मध्य पद्मपाल खाद्यपदार्थमें व्यवहृत होते था

रसा है। पट्टनी लीग में बन साठ. पट्टवान राते है। ये लीग दुर्ग सुत घोर भयवन्त्रेति मानते है। बुभुक्षुके मुमयमाग भी पर प्राणिका पट्टवान र्थाते है। परशु-भामौ लवणते गिह कर मन्त्रन या भवेति प्राय परवा पागमे प्रना कर दमे प्राते है। मरकोवासो मी पट्टवान यो भुन कर प्राते है। यद्यपि साधारमे सुभा एषा पट्ट-वान् विहना है। चक्रिना, रुम, चमोरिका, परिवा, दधिचोपिण, ब्रह्म घोर पाराशान प्रादि द्रुमधामियां-के मे कीरे प्रभाकर, कीरे भुन कर कीरे मसामे प्रादि दान कर दमे प्राते है। पट्टवान विनिवत्त वर्षतको यद्वारावी घोर भगिस्थानो मे रहते है।

पट्ट ( सं० पु० ) चन्द्रित गतिवैक्यं प्राप्नोतीति चन्द्रि गतिवैक्यो या दृसकात् सु । तदा अक्षय त्वे जस्य मादिसः तुम् च (बाहुल्यकारणः प्रजयोःपयो गुणानन्दश्च । उन् १।१०) र मनेचर, गनिवद्व । २ परिप्राट्, परि-प्राजक ।

‘निधाय एवमे दस्य निपूनाकारणय च ।  
 योजनान्तरं वारि मन्त्रे पट्ट देव मः ॥’  
 (विद्यापति)

१ मातव्याधिपयोग, वादयोगना एक मेट । यद्यक-का मत है कि यमरने रहनेवाला वायु ऊर्ध्वाका नमको एकद्व कर निकोह देता है जिसमे रागोके परे मिजुहू जाते है और यह चल फिर नहीं सकता। यमने देओ। (वि०) ४ पञ्च, संगड़ा। रमका पर्याय त्राव घोर लङ्गाशंग है।

पट्ट ( सं० पु० ) १ मद्याटिपण्डवर्षित एक भोम-वर्णोप रासा। ये मरकतोभक्त ये तथा चन्द्रिन् (चक्रिन्) राशके घोरसमे लवण दृप मे। विद्यामित इनका गौरव था। चन्द्रशीत रहनेके कारण इनका पट्ट नाम पड़ा था। चरणपट्टके परामर्शमे इन्होंने चनेकी मर्यादा काटे चारपाक नामक एक पुत्र प्राप किया था।

(कदाचि १।१२ सं०)

२ चन्द्रा-मीप एक राजा, आसमानके पुत्र ।  
 पट्ट, पाठि कन् । पट्ट, संगड़ा।  
 विभिन्न देओमे इम पति क द्योमीया एव होय । मर-वा प्राता है। विचारमे कपुली लण्ड मुद घोर मुदनी

गमक म्यु या प्राता दे, तव यह होय माता प्राता है। पट्ट, पाठ ( सं० पु० ) १ मकर नामक जलजन्तु, मकर । २ मकरराशि।

पट्टता ( सं० स्त्री० ) पट्टीभाव, पट्ट-तन्-टाप । पट्टुत्त, संगड़ापन ।

पट्टत्वधारिणो ( सं० स्त्री० ) पट्टुत्वं इति पट्टुत्त्व-ध-विनि द्विवा होय । मिगुहोपुप, चंगोमी।

पट्टुन ( सं० पु० ) १ शक्रवर्षं चान्, मकेट रंगका घोड़ा । २ परण्डवच, पंडोका पेड़। (वि०) १ पट्टु, संगड़ा।

पट्टुष्वधारिणो ( सं० स्त्री० ) घियनेन पट्टुत्वं पट्टुत्वं इति द्व-विनि। मिगुहोपुप, चंगोमी।

पच ( सं० वि० ) पचति या पच्-पच् (भेदभक्तिपरिचयो ह्युत्पिबयः। ग १।१।१४।) पाककर्त्ता, रसोरे प्रमान-याला ।

पचक ( वि० पु० ) काश्मीरप्रात एक प्रकारके मुक्तको जड़ ‘Cassiphu’, ‘Aucklandia’ । स्थानीयदेम दमके विभिन्न नाम देते प्राते है, यथा—मंस्कन घोर चन्द्रना कुठ घोर कुहू, परम कुठ-र हिन्दू, कुठ-र-परवी, याक्-‘Kurt Kustus’, हिन्दो-वचक, कुट, कुर्रेत, माटिन ‘Costus Arabica’, ममय पचा, मिंवल, मन्मदभम, विरोयभावामि—कुठा, मन्मयु—चन्द्रना प्रभृति; इनके पेड़ माधारवतः ४।५ फाय लम्बे प्राते है। चायिन कानि कमासमे इनकी जड़ चूँट चूँट कर बड़े बड़े शकरीने भेजी प्राता है। चीनशाशा पूव पुँते भी जगा इमको जड़को जगामे घो मुगभामे विमोहित हो प्राते है। ये लीग दमके कामोदीपक गुण वलनाते है।

पचकता ( वि० वि० ) विकला देओ।  
 पचकवर्षान ( वि० पु० ) पट्टकवर्षान देओ।  
 पचभना ( वि० वि० ) जिसमे पाँच चूँट या मंजिन हो।  
 पचमुभा ( वि० वि० ) पच मुभा, पाँच मुभा, पाँच बार पचिक।

पचपच ( वि० पु० ) मंगन, तुध, मुद, यक्त घोर गतिव-मयूव ।

पचदा ( वि० पु० ) इपय, भवीदा, भंभेट । ३ पावनी या भवान्के टङ्का एक प्रकारका मीत । इसमे पाँच पाँच पराचिटे टङ्के होती है।

पचत ( सं० पु० ) पचतीति पच-पतच्. ( मूहयिगत्रिपदि पचमितभिनभिहयोऽतच्. उण्. ३।११० ) १ स्ये । २ चग्नि । ३ इन्द्र । ( त्रि० ) ४ परिपक्वा ।

पचतभ्रज्जता ( सं० स्त्री० ) पचत भ्रज्जत इत्युच्यते यस्यां क्रियायां मयूरव्यंशकादित्वात् समासः । पाक करो, भजन करो, ऐसो आदिशक्रिया ।

पचति ( सं० पु० ) पच-धातुलक्षणे शतित्च् । पच धातु-का खडप ।

पचतिकल्प ( सं० स्त्री० ) ईषदूतं पचतीति तिङन्तात् कल्पप । ईषदूषणं पाककर्त्ता, बहुत काम ऐना पाक करनेवाला ।

पचतूरा ( हिं० पु० ) एक प्रकारका बाजा ।

पचतोलिया ( हिं० पु० ) पांच तोलिका बाट ।

पचत् ( सं० त्रि० ) पचति-यः, पच-शब्द । पाककर्त्ता, रसोई करनेवाला ।

पचत्पुट ( सं० पु० ) पचत् पुटं यस्य । स्यमणिपुष्प ।

पचत्य ( सं० त्रि० ) पचते पाके साधु यत् । पाकविषयमें साधु ।

पचन ( सं० स्त्री० ) पच्यते इति पच-भावे व्युट्. । १ पाक, पकानेकी क्रिया या भाव । २ पकनेकी क्रिया या भाव । ३ चग्नि । ( त्रि० ) ४ पाककर्त्ता, पकानेवाला ।

पचना ( हिं० स्त्री० ) १ शुद्ध पदार्थका रसादिमें परि-यत हो कर शरीरमें लगने योग्य होना, हजम होना । २ शरीर मस्तिष्क आदिका गन्तना, सुखना या चौष होना, बहुत डेरान होना । ३ खय होना, समाप्त या नष्ट होना । ४ दूसरेका माल इस प्रकार खपने छायमें या जाना कि फिर वापिस न हो सके, हजम होना । ५ चतुर्विध उपायसे प्राप्त किए हुए धन या पदार्थका काममें धाना । ६ एक पदार्थका दूसरे पदार्थमें अच्छी तरह लीन होना, खपना ।

पचनामार ( सं० पु० ) पाकगाना, रसोईघर, वावरचो-खाना ।

पचनाग्नि ( सं० पु० ) जठराग्नि, पेटकी आग जो खाये हुए पदार्थका पचाला है ।

पचनिका ( सं० स्त्री० ) कड़ाही ।

पचनी ( सं० स्त्री० ) शुद्धसजाओदिक पच्यतेऽनया पच-

काणि खट, स्त्रियां डीप । वनवीजप्रकर, विहारो नोदू ।

पचनोय ( सं० पु० ) पचने योग्य, हजम होने लायक ।

पचो—वाटा जिलेका एक ग्राम । यह वाटा नगरसे ८ मील उत्तरमें अवस्थित है । यहां ७ हिन्दू-मन्दिर और १ मस्जिद है ।

पचनो ( सं० स्त्री० ) शोदनादीन् पचति पच-शब्द, स्त्रियां डीप । पाककर्त्ता, पकानेवाला ।

परपच ( सं० पु० ) पचप्रकारः पच-प्रकारे द्वित्वं वा पचय पाक-चतुर्थमादेरपि पचो वा । मछादेव, शिव ।

पचपच ( हिं० स्त्री० ) १ पचपच शब्द द्वेनेको । क्र. या भाव । २ कौचड़ ।

पचपचा ( हिं० वि० ) १ पचपका भोजन जिसका पानो अच्छी तरहमें सूवा या जना न हो ।

पचपचाना ( हिं० स्त्री० ) १ किमो पदार्थका जरूरतमें ज्यादा गोना करना । २ कौचड़ होना ।

पचपन ( हिं० वि० ) १ पचास और पांच, पांच कम साठ । ( पु० ) २ पचास और पांचको मंथ्या, ५५ ।

पचपनवां ( हिं० वि० ) जो गिननेमें चौवनके बाद पचपन-को जगड़ पड़े ।

पचपन्नव ( हिं० पु० ) पचपन्न देवो ।

पचप्रकुट ( सं० स्त्री० ) पच प्रकुट इत्युच्यते यस्यां क्रियायां मयूरव्यंशकादित्वात् समासः । पाकच्छेदनायं निवोग-क्रिया, पाक करो, छिदन करो, ऐसा आदिग ।

पचमान ( सं० त्रि० ) पचतेऽसौ इति पच-मानच्. ( लटः शतशान्त्योः । पा २।२।२४ ) १ पाककर्त्ता, पकानेवाला । ( पु० ) २ चग्नि ।

पचमेल ( हिं० वि० ) जिसमें कई या सब मेल हो ।

पचम्पचा ( सं० स्त्री० ) 'पच्यं पच्यं' पचति पचेः खस, ततोऽसुं स्त्रियां टाप । दासहरिदा, दासहरिदा ।

पचय्या—विहारके हजारीवाग जिलान्तर्गत गोरीडोह उप-विभागका एक ग्राम । यह पचा० २५, ३५, ४० और देया० २६, ३६ पू० गौरीडोह रेलवेस्टेशनसे १ मीलकी दूरी पर अवस्थित है । जनमें खया तीन हजार-में ऊपर है । यहांके एक छोटे पाठशाला जार प्रायः १०।१२ पढ़ा जमीनके मन्दरमें पनेक ताज्जनिमित्त

पात चीर कुत्तर खादि गुहाकरके सामान पाये गये है।  
पदसंग ( हि० पु० ) चीरक पुनर्ही सामानो, मिट्टी का  
गुरा, चबोरा, बुहा, चन्टी चीर सुरवाभीके बीन। इस  
सामानमें सब जगह से ही प चीजे नहीं होते, कुछ  
जात्रोको जगह दूसरो बांजे भी काममें लाई जातो है।

पदसंग ( हि० गि० ) १ त्रिसमें भिन्न भिन्न पांच रंग हो,  
पांच रंगका। २ जो पांच रंगोंमें रंगा हुआ हो तथा जो  
पांच रंगोंके गुणोंमें गुला हुआ हो। ३ त्रिसमें बहूनमें  
रंग हो, कई रंगोंमें रंगा हुआ। (पु०) धनबहुल पादि-  
की पुनर्जाके लिए पूरा जानियाना चीक। इस चीकके पानि  
या कोठे पदसंगके पांच रंगोंमें भरे जाते हैं।

पदरा ( हि० पु० ) पदरा देखो।

पदराग—पद्योपमा प्रयोगके गोप्रा नक्षत्रीयके पदराग  
एक पाम। यह त्रिसके मटरमें ८ बीम उतारा पच-  
स्थित है। इसको पाम २० फुट ऊँचा एक स्तूप है जिसके  
ऊपर एक मन्दिरमें पूवीनाथका निरूप प्रतिष्ठित है।  
१८६० ई०में राजा मानसिंहने स्तूपके ऊपर जो मन्दिर  
या जने काठमें समग्र एक विषय पाया था और मन्दिर  
निर्माण कर इसमें लकड़ो प्रतिष्ठा की गी। मन्नावतः यही  
स्थान प्राचीन समयमें पद्धारण नामसे प्रसिद्ध था।  
दूसरे स्तूपके ऊपर पूवीनाथका मन्दिर स्थापित है।  
इसको बाहरो ईंटोंकी गठन देखने कोमि यह शोचस्प-  
मा मान्य होता है।

पदसरी ( हि० स्त्री० ) एक सामूहिक जो प्राणाकी  
तरह होता और त्रिसमें पांच लड़ियां रहतीं है। यह  
गर्भमें पदना जाता है और इसकी पलित्त लड़ी पायः  
नाभि तक पहुँचता है। अभी गर्भमें प्रत्येक लड़िके  
को लम्बी जमा खंभस पलित्तक चीरो वीच एक  
जुगलु लता रहता है। इसकी टांगें सीने, सीनी पयदा  
पत्रा रखने कोमि है।

पदसत्रया सं० स्त्री०) पद पदसत्रय्यत्तं स्त्रीयां क्रियाः  
मणुष्यैर्गणकदित्यात् सामानाः। मणुष्य पांच करो गिना  
पादिस।

पदसनी ( हि० पु० ) १ यह त्रिसमें पांच प्रकारके समक  
सिद्धि है। २ पदसंग देखो।

पदसारी ( हि० स्त्री० ) एक प्रकारकी देवी गंगा की  
बावक, जो, स्वार खादिमें बुहाई जाती है।

पदसारा ( हि० स्त्री० ) १ पदस चीर पांच, चारने लक  
पधिक। (पु०) २ यह मंथ्या जो मत्तार चीर पांचमें  
जोड़ने बनी हो, ७३।

पदसतरया ( हि० स्त्री० ) त्रिसका स्थान क्रमसे पद-  
दत्तर पर हो, गिनतमें पदसतरके स्थान पर पहुँचनेवाला।

पदसरा ( हि० गि० ) १ पांच बार लोड़ा या लपेटा हुआ,  
पांच परती या तबोबाना, पांच पाउसियोंवाला। २  
पांच बार किया हुआ।

पदा ( सं० स्त्री० ) पदपते इति पदेपित्यादृष्ट, तत्पटा २।  
१ पाक, पकानिकी क्रिया या भाष। २ पाककर्ता, पकाने  
वाली।

पदाङ्—बम्बई प्रांतके रायगढ़के निकटवर्ती एक पाम।  
यहां गिवाजने रमटमं पद जनेके लिए एक क्रिया  
बनवाया था। यहाँका रामनामोका मन्दिर प्रसिद्ध है।

पदादि ( सं० पु० ) पद खादि यंत्र। पाणिग्रहण गणमेंद।

पदा—पद, पद, पद, पद, पद, पद, गदट, भयट,  
पुवट, परट, गरट, तरट, चोरट, गाइट, ग्राट, देवट,  
दोवट, रज, मट, पद, मेव, भिय, कोप, मेध, गर्ग,  
मय, दम, दनुम, दप, जार, भर चीर पयप। इस  
पदादि धानुवीके उतार पद पय्य गीना है, पद प्रयप  
के कारण इन्के पदादिगण कहते हैं।

पदानक ( हि० पु० ) एक पद्यो त्रिसका गरीर एक  
खाभिन्न मन्ना होता है। इसके छेने चीर गर्दन वाली  
होती है। दक्षिण भारत चीर यज्ञान इसके स्थायी  
पाशासंस्थान हैं पर पकमानियाम चीर शून्यस्थानमें  
भी यह पाया जाता है।

पदाना ( हि० स्त्री० ) १ पदाना, पांच पर गमाना। २  
लाई हुई बसुकी लठरानिकी महायतामें रवादिमें परि-  
पत कर गरीरमें समाने योग्य बनाना, इजम करना,  
जोच करना। ३ पदमें पदादिमें समतल बसुकी पदमें  
शाममें का कर साम बनाना। ४ पराए मांसकी बसुका  
कर लेना, इजम कर जाना। ५ पद करना, गमाव या  
गट करना। ६ पदसंगिक हरियम में कर या लीन दे  
कर गरीर सक्षिन्न खादिकी गद्याना या सुषाना। ७  
एक पदाय या दूसरे पदायकी पदमें पायमें पद रूपमें  
लीन कर लेना, उगाना।

पंचार ( हि० पु० ) वास या लकड़ीका बड़ा छोटा डंडा जो छूमे में बाँधे और होता है और सीढ़ीके उड़के तरह उसके टाँचेमें दोनों ओर टुका रहता है ।

पंचारना ( हि० क्रि० ) लालकारना, किसी कामके करनेके पहले उन लोगोंके बीच उसकी घोषणा करना जिनके विरुद्ध वह किया जानिवाला हो ।

पंचाव ( हि० पु० ) पंचनेको क्रिया या भाव ।

पंचास ( हि० वि० ) १ चात्सोस और दस, साठसे दस कम । ( पु० ) २ चालीस और दसको संख्या या अङ्क, ५० ।

पंचासर्वा ( हि० वि० ) गिनतीमें पंचासकी जगह पर पड़नेवाला ।

पंचासा ( हि० पु० ) एक ही प्रकारकी पंचास चीजोंका समूह ।

पंचासी ( हि० वि० ) १ नब्बेसे पाँच कम, ८०से ५ अधिक, सस्ती और पाँच । ( पु० ) २ वह अङ्क या संख्या जो सस्ती और पाँचके जोड़से बनी हो, अस्ती और पाँचके योगकी फलरूप संख्या, ८५ ।

पंचासोवाँ ( हि० वि० ) जो क्रममें पंचासीके स्थान पर हो, गिनतीमें पंचासोकी जगह पर पड़नेवाला ।

पंचि ( सं० पु० ) पंचतीति पच, हन् ( सर्वधातुभ्यः इत् । बण्, ४।१।७ ) १ अग्नि, चाग । २ पाचन, पकानेकी क्रिया या भाव ।

पंचित ( हि० वि० ) पचो क्रिया हुआ, बैठाय़ा हुआ, बड़ा हुआ ।

पचो ( हि० स्त्री० ) पचो देखो ।

पचोस ( हि० वि० ) १ पाँच ऊपर बीस, तीसमें पाँच कम, पाँच और बीस । ( पु० ) २ पाँच और बीसके योगफलरूप पङ्क या संख्या, वह संख्या या अङ्क जो बीस और पाँचके जोड़मेंसे बने, २५ ।

पचोसर्वा ( हि० वि० ) जो क्रममें पचोसके स्थान पर पड़े, गणनामें पचोसके स्थान पर पड़नेवाला ।

पचोसी ( हि० स्त्री० ) १ एक प्रकारका खेल जो चीमरकी विधात पर खेला जाता है । इसकी गोटियाँ और चाल भी उसीको तरह होती है । अन्तर केवल इतना है कि इसमें पाँचोंकी जगह सात कौड़ियाँ होती हैं जो खड़बड़ा कर फेंकी जाती हैं । चित्त और पट कौड़ियोंकी

संख्याके अनुसार दाँव नियत होता है । २ एक ही प्रकारकी पचोस वस्तुओंका समूह । ३ किसीकी आयुके पहले पचोस वर्ष । ४ एक विशेष गणना जिसका मैकड़ा पचोस गार्हियाँ अर्थात् १२१५ माना जाता है ।

पाम, अमरुद आदि मस्ति फलोंको खरोद जिसमें इसको का व्यवहार किया जाता है ।

पचुका ( हि० पु० ) पिचकारी ।

पचेनिम ( सं० पु० ) पचन्त्यमो पच-एनिमच् ( पच एलिमच् । उण्, ४।३० ) १ मूय । २ अग्नि, चाग । ( वि० ) ३ जो चापसे चाप पका हो ।

पचेतुक ( सं० पु० ) पचत्योदनादीन्, पचो यादुलकाटा-देतुकाः । मूढ, पाषक, वह जो भीटनादि पाह करे ।

पचीतर ( हि० वि० ) किसी संख्यामें पाँच अधिक, पाँच ऊपर ।

पचीतरसी ( हि० पु० ) एक मो पाँच, मो और पाँचका अङ्क या संख्या, १०५ ।

पचीतरा ( हि० पु० ) कन्यापक्षकी परोक्षिका एक नेग । इसमें उसे दाढ़जमें वरपक्षकी मिलनेवाले ब्राह्मण आदिमेंसे सैकड़ों पोछे पाँच मिलता है ।

पचीमी—युक्तप्रदेशके बरेली जिलेका एक ग्राम । यह बरेलीसे ८ कोस दक्षिणपूर्वमें अवस्थित है । यहाँका प्राचीन मन्मावगीय और स्तूप समूहको, पर्यालोचना करनेमें पूर्वा कीर्तिके अनेक निदर्शन पाये जाते हैं । दारुण हृष्टिके समय यहाँके हहत् स्तूपके धुल जानिसे भारतवर्षके शक राजाओंकी प्रचलित ताम्रमुद्रा बाहर हुई थी । ये सब ध्वंसावशिष्ट दिखनेमें यह स्थान प्राचीन 'पंचभूमि'के लैसा प्रतीत होता है ।

पचीपा ( हि० पु० ) किसी कपड़े पर छोट छप चुकनेके पीछे ८ या १२ दिन पर्यन्त उसे चागमें खुसा रखना । ऐसा करनेसे छापमें समय समस्त स्थान पर जो धब्बे या जामे हैं वे छूट जाते हैं ।

पचीर ( हि० पु० ) ग्रामका प्रधान, ग्रामका मुखिया, सरदार, सरगना ।

पचीली ( हि० पु० ) १ ग्रामका सरदार, सरगना । २ मध्य-भारत तथा बम्बईमें अधिकतामें मिलनेवाला एक प्रकारका पेड़ । इसकी पत्तोंमें एक प्रकारका देल निकाला



वीर्यं च विदुः मते ॥ ३ ॥ चण्ड भयुर्गं मे ॥ ४ ॥  
 साधु मयः पदस्य, देवा, वनस्या, विरिञ्च, दोषा, कारिक  
 चोर उच्यते । ( वि० ) ५ पञ्च वीर्य । ८ पञ्चमयुग ।  
 ८ पञ्चभूतिपुत्रः । १० पञ्चमन्-विषय ।

पञ्चकन्या ( सं० स्त्री० ) पुराणानुसारं पांच विद्या की मटा  
 कन्या को खोले पञ्चांग विद्या का प्रति करने पर भी जिन  
 का सम्मान न हो सके हुए । पञ्चकन्या, शैलदेवी, कस्तुरी,  
 भासा चौर मन्दाकिनी ये पांच कन्याएँ खरो गई हैं ।

पञ्चकवाक ( सं० स्त्री० ) पञ्चम कवाचियु, मन्त्रतः पुरो-  
 ह्यातः । मन्त्रतः मन्त्राः । या ४।३।१६ इत्यत्र ( मन्त्रो हि लो-  
 कं नमस्ते । या ३।१।८८ ) इत्यन्तो लुक् । यज्ञविधिषु ।  
 पञ्चानां कवाचानां समाहारः पञ्चकवाचाः । २ कवाचपञ्चक  
 यज्ञ पुरोह्यात् को पांच कवाचोंमें पृथक्, पृथक्, पञ्चाया  
 जाय ।

पञ्चकूर्प ( सं० स्त्री० ) उज्ज्वल चौर द्वारा पञ्चविभिन्न  
 कूर्प ।

पञ्चकर्म ( सं० पुं० ) महाभारतके पञ्चमार एक दिन ।  
 याच दिन पश्चिम दिशि धर्म का सिद्धि मजलसे राक्षसपुत्रपक्षके  
 ममय कौल का ।

पञ्चकर्मसू ( सं० स्त्री० ) पञ्चानां कर्माणां समाहारः । २  
 यथा शोक कर्मपञ्चकर्मसू, विद्विषाकी पंच क्रियायें—  
 ध्यान, विरोध, अध्यय, निद्राव्यति चौर पञ्चकर्मसू ।  
 नष्ट मोक्ष निवृत्तयति चौर पञ्चकर्मसूके म्यानसे खेद  
 चौर वद्विरक्षण मानसे हैं ।

“इदमे देवतं मयं” शिष्टःपञ्चकर्मसू ।

पञ्चकर्मसूयस्य च शोच्यतेऽपि ॥ ( महाभारत )

३ मा-सागरिण्ये टीका पञ्चकर्म से जीविके पञ्चमार  
 पांच प्रकारके कर्म—एतेषु चरतेषु, चाकृष्यन्,  
 प्रमाणात् चौर ममान ।

“इतेषु” मन्त्रो, देवतं मयं इत्यत्र मया ।

इत्येतेषु मयं च देवतं मयं इत्यत्र मया ।

( भावार्थिकसूत्र ३ वा० )

पञ्चकर्मसूत्रिय ( सं० स्त्री० ) दण्ड, पाद, पायु, पञ्च  
 चौर कर्मा । इन्हीं ५ कर्मिणकी पञ्चकर्मसूत्रिय कहते हैं ।

पञ्चकर्मसू—इत्येते मन्त्रो, देवतं मयं इत्यत्र मया ।  
 इत्येतेषु मयं च देवतं मयं इत्यत्र मया ।

शोचना, दूध दुधना चौर दूध देवना इनका सम्बन्ध  
 था । सभी ने शोक पूर्वक व्यवसायको छोड़ कर महा-  
 खती पञ्चका प्रकारको शोचनी करने लगे हैं तथा ममान-  
 से इत्यति सम्मान करने पञ्चको राक्षस वंशीय चरित  
 मन्त्रान यत्नपूर्वक हैं ।

पञ्चकन्याय ( सं० पुं० ) एक चोरा जिनका मिर चौर  
 भागे पर मन्त्र हो चौर जिय गरीर नाम, जाना या  
 चौर किमी रंगका हो । ऐसा चोरा सम्मान देनेवाला  
 माना जाता है ।

पञ्चकवच ( सं० पुं० ) पांच पात्र पञ्च को कर्मसिद्धि पञ्च-  
 मार ध्यानके पञ्चमे कृते, पश्चिम, छोड़ो, रोमी, चौद  
 पादिसे लिये पञ्चम निकाम दिगा जाता है । यह  
 क्षय मन्त्रिये मन्त्रदेवका पञ्च भागा गया है, पञ्चासन, पञ-  
 शसन ।

पञ्चकवाच ( सं० पुं० ) पञ्चविधः कवाचाः पञ्चमा पञ्चानां  
 सुधावा कवाचाः, वद्विरक्षणमः । पांच प्रकारका कवाच  
 द्रव्य, मन्त्रके अनुसार इन पांच सुधावा कवाच—प्राण, शोभा,  
 मिर, मिर, टो, मोनमिरो चौर धर । यह पञ्चकवाच  
 भगवती दुर्गाका पञ्चम प्रीतिहर है ।

“अमृतानामनियं च पात्रं” मन्त्रं वदं तथा ।

कवाचाः पंच विंशति देवताः प्रीतिहराः सुधाः ॥

( दुर्गाविश्व० )

पञ्चकाम ( सं० पुं० ) पञ्च कामाः कर्मधारयः, मन्त्रास्मान्  
 मन्त्रियुः । पञ्चकारकाम । मन्त्रके अनुसार पांच काम  
 देव जिनके नाम ये हैं—काम, ममय, कर्तव्य, ममर-  
 धन चौर मोमकेतु ।

“वचमामा” मने देवि । मन्त्रानि मन्त्र पात्रेति ।

अमृतानामनियं च पात्रं मन्त्रियुः ॥

मन्त्रियुर्देवतं मन्त्रियुः पश्चिम, ॥ ( मन्त्रपात्र )

पञ्चकाम—( सं० पुं० ) कर्मधारयके अनुसार पांच कारक  
 जिनके किमी कार्यको मन्त्रियु कोमो है । इनके नाम ये  
 हैं—काम, ममान, मन्त्रियु, पुरुष चौर कर्म ।

पञ्चकीर ( सं० पुं० ) अमृतकाम ।

पञ्चकर्म—पञ्चम विद्विषाजः पात्रो इत्यति मयं एक मन्त्र-  
 द्वापयो मया । पात्रं मन्त्रियुः दण्ड ममानं ममी काम  
 पञ्चके मने है । ये पांच पात्र पांच मायात्मक मन्त्रियु

चित्त होते थे। घोर घोर वध सभी पञ्चकुल कहलाने लगे। राज भो किसे किसो विग्रह कायस्थवर्गमें उक्त उपाधि पंचभ्रंशमें 'पञ्चोलो' नाममें परिणत हो गई है।

पञ्चकूट (म० पु०) पञ्च विस्तृत कृत्यं शाखापञ्चवा-  
दिकं यत् । १ पक्षीद्वयक, पक्षीद्वका पक्ष । ( ली० )  
पञ्च प्रपञ्चित कृत्यं कार्यं सृष्टादिकम् । २ सृष्टि प्रकृत  
पञ्च प्रकार आय, ईश्वर या महादेवके पांच प्रकारके  
कर्म ।

"मस्मिन् सृष्टिरिति चंद्रप्रधानानुमादात्मकं ।

कृत्यं पंचविधं सत्यद्वयान्ते तं नुमः शिवम् ॥"

( चिन्तामणि )

सृष्टि, स्थिति, ध्वंस, विधान घोर अनुग्रह यही पांच  
कार्य हैं; इसीका नाम पञ्चकूट है। जिनमें ये पांच  
कृत्य हैं, उन महादेवकी नमस्कार करना हैं।

पञ्चकूट (म० पु०) शीघ्रकौटभेट, सन्तुतिके अनुहार एक  
कौटका नाम।

पञ्चकोट—मानभूमि जिनके अन्तर्गत एक गिरियेशो।  
यह बराबरमें १० मील दक्षिण-पश्चिममें अवस्थित है।  
इसके दक्षिण-पूर्व पांडमूलमें पहले एक दुर्ग था। एक  
समय इस स्थानकी गिनतो राजप्रानादमें होती थी।  
पहो वे सब प्राचीन कौशिया ध्वंसावशेषरूपमें परि-  
णत हो गई हैं। इन पर्वततटस्थ राजवासका पञ्चकोट  
नाम क्यों पड़ा इस विषयमें बहुतरे बहुत तरफ की बातें  
कहते हैं। किसे किनीका कहना है कि यहाँके राजा  
पांच विभिन्न सामन्त राजाओंके ऊपर कर्तव्य करते थे।  
फिर कोई अनुमान करते हैं कि 'कोट' पांच स्वतन्त्र  
प्राचीर द्वारा रचित रहनेके कारण इस स्थानका नाम  
'पञ्चकोट' पड़ा है। स्थानवासी इस स्थानकी पञ्चकोटके  
पंचभ्रंशमें पचेत या पचेत कहते हैं।

दुर्गके उत्तर अक्षतगिरिमाता विराजित है तथा  
पश्चिम, दक्षिण और पूर्व की ओर एकके बाद दुसरे एक  
क्रमसे छे ऊँचमें प्राचीर हैं और उत्तरे भीतरकी ओर  
स्वभावजात पर्वतका उच्चमिन्न भूमिभाग एक स्वतन्त्र  
प्राचीरकी तरह दण्डायमान हो कर दुर्गकी रक्षा करता  
है। प्रत्येक प्राचीरके मध्यस्थमें गहरो घोर चौड़ी खाई

कटी हुई है जो पर्वतगात्रव्य स्त्रोतमात्राके साथ इस  
प्रकार मयोजित है कि उनमें इच्छानुसार जल रक  
सकते हैं। राज तत्र भो उग नानापीमें जन जमा  
है। पहले प्राचीरमें अनेकों द्वार थे। यमो प्राचीर-  
गावस्थ जो गर्त हैं, वही उसका प्रमाण देते हैं। अभी  
एकता भो द्वार देखनेमें नहीं जाता। दुर्गके चारों ओर  
पत्थर काट कर जो चार बृहत् द्वार रचित थे, आज भी  
उनमेंसे कितने दिखाई पड़ते हैं। दुर्गके बाहरमें जो  
प्राचीर था उसको, लम्बाई पांच मील थी। वहाँके लोगों-  
का कहना है, कि दुर्गके चारों ओरका पर्वतमाना-  
परिवेष्टित स्थान प्रायः १२ मील था।

यहाँके अनेक प्राचीर ध्वंसावस्थामें दीर्घ पड़ते हैं।  
कितने चारों वा मन्दिरोंके चारों ओर खाई रहनेमें तथा  
कुछ घने जङ्गलमें घाटत होनेसे उनसे भीतर जानमें बड़ी  
दिकृते उठानी पड़ती हैं। सुन्दर सुन्दर ईंटे तथा मटो-  
की पुचालिकायें प्रायः सभी स्थानोंमें देखी जाती है।  
पर्वतगात्रमें प्रायः ३०५ फुटकी लंबाई पर दुर्गके  
ठीक सामने बहुतसे बृहत् तथा लक्ष्मणकारकाय युक्त  
मन्दिर हैं। इन मन्दिरोंमें रघुनाथका मन्दिर घोर  
उपका महामण्डप लक्ष्मणयोग्य है। राजा रघुनाथके  
नाम पर मन्दिरका नाम पड़ा है। पर्वतके पाटदृश्यमें  
अनेक सुन्दर मन्दिर और बड़े बड़े मकानोंके ध्वंसाव-  
शेष नजर आते हैं। ये सब सुदृढ़ विस्तृत ध्वंसवाटि-  
कादि प्रायः सो वर्षोंके अभ्यन्तर ही गभीर जङ्गलमें  
परिणत हो गये हैं। दुर्गमध्यस्थ ब्रह्मादमें जो चहबच्चा  
ओर संकरमुखी फुहारा है वह देखनेमें बड़ा ही सुन्दर  
लगता है। कागोपुरके राजा नीलमणि सिंह देवके हठ  
प्रतिपत्तह रघुनाथनारायण सिंह देव पहले पञ्चकोट  
छोड़ बगहरगढ़में जा कर रहने लगे थे; पीछे नीलमणिके  
पिताने पुनः कागोपुरमें स्थानपरिधर्शन किया।

यहाँके 'द्वारबांध'के उत्तर बगुला पत्थरमें खोदित  
जो शिलाफलक है, उसमें 'श्रीवीररघुवीर' नामका उल्लेख  
देखा जाता है। ये वनविष्णुपुर, बांकोड़ा, छातना घाट  
स्थानोंमें राज्य करते थे। यह मध देव कर अनुमान  
किया जाता है कि सम्राट अकबरगाह जब दिल्लीके  
सिंहासन पर और राजा मानसिंह बगुलाके प्रतिनिधित्वमें

प्रतिष्ठित है, इस समय पटना समस्त नृप वरमणि को पञ्चकोटकी घोड़लिट्टी दे दी। पञ्चकोटकें पूर्वतन राजवंशकी उत्पत्ति और राजवृत्तवर्षिकें सम्बन्धमें इस प्रकार एक अंग-वृत्तिराम पाया जाता है।

राजोपुरके राजमन्त्र नामक किसी राजाने रघो-की माय कर नगदादपुरको याता को। राघुमें गर्भ-धनो राजाने पञ्चवत्समें एक पुत्र प्रपन्न किया। तोर्ष-यातामें विषय्य होनेके फल नहीं होता, इस भयमें राजा और रानी दोनों ही दन्डा नहीं रहने हुए भी उस पुत्रको वहीं छोड़ नानुरदारको और चले दिए। इस समय पञ्चवत्समें कविनामाय अभय कर रही थी। दयापरवश ही वह उस शिशुका भरण-पोषण करने लगी। एक समय एक टन मिट्टीके वहाँ पाया और शिशुकी जीवित देव उसे दावापुर ले गया। यहाँ जब वह शिशु बड़ा हुआ, तब देववासिनीने उसे माँकी वा टनवर्ति बनाया। इसमें राजाके समावर्तमें चौरानो पर-गनीर राजपट्ट पर बड़े परिचित किया गया। अन्य समावर्तमें लिया है, कि राजा और रामाने २-२ ब्रह्मके पुत्रका परिष्कार न किया जाता रामने यह शिशु बालो-की पीठ परने गिर छोड़ा था। उस दोनेने पुत्रकी सारा ज्ञान वहाँ छोड़ दिया। पुत्रनिर्वाचे टलियागव्य कविना पहाड़ पर कविना गाय रहती थी। उसमें दूध पिना कर उस पुत्रकी ज्ञापित रखा था। बाद पट्टकसममें पाँच राजाकीने उसे गोमुषोराज नामक पञ्चकोटमें प्रतिष्ठित किया। कोई कोई कहते हैं, कि ये राजवृत्तवंशों के हैं। उत्तर-पश्चिम प्रदेशमें पहले मन्त्रमूर्तमें और पीछे जयकी पागामे प्रथोदित ही उन्होंने इन स्थानमें जा कर राज्य संस्थापन किया।

बादशाहनामानमें लिखा है, कि पञ्चकोटकें प्रमोदार राजा औरनारायण मन्त्र, माकसहाजुके राजसत्त्वाममें गान ना मनसबदारके पर पर परिचित हुए। उनके राजवंशके वंश (१०५२-५३ विषयों)में बौदनारायण-का प्राचीनवर्णन हुआ। तबसे पनोवर्षी वंशके राजसत्त्वाममें परा राजा महदुलारायण राज्य करते हैं। १००० ई०० (पुनाय नारायणक मान-नामके भक्तिदा राजना) इनके राज लगी।

यहाँको घोड़ी शक्तिसे मध्य भद्राजकीकी पूजा और समस्त प्रचलित है। भाद्रमासकी चौका राते पूजा करने-के कारण यह समस्त भाद्र कहलाता है। पूजाके बाद प्रतिमा जन्मजन्म को जाता है। प्रवाद है, कि पञ्चकोटकें किसी राजाके एक पनोकेसामान्यद्वयपरव्यवा हो दयागोचर बन्ना थी। यहाँके परिवासिमान उनके दया-गुण पर गुण्य हो उनके भूतल्लन पर पयतोर्षा साचाप दयादेवी समझते हैं। यह कथा घोड़ी घाटि निकट जातिको दरिद्रता देव्य पुत्रित होती और समय समय पर उनके पशु भन टिया करते थीं। बाद यह घोड़ीको समरमें कुटिल क लक गालमें फँस गई। कायो-पुरके पार्श्ववर्षी प्रासवासिगल उनके विधोच पर बड़े ही मोहमत्तम हुए और उनकी पूजा तथा उपासना करने लगे। भाद्रमें अथाको राग्य होनेके कारण वह समस्त भाद्र कहलाता है। कोई कोई कहते हैं कि भाद्र समस्त सभमें पहले पञ्च कोटके राजमन्त्रमें प्रथमाधारवर्षमें प्रचारित हुआ। जन्मा भद्रावर्षको मृगुषे मितान्न व्याकुल ही रानी ध्ययं एक प्रतिमुक्ति का निरापि कर उसकी पूजा करने लगी। धीरे धीरे वह पूजा परनि छोड़ी घाटि शक्तियोंके मध्य फँस गई।

पञ्चकोल ( मं० को० ) १ पञ्चकोलाग्रत चित्तविशेष । एवं कोनिवाला चित्त । २ तस्याः च चित्तविशेष, तस्याः पञ्चवत्स एक पञ्चकोल नाम । ३ तस्याः पञ्चवत्स पञ्च लक्ष स्थान, कुलपुत्रोंमें स्थानमें पञ्चवत्स और तथा स्थान । ( ति० ) ४ पञ्चकोलपुत्र, त्रिममें पाँच कोने रं, पञ्चकोल ।

पञ्चकोल ( मं० को० ) पञ्चवत्सविशेष । गोपय, विपण-मूल, चरं, चित्तकमूल और मोठ इन पाँच प्रकारके द्रव्योंको समभाग करके मिलानमें पाचन करना है। यैश्वर्यमें वृद्धे पाचन स्विकर तथा मुच्य और प्रोषा रोगनाशक माना है ।

पञ्चकोलहृत् ( मं० को० ) पञ्चकोल हृत्पदार्थ । प्रमुल प्रवाली—पाचका घी ५ घैर ; सूत्रं च त्रिये विपामूल, चरं, चित्तक, लादर प्रयोक्त एक घल, दूध ५ घैर । यथा-नियममें हृत् पाक कर निवृत्त करनेमें सुमरीग जाता रहता है ।

पञ्चकोल ( मं० पु० ) पञ्चवत्स ही कोवाचति, संज्ञात्वात्

कर्मधारयः । वेदान्तमतसिद्ध कीषपञ्चक, उपनिषद् और वेदान्तके अनुसार शरीर। संघटित करनेवाले पांच क्रोग जिनके नाम ये हैं—पञ्चमयक्रोप, प्राणमयक्रोप, मनोमयक्रोप, विज्ञानमयक्रोप और आनन्दमयक्रोप। इनमें स्थूल, शरीरकी पञ्चमयक्रोप, पांचों कर्मन्द्रिगों सहित प्राणकी प्राणमयक्रोप, पांचों ज्ञानन्द्रियोंके सहित मनको मनोमयक्रोप, पांचों ज्ञानन्द्रियोंके सहित बुद्धिकी विज्ञानमयक्रोप तथा अक्षरकारात्मक वा अविद्यात्मकको आनन्दमयक्रोप कहते हैं। पञ्चक्रोगी स्थूल शरीर, दूधरेकी सुप्त, शरीर और तोमरे, सोये तथा पांचवैक्रो कारण शरीर कहते हैं।

पञ्चक्रोगी ( सं० ह्रस्व० ) पञ्चानां क्रोगानां समाहारः । कागोके मध्यस्थित दोष और विस्तृतियुक्त ५ क्रोग स्थान, पांच क्रोसको लम्बाई और चौड़ाईके बीच बसो हुई कागोको पवित्र भूमि। कागोमें पापकार्य करनेसे पञ्चक्रोगीमें विघ्न होता है। पञ्चक्रोगीकृत पाप अन्तर्गत ५ में नाम होता है।

‘वाराणस्यां कृतं पापं पंचक्रोशं विनश्यति ।

पंचक्रोशं कृतं पापं अन्तर्गते विनश्यति ॥’ (कागोव०)

पञ्चक्रोश ( सं० पु० ) योगशास्त्रानुसार पवित्र्या, अस्मिता, राग, ह्य और अभिविषय नामक पांच प्रकारके क्रोग। पञ्चद्वारगण ( सं० पु० ) पञ्चानां द्वारानां गणः । द्वार-पंचक, पंचनवग।

‘सर्वैस्तु पंचमि श्रेष्ठः पंचद्वारमिषो गणः ।

इत्येतेष्वद्वाराद्विद्वैतं गौर्वैलोकः सर्वैः ॥

एतान् पंचद्वारं तद्य मृज्जोपेतं पञ्चद्वारम् ॥’

(गान्धि०)

काच लक्षण, मध्व, सामुद्र, विट, और शोषण-लक्षण इस पांच नवगणको पंचद्वार कहते हैं।

पञ्चद्वैट ( सं० स्त्री० ) पञ्चानां द्वैटानां समाहारः । पंचद्वैटका समाहार, समिलन।

पञ्चगङ्गा ( सं० ह्रस्व० ) १ पांच नदियोंका समूह—गंगा, यमुना, सरस्वती, किरणा और धृतवावा। इसे पंचनद भी कहते हैं। २ कायोका एक प्रसिद्ध स्थान जहाँ गङ्गाके साथ किरणा और धृतवावा नदियाँ मिली थीं। ये दोनों नदियाँ भवपट कर लुप्त हो गई हैं।

पञ्चगङ्गा—बम्बई प्रदेशके पन्नागत कोल्हापुर जिलेमें प्रवाहित एक नदी। इसके किनारेके नागरहाना और बिड़ ना बिरह धाममें बहुतसे प्राचीन मन्दिरोंका मनावनीय देखनेमें आता है।

पञ्चगङ्गाघाट—पुण्यक्षेत्र वाराणसीधामके पन्नागत एक पवित्र तीर्थ। ब्रह्मवधमें प्रचारक रामानन्दने यहाँ रह कर अपना अश्वगिष्ट जीवन बिताया था। जहाँ वे रहते थे वहाँ भजन करनेका एक मन्दिर था। अभी केवल-मात्र पत्थरकी वेदी देखी जाती है।

पञ्चगढ—सङ्गोपाके पन्नागत एक परगना। इसमें कुल १० छोटे छोटे शहर लगते हैं। भूपरिमाण ४२५ वर्ग-मोक्ष है। यहके पश्चिमदिशि ब्राह्मण जातिकी गिचकी शाखासे उत्पन्न हुए हैं। छापकार्य को इनकी एक मात्र उपजीविका है।

पञ्चगण ( सं० पु० ) पञ्चानां गणो यत् । वैद्यकीय गण-विषय, वैद्यक शास्त्रानुसार इन पांच शोधधियोंका गण विदारोगत्या, हृष्टता, अग्निपर्णा, निद्रित्यक्षा और भृक्षुभाण्ड।

पञ्चगणि—बम्बई प्रदेशके सतारा जिल्लाभूतल एक स्वास्थ्यानिष्ठान। सद्गात्रि-पर्वतकी जो शाखा महान्वालेखरसे बाँई और विस्तृत है उसी शाखाके ऊपर यह स्वास्थ्यनिवास बसा हुआ है। यह मत्स्यप्रस्थसे ४३०८ फुट ऊँचा है।

पञ्चगन ( सं० स्त्री० ) बीजगणितोक्त पञ्चवर्णयुक्त गणि, बीजगणितके अनुसार यह राशि जिसमें पांच वर्ण हों।

पञ्चगवधन ( सं० त्रि० ) पञ्चगवो धनं यस्य । पञ्चसंख्या-न्विन गवधनस्वामी।

पञ्चगव्य ( सं० स्त्री० ) गोत्रिकारः गव्यं पञ्चगुणितं गव्यं । गोसंख्यो पञ्च प्रकार द्रव्य, गायमें प्राप्त होने वाले पांच द्रव्य—दूध, दही, घी, गोबर और गोमूत्र। पञ्चगव्यकी मन्त्रपूर्वक शोधन करके लेना चाहिए। मोद-कादि भक्ष्यद्रव्य, पायसादि भोज्यद्रव्य, शकटादि यान, गय्या, सासन, पुष्पमूल और फलका उपयोग करनेसे जो पाप होता है, यह पञ्चगव्य पान करनेसे जाता रहता है।



पञ्चगौर—१ अर्धवर्ग प्रदेशके प्रकृत त एक ग्राम । यहाँ १००५ ई०में राजोजी भोजनाने सुगन्धमेनाप्रीकी परास्त किया था । यहाँ एक सुन्दर मन्दिर है ।

२ उड़ोमके अन्तर्गत एक नगर । यह पचा० २०' २०" १' ३०" और देशा० ८५° ३०' ४" पू०के मध्य पवस्थित है ।

पञ्चगौत ( म० पु० ) योमगुणायतके दसमस्कन्धके पान्तगत पांच प्रसिद्ध प्रकार । इनके नाम ये हैं—वेणु गौत, गौषोमीत, सुगन्धगौत, श्वभरगौत और महिषोगौत ।

पञ्चगु ( म० वि० ) पञ्चभिः गोभिः श्रोतः द्विगुणमासः, उक्त तस्य लुक् । श्रावणस्य ऋतुः । पञ्चगोद्वारा श्रोत ।

पञ्चगुण ( म० पु० ) पञ्चगुणितः गुणः कर्मधारयः । १ गन्ध, स्वर्ण, रूप, रस और गन्ध ये पांच गुण । ( प्लो० ) पञ्चगुणा यस्याः टाप् । २ पृथ्वी, पृथ्वीके पांच गुण हैं, इसीमे पृथ्वीका पञ्चगुण नाम पड़ा है । ३ पञ्च द्वारा गुणित, वह जो पांचमे गुण किया गया हो । ४ पञ्च प्रकार, पांच तरह ।

पञ्चगुम ( म० पु० ) पञ्चानामिन्द्रियाणां चापचरं गुमं यत्र वा पञ्चानां पदार्थानां नादनं यत्र । १ चावर्कटग्राम जिनमे पंचेन्द्रियका गोपन प्रधान माना गया है । २ कच्छप, छलुषा । कच्छपके दो हाथ, दो पैर और भक्तक किपे रहते हैं इन कारण उसे पञ्चगुम कहते हैं ।

पञ्चगुमिरामा ( स० स्त्री० ) स्पृका, भ्रमवरण ।

पञ्चगुहीत ( स० वि० ) पञ्चद्वारा लब्ध ।

पञ्चगौड़ ( म० पु० ) ब्राह्मणों का एक विभाग । सारस्वत, कान्यकुब्ज, गौड़, मैथिल और लखन हम पंचथेथीकी लीं कर पञ्चगौड़ विभाग अन्तर्गत हुआ है । कुचवेनके ब्राह्मण अपने ही 'चादि गौड़' धरनाते हैं । वैदिक युगमें भरखतो-भोरधामी ब्राह्मणगण जो सारस्वत कहलाते थे । ये यादिक सारस्वत ब्राह्मण यज्ञोपनयनमें कान्यकुब्ज, गौड़ चादि स्थानोंमें बस गये । धीरे धीरे वहाँ उनको सम्मान सन्तति कायकुब्जादि कक्षगामे लगे । सारस्वत, कान्यकुब्ज चादि नाम देयवर्षा है । सन्दपुराणके मन्नाद्रिलक्ष्णमें लिखा है—

“ब्राह्मणा यथा शोका पञ्चगौडुराचः शरिष्ठाः ।  
“ब्राह्मणा यथा चैव पश्चिम्यस्तित्तमभवाः ।  
देशे देशविशेषा एव विस्तारिता मही।” (मन्ना० २।।१५)

पञ्चगौड़ और पञ्चद्राविड ये दस प्रकारके ब्राह्मण ऋषियमश्रय थे । पीछे जो जिन देगमें बस गये उन्हेंनि उसी देयका आचारव्यवहार अवलम्बन कर लिया ।

पञ्चद्राविड देखो ।

राजतरङ्गिणीमें पञ्चगौड़ नामक विस्तृत जनपदका उल्लेख है । काश्मीरके राजा जयादित्यने पञ्चगौड़के राजाको जोता था । हरिसिंहरचित कुनाचार्यकारिका-में महाराज चादिगूर पञ्चगोड़ाधिप उवाचिसे मन्थानित हुए थे (१) । इसमें अनुमान किया जाता है कि पञ्चगौड़ नामक एक विस्तृत राज्य था । कूर्म और लिङ्गपुराणमें लिखा है, कि सूर्यवंशीय यावस्तीके पुत्र शंशुकने गौड़देशमें यावस्ती नगरी बसाई (२) । रामचन्द्रजोको मृत्युके बाद त्रय प्रयोध्या नगरी जनगुण्य हो गई, तब इसी यावस्ती नगरीमें लवका राजपाट प्रतिष्ठित हुआ । वचमान प्रयोध्या प्रदेशका मोगडा जिला तथा उसके निकटवर्ती कुछ स्थानोंको ले कर गौड़देश अवस्थित था । विश्व शर्माके हितोपदेशमें लिखा है, “पश्चिम गौड़-विषयं कौमास्यी नाम नगरी ।” हितोपदेश-रचनाकालमें पर्यायके पश्चिमस्य कुछ जनपद गौड़विषय कहलाते थे । राष्ट्रकूटराज गोविन्द प्रभूतवर्षके ७३० शकमें उत्कीर्ण नाम्नामानने जाना जाता है, कि राष्ट्रकूटवंशीय राजा भुवने वक्ताजको परास्त कर गौड़ पर अधिकार

- ( १ ) विश्वकोटमें कृतीत सन्द देखो ।
- ( २ ) “यावस्तीके महातेजा वंशकस्तु ततोऽनन्त ।  
निर्मिता येन भावस्तिर्गौड़देशे दिशोत्तमाः ॥  
( कूर्म और लिङ्गपुराण )

० रामायण उत्तरकाण्ड १०८ शर्ग ।  
० जयोध्याप्रदेशके प्रतापगुड जिलेमें गौड़ नामक एक अतिशशील ग्राम है । यहाँ ४थी या ६थी शताब्दीका बनया हुआ एक लुई मन्दिर है । Cunningham's Arch. Sur. Re. Vol. XI. 70.

० प्राचीन कौल इसी नगरी अती कोलाप, इनाम और कोशाम । राम कहलाती है । यह प्रयागसे १४ कोष दूर यमुनाके किनारे अवस्थित है । Arch. Sur. of India by A. Fuhrer, Vol. I. 140



सद्भावप्रदायिका । देव्यादेन श्रीकन्दर्वादिताः ।  
 पंच पंचजनदेव्यो पुरे तस्मिन् निवेशिताः ॥' (भजनतरंग २)  
 २ मनुष्यमन्त्रस्यो प्राणादि, मनुष्य, जीव और शरीरसे  
 मन्त्रस्य रखनेवाले प्राण, आदि । ३ मनुष्यस्य देवादि,  
 गन्धर्व, पितादेव, असुर और राजस । ४ मनुष्यमैत  
 वःप्राणादि, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और निपाद । ५  
 दैत्यविशेष । सङ्गादकी पत्नी कृतिके गर्भसे इसका जन्म  
 हुआ था । ६ एक असुर जो पातालमें रहता था । यह  
 ओहन्वचन्द्रकी गुरु संदीपनाचार्यके पुत्रको चुगा ले  
 गया था । कृष्णचन्द्र इमे भार कर गुरुके पुत्रको छुड़ा  
 लाये थे । इसी असुरकी बहिसे पञ्चजन्य शङ्ख बना था  
 जिसे भगवान् कृष्णचन्द्र वजाया करते थे । ७ राजा  
 मगरके एक पुत्रका नाम । हरिवंशमें लिखा है, कि  
 महाराज मगरके तपोवनादभ्यसा छो मरिचो थीं, बड़ो  
 महिषोका नाम बेगिनो और छोटीका मरुतो था । ये  
 क्रमशः शिवभारत और चरितकेमिको दुष्टता थीं ।  
 शीव श्रुतिने दोनों मरिचियों पर प्रसन्न हो कर उन्हें वर  
 मागनेका कहा । इस पर बेगिनोने एक वंशधर पुत्रके  
 लिये और मरुतीने प्रभूतशैवग्रालो अनेक पुत्रोंके लिये  
 प्रार्थना की । शीव 'तथास्तु' कह कर वर दिए । तदनु  
 सार बेगिनोके मगरके शौरसमे अममञ्जा नामक एक  
 पुत्र हुआ । यही अममञ्जा भदिव्यमें पंचजन नामसे प्रसिद्ध  
 हुए । महतोके गर्भसे साठ हजार पुत्र उत्पन्न हुए । इन  
 सब पुत्रोंमें पंचजन ही राजा बने । पंचजनके पुत्र अशु-  
 मान् और अशुमान्के पुत्र त्रिलोच हुए । (हरिवंश १५७०)  
 ८ प्रजापतिमैत, एक प्रजापतिका नाम । ९ पांच या पाँच  
 प्रकारके जनोका समूह ।  
 पञ्चजनलय ( सं० स्त्री० ) आभीरोंकी संज्ञामैत ।  
 पञ्चजनो ( सं० स्त्री० ) पंचानां जनानां समाहारः ततो  
 ङोप । १ पाँच मनुष्योंको मण्डली, पंचायत । २ विश्व-  
 रूपकेन्या ।  
 पञ्चजनीन ( सं० पु० ) पंचसुं जनीपु आद्यतः, दिक्-संस्थो  
 संज्ञायामिति संज्ञानाः पंचजनै हितं, पंचजन-त्व (पंच-  
 जनदुपसंख्यानमिति स्त्व । पा०शा० ११ ) १ मण्ड, मांड, नगर  
 करनेवाला । २ नट, अभिनेता, स्वर्ग बनाईवाला । ३  
 पञ्च मनुष्योंका नायक वा प्रभु । ( त्रि० ) ४ पंचशक्ति-  
 मन्त्रस्योय ।

पञ्चजन्य ( सं० पु० ) एक प्रसिद्ध शङ्ख जिसे श्रीकृष्ण वजाया  
 करते थे । यह पंचजन राक्षसकी बड़ोका बना-  
 हुआ था ।  
 पञ्चजोरशुभ ( सं० पु० ) चक्रदत्तोक्त शुद्धोपधमैत ।  
 यह सुतिकारोगमें हितकर है ।  
 पञ्चज्ञान ( सं० पु० ) १ पंचानां पदार्थानां ज्ञानं यत्र ।  
 २ बुद्ध । ३ पाशुपतदर्शनाभिन्न ।  
 पञ्चत ( सं० पु० ) पंचपरिमाणस्य पंचनु-ति । पंचसंख्या-  
 युक्त वर्ग ।  
 पञ्च ( सं० स्त्री० ) पंचानां तत्त्वानां समाहारः । पंचतत्त्व-  
 या समाहार ।  
 पञ्चतत्त्व ( सं० स्त्री० ) पंचानां तत्त्वानां समाहारः । १  
 पृथु, पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश । २  
 पंचमकार, मद्य, मांस, मत्स्य, सुद्ध और मधुन ।  
 'मद्यं मांसं तथा मत्स्यं मुदां मेधुनमेव च ।  
 पंचतत्त्वमिदं देवि निर्वाणमुक्तिहेतवे ॥  
 गारारं चकं देवि देवानामपि दुर्कर्मम् ॥'  
 ( कैवल्यतन्त्र १ प० )  
 मद्यादि पंचमकार निर्वाणमुक्तिके कारण है । यह  
 पंचमकार देवतापार्थकी भूल भई है । पंचतत्त्वविनीन  
 मनुष्योंकी कल्पित सिद्धि नहीं होती । पञ्चमकार देखो ।  
 'पंचतत्त्वविहीनानां क्लेशो तिष्ठति जायते ॥'  
 ( तन्त्रशा० )  
 वैष्णवोंके लिये गुरुतत्त्व, मन्त्रतत्त्व, मनस्तत्त्व, देव-  
 तत्त्व और ध्यानतत्त्व यही पंचतत्त्व है ।  
 'तत्त्वज्ञानमिदं प्रोक्तं वैष्णवे श्यु यस्ततः ।  
 गुरुतत्त्वं मन्त्रतत्त्वं मनस्तत्त्वं सुरेश्वरि ।  
 देवतत्त्वं ध्यानतत्त्वं पञ्चतत्त्वं ब्रह्मणे ॥'  
 ( निर्वाणतन्त्र १२ प० )  
 वैष्णवोंके लिये यही पंचतत्त्वज्ञान तत्त्वज्ञान है ।  
 यह पंचतत्त्वज्ञान निम्नलिखित प्रकारसे प्राप्त किया जाता  
 है । पहले गुरुतत्त्व गुरुमन्त्र प्रदान करें, इससे मत्तल  
 यत्किं कायुक्त देवस्थित ब्रह्मतेव पदोम होगा, बाद इस  
 मन्त्रभाषणसे इष्टदेवताका शरीर उत्पन्न होता है । इष्ट-  
 देवताके मन्त्र मन्त्र वर्णमय है । इन मन्त्रवर्णोंमें ईश्वर-  
 वः पद्य योर्व निहित है, पाठे मन ही मन उक्त मन्त्रसे



समाया। फिर ७५० यकके उत्तीर्ण एक दूसरे ताम्र-  
 ग्रामनमें वस्त्रराजकी पवन्तिपति वतलाया है। इससे  
 विशा नरपन्द्रसूरिके दम्भोरकाश्यमें मालवराज्य उदया-  
 दित्य भो गौड़के उपाधिमें भूयित हुए हैं। इससे यह  
 ज्ञाना जाता है, कि मालवराज्यके कितने थोड़े एक समय  
 गौड़ देग-क्षेत्रमें थे। मुसलमान ऐतिहासिकोंने  
 गान्धेय शौर उद्दामाके मध्यवर्ती एक विस्तीर्ण विभाग-  
 का गौड़नामा नामसे उल्लेख किया है। इस प्रदेशका  
 अधिकांश पूर्वोत्तर राजराजमें गौड़ नामसे अभिहित हुआ  
 है। राष्ट्रकूटराज गोविन्ददेवके ७३० ग्रहमें उत्तीर्ण ताम्र-  
 ग्रामनमें इस गौड़देशका सर्वप्रथम उल्लेख देखनेमें आता  
 है। विनकीड मालव इस स्थानकी 'पश्चिम गौड़' नामसे  
 उल्लेख कर गए हैं। पुरावित् कनिङ्गम् नाहवके मत-  
 से वैशुल, हृद्विवाहा, मिशनी शौर मण्डला इन चार  
 जिलापोंकी संघ कर यह गौड़देश संगठित हुआ है।

ऊपरमें जो सब प्रमाण दिखे गये हैं उनसे यह स्थिर  
 किया जाता है कि विन्धागिरिके उत्तर कुबुक्षेत्रमें ले  
 कर उद्देशकी पूर्वोत्तरमा तकके विभिन्न स्थान गौड़  
 नामसे प्रसिद्ध थे। मारखत, कान्यकुब्ज, मियिला, गौड़  
 शौर उत्कल यह पांच जनपद ही पूर्वोत्तर किन्हीं न किंसां  
 एक गौड़में शामिल थे अथवा उनके थोड़े समयमें जाते थे।  
 इस कारण पञ्चगौड़ कहनेसे एक पञ्चजनपदवासी ब्राह्मण  
 विधिपका बोध होता था। इस प्रकार एक समय समय  
 आर्यावर्तके पश्चिमपश्चात् बोध करनेके लिये एक पंचगौड़-  
 श्वर शब्दका व्यवहार होता था। माधवाचार्यके चण्डी-  
 मंगलमें सम्पाट, घकवर पंचगौड़श्वर नामसे अभिहित  
 हुए हैं। पहले ही लिखा जा चुका है कि महाराज  
 पाटिश्वरने भो पंचगौड़श्वरकी उपाधि पाई थी। पहले  
 जो आर्यावर्तके सम्पाट होते थे, वे ही इस सम्पाटजनक  
 उपाधिपक्षमें पठनेकी सम्पाटित समझते थे। बहुपर-  
 यत्नोक्तानमें भी विद्यापतिके पृथुपोक मियिलाराज  
 शिवमिह, कतिवामके आश्रयदाता गौड़ाधिप शौर  
 सुलतान हुसैन शाह पादि इस समुच्च उपाधिसे भूयित  
 रहे।

पञ्चामी (सं० को०) पंचानां आमायां समाहारः,  
 स्त्रियां ङीष् । पंचामके समुच्च ।

"स्वधीमि दय दू भावस्तु पदं वा नय मन्वति ।  
 पंचमानी बहिःशोभाद्द्रवमाप्यथा पुनः ॥"  
 (बाट० २।१।७)

पञ्चक (सं० को०) पञ्चविधं चक्रं । तन्महात्वाद्गुण-  
 पांच प्रकारके चक्र जिनके नाम ये हैं—राजचक्र, महा-  
 चक्र, देवचक्र, वीरचक्र शौर पञ्चक । जो वीरभावसे  
 उत्पन्न करते हैं, उन्हें पंचकसे पूजा करनी चाहिए।  
 "चक्रं पंचविधं शोकं तत्र शक्तिं प्रपूजयेत् ।  
 राजचक्रं महाचक्रं देवचक्रं तृतीयकम् ॥  
 वीरचक्रं चतुर्थं च पञ्चकं च पंचमम् ।  
 पंचकं यजेद्दिवो वीरश्च कुलद्वन्द्वी ॥"  
 (प्रायोचिनी)

पञ्चत्वारिंश (सं० त्रि०) पंचत्वारिंशत् संख्याकां  
 पूरण, पैतालीमवां ।

पञ्चत्वारिंशत् (सं० स्त्री०) पैतानोस ।

पञ्चचामर (सं० को०) छन्दो विगेष, छन्दका नाम ।  
 इसके प्रत्येक चरणमें १६ चरण रहते हैं जिनमेंसे २१,  
 ४था, ६ठा, ८वां, १०वां, १२वां शौर १६वां चरण गुरु  
 तथा शेष चरण लघु होते हैं।

पञ्चचित्त (सं० पु०) पंच चित्तयः प्रस्तारा यस्मिन् ।  
 चन्निमेंद ।

पञ्चचोर (सं० पु०) पंच चीराणि यस्य । १ मञ्जुश्रीका  
 नामान्तर । २ मञ्जुघोष ।

पञ्चचूडा (सं० स्त्री०) पंचसंख्याकाः चूडा शिरोरत्नानि  
 यस्याः । अश्वरोविशेष ।

'उर्वरी मेनका रम्भा पंचपूजा तिथौतमा ॥'  
 (राजो० १।२।११)

पञ्चकव—एक पवित्र क्षेत्र शौर ब्राह्मणोंका पवित्र आश्रम ।  
 रामचन्द्रजी रावणकी मार कर जब अयोध्या लौटे, तब  
 उन्होंने राजमहत्याजनित पापक्षयके लिए यहाँके जल-  
 धरण मणिवरके किनारे कुछ काल तक वास किया था।

पञ्चजटा (सं० स्त्री०) पंचमूल ।

पञ्चजन (सं० पु०) पञ्चभिर्भूतैर्धन्यतेऽसौ पंचजन-  
 कर्मणि घञ्, (अनिश्चोदय । पा ०।१।२५) इति न  
 ङितिः । १ पुण्य । पंचमृत द्वारा पुत्रपत्न्यपत्न्य होने हैं,  
 २ हीति पंचजन कहनेसे पुत्रपत्न्यका बोध होता है ।

“सद्व्यासप्रपादिका द्वैधवतेन धीरवदराहितः ।  
 पंच पंचजनैश्चेज्ज पुरे सरिषन् निवेतिताः ॥” (गजतर० ३)  
 २ मनुष्यसम्बन्धी भाषादि, मनुष्य, जीव और शरीरमें  
 मन्वन्त रत्ननेवानी प्राण आदि । ३ मनुष्यतुल्य देवादि,  
 गन्धर्व, पितादेव, असुर और राक्षस । ४ मनुष्यभेद  
 ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और निपाट । ५  
 देवविशेष । सप्तादकी पत्नी कृतिके गर्भसे इनका जन्म  
 हुआ था । ६ एक असुर जो पातालमें रहता था । यह  
 श्लोकचन्द्रके गुरु संदीपनाचार्यके पुत्रको चुभा ले  
 गया था । कृष्णचन्द्र इसे मार कर गुरुके पुत्रको छुड़ा  
 लाये थे । इसी असुरकी पत्नीसे पञ्चजन्य शङ्ख बना था  
 जिसे भगवान् कृष्णचन्द्र बजाया करते थे । ७ राजा  
 मगरके एक पुत्रका नाम । हरिवंशमें लिखा है, कि  
 मङ्गराज मगरके तपोवत्सम्पत्त्या दो महियो थी, बड़ो  
 महियोका नाम वैशिनो और छोटीका मरतो था । ये  
 क्रमशः विदुर्भाराज और अरिष्टनेमिको दुष्टिता थीं ।  
 शोर्ष, ऋषिने दोनों महियियों पर प्रसन्न हो कर उन्हें वा  
 मांगनेका कहा । इस पर वैशिनोने एक बंशधर पुत्रके  
 लिये और मरतीने प्रभुतवीर्यशाली अनेक पुत्रोंके लिये  
 प्रांशुना को । शोर्ष ‘तथास्तु’ कह कर चन दिए । तदनु  
 सार वैशिनोके मगरके औरमसे अरमञ्छा नामक एक  
 पुत्र हुआ । यही अरमञ्छा महियीमें पंचजन नामसे प्रसिद्ध  
 हुए । महतीके गर्भमें साठ हजार पुत्र उत्पन्न हुए । इन  
 सब पुत्रोंमें पंचजन ही राजा बने । पंचजनके पुत्र अंशु  
 मान् और अंशुमान्के पुत्र दिलीप हुए । (हरिवंश १५५०)  
 ८ पलापतिभेद, एक प्रजापतिको नाम । ९ पांच या पांच  
 प्रकारके जनीका समूह ।

पञ्चजनलय ( म० स्त्री० ) आभौरीकी मञ्जाभेट ।  
 पञ्चजनो ( म० स्त्री० ) पंचानां जनानां समाहारः ततो  
 डोप । १ पांच मनुष्योंको मण्डली, पंचायत । २ विश्व-  
 रूपकेत्या ।  
 पञ्चजनो ( म० पु० ) पंचसु जनोप्यापृतः, टिक्-मं-स्यो  
 सञ्जायामिति संसंगः पंचजने हितं, पंचजन-वि (पंच-  
 जनदुपसंख्यानमिति) स । पा ५१(१५) १ मण्ड, भाङ्ग, तत्तम  
 करनीवाला । २ नट, अभिनेता, स्वर्ग बनायेवाला । ३  
 पञ्च मनुष्योंका नायक वा प्रभु । (त्रि०) ४ पंचयज्ञि-  
 सभ्यभ्योय ।

पञ्चजन्य ( म० पु० ) एक प्रसिद्ध शङ्ख जिसे श्रीकृष्ण बजाया  
 करते थे । यह पंचजन राक्षसकी षडङ्गीका बना-  
 हुआ था ।  
 पञ्चजोर-गुह ( म० पु० ) चक्रदत्तोक्त गुडोपधमेद ।  
 यह स्तित्कारोगमें हितकर है ।  
 पञ्चज्ञान ( म० पु० ) १ पंचानां पदार्थानां ज्ञानं यत्र ।  
 २ बुद्ध । ३ पाशुपतदुर्गनाभिज्ञ ।  
 पञ्चत ( म० पु० ) पंचपरिमाणस्य पंचन्-ति । पंचसंख्या-  
 युक्त वगे ।  
 पञ्चत ( म० स्त्री० ) पंचानां तत्त्वानां समाहारः । पंचतत्त्व-  
 का समाहार ।  
 पञ्चतत्त्व ( म० स्त्री० ) पंचानां तत्त्वानां समाहारः । १  
 पद्मभुज, पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश । २  
 पंचमकार, मय, मांम, मत्स्य, मुद्गा और मधुन ।  
 ‘गर्भे मांम तथा मत्स्यं मुद्गां मधुनमेव च ।  
 पंचतत्त्वमिदं देवि निर्माणमुक्तिहेतवे ॥  
 मत्स्यारं च’ देवि देशानामपि दुर्लभम् ॥”  
 ( कैवल्यतन्त्र १ प० )  
 मयादि पंचमकारनिर्वाणमुक्तिके कारण हैं । यह  
 पंचमकार देवतापत्तिके भी दुर्लभ हैं । पंचतत्त्वविहीन  
 मनुष्योंकी कल्पिते सिद्धि नहीं होती । पञ्चमकार देखो ।  
 “पंचतत्त्वविहीनानां क्लेशो विदिने जायते ।”  
 ( तन्त्रशास्त्र )  
 वैष्णवोंके लिये गुरुतत्त्व, मन्त्रतत्त्व, मनस्तत्त्व, देव-  
 तत्त्व और ध्यानतत्त्व यही पंचतत्त्व हैं ।  
 ‘तत्त्वज्ञानमिदं श्रेष्ठं वैष्णवे श्रेष्ठं यत्नतः ।  
 प्रवृत्तत्वं मन्त्रतत्त्वं मन्त्रतत्त्वं सुरेश्वरि ।  
 देवतत्त्वं ध्यानतत्त्वं पञ्चतत्त्वं ब्रह्मणे ॥”  
 ( निर्वाणतन्त्र १२ प० )  
 वैष्णवोंके लिये यही पंचतत्त्वज्ञान तत्त्वज्ञान है ।  
 यह पंचतत्त्वज्ञान निम्नलिखित प्रकारसे प्राप्त किया जाता  
 है । पहले गुरुतत्त्व गुरुमन्त्र प्रदान करे, इससे मत्स्य  
 शक्ति कायुक्त दिव्यतत्त्व ब्रह्मणेन उद्योग, बाट इन  
 मन्त्रप्रभाषण इष्टदेवताका गान उच्यते होता है । इष्ट-  
 देवताके मन्त्र मन्त्र वर्ण प्रथम हैं । इन मन्त्रवर्णोंमें ईश्वर-  
 वः पञ्चय वीर्यनिहित है, पादे मन ही मन उक्त मन्त्रमें

'मं स्वयं' श्रेयसास्वरूप ह' इत्यादि रूपमें चिन्ता करे'। तटनना उम मन्त्रगे ध्यान करे'। मन्त्रध्यान करते करते मंत्र प्रकरकी सिद्धियां प्राप्त होती हैं। यह पंचतत्त्व सिद्धि तैत्तिरीय मनुष्य विष्णुरूप ही जानते हैं और कदापि यममन्त्र नहीं जानते।

पंचभूत पंचतत्त्व है। तन्त्रमें इन प्रकार लिखा है— पञ्चतत्त्वका उदय स्थिर करके शान्तिकादि पट्टकमें करने होते हैं। शान्तिकाद्यमें जलतत्त्व, वसोकरणमें तडित्तत्त्व, स्तम्भानमें पृथ्वीतत्त्व, विह्वलमें आकाशतत्त्व, उद्याटनमें वायुतत्त्व और मारणमें वाज्रतत्त्व प्रयुक्त है। पंचतत्त्वमें उदयनिर्णय करके शान्तिकादि कार्य करने होते हैं, इसीसे पंचतत्त्वोदयका विषय अति मंचेयमें लिखा गया। भूमितत्त्वका उदय होनेमें दोनों नासापुटमें शङ्काधारमें श्यामनिकलता है, जनतत्त्व और अनितत्त्वके उदयकालमें नासिकाके ऊर्ध्वभाग ही कर श्याम प्रकाशित होता है। वायुतत्त्व। उदयके समय यकभाषमें भया आकाशतत्त्वके उदय होनेमें नासिकाके पश्चिम भाग का श्याम निम्ना करता है। इन सब श्याम निम्नमन द्वारा किम समग्र किम तत्त्वका उदय होता है, उसका स्थिर करना होगा। पृथ्वा तत्त्वके उदयमें स्तम्भान और वसोकरण, अन्ततत्त्वके उदयमें शान्ति और पुष्टिकर्म, वायुतत्त्वके उदयमें मारणादि करकर्म तथा आकाशतत्त्वके उदयके समय विपाटि नाशकार्य प्रयुक्त है।

पञ्चतत्त्वक मण्डल—जिन तत्त्वके उदयमें जो मंत्र कार्य कहे गये हैं, उन तत्त्वका मण्डल निर्माण कर कार्य साधन करना होता है। आकाशतत्त्वमें ६ विन्दुयुक्त मण्डल, वायुतत्त्वमें स्वस्तिरोपित त्रिकोणाकार मण्डल, अनितत्त्वमें शंकेषुद्राकृति, जनतत्त्वमें पञ्चाक्षर और पृथ्वीतत्त्वमें मध्य घुत्तुस्त्र मण्डल करके कार्य करना होता है। (नन्वसार) तत्पर देना।

पञ्चतन्त्र : ( मं० श्लो० ) नैतिगाम्ये नियोगे, विष्णुगमनिगिरचित एक मन्त्रान्तरं यन्त्रं । राजा सुदृगं भजे पुत्रको धर्मं चौर नैतिविषयमें प्राप्त होने, निष्ण ही उदयने ५वीं शताब्दीमें यह ग्रन्थ बनाया। ६वीं शताब्दीके प्रथम भागमें नगिरवानके राजत्व के समय यह ग्रन्थ पद्मवी भाषाओं और पाँच वर्षों शताब्दीके मध्य भागमें श्वदुर्वाचिन

सुम्ताका कर्तृक अरबी भाषाओं अनुवादित हुआ। पीछे यह उर्दूमें तथा तुर्कभाषाओं 'शमायूनु नामा' नामसे भाषान्तरित हुआ। इसके बाद इसका निम्न जेल कर्तृक अथक भाषाओं और पीछे हिन्दु, पारसि, इटाली, स्पेन और जर्मनभाषाओं अनुवाद किया गया। १३वीं शताब्दीको हिन्दुके अनुकरणमें कपुपाराजाके कल्पनेसे यह ग्रन्थ नैतिग भाषाओं अनुवादित हुआ था। १६वीं शताब्दीको अङ्गरेजोंमें : पीछे १६४४ और १७०८ ई०को फरारी भाषाओं तथा इनमें धीरे धीरे यूरोपको समस्त वर्तमान भाषाओंमें यह ग्रन्थ अनुवादित हो कर 'पिब्ले-का गल्प' ( Pilibay's fables ) नामसे प्रसिद्ध हुआ। तामिल और कणाडो प्रभृति टाचिणाल्य भाषाओंमें भी इसका अनुवाद देखा जाता है। विभिन्न स्थानोंसे प्राप्त पञ्चतत्त्व ग्रन्थका कुछ पाठान्तर देखनेमें आता है। संस्कृत और कणाडोमें जो पंचतत्त्व लिखा गया है उसमें पङ्क्तिमें मालूम होता है कि गङ्गानदीके किनारे पाटलीपुत्र नगरमें राजभवन था, किन्तु ग्रन्थ किसी किसी ग्रन्थमें टाचिणाल्यके महिलारोप्य नगरमें इस राजभवनकी कथा लिखी है। इसीसे धर्म-ग्रन्थ वाङ्मय छूट कर और पीछे भी ग्रन्थ पंचतत्त्वको अपेक्षा लक्ष्मि विरहंत और स्थानिमात्र न कर सका।

पञ्चतन्त्रमात्र ( मं० श्लो० ) पंचगुणितं शब्दादिभूतं सुप्रामा-  
खकं तन्त्रमात्रम् । सुप्रपंच महाभूतं शब्द पागं, रूपं, रस और गन्ध तन्त्रमात्र ही पंचतन्त्रमात्र है। इसी पंचतन्त्रमात्र-  
में पञ्चमहाभूत ही उत्पत्ति हुई है। माण्ड्यके मतमें—  
प्रकृतिमें महत्त्व (बुद्धि), महत्त्वमें अहङ्कार, अहङ्कारमें एका-  
दश इन्द्रिय और पंचतन्त्रमात्र ही उत्पत्ति हुई है। यह  
पंचतन्त्रमात्र प्रकृतिविलिप्तियोगी प्रकृतिको विलिप्त है।  
शब्दतन्त्रमात्रमें आकाश है, इसी कारण आकाशके गुण  
शब्द है, शब्द और स्वयं तन्त्रमात्रमें वायु है, इसीसे वायु-  
के दो गुण हैं, शब्द और स्पर्श, शब्द, स्पर्श और रूप-  
तन्त्रमात्र में है, इसीसे तन्त्रके तीसरे गुण माने गये हैं, शब्द,  
स्पर्श और रूप, शब्द, स्पर्श, रूप और रस तन्त्रमात्रमें जल-  
को उत्पत्ति हुई है, इन कारण जलमें ४ गुण हैं, यथा—  
शब्द, स्पर्श, रूप और रस। गन्धतन्त्रमात्र उत्पत्ति ही इसी-  
से पृथ्वीके पाँच गुण हैं, शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्ध।

इस प्रकार पंचतपमात्रमें पंचमहाभूतकी उत्पत्ति हुई। फिर जब पंचमहाभूत लीन हो जाता है, तब आकाश, अग्नि, वायु, जल, अथवा अन्न, तब रूपतपमात्रमें, जल अन्नतपमात्रमें और पृथ्वी गन्धतपमात्रमें लीन हो जाती है। इसी प्रकार सभी भूतोंकी सृष्टि और लय हुआ करता है, जब तक प्रकृतिको सृष्टि रहेंगी, तब तक इसी प्रकार उत्पत्ति और लय हुआ करेगा। जब प्रलयकाल उपनिषत् जोगा तब पंचतपमात्र बुद्धिमें और बुद्धि प्रकृतिमें लीन हो जायगी। (सर्वज्ञानसूक्तौ)

पञ्चतप (सं० पु०) पंचमित्तिजस्विभिः पृग्निचतुष्टय-सूर्यैस्तपति तप-अच्छ। वह जो पंचाग्नि द्वारा तपस्या करती है।

पञ्चतपस (सं० त्रि०) पञ्चरादिभिः पंचमित्तिजःपदारथ-स्वपति यः पंच-तप-पसन् । अग्निचतुष्टय और सूर्य यह पंचतपसुक्त तपस्यो। चारों और अग्नि प्रज्वलित करके प्रीतिमालमें जो खुले मैदानमें बैठ कर तपस्या करती है, उन्हींको पंचतपस, कहते हैं।

"वेजस्विमथ्ये तेजसो दधीभानपि गन्धते ।

पञ्चमः पञ्चतपसस्तपनो मातवेदसाम् ॥"

(शिक्षा० २।५१)

पञ्चतपा (त्रि० पु०) पञ्चतपस देवो ।

पञ्चतप (सं० त्रि०) पञ्च अथयवा यस्य, अथयवे तयप,। पंचाथयव, पंचसंख्या, पांचका अदद ।

पञ्चतप (सं० पु०) पांच वृक्ष, मन्दार, पारिजात, सन्तान, कल्पवृक्ष और हरिचन्दन ।

पञ्चता (सं० स्त्री०) पंचानां भूतानां भावः तल्ल टाप । मृत्यु, भीत, विनाश। मृत्यु होनेमें पञ्चभूत स्वल्पमें अवस्थान करता है, इसीसे पंचता अर्थात् मृत्युका बोध होता है।

"स तु जनपरितापं तदहर्तं जानता वे ।

नरहर उपनीतः पञ्चतां पञ्चवर्षिण ॥"

(भागवत ५।५।२)

२ पंचभाव, पांचका भाव ।

"भास्ये छदे लवे वाद्ये नाति स्थानति पञ्चतां ॥"

(मनु० ८।१५१)

पञ्चताप (सं० पु०) सप्ततालका एक मीद। इस मीदमें पञ्च

युगल, फिर एक, फिर युगल और अन्तमें शून्य होता है। पञ्चतालखर (सं० पुं०) शब्द जोतिका एक राग ।

पञ्चतिक्त (सं० स्त्री०) पंचगुणितं तिक्तं । पंचविध तिक्त द्रव्य, पांच कड़ुई शोषधियोंका मसुह—गिलोय, कण्टकारी, सोंठ, कुट और धिरायता। पञ्चतिक्तका काढ़ा ज्वर में दिया जाता है। भावप्रकाशमें पञ्चतिक्त वे हैं—नीमकी जड़को छाल, परवलकी जड़, अड़ूसा, कण्टकारी और गिलोय। यह पंचतिक्त ज्वरके अनिरिक्त विषस्य और कुट आदि रक्त दोषके रोगों पर भी चलता है।

पञ्चतिक्तघृत (सं० स्त्री०) घृतौषधभेद । प्रस्तुत प्रणाली—गन्धघृत ५३ सेर; कटकायं नीमकी छाल, परवलकी जड़, कण्टकारी, गुलूच, अड़ूसेकी छाल, प्रत्येक १० पल; पाकार्यजल ६४ सेर, श्रेय १६ सेर; कटकायं मिश्रित त्रिकला ५१ सेर। पाछे यथानियम घृत पाक करके सेवन करनेमें कुट, दुष्टद्रव्य और ८० प्रकारकी वातन व्याधि विनष्ट होता है। (सं० पञ्चर० कुष्ठोपाधि०)

पञ्चतिक्तघृतगुग्गुलु (सं० पुं०) शोषधभेद। प्रस्तुत प्रणाली—घृत ५४ सेर; काठायं नीमकी छाल, गुलूच, अड़ूसेकी छाल, परवलकी पत्तियां, कण्टकारी प्रत्येक १० पल; श्लथपीठकोवह गुग्गुलु ५ पल; पाकार्य जल ६४ सेर, श्रेय ८ सेर, काढ़ेको छान कर जब वह उष्ण रहे, उसी समय उसमें पीठेलोका गुग्गुलु मिला दे। वाद घोरमें इस कार्य-जनको पाक करना होगा। कटकायं अजवन, विडङ्ग, देवदारु, गजपिपली, यव-घार, साचिचार, सोंठ, हल्दी, सौंफ, चर्से, कुट, ज्योतिष्यतो, मिर्च, इन्द्रयय, जोरा, चितामूल, कुटकी, भिलाषां, वच, पिपामूल, सञ्जडा, अतोस, त्रिकला, वनयवानी प्रत्येक २ तोला। यथानियम घृतपाक करके सेवन करनेमें कुट, नाडोमण, भगन्दर, गण्डमाला, शुद्ध, मेघ आदि रोग जाति रहते हैं। (सं० पञ्चर० कुष्ठोपाधि०)

पञ्चतीर्थ (सं० स्त्री०) पंचानां तोषानां समाहारः। तीर्थ-पंचक। यह पंचतीर्थ स्थान स्वाममें मिथ प्रकारका है। यथा—शामोस्वत पंचतीर्थ।

"क्षानवापीमुपस्थथ नदिदेवं ततोऽर्चयेत् ।

सारकेण ततोऽर्चयेत् महाकाष्ठैश्चर ततः ।

ततः पुनर्दण्डपागिमित्थेया पञ्चतीर्थि का ॥"

(शारीर० १०।३२)

ज्ञानवायो, नन्दिश्रेय, नारश्रेय, मरुतकानिश्वर चौर  
दण्डवानि यद्यो पंचतीर्थं है। पुरुषोत्तम स्थानमें मां  
ण्डियवर, कुंग, रोहिणिय, नहाममुद्र चौर इन्द्रधुम्न  
मरोवर यद्यो पंचतीर्थं है। पुरुषोत्तममें पंचतीर्थ  
करनेमें पुनर्जन्म नहीं होता।

“गण्डकेये वटे कृष्ये गीहिलेये महोदधौ।

इन्द्रधुम्नभरः स्नात्वा पुनर्जन्म न विद्यते ॥” (तीर्थतरव)

पृथो पर जितने तीर्थ है उनमें स्नान करनेमें जो  
पुण्य निम्ना है, एक एक पंचतीर्थमें स्नान करनेमें सही  
पुण्य प्राप्त होता है।

“शुभिवशां याति तीर्थानि सर्वान्येवामिषेचनात्।

तत् पञ्चतीर्थस्नानेन तमं नारदश्च संशयः ॥”

(यारापुराण)

एकादशीमें विद्यान्ति, द्वादशीमें शोकर, त्रयोदशीमें  
नेमिप, चतुर्दशीमें प्रयाग तथा कार्तिकामासमें पुष्कर  
तीर्थमें स्नान करनेमें प्रलय फल प्राप्त होता है।

पञ्चदश (सं० क्रो०) कुंग, काश, गर, दभं चौर इत्तु  
यद्यो पंचदश।

“कुंगः काशः शरो दभं इक्षुश्चैव तृणोद्भवम्।

पञ्चदशमिदं दद्यात् तृणं पञ्चमूलकम् ॥”

(परिमाणम्)

भाद्रपदाकाशे मसमें पंचदश यद्य है—शानि, इत्तु,  
कुंग, काश चौर गर।

पञ्चविंश (सं० क्रि०) ३५ संख्याका पुरण, पौतोमवा।

पञ्चविंशत् (सं० क्रि०) ३५, पौतोम।

पञ्चविंशति (सं० क्रि०) ३५की संख्या।

पञ्चत्वं (सं० क्रो०) पंचानां सित्यादि भूतानां भावः।  
१ मरण, शरीर संघटित करनेवाले पाँचों भूतोंका घनग  
भवन प्रवस्थान। २ पंचका भाव, पाँचका भाव।

पञ्चय (सं० क्रि०) पंचानां पूरणः, (पदं च छन्दसि। पा  
५।२।५०) इति वेदे घट्। पंचसंख्याका पूरण, पाँचवा।

पञ्चय (सं० पु०) कोकिल, कोयल।

पञ्चदक (सं० पु०) देयभेद, एक देगका नाम।

पञ्चदश (सं० क्रि०) पंचदशानां पूरणः, पूरणे घट्, पंचा-  
धिकारा दश यत्त वा। १ पंचदश संख्याका पूरण, पन्द्र-  
हवा। (पु०) २ पन्द्रहकी संख्या। ३ त्रिवि।

पञ्चदशकञ्चम् (सं० पद्यः) पंचः पञ्चयम्। पंचः १-  
वार, पन्द्रह वार।

पञ्चदशधा (सं० पद्यः) पंचदशः प्रकाशं धाच्। पंचः १  
प्रकार, पन्द्रह तरहका।

पञ्चदशान् (सं० क्रि०) पंचाधिकारा दशः। पंचाधिक दश-  
संख्या, पन्द्रह।

पञ्चदशा (सं० पु०) पंचः पञ्चयम्। १५ दिन।

पञ्चदशाहिक (सं० क्रि०) पंचदश दिन मध्य व्रतभेद-  
१४, १५ दिनमें होनेवाला व्रत।

पञ्चदशान् (सं० क्रि०) पंचदश परिमाणम् परिमाणार्थं  
णिनि। पंचदश परिमाणयुक्त, पन्द्रहवा।

पञ्चदशो (सं० स्त्री०) पंचदशानां पूरणी-घट्, स्त्रियां  
ङीप्। १ पूर्णमा, पूर्णमासी। २ समाख्या। ३ वेदान्त-  
का एक प्रसिद्ध ग्रन्थ।

पञ्चदोषं (सं० क्रि०) पंचसु पयवेषसु दोषः शरीरस्य  
स्मृतिगात्रोक्तमक्षणं पंचदोषं। शरीर पंचावयव-  
मक्षणविशेष। शरीरके पाँच स्थान जिनके दोष होते हैं,  
वे सुलक्षणकात्कान्त हैं।

“बाहू नेत्रद्वयं कुण्डिले तु नाभे तर्षणं च।

स्तनयोस्तारुण्यं च पञ्चदोषैः प्रसङ्गते ॥” (ताम्रिक)

बाहू, नेत्र कुण्डिल, नाभा चौर यत्त दोष होनेमें शरीर  
जनक समझा जाता है।

पञ्चदोष (सं० पु०) पञ्चदोषता दोषो।

पञ्चदोषता (सं० स्त्री०) पंचदोषताः संज्ञात्वात् इमं-  
धातयः। पाँच प्रधान दोषता जिनको उपामना आज कल  
हिन्दुधर्ममें प्रचलित है—पादिल, गलेग, देहो, रुद्रं चौर  
केगव। सभी पूजार्थ इम पंचदोषताको पूजा करनेको होती  
है। पंचदोषताकी पूजा किये जिना धन्य किमो दोषताको  
पूजा नहीं करनेको चाहिए।

“आदिले गन्नापञ्च देहो हरण्य केगवम्।

पञ्चदोषतमियुक्तं सर्वैर्धर्मेषु पूजयेत् ॥” (आहिस्ततर)

उन दोषताधर्ममें यद्यपि तोल बेटिक है पर धनका  
ध्यान चौर पूजन दोषाधिकता तथा तान्त्रिकपद्धतिके पञ्च-  
कार होता है। इन दोषताधर्मोंमें प्रत्येकके धनिक विषय  
है जिनके धनुसार धनिक नाम रूपोंमें उपासना होती  
है। ह्नुक्त लोग तो पाँचों दोषताधर्मोंकी उपासना बमान

भावसे करते हैं और कुछ लोग किसी विशेष मन्त्रदायके अन्तर्गत हो कर किसी विशेष देवताको उपासना करते हैं। विष्णुके उपासक वैष्णव, शिवके उपासक शैव, सूर्यके उपासक सौर और गणपतिके उपासक गणपत्य कहलाते हैं।

**पञ्चद्राविड**—द्राविडराजके अधीन पाँच विशिष्ट जनपद। राजा राजेन्द्रचोड़के राजत्वकालमें उक्त पाँच जनपद (८४०-६४ शकमें) दक्षिण भारतमें विशेष प्रसिद्ध हो गये थे। आर्यावर्तमें जिन प्रकार एक समय 'पंचगोड' नामक एक विशिष्टब्राह्मणसमाज स्थापित हुआ था, उसी प्रकार दक्षिणात्यके ब्राह्मणजन भी पंचद्राविड नामक एक स्वतन्त्रसमाजमें गठित हुए। विन्ध्यनिरिके दक्षिण-भागमें द्राविड, चम्प, कर्णाट, महाराष्ट्र और गुजरात नामक पाँच जनपद पाण्ड्यराजाओंके अधीन उन्नतिके उच्च सीमान पर पहुँच गये थे। स्वतन्त्रराज्यमें लिा है—

“कर्णाटदेशे तैलंगा गुजरात् राष्ट्रविभिः ।

आण्ड्रव श बेट्टाः पञ्च विन्ध्यनिरिकविभिः ॥”

दक्षिणात्यके ये पाँच स्थान और उनके अधिवासि-गण अत्यन्त निष्ठा वन्य जातीयके श्रेष्ठस्थान मानी गये हैं। इन पाँच स्थानोंकी भाषा तामिल, तेलगु, कर्णाडो, मराठी और गुजरातीके भेदमें स्वतन्त्र है। पाण्ड्यराज राजेन्द्रचोड़ 'पंचद्रमिनाधिपति' उपाधिमें विभूषित थे। पञ्चधा (सं० पञ्च०) पंचन-धा (संज्ञया विधापे-धा । पा ५।३।४२) पंचप्रकार।

**पञ्चधुनी**—कठोराचारो वेणुव तपस्त्रिसम्प्रदाय। पर-मार्थसाधनके उद्देशमें शरीरमें कष्ट दे कर धर्मकर्मों करमा हो इनका प्रधानकार्य है। इनमेंसे कोई कोई अपने शरीरके चारों बगल और सामनेमें धाग जला कर तपस्या और होम करते तथा अभिलषित द्रव्यादि भोग दिया करते हैं। इनका पंचधुनी नाम पड़नेका यही कारण है। इनमेंसे कुछ साधु ऐसे हैं जो चारों ओर चौरासो धुनी प्रवर्धनित कर उनके बीचमें बैठते और उपादि करते हैं।

**पञ्चन (सं० वि०) पञ्चनद**। १ संज्ञाविभेप. पांच। पञ्चशककण्ड—पाण्डव, मिथ्यास्य, इन्द्रिय, स्वर्ग, प्रणाम्नि, महापाप, महाभूत, महाकाश्य, महामय, पुराण-

कल्प, यज्ञ, प्राण, वग, इन्द्रियाय, वाण । २ पंच-संख्यायुक्त, जिनमें पांचवा प्रदद हो।

**पञ्चनख (सं० पु०)** पंच नखा यस्य १ इप्सी, हाथो। २ कूर्म, ककुषा। ३ व्याघ्र, बाघ। जिन प्राय जन्तुओंके पाँच नख होते हैं उन्हींको पंचनख कहते हैं। कितने पंचनख ऐसे हैं जिनका मांस भक्षणीय माना गया है। “शशकः शशके गोधा खड्गी कूर्मश्च पञ्चनः ॥” (सृष्टि) शशक, शशको, गोधा, खड्गी और कूर्म ये पंच-नख हैं।

“महाराः पञ्चनखाः सेषागोधाकच्छपशशकाः ।

शशश्च मरुत्येववि दि मिहत्तुण्डरुतिनाः ॥”

(शाक्यव्यव १।१०६)

सेषा, गोधा, कच्छप, शशक और शश इन पाँच-नखोंका मांस खाया जा सकता है।

**पञ्चनद (सं० पु०)** पंच पंचगंखका; नद्यः सन्वत्त्र सप्तमे टच्। १ पंचनदीयुक्त देयविशेष, पञ्चाव प्रदेश उद्घा पांच नदियों बहती हैं। इसका नामान्तर वाह्लीक और मद्र-देय है। सतलज, व्यास, रावी, चनाव और मैतम गङ्गे पाँच नदियाँ जिनसे पञ्जाव नाम पड़ा है, मूलतः नगर-के दक्षिण भागमें था कर सिन्धुनदीमें मिल गई हैं।

पञ्जाव देवी ।

“रुदः पञ्चनदे जातु दुतरैः सिन्धुसंगमैः ॥”

(राजतरां ४।२९८)

सिन्धुनदके उत्तरदेगमें एक लघु नदी और भी सत नदियोंका सङ्गम देखा जाता है। ये सत नदियाँ सव-सिन्धु नामसे प्रसिद्ध हैं। अल्पसिंधु देखो।

(बली०) पंचानां नदानां समाहारः। २ पाँच नदियोंका समाहार। सतलज, व्यास, रावी, चनाव और मैतम ये पाँच नदियाँ। ३ काशीस्थित नदीपंचक-रूपशेखर। काशीखण्डमें इस पंचनद तीर्थका विवरण इन प्रकार लिखा है—धृतवापा सब प्रकारके पाप दूर करनेमें समर्थ है। इसके साथ पड़ने धर्मनद अर्थात् पवित्र मङ्गलमय धर्मनद उदमें सर्वपापापहारिणी धून-प.पा और किरिया धाकर मिल गई है। योद्धे यथासमय भंगोरयानेत भागोरखी, यमुना और सरस्वती ये तीनों नदियाँ था कर मिली हैं। धर्मनदमें ये पाँच नदियाँ

मिनी है इस कारण इसे पंचनद कहते हैं। इस पंच-  
नद तोष में स्थान करनेसे जीवकी पुनः पञ्चभौतिक शरीर  
धारण नहीं करना पड़ता। सभी तोषोंकी चपेसा पंच-  
नदतीर्थ का माहात्म्य अधिक है। इस तीर्थमें ऋधापूर्व क  
आहुत करनेसे आहुतकृत्तिके पिशुपिनामहण नामा योनि-  
गत होने पर भी बहुत जल्द मुक्त हो जाते हैं। ४ रूप  
तीर्थ भेद, एक दूसरे तीर्थ का नाम। महाभारतमें इस  
का उल्लेख देखनेमें पाता है।

“अथ पञ्चनदं गत्वा नियतो नियताग्रतः ।

पञ्चनदं नवाप्नोति कथं यो वेऽनुकीर्तितः ॥”

( मार० ३१८२।५९ )

५ असुरभेद, एक असुरका नाम।

“इत्या पञ्चनदं नाम नरकस्य महाद्वारम् ॥”

( हरिवंश-३२०।८८ )

पञ्चनमथानू—तेनैव देवशासो बद्धं जाति। ये लोग  
मर्त्यागममें पञ्चनद और द्राविडमें कण्मातर नामसे प्रसिद्ध  
हैं। ताम्र लोह आदि धातु, मन्तार और काष्ठोत्पादा कार्क-  
कार्य भी इनका ज्ञानीय व्यवसाय है। कहते हैं, कि  
यह जाति गिबकोके पंचसुपुत्रे निकली है, इस कारण  
इस जातिके लोग ‘पंचनम’ कहलाते हैं। ये लोग यज्ञी-  
पथीत पचनमें और पचनेकी साधारण देखबलाद्यन-  
योगी वृत्त बनलाते हैं। साधारण व्यवहारमें विगोप  
परिपाटो नहीं है, साधारणतः सभी अपरिष्कार रहते  
हैं। यही कारण है कि नीचसे नीच जाति भी इनके  
छायाका छया जन नहीं पते। पूर्व समयमें ये लोग  
विवाहादिमें भी पानकी पर चढ़ने नहीं पाते थे तथा  
द्वतरी और कतिका व्यवहार भी इनमें निषिद्ध था।

व्यवसाय विधेयसे इनके मध्य पांच विभिन्न शाकों-  
की उत्पत्ति हुई है। जो लोग सोनेके काम करते थे  
तां सामो, लोहेके काम करनेवाले कामारो तथा पीतलके  
काम करनेवाले कामेरा कहलाते हैं। इनके मध्य एक-  
मात्र स्वयंकारण ही चतुर होते तथा थोड़ा बहुत  
लिपुना पढ़ना जानते हैं। अथगिट सभी योकोके लोग  
मूर्ख होते हैं। द्राविडके कामालोके मध्य पांच यात्र  
रहने पर भी वे तैलपुनामोकी चपेसा उत्पत्तियोंके  
समसे जानते हैं। पञ्चवर्षाविवरण पञ्चवर्षाव्ययमें देखो।

पञ्चनवत ( म० त्रि० ) पंचानवतां।

पञ्चनयति ( म० स्त्री० ) पंचानवको संख्या, ८५।

पञ्चनाथ—महात्म्य महात्म्यके प्रथिता।

पञ्चनाथो—विद्यारनगरके तिरुनाथके विख्यात मन्दिरके  
सामने एक पुण्यक्षेत्र थी। पुष्करिणी। यह तन्नाथसे  
८ मीलकी दूरी पर अवस्थित है। यह तीर्थक्षेत्र और  
मन्दिर निमोभर नामक एक ऋषिसे बनाया गया है।  
यहां प्रति वर्ष ‘शयचयनम्’ उत्सवमें लाखों चारमी  
जमा होते हैं। कहते हैं, कि इस पुष्करिणीमें स्नान  
करनेसे सर्वरोगक्षय होता है।

पञ्चनाथरमनय—टक्षिण प्राकट जिनके पत्नीमें लोण्डुर  
ग्रामके निकटतवाँ एक पर्वत। इसकी गिब पर पर्वत  
काट कर तीन अन्दरायें बनाई गई हैं जिनमें प्रसार-  
निर्मित शय्यादि और बुद्ध मूर्ति प्रतिष्ठित तथा रक्षित हैं।

पञ्चनामन् ( म० त्रि० ) पंचनामयुक्त, जिनके पांच  
नाम हों।

पञ्चनिदान ( म० पत्नी० ) रोग ज्ञानके पांच प्रकारके  
उपाय, निदान, पूर्णरूप, उपगय, सम्भामि और रोग-  
विज्ञान इन्हीं पांचोंको पंचनिदान कहते हैं।

पञ्चनिधन ( म० पत्नी० ) सोमभेद।

पञ्चनिम्ब ( म० स्त्री० ) नोमके पांच पत्रयव—पता, फल,  
फल, फल और मूल।

पञ्चनिम्बचूर्ण ( म० स्त्री० ) चोपधभेद, नोम की पत्तियों,  
फल, फूल, फल और मूल कुन मिना कर एक भाग,  
विषहक २ भाग और मत्त १० भाग। इन सबकी एक  
माप मिना कर मोटा करनेके लिए सममें चारो डाल  
दे। प्रति दिन २ मात्रा करके सेवन करनेमें पित्तप्रथमा  
जनित शूल और अत्यपित्त रोग जाना रहता है। इसका  
पशुपान जन और मधु है।

पञ्चनी ( म० स्त्री० ) पचति, प्रपचति, पागकोत्राणियमी  
यत्र, पचिविस्तारिभ्युट, स्त्रियां होप,। शारिद्वाना।  
पञ्चनीराजन ( म० स्त्री० ) पंचानां नोभाजनानां समाहारः।  
पंच प्रकार पाशात्रिद, पांच तराईकी चारती।

नोभाजन देखो।

पञ्चपत्तिन् ( म० पु० ) गिबोक्त पचिपचकाधितार द्वारा  
प्रश्रादि ज्ञानके लिए गोकुलगात्रभेद। इस गोकुल-

शास्त्रमें अ, इ, उ, ए और ओ ये पांच स्वर परिभाषिक पंचपञ्चोरूपमें निर्दिष्ट हुए हैं, इसीसे इस शास्त्रका पञ्चपञ्चिगास्त्र नाम पड़ा है।

पञ्चपञ्चिगाकुन नामक ग्रन्थमें लिखा है, एक समय मुनिवोंने महादेवसे पूछा था, 'प्रभो! भविष्यकी वार्ति जाननेका कौनसा उपाय है।' इस पर शिवजीने कहा था, 'वत्समान, भूत और भविष्यत् ये सब वृत्तान्त जाननेके लिए पंचपञ्चो अर्थात् गङ्गुनगास्त्र प्रकाशित करता है। इस गङ्गुनगास्त्रके प्रसुमार सभी कार्यमें लाभालाभ, शुभाशुभ और जयपराजय आदि जाने जायेंगे। कल्पित पत्नियोंका वनावन, गत्वु मित्रभाव आदि विशेषरूपमें जानना आवश्यक है। प्रश्नकर्ता जड़ प्रश्न करें, तब देवत्वकी मत्की हो कर उसका निरोक्षण करना चाहिए। पोछे प्रश्नकर्ताका कार्य देख कर उनके मानसिक भावोंका निरूपण करना चाहिए।'

पंचपञ्चो अ, इ, उ, ए और ओ इन पांच स्वरोंकी पञ्चोकी कल्पना करनेकी होती है। पत्नियोंके नाम श्येन, पिङ्गल, धायस, कुङ्कुट और मयूर हैं। इनकी भोजन, गमन, राजा, निद्रा और मरण ये पांच भवस्था हैं। उक्त पत्नियोंमें श्येन पूर्वदिशाका अधिपति, पिङ्गल दक्षिण दिशाका, काक पश्चिम दिशाका, कुङ्कुट उत्तर दिशाका और मयूर चारों कोंनोंका अधिपति है। इनमेंसे श्येन और काक भविष्यत् काल, कुङ्कुट वत्समानकाल, पिङ्गल और मयूर भूतकाल है। पत्नियोंके मध्य श्येन हिरण्यवर्ण, पिङ्गल खेतवर्ण काक रक्तवर्ण, कुङ्कुट विचित्रवर्ण और मयूर श्यामलवर्ण है। श्येनादि पञ्चोके काक बलवान् है। श्येन और धायस पुरुष, पिङ्गल स्त्री, कुङ्कुट स्त्री और पुरुष तथा मयूर नपुंसक है। इनमेंसे श्येन और पिङ्गल पञ्चो ब्राह्मणजाति, काक क्षत्रिय, कुङ्कुट वैश्य और मयूर शूद्र तथा मयूर परल्य जातिंका है। पत्नियोंकी जाति, मित्र, वर्ण, भवस्था आदि द्वारा प्रश्नका शुभाशुभ जाना जायगा।

उक्त प्रश्नगणना दो प्रकारसे की जा सकती है। प्रथम प्रश्न, वाक्का भवस्था उसके नामके गायम जो स्वरवर्ण रहेगा अथवा उसके प्रथमवर्ण में संयुक्त जो स्वर रहेगा उसका भवभावजन करके अ, इ, उ, ए और ओ इन पांच स्वरोंके

मध्य स्वजातीय एक स्वरकी कल्पना कर लेनी होगी यथा—मेरे मनमें क्या है, ऐसा प्रश्न करने पर 'मेरे' इस शब्दका आद्यस्वर एकार है, इसका स्वजातीय स्वर एकार है, इसे स्वरको कल्पना करनी होगी। इस प्रकार प्रश्नकर्ताका प्रश्नवाक्य सुन उसका आद्यस्वर वा आद्यवर्ण संयुक्त स्वर ग्रहण करके निम्नलिखितरूपसे वारनिर्णय करना होगा, पोछे उक्त कल्पित वार द्वारा शुक्लपत्र और लक्षणपत्रके भेदमें पञ्चोका निरूपण करके प्रश्नोक्त द्रव्य स्थिर करना होगा। तदनन्तर पञ्चोकी भोजनादि-भवस्था देख कर शुभाशुभ फल कह देना चाहिए।

प्रश्नवाक्यके आद्यस्वर द्वारा वारकी कल्पना करके उस वारमें जो पञ्चो होगा पहले उसी पञ्चोकी ने कर गणना करनेकी होगी। यह पञ्चो दिनपञ्चो पदवाच्य है। दिनपञ्चो कार्यरूपी है। इस दिनपञ्चो द्वारा नष्ट और चिन्तित द्रव्य-भसुदाय तथा स्त्री पुरुष आदिका शुभाशुभ फल जाना जाता है। प्रश्नकालमें लग्न स्थिर करके उस लग्नमें उस पञ्चोकी भोजन आदि भवस्था मालूम हो जानिके बाद फल निश्चय करना गणकका कर्तव्य है। गणकको पहले वस्तु और विषय स्थिर करके पोछे उसका फलाफल कह देना चाहिए।

आकारसे ले कर ओकार तक पांच स्वर पञ्चरूपमें मानी गये हैं, यह पहले ही कहा जा चुका है। इन पांच स्वरोंके मध्य अ, आ इन दो स्वरोंमें अ, इ, ई इन दो स्वरोंमें इ, उ, ऊ इन दो स्वरोंमें उ, ए, ऐ इनमें ए, ओ, ओ इनमें ओ वर्ण ग्रहण करना होगा। इस प्रकार सभी वर्णों द्वारा पञ्चोकी कल्पना करनी होगी। अ, इ, उ, ए ये चार वर्ण गणनामें नहीं लिये जाते। यदि प्रश्नके आदि वर्णमें यद्यो स्वर रहे, तो उन्हें व्यञ्जनके मध्य सन्निवेशित करके उच्चारणमें जो स्वर पायेगा, वही स्वर प्राप्य करना होगा। अ पूर्वदिशाका, इ दक्षिणदिशाका, उ पश्चिमदिशाका, ए दोनों दिशाओंका, ओ पश्चिमिष्ट सभी दिशाओंका अधिपति है। दिगा जाननेकी यदि जरूरत हो, तो उसे दिग्धिपति पञ्चो द्वारा जानना चाहिए। प्रश्नके आद्यवर्णमें जो स्वर रहेगा, उसका पंचम स्वर जिस दिशाका अधिपति होगा, उस



दिगाको समो कर्मणि विनोवनः यावाकालमे त्याग करमा चाद्रिये ।

ध्वज्जनवर्णको जगह इस प्रकार पञ्चस्वर स्थिर कर लेने होते हैं—क, छ, घ, ङ, च इन व्यञ्जनवर्णों में च ; ङ स्वरमें घ, ञ, च, न, म, श । उ स्वरमें ग, भू, त, प, य, इ इषी प्रकार ए, ओ इन दो स्वरोंमें इनके धादके ध्वज्जनवर्ण यदण करनी होगी, इसी प्रकार स्वर द्वारा धारणियाँको जगह च स्वरमें रवि और मङ्गल ; इ स्वरमें मीरा और बुध; उ स्वरमें बृहस्पति; ए स्वरमें शुक्र; ओ स्वरमें गनियारका धीध दूषा करता है। तिथिनिर्णय स्वरमें पकारादि पञ्चस्वरमें यगाक्रम नन्दा, भद्रा, रिता, जया और पूर्णा ये पांच तिथियाँ जाननी होगी। लग्नका निरूपण करनेमें च स्वरमें मेष मि'ह और मिच्छा, र स्वरमें कन्या, मियुन और कर्कट, उ स्वरमें धनु और मीन; ए स्वरमें तुलाऔर ह्य तथा ओ स्वरमें मकर कुम्भकी कल्पना करनी होती है। लक्षण निरूपण करनेमें चकारमें वैश्वी, अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा और आर्द्रा ये सात नक्षत्र; इ स्वरमें पुनर्वसु; पुष्या, अश्लेषा, मघा, पूर्वफल्गुनी ये छः नक्षत्र। उकारमें उत्तरफल्गुनी, ज्येष्ठा, चित्रा, स्वाति, विशाखा और अनुराधा ये छः नक्षत्र; एकारमें जेष्ठा, मूला, पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा और श्रवणा ये पांच नक्षत्र; ओकारमें धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वभाद्रपद, उत्तरभाद्रपद और श्यती ये पांच नक्षत्र, इसी प्रकार नक्षत्रोंका स्थिर करना होता है। साराधिपति स्थिर करनेमें इस प्रकार कल्पना करनी होगी—आकारका अधिपति ईश्वर, इकारका पवन, उकारका इन्द्र, एकारका आकाश और ओ स्वरका अधिपति सदाशिव है। पूर्व और पश्चारमें पृथिवीतत्त्व और बृहस्पति, दक्षिण और इकारमें जलतत्त्व और शुक, पश्चिम और उकारमें मङ्गल और अग्नि-तत्त्व, उत्तर और एकारमें वायुतत्त्व और बुध, ऊपर ओकारमें आकाशतत्त्व और अग्निको कल्पना भी काती है।

पृथिवीतत्त्वमें अ'धामविषयक मन्त्र होने पर शुक्र, उ-तत्त्वमें मन्त्र होने पर अग्नि, अग्नितत्त्वमें मन्त्र होने पर अ'धामपद, वायुतत्त्वमें मन्त्र होने पर बुधमें मन्त्र और

मन्त्र दूषा करती है। वायुतत्त्वमें रोगादि विषयक मन्त्र होने पर व युज्यरोग, अग्नितत्त्वमें मन्त्र होने पर पित्त-जनितरोग, जलतत्त्वमें मन्त्र होने पर कफजन्यरोग और पृथिवीतत्त्वके ममय मन्त्र होने पर वायुपित्तकफका मिश्रताजनित रोग दूषा है, ऐसा जानना चाहिए। मन्त्र-कर्ता यदि वायुतत्त्वज्ञानमें मन्त्र करके अग्नितत्त्वके ममय घना पाय, तो वातपित्तजनित रोग दूषा है, ऐसा स्थिर करना चाहिए। मभी तत्त्वोंके वर्णका निरूपण करके वर्ण स्थिर किया जाता है। वायुतत्त्व मीनवर्ण, अग्नितत्त्व रक्तवर्ण, पृथिवीतत्त्व पीतवर्ण और अन्न-तत्त्व शुद्धवर्ण का है। पश्चिमीके भोजनादि भवस्यानुसार फल दूषा करता है। पश्चिमीके भोजनावस्थामें मन्त्र होने पर एक मासमें, गमनावस्थामें मन्त्र होने पर एक दिनमें, राज्यावस्थामें मन्त्र होने पर एक दिनमें और स्वप्नावस्थामें मन्त्र होने पर एक वर्षमें फल मिलता है। इसी प्रकार फलके कालका निरूपण किया जाता है। पिङ्गल द्वारा चतुष्पद ओष, श्येन और वायु द्वारा द्विपदजन्तु, कुक्षुट द्वारा नखायुध और श्रद्धायुध जन्तु तथा मयूर द्वारा पक्षिजाति लक्षित होगी। काक सबसे घनतन्त्र है। काकमें श्येन, श्येनमें कुक्षुट, कुक्षुटमें पेशक और पेशकमें मयूर दुर्बल है, ऐसा स्थिर करना चाहिए। इसी प्रकार पक्षी, तत्त्व, वार और लग्न पादिका स्थिर कर फलाफल निर्णय किया जाता है।

धातुविषयक मन्त्र होने पर पहले स्वर द्वारा वारका उदय स्थिर करना होगा। सोमवार और शुक्रवारके उदय होने पर रोज्य, बुधवारमें उदय होने पर सुवर्ण, बृहस्पतिवारके उदयमें रत्नयुक्त सुवर्ण, रविवार होने पर मुक्ता, मङ्गलवार होने पर ताम्र और गनियार होने पर लौह स्थिर करना होगा।

उद्दिष्टविषयक मन्त्रमें यदि सोम या शुक्रवारका उदय हो, तो शुक्र या यशो, बुधवारमें उदय होनेमें मत्ता या क्रुद्ध, बृहस्पतिवारके उदयमें पद्म, रविवारमें फल, अग्नि या मङ्गलवारमें मूल यशो स्थिर करना होता है। अन्नधनादिविषयक मन्त्र होने पर श्येनपक्षी द्वारा पक्षी उद्दिष्टोत्त मन्त्र दूषा है, ऐसा जानना चाहिए। इसी प्रकार पिङ्गल द्वारा द्वतद्रव्य जल और पक्षीके मन्त्र, काक

हागं चपहत द्रव्यं दृग्मन्थ, कुक्कुट द्वारा भस्ममन्थ, श्येन और मयूर द्वारा जानना होगा कि द्रव्यद्रव्यं दृग्मन्थ तथा श्येन और पंचक द्वारा यह निरूपण करना चाहिए कि द्रव्यधन ग्रामके मन्थ है। काक द्वारा यह जाना जाता है, कि किसी पाकीयने उसे पाया है, मयूर द्वारा द्रव्यधन दूसरे ग्राममें पहुंच गया है, ऐसा स्थिर करना चाहिए। इत्यादि प्रकारसे द्रव्यवस्तुकी प्रत्यक्ष गणना की जाती है।

इन पंचपत्तियोंमें फिर शत्रुमित्र हैं। श्येनका मित्र मयूर, मयूरका मित्र पिङ्गल, कुक्कुटका मयूर और पिङ्गल, काकका मयूर, पिङ्गलका मयूर और कुक्कुट तथा काक और कुक्कुट श्येनके शत्रु, श्येन और काक कुक्कुटके शत्रु, पिङ्गल, श्येन और कुक्कुट काकके शत्रु माने गए हैं।

रवि और मङ्गलवार तथा शुक और कृष्णपक्षमें श्येन पक्षी, शनिवार शुकपक्षमें मयूर, कृष्णपक्षमें काक, शुकवार शुकपक्षमें मयूर और कृष्णपक्षमें कुक्कुट, उष्यपत्तिवार शुकपक्षमें काक और कृष्णपक्षमें पिङ्गल, सोम और बुधवार शुकपक्षमें पिङ्गल और कृष्णपक्षमें कुक्कुट पक्षिपति हुआ करता है। इसीका नाम दिनपक्षी है। इस दिनपक्षी द्वारा प्रत्यक्षका निरूपण किया जाता है। शुकपक्षके दिन जिस वारमें जिस पक्षीके बाद जिस पक्षीका उदय होता है, कृष्णपक्षके रातको उस वारमें उस पक्षीके बाद उसी पक्षीका उदय हुआ करता है। कृष्णपक्षके दिन जिस वारमें जिस पक्षीके बाद जिस पक्षीका उदय होता है, शुकपक्षके रातको भी उस वारमें उस पक्षीके बाद उसी पक्षीका उदय होता है। कृष्णपक्षके दिन पहले जिस पक्षीका उदय होता है, उसके एक एक पक्षीके बाद एक एक पक्षीका उदय होगा। परवर्ती सभी पक्षीक्रमः उदय हुआ करते हैं।

शुकपक्षके दिन और कृष्णपक्षके रातको रवि और मङ्गलवारके सूर्योदयमें पहले श्येन, पीछे क्रमः पिङ्गलादि पक्षीका उदय हुआ करता है। इन पक्षियोंकी वाक्य, कुमार, तरुण, वृद्ध और मृत ये पांच पक्षेष्ट्याएँ हैं। इन सब पक्षेष्ट्याओं और तत्त्वादिको पञ्चांतरद

जान कर दक्ष प्रश्नका उत्तर करें। पंचरक्षी द्वारा सभी प्रश्नोंकी गणना की जा सकती है।

(शिवोक्तचरणी)

इस शिष्योक्त पंचपक्षीके ब्रह्मावा कर्त्तिकोक्त पंचपक्षी भी देखनेमें पाते हैं। इसे पारिजातपक्षपक्षी भी कहते हैं। कर्त्तिकमें यह महादेयमें सीख कर सुनियोंके निकट लोकाहितार्थ प्रकाशित किया था।

“शुभं सुनयः सर्वे प्रदद्यात्सुतमनुत्तमम्।

भूतभाष्यापविज्ञान एकन्दश्रेके महार्थदम्॥

पावैतीशिववक्त्राभ्यां रुद्रः श्रुत्वा महात्मनाः।

प्रश्ननास्त्रमपस्त्राय प्रोवाचिदं महार्थकम्॥” (पञ्चपक्षी)

कर्त्तिकोक्त पांच पक्षी ये हैं—भेरण्डक, चकोर, काक, कुक्कुट और मयूर। श्वेत, पीत, चरुण, श्याम और कृष्ण क्रमः इन पांचोंके वर्ष हैं। इस पंचपक्षी द्वारा भी सभी फलाफल जानी जा सकते हैं।

पञ्चपञ्चाशत् ( स० पन्नी० ) पंचपनकी संख्या, ५५।

पञ्चपञ्चाशत् ( स० पन्नी० ) पंचाधिका पंचाशत्। पांच अधिक पचास संख्या का पूरण, पंचपनवा।

पञ्चपञ्चिन् ( स० पन्नी० ) भागपंचक।

पञ्चपञ्चिनो ( स० पन्नी० ) पंच पंच ऋचः परिमाणमस्याः डिनि। पंचदशश्लोमकी विष्टुतिभेद।

पञ्चपत्र ( स० पु० ) चण्डालकन्द, एक पेड़।

पञ्चपत्रिका ( स० पन्नी० ) गोरक्षो नामका पौधा।

पञ्चपथ—उत्तर पश्चिम भारतके यमुनानदीके दक्षिण तीर-वर्ती पांच ग्राम जिनके नाम ये हैं—पाण्डिपथ ( पानोपत ), सोणपथ, इन्द्रपथ, तिशपथ और वकपथ। ये पंचग्राम छतराइन पाण्डुपुत्रोंको दान किये थे।

पञ्चपदी ( स० पन्नी० ) पंच पादा श्रेण्याः अन्त्यलोपः ततो लोपिपद्मावः। १ ऋग्भेद। २ कुम्भद्वीपस्य नदीभेद।

पञ्चपरिपद—पंचमवर्षिकी सभा। इसका दूसरा नाम मोचमहापरिपद है। चीनपरिव्राजक-जब कान्यकुब्जराज शिलादित्यको परित्याग कर भाये, तब प्रायः ६४० ई०में पपने राजत्वकालमें राजाने इसी प्रकारकी ६४० सभा की थी।

पञ्चपरिपिका ( स० पन्नी० ) पंच पंचपत्राण्यस्याः ततः काप, कापि पतः इत्वं गोरक्षोत्तुव, गोरक्षो नामका पौधा।

पञ्चपर्वत ( मं० स्त्री० ) हिमालयके एक शृङ्गाका नाम ।  
पञ्चपर्वन् ( मं० स्त्री० ) चतुर्दशी पष्टमी, समावस्था,  
पूर्णिमा और रविमङ्गलान्ति ये पाँच दिन ।

“नवदशपष्टमी चैव शमावस्था च पूर्णिमा ।

पर्वान्गतेतानि राजेश्वर रविमङ्गलान्तरेव च ॥”

( भाद्रिकनखर )

पञ्चपञ्चव ( मं० स्त्री० ) पंचानां पञ्चव्यानां समाहारः ।  
पाम्नादि पत्रपंचक । पाम, जामुन, कौश, वीजपूरक  
( विजोषा ) और धेन इन पाँच पौधोंके पत्तों पंचपञ्चव  
कहलाते हैं । गंधर्वरामने यह पंचपञ्चव देना होता है ।

“आसन्नशुभ्रपितृव्यानां वीजपूरकविलासोः ।

गन्धर्वरामि सर्वत्र पत्तानि पञ्चपञ्चव ॥”

( शब्दचन्द्रिका )

पूजादि कार्यमें घटस्थापन करते समय पंचपञ्चव  
देना होता है । पाम, वीपल, बट, पाकड़ और यज्ञो-  
द्धार इन पाँच वृक्षोंके पञ्चव भी पंचपञ्चव कहलाते  
हैं । यैदिकीय पूजादि कार्यमें यह पञ्चव काम आता  
है । तान्त्रिक कार्यमें इस पंचपञ्चवका व्यवहार नहीं  
होता ।

“अश्वत्थोद्धारस्तस्यचूतश्चक्रोपस्तलवाः ।

पञ्चपञ्चवमित्युक्तं सर्वैरुर्मणि, सोमनसु ॥”

( मद्राड्ड्यु० )

तान्त्रिक घटस्थापनमें कटहल, पाम, वीपल, बट  
और मोलसिरी इन पाँच वृक्षोंके पञ्चवपञ्चवीय हैं ।

“पनपास्त्रं तयारवत्यं बटं बङ्कतमेव च ।

पञ्चपञ्चवमुत्पन्नं मुनिमिस्तश्चत्रवेदिभिः ॥”

( तत्त्वसार )

तान्त्रिक और यैदिक, पूजादिमें घटोपरि पंचपञ्चव  
दे कर घटकी स्थापना की जाती है ।

पञ्चपहाड़ी—विहार जिलेमें अन्तर्गत सोनमढ़ीके तोरपर्वत  
एक सुन्दर पर्वत और तदुपरिश्च एक घाम । प्रकृतित्  
कर्मिजमने, हम स्थानका पशुमन्थान करके इष्टकका  
अमनसू प दिलाया । ये भी इस पर्वतकी उपशुभपर्वत  
कह गये हैं । तदवत् इ-पकबरी नामक शुभमन्थान  
इतिहासमें लिखा है, कि यह प्राचीनकालमें यश-पाँच  
गुम्बजका एक पाँच स्तनवाला मन्थान था । ८८२

हिजरीमें जब मुगलसेना पटना शीतनीकी पार, तब  
उन्कोने इस भयन से तथा हमको बगनका टाउटका  
किना देखा था ।

पञ्चपाहा—उड़ीसाके बालेश्वर जिनान्तर्गत एक नदी ।  
यह घाम, लमोरा, भैरवड़ी आदि लोटी लोटी नदियों-  
के योगमें उत्पन्न हुई है ।

पञ्चपात्र ( मं० स्त्री० ) पंचानां पात्राणां समाहारः ।  
१ पंचपात्रका नमिग्नन, गिन्नामके पाकारका चौड़े  
मुँहका एक घरतन जो पूजामें जन रावनेके काममें  
आता है । इसके मुँहका चिरा पैदेके चिरेके बराबर  
ही होता है । २ पंचपात्रकरणक पावणयात्रा । इसे  
अन्तका यात्र भी कहते हैं । टी देववध और तीन  
पितृपंथ इन पंचपात्रोंमें यात्र करना होता है । इसीसे  
इसका नाम पंचपात्र पड़ा है ।

पञ्चपाद ( मं० स्त्री० ) पंच पादा यस्य अन्तर्गोपः, समा-  
सान्ताः । १ पंचपादयुक्त, जिनके पाँच पैर हों ।  
( पु० ) २ संवत्सर । ऋग्वेदके भाष्यमें लिखा है कि  
संवत्सर पंच ऋतुस्वरूप है अर्थात् संवत्सर पंचऋतु-  
स्वरूप दृष्टा करता है । हेमन्त और गिरि ये दो  
ऋतु-एवम् भावमें समिहित नहीं होते ।

पञ्चपितृ ( छं० पु० ) पंच वितरः, मंत्रात्वात् अर्गंधारयः ।  
पाँच पिता ।

“जनकद्वयोपनेता च इव ह्यर्गंध प्रमथति ।

अन्नदाता मयप्रतात पञ्चवेदे विवरः स्मृताः ॥”

( मायरीयातपिरेड० )

जन्मदाता, उपनेता या आचार्य, कन्यादाता, पशु-  
दाता और मयप्रतात ये पाँच पिता माने गये हैं ।

पञ्चपित्त ( मं० पक्षी० ) पंचगुणितं पंचविधं पित्तं  
या पंचविध । पित्त, पित्तपंचक । बराह, हाग, मधिय,  
मर्या और मयूर इन पाँच प्रकारके जंतुओंके पित्तकी  
पंचपित्त कहते हैं ।

“बाराह्यागमधियमर्यामयूरपित्तचम् ।

पंचपित्तमिति कृतं तेषां चैव हि र्ममं ॥ ( विपदह० )

इसका पित्त, जिन्नादि द्रव्योंमें भावित होनेसे  
विशुद्ध होता है ।

पञ्चपौर—भारतवर्षके उत्तर-पश्चिमभोगीमाहाबर्षी यहूक

जाई प्रदेशके समतलक्षेत्रके निकटवर्ती एक छोटा पहाड़। यह समुद्रस्तरसे २१४० फुट पीर उच्चसमतलक्षेत्रमें ८४० फुट ऊँचा है। इस गिरिशृङ्ग पर केवल एक वाटिका है जो पाँच सुसज्जमान महापुरुषोंके नाम पर उत्सव की हुई है। पाँच पीरोंका चावाम होनेके कारण इस पर्वतका नाम पञ्चपीर पड़ा है। सर्वप्राचीन महात्माका नाम था बहा-उद्दीन-जखारिका। ये मूलतानवासी थे और लोग इन्हे 'बहावलकक कका करते थे। निकटवर्ती हिन्दू शिवामियोंका कहना है; कि यह स्थान पहले 'पञ्चपाण्डव' नामसे प्रसिद्ध था, पीछे सुसज्जमानोंके अधिकारमें आनेसे यह उन्हींको कौत्स प्रकाशित करता है।

पञ्चपीर—सुसज्जमानोंके पाँच महात्मा या पीर। सुसज्जमान लोग पञ्चपीरके मान्यके लिए जैसे उखवाटि करते हैं, निम्न श्रेणीके हिन्दुओंमें भी वैसी ही पञ्चपीरकी पूजा प्रचलित देखो जाती है। जब छोटे छोटे बच्चोंके गिर शयवा और किसी अन्नमें दूद होता है, तो उनके मातापिता पञ्चपीरकी दूध, जल शयवा मिरनी, जिलेबी आदि भोग दे कर उन्हें खुश करते हैं। उन लोगोंका विश्वास है कि ऐसा करनेसे उनकी पोड़ा बहुत जल्द जाती रहती है। कहीं सुसज्जमान मुज्जा पीर कहीं निष्कट हिन्दूका पुरोहित इनको पुरोहित ई करते हैं। पञ्चपुत्रिया—त्रिपुरा राज्यात्गत एक गण्डग्राम। यहाँ पाट, चावल और समड़ेका व्यवसाय जीरोसे चलता है।

पञ्चपुर—पटियालाराज्यके अन्तर्गत एक प्राचीन नगर। इसका वर्तमान नाम पञ्जोर है। १०३० ई०में शत्रुघ्न इनके उल्लेखान पर पञ्च पीरका इस प्रकार पय बतलाया है—कनौजसे ५० फरसङ्ग उत्तर-पश्चिममें समग है, वहाँसे १८ फरसङ्ग पीर दूर जानेमें पञ्जोर नगर मिलता है। यहाँ प्राचीन ब्राह्मणधर्मके अनेक निदर्शन पाये गये हैं। किन्तु सुसज्जमान प्रादुर्भावसे वे बिलकूल नष्ट हो गए हैं। आज भी यहाँ एक पुष्करिणीके किनारे कितने प्राचीन हिन्दुओंके निमित्त स्नान देखनेमें आते हैं। इस पुष्करिणीका जल पवित्र और पुण्यवट समझ कर बहुतसे लोग आज भी यहाँ स्नान करने आते हैं। इस

प्राचीन हिन्दू रीतिके ऊपर सुसज्जमानोंने जो मसजिद बनाई है, उसके गावस्य पन्नादिमें पञ्चपुर नाम खोदा हुआ है। यहाँ तोमें गिन्तान्तियोग हैं जिनमेंसे सबसे पुरानी टूट फूट गई है।

पञ्चपुराणोद्य ( म० त्रि० ) प्राग्चिन्तार्य पञ्चनार्यापणसभ्य धेतुमेत ।

पञ्चपुष्य ( प० क्लो० ) पञ्चगुणितं पुष्यं । द्विवेगुराणके धनुमार वे पाँच फूल जो देवताओं को प्रिय हैं—चम्या, ग्राम, शमी कमल और कनेर ।

“वम काभूगीपशदररोऽपञ्चक” ॥”

( देवीपुराण १०० अ० )

पञ्चपीप ( स० पु० ) पञ्च प्रदोषाः यवः । १ पञ्चदोषयुक्त आरतो । २ पञ्चपीपयुक्त धातुमय प्रदीप ।

पञ्चमस्य सं० क्लो० ) पञ्च विषयाः शब्दादयः प्रयाः मानव इव यस्य । १ मंसाररूपवन । भागवतमें इसका विषय यों लिखा है—

एक समय राजा पुरञ्जन रथ पर (छत्रदेह पर) चढ़ कर जहाँ पञ्चमस्य पाँच सानु (शब्दादिविषय) हैं, उसी वन (मज्जनीय देश) में गये थे अर्थात् पुरञ्जयने मंसारमें प्रवेश किया था। इनका गरासन (कटत्वमोक्षतृत्याय-मिधान) बहुत बड़ा था। वे जिन रथ पर मवार हुए थे, वह रथ बड़ा ही विचित्र था। रथमें अत्यन्त द्रुतगामो पाँच घोड़े (ज्ञानेन्द्रिय) थे। ये पाँचो घोड़े दो दण्डों (अहन्ता और ममता) में निबद्ध थे। रथमें चक्र दो (पाप और पुण्य) पञ्च एक (प्रधान), ध्वजा तोन (सत्त्व, रजः और तमः) बन्धन पाँच (प्राणादि पञ्चवायु), प्रयत्न एक (मन), सारथि एक (बुद्धि), रथीका उपवेशन स्थान एक (हृदय) और युगबन्धनस्थान दो (शोक और मोह) तथा विषय पाँच (पाँच कर्मेन्द्रिय) थे। इन प्रकार पुरञ्जय मृगयाकारोके वेशमें रथ पर बैठे हुए थे। इनके प्राथमें अर्थात् सर्व कवच (रजो गुण) और छत्रदेह पर प्रचय तृण था। एकादश अर्थात् अहङ्कारोपाधि मन उनका नेमापति हो कर इनके भाव गया था। राजा पुरञ्जय परचय (मंसारवन) में प्रवेश कर धनुर्वाण (भोगाद्यभिविशेष) और रागहो आदि) ग्रहण करके गिकारको बाहर निकले। गिकारके ये बड़े प्रिय थे।

इमं पञ्चभक्तिमे समोपशक्तिं मो धर्मं पयो विवेकबुद्धि)नि  
 उन्हे परित्याग कर दिया था। यद्यपि धर्मपत्र  
 रथागको प्रयोग्य थीं, तो मो राजा उन्हे खीड़ चने  
 गए थे। धर्मपत्रोके माय रछनेमें स्वेच्छानुसर कार्य  
 करना कठिन हो जाता है इम कारण उन्हे परित्याग  
 कर राजाने कार्य का पथ सुगम कर लिया था। बाद  
 उन्हेनि परस्परदेगमें यथेच्छरूपमें पासुरो हति का प्र-  
 लम्बन कर निमित्त वाण ( रागादि ) द्वारा वहां जितने  
 यनधारी ( भजयोग्य विषय ) वे मर्षी ( पाण्ड्यो को भो-  
 की मार खाना। इम प्रकार पुरस्त्रयने गिभारमें चनेक  
 पद्योको हत्या को पर्यात् वे मंसास्त्रमें विचारण कर  
 विरह-मुक्ति होने को वा माटे। घर मा कर वे नाना  
 प्रकारके कामोपयोग करने लगे। इम प्रकार मंसार-  
 रस्यमें दिचरण करते करते उन हो नवोन वयम सुहृत्त-  
 को तरह बीत गई। अन्तमें पुरस्त्रयने मंसाररस्यमें  
 विचरण कर देहका परित्याग किया। पोछे उन्हेनि किर-  
 से जन्म लिया। इमो प्रकार वे अनिवन जन्मपत्रण  
 करने लगे। मागवत धर्म इहामके २५, २६, २७, २८,  
 २८ अथायमें इनका विषय विरहटा स्पष्टे लिखा है।

इस मंसाररस्यका विषय जो निवा गथा उमका  
 तात्पर्य यह कि पुरस्त्रय शब्दका अर्थ पुरुष पर्यात् जोय  
 है। वे पुर पर्यात् देहको प्रकटित करते हैं, इसीसे  
 उनका नाम पुरस्त्रय पड़ा। यह पुर एक प्रकारका नहो,  
 अनेक प्रकारका है। इम पुरुषके अंश इतर है जो  
 अज्ञेय है। पुरुष पुरमात्रका अन्वयण करते हैं, पर यहो  
 मंसाररस्य है। पुरुष प्रकृतिको मायामें विमोहित हो  
 कर अपना अरूप नहीं पहचानता और बारम्बार जन्म  
 और मृत्युसुखमें पतित होता है।

विशेष पुरस्त्रय शब्दमें देखो।

२ धृतराष्ट्रप्रदत्त पांच पासा। पञ्चपाय देखो।

पञ्चपाय ( सं० पु० ) पञ्च अर्थात् प्रापाय। देहस्थित यःपु-  
 पञ्चक। शरीरके मध्य जो वायु रहती है, उसे प्राण  
 कहते हैं। यह प्राण पांच है—प्राण, अपान, समान,  
 उदान और व्यान।

'प्रमोदः प्राणः समानश्चोदानश्चान्नी च वायवः ॥' (अनुर.)

यह पंचपाय सारे शरीरमें फैले हुए हैं जिनमें

हृदयदेगमें प्राणनामक वायु, गुह्यदेगमें अपानवायु,  
 नाभिदेगमें समानवायु कण्ठदेगमें उदानवायु और सारे  
 शरीरमें व्यानवायु पचस्थान करता है।

'हृदि प्र णो गुह्येऽपानः समानो नाभिर्निवसतः।

उदानः कण्ठेऽथैव च व्यानः सर्वशरीरगः ॥' ( लक्ष्मण )

वेदान्तके मतमें—इस पंचपाय के मध्य ऊर्ध्वगमन-  
 गोल नासापस्थायो वायुका नाम प्राण, अधोगमनगोल-  
 नायुके पादिस्थानमें स्थायी वायुका नाम अपान, सभी  
 नाहियोंमें गमनगोल समस्त शरीरस्थित वायुका नाम  
 व्यान है। ऊर्ध्वगमनगोल कण्ठस्थित उत्तमपच वायुको  
 उदान और जो वायु भ्रूज पनुपानादि को समीकरण है  
 पर्यात् इम रुधिर शक्त पुरोपादि करतो है उसे सतान वायु  
 कहते हैं। इसके अनाया कोई कोई (सांख्यमत-वक्त्रो)  
 कहा करते हैं कि नाग, क्रूर, ककर, देवदत्त और धन-  
 क्षय नामक और भी पंचवायु है। इनमें उत्थिरणकारी  
 वायुको नाग, उन्मोशनकारी वायुको क्रूर, सुपाजनक  
 वायु को ककर, जूधन हारो वायुको देवदत्त और पोषण-  
 कर वायुको धनक्षय कहते हैं। किन्तु वे दान्तिक  
 पाचाय्य प्राणादि पंचवायुमें इस नागादि पंचवायुका  
 अन्तर्भाव करके प्राणादि पंचवायु ही कहा करते हैं।  
 यह मिलित पंचवायु पाकागादि पंचभूतके रजः अंगमें  
 उन्वच होती है।

यह पंचपाय पंचकमेंन्द्रियके माय मिल कर प्राण-  
 मय कीय कहलाता है। वेदान्तदर्शनके मतमें प्राणको  
 ५ हतियां हैं, यथा—प्राण, अपान, समान, उदान और  
 व्यान। प्राणहस्तिका नाम प्राण है इमका काम उच्छ्वा-  
 सादि है। अपाणहस्तिका नाम अपान है, इसका काम  
 मलमूत्रत्याग प्रभृति। जो उरु टोमोके मन्त्रिस्थामें हति-  
 मान है, उमका नाम व्यान है, इसका काम योर्ध्वत् कार्य-  
 निर्वाह और जो सारे शरीरमें समस्तित है, उचका नाम  
 समान है। इम समान वायु द्वारा मुक्ताकर रसरसादि  
 भाय मास की पर सारे धर्तोंमें लाया जाता है।

( वेदान्त २० २।३।१२ )

पञ्चपासाद ( सं० पु० ) प्रमोदन्ति मनसि पञ्च, प्र-मद  
 पञ्चिकापे उच, सपममं प्य टीचंत् । १ पंचसुहृत्त्वित

प्रामाद, वह प्रामाद जिसमें पांच गिखर हैं । २ देव-  
गृहविशेष जिसे पंचरत्न भी कहते हैं ।

“पंचवेटकवितं रम्यं पंचप्राणदम्युतम् ।

कारयित्वा हरेर्धाम धृतगणो मजेद्वैदम् ॥” (अग्निपु०)

पञ्चवन्ध (सं० पु०) पंचमः बन्धः भागो यव । नष्टद्रव्यका  
पंचमाय दण्ड ।

पञ्चवला (सं० स्त्री०) वैद्यकीय पांच प्रकारकी बला  
जिसके नाम ये हैं—बला, अतिबला, नागबला, राज-  
बला और महाबला ।

पञ्चवाण (सं० पु०) पञ्च वाणाः शरा यस्य । १ काम-  
देव । कामदेवके पांच वाण हैं ।

“द्रवणं शोषणं वाणं ताननं मोहनमिषम् ।

उन्मत्तत्वं च कामस्य वाणाः पंचप्रकीर्तिताः ॥”

द्रवण, शोषण, तापन, मोहन और उन्मत्त यद्यो  
पंच वाण हैं । कामदेवके पांच पुण्यावाणके नाम ये हैं—  
कमल, अगोक्ष, शान्त्र, नवमल्लिका और नीलोत्पल ।

“शरविन्दमशोकं च चूतं च नवमल्लिका ।

नीलोत्पलस्य पंचैते पंचवाणस्य सायकाः ॥”

(शब्दरत्नप्रदम्)

(त्रि०) २ पंचवाणविशिष्ट, जिसमें पांच वाण हैं ।

पञ्चवाहु (सं० पु०) पंचवाहो यस्य । महादेव ।

पञ्चवह्नि (सं० स्त्री०) उपनिषद्भेद ।

पञ्चभद्र (सं० पु०) पंचवृ अद्भुतं देयु भद्रः शुभः सुषिप्त-  
त्वात् । १ अश्वमेध, जिस अश्वके पांच जगह पुष्पचिह्न  
हैं, उसे पंचभद्र कहते हैं । २ पाचनविशेष, वैद्यकमें  
एक शोधधिगण जिसमें गिलोय, पित्तपापड़ा, मोथा,  
चिरायता और सोंठ हैं ।

पञ्चभूत (सं० स्त्री०) पंचानां भूतानां समाहारः कोचित्तु  
संज्ञामयुक्तत्वात् पञ्च च तानि भूतानि चेति वचनधारयः ।  
चित्ति, अप, तेज, महत् और व्योम यह भूतपञ्चक  
(जगत् पञ्चभूतात्मक) है । इस पञ्चभूतके सम्मिश्रण  
तथा विशेषणसे इस जगत्की सृष्टि और नाश होता है ।  
बहुत सन्धेयमें इस पञ्चभूतका विषय लिखा जाता है ।

“अमृतामदंकारशिविषः सृष्टिभेदेव ।

वैकारिकादद्द्वारादेवा वैकारिणो दग्धः ।

सिग्नातात्प्रमेतोद्भविकोऽप्येन्द्रसिन्धुकाः ।

तैजसादिभिर्यागुदाहस्तमात्रकमयोगतः ।

भूतादिकादद्द्वारात् पञ्चभूतानि जतिरे ॥” (शारदाणि १ प०)

सृष्टिभेदमें तीन प्रकारके अहङ्कार उत्पन्न होते हैं ।

इन तीन प्रकारके अहङ्कारमेंसे वैकारिक अहङ्कारसे  
वैकारिक दग्ध देवता, तैजस अहङ्कारसे समस्त  
इन्द्रियां और भूतादिक अहङ्कारमें पञ्चभूत उत्पन्न होता  
है । इस मतमें अहङ्कार ही पञ्चभूतका कारण है ।

राघवभट्ट-श्रुत वचनसे जाना जाता है, कि वैकार  
अहङ्कार सात्त्विक, तैजस अहङ्कारका नाम राजस और  
भूतादि अहङ्कार ही तामस अहङ्कार पदनायक है । इसी  
भूतादिसे पञ्चभूतको उत्पत्ति हुई है ।

सांख्यदार्शनिक मतमें पञ्चतन्मात्रमें पञ्चमहाभूत वृषा  
है । प्रकृतिसे महान् बुद्धि, महत्से अहङ्कार, अहङ्कार-  
से पञ्चतन्मात्र और इस पञ्चतन्मात्रसे पंचमहाभूतकी  
उत्पत्ति होती है । शब्दतन्मात्रमें आकाश, इसी प्रकार  
स्पर्श, रूप, रस और गन्धतन्मात्रमें यथाक्रम वायु, तेज,  
जल और पृथ्वीको उत्पत्ति माना जाती है । इसी प्रकार  
पंचमहाभूतको उत्पत्ति होती है और न्यकालमें यह  
पंचमहाभूत तन्मात्रमें लीन हो जाता है । वेदान्तके  
मतानुसार पहले आकाशे आकाश, आकाशमें वायु,  
वायुमें अग्नि, अग्निमें जल और जलमें पृथिवी इस  
प्रकार पंचभूत उत्पन्न हुआ है ।

नैयायिकाना कहना है, कि चित्यादिभूतसमूह  
द्रव्यपदार्थके घनभूत हैं । चित्ति, जल, तेज, महत् और  
व्योम यह पंचभूत तथा काल, दिक्, देश और मन  
यही नौ द्रव्य पदार्थ हैं ।

जिसके गन्ध है, उसे पृथ्वी कहते हैं । वायु और  
जलादिमें जो गन्ध मालूम होता है, वह पृथ्वीका ही  
है । इनके सिवा पृथ्वीके और भी कई गुण हैं, यथा—  
गन्धवत्त्व, नाशाना जातोय रूपवत्त्व, पदविधरत्वत्त्व और  
पाकजसार्थवत्त्व । पृथ्वी छोड़ कर और किसीमें गन्ध नहीं  
है, इसीसे गन्धवतो कहनेसे पृथ्वीका बोध होता है ।  
पतः गन्धवत्त्व पृथ्वीका लक्षण है । पावाणादिमें गन्ध  
मालूम नहीं होता, किन्तु जब पावाण भस्म किया  
जाता है, तब उसमें एक प्रकारको गन्ध निकलती है ।  
कोई कोई कहते हैं, कि प्रद्वारादि स्वभावतः ही गन्ध

कीन है । उसे भस्म करने समय पाकज गन्ध उत्पन्न होती है । पाकज गन्धादि भी पृथिवी भिन्न और किसी भी पदार्थ में नहीं रहती । कारणमें जो गुण नहीं है, पार्थ में वह गुण कभी भी नहीं रह सकता । प्रायणमें गन्ध यो, इसीनिये प्रायणभस्ममें गन्धानुभूति हुई । वायुमें गन्ध नहीं है किन्तु पृष्णादिवराग ज्व वायुके साथ भिन्न जाता है, तब वायुमें गन्ध गिरनती है । इसीसे वायुको गन्धवश कहते हैं ; पर यह गन्धवान् नहीं है ।

गाना ज्ञानीय रूप पृथिवी भिन्न और किसीमें नहीं है, इसीसे गानाज्ञानीय रूपवत्त्व पृष्णोका लक्षण है । जल और तैलमें रूप है नहीं, पर वह भेद है । पार्थिववायवगतः जलमें वर्णभेद देखा जाता है और अग्निका भी पार्थिवीय ली कर विभिन्न रूप रूपा करता है । गाना ज्ञानीय रूप जेवन पृथिवीमें हो है ।

पृथिवीरस जेवन पार्थिव पदार्थमें वर्तमान है ; इसीसे पृथिवीरसवत्त्व पृथिवीका लक्षण है । जलका प्राभाविक रस मधुर है । कपाय, लक्षण आदि रस पार्थिवीयमें उत्पन्न होते हैं । पाकजस्पर्श पृथिवी भिन्न और किसीमें भी नहीं है, इसीनिये पाकज स्पर्शवत्त्व पृष्णोका लक्षण है । पार्थिव घटशरावादिका ही सामान्यत्वमें एक प्रकारका स्पर्श रहता है, पौके अग्निमें पाक होने पर एक और प्रकारका स्पर्श हो जाता है । अग्निमें पाक होनेके बाद कठिनत्व स्पर्श होता है, पथव जल वायु वा विशुद्ध तैलका स्पर्श रहता है, वह विभिन्न नहीं होता । इससे देखा जाता है, कि पाकज स्पर्श जेवल पृष्णोमें ही है, पृष्णोका स्पर्श लण वा गीत नहीं है । निम्न लणगीतस्पर्श को देखा जाता है वह लणीयांग और अग्नि योगमें रूपा करता है ।

पृथिवीमें कुल १४ गुण हैं, यथा—रूप, रस, गन्ध, द्रव्य, सन्ध्या, परिमिति, घटका, सन्धीय, विभाग, वरत्व, पपरत्व, वेग, मुहत्व और नैमित्तिक द्रवत्व । इनमेंसे रूप, रस, गन्ध और स्पर्श ही चार विद्येय गुण हैं । यह पृथिवी दो प्रकारकी है, नित्य और अनित्य । पार्थिव परमाणु नित्य और दूसरी सभी पृथिवी अनित्य है । इसी नित्य पृष्णो पर्याप्त पार्थिव परमाणुमें हम अविमान पृथिवीको खटि हुई है । परमाणुके पथवच नहीं

है । हम पार्थिवपरमाणुमें भी गन्ध तथा जो मधु गुण अनित्यित हुए हैं, वे सभी गुण हैं, किन्तु वे पञ्चभूत नहीं होते । मूल पृथिवीमें गुण नहीं रहने पर स्पर्श पृथिवीमें गुण नहीं रह सकता । मूल पृथिवीको पार्थिव और अन्त संवेद्या परमाणु है ।

अनित्य पृथिवी तोन भागमें विभक्त है—देश, द्वाय और विषय । यह पार्थिव देह चार प्रकारकी है—जरायुज, अणुज, खेदन और उच्छिन्न । मनुष्यादिको देह जरायुज, पक्षीको अणुज लू, लुटमन आदिको खेदन और मतासुक्मादिको देह उच्छिन्न है । इन चार प्रकारको देहोंमें पूर्वाह दो प्रकारकी देह योनिज और शरीर दो पयोनिज है । प्रायैन्द्रिय को पार्थिवैन्द्रिय है । जिम द्वाय द्वारा गन्ध मानुष को जाती है, वही प्रायैन्द्रिय है । नासिकाका नाम प्रायैन्द्रिय नहीं है । द्वायिका प्रायैष्ठानस्थान नासिका पर्यन्त है । जो देह नहीं है, द्वायिक भी नहीं है, पथव पृथिवी है, नहीं विषय है ।

जल यह द्वितीय भूत है । इसके भी पनेक गुण हैं यथा—शुद्धरूप मात्रवत्त्व, मधुर रसमात्रवत्त्व, गीतम स्पर्शवत्त्व, स्नेहवत्त्व और गामिदिक द्रवत्ववत्त्व । इनमें शुद्धरूपके भिन्न और कोरु रूप नहीं है । पृथिवीमें नामा प्रकारके रूप हैं, इसीसे शुद्धरूपमात्र-विगिट कहनेमें देवत समका हो शोध होता है । इसीसे शुद्धरूपमात्र-वत्त्व जलका लक्षण है । जलमें जेवन मधुर रस ही को कोरु रस नहीं । पृथिवीमें पृथुविष रस है, जेवन मधुर रस पृथिवीमें नहीं है । सुतरां मधुर रसमात्र-विगिट कहनेमें जलका ही शोध होता है । इसीसे मधुर रसमात्र-वत्त्व जलका लक्षण है । शीतस्पर्श जेवन जलमें ही को पृथिवीमें भी नहीं ; पृथिवी पार्थिवीको स्पर्श है, वह गीतम नहीं है, इसीसे गीतम स्पर्शमात्र जलका लक्षण है । स्नेहवत्त्व और समपता लणका लक्षण है, स्नेह और किसीमें भी नहीं है । एतादिमें ही स्नेह है वह जलका है, इसीसे स्नेहविगिट कहनेमें जलका ही शोध होता है । जलमें एक और गुण गामिदिक द्रवत्व और प्राभाविक तरंगता है । जलमें कुल १४ गुण हैं । निम्न और अनित्यके भेदमें जल दो प्रकारका है ।

मंत्र यह तृतीय भूत है । निम्नका लक्षण है—लण

स्वयं वक्ष्ये, भास्वर शुक्लरूपवत्त्व और नैमित्तिक द्रव्यत्व-  
वत्त्व । जिसमें उष्ण स्वयं, भास्वर शुक्ल और नैमित्तिक  
द्रवत्व है, वही तेज है । तेजमें कुल ११ गुण हैं । तेज  
दो प्रकारका है, नित्य और अनित्य । परमाणुरूप तेज  
नित्य और सब अनित्य है ।

गन्तु, यह चतुर्थ भूत है । वायुमें अपाकज अन्या-  
शोत स्वयं वत्त्व और तिर्यग्गमनवत्त्व गुण है । वायुमें  
न रूप है, न रस और न गन्ध, केवल स्वयं है । तिर्यक्-  
गमन वायुके लक्षण और स्वर्गादि द्वारा धनुमेय है ।  
यह वायु भी दो प्रकारकी है, नित्य और अनित्य । पर-  
माणुरूप तेज नित्य और सब अनित्य है ।

आकाश पंचम भूत है । जो शब्दशा आश्रय है, वह  
आकाश है । शब्दका आश्रय और कोटि मही है, केवल  
आकाश है । शब्द और जिसो भी द्रव्यमें नहीं रहता,  
केवल आकाशमें रहता है । विशेष विवरण तत्त्व चर्चमें  
देखो ।

मांख्य और वेदान्तके मतमें—आकाश ही भूत-  
समूहका उपादान है । एक आकाशमें क्रमशः अन्य सभी  
भूतोंकी उत्पत्ति हुई है । यह जगत् पंचभूतात्मक है,  
मनुष्य शुभ शुभ घट्टवशसे नाना योनियोंमें भ्रमण  
करते हैं । जोव पंचभूतात्मक देह धारण करता है । जब  
इस भोगदेहका अवसान होता है, तब मनुष्य घट्ट ही  
कर समष्टय अवयवविशिष्ट सूक्ष्मदेहमें इस पंचभौतिक  
देहका परिधाय करता है । पंचमहाभूत पंचतन्मात्रमें  
पीत हो जाता है । सातापिण्डज जो शरीर रहता है  
वह रसान्त वा भस्मान्त हो जाता है । सूक्ष्म शरीर शब्द-  
में एकादश इन्द्रिय, पंचतन्मात्र और महत्तु यही समष्टय  
है । ( बाह्यद० ) वेदान्तके मतमें स्थूलभूत पंचोक्त  
है । पंचोकरण आकाशादि पंचभूतके मध्य प्रत्येक भूत-  
को दो समान भागोंमें विभक्त करनेसे जो दश भाग होते  
हैं उनमेंसे प्रत्येक पंचभूतके प्रत्येक प्राथमिक पंच भाग-  
को समान चार अंगोंमें विभक्त करते हैं, फिर वह  
प्रत्येक चार अंग जब अपने द्वितीयाहं भागको परिधाय  
कर इन चार भूतके द्वितीयाहं भागके साथ मिला जाता  
है, तब पंचोक्त होता है । पंचभूत पंचात्मक रूपमें  
समान होने पर भी प्रदेकमें एक एक आकाशादिका

व्यवहार होता है । इस प्रकार पञ्चीकृत पंचभूतमें भू-  
आदि लोक और ब्रह्माण्ड तथा चतुर्विध स्थूल शरीर तथा  
उनके भोगोपयुक्त अन्नपानादि उत्पन्न हुए हैं । (वेदान्तसार)  
पञ्चीकरण देखो ।

ब्रह्मज्ञानतन्त्र और निर्वाणतन्त्रमें देखा जाता है, कि  
पंचभूतसे सृष्टि होती है । वाटमें प्रलयकाल उपस्थित  
होने पर सभी भूत पहले पृथिवी लनमें, जल तेजमें, तेज  
वायुमें और वायु आकाशमें लीन हो जाती है ।

“मही संलीयते तोये तीर्थं संलीयते रवौ ।

रविः संलीयते वायौ वायुर्निर्मलं लीयते ।

पंचतन्माद्रमवेत् सृष्टितत्त्वे तत्त्वं विधीयते ॥”

( ब्रह्मज्ञान और निर्वाणतन्त्र )

ब्रह्मज्ञानतन्त्रमें पंचभूतोंमेंसे एक एक भूतके अर्थ  
आदि पांच पांच करके गुण लिखे हैं । यथा—पृथिवी, मांस,  
नख, नाड़ी और त्वक् ये पांच पृथिवीके गुण; मल, सूत्र,  
शुक्र, रसिध्मा और शोणित जलके गुण; हास्य, निद्रा, क्षुधा,  
भ्रान्ति और आलस्य तेजके गुण; धारण, पालन, क्षेप,  
सङ्घेव और प्रसर ये पांच वायुके गुण तथा काम, क्रोध,  
लोभ, लज्जा और मोह ये पांच आकाशके गुण हैं ।

पंचभूतके सभी नक्षत्रोंको एक एक भूत मान कर  
ये सब नक्षत्र पाये जाते हैं । धनिष्ठा, रेतो, ज्येष्ठा,  
श्रुतराधा, श्रवणा, अभिजित और उत्तराषाढा इन सब  
नक्षत्रोंको पृथ्वी कहते हैं । इभो जकार पूर्वाषाढा, अश्लेषा,  
मृगश, आर्द्रा, रोहिणी और उत्तरभाद्रपद ये सब नक्षत्र  
जल; भरणी, कृत्तिका, पुष्या, मघा, पूर्वाषाढा और पूर्व-  
फल्गुनी, पूर्वाभाद्रपद तथा स्वाति ये सब तेज तथा  
विशाखा, उत्तरफल्गुनी, चन्दा, चित्रा, पुनर्वसु और  
अश्लेषा ये सब नक्षत्र वायु नामसे पुकारे जाते हैं ।

( सूक्ष्मस्वरोदय )

पञ्चभूत ( सं० की० ) भौतिकीत पांच प्रकारके तत्व,  
देवताहंस, शमो, भङ्ग ( सिद्धि ), ताक्षीशयन और  
निगन्दा ।

पञ्चम—सर्वत्र प्रदेकके काठियावाड़ विभागाके मोहलवाड़-  
के अन्तर्गत एक सूत्र नामन्तराज्य । यह एजितानाम १२  
माल उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है । भूपरिमाण ७२ वर्ग-  
मील है ।



पञ्चम (मं० वि०) पंचाना वृत्तः (पूर्वदि ४४. ततोः मातृ  
 विंशति मट् ।) १ पंचमश्याका वृत्तः, पांचशो। २ रुचिर,  
 सुन्दर। ३ हृत्, निपुण। (पु०) पंचमो चरणाणां पुरणः।  
 ४ तन्मोऽष्टोत्थिन् चरविगोप, मातृ चरोमिनि पाचवो  
 चर इमका संपत्तिस्थान—

“वायुः सुमुद्रांती नामदेवी हृत्पञ्चमुद्रयु।

विचरन् पंचरुपान्प्रदाया पंचम नववते ॥” (भारत)

नामिदमे वायु निष्पन्न कर यत्, हृदय, कण्ठ  
 चोर मूर्धा इन पांचो म्यानमि विचरण करती है, पञ्चम  
 म्यान प्राप्तिके कारण इसे पञ्चम करते हैं।

“शलोद्वानाः समानश्च उदान स्थान एव य।

एतेषां समवायेन ज्ञानते पञ्चमः स्वरः ॥”

( संगीतदासोदर )

प्राग, रूपन, ममान, उदान चौर म्यान इम वल-  
 यायुर्के मेलने पञ्चमस्वरकी उत्पत्ति हुई है। मद्रोत्पत्त्या  
 में इम स्वरका वर्ण ब्राह्मण, रंग ग्राह्य, देवता महादेव,  
 रुद्र इन्द्रके समान चौर म्यान कौचरीव निखा है।  
 यमजो, निर्मलो चौर श्रीमजो नभको इमकी तीन  
 मूर्च्छनाये मानी गई हैं। इमके कूटतान १२० हैं, मंत्रिक  
 तान ४० करके कुल ४८०० तान हैं। यह स्वर विक्र वा  
 श्रीकलके स्वरके समरूप माना गया है। ५ रागमिद,  
 एक राग जो हृत् प्रधाग रामोमि तोमरा है। कोई इमे  
 सिंघोन रागका पुत्र चौर कोई भंरथका पुत्र बतनाते  
 हैं। एक लोग इमे अनित चौर समलोके योगमे बना  
 दुषा मानते हैं चौर कुछ लोग सिंघोन गांधार तथा मनो-  
 धरके मेलमे। सोमेश्वरके मतानुसार इमके गानिका  
 समय शरदरतु चौर प्रातःकाल है। विभावा, भुगानो,  
 सफाटो, लक्ष्मिका, मालश्री, पटमञ्जरी नामको  
 इमको छः रागिनियां हैं, पर कल्लिमाय त्रिगयो, क्षुण्ण-  
 शोभा, शोभोरो, कद्रुभ, यशरो चौर मानोरोको इमको  
 रागिनियां बतनाते हैं। कुछ लोग इमे चौहृद्व ज्ञानि का  
 राग मानते हैं चौर ऋषभ कोमल पञ्चम तथा गान्धर  
 चरुकी इममें वर्जित बतनाते हैं। ६ मेलन, की-  
 प्राज्ञ।

पञ्चम—१ दाघिनात्तरामो जिह्वावर्तको गावामिद।

जिह्वारू रेवो।

२ जो मीके ८४ गच्छोमिमे एक।

पञ्चम—हिन्दोके एक प्राचीन कवि। ये ज्ञानिके इन्दी  
 चौर बुन्देलखण्डके रहनेवाले थे। एकका जन्म मय  
 १०२५में हुआ था। पन्द्रहके महाराज जयमान बुन्देलाके  
 दरबारमें ये रहते थे।

पञ्चमकवि—हिन्दुधर्मका एक संतव। भाद्रमानमें मप्रवि-  
 नसवके उद्दमने यह संतव मनाया जाता है।

पञ्चम रुवि—१ बुन्देलखण्डयासी एक गायक कवि। ये  
 पञ्चमवृद्धके राजा गुमानसिंहको सभामें, विद्यमान थे।  
 इनका जन्म १८५४ ई०में हुआ था।

२ रायचरोलो जिम्के टनमजं नगरवासी एक गायक  
 कवि। ये १८६० ई०में विद्यमान थे।

पञ्चमकार ( मं० त्ठ० ) पञ्चमं ष्यकं मकारं तत्त्वं यत्न।  
 मत्स्यादि मकारपञ्चक, मय, मोम, मस्य, मुद्रा चौर  
 मं घुम।

“मयं मांके तथा मारयो मुद्रा मेषुन मेव य।

पञ्चवदरमिदं देवि निर्वाणमुक्तिहेतवे।

मकारपञ्चकं देवि देवानामपि दुर्लभम् ॥”

( पुनरात्म० ० ० ४४४ )

यह मत्स्यादि पञ्चमकार निर्वाणसुखिका कारण चौर  
 देवताओंको दुर्लभ है।

मत्स्याधुमोको पञ्चमुद्रा द्वारा चम्बिकाकी पूजा  
 करनी चाहिये। निम्नलिखित नियममे यदि इनकी  
 पूजा न की जाय, तो देवता चौर पण्डिततण्ड इनकी  
 निन्दा करती हैं। इम कारण कायमनोवाक्यमे पंचमस्व-  
 पर होना चाहिये।

“मदोमां चौरस्यारवेभुं शर्मिर्भुवैरवि।

जीनिः पादो महासायुर्वचैवेवमरुगिह्वाम् ॥

शारया थ महानिदा गीभवे परिहतेः मुद्रैः।

वागीन मनवा बाया तदगात्तरवरो भवेत् ॥”

( शतभाष्यार्थ १ १० )

इम पंचमकारके मध्य मत्स्यादि प्रसिद्ध है। जो सुभा  
 मयो रामोमि बतनाई गई है, वेना जो सुरात्वात् श्रेय-  
 स्कर है। मुद्राके धामि योग्य जो मय मांम लक्ष्मी गये  
 है, वही मांम है, निम मय मत्स्यमोक्षमका विधान है,  
 मरी मस्य है। प्रवृत्त, तण्डुल, मोधूम चौर चम्बिकादि





जिलेमें ४ गहर और ६८ ग्राम समते हैं। जनसंख्या ८६ लाखके ऊपर है जिसमेंसे सेकड़ों पोंडे ८० हिन्दू, ५ मुसलमान और शेषमें अन्यान्य जातियां हैं। प्रधिकंग लोगीको भाषा गुजराती है। जिलेकी प्रधान ध्यज जुन हरो, चना, गेहूँ, बाजरा, धान और तिल है। जिलेमें ३३३ वर्ग मील वनविभाग है। पक्षी यहाँ तरह तरहके हरिण, हस्ती तथा व्याघ्र पाए जाते हैं। अभी उनको संख्या बहुत कम हो गई है। वनविभागसे १३६ करोड़ आमदनी है। गुजरातकी अपेक्षा इस जिलेमें खानों में अधिक देखनेमें आती हैं। पहाड़ पर लोह, रंगी और पथरखकी खान है। इस जिलेमें अनाज, मनुष्यके फूल, देवदारु और तिलहन अनाज गुजरात भेजे जाते हैं और वरवि तमाकू, नमक, नारियल, धातुकी बनी चीजें तथा कपड़ेकी आमदनी होती है।

१८४५ ई०में टिळोसे कसल नष्ट हो जानेके और १८७६ ई०में पनाहलिके कारण यहाँ भारी भूकाल पड़ा था। जिलेकी आबहवा एक प्रकार अच्छी है। तापपरिमाण ८३ है। विद्यायिचामें यह जिला अग्रम है। जिलेमें द्वाद्वे स्कूल, मिडिल स्कूल और प्राइमरी स्कूल हैं इस प्रकार स्कूलोंकी संख्या कुल १२४ है। स्कूलके अलावा एक अस्पताल और सात चिकित्सालय भी हैं।

पञ्चमहापातक (सं० ६०) मनुस्मृतिके अनुसार पांच महापातक जिनके नाम ये हैं—ब्राह्महत्या, सुरापान, चोरी, गुहकी श्लेषे व्यभिचार और इन पातकोंके करनेवालोंके साथ संसर्ग। ब्राह्मण यदि एक भरो सोना सुराये, तो यह स्तैयपदवाय होगा। स्तैय शब्दमें चोरीका ही बोध होता है, किन्तु पर-वचनमें विगियरूपसे हल्लेखरुहनेके कारण यहाँ ऐसा अर्थ होगा, चौथं मात्र ही महापातक नहीं होगा।

“ब्राह्महत्या सुरापानं स्तैयं पुर्वं गनायमः ।  
महाहित पातकान्यापि दुःसंभर्षावपि तैः सह ॥” (मनु)  
जो उक्त पाप करते हैं, उन्हींकी महापातको कहते हैं। महापातकीका संसर्ग भी महापातक है, इसीसे यज्ञपूर्वक उनका संसर्ग छोड़ देना चाहिए।

महापातक के दो ।

पञ्चमहायज्ञ (सं० ५०) पञ्चगवितो महायज्ञ। गृह्य

कटक प्रतिदिन कर्त्तव्य है और पैदादि यज्ञपंचक, पांच कृत्य जिनका निर्य करना गृहलोके लिए धाम्यक है। गृहस्थ प्रतिदिन पंचसूताजित जो पापा-नुष्ठान करते हैं, यह पंचयज्ञ द्वारा विनष्ट होता है। इस पंचयज्ञका विषय भगवान् मनुने इस प्रकार कहा है—

“पंचमूना गृहस्थस्य सुलोपेयशुभ्रः ।  
कण्ठनी चोदकुम्भश्च बध्यते गान्धु वाहयन् ॥  
तासां फलेषु सर्वासां निष्कृत्यर्थं महातमिः ।  
पंचनल्लता महायज्ञाः प्रस्यंते गृहमेधिनां ।  
अध्यायनं व्रतयज्ञः पितृयज्ञस्तु तर्पणम् ।  
होमो देवो वक्तिर्गर्भः शुभोऽग्निधियुजन्तम् ॥”

(मनु ३६८-५०)

चूड़हा, जाता, टेंको, भाड़ू और जलपातके बिना गृहस्थका काम नहीं चलता, अथच ये सब एक एक सूना अर्थात् प्राणिकके स्थान हैं। चूड़हमें आग देवसे रसोई बनती है, किन्तु उस जन्ते हुए चूड़हमें कितने कीड़े मरते हैं, उसकी शुमार नहीं। कण्डोने अर्थात् शोखली आदिसे भी अनेकों जीव मरते हैं। बुझी आदि वधदान द्वारा जो पाप उत्पन्न होता है, उस पापसे निष्कृति पानेके लिए महापियोंने गृहस्थके लिए प्रतिदिन पंचमहायज्ञका विधान कर दिया है। अध्यायन अध्यापनका नाम ब्रह्मयज्ञ, अर्थादि वा उदक द्वारा पिष्टलोकको तर्पण देनेका नाम पिष्टयज्ञ, होमका नाम देवयज्ञ, पपपद्यादिको अर्थादि प्रदानरूप वज्रिका नाम भूतयज्ञ और अतिविसेवाका नाम मनुष्ययज्ञ है। गति रहते जो गृहस्थ इस पञ्चमहायज्ञका एक दिन भी परित्याग नहीं करते, वे नित्यगर्हसमें वास करते हुए भी पञ्चमहापापमें लिप्त नहीं होते। देवता, अतिथि, पोष्यवर्ग, पिष्टलोक और आत्मा इन पांचोंको जो मनुष्य एक पंचयज्ञ द्वारा अर्थादि नहीं देते, वे निःशानप्रत्याव-विग्रित होते हुए भी ज्ञोवित नहीं है अर्थात् उनका जीवन निष्फल है। किसी किसी वेदशाखामें यह पंचमहायज्ञ अद्वत, द्रुत, प्रद्वत, ब्राह्मद्वत और प्रागित इन पांच नामोंसे अभिहित हुआ है; ब्राह्मयज्ञ वाजपेयका नाम अद्वत, होमका नाम द्रुत, भूतयज्ञका नाम प्रद्वत, नरद्वत वा ब्रह्मकी अर्चनाका नाम ब्राह्मद्वत और



“सा च यद्यर्पिता प्राद्या युग्मात् ।  
पञ्चमी च प्रकृतेष्व्या चतुर्थोविदिता त्रिभो ॥”

( तिथितत्त्व )

आषाढमासकी शुक्लापंचमीमें मनसा और अष्टनाम-  
पूजा करनी होती है । साध मासको शुक्लापंचमीका  
नाम श्रौपंचमी है । इस दिन लक्ष्मी और सरस्वतीकी  
पूजा की जाती है । गामपञ्चमी और भीषणपंचमी देखो ।

साधमासकी शुक्लापंचमीके दिन जो व्रत किया जाता  
है, उसे पंचमोव्रत कहते हैं । यह व्रत ६ वर्ष तक करना  
होता है, इससे इसका दूसरा नाम षट्पंचमोव्रत भी  
है । पहले साधमासको शुक्लापंचमीमें इस व्रतका  
आरम्भ कारकी प्रति शुक्लापंचमीको व्रतोक्त नियममें पूजा  
और कथादि व्यवहार करनी होती है । इस प्रकार ६ वर्ष  
तक अनुष्ठित होने पर इसका उद्यापन होता है । इस  
पंचमी व्रतका विषयब्रह्मपुराणमें इस प्रकार लिखा है—

“क्षीरोदे च पुरां सुष्पं लक्ष्मीसमन्वितं हरिम् ।

प्रणम्य परिपन्नञ्च नारदो मुनिव्रतमः ॥

नारद उवाच । केतोपायेन देवेश नारीणां च सुखं भवेत् ।

सौभाग्यमदुलं याति तन्मै त्वं वव्रुमहेदिव ॥

श्रुत्वा तद्वचनं देवो नारदस्य महारमनः ।

सर्वेभ्य इमलां सव्यं ब्रूहि देवि शुभानने ॥

इं गितं परपुरालोक्य पद्मनवनाथ बल्लभा ।

बल्लभं तं पुरस्कृत्य श्रेया व्रतमुवाच ह ॥

देव्युवाच । अस्ति श्रीपञ्चमी नाम व्रतं परमदुर्लभम् ।

शक्त्या प्राप्यते कौर्यैः सुखं सौभाग्यमुत्तमम् ॥”.

( ब्रह्मपुराण )

एक समय क्षीरोदसमुद्रमें लक्ष्मी और नारायण सोचे  
हुए थे । उसी समय नारद वहां पहुंच गए और उनसे  
सौख्य, ‘भगवन् ! ऐसा कौन सा उपाय है जिससे नारा  
सुखी और बहुत सौभाग्यवती हो ।’ इस पर लक्ष्मीने  
भगवान्की इशारानुसार नारदसे कहा था, ‘श्रौपंचमी  
नामके एक परमदुर्लभ व्रत है । इस पंचमीकी मेरी और  
नारायणकी विधि तथा भक्तिपूर्वक पूजा करनी चाहिए ।  
जो स्त्री भक्तिपूर्वक इस व्रतका अनुष्ठान करती है, वे  
सखीसुखी हैं । इसका विधान इस प्रकार है—  
साधमासकी विंशति शुक्लापंचमीमें इस व्रतका आरम्भ

है और ६ वर्ष तक किया जाता है । इन छः वर्षोंमें  
प्रथम दो वर्ष तक पंचमीके दिन लक्षण माना निषेध  
है । पाँचि दो वर्ष तक हविष्यान्न, भादमें एक वर्ष तक  
फल और नवमे अन्नमें उपवास विधेय है । ६ वर्ष पूरा  
हो जाने पर व्रतप्रतिष्ठाके विधानानुसार ६४ व्रतकी  
प्रतिष्ठा की जाती है । यह व्रत गारियोंका एकमात्र  
सौभाग्यवर्द्धक है । व्रतमाला और होमादिक व्रतसंग्रहमें  
इस व्रतका विशेष विवरण लिखा है ।

अग्निपुराणमें पंचमी व्रतका जो विवरण लिखा है,  
वह इस प्रकार है—प्रायण, माद्र, आग्नि और कार्तिक  
मासमें शुक्लापंचमीकी व्रत कारकी यथाविधान पूजा करनी  
चाहिए । वासुकि, तक्षक, कालीय, मणिभद्र, ऐरावत,  
छत्राष्ट, कर्काटक और धनञ्जय, इनकी पूजा कारकी  
व्रतानुष्ठान करना होता है । इस प्रकार व्रतानुष्ठान  
करनेमें प्रायु, विद्या, योग और सम्पत्ति आदिकी प्राप्ति  
होती है । ( अग्निपुराण ११५ अ० )

पहले ब्रह्मपुराणोक्त पंचमी व्रतका विषय जो लिखा  
गया है, भविष्यपुराणमें भी उस व्रतका उल्लेख है । इस  
व्रतको षट्पंचमीव्रत कहते हैं, व्रतकी जो कथा है,  
वह भविष्यपुराणोक्त है । ब्रह्मपुराणोक्त व्रतका विषय  
जैसा लिखा गया है, भविष्यपुराणमें भी ठीक वैसा  
हो है ।

पंचमी तिथिकी जन्म होनेसे भूपाननाम्य, छपलु,  
पण्डिताचणी, वागसी, गुणी और शत्रुघ्निक निकट  
माननीय होता है ।

“भृंगालपाशो मनुजः द्वापात्रः कृपाग्रमेतो विदुषां वरेण्यः ।  
वाग्मी शुर्गा शत्रुघ्नैकमानयः प्रकृष्टिकाटे यदि पंचमी रयात् ॥”  
( क्षीरोप्र० )

४ मन्त्रोक्त विद्याविधेय । तन्वसारमें इस विद्याका  
विषय इस प्रकार लिखा है—

“पारंभवं प्रथमं कूटं शक्तिकूटं पंचमम् ।

मन्थकूटत्रयं देवि कामराजं मनोहरम् ।

कथिता पञ्चमी विद्या त्रैलोक्यवृद्धभगोदया ॥”

( तन्वधार )

पंचमी विद्याका विषय लिखा जाता है, यथा—  
क, प, ई, ल, जों इसीका नाम वाग्मवकूट है ।



“सद्योजातं मवेत् शुक्लं वामदेवस्तु पोतकं ॥  
रक्षस्तत्पुत्रो हेनोऽपीरः कृष्णः स एव च ॥  
ईशानः पश्चिमहस्तेषु सर्ववर्णनमस्त्रितः ।  
काण्डः कामरूपी स्याद् इयानाघारः शिवानमकः ॥”

( देवीपराण )

३ रुद्रान्तप्रियेय, एक प्रकारका रुद्रात्त त्रिपदे पांच लक्ष्मी होती है। यह पंचसुत रुद्रात्तविशेष शुभफलदा है। इत्यर्थः ।

४ इलाहाबाद जिनान्तर्गत कच्छना तहसीलका एक गाँव ।

पञ्चमुखी ( म० स्त्री० ) पंचमुखानोव सन्ध्याः । १ वामरु, शङ्खुभा । २ जवापुत्रविशेष, गुडफलका फूल । पंचविधतं सुप्तं यस्याः, स्थिरा लोप । ३ मिह-स्त्री, सिंघिनी । छटिकाने पंचत्रयभूतान्येव पंचमुखानोव यस्याः शक्तेः । ४ शिवपत्नी, पार्वती ।

पञ्चमुद्रा ( म० स्त्री० ) पंचविधा मुद्रा । पूजाविधिमें कर्त्तव्य पांच प्रकारकी मुद्राएँ—आवाहनो, स्थापनी, मन्त्रिपथो सम्बोधन और सम्मुखीकरणो । पूजाप्रदोषे पञ्चमुद्राका विषय इस प्रकार लिखा है—

“सुप्तं चतुर्भुजं पुष्पैः स्थापनीं कल्पितेऽङ्गुलिः ।

आवाहनो समाहवाता मुद्रा देविककल्पाः ॥

अथेवमुक्तीं स्थापनीं चैव स्थापनीं मुद्राका मवेत् ।

उक्तितां चतुर्भुजां संशोभात् मन्त्रिपथी ॥

अन्तःप्रवेशितां मुद्रां सैव सम्बोधनीं मता ।

उत्तानमुच्छ्रियुगला सम्मुखीरणी मता ॥”

( पूजाप्रदीप० )

इस पंचमुद्रा द्वारा देवताकीका आवाहन करना चाहिए । तन्वमतमें योनि प्रभृति मुद्राएँ चतुर्का नाम पंचमुद्रा है । ( तन्वधार )

पञ्चमुद्रिका ( म० पु० ) २ मालिगतिः ज्वरमे देय शोषण-विशेष, एक शोषण जो मन्त्रिपथमें दो जाती है । जी, बदरीकला, कुनयो, मूत्र-कार काठामलक ये पांच प्रकारके द्रव्य एक एक मुद्रो से कर इनके २ गुने जलमें पाक करने होते हैं । यह युग्म शूल, गुग्गुलु, काण, श्याम, धृग और च्चरनागक माना गया है । २ लोलक, तोला, बाह्य माशेका वजन ।

पञ्चमूल ( म० स्त्री० ) पंचविधं मूलम् । गो, घञा, निपो, मन्दिनी और गर्दभी इन पांच जन्तुकीका मूल ।

पञ्चमूल ( म० स्त्री० ) पंचप्रकारम् पंचगुणितं मा मूलम् । पाचनविशेष । पांच द्रव्योंके मूलमें यष्ट पाचन बनता है, इसीसे इसे पंचमूल कहते हैं । यह पंचमूल-पाचन वृद्ध, खल्प, लण, गतावरो, लीडन, वला, गीबर्क, गुटुचो प्रभृतिके भेदसे नाना प्रकारका है । यथाक्रम इन सब पाचनोंका विषय लिखा जाता है ।

इत् पञ्चमूल—विष्व, श्लोनाक, गाभारी, पटल और गणिकारिका इन पांच द्रव्योंके मूलमें लो पाचन बनता है, उसे वृद्ध पंचमूल कहते हैं ।

खल्पपंचमूल—गालपर्णी, पृश्निपर्णी, वृहती, कण्ट-कारिका और गोक्षुर, इन पांच द्रव्योंका मूल । यह शस्त्रोनागक और खल्प अग्निसन्दीपक माना गया है ।

लणपञ्चमूल—कुण्ड, काण, शर, रक्षु और दम् इन पांच प्रकारके मूलोंका नाम लणपञ्चमूल है ।

गतावरोपञ्चमूल—गतावरो, विदारोकन्द, लोवली, विषाली और लोवक इस पंचविध द्रव्योंके मूलमें यह पाचन बनता है । इसका गुण स्तन्यकर, गुरु, हृद्य, वायु, शीतल, कामिद और अग्निवृद्धिकर है ।

जीवकाटि पंचमूल—जीवक, ऋषभ, भेदा, मधा-भेदा और जीवनी इन पांच प्रकारके द्रव्योंका मूल । गुण—हृद्य, चक्षुका दिनकर, धातुवर्द्धक, टाण, पिता, च्चर और लक्षानागक ।

वलादिपंचमूल—वला, पुनर्षवा, परण, सुप्रपर्णी और मायपर्णी इन पांच प्रकारके द्रव्योंका मूल । गुण—भेदक, शीत और च्चरनागक ।

गोक्षुरादिपंचमूल—गोक्षुर, बदरो, शृङ्गारकी, कामरु और सर्पेप इनका मूल ।

शुद्ध्यादिपंचमूल—शुद्ध, भेपञ्जो, शारिषा, विदार और च्चरिद्रा इन पांचोंको जड़ ।

यक्षापञ्चमूल—क्षरमर्द, विकण्टक, सैरीयक गता-वरो और वृषभखो, इन पांच द्रव्योंका मूल । पञ्चमूलके यज्ञो भी भेद है ।

पञ्चमूलसूक्तिका ( म० स्त्री० ) १ वैदिक सूक्तिसारको





पञ्चरश्मि (सं० पु०) पञ्च पञ्चवर्षी रश्मयो यस्य । पिङ्गलादि पंचवर्ण रश्मिस्तस्य । सूर्यको किरणमें पिङ्गलादि पांच वर्ण हैं, इसीसे पञ्चरश्मि शब्दसे सूर्यका बोध होता है, छान्दोग्य उपनिषद्में यह प्रतिपादित हुआ है । यथा—सूर्य रश्मिमें पिङ्गल, शुक्ल, नील, पीत और लोहित ये पांच वर्ण हैं ।

पञ्चरमलौह ( सं० श्लो० ) वर्त्तलौह ।

पञ्चरमा ( सं० स्तो० ) पंचोविस्तीर्णा रमो यस्याम् । १ आमलकी, चावला । २ हरीतकी, हह ।

पञ्चरात्रादिकाद्य ( सं० श्लो० ) रात्रा, गुल्फ, एरण्ड, केचूर और एरण्डमूलका काढ़ा । यह आमवातनाशक माना गया है ।

पञ्चराजिफल ( सं० पु० ) पटोलनता, परवलको लता ।

पञ्चरात्र (सं० श्लो०) पञ्चार्ता रात्रोर्णा समाहारः ऋषीश्च । १ रात्रिपंचक, पांच रातीका समष्ट ।

“त्रिरात्रं पञ्चरात्रं वा दशरात्रमप्यापि वा ॥”

( चक्रगणि )

२ पंचरात्रमाध्य ऋहीनयागभेद, एक यज्ञ जो पांच रातमें होता था । ३ वैष्णवशास्त्रभेद, वैष्णवधर्मका एक प्रसिद्ध ग्रन्थ । इस शास्त्रका नाम पंचरात्र पढ़नेका कारण नारदपंचरात्रमें इस प्रकार लिखा है—

“रात्रञ्च ज्ञानवचनं ज्ञानं पञ्चविषंस्तुम् ।

वेदेन पञ्चरात्रञ्च प्रवदन्ति मनीषिणः ॥” (१११ अ०)

रात्रका अर्थ ज्ञानवचन है, यह ज्ञान पांच प्रकारका है, इसीसे इसका नाम पंचरात्र पड़ा है ।

पंचरात्रमतावलम्बौगण पंचरात्र वा भागवत नामसे प्रसिद्ध हैं ।

पंचरात्रमत अति प्राचीन है । बहूर्त्तिका विष्णव है, कि पंचरात्र वा माल्वतमतसे ही आदि वैष्णवधर्म निकला है । वासुदेवादि चतुर्वर्ण्य, प्रेम और भक्ति इस मतका प्रधान लक्ष्य है ।

महाभारतके मोक्षधर्ममें मांख्य, योग, पाशुपात, वेद आदिके साथ पञ्चरात्रमतका उल्लेख मिलता है ।

(मोक्षधर्म ३५० अ०)

भारतमें लिखा है, “पुराशास्त्रं उपरिचर (वसु) नामक हरिभक्तिपरायण परम धार्मिक एक राजा रहते थे ।

वही राजा सबसे पहले सूर्यसुखनिःसृज्य पञ्चरात्रमात्रका भवत्वस्वन करते हुए विष्णुकी अचना वारके अन्तमें पितरोंकी पूजा करते थे ।.....वे पञ्चरात्रगात्रका भवत्वस्वन कर नित्यकार्य और नैमित्तिक यज्ञोपसमो कार्य किया करते थे । उनके भवनमें पञ्चरात्रवित् प्रधान प्रधान श्रोत्रियगण शास्त्रनिर्दिष्ट भोग्यद्रव्य प्रीतिपूर्वक सबसे पहले भोजन करते थे । ( मोक्षधर्म ३३६ अ० )

पञ्चरात्रको उत्पत्ति और मुख्य विषयके सम्बन्धमें महामाभारतमें दूसरी जगह लिखा है—“कुक्षु-पाण्डवयो सदाईमं जव महावीर अर्जुन द्रुपथ हो पड़े, तब महात्मा मधुसूदनने उन्हें जो ऐकान्तिक धर्म ( गोताधर्म )-का उपदेश दिया था वह भवको विदित है । वह धर्म प्रति दुष्प्रेक्ष्य है, मृदु व्यक्तियसे नहीं जान सकते । सद्युगमें भगवान् नारायणने उस मामवेदसप्तत ऐकान्तिक धर्मकी सृष्टि की, तभीसे वे इसे धारण किये हुए हैं । पहले धर्मपरायण महाराज युधिष्ठिरने जब वासुदेव और भोष्मके सामने नारदको धर्मविषय पूछा, तब उन्होंने उन्हें जो कथा या उषे वेदशानने वीशम्पायनके निकट वर्णन किया ।

“ब्रह्मा नारायणके इच्छानुसार जब उनके सुपुत्रे निकले, तब उन्होंने आत्मज्ञान धर्मका भवत्वस्वन कर देवों और पितरोंको आराधना की थी । पाँडे क्लेश नामक महर्षिगण उस धर्मके अनुवर्त्ती हुए । बादमें वैश्वानर नामक महर्षियोंने क्लेशोंसे बड़े धर्म ले कर चन्द्रमाकी प्रदान किया । इसके बाद यह धर्म अन्तर्हित हो गया । फिर ब्रह्माने नारायणके चतुर्मे द्वितीय बार जन्म ले कर चन्द्रमासे यह धर्म ग्रहण किया और रुद्रदेवको दे दिया । रुद्रदेवसे वाल्मीकियोंने उसे प्राप्त किया । पौंड्रि यह संगतन धर्म नारायणके मायाप्रभावसे पुनः तिरोहित हो गया । अन्तर् ब्रह्माने नारायणके वाक्यसे तृतीय बार उदय हो कर फिरसे उस धर्मका आविष्कार किया । महर्षि सुपर्ण तपस्या, नियम और दमगुणके प्रभाव द्वारा नारायणसे यह धर्म पा कर प्रति दिन तीन बार करके उसका पाठ करने लगे । उस धर्मका तिसोपण नाम पढ़नेवाले यज्ञोपकरण है । तदनन्तर वायुने सुपर्णसे, पौंड्रि महर्षियोंने वायुसे और अन्तमें कश्यपने महर्षिपौंड्रि



पञ्चरात्रके प्रति प्राचीनत्वको स्थापनाके लिए महाभारतमें जो जो आख्यायिकायें वर्णित हुई हैं, पुराविद्वगण उन्हें खीकार नहीं करते । महाभारतमें पञ्चरात्रका दूमरा नाम सात्वत धर्म बतलाया है (१) । यस्य उपरिचर इमो सात्वत-विधिके (२) अनुष्ठार धर्मनिष्ठान् करते थे । फिर महाभारतमें ही लिखा है कि रणस्थलमें अर्जुनको क्षुब्ध देख वासुदेवने उस धर्मका प्रकाश किया था (३) । रामानुजस्वामीने 'सात्वत-महिम्ना' नामक एक पञ्चरात्रग्रन्थका उल्लेख किया है । भागवतमें श्रीकृष्ण सात्वतधर्म (१।१।२।१) और सात्वत-पुत्रव (१।८।२२) नाममें अभिहित हुए हैं । भागवतमें लिखा है, कि सात्वतगण यादवोंकी एक शाखा (१।१।४।२२, ३।१।१८) हैं, वे लोग वासुदेवकी पर-ग्रहण समझ कर उनकी भर्चना करते थे । भागवतमें सात्वतगण कसूक जो हृत्की विशेष उपासना लिखी है, वह पञ्चरात्रगास्त्रानुमोदित है । इन सब प्रमाणोंसे ज्ञात होता है, कि वासुदेवनन्दन श्रीकृष्णने ही इस पञ्चरात्र का भागवत-मतका प्रचार किया होगा । श्रीकृष्णके अनुरक्त सात्वतोंने ही सबसे पहले यह धर्ममत प्रवृत्त किया था, इस कारण महाभारतादिमें इसे सात्वतधर्म बतलाया है । वासुदेवको भगवान् समझ कर मतावलम्बिगण उनकी पूजा करते थे, इस कारण वे भागवत कहलाते थे, पतञ्जलिके महाभाष्यसे उनका

आभास पाया जाता है । पाञ्चरात्रगण वासुदेवकी नारायण समझते थे । इसीसे पञ्चरात्रशास्त्रकी नारायणोक्त शास्त्रके जैसा मानते हैं ।

डाक्टर गण्डारकने लिखा है—“वामुदेव सात्वत-वंशीय एक प्रसिद्ध राजा थे । मन्वन्तः उनकी मृत्युके बाद वे सात्वतोंके निकट देवसूत्रपत्र पूजित हुए हीने और उसी उपासनामें विशेष मत निकला होगा । धीरे धीरे सात्वतोंसे दूमरे दूमरे भारतवासियोंने यह मत ग्रहण किया । पहले जब इस मतकी सृष्टि हुई, तब यह वेसा जटिल न था । धीरे धीरे यह परिपक्व हो कर पञ्चरात्रशास्त्रमें परिणत हुआ । इस समय नाना संहितादि रचे गये । इस वासुदेव धर्ममें परवर्त्तिकालकी विष्णु, नारायण, गोविन्द और कृष्णके नाम आये और उसीसे नाना प्रकारके आधुनिक वैष्यव-धर्मोंकी सृष्टि हुई ।”

पाञ्चरात्रमत वेदमूलक है वा नहीं, यह ले कर एक समय चोर आन्दोलन चल रहा था । गङ्गाराचार्यने श्रीरामाभ्यमें पञ्चरात्रकी वेदविन्यस्त बतला कर उसका खण्डन इस प्रकार किया है ।

“भागवत (पञ्चरात्र)-गण समझते हैं, कि भगवान् वासुदेव एक हैं, वे निरञ्जन, ज्ञानवधु और परमार्थ-तत्त्व हैं । वे अपनेको चार प्रकारमें विभक्त करके प्रतिष्ठित हैं । वासुदेवव्यूह, सङ्कर्षणव्यूह, प्रद्युम्नव्यूह और अनिरुद्धव्यूह ये चार प्रकारके व्यूह उन्हींके स्वरूप हैं । वासुदेवका दूसरा नाम परमात्मा, सङ्कर्षणका जोव, प्रद्युम्नका मन और अनिरुद्धका दूमरा नाम अङ्गार है । इन चार प्रकारके व्यूहोंमें वासुदेवव्यूह ही परा-प्रकृति वा मूलकारण है, सङ्कर्षण आदि उन्हींसे ससृज्य हुए हैं । सुनारं सङ्कर्षण आदि उसी पराप्रकृतिका कार्य हैं । जोवाँके दोबं जान तब कायमनोवाक्यसे भगवद्गृह-गमन, पूजाद्रथादि आहरण, पूजा, अष्टाधारादि मन्त्रका जप और यागसाधनमें रत रहनेसे निष्पाप होता है । भागवतगण जो कहते हैं कि नारायण प्रकृतिके अतिरिक्त, परमात्मा नामके प्रसिद्ध और सर्वज्ञा हैं सो श्रुतिविरोध नहीं है तथा वे जो अपनेकी अनेक प्रकारों वा व्यूह-भावोंमें अवस्थित बतलाते हैं, सो भागवतमतका यह

- (१) “ततो हि सात्वतो धर्मो व्याप्य लोकानवस्थितः ।”  
(१।२।३४।२४)
- “दुर्मतेने कुश्चाद्व सात्वतैर्धर्मैरेषदा ।”  
(१।२।३४।२५)
- (२) “सात्वतं विधिमास्थाय प्राक्सूयमुत्तमिःसुतं ।  
पूजनामास देवेभ्यं तच्छेपेन पितृमहान् ॥”  
(१।१।३।१९)
- (३) “एवमेव महान् धर्मः स ते पूर्वं श्रुतेतम ।  
कथितो हृत्कीतासु धर्माध्विविकल्पितः ॥”  
(१।२।३४।११)
- “समुद्रोद्भवमीशेषु कुरुपाण्डवोर्मुधे ।  
अर्जुने विमन्सके च गीता भगवता स्वयं ॥” (१।२।३४।१८)



शङ्कराचार्यने पंचरात्रमतका उद्धार कर उसका जो खण्डन किया है, पंचरात्र-मतावलम्बी रामानुज और मध्वाचारी आदि उसे अममोचोच मानते हैं। परम वैष्णव रामानुजाचार्यने अपने श्रीभाष्यमें पूर्वपक्षके जेमा उपरोक्त शङ्कराचार्यको युक्तियोंका उद्धार कर जिस प्रकार उसका निराकरण किया है, उसके पढ़नेमें पंचरात्रमतके सम्बन्धमें बहुत कुछ जाना जा सकता है। रामानुजका मत नीचे उद्धृत किया गया है—

'कविनाटि शास्त्रकी तरह भगवद्गुरुपरममङ्गलमाधन पंचरात्रशास्त्रका भी कोई कोई अशुक्तिमूलक अर्थ शङ्कराचार्यने प्रामाण्य निराकृत हुआ है। उक्त पंचरात्रशास्त्रमें यह भागवत प्रक्रिया दी हुई है, कि परमकारण ब्रह्मस्वरूप वासुदेवसे महर्षण नामक जीवकी उत्पत्ति, महर्षणसे प्राद्युम्न नामक मनकी उत्पत्ति और मनसे अनिरुद्धमन्त्रक अष्टह्वारकी उत्पत्ति हुई है। किन्तु यहाँ जीवकी उत्पत्ति नहीं बतलाई जा सकती। क्योंकि यह श्रुतिविरुद्ध अर्थात् अशुक्तिमूलक है। 'ज्ञान सम्पन्न जीव कभी नहीं' जनमता और न कभी मरता हो है' इस वाक्य द्वारा सभी श्रुतियोंने जीवकी अनादित्व अर्थात् उत्पत्तिराहित्य कहा है। महर्षणसे प्राद्युम्नसंज्ञक मन की उत्पत्ति बतलाई गई है, यहाँ पर कर्त्ता जीवसे कारण मनका उत्पत्तिमभाव नहीं। कारण परमात्मासे हो प्राण, मन और सभी इन्द्रिय उत्पन्न हुई हैं, श्रुतिमें भी यही कहा है। अतएव यदि जीव महर्षणमें कारण मनको उत्पत्ति कहें, तो परमात्मासे ही उत्पत्ति एवमाटे श्रुतिके साथ विरोध होता है। अतएव यह शास्त्र श्रुतिविरुद्ध अर्थका प्रतिपादन करता है इस कारण द्रवका प्रामाण्य प्रतिषिद्ध होता है। 'वा' शब्द द्वारा वे पक्षका वेपरोत्य कल्पना करके कहते हैं, कि ब्रह्मविद्वानादि महर्षण, प्राद्युम्न और अनिरुद्ध इनका परब्रह्मभाव विद्यमान रहनेसे तत्प्रतिपादक शास्त्रका प्रामाण्य प्रतिषिद्ध नहीं हो सकता अर्थात् ये महर्षणादि साधारण जीवकी तरह अभिप्रेत नहीं हैं, ये सभी ईश्वर हैं, सभी ज्ञान, ऐश्वर्य, शक्ति, बल, कीर्त्य और तेज आदि दिव्यधर्मोंमें युक्त हैं, अतएव उक्त वादिशास्त्रका मत प्रामाण्य नहीं है। 'जीवोत्पत्तिविरुद्ध

अभिहित हुआ है' जो भागवतप्रक्रियामें अनभिन्न हैं यह उन्हींको उक्ति हो सकती है। भागवतप्रक्रिया इस प्रकार है कि जो स्वायत्तवत्सल वासुदेवाख्य परमब्रह्मके जेसा अनभिन्न हैं, वे अपने इच्छानुसार स्वायत्त और मम अयत्तीयतावशतः चार प्रकारमें अवस्थान करते हैं। यौष्करसंहितामें इस प्रकार लिखा है, कि 'क्रमागत ब्राह्मणोंमें कर्त्तव्यताहेतु स्वसंज्ञा द्वारा जहाँ वातुरात्म्य उपासित होता है, वही भागम है।' यह वातुरात्म्य उपासना जो वासुदेवाख्य परमब्रह्मकी ही उपासना मानी गई है, वह सात्वतसंहितामें भी उक्त हुआ है। वासुदेवाख्य परमब्रह्म, सम्पूर्ण, पाङ्गुण्यवपु, सूक्ष्म, व्यूह और विभव ये सब भेद भिन्न हैं और अधिकारानुसार भक्तिसिद्धान्तपूर्वक कर्मद्वारा अर्चित हो कर सम्यक् रूपसे नव्य हुआ करता है। विभवाचरणसे व्यूहप्राप्ति और व्यूहार्चनसे वासुदेवाख्य सूक्ष्म परमब्रह्म प्राप्त हुआ करता है। विभव अर्थात् कण्य आदि प्रादुर्भावसमूह, सूक्ष्म अर्थात् केवलमात्र पाङ्गुण्यवियञ्ज, व्यूह अर्थात् वासुदेव, महर्षण, प्राद्युम्न एवं अनिरुद्धरूप चतुर्व्यूह है। यौष्करसंहितामें लिखा है, 'इस शास्त्रसे ज्ञानपूर्वक कर्म द्वारा वासुदेवाख्य अथवा परब्रह्म प्राप्त हुआ करता है।' अतएव महर्षणादिका भी परब्रह्मत्व सिद्ध हुआ, कारण वे स्त्रीय इच्छानुसार विषय धारण करते हैं। जन्मपरिग्रह न कर वे बहुरूपोंमें जन्म लेते हैं, यह श्रुतिविरुद्ध और शरणागतवत्सल है। इस कारण खेच्छाधीन विषय धारण करनेके हेतु तदभिधायक शास्त्रका प्रामाण्य प्रतिषिद्ध नहीं है। इस शास्त्रमें महर्षण, प्राद्युम्न और अनिरुद्ध ये तीनों जीव, मन और अष्टह्वार मन्त्रके अधिष्ठाता हैं, इसीसे इन्हें जीवादि शब्दसे जो अभिहित किया गया है उसमें विरोध नहीं है। जिस प्रकार पाकाय और प्राणादि शब्द द्वारा परब्रह्मका अभिधान हुआ करता है अर्थात् जिस प्रकार पाकाय और प्राण परब्रह्मके स्वरूप नहीं होने पर भी पाकाय और प्राण परब्रह्म माने जाते हैं, उसी प्रकार जीव, मन और अष्टह्वारमन्त्रके अधिष्ठाता महर्षण, प्राद्युम्न और अनिरुद्धरूपमें अभिहित हुए हैं।

शास्त्रमें जीवोत्पत्ति प्रतिषिद्ध हुई है, कारण परम-



अथलभगशरीरो मङ्गलपण द्वारा जी कोर्त्तित हुए हैं।  
ब्राह्मण, छत्रिण, वैश्य और क्षत्रजन्मण शूद्रोंको उन्हीं  
माधवकी पञ्चन, सेवा और पूजा करना चरित्र ।

अतएव जिन्होंने मात्वतगाम्त्रको इस प्रकार भुरि  
प्रशंसा और श्रेष्ठता प्रतिपादन को है वे वेदोक्तपद  
भगवान् वादरायणकी किस प्रकार वेदोक्तवैय पर-  
ब्रह्मस्वरूप सासुदेव के चैनात्पर मात्वतगाम्त्रका पचा-  
माख कहेंगे ?

किर भी उन्को कथा है 'हे तुने । सांख्य, योग  
पञ्चरात्र वेदों और पाशुपत इन सबका ही शास्त्रों ऊपर  
पादर है । शरीरकभावमें भी सांख्यदि श्रेष्ठिय है  
है, अतएव यह उभर समान है या नहीं ? उभर भा  
उन्कोने शरीरकोक न्यायकी अवतापणा की है । ये सब  
कथा एक निष्ठ हैं अथवा पृथक्निष्ठ ? इस पत्रका उत्तर  
यह है कि. - सांख्य, योग, पाशुपत, वेद और पञ्चरात्र ये  
सब क्या एकतत्त्वप्रतिपादनकारि हैं अथवा पृथक्  
पृथक् तत्त्वके प्रतिपादयिता ? अथवा ये जो एकतत्त्व का  
प्रतिपादन करेंगे, क्या वही तत्त्व है ? जिस समय पृथक्  
पृथक् तत्त्वकी प्रतिपादयिता होगी, उस समय इनकी  
परस्पर विरुद्ध कथोंकी प्रतिपादनपरता और वस्तुमें  
विकल्पनासम्भवेके हेतु एतें ही प्रमाण स्वोकार्यें होगी ।  
वह प्रमाण ही क्या है ? इसका उत्तर लिखनेमें 'हे  
राजर्षे' । इन सब ध्यानो की नामागत समझी । सांख्यके  
ब्रह्मा कथित है 'इत्यादि रूपमें आरम्भ कर कपिल,  
हिरण्यगर्भ और पशुपतिगत सांख्ययोग तथा पाशुपतका  
पौपेयत्व प्रतिपादन कर वेदका और पौपेयत्व स्थापन  
किया है । स्वयं नारायण लिखित पञ्चरात्रतत्त्वके ब्रह्मा  
है, वे ही सभी वस्तुओंके प्रसात्र निष्ठा हैं और तत्तत्  
तन्माहित तत्त्वोंके 'यह विश्वब्रह्मनारायण है' इत्यादि  
वाक्य द्वारा ब्रह्मात्मकता-प्रनुत्स्थानकारो सबोंके एक-  
मात्र नारायण ही निष्ठा है, यही ज्ञान होता है । अत-  
एव वेदान्तवैय 'परब्रह्मभूत स्वयं नारायण ही इस  
पञ्चरात्रके ब्रह्मा है और वह तत्त्व भी तत्स्वरूप तथा  
तदुपातमाधिवाचक है । इसीसे उभरान्तरमें इन तत्त्वों का  
साधारण है । इसे कोई भी उद्गावन नहीं कर  
सकता ।

उन्को तन्त्रमें निष्ठा है, कि सांख्य, योग, वेद और  
पारख्यक ये परस्पर सभी पक्षोंके एक ही तत्त्वका प्रति-  
पादन करते हैं, इस कारण उसका पंचरात्र नाम रखा  
गया है ।

सांख्यिक पंचविंशतितत्त्व, योगोक्तयमनिष्टमादि  
योग और वेदोक्त कर्मस्वरूप पञ्चोकारक पारख्यक  
इन्होंने क्रमशः तत्त्वसमुदायके ब्रह्मात्मकत्व, योगको ब्रह्मो-  
पासना प्रकारता और कर्मोंको तदाराधनारूपनाका अभि-  
धान कर जो एकमात्र ब्रह्मस्वरूपका प्रतिपादन किया  
है इस पञ्चरात्रतन्त्रमें भी परब्रह्म नारायणने स्वयं ही  
उन समुदायकी विवक्ष्यरूपमें अभि यक्त किया है । अतएव  
सांख्य, योग, पञ्चरात्र, वेद और पाशुपत ये भावप्रमाण  
हैं, इन्हें हेतु द्वारा खण्डन करना उचित नहीं । अतः  
अभिहित स्वरूपमात्रकी ही पञ्चोकार करना विधेय है ।  
रामानुजः शिपोक्त सूत्रभाष्यको टोकामें सुदर्शना-  
चार्यन गहरी श्रमोचना द्वारा बराहपुराणादि नाना  
शास्त्रोंमें प्रमाणादि उद्धृत करके पञ्चरात्रगाम्त्रके प्राधान्य-  
स्थापनको चेष्टा की है ।

पाञ्चरात्रगण यलुर्वेदके वाजसनेय शाखानुसार  
संस्कार किया करते हैं । इनमेंसे किमीके एकायन-  
शाखानुसार संस्कारादि सम्पन्न होते हैं । पाञ्चरात्रोंका  
कहना है, कि संस्कार-व्यनवे मुक्ति लाभ करनेके पांच  
उपाय हैं । १म कायमनोवाक्य संयत करके देवमन्दि-  
राभिगमन, प्रातःस्तव और प्रथिपातपूर्वक भगवदारा-  
धना ; २य भगवदाराधनाके लिए पुण्यचयन और पुण्या-  
खलिप्रदान ; ३य भगवत्पूजा ; ४यं भागवतशास्त्रपठन,  
यवण और मनन तथा ५म सत्या, पूजा, ध्यान और  
धारणा एव भगवान्के ऊपर सम्पूर्ण चित्तापेण । इस  
प्रकार क्रियायोग और ज्ञानयोग द्वारा वासुदेवनाम होते  
हैं तथा उनके साक्षिधनामके साथ भक्तगण परमेश्वर-  
मङ्ग निवीण मुक्ति लाभ करते हैं ।

नारदीय पञ्चरात्रमें—१ ब्राह्म, २ शैव, ३ कोमार,  
४ वासिष्ठ, ५ कापिल ६ गीतमीय और ७ नारदीय इन  
पात प्रकारके पंचरात्रोंका उल्लेख है ।

ब्रह्मवैवर्तपुराणके मतमें—पंचरात्र ५ है, १ वासिष्ठ,  
२ नारदीय, ३ कापिल, ४ गीतमीय और ५





रहते हैं। मत्स्यपुराणके २५० अध्यायमें श्रीर हेमाद्रिके दानखण्डमें इसका विस्तृत विवरण लिखा है।

पञ्चलिंगकोण—मन्द्राजप्रदेशके कदापा जिलान्तर्गत एक नगर। यह निम्नरके सीमान्तवर्ती मल्लमकोण्डा पर्वतके मध्य भसा हुआ है। यहाँकी एक गुफामें ५ लिंगमूर्ति चाबिष्कृत हुई हैं।

पञ्चलिङ्गाल—मन्द्राजके कर्णूल जिलान्तर्गत एक ग्राम। यह तुल्लभद्रानदीके उत्तर काईननगरसे २५ मील उत्तर-पश्चिममें अवस्थित है। यहाँके पंचलिंगेश्वर मन्दिरमें एक प्राचीन शिलालिपि उल्लोख्य है।

पञ्चलोकपाल (सं० पु०) पंच च ते लोकपालाद्येति मञ्जालात् कर्मधारयः। प्रथयत्प्रथयत्विनाकादि देवपञ्चक। विनायक, दुर्गा, वायु चैव दोर्णो अश्विनो-कुमार ये पंच देवता पञ्चलोकपाल कहलाते हैं।

“विनायकं तथा दुर्गां वायुमाकाशमेव च।

शशिनौ क्रमतः पञ्चलोकपालान् प्रपूजयेत् ॥”

(विधानपरि०)

पञ्चलोक (सं० स्त्री०) पञ्च विस्तीर्णं लोहम्। १ सोराष्टक-लोह। पञ्चगुणितं लोहम्। २ पांच प्रकारका लोहा; सुवर्ण, रजतं, ताम्र, सोमक और रत्न इन पांच धातुओं-की पंचलोह कहते हैं।

पञ्चलोहक (सं० स्त्री०) पञ्चानां लोहकानां धातूनां समा-धारः। पांच धातुएँ—सोना, चाँदी, ताँबा, सोसा और रंगा।

“सुवर्णं रजतं ताम्रं त्रयमेतद् त्रिलोहकम्।

रंगनागसमायुक्तं तद्ग्राह्यः पञ्चलोहकम् ॥”

(राजनि० व० २२)

वाभटके मतसे सुवर्ण, रजत, ताम्र, त्रय और कष्यायस यही पंचधातु पंचलोह है।

पञ्चलोह (सं० स्त्री०) पांच प्रकारका लोहा—वज्रलोह, सुण्डलोह, कान्तलोह, विण्डलोह और शौचलोह।

पञ्चलक्ष—भारतवर्षकी मध्यप्रदेशवासी स्वर्णकार जाति।

पञ्चवक्त्र (सं० पु०) पंचवक्त्राणि यस्य। १ शिव, महादेव।

“विष्णोश्चित्रिभूमीं लिखितंमयद्वरं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रम् ॥”

(शिवध्यान)

इनके मन्त्रादिका विषय कालिकापुराणमें इस प्रकार लिखा है—

“समस्तानां स्वराणाम्नु वीर्याः शेषाः सविन्दुधाः।

ऋतुदृश्याः सार्द्धवन्दा उपास्ते नाभिसेहिताः ॥

एभिः पञ्चवासरैर्मन्त्रं पञ्चवक्त्रवक्त्रं स्वीर्त्तितम्।

कृपात् सम्पदघन्दोहमादगौवर्षंशुभाः ॥

प्रासादस्तु भवेत् शेषं पञ्चमन्त्राः प्रकीर्त्तितः।

एकैकेन तथैवेकं वक्त्रं मन्त्रेण पूजयेत् ॥”

(शालिङ्गपु० ५० अ०)

महादेवके सम्पद, सन्दोह, माद, गोरव और प्रामाद ये पांच मन्त्र हैं, इन पांच मन्त्र द्वारा एक एक मुखकी पूजा करनी होती है अथवा केवल प्रासादमन्त्रवे भी पूजा कर सकती है। पांच मन्त्रोंमें प्रासाद नामक मन्त्र श्रेष्ठ है। महादेवकी प्रसन्नता लाभ करनेके कारण इस मन्त्रका नाम प्रासाद पड़ा है तथा महादेवके घानन्द-प्रद होनेके कारण सम्पदमन्त्र, मनके शमिनाय पूरणके कारण सन्दोहमन्त्र, पाकघक होनेके कारण माद और गुरु होनेके कारण गोरवमन्त्र नाम पड़ा है। महादेवके पांच मुखोंके नाम ये हैं—सद्योजात, वामदेव तत्पुत्रप, अघोर और ईशान। इन पांचों मुखोंमें सद्योजात निर्मल स्फटिकमण्डप; वामदेव पोतवर्ण अथवा हीम्य और मनोरम; अघोर नोलवर्ण, भयजनक, और दन्त-विशिष्ट; तत्पुत्रप रक्तवर्ण, देवमूर्ति और मनोरम तथा ईशान श्यामवर्ण और नित्य शिवरूप है। महादेवकी पंचमूर्ति का स्वरूप इसी प्रकार है। दक्षिण ओरके ५ हाथोंमें यथाक्रम शक्ति, विशूल, खट्वाङ्ग, वर और समय तथा वाम ओरके ५ हाथोंमें पञ्चमूर्त, वीजपूर, भुजङ्ग, डमरू और उत्पल नामके पांच द्रव्य वस्तमान हैं। पूर्वोक्त सम्मदादि मन्त्र द्वारा महादेवकी पूजा करनेमें सब प्रकारकी निन्दियां लाभ होती हैं और इन पञ्चवक्त्र शिवपूजामें वामा, व्यष्टा, रौद्री, काली, कनकिकारिणी, वलप्रमयिनी, सर्वभूतदमनी और मनोन्मयिनी इस अष्ट देवीकी पूजा करनी होती है। २ सिंह। ३ पञ्चमुख रुद्राक्ष। यह पञ्चमुख रुद्राक्ष धारण करनेमें सब प्रकारके पाप जाते रहते हैं।



रहते हैं। मत्स्यपुराणके २५० अध्यायमें 'घोर' हीमाद्रिके दानखण्डमें इसका विस्तृत विवरण लिखा है।

पञ्चलिङ्गकोण—मन्द्राजप्रदेशके कड़ापा जिलान्तर्गत एक नगर। यह निम्नरके सीमान्तवर्ती मल्लमकीण्डा पर्वतके मध्य वसा हुआ है। यहांकी एक गुफामें ५ लिङ्गमूर्त्तियाँ पाविष्कृत हुई हैं।

पञ्चलिङ्गाल—मन्द्राजके कर्णूल जिलान्तर्गत एक ग्राम। यह तुङ्गभद्रानदीके उत्तर काईननगरसे २॥ मील उत्तर-पश्चिममें अवस्थित है। यहांके पंचलिङ्गेश्वर मन्दिरमें एक प्राचीन गिलालिपि लक्ष्णीय है।

पञ्चलोकपाल (सं० पु०) पंच च ते लोकपालाश्चेति संज्ञात्वात् कर्मधारयः। यहयथाऽयङ्गविना। कादि द्वेषपंचक। विनाशक, दुर्गा, वायु चेर दीनों अश्विनो-कुमार ये पंच देवता पञ्चलोकपाल कहलाते हैं।

"विनायकं तथा दुर्गां वायुमाहाशमेव च।

शशिवनौ क्रमतः पञ्चलोकपालान् प्रपूजयेत् ॥"

( विषानाशरि० )

पञ्चलोक (सं० लो०) पञ्चं विश्वीर्षं लोहम्। १ सोराष्टक-लौह। पंचगुणितं लौहम्। २ पांच प्रकारका लोहा; सुवर्ण, रजत, ताम्र, सोसक और रङ्ग इन पांच धातुओंकी पंचलौह कहते हैं।

पञ्चलोकक (सं० लो०) पञ्चानां लोहकानां धातूनां समाहारः। पांच धातुएँ—मोना, चाँदी, ताँबा सोसा और रंगा।

"सुवर्णं रजतं ताम्रं त्रयमेतत् त्रिलोकहृदम्।

रंगनामसमायुक्तं तत्रप्रादुः पञ्चलोकहृदम् ॥"

( राजनि० व० २२ )

बामटकी मतसे सुवर्ण, रजत, ताम्र, त्रयु और कृष्णायस यँही पंचधातु पंचलोक हैं।

पञ्चलोक (सं० लो०) पांच प्रकारका लोहा—वज्रलोह, सुव्रलोह, कान्तलोह, पिण्डलोह और कौशलोह।

पञ्चलोक—भारतवर्षकी मध्यप्रदेशवासी स्वर्णकार जाति।

पञ्चवक्त्र (सं० पु०) पंचवक्त्राणि यस्य। १ शिव, महादेव।

"विश्वार्चविश्ववीर्यं त्रिबिहमपहरं पञ्चवक्त्रत्रिनेत्रम् ॥"

( विवक्ष्यान )

इनके मन्त्रादिका विषय कालिकापुराणमें इस प्रकार लिखा है—

"समस्तानां स्वराणाम्नु वीर्षाः शेषाः सविन्दुकाः।

ऋतुदृश्याः सार्द्धचन्द्रा उपास्ते नामसंहिताः ॥

एभिः पञ्चवासुरैर्मन्त्रं पञ्चवक्त्रस्य क्रीर्त्तितम् ॥

कृमात् सन्मदघन्तोदमादगौरवसंज्ञकाः ॥

प्रासादम्नु भवेत् शेषं पञ्चवक्त्राः प्रकीर्त्तितः ॥

एकैकेन तयैवेकं वक्त्रं मन्त्रेण पूजयेत् ॥"

( बालिकापु० पू० अ० )

महादेवके सषट्क, सन्दोह, माद, गौरव और प्रामाद ये पांच मन्त्र हैं, इन पांच मन्त्र द्वारा एक एक मुखकी पूजा करनी होती है अथवा केवल प्रासादमन्त्रमें भी पूजा कर सकती हैं। पांच मन्त्रोंमें प्रासाद नामक मन्त्र श्रेष्ठ है। महादेवकी प्रमत्ता लाभ करनेके कारण इस मन्त्रका नाम प्रासाद पड़ा है तथा महादेवके प्रानन्दप्रद होनेके कारण सषट्कमन्त्र, मनके अभिलाष पूर्णके कारण सन्दोहमन्त्र, भाकर्षक होनेके कारण माद और गुरु होनेके कारण गौरवमन्त्र नाम पड़ा है। महादेवके पांच मुखोंके नाम ये हैं—सद्योजात, वामदेव तपुरुष, पचौर और ईगान। इन पांचों मुखोंमें सद्योजात निमल स्फटिकपद्म, वामदेव पोतवर्ण पद्मच शीम्य और मनोरम; पचौर नीलवर्ण, भयजनक, और दन्त-विशष्ट; तपुरुष रक्तवर्ण, देवमूर्त्ति और मनोरम तथा ईगान श्यामवर्ण और नित्य शिवरूपी है। महादेवकी पंचमूर्त्तिका शब्दप इसी प्रकार है। दक्षिण चोरके ५ हाथोंमें यथाक्रम शक्ति, त्रिशूल, खट्वाङ्ग, वर और समय तथा वाम चोरके ५ हाथोंमें पञ्चमूत्र, वाजपूर, भुजङ्ग, डमरू और उत्पल नामक पांच द्रव्य वर्त्तमान हैं। पूर्वोक्त सषट्कमन्त्र द्वारा महादेवकी पूजा करनेमें सब प्रकारकी मिथियाँ लाभ होती हैं और इन पञ्चवक्त्र शिवपूजामें वामा, ज्येष्ठा, रौद्री, काली, कनकिकारिणी, वल्लभमयिनी, सर्वभूतदंमनी और मनोमयिनी इस षट् देवीकी पूजा करनी होती है। २ मंत्र। ३ पञ्चमुखं रुद्राक्ष। यह पञ्चमुख रुद्राक्ष धारण करनेमें सब प्रकारके पाप जाते रहते हैं।



रकं कृष्णमसिद्धुमैरिकादिसमुद्भवम् ।

हरितालीह्वयं पीतं रत्नगोष्ठमभवं क्वचित् ॥

कृष्णं द्रव्यमुलाकैस्तु कृष्णं द्वैर्वैरयापि वा ।

हरितं रिल्लवपत्राद्यैः पीतं हण्डगविमिश्रितम् ॥”

( हेमाद्रि-मतल ० )

मण्डलके निमित्त पंचवर्णका चूर्ण करे सर्वतो-  
भद्रमण्डल, अष्टदलपद्म आदि खलसे पंचवर्णके चूर्ण द्वारा  
मण्डल बनावे । तण्डुल वा थवचूर्ण करके उसमें शुद्ध  
वर्ण चूर्ण और तण्डुलचूर्णमें कुङ्कुम, सिन्दूर और  
गैरकादि द्वारा रक्तवर्ण, तण्डुलचूर्णमें हरितालमिश्रित  
करके पीतवर्ण, टण्डुलनाक ( कृष्णद्रव्य ) मिश्रित कर  
कृष्णवर्ण और पीत तथा कृष्णवर्ण मिश्रित विषयप्रोक्त  
हरित यज्ञो पंचवर्ण है । पूजा प्रतिष्ठा आदि कार्योंमें इम  
पंचवर्णका चूर्ण विशेष भावश्यक है । २ मण्डलके पांच  
वर्ण यथात् अ, ल, म, नाट और विन्दु । ३ स्रो गायत्री ।  
४ वनभेद, एक जङ्गलके नाम । ५ पर्वतभेद, एक  
पहाड़का नाम ।

पञ्चवर्णक ( मं० पु० ) धुस्तूर कृत्तच, धूरिनापिडु ।

पञ्चवर्णगुडिका ( सं० स्त्री० ) पञ्चवर्णका चूर्ण ।

पञ्चवर्ण देखो ।

पञ्चवर्ण ( सं० पु० ) पञ्चोद्वृत्त ।

पञ्चवर्णशिक ( सं० स्त्री० ) १ पञ्चवर्णध्यायी । २ पञ्चवर्ण-  
युक्त । ३ पांच वर्णका पुराना ।

पञ्चवल - महिसुरवासो अट्टईकी एक जाति ।

पञ्चवनमवल देखो ।

पञ्चवक्त्रक ( सं० स्त्री० ) पंचानां खड्गलानां समाहारः ।  
वक्त्रकलपंचक । घट, गूलर, पीपल, पाकर और बेंत या  
छिरमिकी छाल ; कोई घट, पीपल, यज्ञदुमर, पाकर  
और बेंतकी छालकी तथा कोई घट, गूलर, पाकर पारिस  
और पीपलकी छालको पंचवक्त्रक कहते हैं । गुण—  
हिम, योनिरोग और ब्रणनाशक, रुच, कषाय, मीदीघ्न,  
विषघ्न, शोक, पित्त, कफ और अस्त्रनाशक, स्थान्यकर  
और भग्नास्थियोजक ।

पञ्चवाप ( मं० पु० ) १ कामदेवके पांच वाण जिनके नाम  
ये हैं—द्रवण, शोषण, तापन, मोहन और उन्मादन ।  
कामदेवके पांच पुण्यवाणके नाम—कमल, अशोक,

आम्र, नवमल्लिका और नीलोत्पल । २ कामदेव, मदन ।  
पञ्चवातीय ( सं० स्त्री० ) राजमूयाङ्ग कादगुन-शुक्त प्रति  
पटमें कर्त्तव्य पंचाग्निसाध्य होमकर्मभेद यह पञ्च-  
वातीय राजमूययज्ञका कर्त्तव्य अङ्ग है । यह फाल्गुन-  
मासकी शुक्लप्रतिपदसे आरम्भ करना पड़ता है ।

पञ्चवायु ( सं० पु० ) तन्त्र, आनन्द, सुगिर, धन और  
वीरोका गर्जन ।

पञ्चशयु ( सं० पु० ) शरीरके सम्य प्रतिष्ठित प्राण, अपान,  
समान, उदान और स्यान आदि वायु ।

पञ्चशरि ( सं० स्त्री० ) कौप, नादिय, पान्तरिच, ताहाय  
और मसुद्र जल ।

पञ्चशर्पण ( सं० स्त्री० ) पञ्चसु वर्षासु भवं पञ्चशर्प-  
साय्य कार्य, जो पांच वर्षामें होता है । जैसे—बीडांवा  
पञ्चशर्पाप मनोरमर, मन्मथा अशोक-प्रतिष्ठित पञ्च-  
शर्पापौ बोहमङ्ग वा मशपरिपद ।

पञ्चादिन् ( सं० स्त्री० ) पञ्चवाद्या जिसे पांच वादमा टो  
कर ले जा सके ।

पञ्चविंश ( मं० स्त्री० ) २५ संख्याशुक्त ।

पञ्चविंश—१ साहस्य चर्मात्त प्रायामेद । पचोम अशो-  
में विभक्त हीनिके कारण इनका नाम पंचविंश-प्रायण  
पड़ा है । २ स्तोत्रभेद । शोढ़ म.शग देखो ।

पञ्चविंशक ( सं० स्त्री० ) १ पंचविंश सभ्यन्धीय, पचोम  
वर्णका । २ पचोस वर्णका पुराना ।

पञ्चविंशति ( सं० स्त्री० ) पंचाधिका विंशति । पचोस-  
की संख्या ।

पञ्चविंशतितम ( मं० स्त्री० ) पचोसवां ।

पञ्चविंशतिस ( सं० स्त्री० ) पचोस ।

पञ्चविध ( सं० स्त्री० ) पञ्चविधा यस्य । पांच प्रकार ।

पञ्चविधप्रकृति ( मं० स्त्री० ) पंचविधा प्रकृतिः । १ पांच  
प्रकारका राजाङ्ग ; यथा, स्वामी, चमात्य, राट्ट, दुर्ग,  
अथ और टण्ड । २ पंचभूत । पञ्चभूत देखो ।

पञ्चविधिय ( सं० स्त्री० ) पंचप्रकार, पांच तरहका ।

पञ्चविन्दुप्रकृत ( मं० स्त्री० ) नृत्तकी एक जाति ।

पञ्चविप ( सं० पुली० ) ताम्र, हरिताल, सर्वगरल, कर-  
वीर और यक्षनाभ, स्वावर और जङ्गमायक नाम  
प्रकारके रहने पर भी वे सब प्रधानतम तथा पीपवायु  
में अधिक प्रयोजनीय है ।



पञ्चगव्य (सं० क्लो०) पञ्चानां गव्यानां समाहारः । गव्य-  
पञ्च क, धान, मूंग, तिल, जौ और सफेद सरसों । कोई  
कोई सफेद सरसोंको जगह उरटको लेते हैं ।

(दुर्गास्तवपद्धति)

पञ्चशाख (सं० पु०) पञ्च शाखा इव अङ्गुलियो यस्य ।  
१. इक्षु, २. इष्य, ३. पञ्चानां शाखानां समाहारः । (फलो०)  
२ पञ्चशाखाका समाहार, पनशाखा । ३ पञ्चशाखाविग्रिट,  
जिसमें पांच वस्तियां हों ।

पञ्चशारदीय—गरतृकालमें अनुष्ठेय प्राचीन यागभेद ।  
शाखिन पथवा कार्तिकामाममें विगाखा नक्षत्रयुक्त  
शमावस्थामें यह यज्ञ शरभ किया जाता था । मरुत्को  
दृष्टिके लिये इस यज्ञमें बहुत-से गोधोंको हत्या की  
जाती थी । यज्ञमें आहुति देनेके लिये १० ककुदहोन  
श्वकाय-शुपभ और तीन वर्षकी कई एक बछियोंको  
पावश्रुता होते थे । पहलें यथानिहित पूजा और  
उत्सवके बाद उक्त ह्यभगण कोड़ दिये जाते थे । पछि  
यज्ञके यथाशेष्य प्रक्रियानुसार आहुति देनेके बाद प्रति-  
दिन तीन तीन करके गायोंको देवोद्देशसे बलि देते थे ।  
पांचवें दिन दो और अर्थात् पांच गो-हत्या करके यज्ञ  
समाप्त करते थे । शरतृकालमें पांच दिन तक यह यज्ञ होता  
था, इसीसे इसका नाम पञ्चशारदीय पड़ा है । सामवेद-  
के अन्तर्गत ताण्ड्य-ब्राह्मणमें लिखा है, कि इस यज्ञमें  
प्रत्येक परवर्ती वर्ष विभिन्नवर्षकी गो आवश्यक है ।  
उक्त ग्रन्थके मतसे—प्रथम वर्षमें आश्विनमासकी शुक्ला-  
सप्तमी वा अष्टमीको यज्ञारम्भ करना होता है और पर-  
वर्ती वर्षके कार्तिकामासकी षष्ठाकी यज्ञानुष्ठान विधि-  
सिद्ध है । वैदिक उपाख्यानमें जाना जाता है कि पहले  
पहले प्रजापतिने स्वयं इस यज्ञका अनुष्ठान किया था ।  
तैत्तिरीय ब्राह्मणमें लिखा है कि जो धनशाली और  
स्वाधीन होना चाहते उन्हें पञ्चशारदीय यज्ञानुष्ठान द्वारा  
देव-पूजा करनी चाहिये ।

पञ्चगिख (सं० पु०) पंचा विश्वीर्णां गिखा केमरादियस्य ।  
१ सिंहा । २ सुनिवियेय । सांख्यशास्त्रके आप एक प्रधान  
आचार्य थे । कामनपुराणमें लिखा है कि धर्मके प्रतिष्ठा  
नामक एक स्त्री थी जिसके गर्भसे पञ्चगिखमुनि उत्पन्न  
हुए थे । महाभारतके शान्तिपर्वमें लिखा है, कि एक

समय कपिलापुत्र पञ्चगिख नामक एक महर्षि मारी  
पृथ्वी पर पर्यटन करते हुए मिथिला नगरमें पहुँचे । ये  
समस्त सन्त्याश्रमका यथार्थतत्त्व जाननेमें समर्थ,  
निर्द्वन्द्व, अशब्दविचित्र, ऋषियोंके मध्य शक्तिशाली,  
कामनापरिशून्य और मनुष्योंके मध्य शाश्वत सुखसंस्था-  
पनमें प्रसिद्धापी थे । उन्हें देखनेसे मानस पड़ता था  
कि सांख्यमतत्वलक्ष्मी जिन्हें कपिल कहते हैं, मानो वे  
ही पञ्चगिख नाम धारण कर सभी मनुष्योंके हृदयमें  
विस्मय उत्पादन करते हैं । ये महात्मा आसुरिके प्रधान  
गिथ्य और चिरजोत्रो थे तथा इन्होंने सप्तस्र वर्ष तक  
मानस यज्ञका अनुष्ठान किया था ।

भगवान् मार्कण्डेयने पञ्चगिखका वृत्तान्त इस  
प्रकार कहा है—एक समय कपिलसतावलम्बी असंख्य  
महर्षि एक साथ बैठे हुए थे । इसी बीच ब्रह्मशुपरा-  
यण अक्षमयादि पञ्चकीपामिन्न शमदमादिगुणान्वित पञ्च-  
गिख महर्षि वहाँ आ पहुँचे और पनादि घनन्त पर-  
मार्थ विषय उन समागत ऋषियोंमें पूछा । उस जगह  
महामति आसुरि भो उपस्थित थे । उन्होंने पञ्चगिखको  
गिथ्यके उपयुक्त समझ कर उन्हें अपना शिष्य बना  
लिया । महात्मा आसुरि शास्त्रज्ञान-लाभके लिये कपिलके  
गिथ्य ही शरीर और शरीरेश विषय उनमें अच्छी तरह  
जान गये थे । कपिलको कृपासे उन्होंने सांख्ययोग जान  
कर शास्त्रतत्त्वको मात्तात्कार किया था । आसुरिके  
कपिला नामक एक सप्तधर्मियो थी । पञ्चगिख उन्होंने  
गिथ्य थे, अतएव पुत्रभावमें कपिलाका स्तन्यपान करते  
थे । इस कारण इन्हें ब्रह्मनिष्ठ बुद्धि और कपिलाका  
पुत्रत्व लाभ हुआ था । कपिलाका स्तन्यपान करनेसे ये  
‘कपिलापुत्र’ कहलाने लगे । ( महाभारत १२।२।१८ अ० )

इंखर कण्ठको सांख्यकारिकामें लिखा है—कपिल-  
ने आसुरिके और आसुरिने पञ्चगिखको सांख्यशास्त्रका  
उपदेश दिया । इसी पञ्चगिखसे ही सांख्यशास्त्र प्रचा-  
रित हुआ । धार्य देखो ।

पञ्चगिरि—पफगान-सीमानावर्ती हिन्दूकुशपर्वतको पार्श्व  
स्थित एक उपत्यकाभूमि । यह काबुल नगरसे उत्तर-  
पूर्वमें अवस्थित है । यहाँ प्राचीन कपिल नगर बसा  
हुआ था । २५० हिलरोको याकुबनारै काबुल





पञ्चगुण्यधिक ( सं० क्रो० ) पञ्चगुण्यक ।

पञ्चमूना ( सं० स्त्री० ) मूना प्राणिवधस्थान'पञ्चगुण्यता मूना । पांच प्रकारका प्राणिवध-स्थान । गृहस्थोंकी घरमें प्रतिदिन पांच प्रकारसे प्राणिक्रिमा होती है, इन्हीं में इसका नाम पञ्चमूना पड़ा है ।

“पञ्चमूना गृहस्थस्य वृत्तलीपेवशुभकरः ।

व्युत्थनी चोदकभर्त्सक वधते याश्च बाहवन् ॥”

( शुद्धि सू )

चूल्हा जलाना, घाटा घादि पोमना, भाङ्गू देना, कूटना और पानोका चडा रखना यही पांच गृहस्थोंकी पञ्चमूना है । प्रतिदिन इन पञ्चमूनासे पनस्थ प्राणि हत्या होती है । इन्हीं पांच प्रकारकी हिंसाओंके दोषोंको निवृत्तिके लिये पञ्च महायज्ञोंका विधान किया गया है । पञ्चवहायज्ञ देखो ।

पञ्चस्कन्ध ( सं० पु० ) आत्माके लोकान्तरगमन और ज्ञेय तथा जड़जनत्वकी उत्पत्तिका कारण मत्तलानिके लिये बौद्ध शास्त्रकारोंने हिन्दूगान्धोक्त पञ्चतन्मात्रके आधार पर और भी पांच गुणमय पदार्थोंका उल्लेख किया है, यज्ञो पञ्चस्कन्ध है । रूप, रस, गन्ध, स्पर्श और शब्द इन पांच गुणोंके मनसे जिस प्रकार पञ्चभूतको उत्पत्ति हुआ करती है, उसी प्रकार बौद्धोंके मनमें भी पांच वस्तुमत्त्वा वा विभिन्न गुणममट्टिमें मानव-जातिका उद्भव हुआ है । किन्तु हिन्दुओंके साथ आत्मान्ध्वन्धमें प्रौर क्रिसो भी पञ्चममें इनका सादृश्य नहीं देखा जाता । पञ्चतन्मात्र और पञ्चवत् देखो ।

बौद्धोंके मनमें रूप, वेदना, संज्ञा, संस्कार और विज्ञान ये पांच स्वरूप हैं—गुणकी समष्टिका नाम स्कन्ध है । बोधमत घटण करनेमें इन पांचोंकी अनुभूति और प्रकट ज्ञाननाम करना पावश्यक है । इसी चह्दशमें यद्यपि ये पञ्चगुण शास्त्रके मध्य अट्टिनभाषसे सक्रियेगित हुए हैं, तो भी उनका सम घटण करनेके लिये यथाभव व्याख्या की गई है । बौद्धोंने पञ्चस्कन्धको जो एक तानिका दी है, यथा इस प्रकार है:—

। रूपस्कन्ध—यसुष्ठवा वा वस्तुतन्मात्र ।

चित्ति, पप, तिस और मकत् घादि चार भूत; घट्ट, कण, नासिका, जिह्वा और त्वक्, ( देह ) ये पांच

इन्द्रिय; पाज्जनि, मग्द, गन्ध, स्वाद और द्रव्यादि ये पांच पटार्थ पञ्चवस्तुतन्मात्र; स्त्री और पुरुष ये दो निद्रा-तन्मात्र; चेतना, जीवितेन्द्रिय और आकार ये तीन मूल अवस्था; अज्ञमखानन और वाचस्पृक्ति यह मनीभाव-ज्ञापनवा प्रधान उपाय और स्यून्जीवदेवकी चित्तप्रसादरता, स्थितिदशापकता, समताकरण, समष्टिकरण, स्वायित्य, क्षय और परिवर्त्तनशीलता आदि इन मातों विभिन्नगुणोंके अस्तित्व है । इस प्रकार कुल २८ गुण माने गये हैं ।

२। वेदनास्कन्ध रूपस्कन्धमें ही वेदनास्कन्धको उत्पत्ति होती है । यह वेदनास्कन्ध पांच ज्ञानेन्द्रियों और मनके भेदमें छः प्रकारका होता है जिनमें प्रत्येकके शक्ति, अशक्ति, स्पृहणून्यता ये तीन तीन भेद होते हैं ।

३। संज्ञास्कन्ध—इसे अनुमितितन्मात्र भी कहते हैं । इन्द्रिय और पन्तःकरणके अनुसार इसके छः भेद हैं। वेदना होने पर ही संज्ञा होती है ।

४। संस्कारस्कन्ध—यह साधारणतः ५२ संज्ञाओंमें विभक्त है । किन्तु इनमेंमें प्रत्येक क्षतन्ध भावापन्न नहीं हैं । इनमें कितने पूर्ववर्णित तीन भागोंके पन्तर्गत और सामर्थ्यप्रापक हैं । पूर्वोक्त रूप, वेदना और संज्ञा ये तीनों वाह्यभावके ध्वनन्धन पर गठित हैं और संस्कारतन्मात्र मानसिक धारण को महायतामें उत्पन्न हुआ है । इसके ५२ भेदोंके नाम ये हैं— १ स्वप्न, २ वेदना, ३ संज्ञा, ४ चेतना, ५ मनसिधार, ६ श्रुति, ७ जीवितेन्द्रिय, ८ एकाग्रता, ९ चित्तकं, १० विचार, ११ सौर्य जो पन्तान्य शक्तियोंकी उत्पत्तिमें महायता करता है, १२ अधिनोच, १३ प्रोति, १४ दण्ड, १५ मधस्थता, १६ निद्रा, १७ मिद्ध वा तन्द्रा, १८ मोह, १९ प्रज्ञा, २० साम, २१ पचोभ, २२ उताप, २३ अनुज्ञाप, २४ ज्ञो ( लज्जा ), २५ अज्ञोको, २६ दोष, २७ प्रदोष, २८ विचिकित्सा, २९ यहा, ३० दृष्टि, ३१-३२ शरीर और मानस प्रसिद्धि, ३३-३५ शरीर और मानस लघुत्व, ३५-३६ शरीर और मानस सृष्टता, ३७-३८ शरीर और मानस कर्मज्ञता, ३९-४० शरीर और मानस प्राज्ञता, ४१-४२ शारीरिक और मानसिक उद्यातना, ४३-४४ शरीर और मानस शान्ति, ४५ कक्ष्या, ४६



हृदयमें ग्रहण किया करता है। स्वयं बुद्धदेवने कहा था, कि जिस प्रकार केवल काष्ठ वा रज्जु, छत्र, चक्र आदिका एक एक पदार्थ ग्रहणपट्याद्य नहीं हो सकता, ममस्वा काष्ठरज्जादिके सहयोगमें श्यादिका अस्तित्व स्वीकार करना पड़ता है, उसी प्रकार रूप, विज्ञान, वेदना, मंज्ञा और चेतनाके एतन्न होनेमें जीवदेहको उत्पत्ति और आत्माका विकास हुआ करता है। जो कुछ हो सभी जैदोंने जोड़ा वह हम कान्हे जीयात्माका अस्तित्व स्वीकार किया है।

पञ्चस्वरभिमोचक--बुद्धदेवको एक उपाधि।

पञ्चखंड (मं० पु०) घी, तेल, चरबी, मज्जा और मोम।

पञ्चस्रोतस् (पं० स्त्री०) पञ्च स्रोतांसि यत्र। १. तीर्थभेद।

२. यागभेद। महर्षि पञ्चशिखने हजार वर्ष तक यह पञ्चस्रोतायज्ञ किया था।

पञ्चस्वरा (मं० स्त्री०) पञ्च स्वरा यत्र। प्रजापतिदाम प्रोद्यक्षत ज्योतिर्यन्मभेद। इम यन्ममें ७ अध्याय है जिनमें शिशुरिष्ट, माहुरिष्ट, पिहुरिष्ट, स्त्रीनपुंमकादि ज्ञान, सुखदुःख, रिष्टच्छेदादिशेष और मयूजाननिर्णय आदि निरूपित हुए हैं।

“पञ्चस्वराभिवानरुच मय” निदानसमयम्।

किंचिद्बुद्धसमयं च स्वरा वक्ष्यामि साध्वन्मूढ”

(पञ्चस्वरा)

ज्ञानज्ञानके शुभाशुभ विषयकी गणना करनेमें पहले आयुर्गणना करना आवश्यक है। पहले मयूजा निर्णय किया बिना शुभाशुभ गणना निष्फल है। कारण मनुष्यका मरण होनेसे उक्त शुभाशुभका फल कौन भोगेगा। इसलिये पहले मयूजा-निर्णय करना चाहिए। जन्मसमयमें से कर २५ वर्ष तक रिष्टदोष रहता है। इस समय आयुर्गणना न कर रिष्टगणना करनेकी होती है। इन सब रिष्टगणनादिका विषय पञ्चस्वरामें विशेषरूपसे लिखा है। यह सहजबोध्य नहीं है और बिगतर ही जानिके भयसे नहीं दिखलाया गया। अ, इ, ए, ओ इन पांच स्वरोंको प्रधान बना कर यह गणना हुई है, इसीमें इसका नाम पञ्चस्वरा पड़ा है।

(फलिदशोत्थिप पञ्चस्वरा)

इस प्रकार स्वरादिका निर्णय करना होता है।

प्रथमतः एकांतगतमें ५ वर्णोंकी स्थापना करके उनके नीचे क्रमशः अ, आ, इ, ए, ओ, आदि क्रममें सभी वर्णोंकी रखने। ५ स्वरोंके नीचे अ, ञ, ण मिल करकारादि अकारपर्यन्त सभी वर्णोंको ५ भागोंमें विभक्त कर संख्यापन करे। अ, ञ, ण ये तीन वर्ण नामके आदिमें प्रायः नहीं लगते इस कारण वे तीनों वर्ण छोड़ दिये गये। यदि वे तीनों वर्ण किसीके नामके आदिमें रहें, तो अ, ञ, इ, ये तीन अक्षर पढ़ने करनेकी होते हैं। यदि किसीके भी नामके आदिमें संयुक्तवर्ण रहे तो प्रथमसंयुक्तवर्णके आदिमें जो अक्षर रहेगा, वही वर्ण ग्रहण करना होगा। इस पञ्चस्वरामें प्रथम अक्षकें नीचे अ, आ, इ, ए, ओ, अ, आ, वा ये ७ वर्णों; द्वितीय अक्षकें नीचे इ, ई, अ, इ, टि, रि, पि, शि; तृतीय अक्षकें नीचे अ, गु, कु, तु, पु, य, यु; चतुर्थ अक्षकें नीचे ए, ऐ, टि, छि, छि, वे, से और पञ्चम अक्षकें नीचे ओ, औ, टो, बी, मो, हो वर्ण रखें। इसमें पांच प्रकारके स्वर निर्णय होते हैं। जिसके नाम आ आदि अक्षर जहाँ पड़ता है, उस स्थानके स्वराङ्गकी ग्रहण करके गणना करनेकी होती है। इस पञ्चस्वराके पांच नाम है, यथा--प्रथम स्वरका नाम उटिन, द्वितीय स्वरका नाम अमित, तृतीय वा भ्रात, चतुर्थका मन्था और पञ्चस्वरका नाम अष्ट है। इसमें और भी पांच नामांतर हैं, जन्म, कर्म, चापन, पिण्ड और हित्। इन पांच स्थानोंके मध्य प्रकार स्वरके नीचे मय, मि, अ और हयिक; इकार स्वरके नीचे कन्य, मिथ, न और कर्कट। उकार स्वरके नीचे धनु और मोन तथा एकार स्वरके नीचे मकर और कुम्भराशि स्थापन करनेकी पड़ती है। रागिनिर्णय इनो प्रकार खाना होता है। रागिनिर्णय करके स्वरके नीचे रागि और रागिके नीचे उनके अधिपति प्रयोगोंको संख्यापन करे। इस रागिका अधिपति जो अक्षर होगा, उस रागिके स्वरकी समग्रहणा स्वर कहते हैं। अकारमें रवि और मङ्गल, इकारमें चन्द्र और बुध, उकारमें बृहस्पति, ए स्वरमें शुक्र और वी स्वरमें शनि, इम प्रकार ग्रहयसिद्धि होगी।

इस पञ्चस्वरके पांच नाम और भी हैं, यथा--प्रथम ज्ञान, इस प्रकार यथाक्रम कुमार, युवा, और मृत। इनके पञ्चम्यानुसार शुभाशुभ फल जाना है।



५ पञ्चमी	४ पञ्चमी	३ पञ्चमी	२ पञ्चमी	१ पञ्चमी	
शु	रु	रु	श	स	मेष
स	श	श	रु	शु	वृष
शु	रु	रु	श	स	मिथुनककेट
स	श	रु	रु	शु	सिंह
शु	रु	रु	श	स	कन्या
स	श	रु	श	शु	तुला
शु	रु	रु	श	स	विद्या
स	श	रु	श	शु	धनु
शु	रु	रु	श	स	मकर
स	श	रु	श	शु	कुम्भ
शु	रु	रु	श	स	मीन
शु	रु	रु	श	शु	
शु	रु	रु	श	शु	

पञ्चाक्षर ( म० पु० ) पंच अक्षराणि यत् । १ मन्त्रभेद ।  
 २ प्रतिष्ठास्य ऋद्धीभेद । ३ प्रणय । ४ ममें पांच अक्षर  
 होनिके कारण इमे पंचाक्षर कहते हैं । ४ 'नमः शिवाय'  
 यह पांच अक्षरयुक्त मन्त्र । सिद्धपुरा के ८५ अध्यायमें  
 इसका विस्तृत विवरण लिखा है । ( वि० ) ५ त्रिभुमें  
 पांच अक्षर हैं ।  
 पञ्चाख्यान ( म० क्ली० ) पंचाख्यायिकायुक्त ग्रन्थ,  
 पंचतन्त्र ।  
 पञ्चागतुक्छुदि ( म० स्त्री० ) वीभक्तज, दोहदज, अमा-  
 स्रज, लमिज और पञ्जोर्ण छदि भेद ।  
 पञ्चानि ( म० क्ली० ) पंचानां पत्नीनां समाहारः । १  
 पंच अग्निका समाहार, चारों और प्रज्वलित चार अग्नि  
 और मध्यमें स्थानि । ( पु० ) पंच च तै अग्नयदिति

सञ्जात्वात् कर्मधारयः । २ पांच प्रकारको अग्नि, यथा—  
 पत्न्याद्यायै पंचन, गार्हपत्य, मध्य, आहवनीय और धाव-  
 मय्य ।

“यवन पावनात्रेता यस्य पञ्चामनयो वृद्धे ॥” ( शतैव )  
 ३ उक्त अग्निगो हाथ विक्रित कार्यकारक तपस्वि  
 भेद ।

जिन मव माग्नि क प्राण्यगो के अर्थात् जिनके ब्रह्मो  
 अग्नि है, उन्हें पंचाग्नि कहते हैं । अक्षिण गार्हपत्य  
 और आहवनीय इस अग्नित्रयको ब्रह्माग्नि कहते हैं ।

“उदरे गार्हपत्याग्निर्मध्यदेशे तु दक्षिणः ।  
 धारये आहवनीयग्निश्च मध्यः पर्वा च पूर्वदिशि ॥  
 यः पञ्चामनीनिमान् वेद आहिताग्निः स उच्यते ॥”

( षड्पुराण )

उदरमें जो अग्नि है, उसका नाम गार्हपत्य, मध्य-  
 देशको अग्नि का नाम दक्षिण, मुखको अग्नि का नाम  
 आहवनीय अग्नि और मन्त्रको अग्नि का नाम मध्य  
 और पूर्वा है, यज्ञो पंचाग्नि है । मनुमें लिखा है कि  
 जिसके घरमें पंच-अग्नि है उसे पंचाग्नि कहते हैं ।

“त्रिणाचिकेनः पञ्चाग्निविभुगर्भः परमभित् ॥”

( मनु ३।१८५ )

छान्दोग्य उपनिषद्के मतमें स्वर्ग, पञ्चम्य, धृत्वो,  
 पुरुष और योषाम्बक अग्नित्रय आहितिके आधार  
 पदाय है ।

४ धातुर्वेदों अतुमार सीता, चित्रहो, मिन्वावा,  
 गन्धक और सदार नामक श्रोत्रधियां जो बहुत गरम  
 मानी जाती हैं । 'त्रि०' ५ पंचाग्नि का उपासना करने-  
 वाला । ६ पंचाग्निविद्या जाननेवाला । ७ पंचाग्नि  
 तापनेवाला ।

पञ्चाङ्ग ( म० क्ली० ) पंचानां अङ्गानां एकत्रुत्स्य त्वक्-  
 पत्रपुष्यमूलफलानां समाहारः । १ एक छत्रका त्वक्,  
 पत्र, पुष्य, मूल और फल । २ पुरथरणविशेषः जप,  
 होम, तपण, अभिषेक और विप्रभोजन यज्ञो पंचाङ्गी-  
 पासना है ।

“जपहोमो तर्पणश्चाभिषेको विप्रभोजनम् ।  
 पञ्चवर्ततेपावर्त्तते लोके पञ्चाक्षरगमिष्यते ॥” ( तन्त्रधार )  
 ३ वार, तिथि, नक्षत्र, योग और करणनामक पञ्चिका ।



५ पञ्चमांश	४ पञ्चमांश	३ पञ्चमांश	२ पञ्चमांश	१ पञ्चमांश	सोम
शु	वु	ख	ग	स	सुप
स	ग	ङ	च	शु	मिथुनकक्रं
शु	वु	ख	ग	स	सिंहकक्रं
स	ग	ङ	च	शु	कन्या
शु	वु	ख	ग	स	सिद्धि
स	ग	ङ	च	शु	धनु
शु	वु	ख	ग	स	मकर
स	ग	ङ	च	शु	कुम्भ
शु	वु	ख	ग	स	मीन
शु	वु	ख	ग	स	शु

संज्ञात्वात् कर्मधारयः । २ पांच प्रहारको अग्नि, यथा—  
पञ्चाहाय (अचन, गार्हपत्य, मध्य, पाहवनीय और पाच-  
मय ।

“पवन-पावनप्रेता यस्य पञ्चाक्षरयो गृहे ॥” ( शरीर )

३ उक्त अग्नि को हाथ विहित कार्यकारक तपस्वि  
भेद ।

जिन सब आग्नि क यज्ञाणों के अर्थात् जिनके वेता  
अग्नि है, उन्हें पंचाग्नि कहते हैं । दक्षिण गार्हपत्य  
और पाहवनीय इस अग्नित्रयको वेताग्नि कहते हैं ।

“उदरे गार्हपत्याग्निर्मध्यदेशे तु दक्षिणः ।

आस्ये आहवनीदुग्मश्च मध्यः पूर्वा च पूर्वैर्नि ॥

यः पञ्चाग्नीनिमान् वेद आहिताग्निः स उच्यते ॥”

( ऋग्वेदपुराण )

उदरमें जो अग्नि है, उसका नाम गार्हपत्य, मध्य-  
देशको अग्नि का नाम दक्षिण, मुखको अग्नि का नाम  
पाहवनीय अग्नि और मस्तककी अग्नि का नाम मध्य  
और पूर्वा है, यही पंचाग्नि है । मनुमें लिखा है कि  
जिसके घरमें पंच-अग्नि है उसे पंचाग्नि कहते हैं ।

“त्रिणाविकेयः पञ्चाग्नित्रिपुरीः पञ्चगवित् ॥”

( मनु ३।१८५ )

छान्दोग्य = पत्न्यपदके मतमें स्वर्ग, पर्जन्य, पृथ्वी,  
पुरुष और योवात्मक अग्नि तुल्य आहृतिके आधार  
पदार्थ हैं ।

४ प्रागुर्ध्वदके अनुसार चीता, चिचड़ो, भिलावा,  
गन्धक और मदार नामक शोषधियों जो बहुत गरम  
सानी जाती हैं । (त्रि०) ५ पंचाग्नि की उपासना करने-  
वाला । ६ पंचाग्निविद्या जाननेवाला । ७ पंचाग्नि  
तापनेवाला ।

पञ्चाङ्ग ( सं० अन्तो० ) पंचानां अङ्गानां परब्रह्मस्य त्वक्-  
पत्रपुत्रमूलफलानां ममाधारः । १ एक त्वक्का त्वक्,  
पत्र, पुष्प, सूत्र, और फल । २ पुरधरपविषेप । जप,  
होम, तर्पण, अभिषेक और विप्रभोजन यही पंचाङ्गो-  
पासना है ।

“जपहोमौ तर्पणश्चाभिषेको विप्रभोजनम् ।

पञ्चांगोपासनं लोके पुरधरपविषेपते ॥” ( तन्त्रसार )

३ वार, तिथि, नक्षत्र, योग और करणात्मक पञ्चिका ।

पञ्चाक्षर ( सं० पु० ) पांच अक्षरानि यत । १ मन्त्रभेद ।  
२ प्रतिष्ठास्थ कन्दोभेद । ३ प्रणव । इनमें पांच अक्षर  
होनेके कारण इसे पंचाक्षर कहते हैं । ४ ‘नमः शिवाय’  
यह पांच अक्षरयुक्त मन्त्र । लिङ्गपुराणके ८५ अध्यायमें  
इसका विस्तृत विवरण लिखा है । ( त्रि० ) ५ जिकमें  
पांच अक्षर हैं ।

पञ्चास्थान ( सं० अन्तो० ) पंचास्थायिकायुक्त अथ,  
पंचतम्य ।

पञ्चागत्यच्छदि ( सं० अन्तो० ) वीमलज, दोहदज, पमा-  
मज, लमिज और अजापज छदि भेद ।

पञ्चाग्नि ( सं० अन्तो० ) पंचानां अग्नीनां समाहारः । १  
पांच अग्नि का समाहार, चारों और प्रज्वलित चार अग्नि  
और मध्यमें स्थान्नि । ( पु० ) पांच च ते अग्नयथेति





सा रे ग म प । रे ग म प ध । ग म प ध नि । म प ध नि सा ।

अथरोही—सा नि ध प म । नि ध प म ग । ध प म ग रे । प म ग रे सा ।

( त्रि० ) ६ जिनके पांच मुख हैं, पंचमुखी ।

पञ्चाननमुद्रिका (सं० स्त्री०) औषधभेद । प्रसृत प्रणाली—शुद्ध पारा ४ तोला, शुद्ध गन्धक ४ तोला इन दोनोंमें क्षण्णली बना कर उसे १ पल परिमित ताम्रवात्रके चारों ओर लीप दे । पीछे उस ताम्रवात्रकी सुपायत्र और पंचलवण द्वारा पाच्छादित करके गजपुटमें पाक करे । इस प्रकार प्रसृत ताम्रचूर्ण १ पल, पारद, गन्धक, पुटदण्ड लोह, यमानी, अभ्र, शतपुष्पा, त्रिकटु, त्रिफला, निगोधका मूल, चव्य, दन्तीमूल, शपाङ्गमूल, जीरा, कृष्णजीरा प्रत्येक १ पल, मान, ग्रन्थिक, चिचक, कुलोथ प्रत्येक आध पल । इन सब द्रव्योंकी अदरककी रसमें डुबो कर १ मासकी गोली बनाये । इससे अस्वपित्त आदि रोगोंकी शान्ति होती है । पय्य दूध और मांसका गिरवा । इसमें गुरुद्रव्यको छितकर बतलाया है ।

पञ्चाननघृत (सं० स्त्री०) औषधभेद । घृत वा तैल ७४ सेर, काथार्य शान्तिश्च २ पल, पुनर्ण वा २ पल, पाकार्य जल ७४ सेर, श्रेय ७२ सेर । पाक सिद्ध होने पर हरो-तकी, चितामूल, यवचार, सैन्य और सोंठकी अच्छी तरह कपड़ेमें छान कर प्रत्येक दो तोला काढ़ेमें डाल दे । घो खानि और तेल लगानिके काममें आता है । यह श्लेष्मद आदि पीड़ाका शान्तिकारक है । श्लेष्मामें गो-मूत्र और वात तथा पित्तकी अधिकतामें दुग्धसेवनीय है ।

पञ्चाननमहाचार्य—द्वितीय राजशेखरकोष नामक एक अभिधान ग्रन्थके प्रयोगे ।

पञ्चाननरस (सं० स्त्री०) रसौषधभेद । प्रसृत प्रणाली—पारा, तृत्तिया, गन्धक, जयपाल, पोपर इन सबके बराबर बराबर भागको पोस कर उसे घूँघरके दूधके साथ घोटि । इसका अनुपात आंवलेका रस है । इसके सेवन करनेसे गुन्मरोग जाता रहता है ।

अन्यविध—विष ४ भाग, मिर्च ४ भाग, हिङ्गुल १ भाग, गन्धक १ भाग, ताम्र २ भाग, इन्हें एकवचने

दूधके साथ पोस कर एक रत्तीको गोली बनाते हैं । अनुपात भवस्था जान कर देना होता है ।

अन्यविध प्रसृत प्रणाली—पारा, हरिताल, तृत्तिया, रोहागा, शङ्खुस और गन्धक इनके समभागकी करीबके रसमें एक दिन तक पोस कर उसे ताम्रवात्रमें रख दे । पीछे उस ताम्रवात्रको ठक कर उसके ऊपर बालू रख कर पाक करे । भलीभाँति पाक हो जाने पर उसे तुलसीपत्रकी रसमें तीन पहर तक घोट कर तीन रत्तीकी गोली बनावे । इसका अनुपात तुलसीका रस और मिच है । इसके सेवनमें विषम त्रिदोष और टाहयुक्त सब प्रकारके ज्वर जाते रहते हैं । धातुगत ज्वरमें पौपरचूर्ण और मधु अनुपात है तथा पय चीनीके साथ दूध, भात और मूँगकी दान ।

अन्यविध प्रसृत प्रणाली—पारा और गन्धकको आंवलेके रसमें घोट कर द्राक्षा, यष्टिमधु और खजूर इनमेंसे प्रत्येकके काढ़ेमें एक एक दिन भावना देते और तब २ रत्तीकी गोली बनाते हैं । अनुपात आंवलेका चूर्ण और चोनी है । इसके सेवनमें चट्टीरोगकी शान्ति होती है ।

पञ्चाननरसलौह (सं० स्त्री०) औषधभेद । प्रसृत प्रणाली—जारित और पुटित लोह ५ पल, गुग्गुल ५ पल, अभ्र २॥ पल, पारद २५ पल, गन्धक २५ पल, काथार्य त्रिफला प्रत्येक ५ पल, जल ३० सेर, श्रेय ३ सेर ६ पल । इस काथमें लोह, अभ्र, गुग्गुलको पाक करे । घृत ३२ पल, शतमूलीका रस ३२ पल और दुग्ध ३२ पल इसे लोह वा मट्टीके बरतनमें लोहदर्वी द्वारा धोमी आचमें पाक करे । आसस पाकमें विहङ्ग, सोंठ, धनिया, गुलशरज, जीरा, पंचकोल, मिश्रीप, दन्तीमूल, त्रिफला, इलायची और मोथा इन सबकी अच्छी तरह पोस कर पक्षपल मात्र डाल दे । पीछे रस और गन्धककी कजली करके कुछ गरम रहते ही मिना देना कर्त्तव्य है । घाटमें औषधकी नीचे उतार कर ठण्डे बरतनमें रख दे । घृत और मधुके साथ उसे मिना कर गुलच, बीठ और परण्डमूलके काढ़ेके साथ सेव्य है । औषध सेवन करनेके पहले विरेचकादि द्वारा देहको शोध लेना उचित है । इससे पामघात, मन्थिवात, कटोमूल, कुचिप्लस आदि लक्ष्मरोग दूर हो जाते हैं ।



संसारवेश्य प्रापण करता और इस जन्ममें विषय सम्पत्तिमें कोई सम्पर्क नहीं रखता है।

पञ्चामरा (म० स्त्री०) पंच मरा मंत्रात्वात् कर्मधारयः। अमरखतापंचक। दुर्वा, विजया, विस्वपत्र, तिरुण्डी और काली तुलसी इन्हीं पांच द्रव्योंको पंचमरा खता कहते हैं। (हरनामठ)

पञ्चामरादियोग (म० पु०) प्राणतोषिण्युक्त पांच प्रकारके योगभेद, प्राणतोषिणीके कहे हुए पांच प्रकारके योग। यथा—नीती, दन्तीयोग, धीती, मल और आनन यही पांच प्रकारके योग सब योगोंमें खेठ हैं। जो इस पंचामराका योगानुष्ठान करते, वे अमर होते हैं। इसीसे इसका नाम पंचामरादियोग पड़ा है। यह योग अनुष्ठान कर प्रतिदिन भक्तिपूर्वक श्रीकृष्णलोदीवीका सहस्रनामाष्टक पाक करना चाहिये।

पञ्चामृत (म० स्त्री०) पंचानां अमृतानां समाहारः। १ एक प्रकारका स्वादिष्ट पेय द्रव्य जो दधि, दुग्ध, घृत, मधु और चीनी मिला कर बनाया जाता है।

“दुग्धं घणकैरुचैव घृतं दधि तथा मधु।

पञ्चामृतमिदं श्रेकं विधेयं सर्वकर्मेषु ॥” (ज्योतिरत्न)

गर्भवती स्त्रीको पंचामृत खिलाना चाहिए; किन्तु इसके खिलानेका विशुद्ध दिन होना आवश्यक है। ज्योतिस्तत्त्वमें लिखा है,—पंचमासको गर्भावस्थामें रवि, बृहस्पति और शुक्रवारको, रिक्ता भिन्न तिथिमें, रैवती, अश्विनी, पुनर्वसु, पुष्या, स्वाति, मूला, मघा, अशुभा, हस्ता और उत्तरफल्गुनी नक्षत्रमें पुरुष और स्त्रीको लग्नशुद्धिमें पंचामृत दान करना होता है। इससे देवपूजा और महादान आदि भो होते हैं। २ वैद्यकमें पांच गुणकारो औषधियां—गिलोय, गोखरू, सुसली, गोरखगुण्डी और शतावरी।

पञ्चामृतपर्पटी (म० स्त्री०) औषधविशेष। प्रस्तुत प्रणाली—गन्धक ८ भागा, पारा ४ भागा, लोहा २ भागा, ताँबा २ भागा इन सब द्रव्योंको मिला कर लोहेके बरतनमें पीसने और बेरकी लकड़ीसे आगमें गलाते हैं। बाद पर्पटीको तरह गोबरके ऊपर इसे जेलिके पत्ते पर डाल देते हैं। इसके सेवनकी मात्रा २ रत्तीसे ले कर ८ रत्ती तक घतलाई गई है। इसका अनुपान घी और

मधु है। इस औषधका सेवन करनेसे सब प्रकारको ग्रहणो, अरुचि, पार्श्व, कृदि, पतिसार, ज्वर, रक्तपित्त, लय वल्लिपलित, नेत्ररोग प्रभृति जाति रहते हैं। यह हृण और आग्नेय है। (रहेन्द्रसा० प्रद्वीपि०)

भैषज्यात्वायलीके मतमें—गन्धक ८ तोला, पारा ४ तोला, लोहा ४ तोला, अवरक १ तोला और ताँबा पाच तोला इन पांच द्रव्योंको पहने एक साथ मिला कर लोहेके बरतनमें पीसना चाहिये। बाद एक दूमरे लोहपात्र (कड़ाही घाटि)-में रख कर धीमे आंचमें पाक करते और जेलिके पत्ते पर डाल कर उमकी पर्पटी बनाते हैं। इसीको पंचामृतपर्पटी कहते हैं। इसके सेवनकी मात्रा २ रत्ती तथा अनुपान घी और मधु है। प्रतिदिन सेवन-मात्रा बढ़ा कर ८ वा १० रत्ती तककी व्यवस्था करनी होती है। एक समाह तक सेवन करनेसे नाना प्रकारको ग्रहणो, अरुचि, भस्मि, अनेक दिनका पतिसार और नेत्ररोग आदि जाति रहते हैं। दीर्घांतोसार या चिरोन्वितानोसारमें गन्धकका परिमाण उक्त परिमाणमें आधा कम कर देना चाहिये।

पञ्चामृतपिण्ड (म० पु०) अग्निके ब्रह्मपुष्टिकर पिण्ड-विशेष, चौडोंकी ताकतको बढ़ानेवाली एक प्रकारकी औषध। कटुका, अयस्ती, भ्रमरी, सुरमा और घन ये पांच प्रकारके अमृत सभी घोट्टिके लिये उपकारो है।

पञ्चामृतधूप (म० पु०) कुलथादि पंचद्रव्यरुत धूपविशेष। कुलथी, मूँग, अरहर, उरद और मटर इन पांच धोजीका जूस बनानेसे पंचामृतधूप होता है। गुण—गन्धी-पन, पाचन, धातुवृद्धिकर, लघु, अरुचिनाशक, बलकर, ज्वर, लय और अज्ञमर्दानाशक। (वैद्यक०)

पञ्चामृतस (म० पु०) औषधविशेष। प्रस्तुत प्रणाली—पारा १ भाग, गन्धक २ भाग, लोहागा ३ भाग, विष ४ भाग, मिर्च ५ भाग इन सब द्रव्योंको अदरकके रसमें पीस कर पांच रत्तीकी-गोलो बनाते हैं। इस औषधका अनुपान विशेषसे प्रायः सभी रोगोंमें व्यवहार किया जा सकता है। यह जन्तुपेय, जन्तुदर, मसिपात, पीनस, नासारोग, व्रण, व्रणघोष, उपदंश, भगन्दर, माहीव्रण, ज्वर, मण्डनाघात और क्षत घाटि रोगोंमें प्रयुक्त है।

(रहेन्द्रसा० नाधारोगाधि०)

धैर्यवत्प्रजापतिः सत्ये दत्त पात्रा १ गोमा, गमाक १ गोमा, गोदानकी गोदे ३ गोमा, विष १ गोमा, मिर्च ३ गोमा दल मन्थनी चूर्ण कर जम्बूके माघ चक्षुः ताड योनि है । ये ही एक रक्षाकी गोमी बना कर भोग करने है । रमका चमुदाग चटरकका रम है । इसमें दोष खादि ज्ञाना रोग भयमम होने हैं ।

चन्द्रवहार—गोधित पात्रा १ गोमा, गमाक २ गोमा, चक्रक २ गोमा, मिर्च १० भाग घोर विष १ गोमा दन्ते मोडुने रममें दोम कर छरटके बराबर गोमी बनाने हैं । दलका चमुदाग चर्क फलकी छामदा चूर्ण घोर मधु है । इसमें कागहाग मट होना है ।

व्याघ्रसोदरमात्र (मं० पु०) शोधयविमंथ । प्रमुक्त प्रभावो शोधा, ताका, गमाक, चरकर, पात्र, तिक्त, तिक्तता, मोघा, विहङ्ग, भीता, विद्यायता, ट्रिटाटा, हादकदी, दलदी, कुट, यमानो, जोरा, ह्यगभौरा, खपूर, धनिवा, चय प्रकोकका चूर्ण १ गोमा, कुसुमिना कर श्रितमा चूर्ण हो, उमका पाधा गोधितमन्त्र, मन्त्र चूर्णका ४ गुण गो-मूत्र, ८ गुण पुनर्वनाक। छाव इन सबकी एक माघ पात्र कर चामस पात्रमें मोहादि चूर्णको डाल दे घोर चक्षुः तर- मिना कर पतार से । मोतल को जनि वर उसमें एक घन मधु डाल दे । इसकी माया गोमीकी चरणाके चम्पार होने । इसमें यहकी, कम्पना घोर जोष खादि रोग जाने रहने है ।

व्याघ्राय (मं० पु०) वंशमंथकः पात्राणः । महादेवके पञ्चवक्त्रनिर्मित तन्त्राणावतिरोप । महादेवने पूर्व-मुच्यते श्रम तन्त्राक विषय कथा है, यह पूर्वस्याय है । इन प्रकार कीके तन्त्रके नाम ये हैं—पूर्वायाद, गमा-द्व, दक्षिण चर्कद्व, दक्षिण द्वायाद, उत्तर उत्तरा-मक घोर चर्कद्वर्ष्याय त्त्रावरोप या वैश्वानुमना-कक ।

‘पूर्वायादा उत्तरायाः दक्षिणः चर्कद्वारः ।  
 दक्षिणः उत्तरायाः उत्तरा, उत्तरायाः उत्तरा ।  
 उत्तरायाः उत्तरायाः उत्तरायाः उत्तरायाः ।’

(निर्वाण)

महादेवके कर्क कर पात्र, कि दमा ५ मूषके दद

तका विदला जा, रमजिद दमका नाम व्याघ्राय पत्रा है ।

‘मग चन्द्रवहारकक चक्रककायाः चन्द्रवहारः ।  
 (कृष्णवर्णः) ।

व्याघ्र (मं० स्त्री०) चामलि रमनि प्राप्नुभनेनि चाम-रक, शोधयौधयो इति चाम्याः ह्यया (भयभयो-विमंथ । वट, शार) वंशानां पात्रायां चाम्यादीनां समाहारः । हलनिगेवका समाधार, चाम्य खादि कई एक हय ।

एक चमला, एक विमुसद (गोमं), एक च्चपीच (चरमद), दम प्रकारके कुल, दो मातृमक ये सब एक वंशाय है । जो एक वंशाय भवति है, उसे जरक भुगकला नहीं पहना ।

निमित्तवक्त्रे सत्ये दोषा १, गोम १, चम्पा २, नेमर २, ताड ७ घोर कारिघल ८ यशो वंशान् है ।

व्याघ्र (मं० स्त्री०) व्याघ्रानाम्ब्यानां कोनादीनां समा-हारः । चाम्यचक्र, चेषकर्म ये दोष चाम या गर्ति पटाव—चममवेष्ट, दमलो, श्रीमोरो मोडू, कागशी मोडू घोर बिजोरा । मताभारम—धर, चमार, विद्यायल, चमलवेष्ट घोर बिजोरा मोडू । पथिक व्याघ्र करने वर वंशायका मेष मुहमें देनेके व्याघ्र मुक्त जाने है ।

‘कोमराङ्गिचक्रवृत्तमन्त्रकीवापुलिहणः ।  
 चक्रवृत्तकी ह्यवी देवः परा गुणा विवर्तनी ।’  
 (कारकोमुटी)

व्याघ्रत—भारतवर्षकी मन्त्रव्याये व्याघ्रविचारमभा । द्विती जनि वा द्विती विदित चमालके मय द्विती प्रकारका गोममान चरमित होने पर चामय चन्द्रव्याघ्र व्याघ्रकी मन्त्राद बना कर एक ममा मदिन होने है । उभरे पात्र विवाद या प्रयोगामिच्छकी प्रकृत घटनाकी दोनों पक्षके मोम हनने है । इन प्रकार चरनि-ममदिने विचारको ही वंशायतका विचार कहते है । उक्त चरनि से कर ममा मदिन होने है, इधरेसे इमका नाम वंशायत पत्रा है । पात्रः देया जाता है, कि गोमी देनेमें विचारकीके चरनिकीके मय कर कोई विवाद बुझा होता है, तर वंशायतकी चमका निवटता होने है । चमकिरक मन्त्रकीके कोकाय विद्या है, कि

राजकीय शासनप्रणालीसे प्रजा जिन सब विषयोंमें मन्थरूपमें विचार पानेको चाहा नहीं करते, एक-मात्र पंचायत ही उनके इस भावको पूरा करती है। जब जिरण्ड एजियर मन्थईके शासनकर्त्ता नियुक्त हुए (१६६८-१६७०), उस समय उन्होंने हिन्दू, पारसो और मुसलमानोंके विचारके लिए प्रत्येक सम्प्रदायमें ५ व्यक्तियोंको चुन कर स्थायत्तशासनविधिके अनुकरण पर पंचायतकी संगठन की थी। एतद्विषय महाराष्ट्र प्रांशु-भावके समय टांजणात्य प्रदेशमें पैगवाघोंने इस प्रकार अपनेकोका विचारकार्य राजपुत्रोंके हाथ सौंपा था मही, लेकिन अवशिष्ट सभी कार्य ग्राम्यपंचायतीकी ही करने होते थे। इस समय देवानो भद्रान्तमें कवकोकी जमीनके अधिकार ले कर जो मामला चलता था, यह पंचायत महा ही उसका छूटान्त विचार करती थी। ध्यवसायी व्यक्तियोंमेंसे ही यद्यथा उस जातीय सम्प्रदायकोमें ही पांच आदमी चुन लिए जाते थे। सामरिक विभागका विचारकार्य सरदारोंकी पंचायत द्वारा निष्पन्न होता था। पंचायत द्वारा निर्धारित मुकदमके कागजाटि राजदरबारके कागजाटिई मध्य गिने जाते थे। आज भी सभी स्थानोंमें निम्न्यथीके मध्य पंचायतका विचारकार्य दृष्टिगोचर होता है। समा किसी खुले मैदानमें यद्यवा हस्तदिके तने बैठते हैं। इन प्रकारकी पंचायतमें केवल पांच ही आदमी बैठते हैं सो नहीं, उनमें पांचमें अधिक व्यक्ति भी लक्षित होते हैं। विचारके पहले वादी और प्रतिवादी दोनों पक्षकी ही पंचायत तथा उभयपक्षीय मासो और स्वजातीय समवेत व्यक्तियोंकी मिष्टाच विभागा होता है। उसके बाद पंचायतके विचारमें जो निष्पन्न होता है उसे दोनों पक्ष पानेको बाध्य हैं। वर्त्तमान चण्डी-शासनकालमें जिस प्रकार जुरीकी प्रथा तथा प्रजातन्त्र शासनप्रणाली प्रचलित है, उसी प्रकार इस देशमें पंचायत-प्रथा भी प्रचलित देखी जाती है। हम लोगोंके देशमें प्राचीनकालमें भी पंचायत-प्रथा प्रचलित थी, ताम्र-शासनादिवे उसका प्रमाण मिलता है।

पञ्चमण्डली देखी।

हम लोगोंके देशमें यह भी देखा जाता है, कि

जहाँ श्रुतिसंपलितो नहीं है, वहाँ घाट, रास्ता, पुष्करिणी आदिका प्रबन्ध यहाँ तक कि चौकादार आदिका नियोग भी इसी पंचायत द्वारा होता है। पञ्चायतनी (सं० स्त्री०) पञ्चानामुपास्य देवकृपागामायतनानां समाहारः। पंच उपास्य देवताका समाहार। एक प्रकारको दोचा। तन्त्रसारमें इसका विषय इस प्रकार लिखा है,—पंचायतनी दोषामं गति, विष्णु, शिव, सूर्य और गणेश इन पंच देवताओंके ५ यन्त्र बना कर उनमें शक्ति, विष्णु, शिव, सूर्य और गणेश इन पंच देवताओंकी पूजादि करने होती है। इसीसे इसका नाम पंचायतनी दोचा पड़ा है। इसमें विग्रेयता यह है, कि गुठ यदि इस पंचदेवताके मध्य शक्तिको प्रधान समझे, तो उसके यन्त्रकी मध्यस्थलमें चिह्नित कर पूजा करे और उस यन्त्रके ईशानकोणमें विष्णु, अग्नि-कोणमें शिव, नैऋतकोणमें गणेश तथा वायुकोणमें सूर्य का यन्त्र बना कर इन सबको पूजा विधेय है। यदि मध्यस्थलमें विष्णुकी अर्चनाकी जाय, तो ईशानकोणमें शिव, अग्नि-कोणमें गणेश, नैऋतकोणमें सूर्य और वायुकोणमें अश्वि-का यन्त्र चिह्नित कर पूजा करे। यदि मध्य भागमें शङ्करकी पूजा करनी हो, तो ईशानकोणमें विष्णु, अग्नि-कोणमें सूर्य, नैऋतकोणमें गणेश और वायुकोणमें पार्वतीकी पूजा; यदि मध्यमें सूर्यकी पूजा करनी हो, तो ईशानकोणमें शिव, अग्नि-कोणमें गणेश, नैऋतकोणमें विष्णु और वायुकोणमें भवानीचक्रकी पूजा; यदि मध्य भागमें गणेशकी पूजा करनी हो, तो ईशान-कोणमें विष्णु, अग्नि-कोणमें शिव, नैऋतकोणमें सूर्य और वायुकोणमें पार्वतीयन्त्रकी पूजा करनी होती है। इन सब स्थानोंकी छोड़ कर अन्यत्र पूजा करनेसे प्रशुभ होता है ऐसा गणेशविमर्षिणो तन्त्रमें लिखा है। रामार्चनचन्द्रिका और गौतमीयतन्त्रके मतमें—मध्यस्थलमें विष्णु, अग्नि-कोणमें गणेश, ईशानकोणमें सूर्य, वायुकोणमें पार्वती और नैऋतकोणमें महादेवकी पूजा विधेय है। किसी किसीके मतमें ईशानादिकोण विभागमें विकल्प होता है। गन्धादि द्वारा अर्चना करके पञ्चकर्म पूजा करनी होती है। पूजासे बाद २० बार मन्त्रोच्चारण और नमस्कार करके जप करना



दक्षिणजूलक्ष्य भूभाग दक्षिण पञ्चाल कहलाता था। दक्षिण पञ्चालकी राजधानी काम्पिन्यनगरमें थी। इसी राजधानीमें पाञ्चाली यथात् द्रोणदोका स्वयम्बर रचा गया था।

प्राचीन दक्षिण पञ्चालराज्य का पूर्ण चिह्न लक्षित नहीं होता। केवलमात्र वदाजन और पशुवाजद जिलेके मध्यवर्ती दोषावप्रदेगमें गङ्गाके प्राचान गर्तकी बाईं ओर कितने भग्न इष्टकादि पाये गये हैं। यहाँ तथा उत्तर पञ्चालकी अष्टच्छूद्रापुरीमें जो मय फोटित ध्यानो-बुद्ध, तोथंडर और पाखनावाटिकी मूर्तियाँ पाई गई हैं, वे बौद्ध और जैनधर्मके प्रतिपत्तिकालमें संस्थापित हुई थीं, ऐसा बोध होता है। पुराणिक कनिंहुम इन मय मूर्तियोंकी देख कर निख गये हैं, कि ये मूर्तियाँ खष्टपूर्व प्रथम जनार्दने इय वा ४यं शताब्दीकी होगी। (१) रोहिणखण्डके अन्तर्गत कामिननगरमें भास्कर-कायंयुक्त एक प्राचीन चतुरस्र वेदो भारतीय यादु-नरमें लाई गई है।

वदाजनसे प्राप्त लक्ष्मणदानकी गिलालिपिमें हम लोग मालूम कर सकते हैं, कि पञ्चालके अन्तर्गत बीटाम युता नगरमें राष्ट्रकूटमध्यययी राजाधोंने प्रवलप्रतापमें राज्यगामन किया था। उक्त गिलालिपिमें लक्ष्मणके पूर्वनेत्र और भो १० राजाओंके नामोंका उल्लेख है।

पञ्चालः देगविशेषः सोऽभिजनोऽप्य, तस्य राजा वा धण, बहुयु पणोलुक् । २ पञ्चालदेशवाभो । ३ पञ्चाल-देशके राजा । ४ एक ऋषि जो वाभ्रथ गोत्रके थे । ५ महादेव, शिव । ६ छन्दोभेद, एक छन्द जिसके प्रत्येक चरणमें एक तगण होता है। ७ सर्प विशेष, एक सांपका नाम । ८ विपयुक्त कीट, शिवसेना कीड़ा।

पञ्चाल—शौराष्ट्रके अन्तर्गत एक उपविभाग। इनके पश्चिममें वनायनदो और पूर्वमें शाबरमती है। माधा-रथतः यह स्थान देवपंचाल नामसे प्रसिद्ध है। यह जनपद प्रसिद्ध चीनपरिव्राजकं यूएनचुवङ्गसे शौराष्ट्रके मध्यस्थित (पंचालके अधोर्न) पानन्दपुर नामसे ही उक्त हुआ है। यूएनचुवङ्गने लिखा है, कि पानन्दपुरमें वनोभी प्रायः ७०० लोग हैं। किन्तु यथावर्ष पानन्दपुर

वनोभीमें ३२ कीमती दूरी पर अवस्थित है। पूर्व समयमें वनोभी और पानन्दपुरके मध्य जो मय पार्वत्यप्रदेग थे, वे सभी वनाकीर्ण और दुर्गम थे। इन कारण उन समय घूम कर (अर्थात् गोघ्रा ही कर आरम्भ करनीसे प्रायः ११५से ११७ मीलका रास्ता तै कर) जाना होता था। यही पानन्दपुर यथावर्षमें 'देवपंचाल' कहलाता था। यहाँ अनेक प्राचीन निदर्शन पाये जाते हैं।

महाभारतमें लिखा है—इच्छाकुवंगमभूत राजा हयंश्वर अपने भाईसे अयोधामें निकाल दिए जाने पर अङ्गल चले गये। साथमें उनकी एकमात्र स्त्री मधुमती थी। मधुमतीके कहनीमें हयंश्वर समुद्राल चले गये। मधुदानवने जामाताके भागमन पर बड़े प्रसन्न हो मधु-वनकी छोड़ समस्त शौराष्ट्राज्य उन्हें प्रदान किया और चाप तपस्याके लिए वरुणालय समुद्रके किनारे चल दिये। हयंश्वर भी पर्वतके लपर आनर्त्त नामक एक राजधानी बना कर वहाँ पानन्दसे रहने लगे।

प्रवाद है, कि शौराष्ट्रके अन्तर्गत इसी पंचाल जन-पदमें द्रौणदोका जन्म हुआ था, इसी कारण उस स्थानकी अभी देवपंचाल कहते हैं। यहाँके वर्तमान थान नामक नगरके प्राचीनत्वकी कथा भी विशेष रूपसे लिखी है। यह स्थान पश्चि 'त्रिनेत्रेश्वर' नामसे प्रसिद्ध था। स्कन्दपुराणान्तर्गत त्रिनेत्रेश्वर महात्मामें उनकी वर्णना पाई जाती है। चीनपरिव्राजकोत्त पानन्दपुरकी पूर्व मूर्तियोंका आस्थान तथा वहाँके प्राणुमङ्गल भोमार्जुन और कृष्ण आदिके समयका इतिहास पढ़नेसे मालूम होता है, कि हरिवंशोत्त शौराष्ट्रान्तर्गत हयंश्वरका बसाया हुआ आनर्त्तपुर ही परवर्तिकाकालमें पानन्द-पुर वा 'देवपंचाल' नामसे मगहर हुआ है।

यहाँ एक अत्यन्त सुन्दर मन्दिर है जिसे सब कोई पनहनवाद्वागाज मिदराज जयसिंहसे निर्मित बतलाते हैं। इसके अलावा वहाँके अन्यान्य मन्दिरोंमें नाग-देवताओंकी मूर्ति प्रतिष्ठित थी। इन उपविभागमें वासुकि आदि महानागोंकी पूजा प्रचलित है।

पानन्दपुरमें ३ कोस पूर्व धोकलवा नगरकी बगलमें धुमन पर्वत और नगर अवस्थित है। इस पर्वत पर पश्चि

(1) Cunningham's Arch. Report, Vol. I p. 264.





कोशिंग करतें हैं। इस विवादको जे कर दोनों सम्प्रदायके मध्य मकर विवाद हुआ करता है। कई बार देखा गया है, कि इस प्रकार लड़ते भगदूते वे अदालत तक भी पहुँच गये हैं और आखिरकी विश्वनाथजीकी ही जीत हुई है।

पंचालरगण किस प्रकार वाममार्गियोंके समर्थ्यो हुए, इसके उत्तरमें वे कहते हैं कि चेरराज परिमलके समयमें वेदव्यास नामक कोई ब्राह्मण राजदरबारमें आये और राजपरिवारके पवित्र व्रतकर्मोंके करानेके लिये राजसे प्रार्थना की। इस पर राजाने जवाब दिया कि 'पंचालरगण ( विश्व-ब्राह्मण ) इस विषयमें विरोध कायें टहलें, इस कारण आपकी प्रार्थना मैं स्वीकार नहीं कर सकता।' राजाको मृत्युके बाद उक्त व्यास पुनः दरबारमें पहुँचे। राजपुत्रने भी पूर्व-मा उत्तर दिया। इसके बाद व्यासने राजाके एक टुमरे लड़केके पास जा कर पूर्वतन राजा और पंचालरोंके सम्बन्धमें अनेक तरहकी झूठो बातोंसे उनका कान भर दिया। इस प्रकार राजपुत्रके मनको अपनी ओर खींच कर वेद-व्यासने पुनः उक्त पद पर वरण करनेके लिये भी उनसे स्वीकारता लेला। कुछ दिन बाद जब राज-पुत्र सिंहासन पर बैठे, तब अपनी पूर्व प्रतिज्ञाके पालनमें विरोध यज्ञवान हुए। किन्तु वे पंचालरोंको इस अधिकारसे श्रुत न कर सके। दोनोंके बीच सुलह कराना तथा क्रियाकलापादिको बाँट देना ही उनका उद्देश्य था। पंचालरगण इस प्रस्ताव पर मन्तव्य न हुए। इस पर राजाने उन्हें निकाल भगाया। पाँके राज्य भरमें भाग भयान्ति फैल गई। प्रजाने जब देखा कि पंचालरको धर्मकार्य करनेका पूरा अधिकार नहीं दिया गया, तब उन्होंने खेतों-बारी मज्र हँडो दी। इस प्रकार चारों ओर हलचल मच गई। व्यासको मन्त्रार्थसे राजाने जनसाधारणमें यह घोषणा कर दी, कि जो राजपक्षका पक्षस्वयं करेगा वे दलियाचारी और जो पंचालरोंका पक्षस्वयं करेगा, वे वामाचारी समझे जायेंगे।

पंचालरोंके प्रति इस प्रकार अपमानसूचक बातें सुन कर निकटवर्ती राजाोंने उनका बदरह पक्ष धारण किया। उन्होंने कश्मिरकी ओर अपना ही कर

राज्याय पर अधिकार कर लिया। व्यास भी उद्यम समय कागोधासकी भाग गये। पूर्वोक्त उपाख्यान ही दलियाचारी और वाममार्गोंकी उत्पत्तिका एकमात्र कारण है।

पञ्चालि ( सं० स्तो० ) पाटवालि देखो।

पञ्चालिक ( सं० स्तो० ) ग्राम्य पंचायत। नेपालकी प्राचीन शिलालिपिमें इस पञ्चालिकका उल्लेख है।

पञ्चालिका ( सं० स्तो० ) पंचाय प्रपञ्चाय चलति भन्तु पुत्रुत् तत टाप्, स्वायं कन कापि भत इत्वं च। वस्वादि-कृत पुत्तनी, पुतनो, गुडिया।

पञ्चानो ( सं० स्तो० ) पंचान गौरादित्वात् डीप्, १ वस्वादि-कृत पुत्तनिका, पुतनो, गुडिया। २ गौतमिषिप, एक प्रकारका गौत। ३ पांचालो, श्रेपदो। ४ गरि-युङ्गला, चौमरको विमात।

पञ्चानेश्वर—नूनाके चन्तर्गत एक प्राचीन शिवमन्दिर। अभी यह उद्भूत मन्दिर भगवास्वामिं पड़ा है।

पञ्चावट ( सं० स्तो० ) पंच विस्तृतमुरःस्थलवावटति वेष्टते आ-वट-वच्। १ ल-स्कट, वासकका यज्ञापवोत-विशिष, यह जनेऊ जो लड़कोंको किमी त्थीहार पर मालाकी तरह पहनाया जाता है। पंचानां वटानां स्माहारः, निपातनात् माधुः। २ पंचवटी।

पञ्चावर्त्त ( सं० स्तो० ) पंच भागीमें विभक्त यज्ञोय चरु आच्य-प्रभृति।

पञ्चावर्त्तान् ( सं० स्तो० ) पंचवा आवर्त्तं खण्डनम-स्वत्र। पंचधा खण्डित चरु प्रभृति।

पञ्चावर्त्तेयि ( सं० त्रि० ) पंचवर्त्तं यज्ञसम्बन्धोय।

पञ्चावयव ( सं० पु० ) पंच प्रतिष्ठादयोऽवयवः यस्य। प्रतिष्ठा, हेतु, उदाहरण, उपनय और निगममात्मक पंचयवपञ्चक न्यायशास्त्र। न्यायके यहाँ पांच पंचयव हैं।

पञ्चावस्य ( सं० पु० ) पंचसु भूतेषु स्वकारणेषु पंचवस्या यस्य। गव, प्रेतदेह। देहावसान होने पर पंचभूत अपने अपने कारणमें लौन हो जाता है।

पञ्चाविक ( सं० पु० ) भेङ्गोका दश, दूव, चा, मृत और मल यही पांच द्रव्य।

पञ्चावो ( सं० स्तो० ) पंच अवयवः पश्चात्प्रायककान्ता वयोऽस्याः डीप्, साहे वयादयपरिमित ह्यसङ्गत



ब्रह्माण्डका प्राप्ति तत्त्व माना है। इस ज्योतिषाचार्य  
मायाबोधरूप आदि तत्त्वमें क्रमगः शब्दतन्मात्ररूप  
अपञ्चोक्तत आकाश उत्पन्न होता है। इस आकाशमें  
स्यगीतक वायु, वायुमें रूपान्तरक तेज, तेजमें रसात्मक  
जल और जलमें गन्धगुणात्मक पृथ्वी उत्पन्न होती है।  
इस अपञ्चोक्तत पञ्चभूतमें दशापकसूत्र उत्पन्न होता है  
जो निम्नदेह नाममें अर्थात् त है। यह निम्नदेह सर्व-  
प्राणात्मक है और इसीको परमात्मको सूत्र देह कहते  
हैं। यह अपञ्चोक्तत पञ्चभूतभूत पञ्चोक्तत हो कर जगत्  
उत्पादन करता है। इस पञ्चोक्तत भूतपञ्चकका काय  
विराटदेह है, वहो प मीश्वर को स्थूलदेह कहनातो है।  
इस पञ्चोक्तत पञ्चभूतस्थित प्रत्येकके स्वस्वंग द्वारा ओष  
और त्वगादि पञ्चज्ञानेन्द्रियको उत्पत्ति होती है। फिर  
इन ज्ञानेन्द्रियमें प्रत्येकका स्वस्वंग मिल कर एक  
अन्तःकरण होता है। पञ्चोक्तत पञ्चभूतमें प्रत्येकके  
रजो-पशुमें वाक्, पाणि, पाद, वायु और उपस्थ नामक  
पञ्चकर्मेन्द्रियोंको उत्पत्ति होती है। इनमें प्रत्येकका  
रजो-पशु मिल कर पाण, अपान, समान, उदान और  
व्यान यह पञ्च वायु उत्पन्न होता है। इस प्रकार  
पञ्चोक्तत पञ्चभूतमें हो सभी उत्पन्न हुए हैं।

( देवीमा० ७।३२ अ० )

श्रुतिमें ब्रिहत्संहरणका विषय लिखा है। ब्रिहत्-  
करणमें पञ्चोक्ततका उपनयन होता है। सुरेश्वरा-  
चार्य पञ्चोक्तत वात्तिकमें इनका विषय बढ़ा चढ़ा  
कर लिखा है।

पञ्चोक्तत ( स० त्रि० ) जिनका पञ्चोक्तत हुआ हो।

पञ्चोक्तत ( स० पु० ) पञ्चभिरभिः निर्हतः। पञ्चभ-  
साध्य श्रीमतेः।

“रात्रौ निशायाः पञ्चमीयेन च।” ( भाष्यस्वरूप )

पञ्चदेह ( स० त्रि० ) पञ्च देहाख्यो देवता गस्य। इन्द्रादि  
पञ्चदेवताके उद्देश्यमें देय हविः प्रभृति।

पञ्चेन्द्रिय ( स० स्त्री० ) पञ्चानां ज्ञानेन्द्रियाणां समा-  
हारः। ओष, त्वक्, नेत्र, रसना और घ्राण ये पांच  
ज्ञानेन्द्रिय। इनके भिन्ना पांच कर्मेन्द्रिय हैं, यथा—  
वाक्, पाणि, वायु, पाद और उपस्थ। इन्द्रिय ग्यारह हैं,  
पांच ज्ञानेन्द्रिय, पांच कर्मेन्द्रिय और एक मन।

पञ्चैव ( स० पु० ) पञ्च इवपी यस्य। कामदेव जिनके  
पांच इव या शर हैं।

पञ्चोपविष ( स० स्त्री० ) पञ्चमस्यकं उपविषम्। उपविष-  
पञ्चक, पांच प्रकारके उपविष। मनमा, चर्ष, करवो,  
पिपनाङ्गुली और विषमुष्टि ये पांच द्रव्य पञ्चोपविष कह-  
लाते हैं।

पञ्चोपय ( स० स्त्री० ) चित्रक, मिचं, पिप्लो, पिप्लो-  
मूल और चण्ड नामक पांच औषधियां। ( शब्द० )  
वैद्यनिघण्टुके मतसे पञ्चकोन, पिप्लो, पिप्लोमूल,  
चण्ड, चित्रक और शुण्ठी नामक पञ्चविध द्रव्य।

पञ्चोमन् ( स० पु० ) पञ्च उमानः, संज्ञात्वात् कर्म-  
धारयः। आहारपाचक शरीरस्थित पञ्चान्नि शरीरके  
भोतर भोजन पचानेवालो पांच प्रकारकी अग्नि।

पञ्चोदन ( स० पु० ) पञ्चधा विभक्तः शोदनः। १ पञ्चा-  
ङ्गुलि हाग पांच भागमें विभक्त शोदन, पांच उंगलियोंके  
पांच भागोंमें बाटा हुआ चावल। २ एक यज्ञका  
नाम।

पञ्चनगर—रव्येर्द प्रदेशकी शोलापुरवामी एक जाति।  
ये लोग काले, मजबूत और डोलडोलमें चलने लम्बे  
नर्त होते। पुरुष दाढ़ी रखते और सुनसमानके  
जोसा बापड़ा पहनते हैं। स्त्रियां अपेक्षाकृत सुन्दरी  
और सुथो होती हैं। इनका प्रभूपण मराठोंकी तरफ-  
का है। यहाँ पुरुष दोनों ही कटसहित होते हैं।  
इन लोगोंमें एक सरदार होता है। ये लोग आपसमें  
ही विवाह-गादो करते हैं। ये सब इनको अथोके सुबो-  
सम्प्रदायभुक्त हैं, किन्तु कभी कलमा नहीं पढ़ते।

पञ्जर ( स० स्त्री० ) पञ्जरति कथ्यते उदरयस्यमनेन, पञ्जि-  
रोधि-परन्। १ कायास्थिरद्व, देहको अस्थिसमूह,  
शरीरका अस्थिपञ्जर। २ शरीरका वह कड़ा भाग जो  
पशुजोवों तथा बिना रोढ़के और लुद्र जोवोंमें क्रोध  
या आशय प्रादिके रूपमें ऊपर और रोढ़वाले जोवमें  
कड़ो इडियोंके टाँचके रूपमें भोतर होता है। इडियों-  
का उठर या टाँचा जो शरीरके कोमल भागोंकी पचने  
ऊपर उठराये रहता है पचवा बन्द या रचित रहता है,  
ठटरी, कढ़ान। पञ्जरी कथ्यते पल्यादिरत्न। ३ पञ्ची  
पादिका मन्थनद्व, पिंजड़ा। ४ देह, शरीर। आका-



मालूम पड़ता है। यह जनसिक्त मट्टो ज़मीनको नरम बना देनेके और यह इतनी उपजाऊ होती है, कि कृषकोंको इस खेतमें सार देनेकी जरूरत नहीं रहती।

पञ्जाबके चांगी और पर्वताकीर्ण होने पर भी पूर्व-मैथुना नदी और पश्चिममें सुनेमान पहाड़का मध्य-पर्वती स्थान समतल है और जनसिद्धनके निचे इसके बीच ही कर नदी बह गई है। भरवली पर्वतकी ऊँची शिखर और भङ्ग राज्यके अन्तर्गत चीनोपट और कराना पर्वतमालाने पञ्जाबके दक्षिणांगको उबल कर रखा है। टिमोके उत्तर पश्चिममें, रोहतक और हिमान्यके दक्षिणमें, हिमार और शीर्षके मध्य भागमें हिमान्यके डालू प्रदेशमें ले कर लाहौरके दक्षिण तक विस्तृत भूभाग तथा दक्षिण पश्चिममें भरवली पर्वतके तटदेशमें ले कर चोकानेर राज्यके पश्चिम तक विस्तृत भूखण्ड प्रायः समतल है। हिमान्य और भरवलीवा दानू देव ऐसा समतल है, कि प्रत्येक मोलमें बहूत सुदृक्लमें दो श्रवण तोन फुटमें अधिक ऊँचा स्थान देख पड़ता है।

प्रायः सभी समतल ज़ेवों पर पड़ जम जाननेसे फसल अच्छी लगती है। पहाड़का किनारा छोड़ कर कहीं भी बड़ा पत्थर नजर नहीं आता। अवरकको तृच चिकने धान को कण नमाम पाये जाते हैं। यहाँ कहीं भी प्रजात मट्टो नहीं पाई जाती, नमाम बलुका-मय पड़में ज़मीन आच्छादिन मालूम पड़ती है। बालूके तारतस्थानुवार उष्ण पड़का गुणागुण निटिट हुषा करता है। वितस्ता, उन्दाभागा और मित्यु नदीके मध्याभागमें जो सुदृहत् 'धल' भूमि नजर आती है, वह दक्षिणमें राजपूतानेकी मड़भूमि तक विस्तृत है। जहाँ कृषिम उपायसे नदी घाटिका जल बांध कर रखा जाता है, वहाँको ज़मीनके ऊपर नमक पड़ जाता है। ऐसी ज़मीनको 'रे' कहते हैं। रेके सठनेसे ज़मीनको साग-फसो नष्ट हो जाती है। जिस ज़मीनमें रे नहीं निकलता अर्थात् जो स्थान बालुकावत नहीं है, वह स्थान हमेशा उर्वरा रहता है। किन्तु खेतोंके घाट जलमि घनको जरूरत पड़ती है। पञ्जाबके पश्चिम सोमावर्ती स्थान यद्यपि उर्वरा नहीं है, तो भी वहाँ

तम्यो लम्बी घास उगनेके कारण ज़मीन पीछे कुछ उर्वरा हो जाती है। यह स्थान 'वाड़' नामसे प्रसिद्ध है। यहाँ चककर मरेली घाटि चरा करते हैं। इस स्थानमें ज़मीनके नीचे कहीं तो कम गहराईमें और कहीं अधिक गहराईमें जल मिलता है। नदी वा पर्व-तादिके निकट चककर १०से ३० फुट नीचे और सदूर-वर्ती स्थानमें प्रायः १५०से २०० फुट नीचेमें जल पाया जाता है। यह जल प्रायः लक्षणाक होता है, हमेशे जन्तु और शोड्डिजादिके निचे विगेष उपकारो नहीं है।

पूर्वजि विभागानुसार देखा जाता है, कि हिमान्य पर्वतके उपरिवा मामन्तराज्यादि, शिवालिक पर्वत-श्रेणी और पूर्व पश्चिमदिक्क्य समतल भूमि पर ठाकुर, राठो और रावल घाटि प्रायः तीस राजपूत, शिराठ, ब्राह्मण, कुनेत, दामि, गुजर, पठान, सेतुचो घाटि पहाड़ी जातियोंका वास देखा जाता है। पर्वतवर्ती जातियोंमेंसे कुछ अल्पकी सुमनमान और कुछ हिन्दू बतलाते हैं।

पश्चिमदिक्क्य सुहमादिपरिहत 'वाड़' नामक स्थानमें भ्रमणगोल एक जाति रहती है। ये लोग वहाँ श्यामलनेत्रके ऊपर अपने धवने ऊँट, गाय, बैल, गीड़, चकरे आदिको चराया करते हैं। इस स्थानके छप्पादि शेष हो जाने पर वे श्वान्य छप्पाच्छादिन सेवमें जाते हैं। जैसे ऊँट नई नई ऋतुधर्ममें नये नये सुहमादि खाना पसन्द करते हैं, वैसे ही प्रत्येक ऋतुमें स्वभावतः ही उनके उपयोगी नये नये उडिज्जादि उत्पन्न हुषा करते हैं। पश्चिमांशवर्ती इस भूमि पर एकमात्र मृसतान नगर प्रतिष्ठित है।

पञ्जाबका पश्चिमांग मित्यु, गतदू, घाटि नदियाँसे विच्छिन्न हो कर छः दीपावर्तोंमें परिणत हो गया है। इस राज्यका पूर्वांग नदी द्वारा और पश्चिमांग पर्वत द्वारा विभक्त है। इसमें मध्य विभिन्न जातिकी लोगोंका वास है। उत्तर-पश्चिम सोमान्तप्रदेश जो लयणपर्वतवेदित है, वहाँ पिंगावर, रावल पण्डो, भनम, कोहाट और वधू घाटि कई एक ज़िमें हैं। रावलपिण्डो ज़िलेके पश्चिममें हजार, सूरी और शहटा ज़मीन ही प्रधान है। इस पर्वतवर्ती क्षेत्रमें पिंगावर और रावलपिण्डोके मिला



श्री इनके मध्य प्रयुक्तता मंचटित हुई है, मो नहीं :  
 पञ्चायके पूर्वाञ्चलमें सुप्रभमानोंने इस्लाम-धर्मका  
 प्रचार काके साम्राज्यिकताकी जड़ यद्यपि मन्वृत भी  
 कर दी, तो भी इस्लामधर्ममें दोषितन पूर्वतन हिन्दुधर्म-  
 ने अपने नाम, मर्यादा, जाति और धर्ममें पक्षपातिका  
 अनुष्णभावमें रक्षा की है। ममस्त पञ्चाय प्रदेशमें जा त-  
 गत, मन्वदायगत और अणोगत पञ्चिते अनु-वार तथा  
 पूर्वकृत आचार-व्यवहारके वगवर्ती हो कर वे धर्म-  
 जोवनका पालन करते आ रहे हैं। इनका कारण यह  
 है कि पूर्वाञ्चलकी व्यक्तिगण मर्यादा जिन प्रकार उत्तर-  
 पश्चिमाञ्चलवासो भरतीय हिन्दुगणाला और आचार-  
 व्यवहारका अनुकरण करते हैं, ठीक उसी प्रकार बहुत  
 पहलमें ही पश्चिमोञ्चलकी पञ्जाबी जाग सुप्रभमानोंके  
 साथ वास कर उनको प्रथम अनुसार ममा विषयोंकी  
 नकल करने लग गये हैं। सुप्रभमान-अनुकारो व्यक्ति-  
 गण मंजमें ही सुप्रभमान धर्ममें आ फंसे हैं।

पञ्जाबमें १५० नगर और ४३६९० ग्राम लगते हैं।  
 जनसंख्या टाँरे करोड़में ऊपर है। इसके अलावा  
 १ दिल्ली, २ अमृतसर, ३ लाहौर, ५ मूलतान, ६  
 पन्थाना, ७ रावलपिण्ड, ८ जलंधर, ९ मियानकोट,  
 १० लुधियाना, ११ फिरोजपुर, १२ भिवनो, १३ पाता-  
 पत, १४ वाटला, १५ रिवावा, १६ कर्णाल, १७ गुज-  
 रानवाला, १८ डेरागाजी खान, १९ डेरा इस्माइल खान,  
 २० होशियारपुर २१ भोलम आदि स्थान राजधानीमें  
 गिने जाते हैं। इमालय पर्वतके ऊपर शिमला  
 (गवर्नर जनरलका गैरवावास), सूरौ (रावलपिण्डो  
 जिल्लेमें), धर्मशाला (काँगड़ा पर्वत पर) और उल-  
 होमा (गुरुदानपुरमें) आदि स्थान श्रेष्ठकालमें रहने-  
 के लिये विविध हितकारो और मनोरम हैं।

अधिकांशमेंसे अधिकांश खेतो बारी करके अपनी  
 जीविका निर्वाह करते हैं। पति प्राचीनकालमें अर्थात्  
 दो तीन हजार वर्ष पहले जिस प्रकार मरलभावमें खेता  
 चलते थे, आज भी उसी प्रकार चल रही है। यहाँ  
 माधारणतः दो प्रकारको खेतो होती है, वसन्तमें रब्बी  
 और शरत्कालमें खरोफ धान। धान, ईख, रुई, मकई,  
 ज्वार, जौरा आदिको खेतो खरीरके अन्तर्गत है;

तमाकू, सरद और माग-रब्बी रब्बी शस्यमें गिनी जाती  
 है। उत्तर-पश्चिम भारतमें जिन सब अनाजोंको खेती  
 होती है, यहाँ भी वही सब अनाज उपजाये जाते हैं।  
 खेतो छोड़ कर दासहत्ति, वाणिज्य, मनीजोवि, व्यव-  
 हारजोवि प्रकृतिके कार्य भी जनसाधारणमें देखे जाते  
 हैं। अंगरेज गवर्मेण्ट और माधारण मनुष्य अर्थ-  
 गशादिका पालन करते हैं। जब वे बच्चे जनते हैं, तब  
 उन्हें बड़े होने पर वे बानारमें बेच डालते हैं। गव-  
 र्मेण्टके अधिकृत वन्यप्रदेशमें तरह तरहके पेड़ हैं;  
 इनका अधिकारी सामन्तराजाधिका अधीन है। किन्तु  
 गवर्मेण्ट सख्तभोगो है और डिप्टी कमिश्नर उसके रक्षा-  
 कर्ता हैं।

वाणिज्यादिको सुविधाके लिये यहाँ पनेक नहर  
 काटो गई हैं। बहा दोबाव, पश्चिम यमुना, सरहिन्द  
 और खान नदोको खाईमें सब समय जल रहता है।  
 उत्तर शतद्र, दक्षिण शतद्र, चन्द्रभागाको नहर,  
 बाहपुर जिल्लेको तीन नहर, सिन्धुनदोको नहर और  
 सुजयरगढ़को नहर वे सब नहरें खेतादिमें जलसिञ्चन-  
 के लिये काटी गई थीं। इसके अलावा पन्थाना,  
 लुधियाना, जलंधर, अमृतसर, लाहौर, मूलतान, सकर,  
 पेगावर आदि प्रधान प्रधान स्थानोंमें रैनपथ ही जानेसे  
 वाणिज्यकी विप्रेय सुविधा ही गई है। ये सब रैनपथ  
 दिसे ही कर उत्तरपश्चिम प्रदेश, कलकत्ता और राज-  
 पूताना होते हुए कराचो तथा बम्बई शहरके साथ  
 मिल गये हैं। आज भी यहाँ नाव द्वारा वाणिज्यद्रवा  
 समुद्रके किनारे लाये जाते हैं।

पञ्जाब प्रदेशके कृषिजात द्रव्योंमें विभिन्न शमगादि,  
 रुई, मौन्ववनमक और तहेशोत्पन्न अन्धान्य फलमुलादि-  
 को नामा स्थानोंमें रफ्तनो तथा कपासके कपड़े, कोट्टे,  
 लकड़ो और घरपार व्यवहार्य द्रव्योंकी भिन्न भिन्न  
 दिमेंसे यहाँ पामदनां होती है। एतद्दिन यहाँ मीने  
 वा चाँदोको जड़ो, गाज, उत्तम कारुकार्ययुक्त काष्ठ-  
 निर्मित द्रव्यादि, लोहपावादि तथा चमड़ेका काम  
 होता है। खनिज पदार्थोंमें एकमात्र सैन्धवलवण  
 ही प्रधान है। मियखनो, काँसाबाग, लखणपत,  
 भोलम, गाहपुर और कोडाङ





बहवन्पुर, मानकोटला, पतीदो, लोहार और दुजाना घाटि स्थानोंके सामन्तराजगण मुगलमान वंशोय हैं। पटियाला, भिन्द, नाभा, अकूरधला, फरीदकोट और कनकियाके राजगण मिश्रवंशमशूत तथा घवगिष्ट सभी राजगण हिन्दू हैं। बहवन्के गवाघ दाउदपुरव'गोय सुंनतमानोंमें अष्ट तथा बन्धन खीं वंशधर हैं। मानकोटलाके नवाबगण अफगान जातिके हैं। भारत-वर्षमें इनका शुभागमन मुगलोंके अभ्युदयमें हुआ था और मुगलवंशकी अवनतिमें घाट फी इन्होंने अपनी स्वाधोन्मत्ता हासिल की थी। पतीदो और दुजानाके सरदार-गण अफगानजातिसमूह और लोहारके नवान मुगल-वंशोय हैं। एक समय इन्होंने लार्ड लैरुको अच्छी सहायता प्रद्व'चाई थी। इसी अन्तर्जरार्जन प्रसन्न हो इन्होंने और भी कुछ सम्पत्ति दो दी।

यहाँके सिद्ध-सरदारगण प्रधानतः जाटवंशोय हैं। पटियाला घाटि फुलकिया राजाओंके पूर्वपुरुष चौधरो फुल १६५२ ई०में परलोकोके मिधारे। १८वीं शताब्दी में मुगलसाम्राज्य विलुप्त होनेके समय तथा पारस्य, अफगान और महाराष्ट्रोगवाघके उपर्युपरि आक्रमणमें भारतवर्षमें विविध अगान्ति फैल गई। ठोक उमो समय चौधरीफुलके वंशधरोंने दस्युहस्तिकी इच्छामें सिद्ध-सम्प्रदायका निवृत्त रहण किया। कपूर्धलाके राजा कलान जातिमुगल हैं और यशसिंहके वंशधर होने पर भी विगत शताब्दीके मध्यभागमें मिव-सरदार हुए थे। फरीदकोटके राजा बुराड जाटवंशीय हैं। मन्वाट, वाधर-को सहायता करनेके कारण वे विविध माननीय हो गये और अन्न मर्यादाको प्राप्त हुए। योधमिंहने खानसा राज्य बनाया। वर्षतधामो अत्यान्त सरदारगण अपनेकी राजपूत तथा अति प्राचीन सम्भ्रान्त राजपूतको सन्तान बतला कर अपनी वंशपरिचय देते हैं।

पंजाब इतिहास ।

पञ्जाब वा पञ्चनद प्रदेश वैदिक आर्योंका खोला-घेव है। ऋक्संहितामें जो सप्त सिन्धुका उल्लेख है वदुतीका विश्राम है, कि वङ्ग इसी पञ्चनद प्रदेशमें प्रवा-दित है। उल्लेख आदि ग्रन्थोंमें चंशुमतो, अञ्जसो, अनितभा, अश्वत्थतो, अक्षिकी (Akesines), बापया, पार्श्विकिया,

कुभा (Koplen वा काबुल नदी), कुन्डिगो, क्रमु, गङ्गा, गोमती, गौरी, जाह्वी, बटामा, दण्डती, परण्णो, मरुतृथा, सिद्ध, विपाट, (विपाशा), यमुना, रसा, विनभता, धौरपलो, शिफा, शतुद्रो, शर्यणवती, वनेतयाचरी, श्रुती, मरु, मरखती, मिन्धु (Indus), सुधानु, सुमीमा, सुमखा, मौता, हरीयू-पोया वा यथ्यावती इन सब नदियोंका जो उल्लेख है वे सभी वर्तमान पञ्जाब प्रदेशके अन्तर्गत हैं। आर्यवंशमें विरह्यत विवरण देकी। मनुसंहितावर्गित ब्रह्मविदेय एक समय इसी पञ्जाब प्रदेशके अन्तर्गत था। जिस कुक्षेत्रके सदासमर ले कर महाभारतको उत्पत्ति है वह कुक्षेत्र इसी प्रदेशके अन्तर्गत है।

महाभारतमें जो मद्र, वाञ्छिक, चारट और सैन्धव-राजका उल्लेख है वे सब राजा इसी पञ्चनद प्रदेशके अन्तर्गत स्थानविशेषमें राज्य करते थे। यमो जैसे पञ्जाब प्रदेशके मध्य पटियाला, भिन्द, नाभा घाटि देशोय सामन्तराज्योंके अधो विभिन्न जनपद देखे जाते हैं, महाभारतके समयमें भी इन पञ्जाब प्रदेशमें मद्र, चारट, वसती घाटि वेसे ही विभिन्न जनपद थे।

पञ्चनदके लोकोकी रोति गतिके सम्बन्धमें महा-भारतके वनपर्वमें इस प्रकार है—“मद्रदेशमें पिता, पुत्र, माता, श्वयू, श्वशुर, मातुल, जामाता, दुहिता, भ्राता, नता, बन्धुवान्धव, दासदासी सभी मिला कर मयापान करते थे। स्त्रियां इच्छानुसार परपुरुषके साथ सहवास करती थीं। सत्, मञ्जली, गोमांस आदि उनका खाद्य पदार्थ था। नशमें चूर हो कर वे कभी रोते, कभी हंसते और असम्बन्ध प्रलाप करते थे। गान्धारोंके शीघ्र और मद्रकोंकी सङ्घति नहीं थी। मद्रदेशो कामनिर्या-नित ज्ञ. कव्यलाहत, उदरपरायण और पशुचि होती थीं। काञ्चिक उनका अत्यन्त प्रिय था। उनका कहना था, कि वे पति वा पुत्रको छोड़ भी सकती, पर काञ्चिक-को कभी नहीं छोड़ सकती हैं।”

महाभारतमें मद्रदेशका जो परिचय है आज भी पञ्जाबके पश्चिम पार्श्वप्रदेशमें वैया हो व्यवहार देखा जाता है। महाभारतमें जयद्रथके पुत्रका नाम पञ्च पाया जाता है। उसके बादसे लेकर युद्धके



१५२४ ई०में लाहौरराज दीपायल की ओरके धाम-  
 न्धन करने पर सुगलसन्नाय, दावर भारतमें प्राये और  
 लहोरे नारे पञ्जाबमें ले कर मरिचिन्द तक्षणा स्थान  
 अपने अधिकारमें कर लिया। इनके दो वर्ष बाद फिर  
 लहोरे नारे मरिचिन्द नारे प्रा कर पानोपतने मरिचिन्द  
 अधिकारी मैनाकी परास्त कर दिवस के सिंहासन पर  
 सुगल-साम्राज्य स्थापन किया। इनके समयमें लाहौर,  
 दिल्ली और आगरा ये तीनों नगर राजधानीके रूपमें  
 गिने जाते थे। शेरशाहकी मरणात्के समय पञ्जा-  
 बतकने दुर्ग रूपमें सुगलो की रक्षा की थी। जिम समय  
 सुगलराज उत्तरीकी चोटी पर थे, उन्ने समय सिव-  
 नातिकी पञ्चनद-राज्यमें लूती बोल रही थी। घोर घोर  
 लहोरे नारे सुगलराजकी अधोनताकी उपेक्षा कर पञ्जाब-  
 प्रदेशमें स्वाधोनराज्य विस्तार किया।

१५वीं शताब्दीके अन्तमें लाहौरमें दावा नामकने  
 जहा ग्रहण किया। लहोरेके सिन "मिख" नामके प्रभु  
 हैं। यह मिखजाति इतने प्रबल हो उठे थे कि  
 पञ्जाबकेलमें उस समय इनका सामना करनेवाला कोई  
 न था। मिखोंके धर्म गुरु रामदासने सन्नाय, अकबरके  
 सिखधर्मके प्रचारके लिये प्रस्तुतपर नामक स्थान पाया  
 था। यहाँ लहोरेने पुष्करिणी खुदवा कर एक मन्दिर  
 बनवाना शुरू किया, किन्तु काम पूरा होने भो न पाया  
 था कि इनकी मृत्यु हो गई। बाद इनके लड़के तथा  
 सिख-गुरु पञ्चनदने इन मन्दिरका गठनकाय सम्पन्न  
 किया। मिखोंके इन ऐश्वर्यकी देख कर सुगलराजमग  
 बल तरे और पोछे इनके विरोधो हो गये। लाहौरके  
 सुगलराजमरुताने मिखजातिके साथ लड़ाई ठान दी  
 और पञ्चनमसली दन्दी तथा आराहद किया।

अमृतपर देखो।

इन आचार्य पर सिखगण बड़े ही उन्ने जित हो उठे  
 वे निरोध और प्रजादुपमें रह न सके, राजाकी आशादो  
 उत्तम कर देग भरमें उत्पात मचाने लगे। पञ्चनमसके  
 पुत्र हरगोविन्दकी घपना मैना बना कर वे गुरु-दत्त्या  
 परिशोध लेनेके लिए अगसर हुए। सुगलराजमरुताने  
 सिखोंकी ऐसी अयस्थासे देख लाहौरके निकाल भगाया।  
 पापत्वप्रदेशमें जा कर भी सिखोंने अपने बुद्धिप्रा

न छोड़े घोर न वे पूर्वकृत अत्याचारकी कथा विस्मृत  
 हो कर सुनलमानोंमें शत्रुता करनेकी सो भूले। अन्तमें  
 १६७५ ई०में हरगोविन्दके पौत्र गुरुगोविन्द (ये नामक-  
 ने दगम से) ने हो इनके धर्म और बुद्धिप्रापने जन-  
 मानारणमें प्रतिपत्ति काम की थी। पञ्ची मिखसैन्यकी  
 मरणा बधुत क्षम रहनेके कारण गुरुगोविन्द पराजित  
 हुए और लहोरेकी माता तथा पत्न्यायागण शत्रुसे सम्मूल  
 नष्ट को गईं। १७५६ ई०में गुरुगोविन्द जब उत्तरी-  
 प्रदेशके नन्दौर ग्राममें गुरुद्वारे मुमलमानों द्वारा मार  
 दिए गए, तब सिखममदाय और भी धिम हो उठे तथा  
 लहोरेके प्रतिदिमावे प्रज्वलित हो कर गोविन्दके शिष्य  
 लहोरेके अधीन पञ्जाबके पूर्वाग्रवर्त्तों एगनों पर धावा  
 मोल दिया। उन्मत्त मिखोंके एने लोधाननमें पड़ कर  
 कितने मुन्ना अपने दुर्गम जीवनकी खो बैठे थे, उसकी  
 शकार नहीं। कितने मसजिदों नोड़ फोड़ कर भूमि-  
 साग कर दो गईं यों और वातक-वातिका स्त्री-पुरुष  
 आदि हजारों मुमलमान इन लोधाननमें पड़ कर मर-  
 भूत हो गये थे। कत्रके मध्य जो मर मृत-देह गाड़ो  
 गईं यों लहोरे निकाल कर गौदड़, कुत्तों, गोध आदिकी  
 खिना दिए गये। सरहिन्दमें सुगलराजमरुताने परा-  
 जित करके भी वीभस प्रत्याचार चल रहा था उसकी  
 शेष भीमा महरानपुर तक पहुँच गई थी। पोछे लहोरेके  
 सुगलसेनाने जब उनका सामना किया, तब मिख-  
 जातिने पुथिथाना और पापत्व प्रदेशमें प्राथय लिया।  
 दूसरे वारके आक्रमणमें सिख लोग इधर लाहौर और  
 उधर दिनी तकले स्थानोंमें झूट पाट तथा सुसलमान-  
 न्त्या करके भाग गये।

मिखोंके ऐसे आचरण पर क्रुद्ध हो कर सम्राट्  
 बहादुरशाह उनको दमन करनेके लिए दाघिपाल्यो  
 कोटे। किन्तु दाघर नामक दुर्गमें मिखोंके सुगलसैन्य  
 कर्त्तृक अयवृद्ध होने पर भी धन्दा पञ्चपरोकी सभ्य  
 ने पहाडकी नीर मग गये। बहादुरशाहकी मृत्युके  
 बाद मिखोंने पुनः मैना-मंघडा करके राज्याटिमें झूट  
 पाट मचाना आरम्भ कर दिया। १७१६ ई०में सम्राट्  
 फर्ग्युयारके आदेशसे काश्मीरके शासनकर्त्ता पददुल  
 दमज एगि कहे वार मिखों पर आक्रमण किया और



१५२४ ई०में लाहौरराज दोनन खों लोढेके द्वारा  
 न्नाय करने पर सुगनसन्नाट, बाबर भारतमें प्राये मार  
 ल्होने सारे पञ्जाबमें ले कर मरहिट्ठ तक्ष्मा गाम  
 अपने अधिकारमें कर लिया। इसके दो वर्ष बाद फिर  
 ल्होने अफगानिस्तानसे आ कर पानोपतही सट्टाईमें  
 अफगानी सेनाको परास्त कर दिमोके सिंहासन पर  
 सुगन-सन्नाटव्य स्थापन किया। इसके समयमें लाहौर,  
 दिल्ली और आगरा ये तीनों नगर राजधानीके रूपमें  
 गिने जाते थे। औरगाहकी लडाईके समय पञ्जा-  
 राज्यमें दुर्गरूपमें सुगलोकी रजा थी थी। जिस समय  
 सुगनराज अवतिकी चौटो पर थे, उसी समय सिव-  
 लातिकी पञ्चनद-राज्यमें तुली डोल गये थी। घोर घोर  
 ल्होने सुगनराजकी अधोनताकी उपेक्षा कर पञ्जाब-  
 प्रदेशमें स्वाधोनराज्य विस्तार किया।

१५वीं शताब्दीके अन्तमें लाहौरमें बाबा नानकने  
 जन्म ग्रहण किया। ल्होने शिष्य "सिख" नामसे प्रसिद्ध  
 हैं। यह सिखशास्त्रित इतनी प्रबल हो उठी थी कि  
 पञ्जाबक्षेत्रमें उस समय इनका नामना करनेवाला कोई  
 न था। सिखोंके ४वें गुरु रामदासने सन्नाट, अकबरसे  
 सिखधर्मके प्रचारके लिये अस्तपर नामक स्थान पाया  
 था। यहां ल्होने पुस्तकियां खुदश कर एक मन्दिर  
 बनवाना शुरू किया, किन्तु काम पूरा होने भो न पाया  
 था कि इनकी मृत्यु हो गई। बाद इनके लड़के तथा  
 सिख-गुरु प्रजु नमसनी हम मन्दिरका गठनकार्य सम्पन्न  
 किया। सिखोंके इस ऐमर्गकी देख कर सुगनराजमग  
 बल मरे और पोछे उनसे विरोधो हो गये। लाहौरके  
 सुगनराजमकर्तानि सिखजातिके साथ लडाई ठान दो  
 और प्रजु नमसनीको मर्दो तथा बाराकह किया।

अमृतसर देखो।

हम अत्याचार पर सिखगण बड़े ही उत्तेजित हो उठे  
 वे निरोह और प्रजादुपमें रह न सके, राजाकी आज्ञाको  
 अज्ञान कर देग भरमें अत्यात सचाने लगे। प्रजु नमसने  
 पुन हरमोविन्दकी सपना मैता बना कर वे गुरु-दत्ताया  
 परिशोध लेनेके लिए अगसर हुए। सुगनराजमकर्ताने  
 सिखोंकी ऐसी प्रवस्थामें देख लाहौरमें निकाल भवाया।  
 पारस्यप्रदेशमें जा कर भी सिखोंने अपने गुरु-शिष्या

न लोडो घोर न वे पूर्वोक्त अत्याचारकी कथा विस्मृत  
 हो कर सुनसमानोंमें शत्रुता करनीकी हो भूने। अन्तमें  
 १६०५ ई०में हरमोविन्दके पौत्र गुरुगोविन्द (ये नानक-  
 के दसम थे) ने हो-दत्तके धर्म और युद्ध-प्राप्तमें जन-  
 सन्धारणमें प्रतिप्रति लाभ की थी। पहले सिखसैन्यकी  
 मन्दा वस्तुता मर रहनेके कारण गुरुगोविन्द पराजित  
 हुए और लहरी माता तथा पुत्रकन्यागण शत्रुसे समुल  
 नष्ट की गईं। १६५८ ई०में गुरुगोविन्द जब दक्षिण-  
 प्रदेशमें नन्दौर चाममें सुमरूपसे सुनसमानों द्वारा मार  
 दिए गए तब सिखसमूहदाय और भी चिम हो उठे तथा  
 ल्होने प्रतिदिनमासे प्रज्वलित हो कर गोविन्दके शिष्य  
 बंटेने अधोन पञ्जाबके पूर्वोद्भवर्त्ती स्थानों पर धावा  
 मोग दिया। उम्मत सिखोंके ऐसे शोधाननमें पड़ कर  
 कितने मुन्ना अपने दुर्गम जीवनकी खो डेते थे, उसकी  
 गमार नहीं। कितने सम-जिष्टे तोड़ फोड़ कर भूमि-  
 सात कर दो गई थीं और वातक-वातिका स्तो-गुरुप  
 पादि हजारों सुनसमान हम शोधाननमें पड़ कर मर-  
 भूत हो गये थे। कश्तके मध्य जो सब मृत-देह गाड़ो  
 गई थीं ल्होने निकाल कर गोटड़, कुत्तों, गोध पादिकी  
 खिना दिए गये। मरहिट्ठमें सुगनराजमकर्ताने परा-  
 जित करके जो वीभक्त अत्याचार चल रहा था उसकी  
 शेष भीमा महरानपुर तक पधुच गई थी। पोछे वर्धा-  
 के सुगननेनाने जब उनका नामना किया, तब सिख-  
 जातिने गुधिशाना और पारस्य प्रदेशमें भाग्य लिया।  
 दूसरो वारके आक्रमणमें सिख लोग हर लाहौर और  
 उधर दिवो तकने स्थानोंमें कूट पाठ तथा सुनसमान-  
 हत्या करके भाग गये।

सिखोंके ऐसे आचरण पर क्रुद्ध हो कर सन्नाट,  
 दशादुरगाह उनकी दमन करनेके लिए दाघियाल्ये  
 लोटे। किन्तु दाघर नामक दुर्गमें सिखोंके सुगनसैन्य  
 कर्तृक प्रवृत्त होने पर भी बन्दा अमृचरोकी सहाय  
 ने पहाडकी नीर भग गये। दशादुरगाहकी मृत्युदि  
 नाद सिखोंने पुनः मेगा-संघर्ष करके राजादिमें कूट  
 पाठ सचाना आरम्भ कर दिया। १७१६ ई०में सन्नाट  
 ल्होशुभियरके प्रादेशके आगमोरे शासनकर्ता पददुल  
 समज एनि कई बार सिखों पर आक्रमण किया और

काण्डिण व'दाकी युद्धमें परास्त कर दिमी भेज दिया ।  
उसी पर यंदा और अत्यास मिश्रमरदारोंकी सयुद्ध हुई ।

१०३८ ई०में साठिरगाहन दमननके साथ पञ्जाप  
पर आक्रमण किया और कर्णान नगरके समीप मुगल  
सेनाको परास्त कर दिमीको राजधानी मूठो । इनके  
बाद मिश्रमर सुमदत्तशासन मे स्यस्य'यह कर मुगलसेना  
ये विरह दमनर हुए । इस बार भी वे मुगलों'से परा-  
जित और विदस्त हुए । किन्तु कई बार परास्त भीने पर  
मिदलग जर भी विजयित न हुए । १०६८ ई०की  
पानीपतके युद्धमें जब महाराष्ट्रीयगण परमदगाधमे  
परास्त हुए, तब मिश्रमर भी यमझीन ही पड़े । स्वदेश  
शोडमें समय परमदगाधने अमनमरकी तरह नष्ट कर  
गना । इतना ही नहीं, उन्हीने मन्दिर भी तोड़ फोड़  
डाला, पुष्परिषोकी भरया दिया और योही गो-हत्या कर-  
के उम पवित्र स्थानमें चारा और रक्त लगा दिया । अल्-  
मदगाधके लसे जनि पर मिश्रमर दम परयाचारका प्रति-  
शोध सिनेके निचे पुनः अमनर हुए । इस बारके युद्धमें  
मिग्लोंने अपनी खोई हुई स्वाधीनता पुनः प्राप्त की ।

उसी समय नागक प्रवर्तित शान्तिमय धर्मका बहुत  
वृक्ष परिवर्तन हुआ । धीरे धीरे मिश्रमर शान्तिमय  
योगनका विमर्जन कर एक एक थोड़-ठस वा 'मिश्रम'  
सर्वांगुलमें विभक्त हो पड़े । किन्तु यहाँकी पवित्र  
अस्तनर नगरमें था कर मिनना पढता था । मुगलराज  
पुरानीको पञ्जाप राज्य दे देने पर भी मिग्लोंने १०६३  
ई०मे पञ्जाबके पूर्वांगवर्ती स्थानों पर आधिपत्य फेला  
लिया गा । १०८८ ई०में अकालम राज्यमें विद्रव उद-  
पित होने पर भी मिश्र-मरदार रवनिर्वाहका अन्ध-  
दान हुआ । १०८८ ई०में काबुलके दुरामोव'गोय  
शासनकर्ता जमानशाहने रवनिर्वाहको साक्षरका नामग-  
भार चर्पण किया । धीरे धीरे अपने आक्षेपमे पञ्जाब-  
सेरानी इस प्रदेशमें अधिकार स्थानों पर अपना प्रभाव  
फेलाना चाहा । इसी उद्येयमे उन्हीने ११०८ ई०में  
गतदु'मदीके वामनननित अत्यास मिश्रमरदारोंके  
अधिकृत राज्यों पर आया कील दिया । यहाँके नामना  
राजाकीने अक्षर-पदिम प्रदेशमें अक्षरोंका राज्य  
अरप किया । इस समय रवनिर्वाह अक्षरोंके साथ

मिश्रमर कर भी और गतदु'म नामनननितों'अक्षरों' पर  
भी आक्रमण करना चाहा गा उने कुछ कालके अन्ति  
रीक दिया । उमो समय अक्षरोंकीने गतदु'म अक्षरनित  
स्थानों पर अपना अधिकार जमाया । ११२० ई०में  
रवनिर्वाहने सुलतान पर आक्रमण किया और हवे अपने  
दमनर कर लिया, योही मिश्रमर पर कर पेशावर,  
उरजाप और काँगौर जाता । इस प्रकार अक्षरों'यहाँ  
साम पञ्जापप्रदेश और काँगौरके अधिकारभुक्त मानना-  
राज्यों पर अपना पूरा अधिकार जमाया । रवनिर्वाहके  
कीती-जो मिश्रमर अक्षरोंकी परममोमा तक पहुँच  
गया गा । - ११३८ ई०में रवनिर्वाह मारने पर अक्षरों  
अक्षरों अक्षरों'साक्षरोंके मि'जानम पर गये । अक्षर  
दूरे ही यहाँ मिश्रमरमे उम ही सयुद्ध ही गई ।

रवनिर्वाह और अक्षरोंके देवें ।

अक्षरोंकी सयुद्ध बाद पञ्जापमें आक्रमणका  
सुववात हुआ । अक्षर मिश्रमर अक्षरोंको राज्य पर  
चढ़ाई करनका अयोग्य धरने लगे । तदनुसार अक्षरोंने  
१००० सैन्य और २५ कमान भी कर गतदु'म पर ही  
सुडको नगरमें ( ११४५ ई० १८ दिमबर ) अक्षरों  
पर आक्रमण कर ही दिया । इसके तीन दिन बाद  
क्रिजल गहरमें अक्षरोंके अक्षरों । अक्षर बाद मोझालम  
नगरके समीप मिश्र और अक्षरोंकी सेनामें अथो बार युद्ध  
हुवा । इसी युद्धमें मिश्रमर अक्षरों'तरह परास्त हो कर  
अन्धि करनीही बा-द हुए । अन्धि अथुमार अक्षरों  
नगर अक्षरोंकी'हाथ लगा । इतना ही नहीं, साक्षर-  
के दरबारमें भी अन्धि हुई उमके अथुमार अक्षरोंकीने  
गतदु'म और विवागा नदीके अन्धिअक्षरों'स्थानोंकी अक्षरों  
नगरमें अक्षरोंके अधिकारभुक्त कर लिया । अक्षरोंके अक्षरों  
अथुमे अक्षरोंकी मान ही उमके लिए मिश्रोंने अक्षरों  
और काँगौर तथा विवागा और अक्षरोंके अक्षरोंकी  
नामनननननन अक्षरोंकीकी अक्षरोंके अक्षरों । अक्षरों  
मुनाअक्षरोंके हाथ अक्षरोंके अक्षरोंकी अक्षरोंकी  
नामननननननन । किन्तु अक्षरोंके इस प्रकार अक्षरोंके  
हाथ अक्षरोंके अक्षरोंके अक्षरोंके अक्षरोंके अक्षरोंके  
अक्षरोंके अक्षरोंके अक्षरोंके अक्षरोंके अक्षरोंके अक्षरोंके  
अक्षरोंके अक्षरोंके अक्षरोंके अक्षरोंके अक्षरोंके अक्षरोंके

शोर फिरसे नई गन्धि ली गई। तदनुसार नागलिंग दलीपसिंहके राज्यपरिचालनके लिये राजकार्यका भार अङ्गरेज रेसिडेण्ट शोर अधिमावक सभा (Council of regency) के ऊपर रखा गया।

इस समय सिख लोग क्रूरभंग हो पड़े; किन्तु उनके अन्तःकारणको जलती हुई घाग न बुझी थी। किन्तु एक मामाम्य बातको छेड़ कर वे अपना आक्रोश प्रकट करने लगे। अन्तमें १८४८ ई०को पटन्डुत दोबान मूलाजादी उत्तेजनासे विद्रोही हो कर उठेगे ही अङ्गरेज सेनापतिको मार डला। धीरे धीरे चारों ओरसे सिख-सेना मुक्तान नगरमें एकत्रित हुई। साथ साथ सीमांतवर्ती सामन्तोंने भी आ कर उनका साथ दिया। वीहि अङ्गरेज-सेनापति विग्र (General Whish) दल बलके साथ सिख-दलमें आ मिले। क्वमिंह शोर शेरसिंहके लक्ष्यगण अकमानपति अमीर दोस्त महमूद ने सिखजातिको सहायताके लिए सेना भेज दी। १८४८ ई०में अङ्गरेज सेनाध्यक्ष लार्ड गफ जनद्रुको पार कर गये। रामनगरके निरुद्ध शेरसिंहके साथ उनकी मुठमें टूटो गई। इस युद्धमें परास्त हो कर सिखोंने अपना पीठ दिखाई। बादमें १८५१ ई०की १२वीं जनवरीको चिलियनवाना रणक्षेत्रमें सिख-सेना प्रबल प्रतापसे सिख-शोरवकी रक्षा करनेमें समर्थ हुई थी। इस युद्ध में अङ्गरेजोंको क्षतिग्रस्त होना पड़ा था। चिलियनवानाके विख्यात युद्धके दो तोन दिन बाद शेरसिंहके दलमें उनके पिता क्वमिंह ६००० अकमान अस्त्रारोहोके साथ मिल गए। १२वीं फरवरीको लार्ड गफने गुजरातके युद्धमें पूर्वपराजयके फलरूप प्रतिगोष्ठ लिखा। सिखोंके पराजित होने पर अङ्गरेजोंको सेनाने विगावरमें अमीर दोस्त महमूद पर-चढ़ाई कर दो। अमीर किन्तु तरह प्राण ले कर भागे।

१८४८ ई०को २८वीं मार्चको महाराज दलीपसिंह जिस सन्धिस्वयसे पावह हुए थे उसका मर्म इस प्रकार है—(१) महाराज दलीप राज्यमन्त्रालय अधिकारको छोड़ देंगे। (२) जहाँ जा राजकीय सम्पत्ति पाई जायगी उसे दण्ड रहितया क्रम्यनी युद्धके लक्ष्य तथा अङ्गरेज गवर्नेण्टके निकट लाहौर-राजकी कृपकी बावतमें

ले लीगे। (३) महाराज रणजित्ति महसुजाउत्तमुक्तमे जो कौहिनूर वादा है उसे लाहौरके महाराज इङ्गलेण्डको महाराजको दे देंगे। (४) महाराज दलीपसिंह सपरिवारके भरणपोषणके लिए वार्षिक लाख रुपये पावेंगे। (५) महाराजकी अङ्गरेज गवर्नेण्ट मान्य और सम्भवको निगाहसे देखेंगे। दलीपसिंह देखो।

पञ्जाब अङ्गरेजोंके हाथ लगा। १८४८ ई०के आरम्भमें इस गवर्नरकार्य विचारसे सभा द्वारा परिचालित होता था। वीहि इस अङ्गरेजो गाननानुमार विभिन्न जिलोंमें विभाज कर एक चोकगमिथरके हाथ रखा गया। मिपादी विद्रोहके बाद ही यह प्रदेश छोटे छोटे गाननाधीन हुआ।

१८५७ ई०को दिल्ली नगरमें मिपाहो-विद्रोहका स्वयंपात हुआ। पञ्जाब प्रदेशमें प्रचलित देगोय सेनापोंके साथ अन्तःकार्य भाव दिखाई देता था। १२वीं मईको जब दिल्लीमें भयानक कत्याका मस्बाद लाहौर पहुँचा, तब मण्टगोमरी (Sir R. Montgomery) साहयने सङ्घिणुताका अयनस्वन धरके मियागमोरमें ३००० सेनाके सफाटि होन लिये। फिरोजपुरके अफ्तागार सुरक्षित होनेके बाद १५वीं मईको मिपाहोगण रफटनः विद्रोही हो उठे। तमो मासकी २१वीं तारोखको ५५ मण्टगोय पदातिदल अङ्गरेजोंके विरुद्धाचारो हा वहुतोंको हत्या करके पात्रत्यभूममें भाग गये। ७वीं शोर ८वीं जनकी जलम्वरको मिपाहोयोंने विद्रोही हो कर दिल्लीमें विद्रोहियोंका साथ दिया। जुलाई शोर अगस्त मासके मध्यमें विगावर, भोलाप्र, सियालकोट, मूरि शोर लाहौरके दक्षिण इरायती तथा गतद्रु नदोंके अधवर्ती स्थानोंकी सेनाने अङ्गरेजोंके विरुद्ध दल धारण किया। पटियाला, फिन्द, नाभ, कपूरथला पाटि सामन्तराजोंने इस दारुण विप्लवके समय अङ्गरेजोंको विगिण सहायता की थी। इस उपकारके प्रशुपकारस्वरूप अङ्गरेज-राजने भी उन्हें काफी पुरस्कार दिया था।

गिगादीविरोध देखो।

मिपाहोविद्रोहके बादमें ही पञ्जाबकी यात्रिय शोर कार्णकार्यकी सवतिका आरम्भ हुआ। प्रथम वर्षमें ही अगस्तसरेमें मुक्तान तारक रणक्षेत्र



हरी शोषणको मर्यादा है। १९०६ ई०में मध्याह्निकी शक्ति पुनः सिम धार विद्यमान रहती पधारि थी। १९०६ ई०में यहाँकी मजदूरराजसंग श्रमिकोंकी मजदूरभावनका रूप था। अन्ततः मजदूरकार्यमें यह स्थान युद्धकी आन्दोलनके दृष्टिकोणसे विना जाने लगा था। परिणामतः शरणभङ्ग, मिला, भाषा, कपूरगला, फीरोज्जी शेर शाहन पाटि स्थानीके सामन्तशासकोंके चक्रवर्त्यद्वारा विधेय मसौदा का जो। १९०५-१९०६ ई० तक यहाँ जमाभावनके कारण भारी पञ्जिका पड़ती थी जिसे मांगोंको जग गरी थी। रूढ़विषयके कारण पश्चिमदिशाका नाजिज्य बन्द हो गया जिसे प्रजाके अष्टक धाराधार न था। किन्तु कोषाट्टमें पैसापर तक जो रकम पय मोला गया उसीमें काम करके बहुतेको पदवी जग पधारि थी। रूढ़विषयका वाट नी मरिदिकी नहर काटो गई। हममें पञ्जावके पनेक मद्रानोंका अनेकट दूर हो गया।

विद्यापिठाकी धोर रुहाँ विधेय ज्ञान दिया जाता है। लाहौरमें एक विश्वविद्यालय है जो १९०२ ई०में स्थापित हुआ है। इस विश्वविद्यालयकी शिक्षण, सिख, कला, काबूरी, कानून, रूढ़िजिगविधि परीक्षे तोण छात्रोंको विद्यापिठेके भागे पधिरार है। पञ्जाव भरमें १० भाई स्कूल, नारमन स्कूल, २०० मिडिल स्कूल, प्राय मरो स्कूल, ट्रेनिङ्ग स्कूल धोर १२ गिज्यकलाके स्कूल है। इनके सिवा कुछ ऐसे भी कानेज धोर स्कूल है जिसे सरकारके कुछ भागे मशवता नहीं भी जाती है, जैसे, लाहौरमें मुगलमान समुदायमें १९०२ ई०में स्थापित इस्लामिया कानेज, पञ्जतरमें सिन्धीमें १९०६ ई०में स्थापित सामना कानेज। १९०० ई०में पायमामात्रकी धोरसे लाहौरमें एक स्कूल खोला गया जिसे साम दयानन्दप्रयोगेदिक स्कूल है। १९०६ ई०के पञ्जतरमाममें मेडिकल कानेज स्थापित हुआ है जहाँ अन्ततः मध्यमी विषयोंमें उच्च शिक्षा दी जाती है। किलहान पञ्जावकी एक पालनमें उद्यति होती जा रही है।

पञ्जिका ( मं० पत्तो० ) पञ्जिका, १ घण्टा पञ्जिका, मरो। २ पञ्जिका, पञ्जाव।

पञ्जिका ( मं० पत्तो० ) पञ्जिका-पञ्जाव कन्ठाय। १ मजदूर-नाजिजा, कर्ककी नरो। २ व्यापारानपय, शोका-विधेय।

“टीका विद्यालयका पञ्जिका पदमञ्जिका ॥” ( हेतुवद )

जिसमें निरन्तर व्यापार हो, उसे टीका धोर जिसमें निरन्तर पदमञ्जक हो, उसे पञ्जिका कहते हैं। ३ पश्चिमीय सुत्रशक्तिमेट। ४ निधियावादि पञ्जावपुत्र पञ्जिका, पञ्जाव। वयके पारधमें ज्योतिषीमें पञ्जिका सुत्रको पाठिये, उसके सुत्रमें पञ्जक ज्ञाना रक्षता है।

“वागे दधी दुःखत्वं नथर्म मातामार्गं।  
निधिमन्थी गंगाया योगः सागरवद्भवः।  
कानं धर्मीयानि धूयते दिवसत्रिधा ॥” ( ६४० )

दिनपञ्जिका सुत्रमें पारकनेके दुःखप्रनाम, मधकने प पनाम, सिधिम गंगारुक्मन, योगमें मागरमदम मद्रक धोर कानपे मव तोयशा कल होता है। ज्योति-स्तवप्र उराकपुराणमें लिखा है, कि वार धोर मलय ये दुःखप्र धोर पापनामक है, तिधि पायुक्को, योग मुदि-मर्क, चन्द्र नीभाष्यप्र पादि। जो प्रतिदिन पञ्जिका यवण करते हैं उन्हें ये मव फल प्राप्त होते हैं।

“दुःखप्रनामके वागे नथर्म वारनामम्।  
निधि वायुक्की प्रोखा योगे मुदिविषदैकः ॥  
मद्रः शोषे सौमयमवैकः द्युदयः ॥  
करण मयते मधी वः मयोधि धिने धिने ॥”  
( ज्योतिषरत्नसूत्र )

पञ्जिकामें तिधि, वार, मलय, कारण धोर योग पादि हंनन्दिन विषय सिद्धि हुए हैं।

पिण्डिका—महाप्राणुवार वारगवना होता है। जिस महाप्राणमें जिस मासके जिस दिवसका वार जानना होता उस महाप्राणको पदमञ्जिकामें महाप्राणक चतुर्थांश जोड़ कर छठमें फिर निरन्तरविगत मासाद्ध धोर उस मासको दिनमञ्जिका तथा पश्चिमिकी दी ओढ़ते हैं। इस प्रकार भी योगफल होगा चक्रकी मासमें भाग दे कर जो यथेवा, हममें वार जाता जाता है। एक अथमिट रदमें रविवार, दोसे मनिवार इत्यादि। साम्नाद यथा—



गुण करने समेत २३०० बीड है। योगफलको ६०००  
 में भाग देनेसे जो मन्त्र प्राप्त होता है, उसका नाम तिथि-  
 दिन है। पहले एही प्रकार तिथि-दिन स्थिर करना  
 होगा।

चन्द्रदिनको चयनमें गुणा कर, गुणफलमें १५१००  
 क्रं व ३३०००० अकारमें भाग दे। इस प्रकार भाग देने-  
 में जो शेष होगो, तथा मन्त्रदिन और भागदिन है।  
 चन्द्रदिनको ११में गुणा करने समेत १२ और पूर्वोक्त  
 मन्त्रमें जो तिथिदिन गुणा है उसे एकत्र जोड़ कर ६०में  
 भाग दे। भाग देनेमें जो शेष बचेगा यह शेष वर्षकी  
 प्रथम तिथि है। यदि शून्य प्राप्त रहै, तो ३० अमा-  
 स्याया प्रथम तिथि होगा। चन्द्रदिनको १०में गुणा कर  
 ११ जोड़ दे और पूर्वोक्त मन्त्रमें जो मन्त्रदिन और याग-  
 दिन गुणा है उस चन्द्रको समतमें घटा कर २०में भाग  
 दे। भागमें जो शेषगिष्ट रहेगा, वह चन्द्र उस वर्षका  
 प्रथम मन्त्र होगा। यदि शून्य रहै, तो २० मन्त्र ही होता  
 है। यद्यो प्रथम मन्त्र है।

चन्द्रदिनको ०१०/०५५५१/२० इस अंशक चन्द्रमें  
 गुणा करने पृथक् पृथक् स्थानमें रखते हैं। उसके बाद  
 शेषको योग्य २० पुरित चन्द्रदिनगणना ६०में भाग  
 देनेमें जो शेष होगा उसे ५१ पुरित चन्द्रदिनमें जोड़  
 देंगे हैं। अब इस योगफलमें ६०में भाग और ५ पुरित चन्द्र-  
 दिनाङ्कका योग देना होता है। फिर इसे ६०में भाग और  
 ८ पुरित चन्द्रदिनाङ्कका योग, चौथे पुनः इसे ६०में भाग  
 और ७ पुरित चन्द्रदिनाङ्क योग विधेय है। तदनन्तर  
 इसे ६०में भाग और ८ पुरित चन्द्रदिनाङ्कका योग देना  
 होता है। पीछे इसे भी ६०में भाग करके भागफलमें  
 ७ पुरित चन्द्रदिनाङ्कको जोड़ते हैं।

तिथि-दिनकी दो स्थानोंमें रख कर एक स्थानके  
 तिथि-दिनको ६०में भाग दे कर दूसरे स्थानके  
 तिथि-दिनके साथ योग करते हैं। यह योगांश और  
 पूर्व उचित नियमानुसार जो चन्द्र गुणा है उसे यथा-  
 क्रम ०११५४८ अंशगणने साथ योग करना होता है।  
 योग करने जो मन्त्रदिनकी मन्त्रके प्रथमाङ्कको ६०में  
 गुणा करके तिथिदिन चन्द्रके साथ जोड़ देंगे हैं। पीछे  
 इसे १६८३में भाग देने पर जो शेषगिष्ट रहेगा उसे ६०में

भाग करके यथाङ्कको दाईं ओर समतमें जो शेष है,  
 यही तिथिकेन्द्र है। १६८३में भाग देनेमें जो भागफल  
 होना है उसका नाम है तिथिकेन्द्रमन्त्र।

चन्द्रदिनकी पूर्वोक्तव्ययमें यथाक्रम ११६१४८३में  
 गुणा करके पूर्वोक्त मन्त्रमें ६० द्वारा भाग करने हैं और  
 और भागफलकी प्रथमाङ्क पुरिताङ्क विष्णुद्वयमें योग  
 करके योगफलमें ३२३१६१४८ घटाने होंगे हैं। घट-  
 ने पूर्वोक्त तिथिकेन्द्रमन्त्रको ३२में गुणा करके उसे  
 १०में भाग देने हैं और भागफल तथा चन्द्रदिनको  
 पूर्वाङ्क (३२३१६१४८ घटानेमें जो शेष रहता है, उस  
 चन्द्र) में घटाने हैं। यदि यथार्थक जेना तिथि-  
 दिनकी दो स्थानोंमें रख कर एक स्थानके तिथिदिनकी  
 ३०में भाग देने और भागफलको दूसरे स्थानके तिथि-  
 दिनके साथ जोड़ कर पूर्वाङ्कमें जोड़ते हैं। इस प्रकार  
 गणना करनेमें बार, तिथि और तिथिकेन्द्रगणनादि स्थिर  
 जो जाते हैं। चन्द्रदिनको १५००में भाग देने पर जो  
 भागफल होता है, उसे तिथि वारादिके पहले साथ योग  
 करते हैं और वाराङ्कको ७में भाग देने पर जो भागफल  
 रह जाता है वही बार है तथा उसके पहले यदि प्रथम  
 तिथिकी पृथक् करके रखें, तो ये तिथि वारादिके होंगे।  
 चन्द्रदिनकी पहलके जेना यथाक्रम ०१०४४५५५१२६  
 ३५१२में गुणा कर पूर्वोक्त शेषकी ६०में भाग देने हैं।  
 भागफल जो होता है उसे यथाक्रम ३४, ३, ५३, ४५, ०,  
 ७ पुरित चन्द्रदिनाङ्कमें योग करना होता है। मन्त्र-  
 दिनकी दो स्थानोंमें रख कर एक स्थानके मन्त्रदिनको  
 १२०में भाग दे कर समतमें चन्द्रदिनके मन्त्रदिनकी  
 जोड़ देंगे हैं। यह योगफलकी पूर्वाङ्क घटाने हैं और  
 समतमें ०३२१० योग करके प्रथमाङ्कको ६०में गुणा और  
 दिनाङ्कको मन्त्रके साथ योग करते हैं। पीछे उसे योग-  
 फलको १६८३में भाग करके जो भागफल रह जाता है  
 उसे पुनः ६०में भाग दे कर भागफलकी दाईं ओर समतमें  
 हैं, इसका नाम मन्त्रकेन्द्र है। इस मन्त्रकेन्द्रकी १६८३  
 में भाग देनेमें जो भागफल गुणा या, उसका नाम  
 मन्त्रकेन्द्रमन्त्र है।

चन्द्रदिनकी पहलके जेना यथाक्रम ११६१४८३  
 १६१४१२में गुणा करके पूर्वोक्त ६०में भाग देने हैं,

पीछे भागफलको यथाक्रम ३१, ३४, १८, २५, १२, १ पुरित षट्पिण्डाङ्गमें जोड़ते हैं। नवत्र दिनको दो स्थानमें रख कर एक स्थानके नवत्र दिनको १२००से भाग करके उसे अन्य स्थानके नवत्रदिनमें जोड़ देते हैं। योगफल जो होता है, उसे पूर्वाङ्गमें घटा लेते हैं। इस प्रकार घटानेसे जो बच रहता है, उसमें ४२७।५२।२६ योग करते हैं। पूर्वोक्त नवत्रकेन्द्रभ्रमको १८में गुणा करके उसमें ६०का भाग देते हैं। भागफल जो होता है तथा भवगिट जो रह जाता है, उसे पूर्वाङ्गमें (४२७।५२।२६ योग करनेके बाद जो भद्द हुआ है उस षष्ठमें) योग करते हैं। इससे वार, दण्ड, पल आदि निकल पाते हैं। वारको ७से भाग देने पर जो शेष रहैगा, वष वार दिन होगा और उसके पहले नवत्रकी प्रथक् करके रखना होगा, यही नवत्र-वारादि है।

षट्पिण्डको पूर्ववत् यथाक्रम ७।३१।१५।३५।५२।५८।४८से गुणा करके पूर्व नियमानुसार ६०से भाग देते हैं। भागफल जो होते हैं उन्हें ५८, ५२, ३५, १५, ३१, ७ पुरित षट्पिण्डाङ्गमें योग करते हैं। पीछे योगदिनको दो स्थानोंमें रख कर एक स्थानमें योगदिनको ३००से भाग और दूसरे स्थानके योगदिनके साथ योग करते हैं। पीछे उस षड्को पूर्वाङ्गमें घटा लेते हैं। उसमें यदि ०।२८।१२ योग करे, तो वष युक्ताङ्ग होगा। इस युक्ताङ्गको ६०में गुणा करनेसे गुणफलमें इसके बादमें षड्को जोड़ देते हैं। अब इस योगफलको १७६२से भाग देनेसे जो भववित रहैगा, उसे पुनः ६०से भाग देते हैं। भागफल जो होगा उसे वाई और खनुनेसे योग-केन्द्र होगा। फिर इस योगकेन्द्रमें १७६२का भाग देनेसे जो भागफल होगा, उसका नाम योगकेन्द्र-भ्रम है।

षट्पिण्डको पहिलेके यथाक्रमसे कैमा १।४।१००२८।३०।३८से गुणा करके पूर्व नियमानुसार ६०से भाग देते हैं। पीछे नव षड्को ३०, २८, १०, ४६, १ पुरित षट्पिण्डाङ्गमें योग करना होता है। बादमें योगदिनको दो स्थानोंमें रख कर एक स्थानके योगदिनको २४०से भाग दे कर उसे अन्यस्थानके योगदिनके साथ योग और उस पूर्वाङ्गमें वियोग करना होगा। पूर्वोक्त योग-

केन्द्रभ्रमको ११०से गुणा करके उसे ६०में भाग दे कर पूर्वाङ्गमें वियोग करना होता है। ऐसा करनेसे वार, दण्ड, पल आदि होंगे। वारको ७का भाग देनेसे जीव जो बचेगा, वष वार होगा। इसके पहले प्रथमयोगको प्रथक् करके रखना होगा, ऐसा होनेसे जो योग वारादि होंगे।

समेरु पर्वत और गङ्गाको मध्यगत भूमिके ऊपर हो कर उत्तर-दक्षिणमें विस्तृत जो एक रेखा कल्पित हुई है, उसका नाम मध्य रेखा है। उस मध्य रेखामें भपना टेंग जितने योजनके अन्तर पर रहैगा उस योजनको दससे गुणा करके १३में भाग देते हैं; भागफल जो होता है, वष पल है। वष पल यदि ६०से अधिक हो, तो उसे ६०से भाग करके जो दण्डपलादि होंगे उन्हें मधारेखाके पूर्व दिगमें जो मत्र तिथिवारादि, नवत्रवारादि, योगवारादि और भेषकांति भूत हुए हैं उनके साथ जोड़ना होता है।

विषुवदिनके वारादि भूव और केन्द्रध्रुवको दो स्थानोंमें प्रथक् करके ५ वारध्रुव और केन्द्रध्रुवके साथ प्रतिदिनके वारध्रुवयोग और केन्द्रध्रुवयोगका योग करते हैं। योगफल प्रतिदिनका शुद्धवारध्रुव और शुद्धकेन्द्रध्रुव होगा। उस शुद्धकेन्द्रध्रुव संख्यामें खण्डा यज्ञ करके उसे एक स्थानमें रखते हैं। बादमें खण्डा उस स्थापित खण्डामें जितना अधिक होगो, उसका नाम धनभोग्य है और स्थापित खण्डामें जितना कम होगो उसका नाम ऋणभोग्य है। केन्द्रका षड् जो भवगिट रहैगा उसे भोग्य द्वारा गुणा करके पटिलत्वकी शोधित करना होगा तथा धनभोग्यखल पर स्थापित खण्डाके पलके साथ योग तथा ऋणभोग्यखल पर स्थापित खण्डाके पलके साथ वियोग करना होता है।

उस खण्डाकी वारादि भूवखण्डाके साथ योग करनेसे ही प्रतिदिनकी तिथि आदि दण्डादि होंगे। वष दण्डादि यदि ६० दण्डमें अधिक हो, तो उसे ६०में भाग करके लब्धाङ्गवार्में जोड़ना होता है। भवगिट दण्डादि रहैगा। इसमें प्रथम राशि तिथि होगी, इसी प्रकार वार दिवसमें तिथिका स्थितिकाण दुपा करता है। एक दिवसमें यदि वार लब्ध न हो भवार्त्त रविवारके

भाद मङ्गलवार ही, तो जानना होगा कि मोमवारको वृष्ट तिथि १० दण्ड है तथा मङ्गलवार दिनमें मध्य दण्ड है। दोनों दिनमें यदि एक ही वार मध्य हो, तो प्रथम मध्य दण्ड तक एक तिथि तथा द्वितीय मध्यदण्ड तक एक घोर तिथि होगी। इसमें ज्ञाना लाना है, कि यद्यदि दिन तादृशमें होगा। यह तादृशमें मङ्गलाख्यमें परमम्य दण्डमें पूर्वमध्यदण्ड बाद देनेमें स्थिर किया जाता है।

केन्द्र यदि चपने चपने भ्रमचे अधिक हो चर्चाग तिथिकेन्द्र यदि २८५, मध्यकेन्द्र २०१५ तथा योगकेन्द्र यदि २८१२ संख्यामें अधिक हो, तो उभे चपने चपने केन्द्रमें बाद दे कर तिथि वारादि दण्डमें ३२ बाद, मध्य वारादिके दण्डमें १८ योग घोर योग वारादिके दण्डमें ११०का वियोग करना होता है। ऐसा करनेमें शुद्ध वारादि होगी। तिथिकेन्द्रका भ्रम २८५, मध्यकेन्द्रका भ्रम २०१५ घोर योगकेन्द्रका भ्रम २८१२ है।

तिथिकी पहलमें जितनी होगी उन्ही दिगुल करके यदि तिथिमानके पूर्वमें करण करनेकी आवश्यकता हो, तो दिगुलवाटमें २ बाद घोर तिथिमानके परायें होने पर १ बाद देना होता है। चयमिष्ट पहलमें ० बाद दो कर भाग देनेमें की चयमिष्ट रहेगा उसीका मध्य, मासप हत्यादि क्षममें करण जानना होगा।

चन्द्रविण्डकी १००में गुणा करके ८००का भाग दो, मध्याह्न वार, दण्ड इत्यादि होगा। फिर चन्द्रविण्डकी ०में गुणा करके २०में भाग दो घोर भागफलकी वलमें जोड़ दो। उसमें माय १४४८८२३ इस चयमिष्टकी जोड़ी घोर योगक्रमकी ०में भाग दो। इस प्रकार की चयमिष्ट रहेगा, यह विपुलगतज्ञानिका वारादि होगा। इसमें पूर्व तिथिमें देनाभारसंस्कार घोर चारैसंस्कार करनेमें ही विपुलगतज्ञानिका शुद्ध वारादि होगी। इसी समय सूर्य मेषाश्विमें जन्म है। सूर्यके मेषाश्विमें जन्मने मेषाश्विमास हुआ। उस मेषाश्विमें वारम्भ कर पुनः शेष तक मङ्गला अङ्गमें एक मयको मङ्गला हुई। मेषादि मेषाश्वि चन्द्र इस प्रकार है।

- शुक्रमेषाश्वि — ४४४८२३,
- शुक्रमेषाश्वि — २५२५४८,
- मिथुनमेषाश्वि — ११२२२८,
- कर्कटमेषाश्वि — ३१२३,
- सिंहमेषाश्वि — २५२५०,
- कन्यामेषाश्वि — १२८१२०,
- तुलामेषाश्वि — ४५५१०,
- हस्तमेषाश्वि — २४०५१,
- धनुःमेषाश्वि १११५२,
- मकरमेषाश्वि — २३११,
- बुधमेषाश्वि ४१३२४,
- मौलमेषाश्वि — ५५३३८।

विपुलगतज्ञानिकें शुद्ध वारादिमें इन गुणादिके मेषाश्विका योग करनेमें उस समय सूर्य शुद्ध तिथि मङ्गलादि राशिमें गमन करने है चर्चाग मानके ज्ञानमें उस समय वारमें उस समय मङ्गलम होता है। ज्ञान मान कितने दिनोंमें मेष होगा उसका विवरण जोचे दिया जाता है—

दिन, दण्ड, घन,	दिन, दण्ड, घन
मेषाश्वि २०। ५१। ४८	वार्तिक २८। ५२। ५१
ज्येष्ठ २१। २५। ३८	अश्लेषा २८। २८। १
आषाढ़ २१। २८। २५	श्रवण २८। १८। ८
श्रावण २१। २०। ५०	माघ २८। २०। ३५
भाद्र २१। ०। २०	फाल्गुन २८। ५०। ४
पश्चिम २०। २५। ४०	चैत्र २०। ३२। १

इस मङ्गलमास २५१५३३३ परमका एक मङ्गल, पर मङ्गल मङ्गलमें २५१५३३३/२४ चयमेषाश्वि गमन होता है। किम मेषाश्विमें वज्रि का मेषार होता है, उसीका मेषाश्विमासमें दिव्याना उर्वर है। जो वज्रि का मङ्गल है, उच्च मूलपत्र चयम देवता वाचिच।

वार, तिथि, नक्षत्र, मीम घोर करण यही चर्चा वज्रि का प्रथम विषय है। इन सब मङ्गलावा वार स्थिर भी जन्म पर राशि, राशिमें चर्चाका चयमान, मङ्गला, मा-दमा, चयम पादि मङ्गला उच्च मङ्गल मङ्गल चयम देवता देवता है। (विपुलगतज्ञानिकें)

सभी विषय और तदनुसङ्गिक नामा प्रकारको गणनाये रहती हैं। वार, तिथि, नक्षत्र, योग, करण, षष्म, वारहस्पति, ग्रहोंका भवस्थान, ग्रहस्फुट, शुभाशुभ टिनकी तानिका, कालाकाल, ग्रहण और लको व्ययथा, राशिगोत्रके मन्थार आदिकी गणनाये परिष्कृतभायमें मन्त्रिगत होने हैं। पञ्जि जव सुद्रायन्त्र नहीं था, तब हाथमें पञ्जिका लिखी जाती थी। उस समय वार, तिथि, नक्षत्रयोग, करण और राशिचक्रमें ग्रहोंकी भवस्थान, ग्रहोंकी मन्थार और ग्रहणमात्र गणना रहती थी।

दिनचन्द्रिकाके मतसे पञ्जिकागणनाका विषय मन्त्रिपत्र और तिथि टिन आनयन, पीछे नक्षत्रदिन और योगदिन, वाटमें प्रथम तिथि, प्रथम नक्षत्र और प्रथम योग, निधिवारादि, नक्षत्रकेन्द्र, नक्षत्रवारादि, योगकेन्द्र, योगवारादि, प्रतिदिवसकी तिथि, नक्षत्र, योगका स्थिति-टण्ड और बलादि साधन, नक्षत्रानयन, योगानयन, करण और सङ्क्रान्ति यज्ञक्रमसे इन सबकी गणना करने में पञ्जिका प्रस्तुत होती है।

पञ्जिकाकारक (मं० पु०) पञ्जि करोतोति छ-ण्वुल् ।  
 १ कायस्थजाति । २ पञ्जिकाकार, देवग्र, ज्योतिषी ।  
 पञ्जी (नं० स्त्री०) पञ्जि-वाहलकात् डोष् । १ सुव्रतानिष्ठा, नरी । २ पञ्जिका, पञ्चाङ्ग । यथा कुसपञ्जी ।  
 इसमें श्रेय और शंका विवरण विधिपरूपमें वर्णित है ।  
 पञ्जीकर (मं० पु०) पञ्जी पञ्जिका करोताति छ-ट ।  
 कायस्थजाति ।

पट (सं० पु० स्त्री०) पटयन्त्रेण पट-वेष्टने वज्र्ये-क ।  
 १ वस्त्र, कपड़ा । इसका पर्याय सुचेलक है । २ चित्रपट, कागजका वह टुकड़ा जिस पर चित्र खींचा या उतारा जाय । देवीपुराणमें पटका विषय इस प्रकार लिखा है ।  
 जो देवोका पट बनाता है, उसे मिन्दिनाम होता है ।  
 नूतन वस्त्र पर पट बनाना होता है । यह पट सर्वाङ्गसुन्दर, समान तन्तुविगिष्ट और प्रत्य तथा केश विहीन होना आवश्यक है । पटमें यदि कोई छिद्र रहे, तो बनानेवालेका भ्रमङ्गल होता है ।

नवधा, विभक्त वस्तुके समी शीर्षोंमें देवगण, देगान्त और पाशान्तके मध्य नरगण तथा भवगिष्ट तीन शंभोंमें

राजसौका भावाम स्थान है । नूतन वस्तु विद्युत् दिन देख कर पहनना चाहिए । षड्भूतसंहिताके ७१वें अध्यायमें इसका शिवरण विष्टतरूपमें लिखा है । ( पु० )  
 ३ पियार, चिरोँजोका पेड़ । ४ भूहृष्ट, घरवान, ५ कर्षीस, वापास । ६ जोई भाट्ट करनेवालो वस्तु, पर्दा, चिक । ७ लकड़ी, धातु आदिका वह चिकना टुकड़ा या पदो जिस पर कोई चित्र वा लेख खुदा हुआ हो । ८ वह चित्र जो जगसाय, वदरिकायम आदि मन्दिरोसे दगंन-प्राप्त यात्रियोंको मिलता है । ९ छप्पर, छान । १० सरकडे आदिका बना हुआ वह छप्पर जो नाव या बहली-के ऊपर डाल दिया जाता है ।

पट ( हिं० पु० ) १ साधारण दरवाजोंके किवाड़ । २ सिंहासन । ३ किसी वस्तुका तलप्रदेश जो विपटा और चोरम हो, चिपटो और चोरस तलभूमि । ४ पालकीके दरवाजेके किवाड़ जो सरकानेसे खुलते और बन्द होते हैं । ५ टांग । ६ कुशतीका एक पेच । इसमें पहलवान अपने दोनों हाथको जोड़की पाँखोंकी तरफ इसविधे धड़ाता है, कि वह समझि कि मेरी आँखों पर थपड़ मारा जायगा और फिर फुरतेमे झुक कर उसके दोनों पैर अपने मिरकी और खींच कर उसे उठा लेता और गिरा कर चित कर देता है । यह पेच और भी कई प्रकारसे किया जाता है । ७ किसी इलको छोटी वस्तुके गिरनेसे होनेवाली आवाज, टप । ( वि० ) ८ ऐसी स्थिति जिनमें पेट भूमिकी ओर हो और पीठ पावागकी ओर, चितका उलटा, चौधा । ( कि० वि० ) ९ ग्रीष, तुगत, फौरन ।

पटहन ( हिं० स्त्री० ) पटवा-जातिको स्त्री, पटहार जातिकी स्त्री ।

पटक ( सं० पु० ) पटेन हटनेन ज्ञायति प्रकायते इति के क । १ गिविर, तंबू, खिमा । २ सूती कपड़ा ।

पटकन ( हिं० स्त्री० ) १ पटकनेकी क्रिया या भाव । २ चपत, तमाचा । ३ छोटा डंडा, छड़ी ।

पटकना ( हिं० क्रि० ) १ जोरके साथ चंघाईसे भूमिकी ओर भौंक देना, किसी चीजको भौंकके साथ नीचेकी ओर गिराना । २ किसी छड़े या बैठे व्यक्ति को उठा कर नीचे नीचे गिराना । 'पटकना' और 'ढकेलना' में

दस्ता की शक्ति है। उपरमे कोषिकी चौर भीका  
 निज का चौर मरनेका भाव प्रधान है, वही पटकभा चौर  
 पहां पदमे भीका है पर त्रिभो लक्षो या उपर रवो  
 काशिकी गिराये, वहां टकेमना या गिराना कहेंगे। २  
 कुम्भमे मतिदस्ता की पदाहता, गिरा देना या दे मारना।  
 ३ पट कहेके मात तिमो गोत्रका टरक या क्त ज्ञान।  
 ४ मीरा, यमि, धाम यादिका मोन या जलमे भोग कर  
 निर घुप कर मिकुटना। ५ मूलन डेठना या पचकना।  
 पटकगिया। (हिं० घो०) १ पटकनेकी क्रिया या भाव,  
 पटकान। २ भूमि पर गिर कर लोटने या पडाड़े  
 खानेका क्रिया या चमत्ता, लोटगिया, पडाड़।  
 पटकनो ( हिं० घो० ) १ पटकनेकी क्रिया या भाव।  
 २ भूमि या गिर कर लोटने या पडाड़े खानेकी क्रिया  
 या चमत्ता। ३ पटके खानेकी क्रिया या भाव।  
 पटकनो ( हिं० घो० ) एक प्रकारकी डेल।  
 पटका ( हिं० घु० ) १ कमर बांधनेका रमाना या दुपटा,  
 वसकेंटा, कमाधेव। २ सुन्दरता बढ़ानेके लिये दोवारने  
 लोहा धुई पटी या धंटा।  
 पटकान ( हिं० घो० ) १ पटकनेकी क्रिया या भाव। २  
 भूमि पर गिर कर लोटने या पडाड़ खानेकी क्रिया या  
 चमत्ता। ३ पटक खानेकी क्रिया या चमत्ता।  
 पटकार ( मं० घु० ) पट कोमलवस्त्र विद्यं वा करोति  
 लघुप। १ कपड़ा बुननेवाला, गुनाहा। २ विभवट  
 रकानेवाला, धिमदार।  
 पटकुटी ( मं० घो० ) पटव्य पटनिमित्त वा कुटी। कपड़े  
 का घा, सिमा, मंडू। पंथाय—ईजिका, गुवाजवनिका।  
 पटखर। मं० घो०। भूतपूर्व पटल भूतपूर्व भरट, ता  
 पटलमवसठ मण्डं धरतीति पटल-पट-पण्ड। १ लोच-  
 गणा गुणना खण्ड। २ चौर, चौर। ३ महाभारत चौर  
 पुराणमे वर्णित एक माध्याम जनपद। महाभारतके  
 द्वाकाकार मोनकपड़े मसके यह देव माधोम चोल है।  
 विहित महाभारत समापर्वमे मंडदेवका द्विविधन पक-  
 रण पटनेमे ज्ञान पढ़ाया है, कि हमका क्वाण मापेटेम-  
 के दुष्टिय ऐतिके निरुट है।  
 पाटा ( हिं० घो० ) पटी रेवो।  
 पटनी ( मं० घो० ) १ खज्जानकण मण्डलेद। (घं०)  
 २ पट।

पटन ( मं० घु० ) पटयि वेदिय इव कायन्ति के-य।  
 चौर, चौर।  
 पटनकण ( मं० घो० ) पटनकण कणा लोचन।  
 चौरकी मुट्टी।  
 पटना ( हिं० घु० ) १ ममता, सुखता, ममानता, वर-  
 धरो। २ माहताकण, उपमा, लमशील।  
 पटनना ( हिं० जि० ) वारावर दरशाना, उपमा देना।  
 पटनारना ( हिं० जि० ) १ खाटा, भासा यादि मनाकी  
 तिमो पर बनानेके लिय पकड़ना या मोचना, मंभा-  
 लना। २ चमत्तन भूमि मे चमत्तन कर्मा, वस्तारना।  
 पटनान ( हिं० घु० ) मुट्टका एक नाम। यह ताम्र १  
 दीप या २ कृपमायाचोका चोता है। हममे एक ताम्र  
 चौर एक चाभी रहता है।  
 पटट ( मं० घु० ) कार्यामृत, उपाम।  
 पटथारो ( हिं० वि० ) १ जो कपड़ परने लो। (घु०)  
 २ लोमावाचिका अधिधारा, लोमावाचिका मूल्य  
 पफमर।  
 पटना ( हिं० जि० ) १ ममत्तन या भीरव चोता। २  
 मजान कृप यादिने उपर खसो या पयो डग बनना।  
 ३ मोचा खाना, मेराब चोता। ४ तिमो ख्याममे तिमो  
 मनुको इतनी अधिहता होना कि हममे शून्य क्वाण  
 न दिखे पहे, परिपूर्ण चोता। ५ मजानको दूधरो  
 मंजिल या कोठा चढाया जाता। ६ चरोट, बिकी,  
 मेल देन यादिमे लजय पलका मूल्य, छट, मर्षी यादि  
 पर महमत लो ज्ञाना, से लो ज्ञाना, येठ लाना। ७ मन  
 मियना, वनना। ८ लोमे मित्रता होना जिनका कारण  
 मनेक; मिल जाना लो। ९ खणका देना, गुकना लो  
 जाना, धाई धाई पटा लो ज्ञाना।  
 पटना—१ बिहारका एक प्रादेशिक विभाग। यह पचा-  
 २५ १०' से २०' ११" उ० तथा ८५° ०' से ८६° ०'  
 ४४' पू०के मध्य अवस्थित है। इसके उत्तरमें मैदान,  
 पूर्वमें भागलपुर चौर मुजरे तिम्या, दक्षिणमें मोहरहटा  
 चौर खजाराबाग तथा पश्चिममें मोर्चापुर, माधोपुर चौर  
 गोरखपुर है। पटना, पठा, माधवापट, टरमपट,  
 मुगलकपुर, नारव चौर चम्पारण यादि जिलेकी  
 से कर पटना विभाग महडिन हुआ है। लक्षमेंगदा

प्रायः १५५१४८८० हे। इसमें ३५ गहर और ३४१६८ याम लगते हैं। पटना गहर को सब गहरों में वड़ा है। यह याज्ञिक्य तथा गिन्पकार्य का एक प्रधान स्थान है।

२ उक्त विभागका एक जिला। यह पत्ता २५' ५०" से २५' ४५" तक और देशा ८५' ४२" से ८६' ४' पू० के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण २०७५ वर्गमील है। इस जिलेके उत्तरमें गङ्गा नदी, पूर्वमें मुङ्गेर, दक्षिणमें गया और पश्चिममें सोन नदी है।

पटना जिलेका अधिकांश भूभाग भूमि है, किन्तु दक्षिणार्धमें छोटे छोटे गण्डमोच वा पहाड़ देखनेमें आते हैं। गङ्गा तटवर्ती प्रदेश पथ्यस्त उर्वरा है। इन सब जमीनमें ममो प्रकारके शस्य उत्पन्न होते हैं। इस जिलेके दक्षिणपूर्वार्धमें राजगढ़ गोलियों की है। इन पर्वतश्रेणियोंको ऊँचाई कहीं कहीं १०० फुट है और छोटे छोटे घने जङ्गलोंमें आच्छादित है। बोद्धधर्मके प्राचीन स्मारकविशेष रहनेके कारण राजगढ़ गोलियों की प्रत्यक्षविवर्द्धिके निकट समधिक विख्यात है। इस शैलश्रेणियोंके उत्तर एक और पहाड़ है जिसे कनिं हम्, साहबने चीन-भ्रमणकारों यूपनसुयंगकवित कागनिका बतलाया है। राजगढ़ गोलियोंमें अनेक उष्ण प्रस-यण हैं। राजगढ़ देखो।

पटना जिलेके मध्य प्रवाहित नद नदियोंमें गङ्गा और सोन नदी प्रधान है। एतद्दृश्यतोत्त पुनपुन नामका एक और नदी उल्लेखयोग्य है।

पटना जिलेमें वन, जङ्गल, जलामूमि और गोश-रण भूमि नहीं है। प्रायः ममो जमीन पानाद होती है। खनिज पदार्थोंमें शङ्खनिर्माणयोगी प्रस्तर गिला-जतु नामक भेषज पदार्थ, कद्दूर और खनिज लवण ही प्रधान है।

जीवजन्तुओंके मध्य राजगढ़गोल पर भालू, शिंड़िया, शृगाल और नाकेखरो प्राण देखनेमें आता है।

पटना जिला ऐतिहासिक प्रत्यक्षविवर्द्धिके पथमें विद्येय याटरयोग्य है। कहते हैं, कि ई० मन्के ह्य गताश्रयो पत्रले गीतमके मसमानधिक राजा अजातशत्रु-ने पटना गहर जलभाषा और उष्ण मसय यह पाटलिपुत्र नामसे प्रसिद्ध था। पटना जिलेके दक्षिणार्धमें मुसल-

मानीका न्यापिन विहार नगर अवस्थित है। इसके अलावा इस जिलेमें चीनभ्रमणकारों फाहियान और यूएनसुयंग द्वारा वर्णित अनेक स्थानोंका निर्देश पाया जाता है पाटलिपुत्र देखो।

पटना जिला दो प्रसिद्ध ऐतिहासिक घटनाका क्षेत्र है। १०६३ ई०में अंगरेजोंके साथ जब गवाय मोर-कासिम हा विवाद खड़ा हुआ, तब पटना कोठोंके अध्यक्ष एलिय साहब अपनी निवाहियों द्वारा पटना गहर पर अधिकार कर बैठे। इस पर गवाय बड़े क्रोधसे अंगरेजोंके कर्मचारियोंको कोठोंमें बन्द रखा। पीछे इस कोठीमें कामिभवाजारकी कोठोंके अङ्गरेज कर्म-चारिण्य तथा मुङ्गेरमें ही माहब भे लाये गये। इस घटनाके बाद गडिया और उधुपानान्वा युद्धको पराजय-के बाद नवाबने अङ्गरेज-सेनापति मिजर साइमनको कहला मित्रा कि 'यदि हमारे विरुद्ध विवाद और बढ़ता ही जायगा, तो हम एलिय साहब तथा पटनाके अन्य-अङ्गरेज कर्मचारियोंके मिर कटवा डालेंगे।' तदनन्तर समस्त नामक सेनापतिका मदायतासे नवाबने यह कार्य करके ही दिखला दिया। यद्यो घटना इतिहासमें पटना-अध्याकाण्ड कहलाती है। प्रायः ६० अङ्गरेजों-को मृतदेह निकटवर्ती कुर्ममें फेंका गये थे। उसका स्मृतिचिह्न आज भी पटनेमें विद्यमान है।

दूसरी ऐतिहासिक घटना थी 'पटनेके निकटवर्ती दानापुरका गदर।' १८५७ ई०में ७, ८ और ९० न्दंबर सेना दानापुरमें रहती थी। सेनाध्यक्ष नायड-साहबका लक्ष निवाहियोंके जपर अभुग नियन्त्रण रहनेके कारण उन्हें अन्तत्याग करनेका नहीं कहा गया। पीछे पटना विभागके कमिश्नर टेलरसाहब तथा अन्य-अङ्गरेजोंको प्ररोचनासे सेनाध्यक्ष नायडने उन्हें निरक्ष करना चाहा। पर उनको ममो चेष्टाएं निष्कल हुईं। उन्हें फल यह निकला कि तोन रजिमेण्टसेना उभो मसय विद्रोहो ही कर अन्त शस्य लिए चली गईं। उन निवाहियोंमेंसे बहुतेके गङ्गा पार होनेकी चेष्टा की। पर उनको जलो पर गोली बरसने लगा और नावें डुबाई जाने लगीं जिससे





है—पटना कालेज, पटना मेडिकल कालेज, बिहार इमजिनियरिंग स्कूल, बिहार निगमल कालेज, फोमेल हाई स्कूल और अङ्गरेजों के लिये सेण्टमैकम कालेज। पहले ये सब स्कूल और कालेज कलकत्ता विश्वविद्या-के अधीन थे, अब पटना विश्वविद्यालय के स्थापित हो जाने से वहाँ से कोई मम्पक नहीं रफा।

यहाँ का जनसंख्या प्रति स्वास्थ्यकर है। यहाँ ४१८२ इन्च से अधिक जनसंख्या नहीं होता। तापका पारा ४३.५ (फारेनहाइट) से ११० डिग्री तक ऊपर उठता है।

३ पटना जिलेका सदर। यह अक्षा० २५° ३०' ल० और देश० ८५° १०' पू० गङ्गा के दाहिने किनारे अवस्थित है। पटना शहरके पूर्व भागमें बाँकोपुर है। जनसंख्या छिट्ठाखके करीब है। वर्त्तमान पटना शहर और शहरमें बसाया गया है। शेरशाह देखो।

डाक्टर बुकनन हैमिल्टन (Dr. Buchanan Hamilton) ने लिखा है, कि ८२० ई०में पटना शहर कहनेसे वही अंग समझा जाता था जो कीर्तिमानोके अन्तर्गत था। उस समय पटना शहर १६ मुहल्लामोंमें विभक्त था और १५ टारोगा शहरका शान्ति रक्षणकार्य चलाते थे। प्रत्येक मुहल्लेके कुछ अंगमें शहर और कुछ अंगमें जनभूमि तथा वागान था। इस हिसाबसे उस समय पटना शहरको लम्बाई ८ मील और चौड़ाई २ मील थी। सुतरां शहरका परिमाण प्रायः १८ वर्ग मील था। अभी पटना शहरको लम्बाई पू०से पश्चिम तक प्रायः छिट्ठा मील और उत्तरसे दक्षिण तक प्रायः ३ मील होगी। बुकनन हैमिल्टनके समयमें पटना शहरके निहट जो सब प्राचीन दुर्ग भग्नावस्थाने पड़े थे, वे अभी देखनेमें नहीं आते। जनसंवाद है, कि वे सब दुर्ग बादशाह और अङ्गरेजके दोब आज़िमसे बनावे गये थे। किन्तु उक्त दुर्गोंकी हारदेगस्थित प्रस्तरत्रिपि देखनेमें जाना जाता है, कि १०४२ ई०में फिरोज़-अहमद खाने उमका प्रमाण हुआ। अन्यथा प्राचीन पश्चिमिओंके मध्य कम्पनीके अमलका अकोमका गुदाम, चायनका गुदाम और कितने प्राचीन इटकालय विद्यमान हैं। गवर्नेण्टका जो प्राचीन गोना-घर है उसके निर्माणके विषयमें कुछ विगिपल दीख पड़ता है।

घरकी गठनपणालो बहुत कुछ मधुमखोके छत्तीकी तरह है। दो माडो बाहरकी तरफसे छत तक खोले हुए हैं। अंगमें ऐसा चन्दोवला है, कि अनाज छतके ऊपरसे घरके भीतर गिरा दिया जाता है और उसे बाहर निकालनेके लिये नःचे कुछ छोटे छोटे द्वार बने हुए हैं। इस घरकी दोवार प्रायः २१ फुट मोटा है। दुर्ग-निवारणके लिये १०८५ ई०में कम्पनीसे यह गोना-घर बनाया गया था। इसके मध्य शब्द करनेसे उसकी प्रतिध्वनि स्पष्ट सुनी जाती है।

पटना शहरसे प्रायः ३ मील पूर्व गुलज़ारबाग नामक स्थानमें सरकारी अफीमका कारखाना है। इसके पास ही दो प्राचीन मन्दिर विद्यमान हैं। इनमेंसे एक मुसलमानोंको मसजिदरूपमें और दूसरा हिन्दूदेव-मन्दिरके रूपमें व्यवहृत होता है।

पटना शहरका पश्चिमो द्वारदेग दानापुरसे प्रायः १२ मील दूर है। शहरके दक्षिण मादकपुर नामक स्थानमें, जो पहले घोडवो विद्रोहियोंसे अधिकृत हुआ था, अभी एक बाजार बनाया गया है। इसके मन्दि-कटख रोमनकैथलिक गिरजाके दुमरे पात्रमें मोर कासिम कलक निरत अङ्गरेजोंका अन्नस्तान है।

पश्चिम शहरतल्लोमें शाह अर्जनीको मसजिद मुसलमानोंकी उपासनाका प्रधान स्थान है। शाह अर्जनीका १०३२ ई०में देहात हुआ। चैत्रमासमें यहाँ तीन दिन तक मेला लगता है जिसमें प्रायः ५००० यात्रियोंका समागम होता है। इस कब्रमें कुछ दूर कबला है जहाँ सुहरमके समय प्रायः लाख मुसलमान एकत्रित होते हैं। इमके पास ही एक पुष्करिणी है, जिसे कहते हैं, कि एक साधुने खुदवाधा था। यहाँ प्रति वर्ष पनेक यात्री स्नान करने आते हैं। गीशाहको मसजिद शहर भरमें सबसे प्राचीन पश्चिमिका है और गिष्पन पुण्यके मन्त्र-में मानिक खोका मद्ररगा सर्वोत्कृष्ट है। और शहरको अन्न शहरके मध्य एक प्रसिद्ध उपासनाका स्थान है। यह कब्र टारुं मो वर्ष पहले को बनी हुई थी। यहाँ हर-मन्दिर नामक सिद्धोंका एक प्रसिद्ध उपासना-स्थान है जो सिद्ध लोकोके दगम गुरु गोविन्द सिंहका अन्न स्थान कह कर विख्यात है। १०१० ई०में यहाँ बिहारके



पटना निखना माखा था। १८८५ ई०में इन्होंने राज-  
प्रासादके भीतर गोलीसे अपनी स्त्रीकी मार डाली और  
चाप भी उन्हीं समय मर गये। उनके कोई सन्तान न  
थे, इस कारण गवर्मेण्टकी ओरसे उनके चाचा लाल-  
दत्तगंजन सिंह राज्याधिकारी ठहराये गये। गव-  
र्मेण्टने उनको देखरेख करनेके लिए एक दोषान  
नियुक्त किया। राज्यको घामदनी २०००००, रु०की  
है। यहाँ दो मिडिल स्कूल और ३० प्राइमरी स्कूल हैं।  
यहाँ दातव्य चिकित्सालय भी खुला है।

पटनाखाल (Patna Canal)—गया जिलेके अन्तर्गत  
एक खाल। यह बरगुणग्रामसे ४ मील दूर, जहाँ सोन-  
नदीका बांध (Anicut) पूर्व और पश्चिम खालको विभक्त  
करता है, वहाँ पूर्व खाल (Eastern Canal)से पटना-  
खाल निकली है; इसको लम्बाई ७८ मीलके करीब है।  
पटनाया (हि० वि०) १ वृष वसु जो पटना नगर या  
प्रदेशमें बनी है। २ पटना नगर या प्रदेशसे सम्बन्ध  
रखनेवाला।

पटनी (हि० स्त्री०) १ कोठिके नीचेका कमरा, पटौंवा।  
२ जमींदारीका वह अंग जो नियत लगान पर सदाके  
लिये बन्दोबस्त कर दिया गया हो। ३ खेत उठानेको  
वह पद्धति जिसमें लगान और किसान या धरमातीके अधि-  
कार सदाके लिये नियत कर दिये जाते हैं। ४ कोई  
चोज रखनेको दो खुंटियोंके सहारे लगाई हुई पटरी।  
पटपट (हि० स्त्री०) १ हलकी वस्तुके गिरनेसे उत्पन्न शब्द-  
की बार बार ध्वनि। (क्रि० वि०) २ लगातार पट  
ध्वनि करता हुआ, 'पटपट' धावाजके साथ।

पटपटाना (हि० क्रि०) १ भूख प्यास या मरती गरमीके  
मारि बहुत कट पाना, बुरा हाल होना। २ किसी वस्तुसे  
पटपट ध्वनि निकलना। ३ पयात्ताप करना, खेद करना,  
शोक करना। ४ किसी चोजकी बगल में पीठ कर 'पट-  
पट' शब्द उत्पन्न करना।

पटपर (हि० वि०) १ समतल, बरसत, औरम। (पु०)  
२ नदीके पासपासकी वह भूमि जो बरसातके दिनोंमें  
प्रायः मटा डूबी रहती है। इसमें लेवल रफ्तकी खेती  
की जाती है। ३ ऐसा जङ्गल जहाँ घास, पेड़ और पानी  
तेरु न हो, बल्कि उजाड़ स्थान।

पटबंधक (हि० पु०) एक प्रकारका रैहन। इसमें मटा-  
जन या रैहनदार रैहन रखी हुई सम्पत्तिके लाभमें से दू-  
द्वेनिके बाद जो कुछ बच जाता है उसे मूलऋणमें मिनटा  
करता जाता है। इस प्रकार जब सारा ऋण परिशोध हो  
जाता है, तब सम्पत्ति उसके वास्तविक स्वामी को लौटा  
देते हैं।

पटवीजना (हि० पु०) खद्योत, लुगुनू।  
पटवेकर—बम्बई प्रदेशके पन्तर्गत मतारा, पाटन भार  
शोलापुरवासी एक जाति। प्रायः दो सौ वर्ष पहले ये  
लोग कार्य-उपलक्षमें गुजरातमें उक्त स्थानोंमें आ कर बस  
गये। इनके मध्य कथाड़, कुतारी, पोवर, ग्रालनगर और  
गिरालकर नामक कई एक पटवियां और भारद्वाज,  
काश्यप, गौतम और नारदिक आदि चार गोत्र देखे जाते  
हैं। एक पटवी और ममगोत्र होनेसे विवाह नहीं होता।  
ये लोग देखनेमें उच्चश्रेणीके हिन्दू सरीखे होते हैं। पुरुष  
सिर पर गिखा और लुङ्गा रखता है, लेकिन टाढ़ी सभी  
सुद्धा लेते हैं। साधारणतः ये लोग घरमें गुजराती और  
बाहरमें मराठी भाषा बोलते हैं। निरामियागो होने पर  
भो ये लोग केवल पूजोत्सवमें एक दिन भेड़ेका मांस  
खाते हैं, अधिकांश ही मथपाये हैं। पुरुष कुरता, टोपी,  
दूता आदि पहनते हैं और स्त्रियां मराठी रमणोकी तरह  
विशभूषा करती हैं तथा मांगमें सिन्दूर लगाती हैं। इनमें-  
से प्रायः सभी सवल, सङ्घिण्ट, कर्मठ और धार्मिकीयो  
होते हैं। रेशमकी पट्टे, पालकी, धन्नमज्जा और धामूपण  
आदि बांधनेके लिये नानावर्णोंमें रेशम रंगाना ही इनका  
जातीय व्यवसाय है। ये इन सब द्रव्योंको ले कर  
निकटवर्ती स्थानोंमें बेचनेके लिये निकलते हैं। ये  
लोग स्थानीय सभी देव देवियों और ब्राह्मणोंकी  
उपास्य देवदेवियोंकी पूजा करते हैं। तुलजापुर-  
को जगदम्मादेवी ही इनकी कुलदेवी है। घामस्य  
ब्राह्मण ही इनका पीरोहित्य करते हैं। जो ब्राह्मण इनके  
धर्मोपदेष्टा हैं वे 'गोपालनाथ' नामसे पूजित होते हैं।  
विधवा-विवाह और बहुविवाह इनमें प्रचलित है। ये  
लोग श्रवदाह करते हैं। सामाजिक विवाह विधव्याद-  
की खजातीय पञ्चायतसे ही निश्चित हुआ करता है।  
पटवेगार—१ बम्बई प्रदेशमेंको सुप्रसिद्ध जाति। रेशमदा



उपस्थित बन्धुबान्धव और कुटुम्बगण भी यथासाधा योक्तृक देते हैं। वर कन्याको ले कर जब घर पहुँचता है, तब वहाँ प्रसन्नवाचकोंके साथ स्वामीको भोजन कराना पड़ता है।

ये लोग शवदाह करते हैं। जो उत्तराधिकारी है वह एक ढण्डो और ५ पैने के दण्डगण्यक सामने रखता है। दाहके बाद नयी स्थान पर वे पिण्डदान करते हैं। जो सब ढण्डो जल कर खाक नहोँ छोतो, तीसरे दिन मुखाग्निका अधिकारी वहाँ था कर उन ढण्डियोंको चूर करके जलमें फेंक देता है। ग्यारहवें दिन बन्धुओंको भोजन देना होता है। सृताशोचमें ये लोग उपवित्र रहते हैं, इस कारण तीसरे दिन भीड़े कार्य नहोँ करते। सामाजिक विषादको निवृत्ति पञ्चदशतमे होती है।

दीनगाम जिलावासियोंके मध्य चौधरी, नाथम्बाह, पवार, गिरोलकर, मानपुत्र और रज्जाराज चादि उपाधिगण देखी जाती हैं। ये लोग स्वयंमें भोजन और पुत्रकन्यादिका पादानप्रदान करते हैं। देशस्थ ब्राह्मण इनके पुरोहित होते हैं। ममो अपनीको कत्रिय बतलाते हैं। पुत्रकी उमर दस वर्षकी होनेसे ही उसका उपनयन होता है। इस समय पुरोहित यथावचित होम और मन्त्रपाठ करते हैं। मच्छो, मांस, मद्य और धूमपानका पुरुषमात्र ही व्यवहार करते हैं।

विवाहके पहले एक दिन 'गोन्दन' नृत्य होता है। पोछे टेकोहेगमे ब्राह्मण और जातिकुटुम्बकी भोजन कराते हैं। इन दिन ग्रामको उपस्थित कुटुम्बगण घर और कन्याकी ग्रामस्थ देखभान्दिरमें ले जाते हैं। यहाँ कन्याका पिता वरकी पूजा करता है और कन्याकी माता वरके दोनों पैरों पर जल चढ़ातो है। पोछे पिता पैरोंको रगड़ना और अपने बगरेखेमे जल पोछे डालना है। तदनन्तर उपस्थित व्यक्तियोंको पान और सुगरो दे कर विदा करना होता है। दूसरे दिन यमनमें सुबेरे अथवा गोधुली लगनेमे विवाहकार्य सम्पन्न हो जाता है। विवाहके दूसरे दिन कन्याकर्ता वरयात्रियोंको एक भोजन देता है। इसमें विधवाविवाह और बहुविवाह प्रचलित है। ये लोग शवदाह करते हैं और

१० दिन तक सृताशोच मानते हैं। खुण्डोवा, मछान्तमो जङ्गमा इनके उपाय्य देवता है। वेनगामके पटवेगार रोगमके गिवा रुईका भी व्यवसाय करते हैं।

धारवाह जिलावासियोंके साथ इनका घनेक विषयमें सहाय्य है। ये लोग सवि वा सविय कहलाने हैं। भरहाज, जमदग्नि, काश्यप, कात्यायन, वात्स्यक, वसिष्ठ और विश्वामित्र चादि इनके गौत्र देखे जाते हैं। पाश्चिममामकी शुक्रप्रतिपदको कटनीपत्रके ऊपर मटो बिछा कर सममें पांच प्रकारके बीज बीते और उस पत्रकी गृहदेवताके सामने रखते हैं। उक्त सामकी शुक्राष्टममें दुर्गादेवीको एक छागवनि दो जाती है। दसमोके दिन जब उस पञ्चमस्यसे कोपन निकलती है, तब स्त्रियाँ उन्हे ले कर बड़ी धूमधामसे गातो यज्ञातो हुई नदो प्रयवा क्रिमो गृहके जन्ममें उन्हे फेंक देती हैं। दोनपूर्णिमाके समय रमणियाँ टन बांध कर मन्दिर जार्ती और वहाँ नंगो हो कर दिवाचन करातो हैं। इन लोगोंमें विधवा-विवाह तिथिद है।

पटभास (सं० पु०) प्रोक्षणसाधन यन्त्रभेद, प्राचीनज्ञानका एक यन्त्र जिससे पाँखकी देखनेमें सहायता मिलती थी।

पटभेदन (सं० ली०) पुटभेदन, मगर।

पटम (हिं० वि०) वह जिसको पाँखें भूलसे पटपटा या बँट गई हों, जो भूलसे मारे भन्सा हो गया हो।

पटमच्चरी (सं० स्त्री०) सङ्पूर्ण जातिको एक शुद्धरागिनो जो हिंडोल रागकी छोटी है। इतुमत्के मतसे इसका स्वरपाम इष प्रकार है—ग ध नि सा रे ग म प। इसका गानसमय १ दण्डसे १० दण्ड तक है। कोई कोई इसे श्रीरागकी रागिनो मानते हैं। इसका गानसमय एक पहर दिनके बाद है।

पटमण्डप (सं० पु०) पटानाँ यन्त्रानाँ मण्डपः। पटकुटो, वस्त्रगृह, तंबू, खेमा।

पटमय (सं० स्त्री०) पट-मयट्, १ वस्त्रगृह, तंबू। २ शाटी, लहंगा।

पटर (सं० वि०) पट याहुलजात् परन्, वा पटं वान्ति रा-क। १ गतियोत्। २ बन्धदायक।

पटरक (सं० पु०) पटर-स्यार्थे कन्। मुन्द्रह, गीदपटेर।



पटली ( स० स्त्री० ) पटन-डीप् । छप्पर, छान, छत ।  
 पटव ( स० पु० ) जनपटभेद, एक देशका नाम ।  
 पटवर्द्धन—दाक्षिणात्यवामी महाराष्ट्रीय ब्राह्मणत्रयोषोभेद ।  
 इनके मध्य ह्यरीन, शाण्डिल्य भरद्वाज, गौतम, काश्यप  
 आदि चार गोत्र देखे जाते हैं । प्राचीन गिनानिधिमें  
 यह वंश पटवर्द्धिनी नामसे उल्लिखित है ।  
 पटवा ( हि० पु० ) १ वह जो रेशम या सुनमें गहने गूथता  
 हो, पट्टार । २ नारंगी रंगका एक प्रकारका बैल । यह  
 बेल मजबूत और तेज चलनेवाला होता है ।  
 पटवाद्य ( स० पु० ) एक प्रकारका प्राचीन वाजा जो  
 भ्रांमिके आकारका होता था और जिसमें तान दिया  
 जाता था ।  
 पटवाना ( हि० क्लि० ) १ पाटनेका काम दूरसे कराना ।  
 २ आच्छादित कराना, छत डलवाना । ३ गत्त आदिकी  
 पूर्ण करवाना घामकी जमोनके बराबर कराना, भरवा  
 देना । ४ पानीसे तर कराना । ५ टाम दिनवा देना,  
 चुकवा देना । ६ शान्त करना, मिटाना, दूर कर देना ।  
 पटवाप ( स० पु० ) पट उपाय प्रारुयेंगे दोग्यते यत्र ।  
 पटवप-घञ् । वस्त्रगृह, तंबू, खिमा ।  
 पटवारगरो ( हि० स्त्री० ) १ पटवारोका काम । २ पट-  
 वारोका पट ।  
 पटवारो ( हि० पु० ) १ वह छोटा क्रमचारी जो गांवकी  
 जमीन और उसके लगानका निमाव कृताउ रखता  
 हो । ( स्त्री० ) २ कपड़े पहनानेवालो दामो ।  
 पटवाम ( स० पु० ) पटस्य पटनिर्मितो वा वामः । १  
 वस्त्रगृह, तम्बू, खिमा । २ गारो, लहंगा । पटं वाम-  
 याति सुरभि करोति-पट-वाम घञ् । ३ वस्त्रसुरभिकरण  
 द्रव्यभेद, वह वस्तु जिसमें वस्त्र सुगन्धित किया जाय ।  
 बृहत्संहितामें इसको प्रसूत प्रणालो इम प्रकार लिखो  
 है—त्वक् और उगोरपत्रके समान भागमें उसका कर्षक  
 भाग छोटी इलायचो डाल कर उसे चूर्ण करते हैं । पीके  
 उसे श्लकपूर्वमें प्रबोधित करनेसे उर अष्टगन्धद्रव्य प्रसूत  
 होता है, इमोका नाम पटवाम है ।  
 पटवामक ( स० पु० ) पटो वास्येऽनेनेति पट-वाम-घञ्,  
 ततः स्त्राय कन् । पटवासचूर्ण, वस्त्र घमानेवालो सुग-  
 भियोंका चूर्ण । इसका नामान्तर पिटान है ।

पटवैश्वान ( स० स्त्री० ) पटनिर्मितं वैश्व । वस्त्रगृह,  
 तंबू, खिमा ।  
 पटव्य ( स० त्रि० ) पटवे द्वितं पटु-यत् । ( तस्मै द्वि० ।  
 पा ५।१।५ ) पटु, विषयमें हितकर ।  
 पटसन ( हि० पु० ) १ एक प्रसिद्ध वीषा जिमके रोगमें रसो,  
 बोरि, टाट और यक्ष बनाए जाते हैं । यह गरम जल-  
 वायुवाले प्रायः सभी देशोंमें उत्पन्न होता है । विषेर-  
 विवरण यह शब्दमें देखो । २ पटसनके रोग, पाट, जूट ।  
 पटसामो ( हि० पु० ) धारवाड मानाको सुनाईको एक  
 जाति जो रेशमो वस्त्र बुनती है ।  
 पटहंसिका ( स० स्त्री० ) सम्पूर्ण जातिको एक रागिणी ।  
 इसमें सव शुद्ध स्वर लगते हैं । यह रागि १० टण्डमे २०  
 टण्ड तकके बीचमें गाई जाती है ।  
 पटह ( स० पु० क्लो० ) पटेन हन्यते इति पट-हन् उ, वा  
 पटत् शब्दं जहाति पटह-उ निपातनात् साधुः । १  
 थानकवाद्य, दुंदुभो, नगाड़ा । २ बड़ा डाल । ३ समा-  
 रम्भ । ४ हिंसन ।  
 पटहघोषक ( स० पु० ) वह मनुष्य जो टोल बजा कर  
 घोषणा करता है ।  
 पटहता ( स० स्त्री० ) पटहका भाव या ध्वन ।  
 पटहभ्रमण ( स० त्रि० ) जो घामवामिणोंको एकत्रित  
 करनेके लिये टोल बजाता फिरता है ।  
 पटहार ( हि० वि० ) १ जो रेशमके डोरि बनाता हो, रेशम  
 के डोरोंमें गहना गूथनेवाला । ( पु० ) २ रेशम या सुनके  
 डोरोंमें गहने गूथनेवालो एक जाति, पटवा ।  
 पटहारिन ( हि० स्त्री० ) १ पटहारको स्त्री । २ पटहार  
 जातिकी स्त्री ।  
 पटा ( हि० पु० ) १ एक प्रकारकी लोहेकी फटो जो दो  
 हाथ लम्बी और किर्चके आकारकी होती है । इसमें तल-  
 वारकी काट और बचाव मोचे जाते हैं । २ चटाई । ३  
 चौड़ी लकोर, धारो । ४ लेनदेन, बीटा । ५ नगामको  
 मुहर । ६ पक्षिकारपत्र, मन्द, पटा ।  
 पटाई ( हि० स्त्री० ) १ पटानेको क्रिया या भाव, मिचार्ई,  
 चाववाशी । २ मिचार्ईको मजदूरी । ३ पाटनेको क्रिया  
 या भाव । ४ पाटनेकी मजदूरी ।  
 पटाक ( स० पु० ) पटति मज्जतीति पट-आक निपातनात्  
 साधुः । पक्षिविषय, एक पक्षिकाका नाम ।





प्राप्त की। अहमदशाह दुरानो जब भारतवर्ष में लोटे, तब आलासिंहने सरहिन्द प्रदेशके सुसज्जमान गामन-कर्त्ताकी आक्रमण किया और मार डाला। अहमद शाहने जब दुरानो वार भारतवर्ष पर चढ़ाई की, तब आलासिंहने कुछ रुपये ले कर उनका अपराध क्षमा कर दिया। आलासिंह पटियालाराज्यका संस्थापन करके १७६५ ई०में इस धराधामको छोड़ स्वर्गधामकी सिधारे।

आलासिंहके उत्तराधिकारी अमरसिंहने अहमद शाह दुरानोसे 'राजा-इ-राजगांव बहादुर'की उपाधि पाई। १७७२ ई०में मरहटोंने इस राज्य पर आक्रमण करनेका भाव दिखलाया और उसी समय अमरसिंहके भाई विद्रोही हो गये। १७८१ ई०में उनकी मृत्यु हुई। १७८२ ई०में पटियाला राज्यमें घोरतर दुर्भिक्ष और भराजकता फैली। राजाके दीवानके यत्नसे यह घोरतर विपद दूर हुई।

१८०३ ई०में जनरल लेक द्वारा दिल्लीविजयके बाद पंजरीने उत्तर भारतमें एकाधिपत्य लाभ किया। इस समय रणजित्सिंहने पटियाला राज्यकी अपने अधीन लानेकी चेष्टा की। किन्तु पंजरीने पटियाला राज्यको सहायता देनेका वचन दे कर रणजित्सिंह को लौटा दिया।

१८१५ ई०में जब सुखा और अङ्गरेजके बीच लड़ाई छिड़ी, तब पटियालाके राजाने पंजरीकी खासो मदद पढ़वाई थी। इस प्रत्युत्कारके लिए इन्हें कुछ जागीर मिली। १८४५-४६ ई०में जब सिखोंने गतदुनदो पार कर अंगरेजी राज्य पर आक्रमण किया, उस समय पटियालाके महाराजने पंजरीका पक्ष लिया था। १८५७ ई०के गदरमें राजाने धन और सेनासे पंजरीको सहायता की थी। इस कारण अन्याय पुरस्कारके सिवा इन्हें अफ़्ग़ान राज्यका नर्मान विभाग मिला।

१८६२ ई०में अरेन्द्रसिंहके पुत्र महेंद्रसिंह राजा हुए। इन्हींके समयमें १८८२ ई०को सरहिन्द नहर काटी गई थी जिसमें १ करोड़ २३ लाख रुपये खर्च हुए थे। ये बड़े उदारवेत्ता थे और प्रजाकी भलाईके लिए अनेक कार्य कर गए हैं। १८७३ई०में इन्होंने एक सुट्टे

७००००) रु० लाहौर विश्वविद्यालयमें दान दिए थे और बङ्गालके दुर्भिक्ष-पोहित मनुष्योंको रक्षाके लिए १० लाख रुपये गवर्मेण्टके अधीन रख छोड़े थे। १८७५ ई०की दक्कीके सम्मानार्थ-नाइ नाथबूकने पटियाला पधार कर 'महेन्द्रकालिङ्ग' खोला था। १८७१ ई०में इन्हें जी० सी० एस० आई०की उपाधि मिली थी। १८८६को पाप इस धराधामको छोड़ स्वर्गधामको जा बसे। उस समय उनके लड़के राजेन्द्रसिंह केवल चार वर्षके थे। इनके नावानिग-काल तक कान्मिल प्राय-रजिन्सी (Council of Regency) ने मरहटार मरदेवसिंहके ३० सी० एस० आई०के अधीन राज्य कार्य चलाया। १८८० ई०में राजेन्द्रसिंहने राज्यका कुल भार अपने हाथ ले लिया। इन्होंने १८०० ई० तक सुचारुरूपमें राजकार्य चलाया। पोछे उसी साल उनको मृत्यु हुई। बादमें उनके लड़के भूपेन्द्रसिंह राजगद्दी पर बैठे। ये ही वर्त्तमान महाराजा हैं। इनकी उपाधि (M. C. I. E., G. C. S. I., G. C. B. E. है। ये ब्रिटिश गवर्मेण्टको १०० अम्बारोहीसे सहायता देनेमें बाध्य हैं। इन्हें सरकारकी ओरसे १७ सलामी तोपें मिलती हैं। राज्यकी ग्रामटनो एक करोड़में ज्यादा है। मैन्य म'ल्या २५०० अम्बारोही, ६०० पदातिक, १०८ कमान और २३८ गोसन्दाज हैं।

ग्रिचाविभागमें यह जिला बहुत बड़े पड़ा हुआ है। कुछ दिन हुए महाराजाका इस घोर ध्यान आकृष्ट हुआ है। अभी यहां एक शिल्प स्कूल, २१ सेरिगड्डी, ८४ प्रादमरी और १२२ एनिमेटोरोस्कूल हैं। ग्रिचाविभागमें प्रति वर्ष ८३३०३ रुपये व्यय होते हैं। स्कूलके अलावा राज्यभरमें ३४ अस्पताल और चिकित्सालय हैं। इनमेंसे १० अस्पतालमें रोगियोंके रहनेके लिये अच्छी व्यवस्था की गई है। इस घोर राज्यकी ओरसे वार्षिक ८००७६ रु० खर्च होते हैं। यहांका मंदर और सैडो डफरिन अस्पताल उत्कृष्टयोग्य हैं। १८०६ ई०में मर्देवसिंहने एक ट्रेनिंग स्कूल खुला है। सब मिला कर राज्यकी प्राविष्टवा आस्थक है। वार्षिक ब्रिटिशात २५-से४० इंच है।

२ पटियाला राज्यके कर्मगद्द मिजामतकी एक तहसील। यह अक्षांश ३०° ८' से ३०° १०' उ० और देशांश



नायकवंशीय राजा विजयराघवका बनाया हुआ एक किता है।

पट्टजातीय (मं० त्रि०) पट्टप्रकारः, पट्ट, जातीयर, पट्ट-प्रकार।

पट्टता (मं० स्त्री०) पट्टोभावः, पट्ट-तन, टाप। १ दक्षता, चतुराई, चालाकी। २ पट्ट, होनेका भाव, प्रवीणता।

पट्टतुलक (मं० स्त्री०) लवण-क्षण, एक घास।

पट्टलक्षण (मं० स्त्री०) पट्ट, लवण तत्पश्चुर लक्षणं ततः कन। लवण-क्षण, एक प्रकारकी घास।

पट्टत्रय (मं० स्त्री०) लवणत्रय, विट्ट, सैन्धव और सौवर्च लवण।

पट्टत्व (मं० स्त्री०) पट्ट, भावे त्व। पट्टता, दक्षता।

पट्टपत्रक (मं० स्त्री०) लवणपत्रक।

पट्टपत्रिका (मं० स्त्री०) पट्ट, पत्रं यस्याः, कप् टापि पत्र इत्वं। १ शुद्ध चञ्चुपु, कोटे चैवका घोषा। २ कीरिका, पिण्डखजूर।

पट्टपर्णिका (मं० स्त्री०) पट्ट, पर्णं यस्याः, कप् टापि पत्र इत्वं। चोरिणीष्ठक, एक प्रकारकी कटेहरी।

पट्टपर्णी (मं० स्त्री०) पट्ट, पर्णं खोप् (पाठवर्णपर्युपा-क्येति। ग ४। १। ४४) स्वर्णं लोहि, सख्यानगी कटेहरी।

पट्टभेदिका (मं० स्त्री०) कृष्णजीरक, खाना जीरा।

पट्टमत् (मं० पु०) पद्मवंशीय एक राजा। किसी किसी पुराणमें इनका नाम पट्ट, मान् और पट्टमायि मिलता है।

पट्टमित्र (मं० पु०) राजपुत्रभेद।

पट्टरूप (मं० त्रि०) प्रगन्तः पट्टः। पट्ट, रूपम्। पति-शय पट्ट, बहुत चानाक।

पट्टलिका (मं० स्त्री०) नागवलीभेद।

पट्टली (मं० स्त्री०) १ काठकी बड़ पट्टरी, जो भूमिक रस्में पर रखी जाती है। २ बड़ लम्बा चिपटा डंडा जो गाड़ी या ककड़में लड़ा रहता है। ३ चौकी, पीड़ी।

पट्टवा- एक जाति। ये लोग अपनेको ब्राह्मण-वर्णमें मानते हैं, परन्तु यह मत सर्व-सम्मत नहीं है। इनकी विशेष स्थिति गुजरात तथा राजपूतानेमें है। ये सदैवमें यज्ञोपवीत धारण करते बले पाये हैं, प्राग पाममें यह

हैं और वैष्णव सम्प्रदायो है। इनका विवरण स्कन्द-पुराणमें लिखा है। रंगमो चरत्री पर कसोटा काटना और रंगमी डोरोंमें गहनोंको पोना इनकी मुख्य जोविका है।

पट्टवा (मं० पु०) १ पट्टमन, जूट। २ करैम्पु। ३ गूनके मिरि पर बंधा हुआ डंडा जिसे पकड़ करः मांभी लोग गून खींचते हैं। ४ शक, तोता।

पट्टग (मं० पु०) राघवभेद।

पट्टस (मं० पु०) राजभेद।

पट्टत्तम (मं० स्त्री०) सैन्धव नमक।

पट्टेवाज (मं० पु०) १ वड़ जो पटा खिलता हो, पट्टेमें लहनेवाना। २ एक पिनोना जो हिनानिमें पटा खिलता है। ३ व्यभिचारो और धूर्त पुरुष। ४ कुलटा परन्तु चतुरा स्वो, हिनाल औरत।

पट्टेर (मं० स्त्री०) सरकण्डेको जातिका एक प्रकारकी घास जो पानीमें होती है। इसकी पत्तियां प्रायः एक दूध छोड़े और चार पांच फुट तक लम्बी होती है। इन पत्तियोंमें चटाइयां भादि बनाई जाती हैं। इसमें बाजरेको बालकी तरह बालें लगती हैं जिसके दानोंशा घाटा सिंधदेशके दरिद्र निवासी खाते हैं। वैद्यकमें यह कर्मलो, मधुर, शीतल, रजपित्त नाशक और मूत्र, शक, रज तथा हतनोर्क-दूधकी शुद्ध करनेवालो मानी जाती है।

पट्टेरक (मं० स्त्री०) सुप्तकक्षण, मोघा।

पट्टेरा (मं० पु०) १ पट्टेरा देखो। २ पट्टेला देखो।

पट्टेल (मं० पु०) १ घामका प्रधान, गांधका सुखिया, गांवका चौधरी। २ एक प्रकारकी उवाधि। इस उवाधिके लोग मध्य और दक्षिण भारतमें पाये जाते हैं।

पट्टेलमा (मं० त्रि०) पट्टेलना देखो।

पट्टेला (मं० पु०) १ बड़ नाथ जिसका मध्यभाग पटा हो। बेल छोड़े आदिको पीसा हो नाथ पर पार उतारते हैं। २ एक घास जिसकी चटाइयां बनाते हैं। ३ हिंगा। ४ मिन, पट्टिया। ५ कुमोका एक पंच जिममें नोचे पड़े हुए जोड़की वित किया जाता है। बाएँ हाथमें जोड़की गरदन पर कानाई जमा कर उसकी बांहिने बंधक पकड़ते और दाहिने हाथमें समकी बांहिनी



अपक वसन्त प्रथमित घोर पक वसन्त शुक्र हो जाता है। विस्फोटक स्वरमें यह विधेय उपकारो है।

पटोलादिशाथ ( स० पु० ) पटोलपत्र, कटकी, शतमूली, त्रिफला, गुलचू सब मिला कर २ तोला, जन बाध मन, शिव बाध पाव । इन काटके को पोनेसे दाहयुक्त पैसिक वातरक्त पच्छा हो जाता है।

( भैषज्यरत्ना० वातरक्तधिकार )

पटोलाद्यष्ट ( स० स्त्री० ) चक्रदत्तोक्त छतमेंद । छत ७४ सेर, कावाय पटोलपत्र, कटकी, दाहहरिद्रा, नीमको छाल, चटुसको छाल, त्रिफला, दुरानभा, पिचपापड, डूबर प्रयुक्त १ पल, चांबला २ सेर, कूटजको छाल, मोया, यष्टिमधु, रक्तचन्दन घोर पोपर कुल मिला कर १ सेर । यथानियम छत पाक कर सेवन करनेसे चतु-रोग और अन्धान्य रोग प्रथमित होते हैं।

पटोलिका ( स० स्त्री० ) खाटुपटोल, मफेद फूलकी तुरई वा तरोई । गुण—खाटु, विनास, रुचिकृत, स्वरप्र, अन-कर, दोषन घोर पाचन ।

पटोली ( स० स्त्री० ) पटोल जातित्वात् ङीव । घ्योरस्त्री, तुरई ।

पटोने ( हि० पु० ) नसाह, माफो ।

पटोही ( हि० पु० ) १ पटा हुआ स्थान । २ पटावके नाभिका स्थान । ३ वह कमरा जिसके ऊपर कोई घोर कमरा हो । ४ पटवंधक ।

पट ( स० स्त्री० ) पट-गतो ऋ इङ्गभावः । १ नगर । ( पु० ) २ भेषज-पायाप, मिला, पहिया । ३ व्रथादिका वन्धन, घाव पर बांधनेका पतला कपड़ा, पटो । ४ राजादिका शासनान्तर, पटो । ५ पाट, पांडा, पाटा । ६ ढाल । ७ उण्यांयादि, पगडो । ८ टुपटा । ९ कोषिय, रैयस । १० सोहित कोषिय उण्यायादि, लाल रेशमो पगडो ।

राजगण मस्तक पर किरोटस्वरूप जो पट धारण करते हैं, उसका विषय इहत्संहितामें इस प्रकार लिखा है—

“पाचार्योने पटका गिन्नेलिखितरूप लक्षण वतनाया है। जिस पटका मध्य पाठ पंगुल विस्तृत होता है, वह राजाभौके लिये शुभजनक है। समग्रूल विस्तृत होनेसे राजमहिषाका, ६ पङ्कल विस्तृत होनेसे युवराज-का और ४ पङ्कल विस्तृत होनेसे सेनापतिका शुभ होता

है। दो पङ्कल विस्तृत पट प्रासादपट कहलाता है। यहो पांच प्रकारका पट है। समो पट विस्तारका दूना घोर पात्र विस्तारका बाधा होना चाहिये। पद्मगिखायुक्त पट नृपतिके लिये, त्रिगिखायुक्त पट युवराज घोर राजमहिषोके लिये तथा एकगिख पट सेनापतिके लिये शुभजनक है। गिखाहीन प्रासादपट भी राजाघोका शुभद माना गया है। यदि पटका पत्र प्रासादीये फैलाया जा सके, तो भूमि पनिको वृद्धि घोर जय होती तथा प्रजा सुखसम्पद लाभ करती है। पटमध्य व्रण समुत्पन्न होनेसे राज्य विनष्ट होता है। जिसका मध्यदेग स्फुटित हो, वह परित्यक्त है। जिस पटमें किसी प्रकारका अशुभ चिह्न न रहे, राजाभौके लिये वन्नी शुभफलपद है (इहत्संहिता ४८ म०) १० राजसिंहासन । ११ चतुर्भुज, चोराहा । १२ शाक-भेद, एक प्रकारका उग । १३ पटो, तपना, सिपनेका पटिया । १४ तवि खादि धातुभोका वह चिपटो पटो जिस पर राजकाय भाक्षा या दान खादिको मनद छोदो जाती हो । १५ किसी वस्तुका चिपटा या चोरस तन भाग । १६ पाट, पटसन । ( वि० ) १७ मुख्य, पथान । पटक ( स० पु० ) पट एव इत्यर्थे स्वार्थे कान् । १ पट, लिखने-को पटो या पटिया, तखता । २ ताम्रपट या चित्रपट । ३ ताम्रपट पर खुदो हुई राजाशा या मन्थ विषय । ४ पटका, कमरबन्द । ५ वह रैयसो यस्त्र जिसका पगडो बगार जाय । ६ वृष विधेय, एक पेड़का नाम ।

पटज ( स० स्त्री० ) पटोत् कोषयात् जायते जन ट । वस्त्रमेद, टसरका कपडा ।

पट्टकल—अम्बरे प्रदेशके बोजापुर जिलास्तर्गत एव प्राचीन नगर । इसका प्राचीन नाम किरुवीलत या पट्ट किरु-बोलत है। यह अक्षा १५° ५०' उ० तथा देशा ७५° ५२' पू०के मध्य सालप्रभा नदीके बाएँ किनारे बढामोसे ४ कोसको दूरी पर अवस्थित है। जनसंख्या हजारके ऊपर है। यहां वनेक प्रधान मन्दिर घोर गिनाफलक उल्लाष है। प्राचीनपरिवेष्टित ४ एकड़ भूमिक मध्य ४ बड़े घोर ६ छोटे मन्दिर हैं। बड़े मन्दिरोंका गठन घोर काहकाय द्वाभिक देगके जेसा प्रतीत होता है। यहांके सबसे बड़े मन्दिरमें विरुपाक्षो, मूर्ति प्रतिष्ठित है। जैनमन्दिरादि ६ जेसा इस मन्दिरके चारों घोर चार भां कितनो विभिन्न



हैं। स्त्रीपुरुष दोनों ही 'लिङ्ग' धारण करते हैं। कपड़ा बुनना ही इनका जातीय व्यवसाय है। प्रतिदिन सुबह-से नै कर शाम तक ये परिश्रम करते हैं। हिन्दूके पर्व-दिन ये लोग कोई काम क्राज नहीं करते। ब्राह्मणों पर इनको सतनो खड़ा नहीं है, इसीसे ब्राह्मणोंके उपास्य देवताओं-से ये लोग विशेष मान्य नहीं करते। ये लोग बहुत लिङ्गायत हैं। विवाह तथा व्रतादि कार्य-में ये लिङ्गायत पुरोहित भी बुना कर उन्हींमें काम कराते हैं। चिकोरिखामो नामक इनके एक साधारण गुरु हैं जिनका वास निजाम राज्यके भन्तर्गत सुलतानपुरमें है।

भौतिक क्रिया, भोजविद्या घाटमें इनका हृदयिष्ठान है। लड़कें जन्म लेने पर उसकी नाड़ी काट कर उमें मुखमें थोड़ीका तेल दिया जाता था तब माता तथा जातपुत्र दोनोंको स्नान कराया जाता है। पाँच दिन तक सपरवारमें पशोच रहता है। पाँचवें दिन धाई पा कर पठा मूर्त्तिको स्थापना करते हैं। गर्भिणी माताको उस मूर्त्तिको पूजा करना होती है। पोछे उपस्थित पाँच सधवाओंको चने देने होते हैं। छठें दिन लिङ्गायत पुरोहित पा कर जमोन पर चावलके चूरेको पानोंमें घोलता और उसमें आठ रेखा युक्त एक चित्र अङ्कित करता है। पोछे उस पर २ पान, १ छुपावों और २ पंमे रख कर जातशिशुकी सुनाता है। अनन्तर वह पुरोहित जातशिशुके पिता या माताके घाएँ हाथमें एक लिङ्ग रख उमें चानो, मधु, दूध और दहीसे जो धार धुनाता है, पोछे उसके ऊपर १०० धार सफेद सुतेको लपेट कर रखता है। सुत समेत लिङ्गको रेशमके बहलमें आवृत कर शिशुके गलेमें बांध दिया जाता है। बाद पुरोहित तीन चार शिशु शरीर-में घपना पौर लगा कर पाशोर्वाद करता और उमें माताको गोदमें सुला देता है। माता भी पुरोहितकी पंचाम करता है। तीरहवें दिन जातपालकको पानो पा कर पुत्रका नामकरण करती है, इसीसे उसे एक करता इनाम दिया जाता है।

विवाहके प्रथम दिन वर और कन्या दोनोंको ही इन्दी और तेल लगा कर स्नान कराते हैं। पोछे लिङ्गा-

यत पुरोहित, वस्तुमान्धव और पाप्मोय कुटुम्ब एक साथ भोजन करते हैं। इस भोजनका नाम है 'परिपानद तथा' पर्यात् वर या कन्याको मङ्गलकामना और मान्यथा भोज। दूसरे दिन देवकार्याड उता' (पर्यात् देवताके उद्देश्यसे दत्त भोज्यकार्य) सम्पादन होता है। विवाहारात्मिं जातिकुटुम्ब एकत्र ही कर विवाहभानों उपस्थित होते और जानिके समय उन्हे पान सुपारी मिलता है; पाँच सधवा स्त्रियों जो कन्या का भार पहण करते हैं वे 'पदगिच्छे' और जो दो पुरुष वरके माहचर्यमें नियुक्त रहते हैं वे 'शृंगिरिक' कहलाते हैं। इस दिन जातिक मोड़न 'गब्द'की भा निमन्त्रण दिया जाता है। उमें पाँच बार पान और सुपारी उगटोकन-में देना होता है विवाहके बाद तिसरे दिन कन्याका पिता वरके हाथमें कपड़ा, चावल, जनपात्र आदि देता है। पोछे वर और कन्या दोनोंको उद्यासन पर बिठा कर लिङ्गायत पुरोहित पाशोर्वादमें उनके मिर पर धान फेंकता है, साथ साथ मन्त्र पढ़ कर कन्याके गलेमें मङ्गलसूत्र बांधता है। बादमें रागना जला कर दोनोंको हो वरण किया जाता है। यही विवाहका शिव काय है। जो समय स्त्री और पुरुष वर तथा कन्याकी परिचर्यानिं नियुक्त रहते हैं, वे भा उपयुक्त प्राहाय उपहार पाते हैं।

लिङ्गायतोंको तरह ये लोग प्रथमकी जमोनसे गाड़ देते हैं। जम पौर मृत्यु दोनोंमें केषल पाँच दिन तक पशोच रहता है। त्रिगोंके घात्तमें भा तीन दिन पशोचविधि प्रचलित है। यात्यविवाह और विधवाविवाहमें कोई रोर टोक नहीं है। सामाजिक गोममात उपस्थित होने पर याम्य पञ्चायत द्वारा उसका निवरेता होता है।

पट्टसूत्रकार—जातिवर्णय। रेशमके कोट्टे तथा रेशमके सूत्रादि प्रस्तुत करना इनका जातिगत व्यवसाय है। पहा (५० पु०) १ किमी स्यावर सम्पत्ति विशेषतः भूमिके उपभोगका अधिकारवत् जो स्वामिको घोरमें पनामो, किरायेदार या ठेकेदारकी दिया जाय।

सांख्यिक पधनी सम्पत्तिकी जम कामके लिए घोर जिन गती पर देता है तथा जिनके विरुद्ध पाचरण



एक देवियों की मूर्ति छोटी छोटी गृहाके मध्य मण्डिपट्ट  
 देवी जगदी ( विष्णुवाचके मध्यमव्य गृहमें तीन पद्मके  
 ऊपर मण्डिपट्टो बने हुए हैं जिन्हके दोनों हाथ निरके  
 ऊपर धोर गृहमें बसना है। वापीरके गाथमें जो पशु-  
 क्लान्तादि मध्य बाहर निराला हुआ है उनमें गाथमें  
 श्रीमूर्ति स्थापित है। उन मूर्तियोंका वैश्विन्वाम  
 देवनेमें ही देवत्व देवतामें रमणियाका प्रधान पा  
 जाता है। इनके ऊपरों भाग पर श्रीसिमुनीके विद्य  
 चिह्न है। गमपठके द्वारके सामने धोर भी कितनी स्त्री  
 मूर्तियां गोभा दे री हैं। बाहरकी दोवार पर विष्णु  
 धार शिवकी माना प्रकारका मूर्ति खुदी हुई देवनेमें  
 पायी है। गे मध मन्दिर चालुख चादि राजाओंके  
 ममयके धने हुए है। कुन १२ गिनालिपि लकोण है।  
 दलाम्य मन्दिराके मध्य मज्जिकाकुंन, मंयमिगर,  
 चन्द्रमंगल, वंमनुषी, गोलोकनाथ, चादिमगर, विजये-  
 मर, वापविनागम या वापनाथ चादि देवमूर्तियां प्रति-  
 नित देवी जाती है। वापविनागम चादि दो एक शिव-  
 मन्दिरके द्वारद्वारके ऊपरों भाग पर राम, रायण खर,  
 दूषक, सुभखा, लक्ष्मण, मोता, जटावु शैवनाथ चादि-  
 के चित्र चिह्न है। मंयमिगरके मन्दिरमें लकोण  
 मिश्राल २५ चालुन्दाकी गिनालिपिमें जाना जा  
 भकता है कि ये पांचम चालुखराज १५ तेलका अधि-  
 कार स्वाकार करने में। ये स्वयं, श्री देवामदेवी तथा  
 पुत्र २५ पाने होना किशुशोलनको विजयेमर शिव-  
 पूजाके सर्व धर्मके लिए बहुत-से जमीन दान कर गए  
 हैं। पट्ट किशुशोलनमें इनकी राजधानी थी।  
 पट्टनी ( मं० स्त्री० ) पट्टे मिहामने गिता, तट्टनी वा  
 देवी। महादेवी, राजाका प्रधान स्त्री, पट्टरानी।  
 पट्टोन ( मं० स्त्री० ) कट्टेका घना हुआ भूय या  
 पानना।  
 पट्टन ( मं० स्त्री० ) पट्टनि मन्त्रनि चापिये यत्। पट्ट गती  
 यापुनहात् तन्म। १ पथग, नगर। २ कृष्ण नगर।  
 पट्टः ( मं० स्त्री० ) पट्टन मोरादित्वात् डोव। पट्टन, नगर।  
 पट्टमङ्गलम्—मट्टा लिनेके पसागत एक नगर श्री राम  
 नाटने १२ कीम लखरपुर्व में अवस्थित है। पट्टा वापु  
 राजाकीका निर्मित शिव-मन्दिर है।

पट्टमहिषी ( मं० स्त्री० ) राजाकी प्रधान स्त्री, पट्टरानी।  
 पट्टराज ( मं० स्त्री० ) पट्टे तट्टे रज्यनेन पट्टरज्य-  
 पत्न। पत्तरट्ट, वरुम।  
 पट्टराजक ( मं० स्त्री० ) पट्टानी बलानां रज्यने ततः  
 कन्। पत्तरट्ट, वरुम।  
 पट्टराज ( मं० पुं० ) महाराट्टके पुन ब्रह्मदेवीकी लप पि  
 जो पुत्रापीका काम करते हैं।  
 पट्टराज्ञी ( मं० स्त्री० ) पट्टानी राज्ञी, पट्टरानी।  
 पट्टना ( मं० स्त्री० ) १ जमानविभाग, जिना। २ मध्य  
 टाय।  
 पट्टयन्मोखव—दालिगाव्यवामो हिन्दूराजाओंके राज्या-  
 मिकेक समयका एक लखन। गायट पमिकेकालमें  
 उनकी कमरमें दृष्टयनी दा जानी होय, इसीमें उनमें  
 नाम पट्टा है। चालुखराजगीय राजा विक्रमवर्षकी  
 गिनालिपिमें इन लखवकी कथा लिखी है। लखव प-  
 ल्खमें राजगण पनेक भूमिदान करते थे।  
 पट्टगाक ( मं० पुं० ) गोकर्मेष्ट, पट्टुषा नामका गाग जो  
 लपित्त-नागक, विटथी धोर वातवर्द्धक माना  
 जाता है।  
 पट्टगानो—धारवाह प्रदेशवामो तक्षुवाय जति। रंगमके  
 वधाट्टे बुननेके कारण इनका यह नाम पट्टा है।  
 इनके किंशो पट्टाकी पट्टो नहीं है, एकमात्र नाम  
 ही इनका जतिमंशानिदेशक है। पट्टाके लख-  
 रज्य वापयमूर्ति, वैश्वीके निजटपनी पायसी धोर  
 धोरभट्टकी मूर्ति ही इनकी प्रधान वद्या है। गाना-  
 वतः ये नंग दृष्टकाय धोर मयन, माधारयतः निहा-  
 यतंकि लैते भीते है धोर खुध पण्णर परिदृष्ट  
 रहते हैं। इनका प्रायादि लखरपीके हिन्दूके प्रेमा  
 होता है। भयो निशामिधोनी है, मट्टने मर्म या  
 मराव कीट्टे हता तक भी नहीं। पैगभूया भी माधा  
 रण हिन्दू मरोया है। पुर्व स्वकी तरङ्क काममें  
 कनेही धोर चायमें बंकेण पंजने है। दिवयो काम,  
 लंगनी, लाक धोर धोरकी वंगनीमें कनेही तरङ्क  
 चायध्व धोर चायमें कंकव तथा गममें धार पट्टनी

० कनडीभाषामें 'पट्ट' मट्टक; अर्ध देवना धोर मट्टाई  
 भाषामें 'शाकी'का अर्थ लखुवाव या लखी है।

है। स्त्रीपुरुष दोनों को 'निष्क' धारण करते हैं। कपड़ा बुनने की इनका जातीय व्यवसाय है। प्रतिदिन सुबह-मे ले कर शाम तक ये परिचर्य करतें हैं। हिन्दूके पर्व-दिन ये लोग कोई काम काज नहीं करतें। ब्राह्मणों पर इनको सतनी श्रद्धा नहीं है, इसीसे ब्राह्मणोंके उपास्य देवताका भी ये लोग विग्रीय मान्य नहीं करतें। ये लोग बहुत लिङ्गायत हैं। विवाह तथा व्रतादि कार्य-में ये लिङ्गायत पुरोहितगो बुला कर उन्हींमें काम कराते हैं। चिकरिस्वामी नामक इनके एक माधारण गुरु हैं जिनका वाम निजाम राज्यके पन्तर्गत सुलतानपुरमें है।

भौतिक क्रिया, भोजविद्या आदिमें इनका हृष्ट विज्ञान है। लड़केके जन्म लेने पर उसको नाडी काट कर उसमें सुवर्ण धाँडिका तीन दिया जाता और तत्र माता तथा जातपुत्र दोनोंको स्नान कराया जाता है। पाँच दिन तक मप रवारेमें पगोच रहता है। पाँचवें दिन धाँडि आ कर पट्टा मूर्त्तिको त्यागना करतो है। अग्निषो माताको उस मूर्त्तिको पूजा करना होतो है। पौछि उपस्थित पाँच मधवाग्रीको चने देने होते हैं। छठे दिन लिङ्गायत पुरोहित आ कर जमोन पर चावलके चूरको पानोमें घोलता और उसमें घाट रेखा युक्त एक चित्र अङ्कित करता है। पौछि उस पर २ पान, १ सुपारी और २ पैसे रख कर जातशिशुको सुनाता है। पन्तर बह पुगोहित जातशिशुके पिता वा माताके बाएँ हाथमें एक लिङ्ग रख उसे चानी, मधु, दूध आर दहीमें नो धार धुनाता है, पौछि उसके ऊपर १०८ बार सफेद सतकी नपेट कर रखता है। सुत समेत लिङ्गको रेशमके बस्त्रमें आवृत कर शिशुके गलेमें बांध दिया जाता है। बाढ़ पुरोहित तीन चार शिशु शरीर-में अपना पैर लगा कर भाशोर्वाद करता और उसे माताको गोदमें सुला देता है। मातां भी पुरोहितको प्रणाम करतो है। तैरब्वे दिन जातपालकको दोनो आ कर पुत्रका नामकरण करती है, इसीमें उसे एक सुरता इनाम दिया जाता है।

विवाहके प्रथम दिन वर और कन्या दोनोंको ही हठनो बोग तेल लगा कर स्नान कराते हैं। पौछि लिङ्गा-

यत पुरोहित, वस्त्राभूषण और भास्वीय कुटुम्ब एक साथ भोजन करते हैं। इस भोजनका नाम है 'परिधानद उता' प्रथात् वर वा कन्याको मङ्गलकामना और मायायें भोजन। दूसरे दिन 'देवफायर्ड उता' (प्रथात् देवताके उद्देश्यवें दत्त भोज्यकार्य) सम्पादन होता है। विवाहरात्रिमें जातिकुटुम्ब एकत्र हो कर विवाहमभारतें उपस्थित होते और जानिके समय उन्हें पान सुपारी मिलतो है; पाँच मधवा स्त्रियाँ जो कन्या का भार पहन करती हैं वे 'पटगिनी' और जो दो पुरुष वरके साहचर्यमें नियुक्त रहते हैं वे 'दयुगिरु' कहलाते हैं। इस दिन जाति मंडल 'गण्ड'को भी निमन्त्रण दिया जाता है। उसे पाँच बार पान और सुपारी उपढोकन-में देना होतो है। विवाहके बाद तीसरे दिन कन्याका पिता वरके हाथमें कपड़ा, चावल, जलपात्र आदि देता है। पौछि वर और कन्या दोनोंको उष्णामन पर बिठा कर लिङ्गायत पुरोहित भागोर्वादमें उनके बिर पर धान फेंकता है, साथ साथ मन्त्र पढ़ कर कन्याके गलेमें मङ्गलमूत्र बांधता है। बादमें रोगनी जला कर दोनोंको ही वरण किया जाता है। यही विवाहका शेष कार्य है। जो सब स्त्री और पुरुष वर तथा कन्याकी परिचर्यामें नियुक्त रहते हैं, वे भी उपयुक्त पाहाय उपहार पाते हैं।

लिङ्गायतोंके तरड ये लोग श्रवको जमोनवे गाड़ देते हैं। जन्म और मृत्यु दोनोंमें केवल पाँच दिन तक प्रगोच रहता है। श्रियाक पार्श्वधर्म भी तीन दिन प्रगोचविधि प्रचलित है। वान्यविवाह और विधवाविवाहमें कोई रीत टोक नहीं है। सामाजिक गोलमाल उपस्थित होने पर धाम्य पञ्चायत द्वारा उनका निबटारा होता है।

पट्टसूत्रकार—जातिविगप। रेशमके कोड़े तथा रेशमके सुवादि प्रस्तुत करना इनका जातिगत व्यवसाय है। पट्टा (म० पु०) १ किमी स्थावर सम्पत्ति विगपः भूमिक उपभोगका अधिकारपत्र जो स्वामिको धोरमें बनाने, किरादेदार या ठेकेदारको दिया जाय।

मासिक धरनी सम्पत्तिको जिस कामके निये और जिन जमीनों पर देता है तथा जिनके विषय आधर

करनेमें उसे अपने वस्तु वापस ले लेनेका अधिकार होता है ये शर्तें हममें लिख दी जाती हैं। माघ की चमकी मध्यराति माघ अठारहें बटने पनामामे यह याचिका या मागिक धन या सामाग्य देने की जो प्रतिज्ञा कराता है उसका भी हममें निर्देश कर दिया जाता है। पट्टा माधारणतः दो प्रकारका है, मियादी या मुदती पट्टा और इत्तमरारी पट्टा। मियादी पट्टेके द्वारा मानिक क्रम नियम समय तकके लिये प्रजाको अपने अधिकारसे वंचित कर दिया जाता है, तब मानिकको उसे वे-टखन कर देनेका अधिकार होता है। इत्तमरारा पट्टे द्वारा मानिक प्रजाको हमेशाके लिये अपना वस्तुके उपभोगका अधिकार देता है। मना यदि चाहे, तो उस जमानेको दूसरेके हाथ देव भा सकता है, हममें मानिक क्रम भी कुछ बाह नही कर सकता। जमींदारोंका अधिकार जिस पट्टे द्वारा नियत समय तकके लिये दूसरेको दिया जाता है उसे ठेकेदारो या मुद्यागिरा पट्टा कहते हैं। प्रजा जिस पट्टे द्वारा अपने मानिकमें प्राप्त अधिकार या उसका अंग विवेक दूसरोंको देता है उसे गिकमो पट्टा कहते हैं। पट्टेकी शर्तोंका खोजात मुखक जो कागज प्रजाको पारने लिखकर मानिक या जमींदारको दिया जाता है उसे कपू नियत कहते हैं। पट्टे पर मानिकका और कपू नियम पर प्रजाका इत्यादि पर चमक होना चाहिये।

६ चूड़ियाँके दोषमें पहननेका एक गहना। १ पोड़ा। ४ कोरि अधिकारपत्र, मन्द। ५ कुत्ता, विजिदाके गलेमें पहनाई जायको चमके या मानाग पादिको बहा। ६ एक प्रकारका गहना जो घाड़ोंके मन्त्र पर पहनाया जाता है। ७ चमकेका कमरबन्द, पट्टा। ८ कम्पा पचमं भाई, धोवो, कटार पादिका यह नेग ला विवाहमें बापपक्ष धरनें दिलवाया जाता है। देशांतके विन्दुपाने यह रीति है कि भाई, धोवा, कटार, मंगा पादिका मजदूरीमेंसे उत्तमा अंग लकी देते जितना पट्टेमें चिन्हादिता कम्पाके रखे पकता है। जब कम्पाका विवाह हो जाता है, तब माता एकम दहना कर उसके पिताने लके दिलवाई जाती है। ८ एक प्रकारको

तनवार जो महाराष्ट्रदेशमें काममें लाई जाती है। १० कामदार कृतियों परका यह कपड़ा जिस पर काम बना होता है। ११ घोड़ेके मुँह परका मन्था मकटे निगाग। यह निगाग तबमेंसे ले कर मर्या तक होता है। १२ पुकपके विरुधे वाल जो पोलिका और गिधे और बराबर कटे होते हैं। १३ यह हलाकार पट्टा जिसमें चवरा म टंको रहती है। १४ चवरा म।

पट्टाचार्ज (मं० पु०) टलिवट्टेमें चमनेवाले प्राचीन पत्तुताकी उपधि।

पट्टाभिरामगाथो—यं लक्ष्मणो एक विख्यात पत्तु। इन्हीं कडे एक गाय यन्त्रोंकी रचना की।  
ग्याय लक्ष् देवी।

पट्टार (मं० पु०) एक प्राचीन देग।  
पट्टारक (मं० वि०) पट्टारे देगे भवः धुमादिभात् पुम्।  
पट्टार-देगभव, पट्टारमें उत्पव।  
पट्टार्या (मं० स्त्री०) पट्टे नुपासने पर्वा योग्या। पट-राना।

पट्टिका (मं० स्त्री०) पट्टिरेव कायति कं-क, छिवां टाप।  
१ पट्टिकात्य लोभ, पठाना लोभ। २ वित्तिका प्रमाथ वस्त, एक वित्त। मन्था कपड़ा। ३ छोटी तल्ला, पट्टिया। ४ छोटा ताम्रपट या चिमपट। ५ कपड़ेकी छोटी पट्टा। ६ रंगमका फीता।

पट्टिकात्य (मं० पु०) पट्टिका पाल्या यत्त्व। रत्नलोभ, पठानो लोभ।

पट्टिकार (मं० वि०) पट्टवस्त्रवयनकारो, रोगमोके कपडे चुननेवाला।

पट्टिकालोभ (मं० पु०) पट्टिका एव लोभः। रत्नलोभ, पठानो लोभ। पट्ट्या—कमुक, मन्कलाभ, सुहृदल, लोचं सुभ, सुहृदल, मोचपत्र, पतिभेदक, गारव, मोत-लोभ, गात्रव, सुहृदल, पट्टा, मासाभगाद, यस्त्र, हृदय-बन्धन, शोचं पत्र, सुहृदल। ४ मका गुण—कपाय, गोगल, वात, कफ, पस्त्र और विपनागक तथा कपुका हितकर है। माधकीके मन्थ महत्तमीप्रक येह है। हममें पाको, लघु, पित्तक, विषातिमार और गोय-नागक गुण माना गया है। (भाष्य०)

पट्टिकावापक (मं० पु०) यह जो लोभ चपन करती है।

पट्टिकावापक ( स० पु० ) वह जो रोगका फोटा बुनता है।

पेट्रिडिगण्डुसु—नि हलहोपवामी कीयजातिकी एक शाखा। ये लोग मसिलोद्रेको उपासना करते हैं, समय समय पर नरवलि भी देते हैं। ये लोग शूद्रदेह दाह करते हैं और पोछे उस भस्मराशिकी गोत्रोकी तरह बना कर लसोमन में गाड़ देते हैं। गो-मांस भी ये लोग खाते हैं।

पट्टिन् ( स० पु० ) पट्टिका लोभ्र, पट्टानो लोघ।  
पट्टिल ( स० पु० ) पट्टो विद्यतेऽस्य पट्ट अस्वयं इत्यच्।  
पूतिकरश्च, पनङ्ग।

पट्टिलोभ्र ( स० पु० ) पट्टिकालोभ्र, पट्टामी लोघ।  
पट्टिलोभ्रक ( स० पु० ) पट्टिलोभ्र स्वार्थे कन्। पट्टिका-लोभ्र, पट्टानो लोघ।

पट्टिम ( स० पु० ) पट्ट गतौ बाहुलकात् टिगच्। अस्व विशेष, यह तन्त्रवारिके जेमा होता है। 'भान्येय धनुर्वेद, वैशम्पातीय धनुर्वेद और शुकनोति इन तीन ग्रन्थोंमें इस अस्त्र का उल्लेख देखनेमें पाता है।

“पट्टियः पुं प्रनाथः स्वात् द्विपारसीयन्त्रं गृहः।

इस्तत्रापवमायुकोमुष्टिः खड्गवहोदारः ॥” (वैशम्पायन)

पट्टिग पञ्च खड्गका सड़ोटर है अर्थात् इसके कांकार खड्गके जैसा होता है। इसके लम्बाईका तीन माप हैं। उत्तम ४ हाथ, मध्यम ३ हाथ और अधम ३ हाथ लम्बा होता है। मुठियाके ऊपर चलानेवालेको कलाइके बंधायके लिये लाइको एक जानो बनो होता है। धार इसके दोनों और और पत्यन्त तोख्य होता है। यह प्राचीन कालका अस्त्र है। आज कल जिसे पट्टा कहते हैं, वह हममें केवल लम्बाईमें कम होता है और सब बातें दोनोंमें समान हैं।

पट्टिमी ( स० पु० ) १ वह जो पट्टिय बांधता हो। २ वह जो पट्टिमसे लड़ाई करता हो।

पट्टिम ( स० पु० ) पट्ट-टिगच्। अस्त्रभेद, पट्टिय, पट्टा।  
पट्टी ( स० स्त्री० ) पट्ट बाहुलकात् डीप। १ पट्टिकालोभ्र, पट्टामीलोघ। २ सनातनधरा, एक गहना जो पगड़ीमें लगाया जाता है। ३ लक्ष्मणारक, तोड़ना। ४ अश्वघोषः स्वस्त वन्धन रज्जु, जोड़ने की रज्जु।

पट्टे ( हि० स्त्री० ) १ लकड़ोको यह लम्बोतरो घोरस घोर चिपटो पट्टरी जिम पर प्राचीन कालमें विद्यार्थियोंको पाठ दिया जाता था और सब चारभिन्न छात्रोंको लिखना सिखाया जाता है, पाटो, पट्टिया, तपती। २ लकड़ोको वह बन्नी जो खाटके टाँचिको लम्बाईमें लगाई जाती है, पाटो। ३ धातु, कागज या कपड़ेकी धञ्जी। ४ कपड़ेको वह धञ्जी जो छाव या अन्य किमो न्यानमें बांधो जाता है। ५ वह उपदेय जो उपदेयक स्वार्थ-भाधनके लिये दे, वह कानिवालो गिचा। ६ उपदेय, गिचा, सिखावन। ७ परधरका पतना, चिपटा घोर लम्बा टुकड़ा। ८ पाठ, मद्यक। ९ मांगिके दोनों औरके कंधोंमें खूब बैठायें हुए बाल जो पट्टोमें टिखाई पड़ते हैं, पाटो, पट्टिया। १० पंक्ति, पांती, कतार। ११ सुतो या जनों कपड़ेको धञ्जी जिसे सर्दों और यकावटमें मचनेके लिये टांगोंमें बांधते हैं। यह चार पांच पंगुल चोड़ो और प्रायः पांच हाथ लम्बो होता है। इसके एक सिरे पर मजबूत कपड़ेको एक घोर पननी धञ्जी टाँकी रहती है जिसे लपेटनेके बाद ऊपरकी घोर कस कर बांध देते हैं। बहुतसे लोग ऐसे हैं जो इसे केवल लाड़में बांधते हैं, पर सेना और पुलिसके सिपाहियोंको इसे सभी ऋतुओंमें बांधना पड़ता है। १२ एक प्रकारकी मिठाई जिसमें चांगनीमें अन्य चीजें जैसे चना, तिल मिला कर जमाते और फिर उसके चिपटे पतले घोर चोकारे टुकड़े काट लिये जाते हैं। १३ ठाठके घोरकी बलिवाँकी पाता। १४ सनकी बुनो हुई धञ्जियाँ जिनके ओड़नेमें टाँट तैयार होते हैं। १५ कपड़ेका और या किनारी। १६ वह तपता आ नावके बांधों बीच रहता है। १७ लकड़ोकी लंबो बन्नी जो छत या छाजनके ठाठमें लगाई जाता है। १८ किसी जमींदारीका उत्तमा भाग जो एक पट्टोदारके अधिकारमें हो, थोकका एक भाग। १९ हिस्सा, भाग, विभाग, पट्टो। २० यह प्रति-रिक्त कर जो जमींदार किमो विषय प्रयोजनके लिये चावग्यक धन एकत्र करनेके लिये पसामियों पर लगाता है, निग, भववाव। २१ छोड़ेकी वह दोड़ जिसमें यह बहुत दूर तक सीधा दीड़ता चना जाय, लंबी घोर सीधी सरपट।

पट्टी—१ यह प्रदेशके जिलापट्टी जिनके एक तहसील । यह पत्ता २५' ३६" से २६' ४' से ३०' पौर देगा ० ८१' ५६" से ८२' २०" पूंके मध्य अवस्थित है । भूवरिमाण ४६० वर्गमील पौर जनसंख्या लगभग तीन लाखकी है । इसमें ८०२ ग्राम नगरे हैं । गधर एक भी नहीं है । इस तहसीलमें मारु पौर मोमती नामकी दो नदी बह गई हैं । तहसीलका उत्तरी भाग टलिन भागमें उपजाऊ है । जिन भूको खेतीवा यहाँ ऊपरकी खेती बहुत होती है ।

२ पत्ता २६' ४' से २६' १०" से ३०' पौर देगा ० ७४' ५०" पूं, नाणोर गधरसे ३८ मोल टलिन-पूर्वमें अवस्थित है । जनसंख्या प्रायः ८१०० है । ७वीं गताष्टीमें प्रतिशत पानपरिप्राप्तक युवकयुविका चीनयती नामसे इस नगरका उल्लेख कर गये हैं ।

याने ग माहाद्वेने निपा है, कि यह नगर मन्दाट, चक्रवर्तके समयमें बसाया गया था । किन्तु चक्रवर्तके पतने कृपायुने यह परगना खोले मोरर जोहरकी टाल किया था । चतुलकजल इन स्थानकी पट्टी-देवतपुर नाममें उल्लेख कर गये हैं । यहाँ जो बड़ी उड़ी कर्म है वहाँ स्थानीय अधिवासिण 'नोगज' या नोगज कहा करते हैं । इनका विश्वास है, कि लहड़ाकार राक्षस महान मनुष्याण लाल कर्ममें गाड़े गये हैं । उत्तर-पश्चिम भारतमें इस प्रकारकी पत्तेक कर्म देखो जाते हैं । उन्हें देख कर अनुमान किया जाता है, कि गजनीयति मरु-भूटके समयमें जो मरु गाजी बना मारी गई थी, उन्हेंकी कर्मके ऊपर चक्रवर्तके समयमें स्थापित किया गया था ।

युवकयुविका यहाँ मानुमार पानयती जिनके परिधि १२१ मोल थी । गजराज कनिष्कके समयमें भी इस नगरका उल्लेख पाया जाता है । मल राजाके पान पति-प्रियेके रहनेके लिये यह स्थान पसन्द किया था । पान-परिप्राप्तकने निपा है, कि भारतपट्टीमें वहाँके पसन्द फल नहीं था । पानवासिण यह ही एक फल इन देगमें पाये थे ।

नगरके चारों पौर प्राचीनपरिचित पौर नभे

यहाँ १८३८ तक निर्मित है । नगरमें २०० गज उत्तर पूर्वमें एक प्राचीन जिला के जो पानी सुनिम पौर परिचित निवासायाममें परिचित हो गया । यहाँके अधिवासी साधारणता यन्त्रिण हैं । अधिकांश मनुष्योंने बौद्ध-श्रद्धाका अवलम्बन किया है । इ जामोतका एक परि-माणभेद, जामोतकी एक माप ४ इन्चभेद, एक प्रकारका शंख ।

पट्टीकाष्ठ—मन्दाट प्रदेशके कोषोन जिलानाममें एक प्राचीन ग्राम । यह सिधरमें ४ कोम दूरमें अवस्थित है । यहाँके निकटवर्ती यन्त्रिण पत्तेक देवमन्दिर देखे जाते हैं ।

पट्टीकोण्डा—१ मन्दाट प्रदेशके कर्नूल जिलेका एक तालुक । यह पत्ता १५' ०" से १५' ५२" से ३०' पौर देगा ० ७०' ०" से ७०' १' पूंके मध्य अवस्थित है । भूवरिमाण ११२४ वर्गमील पौर लोकसंख्या प्रायः १४३०१३ है । इसमें १०४ ग्राम नगरे हैं, गधर एक भी नहीं है । १८०१-०८में यहाँ भारी पकान पड़ा था । तुहमन्दा पौर हिन्दी नामकी दो नदी इस उपविभागमें बहती हैं ।

२ एक उपविभागका एक मठ । यह पत्ता १५' २४' ०" पौर देगा ० ७०' १' पूंके मध्य अवस्थित है । जनसंख्या चार हजारमें ऊपर है । यहाँ १८२५-६०में पट्टीके मेलापति मर टामम मरुकीकी जगमें शय्य हुई थी । इनके स्मरणार्थ यहाँ कूप पौर टोले बनाये गये हैं ।

पट्टीदार ( मं ५० ) १ यह स्थान जिसका किमो मन्वसिमें हिन्दुमा -ी, हिन्दुदेदार । २ यह स्थान जो किमो विषय-में दूरीके बराबर अधिहार रचना को, बगानका अधि-कारी । ३ मंयुक्त मन्वसिने पं गविगयका नामो, पट्टी-दारोके मानिकीतिमि एक । ४ हिन्दुमा बटार्थके लिये भद्रका स्मरिका अधिहार रगनेवाला ।

पट्टीदारो ( हिं ५० ) १ पट्टी रोमिका भाव, बद्धने हिन्दुमे होता । २ यह जमीदारोंके जिनके बहुतमे मानिक होने पर भी जो अधिभक्त मन्वसि मसभा, जामो है, माईपारा ।

पट्टीदारो जमीदारोंमें पत्तेक विभाग पौर उपविभाग होने हैं । पत्ता विमान पौर पौर उत्तर-पत्ता १५' २४' ०" से ३०' पौर देगा ० ७०' ०" से ७०' १' पूंके मध्य अवस्थित है ।

विभाग पट्टी कहलाता है। प्रत्येक पट्टीका मालिक अपने हिस्सेकी जमीनकी सतत्त्व-व्यवस्था करता और मरकारो कर देता है। परन्तु शिमो एक पट्टीमें माल-गुजारी बाकी रह जाने पर वह सारो जायदादमें वसूल को जा संकतो है। प्रायः प्रत्येक थोकमें एक एक नंबर-दार होता है। जिस पट्टीदारोको सारी जमीन हिस्से-दारीमें बाँट गई हो उसे पूर्ण पट्टीदारो और जिसमें कुछ जमीन तो उनमें बाँट दी गई हो और कुछ मरकारो कर तथा गाँवकी व्यवस्थाका खर्च देनेके लिये भास्केमें हो चलन कर लो गई हो उसे अपूर्ण पट्टीदारो कहते हैं। अपूर्ण पट्टीदारोमें जब कभी बसग को हुई जमीन-का मुनाफा मरकारो कर देनेके लिये पूरा नहीं पड़ता, तब पट्टीदारोंके मिर पर बख्यायो कर लगा कर वह पूरा किया जाता है। ३ पट्टीदार होनेका भाव, हिस्से-दारी।

पट्टीवार ( हि० कि० वि० ) १ इस प्रकार जिसमें हर पट्टीका हिस्सा अलग अलग भा जाय। ( वि० ) २ जो पट्टीके भेदकी ध्यानमें रख कर तैयार किया गया हो। शहीग ( स० पु० ) १ महादेव, शिव। २ अस्त्रभेद।

पट्टिय देवो।

पट्टेश्वरम्—मन्द्राज प्रदेशके तञ्जौर जिलात्संगत एक ग्राम। यह कुम्भकोणसे ३३ मील दक्षिण-पश्चिममें अवस्थित है। यहाँ एक प्राचीन गिद्यमन्दिर है जिसके गार्भमें गिलाफसक देखा जाता है।

पट्ट ( हि० पु० ) १ एक लानो वस्त्र जो पट्टीके रूपमें बुना जाता है। इस प्रकारका कपड़ा काश्मीर, पश्मीडा आदि पहाड़ो प्रदेशोंमें तैयार होता है। यह खुब गरम होता है, पर लान इसका मोटा और कड़ा होता है। २ धारीदार, एक प्रकारका चारखाना। ३ एक, तोता, सुवा।

पट्टकोट—१ मन्द्राज प्रदेशके तञ्जौर जिलात्संगत एक उपविभाग। यह अक्षा० ८° १८' से १०° ३५' उ० तथा देशा० ७८° ५५' से ७८° ३२' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ८०५ वर्गमील और जनसंख्या लगभग २८५८८४ है। इसमें १ शहर और ७८२ ग्राम लगते हैं। विद्या-गिष्णामें यह तालुक बहुत पौष्टि पड़ा हुआ है।

२ उक्त तालुकका एक शहर। यह अक्षा० १०° २५' उ० और देशा० ७८° १८' पू०के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या मात हजारमें ऊपर है। नगरके चारों ओर एक कारुकार्यविगिट प्राचीन गिद्यमन्दिर और तत्सम्बन्धन एक गिलानिवि है। नगरके उपजण्डवर्ती महा-समुद्रम् नामक स्थानमें एक और मन्दिर है। यहाँ एक प्राचीन दुर्गका ध्वंसावशेष देखनेमें आता है। १८१५ ई०में फरामीके ऊपर अङ्गरेजोंकी जयके उपलक्षमें तञ्जौरराज सरभोजीने प्राचीन दुर्ग पर एक नूतन दुर्ग बनवाया। इस दुर्गके अभ्यन्तर एक फलक है जिसमें वीनापाटके अधःपतन और अङ्गरेजोंकी जयकी घाती लिखी है। शहरमें तांबेके बरतन, चट्टाई और मोटे कपड़े प्रसृत होते हैं।

पट्टभट्ट—दाक्षिणात्यवासी एक कवि। प्रसङ्गरत्नायलो नामक उनका काव्य पढ़नेसे मान्य होता है, कि उन्होंने राजा सि० हर्षपूके अश्वमेधसे १३३८ शकमें उक्त ग्रन्थकी रचना की। वे धार्पुस वर्गयोग ब्राह्मण थे। राज-मासादमें रहनेके लिये उन्हें मल्लोपराजसे ४० शोस दूर काकास्वानोपुरी नामक स्थान मिला था।

पट्टरु—मन्द्राज प्रदेशके कडवापा जिलात्संगत एक गण-ग्राम। यहाँ इन्द्रनाथ स्वामीका एक प्राचीन मन्दिर है। लोगोंका विश्वास है, कि कनियुगके आरम्भमें स्वयं इन्द्रने इस मन्दिरका बनवाया था। वे यह भी कहते हैं, कि इस स्थानके साहाय्यसे सम्मन्थमें विभ्रत विवरण ब्रह्माण्डपुराणमें लिखा है। इसकी सिवा यहाँ दो और भी प्राचीन मन्दिर देखे जाते हैं। गदाधर स्वामीके मन्दिरके दक्षिणाग्रमें जो दो मन्दिर और एक मण्डप बने हुए हैं, प्रवाद है, कि वे बोल राजाघोषके कीर्तिस्तम्भ हैं।

पट्टेपहाड़ ( हि० पु० ) कुशतीका एक पेश। यह पेश उम समय चित करनेके लिये काममें लाया जाता है जिम समय जोड़ कुटलिया टिक कर पट, पड़ा हो और इस कारण उसे चित करनेमें कठिनार्ह पड़ती हो। इसमें उसके एक हाथ पर जोरसे घाय सारी जाती है और साथ ही उसी आँधको इस ओरसे खींचा जाता है कि वह उलट कर चित हो जाता है। यदि बाप काँटि

हाथ पर मारो जाय, तो शरिं जाय और यदि हाथ हाथ पर मारो जाय तो दाहिनी जाय खोजनी पड़ेगी।

पट्टेबैठक ( लि० पु० ) कुम्होका एक वि० । हममें जोड़का एक हाथ पठनी जाचिंमिं दबा कर चौर चयना एक हाथ हमको जाचिंमिं जान कर चयनी जातोका अन् दैते हुए हमे धिय कर कोक दिशा जाता है ।

पट्टेग्राम—मन्दाज प्रदेशके मोटावरी जिनाकागत एक ग्राम । यह मोटावरी नदीके समीप एक छोटे द्वीपमें पहाड़के ऊपर अवस्थित है । यहां प्राचीन चार मन्दिरोंमें चार मिमानिदि हैं । स्थानमाहात्म्य रचनेके कारण दक्षिणात्य-वासियोंके मध्य यह स्थान प्रसिद्ध तोर्यंजानके रूपमें गिना जाता है ।

पट्टेन ( लि० पु० ) १ पट्टेन । २ धवजूक । ३ धव कबूतर को धिनकुल मान, काला या नीला हो चौर जिनके गलेमें एकद कंठा हो ।

पट्टीगंधाय ( मं० पु० ) यह जो टानवट वा टानविपयक पटा निपता है ।

पट्टीनिष्ठा ( मं० स्त्री० ) पट्टे पहाड़्यं अन्ति प्राशोतोति अल-गती एतुन्, टायि इत्वं । भूमिके करपहणका व्यवसायत, पटा ।

पटा ( लि० पु० ) १ तद्वत्, अग्राम । २ मनुष्य पशु प्रादि पर शोबीका यह वधा जिसमें योवनका भागमग हो चुका हो, नयमुचक, ठटंत । शोपाइयोंमें घोड़े, पक्षियोंमें कबूतर तथा उड़ू चौर गरीहवोंमें सपके योवनोमुचयवको पटा कहते हैं । ३ टमदार या मोटापत्ता । ४ रजागु, मोटी नम । ५ कुम्होबाज, लहाना । ६ पिछुके मोचे कमर चौर जांचके जोड़का यह स्थान जहां कुम्हो गिच्छिंमिं मान्म होतो है । ७ एक प्रकारका मोड़ा मोटा मो सुगंधवा चौर रूपवना दोनो प्रकारका होता है । ८ पतनम, मानसपेट खादिकी पटा पर धिन चुन कर बनाई हुई मोट ।

पटापटाइ ( लि० वि० ) गूध इटपुट चौर वलवता ।

पटा ( लि० स्त्री० ) उरिग देतो ।

पटा ( लि० स्त्री० ) यह प्रताप बहरी जो स्याई न हो, पात ।

पठक ( मं० पु० ) पठनीति गठ-पठ्, क् । पाठक, पढ़ने-वाला ।

पठहा ( मं० स्त्री० ) पाठकी चयना, पढ़नेका समय ।

पठन ( मं० स्त्री० ) चयनन, पाठ, पठना ।

पठनोय ( मं० लि० ) पठ-पठनीय । पढ़ने योग्य ।

पठमन्त्रो ( मं० स्त्री० ) त्रोरामकी चतुर्थशक्ति ।

इतका म्यामांग गृह पठम है चौर मान समय एक दिनके बाद है । इसका ध्यान वा लक्षण—

“सिद्धो गतो वायवरीतो नैत्रुवां तन्ने बदगो वपुस्तिगुप्था ।  
भारधामवना विववा च महता विपुर्गामी पठमत्रोदम् ॥”  
( बंगोतरागो )

पठान—महत्प्रदोय धर्मोत्थो एक प्रधान जाति ।

‘पठान’ शब्दको उत्पत्तिके सम्बन्धमें पत्तिका मतमिद है । डाक्टर बेल्लू ( Dr. Bellew ) साहब कहते हैं, कि पठान शब्दकी उत्पत्तिका निर्णय करनेमें यदि प्राचीनमे इतका अनुसन्धान करना होता है । पठान शब्द पारसी वा पारसी शब्द नहीं है, यह पद्यमान-देशीय ‘पुण्डाना’ शब्दका हिन्दी रूपमें ग मास है । पुण्डु शब्दवा नामक स्थानके लोगोंकी पुण्डन चौर वहां की प्रचलित भाषाको पुण्डा या पुण्टो कहते हैं । पुण्टो शब्दका मूलन पयं ज्या है, जोक ठीक मान्म नहीं । पर पुण्ड शब्दका पयं गोल वा छोटा पहाड़ है, इसका फारसी प्रतिशब्द ‘पुण्ट’ है ।

इसप्रकारके चार गो पयं पठमं पीक पतिहामिक हेरोदीतम अल स्थानको पाकटिया वा पाकटियाहा ( Paotya, Paotyaca ) नामसे उल्लेख कर गये हैं । अकालिगस्तानके पुर्यांममें पत्तिका पचरके उच्चारण-कालमें पतिहामिके पतिहासो ‘प’का व्यवहार किया करते हैं जिसमे पुण्डन शब्दका उच्चारण पुट्टम होता है । पतिहासो पुण्डन चौर हेरोदीतम-प्रकृत पाकटिया ( Paotya ) शब्द एक है चौर एक स्थानके पतिवा-सियोंके लिये बहुत हुआ है ।

प्रायुनिक संसिद्धीका कहना है, कि मान (Saul) के पिता केन, वा कियोम ( Kain or Kioh )-के संग-में पठान लोग उत्पन्न हुए हैं । पोगर मरुस्थलके केन के नामसे ज्ञान हो कर उनके पठानकी उच्चारि दो चौर

अपनी सन्तान सन्तानिकी तत्प्रवृत्ति त धर्म पर चलने-  
की परमाया । इसीसे अनुमार उनको सन्तान सन्तानि-  
गण 'पठान' कहलाने लगी । फिर ब्रह्मदेरी लोगोका  
कहना है, कि अफगान शब्दका अर्थ खियामान है ;  
लेकिन कुछ लोग इस सिद्धान्तको समीचीन नहीं मानते ।  
गान्धार देशका एकांश अश्वक है । पञ्जाबके लोग  
कुमा वा कायुन नामक स्थानके अधिवासियोको उक्त  
देशमें उल्लङ्घ अश्व मिलनेके कारण अश्वक देशवासी  
कहते थे । अश्वकमन्दरके समकालवर्ती ग्रीक ऐति-  
हासिकगण 'अश्वकानि' वा 'अश्वकैनि' शब्दका  
व्यवहार कर गये हैं । कोई-कोई समझते हैं, कि  
अश्वकैनि और अफगान वा अफगान एक ही शब्द है ।  
कोई-कोई हिन्दो शब्द पठसे पठान शब्दको उत्पत्ति  
वतनाते हैं ।

परगानियोंके मध्य किंवदन्ति है, कि उनका आदिम  
वासस्थान निरिया देशमें था । इनके पूर्वपुरुषको जब बल-  
नासर ( Nebuchaduzzor )-ने कैद कर पारस्य तथा  
मिडियादेशके विभिन्न स्थानोंमें निर्वासित किया, तब वे  
यहांसे धीरे धीरे घोर देश तक फैल गये । यहांके अधि-  
वासी इन्हें बनि-अफगान वा बेनी-इस्त्राएल अर्थात् अफ-  
गान वा इस्त्राएल सन्तान कहते थे । एमदूसका कहना  
है, कि इस्त्राएलोकी जो दस जाति कैद हुई थीं, वे छोडि  
पर्सोरेय नामक स्थानको भाग गईं और पर्सोरेयदेश हो  
वत्तमान समयमें हजारा प्रदेश नामसे प्रसिद्ध है जो घोर  
प्रदेशका एक अंशमात्र है । तबकाल ईनासिरो नामक  
शब्दमें लिखा है, कि घोरदेशमें संशयोवर्गके राजत्वकालमें  
बेनी-इस्त्राएल नामक एक जातिके लोग रहते थे जिनमेंसे  
अधिकार्य वाणिज्यकार्यमें लगा रहता था । यरवर्ष  
साहस कहते हैं, कि ये यहूदीवर्गके थे, यहूदियोंके  
आचार-व्यवहारके साथ इनका आचार-व्यवहार बहुत  
कुछ मिलता मिलता था । विपदसे बचनेके लिये प्राण-  
हत्या करके रक्तसे धरते धारदेशको रंगाना, देशोद्देशमें  
वलिदान देना, धर्मनिन्दाकारियोंको हत्या करना,  
सामयिक भूमिदान आदि अनेक आचार-व्यवहार दोनों  
ही जातिके मध्य प्रचलित हैं ।

पञ्जाबके पश्चिम क्षीमाख्यत पठानोंके मध्य ही समाज-

बन्धन प्रति दृष्ट है । वलूचियोंको अवेजा पठानोंके सम-  
एक अर्थोके लोगोका समावेश देखा जाता है अर्थात्  
विभिन्न वर्णोका समावेश नहीं है । मैयद, तुर्की और  
अन्यान्य अर्थो पठानोंके मंस्त्रमें धाने पर भी इनके  
साथ विनकुल मंस्त्रित नहीं हो सकते । अनेक पिटकुल  
पठान नहीं होनेपर भी वे मालकुनके मंस्त्रयमें अपनेको  
पठान वतनाते हैं । पठानोंको मल्लिक अर्थोके मध्य भिन्न  
भिन्न सम्प्रदाय हैं । प्रत्येक सम्प्रदायके सरदारका नाम  
है मल्लिक या मल्लिक । अनेक जानियोंके मोतर एक एक  
शाखा है जिसे खा, खिन वा प्रधा-अंश कहते हैं । इन  
खां खिखके मल्लिकका नाम खां है जिसके ऊपर समस्त  
शाखाओंका कर्त्तृत्वभाव सौंप रहता है । स्वजातिके  
ऊपर प्रभुत्व कायल्व रहने पर भी उसे उत्तमो चमता नहीं  
है । शुद्धवधका भार और अन्यान्य जातिके साथ सन्धि-  
शतका प्रस्ताव उसीके हाथ है । जिरगा नामक  
मल्लिकोंकी प्रतिष्ठित एक सभा है जिसके हाथ प्रकृत  
चमता रहती है । अंगवाचक शब्दमें खिन वा जाई यह  
शब्द जोड़ कर एक एक जाति वा सम्प्रदायका नामकरण  
हुषा करता है । मुळट्ट, 'जाई' शब्दका अर्थ है सन्तानि  
वा अंग और अरबो 'खिन' शब्दका सभा वा सम्प्रदाय-  
वाचक । ये नाम सभी समय यथावयवरूपसे व्यवहृत गर्हो  
होते । एक नामसे भिन्न जाति और सम्प्रदायका भी बोध  
होता है । ये सब नाम इस प्रकार मिश्रित हो गये हैं  
कि अदेगिकगण नाम द्वारा सम्प्रदायनिर्णयकालमें कभी  
कभी भ्रममें पड़ जाते हैं । अनेक जातियोंने प्राचीन पूर्व-  
पुरुषोंके नामका परित्याग कर अपने जातक आधुनिक पूर्व-  
पुरुषोंके नाम पर अपने सम्प्रदायका नाम रख लिया है ।  
इस प्रकार एक जातिके मध्य विभिन्न सम्प्रदायको श्रुति  
हुई है । अंगरेजो अधिकांशके मध्यस्थ विन्धुनदोको  
उपस्थकालमें सोमास्त प्रदेशस्थित पठानोंको अनेको जमीन  
है । जो सभ हिन्दू इनके पठान जमीन से कर कर्मकार्य  
करते हैं उन्हें ये लोग अश्व व्यवसायके हिन्दूको नाम-  
से पुकारते हैं । जिन सब हिन्दूधर्मि सुसलमानो धर्म  
पहण किया है, वे भी इसी नामसे पुकारे जाते हैं ।

गत लोकगणनामें इस प्रदेशके पठान निम्नलिखित  
विभागोंमें विभक्त किये गए हैं ।





शब्द तुर्की 'गिनजो' शब्दमें उत्पन्न हुआ है, 'गिनजो' शब्दका अर्थ है तनवारधारी। ये लोग घोर प्रदेगके मियावन्ध गिरिमालामें रहते थे। अन्त चलाना इनका जनिगत व्यवसाय था। यहाँ वष जानेके कारण ये लोग पारसिकोंके साथ मिल गये।— गिनजाई शब्दका स्थानीय उच्चारण गान्जो है। मङ्-सूद गल्लेनी जय भारतवर्ष पर आक्रमण किया था, तब ये लोग उनके साथ आदि थे। पंछे जलानावाट-में ले कर 'विलान-इ-गिनजाई' तकके समस्त प्रदेगों पर इन्होंने अधिकार जमा लिया। घाठवों शत छोटों प्रारम्भमें ये सिद्धोक्षी हो कर बेसमासक परदार-के अधीन कन्दहारमें प्रतिष्ठित हुए और पीछे उन्होंने पारस्य देश तक धावा बोल दिया। अनन्तर पारस्यधि-पति नादिरशाह इन लोगोंको अपने देश लाये। प्रच-लित किंवदन्ती है, कि शाह रुमेनके पिताने अपने कन्याका धर्म नष्ट किया था, इस कारण लोग रुमेनके पुत्रको गिनजो अर्थात् घोर-पुत्र कहा करते थे। उसीमे गिनजाई शब्दकी उत्पत्ति हुई है।

गिनजाई पठान साधारणतः अन्यान्य जातियोंके मस्त्रधर्म धाना नहीं चाहते और उनका आचार-व्यवहार भी अफगानिस्तानके अन्यान्य जपतीय अधिवासियोंके आचार-व्यवहारमें अन्तर्गुल भिन्न है। गिनजाइयोंके मध्य कोई कोई सम्प्रदाय साममें आ कर हाथियाय-अथवांश्चनपुत्रक वस गया है। किन्तु इस जातिके अधिकांश मनुष्य नामा स्थानोंमें घूम घूम कर जोवन-यात्रा निर्वाह करते हैं। लपिजोया गिनजाई लोग अन्त-कलहप्रिय होते हैं और अपने तथा अन्यान्य जातिके मध्य अक्षमर लड़ाई भ्रगहा किया करते हैं। ये लोग देशमें बड़े हन्दर होते हैं। देशको गठन और सन्वीयके सम्बन्धमें ये लोग अफगानिस्तानको अन्यान्य जातियोंके किसी अर्थमें कम नहीं हैं। ये अत्यन्त प्रतिहि सा-परायण होते और युद्धशानमें अग्रगण्यी तरह व्यवहार करते हैं। ये लोग भीड़के पगमसे मोटा मलोचा तथा अन्यान्य पगमोने प्रशुत करते हैं। गिनजाई जातिभूक्त अनेक व्यक्तियुक्त पगिया, भारतवर्ष और अफगानिस्तानमें

मत्र जगह व्यवसाय करते हैं। इनमें नियाजी, नासुर, खरोटी और मुजेमान खेल ये लो व्यवसायजीवो हैं। इसीमें इन्हें पौविन्द, लवानो वा मोहानो कहते हैं।  
घोरगस्ति पठान—घोरगस्ति शब्द घिरगिस्त वा अरगस्त शब्दका अर्थ है। पठानवंशके आदिपुरुष कंसके छतोप पुत्रका नाम घिरगिस्त वा अरगस्त था। उक्त शब्द गिरगिस्त वा घिरगिस्त शब्दका रूपान्तर मात्र है जिसका अर्थ होता है 'प्रान्तर भ्रमणकारी'। इनमे अनुमान किया जाता है कि तुर्किस्तानके उत्तरांगमे ये लोग पाये हैं।

घोरो पठान—घोरके पूर्ववर्ती घोरे देशमें इनका आदिम वासस्थान था, इस कारण उक्त पठानोंको मिलो है।

काकर पठान—बेलोसाबजका कहना है, कि काकर पठान शक्य शनभूत हैं और रावलपिण्डो तथा भारतके अन्य न्य स्थानोंके अधिवासो गोरक प्रथवा गोखरंके एक वंशोय हैं। अफगानिस्तानके प्रचलित प्रवादक अनुसार काकर अरगस्त पौत्र अर्थात् अरगस्तक इतीय पुत्र दानोंके वंशजात थे। उक्त सम्प्रदायन्य पठान लोग जो राजपूत वंशजात माने गये हैं लो एक प्रकारसे ठाक है। कंसके प्रथमपुत्र मारावनक टा पुत्र थे, शार्धन और छट्टरून। ये दानों नाम सूर्य और हन्य शब्दके अर्थ हैं, यह साक माफ भनकता है। पीछे ये दानों नाम रूपान्तरित हो कर अशकम नरकुहान और खटकुहान आख्यायान हुए हैं। अशकगुहानने जय गजनी और कन्दहार तक अपना राज्य फैला लिया था, तब उक्त मत कुछ भी अर्थव्यव नहीं है।

काजिमवान पठान—अक्षम पर्वतके पूर्वमान्-स्थित प्रदेशमें इनका आदि वासस्थान था। एक समय इनमें अधिकांश पारस्यधिपतिके अन्ताराजो मन्दल-भूक्त थे। ये लोग तागर जातिके हैं। नादिरशाहने जय भारत पर आक्रमण किया, तब काजिमवान पठान उनके मन्दलभूक्त थे।

सुगल सम्प्रदायके समय अनेक राजमन्त्री काजिम-वास जातिके थे। सम्प्रदाय घोरगुहानके विख्यात मन्त्री मीर सुमना उनके अन्ततम थे। एक प्रकारको लान

श्रीगो विर पर धारण जानिके कारण से श्रीगो जाति-  
 योग कल्पयति है । धारणप्रयोग श्रीगो-राजसूत्रमें  
 प्रतिज्ञावादे वम प्रवक्षा प्रवक्ष्यतिः निष्ठा-भक्त्या-  
 वा ददु एक विनियोगिक्त है ।

पञ्चम पठान—श्रीगो विरिहण्टके समुपववा धारण-  
 गठोके व-मनो-मर्त्तिये प्रवेग वनका धाममान या । ये  
 श्रीगो यमो धारण प्रवक्ष्यतेति विमल है—साट्टुजाई,  
 वागोजाई, ईशारजाई और निवारजाई । इनकेमे वागो-  
 जाई मन्वदाय से मवति जलमशापी है ।

षष्ठक पठान—षष्ठकके वंशोद्भव होनेके कारण  
 दमका यह नाम पड़ा है । षष्ठकके दो पुत्र थे मुहंमान  
 और वृत्ताक । मुहंमानके वंशधरोको मुहंमानो कहते  
 हैं । मुहंमानके पुत्र मराईने इतनी प्रतिपत्ति प्राप्त की,  
 कि दो प्रधान मन्वदाय 'तरिन्' और 'तरजाई' क्योंकि  
 नामसे पुकारे जाते हैं । षष्ठक पठान माधारयका सुप्री  
 और वायंवातु जाते हैं । पञ्चम पठान प्रातिगोमे  
 इतरा पाहनि और वाधारमे प्रहण पन्ना वदुमा है ।  
 ये श्रीगो मातिसय मुदविष होने और निहटगर्भी पञ्चम  
 प्रातिगोमे मर्षटा मुदविषवादि विगः करने हैं । कुर  
 वागमाय और कुट कुमिजायमे पचना गुमारा जनाते  
 हैं । मोयल और वृमार प्रदेगके मन्व-प्यवमायको षष्ठक  
 पठानोका एक प्रवक्ष्यका नाम व्यवमाय कल्प मकते हैं ।  
 ये श्रीगो ममो सुषो-मन्वदायमुक्त हैं ।

श्रीगो पठान—दिक्के श्रीगोमंशोय पठान प्रवक्ष्यते  
 धर्मदेवोके पन्नागत है । श्रीगो पठान प्रधानतः प्यव-  
 मायमोवा है और भारतवर्ष, पञ्चमामिह्यम तम  
 मन्व पमिया इन कई एक प्रदेशोंमें व्यवमाय 'काय' करते  
 हैं । प्रवक्ष्यमानके पन्ने ये श्रीगो वृत्ताका और वृत्ताका  
 पन्वदाय, मीव, उदु, मवादिपम जाते और श्रीगुप्त परि-  
 धार मदिन मन्मोके पुत्र स्थित प्राण्योमे ममानत होने हैं  
 तथा इहाँके काहर तथा वको। देग कोरे दुप मुहंमान  
 प्रवक्ष्यमानको वर भर देवा-रमाइक को विमये पाते  
 हैं । यहाँ को-पुवादि तथा पन्नादि को रव कर पन्वदाय  
 कटोको वेड पर म्पदते और मुममान, राकनुमाना,  
 म्पकोर, पन्वपव, दिडो, वाडनुव, कागा और पट्टा  
 मक मर्ष के पन्ने चर्च जाते हैं । वममहाका पाने पर

ममो वरट्टो को पुत्रं पय होने दुप मन्मो और विमान-  
 व गिनवाइके निहटगर्भी मर्षदेग श्रीगो है । पन्ना-  
 रम्ये भारतमे मवते दुप पन्वदायको मे कर ये पन्मामि-  
 ह्यम और मन्वदायारे पन्ने म्पमानोंमे चर्च जाते हैं ।

मन्वदायजाई—श्रीगोमन्वदाई प्रातिगो मन्वदाय  
 मन्मे वट्टा है । म्पमानका मन्ममान मन्वदाय वंश  
 इमो मन्वदायका है ।

श्रीदिवा पठान—श्रीगो का पन्वट्टु, मन्मया मन्मक प्रदेग-  
 को विदेगिगन 'रो' कहते हैं । 'रो' मन्मे पर्वत और  
 श्रीदिवामे पर्वतमामोका बोध होता है । वन्ममान  
 श्रीदिवाकण्टका नाम मन्मूषं वापुनिका है । १०००  
 ई०में वाडगाए वीरठुमेवकी म्पुत्तु, वाट म्प वरंमो-  
 थामो किन्दुपोंके मन्व विवाट वट्टा वृषा, तर श्रीदिवा  
 पठानोंके मरदाए पन्ने मन्वदाय जाते वम म्पदेग पर  
 पाकमप क्रिया । १००४ ई०में क्पामुनके पन्मलोरा  
 मकका प्यल ननके पमि-कागों वा गया । टा वन्मं पंष्टि  
 ये कादगाए मन्वदाय म्पदेग वरादा दुप । म्पदमें राजि-  
 व रदमम जाके ममय वारंन डेटिंय श्रीदिवाके मन्मवने  
 वा गये । श्रीदिवाके मन्मे ये राजिपट्टे देगोय कोम-प्राति-  
 मन्मूष है । फेरामे विनाहित ही कर वन्मोने पन्माम्य  
 देगोने वापय निष्ठा है । राजि-वा पठान वट्टे माहमा  
 और पन्वदाय वन्मवविष होते हैं ।

तरिन् पठान—ज्जातीय प्रवक्ष्यते, कि प्राया मान  
 धार मो मव पन्ने युधुकाजाई और मागन्व ज्जातीय  
 पठान श्रीगो तर्षक मया धर्मानम म्पदोके किमारे वा  
 कर मान करने मते । उक्त म्पानमें और भा जाये तरिन्-  
 ज्जातीय पठान रहते मे । उनको कर्षित ज्जमोम वदु  
 मर यो और पन्मे मन्ममन्वका श्रीदि देवाय म था ।  
 इमोमें तरिनेति ज्जममः मन्वदाय धार मोमन्व पठानोंको  
 ज्जमोम जान भी है ।

पन्वदायपठान—ये श्रीगो मन्वदायमानके पुत्र  
 इतरके वंशोद्भव हैं । इतरा मन्वदायमन्वदायव्य एक  
 मन्मोका वादिपन्वदाय करके इमो म्पानमें वम मये । प्रायः  
 एक मन्मदाई पन्ने म्पदाय और पन्ममान का इनके  
 ज्जममका प्रधान पन्ममम था । पंष्टि मुदाविनेके प्राय  
 विवाट पन्वदाय को जाते पर उक्त पन्ममोके धार जाते

पानिकी सुविधा न रह गई, तब इन लोगोंने व्यवसाय करना बिलकुल छोड़ दिया। अगो वे लोग खेतों-बारी करके अपना गुजारा करते हैं। सुलेमान पर्वतके पूर्वी किनारे इनका वासस्थान है। इनके मध्य और भी अनेक सम्प्रदाय हैं जिनमेंसे अहमदजाई और गगलजाई यही दो सम्प्रदाय प्रधान हैं। ये लोग निरीह और शान्तिप्रिय होते हैं। बहुतेरे सरकारो पुलिस सेन्धविभागमें नोकरो करते हैं। ये सधके सब सुखीसम्प्रदायभुक्त हैं।

वाजिरो पठान—खटकोंकी दूरीभूत करके सुलेमान पर्वतके पानी पर बस गये। ये लोग सोझाजातीय पठानोंकी एक श्रेणी विभेय हैं। सोझा पठान प्रमा-राजपूतोंकी एक शाखा मानी जाते हैं। प्रायः पांच या छः शताब्दी पहले इन्होंने खटकों पर आक्रमण कर कोहाट उपत्यकामें शाम तक अपना अधिकार फैला लिया। ये लोग समताशाली स्वाधीन जाति हैं, अधिकार एक जगह बस नहीं करते, नाना स्थानोंमें घूम फिर कर अपनी जीविका निर्वाह करते हैं। इनकी आकृति और आचार-व्यवहारमें अन्यान्य पठानोंमें बहुत अन्तर पड़ता है।

यूसुफजाई पठान—नीयत, बुनार, लम्बखवार और राखिजाई उपत्यकामें इनका वास है।

पठानोंका चरित्र और आचार व्यवहार।—सोमान्तवासी और पञ्चायके कतिपय स्थानोंके अधिवासो प्रकृत पठान अत्यन्त अस्मय हैं। ये लोग अति-निर्दय, प्रतिहिंसा-परायण तथा अमहिण्य होते हैं। धर्म और सत्यवादिता किसे कहते हैं, ये लोग जानते तक भी नहीं। अफगान निम्नामघातक होते हैं, यह प्रवाद अन्यान्य जातिके मध्य प्रचलित है। दलसे, बलसे जिअ किमो प्रकारसे कर्ता न हो, ये शत्रुका यिनाश कर ही लासते। जो कुछ हो, इनमें तीन अच्छी प्रथा प्रचलित हैं—(१) शत्रुके शरणगत होने पर उसकी रक्षा अवश्य करनी होगी, (२) अनिष्ट करने पर उसकी प्रतिहिंसा लेना अवश्य कर्तव्य है तथा (३) आतिथ्य सत्कार अलङ्घनीय है। अनित प्रवाद है, कि पठान एक मूढ़कर्तमें देव और एक मूढ़कर्तमें रागव है। सोमान्तवासी पठान जो कई शताब्दीमें अपनी स्वाधीनताकी चणूषामावसे रक्षा करते आ

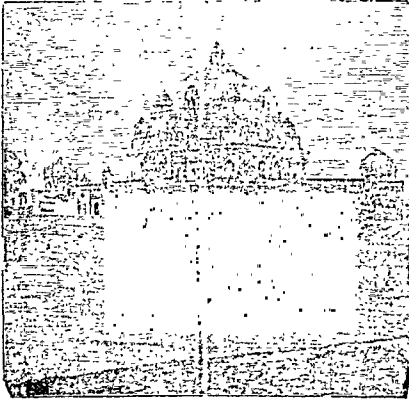
रहे हैं, यह उनकी वीरत्वयुक्त आकृतिमें ही ऐतरेय्यमान है। ये लोग दोर्घाकार और गौरवर्ण होते तथा सुवस्त्रो शीर्षव्यञ्जक होगे हैं। देखनेमें ही ये आज्ञास्वाधीन माने जाते हैं। सोमान्तदेयस्थित पठान बड़े बड़े बाल रखते हैं। इनका पहनावा टोला पात्रामा, टालो चक्रन, छागलनोमनिर्मित कीट, कम्बल वा लमो प्रकारका रेगमो कपड़ा है। पठान स्त्रियों भी टोला पात्रामा पहनते हैं। स्तो-पुरुष दोनों ही अत्यन्त अपरिष्कार रहते हैं।

भारतवर्षिय पठान बहुत कुछ मध्य हैं। इनमेंसे कितने खेतो बारी करके अपनी जीविका चलाते हैं। स्त्रियोंकी सतीत्वरक्षाके सम्बन्धमें पठान विवेक ध्यान देते हैं। इनमेंसे अधिकार विवाद स्तो ले कर हा होता है। स्वजातिमें ही इनको विवाहगादा चलता है। भारतवर्षिय पठानोंके सम्बन्धमें यह यथायथ नहीं होने पर भी सोमान्त प्रदेशके पठानोंके विषयमें ठोक है। इनके मध्य उत्तराधिकारप्रथा महम्मदीय नियमासु-सार न हो कर जातीय नियमासुसार हुआ करता है। अगो दो एक जो शिक्षित बंग हैं वे महम्मदीय आर्इनके अनुसार चलते हैं। इनमें विभिन्न जातिके मध्य भिन्न भिन्न प्रथा प्रचलित है। रोहितखण्डके पठान ही सर्वापेक्षा शिक्षित हैं जिनमेंसे अधिकार अंगरेज गवर्नेमण्टके अधीन राजस्व, पुलिस और अन्यान्य विभागोंके उच्च कार्यमें नियुक्त हैं।

पठान-स्वायत्त और स्थिर।

पठान-राज्यकी जब इस देशमें जड़ मजबूत होगई, तब उन्होंने अर्थनिकायोंको और ध्यान दिया। पहले पहले उन्होंने जयचिह्नमूचक अजमर और दिल्लीमें दो मसजिद बनवाईं। युद्धकार्यमें हमेशा लिप रहनेके कारण वे अहलिकादि प्रयुक्तकार्यमें निपुण शिल्पीकी ला न सके थे। उनका यह अभाव विजितोंके द्वारा ही पूरा हुआ था। अनेक जैन मन्दिरोंकी पठानोंने मसजिदमें परिणत किया। दिल्लीके निकट जो मसजिद थी उसके माय अजमरेकी मसजिदको तुलना नहीं हो सकती। दिल्लीकी मसजिद यद्यपि अभी भग्ना-वस्थामें है, तो भी उसका इत्य अतीव सुन्दर है। यह





शेरशाहका समाधिमन्दिर ।

- ८। कमरुद्दीन तैमुर खाँ १२४५-१२४७ ई०  
 १०। इल्तियार-उद्दीन युजुफको तुमिन खाँ  
 (सुलतान सुप्रिसुद्दीन) १२४७-१२५८ ई०  
 ११। जलालुद्दीन मन्नाउत मालिकजानी  
 १२५८-१२५८ ई०  
 १२। इब्नुद्दीन बलबन १२५८ ई०  
 १३। महम्मद बर्मलन तातार खाँ १२६५ ,,  
 १४। तुमिन (सुलतान मधिसुद्दीन) १२७८ ,,  
 १५। मालिकुद्दीन महमूद  
 (बगदा खाँ) १२८२  
 १६। इकबतुद्दीन कौकबतुद्दीन १२८१-१२८६ ई०  
 १७। गमसुद्दीन अबुल मुजफ्फर किरोजगाह  
 १३०२-१३२२ ,,  
 १८। गयासुद्दीन बहादुरगाह १-१३३५ ई०  
 १९। कटर खाँ १३२६-१३३८ ई०  
 २०। बहराम खाँ १३३५-१३३८ ई०  
 २१। अजोम बल-मुदक १३२४-१३३८ ई०

- बदकी खाधीन पठान-सुलतानगण ।  
 १। फखरुद्दीन अबुल मुजफ्फर सुवारकगाह  
 १३३८-१३४८  
 २। अलाउद्दीन अबुल मुजफ्फर अलीगाह  
 १३५८-१३५५  
 ३। इल्तियारउद्दीन अबुल मुजफ्फर गाजोगाह  
 १३५०-१३५२  
 ४। गमसुद्दीन अबुल मुजफ्फर इलियमगाह  
 १३३८-१३५७  
 ५। अबुल मजाहिद सिकन्दरगाह १३५७-१३८८  
 ६। गयासुद्दीन अबुल मुजफ्फर आज़मगाह  
 १३८८-१३८६  
 ७। सैफुद्दीन अबुल मजाहिद हामजागाह  
 १३८६-१४००  
 ८। गमसुद्दीन १४०१-१४०३

इस्लाम शाहीवंश ।

- ८। नासिरउद्दीन अबुल मुजफ्फर महमूदगाह  
 १४४७-१४६७  
 (६४३ पृष्ठमें देखो)

वित्तिके वसतवसतवसतव ।

वसतव-वसतव वसतव  
( १२२५-१२२६-२०-१२२७ )

वसतव

वसतव

वसतव-वसतव वसतव  
( १२२०-१२२१ )

वसतव-वसतव वसतव वसतव वसतव  
( १२२२-१२२३ )  
वसतव-वसतव वसतव  
( १२२४-१२२५ )  
वसतव-वसतव वसतव  
( १२२५-१२२६ )

वसतव-वसतव वसतव  
( १२२६-१२२७ )

वसतव-वसतव वसतव  
( १२२८-१२२९ )

वसतव

वसतव वसतव

वसतव

वसतव-वसतव वसतव  
( १२२०-१२२० )

वसतव-वसतव ।

वसतव-वसतव वसतव  
( १२२०-१२२५ )

वसतव-वसतव वसतव  
( १२२५-१२२५ )

वसतव-वसतव

वसतव

वसतव

वसतव

वसतव

वसतव-वसतव-वसतव  
( १२२६-१२२७ )

वसतव-वसतव

वसतव-वसतव ।

वसतव-वसतव वसतव-वसतव  
( १२२०-१२२५ )

वसतव-वसतव वसतव  
( १२२५-१२२५ )

वसतव-वसतव वसतव  
( १२२५-१२२५ )

वसतव-वसतव वसतव  
( १२२०-१२२० )

वसतव

वसतव

वसतव-वसतव वसतव  
( १२२०-२०-१२२० )

वसतव-वसतव  
( १२२०-१२२० )

वसतव-वसतव वसतव  
( १२२०-१२२० )

( १२२०-१२२० )

( १२२०-१२२० )

सैयद-वंश

- सैयद-खिज़र ख़ाँ ( १४१४-१४२१ )
- सैयद सुवारकगाह ( १४२१-१४३३ )
- महम्मदबिन् फ़रोद ( १४३३-१४४३ )
- अनाउद्दीन् ( आलमगाह ) ( १४४३-१४५० )

लोदी-वंश

- बहोतलोदी ( १४५०-१४८८ )
- मिहन्दरलोदी निज़ाम ख़ाँ ( १४८८-१५१० )
- इब्राहिमलोदी ( १५१०-१५३० )

- १०। रुकसुद्दीन अबुल मन्नाज़िद बायक गाह १४५८-१४७४
- ११। शमसुद्दीन अबुल मुज़फ़्फ़र यूसुफ़ गाह १४७४-१४८१
- १२। मिहन्दरगाह ( २य ) १४८१
- १३। ज़नाज़तुद्दीन अबुल मुज़फ़्फ़र फ़तेह गाह १४८१-१४८०
- हुसेनी-वंश।
- १४। अनाउद्दीन अबुल मुज़फ़्फ़र हुसेन गाह १४८३-१५२० वा-२२
- १५। नामिहद्दीन अबुल मुज़फ़्फ़र नगरत गाह १५२२-१५३२
- १६। अनाउद्दीन अबुल मुज़फ़्फ़र क़िरोज़ गाह ( ३य ) १५३२
- १७। ग़यासुद्दीन अबुल मुज़फ़्फ़र महमूद गाह ( ३य ) १५३३-१५३०

सूर-वंश।

- १८। शिरगाह सूर १५३०-१५४५
- १९। महम्मद ख़ाँ १५४५-१५५५
- २०। बहादुरगाह १५५५-१५६१
- २१। ज़नाज़तुद्दीन और उमर मुव १५६१-१५६३
- २२। ग़यासुद्दीन

करानी-वंश।

- २३। इज़रात-इ-आला मीर्जा सुलेमान १५६३-१५७२
- २४। ययानिद १५७२
- २५। दाजद १५७३-१५७६

पठानकोट—विधाया और इरावती नदीके मध्य भागमें अवस्थित एक प्राचीन दुर्ग। बहुतांश पशुमान है, कि पठानोंके नाम पर ही इस दुर्गका नामकरण हुआ है।

किन्तु हिन्दुओंके मतमें पठानिया ( नरपूरके राजवंशकी वंशधि )-में इमका नाम पठानकोट पड़ा है। यह प्राचीन दुर्ग अभी भग्नावशेषमें पड़ा है। यहाँ हिन्दु और मुसलमानोंके घने व मद्राष' पाए गए हैं।

पठानिन ( हिं० स्त्री० ) पठानी देखी।  
 पठानी ( हिं० स्त्री० ) १ पठान जातिकी स्त्री, पठान-स्त्री। २ पठान जातिकी चरित्रगत विशेषता, रत्नपात-प्रियता वाटि पठानोंके गुण पठानपन। ३ पठान होनेका भाव। वि० ) ४ पठानोंका। ५ निमक्का पठान या पठानोंमें मन्व्य हो, पठानोंमें मन्व्य रहनेवाला। पठानोलोभ ( हिं० पु० ) एक ज़र्रकी पिड़ लियका काठ और फूल शोषण तथा पत्त और छिन्न रंग बनानेके काममें पाले हैं। यह रोपा नहीं जाता, ज़ेयल ज़र्रली-रूपमें पाया जाता है। इमको छालकी उपातनमें एक प्रकारका पोला रंग निकलता है। यह रंग कपड़ा रंगनेके काममें लाया जाता है। पिज़नोर, कुमाल' और गढ़वालके ज़र्रलीमें इमके लक्ष बहुतायतमें पाये जाते हैं। चमड़े पर रंग पकाने और पथोर बनानेमें भी इमको छाल व्यवहृत होती है।

नियेय विवरण पट्टालोभ शब्दमें देखी।

पठान ( हिं० पु० ) एक पदाङ्गी जाति।  
 पठानन ( हिं० पु० ) म'देशवाहक, दूत।  
 पठानिन ( हिं० स्त्री० ) १ किसीकी कर्हों की ईद यद्य सन्देह पट्ट'वानेके लिये भेजना। २ किसीके भेजनेसे कर्हों कुछ ले कर जाना।  
 पठानर ( हिं० पु० ) एक प्रकारकी घाम।  
 पठि ( हिं० स्त्री० ) पठ-इन् (पविषासुभ्य इन्। तण्, १३१०) पठन, पाठ।  
 पठिन ( मं० वि० ) पठ-क। १ वाचित, क्षतपाठ, लिये पढ़ चुके हैं। २ विज्ञित, पढ़ा लिखा।





पड़पोता ( हि० पु० ) प्रपोत्र, पोतिका पुत्र, पुत्रका पोता ।  
 पड़वेहू—उत्तर थाकूट जिनके पं नूर तालुकके अन्त  
 गंत एक विधवा नगर । कोई कहते हैं, कि यहीं पर  
 कुम्हरीकी राजधानी थी । प्रायः १६ मील घेरेके अन्दर  
 प्रासाद, देवमन्दिर और छत्र आदिके भग्नावशेष पड़े हैं  
 जिनसे नगरकी प्राचीन समृद्धिका यथेष्ट परिचय मिलता  
 है । प्रवाद है, कि कुम्हरी, हूचोलकं पुत्र पड़ोण्डईने इस  
 नगरको विधवा शोर जनम नवशुश्रू कर डाला था,  
 तभीसे इसकी सबब्या सुधरी नहीं है । पड़वेहू नामक  
 यहाँके नूतन ग्राममें बहुत कम लोग रहते हैं । इसी  
 ग्राममें रणुका पीर रामस्वामीों मन्दिरमें गिनालिपि  
 देखी जाती है । १४६८ ई०में उल्कोर्ण शिलालिपिमें  
 'पड़वेहू'का उल्लेख है ।

पड़म ( हि० पु० ) खेमे आदि बनानिके काममें धानिवाला  
 एक प्रकारका मोटो घनो कपड़ा ।

पड़गा ( हि० स्त्री० ) प्रत्येक पक्षको प्रथम तिथि ।

पड़वाना ( हि० क्रि० ) पढ़नेका काम दूसरेसे कराना,  
 गिरवाना ।

पड़वी ( हि० स्त्री० ) बीसाख या जठ मासमें घोड़े  
 जानिवाली एक प्रकारकी रूख ।

पड़ाहन ( हि० स्त्री० ) पंढान देखो ।

पड़ाका ( हि० पु० ) पटाका देखो ।

पड़ागा ( हि० क्रि० ) झुकागा, गिराना ।

पड़ापड़ ( हि० क्रि० वि० ) पदापट देखो ।

पड़ाय ( हि० पु० ) १ गाविसमूहका यात्राके बीचमें अथ-  
 वधान । २ यह स्थान जहाँ यात्री ठहरते हैं, चडी,  
 टिकान ।

पड़ागो ( सं० स्त्री० ) पत्तागृह, टाकका पेट ।

पड़िया ( हि० स्त्री० ) भैंसका मादा बच्चा ।

पड़ियाना ( हि० क्रि० ) १ भैंसका भैंसेसे अंभोग हो  
 जाना, भैंसाना । २ भैंसको मेथुनार्थ भैंसेको समीप  
 पहुँचाना ।

पड़िया ( हि० स्त्री० ) प्रत्येक पक्षको प्रथम तिथि, पड़वा,  
 प्रतिपदा ।

पड़ुह ( हि० पु० ) पड़क देखो ।

पड़ोरा ( हि० पु० ) पररठ देखो ।

पड़ोम ( हि० पु० ) १ प्रतिवेग क्रिमोके समीपके घर ।  
 २ क्रिमो स्थानके समीपवर्ती स्थान ।

पड़मो ( हि० पु० ) प्रतिवामो, प्रतिवेगो, पड़ोममें रहने-  
 वाला ।

पड़ोमो ( हि० पु० ) पड़ोमी देखो ।

पड़ुष्टभि ( सं० पु० ) असुरभेद, एक राक्षसका नाम ।

पड़ुथोग ( सं० स्त्री० ) १ पाटवभन । २ पाटवभनयोग्य  
 रज्जु ।

पड़ुन ( हि० स्त्री० ) १ पड़नेकी क्रिया या भाव । २ मग्न,  
 जादू ।

पड़ना ( हि० क्रि० ) १ क्रिमो पुस्तकका लेख आदिको इस  
 प्रकार देखना कि समझमें लिखो यात समझमें हो जाय ।

२ मध्यम स्वरसे कहना, उच्चारण करना । ३ क्रिमो नेत्र-  
 के अक्षरानि सूचित शब्दोंको सुँहसे बोलना । ४ नया पाठ  
 प्राप्त करना, नया सबत लेना । ५ स्मरण रखनेके लिये

क्रिमो विपरीत बार बार उच्चारण करना । ६ मन्त्र  
 फूँकना, जादू करना । ७ गिष्ठा प्राप्त करना, अध्ययन  
 करना । ८ ताते, भेना आदिका समुच्चोके भिन्नाये हुए

शब्द उच्चारण करना । ९ एक प्रकारको मकनो ।

पड़ना देखो ।

पड़नो ( हि० पु० ) एक प्रकारका धान ।

पड़नो-पड़ो ( हि० स्त्री० ) कमरतमें एक प्रकारका अथ्याप  
 जिसमें आदमी, टोला या अन्य कोई ऊँची चीज छद्म  
 कर लायो जाती है । इसके दो भेद हैं—एकमें सामनेकी

धोर धोर दूसरेमें पछिकी धोर उठानते हैं, अक्षरानेवाली-  
 के अथ्यासके अनुसार टोलको ऊँचाई रहती है ।

पड़वाना ( हि० क्रि० ) १ क्रिमोमें पड़नेको क्रिया  
 कराना, बँववाना । २ क्रिमोके द्वारा क्रिसोको गिष्ठा  
 दिलाना ।

पड़वेया ( हि० पु० ) १ गिष्ठाधी, पड़नेवाला ।

पड़ाई ( हि० स्त्री० ) १ विद्याभ्यास, अध्ययन, पठन, पड़ने-  
 का काम । २ यह धन जो पड़नेके बदलेमें दिया जाय । ३

पड़नेका भाव । ४ अध्यापन, पाठन, पढ़नी । ५ पड़ने-  
 का भाव । ६ अध्यापन शैली, पढ़ानेका ढंग । ७ यह  
 धन जो पड़ानेके बदलेमें दिया जाय ।

पड़ाना ( हि० क्रि० ) १ अध्यापन करना, गिष्ठा देना । २



पणार्थ—गौहीय वैष्णवीका एक पवित्र तीर्थ। योद्धक सुनामगच्छ उपविभागेने अधीन लाउड परगना है। पीर लाउड वर्षतकी अधित्यका पर ही पणार्थ पव-स्थित है। पण एक प्रसवण भाव है, प्रति वारुणी-गोमने धनिक मनुष्य यहाँ स्नान, तर्पणके लिये आते है। पणाङ्गना ( सं० स्त्री० ) पणन लभ्या अङ्गना। वंश्या, रंडी।

पणाया ( सं० स्त्री० ) पणायते वरुःश्रुते इति पण-वरुवहारे सुतो च, स्वार्थे षाय ततो भावे षप्, तत-ष्टाप, १ सुति, प्रगभा। २ खूत, लुषा। ३ कथयिष्य-रूप अवनहार, वर पार, वरवसाय।

पणायित ( सं० स्त्री० ) पणायते स्म, पण-स्वार्थे षायः ततो क्तः ( आशय आर्द्धध्रुवे वा। वा ३।१।३१ )। सुत, श्रिमती प्रगभा का गर्द है। २ वरवहत, जिनका वरवहार किया गया हो। ३ क्रीत, जो खरोटा गया हो। पणास्य ( सं० स्त्री० ) पणस्य पणाय वा यटस्थि। कपर्दक, वराटक, कोड़ी।

पणास्यक ( सं० स्त्री० ) पणास्य स्वार्थे कन्। वराटक, कोड़ी।

पणाशन-१ युक्तप्रदेशके भागना जिलान्तर्गत एक तहसील। इसका उत्तर यमुनानदी पीर दक्षिण चम्बलनदी पूर्व-पश्चिममें विस्तृत है। इसका भूपरिमाण ३४१ वर्ग मील है। यहाँ मधुमैका विस्तृत वरवसाय होता है।

२ उक्त तहसीलका सदर पीर प्रधान नगर। यह अक्षा० २६° ५२' ३८" उ० तथा देशा० ७८° २४' ५८" पू० मध्य अवस्थित है। यहाँ तीन वारुकाय युक्त सुन्दर हिन्दू देवमन्दिर हैं।

पण ( सं० स्त्री० ) पण पाधारे इन्। पणवोधिका, कर्वावकयका स्थान, हाट, बाजार।

पणक ( सं० पु० ) पण।

पणकावर्ष ( सं० पु० ) राजावर्ष मणि।

पणित ( सं० स्त्री० ) पणिते स्म इति पण क्तः अशामान पचे विद्वे। १ व्यवहन। २ स्तुत, ३ क्रीत। ४ विक्रीत। ( स्त्री ) ५ धात्री। ६ लुषा।

पणितथ ( सं० स्त्री० ) पणिते इति पण-तथ्य। १ विक्रीत द्रव्य, बेचनेयोग्य। खरीदने योग्य। २ श्शेतेऽथ, प्रगभा

करने योग्य। ४ व्यवहार्य, व्यवहार करने योग्य। पणित ( सं० स्त्री० ) पण-तथ्य। विक्रीत, बेचनेवाला।

पणित् ( सं० स्त्री० ) व्यवहारो धूमं स्तुतिर्वा पणः पणित्ये इति। १ क्रयादि व्यवहारयुक्त। २ स्तुतियुक्त। ( पु० ३ ऋषिभेद।

पण्डनपीरो—अन्धे इति के रेयाशान्तके पन्तार्गत संखेड गेवात अधिकृत एक सुदृ सामन्तराज्य। भूपरिमाण ५ वर्ग मील है। यहाँ नाथुर्वा पीर नाजिरवा नामक दो मरदार रहते थे।

पण्डानियन—एक प्राचीन योकराजा। पञ्चावके क्रिन्ने स्थानमें यह राज्य करते थे। तत्सगिता नामक स्थानसे इसके समयको मुद्रा पाई गई है।

पण्ड ( सं० पु० ) पण्डते निष्फलत्वं प्रतीकोति पण्डि-गते पच यच-भा पण्ड। १ क्लान्त, नपुंसक, हिजडा। वि० २ निष्फल जिसमें फल न रहे।

पण्डक ( सं० पु० ) १ सावर्णिकमनुके एक पुत्र का नाम। २ नपुंसक, हिजडा।

पण्डक ( सं० पु० ) १ खोजा, नपुंसक। २ पण्डकका पाठान्तर।

पण्डरटेवी—निजाम राज्यके वार प्रदेशके पन्तार्गत एक ग्राम। यह वृत्त नगरमें ११ कोस पश्चिममें पवस्थित है। यहाँ छेमाड पत्थियोंका एक भग्नावशेष मन्दिर देखनेमें आता है। जिन मन्तार्थिके ऊपर हत प्रबलधित घों, उनका अधिकांश टूट फूट गया है, केवल ३० स्तम्भ रह गये हैं। इसका बाहरी भाग सुन्दर शिल्पकार्य-विशिष्ट है।

पण्डरानी—मनहार उपकूलवर्ती एक प्रधान बन्दर। दक्षिण-पश्चिम मोनघनवायुके तहने पर यहाँ जहाज आदि रखनेके विविध सुविधा दी। इसके पूर्व शीतल्यका ज्ञाम ही गया है। वर्तमान काममें कुछ मन्थ्याजिवि इस कामके अधिकारी हैं। प्रसिद्ध पोचु गात्रगाविक भास्के-डिगामा भारतवर्ष पदार्थण करते समय पहने पहने इसी बन्दरमें ठहरें हैं। ११५० ई०के एडिम्बे प्रताशाने ज्ञाना जाता है, कि यह नगर मलबार उपकूलके मदीके मुह पर स्थापित था। पहले यहाँनाग द्रव्यका व्यवसाय होता था पीर अमरव्य धनी तथा व्यवसायी यहाँ रहते



पणतोर्थ—गोडीय वैष्णवोंका एक पवित्र तीर्थ। ओड़िसे सुनामगञ्ज उपविभागके अधीन लाउड़ परगना है और लाउड़ परगतीकी अधिल्यका पर ही पणतोर्थ अवस्थित है। पण एक प्रस्त्रवण मात्र है। प्रति वारणौ-गोगमें अनेक मनुष्य यहां स्नान तर्पणके लिये आते हैं।

पणाङ्गना ( म० स्त्री० ) पणन नभ्या अङ्गना । बेश्या, रंडी ।

पणाया ( म० स्त्री० ) पणायते व्रथाङ्गगत इति पण-व्रथहार स्तौ च, स्वार्थे षाय ततो भावे ऋप्, तत-ष्टाप, । १ स्तुति, प्रशंसा । २ व्यूत्त, लुपा । ३ क्रयद्विप्राय-रूप अवधार, व्र पार, व्रथसाय ।

पणायात ( म० त्रि० ) पणायते स्म, पण स्वार्थे षायः ततः ऋः ( आराद्य आदेशदुः वा । षा इ, १, ११ ) ।

स्तुतः, जिसकी प्रशंसा की गई है। २ व्रथहत, जिमका व्रथहार किया गया हो। ३ क्रोत, जो खुरोदा गया हो

पणास्य ( स० स्त्री० ) पणस्य पणास्य वा यटस्थि । कपर्दक, बराटक, कांड़ी ।

पणास्यिक ( स० स्त्री० ) पणास्य स्वार्थे कन् । बराटक, कांड़ी ।

पणाहान-१ युग प्रदेशके चागरा जिलान्तर्गत एक तहसील । इसका उत्तर यमुनानदी और दक्षिण चम्पननदी पूर्व-पश्चिममें विस्तृत है । इसका भूपरिमाण १४१ वर्ग मील है । यहां मय घोका विस्तृत व्रथसाय होता है ।

२ उक्त तहसीलका सदर और प्रधान नगर । यह अक्षा० २६° ५२' ३८" उ० तथा देशा० ७८° २४' ५८" पू० में स्थित है । यहां तीन कारुकार्ययुक्त सुन्दर हिन्दू देवमन्दिर हैं ।

पण ( स० स्त्री० ) पण साधारे इन् । पणवाधिका, क्रयविक्रयका स्थान, बाट, बाजार ।

पणिक ( स० पु० ) पण ।

पणिकावर्त्त ( स० पु० ) राजावर्त्त मणि ।

पणित ( स० त्रि० ) पणते स्म इति पण ऋ, अशाभाव पथे णिच् । १ व्यवहन । २ स्तुत । ३ क्रोत । ४ विक्रोत । ( स्त्री ) ५ बाजी । ६ लुपा ।

पणितय्य ( स० त्रि० ) पणते इति पण-तय्य । १ विक्रोय द्रव्य, बेचनेयोग्य । खरीदने योग्य । २ ३ क्रोतय्य, प्रशंसा

करने योग्य । ४ व्यवहार्य, व्यवहार करने योग्य । पणित ( म० त्रि० ) पण ऋच् । विक्रोत, बेचनेवाला ।

पणित् ( म० त्रि० ) व्यवहारो व्यूत् सृतिर्वा पणः प्रस्त्रर्थे इति । १ क्रयादि व्यवहारयुक्त । २ स्तुतियुक्त । ( पु० ३ ऋषिभेद ।

पणनपीरो—सन् ५६ ई.पू. के रेवा कालके अन्तर्गत मण्डि-मेवांम अधिकृत एक क्षुद्र सामन्तराज्य । भूपरिमाण ५ वर्ग मील है । यहां नागूना और नाजिरना नामक दो मरदार रहते थे ।

पणालियन—एक प्राचीन योकराजा । पञ्चावके किमो स्थानमें यह राज्य करते थे । तक्षमिला नामक स्थानमें इसके समझकी मुद्रा पाई गई है ।

पण्ड ( म० पु० ) पण्डते तिष्कलत्वं प्र प्रीतीति पण्डि-गती पच थच्, भा पण ड । १ ज्ञान, नपुंसक, विज्ञा । त्रि० २ तिष्कल, जिसमें फल न लगे ।

पण्डक ( म० पु० ) १ मावर्णमनुके एक पुत्रका नाम । २ नपुंसक, विज्ञा ।

पण्डग ( म० पु० ) १ खोजा, नपुंसक । २ पण्डकका पाठान्तर ।

पण्डरदेवी—मिजाम राज्य के अंग प्रदेशके अन्तर्गत एक ग्राम । यह वृन नगरमें ११ कोस पश्चिममें अवस्थित है । यहां छमाड़ पत्थरोंका एक भगवान्नीय मन्दिर देखनेमें आता है । गिन मय अन्तर्गत के ऊपर दत्त पञ्चलम्बित घो, उनका अधिकांग टूट फूट गया है, केवल ३० स्तम्भ रह गये हैं । इसका बाकी भाग सुन्दर शिल्पकार्य-विशिष्ट है ।

पण्डरानो—मलबार उपखण्डकी एक प्रधान बन्दर । दक्षिण-पश्चिम मोनसूनवायुके मजने पर यहां अहाज आदि रजनेकी विधिप सुविधा थी । इसमें पूर्व मोन्द्यका जाम ली गया है । वर्त्तमान कालमें कुछ सम्बन्धीय इस ग्रामके अधिकारी हैं । प्रसिद्ध पोर्चुगालनाविक भास्को-डिगामा भारतवर्ष पटापण करने समय पण्डे पहुँच इसी बन्दरमें ठहरे थे । १५० ई.के एड्रिगोके हतानामे जाना जाता है, कि यह नगर मलबार उपखण्डके गदोके सुष पर स्थापित था । पण्डे यहां ताला द्वीपोंका व्यवसाय होता था और अस्त्रधनी तथा व्यवसायी यहां रहते



वान्, कवि, भीमान्, मूर्ति, कृती, कृष्टि, लब्धवन्, विचक्षण, दूरदर्शी, दीर्घदर्शी, विशारद, कवी, विदग्ध, दूरदृक्, वेदी, हृद, बुद्ध, विधानग, प्रज्ञान, कृष्टि, विज्ञ, मेधावी और सिद्धक ।

२ महादेव । ( त्रि० ) ० कुशल, प्रबोध, चतुर । ४ संस्कृत भाषाका विद्वान् ।

पण्डितक ( म० पु० ) १ छतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम ।

पण्डित स्वार्यकन् । २ पण्डित शब्दार्थ ।

पण्डितज्ञानोय ( म० त्रि० ) १ माह-ग्रामभेद । २ महा-मात्रभेद ।

पण्डितता ( सं० स्त्री० ) पण्डित-भावे तत्त्वं, स्त्रियां टाप् ।

पण्डितत्व, पाण्डित्य ।

पण्डितमानिक ( म० त्रि० ) जो अपनेको पण्डित बतला कर अभिमान करता है, मूर्ख ।

पण्डितमानिन् ( म० त्रि० ) आत्मानं पण्डितं मन्यते पण्डित-मन-इति । मूर्ख ।

पण्डितप्रमथ ( म० त्रि० ) आत्मानं पण्डितप्रमथते यः, पण्डित-मन खम, सुम् ( आश्रममने व्यथ । पा ३।२।२३ ) अपनेको विद्वान् माननेवाला, मूर्ख ।

पण्डितप्रान्यामान ( म० त्रि० ) पण्डिताभिमानो, मूर्ख ।

पण्डितराज ( म० पु० ) पण्डितानां राजा, टच्, समा-सान्ता । पण्डितराज ।

पण्डितसुरि—सरसिं हचव्युके प्रथेता ।

पण्डिता ( म० त्रि० ) विदुषो ।

पण्डिताइन ( हि० स्त्री० ) पण्डितानी देवो ।

पण्डिताई ( हि० स्त्री० ) विद्वत्ता, पाण्डित्य ।

पण्डिताल ( हि० वि० ) पण्डितोंके टंगला ।

पण्डितानी ( हि० स्त्री० ) १ पण्डितकी स्त्री । २ ब्राह्मणी ।

पण्डितिसन, ( म० पु० ) पण्डितस्य भावः, हृदादित्वात् इमनिच् । पाण्डित्य ।

पण्डु ( म० त्रि० ) १ पोलापन निये मटमैसा । २ पोला । ३ खेत, मकैद ।

पण्डु पा—ब्रह्मण प्रदेशमें इस नामके तीन ग्राम हैं, पहला सालदह जिलेमें, दूसरा दुगली जिलेमें और तीसरा मान-भूम जिलेमें ।

में पेड़ूपा या बड़ा पैडो और दुगली जिलेके पण्डुपा ग्रामकी पेड़ो वा छोटा पेड़ो कहते हैं । मानदह जिलेका पण्डुपा ग्राम २५° ८' उ० और देशा० ८८° १०' पू० तथा दुगलीका पण्डुपा ग्राम २३° ५' उ० और देशा० ८८° १०' पू०के मध्य अवस्थित है । बड़ा पेड़ो सभी जनशून्य है और छोटे पेड़ोमें करीब तीन हजार मनुष्योंका वास है । एक समय ये दोनों ग्राम बड़े ही मशहूरगानो थे, पर सभी यहाँकी पृथ्वी दिन कुल जाती रही । पहले यहाँ ब्रह्मणका राजधानी था ; सुविख्यात गौड़ नगरकी प्रथमा इमकी प्रतिपत्ति किसे शंभे कम न थी । अब भी यहाँ प्राचीन कौत्तियांन यद्येष्ट भग्नावशेष देखनेमें आते हैं । दुगली जिलेमें जो पण्डुपा ग्राम है उसीका संचिम विवरण यहाँ पर दिया जाता है । १०६० ई०में यह ग्राम शंभेजीके अधीन तथा वर्द्धमानराजके जमोदारोभुक्त हुआ था । यहाँके प्राचीन दुर्गका पारं प्राज भी विद्यमान है । प्राचीन मस्जिद तथा बड़े बड़े सहृष्ट घाट घाटिया भग्नावशेष देखनेमें आनूम होता है, कि यह एक समय अतिमशहूरगानो नगर था । १८वीं शताब्दीके पारश्वमें भी यहाँका कागजका कारवार विद्यमान प्रसिद्ध था । 'पेड़ुई' कागजकी कथा आज भी सुमन-मानोंके मुखमें सुनी जाती है । कहते हैं, कि पण्डुपाका कागज दीर्घकालस्यायो और पतना होता था । लोग विग्रेपतः इमो कागजकी काममें आते थे ।

पण्डुपाके प्रथिवामी प्रधानतः सुमनमान है । हिन्दूकी संख्या प्रायः नहींके समान है । यहाँके सभी सुमनमान अपनेको शाह सही उद्दीन् नामक एक पारके वंशधर बतलाते हैं ।

पाईन-र-पकड़ीके सिवां उसमें भी प्राचीन किनी सुमनमानो इतिहासमें छोटे पण्डुपाका नाम नहीं मिलता ।

इसकी नामोत्पत्तिके विषयमें इस प्रकार अनुमान किया जाता है,—गौड़की प्राचीनतम राजधानी पण्डु-वर्द्धनसे जब पाण्डुरके वंशधर पालराज द्वारा भगाये गये, तब शून्यशीय नृपतिगण टण्डियराष्ट्रमें पाकर राज्य करने लगे । सम्भवतः उन्हीं ही पूर्वतन पोण्डुके





यहाँकी चारहाड़ी ममजिद, कुतुबशाहकी ममजिद, मोना-ममजिद, एकनाबी-ममजिद, चदीना-ममजिद, मिन्दरकी अन्न और मत्तारूम घर विगोप प्रसिद्ध हैं।

विशेष विधान पौडवर्द्धन शब्दमें देखो।

पण्डक ( स० पु० ) १ वातरोगयुक्त, वह जिसे वात रोग दबा हो। २ पण्ड, लंगडा।

"विषर्वाणश्च पूर्वाह्नि मन्थनाहाते न पण्डकाः।"

(मार्कण्डेय पुराण)

मायकाममें स्त्रीगमन करनेमें जो सन्तान जन्म लेती है वह पण्डक होती है। ३ खोजा, नपुंसक।

पण्डरपुर—१ बम्बईके प्रदेशके गोलपुर जिलेका एक तालुक। यह सन् १७०२ से १७५६ उ० तथा देगा० ७५ ६' से ७५ ३१' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ४०८ वर्गमील और जनसंख्या लाखके करीब है। इसमें २ शहर और ८२ ग्राम लगते हैं। यहाँकी प्रधान नदी भीमा और मान है। जनपायु शुष्क है।

२ उक्त तालुकका एक शहर। यह सन् १७५६ उ० तथा देगा० ७५ २६' पू० भोसानदीके दक्षिण किनारे अवस्थित है। जनसंख्या प्रायः ३२४०५ है। वर्षाकालमें जब नदीका जल खूब बढ़ जाता है तब प्रायः पामर सभी स्थानोंमें पण्डरपुरा नगर देखनेमें बहुत सुन्दर खगता है। नदी गर्भमें चरके ऊपर विणुपद और नारद-मन्दिर तथा अदूरवर्ती तौरभूममें यसंख्य मोपानायको है और उन मोपानोंके ऊपर कहीं तो मन्दिरादिकें उच्च गिखा, कहीं छायाविहारिणो वनगजिदें मध्याह्निके और कहीं कन्नरें ऊपर स्मृतिस्मृति प्रियाजित हैं। इन सबमें नगरको मोभा और मो बड़ जाता है। दक्षिणात्यमें यहाँका स्थानमाहात्म्य सर्वप्रसिद्ध है। हिन्दुधर्मके मध्याह्निके पूर्वोपर जिस प्रकार गयाधाम, विणुपद और बुधगया आदिका तोयमाहात्म्य तथा विणुपदमें आह्वानप्रियादि विहित हैं वगैरे प्रकार दक्षिणात्यमें माय हिन्दुधर्मके विस्तारके साथ साथ ब्राह्मणगण इस स्थानकी दक्षिणात्यका गयातोय मानते हैं। विणुपदमें आह्वानप्रिया और विणुपदनादि सभी कार्य यहाँ होते हैं। यहाँ तक कि गयाधामके जैसा यहाँ भी लकनोटीके ऊपर विणुपद पढित हो कर शास्त्रमें विकसित है। इसी

कारण पण्डरपुरमें सभी समय पनेक तोययात्रियोंका समागम हुआ करता है।

दक्षिणात्यवासो ब्राह्मणगण पण्डरपुरके विठोवादेवका अधिकतर मान्य करते हैं। उक्त विप्रहमूर्त्तिके विणुभगवानका एक भेद है। नगरके मध्याह्निके अर्द्धा विठोवाका मन्दिर प्रतिष्ठित है, नमके निकटस्थ स्थान 'पण्डरिचित्र' नाममें प्रसिद्ध है। यैग्राव, पापाद और चन्द्रहास्यसामने प्रायः बीस हजारमें ले कर ढेड़ लाख तक मनुष्य एरुवित होते हैं। प्रति मासको गुस्ता-एकाटम'को यहाँ प्रायः दस हजार यात्रियोंका समागम होता है।

पण्डरपुर नगर पड़ने बोर्होका वापस्थान था। हिन्दुधर्मके प्रचार और आधिपत्य विस्तारके साथ साथ पण्डरपुरका बोडाधिकार लोप हो गया है। सचमुचमें विठोवाको प्रतिमूर्त्तिके देखनेमें वे बुद्धिको मूर्त्तिके सी मान्य पड़ते हैं। पण्डरपुरमें आज भी ७५ घर जैन वास करते हैं। उनका मत है, कि विठोवा जैनियोंके एक तीर्थहर है। उक्त ७५ घरोंमेंसे ८ घरकी सपाधि 'विद्वनदाम' है। ये लोग देवमन्दिरके सामने तुल्यगोत और वाद्य करते हैं। यहाँके 'वडुव' नामक गङ्गापुत्रगण ब्राह्मण यैणोमुक्त हैं। वे लोग यात्रियोंको साथ करके देवमूर्त्तिके दिवाते और उनके दिए हुए सपहारदि प्रणम करते हैं। पवित्र विणुभक्त तुकागम पण्डरिचित्रको स्वयं के गमान मानते थे। उन्होंने तथा उनके गुरु नामदेवने अपने जोधनलीला यहाँ पर गीत की थी।

दुकराम और नामदेव देखो।

१६५८ ई०में योजपुरके मैयाध्वज पक्कन खनि यहाँ छावनी डाली थी। १७७४ ई०में पेशवा रघुनाथरावके साथ त्रिब्यकराय सामाका युद्ध हुआ। उनो मानना कङ्कनबोस और हरिपन्थकङ्कके नारायणरावकी विधवा पत्नी गङ्गाबाईकी यहाँ नजरबंद करके राजकार्यको पर्यालोचना करते थे। नाना कङ्कनवीर देखो।

१८१५ ई०में पेशवा बाजोररावकी प्रचारणामे महाराष्ट्रमन्त्रिय गङ्गाधर शास्त्री विठोवा-मन्दिरके सामने-गुप्तमावमें मरवा दिये गए थे। १८२७ ई०में यहाँ अङ्गरेजोंके साथ पेशवाका एक युद्ध हुआ था।

नामादना का नाम 'दीनद' वा 'दुनद' था । यही दीनद का पत्रसंख्या पत्र, या वा 'दोटा' पुस्तिका दूपा है । यहाँ जो पत्र है और जो है, वे नामसंगत साम्य कहते हैं, यह प्राचीन कलाकारों के पौर पत्र नाम पत्र, यानि हार्द कोमकी दूरी पर रचना, यानि-द्वितीय चरित्र नाम द्वितीय ही मद्रम में पदमिन नीला है । वर, ऐन और दाराकारों सेवा ।

यहाँ 'दीनद' मन्दि नामक मन्त्र, यह मन्त्र प्राचीन मन्त्रित पौर मन्त्रिद्वय मन्त्रि मन्दिरी प्राचीन कालि'दो' प्रमाण है । ईस-स्टिमम से मद्र प्रायः पाथ पण्डितों के पत्र पर चरित्रित है । एक मन्त्र-मन्त्रिद्वय मिया यही कृतवर्गी नामकी एक और मन्त्रित विद्यमान है । कहते हैं, कि १२४० हिजरी में ( १०२०-२८० ई ) यान-दीव गुजराती पुत्र फतेली-ने इस मन्त्रिद्वय नामी चित्रा ।

यह नामद्वय जिनके पत्र, याका मन्त्रि विद्यमान दिवा जाता है,—इसे मीन उन्नत पत्र, या भी कहते हैं । यह यही ब्रह्मली राजधानी गोकु मन्त्रिद्वय 'माधव'द्वय १० कोम पौर मानद्वय नगर में ३ कोम दूरा उत्तरपूर्व में चरित्रित है । गोकुली तरफ यह उत्तमा विद्यालय तो नहीं है, पर एक समय मुमुक्षुनाम मानकोंकी यहाँ राजधानी हीन' कारण' दमक' चनेक पितृनामिक विषय मिला है । दूर-प्रामादादिवा मन्त्र-वर्गों पर भी देखने में जाता है । नामद्वय जिनका यह चंग तथा दमक चाम'वर्गी दिवाप्रयु जिनके मूलाग्र महास्थानद्वय मन्त्रि स्थान पितृनामिक पत्र-पत्रिद्वय विषय दृष्टि ही पयोनीय है । दुःखला विषय है, कि चंगरेनी मानगतमें गोकु लक्षणका स्थान तो निर्दिष्ट है, पर पत्र, याका स्थान निर्दिष्ट नहीं है । पूर्व'द्वय दमको जिनमें जो पत्र, या है, उनके नाम इस पत्र, या मन्त्रिद्वय 'दी' गोकुलाल ग हा लाय, इस कारण ना- कनि'दम रमथा नाम 'दहात पत्र, या' रच गये है ।

पत्र, याके नामके मद्रम में कनि'दम मद्रम कह गये है, कि किन्तु यीहीने पत्र, याके मद्रम में इसका नाम 'दाहदो' वीट 'पत्र, या' रच है, किन्तु इस

मद्रम में 'दाहदो' नामक एक मद्रम है, जिनका पत्रो-चरित्र म'मन्त्रि' काय नाम है, मद्रम ही गोकु पत्र, या नाम 'पत्र, या' कनि'दमने यहाँ पर एक पत्र, या नामसंगत प्ररचित रिवा है, किन्तु यहीने विद्यामिद्वय में यही यही विद्यालय रिवा है, कि यह 'पौण्ड्रवर्ण' नामका ही चरित्रित है । महाभारतीय कालके पौण्ड्र राज विद्यमान है । पौण्ड्रम में पौण्ड्र-मद्रमना विषय प्रमाण था। डा- कनि'दमने महा-स्थानमद्रके पितृनामिक-विचारके मद्रम में पौण्ड्र-मद्रम नाम से एक एक और पत्र, या युक्तिकी चरित्रारण को है । यहाँ पर उनीने कहा है, कि पत्र, या नामक साम्य'द्वय पत्र, याके मद्रमनाम नाम 'पौण्ड्र' पत्रा है । जो कुछ ही, वे सब तर्क 'पौण्ड्र-मद्रम' मद्रम में मीमांसित हीने ।

मुमुक्षुनामो प्राचीन इतिहासमें लज्जाम चमाद्वयम पनीगाकरे राजलक्षणमें पत्र, याका मन्त्रिद्वय देवा जाता है । इन्हीं ही कलीर अनामद्वयम ताद्विकीका मन्त्रि मन्दि प्रथमाय । यनामद्वय पनीगाद्वके राजलक्षमें मो य' पत्र, या ( १२४३ हिजरी वा १२४३ ई-में ) कलीर इनाम-द्वयमको मद्र, य' है । सुनरी मद्रम मद्र भी पत्र, याका मन्त्रिद्वय ही, मीन उन्नत रोग । मद्र दिवावने चरित्रः १२४४ ई-में भी पत्र, याका चरित्रित पाया जाता है । उसके बाद इतिहास माद्वके राजलक्षणमें दमका दितीव धार चरित्र देवा जाता है । मुमुक्षु चंग'माय क्रियेक माद्वके चरित्रमय पर इति-हास माद्व पत्र, याका चरित्रमय कर एकद्वयना नामक स्थानकी मद्र गये । क्रियेक माद्व एकद्वयम में पत्र, याका पर पत्र, या वा लर ही मोटे य । पत्रि' द' दिवरी- ( १२५६ ई- ) में मिकद्वय माद्व लक्ष्य पत्र, या क्रि-मि दवायी राजधानीद्वयमें परिवर्तित दूपा । इस मद्रम लक्षमें पत्र, याकी विद्यालय पटीना मन्त्रिद्वय वनाई । लक्षणका प्रमाणद्वय पौर पत्र, याके राजलक्षणमें भी पत्र, याके ही राजधानी ही । किन्तु मद्रम मद्रमद्वके राजधानीद्वय मद्रम मद्र पत्र, याके राजधानी दृष्टा कर मुन. गोकुलमें लक्ष्य मद्र । इनी मद्रम में पत्र, याकी मन्त्र-रमा चारद्व दृष्टे है ।

यहाँकी बारहागी ममजिद, क्लुत्तवाहकी ममजिद, सोना-ममजिद, एकलाखी-ममजिद, पदीना-ममजिद, सिकन्दरकी कब्र और सत्ताईस घर विशेष प्रसिद्ध हैं। विशेष विवरण पौष्टवदन सम्पत्त देखी।

पर्यटक ( मं० पु० ) १ वातरोगयुक्त, वह जिसे वात रोग हुआ हो। २ पट्ट, लंगड़ा।

“विषनीगश्च पूर्वाह्नि गन्धकादे च पर्यटकाः।”  
(मार्कण्डेय पुराण)

सायंकालमें स्त्रीगमन करनेमें जो मत्तान जन्म लेती है वह पर्यटक होती है। ३ खोजा, गनुंसक।

पर्यटपुर—१ इम्बईके प्रदेशके गोनापुर जिलेका एक तालुक। यह मत्ता० १७° २८' से १७° ५६' उ० तथा देगा० ७५° ६' से ७५° ३१' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ४०० वर्गमील और जनसंख्या सात्वके करीब है। इसमें २ शहर और ८१ ग्राम लगते हैं। यहाँकी प्रधान नदी भीमा और मान है। जलवायु शुष्क है।

२ उक्त तालुकाका एक शहर। यह मत्ता० १७° ४१' ४०" तथा देगा० ७५° २६' पू० भोसागदोके दक्षिण जिनारे अवस्थित है। जनसंख्या प्रायः ३२,४०५ है। वर्षाकालमें जब नदीका जल खूब बढ़ जाता है तब यहाँ पामरके समो प्यानीसे पर्यटपुर नगर देखनेमें बहुत सुन्दर लगता है। मठो गर्भमें चारके ऊपर विष्णुपद और नारद-मन्दिर तथा शटूरवर्षी तौरभूममें बसंख्य सोपानावली है और उन सोपानोंके ऊपर कहीं तो मन्दिरादिकें उद्य गिपुर, कहीं कृष्णविद्यारिणो वनगाजिके मधर हर्म्योदि और कहीं कन्नरं ऊपर क्च्यतिन्नाथ विराजित हैं। इन सबसे नगरको शोभा और भी बढ़ जाता है। दक्षिणात्यमें यहाँका स्थानमाहात्म्य सर्वप्रसिद्ध है। हिन्दुधर्ममें मधर पूर्वापर जिस प्रकार गयाधाम, विष्णुपद और बुडगवा आदिका तीर्थमाहात्म्य तथा विष्णुपदमें ब्राह्मप्रतिष्ठादि विहित हैं उसी प्रकार दक्षिणात्यमें प्रायः हिन्दुधर्मके विन्दारके साथ साथ ब्राह्मणगण इस स्थानकी दक्षिणात्यका गयातीर्थ मानते हैं। पिष्टपुरकी ब्राह्मप्रतिष्ठा और पिष्टुडामादि समो कार्य यहाँ कीते हैं। यहाँ तक कि गयाधामके जैसा यहाँ भी ककमोटीके ऊपर विष्णुपद चढ़ित हो कर बाजारमें विकते हैं। इसी

कारण पर्यटपुरमें समो समय पनिक तीर्थयात्रियोंका समागम हुआ करता है।

दक्षिणात्यवामो ब्राह्मणगण पर्यटपुरके विठोवादेवका पश्चिम्तर मान्य करते हैं। उक्त विषयमूर्त्ति विष्णुभक्तानका एक भेद है। नगरके मध्यस्थलमें जहाँ विठोवाका मन्दिर प्रतिष्ठित है, उसके निकटस्थ स्थान 'पर्यटरिचि' नामसे प्रसिद्ध है। यैग्रावु, पापाद और अग्रहायणसाममें प्रायः बीस हजारसे ले कर डेढ़ लाख तक मनुष्य एकत्रित होते हैं। प्रति मासको शुक्ल-एकादशीको यहाँ प्रायः दस हजार यात्रियोंका समागम होता है।

पर्यटपुर नगर पहले बोडोका वापस्थान था। हिन्दुधर्मके प्रचार और प्राधिपत्य विस्तारके साथ साथ पर्यटपुरका बोडाधिकार लीप हो गया है। मधमुचमें विठोवाको प्रतिमूर्त्ति देखनेके वे बुद्धिको मूर्त्ति-सी मान्य गड़तो हैं। पर्यटपुरमें भाज भी ७५ घर जे म वास करते हैं। उनका मत है, कि विठोवा जैनियकि एक तीर्थहर है। उक्त ७५ घरोंमेंसे ८ घरकी उपाधि 'विठुनटाम' है। ये लोग देवमन्दिरके सामने नृत्यगीत और वाद्य करते हैं। यहाँके 'बडवे' नामक गङ्गापुत्रगण ब्राह्मण यं पोभुक्त हैं। वे लोग यात्रियोंको साथ करके देवमूर्त्ति दिव्याते और उनके दिए हुए उपहारदि ग्रहण करते हैं। प्रसिद्ध विष्णुभक्त तुकागम पर्यटरिचिक्को स्वयं से ममान मानते थे। उन्होंने तथा उनके गुरु नामदेवने अपने ज्ञोवनलीला यहाँ पर श्रेय को धो।

दुकराम और नामदेव देखी।

१६५८ ई०में घोजापुरके मैन्वाअधक पफजन यानि यहाँ हारानी डाली थी। १७०४ ई०में पैगवा रघुनाथरावके साथ विस्वाकराम मामाका युद्ध हुआ। उसी मालाना फडनवीस और हरिपन्थकहके नारायणरावकी विधवा पत्नी गङ्गासाईकी यहाँ नजरबंद करके राजशायकी पशालीचना करते थे। नाना फडनवीस देखी।

१८१५ ई०में पैगवा बाजोरवाको प्रसारणामे महा-गडूमचिय गङ्गाधर शास्त्री विठोवा-मन्दिरके सामने-गुप्तभावसे मरवा दिये गए थे। १८१० ई०में यहाँ पर्यटपुरकी साथ पैगवाका एक युद्ध हुआ था।



पानीमें लवाकत हैं जिसमें एक प्रकार का बहुत बढ़िया खान रंग निकलता है। पहले यह रंग बहुत विक्षता था और अधिक परिमाणमें भारतवर्ष में विदेशोंमें भेजा जाता था। परन्तु जबमें विलायतों नकली रंग तैयार होने लगे तबमें इसकी मांग घट गई है। आज कम कई प्रकारके विलायती खान रंग भी 'पतंग'-के नाममें ही विक्रित हैं। कुछ लोग इसे 'नासचन्दन' भी समझते हैं, परन्तु यह बात ठीक नहीं है। इसकी बरत भी कहते हैं। (स्त्री०) ३ इयामें ऊपर उड़ाने का एक विधान। यह कामको तीलियाँ टाँचि पर एक और चोकाना कागज और कभी कभी बारीक बपट्टा मट्ट कर बनाया जाता है, गुड्डो, निरंगो इत्यादि टाँचा दो तीलियोंमें बनाया जाता है। एक बिलकुल मोथा रखो जाती है, पर दूसरीको लचा कर मिहाराबदार कर देते हैं। सोधो तीलोका नाम टड्डा और मिहाराबदारका नाम कमाच या काँच है। टड्डेके एक मिरको पुच्छा और दूसरेको मुहटा कहते हैं। पुच्छने पर एक और तिकोना कागज मट्ट देते हैं। कमाचके दोनों मिरको कुब्जे कहते हैं। टड्डे पर कागजको दो छोटी चोकौर चकतिया मट्टो होती है। एक उस स्थान पर जहाँ टड्डा और कमाच एक दूसरेको काटते हैं, दूसरी पुच्छके चोर कुछ नियत अंतर पर। इन्हें सुरास करके कन्ना पर्यात् वह डारा बांधा जाता है जिसमें चरखो, या परेनकी डोरीका बिरा बाँध कर पतंग उड़ाया जाता है। यद्यपि देखनेमें पतंगके चारों पाखोंको लम्बाई बराबर जान पड़ती है, पर मूठे और कुब्जेका अन्तर कुब्जे चोर पुच्छके अन्तरमें अधिक होता है। जिस डारोसे पतंग उड़ते हैं वह नख, बाना, रोल आदि कई प्रकारकी होती है। बाँधके जिस विशेष टाँचि पर डोरो लपेटो रहती है उसके भी दो भेद हैं—एक चरखी चोर दूसरा परेता। विश्वारमैदगे पतंग कई प्रकारकी होती है। बहुत बड़ी पतंगको तुल्ल कहते हैं। घनाबटका दोष, वायुको प्रचरना आदि कारणोंसे पतंग वायुमें चकर खाने लगती है। इसे भी कनेके लिये पुच्छमें अपड्डे को एक धब्बो बाँधी होती है जिसे पुच्छना ही कहते हैं। भारतवर्षमें सिर्फ़ ही बहकानेके लिये पतंग उड़ाते हैं,

परन्तु प्रायःत्य देगिंमें इनका कुछ व्यवहारिक उपयोग भी किया जाते लगते हैं।  
 पतंगकुरो ( हि० स्त्री० ) विशुन, सुगुनओर, चवाई।  
 पतंगवाज ( हि० पु० ) १ वह जिसका प्रधान कार्य पतंग उड़ाना हो। २ पतंग उडा कर मनोरञ्जन करनेवाला, पतंगका गीकीत।  
 पतंगवाजी ( हि० स्त्री० ) १ पतंग उड़ानेकी कला। २ पतंग उड़ानेकी क्रिया या भाव, पतंग उड़ाना।  
 पतंग ( हि० पु० ) १ पतङ्ग, फतिंगा। २ परदार कोष्टेको आतिका एक विशेष कोडा जो प्रायः घानों पक्षवा तुल्लको पत्तियों पर रहता है ३ स्तूलिंग बिलगारो। ४ दोपककी बनीका लज पंग जो जल कर उभमें प्रनग हो जाता है, फूल, गुल।  
 पग ( म० त्रि० ) पनतोति पतिपच १ पुट। ( स्त्री० ) २ अतनकक्षा।  
 पग ( हि० स्त्री० ) १ लज्जा, पावरु। २ प्रतिष्ठा, इज्जत।  
 पतई ( हि० स्त्री० ) पत, पत्ती।  
 पनक ( म० पु० ) पतनगोन व्यक्ति वा वस्तु।  
 पनकुभ ( म० पु० ) पत्तिविशेष, कोई चिह्निया।  
 पतलोवन ( हि० पु० ) वह जो प्रायः ऐसे कार्य करता फिरे जिसमें पतनो वा दूसरेको घेदलतो हो।  
 पतग ( म० पु० ) पत उत्पत्तिः मनु गच्छति वा पतन पक्षेण गच्छति पतंगमड। १ पत्ती, चिह्निया। पत्तियाँ जातिलत्तु डोप। २ अंधकारके अन्तर्गत पद्मान्तर्गमे एक।  
 पतङ्ग ( म० पु० ) पतति गच्छतीति पतिपच १ ( पनेरगच १ उण्, १।१२८ ) १ पत्ती, चिह्निया। २ धृत् १ ३ सुटाकनिपुत्रोवमैद, फतिंगा। इनका शरीर यन्त्रियुक्त होनेके कारण इनको गिनतो यन्त्रिविगिट जीवव्योमोंमें को जाते है। यन्त्रियुक्त सभी जात माधारणतः पाँच भागोंमें विभक्त है—१ कर्कटोषमं (Crustacea), २ लतावर्ग (Arachnida), ३ हृषिक हयर्ग या यतपादिक ( Myriapoda ), ४ पतङ्गवर्ग ( Insecta ) और ५ कीटवर्ग ( Vermes )। यन्त्रिविगिट जाणोमात्र ही कीटजातिके अन्तर्गत है। इनको उत्पत्ति चोर पक्षवर्गकी परिपुष्टि एक ही प्रकारकी है। यन्त्रियुक्त भेद चोर



पतञ्जा ( म० स्त्री० ) १ पञ्च, छोड़ा । २ नटोविगीय, एक नटोका नाम ।

पतञ्जिका ( म० स्त्री० ) पतञ्ज-वक्ष्यायै मन्त्रायां वा कन, स्त्रियां टाप्, पत इत् । मधुमच्चिकाविगीय, मधु-मन्त्रिलेखिका एक भेद । इमन्त्रा पर्याय पुत्रिका है ।

पतञ्जिन् ( म० पु० ) पतञ्ज उतप्रथनेन गमनमस्यस्य इति । खग, पत्नी, चिह्निया, पछेक ।

पतञ्जिन्द्र ( म० पु० ) पत्तिराज, गरुड ।

पतञ्जोष्ठी ( हि० स्त्री० ) एक प्रकारका पोषा ।

पतभङ्ग ( हि० स्त्री० ) १ वह ऋतु जिसमें पड़ोकी पत्तियां भङ्ग जाती हैं, गिरिज ऋतु, माघ और फाल्गुन मान । इन ऋतुमें वायु पतत्यक्त रूखी और सराटिकी भी जाती है । इस कारण यमुनाके रम और सिन्धुताका शीपण होता है और वे पतत्यक्त रूखी ही जाती हैं । बृशोकी पत्तियां रुचताके कारण सुख कर भङ्ग जाती हैं और वे ठूँडे ही जाती हैं । सटिका सोन्यं और शीमा इन ऋतुमें बहुत घट जाती है, वह घै भवहीन हो जाती है । वेद्यकके अनुसार इस ऋतुमें कफका स्रवण होता है और वायुकाग्नि प्रधान रहती है । इस समय सिन्धु और मारी बाहार सरलतामें पचता है । स्रुतके समय माघ और फाल्गुन ही पतभङ्गके महीने हैं, पर पत्य भग्नक वैद्यक ग्रन्थोंने पूष और माघको पतभङ्ग माना है । लेकिन यद्यार्थमें माघ और फाल्गुन ही पतभङ्ग माने गये हैं । २ अवनतिकाल, खराबी और तवाहीका समय ।

पतभर ( हि० स्त्री० ) पतङ्ग देखो ।

पतञ्जल ( म० पु० ) मोल प्रसक्त ऋषिभेद । इनका दूसरा नाम काव्य भो है । शतपथ ब्राह्मणमें इनका उल्लेख थाया है ।

पतञ्जिका ( म० स्त्री० ) पतं अभिमतं शब्दु, चिकित्सित पीडयति क्षारोपित शरीरिति, एवोदरादित्वात् साधुः । धनुर्ज्ञा, धनुयको डोरी, वेमानकी ताम, चिन्ता ।

पतञ्जलि ( म० पु० ) पतन्-पञ्जलिर्नमस्यतया यद्विदन्, गङ्गादित्वात् साधुः । १ योगशास्त्रप्रणेतृ सुनिभेद, पातञ्जलदर्शनकक्षा । वेदशास्त्रदर्शन देखो ।

२ पाणिनिके महाभाष्यप्रवृत्ता ।

महाभाष्यपतञ्जलिकी समाधारण शक्ति है, वेदका संस्कृत ही नहीं, मन्मारकी किमो भो भाषामें ऐसा विचारमूलक सुविस्तृत व्याकरण पत्य देखनेमें नहीं आता । जिस समय और किस उद्देश्यमें यह महा-ग्रन्थ रचा गया, यह ले कर बहुत दिनोंमें पाश्चात्य और दैवीय संस्कृतविदों मध्य वादानुवाद चला या रहा है । किमोरे मतमें पतञ्जलिका महाभाष्य प्रो गताब्दोंमें, किमोरे मतमें ५वीं शताब्दोंमें और फिर किमोरे मतमें २री शताब्दोंमें रचा गया ।

पथ किमका मत समीचीन है, वही देखना चाहिये । कोई कहते हैं, कि पाणिनिका मत निराग जर निजमत स्थापन करनेके लिये कात्यायनने वार्त्तिककी रचना की और पाणिनिकी वार्त्तिककारके शास्त्रमध्यमें वचनिके लिये तथा जनसाधारणमें विशुद्ध व्याकरणज्ञान और पाणिनीय मतका प्रचार करनेके उद्देश्यमें ही पतञ्जलिने महाभाष्य बनाया,—डाक्टर गोण्डट्काने इस मतका बहुत कुछ प्रचार किया है ।

किन्तु महाभाष्य केवल वार्त्तिककी समालोचनाके जैसा प्रतीत नहीं होता । वार्त्तिक पाणिनिमुद्रका परिगिट और हस्तिलेख है । पाणिनिका जो मत कात्यायनके समयमें थायं या तत्कालप्रचलित व्याकरणके विरुद्ध हुआ था, कात्यायनने तत्कालीन भाषाकी उपयोगी करनेके लिये उस उम स्थानको समानोचना की है । पतञ्जलिने फिर पाणिनिमुख और कात्यायनके वार्त्तिकको विस्तृतभाजनमें समझानेके लिये ही महा-भाष्यकी रचना की है । वार्त्तिक और महाभाष्यका उद्देश्य एक ही है; दोनोंका ही उद्देश्य सामयिक भाषा के साथ सामञ्जस्य करके पाणिनिके मतका प्रकाश करना है । प्रचलित संस्कृत भाषाका अनुगत करनेके लिये ही पतञ्जलि कहीं कहीं कात्यायनके मतको समानोचना और अपना मत प्रकाशित करनेमें बाध्य हुए हैं । इसीमें जहाँ जहाँ सूत्र वा वार्त्तिकमें प्रभाव है, वहाँ वहाँ पतञ्जलिने पूरा करनेकी चेष्टा की है । वास्तविकमें संस्कृत भाषाकी प्रकृति क्या है, किम वैज्ञानिक उपादानमें संस्कृत भाषा गठित हुई है, उसका प्रदर्शन करनेमें ही पतञ्जलिका भाष्य रचना दिष्टत ही गया





वसन्तोको कामोराराज जयादिशयने विद्विह्व महाभाष्य-  
का उद्वार कर फिर अपने शब्दमें उसका प्रचार किया ।

जो कुछ भी, सब यह अमूल्य महारत्न शिष्य ग  
होगा । सुद्वयन्त्रके प्रभावसे सर्वत्र और काशीधाममें  
कौयटकी भाष्यप्रदीप नामक टीका मिलत यह महाभाष्य  
सुदृढ हुआ है ।

कौयट छोड़ कर शिव-नारायण, लृप्त, रामलला-  
नन्द, लक्ष्मण, गिबशमेन्द्र, सरस्वती, मृदानिध प्रभृति  
रचिते कुछ टोकार् पार गई है । कौयटके भाष्यप्रदीप-  
के उपर भी अन्तमष्ट, भक्तमष्ट, ईश्वरानन्द, मन्मथ  
नारायण, नोत्तकण्ठ टोचिन, प्रवर्त्तकोपाध्याय, राम  
चन्द्रसरस्वती और हरिराम आदि कुछ भाष्ययोगी  
टिप्पणियोंकी रचना की है । नर्मदा महाभाष्यप्रदीप-  
द्योतक उपर, फिर वेद्यनाथगणगुण्डिने 'जाया' नाम-  
को एक सुन्दर प्रति लिखी है ।

पतत् ( सं० वि० ) पत-गट्, वाङ्मनात् प्रति वा । १  
पतनकर्त्ता, नीचेका और जाने वा आनिवाना । २ उड़ता  
हुआ । ( पु० ) ३ पक्षी, चिड़िया ।

पतत्पतद् ( सं० पु० ) डूबता हुआ घुंटे ।

पततमत्सर्ष ( सं० पु० ) काशमें एक प्रकारका रघदीप ।

पतत्र ( सं० क्री० ) पत-गती पत्रन् । १ थापन, सवारी ।  
२ पक्ष, पंख, डंभा ।

पतति ( सं० पु० ) पतति उत्पतताति पत-पतिन् ( पठे-  
त्रि उण्, ४।६। ) पत्नी, चिड़िया, पखिड़ ।

पततिहेतव ( सं० पु० ) पतना हेतव यस्य । गद्गुध्वज,  
विष्णु ।

पततिन् ( सं० पु० ) पतत्र पर्ययं इति । पक्षी,  
चिड़िया ।

पततिराज ( सं० पु० ) पततिर्षा राजा, टप्पू ममासाक्षाः ।  
पतिराज, गद्गु ।

पतद्पद् ( सं० पु० ) पतत् सुधादिभ्यः स्वप्नत् आमादि  
ष्टञ्जातीति पतत् पद्-पद् । १ प्रतिवाद्य, पाकदान । २  
वध कामण्डलु जिसमें भिषारा भिषाण केंते हैं, भिषा  
पद्, क्षापा ।

पतद्भोद ( सं० पु० ) पतन् पक्षी भोक्तव्यं इति । उज  
पक्षी, मात्र नामक पक्षी ।

पतय ( सं० क्री० ) पत-भावं क्युट् । १ गिरने या नीचे  
पानीकी क्रिया या भाव, गिरना । २ नीचे जाने धंसने  
या बँटनेका क्रिया या भाव । ३ प्रवर्त्तन, प्रयोगति

त १। ४ प्रजापति । ४ नाग, नृपु । ५ पाप करनेसे ही  
पतन का करना है, इसमें पतन शब्दमें पापका बोध  
होता है जो भव कार्य आत्मने निर्दिष्ट है उनका नहीं  
करना होता । इन्द्र कार्य करना और यथागात्र इन्द्रिय-  
संग्रह करने करना, इसी सब कारणोंसे पतन हुआ करता  
है । कारण रहनेमें कार्य हुआ ही । विहित कार्यका  
अनुष्ठान आदि कारण रहनेमें कार्यका जो पतन  
होता है, उसे कोई नहीं रोक् सकता । ६ क्षातिय,  
जा-पु, १० उड़नेकी क्रिया या भाव, उड़ान, उड़ना ।  
७ क्रिया नष्टकरा प्रयोग । ( ति० ) ८ गिरता हुआ  
या गिरनेवाला । १० उड़ता हुआ या उड़नेवाला ।

नोचाभिवमन, रामपात, स्वामिहिंसा करनेवाले  
स्त्रीका प्रथम पतन होता है ।

पतनगान ( सं० वि० ) जिमका पतन निश्चित हो, जो  
बिना गिरने रह सके ।

पतना ( ति० पु० ) योनिका तट भाग, योनिका किनारा ।

पतनाश ( ति० पु० ) परगाना, नावदान, मोरी ।

पतनाथ ( सं० हिं० ) पत-पतिवर । १ जिसका गिरना  
प्रथम प्रयोग होता मन्थर ही, पतित होनेवाला,  
गिरनेवाला । ( क्री० ) २ वह पाप अपने करनेसे ज्ञाति-  
में द्युत होता पड़े, पतित करनेवाला पाप ।

पतनोमुप ( सं० वि० ) जो गिरनेको धोर प्रवृत्त हो,  
जिसका पतन, प्रयोगति या विनाश निकट जाता  
जाता हो ।

पतनरुद ( सं० क्री० ) पञ्चमेध-धामसेट ।

पतनाश ( हिं० पु० ) १ प्रतिठा, मान, इज्जत । २ क्षात्र,  
चापल ।

पतन ( सं० पु० ) पतति कर्मक्षये यस्मात्, पत-भम ।  
१ नष्टमा । २ पक्षी, चिड़िया । ३ उड़, कर्त्तव्य ।

पतवापु ( सं० वि० ) पति-प्राप्त्युत् । पतनमोक्ष, गिरने-  
वाला । इसका पश्याय पादक है ।

पतविष्णु ( सं० वि० ) पति-वाङ्मनात् इण्डुत्, प-वि-  
क्षीः । पतनमोक्ष, गिरनेवाला ।



श्रीर ध्वज गण्ड पताकाके टंडायमें व्यवहृत होते हैं। साधारणतः मङ्गल वा शोभा प्रकट करनेके लिये पताकाका व्यवहार होता है। देवताओंके पूजनमें भी लोग पताका खड़ी करते या चढ़ाते हैं। ऐमाद्रिके टानखंडमें पताकाका विषय जो लिखा है वह इस प्रकार है—

देवमंडपमें जो पताका देने होती, उसका परिमाण ७ हाथ १० घट्टून विरहृत और टंड १० हाथ होना चाहिए। इन सब पताकाओंकी मन्दूर, कर्पूर, धूप, धूसर, मेवमन्त्रिभ, पांडु और शुभ्र इन पाठ प्रकारके वर्णोंमें पूर्वदिक्कसमें सन्निविष्ट करना चाहिये, ऐसी पताका शुभजनक मानो गई है। लोकापालादिसे उद्देश्यसे जो पताका चढ़ानो होगी, वह उनके वर्ण तथा पदत्रके अनुसार हीनो चाहिए। जो सब वस्तु खण्ड त्रिकोणाकार होता है, उसे पताका और जो चतुष्कोणाकार होता है, उसे ध्वज कहते हैं। २ सोभाग्य। ३ तीर चलासेमें उगनियोंका एक विशेष न्याम वा स्थिति। ४ टग खर्बकी संख्या। ५ पिङ्गलके ८ प्रत्ययोंमेंसे कर्वा। इसके द्वारा किसी निश्चित गुरुलघु वर्णके छन्द पद्यवा छन्दका स्थान जाना जाता है। उदाहरणार्थ प्रस्तार द्वारा यह मालूम हुआ कि ८ सात्वाधीके कुल १४ छन्दमें से ही घोर मेह प्रत्यय द्वारा यह भी जाना गया कि इनमेंसे ७ छन्द १ गुरु और ६ लघु वर्णके होंगे। अब यह जानना रहा कि ये मातों छन्द किस किस स्थानके होंगे। पताकाकी क्रियासे यह मालूम होगा, कि १३वें, २१वें, २६वें, २८वें, ३१वें, ३२वें, ३३वें स्थानके छन्द १ गुरु और ६ लघुके होंगे। ६ यह उंडा जिसमें पताका पहनाई हुई होती है। ७ नाटकमें वह स्थल जहाँ किसी पात्रके चिन्तागत भाव या विषयका समर्थन या वीक्षण भाग लुक भावसे हो। जहाँ एक पात्र एक विषयमें कोई बात सोच रहा हो और दूसरा पात्र या क्रूर हृदये सम्बन्धमें कोई बात कहे, पर उसको बातसे प्रथम पात्र के चिन्तागत विषयका मेल या वीक्षण होता हो, वहाँ यह स्थल माना जाता है।

- पताकाङ्क ( म० पु० ) पताकास्थान देखो।
- पताकादण्ड ( म० पु० ) पताकाका उंडा, भंडिका उंडा।
- पताकास्थान ( म० स्त्री० ) नाटकाङ्कभेद। नाटकके मध्य

पताकास्थान सन्निवेशित करना होता है। नाटकमें उच्चमरूपमें स्थानकी विवेचना कर पश्चात् ऐसे स्थानमें पताका सन्निवेशित करनो होगी जहाँ वर्णनका समतकारित्व विगोप्यरूपमें बड़े। इसका लक्षण इस प्रकार है,—

अन्य किसी एक पद्य या विषयको जब चिन्ता को जानो है, तब यदि प्रागन्तुक भाव द्वारा अतर्कितभावमें या कर वह पद्य समर्थित या उपस्थित हो, तो पताका स्थान होता है। इसका एक उदाहरण दिया जाता है—  
 रामचन्द्रजी मन ही मन चिन्ता कर रहे हैं, 'सोताविरह मेरे लिये एकमात्र दुःसह है।' ठीके समयमें दुर्गुत्तने या कर निवेदन किया, 'द्वैय उपस्थित।' यहाँ पर रामको इच्छा थी कि सोताविरह न हो (पर दुर्गुत्तने 'उपस्थित' ऐसा कहनेसे रामको दुःसह सोताविरह उपस्थित हुआ, यही सूचित होता है। अतएव यह स्थान पताकास्थान हुआ। राम, सोताका विरह न हो, इस प्रकारको चिन्ता कर रहे थे, प्रागन्तुक भावने सोताका विरह उपस्थित हुआ, यही सूचित होता है। नाटकमें ऐसे स्थान पर पताकास्थान होता है।

यह पताकास्थान ४ प्रकारका है जिसका लक्षण यथाक्रमसे नीचे दिया जाता है।

- १। अतर्कितभावसे परम प्रोतिकरने पद्य सम्पत्ति प्राप्त हो, वहाँ प्रथम पताकास्थान होता है।
- २। भाष्यके अत्यन्त शिष्ट और माना प्रकार वस्तुगत होने पर द्वितीय पताकास्थान होता है।
- ३। फलरूप कार्यको सूचना और शिष्ट प्रत्युत्तर-युक्त होनेसे तृतीय पताकास्थान होता है।
- ४। द्वय एवं सुश्रित अथनविन्याम तथा प्रधानात्तरापेक्षो होनेसे चतुर्थ पताकास्थान होता है।

इन सबका उदाहरण विस्तारके भयसे नहीं दिया गया। नाट्यदर्पणके ६ठे परिच्छेदमें इनके उदाहरण दिये गये हैं।

- पताकि ( म० स्त्री० )—पताकास्थान योकादित्यात् ठन्। १ पताकायुक्त, जिसमें पताका हो। २ पताकाधारक, भंडारदार, भंडो उठानेवाला।
- पताकिन् ( म० स्त्री० ) पताका विद्यनेभ्य, पताका-इनि।
- १ धेनुवन्तिक, पताकाधारी, भंडो उठानेवाला।



मित्र पन्थ तोन बंध हैं। तुला, वृश्चिक और धनु इनके सम्मुख बंध नहीं है; पन्थ तोन प्रकारके बंध हैं। मेष, वृष और मिथुन इन तोन राशियोंके याम, दक्षिण सम्मुख और लग्न यही चार प्रकारके बंध होते हैं। वृष, कुम्भ, मि'र और वृश्चिक ये वृषसम्बन्ध बंधध्यान माने गये हैं तथा इन सब राशियोंके ८।१।३ पद हैं। इन सब पदोंको परस्पर संयुक्त कर ८।१।१।४।१० इन सब पदपरिमित दिन या मास वा वर्षमें वालकका पताकि-रिट होता। यदि दण्डाधिपति पद पूर्ण बलवान् हो, तो ८।१।३ इत्यादि दिनके क्रिमो एक दिनमें वालकका विनाश होता।

किमी क्रिमोके मताशुमार विडम्बलमें पापग्रहके रहनेसे पताकि-रिट होता है। किन्तु वह रिट प्राण-नाशक न हो कर दोहाटायक है। उस रिटका निम्न-लिखित रूपसे निरूपण करना होता है—

जैसे वृष, कुम्भ, मि'र और वृश्चिक ये चार राशि वृषको बंधध्यान हैं। इन चार राशियोंमेंसे किमी एक राशिमैं यदि कोई पापग्रह रहे, तो मतभेदसे पताकि-रिट हुआ करता है। मेष, वृष और मिथुन ये तोन राशि चार प्रकारको बंधयुक्त हैं। अतएव इनके रिटविचारस्थल पर चार प्रकारको बंधध्यान-टिप करके रिटका निरूपण करना होता है और जिन जिन राशिके याम वा सम्मुख बंध नहीं है, उनका रिट इन प्रकार निरूपण करना होगा। मि'र, कन्या और तुला इन राशियोंके याम बंध मित्र पन्थ तोन बंध हैं। अर्कट, धनु और मोन यही तोन राशि अर्कट राशिको बंधध्यान हैं। इनमेंसे किमी एक राशिमैं यदि दण्डाधिपति पापग्रह रहे, तो ५।१।४।८।१।३।१।२ परिमित दिन, मास वा वर्षमें वालकका रिट स्थिर करना होगा। मकर, कुम्भ और मीन राशियोंके दक्षिण बंध नहीं है तथा तुला, वृश्चिक और धनु राशिके सम्मुख बंध हैं। अतएव इनका रिट विचार बंधध्यान ले कर करना होगा। (उपेक्षितरूप, पञ्चदशरा)

पताकीका विषय अक्षेपमें लिखा गया। इसका विशेष विवरण यदि जानना हो, तो पञ्चदशरा, ज्योति-श्लाघ, दोषिका, महात्म्यमुतायनो, ज्योतिःसारमं पद पादि ज्योतिषग्रन्थ देखो।

वैतुपताकीका विवरण वैतुपताकी शब्दमें लिखा है। वैतुपताकी काया वर्षाधिपति यह पादि जाने जाते हैं। वैतुपताका गणनामें एक एक पद एक वर्ष का अधिपति होता है। जिन वर्षका अधिपति या पद है, उस वर्षमें उमी पदकी दशा होता है।

पताकिनो (सं० स्त्री०) १ एक देवी। २ मेना, ध्वजिनो।

'न प्रवेहे म हृदकेषुपतावर्षदुर्दिने।

रथरगोरोजोपत्य इत एव पताकिनी ॥' (रघु ५.८२)

पतापत (सं० स्त्री०) पत-यद्, लुङ् पठ् निपातनात् साधुः।

१ अतिशय पताकायुक्त, जिनमें बहुतसे भंडे हैं। (श्लो०)

२ उड़तो घुड़े पताकाका सम्भूत शब्द।

पतामी (हिं० स्त्री०) एका प्रकारकी ना।

पतारी (हिं० स्त्री०) उत्तर भारतके जनाशयोंके किनारे मिलनेवाला बसतकी जालिका एक जलपत्ती। अतुके अनुसार यह पत्ते रेत के स्थानमें परिवर्तन करता रहता है। लोग इसका गिकार करते हैं।

पतान (हिं० पुं०) पतल देगा।

पतानर्षवना (हिं० पुं०) एक बोधा जो शीतके काममें जाता है। यह बहुत बड़ा नहीं होता। बोधके बोधे पतली डंडो निकलती है और इसी डंडोमें फस लगते हैं। बंधकके अनुसार यह कट्टवा, कसौना, मधुर, शोतल, वातकारक, याम, खमी, रक्तपित्त, अफ, पाण्डुरोग, लन और विपत्ता नाशक तथा पुत्रप्रदायक है। पर्याय—भूग्यामलकी, गिवा, ताला, खैवामनो, तामलकी, सुधमफला, अफला, चमला, बहुपुत्रिका, बहु-बोधा, भूधावी आदि।

पतानकृच्छ्रा (हिं० पुं०) एत प्रकारका जंगलो बोधा। इसको वेन शब्दकेन्द्रको लताकी तरह जमीन पर फैलतो है और शकरकन्द ही की तरह इसकी गांठोंमें कंद फूटते हैं। कंदोंका परिमाण एक मा अर्ध होता, कोई छोटा और कोई बहुत बड़ा होता है। यह दवाके काममें जाता है।

पतानदंती (हिं० पुं०) यह दवा जिनके दंतिका छुटाव भूमिकी और हो। ऐसा दवा ऐसी समझा जाता है।

पतावर (हिं० पुं०) पैरुके सखे हुए पत्ते।

पुत्रान् । विंशतिः । अथवाऽपि एकः पुत्रोऽपि ।

पुत्रान् । विंशतिः । अथवाऽपि एकः पुत्रोऽपि ।

विंशतिः । अथवाऽपि एकः पुत्रोऽपि ।

“पुत्रान् । विंशतिः । अथवाऽपि एकः पुत्रोऽपि ।”

( अथवाऽपि एकः पुत्रोऽपि । )

पुत्रान् । विंशतिः । अथवाऽपि एकः पुत्रोऽपि ।

“पुत्रान् । विंशतिः । अथवाऽपि एकः पुत्रोऽपि ।”

विंशतिः । अथवाऽपि एकः पुत्रोऽपि ।

( अथवाऽपि एकः पुत्रोऽपि । )

पुत्रान् । विंशतिः । अथवाऽपि एकः पुत्रोऽपि ।

पुत्रान् । विंशतिः । अथवाऽपि एकः पुत्रोऽपि ।

पुत्रान् । विंशतिः । अथवाऽपि एकः पुत्रोऽपि ।

पुत्रान् । विंशतिः । अथवाऽपि एकः पुत्रोऽपि ।

पुत्रान् । विंशतिः । अथवाऽपि एकः पुत्रोऽपि ।

पुत्रान् । विंशतिः । अथवाऽपि एकः पुत्रोऽपि ।

“रक्षधर्मं यः समुच्छिद्य पारधर्मः समाधयेत् ।

अनापदि च विद्वद्भिः पतिः परिकीर्तितः ॥”

( मार्क० पु० )

जो मनुष्य अनापदकालमें अर्थात् विपत्तिके उपस्थित नही होने पर भी अपना धर्म छोड़ दूसरे धर्मका आश्रय लेता है, पंडित लोग उसीकी गति कहते हैं ।

मध्यपुराणमें लिखा है, कि जो ब्राह्मण चंडालादि अन्वज-भ्यो-गमन करत, उनके अन्नको खाता और अज्ञानपूर्वक उनमें नैन देन करता है, वह पतिन और अज्ञानपूर्वक करनेमें उनके समान होता है ।

शुद्धित्वष्टन ब्रह्मपुराणमें लिखा है, कि आग लगानेवाला, विप देनेवाला, पापंड, क्रूरबुद्धि और क्रोधवशातः विप, अग्नि, जल, उद्वेग आदिसे मर जानेवाला पतिन माना जाता है । पतिन व्यक्तिका दाह, अन्वयेष्टिक्रिया, अश्विमुख्य, आह, यहां तक कि उसके लिए आँसु भा बहाना परुर्त्तव्य है । पतिनका संभर्ग, उसके माय भोजन, शयन वा बातचीत करनेवाला भी पतिन होता है ।

वराहपुराणमें लिखा है, कि जो पतिनके साथ बैठ कर खाते, सोते और बातचीत करते, वे पतिन होते हैं । किन्तु पतिनव्यक्ति प्रायश्चित्त करके शुद्ध हो सकता है । यह व्यक्ति जब तक प्रायश्चित्त नहीं कर लेता, तब तक उसे वैदिककर्ममें अधिकार नहीं रहता और अन्तमें वह नरकगामा होता है । पतिनके संसर्ग से जो पतिन होते उनके उदकादिकाय होते हैं । पतिनमात्र ही शयनोपवेश, बस्त्र आताक पतिन होने पर उसे त्यागनही करना चाहिये ।

“पतिना सुरवत्सवा न तु माता उदाचन ।

धर्मधारणोपदेशे तेन माता गरीरवी ॥”

( मारुतपुराण )

शुद्ध यदि पतिन है, तो उसके परिचय कर सकते हैं पर माताको वामाभा नहीं । क्योंकि माता धर्मधारण और वापण द्वारा मनुष्य होत । अन्तपुराणमें लिखा है—ब्रह्मण, क्षत्रिय, गंधारो और अश्वयत्नको उनके उद्देश्ये गद्यां पिंड देनेमें उदार हो सकता है । ब्रह्मपुराणमें भी इसका समर्थन किया है । पतिनके

उद्देश्ये एक वर्षके दाह गयायाडादिका अनुष्ठान करना होता है ।

हेमाद्रि और प्रायश्चित्तविषयक प्रभृतिमें लिखा है— एक वर्षके दाह नारायणवनि दे कर पतिनका आहादि हो सकता है । नारायणवनि देखो ।

कोई कोई कहते हैं, कि प्रायश्चित्त करनेमें पिता या पाप नाश होगा, पर इसका भी है प्रमाण नहीं है, किन्तु अन्तघातोभी जगद्विप्रमाण है, कि पुत्र प्रायश्चित्तमें पिताका पाप नाश होता है ।

पतिनका उदक-विषय—हेमाद्रिः लिखा है कि यदि कोई व्यक्ति पतिनके प्रति दया दिखाना कर उमा-वृत्तिमाधन करना चाहे तो उसे एक टामाको गुलाबर कुडु अर्घ्य दे यह कहना चाहिये, “तुम मृत्यु से बच तिन लामो और जलपूर्व एक लडको ले कर दक्षिण मुँह बैठे वामचरण द्वारा उसे किंका तथा बाणधार पातकावा निदेश और पान करो ।” दयापरवध व्यक्ति-को यह बात सुन कर यदि कोई टामो अर्घ्य ले कर ऐसा आचरण करे, तो पतिनको दामि धातो है । इस प्रकारका कार्य नृताइ दिन करना होता है । मदन-रत्नमें लिखा है, कि जो आन्धघातो हैं, उनके सम्बन्धमें यह विधान कहा गया है । कि जो किंकोका कहना है, कि उपनयनक्रममें सभी पतिनविषयोंन यह नियम लागू है । ( निर्देशविशु ५ पं० । )

पतिनका विषय प्रायश्चित्तविषयमें इस प्रकार लिखा है,—ब्रह्मण, क्षत्रिय, गुरुतत्त्वगामा, योग, नास्त्रिक और निन्दित कर्माभ्यांभी प्रभृति पतिन है । माधारणतः जिह्नीने मरणापातक वा अतिपातकका कर्मावृत्तान किया है, वे ही पतिन हैं ।

पतिन-उधारन ( चि० धि० ) १ पतिनको गति देने-वाला । ( पु० ) २ मनुष्य ईश्वर, पतिन अर्थात् उधारके लिए अवतार लीनेवाला ईश्वर । ३ ईश्वर, परमात्मा ।

पतिनता ( मं० स्तो० ) १ पतिन होनेका भाव, जाति या धर्मसे श्रुत होनेका भाव । २ अविद्यता । ३ अध-मता, नीचता ।

पतिनत्व ( मं० पु० ) पतिन होनेका भाव ।

पतिनध्वज ( मं० श्लो० ) १ पतिनकी शुद्ध करनेवाला,





मानना चाहिये। जो वार्ते पतिको समिप हा, उमकी मृत्युके बाद भी वे पतिव्रताके लिये चक्रचंच्य हैं। पतिकी मृत्युके पश्चात् पतिव्रता स्त्रीकी फल मृगुन भाटि खा कर पूर्ण ब्रह्मचर्यमे रहना चाहिये।

जो सब विषयां पानिग्रन्थवमं का उक्तहुन कर पर-पुरुषादि व्रथण करती है, वे इम लोकमें निन्द्या होती हैं और मरनेके बाद मृत्यामथोलिमें जन्म लेती हैं तथा तरह तरहके पाप रोगोंके प्राक्रान्त हो कर कष्ट भोगती हैं। ( मनु ६ अ० ) याज्ञवल्क्यसंहितामें लिखा है, कि पतिव्रता स्त्रीको सभी कार्योंमें स्वामीकी वशवर्तिनी होना चाहिये। पतिके विदेग होने की दशामें उमे मृद्धार, छाम परिछाम, क्रीडा, मर तमागिमें या दूमरे चर जाना भाटि आर्य त्याग देना चाहिये। ( याज्ञवल्क्य १ अ० )

ब्रह्मवैवर्तपुराणके श्रीकृष्णजन्मवृत्तमें पतिव्रता स्त्रीधर्मका विषय इम प्रकार लिखा है। मती स्त्री प्रति दिन भक्तिभावसे पतिपादोदकका सेवन करे। मयपूर्ण व्रत. पूजा, तपस्या और धाराधना त्याग कर पतिसेवामें रत रहना ही पतिव्रताके लिये एकमात्र धर्म है। सद्य पतिको नारायणमे भी श्रेष्ठ ममस्ते। पतिव्रता स्त्री स्वामीके श्राव्य पर समान प्रशुत्तर न करे। स्वामी यदि त्राधमें पा कर उसे दण्डभी दे, तो भी क्रोध न करे, भूय लगने पर स्वामीको तत्काल भोजन करावे और निद्रा-भङ्ग कदापि न करे। पुत्रकी अपेक्षा पतिको मौगुना अधिक प्यार करे। पति उमे सब पापोंसे छुड़ा देता है। प्रयत्न पर जिनमें भीर्ष्य हैं, वे सब तीर्थ तथा देवताके तेज मतीके पादतलमें प्रथप्यिन हैं। स्वयं नारायण, देव गण, मुनिगण भाटि मतीमें भण खाते हैं। पतिव्रताके पदरेणुसे यमशुभर पतिव्रत ह्यती है। मतीको नमस्तार करनेमें सभी पाप मांग हो जाते हैं।

पतिव्रता स्त्री यदि चाहे, तो सण भरमें तीनों लोकोंका नाग कर सकती है। मतीके पति और पुत्र सर्वदा निःगह्वर रहते, उन्हें कहीं भी डर नहीं। जो पतिव्रता जन्मा प्रमव करतो हैं वे सतोर पुत्रवतो ही ममभी जातो हैं तथा जन्माके पिता भी कीर्त्यमूला होतें हैं।

पतिव्रता स्त्रीकी प्रतिदिन स्वामीका पूजन करना चाहिये जिसका विधान इम प्रकार है—जबो सबरे उठ

कर रात्रिवामका परिचय करे, पीछे स्वामीको प्रणाम और स्तव करके गृहकार्य करे। तदनन्तर स्नान करके धोतवस्त्र, चन्दन घोर सुक्त पुष्पादि घटण कर पहले पतिको मन्थमृत जलमे स्नान करावे, पीछे यस्त्र पहना कर परे धो दे। बादमें यामन पर विठा मलाट में चन्दन, गलेमें माला और गायमें धनु त्रेपन पादि दे कर भक्तिपूर्वक पतिको प्रणाम करे।

‘ श्रीं नमः काम्नाय शान्ताय सर्वदेवाययाय स्वाहा’ मन्त्रमे पाय, घर्ष्य, पुष्प, चन्दन, नैवेद्य, सुयामित जल और त मृनादि दे कर पूजा करनी होती है। बादमें पत्नी निम्नलिखित स्तवका पाठ करे।

“ श्रीं नमः शान्ताय शास्त्रे न दिपनन्दहरद्विगे ।  
 नमः शान्ताय शान्ताय सर्वदेवाययाय च ॥  
 नमो ब्रह्मेश्वरहाय सतीप्राणपराय च ।  
 नमस्त्राय च पूज्याय हृदाधाराय ते नमः ॥  
 पञ्चवश्याविदेवाय चतुष्वहाराकाय च ।  
 शान्ताधाराय पत्नीनां परमानन्दरूपिणे ॥  
 पतिव्रता पतिविष्णु पतिरेव महेश्वरः ।  
 पतिव्रत विष्णुयाचारो ब्रह्मरूप नमोऽस्तुते ॥  
 धमस्व भगवन् । शौं शान्ताहानरुद्रजय यत् ।  
 पत्नीवशो देवायिन्धो दासीशोऽ धमस्व च ॥  
 इदं स्तोत्रं मदायुष्यं सृष्टवायो पद्मया कृतम् ।  
 धरस्वरथा च धरथा मङ्गला न पुरा व्रत ॥  
 यादिव्रत च कृतं मन्त्रवा, कैलासे शङ्कराय च ।  
 मुनीनाञ्च धाराणाञ्च परतोभिरप्य कृतं पुरा ॥  
 पतिव्रतानां सर्वाथी स्तोत्रमेतत् शुभाषदं ।  
 इदं स्तोत्रं मदायुष्यं या मृतेति पतिव्रता ।  
 नरोऽप्यो वापि गात्री वा लभते सर्ववाञ्छितम् ॥  
 अयुत्री लभते पुत्रं निर्धनो लभते धनं ।  
 रोगो च मुच्यते रोपात् वयो मुच्यते वपनात् ॥  
 पतिव्रता च स्तुता च तीर्थस्नानकरं समेत ।  
 कलरूप सर्वतरुनां यत्नानाञ्च व्रजेदर ॥  
 इदं स्तुत्या नमस्कराय मुहूर्त्तके वा तदनुशया ।  
 उक्त पतिव्रतापनीं श्रुतिना धृतानां व्रत ॥”

( ब्रह्मवैवर्तपुराण धीहृत्पञ्चमस्कण्ड ८६ अ० )  
 और भी दूसरे दूसरे पुराणोंमें पतिव्रताके नाम



मानना चाहिये। जो व्रति पतिको चप्रिय हई, उसकी श्रुत्युक्त बात भी वे पतिव्रताके निचे पकसंत्य हैं। पतिकी श्रुत्युक्ति पयात् पतिव्रता स्त्रीकी फल मूल भादि त्वा कर पूर्ण ब्रह्मचर्यमें रहना चाहिये।

जो सब स्वयं पाणिप्रत्यक्षमें का उल्लङ्घन कर पर-पुरुषादि दृश्य करती हैं, वे इन लोकमें निन्दना होती हैं और मरनेके बाद श्यामल्योनिमें जन्म लेती हैं तथा तरह तरहके पाप रोगोंके प्राकान्त हो कर ऋष्ट भोगती हैं। ( गयु ६ प० ) याज्ञवल्क्यसंहितामें लिखा है, कि पतिव्रता स्त्रीको सभी कार्योंमें स्वामीकी वगयर्त्तनी होना चाहिये। पतिके विदेय होने की दशामें उसे शूद्रार, काम परिहास, क्रोड़ा, सैर तमागिमें या दूनरेते घर जाना भादि आर्य त्याग देना चाहिये। ( याज्ञवल्क्य० १ अ० )

ब्रह्मचर्य व्रतपुराणके श्रीकृष्णजन्मवृत्तमें पतिव्रता स्त्रीधर्मका विषय इन प्रकार लिखा है। मती स्त्री प्रति दिन भक्तिभावमें पतिपादोदरका सेवन करे। सम्पूर्ण व्रत, पूजा, तपस्या और चाराधना त्याग कर पतिसेवामें रत रहना ही पतिव्रताके निचे एकमात्र धर्म है। वह पतिकी नारायणमें भी श्रेष्ठ ममके। पतिव्रता स्त्री स्वामीके वाच्य पर समान प्रयुत्तर न करे। स्वामी यदि क्रोधमें या कर उसे दण्ड भी दे, तो भी क्रोध न करे, भूषणगने पर स्वामीको तल्लाल भोजन करावे और निद्रा-भङ्ग कदापि न करे। पुत्रकी अपेक्षा पतिको सोयुना अधिक प्यार करे। पति उसे सब पापोंसे छुड़ा देता है। पृथ्वी पर जिनने तीर्थ है, वे सब तीर्थ तथा देवताके तंत्र मतीके पादतलमें प्रथमियन हैं। स्वयं नारायण, देव-गण, मुनिगण भादि सतीसे भय खाते हैं। पतिव्रताके पदरेणुमें वसुन्धरा पवित्र होती है। मतीको नमस्कार करनेमें सभी पाप माय हो जाते हैं।

पतिव्रता स्त्री यदि चाहे, तो छत्र भरमें तीनों लोकोंका नाम कर सकती है। मतीके पति और पुत्र सर्वदा निःशङ्क रहते, उन्हें कहीं भी डर नहीं। जो पतिव्रता कत्या प्रसव करती है ने वतीर पुत्रवती ही ममभी जाती है तथा कत्याके पिता भी जीयसुख होते हैं।

पतिव्रता स्त्रीकी प्रतिदिन स्वामीका पूजन करना चाहिये जिसका विधान इस प्रकार है—स्त्री सबेरे उठ

कर राखिदामका परिच्छाग करे, पाँडे स्वामीको प्रणाम और स्नान करके गृहकार्य कर डाले। तदनन्तर स्नान करके धोतकस्त्र, चन्दन और शङ्ख पुष्पादि ग्रहण कर पछमें पतिको मन्मथुत जन्में स्नान करावे, पाँडे यस्त्र पहना कर पैर धो दे। घाटमें स्नान पर विठा मल्लाट में चन्दन, गुनेमें माया और गातमें पशु त्रेपन भादि दे कर भक्तिपूर्वक पतिको प्रणाम करे।

“ओं नमः काम्ताय शान्ताय सर्वदेवायया स्वाहा” मन्त्रमें पाय, चर्च, पुष्प, चन्दन, गैवेद्य, सुवामित जल और त मूनादि दे कर पूजा करनी होती है। घाटमें पत्नी निम्नलिखित स्तवका पाठ करे।

“ओं नमः शान्ताय शाश्वे च शिवनन्दस्वरुपिणे ।  
 नमः शान्ताय दाम्ताय सर्वदेवायया च ॥  
 नमो ब्रह्मवत्सुग्य सतीप्राणपराय च ।  
 नमस्वाय च पूज्या हृदापाराय ते नमः ॥  
 पञ्चप्राणाधिदेवाय चतुःस्तारकाय च ।  
 शानापाराय पत्नीनां परमानन्दरुपिणे ॥  
 पतिव्रता पतिरिपु पतिरेव महेश्वरः ।  
 पतिश्च त्रिपुणापारा ब्रह्मरत नमोऽस्तुते ॥  
 धनस्य भगवन् । दोषं शानाशानकृत्तय यत् ।  
 पत्नीवश्ये ददायिष्ये तामीश्वरं धनस्य च ॥  
 इदं स्तोत्रं मन्त्रायुषं छत्रपापे पद्मवा कृतम् ।  
 सरस्वत्या च धरता मङ्गला च पुत्र प्रज ।  
 वापिशत्रु च कृतं मकवा कैशेपे शङ्कान्त च ।  
 सुनीनाञ्च प्राणाञ्च परतोमिश्र कृतं पुत्र ॥  
 पतिव्रतानां सर्वोवा स्तोत्रमेतत् शुभावहं ।  
 इदं स्तोत्रं महापुण्यं वा श्रेयोति पतिव्रता ।  
 नरोज्ज्यो वापि गीरी वा लभते सर्ववाञ्छितं ॥  
 अशुभो लभते पुत्रं निषेधो लभते धनं ।  
 रोमी च सुचरते रोगात् वयो मुच्यते बंधनात् ॥  
 पतिव्रता च शूद्रश्च च तीर्थस्नानकृत् समेत् ।  
 कवच्य सर्वतपसां प्रतानाञ्च ब्रह्मेश्वर ॥  
 इदं स्तुत्या नमस्त्वय मुञ्चते या तददुःखं ।  
 वक्तु पतिव्रताधर्मे तृदिनां भूयनां प्रथ ॥”

( ब्रह्मवैवर्तपु० धीहृत्पत्रधनपत्र ८१ श० )  
 और भी दूसरे दूसरे पुराणोंमें भी पतिव्रताके नाम



पतोखद (हिं० स्त्री०) १ वह भोपधि जो किसी वृक्ष, पौधे या वृक्षका पत्ता या फूल, आदिका हो, घास पातकी दवाई, खरबिरई। २ चन्द्रमा।

पतोखदी (हिं० स्त्री०) पतोखद देखो।

पतोखा (हिं० पुं०) १ दोना, पत्तका मना पात्र। २ एक प्रकारका चगला जो मल्लग चगलने छोटा और किलचिपामे बड़ा होता है। इसका पर खूब सफेद, चिकना, नरम और चमकीला होता है। टोपियों आदिक, बनानेमें प्रायः इसीके पर काममें लाये जाते हैं, पतख्वा।

पतोखी (हिं० स्त्री०) १ पत्तीका बना छोटा छाता, घोषी। २ एक पत्तका दोना, छोटा दोना।

पतोरा (हिं० पुं०) पखोरा देखो।

पतोह (हिं० स्त्री०) पतोहू देखो।

पतोहू (हिं० स्त्री०) पुत्रघण्ट, बेटेकी स्त्री।

पतोझा—पयोध्या प्रदेशके मोतापुर जिलेका एक ग्राम। यहांमें ३ मौल उच्चर विम सुलतान नगरके मसोप तक एक सुविस्तृत प्राचीन नगरका प्रवेगद्वार तथा मन्दिरादिका ध्वंसावशेष देखनेमें आता है।

पतोदो—१ पन्नावके पथीनख एक सामन्तराज्य। यह पचा० २८° १४' से २८° २२' उ० और देगा० ७६° ४' से ७६° ५२' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ५२ वर्गमील और जनसंख्या २१८३३ है। इसमें ५५० नामका एक शहर और ४० ग्राम लगे हैं। मध्ययुद्ध सुमताजदुन पतो खों यहांके वर्तमान नवाब हैं। ये बलूचों वंशके हैं। इनके पूर्व पुरुष फर्रुजतलय खाने होलकरकी सेनाके विरुद्ध युद्ध किया था जिसके लिये लार्ड निकने १८०६में उनको यहो भूस्वयत्ति दान दी थी। यहां एक पखताल, प्राईमरी स्कूल तथा चार माध्य-पाठशालाएं हैं। यहांकी कुल आय ७६६३१ रु० है।

२ उल्ल राजाका मठ। यह पचा० २८° २०' उ० और देगा० ७६° ४८' पू०के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या ४१०१ है। यह जलाल-उद्दीनी खानजीके राज्यकाममें बसाया गया है। यहां पतोदोके नवाबका निवासस्थान और राज्यके धर्मयथास्थान हैं।

पत्तायिन् (सं० त्रि०) पाटनेन कपति गच्छति कप-पति,

ततः पाटस्य पटाट्रिगः। पाट द्वारा गन्ता, पेरने चलने-वान्ता।

पत्त (सं० पुं०) पत्तखनेन पतवापुलकात् करणं गम्। १ पाट, पर, पांव। २ पत्र देखो।

पत्तङ्ग (सं० स्त्री०) पत्ताङ्ग पृथोदरादित्वात् माधुः। १ रक्तमन्दन, पतंग नामक लकड़ो, बकम (Caesalpinia sappan)। २ इमे हिन्दीमें पतंग, तैलङ्गमें घोकरुकू और उल्कनमें बकमो कहते हैं। संस्कृत पर्याय पत्ताङ्ग, रक्तशाठ, सुरङ्गद, पत्ताण्य, पट्टाङ्ग, भार्याङ्ग, रक्तक, लोहित, रङ्गकाष्ठ, रोगकाष्ठ, कुचन्दन, पट्टरङ्गक, सुरङ्ग। गुण—कटु, रुच, पक्व, शीत, वातपित्तघ्न, विस्तीर्ण, कम्पाद और भूतनाशक है। (पुं०) २ भृङ्गराज, भीमराज। ३ कैयाराज। ४ गालिधान्यमिद, एक प्रकारका धान।

पत्ततम् (सं० पञ्च०) पत्त-तम्। पादमे।

पत्तन (सं० स्त्री०) पत्तन्ति गच्छन्ति जनो यस्मिन्। पत्तनन् (वीतिश्रुति) तनन्। गू. १।१०) १ नगर। २ म्दङ्ग। पत्तन—गाउन देखो।

पत्तनवणिज (सं० पुं०) पत्तनस्थ नगरस्थ वणिक। नगरवणिक। पर्याय—स्रधायो।

पत्तना—बङ्गाल प्रदेशके गाहावाट जिलान्तर्गत भद्रुषा थानिका एक प्राचीन नगर जिमे गवर जातीय हिन्दू राजमे प्रतिष्ठित वतन्ताते हैं।

पत्तनाधिपति (सं० पुं०) पत्तनस्थ अधिपति। राजभेद। पत्तनीप्रभु—वर्षे प्रदेशका जो चतुर्विध-जातीय एक श्रेणीके कायस्थ वा मसोजोवा। वर्षे और कर्णाटक प्रदेशमें चार प्रकारके मसोजोवा प्रभु देखे जाते हैं, कायस्थ-प्रभु, दमनप्रभु, भूवप्रभु और पत्तनप्रभु। इन चार श्रेणियोंके प्रभु वा कायस्थोंके मोक्ष पत्तनप्रभुगण ही प्रपनेकी श्रेष्ठ और विशुद्ध चतुर्विधसन्तान वतन्ताते हैं।

स्वतन्त्रपुराणके सद्गाद्विखण्डमें लिखा है, कि पहले ये लोग 'पठारीय' नामसे प्रसिद्ध थे। किम प्रकार उनका पत्तनप्रभु नाम पड़ा, इस विषयमें सद्गाद्विखण्डमें जो लिखा है वह इस प्रकार है—

“सद्गाद्वे मानसपुत्र काश्यपे, काश्यपके पुत्र सुथ, सुथके पुत्र वैश्वस्वतप्रभु, तद्वंशमें दिनीय, दिनीयके पुत्र रघु, रघुके पुत्र पञ्ज, पञ्जसुत दमरय, दमरयसुत राम, तत्पुत्र



मिमांसे पुराणिकममे धनञ्जय, माह्वन्व, कामराज. पुष.  
 रविमण्डल, रविके वंशमें सर्वज्ञित् सर्वज्ञित्मे नभु,  
 दीक्षि पुत्रादिकममे इन्दुभूषण, दुष्ट, दुर्मणा, धर्म, काम,  
 दीशिक, रणमण्डन, रणमंडनके वंशमें मिमिराज,  
 मिमिराजके पुत्र वागलानन, उनके वंशमें वज्रनाभ,  
 वज्रनाभके पुत्र इन्दुमंडल इन्दुमंडलके कामराज, काम-  
 पालके वंशमें मलिन, मलिनके पुत्र धमध, धमधके  
 पुत्र कामो और शशोके वंशमें कामपतिने जम्भप्रहण  
 क्रिया। पहले कामपतिने कोई मलान न थी। उन्होंने  
 ऋषियोंको मन्त्राहने पुत्रेष्टियत्त क्रिया जिनमे उनके पतिके  
 पुत्र उत्पन्न हुए।

नीचे कामपतिनी वंशधारा, उनके गौत्र और कुल-  
 देवोके नाम दिये जाते हैं,—

पूषे पुष्य ।	कुलदेवो ।	गोत्र ।
१ पद्मराज	वागेश्वरो	पद्मराज ।
२ शामक	महाबली	श्याम ।
३ पृथु	एकवीरो	गौतम ।
४ शोधर	कानिका	कौण्डिन्य ।
५ वज्र	पद्मवतो	मौनस्य ।
६ चम्पक	कुमारिका	चम्पक ।
७ नीलाश	जगदम्बा	वज्रिष्ठ ।
८ विश्वामि	सरस्वतो	विश्वामित्र ।
९ सुरध	उमा	भृगु ।
१० रघु	वागेश्वरो	शक्ति ।
११ मागध	वागेश्वरो	शक्ति ।
१२ शैल	ममिता	भरद्वाज ।
१३ शोपति	चंडिका	शारित ।
१४ शैल	रेणुका	देवराज ।
१५ मङ्गल	महाकाली	भूषण्ड ।
१६ दमम	तामनी	शङ्करा ।
१७ शैल	इन्द्राया	गर्ग ।
१८ यदु	पद्मवतो	मौनस्य ।
१९ पौण्ड्रक	मोनाम्बा	पार्श्वत ।
२० जघन	कोनाम्बा	प्रियधि ।
२१ सपथ	पद्मवा	हृदयिण्यु ।
२२ पारमि	वागेश्वरो	शैवस्वत ।

२३ रन्धक	रत्नाचो	भद्र ।
२४ प्रदीप	महादेवो	हृदाय ।
२५ टाण्डना	वज्रिणो	मार्चण्ड ।
२६ शिमिराज	तामनी	चामर ।
२७ मारुत	माह्वन्वा	टाण्डय ।
२८ वज्रदंष्ट्र	नीला	पृथिमण्ड ।
२९ देवराज	जनशेध	जाम्बवत ।
३० मन्त्रोद्भव	माह्वना	गणक ।
३१ शोषण	मोहिनी	वैद्युध ।
३२ काममानी	भोमा	गर्ग ।
३३ मयूषधन	भद्रा	वैतन ।
३४ शूरसेन	कर्मिनी	जमदग्नि ।
३५ लृष्टरि	यागेश्वरा	भाग्य ।
३६ भागव	वर्षाद्या	गानाभि ।
३७ सुशोष	कामला	दुन्दुभि ।
३८ मन्वन्ध	पाममानिनी	दुषिण्ड ।
३९ चंद्रराज	चम्पवतो	गोप ।
४० धर्मराज	दुर्गा	कुमार ।
४१ रिपुनाग	शैलर	कुमर ।
४२ जगत्पति	शोभेश्वरी	मित्र ।
४३ शानाज	पद्मगुणो	मंडन ।
४४ शारमनि	पाटला	वक्रतुण्ड ।
४५ जगवान्	त्वरीना	रोमधर्ष ।
४६ पालनाथ	मानमानिनी	कूर्म ।
४७ विदर्भ	मुन्ना	सुकुमार ।
४८ वोजयना	साहेश्वरी	सायन ।
४९ पार्ष्वि	पान्थायनी	मानिस्वत ।
५० द्रुपद	पदरा	प्राश्रितिय ।
५१ वामुकि	दाहिमा	सुदन ।
५२ सुरवर	शैलुर्वी	पार्श्व ।
५३ वामुदेव	त्रयिका	पगहवा ।
५४ पतिशार	मोहिनी	शाठमनि ।
५५ सुदण्य	सुधर्षा	पावो ।
५६ कवरथ	भैरवी	भोमर्ष ।
५७ सुरध	भामिनी	महातप ।
५८ आदिराज	आतिका	उग्रमथु ।



कुश, तपुत्र चतुषि, तत्सुत निषध, तत्सुत गमः, तपुत्र पुत्रोक्त, तपुत्र चतुषुत्वा, तपुत्र देशानोक्त, तत्पुत्र चासौ, तत्सुत दत्त, तपुत्र शीन, तपुत्र उग्राम, तपुत्र प्रजगाम, तपुत्र पण्डित, तत्सुत पुत्रिण, तपुत्र विप्रपत्न, तत्सुत भाद्रपद, तत्सुत चिरस्थनाम, तत्सुत कौशल्या, तत्सुत सोम, तत्पुत्र प्रसिद्ध, तत्सुत पुत्र्य, तत्सुत सुदर्शन और सुदर्शनक पुत्र अनिवर्ण दृष्ट। अनिवर्णक एक पुत्र ये जिनका नाम घा प्रत्यपति। पहले राजा प्रत्यपतिके कोई पुत्र न था। पोल्ले लक्ष्मिने भरद्वाज खादि वारह ऋषियोंको मंत्र देव टक्षिणा देवत पुत्रोत्थिप्र किया जिनमे लक्ष्मिने प्रभृति १२ पुत्र दृष्ट। इन १२ पुत्रोंके गोत्र १२ ऋषियोंके नाम पर रखे गए और उन वारह ऋषियोंकी पारश्वगतिक इन वारह राजपुत्रोंको कुलदेवो मानो गये। एक समय राजा प्रत्यपति पुत्रोंके साथ बैठन नगरमें गोर्घयात्रा करनेको गये। वहाँ लक्ष्मिने ग्राह्य विधिके धनुमार तुनापुरुषादि प्रत्येक मन्त्रोंका अनुष्ठान किया। श्युम्भृति राजदुर्गनके लिये वहाँ पहुँचे। किन्तु घटनाक्रममे मुनिको देख कर प्रत्यपति न उठे और न पाप्य पथ्य द्वारा ठनको पूजा हो को। इस पर ऋषि वड्डे त्रिगड्डे और राजाको इस प्रकार गाप दे चले, "तूने राज्येन्द्र्यमे मदीकसत हो कर मेरी प्रथमानना की है, इस कारण तेरा राज्य और वंशनाम होमा।" राजा प्रत्यपतिने अपनी प्रपराध समझ कर ऋषिके पेर पकड़े और कातरभावसे कहा, "प्रभो ! मैं टानादि कार्यमें प्रथमगन्त था, इसी कारण यह प्रपराध हुआ है, क्षमया क्षमा कीजिये।" राजाके कातर वचन सुन कर मुनिवर मंतुष्ट दृष्ट और बोले, "मेरा गाप तो हुआ हो नहीं सकता, तब तुम्हारा वंश रहेगा नहीं, लेकिन ये राज्यहीन हो कर निःश्रेय होगि और निषिक्ताहस्तिका प्रथमपत्न करेगी। इस पेटन पत्नमे मैंने क्रोधवग गाप दिया है, इस कारण ये प्रसिद्ध पाठारोग्यग 'पत्न' नाममे प्रसिद्ध होगि और इन पत्नवंगधरोंकी उपाधिमें 'प्रभु' पदयुक्त रहेगा (१)।" इतना कह कर श्युमुनि चल दिये।

(१) "एवं वेदव्यवहाराद्ये पशुदिकेतिवपति।  
 १२ दंशभारव राजानो निःश्रीयै राज्यहीनताः ॥

वर्त्तमान सूर्यवंशोय पत्नप्रभुगण प्रत्यपतिके उक्त १२ पुत्रोंको ही अपने खादिपुरुष मानते है। महाद्भिः खण्डःतुवार उक्त १२ जनोंके नाम, गोत्र और कुलदेवोंका परिचय तथा प्रत्येकके वर्णमें प्रभो जो पदवो वसती है, वह नीचे लिखो गये है—

१२ सात्तैण्ड	११ कुमिक	१० साण्डुक	९ कौण्डिक	८ सुमन	७ श्रीवाम	६ सुमिन्नु	५ जय	४ ऋतुपण	३ पुष्ट	२ देवक	१ यमज
विश्वामित्र	कौमिक	साण्डक	कौण्डिक	वामन्य	वामन्य	हरविण	कारित	काण्य	वामिष्ठ	पूनामल	भरद्वाज
स्वर्गता	दुर्गा	सद्विन्वी	पवित्रा	एकवारा	कामाची	रन्दापो	गोविन्दरी	मन्त्रात्मो	चण्डिका	कानिका	प्रभावती
भोवगुजना	कनकका	गुजराज	कापुथम	कापुथम	कापुथम	विमवा	गोमन्त्री	कोनपुर	दशम	सुवर्ण	मङ्गिका
व्याधरकर	दीनकर	मन्तक	दिनाई	नायक	दिनाई	धुरन्धर	पत्त राव	मन्त्रक	कोठारे	प्रधान	रामि
						सहायकर					पटवा

। एतद्विद्याकाशायाः। एतद्विद्याकाशायाः। एतद्विद्याकाशायाः।

इसके निवा एक जेगोके पोर भा पशानोपसु है जो अपनेको चन्द्रवंशोय सविद्य कामपतिकी सन्तान बतलाते है। सन्तुपुराणके महाद्भिःखण्डमें कामपतिकी परिचय इस प्रकार है—

कश्यप, तपुत्र घत्रि, पत्रिकी चाँहमे चन्द्रमा, चन्द्रमाके पुत्र सुच, सुधके पुत्ररवा, तपसत नपुत्र, तत्सुत ययाति, ययातिके पुत्र पायु, पायुके तनु, तपुके वाम, वामके कुश, कुशके भाशु, भाशुके सोम, सोमके गिरा,

अपप्रति देवा वै लिपिवाभिरन भवेत्।  
 पेटने पतने शक्य मया कोपवगारु कित ॥  
 पाठारीयः प्रथिद्वारे पत्नान्नाय मन्त्रु वः।  
 प्रभुत्तरपदं देवो पत्नप्रमवाप्रय ये ॥

मेना, नषिग, त्रिभुकराव, गिव, श्यामराव, पद्माकर और कर्ण ब्राह्मणप्रभु ; मोनस्यगोत्रमें पुण्डरीक, दादा गिव, गोविन्दराव और गिवराम देगई; कोण्डिनगोत्रमें प्रनन्ता कौत्ति, देव, भोम, गिव और गोविन्दराव नयक ; मांडव्यगोत्रमें वासुदेव, गोविन्द, नारायण, ग्राम, भीम, श्रोतलाय, भास्कर और नरहरि मानकर ; कौमिक गोत्रमें सुमन्त, केशव, लक्ष्म, त्रिभुकर, श्रोपाल, भीम, सुरदाम और रघुनाथ बेलकर , विश्वामित्र गोत्रमें जयवन्त दामोदर, गोरक्ष, मिथराम और भीम व्यवहारकर ।

चन्द्रवंशमें—अयनभागवंगोत्रमें दामोदर, गिव, भीम, रणजित् ; गोतमगोत्रमें मधुसूदन और भीम गोरक्षकर ; ग्राण्डिन्यगोत्रमें वासुदेव, श्रोपति और लक्ष्मराव ; देवदत्तगोत्रमें केशव और दामोदर जयाकर ; मात्तण्डगोत्रमें नारायण, लक्ष्मीधर और भीमधराधर , जमदग्निगोत्रमें नारायण और केशवतलपट्टे ; नानाभिगोत्रमें सुरदास और भरदाम कौत्तिकर ; मुद्गलगोत्रमें श्रोपाल पञ्जीहर ; चनास्यगोत्रमें सुमन्त, त्रिपल और रघुनाथ धैयवान् ; भार्गवगोत्रमें रामदेवमञ्जीव ; साण्डव्य गोत्रमें केशवराव और सुमन्त विनोदकर । पौलस्त्यगोत्रमें रामप्रभाकर ; गरुडगोत्रमें धर्मसेन बककर , धैर्यायनगोत्रमें लक्ष्मीधर पानन्दकर और उपमन्युगोत्रमें नारायण व्यवहारकर ।

राजा विम्बदेवके आश्रयमें प्रभुगण उच्च राजकीय पद पर नियुक्त होने लगे। विम्बदेवके प्रदत्त ताव्यगामनसे जाना जाता है, कि प्रभुगण कोइए प्रदेयके नाना स्थानमें महासामन्त वा ग्रामनकर्त्ताके रूपमें नियुक्त थे। उनमेंसे किसी किसीने तो राजपद तक भी पा लिया था। इनमेंसे महिमके प्रभुराजापत्नीका विवरण कासुमदित्तामणिव और पोत्तुगोजीके लिखित महिमके इतिहासमें पाया जाता है।

पोत्तुगोजीके प्रागमनकाल तक प्रभुगण मानमेटी, बसाई, महिम और बम्बई नगरके निकटवर्ती छोटे-छोटे स्थानोंका शासन करते थे। ११२२ ई०में पोत्तुगोजीने इस स्थान पर अधिकार जमाया। इस समय प्रभुगण अपना पूर्वाधिकार छोड़ बैठे। पोत्तुगोजीके दोस्तान और

उत्पीड़नसे यहांका हिन्दू समाज तंग तंग पा गया था। पोत्तुगोजीके निकट जातिविचार था नहीं, वे ब्राह्मणकी पकड़ पकड़ कर पोतने और गटरो दुलाते थे। राजवंशोंय किनको भी राहमें पा मेंनेसे वे उमें पकड़ कर ले जाते और नीचे नीकराके जैसा काम कराते थे। इस प्रकार ये हिन्दू समाजको उच्चजातिमेंसे किमाके भी मान चपमानको और ध्यान नष्टां देते थे। पोत्तुगोजीशामनकर्त्ताघोने प्रभुघोंको कार्यकुशल और चतुर समझ कर उनमेंसे किसी किसीको याम और नगरके उच्च राजकीय पदों पर नियुक्त किया था। उनमें से सब कार्यप्रणकी इच्छा नहीं रहने पर भी पोत्तुगोजी राजपुरुषोंके उपाहुन और भयसे वे कार्यप्रण करनेको बाध्य होते थे। पोत्तुगोजीगण उच्च हिन्दू समाजके ऊपर जितना ही पत्याचार करते थे, ब्राह्मणादि हिन्दूगण उतना ही समझते थे कि प्रभु जस चारियाके परामर्शमें ही वेसा पत्याय और उत्पीड़न ही रहा है। इस विषय पर धीरे धीरे सभी ब्राह्मण प्रभुओंके ऊपर प्रत्यन्त विरक्त हुए और प्रभुनाय नाच जाति है, उनके साथ कोई भी सम्बन्ध रखना ब्राह्मणोंको उचित नहीं है' ऐसा मत तत्काल प्रकाश करने लगे। जब तक प्रभुघोंका राजकीय प्रभाव रहा, तब तक ब्राह्मण लोग उनका कुछ भी प्रतिष्ठा कर न सके। विवाहादि पन्थदयकालमें महाराष्ट्र ब्राह्मणोंने प्रभुघोंके सर्वनाम करनेकी चेष्टा की थी। किन्तु हिन्दूकुलतिलक मिश्राजीने ब्राह्मणोंका मन्द अमिमाय समझ कर प्रभुघोंका प्रतिष्ठा करनेमें उद्ये' मना किया। इतना ही नहीं, मिश्राजीने प्रभुघोंको अपने सेनापतिके पद पर नियुक्त कर सम्मानित किया था। मिश्राजीके इतिहासमें इन सब प्रभुसेनापतिघोंकी कार्यप्रणता और धैर्यवशात्का यथेष्ट परिचय मिलता है। रूभाजी, राजाराम और ताराशरके समयमें भी प्रभुघोंको समाजमें उच्च करनेके लिये ब्राह्मणोंने कोई कसर छोड़ा नहीं थी, पर इस समय भी उनका यह प्रयत्न निष्फल गया था। इस प्रकार दोनों जातिके बीच विद्वेष भाव चलने लगा। महाराष्ट्र राजाघोंके साथ चेष्टा करने पर भी विद्वेषवृद्धि न हुआ सकी। प्रभुघोंने महाराष्ट्रपति साहुके

५८ मशाराज	भोमिनो	गांडित्य ।
६० परिमेट	टनिना	विमंडक ।
६१ मोनिमान्	देवनागिनो	धार्मिक ।
६२ चित्ररथ	गिलादेवो	ब्रह्मर्षि ।
६३ मइस्त्रजित्	प्रभावतो	मालिक ।
६४ भीमथा	वगला	जनार्दन ।
६५ गय ७	भामिनो	विमल ।
६६ महीधर	धमरा	दाता ।
६७ ग्रेत ४	चित्ररेया	रारण ।
६८ सुवेत्र	शक्ति	उय ।
६९ स्वर्ण वाह	भोमिश्चरी	प्रेम ।
७० योधर	मछामारो	भाषण ।
७१ मछाविद्यान्	तुलना	भीमर्षि ।
७२ प्रजापाल	लाननिका	नभाः ।
७३ सुविद्यान्	पद्मगेश्वरी	वायु ।
७ कामट	त्रिपुरा	वामक ।
७५ ये दधाट	अन्तर्भैरवो	प्रयाण ।

मछाद्विखण्डमें जो ७५ धारायें वर्णित हैं, यत्तमानकालमें चन्द्रवंशीय पत्तनोप्रभुके मध्य हलको अधिकांग धारा ही नहीं है। जान पड़ता है, कि वे लोग भिन्न-भिन्नो वा जातिके हो गए होंगे। दमनको मरतान दमन-प्रभु नातमे मगहर है, किन्तु वे लोग पत्तनोप्रभुके माथ किसे प्रकार का सम्बन्ध नहीं रखते। अभी पत्तनोप्रभुके मध्य कामवतिके वर्गमें केवल १५ धाराओंका परिचय मिलता है जो दूसरे कालमें दिया गया है।

मछाद्विखण्डके पारितोक्त कोसुमघन्तामणि, विश्वाख्यान, जनार्दन, गणेशका प्रभुचरित्र, ज्ञानेश्वरी, मेनोर-भेतन-दे-सुजाका मसिम् 'इतिहास' (१) पादि ग्रन्थोंने इस जातिका उल्लेख देवनेमें पाता है। विश्वाख्यान ग्रन्थमें लिखा है, कि यादववंशीय राजा रामराज १२८८ ई०में जब पैठनके निकट सुमलमानीमें परास्त हुए, तब उनके पुत्र विश्वदेव कोट्टण देगको भाग गये। उनके भाट मूर्यवंशीय और चन्द्रवंशीय प्रभु समात्तगण जो

\* चिह्न पुराणीकी वारा आज भी देखी जाती है, जिसे धोर और कुलदेवीका लक्षणम जगह परिवर्तन हुआ है।

कामवतिके पुराणिक नाम	गोत्र	वर्ष मान वंशधरोंको उपाधि	कुलदेवो	कुलदेवोके जहाँ मन्दिर है
१ गाम	च्यवनभार्गव	रणजित्	एकवीरा	कानो
२ उयु	गोतम	गोरक्षकर	वज्रो	भाण्डो
३ ब्रह्म	गाण्डित्य	राव	वज्रिणो	यज्ञरवाह
४ योपति	देवदत्त	जयाकर	योगेश्वरो	योगार्ह
५ उडुकीक	मार्त्तण्ड	धाराधर	तारादेवो	कागो
६ वज्रट्ट	जामटग्नि	तपावट्टे	योगेश्वरी	योगेश्वरी
७ योपाल	नानामि	कीर्त्तिकर	कनका	कनीरो
८ शारमली	सुमल	राजिड	घण्टेश्वरी	ठाना
९ पार्थिव	चनाक्ष	धैर्यवान्	चण्डिका	दभोली
१० वासुकि	भार्गव	मेनजित्	वज्रिणी	यज्ञरवाह
११ सुरथ	उपमथ्यु	विजयकर	जातिका	कागो
१२ गज	महेन्द्र	त्रिलोककर	वज्रिणी	यज्ञरवाह
१३ धानन्द	पुलस्त्य	प्रभाकर	जीवेश्वरो	जीवदान
१४ ग्रेत	गर्ग	यज्ञकर	एकवीरा	कानो
१५ अंग	वैशम्पायन	पामन्दकर	हरदेवी	सूरत (१)

नपरिवार पाए थे। उन प्रभुओंके नाम ये हैं, यथा—

मूर्यवंशमें भरद्वाज गोत्रमें विक्रम राणे धोर मधु-न्दन प्रधान; वृत्तमाच्छोत्रमें भीम, श्यामराय, गिव धोर त्रीपत्तय प्रधान; वगिण्डगोत्रमें विक्रमसेन, केशव-राव, गोदान, भीम, नारायण, विश्वनाथ, विश्वका-राव, गिवदान धोर दामोदर कोठारे; काश्यपगोत्रमें कागेश्वर, कणाराव, गोविन्दराव, चन्द्र, महादेव, भास्कर, विश्वक, नारायण धोर केशव नवलकर; शारित गोत्रमें मेनजित्, योपत्, राम धोर गहर पलतराव; वृद्धविणु गोत्रमें माभ्याना, विश्वक, दामोदर, सुरदास, गिवगाम धोर केशव धुरन्धर, ब्रह्मजनार्दन गोत्रमें महर-

(१) Senhar Cayan De Souza's Mahin Histories

(१) History of the Pattana Prabhu, p. 6, Table 11.

करण लो। वादमें उन्होने मन्नाट्टिपुण्ड, कुलपत्रिका, कोनापुरके गङ्गाराचार्य स्वामीका समतिपत्र, विम्ब-देवका ताम्रगाथन आदि उपस्थित किया एवं उसे देख कर उनकी जाति और अधिकार निर्णय करनेको प्रार्थना की। गङ्गाराचार्य स्वामीने प्रभुसमाजको गोचनीय भवत्या सुन कर और उनसे कुल सम्बन्ध पर आलोचना कर उन्हें प्रकृत चरित्र ही बतनाया और ऐसा ही समतिपत्र दिया। इस समय स्वामीजीने प्रभुओंकी पूर्वाधिकार देनेके लिये पोगवाको भी अनु-रोधके साथ लिख भेजा। उस समय माधोराय ( २५ ) पूनामें पोगवा पद पर अधिष्ठित थे। उनकी सभामें जब गङ्गाराचार्यकी लिपि पढ़ी गई, तब उन्हेंने बसारे-निवासो ब्राह्मणोंको उसी समय सभामें निकल जानेका हुकुम दिया। इतना ही नहीं, प्रभुगण जिसमें पूर्ववत् निर्घृणतया अपने अपने धर्मका पालन कर सकें उसकी भी अनुमति दे दो।

मन्त्रिवराना फड़नबोम पोगवाके कार्यसे उत्तमि सगुट न थे। उन्होने पुनः पूनाके धर्माधिकारो राम-गाखो और प्रभुपत्नीय घनश्यामदाखीकी अपने घर बुनाया और प्रभु जातिके सम्बन्धमें उनका अभिप्राय जानना चाहा। रामगाखीने, प्रभुओंके चरित्रत्व सम्बन्धमें इनके पहले जितनी आलोचना हुई थी, सब फड़नबोमको कह सुनाई और प्रभु लोग जो प्रकृत-चरित्र हैं, वह भी जता दिया। प्रभुओंके प्रति दुर्ब्य-व-हारको कदा सुन कर नाता फड़नबोम भी विचलित हुए थे और भविष्यमें उनके प्रति ब्राह्मण लोग फिर किसी प्रकारका पत्याचार न कर सकें, इसकी भी घोषणा कर दो। इतने दिनोंके बाद ब्राह्मण और प्रभुका विवाद शान्त हुआ।

प्रभु लोग कहर दिख्ते हैं। बसारे आदि स्थानोंके ब्राह्मणोंने यद्यपि उनके प्रति यथैत पत्याचार किया था, तो भी उनके हृदयमें ब्राह्मण भक्तिका जरा भी क्षय न हुआ। वे लोग शास्त्रीय विधानानुसार चरित्रोचित सभी संस्कारोंका पालन करते हैं। प्रभुओंके मध्य विवाह, गर्भाधान, पुंभवन, सोमस्तीर्षण, जातकर्म, नामकरण, निष्क्रामण, पक्षपासन, घृहाकरण, उपनयन या मोखो

वन्धन, समावर्तन और शक्येष्टि ये सब संस्कार प्रधान हैं।

प्रभुओंके मध्य वाद्यविवाह आदरणीय है। कन्या और वरका एक गोत्र होनेसे विवाह नहीं होता। बालक १०से १६ और कन्या ४में ८ वर्षके भीतर ध्याही जाती है। पूर्वकालमें इनके मध्य दो प्रकारका विवाह प्रचलित रहने पर भी अभी केवल ब्राह्मण-विवाह ही प्रचलित देखा जाता है।

इन लोगोंके विवाहमें बहुत रुपये चर्च होते हैं तथा इतना अनुष्ठान और किमो जातिसमें देणा नहीं जाता। पात्र जब पसन्द हो जाता है, तब कन्यापत्नीय पुरोहित जा कर पहले वरकत्तोंके निकट इस बातको चर्चा करते हैं। वरकत्तोंका अभिमत होने पर वर और कन्याको कोष्ठो मिलाई जाता है। दोनोंको कोष्ठोंके मिल जाने पर तथा देना पावना स्थिर हो जाने पर तिथि और लग्न स्थिर किया जाता है। तिथिनिर्णय या लग्नपत्रका निर्णयकार्य वरके घरमें पाठ भी वही रातको सम्पन्न होता है।

विवाहके दो मस्राह परले निमन्त्रण दिया जाता है। पहले जाति-कुटुम्ब स्त्रीपुरुष दोनों पक्षका ही निमन्त्रण होता है। जब विवाह केवल एक मस्राह रह जाता है तब कन्याका माता अपने सङ्घे और नौकरकी साथ लो वरकी माता और उनकी प्राति-कुटुम्बिनीको निमन्त्र करनी पाती है। विवाहके चार दिन पहले वरको माता कन्याको माताको 'कत फुन-दान होगी' यह कहना भेजती है। दूसरे दिन वरका माता एक बानकको भजा कर कन्याको लाने भेजती है। कन्या लाना चलद्वार और महासम्पन्न घरमेंसे विभूषित हो पानकी या गाड़ी पर चढ़ कर प्रायः दो पहरको वरके घर पाती है। यहां वरको माता आदि रमणियां कन्याके पास जातीं और उमें गोदमें बिठा कर नीचे उतारती हैं। पीछे कन्याको अच्छे-अच्छे चलद्वारों और बखोंमें भजा कर जाति-कुटुम्बरमणियोंके पास दिखाने से जाता है। दिवने सुननेमें शान्त हो जाते हैं। पीछे उभी दिन मन्थाके एक कन्या पिदा-लय घती पाती है। दूसरे दिन वर भी कन्याको

यम पर पत्तनीमथु क्रिया, कि ब्राह्मण लोग उनके कुल-  
 रिवाजमूलक साम्राज्यवर्धन तथा दूसरे दूसरे पुराणों में  
 पशुपतिवन्दनाके प्रतिपादन कर उन्हें मनाओं में उच्च स्थानों  
 की चेष्टा कर रहे हैं। यान्त्री यात्रीरायके पाम भी यह  
 मानिग की गई। उन्होंने माहको इसकी प्रशंसा की।  
 गिवासी की तरह मान् भी प्रभुओंको बहुत चाहते थे।  
 उन्होंने बताया है, कि प्रभुलोग बहुकालमें जिन प्रकार  
 श्रमिवाचित संस्थापति करते थे वह हैं, आज भी उन्हीं  
 प्रकार करते हैं। उन्होंने खंड चौर माहकी प्रामके  
 प्राणियोंको बहुत दिशा शिष्य विजयपुरके राजाघाट  
 समयमें जिन प्रकार पौरोंटित्यादि कर्म करते पाये हैं,  
 आज भी उन्हीं प्रकार करते हैं। माहके ऐसे पादिक करने  
 पर भी उनके प्रतिनिधि जगदीश्वर राव पंडितने उनके  
 पादिकोंको दूध रखा। इसी समय एम सम्पत्तिगामी  
 प्रभुने पशुपतिवन्दनाके निकट भिक्षुविनायक नामक एक  
 गणित-मन्दिरको प्रतिष्ठा की। उस प्रतिष्ठानके उपलक्ष्य  
 प्रभुओंके साथ चित्पावन चौर चौरापर ब्राह्मणोंका  
 विवाह उपस्थित हुआ। चित्पावनोंने पत्तनीको बन्धु-  
 र प्रथम ब्राह्मण बतला कर प्रतिष्ठाकार्यमें प्रती पीना  
 पाया। किन्तु प्रभु लोगोंने चैतन्यविवाहो वेदमूर्ति  
 राजश्रीचिन्तामणि धर्मोपकारी प्रभुओंकी बुना का  
 विनायकका पत्तनीकादि सम्पत्त किया। इस पर  
 चम्पई-निवासी ब्राह्मणगण बहुत विगड़े चौर उन्होंने  
 यहाँके सुवेदार राजश्री गड्ढरको जेगयके पाम जा कर  
 इस प्रकार दिया प्रमिवाग किया, 'प्रभुन राजा विश्व  
 दिव्यके पत्तनीको राजपूत क्षत्रिय-संस्थान नहीं हैं, वे जैसे  
 हैं वे ब्राह्मणकी बुना कर धर्म कर्म करते हैं। उनके  
 द्वितीयम अधिकार नहीं रहने पर भी वे यज्ञसुत्र पस-  
 न्ते चौर गायत्री उच्चारण करते हैं। उनके प्रधान पुत्रो-  
 षि वेदमूर्ति विगनाय नामक एक ब्राह्मणने प्रभुओं-  
 के उत्पत्तिमन्त्रमें एक मिथ्या गथ्य लिखा है। हम  
 मन्त्रमें उन्हीं यह मानित करनेका चेष्टा की है कि  
 पत्तन या पाठारोह प्रभुगण सुयंत्रणीय पत्तनति चौर  
 पत्तनकीय कामपतिको मस्तान है। सुवेदारने उन्हें  
 यह भी पशुपतिवन्दना किया कि, 'हम लोगका मत न के कर  
 पाप धर्मकर्म, मोक्ष, भण्डारी चौर पत्तनान्य मोक्ष-

ये लोके धर्मो लोगोंकी बुना कर प्रभुओंकी मानिक विषय  
 जान सकते हैं।' हमने विवाह उठाने मनाज्युत कुछ  
 प्रभुओंकी बुना कर हमने यह कहनाया कि प्रभुओंके  
 मन्त्र बहुविधाए चौर विधवाविवाह प्रचलित है।  
 सुवेदारने तदनुसार प्रभुधर्मिकद पंगवा वाता  
 जो वाजोरारके निकट एक पत्तनीमथु भेजा। १७४२ ई-  
 में पंगवाने चैतन्य पत्तनगत प्रयोक नगर चौर यामके  
 प्रधान प्रधान ब्राह्मण चौर राजकर्मचारियोंको यह  
 हुकूम दिया कि, 'कोई भी ब्राह्मण प्रभुओंके संस्कारादि  
 कार्य नहीं कर सकते, करनेमें उन्हें दण्ड मिलेगा।  
 प्रभु लोग गायत्री उच्चारण नहीं कर सकते चौर न यज्ञ-  
 सुत्र की पढ़न सकते हैं।' पंगवाके पादिकने प्रभुओंका  
 ब्राह्मण-पुरुषितन बन्द हुआ। इस समय ब्राह्मण वे-  
 दारके पादिकने कौहों प्रभु-मन्त्रान निकटहीन, लाञ्छित  
 चौर श्मश्रुसूत्रमें पतित हुई था। जिन प्रभुके घरमें  
 उपनयन या विवाह उपस्थित होता था, उसके कटको  
 परिमोना न रहती थी। प्रपुर चर्चदण्ड दे सकते  
 पर धर्मो लोग कटके रखा वाने थे किन्तु जो गरीब थे  
 वे फिर समाजमें सुख नहीं दिख सकते थे। प्रभु  
 लोगोंने इस प्रकार पांच वर्ष तक ब्राह्मणोंके हाथमें  
 दारुण नियम भोग किया। वेछे पति पदिकने सुवे-  
 दार रामको महादेवने प्रभुमनाजके रूप पादिकने  
 विचिन्तन हो पंगवाको यह जताया कि "प्रभुगण प्रकृत  
 क्षत्रियमन्त्रान ज्ञाने पर भी उन लोगोंके प्रति कोई  
 सुविचार नहीं होता है, वरन् वे विगेयस्वर्णने पशुपति  
 होते हैं। गड्ढराचार्य नामाने पत्तनी मन्त्र-प्रथमें  
 इन जातिको क्षत्रिय बतलाया है।" इत्यादि।  
 इसके कई वर्ष बाद प्रभुओंके विप्लवगवने पूना  
 जा कर पंगवाके निकट प्रभु जातिकी गिहायत की।  
 पंगवाके पादिकने प्रधान धर्मोधिकारो रामगाम्भोने पम्पई  
 चौर महिमवाको सभी महाराष्ट्राको यह सूचना दी कि,  
 'कोई भी ब्राह्मण प्रभुओंके घरमें किसी प्रकारका कर्मा-  
 नुष्ठान नहीं कर सकते, यदि करेंगे, तो यह ब्राह्मण-  
 जातिकी निरुद्ध कर्म ममभा जायगा।'  
 इस समय पम्पईके गड्ढराचार्य नामो पम्पई जग  
 पम्पई। ऐसे सुयोगमें प्रभुओंने यहाँ जा कर हमको

गरण लो । वाटमें उन्होने मद्राष्ट्रिखण्ड, कुसुपञ्चिका, कोनापुरके गद्दराचार्य स्वामोका सम्प्रतिपत्र, विस्-  
टेवका ताम्रगामन चादि उपस्थित किया एवं उसे देव कर उनकी जाति और अधिकार निर्णय करनेको प्रार्थना की । गद्दराचार्य स्वामीने प्रभुममाज-  
को शोचनीय भवस्था सुन कर और उनके कुल सम्बन्ध पर चालोचना कर उन्हे प्रकृत चरित्र हो बतनाया और ऐसा ही सम्प्रतिपत्र दिया । इस समय स्वामोत्रीने प्रभुओंको पूर्वाधिकार देनेके लिये वेगवाको भी अनु-  
रोधके साथ निव भेजा । उस समय माधोराय ( २५ ) पूनामें वेगवा पद पर अधिष्ठित थे । उनकी सभामें जब गद्दराचार्यकी लिपि पढ़ी गई, तब उन्होने वसाई-  
नियामो ब्राह्मणोंको उसी समय सभासे निकल जानेका हुकुम दिया । इतना ही नहीं, प्रभुगण जिससे पूर्ववत् निर्दिष्टतया अपने अपने धर्मका पालन कर सकें उसकी भी अनुमति दे दो ।

मन्त्रिवराना फड़नवोम वेगवाके कार्यसे उरने समुष्ट न थे । उन्होने पुनः पूनाके धर्माधिकारो राम-  
गास्त्री और प्रभुपत्नीय घनश्यामगास्त्रीकी अपने घर बुनाया और प्रभु जातिके सम्बन्धमें उनका अभिप्राय जानना चाहा । रामगास्त्रीने, प्रभुओंके चरित्रत्व सम्बन्धमें इनके पहले जितनी चालोचना हुई थी, सब फड़नवीसको कह सुनाई और प्रभु लोग जो प्रकृत-  
चरित्र हैं, वह भी जता दिया । प्रभुओंके प्रति दुर्व्यव-  
हारको कदा सुन कर नाना फड़नवोम भा विचलित हुए थे और भविष्यमें उनके प्रति ब्राह्मण लोग फिर किसी प्रकारका अत्याचार न कर सकें, इसको भी घोषणा कर दो । इतने दिनोंके बाद ब्राह्मण और प्रभुका विवाद शान्त हुआ ।

प्रभु लोग कहर हिन्दू हैं । वसाई चादि स्थानोंके ब्राह्मणोंने यद्यपि उनके प्रति यथेष्ट अत्याचार किया था, तो भी उनके हृदयमें ब्राह्मण भक्तिका जरा भी छान न हुआ । वे लोग शास्त्रीय विधानानुसार चरित्रोचित सभो संस्थाओंका पालन करते हैं । प्रभुओंके सभ्य विवाह, गर्भोधान, पुंसवन, सोमलोचयन, ज्ञातकर्म, नामकरण, निष्क्रामण, पञ्चपामन, चूड़ाकरण, उपनयन वा मोखी

वस्त्रन, समावर्तन और शक्योष्टि ये सब संस्कार प्रधान हैं ।

प्रभुओंके सभ्य वाश्यविवाह बादरणीय है । कन्या और वरका एक गोत्र होनेसे विवाह नहीं होता । वानक १०से १६ और कन्या ४से ८ वर्षके भीतर ब्याहो जाती है । पूर्वकालमें इनके सभ्य दो प्रकारका विवाह प्रचलित रहने पर भी अभी केवल ब्राह्मण-विवाह ही प्रचलित देखा जाता है ।

इन लोगोंके विवाहमें बहुत रुपये खर्च होते हैं तथा इतना अनुष्ठान और किमो जातिमें देखा नहीं जाता । पात्र जब पसन्द हो जाता है, तब कन्यापत्नीय पुरोहित जा कर पहले वरकतांके निकट इस बातकी चर्चा करते हैं । वरकतांका अभिमत होने पर वर और कन्याको कोठो मिलाई जाता है । दोनोंको कोठीके मिला जाने पर तथा देना पावना स्थिर हो जाने पर तिनिय और लग्न स्थिर किया जाता है । तिनियचय वा लग्नपत्रका नियंयकार्य वरके घरमें पाठ भी वही रातको मन्मथ होता है ।

विवाहके दो महीने पहले निमन्त्रण दिया जाता है । पहले जाति-कुटुम्ब शोपुरूप दोनों पक्षना ही निमन्त्रण होता है । जब विवाह केवल एक पक्ष पर रह जाता है तब कन्याका माता अपने सपुत्रे और नौकरकी साथ में वरकी माता और उनको प्राति-  
कुटुम्बिकोंको निमन्त्र करनी पातो है । विवाहके चार दिन पहले वरको माता कन्याको माताकी 'कल पुन-  
दान होगा' यह कहना भिजतो है । दूसरे दिन वरको माता एक वामककी मजा कर कन्याको लाने भिजतो है । कन्या नाना पलदार और महामन्थ जमनोंसे विभूषित हो पानकी या गाड़ी पर चढ़ कर प्रायः दो पहरकी वरके घर आतो है । यहां वरकी माता प्रादि रमणियों कन्याके पाम लातो और उसे गोदमें बिठा कर नीचे उतारतो है । पीछे कन्याको पच्छे पच्छे अन्न-  
हारों और बखीसे मन्ना कर जाति कुटुम्बिकोंके पाम दिवानी से आतो है । देवने सुननेमें गान हो जातो है । पीछे उसी दिन मन्थाने कर कन्या पिता-  
लय चली पातो है । दूसरे दिन वर भी कन्याको

नरक मन्त्र भोजन कर कन्याके घर जाता है। कन्यापक्षमें वर भी एकदृष्ट वेगभूया पा कर अपने घर घना जाता है। दूसरे दिन पाहाय और व्यवहारोपयोगी पदार्थ मन्त्रहीन होते और विवाहमण्डप बनाया जाता है।

विवाहके दो एक दिन पहले पात्रहरिद्रा होती है। पांच मधवा क्रिया मिन कर सोचनीमें हलदी कूटती है। पीछे एक छोटी चोकनीके ऊपर बरकी बिठा एक मधवा स्त्री कन्दी तेल पाटिकी मिला कर बरके कपाय-में लगाती है। बादमें ये पांचो स्त्रियां हल्दी मिश्रित कुछ धनिया और गुड़ पापसमें खाती हैं। दूसरी जगह हरामटेवा एक चोकनी रखी जाती है और उसके चारो कोर्नमें चार कमरी रख कर उन्हें सूतमें लपेट देती है। तदनन्तर वर यहाँ जाता और चोकी पर बैठता है। इस समय वायक लोग बाजा बजाते और बालिकाएँ गान करती हैं। गान शीघ्र हो जाने पर जिन बालिकाने पहले पहल शरीरमें हल्दी लगाई थी, यही बरकी खान करती है। खानके बाद वर गधा कपड़ा पहनता और गलेमें माना डाल लेता है। बादमें बालिकाएँ उसको पारतो उतारती है। कन्याके घरमें भी ठोक उसी तरह होता है। पधोवे वर-कन्याकी 'नवरादेव' पधाय विवाहके देवतामें गिनती होती है और ये दोनों विवाहके चार दिन शीघ्र नहीं होने पर घरसे बाहर नहीं निकलते हैं। इस दिन पवराङ्कालमें शेष्य, विवाह-मण्डप, बहपदेवता, पित्रगण और नयपदकी पूजा होती है तथा कुम्हड़े और गूलरको बलि दो जाती है। कुम्हड़ाबलिके उत्सवका नाम है "ककल्यामुहूर्त"। इस समय वरके भगिनोपति या कोई विवाहित पत्नीय कुम्हड़ेकी तलवारमें दो पण्ड कर डालते हैं। जो कुम्हड़ेकी ऋटिया उसके अर्थ पर गाल रहता है और पादमें उसके दो छोड़े रहती है। इसी भावमें वे दोनों विवाहमण्डपमें पहुँचते हैं। इस समय एक मधवा खाती है और दम्पतिके गानके दोर ले कर गीठ खाई देती है। उसी समय पुरोहित उसके हाथमें तलवार देता है जो वह एक ही बारमें कुम्हड़ेकी दो खंडोंमें काट डालता है। जो कुम्हड़ेमें हल्दी लगा कर पुनः पीछे पा खड़ी होती है। उसका खामी दो बारमें

कुम्हड़ेकी चार खंड कर डालता है, बादमें स्त्री उसको पारतो उतारती है।

गूलरबलिका गाम उदुम्बर वा 'उम्पर चामन्दा' है, यह समय भी कुम्हड़ेबलिके औषा मन्त्र प्रयोग होता है। इनमें तलवारमें गूलरको माया काटो जाती है। जो यह काम करता है वह स्त्री समेत गानका जोड़ा वा उसी तरहका अन्य बहिया कपड़ा उतारने जाता है।

इस दिन मन्त्राके बाद वरपक्षकी कुछ पाकीया गान करती हुई नामा प्रकारके मिठाये, बिनीने और तेज पत्रादिने माय कन्याके घर पहुँचती है। कन्याकी बहन या कर बरकी बहनको वरण करती और पत्तापुर ले जाती है। यहाँ बरकी बहन कन्याको घने घाम बिठा कर उसका झुहा बांधती और अच्छे अच्छे कपड़े पहना कर गलेमें फूलकी माना डाल देती है। घरमें उसको पारतो ली जाती है। पीछे कन्या कुछ मिठाक सुपमें दे कर बिनीनेको हाथमें लेती और माना तथा पाकीयो-के घाम या कर लेने दिखाने दे। तदनन्तर वर पक्षवाने तल्वकी सामग्री ले कर चले पाते हैं। 'उस दिन कन्यापक्षमें भी उसी प्रकार बरके घर उतारारि मीज जाती है। कन्याको जिन प्रकार वरपक्षमें पलहार बिनीने पादि मिलते हैं उसी प्रकार कन्यापक्षमें बरको उलट वोगाकके माय कुर्मी, पलमारो, डेस्क, पुस्तक, शतरंजका पाया, झुता, छता और घाय पीनेके लिये चाँदीके बरतन पाँटि मिलते हैं।

विवाहके दिन प्रधान अनुष्ठान ११ हैं - फलदान, तेन्दु-उत्सर्ग, चौर, खान, पदपक्षान्न, गूलरकी पूजा, वर-याता, विवाह, निमन्वित व्यक्तियोंका पायाहन, विदाई और वरगृहमें पुनरागमन।

विवाहके दिन बहुत मधे वरपक्षीय कोई रमणी प्राति कुटुम्बकी स्त्रियोंकी बुलायाती है। एक घण्टे दिन-की निम्नलिखित स्त्रियां, पुरोहित ठाकुर, वरका कोई विवाहिता भ्राता, भृत्य (प्रथम भक्तहार जनमुमादिकी माये पर रख कर) और वायक लोग बाजा बजाते हुए कन्याके घर पहुँचते हैं। कन्याको कोई पानीया या कर बरकी बहनकी वरण करती और उसे घरके भीतर ले जाती है। विवाहमण्डपमें वरहा मारि पुरोहितको सहायतामें

गणपति और वरुणको पूजा करता है । इस समय उसे कन्याको वस्त्रालङ्कार देना होता है । कन्या उभ नवीन वस्त्रालङ्कार ही पहन कर पिताके पास या बैठने से । बाटमें कन्याके पिता और वरके भाइके वस्त्रोद्यम प्रसूत इसको और कुछ सुपारियाँ बाँध दी जाती है । इस के अनन्तर कन्याको उत्कृष्ट वस्त्रालङ्कारके विभूषित कर शिवाङ्गमण्डपमें ले जाते हैं और उसको गोदमें कुछ फल दे कर एक सधवा धरण करतो है । इस समय वरपक्षीय दो एक रमणियाँ अन्तरदान, गुलाबपाग और एक टोकरो पान ले कर पन्तःपुरके मध्य कन्यापक्षीय रमणियोंकी हस्तो लगातो हैं, सिर पर केसर, चन्दन और गुलाबजल छिड़कतो हैं तथा पान, सुपारी और नारियल खानेकी देतो हैं । इसके बाद उपस्थित सभी रमणियोंके बीच नारियल वितरण किया जाता है । वरपक्षीयानेके चूने पाने पर कन्याकी माता माना अन्तःपुरमें विभूषिता भी पक्षीय रमणियों और नौकराँके साथ वरके घर जाती है ।

इस समय वर या कर रमणियोंके बीच खड़ा होता है । कन्याको वदन वरके पागे जल केँकती हुई जाती है और वरके दोनों हाथोंमें हस्तो लगा देतो है । बाटमें वर और कन्या दोनोंके पक्षमें दो दो सधवा धानके पागोबाँध करतो है । इस समय वरकी वदन सुनहलो पाइका एक रैयमो रूपड़ा वरको देतो है ।

कन्याकी माता या कर वर और वरको माताका पैर धोती है, इस समय वर सधवाधोको एक एक वस्त्र दिया जाता है । इसके बाद ही वरको वदन क्षिपके एक पक्षमें हस्तो जाती और वरके हाथमें दे देती है । कन्याकी माता वरको अथ कटोरेमें भर कर दूध देने जाती है तब वर उस हस्तोको सासके मुखमें लगा देता है । इस समय वरके शय्यापर पक्षीय हस्तो ले कर पामोद-प्रमोद करते हैं । दोहो तीन वजे दिनको दोनों पक्षमें घार घार करके ८ मनुष्य कालिकामन्दिरमें तेल उत्सर्ग करने जाते हैं ।

शरपादा करनेके पहले कन्यापक्षीयले वरके घरमें उसको पैर धोने पाते हैं । वरको एक चोकी पर बिठा कर कन्याका पितादूधमें उसको पैर धोते और पोछे हसाल-

से पोछे लेते हैं । इसके निवा वे वरके कपानमें चन्दन लगा कर, उँगलीमें सोनेकी चूँगूठो पहना कर और गुलाबजल तथा हल दे कर चले पाते हैं । पैर धोनेके बाद दोनोंके घरमें गूलरकी बलि भोगो है । दोहो महा मंगारोहसे वाराण निकलती है । वरके साथ उसको खानि सुट, अ्य पुरुष-रमणी मयके सब जाते हैं । राहमें अमरान निवारणार्थ बीच बीचमें नारियल काटने जाते हैं । वर घोड़े पर चढ़ कर मयमें पागे चलता है । पहले माथमें एक तनवार रहती घो, अभी उसके वदनमें छुरी रहती है ।

जब वाराण कन्याके दरवाजे पहुँचती है, तब कन्याभी सोमी या कर वरण करती है और सभी नौका-चार विधि कर जाती है । पन्तमें कन्याका पिता वरके मुखमें एक मिठाई दे देता और उसे पंचनी गोदमें बिठा कर विवाहमभामें ले जाता है । ज्योतिषी मन्त्रपत्र ले कर विवाहका ठीक समय कह देते है कन्या और वरपक्षीय दोनों पुरोहित मन्त्र उच्चारण करते हैं ।

इधर कन्याकी माता या कर पहले वरको पाद-वन्दना करतो, दोहो पन्थान्य रमणियोंके साथ उसे पन्तःपुर ले जाती है । बादमें वरको विवाह-बंदो पा लाया जाता है ।

विवाहमें ये सब प्रधान अनुष्ठान हैं—मधुपान, पदधौतकरण, माताञ्जलि, सुहृन्नाम, दानसामधो-लिखन, वस्त्रपूजा, कन्यादान, गणप, मन्त्रपक्षीयन और वरकन्यामोज । विवाहके पक्षके मन्त्र फिर कुछ विधेयत्व है—मातृकापूजाके साथ मुक्त तलवारपूजा और बाह्यपनि मन्त्रपाठक पाठ आदि ।

कन्यादानादि मूल विवाहकृत्य तथा निमन्थित व्यक्तियोंके आदर-पथ्यर्चना शेष होनेके बाद वर उभो रातको पंचने घर चला जाता है । बिटाईके समय प्रत्येक निमन्थित व्यक्तिके अंशाल पर चन्दनका तिलक लगाते और प्रत्येकको दो दो नारियल देते हैं । तब वर पंचने घरके मामने पहुँचता है, तब दो मुख्य वर और कन्याकी प.नो पंचनी गोदमें ले कर नाच गान करते हैं । दोहो कन्याकी पागे करके वरके घरमें जाते हैं । प्रवेश-कालमें वरको वदन दरवाजे पर रुद्ध



पुरन्दार पानिने नियो चढ़ो रहतो है। आदमें घरकन्या  
श्रीमती हो देवक्याममें जानि हैं। सब स्त्रीकी लोकाचार-  
विधि निय हो जानी है, तब बरने मातापिता समके  
काममें नवययूका गुनन नाम कहै हैं। तदनुसार  
घर भी यथुके काममें चपना नाम कहै देता है। यह सब  
हो जानिहै बाद भिमभिन्न व्यक्तिय दूध धोर गरवत पो कर  
चपनी चपनी राए सेते हैं। कन्या बालिकाओंके साथ  
धोर बरदानकीके साथ रात्रियापन करता है।

इसके बाद भी चार दिन तक उत्सव रहता है।  
विवाहके बाद यथायुक्त कन्याकी उमर चारह वर्ष होनेके  
पहले 'सुगत' माट' या सुनस्वस्वगिधान होता है। चरका  
पिना शुभ दिन दिखा कर कन्याको सुन वस्त्र धोर स्वाद्य  
नामकी भोज देता है। पुरोहित कन्याके घर या कर  
थयासीन पूजा करके कन्याकी वक्ष साड़ी धोर चोली  
पहनने कहते हैं। इस समय स्त्रियां नाना प्रकारके  
साडीट प्रमोद करती हैं।

पाँडे 'पदरमाट' नामक उत्सव स्थिर होता है। इस  
दिन यथु बुधट काट कर वयस्या स्त्रियोंके जैसा टपड़ा  
पहनती है।

श्रुतमानी नहीं होने तक कन्या पतिके साथ रात्रि-  
वास करने नहीं पाती, तब तक उसे पित्रश्रद्धमें हो रहना  
पड़ता है। श्रुतमानी हो जाने पर कन्याको माता कोनिक  
स्त्री-साधारणके बाद चर्मे मसुरान भोज देतो है।  
यहां उसका ससुरा उसे किसी पृथक् घरमें रहने देता है।  
चार दिन तक कन्याको माता धोर चपरापर रमणियां  
या कर प्रयाग चपुसार उसे खानादि करा जाता है।

पाँचवें दिन पतिपानोका प्रथम मिलनोत्सव धोर  
भारतमानकार्य सम्पन्न होता है। इस दिन पुरोहितके साथ  
धोर भी दग माण्डव या कर मवपति धोर मममाटकाको  
पूजा, नवययुकीम सदा सुननेपरका भावाहन करते  
हैं। श्रियां दम्पतिही रमणीय वीगभूषांम मजा कर नृत्य  
गातादि नाना प्रकारके साडीट-प्रमोद करती हैं।

हत्तीके गर्भ रह जाने पर पाँचवें मसुरांम पद्यागत  
होता है। उनी समयमें गर्भिणीकी समके इच्छानुसार  
श्रीमती धोर पहननेकी दिया जाता है। प्रसवके बाद ही  
नवभारतमिष्टकी गरम कलमें भी डालते हैं। पाँडे धारे

मिष्टकी गाड़ी काटतो है धोर मिर तथा गाऊकी कुछ  
ऊपर खींच कर ठोक कर देतो है। यह कामो लका-  
कानकी लिय रहते हैं। ४० दिन तक प्रसूति श्रुतिका-  
श्रद्धमें रहतो है। इसमें दिनोंके बीच उदें रंडा जल पीने  
नहीं दिया जाता। सोइकी दूध कर जनमें चमे चुबो  
रहते हैं धोर वही मन प्रसूतिको पीनेके नियो दिया  
जाता है।

जन्मदिन पश्चात् उसके बादके दिन मिष्टकी पिता  
पुरोहित, ज्योतिषी धोर दो एक मनुष्याभ्यर्चके-साथ  
पुत्रमुख देखने पाता है। ज्योतिषी श्रद्धश्रीमिगे नामका  
समय जान कर एक खेटके ऊपर चढ़ोमें बीसी भगति  
हैं धोर मिष्टके शुभाशुभकी गणना करके करते हैं। तद-  
नुसार पिता शुभलग्नमें पुत्रमुखदर्शन धोर जातकर्म  
करता है।

यदि मिष्टके जन्मसममें कोई दोष रहे, तो पिता पुत्र-  
मुख नहीं देखते, बल्कि उसके कन्यापके नियो माण्डवों-  
को दान देते धोर स्वस्नायनादि कराते हैं। जन्मोत्सवके  
उपलक्षमें मत्तकी या कर गाव गान करती है। मिटाव  
घाँटा खाता है। पुरोहित धोर ज्योतिषी उव्युक्त बिटार  
या कर चपने घर जाते हैं।

तीसरे दिन प्रसूति धोर मिष्टकी स्नान कराया जाता  
है। इसी दिन प्रसूति मिष्टकी प्रथम स्नान्यगान करती  
है। पाँचवें रातकी पट्टापूजा होती है। इस दिन धायो  
मिष्टकी चपना गोदमें ले कर रात भर भगी रहता है।  
दशवें दिन प्रसूति धोर मिष्टकी स्नान करा कर गंधा  
यस्त्र पहननेकी दिया जाता है। इन दिन सभी घरोंमें  
तोषर धोर जल सींचते हैं। प्रसूतिके  
सभी श्रद्धस्य भी पद्यागथ्य पो कर परिशुद्ध जाते हैं। चर-  
मिष्टकी पिता धोर पित्रश्रद्धवासी सभी मगोही यज्ञो-  
पवीत बदनमें धोर पद्यागथ्य चालते हैं।

चारहवें, बारहवें या तेरहवें दिन कुछ मधवा श्रियां  
या कर हिंदुनी पर पुत्रकी सुनाती हुई उसका नाम-  
करण करती हैं। ४०वें दिन प्रसूति पातुरचरका परि-  
त्याग करती धोर स्नान करके घर ही जाती है। इस  
दिन नवीन कीचकी चुड़ी पहनतो पहता है धोर चुड़ी-  
माडेकी इस उपलक्षमें कुछ पुस्तकार भी मिलता है।

पौष्टि तो मरे वा पंचमं मांसमं यिषु पिष्टुष्टइमं न्याया जाता, इमे १२ मासके भोतर कर्ण वेषेध और टोकाप्रदण होता, दातं निकलने पर एक दिन दन्तोदग्रम नामक उलस्य बड़ो भूमधाममे मनाया जाता, पीछे चूड़ाकरण और चारमे दस वर्षके भोतर मोञ्जी-बन्धन वा उपनयन और विवाह होता है।

विवाह की तरह मोञ्जीबन्धन भी इनका एक प्रधान संस्कार है। बालकका पिता ज्योतिषी द्वारा जन्मकीटो दिखा कर शुभदिन थियर करता और तभीमे उपनयनका आयोजन होने लगता है। मोञ्जी होनेके एक सप्ताह पहले शुभदिनमें एक छटाके हथेली, सिन्दूर, धनिया, जल और सूता इन सब चीजोंको बाजारमे खरीद लाते और कुलदेवताके नामने रखते हैं। दो तीन दिन बाद परिवारस्य दो तीन बालक-बालिका एक वाद्यकरके साथ ले पात्थीय कुटुम्बके घर जाते हैं और मोञ्जीके दिन सभीको उपस्थित होनेके लिये निमन्त्रण कर पाती हैं। इस समय एक मण्डप बनाया जाता है। दूसरे दिन बालकके शरीरमें हथेली लगाई जाती और विवाहके पहले को मद्य पशुष्ठान करने होती है, यही पशुष्ठान इस उपवीनप्रणयके उपनयनमें भी किये जाते हैं। इस दिन दो पहरकी निमन्त्रित महिलाएँ और उस बालकको भोज दिया जाता है। भोजके पहले सभी रमणियोंके पात्रमे चार चार पत्र ले कर बालक और उसकी माताके पात्रमें दिया जाता है। सभी घरकी बालक खाती है। इन दिन रातको पुसपभोज होता है। दूसरे दिन सबेरे मण्डपके चारों ओर लाव दिया जाता है और उसके बीचमें दो छाटा रखा जाता है। बालक और बालिका उस चोंकी पर पा कर बैठती है। इसी तरह गीतशाय होने लगता है और कुछ सधवा भा कर दोनोंका जलमे अभिषेक करते हैं, बादमें वरण करके चलो जाती हैं। मण्डपके एक पात्रमें लक्ष्मीपा रहता है, यहाँ चौकाके लखर बालक भा कर बैठता है और इनका मामा तथा पामो सामने बैठी रहती हैं। पहले मामा बालकके टाङ्गिने शायकी पनामिकामें एक मोनेकी चंगूठो पहना देते हैं, पौष्टि केबीधे मामनेके दाताका गुच्छा धाट जानते हैं। बालक-

की पीसो लग वासकी ले कर एक कटोरेमें जी दूधमे भरा रहता है, रख देतो है। बादमें नारद, मित्रा छोट कर निरके सभी वानोंको सुँड देता है। इसकी बाद सधवा स्त्रियाँ बालकको स्नान करातो और वरण करतो हैं। तदनन्तर बालकका माता पति भोजिको एक सफेद कपड़ेमे टँक कर गोदमें छठा लेते और बरामदे पर आते हैं। यहाँ वरण होनेके बाद उसे पूजाशुद्धमें ले पाते हैं। इसके कुछ समय बाद ब्राह्मण पाठ उपनोत प्रथम अविशाहित वानकीके माय एश्व भोजन करता है। भोजन का चुकनेके बाद शुचि हो कर और पन-हार पहन कर बालक देरुष्टइमें पिताकी बगल पूर्व-मुखी हो बैठ जाता है। शुभमुहूर्तमें ज्योतिषी, पुरोहित और दूर-दूरसे ब्राह्मणगण स्तोत्र-पाठ करते हैं। ज्योतिषीके कथनानुसार ठोक समयमें मन्मो निमन्त्र्य होते हैं। पुरोहित उत्तरमुख करके कपड़ेको ओंघ कर पक-डते हैं। इस समय वाद्यकर औरमे वाजा बजाता है और अभ्यागतगण करतनध्वनि करते हुए खड़े होते हैं। पुरोहित वामहस्तमें दाहिनी ओर यज्ञशूत्र और मध्यस्थलमें मुञ्जदण्डके माथे लगभारको छाल बांध देते हैं। बालक इस समय उठ कर पिताकी प्रणाम करता और उनको गोद पर जा बैठता है। पाचार्य जानमें 'गायता' मन्त्र कथ देते हैं। उपस्थित स्त्रियाँ जिसमे गायत्रोका कोई पक्षर सुनने न पावे, उसके लिये पुसप लोम लचोःस्त्रामे स्तोत्रपाठ करते हैं। पीछे पात्थीय बन्धुगण बालकको स्पर्ण, रोष्य वा जड़ो पुरे चंगूठी पहना रूपये दे कर पागोवाट करते हैं। बादमें पुरोहित होम करते हैं, उन पतिनी ज्वाम्ना कममे कम पाव दिन तक रहती हैं। पांच दिन तक जिमोकी भी अय्य नहीं कर सकता और न यह घरमे बाहर हो निकल सकता है। उपनयनके बाद मध्याह्नकानमें बालक भिषाकी भोनी और दण्ड हत्यमें ले कर वेदोके पात्र चूड़ा होता और भिषा मांगता है। पात्थीय कुटुम्ब स्त्री-पुसप दोनों ही भिषा देते हैं। इस दिन जातिकुटुम्बका भोज होता है। रातके दसवजे बालक 'रागो जाता म' यह कथ कर मामाके घर पला-पाता है। उसके पात्थीय कुटुम्ब भी कुछ समय

बाद ही मासके घर पहुँच जाते हैं। यहाँ मध कोई योगी-विद्विज बोठा घोर नारियल खा कर बालककी माय लिए चाने हैं। दूसरे दिन प्रायःभोज ही कर मीनो-उत्सव मंत्र होता है।

मृत्यु काल उपस्थित होने पर गो-पूजा, गो-नाष्ट्रुम-स्वष्ट, जलपान, चाचाय की गोदान, गातापाठ, मृत्युके बाद मृत व्यक्तिके सुप्तमें गद्दाजल, तुलसीपत्र घोर एक पण्ड सुवर्ण प्रदान, मृत्युके दिन मृतके पुत्र वा पति निकट पायायका ईशानुष्ठान घोर अंततत्त्व परिधान मृतकी विधवा रमणीका चमडारादिमोचन, धात्रीय स्नान एकत्र ही खाट पर मय ले कर ( रामनाम करत हुए ) अंगानघ्नमें ममन, अंगानमें कर दीय सुधानि-मथति, अख्ये टिकिया, २० दिन प्रेतके उद्देश्यमें केलके पत्तोंमें दुग्ध घोर जलप्रदान पादि कार्य सम्पन्न होते हैं। जो सुजाति करता है, यह दस दिन घरमें बाहर नहीं निकलता। इतने दिनोंमें मन्थ परिवारस्य कोई भी रन्ध नादि नहीं करता, बंधन भासां नाद घोर मोक्षप्रसाद करता है। धात्रीय कृत्य उभयें घर खाद्यवदायें भोज देने हैं घोर धा कर जिना भी जाते हैं। २३वें दिनमें आद्याधिकारी किमी धर्मशास्त्रमें जा कर पुरोहितको महायामि ययारोति आद्य घोर टानादि सम्पन्न करते हैं। २३वें दिन भी प्रतायाको सुधा लण्वा दूर करनेके निवे मिलतपत्र किया जाता है।

यदि किसी व्यक्तिका पति दूर देशमें दिहाल ही जाय पथवा किसीको भी भायाँ पतिकी लाङ्ग उभयें कुलमें कानिमा लना कर लनी जाय, तो समके भी उद्देश्यमें ययारोति अंगान जा कर अन्धे टिकिया घोर आहादि करने होते हैं। ऐसी हालतमें यह पति पयोका किंर कभी सुप्त नहीं दिखता।

घनो घनो प्रमृगय प्रायः मय देते जाते हैं। अद्भिरिमठके महाभावाँको ही ये लोग पचना सम-प्रधान धर्मगुरु मानते हैं घोर वचनमें ही मंजलत स्तोत्र पाठ घोर दिनपूजा करना नियते हैं। अथिकांय भुक्ते गमें मचपनि, महादेवका याचनिक घोर शास्त्रपम विना रहता है तथा प्रतिदिन मगको पुता को जानते हैं। घनो प्रमृगय हिन्दुयका पामन करते हैं। इमके

मिया घनके कई एक विनीय पर्व हैं, यथा—घेरगुल प्रतिपदकी ध्वजदान, रामनयनो, दुनुमानुपूर्णिमा, पद्ययतीया, कटकोपूर्णिमा, चावाड़ी मूल एकादगी, नागपक्षमी भीर नारिकेल-पूर्णिमा, लक्ष्मी अन्नाष्टमी, हरितान लनीय, गवियघसुर्षो, महापक्षमी, गण्डेमा, वामनहादगी, चमत्ताचतुर्दशी, महापया, दगहरा, कीजागरा, पूर्णिमा, टिषाको, यमदितीय, तुलसीएकादगी, दापमंज्ञानि, हीनो या दोलपूर्णिमा।

प्रसूतिके मन्थ किमा प्रकारकी पद्यायत नहीं होता है।

पत्तर ( हि० पु० ) १ धातुका एधा चिपटा लम्बीतरा टुकड़ा जो पाठ कर तैयार किया गया हो पत्त-का तरफ पतला होने पर भा कड़ा हो तथा जिसको तह या परत को जा सके, धातुका चादर। २ पत्त रवेया। पत्तर ( सं० क्ता० ) पत्तर ( पत्ता० ) धातु। ३ रत्नपट्टन, अक्षम। पत्तर ( सं० )

पत्तन ( हि० क्ता० ) १ पत्तिका मॉकोमें जोड़ कर बना हुआ एक पत्त। इसमें घाकोका काम लिया जाता है। पत्तन प्रायः बरगद, महुए या पलास पादिक पत्रोंका बनाई जाती है। इसकी बनावट गाल जाता है। व्यास-का लम्बाई एक हाथस कुछ कम या अधिक होती है। हिन्दुपति यहाँ बड़े बड़े भाजोंमें इस पर भोजन परवा जाता है। अन्य समयमें पर भी इसका वालीके स्थान पर उपयोग किया जाता है। जङ्गली मनुष्य तो भदा रनोंमें खाना खाते हैं। २ पत्तन भर दाल चावल या पुर्ण भट्टू पादि, परोसा। ३ पत्तनमें परवा, हुई भोजन-सामग्री।

पत्तलक—पन्धरंशोय एक राजा।

पत्तम् ( सं० पत्त० ) रजिमंजक पाद द्वारा।

पत्ता ( हि० पु० ) १ पीड़ या पौधेके शरारका यह दूरे रंगका फेला हुआ पत्रपत्र जो कण्ड ता टहन्यामें निकलता है, पत्त, पत्त, हटन। विशेष विशेष 'त्र' उपरते देलो। २ एक प्रकारका गहना जो कानमें पहना जाता है। ३ धातुका चादर, पत्तर। ४ मोंटे कागजका मोल या पौकीर पत्त। ( वि० ) ५ बहुत घनका। पत्ति ( सं० पु० ) लयमें विपत्त-भेनाप्रति पत्ता गच्छ-

नीति पट-ति ( परिप्रथिमार्ग निर । वग. ४।१८२ ) १ पटा-  
तिक, पेटल मिवासी । २ वीर योडा, बहादुर । ( स्त्री० )  
पट-भावे क्तिन् । ३ गति, चाल । ४ प्राचीन कालमें  
सेनाका मन्त्री छोटा विभाग । इनमें १ रथ, १ हाथी, १  
छोटे वीर ५ पेटल होते थे । किमी किमीके मतमें  
पेटलकी संख्या ५५ होती थी ।

पत्तिक ( म० पु० ) पत्ति-कम् । १ पटाति, पेटल मिवासी ।  
२ प्राचीनकालमें सेनाका एक विशेष विभाग । इनमें  
१० घोड़े, १० हाथी, १० रथ वीर १० प्याट्टे होते थे ।  
३ उपयुक्त विभागका उपक्रम । ( त्रि० ) ४ पेटल चमने-  
माना ।

पत्तिकाय ( म० पु० ) पटानिक सेन्य, पेटल सेना ।  
पत्तिगणक ( म० त्रि० ) पत्ति गणयतीति गण-गणक । पत्ति-  
गणयिता, प्राचीन सेनामें एक विशेष अधिकारी जिसका  
कर्तव्य पेटल सेनिकोंकी गणना करना तथा उन्हें  
एकत्र करना होता था ।

पत्तिान ( म० त्रि० ) पट्टां सेनानि तिल-गतो वा हिन् ।  
पाद द्वारा गमनशील, पैरोंसे चलनेवाला ।

परितसंहति ( म० स्त्री० ) परतोर्ना संहतिः इत्यम् ।  
परितसम्बन्ध, सेनासम्बन्ध ।

पत्नी ( हि० स्त्री० ) १ छोटा पता । २ भाग, हिस्सा । ३  
फूलकी पंखड़ी, टल । ४ भाग । ५ परतोके पाकारका  
मकड़ी, धातु आदिका कटा हुआ कोई टुकड़ा जो प्रायः  
किमी स्थानमें जड़ने, लगाने या लटकाने आदिके काम-  
में जाता है, पत्ती ।

पत्नीदार ( हि० पु० ) साप्तीदार, हिस्सेदार ।

पत्नी ( म० पु० ) गती याद्वलकादूर, तस्य च द्वित्वं ।  
१ शान्तिप्रदाक, शान्ति-नामक प्रायः । २ जनविषयो,  
जनसोपव, ३ पत्नीटोडस, पाकइला वेड़ । गमोहस,  
समोका वेड़ । ४ कुण्डन । ५ पतइको लकड़ी ।  
० सातगमन ।

पथ ( हि० पु० ) पथ देखो ।

पथर ( हि० पु० ) १ छटशोके कड़े स्तरका पिप्ट या मण्ड-  
विशेष निररप प्रतर कर्ममें देखो ।

२ मङ्गलकी सायम्बित करनेवाला पथर, मीसका पथर ।  
३ रत्न, जयाहिर, हीरा, सात, पवा आदि । ४ इन्द्रोपल,

विनोमी, चीला । ५ बिलकुल नहीं, कुछ नहीं, खाक । ६  
पथरकी तरह पथोर, भारी पथवा पथने गमने आदिके  
पयोग्य वस्तु ।

पथरकमा ( हि० पु० ) पुरानी चालको बन्दूक जिसमें  
वास्तु सुनगानेके लिये चक्राक पथर लगा रहता था ।  
तोड़ेदार या पत्नीदार बन्दूक, चाँददार बन्दूक ।

पथरकून ( हि० पु० ) गैमाख्य, करीला ।

पथरचटा ( हि० पु० ) १ एक प्रकार की चाल जिसकी टक-  
नियां नरम चौर गतनी होती है । २ एक प्रकारका  
साँव जो पथर चाटता है । ३ एक प्रकारकी मटनी जो  
सामूद्रिक चट्टानोंसे चिपटी रहती है । ४ कन्नूस,  
मरलीचूम । ( वि० ) ५ जो घरकी चारदीवारीसे बाहर  
न निकलता हो ।

पथरचूर ( हि० पु० ) एक प्रकारका पोषा ।

पथरफोड़ ( हि० पु० ) छुटछुट पत्ती ।

पथरफोड़ा ( हि० पु० ) पथर तोड़नेका पैगा करदेवाना,  
संगतराग ।

पथरवाज ( हि० पु० ) १ वह जो पथर किंक कर किसी-  
की मारता हो । २ वह जो प्रायः पथर या टेला किंका  
करे । ३ वह जिसे पथर किंकनेका अभ्यास हो, टेला-  
वाह ।

पथरवाजी ( हि० स्त्री० ) पथर किंकनेकी क्रिया, पथर  
किंकार, टेलावाहो ।

पथन ( हि० पु० ) पथर देखो ।

पत्नी ( म० स्त्री० ) पत्न्यु यज्ञे मन्त्रयो यथा, इति मकारादेशः  
डोव च ( पत्न्युर्ना ४३५ ) योगे । ग ४।१।२२ वेदविधाना-  
नुया लड़ा, विवाहिता स्त्री । जो कन्या शान्तानुभार  
व्याहो जाती है उसे पत्नी कहते हैं । पर्याय—पानि-  
गृह्णते, मङ्गलमिणी, भार्या, प्राया, दारा, सधमिणी,  
धर्मधारिणी, दार, गृह्णिणी, मङ्गलरी, गृह, सेव, सधु,  
जनि, परिपथ, लड़ा, कन्या ।

"पत्नीमूले पृष्टं पुंसां नदिच्छन्दोऽनुवर्तिनी ।  
गृहधामनयनं नरिन यदि भावीं वयात्तया ॥"

( दशमरिता । )

दशमरितामें लिखा है कि पत्नी ही गृहधर्मकी  
जड़ है । यदि पत्नी पुरुषकी वगवर्तिनी हो, तो गार्ह-

स्वाग्रम दत्तमभोजं च । पत्नीं तदग्रे रक्षन्ते उच्यते साय  
धर्मो, चर्गं चौर काम इम विवर्गता एव लाभ होता  
है । पत्नी यदि मोक्षदाधारिणी हो चौर उभे यदि  
विचारण न किया जाय, तो यह व्याधिकी तरह क्रो-  
दायिका होता है । जो पत्नी स्वामीको अनुकूल, याद-  
दोषरहित, कार्यदक्षा, दत्ता, मित्रभाषिणी चौर पतिभक्ति-  
यत्नः से यह साक्षात् देवीके सदृश है । जिसकी पत्नी  
समस्तलिंगी नहीं है उभे दम्भी लोकमें मरक-वास होता  
है । पत्नी चौर पतिजा परस्पर अनुराग रहना स्वर्गमें  
भा सुखभ है । गृहस्थायुषमें नाम देवल सुवर्षे लिये है,  
किन्तु पत्नी ही हम गांधर्वसुवर्षकी अह है । जो पत्नी  
विनीता है चौर पतिजा मनोगत भाव समझ कर चलती  
है वही पत्नी पत्नीगन्धवाय है । जिस पत्नीमें चक्र गुण  
नहीं है उसमें केवल दुःख भोग होता है ।

निन्दिता पत्नी लोकके समान है ; पत्न्यार वस्त्र प्रशंति  
द्वारा उच्यतेउच्यते परिपालित होने पर भा यह उभेगा  
सुदुर्गम रह चुसता है चौर एक दण्ड भी स्वच्छन्द  
रहने नहीं देता । जब तक पति चौर पत्नीकी उभर  
बोझा रहता है, तब तक पत्नी मर्षदा गृहगुण रहती  
है । जो पत्नी मर्षदा दृष्टिपक्षा है, गृहोपकरण  
द्रव्यमसूहक भवस्थान चौर परिमाण विषयमें जानकार  
है तथा पत्न्यरत पतिके प्रातिकर कार्य करता है, यहाँ  
पत्नी प्रकृत पत्नी है । ये सब गुण जिसमें नहीं हैं, वह  
केवल शरारतव्यवहारिणी जग है । पुत्रपत्नी प्रथम विवा-  
हिता जो पत्नी है, वहाँ पत्नी धर्मपत्नी है । अपर विवा-  
हिता पत्नी कामपत्नी माना गई है । इन सब पत्न्यव-  
र्षे दृष्टकल जाता है, पट्टकल धर्म चादि कुल भी नहीं  
होता । ( रत्नरिखा ४७० )

मनुमें लिखा है—पतिकी पत्नीके प्रति निवृत्त मनु  
व्यवहार करना चाहिये । जो आदिहिकी कामना करते  
हैं, विविध मरकावकामने ही प्रथम लिये ही, धर्मन,  
मधन चौर भूरगादि द्वारा स्तियाका धामोद विधान  
करना उनका कर्तव्य है । जिस परिवारके मध्य पति  
चौर पत्नी दोनों एक दूसरेके खबर लिये समुद्र रहते  
हैं, निवृत्त ही उभे कुलका सम्पाद होता है । यद्यत्त चौर  
चाभरत चादि द्वारा स्वात्मितो नहीं होने पर नारीका

पुत्र पर प्रेम नहीं ही मरुता चौर जब तक स्वामी पर  
प्रेम नहीं होता, तब तक सुकल्याण हो ही नहीं मरुती ।  
पत्नी यदि मृत्युचादि दाग मनोहरभावमें समस्त रह, तो  
मर्षो वर भीमा पाते हैं पत्न्या वे भीमाचीन हो जाने हैं  
जिस कुलमें नारियोंका मध्यक मनाटा है, यहाँ देवता भी  
प्रमथ रहते हैं चौर नहीं स्तियाकी पूजा नहीं है, मम  
परिवारके वागादि क्रियाकर्म निष्कल होते हैं । जिस  
परिवारमें स्तिया मरु दुःखित रहती हैं, वह परिवार  
बहुत जल्द नाश हो जाता है । स्तिया जिस परिवारमें  
धनसूत्र हो कर समस्तपत्नी देती है, वह परिवार  
पतिपारकतकी तरह विनष्ट हो जाता है । ( मनु ३ म० )  
पत्नीव्य ( म० स्त्री० ) पत्नी भावे ग्व । पत्नीका भाव वा  
धर्म ।

पत्नीमन्य ( म० पु० ) एक वैदिक मंत्र ।  
पत्नीयुव ( म० पु० ) यज्ञमें देवपत्नियोंके लिए नियत  
रथान ।

पत्नीयत् ( म० स्त्री० ) स्त्रीकी तरह, स्त्रीके जेगा ।  
पत्नीयत ( म० पु० ) पत्नी विवाहित। स्त्रीके पतिरिक्त  
चौर किसी स्त्रीके गमन न करनीका मन्त्रक या नियम ।  
पत्नीगाना ( म० स्त्री० ) पत्न्याः गाना । यज्ञकालमें  
पत्नीके लिये निर्मित गृहोद, यज्ञमें वर घर जो पत्नीके  
लिये बनाया जाता है । यह यज्ञगानाके पवित्र चौर  
होता है ।

पत्नीमंवात्र ( म० पु० ) वैदिक कर्मभेद ।  
पत्नीमंवाजन ( म० स्त्री० ) पत्नीमंवाजनक वैदिक कर्म-  
विधिय, विवाहके पश्चात् होनेवाला एक वैदिक कर्म ।  
पत्नीमंहनन ( म० स्त्री० ) पत्न्याः मंहनन । मनु ।  
मिथुना द्वारा पति-प्रत्याश्र यादीकारके लिये यज्ञमाने  
चौर पत्नीका दन्तमभेद ।

पत्न्याट ( म० पु० ) पत्न्यव्य पट-पाधारि मय, पाटा,  
पत्न्याः पाटः । पत्नीगृह, स्त्रीका घर ।  
पत्न्यु ( म० स्त्री० ) १. शाश्वतमन-शाश्वत । २. मायुगमन  
मदम गतिविधियट । ३. वायु दाग-पत्न्यौलमें गमन-  
गाम । ४. पतनगमिसा पटि ।  
पत्न्य ( म० स्त्री० ) पतिजा भाव, जैसे मैनापत्नी ।  
पत्नींश ( स्त्री० पु० ) पतिमाता देवी ।

पत्नीरो ( 'शि'० स्त्री० ) पत्नि, कतार ।

पत्नीरां ( 'शि'० पुं० ) एक पत्रवान जो कच्छू के पत्ती को पोठीमें लपेट कर घो घो या तेलमें तननेमें तैयार होता है, एक प्रकार का रिकयच ।

पत्र ( मं० स्त्री० ) पत्रति हृत्वात् पत्र-ङ्ङुन् (सर्वत्राङ्ङुन्-पृष्ट् । उण् ४।१५८) । हृत्वाथययविग्रोप, पत्ता । पर्याय—पनाग, छदन, दल, पर्ण, कंद, पाद, छादन, यई, वषण, पत्रक ।

पत्रके बीचकी जो मोटी नम होती है वह पोछी हो और टचनेसे लुढ़ो होती है । यह नम प्रागती और उत्तरोत्तर पत्रनो होती जाती है । इस नमके दोनों ओर अनेक पत्रनो नव निकलती हैं । ये खड़ो और चाड़ी नसे की पत्रका टांचा होती हैं । सभी नमोका यह जाल हरि वाच्छादनमें टका होता है । बहुतसे पेड़ों और पौधोंके मत्तीका अन्तिम भाग जो रुदार अथवा कुछ कुछ गावदुम होता है, पर कुछके पत्तें त्रिकुल गोल भी होती हैं । नया निकला हुआ पत्ता परापन लिये हुए नाल होता है । इस अवस्थामें उसे शीपत्र कहते हैं । कुछ पेड़ोंके पत्तें प्रति वर्ष पत्रकड्डे दिनोंमें झड़ जाती हैं । इस समय वे पायः वर्षणीन होते हैं । इन दो अवस्थाओंके प्रत्यावर्तन समय परता करा ही होता है । पत्ता हल या पोछेके लिये यत्ने कामका पत्र है । प्रायसे उसे जो पाहार मिनता है वह इसीके द्वारा मिनता है । निरिन्द्रिय पाहारका सेन्द्रिय द्रव्यमें परिवर्तित कर देना पत्तें हीका काम है । कुछ हृत्वांके पत्तें द्रायका भी काम देते हैं । इनके द्वारा पोषे वायुमें वहनेवाले कोड़ाको पकड़ कर उनका लेह चुमते हैं ।

विष्णुके लहंगेमें पत्तें निवेदन करनेमें प्रमोद पुण्य प्राप्त होते हैं । इन सब पत्तोंका विषय नारमिहपुराणमें इस प्रकार लिखा है—पयोमागका पत्र, भृङ्गारकपत्र, खटिर, शमो, दूर्वा, कुग, दमनक, विन्धव और तुलसी-पत्र (पुण्यके माय) विष्णुके विशेष धीतिकर है । जो पुण्यके माय इन सब पत्तों द्वारा विष्णुको चर्चना करते हैं, वे सभी प्रकारके पापोंमें मुक्त होते हैं और परममें वे विष्णुलोक जाते हैं । पूज्य पत्रकी अपेक्षा परम अधिक पुण्यजनक है ।

कानिकापुराणमें लिखा है—पयोभागपत्र, भृङ्गा-रवापत्र, गन्धिनीपत्र, इनाहक, खटिर, वज्रनू-मन्थक, जम्बू, वाजपुर, कुग, दूर्वा, शमो, आमलक और आम ये सब यथाक्रमसे देवो भगवतोंके अधिक प्रीतिकर हैं तथा इन सबका अपेक्षा विष्वक्पत्र अधिक है ।

( वाटिकापुं० १८ म० )

नारायणको तुलसीपत्र और शिव तथा दुर्गा चाटिको विष्वक्पत्रको अपेक्षा और कोई दस्तु प्रिय नहीं है । विष्णु पूजनमें तथा शान्तिस्वस्थयन सभी कर्मोंमें विष्णुको तुलसीपत्र प्रदान करनेमें सभी प्रकारके विघ्न जाते रहते हैं । शक्ति-पूजनमें भी विष्वक्पत्र ही प्रकार श्रेष्ठ माना गया है ।

२ तैजपत्र, तैजपत्ता । पर्याय—तैजपत्र, तमानपत्र, पत्रक, छदन, दल, पनाग, पंशुक, वाम, तापन, सुकुमारक, वरद, तमानक, राम, गोगन, यमन, तमान, सुरनिगम्य । गुण—रट्ट, तिष्ठ, उष्ण, कफ, वात, विष, वक्षि और कण्ड तिदोपनागक ।

३ वाहन । ४ ग्रापत्त । ५ पक्षिपत्त । पत्यते

पात्यते शास्त्रबोधाय चर्चा निवर्गोऽनेन, पत करणं द्रुम् । ६ लिखनाधार, धातुमय पत्राति द्रव्य । पात्यते न्यानात् स्थानान्तरं समाचारोऽनेन । ७ पत्तो, चिट्ठी । पत्र द्वारा सम्वाद एक स्थानमें दूसरे स्थानमें भेजा जाता है ।

वररुचिहृत पत्रकौमदीमें पत्र लिपनिका प्रकार और पत्रका अन्त्यान्व विषय विरहस्तदप्यमें लिखा है । यज्ञ पर बहुत मंसेपमें लिखा जाता है—

पत्रको लिख कर रंगा देना चाहिये । जो पत्र सुवर्ण द्वारा रंगाया जाता है, वह उत्तम, शीघ्र द्वारा होनेसे मध्यम और रत्नादि द्वारा होनेसे अधम होता है । एक हाथ छः पद्म, न प्रमाणका पत्र उत्तम, छत्तरप्रमाण मध्यम और मुट्टि हटा प्रमाण सामान्यपत्र माना गया है । पत्रभद्रका विषय हम प्रकार लिखा है—पत्रको तीन समान भागोंमें करके सुड़ना होता है । इन तीन भागोंमेंसे दो भाग डीढ़ कर गेप मागमें गंध का पत्तादि अंशुक यर्ष लिखना चाहिये ।

पत्ररचनाका क्रम—राजा अपने लिपिकको बुला कर पत्ररचनाका आदेश करे । लिपिक गंध वा पत्तादि

पदवृत्त पत्र प्रस्तुत करके दो पालियोंके साथ दो या तीन दिन तक लिखा। हरके भेजा स्वच्छ होना, पैसा की पत्र पुस्तकमें लिपि और सामान्य पत्रमें लिपि कर लिपिके राजाको सुनाये। पीछे राजसेवक राजाके पात्रानुसार समपत्र लिपे।

लेखनप्रकार—पत्रके पहले मन्त्रसायं पदुग, मध्यमें द्वन्द्व चार समाह्ण लिखना चाहिये। तदनन्तर सप्त मन्त्र प्रयोग पौर श्रौ-मन्त्र पूर्वक संस्कृत वा खलित भाषामें कुम्भलिपि कर समवासा लिखनी चाहिये।

कीर्ति पौर प्रीतिपुत्र पद्य, पीछे 'किमधिकमित्यादि' लिपि कर गोप करना चाहिये। इसके बाद पत्रतय-परेण लोक पौर मन्त्रादिका पद लिखना होता है। इन प्रकार पत्र लिखनेकी विधि जान कर जो पत्र लिखने हैं, वे मन्त्रेय पौर विदेगमें कीर्तिनाम करते हैं। जो शास्त्र नियमको भ्रानि बिना राजपत्र लिखते हैं, वे मन्त्रीके साथ महत् प्रयय पाते हैं।

पत्र लेनिका नियम—राजपत्र, गुरु, ब्राह्मण, यति, मन्त्र्यामी पौर स्वामी इनके पत्रको पादर पूर्वक मन्त्रक पर धारण करना चाहिये। मन्त्रीके पत्रको मन्त्राट-देयमें; भार्या, पुत्र पौर मित्र इनके पत्रको हृदयमें पौर प्रवीरके पत्रको कच्छदेगमें धारण करना होता है। इनके मिया पद्य कोनीके पत्रधारणमें कोई विरोध नियम नहीं है।

पत्रपाठका नियम—पत्रके पत्रको पकड़ कर नमस्कार करना चाहिये। पीछे राजाके समीप टलिय पौर बैठा कर दो बार, मन ही मन पढ़ लेना चाहिये, तीसरी बार परिरपुट भाषमें राजाको पढ़ कर सुना देना प्रथम है। गोपनीय पत्रको निर्जन स्थानमें पौर शुभपत्रको राजाके पात्रानुसार समामें पढ़ सकते हैं। पाठकको इन प्रकार पद्यार्थ सुन कर राजसमीपमें राजाका प्रति-पादन करना चाहिये।

पत्र विष्टका नियम—लक्ष्मदेयमें हः पदुग लाल लोड़ कर मन्त्रक चन्द्रविग्रहके समान कपुरा पौर कुङ्कुम द्वारा विष्ट करके राजाको पत्र देना होता है। इसी प्रकार मन्त्राका पत्र कुङ्कुम द्वारा, पण्डित पौर गुरुका चन्दन द्वारा, स्वामीका सिन्दूर द्वारा, भार्याका

पत्रक द्वारा, पिता, पुत्र पौर मन्त्र्यामीका पत्र चन्दन द्वारा, 'पत्नीका कुङ्कुम द्वारा पौर सूर्यका पत्र रक्त-चन्दन द्वारा विष्टित करना चाहिये। कृष्ण मन्त्रको जो पत्र दिया जाता है उसे रात द्वारा पत्रविष्टित करने हैं। सभी पत्रोंके लक्ष्मदेयमें सुवर्णन लिष्ट करना पानयक है।

राजपत्रके कोमें हेट नहीं करना चाहिये। राज-पत्रादिमें राजाको मधाराजाधिराज, दामश्री, मन्त्र रित्र पौर कच्छपुत्रपण्डव इत्यादि यथायोग्य पदम्यास विधेय है। इसी प्रकार मन्त्रीके पत्रमें गुर्वाणुसार प्रवर, प्राज्ञ पौर सचरितादिका उल्लेख; पण्डितके पत्रमें पद-तममें सन्त्यापूर्वक प्रणाम, शास्त्रार्थनिपुण इत्यादि; गुरुके पत्रमें चरचमें प्रचतिपूर्वक सास्त्रविद्वान्निपु-यादि; राजामिपत्रमें मनमस्कार प्राज्ञप्रियादि पद; भार्याके पत्रमें माधो पौर मचरितादि तथा प्राचप्रिया प्रभृति पद; पुत्रके पत्रमें पागोर्वाटपूर्वक प्राज्ञपुत्र इत्यादि; पितृपत्रमें प्रभुचर्च मनस्कार पौर मचरितादि मन्त्र्याधिकारके पत्रमें मन्त्रवाग्द्वानिर्मुक्त, सर्वशास्त्रार्थ-पारग इन प्रकार पदविन्यास करना होता है।

गुरुके पत्रमें १ श्रौमन्त्र, स्वामीके पत्रमें २, भृत्याके पत्रमें ३, गुरुके पत्रमें ४, मित्रके पत्रमें १, पुत्र पौर भार्याके पत्रमें १ श्रौमन्त्रका प्रयोग करना चाहिये।

( बरविष्टित पत्रकीपुत्री )

पत्र मन्त्रेय पत्रके साधारणतः गुरु पत्रका ही बीध होता है, पीछे उन पत्रकी निश्चित यत्तुका। यत्तमान समयमें जो मनोभाव कागत्र पर लिपि कर पत्रके मद्य सचिचमिग होता है, तथा एक समय तामपत्र या भोज-पत्र पर लिपि कर व्यक्त होकर था। पूर्व समयमें हस्त पद्यादि पर लिखा जाता था, इन कारण इन पत्रपर लिखित मनोभाव 'पत्र' वा 'विद्वान्' नाममें खला था रहा है।

पूर्व समयमें जब हम लोगोंके देगमें कागत्रका प्रचार नहीं था, तब भोजपत्र, कदनीपत्र पद्यया ताम-पत्र पर विद्वान् लिपि कर अपने पालीय स्वर्णनीको मनो-भाव जताते थे। आज भी पत्रिपादन्य मुद्रकशास्त्र-को पाठशास्त्रमें पानकगण पत्रके तामपत्रके ऊपर लक्ष

माता निखना मोच्छते हैं। पीछे हस्ताक्षर सरल हो जाने पर कटकीपत्रके ऊपर 'निवृत्तादि' पाठ (चिट्ठो, जमींदारी वा मझानगी पाठि) लिखा करते हैं। पूर्ण-वयस्क होने पर पथीय अथ प्रकृत विपयक्रममें हस्ताक्षर करनेमें समय हो जाते हैं, तब वे कामगजके ऊपर लिखना आरम्भ करते हैं। यभी प्रायः हस्तपत्रादिके ऊपर लिखन-प्रणाली चठ गई है। केवलमात्र सटोमा देगसे प्रेरित दो एक तालपत्र पर लिखित 'चिट्ठो' (भावा-पत्र) और प्राचीन ग्रन्थादिकी मरुम निख कर नाना देगोंमें भेजो जातो हैं। विवाहादि कार्य स्थिर हो जाने पर शुभ दिनमें शुभक्षणमें विवाहवन्धन दृढ़ करनेके लिये दस पाँच मनुष्योंके सामने एक कामगज पर विवाहके पात्र और पात्री तथा वरकन्या और कन्या-कन्या पक्ष विवाहके प्रकृत खान और दिन नियत कर जिन कामगज पर लिखा जाता है, उसे मो पत्र कहते हैं। यूरोप देगोंमें जिस प्रकार विवाहका Contract लिख कर रजिस्ट्रो होतो है, हम जोगोंमें भी उसी प्रकार आत्मोय क्लृप्त्यके सामने उस पत्र पर चन्दन और रुपयका छाप दे दिया जाता है। इनके बाद कर्तव्यो दे कर दोनों पक्षवाली यह स्वीकार करते हैं, कि हम दोनों इस सम्बन्धके स्थापनमें राजी हैं। छोड़ी देखो। पत्रक (सं० स्त्री०) पत्र खार्चो कम्, तदिव कायति या कंक। १ हस्तका पर, पत्ता। २ पत्रावनो, पत्तीकी लड़ी। ३ तेजपत्र, तेजपत्ता। ४ गालिय शरु, गालि साग। ५ पत्रागह, टाकका पेड़। पत्रकस्त (सं० स्त्री०) १ पत्रका कवक, गन्धममाला दिया हुआ पत्तीका धूर। तेज पत्र जाने पर गरम भवस्थानि गन्धकी छिट्ठके सिद्धे जो कुच्छ दिया जाता है, उसे पत्रकस्त कहते हैं। २ मधुसुगन्धित तैल, सुगन्ध-दार तैल। पत्रकाहना (सं० स्त्री०) पत्रकाया पाहना शब्द। १ पत्रगन्ध, पत्तीके छिट्ठनेमें होनेवाला एक प्रकारका शब्द। २ पिन्नाका। पत्रकच्छु (सं० पु०) पत्रोः पत्र-कायः साधयं लच्छे। प्रतविधेय, एक प्रत सिधमें पत्तीका काटा पी कर रखा जाता है।

पत्रगुप्त (सं० पु०) पत्राणि गुप्तानि यस्य। स्मृती हस्त-भेद, तिधारा, धूर। पत्रघना (सं० स्त्री०) पत्रमेव घनं यस्या, पत्र साध्यात् तथा लं। सातला हस्त, सेंदुन। पत्रङ्ग (सं० स्त्री०) पत्रमध्यते पत्र-कारणे घञ्, गत्र म्यादित्वात् साधु। पत्राङ्ग, रत्नचन्दन, वक्षम। पत्रधारिका (सं० स्त्री०) भौतिक क्रियाभेद। पत्रहेदक (सं० त्रि०) पत्रच्छेदनकारो, हेने काटनेवाला। पत्रच्छेद्य (सं० त्रि०) छिन्नपत्र, जिमके हेने ऋटे हैं। पत्रम (सं० पु०) तेजपत्र, तेजपत्ता। पत्रजाघम (सं० पु०) पटोक्त पौर तानपत्रोय पामव, वह मथ जो परधन और ताड़के पत्ताने पुपाई जाय। पत्रभङ्गार (सं० पु०) पत्रेषु भङ्गारस्तदत् शब्दावस्य। पुरोटीहस्त। पत्रणा (सं० स्त्री०) पत्रोः पत्नी ज्ञावनमिव यत्। शरपत्र-रचना। पत्रतण्डुली (सं० स्त्री०) पत्रेषु तण्डुलवत् विद्यते यस्या, अगं वादित्वात्, ततो गोरादित्वात् डीव्। यथतिष्ठा-मता। पत्रतण्डुल (सं० पु०) पत्रप्रधानस्तदः। विट्छदिरहस्त, दुर्गन्ध खेर। पत्रतानक (सं० स्त्री०) वंशपत्र हरितान। पत्रदारक (सं० पु०) पत्रवत् दारयति हस्तानि रति ह-निच् ष्वल्। मरुच, करीमका पेड़। पत्रहुम (सं० पु०) तानहस्त, ताड़का पेड़। पत्रनाहिका (सं० स्त्री०) पत्रस्य नाहिका। पत्रगिरा, पत्तीको मस। पत्रनामक (सं० स्त्री०) तेजपत्र, तेजपत्ता। पत्रपरद (सं० पु०) पत्रे धातुनिर्मितपत्राकारे परद-रिष, तच्छेदकत्वात् तथा लं। अर्थात्कार प्रभृतिका यन्म-भेद, बीनार लोहार पादिका एक औजार, किनो। पत्रवा (सं० स्त्री०) पत्रपत्रमिति पत्र-पत्र-पत्र निपात-नादकारलोपः। अत्रपत्ता, लम्बा। पत्रपान (सं० पु०) पत्रवत् पत्यते वायुनेऽपी पत्र-पत्र-घञ्। पायता छुरिका, कन्या हुआ या कटार। पत्रपासो (सं० स्त्री०) पत्रपाल-टाव्। १ कस्तानो,



पदपुत्र पत्र प्रसूत करके दो पंक्तिमें के माघ दो वा तीन दिन तक बिना रुके सेवा चलाव होता, वैसा ही पत्र पुस्तकमें लिखे चोर नामाव्य पत्रमें लिख कर द्विपके राजाको सुनाये। पीछे राजभियत राजाके आज्ञानुसार यमपत्र लिखे।

संलग्नपत्र—पत्रके पहले मन्त्रार्थ पदुम, मध्यमें हिन्दु धार समाहू लिखना चाहिये। तदनन्तर अति मन्द का प्रयोग चोर श्री-मन्द पूर्वक मन्त्रित वा अलिप्त भावमें कुम्भन लिख कर यमपत्रार्थ लिखनी चाहिये।

कीर्ति चोर प्रीतिपुत्र पत्र, पीछे 'किमधिकमित्यादि' लिख कर गोप करना चाहिये। इसके बाद पत्रप्रथमेरुण प्रीक चोर मन्त्रादिका पदुम लिखना होता है। इन प्रकार पत्र लिखनेकी विधि जान कर जो पत्र लिखते हैं, वे अट्टेग चोर विदेगमें कीर्तिनाम करते हैं। जो शरद नियमको जानि बिना राजपत्र लिखते हैं, वे मन्त्रीके माघ मङ्गल पत्रमें पाते हैं।

पत्र लेखका नियम—राजपत्र, गुरु, आज्ञाप, यति, मन्त्राको चो। चामा इनके पत्रकी वादर पूर्वक मन्त्रक पर धारण करना चाहिये। मन्त्रीके पत्रको लमाट-देगमें; भागी, पुत्र चोर मित इनके पत्रको हृदयमें चोर पत्राके पत्रको कष्टदेगमें धारण करना होता है। इनके सिवा अन्य लोगोंके पत्रधारणमें कोई विगोप नियम नहीं है।

पत्रपाठका नियम—पत्रसे पत्रको पकड़ कर मन्त्रकार करना चाहिये। पीछे राजाके समीप टपिय चोर लेना कर दो बार, मन्त्र ही मन्त्र पढ़ लेना चाहिये, तीसरी बार परिसुट भावमें राजाको पढ़ कर सुना देना अलिप्त है। गोपनीय पत्रको निर्जन स्थानमें चोर कुम्भपत्रकी राजाके आज्ञानुसार नाममें पढ़ सकते हैं। पाठकको इन प्रकार पत्रार्थ सुन कर राजमन्त्रीमें राजाज्ञाका प्रतिपादन करना चाहिये।

पत्र विच्छेदा नियम—कर्मदेगमें छः पदुम याम प्रीक कर पत्र, पदुमिपत्रके समाग कर्तुमी चोर कुम्भ द्वारा विच्छेद करके राजाको पत्र देना होता है। इनके प्रकार मन्त्राका पत्र कुम्भ द्वारा, पञ्चित चोर पुत्रका चन्दन द्वारा, चामाकी मन्दूर द्वारा, भायाका

पलकक द्वारा, पिता, पुत्र चोर, मन्त्राकोका पत्र चन्दन द्वारा, 'पत्रयोका कुम्भ द्वारा चोर मयका पत्र रत्न-चन्दन द्वारा विच्छेद करना चाहिये। केवल मन्त्रीको जो पत्र दिया जाता है उसे रत्न द्वारा पत्रविच्छेद करते हैं। सभी पत्रोंके लक्ष्यदेगमें सुपत्र, मन्त्र चित्र करना आवश्यक है।

राजपत्रके कोमेंमें छेद नहीं करना चाहिये। राज-पत्रादिमें राजाको महाराजाधिराज, दानगोत्र, मन्त्र रित चोर वरगुरुकपदव इत्यादि यथायोग्य पदम्यास विधेय है। इनके प्रकार मन्त्रीके पत्रमें सुपत्रानुसार प्रथम, प्राय चोर सचरितादिका छल्लेय; पञ्चमके पत्रमें पद-तममें मन्त्रापूर्वक प्रथम, प्रायार्थनिपुत्र इत्यादि; सुपत्रके पत्रमें चरचममें प्रथमपूर्वक मन्त्रासिद्धात्मिपु-त्यादि; स्वामिपत्रमें सनमन्त्रार प्राथमियादि पद; भायाके पत्रमें माथ्यो चोर सचरितादि तथा प्राथमिया प्रथमि पद; पुत्रके पत्रमें चामोर्वादपूर्वक प्राथपुत्र इत्यादि; विच्छेदमें, मधुपय मन्त्रकार चोर सचरितादि; मन्त्रासिद्धीके पत्रमें मन्त्रवाप्यादिनिर्मुक्त, मन्त्राज्ञाके पारग इन प्रकार पदवित्याम करना होता है।

गुरुके पत्रमें ३ श्रीगण्ड, चामाके पत्रमें ५, मन्त्राके पत्रमें ३, मन्त्रके पत्रमें ५, मितके पत्रमें ३, पुत्र चोर भायाके पत्रमें १ श्रीगण्डका प्रयोग करना चाहिये।

( बरचिह्न पत्रकीसुती )

पत्र मन्त्रके पहले साधारणतः हस्त पत्रका ही बोध होता है, पीछे उन पत्रकी विच्छेद यमुका। यथा मान भयमें जो मनीभाव कागत्र पर लिख कर पत्रके माध्य मन्त्रिनिमित्त होता है, यथा एक समय तापवत् वा भोज-पत्र पर लिख कर व्यर्थ होकर जाता वा। पूर्व समयमें हस्त पत्रादि पर लिखा जाता था, इन कारण इन प्रकार लिखित मनोभाव 'पत्र' वा 'चिट्ठी' नाममें चला आ रहा है।

पूर्व समयमें जब इन लोगोंके देगमें कागत्रका प्रचार नहीं था, तब भोजपत्र, कदनीपत्र चयवा ताप-पत्र पर चिट्ठी लिख कर पत्रमें चामोप चरचमीको मनो-भाव प्रकटते थे। यत्र भी वरिष्ठामन्त्र गुरुमन्त्राव-की पाठनाममें बालकवय पढ़ने तापपत्रके ऊपर लिख

माना लिखना मोखते हैं। पीछे हस्ताक्षर मरन को जाने पर कटकीपत्रके ऊपर 'सेवकादि' पाठ ( चिट्ठी, जमींदारी वा महाजनो पादि ) लिखा करते हैं। पूर्ण-वयस्क होने पर अर्थात् जब प्रकृत विषयकर्ममें हस्ताक्षर करनेमें समर्थ हो जाते हैं, तब वे कागजके ऊपर लिखना आरम्भ करते हैं। अभी प्रायः हस्तपत्रादिके ऊपर लिखन-प्रणाली उठ गई है। केवलमात्र उद्योगा-देगसे प्रेरित दो एक तालपत्र पर लिखित 'चिट्ठी' (माणा-पत्र) और प्राचीन अत्यादिको मकल लिख कर नाना देगोंमें भेजा जातो है। विवाहादि कार्य स्थिर हो जाने पर शुभ दिनमें शुभक्षणमें विवाहवन्धन दृढ़ करनेके लिये दश पाँच मनुष्योंके सामने एक कागज पर विवाहके पात्र और पात्री तथा वरकत्ता और कन्या-कत्ता एवं विवाहके प्रकृत लग्न और दिन निश्चित कर जिन कागज पर लिखा जाता है, उसे ही पत्र कहते हैं। यूरोप देगोंमें जिस प्रकार विवाहका Contract लिख कर रजिद्री होतो है, हम लोगोंमें भी उसी प्रकार प्राणोप कटुस्थानके सामने उस पत्र पर चन्दन और रुपयेका ढाप दे दिया जाता है। इसके बाद हल्दी दे कर दोनों पचवाले यह स्वीकार करते हैं, कि हम दोनों इस सम्बन्धके स्थापनमें राजी हैं। कोठी देखो।

पत्रक ( मं० खो० ) पत्र अर्थात् कम्, तदिव कायति वा के-क। १ हवका पत्र, पत्ता। २ पत्रावली, पत्तीकी सही। ३ तेजपत्र, तेजपत्ता। ४ गालिच गाक, गान्ति नाम। ५ पत्राग्रहण, टाकका पैड़।

पत्रकल्प ( सं० खो० ) १ पत्रका कवच, गन्धममाला दिया हुआ पत्तीका घूर। तेज पत्र जाने पर गरम पवस्थामें गन्धको हृदिके सिधे जो कुच दिया जाता है, उसे पत्रकल्प कहते हैं। २ महासुगन्धिस लैस, सुगन्ध-दार तेज।

पत्रकाहना ( सं० खो० ) पत्रकाचा पाहना शब्दः। १ पत्रशब्द, पत्तीके हृदिकेसे होनेवाला एक प्रकारका शब्द। २ पिच्छोना।

पत्रकच्छु ( सं० पु० ) पत्रोः शत्र-कायः सायं लच्छुः। प्रताविगोप, एक व्रत जिनमें पत्तीका काड़ा पी कर रखा जाता है।

पत्रगुम ( सं० पु० ) पत्राणि गुमानि यस्य। स्मृष्टो ह्य-भेद, तिथारः, घृहः।

पत्रचना ( सं० खो० ) पत्रमेव चनं यस्य, पत्र वापुष्यात् तथा त्वं। सातना ह्यच, में दुल।

पत्रङ्ग ( सं० पत्ती० ) पत्रमच्यते पञ्च-करणे चञ्, गञ् श्चादित्वात् साधु। पत्राङ्ग, रत्नचन्दन, मङ्गल।

पत्रचारिका ( सं० खो० ) भौतिक क्रियाभेद।

पत्रकैदक ( सं० त्रि० ) पत्रच्छेदनकारो, हेने काटनेवाला।

पत्रच्छेद्य ( सं० त्रि० ) क्षिप्य, जिमके डेने कटे हैं।

पत्रज ( सं० पु० ) तेजपत्र, तेजपात।

पत्रजासव ( सं० पु० ) पटोल और तानपत्रोप्य चासव, वह मध्य जो परधन और ताड़के पत्तमें खुपाई जाय।

पत्रभङ्गार ( सं० पु० ) पत्रेषु भङ्गारस्तद् गन्धो यस्य। पुरोटीह्य।

पत्रणा ( सं० स्त्री० ) पत्रोः षणो ज्ञोवनमिव यत्। शरपत्र-रचना।

पत्रतण्डुली ( सं० स्त्री ) पत्रेषु तण्डुलवत् विद्यते यस्याः, भग्नं बादित्वाद्य, ततो गोशदि-त्वात् डीप। अथतिहा-लता।

पत्रतरु ( सं० पु० ) पत्रप्रधानस्तवः। विदुसदिरह्य, दुर्गन्ध घेर।

पत्रतालक ( सं० खो० ) वंशवृक्ष हरितान।

पत्रदारक ( सं० पु० ) पत्रवत् दारयति ह्यत्वात् इति ह-णिच् खुल्। ककच, करीमका पैड़।

पत्रद्रुम ( सं० पु० ) तालवृक्ष, ताहुका पैड़।

पत्रनाहिका ( सं० खो० ) पत्रस्य नाहिका। पत्रगिरा, पत्तीको नस।

पत्रनामक ( सं० खो० ) तेजपत्र, तेजपत्ता।

पत्रपरशु ( सं० पु० ) पत्रे धातुनिर्मितपत्राकारे परशु-रिव, तच्छेदकत्वात् तथात्वं। क्षणंकार प्रभृतिका यन्-भेद, सोनार लोहार आदिका एक प्रकार, हेनो।

पत्रपा ( सं० खो० ) पत्रप्रथमिति पत्र-प्रथ-पच् मिपात-नादकारलोपः। पत्रपा, मत्ता।

पत्रपास ( सं० पु० ) पत्रवत् पत्यते प्रायतःसो पत्र-पल-घञ्। पायता हरिका, स्या दुरा या कटार।

पत्रपासी ( सं० खो० ) पत्रपाक-डाय। १ कर्त्तना,



पत्रविषय ( म० स्त्री० ) पत्रमि निकलनेवाला विषय ।  
 पत्रव्ययिक ( म० स्त्री० ) पत्रमिव व्ययिकः । पत्राकार  
 व्ययिकभेद, पत्रविद्यया, पत्रविद्यया ।  
 पत्रवेष्ट ( म० पुं० ) पत्रमिव वेष्टं वेष्ट-कर्मणि घञ् ।  
 १ ताडक, तरकी । २ करनफूल नामका कानमें पहनने-  
 का गहना ।  
 पत्रव्यवहार ( म० पुं० ) विद्यो लिखित और उत्तर पत्रे  
 रहनेकी क्रिया या भाव, स्वतन्त्रतायत ।  
 पत्रगहर ( म० पुं० ) प्राचीनकालकी एक शनार्यं जाति ।  
 पत्रशाक ( म० पुं० ) पत्रप्रधाना शाकः शाकपायिवाटि  
 त्वाम् कर्मधा० । भक्ष्यशाकमात्रं वक्ष्य पोधा जिमकै  
 पत्तीका सांग बना कर खाया जाता है ।  
 पत्रशिरा ( म० स्त्री० ) पत्रस्य शिरसि । १ पत्रभङ्ग, माटो ।  
 २ पर्णपत्रिका, पत्तीकी माला । ३ पर्णनाटो, पत्तीकी  
 माला ।  
 पत्रशुद्धि ( म० स्त्री० ) - पत्रं शुद्धमिव यस्याः डोप् ।  
 मृदिककर्णिका, मूमाकानो नामकी लता ।  
 पत्रश्रेणी ( म० स्त्री० ) पत्राणां श्रेणीषु । १ द्रवस्त्रीनाता,  
 मूमाकानो । २ पत्रपत्रिका, पत्रावली ।  
 पत्रश्रेष्ठ ( म० पुं० ) पत्रं श्रेष्ठं यस्य । विद्वयपत्र, विल-  
 कापत्ता । -यद्यपत्ता महादेव और दुर्गाका अत्यन्त  
 मोतिकर है, इसीसे पत्तीमें श्रेष्ठ माना गया है ।  
 पत्रसुन्दर ( म० पुं० ) पत्रं सुन्दरं यस्य । खनामस्यात  
 सुखविशेष ।  
 पत्रसूचि ( म० पुं० ) पत्राणां सूचि रिव । कण्टक, काँटा ।  
 पत्रसिद्धि ( म० पुं० ) पत्रेषु सिद्धिं यस्मिन् दिने । हिम-  
 दुर्दिन ।  
 पत्रा ( हि० पुं० ) १ तिथिवच, जन्तो, पंचांग । २ पत्रा,  
 वक, सफहा ।  
 पत्रास्य ( म० स्त्री० ) पत्रमेव चास्या यस्य । १ तैजपत्र,  
 तैजपत्ता । २ तालोगपत्र ।  
 पत्रास्या—कामरूपके, चत्वारिंशत् श्लोकके दक्षिण-पय-  
 स्थित एक नदी ।  
 पत्राङ्ग ( म० स्त्री० ) पत्रमिव चन्द्रं यस्य । १ रत्नचन्दन,  
 ज्ञानचन्दन । २ रत्नचन्दन महग पाण्डविशेष, यक्षम  
 ३ शूर्जपत्र, भोजपत्र । ४ पद्मक, कामरुपहा ।

पत्राङ्गासव ( म० पुं० ) चोदघभेद । प्रसून प्रवाली—शशम  
 और खैरकी लकड़ी, चडूम और विजयन्दकी छान,  
 श्यामानता, चननामून, जवापुष्पकी कोटो, चामकी  
 गुठलीका मूदा, दासहविद्रा, चिपायता, चफोमका फल,  
 जौरा, मोह, रसाञ्जन, कचूर, गुड़त्वक, कुडम, लवङ्ग  
 प्रथेक एक पत्र । इन सब द्रव्योंकी भनोभाति चूर कर  
 किमी एक घरतनमें रखते हैं । पीछे उसमें द्राचा २०  
 पत्र, धवका फूल १६ पत्र, चीनो १२१ मेर, मधु ६। मेर,  
 जल २२८ मेर डाल कर एक मास तक रख छोड़ते हैं ।  
 बाद पाच पत्र करके दिन भरमें सेवन करनेसे श्रेत  
 और शक्तप्रद तथा तत्संयुक्त वेदना खर, पाण्डु, पादि  
 रोग अच्छे हो जाते हैं ।  
 पत्राङ्गिनि ( म० स्त्री० ) पत्रं चङ्गुनिरिव यस्य । पत्रभङ्ग,  
 माटो ।  
 पत्राञ्जन ( म० स्त्री० ) पत्रं लेखनपत्रमज्यतेऽनेन पत्रं  
 पञ्च करणेषु च । मसो, कानो, स्याद्यो ।  
 पत्राञ्ज ( म० स्त्री० ) पत्राराञ्जं । १ विषलीमूल,  
 विपरामूल । २ वर्षातटण, पहाड पर होनेवालो एक  
 घास । ३ मन्थलगविशेष, एक प्रकारकी सुगन्धित घास ।  
 ४ पत्राङ्गचन्दन । ५ चण्डपत्र परिनाच । ६ तानीश-  
 पत्र ।  
 पत्राञ्ज्य ( म० स्त्री० ) १ पत्राङ्ग, यक्षम । २ ज्ञानचन्दन ।  
 पत्राञ्ज ( म० स्त्री० ) पत्रे चञ्जं यस्याः । बुक्तिका, चम-  
 लीनोका माग ।  
 पत्राञ्जो ( म० स्त्री० ) पत्राणां पानोरिव । १ पत्राञ्जो ।  
 २ पत्रश्रेणी ।  
 पत्राञ्जु ( म० पुं० ) पत्र-पञ्चयं पाञ्जुत् । १ कासाञ्जु । २  
 हजुदम ।  
 पत्राञ्जिनि ( म० स्त्री० ) पत्राणां पत्राञ्जोनां पाञ्जिनिः  
 पञ्जिरिव रचना यस्याः । १ गेरिक, गेरु । २ पत्रश्रेणी ।  
 पत्राञ्जो ( म० स्त्री० ) पत्राञ्जिनि-शाङ्गकात् डोप् । १  
 पत्रभङ्ग, माटो । २ पत्तीकी पत्रिका । ३ नवदुर्गासम्प-  
 दानक मधुमिश्रित ययचूर्णयुक्त नवाग्रश-पत्र । कोठे  
 चूरकी मधुमें मिला कर जो दोपलके पत्तीमें रख लवङ्ग-  
 की दाज करवा होता है ।

“मन्त्राः” इति शब्दे तु यो कश्चिद्व्यङ्ग्यः ।  
कदाचिन्मन्त्रो देवैः कृतस्तु यत्कर्मवत्तु ॥”

(देवमन्त्रः)

पवित्रता ( मं० श्लो० ) यतो पत्र, वादि कम्, ततो कर्मः ।  
 १ पयो, शिशो, रासः २ कीरे छोटा मेष या भिवि । ३  
 कीरे नामपिच पत्र, समानारपत्र, चमकारः प्रमदा  
 पत्र विद्यते यस्याः पत्र-कम् । ४ कटको पादि मन्-  
 पवित्रता । ५ कर्तुर्भेद एक प्रकारका कर्तुः ।  
 पवित्रताय ( मं० पु० ) पठिका यास्या यत् । १ कर्तु-  
 भेद, एक प्रकारका कर्तुः, पालकतुः । २ पठिका-  
 नामक ।  
 पवित्र ( मं० पु० ) पत्र पत्ता विद्यते यत् । पत्र-द्वि ।  
 १ वाच, मोः । २ पयो, विद्विद्यः । ३ मन्त्र, भाज । ४  
 रयो । ५ पर्वत, पहाड़ । ६ रुच, पिकु । ७ ताप, ताड़ ।  
 ८ खेत्तकविहीनक । ९ मन्त्रापयो । ( सि० ) १० पत्रविगिट,  
 तिममें पत्ते ही ।  
 पवित्रो ( मं० श्लो० ) पवित्र स्थिती होय । मन्त्रादुर,  
 पत्र, कीरल ।  
 पवित्राह ( मं० पु० ) पत्रपाहक, चकारा, शिशोरमी ।  
 पत्री ( मं० श्लो० ) पत्र-स्थिती होय । १ त्रिपि, पत्र,  
 शिशो । २ दमनकचय, दोमिका पिकु । ३ मन्त्रासुमन्त्रित  
 तेल । ४ मन्त्रापयो । ५ पुराणमा । ६ पट्टिपत्र । ७  
 तापकचय । ८ मन्त्रोपयो । ९ महातिपत्र ।  
 पत्री ( हिं० श्लो० ) एक प्रकारका गचना जिमें जायमें  
 पत्रमै ही, हरे मन्त्रागारा भी कहते हैं ।  
 पत्रोपकार ( मं० पु० ) पत्रमैय उपकार उपकरण यत् ।  
 कामपत्रोपकार, कर्मोप ।  
 पत्रोर्ष ( मं० श्लो० ) पत्रका ऊर्षा माधनरतेमाधन्य  
 धर्म यादित्वाह । १ धोतकविद्या, मन्त्रो कर्तुका ।  
 ( पु० ) पत्रे तु लयां यत् । २ योपकचय ।  
 पत्रा ( मं० पु० ) पत्रव्य दितं यत् । मन्त्रोपकचय ।  
 पत्रक ( मं० पु० ) पत्र-मात्रे मतिम् । १ पत्र, नाम । २  
 पत्रमापत्र ।  
 पत्रक ( मं० पु० ) पत्रकस पत्र याधारे मतिम् । मन्त्रो,  
 रासा ।  
 पत्रक ( मं० श्लो० ) पत्रमै कर्मणि पठिकाय पत्र-पत्रम्

रथ मय ( मं० श्लो० ) १ प, ३, ५३) यस्या, मानं, रासा ।  
 पापुत्रय ( मं० श्लो० ) पापु, तम् । पापुत्रे ।  
 पय ( मं० पु० ) पयति मयति पय-पयर्त्तं पयिच्छादि-  
 क । १ यय, मानं, रास । २ ययवार या यय  
 यादिनी गीति विषयः ।  
 पय ( हिं० पु० ) पय, योगे जिमें मयदुष्ट ययका  
 यावार ।  
 पयक ( मं० पु० ) पय कृणवः, पय-कम् । १ मन्त्रकृणव,  
 पय जानने या यतनादिनामा । २ मान, मानं,  
 रासा । ३ ययिच्छासा ।  
 पयकस्या ( मं० श्लो० ) इन्द्रमान, पादुका येल ।  
 पयगामो ( हिं० पु० ) पयिच, रासा ययनेनामा ।  
 पयत् ( मं० पु० ) पयति पय-गत् । १ ययमकनी, यय  
 शो माना ही । २ पय, रासा, रास ।  
 पयवारी ( हिं० पु० ) रासा ययनेनामा ।  
 पयदमक ( मं० पु० ) रास दिव्यानेनामा, रासा यय-  
 नेनामा ।  
 पयवार ( हिं० श्लो० ) १ मोवरते पयने ययना या यायना,  
 यायना । २ योत्रे या मानिके क्रिया ।  
 पयदमक ( मं० पु० ) मन्त्रोर्षक, रासा दिव्यानेनामा ।  
 पयदक ( हिं० पु० ) एक प्रकारको मन्त्रक या कर्तुधीन  
 जो ययमक पयर्त्तं द्वारा पयिच ययय करके ययार्  
 कानी यो, यय मन्त्रक जिमको कल या योर्त्तं पयरो  
 मन्त्रो रहती हो । इस प्रकारको मन्त्रकका व्यवहार पयने  
 होता या, यय मन्त्रो होना है ।  
 पयदपटा ( हिं० पु० ) १ ययानमेद या ययानमेद नाम-  
 को योपधि । २ एक प्रकारको योर्त्तं मन्त्रो जो भात  
 यो मन्त्रोको मन्त्रोमें पाई जाती है । यय मन्त्रो एक  
 भातिप मन्त्रो होता है ।  
 पयदला ( हिं० श्लो० ) योर्त्तानीको पयद पय रमक कर  
 मन्त्र करण ।  
 पयदला ( हिं० श्लो० ) १ यय कर् पयदको मन्त्र कर्तुः  
 हो जाता । २ मन्त्र यो कर्तु हो जाता । ३ यय कर्  
 नाम, कर्तु हो जाता, मन्त्रो मन्त्रदला ।  
 पयदिपः—मन्त्रपयर्त्तं मन्त्रो विषयमन्त्रं एक धाम ।  
 यय यया २३ ३३ ३० यो देवा ७८ १८ पु० है

मध्य भवस्थित है। यहाँ सरकारी विद्यालय, चौपध-  
सय थोर डाकबंगला है।

पथरी ( हिं० स्त्री० ) रोगभेद मूत्ररुद्ध है। इस रोगका  
संस्कृत नाम है भ्रमरो।

सूत्रमें इस रोगका विषय इन प्रकार लिखा है—  
भ्रमरो चार प्रकारको है। श्लेष्माही जनका आधार है।  
श्लेष्मा, वायु, पित्त थोर शुक्रमे यह रोग उत्पन्न होता  
है। चपयशकारी व्यक्तिको श्लेष्मा विगड कर जब वस्ति  
देगमें पायय लेती है, तब यह रोग होता है। यह रोग  
होनेसे वस्तिदेगमें पोड़ा, पक्व, मूत्र रुद्ध, वस्ति, गिरः  
सुष्क थोर उपस्थमें वेदना, ज्वर, देहकी चयसक्तता थोर-  
सूत्रमें बकरे-सो गन्ध होती है। ये सब पूर्वलक्षण होने  
पर कारणभेदमें वेदना, मूत्रका वर्णदोष थोर गाढ़ता  
तथा बाधिलता होती है। रोग उपस्थित होने पर पैगाव  
निकलने समय नाभि, वस्ति, सेवनी थोर उपस्थ इनमें  
किसी न किसी स्थान पर वेदना चयश्य होती है। धावन,  
सम्पन्न, सत्कारण, चम्पादिकी छह पर गमन वा पययम  
द्वारा भी वेदना होती है। यदि सेवमसे श्लेष्मा वस्ति हो  
कर चधोभागसे वस्तिमुखमें चयस्थान करके स्त्रोतका मार्ग  
रोकती है जिससे मूत्र प्रतिहत हो कर भेदकरण वा  
सुवि-विहकरणको तरह पोड़ा उग्न होती है एवं  
वस्तिदेग मुख थोर गीतल हो जाता है। श्लेष्म-जन्य  
भ्रमरो ज्वर, स्निग्ध, हृत् रुद्ध, टाण्ड वा मधुकण्डुको  
तरह वर्णविगिट हो जाती है।

श्लेष्माके पित्तयुक्त होनेसे वह संहत थोर पूर्वोक्तदप  
में हृदिप्राम हो कर वस्तिमुखमें चधिष्ठान-पुष्क स्त्रोत-  
मार्गको रोकती है। इससे मूत्र प्रतिहत हो कर चण्यता,  
दाह थोर पाक होनेके सदृश यन्त्रणा तथा वस्ति  
उप्य वायुयुक्त होती है। पित्ताभ्रमरी रूयुक्त थोर पीताभ  
तथा कृष्ण वर्णकी हो जाती है।

श्लेष्मा वायुयुक्त हो कर संहत थोर पूर्वोक्तदपसे वर्धित  
होती है। यह वायुयुक्त श्लेष्मा वस्तिमुखमें चधिष्ठान  
करके नाड़ीपयको रोकती है जिससे शीत वेदना उत्पन्न  
होती है। रोगी जब वेदनासे चयस्त चकार हो जाता है,  
तब वह दन्तपेय, नाभि थोर मूत्रदेगमदले तथा सन्दार  
प्रण करता है। पैगा करनेसे रोगी पतिथीर्ष हो जाता

है। वायुज-भ्रमरो—श्लेष्मजन्य, पक्व, स्वरम्यं, विषम थोर  
कदम्बपुष्पको तरह कण्डुकयुक्त होती है। दिवाभ्र, चतम  
वा पतिरिक्त पाहार तथा गीतल, स्निग्ध थोर मधुपाक  
द्रव्य खानेमें प्रिय मान्यम पहता है, रम कारण पूर्वोक्त  
तोन प्रकारको भ्रमरो विगिपतः बालकको ही होती है।  
उनके शरीर थोर वस्तिदेगका परिभाष्य चयय तथा  
शरीरमें मांस हृदि न होनेसे प्रयुक्त पथरी वस्तिदेगसे  
महजमें निकाली जाती है।

वयःस्य लीगंकी शुक्रजन्य शुक्राभ्रमरो होती है। मैथुन-  
के परिघातने वा पतिरिक्त मैथुन दाग चस्ति शुक्र  
निःसृत न हो कर चयय पय हो कर बहने लगता है।  
पेछे वायुकण्डक वह शुक्र उन मय स्थानसे म'गृहीत  
हो कर मूत्र थोर सुष्क दारके मध्य सञ्चित होता तथा  
पेछे सूत्र जाता है। इससे मूत्रमार्ग पाहत हो कर मूत्र-  
रुद्ध, वस्तिवेदना थोर दोनों सुष्कीता चयय होती है।  
यह स्थान दाबनेसे पथरी मिल जाती है।

शर्करा, विकता थोर भ्रमनामक मेह भी पथरीका  
विकृतिमात्र है। मूत्राधार थोर समाग्य भावका पायय-  
स्थान है। जिस प्रकार नदी सागरकी थोर जल बहन  
करता है पत्तागयगत मूत्रबहा नाड़ियां भी उसी प्रकार  
वस्तिके मध्य मूत्र बहन करती हैं। जो सब नाड़ी चामा-  
गयके मध्यसे मूत्र बहन करती हैं, उनके मुख भरयता  
मूत्र रहनेके कारण देखनेमें नहीं पाते। जायत वा  
स्वप्रायस्कामें मूत्र चरित हो कर मूत्रागयको परिपूर्व कर  
देता है। किन्तु एक गूतन चहको जसके मध्य  
छो कर रखनेसे जिस प्रकार चारों थोरसे जल धा कर  
चहको भर देता है उसी प्रकार वस्तिदेग में मूत्र  
द्वारा भर जाता है। इस प्रकार वातपित्त वा कफ जब  
मूत्रके माय मिल कर वस्तिमें प्रवेश करता है, तब पथरी  
रोग उत्पन्न होता है।

जिस प्रकार नये चहमें निर्मल जल रहनेसे भी क्रमगः  
उमकी पैदोमें कीचड़ प्रम जाता है, उसी प्रकार वस्ति  
के मध्य पथरी जनमती है। पाकागय वायु पित्त थोर  
वैद्युतो शक्ति द्वारा जिस प्रकार जल संहत हो कर बरफके  
रूपमें परिचय हो जाता है, उसी प्रकार वस्तिके मध्यस्थित  
श्लेष्मा वायु भी चण्यता द्वारा संहत हो कर चयरी



उपस्थित होनेमें स्निग्धादि द्वारा विक्रिया जानी होती है। कचूर, गण्डियारो, पापाणभेदो, गोष्ठिजन, वरुण, गोक्षुर और गाभारी इनके काढ़ेमें हिङ्ग, यवचार और मैथुन चूर्ण डाल कर पान करनेमें पथरी रोग प्रगमित होता है। यह अग्निप्रदोषक और पाचक है। इनका नाम गुण्टादिक्रपाय है।

एलायची, पोपर, यष्टिमधु, पापाणभेदो, रेणुका, गोक्षुर, शङ्खु, मधु और भरेण्डा का मूल, इनके काढ़ेमें १ या ४ मासा गिलाजस्तु डाल कर पान करनेसे यह रोग प्रगमित होता है। इनका नाम है एलादिक्रपाय। वरुण-छानके काढ़ेमें मोठचूर्ण, गोक्षुर, यवचार और पुराना गुड़ डाल कर पान करनेमें श्लेष्मज पथरी बिनट होती है। इनका नाम यरुणादिक्रपाय है। पापाणभेदाय छतं भो इन रोगमें विशेष फलप्रद है।

पित्तजन्य पथरो। कुमायष्टत द्वारा चार, यथागू, काय, दुग्ध वा किसी प्रकारका पाचारीय द्रव्य पात्र कर सेवन करनेसे पित्तज पथरी और पित्तश्लेष्मरो भो-पच्छी हो जाती है।

श्लेष्मज पथरी। वरुणष्टत और वरुणादिगणका सेवन करनेसे श्लेष्मजन्म पथरी पारोग्य हो जाती है। श्लेष्मजश्लेष्मरो रोग। ८ तोना पुराने की हड्डिका रस, १२ मासा यवचार और ४ मासा गुड़ इन सब दो एकत्र मिला कर पान करनेसे श्लेष्मजश्लेष्मरो जाती रहती है। पथरो यह औषध प्रायः श्लेष्मजन्म की व्यवहृत होती है। मिन, यथासाग, कदली, पलाश, यव और वैनसोठ इनका ज्ञाय पान तथा वेतुक, वासक और नीलोत्पल इनके समान भागके चूर्णमें गुड़ मिला कर सखजनके साथ पान करनेसे पथरी मूथके साथ चार निकल जाती है। पापाणभेदो, गोक्षुर, भरेण्डमूल, हहतो, कण्टकारी और कौकिलाच मूल इनके समान भागके चूर्णको मूथमें पोष कर दक्षिके साथ पान करनेसे पथरीरोग नष्ट होती है। कुटजचूर्ण दक्षिके साथ वाग करके या दक्षिके साथ पानसे भो यह पथरो दूर हो जाती है। जोरिका बीज पथरा मारियलके फूलको मूथके साथ पोष कर पान करनेसे थोड़े ही दिनोंके अन्दर पथरी नष्ट हो जाती है। गोक्षुर, वरुणष्टत और कचूरका ज्ञाय

मधुके साथ पान करनेसे तथा पुराने की हड्डिका रस, हिङ्ग, और यवचार एकत्र कर सेवन करनेसे पथरी पारोग्य हो जाती है। पुनर्था, लोह, हरिद्रा, गोक्षुर, प्रियङ्गु, प्रकाश और उत्तुपुष्य इन सब द्रव्योंकी दुग्ध, पान्चरम और मद्यक्षत दक्षुरम द्वारा मर्दन करके सेवन करनेसे पथरी नष्ट हो जाती है।

वरुणष्टतकी छान, पापाणभेदो, मीठ और गोक्षुर इनके काढ़ेमें यवचार और चीनी डाल कर पान करनेसे भो उपकार होता है। इनके सिवा टण्डपकमूलान्य-ष्टत, वरुणास और कुमायष्टतका ज्ञयहार करनेसे पथरो बहुत जल्द पारोग्य हो जाती है। यरुणष्टत, मृगाल, मालमूली, काग, रत्नवास्तिका, दक्षुमूल, कुग और सुगन्धवाला इन्में मधु और चीनीके साथ पानसे यह रोग जाता रहता है। यरुणाद्यचूर्ण, वरुणकगुड़, कुन्त्याद्य-ष्टत, शराद्य पञ्चमूलाद्यष्टत और पुनर्थादि तैल पथरी रोगमें विशेष फलप्रद है। ( भास्करास अरवरीरोगाधि- ) इन सब औषधियोंका विषय उक्तो सब शब्दोंमें देखो।

रुमेन्द्रमारसप्रहकी पथरी-विक्रियामें पापाणभेद-रस, त्रिदिवसमरस, लोहनागक और पथरोनागक ये सब औषधियाँ लिखी हैं। भैषज्यरत्नावलीके पथरीरोगाधिकारमें वरुणादि ज्ञाय, हृद्दवकुणादि, कुन्त्याद्य-ष्टत, वरुणष्टत, पापाणभेद और आनन्दयोग चादि औषधियाँ बतलाई गई हैं। इन सब औषधियोंका विवरण उक्तो सब शब्दोंमें देखो।

यह पथरीरोग मद्यापातकसे जूझा करता है। जिसकी यह रोग होता है, उसे प्रायचित्त करना चाहिये। यदि कोई वरुण पथरीरोगसे मृत्युसुखमें पतित हो, तो उसका प्रायचित्त किये बिना, दहन, यवण और अग्नि-द्वार्यादि कुछ भी नहीं होगा।

“मूथदृष्ट्वापथरीद्वारा अतोधारमगन्दरी।  
दुष्टमग्नं गण्डमासा वसापाठोद्भिनाशनं ॥  
इत्येवमापथरीना महापातोद्भवः स्युः ॥”  
( भास्करायतिसि- )  
पथरीरोग होनेसे ही पापमान्तिके किये प्रायचित्त पथरुत्तं स्युः है। पापमान्तिके ही जानेसे रोगको प्रसन्न



भी होता है । इसी शैली का चित्रकारी विरर  
 प्राणेश्वर स्वयं भी चित्रकारी विररका स्वयं स्वयं  
 है। १ शरीरके आकारका एक पात्र जो उत्तर-  
 का बना होता है । २ अक्षरका पात्र जिस पर चित्र  
 पत्रमें सुरत पात्र निकल पातो है । ३ कर्म  
 उत्तर । इसमें पूर्ण शोभाय वादिमें मिला कर  
 जोकार तेज करकेको मान बताते हैं । ४ उत्तरका एक  
 टुकड़ा जिस पर एक या एकसे वादिको या नैज  
 करते हैं, मिला । ५ एक प्रकारको मण्डली । ६ जोरुप  
 जो मण्डल दक्षिणी भागके अक्षरोंमें कोमिकाया काय-  
 दमको प्रतिष्ठा एक मण्डल । इस रूपको लक्ष्मी मण्ड-  
 ल कहती होती है जो इसारण बनाते काममें पातो  
 है । इसमें एक कायकर्मके भी होती है जिसे लक्ष-  
 मने या धर्ममें कोमि रंगका तेज निकलता है । यह  
 तेज योग्य जोर अभावको भी काममें पाता है ।

पयोला ( वि० वि० ) पत्रोंमें दुःख, मिसमें उत्तर को ।

पद्योत्तर—निजाम राज्यके वरार प्रदेशके पद्योत्तर एक  
 नाम । यहाँ ईसापूर्वजिदका 'योदेयो सन्धीतो'-मन्दिर  
 विद्यमान है । इस प्राचीन मन्दिरका प्रायः १६५ वर्ष  
 पहले मरका हुआ था । इसका विस्तृत समाप्तपत्र  
 १६ कर्मोंके उत्तर व्याजित है ।

पद्योत्तर ( वि० शब्दो० ) पद्योत्तर शब्दों, पद्यो, कुंको ।

पद्योत्तर ( वि० पु० ) पद्यो देवी ।

पद्योत्तर—युक्त प्रदेशके अयो जिलेका एक नाम । यह  
 ईरिल्ल मगरमें ३ कोम दक्षिणपूर्वमें अवस्थित है । यहाँ  
 एक बड़े कर्मके नाममें एक उत्तरय पद्योत्तर मन्दिरका  
 अंशवादेय देवमें पाता है । यहाँ एक अन्यथा यो  
 स्वकार विद्यमानों पात्र भी स्थित है ।

पद्योत्तर—महाभारतके वांशकृ रावणका एक नाम । यह  
 एक बड़ा पद्योत्तर वादेय पर अवस्थित है । इस नाम  
 को महाभारत महाभारतों नाममें एक उत्तर अक्षरका है  
 तथा मण्डल मण्डलकर्म एक उत्तरय विद्यमान  
 है । अक्षरके दक्षिणपत्र पर बहमंकाक कर्मो यो  
 अक्षरका मण्डलका एक उत्तर दुर्ग तथा पूर्वदक्ष पर  
 दो मन्दिर यो बनाए है । पद्योत्तर महाभारत दक्षिण

पूर्वमें मरमल नामक एक प्राचीन मन्दिरका अक्षर-  
 देवता जाता है । इस मन्दिरके उत्तर यो उत्तर-  
 पूर्वमें एक अक्षरका है जिसमें किसी मण्डल अक्षर  
 नाम रहता था । यहाँ एक अक्षरका मण्डल यो  
 मण्डलपूर्व हो गया है । प्रायके मण्डल दक्षिण मण्डल  
 पत्रिकित है जिसमें सुर, वाद्यराम, मरार, कायल  
 वादि अक्षरोंको मण्डलको पद्योत्तर है । मरमल  
 मन्दिरके उत्तर पद्योत्तर यो अक्षरके अक्षर-मण्डलका  
 अक्षरको है । यह अक्षरके प्रायः ६ वर्षोंके लक्ष  
 विस्तृत है ।

पद्योत्तर ( सं० पु० ) पद्योत्तर मण्डलित यः पद्योत्तर ( सं०  
 १६२ । वांशकृ १६५ ) । पद्योत्तर, मार्ग अक्षरका, मण्डल,  
 योत्तर, मुद्रादि, राद्योत्तर । पद्योत्तर—पद्योत्तर, पद्योत्तर,  
 पद्योत्तर, पद्योत्तर, मण्डल, मण्डल, पद्योत्तर, पद्योत्तर,  
 योत्तर पद्योत्तर ।

पद्योत्तराणा ( सं० शब्दो० ) पद्योत्तराणा पद्योत्तराणा,  
 पद्योत्तर, मण्डल ।

पद्योत्तरमंदि ( सं० शब्दो० ) पद्योत्तराणा मंदि । पद्योत्तर-  
 मण्डल ।

पद्योत्तरमण्डल ( सं० शब्दो० ) पद्योत्तराणा मण्डलित मण्डल ।  
 पद्योत्तरमण्डल, पद्योत्तर मण्डल । इसका नामाक्षर द्वारि है ।

पद्योत्तरा ( सं० शब्दो० ) पद्योत्तराणा । अक्षरकाणा,  
 मण्डल ।

पद्योत्तरा ( सं० शब्दो० ) पद्योत्तराणा करोति-अक्षर । मार्ग-  
 कायल, मण्डल अक्षरका ।

पद्योत्तराय ( सं० पु० ) पद्योत्तरके पद्योत्तरा मण्डल, पद्यो-  
 मण्डल ।

पद्योत्तरा ( सं० शब्दो० ) पद्योत्तराणा मण्डलित मण्डल ।  
 अक्षरकाणा अक्षरकाणा ।

पद्योत्तरा ( सं० शब्दो० ) पद्योत्तराणा अक्षरके, पद्योत्तरा  
 पद्योत्तरमें एक अक्षर जिसमें मण्डलका एक योत्तर पद्योत्तर  
 एक नाम जाता है ।

पद्योत्तर ( सं० शब्दो० ) पद्योत्तराणा मण्डलित मण्डल ।  
 मण्डलको मण्डल अक्षरके, मण्डल अक्षरको मण्डलित मण्डल  
 पर अक्षरकाणा मण्डलित मण्डल ।

पथिद्वम ( स० पु० ) पथि प्राप्तगुणो द्वमः । अदिरहच,  
मफेद खैर ।

पथिन् ( स० पु० ) पथि आधारे रति । मार्ग, पथ,  
रास्ता । पथकहाँ किम प्रकारका होना चाहिये, सम-  
का विषय देवोपुराणमें इस प्रकार लिखा है । देग मार्ग  
३० धनु, यामपथ २० धनु, सोमापथ १० धनु और राज  
पथ १० धनुका होना चाहिये । जो राह चलते हैं,  
उनके मिथ, कफ, श्यूसता और सौकुमार्यादि नष्ट होते  
हैं । जिस भ्रमणसे शरीरमें तकलोक मान्नुम न पड़े,  
ऐसा पथगमन इन्द्रिययोषण और आयु, वन, मिधा और  
पग्नि-वृद्धिकारक होता है ।

पथिमन्त्र ( स० त्रि० ) पथामिन्त्र, राह जाननेवाला ।

पथिमत् ( स० त्रि० ) पथिमन्त्रयुक्त ।

पथिरक्षत् ( स० पु० ) पथ्याम् गच्छति रक्ष-पसुन् । १  
रुद्रभेद । ( त्रि० ) २ मार्गरक्षक ।

पथिल ( स० त्रि० ) पथति गच्छतीति पथगतौ इलच,  
( भित्तिवदयथ । उग्न १।५८ ) इति निपातनात् साधुः ।  
१ पथिक, राह चलनेवाला । २ भारवाहक, बोझ टोनि-  
वाला । ३ गाकुनिक । ४ निहुर, कठोर ।

पथिपद् ( स० पु० ) रुद्रभेद ।

पथिष्ठा ( स० त्रि० ) पथिष्ठीति श्रेष्ठ ।

पथिस्थ ( स० त्रि० ) पथि-तिष्ठति स्थानक । पथमें अव-  
स्थित, जो राहमें मिले ।

पथी ( हि० पु० ) पथिन् देवो ।

पथोय ( स० त्रि० ) १ पथ-उपस्थी । २ सम्प्रदाय सम्बन्धी ।

पथेश ( हि० पु० ) ईंटे पाथनेवाला, कुम्हार ।

पथेष्ठा ( स० त्रि० ) पथे मार्गं तिष्ठति स्थान-क्षिप, चतुक्  
समाशः वेदेयत्वं । मार्गमें यत्तमान, जो मार्गमें हो ।  
पथोरा ( हि० पु० ) वह स्थान जहाँ अपने पाये जाते हैं,  
गोबर पाथनेकी जगह ।

पथ्य ( स० पु० ) पथोऽनपेतः पथिन् यत्, धर्मपथ्यार्थावावर-  
पेते । वा ४।४।८२ । १ हितविहित्यादि, बधिया इत्याज ।  
२ हितकारक भोग्यद्रव्यभेद, वह वनका और जहदी  
पचनेवाला पाना जो रोगोंके लिये लाभदायक हो  
पर्याय—करण, हित, आशुय । ३ मैथव, संघा-  
नमक । पथिनाथः दिगादिरवात् यत् । ४ हरोतको-

वच, छोटी हड़का पड़ । ५ तण्डुलीय शाक । ६ हित,  
मन्त्रल, कल्याण ।

पथ्यकरो ( स० स्त्री० ) रत्नक मालि, एक प्रकारका लाल  
धान ।

पथ्यका ( स० स्त्री० ) मिथिका, मिथी ।

पथ्यकारिन् ( स० पु० ) पथिक धान्य, गाठी ।

पथ्यभोजन ( स० स्त्री० ) पथ्य भोजन । हितभोजन,  
नाभदायक पाहार ।

पथ्यशाक ( स० पु० ) तण्डुलीय शाक, चोईका साग ।

पथ्या ( स० स्त्री० ) पथ्य टाप । १ हरीतकी, हड़ ।  
२ मृतीवाँस । ३ चिमिंटा । ४ बध्याकशोटीकी, बन-  
केहड़ । ५ गड्ढा । ६ पावाहृन्दका एक भेद । इनके  
और कई पथान्तर भेद हैं ।

पथ्यादि ( स० पु० ) पाचनभेद ; हरीतकी, देवदारु, वच,  
मोथा, कचूर, पत्तोस इन सब द्रव्योंका ज्ञाय । इस  
कायके सेवन करनेसे पामातोषार प्रगमित होता है ।

पथ्यविध—हरीतकी, मञ्जिष्ठा, पिठवन, पद्मसु,  
कचूर, पत्तोस और देवदारु इन सब द्रव्योंका ज्ञाय  
सेवन करनेसे गुन्मरोगोकी पग्नि प्रदोष होती है ।

पथ्यादिकाय ( स० पु० ) भावप्रकाशोक्त ज्ञायोपधभेद,  
नैद्यकमें एक प्रकारका पाचक जो जिनसा, गुहृच,  
हतदी, चिरायते और नीम पादिको दबास कर उनमें  
गुहृ मिष्ठानिसे बधता है । इन ज्ञायको नासिकारन्ध्र में  
देनेसे भ्रू, कर्ण, चक्षु और गिरःगुल पादि प्रगमित  
होते हैं । ( भावप्रकाश शिरोरोग )

पथ्यादिगुण्यु ( स० पु० ) औपधभेद, एक प्रकारका  
दवा ।

पथ्यादिनेप ( स० पु० ) प्रसेजोपधविशेष । प्रसृत प्रपात्नी—  
हरीतकी, डहराकरंज, श्रेतमर्षप, हडिद्रा, मोमरातो,  
सैन्धव तथा विटङ्ग इनके बराबर भागोंकी गो-भूतसे  
पौनते हैं । बाद शरीरमें उनका प्रनेप देनेसे कुन्मरोग  
प्रगमित होता है ।

पथ्यादिलोह ( स० स्त्री० ) औपधविशेष । प्रसृत प्रपात्नी—  
कचूर, तिन और गुहृके समान भागकी दूधसे पौन कर  
लेपन करनेसे परिषामगुल प्रगमित होता है । शब्द-क-  
भ्रमण्युकी पाथ तोना गरम जलके साथ पीनेसे भी



अग्निरोगो अथवा—आनूप, चापिप, मस्य, पिप्लाक, देधि, विटकं, कलाय, निपाय, विदन, सुश्वो, पका आम, आमिप, जलपान, वमन, वस्त्रिकर्म, नदीजल, युष् चौरको हवा, वैमरीध चौर पृष्ठवान ।

अग्निमाद्य चौर अचोर्णादिभि पथ्य - अने गिक्क प्रकृतिभिं पहेने वमन; पैत्तिकमे अदुरेचन, यातिकमे स्वेदन, नाना प्रकारके व्यायाम, पुरातन मुह चौर लोहित शालि, लांजतपडे, सुरा, एष चादिका मांस, मय तरुहकी छोटीं कंकली; शालिष्यगक, वेत्ताप, लहसुन, हृदकुशमाण्ड; अनेन कटलीफल, पटोल, वाचांकु, घनार, जौ, अश्वेतम, जम्बोर, नवमोत, हृत, तक्र, तुपोटक, धाय्यांर, कटुतेन, सवपाट्रक, यमानो, मिर्च, मेथी, धनिया, जोरो, टहो, पान, कटु चौर तिक्तरम ।

अग्निमाद्य चौर अचोर्णादिका अपथ्य—विरेचन, विषा, नूत चौर वायुधेगधारण, अतिरिक्ताशन, अथ्यशन, जागरण, विषमाशन, रक्तचुतिमस्य, मांस, जलपान, विटकं, मयंशालुक, कुचिका, चौर, प्रवानक, ताड़की गरो, स्मेरुन, दुटवाधि, विरुहं पानास, विटगो चौर गुरुद्रव्य है ।

क्रिमिरोगमें पथ्य—शास्थायन, आयुविरेचन, गिरो-विरोधम, धूस, कफनाशक द्रव्यममुह, शरीरमांशना, पुराता चायन, पटोल, वेत्ताप, केनिका नगा फूल, सुहतीफल, मोपिकमांस, विहङ्ग, चिन्तन, सयं पतेन, पीवीर, मोमूव, ताम्बूल, सुरा, यमानिका चौर चटु, तिक्क तथा कपाय रम ।

क्रिमिरोगमें अपथ्य—ऊर्दि, तडे गंधधारण, विरुह पाशाजन, टिवादिद्रव्य, द्रव्यद्रव्य, विष्टाय, संकोषं भोजन, हृत, माप, दधि, पत्रगार्क, मांस, दुध, पक्ष चौर मधुर रम ।

रक्तविक्षमें पथ्य—अधोगममें हृदन, लक्ष् निर्गममें विरेचन, उभयव लहन, पुरातन शालि, मूंग, मसूर, चना, धरहर, विहृट चौर वमंमस्य, खरगोम चादिका मांस, कपायवमं, घो, पनम, धियान, रश्माफन, पटोल, शैलाप, महादक, पुराता कुषमाण्डक, पकतान, घनार, पत्रर, पातो, मारियन, कविय, गालूक, पिपुमदं पद, सुश्वी, कलिङ्ग, चङ्गर, गुड़, मेक, चवारा, अथ्यह,

शगिर; पद्रेड, चन्दन; मनोऽनकूल विविध कथा, चोम-यद्य, सुशोतोषन, मियङ्गु, चराङ्गानिद्रन चौर हिम-वालुक ।

रक्तविक्षमें अपथ्य—श्याम, अश्वनिषेवन, रविकरण, तोष्य कर्म, चाभ, वेगधारण, चपलता, हस्तग्रधान, खेद, अस्त्रयुति, धूमपान, सुरत, क्रोध, कुलथो, गुड़, वाचांकु, तिल, माप, सयं प, दहो, पान, मय, लहसुन, विरुहभोजन, कटु, अन्न, सवय चौर विटादिद्रव्य ।

राजयक्ष्मारोगमें पथ्य—हृनपक मिर्च चौर जोरा द्वारा संस्कृतलाव चौर तिचिरि रस, गेहूं, दूध, चना, छाग मांस, नवनीत चौर घी, गमादिकरण, मधुर रस, मेधा, पनम, पका आम, धात्री, खजूर, मारियन, धोहिनन, वकुन, ताड़की गरी, चङ्गर, मस्यण्डिका, गिपरिणी, मटिरा, रसाना, कपूर, मृगमद, लालचन्दन, अथ्य-पन्न, सुरभि, अश्वेवन, स्नान, वैगरचन, अत्रगाहन, सुदुग्धवह, गीत, लास्य, हिमचूर्ण सुतामाष्य चादिका भूयधधारण, होम, प्रदान, देव चौर ब्राह्मचरूता तथा ह्यावपान ।

राजयक्ष्मारोगमें अपथ्य—विरेचन, वेगधारण, अम, खो, खेद, अन्न, प्रजागर, चाहस, कर्म, मेवा, रुधाचपान, विषमाशन, ताम्बूल, कनिङ्ग, कुलथी, कलाय, लहसुन, वंशारू, अन्न, तिक्क, कपाय, मय प्रकारके कटुद्रव्य, पत्रगक, चार, विरुहभोजन, गिष्ठी; कर्कोटक चौर विटादिद्रव्य ।

कासरोगमें पथ्य—खेद, विरेचन, ऊर्दि, धूमपान, शानि गेहूं, कनाय, जौ, कोदक, चालगुता, मूंग चौर कुलथी-का रस, मांस, सुरा, पुरानी सरसो, छागदुध चौर हृत, वायुधोमाक, वाचांकु, वालमूलक, कण्टकारी, काममदं, जोवन्तो, चङ्गर, वागक, क्राटि, गोमूत्र, लहसुन, पथ्या, गरम पात्री, लाल, मधु, दिवादिद्रा चौर लघुपथ ।

कासरोगमें अपथ्य—वस्त्रि, नस्य, रक्तमोक्षण, व्यायाम, हस्तचर्पण, चातप, दुग्ध पवन, मार्गनिषेवन, विटगो, विटाहो चौर विविध रुचद्रव्य, म त्रोदारादिका वेगधारण, मास्य, कस्य, सयं प, तुष्ठी, दुटास्य, दुटापान, विरुह-भोजन, गुह चौर शीतासपान ।

हिक्कारोगमें पथ्य—स्नेहन, वमन, नस्य, धूमपान,



व्यायाम, धातप, तक्र, ताम्बूल, मधु, व्यवाय, तिक्त  
घोर क्षयाय ।

वातरोगमे पथ्य—पथ्यङ्ग, मर्दन, वस्त्रि, खेद, स्वेद, भवगाह, संवाहन, संशमन, वातवर्जन, अग्नि कर्म, छपनाह, भ्रूगथ्या, स्नान, धामन, शिरोवस्त्रि, नस्त्र, धातप, मन्तर्पण, वृंष्टम, दधि, कुचिका, तेल, यसा, मन्ना, स्वादु, पन्त, घोर नवणरस, कुलथीका रस, मुरा, हागादिका मांस, पटोल, धात्तीकु, अनार, पका तान, जम्बीर, चटर तथा शक्रवहेक क्रिया ।

वातरोगमे अपथ्य—चिन्ता, प्रजागर, वेगधारण, छर्दि, अम, अनशन, घना, कनाय, मूंग, करोरकम्प, कशेरु, मृणाल, निष्पाववीज, गालुक, वासुतान, पत्र-शाक, विरुह पत्र, चार, सुक्कयनन, छतज स्रुति, शीद्र, कपाय, कटु घोर तिक्तारस, वावाय, हस्त्यग्नयान, चक्र-मण, खटा घोर दन्तधर्षण ।

शूलरोगमे पथ्य—ऊर्दि, स्वेद, लहान, पायुं वस्त्रि, वस्त्रि, निद्रा, रचन, पाचन, तक्रचौर, पटोल, मोहिञ्जन, धात्तीकु, पका धाम, पंगूर, क्षपित्य, रुचक, पियान, गालिञ्चपत्र, वास्तूक, मामुद्र, सीवर्चल, डिङ्गु, विग्न, विट्ट, लहमम, लवङ्ग, शिंहीका तेल, सुरभिज्जल, तमागु, जम्बीररस घोर कुष्ठ ।

शूलरोगमे अपथ्य—विरुह पचपान, ज्ञागरण, विपमा-शन, रुच, तिक्त, कपाय, शीतन, गुरु, वायाम मेथुन, मद्य, वेदल, लवण, कटु, वेगरीध, शोक घोर क्षोध ।

हृद्रोगमे पथ्य—स्वेद, विरेक, वसन, लहान, वस्त्रि पुरातन रक्तगालि, जाङ्गल, मृग घोर पचीका जूम, मूंग घोर कुलथीका रस, पटोल, कटलोफल, पुराणा कुष्माण्ड, रक्षाल, अनार, सम्पाकयाक, नवमूलक, शिंहीको तेल, सैन्धव, चङ्गर, तक्र, पुराणा गुड़, भौठ, लहसुन, हरी-तकी, कुठ, कुमुन्दुद, पाद्रक, नीवार, मधु, वाहचो-रस, कस्तूरिका, चन्दन घोर ताम्बूल ।

हृद्रोगमे अपथ्य—दण्डा, छर्दि, मूल, पायु, शक, काक, छद्दार, अम, म्नास, विष्टा घोर पशुवेगधारण दूषित अन्न, कपाय, विरुह, चण, गुद, तिक्त, पन्त, चार, मधुक, दन्तकाष्ठ घोर रक्तपुति ।

मूत्रकृच्छमे पथ्य—वायुजन्म होमेमे पथ्यङ्ग, निरुह-

वस्त्रि, स्नेह, भवगाह, उत्तरवस्त्रि घोर शक, पित्त-जन्म होमेमे भवगाह, वस्त्रिविधि, विरेचन, श्लेष्मज होमेमे खेट, विरेक, वस्त्रि, चार, यवाच, तोष्य, डण्य, पुरातन मोहितगालि, मायका दूध, मन्त्रन घोर दधो, मूंगका रस, गुड़, पुराणा कुष्माण्डफल, पटोल, महाद्रक, गोक्षुरक, कुमारो, गुवाक, पञ्चूर, भारि-यल घोर ताङ्की कोपन, ताङ्की गरो, शीतपान, शीताग्न घोर हिमशालुका ।

मूत्रकृच्छमे अपथ्य—मद्य, अम, सुरत, गजवाजि-यान, विरुहभोजन, ताम्बूल, मद्य, लवण घोर पाद्रक, डिङ्गु, तिल, सर्पण, वेगरोध, कताय, पतितोष्य, विराष्टी, रुच घोर पन्त ।

पश्मरोगमे पथ्य—वस्त्रि, विरेक, वसन, लहान, स्वेद, भवगाह, वारिमेवन, लो, कुलथी, पुराणा चावल, गराह, पुरातन कुष्माण्ड, वाहण शाक, पाद्रक, यवशूक, वेणु घोर पश्मसमाकार्यण ।

पश्मरोगमे अपथ्य—मूत्र घोर शकका वेगधारण, पन्त, विट्भी, रुच घोर गुद पचपान तथा विरुह पाना-शन ।

प्रमेहमे पथ्य—लहान, वसन, विरेचन, प्रोक्षन, शमन, दीपन, नीवार, यव श्यामाक, गोधूम, गालि, कलम, मूंग पादिका लूम, लाज, पुरातन सुरा, मधु, तक्र, षोड्भ्यर, लहसुन, मोहिञ्जन, पत्तूर, गोक्षुरक, मूत्रि हर्षणी, शाक, मन्दारपत्र, त्रिफला, क्षपित्य, लम्ब, कपाय, हाथी घोर घोड़ीकी मवारो, पतिश्वमण, रवि-किरण घोर व्यायाम ।

प्रमेहमे अपथ्य—मूत्रवेग, घृमशन, खेट, रक्त-मोक्षण, टिवानिद्रा, नवाच, दधि, पान प मांस, निष्पाव, पिष्टान्न, मेथुन, मोषेरक, सुरा, शक, तेल, चीर, छत, गुड़, तुम्बो, ताङ्की गरो, विरुहशमन, कुष्माण्ड, रङ्गु, स्वादु, पन्त, लवण घोर पतिश्वन्दी ।

कुठरोगमे पथ्य—पथ पचमे छट्टन, माम साममे विरेचन, प्रथेक तीन दिनमे मद्य, छह मदीनेमे रक्त-मोक्षण, सर्पिर्ण, पुरातन यवादि माक्षिक, जाङ्गला-मिय, पावाद्रफल, वेवाय, पटोल, हरतीफल, काज-माची, नीम, लहसुन, हिलमोक्षिका, पुनप मूद, जैश-



विद्यमागम, विरुद्धाय, वैगरोध, चतिभोजन, दिवानिद्रा, चमिपायसी, विदशो चोर युक्त भोजन ।

विद्यरोगमें पथ्य—अग्निष्टान्धन, मन्त्रक्रिया, हृदि, विरचन, शोषिताङ्गुलि, परिप्रेर, श्ववगाहन, छटयावरण, नसा, भङ्गन, प्रतिमारण, सक्तन्तन, प्रयमन चोर प्रद्वेष, बह्निभक्त, उपधान, प्रतिविष, धूप, सञ्ज्ञाप्रबोधन, प्रियङ्गु, मूंग, तैल, गर्पि, वाचाङ्गु, धात्री, निष्पाप, तण्डुलौघ, मण्डुकपर्णी, जीवन्ती, कालशक, लहसुन, बनार, प्राचीनामलक, कपिल्य, नामकोशर, गो, छाग और नर-मूत्र, तक्र, शोताम्बु, शर्करा, चविदाही, श्ववर्नन्धय, मधु, कुङ्कुम, पश्चिमोत्तर वात, हरिद्रा, लालचन्दन, मोथा, शिरोप, कस्तूरी, तिक्त चौर मधुर ।

विद्यरोगमें अपथ्य—क्रोध, विरुद्धागम, पथ्यगन, द्यधाय, ताम्बूल, आयाग, प्रवात, शर्करा, सर्वलवण, निद्रा, भय चोर धूमविधि ।

वातिकरोगमें पथ्य—अभ्यङ्ग, परिमर्दन, गमन, सन्निहन, तंरण, स्नेह, श्वेदन, शयन, सन्वाहन, तस्ति, नस्य, प्रावरण, समीरण-परिचयः, श्ववगाह, शिरोवस्त्रि, विस्मरण, सुषंकिरण, स्नान, विष्मापन, गाङ्गोपनाह, सुरा, भृगुध्या, सुषुग्रीलता, मज्जा, तैल, यवा, कुनयी, तिन, गेहूँ, छागर, मोथा, गोमूत्र, टधि, कृषि का, पचादिका मीम, रोहितादिमस्य, वाचाङ्गु, लहसुन, शङ्कर, कपिल्य, शिवा, पञ्जातान, यकुल, वास्तुक, मन्दारफल, ताम्बूल, शर्करा, लवण, लोध, चगुन, गुग्गुलु, कुङ्कुम जालि प्रशतिके फूलको माना ।

वातिकरोगमें अपथ्य—चित्ता, जापरण, रक्तमोक्षण, धमि, लहसुन, व्याधाम, गत्र चोर वाजिवाहनविधि, सन्धारण, मेषुन, पाघात, प्रपतन, धातुघय, चोभन, शोक, संक्रामण, विरुद्धागम, जनदागम, रजतोशेय, अपराह, भय, कपाय, तिक्त, कटु, चार, शयन्त शीत पादिका भक्षण, लणधान्य, परहर, कङ्कु, उहान, जो, श्यामक, मिश्री, दलाय, चना, मूंग, कुनयी, विष, शालुश, सिन्दुक, नवतामका गूदा, तालाहिमज्जा, दिष्टाह, शिनिराम्बु, गङ्गोका दूध, पत्रगाक, त्रिष्टु, भृश्रिभ्य, करी, साधक, धूम चोर लहसुनदेत् ।

पैशिकमें पथ्य—सर्वि गानविधि, विरचन, रक्तमोक्षण

लोहितगालि, गेहूँ, परहर, चना, मूंग, मधुर, जो, पयुं पित मण्ड, पयः, साक्षिका, लाज, घृत, सितावर, शोतोदक, कदन, वेत्राय, पापाङ्क, मृही का, कुमाण्ड तुष्ठी, बनार, धात्री, कोमलतानयस्य, चमथा, पञ्चूर, कपाय, तिक्त, मधुर, निष्य, त्रिष्टु, चन्दन, मिथमतागम, सुगोतलवण, धाराण्ड, चन्दि का, भृगुध्या, छान, भूमिष्ट, प्रियकथा, मन्दानिन, पथ्यक्षण, यादिव यवण, उत्तम लृत्वदमन, कपूर चौर शीतक्रिया ।

पैशिकमें अपथ्य—धूम, श्वेट, पातप, मैथुन, सन्धारण, क्रोध, चार, शध्या, गत्रयात्रि पाहनविधि, तोच्यकर्म, व्यागम, शोभ, विरुद्धागम, सन्धार, शक्त-दात्वय, रजतोमस्य, मध्यवयः, शोधि, येषुकन, तिन, लहसुन, कलाय, कुनयो, गुङ्ग, निष्पाप, मदिरा, पतसा, उषोदक, जम्बोर, हिद्र, लङ्क, मूत्र, भिस्तावा, ताम्बूल, दधि, सर्पप, वदर, तैलामन, तिमिहो, कट, शक्त, लवण चौर विदाही ।

शैथिलिकरोगमें पथ्य—हृदि, लहसुन, अञ्जन, निष्पा-यन, स्वदन, चित्ता, जागरण, यम, चनिगमन, दय्या-वेगधारण, मण्डप, प्रतिमा-ग, प्रगम, दय्यमायग, धूम, प्रावरण, निषुद, चतिमञ्जीम, नस्य, भय, पुरातन गालि, निष्पाय, लणधान्य, चना, मूंग, कुनयीका रम, चार, सर्पपतौल, उषुजस, राजिका, वेत्राय, वाचाङ्गु, शोङ्गवर, ककोट, लहसुन, रोहिञ्चन, मज्जागम, गूण, निष्य, मूत्रकपोतिका, वरुण, तिक्ता, त्रिष्टु, साक्षिक, ताम्बूल, पुराना मदिरा, श्योप, लाज, तिक्त भञ्जन, शोषिक, कटु, चौर-कपायरण ।

इने शिकरोगमें अपथ्य—स्नेह, पथ्यञ्चन, पासन, दिवानिद्रा, स्नान, विरुद्ध भोजन, गिगिर, यमतापमय, सुक्तमायधमय, कलाय, गत्रतण्डु, मस्य, मांस, इषु-विक्षिपि, दुग्धविक्रति, तानाशिमज्जा, द्रव, पनम, दया 5 पापाङ्क, कञ्जूर, पनुलेपन, पयः, पायप, स्वादु, परर, लवण, गुण, तुक्षिन चोर सत्सर्वप ।

श्वन्त चरतुमें पथ्य—यमन, सुरत, व्यायाम, भेद, छमण, श्वनिवेना, कटु, तिक्त, विदाही, तीच्य, ददाय चौर मञ्चोदन ।

श्वक्चरतुमें अपथ्य—दिवानिद्रा, सत्सर्वप, पासपय,





व्यतोत्त वे पद नहीं होते और पद नहीं होनेसे वे वाक्योंमें व्यवहृत नहीं होते ।

शब्दके उत्तर विभक्ति जोड़नेमें नाम-पद और धातुके उत्तर विभक्ति जोड़नेमें क्रियापद होता है । प्रातिपदिक और धातुका एक एक अर्थ है, पर विभक्ति-युक्त अर्थात् पद नहीं होनेमें अर्थबोध नहीं होता 'क' धातुका अर्थ है करना, किन्तु धातुरूपमें इसका व्यवहार नहीं होता । टो या टोसे अविक पद मिल कर जब पूर्ण अर्थप्रकाशित करता है, तब उस पदममष्टिको वाक्य कहते हैं । यह पद पाँच प्रकारका है—विशेष्य, सर्वनाम, विशेषण, अव्यय और क्रिया ।

नैयायिकोंके मतमें -अर्थबोधक शक्तिविशिष्ट होनेसे उसे पद कहते हैं ।

११ योग्यताके अनुसार नियतस्थान, दर्जा । २० मोक्ष, निर्वाण । १८ ईश्वरभक्तिमग्नयो गोन, भजन । पदक ( सं० पु० ) पदं वेति यः पद-बुन् (कमारिभ्यो बुन् । पा ४।२।११) १ पदज्ञाता वेदमन्वपदविभाजक श्रव्यके अध्येता, वह जो वेदोंका पदपाठ करनेमें प्रयोग ही । २ गीतप्रवक्तृक ऋषिभेद । ३ स्वनामख्यात कण्ठभूषण, एक प्रकारका गहना जिसमें किसी देवताके पैरोंके चिह्न चिह्नित होते हैं और जो प्रायः ब्राह्मणोंको राजाके लिये पहनाया जाता है । (को०) ४ पूजन आदिसे लिये किसी देवताके पैरोंके बनाये हुए चिह्न ।

ब्रह्मवैश्वानरपुराणमें लिखा है, कि सोने चाँदी वा पथर पर त्र्योक्त्याका पदचिह्न प्रस्तुत करके पूजा करनेको कहते हैं । पदचिह्नकी पूजा करनेसे मय प्रकारकी सिद्धियाँ लाभ होती हैं । सुवर्णादिमें पदचिह्न चिह्नित करनेके दक्षिण पदाङ्गुलमन्में चक्र, मध्यमाङ्गुलिके मूलेमें कमल, अग्रके अर्धोदिकमें ध्वज, कनिष्ठामन्में वक्त्र, पाणिमध्यमें चन्द्र, अङ्गुष्ठपथमें गज और यामाङ्गुलमन्में पाद्म जन्म से सब चिह्न देने होते हैं । ( पदमय० पा ३।१२० ) ५ सोने चाँदी या किसी और धातुका बना हुआ मित्रकी तरहका मोल या चोकोर टुकड़ा । यह किसी शक्ति प्रयुक्त जनमम इको कोई विग्रेष पच्छा या चतुर्न कार्य करनेके उपनयनमें दिया जाता है । इस पर प्रायः टाता और शहीताका नाम तथा दिये जानेका कारण

और समय आदि चिह्नित रहता है । यह प्रामाण्यवक और योग्यताका परिचायक होता है ।

पदकार ( सं० पु० ) पदविभाग करीति क-पण । वेदका मन्वपदविभाजक श्रव्यकर्त्ता ।

पदक्रम ( सं० पु० ) वेदमन्त्रया पदविभाजकक्रम ।

पदक्रमक ( सं० स्त्री० ) पदं क्रमश्च तो वेत्येवोति वा बुन् । १ पद और क्रमयुक्ता । २ तद्व्यत्याज्येता ।

पदग ( सं० पु० ) पदाभ्यां गच्छतीति गम-ङ । १ पदानिक, पैदल चलनेवाला, व्यादा । ( त्रि० ) २ पद द्वारा गमनकर्त्ता ।

पदगति ( सं० स्त्री० ) पदस्य गतिः । पदसंचार ।

पदगोत्र ( सं० स्त्री० ) पदानां गोत्रं । भारद्वाजादि पदका गोत्र, भारद्वाज आदि चार ऋषियोंका गोत्र ।

पदधतुर्हृदं ( सं० पु० ) हृदोविशेष्य, विषमहृत्कारका एक भेद । इसके प्रथम चरणमें ८, द्विचरेमें १२, तीचरेमें १६ और चोचरेमें २० वर्ण होते हैं । इसमें शुद्ध, सपुत्रा निपम नहीं होता । इसके अर्धोद्, प्रत्याोद्, मंलरो, सयसो और अमृतधारा ये पाँच अन्तर भेद होते हैं ।

पदचर ( सं० पु० ) वेदल, व्यादा ।

पदचरो ( सं० त्रि० ) वेदल चलनेवाला ।

पदचिह्न ( सं० पु० ) वह चिह्न जो चरनके समग्र पैरोंके जमीन पर बन जाता है ।

पदच्छेद ( सं० पु० ) मन्त्र और समासयुक्त किसी वाक्यके प्रत्येक पदको व्याकरणके नियमोंके अनुसार अलग अलग करनेको क्रिया ।

पदच्युत ( सं० त्रि० ) जो अपने पद या स्थानसे हट गया हो अपने स्थानसे हटा या गिरा हुआ ।

पदच्युति ( सं० स्त्री० ) अपने पदसे हटने या गिरनेकी अवस्था ।

पदत्र ( सं० पु० ) १ पैरकी सँगलियाँ । २ शूद्र । ( त्रि० ) ३ जो पैरने उत्पन्न हो ।

पदज्ञात ( सं० स्त्री० ) पदानां ज्ञातं । आख्यात नाम निपात और उपनयनपदसम ह ।

पदज्ञ ( सं० त्रि० ) पदं ज्ञानाति ज्ञा-क । मार्गज्ञ, राह जाननेवाला ।

पददल ( सं० पु० ) ऋषिभेद ।



फल स्वयं ज्ञाने हैं और कहीं कहीं फकीर लोग उनको मालाएं बना कर गलेमें पहनते हैं । यह फल गरुड वनानेके लिये विनायक भी भोज्य जाना है । इन पत्रु ही लकड़ीके छड़ियां और आरायणी सामान बनाने ज्ञाने हैं । कहते हैं, कि गर्भ न रहता हो तो इनको लकड़ी घिस कर पोलिने-गर्भ रह जाता है और यदि गर्भ गिर जाना है तो स्थिर हो जाता है ।

विशेष विवरण पद-काष्ठमें देखो

- पदमकाठ ( हिं० पु० ) पदम देखो ।  
 पदमचम ( हिं० पु० ) रेवन्द नीली ।  
 पदमण ( हिं० स्त्री० ) स्त्री ।  
 पदमनाम ( हिं० पु० ) १ विशु । २ सुध ।  
 पदमाकर ( हिं० पु० ) जलानय, तानाव ।  
 पदमाला ( मं० स्त्री० ) पदानां माला । १ पदश्रेणी । २ मोहनगीलाविद्या ।  
 पदमूल ( मं० पु० ) पैरका तलवा ।  
 पदमूर्त्तौ ( मं० स्त्री० ) अनुभास, वर्णमूर्त्तौ, वर्णसाय्य । जमे, मल्लिकान मञ्जुल मन्दिन्द सतवारि सिने मंड गंद मारुण सुहीम सनमा की है ।  
 पदश्री ( हिं० पु० ) गज, उद्यो ।  
 पदश्रेयसा ( मं० स्त्री० ) कविनाके लिये पदिका जोड़ना, पद वनानेके लिये शब्दोंको मिलाना ।  
 पदशंपन ( मं० वि० ) १ पशुतिरोध । २ पशुद्वन ।  
 पदर ( हिं० पु० ) १ एक प्रकारका पेड़ । २ खोड़ीदारोंके बैठनेका स्थान ।  
 पदशो ( मं० पु० ) पादुका, खुदाक, गुता ।  
 पदरवन एक प्राचीन जनपद । पावा देखे ।  
 पदरिपु ( हिं० पु० ) कण्टक, खाटा ।  
 पदल - टांछानात्वयामो गौडजातिकी एक शाखा । इनकी पण्डो, प्रधान या देगड़े खाटि नई एक ज्ञातोय उपाधिवा है । उच्च श्रेणीके गौडोंकी धर्मोपदेश देना और भाटका काम करना ही इनका प्रधान व्यवसाय है । इन ज्ञानिने स्वयं एक मिथजानि देखे जाते है जो वाद्यपर और शक्तुवायका काम करते है ।  
 पदवाच्य ( मं० पु० ) प्राचीन कालका एक प्रकारका श्लोक ।

- पदयाना ( हिं० क्रि० ) पदानिका काम दूररने कराना ।  
 पदयाय ( मं० वि० ) पदप्रदगर्भ, राह दिखानियाना ।  
 पदधि ( मं० स्त्री० ) पश्यते गम्यतेऽनया पद गौ पद 'पश-टिभ्यामधि' इति पत्रि । १ पदति. पधिपट्टी, तरीका । २ पश्य राप्ता । ३ उपनाम. उगधि । ४ ब्रह्म पतिव्रा या मानसुचक पद जो राज्य अथवा हिमो संस्था खाटिको चोरने किमो योग्य व्यक्तिको मिसता है, उपाधि, विनाय । ५ निशोग ।  
 पदनिक्षेप ( मं० पु० ) पदप्य विधिः । पदन्याम ।  
 पदविश्रव ( मं० पु० ) पदेन विषधीयव । १ समान, समानवाच्य ।  
 पदविच्छेद ( मं० पु० ) पदप्य विच्छेदः । पदका विच्छेद, पदका विग्र लेपण ।  
 पदविद्व ( मं० वि० ) पदं वेत्ति विद-किर । पदवेत्ता, पदज्ञ ।  
 पदवी ( मं० स्त्री० ) पदवी पत्रे डोप । १ पत्या, राह, राप्ता । २ पति, परिपट्टी, तरीका । ३ पद. उपाधि, विताव । ४ खोइटा, दरजा । ५ भ्रिण्टे सुप ।  
 पदशोय ( मं० स्त्री० ) वसुका अनुसन्धान ।  
 पदश्रुति ( मं० स्त्री० ) पदद्वयका मध्यच्छेद ।  
 पदश्याष्यान ( मं० स्त्री० ) पदप्य श्याष्यानं यव । १ वेदमन्त्रका विभाजक ग्रन्थभेद । तस्य व्याख्यानपत्र्य तत्र भवो वा ऋगयनाटित्वाटण् । ( वि० । २ पद-व्याष्यान ग्रन्थको व्याख्या या तत्र भव ।  
 पदग्रस ( मं० अश० ) क्रमगः, पद पदमें ।  
 पदश्रेणि ( मं० स्त्री० ) पदानां श्रेणिः । पदश्रेणि, पद-श्रिणि ।  
 पदश्लेष ( मं० स्त्री० ) पादौ च चष्टोषन्तो च तयोः समाहारः. ( अथश्रुविषयुरेति । या ५।४।०७ ) इति निपातानात् सिंह । पाट चोर प्रानुश समाहार ।  
 पदमंघाट ( मं० पु० ) पदमंघाटक ग्रन्थकर्ता या टीकाकार, वह जो ग्रन्थ या पद मंघट करता हो ।  
 पदमंघिता ( मं० स्त्री० ) पदमंघोजना ।  
 पदमघातु ( मं० स्त्री० ) गोनका प्रमरपभेद ।  
 पदमंघि ( मं० पु० ) श्रुतिमपुकी पदमंघोजना ।  
 पदममूह ( मं० पु० ) १ पदश्रेणी । २ कविताशरद, पदपाठ ।



फल खाये जाते हैं और कहीं कहीं फकीर लोग उनको मालाएँ बना कर गरीबों में वितरते हैं। यह फल गरव वशानेके लिये बिलायत भी भोजा जाता है। इस पेड़ को लकड़ीके छड़ियाँ और आरायणी सामान बनाने जाते हैं। कष्ट है, कि गर्भ न रहता हो तो इसको लकड़ीके घिस कर पीनेमें गर्भ रह जाता है और यदि गर्भ गिर जाना है तो स्थिर हो जाता है।

विशेष विवरण पदःशब्दमें देखो

- पदमकाठ ( हि० पु० ) पदम देवी।
- पदमचल ( हि० पु० ) रिवन्द नीली।
- पदमण ( हि० स्त्री० ) स्त्री।
- पदमनाम ( हि० पु० ) १ विष्णु। २ सूर्य।
- पदमाकर ( हि० पु० ) जलामय, तालाव।
- पदमाला ( सं० स्त्री० ) पदानां माला। १ पदयोः २ मोहनगोलाद्यादि।
- पदमूल ( सं० पु० ) पैरका तलवा।
- पदमैत्री ( सं० स्त्री० ) अनुग्रह, वर्णमैत्री, वर्णसायु। जैसे, राजकानमंजुल मलिन्य मतपारि मिले मंद मंद मारुत सुहृदम मनसा की है।
- पदम्नी ( हि० पु० ) गज, उद्यो।
- पदमोजना ( सं० स्त्री० ) कविशाके लिये परीका जोड़ना, पद बनानेके लिये शब्दोंको मिलावा।
- पदशपन ( सं० स्त्री० ) १ पशुतिरोध। २ पशुहन्त।
- पदर ( हि० पु० ) १ एक प्रकारका पेड़। २ खोड़ीदारोंके बैठनेका स्थान।
- पदरायो ( सं० पु० ) पादुका, खुदाक, शूता।
- पदरसन - एक प्राचीन जनपद। पादा देवे।
- पदरिपु ( हि० पु० ) कण्ठक, काटा।
- पदरु - दक्षिणात्यभासे गौड़जातिकी एक गाय। इसको पवड़ी, प्रधान या देगारि प्रादि कई एक जातीय उपाधियाँ हैं। उच्च श्रेणीके गौड़ोंकी धर्मोपदेग देना और भाटका काम करना ही इसका प्रधान व्यवसाय है। इस जातिसे कल्प एक मिश्रजाति देखी जाती है जो साधारण और हस्तुनायका काम करती है।
- पदशय ( सं० पु० ) प्राचीन कालका एक प्रकारका दोष।

- पदशयाना ( हि० स्त्री० ) पदानिका काम हूनेमें कराना।
- पदशय ( सं० स्त्री० ) पदप्रदगर्भ, राट दिव्यनिवाला।
- पदति ( सं० स्त्री० ) पद्यते गन्धर्वनया पद गी पद पद्य-टिष्यामदि इति पति। १ पदति, परिपारी, तरीका। २ पत्य रात्ता। ३ उपनाम, उपाधि। ४ ऋष प्रतिष्ठा या मानसूचक पद जो राज्य अथवा किमो मंत्वा प्रादि-को चोरने किमो गोच्य व्यक्तिको मिनता है, उपाधि, पिताव। ५ मिश्रीग।
- पदतिक्षेप ( सं० पु० ) पदव्य विक्षेपः। पदम्याम।
- पदविषय ( सं० पु० ) पदेन विषयको यव। १ ममान, समासयाव।
- पदविच्छेद ( सं० पु० ) पदस्य विच्छेदः। पदका विच्छेद, पदका विग्रहोपण।
- पदविद् ( सं० स्त्री० ) पदं वेत्ति विदःकिम्। पदवेत्ता, पदज्ञ।
- पदवी ( सं० स्त्री० ) पदवो वक्त्रे डोष। १ पत्या, राट, रात्ता। २ पदति, परिपारी, तरीका। ३ पत्य, उपाधि, पिताव। ४ पौडटा, टरजा। ५ भिण्डो रूप।
- पदवीय ( सं० स्त्री० ) वक्तुका अनुसन्धान।
- पदवृत्ति ( सं० स्त्री० ) पदव्यका मध्यच्छेद।
- पदव्याख्यान ( सं० स्त्री० ) पदस्य व्याख्यानं यव। १ वेदमन्त्रका विभाजक ग्रन्थभेद। तस्य व्याख्याग्रन्थ तत्र भवो वा ऋगयनादित्वाद्गम्। ( स्त्री० २ पद-व्याख्यान ग्रन्थको व्याख्या या तत्र भव।
- पदग्राम ( सं० पद्य० ) क्रमगः, पद पदमं।
- पदश्रेणि ( सं० स्त्री० ) पदानां श्रेणिः। पदश्रेणि, पद-शक्ति।
- पदश्लोक ( सं० स्त्री० ) पादो च पदश्लोको च तयोः समाहारः, ( अष्टादशपुरेति । या शां० ७० ) इति निपातान्तात् सिद्धं। पाद चोर जानुका समाहार।
- पदसंचाट ( सं० पु० ) पदमंगादक ग्रन्थकर्ता या टोकाकार, यह जो ग्रन्थ या पद मंगल करता हो।
- पदसंहिता ( सं० स्त्री० ) पदमंयोजना।
- पदमथातु ( सं० स्त्री० ) गानका प्रसङ्गभेद।
- पदशिर ( सं० पु० ) श्रुतिगंधुकी पदमंयोजना।
- पदममू ( सं० पु० ) १ पदश्रेणी। २ कवितावर्ष, पदपाठ।

पदलोभ ( मं० पु० ) पदलोक स्त्रीभः । पदमन्त्र पठित  
निर्वाहक मन्त्रोद ।

पदस्य ( मं० वि० ) पदे तिङ्गि व्या-क । १ दण्डायमान,  
श्री पदमे वेभंके वन वान्हा श्री । २ कर्मपद पर पधि-  
दित वा निवृत्त, श्री किमो पर निवृत्त श्री । ३ श्री  
वेभंके वन वन वहा श्री ।

पदभ्याम ( मं० स्त्री० ) पदनिजपुत्र व्याप ।  
पदलित ( मं० ति० ) पदस्य, श्री वपने वेभंके वन  
पदा श्री ।

पदाङ्ग ( मं० पु० ) मर्द, मीप ।  
पदाङ्ग ( मं० पु० ) पदस्य पदपिङ्गः । कमाङ्ग, पादनिज,  
वेभंका निमान श्री वपनेके समय वान्हा श्री वकीष  
पादि पर वन जाता श्री ।

पदाङ्गी ( मं० स्त्री० ) १ कर्मपदोन्मत्ता । २ रक्तमज्जा-  
लुका, माल रंगका लज्जामू ।

पदाङ्गि ( मं० पु० ) पादाभ्यामन्मतीति पञ्ज मन्तो-दन् ।  
( वान्हा श्री । वन् ४१३१ ) पादगण्डस्थाने पदादेगः ।  
पदाङ्गि, पैदम निपाही ।

पदात् ( मं० पु० ) पदव्यामन्मतीति गच्छतीति पद-पत्-  
चश् । पदाङ्गि ।

पदाति ( मं० पु० ) पादाभ्यामन्मतीति गच्छतीति पाद-पति  
( वान्हा श्री । वन् ४१३१ ) पादगण्डस्थाने पदादेगः ।  
पदाङ्गि, पैदम निपाही । पदाय-पति, पतग, पादा-  
तिङ्, पदाति, पद, पदिह, पादात्, पदाङ्गि, पदात्,  
पाङ्गि, कयराति ।

पदाङ्गि ( मं० पु० ) पदानि पाठं कन् । १ पदाति,  
पैदम निपाही । २ यह श्री पैदम वनता श्री ।

पदाङ्गिन् ( मं० पु० ) पदाङ्गिभ्यः ।

पदाङ्गीय ( मं० पु० ) पदाङ्गि ।

पदाङ्गीय ( मं० पु० ) पदाङ्गीयभ्यः । पदाति मेमा-  
का पधिपति ।

पदादि ( मं० पु० ) पदस्य पादिः । पदका पादि ।

पदादिका ( वि० पु० ) पैदम मेमा ।

पदाद्यपि ( मं० पु० ) पदादिं न वेति विद्वेदिय ।  
पदकृत कात्, यह कात् श्री पदका नृत्त भी वयाव  
न कर मच्छता श्री ।

पदाधिकारी ( मं० पु० ) यह श्री किमो पद पर निवृत्त  
श्री, श्रीवेभंका, पञ्जम ।

पदाध्ययन ( मं० वली० ) पदस्य परवयन । पदका पद्य  
यन, पद-पठः पञ्जमार मेटका पठन ।

पदानत ( मं० ति० ) चरत् पर पतित, एकात्-पद्योः ।  
पदाना ( वि० कि० ) १ पादनेका काम दुभरेमि वराना ।  
२ पदम पधिक दिक् वराना, मंग वराना, वृहाणा ।

पदानुग ( मं० पु० ) पदेऽनुगच्छति अनु गम-ह । पदानु-  
मरत्, यह श्री किमोका अनुगमग करता श्री ।

पदानुगम ( मं० पु० ) पदे अनुगमः । पदमे अनुगति,  
देवचरत्मे भक्ति ।

पदानुगामन ( मं० वली० ) पदानि अनुगिच्छन्तेऽनेन  
अनु-गम-करये म्पुट् । गद्यनुगामनया वरत् ।

पदानुस्वार ( मं० पु० ) मामभेट । निधमस्वरो स्वार  
कहते ई । यह स्वार दो प्रकारका श्री, शायिकस्वार  
शोर पदानुस्वार । वान्हाय पद शायिकस्वार श्री शोर  
शोमन पदानुस्वार ।

पदास्त ( मं० पु० ) पदस्य पलाः पवमानः । १ पदका  
पवमान, पदका मीप । २ व्याकरणमे किमकी पदमंका  
की गर्द ई, उषका पला । व्याकरणमे किमने प्रथपादि  
पदात् निपयमे शोर किमने पदात्ता विपयमे वृषा  
करते ई ।

पदास्तर ( मं० वली० ) पद्यत्पदं पदास्तरः । १ भिगन  
पद दूमा पद । २ वरानास्तर ।

पदात्तोय ( मं० ति० ) पदात्त मध्ययो ।

पदाभिवेक ( मं० ति० ) पदे अभिविक्तः । पद पर  
स्थापित ।

पदाभोज ( मं० स्त्री० ) पदारविन्द, पादपत्र ।

पदार ( मं० पु० ) पदं मच्छति प्राप्नोतीति प-पञ्च ।  
पादपुनि, वेभंकी भुन ।

पदारविन्द ( मं० स्त्री० ) पादपत्र ।

पदार्थ ( मं० पु० ) यह जन की किमो चतिनि या  
पुत्रकी वेभंकीने किमे दिवा जाव ।

पदार्य ( मं० पु० ) पदानां पदपदोर्ना पदोऽभिपेयः ।  
गद्याभिपेय द्रव्यादि । पदाय-माय, पम, तख, मख,  
वपु ।

दशममहके मतमें हमें पदार्थ भी नाना प्रकारका है। किन्तु दशममें छः पदार्थ, किन्तुमात्र मात्र चौर किसीमें मोलह पदार्थ माने गये हैं। वस्तुमात्र ही पदार्थ पदवाच्य है। गीतमादि ऋषिगिने तपःप्रभावमे जागतिक वस्तुनिचयको पहले कई एक श्रेणियोंमें विभक्त किया है। किसी किन्तु दशममें पदार्थ की संख्या जो निरूपित हुई है, उनका विषय बहुत संक्षेपमें नीचे लिखा जाता है। पदार्थ तत्त्व वा मत्त्व एक ही पदार्थ की किसी दशममें पदार्थ चौर किसीमें तत्त्व वतलाया है। प्राथमिक नैय्यायिकोंके मतमें पदार्थ ७ प्रकारका है।

“द्रव्यं गुणस्तथा कर्म सामान्यं सविशेषकं” ;

समवायस्तथा भावः पदार्थाः सप्तकीर्तिताः ४”

( भाषा परी० २ )

द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष, समवाय चौर प्रभाव यही सात पदार्थ हैं। नभ्य नैय्यायिकोंने पदार्थ-को ७ भागोंमें विभक्त कर खिल पदार्थको इन सात पदार्थोंके मध्य निविष्ट किया है। वैशेषिकदशम-कृत कषाद सम पदार्थोंको नहीं मानते। प्रभाव भिन्न पूर्वोक्त छः पदार्थ ही उनका अभिमत है। वैशेषिक-को प्रत्यक्ष पदार्थ नहीं खोजते। परवर्ती नैय्यायिकों-ने पदार्थको भाव पदार्थ वतलाया है। वैशेषिक-भाव पदार्थ खोजकरनेमें प्रभावको उपलब्धि नहीं होती, इसीसे प्रभावको एक चौर प्रत्यक्ष पदार्थमें खोजकर चरनेमें सप्त पदार्थ निर्देश किये हैं।

इन सात पदार्थोंके अतिरिक्त चौर कोई पदार्थ ही नहीं है। इन्हींके मध्य तावत् पदार्थ भन्तर्भूत होगा। कोई कोई इन सात पदार्थोंके भिन्न तमः 'अन्धकार'को एक चौर प्रत्यक्ष पदार्थ वतलाते हैं। किन्तु अन्धकार-दि भ्रान्त पदार्थ नहीं है, क्योंकि पालोकिका प्रभाव ही अन्धकार है। हमके सिवा अन्धकार पदार्थमें चौर कोई प्रमाण नहीं है। किन्तु कोई कहते हैं 'नील' तमवन्तति' अर्थात् नीलवर्ण अन्धकार समता है, इन प्रकार जो व्यवहार रूपा करता है, वह भ्रान्तक है। सब पूछिये, तो अन्धकार प्रत्यक्ष पदार्थ ही ही नहीं सञ्जाता, क्योंकि प्रभाव पदार्थमें मोलगुण चौर प्रवृत्तक्रिया प्रभाव नहीं है। सभी पदार्थोंका ज्ञान ही

सञ्जाता है चौर उन्हें निर्देश तथा प्रमाणविह कर सकते हैं, इन कारण सभी पदार्थ उभय वाच्य चौर प्रमेयरूपमें निर्देश किये जाते हैं।

पहले जिन सात पदार्थोंका जिक्र किया, उनका विषय इस प्रकार है :—

द्रव्यपदार्थ ८ है ; यथा—पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश, काल, दिक्, आत्मा चौर मन ।

गुणपदार्थ २४ हैं ; यथा—रस, रस, गन्ध, स्पर्श, संख्या परिमाण, प्रयत्नत्व, संयोग, विभाग, परत्व, अपरत्व, बुद्धि, सत्य, दुःख, इच्छा, द्वेष, धर्म, शुद्धत्व, स्नेह, संस्कार, धर्म चौर अधर्म ।

नील पीतादि वर्णोंका नाम रूप है। यह रूप वर्ण-भेदसे कई प्रकारका है। तर्कान्त प्रत्यक्षके मतमें शुक्ल, नील, पीत, रक्त, इरित, कपिल चौर चित्र ये सात प्रकारके रूप हैं। जिन वस्तुके रूप नहीं है, यह दृष्टि-गोचर नहीं होता। इसीसे रूप ही दशमका कारण है।

रस छः प्रकारका है, कटु, कषाय, तिक्त, पश्न, लवण चौर मधुर। गन्ध दो है, सोरभ चौर असोरभ। स्पर्श तीन प्रकारका है—उष्ण, शीत चौर अनुष्णशीत। संख्या एकत्व द्वित्व चौर त्रित्वादिक भेदसे नाना प्रकारकी है। संख्या खोजकरनेमें किसी प्रकारकी गणना नहीं कर सकते। क्योंकि इस प्रकारकी गणना संख्यापदार्थके अवलम्बनमें ही जाती है। परिमाण चार प्रकारका है—स्थूल, सूक्ष्म, दोष चौर अदोष। जिनका अवलम्बन करके छट पदसे प्रत्यक्ष है, वेना व्यवहार रूपा करता है, उसको प्रत्यक्ष कहते हैं। प्रसिद्ध वस्तु-हयने मिलन चार मयिक्त वस्तुप्रत्यक्ष विद्योगको यथा-क्रम संयोग चौर विभाग कहते हैं। परत्व चौर अपरत्व प्रत्यक्ष दैगिक चौर कालिक भेदसे दो प्रकारका है—दैगिक परत्व चौर दैगिक अपरत्व। दैगिक परत्वमें प्रसुक्त नगरमें प्रसुक्त नगर दूर है, इस दूरत्वका ज्ञान होता है चौर दैगिक अपरत्वमें प्रसुक्त स्थानमें प्रसुक्त स्थान निकट है, यह समझा जाता है। इस प्रकारके कालिक परत्व चौर अपरत्व यथाक्रम ज्येष्ठत्व चौर छट व्यवहारके उपयोगी है। बुद्धि दोष होता है। ज्ञान दो प्रकारका





परमाणुमें जो विशेष है, वह अन्य परमाणुमें नहीं है। अतः यह परमाणु अन्य परमाणुसे मिल है और अन्य परमाणुमें जो विशेष है, वह अपर परमाणुमें नहीं है। इस कारण अन्य परमाणु अपर परमाणुसे पृथक् है। इसी रीतिमें जितने परमाणु हैं, मर्वाकी परस्पर विभक्तता निरूपित होती है।

ममभाव—द्रव्यके साथ गुण और कर्मका; द्रव्य, गुण और कर्मके साथ जातिका; नित्य द्रव्यके साथ विषये पदार्थका और वययथके साथ चययवीका जो सम्बन्ध है, उसे ममभाव कहते हैं।

यही पदपदार्थ है। इनके चलावा चभावपदार्थको ले कर समपदार्थ कल्पित हुआ है। चभाव दो प्रकारका है, सगर्गाभाव और अन्योप्याभाव। रूढ़में पुस्तक भिन्न है, पुस्तक रूढ़ नहीं है, लेखनमें घटका भेद है इत्यादि स्थानमें जो चभाव प्रतीयमान होता है, उसे सगर्गाभाव कहते हैं। अन्योप्याभाव, ध्वंसाभाव और प्रागभावके भेदमें सगर्गाभाव तीन प्रकारका है। जिम वस्तुको जिनमें उत्पत्ति होगी, उस वस्तुका उसमें पहलें जो चभाव रहता है, उसे प्रागभाव कहते हैं। प्रागभावको उत्पत्ति नहीं है, किन्तु विनाश है। विनाश को ध्वंस कहते हैं। नित्य सगर्गाभावत्व ही चल्याभाव है।

गीतमने मोलह पदार्थ स्वीकार किये हैं। यथा—प्रमाण, प्रमेय, संशय, प्रयोजन, दृष्टान्त, सिद्धान्त, व्यवयव, तर्क, निर्णय, खाद, जल्प, वितण्डा, दुस्त्राभाव, छल, जाति और निवृत्तयान। गीतमके मतमें इनके चलावा और कोई पदार्थ नहीं है। जितने पदार्थ हैं, वे समो इन्हों मोलहके चर्तगत नित्य गये हैं। परवर्ती नैयायिकोंने कषाद और गीतमके मतको न मान कर सात पदार्थ प्यर किये हैं।

स्वाय और वैशेषिकदर्शन दग्ध देखो। रामानुजने अपने दर्शनमें तीन प्रकारका पदार्थ चतनाया है, चित्, चचित् और ईश्वर। चित् जोषवदभाष्य है, भोला, चमद्विध, चपरिच्छिन्न, निर्मल चानस्पदपौर नित्य है। चनादिकर्मरूप चवित्वावेदित भगवदाराधना और तत्पदमात्रादि जीषका स्वभाव।

वेद्यापकी मो भागीमें विभक्त कर पुनः उसे मो भाग करनेमें जितना सूक्ष्म होता है, जोष चतना हो सूक्ष्म है।

चचित् भोग्य और दृग् पदनाथ्य है, चचिनन स्वरूप, जडाकक, जगत् चार भोग्यवविशारास्वत्व दि स्वभावागानो है। यह चचित् पदार्थ तीन प्रकारका है—भोग्य, भोगोपकरण और भोगायतन। जिनका भाग क्रिया जाना है, उसे भोग्य। जिनके द्वारा भोग क्रिया जाता है, उसे भोगोपकरण और जिनमें भोग क्रिया जाता है उसे भोगायतन कहते हैं।

ईश्वर मर्वाके नियामक तथा हरिपदवाष्य है। वे जगत्के कर्त्ता हैं, उपादान हैं, मर्वाक चरतर्थांमो हैं और चपरिच्छिन्न ज्ञान, ऐश्वर्य तथा योर्वादि-सम्पन्न हैं। चित् और चचित् मभो वस्तु उनके गरीर स्वरूप हैं। पुरुषोत्तम वासुदेव भादि र्वाको च'च'प' है। इन दर्शनके मतमें पूर्वोक्त तीन पदार्थोंके चतिरिक्त चार कोई भी पदार्थ नहीं है।

शैवदर्शनके मतमें भी पदार्थ तीन प्रकारका है, पति, पद्य और पाग। पतिपदार्थ भगवान् गिव है और पद्यपदार्थ जोवात्मा। पागपदार्थ मन, कर्म, माया और रोधगलिके भेदमें चार प्रकारका है। स्वाभाविक चगुचिको मन, धर्माधर्मको कर्म, प्रनयाचव्यामें मर्वा पदार्थ जिनमें मोन हो जाते हैं और रूटिकालमें जिनमें उत्पन्न होते हैं, उसे माया कहते हैं। इसी पागवयवच-को 'म-कल' कहते हैं।

षाडैतिके मध्य पदार्थ वा तत्त्वके विषयमें चनेक मतभेद हैं। किशोक मतमें तत्त्व दो हैं, जीव और चजीव। जीव बोधात्मक है और चजीव चबोधात्मक। किशोक मतमें पञ्चतत्त्व, किमाके मतमें सप्ततत्त्व और किशोक मतमें तथतत्त्व स्यादतत हुआ है।

सांख्यदर्शनके मतमें—प्रकृति, पञ्चतत्त्विकृति, चित्ति और चतुभय ये चार प्रकारके पदार्थ हैं। मूल प्रकृति और स्रष्टादि प्रकृति, योद्गयिकृति तथा चतुभय पुरुष है। सांख्यके मतमें चमके चलावा चार कोई पदार्थ नहीं है। पातञ्जलदर्शनमें भी ये नव पदार्थ हैं चार इनके चतिरिक्त ईश्वर चपक, पदार्थ माने गये हैं।



राशि मिय पदार्थ है; क्योंकि वायुरागिका प्रधान उपदान घटनजन है। घटनजन और यथचारजन (Oxygen and Nitrogen) दोनों वायु रासायनिक संयोगमें संयुक्त न हो कर कंथन मिली हैं। सुतरां वायुरागिमें लभ्यगुणका चरित्तव प्रत्यक्, प्रत्यक् रूपमें प्रकटीभूत होता है।

पदार्थके सङ्घटनन चंगुलके परमाणु कहते हैं। इन सङ्घ परमाणुसमष्टिके योगमें सभी जड़ पदार्थको चर्यात्ति हुई है। वैशेषिक दृग्गणकारने सबसे पहले इन मूलका प्रचार किया। वे कहते हैं 'जिसके अर्थ प्रवयव नहीं है, अथवा जिग परम्परामें सभी प्रवयव है और वायव्य सदापदार्थ का गीप सोनासङ्घ है, उसका नाम परमाणु है। सभी परमाणु वाक्यार्थ पर विकर्षण गुणसम्पन्न हैं।' परमाणुओं का नाम नहीं है।

अतः परमाणु और वैशेषिक देखो।

कठिन, तरल और वायव्य (Solid, liquid and Gas)के भेदमें जड़ वस्तुको प्रवयवा तीन प्रकारकी है कठिन प्रवयवमें जड़ वस्तुके अणुओंका दृग्गणसम्पन्न रहता है, किन्तु तरल और वायव्य द्रव्यमें अणु धरल विनिवेशवशतः सहजमें विच्छिन्न हो जाते हैं। दृग्गणकादि कठिन द्रव्य है, जल तरल और कठिन तथा तरल वस्तुमें ताप-दानमें जो वायव्य द्रव्य उत्पन्न होता है, उसे वाष्प कहते हैं। वायुरागिका वायव्य भाव स्वाभाविक है और जलवाष्प आदि का वायव्य भाव नैमित्तिक।

जड़पदार्थमात्र ही अचेतन है, निश्चय, स्थानस्थापक और भ्रुत्ति विनिष्ठ है। सुतरां अचेतनत्व, निश्चयत्व, स्थानस्थापकता और भ्रुत्तित्व जड़के ये कई एक स्वाभाविक धर्म हैं। जड़पदार्थमात्रमें ही ये सब गुण पाये जाते हैं। सूक्ष्म, सूक्ष्म, परमाणु, सूक्ष्म, मिय या योगिक, कठिन, तरल आदि यावताय पदार्थमें इन प्रकारके गुण नहीं हैं प्रवयव जड़ पदार्थ है, ये पदार्थों का अस्तित्व प्रकृत है। जो गुण जड़ कठिन द्रव्यमें देखा जाता है वही कठिन द्रव्यका परमाणुत्व वा विशेष धर्म है और पूर्वोक्त गुण विषय माहात्म्य सभी द्रव्यमें लक्षित होते हैं, इन कारण यह

कठिनादि जड़द्रव्यका साधारण धर्म है। विभाव्यता और मान्तरता-गुण परमाणुका धर्म नहीं है, किन्तु परमाणु समष्टिके गुण पदार्थमात्रमें ही कठिन, तरल और वायव्य सभी प्रवयवोंमें उक्त दो गुण लक्षित होते हैं। मन्तां ये दो पदार्थके स्वाभाविक धर्म नहीं होने पर भी कठिन, और तरल प्रयुक्त साधारण धर्म हैं। स्थानस्थापकत्व जड़त्व, विभाव्यत्व और मान्तरत्व ये सब जड़ पदार्थके साधारण गुणोंमें प्रधान हैं। स्थानावरोधकत्व और भ्रुत्तित्व, स्थानस्थापकत्व गुणमापेक्षित हैं। यदि सभी द्रव्यस्थानस्थापक न होते, तो वे स्थानावरोधक नहीं हो सगते और न उनके आकारको कोई भ्रुत्ति हो रहती। चैतन्य-गुणत्व और निश्चयत्व ये दोनों ही गुण जड़त्व शब्द द्वारा सूचित होता है। फिर आकृष्टनीयता, परमाणुयता स्थितियापकता और विभाव्यता आदि गुण मान्तरता गुण-साधक हैं।

जड़पदार्थ मात्र ही कुछ स्थानमें स्थापित हो कर रहता है। जिग गुणके कारण जड़ पदार्थ सभी स्थानोंमें स्थापित रहते हैं, उनका नाम ही स्थानस्थापकता। सभी स्थानस्थापकता गुणमें सभी जड़द्रव्य तोन और विच्छिन्न हो कर स्थानको अधिकार करते हैं। इन प्रकार विच्छिन्न रह कर जड़ वस्तु जिग स्थानको अधिकार करती है, उसे 'चायतन' कहते हैं। जिग सब गुणोंमें सभी जड़द्रव्य अन्तर्गमने अधिकृत स्थानमें अन्य द्रव्यकी प्रव्यवृत्तिका अवरोध उत्पन्न करते हैं, उसका नाम स्थानावरोधकता है; जैसे किसी जलपूर्ण पिचकारीका मुँह बंद कर यदि उसका अर्गल टकाया जाय, तो पिचकारीके भीतर पानी पवित्र नहीं होता है, क्योंकि अर्गल और जल एक समयमें एक स्थान पर नहीं रह सकता। यह स्थानावरोधकत्व गुणपरमाणुनिष्ठधर्म है। जड़द्रव्यके परमाणु जो चायतनमें सम्मिलन रहते हैं सो नहीं, उनके मध्य कुछ कुछ प्रवयव या प्रसार रहता है। जड़वस्तुको परमाणु स्थानावरोधक है मही, लेकिन उनके अन्तर्गत प्रवयवका काम तथा उद्विग्नता करने से और एकके परमाणुपाके अन्तर्गत प्रवयव स्थानमें अन्यके परमाणु कभी कभी विचरते माने जाते हैं, लेकिन वास्तविकमें ऐसा नहीं है।



पद् ( हि० पु० ) पदोद्गा देखो ।  
 पदटिका ( सं० पु० ) एक माटक छन्द । इसके प्रत्येक चरणमें १६ मात्राएँ होती हैं और अन्तमें जगण होता है ।  
 पदही ( हि० स्त्री० ) पदटिका देखो ।  
 पदति ( सं० स्त्री० ) पदभ्यां घञ्ति गच्छतीति, इन्-क्तिन् ( द्विवचनविहिते पुं । पा ६।१।५४ ) इति पाठस्य पदाद्देगः, ततो डीप् । १ वक्त, पय, राह । २ पंक्ति, कतार । ३ यन्व्यायं बोधक यन्व, वह पुस्तक जिसमें किसी दूबरी पुस्तकका अर्थ या तात्पर्य समाप्त जाय । ४ पदवी, उपनामभेद, जैसे, डाक्टर, घोष आदि । ५ प्रणाली, रीति, तरीका, ढंग । ६ आचार अर्थ, वह अर्थ जिसमें किसी प्रकारकी प्रथा या कार्य-प्रणाली लिखी हो । ७ कार्य-प्रणाली, विधिविधान । ८ रीति, रस्म, रिवाज, परिपाटी ।

पदति ( हि० पु० ) पददेहा देखो ।  
 पदिस ( सं० स्त्री० ) पादस्य हिमं, पादस्य पद्मावः । पादकी शीतलता ।  
 पद्मी ( हि० स्त्री० ) खेनमें किसी लक्ष्मीका जीतने पर टाँव लेनेके लिये धारिणीवने लक्ष्मीकी धीठ पा चढ़ना ।  
 पद्म ( सं० पु० स्त्री० ) पद्मते इति पद गतो मन् ( अलिप्त इन्द्र-य इत्यादि । उच् १।१२८ ) ऐश्वनामप्रायत कोमल तथा और तज्जात पुष्पविशेष, कमल । पर्याय-नानिन, धारविन्द, महीच्यवन, महस्त्रपत्र कमल, शतपत्र, कुशो-यय, पद्मेक्य, तामरस, सारस, मरगोक्ष, विषपत्र, राजीव, पुष्कर, अशोक, पद्मज, अशोक, चन्द्र, मरमिज, श्रीवाम, श्रीवर्ण, इन्द्रियमय, जनजात, अम, नम, नमोका, नागिक, यज्ञ, पद्म, पुष्क ।

माधारणतः श्वेत, मोहित, पीत और अमिल इन चार वर्णोंके पद्म इस लीलाके नयनगोचर होते हैं । वर्णमाह्वय रहने पर भी इनके मध्य आकृतिका बोल चरण देखा जाता है । आकृतिके अलक्ष्यके कारण पद्मोंके अनेक नाम पड़े हैं । हम लीलाके देगमें पद्मके अनेक पर्यायशब्द रहने पर भी वे किम किम ज्ञातिके हैं, हमका अर्थमें निर्णय नहीं हो सकता । श्वेत, शुक और मोनोच्यवके विभिन्न संज्ञादिशुभक पर्याय शब्द उत्पन्न शब्दमें निचु गये हैं । शतक देखो ।

मिश्र मिश्र स्वार्थोंमें पद्मके विभिन्न नाम देखे जाते हैं ।  
 हिन्दी—कमल, बहल—पद्म पदमः, उद्गीमा—पदम, विजरीर—योगेन्द्र, उत्तरपश्चिमदेशमें—अर्दिन् ।  
 पञ्जाब—पम्पाय, कणकपत्रः, मिश्र—अन्नन, अक्षिपमें—कुड, वनका गुड, अर्ध—कमल, काँडो ; अण्डो—तवरिगिजा, तवरिगड ; श्वान्देग—दुधमलिकाशब्द पूरा गन्धकन्द, तामिल—श्वेत—तामरवेद, पद्मन, तिलगु—एरा तामरश्वेक, मनय—ममर, मित्रापुर—नेतुम, ब्रह्म—ग-दुधमा, चय—नानुकर, उत्पन्नोलुकार ; पारस्यनानुकर, नोलुफ, वैश्वोलुकर ; पर्गिनी—The Sacred lotus ( Pythagorism or Egyptian Bean )-विश्वनामप्रायत - Nelumbum Speciosum or Nymphaea Asiaticum.

माधारणतः पुष्करिणा, भूल और छोटे छोटे जल-शयों तथा नदी आदिमें पद्म उत्पन्न होता है । पद्म मत्ता है, या सुन्दर वा हल कमला नियत करना कठिन है । पुष्करिणीके मध्यस्थ कर्पूर ( काँडो ) में पद्म निकलता है । पहले अनेक बीजमें ही पद्म और कन्द गठित होता है । पीछे यह बीज पर्वित हो कर ऊपरकी ओर उठता है । ऊपर जा कर उन बीजोंमेंमें थोड़े पद्ममें और कोई पुष्पमें परिणत होती है । जिस दण्डमें पद्म या पुष्प निकलता है, यह बहुत कोमल और अत्यन्त-युक्त होता है जो नाल कहता है । पद्मका जड़में पत्र या पुष्पका नाल छोड़ कर एक और प्रकारका उठल भिन्नता है जो नामकी चपेटा होता, श्वेत, कण्टक-हीन और कोमल होता है । हम उठलकी मूलात्त कहते हैं । यह श्वानेके समित और सुपाद् होता है । इसी और एवं मूर्च्छित प्राणिवश अत्र किसी पद्मवर्णमें जाते हैं, तब केवल मूलात्त तोड़ कर आते हैं ।

पद्मकी पत्तियाँ कुछ मोल होती हैं । इनका जलचर-भाग श्वेतमयी तरह कोमल और ऊपरका भाग चिकना होता है । इसमें कविगण मानवजायमकी 'पद्ममे जलविन्दुयथा' इस प्रकार उम्मा दिया करते हैं पर्यायपद्मपर पर जिस प्रकार जलविन्दु स्थिर नहीं रहता, मानवजायम भा उभा प्रकार चपट्यायो और नखर है । उत्तरमें काश्मिर और हिमालयके पारस्य-



पाती है। इसकी माला और पुष्पकी मूल कर वर्द्धने का प्रयोजन प्रयुक्त करते हैं। चीन-नामिकाएँ इसको जड़ का औषधिक प्रयोग वर्द्धने साध्य करने के लिये करते हैं।

पद्मपुष्प हिन्दुओंकी एक आराध्यक वस्तु है। वैदिक कालमें पद्मका व्यवहार देखा जाता है। रामायणमें श्रीरामदे 'नीलोत्पलनेत्र' और पद्मकी कथा तथा महा-भारतमें विष्णुके नामपद्ममें ब्रह्माकी उत्पत्ति आदि कथाएँ लिखी हैं। एतद्विना वेदाध्यायन, देवीमन्त्रोक्तो पद्मके लक्षण प्रकृत हैं और यैक्युष्टपति नारायणके हाथमें पद्मका पुष्प अभिप्रायमान है अनेक प्राचीन ग्रन्थों में इसका उल्लेख देखनेमें आता है, विश्वकोश, द्वात्रिंशद्विधप्रतिष्ठा आदि प्राचीन ग्रीक कविपणिके ग्रन्थोंमें भी पद्मका उल्लेख है।

कुमुद नामका एक प्रकारका सुद्रागार अंतपद्म काश्मीरप्रदेशमें ५३०० फुटकी ऊँचाई पर उगता है जिसे विज्ञानविदु Nymphaea alba (The White Waterlily) और भिन्न भिन्न स्थानवासी नीलोत्पल और नीलोत्पल कहते हैं। यूरोपके जनाग्रय, छोटे छोटे स्त्रोत और लवणवर्जित झरनादिमें यह पुष्प देखनेमें आता है। इसके मूलमें गालिक एसिड (Gallic acid) रहनेसे यह द्रव्यादि रंगानेके काममें आता है। इसमें कटु-कषाय तथा रसके समान पदार्थमिश्रित गुण रहनेके कारण आमाशयरोगमें इसको जड़ नियमित लाभदायक माना गई है। डाक्टर उमफेल्सो मतमें यह धारकता और मादकता गुणयुक्त है। इसका पुष्प काम-दमनकर माना गया है। उदरामय रोगमें तथा विषम-स्वरमें यह स्त्रोतजनक औषधरूपमें व्यवहृत होता है। इसके पुष्प और फलकी जलसिद्धि (Infusion) करके सेवन करनेसे उच्च रोग प्रशमित होता है। इसके मूलमें स्टार्च (Starch) रहता है जिसमें फ्राम्मोसोसो एक प्रकारका 'विषय' नामक मध्य प्रस्तुत करते हैं।

रक्त कम्पल या लाल कमल नामक पद्म-जातीय एक और प्रकारका सुद्रागार जलज पुष्प देखा जाता है जिसका विज्ञानविदोंने Nymphaea lotus नाम रखा है। इसकी उत्पत्ति न जायसुको मानी जाती है। भिन्न भिन्न स्थानोंमें इसका लाल, भिन्न प्रकारका है, हिन्दी-स्थान कमल, यद्वाः—गायुक्त, गान, रक्तकम्पल;

उड़ीसा—धावलकण्टिक, रक्तकाण्टिक; मिथु—कुणो, पुणो। टासिलिपुष्प—पद्मोफूल; गुजरात—नीलोत्पल, तामिल—अमोत सराई, पद्मवन; तेलगु—पद्मोत्पल, तेलकम्पल, लोनेर, एडाकोलुक, कन्धारम्। कर्णाटो—न्यादन कुडु; मलय-पद्मकम्पल; ब्रह्म—व्या-प्य क्रिया-ति; पिङ्गापुर—पोलु; मङ्गल—प्रमल, कुमुद, कल्लार, लक्ष, पद्मिः शरव और पारस्य—नीलोत्पल।

इसमें संकेत पाए जाते हैं। इस ज्ञानिका एक और भी पद्म (N. pubescens) देखा जाता है जिसको पश्चिम और फ्लोरिडा आकार अपेक्षाकृत छोटा होता है।

उदरामय, निम्बिका, स्वर और यकृतमङ्गलान्त पीडा-में इसकी मूला पचाना पचि-उद्गायक है। रक्त-मांस और पत्राण रोगमें इसका जड़का चूर्ण सिग्म-नर औषधरूपमें व्यवहृत होता है। कुष्ठ, टड्ड आदि रोगरोगी-तथा मधु विषमें इसका बीज स्निग्धकर है। पाकस्थली या पद्ममूलमें रक्तसाव होने पर पद्मवा रक्तपत्ररोगमें इसके पुष्प और मूलके चूर्णको विनानिमें रोगो चंगा ही जाता है।

लोग इसका जड़ को रोगों को पद्मवा भूत कर पाते हैं। पटुटजन रक्षा स्थानोंमें भी प्रचलित लगता है। पद्म-वाजको भूत कर लया जाता है।

नीलपद्म नामके प्रसिद्ध जो फूल पुष्करिणी आदिमें देखा जाता है यह पद्म नीलोत्पल नहीं है। 'विज्ञान-शास्त्र'में इसे Nymphaea Stellata, हिन्दीमें नीलपद्म, उडामासे शंदिकायम, विजयनगरमें चण्णर, मद्रासमें उडिया-वसल, तेलगुमें नीलकम्पल, मलयमें वित्तु-पद्म, मङ्गलमें नीलोत्पल, उत्पल और हिन्दोवर कहते हैं। इस अश्लील और भी तोम प्रकारके पुष्प देखे जाते हैं, (१) N. Cyanea मङ्गलकृत मन्थनीन और नीलकम्पल होता तथा पद्मोत्पल और पुष्करिणीमें उत्पन्न होता है। (२) N. pervillora अपेक्षाकृत छोटा होता है और (३) N. Versicolor सर्वोच्च वर्द्ध, संकेत, नील और बैंगनी रंग का होता है। इसमें पद्मक पुष्प रङ्गित हैं। इन्हींके दक्षिण भागमें, रोहिटा, आम्बिटा और कायरोनगरके निःशुद्ध स्थानोंमें एक प्रकारका नील-





पुराणानुसार एक कल्पका नाम । १२ शरीर-  
स्थित पटुपद्म, तन्मने चतुस्रार शरीरके भोतरी  
भागका एक कल्पित कमल जो सोनिके रंगका और  
बहुत ही प्रकाशमान माना जाता है । इसमें छः टल  
है । ११ बंधकमें पद्म शब्दके सखे लको जगह प्रायः  
पद्मके शरका ही बोध होता है । १४ दाधारि । १५  
नागविशेष, एक नागका नाम । १६ पद्मोत्तरात्मज ।  
१७ बलदेव । १८ सोनके प्रकारके रतिवर्षियोंमें एक ।

"इदं नाम क्वच प्रमादिद्वय नारी पदासनोपति ।

मेदु गटं समाह्वय इन्वीडयं पद्मसंज्ञकः ॥" (रतिमं०)

१८ नरकभेद, पुराणानुसार एक नरकका नाम ।

२० कावुलके एक हिन्दू राजा । इन्होंने ८०८ ई०  
तक राज्य किया था । इनके समयको ताम्रमुद्रा पाई  
गई है । २१ एक प्राचीन नगर । २२ सपभेद । २३  
जम्बूद्वीपके दक्षिण-पश्चिममें अवस्थित एक भूभाग । २४  
मारवाड़ राज्यके एक राजा । इन्होंने उड़ीसा और  
तेजमान यदुने बगानन प्रदेश जीता था । २५ गङ्गाका  
पूवेंद । यद्वा देखो । २६ एक राजा । चन्द्रवंश-  
के पाण्डेय सुनिगोत्रमें इनका जन्म हुआ था । २७  
कुमारानुचभेद, कालि कथके एक चतुर्वरका नाम ।  
२८ जैनेक चतुस्रार भारतके नवें चक्रवर्त्तिक । नाम ।  
२९ काशमीरके एक राजसत्त्व । इन्होंने पद्मस्थामो-  
का मन्दिर और पद्मपुर नगर स्थापन किया था । ३०  
सामुद्रिकके चतुस्रार परमेका एक विशेष प्रकारका  
चिह्न । यह चिह्न भाग्यवृक्ष माना जाता है । ३१  
किसी स्तम्भके सातवें भागका नाम । ३२ विशुके एक  
पापुधका नाम । ३३ एक प्रकारका पापुष्य जो गन्ते-  
में पचना जाता है । ३४ शरीर परका भस्मदे दाग । ३५  
सावके फल पर बने हुए चित्र विचित्र चिह्न । ३६ एक  
ही कुरभी पर बना हुआ एक ही गिखरका पाठ हाथ  
चोड़ा घर । ३७ एक पुराणका नाम । पुराण देखो ।  
३८ एक वर्षोत्सव । इसके प्रत्येक वर्षमें एक नभय,  
एक सगव और सत्तमें सपु-गुरु होते हैं ।

पद्मक (मं० पृ०) पद्ममिव काष्ठोत्पन्नकं क, पद्म-  
मतिजालिगद्ययत्वात् लघोत्पत्तः । १ गजसुवस्थित पुष्पा-  
कार विन्दुसमुच्च । २ पद्मकोट । इसका गुण—सुख,

तिरु, मोतन, वासन, सपु, चिन्त, दाह, विन्कोट, कुड,  
शुभ, भक्त और पितानामक, मय मंशाप, कपित्तर,  
धर्म, सग और दानानामक । ३ कुट्ट'पधि, पट नामक'  
चोपधि पद्मप्रायं कन् । ४ पद्म यद्वाधे । ५ पटरायतन-  
भट । ६ श्वेतकुष्ठ, सकेट कोट । ७ सेनाका पद्मसूच ।  
पद्मकण्ठक (मं० पु०) सुदुरागम ट, एक प्रकार का शीत  
पद्म+न्द (मं० पु०) पद्मय कन्दः । १ कमलकन्द, कमल-  
की जड़, सुरार । पश्यां—गानूक, पद्मपुष्प, कटाक्षप,  
गालुक, जनानूक । गुण—कटु, विटम्भा । भाव-  
प्रकाशके समने इसका गुण—मोतन, हृय, पित्त, दाह,  
रक्तोपनामक, गुरु, मंशाह । २ जनपदविशेष पाना-  
ने रहनेवाला एक प्रकारका चिहिया ।

पद्मकर (मं० पु०) पद्म करे यस्य । पद्मपद्म विरु,  
पद्मपाणि ।

पद्मकरधोर (मं० पु०) पुष्पवृक्षविशेष ।

पद्मकण्ठ (मं० पु० स्त्री०) कमलाक्ष, पद्मवोज ।

पद्मकणिका (मं० स्त्री०) । पद्मका धारने मज्जन मेता-  
मण्डलीका मय भाग । २ कमलकणिका ।

पद्मकण्ठ (मं० पु०) कल्पभेद, विगन गोप कल्प ।

पद्मकाद्युत्त (सं० स्त्री०) चक्रदत्तक पत्र पुनभेद ।

पद्मकाष्ठ (मं० स्त्री०) पद्ममिव गन्धवत् काष्ठ । पापधि-  
विशेष, स्वनामस्थानि सुगन्ध काष्ठ । पश्यां—पद्मक,  
पोतक, पोत, मानय, मोतन, क्षिम, शुभ, केदारज, रक्त,  
वाटनापुष्पवृक्षम, पद्मकण्ठ । गुण—मोतन, तिक्त,  
रक्तपित्तनामक । मोह, दाह क्षय, भ्रान्ति, कुष्ठ, विन्कोट  
चार गान्तिकारक । विशेष लक्षण पद्म शब्दमें देखा ।

पद्मकाष्ठ (मं० स्त्री०) पद्मकण्ठ, पद्म नामक का पुष्प ।

पद्मकच्छक (मं० पु०) पद्म-शर, कमलका केसर ।

पद्मकन् (मं० पु०) पद्मकं विन्दुमानमयस्य इति  
भूजस्य, भोजपत्रका पेड़ ।

पद्मकोट (मं० पु०) पत्तिप्रकृति कोटभेद, एक प्रकार-  
का जहरीला कोड़ा ।

पद्मकूट (मं० पृ०) प्राचीन जनपदभेद, एक प्राचीन  
देश जहाँ बुभोमाका साम्राज्य-स्थापना गया था ।

पद्मकेत (मं० पु०) १ गङ्गाज्यनेद, पुराणानुसार  
गङ्गाके एक पुत्रका नाम



चित्र होनेके कारण यह स्थान प्रसिद्ध है। यहांके चित्र-  
माहात्म्यमें लिखा है, कि यहांके गिरिगिखर पर पावि-  
भूत भी कर श्रीकृष्णने वनवासी वाण्डनमें कहा था,  
'मैं अपना गृह और चक्र वहीं छोड़ जाता हूँ, तुम  
योग इनकी पूजा करना।' इतना कह कर भगवान्  
गिखरदेग पर गङ्ग-चक्र रख कर चले गये। वहींके  
नामःशुभार इस गिरि को 'निःटवर्ती' भगवत्का पद्म-  
नाभ नाम पड़ा है।

पर्वतके गिखर पर अति प्राचीन गङ्ग-नक्ष प्रतिष्ठित  
है और प्राचीन मन्दिरका ध्वंसावशेष भी देखनेमें आता  
है। इसके पास ही विजयरामराजने एक मन्दिर बनवा  
दिया है। मन्दिरके ऊपर ज्ञानेश्वर १२८० मोड़ियां  
लगी हुई हैं। गिरि-गिखर परसे भी सुनिश्चयन मन्दिर,  
मागसपथ, सिंहाचल और विजयनगरका दृश्य नयन-  
गोचर होता है। पर्वतके पयाह्रगमें कुन्तिमाधव स्वामीका  
मन्दिर, कुछ ब्राह्मण और भैरवों गुरुके मकान  
हैं। इनके पास ही पुण्डरीकसिमा मोदीहरी नामको  
एक छोटी स्त्रीस्वती बह गई है। विजयरामराज अपने  
समय तक पद्मनाभमें रहें थे। १०८४ ई०को १० वीं  
जूनको इनके साथ चंद्रजो सेनावा घोरतर युद्ध हुआ।  
युद्धमें विजयरामराजकी मृत्यु हुई।

पद्मनाभ दालिवालयवासीका एक परिवार तीर्थ है।  
रामानुजस्वामी, गौराङ्गदेव आदि इन लोगोंमें पाये थे।  
२ विवाह-हो राख्ये वनगत एक अति पुनःस्थान  
और प्राचीन नगर। वनवासियों विष्णुका चित्र होनेके  
कारण यह स्थान वनवास-ग्राम नामसे प्रसिद्ध है।  
ब्रह्माण्ड उपपुराण वनगत वनवासग्राम-माहात्म्यमें इस  
स्थानका पौराणिक वास्तव्य वर्णित है।

पद्मनाभ—१ भास्कराचार्यभूत एक प्राचीन ज्योतिषिभूट।  
इसका ब्रह्माया हुआ वोजगणित 'पद्मनाभभोज' नामसे  
प्रसिद्ध है।

२ दगकुमारचरितोत्तरपाठिकाके रचयिता।

३ माध्वान्दिनेय पाचार्यपद दालिकाके रचयिता।

४ मन्मथनाथके ग्रन्थ, रामाष्टोत्तराशिकायके रचयिता।

५ ब्रह्मसंहिताके महाकाव्यके रचयिता।

६ कृष्णदेवके पुत्र, एक विख्यात ज्योतिषिभूट।

पद्मनाभरचित निम्नलिखित ग्रन्थ पाये जाते हैं—  
नामदो नामक करणकुतूहलटोका, पद्मचन्द्रपा-  
विकार, ज्ञानप्रदोष, ध्रुवभ्रमपाधिकार। इस ग्रन्थमें  
ग्रन्थकारने नामदोका नामसे अपना परिचय दिया है।  
शुभनदोष या प्रह्लाथ प्रहास, सिद्धान्त, सम्पाक, व्य-  
हार प्रदीप।

७ एक प्रसिद्ध नैयायिक। इनके पिताका नाम  
वनभद्र, माताका विजययो और भ्राताका गोवर्धनमिय  
तथा विजयनाथ था। इन्होंने किरपावसोभास्कर, तत्त्व-  
विस्तारमणिवीणा, तत्त्ववकाशिकाटोका, राधात्मसुहा  
हार और करणादरहस्य नामकी समस्त टोका और  
१६४८ मन्वन्तमें वीरभद्रदेव सम्पत्की रचना की।

पद्मनाभदत्त—एक प्रसिद्ध नैयायक। इन्होंने सुपद्म-  
व्याकरण, सुपद्मपञ्चिका, प्रयोगदोषिका, उच्चारदृष्टि,  
धातुकोमुदे, यद्भुक्तृति, परिभाषा, गोपानचरित,  
पानन्दलहरीटोका, स्मृत्याचार-चन्द्रिका और भूरि-  
प्रयोग नामक संस्कृत परिभाषा बनाये हैं। इन्होंने  
परिभाषामें अपने पूर्वपुरुषोंका इस प्रकार परिचय  
दिया है—

मयं ग्राह्यविगारद वररुचि, उनके पुत्र फविमा-  
प्यायं तत्त्ववित् श्यामदत्त, न्यायदत्तके पुत्र पाणिनीयाय-  
तत्त्ववित् दुर्घट, दुर्घटके पुत्र मीमांसाग्राह्यपारग  
जयादित्य, जयादित्यके पुत्र मांथ्यग्राह्यविगारद गवेश्वर  
( गणपति ), गवेश्वरके पुत्र रसमन्त्ररीकार भानुदत्त,  
भानुदत्तके पुत्र वेदमाध्यायं तत्त्ववित् शलायुष, शलायुष-  
के पुत्र स्मृतिग्राह्ययं तत्त्ववित् श्रीदत्त, श्रीदत्तके पुत्र  
वेदान्तिक भवदत्त, भवदत्तके पुत्र काव्यान्कारकारक  
दामोदर, दामोदरके पुत्र पद्मनाभ।

पद्मनाभदोषित—एक विख्यात हर्मास। इनके पिताका  
नाम था गोपान, पितामहका नारायण और गुरुका  
श्रितिकण्ठ। इन्होंने कात्यायनसूत्रपरति, प्रतिष्ठादोष  
और प्रयोगदोषकी रचना की।

पद्मनाभभोज ( म० स्त्री० ) पद्मनाभरचित वोजगणित।  
पद्मनाभ ( म० पु० ) पद्मनाभ नामो यस्य, समासनामविधे-  
रिन्त्यन्तात् न पठ्यते। पद्मनाभ, विष्णु।

पद्मनाभ ( म० स्त्री० ) पद्मनाभ नाम। नृपान, कर्मना-  
शाल।



मोरपुराणके ३२वें और ४०वें अध्यायमें ये पद्मपादुकाचार्य और परम पद्मैतत्त्ववित् नामसे वर्णित हुए हैं। मर्यादायें देखो।

पद्मपाद पनेक यें दान्तिक पन्थोंको रचना कर गए हैं जिनमेंसे सुरेश्वराचार्यकृत लघुशास्त्रिकको टोका, चाक्रानामविवेक, पद्मपादिका और प्रपञ्चसार नामक ग्रन्थ पाए जाते हैं। पद्मपादके पत्न्यवती गिषयोर्गे ही दशनामियोको 'तीर्थ' और 'वायम' ग्रात्या निकली है। पद्मपादाचार्य ( म० पु० ) वाचायेंमें। पद्मपाद देवो।

पद्मपुराण—काश्मीरराज हृदयस्थितिके मन्वीका वमाया कुषा एक नगर। इसका पत्तमान नाम पामपुर है। यह काश्मीरको राजधानीमें श्रीनगरसे ४ कोस दक्षिण-पूर्व ओर नदीके किनारे अवस्थित है। आज भी यहाँ पनेक मन्थोंका वास है। आफगान् क्षेत्रके निवेशक स्थान प्रसिद्ध है। २ राधात्मन्वर्णित यमुना-तीरस्थ एक पुण्यस्थान।

पद्मपुराण ( म० को० ) व्यासपुराणमें पटादश महापुराणके अन्तर्गत महापुराणमें। नारदोपपुराणमें इन्द्रपुराणका विषय इस प्रकार लिखा है—प्रथम सृष्टिकण्ड है। इसमें पद्मने सृष्टादिक्रम, नाना चाख्यान और इतिहासादि द्वारा धर्मविस्तार, पुस्तकमाहात्म्य, ब्रह्मपञ्चविधान, वेदपाठादिनक्षत्र, दान कौत्सन, उभाविवार, तारकाख्यान, गोमाहात्म्य, कालकेयादिदेव्यध, पद्मैका पवन और हान ये सब विषय वर्णित हैं। 'इतोय भूमिखण्ड—इसके प्रथममें विष्ट-माष्ट चादिकी पूजा, गिवधर्मकथा, उत्सवमंत्रकी कथा, हवयध, पृथु और वंशका धर्मख्यान, विष्टसुधूपणायन, लघुपकथा, ययातिचरित, सुवतीर्थनिष्पण, वहु पाषाण कथा, पगोकुसुन्दरीकी कथा, दुग्ददेव्यधख्यान, कामोटाख्यान, विष्टसुधुध, कुष्ठलसम्पाद, मिटाख्यान, मन्थगोनकर्मपाद जिन सब विषय प्रदर्शित हुए हैं।

इतोय स्वर्गखण्ड—इसमें ब्रह्माण्डरश्मि, पभूमनोकर्मख्यान, तोषीयन, मर्म दोत्वमि अथम, कुक्षयेवादि तीर्थकी कथा, कामिन्दोपुल्लकथन, कामोमाहात्म्य, गया तथा वयावमाहात्म्य, वर्णायमात्राधर्मकर्मयागनिरूपण, व्यासके निमित्तम्पाद, मनुद-मन्थनख्यान, मन्थकथा ये सब विषय वर्णित हैं।

चतुर्थ पातानखण्ड—इसके रामका पद्ममेध और राधाभिये, पद्मपादिका पागमन, पोलस्तरयंगकोर्त्तन, पद्ममेधोद्देश्य, हयचर्चा, नानाराजकथा, जगदायवर्णन, इन्द्रायनमाहात्म्य, त्रिचलोनाकथन, माधव स्नानमाहात्म्य, स्नानटा-पायन, धरावराहमथा, यम और ब्राह्मणकी कथा, राजदूतमर्षाद, छयास्तान, गिव-गन्धुममायोग, दधोष्णाख्यान, भक्तमाहात्म्य, विष-माहात्म्य, देवरातसुताख्यान, गीतमाख्यान, गिवगोता, कलाकाररामकथा, भरदाजायमस्थिति ये सब विषय वर्णित हैं।

पद्म उत्तखण्ड—प्रथम गोरुके प्रति गिरिका पर्वताषयान, ज्ञानस्वरकथा, योगेलादिका वर्णन, सागरकथा, गङ्गा, प्रयाग और कामोका चाधिपुल्लक, चाख्यादितानमाहात्म्य, मङ्गलादगोत्रन, चतुर्विंशोकादगोका माहात्म्यकथन, विष्णुधर्मसमाख्यान, विष्णुनाम-महस्त्र, कार्तिकेयकर्ममाहात्म्य, माधवस्नानकन, जम्बूद्वीप और तोयमाहात्म्य, माधुमतीका माहात्म्य, नृमिथो-त्पत्तिवर्णन, देवगर्मादि चाख्यान, गातामाहात्म्य-वर्णन, भक्त्यख्यान, योगेद-भगवतहा महाका, इन्द्र-प्रश्नका माहात्म्य, बहुतीर्थकी कथा, मन्वरखाभिधान, त्रिपादभूत्वमुवर्णन, मत्स्यादि पवनारकथा, रामनाम-गत और तन्माहात्म्य, उत्तरखण्ड-यनी भव वर्णित हुए हैं।

पद्मपुराणकेइसमें पाँच खण्डोंमें विभक्त है। ये पञ्च-खण्ड पद्मपुराण जो भक्तिपूर्वक अध्ययन करते हैं, उन्हें 'योग्यवपद' नाम होता है, इन पद्मपुराणमें १५ हजार श्लोक हैं। पुराण कह्यो।

दियस्वर जैमिणोके भी इस नामके दो पुराण हैं जिनमेंसे एक रथिमेंनविरचित है। जैन हरियंगकार निमयेनेमें पयो गनाय्दमें इस पद्मपुराणका उल्लेख किया है। जैनोकी पनेक पौराणिक चाख्यायिका इस पद्म-पुराणमें देखी जाती हैं। मधरावर जैन लोग इस हस्त पद्मपुराण मानते हैं। इस पुराणके सुनीवना पादि कुछ उपाख्यान किन्तु पद्मपुराणमें भा देखे जाते हैं। पद्मपुराण ( म० पु० ) पद्ममंत्र उपदेशक। १ कवि-कार-हण, कनेरका पेटु। २ पिशाचपणा, एक प्रकारकी बहिष्या। ३ पारिभद्रकथन।



पद्यरथ (सं० पु०) राजसुवर्गदत्त ।

पद्यराग (सं० पु०) पद्यरथीय रागो यस्य । रत्नवर्ण मणिविधौ ।

पद्यरथीय लाल चुन्नोकी जो पद्यराग कहते हैं । चुन्नो रत्नमें विशद्वत विवरण देखो । 'पद्यरथीय' नाम रत्नगास्त-में लिखा है—

वैशोक्त्यको भलाईके लिए सुराकान्तमें जय इन्द्रनि पद्यरथी मारना चाहा, तब लक्ष्मि जिसे उसका विन्दुमात्र भी रत्न प्रथो पर गिरने न पावे, इस ख्यालसे सूर्यदेवकी धारण किया । किन्तु दशाननको देख कर सूर्य डर गये और वह रत्न विचित्र हो कर गि'हनदेग-में रावण गङ्गानदीमें पतित हुआ । रातको उस नदीके दोनों किनारे तथा मध्यमें यह रुधिर खद्योताग्निवत् कलने लगा । उससे एक जातीय तीन प्रकारके पद्य-रागकी उत्पत्ति हुई ।

वराहमिहिरकी हस्तसंहिताके मतसे—सौगन्धिक, कुरुविन्द और स्फटिकसे पद्यरागमणिको उत्पत्ति हुई है । इनमेंसे सौगन्धिकजात पद्यराग भ्रमर, पञ्चन, पद्य और लभुरसके जंसा दोमिश्रानो ; कुरुविन्दजात पद्यराग बहुवर्णयुक्त मन्द्युतिगम्प्यर और धातुविन्द तथा स्फटिक जात पद्यराग विविध वर्णयुक्त व्युत्तिमान् और विशद्व होता है ।

पद्यरथके मतसे पद्यराग एक जातिका होने पर भी वर्णभेदके अनुसार यह तीन प्रकारका है, सुगन्धि, कुरुविन्द और पद्यराग । पद्यराग देखनेमें पद्यरागके औषा खद्योतकी तरह प्रभायुक्त, कोकिल, मारस वा 'चफोर पद्योके, चपुके जैसा और सतवर्णयुक्त होता है । सौगन्धिक देखनेमें ईषत् नील, गाढ़ रत्नवर्ण, भाजारस, चिह्नल और कुङ्कुमके जंसा प्रभायुक्त है । कुरुविन्द देखनेमें शशाङ्क, मोक्ष, सिन्दूर, गुच्छा, बन्सूक और किंशुकके जंसा पतिलस और पोतवर्णयुक्त होता है ।

पद्यरथके मतसे सि'हल, कालपुर, पद्य और तुम्बर नामक स्थानमें पद्यराग पाया जाता है । इनमेंसे सि'हल-में पतिलवर्ण, कालपुरमें पोतवर्ण, पद्यमें ताम्रभासु-वर्ण और तुम्बरमें हरित छायाको तरहक पद्यराग मिलता है ।

मन्तारमे—गि'हनमें जो रत्नवर्णका पद्यराग मिलता है वही उत्तम पद्यराग है । जानपुरोद्यय पान-वर्णो दुर्लभक कहते हैं । तुम्बरमें ता मोन-छाया-वत् मणि पाई जाती है, तथा मोनगन्धि है । इनमेंसे सि'हलदेगोद्वय पद्यराग उत्तम, मन्थदेगत्त मन्थम और तुम्बरदेगोद्वय पद्यराग ही निकट माना गया है ।

युक्तिरूपतरुमें लिखा है—रावणगङ्गा नामक स्थान-में जो कुरुविन्द उत्पन्नता है वह खूब लाल और परि-ष्कार प्रभायुक्त होता है । पद्यरथीयमें एक और प्रकारका पद्यराग मिलता है जो रावणगङ्गाजात पद्यरागके जैसे वर्णयुक्त नहीं होता और उसका मुख्य भी उसमें कम है । इसी प्रकार स्फटिकाकार तुम्बरवर्णोद्वय पद्यराग भी कम दामका है, किन्तु देवनेमें सुन्दर होता है ।

कोन पद्यराग उत्कृष्ट जातिका है और कोन विजा-ताय है, इसका निर्णय करनेकी व्यवस्था युक्तिरूपतरुमें इस प्रकार लिखी है—

कमोटी पर विननेमें जिस ती गोभा वदनी पद्य परि-माण भी नष्ट नहीं होता, वही जात्यपद्यराग है । जिसमें ऐसा गुण नहीं है उसे विजातीय ममकना चाहिये । औरक ही चाहे मणिख, स्वजातीय दो पद्यरागकी सटा कर रखनेसे पद्यका एक दूसरेमें विननेसे पटि कीट टाग न पड़े, तो उसका जातिपद्यराग जानना चाहिये । फिर भी, जगमें छोटे छोटे विन्दु ही, जो देवनेमें उतना चमकोला न हो, मन्थसे जिसकी दोमि कम ही जाती हो, उगनामें धारण करनेमें जिसके पार्श्वमें कानी प्रामां दिग्वादे पहतो ही वही विजाति पद्यराग है । इनके पलाया दो मणि ले कर वजन करनेमें जिसका वजन भारी होगा वह उत्तम और जिसका कम होगा वह निकट पद्यराग ममका जाता है ।

एतद्वय रत्नशास्त्रविद् पद्यरागमें ८ प्रकारके दीप, ४ प्रकारके गुण और १६ प्रकारकी छायाके विषयका वर्णन कर गये हैं ।

देखनेमें पद्यरागकी तरहका, ऐसा विजातीय पद्य-राग पांच प्रकारका है—कलपुरोद्भव, सि'हलोद्य, तुम्बोद्य, सुन्नलोद्य और व्यावर्जक । कलपुरोद्भवके लपर सुपके जंसा टाग रहता है, तुम्बरम कुङ्कुम



पद्मप्रम ( सं० पु० ) पद्मप्रमयेव प्रभा यस्य । चतुर्विंशति पद्यैः प्रसिद्धं तस्य यद्यथा पद्यैः ।

पद्मप्रम—१ एक पद्यैः । इन्दुनि सुनिमुत्तचरित्र नामक एक पद्य रचा है । यद्वाचताकालमें १२८४ मध्य-  
(७) इतने गिण्य पद्मप्रमभूरिने इनको सहायता की थी । तिनकाधार्यने तत्कृत पावायकनिर्गुणिको मधु-  
हृत्तिं जीवभागमें हम विषयका उत्प्रेषण किया है । सुनि-  
मुत्तचरित्रके जीवभागमें यत्नकारने जो निज मुद्रपरम्परा-  
का परिचय दिया है, यद्य ३० प्रकार है—चन्द्रवंशमें १  
वर्द्धमान, २ जिनेश्वर शोर बुडिमागर, ३ जिनचन्द्र-  
पमयदेव, ४ प्रमथ, ५ देवभद्र, ६ देवानन्द, ७ देव-  
प्रम, विबुधप्रम शोर पद्मप्रम ।

पद्मप्रमनाथ—जैनोंके इठें तीर्थद्वार । ये कौशाभ्यो नगरमें श्रीधाराजके शोरम शोर सुभीमाके गर्भमें कार्तिकेय  
कृष्ण हाटगो विज्ञानचक्र कथ्यात्मनमें उत्पन्न हुए थे ।  
इन्होंने सोमदेवानलयमें दो दिन पाषाण करके कार्तिकेय  
तपोदगोको दोषा शोर मनेतगिबवर पर पप्रहायण  
कृष्ण एकाटगोको मोक्षनाम किया था । इनका शरीर  
रत्नवर्ण, शरीरमान २५० धनु, प्रायुर्मान ३० लाख  
पूर्व था शोर शरीरमें पद्मका चिह्न प्रोभता था । जैन के  
सबसे पद्मपुराणमें इनका चरित्र विस्तृतभावमें वर्णित  
है । जैन देखो ।

पद्मप्रमपण्डित—एक जैन ग्रन्थकार । धर्मघोषके गिण्य  
शोर प्रभुग्रन्थिर्धं गुरु ।

पद्मप्रिया ( सं० स्त्री० ) पद्मानि प्रियाणि यस्याः । १ जरातु  
काकसुनिपत्नी मनसादेवो । २ गायत्रीरूप महादेवो ।

पद्मप्रथ ( सं० पु० ) पद्मप्रथेय स्यात् रचना यस्य । १  
चित्तकाशत्रिगोप, एक प्रकारका चित्तकाशत्रिगोपमें  
चरित्रको ऐसे क्रममें लिखते हैं जिसमें पद्म प्रथ या  
कमलका वाकार धन जाता है । इसका उदाहरण  
इस प्रकार लिखा है—

“शरमा सुवमा नाक क्वा मार वपुतमा ।  
सात पूरैतमा शवा सा बामो मेरु मा रमा ॥”

पद्मप्रभु ( सं० पु० ) पद्मप्रभुय कमलस्य वभुः । १ सुयं ।  
पद्मेन वषट्ते कृष्णतंसो निगार्था मधुनीमात्, वध-  
वत् । २ भ्रमर, मोर ।

पद्मभाम ( सं० पु० ) विष्णु ।

पद्मभू ( सं० पु० ) पद्मं विष्णुनामिभवकमलं भूत्सुवति  
स्यात् यमत्, यदा पद्मादभवतोति भू-  
क्तिप् । मद्रा । मद्रा विष्णुके नामिकमनमें उत्पन्न हुए हैं, इन्हीं इनका  
नाम पद्मभू पड़ा है । भागवतमें इनका उत्पत्ति-विवरण  
इस प्रकार लिखा है,—

“राशेरेवा भूतानामारवा, यः पुरवो परः ।

म एवाशीरिदं विष्वक्स्वरावेऽनुभ किं चन न

तस्य नामे, सगमकं पद्मकेनो हिरण्मः ।

तस्मिन् ब्रह्मे महाप्राज्ञ स्वयम्भुस्त्वप्रातना ॥

(भाग० १।१।८-८)

परापर जगतके कर्त्ता प्रधान पुरुष काका ही एक-  
मात्र थे, कल्पान्तमें शोर दूसरा कुल भी न था । उनके  
नामिकमनमें स्वयम्भुस्रष्टाको उत्पत्ति हुई ।

पद्ममय ( सं० स्त्री० ) पद्म मय रूपे मयत् । पद्ममयुक्त, पद्म-  
निर्मित ।

पद्ममालिनो ( सं० स्त्री० ) १ मद्रा । ( पु० ) २ पद्म-  
मानाधारो राक्षसभेद ।

पद्ममाली ( सं० पु० ) राक्षसका एक नाम ।

पद्ममिहिर ( सं० पु० ) काश्मीरदेशके एक पुरातन इति-  
हास प्रेषिता ।

पद्ममुख ( सं० स्त्री० ) पद्मनिव मुखं यस्य । १ कमल  
मध्य मुखयुक्त, कमलके जैसा निहका मुख थी । ( पु० )  
२ दुरालभा, धमामा नामका कटोना पोधा ।

पद्ममुखो ( सं० स्त्री० ) १ कण्ठकारी, भटकटैया । २  
दुरालभा, धमामा ।

पद्मसुद्रा ( सं० स्त्री० ) तन्वनारोक्त सुद्रात्रिगोप, तद्विको-  
को पूजामें एक सुद्रा जिसका दोनों हृदयनिर्घोको नामने  
करके उगलिया बोधे रखते हैं शोर पण्डिते मिका  
देते हैं ।

पद्ममेह—एक प्रसिद्ध जैन पण्डित, पद्मसुन्दरके गुरु शोर  
पानन्दमेहके गिण्य । इन्होंने १६१५ मध्यमें रायमहा-  
भ्युदय नामक महाकाव्यकी रचना की ।

पद्मयोगि ( सं० पु० ) पद्मं विष्णुनामिभवकमलं योनिदत्-  
पत्तस्थानं यस्य । १ मद्रा । २ बुद्धका एक नाम ।

पद्मरज ( सं० पु० ) पद्मरेश्वर, कमलका रेश्वर ।

पद्यरथ ( सं० पु० ) राजपुत्रमैद ।

पद्यराम ( सं० पु० ) पद्यन्विय रागो यस्य । रत्नवर्ण मणिविभ्रिय ।

पद्यरथी लाल बुझीको हो पद्यराम कहते हैं । बुझी हस्तमें बिस्टट विवरण देखो । 'पद्यमिमत' नाम रत्नगोष्ठ- में लिखा है—

वे लोच्यकी भलाईके लिए पुराकालमें जब इन्द्रने पद्यरथको मारना चाहा, तब उन्होंने जिसमें उसका बिन्दुमात्र भी रत्न पृष्ठा पर गिरने न पावे, इस स्थानमें 'स्य' देवको धारण किया । किन्तु दशाननको देख कर सूर्य डर गये और वह रत्न विचित्र हो कर मि'हलदेग- में राक्षस गङ्गानदीमें पतित हुआ । रातको उस नदीके दोनों किनारे तथा मध्यमें वृद्ध रुधिर खद्योतान्वित वृक्षन लगा । उद्योसे एक जातीय तीन प्रकारके पद्य- रागकी उत्पत्ति हुई ।

वराहमिहिरकी हृद्यत्संहिताके मतसे—सौगन्धिक, कुरुविन्द और स्फटिकसे पद्यरागमणिको उत्पत्ति हुई है । इनमेंसे सौगन्धिकजात पद्यरागःश्रमर, पञ्चन, पद्य और लभुरसके जेसा दोमियाली ; कुरुविन्दजात पद्यरागः बहुवर्णयुक्त मन्द्युतिमम्बधर धातुबिद्ध तत्रः स्फटिक जात पद्यराग विविध वर्णयुक्त व्युत्तमान् और विशद होता है ।

पद्यरथके मतसे पद्यराग एक जातिका होने पर भी वर्णभेदक अनुसार यह तीन प्रकारका है, सुगन्धि, कुरुविन्द और पद्यराग । पद्यराग देखनेमें पद्यरूपके जेसा खद्योतकी तरह प्रमायुक्त, कोकिल, सारन या 'चकीर पक्षीके चमूके जेसा और सतवर्णयुक्त होता है । सौग- न्धिक देखनेमें ईयत् नील, गाढ़ रत्नवर्ण, माधारस, विडम्बण और कुङ्कुमके जेसा प्रामायुक्त है । कुरुविन्द देखनेमें शशाङ्क, लोध, सिन्दूर, गुग्गा, बन्धूक और किंशुकके जेसा प्रतिष्ठ और पोतवर्णयुक्त होता है ।

पद्यरथके मतसे मि'हल, कालपुर, पद्य और तुम्बर नामक स्थानमें पद्यराग पाया जाता है । इनमेंसे मि'हल- में पतिरक्षवर्ण, कालपुरमें पोतवर्ण, पद्यमें ताम्रभा- वृत्तवर्ण और तुम्बुरमें हरित्वाका तरह रत्न पद्यराग मिलता है ।

मगान्तरमे—मि'हलमें जो रत्नवर्णका पद्यराग मिलता है वही उत्तम पद्यराग है । जानपुरीयत्र योन- वर्ण जो रत्नवर्ण कहते हैं । तुम्बुरमें जो नील-वाया- वत् मणि पाई जाती है, यही नीलमन्थि है । इनमेंसे मि'हलदेशोद्भव पद्यराग उत्तम, मन्थदेशज मन्थम घोर तुम्बुरदेशोद्भव पद्यराग ही निष्ठत माना गया है ।

युक्तिकल्पतरुमें लिखा है—रावणगङ्गा नामक स्थान- में जो कुरुविन्द उपजता है वह सूक्ष्माल और परि- प्कार प्रमायुक्त होता है । पद्यदेशमें एक घोर प्रकारका पद्यराग मिलता है जो रावणगङ्गाजात पद्यरागके जेना वर्णयुक्त नहीं होता । घोर उत्तमका मुख्य भी उत्तममे कम है । इसी प्रकार स्फटिकाकार तुम्बुरवर्णोद्भव पद्यराग भी कम दामका है, किन्तु देखनेमें सुन्दर होता है ।

कौन पद्यराग स्फटिक जातिका है घोर कौन विज्ञा- ताया है, इसका निश्चय करनेको व्यवस्था युक्तिकल्पतरुमें इस प्रकार लिखी है—

कमोटी पर विननेमें जिस ती गोभा वृद्धी पद्यर परि- मण भी नष्ट नहीं होता, वही ज्ञान्यपद्यराग है । जिन्- में ऐसा गुण नहीं है उसे विज्ञातोय ममप्रका चाहिये । धीरक हो चाहे माणिक्य, स्वजातोय दो पद्यरागकी सटा कर रखनेमें पद्यरा ए । दूरमें विननेसे यदि कोई टाग न पड़े, तो उसका जातिपद्यराग जानना चाहिए । फिर भी, जगमें छोटे छोटे बिन्दु हों, जो देखनेमें सतना चमकाला न हो, मन्थनेमें जिसका दोमि कम हो जाती हो, उगलानेमें धारण करनेमें जिसमें पार्श्वमें काली चामा दिखाई पड़ता हो वही विज्ञाति पद्यराग है । इसके चलाया दो मणि ले कर वजन करनेमें जिसका वजन भारी होगा, यह उत्तम और जिसका कम होगा यह निष्ठत पद्यराग ममभा जाता है ।

एनाइव रत्नगोष्ठविन्दु पद्यरागमें ८ प्रकारके दीय, ४ प्रकारके गुण और १५ प्रकारकी क्षयाके विषयका वर्णन कर गये हैं ।

देगनेमें पद्यरागको तरहका, ऐसा विज्ञातोय पद्य- राग पांच प्रकारका है—कनभुरोद्भव, मि'हलोय, तुम्बुरीय, सुक्तनातोय और आर्षावर्ण । कनभुरोद्भव- के कपर रूपके जेसा टाग रहता है, सुब्ध रम

नाम्नमाय चौर सिन्धोत्तमं कालो चाभा मञ्जित होती है; इसी प्रकार सुरमाला चौर शोचिर्णिर्जर्मो यो जाय-  
बोधक विग्रह देखा जाता है। प्रथी और मागिनय देखो।  
पद्मरागमय (मं० वि०) पद्मरागमयत्। पद्मरागविगिष्ट।  
पद्मराज (मं० पु०) राजभेट, एक राजाका नाम।  
पद्मराजगवि—ज्ञाननिर्गणविधं गुरु चौर पुष्ट्यमागरकी  
गिण्य। इन्होंने १६६० मन्वत्तमं गौतमकुलकठसिक्की  
रचना की।

पद्मरेखा (मं० स्त्री०) पद्माकारा रेखा। इन्द्रास्वित पद्माकार  
रेखाभेट, सामुद्रिकके अनुसार पृथिवीको एक प्रकार-  
को प्राकृतिक रेखा जो बहुत भाष्यमान् होनेका लक्षण  
मानी जाती है।

पद्मरेण (मं० पु०) पद्मरेणर।

पद्मलाब्धन (मं० पु०) पद्मं विण्य कमलं वा लाब्धनं  
यस्य। १ ब्रह्मा। २ सूर्य। ३ कुबेर। ४ नृप ५ बुध।  
(स्त्री०) ६ तारा। ७ नक्षत्री। ८ सरस्वती। (त्रि०) ९ पद्म-  
रेखायुक्त।

पद्मसेवा (मं० स्त्री०) काश्मीरराजकन्याभेट।

पद्मयत् (मं० त्रि०) पद्मं विद्यतेऽस्य, पद्म-मत्पु, मस्य व।  
१ पद्मयुक्त। (पु०) २ स्थलकमलिने, गीटा।

पद्मवर्ण (मं० पु०) पुराणानुसार यदुके एक पुत्रका  
नाम।

पद्मवर्षक (मं० स्त्री०) पद्मस्यैव वर्णा यस्य रूप। १  
पुष्करमूल। २ कमलतुल्य वर्णयुक्त। ३ पद्मकाण्ड।

पद्मवामा (मं० स्त्री०) पद्मे वामो यमगाः। पद्मालया  
लक्ष्मी।

पद्मविजय—एक प्रसिद्ध जैनग्रन्थ। ये योगविजयगणिक  
मतीयं ये। इन्होंने ज्ञानविन्दु मकावकी रचना की है।

पद्मयोज (मं० स्त्री०) पद्ममय योज। कमलबीज, कमल-  
महा। प्रशंस—पद्ममाल, गाली इय, कन्दनो, गिण्डा,  
क्रोश्वादी, क्रोश्वा, यामा, पद्मयकंटी। गुण—कटु,  
स्वादु, पिक्त, हृदि, टाड चौर रक्तोपनाशक, पाचन  
तथा हृदिकारक।

भावमनागम मन्त्रे इमहा गुण—हिम, स्वादु,  
स पाय, तिक्त, गुरु, त्रिदोष, बसन्त, हृष चौर गर्भ-  
संस्थापक।

पद्मवीर्याम (मं० स्त्री०) पद्मयोजय चामा इव चामा  
यन्त्र। मय-बजन, मपाना।

पद्मपुल (मं० स्त्री०) पद्ममकाठ।

पद्मपुत्रभविक्कामिन्—मात्री बुधभेट।

पद्मपुष्ट (मं० पु०) १ समाधिभेट, एक प्रभाको  
समाधि। २ प्राचीनकालमें युद्धके समय किमो वसु  
या वरिष्ठी रक्षाके लिये सेनाको रणमेंको एक विग्रह  
दियेति। इसमें सारी सेना कमलके पाकारको हो  
जाती थी।

पद्मपयितो (मं० स्त्री०) जलचर पक्षिभेट, पानीमें  
रहनेवाली एक विडिया।

पद्मगामी—बम्बई प्रदेशवामी गाली जातिको एक शाखा।  
गाली देखो।

पद्मशो (मं० पु०) एक शोधिसत्त्वका नाम।

पद्मपण्ड (मं० स्त्री०) पद्ममसुष्ट, कमलका टेर।

पद्मसमानन (मं० पु०) पद्मसमं चामनं यस्य। १  
ब्रह्मा। (त्रि०) २ जिसके पद्मसुवय चामन है।

पद्मसम्भव (मं० पु०) पद्मं विष्णु नामिकमलं सन्भव  
वराहस्यदानं यस्य। १ ब्रह्मा। २ एक विषयात  
बोध पंडित।

पद्मसुन्दर—एक विख्यात जैनपण्डित। ये पद्मसुन्दरके  
ग्रन्थ चौर चामन्दसुन्दरके प्रणिष्य थे। हर्षकीर्तिक  
धनुषाठमें जाना जाता है, कि पद्मसुन्दर तपागच्छके  
नागपुराण, शाश्वामुक्त थे। इन्होंने दिक्कोशर चक्रवरकी  
भाषा में एक विषयात पण्डितको पराम्ति किया था। इस  
पर मन्त्राटने प्रसन्न हो कर इन्हें एक ग्राम, वन चौर  
सुखामन पारितोषिकमें दिये थे। इन्होंने संस्कृत भाषा-  
में १६११ मन्वत्तको 'शयमन्त्राभ्युदय महाकाव्य' चौर  
१६२२ मन्वत्तकी 'पाशनायकाव्य' तथा प्राकृतिभाषा में  
'जम्बूद्वीपामिकयागम'की रचना की।

पद्मसरस् (मं० स्त्री०) काश्मीररव्य ऊदभेट।

पद्मसागरगवि—एक जैनाचार्य, विमलसागरगविके शिष्य।  
इन्होंने १६८० मन्वत्तमें उत्तराध्ययन हृदयवृत्तिकथाकी  
रचना की।

पद्मसुव (मं० स्त्री०) पद्मका सुव या मासा।

पद्मसरि—बुधहृदययुक्त एक जैनाचार्य। चामहृदित

विश्वकर्मस्त्रोको वानचन्द्रने जो टोका रचो थी, पद्म-  
मरिने उभोका संगोचन किया था।

पद्मस्तुपा ( मं० स्त्री० ) १ गङ्गा । २ दुर्गा ।

पद्मस्वात्मिका ( मं० पुं० ) पद्मचिह्नयुक्त स्तनिकभेद, यह  
स्तनिकचिह्न जिसमें कमल भी बना हो।

पद्मस्त ( मं० पुं० ) प्राचीन कालकी लम्बाई नापने की  
एक प्रकारकी माप।

पद्महाव ( मं० पुं० ) विशु,।

पद्मा ( सं० स्त्री० ) पद्मं वामस्थलत्वेनास्त्यऽस्त्राः, पद्मं  
पादिल टच, टाप, च। १ लक्ष्मी। २ लवङ्ग, लौंग। ३

पद्मवारिणोपना। ४ पद्मगो, मगमादेवो। मनसा देखो।

५ कञ्जिकावृक्ष, गेदेका वृक्ष। ६ अर्घत् माळमंद।

७ कुसुमभद्रप, कुसुमका फूल। ८ वृद्धयराज-कन्या।

कल्किदेवके माय इमका विवाह हुआ था। विशाङ्कके  
मुाद कल्किदेव नयविवाहितता स्त्रोक्त माय निंङलदापमें

रक्षने योग्य थी। कल्किपुराणके १०वें अध्यायमें इनका  
पूजा हुआ लिखा है। कल्कि देखो। ९ वृद्धदेयमें

प्रथित गङ्गाको पूर्वी शाला। ८वें शताब्दीमें रचित  
जेनीके हरेशंशमें यह पद्मगङ्गा-पूर्वनाद नामसे

वर्णित है। गङ्गा देखो। १० भार्दा शुद्धी एकादशी  
तिथि। ११ मृगश, कमलकी नाल। १२ मञ्जिष्ठा,

मञ्जीठ।

पद्माकर ( मं० पुं० ) पट.मस्य आकरः १ पद्मजनक  
जन्माग्य, सङ्गतानाथ या भोल जिममें कमल पंटा

होते हैं। पर्याय—तडाग, कासार, मरसो, मरसू,  
मरोगिनी, सरोवर, तडाक, तटाक, मरम, मर, सरक

२ हिन्दोई एक प्रसिद्ध कविता नाम।

पद्माकरदेव—नरपतिविजय नामक क्वातिःपन्थके रच-  
यिता।

पद्माका भट्ट—१ निव्याके सम्प्रदायके एक महन्त। ये  
कृष्णभट्ट गिष्य पौर अथवभट्टक गुप्त थे।

२ हिन्दोईके एक कवि। पाप बंदिः मुन्दलपण्डित  
नाथो माङ्गलभट्टक पुत्र थे। मं० १८३८म पापका जन्म

दिये। पुनः यहमें पाप जयपुर गये पौर यह मपादि  
जगत् मिङ्कके नाम जगदिनोट नामक ग्रन्थ बनाया।

इस ग्रन्थकी बना कर पापने जयपुरके राजासे बहुत  
धन पाया। वृद्धावस्थामें पापने गङ्गासेवन किया था।

उभो ममयका बनाया पापका गङ्गाबहरो नामक स्तुति-  
ग्रन्थ विशेष पाटरगोप है।

पद्माच ( मं० स्त्री० ) पद्मस्य पक्षोव, ममाने पद्म, ममा-  
मान्तः। १ पट.मवोज, कमलगङ्गा। पद्मे इव पद्म-

युगल-यत् प्रसिषो यस्य। २ पद्मनेत्र, कमलके समान  
आंख। ३ विशु,।

पद्माचल—भारतके पश्चिम उपकूलस्थित गोकर्णके निकट  
वर्ती एक पवित्र गिरि। यहाँ पद्मगिरीश्वर नामक

शिव पौर अभिरामो नामक उनको शक्ति का एक मन्दिर  
है। पद्माचलमाहात्म्यमें इसका पौराणिक आख्याय

वर्णित है।

पद्माट ( सं० पुं० ) पद्मं पद्मनाटय्यं षटति गच्छति षट-  
गती-षण् । १ चक्रमर्द, चक्रवङ्क। ( स्त्री० ) २

चक्रवङ्कके वोज। ३ महाभारतक गुड़।

पद्माधाय ( सं० पुं० ) यिषु,।

पद्मानन्द—पद्मानन्दमतकके रचयिता।

पद्मास्तर ( सं० स्त्री० ) पद्मपत्र, कमलके पत्ते।

पद्मालय ( सं० पुं० ) व्रज्जाल।

पद्मालया ( सं० स्त्री० ) पद्ममेव पानयो वासस्थानं  
यस्यः। १ लक्ष्मी। २ लवङ्ग। ३ गङ्गा।

पद्मावती ( सं० स्त्री० ) पद्म-पत्तय्यं-मत्पु, ममय यत्वं  
स प्रार्था दीव्यः। १ मगमादेवी। २ नदाविशेष,

पद्मानदी। ३ पद्मचारिणी, गेदेका वृक्ष। ४ प्रसिद्ध  
कवि जयदेवकी पत्नी। ५ पटना नगरका प्राचीन

नाम। ६ पद्मा नगरका प्राचीन नाम। ७ एक मातृक  
हल्दीका नाम। इसके प्रथम चरणमें १०, ८ पौर १४-

के विरामसे ३२ मात्राएँ होती हैं पौर पक्षमें दो गुण  
होते हैं। ८ जगतका प्रथिकी स्त्रीका नाम, लक्ष्मी।

९ पुराणाशुभार स्त्रोको एक पद्मराका नाम। १०  
शुभित्तिका एक रातोका नाम।

पद्मावती—१ पौराणिक जनपदभेदः विशु, मगमा पादि-  
पुराणोंमें लिखा है।

मन्नाग राज्य करेगा ।' यह पद्मराजो नगरी-करो  
 है। इसके उत्तरमें मगधुतिने मान्यो माधवने किया  
 है—'महा पाग पौर विभुजनेो वदतो है, जहां पद्मा-  
 मतोके उद्य मोधमन्द्रिराजनीको छुडा गगनपर्य करतो  
 है, वहां मधवको चञ्चल तरङ्गिणो प्रवाहित होतो है।'  
 विन्ध्योन्मत्तानाके मध्यमें चवन्दिन सर्वामान नराधारका  
 मलय दुर्गके पार्श्वमें पात्र भी विभु, पारा, लज्ज वा  
 नूनगदी तथा महेश्वर या मधुमतो नामके स्तोत्रवतो  
 वदतो है; इसमें यह महजर्म अनुमान किया जाता  
 है, कि गद्यमान नरनरा भी पूर्वकालमें पद्मावती नाममें  
 प्रसिद्ध था।

२ सिंहनराजकन्या । चित्तोरके राजा रत्न-  
 सेन उमें ह्रा माये ये पौर उमें विवाह कर लिया  
 था। गजनी-निवासी दुर्मेने पारवी भाषामें 'किच्छा  
 पद्मावत्' नामके एक पद्यमें उक्त उपाख्यानकी प्रथम  
 वर्णना की है। गव गोविन्द मुंशीने १६५२ ई०में 'तुज-  
 यत् उलय' नाममें उक्त उपाख्यानको पारसी भाषामें  
 प्रकाशित किया। उक्त पद्मावतीका उपाख्यान में कर  
 उत्कलने राजकवि उपेन्द्रभङ्गने तथा प्रायः २५० वर्ष  
 पहले पाराकानके प्रसिद्ध सुसम्मान कवि चान्दायनने  
 बङ्गालमें पद्मावतीकाव्यकी रचना की।

चित्तोरका पद्मिनी-उपाख्यान ही विज्ञतभावमें इस  
 पद्मावती काव्यमें वर्णित है। चित्तोरसाधर पद्मावतीके  
 कवि द्वारा रचनेन नाममें विज्ञत है। उपाख्यान विज्ञत  
 होने पर भी इस काव्यके शिवमें पलाउद्दानका पराजय-  
 प्रमद् है। कवि चान्दायनने पाराकानराजके समान्य  
 मागन ठाकुरके पादेमें पद्मावतीकी रचना की। यह  
 पद्य यद्यपि सुसम्मान कविमें बनाया गया है पौर उम-  
 में सुमन्मानी भाषे पद्यत्र है, ताभी हिन्दू समाजका  
 पाषाण-व्यपहार पौर प्रकृत पारिवारिक चित्र चञ्चल  
 सुन्दर प्रद्वित हुआ है। श्रय पदनेमें पद्यधारकी संस्कृता  
 भिन्नताका यद्वट परिचय पाया जाता है।

पद्मावती-प्रथ ( स० पु० ) पद्म-वत्याः प्रियः स्वामी । १  
 लरत्नकाव्ये मुनि । २ श्रयदेव ।

पद्मासन ( स० स्त्री० ) पद्मसिद्ध उद्गाकारेण यद्मं ध्यात्वा । १  
 योगमनविधये । गारसधर्मितामें इस पद्मासनका विषय

इस प्रकार किया है—याम उद्गके उपर दक्षिण उद्ग  
 रसमें है पौर प्लातो पर पद्म उद्ग कर नामिकाके  
 भयभागीको दे नि है। यह पद्मासन व्याधनायक है।

२ पुलाके नामस धातुवय पद्म-रर पासन । पद्म  
 विभु नामिकवत्तं पासनं यत्प । १ ब्रह्म, कथनासन ।  
 ४ शिव । ५ सूर्य । ६ प्लाके माय प्रमद् करनिका एक  
 पासन ।

पद्मासन-उ ( स० पु० ) एक प्रकारका उं ड जो पालपी  
 मार कर पार गुटन जनीन पर टेक कर किया जाता  
 है। इसमें उभ मधता है पौर गुटने मजबुत होते हैं।

पद्म-घा ( स० स्त्री० ) पद्मस्य घाता माशया यस्याः । १  
 पद्मवर्षिणोपता, गेदा । २ लक्ष्य, लीग ।

पद्मिन् ( स० पु० ) पद्माति सन्वत्सिमन्, पुष्करादित्वा-  
 दिन । १ पद्मशुद्धेय । २ पद्मधारा विण्डु । विष्णु शब्द  
 चक्रगटापद्मधारा है इसीसे उद्म पद्मिन् कहते हैं। (वि०)  
 ३ पद्मधारिभाव । ४ पद्मसमूह ।

पादना ( स० स्त्री० ) पादन् स्त्रिया डोप । १ पद्मलता ।  
 पद्यो—दलिनो, विभवतो, नृपालिनो, कमलिनो, पद्म-  
 जिना, सराजिनो, नालाकना, गालाकिगो, पारविन्दनी,  
 धम्भाजिनो, पुष्करिणो, जम्बानिनो, पलिनो ।

इसका गुण—मधुर, तिक्त, कषाय, मातल, पिश,  
 किमदाय, शर्म, श्रम पार सन्तापनायक है। पद्मस्य मय  
 इव मयो विद्यते गरारे वस्याः । २ कोकशाखके समु-  
 सां शिथलाका पार आतयासमें सर्वोत्तम जाति।  
 कहते हैं, कि इस जातियों का शयन शोमलाङ्गी,  
 सुगन्धा, रूपवता पौर पतिव्रता होती है। ३ सरावद,  
 तालाह । ४ पद्म, रस । ५ नृपाल, कमलकी नाल ।  
 ६ रत्नगो, माटा धार्यो ।

पद्मिनी—भोमसेनका प्रथम महिषा ( पटरागी ) पौर  
 इमारगङ्गाके कन्या । १२०५ ई०में लक्ष्मणसिंह मेवा-  
 कि सिंहासन पर बैठे। नाबालिग होनेके कारण  
 उनके चचा भामसिंह राजकाय की देखभाल करते थे।  
 इसी भामसिंहने भारतप्रसिद्ध पद्मिनीका पाचिपक्ष  
 किया था।

उपमें सुसम्मान देना राजा बहुत काम देवी गई है।  
 इस सोन्दर्यमयी पलाकवाभावा रम्योको मलय कर

देशीय-घोर विदेशीय किन्ने ही कथि काय्य निवृत्त कर प्रतिष्ठा लाभ कर गए हैं। पद्मश्रवणी देखो। राज-पूतभाय्यण पात्र भो उनकी राजपूत जननी कह कर सम्बोधन करते- 'धो! उनकी कार्ति गाया गा ना कर सर्वमाहायण भो मुख किया करते हैं।

पद्मिनीको रूप ही राजपूतजातिके भय का कारण था। सुनतान पलाउद्दानने पद्मिनीको पानिको आगाने ही चित्तोरमें घेरा डाला था। बहुत दिन तक घेरे रहनेके बाद उन्होंने यह प्रचार कर दिया कि, 'पद्मिनीका पा लेनेसे हो वे भारतवर्ष छोड़ कर चले जायेंगे।' परन्तु चित्तोरके राजपूतोंने यह सुन कर प्रतिष्ठा को जि जव तक एक भी राजपूत ज्ञाता जागता रहैगा, तब तक कोई भी सुमन्मान चित्तोरको रानो पर हाथ नहीं रख सकता। जब पलाउद्दानने देखा, कि उनका उद्देश्य सिद्ध करनेका नहीं है, तब उन्होंने भोमसिंहको कहला भेजा, 'मैं उस अनुपमा सुन्दरीको प्रतिष्ठायाकी सिर्फ एक माग दोग्यमें देव कर देय सोट जाऊंगा।' भोमसिंह इस प्रस्ताव पर सहमत हो गये। धूर्त पलाउद्दानने कुछ मना ले कर चित्तोरमें प्रवेश किया। भोमसेनने प्रतिथिक सत्कारमें एक भो कपूर उठा-न रखा। यहाँ तक कि वे पलाउद्दानके धिटाई-कालमें उनके साथ दुर्ग तक आये थे। धूर्त पलाउद्दानने चिकनी चुपड़ा बार्निमें राजपूतोंको लुभा लिया। भोमसेन पलाउद्दानके साथ गिटालाप कर छो रहे थे, कि इतनेमें एक दल समस्त यवनसेना गुप्त स्थानसे निकल कर एकाएक भोमसिंह पर टूट पड़ा और उन्हें बंद कर लिया। पलाउद्दानने यह घोषणा कर दी, कि जब तक पद्मिनी न मिलेगा तब तक भोमसिंह इसका नहीं छोड़ सकता।

इस दास्य मन्दादकी सुन कर चित्तोरमें सतयवनी मच गई। बात सुनिमता पद्मिनीने पतिका उदारके लिए एक मई तरकीब टूट निकाली। उन्होंने पलाउद्दानको कहला भेजा, 'इस आत्मभ्रमण करनेका तैयार है, लेकिन इसके पहले आपकी मयराध उठा लेना पड़ेगा। हमारा सहयोग्य पापके गिविर तक हमारे साथ आना चाहते हैं, जिससे उनकी मर्यादाभ को हानि न पड़े, इसका भी आपकी यत्नोवस्त

करना होगा। हमारा जो चिरमद्दिनो है ये भी हमारे साथ दिवो तक जामि हो तैयार हैं। इन सब भद्रमहि-साधोंको मर्यादा घोर सम्मानरक्षामें जिसमें कुछ छूट न हो तथा जिसमें कोई इन सब पुरमाहनापात्रके निकटवर्ती हो कर पलाउद्दानके विधिपर न करे, इनका भी आपका उचित प्रबन्ध करना होगा और अन्तिम विटारि लेनेके लिये आपकी भोमसेनके साथ हमारा मुलाकात कराना होगी।' पलाउद्दान पद्मिनीको उक्त प्रस्तावों पर सहमत हो गये।

पाँच निदिष्ट दिनमें सान भो भावरणयुक्त गिविका मंगारे गये। जुने हुए मात सो समस्त राजपूत वीर उन गिविकाप्रीति जा बैठे। पाश्चादित गिविकाएँ धीरे धीरे यवनगिविरके अन्धकार पड़्यो। पाध घण्टे-के लिए भोमसेनको प्राणप्रियतमामें मिलनेका आदेश हुआ। पाशा पाते ही भोमसेन यवनगिविरमें रानासे मुलाकात करन आये। यहाँ पहुँचने ही उनके कुछ मनापातपाने बहुत छिप कर उन्हें गिविकामें बिठा लिया और नगरको धोर यात्रा कर दो। पद्मिनीको अन्धकारों अन्तिम विटारि ले कर सोट रहो है, ऐसा समझ यवनतंत्रिसे कोई भी कुछ न भेरा। जब पाध घण्टा बीत गया और भोमसेन नहीं लोटे, तब पलाउद्दान प्राणवचुला हो उठे। पथ वे जरा भी ठहर न सके और अपने घोडापोंको दृक्कम दे दिया कि ये सब गीविकाएँ जा अभी गिविरके भीतर हैं उनका भावरण उतार डालो। किन्तु भावरण उतार लेने पर उन्होंने जा दिया उससे एक घोर ती नाराग्रने-घोर दूरी घोर मङ्कलधने पा कर उनके हृदयमें त्याग लिया। गीविका-ने निकल कर राजपूत धारणय यवनों पर टूट पड़े। दानो दर्शन घनवार युद्ध हुआ। राजपूतोंके मध्य जब तक एक भा जाता रहा, तब तब उन्होंने सुसलमान मर्कटोंको पलाउद्दान राजपूतोंका ढोका करनेका सोचा न दिया। इस प्रकार पलाउद्दानका आगा पर पाना फिर गया।

इधर भोमसिंहन राक्षमें एक घोड़े पर मयराध की निरापदमें चित्तोर-दुर्गमें प्रवेश किया। पलाउद्दानने पा कर दुर्ग पर आधा घण्टा योरणय प्राणवचय दुर्ग का

पद्मिनीके चचा गोत्रने चौर स्वयं बारह वर्षके भनीजि  
गाठजने चामामान्य चौरता दिखनारं थी।

पठानके बार बार पाकमणमे की चित्तोर ध्वं-  
दाय होना गया। एक एक राजपूतवीर बहुसंख्यक  
गवनमिनाकी मार कर ममरगयो होतं गये। क्रमगः  
भीममिंदजी मालूम हो गय, कि ये सब प्राणदियतमा  
पद्मिनी चौर चिरसुवने चायाम चित्तोरनगरको रक्षा  
रिभो शानतमे नहीं कर सकते। सर्वेनि फिर स्वयं  
देख, कि चित्तोरकी पधितातोदेकी जिताना सुधातुर हो  
बारह राजपूतिका गोपित चापती हैं। तदनुसार एक एक  
उर खारक राजपूतोंने क्रमशुमिके लिए रणस्थलमें चाप्यो-  
त्सर्ग किया। यह भीममिंद फिर न रक मके। राज-  
पंशका विण्डमोव होनेको चागहामे भक्तमें ये ध्वं  
चागोत्सर्ग करनेको पयमर हुए। राजपूत महिनामण  
जगदयतका पनुग्राम करनेके निचे पयमर हुईं। राज-  
स्थानको प्रफुल्लकमलितो पद्मिनीने मदाके निचे पति-  
चरणको चूमती हुई ज्वलन्त चित्तारिं देह विमर्जम कर-  
के निर्मल मनोव्यथ चौर राजपूतकुल गौरवको रक्षा  
की। राजपूत-महिनाचोनि भी पद्मिनीका पनुमरण  
क्रिया। भीममिंद भी निधिया मनमे मकड़ी बैरिहृदय  
को विदोष कर चाओय स्वजनिके साथ पनग्याग्या पर  
सो रहें। चित्तोर चौरगुन्य हुआ चौर चनाउहोतने  
प्राय लगा। किन्तु त्रिम पद्मिनीके लिए प्रभाउहोन इतने  
दुर्मिमे लालायित थे, जित पद्मिनीके लिए त्रिनो सुग-  
वरायो हुईं, यह पद्मिनी चनाउहोतने हाय न लगी।  
जहाँ पद्मिनीने पपगा गयेर विमर्जम क्रिया था, सम  
स्थानकी चनाउहोतने जा कर देखा, कि सम समय भी  
तममाउहो गह्वरमे धुमराशि निकल रही थी। तमीमे  
यह गह्वर एक पवित स्थानमें गिना जा रहा है।

पद्मिनीकण्ठक ( मं० पु० ) पद्मिनीकण्ठक इव पाकति-  
त्रियने पद्य। सुदुरोगविमोच भावप्रशाममें लिखा है—  
त्रिम रोगमें गोलाकार पाण्डुवर्ष कण्डयुक्त भयघ्न पद्म-  
मानके कटिका तरह कण्ठक द्वारा पण्डित मण्डम  
उदित होता है, समे पद्मिनीकण्ठक कहते हैं। इस रोग-  
में नोमके काटनें वमन चौर लोम द्वारा हृत पाक कर  
सधुके साथ उमका सेवन विधिय है। हृत्की प्रयुत

प्रधानो—गण्डयण ७४ मेर। कण्ठक म्मिषयस चौर  
पमनतामपय दोनो मिला कर ७१ मेर, मिश्रवतका  
कथ ७६ मेर। यद्यपियम इम हृत्का पाक कर द  
तोना परिमाणमें सेवन करतमे हो पद्मिनीकण्ठक रोग  
पाराम हो जाता है। ( भावप्र० सुरोग० )

सुदुर्लभ मतमे पद्मके कण्ठककी तरह गोलाकार  
चौर उमका मण्डम पाण्डुवर्ष, ऐसे वषकी पद्मिनीकण्ठक  
कहते हैं। यह वायु चौर कफ द्वारा उभयप होता है।  
पद्मिनीकान्त ( मं० पु० ) पद्मियाः कामाः सुयं ।  
पद्मिनीवधम ( मं० पु० ) पद्मियाः वधमः सुयं ।  
पद्मी ( वि० पु० ) १ पद्मयुक्तदेव। २ पद्मवागी, विष्णु। ३  
पद्मसमूह। ४ प्रोडिके पनुसार एक लोतका नाम। ५  
उक्त लोकीं रफनेवाने एक सुदृश नाम जिनका पयसार  
पभी इम मंभारमें होनेको है। ६ गज, छापी।

पद्मेश—एक हिन्दोः कवि। मन्वत् १८०३में इतका प्रया  
हुया था। इनको कविता सुन्दर चानी थी।

पद्मेशय ( मं० पु० ) पद्मो गेते गो-... (अभिप्राये सेते।  
वा शरीर५, यमवाचयविरिचि वा शरीर८ इति पणुक् ।  
विष्णु।

पद्मीतम ( मं० पु० ) कुमुदपुष्पश्रव, कुसुम फूलका चिह्न।  
पद्मीस्त ( मं० पु० ) पद्माशुभार, यगंतः श्रेष्ठः। १ कुसुम,  
कुसुम। २ कुम, मवीम, कुसुमका भीष। ३ एग बुद्धका  
नाम।

पद्मीशरामज ( मं० पु० ) पद्मीशरस्य पत्यमः पुत्रः त्रिम-  
चक्रवर्तीविमोच।

पद्मीहव ( मं० पु० ) पद्मं स्रहव संपत्तिस्थानस्य। प्रह्ला।

पद्मीहवा ( मं० सा० ) पद्मीहव टाय। मनमादेवो।

पद्य ( मं० कौ० ) १ जातिविमोच (मण्डरि ३५१८)। पद्ये  
चरचमहंतीति पद्य-यत् । २ कविकवि, इमोः। ३ युक्ति-  
मधुके गद्यविन्याममें रचित कविता वा काव्य। तुलसी-  
दानके रामायण तथा महाभारत पादि पद्योकी जा  
भाषा है, यह गद्यमें हो लियो गई है। इस लोय त्रिम  
भाषामें हमीगा बोध-चान किया करते हैं, यह गद्य है।  
विमोच विमल गय हर्दरे देवी।

पाटनचपपर हत पटममे, एनी गय कहते हैं। किन्तु  
पाटनचपयुक्त हस्तमात्र समावित पटमविमोच पद्य  
कहताता है। कार देवी।

संस्कृत भाषामें विभिन्न छन्दोंमें पद्यादि लिखे जाते हैं। क्लासिकल लक्षण घोर वास्तुनिव्याप्त छन्द-छन्दों तथा माहित्यवर्षके विगोप रूपके लिखा है। वे दादि शब्दोंको भाषा पद्य वा गद्य है, किन्तु उसका छन्द घोर मात्रादि च्यन्द है। तत्परवर्ती पुराणयुगमें—राजयग्य यथा महाभारतके पद्ययुगमें—वेदकी भाषा विकृत हो कर वा सर्वाङ्गीयता लाभ कर काव्यरूप नूतन धारार देती गई थी। उम पाचीन समाज सिद्धिः मय जो सद यत्न लिखे हुए हैं, उन मभी शब्दोंकी रचना पद्य है। जेवन पाचीन सिद्धयुग ही कविः भावमें पद्यादि-की रचना करते थे सो नहीं। होमर, मॉरिल, घोभिद, एनकाइलम, सफोक्लिप, मिनटन खेनर यद्-पद्य पाटि सुदूरवाची पद्यत्व कविगण भी पद्य लिख कर जगतमें प्रसिद्ध हो गये हैं। इन मय पद्यादिमें लिखिय जाञ्चख रंग भाषा शब्दोपजन घोर स्वभाव-वर्णना दिवनेग चमकृत होना पडना है। Ballad, Drama, Epie, Lyric, Ode पादि कई प्रकारके पद्योंवा जन्म उन मय शब्दोंमें देखा जाना है।

पुराणादि रचे जाने पद्यके कानिटाव, नागवि मय भूति, वरकवि, महकवि, मांव, दण्डो, शूद्रक पिगाख-दत्त, चंमोहर, भटनारायण, योर्ध्व पादि ख्यातनामा कवियोंकी बनाई हुई कथितानको जगतमें प्रचलनीय घोर पद्यजगतका पाटग अन्त है। इनके पाट जयदेव गीतांमोका पाविर्भाव हुआ। उनके वनाये हुए गीत-गोविन्द नामक पद्यमें 'प्रलयययीधिजनै' 'ललितलज्जलत-परिमीलन' घोर 'खरगरलखण्डनम् मम मिरनि मुण्डनम्' पादि कविनाथ रमसाधुयमें जैमो है उमको तुलना महीं की जा मकतो। जण्डीदास, ज्ञानदास, गोविन्ददास, हण्टास कविराज, तरोत्तमदास पादि वैष्णव कवियोंके पाट मनोहर घोर प्रेम प्रकाशक हैं। चमणध वेवा कवियोंको पदेनहरी देवकी मनोरह दे, कि उनके रचित पद्यादिका पाठ करनेमें चलाकरण पुनरुत्त नत है। तत्मान कवियोंमें माइरुम मधुमदन दत्तने काव्य जगतमें नूतन परिचरने कि है। उक्त महात्माने 'सिधनाद-वध' तथा 'मिलीतमाधुमकाव्यमें मिरटन घोर होमर पादि यगोवय कवियोंके भाषपर पर

लिख कर नूतन म कमाया है। गीत, खीत्र पादि माधार-नः पद्य भाषामें लिखे जाते हैं। इनके पनावा मखनभाषणी कथा दिवविषय वरचना पद्यमें ही लिखी देवी जाता है।

पद्यकी मात्रादि घोर कन्दादिके विवरण, कवि, प. खानी धार यं श्याव कदि-कृत पद्यादिके उदाहरण उन्को मय शब्दोंमें तथा शब्दार्थों की शोधनामें विगोपदामे प्रयोगित है।

छन्दोमञ्जरीमें पद्यकः सवण रम प्रकार लिखा है -  
 "पद्यं ननुपदी तद्य हृतं जतिरिति द्विवा ।  
 ह्यनःउरनहयानं कतिपया हवा भवेत् ॥"  
 ( छन्दोमं )

चार पराविगित वाच्य पद्य है। यह पद्य दो प्रकार का है जति घोर हृत। जिनमें पद्यर ममान हैं उमे हृत घोर की मात्रानुसार होता है उमे जति कहते हैं। ममहृत, चहेमम घोर विषयहृतके मेटमें हृत भी तोन प्रकारका है। जिनके चार पाट ममान हैं उमे ममहृत, जिनके प्रथम यो हृतोय पाट तथा द्वितीय घोर पद्युय पाट ममान है उमे चहेमम घोर जिनके चारपाट विभिन्न है उमे विषयहृत कहते हैं। कन्दोवय्य पदमात्र ही पद्य है।

४ गण्य। पद्य-यत् ( पदनसिद्द रत्न' वा ४।४।२० )  
 ५ नातिशुभक कदम, वर काचडु जो सूवा म हो।  
 ( पु० ) पद्युयं जातः पद्य-यत् । ६ गृह । गृहने वझाके पट में जस शरण किया है, इसीमें पद्य शब्दमें गृहका बोध होता है।

"मादनेदर-डावुनावीर पादुगावना हः ।  
 कक मरना यन् वैरनाः पद्युयं शरी वरनायक ह'  
 ( दशरतु० ३।१।१ )

पद्यय ( सं० वि० ) पद्य-शब्दके मयट । पद्यत्वका । पद्य ( सं० स्त्री० ) पद्य-शब्दका, पाट गीतविषयका यत्, तसः पद्येः पद्य-यत् । पद्यपद्ययः । पद्य-यत् । पद्य-यत् ।



द्वयं ( हि० पु० ) १ पाद । २ पाद । ३ मूलक, \* द्वयमेव ।

द्वयं ( सं० पु० ) पद्य रय रय गम्य । पदगाथी, पाद-  
चारो ।

द्वयं ( सं० पु० ) पद्ये गम्यनेरस्मिन्ननेन वा पद्य गतो  
( पदं निवृत्तमित्येति । अन् ३।१५३ ) इति निपातभागे  
निये । १ मूलक । २ रय । ३ पद्य ।

द्वयं ( सं० पु० ) पद्ये गम्यने गद्य पद्य-गतौ यमिप-  
( रयमिपरीति तच् ३।१२२ ) अन्वा, राद्य ।

पधरत्ना ( हि० क्लि० ) किमो बद्धे, प्रतिष्ठित या पूज्यता  
पामम ।

पधरत्ना ( हि० क्लो० ) १ पादर पूर्वक ने ज्ञाना । २  
किमोको पादरपूर्वक ने का कर बैठाने को क्रिया या  
भाग, पधरत्नेकी क्रिया ।

पधारता ( हि० क्लि० ) गमन करना, जाना, चला जाना ।  
२ वा पद्यं वा । ३ गमन, करना, चलना । ४ पादरपूर्वक  
बैठाना, प्रतिष्ठित करना । इम गद्यका प्रयोग केवल  
बद्धे वा प्रतिष्ठितके पाने पद्यवा ज्ञानके मन्व्यर्थमें पाद-  
रार्थ होता है ।

पधंग ( हि० पु० ) मधं, गीप ।

पध ( हि० पु० ) १ प्रतिष्ठा, महत्त्व, पदः । २ पायुके  
चार भागोंमें से एक । माधारणतः श्लोक पायुके चार  
भाग पद्यवा पद्यमायं मानते हैं, पद्यना धास्यान्या,  
दूसरो युवायन्ना, तानरो प्रोद्गावन्ना चोर चोया सहा-  
यन्ना ।

पधकटा ( हि० पु० ) बह मनुष्य जो खेतमें दूधर उधर  
पानी ले जाता या मोचता है ।

पधकपड़ा ( हि० पु० ) बह मोला कपड़ा जो शरीरके  
किमी धंग पर चोट लगने या कटने या क्षिप्तने पादि  
पर धाया जाता है ।

पधकाम ( हि० पु० ) पति पयाडे प्रकार पकाल ।

पधककड़ी ( हि० क्लो० ) पधकीवा देणो ।

पधकी ( हि० क्लो० ) बह छाटा चरम निममें प्रायः  
उध या टूटे हुए दानवामे श्लोक पानेके लिये पान  
कूटते हैं ।

पधकीवा ( हि० पु० ) एक प्रकारका जलपयो, जलकीवा ।  
पधपट ( हि० पु० ) लुनाकी बह मप्योनी धुनको प्रस  
पर जनेके मानने बुना हुआ कपड़ा फोला करता है ।  
पधगाथा ( हि० पु० ) पानोने भरा या मोचवा हुआ जिन ।  
पधगीटी ( हि० क्लो० ) मोतिगा गीतना ।

पधघट ( हि० पु० ) पानो भरने का घाट, बह घाट जरी-  
मे श्लोक पानो भरते हैं ।

पधघ ( हि० क्लो० ) परधंघ, धनुषकी छोरों ।

पधचकी ( हि० क्लो० ) एक प्रकारकी चकी जो पानोके  
शोरमें चलता है । नदी वा नहर पादिमें किनारे  
जहाँ पानो वा वेग कुछ पधित होता है वही जगह श्लोक  
कीई चकी या दूमा कल लगा देते हैं । उम चकी  
वा कलका मन्व्य एक वेने बद्धे चकारके गाय होता  
है जो बहने हुए जलमें प्रायः पाधा हुआ रहता है । जय  
बहायके कारण बह चकर घूमता है, तब उमके माप  
मन्व्य दरनेके पारय बह चकी या कल चलने लगता  
है । सभी काम पानोके बहायके द्वारा ही होता है ।  
पधचो ( हि० क्लो० ) गीटोके खेनेमें खेनेके लिये पगलो  
सकड़ो या गेडो ।

पधचोरा ( हि० पु० ) बह बरतन निमका घेट चोड़ा  
चोर सुंघ बहून कोटा हो ।

पधचुब्बा ( हि० पु० ) १ बह जो पानोमें गोता लगाता  
हो, गोताचोर । ये श्लोक प्रायः कूप या तालाबमें गोता  
लगा कर गीरो हुई चाज दूड़ने पद्यवा समुद्र पादिमें  
गोते लगा कर मोप मोर मोता पादि निवाकते हैं । २  
पानोमें गाता लगा कर महलियां पकड़नेवाला चिड़िया ।

३ जनागयीमें रहनेवाला एक प्रकारका क्षिप्त भूत  
इमके निपवमें श्लोकका विग्राम है, कि बह लहानेवाले  
मनुष्योंको पकड़ कर ह्वा देता है । ४ सुरगाथो ।

पधचुब्बा ( हि० क्लो० ) १ पानोमें चूबकी मार कर मक  
नियो पकड़नेवालो चिड़िया । २ पानोके चन्दर ह्वा कर  
चलनेवाली एक प्रकारको नाय । इम का पानिपकार पधो  
पालम पायाय देगामें हुआ है, मय मिरन । ३ सुरगाथो ।

पधपरा ( हि० क्लि० ) १ पुनः पद्य, रित या पकवित होना,  
पानो निकलनेके कारण किरने हरा हो जाता । २ राग-  
सुख होनेके उपरान्त स्वयय तथा हट पुट होना ।

पनपनाइट ( हि० स्त्री० ) 'पन' 'पन' चीनिका शब्द जो प्रायः वाष्प चलनेके कारण होता है ।

पनपाना ( हि० स्त्री० ) ऐसा कार्य करना जिससे कोई वस्तु पनवे ।

पनकर ( सं० पु० ) ज्योतिषोक्त संज्ञामुद्रा । केन्द्रस्थानके दूसरे दूसरे ग्रह पर्याप्त जगन्मि हितोद्य, घटम, पद्मम और एकादश स्थानका नाम पनकर है ।

पनशदा ( हि० पु० ) पानके लगे हुए कीड़े रखनेका छोटा डिब्बा ।

पनविज्ञिया ( हि० स्त्री० ) एक प्रकारका कोड़ा जो पानी में रहता है और डंक मारता है ।

पनबुडवा ( हि० पु० ) पनबुडा देखो ।

पनमता ( हि० पु० ) जैवज पानीमें उबाने हुए चावल, साधारण भात ।

पनभरो—कोलियोंका एक श्रेणी । इनका दूसरा नाम मलहारो और मलहार-उपासक है । दाक्षिणात्यके प्रत्येक ग्राममें इनका वास देखा जाता है । ये लोग ग्रामवासियोंको जल पहुँचाते और ग्राम परिहार करते हैं । पच्छिमपुरके निकट पनेक मलहारी कोलि ग्राम रचकका काम करते हैं । खान्देश और पद्मदनगरमें इस श्रेणीके कोलि सरदार हैं । पूर्णके दक्षिण मलहारी कोलि बंशपरम्परामें पुरन्दर, सिंहगढ़, तथा और राजगढ़ नामक पाषंय दुर्गको रखा करते पा रहे हैं ।

प्रवाद है, कि पूर्वकालमें दाक्षिणात्यके पश्चिम घाट-विशेषके अधीन ये लोग वास करते थे । घाटसी साग लड़ाधिपति रावणके नायक थे । वीरि गाबलियों ( एक जातिकी गोप ) ने घाटवियोंकी परास्त किया । उनका दमन करनेके लिये एक दल भेजा भेजा गई, किन्तु वे सबके सब गाबलियोंके हाथसे पच्छी तरह पराजित हुए । गाबलियोंका देग जनगुप्त दुर्ग म और पश्चात्परकर होनेके कारण कोई भी उनमें बिहद युद्ध करनेकी राजी न हुआ । पश्चिम सञ्चयगोपाल नामक एक महाराष्ट्रवर्षी ने कोजी कोकडा नामक एक खोलिकी सहायतामें गाबलियोंकी पच्छी तरह परास्त और ध्वंस किया । गाबलियोंका देग जनगुप्त ही पड़ा । इस जनगुप्त देगमें खेतीबारी करनेके लिय निजामराज्यके मध्य पश्चिम

महादेव पर्वतमें कुछ कोलि जाये गये । गाबलियोंमें जो बच रहे थे, वे क्षमगः कोलियोंके साथ मिल गये । इस समयमें कोलि लोग दक्षिण भारतमें प्रधान हो उठे थे १३४० ई०में महम्मद तुगलकके समयमें सिंहगढ़ एक कोलि सरदारके अधीन था । देवगिरि-घाटविके पक्षः पतनके बाद कोलियोंने जोहर प्रदेश पर अपना अधिकार जमा लिया । बादशाहों और पद्मदनगरके राजाओंके समय कोलि लोग स्वाधीन भावमें वास करते थे । इस समय पनभरियोंने पनेक उद्योग प्राप्त किये थे ।

१०वीं शताब्दीके मध्यभागमें कोलि लोग बागो हो गये । १६१६ ई०में पद्मदनगर-राज्य ध्वंसके बाद टोडरमल पद्मदनगरकी जमीन आपने गये । जब कोलियोंका लोभो मापो गई और तदनुसार राजेश्वर भो निर्धारित हुआ, तब वे सबके सब विगड़ गये । खेनि-नायक नामक एक कोलि सरदारने पश्चिम कालियोंकी सुगरीकें बख्त उतारजित किया, पीछे गिवाजोसे धार धार सुभलमानोंकी पराजित होती देख कोलि लोग विद्रोहो हो गये और यह विद्रोह बहा सुदिक्रमसे गालत किया गया । विद्रोहदमन हो जाने पर औरजिबने कोलियोंके प्रति दया दर्शायी थी । पेशवाधाके साध-पतरकालमें कालि लोग पावंतर दुर्ग काननेमें विशेष पट हो गये थे । १८वीं शताब्दीके मध्य भागमें और इटियायासकके प्रारम्भमें पद्मदनगरके पांचम तथा चौदहमे प्रदेशमें कोलि-डकेत भारो उत्पान मधाने थे । १८२० ई०में जब सिपाही-विद्रोह पारम्भ हुआ, उन समय कप्तान नटाल ( Captain Nuttal ) के अधीन ६०० पश्चायो कोलि सैन्यदलमें नियुक्त थे । ये लोग घाटो की दिनोंके सम्य सुबहियुक्त हो उठे । पेशवा वलनेमें इनका मुकाबला कोई नहीं कर सकता, गटारके समय इन्होंने पेशवाओंकी खासो सहायता पहुँचाई थी । १८६१ ई० तक ये लोग मैनामें मती रहे, पीछे १८६२ ई० कार्यसे छुटकारा दिया गया । कोई कोई कोलि पुनिसमें काम करता है, किन्तु अधिकतर कोलि खरके पचना गुजारा चलाते हैं ।

पनमड़िया ( हि० स्त्री० ) प  
धुने समय टटे तागाकी

पनरौरी—दक्षिण पश्चिमदिशा एक भाग को। वेदवेदान्त।  
१५०० १५०० १५०० १५०० १५०० १५०० १५०० १५०० १५०० १५००  
१५०० १५०० १५०० १५०० १५०० १५०० १५०० १५०० १५०० १५००

पनमन्त्र ( हि० पु० ) विष्णुं पानो मीचने वा मगानि-  
माना मन्त्र, यमकटा।

पनमोक्ष ( हि० पु० ) अर्जुने पनवार रंग बदलनेवाला  
यज्ञ पक्षी।

पनता ( हि० पु० ) कर्म पारिषिं मनी दूरे धीवलाको  
चोको को मानके पाकारको चोको है, टिकड़ा, पान।

पनवाङ्को ( हि० स्त्री० ) १ यज्ञ चित्त जितमें पान ैटा  
५, अरुणा। ( पु० ) २ यज्ञ जो पान बेचना उ,  
मनीको।

पनवासा ( हि० पु० ) १ पक्षीको बनी दूरे पतन जिन  
पर राज का लोग भोजन करते है। २ एक पतन भर  
भक्षण जो एक मनुष्यके धानि भरका हो। ३ एक  
प्रकारका मीन।

पनवासी ( हि० स्त्री० ) पनवाङ्को देखो।

पनवेन—कोलावा जिनके पनवेन एक प्रधान नगर।  
पहले यह माना जिनके पनवेन दा। यह यज्ञ १५००  
५८०० १५०० १५०० १५०० १५०० १५०० १५०० १५०० १५००  
याना कहरके १० कोम दक्षिण पूर्णमें अवस्थित है। पन-  
वेन्या दग हजारेमें ऊपर है। यहां मि० मित्र प्रकार  
मालीका वाणिज्य होता है। १५०० ई०में यूरोपीयवाण  
वर्षके अन्तमें वाणिज्यायें पाया करने थे। यहां सव-  
भजनी पद्मानत, डाकघर चादि है।

पनम ( मं० पु० ) पनाप्येन स्फुटमेन देवः मनुष्यादि-  
वैति, पन-यमच्, ( भराविषमिरीति। अन् १११० ) १  
पनपुत्रादिमेव, कटहलका पिट्ट। पर्याय—कटहलक  
महामन्त्र, पवित्र, पनपुत्रक, यज्ञ, कटहल, मू-  
कजट, पनुपक-ट, पूतकज, पनपुत्र, धम्पा-  
कटहलीकज, रमान, सुदहकज, पानत।

इसके फलका गुण—मधुर, सुपिकित्त, गुह, हृद्य,  
मन चो। वायुके हित, यम, दाहक, शोषणकारक, हृन्  
कारक, पानी, अतिदूरे है। योजन—२५०, अनाय,  
मधुर, मानस, गुह, क्षिपक। भाष्यप्रकाशक मन्त्रेण क-

पनपना गुण—शोषक, विष, विम, चोर, वायुनामक,  
मन्त्र, हृद्य, दाहक, शोषण, यम, हृन् कारक,  
पानी, अतिदूरे, यम चो। अयनामक। पनपुत्रक—  
पिट्टी, मानस, गुह, दाहक, यमकर, मधुर, गुह,  
मूत्रशोधक। पनपना मन्त्र—यमकर, वायुपत चो  
रफलागक। गुहम चो। पनपनापुत्रोवमं यमम विमि  
नियत है। कटहल देवो। २ रामदेवका एक अन्तर। ३  
विभीषणके चार मन्त्रियोंमें एक।

पनपविद्या ( हि० स्त्री० ) १ एक प्रकारका फूल। २ एक  
फूलका पुत्र।

पनपना-निशा ( मं० स्त्री० ) पनपं टोचत्वेन मुन्यं  
यत्नात्, तद्वत् कनमन्त्र्याः, तन्। कटहलकज, कट-  
हल।

पनपनायका ( मं० पु० ) कटहल।

पनपना ( हि० स्त्री० ) यह स्थान जहां पर राह चलनी-  
को पानी पिलाया जाता हो, पनपान, प्याज।

पनपना ( हि० पु० ) एक प्रकारका मन्त्र। जिनमें  
मान या पांच बलिधों साथ जलना है। इनमें वांमके  
एक लम्बे डंडे पर लोहेका एक पंजा बंधा रहता है  
जिसमें दोनो भागोंका कण्डूकपेट कर बार तीनमें  
पुपड़ कर मन्त्रको भाति प्रतात है।

पनपार ( हि० पु० ) पानामे किसी छात्रको पनपार  
करनेको क्रिया या भाव, भरतृ मि चादि।

पनपारी ( हि० पु० ) पंवापी देखा।

पनपान ( हि० स्त्री० ) १ यह स्थान जहां सर्वभाषारथ-  
का पानी पिलाया जाता है, पानत, २ पानाकी गह-  
राई नपने का उचरथ। ३ पानाका गहराई लावनेको  
क्रिया या भाव।

पनपिपा ( मं० स्त्री० ) पनमवत् कटहलमयाकृति-  
यै चैते यत्नः पनम-ठन् टाप। सुश्रीगीर्णमथ, मानकी  
मेनाका एक प्रकारकी फुला जो कटहलके काटिकी  
तरह लोहदार होती है।

पवित्रकटकः पनपनः पनपिका शोभते श्रीदका  
यय ग काने वरिष। पादि पनःपनः, कट, हृदिश,  
पवित्रकार इदमप्यन पनका यम कर पनप है।  
यद यं सर्वं सुमिमी पन आय, ता मन्त्रत

श्रद्धा-व्रणको तरह, चिकित्सा करे। (भाष्यप्रकाश)  
सृष्टतश्च मतमे—यत्र रोग वायु चौर श्रेष्ठामि उल्लस्य  
होता-ई। एत जातिके व्रण कर्षु चौर घृष्टके चारिं चौर  
कोल जाति हैं। यह रोग अत्यन्त घातनाशप्रद माना गया  
है। (सुश्रुत सुरोगः)

पनसी (हिं० स्त्री०) १ कटहलका फल। २ पनसिका।

पनसुरथा (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी छोटी नाथ।

इसके एकको छिनेवाला दो डाँड़ बना सकता है।

पनसुर (हिं० पुं०) एक प्रकारका बाजा।

पनसरो (हिं० स्त्री०) पंसेरी देखो।

पनसोई (हिं० स्त्री०) पनसुरथा देखो।

पनसु (मं० त्रि०) पनस्य-उ। प्रयासा या तारोफ  
सुननेका इच्छुक, जिसे प्रयास मिले होने को इच्छा हो।

पनसुडा (हिं० पुं०) वह हाँडी जिसमें नथोनी पान  
बचवा डाल घीनेके लिये पानी रखते हैं।

पनसुरी (हिं० पुं०) १ पानी भरनेका नोकर, पनभरा।  
२ वह पथरो जिसमें पानी भरने घीने आदिके लिये  
पानी रखते हैं।

पनस (हिं० पुं०) १ कपड़े या दीवार आदिको चौड़ाई।  
२ गूठ भाग्य या तावपथ, मर्म, भेट। ३ वह जो चारो-  
क पता लगाता हो। ४ वह पुरस्कार जो सुराई हुई  
बसु लौटा या टिकवा देनेके लिये दिया जाय।

पनसारा (हिं० पुं०) वह जो पानी भरनेका काम करता  
हो, पनभरा।

पनहान—पथोव्याप्रदेशके उभाव जिलेकी पूर्वी तरफ सोलह  
पथोम एक नगर पौर पनहान परगनेका सदर। यह  
उभाव गहरमे १२ कोस दक्षिणमें अवस्थित है। यहां कई  
एक प्राचीन हिन्दू-देवालय हैं। एक सुमनमान पौरके  
सम्मानार्थ यहां वर्ष भरमें दो बार मेला लगता है जिसमें  
चार पांच हजारके करोड़ मनुष्य एकत्रित होते हैं।

पनसिया (हिं० स्त्री०) नदी देखो।

पनसियासू (हिं० पुं०) यथेष्ट उपालय-प्रहार, सिर पर

रतने जूत पहना कि यान उड़ जाय, जूतोंको वर्षा।

पनसो (हिं० स्त्री०) उपासक, उता।

पना (हिं० पुं०) एक प्रकारका शरवत जो घाम इसको  
आदि १ ससे बनाया जाता है। यह शरवत लम्बे पत्रे

दोनों प्रकारके फलोंमें तैयार किया जाता है। एक फल,  
का रस या गूदा घां हो पनग कर लिया जाता है पन  
कथको गूदा पलंग कर्षनेके पक्षने उमे भूना या उच्युत  
जाता है। वादमें उसको खूब मसल कर मोठा तैयार  
दिते हैं। लवङ्ग, कर्पूर चौर अभी कसो लवङ्ग तथा  
मान सिंचे भी पनेमें मिलाई जाते है चौर हींग, जारे  
आदिका बंधार दिया जाता है। वेदकके अनुसार पना  
रुचिकारक, तत्काल अन्वर्द्धक चौर इन्द्रियाशो हर्षि  
देनेवाला माना गया है।

पनाती (हिं० पुं०) पुत्र अथवा कन्याका नामो, पोते  
अथवा नातीका लड़का।

पनार—पूर्विया जिनमें पनाहित एक मदे। यह नदी  
नेपालमें निकली है।

पनारा (हिं० पुं०) पनाना देखो।

पनाना—बम्बई प्रदेशके कोरवापुर राज्यके पलागत एक  
निरिदुग। यह काठडापुर नगरमे ६ कोम उत्तर-पश्चिम-  
में अवस्थित है। दुर्ग भूतवाय अथवास्वामि रहने पर भा  
इस पश्चिम भागमें प्रकृत्य सुमन्वित स्थितियोंको  
पानोचना करनेके अनेक उपकरण हैं। ११वां गताष्टो-  
में भोजराज शिवाकार गृहक यह दुर्ग बनाया गया  
है। उक्त राजाके नामानुसार दुर्गके उत्तरो भाग पर एक  
ऊंचा स्तूप दण्डायमान देला जाता है। यहां बहुत-सी  
निरिदुग हैं जिनमेंसे परशुगाम जय नामक गुफा  
पर्वतको पूर्वो भोग पर अवस्थित है। इसके द्वार आदि  
भूतवाय होने पर भी उसका आहवाय अमनाशियाके  
गुणगौरव-अत्यन्त है। भोजराजकी चूडाके मन्वभाग पर  
सुमनमान राजावेमे दो बड़े बड़े 'पम्बरगाना' निर्मित  
हुए थे। ओहधमके प्राक्कमे वे मध निरिदुगाए  
ध्यानियाको वासभूमिमें परिणत हो गई थी।

पनाना (हिं० पुं०) परनाना देखो।

पनामना (हिं० स्त्री०) पोषक करना, पोसना, परवरित्त  
करना।

पनामा—परनामा देखो।

पनाइ (का० स्त्री०) १ गह, मकट या कटमे रखा  
पानेको क्रिया या भाव, वाण, बचाव। २ रखा  
स्थान, बचावका ठिकाना, गण, पाइ।

दक्षिण ( हि० पु० ) सुवारीका एक देवीममा योपार  
जिन पर आना के आ कर पाई जा गानो है, कंठान ।

दक्षिण ( हि० पु० ) दक्षिण देवी ।

दक्षिण ( हि० पु० ) दक्षिण देवी ।

दक्षिणवर्णपुत्रयोत्तमपुत्र—एक पद्यकार इंदोनि धर्म-  
प्रदो ग नामक एक पद्यको रचना की ।

दक्षिणो ( हि० स्त्री० ) पल्लवोक्तपुत्र, पुंडरिया ।

दक्षिणी ( हि० पु० ) १ पानीके सम्बन्धका । २ पानीमें  
उपपत्त । ३ जिसमें पानी मिला हो । ४ पानीमें रहने-  
वाला ।

दक्षिणी—सुप्रप्रदेशके गोरखपुर जिल्लात्तर्गत एक नगर ।  
देखो ।

दक्षिणाला—१ पद्मप्रदेशके छिपारछापारल खां जिल्लात्तर्गत  
एक पाम । यह पक्षा ३२° १४' ३०" उ० और रेखा ०  
०° ५३' १५" पू०के मध्य छिपारसमाहल खां नगरमें २६  
कोस दूर आगे उपत्यकाके प्रवेशपथ पर अवस्थित है ।

२ सुप्रप्रदेशके गहरानपुर जिनके भगवाणपुर पर-  
गन्नेके अन्तर्गत एक गण्डपाम । यहाँ गोलानदीके  
किनारे विश्वोर्ष पायखन मठनगोषर होता है ।

दक्षिणाला ( हि० पु० ) एक प्रकारका फल ।

दक्षिणालोत ( हि० वि० ) जिसमें पानीका सीता  
मिश्रण हो ।

दक्षिणी ( हि० पु० ) गुरुणी देवी ।

दक्षिण ( म० वि० ) पक्ष-कर्म वि दक्षिण, अतिगहन पक्षि-  
तमप । सुप्रप्रदेश ।

दक्षिण ( म० वि० ) अतिगहन पक्षिना दक्षिण, अन्धीनपः ।  
क्षीप्रतम ।

दक्षिणिगा ( हि० पु० ) प्रवीणत देवी ।

दक्षिणपट ( म० वि० ) दक्षिण-पट-पुत्रः पक्ष पक्ष्यादि जिना-  
गमः । अन्धीना उपपत्तनाल ।

दक्षिणी ( हि० वि० ) १ पानीमें रहनेवाला । २ जिसमें  
पानी मिला हो, पानमेव । ३ पानी-सम्बन्धका ।

दक्षिणार ( हि० पु० ) दक्षिण देवी ।

दक्षिण ( म० पु० ) १ काट कर प्रमाणा दुपा दूध, देना ।  
दूधको काट कर यह बनाया जाता है । दोहे सम्बन्ध  
को मिश्र मिला कर देनेको अर्थमें भरा जाता है अथवा

मे समझी यहमिठा बन जाती है । २ यह दही मिश्रण  
पानी मिश्रण किया गया हो ।

पक्षी ( हि० स्त्री० ) १ फूल पक्षीके जो छोटे पोषे जो  
दूधको जयजय भा कर रोपनेके लिये मगाये गये हो,  
फूल पक्षीके बिल । २ गनगन मोड़को काँचके तप-  
का गूदा । ३ यह पक्षी जिसमें पानी समाई गई हो,  
बिलका पक्षी ।

पक्षी ( हि० वि० ) जिसमें पानी हो, पानी-मिला  
दूध ।

पक्ष ( म० स्त्री० ) पक्ष-उ । सुति, प्रगंभा, तारीक ।

पक्षी ( हि० पु० ) एक प्रकारका शरवत । यह सुप्रके  
कड़ाहमें पाग निकाल देनेके पीछे लगे हो कर तैयार  
किया जाता है । पाग निकाल देनेके बाद कड़ाहमें  
ताम पात्र चढ़े पानी छोड़ देते हैं । फिर कड़ाहको  
उभरी पच्छी तरफ धा कर याही देर तक लगे मरमाने  
है । उबलना शुरू होने पर प्रायः शरवत तैयार मममा  
जाता है ।

पक्षी ( हि० स्त्री० ) पानी मिला कर पीई हुई शीटी,  
शीटी शीटा ।

पक्षी ( हि० स्त्री० ) १ पक्षी देवी । २ पान बेचने-  
वाला, तंबोली ।

पक्षी ( हि० स्त्री० ) पक्षी देवी ।

पक्षी ( हि० पु० ) पक्षी देवी ।

पक्षी ( हि० पु० ) एक प्रकारका गाढ़ा, चिकना और  
अमकीना कपड़ा जो प्रायः गरम कपड़ोंके लोचि पक्षर  
देनेके काममें पाता है । जिस लोचि देनेमें यह कपड़ा  
बुना जाता है यह किम्बोपादन होयपुत्रने होता है ।  
रम होयपुत्रकी राजधानी मनीमा है । मन्थवता वहानि  
आमाने लिये जानेके कारण पक्षी देवीका और फिर  
उभरी बुने जानेवाले कपड़ेका मनीमा नाम पड़ा है ।

पक्षी ( हि० पु० ) एक प्रकारका भी पानके पक्षी  
के मन या चारोठेमें लपेट कर धां या निलने तलनेके  
कामका है ।

पक्षी ( हि० स्त्री० ) पान रखनेकी पिटाही, पानदान,  
बिलपत्र ।

पक्षी ( म० पु० )—ममपक्षयतदके अर्थवाला । ये ममपक्षयके  
पुत्र है ।

पद्य—महाराष्ट्रदेशमें पद्मालय वा मन्त्रिष प्रभृति राजकीय  
कर्मचारियोंकी उपाधि ।

पद्यक (सं० वि०) पाद्य ज्ञानः कन् । पश्चिमात, पद्यो-  
त्पन्न ।

पद्यविज्ञानद—पश्चिम मानवाके चरुसर्गंत एक ठाकुरात  
सम्पत्ति ।

पद्यप्रतिनिधि—गजाके प्रतिनिधि स्वरूप पद्य उपाधिधारी  
कर्मचारी (Viceroy) । महाराष्ट्रीय राजाधिकारि मन्त्रमें  
जो व्यक्ति राजाके प्रतिनिधि हो कर काम करते थे, उन-  
के वंशधरको पद्मालय भी पद्यप्रतिनिधि कहे हैं । इस  
पद्यप्रतिनिधिपदकी असंख्य कौतूह्यां द्वांसलगाय  
प्रदेशमें देखनेमें आती हैं । सारा मालुके चरुसर्गंत  
माइकी नामक स्थानमें शोपतराव पद्य प्रतिनिधिप्रतिष्ठित  
भूनेश्वर चौर विश्वेश्वर भादि अनेक सुन्दर मन्दिर हैं ।

पद्यलिहा (सं० स्त्री०) चपरिसर पद्य, सकरो गयी ।

पद्यो—ब्रह्मदेशवासो, सुसकमान-सम्पदाय । ये लोग  
यूनान प्रदेशसे इस देशमें आ कर बस गये हैं । १८६७-  
१८७२ ई०के मध्य बर्षोंमें तलिकू नामक स्थानमें चपना  
पाधिपत्य विस्तार किया था । ब्रह्मदेशमें ये लोग पयि-  
कुल नामसे प्रसिद्ध हैं ।

पद्यर (सं० पु०) गिरिभेद, एक पहाड़का नाम ।

पद्यरई—चम्पारण्यदेशमें प्रवाहित एक नदी । यह कोम-  
श्वर पर्वतमें निकल कर रामनगर राज्यके मध्य होती  
हुई नेपालमोमान्तमें लोरो नगर तक चली पाई है और  
पहले पश्चिममुखी और पीछे दक्षिण-पूर्वकी ओर बहती  
हुई गिहारापुरमें एक बोन पुर्व धारम् नदीमें धा-  
गिरी है ।

पद्यप्रतिपा—१ मध्यप्रदेशके विन्नामपुर जिलेकी सुहोली  
तहसीलके चरुसर्गंत एक छोटी जमींदारी । यहांके भामना-  
राज राजगोष्ठ कच्छाते हैं । गुरुमण्डलके गोष्ठ राजाने  
तोन गताह् पद्यसे इस वर्गके पूर्वपुत्रको यधिका  
पाधिकार स्वत्व दान किया था । इसमें कुल मित्रा कर  
३१२ घाम लगते हैं । भूपरिमाण ४८६ वर्गमोल है ।

२ सुहोली तहसीलका प्रधान घाम । यहां सम्पत्ति  
पयिचारी जमींदारका प्रासाद है ।

पद्योच—हरमन्ना जिलेके चरुसर्गंत एक घाम । यहां राजा

गिबमिंकी पुष्करिणीकी बगलमें एक चीनोको क्ल है  
और दूसरा जगह तिरहुतके मध्य सुहहत् नोनकोठीका  
ध्वंसावशेष देखनेमें आता है ।

पद्याना—मध्यप्रदेशके नीमा जिलेकी खाण्डोना सरनोम-  
के चरुसर्गंत एक घाम । यह खाण्डोना नगरसे ५ कोस  
दक्षिण-पश्चिममें पद्या० २१' ४२' उ० और देशा० ७६'  
१६' पूर्वके मध्य अवस्थित है ।

पद्य (सं० वि०) पद्य-ज्ञः । १ पद्य, गिरा दूषा । २ गन्त ।  
(पु०) पद्य सुतो पद्य-न (पु०) पद्य वि दूषोति । ३  
१।१०) ३ अधोगमन, रंगना, सरकते हुए चलना ।  
पद्यर (वि० वि०) पद्यके रंगका, जिनका रंग पद्येका-  
मा हो ।

पद्यग (सं० पु०) पद्य पद्योगमन पतित वा गच्छतीति  
गम-उ पद्मानं गच्छतीति या । १ सर्प, मांवा । यह पद्ये  
नधो चलता, इसीसे इसका पद्यग कहते हैं । २ पद्यध-  
विशेष, एक बूटो । ३ पद्यकाष्ठ, पद्यम ।

पद्यगईश्वर (सं० पु०) नागईश्वर पुत्र ।

पद्यगनागक (सं० पु०) पद्यग-नाग क्त्वा । गहड़ ।

पद्यगमय (सं० वि०) पद्यग-मयट् । सर्पगहृत्त सर्पिका  
समूह ।

पद्यनगारि (सं० पु०) पद्यनगानामरिः । गहड़ ।

पद्यनगाश्रम (सं० पु०) पद्यनगं सपं यन्नातीति पद्य-क्यु ।  
गहड़ ।

पद्यनो (सं० स्त्री०) पद्यनम जातो डोप । १ पद्यगपयो,  
नागिन, मांघिन । २ मलमाटवी ।

पद्यनहा (सं० स्त्री०) पदि नहा यहा । चर्मपादुका, जूता ।

पद्यनदूषो (सं० स्त्री०) पदीयरपयोनेदूषो । चर्मपादुका,  
जूता ।

पद्या (वि० पु०) १ प्रज्वलन हरिद्रावर्ष मणिविषय,  
पिरोजिकी जातिका हरि रंगका एक रश्म लो घाया  
हनेत चौर येनाइटको घामेनि निकलता है । इससे  
संस्कृत नाम ये हैं—मरकत, गहव्यञ्ज, चम्रगम, हरि-  
मन्दि, राजनोम, गहव्यादिम, रोहिणिय, मोपय, गहव्यो-  
द्वान, बुधाय गहड़, गरुणारि । पद्येका सर्पं शुचपकोके  
पद्य सहय, चिंय, नावत्ययुक्त चौर मु निर्मल होता है ।  
इसका पद्यभाग मूत्र्य नृत्तचपुर्वं पद्यविरित माला



हेतो, वीगमनपुर आदि माचोन पुरा विदग्गण इस रत्नका  
 उल्लेख कर गये हैं। पारसके लोग अथवा मणि को  
 श्रेष्ठता पत्थर का विविध आदर करते थे। हिन्दू लोग  
 पतित मांचोनकालमें इसका व्यवहार करते आ रहे हैं।  
 ब्रह्महारा और सुन्दर सुन्दर द्रव्यमें यह रत्न प्रचुर परि-  
 भाषणमें व्यवहृत होता है। रणजित्मिंह सर्वोत्कृष्ट  
 पत्थर पत्थर हुए कड़े पहना करते थे।

पत्थरों की खोज—पत्थरों की खोज कर सुन्दर सुन्दर  
 मूर्त्ति बनाई जा सकती है। ग्रामदेवके बुद्धदेवके  
 मूर्त्तियोंमें दो फुट लंबो एक देवमूर्त्ति है। कश्त हैं  
 कि बड़े मूर्त्ति एक पत्थरकी बनो हुई है।

पत्थर पत्थर।—दिप्राके सुगल मन्वाट, जहाँगोर  
 एक भंगूठो थी जो एक ठोस पत्थर काट कर बनाई गई  
 थी और जिसमें होना तथा दो छोटे छोटे पत्थर लड़े हुए  
 थे।—यह भंगूठो शाहसुजाने इष्टदिग्घ्या सम्पत्तीको  
 'संपहारमें दे दा थी।' पीछे गवन्त जगन्नाथ लाड भाक-  
 लीएने उधे खरीद लिया। यह पत्थर कुमारी इयुनके  
 पास है। दसोपत्थरके निकट तीन इंच लम्बा दो  
 इंच चौड़ा और इंच भर मोटा एक पत्थर था जिसका  
 वर्ष पतित सुन्दर तथा जिसमें बहुत कम दाग थे। मालूम  
 पड़ता है, कि यही पत्थर १८५१ ई०में ग्लासगोके प्रसिद्ध  
 महाभूषणमें प्रदर्शित हुआ था।

पट्टिप्राके राजकीयमें २००० कोटका और धातु-  
 पाव-डिभनसायरके पास ६ पौंस ( प्रायः डेढ़ पाव ) का  
 एक पत्थर है। यह पहले न्युयार्काडकी खानमें निकाला  
 गया। पीछे डम-पट्टीमें धातु-पाव-डिभनसायरने  
 इसे खरीदा इसका व्यास दो इंच है और यह उज्ज्वल  
 वर्षाविशिष्ट है।

मध्यकालमें पत्थर शीतल मधुरमधुस, हृदिकारक,  
 पुष्टिकर, शोथवर्धक और प्रेतवाधा, पञ्चवित्त, स्व-  
 यम, ग्रास, मन्दाग्नि, वषाधोर, पाण्डुरोग और विशेष  
 रूपमें विषका नाश करनेवाला माना गया है।

२ पुस्तक पादिता पृष्ठ, पत्रा, वरक। ३ भेंडोंक  
 कागला वह शोड़ा भाग लडाका जग काटा जाता है।  
 ४ देगो जूतेके एक ऊपरी भागका नाम जिसे पान भी  
 कहते हैं।

पद्मा—विचोव'गोत्र एक राजपूतसमूह, राधा संघाम  
 मि'हके गिरा-पुत्र उदयसिंहकी धात्री। राधा संघाम-  
 मि'हक मरने पर विधोरेन भारो गोलमाल उपस्थित हुआ।  
 पत्थरमें सरदारोंने उदयसिंहकी नाशानिर्गोमें राजकाय  
 चनानेके लिये प्रयत्नशुभके जायावतुन वनधोरको वित्तोर  
 मि'हसन पर अधिष्ठान किया। मि'हसन पर बैठनेके  
 कुछ समय बाद ही वनधोरको दुराकाहाप्रति प्रसन्न हो  
 उठी। उन्हीं पत्थरें समस्त प्रतिद्विष्टियोंको क्षान्ताकरित  
 करनेका संकल्प किया। उदयसिंहको पत्थर उम समय  
 जीवन छः वर्षको था। इस नवके वर्षका विनाश क्षान्ति-  
 के लिये वनधोर तैयार हो गये। एक रातको उदय-  
 सिंह खा पी कर सो रहे थे। धात्री पत्थर वनधोर निरा-  
 हने बैठी थी। इसी समय पत्थरपुत्रों घोर आसं-  
 नाद सुनाई पड़ा। भय घोर विस्मयमें पत्थरका हृदय  
 कापने लगा। ठीक उभो समय पत्थरपुत्रों गायित  
 राजकुमारका जूठा उठाने आया और पत्थरें बोला कि  
 वनधोरने अभी तुम्हें राधा विक्रमजितकी मार डाला है।  
 इस हत्याकाण्डकी कथा सुन कर पत्थर ताड़ गई कि  
 इसल इमामे वनधोरको जिवांता मित्रता न होगी, वह  
 पत्थरें प्रधान प्रतिद्विष्टा उदयसिंहका भा पुत्र करने  
 प्रथम आयेगा। अब उष्य काल भी यह विनियम न कर  
 सकी और राजकुमारको बचानेका उपाय सावने लगी।

सन्ने गृहमपराध पुण्यकरिन्द्रकाके मध्य निर्दिष्ट राज-  
 कुमारको रत्न कर करणमें कुछ निर्मोक्ष विरुद्ध विद्या  
 दिया और नावितके साथ उम समयके कर बहुत तेजो-  
 में दुर्गक बाहर निकल जानकी कहा। नावितने विना  
 किसी तर्क वितर्क ही उम समय पत्थरके उपदेशका प्रति-  
 पादन किया। इधर पत्थरने राजकुमारके बटनेमें पत्थरें  
 पुत्रको लम्बी गय्या पर सुना दिया और पाप पुत्रवत्  
 निराहनेमें बैठ गई। इसी बीच वनधोर कासालाक  
 यमकी तरफ धम धरमें पा धमका और 'उदयसिंह  
 कहा है', धात्रीने पूछा। उरन मारे धात्रीके सु'हमें एक  
 गम्भीर भा न निकला। उमने राजकुमारकी गय्याको भी  
 उगलोका दगावा किया और उगम वनधोरके तोप  
 करिशाघातमें निर पुत्रका हृदयवादास्य कर्की धात्री-  
 में देला। पुत्रगोकथें उमका हृदय



द्विचन्द्र धरके मारे एक छूट छूट कर ही भा बरों मकर  
 का कि तापतय कर कथ्य पुन भी मलय । तदन्तर  
 ये भी मलय कर मलयी जा मय विद्या और चरने पुत्र-  
 की पश्ये दिग्गज नरकेत वदने नदयमिं बनी मलयमें  
 धरने मरे । इय पशार मलयी पश्ये पुत्रकी विद्याकर  
 कर नदयमिं बनी जाल तथा मी । पद्मापुरकारिणी  
 मलिपुत्रीकी इस पञ्चोक्त पावननामके विषयमें  
 कृद भी लख म ले । मंयाममिं कथा मंयमो दृषा,  
 यद ममक कर गे विद्याय करने मतो । इधर विती की  
 पवित्र मलयमयविनी हीराभर्तृकि (कनार पदयमिं नको  
 ले का कर नदु मापिन कथाको प्रतीक्षा कर म्या या ।  
 यथाभव पद्मा पदां पदं च मरे चौर द्वेषवराक मिं द-  
 रानके वदा पायय पशय मनेके । वदनेमि ये हीने कुमार  
 के माय मरामि मल दिवे । मिकम मदां जय लमका मनी  
 रद मलय न दृषा, तव मे दुःखापुत्री रयामा दृष । मग  
 भा पायय तथा कर मे मरके मय शयम ऐमदयं  
 नामक क्ती मायाशरको मयमने पदं मे । शशने  
 पायय मनेकी बात तो दूर रहे तुरत लके शशने मिक  
 जनेकी बाध्य क्रिया । पश्यते पद्मा दुर्मय मलयम प्रदेग  
 मयुदकी वा कर लममयोरेके पदं भी चौर मराने  
 नामकका पाया-मादके दाय राजकुमारकी पश्ये कर  
 पाव मरामि रयामा भी मरे । इय प्रकार पश्यते पति  
 विमल भागमे पश्ये कर्तव्यकर्मका वासन क्रिया । जो  
 मरमा पश्ये पुत्रका तीव्रत उत्सव कर इस प्रकार  
 भाषा विषयका ररमकी ही यह मरमा मायाका  
 मरने । उमका यह पदुत पावन नाम मर्या पश्ये  
 की है ।

पदा (पदां)—१ मन्मथारमकी बुद्धेलवण्ड पदेमाके  
 पश्यतेन मय मरद मलय । यह पदां २३ ४८ मे २४  
 ४३ ५० की पदां ७८ ४२ मे २३ ३ पुत्रके मलय  
 पश्यतेन है । इयके उल्लस्य पश्ये मायिक्त मीटा और  
 मरपदां शश्या पुंमं मीटा, पुत्राय, मागोद और पश्य-  
 मयु चादि कोटे कोटे शश्याः कलिपमे टमीर और  
 लवणपुर जिमा तथा पविमने लखुर और पश्यमदका  
 नामक शशय है । भुवविमाद २४८३ वर्तमान और मय-  
 मंयका १८२८८३ है मियमने पविशय हिन्दु की है ।

यथाका पश्यते पश्यते ज्ञान विद्या-पवित्रकाभूमि  
 पश्ये पश्यतेन चौर मयमने पश्यते है ।

पश्ये-पश्यते मिये यह ज्ञान विद्यामय है । पश्ये  
 दय मायमें पश्ये औरक मियता या और उमी मयमने  
 पश्ये यह मयमियामा मयमने पश्यते दृषा । पाय  
 कथ मर पश्येके मीमा मयुत मय मय औरक

Diamond of the first water, of completely  
 colorless ) मरुं मियता । मर मियता भी है, तो  
 सुकाकलका तरद मरिद, हरिताम, पोताम, मोहिताम  
 और मयमयका । मयमय मयमने मयम मय औरक-  
 ज्ञानोय मयमके माधारणता चार नाम मयमये है—  
 १ 'मोचोच' परिष्कार तथा मयम, २ 'मायिक' हरि-  
 ताम, ३ 'मय' कर्मता मोचुके जेमा रंमदिगिट और ४  
 'मोचोच' लवणयवंमियट । यदा मोचुकी भी पावन है ।  
 मयमय मयममने मयम पद्मा पश्यतेकी पश्यमोमा  
 मय पश्ये मया या । मयमय और मयम मय मय  
 उमने मयमने मयमयिमागी, मयमयारी, मियमाय  
 मय, मयमयो-मयमययके मयमके मयमय, मियामं,  
 पुत्रायम, मियममियमयन चादि मयम हिन्दु-मयि  
 यनी मय कर पश्यते पश्यते कवित्वका पश्यते मरे है ।

मयममने पश्यते मरुं मरे इदयमाककी पसा (पदां)  
 शश्या दिशा । इदयमाय यथा उल्लस्य मयमयो मया कर  
 मरने मने । मयके मयमयकायमें मयमदि विद्यमान है ।  
 इदयमायके मयमिं च या मयमाय और मयमिं च  
 नामक ती पुत्र है । मियते मने पर मयमाय मयमयो  
 पर मरेके मयमने मयमयि मया मयमय नामक  
 ही मयम-कवियेने मयमयोकी मयमय कर  
 दिशा या ।

मयमिं चके मीम पुत्र है—मयममिं च, हिन्दुपत  
 और मयमिं च । हिन्दुपतने मरुं भार मयममिं चकी  
 मयममने मय कर और मरेके भारे मयमयो मरुं कर  
 मियमयकी पश्यते मय । हिन्दुपत मने ती मयमा-  
 यारी, पर मायिज्यकी मय मयका विमये मय मय ।  
 मयमय-इदयमाकी मरे मरने मयमय चादि हिन्दु-  
 मयि मय मयकी मयाकी मयमिं चकरने है । मयमाय  
 हिन्दुपतके तीम पुत्र है, मयके मयममिं च (दितीय

पत्तने गर्भमें) और पतिव्रतसिंह तथा धोकलसिंह (ज्येष्ठ महिषाके गर्भमें)। मरते समय विश्रुत पतिव्रतसिंहको ही समस्त राज्य सौंप गये थे। उनको नात्राजिगीमें दोषान येनीहजरी तथा कालिङ्गके जिन द्वार और कौशाभ्यक्ष काएमजी चौबे राज्यको देखरेख करते थे। हजरी और काएमजी सहीदर भाई होने पर भी राज्यकी समस्त श्रेष्ठ क्षमता पानेके लिए काएममें लड़ पड़े। यथा तक कि एक दूसरेके जानो दुश्मन हो गये।

अन्तमें काएमजीने सरमेद सिंहका पक्ष ले का। उठे राजा बनाना चाहा। अन्तः दोनों दलमें कई बार घोरतर संघाम छिड़ गया।

कुछ दिन बाद राजा पतिव्रत सिंहको मृत्यु हुई। अभी दोनों भाइयोंने अपना अपना क्षमता प्रस्तुत करने के लिए धोकलसिंहको राजसिंहासन पर बिठाया। इसपर सरमेदसिंहने भग्नमनोरथ हो कर बाँटाराज गुमानसिंहके सेनापति नोनो पशुनसिंहको बुलाया।

पशुनसिंहने आ कर धोकलसिंहको राज्यमें सार भगाया और चाप बाँटाराजके नाममें पटनाराज्यका अधिकार्य अधिकार कर बैठे तथा शिशुवाँटा राजा मलसिंहका अभिभावक हो कर चैन उठाने लगे। इस प्रकार सरमेदसिंह पुनः जताग हो हिन्दुपुत्रदत्त राजनगर नामक स्थानमें जा कर रहने लगे। वहाँ ये सुसलमानोंके गर्भजात हरसिंह नामक एक पुत्रको छोड़ परलोक सिधार गये।

इधर धोकलसिंहने पत्तनेके चेटाके बाद पेटक-राज्यका उद्धार तो किया, पर ये और अधिक दिन तक उसका भोग न कर सके। किगोर सिंह नामक उनका एक प्रथम पुत्रने सिंहसदन लाभ किया।

पत्तनेमें प्रथम सुन्दरलखण्ड पर अधिकार जमाय, तब किगोरसिंह उनके साथ पहले पहन मन्त्रिसुखमें भाग्य हुए। इटिम गवर्मेण्टने १८०७ ई०में उनको एक सनट हो। उनकी सभामें प्रयोग नामक एक हिन्दो कवि रहते थे। किगोर सिंह और धारि वहुं भी प्रजाप्रीहक हो गये। अपने पन्थाय काय के नियं राज्यामें निर्वासित होना पड़ा। पोले हरवंगराज

राजगद्दी पर बैठे। १८३५ ई०में किगोर सिंहा निर्वासित प्रथममें प्राणात्त हुए। १८४१ ई०में भारू नरपति सिंहाकी मध्यायनाते राजकार्य सदासे लगे। नरपतिविंश वहुं हो करिन नुरागा और विजय जाले गे। उठाने वनभद्र, भांगसिंह, उरिटाग चादि हिन्दो कवियोंका प्राथय दिया या। १८४८ ई०में पररंग रावकी मृत्यु होने पर नरपति सिंहाने राजसिंहासन सुगोभित किया। उन्होंने १८५७ ई०में गटरमें पंथेनी को खानो महायना पदवाँटो। इस प्रत्युपकारमें इटिम गवर्मेण्टको पोरमें उठे २०००० रु० को एक पीगाक, पाण्डुपुत्र पण्यको क्षमता और ११ मनामो तोपें मिलीं। मशाराज नरपति सिंहाकी मृत्युके बाद उनके बड़े लड़के कृष्णनापति विगत प्राथ वेदमके हाथमें उच्च मन्थान और विनयत पाई। रागो विक्टोरियाके भारतेश्वरो उपाधिप्राप्तके उपलक्षमें ये भी वहाँ उपलिनत थे। उनके मन्थानाय १२ तोपों का मनामो उवागो गई थी। १८८३ ई०में ये ३० सि० एक पा० बनाये गये। १८८७ ई०में ये हम धराधमको छोड़ सुरधानको सिधारें। पोले लोकपान सिंहा राजसिंहासन पर बैठे। उनके समयमें कोई विगेष घटना न हुई। पत्तनर भांगोसिंह उनके उत्तराधिकारी हुए। कुछ दिन बाद अपने चचा राय राजा सुमान सिंहका मृत्युका उठमें वे सिंहासनपुत्र किटे गये। तत्पश्चात्सुन रावजाके लड़के यादवेंद्र राजगद्दी पर बैठे। ये ही वर्त्तमान राजा हैं। इनका पूरा नाम है—'शिव० एक० महेन्द्र यादवेंद्रसिंह साहब बहादुर।' उठे ११ तोपोंका मनामो मिलता है और ३० सुडमधार, १५० पटागि, १२ गोतंदात्र और १८ वन्दूक रखनेका अधिकार है। इन राज्यमें १ जहर और १००० ग्राम लगते हैं। राज्या की कुल प्राय धान माल्य कृषिको है। यहाँ १५ स्कूल, १ पन्थान और ४ चिकित्सालय हैं।

२ उक्त राज्यको राजधानी और प्रधान नगर। यह यह पत्ता २४° ४३' उ० और दिशा ८०° १२' पू० इत्य-गद्दीमें मनामो जानेके हाथय पर प्रथमिन है। मन्थाना दग प्रजारमें ऊपर है। नगर परिष्कार और पहलिकादि परिगोभित है। वहाँ



तथा शिखर तहसे बरग मालूम होती है। २ घावके ऊपर मवादके सूख जानेसे बना हुआ आवरण या परत, सुखे। ३ छत्रकी छालकी ऊपरी परत जिसमें मूखने और विटकनेके कारण जगह जगह दर-रे-सी पड़ी हैं। ४ छोटा पापड़। ५ सोहन पपड़ो या अन्य छोटे मिठारे जिसकी तह जमाई गई हो।

पपड़ोला (हिं० वि०) जिसमें पपड़ो हो, पपड़ोदार।  
 पपड़ो (हिं० स्त्री०) पलकके बाल, धरोनी।  
 पपरियाकल्या (हिं० स्त्री०) पाड़ियाकल्या देखो।  
 पपरो (हिं० स्त्री०) १ एक पोधा जिसको जड़ दवाके काममें पाती है। २ पपड़ी देखो।

पपशा (हिं० पुं०) धानको फसलका हानि पहुँचाने-वाला एक कीड़ा। २ एक प्रकारका चुन जो जी, गेहूँ आदिमें छुस कर उनका सार छा जाता है और केवल ऊपरका छिलका ज्योंका त्यों रहने देता है।

पपि (सं० पुं०) पाति लोकर, पिबति च, पा-कि, हित्व च। (कामधेयवचनः किकिनी लिट् च। पा ३२।१७१) १ चन्द्रमा। (त्रि०) २ पानकर्ता, पानेवाला।

पपो (सं० पुं०) पाति लोकर पा-रचण्ये इक, हित्व च (गोः कित्त्वे च। उण् ३।२५८) १ सूर्य। २ चन्द्रमा।

पपोषा (हिं० पुं०) १ जोड़े खानेवाला एक पशु। यह बध्मल और वर्षा ऋतुमें भकसर चामके दरमियाँ पर बैठ कर बड़े मोठे स्वरसे गान करता है। इसका दुधरा नाम है घातक। देगभदसे यह कर्क रूप, रंग और पाकारका होता है। उत्तर भारतमें इसको भालति प्रायः ग्रामा पपीके बराबर घोर हलका काला या सटनेला होता है। दक्षिण भारतका पपोषा भालतिमें इससे कुछ बड़ा और रंगमें विचित्र होता है। अन्यथा कानमें घोर भो कर्क प्रकारके पपोषे पाये जाते हैं जो कदाचित् उत्तर घोर दक्षिणके पपोषेको संकर सन्ताने हैं। मादा पपोषेका रंगदूध प्रायः सब जगह एक ही का होता है। यह पपुसे देखे नीचे प्रायः बहुत कम उत्तरता है घोर उस पर भी इस प्रकार छिप कर बैठ रहता है कि मनुष्यको दृष्टि कदाचित् ही उस पर पड़ता है। इसकी बोली बहुत ही मोठा होती है घोर उसमें कई स्वरोंका समावेश होता है। कोई कोई कहते

हैं, कि इसकी बोलनेमें कोयनकी बोलनेमें भी पपिक मिश्रण है। हिन्दो-कवियोंमें मान रखा है कि यह पपुनो बोलनेमें "ये कहाँ?" "ये कहाँ?" पद्योत् "मियतम कहाँ है?" बोलता है। वास्तवमें ध्यान देने-से इसकी रागमय बोलनेमें इस वापके उच्चारणसे समान ही ध्वनि निकलती जान पड़ती है। कहते हैं, कि यह पपुसे केवल वर्षाको बूँदका हो जन पोता है। यदि यह प्यासमें भर भी जाय, तो भी नद, तानाव आदिके जलमें चींच नहीं डूबता। जब पाकाय मिय-रूप रहता है उस समय यह पपुनो चींचको बराबर प्योने पाकायकी पार इस स्थानमें टक लगाये रहता है, कि कदाचित् कोई बूँद उसके मुँहमें पड़ जाय। बड़तीने तो यहाँ तक मान रखा है, कि यह केवल स्वातो नच-जमें होनेवाला वर्षाका ही जन पोता है पार यदि यह नचव न बरसे, तो माल भर प्यास ही रह जाता है। इसका बोली कामोद्धार मानो गई है। इससे घटन नियम, भेष पर अन्य प्रेम और इसकी बोलीको कामे दीवकताको ले कर संरक्षण तथा भायाके कवियोंमें कितनी ही अच्छी पच्छी उलियाँ की हैं। यद्यपि इसकी बोली बोलने में आद तक लगातार सुगार पड़ती रहती है, परन्तु कवियोंमें इसका वर्णन केवल पपुसे उद्घोषणोंमें ही किया है।

बेद्यकमें इसके मांसकी मधुर, कषाय, लघु, शीतल कफ, पित्त घोर रक्तका नाश तथा पम्निका शक्ति करने-वाला लिखा है। २ चित्तारके कः तारामेंसे एक जो लोहेका होता है। ३ पावहाके बापका जोड़ा जिसे मांझके राजाने हर लिया था। ४ परेया देवो।

पपोता (हिं० पुं०) एक प्रसिद्ध हथ जो पकसर गोपी-में लगाया जाता है। इसका पैड़ ताड़की तरह साँपा बड़ता है घोर प्रायः बिना डालियोंका होता है। यह २० फुटके लगभग ऊँचा होता है। इसकी पत्तियाँ पंड़ीकी पत्तियोंकी तरह कटावदार होती हैं। बा-का रंग सफेद होता है। इसका फल अधिकतर खो-तरा घोर कोई कोई गोल भी होता है। फल-मोटा बड़ा हिसका होता है। गुदा-द्वारमें सफेद घोर पक जाने पर पी-क

कोर दोषमें बांध कर ले है। बांध कोर मुद्रित दोष उद-  
 भद्रुदवर्णको विजाह कोरी है जो बांध दोष का दोषाधार-  
 का काम देती है। कथा कोर कथा कोरी अथवा कम  
 कथिनें काममें आता है। कथो कथरी कथमा तरकारी  
 बनाते है। कथा कम मोटा कोमा है कोर करन लीका  
 तरब दा जो या महर खादि मय खाया जाता है।  
 दमके मुटे, हाज, कम कोर दमकेमें भी एक प्रकारका  
 कमदार दूध मज्जमा है निममें भाय प्रकी विमियका  
 मीमके मकारकः गुण माना जाता है। दममें दमकी  
 मीमके माय मायः पकते है। कथते है, कि वीट मांम  
 मोड़ा देर तक दमके पत्तेमें लपेटा रखा रहे, तो भी  
 यह ददुल सुख मान जाता है। दमके पधवे कनमें दूध  
 प्रमा कर 'वैपिन' नामकी एक पोषण भी बनाई गई है।  
 दम दोषम मन्दाग्निमें उपकारक माना जाता है। कम  
 भी पाषणमुपाविगिट मममा जाता है कोर पधकर  
 रभी गुल्के निपु लमें खाते है।

दक्षिण पमोरिकासे पयतिनी उत्पत्ति दूरे है।  
 चन्दाय्य देगीमें बधा'से मया है। भारतन-पुर्नगानिया-  
 के संमर्गमें भाया कोर कुह का वरमोन भारतके पध-  
 काममें कोल कर चीन पहुंच गया। दम मयय १५पु-  
 वत रैवाके ममापण्य मभी टिमिं दम० उल पधिरता-  
 में पाए जाते है। भारतवषमें दम० दा भेट टिवाई  
 पदुर्त है। एकका कम पधिक बधा पार माटा कोर  
 है, दूनकेका दाटा कोर कम माटा। प्रथम प्रकाशका  
 दपोता माया कामामके गोशरटा कोर ट टाभागदु-  
 विभागाके वजाभाग ल्यानेमिं बीता है। वैद्यकम दम-  
 को मधुर, तिथ, वातमात्र, योग्य कोर ककका कृदा-  
 माता, कृदपका वितकर कोर उष्णट तथा मर्के शर्मिका  
 नामक विद्या है।

पुणु ( मं० पु० ) पानि कर्ति पा कु हिलच ( उमरमें ) ।  
 दम ( म० ) १ कामक । ( को० ) २ भाती ।  
 मधुपेका ( मं० ति० ) मयकांनं, मयकांपोका ।  
 पदुरि ( मं० ति० ) पृ०क हिले । पू०मोम ।  
 पदिया ( वि० पु० ) १ भांटा । २ एक कथाको कोटी  
 किंके लक्ष्मि पानकी पंजुतिग मुज्जकी विम कर बनाते  
 है । ३ कामका मय पोधा, पमीला ।

पमीम ( वि० स्त्री० ) एक पोधा निमके पत्ते बांधनेसे  
 पमीम पकता है। दमका एक मयोपोका तरब कोमा है।  
 पमाटा ( वि० पु० ) पानि लताका मज्जका पती ।  
 मय केटीको उ० वचना है पोर दमके निममें पांच दम  
 कोमा है तथा लममें पुनकी है, दमक ।

पमारना ( वि० स्त्री० ) पयता राईके पंठका कोर कमका  
 मरव वा पुटता पयना ।

पमनका ( वि० स्त्री० ) पमीका पुपयाना, खराना वा  
 मुंके यताना ।

पयता ( वि० स्त्री० ) वाम मयका, पुंमयदरी ।

पयि ( मं० ति० ) म-पूरणे कि, हिले । पू०मोम ।

पयक ( मं० पु० ) मोतमरवके कय पमेटे ।

पयई ( वि० स्त्री० ) मोगाकी प्राणिका एक पयिक ।

दम की य ला पहुंच माटी खाता है ।

पयाम ( मं० स्त्री० ) १ मय माय रन, जलता, काम-  
 लाय । ( वि० ) २ मय माधारन-मयमी, भाई प्रणिक ।  
 दमलियवद ( मं० पु० ) १ मयोप-पययो के काये जो  
 मय माधारनके नामक निपु मरकारका कोरने किये  
 लाये गे, पुण महर खादि बननिका काय । २ रंजा  
 निधका सुखका ।

पय ( मं० पु० ) वरि देनी ।

पयाम—उत्पावावाट अनेके दमगत कोर दमुनाके  
 दाकप नारने पयोलाय एक माधोन काम । यह  
 मयाम ३२ मान दीपक-वियममें उपस्थित है । दमका  
 म-पान मय मयाम है ।

मापान कोमाना दुग्म ३ मोल उत्तर-पश्चिममें  
 पकिट पयामा मेल पधस्थित है। दम मीमके निधर वर  
 एक कतिम मुदा है निमम एक प्रवेम-कार कोर दो  
 मगाये है। मुनाके दक्षिणमागमें किमी माधुके वई मरवे  
 पदुरमय्य कोर प्रकाका उपाधान है। दमके मातमें  
 मुनामरमें उत्पल १० मिकाविपदी है। मुनाको दक्षिमी  
 टाकायें कोपेके मयमके पधरमें उत्पले ३ मिकाविप  
 दिव्य जात है। दम मिकाविपयोगे माना जाता है,  
 कि पाम-दुग्ममें एक मुनाका निर्माक विद्या । मुनाके  
 मवे-उ-रने, काम लममें दम निविपेको ० पंकि है  
 किममें पाम-दुग्मका पधिरव कोर दमका निर्माकवाय

लिखा है। चावादेमेन वै पिउर-व-गौय गोपाल धोर  
 नोपाकोके पुत्र राज-यप्यपन्निमित्तके मातुल धे। प्रवाद  
 है, कि इस मुहामें नाग रक्षता है। यूपनसुवद्र, सुंएन  
 चाटि चोनप्रतिराजक मो बुदस उक्त मयं देमन ही कथा  
 बचन कर गये हैं। उक्त चोनप्रतिराज की ही वपना-  
 से जाना जाता है, कि मन्त्राट, समीकने यों २०० फुट  
 लंबा एक स्तूप बनवाया था। किन्तु यमो उम प्राचीन  
 बौद्धकालिका कुछ मो निर्देश न नहीं पाया जाता  
 १८२४ ई०में गिरिगिखर पर हैनतोयेंद्वर पद्मभन'ध'  
 का एक मन्दिर बनाया गया है। गिरिक पाददेग  
 समीप देवकुण्ड-नामक एक सरोवर धोर एक छोटा  
 हिन्दूदेवालय देखा जाता है।

पंमरा (हि० हतो०) सत्रुकी नामक गन्धद्रव्य।  
 पंमार (हि० पु०) १ अन्निकुलके चत्विर्ही एक ग्रावा,  
 पंमार, पवार। २ चक्रमर्दक, चक्रमंड, चक्रोटा।  
 पंभ्वर—कण्ठी भाषाके एक कवि। भाप कवितागुणा-  
 चक्र, पुराणकवि, सुकविजन 'मंगोमनसोत्स'म, स  
 सुजोत्स, वंशराज इत्यादि उपाधियोंने भूषित धे।  
 साधारणतः ये पञ्चगुरुहम्य गामसे हो प्रसिद्ध धे। पहले  
 कनाडो-लिखित ग्रन्थको भाषास्वरूप गिनतो नहीं होती  
 थी, इन्होंने ही सबसे पहले कनाडो भाषामें पुस्तककी  
 रचना कर कनाडो भाषाका गौरव बढ़ाया। अपने  
 चादिपुराणमें इन्होंने जो अपना परिचय दिया है यह  
 इस प्रकार है—

वेङ्गीमण्डलके अन्तर्गत विक्रमपुर-प्रदेशमें अक्ष-  
 गोत्रमें मानव सोमयाजी उत्पन्न हुए। उनके पुत्र अम्भि-  
 मानन्द, अभिमानके पुत्र कोमरपरा, कोमरपराके पुत्र  
 अभिरामदेव राय धे। अभिरामने जैनधर्म ग्रहण किया  
 था। अभिरामके पुत्र कवितागुणाचम पंभ्वर धे। इन्होंने  
 १८२४ शकमें लक्ष्मणदेवकी सेवा धा। जोनाधिपत चालुख्य  
 परिकेयरोके लकाहमे इन्होंने कानड (कण्ठी) भाषामें  
 पम्बरचना दारभ की। इनको कवितामें सुध हो कर  
 राजाने इन्हें धर्मपुरका शासन प्रदान किया। ये १८२४ शक  
 (१८४१ ई०)में पहले चादिपुराण, पीछे पंभ्वरभारत ना  
 विक्रमाडुनिबन्ध, एतद्दिन ससुपुराण, पाम्बनायपुराण,  
 परामम प्रभृति काव्यग्रन्थ प्रकाशित कर विख्यात हुए।

२ एक दूसरे जैन-कवि। ये अभिनव पद्मनाभमे  
 प्रसिद्ध धे। ये कनाडो भाषामें राघवपाण्डवीय चादि  
 कुछ काव्य लिख कर प्रसिद्ध हुए। ये १००६ शकके कुछ  
 पहले विद्यमान धे।

पम्पा (५० स्त्रो०) पाति रक्षति महपरांशो न पा सुहागमत्वे  
 निय तनाम् साधुः ( मन्थिलिवाणरु पम्पा हम्पा; उन्,  
 ३२८)। दक्षिण्य नदीभेद, दक्षिण देवको एक नदी  
 धोर उदीर्ध ममोय्य एक नाल तथा नगर जिनका उक्त  
 रामायण धोर महाभारतमें इस प्रकार धाया है—पम्पा  
 नदीन लगा दृषा ऋषामुक्त पवत है। ये दोनों कथा है,  
 इसका ठीक ठीक निधय नहीं दृषा है। विनमन माहवने  
 लिखा है, कि पम्पा नदी ऋषामुक्त परतमे निकल कर  
 तुङ्गभद्रा नदीमें मिल गई है। रामायणमे इतना पता तो  
 धोर लगता है, कि मनय धोर ऋषामुक्त दोनों पर्वत पास  
 हा पास धे; उतुमान्ने ऋषामुक्त मनयगिरि पर जा  
 कर रामसे मिलनेका हतान्त सुपोवने कहा था। पाज  
 कलत्राद्वार राज्यमें एक नदीका नाम पम्पे है जो  
 पश्चिम घाटसे निकलतो है। इस नदीकी वर्षावासे  
 'अनमलय' कहते हैं। अस्तु यही नदी पम्पानदी जान  
 पड़तो है धोर ऋषामुक्त पवत मो वही हो सकता है।  
 ऋषामुक्त देवो।  
 पम्पातोय—तीर्थभेद। यह वेङ्गी जिलेकी तुङ्गभद्रा  
 नदीके दक्षिणी किनारे हास्यानगरमें उपस्थित है।  
 पम्पापति देवो।

पम्प पति—गिर्वनिद्धभेद। यह विजयनगर राज्यके पन्ना-  
 गत हास्या नगरमें अवस्थित है। पम्पापतिने मन्दिरकी  
 कोरे कोरे विरुपाक्षदेवका मन्दिर कथते हैं।  
 पम्पापुर—एक प्राचीन नगर, विज्याचन एक समय इसी  
 नगरको सोमाके पन्तगत था। यहाँ प्राचीन पम्पापुर  
 नगरका दुर्ग धोर उसके लवरके स्तम्भादिका ध्वंसावशेष  
 देखनेमें आता है।

पंभ्वर—भारतवागियोंके मध्य दानरमपियोंकी एक  
 प्रकारकी विवाहप्रथा। इस प्रकारके विवाहमें स्त्रोके  
 लय खासीका कोरे अधिहार नहीं रहता। नाम  
 मावका विवाह के खासी  
 जाता है।



जलस्य वा घरा । १ स्त्रीस्तन । २ मेघ । ३ सुप्तक, मोघा ।  
 ४ कोषकार । ५ नारिकेल, नारियन । ६ क्षमी । ७ तडाग  
 तालाब । ८ पायकां शायन । ९ मटार, चकोवा । १० एक  
 प्रकारकी जड़ । ११ पर्वत, पहाड़ । १२ कोई दुग्धद्रव ।  
 १३ दोहा छन्दका ११वां भेद । १४ समुद्र । १५ क्षप्य  
 छन्दका २७वां भेद ।

पयोधरा--नदीभेद, एक नदीका नाम । यह अम्बईप्रदेशके  
 महमदनगर जिलेके कलम बुद्रुहण ग्रामके उत्तरमें प्रवा-  
 हित है । अभी यह नदी पवरा नामसे प्रसिद्ध है ।

पयोधम् (सं० पु०) पयो दधाति धा-भसुन् । १ मन्द्र ।  
 २ जनाधार ।

पयोधा (हि० पु०) पयोधम् देखो ।

पयोधारा (सं० स्त्री०) पयोर्धा जलाना धारा । १ जनधारा ।  
 पयसां धारा यत्र । २ नदीभेद ।

पयोधि (सं० पु०) पयसि धीयन्तेऽस्मिन्, धा-कि (कर्मण-  
 शिधनेच) वां शिशेः । समुद्र ।

पयोधिक (सं० स्त्री०) पयोधी समुद्रे कायति प्रकाशते  
 इति कै-क । समुद्रकल्प ।

पयोनिधि (सं० पु०) पयोमि निधीयन्तेऽस्मिन् धा-धारणे  
 अधिप्रणे कि । समुद्र ।

पयोमुख (सं० लि०) दूधपौता, दुधमुंजां ।

पयोमुख (सं० स्त्री०) पयो मुखति मुख-क्षिप् । १  
 जलमुख, मेघ । २ सुप्तक, मोघा ।

पयोऽन्ततीर्थ (सं० स्त्री०) तीर्थभेद ।

पयोर् (सं० पु०) पयो जलं रातीति रा-क । खदिर,  
 धैरका पेड़ ।

पयोक्षता (सं० स्त्री०) चोरविदारो, दूधविदारिकंद ।

पयोकाह (सं० पु०) १ मेघ, बादल । २ सुप्तक, मोघा,

पयोत्रध (सं० लि०) जलप्रावित, जलपरिवर्द्धित ।

पयोत्रम (सं० पु०) पयोमात्रपानसाध्यो व्रतः । पयोमात्र  
 पान रूप व्रतविशेष ।

“पुष्यं त्रिविधमावाय युगमन्यःतगदिकः ।  
 पयोत्रमस्त्रांनं स्वदेशेऽत्रापवापि वा ॥”

(मत्स्यपुराण १५२ अ०)

पुष्पतिथिमें त्रिरात्रमाध्य या एकरात्रमाध्य पयोत्रम  
 Vol. XII. 186

करना चाहिये । इस व्रतमें केवल जल पी कर रहना  
 होता है । यह व्रत दो प्रकारका है, पायमित्तानक चौर  
 काश्य । २ यज्ञदीक्षित व्रतभेद । इस व्रतका विषय भाग-  
 वतमें एव प्रकार लिखा है—प्रागुत्तमामने शयपक्षमें  
 प्रतिपत्तमे ले कर त्रयोदशी तक पयोत्र १२ दिन इस  
 व्रतका अनुष्ठान करना होता है । प्रातःकालको प्रातः  
 कृत्यादि करके समाहित चित्तमें भगवान् चोक्ष्य ही यथा-  
 विधान पूजा करने चाहिये । इस व्रतमें रोजन यद्यदाप  
 करके रहना होता है, इसमें इसका नाम पयोत्रग पटा  
 है । इन व्रतानुष्ठानके समय किसी प्रकारका भ्रमटा-  
 नाप वा अन्य किसी प्रकारका निषिद्ध कर्म करना मना  
 है । इस व्रतमें यौञ्ज्यका पूजा का प्रधान है । प्रग  
 समाप्त हो जाने पर ब्राह्मणभोजन चौर श्रावणतादि  
 उक्त्यव करना होता है । यह व्रत सभी यज्ञाचार व्रतमें  
 श्रेष्ठ है । इस व्रतमें निम्नलिखित मन्त्रमें प्राथना करने  
 होती है -

“स्वं देव्यादिवरादेव वरागाः स्थानमिच्छताम् ।  
 बुद्धयति नवरातुम्नं पानानं मे वराशय ॥”

भागवतके ८।१६ अध्यायमें इस व्रतका विवेक विष-  
 रण लिखा है ।

पयोत्र्य--नदीभेद । यह तापोरदोमें मिली है ।  
 (सारीख ७।१।४)

पयोष्णी (सं० स्त्री०) दिव्यावन्तके दक्षिण दिगामें प्रवा-  
 हित एक नदी । राजनिचण्डके मतमें इस नदीका जल  
 रुचिकर, पवित्र तथा पाप चौर मन्त्र प्रकरना पामय-  
 नाशक, सुगन्ध, बल चौर आन्तिप्रद तथा लघु माना गया  
 है । इसका वर्तमान नाम वायसुनि है ।

पयोष्णीजाता (सं० स्त्री०) पयोष्णी जाता यस्याः, द्यो-  
 टरादित्वात् साधुः । सरस्वती नदी ।

परंतु (हि० अर्थ०) एक शब्द जो किसी मापके माप  
 लभमें कुछ अल्पया स्थिति सूचित करनेवाला दूसरा माप  
 कहनेसे पहले लगा जाता है, पर, तोभा ।

परंदा (फा० पु०) १ पत्ता, चिट्ठी । २ एक प्रकारकी  
 हवादार भावकी आकारकी झीलें । चमत् ।

पर (सं० स्त्री०) (सूरी ।  
 ४ अर्थ ।





स्थान, दूररेकी कतिहा वणन । २ दूररेकी कति,  
दूररेकी जियां बुधा काम । ३ कामकाण्डमें दो पर-  
स्पर विरुद्ध वाक्कीकी स्थिति ।

परेशरी—बोलवंगीय एक राजा । कण्वेशरीय राजा  
इस्लामकके शासनमें इनका नामोल्लेख है । सम्भवतः  
वे ही मद्राजको कोरेशरी वर्मा हैं ।

परेशरीवतुषेदीमङ्गल—कावेरी नदीके तोरवर्ती एक  
ग्राम । कोरवोल नामक किसी युवराजने यह ग्राम  
१५ ब्राह्मणोंको दान दिया था ।

परेशरीवर्मा—बोलवंगीय एक राजा । कोई इन्हें  
कोर राजेश्वरदेव, कोई पूष चालुक्य वंगीय रय कुनी-  
पुत्र बोद्ध मानते हैं ।

पराकोटा ( हि० पु० ) १ किसी गढ़ या स्थानकी रक्षाके  
निये चारों ओर उठाई हुई दीवार । २ पानी घाटि-  
की रोशनेके निये खड़ा किया हुआ धुस, पांघ, चढ़ ।

परकम ( सं० पु० ) परवर्त्तिका ।

परकावण ( सं० पु० ) जहाभारतोल एक घोड़ा । मजा-  
भारतको लड़ाईमें ये कुकुरकी धारसे लड़े थे ।

परकालिका ( सं० स्त्री० ) योजनात्मिका ज्या ।

परकृष्ण ( सं० स्त्री० ) वेदादिमें लिखित छोटा काव्यता ।

परकेश ( सं० स्त्री० ) पक्ष चेरख पत्न्यादि । १ परपत्नी,  
परार स्त्री । २ पराया खेत । ३ दूररेका शरीर ।

परक ( हि० स्त्री० ) १ गुण दोष स्थिर करनेके लिय अच्छी  
तरह देख भाव, जांच, परीक्षा । २ कोई वस्तु भली  
है या बुरी, यह जान लेनेका शक्ति, पक्षान ।

परखना ( हि० क्ति० ) १ गुण दोष स्थिर करनेके लिये  
अच्छी तरह देखना भावना, परीक्षा करना, जांच  
करना । २ भला और बुरा पहचानना, कौन वस्तु कौनो  
है यह तावना । ३ प्रतीक्षा करना, इत्तभार करना,  
धायरा दिखना ।

परखाना ( हि० क्ति० ) परखाना देखो ।

परखवेया ( हि० पु० ) परखनेवाला, जांचनेवाला ।

परवाई ( हि० स्त्री० ) १ परखनेका काम । २ परखनेकी  
मजदूरी ।

परखाना ( हि० क्ति० ) १ परखनेका काम दूररेके कराना,

परीक्षा कराना, जांचवाना । २ कोई वस्तु देखे या सोचने  
समय उसे गिन कर या वनट वनट कर दिया देना,  
मङ्गलवाग, सम्भववाना ।

परखाम—मयुरः अनेके पक्षगत एक प्राचीन याम । यह  
पायरा नगरसे २५ मोल पोर मद्युगमे १४ मंजकी दूरी  
पर एक निम्न मूर्त्तिकाम्पुपके ऊपर स्थित है ।

यहां अष्टादशके मान्यके निये साधयाममें प्रति  
रविवारकी मेला मद्यता है । वर्धमानकालमें इस याम-  
की कोई विवेक उल्लेखयाग्य छटना नहीं रहने पर भी  
यहां शक राजाओंके समयकी पद्येय प्रक्षारमूर्त्तिकें  
पाई जाता है । इनमेंसे एक मयुपकी मूर्त्तिके अिमकी  
ऊंचाई ० फुट है । यह मूर्त्तिके पामी भग्नाप्याममें  
रहनेपर भी इसका पूष कार गठन पोर मद्युपता पात्र  
भाज्याकी तामी यमी है । इसके परिच्छेदादि स्तन्य है ।  
परयर्त्तिके शक-राजाओंके शासनकालमें खोदित मूर्त्तिके  
परिच्छेदमें भिन्न है । मनेमें एक प्रकारकी माला मटक  
रहा है । इसके गलेमें जो निधि खोदित है वही पाटर-  
की चोख है । समके पक्षर मन्नाट, पगीरके समयकी  
निधिके जेमें मालूम होते हैं । यह मूर्त्तिके शरी शताब्दी-  
की मनी हुई है, ऐसा जान पहना है । मूर्त्तिके दो हाथ  
टूट जानेसे यह किसकी मूर्त्तिके है, इसका पता नहीं  
चलता ।

परसुनी ( हि० स्त्री० ) पलड़ी देखो ।

परखंया ( हि० पु० ) परखनेवाला ।

परगांव—१ बम्बईप्रदेशके पुला जिलासर्गत एक याम ।  
यह पाटगमे ११ मोल उत्तर-पश्चिममें अवस्थित है ।  
यहां तुकारि देवाका एक मन्दिर है । देवाकी मूर्त्तिके  
तुलजापुरसे यहां लाई गई थी ।

२ याना जिनके पक्षगत एक याम । इसकी  
कीमा पर गदभ पोर हथो-मूर्त्तिकें स्थित है ।

परग ( हि० पु० ) पग, कदम, टग ।

परगत ( सं० क्ति० ) परं गतः हि० गतः  
तत् । परमात्, अपरगत ।

परगना ( फा० पु० ) एफ भूभाग  
याम है । पात्र कल एक



परद्वन ( हि० स्त्री० ) विवाहभी एक भेति । इममें बरात त्रय द्वार पर जाती है, तब कन्या पक्षका द्विवां वरके समीप जाती है और तबे दही, धूपत भी टीका लगाती, उषकी बाराती उतारती तथा उमके ऊपरसे मूखने वटा चादि घुमाती है ।

परद्वना ( हि० स्त्री० ) द्वार पर बरात लगने पर कन्या-पक्षकी स्त्रियोंका बरका धारता चादि करना, परद्वन चादि करना ।

परदा ( हि० पु० ) १ सव कपड़ा जिसमें तेलो कोरहके बिलको चाँदामें बंधीटी बांधते हैं । २ लुलाहीको मला जिम पर चल लपेटा जाता है, चलकी फिरकी, बिरनो । ३ बहुतसो बसुधाके घने समूहमेंसे कुछके निकल जानेसे पड़ता हुआ पक्काग, बिरलता, छोड़ । ४ घनेपन या भीड़की क्रमो, भाड़का छंटाव । ५ ममाति, निबटेरा, फेमता ।

परदाहं ( हि० स्त्री० ) १ प्रकाशके मार्गमें पड़नेवाली किमो विपद्का धाकार जो प्रकाशमें भिन्न दिशाका पार छाया या बंधकारके रूपमें पड़ता है, छायाकृति, २ लज, दुर्घण चादि पर पड़ा हुआ, निःसा वदाय का पूर्ण प्रतिरूप, धवन ।

परदाह ( स० स्त्री० ) परस्य दिह । परदाय, दूसरेका दैव ।

परज ( हि० स्त्री० ) १ एक रागिनो जो गाथार, धनाथी और साहके मेलमें धनो दुई माना जाती है । ( वि० ) २ परजात, दूसरेमें उत्पन्न । ( पु० ) ३ बोकल, कोयल ।

परजवट ( हि० पु० ) परजोट देखो ।

परजा ( हि० स्त्री० ) १ प्रजा, रंथन । २ धार्मिकजन, कामधंधा करनेवाला । ३ जमादारकी जमान पर बसनेवाला या खेतो चादि करनेवाला, बनाराम ।

परजात ( स० त्रि० ) परेष जातः, परपुटत्वात् सधात्वं । १ पत्नीपत्न, दूसरेमें उत्पन्न । ( पु० ) २ कौकिल, कोयल । यह कथिधं पालो बोधी जाती है, रबीमें इमको परजात कहते हैं । ३ दूसरी जातिना मनुष्य । ४ दूसरी विरादाका चादमी ।

परजाता ( हि० पु० ) भागतवर्षमें मिमनेवाला एक प्रकारका

पेड़ । इमको पत्तियां पांच हः बंगुल लंबी और चार बंगुल चौड़ी होती हैं । ये पानीकी और बहुत नुकीली होती हैं और इनके किनारे मोमकी पत्तीके किनारोंकी तरह कुछ कुछ कटावदार होते हैं । केवल फलके निचे जो इमके पेड़ लगाने जाते हैं । फूल गुच्छोंमें लगते और छोटे छोटे तथा छोडोदार होते हैं । लड्डिका रंग लाल या नारंगो और दनीका रंग सफेद होता है । सुखी दुई डाढ़ियोंकी उधाल कर पीना रंग निकालते हैं, यह पेड़ गरट चतुर्में फलता है । फल बराबर भडुते रहते, पेड़में काम ठहरते हैं । पत्तियां दवाके काममें जाती हैं और बहुत गरम होती है । ऐसा देखा जाता है, कि जबरमें भोग प्रायः परजातेकी पत्तो देते हैं । इमका दूसरा नाम धरनिगार भी है ।

परजाति ( स० स्त्री० ) दूसरी जाति ।

परजित ( स० त्रि० ) परेष जितः । १ परपुट । २ शत्रुमें पराजित ।

परजोट ( हि० पु० ) १ यह मानाना किराया जो मकान बनानेके लिए लो दुई जमीन पर लगी । २ घर बनानेके लिए मानाना किराए पर जमीन जिते देनेका नियम । परस्य स० घय० ) १ घोर भी । २ परन्तु, लेकिन, तो भी ।

परज्ज ( स० पु० ) परं जयतीति जि-जये यादुलगात् ह । १ तं नाना-पेत्रय वन्द्य, तेन परनेका कोदहू । २ दुर्गोका फल । ३ फिन ।

परज्जन ( स० पु० ) परायाः पश्चिमस्थाः दिगो जनः स्वामा, निपातनात् पाधुः । वरष ।

परज्जय ( स० पु० ) परं पश्चिमा दिगं जयति स्वामित्येन जि पच्, पुं-बडावः सुम् व । १ बहव । २ शत्रुजय-कर्ता, शत्रुकी जीतनेवाला ।

परज ( स० त्रि० ) १ पार । २ पठन ।

परतंथा ( हि० स्त्री० ) पतन्धिका देखो ।

परतः ( हि० पञ्च० ) १ पन्थमें, दूसरेमें । २ पयाग, पोछि । ३ परे, पागे ।

परतःप्रमाप ( स० पु० ) जो स्वतः प्रमाप न हो, जिसे दूसरे प्रमापको पपेया हो ।

परत ( हि० स्त्री० ) १ मोटाईका के माव जो किसी उतहके



परदातेरवर - गिबनिद्रभेद ।

परदाटा ( हि० पु० ) प्रपितामह, दादाका बाप ।

परदांगनीन ( फा० वि० ) अन्तःपुरयामिनी, परदेमें रहने-वाली ।

परदार ( सं० पु० ) परस्य टाराः । परभार्या, दूसरेकी औरत ।

“परदारताश्चैव परदग्धराश्च ये ।

अपोऽप्यो नरके याति पीबन्ते नमस्किंकरैः ॥”

( कर्मलोचन ।

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यादि जो कोई मनुष्य परदार-गमन करता है, अच्छी उसके घरमें निकल जाते हैं । जो पालिस्टहीन स्त्रीकी परित्याग कर अन्य स्त्रीके साथ गमन करता है, उसके निरय नैमित्तिक और काम्यकर्म निष्फल होते हैं और अन्तमें उसे नरक होता है ।

( ब्रह्मसंहिता० धीहृत्वन जगत्सु० ६१ ७० )

परदारगमन ( सं० स्त्री० ) परस्त्री-गमन ।

परदारगामिन् ( सं० वि० ) जो परस्त्रीके साथ गमन करता है ।

परदारगमिगमन ( सं० स्त्री० ) परस्त्री गमन ।

परदारिक ( सं० वि० ) परदारानुसृत ।

परदारिन् ( सं० वि० ) परदार-गिनि । जो परस्त्रीके साथ गमन करती है ।

परदेयस ( सं० स्त्री० ) आजमे अथ दिव, कल, घरमें ।

परदेयता ( सं० स्त्री० ) परा अथ दैवता । परम देवता, अष्ट देवता, इष्टदेव ।

परदेग ( सं० पु० ) देगात् परः, वा परः भिन्नः देगः । १ अथ देग, दूसरा देग, विदेग । २ दाक्षिणात्यके अन्तर्गत स्थानभेद ।

परदेगी— १ बर्धने प्रदेशके अन्तर्गत अष्टमदुर्गगर शिला-वासी ब्राह्मण । ये लोग उत्तर-भारतमें धर्मोपलक्षमें यहाँ आते हैं, इस कारण परदेगी नाम पड़ा है । इनके मध्य गौड़, कनोज, मैथिल, मारवात और उज्जैनके गौड़ ब्राह्मण देखे जाते हैं । इनमेंमें फिर कश्यपदे, यजुर्वेदी, सामवेदी और अथर्ववेदी हैं । इन पाँच अष्टमदुर्गके मध्य परस्पर पाहार व्यवहार या विवाहमें आदान-प्रदान प्रचलित नहीं है । लेकिन कन्याके पिता यदि

पागातोत पर्यट्टे सते. तो इनकी कन्या उच्च कुलमें ब्याही जा सकती है । परदेगीके मध्य प्रधानतः चाण्ड-रम, दुर्धन्वि, भरद्वाज, काश्यप आचार्यन और यमिष्ठ गोत्र देखे जाते हैं । समानगोत्र, होने पर भी अनेकोंके मध्य विवाह नहीं होता । इनके मध्य अग्निदेवी, शार-पेयी, सोई, दूबे, मित्र, पांडि, पाठक, मुद्ग, तिरारो, विवेदी इत्यादि उपाधिवाँ देखे जाते हैं । पाहार व्यवहार बहुत कुछ हिन्दू, ब्राह्मणके जैसा है । पुण्य लोग मराठी ब्राह्मणोंके जैसा पांडो उपाधि हैं, पर रमणिनां आज भी दिन्दुत्वानो रमणोकी पोगाक, करने और भीरने खाटिका व्यवहार करी है ।

परदेगी ब्राह्मणोंमें किंगने तो ऐसे हैं जो एक ही ग्राम स्थान हैं । मरुतो, मांस या मद्य पीने छुँने तक भी नहीं । लेकिन गाँजा और भंग खाँनेमें छोटे पापति नहीं करते । ये लोग ब्राह्मणोंघितप्रत सपथामादि वानन करने, पर जीविकादिवाँके निर्ये कितनेने पुरुषाभूकमने मीम-वृत्ति, कृषिक और मोटागर खाटिका कार्य चयमरन किया है । दाक्षिणात्यमें वाम करने पर भी ये लोग पूर्ये दिन पठो-पूजा न कर हरेँ दिन पठिपूजा करते हैं ।

दाक्षिणात्यमें ब्राह्मणके साथ इनका पाहार-व्यवहार प्रचलित नहीं है, लेकिन पापममें प्रनवान चनता है । इन लोगोंको पशुध्या उतनो वराज नहीं है । ये लोग छो-मिच्छाके विरोधी हैं, पर पृथाटिकी यवपुत्र क विपना पठना गिहाने हैं ।

२ गोलापुर, मतारा वादि अञ्चलमें परदेगी कर्णनेमे माभारततः दिन्दुत्वानने पाये हुए ब्राह्मण और राजपूत दोनों ही जातिका बोध होता है । इन मध्य परदेगीयोंमेंमें कोई भी इस अञ्चलमें म्यायोक्षयमें काम नहीं करता, इन कारण ये स्त्रियोंको साथ नहीं लाते हैं । सभी देगीय रमणो रवते हैं । उनके गर्भमें जो मलानादि प्रस-जिते हैं, उनके प्रति ये लोग उतमा प्रेम नहीं रखते । लेकिन जो लोग यहाँ विवाह करके बस गये हैं, उनको बात धरतल है । पर ऐसे परदेगी बहुत कम देगमें पाते हैं । इनके पुत्रादि बहुत कुछ मराठी भाषाप्रथ हैं । लेकिन जो देगमें आते हैं, उनका पाहार-व्यवहार



परंतु ( हि० अक्ष० ) परंतु देना ।  
 पंचपत्रक ( हि० वि० ) मायावो, मलेहिया, फनादी  
 परपंचो ( हि० वि० ) १ धूल, मायावो । २ फनादी,  
 मलेहिया ।

परपल ( सं० पु० ) १ त्रिकद पल, त्रिविधगीहा टन । २  
 त्रिपलकी धान, मतका त्रिराध करनिवानेको वत ।

परपट ( हि० पु० ) समतल भूमि, सीधेप मैदान ।

परपटी ( हि० स्त्री० ) पर्वटी हिनो ।

परपत्रिका ( सं० स्त्री० ) छुद्रचक्षुष्य ।

परपट ( सं० स्त्री० ) परं अष्ट पद । १ अष्टस्थान, मुक्ति ।

परप्य परेषां वा पदं । २ परराष्ट्र ।

परपराना ( हि० स्त्री० ) मिर्च खादि कटुई चोत्रोभा जोम  
 या शरीरके शीत किर्मी भागमें एक विंगेप प्रकारका सप  
 संवेदन उत्पन्न करना, तीक्ष्ण लगना, चुनचुनाना ।

परपराष्ट ( हि० स्त्री० ) परपरानेका भाव, चुनचुनाष्ट ।

परपाकनिष्ठ ( सं० पु० ) परार्थात् पाकात् निष्ठः । परो-  
 हेमश्च, पाकरहित, जो दूसरेके सहैश्वर्यमें भोजन न  
 निकाले, पशुपक्ष में करनेवाला ।

परपाकरत ( सं० पु० ) परस्य पाके रतः । परपाकहृत्, वह  
 जो स्वयं पशुपक्ष करके दूसरेका दिया पक्ष भोजन करके  
 रहै ।

मिताक्षरामें लिखा है, कि जो समरे सठ कर पशुपक्ष  
 समान करके परास द्वारा जोविकामिर्वाह करता है, उसे  
 परपाकरत कहते हैं । परपाकरत और परपाकनिष्ठका  
 पक्ष छानिसे चन्द्रायण करना होता है ।

"परपाकनिष्ठस्य परपाकरतस्य च ।

अन्वस्य च सुहृत्त्वानां द्विजश्चाश्रायणप्रवरेत् ॥"

( मिताक्षरा )

परपाजा ( हि० पु० ) पाजा या दादाका बाप, पितामह-  
 का पिता, प्रपितामह ।

परपार ( हि० पु० ) सम चोरका सट, दूसरी तरफका  
 किनारा ।

परपिच्छाद् ( सं० स्त्री० ) परस्य पिच्छं अर्थात्किं पत्तोति  
 पदपक्ष् । परान्नोपजोषां, परान्नभोजो, दूसरेका पत्र  
 का कर जोनेवाला ।

परपेक्षक ( सं० पु० ) १ दूसरेको पोहा या दृष्ट पक्ष्वादे-

वाका । २ पराई पोहाको समझनेवाला ।

परपुरश्चय ( सं० पु० ) मत्र पुरजिता, मत्रका देग जोतने-  
 वाना ।

परपुरव ( सं० पु० ) परः अष्टः पुरुषः । १ त्रिणु । २  
 अन्यपुरुष । ३ छपनामक ।

परपुट ( सं० पु० ) परेषु कालेन पुटः पालितः । फोहिन,  
 कोयल । कायन अपने पंकेका घिसलेप निकाल कर  
 कावक घोलनमें दे दतो है । कौवा उसे अपना चंटा  
 ममभ कर पालता-पोसता है । इस प्रकार कावक प्रति-  
 पालित होनेके कारण कायनको परपुट कहते हैं ।

परपुटमहाभाव ( सं० पु० ) परपुटाना कोकनाया महा-  
 त्त्ववा यत् । भास्व, आमका पंहु ।

परपुटा ( सं० स्त्री० ) परेषु परपुरुषेषु पुटा पालिता । १  
 परायवा, वंश्या, रंडा । २ परमाका, बादा ।

परपूटा ( हि० । अ० ) पक्ष, पक्षा ।

परपूर्वा ( सं० स्त्री० ) पराश्रयः पूर्वामतां यस्याः । वह  
 स्त्री जो अपने पहल पतिना छोड़ दूसरा पति कर  
 लता और मत्तता दो प्रकारकी परपूर्वा कहो गई है ।  
 नारदन इसके मात मंद बतलाय है - तोम प्रकारकी  
 पुनर्भू भार चार प्रकारका खीरयो ।

परपात्र ( हि० पु० ) प्रपात्रका पुत्र, पतिके बेटेका बेटा ।

परपोरवतन्त्र ( सं० पु० ) विद्यामित्रके एक पुत्रका नाम ।

परप्रणय—शचिबभुगलरत्नमानाक प्रणया ।

परप्रातनम ( सं० पु० ) प्रातनमः परः अन्तरः । हृद-  
 प्रपात्र ।

परप्रपात्र ( सं० पु० ) प्रपात्रात् परः अन्तरः, बाहुलकात्  
 पर-निरातः । हृदप्रपात्र ।

परप्रथ ( सं० पु० स्त्री० ) परपा इत्य । १ दास ।  
 २ दासी ।

परपुल्लिन ( हि० पु० ) मरुत देवता ।

परपंड ( हि० पु० ) नावका एक मत् । समन दासी पर  
 द्रम प्रकार लड़के लते हैं, कि हमर पर दासी कुदनिया  
 सटी रहतो हैं ।

परप ( हि० पु० ) १ संकेता । ( स्त्री० ) २ तिनो रस वा  
 जवाहिरका छाटा ट कड़ा ।

परपत्ता ( हि० पु० ) पहाड़ी तोता वा सुव्या । यह देयो



परदेशी ( हि० पु० ) अन्य देशनिवासी, विदेशी ।  
 परद्वय ( सं० श्लो० ) पर्याय दुःखं । परया दुःख, दुःख-  
 की तकलीफ ।

परद्वक ( सं० पु० ) काक, कौवा ।  
 परद्वयवा ( सं० श्लो० ) प्रतिपत्न्य, गतिधन ।  
 परदेविन् ( सं० त्रि० ) परेभ्यो द्रोष्ट पर-दिद-णिनि । १  
 विद्वक । २ परदेष्टा, परद्वयक, खन ।  
 परधर्म ( सं० पु० ) परः श्रेष्ठः धर्मः । १ परमधर्म, श्रेष्ठ  
 धर्म । परस्य धर्मः । २ दूतका धर्म ।

“श्रेयान् स्वधर्मं निजो परधर्मं स्वमुचितात् ।  
 स्वधर्मं नियन् श्रेयः परधर्मो भयावहः ॥” (गीता ३।३१।४)

गीतार्थ भगवान् श्रीकृष्णने शुकजीको उपदेश दिया  
 है कि सम्पूर्ण रूपसे परधर्मं अनुष्ठित होनेकी अपेक्षा  
 कथञ्चित् पक्षपाति होने पर भी स्वधर्मसाधन श्रेष्ठ है ।  
 परधर्म अत्यन्त भयगङ्गुल है । तात्पर्य यह कि ब्राह्मण,  
 क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र ये चारों वर्ण तथा ब्रह्मचर्य,  
 गार्हस्थ्य, धानप्रस्थ और मन्वासा ये चारों आश्रमविहित  
 धर्म ही मनुष्यके निजोचित धर्म हैं । तदवस्था ब्राह्मण-  
 का धर्म है, किन्तु वह क्षत्रियका धर्म नहीं है—पर-  
 धर्म है। युद्ध करना क्षत्रियका धर्म है, ब्राह्मणका पर  
 धर्म है। केवल भगवान्नाश नामकीर्तनादि ब्राह्मणका  
 धर्म है, यह प्राणिसाधका ही स्वधर्म है। वर्णाश्रमो-  
 चित मन्त्र, देवता आदि कर्माङ्गीको छोड़ कर जो धर्म  
 किया जाता है, वह विगुण होने पर भी सम्यक् प्रकारसे  
 अनुष्ठित परधर्मकी अपेक्षा भी श्रेष्ठ है। परधर्म निज  
 प्रकृतिविरुद्ध है, इससे स्वधर्मसाधनपूर्वक प्रकृतिना-  
 शिमोच्य करते करते चरम हो जाने पर भी मङ्गल होता  
 है। परधर्म कभी भी शुभफलद नहीं होता। जो प्रकृति-  
 विरुद्ध है उससे क्या कभी शुभफल मिल सकता है ? कभी  
 नहीं। भगवान्की इस उपदेशका तात्पर्य यह है, कि  
 किसीकी परधर्मापुष्टान नहीं करना चाहिये; करनेसे  
 पद-पदमें दुःख होता है।

परधाम ( सं० पु० ) १ यजुष्यधाम, परलोक । २ ईश्वर,  
 विष्णु ।  
 परधान ( सं० श्लो० ) परं श्रेष्ठं ध्यानं । १ ध्यानविशेष,  
 श्रेष्ठ ध्यान । परस्य ब्राह्मणं ध्यानं दक्षापरं ब्रह्मविद्यया

ध्यानमिति । २ ब्रह्मचिन्तन । पर्याय ध्यानं । ३ दूसरेका  
 चिन्तित चिन्तन ।

परनः ( हि० पु० ) १ शूद्रक पादि दासीको बजाते समय  
 मुख्य धोनीके बीच बीचमें बजाए जानेवाले धोनीके  
 तबल । २ प्रतिज्ञा, टेक । ३ चादत, अभ्यास ।  
 परपेठ ( हि० श्लो० ) दुःखोकी तीसरी मजल ।  
 परगोता ( हि० पु० ) पुत्रके पुत्रका पुत्र, पोतेका बेटा ।  
 परपौरो—मध्यदेशके रांथपुर जिलास्तगत दुर्ग तन्मोक्ष-  
 का एक सामान्यराज्य । यहाँके सरदार गोजु जातिके  
 हैं । १ म राज्यमें कुल २४ ग्राम लगते हैं । भूपरिमाण  
 ३२ वर्गमील है ।

परनामा ( हि० पु० ) नानाका पिता ।  
 परनानो ( हि० श्लो० ) नानोकी माता ।  
 परनाम ( हि० पु० ) प्रणाम देखो ।  
 परनाला ( हि० पु० ) यह मार्ग जिससे घरमेंका मल या  
 पानी बह कर बाहर-निकल जाता है, पनाला, मोरो ।  
 परनालो ( हि० श्लो० ) १ छोटा परनाला, मोरो । २  
 अच्छे घोड़ोंकी थोठका नीवापन जो उनको तेजी प्रकट  
 करता है ।

परनि ( हि० श्लो० ) चादत, टेप ।  
 परनिपात ( सं० पु० ) परच निपातः उच्चारणं । समास-  
 विषयमें पौष्टि निपात अर्थात् उच्चारण होता है। जैसे  
 ‘दन्ताना राजा’ या ‘पर विभक्तिका लाप हो कर ‘दन्त-  
 राज’ ऐसा पद होता उचित था; लेकिन परनिपात हो कर  
 अर्थात् दन्त शब्द राजन् शब्दके पौष्टि उच्चारित हो कर  
 रा-दन्त ऐसा पद हुआ । ‘राजदन्तादिपु पर’ इस सूत्रके  
 अनुसार परनिपात हुआ है ।

परना ( हि० श्लो० ) रंगिका मद्योन पत्तार जिनमें सुनहली  
 या लहली चमक होती है और जिनमें मनावटके लिये  
 चिपकाते हैं, पना ।

परनोत ( हि० श्लो० ) नमस्कार, प्रणाम, प्रणति ।  
 परन्तप ( सं० त्रि० ) परान् शूद्रान् तापयताति तप-खच-  
 च्चिच्छः (शिवपुरकोशात्) । पा ३।२।२८ ततो मुन् । १  
 १ परतापी, शूद्रोंको ताप देनेवाला, धैर्योकी दुःख  
 देनेवाला । २ शिताभ्युत्थ । (पु०) ३ विन्तामण । ४ तामस  
 भगुके एक पुत्रका नाम ।

परन्तु ( हिं० अथवा० ) परंतु देखो ।  
 पाप चक्र ( हिं० वि० ) मायावी, भ्रष्टेष्टिया, फसादी ।  
 परपंचो ( हिं० वि० ) १ धूर्त, मायावी । २ फसादी, भ्रष्टेष्टिया ।  
 परपत्र ( सं० पु० ) १ त्रिरुद्ध पत्र, विरोधियोंका पत्र । २ विपक्षीको धात, मतका विरोध करनेवालेको पत्र ।  
 परपट ( हिं० पु० ) समतल भूमि, सीमा मैदान ।  
 परपटी ( हिं० स्त्री० ) परंपटी टिनो ।  
 परपत्रिका ( सं० स्त्री० ) छद्मपत्र छाप ।  
 परपद ( सं० स्त्री० ) परं योष्टं पदं । १ योष्टस्थान, मुक्ति । परस्य परेषां वा पदं । २ परराष्ट्र ।  
 परपराना ( हिं० स्त्री० ) मित्रं खाति कछुई चोर्जाशा जोम या शरीरके भीरु किमी भागमें एक विरुद्ध प्रकारका उद्यम संवेदन उत्पन्न करना, तोच्छा लगना, चुनचुनाना ।  
 परपरानाहट ( हिं० स्त्री० ) परपरानेका भाव, चुनचुनाहट ।  
 परपाकनिष्ठत्त ( सं० पु० ) परार्थात् वाकात् निष्ठत्तः । परोद्देशक, पांकरहित, जो दूसरेके उद्देश्यके भोजन न निकाले, पक्षयज्ञ से करनेवाला ।  
 परपाकरत ( सं० पु० ) परस्य पाके रतः । परपाकरुचि, वह जो अन्न पक्षयज्ञ करके दूसरेका दिया अन्न भोजन करके रहे ।

सिताहरामें लिखा है, (क जो समरेके उठ कर पक्षयज्ञ समाप्त करके परात्र द्वारा जीविकामिर्वाह करता है, उसे परपाकरत कहते हैं। परपाकरत चोर परपाकनिष्ठत्तका अन्न खानेसे चन्द्रायण करना होता है ।

“परपाकनिष्ठतस्य परपाकरतस्य च ।  
 अथस्य च मुद्गत्सागं द्वित्रदवाश्रायणञ्ज्वरेत् ॥”  
 (सिताहरा)

परपाजा ( हिं० पु० ) पाजा या दादाका चाप, पितामहका पिता, प्रपितामह ।  
 परपार ( हिं० पु० ) सम चोरका तट, दूसरे तरफका किनारा ।  
 परपिच्छाद ( सं० स्त्री० ) परस्य पिच्छं अघाटिकं पत्तोति । पदपत्रं । पराग्नोपजीवी, पराग्नभोजी, दूसरेका चरन खा कर जीनेवाला ।  
 परपीडक ( सं० पु० ) १ दूसरेको पीड़ा या दुःख पहुंचानेवाला । २ पराई पीड़ा को समझनेवाला ।  
 परपुरस्त्रय ( सं० पु० ) ग्रन्थ पुरजेता, ग्रन्थका देग जीतनेवाला ।  
 परपुरष ( सं० पु० ) परः योष्टः पुरुषः । १ विष्णु । २ अन्त्यपुरष । ३ सपनामक ।  
 परपुट ( सं० पु० ) परेषु कालेन पुटः पालितः । फौजिन, कायक । कायल अपने पंढेका धर्मिलेन तिकास कर कायक वीरपत्ने दे दतो है । कावा उभे अथवा पंढे समझ कर पालना-पोषना है । इस प्रकार कायक प्रतिपालित होनेके कारण कायकको परपुट कहते हैं ।  
 परपुटभक्षाभव ( सं० पु० ) परपुटाना कीरुना मद्योत्सवा यत्र । भान्न, पामका पंड ।  
 परपुटा ( सं० स्त्री० ) परस्य परपुटपथ पुटा पालिता । १ पराश्रया, वंश, रंडा । २ परगाहा, बाँटा ।  
 परपुटा ( हिं० । अ० ) पत्र, पत्रा ।  
 परपूर्वा ( सं० स्त्री० ) पराऽन्यः पूर्वाभता यस्या । वह स्त्री जो अपने पहले पतिको छोड़ दूसरा पति करे । क्षता भार मक्षता दो प्रकारका परपूर्वा कहो गई है । गारदने इसके सात भेद बतलाये हैं - ताग प्रकारका पुनर्भू भार चार प्रकारका स्वरिचो ।  
 परप्रात्र ( हिं० पु० ) प्रप्रात्रका पुत्र, पतिके धेटिका बेटा ।  
 परपोरवतन्त्र ( सं० पु० ) विद्यामित्रक एक पुत्रका नाम ।  
 परप्रथम—शिवधूगनरत्नमालाक प्रथमा ।  
 परप्रातनम ( सं० पु० ) प्रतिपत्तः परः अन्तरः । हृद-प्रप्रात्र ।  
 परप्रात ( सं० पु० ) प्रप्रातात् परः पत्न्याः, बाह्यकात् पर-निगतः । हृदप्रप्रात्र ।  
 परप्रथ ( सं० पु० ) परयां प्रथ । १ दास । २ दानो ।  
 परपुलिन ( हिं० पु० ) प्रकृत देवता ।  
 परषदे ( हिं० पु० ) मावहा वह गत । समन दानां परं इस प्रकार खुद्रे रखते हैं, हिं इसपर दोनो कुदगियां बटा रहती हैं ।  
 परस ( हिं० पु० ) १ । २ । ३ । (वा०) १ । २ । ३ । रस वा लवाहिका छाटा ट कटा ।  
 परक्षता ( हिं० पु० ) पराक्षी क्षीमा

वाला । २ पराई पीड़ा को समझनेवाला ।  
 परपुरस्त्रय ( सं० पु० ) ग्रन्थ पुरजेता, ग्रन्थका देग जीतनेवाला ।  
 परपुरष ( सं० पु० ) परः योष्टः पुरुषः । १ विष्णु । २ अन्त्यपुरष । ३ सपनामक ।  
 परपुट ( सं० पु० ) परेषु कालेन पुटः पालितः । फौजिन, कायक । कायल अपने पंढेका धर्मिलेन तिकास कर कायक वीरपत्ने दे दतो है । कावा उभे अथवा पंढे समझ कर पालना-पोषना है । इस प्रकार कायक प्रतिपालित होनेके कारण कायकको परपुट कहते हैं ।  
 परपुटभक्षाभव ( सं० पु० ) परपुटाना कीरुना मद्योत्सवा यत्र । भान्न, पामका पंड ।  
 परपुटा ( सं० स्त्री० ) परस्य परपुटपथ पुटा पालिता । १ पराश्रया, वंश, रंडा । २ परगाहा, बाँटा ।  
 परपुटा ( हिं० । अ० ) पत्र, पत्रा ।  
 परपूर्वा ( सं० स्त्री० ) पराऽन्यः पूर्वाभता यस्या । वह स्त्री जो अपने पहले पतिको छोड़ दूसरा पति करे । क्षता भार मक्षता दो प्रकारका परपूर्वा कहो गई है । गारदने इसके सात भेद बतलाये हैं - ताग प्रकारका पुनर्भू भार चार प्रकारका स्वरिचो ।  
 परप्रात्र ( हिं० पु० ) प्रप्रात्रका पुत्र, पतिके धेटिका बेटा ।  
 परपोरवतन्त्र ( सं० पु० ) विद्यामित्रक एक पुत्रका नाम ।  
 परप्रथम—शिवधूगनरत्नमालाक प्रथमा ।  
 परप्रातनम ( सं० पु० ) प्रतिपत्तः परः अन्तरः । हृद-प्रप्रात्र ।  
 परप्रात ( सं० पु० ) प्रप्रातात् परः पत्न्याः, बाह्यकात् पर-निगतः । हृदप्रप्रात्र ।  
 परप्रथ ( सं० पु० ) परयां प्रथ । १ दास । २ दानो ।  
 परपुलिन ( हिं० पु० ) प्रकृत देवता ।  
 परषदे ( हिं० पु० ) मावहा वह गत । समन दानां परं इस प्रकार खुद्रे रखते हैं, हिं इसपर दोनो कुदगियां बटा रहती हैं ।  
 परस ( हिं० पु० ) १ । २ । ३ । (वा०) १ । २ । ३ । रस वा लवाहिका छाटा ट कटा ।  
 परक्षता ( हिं० पु० ) पराक्षी क्षीमा

नोतिमे वडा होला री घोर दमके दोनो डोनों पर साल  
दाग होते है, करमेन ।

पारधन ( हि० वि० ) परधन देखो ।

परधान ( हि० पु० ) चाँदनी वनक पर वक फलमू  
निकला हुआ खान या बिरनी जिमके कारण बहुत पीडा  
होती है ।

परधी ( हि० स्त्री० ) पधका दिन, उक्तवका दिन ।

परधीग ( हि० वि० ) प्रधीन देखो ।

परधेन ( हि० पु० ) प्रधेन देखो ।

परधीघ ( हि० पु० ) प्रधीघ देखो ।

परधीधना ( हि० क्लि० ) १ ज्ञानीपदेग करना । २  
जगाना । ३ प्रमोष देना, टिलाना देना, तमली देना,  
ममभाना ।

परधमन् ( म० स्त्री० ) पर धमन् । १ निशुण्ण निरुवाधिक  
धमन् । इसका विषय धमन् रश्मि देखो । २ तत्पतिपाठक  
उपनिषद्दे ।

परभाग ( म० पु० ) परस्य श्रेष्ठस्य भागः । १ शुण्णोत्कर्ष,  
पच्छापन । २ सुसम्पद । ३ शिवाय, उचा हुआ भाग ।  
४ पश्चिम भाग । ५ दूरसो घोरका भाग ।

परभायोपजीवी ( म० वि० ) दूरसोकी कमाई वा कर  
रहनेवाला ।

परभात ( हि० पु० ) प्रभात देखो ।

परभाती ( हि० स्त्री० ) प्रभाती देखो ।

परभापा ( म० स्त्री० ) मंस्कृत भिन्न अर्थ भापा ।

परभुक्त ( म० वि० ) परेण भुक्तः । अपर कष्टक भुक्त, दूरसो  
भोगा हुआ ।

परभुक्ता ( म० स्त्री० ) परेण परभुक्तेण भुक्ता । अर्थ पुरुष-  
सभोगविगिता, दूरसो भोगी हुई स्त्री । अन्नवेचर्त्त-  
पुराणमें लिखा है, कि जो परभुक्ता स्त्रीका उपभोग करता  
है, वह जब तक अर्थ घोर चन्द्रमा पृथ्वी पर रहने में, तब  
तक नरकमें वाम करता है । परभुक्ता स्त्री देख, पैठर  
पादि किमी कार्यमें पाक करनेकी योग्य नहीं है ।  
भक्तो अन्धभुक्ताके चालिद्वन्द्वे कनेत्रो हो जाता है, उस-  
के तर्पणादि ममो निरकन होते है ।

परभृत् ( म० पु० ) परान् कौकिलान् विभर्त्ति भृत्कृत् ।  
तुगागमः । १ काक, कौया । ( वि० ) २ परजगत्पोषक,  
दूरसोको पालनेवाला ।

“वीरगि हि पथि न सति दिगति मिथी ।

ने शरद्विषाः परधतः गरितोऽप्यनु इव ॥”

( गानवत २।२।५ )

परभृत् ( म० पु० ) परेण भृत्ः पुटः । १ कौकिल, कौयल ।  
( वि० ) २ अन्धपुटमात्र ।

परभृत् ( म० वि० ) परस्य भृत् । अन्धका चक्षुष, दूरस-  
को सेवा करनेवाला ।

परभृ ( म० अन्ध० ) पु-पूर्त्तो भृम् । १ नियोग । २ श्रेय ।  
३ पद्यात् । ४ कित्तु । ५ पश्चिम, ज्यादा ।

परम ( म० अन्ध० ) अन्धत्वात्, हाँ ।

परम ( म० वि० ) परं उरकष्टं मातीति मा-क ( अतो-  
ऽनुवर्गो कः । पर ३।२।४ ) १ पर, उरकष्ट, जो बहुत-  
का हो । २ प्रधान, मुख्य । ३ अत्यन्त, सबसे बड़ा चदा,  
कदमे ज्यादा । ४ भाव्यः, पाठिम । ( पु० ) ५ महादेव,  
मित्र । ६ विष्णु ।

परम—१ कौतुकनीलावतीके प्रथिता । २ यदुमपिके पुत्र  
घोर प्रयागके पोत । इन्होंने १५२५ ई०में राजा सुहृद्-  
सेनकी विजय घोषणा कर सुहृद्विजय नामक एक  
अन्धकी रचना की ।

परमज्ञान्ति ( म० स्त्री० ) सूर्यमिहान्तोक्त, सूर्यकी शेष-  
ज्ञान्ति ।

परमक्रोधिन् ( म० पु० ) १ विश्वदेशभेद । ( वि० ) २  
अत्यन्त क्रोधान्वित ।

परमगति ( म० स्त्री० ) परमा गतिः । १ सुक्ति, मोक्ष  
( वि० ) २ मोक्षहेतु ।

परमगम ( म० पु० स्त्री० ) परमधामो गौघति । अत्र  
गामि, सुन्दर गाय ।

परमजा ( म० स्त्री० ) प्रकृति ।

परमज्या ( म० पु० ) इन्द्र ।

परमट ( हि० पु० ) सन्नोतमें एक ताल ।

परमणि ( म० पु० ) राजपुत्रभेद ।

परमतस्त्र ( म० पु० ) १ मूलतस्त्र जिसमें सम्पूर्ण विम-  
का विकारा है, मूलमत्ता । २ अन्न, इन्द्र ।

परमट ( म० पु० ) सरायाजन्य रोगभेद, अत्यन्त अर्थ  
पोनेमें होनेवाला एक रोग । इसमें शरीर भारी रहता  
है, सुईका खाद विगदा रहता है, अंश अधिक संगती  
है, माथे घोर शरीरके जोड़ोंमें दर्द होता है ।

परमदेव—हिन्दू ध्यानवाणी एक प्रभावशाली राजा ।  
 राजनीति मक्षमूट सोमनाथकी जीत कर जब त्रदेग  
 कोट रहे थे, उस समय इन्होंने महान्य उन पर आक्रमण  
 किया था ।  
 परमदेवी ( स० स्त्री० ) १ श्रृष्टादेवी, महादेवी । २  
 महाभारत और महाराजकी महिषीकी उपाधि ।  
 परमधाम ( स० पु० ) वैकुण्ठ ।  
 परमस्यु ( स० पु० ) कक्षियुकी पुत्रभेद ।  
 परमपद ( स० पु० क्तो० ) पद्यते ज्ञानिभिः प्राप्यते इति  
 पदं, परमं पदं कर्मधा० । १ श्रेष्ठ स्थान । २ परम-  
 देवताचरण ।  
 परमपिता ( स० पु० ) परमेश्वर ।  
 परमपुरुष ( स० पु० ) परमः श्रेष्ठः पुरुषः । पुरुषोत्तम,  
 विष्णु ।  
 परमपूजिक ( स० पु० ) शक्तिन, पकोम ।  
 परमफल ( स० पु० ) १ सबसे उत्तम फल या परिणाम ।  
 २ भोज, मुक्ति ।  
 परमपुरुषो—मन्दाजादेगके मठुरा जिलान्तर्गत रामनाद  
 तालुकका एक नगर । यह अक्षां ८° ३१' उ० और  
 देशां ८८° ४२' पू० के मध्य अवस्थित है । यहाँ कपड़े  
 बुननेका एक बड़ा कारखाना है ।  
 परमवन्दनीजम—एक हिन्दू कवि । ये महाभारत रचने-  
 वाले थे । इनका जन्म स० १८०२में हुआ था । इन्होंने  
 नवमिषवर्णन बनाया है जो उत्तम है ।  
 परमब्रह्मधारिणी ( स० स्त्री० ) दुर्गा ।  
 परमब्रह्मण्य ( स० पु० ) यह जो ब्रह्मारी पूजा करते हैं,  
 ब्रह्मके उपासक ।  
 परमभट्टारक—महेश्वर मान्यके पात्र, महाराजाधिराज,  
 एक हजुराबाणोंकी उपाधिभेद ।  
 परमभट्टारिका—राजमहिषियीकी सम्मानसूचक उपाधि ।  
 परमभागवत—भगवान् विष्णुकी उपासना करनेवाले,  
 वैष्णवोंकी साम्प्रदायिक उपाधि । धर्मप्राण प्राणोत्त  
 हिन्दू राजगण और प्रधान वैष्णवाचार्य गण इस प्रकार-  
 की सम्मानसूचक उपाधि पाते थे ।  
 परममहत् ( स० वि० ) परमं सर्वोत्कृष्टं महत् । सबसे  
 बड़ा और व्यापक । काल, यात्रा, पाकाग और दिक्-

ये सर्वांगत श्रेष्ठके कारण परममहत् कहलाते हैं ।  
 मैत्री मन्त्रिभाषणा द्वारा जब चित्त निर्मल होता  
 है, तब एकधता अभ्यास सिद्ध होता है । उस  
 समय चित्त तथा परमाणु तथा परममहत् सब जगद  
 स्थिर हो जाता है । सुप्रसन्न परमाणुमे से कर लक्ष्मण  
 पयत्त सभी वस्तुएं उभके पाद्य, प्रकाश और वज्र हो  
 जाती हैं ।  
 परमागाधेश्वर—महेश्वरकी उपासना करनेवाले, गेयोकी  
 साम्प्रदायिक उपाधि ।  
 परमभय ( स० पु० ) जननिद्रित तक्र, पानी मिठा दूधा  
 गढ़ा ।  
 परमद्विदेव परमान्त—१ बुद्धलक्ष्मण प्रसन्नत  
 महाभा प्रदेग एक राजा । ये चन्द्रलक्ष्मणोय राजपुत्र  
 थे । प्रथममय राजकन्याकी चरण कर दिशोभर घृष्टो-  
 राज भागी जार रहे थे, उस समय जिनोंने घृष्टोराजकी  
 सहायता की थी, उन्हें परमान्ते वसुध भजन दिया ।  
 यथा मे वरदानमे वनघोर युद्ध छिड़ा । गिरावा नामक  
 स्थानमें घृष्टोराजने परमान पर आक्रमण किया । युद्ध-  
 में चन्द्रनराजकी शक्ति देना मारो गईं और परमान्ते  
 साधार हो कर उन्हें दिशोभरकी शरण लेने पड़ीं ।  
 गिरि विरहः न यथाश्रेयसं कं सदर्शने इमे ।  
 परमर्षि ( स० पु० ) परम्यगामी ऋषियेति । १ वेदशा-  
 नादिवर्ष ।  
 परम्यपुराणमें लिखा है, कि विद्या, मन्त्र, तपस्या  
 और वेद ये सब जिनमें हैं उन्हें ऋषि और ती ऋषिकी  
 अपेक्षा समधिक ज्ञानशाली हैं उन्हें परमर्षि कहते हैं ।  
 २ गीनादिवर्षविशेष । ( त्रिबन्ध २।८।१ )  
 परमल ( हि० पु० ) १ ज्वार या गेहूँका एक प्रकारका  
 भुना दूधा दाना या चनेका । परमल देवो ।  
 परमल—एक कवि, गदरके पुत्र । इन्होंने श्रीपालक्या  
 नामक एक अनपत्यकी रचना की ।  
 परमप्रेषुव—विष्णुके प्रधान उपासक । साम्प्रदायिको-  
 जितित प्रानीन हिन्दू राजाओंकी इमे प्रकारकी उपाधि  
 देयी जाती है ।  
 परमशिवाचार—मिहान्भूति-प्राणिका नामक पद्य-

रममिन्द्र-परमहंस—एक विष्णुगत पंडित, अभिनव-  
नाथसिद्ध-परमहंसके गिण । इनमें घोटसारसंस्कार  
नामकः पौर गिणमन्त्रनामभाय नाम च दो पत्नी-  
का रचना थी ।

परमसुख—एक विख्यात ज्योतिषिद, मोन रामके पुत्र ।  
इनके बनाए हुए पत्र ये मंत्र पाये जाते हैं—गर्भसो-  
रमाटोहा, अक्षरानिर्बंध, परागटोका, बालवीनिना-  
नामक ज्योतिष्यमासाटीक, योजयिष्टसिक्तव्यता,  
सुगर्भपदांतीका, यन्त्रमणिकाटोका, रमलक्षरव्य,  
रमलक्ष्य पौर शम्भु क्षाराप्रकाशिका ।

परमसोदर—सुगत अर्थात् सुदक्ष उपासक । प्राचीन बौद्ध-  
धर्मावलम्बी भारतवाय राजापीमि भा यह उपाधि देखा  
जाती थी ।

परमसूतो—सर्वश्रेष्ठ राजा, राजचक्रवर्ती ।

परमहंस ( म० पु० ) परमः अष्टः हंस, साडहं आत्मा  
यस्य । मन्त्रासावगोप, मन्त्राभिर्याता एक भेद । परम-  
हंस-उपनिषद्क मतमें, जो ब्रह्म वेदान्तादिमें पूर्णानन्द  
परमात्मा कह कर लिखित हुए हैं, में जो वह ब्रह्म हंस  
ऐस अनुभवकारा योग परमहंस ही कृतत्व है ।

जान पौर ब्रह्म एकत्वज्ञानके कारण उनमें  
भेदबुद्धि नहीं रहती । यही एकत्वबुद्धि दोनों आत्मा-  
का भास्वद उत्पन्न होता है, इस कारण अज्ञान है । वह  
अज्ञान रात्रि पौर दिनके अस्वभावमें अनुभूतयमान  
क्रियाकी तरह है । सभी काम छोड़ कर वह तत्राग्रस ही  
परमस्वति है । जो ज्ञानदण्डधारण करते हैं, अर्होंको  
एक दण्ड कहते हैं । फिर जिसके ज्ञान नहीं है, सभी  
वस्तुसिद्धि आया है, वह काष्ठदण्डधारः महारोष  
नामक धार नरकमें पत जाता है । जो इनका प्रसार  
जान कर अर्थात् ज्ञानदण्ड पौर काष्ठदण्डका भेद  
समझ कर उसमें प्रवृत्त अरण करते हैं वही परम-  
हंस कहलाते हैं ।

इनका मन्त्र—जो सिद्धन्द, निराग्रह, सर्वदा तत्र  
मार्गमें मन्त्रक. मन्त्रम पौर सहचरित हैं, जो केशसनाय  
यथासमय प्राणधारणोपयोगी निवारणित द्वारा प्राणिक  
जलाते हैं, नामानाममें जिनका समानज्ञान है, जो  
गुन्यागार, देवगृह, लक्ष्मण, मन्थोक, हनुमन्त, कुलास-

आत्मा, अग्निहोत, नदीपुलिन, गिरिकुहर पौर कन्दरादि-  
में प्रवृत्त करते हैं, जिनके किसी प्रकारका यत्न नहीं  
है, जो निर्मम, एकव्यंगप्रायण, अज्ञानमित्र हैं तथा जो  
समागम कर्मोंका निम्न करनेके लिये संन्याम द्वारा  
देहत्याग करते हैं, अर्होंको परमहंस कहते हैं । जो  
दिव्यश हैं, जिन्हें किसीको भी समझकर करना नहीं  
पड़ता, जिनके लिये याद्विदि पितृकार्य भी अनावश्यक है  
पौर जिनके निकट निन्द्य तथा हस्तुति त्याग नहीं पातो,  
ऐसे विशेष भिन्न ही परमहंस कहलाते हैं । जिन्हें  
दुःखमें लगे पौर सुखमें प्रमत्त नहीं है, राम  
अर्थात् रञ्जन हेतुमें जिनका त्याग है पौर जिनके निकट  
हृदयप्रणम प्रण नहीं पता, जो किसीमें भी द्वेष नहीं  
करते पौर न प्रतिकर वस्तु देख कर प्रमत्त ही होते हैं,  
जो सर्वदा आत्मा ही प्रवृत्तान करते हैं, वे ही योगी  
हैं । कुटोचर, ब्रह्मदक, हंस पौर परमहंस इन चार  
प्रकारके अवधूतोंमें परमहंस श्रेष्ठ हैं ।

“अधुना-अधुनात्तु द्वयोर्द्वय उच्यते ।  
त्रयोऽन्ये भोगयोग्याः सुव्रताः सर्वे शिषोपमाः ॥”

( महाभारत )

परमहंस होनेमें पहले यज्ञोपवीत प्रभृति चिह्न छोड़  
कर कौपोनादि धारण करने होते हैं । मृतसंहितामें  
लिखा है—परमहंसको त्रिदण्ड, गोवालमिश्रित रज्जु,  
अलपवित्र शिष्य, पवित्र कमण्डलु, अजिन, सुषो, मृच्छ-  
निद्रा, क्षपाणिका, गिष्ठा पौर यज्ञोपवीत आदि छोड़  
देना चाहिये, केवल कौपीन, पाच्छादन वस्त्र, शीत-  
निवारिका, कप्या, योगपट, वहिर्वस्त्र, पादुका, पङ्कत-  
छत, अचमाला पौर क्षिद्रादिहोत वेषवदण्ड धारण  
करना चाहिये ।

जिनपरमिभुमें लिखा है—परमहंसोंके मध्य जो  
अविदान् है अर्हें एकदण्ड धारण करना चाहिये । विद्वान्  
परमहंसको दण्डादि कुछ भी धारण करना नहीं पड़ता ।  
मृतसंहितामें लिखा है कि परमहंसको सर्वदा  
प्रथममन्त्रका जप करना चाहिये । क्योंकि प्रथममें तीनों  
वेद परमवसित हुए हैं । अर्हें निर्जन स्थानमें समाहित-  
चित्तसे यथाशक्ति समाधििका अवलम्बन करना चाहिये

परमहंसांको 'तत्त्वमसि' इत्यादि महावाक्यका भव-  
लक्षण कर सर्वदा आत्मज्ञानका अनुभूति करना  
उचित है। 'मोऽहं गिबोऽहं' इत्यादि वाक्य कह कर  
इन्हें तत्त्वज्ञानावलम्बनका परिषय देना चाहिये।

एक चार प्रकारको उपायकोंको चत्वारिंशत्क्रिया भी  
एक-सो नहा है। निष्कर्मसिद्धिमें परमहंसको विषयमें  
को लिखा है, वह इस प्रकार है—

परमहंसाका देशावसान होने पर उनका गौरव  
न जला कर जमीनमें गाड़ देना चाहिये। किन्तु  
वायुमें हितको मतमें परमहंस भिन्न अन्य तीन प्रकारके  
संन्यासीको पहले जमीनमें गाड़ कर, पीछे दाह करना  
चाहिये। केवल परमहंसको मृतदेहको जमीनमें गाड़  
सकते हैं। उनको मृत्युमें प्रगोच नहा होता और न  
जलाक्रिया हो जाता है।

साधारणतः परमहंस संन्यासी हो हम लौकिक नयन-  
गोचर होते हैं, शेष तीन प्रकारके संन्यासी बहुत  
कम नजर आते हैं। प्रधानतः परमहंस दो प्रकार-  
का है, दण्डो और भवभूत। जिन्होंने दण्डका त्याग कर  
परमहंसायम भवसम्बन्ध किया है, वे दण्डपरमहंस  
और जो भवभूत-वृत्तिका अनुष्ठान कर शेषमें परमहंस  
हो गये हैं, वे भवभूत-परमहंस कहलाते हैं। यद्यपि दो  
प्रकारके परमहंस केवल प्रणवको उपासना किया करते  
हैं। साधुभाका कहना है, कि परमहंसांका ज्ञान ही  
एकमात्र दण्ड है। यद्यपि वे लोग शीकारके उपासक  
और तत्त्वज्ञानके अवलम्बी हैं, तो भी प्रयोजन पढ़ने पर  
कोई कोई देवप्रतिभृत्तिकी पचना करते हैं, किन्तु  
वह नमस्कार नहीं करते। इनके मध्य भी कोई कोई  
सुरापान किया करते हैं। भक्तावभूत दो प्रकारका है,  
पूर्ण और अपूर्ण। पूर्ण भक्तावभूतको परमहंस और  
अपूर्णको परित्राजक कहते हैं।

महानिर्वाणतन्त्रके अष्टमोऽध्यायमें लिखा है—  
'तत्त्वमसि महाशक्त हंसः गोऽहं विभावय।  
निष्कामो निरहङ्कार स्वभावान् सुखं चर ॥'  
गिष्ण इस प्रकार महात्मन् प्रणव कर चणिको पाल-  
नकर समर्पित। तन्त्रके मध्य उल्लिखित ब्रह्मसम्बन्ध उप-  
देश देनेकी व्यवस्था है। किन्तु संन्यासी लोग संपरा-  
Vol. XII. 189

पर इस प्रकार सर्व-प्रतिपादकं निम्नलिखित सचिदा-  
नन्दका मन्त्र ग्रहण किया करते हैं।

"ओम् गोऽहं हंसः परमहंसः परमाणा देवाः।  
विष्णवः चन्द्रिदलन्दरवः गोऽहं हंसः।"

श्री। मैं वही हंस, परमहंस, परमात्मादेवता हं,  
मैं वही ज्ञानमय सचिदानन्दरूप परमेश हूँ।

हम मन्त्रको एक मायवी भा है जिनका अन्वय  
कर जप करना होता है। वह मायवी ही है—'गो  
हंसाय विद्महे परमहंसाय धीमहि तन्नो हंसः प्रचो-  
दयात्।' श्री। जिनमें हंसमें ज्ञान ही, परमहंसको  
चिन्ता करें, यद्यपि हम मांसांको प्रदाय जाजने।

जावानोपनिषद्में संवत्सक, भस्त्रिण, श्रंतंशु,  
दुर्धामा, श्रुत, निदाघ, जडभरत, दत्तात्रेय और वैश्वदेव  
आदि परमहंस नाममें वर्णित हुए हैं। वे भी ग पत्या-  
लिङ्ग, अन्वयाधारा और उन्नत नहीं होते हुए भी  
उन्नतवत् आचरण करते हैं। (जावालक १) परमहंस-  
का विद्वत् विवरण हंसोवागवत्, जावानोपनिषत्, एत  
संज्ञिता, नारदपञ्चरात्र, परमहंससांख्य, निष्कर्मसिद्धि  
आदि ग्रन्थोंमें लिखा है।

२ परमाणा। ३ तत्त्वप्रतिपादक उपायपद्धति।  
परमा ( सं० स्त्री० ) चव्य, पद।  
परमा ( सं० स्त्री० ) गामा, दीप, शू, यद्युत्तमा।  
परमाशय ( सं० स्त्री० ) परमा आशय यथा। परमाशय।  
परमाटा ( सं० पुं० ) १ संघोत्तम एक शब्द। २ एक  
प्रकारका चिन्ता, चमकीला और दृश्या उपाय। पर-  
माटा आश्रित्यलयन एक शब्द है। आश्रित्यलयन यथा-  
से जिन जगती रक्षता होती या उसमें एक प्रकारका  
कपड़ा बनता या। उस कपड़ेका ताना चुनका  
और बाना ऊनका डाला या। उसीको परमाटा कहते  
हैं। लेकिन सब परमाटा चुनरा ही बनता है।

परमाणु ( सं० पुं० ) परमः सर्वपरमकः अणुः। सर्वा-  
पङ्क्त परिमाणयुक्त वैश्वेदिकमतनिन्द्य चिति, जल, तैल  
और वायुका सूक्ष्मांशभेद, अणु, जल, तैल और वायु इन  
चार भूतोंका वह अणु ही होता है। जिनमें फिर विभाग

० हंस शब्दका अर्थ शिव, सूर्य, विष्णु, परमाणा इत्यादि  
है। इन सब मन्त्रोंमें हंस ब्रह्मप्रतिपादक है।

नहीं हो सकते। यह परमाणु नित्य चौर निरवयव है। परमाणु ही चौर चौरों पटाघों ही नहीं है।

“नित्यामिन्वा य एा द्वेषा निष्वा एववचुत्तशया।  
अनिष्वा तु नदःसा एवव गैवावदवयोगिनी ॥”

( माधवविर )

परमाणु नित्य चौर अनित्य है। इसमें अनुत्पत्तयानि तथा चौर सभी अनित्य हैं। यह अवयवयोगिनी है। गद्यात्मार्ग ही का सूर्यकिरण पट्टनेमें उभमें जो छोटे छोटे रजःक्षय टैपनेमें पति है, उसके लठे भागका नाम परमाणु है।

“आत्मन्तर ते मानै बह सूक्ष्मं दस्यते रशः।

भास्वतस्य च पद्मी वः परमाणुः ग इत्यनेन ॥”

( तर्कसूत्र )

भाग करते करते जिनका फिर विभाग नहीं हो सकता, वही परमाणु है। परमाणु प्रत्यक्ष नहीं होता, परमाणुद्वय संयुक्त ही कर द्वाणक चौर त्वावरेणु होनेमें तब प्रत्यक्ष होता है। सावयव द्रव्यके अवयवोंको विभाग करते करते जहाँ विभागका शेष होगा, जिनका फिर विभाग नहीं किया जायगा अथवा जो फिर विभक्त नहीं हो सकता, उसका नाम परमाणु है। यह परमाणु चार प्रकारका है—भौम, जलीय, वैजसु चौर आयवोय। लव जगत् सृष्ट होता है, तब प्रथमतः चट्टकारणोंमें वायवोय परमाणुमें क्रिया उत्पन्न होती है, यह क्रिया वायवीय परमाणुको परस्पर संयुक्त करती है। इस प्रकार संयुक्त होनेमें द्वाणक उत्पन्न होता है। क्रमशः त्वाणक, चतुराणक इस प्रकार वायुको उत्पत्ति हुआ करती है। इसी प्रणालीमें क्रमशः अग्नि, जल चौर पृथ्वी आदिकी सृष्टि होती है। प्रत्येकजन्में इस प्रकार-परमाणुके विभक्त होनेमें ही सभी भूतजका नाम होता है, जेवन परमाणु मात्र रह जाता है। ऐसी अवस्थाको प्रलय कहते हैं। परमाणु परिमाणका कारणत्व नहीं है।

वैज्ञानिक टर्गजमें जो परमाणु नाममें व्यवहृत होता है, साव्यदार्शनिक मतमें यह तन्मात्रके त्रैमा पदुमिग होता है। यह तन्मात्र वा परमाणु स्यूक्त भूतत्पदक चौर भौतिक-जगत्का उपादान-कारण है। संख्या

तन्मात्र शब्द भौतिक है, तत् + मात्र अर्थात् जेवन वा वही। जे गार्थिक लोग जिन प्रकार पार्थिव परमाणुका ज्ञातोप परमाणु चौर तेषु परमाणुका विविध विविध नामोंमें व्यवहार करते हैं, उसी प्रकार संख्याचार्य भी गन्ध-तन्मात्र रसतन्मात्र आदि विविध विविध नामोंको काममें लाते हैं। तन्मात्र शब्दको तरह परमाणु शब्द भौतिक है, परम + अणु अर्थात् पति सूक्ष्म। परिमाण, मोन प्रशारका है, अणु, मध्यम चौर महत्। इसका प्रथम सुदृतामोषक चौर स्थीय सुदृत्वबोधक है। प्रथम परिणाम चौर महत् परिणाम शक्ति यत्परोनास्ति ही लठे, तो उमें ज्ञानमेंके निगे उम अणु चौर महत् शब्दों पद्वेन एक परम शब्द-का प्रयोग होता है। इसीमें यत्परोनास्ति म सूक्ष्म वस्तुका नाम परमाणु है, इसी प्रकार सुदृत् परिणामका नाम परमसुदृत् है। परमाणुका दूसरा नाम है परिमण्डल चौर सुन्धातु। शास्त्रान्तरमें यह मूलाभूत नामों परिभाषित हुआ है।

परमाणु चौर तन्मात्र यही दो-पदुमिग पटाघों है, परमाणुका अनुमान इस प्रकार है—सूक्ष्म वस्तुमात्र ही विभाज्य है। जो विभाज्य है, उसका अंग हुआ करता है। वस्तु विभक्त होनेमें उमें पृथक्-पृथक् अंगोंमें व्यवस्थित-कृति देखा जाता है। यह भी देखा जाता है, कि प्रत्येक विभक्त अंग प्रत्येक विभाज्यको अपना मूला-ज्वा धारण करता है, इस प्रकार जहाँ मूलप्रताका शेष होगा, वह अविभाज्य चौर अवयवमूल्य वस्तु ही परमाणु है।

वैज्ञानिकोंके मतमें—आकाश जिन प्रकार अमीम चौर अन्तना है, परमाणु भी उसी प्रकार अणुमौय, अमीम चौर अन्तना है। महाप्रलयमें यह, लक्ष्य, तारका, सागर, मोन आदि समस्त विश्व विध्वस्त होने पर उनके परमाणु, आकाशगर्भमें मिश्रित वा लिपि रहते हैं। वैज्ञानिक टर्गजमें मतमें परमाणुके अणुत् उत्पन्न हुआ है। कथाद सृष्टिप्रक्रियाको जगद कहते हैं, कि सभी परमाणु प्रत्यावस्थामें निवचन रहते हैं। लव सृष्टिका आरम्भ होता है, तब ये सब परमाणु जोयायाके प्रभावमें अचल हो जाते हैं। वे ल्यों ही अचल होतें हैं, रहीं ही संयुक्त होने लगते हैं। पौके द्वाणक, त्वाणक आदि रज्योंमें समुद्र

अहंत्वत् उत्पन्न होता है। इस मतमें गिरि, नदी, मनु-  
 श्रादिविगिष्ट ये सभी विश्वब्रह्माण्ड भावयव हैं। जिस हेतु  
 भावयव है उसी हेतु इसका पाद्यत्व है, उपासि और  
 प्रत्यक्ष दोनों ही हैं। कार्यमात्र ही सकारण है, बिना  
 कारणके कोई कार्य नहीं होता, परमाणुरागि हा जगत्-  
 का कारण है। कणादका कहना है, कि क्षिति, जल, तेज  
 और वायु ये चार भूत भावयव हैं। सुतरां परमाणु भी  
 चार प्रकारका है। जिस कालमें यह पृथिव्यादि चरम  
 विभागमें विभक्त होती हैं अर्थात् परमाणु ही जाता है,  
 उसी कालका नाम प्रलय है। प्रलयकालमें चरम अवयव  
 अन्त परमाणु ही रहता है, उस समय फिर अवयवों  
 नहीं रहता। सृष्टिकालमें इसी परमाणुमें जगत्को  
 उत्पत्ति होती है। जिस समय दो परमाणुमें द्वायुक्त  
 उत्पन्न होता है, उसी समय परमाणुनिष्ठ द्वादि गुण-  
 विगेष जो शुक्रादि नामने प्रसिद्ध है, वह अन्य शुक्रादि  
 गुणविगेष उत्पन्न करता है। केवल परमाणु ही अन्य  
 गुण है—परिमाणुद्वय (परिमण्डल—परमाणु, परमाणु  
 का परिमाण है। द्वायुक्तमें अन्य परिमाणुसला नहीं उत्पन्न  
 होता। द्वायुक्तका परिमाण अणु और ऊल है। द्वायुक्तादि  
 क्रममें स्थूल भूतोत्पत्ति होती है। (वैशेषिकद०)

वेदान्तदर्शनमें परमाणु-कारण-वाद निराकृत हुआ है।  
 भगवान्, गङ्गाचायं परमाणुमें जगत्को सृष्टि हुई है,  
 यह स्वीकार नहीं करते। उन्होंने कणादके इस मतकी  
 श्लाघा साधित किया है। यद्यपि पर बहुत मंजिषमें इस  
 विषयकी चालोचना की जाती है। भगवान् गङ्गाचायं-  
 का कहना है, कि परमाणु रागि या तो प्रवृत्तिसम्भाव  
 है या निवृत्तिसम्भाव, या उभयसम्भाव अथवा अनुभव  
 सम्भाव अर्थात् नित्यत्वभाव। वैशेषिकों इन चार  
 प्रकारमेंमें एक प्रकार अवयव ही स्वीकार करना होगा,  
 किन्तु इन चार प्रकारोंमें किसे भी प्रमाणात् उत्पन्न  
 नहीं होता। प्रवृत्तिसम्भाव हीमें प्रलय ही ही नहीं  
 सकता और फिर निवृत्तिसम्भाव हीमें सृष्टि भी नहीं  
 हो सकती। एकाधा पर प्रवृत्ति और निवृत्ति ये दोनों  
 एक नहीं सकती। नित्यभाव हीमें नैमित्तिक-प्रवृत्ति  
 निवृत्ति तो हो सकती है, पर तत्पतके निमित्त सभी हैं  
 अर्थात् काल, पद और ईश्वर-रक्षा, नित्य तथा नियत

मनिहित है। सुतरां उस पक्षमें भी नित्य प्रवृत्ति  
 भी। नित्य निवृत्तिकी प्रवृत्ति ही सकता है। पदटादि  
 कारण निवयवकी अव्यवत्तत्त्व अथवा अनित्य कहनेमें  
 भी नित्य प्रवृत्तिका प्रवृत्ति होती है। अतएव पर-  
 माणु कारणवाद मयदा युक्त है। भावयव द्रव्यका मय  
 विभाग ही परमाणु है। वैशेषिकोंका यह कल्पना  
 नित्यात् अयुक्त है, क्योंकि उनका कहना है, कि द्वादि-  
 मान, परमाणु, नित्य है और वे ही भूतभौतिक पदाद्यं-  
 के चारभक्त हैं। द्वादि कहनेमें ही परमाणुमें प्रचल  
 और नित्य इन दोनोंका वैपरीत्य पाया जाता है  
 अर्थात् वैशेषिकके परमाणु, परम कारणविद्या स्थूल  
 और अनित्य यही उपनय्य होता है, किन्तु यह उनके  
 अभिप्रायके विपरीत है। द्वादि रहनेमें उसमें जो स्थूल  
 और अनित्यत्व रहता है वह लोभोंमें दृष्ट होता  
 है। यह सब जगत् देखा जाता है, कि द्वादिमद्वय  
 मयो-सकारणविद्या स्थूल और अनित्य है। वैशेषिकोंका  
 परमाणु भी द्वादिमान है। जिस हेतु द्वादिमान, है  
 उसी हेतु उसका कारण (मून) है और परमाणु उस  
 कारणकी प्रविद्या स्थूल तथा नित्य है, यह सबजमें  
 प्रतीत होता है। वैशेषिककारने जो पक्षके निरयता-  
 साधनके निवे 'अविद्या च' यह मूल कथा है, वह उनके  
 मतमें अणु-नित्यता का दृश्य कारण है। यदि अणु-  
 निरयतासाधक अणु अविद्यागण्डकी ऐसी व्याख्या कथ्यत  
 हो कि दृश्यमान स्थूलकार्य (जन्मदृश्य) का मूलकारण  
 प्रत्यक्ष ही दृश्य ही नहीं होता अर्थात् वह अव्यवत्त  
 है, तो उसी कारण उसका नाम अविद्या है। यह अविद्या  
 अणु-नित्यताका अन्त्यतम हेतु है। 'अविद्या च' इस मूल-  
 का अर्थ कथित प्रकार हीमें द्वायुक्त और नित्य ही  
 सकता है। "अविद्या परमाणुविषयकी नित्यता व्यापन  
 करनेमें समर्थ है" ऐसी व्याख्या करनेमें भी निश्चिन्तकमें  
 अणु नित्यमित्य नहीं होगा। कारण यह है, कि विनश्वर  
 अणु अर्थात् दो कारणोंमें नष्ट होती है। अन्य प्रकारमें  
 नष्ट नहीं होते, ऐसा कोई नियम ही नहीं है। यदि  
 पारम्भ गण्डके बहु अवयव मंयुक्त हो कर द्रव्याकार उत्पन्न  
 करता है, ऐसा अर्थ हो, तो उस नियममें विनाशकी  
 निधि ही हो सकती है, पर विषयवर्जित



नहीं हो सकते। यह परमाणु, निम्न घोर निरवयव है। परमाणुमें सूक्ष्म घोर छोटे पटायों को नहीं है।

"निम्नामिका यथा ह्येषा निम्ना रजःपुत्रवत्तथा।

अत्रिमा तु सद्गन्दा रजः रीषाकचययोगिनी ॥"

(भाष्यारिः)

परमाणु निम्न घोर पतित है। इनमेंमें अतुल्यघणा निम्ना घोर सभी पतित है। यह पत्रघवयोगिनी है। गद्यासमानों को कर सुसुंकरण पट्टनेमें उनमें जो छोटे छोटे रजःकण देवनेमें पाते हैं, उसमें कठे भागका नाम परमाणु है।

'बालांतर ते गानौ यत् सूक्ष्म' रजःपुत्रः ॥

भाष्यतस्य न दधी सः परमाणुः य उच्यते ॥"

(सर्वायुग)

भाग करते करते जिनका फिर विभाग नहीं हो सकता, यही परमाणु है। परमाणु प्रत्यक्ष नहीं होता, परमाणुद्वय संयुक्त ही कर दृश्यक घोर तरनरेणु होनेमें तब प्रत्यक्ष होता है। सावयव द्रव्यमें चषयवर्षोंको विभाग करते करते जहां विभागका शेष होगा, जिनका फिर विभाग नहीं किया जादगा चषयवा जो फिर विभक्त नहीं हो सकता, उसका नाम परमाणु है। यह परमाणु चार प्रकारका है—भौम, जनीय, तैजसु घोर आयवोय। जब जगत् घट्ट होता है, तब प्रथमतः घट्टकारणोंमें घायवोय परमाणुमें किया उपपन्न होता है, यह क्रिया वायवोय परमाणुको परस्पर संयुक्त करती है। इन प्रकार संयुक्त होनेमें दृश्यक उदय होता है। क्रमशः त्रणुज, चतुरणुक इन प्रकार वायुको उत्पत्ति हुआ करता है। इसी प्रणालीमें क्रमशः पवित्र, जल घोर धूम्रों कातिको कट्टि होती है। प्रत्यक्षजानमें इन प्रकार-परमाणुमें विभक्त होनेमें ही सभी भूतोंका नाम होता है। जब परमाणु कण रक्ष जाता है। ऐसी चषयवा-को कण कहते हैं। कर्मका परिमाणका कारणत्व होती है।

ये विभिन्न कणों को परमाणु नाममें व्यवहृत होता है। कर्मका कर्म ज्ञानमें कर्म कर्मका है। जैसे पतुमित होता है। यह ज्ञानमें यह परमाणु कर्म भूतपदक घोर कर्मका कारण है। साव्यका

तन्मात्र गण्ट योगिक है, तत् + मात्र परमात् उच्यत या ततो। नै गायिक लोम त्रिष पका। धार्मि व परमाणुका जातीय परमाणु घोर तैजस परमाणुका विभिय विभिय नामोंमें व्यवहार करते हैं, उसी प्रकार भौत्याचार्य भो गन्ध-तन्मात्र रमण्यमात्र पादि विभिय विभिय नामोंको काममें लाते हैं। तन्मात्र गण्टको तरह परमाणु गण्ट योगिक है, परम + चण्ट उच्यत पति सुखा। परिमाणु, जौन प्रकारका है, चण्ट, मध्यम घोर महत्। इनका प्रथम दृष्टताधीभक भोः हसीय हृदचधीभक है। प्रथम परिणाम घोर महत् परिणाम गट्टि यत्परोनास्ति को लठे, तो उसी ज्ञानके लिये उस चण्ट घोर महत् गण्टमें चषसे एक परम गण्ट-का प्रयोग होता है। इसीमें यत्परोनास्ति मूक्ष्म यस्तुका नाम परमाणु है, इसी प्रकार हृदत् परिणामका नाम परमहृदत् है। परमाणुका दूवरा नाम है परिमण्डल घोर सुदधातु। शास्त्रान्तरमें यह मूक्ष्मभूत नाममें परि भाषित हुआ है।

परमाणु घोर तन्मात्र यही दो पतुमिय पटायों है, परमाणुका पतुमान इन प्रकार है—स्थूल चतुमात्र जो विभाज्य है। जो विभाज्य है, उसका चंग हुआ करता है। यत् विभक्त होनेमें लगे पृथक्-पृथक्, चंगोंमें व्यव-प्यत होते देखा जाता है। यह भी देखा जाता है, जि प्रत्येक विभक्त चंग प्रत्येक विभाज्यको सपिला मूक्ष्मा-कार धारण करता है, इन प्रकार जहां मूक्ष्मताका शेष होगा, यह चषविभाज्य घोर चषयवग्युय यत्तु जो पर-माणु है।

नै याधिकीके मतमें—पाकाग जिन प्रकार चषीम घोर पतना है, परमाणु भी उसी प्रकार पचपनीय, चषीम घोर पतना है। महाप्रलयमें यह, लक्ष्य, तारका, मागर, गोल पादि ममस्त मिश्र विध्वस्त होने पर सके परमाणु, पादाश्रयमें निहित या हिपे रहते हैं। नैवे-यिक दर्शनके मतमें परमाणुमें जगत् उदय हुआ है। कणाद सट्टिप्रक्रियाको जगत् कहते हैं, कि सभी परमाणु प्रव्यायव्यमि नियन रहते हैं। जब सट्टिका चारभ होता है, तब ये सब परमाणु जीवात्मके प्रभावमें मचन हो जाते हैं। ये कणों को मचन होते हैं, यहाँ ही भंयुक्त होने लगते हैं। पौष्टि दण्डक, त्रणुज पादि कर्मोंमें ववृद्ध

जड़जगत् उत्पन्न होता है। इस मतसे गिरि, नदी, मनु-  
द्वादिविगिष्ट ये सभी विश्वब्रह्माण्ड नाशयव है। जिह हेतु  
भावयव है उसो हेतु इमका भावयव है, उत्पत्ति और  
प्रलय दोनों हो हैं। कार्यमात्र हो सकारण है, त्रिना  
कारणके कोई कार्य नहीं होत, परमाणुरागि ही जगत्-  
का कारण है। कषाटका कषना है, कि चिति, जल, तेज  
और वायु ये चार भूत भावयव हैं। सुतरां परमाणु भी  
चार प्रकारका है। जिस कालमें यह पृथिव्यादि चरम  
विभागमें विभक्त होती हैं अर्थात् परमाणु हो प्रातो है,  
उमो कालका नाम प्रलय है। प्रलयकालमें चरम भवयव  
अनन्त परमाणु ही रहता है, उस समय फिर भवयवो  
नहीं रहता। सृष्टिकालमें उमो परमाणुने जगत्को  
उत्पत्ति होती है। जिस समय दो परमाणुने द्वाणु न  
उत्पन्न होता है, उमो समय परमाणुनिष्ठ रूपादि गुण-  
विशेष जो शुक्रादि नामने प्रसिद्ध है, वह अन्य शुक्रादि  
गुणविशेष उत्पन्न करता है। केवल परमाणुनिष्ठ अन्य  
गुण है—पारिमाणुल्य (परिमण्डल—परमाणु) परमाणु  
का परिमाण है। द्वाणुकमें अन्य पारिमाणुल्य नहीं उत्पन्न  
होता। द्वाणुकका परिमाण अणु और जल है। द्वाणुकादि  
क्रमसे स्थूल भूतोत्पत्ति होती है। (वैशेषिक०)

वेदान्तदर्शनमें परमाणु-कारण-वाद निराकृत हुआ है।  
मगवान् शङ्कराचार्य परमाणुसे जगत्की सृष्टि हुई है,  
यह स्वीकार नहीं करते। उन्होंने कषाटके इस मतको  
भ्रान्त सावित किया है। यहां पर बहुत संप्रियमें इस  
विषयकी आलोचना को जातो है। मगवान् शङ्कराचार्य-  
का कहना है, कि परमाणु रागि या तो प्रवृत्तित्वभाव  
है या निवृत्तित्वभाव, या उभयस्वभाव भयवा अनुभव  
स्वभाव अर्थात् नित्यस्वभाव। वैशेषिकको इन चार  
प्रकारमेंसे एक प्रकार भयव्य ही स्वीकार करना होगा,  
किन्तु इन चार प्रकारोंमेंसे किमो भी प्रकारका उत्पन्न  
नहीं होता। प्रवृत्तित्वभाव होनेसे प्रलय हो ही नहीं  
सकता और फिर निवृत्तित्वभाव होनेसे सृष्टि भी नहीं  
हो सकती। एकाधा पर प्रवृत्ति और निवृत्ति ये दोनों  
रह नहीं सकती। निवृत्तित्वभाव होनेसे नैमित्तिक-प्रवृत्ति  
निवृत्ति तो ही सक्तो है, पर तन्मतके निमित्त समो हैं  
अर्थात् काल, चट्ट और ईश्वररक्षा, नित्य तथा नियत

मनिहित हैं। सुतरां इस पक्षमें भी नित्य-प्रवृत्ति  
और नित्य निवृत्तिकी प्रावृत्ति हो सकती है। चट्टादि  
कारण निवृत्तिको अस्वतन्त्र भयवा अनित्य कषनेसे  
भी नित्य प्रवृत्तिको प्रावृत्ति होती है। अतएव पर-  
माणु कारणवाद भवदा प्रयुक्त है। सावयव द्रव्यका शेष  
विभाग हो परमाणु है। वैशेषिकोंको यह कल्पना  
नित्यत प्रयुक्त है, क्योंकि उनका कहना है, कि रूपादि-  
मान् परमाणु नित्य हैं और वे हो भूतभौतिक पदार्थ-  
के आरम्भक हैं। रूपादि कषनेसे हो परमाणुमें अणुत्व  
और नित्यत्व इन दोनोंका वैपरीत्य पाया जाता है  
अर्थात् वैशेषिकके परमाणु परम कारणपेचा स्थूल  
और अनित्य यज्ञो उपलब्ध होता है, किन्तु यह उनके  
प्रतिप्रायके विपरीत है। रूपादि रक्षनेसे उसमें जो स्थूल  
और अनित्यत्व रहता है यह लोगोंमें दृष्ट होता  
है। यह सब जगद देखा जाता है, कि रूपादिमदद्यु  
समो-सकारणपेचा स्थूल और अनित्य है। वैशेषिकोक्त  
परमाणु भी रूपादिमान् है। जिह हेतु रूपादिमान् है  
उमो हेतु उमका कारण (मून) है और परमाणु उस  
कारणको अपेचा स्थूल तथा नित्य है, यह सहजमें  
प्रतीत होता है। वैशेषिककारने जो अणुके नित्यता-  
साधने लिये 'अविद्या च' यह मूल कहा है, वह उनके  
मतसे अणु-नित्यताका द्वितीय कारण है। यदि अणु-  
नित्यताभाषक सत्त 'अविद्याशब्दको ऐसे व्याख्या सम्यत  
हो कि दृश्यमान् स्थूलकार्य (जन्मद्रव्य)का मूलकारण  
प्रत्यक्षके द्वारा गृहीत नहीं होता अर्थात् वह प्रप्रत्यक्ष  
है, तो उमो कारण उमका नाम अविद्या है। वह अविद्या  
अणु-नित्यताका अन्ततम हेतु है। 'अविद्या च' इस सूत्र-  
का अर्थ कथित प्रकार होनेसे द्वाणुक और नित्य हो  
सकता है। "अविद्या परमाणुनिवृत्तिकी नित्यता स्थापन  
करनेमें समथ है" उमो व्याख्या करनेसे भी नियतरूपमें  
अणु नित्यमिद्ध नहीं होगा। कारण यह है, कि विनष्टर  
दस्तु उन्हां दो कारणोंसे नष्ट होती है। अन्य प्रकारसे  
नष्ट नहीं होती, ऐसा कोई नियम ही नहीं है। यदि  
पारम्यशब्दके बहु भवयव संयुक्त हो कर द्रव्यान्तर उत्पन्न  
करता है, ऐसा अर्थ हो, तो उस नियमसे  
विधि तो हो सकती है, पर विधि

आत्मतत्त्वमक परमाण्वी विमोच चक्षुषा उपस्थित  
 भीमो वाग्म्य कल्प लय, तो वृत्तकारिण्यविना-  
 दा इति चक्षुष्य चक्षुष्यादि विनाशने भी विनाश-  
 का भीम मन्त्र नरी का मकता । चक्षुष्य परमाणुके  
 मन्त्रमिमे वंते विनाश को मूढ समिप्राय वा, मर  
 चक्षुष्य मन्त्रादि यो वर करकेने को विपर्यय दूषा  
 है । इसमें परमाणु कारकवाद मयुक्त है यथात् परमाणु  
 ही जो परम कारण है, मो नही । मन्त्रादि चरविद्येति  
 मय म कारण वाटके किमो किमो चंगको वैदिक और  
 मन्त्र यनादि चंगको उपप्राप्त्यार्थ माना है । किन्तु  
 परमाणु कारण शब्दका कोई भी चंग किमो भी  
 म् यथा चर-नेम नही दूषा है । इस कारण वैदवादीके  
 निकट परमाणु वाट चक्षुष्या चादयोप है ।

वेदव्याख्यान, 'वेदेपरदर्शन हीम मयु मन्त्रे विरल्लन  
 विरल्ल देखो ।

परमाणुवाद ( मं० पु० ) न्याय और वैशेषिकता यह  
 सिद्धांत कि परमाणुचोम जगत्की सृष्टि हुई है ।

परमाणु देखो ।

परमाणुवादो ( मं० पु० ) परमाणुचोमि योगमे सृष्टिकी  
 उत्पत्ति माननेवाला ।

परमाणुवादक ( मं० पु० ) परमाणुवाद यथा, सप्तः कप, ।  
 द्रव्य, विज्ञ, । परमाणु द्वारा जगत्की सृष्टि होती है,  
 इसमें परमाणु, द्रव्यरका चंग माना गया है ।

परमाणुक ( मं० वि० ) परमाणुत्व स्वार्थ-जन, । परमाणु-  
 रूप ।

मात्मन् ( मं० पु० ) परमः केवल आत्मा । परमप्र,  
 ईश्वर । परार्थ—परार्थोक्ति, सिद्धांत ।

"परमाणु परमाणु विद्युत् प्रमाणे परः ।

राज" आत्मनाम्य भोइसो मायान् स्वयं ॥"

( मन्त्रं० प्र० २३ मं० )

परमाणु-विषयमें दर्शनसम एमं मतभेद देखा जाता  
 है । अपकिष्ट और दर्शनसमूहमें यह त्रिय भावमें  
 चालोचित दूषा है, वही यही पर भिन्नमें निरदा जाता है ।

परमाणुका विषय कहनेमें पहले आत्माके विषयको  
 परिभाषना करना आवश्यक है ।

उपलब्धवादि माधान यथोमि केवलमात्र 'आत्मा'

मन्त्र द्वारा ही विभिन्न आत्माका विषय वर्णित दूषा है ।

दार्शनिक मोन प्रधानतः जीवाका चोर परमाणु यह  
 दो आत्माको गीकार करते हैं । कई मय वेदांगितकी-  
 ने देवन 'आत्मा' शब्द द्वारा परमाणुको ही समझनेकी  
 चेष्टा की है । परमाणु ही वेदान्ति की परमप्र है ।

जीवात्माको ज्ञाने विना परमाणुका स्वरूप जानना  
 कठिन है । इस कारण पहले जीवात्माका स्वरूप  
 ही निरदा जाता है ।

मदानन्द योगीश्वर वेदान्तमारमें निरदा है, 'तंग  
 कीन व्यति किम किम वस्तुकी जीवात्मा मानते हैं यह  
 कहते हैं—

मूढ प्रवृत्ति श्रुतिका प्रमाण दिग्वा कर करते हैं,  
 "आत्मा ही पुत्र ही पर जन्म लेती है, अपनेम जैसे  
 मोति है, पुत्रमें भी वे मो मोति होती है ।" फिर उनका  
 कहना है कि पुत्रकी पृष्टि होनेमें हमने पृष्टि होगी  
 चक्षुष्य पुत्रके नष्ट होनेमें हम भी नष्ट होगी । इन प्रकार  
 'पुत्र ही आत्मा है' ऐसा वे कहते हैं ।

कोई कोई चार्वाक 'चक्षुष्यका विकार पुत्र ही  
 आत्मा है' इन श्रुतिका प्रमाण दे कर स्थूलगरीर-  
 को ही जीवात्मा मानते हैं । उनका कहना है, कि  
 पुत्रकी फल देने पर भी यह प्रदेत शब्दमें चोमि देखा  
 जाता है । किन्तु मभो यह समझते हैं कि 'मि स्थूल श्रु'  
 में जग श्रु' इत्यादि । फिर किसी चार्वाकका कहना है,  
 'मि चक्षु श्रु', मं वधि दू, इत्यादि मभो समझते हैं ।  
 फिर इन्द्रियाके चभावमें शरीर चक्षु ही जाता है । हम-  
 के मिवा 'वे मत्र इन्द्रियां प्रजावतिके निरुट गई यो'  
 इत्यादि श्रुतिप्रमाण भी है । इन श्रुतिके यत्ने इन्द्रिय-  
 मय ही आत्मा है ।

फिर कोई चार्वाक 'शरीरादिमें मिश्र प्राणमय धरा-  
 शाला है' इन श्रुतिप्रमाण द्वारा चोर प्राणके चभावमें  
 इन्द्रियाकी क्रियाका चभाव होता है' इन श्रुति द्वारा  
 प्राणको ही आत्मा कहते हैं ।

कोई चार्वाक मनको ही आत्मा वतनाते हैं । वे  
 यह श्रुतिप्रमाण देते हैं, "शरीर इन्द्रिय चोर प्राणमें मिश्र  
 मनोमय चक्षुष्यात्मा है ।" हमने मिवा यह भी श्रुति देते हैं,  
 कि मनके लुप्त (निष्कथ्य) होने पर प्राणादि हा मं चक्षु

होता है। वे लोग, 'मैं सकलविविष्ट हूँ, मैं विकल्प विविष्ट हूँ' इत्यादि, ऐसा समझते हैं।

वही लोग विज्ञान वा बुद्धि को ही आत्मा मानते हैं। उनको युक्तियाँ हैं 'कर्त्तृके अभावमे करणका अभाव होता है', इत्यादि।

प्रभाकर-मतावलम्बी मोमांसकों और नैयायिकोंका कहना है, 'शरीरादिमे भिन्न भ्रान्दमय अन्तरात्मा है' इस अनुप्रमाण द्वारा और 'सुप्तिकालमें अज्ञानतावश बुद्धिका भ्रान्द होना है' और 'मैं अज्ञ हूँ, मैं जानो हूँ' इत्यादि अनुभव द्वारा अभाव ही आत्मा है।

फिर चार्वाकमिसे कोई स्थूल शरीरको, कोई इन्द्रिय-गणको, कोई प्राणको, कोई 'मैं अज्ञ हूँ, मैं जानो हूँ' इत्यादि अनुभव द्वारा अज्ञानको ही आत्मा कहते हैं।

कुमारिल मतावलम्बी मोमांसकोंके मतसे अज्ञान द्वारा उपहित चैतन्य ही आत्मा है। वे अनुप्रमाण इस प्रकार देते हैं, 'अज्ञान धनस्वरूप भ्रान्दमय ही आत्मा है।' उनकी युक्तियाँ हैं, 'सुप्तिकालमें जब सभी लीन हो जाते हैं, तब अज्ञानोपहित चैतन्यका प्रकाश होता है।'।

किमीकिमी वीहके मतसे शून्य ही आत्मा है। वे यह अनुप्रमाण देते हैं 'यद्य जगत् पश्ये अमत्था' और युक्ति इस प्रकार देते हैं 'सुप्तिकालमें सर्वोंका अभाव होता है।' उनका अनुभव है कि 'सुप्तिकालमें मेरा अभाव हुआ था, सुप्तिसि उल्लिख्य वस्तुतावको ही इस प्रकार उपलब्धि हुआ करती है।'

इस प्रकार विभिन्न मतावलम्बियोंका निर्दिष्ट पुत्र वा इन्द्रिय वा प्राण अथवा मन, बुद्धि, अज्ञान वा अज्ञान द्वारा उपलब्ध चैतन्य अथवा शून्यता, इनमेंसे कोई भी जीवात्मा नहीं है। वैदान्तिकके मतमें पुत्रादिसे ले कर शून्य तक सर्वोंके जो प्रकाशक नित्य, शुद्ध, बृद्ध, सुख और सदास्वरूप प्रत्यक्ष चैतन्य है, वही जो जीवात्मा है।

नास्तिकोंका कहना है, कि स्थूल शरीर ही आत्मा है। इसके अतिरिक्त अन्य कोई भी आत्मा नहीं है। लेकिन यह अनात्मवाद प्रतिशय भ्रान्त है। ममी दर्शनमें अनात्मवाद निन्दित और खण्डित हुआ है। अवेदान्तिकगण पूर्वार्त्तरूपमें आत्माका अस्तित्व खोकार नहीं करते।

रामानुज-द्वय नके मतमें चित् और ईश्वरकी क्रमशः जीवात्मा और परमात्मा माना है। इस मतमें 'चित्' जीव-आत्मा, भोजता, अपरिच्छिन्न, निर्मल, ज्ञानस्वरूप, नित्य और अनदि कर्मरूप अविद्याविहित, भगवदाराधना और तत्पदप्राप्त्यादि जीवका स्वभाव है। ईश्वर जगत्त्रया, अन्तर्यामी और अपरिच्छिन्न ज्ञान, ऐश्वर्य और चोर्थादिगुण-शाली है। परमात्माके साथ जीवका भेद, अभेद और भेदाभेद यही तोन है। 'तत्त्वमसि श्वेतकेतो' इत्यादि युक्तिसि जीवात्मा और परमात्माके गरोरात्मभावमें किसी किसीने अभेद वतलाया है, कदातः इसके द्वारा अभेद प्रतीत नहीं होता। जो जीवात्मा और परमात्माकी एक मानते हैं, वे नित्यत नृष्ट हैं। युक्तिसि जहां ईश्वरकी निगुण वतलाया है, उभका तात्पर्य यह कि वे प्राप्त जनकी तरह रागद्वेषादि गुणसम्पन्न नहीं है। रामानुज-ने शरीरक सुत्रका ऐसा मत संस्थापन कर अज्ञानभाव-में एक भाष्यका प्रणयन किया है।

पूर्ण प्रज्ञदर्शनके मतमें—जीवात्मा और परमात्मा ये दो हैं।

नकुलोपपाशुपतदर्शनके मतमें—परमात्माके कर्मादिको देख ही परमेश्वर है और जीव पश्य कर अभिहित हुए हैं। यही परमेश्वर परमात्मा और जीव जीवात्मा पदवाच्य है।

श्रीवदशेनके मतमें शिव ही परमेश्वर वा परमात्मा है और जीवगण पश्य। यही पश्य जीवात्मा पदवाच्य है। नकुलोपपाशुपतदर्शनके मतमें परमात्माके कर्मादिको निरपेक्ष कर्तृत्व नहीं मानते। उनका कहना है, कि जीवगण जो मा कर्म करते हैं परमेश्वर उन्हें वैसा ही फल देते हैं।

प्रतिज्ञादर्शनके मतमें जीवात्मा और परमात्मामें कोई भेद नहीं माना है। इनका कहना है, कि जीवात्मा ही परमात्मा है और परमात्मा ही जीवात्मा है। लेकिन जो परस्पर भेदज्ञान हुआ करता है, वह अस्मत्प्र है। जीवात्माके साथ परमात्माका अभेद अनुमान-सिद्ध है। इस दृश्य होनेमें जीवात्मा और परमात्मा का भेद करता है। इस

पदार्थों का पदम पाप प्रकाश पतित है। कोरि कोरि हम  
 मा पर पापनि कर्म हुए करते हैं, जि जोवात्मा और  
 परमात्माका यहि पदमि कल्पित हो और परमात्मा स्वतः  
 प्रकाशमान हो, तो जोवात्मा भी स्वतः प्रकाशमान कर्ती  
 न होना। इस प्रकार पापनिर्वाही होमाना करते हुए  
 सर्वमि जोवात्मा और परमात्माका पदमि इम मनमि  
 मन्वायित किया है।

रमेश्वरानन्दनं मनमि भी मन्देश्वरकी परमेश्वर और  
 जोवात्माको परमात्मा माना है।

वैश्विदिदगंगर मनमि पात्मा दो प्रकारकी है,  
 जोवात्मा और परमात्मा। प्रमके चेतन्य है, उमि पात्मा  
 कर्तते है। यहि पात्माकी व्यापार न करे, तो किमो  
 दृष्टिय दाग कर्त्तु भी कर्त्तु नहीं होना। मनुष्य,  
 कोट, पशु प्रादि ममो जोवात्मा पदवाण्य है। परमात्मा  
 एसावै परमेश्वर है। ल्यागट निमं भी यह मत मम-  
 यित दूपा है।

पमो उपनिषद् और वेदान्तशास्त्रमं इमका विषय  
 जिन प्रकार पर्यायवित दूपा है, उमो पर जोडा विचार  
 करना पावश्यक है। पात्माविषय कहते हैं कि पुष्ट  
 तोन प्रकारका है, प्राणात्मा, पशारात्मा और परमात्मा।

त्वक्, चर्म, मज्जा, शोम, पशुनि, पशुष्ट, पृष्ठवंश,  
 नख, गुल्फ, उदर, नाभि, मूत्र, कटी, ऊरु, कपोल, भ्रू,  
 मनाड, यादू, पत्र, शिर, धमनो, निरुहय, कर्णद्वय तथा  
 जिनको उपर्यक्त और यिनाग है, यही प्राणात्मा है।

पृथो, पय, तंत्र, धायु, पाकाग, दक्षिण, हंय, सुच,  
 दुःख, काम, मोह और विकल्पनादि एवं स्मृति, निद्रा,  
 उदात्त, पशुदात्त, ज्ञव, दोष, प्लुत, ह्यवित्त,  
 गजित, स्फुटित, मुदिन, श्रुत्य, मोन, वादिव और प्रमव-  
 पर्वन, जो उपपन्न करता है, जो प्राण करता है, जो  
 पात्यादन लेता है, जो ममभक्ता है, जो ममभक्त बुझ कर  
 काम करता है, वही परारात्मा है।

जो पक्षय और उदात्तनाके शोच है, प्राणायाम,  
 मन्दाहार, समाधि, योग, पशुमान और जो पश्याम-  
 सिताका विषय है, वही परमात्मा है।

हामपूर्वतापनोपम मनमं परमा, परमात्मा, पर-  
 मात्मा और ज्ञानात्मा यही चार प्रकारकी पात्मा है।

दोपिकाकार नारायणके मनमि पात्मा निद्र, पक्ष-  
 मात्मा जोव, परमात्मा ईश्वर और ज्ञानात्मा ब्रह्म पदार्थ  
 ये चार बिन्दु, नाट, शक्ति और मात्मात्मक है।

हृ-द-रन्ध्रक उपनिषद्मं परमात्माका विषय वच  
 प्रभार निष्ठा है—परमा, परमात्मा या ब्रह्म ये सब पद  
 ही पर्यमं व्ययुक्त होते हैं। पात्माकी मर्थाटा उपा-  
 मना करी, पात्माका पश्येपव काममि सर्वोम पश्ये-  
 पव किया जायगा। पश्येपव सर्वोमो पवेसा नोह  
 है, उमोमि उमना पश्येपव विधिग है। पश्येपवनामो-  
 के निवेमि ही ब्रह्म है, एमो ममभक्ता होता है।

'पात्मा ममो भूमीमि निगुक्त भावमि रहती है' इत्यादि  
 ब्राह्मणवाक्य परमात्माका ही जोवत्व प्रकाश करता है।  
 नाक पावि प्रभृति ममो दृष्टिय सुषुप्तादि कर्मकले  
 है और दृष्टयधिदाता ममो देवता है, यमो तक कि  
 ब्रह्मादि स्वय एयंता ममस्त प्रापो परामोरमामि लयंके  
 होते है। यह जो व्यापक ब्रह्मादि ममस्त जगत् है,  
 पग्निन्दुनिद्रको तरह जिनमि रात दिन निरलंभा है,  
 जिनमि विमोम होता है और स्वितिकालमं जन्म-विश्व-  
 यत् जिनमं आ कर रहता है, यही पात्मा है। इस  
 पात्माको सदाके मनमि ही प्राणको सत्ता है, नहीं तो  
 प्राण किमी भी वास्तव्य परामेनाम नहीं कर सकता।  
 जो गर्वक है, विमिपक्षमि सर्वविद्, पशु और मम  
 प्रकारके मंक्रमपरमि रहित है, जिन पक्षपुष्टवै मास-  
 मि मयं और चन्द्र रात दिन चलते है, जो पलायमि-  
 दपमि ममो भूमीमि रह कर ममो भूमीका वहन करती  
 हुए भी जगत् उमके पतीत है, वे जो लक्ष्मणवादि शूरो  
 सर्वव्यापी पात्मा है और ममो मंसारके विचारके मित-  
 रूप है। उमो पात्मानि ममो मंसारकी यमोभूत कर  
 रवा है और जो सर्वोके ईश्वर तया नियन्ता है, जो  
 सब प्रकारके पाप, ताप, जग और शत्रुविहीन है,  
 उमि ही तंत्रको कृति को है। इस जगत्कालकी  
 कृटिके पदमि एकमात्र पात्मा ही मी। उमो पात्मानि  
 ममो लयव हुए है। (हृदयारण्यक)

कोरि कोरि कहते है "परमेश्वरमादात्मना" रच  
 श्रुतिमंमो मंसार पात्मा (जोवात्मा)-मं हो ममदा  
 भूमीको लयवित वतनाई गई है। जो पेशकहते है,

उनका मत सत्य नहीं है। क्योंकि श्रुतिमें ही लिखा है 'य एषोऽनृद्धदयः आकाशः' यहाँ आकाशः शब्दसे परमात्माका बोध हुआ है, अतएव वहाँ आत्माका अर्थ परमात्मा है। उसी परमात्मामें सभी उत्पन्न हुए हैं। यदि कहो, कि आकाश शब्दका अर्थ परमात्मा यह किसने कहा, जीव अर्थ होनेमें हो क्या दोष होता? इससे उत्तरमें श्रुतिमें कहा है, "केच तदा अभूत्" जीव (जीवात्मा) उन समय अर्थात् सृष्टिकालमें कहा था? जब कब भी नहीं था, एकमात्र आत्मा ही थी और श्रुतिमें भी लिखा है "य एषोऽनृद्धदयः आकाशस्तस्मिन् जिते" इत्यादि। अतएव ही आकाश है उसीमें उस समय निहित था। इसीसे जानना होगा, कि जीव (जीवात्मा) कबो भी अपने ऊपर अर्थ नहीं कर सकता। अतएव आकाश शब्दका अर्थ परमात्मा को कहना होगा। जीव सृष्टिकालमें अतपरमात्मासे माया मिल जाता है। अतिवाक्यार्थकी पर्यालोचना करनेसे यह साफ साफ प्रतीत होता है, कि वहाँ आकाश शब्दका अर्थ परमात्मा है इसमें कुछ भी संन्देह नहीं।

संसार जीव (जीवात्मा)से विचित्र विश्वसंसारकी सृष्टि, स्थिति और संहार करनेको शक्ति नहीं है। ब्रह्मविद्याकी जगह लिखा है, "ब्रह्म ते हुवाणि, ब्रह्म ज्ञापयिष्यामि" इति गार्गी! तुम्हें ब्रह्मका विषय कहूँगा ब्रह्म वताऊँगा। उसी जगह लिखा है, कि ब्रह्म (परमात्मा) कर्तृत्व-भोक्तृत्वादि रहित, नित्य शुद्धसुख ज्ञानरूप और असंसार है। कोई कोई इस पर आपत्ति करते हुए कहते हैं, कि ब्रह्म जब जीवसे अत्यन्त उच्छृष्ट है तथा जीव ब्रह्मकी अपेक्षा अत्यन्त निकृष्ट है, तब 'पद्मं ब्रह्मान्मि' में ही सर्वशक्तिमान ब्रह्म है, ऐसा कहना या इसी भावमें उपासना करना किसी ज्ञानसे लोचका सङ्गत नहीं हो सकता। इस प्रकारकी असदाशङ्का सङ्गत नहीं है। कारण, श्रुतिसे जाना जाता है, कि 'परमात्मानि' प्रथमतः द्विपदस्युपपदादिका निर्माण कर उनके अन्तर्गत प्रवेश किया, वे अत्यन्त अल्पके अन्तर्गत हुए। 'परमात्मा सभी ब्रह्मणोकी सृष्टि और नामकरण कर स्वयं उसमें रहने लगे, इत्यादि सब आत्मामें अत्यन्त अल्प अन्तर्गत हैं।

मन्त्रोंकी सृष्टि करके और आप उसमें प्रविष्ट हो कर जीव नाम धारण किया है। परमात्माने आकाशादि पञ्चभूतोंमें जीवरूपमें प्रविष्ट हो कर नाम (संज्ञा) और रूप (सूक्ति)का प्रकाश किया है।

जब प्रायः सभी श्रुतियोंमें ब्रह्मको आत्मा बतनाया है, "सर्वभूतान्तरात्मा" अर्थात् भी आत्मा शब्दमें ब्रह्मका ही उल्लेख किया है और श्रुतिमें अनेक जगह जब परमात्मा अतिरिक्त संसारी आत्माके अभावकी सूचना की है, तब "ब्रह्मं ब्रह्मान्मि" में ब्रह्म ही यह कह कर आत्माकी उपासना करना असङ्गत नहीं है। ऐसे उत्तर पर कोई कोई आपत्ति करते हैं, कि जीव और ब्रह्म अर्थात् जीवात्मा और परमात्माका एकत्व ही यदि प्रकृत शास्त्रार्थ है, तो परमात्माभी भी सांसारिक सुख दुःखादिका भोग करना होता है, यह बात भी अवश्य स्वीकार करनी पड़ेगी। ऐसा होनेमें ब्रह्मसानोपदेशक भी शास्त्र निरर्थक हो जाते हैं। प्राणियोंके सुख दुःखादि द्वारा जीवात्मा क्लिप्त नहीं होते वे स्फटिकमणिसत् समुच्चयन रहते हैं। इन विषय पर कोई कोई कहते हैं, कि परमात्मा सर्वभूतोंमें प्रवेश करते समय अपना निर्विकार रूप परिवर्त्याग कर विकृतावस्था धारण करके जीवात्माकी प्राप्त होते और वह जीवात्मा परमात्मासे भिन्न और अभिन्न समयपूर्वमें प्रतीयमान होते हैं। उद्योगमें अभिन्न कहनेमें ही 'नाहं ब्रह्म' अर्थात् "मैं ब्रह्मभिन्न हूँ" यह ज्ञान नहीं होता और सांसारिक अवस्थाभेदमें भिन्न कहनेमें ही परमात्माकी उपासना की जाती है, अर्थात् होनेमें उपासना नहीं हो सकती।

श्रुतिमें 'नेति नेति' अर्थात् यह ब्रह्म नहीं है, यह ब्रह्म नहीं है, यह कह कर सभी प्रकारके भौतिक-विशेष अर्थ परिहारपूर्वक परमात्माका स्वरूप निर्णय हुआ है। (ह्रदाण्यकोपनि०)

श्रुतिमें जहाँ परमात्माका विषय उल्लिखित हुआ है वहाँ सब प्रायः सभी जगह ब्रह्मबोधक माने गये हैं, इस कारण इनका विषय और अधिक आलोचन नहीं हुआ। ब्रह्म देखा।

वेदान्तदयने लिखा है कि इन्द्रियान्वित शरीरके कर्मफलभीता जीव नामक आत्मा है,

इस भी जो वाक्य कह सकते हैं। यह सोचना  
 वाक्यादि का तात्पर्य है पंचम रूप है पंचम प्रकृति  
 तरह निम्न है, इस प्रकार मंगल ही प्रकृति है।  
 कारण एतदर्थं प्रतीक विभिन्न युक्ति द्वैतमें  
 दाता है। किन्तु किन्तु युक्ति पञ्चिभूतिका  
 दृष्टात्ता के कर कदा है, कि ज्ञानरत्ना परमात्मा  
 में उत्पन्न हुआ है। कि पञ्च युक्ति कहना है,  
 कि चरित्र परमात्मा ही सृष्टिप्रकारमें प्रतीक है। और  
 जो भावमें विराजित है तथा अतिमें जाना जाता है  
 कि एक विज्ञानमें सभी विज्ञान होते हैं। सभी पञ्च  
 प्रकृतियों में सभी जोनेमें एक विज्ञानमें सभी विज्ञान  
 नहीं हो सकते। चरित्र परमान्ता ही जो प्रतीक  
 लायभावे विराजित है, इसका ज्ञान ही काई उत्पन्न  
 नहीं है। यद्यपि परमात्मा और जीवात्मा सम लक्षण  
 है। परमात्मा निष्पाप, निष्क्रिय, निर्धर्मक है। जो  
 समस्त सत्त्व गुणों विरोध है। विभाग करनेमें ही जोयका  
 विकारत्व (अस्मत्त्व) जाना जाता है। 'पाकागादि  
 जो कुछ विभक्त यद्यु है ये सभी विकार चर्चात् ज्ञान-  
 पदार्थ है। जो प्रकृतिसंज्ञा, सुखदुःखमोहो और  
 प्रतिप्ररोधमें विभक्त है, इधमें जीवकी भी जगदुत्पत्ति  
 कालमें उत्पत्ति हुई थी, ऐसा कहना ही सही है।  
 कि भी देखो, जैसे चरित्रमें छोटे विस्फुल्लिख निकलते  
 हैं, वैसे परमात्मा में भी जीवात्मा उत्पन्न होता है, फिर  
 प्रत्यक्षान्तरमें समीप हो जाता है। इस प्रकार चर्चा-  
 प्रतिपादक युक्ति द्वारा यह जाना जाता है, कि भोगरत्ना  
 चर्चात् जीवात्माको सृष्टि उद्दिष्ट हुई है। कि एक ही  
 युक्तिमें जाना जाता है, कि जिस प्रकार प्रतीक वाच्यमें  
 वाच्यरत्ना सत्त्व सत्त्व सत्त्व सत्त्व सत्त्व है, समी  
 प्रकार एक परमात्मा में परमात्मा मानद्वेषी विविध पदा  
 उत्पन्न होते हैं कि प्रकृतियों परमात्मा में जान ही जान है।  
 इस युक्तिमें समानद्वेषी यह सत्त्व रत्नमें जीवात्माकी  
 उत्पत्ति और विभाग कहा गया है, ऐसा समझना होगा।  
 सृष्टिप्रकृति समानद्वेषी है, जीवात्मा भी परमात्मा  
 समानद्वेषी है चर्चात् होने ही चरित्र है, सुखों समान-  
 द्वेषी है। इस सब युक्तिप्रतीक द्वारा परमात्मा (परमात्मा)-  
 के जीव (जीवात्मा) की उत्पत्ति मानो गई है।

परमात्मा जिना और सिद्ध है। जिस प्रकार पञ्च-  
 पत्र पर जन रहने में यह सममें निग नहीं होना,  
 समी प्रकार गुणात्मक परमात्मा भी कर्मफलमें निग  
 नहीं होने। जो कर्मात्मा चर्चात् चर्चात् चर्चात् है,  
 उन्हींका चरित्र और मोक्ष हुआ करता है। ज्ञानमें  
 सृष्टिप्रतीक है, जिस प्रकार विष्णुसूक्त चर्चात् चर्चात्  
 (प्रतिविम्ब) है, समी प्रकार जोय भी परमात्माका  
 चर्चात् है, ऐसा जानना होगा। जिस हेतु चर्चात् है,  
 उन्हीं हेतु जोय 'साक्षात् परमात्मा नहीं है, पदार्थ-  
 न्तर भी नहीं है।

विस्फुल्लिख जिस प्रकार चरित्रका चर्चात् है, जोय  
 (जीवात्मा) भी समी प्रकार परमात्माका चर्चात् है।  
 परमात्मा साकार है या निराकार ? इसमें उत्तरमें  
 वेदान्तने कहा है, कि परमात्मा निराकार या रूपादि-  
 रहित है। कारण, इस परमात्माप्रतिपादक युक्तिचर्चा-  
 ने यही चर्चात् चर्चात् किया है। ये सत्त्व नहीं है, सुख  
 नहीं है, क्लेश या दोष भी नहीं है, चरित्र, चरित्र, चरित्र  
 और चर्चात् है, प्रसिद्ध पाकाग नाम और रूपके निर्वा-  
 चक है, नाम और रूप जिनके भीतर है वही ही पर-  
 मात्मा है। ये दिव्य, मुक्ति हीन सुख, चर्चात् पूर्व  
 है। सुखों चर्चात् और भीतर विराजमान है, ये चर्चा  
 (अस्मरहित) है, ये चर्चात्, चर्चात्, चर्चात् और  
 चर्चात् है। युक्तिमें यह भी कहा है, कि परमात्मा  
 निष्पाप, एकाकार और केवल-चेतन है। जैसे, सत्त्व-  
 सत्त्व चर्चात्, चर्चात्, सत्त्व चर्चात् और चर्चात् है, समी  
 प्रकार परमात्मा भी चर्चात्, चर्चात्, पूर्व और चर्चात्  
 चर्चात् (केवल चेतन्य) है। इसमें यही कहा गया, कि  
 परमात्माके चर्चात् नहीं है, चेतन्य सिद्ध चर्चात्  
 या चर्चात् नहीं है। निरवच्छिन्न चेतन्य ही परमात्मा-  
 का सत्त्वचरित्र रूप है।

युक्तिमें जाना जाता है, कि परमात्माके ही रूप है,  
 मुक्ति और चर्चात्। परमात्माके कर्ममें ही चर्चात् है और  
 चर्चात्के चर्चात्के लक्षणा चर्चात् चर्चात् और  
 चर्चात् है। मुक्ति मुक्तिमान चर्चात् चर्चात् है और चर्चात्  
 तद्विन्न चर्चात् चर्चात्। चर्चात्, चर्चात् और चर्चात् ही चर्चात्  
 चर्चात् चर्चात् है और चर्चात् तदा चर्चात् चर्चात्

संस्काररूप। मूर्त्तरूप अर्थात् सरणशील है और संस्काररूप अर्थात् अविनाशी।

श्रुतियोंमें परमात्माके अतिरिक्त जोव अर्थात् जीवात्माका विषय उल्लिखित है और अद्वैतबोधक श्रुति भी है। महात्मनि शङ्कराचार्य परमात्मातिरिक्त प्रथम जीवात्माका अस्तित्व स्वीकार नहीं करते। (वेदान्तदर्शन)

शङ्कराचार्यके धामबोधमें लिखा है—जो स्रष्टा, स्थूल, सूक्ष्म और दीर्घ नहीं है, जिनके लरा, श्रय, रूप, गुण और वर्ण नहीं है, वे ही परमात्मा हैं। जिनके किसी प्रकारका आकार नहीं है, जिनकी ज्योतिमि ज्योतिशमान् हो कर सूर्यादि ज्योतिष्कगण प्रकाश पाते हैं, जिन्हें सूर्यादि कोई भी प्रकाशित नहीं कर सकते और जिनमें यह अखिल ब्रह्माण्ड टोसि पाता है, वही परमात्मा हैं। जिस प्रकार प्रथम लौहोपज्य अन्तर और बाह्यमें प्रदीप्त हो कर आलोक प्रदान करता है उसी प्रकार परमात्मा वाङ्मय और अन्धन्तरमें ममो जगत्की प्रकाशित करते और स्वयं प्रकाशित होते हैं। परमात्मा भिन्न इस अन्त ब्रह्माण्डके प्रकाशक और कोई भी नहीं है। परमात्मा जगत्के अतिरिक्त अथवा परमात्मा भिन्न और कुछ भी नहीं है। जिस प्रकार मरुभूमिमें मरोचिका हीनेसे व्यलमें जलज्ञान होता है, किन्तु यह जल जिस प्रकार मिथ्या है, उसी प्रकार परमात्माभिन्न जो कुछ है वो सभी मिथ्य हैं। इस लोग जो कुछ देखते और सुनते हैं, वही परमात्माका स्वरूप है, परमात्मा भिन्न और कुछ भी नहीं है। तत्त्वज्ञान होनेसे ही उन मच्चिदानन्दमय अव्यय परमात्माका लाभ होता है। तत्त्वज्ञान भिन्न परमात्माप्राप्तिका कोई उपाय नहीं। जिसके ज्ञानसूर्य प्रोक्षित हुआ है, वो ही परमात्माकी देख सकते हैं। जिस प्रकार सुवर्णको अग्निमें लक्ष्म करानेसे उसका मल निकल जाने पर वह उद्दीप्त हो कर स्वयं प्रकाश पाता है, उसी प्रकार जीवके अव्ययमननादि द्वारा ज्ञानाग्नि उद्दीप्त हो कर अज्ञानरूप मलके विनाश होने पर ही वह स्वयं प्रकाशित होता है। उसी समय जीव परमात्मस्वरूप प्राप्त करता है। (ध्यातबोध)

परमात्मतत्त्वनिर्णय अति दुर्लभ है, क्योंकि श्रुतिमें कहा है "यतो यांचो निवर्त्तन्ते अमाप्य मनसा सह अथाव प्राप्य लब्धां जा नहो" सज्जता और मनके साथ

लौट आता है, इस कारण वाक्यसे परमात्माका निर्णय नहीं किया जा सकता।

मनोविद्योनि श्रुतिमसूत्रका जैसा अर्थ समझा है, परमात्मविषयमें भी वैसा ही प्रवचरण किया है। जीवात्मन् और ब्रह्म उभय देखो।

परमाचार्य—वसुपूजनपद्धतिके रचयिता।  
परमाद्वैत (सं० पु०) परम महैत यत्र। १ सर्वभेद रहित परमात्मा। २ विष्णु।

"नमस्ते ज्ञानप्रदायक नमस्ते ज्ञानदायक।  
नमस्ते परमाद्वैत नमस्ते पुरुषोत्तम ॥" (गुरुपुराण)  
परमानन्द (सं० पु०) परमः सर्वोत्कृष्टः आनन्दः। सव आनन्दमें उत्कृष्ट आनन्दात्मक परमात्मा। परमानन्द ही परमात्मा है। "परमानन्दभावः" (श्रीवै) उपनिषदादिमें ब्रह्मकी ही परम आनन्दस्वरूप माना है।

परमानन्द—इस नामके कितने संस्कृत ग्रन्थकारोंके नाम पाये जाते हैं। यथा—

- १ अमरकोषमालाके रचयिता।
- २ खण्डनमण्डन नामक हर्षरचित खण्डनखण्डखाद्यके टीकाकार।
- ३ मकरन्दसारिणी नामक ग्रन्थके रचयिता।
- ४ वेदश्रुतिटोकाके प्रणेता।
- ५ वेदान्तसारटोकाकर्त्ता।
- ६ सांख्यतरङ्गटोकाके प्रणेता।
- ७ एक जैन ग्रन्थकार। इन्होंने मार्गप्रणीत 'कर्मविराम' नामक ग्रन्थकी एक संस्करण टोका प्रणयन की है। ये अपन ग्रन्थमें अपने धर्मगुरुपंका इस प्रकार परिचय दे गये हैं—पहले भद्रेश्वरसुरि, उनके शिष्य शान्तिशूरि और अभयदेवसुरि, अभयदेवसुरिके शिष्य परमानन्द। लोग इन्हें योगीदेव कहा करते थे।

८ एक क्षत्रिय राजा। इन्होंने सम्राट अक्षयवर्माके भङ्गरप्रदेशका शासनभार पाया था।

९ वेणोदत्तके पुत्र। इन्होंने प्रथमाणिक्यमाला नामक एक ग्रन्थकी रचना की है।

परमानन्दधन—एक विख्यात पण्डित, चिदानन्द ब्रह्मन्सरस्वतीके शिष्य। इन्होंने प्रयोगशास्त्रकी, ब्रह्मसूत्रविद्यरण और स्वप्निसिद्धोदधि नामक तीन ग्रन्थ बनाये हैं।

परमाणन्द चक्रवर्ती—  
काव्यप्रकाशकी टीकाके रचयिता  
ईशान नामक



३ सर्वात्म्यं पुत्र चो देवानन्द तदा मन्त्रानन्दं  
भाता । रक्षति महिषासुरतोका नामक एक टीका  
प्रचलन की है ।

परमानन्ददास-सकलामो एक हिन्दी-कवि । हज्जानन्द  
दासदेवदत्त रघुमानोदय रामकन्दर्प नामक कवयि  
इतना नामोक्त है देना भासा है ।

परमानन्ददास-श्रीधरदासदास गणेश्वर कवि कल-  
पूरका प्रथम नाम परमानन्ददास था । गोपाल मन्त्रामु  
रने पुरोडास कथा करके थे । इनका जन्म १७४६  
अमृतका हुआ था । इनके पिताका नाम था शिवानन्द-  
सिंह को गोराहृदेवके एक परममात्र थे । परमानन्दकी  
जन्म जय गान शीघ्रमें ही थी, सभी समय ये अपने  
पिताके साथ महाप्रभुके दर्शन करनेके लिये श्रीधर गए  
थे । महाप्रभुने हज्जा दरगा अर अपने श्रीधरका प्रदा-  
हूत बालकके मुखमें दिया था । परमानन्दने श्रीगोराहृ-  
देवका पटाङ्गुल घाट करके अर्घ्यं कवित्वगानि पाए थे ।  
चेतन्यचरिताःसूतप्रथममें लिखा है, कि इस समय महा-  
प्रभुने परमानन्दमें हज्जामोनाहा बचन करके कहा ।  
कहते हैं, कि बालक परमानन्दने प्रभुका आदेश पाते  
ही आर्षाच्छन्दमें एक श्लोककी रचना कर महा-  
प्रभुकी सुनाया था ।

इनके बनाये हुए प्रथम संस्कृत ग्रन्थ थे प्रथममात्र-  
में प्रचलित है, यथा-आर्षागतक, चेतन्यचरितासूत-  
महाकाव्य, चेतन्यचरिणीदशमोऽध्याय, पानन्दप्रस्ताव-  
पत्र, हज्जामोनीदे गदाविद्या, गोरामोनीदे गदाविद्या और  
अन्यद्वारकीसुध ।

परमानन्ददेव-संस्कृततरयमाया नामक कवयि प्रथिता ।  
परमानन्ददास-सुभनेगोवहति नामक कवयि रचयिता ।  
परमानन्ददास-अर्घ्यं सूरदासिका नामक कवयि प्रथिता ।  
परमानन्दमहाशाय-महाभारत टीकाके प्रथिता ।

परमानन्दसिय-१ योगवासिष्ठमार्गोद्धारके रचयिता । २  
सकलामो प्रकृति । मेठ देवी ।

परमानन्दयोगीन्द्र-परमानन्दहरिप्रोद्धारके रचयिता ।

परमानन्ददास-अर्घ्यं देवी ।

परमानन्दनारायणदास-एक हिन्दी-कवि । बुद्धसत्त्व-  
के अन्तर्गत अष्टमस्कन्धमें १८१० ई०में इनका जन्म हुआ  
था । लावक-आदिवासी प्रथमपरित 'सद्युक्ति' नामक  
ग्रन्थ रचिंका बनाया हुआ है ।

परमाव ( सं० जी० ) परमं देवमिहमिदंवाग् भोक्तं  
एवं । यथम, चौर । यह देवताः चौर जितरीका अन्वय  
मिथ है, इसीमे हमको परमाव कहते हैं । हमको  
प्रयुक्त अन्वयो भावहकारमें हम प्रकार लिखा है,—  
अत्र शूष आधा एक भाव, तत्र उभयं शूषात् अष्टमं ज्ञान  
दे । यह उभयं हत चौर शर्करा मिलानिमे परमाव  
देवार बोना है । गुण-दुर्गा, वन चौर धातुपुटिकर,  
गुन, विदग्धो, विधा, रत्नं वन, चिन चौर वायुनायक  
परमावुर ( सं० लो० ) परमं पद्वत् । न्यायिक-  
साधन अर्घ्यं मित ।

परमासुद्रा ( सं० स्त्री० ) त्रिपुरादेवीको पूजाके मुद्रामित ।  
तन्मन्त्रानेहम मुद्राका विषय हम प्रकार लिखा है—  
दीनी हाथीकी मध्यमाको मध्यम्यमे रत्न कर दीनी  
हाथीके पहिलेहाथकी मध्यमादय द्वारा आभूषण करते  
हैं और दीनी तर्जनीको टण्डाकारमें करके मध्यमादय-  
के ऊपर भाग पर रखनेमे यह मुद्रा बनती है । यह  
परमासुद्रा मन्त्रं नामकारिणो है । हम मुद्रामे त्रिपुरा-  
देवीका आभूषण करता होता है ।

त्रिपुराके पूजाके एक चौर प्रकारको परमासुद्रा लिखी  
है जिसे यामिमुद्रा भी कहते हैं । इनका प्रकार यों है—  
दीनी मध्यमाको मन्त्र कर उभयं ऊपर तर्जनी रखनी  
होती है । पीले परामिहका चौर कनिष्ठाकी मध्यगत कर-  
के अष्टमं हाथ परावोहन करनेमे यह मुद्रा होती है ।  
परमाव ( सं० स्त्री० ) परमावुर देवी ।

परमावुव ( सं० पु० ) परमं आर्षावृत्त, अर्षोदरादित्वात्  
अर्षु मन्त्रागतः । अमरप्रथ, विषयमावका पेठ ।

परमावुव ( सं० स्त्री० ) परमं आर्षः कर्मधा० । शीवित-  
काव । "रत्नपुत्रं पुराः" ( श्रुति ) मानवकी परमावुव की  
यह है । शब्दमन्त्रामे परमावुव नाम हम प्रकार निर्दिष्ट  
हुआ है, १२० वर्ष ३ टिन मानवका परमावुव नाम चौर  
हाथीका भी उतना ही, ३२ वर्ष परमाका, १२ वर्ष  
गुहुरका, २४ वर्ष गर चौर करमका, ५४ वर्ष हृष चौर  
महियका, अंग चौर शूकरका परमावुवकाव तत्र तत्र  
मानः मया है तत्र तत्र उभयं ज्ञः दान न सिद्धं ।  
प्रातिःशामं लिखा है—

"मन्त्रावुरावुरः सर्वं तिस्रं कीर्तिप्रदं तत् ।  
दशमोऽध्यायः १८१ (सुदादेवनिधीयते ४) (पत्तिपत्तिः)

मानवका जोवितकाल यदि न जाना जा सके, तो सभी विफल होते हैं, इस कारण सबसे पहले प्रायुका परिमाण जानना आवश्यक है। मनुष्यका ऐहिक और पारलौकिक सभी कार्य परमायुके ऊपर निर्भर करते हैं।

मनुष्यको परमायुकी गणना चार प्रकारसे की जाती है, यथा—अंशायु, पिण्डायु, निमर्गायु और जीवायु। जन्मका लग्न बलवान् है उससे लिये अंशायुकी गणना, इसी प्रकार मूर्ध्न्य बलवान् होनेसे पिण्डायु; गणना, चन्द्र बलवान् होनेसे निमर्गायु और जन्मसे तीर्थात् ही दुर्बल है उसकी जीवायुगणना की जाती है। यह गणना करनेमें यहाँकी उच्च और नीच राशि उच्चान् और नीचान्का जानना आवश्यक है। अंशायुके वषादि गणना करनेसे अपने अपने कर्मयोग्य गुणक अङ्क द्वारा स्वयं प्रायुपत्रके अङ्ककी गुणा करनेसे जो अङ्कमंख्या होगी, उसे ६०से भाग देना होगा, पीछे भागफलको १२०००से भाग देनेसे जो उत्तर आवेगा वही उस व्रह्मका दण्डायुवर्ष होगा।

अथशिष्टाङ्कको १२से गुणा करके उसे १२००० द्वारा भाग देनेसे जो उत्तर आवेगा, वह मास होगा। अथशिष्टांशको ३०से गुणा करनेसे जो गुणफल होगा, उसे १२०००से भाग दो, अब भागफल दिन होगा। भागावशिष्ट अङ्ककी ६०से गुणा करके १२००० द्वारा भाग देनेसे जो उत्तर आवेगा, उसे दण्ड ममभक्तो, दमो नियमसे गणना करनेसे पल और विपल जाना जाता है।

यदि लग्नका बल सबसे अधिक हो, तो लग्न स्फुटकी राशिका अङ्क जितना होगा, उतने वर्षका अङ्क लग्न दण्ड प्रायुवर्षाङ्कके साथ योग करो, उसमें प्रायुका वर्षाङ्क जानो जायगा।

अंश, कला और विकला प्रत्येकको १२ से गुणा करके उसे तीन स्थानोंमें रखना होता है। प्रथमतः विकलाके अङ्ककी ६०से भाग दो और भागफलको कलाके अङ्कमें जोड़ दो। भागावशिष्ट अङ्कको एक स्थानमें रख देना होता है, पीछे उस योग्य कलाके अङ्ककी ६० से भाग दे कर भागफलको अंशङ्कके साथ जोड़ देना होगा। अथशिष्टाङ्ककी कलाङ्ककी वाई और रखना होता है। पीछे उन योग्य अंशङ्ककी १०से भाग देनेसे जो लब्ध होगा तथा उसका अथशिष्टाङ्क जो रहेगा, उसे पूर्वस्थापित कलाङ्ककी वाई और वादमें उस

३० लब्धाङ्ककी भी उसके याम भागमें रखो। उस लब्धाङ्क द्वारा क्रमशः मास, दिन, दण्ड और पल आदि जानी जायेंगे। उस मामादिकी लग्नदत्तायुके मामादिके साथ जोड़नेसे लग्नदत्तायुका वर्ष, मास, दिन, दण्ड और पल होगा तथा अथशिष्टादि ममभक्त और लग्नकी दत्तायुका वर्ष, मास, दिन, दण्ड और पलादि सभी योग करनेसे जितना वर्ष, मास, दिन और दण्ड पलादि होगा, उतनी मंख्या अंशायुगणनानुसार परमायु होगी।

अंशायुके मतसे आयुःपल निकालना।—जन्मकालमें ग्रहगणना जिन राशिके जिन अंशोंमें रहते हैं, उस उस राशि और अंश, कला तथा विकलाङ्ककी प्रथक, प्रथक स्थानमें रखो। पीछे एक एक ग्रहस्फुटकी राशिके अङ्कको ३०से गुणा करके गुणफलको उस ग्रह स्फुटके अंशके साथ जोड़ दो। पीछे उस योग्य अङ्ककी ६०से भाग दे कर अवशिष्ट अङ्ककी ६०से गुणा करो। अब उस गुणफलको उसके बादके विकलाङ्कके साथ योग करनेसे जो अङ्कमंख्या होगी, उसकोका नाम उस ग्रहका अंशायुःपल है। इस प्रकार प्रत्येक ग्रहस्फुट और लग्नस्फुटकी राशि, अंश, कला और विकलाङ्ककी इसी प्रकारकी प्रक्रिया करनेसे जो अङ्कमंख्या होगी, वही उस उस ग्रह और लग्नका अंशायुःपल होगा। पिण्डायुगणना करनेमें निमर्गायु ग्रहको जगद जो प्रायुःपल निकालनेका विषय लिखा गया है, उसीके अनुसार प्रायुःपल निकाल करके जो अङ्क होगा उसे तीसरे भाग दो और भागफल दो स्थानोंमें रखो। पीछे उसके एक अङ्कको २०से भाग दे कर जो भागफल हो उसे द्वितीय अङ्कसे वियोग करो। अब जितनी कला विकला अवशिष्ट रहेगी उतना दिन और दण्ड रविपक्ष पिण्डायु होगा। चन्द्रका प्रायुःपल ले कर जो अङ्क बनेगा उसे ५से गुणा करो और गुणफलको १२०से भाग दो। अब भागफलमें कला-विकलादिका जितना अंश रहेगा, उतना दिन और दण्डादि चन्द्रपक्ष पिण्डायु होगा।

मङ्गल और बृहस्पतिका प्रायुःपल ग्रहण कर उसे ४से भाग दो, भागफल जितनी कला विकला उतना दिन और दण्डादि पिण्डायु होगा।

भाग करनेमें मिलने। कला-विशालादि भाग्यफलमें शामिल, उलगा दिन और दशादि बुधकी प्रदत्त वायु समझो। बुधकी वायुपद पदक करके उसे ७मे गुणा करनेमें गुणफल मिलना होगा, उसे २०मे भाग देनेमें भागफल मिलने कला विशालादि प्राणियों उलगा दिन और दशादि दशाहम विशालादि लोग। मजिहा वायुपद पदक कर उसे ७मे भाग देनेमें मिलने कला विशालादि भागफल होगा, उलगा दिन और दशादि मजिपदका दिशादि होगा है। विनयांदि देखो।

परमात्मा-वर्णित विषयकी हम प्रकार मथना की जाती है। आतन्त्रिकम अन्तस्फुट स्थिर करने समझी समिते वृद्धकी ३०मे गुणा करो, गुणफल को होगा उसे चंदादके माव पीछ हो। यदि हम युवाहकी ३०मे गुणा करके गुणफलको पायसो कलाहके माव जोत हो, योगफल को होगा उसे एक स्थानमें रवो। यदि पूर्ण प्रयासोंके समुदाय एक एक पदकी दश वायु स्थिर कर उसे उलगा दिन पद द्वारा गुणा करो। अब गुणफल को २२५०००मे भाग देनेमें जो दशादि भागफल होगा उसे अपने अपने पदकी प्रदत्त वायुके तत्कारादिमें विधोत करो, विधोतफल को होगा उसकी परमायु समझो। यदि मन्त्रमें प पापक रहे, तो रवो प्रकार स्थिर करना होगा। यदि पाप-पदगुण मन्त्रमें किमी शुभपदकी दृष्टि पदमा जो, तो अपने अपने पदकी पदक वायुमेंके उल भागफलका वाधा विधोत कर वायु स्थिर करो। हा या भाग शुभपद मन्त्रमें रहनेमें चरके मध्य की पद शुभफल पदान करेगा, उस पदके भागफल द्वारा पदपदक वायुको गुणा करके पदमेंके जैसा कार्य करना होगा है। मन्त्रमें यदि दो या तीन पापपद रहें, तो उनके मध्य जो पद समभाग रहेगा उनके भागफलका पदपदक वायुकी गुणा करो, अब गुणफल में एक पूर्ण रक्त कार्य करना होगा। मन्त्रमें यदि पाप पद रहे और मध्य पापपद यदि मन्त्राधिपति हो, तो वायुकीदिके मथना नहीं करनी होगी।

हम प्रकार मथना पदों और मन्त्रोंकी वायुकी दृष्टक, दृष्टक मथना कर एतत् योग करनेमें मिलने मन्त्रादि होगी, मथना को अन्तःस्थिकी परमायु समझो।

वायुकी मथना करके रिमको जिनका भव परमायु

होगी, उस पदकी ही मथनामें रवो। पीछे एक पदकी ७०मे भाग दे कर जिनका योग हममें उलगा २२५००० भाग विधोत करनेमें जो अवशिष्ट रहेगा उसे रथायिन दिनांदि पदमें विधोत करो; अब विधोतफल को होगा उसी पदकनपरमायु है। जो स्थिति पदको, कथनांदिदशक, मन्त्रमन्त्रात, भिन्नेन्द्रिय, दिन और देवार्थनाशन है, पदकीको हम प्रकार मथनापरमायु प्राय होगी।

जो मय मनुष्य पायो, सुख, भय, देव और प्राण्य-निश्चक है तथा यन्त्रायां और मुहूर्तमें उलगा रहने है, तो मय मनुष्य उलगापरी निर्दिष्ट वायु न पा कर पदान को मन्त्रमुपमें पतित होगी है।

जातकालप्रारंभमें योगक वायुका विषय हम प्रकार विधा है। जिनके जन्मकालमें मन्त्राधिपतिपद पूर्ण मन्त्रान् को कर केन्द्रियम सुभपदके देवा प्राय, वन स्थिति दोष जीवन लाभ परता है। जन्मकालमें शुभपद केन्द्रियम या सन्नेयस्थित तथा पदक लक्ष्मिस्थित होनेमें यदि मन्त्राधिपति पद मन्त्रान् को कर मन्त्रस्थित हो, तो जातकालको वायु ३० वर्षकी होगी है। जिनके जन्मकालमें हृदयस्थि मन्त्रमें रहे और मन्त्र या पदमें हृदय धर्मात् प्रथम, चतुर्थ, सप्तम या नवम स्थानमें शुभपद तथा हम मय शुभपदोंके प्रति उद्यम स्थानस्थित पापपदको दृष्टि न पड़ती, तो हम मनुष्यकी ७० वर्षकी परमायु होगी है। जन्मकालमें मन्त्राधिपति शुभपद और शुभ स्थानमें हृदयस्थि रहेनेमें यदि मन्त्राधिपति मन्त्रान् को, तो जातकालिकी परमायु ८० वर्षकी मथनी होगी। जिनके जन्मकालमें शुभपद मन्त्रान् को कर उलगा पदों मन्त्रमें चतुर्थ, सप्तम या दसम स्थानमें रहे और पदक स्थानमें यदि पापपद न रहे, तो तद स्थिति ३० वर्ष तक जीता है। उस पदक स्थानमें शुभपदको दृष्टि पड़नेमें हमको परमायु ४० वर्षकी होगी है। जन्मकालमें हृदयस्थि अपने स्थित या हृदयस्थिमें रहनेमें जातकालिकी ३० वर्ष परमायु होगी। जिनके जन्मकालमें चन्द्रमा अपने स्थित या स्थानमें रहे और मन्त्र स्थानमें शुभपद हो, तो हमको ३० वर्षकी परमायु होगी है। जन्मकालमें पदक या नवममें शुभपदके रहनेमें यदि हृदयस्थि पदकटमें रहे, तो जातकालिकी परमायु ८० वर्ष होगी।

यदि हृदिक जन्मलग्न हो और उस जन्मलग्नमें हृद-  
स्थिति रहे, तो ८० वर्ष उसकी परमायु मानो जातो है ।  
जिसके जन्मकालमें अष्टमाधिपति नवमस्थान और लग्नाधि-  
पति अष्टमस्थानमें रहे तथा उस लग्नाधिपतिके प्रति पाप-  
ग्रहकी दृष्टि पड़ती हो, तो उसकी परमायु २४ वर्ष होगी,  
ऐसा जानना चाहिये । जन्मकालमें लग्नाधिपति और अष्ट-  
माधिपति ये दोनों ग्रह यदि अष्टम स्थानमें रहे, तो जात-  
व्यक्तिकी परमायु २७ वर्ष की होगी । जिसके जन्मकालमें  
कोई पापग्रह और हृदस्थिति ये दोनों यदि लग्नस्थित हों  
तथा उक्त ग्रहके प्रति यदि चन्द्रकी दृष्टि पड़ती हो, तो उस  
व्यक्तिकी परमायु २२ वर्ष की होती है । जन्मकालमें  
शुक्र और हृदस्थिति यदि केन्द्रस्थानमें अर्थात् लग्नमें, चतुर्थ-  
में, सप्तममें वा दशममें रहे, तो जातव्यक्ति को सो वर्ष  
परमायु होगी । जन्मकालमें कर्कटमें हृदस्थिति और केन्द्र-  
स्थान शुक्रके रहनेसे जातव्यक्ति को सो वर्षकी आयु  
होगी । जिसके जन्मकालमें लग्न वा नवम स्थानमें चन्द्रमा  
रहते हैं उसको भी आयु सो वर्षकी मानो गई है ।  
लग्न, चतुर्थ, पंचम सप्तम, नवम वा दशम स्थानमें यदि  
कोई पाप ग्रह न रहे और धनु वा मीन जन्मलग्न हो  
तथा केन्द्रस्थानमें हृदस्थिति वा शुक्र रहे एवं लग्नमें अष्टम  
और नवममें शुभग्रहकी दृष्टि पड़ती हो, तो उसकी भी  
सो वर्षकी परमायु होती है । लग्न और चन्द्रसे अष्टम-  
स्थानमें यदि कोई पाप ग्रह न रहे तथा हृदस्थिति और  
शुक्र बलवान् हो, तो उस व्यक्तिकी परमायु १३० वर्ष  
होगी । जन्मकालमें हृदस्थिति और शुक्र केन्द्रस्थानमें  
तथा एकादशमें चन्द्र रहे, तो जातव्यक्तिकी १२० वर्ष  
परमायु होती है । जन्मकालमें मोनलग्नमें शुक्र, अष्टम  
स्थानमें चन्द्र और केन्द्रमें हृदस्थितिके रहनेसे तथा चन्द्रके  
प्रति शुभग्रहकी दृष्टि पड़नेसे जात व्यक्तिकी सो वर्ष पर-

मायु होती है । इत्यादि प्रकारसे परमायुका विषय स्थिर  
करना होता है । फिर भी लिखा है, कि ज्योतिर्विद्ग न  
स्थिर चित्त हो अर्थात् कलावल विचार कर धर्मके प्रति  
दृष्टि रखते हुए आयुयोगका उपदेग देते हैं, इत्यादि ।  
यहो परमायुगणनाका विषय है जो संचिपमें कहा गया ।  
विशेष विवरण हृदज्जातक और जातकालद्वारा आदि  
ज्योतिर्विद्गोंमें लिखा है ।

ज्योतिषमें गोमहिषादिको परमायुके सम्बन्धमें इस  
प्रकार लिखा है । मनुष्य और हाथीको परमायु १२० वर्ष  
५ दिन, घोड़ा और खान्गादिको परमायु १६ वर्ष, गौ  
और महिषको परमायु २४ वर्ष, उष्ट्र और गर्दभको  
परमायु २५ वर्ष, कुम्हुरकी परमायु १२ वर्ष और शरबकी  
परमायु ३८ वर्ष है ।

इन सबके जन्मसमयके लग्न और ग्रहसंस्थिति द्वारा  
उक्त आयुगणनाकी प्रणालीके अनुसार आयुके अन्तरादि  
स्थिर करके उसे हस्ती आदिकी अपनी अपनी निरूपित  
आयु द्वारा गुणा करा । पोछे उस गुणफलको १२०से  
भाग दो । भागफल जो होगा, वही उक्त हस्ती आदिकी  
परमायु है ।

सचराचर मानवादि जितने वर्ष तक जीते हैं, उसी-  
की परमायु माना गया है । किन्तु १५० वर्ष यहां तक  
कि १६५ वर्षके भी मानवका नाम सुना जाता है, किन्तु  
ऐसा बहुत कम है । योगबलमें किसी किसोने तौन चार  
सो वर्ष तक जीवनरत्ना को है, ऐसा भी सुना  
जाता है ।

\* "पञ्चबाहानसभूयसा वृकरिणां दशान्नयत्रादेष्टुर्पाः  
गोकार्थोद्धिजिनास्तयोद्वयोरस्तत्तानि सूर्याः शुनः ।  
अ.वा.युः परमं रदा वृवदिहानियायुरेवां परायु  
निग्नं वृरायुषा च विहतं तेषां क्षुटायुर्भवेत् ॥" (ज्योतिष)



